ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 अप्रैल, 2016 अंक : 1

प्रधान सम्पादक
डॉ. एम.पी. सूद

वरिष्ठ सम्पादक
यादविन्दर सिंह चौहान

सम्पादक
वेद प्रकाश

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : अश्वनी

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-171 005

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

पैसा होना बड़ी बात है। इससे आप जो चाहते हैं कर सकते हैं। लेकिन मैं हमेशा से अमीर रहा हूं क्योंकि मेरी खुशी पैसे से जुड़ी नहीं रही।

– पाउलो कोहलो

इस अंक में

विकास

अपनी बात

अप्रैल माह हिमप्रस्थ पत्रिका के लिए विशेष महत्त्व रखता है। आज से 61 वर्ष पूर्व 1955 में इसी महीने पत्रिका ने साहित्यिक क्षेत्र में पदार्पण किया था। उस समय तक साहित्यिक रचनात्मकता की दृष्टि से उपेक्षित रहे इस पहाड़ी क्षेत्र में एक पत्रिका का उदय होना किसी बड़ी उपलब्धी से कमतर न था। समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर और प्राकृतिक सौंदर्य से लबरेज यह पर्वतीय क्षेत्र बाहरी समाज के लिए बिलकुल अनभिज्ञ था। प्रदेश के नवोदित एवं उभरते रचनाकारों के लिए पत्र-पत्रिकाओं के रूप में किसी भी प्रकार के मंच का सर्वथा अभाव था जिसके चलते यहां के प्रबुद्धजन साहित्यिक रूप से अपने आप को शेष भारत से कटे से महसूस करते थे। पत्रिका ने ऐसे समय में न केवल साहित्यिक रिक्तता की भरपाई की बल्कि यहां के लेखकों को साहित्यिक गतिविधियों के विस्तार के साथ अभिव्यक्ति का एक सशक्त मंच प्रदान किया। प्रदेश में सत्तासीन रही सरकारों ने यहां की कला एवं संस्कृति को संजोए रखने तथा रचनात्मकता को बढ़ावा देने की दिशा में सदैव सराहनीय योगदान दिया है। हिमप्रस्थ सहित सरकारी क्षेत्र में प्रकाशित अनेक पत्र-पत्रिकाएं इसका सजीव उदाहरण है। सरकार के ऐसे प्रयासों का ही सार्थक परिणाम है कि आज के सूचना एवं प्रौद्योगिकी के आधुनिक दौर में भी हिमप्रस्थ अपनी प्रासंगिकता बनाए रखने में कामयाब रही है। यह एक संयोग ही है कि हिमाचल प्रदेश का एक राज्य के रूप में उदय भी अप्रैल महीने में ही हुआ। स्वाधीनता प्राप्ति के आठ माह उपरांत 15 अप्रैल, 1948 को इस पर्वतीय क्षेत्र की छोटी-बड़ी 30 रियासतों के विलय के बाद हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। प्रदेश ने इस वर्ष अपने अस्तित्व के 68 वर्ष पूरे कर लिए हैं। इस अवधि के दौरान प्रदेश में हुए एक समान एवं सर्वांगीण विकास का अंदाजा इस बात से लगया जा सकता है कि प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय, जो वर्ष 1948 में मात्र 240 रुपये थी, आज बढ़कर 1,30,067 रुपये तक पहुंच गई है। राज्य का सकल घरेलू उत्पाद 26 करोड़ रुपये से बढ़कर 82,585 करोड़ रुपये तथा साक्षरता दर 7 प्रतिशत से बढ़कर 82.80 प्रतिशत हो गई है। खाद्यान्न उत्पादन वर्ष 1948 के 2 लाख मीट्रिक टन की तुलना में बढ़कर 16 लाख मीट्रिक टन तथा फल उत्पादन 1200 मीट्रिक टन से बढ़कर 8.54 लाख मीट्रिक टन पहुंच गया है। प्रदेश शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सेवाएं, महिला सशक्तीकरण, पर्यावरण संरक्षण, रोजगार सृजन, मैक्रो इकॉनमी तथा पूंजी निवेश में देश का अग्रणी राज्य बनकर उभरा है, जिसके परिणामस्वरूप प्रदेशवासियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर में व्यापक सुधार आया है। वर्तमान प्रदेश सरकार ने प्रदेश की बागडोर सम्भालने के बाद राज्य के समान एवं संतुलित विकास पर विशेष ध्यान देने के साथ-साथ आम आदमी के कल्याण को सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों का केन्द्र बिन्दु बनाया। विकास एवं संस्कृति का आपस में अटूट रिश्ता रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अगर हम हिमाचल प्रदेश की संस्कृति और परंपराओं पर नजर दौड़ाएं तो यह बात स्पष्ट हो जाती है विकास की राह पर आगे बढ़ते हुए यहां के निवासियों ने अपनी पुरातन संस्कृति के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा को सदैव बनाए रखा है। प्रदेश की समृद्ध संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन में भी सरकार रचनात्मक सहयोग दे रही है। राज्य के मैदानी इलाकों से लेकर उत्तुंग पहाड़ों के मध्य फैले भू-भाग के जनजीवन में मेले एवं त्योहार ऐसा उमंग एवं उत्साह का संचार करते हैं जो लोगों को एक सूत्र में पिरोकर रखने में सहायक सिद्ध होता है। प्रदेश में मुख्यतयः वसंत ऋतु से मेलों का सिलसिला आरंभ होकर वर्षभर चलता रहता है। देवभूमि का चुंबकीय आकर्षण लाखों सैलानियों को हर वर्ष हिमाचल भ्रमण के लिए लालायित करता है। इससे पर्यटन गतिविधियों को प्रोत्साहन मिलने के साथ-साथ राज्य की आर्थिकी को भी संबल मिलता है। परिणामस्वरूप प्रदेश के सकल घरेलू उत्पाद में पर्यटन उद्योग का 9 प्रतिशत का योगदान है। संस्कृति के संरक्षण से हमारी देव संस्कृति के मूल स्वरूप को बनाए रखने में सहायता मिलती है। हिमप्रस्थ राज्य के विकास, संस्कृति, परंपराओं और साहित्य को आम पाठक तक पहुंचाने की दिशा में 61 वर्षों से निरंतर प्रयासरत है। हमारे इस प्रयास में रचनाकारों, लेखकों से सदैव भरपूर सहयोग मिला है और आशा करते हैं भी ऐसा सहयोग भविष्य में हमारा मनोबल बढ़ाता रहेगा।

–संपादक

सतत् विकास की राह पर अग्रसर हिमाचल

हिमाचल दिवस (15 अप्रैल) पर मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह का विशेष आलेख

हिमाचल प्रदेश ने अपने अस्तित्व के 68 वर्ष पूरे कर लिए हैं। इस पावन अवसर पर मैं हमारे सुन्दर पहाड़ी प्रदेश के सभी लोगों को हार्दिक बधाई देता हूँ तथा उनके सुखमय एवं उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ। मैं, हिमाचल प्रदेश को एक शांतिपूर्ण, प्रगतिशील एवं समृद्ध राज्य बनाने में रचनात्मक सहयोग देने के लिए प्रदेशवासियों का आभार व्यक्त करता हूँ।

15 अप्रैल, 1948 को ग़रीबी व पिछड़ेपन की एक धूमिल तस्वीर से अपनी यात्रा शुरू करने के बाद हिमाचल प्रदेश सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति करते हुए देश का अग्रणी पर्वतीय राज्य बनकर उभरा है। प्रदेश की प्रति व्यक्ति आय, जो वर्ष 1948 में मात्र 240 रुपये थी, आज बढ़कर 1,30,067 रुपये हो गई है। राज्य सकल घरेलू उत्पाद 26 करोड़ रुपये से बढ़कर 82,585 करोड़ रुपये हो गया है। साक्षरता दर 7 प्रतिशत से बढ़कर 82.80 प्रतिशत हो गई है। खाद्यान्न उत्पादन वर्ष 1948 के 2 लाख मीट्रिक टन की तुलना में बढ़कर 16 लाख मीट्रिक टन तथा फल उत्पादन 1200 मीट्रिक टन से बढ़कर 8.54 लाख मीट्रिक टन पहुंच गया है। प्रदेश शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सेवाएं, महिला सशक्तीकरण, पर्यावरण संरक्षण, रोज़गार सृजन, मैक्रो इकोनामी तथा पूंजी निवेश में देश का अग्रणी राज्य बनकर उभरा है, जिसके परिणामस्वरूप प्रदेशवासियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर में व्यापक सुधार आया है।

प्रदेश में हुए इस विकास का श्रेय राज्य के मेहनतकश लोगों तथा विशेष रूप से कांग्रेस द्वारा प्रदान की गई स्थिर सरकारों को जाता है। हम इस अवसर पर हिमाचल प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. वाई.एस. परमार को श्रद्धासुमन अर्पित करते हैं, जिन्होंने प्रदेश के शैशवकाल में इसके विकास की ठोस नींव रखी। प्रदेशवासियों के स्नेह एवं आशीर्वाद से मुझे 6 बार मुख्य मंत्री के रूप में 20 वर्षों से भी अधिक समय तक प्रदेश की सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

25 दिसम्बर, 2012 को हिमाचल प्रदेश की बागडोर सम्भालने के दिन से वर्तमान प्रदेश सरकार के सभी प्रयास राज्य के समान एवं सतत् विकास पर केन्द्रित रहे है तथा आम आदमी का कल्याण वर्तमान सरकार की नीतियों का केन्द्र बिन्दु है।

सामाजिक सुरक्षा

प्रदेश सरकार ने सामाजिक सुरक्षा पैंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 650 रुपये प्रति माह किया है तथा गत तीन वर्षों में सामाजिक सुरक्षा पैंशन के 57,000 नए लम्बित मामले स्वीकृत किए गए है। वर्तमान में 3.63 लाख पात्र विधवाओं, वृद्धों तथा दिव्यांग व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा पैंशन प्रदान की जा रही है। इस वर्ष प्रथम अप्रैल से 24000 लम्बित पैंशन मामलों को स्वीकृत किया गया है। 80 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धों की सामाजिक सुरक्षा पैंशन को बढ़ाकर 1200 रुपये प्रति माह किया गया है। एक या एक से अधिक बच्चों वाली 45 वर्ष से कम आयु की विधवाओं की सामाजिक सुरक्षा

पैंशन को बढ़ाकर 1200 रुपये प्रति माह किया गया है। मुख्य मंत्री कन्यादान योजना के अन्तर्गत सहायता राशि को 21000 रुपये से बढ़ाकर 40000 रुपये किया गया है।

'इंदिरा आवास योजना' के अन्तर्गत 8538.65 लाख रुपये की लागत से 13652 आवासों तथा 'राजीव आवास योजना' के अन्तर्गत 2280.87 लाख रुपये की लागत से 2141 आवासों का निर्माण किया गया। सरकार द्वारा इस वर्ष से 25 करोड़ रुपये का बजट प्रावधान कर 'मुख्य मंत्री आवास योजना' आरम्भ की गई है, जिसके अन्तर्गत सामान्य श्रेणी के बी.पी.एल. परिवारों को आवास निर्माण के लिए 75 हज़ार रुपये का उपदान दिया जाएगा। इस वित्तीय वर्ष में विभिन्न आवास योजनाओं के अन्तर्गत 97 करोड़ रुपये की लागत से 12000 आवासों का निर्माण किया जाएगा।

खाद्य सुरक्षा

प्रदेश के 37 लाख लोगों को 'राजीव गान्धी अन्न योजना' के अन्तर्गत खाद्य सुरक्षा प्रदान की जा रही है। उन्हें 2 रुपये प्रति किलो की दर से 3 किलो गेहूं तथा 3 रुपये प्रति किलो की दर से 2 किलो चावल प्रति व्यक्ति प्रतिमाह प्रदान किए जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें खाद्य तेल, दालें तथा नमक भी प्रदान किया जा रहा है। सभी बी.पी.एल. परिवारों को प्रति माह 35 किलो राशन प्रदान किया जा रहा है। राज्य खाद्य उप-दान योजना के अन्तर्गत गत तीन वर्षों में 667 करोड़ रुपये खर्च किए गए हैं जबकि वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान इसके लिए 210 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

प्रदेश सरकार ने सामाजिक सुरक्षा पैंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 650 रुपये प्रति माह किया है तथा गत तीन वर्षों में सामाजिक सुरक्षा पैंशन के 57,000 नए लम्बित मामले स्वीकृत किए गए हैं। वर्तमान में 3.63 लाख पात्र विधवाओं, वृद्धों तथा दिव्यांग व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा पैंशन प्रदान की जा रही है। इस वर्ष प्रथम अप्रैल से 24000 लम्बित पैंशन मामलों को स्वीकृत किया गया है। 80 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धों की सामाजिक सुरक्षा पैंशन को बढ़ाकर 1200 रुपये प्रति माह किया गया है। एक या एक से अधिक बच्चों वाली 45 वर्ष से कम आयु की विधवाओं की सामाजिक सुरक्षा पैंशन को बढ़ाकर 1200 रुपये प्रति माह किया गया है। मुख्य मंत्री कन्यादान योजना के अन्तर्गत सहायता राशि को 21000 रुपये से बढ़ाकर 40000 रुपये किया गया है।

रोज़गार

हमारी सरकार ने गत तीन वर्षों में सरकारी तथा निजी क्षेत्र में 60 हज़ार से अधिक लोगों को रोज़गार प्रदान किया है। सरकारी क्षेत्र में ही 27000 से अधिक लोगों को रोज़गार दिया गया है, जबकि आने वाले दो वर्षों में हम अकेले सरकारी क्षेत्र में 25000 लोगों को रोज़गार के अवसर उपलब्ध करवाने के लिए वचनबद्ध हैं। उच्च शिक्षा विभाग में इस अवधि के दौरान 3237 नियुक्तियां की गई तथा 4527 पदों पर पदोन्नति दी गई। इसी प्रकार प्रारम्भिक शिक्षा विभाग में इस अवधि के दौरान लगभग 5000 नियुक्तियां की गई। प्रदेश में नये सृजित अथवा स्तरोन्नत शिक्षण संस्थानों के लिए 3355 पद सृजित किए गए हैं जबकि प्रदेश के लिए स्वीकृत नये मेडिकल कॉलेजों के लिए 1775 पद सृजित किए गए हैं। इस अवधि के दौरान स्वास्थ्य क्षेत्र में विशेषज्ञ एवं चिकित्सकों सहित विभिन्न श्रेणियों के 2458 पद भरे गए हैं जबकि 7503 आशा वर्करों की नियुक्ति भी की गई है। इसके अलावा पुलिस विभाग में 1300 से अधिक पद भरे गए हैं।

मनरेगा योजना के अन्तर्गत 1474.34 करोड़ रुपये व्यय कर 708.63 लाख श्रम दिवस सृजित किए गए हैं।

प्रदेश में महत्त्वाकांक्षी 'कौशल विकास भत्ता योजना' से अभी तक 1,07,887 युवा लाभान्वित हुए हैं, जिसके अन्तर्गत बेरोज़गार युवाओं को एक हज़ार रुपये तथा शारीरिक रूप से अक्षम युवाओं को 1500 रुपये प्रतिमाह का कौशल विकास भत्ता दिया जा रहा है।

शिक्षा क्षेत्र

प्रदेश में इस अवधि के दौरान एक हज़ार से अधिक स्कूल खोले गए अथवा उनका दर्जा बढ़ाया गया। इसके अलावा 24 नए औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान एवं दो इंजीनियरिंग कॉलेज भी खोले गए। प्रदेश के दूरदराज तथा ग्रामीण क्षेत्रों में वर्तमान कार्यकाल में 29 महाविद्यालय खोले गए। राज्य पथ परिवहन निगम की बसों में सरकारी स्कूलों तथा केन्द्रीय विद्यालय के विद्यार्थियों को निःशुल्क यात्रा सुविधा प्रदान की जा रही है। प्रदेश के प्रत्येक विधानसभा क्षेत्र में दो वरिष्ठ माध्यमिक पाठशालाओं में अत्याधुनिक अधोसंरचना एवं शिक्षण सुविधाएं उपलब्ध करवाने के लिए 30 करोड़ रुपये के प्रावधान के साथ 'मुख्यमंत्री आदर्श विद्यालय योजना' शुरु की गई है। इसके अलावा, 'मुख्य मंत्री ज्ञानदीप योजना' भी शुरु की गई है, जिसके अन्तर्गत सभी हिमाचली विद्यार्थियों को 10 लाख रुपये तक के शिक्षा ऋण पर 4 प्रतिशत का ब्याज अनुदान दिया जाएगा। 'मुख्य मंत्री वर्दी योजना' के अन्तर्गत सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले सभी विद्यार्थियों को वरिष्ठ माध्यमिक स्तर तक निःशुल्क वर्दियां प्रदान की जा रही है। ऊना ज़िले में भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान, सिरमौर ज़िले में भारतीय प्रबन्धन संस्थान तथा

> **'15 अप्रैल, 1948 को गरीबी व पिछड़ेपन की एक धूमिल तस्वीर से अपनी यात्रा शुरू करने के बाद हिमाचल प्रदेश सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति करते हुए देश का अग्रणी पर्वतीय राज्य बनकर उभरा है। प्रदेश शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सेवायें, महिला सशक्तीकरण, पर्यावरण संरक्षण, रोजगार सृजन तथा पूंजी निवेश में देश भर में एक आदर्श राज्य बना है। परिणामस्वरूप प्रदेशवासियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर में व्यापक सुधार आया है।'**
>
> **–वीरभद्र सिंह**

शिमला में फाईन ऑर्ट कॉलेज खोला गया है। प्रदेश सरकार ने शिमला के समीप राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय खोलने का निर्णय लिया है।

स्वास्थ्य

प्रदेश में 'हिमाचल प्रदेश सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल योजना' शुरु की गई है, जिसके तहत ऐसे सभी व्यक्तियों को सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल सुविधा प्रदान की जाएगी जो 'राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना,' 'मुख्य मंत्री राज्य स्वास्थ्य सेवा योजना' तथा अन्य किसी चिकित्सा प्रतिपूर्ति योजना के दायरे में नहीं आते हैं। इस अवधि के दौरान प्रदेश में 130 से अधिक स्वास्थ्य संस्थान खोले गए। प्रदेश के हमीरपुर, चम्बा तथा सिरमौर ज़िलों में तीन मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे है तथा इनके लिए 1775 पद सृजित किए गए हैं। प्रदेश के लिए एक अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान भी स्वीकृत किया गया है, जिसे बिलासपुर ज़िले में खोला जाएगा।

कृषि व बागबानी

कृषि एवं बागबानी गतिविधियों के विविधीकरण तथा इन्हें जलवायु प्रतिरोधी बनाने के लिए सरकार द्वारा 111.19 करोड़ रुपये की 'डॉ. वाई.एस. परमार स्वरोज़गार योजना' तथा 154 करोड़ रुपये की 'राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना' कार्यान्वित की जा रही है। प्रदेश में किसानों की फसलों को बन्दरों, आवारा पशुओं तथा जंगली जानवरों से बचाने के लिए 'मुख्य मंत्री खेत संरक्षण योजना' शुरु की गई है, जिसके तहत किसानों को अपने खेतों में बाड़ लगाने के लिए 60 प्रतिशत की वित्तीय सहायता दी जाएगी।

प्रदेश में विश्व बैंक द्वारा पोषित 1115 करोड़ रुपये की हिमाचल प्रदेश बागबानी विकास परियोजना कार्यान्वित की जा रही है, जिससे बागानों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि होगी।

सड़कें

गत तीन वर्षो के दौरान प्रदेश में 1366 किलोमीटर नई सड़कों तथा 134 पुलों का निर्माण किया गया है। इस अवधि के दौरान 255 से अधिक गांवों को सड़कों से जोड़ा गया है। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अन्तर्गत 532 करोड़ रुपये की लागत की 2267 किलोमीटर सड़कों की 241 विस्तृत परियोजना रिर्पोट भारत सरकार से स्वीकृत करवाई गई हैं। गत तीन वर्षों के दौरान 603 करोड़ रुपये की लागत से 2489 किलोमीटर की 378 परियोजनाएं पूरी कर दी गई हैं।

पेयजल आपूर्ति

इस अवधि के दौरान पेयजल आपूर्ति योजनाओं पर 773 करोड़ रुपये खर्च किए गए है। ग्रामीण पेयजल आपूर्ति योजना के अन्तर्गत 6949 अतिरिक्त बस्तियों को पेयजल सुविधा प्रदान की गई तथा जलाभाव वाले क्षेत्रों में 4890 हैंडपम्प स्थापित किए गए है। इस अवधि के दौरान 400 करोड़ रुपये की लागत से 10586 हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई सुविधा प्रदान की गई है। ऊना ज़िले में 922 करोड़ रुपये की लागत से स्वां नदी तटीकरण परियोजना तथा कांगड़ा ज़िला में 180 करोड़ रुपये लागत की छौंछ खड्ड तटीकरण परियोजना का निर्माण कार्य प्रगति पर है।

पर्यटन

प्रदेश में साहसिक पर्यटन को प्रोत्साहित करने के लिए कांगड़ा ज़िले के बीड़-बिलिंग में पैरा-ग्लाईडिंग विश्व कप का आयोजन किया गया। प्रदेश के प्रमुख पर्यटन स्थलों में मूलभूत अधोसंरचना तथा पर्यटन सुविधाओं के सुधार के लिए एशियाई विकास बैंक से 570 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता स्वीकृत करवाई गई है। प्रदेश की पिछड़ी पंचायतों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यटन इकाइयों को 10 वर्षो के लिए विलासिता कर में छूट दी गई है।

औद्योगिक विकास

प्रदेश सरकार राज्य में तीव्र औद्योगिक विकास के लिए 'निमंत्रण से निवेश' को बढ़ावा दे रही है। मुम्बई, बैंगलुरु, अहमदाबाद तथा नई दिल्ली में 'इन्वेस्टर मीट' का आयोजन किया गया, जिससे कुल 4079 करोड़ रुपये निवेश की नई परियोजनाएं तथा 60 परियोजना विस्तार प्रस्ताव प्राप्त हुए है। ऊना जिले के पण्डोगा तथा कांगड़ा जिले के कन्दरोड़ी में क्रमश: 140 करोड़ तथा 122 करोड़ रुपये की लागत से अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित करने का कार्य प्रगति पर है।

प्रदेश में रोज़गार सृजन के लिए नये निवेश को त्वरित स्वीकृतियां प्रदान करने के लिए हिमाचल निवेश ब्यूरो की

कृषि एवं बागबानी गतिविधियों के विविधीकरण तथा इन्हें जलवायु प्रतिरोधी बनाने के लिए सरकार द्वारा 111.19 करोड़ रुपये की 'डॉ. वाई.एस. परमार स्वरोज़गार योजना' तथा 154 करोड़ रुपये की 'राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना' कार्यान्वित की जा रही है। प्रदेश में किसानों की फसलों को बन्दरों, आवारा पशुओं तथा जंगली जानवरों से बचाने के लिए 'मुख्य मंत्री खेत संरक्षण योजना' शुरू की गई है, जिसके तहत किसानों को अपने खेतों में बाड़ लगाने के लिए 60 प्रतिशत की वित्तीय सहायता दी जाएगी। प्रदेश में विश्व बैंक द्वारा पोषित 1115 करोड़ रुपये की हिमाचल प्रदेश बागबानी विकास परियोजना कार्यान्वित की जा रही है, जिससे बागानों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि होगी।
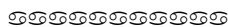
स्थापना की जा रही है। 100 से अधिक हिमाचलियों को रोज़गार प्रदान करने वाले उद्योगों को औद्योगिक क्षेत्रों में कम दामों पर भूमि उपलब्ध करवाई जाएगी। नये उद्योगों को भूमि खरीदने की रजिस्ट्री पर केवल तीन प्रतिशत स्टाम्प शुल्क वसूला जाएगा। एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा इस अवधि के दौरान 11663 करोड़ रुपये निवेश की 219 औद्योगिक इकाइयों को स्वीकृति प्रदान की गई, जिनमें 22000 से अधिक रोज़गार के अवसर उपलब्ध होंगे।

पंचायती राज/शहरी विकास

पंचायती राज संस्थाओं एवं स्थानीय शहरी निकायों को धनराशि के विकेन्द्रीकरण के लिए समय पर संस्तुतियां देने के लिए पांचवें राज्य वित्तायोग का गठन किया गया है। 14वें वित्तायोग की सिफारिशों के अनुरूप चालू वित्त वर्ष के दौरान पंचायतों को 306 करोड़ रुपये जारी किए जाएंगे, जबकि राज्य सरकार द्वारा 130 करोड़ रुपये प्रदान किए जाएंगे। प्रदेश सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं एवं स्थानीय शहरी निकायों के पदाधिकारियों के मानदेय में वृद्धि की है।

ऊर्जा क्षेत्र

हम वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान अकेले सरकारी क्षेत्र में ही 265 मेगावाट अतिरिक्त क्षमता के दोहन के प्रति वचनबद्ध है। प्रदेश सरकार ने राज्य में ऊर्जा बचत के लिए एक वृहद् 'एल.ई.डी. प्रोत्साहन योजना' आरम्भ की है, जिसके अन्तर्गत घरेलू उपभोक्ताओं को रियायती दरों पर एल.ई.डी. बल्ब प्रदान किए जा रहे हैं। गत तीन वर्षों के दौरान प्रदेश के सभी घरेलू उपभोक्ताओं को उपदानयुक्त दरों पर बिजली प्रदान करने के लिए 1080 करोड़ रुपये खर्च किए गए है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान इसके लिए 410 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

परिवहन

प्रदेश सरकार लोगों को सुरक्षित, भरोसेमंद तथा आरामदेह परिवहन सेवाएं प्रदान करने के प्रति वचनबद्ध है। इसके लिए राज्य पथ परिवहन निगम के बेड़े में 1231 नई बसें शाामिल की गई है, जबकि 69 और बसें शीघ्र उपलब्ध करवाई जाएंगी। सभी महिलाओं को राज्य पथ परिवहन निगम की सामान्य बसों में प्रदेश के भीतर किराये में 25 प्रतिशत छूट दी जा रही है।

कर्मचारी कल्याण

दिहाड़ी को 150 रुपये से बढ़ाकर 200 रुपये किया गया है। 31 मार्च, 2016 को 5 वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले अनुबंध कर्मियों, 7 वर्ष का नियमित सेवाकाल पूरा करने वाले दिहाड़ीदारों को नियमित किया गया है तथा आठ वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले अंशकालिक कर्मियों को दिहाड़ीदार बनाया जा रहा है। प्रदेश सरकार ने राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना से वंचित सभी दिहाड़ीदारों, अंशकालिक कर्मियों, आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं/सहायिकाओं एवं मिड-डे-मील कार्यकर्ताओं को 'मुख्यमंत्री राज्य स्वास्थ्य सुरक्षा योजना' के अन्तर्गत लाया है। अनुबंध कर्मचारियों के पारिश्रमिक में ग्रेड-पे में पचास प्रतिशत की वृद्धि की गई है। अंशकालिक जलवाहकों, जल रक्षकों, सिलाई अध्यापकों, ग्राम विद्या उपासकों, गृह रक्षकों तथा पंचायत चौकीदारों के मानदेय में भी आशातीत वृद्धि की गई है।

जवाबदेह प्रशासन

लोगों को पारदर्शी, जवाबदेह तथा समयबद्ध सेवाएं प्रदान करने के लिए विभिन्न विभागों की 86 सेवाओं को 'लोक सेवा गारन्टी अधिनियम' के अन्तर्गत लाया गया हैं। लोगों की सुविधा के लिए इस वर्ष के अन्त तक 100 से अधिक सेवाओं को इस अधिनियम के अन्तर्गत लाया जाएगा। प्रदेश सरकार ने विभिन्न नागरिक सेवाएं प्रदान करने के लिए जहां कानूनी बाध्यता न हो, शपथ पत्र प्रस्तुत करने की अनिवार्यता को समाप्त कर दिया है।

स्थिरता, समृद्धि एवं विकास की कुंजी है। प्रदेश की कांग्रेस सरकारें स्थिरता, विकास एवं जन-कल्याण की पर्याय रही है। राज्य सरकार लोगों को स्वच्छ, पारदर्शी एवं जवाबदेह प्रशासन प्रदान कर रही है। सरकार हिमाचल प्रदेश को देश का सर्वाधिक विकसित राज्य बनाने के ध्येय से कार्य कर रही है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैं आप सभी के सहयोग की अपील करता हूं।

एक पुनरावलोकन
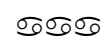
पर्वतीय संस्कृति विगत और आगत

● श्रीनिवास श्रीकांत

संस्कृति भारतीय ग्राम्य समाज की पहचान है। वह लोक परंपरा की आत्मा है। उसके व्यवहार्य भाव-बोध में सहज कलात्मक रहन-सहन के तत्त्व निहित हैं। गत शताब्दी उत्तरोत्तर बढ़ते हुए वैश्वीकरण ने ग्राम्य-लोक समाज के अंदर ही परिपाटियों और जीवनीय परिवेश में अभूतपूर्व बदलाव लाए हैं। ग्राम्य परिवारों की जीवनचर्या में भी तदनुरूप रूपांतरण हुआ है। यह परिवर्तन कहीं प्रिय तो अन्यत्र कहीं अवांछनीय भी नज़र आता है। जहां तक सभ्यता के आर्थिक उत्थान और भौतिक जीवन-स्तर के परिष्कार की बात है स्थिति कमोबेश बेहतर हुई है। नई सभ्यता की आक्रामक जीवन शैली को जनोत्प्रेरित कर सांस्कृतिक खूबियों को अनेक शोबों में बदरूप भी बनाया है।

हिमाचल का पर्वतीय क्षेत्र और घाटियों में दूर-दूर तक फैले जनपद कुछ बरस पूर्व जन सुविधा-संचार और आवाजाही के साधनों की अनुपस्थिति में बाहरी दुनिया से कटे हुए थे। अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य काल में पहली बार अपनी छावनियां स्थापित कीं और अपने गौरांग-छाप रहवास भी निर्मित किए। शिमला हिल्ज़ और पंजाब हिल्ज़ में अंग्रेजों का वह आगमन पर्वतांचल में बसे देहाती जन-समुदाय समानांतर होते हुए भी असरंदाज़ होता रहा है। नृजातीय, सामाजिक व सांस्कृतिक रूपांतरण का वह एक सतही दौर था। वर्ग-वर्ण और जातीयता के पैमाने पर लोग एक अजनबी-आगंतुक सांस्कृतिक समुदाय से उनकी व्यवहारधर्मिता को सीखते हुए भी अपने घरों में निस्संदेह अपनी ही जीवन शैली अपनाए रहे। आम जीवन की दिनचर्या में वे बने रहे। उनके समर्थक, उनके सेवादार और उनके परिवार दास्य भाव में भी वे उनके तौर-तरीकों पर हामी भरते रहे। यह एक विलक्षण बात थी कि शासक-सम्यकों से प्रभावित रहते हुए भी ग्राम्य समाज के सभी वर्गों ने अपने सांस्कृतिक मूल्यों, रीति-रिवाजों व पारिवारिक स्तर पर अपने जातीय संस्कारों को सुरक्षित रखा।

हिमाचल बहुरंगी संस्कृति का एक नायाब केलीडो-स्कोप है। इस रंगदर्शी में अनेक ऐसे रंग उभरते हैं जो किसी भी संस्कृति-रसिक (कल्चर वाचर) को मुग्ध कर देगा। इस विरासत के संवर्द्धन और नैरंतर्य की दिशा में जिन लोगों का अपूर्व योगदान रहा उनमें पर्वतीय महिलाओं, स्त्री व पुरुषों और दलित जाति के कलाकारों/शिल्पियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

अगर हिमाचल के सांस्कृतिक संप्राप्य और दाय का विहंगावलोकन किया जाए तो अनुभवाधारित कल्पना में एक भव्य और रुचिकर तसवीर बनती हैं। अंतर्जातीय और अंतरपारिवारिक रीतिरिवाज, तीज-त्योहार का उत्सवन, विवाह पद्धतियां, रिश्तेदारों के बीच का व्यवहार, लोकगीत, पारंपरिक गीत, ठेठ देहाती पहरावे मनुष्य की मायावी दुनिया का एक अद्‌भुत चित्र बनाते नज़र आते हैं। हिमाचल के लोकगीत, लोकनाट्य के विविध प्रकार और गाथा परंपराएं पर्वतीय जनलोक की संस्कृति को एक ऊंचा पदस्थल प्रदान करता है। पहाड़ी चित्रकारी के शैलीगत संस्थानों ने विश्वभर में अपनी एक अलग अस्मिता बनाई है।

लोक थियेटर में करियाला, बांठड़ा, भगत, रास, हरणात्तर, धाजा, यद्यपि समय काफी बदल चुका है फिर भी अनेक स्थानीय ग्राम-कुल देवताओं के नाम पर आज भी बराबर खुले प्रांगण में पूरे विधि-विधान के साथ प्रस्तुत किए जाते हैं। संस्थानगत रंगमंच कर्मियों ने भी इन शैलियों को अपनी विशिष्ट प्रस्तुतियों में उपयुक्त रीति से उपयोग में लाया है। राज्य में लोक कथाओं पर भी एकाधिक नाटकों का मंचन हुआ है। यद्यपि पारंपरिक लोक नाटक में अब वो चरित्र नज़र नहीं आते जिन्होंने अपनी भूमिकाओं के ज़रिए हिमाचल के ग्राम्य समुदाय में ख्याति अर्जित की। फिर भी कुछ नए भूमिकाकार इन चरित्रों का संबंधित आयोजनों में चरित्र का खेल खेलते नज़र आते हैं जो अपनी अद्यतन शैली में कामयाबी के साथ अपनी भूमिकाएं प्रदर्शित करते दिखाई देते हैं।

हिमाचल के हर क्षेत्र के अपने लोक नाट्य रंग हैं। इनमें पुराना महासू का इलाका (सोलन और शिमला जिले), मंडी, चंबा और कांगड़ा लोक रंगमंच गतिविधियों की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। इन नाटकों को पारंपरिक देहाती कलाकार समय-समय पर मंचित करते देखे गए हैं। सोलन और शिमला हिल्ज़ का करियाला उत्तर मध्यकाल से देव-उत्सवों के अवसर पर, अन्यथा विशिष्ट पर्वों-समारोहों पर भी प्रस्तुत किया जाता है। यह स्वागों के रूप में खुले प्रांगण में कार्यान्वित किया जाता है। साधू का स्वांग, साहब-मेम

का स्वांग, घाड़ी और घाड़न का स्वांग एक लंबे अर्से से सामाजिक ऐतिहासिक स्मृतियों के रूप में हर कार्यक्रम में अपरिहार्य प्रस्तुत किए जाते हैं। इतिहास के विभिन्न काल-खंडों का प्रतिनिधित्व करते ये दृष्टांतपरक नाटकीय प्रहसन हिमाचल की पूर्व-सामाजिकता और यहां आए अजनबी चरित्र समुदायों का आकलन करते हैं। आधुनिक समय में कुछ समकालीन प्रसंग-संदर्भो को लेकर नए-नए स्वांग भी निकट किए गए अब दिखाई देने लगे हैं जो समीपवर्ती अतीत अथवा समकालीन प्रसंगों की व्यंग्य चित्रात्मक नुमाइंदगी करते हैं।

जर्मनी के प्रसिद्ध रंगकर्मी बरटोल्ट ब्रेख्त के ओपेराओं की मानिंद ये भी भाववाची और अमूर्त (एब्स्ट्रेक्ट) रूपाकार में तत्कालीन समाज की स्थितियों-परिस्थितियों पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं।

कुछ ऐसे नाटक भी हैं जिनमें पारंपरिक मुखौटों का प्रयोग होता है। चंबा का हरणात्तर ऐसा ही नाटक है। प्रदेश के सीमावर्ती जनजातीय इलाकों में भी धर्मोत्सवों पर मुर्खाटा-पात्रीय नाटकों का खुले प्रांगण में ऐसे नाटकों का मंचन चिरकाल से होता आ रहा है। इनमें लोक दर्शकों की भागीदारी सुनिश्चित है- यूरोपीय वर्गीकरण के अनुसार इन लोक नाटकों को यदि 'थियेटर ऑफ इनवॉल्वमेंट' कहा जाए तो असंगत न होगा। संस्कृत नाटकों के वर्गीकरण में भी रंगाचार्यों का ऐसे नाटकों का उल्लेख किया है।

हिमाचल की समृद्ध पर्वतीय संस्कृति को महफूज और अमूल्य परंपरा को जीवित रखने के लिए लक्षित अभिभावक समाज को सही प्रोत्साहन की आवश्यकता है। इस संदर्भ में सरकारी सांस्कृतिक क्षेत्रों के साथ-साथ, गैर- व्यावसायिक संगठनों को सक्रिय किया जाना भी ज़रूरी है।

हिमालय के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र में अन्य पर्वतीय और दीगर बीहड़ क्षेत्रों में लोकनाट्य वहां की आदिम जातियों की परंपरा और विरासत रही है। हिमाचल में भी यह परंपरा आदिम जातियों की देन रही है, इसमें कोई संदेह नहीं होना चाहिए। बाद में यहां प्रविष्ट आक्रामक जाति-वर्ग के समाज-खंड ने इसे अपने लोक संस्कारों में तो अपनाया अवश्य किंतु चरित्रों अथवा बाजंत्रियों के रूप में इनमें भाग नहीं लिया। उनके लिए देव संबंधी धर्माचार का एक हिस्सा था जो एक लंबे समय तक उत्तरवर्ती काल में अपनाया जाता रहा। देवता भी तपस्वी अथवा युद्धवीर (नाइट) ही थे अथवा समाज के ही ऐसे कुछ लोग जिन्होंने अपने लोक में चमत्कार दिखाए होंगे। आरंभ में वे आदिक आस्था के प्रतीक रहे थे जबकि बाद में ये कुलीन और विशेषकर योद्धा जातियों के प्रतिनिधि ही थे।

वर्तमान राज्य प्रदेश में कद्रतन मैदानी क्षेत्रों से आगमित आक्रामक उच्च वर्ग-वर्ण-जातियों ने ही उत्तर मध्यकाल में यहां की मूल संस्कृति का अवगाहन करते हुए उसमें तत्कालीन हिंदू धर्म तक का समावेश किया और एक मिश्र-संस्कृति के परिष्कृत रूप में उसने पर्वतीय समाज में अपनी पैठ बनाई।

हिमाचल की लोक गायन और गाथा संबंधी परंपरा में प्रयुक्त होने वाले वाद्ययंत्र बुनियादी तौर पर पारंपरिक ही थे जब कि कुछेक यंत्र बाद में बाहर से आयातित होकर यहां की लोकधारा के अंग बन गए। इनके आगमन और आकार-प्रकार का अध्ययन करना विशेषज्ञों का काम है और कहना न होगा कि हिमाचल के इन यंत्रों पर पूर्व में खोजबीन और विस्तृत अध्ययन भी हुआ है।

हिमाचल के अस्तित्व में आने से लेकर अब तक यहां के लोक जीवन और उसके परिवेश में अभूतपूर्व परिवर्तन आए हैं। ग्राम्य और विशेषकर नगर क्षेत्रों में जलावासों का भौतिक विकास भी पर्याप्त हुआ है मगर विकास की नई भौतिक त्वरा में लोक संस्कृति की धारा हर सक्रिय बिंदु पर अब अवरुद्ध नज़र आती है। संस्कृति और उसके माध्यम से होने वाला जनपदीय संस्कार और पुनर्संस्कार अब मंद-मंद गति से आज के जमाने में अग्रसर है। पूर्व में सक्रिय रहे अनेक हल्कों में उक्त प्रक्रिया की गतिविधियां अब मृतप्राय हो गई हैं। यह एक सकारात्मक बात है कि ऐसी परिस्थिति में राज्य सरकार और उसकी सांस्कृतिक संस्थाओं ने इस वृहद और ठेठ ग्राम्यांचल की परंपराओं को बनाए रखने के लिए गत आधी शताब्दी से भरपूर उपक्रम किया है मगर फिर भी वे धीरे-धीरे अपनी पूरी विरासत के साथ विलुप्त और अर्द्धविलुप्त होता जा रहा है।

इस अमूल्य परंपरा को जीवित रखने के लिए लक्षित अभिभावक समाज को सही प्रोत्साहन की आवश्यकता है। इस संदर्भ में सरकारी सांस्कृतिक क्षेत्रों के साथ-साथ, गैर- व्यावसायिक संगठनों को सक्रिय किया जाना भी ज़रूरी है।

लोक नाट्य के प्रकाश के अलावा बरलाज, एंचली, गुग्गा जैसी गाथाओं को भी बराबर और उपयुक्त अवसरों के लिए सुरक्षित रखा जाना चाहिए। सांस्कृतिक जीवन के प्रतिबिंब अलग-अलग क्षेत्रों की जीवन शैली, ठेठ लोक व्यवहार की वस्तुओं-पहरावा, आभूषणों, कलात्मक बर्तनों को भी एक वृहद संग्रहागार के रूप में स्थापित किया जाना चाहिए। पर्वतीय लोक विधा के महत्त्वपूर्ण सूत्रों को भी ज्ञानकोश के रूप में संचित और सुरक्षित रखने की आवश्यकता है।

हिमाचल की समृद्ध पर्वतीय संस्कृति ही महफूज रखने के लिए उपर्युक्त बातों पर तत्काल ध्यान देना उपयोगी होगा।

पूजा सोसायटी, संदल, चक्कर, शिमला-171 005

विकासात्मक आलेख

हिमाचल में नील क्रांति का आगाज़

● मु. अमीन शेख चिश्ती

हिमाचल प्रदेश में मात्स्यिकी विभाग जनता के लिए प्रोटीनयुक्त प्राणी आहार उपलब्ध करवाने के साथ-साथ आय में वृद्धि व स्वरोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए कृतसंकल्प है। विभाग इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रदेश में मत्स्य उत्पादन तथा उत्तम प्रजाति के मछली बीज उत्पादन के लिए विशेष रूप से प्रयासरत है।

पिछले तीन वर्षों में प्रदेश में समस्त मत्स्य स्रोतों से 23862.68 लाख रुपये मूल्य की 27885.14 मीट्रिक टन मछली का उत्पादन हुआ। इस कुल मछली उत्पादन में 4719.098 मीट्रिक टन उत्पादन जलाशयों का रहा जबकि 940.91 मीट्रिक टन उत्पादन ट्राऊट मछली का हुआ। इस अवधि में 733.208 लाख मछली बीज का उत्पादन विभागीय फार्मों से भारतीय मेजर कार्प तथा कॉमन कार्प प्रजाति का किया गया। इसी अवधि में कॉमन कार्प प्रजाति की एक अधिक गति से बढ़ने वाली हंगेरियन कॉमन कार्प प्रजाति को प्रदेश में लाकर विभागीय फार्म देवली (घागस) बिलासपुर में इसका ब्लड स्टॉक तैयार कर इस प्रजाति का सफलतापूर्वक प्रजनन भी करवाया गया है ।

विभाग द्वारा इस अवधि में रेनबो ट्राऊट मछली पालन में विस्तार कर प्रदेश में 200 से अधिक नए ट्राऊट यूनिट निजी क्षेत्र में निर्मित करवा कर ट्राऊट के मछली उत्पादन में वृद्धि की गई। प्रदेश के जलाशयों में मत्स्य धन संरक्षण व मत्स्य बीज संग्रहण के फलस्वरूप गोबिन्दसागर जलाशय से सर्वाधिक 149.2 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की मछली उत्पादकता दर प्राप्त की गई। मत्स्य धन संरक्षण कार्यक्रम के तहत जलाशयों को 88.43 लाख रुपये के दो आधुनिक सुविधाओं से लैस तेज गति मोटर बोट भी क्रय किए गए। विभाग के इतिहास में 'तालाबों में मछली पालन के विकास' को लेकर राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के एक घटक (Component) -नेशनल मिशन फार प्रोटीन सप्लीमेंटस- (NMPS) के अधीन"एक्वाकल्चर डिवैलपमेंट थ्रू इंटेग्रेटिड एप्रोच" नामक उपयोजना के अन्तर्गत निजि क्षेत्र में 30 लाख रुपये की लागत से 3 कार्प हैचरियां स्थापित की गई हैं। 1.20 करोड़ रुपये की लागत से 20 हेक्टेयर के नर्सरी तालाब, 4 करोड़ की लागत से 80 हेक्टेयर के मछली पालन तालाबों का निर्माण करवाया जा रहा है जिस पर 40 प्रतिशत अनुदान देय है। इसमें से अब तक 16.3559 हेक्टेयर के नर्सरी तालाब व 77.1835 हेक्टेयर के मछली पालन तालाबों का निर्माण कार्य पूर्ण होकर उसमें मछली बीज उत्पादन व मछली पालन का कार्य आरंभ किया जा चुका है। 90.00 लाख रुपये की लागत से दो फीड मिल प्लांट ऊना तथा चंबा जिला में स्थापित किये जा रहे हैं। 92.00 लाख रुपये की लागत से मछली दोहन के बाद (Post Harvest Infrastructure) मछली को संभालने के लिए 2 बर्फ के कारखाने, 2 मोबाईल मछली विक्रय वाहन, डीप फ्रीजर तथा इंसूलेटिड बाक्स इत्यादि, नव पंजीकृत 2 मत्स्य पालक सहकारी सभाओं के माध्यम से जिला ऊना तथा सोलन में स्थापित करवाए जा रहे हैं। इस योजना पर कुल 5 करोड़ रुपये व्यय किये जा रहे हैं। एन.एम.पी.एस के अन्तर्गत इन तीन वर्षों में कुल 21. 70 करोड़ की परियोजनाएं तैयार कर विभाग द्वारा यह राशि भारत सरकार से स्वीकृत करवाकर प्राप्त की गई जो कि विभाग के योजना आकार के अतिरिक्त है।

इस राशि में से 'केज कल्चर' नामक योजना के लिए प्राप्त 13.36 करोड़ रुपये की राशि जोकि विभागीय मत्स्य फार्मों के सुधार हेतु परिवर्तित करवाई गई थी, उससे विभाग के दो मछली बीज फार्म नालागढ़ (सोलन) तथा देवली (ऊना) का आधुनिकीकरण व विस्तारीकरण कर इनमें मछली बीज उत्पादन का कार्य आरंभ भी कर दिया गया है। इसी राशि से जलाशयों में मछली बीज संग्रहण करवाया गया तथा सभी मछुआरों व मत्स्य सहकारी सभाओं को निशुल्क इंसूलेटिड बाक्स 'कोल्ड चेन' योजना के तहत आबंटित किये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त 3.34 करोड़ रुपये एन.एम.पी.एस. योजना के तहत ही वर्ष 2013-14 में

राज्य में मत्स्य आखेट की गतिविधियों में कार्यरत 11,333 माहीगीरों के अतिरिक्त 1200 मत्स्य पालकों को भी निःशुल्क जीवन सुरक्षा निधि के अधीन लाया गया है जिसके अन्तर्गत उनके आश्रितों को मत्स्य आखेट के दौरान मृत्यु होने अथवा पूर्ण अपंगता की दशा में 2.00 लाख तथा आंशिक अपंगता की दशा में 1.00 लाख रुपये प्रदान किये जाने का प्रावधान किया गया है। इसके अतिरिक्त बीमारी की स्थिति में इलाज हेतु 10,000 रुपये तक सहायता राशि दिए जाने का भी प्रावधान है ।
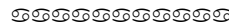
स्वीकृत करवा कर 'केज कल्चर' तकनीक का प्रदर्शन (Demonstration) प्रदेश के गोबिंदसागर तथा पौंग जलाशय में करने हेतु केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता को स्थानान्तरित किये गये हैं। उक्त संस्थान द्वारा इन जलाशयों में पिंजरे स्थापित करने का कार्य आरंभ कर दिया गया है।

सामान्य राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आर.के.वी.वाई) के अन्तर्गत इस तीन वर्ष की अवधि में कुल 7.87 करोड़ रुपये स्वीकृत करवा कर प्रदेश में सामुदायिक तालाबों के निर्माण, जनजातीय क्षेत्रों में ट्राऊट इकाइयां स्थापित करने, जलाशयों में गरीब मछुआरों को गिल जाल आबंटित करने व मछली बीज संग्रहण हेतु तथा मछली बीज फार्मों के आधुनिकीकरण हेतु व्यय किये गये। नैशनल फिशरीज डेवलैपमेंट बोर्ड (NFDB) हैदराबाद से 5.78 करोड़ रुपये की सहायता राशि प्राप्त कर प्रदेश में चार "मोबाईल फिश मार्कीट वाहन" क्रय किये गये, ट्राऊट इकाइयां स्थापित की गई, जलाशय के सभी मछुआरों को प्रशिक्षण दिया गया, विभाग का "विजन डॉक्यूमेंट" तैयार करवाया जा रहा है तथा कांगड़ा में सजावटी मछलियों के बीज उत्पादन हेतु 2 इकाइयों की स्थापना करवाई जा रही है। 1 करोड़ 89 लाख रुपये की लागत से 12 फिश लैंडिंग सैंटर भवनों का आधुनिकीकरण करवाया जा रहा है जबकि 33.81 लाख रुपये की राशि चार अन्य फिश लैंडिंग सैंटर भवनों के आधुनिकीकरण हेतु इस वर्ष स्वीकृत की गई है।

विभाग द्वारा इस अवधि में लगभग 22.00 करोड़ रुपये विभागीय ट्राऊट व कार्प फार्मों के उन्नयन, सुदृढ़ीकरण, पानी जलापूर्ति व्यवस्था को बहाल करने के लिए व्यय कर अब इन फार्मों में से अधिकांश को पूर्ण रूप से बीज उत्पादन हेतु तैयार कर दिया गया है तथा कुछ एक पर कार्य तेजी से हो रहा है। जिला चम्बा के दुर्गम क्षेत्र भरमौर के थल्ला नामक गांव में 4.08 करोड़ रुपये की लागत से एक नये ट्राऊट फार्म की स्थापना की जा रही है तथा चंबा के ही धरवाला नामक स्थान पर 41.00 लाख रुपये से अधिक राशि "एक्वेरियम हाउस-कम-म्यूजियम" केन्द्र स्थापित करने हेतु स्वीकृत की गई है। जलाशयों का मछली उत्पादन बढ़ाने हेतु 489.67 लाख मछली बीज संग्रहण किया गया तथा एक नई 'केज कल्चर योजना' दोनों जलाशयों गोबिंद सागर व पौंग जलाशय में विभागीय स्तर पर आरंभ कर दी गई है जिसमें नील क्रांति योजना के तहत एक नई मछली प्रजाति 'पैंगेशियस सूचि' आयात कर सफलतापूर्वक पाली जा रही है। यह मछली प्रजाति प्रदेश के तालाबों में भी पालनी आरंभ कर दी गई है। केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता व केन्द्रीय मात्स्यिकी प्रौद्योगिक संस्थान, कोचीन से प्रदेश के समस्त जलाशयों में मछली उत्पादन को बढ़ावा देने व इन जलाशयों के उचित दोहन हेतु इनका वैज्ञानिक अध्ययन करवाया गया है इन दोनों संस्थानों से रिपोर्टें प्राप्त हो गई हैं और विभाग उनके अनुसार कार्यवाही करने जा रहा है।

इस अवधि में विभाग द्वारा 818 मत्स्य पालकों को मत्स्य

पालन के विभिन्न पहलुओं पर प्रशिक्षण दिया गया, 100 अधिकारियों/कर्मचारियों तथा मत्स्य पालकों को झारखंड व छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में तथा केन्द्रीय अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, बैरेकपुर-कोलकाता व अन्य राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों में मात्स्यिकी अध्ययन हेतु भेजा गया। इसके अतिरिक्त जलाशय के 1300 मछुआरों को मछली पकड़ने की आधुनिक तकनीक सम्बन्धी प्रशिक्षण प्रदान किया गया। स्वां परियोजना तथा मध्य हिमालयन परियोजना के अधीन निर्मित चौक डैमों व अन्य तालाबों में मछली पालन बारे सदस्यों को प्रशिक्षण प्रदान कर इन जलों में सफलतापूर्वक मछली पालन आरंभ करवाया गया है। सजावटी मछलियों के बीज उत्पादन, पालन व रख रखाव हेतु 11 विभागीय अधिकारियों/ कर्मचारियों को मदुरैई (तमिलनाडु) में प्रशिक्षण दिलवाया गया। विभागीय ट्रेनिंग मैनुअल के अनुसार 292 अधिकारियों/कर्मचारियों को विभागीय प्रशिक्षण केन्द्रों व हिमाचल प्रदेश लोक प्रशासन संस्थान शिमला में प्रशिक्षण दिलवाया गया तथा इन्हें जागरूकता भ्रमण के लिए प्रदेश के भीतर व बाहर भी भेजा गया ।

विभाग में इस अवधि में नव निर्मित जलाशय कोल डैम में मत्स्य विकास कार्य आरंभ करने हेतु विभिन्न श्रेणियों के 12 पद सरकार द्वारा स्वीकृत किये गये है।

इस अवधि में प्रदेश के जनजातिय व दुर्गम क्षेत्रों भरमौर, पांगी, लाहौल एवं स्पीति में भी निजी क्षेत्र में ट्राउट इकाईयों का निर्माण करवा कर ट्राउट पालन आरंभ करवाया गया तथा शिशु झील, दीपक ताल, चन्द्रभागा नदी तथा पांगी व भरमौर क्षेत्र के नदी नालों में मछली बीज संग्रहण कर वहां भी मछली पालन आरंभ करवा दिया गया है।

राज्य में मत्स्य आखेट की गतिविधियों में कार्यरत 11,333 माहीगीरों के अतिरिक्त 1200 मत्स्य पालकों को भी निःशुल्क जीवन सुरक्षा निधि के अधीन लाया गया है जिसके अन्तर्गत उनके आश्रितों को मत्स्य आखेट के दौरान मृत्यु होने अथवा पूर्ण अपंगता की दशा में 2.00 लाख तथा आंशिक अपंगता की दशा में 1.00 लाख रुपये प्रदान किये जाने का प्रावधान किया गया है। इसके अतिरिक्त बीमारी की स्थिति में इलाज हेतु 10,000 रुपये तक सहायता राशि दिए जाने का भी प्रावधान है ।

प्रदेश में ऐंगलिंग को भी बढ़ावा देने हेतु कार्य किया गया है। मत्स्य आखेट प्रेमियों की सुविधा हेतु जिला चम्बा के होली नामक स्थान पर ऐंगलिंग हट का कार्य पूर्ण करवा कर ऐंगलरज को समर्पित कर दिया गया है जबकि बन्जार क्षेत्र के हामनी में एक ऐंगलिंग हट का कार्य लगभग पूर्ण हो चुका है जिसे शीघ्र ही आरम्भ कर दिया जाएगा। पंचायती राज संस्थाओं के अतिरिक्त सरकार द्वारा प्रदेश की 2 ऐंगलिंग एसोसिएशनों के 14 सदस्यों को मत्स्य अधिकारी नामित कर उन्हें एक वर्ष के लिए मत्स्य धन संरक्षण करने हेतु शक्तियां प्रदान की गई हैं ।

कुल मिलाकर पिछले तीन वर्षों के कार्यकाल में प्रदेश में विभाग ने अपार उन्नति की है तथा जो कार्य मछली बीज उत्पादन को लेकर विभागीय फार्मों के आधुनिकीकरण व फिश लैंडिंग सैंटरों के उन्नयन तथा तालाबों के निर्माण व दोहन इत्यादि हेतु किया गया है, आने वाले समय में प्रदेश में मछली बीज एवं मछली उत्पादन में बढ़ौतरी के साथ साथ उपभोक्ताओं को आरोग्य व ताजा मछली प्राप्त होने में यह निश्चित तौर पर बहुत सहायक सिद्ध होगा।

वित्तीय समीक्षात्मक आलेख
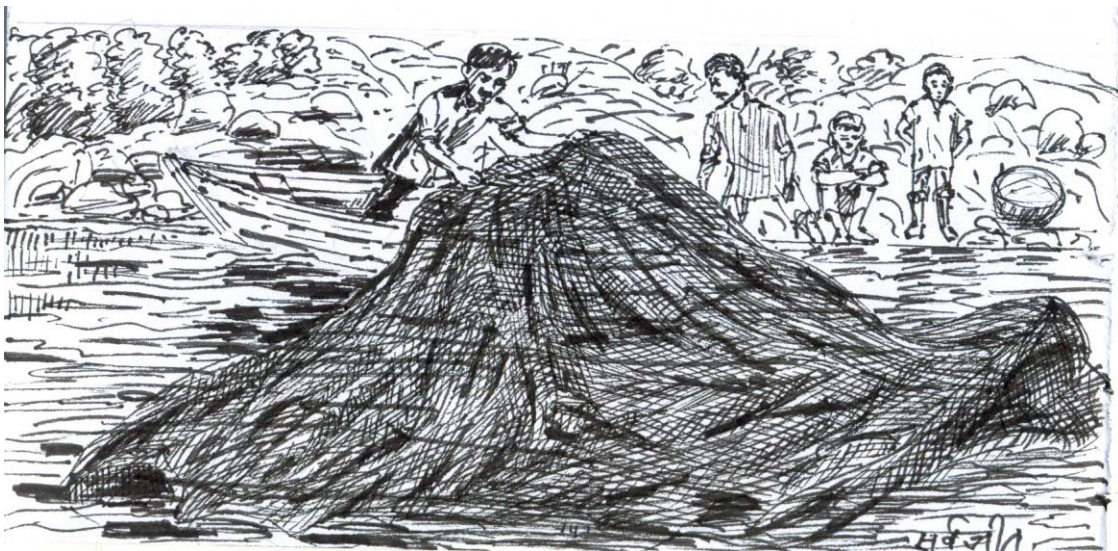
आर्थिक समृद्धि में महिलाओं की दस्तक

● विनोद भारद्वाज

आज दुनिया भर में आर्थिक उन्नति को विकास एवं प्रगति का एक सटीक पैमाना माना जाता है। आर्थिकी में महिलाओं ने पुरुषों के एकाधिकार को तोड़कर अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करवाई है। विगत दो दशकों में महिलाओं के योगदान से आर्थिक परिदृश्य में सकारात्मक बदलाव देखा जा रहा है।

हिमाचल की महिलाओं ने पारम्परिक गृह कार्य तथा कृषि कार्यों से बाहर निकल आज छोटे प्रतिष्ठान तथा उद्यमियता इकाइयां आरम्भ कर एक नई पहल की है। राज्य में 4.12 लाख छोटे वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों में से 49,173 (11.9 प्रतिशत) प्रतिष्ठान महिलाओं द्वारा कार्यान्वित किये जा रहे हैं। यह तथ्य राज्य में आर्थिकी एवं सांख्यिकी विभाग द्वारा करवाए गए छठे आर्थिक सर्वेक्षण में सामने आये हैं। सर्वेक्षण के अनुसार आर्थिक गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी में तीन गुणा वृद्धि दर्ज की गई है। इस सर्वेक्षण का मूल उद्देश्य आर्थिकी के विभिन्न क्षेत्रों विशेषकर असंगठित क्षेत्रों का आंकलन कर भविष्य के लिये आर्थिक नीतियों एवं कार्यक्रम को लागू करना है।

सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल में एक हजार में से 216 ही काम धंधा कर रहे हैं। इसमें वस्तुएं एवं सेवा सृजित करने वालों को भी शामिल किया गया है। हर वर्ष 8.5 प्रतिशत की दर से कामकाज की इकाइयों में वृद्धि हो रही है।

हिमाचल प्रदेश छठी आर्थिक गणना पूर्ण करने वाला देश का पहला राज्य बना है। इस सर्वेक्षण को राज्य में दो चरणों में कार्यान्वित किया गया। प्रथम चरण में फरवरी से जुलाई 2013 तक दस जिलों तथा द्वितीय चरण में किन्नौर, लाहौल-स्पीति तथा चम्बा जिले के दो विकास खण्डों पांगी तथा भरमौर में जुलाई 2013 में किया गया। इस कार्य में 12322 व्यक्तियों को लगाया गया। पहली बार सर्वेक्षण कार्य में शिक्षकों की सेवाएं नहीं ली गई। इस बार आंगनबाड़ी कार्यकताओं, पंचायत सचिवों, बाल विकास अधिकारियों व बेरोजगार युवाओं को कार्य पर लगाया गया।

सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल में एक हजार में से 216 ही काम धंधा कर रहे हैं। इसमें वस्तुएं एवं सेवा सृजित करने वालों को भी शामिल किया गया है। हर वर्ष 8.5 प्रतिशत की दर से कामकाज की इकाइयों में वृद्धि हो रही है।

आर्थिक गणना से स्पष्ट हुआ है कि 72.73 प्रतिशत महिलाओं के कारोबार गैर कृषि क्षेत्र से हैं तथा सबसे अधिक शिक्षा क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। इसके बाद उत्पादन क्षेत्र तथा अन्य इकाइयां आती हैं। इन इकाइयों के संचालन में महिलायें रोजगार भी प्रदान कर रही हैं। महिलाओं द्वारा संचालित 49,173 इकाइयां हैं। 3,944 इकाइयां ऐसी हैं जिनमें किसी-न-किसी को रोजगार प्रदान किया गया है। 3,944 इकाइयों में से 73 कृषि आधारित तथा 3,871 गैर कृषि गतिविधियों से जुड़ी हैं। 12,172 हथकरघा तथा हस्तशिल्प इकाइयों में से 5,018 इकाइयां महिलाओं द्वारा चलाई जा रही हैं।

सर्वेक्षण के अनुसार 4.12 लाख छोटे उद्यमों में से 3.34 लाख ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 77,842 शहरी क्षेत्रों में स्थित हैं। इनमें से 57.6 प्रतिशत इकाइयां घरों के बाहर पक्के ढांचे में तथा 42.35 घर के भीतर चल रही हैं। पिछले आर्थिक सर्वेक्षण की तुलना में इस उद्यम में 2005 के मुकाबले 2013 में 8.5 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई तथा इनमें 9,77,188 लोग कार्यरत हैं। कुल कामगारों में महिलाओं की संख्या 24.27 प्रतिशत यानि 7,40,047 पुरुष तथा 2,37,141 महिला कामगार है। ग्रामीण क्षेत्रों में 76.17, शहरों में 23.83 प्रतिशत कामगार हैं। 64.14 प्रतिशत कामगारों को इन उद्यमों में काम मिला है। 35.86 प्रतिशत लोग अपना काम खुद करते हैं।

आर्थिक गणना के अनुसार कांगड़ा में सबसे अधिक तथा शिमला जिले में सबसे कम प्रतिष्ठान हैं। शहरी क्षेत्रों में शिमला जिले में सबसे अधिक प्रतिष्ठान हैं। सोलन जिले में सबसे अधिक कामगार कार्य पर रखे गये हैं। इसके बाद सिरमौर का स्थान आता है। इसकी वजह दोनों जिलों में उद्योगों की संख्या अधिक होना है। खनन क्षेत्र में सोलन प्रथम स्थान पर है जबकि ऊना द्वितीय स्थान पर रहा है। रिअल एस्टेट में शिमला, तकनीकी तथा वैज्ञानिक सेवाओं के मामले में कांगड़ा प्रथम स्थान पर है।

आर्थिक सलाहकार श्री प्रदीप चौहान ने बताया कि आर्थिक गणना के अनुसार राज्य में आर्थिक सम्पन्नता बढ़ी है तथा महिलाओं की भागीदारी में तीन गुणा इजाफा हुआ है।

देश में प्रथम आर्थिक गणना वर्ष 1977 में हुई थी। द्वितीय वर्ष 1980, तृतीय वर्ष 1990, चौथी वर्ष 1998, पांचवीं 2005 तथा छठी वर्ष 2012-13 में की गई।

(लेखक गिरिराज साप्ताहिक के संपादक हैं)

आलेख

भारतीय संस्कृति में असुर-पूजा एवं हिमाचल

● अमर देव आंगिरस

प्राचीन साहित्य के अनुसार मानव की सुर तथा असुर प्रजातियां हिमालयी क्षेत्रों में निवास करती थीं। इसके अंचल में यक्ष, गंधर्व, विद्याधर, अप्सराएं आदि भी निवास करती थीं, जिन्हें देवयोनियों में परिगणित किया जाता था। इनके निवास को 'देवलोक' अथवा 'स्वर्गलोक' कहा गया। वैदिक काल में देव, सुर तथा असुर समानार्थी थे। इसलिए ऋग्वेद में वर्णित 33 प्राकृतिक शक्तियों- इंद्र, अग्नि, वरुण, मरुत, विष्णु, सूर्य, सविता, मित्र, उषस्, सोम, रुद्र, यम, हिरण्यगर्भ आदि को देव अथवा असुर के नाम से संबोधित किया गया मिलता है। वृत्रासुर, जिसका वध इंद्र ने किया था, देव कहा गया। कुछ काल बाद जिसे उत्तर-वैदिक काल कहा जाता है, सुर और असुर में भेद मिलता है। 'सुर' देवताओं को और 'असुर' देवताओं के विरुद्ध आचरण करने वाले और इंद्र के यज्ञों का विरोध करने वालों को कहा जाने लगा।

पुराणों में सुर-असुरों के युद्धों का पर्याप्त वर्णन मिलता है। रामायण-महाभारत काल में असुर जाति 'राक्षस' जाति के रूप में परिगणित मिलती है। वैदिक साहित्य में ब्रह्मा, विष्णु, महेश (रुद्र) द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति, पालन एवं विनाश की प्रवृत्तियों के रूप में रूपकों द्वारा समझाया गया है। प्रजापति ब्रह्मा के मुख से सुर तथा जंघा से क्षत्रिय एवं पांवों से निम्न वर्ग की उत्पत्ति रूपक द्वारा समझाई गई है। वास्तव में शरीर के अंगों से मानव उत्पत्ति संभव नहीं है, किंतु वर्णों के सामर्थ्य एवं महत्त्व के कारण अतिरंजना से ईश्वर द्वारा स्वेच्छाचारिता से मानव-सृष्टि को दर्शाया गया है।

असुरों की उत्पत्ति भी भागवतपुराण के अनुसार एक रूपक द्वारा ही समझाई गई है। ब्रह्मा के तमोमय शरीर से राक्षसों एवं यक्षों की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा ने अपने प्रतिबिंब से 'किंपुरुषों' (किन्नरों) की उत्पत्ति की। पौराणिक मान्यता के अनुसार सतयुग के अंत में जब ब्रह्मा निद्रा में पड़े हुए थे तो उनकी मलीन सांसों से 'राक्षसों' की उत्पत्ति हुई। उत्पन्न होते ही वे युवा हो गए और भूख प्यास से व्याकुल होकर ब्रह्मा का रक्त पीने लगे। ब्रह्मा ने विष्णु से भयभीत होकर कहा- 'रक्षामः'। विष्णु ने सुनते ही राक्षसों को मारकर धरती पर धकेल दिया जहां पर उन्हें मांस के लिए जीत-जंतु मिल सकते थे।

वास्तव में ये रूपक-कथाएं तामसिक एवं सात्त्विक वृत्तियों को व्यक्त करने के लिए रची गईं जो कालांतर में जातिगत धारणाओं में परिवर्तित मिलती हैं।

दुष्प्रवृत्तियों के कारण दैत्य, दानव, असुर, राक्षस एक ही श्रेणी में रखे गए- यह ऐतिहासिक विश्लेषण से पता चलता है। प्रारंभिक पुराण 'मत्स्य' के अनुसार कश्यप ऋषि ने दक्ष प्रजापति की 10 कन्याओं- अदिति, दिति, दनु, अरिष्टा, सुरस, सुरभि, विनता, तमरु कद्रु और विश्वमुनि से विवाह किया था। वे ही संपूर्ण सृष्टि की माताएं हुईं। अदिति ने बारह आदित्यों को जन्म दिया। ऋग्वेद में अदिति के आठ पुत्र बताए गए हैं तथा अथर्ववेद में उसे 'अष्टयोनि' कहा है। अदिति से देवता, दिति से दैत्य तथा दनु से दानव उत्पन्न हुए। इस प्रकार कश्यप ऋषि की संतानें ही देवता, असुर, मानव, नाग आदि मानव जातियों के रूप में विकसित हुईं।

सृष्टि विषयक यह वृत्तांत भी हिंदू धर्म मान्यताओं का रूपक द्वारा समझाने का साहित्यिक रूपांतरण है। वास्तव में विभिन्न पुराण ईसा की छठी शताब्दी तक लिखे गए जिनमें लोकरंजकता तथा भक्तिभावना का समावेश अतिशयोक्तियों द्वारा किया जाने लगा। साहित्य के पुनर्लेखन एवं व्याख्याओं में कालांतर के सामयिक परिवेश एवं मूल्यों का प्रभाव स्वाभाविक रूप से दृष्टिगोचर होता है किंतु वास्तविक तथ्य बीज रूप में वर्तमान रहते हैं।

प्राचीन साहित्य में सुरों और असुरों के युद्धों का विस्तृत वर्णन मिलता है। दानवों, दैत्यों, असुरों के यज्ञ-विहीन निरंकुश जीवन और उनकी सामाजिक व्यवस्था के कारण उनका देवताओं से सदैव संघर्ष रहा। वे स्वर्ग के एक छत्र राजा इंद्र के स्वर्गलोक को हथियाने का प्रयास करते रहे। अवतार कथाओं- मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण आदि में सात्त्विक एवं तामसिक वृत्तियों के संघर्ष का पता चलता है। ये सुरत्व और असुरत्व को ही अभिव्यक्त करते हैं।

रामायण, महाभारत और पुराणों में राक्षसों के स्वरूप का स्पष्ट वर्णन मिलता है जो परवर्ती लोक साहित्य एवं जनश्रुतियों में सुरक्षित है। असुरों के मानव भक्षी होने के प्रसंग नहीं मिलते जबकि

राक्षसों के मानवभक्षी होने की पर्याप्त कथाएं मिलती हैं। राक्षस मानव भक्षी होने के साथ भयानक आकृति वाले होते हैं। इनका रंग भद्दा तथा कोयले की तरह काला होता है। इनका कद मानव की अपेक्षा असामान्य होता है। ये स्थूलकाय नीचे से ऊपर तक लंबे तथा उतने ही नीचे को झुके होते हैं। आंखे लाल, पंजे पशुओं की तरह तीखे और लंबे होते हैं। नरभक्षी होने के साथ इन्हें तीव्र भूख होती है। राक्षसों की घ्राण शक्ति तीव्र होती है। ये दूर से ही पशुओं, मानवों एवं मांस की गंध सूंघ लेते हैं। ये हड्डियों को चबाते, भयानक गर्जना करते और हथेलियों से रक्त पीते चित्रित मिलते हैं। ये अपना रूप बदल सकते हैं तथा मायावी होते हैं। ये आकाश में उड़ सकते हैं तथा समुद्र में तैर सकते हैं।

लोक साहित्य में बहुतायत में राक्षसों की कथाएं मिलती हैं। रामायण काल के राक्षसों में रावण, कुंभकर्ण, कबंध, ताड़का, शूर्पनखा, मारीच, खरदूषण, अहिरावण आदि हैं और महाभारत के राक्षसों में हिडिंब, घटोत्कच, बर्बरीक, कंस, बकासुर, किर्मीर, जटासुर, अलंबुश प्रमुख राक्षस हैं। पांडवों द्वारा अनेक राक्षसों का वध किया गया था। इसी प्रकार कृष्ण और शिवजी द्वारा अनेक असुरों राक्षसों के वध के आख्यान प्राचीन साहित्य में पर्याप्त संख्या में मिलते हैं। महामाया दुर्गा ने महिषासुर का संहार किया था। हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु, अंधक और बाणासुर महत्त्वपूर्ण असुर हैं जिनके आख्यान प्रख्यात हैं। दैत्यों में दुदुंभी, मूक, मधुकैटभ, शुभ-निशुंभ आदि का वध भी देवी-देवताओं द्वारा किया गया था। इस प्रकार पुराणों में तथा बाद के साहित्य में असुर, राक्षस, दानव, दैत्य समानार्थी शब्द हो गए।

वीरपुरुष अपने पराक्रम के कारण जनसाधारण के पूज्य रहे हैं, बेशक वे किसी जाति, वर्ग के हों। कुछ सद्गुणों के कारण विष्णु-अवतारों से लड़ने वाले एवं पराजित योद्धाओं को उनके वंशजों ने देवता का स्वरूप प्रदान किया।

हिमालयी क्षेत्रों, विशेषकर हिमाचल प्रदेश में असुर राजा बलि, बाणासुर, सहस्रबाहु, हिडिंबा, बर्बरीक आदि के पराक्रम के कारण ही उन्हें 'देवता' का पद दिया गया। ब्राह्मण रावण को यद्यपि 'राक्षस' कहा गया, तथापि उसके पराक्रम एवं विद्वता के कारण दक्षिण भारत में पूज्यभाव से स्थान दिया गया। यही नहीं, वर्णाश्रम की कठोरता के बावजूद भी अनेक निम्न वर्ग के पराक्रमी एवं संत स्वभाव समाजसेवी पुरुषों को देवता के रूप में स्मरण किया जाने लगा। महाभारतकालीन योद्धा चाणूर जिसे 'सिद्ध चानो' के रूप में हिमाचल में पूजा जाता है- ऐसा ही कंस राजा के अखाड़े का पराक्रमी पहलवान था जिसने कृष्ण से कई दिन तक युद्ध किया था तथा लोक विश्वास के अनुसार उसे छल से मारा गया था। निम्न वर्ग के अनेक लोक देवता जनसाधारण द्वारा आज इसी प्रकार पूजनीय बने हुए हैं।

हिमालयी क्षेत्रों, विशेषकर हिमाचल प्रदेश में असुर राजा बलि, बाणासुर, सहस्रबाहु, हिडिंबा, बर्बरीक आदि के पराक्रम के कारण ही उन्हें 'देवता' का पद दिया गया। ब्राह्मण रावण को यद्यपि 'राक्षस' कहा गया, तथापि उसके पराक्रम एवं विद्वता के कारण दक्षिण भारत में पूज्यभाव से स्थान दिया गया। यही नहीं, वर्णाश्रम की कठोरता के बावजूद भी अनेक निम्न वर्ग के पराक्रमी एवं संत स्वभाव समाजसेवी पुरुषों को देवता के रूप में स्मरण किया जाने लगा। महाभारतकालीन योद्धा चाणूर जिसे 'सिद्धचानो' के रूप में हिमाचल में पूजा जाता है

हिमाचल में असुर पूजा का सर्वविख्यात प्रसंग सतयुग के राजा बलि का है जिसे महादानी के रूप में स्मरण किया जाता है। वह तीनों लोकों का राजा था। पौराणिक प्रसंग के अनुसार विरोचन का पुत्र बलि इंद्रादि देवताओं को हराकर त्रिभुवन का राज भोग रहा था। देवता उससे दुखी थे। देवताओं के अनुरोध पर विष्णु ने वामन अवतार के रूप में बलि को स्वर्ग से निष्कासित करने का निर्णय किया। राजा बलि को अपनी संपन्नता का अहंकार था। एक यज्ञ में उसने वामन को मुंहमांगा दान मांगने को कहा। वामन ने केवल अपनी यज्ञशाला के लिए केवल तीन पग धरती मांगी। बलि राजी हो गए। वामन ने एक पग से संपूर्ण धरती नाप ली, दूसरे पग से स्वर्ग और तीसरे पग से बलि ने अपना शरीर सम्मुख किया। फिर बलि का त्रिभुवन का राज छीनकर इंद्र को समर्पित कर दिया और बलि से कहा, "तुमने भक्ति एवं दानभाव से मेरे हाथ में भूमि का संकल्प दिया है, इसलिए मैं तुम्हें पाताल लोक का राज्य प्रदान करता हूं। तुम संसार में अमर देवता के रूप में याद किए जाएंगे।"

हिमाचल में बलि का उत्सव कार्तिक अमावस्या को निरमंड में लोकनाट्य बरलाज के रूप में आयोजित होता है। शिमला, सोलन, सुन्नी आदि क्षेत्रों में भी बरलाज नाट्य से पूर्व राजा बलि का स्तुतिगान होता है। लोक विश्वास है कि बलि ने हिमालय के इसी स्थान पर महायज्ञ किया था, जिसे 'भुंडा यज्ञ' के नाम से भी जाना जाता है। असुर देवता के कारण यहां यज्ञ में पशुबलि के साथ नरबलि के प्रसंग भी मिलते हैं। शिमला के ठियोग में बलग के स्थान पर राजा बलि की प्रस्तर मूर्ति एवं हवनकुंड है जहां बलि पूजा होती है। कहते हैं बलि के नाम पर ही यहां का नाम 'बलग' पड़ा है।

इसी प्रकार दानव राजा 'सहस्रबाहु' जिसे अर्की क्षेत्र में 'दानोदेव' के नाम से जाना जाता है- परशुराम-सहस्रबाहु' के पौराणिक आख्यान की स्मृति है। प्रतिष्ठानपुर के राजा कार्तवीय

सुरों, असुरों एवं राक्षसों की पूजा-परंपरा पितृदेवों अथवा जाति विशेष के पूर्वजों के रूप में प्रचलित रही है। किंतु इसका विशेष कारण उनकी वीरता, पराक्रम, दानशीलता आदि गुण रहे हैं।
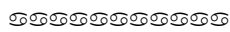
अर्जुन को तप एवं भक्ति के कारण शिव से सहस्रबाहु होने का वरदान मिला था। अपनी निरंकुशता एवं अहंकार के कारण इसने ऋषि यमदग्नि का अपमान किया था। इसी कुकृत्य के कारण इस हैहेयवंशी क्षत्रिय राजा को 'दानव' मान लिया गया। सहस्रबाहु ने अपनी शक्ति के अभिमान में यमदग्नि ऋषि की गौ कामधेनु को आश्रम में छीनने का प्रयास किया था तथा ऋषि के साथ दुर्व्यवहार किया था, बाद में उसकी हत्या की थी। परिणामस्वरूप यमदग्नि के पुत्र परशुराम ने क्षात्रधर्म अपनाते हुए सहस्रबाहु का वध कर दिया था तथा क्षत्रियों से इक्कीस बार युद्ध किए तथा उन्हें परास्त किया था।

वास्तव में उस युग में यह अधिकारों के लिए ब्राह्मण एवं क्षत्रियों का संघर्ष था। इस प्रसंग के आज भी तत्तापानी-सुन्नी के गर्म जल के पवित्र स्रोत तथा देवस्थल उस युग का स्मरण करवाते हैं। परशुराम के समान ही सहस्रबाहु को भी समान रूप से पूजते हैं। परशुराम की माता रेणुका के नाम पर सिरमौर का रेणुका मेला तथा देवस्थल आज भी श्रद्धालुओं की आस्था का केंद्र बना हुआ है। अर्की के दानोघाट नामक स्थान में सदियों से सहस्रबाहु यानी 'दानो देव' का देवस्थल वर्तमान है। इसी देवता के नाम पर इस स्थान का नाम दानोघाट पड़ा है तथा यहां प्रतिवर्ष ज्येष्ठ मास की पंद्रहवीं तिथि को 'दानोघाट मेला' परंपरा से मनाया जाता है।

किन्नौर क्षेत्र में असुर बाणासुर तथा उसकी संतानों को आदिकाल से देवताओं के रूप में पूजा जाता है। यहां की मान्यताओं के अनुसार बाणासुर ने हिरमा (हिडिंबा) को मुलटधार पर बलपूर्वक रोक लिया और 'राक्षस विवाह' करके एक गुफा में रहने लगा। यह गुफा 'गोरबोरिंग-अग्ग' कहलाती है। यहां इनके अठारह पुत्र-पुत्रियां हुए जो समस्त क्षेत्र के देवी-देवता हैं। इनमें कोठी गांव की चंडिका प्रमुख है। भावा मेशुर, सुंगरा भेशुर, चगांव मेशुर, उषा, चित्ररेखा, बड़ा कंबा दुर्गा तथा गूंगे-बहरे आदि पूज्य देवी देवता हैं। एक लोककथा के अनुसार किन्नर प्रदेश के एक बड़े राज्य की राजधानी कामरू थी जहां का मंत्री बाणासुर था।

एक बार शिव कैलाश पर तांडव नृत्य कर रहे थे। उन्होंने विशाल किन्नर कैलाश को एक ठोकर मारी। पृथ्वी फट गई और कैलाशलुप्त हो गया। परंतु कुछ समय के पश्चात वह मानसरोवर के उत्तर में प्रकट हुआ। भूचाल आने पर वहां एक नदी बन गई जिसका नाम 'शोणित' (सतलुज) पड़ा। आगे-आगे बाणासुर चला और पीछे शोणित। सराहन के पास वह रुका, और नदी आगे निकल गई। बाणासुर ने उस स्थान पर अपनी राजधानी बनाई जिसका नाम रखा शोणितपुर।

इसका अभिप्रायः है कि बाणासुर यहां का वीर पुरुष था जिसकी राजधानी सराहन थी। बाणासुर के बारे में यहां अनेक चमत्कार-कथाएं प्रचलित हैं।

राक्षसी हिडिंबा हिमाचल में लोकदेवी के रूप में पूज्य हैं। मनाली में हिडिंबा का आदि मंदिर हैं। विश्वास किया जाता है कि कुल्लू के प्रथम शासक विहंगमणिपाल को कुल्लू का शासन हिडिंबा की कृपा से ही मिला था। यहां का राज परिवार हिडिंबा को दादी मानता है। भीमसेन-हिडिंबा ने गुप्तवास यहां के जंगलों में ही व्यतीत किया था। हिडिंबा को अनेक मंदिरों में 'रक्षिण' देवी के रूप में पूजा जाता है।

इसी प्रकार हिडिंब पौत्र बर्बरीक के देवस्थल तथा उत्सव प्रदेश तथा अन्य प्रदेशों में भी आस्था के केंद्र बने हुए हैं। प्रसंग के अनुसार युद्ध से पहले कृष्ण ने कूटनीति से बर्बरीक का शीश दान लेकर उसे एक ऊंची पहाड़ी पर दंड से बांध दिया था जहां से वह महाभारत का समस्त युद्ध देखा सकता था। उसने ऐसी इच्छा व्यक्त भी की थी। कृष्ण ने उसे जीवित रहकर युद्ध की हार-जीत देखने का वरदान दिया था।

इस स्मृति को आज भी सोलन के अर्की-बाड़ीधार पर आषाढ़-संक्रांति को आयोजित होने वाला 'बाड़ीमेला' जीवंत रखे हुए है। इस दिन पांचों पांडवों की सजी पालकियां बाड़ीधार पर बर्बरीक से मिलने विभिन्न गांवों से लाई जाती है।

बर्बरीक की स्मृति मंडी का कमरूनाग और ननखड़ी के शिखर पर स्थापित देवस्थल (लौहदंड) भी माना जाता है। बर्बरीक को कृष्ण ने अपना रूप प्रदान किया था, अतः वह 'श्याम खाटू' एवं 'शीशदानी' के रूप में राजस्थान, हरियाणा तथा उत्तरी भारत के अनेक स्थानों पर पूजा जाता है।

कहा जा सकता है कि सुरों, असुरों एवं राक्षसों की पूजा-परंपरा पितृदेवों अथवा जाति विशेष के पूर्वजों के रूप में प्रचलित रही है। किंतु इसका विशेष कारण उनकी वीरता, पराक्रम, दानशीलता आदि गुण रहे हैं।

वी.पी.ओ. दाड़लाघाट, जिला सोलन-171 102,
मो. 94181 65573

आलेख

देव परंपरा में योगदर्शन

• डॉ. मनोज शर्मा

रहस्य, विज्ञान व पद्धति इतने सूक्ष्म विषय है कि इनका भेद समझना अत्यन्त कठिन है। इसकी सरलता के लिए इसे विशेष भागों में विभाजित कर जन कल्याण के लिए बांट दिया गया और मात्र इसे क्रियावान ही रखा अर्थात् कार्य विशेष को ही करने का उत्तरदायित्व जन समुदाय को सौंपा, जिससे वह क्रिया विशेष भावनात्मक बन कर उस सूक्ष्म परमात्मा का स्थूल भेद ही जान कर लोग विभिन्न प्रपंच से संलिप्त न रहे, कोई शक्ति विशेष का पूजन सात्विक रूप से दूध की धार, राजसी रूप से मदिरा, मांस और तामसी भाव में पशु बलि मनुष्य बली तक भी देते हैं। बिना विचारे और ज्ञान विहीन होकर हम उस कार्य हो ही परम्परा मान कर चलते रहते हैं। सूक्ष्म, विज्ञान रहस्य, पद्धति भिन्न होती है। ऐसे ही कुछ रूढीवादिता पर चले हैं तो कुछ उसका अत्यधिक विकास स्थूल भेद में लगे रहते हैं। वास्तविक रूप का विश्लेषण छोड़ कर आसुरी संपदा में लगे रहते हैं।

देव सम्पदा या दैव संस्कृति को शाश्वत बनाये रखने के लिए बाह्य आडम्बरों की आवश्यकता नहीं होती। मूलभूत रूप को छोड़ कर शरीर को सजाकर परमतत्व की प्राप्ति नहीं होती। दैव शक्ति इच्छित (सकाम) भाव की पूर्ति करती है। परन्तु भगवद् प्राप्ति के लिए कोई अन्य सीधा ही मार्ग नहीं है, उस धाम के लिए अन्य वस्तुओं की आवश्यकता नहीं है। मात्र ज्ञान मार्ग में रहते हुए, पूर्वजों से की जाने वाली परम्पराओं को मार्गदर्शक मानते हुए निष्काम भाव से प्रभु द्वारा रचित सृष्टि की सत्यता मानते हुए उन इच्छित भोगों का भोग निष्काम भाव से करते हुए अपना जीवनोद्धार करना चाहिए, चाहे वो नित्य कर्म हो या नैमेतिक कर्म अथवा काम्य कर्म, हर मनुष्य शास्त्र अध्ययन से पूर्ण नहीं होता, इसलिए भगवद् आज्ञा मान कर कुछ विद्वानों द्वारा, समाज पर्वतकों द्वारा भगवद् सृष्टि में रहस्य विशेष को देखकर परंपरागत पद्धति को ठीक उसी तरह से माना जो उस स्थान विशेष की प्राकट्यता के कारण थे परंतु समयांतर होने से उस मूल स्वरूप के भंग होने के कारण अथवा प्राचीन परिपाटी (परंपरा) में परिवर्तन होने से वह पद्धति धीरे-धीरे लुप्त होने की स्थिति पर पहुंच जाती है जिससे स्थान भंग होने के कारण स्थान विशेष की शक्ति द्वारा उपद्रव प्रारंभ हो जाता है, उससे न इच्छित भोगों का ही सुख प्राप्त हो पाता है और जीवनोद्धार तो भिन्न मार्ग है। इसलिए शक्ति विशेष से सम्पन्न स्थान ही दैव स्थान कहे जाते हैं और वहां के नियम परम्परा एवं दैविक आशीर्वाद ही दैव संस्कृति मानी जाती है। मनुष्य कल्याण में कार्य विशेष को करते हुए सद्गति की प्राप्ति ही योग मार्ग कहा जाता है। देह (शरीर), के द्वारा कार्य संपन्न किये जाते हैं यदि उसमें देही स्थित हो अन्यथा कोई भी कार्य करना असम्भव है। कुमार्गो द्वारा इस चित्त पर विभिन्न संस्कार पड़ने से भ्रांतिवश आत्म कल्याण से विमुख होकर नरकों में प्रवेश करना पड़ता है। सन्मार्ग का अन्य कोई मार्ग विशेष नहीं है। यही प्राचीन परंपराएं चाहे दैव परंपराएं हो या पितृपूजन का कार्य देह एवं देही, शरीर एवं शरीरी का ही यह खेल है जो भूरेश्वर महादेव की परंपरा सिद्ध कर रही है। निर्जीव देह तो लिंग रूप में विजरामान है और चेतन रूप देही शरीर माध्यम से अभी भी उन्हीं पंच तत्त्वों (पृथ्वी, जल, वायु, तेज, आकाश), की पांच दूध की धारों को स्थूल रूप में जन समुदाय के लिए सिद्ध कर रहे हैं। देही (आत्मा) देह में स्थित पंचकोश के माधयम से स्थित है।

देह में स्थित पंचकोश

अन्मय कोश

यह पांच भौतिक स्थूल शरीर का पहला भाग है। अन्मय कोश त्वचा से अस्थिपर्यन्त पृथ्वी तत्व से संबंधित है। आहार विहार की शुचिता, आसन सिद्धि और प्राणायाम करने से अन्मय कोश की शुद्धि होती है।

प्राणमय कोश

शरीर का दूसरा भाग प्राणमय कोश है। शरीर और मन के बीच में प्राण माध्यम है। ज्ञान कर्म के सम्पादन का समस्त कार्य प्राण में बना प्राणमय कोश ही करता है। श्वासोच्वास के रूप में भीतर-बाहर आने-जाने वाले प्राण स्थान तथा कार्य के भेद से दस प्रकार का माना जाता है, जैसे-प्राण, अपान, ब्यान, उदान, समान, इनमें प्राण मुख्य है। धनंजय, नाग कूर्म, कृकंल और देवदत गौण प्राण या उपप्राण है, प्राण मात्र का मुख्य कार्य है। प्राणायाम के नियमित अभ्यास से प्राणमय कोश की कार्य शक्ति बढ़ती है।

ज्ञान मार्ग में रहते हुए, पूर्वजों से की जाने वाली परम्पराओं को मार्गदर्शक मानते हुए निष्काम भाव से प्रभु द्वारा रचित सृष्टि की सत्यता मानते हुए उन इच्छित भोगों का भोग निष्काम भाव से करते हुए अपना जीवनोद्धार करना चाहिए, चाहे वो नित्य कर्म हो या नैमेतिक कर्म अथवा काम्य कर्म, हर मनुष्य शास्त्र अध्ययन से पूर्ण नहीं होता, इसलिए भगवद् आज्ञा मान कर कुछ विद्वानों द्वारा, समाज प्रर्वतकों द्वारा भगवद् सृष्टि में रहस्य विशेष को देखकर परंपरागत पद्धति को ठीक उसी तरह से माना जो उस स्थान विशेष की प्राकट्यता के कारण थे

मनोमय कोश

सूक्ष्म शरीर के पहले क्रिया प्रधान भाग को मनोमय कोश कहते हैं। मनोमय कोश के अंतर्गत मन, बुद्धि, अहंकार और चित है जिन्हें अन्तः करण चतुष्टय कहते हैं। पांच कर्मेदियां है जिनका संबंध बाह्य जगत के व्यवहार से अधिक रहता है।

विज्ञानमय कोश

सूक्ष्म शरीर का दूसरा भाग जो ज्ञान प्रधान है। वह विज्ञानकोश कहलाता है। इसके मुख्य तत्व ज्ञानायुक्त बुद्धि एवं ज्ञानेन्द्रियां है जो मनुष्य ज्ञानपूर्वक विज्ञानमय कोश को ठीक से जान-समझकर उचित रूप से आचार-विचार करता है और असत्य, भ्रम, मोह, आ सकती आदि में सर्वथा अलग रहकर निरन्तर ध्यान एक समाधि का अभ्यास करता है उसे ऋतम्भरा प्रज्ञा उपलब्ध हो जाती है।

आनंदमय कोश

इस कोश को हरिण्मय कोश, हृदय गुहा, हृदयाकाश कारण-शरीर, लिंग शरीर आदि नामों से भी पुकारा जाता है। यह हमारे हृदय प्रवेश में स्थित रहता है। हमारे आंतरिक जगत से इसका संबंध अधिक रहता है। बाह्य जगत से बहुत कम । मानव जीवन मानव के स्थूल शरीर का अस्तित्व और संसार के समस्त व्यवहार इसी कोश पर आश्रित है। निर्वीज समाधि की प्राप्ति होने पर साधक आनंदमय कोश में जीवनयुक्त होकर सदा आनंद करता है।

यही इस देह, देही का संबंध है जिसे हम प्रत्यक्ष भूरेश्वर महादेव की इहलौकिक खेल (परंपराओं) में देख सकते हैं। साधारण विवेचन में देह स्थित देही प्रारब्ध चित्त संस्कारों पर आधारित होती है।

देव संस्कृति का वर्णन किया गया है, जो त्रिविध है। आधि भौतिक, आधि दैविक एवं आध्यात्मिक होने से इसे उसी प्रकार से करना पड़ता है जैसे पहले से लेकर चली आई है उसमें एक ऐसा गूढ़ विज्ञान छुपा होता है जो शास्त्र पर आधारित होता है। दैव संस्कृति में यदि योगदर्शन की बात करें तो दैव संस्कृति का अर्थ दैव शब्द देवता का द्योतक है। हिन्दू संस्कृति जो हमारी वैदिक संस्कृति मानी जाती है इसमें कुछ भ्रांतियां ऐसी हैं जिनका शोधपरक होना आवश्यक है। मूलतः यदि देव शब्द को समझा जाए तो परमात्मावाचक माना गया है।

"यो देवानां नामधा एव" (ऋग्वेद 10/82/2)

इस मंत्र में प्रथम एक देवतावाद, पश्चात् बहुदेवतावाद कल्पना का स्पष्ट उल्लेख है।

"यत्र देवाः समगच्छन्त विद्ये" (ऋग्वेद 10/82/6)

समस्त देव एक देव के संगत अन्तर्गत हैं। इसके अतिरिक्त एक और बात विचार करने की है। कारण से कार्य का विकास सर्वसम्मत है, कार्य से कारण का विकास कहने की भूल कोई विवेकी नहीं कर सकता। संहिता ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, पुराण स्मृति आदि प्राचीन समस्त शास्त्र एक मत से जैसे एक ब्रह्म से सृष्टि रूप में विविध पदार्थों का विकास व मानते हैं, ठीक उसी तरह एक देव से अनेक देवताओं का विकास तो बुद्धिग्राह्य है, पर अनेक देवताओं से एक देवता का विकास विद्वन्य मान्य नही है। बृहद्देवता रूप से है। दैव परम्पराओं का एक शाश्वत एवं सैद्धांतिक रूप के प्रथम अध्याय तथा द्वितीय अध्याय के 25 वर्गों में विस्तार है। यास्क के निरूक्त में सातवें अध्याय के आरम्भ के तीन पाद भी विशेष द्रष्टव्य हैं। लक्षण एवं निर्वचन के आधार पर देव शब्द के अर्थ पर प्रत्यक्तत्व प्रदीपिकाय् में चित्सुखाचार्य का वचन है

"अपरोक्षव्यवहृतेर्योग्यस्याधीपदस्य न
सम्भवे स्वप्रकाश लक्षणासम्भवः कुतः"

मोदका अर्थ क्षणभंगुर विषायानंद नहीं अपितु नित्य निरतिशयानंद है। अतः देव शब्द का अर्थ सत् (त्रिकालाबाध्य) चित् (स्वप्रकाश) एवं आनंद स्वरूप (नित्यनिरतिशयानंद) ब्रह्मतत्त्व हुआ है, जो एक है। 'देव' शब्द का अर्थ होता है :-

"मायावशात् दिव्यति क्रिड़ति विविध सृष्टि रचना लक्षणाम् क्रिड़ां कुरूते इति देवः"

अर्थात् मायाशबल ब्रह्म तथा सच्चिदानंद ब्रह्म ईश्वर है वह ईश्वर एक है अनेक नहीं। अतः 'देव' शब्द के यौगिकार्थ के अनुसार भी एक देवतावाद ही प्रमाणित होता है। वेदों द्वारा स्तुत्य अग्नि आदि देव उसकी विभूति या विभिन्न विचित्र शक्तियों के प्रतीक मात्र हैं। पूर्व लिखित लघुशोध ग्रंथ सिरमौरी देव संस्कृति में योगदर्शन नामक पुस्तक में इसी ईश्वरीय मायाशबल से यही

यौगिकार्थ के अनुसार एक ही है जिसे इसी उपर्युक्त प्रसंग जिसमें स्वयंभूलिंग एवं शिला जो सृष्टि के आरंभ काल से मानी जा सकती है और भूरशिंग नाम से विवरणित की गई है। जहां देह रूपी भाई एवं देही रूपी बहन का वह दृश्य आज तक स्थूलता से होता रहा है। इस देह एवं देही के मिलन का प्रत्यक्षता से दर्शन होता है। लिंग स्वरूप में स्वयं ईश्वरीय शक्ति विराजमान है। जिसे इस भूरशिंग स्थान का अधिपति माना जाता है। जिसकी मायावशात् देह एवं सूक्ष्म देही का सजीव चित्रण दैवीयशक्ति संपन्न पुश्तैनी पुजारी द्वारा देही का देह से लोकिक देवता की खेल के रूप में अलग होना समक्ष रूप से आज भी देखने को मिलता है और इसी योगिकार्थ रूप के अनुसार एक देवतावाद सिद्ध होता है।

"द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते'

उपनिषद के इस मंत्र को पूर्णतः प्रदर्शित करता है वैदान्त दर्शन के,

'देवादिवद्वपि लोके" (02/01/25)

इस सूत्र तथा इसके शांकरभाष्यादि के अवलोकन से भी 'देव' शब्द की प्रयोग भूमि वही दिव्य पुरुष प्रमाणित होते हैं जो किसी भौतिक साधन की सहायता के बिना अपनी संकल्प शक्ति से मनवांछित विविध कार्य कर सकते हैं। डा. राजीव जी प्रचंडिया ने लिखा है कि अराध्य देवी-देवता आदि की परिकल्पना और धारणा आस्थापरक मनोवृति पर केंद्रित है। आस्थावादी संस्कृतियों में वैदिक संस्कृति एक है जिसके मूल में वेद प्रतिष्ठित हैं। भारतीय सभ्यता और संस्कृति अर्थात रिति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान, नियम-उपनियम, आचारिक-वैचारिक, संहिताएं, शिक्षाएं तथा मान्यताएं आदि सभी कुछ वेदों पर आश्रित हैं चूंकि भक्त समुदाय में जीवन के लिए अराध्य एक अनिवार्य आलंबन होता है। श्रद्धालु जन अपनी-अपनी सुख-सुविधा व मनोकामना के आधार पर इनमें से ही किसी एक देवता को अपना आराध्य मानकर पूजते हैं। देवता और सृष्टि परमात्मा की ही विभूति है।

गांव पुजारली, डा. बाग-पशोग, तह. पच्छाद, जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश-173024
मो. 0 93188 42464

कविता

वंचित

● रमेश चंद्र शर्मा

किसी ने दरवाज़े पर दी दस्तक
उदास क्षणों को गिनते गिनते
जब तक आया बाहर,
वह चलता बना था-
माघ फाल्गुन के पीछे पीछे
इन्हीं रास्तों से आते जाते रहे हैं
मेरी प्रतीक्षाओं के पल;

मैं चल पड़ा उसी राह से
बिना कुछ बताए, घर से!
अगले मोड़ पर एक दानवाकार
मुझे घूरने लगा लगातार!
रुक गए रास्ते, हाथ पांव ठंडे-
बड़ा महंगा पड़ा, किसी का, आधारहीन इंतज़ार!
नदी किनारे, जहां मैं पहुंच चुका था
पानी में गंदगी को,
रवानी नोचते देखा।
न रही भूख न समय पर प्यास
हो चुका था बेबस अनायास!
उसी वक्त वसंत ने झकझोरा
मेरा हाथ पकड़ा,
मैं आश्चर्यचकित रह गया।
मुझे मेरे घर में लाया,
मैं कहने ही को था शुक्रिया।
वसंत यकायक नाग की फांस बन गया,
मुझे जकड़ने लगा।
वातावरण ही बदल गया।
मैं मूर्छित सा पास ही दिखे-
पलंग पर गिर पड़ा!
इस बार मैं ऋतुराज की
फूल वालों की सैर से वंचित रहा।

रिटायर्ड आई.ए.एस., टकसाल हाउस, छोटा शिमला, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, दूरभाष : 0177 2621199

आलेख

कलम-ए-गालिब

• एम.एस. मैहता

हैं और भी दुनिया में सुखनवर बहुत अच्छे ।
कहते हैं 'गालिब' का है अन्दाज-ए-बयां और ॥

हर वो शक्स जो साहित्य की इस विधा (शे'र-ओ-शायरी) का शौक रखता है और मुकतलिफ शायरों के कलामों से रूबरू होता है, वह जल्दी ही इस बात की तसदीक कर देता है कि गालिब ने उक्त शे'र आत्मप्रशंसा के लिए नहीं लिखा बल्कि इस के माध्यम से अपनी शायरी से संबंधित एक हकीकत से अपने पाठकों को अवगत करवाया है। उनका एक-एक शे'र अपनी एक अलग पहचान रखता है और पाठक के दिल की गहराई में उतरकर विचारों का एक सैलाब पैदा कर देता है। विषय कोई भी हो गालिब की गहरी समझ पाठक को सोचने पर मजबूर कर देती है कि एक इनसान हर मौजू पर इतनी पकड़ आखिर कैसे रखता है। बस फिर यूं समझो कि गालिब का यह शे'र पाठकों के मुख से स्वतः ही निकलता हुआ प्रतीत होता है :-

यह तेरा मस्साईल-ए-तसब्बुफ यह तेरा व्यान गालिब
तुझे हम बलि समझते जो न बादाख्वार होता॥

बस अगर तू शराब न पीता होता तो हमारी दृष्टि में तो तू बलि (अवतार) था । बेशक अदबी बलि (साहित्यिक अवतार) । यह एक सच्चाई है कि गालिब की, जीवन के हर पहलू की बारीकी से समझ और आत्मा-परमात्मा, जन्म एवं मृत्यु जैसे रूहानियत से जुड़े गूढ़तम विषयों पर जो पकड़ है वह उन्हें उर्दू अदब के फलक पर लाखों सितारों के बीच ध्रुव तारे की तरह एक अलहदे मुकाम पर बैठा देती है ।

गालिब का जन्म 27 दिसम्बर 1797 में हुआ। उनके दादा मिर्जा कोकान बेग समरकन्द से भारत आए और यहां आकर लाहौर के नवाब के यहां मुलाज़मत की। उनके दो पुत्र थे जिनमें मिर्जा गालिब के वालिद अब्दुल्लाह बेग और नस्र उल्लाह बेग। सिपाहीगीरी उनका पेशा था। अब्दुल्लाह बेग को सिपाहीगीरी में ज्यादा कामयाबी हासिल नहीं हुई। पहले वह आसिफ उददौला की फौज में मुलाजिम हुए फिर हैदराबाद में और उसके बाद अलवर के राजा बख्तावर सिंह के यहां। सन 1802 में वह एक लड़ाई में काम आए, जब गालिब की उम्र केवल पांच साल की थी। गालिब का पालन पोषण का दायित्व उनके चाचा नस्र उल्लाह बेग पर आन पड़ा। मगर नियति तो जैसे उनसे हर वो शै छीनने के लिए उत्सुक थी जिस का भी गालिब ने आश्रय लिया। नौ साल की उम्र तक आते आते गालिब के सिर से चाचा का साया भी उठ गया। उनकी माता जी गालिब को लेकर अपने मायके आगरा चली आई। ननिहाल की माली हालत अच्छी थी और गालिब का लालन पालन ऐशो-आराम से होने लगा। यहीं पर गालिब को पतंगबाजी, शतरंज आदि की आदत पड़ी जो आगे चल कर जुआ और शराबखोरी की आदत में बदल गई। यहीं उनकी शिक्षा-दीक्षा का भी अच्छा प्रबन्ध किया गया था। उन्होंने जाने माने उस्तादों से उर्दू, अरबी व फारसी भाषाओं की बेहतर तालीम हासिल की । तेरह साल की उम्र में उनका निकाह नवाब ईलाही बख्श की बेटी उमराव बेगम से हो गया और कुछ दिन वो खाना दामाद की हैसियत से ससुराल में ही रहे और बाद में आगरा से दिल्ली आ कर रहने लगे जहां उनकी तमाम उम्र बीती।

गालिब का पूरा नाम मिर्जा असद उल्लाह खां 'गालिब' था। उनका इबतिदाई (प्रारम्भिक) कलाम 'असद' के नाम से शुरू

हुआ। मगर बाद में उन्होंने 'गालिब' उपनाम अपने साथ जोड़ दिया और इसी नाम से वो सारे जहां में मशहूर हुए। शायरी की समझ और तलब रखने वालों के लिए गालिब का नाम शायरी के खुदा के नाम की तरह है ।

गालिब पूरी ठसक और शान से जिन्दगी जीने वाले इनसान थे। वो शयरी करते थे मगर इसलिए नहीं कि किसी को खुश करना है या प्रभावित करना है। उन्होंने खुद कहा है :

न सताईश की तमन्ना न सिले की परवाह
अगर नहीं है मेरे अशआर में मानी तो न सही ।

और कहते है :-

कर्ज की पीते थे मय, लेकिन समझते थे कि हां
रंग लावेगी हमारी फाकःमस्ती एक दिन ।

अपने उपर तंज कसने और अपनी स्थिति पर हंसने का जो जज्बा गालिब में था वह अन्यत्र कम ही नजर आता है । अपने घर की हालात को वह कुछ इस तरह फरमाते है :

उग आया है दरो-दिवार पर सब्जा गालिब
हम बियावान में पड़े है और घर में बहार आई हुई है ।

और देखिए, प्रेयसी घर में आई है और घर की हालात खस्ता है, इस स्थिति को कुछ यूं बयां करते है, साथ में देखिए एक मुहावरे को किस खूबसूरती के साथ प्रयोग किया है :-

घर टपकता है और उस पर घर में वो मेहमान है
पानी-पानी हो रही है आबरू बरसात में।

गालिब की जिन्दगी में अपनों के खोने की जो शुरुआत उनके वालिद के इंतकाल से हुई, उसका सिलसिला ताउम्र चलता रहा। एक-एक करके भाई बंधु व पांच बच्चे भी गालिब ने खोए। दर्द बढ़ता रहा और यहीं दर्द उनकी शायरी को तराशता रहा, निखारता रहा। जिन्दगी के हर पहलू को उन्होंने नजदीक से देखा, परखा और जीया। दिल का दर्द शेअर का रूप धारण करके बाहर आता रहा :

हुआ जब गम से बेहिस तो गम क्या सिर के कटने का
न होता तन से जुदा तो जानू पर धरा होता ॥

गालिब को लगता कि दुनिया जैसे बच्चों के खेलने का मैदान है जिसमें किसी भी बात का कोई मतलब नहीं है। चीजें तेजी से बदलती जाती है, जैसे कि यह एक जादू का तमाशा है -थोड़ी देर चलता है फिर सब समाप्त। वह कहते है :

बाजीचा-ए अतफाल है दुनिया मेरे आगे ।
होता है शबो रोज तमाशा मेरे आगे ।

फिर न जाने किस किस को उलहाना देते से प्रतीत होते है गालिब, जब वो कहते है :

मत पूछ के क्या हाल है मेरा तेरे पीछे ।
तू देख के क्या रंग है तेरा मेरे आगे ॥

दीन और दुनिया के बीच की कशमकश इनसान को हमेशा दुविधा में फंसाए रखती है। दीन पर चले तो माया का आकर्षण तंग करता है और दुनिया के साथ चले तो दीन मन को कचोटता रहता है। इस उलझन को कुछ इस तरह ब्यां करते है गालिब-

इमां मुझे रोके है तो खींचे है मुझे कुफ्र
काबा मेरे पीछे है खलीसा मेरे आगे ।

दुनिया की ऐशो-इसरत और शक्लो पदार्थ को चाहे इन्सान ताउम्र भी भोगता रहे मगर उसकी हवस कभी कम नहीं होती । लालसा, रूप भले बदल ले मगर अपना प्रभुत्व जरूर कायम रखती है। उम्र बढ़ने के साथ शराब की लत रूप बदल लेती है। हाथ में पैमाना उठाने की ताकत नहीं रही तो कोई बात नहीं हम आंखों से ही पी लेंगे। बस सुराही और प्याला सामने रहने दो। गालिब कुछ इस अन्दाज में ब्यां करते हैं :

गर हाथ में नहीं है जुम्बिश आंखों में तो दम है ।
रहने दो अभी सागरो-मीना मेरे आगे ।

मुसीबत में इन्सान खुदा की रहमत में पनाह तलाशता है । रहमत तो हमेशा बरस रही है मगर उसका आभास तब होता है जब उसकी सत्ता में विश्वास हो। गालिब ने कभी-कभी एक सच्चे मुसलमान की तरह भी बात की है :

जान दी, दी हुई उसी की थी
हक तो यह है कि हक अदा न हुआ ॥

इसी तरह बहदत-उल-बजूद (अद्वैत) का फलसफा भी गालिब ने बयान किया है :

न था कुछ तो खुदा था, कुछ न होता तो खुदा होता
डुबोया मुझको होने ने, न होता मैं तो क्या होता ॥

गालिब की शायरी में इश्क, माशूक, जाम- सुराही, वज्म व महफिलो-मजलिस का खूब जिक्र हुआ है । मगर शायर कभी यह जाहिर नहीं करता की उसका माशूक मर्द है या औरत । वो कौन सी महफिल है जहां बेतकलूफी से जाम ढाले जा रहे है इश्को-मोहब्बत, बसलो-हिज्र के चर्चे है तथा माशूक व रकीब भी मौजूद है। माशूक के द्वारा ढाए जाने वाले जुल्मो-सितमों का तो कोई हिसाब ही नहीं ।

वह वज्म जिसका उर्दू शायरी में इतना जिक्र है, दोस्तों की महफिल हरगिज नहीं होती थी। लोग किसी मेजबान की दावत पर इकट्ठे नहीं होते थे बल्कि यह तवाइफ की महफिल ही हुआ करती थी जहां शराब भी चलती थी, फिकरे भी कसे जाते। मगर इसका यह भी हरगिज मतलब नहीं कि वो तमाम शायर जिन्होंने माशूक की बज्म का जिक्र किया है, तवाइफों की बज्म में शरीक होते थे, जैसे शराब और मयखाना का जिक्र का मतलब यह नहीं है कि वो शराब की दुकान पर बैठकर ठर्रा चलाते थे ।

ऐसी महफिले कहीं दिल बहलाने का सबब बनती थीं तो कहीं दिल की परेशनी का बायस भी जरूर बन जाती थी। जैसे :

बू-ए-गुल नालः -ए -दिल, दूदे चरागे महफिल

दरबार के मुशायरे में जौक ने बात उठा दी। बादशाह बहादुर शाह जफर ने गालिब से पूछा कि क्या सच ही आपने जौक पर 'हुआ है शह का मुसाहिब फिरे है इतराता' इस तरह का फिकरा कसा था? गालिब ने जवाब दिया बादशाह सलामत मैंने किसी पर कोई फिकरा नहीं कसा। मगर यह तो मेरी एक गजल का मुखड़ा है यह पंक्ति आप तक कैसे पहुंची? बादशाह कहने लगा अरे, अगर गजल का मुखड़ा ऐसा है तो पूरी गजल कैसी होगी ? क्या आप सुनाएंगे ? गालिब ने कहा, क्यों नहीं बादशाह अभी लीजिए।

जो तिरी बज्म से निकला, सो परीशां निकला ।

गालिब की शायरी पर मीर तकी 'मीर' और 'बेदिल' का काफी असर देखने को मिलता है। गालिब का बढ़पन देखिए कि जिस खुले दिल से उन्होंने दूसरे शायरों की अजमत का एतराफ किया है उस तरह किसी दूसरे शायर ने कभी किया हो ऐसा कहीं उल्लेख नहीं मिलता। 'बेदिल' के बारे में वो लिखते है :

जोशे दिल है मुझसे हुस्ने-फितरते बेदिल न पूछ
कतरः से मयखानाः-ए-दरिया-ए-बेसाहिल न पूछ ।

'बेदिल' की तर्ज पर शेयर कहने की इच्छा ने गालिब को मुश्किल-पसन्द बना डाला। उनका शुरू के दौर का कलाम लोगो को हैरत में डाल देता होगा। शे'र सुनकर लुत्फ आना चाहिए , मगर गालिब के शे'र पढ़कर तो पाठक के इल्म और अक्ल का इम्तहान होता था। और साथ में मुश्किल यह थी कि गालिब के कलाम को नजरंदाज करना भी मुमकिन न था ।

यह दिलो-दिमाग में नई कैफियतें और नए हंगामें पैदा करने वाली ताकत क्या थी? पहले दौर का एक शे'र मिसाल के तौर पर पेश है :

कुल्फते -रब्ते-ईनो-आं गफलते मुद्दआ समझ
शौक करे जो-मर गरॉ, महमले -ख्वाबे-पा समझ ।

शेख मोहम्मद इब्राहिम जौक मुगल शासक बहादुर शाह जफर के दरबारी शायर थे और गालिब की बढ़ती मशहूरी से बहुत खार खाते थे। गालिब को नीचा दिखाने का वह कोई मौका न चूकते। एक बार गालिब अपने मोहल्ले में बाहर खुले में बैठ कर दोस्तों को अपनी एक ताजा गजल सुना रहे थे। उसी समय उधर से जौक की सवारी भी गुजरी। गालिब ने जौक पर ताना कसने के मकसद से गजल का मुखड़ा 'हुआ है शह का मुसाहिब फिरे है इतराता' जरा जोर से दोहराया, जौक के कान में गालिब की यह पंक्ति- 'हुआ है शह का मुसाहिब फिरे है इतराता' पड़ गई। गालिब के दोस्त खूब ठहाके लगा कर और तालियां बजा कर गजल का आनन्द ले रहे थे। जौक को यह मजाक काफी नागवार गुजरा। उसने गालिब की शिकायत बादशाह बहादुर शाह जफर से कर दी। बादशाह बहादुर शाह जफर खुद एक आला दर्जे के शायर थे। उन्होंने सच्चाई जानने के लिए दरबार में एक मुशायरे का आयोजन किया और गालिब को भी उसमें शिरकत करने के लिए पैगाम भेजा। मुशायरे में जौक ने वो बात उठा दी। बादशाह बहादुर शाह जफर ने गालिब से पूछा कि क्या सच ही आपने जौक पर, 'हुआ है शह का मुसाहिब फिरे है इतराता' इस तरह का फिकरा कसा था? गालिब ने जवाब दिया बादशाह सलामत मैंने किसी पर कोई फिकरा नहीं कसा। मगर यह तो मेरी एक गजल का मुखड़ा है यह पंक्ति आप तक कैसे पहुंची? बादशाह कहने लगा अरे, अगर गजल का मुखड़ा ऐसा है तो पूरी गजल कैसी होगी ? क्या आप सुनाएंगे ? गालिब ने कहा, क्यों नही बादशाह अभी लीजिए। और मुशायरे का आगाज इस गजल से हुआ :-

हुआ है शह का मुसाहिब फिरे है इतराता
वरना शहर में गालिब की आबरू क्या है ।
हर एक बात पर कहते हो तुम कि तू क्या है
तुम्ही कहो कि ये अन्दाज-ए-गुफतुगू क्या है ।
रगों में दौड़ते-फिरने के हम नहीं है कायल
जब आंख ही से न टपका तो फिर लहु क्या है ।
न शोले में यह करिश्मा न बर्क में ये अदा
कोई बताओ कि वो शोख ए तुंद खूं क्या है ।

जौक साहब तो मुशायरे में गालिब की फजीहत करवाना चाहते थे और इधर उल्टा ही हो गया। गजल की हर एक पंक्ति पर सुहानअल्ला, माशाअल्ला, वाह वाही और तालियां बजती रही। बादशाह और सभी शायर गालिब के मुरीद हो गये। इस तरह जौक साहब को गालिब का लोहा मानना ही पड़ा।

1850 में शहनशाह बहादुर शाह जफर ने गालिब को दौला -उद-नज्म और मुल्क-उल-दबीर के खिताब से नवाजा। बाद में शहनशाह ने उन्हें मिर्जा नोशा का खिताब भी अता फरमाया।

शराब और जुए की आदत ने गालिब को ताजिन्दगी बहुत जलील किया और उनकी इज्जत को भारी धक्का लगा। इस बात को गालिब बखूबी समझते थे मगर क्या करते। सूरतेहाल कुछ ऐसी बनती रही कि न चाहते हुए भी यह लत छूट न पाई। कमजोर माली हालत व अपनों की निरन्तर होती रही मौतों ने गालिब को अन्दर तक हिला कर रख दिया था। यह तमाम दर्द उनकी शायरी में गाहे-बगाहे झलकता रहा। एक बानगी देखिए :-

हुए मरके हम जो रुस्वा, हुए क्यों न गर्के-दरिया
न कभी जनाजा उठता, न कहीं मजार होता ।

कविता

एक ठोकर

● एल.आर. शर्मा

मैं चल रहा था,
गर्व से धरती को रौंदता हुआ,
कि एक ठोकर ने मुझे गिरा दिया,
ओंधे मुंह, मुझे धूल में मिला दिया।

आज तक, धरती कि छाती को मैं,
अपने महंगे बूटों से प्रहार करता,
वृक्षों को काटता,
जब वे धड़ाम से ढहते,
तो पक्षियों के घोंसले छिटक कर,
दूर गिर कर बिखर जाते,
तितलियाँ, भंवरे टूटे हुए फूलों पर,
मंडरा कर भाग जाते,
फिर कभी वापस नहीं आते।

इस तरह हरियाली सिमटने लगी,
तालाब और झरने सूखने लगे,
पर मैं खुश था, दुनिया खुश थी,
क्योंकि बहु-मंज़िला इमारतें बनती,
बड़े-बड़े मॉल और बाजार बनते।

पर जीवन नकली होता गया,
गाड़ियां घूमती, हवा में प्रदूषण था,
फूल नकली पर रोग असली थे,
धूप में चमकती काली सड़कें,
पीपल और नीम कि छाया को तरसती।

आज मैं ओंधे मुंह पड़ा हूँ,
धरती माता की कोमल गोद में,
मुझे अपूर्व शांति का अनुभव हो रहा है,
धूल से एक सुगंध आ रही है,
जो पहले कभी नसीब नहीं हुई थी।

ऐ ठोकर तेरा शुक्रिया,
जो तूने धरती माँ से मिला दिया,
और मुझे,
अपनी गलतियों का एहसास करा दिया.

42/5, हरिपुर सुंदरनगर,
जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश

जब हालात मनमाफिक न रहे तो इन्सां सोचता तो है कि काश ऐसा होता, वैसा होता :-

हुई मुद्दत के गालिब मर गया पर याद आता है
वो हर बात पर कहना कि यूं होता तो क्या होता?

एक विचारशील इन्सां को हालात चाहे मर्जी जितना गिरा दे फिर भी उसके अन्दर की अच्छाई और रचनात्मक सोच समाप्त नहीं हो जाती। वह कहते है :-

घर में था क्या तेरा गम जिसे गारत करता
वो जो रखते थे हम हसरते-तामीर, सो है।

आखिर कब तक इन्सां दुख सहन करता रहे। कभी दिल मचल उठता है और कुछ रंगीनियां चाहता है :-

जी ढूंढता है फिर वही फुरसत के रात दिन
बैठे रहें तसव्वुर-ए-जानां किए हुए।

मगर कल्पनाओं के साहरे कब तलक मन को बहलाया जा सकता है या हकीकत को झुठलाया जा सकता है। आखिर दिल पुकार उठता है :

कोई उम्मीद बर नहीं आती
कोई सूरत नजर नही आती
पहले आती थी हाले-दिल पै हंसी
अब किसी बात पर नहीं आती।

और अन्त में चाहे जैसे-तैसे जिन्दगी का सफीना; किश्ती जब किनारे लग ही गई है तो अब जिन्दगी में क्या- क्या सहन करना पड़ा उसका जिक्र क्यों करें। गालिब मानों अपने को ही समझा रहे है :

सफीना जब कि किनारे पै आ लगा 'गालिब'
खुदा से क्या सितमो-जौरे-नाखुदा कहिए।

और आखिर 15 फरवरी 1869 को गालिब इस लोक का अपना सफर पूरा करके सारी जदो-जहद को दरकिनार करते हुए यहां से कूच कर गये और हमें सौंप गये अपने अशआर रूपी हीरों का अनमोल खजाना जिसका रसिक लोग सदियों तक लुत्फ उठाते रहेंगे। मगर आज के दौर में उनकी तरह का शायर कहीं ढूंढे नहीं मिलता। और फिर शेरो-शायरी के आशिक अपनी खीज इस शे'र को गुनगुना कर उतारेंगे :

गालिब-ए-खस्ता के बगैर कौन से काम बन्द है।

लता निवास, सांगटी , संजौली, शिमला- 6
मो. 0 98050 95289

स्मृति

सत्येंद्र शर्मा
साहित्य, संगीत और संपादन का समन्वय

● तुलसी रमण

करीब डेढ़ दशक पहले लिखी गई *माल रोड पर एक पीढ़ी* शीर्षक अपनी कविता की इन पंक्तियों में सत्येंद्र शर्मा के व्यक्तित्व का यह छायांकन आज भी अपने अर्थ खोलता है। खास तौर से उन लोगों के लिए, जो इस पीढ़ी के जुझारू साहित्यकारों- पत्रकारों को जानते- समझते रहे हैं। उन लोगों के लिए भी जो इनके छोड़े तीरों से कभी बिदकते भी रहे हैं

संपादकों के नाम कलम के तीर
पहाड़ की पाती सत्येन के खत
दुख-सुख छापता जीवन अखबार
मस्तक पर चमकती धूप
आँखों में अँधेरा
आत्मा में भीषण हाहाकार
ज़ुबान पर उतर आते
संगीत की दुनिया के किस्से
कानों में गूँजती बर्मन दा की धुनें...

रामदयाल नीरज, हिमेश, सत्येन और जि या सिद्दीकी की इस चौकड़ी के साथ कहीं श्रीनिवास श्रीकांत भी शामिल रहे। यह बात अलग है कि उनका पढ़ाई-लिखाई का सिलसिला ज यादा पद्म गुप्त 'अमिताभ' की संगत में चलता था। जि या अपने गृह नगर अमरावती, मध्य प्रदेश चले गए, अमिताभ अंबाला में जाकर रहने लगे, हिमेश, नीरज और सत्येन हमेशा के लिए विदा ले गए; मगर इस पीढ़ी के कुछ लोग इन दिनों भी शिमला में ही रह रहे हैं।

ये सभी लोग अपनी धुन के पक्के रहे। ऐसे समय में जब हिमाचल में हिंदी भाषा और साहित्य के अध्ययन और लेखन की शुरुआत चल रही थी, इन लोगों ने लोकरंग के बीच आधुनिक हिंदी साहित्य के बीज बोये। प्रारंभिक मंच *हिमप्रस्थ* मासिक का रहा और फिर डॉ. परमार व लालचंद प्रार्थी के ज माने की प्रादेशिक साहित्यिक-सांस्कृतिक हलचल के बीच ये शख़्स हिंदी के हिस्से में चमक कर निकले थे।

उसी दौर में मार्च, 1957 में सत्येंद्र शर्मा ने हिमाचल के लोक संपर्क विभाग में उप संपादक के पद पर प्रवेश किया था। साहित्य,

संगीत और पत्रकारिता के संस्कार उन्होंने अपने गृह नगर देहरादून में ही पा लिये थे। किसी भी पद के लिए अनुकूल योग्यता रखने वाले को नियुक्त करने का विवेक तब प्रशासन में रहता था। सत्येंद्र शर्मा आजीविका के लिए शिमला आए तो यहीं के होकर रह गए। देहरादून की पहाड़ियों से शिमला के पहाड़ों का फासला भी कोई दुरूह न था। यहाँ आकर मित्र मंडली में सत्येंद्र शर्मा न जाने कब 'सत्येन' हो गए। उम्र और अनुभव के साथ बुद्धिजीवी का रूप बनता गया तो वह 'पंडितजी' कहलाने लगे।

सत्येन के पास जो कलम के तीर रहते, वे पत्रों के रूप में अंत तक दोहरे चलते रहे। जो बात उनकी बुद्धि में कुछ सार्थक करने

सितम्बर, 1961 से 1978 तक सत्येंद्र शर्मा केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित 'रेडियो देहाती गोष्ठी' के मुख्य संयोजक के रूप में राज्य स्तर पर प्रभारी रहे। इस दौरान उन्होंने प्रदेश का व्यापक भ्रमण किया।

की आती, उसे लेकर सुझाव के पत्र शासकों-प्रशासकों के नाम भेज देते और इसके लिए बाकायदा माहौल बनाया जाता। जो बात ग लत हुई दिखाई देती, उसके हिस्से के पत्र अखबारों के संपादकों के नाम चले जाते और कुछ विचार मुद्दे पक्के साथी हिमेश के कॉलम में जगह पा लेते। ये सत्येन जी के जूझने का अपना तरीका रहा। जो कसर यहाँ रह जाती, उसे हिमेश के 'व्यंग-बाण' पूरा कर लेते। आगे चलकर हम देखते हैं कि सत्येन भी अपने गीतों में भी व्यंग्य के तीखे तीर छोड़ते हैं

हाल पूछने आये ठाकुर
छीन-झपट सुख की जागीर।
कितने भोले कितने निश्छल
ज ख्म सौंपकर पूछें पीर।

दरअसल सत्येन के गीतों में ही साहित्य और संगीत की जुगलबंदी उनकी रचनात्मकता का रूप लेती है। देहरादून के छात्र जीवन में उन्होंने 1954 में *'साहित्य'* पत्रिका के कुछ अंक अपने एक मित्र के साथ निकाले थे, जिनमें प्रभाकर माचवे और रामविलास शर्मा जैसे साहित्यकारों का परामर्श भी रहा। 'निराला' विशेषांक से शुरुआत की तो निराला जी से भेंट भी हुई और राहुल सांकृत्यायन से भी संपर्क बनाए रखा। छात्र जीवन में ही संगीत सीख लिया था। फिर उस्ताद विलायत खाँ से भी भेंट हुई। आगे चलकर साहित्य और संगीत की बड़ी हस्तियों से सत्येन का लगातार संपर्क बना रहा। इस दिशा में 'साक्षात्कार' और 'पत्र' उनके प्रमुख माध्यम रहे। सत्येन जी के संग्रह में जो पत्र विभिन्न विधाओं के महारथियों के हैं, वे एक ज माने का इतिहास बताते हैं और पत्र-व्यवहार की विरासत के दस्तावेज भी हैं।

साहित्यकार निर्मल वर्मा जब यशपाल सृजनपीठ के अध्यक्ष के रूप में शिमला में थे तो सत्येन जी ने उनसे भेंट की इच्छा जतायी और एक शाम हम दोनों निर्मल जी के पास चले गए थे। लगभग दो घंटे तक विभिन्न विषयों पर बातें होती रहीं। सत्येन के विविध अनुभव संसार और संपर्क विस्तार से निर्मल भी प्रभावित हुए। वह सालों बाद तक याद करते थे कि 'वो शर्मा जी एक इंटेलीजेंट आदमी हैं।' सत्येन भी निर्मल के साथ धीमे सुरूर की उस शाम का अकसर ज़िक्र करते थे।

पुरानी चिट्ठियों के साथ, प्रकाशित सामग्री की कतरनें, पत्र-पत्रिकाओं के विशेषांक, पुरानी पुस्तकें और छायाचित्र जिस चाव के साथ उन्होंने संजोकर रखे हैं, यह अपने में मिसाल है। वैसे भी शास्त्रीय, फिल्मी या लोक संगीत की विरासत की सूचनाएँ हमारे यहाँ सत्येन के पास सबसे ज यादा रही हैं। *गिरिराज* व *हिमप्रस्थ* तथा अन्यान्य पत्र-पत्रिकाओं में उन्होंने लेखकों, कलाकारों के जो साक्षात्कार प्रकाशित किए हैं, यह सब सांस्कृतिक सूचना का भंडार ही है। इसे पुस्तकाकार में वह नहीं छपवा पाए, जबकि संकलित-संपादित रूप में यह महत्त्वपूर्ण कार्य साबित हो सकता है। लोक गायक-गायिकाओं, प्रसारण कलाकारों और संगीतकारों को लेकर उनके लिखे लेख भी बड़ी संख्या में पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं, वे भी संकलन की अपेक्षा में हैं।

सितम्बर, 1961 से 1978 तक सत्येंद्र शर्मा केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित *रेडियो देहाती गोष्ठी* के मुख्य संयोजक के रूप में राज्य स्तर पर प्रभारी रहे। इस दौरान उन्होंने प्रदेश का व्यापक भ्रमण किया। अक्तूबर, 1978 में *गिरिराज* साप्ताहिक शुरू हुआ तो इसकी प्रारंभिक योजना व संपादन का दायित्व इन्होंने निभाया और 1988 में इसी समाचार साप्ताहिक के वरिष्ठ संपादक के पद से सेवानिवृत्त हुए। रचनात्मक साहित्य में उनकी उल्लेखनीय विधा 'गीत' की रही है, भले ही उन्होंने कुछ स्वछंद कविताएँ भी लिखी हैं और कहानी संग्रह 'बर्फ़ के हीरे' का संपादन भी किया है; जबकि उनका सबसे लम्बा अनुभव सांस्कृतिक और विकासात्मक पत्रकारिता का रहा है। पत्रकारिता का यह काम ही उनके लेखन और रचनाओं के संकलन-प्रकाशन की दिशा में बाधा पैदा करता रहा है; क्योंकि पत्रकारिता, लेखन और प्रकाशन से हटाकर रचनाकार को अपने में उलझाये रखती है। इसके उलझाव से बहुत कम लोग निकल पाते हैं।

साहित्यिक मंचों पर सत्येन शर्मा का यह गीत बराबर गूँजता रहा है

अरे मरण के गायक पग पग
गूँज रहा जीवन संगीत
पीछे मुड़कर देख रहा क्या
बीते कल से भयभीत
नहीं लौटकर आया करता
वर्तमान में कभी अतीत

चलते नहीं मील के पत्थर
इनका काम बताना दूरी
राह स्वयं ही चलनी होती
चाह तभी होती है पूरी...

तत्काल गीत रचना और साथ ही उसकी धुन बनाने में सत्येन कमाल करते थे। 1987 की सर्दियों में हिमाचल के पंद्रह लेखकों का दल मध्य प्रदेश की यात्रा पर गया था। उज्जैन, भोपाल

और जबलपुर की संगोष्ठियों व कई दर्शनीय स्थलों की यात्रा के बाद हम लोग वापिस दिल्ली आ रहे थे। आधी रात थी, जब हम लोग झाँसी की ओर लौट रहे थे। उस यात्रा का यह भी अनुभव रहा कि मध्य प्रदेश में नाकों पर बार-बार बस रोकी जाती थी। वह मध्य प्रदेश का आखिरी नाका था। पुलिसवालों ने हमारी बस रोक रखी थी। उस इंतज़ार की घड़ियों में सत्येन शर्मा तुक पर तुक जोड़ते, गाये जा रहे थे और श्रीनिवास श्रीकांत उनका पूरा साथ दे रहे थे। अनिल राकेशी, वरयाम सिंह, ज़िया सिद्दीकी और सतीश धर आदि कवि भी तुक चढ़ाते हुए उस कोरस में शामिल थे। निबंध लेखक डॉ. मनोहर लाल और सुशील कुमार फुल्ल जैसे कहानीकारों का भी तुक जोड़ने का मन होता रहा, मगर कहानीकार की भाषा में तुकबंदी की गुंजाइश न थी; सो गद्य लेखक सीटों पर बैठे ही मज़े ले रहे थे। उस नाके पर करीब आधे घंटे तक बस रुकी रही। दल संयोजक के नाते हमने उतरकर रूकावट का पता किया तो हवलदार बोला 'इतने बढ़िया गीत चल रहे हैं, हम भी आधी रात में कुछ मज ा ले लेते हैं।' सत्येन ने मुश्किल से टेक ली तो बस आगे चली, वर्ना झाँसी से ट्रेन ही छूट जाती।

सेवानिवृत्ति के बाद भी सत्येन का बसेरा नाभा हॉऊस में ही बना रहा, क्योंकि सरकारी आवास उनके पुत्र संजय शर्मा के नाम हो गया था। इसलिए माल रोड के प्रैस-रूम तक उनका आना बदस्तूर नाभा से ही होता रहा। मगर अब शाम की गोष्ठियों में वह शामिल नहीं हो पा रहे थे। सन् 1930 में जन्मे सत्येन सिर पर ऊनी गर्म टोपी और कंधे पर झोला लिए हल्के शरीर में कभी माल पर मिल जाते तो फिर वही साहित्य-संस्कृति की नयी-पुरानी बातें निकल आतीं। इस बीच हम दूसरे छोर ढली में बस गए थे, इसलिए नाभा जाना नहीं हो पा रहा था। मगर सत्येन और हिमेश हमारा दुख साँझा करने ढली तक भी चले आए थे।

सत्येन सर्दियों में देहरादून चले जाते थे। वहाँ से कई बार उन्होंने पत्र भी लिखे। वह हमें पत्राचार के संस्कार में ढालने को प्रयत्नशील रहे, मगर हमसे न हो पाया। इस बार की सर्दियों में भी वह देहरादून चले गए थे। काफी समय से उनसे मिलना भी नहीं हो पाया था। उनकी बीमारी की भी कोई सूचना न थी। 16 जनवरी, 2016 को पहले *गिरिराज* से अश्विनी कुमार का फोन आया और उसके बाद विनोद भारद्वाज ने सूचना दी कि सत्येन जी का देहरादून में निधन हो गया है। हम उस रोज़ विश्व पुस्तक मेले के लिए दिल्ली पहुँचे ही थे। मैंने अरुण भारती से सूचना साँझा की और देर तक साहित्यकारों के बीच सत्येन जी को याद किया जाता रहा कि मालरोड की उस चर्चित सांस्कृतिक मंडली का एक और ज़िंदादिल लेखक-संपादक 85 वर्ष की उम्र में हमेशा के लिए विदा हो गया।

दयार-दुर्गा कॉलोनी, ढली, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171012, मो. 94180 86986

सत्येंद्र शर्मा का प्रसिद्ध गीत

अरे मरण के गायक

अरे मरण के गायक!
पग-पग गूंज रहा जीवन संगीत
पीछे मुड़कर देख रहा क्या
क्या बीते कल से भयभीत
बीती बातों का सपना तो
केवल पथ से भटकायेगा
गाये गये गीत को फिर से
वक्त नहीं अब दोहरायेगा
नहीं लौटकर आया करता
वर्तमान में कभी अतीत।

अरे मरण के गायक
सौ-सौ बार मरण यह कैसा
क्या जीने की प्यास नहीं है
चाहे फूल, मगर शूलों से
बिंधने का आभास नहीं है
खड़ा हुआ मैदान छोड़कर
कहलाता चाहे रण जीत।
अरे मरण के गायक

चलते नहीं मील के पत्थर
उनका काम बताना दूरी
राह स्वयं ही चलनी होती
चाह तभी होती है पूरी
मिला नहीं करती मंजिल
चलकर राह कभी विपरीत
अरे मरण के गायक...।

शोध

अनुरागमयी महादेवी

● डॉ. सुनीता देवी

जब साधक की आत्मा का अलौकिक सता से तादात्मय हो जाता है तो यह प्रेम अलौकिक या आध्यात्मिक प्रेम कहलाता है। महादेवी के काव्य में वर्णित प्रेम भी आध्यात्मिक प्रेम ही है। महादेवी ने उस अलौकिक ब्रहम के प्रति अपना प्रेम दर्शाया है। जो अज्ञात है, असीम है। महादेवी वर्मा की प्रेम भावना रहस्यवाद की ओर उन्मुख है। वे शरीर के धरातल से ऊपर उठकर आध्यात्मिक साधना की संसरणियों को पार कर उस अनंत सत्ता में एकाकार हो जाना चाहती हैं, जो धरती के कण-कण में व्याप्त है।

हिंदी काव्य जगत, साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक गतिशील है, तथा वह हिंदी साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा रही हैं गहन व गम्भीर मनोभावों, जीवन की जटिलताओं मार्मिक पहलुओं पर चिंतन-मनन और विश्लेषण करना मनुष्य जाति की सहज वृत्ति है। हिंदी काव्य जगत में कवयित्री महादेवी वर्मा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे हिंदी की उत्कृष्ट कवयित्री तथा प्रसिद्ध गद्य लेखिका है। महादेवी जी का काव्य अपना अलग ही आकर्षण रखता है। वे नारी जगत में एक अनूठी प्रतिभा रखती है।

प्रेम, जीवन की एक ऐसी प्रभावशाली प्रवृति है जो सृष्टि के मूल में सदा से रही है- इसी की प्रेरणा से अणु से अणु व परमाणु से परमाणु जुड़ा रहता है तथा इसी शक्ति से पुरूष-स्त्री के प्रति व स्त्री पुरुष के प्रति आकर्षित रहते हैं, इसी प्रवृत्ति को महादेवी जी ने अपने काव्य का आधार बनाया है तथा अपनी समग्र रचनाओं के इस सुंदर तत्त्व को बड़े ही अनूठे ढंग से नियोजित किया है। महादेवी के काव्य-कानन में अंतःसलिला के समान प्रेमधारा प्रवाहित मिलती है। उनके काव्य में जो वेदनामय सरसता और मधुमय रहस्यवाद है, वह प्रेमभाव से सम्पृक्त होने के कारण हिंदी कविता के लिए एक नूतन योगदान है महादेवी का प्रेम गूढ़ है उसे लौकिक तथा अलौकिक दोनों रूपों से ग्रहण किया जा सकता है। "महादेवी की प्रणय भावना करूणामय प्रियतम के रहस्यमय अस्तित्व के प्रति निवेदन में स्थापित हुई है। रहस्यभावना की इस रूप में चरम परिणति महादेवी से हुई है माधुर्य भाव, वेदना, भाव-प्रवणता तथा एकांतिक समर्पण की विशेषताओं के कारण महादेवी की प्रणय भावना लौकिक व मांसल परिदृश्यों से ऊपर उठकर रहस्यानुभूति की चरम अवस्था को पहँच गई है।"

प्रेम जीवन की एक लौकिक वृति है जब इसका क्षेत्र दो प्राणियों तक सीमित रहता है तो उसे लौकिक प्रेम का नाम दिया जाता है जैसे हीर-रांझा की प्रेमकथा। महादेवी के काव्य में मुक्त प्रेम संबंधी धारणा का विस्तार देखा जा सकता है। कतिपय आलोचकों ने महादेवी की प्रणयानुभूति को नितांत निजी पृष्ठभूमि से संबंधित किया है। चाहे वह प्रेम प्रणय संबंधी धारणा से हो या आत्मसमर्पण। महादेवी की धारणा है कि अलौकिक आत्मसमर्पण को समझने में लौकिक का सहारा लेना होगा, क्योंकि प्रेम में किसी उच्चतम आदर्श, भव्यतम प्रेम सौन्दर्य का पूर्ण व्यक्तित्त्व के प्रति आत्मसमर्पण पूर्णता की इच्छा स्वाभाविक हो जाती है।

महादेवी का काव्य अपने अज्ञात प्रियतम के लिए एक समर्पित भेद है, जिनके हृदय के प्रेम भावों का ही उद्गार है। महादेवी का प्रियतम रहस्यमय है। वह महादेवी के अंतस में समाया है। अतः उसके लिए परिचय व्यर्थ है- "तुम मुझ में प्रिय, फिर परिचय क्या/तारक में छवि प्राणों में स्मृति/ पलकों में नीरव पद की गति/लघु उर में पलकों की संस्कृति"

इसी अज्ञात प्रियतम के विरह में उनका जीवन व्यतीत होता है- "विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात/वेदना में जन्म, करुणा में मिला आवास/ अश्रु चुनता दिवस, अश्रु गिनती रात"

जिस महादेवी के लिए विरह ही अभीलिप्त है जिसमें वे प्रियमय हो जाती है।

"आकुलता ही आज, हो गई तन्मय राधा/विरह बना आराध्य, द्वैत व्यथा कैसी बाधा"

उनको अपनी प्रियतम के दर्शन प्रकृति के बीच होते है यही उनकी रहस्य भावना है। उनका अपने प्रिय से मानसिक मिलन भी होता है- कैसे कहती हो सपना है/ अलि उस मूक मिलन की बात/छिपे हुए है उसने अब भी/ गेरे आँसू उनके दास।

प्रणय इनका आधार है- इसी पर संपूर्ण काव्य स्थित है। सारे काव्य में प्रिय-प्रेयसी की आंख मिली हुई है। कवयित्री अपने प्रिय के प्रति पूर्णतः आसक्त है पूर्ण आस्था व्यंजित है- मिलनेच्छा कुछ स्थलों पर दृष्टव्य है, शेष विरहानूभूति व्याप्त है। महादेवी का तो यहां तक मानना है- "जन्म ही हुआ, जिसको वियोग/ तुम्हारा ही तो हूँ उच्छवास/चुरा लाया जो विश्व समीर/वही पीड़ा की पहली साक्षी/ छोड़ देते क्यों बारंबार/ मुझे देते क्यों तम से करने का अभिसार।"

महादेवी का काव्य प्रणयानूभूत है, "प्रिय प्रेयसी पर केंद्रित ये कथ्य है, उसे वासना या काम जन्य मानना भ्रान्ति है, शालीनता एवं सात्त्विकता इनकी प्रणयाभिव्यक्ति में है, मांसलता व स्थूलता का अभाव है। हाँ, प्रेम लौकिक है या अलौकिक इस संबंध में विवाद होना स्वाभाविक है क्योंकि कहीं-कहीं अवश्य प्रिय एवं प्रेम के लौकिक होने की प्रतीति होती है।"

जब साधक की आत्मा का अलौकिक सत्ता से तादात्मय हो जाता है तो यह प्रेम अलौकिक या आध्यात्मिक प्रेम कहलाता है। महादेवी के काव्य में वर्णित प्रेम भी आध्यात्मिक प्रेम ही है महादेवी ने उस अलौकिक ब्रह्म के प्रति अपना प्रेम दर्शाया है जो अज्ञात है, असीम है, महादेवी वर्मा की प्रेम भावना रहस्यवाद की ओर उन्मुख है। वे शरीर के धरातल से ऊपर उठकर आध्यात्मिक साधना की संरणियों को पार कर उस अनंत सत्ता में एकाकार हो जाना चाहती है, जो धरती के कण-कण में व्याप्त है।

सारे जगत में एक बह्म व्याप्त है सभी मानव प्रतिबिम्बों में वही समाया है, उस अद्वैत भावना को कवयित्री ने ऐसे व्यक्त किया है- विविध रंगो में मुकुट संवार/उठा जिसमें यह करागार/ बना गया बंदी वही अपार/अखिल प्रतिबिम्बों का आधार।

मेघों में बिजली की चमक और तारक बालाओं में उसी परम-पूज्य की छवि विद्यमान है, जिसे महादेवी ने यों स्वीकार किया है- "मेघों में विद्युत सी छवि, उनकी बन कर मिट जाती/आँखों की चित्रपटी में जिसमें आँक न पाऊँ/ वे तारक बालाओं की अपलक चितबन बन जाते/जिसमें उनकी छाया भी मैं छू न सकूँ, अकुलाँऊ।"

"यह अकुलाहट प्रेम की तन्मयता की द्योतक है। यह कोई आरोपित वस्तु नहीं, प्रेम की व्यापकता की अनूभूति इस तन्मया की पहली शर्त और वही रहस्यवाद की भाव-भूमि तक पहुँचाने का प्रथम सोपान है।"

प्रेम की व्यापकता का एक और चित्र-

सिहर-सिहर उठता सरिता-उर/खुल-खुल पड़ते सुमन सुधा भर,

मचल-मचल जाते पल फिर-फिर/सुन प्रिय की पदचाप हो गई पुलकित यह अवनी

"इनके प्रेम की अवस्था अलौकिक है। जहां प्रेम भावना का उज्ज्वल स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। इस क्षेत्र में आकर विष भी अमृत बन जाता है, पीड़ा ही सर्वस्व बन जाती हैं आँसू ही नेत्रों का शृंगार करते हैं, प्रतिक्षा नयनों का अंजन बन जाती है वेदना सजीव हो जाती है।" कवयित्री का प्रियतम अलौकिक है, जिसकी कल्पना उन्होंने व्यक्ति के रूप में की है। उसके द्वारा प्रदर्शित लौकिक किन्तु असाधारण लक्षणों से उनके प्रिय की अलौकिकता का बोध होता है- "जिन चरणों पर देव लुटाते थे अपने भ्रमरों के लोक/लेख चन्द्रों की क्रांति लजाति थी, नक्षत्रों के आलोक/रवि शशि जिन पर चढ़ा रहे थे अपनी आभा, अपना राज/जिन चरणों पर लौट रहे थे सारे सुख सुषमा के साज।"

"मार्धुयभाव मूलक प्रेम में आधार का तादात्म्य अपेक्षित है और यह तादात्म्य उपासक ही सहन कर सकता है, उपास्य नहीं। इसी से तन्मय रहस्योपासक के लिए आदान सम्भव नहीं पर प्रदान या आत्मदान उसका स्वभावगत धर्म है। महादेवी वर्मा ने अपने काव्य में संयोग शृंगार के वर्णन में प्रेम के उदात्तीकरण का परिचय दिया है। 'नीहार' में संकलित कविता का एक अंश इस प्रकार है- "आज आये हो करुणेश/ इन्हें जो तुम देने वरदान/जलाकर मेरे सारे अंग/कर दो आंखो का निर्माण।"

अत्यधिक अध्यात्मिकता प्रकाश की भांति प्रेम की स्थिति में चकाचौंध न पैदा कर दे, इसी हेतु महादेवी ने इस आलौकिक प्रेम में लौकिक प्रणयतम को ग्रहण किया है। किन्तु अन्य साधकों से भिन्न उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने अपने आराध्य को किसी व्यक्ति अथवा वस्तु रंग की अपेक्षा केवल भाव रूप में ही स्वीकर किया है-

"आकुलता ही आज हो गई तन्मय राधा/विरह बना आराध्य द्वैत क्या कैसी बाधा।"

"महादेवी का प्रेम देशानुराग के रस में भी अपनी कविताओं में मुखरित हुआ है। वे बचपन के प्रारम्भ से ही अपनी कविताओं में भारत-माता की आरती उतारा करती थी।"

राष्ट्रीय भावना की व्यंजना उन्होंने "शृंगारमयी अनुरागमयी, भारत जननी माता कहकर व्यक्त की। युग भावना से परिचालित होकर राष्ट्रीय जीवन में नवचेतना अैर स्फूर्ति भरने के निष्देश को सचेत करती है- "चिर सजग आँखे उनींदी आज वैसा व्यक्त करना/जाग तुमको दूर जाना।"

देश की स्तवन करती हुई राष्ट्रीय ममता निम्न शब्दों में व्यंजित करती है-

"भारत मेरे विशाल/मुझको कह लेने दो उदार/फिर एक बार बस एक बार।"

जब-जब देश पर किसी संकट ने अपनी वीरानी छाया छोड़नी चाही है, तब-तब महादेवी पर दुःख कातर हृदय सेवा के सम्बल में उसका प्रतिकार करता रहा है। महादेवी जी को मनुष्यता से प्रेम है। उन्होंने प्रयाग के आस-पास के गांव में जाकर साधनहीन बालकों को शिक्षा देने का कार्य वर्षों तक किया "महादेवी जी को कवि हृदय के साथ-साथ नारी हृदय भी मिला है, इस नारी हृदय के प्रेम ने अपने तक ही सीमित न रहकर समस्त मानवता का अपने स्नेह रज्जु में आबद्ध किया है। उनके काव्य में सर्वत्र सहानूभूति, वेदना की भावनाएँ भरी पड़ी है। दुःख की भावना ने ही उनके लिए संसार को एकता के सूत्र में बद्ध कर दिया है। वे अपने प्रिय को किसी एकान्त निभृत स्थान में नहीं खोजती। जन-जन की पीड़ा में ही प्रिय को पाना चाहती है।" "तुम मानस में बस जाओ छिप दुःख के अवगुण्ठन से/मैं तुम्हें ढूंढने के मिस परिचित हो लूँ कण-कण से।"

प्रकृति से प्रेम का चित्रण भी महादेवी वर्मा के काव्य में व्याख्यायित हुआ है। प्रकृति महादेवी के लिए श्रृंगार की वस्तु है, प्रियतम की ओर संकेत वाली सहचरी है, उनकी आत्मा की छाया है, ब्रह्म की छाया है, उसके जीवन का अपरिहार्य अंश है। महादेवी जी ने मानवीकरण के रूप में भी प्रकृति के चित्र खींचे हैं यों तो प्रकृति सजीव है और स्थान-स्थान पर उसके ऐसे चित्र मिल सकते हैं, परन्तु बहुत सी कविताएँ तो ऐसी हैं, जो हिंदी की निधि कही जा सकती है- "धीरे-धीरे उतर क्षितिज से/ आ वसंत रजनी/ तारकमय नववेणी बंधन/शीशफूल शशि का कर नूतन/रशिम वलय, सितवन नवगुण्ठन/मुक्ताहल अभिराम बिछा दे/चितवन से अपनी/पुलकती आ बसन्त रजनी।"

महादेवी वर्मा छायावादी काव्य में प्रेम साधिका व रहस्यवादी के रूप में चित्रित है। उनकी प्रेम भावना अपने देश प्रकृति, व्यक्ति के ही प्रति न होकर समूचे विश्व के प्रति है। उनकी धारणा है कि यदि हम अपने हृदयतंत्री में विश्व अस्तित्व को भूल जायेंगे तो कुछ दिनों बाद हम अपने अस्तित्व से भी परिचित नहीं रहेंगे। अपने दुःखवाद के विषय में उन्होंने लिखा है "दुख मेरे निकट जीवन का ऐसा काव्य है जो संसार को एकसूत्र में बाँधने की क्षमता रखता है। हमारे असंख्य सुख हमें चाहे मनुष्यता की पहली सीढ़ी तक भी न पहुँचा सके, किंतु हमारा एक बूँद आँसू भी जीवन को अधिक मधुर, अधिक उर्वर बनाये बिना नहीं गिर सकता। मनुष्य सुख को भोगना चाहता है। परन्तु दुख सबको बाँटकर विश्वजीवन में अपने जीवन को, विश्व वेदना में अपनी वेदना, को इस प्रकार मिला देगा, जिस प्रकार एक जल बूँद समुद्र में मिल जाती है, यही कवि का मोक्ष है।"

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि महादेवी के काव्य की प्रेम-पीठिकायें हैं। इन्हीं क्षेत्रों में होकर उनकी प्रेम धारायें प्रवाहित हुई जो मूलतः एक होते हुए भी भिन्न सी प्रतीत होती है। उनके काव्य में अलौकिक प्रेम सर्वत्र व्याप्त है। वे आध्यात्मिक स्तर पर परमात्मा से तादात्म्य की आकांक्षी है। प्रणय ही इनका आधार है। यदि इनके काव्य से प्रेम की प्रवृत्ति को निकाल दिया जाये तो समस्त काव्य शुष्क मात्र रह जायेगा। महादेवी की प्रणय भावना बाह्य से अंतः, ऐंद्रिक से सात्त्विक, स्थूल से सूक्ष्म, व्यष्टि से समष्टि तथा लौकिक से अलौकिक की ओर उन्मुख हैं।

हिंदी विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला-171005

संदर्भ

1 डॉ. शशि मुदीराज, छायावाद में अभिव्यक्ति, पृ.-214
2 डॉ. प्रमोद सिन्हा, कवियों का सांस्कृतिक दृष्टिकोण पृ.-290-91
3 महादेवी वर्मा, यामा (द्वि.सं.) पृ.-142
4 वही पृ.-138
5 वही पृ.-213
6 वही पृ.-3
7 महादेवी वर्मा, यामा संधिनी पृ.-50
8 डॉ. हुकुमचंद राजपाल, महादेवी का काव्य सौंदर्य पृ.-37
9 महादेवी वर्मा, यामा, रश्मि पृ.-109
10 वही पृ.-111-112
11 प्रो. रमेश चंद्र गुप्त, महादेवी का काव्य वैभव पृ.-70
12 महादेवी वर्मा, यामा, नीरजा पृ.-134
13 प्रो. रमेश चंद्र गुप्त, महादेवी का काव्य वैभव पृ.-46
14 महादेवी वर्मा, यामा, नीरजा पृ.-59
15 महादेवी वर्मा, दीपशिखा (भूमिका) पृ.-29-30
16 महादेवी वर्मा, यामा, पृ.-54
17 गंगा प्रसाद पांडेय, महीयसी महादेवी-पृ.-214
18 प्रो. रमेश चंद्र गुप्त, महादेवी का काव्य वैभव पृ.-55
19 महादेवी वर्मा, यामा, पृ.-234
20 वही पृ.-33
21 पदम सिंह चौधरी, महादेवी साहित्य : एक नया दृष्टिकोण-पृ.-7109
22 महादेवी वर्मा, यामा, पृ.-77
23 वही पृ.-122
24 महादेवी वर्मा, यामा, (भूमिका) पृ.-2

आलेख

समकालीन साहित्य के संदर्भ में दलित विमर्श

● सोनिया माला

समकालीन साहित्य के संदर्भ में दलित विमर्श आज समाज का चर्चित मुद्दा है जिसके परिणामस्वरुप पूरे देश में दलित वर्ग के बुद्धिजीवियों के स्वर उभरे है। साहित्य के माध्यम से अपनी बात कहने की उनमें ऊर्जा आई है। दलित विमर्श के बारें में विस्तार से जानने से पहले समकालीन शब्द से अभिप्राय जान लेना आवश्यक है। समकालीन से अभिप्राय है कि जो इस काल में है लेकिन इस अर्थ में यह भ्रम पैदा होता है कि इस काल में साथ रहने वाले लोग समकालीनता के दायरे में आते है या नहीं। यहीं पर सहसा एक प्रश्न यह भी उपजता है कि क्या जड़ या अचेतन व्यक्ति को भी समकालीन की संज्ञा दी जायेगी? वस्तुतः समकालीन एक काल में साथ -साथ जीना नहीं है। समकालीन लोकमंगल की भावनाओं को साकार करने वाले प्रयत्नों में निहित होता है।[1]

डॉ. गंगाप्रसाद विमल के अनुसार -" समकालीन साहित्य कोई नयी विधा नहीं है, न ही नये लोगों का कोई रचनात्मक आंदोलन इसे कहा जाना चाहिए, अपितु वे सब रचनाकार जो कम से कम रोमांटिक भाव बोध तथा परंपरागत स्थिति से अलग है तथा साहित्य में अपने समग्र नयेपन का आग्रह रखते है। वे समकालीन साहित्य के अंतर्गत आते है।"[2]

भारतीय साहित्य में अन्य भाषाओं के समान हिंदी भाषा व साहित्य में भी दलित विमर्श होता रहा है और आज इस दलित विमर्श को दलित साहित्य के माध्यम से उचित अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। हिंदी क्षेत्र में दलित साहित्य की रचना का पहला चरण काफी पुराना है। परन्तु सबसे बड़ी समस्या उसे स्वीकारने की थी। धीरे-धीरे दलित साहित्य के तेवर बदलने लगे और दलित विमर्श एक नया रूप ग्रहण करता गया।

दलित विमर्श आज एक ओर अपने व्यापक सरोकारों के साथ वैकल्पिक दर्शन गढ़ने का प्रयास कर रहा है तो दूसरी ओर सशक्त राष्ट्रीय आंदोलन के रूप में भी उभर कर सामने आ रहा है। मराठी साहित्य द्वारा हिंदी साहित्य में अवतरित दलित साहित्य रचना की प्रवृत्ति ने साहित्य के अध्येताओं-आलोचकों के समक्ष चुनौतियां प्रस्तुत की जिसके परिणामस्वरुप साहित्य के मूलभूत प्रश्न पर भी विचार होने लगा कि क्या साहित्य भी दलित होता है? साहित्य को सामाजिक यथार्थ का निरूपक ही नहीं वैचारिक क्रांति का वाहक भी माना जाता है। भारतीय नवजागरण के व्यापक प्रभाव तथा तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीकि दबावों के चलते कुछ सवर्ण साहित्यकारों ने दलितों के प्रति अपनी चिंता प्रकट करते हुए उनकी समस्याओं पर अपना ध्यान केंद्रित किया। जिससे साहित्य में विमर्श की प्रक्रिया आरंभ हुई।

दलित विमर्श एक व्यापक शब्द है जिसमें दलित से अभिप्राय- "उन बेजुबानों की आवाज से है जिनकी जुबान वेद मंत्र दोहराने पर काट दी जाती थी। उन लोगों की श्रवण शक्ति से है जिनके कानों में वेदमंत्र सुनने पर उबलता हुआ शीशा उड़ेल कर बहरा बना दिया जाता था, उन लोगों के हाथों से है जिन्हें समानता के अधिकार मांगने के अपराध में काट दिया जाता था और उन लोगों के पांव जिन्हें न्याय की याचना करने के लिए बढ़ने पर कलम कर दिया जाता था।"[3]

'दलित' शब्द उन्हें सामाजिक पहचान देता है जिनकी पहचान इतिहास के पृष्ठों में सदा के लिए मिटा दी गई है। जिनकी गौरवपूर्ण संस्कृति, ऐतिहासिक धरोहर कालचक्र में खो गई है।"[4] दलित शब्द आक्रोश, चीख, वेदना, पीड़ा, चुभन, छटपटाहट का भी प्रतीक है। यह उन लोगों की ओर संकेत करता है जो अमानुषिक सामाजिक व्यवस्थाओं में बंधे अन्यायों की प्रताड़ना सहते चिखते चिल्लाते रहें पर उनकी वेदना, पीड़ा, चुभन, छटपटाहट की अनदेखी कर मनुस्मृति की जालिम न्याय प्रणाली की दुहाई देकर उनके रिसते घावों पर नमक मिर्च छिड़का गया।

दलित शब्द जहां निरीह लोगों की वेदना को प्रस्तुत करता है। वहीं विमर्श शब्द का अर्थ इस रूप में लिया जाता है- "किसी बात या विषय में किसी निर्णय या निश्चय पर पहुंचने से पहले जब हम कुछ लोगों के साथ बैठकर उसके सब अंगों या पक्षों का, ऊंच-नीच और हानि लाभ देखते है या सब बातें अच्छी तरह सोचते समझते है। तब हमारा यह कार्य विमर्श कहलाता है। विचार तो हम स्वयं या अकेले कर सकते है। परंतु विमर्श में किसी दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों की अपेक्षा भी होती है। आपस में मिलजुल कर और अच्छी तरह सोच समझकर की जानें वाली चर्चा ही

मुख्यतः विमर्श है। इस प्रकार हम कह सकते है कि जब कुछ लोग एक साथ बैठकर समाज के सबसे निम्नतम वर्ग की स्थिति, उसकी समस्याओं, विभिन्न पक्षों के विषय में अच्छी तरह सोच समझकर चर्चा करते है। उनका मूल्यांकन करते है तथा उनसे संबंधित विभिन्न मान्यताओं व नियमों का निर्माण करते है तो यह कार्य दलित विमर्श कहलाता है।

दलित विमर्श की शुरुआत 1914 ई. में सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित "हीरा डोम" की कविता 'अछूत की शिकायत' से मानी जाती है। जिसे हिंदी दलित साहित्य की पहली कविता माना जाता है। इस कविता में हीरा डोम ने ईश्वर से एक दलित के जीवन की शिकायत दर्ज की है यह कविता वास्तव में कविता कम एक दलित की वेदना अधिक है।[5]

दलित विमर्श का मूल उद्देश्य समतामूलक समाज का स्वप्न है। दलित विमर्श का मार्फत जातिगत समानता है। दलित विमर्श अंबेडकर को घोषित करता है। जातिगत समानता के दो स्वरूप सम्भव है या तो किसी भी जाति का अस्तित्व बरकरार नहीं रहे पर उनमें कोई क्रमिक भेदभाव न बचा रह पाये। दलित विमर्श के भीतर दो दल उपस्थित हैं। एक वे जो जातिवाद का विघटन चाहते है दूसरे वे जो जातिवाद का प्रतिष्ठान चाहते है। गौरतलब है कि जातिवाद के इस विघटन और प्रतिष्ठान के मध्य ही दलित विमर्श है।

दलित विमर्श को चर्चा का विषय बनाकर समय समय पर विभिन्न सम्मेलन व सभाएँ होती रही है लेकिन दलित लेखकों का सर्वप्रथम सम्मेलन बंबई में दलित साहित्य संघ ने 1958 में आयोजित किया। इस सम्मेलन में रचित साहित्य में दलित विमर्श पर होने वाली विभिन्न चर्चाओं को लिखित आधार प्रदान किया गया और समाज के इस मूक वर्ग को वाणी प्रदान की गई।

दलित विमर्श आज हिंदी लोकगीतों में, कहानियों, उपन्यासों, नाटकों, आत्मकथाओं, निबंधों, पत्रकारिता, सिनेमा आदि में देखने को मिलता है। आज दलित विमर्श का ऐसा कोई भी पक्ष नहीं है जहां इसका अस्तित्व न हो। लोकगीतों में गाँव के अनपढ़, गरीब, दलित पिछड़े लोगों की भावनाओं को ही मुखरित किया जाता है। इन गीतों में जहाँ दलितों की मंगलदायक और सुखदायक स्वर लहरी होती है। वही दुःख-दर्द, पीड़ा की पुकार भी सुनाई देती है। लोकगीतों में जहां दलितों की सामाजिक और धार्मिक स्थिति का उल्लेख मिलता है। वहीं कठिनाइयों से संघर्ष करके आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहन भी मिलता है। दलित जाति की स्त्रियों के अधिकतर लोकगीत व्यथा और पीड़ा से भरे होते है। यह अपने समाज पर बीती स्थितियों को गाती चली आ रहीं है। लोकगीत की छोटी छोटी कड़ियाँ इतिहास को समझने में सहायता करती है। लोकगीत दलित समाज की संस्कृति की थाती है इनसे दलित समाज की पुरानी स्थिति को भी समझने में सहायता मिलती है।

भारतीय साहित्य में अन्य भाषाओं के समान हिंदी भाषा व साहित्य में भी दलित विमर्श होता रहा है और आज इस दलित विमर्श को दलित साहित्य के माध्यम से उचित अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। हिंदी क्षेत्र में दलित साहित्य की रचना का पहला चरण काफी पुराना है। परन्तु सबसे बड़ी समस्या उसे स्वीकारने की थी। धीरे-धीरे दलित साहित्य के तेवर बदलने लगे और दलित विमर्श एक नया रूप ग्रहण करता गया।

दलित कहानी में दलित विमर्श दलित चेतना का संवाहक है। वह पीड़ित, शोषित , दलित वर्ग की कथा तो स्पष्ट करता ही है साथ ही उन्हें संघर्षरत होने के लिए प्रेरित भी करता है। हिंदी दलित कहानी का समकालीन परिदृश्य आठवें दशक में तेजी से उभरता है। नवें दशक में दलित कहानियों ने अपनी विशिष्ट पहचान निर्मित की। दलित कथाकारों को हिंदी में सर्वप्रथम हंस ने मंच प्रदान किया। नवें दशक में ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, श्यौराज सिंह बेचैन, सूरजपाल चौहान, डॉ. सुशीला टाकभौरे आदि की कहानियां हंस में छपी। इसके पश्चात लोकमत समाचार, युद्धरत आम आदमी, संचेतना, वसुधा, पश्यंती, कल के लिए, कथानक, इंडिया टुडे, दस्तक, उत्तर प्रदेश, प्रज्ञा साहित्य इत्यादि में दलित कहानियां प्रकाशित हुई। अनेक कहानी संकलन भी आए। हिंदी दलित कहानी की यह यात्रा सहज और सरल नहीं है। दलित कहानी ने समकालीन समस्याओं से मुठभेड़ की है। अपने सर्जनात्मक आक्रोशित स्वर को यथार्थ की भूमि पर खड़ा करके बदलाव के नये आयाम स्थापित किये है। इन दलित कहानियों में जहां भारतीय गाँव में व्याप्त वर्ण व्यवस्था और सामंती व्यवस्था में पिसते दलितों की हाहाकार है, वही छोटे शहरों एवं महानगरों में बसे दलित सरकारी कर्मचारियों की व्यता- कथाएँ है।[6] दलित कहानियों में दलित विमर्श जहां देखने को मिला। वहीं उपन्यासों में भी दलित विमर्श की चर्चा किसी न किसी रूप में देखने को मिलती है।

आज बांग्ला, उड़िया, मराठी, हिंदी, तमिल, मलयालम सहित प्रायः सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं में नाटकों की रचना हुई है किंतु समकालीन साहित्य में अपेक्षाकृत इसका लेखन और प्रचलन बहुत कम हुआ है। दलित साहित्य में फिर से नाटकों का सृजन हो रहा है। भले ही यह इस नये साहित्य के इतिहास के लिए प्रारंभिक आरोपित प्रयास हो किंतु समकालीन दलित साहित्य में आज नाटकों की कमी नहीं है। समकालीन नाटको के लेखन और

मंचन के अतिरिक्त यदि मध्यकालीन और आधुनिक लोकनाट्य परम्परा को देखा जाये तो यहाँ भी नाट्य परंपराओं के सूत्रधार दलित ही दिखायी पड़ते है। लोकनाट्य परंपरा विशुद्ध रूप से दलितों की चीज है। लोकनाट्य दलित समाज के बहुत नजदीक है। दलितों के सुख, दुख, संवेदनाएं तथा भाषा शैली का सहजता से लोकनाट्य में प्रतिनिधित्व होता है। बकौल कमलेश्वर लोक गीत हों या लोकनाट्य ये सब दलित समाज की ही निधि है।[7]

हिंदी में करीब दो दशक पहले भगवान दास की सामाजिक आत्मकथा "मैं भंगी हूं" प्रकाशित हुई। उस समय दलित आत्मकथा ने वह प्रतिष्ठा हासिल नहीं की थी जो उसने आज की है। सृजनात्मक दलित आत्मकथा लेखन में जिन समकालीन दलित लेखकों ने कुछ प्रयास किए उनमें मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, कौशल्या बैसंत्री, श्यौराज सिह बेचैन , कुसुम वियोगी, सूरजपाल चौहान आदि प्रमुख है। इन लेखकों द्वारा दलित साहित्य के लिए दिया गया योगदान अतुल्नीय है।

दलित साहित्य में निबंध की उपस्थिति इसकी परिपक्वता का प्रमाण है। हिंदी दलित लेखकों द्वारा निबंधों में प्रायः सामाजिक मुद्दो पर लिखित निबंधों की ही अधिकता है। हिंदी दलित साहित्य में निबंध केवल दलित समस्याओं से ही संबंधित लिखे गए है, जो केवल विश्लेषणात्मक है, जो सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थितियों का विश्लेषण करते है। निबंध अभी अपनी शैशवास्था में है लेकिन भविष्य में इसके निश्चित दिशा में विकसित होने की पूरी सम्भावनाएँ है।[8]

हिंदी दलित पत्रकारिता का प्रश्न सौ वर्षो से भी अधिक पुराना है हिंदी भाषा में दलित पत्रकारिता का उदय उस समय हुआ, जब बाबा साहब डॉ. अंबेडकर का जन्म भी नहीं हुआ था। समकालीन पत्रकारों में ज्योतिबा फूले ही थे जिन्होंने इस क्षेत्र में मौलिक एवं आधारभूत काम किया था। वास्तव में सन् 1980 के आसपास ही हिंदी में दलित प्रश्न पत्र पत्रिकाओं में दिखाई पड़ा, इन पत्र-पत्रिकाओं को मुख्यतः दो रूपों में देखा जा सकता है। पहले प्रकार की वह पत्रिकाएँ जो हिंदी साहित्य की परंपरागत पत्रिकाएँ है और उन्होंने दलित प्रश्न को भी स्थान दिया है। दूसरे प्रकार की वह पत्रिकाएँ है जो दलितों द्वारा प्रकाशित एवं संपादित दलित चेतना पर ही केंद्रित रहती है। दलित प्रश्न को हिंदी में स्थापित करने का प्रथम प्रयास हिंदी के प्रसिद्ध लेखक एवं सम्पादक कमलेश्वर ने किया। उनके सम्पादकत्व में सन 1975 ई. में सारिका ने दलित साहित्य विशेषांक निकाला। अप्रैल 1975 का अंक देखने से ज्ञात होता है कि हिंदी में सबसे पहले दलित साहित्यकारों का परिचय इस अंक में है।[9]

भारतीय सिनेमा ने आज अपना स्थान विश्व स्तर पर बना लिया है। फिल्मों में भी दलित पात्रों का जिक्र प्रस्तुत किया जा रहा है। आज अनगिनत ऐसी फिल्में बन चुकी है जिनके पात्र फिल्मों में दलित परिवार से संबंध रखते है।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि समकालीन साहित्य में दलित विमर्श की भूमिका केवल एक साहित्य विधा में ही व्याप्त नहीं है अपितु हर विधा में अपनी पकड़ मजबूत कर चुकी है।

नजदीक रुचि ऑयल कार्पोरेशन, हाऊस नः 497, ब्लॉक नः , सतनाम नगर, दोराहा शहर, जिला लुधियाना-141421,
मो. 9815193355

संदर्भ

1. किशोरराज, हरिजन से दलित, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1994, पृ. 10
2. डॉ. किरण बाला, समकालीन हिंदी कहानी और समाज का वेतन, अनुभव प्रकाशन, कानपुर, 1998 , पृ .12
3. डॉ. विजय कुमार संदेश और डॉ. नामदेव, दलित चेतना और स्त्री विमर्श, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी ,नयी दिल्ली, 2009, पृ. 123
4) वही, पृ. 42
5) उमाशंकर चौधरी, दलित विमर्श कुछ मुद्दे कुछ सवाल, आधार प्रकाशन, पंचकूला, 2011, पृ. 82
6) डॉ. रश्मि चतुर्वेदी, हिंदी दति साहित्य की विविध विधाएँ, सरस्वती प्रकाशन, कानपुर, 2014, पृ.78
7. डॉ. देवी सिंह, मेरठ जनपद की परिगणित जातियों के लोक साहित्य का अध्ययन, 2000, पृ. 234
8. डॉ. रश्मि चतुर्वेदी, हिंदी दलित साहित्य की विविध विधाएँ, वही, पृ. 143
9) वही, पृ. 170

- आस्था तर्क से परे की चीज है। जब चारों ओर अंधेरा ही दिखाई पड़ता है और मनुष्य की बुद्धि काम करना बंद कर देती है, उस समय आस्था की ज्योति प्रखर रूप से चमकती है और हमारी मदद करती है।
  -संपूर्ण गांधी वाङ्मय
- पक्षियों की तरह हवा में उड़ना और मछलियों की तरह पानी में तैरना सीखने के बाद हमें इनसानों की तरह धरती पर चलना सीखना है। -डॉ. राधाकृष्णन
- संयम का अर्थ है अपनी बिखरी शक्ति को एक निश्चित दिशा देना। लक्ष्य का निश्चय होते ही चीज़ें और लोग निरर्थक लगने लगते हैं जो लक्ष्य प्राप्ति में सहायक नहीं होते। -स्वामी रामतीर्थ

एक पुनरावलोकन

अमरकांत : निम्न मध्यवर्ग की विडंबनाओं का कथाकार

● डॉ. हेमराज कौशिक

(गतांक से आगे)

'श्याम' कहानी में भी मध्यवर्गीय परिवारों की विपन्नता के कारण दाम्पत्य जीवन के तनाव का चित्रण है। इस कहानी में पुरुष की वर्चस्ववादी मनोवृति को भी अंकित किया है। कहानी में लता और महेन्द्र के दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों के माध्यम से इसे स्पष्ट किया है। पत्नी घर की आर्थिक दशा को अनुभव कर चिंताग्रस्त रहती है, उसे संतति के भविष्य की चिंता होती है। परन्तु पति पत्नी को नीचा दिखाने के लिए अवसर निकालकर तीव्र कटाक्ष करता है। पति की पलायन और उपेक्षापूर्ण दृष्टि को अनुभव कर पत्नी कहती है 'मर्द पुरुष कहीं हिम्मत हारता है? पर आप को तो कोई शौक ही नहीं, आप खुद भिखमंगा बना रहना चाहते हैं। और बाल बच्चों को भिखमंगा बनाए रखना चाहते हैं।' पति पत्नी के इन व्यंग्यवाणों से आहत होकर कहता है 'मेरे घर में तुम मेरा इस तरह अपमान नहीं कर सकती' पति के इस कथन से यह तथ्य उभरता है कि पति अपने आप को घर का स्वामी समझता है और उसकी दृष्टि में पत्नी का घर में कोई स्थान नहीं है।

'विजेता' कहानी में यह प्रतिपादित किया गया है कि सामाजिक व्यवस्था की विसंगतियों के कारण आज का युवा वर्ग मानवीय मूल्यों की अवहेलना करता हुआ प्रतिस्पर्धा के विकृत मार्ग पर जाता है। इसे मित्र की पत्नी के साथ प्रेम के नाटक के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। प्रेम के इस नाटक में मित्र की पत्नी उसके प्रति अनुरक्त होती है और कहीं दूर चलने का आग्रह करती है। अंततः पत्नी पति की मार से मर जाती है। इस कहानी में विजेता शब्द में निहित व्यंग्य को अर्थपूर्ण ढंग से व्यंजित किया है। मान, प्रतिष्ठा, स्पर्धा, उपलब्धियाँ आदि सामाजिक मानदण्डों पर यह कहानी प्रहार करती है।

'छिपकली' में ईमानदारी से कार्यालय में कार्य करने वाले कर्मचारी के शोषण का चित्रण है। दो बेटों और पांच बेटियों के पिता को सवा सौ की नौकरी करना कठिन हो जाता है क्योंकि उसकी ईमानदारी और कर्मठता से कार्यालय के कर्मचारी उस से चिढ़ते हैं। कार्यालय में रहते हुए वह अतीत को स्मरण करता है। उसका अतीत सुखद और अंततः दुखद स्थितियों से भरा है। कहानी में उसकी महत्त्वाकांक्षाओं और स्वप्नों का चित्रण है। मध्यवर्गीय व्यक्तित्व की दुर्बलताएं रामजी लाल में विद्यमान है। अपनी अतीत जीवन की घटनाओं के उद्घाटन के द्वारा वह अपने यश और गरिमा का रौब झाड़ता है ताकि वह कार्यालय में अपना प्रभाव जमा सके। परन्तु कार्यालय में उसकी दयनीय स्थिति है। उसमें कायरता और मिथ्या भाषण जैसी कमजोरियां हैं। कार्यालय में उसका मैनेजर और मालिक उसे अकारण तंग करते हैं। सामंतवादी व्यवस्था में सामंतों और सामान्यजन में शोषक और शोषित का भेद था। पूंजीवादी व्यवस्था में भी यह वर्गभेद दिखाई देता है। कार्यालय में भी अधिकारी और उनके अधीन कर्मचारियों में भी वर्गभेद दिखाई देता है जिसमें अधिकारी अपने स्वार्थों की सिद्धि के लिए अनेक युक्तियों का प्रयोग करता है। कार्यालय में निकम्मे, चाटुकार कर्मचारी कर्मठ कर्मचारी के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करते हैं।

'कुहासा' कहानी पूंजीवादी समाज में शोषण के विविध रूपों को उद्घाटित करती हुई झींगुर के पुत्र दूबर जैसे अनेक युवकों की विडम्बनात्मक नियति को प्रस्तुत करती है जो गाँव में अभावग्रस्त जीवन यापन करते हैं और आजीविका की तलाश में शहर में आते हैं। आधुनिक नगरों में उनका विभिन्न प्रकार का शोषण होता है। रामचरण जैसे दलाल श्रमिकों का शोषण करते हैं। उन्हें रोटी, मकान, आजीविका आदि के अनेक प्रलोभन देते हैं परन्तु घोर परिश्रम करने के पश्चात् भी उन्हें श्रम का मूल्य नहीं मिलता और उनकी स्थिति भिखमंगों से भी गई-गुजरी होती है। अमरकान्त ने इस कहानी में निम्नमध्यवर्गीय जीवन की करुण गाथा प्रस्तुत की है। चमरटोली का झींगुर एक श्रमिक कृषक है, सूखे की स्थिति के कारण उसके लिए परिवार का पालन पोषण दुष्कर हो जाता है। आर्थिक कठिनाइयों के कारण किशोर वय के पुत्र दूबर पर उसका क्रोध प्रस्फुटित होता है। वह उसे पीटकर मजदूरी करने के लिए विवश करता है। पुत्र पिता के व्यवहार से क्षुब्ध होता है और विद्रोह के फलस्वरूप गांव छोड़कर शहर में चला जाता है। शहर में उसे साइकिल ढोने, जूठन साफ करने, चुनाव में नारे लगाने के काम मिलते हैं। रामचरण ठेकेदार उसे रिक्शा दिलाने का प्रलोभन देकर

छलता है। वह शहर में कठोर परिश्रम करने के बाद भी खुले आसमान के नीचे सोता है। भीषण सर्दी में उसे रात बिताना कठिन होता है। उसकी दयनीय स्थिति को देखकर एक व्यक्ति उसे भिखमंगा समझकर एक कंबल दिलवाता है। परन्तु यहाँ भी भिखमंगे और कोढ़ी मिलकर उसे मारते हैं और कम्बल छीन लेते हैं। परन्तु उसी समय रामचरण ठेकेदार आकर उन्हें भगाता है और स्वयं कम्बल को तीस रुपये में दुबर से लेता है। वह तर्क देता है 'यह अस्पताली कम्बल है, विलायत से मँगाया गया है, इसमें रोगों की छूत है, इसे जो ओढ़ेगा हैजा, टी.बी., कैंसर से जल्दी मर जाएगा। वह दूबर को तीस रुपये देने की बात करता है, परन्तु उसे पच्चीस रुपये ही देता है। वह उस राशि से मूँगफली बेचने का धन्धा करना चाहता है। परन्तु भीषण शीत में वह कुछ नहीं कर पाता है अंततः वह मर जाता है।

'कम्युनिस्ट' कहानी में वियनीपुर के तीन ठाकुर भिन्न प्रकृति के हैं, एक दूसरे का विरोध भी करते हैं परन्तु किसी दूसरे के साथ लड़ने के लिए बिना कारण जाने संगठित होकर टूट पड़ते हैं। बड़े ठाकुर जो दिन भर धर्म के सागर में डूबे रहते हैं, धार्मिक होने का दंभ करते हैं और लोग उनके व्यवहार को देखकर उन्हें 'गांधी जी' कहते हैं। वह अपने पुराने हलवाई की दूसरी पत्नी सुनरी के प्रति कुदृष्टि रखता है और एकांत पाकर उसका शील भंग करने के लिए उद्यत होता है। वह किसी तरह उसके चंगुल से मुक्त होती है और सारा वृतान्त पति को सुनाती है। उसका पति भोलू क्रोधाग्नि में ठाकुर से कहता है 'गरीबों की इज्जत होती है कि नहीं। आज मैं इसका फैसला कर लूँगा। जेहल, फांसी का मुझे डर नहीं है। क्या समझकर आपने सुनरी को पकड़ लिया था।' भोलू के इस कथन का ठाकुर के पास कोई उत्तर नहीं था। एक नीच आदमी का ऊँची आवाज में यह कहना उन्हें अवाक् कर देता है। तीनों भाई भोलू पर झूठा आरोप लगा कर उसे चोर सिद्ध ही नहीं करते, अपितु उसे निर्ममता से पीटते भी हैं। अपने अधिकारों की बात करने पर उसे कम्युनिस्ट कहते हैं।

अमरकान्त ने व्यक्तित्व की ओछी और स्वार्थ के प्रवृति को अनेक कहानियों में व्यंजित किया है। 'सुख और दुःख का साथ' इस दृष्टि से उल्लेखनीय कहानी है जिसमें दो सहेलियों - विमल की माँ और बबली की माँ की परस्पर विरोधी प्रवृतियों के अंकन के माध्यम से इसे स्पष्ट किया है। वे दोनों घनिष्ठ सहेलियों के रूप में जानी जाती है। परन्तु वास्तविकता यह है कि पांच वर्ष के सान्निध्य में विमल की माँ शोषण का शिकार ही होती है। जब वह गंभीर रूप में बीमार पड़ती है तो उसका आना जाना ही बंद नहीं होता अपितु अपने घर का उसके घर की तरफ खुलने वाला दरवाजा भी बंद कर देती है। छोटा बच्चा मुन्ना भूल से और लालच से उसके घर आने लगता है तो उस गंभीर स्थिति में बालक का आगमन उसके अकेलेपन में सहारा प्रतीत होता है। परन्तु इसकी भी कीमत उसे चुकानी पड़ती है। बबली की माँ कभी नींबू का आचार, टमाटर, आलू और दूसरी घरेलू चीजें मांग कर अपने स्वार्थों की पूर्ति करती है जब किसी चीज के घर में न होने के कारण मना करती है तो वह बच्चे का उसके घर जाना सदा के लिए बंद कर देती है परन्तु बीस दिन के पश्चात् जब उसकी मृत्यु हो जाती है तो वह विमल की माँ की लाश के पास बैठकर अपनी सहेली के अकेले छोड़ जाने पर ऐसा करुण विलाप करती है कि मृत सहेली के प्रति शोकाकुल बबली की माँ के प्रति सभी द्रवित हो जाते हैं। दुःख के इस मिथ्या प्रदर्शन को यह कहानी बखूबी उद्‌घाटित करती है।

सप्ताहांत' में निम्न मध्यवर्गीय व्यक्तित्व के जीवन के उल्लास का चित्रण किया है जो लाटरी जीतने की अफवाह और दूसरे दिन अखवार में लाटरी जीतने वालों में नाम न होने के कारण उसकी मनःस्थिति का चित्रण अमरकान्त जिस सूक्ष्मता और गहनता से करते हैं वह अद्वितीय है। निम्नमध्यवर्गीय परिवार की आकांक्षओं विडम्बनाओं को यह कहानी प्रस्तुत करती है।

'दो चरित्र' में मध्यवर्गीय व्यक्तित्व की कथनी और करनी के अंतर को स्पष्ट किया है। मध्यवर्गीय व्यक्तित्व अभावग्रस्त जन के प्रति विपरीत दृढ़ धारणाओं को भी अनावृत किया जिनके कारण वे प्रत्येक निर्धन, भिक्षाा मांगने के लिए विव्य व्यक्तित्व को चोर और ठग समझते हैं। जनार्दन ऐसा ही व्यक्तित्व है जो एम. ए.एल.एल.बी. तक पढ़ाई करने के अनंतर को-आपरेटिव इन्सपेक्टर के पद पर कार्यरत है। उसकी समृद्धता उसके मालपुए की भाँति फूले हुए गालों से प्रकट होती है। खा पीकर वह प्रसन्न है परन्तु उसकी परेशानी यही है उसका नौकर भाग गया है। नौकर के संबंध में भी उसकी धारणा यही है कि आपके मेरे नौकर चाकर भाग कर कोई अच्छा काम धाम थामते हैं, तो अपने को भूल जाते हैं। सभी भीख मांगते है या आवारगी करते हैं। मैं चुनौती देकर कह सकता हूँ कि इन्हीं भिखमंगों से किसी को बुलाइए और काम देने की बातचीत कीजिए, अगर वह भाग न चले तो मेरा नाम नहीं।' परन्तु जनार्दन को दो मित्रो कन्हाई और अर्जुन के सामने एक दुबला पतला उनके घर आता है और किसी भी प्रकार का काम करने को तैयार हो जाता है। उससे सफाई और दूसरे काम करवा कर जनार्दन मित्रों के जाने के बाद घर से लात मारकर इसलिए भगा देता है कि उसकी निम्न मध्यवर्गीय विशेषकर भिखमंगों के प्रति पूर्व निर्मित धारणा निर्मूल सिद्ध होती है। यह कहानी मध्यवर्गीय व्यक्तित्व के अहंकार अमानवीयता और सोच की जड़ता व्यंजित करती है।

'जनमार्गी' कहानी में देश की आजादी के लिए निर्मम यातनाओं को सहन करने वाले बलराज जैसे लोग आजादी के पश्चात् उपेक्षित जीवन यापन करते है। किसी समय पिस्तोल लेकर घूमने वाले बलराज की कविता को सुनने के लिए हजारों की

भीड़ एकत्रित होती थी। परन्तु आज उसकी स्थिति इतनी दयनीय है कि फेरीवाले से चने लेकर, कहीं चाए पीकर दिन काटने पड़ते हैं या दो तीन दिन का भोजन बनाकर रखता है। उसके जेल के साथी विभिन्न संस्थाओं से सम्बद्ध होकर घनाढ्‌य हो गए है। उनके पास धन, बल और सम्मान सब कुछ है। उसने सिद्धान्तों और आदर्शों का जीवन का संबल बनाया परन्तु उसके साथियों ने झूठ, बेईमानी और चाटुकारिता का मार्ग अपना कर यश अर्जित किया उन्हें देखकर उसे कुछ क्षणों के लिए पश्चाताप भी होता है कि वह क्रान्तिकारी न होकर डाकू या घूस खोर होता।' पचास की उम्र में ही वह अत्यन्त वृद्ध प्रतीत होता है। उसकी फरारी की अवस्था में उसकी भेंट सुयीला से हुई थी। सुशीला के प्रति उसके हृदय में कहीं अनुराग था। परन्तु जेल से छुटने के बाद उसे ज्ञात होता है कि उसका विवाह हो गया है। मध्यवर्गीय लड़की में भी यह हिम्मत नहीं थी कि वह कहती कि वह किसी क्रान्तिकारी से विवाह करना चाहती है। एक लम्बे अंतराल के बाद उसके मन में सुशीला से भेंट करने की चाह होती है वह पाँच रुपये की मिठाई का डिब्बा लेकर उसके घर पहुँचता है। सुशीला का बच्चा उसे देखकर उसे 'यू आर डर्टी' कहता है। उसे अपनी दारुण दशा का बोध होता है। वह वहाँ से लौटने का मन बनाता है। उसी समय उसकी जीर्णशीर्ण देह सुशीला के दरवाजे पर ढेर हो जाती है। बाद में वह आती है नौकर को प्रताड़ित करती है कि पूछा क्यों नहीं कहाँ से आया था क्या काम था? वह अब तक बलराज नाम ही विस्मृत कर चुकी थी। कदाचित विस्मृति का नाटक कर रही हो ताकि वैवाहिक जीवन में किसी प्रकार की समस्या उत्पन्न न हो। एक क्रान्तिकारी व्यक्तित्व का त्रासदीय अंत मार्मिक है और जन सेवा के मार्ग पर चलने वाले व्यक्तित्व आजादी के पश्चात् किस प्रकार का उपेक्षणीय जीवन यापन करते रहे, उस सच्चाई को सामने लाती है।

'नौकर' में मध्यवर्गीय परिवारों की संकीर्ण मानसिकता, अहंमन्यता, मिथ्या दंभ और नौकर के प्रति अमानवीय दृष्टिकोण को वकील साहब के परिवार के माध्यम से व्यक्त किया है। यह कहानी मध्यवर्गीय परिवारों की जीवनचर्या का जायजा लेती है। वकील साहब के परिवार के सभी सदस्य परिवार के नौकर पर शासन चलाते हैं और शोषण करते हैं। वकील साहब का घरेलू नौकर जन्तु उन सभी की दृष्टि में एक ऐसा जन्तु है जिसका निजी कोई अस्तित्व नहीं है। घर के छोटे बच्चों से लेकर वृद्धों तक प्रत्येक सदस्य के आदेशों का पालन करना उसका कर्तव्य होता है। मध्यवर्गीय परिवारों की ओछी मनोवृति और कमीनापन जन्तु नामक नौकर से करवाए जाने वाले कार्यों से प्रकट होता है उसे जिन कार्यों को करना होता है उनमें कभी एक आने का हींग, कभी एक पैसे का नमक, कभी दस पैसे की लकड़ी और कभी चार आने का घी कभी पड़ोस के व्यक्ति से कभी दो गिलास आटा, कभी एक मुट्ठी चीनी, आधा सेर मूंग या उड़द की दाल उधार लाना होता है। नौकर के माध्यम से जिन कार्यों को करवाया जाता है उनके माध्यम से जहाँ मध्यवर्गीय परिवारों के आर्थिक स्तर और मनोवृत्ति का बोध होता है। प्रातः से लेकर रात्रि तक घर के प्रत्येक कार्य को पूरा करने वाले नौकर को भोजन के रूप में शेष बचा हुआ खाना, बची खुची तरकारी और पानी दाल परोसी जाती है। जन्तु के लिए भोजन उसी भाँति दिया जाता है जैसे किसी कुत्ते जैसे जन्तु के लिए फेंका जाता है। इतना ही नहीं जब वह बीमार पड़ता है तो उसकी बीमारी के उपचार के लिए कोई सहायता करने नहीं आता। यहाँ तक कि उसे कोई पानी पीने के लिए भी नहीं पूछता।

नौकर की बीमारी के संबंध में उनका दृष्टिकोण है 'दवा दारू की जरूरत ही क्या है। छोटी जाति के लोग हवा-पानी से ठीक हो जाते हैं। इतना ही नहीं वे यह भी कहते हैं कि उसे बड़े घर का अन्न लग गया है नहीं तो क्या कमतर-कहार इतने दिनों तक बीमार रहते हैं। उसे यह भी धमकी दी जाती है कि अगर नहीं चंगा होगें बच्चा तो निकाल बाहर कर दूँगा। भीषण अस्वस्थता में उसे दो घड़ा पानी लाने का आदेश दिया जाता है। प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने जन्तु की विवशता भी प्रकट की है। वह भली भाँति जानता है कि वहाँ से निकाल दिया जाने के बाद वह कहाँ जाएगा। वकील साहब के परिवार की मानसिकता के माध्यम से कहानीकार ने मध्यवर्गीय समाज की निम्न मध्यवर्गीय समाज के प्रति उपेक्षापूर्ण, स्वार्थी, संवेदनाशून्य दृष्टिकोण को सामने लाया है। उनकी दृष्टि में नौकर एक छोटी जाति का जीव है। अमरकान्त ने जन्तु के जीवन की गाथा के माध्यम से उन घरेलू नौकरों के जीवन की नियति को चित्रित किया है। जिन्हें प्रातः से लेकर रात्रि तक घर के सभी व्यक्तित्वों की सुख सुविधा के लिए बिना किसी अंतराल और विश्राम के कार्यों में लगे रहना पड़ता है, परन्तु जब वह बीमार पड़ता है तो उनकी किसी तरह के उपचार में किंचित भी मदद नहीं की जाती है। अपितु उसे धमकी देकर नौकरी से हटाने के लिए कहा जाता है। इस प्रकार इस कहानी में कथाकार ने मध्यवर्गीय समाज की क्षुद्रताओं और टुच्चेपन को सामने लाया है। नौकर की नियति और वकील परिवार की मानसिकता के माध्यम से मध्यवर्गीय समाज की मनोवृत्ति, सोच और निम्न मध्यवर्ग के प्रति द्वेष और उपेक्षापूर्ण दृष्टि को उद्‌घाटित किया है। 'बहादुर' कहानी में भी घरेलू नौकर दिल बहादुर उत्पीड़न और शोषण के शिकार होता है। बालक दिल बहादूर का पिता समर भूमि में मारा जाता है। वह विधवा माँ के कार्यों में वह सहयोग नहीं देता तो माँ द्वारा पीटा जाता है जिसके परिणामस्वरूप वह घर से भाग जाता है। मध्यवर्गीय दम्पति के यहाँ उसे नौकर रखा जाता है। घर की मालकिन निर्मला के घर में उसका शोषण ही नहीं किया जाता उसे बात-बात पर प्रताड़ित किया जाता है। रिश्तेदार अतिथियों के द्वारा उस पर चोरी का इल्जाम भी लगाया जाता है। निर्मला के बेटे द्वारा भी उसकी अकारण पिटाई की जाती है। बाप

की गाली दी जाती है इस कारण वह घर छोड़कर चला जाता है।

अमरकान्त की निम्नमध्यवर्ग के प्रति सहानुभूति पूर्ण दृष्टि रही है। उनकी कहानियों में मध्यवर्गीय यथार्थ को वैविध्यपूर्ण सच्चाइयों के साथ सूक्ष्म रूप में उभारा है। 'फर्क' कहानी में निर्बल और सबल चोर के प्रति सामाजिक प्रतिक्रियाओं के माध्यम से लोगों के दृष्टिकोण के अंतर को स्पष्ट किया है। चौदह पन्द्रह वर्ष का अवयस्क लड़का क्षुधा तृप्ति के लिए अवसर प्राप्त करके किसी घर में घुस कर चार परांठे और दूध पीता है। एकाध कपड़ा वर्तन आदि ले जाकर उसे बेचकर एक आध दिन की भूख मिटाने का जुगाड़ करता है। क्षुधा तृप्ति करने वाले दुर्बल शरीर वाले इस युवक के प्रति पुलिस वाले से लेकर दूसरे मध्यवर्ग के लोग उसे घोर अपराधी सिद्ध करते हैं और उसे कठोर से कठोर सजा देने का परामर्श देते हैं। परन्तु एक डकैती में पांच कत्ल करके बीस हजार की संपति लूटने वाला भंयकर डाकू उनकी दृष्टि में प्रशंसा का पात्र बनता है। वे पुलिस अधिकारी को भी परामर्श नहीं देते, पुलिस अधिकारी भी किसी प्रकार की धमकी नहीं देता। अपराध के प्रति उनका आक्रोश समाप्त हो जाता है। उपस्थित लोग ही उसके चरित्र की गरिमा को सिद्ध करते हैं कि वह निर्धनों को नहीं लूटता और न ही किसी स्त्री की ओर आँख उठाकर देखता है जबकि वास्तिविकता यह है कि वह घोर अपराधी और ऐय्याश किस्म का व्यक्तित्व है। उस नृशंस डाकू को देखकर सभी की प्रतिक्रियाएं और आक्रोश समाप्त हो जाता है।

'गगन बिहारी' में कहानीकार ने यथार्थ में टूटे स्वपनों की दुनिया में विचरण करने वाले युवकों की जीवनचर्या का चित्र प्रस्तुत किया है जो जीविकोपार्जन के लिए किसी भी कार्य को करने के लिए मन नहीं लगाते हैं, कल्पना और स्वप्नों की दुनिया में विचरण करते हुए परिवार, समाज और राष्ट्र की चिंता में लीन रहने का अभिनय करते हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि उन्हें घर का कोई सामान्य सा कार्य करने का परामर्श दिया जाता है तो वे उसे भी करना नहीं चाहते। कर्म और दायित्व से विमुख होने के लिए उसके पास सबसे ठोस बहाना स्वास्थ्य का होता है। जिसके कारण वह बिस्तर पर पड़े रहने में जीवन की सार्थकता समझते हैं। गगन बिहारी ऐसा ही नवयुवक है जो जीवन में एक के बाद एक व्यवसाय करने का स्वप्न देखता है। उसकी महत्वाकांक्षएं हैं परन्तु उन्हें कार्यान्वित करने का कोई ठोस प्रयास वह नहीं करता है। वह स्वप्नजीवी युवक है। वह कभी कृषि करने का स्वप्न देखता है तो कभी होम्यिोपैथ बनने का, कभी व्यापारी बनने का स्वप्न देखता है। वह सोचता है व्यापार करना कौन सा मुश्किल काम है। चूंकि इन्सान मूलतः नीच है इसलिए वह आसानी से व्यावहारिकता, चापलूसी, झूठ फरेब, चार सौ बीस आदि सीख लेगा। दिन रात ध ुंआधार मेहनत करने और उसका धन्धा निकलेगा।' आज की युवापीढ़ी की अकर्मण्यता को यह कहानी व्यंग्य के धरातल पर प्रस्तुत करती है। 'देश के लोग' में कहानीकार ने देश के उस शिक्षित वर्ग की मनोवृति को सामने लाया है जिन्हें अपने ही देश के सामान्यजन के प्रति घृणा का भाव रहता है। ऐसे सफेदपोश शिक्षितों वर्ग की अहंमन्यता और अमानवीयता को अखिल के माध यम से प्रकट की है। वह व्यवसाय से प्राध्यापक है वह अपने आप को सामान्यजन से श्रेष्ठ समझता है। चौराहे पर रिक्शा में एक रोगी व्यक्तित्व के साथ बैठता है। वह उसके प्रति घृणा की दृष्टि से ही नहीं देखता है, अपितु उसके समय पूछने और स्थान का नाम पूछने पर कोई उत्तर नहीं देता है। उसमें श्रेष्ठता का अहंकार यहाँ तक है कि उसे अपने देश में कोई चीज श्रेष्ठ नजर नहीं आती है। रिक्शा से उतरने पर रोगी सहयात्री मर जाता है। 'दुर्घटना में नगरीय व्यक्तित्व की दृष्टि में ग्रामीण व्यक्तित्व का कोई महत्त्व नहीं है। नगर से संबंध रखने वाले राजेश के लिए आचार व्यवहार, मैत्री, संबंध, विचार, आदर्श, त्याग आदि सभी मूल्य अपने स्वार्थों की पूर्ति के साधन है। वह उन्हीं लोगो के साथ संबंध बनाना चाहता है जिससे वह अपने हित साध सके। ट्रेन के डिब्बे में दो बर्थों पर अनधिकृत बैठा राजेश ग्रामीण व्यक्तित्व के अनुरोध पर भी उसे बैठने के लिए स्थान नहीं देता। जब उसे ज्ञात होता है कि ट्रेन में डाकू आक्रमण करने वाले हैं तो ग्रामीण को स्थान ही नहीं देता अपितु उसकी प्रशंसा कर भी करता है तथा खाने के लिए भी पूछता है। आसन्न संकट के समय वह ग्रामीण व्यक्तित्व ट्रेन में डाकुओं के आक्रमण की अपेक्षा ट्रेन दुर्घटना ग्रस्त होती है तो वही ग्रामीण उसका सामान उठाने में उसकी सहायता करता है। वह ग्रामीण का हितैषी होने का अभिनय करता है। वास्तविकता यह है कि उसमें अवसरवादिता और काइयांपन ही अधिक होता है। उसके लिए अच्छे बुरे की परिभाषा अपने हित साधन के आधार पर ही होती है। कहानी के अंत में उसकी चापलूसी प्रकट होती है

'असमर्थ हिलता हाथ' में प्रेम और प्रेम विवाह के संदर्भ में नारी का नारी के प्रति दृष्टिकोण व्यंजित किया है। कहानी में मां अपने यौवनकाल में प्रेम किसी से करती है परन्तु विवाह कहीं अन्यत्र होता है। परम्परागत समाज में वह जाति और धर्म की दीवारों को लांघने का साहस नहीं बटोर पाती। विवाहोपरान्त नीरस और यांत्रिक जीवन यापन करती है। उसमें किसी दूसरे के प्रेम के प्रति कोई सहानुभूति भाव नहीं होता।

जब वह ग्रामीण युवक से कहता है 'भइया जरा संभलकर चलना। मुझे तो हर क्षण तुम्हारी ही चिंता लगी रहती है।

'असमर्थ हिलता हाथ' में प्रेम और प्रेम विवाह के संदर्भ में नारी का नारी के प्रति दृष्टिकोण व्यंजित किया है। कहानी में मां अपने यौवनकाल में प्रेम किसी से करती है परन्तु विवाह कहीं अन्यत्र होता है। परम्परागत समाज में वह जाति और धर्म की दीवारों को लांघने का साहस नहीं बटोर पाती। विवाहोपरान्त नीरस और यांत्रिक जीवन यापन करती है। उसमें किसी दूसरे के प्रेम के प्रति कोई सहानुभूति भाव नहीं होता। घृणा और ईर्ष्या की भावना इतनी प्रखर हो जाती है कि वह अपनी बेटी मीना के किसी युवक से प्रेम को भी वह सहन नहीं कर पाती। माँ बेटी के युवक के प्रति प्रेम को वह अस्वीकार करती है परन्तु मरणासन्न अवस्था में उसे बेटी के चेहरे पर एक पवित्र और निर्दोष जीवन की निष्फलता दिखाई देती है। इस अवस्था में वह अपनी बेटी को यह बताना चाहती है कि उसे अपनी आत्मा की रोशनी के अनुसार अपना रास्ता चुनना चाहिए और यह कि कायरता जिन्दगी को झूठा बना देती है। उसकी यह कामना होती है कि मीना जिन्दगी में झूठ के पीछे न भागे बल्कि सत्य को साहस के साथ ग्रहण कर वास्तविकता सुख को प्राप्त करे।' माँ का असमर्थता में उठा हाथ उसे प्रेम को वरण करने का संकेत करता है परन्तु परम्परावादी समाज की इकाई परिवार के सदस्य माँ के संकेत का अर्थ भिन्न लगाते हैं। वे बेटी को अपनी जिद्द तोड़ने के लिए कहते है ताकि माँ के प्राण आसानी से निकल जाए नहीं तो वह चौरासी लाख योनियों में भटकती रहेगी। 'मैं वचन देती हूँ कि मैं वही करूँगी जो तुम्हारी इच्छा थी'।

'हत्यारे' में वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में युवा पीढ़ी की दिगभ्रमित स्थिति, मूल्यहीनता तथा वर्तमान शिक्षा प्रणाली की विकृतियों, विश्वविद्यालय में शिक्षा के नाम किए जाने वाली व्यवसायिकता, अनैतिकता भ्रष्टाचार को चित्रित किया है। कहानी में गोरा और काला दो चरित्र है जो आज की अर्धशिक्षित युवा पीढ़ी की मानसिकता, बेईमानी, लक्ष्यहीन घुम्मकड़ी, अनापशनाप, लफ्फाजी और झूठी बयानबाजी को चित्रित करते हैं तथा युवापीढ़ी के दुर्व्यसनी अय्याशी चरित्र को सामने लाते हैं। गोरा और काला ऐसी शिक्षा पद्धति की उपज हैं जहाँ शिक्षा के ठेकेदार कुजियाँ और सस्ती पुस्तकें लिखकर पैसे कमाते हैं और छात्र छात्राओं का दैहिक और मानसिक शोषण करके उन्हें शोध की उपाधियां प्रदान करते हैं। कहानी में दो दिग्भ्रमित युवकों की बातचीत के माध्यम से कहानीकार ने राजनीतिक क्षेत्र में आई मूल्यहीनता और भ्रष्टाचार को व्यंग्य के धरातल पर प्रस्तुत किया है। दोनों युवक सामाजिक और राजनीतिक विकृतियों की उपज हैं। इसमें भविष्य के अंधकार के कारण युवा पीढ़ी की अकर्मण्यता और संवेदनशून्यता को चित्रित किया है। ऐसे युवा उच्च वर्ग से संबंध नहीं रखते। उच्चवर्ग और अभिजात्य वर्ग के प्रति अपने आपको व्यंग्य के धरातल पर व्यक्त करते हैं। सामाजिक विषमता का विष उनके शरीर में व्याप्त है। उनमें न कोई साहस है और न ही उनके समक्ष कोई लक्ष्य ही है। उनकी अनर्गत बातचीत इसे भली भाँति स्पष्ट करती है। कहानी के अंत में उनकी वीरता नहीं कायरता ही झलकती है जब एक नारी से दैहिक तृप्ति कर धोखा देकर बिना पैसे दिए भागते हैं। जब उन्हें पकड़ने के लिए एक व्यक्तित्व जाता है तो वे उसकी छूरे से हत्या कर देते हैं और वहाँ से भाग जाते हैं। वे कोई व्यावसायिक हत्यारे नहीं है। वस्तुतः वे जीवन की समुचित राह से भटके हुए युवक हैं। हत्या उनके लिए अतिनाटकीय क्रिया है जो अवास्तविक भी प्रतीत होती है। यहाँ जिन्दगी से खेलने वाली अमानवीयता की चरम परिणति दिखाई देती है। वस्तुतः यह कहानी आजादी के बाद के भारत के दिग्भ्रमित युवा पीढ़ी की मनोदशा और रुग्ण मनोवृत्ति को व्यंजित करती है।

'मौत का नगर' कहानी में सांप्रदायिकता के कारण होने वाले दंगों के प्रभाव से सामान्यजन एवं अभावग्रस्तजन किसी प्रकार के आक्रमण की संभावना के होते हुए भी निजी रक्षा के लिए असमर्थ होने की स्थिति में अपने आप को उस संकट में कुछ भी होने के लिए खुला छोड़ देने के लिए विवश होते हैं। कहानीकार ने इस कहानी में यह स्पष्ट किया है कि हिन्दू और मुस्लिम समाज में परस्पर सौहार्द रहा है परन्तु सांप्रदायिकता का बीज बोने वाले कुछ तत्व उस सौहार्द और एकता को खण्डित करते रहे हैं जिसके कारण प्रतिदिन एक दूसरे से आचार व्यवहार में समान और दुख सुख में इकट्ठे रहने वाले हिन्दू-मुस्लिम मोहल्लों में रहने वाले लोग एक दूसरे को भय की दृष्टि से देखने लगते हैं। कहानी में राम जैसे हिन्दू या दाढ़ीवाला मुसलमान एक दूसरे को भय और आतंक की दृष्टि से देखते हैं। वास्तविकता यह है कि दोनों ही आत्म रक्षा करने में असमर्थ हैं और उन्होंने अपने आप को सांप्रदायिकता के विषैले वातावरण में आक्रमण के लिए छोड़ दिया है।

'मूस' कहानी का केन्द्रीय चरित्र मूस है जिसके माध्यम से कहानीकार ने निम्नमध्यवर्गीय समाज की विडम्बनाओं और विसंगतियों को चित्रित किया है। मूस चालीस साल का व्यक्तित्व है किन्तु जीवन संघर्ष की इस यात्रा में वह असमय ही वृद्ध प्रतीत होता है। दुबला पतला शरीर छोटा चेहरा, बड़ी-बड़ी फरकती मूंछे छोटी-छोटी मिचमिचाती आँखे और उभरी हुई गाल की हड्डियां। उसके हाथों तथा पैरों में सिकड़े हुए केंचुए की तरह मोटी मोटी नसें उभर आई थी। बाल्यकाल में ही वह मातृ-पितृविहीन हो गया। चाचा के पास रहते हुए अनेक कष्ट भोगे, परवतिमा से उसका विवाह हुआ और अकाल की भयावह स्थितियों से निकलकर शहर में आया। वहां शहर की उपेक्षित सीलन भरी, अंधरी और तंग कोठरी में अपनी पत्नी परवतिमा के साथ रहता है। बीस वर्ष पूर्व वह अपनी पत्नी और बेटी जलेबिया के साथ शहर में अदम्य

जिजीविषा के साथ शहर में आया था। गांव का गडरिया मूस गांव छोड़कर शहर आता है। उसकी गांव में भी कोई संपत्ति नहीं थी। उसे विश्वास था कि शहर में रोजगार के अनेक अवसर विद्यमान है। इसलिए वह अपना और परिवार का निर्वाह कर लेगा। उसे शहर में आकर घरों में पानी भरने का काम मिलता है। परन्तु शहर में विकास के कारण पानी की समुचित व्यवस्था होने पर मूस और उसकी पत्नी का पानी ढोने का रोजगार छीन जाता है। मूस और उसकी पत्नी इस विकास की धारा को समझने में असमर्थ रहते हैं। इसलिए परवतिया सरकार को गालियां देती है। वह कहती है 'हे गंगा मैया ! हे बाबा बलेरनाथ जो किसी की रोजी छीने उसकी आंखों में कच्चा बैठे। उसके अंग अंग में कोढ़ फूटे'। कहानीकार ने उनके जीवन की स्थितियों और सोच के माध्यम से उद्घाटित किया है कि अपने जीवन के जिस अंधकार में वे घिरे हैं उसी में रहना चाहते हैं क्योंकि जीवन की परिवर्तित स्थितियों और उनकी विकासात्मक स्थितियों के प्रति उनमें किसी तरह की जागरूकता नहीं हैं। मूस जैसे समाज के हाशिए पर स्थित लोग ऐसे निरीह चरित्र हैं जिनका परम्परागत व्यवसाय के प्रति ऐसी अंध श्रद्धा है जिसके छीन जाने पर अपने आपको निरीह और असहाय समझते हैं। मूस निरीह और सामान्य सा चरित्र है। उसके परिचय के माध्यम से अमरकान्त सामान्यजन के उत्पीड़न और शोषण को व्यंजित करते हैं। मूस के संबंध में वे लिखते है 'मूस का जीवन मरियल बैल की तरह था, जो चुपचाप हल में जुतता है, चुपचाप मार सहता है और चुपचाप नांद में भूसा खाता है। उसको देखकर यह कहना मुश्किल था कि उसकी कोई इच्छा या अनिच्छा भी है। उसके मुख पर कोई भाव नहीं था और वह ऐसी पुरानी मशीन की तरह लगता, जो वर्षों से काम करते रहने पर भी खराब नहीं होती।' अमरकान्त निरीह पात्रों में भी जिजीविषा की तलाश करते है वे जीवन संघर्ष में पराजित नहीं होते।

'घर' में भी निम्नमध्यवर्गीय परिवार की दारुण दशा का चित्रण है। पिता दुर्व्यसनी है, पारिवारिक दायित्व से सदैव विमुख रहने वाला व्यक्तित्व है। माँ बेटे को कठिनाई में पढ़ाती है। एम. ए. पास करके भी बेकार घूमता है विवश पिता से झगड़ा कर नौकरी की तलाश में जाता है। एक प्रकाशक के यहाँ प्रूफरीडरी का कार्य कर कुछ पैसे कमाता है परन्तु प्रकाशक उसे आधा अधूरा वेतन देता है। प्रकाशक के शोषण के अपने सिद्धान्त है यथा लेखक को खिलाने पिलाने पर चाहे कितना खर्च कर दो हक के नाम पर उसे पैसा न दो क्योंकि किसी का हक देकर उसका हक नहीं मारा जा सकता। दूसरे का हक ही अपनी इमारत होती है। कहानी में बलराम सिंह की कहानी प्रकाशकों के उस चेहरे को सामने लाती है जो श्रमिक करने वाले का शोषण कर उसके श्रम का लाभ कमाता है।

'जन्म कुण्डली' में शिवदास बाबू के माध्यम से मध्यवर्गीय समाज के अंधविश्वासों का चित्रण किया है। शिवदास बाबू अपने प्रारंभिक जीवन में धन दौलत को निरर्थक नष्ट करता है और बड़ा होने पर उसकी महत्त्वाकांक्षाएं बलबती होती हैं। वह अनेक व्यवसाय परिवर्तित करता है। अन्ततः ठेकेदारी में धनार्जन करने के लिए ज्योतिषी द्वारा बताए गए नुस्खों को अपनाता है पीले रंग के वस्त्र और भोजन को ग्रहण करता है परन्तु उसकी शोषण की वृति परिवर्तित नहीं होती, वह भैया लाल नामक ग्रामी प्रवासी मजदूर को अपने लान में आश्रय देता है।

अमरकान्त की कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन की तथाकथित नैतिकता, धूर्तता, स्वार्थपरता, बेईमानी, कायरता, आडम्बरप्रियता, दोमुहांपन आदि कहानियों में व्यंजित हुई है। मध्यवर्गीय मानसिकता पर तल्ख टिप्पणियाँ उनकी अनेक कहानियों में परिलक्षित होती है। उनकी कहानियों में निम्न मध्यवर्ग की अति सामान्य जीवन स्थितियों के मध्य उनकी मानवीयता और करुणा का प्रकट हुई है। ऐसी कहानियों में उनकी करुणा और मानवीयता की प्रच्छन्नधार प्रवाहित होती हुई दिखाई देती है। उनकी कहानियों में उल्लेखनीय विशिष्टता सामाजिक प्रतिबद्धता है। वे कहानियों की अन्तर्वस्त, आसपास की जिन्दगी से ग्रहण करते हैं और अपने परिवेश में व्याप्त विसंगतियों, विद्रुपताओं और अन्तर्विरोधों को अनावृत करते हैं। उनकी प्रतिबद्धता सामान्य, निरीह, अभावग्रस्त जन के प्रति है। यही कारण है कि कहानियों में चित्रित पात्र समाज के हाशिए पर जीवन यापन करने वाले चरित्र हैं। अमरकान्त की कहानियाँ जीवन के प्रामाणिक अनुभवों की आंच पर पकी कहानियाँ हैं। जीवन की बहुरंगी विविधता, जीवंतता और अनगढ़ता को चित्रित करने वाली उनकी कहानियाँ साधारणता में भी विशिष्टता लिए हुए है। इनमें न किसी प्रकार का शिल्प चमत्कार है और न ही निरर्थक आरोपण। कहानी के छोटे-छोटे तन्तुओं से उन्होंने सामाजिक व्यवस्था की तस्वीर नितांत तटस्थता से प्रस्तुत की है। भाषा में सहजता और व्यंग्य की गहराई है। व्यंग्य का कलात्मक उपयोग उनकी कहानियों को वशिष्ट बनाता है। इस प्रकार अमरकान्त निम्नमध्यवर्गीय समाज की जिन्दगी के अभावों को उनकी विडम्बनात्मक नियति को मूर्तिमान करने वाले अद्‌भुत चितेरे हैं। उन्होंने निम्नमध्यवर्गीय समाज उपेक्षित बदहाल जिन्दगी पर सशक्त और कालजयी कहानियाँ लिखी है। अमरकान्त, प्रेमचन्द परम्परा को एक सशक्त और समृद्ध करने वाले प्रमुख कहानीकार हैं।

गांव व डाकघर बातल, तह. अर्की, जिला सोलन,
हि. प्र.-173 208, मो. 0 94180 10646

कहानी

सिक्का चढ़ाई

● डॉ. राकेश 'चक्र'

पूनम की उम्र अभी कुल जमा उन्नीस की ही हुई थी कि वह अपने माता-पिता के लिए चिन्ता का कारण बनने लगी। उसके पिता रामदयाल गुप्ता ने उसे इण्टरमीडिएट तक पढ़ाया। उसका प्रवेश बी.ए. में करा दिया, लेकिन बाद में कई समस्याएँ आने पर उसे घर पर बैठा लिया कि जमाना खराब है कि कहीं कोई ऊँच-नीच न हो जाए, जैसे की दबंग मनचलों द्वारा आये दिन ऐसी घटनायें घटित की जा रही हैं, कि कई लड़कियाँ तो शर्मसार होकर आत्महत्या तक कर लेती हैं। आज का सभ्य समाज इसका साक्षी बनकर आईना दिखा रहा है कि हम कितने विकसित हो गए हैं। क्योंकि महाविद्यालय से उसका घर चार किलोमीटर से भी अधिक दूरी पर था। कुछ दिन वह साईकिल से गई भी, लेकिन वह मनचले भूखे भेड़ियों की मनमानी से आजिज आ गई। तरह-तरह के कमेंटौंऔर छेड़खानी ने उसे शर्मसार कर दिया, कुछ तो इतने अश्लील की बस पूछिए ही मत। कोई साईकिल से साईकिल भिड़ाने का प्रयास करता, तो कोई कंधे से कंधा भिड़ाने का और कोई उरोजों पर हाथ फिराने का कि जैसे मजनुओं के कोई माँ-बहन ही नहीं होंगी। स्कूटर-मोटर साईकिल वाले और कुछ पैदल चलने वाले आदमजात, जिनमें अधेड़ और बूढ़े भी होते हैं, जो भेड़िये की तरह ऐसे घूर-घूर कर देखते हैं कि वह अपनी आँखें शर्म से झुका लेती और सोचती कि यहाँ लड़कियाँ अभी भी पूरी तरह परतंत्र हैं कि पथ में निकलते ही हजारों आखें उसे घायल करने के लिए बेताब रहती। शायद इस सबका मुकाबला करने के लिए ही अब आध ुनिक लड़कियों ने मर्दों की वेश-भूषा अपना ली है और सीने पर दुपट्टा डालना भी छोड़ दिया है कि देखो! जी भरके देखो दुष्टो!

इस कमर तोड़ महँगाई में पूनम के पिता को माह में मात्र सात हजार रुपया पगार मिलती। एक प्राईवेट फर्म हाईस्कूल पास व्यक्ति को इससे अधिक दे भी क्या सकती थी। उसी में घर के सारे खर्चे, हारी-बीमारी, बच्चों की पढ़ाई-लिखाई और शादी-ब्याह के लिए जोड़ना। क्योंकि बिना अच्छा दहेज के दिए यहाँ लड़कियों के विवाह नहीं होते, कितनी ही लड़कियाँ तो क्वारी ही रहकर बूढ़ी हो जाती हैं, क्योंकि कभी उनके मनमाफिक लड़के नहीं मिलते, तो कभी दहेज रूपी राक्षस सीना तान कर खड़ा हो जाता है। इस मामले में तो पश्चिम की गोरी जातियाँ ही अच्छी हैं, जो दहेज रूपी राक्षस का नाम भी नहीं जानती हैं।

पूनम सबसे बड़ी थी, उससे छोटी तीन बहनें और सबसे छोटा भाई था, जो अभी चौथी कक्षा में पढ़ रहा था। इसके ही चक्कर में तो घर में लड़कियों की लाइन लग गई। क्योंकि यहाँ पुत्र ही तो स्वर्ग की सीढ़ियों तक पहुँचाने का महान् कार्य करता है, चाहे जीते जी वह कष्ट दर कष्ट माता-पिता को देता रहे, लेकिन पुत्र और पुत्र का पुत्र यानी पोता ही तो स्वर्ग की सीढ़ियों का द्वार खोलता है।

पूनम के विवाह के लिए लड़कों पर दृष्टि डालना शुरू हो गया था। कई जगह रामदयाल का आना-जाना हुआ। सैंकड़ों रुपये और समय पर पानी फिर गया, फिर भी कहीं बात नहीं बनी, क्योंकि सब जगह ही दहेज रूपी दैत्य की ऊँची-ऊँची उड़ानें थीं। इसी कारण रामदयाल के मस्तक पर बल पड़ना स्वाभाविक ही था। उसकी पत्नी भी चिन्ता में घुलने लगी। एक दिन यकायक उसके बहनोई के बहनोई ने पूनम के विवाह का प्रस्ताव रखा कि एक लड़का देखने-भालने में अच्छा है, चप्पल-जूतों की दूकान करता है और वह खागा का रहने वाला है। उसके माता-पिता की अधिक माँग भी नहीं है। दूकान अच्छी चलती है, लड़की राज करेगी ...।

ऐसा प्रस्ताव जब पूनम के माता-पिता ने सुना तो उनके मन ही मन लड्डू फूटने लगे। पूनम भी कान लगाकर उनकी बातें आलमारी की औटक लेकर सुनती रही और उसका भी रोम-रोम पुलकित होता रहा, हृदय में नव संगीत की लहरें उठने लगीं।

रामदयाल ने चैन की श्वास लेते हुए कहा, ''चलो! भगवान ने आपके सहारे सुन तो ली, मैं तो सात-आठ महीने से पागल कुत्ते-सा इधर-उधर भटकता रहा। लड़केवालों की ऊँची-ऊँची माँग सुनकर मैं तो बुरी तरह टूट ही गया था। भगवान सबका ही बेड़ा पार लगाता है।''

''भाईसाहब! मैं जल्दी ही सिक्काचढ़ाई कराता हूँ। आप मेरे रहते कोई चिन्ता ही न करें। सब कुछ अच्छी तरह निपट जाएगा।'' बहनोई राजेन्द्र मुस्कुराते हुए बोले।

''जीजाजी! उन्हें लड़की देखना हो तो देख लें।'' कुछ झिझकते हुए रामदयाल ने कहा।

''मैं आज ही उनसे इस सम्बन्ध में बात करता हूँ। आप सब मेरे ऊपर छोड़ दें। आपकी बेटी है तो कुछ मेरी भी लगती है, ये बात आप काहे को भूल जाते हैं, साले साहब।''

''जीजाजी! आपके रहते हमें क्या फिकर है?''

रामदयाल ने उनकी खूब आव-भगत की और दो-तीन घण्टे ठहरकर चले गए।

राजेन्द्र शाम को ही लड़के वाले के घर पहुँच गए। लड़के के माता-पिता से वह सब बातें खुल कर लीं, जो लड़की पक्ष ने उनसे की थीं, अर्थात् विवाह में लेन-देन, वर-इच्छा और लड़की को पसंद करने आदि की बातें।

उनकी बातें खूब जान-समझने के बाद लड़के के पिता ने कहा, ''भाईसाहब! आप हमारी दूर की रिश्तेदारी में मेरी बहन के ननदोई लगते हो और लड़की वाले भी आपके रिश्तेदार हैं। लड़की आपकी देखी हुई है, सो हमने देख ली। लड़का भी हमारा कलक्टर नहीं है, जो उसे लड़की पसंद न आए और न ही लड़की काँणी-भैंगी है, जैसा कि आप बता रहे हो। लड़का तो मेरा हीरा है हीरा, लाखों में एक, जो मैं कह दूँगा ना-नुकुर का तो सवाल ही नहीं उठता। आप पूरा इत्मीनान रखिए। जो आप दिला देंगे वो सब सर माथे ...।

विवाह की बात पक्की हो गई। वर-इच्छा (सिक्का चढ़ाई) की तारीख नियत हो गई। दोनों ओर से तैयारियाँ शुरु हो गई। घर में खुशियाँ फूलों-सी झरने लगीं। विशेषकर पूनम के घर में तो सभी के पैर जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। घर की साफ-सफाई से लेकर लेन-देन की तैयारियाँ। लड़के के लिए सोने की अंगूठी और गले में जंजीर, पाँच कपड़े और इक्कीस हजार रुपये नकद, लड़के के माता-पिता के लिए पाँच-पाँच कपड़े और पाँच-पाँच सौ रुपये नकद, लड़के के अन्य रिश्तेदारों के लिए भेंटें आदि।

सिक्का चढ़ाई से एक दिन पहले कई तरह की मिठाईयाँ तैयार की गईं, यानी मेहमानों को खिलाने और साथ में उनके बाँधने का पूरा बंदोबस्त। आखिर वरइच्छा का दिन आ ही गया। घर के आगे छोटी-सी गली में ही शामियाना, कनातें और कुर्सियाँ सज गईं और कान फोडू डीजे बजना शुरू हो गया।

पूनम और उसकी बहनें तथा महिला मेहमानों ने शानदार मेकअप करके ऐसा अपने आपको सजाया-धजाया कि बस पूछिए मत। मेंहन्दी और अन्य तरह के खिजाब तो हाथ-पैरों और सिरों में पहले ही लग गए थे। अधेड़ और बूढ़ों के सिरों के बाल भी काजल से काले चमक रहे थे, जैसे कि वह एक सप्ताह के लिए जवान हो गए हों। महिलाएँ और युवतियाँ नकली जेवरों तथा फिरोजावादी चूड़ियों से पूरी तरह लद-बद गईं थीं। घर में चूड़ियों की खनखनाहट से लग रहा था कि विवाहोत्सव हो रहा है। हर कोई वर पक्ष के सम्मुख अपनी दिखावट में कमी नहीं रखना चाह रहा था, यानी सजने-सँवरने की पूरी तरह होड़ मची हुई थी। कुछ युवक और युवतियों के सिर के बालों के आगे की लटें सुनहरी चमक रही थीं। एक बुजुर्ग महिला ने पूनम की बहन पर कमेंट्स पास करते हुए कहा - ''ये निगोढ़ा कैसा फैशन आया कि अच्छे-खासे काले बालों की लटें सुनहरी करो। चाहे पैसे की तंगी हो या कुछ और। लेकिन बालों पर डाई जरुर लगेगी। वो सरोज और आशा साठ की उम्र पार कर गईं हैं, फिर भी डाई लगा के जवान होने का ख्वाब देखे हैं। वाह रे! जमाने ...।''

दोपहर के बारह बजे वर पक्ष के लोग आ ही गए। उनका जबरदस्त आतिथ्य-सत्कार हुआ, यानी पेटभराऊ जलपान और बाद में वर-इच्छा की तैयारियाँ। पूनम भी गुड़िया-सी सजी-धजी चौकी पर बैठ गई थी, उसे उसकी बहनें ऐसे पकड़कर लाईं थीं कि जैसे उससे चला न जा रहा हो।दूसरी तरफ वर उसे ऐसे घूर-घूर के देखे जा रहा था कि जैसे कि वह कुछ ही पल में उसकी बाँहों में होगी। अविद्वान पण्डित ने गलत-सलत मंत्र बोलकर किसी तरह जल्दी-जल्दी रस्मों की औपचारिकता पूरी करवाई। रामदयाल ने अपनी हैसियत से ज्यादा वर और वर पक्ष की पूजा-अर्चना की।

सिक्का चढ़ाई (वर-इच्छा) निपटी और ढाई बजे भोजन शुरू हो गया, जबकि अभी भूख किसी को नहीं लगी थी। फिर भी मेहमानों ने उदारता दिखाते हुए जमकर खाया-पिया, यानी गले-गले तक। कई मेहमान तो पेटों पर हाथ फिरा-फिरा कर कुर्सियों पर ऐसे जम गए जैसे कि किसी सर्कस में जोकर जम जाता है। कई तोउबकाई-सी लेने लगे। लड़की पक्ष ने पाचक चूर्ण उपलब्ध कराया। दो-तीन को तो उलटियाँ भी होने लगीं। अब कोई उनसे पूछे कि भाई इतना खाते ही क्यों हो, जो खाकर बीमार हो जाओ। लेकिन लोगों को मुफ्त का माल खाने में कुछ ज्यादा ही मजा आता है, सो खाते रहेंगे और स्वयं ही मुसीबत बुलाकर मरते रहेंगे और दूसरों को कष्ट देकर समाज का भी अहित करते रहेंगे।

लड़की पक्ष ने डॉक्टर को बुलाकर किसी तरह स्थिति

सम्भाली कि कहीं कोई अपशगुन न हो जाये या लड़की वालों पर बिना मतलब का दोषारोपण न लग जाये। रामदयाल द्वारा बाद में सभी मेहमानों को राजी-खुशी विदा किया गया। विवाह की तारीख भी तय हो गई।

सायं साढ़े सात बजे रामदयाल का मोबाईल घनघना उठा। सुना तो लड़के का पिता बोल रहा था। रामदयाल ने नमस्ते की तो उधर से कुछ क्रोधभरी आवाज सुनाई दी।

''हमारे लड़के को लड़की पसन्द नहीं है। हम ये शादी नहीं करेंगे ... कहीं इस तरह लेन-देन किया जाता है ... तुम लोग बड़े रुखे स्वभाव के हो ... और न जाने क्या-क्या।''

इतना सुनते ही रामदयाल के पैरों की जमीन धँसती गई, जैसे कि वह जमींदोज हो गए हों, मोबाईल हाथ से छूट गया। तभी वहाँ सभी घर वाले आ गए। घर में खुशियों की जगह मातम छा गया। लेकिन पूनम ने अपने पिता की हिम्मत बँधाई और कहा, ''पापा! ऐसे लड़के से मैं कभी भी शादी नहीं कर सकती, जिसमें अभी से इतनी नफरत और लालच भरा हुआ हो। ऐसा व्यक्ति तो सपने में भी सुख नहीं दे सकता। आप रिश्ता तोड़ दीजिए और जो आपने दिया है उसे वापस ले लीजिए। अभी मेरी शादी मत करिए, मुझे अपने पैरों पर खड़े होने के लिए और पढ़ाइए ... पढ़ाइए, मैं हिम्मत से पढ़कर आगे बढ़ूँगी ... ।''

इतना कहकर पूनम ने लड़के वालों की दी हुई अँगूठी और साड़ी आदि यह कहकर पिता को दे दी कि आप इसे वापस करके आइये और यदि वे हमारे दिए हुए रुपये और सामान नहीं लौटाते हैं, तो उनके खिलाफ थाने में मुकदमा दर्ज करा दीजिये। लड़के वालों के इतने दिमाग खराब हो गए कि हमारी इज्जत ही कुछ नहीं समझ रहे हैं, जैसे कि हम उनके गुलाम हो गये हों ... मैं ट्यूशनें पढ़ाकर अपनी पढ़ाई जारी रखूँगी और मैं कभी अपने पापा पर बोझ नहीं बनूँगी ... कुछ करके, कुछ बनकर दिखाउंगी...।

पूनम का साहस भरा निर्णय सुनकर रामदयाल के पैरों की धँसी जमीन ऊपर उठने लगी थी।

एम.डी. (एक्युप्रेशर एवं मैग्नेटि), 90-बी, शिवपुरी, मुरादाबाद-244001, मो. 94 56201857

कविता/ ●मनोज चौहान

आकार लेती - एक रचना

बात कोई,
छू जाती है जब,
हृदय तल की,
गहराइयों को,
या कभी,
पीड़ा और तकलीफ देते,
क्रिया-कलाप,
घटनाएं व दृश्य,
कर देते हैं बाध्य,
भीतर के समंदर में,
गोता लगा देने को ।
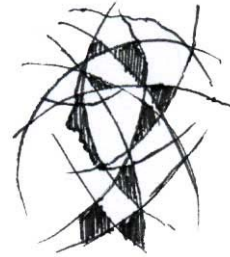
जेहन में बसाये,
इन तमाम पहलुओं को,
जीता है रचनाकार,
रात-दिन,
हर पल,
निज अनुभव ,
के धरातल पर ।

ताकि निकाले,
जा सकें बाहर,
जागृत व प्रेरित करते,
सीख देते ,
और रुग्ण मानसिकताओं के,
अंतस को,
कचोटते,
चहूँ ओर,
नाद करते,
शब्दों के मोती ।

करता है मंथन वह,
प्रकृति, जीव, समाज,
विश्व, देश व काल का,
खंगालता है,
उधड़ते और जड़ हो चुके,
रिश्तों को,
टटोलता है,
बालमन को भी ।

और जब,
द्वंद्व करते ,
विचारों का वेग,
लाँघ जाता है,
चरम सीमाओं को
तो उकेर देता है वह,
उन्हें कागज पर ।

आकार लेती है,
इस तरह,
एक रचना,
और लिए हुए,
मशाल,
क्रांति की,
बन जाती है ,
पथ प्रदर्शक,
मानवता और समाज की ।

एसजेवीएन कॉलोनी दत्तनगर, रामपुर बुशहर , शिमला (हि.प्र.) -172001, मो. 0 94180 36526

कहानी

कन्या पूजन

● अजय पाराशर

''अरे! पण्डितजी, ये सारी बातें ठहरी-टिकी जिन्दगी में अच्छी लगती थीं। अब काहे के व्रत-उपवास और काहे की पूजा-अर्चना? हर रोज कुत्तों की तरह भागने वाली जिन्दगी में कयाम कहाँ। स्साला, सबका ध्यान रुतबे, नाम और नोटों के प्रदर्शन में फंसा है। सब जार दिखावा है। नेता-अभिनेता हो, व्यापारी-खिलाड़ी हो, अफसर-कर्मचारी हो या फिर दर-दर फिरता आम आदमी, सबके सब इस महामारी के खूंटे से बंधे हैं।'', बोलते हुए मोहन ने पानी का घूंट भरा और जवाब का इन्तजार करने लगा।

''यार, कहते तो बिलकुल ठीक हो। लेकिन करें क्या, कुछ न करें तो समाज से बाहर और करें तो अपनी रूह से।'', कहते हुए आर्यन कहीं गहरे खो गया। आज व्रत था, कल कन्या-पूजन है। पर शुक्र है कि कल राम-नवमीं की छुट्टी है। वर्ना, पिछले साल नवमीं को सुबह चार बजे उठकर भी कन्या-पूजन के फेर में आयशा की बस छूट गई थी और उसे कार से आनन्दपुर तक छोड़ने के चक्कर में वह भी दफ्तर से लेट हो गया था। इस अफरा-तफरी में दोनों एक-दूसरे से उलझ भी गए थे। आखिर में आयशा ने महिलाओं का अमोघास्त्र अश्रु बाण चला दिया। वह, अब कुछ भी बोलने की स्थिति में नहीं था। उलटे उसे पछतावा होने लगा था। हालांकि उसने उससे पहले उठकर प्रैशर कुकर में चने उबलने के लिए धर दिए थे, गीजर ऑन कर दिया था, चाय बना कर झाड़ू लगा दिया था, पूजा की सारी तैयारी कर दी थी। परन्तु जब उसने रोते हुए अपनी रोजाना भाग-दौड़ के बाद घर में खपने का जिक्र किया तो उसे लगने लगा कि उसे आयशा से उलझना नहीं चाहिए था। बेचारी, हर रोज 150 किलोमीटर का सफर तय करती है, वह भी पहाड़ी इलाके में।

उसकी तन्द्रा तब टूटी जब मोहन ने वापिस जाने की इजाजत मांगी। शाम गहरा चुकी थी। आयशा कुछ देर पहले ही घर पहुंची थी। अपनी चाय के साथ ही उसने, उन दोनों की चाय भी धरी थी। हर रोज आर्यन उसके आने पर चाय बना कर देता था। लेकिन मोहन के आने पर आज आयशा को खुद ही चाय बनानी पड़ी थी। आर्यन, मोहन को खाने के लिए रोकना चाहता था लेकिन आयशा की थकावट को देखते हुए उसने ज्यादा जोर नहीं दिया। उसने आयशा के साथ औपचारिकतावश, दो-एक बार मोहन को खाने के लिए रुकने को कहा। पर मोहन समझदार था, दोनों का शुक्रिया अदा करते हुए निकल लिया।

अगले दिन राम-नवमीं की छुट्टी होने की वजह से दोनों लेट उठे। दूसरे कमरे में सात्विक अभी भी खर्राटे भर रहा था। आर्यन ने चने उबलने के लिए धरे और इंडक्शन पर चाय धर दी। पूजा के बर्तन धोने के बाद उसने गीजर ऑन कर दिया। मार्च खतम होने को था, इस दौरान पहाड़ों में मौसम सुहावना हो उठता है। लेकिन इस साल बारिशें थीं कि जाने का नाम नहीं ले रहीं थीं। बारिशें भी ऐसी कि तीस पहले की झड़ी की याद दिला रहीं थीं। एक बार पानी बरसना शुरू हो तो क्या मजाल कि हफ्ते से पहले अपना ताम-झाम समेटे। लगता था पूस की ठंड फिर से लौट आई है। लोग दुःखी हो चुके थे, किसानों-बागवानों के चेहरों पर चिंता की लकीरें गाढ़ी होती जा रही थीं। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने रेडियो पर 'मन की बात' में अपने मन की ही बातें की थीं। किसानों की जिन्दगी तो कब से गेहूँ और रबी की अन्य फसलों की तरह खेतों में लेट चुकी थी। मौसम का मिजाज भी लोगों के चरित्र की तरह लिजलिजा हो चुका था। हीटर के सामने बैठा आर्यन न जाने क्या-क्या सोच रहा था। चेता आते ही उसने 'ऊँ नमः शिवाय' का जाप शुरू कर दिया।

आयशा अभी भी बिस्तर छोड़ने के मूड में नहीं थी। कुछ ठंड, कुछ अवकाश का सुकून। वह इस सुबह को अपनी बाँहों में भर कर तसल्ली से सोना चाहती थी। किन्तु आर्यन की आवाज 'चाय तैयार है' सुनकर उसे मन मार कर उठना ही पड़ा। ब्रश करने के बाद बाथरूम से आते ही उसने आर्यन को प्यार से ताना मारा, ''जानू! तुम मुझे सोने ही नहीं देते हो। आज तो छुट्टी थी।'' आर्यन हंसते हुए बोला, ''जल्दी करो, वर्ना तुम्हारी देवी माँ नाराज हो जाएंगी। मैं तो यह सब करता हूँ तुम्हारी खुशी के लिए।'' यह सुनकर आयशा कानों से हाथ लगाते हुए बोली, ''तुम कुछ भी अनाप-शनाप बोलते रहते हो। भगवान से ऐसा मजाक ठीक नहीं।''

आयशा नहाने के बाद रसोई में घुस गई। उसे भरी ठंड में नंगे पाँव देखकर आर्यन ने अपने माथे पर हाथ मारा, किन्तु बिना कुछ बोले उसने रसोई के बर्फ से ठंडे फर्श पर चटाई बिछा दी। आयशा ने मुस्कराते हुए उसे प्यार से देखा, पर बोली कुछ नहीं। चने, हलवा और पूरियां बनाते हुए उसे करीब 10 बज गए थे। आर्यन और सात्त्विक को भूख लग आई थी, किन्तु कन्या-पूजन के बिना दोनों को नाश्ता नसीब होने वाला नहीं था। आयशा के कुछ कहे बगैर ही दोनों मानसिक रूप से तैयार हो चुके थे। कॉलोनी में छोटी लड़कियां थी नहीं, सो हनुमान मन्दिर जाना ही एकमात्र विकल्प था। इस मन्दिर पर जिला पुलिस का कब्जा था। कहने को तो हनुमान मन्दिर था, लेकिन इसके प्रांगण के बाईं ओर शिवजी, देवी माँ के अलावा भक्तों को शनिदेव के प्रकोप से बचाने के लिए हाल ही में शनि मन्दिर का निर्माण करवाया गया था। इसके बावजूद लोग अब भी अपने आपको बड़े शनि (पुलिस) के कहर से नहीं बचा पाते थे।

राजपत्रित अवकाश होने के कारण न ही आर्यन ने सरकारी गाड़ी निकाली और न ही ड्राईवर को बुलाया। तीनों अपनी कार में सवार होकर मन्दिर के लिए निकल पड़े। मन्दिर के बाहर वाली सड़क पर प्रवेश करते ही पुलिस कर्मियों की मुस्तैदी देखते ही लगा कि उन्होंने मन्दिर आने का गलत समय चुन लिया था। राम नवमीं होने के बावजूद मन्दिर का माहौल कर्फ्यू का आभास दे रहा था। बाहर के चौक पर दोनों ओर पुलिसिया वाहन लोगों का रास्ता रोके खड़े थे। दो गाड़ियां एसपी साहिब की थीं तो एक गाड़ी पुलिस थाने की। एक और बड़ी गाड़ी पुलिस लाईन्स से आई थी जिसमें कन्याओं के अलावा उनके अभिभावक भी आए थे। भला सवाब कमाने का ऐसा मौका और कहां मिलता जिसमें देवी के साथ-साथ एसपी साहिब की खुशामद हो जाती। पार्किंग के लिए रास्ता न मिलने पर जब आर्यन ने गाड़ी सड़क पर ही खड़ी कर दी तो एक नौजवान एस.आई. त्यौरियां चढ़ाकर हाथ से इशारा करने लगा। आर्यन तो चाहता भी यही था, उसने भी उसी अन्दाज में उसे पुलिस की गाड़ियों की ओर इशारा किया। यह देखकर एस.आई. कुछ झेंप सा गया, शायद नया था इसीलिए कुछ शर्म बाकी थी। इतने में आर्यन को जानने वाले एक ट्रैफिक कांस्टेबल ने पास आकर कहा, ''सर, मैं यह मोटर-साईकिल हटा देता हूँ। आप कार आगे पार्क कर लें।'' यह बाईक किसी पुलिसिए की ही थी जिसने सड़क को अपना आंगन समझ कर, उसे बीच में ही पार्क कर दिया था। आर्यन ने आयशा और सात्त्विक को उतारने के बाद कार को पुराने खेल परिसर में पार्क कर दिया।

झुग्गी-झोंपड़ियों से आए बच्चे मन्दिर के बाहर ही घूम रहे थे। एस.पी. साहिब के रहने तक मन्दिर में उन्हें घुसने की इजाजत नहीं थी। इन बच्चों में अधिकतर लड़कियां थीं, कुछ छोटे लड़के भी अपनी बहिनों की गोदियों में टंगे थे। कंजकांओं के साथ लोंकड़े मुफ्त थे। कई बड़े लड़के भी पैसों और हलवा-पूरी के लालच में भीड़ का हिस्सा बन गए थे। कुछ माँएं भी अपने बच्चों को गोदी में चिपकाए यहां-वहां से घूम रही थीं। किसी भी श्रद्धालू के मन्दिर में आते ही यह तमाम भीड़ उनके साथ चिपक जाती। भक्त किसी तरह उनसे पीछा छुड़ाकर मन्दिर में तो घुस जाते परन्तु वहां थानामय माहौल देखकर उनका हौंसला गोते खाने लगता। अन्दर-बाहर फैले खाकीधारियों को देखकर एक बार तो उसे हनुमानजी भी खाकी में ही लिपटे नजर आए। उसने मन में सोचा अगर पुलिस ने सचमुच ही हनुमानजी को खाकी पहनाई होती तो उन्हें क्या रैंक दिया होता। मुख्य मन्दिर का पुजारी भी सावधानी की हालत में हनुमानजी के सामने टंगा था। पीतल की रेलिंग के आगे चार हट्टे-कट्टे, गोल-मटोल पुलिस कर्मी सिविल कपड़ों में बड़े साहिब की खिदमत में हाजिर थे और देवी के मन्दिर की ओर जाने वाली भीड़ को नियन्त्रित कर रहे थे।

लोकल एस.एच.ओ. के साथ थाने का पूरा स्टाफ साहिब की सेवा में हाजिर था, ज्यादातर बावर्दी तो कुछ बिना वर्दी। बड़े साहिब को देखकर मानो हनुमानजी भी दुबक से गए थे। उनके ठीए पर भीड़ रोज के मुकाबले काफी कम थी। लेकिन देवी के मन्दिर में वैसी ही रेलम-पेल थी जैसे सीएम के आने पर सर्किट हाऊस में होती है। परन्तु जिस तरह सीएम के कमरे में दाखिला उन्हें ही मिलता है जिन्हें पुलिस वाले चाहें, वैसे ही देवी के मन्दिर में कुछ विशेष लोगों को एंट्री मिल रही थी। माता के मन्दिर के सामने वाले हॉल में एसपी साहिब और उनकी धर्मपत्नी के अलावा कुछ बा-हैसियत लोग भी मौजूद थे। पूजी जाने वाली कन्याएं साफ-सुथरे वस्त्रों में चमक रहीं थीं। ऐसे भव्य किन्तु भयपूर्ण माहौल में भी उनका आत्मविश्वास साफ बता रहा था कि उनके माता-पिता जरूर पुलिस में नौकरी करते होंगे। शनि महाराज भी जगह-जगह अपने से बड़े शनीचरों को फैले देखकर सहमे-सहमे से लग रहे थे।

आयशा बड़े मनोयोग से शिव के सामने नतमस्तक होने के बाद देवी के मन्दिर में शीश झुका रही थी। उसे भी अन्दर पसरे माहौल से कोफ्त होने लगी थी। किन्तु सजी-धजी कंजकांओं को देखकर उसका मन भी बच्चे की तरह मचल उठा। वह मन-ही-मन आर्यन को कोसने लगी कि यह साहिब कभी भी अपनी पोस्ट का कोई फायदा ही नहीं उठाते हैं। कुछ लोग पहले से ही एस.पी. साहिब और उनकी धर्मपत्नी की पूजा खतम होने के इन्तजार में कतारबद्ध थे। बाहर कंजकें ढूंढना तो आसान था किन्तु उनकी हालत देखकर मन में श्रद्धा उमड़ना मुश्किल था। काले किन्तु मैले जिस्म, गन्दे कपड़े, बहती नाक और चेहरे पर पसरी भूख-प्यास देखकर देवी के किसी और रूप तो क्या, कालरात्रि का तसव्वुर भी नामुमिकन था। आयशा वहीं पूजा करना चाह रही थी। उसने आर्यन से कहा भी लेकिन वह उसे यह कह कर प्रांगण में ले आया कि पहले से भरे पेट उनके प्रसाद और सामान की बेकदरी ही करेंगे।

आर्यन और सात्विक ने बाहर आकर नौ बंजारा लड़कियों और एक छोटे लड़के को इकट्ठा किया। बाहर न ही कोई दरी थी और न ही कोई चटाई। उन्हें फर्श पर ही लाईन में बिठाकर मोहन घर से लाए जग में पानी भरने चला गया। लड़कियों के चेहरों पर कुछ पाने की बेताबी और खुशी साफ देखी जा सकती थी। कुछ लड़कियों ने अपनी गोदी में छोटे भाई-बहिन पकड़े हुए थे। वह उन्हें अपने से अलग दिखा कर उनका अलग हिस्सा चाह रहीं थीं। आयशा ने उन्हें ऐसा करने से रोका, पर उन्हें लेकर अपने मन में चल रही कशमकश को वह छिपा नहीं पा रही थी। उसकी मिची आँखों में उठते जज्बात, पेशानी पर खिंची लकीरें, घर से लाए सामान को अलग-अलग करने का अन्दाज, उसके चेहरे पर खिंची जबरदस्ती की मुस्कान की चुगली कर रहे थे।

उनके आने से पहले झुग्गी-झोंपड़ियों के बच्चों को मन्दिर में दाखिल होने की मनाही थी। लेकिन अब आंगन में फैले पुलिस वाले चाह कर भी उन्हें कुछ कहने या रोकने की हिम्मत नहीं कर पा रहे थे। पर इन बच्चों के लिए उनकी हिकारत साफ देखी जा सकती थी। उन्हें ज्यादा हैरानी आर्यन के बच्चों के पाँव धोने और पूजा के बाद पाँव छूने की थी। पूजा मुकम्मिल होने के बाद आर्यन के चेहरे पर जो सुकून था, वह हौले-हौले आयशा और सात्विक के रुख पर भी नजर आने लगा था। तीनों धीरे-धीरे मन्दिर से बाहर निकल रहे थे। किन्तु देवी के मन्दिर में एस.पी. साहिब और उनकी बीवी के कन्या-पूजन के बाद आरती के सुर गूंजने लगे थे। पुलिस वाले जहां भी खड़े थे, वहीं से अपने सुर मिलाने की कोशिश कर रहे थे।

अधिकतर पुलिस वाले आर्यन को जानते थे, इसीलिए उसे किसी ने रोका नहीं। जब वह आयशा और सात्विक के साथ सीढ़ियां चढ़ रहा था तो एस.पी. साहिब पानी का लोटा भरने के लिए बाहर निकल रहे थे। दोनों की नजरें मिलीं और चेहरों पर मुस्कान फैल गई। किन्तु दोनों मुस्कानों में दिन-रात का फर्क था। मोहन की नजरों में जहां तंज था, वहीं एस.पी. साहिब की नजरों में अपने जाहो-जलाल का दंभ। उसके कण-कण से सामन्तवाद टपक रहा था। एस.पी. के चेहरे पर माता की भक्ति कम और भौतिक सत्ता का सुख ज्यादा पसरा हुआ दीख रहा था। उसकी बीवी उसके साथ ही नए सलवार-कुर्ते में बाहर निकल रही थी। उसके चेहरे पर फैले विचित्र पुरसुकून भावों को कोई सत्ता का सुख भोगने वाला ही महसूस कर सकता था। एस.पी. साहिब के हाथ से लोटा लेने के लिए बाहर खड़े सभी पुलिस कर्मियों में होड़ लग गई। किन्तु एस.पी. साहिब सारा सवाब खुद ही कमाने के मूड में थे। वह खुद ही नल से पानी भर कर कन्याओं के पाँव धुलाने के लिए अन्दर चले गए। उनकी धर्मपत्नी साये की तरह उनके साथ चिपकी हुई थी, अगर न भी चिपकती तो भी शास्त्रों की व्यवस्था के अनुसार अपने पति द्वारा कमाए गए पुण्य की आधी हकदार वह अपने आप ही, हो जाती।

अन्दर-बाहर पसरे पुलिसिया साम्राज्य को देखने से पहले आर्यन के मन में जो थोड़े-बहुत आध्यात्मिक भाव थे भी, वे उसके विचारों का शिकार हो गए। शिव के मन्दिर में अनमना सा माथा टेकते हुए वह अलग जा खड़ा हुआ। वह सोचने लगा कि शायद, पहले भी कुछ लोग दोहरी जिन्दगी जीने के आदी रहे हों। पर ऐसे लोगों का समाज में कोई आदर नहीं होता था। हाँ, उनके रुतबे, हैसियत और माल की वजह से लोग उनसे डरते जरूर होंगे। लेकिन नये जमाने की नई तरक्की ने अब इसे आदत और मजबूरी, दोनों बना दिया है। इसने चाहे जिन्दगी को और भी मुश्किल बना दिया हो पर लोगों में दिखावा इस कदर घर कर गया है कि आडम्बर जिन्दगी का अहम हिस्सा बन कर रह गया है। लोगों ने अपनी फूल जैसी जिन्दगी को दिखावे की ओढ़नी से ऐसे ढक लिया है कि हमारा आचार-विचार, व्यवहार और चरित्र सब लापरवाही की भेंट चढ़ चुके हैं। जिन्दगी के इस नए तरीके ने हमारा बाहर-भीतर एक कर, हमें तलफी की ओर धकेलना शुरू कर दिया है। कहाँ के रह गए हैं हम? घर के न घाट के। सब दिखावे का शिकार। एस.पी. को शायद पूजा की बेताबी इतनी न हो जितनी तलब उसे अपने रुतबा, ताकत और हैसियत दिखाने की थी। नहीं तो पूजा वह अकेला बीवी के साथ आ कर भी कर सकता था। किन्तु सत्ता की चाट, उसके चेहरे पर मुस्कान फैल गई, एक बार लगने पर कहाँ बैठने देती है। ऐसे आदमियों का रिटायर होने या सत्ता छिनने पर क्या हाल होता होगा, सोच कर वह हैरान था।

उप-निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग,
क्षेत्रीय कार्यालय, धर्मशाला, जिला-कांगड़ा (हि.प्र.)-176 215

कहानी

उजाले की ओर

● अदित कंसल

विश्वविद्यालय में प्रवेश प्रक्रिया समाप्त हो चुकी थी। महक को एम.एस.सी. (रसायन विज्ञान) में प्रवेश मिल गया था। उसका पसंदीदा विषय भी रसायन विज्ञान था। कक्षाएं अगले सप्ताह से आरंभ होनी थीं, सो महक ने सप्ताह भर के लिए अपने घर जाने का निर्णय कर लिया।

महक बस में बैठी-बैठी मयंक के बारे में सोचने लगी। महक व मयंक ने एक साथ बी.एस.सी. की थी। लगभग चार वर्षों तक कॉलेज में मयंक, महक का सहपाठी रहा था। वह उसे बेहद प्यार करता था। महक बेहद खूबसूरत व नाज़ुक लड़की जो थी।

बड़ी-बड़ी आंखें, घुटनों से नीचे तक लंबे बाल व सुराहीदार गर्दन किसी को आकर्षित करने के लिए पर्याप्त थी। परंतु महक की मयंक के प्रति कोई विशेष दिलचस्पी नहीं थी। महक तो काफी पढ़ना चाहती थी।

मयंक अकसर महक को रोककर बातें करने को मजबूर करता। कभी अपने घर आने का निमंत्रण देता तो कभी नववर्ष या दिवाली को शुभकामनाओं सहित शुभकामना-पत्र भेंट करता।

महक सोच रही थी आखिर मयंक में कमी भी क्या है? पढ़ने में होशियार है। अच्छे खाते-पीते घर का है। फिर भी न जाने क्यों मयंक, महक के मन को नहीं भाया। यही सोचते-सोचते महक घर पहुंच गई।

अकेली लड़की होने के कारण मां-बाप भी महक को बहुत दुलार करते थे। मां की इच्छा थी कि अब महक की शादी कर दी जाए, परंतु महक की जिद आगे पढ़ने की थी। मां को महक की जिद के आगे घुटने टेकने पड़े और पिता जी... उन्होंने ही तो महक को सिर पर बैठा रखा था। पिता जी अकसर मां को समझाते, "अरे शादी की जल्दी क्या है? हमारी महक सुंदर है, होशियार है और फिर वो पढ़ना ही तो चाहती है। दो-तीन सालों में क्या फर्क पड़ता है। विश्वविद्यालय की पढ़ाई समाप्त होते ही शादी कर देंगे। शायद हमारी महक अपने लिए लड़का खुद ही ढूंढ ले।"

यह सुनते ही महक शरमा जाती और कमरे से भाग जाती। मां-बाप दोनों जोर-जोर से हंसने लगते।

"मां, मोटी रजाई डाल देना। शिमला में ठंड बहुत है और मां अपनी और पिताजी की फोटो भी बैग में रख देना। कभी याद आई तो दिल बहला लिया करूंगी।" उसे चलते समय के शब्द याद आ रहे थे। देखते-ही-देखते सप्ताह बीत गया। आज महक वापस शिमला जा रही थी। बस स्टैंड पर जैसे ही टिकट लेकर मुड़ी सामने मयंक खड़ा था।

"मुबारक हो महक, तुम्हें एम.एस.सी. में एडमिशन मिल गया।"

"थैंक यू।"

"महक मैं आजकल कांपीटीशन की तैयार कर रहा हूं।"

"बहुत अच्छी बात है मयंक, तुम अवश्य किसी अच्छे पद के लिए सलैक्ट हो जाओगे!"

"थैंक यू फॉर गुड विशेज़, महक आज तो तुम जा रही हो, आज तक कभी तुमने मुझे नहीं समझा। महक मैं तुमसे बहुत प्यार करता हूं...।"

"ओह मयंक, फिर वही..."

"नहीं महक, आज तुम्हें जवाब देना पड़ेगा। और वो भी 'हां' में। महक तुम पढ़ना चाहती होन। खूब पढ़ो। मेरी शुभकामनाएं तुम्हारे साथ हैं। तुम जब चाहोगी तभी शादी होगी। मैं जिंदगी भर भी तुम्हारा इंतजार कर सकता हूं।" कहते-कहते मयंक भावुक हो उठा।

"ओह, बस चल पड़ी।" भागती हुई महक बस में चढ़ी। मयंक बेबस खड़ा देखता रह गया और महक कुछ ही क्षणों में नज़रों से ओझल हो गई।

000

"एक्सक्यूज़ मी प्लीज़, कैमिस्ट्री की लेबोरेटरी कहां है?"

"ऊपर वाले ब्लॉक में।"

"नई आई हो।"

"जी हां, आज पहला दिन है।"

"क्या नाम है तुम्हारा?"

"जी... महक।"

"वाह, जैसी खुद हो वैसा नाम है।"

"जी?..."
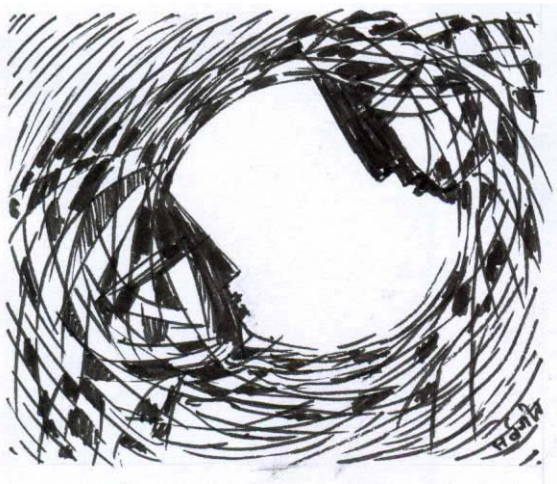
"नहीं, कुछ नहीं, मेरा नाम अंशुल है। मैं भी इस विश्वविद्यालय में नया हूं। मेरा भी आज पहला दिन है।"

"आप किस डिपार्टमेंट में हैं?"

"मैं आप ही के डिपार्टमेंट में प्रोफैसर नियुक्त हुआ हूं। वैसे मैं दिल्ली का रहने वाला हूं।"

"ओह... माई गॉड... तो मैं अपने सर से बात कर रही थी। आप तो बिलकुल विद्यार्थी लगते हैं।"

"हां.. ठीक कहती हो, कुछ किस्मत ने साथ दिया। पी. एच-डी. करते ही नौकरी मिल गई।"

महक पहली नज़र में ही अंशुल की ओर आकर्षित हो गई। जवान, खूबसूरत, घुंघराले बाल व इतना मधुर बोलने वाला नवयुवक। फिर इतना काबिल और पढ़ा-लिखा। महक ने पहली बार अपनी धड़कन को तेज होते महसूस किया। अंशुल भी महक की ओर आकर्षित हो चुका था। फिर एक डिपार्टमेंट। बातें धीरे-धीरे मुलाकातें बन गईं। फिर मुलाकातों का सिलसिला प्यार में बदलते भी देर नहीं लगी। समय बीतता गया। अब महक की पढ़ाई समाप्त होने में केवल एक महीना रह गया था।

आज महक का दिल पढ़ाई में नहीं लग रहा था, कारण? आज अंशुल सर छुट्टी पर थे। खैर, जैसे-तैसे दो बज गए। दो बजे के बाद प्रैक्टिकल का पीरियड हुआ। महक अनमनी-सी प्रैक्टिकल करने लगी। टैस्ट ट्यूब में कैमिकल मिलाकर गर्म हो जाने से कैमिकल महक के चेहरे पर आ गिरा। एकदम शोर मच गया। महक को अस्पताल में ले जाया गया। महक अपनी एक आंख खो बैठी तथा लगभग आधा चेहरा जल चुका था।

अंशुल को पता चला तो भागते हुए अस्पताल आया। महक को सांत्वना दी। महक के घर दूरभाष द्वारा जानकारी दी। महक के माता-पिता आकर महक को घर ले गए।

इस हादसे से पूरे घर में मायूसी छा गई। मां-बाप से महक की हालत देखी नहीं जाती थी। फूलों सी महकने वाली महक बेबस गुमसुम पड़ी छत को निहार रही थी।

सारे सपने पल भर में छिन-भिन्न हो गए। न जाने किस मनहूस की नज़र लग गई थी, इस घर को।

महक अकसर बंद अंधेरे कमरे में ही लेटी रहती। मां-बाप से भी कम बातें करती। अंदर-ही-अंदर घुली जा रही थीं अंशुल ने भी न तो कोई पत्र लिखा न ही कोई खबर ली। महक ने किस्मत के साथ समझौता कर लिया था।

समय गुजरता गया। आज इस हादसे को हुए पूरा एक वर्ष हो चुका था।

"डींग डांग", दरवाजे पर कॉलबेल बजी। महक की मां ने दरवाज़ा खोला।

"जी मेरा नाम मयंक है। आज ही देहरादून से मिलिट्री ऑफिसर की ट्रेनिंग समाप्त करके आया हूं। मेरी पोस्टिंग इसी जिले में हुई है। मैं महक का सहपाठी था।"

"आओ बेटा आओ... बैठो... महक तो किसी से मिलना पसंद नहीं करती। वक्त ने उसके साथ बहुत बड़ा छल किया है। बेटे। मेरी शीशे जैसी बेटी हालात की ठोकर से चटक गई है बेटे।" कहते-कहते मां रोने लगी।

मयंक ने मां को ढांढस बंधाया, "मुझे सब पता है मां जी, वक्त के आगे किसकी चलती है।"

"मां जी... महक से कहिए न मयंक मिलने आया है।"

"अच्छा बेटे देखती हूं, महक जा बेटी, कोई मयंक नाम का लड़का तुझसे मिलने आया है।"

मयंक का नाम सुनते ही महक रो पड़ी। "रहने दो मां, मुझे बीता हुआ कल याद न दिलाओ। मैं किसी को नहीं मिलना चाहती।"

मयंक इतनी देर में कमरे में प्रवेश कर चुका था।

"महक... देखो मैं मयंक हूं... महक कब तक इस अंधेरे कमरे में रहोगी।"

महक ने मयंक को देखा तो दोनों हाथों से चेहरा ढक लिया।

"मैं जानता हूं महक... मैंने तुमसे प्यार किया है। तुम्हारे चेहरे से नहीं। मैं तुम्हें चाहता हूं तुम्हारे अस्थायी हुस्न को नहीं। महक मैं तुमसे शादी करना चाहता हूं। मैंने अपने मां-बाप को सब बता दिया है। उन्हें कोई एतराज नहीं है।"

यह सुनते ही महक मयंक के गले लग गई। मयंक ने महक को आलिंगनबद्ध करते हुए खिड़की से पर्दा हटा दिया। कमरा उजाले से भर गया।

प्रधानाचार्य, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला बाहा,
तहसील नालागढ़, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-174 101,
मो. 94180 33868

नाटक

अभिशाप

● हेमंत भार्गव

काट डालेंगे आज उसे नहीं छोड़ेंगे (रंगमच पर आवाजें आने लगतीं हैं)

(सूत्रधार का रंगमंच पर प्रवेश)

सूत्रधार - किसे काट डालेंगे (सामने दो आदमी खड़े हैं एक हिन्दु एक मुसलिम)

आदमी- जिसने ये नाटक लिखा है

सूत्रधार - क्यूं काट डालोगे भाई और ये नाटक लिखा किसने है।

आदमी- कोई हेमन्त भार्गव नाम का आदमी है उसने धर्म को लेकर कुछ लिखा है। मैं अपने धर्म के खिलाफ कुछ नहीं सुन सकता इसलिए उसका गला काट के धर्म की रक्षा करूंगा।

दूसरा आदमी - मेरे मजहब के खिलाफ भी कोई गलत बात करे, ये मैं भी बर्दाश्त नहीं कर सकता।

सूत्रधार - तुम्हें पता है इस नाटक में क्या है ?

दोनों आदमी - नहीं

पहला आदमी - हमने किसी से सुना है कि उसने अपने नाटक में परम्पराओं और हमारे समाज की बुराई की है।

सूत्रधार - किसी की सुनी सुनाई बातों पर तुम कैसे यकीन कर लेते हो ?

दूसरा आदमी - जो भी हो मैं तो उसका गला काटूंगा।

पहला आदमी - मैं भी तुम्हारे साथ हूं।

सूत्रधार - पहले नाटक तो देख लो बाद में उसका गला काट लेना ।

दूसरा आदमी - इसमें हर्ज ही क्या है।

पहला आदमी - हां हां हम देखेंगे कुछ गलत लगा तो मैं चाकू तो साथ लाया ही हूं। अपने नाटक को देखने तो वो आएगा ही तब उसका गला काटूंगा।

सूत्रधार - (जनता को लक्ष्य करके) देखा आपने ये रोज मजहब के नाम पर झगड़ा करते हैं देश में कितने सांप्रदायिक दंगे होतें हैं, कितनी बसें-गाड़ियां तोड़ी और फूंकी जातीं हैं एक दूसरे पर छींटाकशी होती है, लेकिन जब चोट दोनों तरफ लगी है तो दोनों एक हो गए। किसी ने सच ही कहा है दुश्मन का दुश्मन दोस्त होता है, आइए देखतें हैं इस नाटक में एसा क्या है।

फव्वाद - अम्मी जान अम्मी जान!

(रुखसार का प्रवेश)

क्या हुआ बेटा चिल्ला क्यों रहा है ?

अम्मी जान! आज मैंने हिना को एक लड़के के साथ देखा और वो भी हिंदू।

रुखसार - आने दे उसे मैं उसकी खबर लेती हूं वो हमारे नाम को मिट्टी में मिलाने पर तुली हुई है। उसे अपने अब्बा की इज्जत का भी ख्याल नहीं।

फव्वाद - अम्मी जान मैं तो कहता हूं तुम उसकी पढ़ाई छुड़वा दो और उसके निकाह के बारे में सोचो उसके बाद आएगी उसकी अक्ल ठिकाने। बहुत पर निकल आएं हैं उसके।

रुखसार - आने दे तेरे अब्बा को उनसे कहकर किसी अच्छे से लड़के को देख उसका निकाह करवा देंगे।

फव्वाद - अम्मी आप अब्बा से कहकर मुझे नया फोन दिलवाईए ना।

रुखसार - तू इस बार अच्छे नंबरों से पास हो जा तब तेरे अब्बा से तूझे फोन दिलवा दूंगी, पिछली बार भी तेरे नंबर कम आए थे ।

फव्वाद - अम्मी जान रिजल्ट तो अगले साल आएगा मुझे फोन आज ही चाहिए मुझे नोटस लेने होतें हैं और मैं इंटरनेट के जरिए नोटस मंगा कर पढ़ सकूंगा।

रुखसार - घर में कम्प्यूटर तो पड़ा है और तेरे अब्बा ने नया ब्रॉडबैंड कनेक्शन तेरे लिए ही तो लगवाया है।

फव्वाद - अम्मी अब मैं प्लस टू में हूं मुझे स्कूल में कुछ जरूरी टॉपिक चाहिए होतें हैं। मेरे दोस्त अपने-अपने फोन से इंटरनेट पर सर्च कर जल्दी से एसाइन्मेंट बना लेते हैं। और मैं दोस्तों से फोन मांग कर सर्च करता हूं। (रोने लगता है)

रुखसार - तूझे इतनी मंहगी ट्यूशन भी तो लगा रखी है वहां क्या करने जाता है तू ?

फव्वाद - वहां सर जो टॉपिक पढ़ाते हैं उनको इन्टरनेट पर समझना पड़ता है इसकी वजह से ही मेरे नंबर कम आते हैं मैंने

आज तक आप लोगों को इसलिए नहीं कहा क्योंकि मैं जानता हूं कि आपके पास भी पैसों की तंगी है।

रुखसार - हिना के पास भी तो फोन नहीं है लेकिन वो जमात में अव्वल आती है और उसके लिए तो हमने ट्यूशन भी नहीं लगा रखी है।

फव्वाद - वो नकल करती है तभी उसके नंबर ज्यादा आते हैं।

रुखसार -चल तेरे अब्बा से कहती हूं। (दोनों चले जातें हैं अंधेरा)

(सायंकाल का दृश्य)

(हिना कॉलेज से अपनी सहेली के साथ लौट रही है)

सोनी - हिना अब तो सिर पर बोझ बहुत हो गया है एग्जाम आने वाले हैं।

हिना- हां वो तो है।

सोनी- तू इतनी उदास क्यूं है।

हिना- कोई बात नहीं है।

सोनी- कुछ तो है जो तू छुपा रही मैं तेरी सहेली हूं मुझे तो बता दे।

हिना- कुछ लड़के रोज मुझे घर जाते छेड़ते हैं और गंदी बाते बोलते हैं (रोने लगती)

सोनी - (लम्बी सांस छोड़ते हूए) ये तो सब लड़कियों की परेशानी है जिनकी शादी हो चुकी होती है उनपे भी फब्बतियां कसते हैं और हम घर पर भी कुछ नहीं कह सकतीं अगर कहेंगी तो हमारी पढ़ाई छुड़ा देंगें।

हिना- हां सही कहती हो, लड़कों से लेकर अधेड़ उम्र तक एसे घूरते हैं जैसे कई दिनों से भूखे बाघ को शिकार मिल गया हो। क्या करें समझ नहीं आता मुझे तो ये मजहब भी औरतों को बेड़ियों में जकड़ने वाले फंदे नजर आते हैं।

सोनी - लगता नहीं ऐसा ही है, हम घर की दहलीज लांघते हैं तो पहली शिक्षा यही मिलती है कि तुम हमारे घर की इज्जत हो बस ये ख्याल रखना जबकि ये लड़कों से मां बाप कुछ नहीं कहते। लड़के रात को जितने मर्जी बजे घर आए उनसे कुछ नहीं पूछा जाता और हम पांच मिनट लेट हो जाएं तो बवाल खड़ा हो जाता है।

हिना- बात तो तुमने सही कही जब मैं लेट होती हूं मुझसे सौ सवाल होते हैं लेकिन मेरे मेरा भाई अक्सर लेट आता है उसको पूछने वाला कोई नहीं है।

सोनी- मुझे तो लगता है कि लड़की होना गुनाह है ?

हिना- इसमें सोचना क्या? ये तो साफ दिखता है।

सोनी- तेरा भाई कौन सी क्लास में है ?

हिना- बारहवीं में हुआ है वो भी थर्ड डिविजन में ।

सोनी- क्या बात है तुम्हारे होते हुए थर्ड डिविजन में पास हुआ ?

हिना - अब मैं क्या कहूं उसे नशे की लत लग गई है और उसका साथ भी गलत है। (लम्बी सांस लेकर) घर में कुछ कह भी नहीं सकती, कुछ कहूंगी तो मुझे डांट पड़ेगी। जब उसे पढ़ने को कहती हूं तब उससे तो सुनने को मिलता ही है लेकिन साथ ही साथ अम्मी अब्बू से भी डांट पड़ती है।

सोनी- मेरे घर का भी यही हाल है।

हिना- क्यूं तुझे क्या परेशानी है ?

सोनी- परेशानी तो ये है कि घरवाले मेरी शादी कराना चाहतें हैं और मैं पढ़ना चाहती हूं।

हिना - लेकिन तुम्हारी अभी उम्र ही क्या है ? अभी कॉलेज का फाइनल ईयर है, उसके बाद आगे पढ़ना है, नौकरी करनी है, फिर किसी के सहारे की जरूरत नहीं रहेगी।

सोनी -तू ठीक कहती है कहने के लिए यहां औरत और मर्द को बराबर दर्जा है लेकिन सिर्फ कागजों और नेताओं के भाषणों में ही। हकीकत की दुनिया कुछ और ही है। यहां पर लड़की पैदा होते ही घरवाले उसकी शादी के बारे में सोचने लगतें हैं, लड़की स्कूल जाने लगी नहीं की सौ बंदिशे लगा दी जातीं है। लड़की पढ़े भी तो कैसे ? हर वक्त उससे कहा जाता है इक्कीस साल तक पढ़ ले जितना पढ़ना है उसके बाद शादी करवा देंगे। (रोने लगती है हिना उसको गले लगाती)

हिना- चुप हो जाओ कुछ नहीं हो अभी फाईनल पेपर हो जाएंगे तू बैंक की तैयारी कर, नौकरी लग जाएगी तब तू अपनी मर्जी से शादी कर सकती है।

सोनी -पर घरवाले ग्रेजुएशन के तुरंत बाद ही मेरी शादी करना चाहते हैं। दादी कहती है उम्र हो रही है इसकी शादी की, गुजर गई तो कोई शादी नहीं करेगा इससे । दादी कहती की पांच साल की उम्र में उसकी शादी हो गई थी। अब क्या करूं कुछ समझ में नहीं आता । परेशान हो गई हूं मां ही मेरा साथ देती है मां चाहती है मैं आगे पढ़ूं पर उनकी सुनता कौन है ? उनको छोड़ सभी मेरी शादी करवाने पर तूले हैं।

हिना-अल्लाह का शुक्रिया अदा करती हूं कि मेरे अम्मी अब्बू ऐसे नहीं हैं। उन्हें मेरी पढ़ाई से कोई परेशानी नहीं है।

हिना- अब हमें देरी हो रही है चलते हैं, बस आने वाली है।

(हिना और सोनी बस का इंतजार कर रही है सामने कुछ आवारा लड़के हैं जो उन्हें परेशान करते हैं)

पैसे दे दो पैसे दे दो (छोटा बच्चा भीख मांगते हुए उम्र नौ साल)

रमेश- (एक आवारा लड़का जो हिना को परेशान करता है बच्चे से) क्या चाहिए ?

छोटा लड़का - पैसे चाहिए भूख लगी है।

रमेश - तेरे मां बाप ने तुझे पैदा ही क्यूं किया अगर पाल नहीं सकते थे (अपने दोस्तों के साथ हंसते हुए)

छोटा बच्चा उनके पास से हटने लगता है

रमेश - ए सुन

(बच्चा उसकी तरफ आता है)

रमेश - पैसे लेगा ।

बच्चा- हां

रमेश - जो मैं बोलूंगा वो करेगा तो तूझे सौ रूपये दूंगा।

बच्चा- हां मैं करूंगा।

रमेश - ये लो गुलाब का फूल और जो सामने लड़की खड़ी है न उसे देकर आओ ।

(बच्चा फूल लेकर लड़की की ओर चलता है)

बच्चा- दीदी दीदी ये।

हिना- क्या है ?

बच्चा- ये फूल उन भैया ने दिया है।

(हिना उन लड़कों की तरफ देखती है रमेश और उसके दोस्त हंसने लगते हैं)

हिना- मुझे ये फूल नहीं चाहिए

बच्चा- ले लो न दीदी नही ंतो वो मुझे पैसे नहीं देंगे

हिना- कहना क्या चाहते हो तुम ?

बच्चा- उन्होंने कहा है कि अगर आप ये फूल लेंगी तो वो मुझे पैसे देंगे मुझे भूख लगी है ले लो न।

(हिना को उन लड़कों पर गुस्सा आता है और बच्चे पर तरस वो अपने पर्स से दस रूपये निकाल कर बच्चे को देने लगती है)

बच्चा- दीदी अब दस रूपये में कुछ नहीं आता भरपेट थाली पचास रूपये की आती है।

हिना- ये लो पचास रूपये और जाओ यहां से

(बच्चा जाने लगता है हिना,सोनी की बस आ जाती है दोनों बस में बैठ जाती है बस में उसके साथ एक पुरूष बैठा है)

(बच्चा खाना खाने के लिए होटल जाने को होता है तभी रमेश और उसके दोस्त बच्चे को पकड़ कर मारने लगते हैं। उससे पैसे छीन लेतें हैं ,हिना बस की खिड़की से उदास मन से सब देखती रहती है)

रमेश - साले तुझको फूल देने भेजा था तू उससे पैसे ले आया (थप्पड़ मारता है बच्चा नीचे गिर जाता है और रोने लगता है। उन लड़को में से एक बस की तरफ इशारा करके बोलता है रमेश देख भाभी तूझे देख रही है। रमेश खुश होता है।

(रमेश बच्चे से बोलता है)

देख अगर तू मुझसे थप्पड़ खायेगा तो तूझे सौ रूपये दूंगा

बच्चा- ठीक है

(रमेश बच्चे के गालों पर जोर -जोर से थप्पड़ मारता है बच्चा दर्द से चीखता है)

बच्चा- भैया अब तो पैसे दे दो न।

रमेश - साले इतने थप्पड़ खाये तब भी तेरी भूख नहीं मिटी, चल जा यहां से (धक्का देता है बच्चा फिर नीचे गिरता है और रोता हुआ चला जाता है)

(रमेश अपने दोस्त शमी और उसके साथियों के साथ बात कर रहा है)

रमेश - यार आज तेरी भाभी कमाल की लग रही थी क्या करूं यार।

शमी- (सिगरेट फूंकते हुए) यार वो तो ठीक है पर मेरा तो भाभी की सहेली पर दिल आ गया है वो तो तेरे ही मोहल्ले में रहती है न।

शमी - इश्क ने हमें निकम्मा कर दिया रमेश वर्ना हम भी आदमी काम के थे।

रमेश - अबे वो गालिब था।

शमी- मेरे लिए तो तू ही गालिब है (दोनों हंसते हैं)

रमेश - यार तू टेंशन मत ले मैं तेरा टांका फिट करवाऊंगा।

शमी- यार ऐसा हुआ तो पार्टी मेरी तरफ से । पर लगता नहीं तू ऐसा कर पाएगा अपनी वाली को तो इतने दिनों में पटा नहीं सका मेरे लिए उसको कैसे पटाएगा ?

रमेश -तू हजार की शर्त लगा तब देखना।

शमी- तू हजार की बात करता है चल लग गई पांच हजार की।

रमेश - तू नहीं जानता तेरा भाई कुछ भी कर सकता है। अब तो तू तैयारी कर वो तेरी हुई।आज रात पार्टी के बाद सीधे उसके

घर चलेंगे बस तू अपनी वैन ले आना

(बच्चा जिसे रमेश ने थप्पड़ मारा है वो बेबस आंखों से होटल में लगे खाने की तरफ देखता है)

(अरे तुम रो क्यों रहे हो एक आवाज गूंजती है)

बच्चा - कुछ नहीं बाबूजी जो सामने होटल में खाना है उसकी महक से ही अपनी भूख मिटा रहा हूं क्योंकि खाना तो मेरे नसीब में भगवान ने लिखा नहीं है। मार जरूर थी जो मैं खाकर आया हूं।

बाबू- किसने मारा है तुम्हें ? और मारा क्यूं ?

बच्चा- मैं उनसे पैसे मांग रहा था (फिर रोने लगता है रोते हुए) एक दीदी ने मुझे पैसे दिए भी जो उन्होंने छुड़ा लिए।

बच्चा - उन लड़कों ने (रमेश और उसके दोस्तों की तरफ इशारा करता है।)

(बाबू उन लड़कों के बारे में अच्छी तरह से जानता है कि वो आवारा हैं वो उनसे उलझ नहीं सकता। कुछ सोचते हुए)

बाबू - तुम चुप हो जाओ मैं तुम्हें पैसे दूंगा अब तो ठीक है न

बच्चा - बाबूजी आज तो आप दे देंगे कल कौन देगा ? मेरे पैदा होते ही मेरी मां मर गई बाबा रोज शराब पीकर घर आते हैं अब इन सबमें मैं पिस रहा हूं मैं कहां जाऊं समझ में नहीं आता है। मुझे लगता है मेरी तो जिंदगी ही बेकार है।

बाबू- नाम क्या है तुम्हारा ?

बच्चा-शमी (उदास होते हुए)

बाबू- ऐसा नहीं है शमी इस धरती पर जो पैदा होता है उसका एक खास मकसद होता है तुम्हारा भी है ।

बच्चा- मेरा क्या मकसद है ?

बाबू- तुम्हें ऊंचाइयों को छूना है।

बच्चा- बाबूजी ये कैसे हो सकता है ?

बाबू- तुम स्कूल नहीं जाते ?

बच्चा- नहीं जाता उसके लिए फीस भरनी पड़ती है न वो हमारे पास होती नहीं जो कोई हमें कुछ दे जाता है उससे ही तो गुजारा चलता है।

बाबू- मैं तुम्हें घर ले जाऊंगा और तुम घर का काम भी करना और पढ़ना भी।

बच्चा- पर मैं अपने बाबा को कैसे छोड़ूंगा वो तो अकेले रह जाएंगे न।

बाबू -तुम मेरे घर के छोटे-मोटे काम कर दिया करना और दिन में स्कूल से छुट्टी होने के बाद मेरे घर पर काम करना और मैं तुम्हें पढ़ा भी दूंगा। मैं तुमसे घर में काम करने को इसलिए कह रहा हूं कि तुम मेहनत से कमाना सीख जाओगे और जिंदगी में बहुत नाम कमाओगे। ठीक है न ?

बच्चा- जी बाबूजी (खुश हो जाता है)

बच्चा- बाबूजी आपका नाम क्या है और आप क्या करते है?

बाबू- मेरा नाम हरीश है और मैं कॉलेज में प्रींसिपल हूं।

बच्चा- बाबूजी वो सब तो ठीक है पर मुझे अभी भूख लगी है।

हरीश - ठीक है तुम मेरे घर चलो वहां हम दोनों खाना खाएंगे। कल मैं स्कूल में तुम्हारा दाखिला स्कूल में करवा दूंगा।

बच्चा- ठीक है।

(दोनों चले जाते हैं।)

(हिना के साथ बैठा हुआ आदमी हिना को छेड़ रहा है कभी हाथ लगाता है कभी चूंटी काटने लगता है हिना जोर से उसे तमाचा जड़ती है और वो आदमी स्तब्ध होकर हिना को देखने लगता है सारी बस में खामोशी छा जाती है)

हिना- तुम्हारे घर में मां बहन नहीं है जो तुम इस तरह की हरकत करते हो ।

आदमी- मैंने क्या किया है ?

हिना - तुम क्या कर रहे थे तुम्हें तो सवाल करते हुए शर्म नहीं आती पर मुझे जवाब देने में भी शर्म आ रही है। तुम मेरे वालिद की उम्र के हो मैं तुम्हारी बेटी जैसी हूं और तुम एसी गिरी हुई हरकत करते हो। तुम लोग लड़कियों का गलत फायदा उठाते हो की वो कुछ तो कहेगीं नहीं और तुम अपनी मर्जी की करते रहोगे। अब जमाना बदल चुका है और लड़कियां भी, नहीं सुधरोगे तो आगे और भी करारा जवाब मिलेगा (बस तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठती है सब हिना की प्रशंसा कर रहे हैं । अच्छा हुआ इसे थप्पड़ पड़ा ये रोज ऐसा ही करता है। ऐसा ही

होना चाहिए इन जैसे लोगों के साथ।)

(हिना, सोनी का बस स्टॉप आ जाता है)

कंडक्टर- मैडम आपका बस स्टॉप आ गया

सोनी- एक मेरी तरफ से भी मार देती। (हंसने लगतीं हैं)

(हिना, सोनी बस से उतरतीं हैं वो आदमी गुस्से से हिना की तरफ देख रहा है)

(हिना घर पहुंचती है रात हो रही है सात बजने लगे हैं)

रुखसार - आज इतनी देर कहां लग गई तुझे ?

हिना- आज बस खराब हो गई थी तो देर लग गई।

रुखसार - देर लग गई या किसी के साथ गुलछर्रे उड़ा के आई है।

हिना- ये कैसी बातें कर रहीं हैं अम्मी जान।

रुखसार - मुझे सब पता है तू हिन्दू लड़के के साथ घूमती है, तू अपने अब्बा की नाक कटवाने पर तुली है। फव्वाद ने मुझे सब कुछ बता दिया है कल से तेरा कॉलेज जाना बंद अब तेरे निकाह की बात तेरे अब्बू से करनी ही पड़ेगी, कल को तू किसी के साथ भाग गई तो हमारी इज्जत तो खाक में मिल जाएगी।

हिना- अम्मी जान मेरी बात तो सुनो

रुखसार - मुझे कुछ नहीं सुनना है (गुस्से के साथ) अब तू घर के काम सीख बहुत कर ली पढ़ाई।

(हिना फव्वाद की तरफ देखती है उसके आंसू बह रहे हैं, अपने कमरे में चली जाती है)

(हिना खुद से ही बात कर रही है)

(हमारा लड़की होना इसमें मेरा क्या गुनाह है आज मैं सोच ही रही थी कि मेरे अम्मी अब्बू ऐसे नहीं हैं । फव्वाद ने उस रमेश को मुझे छेड़ते देख लिया होगा और वो गलत समझ बैठा उसकी वजह से ये क्या हो गया, अब अगर अम्मी ने अब्बू को मेरे निकाह के लिए मना लिया तो मेरे सारे ख्वाब अधूरे रह जाएंगे)

(हिना फव्वाद के पिता इकबाल का घर में प्रवेश)

रुखसार - आप आ गए ?

इकबाल- नहीं अभी रास्ते में हूं

रुखसार - अरे आप इतने चिढ़ते क्यूं हैं।

इकबाल - तुम इतने बेतुके सवाल पूछती ही क्यूं हो तुम्हें नहीं पता कि मैं आ गया हूं दिखता नहीं। एक गिलास पानी लाना। (पानी देते हुए)

रुखसार - सुनिए वो फव्वाद को फोन चाहिए था स्कूल में उसे नेट की जरूरत होती है पढ़ाई के लिए।

इकबाल -उसे फोन की क्या जरूरत है घर में ब्राडबैंड है उसपे क्यूं नहीं कर लेता जो काम करना है।

रुखसार - स्कूल में उसे जरूरी टॉपिक सर्च करने होते हैं इन्टरनेट पर

इकबाल- इतने सालों से तो उसके नंबर कम आ रहे हैं अब नवाबजादे को मोबाइल चाहिए चलो भई ले देंगे।

रुखसार - एक बात और है

इकबाल- अब क्या है ?

रुखसार - हिना अब जवान हो गई है उसके निकाह के बारे में भी सोचिए।

इकबाल - तुमने मेरे मुंह की बात छीन ली आज ही उसके लिए लड़का देख आया हूं, लड़का तीस हजार तनख्वाह लेता है । अल्लाह ने चाहा तो सब ठीक हो जाएगा।

(हिना की आंखों से आंसू बह रहे हैं)

(सूत्रधार का प्रवेश)

सूत्रधार - (ऐसा लगता है लड़की होना एक अभिशाप है सरेराह ऐसी घटनाएं होतीं हैं । बस स्टैंड, रेलवे के बाथरूम में, बस स्टाप की दिवारों पर अश्लील शब्द देखने को मिलतें हैं वहां खड़े होकर दम घुटने लगता है। और तो और ऐसे लोग कई बार अपनी खुन्नस निकालने के लिए लड़कियों का मोबाईल नंबर हर कहीं लिख देतें हैं, कई बार एसी घटनाओं के कारण कई लड़कियां खुदकुशी कर लेतीं हैं। कुछ आवारा लड़के लड़कियों का पीछा उनके स्कूल, कॉलेज से उनके घर तक करतें हैं, लड़कियां डर की वजह से कुछ नहीं कहतीं जिससे ऐसे बदमाश लोगों की हिम्मत बढ़ जाती है और उससे कई भयानक अंजाम सामने आते हैं। लड़कों की फिक्र उनके मां बाप को इतनी होती है कि वो गलत संगत में न जाए और लड़कियों के मामले में हर चीज पर पैनी नजर रखतें हैं।

ऐसा नहीं की लड़कियां गलत नहीं होतीं, लेकिन जो सही होतीं हैं उनके साथ भी तो ऐसी घटनाएं घटतीं हैं।

लोग बस तमाशा देखतें हैं। रमेश और उसके दोस्त हमारे सभ्य समाज से ही आते हैं। करें भी तो क्या? असभ्यता का बीज तो हमारे समाज ने ही बोया है, आजकल बहुत सी घटनाएं ऐसी होतीं हैं जो हमारे समाज की वास्तविकता को दर्शातीं हैं। हिना के साथ जो कुछ भी हुआ वो आज हर लड़की के साथ होता है शायद इससे भी बुरा, हिना वो सब अपने अब्बू को कैसे बताती, उसने कुछ नहीं बताया तब भी हंगामा खड़ा हो गया। भूख भी चीज क्या होती है कि थप्पड़ खाने को रमेश तैयार हो जाता है। आइए आगे देखते हैं।

(पहले अंक की समाप्ति होती है पर्दा धीरे-धीरे नीचे गिरता है)

(शेष अगले अंक में)

गांव सानन डाकघर डमैहर, तह. अर्की जिला सोलन,
हिमाचल प्रदेश-173 221, मो. 94592 41266

कविता

चींटियां भी कभी दे जातीं मात

● श्याम सिंह घुना

जो खटता नित सांझ सवेरे
बचपन, जवानी और बुढ़ापा
लाचार चाहे कितना भी वह
कम न खेतों से उसका प्यार हुआ
घर किसान का चाहे जितना लाचार हुआ
फसल गवाही दे सकती
कमा-कमा खिलाया किसने
सबको खुशहाल बनाया किसने
खटते-खटते हज़ारों साल हुए
मगर न सपना उसका साकार हुआ

लूटा उसको सूरज ने तब-तब
सरमाथे बिठाया उसको जब-जब
वही हाथ झुलस दिए उसने
जो करते थे नित नमन उसको
कैसा यह भक्तों से प्यार हुआ
साहूकारों के जाल में भुखमरी की सांसें
मांगती कभी पानी तो कभी राहत
खेतों में किसान के आंसुओं का सैलाब
कभी बाढ़ तो कभी सूखे की मार
निरंकुश क्यों अंतर्राष्ट्रीयवाद हुआ

ब्याज़ चक्र वृद्धि ब्याज़ में फंसते गांव
जंगलों से लुप्त होती छांव
सूखते जल स्रोत उगते कंक्रीट
मानवता की छाती पर कीमतों के प्रहार
कैसा यह आयात्-निर्यात विश्व व्यापार हुआ

मुफलिसों का निवाला छीनने वालो
गद्‌दी चोर सत्ता के अदना दलालो
सुनो यह बात ध्यान से सुनो
गरीबी का तुम्हारी नहीं कोई अंत
महल चाहे तुम जितने बनवा लो

कुत्ते की नस्ल का होता इनसान कैसा
इनसान की नस्ल का हैवान कैसा
गिरेबान् में अपने झांकों तो जरा
पता चल जाएगा पल भर में
दर्पण को अपना तनिक मुंह तो दिखा दो

समाजवाद तुमने यह कैसा फैलाया
गरीबी-बेरोज़गारी हटाने का बीड़ा उठाया ऐसा
सोने-सोचने, खाने पहनने, उड़ने चलने के क्यों
देने पड़ते दामों के दाम हर सुविधा के नाम
कैसा यह पेटेंट अधिकार कहलाया

मज़बूरियों से खेलोगे कब तक
कभी तो रहम करोगे मेहनतकशों पर
कब तक यों ही सेवाएं लोगे
कभी तो खाएगा तुम्हें हमारा श्राप
कभी तो कीमत चुकाओगे जनाब

हम बताए देते आपको साहब
बेशक आप सूरज या ईद का चांद
नज़र अंदाज़गी में आपकी इतना दम नहीं
दूध से मक्खी की सानी क्या
हर बार हर किसी को फेंकते रह सकोगे आप

बहुत मेहनत से संजोया हमने
अपने दिल की बगिया में फूलों का बाग
यह मत सोचिएगा जनाब
कि हर बार रौंद लोगे अपने जूतों से इसे
सफेद हाथियों की ही नहीं होती औकात्

कैसी यह विडंबना
हमारी मेहनत को अपना बताओ
लूटो भी हमें, समझाओ भी हमें
बदनाम भी करो, पैरों तले भी रौंदो
मगर कब तक अटकी रह सकती गले में आवाज़
चींटियां भी कभी दे जातीं मात

गांव लिंगाह, डाकघर झिकनीपुल,
चौपाल, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 211

लक्ष्मी प्रसाद बडोनी की ग़ज़लें

1

मछलियां हंसने लगीं जब ख्वाब में
रोशनी सी हो गई तालाब में।
दुश्मनों से जान कैसे अब बचे
घुल गए हैं सब मिरे अहबाब में।
आंसुओं की बाढ़ दर तक आ गई
डूब जाएंगे इसी सैलाब में।
हिचकियां रुकती नहीं हैं क्यों मेरी
याद करता है कोई क्या ख्वाब में
मानकर बेकार फेंका था जिसे
हो गया शामिल वही नायाब में
'दर्द' क्या तुझको बताएं हाल अब
घिर गई हैं कश्तियां गिरदाब में।

2

जख्म दिल का कोई तो हरा छोड़ दो
जा रहे हो तो अपना पता छोड़ दो
कर रहा हूं दुआ मैं तुम्हारे लिए
ठीक होना है तो सोचना छोड़ दो
वस्ल फिर होगा सोनी माहिवाल का
फिर से दरिया में कच्चा घड़ा छोड़ दो
जिंदगी ये मिरी भी महकती रहे
फूल जूड़े में यूं ही खुला छोड़ दो
हो उजाला पड़ोसी के घर में भी कुछ
सेहन में इक जलाकर दिया छोड़ दो।
'दर्द' जो भी हो दिल में लिख दो सभी
और खत को यूं ही फिर खुला छोड़ दो।

3

जब से खुद से प्यार हुआ है
जीना मरना दुश्वार हुआ है
तुझसे मिलके जाने क्यों
खुद से मुझको प्यार हुआ है
शीशा सा कहीं चटका है
दिल कोई संगसार हुआ है
तुझसे मिलने से रोके है
दिल मेरा दीवार हुआ है
तेरी महफिल में आने को
मुश्किल से तैयार हुआ है
तुझसे मिलकर लगता है
सपना इक साकार हुआ है।

4

मुझको जीने का फलसफा देके
खो गया खुद वो रास्ता देके
खुद तो सोता रहा सुकून से वो
मेरी आंखों में रतजगा देके
किन अंधेरों में खो गए हो तुम
मेरे हाथों में इक दिया देके
खुद तो गुम हो गए न जाने कहां
जिंदगी को मेरा पता देके।

'दर्द', गढ़वाली, बडोनी भवन, देवपुरम कालोनी, तुनवाला
लोअर देहरादून, उत्तराखंड, मो. 0 94554 85094

कविता/कुलभूषण कालड़ा

जीवन की महाभारत

1
माना कि महाभारत के
संजय की तरह
नहीं है तुम्हारे पास
कोई भी दिव्य दृष्टि
फिर भी तुम्हें
अपनी जीवन डगर में
पहचानने तो होंगे
चेहरों के पीछे
चेहरे
मुस्कानों में छिपी
कुटिलता
संबंधों में लिपटी
औपचारिकता
रिश्तों की भीड़ में
अपने
और संसार की
आपाधापी में
अपना अस्तित्व।
अपने जीवन मूल्यों
तथा संस्कारों की स्थापना हेतु
आवश्यक हैं
ये सभी विश्लेषण
तभी तुम अपने परिवार के
'व्यास' बन
अपनी विरासत में
लिख पाओगे
जीवन की वह ग्रंथ
जिसे सूतपुत्र बनकर
सुनती सुनाती रहेंगी
तुम्हारी भावी पीढ़ियां।

2
अपने जीवन में
शरीर पर ही जीने वाले
हम लोग
कभी कर नहीं पाते
कोई भी फलरहित कर्म
न जाने क्यों
भूल जाते हैं हम
कृष्ण व उनकी गीता
तभी तो मायाजाल तथा
मोहजाल में उलझे
प्रायः रहते हैं संघर्षरत
अपने जीवन की
महाभारत के इस युद्ध में
अकसर हम
लहरा नहीं पाते
अपनी विजय का परचम
और अब
कर्मक्षेत्र के इस रण में
विजयी होने हेतु
हमें बनना ही होगा
अर्जुन
और केवल तभी
मिल पाएगा हमें
कोई सारथी कृष्ण।

27, मजीठिया एनक्लेव, फेज-दो,
पटियाला (पंजाब)-147 005,
मो. 0 98142 45174

कविता

लाजवाब सवाल

● **अरुण कुमार नागपाल**

क्यूं नहीं समझते सब लोग
सुर्ख और सफेद फूलों का पैगाम
सफेद फाख्ताओं की अमन की जुबां
क्यूं पूरी नहीं होती
हर आदमी की हर चाहत

क्यूं फिसल जाता है हाथ से
यौवन का प्याला
क्यूं नहीं मर जाती है
आदमी के भीतर की हिंसा
गांधी टोपी पहन लेने से ही

सफेद लंबी दाढ़ी वाला
हर आदमी
सांता क्लाज क्यूं नहीं होता
क्यूं रूलाते हैं हमें
तन्हा छोड़ जाते हैं हमें
हमारे अपने
और बन जाते हैं
टिमटिमाते सितारे दूर गगन के

क्यूं नष्ट करते हैं हम
अपने पुनीत प्रेम को
दूसरों की खातिर
क्यूं अतीत को गोद में खिलाते हैं हम
नवजात शिशु की तरह
और वो हमें प्यारा लगता है
वर्तमान और भविष्य से भी ज्यादा

क्यूं मौत के हाथों मिलती है
हमें यह जिंदगी खैरात की तरह
क्यूं लगता है
कि हमने जान लिया है सब कुछ
और फिर क्यूं लगता है
कि जिंदगी अब भी हमारे लिए
एक लाजवाब सवाल है।

धौलाधार कॉलोनी, नगरोटा बगवां,
जिला कांगड़ा, हि. प्र.-176 047,
मो. 0 94181 65671

कविता

बुलंदियां

● डॉ. कमल के. प्यासा

बुलंदियां छूना/ ऊंचा उठना
अच्छा लगता है/ खुद को सबको
बुलदियां बढ़ाती हैं/ दूरियां और फासलें
जिनसे पनपते हैं भरम
नजरों के/ और बदलते हैं स्तर देखने के।

बुलंदियों पर रहने के लिए
एकाग्र होना पड़ता है
ध्यान लगाना पड़ता है
और संतुलन बनाना पड़ता है
एकाग्रता खो जाने से
ध्यान हट जाने से
व संतुलन बिगड़ जाने से
धड़ाम से नीचे गिरना पड़ता है।

बुलंदियों को बदलते है
परिस्थितियां/ नियम है कुदरत का
विज्ञान का/ परिवर्तन होता है
ऐसे ही चलता है
ऊपर से नीचे/ नीचे से ऊपर
यही प्रकृति का चक्र है।

बुलंदियों की दूरियां
आकर्षण (बल) पैदा करती है
बढ़ाती है बल और वेग
क्रिया-प्रतिक्रिया होती है
(न्यूटन गति का तृतीय नियम)
और बुलंदियों में खलल से
यथास्थिति आ जाती है!

बुलंदियां भुला देती हैं
औकात और याद्दाश्त
अंतर-फासला बढ़ जाता है
दूर से बौने लगते हैं सब
भेद-फर्क आ जाने से
धराशायी हो जाता है तब।

प्रूर्थी, 34/अप्पर समखेतर,
मंडी, हि.प्र.-175 001

गीत

● राजेंद्र निशेश

बंद लिफाफा, पीर पराई

लौट गए आकर द्वार तक
सुखद स्वप्न हमारे।

खामोशी की चादर ओढ़े
आया नया सवेरा
बेच दिया ईमान समय ने
ऐसा संकट गहरा।
लौट गए सब पाखी-पंछी
सुख-सुविधा के मारे।

बंद लिफाफा, पीर पराई
कोई कैसे जाने
बैरिन सास, बहू को देखो
कस-कस मारे ताने।
निष्फल होकर बिखरे कैसे
सारे जतन हमारे।

सूख गई फसल उम्मीद की
ब्याज चढ़ता जाए
कैसे कोई पीर से निकले
संकट बढ़ता जाए।
चक्रव्यूह में घिरे खड़े हैं
निहत्थे व लाचारे।

आदमी का प्यार मरता जा रहा है!

उलझनें अब इस कदर बढ़ने लगी हैं
आदमी बीमार होता जा रहा है!

कहने को उसे फुरसत, न अवकाश है
हर तरफ व्यस्तता का फैला ह्रास है।
रोशनी अब इस तलक छलने लगी है
भू पर ही बना तारकों का वास है।

चमचमाती इस मशीनी जिंदगी में
मात्र वह औज़ार बनता जा रहा है!

माटियों की वह कहानी खो गई है,
आस की रूठी जवानी सो रही है।
आग-जल का रिश्ता बना कुछ इस तरह
सुलगती वह अनल पानी हो रही है।

जो लबों को छीलती है नागिनों सी
उस किरण का सार बोता जा रहा है!

आज उसका रंग हर बदला हुआ है
घुटन की तार में जकड़ा हुआ है;
जो बनाए जाल को अपने करों से
तड़पता लाचार सा मकड़ा हुआ है।

उंगलियां फौलाद की थामे हुए, पर
आदमी का प्यार मरता जा रहा है!

2698, सेक्टर 40-सी,
चंडीगढ़-160 036, मो. 0 94171 08632

बाबूलाल शर्मा 'प्रेम' की कविताएं

नई सुबह

बीत गया जो उसको छोड़ो
नई सुबह से नाता जोड़ो
समय न अपना व्यर्थ गंवाओ
मेहनत से जी नहीं चुराओ।

अब का काम न कल पर टालो
करना हो सो सभी संभालो
अगले कल को किसने देखा।
गढ़ लो अभी भाग्य की रेखा।

गिरकर उठना और संभलना
चाहे हो कांटों पर चलना,
कभी न पीछे पांव हटाना
साहस से आगे बढ़ जाना।

कल क्या होगा?

हम क्यों सोचें कल क्या होगा
करना हो सो आज करें-
हमें अभी जो समय मिला है
उसको क्यों नाराज करें।

हर पल की अपनी कीमत है
हर पग मंजिल लाता है
पल पल का जो मोल समझ ले
वह न कभी पछताता है।

कर्तव्यों के पथ पर चल हम
खुशियों से संसार भरें।

प्रेम-प्यार से भरा रहे तो
कितना अच्छा हो जीवन
कितना अच्छा हो सेवा में
लग जाए सब तन मन धन

धरती स्वर्ग बने सब मिलकर
दुखियों के दुख दूर करें।

हमको है विश्वास सदा है
मंजिल अपने पांवों में
आगे आगे पांव बढ़ाते
हम विपरीत हवाओं में

ऐसी हो हिम्मत अपनी हम
कभी मौत से नहीं डरें

हम क्यों सोचें, कल क्या होगा
करना हो सो आज करें।

हंसते रहना

चाहे रात घनी हो काली
चाहे घटा घिरे मतवाली
बच्चो! हिम्मत कभी न खोना
कठिनाई में कभी न रोना
कांटों भरी डगर में चलना
दीपक बन रातों में जलना
अंधकार से लड़ते जाना
पर घमंड का बोझ न ढोना
भले पड़े तुमको दुख सहना
पर जीवन में हंसते रहना
सबको एक समान समझना
जग में बीज प्रेम के बोना।

**555/का/ग/1, इंद्रपुरी, आलमबाग,
लखनऊ, उत्तर प्रदेश**

कविता

वो वृद्ध

● शबनम शर्मा

कितने सिमट से गये हम,
पड़ोसी को पड़ोसी की खबर नहीं,
गाँव तो बहुत दूर रहा।
बता रहा था किशन चौपाल में,
आए थे कुछ लोग बैंक से,
उसे सिखाने 'नैट बैंकिंग'
साफ मना कर दिया उसने,
चलाता है वो कम्प्युटर
करता है ढेरों बातें दोस्तों से,
पर सोचता कि गर सब
काम हो जाएंगे मोबाईल से,
तो कैसे निकलेगा, वो घर
से बाहर? कौन पहचानेगा उसे?
मंगा लेगा कपड़े, जूते, बर्तन
घर पर,/ तो कैसे देखेगा रौनक बाजार,
पढ़ा लेगा सब पाठ नन्हों को
घर पर ही/ तो कैसे जायेंगे शाला व
सीखेंगे संस्कार
दे देते आज हम बधाई फोन पर ही,
फिर कौन मिलायेगा हाथ,
मिलेगा गले, देगा आशीशें
छुएगा पाँव।
रहती है सत्तो ताई अकेली
देखने जाना है उसे भी
बीमार है सरपंच साहब,
पूछने जाना है उन्हें भी,
दो घूंट चाय की चुस्की संग
देखनी है मुस्कान इन चेहरों पर,
खानी है मिठाई शादी-सगाई
वाले घरों से,
नहीं करना है उसे एस.एम.एस.
नहीं करनी उसे ऑनलाईन शॉपिंग,
ऑनलाईन बैंकिंग,
नहीं सिमटना है उसे एक ही कमरे में,
जिन्दगी आज है, कल नहीं
जीनी है उसे, सबके दुःख-सुख
हँसी-मजाक के साथ।

अनमोल कुंज, पुलिस चौकी के पीछे, मेन बाजार, माजरा, तह.
पांवटा साहिब, जिला सिरमौर, हि. प्र. - 173021
मोब. - 098168 38909

बाल कविता

सूरज

● जगदीश कपूर

सूरज बोला मैं आग का गोला
गरमी सब को पहुंचाता हूं
पृथ्वी मुझ से दूर है इतनी
नहीं किसी को, जलाता हूं।

मैं ऊर्जा का अविरल साधन
सब को जीवन देने वाला
अंधियारे का हूं मैं दुश्मन
मैं धरती पर करूं उजाला।

पृथ्वी घूमे धुर पर अपनी
दिन और रात बनाती है
बारह मास में मेरा पूरा
चक्कर एक लगाती है।

कभी न भूलूं अपना काम
नियमों का पक्का रखवाला
नियमों का पक्का रखवाला।

अटल है मेरा अनुशासन यह
करता नहीं मैं गड़बड़झाला
सूरज बोला मैं आग का गोला।

गांव डलाह, डाकघर पधर, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 012

बाल जगत

दुनियाभर के बच्चों की प्यारी! एलिस

● पुष्पा भारती

उधर पीछे गिरजाघर, इधर बगल में क्रास्ट चर्च कॉलेज और ये सामने रहने के क्वार्टर्स। यहां बाग में पेड़ों की घनी पत्तियों से छन कर आती प्यारी-प्यारी धूप! लेकिन कब तक यहां बैठा जा सकता है! दीदी के साथ बैठी नन्ही एलिस बड़ी बोर हो रही थी। कमाल है दीदी का भी- जाने कैसी किताबें पढ़ती रहती है, न कोई रंगीन तसवीर, न कोई परी कथा! छीः क्या करना ऐसी किताब का! पर दीदी है कि आंखें गड़ाए बस पढ़े ही जा रही है, कभी- कभी मुस्कराती भी है। हुंऽ मेरे को क्या करना- दीदी से कुट्टी। ऐंऽ,यह कौन आ रहा है भला?

एलिस ने देखा, एक खरगोश जी खरामा-खरामा चले आ रहे हैं। वाह जी, क्या ठाठ है- कोट, पतलून और टाई! अरे वाह! ये जनाब तो जेब में से घड़ी निकाल कर देख रहे हैं। और लो, घड़ी देखते ही भागने भी लगे। चलूं देखूं, कहां जाते हैं? और यह लो जी,उनन्ही एलिस तो यह जा, वह जा! वह तो खरगोश के पीछे-पीछे चल दी। खरगोश एक बिल में घुसा, एलिस भी पीछे-पीछे घुस गई। कैसी लंबी सुरंग जैसा बिल है यह तो! अभी एलिस संभले-संभले कि वह तो एक लंऽबेऽऽ-से कुएं में गिरती चली गई। और एक बड़े-से कमरे में जा पहुंची। कमरे में बड़ी-बड़ी कांच की आलमारियों के तमाम तरह की चीजें रखी हैं। लंबे-लंबे दरवाजे, खूब सूंदर झालरवाले परदे ओर कमरे के बीचोबीच चिकने कांच की एक गोल मेज।

एलिस ने देखा, मेज पर, एक सोने की चाबी रखी है। उसने चाबी उठा ली। जब चाबी है, तो ताला होगा ही। पर एक-एक करके सब दरवाजे देख डाले- ताले थे तो, पर इत्ते बड़े-बड़े कि वह नन्ही चाबी किसी के काम की नहीं। चाबी तो है, पर एलिस इस कमरे में बंद है- कैसे निकले- इस चाबी का ताला कहां है? एलिस उदास हो गई। हाय! अब क्या होगा। वह बाहर निकल नहीं सकेगी, तो दीदी उसे कहां ढूंढेगी? उसके अलावा प्यारी बिल्ली डायना म्याऊं-म्याऊं करके कित्ता-कित्ता रोएगी। हाय! अब क्या करे एलिए?

अचानक उसे एक छोटा-सा दरवाजा दिखाई दिया- हां ठीक, यह देखो, इसमें जो नन्हा-सा ताला लगा है, उसमें यह चाबी घूम गई। जो दरवाजा खुला कि एलिस ने देखा, बाहर कित्ता सुंदर बाग है, गुलाब, चमेली, चंपा, लिली और जाने कौन-कौन से फूल और वह देखो, हाय राम, लदालद चेरियों से लदा पेड़। वह आम और वह खट्टे चकोतरे, संतरे भी हैं। उधर लीचियों के गुच्छे तो देखो। हाय कैसे पहुंचा जाए वहां तक? इस दरवाजे में से तो एलिस का सिर तक बाहर नहीं निकल सकता। मान लो, सिर किसी तरह घुसा भी दे, तो फिर कंधे से धड़ कैसे निकलेगा?

एलिस खोजने लगी, शायद कोई और चाबी मिल जाए। वह चाबी मेज पर वहीं रख दी, और आलमारियों में खोजने लगी। अचानक उसने देखा; एक बोतल में कुछ लाल-सा शर्बत जैसा कुछ रखा है। उस पर लिखा है, 'मुझे पी लो।' वाह जी, एलिस इतनी बुद्धू नहीं है। क्या पता, कोई जहर-वहर हो। उसने ध्यान से उलट-पुलट कर देखा। नहीं, कहीं 'जहर' शब्द तो लिखा नहीं है। हिम्मत करके उसने एक बूंद चख कर देखा। अरे वाह! यह तो मजेदार है। और जहर भी नहीं होगा, नहीं तो एक बूंद से ही मैं मर जाती। बस, उसने गटागट वह शर्बत पी डाला। और लो जी, नन्ही एलिस तो एकदम से बिलकुल ही नन्ही-मुन्नी गुड़िया जैसी, छोटी-सी बन गई। छोटे-छोटे हाथ-पैर, छोटी-सी मुइयां, छोटी-छोटी चुटल्ली! अहा!

अब तो एलिस उस दरवाजे से बाहर निकल कर बाग में जा सकेगी। एलिस ने खुशी से ताली बजाई। पर हाय री किस्मत! यह क्या हुआ- चाबी तो वहां मेज पर रखी है और एलिस इतनी नन्ही-मुन्नी हो चुकी है कि उसके हाथ मेज तक पहुंच ही नहीं सकते। उचक कर पायों पर चढ़ने की उसने बहुत कोशिश की, पर सब बेकार। वह पूरी-की-पूरी चिकने कांच के पाये से फिसल पड़ती थी, जब बड़ी थी। दरवाजा छोटा था। अब छोटी है, तो यह मेज इत्ती ऊंची है।

एलिस फिर कुछ देखने-खोजने लगी। इस बार उसे एक कटोरे में केक जैसा कुछ रखा दिखाई दिया। उसपर लिखा था, "मुझे खा लो।" जहर-वहर के खतरे से अब एलिस निशा खातिर हो गई थी। उसने केक खा ली। ओफ्फो, केक का खाना था कि एलिस तो बढ़नी शुरू हो गई- यह गई, वह गई और धम्भ! एलिस

का सिर धम्म-से छत से जा टकराया। उसे अपने पैर दूऽऽर फर्श पर दिखाई दे रहे थे। बोली, "पैर! मेरे दोनों पैरो, तुम्हें गुड बाई। पता नहीं कितनी दूर जानेवाले हो तुम।" उसने किसी तरह दोहरी झुक कर चाबी उठा ली, लेकिन अब वह फर्श से जरा ही ऊंचा वह छोटा-सा दरवाजा कैसे खोले? आखिर वह वहीं फर्श पर धड़ाम से लेट गई और लेट कर दरवाजा खोला। मुंह इतना बड़ा हो गया था कि सारे दरवाजे में एक ही आंख फिट आती थी। सो एक आंख से वह बाहर का नजारा देखती रही। पर ऐसे देखने से क्या मिलेगा? अब वह बाहर कैसे जा सकेगी? हाय! क्या वह हमेशा यहीं ऐसे ही पड़ी रहेगी?' क्या अब कभी वह अपनी प्यारी बिल्ली से नहीं मिल सकेगी? पता नहीं, उसे अपनी दूध-रोटी के कटोरे तक जाने की याद भी होगी या नहीं। बिचारी कहीं भूखी ही न सो जाए!

अपनी बिल्ली की चमकीली नीली-नीली आंखों और मुलायम रेशों की, उसकी म्याऊं-म्याऊं और उसकी प्यारी-सी दुम की याद कर-करके एलिस रोने लगी। इतना रोई, इतना रोई कि उसके आंसुओं से वहां एक तालाब बन गया। और वह अपने आंसुओं के तालाब में तैरने लगी। अचानक उसने छप्प-छप्प की आवाज सुनी। देखा, वही खरगोश जी अब ड्रेस बदल कर एकदम हीरो बने अपने एक हाथ में दस्ताने और दूसरे में एक पंखा लिए चले आ रहे हैं।

और फिर तो एलिस को एक-से-एक मजेदार परिस्थितियों का सामना करना पड़ा, जिनका ब्योरा सुन-सुनकर न कभी बच्चे थकते हैं, न सुना-सुना कर कभी बड़े लोग बोर होते हैं। 'एलिस इन वंडरलैंड' नाम की यह किताब सौ से भी कुछ और बरस पहले छपी थी। तब से अब तक संसार की लगभग सभी भाषाओं में इस किताब के अनुवाद हो चुके हैं। दुनिया भर के बच्चे इसे पढ़ और सुन कर अपना बचपन मजे से गुजारते आए हैं। एलिस दुनिया भर के बच्चों की प्यारी-दुलारी दोस्त बन चुकी है, जो उनके मनोरंजन के लिए एक-से-एक कारनामे करती है। उन्हें अपने साथ एक अनोखे परीलोक की सैर कराती है।

सचमुच की एलिस!

पर आपको सुनकर अचरज होगा कि आपकी यह नन्ही दोस्त, आपकी सुपरिचित एलिस अन्य परीकथाओं के पात्रों की तरह केवल कल्पना से गढ़ी पात्र नहीं है। एलिस तो सचमुच एक प्यारी-सी गुदकारी बच्चों का नाम था। उस प्यारी-सी एलिस ने इस पुस्तक के लेखक को परीकथाएं लिखने को प्रेरित किया था। यह बात भी कोई बहुत पुरानी नहीं- उस एलिस की 1934 में मृत्यु हुई थी। बड़ी होकर उसने 'एलिस इन वंडरलैंड' के लेखक के एक प्रिय शिष्य से शादी की थी। उसके तीन बेटे थे। दो तो प्रथम महायुद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए और तीसरा कैरिल भी आर.ए.एफ. यानी रॉयल एयर फोर्स में विंग कमांडर था, अभी पांच-छह बरस पहले ही उसकी भी मृत्यु हो गई।

एक मजे की बात बताएं? आज सारा संसार जिन्हें महारानी ऐलिजाबेथ के नाम से जानता हे, वे जब छोटी थीं, तो अन्य सब बच्चों की तरह उन्हें भी परीकथाएं सुनने का बड़ा शौक था। तो ये महारानी जब छह साल की नन्ही राजकुमारी थीं, तब एलिस (नन्ही मुन्नी नहीं-वृद्धा एलिस) से उन्होंने 'एलिस इन वंडरलैंड' की अपनी प्रति पर ऑटोग्राफ लिए थे। कहते हैं, वह प्रति अभी भी उस घराने में सुरक्षित है।

एलिस के लेखक : बच्चों के अंकल

एलिस का परिचय कराएं, इसके पहले आइए, उसके लेखक से मिलें। आप उन्हें लेविस कैरोल के नाम से जानते हैं, पर यह तो उनका छद्म नाम था। उनका वास्तविक नाम था चार्ल्स लुतविज डॉजसन। लंबे, दुबले, छरहरे बदन के, पीला-पीला सा चेहरा, गहरे काले घुंघराले बाल और खास किस्म की ऊंची-सी आवाज। आंखें बच्चों जैसी मासूम और नीली! बच्चों के लिए इन्होंने बहुत बढ़िया परीकथाएं ही नहीं लिखीं, ये बच्चों को प्यार भी बहुत करते थे और अपने खास अंदाज से पलक झपकते ही बच्चों से हिलमिल जाया करते थे। उनके पास एक-से-एक नायाब लटके थे बच्चों को रिझा लेने के। जैसे मान लीजिए वे किसी परिवार में गए, तो बड़ों से दुआ-सलाम के बाद बच्चों को बुलाएंगे, नाम पूछेंगे, किस क्लास में पढ़े हो, कौन-सी टीचर अच्छी लगती है, कौन-सा विषय पसंद है, आदि पूछेंगे। तब कहेंगे, गणित विषय कैसा लगता है? बच्चा कहेगा कि अच्छा लगता है, तो कहेंगे, अच्छा आओ, तुम्हारी परीक्षा लें और यदि बच्चो कहे कि अच्छा नहीं लगता, तो कहेंगे, वाह गणित में तो बड़ा मजा आता है। आओ तुम्हें गणित का खेल

दिखाएं। फिर उसे सरल से जोड़ का एक सवाल देंगे- बच्चा हिसाब लगाने लगेगा, तो कहेंगे, "धत् तेरे की, कैसा गणित लगाते हो, अरे भई, जवाब पहले लिख दो। सवाल बाद में हल करना।"

कुछ बच्चे चौंकेंगे, कुछ भौंचक रह जाएंगे और कुछ प्यारे-प्यारे टुटहे दांतोंवाले मुंह से खी-खी करके हंस पड़ेंगे, "धत् अंकल, सवाल लगाए बिना जवाब मिलेगा ही नहीं।" तो डॉजसन महाशय कहेंगे, "वाह, मिलेगा कैसे नहीं- लो देखो, हम सवाल का जवाब इस कागज पर लिखे देते हैं, हल बाद में करेंगे।" बच्चे चिहुंक उठेंगे, "अहा हा, आप तो हमें बिलकुल बौड़म समझ रहे हैं। हम आपकी चालाकी समझ गए। सवाल पहले से ही लगा लिया होगा, उत्तर रट कर याद कर लिया और लिख दिया है। अब खाली नाटक करेंगे, सवाल हल करने का।"

डॉजसन उसी अदा से उनसे लड़ेंगे और कहेंगे, "वाह जी वाह, हमें क्या तुमने कोई चालबाज समझ लिया है। हम झुट्ठे नहीं हैं। भई हमें क्या? लो तुम अपने मन से कोई भी संख्या लिख दो- तुम अपनी संख्या लिखोगे, तो वह तो हमें पहले से मालूम नहीं थी, सो जवाब रट लेने का प्रश्न ही नहीं- ठीक है न- तो लो हमने लिख दिया 1754। अब इसके नीचे तुम्हारे जो जी में आए, वह संख्या लिख दो।

अब मान लीजिए, बच्चा नीचे लिख देता है 6,735, तो उसके नीचे डॉजसन लिख देंगे 3,264। फिर दूसरा बच्चा मान लीजिए लिखे 4,267, तो डॉजसन साहब अपनी बारी आने पर लिखेंगे 5,732। अब सवाल बन गया 1,754 6,735 3,264, 4,267

अब तो बच्चे लाख दिमाग चलाएंगे, पर समझ ही नहीं पाएंगे कि यह कैसे हो गया। ट्रिक तो हो नहीं सकती, क्योंकि उन्हें क्या मालूम था, हम कौन-से नंबर लिखेंगे। और बस वे सब तो डॉजसन को सचमुच का जादूगर समझ बैठेंगे और विश्वास कर लेंगे कि जरूर उन्होंने सूट-बूट पहने खरगोश को देखा होगा, जरूर एलिस केक खा कर लंबी हो गई होगी, शर्बत पी कर, हथेली पर रख लो, इतनी छोटी हो गई होगी और सचमुच उसके आंसुओं के तालाब में एक चूहे जी छप-छप करते आए होंगे और आंखों पर चश्मा चढ़ा कर एलिस को लेक्चर देने लगे होंगे और डायना बिल्ली की बात छिड़ते ही गुस्से से भनभना कर भाग गए होंगे।

5,732। जवाब आया 21,752 और यह 21752 की संख्या डॉजसन पहले ही लिख चुके थे, जवाब के रूप में।

अब तो बच्चे लाख दिमाग चलाएंगे, पर समझ ही नहीं पाएंगे कि यह कैसे हो गया। ट्रिक तो हो नहीं सकती, क्योंकि उन्हें क्या मालूम था, हम कौन-से नंबर लिखेंगे। और बस वे सब तो डॉजसन को सचमुच का जादूगर समझ बैठेंगे और विश्वास कर लेंगे कि जरूर उन्होंने सूट-बूट पहने खरगोश को देखा होगा, जरूर एलिस केक खा कर लंबी हो गई होगी, शर्बत पी कर, हथेली पर रख लो, इतनी छोटी हो गई होगी और सचमुच उसके आंसुओं के तालाब में एक चूहे जी छप-छप करते आए होंगे और आंखों पर चश्मा चढ़ा कर एलिस को लेक्चर देने लगे होंगे और डायना बिल्ली की बात छिड़ते ही गुस्से से भनभना कर भाग गए होंगे।

(शायद हमारे पाठक भी उत्सुक हो उठे हों कि डॉजसन साहब आखिर यह करते कैसे थे, तो उनकी जिज्ञासा शांति के लिए हम बताएं कि जितने बच्चों से उन्हें नंबर लिखाने होते थे, उतनी ही बार 9,9,9,9 की संख्या को अपने दिए पहली सतर के नंबरों में जोड़कर पहले से उत्तर लिख देते थे। उनकी दी संख्या के बाद बच्चे जो भी नंबर लिखते, उसके नीचे की सतर में वह हर अंक के नीचे उतनी संख्या लिख देते, जिसका जोड़ 9,999 बन जाए; बस उन्हें अपना मनचाहा उत्तर मिल जाता।

(डॉजसन साहब बच्चों के साथ एक और खेल खेलते थे। कहते, एक से लेकर नौ तक की गिनती लिखो। फिर पूछते, अच्छा यह बताओ, इसमें से कौन-सा अंक जरा ठीक से नहीं बन पाया है। तो मान लीजिए, बच्चा कहे कि पांच जरा टेढ़ा हो गया है, तो उससे कहे इस एक से लेकर नौ तकवाली पूरी लाइन को पैंतालीस से गुणा करो। और लीजिए, जो उत्तर आया, उसमें सारे अंक केवल पांच-ही-पांच थे। डॉजसन साहब कहते देखा! हमने तुम्हें पांच का अंक लिखने की पक्की प्रैक्टिस दे दी, अब वह टेढ़ा नहीं होगा। (इसमें राज यह है कि बच्चा जिस भी अंक की शिकायत करे उसे नौ से गुणा करके जो संख्या आए उसका गुणा लगवा दीजिए- बस वही अंक स्वयं को दोहराएगा।)

अरे, हम आपको यह बताना तो भूल ही गए कि चार्ल्स लुतविज डॉजसन साहब पादरी थे और ऑक्सफोर्ड में क्राइस्ट चर्च कॉलेज में गणित के अध्यापक थे। उनको अपनी बहनों से बड़ा प्यार था। बहनें थीं भी एक-दो नहीं, पूरी सात! इन सातों के लिए वे गणित के तरह-तरह के खेल ईजाद किया करते, खिलौने बनाते, कठ-पुतलियों के तमाशे दिखाते।

एलिस से पहली मुलाकात

बाद में जब वे घर से दूर क्राइस्ट चर्च कॉलेज के स्टाफ क्वार्टर्स में रहने चले आए, तो एक दिन यों ही बहनों की बड़ी याद आ रही थी। दिल उदास हो गया, तो वे अपने कमरे की खिड़की के पास खड़े होकर बाहर देखने लगे। उन्होंने देखा, बाग में तीन

छोटी लड़कियां खेल रही हैं। वे यों ही टहलते-टहलते उनके पास चले गए और अपने बनाए खेल उनके साथ खेलने लगे। दो-तीन दिन इसी तरह बाग में मुलाकातें होती रहीं। फिर तो बच्चियों ने अपने अंकल को जो पकड़ा, तो छोड़ा ही नहीं। जब देखो, तब कमरे में घुस आतीं और खूब धमाचौकड़ी करतीं।

धीरे-धीरे इतनी दोस्ती हो गई कि अकसर पिकनिक पर भी जाने लगे। और एक दिन ऐसी ही एक पिकनिक के दौरान जब बच्चों ने कहानी सुनाने की जिद की, तो बस करिश्मा शुरू हो गया। एक नन्ही-मुन्नी प्यारी-सी गोलमटोल बिटिया खरगोश जी के पीछे-पीछे उनके बिल में घुस गई और वहां उसे एक-से-एक अजीबोगरीब जानवर मिले, एक-से-एक रोचक और रोमांचक स्थितियों और अनुभवों में से वह गुजरी कि 'एलिस इन वंडरलैंड' नाम की विश्वविख्यात कृति की रचना हो गई औ अब तो आप समझ ही गए होंगे कि बिल में घुसनेवाली एलिस और कोई नहीं इन्हीं तीनों बच्चियों में से एक थी। उसका नाम था एलिस! यह पिकनिक 4 जुलाई, 1862 को हुई थी। उस समय डॉजसन साहब की दुलारी दोस्त एलिस की उम्र थी दस वर्ष!

रैवरेंड चार्ल्स लुतविज डॉजसन एक भरे-पूरे विक्टोरियन परिवार के सबसे बड़े बेटे थे। उनसे छोटे भाई-बहनों की पूरी एक पल्टन थी और वे सबको प्यार भी बहुत करते थे, इसलिए बाल मनोविज्ञान की समझ तो उनमें बचपन से ही आ गई थी। डॉजसन पढ़ने में बहुत होशियार थे, गणित उनका सबसे प्रिय विषय था। लेकिन वे अपने हमजोलियों से दूर ही रहते थे, साथ के लड़कों में घुलते-मिलते नहीं थे और बड़ों से शरमाते थे। शायद इसके पीछे मुख्य कारण यह था कि वे हकलाते थे। काफी इलाज कराया, लेकिन हकलाना नहीं गया। पर एक अजीब बात थी कि वे अब अपने छोटे भाई-बहनों के साथ बातें करते और खेलते थे, तब बहुत कम हकलाते थे और उन लोगों को कहानी सुनाते समय तो बिलकुल ही नहीं हकलाते थे। धीरे-धीरे उनका यह हकलाना जैसे बच्चों की कहानी की दुनिया के लिए वरदान बन गया। वे अपना अधिक-से-अधिक समय बच्चों के बीच गुजारते। उन्होंने बच्चों के लिए कहानियां तो गढ़ी हीं, तमाम तरह के नए खेल ईजाद किए, पहेलियां बनाईं, चित्रकथाएं बनाईं, वे पेंटिंग भी बहुत अच्छी करते थे, और बच्चों के फोटो खींचने में तो उन्हें महारत हासिल थी।

फोटोग्राफी की कला उन दिनों आज-जैसी विकसित नहीं थी। सीमित साधन होते थे और फोटो खींचना बड़ा कठिन काम होता था। लेकिन डॉजसन के खींचे बच्चों के चित्र उससमय के महानतम चित्रों में से माने जाते हैं। डॉजसन के अनेक प्रसिद्ध और श्रेष्ठतम चित्रों की मॉडल एलिस ही थी। उससे तरह-तरह के पोज बनवा कर, उसे तरह-तरह की पोशाकें पहना कर वे चित्र खींचा करते थे। यदि एलिस डॉजसन को कहानी लिखने को प्रेरित न करती, तो निश्चित ही वे एक महान फोटोग्राफर के रूप में हमेशा याद किए जाते।

चाहे तरह-तरह के खेल हों, पहेलियां हों, कहानियां हों या चित्र हों- डॉजसन ने अपनी दुनिया बच्चों के बीच में ही केंद्रित कर ली थी। बच्चे भी उन्हें बहुत प्यार करते थे। परिचित बच्चे तो बिना डॉजसन के अपनी बर्थडे पार्टी तक नहीं मनाते थे। बिना उनके आए न केक कटती, न मोमबत्तियां जलाई जातीं। ऐसी ही एक पार्टी के कारण एक मजेदार घटना घटित हो गई थी।

एक बार डॉजसन को अपने एक नन्हे दोस्त की बर्थडे पार्टी में जाना था। पार्टी एक होटल के कमरे में आयोजित की गई थी। डॉजसन को जरा देर हो गई थी, तो नन्हे दोस्तों की नाराजगी दूर करने के लिए उन्होंने सोचा कि अपना प्रवेश ही ऐसा करें कि बच्चे खुश हो जाएं। तो बस डॉजसन साहब हाथ-पैरों के बल बकइयां जमीन में भालू बनकर चलते हुए, भालू की आवाज मुंह से निकालते हुए सिर से कमरे का दरवाजा ठेलकर अंदर घुस पड़े। पर आप दांज कीजिए डॉजसन साहब की हालत का, जब उन्होंने पाया कि बार-रे-बाप! बच्चों की पार्टी तो बगलवाले कमरे में चल रही है, वे तो उस कमरे में घुस आए हैं, जहां हाई सोसायटी की बड़ी शाइस्ता औरतों की मीटिंग हो रही थी। बेचारे रै. चार्ल्स लुतविज डॉजसन को उस समय लेविस कैरोल के हाथों बड़ी हास्यास्पद स्थिति का सामना करना पड़ा होगा।

पर कुछ भी कहिए, एक ओर तो उन्हें टेनीसन, रस्किन, रोजेरी आदि जैसे संसार प्रसिद्ध साहित्यकारों का मान-सम्मान और स्नेह प्राप्त था, दूसरी ओर उनका मन था कि केवल बच्चों के बीच सुख पाता था। जरूरी नहीं है कि बच्चा उनका अपना परिचित हो।

एक बार की बात है, सर्दियों के दिन थे, वे शाम को यों ही टहलने निकले थे। उन्होंने देखा, बेकरीवाले की दुकान में, शोकेस में, रंग-बिरंगे बिस्किट, केक और पेस्ट्री का ढेर लगा हुआ है, बीच-बीच में रंगीन रोशनी भी जगमगा रही है और दुकान के सामने कुछ गरीब बच्चों का एक झुंड बड़ी हसरत भरी निगाहों से उन चीजों को देख रहा है। मुंह में उंगली डाले हसरत भरी भूखी निगाहों से ताकते गरीब बच्चे! डॉजसन का दिल भर आया। बच्चों से बोले, "खाओगे? आओ मेरे साथ।" और एक नाक सुड़कती बच्ची की उंगली थामी और बाकी सबको पीछे-पीछे आने का इशारा करके दुकान में घुस गए। बच्चों से कहा, सब लोग अपनी-अपनी पसंद की खाने की चीज चुन लो। बच्चों ने कौतुक और संभ्रम से उन्हें देखा और एक-एक, दो-दो केक, पेस्ट्री आदि लेकर हबर-हबर खाने लगे। डॉजसन ने दुकानदार का बिल चुकाया। अपनी नीली आंखों की नमी पोंछी और फिर अपनी राह चल दिए।

डॉजसन को एक और शौक था, उन्हें खत लिखना व खत पाना दोनों ही बातें बहुत अच्छी लगती थीं। खत मिलते ही वे उसपर क्रम संख्या जरूर डाल देते थे। उनको प्राप्त आखिरी खत

के कोने पर 18,721 की संख्या अंकित है। अपने तमाम युवा मित्रों को पत्र लिखते समय वे अंत में एक वाक्य लिखना कभी नहीं भुलते थे, "राह चलते तुम्हें जो भी बच्चा, कहीं भी मिले, मेरा प्यार उसे जरूर देना।"

गणित के उस शर्मीले धुरंधर विद्वान ने सारी जिंदगी तहेदिल से यह प्यार बांटा था। शायद यही कारण होगा कि आज सैकड़ों बरस बाद भी उनका व उनकी प्यारी नन्ही मित्र एलिस का नाम घर-घर में लिया जाता है व सदियों तक लिया जाता रहेगा।

डॉजसन साहब के बारे में तो आपने जाना। उत्सुक होंगे आप उनकी एलिस के बारे में भी कुछ जानने को। लेकिन सिवाय इसके कि एलिस इतनी महत्त्वपूर्ण परीकथा लिखी जाने का माध्यम बनी थी, उसने ऐसा कुछ महत्त्वपूर्ण काम स्वयं नहीं किया था कि वह किसी और रूप में प्रसिद्ध हो पाती। लेकिन उससे क्या होता है। है तो वह आज सारी दुनिया के बच्चों की चहेती।

एलिस का पूरा नाम था एलिस प्लैजैंस लिडेंल क्राइस्ट चर्च कॉलेज के डीन जॉर्ज हेनरी लिडैल के चार बच्चे थे। बड़ा तो बेटा और फिर ये तीनों बेटियां। लॉरिना, एलिस और ऐडिथ। 4 जुलाई 1862 पिकनिक पर जब डॉजसन ने कहानी सुनाई थी, तो ये तीनों क्रमशः तेरह, दस और आठ बरस की थीं। स्वयं डॉजसन बत्तीस के थे। इन चारों के साथ डॉजसन के एक मित्र मिस्टर राबिंसन डकवर्थ भी थे। डॉजसन और डकवर्थ पतवार पकड़े नाव खे रहे और तीनों बच्चियां हंसती-खिलखिलाती, नाचती-गाती, मस्ती कर रही थीं। बड़ा मजा आ रहा था, मौसम बड़ा सुहावना था, बच्चियों को खुश देखकर डॉजसन भी बड़े खुश थे। थोड़ी देर बाद सूरज जरा तेज चमकने लगा, तो पांचों लोगों की पार्टी एक पेड़ के नीचे सुस्ताने को गई। डॉजसन ने बाद में एक जगह लिखा था, "मुझे अच्छी तरह से याद है, उस दिन परीकथा को किसी बिलकुल नए तरीके से सुनाने के चक्कर में कथा की नायिका को सीधे खरगोश के बिल में ले गया। मुझे पहले से कतई कोई अंदाज नहीं था कि आगे क्या होगा। बस, मैं सुनाता गया और कहानी आगे बढ़ती गई।"

असल में इस पिकनिक से कुछ दिन पहले यही लोग एक और पिकनिक पर गए थे। वहां किसी बात से चिढ़ कर एलिस रोने लगी थी। थोड़ी ही देर बाद मूसलाधार पानी बरसने लगा था, तो सारे रास्ते डॉजसन एलिस को चिढ़ाते-खिजाते रहे थे कि यह बरसात थोड़े ही हो रही है, यह तो ऊपर आसमान से एलिस के आंसू टपक रहे हैं। आंखों का स्टॉक खत्म हो गया था, तो ऊपर से भगवान ने एलिस के आंसुओं के खजाने में से थोड़े-से भेज दिए हैं। सब लोग हंस रहे थे और एलिस पिनपिना कर और भी ज्यादा रोऐ जा रही थी।

बस, पिछली पिकनिक की यही घटना जिम्मेदार है 'एलिस इन वंडरलैंड' में एलिस के आंसुओं का तालाब बनवाने के लिए। इसी तरह पुस्तक में आए जीव-जंतुओं के नाम भी उन्हीं के अपने नाम थे। जैसे डक, डोडो, लौरी, ईगलैट यानी वे जो डॉजसन साहब के मित्र थे रॉबिंसन डकवर्थ, वे हो गए डक और खुद डॉजसन साहब हो गए डो डो वे हकले थे न, तो अपना नाम बोलेंगे डॉ... डॉ. .. जॉजसन। तो बस वहीं से मिल गया डो, डो. बड़ी बहन लॉरिना से बन गया लौरी और ऐडिथ की हो गई ईगलट, और पांचवीं एलिस तो खैर हीरोइन ही थी। बच्चों की गवर्नेस मिस प्रिकेट यद्यपि पिकनि पर साथ नहीं थीं, पर वे इतना रूखा-सूखा पढ़ाती थीं कि उनके लेक्चर की नकल चश्मा पहने चूहे राम से करवाई गई है। बस, इसी तरह महज तात्कालिक मौज-मजे के लिए जो कहानी उस दिन गढ़ कर सुनाई गई, वह बच्चों को इतनी अपनी-अपनी और इतनी अच्छी लगी कि एलिस ने जिद ठान ली कि रोज यही सुनेगीऔर डॉजसन साहब इस कहानी को लिख कर उसे दे दें। एलिस उन्हें बहुत प्रिय थी, उसी को वे सबसे ज्यादा चिढ़ाते भी थे और सबसे ज्यादा प्यार भी करते थे।

सो उसकी बात टालने का सवाल ही नहीं था। उन्होंने एक छोटी-सी नोटबुक में उस दिन एलिस को जो कथा लिख कर दी, वह आज सारी दुनिया के बच्चों की सबसे प्यारी परीकथा बन गई है।

एलिस के पास उसकी नोटबुक पर डॉजसन के कुछ मित्रों की नजर पड़ी। उन्होंने सलाह दी कि इसे पुस्तक रूप में छपाओ, पर डॉजसन साहब बोले, अरे यह तो हम पांचों के सिवाय कोई समझेगा ही नहीं, इसमें हमारे ही सबके नाम हैं, हमारी ही पहचानी घटनाओं को कल्पना की उड़ान से तोड़ा-मरोड़ा गया है, इसमें और किसी को क्या मजा आएगा? एक मित्र उस नोटबुक को अपने घर ले गए और आस-पड़ोस के और अपने घर के बच्चों को वह कथा पढ़ कर सुनाई। लीजिए, बच्चे तो खुशी से उछलने लगे। जब तक पूरी कहानी खत्म नहीं हुई, कोई उठने को तैयार ही नहीं था। आखिर जब प्रसिद्ध पंच आर्टिस्ट सर जॉन रैनियल ने डॉजसन से कहा कि इस परीकथा के साथ छापे जाने योग्य चित्र वे स्वयं बना देंगे, तो डॉजसन जरूर उत्साहित हुए और मैकमिलन ने कमीशन बेसिस पर यानी कि लेखक के स्वयं के खर्चे से यह किताब छापी। डॉजसन अच्छे लेखक थे, उनकी गणित पर कई महत्त्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं, वे अपने समय के सबसे बड़े फोटोग्राफर समझे जाते थे, उनकी कविताएं भी प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिकाओं में छपती रहती थीं। इसलिए उन्होंने इस पुस्तक पर अपना नाम दिया तो लेकिन छिपा कर दिया; यानी कि अपने नाम चार्ल्स लुतविज का लैटिन में अनुवाद किया, तो बन गया- कारलोस लुदोविकस। अब इसे उन्होंने अंग्रेजी में बदला तो बना कैरोल लेविस और फिर उन्होंने इसे उलट दिया यानी अब हो गया लेविस कैरोल। बस अपना यही लेविस कैरोल नाम उन्होंने इस परीकथा के लेखक के रूप में दे दिया है।

एलिस के पास उसकी नोटबुक पर डॉजसन के कुछ मित्रों की नजर पड़ी। उन्होंने सलाह दी कि इसे पुस्तक रूप में छपाओ, पर डॉजसन साहब बोले, अरे यह तो हम पांचों के सिवाय कोई समझेगा ही नहीं, इसमें हमारे ही सबके नाम हैं, हमारी ही पहचानी घटनाओं को कल्पना की उड़ान से तोड़ा-मरोड़ा गया है, इसमें और किसी को क्या मजा आएगा? एक मित्र उस नोटबुक को अपने घर ले गए और आस-पड़ोस के और अपने घर के बच्चों को वह कथा पढ़ कर सुनाई।

'एलिस इन वंडरलैंड' 1865 में छपी और देखते-देखते वह इंग्लैंड की गली-गली में, घर-घर में छा गई। जिस बच्चे को देखो, वही इस पुस्तक में डूबा-खोया है। पुस्तक इतनी प्रसिद्ध हुई कि उसकी चर्चा महारानी विक्टोरिया के कानों तक भी पहुंची। उन्होंने भी पुस्तक मंगा कर देखी और सचमुच उसे बच्चों के योग्य एक बहुत ही रोचक पुस्तक के रूप में पाया, तो इस अद्भुत परीकथा के लेखक को उन्होंने बड़े आदर के साथ विंडसर कैसल में खाने पर बुलाया। डॉजसन शर्माते-सकुचाते रहे और वे उन्हें बड़ा सम्मान देती रहीं। विदा देते समय महारानी विक्टोरिया ने उनसे वायदा लिया कि अपनी अगली पुस्तक प्रकाशित होते ही एक प्रति उन्हें अवश्य भेजेंगे। रैवरेंड चार्ल्स लुतविज डॉजसन साहब वायदे के पक्के निकले। उन्होंने अपनी अगली पुस्तक की पहली प्रति तुरंत महारानी विक्टोरिया के पास भेजी। किंतु सच जानिए, जरूर ही विक्टोरिया ने माथे पर शिकन देकर उस पुस्तक को देखा होगा, उनके मुंह का स्वाद कसैला हो गया होगा। क्योंकि किताब 'एलिस इन वंडरलैंड' जैसी नहीं थी। वह तो विद्वान लेखक की गणित की गुत्थियों पर लिखी एक जटिल पुस्तक थी।

परीकथाएं यों तो उन्होंने कई लिखीं, पर जैसे एलिस के खींचे गए फोटो उनके सर्वश्रेष्ठ चित्रों में माने जाते हैं, उसी तरह एलिस से प्रेरणा पाकर लिखी उनकी दो परीकथाएं- 'एलिस इन वंडरलैंड' और 'थ्रू द लुकिंग ग्लास' ही उनकी सर्वश्रेष्ठ कृतियां मानी जाती हैं। शायद वे और भी ऐसी कथाएं लिख पाते। लेकिन सुनकर आप भी शायद दुखी हों कि उनकी प्यारी नन्ही दोस्त उनसे जल्दी ही बिछुड़ गई थी।

एलिस कैसे बिछुड़ गई?

हुआ यों था कि डॉजसन साहब से मिलने के बाद तीनों बच्चियां इस कदर विनोदप्रिय और खिलंदड़ी हो गई थीं कि हर समय सिर्फ धमाचौकड़ी करती रहतीं। न तो लिखती-पढ़ती, न घर के कोई काम करतीं, न कसीदा-सिलाई ही सीखने में रुचि दिखातीं। बस खेलना, नाचना, गाना और कहानियां सुनना, सुनाना। यह देख-देखकर उनकी पुरातनपंथी मां मिसेज लिडेल बहुत बिगड़तीं, 'यही रवैया रहा, तो ये लड़कियां एकदम बिगड़ जाएंगी। कोई इनके साथ शादी भी नहीं करेगा। हम फिजूल में बदनाम हो जाएंगे।' बच्चों की गवर्नेस मिस प्रिकेट भी डॉजसन से बहुत चिढ़तीं। उसका कहना था कि उन्होंने बच्चों को इतना सिर चढ़ा लिया है कि वे उसे बिलकुल गाजर-मूली समझते हैं। उसका मखौल बनाते हैं, उसे मुंह चिढ़ाते हैं। दोनों महिलाओं को एकदम यह विश्वास हो गया कि डॉजसन के प्रभाव में आकर बच्चियां एकदम अनुशासनहीन और उजड्ड बन जाएंगे।

और बस एक दिन मिसेज लिडेल ने अपना गुस्सा डॉजसन पर जाहिर कर ही दिया। अपनी बहनों और घर से दूर वे थे ही। अब इन बच्चियों को भी उनकी मां ने उनसे छीन लिया। कोई बात नहीं, आखिर वे मां हैं, अपनी बच्चियों के भविष्य के बारे में ज्यादा ठीक समझती होंगी। और बस! डॉजसन ने धीरे-धीरे स्वयं को अपने में समेट लिया। फिर उन्हें नहीं मालूम, बच्चियों का क्या हुआ। वे कितनी अनुशासनप्रिय कितनी कुशल और सुघड़ बनीं, उन्हें नहीं मालूम। वे तो बस अचानक उस दिन बहुत हैरान हर गए थे, जब बरसों बाद एक दिन उनके दरवाजे पर दस्तक हुई और तीन युवतियों ने उनके कमरे में झांका। दिसंबर 1811 का वह दिन उन्हें वर्तमान में खींच कर बहुत पीछे अतीत में 1863-64, 1865-66 के दिनों में ले गया था। ये युवतियां उनकी आंखों के सामने थीं, पर दिल और दिमाग में ऊधम-मस्ती मचाने लगी थीं लॉरिना, एलिस और ऐडिथ-13, 10 और 8 बरस की नटखट प्यारी बच्चियां।

उस दिन उन्हें पता चला कि उनकी नन्ही एलिस का ब्याह हुए ग्यारह बरस बीत चुके हैं। उसके तीन प्यारे-प्यारे बेटे भी हैं। वह बहुत खुश है। उन्हीं के एक शिष्य रेनॉल्ड गैरविस हारग्रीव्स से उसने शादी की थी। उस दिन तीनों बहनों ने आकर बूढ़े डॉजसन को एक बार फिर से उस परीलोक में पहुंचा दिया था, जहां बेलौस मस्त थी। बड़ी चैन भरी शांति थी। बड़ा सुकून था।

उस दिन की गई-गई एलिस फिर कभी उन्हें मिली भी नहीं- न उन्होंने ही मिलने की कोशिश की। पर हम कभी भूल नहीं सकते इस बात को कि उन्होंने अपने जीवन में हजारा खत लिखे थे और हर खत में वे अपने परिचितों को लिखा करते थे- "राह चलते तुम्हें जो भी बच्चा कहीं भी मिले, मेरा प्यार उसे जरूर देना।" निश्चित जानिए दुनिया भर के हर परिचित-अपरिचित बच्चे को यह प्यार लुटाते समय डॉजसन के दिलोदिमाग पर जरूर वही गुदकारी नन्ही एलिस छाई रहती होगी, जो सूटेड-बूटेड खरगोश जी के पीछे-पीछे उनके बिल में घुस गई थी।

लेविस कैरोल (1979)

5, शाकुंतला, साहित्य सहवाह, बांद्रा पूर्व,
मुंबई, महाराष्ट्र-400 015

समीक्षा

स्पंदन : एक सम-सामयिक चिंतन

● डॉ. प्रेमलाल गौतम 'शिक्षार्थी'

स्पंदन शब्द का अर्थ किसी वस्तु का शनैः शनैः हिलना, कांपना या शरीर के अंगों आदि का फड़कना होता है। क्रांतद्रष्टा कवि अतीव भावुक कोमल हृदय का अनुपम प्राणी होता है। चराचर जगत में जब भी कोई अप्राकृतिक घटना घटित होती है तो उसका सहृदय कंपायमान होने लगता है। उसके भीतर एक असह्य, ज्वारभाटा उठता है जो उसे अपने भावोद्गारों को व्यक्त करने के लिए बलात् विवश कर देता है। कवि अपने समाज में जब अवांछनीय तत्त्वों को देखता है, अमानवीय कृत्यों से जब कहीं भीतर तक आहता होता है, सज्जन निरीह मूक होकर दुर्जनों से ग्रसित त्राहि-त्राहि करने लगते हैं, अनाचार-कदाचार जब चरम सीमा पर व्यक्त होने लगता है तभी कवि आंतस् कराहने लगता है और तत्काल कवि-मन-मस्तिष्क से निःसृत शब्द वृष्टि भव-ताप-तापित जन समुदाय की अनेक विध-पीड़ाओं का शमन करती है। कवि अपनी कविताओं के माध्यम से, वर्जनाओं की लक्ष्मण रेखा तथा सर्जनाओं की सौम्य संपदा सहृदय पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इन्हीं समस्त भावोर्मियों से स्पंदित करने वाला कविवर डॉ. शंकर लाल वासिष्ठ का द्वितीय कविता संग्रह 'स्पंदन' है। प्रस्तुत संग्रह की अधिकांश कविताएं सम-सामयिक विभिन्न समस्याओं की ओर जन सामान्य का ध्यानाकृष्ट करती हैं तथा उनके समाधानार्थ पाठकों को प्रेरित भी करती हैं। संग्रह की प्रतिनिधि रचना में कवि अभाव ग्रसित समाज का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते लिखता है :-

'निराशा-हताशा दिग् शून्यता, मृगतृष्णा धुंधलाती किरण।
निवर्सन निराहार निराश्रय, फुटपाथों बसता यही समाज।'

राष्ट्र का निम्न अधिकांश वर्ग आज भी निराशा-हताशामय जीवन यापन कर रहा है। उसकी दौड़ आज भी रोटी-कपड़ा और मकान तक सीमित है। फुटपाथों पर उनका जीवन व्यतीत हो रहा है। मात्र मृगमरीचिका ही उनका संबल है। डॉ. वासिष्ठ अपनी रचना के माध्यम से केवल जनाकांक्षाओं की अभिव्यक्ति ही नहीं करते उसका सही समाधान भी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं :- 'श्रद्धा आस्था परंपरा व भक्ति, नहीं आडंबर आज वसन
रख आचरण कसौटी लाओ, लकीर फकीर में परिवर्तन।'

कवि की भाषा मुहावरेदार है। लकीर का फकीर बने रहने से कदापि समस्याओं का समाधान नहीं हुआ करता। कथनी और करनी की एकरूपता कवि को अभिप्रेत है। पुरातनता की अहितकर परंपराएं कवि को त्यज्य हैं तथा अर्वाचीनता की लाभप्रद सरणियां सर्वथा ग्राह्य हैं। दिशा निर्देशन करना ही सफल कवि का ध्येय होता है।

प्राकृतिक उपकरणों से भी समाज को शिक्षा देने का विशेष कवि कौशल होता है :- 'कालिख मिटा निर्मल अपना मन, आओ! करें हम वसंत अभिनंदन।'

मानव-मन कालुष्य जब समाप्त होगा, ऊंच-नीच, अमीर, गरीब, बड़ा-छोटा, ईर्ष्या-द्वेष भाव जब समाप्त होगा, स्वतः मानव मन विमल होगा और तभी सद्भावनाओं की सुखद सुरभी से तन-मन-विश्व का ऋतुराज वसंत की तरह समग्र परिवेश को सही अर्थो में सुवासित करेगा। अंतहीन लिप्सा, रचना के माध्यम से अर्थ प्रधान वर्ग पर चपेटाघात किया है तथा 'तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा' का सदुपदेश प्रदान किया है।

सोलन नगर अधिष्ठात्री मां शूलिनी का स्मरण कर कवि ने वर्षों से आयोजित मेले का बिंब चित्र कविता के माध्यम से खींचा है तथा पाठकों को समरसताव विश्वबंधुत्व की अनूठी प्रेरणा भी प्रदान की है :- 'बजे शहनाई ढोल-नगारे, मनमोहन नागर नर्तन।
सजते हैं पकवान पांडाल, बिना भेद के होता वितरण।'

संसार में मानव स्वार्थों की पराकाष्ठा पार कर रहा है। कवि के दुखी हृदय की चीत्कार श्रवणीय है :-

'गैरों की कोई परवाह नहीं, अपनों से धोखा खाता रहता हूं।
स्वार्थों में डूबे अपने-पराए, शब्दों में रिश्ते ढूंढता रहता हूं।'

'अराजकता' शीर्षक से नेताओं की क्रिया पद्धति का सही चित्रण प्रस्तुत हुआ है :- 'नेताओं का प्रचार-प्रसार, भविष्य में कुर्सियों पर अधिकार/ सेंककर रोटियां अपनी-अपनी, कर नया कोई वक्तव्य जारी/ कौतुहल से अखबार भर देते हैं।'

कवि वासिष्ठ ने आदमी को आदमी बनने का समुचित परामर्श दिया है, उसकी सामाजिक उपाधियां उन्हें कतई पसंद नहीं, बस मानव-मानव बन जाए तो सभी समस्याओं का निदान स्वतः हो जाएगा :-

'आदमी से आदमी क्यों डरता है, स्वार्थहित क्यों लड़ मरता है,
देख पर सुख डाह से जलता है, वैसे सृष्टि में श्रेष्ठ कहलाता है।'

भारत गांव बहुत देश है, गांव में भारतीय परंपराएं सभ्यता-

संस्कृति जीवित हैं, वहीं अश्वत्थ और वटवृक्षों का अतीत भी शिक्षा एवं आश्रयप्रद है, इसी के साथ गहन अध्ययन करने से कवि की यहरचना दिवंगत पूज्य पिता सर्व विद्याविशारद, समाज सेवी, ज्योतिषकर्मकांड प्रवीण आचार्य चंद्रमणि वासिष्ठ, जो वास्तव में क्षेत्र के वट वृक्ष तुल्य रहे, उन्हें समर्पित है, कविता के समस्त प्रतीक, बिंब उन्हीं के प्रति अगाध श्रद्धा एवं कृतज्ञता के द्योतक हैं :- 'परिश्रांत पथिक शांत छांव, व्यथित मन सहलाता घाव।

पींग-हुल्लार सा पनपाता, निराश मन सदा जीने का चाव।'

'अस्मिता' शीर्षक से कवि अभाव पीड़ित समाज और समृद्ध वर्ग की मानसिकता को उनकी विवशता और विकृति विद्रूपता को सरल सपाट शब्दों में अभिव्यक्त कर रहे हैं :-

'एक सहमा लज्जाया
मर्यादित बदन अपने/ जीर्ण-शीर्ण वस्त्रों से
अस्मिता ढांपने की... असफल/ कोशिश कर रहा है... और
दूसरा... उच्छृंखल, असंयमित/ सक्षम होने पर भी... निर्लज्ज
बदन को निर्वसन कर... स्व प्रदर्शन
को लालायित हो रहा है।'

'परंपरा' कविता के माध्यम से प्रतिवर्ष रावण दहन पर कवि का व्यंग्य ध्यातव्य है :-

'माना कटना मेरी नियति है
पर कटने पर किसी गरीब की छत बनता
बन टोकरी किसी पेट को संबल देता
सीढ़ी बनकर मानव को ऊंचा उठाता
और महाप्रयाग का अंतिम साथी बनता।'

कवि मन में असह्य व्यथा है उसे दिवाली-होली जैसे महोत्सव मनाने के सही रहस्य को जनमानस तक पहुंचाने की सतत् चिंता है। उसे होली के बाह्य रंगों के दिखावे पर घोर आपत्ति है। वह मानव मन में आत्मीयता का रंग भरना चाहता है :-

'हिंदू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई, छद्म से बने भाई-भाई
धरती जीतो चाहे अंबर, प्रथम भरो निज मन की खाई
कान्ह! न सखियों की टोली, कहो! हम कैसे खेलें होली?'

लोकतंत्र का संरक्षण अपात्र व्यक्तियों के हाथों में जाता देखकर कवि मन अतीव खिन्न है। रक्षक ही भक्षक बन गए हैं। एक शब्द चित्र अवलोकनीय है :

लोकतंत्र का मंदिर लूटें कैसे, आज ऐसी चाहत सभी ने पाली
सब दौड़े हैं सत्ता हथियाने ऐसे, दौड़े ज्यों बेशर्म श्वानों की टोली।'

इस संपूर्ण कविता के द्वारा कवि ने सभी शीर्ष राजनेताओं का यथार्थ चित्र अंकित करने का सफल प्रयास किया है। किसी बड़े नेता के आगमन पर उद्घाटन करने हेतु या किसी सामाजिक कार्यक्रम में आने का समाचार सुनते ही हमारा तंत्र उनके भय से कुंभकरणीय निद्रा से एकाएक जागकर बिजली, पानी, सड़कें सुधारने लगते हैं। कवि ने 'मेरे आका' शीर्षक से यही कुछ कहने का सफल प्रयास किया है :-

'चप्पा चप्पा सजने संवरने लग जाता है
सुनकर आहट/ महोत्सव में बदल जाता है... शहर
वर्षों से रंडेपा काटने वाली/ सड़कें व मेरे शहर की गलियां
शृंगार कर लगती हैं दुल्हन/ सदा सुहागन... इसलिए मेरे आका
तुम्हारा अभिनंदन!/ मेरे शहर आओ,
पर बारंबार आओ।'

ग्रामीण परिवेश में जन्मे, पले, पढ़े कवि को गांव से स्वाभाविक स्नेह है। उसे गांव का बिछोह कतई पसंद नहीं है :-

बीहड़ इनसानों के जंगल, ढूंढे नहीं मिलती कहीं छांव
सशंकित मानव-मानव से, नित पीड़ा मन गहराता घाव
कितना अकेला पड़ गया हूं, जब से छोड़ा अपना गांव।

पहाड़ी प्रदेश का नयनाभिराम बिंब चित्र भी आकृष्ट करने वाला है :-

झूलते प्रफुल्लित दारु-वृंद, महकती डालियां पात-पात
सरसराती आनंदायक समीर, कलरव करते चहकते खग-वृंद
बहते कलकल मुक्ता जलकण, रंभाते पशुधन, उत्सुक जन जीवन।

डॉ. वासिष्ठ का भाषायी आकर्षण सम्मोहित करता है कवि भाषायी मोह में न पड़कर तत्सम, तद्भव, देशी, विदेशी तथा आंचलिक शब्दों का प्रसंगवश अनायास प्रयोग करने में रंच भी संकोच नहीं करते, उनका लक्ष्य तो सहज, सरलरूपेण अपना संदेश समाज तक पहुंचाना है और इसमें कवि सफल हुआ है।

गागर में सागर, बिंदु में सिंधु समेटने का कवि का अपना कौशल होता है और इस विद्या में डॉ. शंकर वासिष्ठ सफल चितेरे हैं। उन्हें क्षणिकाएं लेखन में भी महती रुचि है। एक क्षणिका का उल्लेख करने का मोह संवरण नहीं कर पा रहा हूं :-

दस्यु सुंदरी का/ संसद में जीतकर आना
कोई त्रासदी नहीं, बल्कि प्रतीक है...
कि आज के कर्णधार/ दस्यु सुंदरी से भी बदतर हो गए हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि डॉ. वासिष्ठ पाठकों को व्यर्थ के शब्द व्यामोह या उलझाने वाली क्लिष्ट उत्प्रेक्षाओं में न डालकर सांसारिक घटित-घटनाओं तथा उनसे हो रही, सामाजिक क्षति, फैल रही विद्रूपताएं, पतन और दुर्दशा का सरल-सपाट चित्रण अभिधाशक्ति के माध्यम से प्रस्तुतकरना मात्र कवि लक्ष्य रहा है। साहित्य का मुख्य उद्देश्य भी सहित की भावना स्थापित कर जगन्मांगल्य करना है। जन सामान्य की समस्याओं को शब्द एवं अर्थ चित्र देना तथा उनका समुचित निदान निर्देश करना सच्चे कवि का दायित्व भी होता है। इस दिशा में डॉ. शंकर वासिष्ठ सर्वथा सफल कवि हैं। मैं द्वितीय कविता संग्रह 'स्पंदन' के सफल प्रकाशनार्थ विद्वान कवि को हार्दिक साधुवाद प्रदान करता हूं।

प्राचार्य (से.नि.), सरस्वती सदन रबौण, पत्रालय सपरून,
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 211

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 मई, 2016 अंक : 2

प्रधान सम्पादक
दिनेश मल्होत्रा

वरिष्ठ सम्पादक
यादविन्दर सिंह चौहान

सम्पादक
वेद प्रकाश

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

अपनी सफलता में किस्मत को जो बिलकुल नहीं मानते, वे अपने आपसे मजाक कर रहे हैं।

– लैरी किंग

इस अंक में

लेख

अपनी बात

ग्रीष्म ऋतु के तपते मौसम में हरे-भरे पहाड़ी क्षेत्रों के अहसास मात्र से ही मन को सुकून मिल जाता है। मैदानी क्षेत्रों की भीषण गर्मी से राहत की आस में हर वर्ष बड़ी संख्या में सैलानी हिमाचल जैसे पहाड़ी क्षेत्रों का रुख करते हैं। हिमाचल प्रदेश एक ऐसा पहाड़ी राज्य है जहां वैसे तो सैलानी हर मौसम हर ऋतु में भ्रमण के लिए लालायित रहते हैं, लेकिन गर्मियों के मौसम में यहां का शीत एवं स्वास्थ्यवर्धक जलवायु और प्राकृतिक सौंदर्य हर किसी को आकर्षित करता है। बर्फ से ढकी पर्वतमालाओं का नैसर्गिक सौंदर्य और कल-कल बहते नदी-नालों का मधुर नाद सैलानियों को मोहित करता है। वर्तमान समय में सुख- सुविधाओं के सर्वसुलभ हो जाने से पर्यटन एवं भ्रमण के प्रति लोगों का रुझान बढ़ा है। आधुनिक जीवन शैली की अपनी व्यस्त दिनचर्या से समय निकाल कर आज हर कोई अपने परिवार के साथ किसी पर्यटक स्थल पर फुर्सत के कुछ क्षण जरूर व्यतीत करना चाहता है। यातायात के साधनों में वृद्धि तथा आधुनिक सुविधाओं के विस्तार से हिमाचल में पर्यटकों विशेषकर प्रकृति प्रेमियों, वन्य जीव एवं वनस्पति जिज्ञासुओं तथा साहसिक पर्यटकों की खूब चहल-पहल रहती है। प्रदेश के जनजातीय एवं दुर्गम क्षेत्र पर्यटकों के लिए खुल जाने से पर्यटन गतिविधियों को और बढ़ावा मिला है। प्रदेश सरकार की 'होम स्टे योजना' के सफल कार्यान्वयन से पर्यटकों को देवभूमि के पारंपरिक रीति-रिवाजों, जनजीवन तथा रहन-सहन को नजदीक से देखने एवं अध्ययन का अवसर मिला है, शायद इसीलिए हिमाचल के पारंपरिक पहाड़ी व्यंजन आज पर्यटकों में खूब लोकप्रिय हो रहे हैं। प्रदेश की आर्थिकी में पर्यटन व्यवसाय के बढ़ते महत्त्व एवं अहम योगदान को ध्यान में रखते हुए वर्तमान प्रदेश सरकार इस क्षेत्र पर विशेष ध्यान दे रही है। प्रदेश के प्रमुख पर्यटक स्थलों पर मूलभूत अधोसंरचना एवं पर्यटन सुविधाओं के सुधार व विस्तार के लिए एशियाई विकास बैंक से 570 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता स्वीकृत करवाई गई है। पर्यटन विस्तार गतिविधियों को गांव स्तर तक पहुंचाने के लिए राज्य की पिछड़ी पंचायतों, ग्रामीण एवं दुर्गम क्षेत्रों में पर्यटन इकाइयों को 10 वर्ष के लिए विलासित कर में छूट प्रदान की गई है। प्रदेश में पर्यटकों के ठहराव की अवधि को बढ़ाने के उद्देश्य से गतिविधि आधारित पर्यटन को बढ़ावा दिया जा रहा है। सरकार ने राज्य के चिन्हित स्थानों पर सैरगाह, मनोरंजन स्थल, जलक्रीड़ा तथा गोल्फ कोर्स जैसी पर्यटन गतिविधियों के लिए निजी क्षेत्र को लंबी अवधि तक लीज़ के आधार पर प्रदान करने का निर्णय लिया है। प्रदेश में प्रस्तावित रज्जू मार्गों को सार्वजनिक-निजी सहभागिता के आधार पर विकसित करने को प्राथमिकता दी जा रही है। साहसिक पर्यटन के क्षेत्र में हिमाचल प्रदेश सरकार के प्रयासों को उस समय और बल मिला जब प्रदेश के कांगड़ा जिला के बीड़-बिलिंग में गत वर्ष अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिता का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया। इससे हिमाचल प्रदेश को साहसिक पर्यटन के विश्व मानचित्र पर उभारने में मदद मिली है। प्रदेश में पर्यावरण संरक्षण उपायों तथा पारिस्थितिकीय संतुलन को बनाए रखने के उद्देश्य से सरकार ने हिमाचल को अग्रणी इको पर्यटन गंतव्य बनाने के लिए राज्य की संशोधित इको पर्यटन नीति-2016 को स्वीकृति प्रदान की है। इको पर्यटन को प्रोत्साहन देने से प्रदेश में हर वर्ष अधिक-से-अधिक पर्यटक भ्रमण के लिए आकर्षित होंगे। प्रदेश सरकार के इन कारगर प्रयासों का ही प्रतिफल है कि हिमाचल प्रदेश आज देश-विदेश के पर्यटकों के लिए पसंदीदा पर्यटक स्थल बनकर उभरा है और इस वर्ष हिमाचल को साहसिक गतिविधियों के लिए सर्वश्रेष्ठ भारतीय गंतव्य पुरस्कार से नवाजा गया है।

–संपादक

आलेख

भारतीय दानवीर संस्कृति में कहलूरी संस्कार

● डॉ. आर. के. शुक्ला

संस्कृति प्रत्येक जाति की जीवन-विषयक चेतना को अभिव्यक्त करती है। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त मनुष्य जिन-जिन क्रिया-कलापों, भाषाओं व भावों को व्यक्त करता है, वे सभी संस्कृति के अंग हैं। भारतवर्ष सांस्कृतिक विविधता एवं बहुलता से भरपूर देश है। भारतीय संस्कृति मन और आत्मा की विशालता व व्यापकता से परिपूर्ण है। इसके सभी सिद्धान्त पूर्णतः वैज्ञानिक हैं, और उनका मुख्य उद्देश्य मनुष्य का कल्याण है। मानव सभ्यता के विकास में जहां कई संस्कृतियां व सभ्यता विलुप्त हुई हैं, वहीं भारतीय संस्कृति अपनी समन्वयशक्ति, सहनशीलता, धार्मिक सहिष्णुता एवं आध्यात्मिक भावना के कारण पिछले पाँच हजार वर्षों से अधिक समय से निरन्तरता और नवीनता बनाये हुए हैं। श्रद्धा, विश्वास, प्रेम, दया, दान, त्याग जैसे आत्मीय गुण इसे पुष्पित-पल्लवित करते रहे हैं।

दान का जीवन में विशेष महत्त्व है। रामकृष्ण परमहंस कहते हैं कि जीवन में जितना दान कर सको, करो, पर मांगिए मत, क्योंकि मांगने से व्यक्ति छोटा हो जाता है, जैसे राजा बलि से भिक्षा मांगने वाले भगवान् को भी वामन का बौना रूप धरना पड़ा था। रहीम ने बहुत अच्छा कहा है :

रहिमन वे नर मर चुके, जे कहुं माँगन जाँहि।
उनते पहले वे मुए, जिन मुख निकसत नाँहि॥

अर्थात्, वे मनुष्य मरे समान हैं जो कोई वस्तु माँगने जाते हैं, परन्तु उनसे पहले वे मनुष्य नैतिकता की दृष्टि से मर चुके हैं, जो वस्तु पास होते हुए भी देने से मना करते हैं। भावार्थ यह है कि वस्तु अपने पास होते हुए माँगने वाले को कभी मना नहीं करना चाहिए। मांगने वाले को भी चाहिए कि वह किसी के दान का निरादर नहीं करे, और दान-स्वरूप जो कुछ मिल जाये उसे सहर्ष स्वीकार करे।

दान करने को अपना धर्म समझकर निष्काम बुद्धि से दान करना और यश-हेतु एवं अन्य फल की आशा से दान करना इन दो कृत्यों का बाहरी परिणाम भले ही एक-समान है, फिर भी श्रीमद्भागवत गीता में पहले दान को सात्त्विक तथा दूसरे को राजस दान कहा ग्या है, और वही दान कुपात्रों को दिया जा, तो उसे तापस दान कहा गया है। दान प्रायः श्रद्धा, प्रेम, सहानुभूति व नम्रतापूर्वक करना चाहिए और दान देते समय अहं सजाने की भूल कभी नहीं करनी चाहिए। सत्य मार्ग पर चलते हुए राजा हरिश्चन्द्र ने अपना राज्य, पत्नी, पुत्रादि सब खोकर भी लेशमात्र दुःख का अनुभव नहीं किया था। सम्राट हर्षवर्द्धन (606-647 ई) प्रत्येक पांच वर्ष के पश्चात् प्रयाग में एक विशाल जनसभा करता था, और उसमें अपना बहुत कुछ दान दे देता था। प्रयाग के अपने अन्तिम सांस्कृतिक सम्मेलन में उसने चीनी यात्री ह्वेनसांग की उपस्थिति में बौद्ध भिक्षुओं, ब्राह्मणों, जैनियों व गरीब लोगों को हजारों स्वर्ण मुद्राएं, मोती, अपने कानों के कुंडल, वस्त्रादि सब दान में दे दिये थे तथा स्वयं अपनी बहन राज्यश्री से पुराने वस्त्र लेकर पहने थे।[1]

किसी देश, प्रदेश अथवा क्षेत्र विशेष की संस्कृति के दर्शन, उस देश, प्रदेश व क्षेत्र के लोक-साहित्य में सहज हो जाते हैं। पहाड़ी राज्य हिमाचल प्रदेश अपनी उत्कृष्ट संस्कृति के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। यहां का लोक-साहित्य तत्कालीन समाज के चित्र व चरित्र को बड़ी स्पष्टता से प्रदर्शित करता है। कहलूर-बिलासपुर के राजा देवीचन्द (1741-1778 ई.) के बारे में गणेश सिंह बेदी ने इस प्रकार लिखा है :[2]

देवीचंद नरेश भा बड़ बीर उदारा।
सिंह अजा इकठी चरी जिह राज मँझारा॥
मीये गजे मृगिन्द को अधिकारी जाना।
दीनो राज हँडूर को कर कृपा महाना॥
देवीचन्द नरेश लौं जग कौन उदारा।
खिन मै कीनो रंक ते राजा निरधारा॥

उपरोक्त पंक्तियों से पता चलता है कि शूरवीर और उदार शासक देवीचंद के समय बिलासपुर रियासत में इतनी सुख-समृद्धि थी कि शेर और बकरी प्रसन्नतापूर्वक इकट्ठे रहते थे। एक बार उनके शासनकाल के समय (हंडूर-नालागढ़) राज्य में बड़ा विद्रोह हुआ, जिसमें वहां का राजा मानसिंह, उसका भाई पद्म और उनके पुत्र सब मारे गए। राजा के बिना वहां की प्रजा अनेक प्रकार के दुःख-कष्ट सहने लगी। तब वहां से कुछ लोग अपने वज़ीर अगडू की अगवाई में कहलूर-बिलासपुर के राजा देवीचंद के पास आये और उनसे हंडूर राज्य को संभालने के लिए प्रार्थना की। इस पर

हिमाचल के लोग विभिन्न संस्कारों, त्योहारों व उत्सवों के अवसर पर जाने-अनजाने रूप से अनेक प्रकार के दान-पुण्य करते हैं। बच्चे के जन्म पर घर-परिवार में प्रसन्नता का वातावरण होता है, और मित्रों में मिठाई बांटी जाती है। लड़का पैदा होने पर समाज में विशेष उत्साह देखने को मिलता है।

देवीचंद ने हंडूर का राज्य लेने से मना कर दिया और अपने छोटे भाई शक्तिचंद को हंडूर राज्य देना चाहा। परन्तु शक्तिचंद ने यह कहते हुए राज्य लेने से इनकार कर दिया कि मैं आपका सेवक हूँ, राजा बनकर आपकी बराबरी नहीं करना चाहता। इसी प्रकार देवीचंद के अन्य भाइयों-चिमना, इज्जतू और जुगतू ने भी हंडूर का राज्य लेने से मना कर दिया। तदोपरान्त देवीचंद ने अपने हाजरी मियां गजे सिंह (जो हंडूर के राजा का वंशज था) को बुलाकर हंडूर का राज्य उसे दे दिया। इतनी बड़ी दानवीरता शायद ही किसी अन्य पहाड़ी शासक में रही होगी।

हिमाचल के लोग विभिन्न संस्कारों, त्योहारों व उत्सवों के अवसर पर जाने-अनजाने रूप से अनेक प्रकार के दान-पुण्य करते हैं। बच्चे के जन्म पर घर-परिवार में प्रसन्नता का वातावरण होता है, और मित्रों में मिठाई बांटी जाती है। लड़का पैदा होने पर समाज में विशेष उत्साह देखने को मिलता है तो वहीं कन्यादान को सर्वोत्तम माना गया है। पखवाड़े भर में किसी शुभ दिन मित्रों और आस-पड़ोस के लोगों को बुलाकर लोकगीत व लोकनृत्य का आयोजन किया जाता है। इस दिन सबको मिठाई, शक्कर-छोले (भिगे, हुए काले चने) बाँटे जाते हैं, और प्रीतिभोज खिलाया जाता है। ननिहाल की ओर से मामा-मामी बच्चे के हाथों के लिए चांदी के कंगन, पैरों को पाजेब, सुन्दर वस्त्र, खिलौने तथा बच्चे के माता-पिता व परिवार के अन्य सदस्यों के लिए वस्त्रादि देते हैं। बच्चे के माता-पिता परिवार की विवाहित बेटियों और पुरोहित को भोजन, दक्षिणा, वस्त्रादि देते हैं। कुछ समय के पश्चात् कुल-पुरोहित बच्चे की जन्म-कुंडली तैयार करता है। यदि कुंडली में कुछ अनिष्ट ग्रह मालूम पड़े तो जन्मदिवस पर ग्रहों की शान्ति के लिए उचित अन्नदान और तुलादान करवाया जाता है। शिक्षा-ग्रहण करने के लिए जब बालक को सर्वप्रथम पाठशाला भेजा जाता है, तब माता-पिता विद्यालय में लड्डू बाँट कर बच्चे का विद्यारम्भ करवाते हैं। उत्तर-वैदिक काल में गुरुजन द्रोणाचार्य जैसे ऋषि-मुनि होते थे, जो स्वार्थ से अलग, लोभ से दूर, निष्काम भाव से झोंपड़ी में रहते थे। विद्यार्थी गुरुओं के आश्रमों में जाकर निःशुल्क विद्या ग्रहण करते थे। शिक्षा समाप्ति पर विद्यार्थी अपने गुरु को 'गुरु दक्षिणा' देते थे। विद्या या ज्ञान का दान एक महादान है। मनुष्य को आज भोजन खिलायें तो कल उसे पुनः भूखा लग जाती है, परन्तु उसे यदि कोई विद्या अथवा कला सिखा दी जा, तो वह जीवन-पर्यन्त अपनी जीविका प्राप्त करने के योग्य हो जाता है। विवाह योग्य होने पर अपने घर-आँगन में वेदिका सजाकर समाज व सम्बन्धियों की उपस्थिति में कन्या का हाथ सुयोग्य वर को सौंपना प्रत्येक बेटी के माता-पिता का एक सुनहरा स्वप्न होता है, और इस सपने को साकार होते देखकर उनकी आँखें भर आती हैं। कन्यादान के पावन अवसर पर माता-पिता अपनी सामर्थ्यानुसार कन्या और वर के लिए सोने-चाँदी के आभूषण, वस्त्रादि तथा बारात में आए हुए अतिथियों को दक्षिणा देते हैं। इस अवसर पर सब को 'धाम' खिलाकर सहर्ष विदा किया जाता है। बिलासपुरी धाम में धुली दाल, दाल उड़द, मीठा और कढ़ी-पकौड़ा प्रमुखता से बनाए जाते हैं। यहां का समाज कन्यादान को इतना महादान मानता है कि जिस दम्पत्ति के कन्या नहीं होती, वे अपने किसी निकट सम्बन्धी या मित्र की बेटी के विवाह पर उसका कन्यादान करके अपने को सौभाग्यशाली समझते हैं। कुछ दम्पति अपने द्वार में तुलसी का पौधा सींचकर उसका विवाह ठाकुर (शालिग्राम) से रचाकर विधिपूर्वक कन्यादान करके आनंदानुभूति करते हैं।

आत्मा की अमरता को मानते हुए यहां मनुष्य की मृत्यु के बाद भी मृतक के नाम से अन्नदान, वस्त्रदान, पिंडदान किया जाता है। मृतक के क्रियाकर्म के उपलक्ष्य में जो वस्तु एवं दान के रूप में दी जाती है, उन्हें महाब्राह्मण लोग लेते हैं। मृतक की पुण्यतिथि के अनुसार वर्ष भर प्रतिमास उस तिथि को किसी व्यक्ति को भोजन खिलाया जाता है। एक वर्ष तक प्रतिदिन गाय, कुत्ता व कौआ को भोजन दिया जाता है, और शाम को अंधेरा होने से पूर्व द्वार के बाहर दक्षिण दिशा में मृतक के नाम से दीपक जलाया जाता है। वर्ष पूरा होने पर पुण्यतिथि के दिन वार्षिक श्राद्ध किया जाता है, और उसमें शय्यादान, वस्त्रदान, भोजनदान किया जाता है। चार वर्ष पूरे होने पर चर्तुवार्षिक श्राद्ध (चवखी) करते हैं, और फिर नियमित रूप से प्रतिवर्ष श्राद्ध-कर्म किया जाता है। देश, प्रदेश और गांव-शहर की सरकार का लोकतांत्रिक प्रणाली से गठन करने के लिए लोग बड़े उत्साह व शांतिपूर्वक ढंग से मतदान करते हैं। कल्पा (किन्नौर) निवासी श्यामसरण नेगी को देश के प्रथम मतदाता होने का गौरव प्राप्त है, और उसने जनवरी, 2016 के पंचायत चुनाव में भी अपने मताधिकार का प्रयोग किया है।

हिमाचल प्रदेश की संस्कृति कृत्रिम कम तथा स्वाभाविक और भाव-प्रवण अधिक है। क्षेत्र के अनुसार तीज-त्योहार, उत्सव-मेले, विवाहादि संस्कार मनाने के रीति-रिवाजों में भिन्नता पाई जाती है। बिलासपुर क्षेत्र में लोहड़ी पर्व पर तिल के लड्डू तथा तिल, चावल और शक्कर से तिलचौली बनाकर लोहड़ी गाने वालों

और आस-पड़ोस के लोगों में बांटी जाती है। चैत्र, श्रावण और शरद् नवरात्रों में लोग नैनादेवी, नेरशा देवी, जालपा देवी, हरिदेवी आदि के मन्दिरों में पूर्ण श्रद्धा से जाकर भेंट चढ़ाते हैं और शीश नवाते हैं। इस दौरान लोग कन्या-पूजन कर उनको भोजन खिलाकर दक्षिणा देना श्रेष्ठ समझते हैं। निर्जला एकादशी के दिन लोग निराहार व निर्जल व्रत धारणकर गाँव-शहर के प्रमुख स्थलों पर राहगीरों को स्वच्छ, मीठा पेयजल, शर्बत तथा खरबूजे, आम, केले जैसे फल बाँटते हैं। भाई-बहन के पवित्र सम्बन्धों के पर्व रक्षाबन्धन और भाई-दूज के अवसर पर भाई अपनी बहनों को बुलाकर तरह-तरह के पकवान खिलाते हैं और वस्त्रादि देते हैं। करवाचौथ पर सुहागिन स्त्रियां अपनी श्रेण्य सुहागिन महिलाओं को चूड़ियां, बिंदियां तथा रुपये, फल-फूलों से भरपूर करवे (मिट्टी के कुज्जे) देकर और चरण वन्दना करके आशीर्वाद प्राप्त करती हैं। दीपावली के पर्व पर घरों को साफ-सुथरा करके सजाया जाता है, शाम को दीपक जलाकर, चावल के आटे से विभिन्न पकवान बनाकर लक्ष्मी पूजन करके पकवानों को मित्रों व आस-पड़ोस में बांट कर खाते हैं। कार्तिक पूर्णिमा से पाँच दिन पूर्व के समय को भीष्मपंचक काल कहते हैं। इस अवधि में लोग अपने घरों में तिल के तेल से अखंड दीपक जलाते हैं, जिन्हें पूर्णिमा के दिन पूज्यभाव से गेविन्दसागर जैसे जलाशयों में जलता हुआ छोड़कर दीपदान करते हैं और आस-पड़ोस व सम्बन्धियों को प्रीतिभोज खिलाते हैं।

हिमाचल प्रदेश के मेहनतकश लोगों का कृषि, बागबानी और पशुपालन मुख्य व्यवसाय है। वे सुबह स्नान करके सूर्य, पीपल को जल देते हैं, खाना पकने पर अग्नि, गाय-बैल, कुत्ता, कौआ को खाना देकर स्वयं खाना खाते हैं। गेहूं, जौ, चना, मटर तथा मक्की, धान, मूंग, उड़द, तिल की नई फसल तैयार होने पर उसका कुछ भाग सर्वप्रथम अपने कुल-देवी, देवता को श्रद्धापूर्वक चढ़ाया जाता है, जिसे बिलासपुर क्षेत्र में नसरावां कहते हैं। यहां संक्रान्ति, जन्मदिवस, श्राद्ध पर पुरोहित को विशेष रूप से नसरावां देते हैं और अन्य मांगने वाले लोगों को भी नसरावां दिया जाता है। आम, अनार, अमरूद, संतरा, नाशपाती आदि फल पकने पर और आलू, अदरक, भिंडी, गोभी, करेला की भरपूर फसल होने पर आस-पड़ोस व मित्रों में बांटे जाते हैं। गाय-भैंस के बच्चा पैदा होने पर उसके प्रथम दूध को निकालकर किसी अन्य पशु-बैलादि को पिलाया जाता है, और फिर उसके दूध को मनुष्य पीते हैं। सप्ताह भर में उस पशु के दूध से खीर बनाई जाती है। तदोपरान्त उसके दूध को मित्रों व आस-पड़ोस के लोगों में खीर-हेतु बांटा जाता है। कुछ लोग दुधारू पशु अपने जान-पहचान वाले लोगों को दान स्वरूप भी दे देते हैं। दुधारू गाय का दान करना समाज में श्रेष्ठ माना जाता है। उत्तर वैदिक काल में गोदान सोलह-संस्कारों में से एक संस्कार था, जिसे विद्या-ग्रहण के उपरान्त और विवाह से पूर्व सम्पन्न किया जाता था।

सात धारों वाले बिलासपुर जिला के लोगों का जनजीवन कठिन रहा है। यहां के स्पष्टवादी एवं कर्मठ लोग मिल-जुलकर अपना कृषि और अन्य कार्य करते हैं। फसल की बोआई, गुड़ाई, कटाई व घास की कटाई में जो लोग पहले अपना कार्य समाप्त कर लेते हैं, वे अपने पड़ोसी लोगों की सहायता करते हैं।

सात धारों वाले बिलासपुर जिला के लोगों का जनजीवन कठिन रहा है। यहां के स्पष्टवादी एवं कर्मठ लोग मिल-जुलकर अपना कृषि और अन्य कार्य करते हैं। फसल की बोआई, गुड़ाई, कटाई व घास की कटाई में जो लोग पहले अपना कार्य समाप्त कर लेते हैं, वे अपने पड़ोसी लोगों की सहायता करते हैं। पुराने बावड़ी, कुओं की सफाई, ग्रामीण रास्तों की मरम्मत, विवाह-उत्सव के लिए लकड़ियां एकत्रित करने में सामूहिक रूप से प्रत्येक परिवार के सदस्य श्रमदान करते हैं। प्यासों को पानी पिलाना, भूखों को भोजन खिलाना तथा चिड़ियों को दाना डालना, मछलियों को आटा डालना लोग अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं। गरीब लड़की की शादी, बीमारी, बाढ़, भूकम्प प्रभावित लोगों की सहायतार्थ व विद्यालय के भवनों, स्वच्छ जल व्यवस्था आदि के लिए लोग दिल खोलकर धनराशि देते हैं। कुछ लोग विद्यालय, देवालय, सड़क-मार्ग, आंगनबाड़ी आदि के लिए भूमिदान करते हैं। श्रद्धालुओं की सुख-सुविधा हेतु देवालयों के समीप व दुर्गम यात्रा मणिमहेश (चम्बा), श्रीखंडमहादेव (कुल्लू) के दौरान निःशुल्क भोजन-पानी (लंगर) की व्यवस्था करते हैं। महर्षि व्यास, मार्कंडेय, बाबा बालकनाथ, बाबा बंगली, काला बाबा कल्याणदास, बाबा हंसागिरि आदि ऋषियों व साधु-संतों ने अपने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सेवा-भाव से भारतीय संस्कृति को गौरवान्वित किया है। स्वदेश-प्रेम बिलासपुर के लोगों में कूट-कूटकर भरा हुआ है। स्वतंत्रता संग्राम, भारत-चीन, भारत-पाक युद्ध के समय तथा अन्य अवसरों पर देश की सेवा करते-करते यहाँ के सैंकड़ों वीर जवान शहीद हुए हैं। प्राचीनकाल में रुक्मिणी ने अपने बलिदान से गेहड़वीं क्षेत्र के लिए अखंड जलधारा का सृजन किया था, जिसे अब 'रुक्मिणी कुंड' कहा जाता है। सन् 1922 ई. में राजा विजयचन्द के शासनकाल में रंडोह (कसोल) निवासी मोहण अपने भाई तुलसी को बचाने के लिए हंसते-हंसते फांसी पर लटक गया था। आशा है कि हमारी नई पीढ़ी अपनी समृद्ध संस्कृति की अमूल्य विरासत के संरक्षण एवं संवर्द्धन के प्रति सदैव अग्रसर रहेगी।

प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय,
बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश

संदर्भ :

1. डॉ. आर. के. शुक्ला, प्राचीन भारत, पृ. 115, 2009
2. गणेश सिंह, शशिवंश विनोद, पृ. 76,78, 1882

आलेख

जनजातीय क्षेत्र पांगी : एक यात्रा

● डॉ. दायक राम ठाकुर

'देश शोभला हिमाचल म्हारा, हिमाचल म्हारा,
जेहड़ा चमको सरगे रा तारा-देश शोभला-2'

हिमाचल प्रदेश भारत का बहुत ही सुंदर एवं शांतिप्रिय राज्य है। हिमालय की गोद में बसा यह पहाड़ी क्षेत्र आसमान में चमकते सितारे के समान शोभायमान है। यहां के इस प्रसिद्ध लोकगीत में इसकी सुंदरता का बखूबी वर्णन किया गया है साथ ही पर्यटकों को यहां आने का निमंत्रण दे रहा है। यहां की शांत वादियां, स्वच्छंद हवा, कल-कल करती नदियां-नाले, पक्षियों का कलरव, देवी-देवता, भोले-भाले लोग, मनमोहक प्राकृतिक छटा आगंतुक को स्वतः ही अपनी ओर आकृष्ट करती है। यहां के जनजातीय क्षेत्रों के दर्शन किए बगैर संपूर्ण हिमाचल की जान व पहचान अधूरी है। हिमाचल वास्तव में पहाड़ों की कंदराओं, घाटियों, ढलानों व नदी-नालों के आस-पास गांवों में बसता है।

हिमाचल प्रदेश में जिला शिमला का डोडरा-क्वार, काशापाट, पंद्रह बीश, अठारह बीश, जिला सिरमौर का चेता, कुपवी, शिलाई, रोहनाट, कुल्लू की मलाणा घाटी, मंडी का बरोट तथा सिराज, चंबा का तिस्सा, सलूणी, कांगड़ा का छोटा व बड़ा भंगाल इत्यादि अति दुर्गम क्षेत्रों में शुमार हैं। इन क्षेत्रों का जनजीवन कठिन है। यहां की संस्कृति, अर्थव्यवस्था व इतिहास निचले क्षेत्रों से भिन्न है परंतु इन क्षेत्रों से भी कहीं ज्यादा कठिन जीवन हिमाचल के जनजातीय क्षेत्रों का है।

हिमाचल का संपूर्ण जिला किन्नौर व लाहुल स्पीति तथा चंबा का पांगी एवं भरमौर जनजातीय क्षेत्र घोषित किए गए हैं। यहां के रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेशभूषा, लोक संस्कृति, भाषा, अर्थव्यवस्था, भूगोल इत्यादि हिमाचल के अन्य क्षेत्रों से बिलकुल अलग हैं। सर्दियों में यह क्षेत्र कुछ महीनों के लिए बाकी दुनिया से कट जाते हैं। बेशुमार बर्फ के दौरान यहां का जीवन अत्यंत कठिन एवं चुनौतीपूर्ण होता है। सड़क मार्ग बिलकुल बंद हो जाते हैं केवल हेलिकॉप्टर सेवा यहां की जीवन रेखा रह जाती है। यह सुविधा भी अत्यंत सीमित और महंगी है जो पूर्णतः मौसम के मिजाज पर निर्भर करती है। लोगों को हरी सब्जियां, अखबार, टेलीविजन इत्यादि सुविधाएं मिलना लगभग बंद हो जाती हैं। महीने पंद्रह दिन पुराना अखबार भी लोग बड़े चाव से पढ़ते हैं। लोग राशन, दाल, लकड़ी, कोयला, मिट्टी तेल, कपड़े इत्यादि आवश्यक वस्तुओं का भंडारण पहले ही कर देते हैं। यहां पहुंचना ही अपने आपमें सबसे पहली चुनौतीपूर्ण परीक्षा है। इस वर्ष (2015) हमारी यात्रा का गंतव्य हिमाचल का जनजातीय क्षेत्र पांगी था। सर्वप्रथम बता दें कि किलाड़ (पांगी) कैसे पहुंचा जा सकता है? पांगी पहुंचने के लिए मुख्यतः तीन स्थल मार्ग हैं। बाहर से आने वाले यात्रियों के लिए दिल्ली से चंडीगढ़, चंडीगढ़ से मनाली, रोहतांग दर्रा पार करके जनजातीय जिला लाहौल स्पीति में प्रवेश कर सकते हैं।

तांदी जहां चंद्रा व भागा नदियों का संगम स्थल है, वहां से नदी की दाहिनी तरफ वाया उदयपुर, तिंदी, पुर्थी होते हुए पांगी के मुख्यालय किलाड़ पहुंचा जा सकता है। यह केवल गर्मियों का सड़क मार्ग है जो मई से अक्तूबर तक छह महीने खुला रहता है। रोहतांग पास बंद होने पर यह मार्ग बंद हो जाता है। दूसरा मार्ग चंडीगढ़, पठानकोट वाया चंबा, तिस्सा, बैरागढ़, साचपास पार करके किलाड़ पहुंच सकते हैं। यह सड़क मार्ग भी केवल गर्मियों में चार महीने खुला रहता है। साच दर्रा रोहतांग से भी अधिक ऊंचाई पर स्थित है। तीसरा मार्ग पठानकोट, जम्मू से वाया डोडा, किश्तवाड़, गुलाबगढ़, संसारी नाला होते हुए किलाड़ पहुंच सकते हैं। इस मार्ग से केवल छोटे वाहन ही किलाड़ पहुंच सकते हैं क्योंकि जम्मू कश्मीर के सोहल नामक स्थान से आगे जम्मू रोड ट्रांसपोर्ट की बसें नहीं जाती क्योंकि यहां से आगे संसारी नाला तक सड़क काफी तंग है। सड़क मार्ग के अलावा किलाड़ हैलीपैड के लिए हैलिकॉप्टर की उड़ान भी संभव है।

हमारा आठ सदस्यीय दल 5 जुलाई 2015 को छोटे वाहन द्वारा प्रातः 5 बजे करसोग से रवाना हुआ। हमारा एक साथी नेरचौक से और स्वयं लेखक ने मंडी से वाहन लिया। करीब 10 बजे हम मंडी से चले। हम मंडी से जोगेंद्रनगर, बैजनाथ, पालमपुर,

तांदी जहां चंद्रा व भागा नदियों का संगम स्थल है, वहां से नदी की दाहिनी तरफ वाया उदयपुर, तिंदी, पुर्थी होते हुए पांगी के मुख्यालय किलाड़ पहुंचा जा सकता है। यह केवल गर्मियों का सड़क मार्ग है जो मई से अक्तूबर तक छह महीने खुला रहता है। रोहतांग पास बंद होने पर यह मार्ग बंद हो जाता है। दूसरा मार्ग चंडीगढ़, पठानकोट वाया चंबा, तिस्सा, बैरागढ़, साचपास पार करके किलाड़ पहुंच सकते हैं। यह सड़क मार्ग भी केवल गर्मियों में चार महीने खुला रहता है। साच दर्रा रोहतांग से भी अधिक ऊंचाई पर स्थित है। तीसरा मार्ग पठानकोट, जम्मू से वाया डोडा, किश्तवाड़, गुलाबगढ़, संसारी नाला होते हुए किलाड़ पहुंच सकते हैं। इस मार्ग से केवल छोटे वाहन ही किलाड़ पहुंच सकते हैं।

कांगड़ा, शाहपुर, सिंहुता, भटियात, लाहड़ु, तन्नुहटी होते हुए शाम तक बनीखेत पहुंचे। हमारा रात्रि ठहराव हिमाचल प्रदेश लोक निर्माण विभाग के विश्राम गृह में था। मंडी से बनीखेत 288 किलोमीटर, बनीखेत से किलाड़ 216 किलोमीटर कुल मिलाकर मंडी से पांगी 504 किलोमीटर का सफर है। हमारे दो नए साथियों ने डलहौजी, खजियार नहीं देखा था, इसलिए छह जुलाई प्रातः हम डलहौजी होते हुए खजियार पहुंचे। जाहिर है चंबा जाएं और हिमाचल का मिनी स्विटज़रलैंड यानी खजियार न जाएं यह सही नहीं होगा। सूर्योदय का नज़ारा यहां देखते ही बनता है। यहां के स्वच्छंद वातावरण व ताज़ी हवा में हम एकदम तरोताज़ा हो गए। खजियार एक बहुत ही खूबसूरत, रमणीक सैरगाह है। हरी-भरी घास का समतल मैदान, इसके चारों तरफ बड़े-बड़े देवदार के सदाबहार वृक्ष प्राकृतिक सौंदर्य को चार चांद लगा देते हैं। सुबह में यहां का वातावरण शांत, खाली-खाली व शानदार था जबकि दोपहर बाद यहां खूब भीड़भाड़ हो जाती है।

प्रातःकालीन भ्रमण व मस्ती के उपरांत हमने वहां चाय-नाश्ता किया और खजी महादेव को नमस्कार करके हम चंबा की तरफ चल पड़े। थोड़ी ही दूरी के पश्चात गांव के एक मंदिर के पास करीब 50-60 फुट ऊंची शिव प्रतिमा बनाई गई है, ऐसा लगता है कि स्वयं महादेव इस धरती पर आगंतुकों का स्वागत कर रहे हों। करीब 10 बजे हम चंबा जिला मुख्यालय पहुंचे। सर्वप्रथम हम सब ने यहां के प्रसिद्ध लक्ष्मी नारायण मंदिर के दर्शन किए तत्पश्चात् चौगान में घूमे और साथ ही सटे बाजार से चंबा चप्पल इत्यादि खरीद कर दोपहर का भोजन ग्रहण किया। इसके बाद हिमाचल प्रदेश लोक निर्माण विभाग के मंडलीय कार्यालय में जाकर विश्राम गृह बैरागढ़ बुक करवाया। अधिशासी अभियंता जो स्वयं पांगी के रहने वाले हैं, उन्होंने हमें मार्गदर्शन करवाया। इसके उपरांत हम चंबा-तिस्सा मार्ग पर चल पड़े।

रावी नदी के दाहिनी तरफ कियानी, बसेरा, पुखरी से होते हुए कोटी नामक स्थान पर पहुंचे। कोठी से भलेई माता व सलूणी के लिए बैरा-स्यूल खड्ड (नदी) पार करके जा सकते हैं जबकि तिस्सा के लिए बैरा-स्यूल की बायीं तरफ ऊपर की ओर सड़क जाती है। तिस्सा सड़क से बैरा-स्यूल पर बना सुरगाणी जलविद्युत परियोजना देखी जा सकती है। कहते हैं जब सुरगणी डैम (बांध) बन रहा था तो लोक कलाकारों ने यह प्रसिद्ध लोकगीत गाया था : "छोटी सुरगाणी बड़ा डैम बणेया"। कोटी से कंदला, बडोह, कलैहल, मधुबाड़ा, नकरोड़, चिल्ली नामक स्थानीय स्टेशनों से होते हुए पहाड़ी मोड़दार सड़क से तिस्सा पहुंचे। सड़क कई तरह से काफी तंग और खतरनाक थी, जबकि एक दिन पहले इस क्षेत्र में भयानक वर्षा होने के कारण सड़क पर ल्हासे गिरने से सड़क की दशा बहुत खराब थी। दलदली सड़क व तीखे मोड़ों पर वाहन चलाना चुनौतीपूर्ण था। तिस्सा कलोनी मोड़ पर हम सबने जलपान किया। तिस्सा कलोनी मोड़ से एक सड़क भजवाड़ू जाती है जबकि बायीं तरफ आगे साचपास मार्ग है। मोड़ के साथ ही नीचे राजकीय महाविद्यालय तिस्सा है। तिस्सा के उपरांत इच्छलूणी, खुशनगरी होते हुए सायं सात बजे बैरागढ़ पहुंचे। विश्रामगृह में केवल मात्र दो सेट हैं, जिसमें हमें केवल एक सेट मिला परंतु कनिष्ठ अभियंता के सहयोग से हमारे चार साथी एक सरकारी आवास में ठहरे।

सुबह का नज़ारा यहां बहुत ही खूबसूरत था, सामने संपूर्ण चुराह घाटी नज़र आ रही थी। दूर-दूर तक फैले मनमोहक गांव जैसे आपस में बतिया रहे हों। यहां अभी गेहूं, जौ की कटाई चल रही थी। अधिक ऊंचाई एवं ठंडे क्षेत्र के कारण गेहूं पकने में बहुत समय लगाती है। बैरागढ़ से कुछ दूरी पहले एक कच्ची सड़क देवकोठी के लिए जाती हे जो मुख्य सड़क से नौ किलोमीटर दूर है, वहां एक मशहूर मंदिर है। बैरागढ़ होम स्टे होटल में हमने सुबह का नाश्ता किया और सात बजे साच दर्रा की तरफ चल पड़े।

बैरागढ़ से रानीकोटल, कालावन होते हुए सतरुंडी पहुंचे। कालावन देवदार, रई, तोस के सदाबहार वृक्षों का घना जंगल है। सड़क के दूसरी तरफ श्वेत दुग्ध जलधाराएं आकर्षण का केंद्र थीं। रास्ते में गद्दियों की भेड़ों के बड़े-बड़े झुंड पांगी की तरफ जा रहे थे। कालावन से सतरुंडी तक पांच ग्लेशियर प्वाइंट थे जिसमें दो जगह बहुत ही खतरनाक थीं, जहां पानी सड़क के ऊपर से झरने की तरह बह रहा था। इन जगहों से गाड़ी पार करवाना जोखिमपूर्ण था। दिन की धूप में ग्लेशियर पिघल कर विकराल रूप धारण कर लेते हैं इसलिए इन स्थानों से सुबह के वक्त निकल जाना सही रहता है। सतरुंडी में चार-पांच तंबुनुमा ढाबे थे, जहां चाय, खाना इत्यादि मिल जाता है। हमने एक घंटा रुक कर यहां के प्राकृतिक

साच पास से 6-7 किलोमीटर दोनों तरफ (चंबा व पांगी) बहुत ज्यादा बर्फ थी। सड़क के दोनों तरफ 20-30 फुट ऊंची दीवार की तरफ बर्फ के ढेर थे। बर्फ के बीच स्नोकटर से रास्ता बनाया गया था जो बर्फ में खाई जैसा लगता था। हम सभी भारी बर्फ देखकर गाड़ी से उतर गए और बर्फ के ऊपर अठखेलियां करने लगे।

सौंदर्य का खूब लुत्फ लिया। उस दिन मौसम बिलकुल साफ था इसलिए हम भाग्यशाली थे। यहां से आगे अब सड़क की दोनों तरफ बर्फ थी।

सतरुंडी से साच पास तक 12 किलोमीटर दूरी है, जिसमें 12 कैंचीनुमा मोड़ हैं, प्रत्येक मोड़ लगभग एक किलोमीटर लंबा है। सतरुंडी में भी हैलीपैड बनाया गया है। साच पास से 6-7 किलोमीटर दोनों तरफ (चंबा व पांगी) बहुत ज्यादा बर्फ थी। सड़क के दोनों तरफ 20-30 फुट ऊंची दीवार की तरफ बर्फ के ढेर थे, मैंने इतनी ज्यादा बर्फ आज तक नहीं देखी थी। हम सभी भारी बर्फ देखकर गाड़ी से उतर गए और बर्फ के ऊपर अठखेलियां करने लगे। मसती करते-करते हमारा एक साथी ऑक्सीजन की कमी के कारण थोड़ी देर के लिए बेहोश हो गया। जिसे मैंने तुरंत गाड़ी में बिठाया, पानी पिलाया और तब वह होश में आया। स्नोकटर से रास्ता बनाया गया था जो बर्फ के बीच एक खाई की तरह लगता था। इसलिए मार्ग भी बहुत जोखिमपूर्ण था। अभी पांच दिन पहले ही यह मार्ग केवल छोटे वाहनों के लिए खोला गया था। इतनी ऊंचाई पर कूदना, चहकना ठीक नहीं होता। करीब 9. 30 बजे हम साच दर्रे पर थे। काली माता मंदिर के चारों तरफ भेड़-बकरियों का बहुत बड़ा झुंड था। गद्दी थोड़ी देर के लिए विश्राम कर रहे थे। हम सबने माता के मंदिर में माथा टेका और बिना विलंब दूसरी तरफ चल पड़े। मंदिर के पास हमारी गडरिये से बात हुई। उसने कहा कि अभी बस के लिए 15-20 दिन और लग जाएंगे, तब तक बर्फ भी पिघल जाएगी और सड़क की दशा भी ठीक कर दी जाएगी। उन्होंने बताया कि वाया साच पास किलाड़ घूमने का सही समय अगस्त महीना होता है। मैंने मजाक में पूछा कि आपके पास सबसे बड़ा बकरा कितने रुपये का है, तो उन्होंने कहा कि जी 15000 रुपये का। किलाड़ की तरफ भी सड़क बहुत ज्यादा खराब थी। यूं कहूं कि इस तरह से अधिक जोखिमपूर्ण था। बगोटू नामक स्थान में सतरुंडी की ही तरह चाय एवं खाने का ढाबा था। बगोटू, गार्ड हट इत्यादि स्थानों से होते हुए चंद्रभागा नदी पर बने शकराली पुल पार करके अपराह्न 1.30 बजे हम किलाड़ पहुंचे। पांगी कोई एक निश्चित स्थान नहीं है। इस पूरे इलाके को पांगी कहा जाता है जिसका मुख्यालय किलाड़ में स्थित है। किलाड़ पहुंच कर हमने दोपहर का भोजन किया। राजकीय महाविद्यालय पांगी में कार्यरत हिंदी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. राजेंद्र वर्मा एवं अर्थशास्त्र विभाग में एसिस्टेंट प्रोफेसर दिनेश शर्मा ने हमारा रात्रि ठहराव का इंतजाम हिमाचल प्रदेश लोक निर्माण विभाग के विश्राम गृह में किया था। थोड़ा विश्राम करने के उपरांत दोनों मित्रों के साथ किलाड़ हैलिपैड होते हुए 16 किलोमीटर दूर सबसे ऊंचे गांव होडान भटोरी देखने गए। किलाड़ हैलिपैड सर्दियों में जीवन जोड़ने का एकमात्र सहारा है। हैलिपैड से संपूर्ण किलाड़ का दृश्य देखा जा सकता है। ठीक नीचे चंद्रभागा नदी, नदी के दूसरी तरफ पूंटो गांव और सामने बर्फ से ढकी चोटियां दृष्टिगोचर होती हैं। पूंटो गांव के आस-पास देवदार, रई, तोस, अखरोट, ठंगी इत्यादि का घना जंगल है। ठंगी पांगी में जंगली प्रजाति का मशहूर फल है। संपूर्ण पांगी क्षेत्र में सबसे ऊपर के गांव भोट लोगों के हैं जो बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं जो मांसाहारी हैं। इन गांवों को भटोरी कहा जाता है। यहां कुल मिलाकर सात भटोरियां हैं जिनमें पांच पांगी क्षेत्र में और दो जम्मू कश्मीर की पड्डर घाटी में हैं। इनमें से हम भी बौद्ध धर्म के अनुयायियों के एक गांव होडान भटोरी देखने गए। हैलीपैड से कवास, टकवास, भटवास, टुंडरू और फिर अंतिम गांव होडान भटूरी पहुंचे। यहां मक्की और गेहूं सा-साथ उगी हुई थीं। यहां एक वन्य जड़ी-बूटियों की नर्सरी भी है जहां कुठ, धूप, चोरा, बनबकरी, पंजा, पतीस, चुकरी, जंगली प्याज, गुरनु इत्यादि जड़ी बूटियां थीं। यद्यपि हमें वहां माली नहीं मिला फिर भी एक स्थानीय निवासी ने थोड़ी जानकीर दी। वहां हमने पांगी महाविद्यालय में कार्यरत कर्मचारी टेकचंद के घर चायपान किया। वहां हमने एक ऐसा कमरा देखा जहां सर्दियों में परिवार के सदस्य तथा पशु एक साथ रहते हैं कमरे में रसोई के साथ-साथ सोने की व्यवस्था भी है, तो साथ ही एक तरफ गाय व दूसरी तरफ भेड़ें इत्यादि रखी जाती हैं। बहुत ज्यादा बर्फवारी के दौरान यह सर्दी से बचने का एक सामान्य उपाय है। इससे पहले मैंने ऐसे घर तो देखे थे जिसमें भूमि तल पर पशु और प्रथम तल पर मनुष्य रहते हैं परंतु सभी का एक साथ वास प्राकृतिक मजबूरी है। किलाड़ के अलावा पांगी क्षेत्र में प्रमुख दर्शनीय स्थल में सुराल, सेचूनाला, मिंधल माता, करयास माता, क्रियुणी, मालुनाला, साच घराट, पुर्थी, संसारीनाला इत्यादि शामिल हैं।

वास्तव में पांगी क्षेत्र का जीवन बहुत कठिन है, विशेषतः सर्दियों में। भौगोलिक दृष्टि से यह चंबा में लगता ही नहीं क्योंकि साच पास इस क्षेत्र को अलग कर देता है परंतु लाहौल की उदयपुर

घाटी की तरफ है। चंबा से वाया साच पास 3-4 महीने के लिए जुड़ जाता है। प्रायः जम्मू से यहां का जनजीवन जुड़ा रहता है। यहां बिजली के छोटे-छोटे प्रोजेक्ट हैं। सर्दियों में यहां यातायात, संचार, बिजली की समस्या अकसर रहती है, रेडियो भी यहां अच्छी तरह सिग्नल नहीं पकड़ता। मिंधल माता किलाड़ ही नहीं जम्मू की संपूर्ण पडर वैली, गुलाबगढ़, किश्तवाड़, डोडा, भद्रवाह तक मशहूर है। जम्मू के इन क्षेत्रों से प्रति वर्ष मिंधल माता की यात्रा की जाती है। यह हिमाचल का ऐसा गांव है जहां एक बैल से खेती यानी हल चलाया जाता है, हल में दो बैल नहीं जोड़े जाते। तय कार्यक्रमानुसार हमें उदयपुर, मनाली होते हुए वापस आना था परंतु तिंदी और पुर्थी के बीच पागलनाला में ग्लेशियर पिघलने के कारण सड़क मार्ग अवरुद्ध था इसलिए हमें वापसी का मार्ग वाया किश्तवाड़ चुनना पड़ा।

यही कारण था कि हम मिंधल माता के दर्शन नहीं कर सके। यह मंदिर किलाड़-उदयपुर मार्ग पर है। दो दिन के घूमने-फिरने के पश्चात् आठ जुलाई को हम प्रातः किलाड़ से संसारीनाला, धरवास, लुंज, इस्तयारी, थंवनाला, तयारी, सोहल, गुलाबगढ़, किश्तवाड़, डोडा, भद्रवाह होते हुए पाघरी जोत पार करके सलूणी मार्ग से वापस आए। किलाड़ से हम चंद्रभागा नदी की दाहिनी तरफ चलते रहे, संसारीनाला हिमाचल प्रदेश का आखिर स्टेशन है। यह हिमाचल जम्मू की सीमा है, यहां हिमाचल प्रदेश पुलिस की अंतिम चौकी है, जहां हमारी पूरी पूछताछ और तलाशी ली गई। संसारी नाला के आगे चंद्रभागा का नाम चिनाव है। सीमा पार जम्मू का पहला गांव इस्तयारी पड़ता है, साथ ही गंधारी माता का (महाभारत में कौरवों की मां) मंदिर है। इस्तयारी के पश्चात 4-5 किलोमीटर थंमनाला बहुत ही खतरनाक पथरीला पहाड़ है, दूर से पहाड़ी के बीचोबीच सड़क पैंसिल की एक रेखा की तरह दिखती है। बहुत ही तंग सड़क में ड्राइवर की थोड़ी सी गलती सीधे कयामत का पैगाम दे सकती है, नीचे चिनाव नदी में गाड़ी का पता भी नहीं चलेगा। इस नदी में पानी का बहाव बहुत तेज है। थंब नाला में एक जगह सड़क के ऊपर से झरने की तरह पानी गिरता

वास्तव में पांगी क्षेत्र का जीवन बहुत कठिन है, विशेषतः सर्दियों में। भौगोलिक दृष्टि से यह चंबा में लगता ही नहीं क्योंकि साच पास इस क्षेत्र को अलग कर देता है परंतु लाहौल की उदयपुर घाटी की तरफ है। चंबा से वाया साच पास 3-4 महीने के लिए जुड़ जाता है। प्रायः जम्मू से यहां का जनजीवन जुड़ा रहता है। यहां बिजली के छोटे-छोटे प्रोजेक्ट हैं। सर्दियों में यहां यातायात, संचार, बिजली की समस्या अकसर रहती है, रेडियो भी यहां अच्छी तरह सिग्नल नहीं पकड़ता।

है जो सीधा गाड़ी के शीशे पर पड़ता है, जिसके कारण ड्राइवर 30 सेकेंड तक अंधा हो जाता है। यह सबसे खतरनाक प्वाइंट था। किलाड़ से सोहल तक केवल छोटी गाड़ी जा सकती है। जम्मू से सोहल तक बस पहुंचती है। सोहल के गुलाबगढ़ तक भी सड़क तंग और कच्ची है, गुलाबगढ़ के आगे सड़क पक्की और खुली है। तयारी नामक स्थान पर शर्मा ढाबा में हमने दोपहर का भोजन किया। शुद्ध देसी घी के साथ घर की तरह हमारी यहां खातिदारी की गई। गुलाबगढ़ से संसारीनाला तक संपूर्ण क्षेत्र को पडर घाटी कहा जाता है। आर्थिक विकास की दृष्टि से यह पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। यहां आज भी बिजली, पानी जैसी मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। सोहल के पास मशहूर चिटो देवी का मंदिर है, उस दिन भी हमें जम्मू की तरफ से चिटो देवी के लिए विशेष बसें मिलीं। गुलाबगढ़ इस क्षेत्र का विकसित कस्बा है। यहां भोटनाला जो मचेल-जंस्कर की तरफ से आता है, यहां चिनाव नदी में मिलता है। प्रतिवर्ष मचेल माता के लिए भी यात्रा जाती है। गुलाबगढ़ पुल पार करके हमारा संपूर्ण मार्ग अब चिनाव नदी की बायीं तरफ था। हम थोड़ी देर के लिए किश्तवाड़ में रुके।

किश्तवाड़ बहुत सुंदर शहर है, बाज़ार में जम्मू पुलिस ने हमारी गाड़ी का चालान कर दिया। ड्राइवर द्वारा वर्दी न पहने के कारण सौ रुपये जुर्माना लगाया गया। हमें सौ रुपये की रसीद कटवाने और पुलिस से पुनः गाड़ी के कागजात प्राप्त करने के लिए सौ-सौ रुपये रिश्वत देने पड़े। ऐसा न करते तो हमें उस रात किश्तवाड़ में ही रुकना पड़ता। किश्तवाड़ से सिंधन टॉप पार करके सीधे अनंतनाग होते हुए श्रीनगर एक दिन में आ-जा सकते हैं। इसके पश्चात हम डोडा होते हुए भद्रवाह घाटी की तरफ आ गए। भद्रवाह को 'छोटा काश्मीर' कहा जाता है, यकीनन यह कश्मीर घाटी की तरह ही बहुत खूबसूरत जगह है। पादरी जोत जाने के लिए हमें भद्रवाह बाज़ार के बीचोबीच से गुजरना था। बाजार के मध्य में प्रसिद्ध वासुकि नाग का मंदिर है। यहां हिंदू-मुसलमान की जनसंख्या आधी-आधी है और लोगों में धार्मिक सद्भाव है।

प्रतिवर्ष भद्रवाह से वासुकि नाग की कैलाश झील तक कैलाश यात्रा आयोजित की जाती है। इसके अलावा लोग बड़ी संख्या में मणिमहेश यात्रा पर जाते हैं। विकास की दृष्टि से भद्रवाह एक आधुनिक शहर लगता है, लोगों का जीवन स्तर बहुत अच्छा है, यात्री को कम से कम एक दिन भद्रवाह रुकना चाहिए। भद्रवाह से पादरी जोत तक देवदार का घना जंगल है और सड़क मार्ग बहुत खुला है। हमने पादरी पास में ढाबे में रात का भोजन ग्रहण किया। यही हमारी लंबी बातचीत इंस्पैक्टर खान से हुई, उनके अनुसार भद्रवाह के युवा उच्च शिक्षा की तरफ आकृष्ट हैं, यहां हिंदू, मुसलमान, बौद्ध सभी मिलजुल कर रहते हैं। पादरी जोत के पश्चात लंगेरा नामक स्थान पर हिमाचल की सीमा है। सीमा पर

लघुकथा

हमसफर

● शरेश

...एक रास्ता उबड़-खाबड़ था तो दूसरा एकदम सीधा-सपाट...

...जहां से ये दोनों रास्ते एक-दूसरे की विपरीत दिशाओं में शुरू होते थे, वहीं चौराहे पर तीन सुंदर स्त्रियां मायूस सी खड़ी थीं, शायद अपने-अपने हमसफर का इंतजार कर रही थीं... उनकी आंखों में इंतजार साफ नजर आ रहा था...हैरानी की बात ये थी कि एक सी मुद्रा में नजर आ रही ये स्त्रियां एक-दूसरे की ओर देख तक नहीं रही थीं, बात करना तो दूर की बात थी... . ..एक अन्य तीसरे रास्ते से इस चौराहे पर पहुंचे एक रईस से दिखने वाले अजनबी पुरुष ने इनमें से एक महिला को देखा तो कुछ पल देखता ही रह गया... फिर उसी महिला से पूछा - ये रास्ता कहां जाता है?

वह आकर्षक स्त्री बोली - सच्चाई की ओर!

...पर वह अजनबी दूसरी दिशा में मुड़ गया, उस रास्ते के एकदम उलट...

...और वह महिला भी उस अजनबी के पीछे-पीछे चल दी...

...बाकी दोनों महिलाओं ने भी अपनी नजरें उठाते हुए इस दृश्य को गंभीरता से देखा...दोनों फिर से पहले जैसी मुद्रा में खड़ी रहीं...

...थोड़ी देर बाद फिर एक और अजनबी पुरुष आया... उसने भी अपने से निकट वाली महिला से पूछा - ये रास्ता कहां जाता है?

मधुर स्वर में इस महिला ने भी जवाब वही दिया - सच्चाई की ओर!

वह पुरुष भी इस महिला की मीठी आवाज की मादकता में पल भर खोया रहा और उस सच्चे रास्ते के उलट दूसरी दिशा में जाने वाली राह पर चल दिया...वह महिला भी उसी के पीछे चल निकली...

...अब पीछे बची तीसरी अकेली महिला भी ये सब देखती रही...फिर पूर्ववत स्तंभित सी खड़ी हो गई...उसका इंतजार अब और बढ़ गया था...उसके आकर्षक चेहरे पर तनाव की लकीरें खिंचने लगी थीं...

...फिर एक तीसरा पुरुष वहां पहुंचा, उसने भी वैसे ही पूछा - ये रास्ता कहां जाता है?

...महिला का वही जवाब था, जो पहले वाली दोनों महिलाओं ने दिया था - सच्चाई की ओर!

...पुरुष किसी दिशा में आगे नहीं बढ़ा...उसका एक सफर जैसे पूरा हो गया था... उसने पूछा - आप किसी का इंतजार कर रही हैं?

वह स्त्री बोली - हां, हमसफर का...

...वह पुरुष किसी भी रास्ते पर आगे नहीं बढ़ा और दोनों घंटों बतियाते ही रहे...ये तय करते रहे कि किस रास्ते पर आगे बढ़ें...

...एक जो बीच का रास्ता था... दोनों ने इसी पर नजरें गड़ा रखी थीं...

ग्राउंड फ्लोर, रुक्मणि निवास, नोर्थ ओक,
संजौली, शिमला-171 006

हिमाचल पुलिस की चौकी है, सघन पूछताछ के पश्चात ही हमने हिमाचल के अंदर प्रवेश किया। देर रात लोक निर्माण विभाग के विश्राम गृह भांदल में हमने अपना डेरा लगाया। दोनों सेट बुक थे, चौकीदार ने खाने की मेज को हटाकर भूमि आसन लगाए, गांव से रजाई-कंबल मंगवा कर हमारा इंतजाम कर दिया। नौ जुलाई प्रातः सात बजे हम भांदल से चले और सलूणी में चाय-नाश्ता किया और स्थानीय बर्फी का आनंद लिया। सलूणी भी एक खूबसूरत पहाड़ी कस्बा है और यहां का सड़क मार्ग तिस्सा की तुलना में बेहतर है। हमने भलेई माता होते हुए, चमेरा बांध पार करके बाथरी में दोपहर का भोजन किया और देर रात तक वापस करसोग पहुंच गए। यद्यपि यह यात्रा संपूर्ण रूप से छोटे वाहन द्वारा पूरी हुई परंतु यह काफी रोमांचक व जोखिमभरी रही। निस्संदेह पांगी हिमाचल प्रदेश का एक ऐसा क्षेत्र है जो भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक प्रत्येक दृष्टि से अलग है। यहां के लोग बड़े ही भोल-भाले, हृष्ट-पुष्ट एवं मेहनतकश हैं। ऐसे क्षेत्रों का विकास सही मायने में हिमाचल का विकास होगा। सरकार को चाहिए कि यहां के कठिन जीवन को सुलभ बनाने के लिए हर दृष्टि से प्रयास करे और विकास के रथ को जमीनी हकीकत में उतारे।

सह-प्राध्यापक, राजनीति शास्त्र विभाग, राजकीय
महाविद्यालय बासा (गोहर),
जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 029

संदर्भ सूत्र

1. डॉ. राजेंद्र वर्मा, सह-प्राध्यापक, हिंदी, राजकीय महाविद्यालय, पांगी (किलाड़), हिमाचल प्रदेश
2. श्री दिनेश शर्मा, सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्री, वही
3. श्री टेक चंद, सेवादार, वही
4. इंस्पेक्टर खान, जे.एंड के. पुलिस, पाघरी जोत (सेवारत)
5. साच दर्रा : चंबा एवं पांगी के बीच, समुद्रतल से 4395 मीटर ऊंचाई
6. रोहतांग दर्रा : लाहौल स्पीति व कुल्लू के बीच, समुद्रतल से 3,960 मीटर ऊंचाई पर स्थित।

आलेख

एंग्लो-गोरखा युद्ध का मूक गवाह : मलौण किला

● नेम चंद अजनबी

हिमाचल के एक विस्तृत भू-भाग पर सन् 1805 से 1815 ई. तक गोरखों का शासन रहा। विशेषतः शिमला की पहाड़ी रियासतों के ऊपर अमर सिंह थापा के सैनिकों द्वारा किये गये अत्याचार आज भी जन-मानस में 'गोरखायण' के रूप में अंकित है। कुछ रियासतों के शासकों ने गोरखों के आतंक से भयभीत होकर उनके साथ अपनी पुत्रियों के विवाह करके कुछ राहत ली जबकि हिन्डूर नरेश तो गोरखों के विरुद्ध ब्रिटिश कम्पनी की सेना की शरण में चला गया था। कम्पनी सरकार उन दिनों भारत में अपने साम्राज्य को बढ़ाने के लिये प्रयासरत थी। कम्पनी सरकार ने तुरन्त सर डेविड अखतरलोनी के नेतृत्व में एक सेना हिण्डूर नरेश के आग्रह पर गोरखों के विरुद्ध भेज दी । कुमांऊं में कम्पनी सेना गोरखों के विरुद्ध युद्ध रत थी।

ब्रिटिश सेना ने गोरखों को अन्तिम मात मलौणगढ़ में दी। यहां गोरखा सेनापति अमरसिंह थापा मोर्चा सम्भाले था। उस समय तक गोरखों के पास जैथकगढ़ और मलौणगढ़ ही शेष बचे थे। जैथकगढ़ में अमर सिहं थापा का पुत्र रणजीत सिहं थापा डटा हुआ था। इसी समय अमर सिंह थापा को कुमाऊं के हाथ से निकल जाने का समाचार प्राप्त हुआ। अमर सिंह थापा ने अपने आप को चारों तरफ से दुश्मनों से घिरा पाया। परन्तु उसने लड़ाई जारी रखी। उसका भाई भक्ति सिंह थापा समीप ही मलौण से दो किलोमीटर दूर नरायण कोट में अंग्रेजों से लोहा ले रहा था। 70 वर्ष की आयु में भी उसमें युवाओं जैसा जोश था।

अमर सिंह थापा के सैनिक हाथों में खोखरी और तलवार लिये 'हर-हर महादेव' और 'जय काली कलकते वाली' का जयघोष लगाते हुए युद्ध क्षेत्र में अपने प्राणों की आहूति दे रहे थे। अपने सैनिकों की कम होती संख्या से कुछ गोरखा सैनिकों ने अमर सिंह थापा का साथ छोड़ दिया। जबकि बचे सैनिक और युद्ध से कतराने लगे थे। ठीक इसी समय 15 अप्रैल 1815 को भक्ति सिंह थापा युद्ध क्षेत्र में खेत रहा। अखतरलौनी ने उसके शरीर को कीमती शालों में लपेट कर अमर सिंह थापा के पास भिजवाया ताकि उसका रहा सहा मनोबल भी टूट जाये।

अख्तरलौनी की युक्ति काम कर गई। भाई के शव को देखकर अमरसिंह थापा बिल्कुल टूट गया। उसने अपने तथा अपने पुत्र रणजीत सिंह तथा बचे सैनिकों के जीवन के बदले आत्मसमर्पण कर दिया। दोनों सेनाओं की उपस्थिति में भक्ति सिंह थापा का अन्तिम संस्कार किया गया। उसकी दोनो पत्नियां उसके साथ सति हो गई। अमर सिंह थापा ने नेपाल की राह ली। कहते हैं कि रास्ते में ही उसकी मृत्यु हो गई।

मलौण किला शिमला से लगभग 90 किलोमीटर दूर है जबकि बिलासपुर से यह मात्रा 32 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। लुहारघाट की चोटी पर बना यह किला किसी जमाने में हिण्डूर रियासत का अजेय दुर्ग होता था। इस किले पर अधिकार करने वाला हमेशा अपने को गौरवान्वित महसूस करता था। इसलिए बिलासपुर के शासक हमेशा इसे ललचाई दृष्टि से देखते थे। फलस्वरूप रतनपुरगढ़ और मलौण गढ़ के सैनिकों के बीच आए दिन झड़प होती रहती थी।

किले तक जाने के लिये लुहारघाट से आधे घण्टे की सीधी चढ़ाई चढ़नी पड़ती है । किले के निर्माण के बारे में कुछ भी स्पष्ट नहीं हैं कि इसका निर्माण कब और किसने किया था। मलौण वासियों के अनुसार यह गोरखों द्वारा निर्मित है जबकि यह सत्य नहीं है। यह गोरखों से लगभग सौ वर्ष पूर्व का बना है। सम्भवतः कई वर्षों तक गोरखों के कब्जे में रहने के कारण इसे गोरखों द्वारा निर्मित कहा जाने लगा।

परन्तु शोध से एक तथ्य सामने आता है कि इसका निर्माण हिन्डूर के राजा भूप चन्द (1704-1755) ने करवाया था। बिलासपुर क्षेत्र की एक लोकगाथा के अनुसार मलौण का निर्माण हिन्डूर के राजा ने करवाया था। गाथा के अनुसार हिन्डूर और कहलूर की किसी कलह के चलते हिन्डूर ने मलौण को चिनना शुरू किया। जब गढ़ बन कर तैयार हो गया तो यह बिलासपुर की महारानी 'बादला' को नागवार गुजरा। महारानी बादला ने कहलूर के राजा को हिन्डूर पर चढ़ाई के लिये प्रेरित किया तथा मलौण पर अधिकार करने की बात कही। रानी के उकसाने पर राजा ने पम्मा नड्डा को बुला कर जो उस समय रियासत के वजीर थे, कहा कि सेना ले जाकर या तो मलौणगढ़ को अपने कब्जे में ले लो या उस

किले की लम्बाई लगभग 400 मीटर और चौड़ाई 8 मीटर से 50 मीटर तक है। मलौण किला रत्नगढ़ की अपेक्षा चार गुणा बड़ा प्रतीत होता है। इसी से मलौण किले की मजबूती व उसकी उपयोगिता का पता चलता है। इस भीमकाय किले को देखकर आश्चर्य होता है कि वो लोग किस मिट्टी के बने होंगे जिन्होंने 5-5 फुट लम्बी पत्थर की शिलाओं को इस टिले पर पहुंचाया होगा।

गढ़ को गिरा दो। पम्मा नड्डा ने निक्कु, नोगलु, अमरू, सुंघाल आदि ढाई धड़े चन्देलों के व 36 धड़े सुंघाल सिपाहियों की सेना लेकर हिन्डूर की ओर कूच किया। बिलासपुर से चल कर पम्मा नड्डा ने मन्दोलड़िया में पहला डेरा डाला। दूसरे दिन पम्मा ने हिन्डूर में प्रवेश कर भारी उत्पात मचाया। पम्मा ने एक ही हमले से आधा हिन्डूर अपने कब्जे में कर लिया।

पम्मा नड्डा को बढ़ता देख कर हिन्डूर की महारानी बसोहली को बड़ी चिन्ता हुई। राजा उस समय बालक था। उसने राजा को पम्मा की गोदी में डाल कर पम्मा को अपना धर्म भाई बनाने का षड्यंत्र रचा। पम्मा उस षड्यंत्र में फंस गया। बसोहली रानी ने पम्मा से कहा कि मैं तूझे हिन्डूर की वजीरी भी प्रदान करती हूं। हिन्डूर की वजीरी के लालच में आकर पम्मा कचहरी में गया। रानी ने अपने विश्वासपात्र सैनिको के हाथों से पम्मा का वध करवा दिया। पम्मा की लाश को शाल में लपेट कर उसके डेरे मन्दोलड़ी में पहुंचा दिया। पम्मा की लाश को देख कर उसके साथी हक्के - बक्के रह गये। सैनिको ने तुरन्त कहलूर से बीरीया वजीर को बुलवाया। बीरीया के नेतृत्व में सेना ने पुनः हिन्डूर पर हमला किया। यहां यह उल्लेख मिलता है कि उस समय हिन्डूर का राजा भूप चन्द था और हिम्मत चन्द उसका वजीर था। भूप चन्द ने हिम्मत चन्द को कहलूरियों का सामना करने भेजा परन्तु इस युद्ध में हिन्डूर की हार हुई।

तारीख-ए-रियासत हिन्डूर में भूप चन्द (1704-1755) का शासनकाल सम्वत 1761 से सम्वत 1812 बताया गया। हिम्मत चन्द को भूप चन्द को वजीर नहीं बल्कि उसका बाप था। जिसका शासनकाल सम्वत 1758 से सम्वत 1761 बताया गया है। गाथा का मुख्य नायक पम्मा नड्डा है। शशी वंश विनोद के अनुसार पम्मा नड्डा राजा भीम चन्द (सन 1665-1694) का वजीर था। भीमचन्द सम्वत 1722 को गद्दी पर बैठा और सम्वत 1751 में गद्दी अपने बेटे अजमेर चन्द को सौंप कर स्वंय सन्यासी हो गया। भीम चन्द के बाद उसका बेटा अजमेर चन्द (सन 1694-1741) सम्वत 1751 में कहलूर की गद्दी पर बैठा। अजमेर चन्द ने सम्वत 1798 तक कहलूर पर राज किया। अजमेर चन्द के काल में भी पम्मा नड्डा का उल्लेख मिलता है। कहलूर रियासत के इसी काल के इतिहास में एक वजीर माणिक चन्द का वर्णन आता है। भीम चन्द के राज्य रोहण के समय रियासत का वजीर माणिक चन्द था। उस समय भीमचन्द की आयु चौदह वर्ष थी। भीम चन्द की वाल्यवस्था को देख कर माणिक चन्द ने मनमानी शुरू कर दी। यह देख कर भीम चन्द की माता ने माणिक चन्द को निकाल दिया। सम्भवतः इसी के बाद पम्मा नड्डा को वजीर बनाया गया।

हम उपरोक्त वर्णन के बाद पम्मा नड्डा को केन्द्र मान कर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि पम्मा नड्डा कहलूर का वजीर सन 1665 के बाद से लेकर सन 1741 के बीच रहा। गाथा में हिन्डूर के राजा के रूप में भूप चन्द का वर्णन आया है। भूप चन्द हिन्डूर का राजा सन 1704-1755 तक रहा। इस प्रकार मलौण गढ़ का निर्माण अठारहवी शताव्दी के प्रथम दशक में हुआ प्रतीत होता है जो सत्य के समीप बैठता है।

किले को जो रास्ता जाता है उसके सामने मां भद्रकाली का मन्दिर बना हुआ है। किले के बायीं ओर बने इस मन्दिर में रखी मां भद्र काली की विशाल पत्थर की मूर्ति को गोरखे नेपाल से पीठ पर उठा कर लाये थे। यहां अन्य मूर्तियां भैरव और हनुमान की भी प्रतिष्ठित है जो शिलाओं में उकेरी गई हैं। मन्दिर के मुख्य द्वार का नव निर्माण किया गया है। मन्दिर पर लाल रंग किया हुआ है। किले का यही एक मात्रा भाग है जिसकी देखभाल की जा रही है। रविवार और मंगलवार को यहां लोग दूर दूर से जातरा लेकर आते हैं। उस दिन यहां मेले जैसा दृश्य होता है।

मन्दिर में मां के दर्शनों के बाद किले में प्रवेश किया जाता है। समुद्र तल से लगभग 4,500 फुट की ऊंचाई पर स्थित इस किले की दीवार पर चढ़कर चारों तरफ के नजारों का आनन्द उठाया जा सकता है। किले के एक तरफ मलौण गांव तथा दूसरी तरफ घना जंगल है। सामने बाड़ी धार अपनी उंचाई पर गर्व करती हुई मलौण धार को चिढ़ा रही है। रत्नगढ़ के पीछे दूर नीचे गोविन्दसागर का नजारा देखते ही बनता है। पश्चिम की ओर फतेहगढ़, स्वारघाट की लघु पहाड़ियां राजगढ़ तथा कसौली तक के दृश्यों का अवलोकन किया जा सकता है।

बाहरी दीवार की ऊंचाई 50 फुट रही होगी। यह दीवारें आज भी कहीं 20 फुट तो कहीं 50 फुट तक उंची है। किले की लम्बाई लगभग 400 मीटर और चौड़ाई 8 मीटर से 50 मीटर तक है। मलौण किला रत्नगढ़ की अपेक्षा चार गुणा बड़ा प्रतीत होता है। इसी से मलौण किले की मजबूती व उसकी उपयोगिता का पता चलता है। इस भीम काय किले को देखकर आश्चर्य होता है कि वो लोग किस मिट्टी के बने होंगे जिन्होने 5-5 फुट लम्बी पत्थर की शिलाओं को इस टिले पर पहुंचाया होगा।

एक वृद्ध गोरखा के अनुसार केवल एक मुख्य द्वार से किले में प्रवेश किया जाता था। जब यह मुख्य दरवाजा बन्द होता था तो

दूर-दूर तक आवाज सुनाई देती थी।

खण्डहर बनते इस किले की दीवारें आज भी अलंघ्य है। कहते हैं कि चारों तरफ से जब अंग्रेजों ने इस किले को घेर लिया था तो किले में रसद खत्म होने से गोरखा महिलाओं ने कई महिनों तक घास उबाल कर पेट भरा था। इन वीरांगनांओं ने अंग्रेजों पर पत्थर बरसा कर उन्हें चकित कर दिया था।

किले के अन्दर ही फॉसी कक्ष, रानी कक्ष, अधिकारी कक्ष, सभागार, अनाज भण्डार तथा शौचालय का भी प्रावधान था। किले से बाहर जाने के लिए गुप्त रास्ता भी था। किसी जमाने में दो फुट व्यास लिए कुंओं में पानी भरा होता था। आज इन कुंओं में मिट्टी भरी हुई है जिसमें घास उग गई है। कहते हैं कि मन्दिर से लगते भाग पर अंग्रेजों ने जमकर गोले बरसाए थे। इन गोलों के निशान कुछ वर्ष पूर्व तक देखे जा सकते थे। परन्तु मन्दिर की मुरम्मत करते समय वो मिट गये थे। किले की बाहरी दीवार चार-पांच फुट तक चौड़ी हैं। इसके भीतरी कक्ष 12x12 फुट के बने थे। एक कक्ष के दरवाजे की पत्थर की चौखट पर की गई चित्रकारी आज तक विद्यमान है। वह पत्थर पर उकेरी गई हैं।

इन कक्षों में किले के चारों ओर मोर्चे बने हुए थे । पांच-छः फुट की दूरियों पर बीच-बीच में गवाक्ष बने थे । इन खिड़कियों का अग्रिम भाग दो ईंच वर्गाकार का है। गवाक्ष में लगी बन्दूक को थोड़ा हटाकर इसकी दिशा बदली जा सकती थी । किले की एक दीवार में दो बड़े-बड़े दरवाजे हैं। दूसरे दरवाजे विभिन्न प्रकार की आकृतियां लिये हैं । यहां पर कुछ वर्ष पूर्व तक दो तोपें रखी हुई थीं। अब इन तोपों को गोरखा ट्रेनिंग सेन्टर सुबाथू ले गये हैं। हैरानी की बात है कि इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी ताम्बे से बनी इन तोपों में कोई जंग नहीं लगा है। इन तोपों की लम्बाई 14 फुट तथा अग्रभाग 6 फुट का है।

किले के अन्दर जल के 20x20 फुट के तालाब बने हुए थे। इन तालाबों में अब झाड़ उग चुके हैं। किले की दीवारें जर-जर हाल में गिर रही हैं। इनमें वृक्ष उग आयें हैं। किले से दो सौ मीटर दूर भक्त थापा का अन्तिम संस्कार किया गया था। यहां उसकी एक यादगार बनाई गई है। गोरखा ट्रेनिंग सेन्टर सुबाथू ने अब इसका जीर्णोद्धार किया है।

मलौण किला जो किसी जमाने में एक सुदृढ़ ऐतिहासिक दुर्ग था पिछले पचास वर्षों से उपेक्षा का शिकार है। यह किला अंग्रेज-गोरखा युद्ध का मूक दर्शक रहा है, आज धीरे-धीरे दम तोड़ रहा है। आज यह ऐतिहासिक धरोहर जीर्णोद्धार के इंतजार में है। अगर सड़क से किले तक ठीक मार्ग बन जाए तो हजारों इतिहास प्रेमी व घुमक्कड़ यहां आना पसन्द करेंगे।

उच्चत्तर शिक्षा-क अनुभाग, 402, आर्मजडेल बिल्डिंग,
हि. प्र. सचिवालय, शिमला -171002, मो. 094180 33783

दोहे

● **पुष्पा मेहरा**

मरुथल पोसे कैक्टस, बागों हँसे गुलाब।
माली बिन मरुथल हँसे, बिन माली न गुलाब ॥।

मन के इस कुरुक्षेत्र में, होता रहता द्वंद।
धर्म अधर्म के युद्ध में, धर्म सदा ही मंद ॥

नीले नभ की खोह में, दीप भरे उजियार।
दीप धरा पे शत जलें, नासें ना अँधियार॥

यादों के इस गाँव में, सुख-दुःख दोनों मिले।
सुख मुस्काने दे चले, दुःख शूल चुभा चले ॥

तप कर शबरी को मिले, मर्यादा घन राम।
भक्ति तुला तुलसी तुली, मिले उसे थे श्याम ॥

भक्ति बड़ी है मान से, विदित सकल संसार।
तुलसी पत्र भारी रहा, हल्का कंचन भार ॥

खंड खंड पत्थर उठे, पत्थर हो गये मन।
झोपड़ियों के फूँस बिच, मोम से पिघले मन ॥

चन्दन सा महका सदा, निर्मल मन का गाँव ।
उड़ती हवा कुचाल की, कपटी मन के गाँव ॥

काची माटी का घड़ा, टूटे फिर बन जाए।
मन ये टूटे जो कभी, फिर ना जुड़ने पाए ॥

पेड़ों में औषधि भरी, साँसों का संगीत।
दानी दधीचि से खड़े, छोड़े निज परतीत ॥

देख गगन उड़ने लगी, ले सपनों की डोर।
झटका ऐसा आ लगा, सपने ले हिलकोर ॥

घर घर जो बेटी हँसे, जग में हो उजियार।
रिश्तों की कड़ियाँ जुड़ें, जग पावे विस्तार ॥

201, सूरजमल विहार, दिल्ली-110 092,
दूरभाष : 011 22166598

शोध

वैश्वीकरण और बाजारवाद के दौर में भाषा और साहित्य

● डॉ. सुनीता देवी

प्रत्येक युग का नामकरण उस युग में प्रचलित प्रतिनिधि विचार अथवा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक प्रवृति के आधार पर किया जाता है। मध्ययुग को सामन्ती, धर्माश्रित, पिछड़े समाज की संज्ञा दी गई क्योंकि उस युग में मनुष्य की हर शंका का समाधान, हर प्रश्न का उत्तर धार्मिक पुस्तकों और धर्माचार्यों के उपदेशों में खोजा जाता था। मध्ययुग के पश्चात आधुनिक युग का प्रारम्भ औद्योगिकरण से उपजे व्यक्तिवाद, तर्कवाद तथा वैज्ञानिक सोच से माना जाता है। जीवन के केन्द्र में कार्य-करण से जुड़ी वैज्ञानिक तर्कपद्धति आ गई तथा जीवन का सुख धार्मिक आस्थाओं और विश्वासों में न खोज कर, पूंजी-संचय और भौतिक पदाथों के अधिक से अधिक उपभोग में माना जाने लगा। इस युग को औद्योगिक युग अथवा आधुनिक युग कहा गया। बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में औद्योगीकरण का स्थान कुशल प्रबन्धन और ज्ञान के उत्पादन ने लिया जिसे उत्तर-आधुनिक अथवा डेनियल बेल के शब्दों में 'उत्तर-औद्योगिक युग' कहा जाने लगा। औपनिवेशिक साम्राज्यों के ध्वस्त होने के पश्चात पूरा पश्चिमी जगत अपने उच्च उपभोग स्तर को बनाए रखने के लिए ऐसे बाजारों की खोज में निकला जहाँ अपना तैयार किया सामान बेच कर अधिक से अधिक लाभ कमाया जा सके। जब यूरोप में आर्थिक विकास न्यूनतम अथवा ऋणात्मक होने लगा, फ्रांस जैसे राष्ट्रों में बेकार युवक हिंसक प्रदर्शन करने लगे और पूरे पश्चिमी जगत में पूंजीवाद का संकट गहराया तो 1994 में आर्थर डंकल अपने पन्द्रह सूत्री प्रस्ताव लेकर उपस्थित हुए। मृत प्राय पूंजीवाद को डंकल प्रस्तावों का अमृत पिला कर पुनः जीवित किया गया तथा विश्व के सभी राष्ट्रों को आर्थिक उदारीकरण की डंकलवादी नीतियों पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया गया, यह प्रचारित किया गया कि विश्वस्तर पर सामान के व्यापार तथा पूंजी के फैलने से प्रतियोगिता बढ़ेगी, उत्पादन में गुणवत्ता आएगी तथा हर राष्ट्र अपनी विशेषज्ञता के आधार पर जो श्रेष्ठ सामान तैयार करेगा उसे बेचकर असीम लाभ कमाएगा। इस प्रकार देशों की अर्थ-व्यवस्था को जोड़कर एक विश्व-व्यापी अर्थ-व्यवस्था का हिस्सा बना दिया गया तथा 'विश्व-व्यापार संगठन' को इसकी पहरेदारी पर बिठा दिया गया। यह बात और है कि पहरेदारों में पश्चिमी जगत का प्रभाव अधिक है और पूर्व के राष्ट्रों को उनके हाथों शायद ही कभी न्याय मिल सके। इस प्रकार यह बाजारवादी वैश्वीकरण वर्तमान युग की पहचान बन गया और विश्व का कोई राष्ट्र इससे बच नहीं सका है। विश्व-बैंक और 'अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष' के सहारे निर्धन राष्ट्रों, आर्थिक उदारीकरण के लिए विवश हुए और अपने राष्ट्रीय हितों से समझौता करने के सिवा उनके पास कोई चारा नहीं रहा। यह वैश्वीकरण पश्चिम की जरूरतों से पैदा हुआ है, उनके हित साधन के लिए जिन्दा है इस लिए यह ऐसा उदारीकरण है जिसमें पिछड़े, निर्धन राष्ट्रों की दृष्टि से उदारता नहीं है। आज विज्ञान, तकनीक और आर्थिक लाभ मिलकर 'शोध ा एवं विकास' का गीत गा रहे हैं तथा अमीर राष्ट्रों को अधिक अमीर तथा गरीबों को और गरीब बना रहे हैं। इन्हीं कारणों से वर्तमान युग को वैश्वीकरण अथवा भूमण्डलीकरण का युग कहा जाता है।

यह वैश्वीकरण पहली बार नहीं हो रहा, 18वीं शताब्दी में पश्चिम में औद्योगिक क्रान्ति आई तब पश्चिमी राष्ट्र अपना माल बेचने के लिए उपनिवेशों की खोज में निकले थे और उन्होंने सैन्य और छलबल से आधे से अधिक दुनिया को गुलाम बनाकर उसका शोषण किया था तब उन्होंने अपने साम्राज्यवाद को पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान के प्रसार तथा प्रजातंत्रीकरण का नाम दिया था और अब अपने नव-साम्राज्यवाद को उन्होंने आर्थिक-उदारीकरण का जामा पहनाकर वैश्वीकरण का सुन्दर सा नाम दे दिया है। वास्तव में यह वैश्वीकरण, भूमण्डलीकरण अथवा विश्वग्राम की परिकल्पना को साकार नहीं करता बल्कि संकीर्ण पश्चिमीकरण अथवा अमरीकीकरण को बढ़ावा दे रहा है।

सुदूर अतीत में भारतीय परम्परा में भी वैश्वीकरण के बीज देखे जा सकते हैं। यहाँ वैदिक ऋषि ने 'कर्णवन्त, विश्वन आर्यम'

का जयघोष कर सारे विश्व के प्राणियों को श्रेष्ठ बनाने की बात कही थी और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया', सर्वे भद्राणी पश्चन्तु, मा कस्विद दुख भात भर्वत की कामना प्रकट कर विश्व का मंगल चाहा था। भारत ने दक्षिण पूर्वी एशिया, पश्चिमी एशिया तथा अन्य महाद्वीपों में सांस्कृतिक वैश्वीकरण किया था। वैश्वीकरण का लक्ष्य यदि 'विश्व मानव' और 'विश्व-संस्कृति' का निर्माण है तो भारतीयों ने सही अर्थों में ऐसा प्रयास किया था। व्यापारी, विचारक, ऋषि-मुनि और धर्म-प्रचारक सारे विश्व को मानवता का पाठ पढ़ाने और उच्चतर जीवन-मूल्यों से मानवता को परिचित करवाने विदेशों में गए। वास्तविक 'विश्वग्राम' तभी बनेगा जब सर्वमंगल एवं सहयोग के भाव प्रबल होंगे, विश्व-मानव तभी आकार लेगा जब तामसिक भावों से मुक्त होकर मनुष्य परमार्थ के लिए पुरुषार्थ करेगा। आज, पश्चिम से आयातित जिस वैश्वीकरण की चर्चा की जा रही है वह बाजार पर आधारित भोगवादी, आत्मनिष्ठ एवं मानसिक पश्चिमीकरण है जो भारतीय संस्कृति के लिए बड़ा खतरा है।

यह प्रश्न उठ सकता है कि भैतिकवादी पश्चिमीकरण पर आधारित वैश्वीकरण का भारतीय संस्कृति से क्या द्वेष है? वे व्यापारी राष्ट्र हैं, अपना सामान बेचेंगे और लाभ कमाकर चले जाऐंगे। वे हमारी संस्कृति पर प्रहार क्यों करेंगे? वास्तव में उनके व्यापारिक हित हमारी संस्कृति के विनाश से गहरे में जुड़े हैं। हम सभी जानते हैं कि किसी भी समाज में जो भी उपभोग की वस्तुएँ रहती हैं वे उस समाज के लोगों की सूक्ष्म आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। ये वस्तुएँ उस देश की भौगेलिक, सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप होती है। अब कल्पना कीजिए कि इटली को अपना पीजा, अमेरिका को अपना बर्गर या हॉलैंड को अपना चॉकलेट भारत में बेचना है। भारत में परौंठे या लड्डू, बर्फी या रसगुल्ले का प्रचलन है। जब तक भारतीय खाद्य पदार्थों से भारतीयों का लगाव रहेगा तो विदेशी माल कैसे बिकेगा? यदि आप गृह-प्रवेश पर लड्डू दिवाली पर बर्फी और होली में गुझियाँ ही खाते और बांटते रहेंगे तो उनकी चॉकलेट कैसे बिकेगी? इसके लिए पश्चिमी कम्पनियाँ विज्ञापनों का सहारा लेकर यह सिद्ध करेंगी कि भारतीय खाद्य पदार्थ पकवान स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है क्योंकि उनमें गंदे हाथ लगते हैं, वे ठीक से पैक नहीं होते, उनमें फैट अधिक हैं आदि। वे यह भी सिद्ध करने का प्रयास करते हैं कि उन्नत संस्कृति से जुड़े चॉकलेट खाकर आप 'इलीट' नागरिक बनते हैं, लड्डू-बर्फी साधारण लोगों के लिए है। इसी प्रकार झाड़ू से घर ठीक से साफ नहीं होता इसलिए वैक्यूम क्लीनर खरीदो, साधारण कपड़े धोने की मशीन में साधारण वशिंग पाउडर से कपड़े साधारण ही धुलेंगे। सबसे सफेद धुलाई के लिए पूर्ण-ऑटोमैटिक मशीन और एक्सोमैटिक साबुन ही चाहिए। बच्चे को दूध में बोर्नविटा नहीं दोगे वह बढ़ेगा कैसे? सार रूप में कहें तो वे आपके खाने-पीने, उठने-बैठने यहाँ तक कि आपके सोचने का ढंग बदल कर ही आपको अपनी परम्परागत वस्तुएं छोड़ने और उनकी बनाई बस्तुएँ अपनाने को विवश कर सकते हैं। इसी को तो सांस्कृतिक आक्रमण कहते हैं। आप में अपनी वस्तुओं, जीवन-शैलियों, विचारधाराओं के प्रति कुण्ठा अथवा हीनता का भाव भरकर वे अपना वर्चस्व स्थापित करते हैं जिससे उनके आर्थिक हित साधते हैं। इस प्रकार सांस्कृतिक आक्रमण, आर्थिक सम्राज्यवाद का अस्त्र बन जाता हैं समाज का सम्पन्न, सचेत वर्ग सबसे पहले इस आक्रमण का शिकार होता है। पुरानी वस्तुएँ जो सदियों के व्यवहार से अपनी उपयोगिता सिद्ध करती आई थी बाजार और जीवन से गायब हो जाती हैं तथा पश्चिमी उद्योगपतियों की वस्तुएँ हमारे घरों की शोभा बढ़ाने लगती हैं। पुरानी वस्तुओं के स्थानान्तरण के साथ-साथ बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ समाज में वर्जित अथवा निषिद्ध वस्तुओं का प्रचलन बढ़ा कर लाभ कमाती है। शराब तथा नशों का प्रचार इसका प्रमाण है। शराब पहले अपवाद स्वरूप किसी एक-आध घर में मुहल्ले में आती थी आज मुहल्ले में एक-आध घर ही इससे बचा दिखता हैं बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ आपकी जरूरतों के लिए माल पैदा नहीं करती। वे अपने माल के लिए प्रचार माध्यमों द्वारा मांग पैदा करती हैं। वैलेन्टाईन्ज का प्रचार होगा तो उनका सामान बिकेगा ही। 'मदर डे' और 'फादर डे' आदि मनाने का प्रचलन वे अपने उत्पाद बेचने के लिए ही करते हैं। जिस भारत में 'मातृ देवो भव' और 'पितृ देवो भव' का नाद गूंजा करता था, वहाँ ये दिन मनाना बचकाना काम है।

वैश्वीकरण, बाजारवाद के कंधों पर चढ़कर आया है और बाजारवाद की जान उपभोक्तावाद है। अधिक उपजाओ, अधिक खाओ औ अधिक उजाड़ो, यही उपभोक्तावाद है। संयम से जीना पिछड़ापन है। उन्नत तकनीक के सहारे सारे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन ही नहीं शोषण करके सब कुछ खा-पी जाओ और आने वाली अभिशप्त पीढ़ी के लिए अभिशप्त पृथ्वी और आकाश छोड़ जाओ यही उपभोगतावाद का आदर्श है। आज समाज की ड्राईविंग सीट पर उपभोक्तावाद है जहाँ पहले कभी वैज्ञानिक चितंन अथवा धर्म होता था। आज के बाजार का नारा है 'लूटो या लूट जाओ'। आज जो जितना ज्यादा छली है वह उतना ही बलि है हमारा समय कलियुग नहीं, छलयुग है क्योंकि पूरा बाजार तन्त्र धोखे और चालाकी पर टिका है। हमारे युग को मार्शल मैक्लूहान ने 'सूचना युग' कहा क्योंकि सूचनाओं को अविरल प्रवाह इलैक्ट्रोनिक एवं प्रिंट माध्यमों से हमें सूचित कम एवं भ्रमित अधिक कर रहा है। डेनियल बेल ने हमारे युग को 'उत्तर औद्योगिक समाज' की संज्ञा दी है। जिसमें औद्योगिक उत्पाद से अधिक कीमत प्रबन्धन या सेवा क्षेत्र की है। जिसमें ज्ञान मानव कल्याण के लिए बाँटा नहीं जाता, बाजार मूल्य पर खरीदा-बेचा जाता है। 'मेरी-क्यूरी' ने रेडियम के आविष्कार का और अलैकजैंडर फ्लेमिंग ने 'पैंसलीन'

का पेटेंट नहीं करवाया और अपनी खोज मानवता के कल्याण के लिए विश्व को सौंप दी परन्तु आज हजारों पेटेन्ट हर रोज होते हैं और हर आविष्कार की पूरी कीमत बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ वसूलती है। आज विज्ञान भी पूंजी के यहाँ गिरवी पड़ा है। जो पूंजीवाद मर रहा था वह आर्थिक उदारीकरण के चलते फिनिक्स पक्षी की तरह अपनी राख से उठ खड़ा हुआ है। फ्रेड़रिक जेमेसन ने 'वृद्ध पूंजीवाद' (लेट कैपिटलिज्म) को आर्थिक साम्राज्यवाद का सांस्कृतिक तर्क करार दिया है। बूरिस्टन की पुस्तक 'रिपब्लिक ऑफ टैक्नॉलोजी' में यह स्पष्ट किया गया है कि तकनीक की तानाशाही हमारी सारी सभ्यता पर हावी हो चुकी है। आज धार्मिक प्रवचन, भव्य, खर्चीले आयोजनों में बदल गए हैं जिनसे लाखों की आय होती है, सांस्कृतिक क्रिया-कलाप और प्रतीक शुद्ध मनोरंजन में बदल गए हैं।

तकनीकी निर्ममता के इस भयावह दौर में साहित्य और भाषा के लिए संकट है। संस्कृति के प्रमुख उपादान के रूप में भाषा और साहित्य, संस्कृति की तरह ही खतरे में है। आज कल्याणकारी, प्रजातांत्रिक सरकारें बाजार के हाथों की कठपुतली बनी शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात आदि से पल्ला छुड़ा रही हैं, उनकी शासन क्षमता विलुप्त हो रही है और वे निगमों, कम्पनियों और उपभोक्ताओं के बीच दलाल बनकर रह गई है। किसी दिन शांति-व्यवस्था, न्याय तथा राष्ट्रीय सुरक्षा की जिम्मेदारी भी यदि वे ठेके पर दे दें तो आश्चर्य न होगा।

साहित्य, मानव की संवेदनाओं और सपनों की रंगीनी का दर्पण होता हैं वर्तमान लाभ और लोभ की उपभोक्तावादी संस्कृति ने हमारी संवदेनाओं को भोथरा बना दिया है। जहाँ सपने मर रहे हों वहाँ साहित्य और भाषा को कब तक और कैसे जीवित रखा जा सकता है? आज का साहित्यकार पुराने साहित्यकारों की तरह अकेला, विवश और सनखी नहीं रह गया है वह बहुत चालाक, व्यवस्थित और आत्मतुष्ट हो गया है। अब शब्दों में वह रुपयों की खुशबू खोजता है इसलिए बहुराष्ट्रीय कम्पनी के लिए नारे लिखने या बेहुदा, बेतुके, धारावाहिक लिखकर पैसे कमाने को अधिक महत्त्व देता हैं इस युग में कोई प्रष्किन, गोर्की, टॉलस्टाय, चेखब, प्रेमचंद, प्रसाद या निराला पैदा होगा, इसकी सम्भावना क्षीण होती जा रही है। आज का चतुर लेखक इतना कुशल है कि जो उसका अनुभव नहीं है उसे भी वह मार्मिक ढंग से प्रस्तुत कर सकता है। आज साहित्य, राजनीति की दुम नहीं उसका बांयां हाथ बन चुका है।

आज पूरे वातावरण में मूल्यक्षरित हो रहे हैं और साहित्य मनोरंजन की सामग्री बनता जा रहा हैं संचार, माध्यमों ने एक सस्ती, बाजारना, भावनाशून्य और भड़कीली-दोगली भाषा का निर्माण किया है जो बाजार और जीवन के सतहीपन को भले ही अंकित कर दे परन्तु गहन रागात्मकता अथवा आत्मा की करुण पुकार को अंकित करने में पूरी तरह असमर्थ है। वर्तमान पीढ़ी को एस एम एस और ई-मेल की जिस भाषा का संस्कार मिल रहा है वह उनकी संवेदनाओं को भी सतही बना रही है। मूल्यहीनता, चिन्तन की अस्पष्टता और पारदर्शिता का अभाव जीवन और साहित्य में समान रूप से देखा जा सकता है।

हमारे समय में विज्ञापन, भव्य-झूठ के मिथक गढ़ रहे हैं। हम कोलगेट के साथ 'दांतों' को सुरक्षा चक्र' खरीद रहे हैं और बाल-काला करने वाले तेलों के द्वारा सफेद बाल काले कर पुनः जवान होने का नाटक कर रहे हैं। अश्लीलता और नग्नता का प्रचार पैसा कमाने का साधन पूरे मीडिया और मनोरंजन जगत के द्वारा मूलमंत्र के रूप में अपना लिया गया है फिर साहित्यकार भी पीछे क्यों रहे। प्रायोजित प्रचार द्वारा जिस साहित्य को सर्वश्रेष्ठ घोषित किया जा रहा है उसकी आयु पांच वर्ष भी नहीं है, कालजयी होना तो बहुत दूर की बात है। बाजार की तरह साहित्य भी अश्लीलता और नग्नता को प्रश्रय देता हुआ पल्प-फिक्सन, थ्रिलर्स, फार्मूला उपन्यास, अश्लील फिल्मों और निरर्थक धारावाहिकों को विकसित कर रहा हैं आज का साहित्य यथास्थिति पोषक, एक स्तरीय, एक जातीय एवं एक स्वरात्मक होने से मशीनी होता जा रहा है। शब्द की गरिमा खंडित हो गई है। हमारा सौन्दर्यबोध भौतिकवाद के धुएँ से कुलषित हो रहा है।

निश्चय ही हिन्दी-क्षेत्र अपनी आबादी और क्षेत्रफल के चलते बहुत बड़ा बाजार है। इसलिए बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपने माल की बिक्री के लिए हिन्दी का प्रयोग करने को विवश हैं और हिन्दी फैल रही है। 'हिन्दी-अंग्रेजी' मिश्रित जिस भाषा को 'हिंग्लिश' कहा जाता है, वही विज्ञापन से साहित्य तक पसर रही हैं संप्रेषण की भाषा तो यह है परन्तु संवेदन की भाषा नष्ट होती जा रही है।

वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में न तो विश्व-मानव का उज्ज्वल चेहरा उभर रहा है और न ही विश्व-संस्कृति की उदार गंगा के दर्शन हो रहे हैं जो सभी संस्कृतियों को समेट कर पवित्र बना दें। आज का बाजार सतत असंतुष्ट उपभोक्ता पैदा कर रहा है जो बर्बर भी है और भुक्खड़ भी, उससे किस संस्कृति और साहित्य की आशा करें।

हिन्दी विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला-171005

सन्दर्भ पुस्तकें

उपन्यास समय और संवेदना-विजय बहादुर सिंह।
समकालीन कथा सहित्य, सरहदें और सरोकार, रोहिणी अग्रवाल।
उत्तर आधुनिक साहित्य विमर्श, सुधीर पचौरी।
उत्तर आधुनिकता और उत्तर सरंचनावाद, सुधीर पचौरी।
मृदुला गर्ग, कलि में सत हंस (पत्रिका) सं. राजेन्द्र यादव।
बीसवीं शताब्दी की हिन्दी कहानियां, महेशदर्पण खण्ड-दस।
वन हंड्रेड इयर्स ऑफ सॉलिटड्ड, गेब्रिएल गर्सिया मर्वेज।
डैथ ऑफ अ सेल्जमैन, आर्थर मिलर।
जगदीश्वर चतुर्वेदी, उत्तर आधुनिकता।

शोध

मंजूर एहतेशाम के कथा साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर भारत की समस्याएं

● कंचन कुमारी

मंजूर एहतेशाम हिन्दी, उर्दू अदब के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। एहतेशाम के व्यवहार एवं व्यक्तित्व में ही साहित्य व संस्कृति की झलक दिखाई देती है। वह एक ऐसे समर्पित लेखक हैं जिनके व्यक्तित्व में मानवतावाद की झलक है। उनका किसी विचाराधारा की ओर झुकाव उनके मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण है। इसलिए मार्क्सवाद और गांधीवादी जैसे वैचारिक दृष्टिकोण उनकी विचारधारा रही है। मंजूर एहतेशाम का जन्म 3 अप्रैल 1948 को मध्यवर्गीय मुस्लिम परिवार भोपाल में हुआ। साहित्य की ओर झुकाव बचपन से ही था। लेखक ने बारह वर्ष की उम्र से लिखना शुरू कर दिया था।

मंजूर एहतेशाम का लेखन धरातल मध्यवर्गीय मुस्लिम समाज है। वे लेखन को साँस लेना जैसा कहते हैं। लेखन कर्म के विषय में स्वयं मंजूर एहतेशाम ही मानते हैं कि, "...........हम सब अपने-अपने इतिहास में विराजते हैं, सांझा समय की अलग-अलग अनुभूतियां हमारा प्यार, नफरत या लापरवाही सब के स्त्रोत कहीं अतीत में है, और जीते-जी जो उतना प्रत्यक्ष नहीं होता बहुत महत्वपूर्ण होते हुए भी लेखन कर्म का दायित्व, बिना शोर मचाए इसी को रेखांकित करना होता है।......" अर्थात् एक साथ व्यतीत किए गए समय के सबको अलग-अलग अनुभव होते हैं। इस अनुभव का वर्णन करना लेखन कर्म है। मंजूर एहतेशाम ने अनेक उपन्यासों और कहानियों के साथ नाटक साहित्य भी लिखा। लेकिन नाटक साहित्य उनकी स्वतन्त्र रचना न होकर उनके दोस्त सत्येन के साथ लिया गया है। उपन्यासों में 'कुछ दिन और', 'सूखा बरगद', 'दास्तान-ए-लापता', 'बशारत मंजिल','पहर ढलते,' 'मदरसा' उपन्यास शामिल है। कहानियों में दो कहानी संग्रह लिखे गए है : 'तमाशा' तथा अन्य कहानियां और 'तसबीह'। नाटक साहित्य जिसके सह लेखक सत्येन हैं, वह हैं 'एक था बादशाह' और 'गौतम'।

मंजूर एहतेशाम ने अपने कथा-साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर भारत की समस्याओं का चित्रण किया है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा था। यह समस्याऐं सामाजिक और साम्प्रदायिक थी। सामाजिक समस्या के रूप में लेखक ने भोपाल गैस त्रासदी का वर्णन किया है। साम्प्रदायिक समस्या के रूप में अंग्रेजों द्वारा बोए गए साम्प्रदायिकता के विष बीज का वर्णन किया है। भोपाल गैस त्रासदी के कारण भोपाल की जनता को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा था। इस त्रासदी के दूरगामी प्रभाव लोगों पर आज भी देखने को मिलते हैं। इसके प्रभाव के रूप में श्वास प्रणाली में समस्या, प्रजनन सम्बंधी समस्या, मृत प्रसव इत्यादि समस्या आज भी प्रभाव में है।

भारत के मध्य प्रदेश राज्य के भोपाल में दो दिसम्बर सन् 1984 को एक भयानक औद्योगिक दुर्घटना हुई इसे भोपाल गैस कांड, या भोपाल गैस त्रासदी के नाम से जाना जाता है। भोपाल स्थित यूनियन कार्बाइड नामक कम्पनी के कारखानों से एक जहरीली गैस का रिसाव हुआ जिससे लगभग पन्द्रह हजार से अधिक लोगों की जान गई तथा बहुत सारे लोग अनेक तरह की शारीरिक अपंगता से लेकर अंधेपन तक के भी शिकार हुए। भोपाल गैस कांड में मिथाइल आइसोसाइनाइट नामक जहरीली गैस का रिसाव हुआ था। जिसका उपयोग कीटनाशक बनाने के लिए किया जाता था। मरने वालों के अनुमान पर विभिन्न स्त्रोतों को अपनी-अपनी राय होने से इसमें-भिन्नता मिलती है। "फिर भी पहले अधिकारिक तौर पर मरने वालों की संख्या 2,259 थी। मध्य प्रदेश की तत्कालीन सरकार ने 1,787 की गैस से मरने वालों के रूप में पुष्टि की थी।"

भोपाल गैस त्रासदी को लगातार मानवीय समुदाय और उसके पर्यावरण को सबसे ज्यादा प्रभावित करने वाली औद्योगिक दुर्घटनाओं में गिना जाता रहा। इसलिए 1993 में भोपाल की इस त्रासदी पर बनाए गए भोपाल-अंतर्राष्ट्रीय चिकित्सा आयोग को इस त्रासदी के पर्यावरण और मानवता समुदाय पर होने वाले दीर्घकालिक प्रभावों को जानने का काम सौंपा गया था। नवम्बर 1984 तक कारखानें में कई सुरक्षा उपकरण न तो ठीक हालत में

'मदरसा' उपन्यास में मंजूर एहतेशाम ने भोपाल गैस त्रासदी का वर्णन किया है। साबिर की पत्नी मरियम कार्बाइड गैस के कारखाने में कार्य करती है। साबिर वहां पेंट का काम करने जाता था। साबिर कहता है, "यह वही टंकियाँ थीं, जिनके रिसने से, उसके भोपाल के इस दूसरे पड़ाव के दौरान हजारों की जान गई और तरह-तरह की बर्बादी हुई थी।" अभिप्राय यह है कि जब वह दूसरी बार बम्बई से भोपाल आया तो यूनियन कार्बाइड के कारखानें में पेंट का काम करता था।

थे और न ही सुरक्षा के अन्य मानकों का पालन किया गया था। स्थानीय समाचार पत्रों के पत्रकारों की रिपोर्टों के अनुसार कारखाने में सुरक्षा के लिए रखे गए सारे मैनुअल अंग्रेजी में थे जबकि कारखाने में कार्य करने वाले ज्यादातर कर्मचारियों को अंग्रेजी का बिल्कुल ज्ञान नहीं था। साथ ही पाइप की सफाई करने वाले हवा के वेन्ट ने कभी काम करना बंद कर दिया था। मिथाइलआइसो साइनेट के कूलिंग स्तर पर रखने के लिए बनाया गया फ्रीजिंग प्लांट भी पॉवर का बिल कम करने के लिए बंद कर दिया गया था।

त्रासदी के दो दिन के पश्चात ही राज्य सरकार ने राहत का कार्य आरम्भ कर दिया था। जुलाई 1985 में मध्य प्रदेश के वित्त विभाग ने राहत कार्य के लिए लगभग एक करोड़ चालीस लाख डॉलर की धन राशि लगाने का निर्णय किया। अक्टूबर 2003 के अंत तक भोपाल गैस त्रासदी राहत एवं पुनर्वास विभाग के अनुसार 534,893 घायल लोगों को व 15,310 मृत लोगों के वारिसों को मुआवजा दिया गया। मंजूर एहतेशाम ने अपने कथा-साहित्य में भोपाल गैस त्रासदी का वर्णन किया गया है।

'दास्तान-ए-लापता' उपन्यास में भोपाल गैस त्रासदी का वर्णन लेखक ने किया है। जमीर एहमद खान अपने समझ न आ सकने वाली बीमारी के इलाज के लिए डॉक्टर के पास जाता है। जमीर एहमद खान डॉक्टर को मगरमच्छ कहता था। डॉक्टर उससे भोपाल गैस त्रासदी में पीड़ितों को मिलने वाली राहत सामग्री के बारे में पूछता है, "गैस के क्लेम फॉर्म भी भरे आपने? मेडिकल चेक-अप कराया।" तात्पर्य यह है कि भोपाल गैस त्रासदी के पीड़ितों को मिलने वाले पैसे और राहत सामग्री को प्राप्त करने के लिए क्लेम प्रारूप भरना पड़ता था और डॉक्टर से जांच करवाने पर डॉक्टर द्वारा प्रभावित बताए जाने पर ही क्लेम फार्म भरे जा सकते थे। इस प्रकार गैस से प्रभावित लोगों को राहत सामग्री करने के लिए क्लेम फॉर्म, डाक्टर से जांच करवानी पड़ती थी।

जमीर एहमद खान गैस रिसाव से शहर के प्रभावित क्षेत्रों का वर्णन करता हुआ कहता है, "वैसे तो गैस रिसाव की दुर्घटना सारे शहर के लिए ही एक अभिशाप साबित हुई थी, मगर रेलवे स्टेशन और उसके नजदीकी इलाकों में रहने वाले लोग सबसे ज्यादा प्रभावित हुए या मारे गए थे।" स्पष्ट है कि भोपाल गैस त्रासदी में सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्र रेलवे स्टेशन के असपास का क्षेत्र है। कार्बाइड गैस के कारखाने से रेलवे स्टेशन की दूरी लगभग एक किलोमीटर है। इसी कारण रेलवे स्टेशन के आसपास का क्षेत्र अधिक प्रभावित हुआ।

देश में चल रही विभिन्न समस्याओं का वर्णन करता हुआ भोपाल को भी इस तरह की समस्याओं में शामिल करता हुआ लेखक कहता है, "इस सूची में गैस दुर्घटना को खासी प्राथमिकता प्राप्त हुई है।" स्पष्ट है कि देश में पंजाब, कश्मीर, असम समझौता, रामजन्म भूमि-बाबरी मस्जिद विवाद जैसी समस्याओं में देश घिरा हुआ है। लेखक भोपाल को भी इसी सूची में शामिल करता है। जमीर एहमद खान सब मसलों से महत्वपूर्ण बात साम्प्रदायिकता को बताता हुआ कहता है, "गैस और बोफोर्स इन मूंजियों के आगे कहां लगती है।" तात्पर्य यह है कि देश में इतना कुछ घटित हो रहा है देश भोपाल में घटित गैस त्रासदी से गुजर रहा है फिर भी हिन्दू और मुसलमान मसलों को लोग अधिक महत्व दे रहे हैं।

'मदरसा' उपन्यास में मंजूर एहतेशाम में भोपाल गैस त्रासदी का वर्णन किया है। साबिर की पत्नी मरियम कार्बाइड गैस के कारखाने में कार्य करती है। साबिर वहां पेंट का काम करने जाता था। साबिर कहता है, "यह वही टंकियाँ थीं, जिनके रिसने से, उसके भोपाल के इस दूसरे पड़ाव के दौरान हजारों की जान गई और तरह-तरह की बर्बादी हुई थी।" अभिप्राय यह है कि जब वह दूसरी बार बम्बई से भोपाल आया तो यूनियन कार्बाइड के कारखानें में पेंट का काम करता था। उसने उन टंकियों को पेंट किया और करवाया था। जिससे गैस रिसाव हुआ था। जो शहर के लिए एक त्रासदी बन कर रह गई थी।

साबिर भोपाल गैस को विदेशी की पैसे कमाने की नीति बताते हुए कहता है, "कार्बाइड तो पैसे बनाने का विदेशियों का 'षड्यन्त्र' था जिसने जम्हाई ली तो सैकड़ों हजारों मारे गए।" अभिप्राय यह है कि भोपाल में स्थापित कार्बाइड गैस का कारखाना अंग्रेज व्यक्ति वॉरेन एन्डर्सन का था। जिसमें गैस रिसने से लाखों लोग मारे गए। साबिर के अनुसार उन्होंने कारखाना सिर्फ पैसा कमाने के लिए लगाया था। उस कारखाना में रख-रखाव का ध्यान नहीं रखा गया था।

'जिक्रे खलील उर्फ़ दास्ताने फाख्ता' कहानी में लेखक ने गैस रिसने के पश्चात् शहर पर उसके प्रभाव का वर्णन करते हुए लिखा है, "क्या मंजर थे अगले दिनों कि बड़ी-बड़ी क्रेनों से शमशान की

आग जरतुश्त की पवित्र अग्नि की तरह बिना एक पल रुके सुलग और दहक रही थी।" स्पष्ट है कि भोपाल गैस त्रासदी के बाद शहर की दर्दनीय स्थिति थी। इंसान के साथ जानवर भी गैस त्रासदी का शिकार हुए थे। शमशान घाट में शवों को जलाने के लिए जगह नहीं थी इतनी संख्या में लोगों की मौत हो गई थी। मरे हुए जानवरों ट्रकों और ट्रोलियों में ले जाया जा रहा था।

'राहत' कहानी में भोपाल गैस त्रासदी में राहत सामग्री पाने के लिए मिलने वाले मुआवजा के संबंध में कथावाचक कहता है, "लेकिन एक मौत के शहर में छोटे-छोटे आर्थिक फायदों की खातिर मौत के सर्टिफिकेट से डाक्टर के पर्चे और जमीन ज्यादाद पर नाजायज कब्जे तक का बाजार।" कहा जा सकता है कि भोपाल गैस त्रासदी से कुछ मौका परस्त लोगों ने आर्थिक फायदा उठाना भी शुरू कर दिया था। डाक्टर से सर्टिफिकेट बनवाना, डाक्टर से गैस से प्रभावित होने की रिपोर्ट लिखवाना, इस त्रासदी के दौर में जमीन जायदाद पर नाजायज कब्जा करना लोगों की लालची और संवेदनहीनता वाली मानसिकता का पता चलता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि भोपाल गैस त्रासदी का सफल चित्रण मंजूर एहतेशाम ने अपने कथा-साहित्य में किया है। 'दास्तान-ए-लापता' उपन्यास में भोपाल गैस के रिसाव का वर्णन करते हुए इसके शहर के क्षेत्रों पर प्रभाव और सबसे अधिक रेलवे स्टेशन पर इसके प्रभाव को बताया गया था। 'मदरसा' उपन्यास में टंकियों से गैस रिसने और इसको कारखाना के मालिक को पूंजीवादी बताते हुए गैस दुर्घटना को दोषी बताया गया है। 'जिक्रे खलील उर्फ दास्ताने फाख्ता' कहानी में भोपाल गैस त्रासदी के पश्चात् इसका शहर पर प्रभाव का वर्णन है। 'राहत' कहानी में त्रासदी में राहत के नाम पर मिलने वाली मुआवजे की धोखाधड़ी का वर्णन किया गया है। कहा जा सकता है कि जब भी कोई त्रासदी या दुर्घटना होती है, उसके बाद जांच में लापरवाही के मामले सामने आते हैं। दुर्घटना घटित होती है तो लापरवाही के मामले सामने आएंगे, अगर कोई दुर्घटना घटित न हुई तो सभी प्रकार की लापरवाही पर पर्दा डाल दिया जाता है। कार्बाइड गैस का कारखाना किसी एक के अधिकार में था, तो उसे प्रत्यक्ष रूप दोषी करार दिया गया, अगर ऐसा कोई कार्य जो सरकारी तन्त्र में हो तो सामूहिक रूप से इसमें लोग दोषी पाए जाते है। सामूहिक रूप में दोषी होने में न तो आत्मग्लानी होती है और दोषारोपण एक-दूसरे पर किया जा सकता है। भोपाल गैस त्रासदी की दुर्घटना का इस प्रकार से उछाला जाना क्या किसी एक के मालिकाना हक के कारण उस पर प्रत्यक्ष रूप से आसानी से आरोप लगाना है? हाँ यही हुआ है भोपाल गैस त्रासदी के साथ भी। सरकारी तंत्र से कितनी बार इस प्रकार की लापरवाही होती है। मामला कुछ दिन उछलता है सरकार के खिलाफ आप कुछ कर सकने में सक्षम नहीं होते है तो मामला उसी प्रकार बंद हो जाता है।

साम्प्रदायिक समस्या के रूप में लेखक ने बाबरी विध्वंस अर्थात् राम जन्मभूमि विवाद को वर्णित किया है। अंग्रेजों ने भारत में अपने उपनिवेश स्थापित करते हुए साम्राज्यवादी नीति को अपनाते हुए 'फूट डालो और शासन करो' की नीति का सहारा लिया। इस नीति के तहत अंग्रेजों ने हिन्दू और मुस्लमानों में फूट डाल दी। परिणाम स्वरूप भारत में साम्प्रदायिक समस्या का जन्म हुआ। अंग्रेजों के भारत छोड़ने के पश्चात् भी इस समस्या का प्रभाव उत्तर उपनिवेशवादी भारत में देखने को मिलता है। जिसका वर्णन लेखक ने अपने लेखन में किया है। बाबरी विध्वंस अर्थात् राम जन्मभूमि विवाद का सीधा संबध हिन्दुओं के स्वाभिमान व मुसलमानों के स्वाभिमान से है। इस टकराव का ही परिणाम है कि आज पूरे देश में साम्प्रदायिकता की आग लगी है। यद्यपि साम्प्रदायकिता की आग लगाने वाले को भी इस बात का एहसास नहीं होता होता कि वह अपने ही घर में अपने ही भाई को जला रहा है क्योंकि दंगाई किसी जाति या धर्म के नहीं होते उनका धर्म या मजहब दंगा भड़काना ही होता है। राम और खुदा दोनों हमारी संस्कृति के पर्याय हैं, जिनका विरोध न हिन्दू करते हैं न मुसलमान, न ही उन्हें करना चाहिए। बाबर एक विदेशी आक्रमणकारी था तथ्य भी इतिहास द्वारा प्रमाणित है। फिर राम, बाबर को लेकर तो कोई मुद्दा बनता ही नहीं।

अयोध्या वह भूमि है जो युद्ध के योग्य नहीं है। इसका शाब्दिक अर्थ भी इसी प्रकार से है- 'न योद्धा शक्या सा भूमि अयोध्या' अर्थात् जो भूमि युद्ध करने योग्य नहीं है, अयोध्या है। वह भूमि जो कभी युद्ध से जीती नहीं जा सकती अयोध्या है। परन्तु इसका अर्थ अतियोध्या होता जा रहा है क्योंकि इस विवाद को लेकर अब तक 73 युद्ध हो चुके हैं। हिन्दू यह दावा पेश करते हैं वर्तमान में जहां बाबरी मस्जिद है वहां पहले राम मन्दिर था। वहां राम की मूर्ति थी। वहाँ राम जन्म भूमि है। लेकिन मुस्लिम यह दावा प्रस्तुत करते हैं कि, "तुजुके-बाबरी या बाबर की संक्षिप्त जीवनी सहित इतिहास की अन्य प्रामाणिक पुस्तकों से यह

'राहत' कहानी में भोपाल गैस त्रासदी में राहत सामग्री पाने के लिए मिलने वाले मुआवजा के संबंध में कथावाचक कहता है, "लेकिन एक मौत के शहर में छोटे-छोटे आर्थिक फायदों की खातिर मौत के सर्टिफिकेट से डाक्टर के पर्चे और जमीन जायदाद पर नाजायज कब्जे तक का बाजार।" कहा जा सकता है कि भोपाल गैस त्रासदी से कुछ मौका परस्त लोगों ने आर्थिक फायदा उठाना भी शुरू कर दिया था।

पुर्णतया सिद्ध होता है कि बाबर ने अयोध्या में कभी कोई मंदिर नहीं बनवाया था और यह कि बाबरी मस्जिद नामक विवादास्पद मस्जिद का निर्माण बाबर के आदेश पर जमीन के खाली टुकड़े पर किया गया था और उसे ही 450 वर्षो से बाबरी मस्जिद के नाम से जाना जाता रहा है। अयोध्या में किसी भी विध्वंस का और इसके खण्डर पर किसी मस्जिद के निर्माण का कहीं कोई उल्लेख नहीं है। आइन-ए-अकबरी या आलमगीर नामा में भी नहीं।" इस प्रकार मुस्लिम अनेक प्राचीन धार्मिक ग्रंथों से सत्यता प्रमाणित करते हैं कि बाबरी मस्जिद के स्थान पर पहले कोई भी हिन्दू मंदिर नहीं था। मंजूर एहतेशाम ने अपने उपन्यासों में बाबरी विध्वंस के कारण उत्पन्न साम्प्रदायिक दंगों को वर्णित किया है।

'दास्तान-ए-लापता' उपन्यास में देश में राजनीतिक समस्याओं का वर्णन करते हुए बाबरी विध्वंस का भी वर्णन किया है, "तो पंजाब और कश्मीर, असम-समझौता, राम जन्म भूमि-बाबरी मस्जिद विवाद और देश के लिए समान पर्सनल लॉ की मांग।" तात्पर्य यह है कि आजादी के बाद देश अनेक राजनीतिक, साम्प्रदायिक समस्याओं से जूझ रहा हैं आजादी के साथ देश ने एक साथ कई समस्याओं का सामना किया है। जमीर एहमद खान अपने दोस्तों के साथ बैठकर कम्युनिज्म की बातें कर रहे हैं। वह कह रहे हैं कि रूस और यूरोप ने तो पुराने हथियारों, पुरानी दवाओं की तरह कम्यूनिज्म को बाहर निकाल फैंका है। हम लोग ही उसका स्वागत करेंगें। पुरानी चीजों का ग्रहण करने में भारतीय सबसे आगे है। जब दुनिया में लोग उन चीजों का उपयोग कर उन्हें फैंक चुके होते हैं तब हम उस चीज को ग्रहण करना शुरू करते हैं, इसी संदर्भ में जमीर एहमद खान कहता है, "मौजूदा हालत में हिन्दुस्तान में। जब पर्सनल-लॉ और बाबरी मस्जिद खतरे का डंका पीट रहे हैं......।" कहने का अभिप्राय है कि प्राचीनता, स्वाभिमान के नाम पर विवाद खड़ा करना कुछ लोगों का उद्देश्य रहा है। इस प्राचीनता के विवाद के विषय में जमीर अहमद खान कहता है,

'दास्तान-ए-लापता' उपन्यास में देश में राजनीतिक समस्याओं का वर्णन करते हुए बाबरी विध्वंस का भी वर्णन किया है, "तो पंजाब और कश्मीर, असम-समझौता, राम जन्म भूमि-बाबरी मस्जिद विवाद और देश के लिए समान पर्सनल लॉ की मांग।" तात्पर्य यह है कि आजादी के बाद देश अनेक राजनीतिक, साम्प्रदायिक समस्याओं से जूझ रहा है। आजादी के साथ देश ने एक साथ कई समस्याओं का सामना किया है।

"भगवानों में भी बाजी मार ले जाने की होड़ लगी हुई है।" तात्पर्य यह है कि अयोध्या राम जन्म भूमि और बाबरी मस्जिद के विवाद का विषय मस्जिद के स्थान पर राम जन्म भूमि है, वहाँ राम का मंदिर था। बाबर ने राम मंदिर को तुड़वा कर बाबरी मस्जिद बनवाई थी। इस प्रकार प्राचीनता के मामले में भगवान भी होड़ में लगे हुए हैं।

साम्प्रदायिकता को लेकर चल रही बहस में जमीर एहमद खान का दोस्त कहता है, "यह जो मस्जिद मंदिर का टंटा पनपना शुरू हुआ है, आप समझते हैं इतनी आसानी से हल हो जाएगा?" अभिप्राय यह है कि साम्प्रदायिकता के विवाद जल्दी सुलझते नहीं है। इन्हें सुलझाने में काफी समय लगता है। यदि साम्प्रदायिकता के मामले सुलझने भी लगे तो धार्मिक, ठेकेदार धर्म पर अपना आधिपत्य बनाए रखने के लिए मामले को और अधिक बढ़ावा देते हैं और राजनीतिज्ञ अपने वोटों व शासन करने की नीति के तहत साम्प्रदायिक मामलों को तूल देते रहते हैं।

जमीन एहमद खान 1992 की बाबरी मस्जिद की घटना का प्रभाव अपने सपने के माध्यम से बताता हुआ कहता है, "कहीं आग लगी है, टी. वी. पर जो दिल चाहता है बताते छिपाते हैं, ट्रांजिस्टर पर बी. बी. सी. की खबर है, सारा मुल्क जल रहा है। सैकड़ो मारे जा चुके हैं।" स्पष्ट है कि बाबरी मस्जिद के प्रभाव लोगों के मन में इस तरह है कि सपने में भी इस हादसे का प्रभाव है। हर तरफ साम्प्रदायिक दंगों से लोग शारीरिक रूप से तो प्रभावित है, मानसिक रूप से ज्यादा प्रभावित हो रहे हैं।

'बशारत मंजिल' उपन्यास में बाबरी मस्जिद के टूटने और राम मंदिर के निर्माण कार्य का वर्णन किया गया है। कथावाचक अपने चाचा तंजा के साथ उनके दोस्त प्रयाग बाबू के साथ बातचीत कर रहे होते हैं। कथावाचक वर्णन करता हुआ कहता है, "यह सन् 1993 की बात है जब मस्जिद और सोवियत यूनियन दोनों टूट चुके थे और साफ नजर आने लगा था कि मुल्क ही नहीं, सारी दुनिया एक नए बदलाव की ओर बढ़ रही थी।" अभिप्राय यह है कि 1992 ई. में चले बाबरी मस्जिद विवाद के तहत 1993 में बाबरी मस्जिद को गिरा दिया गया था। देश में बदलाव यह हुआ था कि लोगों के मन में साम्प्रदायिक भावना और अधिक भड़क गई थी। उसी वर्ष सोवियत यूनियन भी अलग हो गया था और विभाजित होकर एक नए अस्तित्व में आ गया था। तंजा और प्रयाग बाबू की बातचीत हिन्दू और मुस्लिम को लेकर हो रही थी। तंजा के विवाह न करने पर प्रयाग बाबू यह कहते हैं कि इन्हें यह डर है कि इनकी संतानों का इस देश में क्या होगा। तंजा गुस्सा हो गए थे। प्रयाग बाबू ने मजाक में शराब पीते हुए खुदा हाफिज कहते हैं। तंजा चाचा के मना करने पर प्रयाग बाबू कहते हैं, "नहीं कहा करेंगे, अब शराब शुरू करते हुए जय श्री राम बोलने लगेंगे। सोच लो, उस पर भी एतराज तुम्हें ही होगा। कहोगे यह भी

अयोध्या में मंदिर बनवाने के काम में लग गए हैं।" स्पष्ट है कि इस प्रकार अनजाने ही बातचीत में हिन्दू मुस्लिम विषय आ जाते हैं। देश उस समय साम्प्रदायिकता की आग में जल रहा थी तो लोगों के विषय भी साम्प्रदायिक हो जाते हैं।

'मदरसा' उपन्यास में बाबरी मस्जिद को लेकर चले विवाद के संदर्भ में साबिर कहता है, "अयोध्या में राम के नाम पर गरमाते मामले में बाबर किस हद तक दोषी हैं?" कहने का अभिप्राय यह है कि बाबर ने इस मस्जिद का निर्माण 1526-1530 ई0 के बीच करवाया था। अब 1992 में इस मामले को लगभग 450 सालों बाद विवाद का कारण बनाया जा रहा है। शायद उस समय तक बाबर ने यह नहीं सोचा होगा कि इस मस्जिद का निर्माण आगे जाने वाली पीढ़ियों में साम्प्रदायिक दंगे पैदा कर देगा। देश में चल रहे इस साम्प्रदायिक विवाद को लेकर रोज की खबरों के विषयों में साबिर कहता है रोज उद्योगपतियों या समाचार-पत्रों पर छापे पड़ने की खबरें आ रहीं थी और दूसरी खबर यह थी कि, "या राम जन्म भूमि-बाबरी मस्जिद विवाद को लेकर, हिन्दू-मुसलमान के बीच गहराता तनाव और टकराव की।" इस प्रकार कहा जा सकता है कि राम जन्मभूमि और बाबरी मस्जिद विवाद से लोगों की मानसिकता पर गहरा असर हुआ था। रोज इस तरह की खबरें लोगों की मानसिकता को प्रभावित करती हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि राम जन्मभूमि और बाबरी मस्जिद विवाद देश में साम्प्रदायिकता को बढ़ाने का कार्य कर रही हैं इस बात का वर्णन लेखक ने अपने उपन्यासों के माध्यम से वर्णित किया है। 'दास्तान-ए-लापता' उपन्यास में बाबरी मस्जिद का वर्णन करते हुए साम्प्रदायिकता को बढ़ाने वाले लोगों द्वारा इस विवाद को और अधिक बढ़ावा देने का वर्णन किया गया है। इस विवाद ने लोगों को मानसिक रूप से प्रभावित किया है। 'बशारत मंजिल' उपन्यास में प्रयाग बाबू द्वारा साम्प्रदायिकता के कारण भारत में मुसलमानों के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगाए जाने का वर्णन है। 'मदरसा' उपन्यास में अयोध्या के मामले में बाबर के दोषी होने या न होने पर सवाल किया गया है। सवाल बाबर के दोषी होने या न होने का नहीं है बल्कि लोगों का आज के आधुनिक युग में भी उनकी मानसिकता का है। लोग चार सौ पचास वर्षो के बीत जाने पर उसी मानसिकता में जी रहे हैं। बाबर ने उस समय मंदिर को तुड़वाकर मस्जिद बनाई थी (जैसा कि हिन्दू आरोप लगाते हैं) बाबर की वह मानसिकता, धार्मिक संकीर्णता क्या आज भी चार सौ पचास साल पूरे करने पर आज के लोगों के भी वही हैं। लोगों की धार्मिक विषयों के संबंध में मानसिकता 450 वर्षो वाली ही है। आज के युग में जहां धर्म को तार्किक दृष्टिकोण से देखने की जरूरत है। तकनीक जहां इतनी विकसित हो गई है कि हम दूसरे ग्रहों में जाकर मानव के निवास के लिए स्थान खोज रहे हैं वहीं भारत में लोग धर्म के विषय में 450 वर्ष की स्थिति में जी रहे है यह विकास का नहीं बल्कि ह्मस का प्रतीक है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मंजूर एहतेशाम अपने कथा-साहित्य के माध्यम से स्वतन्त्रता के पश्चात भारत के समक्ष आयी सामाजिक, साम्प्रदायिक समस्याओं का वर्णन करने में पूर्णतः सफल हुए है। स्वतन्त्रता के पश्चात भोपाल गैस त्रासदी जैसी सामाजिक और बाबरी मस्जिद जैसी साम्प्रदायिक समस्या का भारत को सामना करना पड़ा है। आजादी से पहले भारत परतन्त्रता से ग्रसित था और अंग्रेजी शासन की नीतियों से परेशान था। आजादी के बाद अंग्रेजों द्वारा भारत को दो भागों में विभाजित कर साम्प्रदायिकता के बीज बो दिए गए जिसका परिणाम बाबरी-मस्जिद के विवाद के रूप में देख रहे हैं।

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल, शिमला, हि. प्र. 171005, मो. 94185-28952

संदर्भ

1 अन्यथा (स.) कृष्ण किशोर, अक्तूबर-दिसम्बर 2012, पृ0 44
2 मंजूर एहतेशाम, दास्तान-ए-लापता, पृ0 15
3 वही, पृ0 73
4 वही, पृ0 84
5 वही, पृ0 109
6 मंजूर एहतेशाम, मदरसा, पृ0 121
7 वही, पृ0 240
8 मंजूर एहतेशाम, सम्पूर्ण कहानियां (जिक्रे खलील उर्फ दास्ताने फाख्ता), पृ0 157
10 मंजूर एहतेशाम, सम्पूर्ण कहानियां, (राहत), पृ0 185
11 रमेशचन्द्र गुप्त, जन्मभूमि विवाद, पृ0 73
12 मंजूर एहतेशाम, दास्तान-ए-लापता, पृ0 84
13 वही, पृ0 87
14 वही, पृ0 87
15 वही, पृ0 109
16 वही, पृ0 109
17 मंजूर एहतेशाम, बशारत मंजिल, पृ0 227
18 वही, पृ0 230
19 मंजूर एहतेशाम, मदरसा, पृ0
20 वही, पृ0 239

आलेख (पुण्यतिथि 9 मई)

ऐ मेरे दिल कहीं और चल... तलत महमूद

● शशिभूषण शलभ

सन् 1952, फिल्म 'दाग' का एक गीत देश की गली-गली में गूंजा था... ऐ मेरे दिल कहीं और चल... गीत प्रत्येक नौजवान के मुंह से सुनाई देता था। फिल्म 'दाग' के इस गीत को दिलीप कुमार पर फिल्माया गया था। इस गीत के दर्दभरे स्वर वर्षों तक फिजाओं में गूंजते रहे थे। तलत महमूद ने उस दर्दभरे गीत को स्वर दिए थे।

तलत महमूद आज हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनके गीत आकाशवाणी और रिकार्डों के माध्यम से सदैव गूंजते रहेंगे। तलत महमूद का जन्म 24 फरवरी, 1924 को लखनऊ के एक मध्यवर्गीय परिवार में हुआ था। किशोरावस्था में तलत महमूद ने गीतों को स्वर देना शुरू कर दिया था। 16 वर्ष की आयु में आकाशवाणी, लखनऊ से गाना शुरू कर दिया था। आकाशवाणी से मिर्जा गालिब, दाग और जिगर जैसे बड़े शायरों के कलाम तलत महमूद के स्वर में गूंजने लगे थे।

सन् 1944 में तलत महमूद कलकत्ता (अब कोलकाता) चले गए थे। कलकत्ता में गैरफिल्मी ग़ज़लों से उन्होंने गायन प्रारंभ किया। यही नहीं, फिल्मों में अभिनय करने और गायन में स्वर देने के लिए तलत महमूद ने अपना नाम तपन कुमार परिवर्तित कर लिया था। तब तलत महमूद ने तपन कुमार के नाम से रवींद्रनाथ टैगोर की कहानी पर निर्मित 'समाप्ति' फिल्म में अभिनय किया था।

सन् 1944 में तलत महमूद की गैरफिल्मी ग़ज़लें बहुत लोकप्रिय हुईं। ग़ज़लें थीं- तस्वीर तेरी दिल मेरा बहला न सकेगी.. सब दिन एक समान नहीं... कलकत्ता में गायन के साथ तलत महमूद ने सन् 1945 में 'राज लक्ष्मी' फिल्म में, सन् 1947 में 'तुम और मैं' का अभिनय किया। इन फिल्मों में तलत महमूद नायक बने और उस समय की प्रसिद्ध अभिनेत्री कानन बाला नायिका थी।

उस समय मित्रों ने उन्हें मुंबई जाने की सलाह दी और वह मुंबई चले गए। कुछ दिन संघर्ष करने के बाद मुंबई में भी तलत महमूद को सफलता मिली। उस समय के प्रसिद्ध संगीतकार अनिल विश्वास ने उन्हें फिल्म 'आरजू' में प्लेबैक का अवसर दिया। रातोंरात तलत महमूद के स्वर में 'ऐ दिल मुझे ऐसी जगह ले चल जहां कोई न हो...' इस गीत से तलत महमूद को इतनी लोकप्रियता मिली कि फिर उन्होंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

तलत महमूद ने दिलीप कुमार, देव आनंद, राजकपूर से लेकर सुनील दत्त, मनोज कुमार, भारतभूषण आदि सभी कलाकारों के लिए गीत गाए। सभी प्रसिद्ध पार्श्व गायिकाओं शमशाद बेगम, सुरैया, लता मंगेशकर, आशा भौंसले, गीता दत्त आदि के साथ गीत गाए। गीतों को स्वर देने के साथ समय-समय तलत महमूद फिल्मों में अभिनय भी करते रहे।

सन् 1951 में बनी फिल्म 'आराम' में तलत महमूद ने सबसे पहले अभिनय किया। सन् 1953 में तलत महमूद के अभिनय की फिल्म 'दिले नादान' प्रदर्शित हुई। सन् 1954 में मिर्जा गालिब, डाक बाबू वारिस, सन् 1957 में एक गांव की कहानी, सन् 1958 में सोने की चिड़िया, मालिक और लाला रुख फिल्मों में अभिनय किया। सोने की चिड़िया फिल्म में नूतन ने उनके साथ अभिनय किया था।

सोने की चिड़िया फिल्म में तलत महमूद ने गाने भी गाए थे। प्यार पर बस तो नहीं है मेरा लेकिन फिर भी तू बता दे कि तुझे प्यार करूं या न करूं... इस फिल्म में तलत महमूद ने खलनायक की भूमिका निभाई थी। सन् 1945 से सन् 1986 तक लगातार तलत महमूद फिल्मों में गीत गाते रहे लेकिन धीरे-धीरे संगीत बदलता रहा। गीत भी बदलते रहे और तलत महमूद को नए

ग़ज़लें

● धर्मेंद्र गुप्त 'साहिल'

एक

कब कहा आज, कल चाहिए
जिसमें जी लूं वो पल चाहिए

तुमने पौधा लगाया अभी
और अभी तुमको फल चाहिए

सड़ चुका है सरोवर का जल
उनको खिलता कमल चाहिए

पान अमृत का जब कर लिया
कह रहा है गरल चाहिए

दिल की मिट्टी करो खूब नम
गर ग़ज़ल की फ़सल चाहिए

दो

किस-किसको समझाऊंगा
मैं पागल हो जाऊंगा

मैं न सफाई दूंगा कोई
जहर भले पी जाऊंगा

जितना मुझमें डूबोगे
उतना मैं गहराऊंगा

अंधों की बस्ती में किसे
आईना दिखाऊंगा

ठीक रहेगा हां इतना
इतना दुख सह पाऊंगा

कड़वा सच कहता हूं मैं
कैसे उनको भाऊंगा

तीन

वो जो सबसे भिन्न है
वो ही सबसे खिन्न है

अंश है जो हर वही
कैसे कह दूं भिन्न है

उनके हाथों जो बना
उनके हाथों छिन्न है

सच, सियासत आज की
तक-धिना-धिन-धिन है

कथ्य भी कुछ है उदास
शिल्प भी कुछ खिन्न है

चार

मैं तो बस ये सोच रहा हूं
क्या मैं खुद अपने जैसा हूं

गूंगे सब नाराज़ हैं मुझसे
सन्नाटा जो चीर रहा हूं

चिनगारी पैदा होती है
जब मैं खुद से टकराता हूं

शहर से इक चिट्ठी आई थी
अब तक उसको बांच रहा हूं

वक्त मुझे सुनने में लगेगा
मैं इक लम्बा अफ़साना हूं

सदियों का इतिहास समेटे
'साहिल' मैं बस एक लमहा हूं

पांच

कुछ न ले जाना है फिर भी
दिल को सब पाना है फिर भी

खेलता है पत्थरों से
आईना-खाना है फिर भी

आग, जल, भू, वायु, नभ में
कल बिखर जाना है फिर भी

उससे नादानी हुई है
वो बहुत दाना है फिर भी

साज़ सारे बेसुरे हैं
हमको तो गाना है फिर भी

संपादक : समकालीन स्पंदन,
के 3/10ए मां शीतला भवन, गायघाट,
वाराणसी-221 001, मो. 0 89350 65229

जमाने के गीतों को गाना मुश्किल हो गया। लगभग 8,000 गीतों को पार्श्व स्वर देने के बाद तलत महमूद गायन से अलग होते चले गए। 1964 में फिल्म 'हकीकत' और 'जहांआरा' के गीतों के साथ तलत महमूद बुलंदी पर थे, उस समय के बदलते संगीत और गीतों को देखते हुए तलत महमूद पार्श्व गायन से अलग होते चले गए। जब एक पार्टी में पार्श्व गायन से एकदम अलग होने का कारण पूछा गया तो उन्होंने उत्तर दिया, 'हिंदी सिनेमा उस समय परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था। इस दौर के फिल्मकारों के लक्ष्य बदल गए थे। नई शैली उभर रही थी, जिसमें फिल्मकारों के लिए 'बॉक्स आफिस' महत्त्वपूर्ण हो गया था। युसूफ साहब (दिलीप कुमार) ने अपने को वक्त के साथ बदल लिया लेकिन मैं अपने आपको नए माहौल में नहीं रमा सका। औरों की तरह बदलना कुबूल नहीं हुआ।'

फिल्म 'जहांआरा' ने तलत महमूद में आखिरी बार गाया। फिल्म 'लव एंड गॉड' में भी कुछ गीत गाए लेकिन यह फिल्म पूरी नहीं बन सकी। सन् 1964 में चांदी की दीवार, हकीकत, जहांआरा, मैं सुहागन हूं, शगुन और सुहागरात फिल्मों में गीत गाए। तलत महमूद ने बंगाली, असमी, भोजपुरी, मलयालम, मराठी, पंजाबी और सिंधी फिल्मों में भी बहुत से गीत गाए।

सन् 9 मई, 1988 में तलत महमूद का निधन हुआ लेकिन 'ऐ मेरे दिल मुझे ऐसी जगह... (आरजू), मिलते ही आंखें दिल हुआ. .., दुनिया बदल गई मेरी... (बाबुल), मेरा जीवन साथी बिछुड़ गया. .. (बाबुल), जाएं तो जाएं कहां... (टैक्सी ड्राइवर), ऐ मेरे दिल कहीं और चल' (दाग), जलते हैं जिसके लिए... (सुजाता), याद आने वाले फिर याद... (अनमोल रतन), ये हवा ये चांदनी...(संगदिल), फिर वही शाम वही गम... (जहांआरा), अंधे जहान के अंधे रास्ते. .. (पतिता), मेरी याद में तुम न आंसू बहाना... (मदहोश), आसमां वाले तेरी... (लैला मजूनं), आंसू समझ के क्यूं मुझे... (छाया) और अनेक गीतों में तलत महमूद के स्वर उन्हें सदैव अमर रखेंगे।

ए.डब्ल्यू.एच.ओ. टाउनशिप, ब्लॉक 4आर, फ्लैट नं. 904,
सेक्टर सीएचआई-1, पॉकेट 5, गुरजिंदर विहार, ग्रेटर नोएडा,
यूपी-201 308, मो. 0 84470 13666

शिक्षा का सिरमौर : हिमाचल प्रदेश

● प्रेम ठाकुर

हिमाचल प्रदेश ने शिक्षण संस्थानों के सुदृढ़ नेटवर्क के माध्यम से पिछले कुछ वर्षों के दौरान शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं। राज्य ने प्रारम्भिक शिक्षा में नामांकन दर लगभग 100 प्रतिशत हासिल कर ली है और अब यह माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के निर्धारित लक्ष्य को वर्ष 2017 तक हासिल करने की ओर निरंतर अग्रसर है।

वर्तमान प्रदेश सरकार राज्य में 6 से 14 वर्ष आयु वर्ग के सभी बच्चों को गुणात्मक प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करने के प्रयास कर रही है। इसके लिये दूर दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में नये प्राथमिक पाठशाला खोले जा रहे हैं और वर्तमान पाठशालाओं को स्तरोन्नत किया जा रहा है। प्रदेश सरकार, मानदण्डों के अनुरूप राज्य के सभी प्रारंभिक स्कूलों में अध्यापकों के रिक्त पदों को भरने के लिये कटिबद्ध है जिसके लिये शिक्षा विभाग में अध्यापकों की विभिन्न श्रेणियों के पदों पर हजारों नियुक्तियां की गई हैं।

राज्य सरकार राजकीय पाठशालाओं के विद्यार्थियों को हिमाचल पथ परिवहन निगम की बसों में स्कूल तक पहुंचने व वापिस घर तक निःशुल्क परिवहन सुविधा प्रदान कर रही है। राज्य में यह योजना पहली अप्रैल, 2013 से कार्यान्वित की जा रही है।

प्रदेश सरकार ने अपने वर्तमान कार्यकाल के दौरान प्रशिक्षित स्नातक अध्यापकों के 1522 पदों पर नई नियुक्तियां की हैं। अनुबंध पर कार्यरत 1497 टीजीटी अध्यापकों की सेवाएं पांच वर्ष का कार्यकाल पूरा करने पर नियमित की हैं। वर्ष 2015-16 में 684 पैरा अध्यापकों (टीजीटी) की सेवाएं भी नियमित की गई हैं। पीटीए पर कार्यरत 919 टीजीटी अध्यापकों की सेवाओं को अनुबन्ध पर परिवर्तित किया है जबकि 356 जेबीटी और 59 सी एण्ड वी अध्यापकों को पदोन्नत किया गया है।

इसी अवधि के दौरान सी. एण्ड वी. अध्यापकों के 847 पदों को नई नियुक्तियों अथवा बैच आधार पर भरा गया है। वर्ष 2015-16 के दौरान इस श्रेणी के 695 पैरा अध्यापकों की सेवाएं नियमित की गई हैं। पीटीए/जीआईए पर कार्यरत सी. एण्ड वी. श्रेणी के 2307 अध्यापकों की सेवाएं अनुबंध पर की गई हैं। इसी श्रेणी के 97 अनुबन्ध अध्यापकों को नियमित करने के साथ-साथ सीधी भर्ती से जेबीटी के 1197 पद भरे गए हैं।

स्नातक अध्यापकों की पीटीए ग्रांट 6950 रुपये से बढ़ाकर 12510 रुपये तथा सी एण्ड वी अध्यापकों की ग्रांट 6750 रुपये से 12150 रुपये मासिक की गई है। प्राथमिक सहायक अध्यापकों का मासिक मानदेय 7500 रुपये से बढ़ाकर 8900 रुपये करने के साथ-साथ प्रारम्भिक शिक्षा में जेबीटी से मुख्याध्यापक पदोन्नत होने पर एक वेतन वृद्धि को मंजूरी प्रदान की गई है।

वर्तमान राज्य सरकार ने सेवा से बर्खास्त किये गए पीटीए अध्यापकों की सेवाओं को पीटीए नीति के अनुरूप बहाल करने का निर्णय लिया था जिसके अनुसार इन अध्यापकों के पदों को भरा हुआ माना गया।

राज्य में पिछले तीन वर्षों के दौरान 210 प्राथमिक पाठशालाओं को माध्यमिक पाठशाला के रूप में स्तरोन्नत करने के अलावा 121 नये प्राथमिक स्कूल खोले गए। नये स्तरोन्नत

प्रारंभिक स्तर पर विद्यार्थियों के अध्ययन स्तर में सुधार एवं गुणात्मकता लाने के उद्देश्य से बाह्य रूप से पांचवीं तथा आठवीं कक्षाओं का आंकलन एवं मूल्यांकन करने का निर्णय लिया गया है। सभी अंशकालीन कर्मियों की सेवाएं 31 मार्च, 2014 को आठ वर्ष का कार्यकाल पूरा करने के उपरांत दैनिक भोगी कर्मियों में परिवर्तित की गई।

किये गए स्कूलों के लिये विभिन्न श्रेणियों के 830 पदों को सृजित किया गया।

प्रारंभिक स्तर पर विद्यार्थियों के अध्ययन स्तर में सुधार एवं गुणात्मकता लाने के उद्देश्य से बाह्य रूप से पांचवीं तथा आठवीं कक्षाओं का आंकलन एवं मूल्यांकन करने का निर्णय लिया गया है। सभी अंशकालीन कर्मियों की सेवाएं 31 मार्च, 2014 को आठ वर्ष का कार्यकाल पूरा करने के उपरांत दैनिक भोगी कर्मियों में परिवर्तित की गई।

राज्य की विभिन्न पाठशालाओं में केन्द्रीय/राज्य की विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं के अन्तर्गत अंशकालीन जलवाहकों की नियुक्ति के लिये वांछित आय प्रमाण पत्र के लिये अधिकतम आय की सीमा को 12 हजार से बढ़ाकर 35 हजार रुपये किया गया है जिससे और अधिक लोग इन पदों के लिये पात्र होंगे।

अंशकालीन जलवाहकों का मासिक मानदेय पहली अप्रैल, 2014 में 1300 से बढ़ाकर 1500 रुपये तथा पहली अप्रैल, 2015 में इसे 1700 रुपये किया गया। राजकीय प्राथमिक पाठशालाओं में अंशकालीन जलवाहकों के 829 पदों को भरा गया। प्रारंभिक शिक्षा विभाग में आउटसोर्स आधार पर क्लर्क-कम-डाटा एंट्री आप्रेटर की 164 नियुक्तियां की गई हैं। अनुबन्ध पर कार्यरत कर्मचारियों के नियमितिकरण के लिये कार्यकाल को संशोधित कर छह वर्ष से पांच वर्ष किया गया है।

राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त करने वाले अध्यापकों को सेवानिवृति के उपरांत सेवा विस्तार प्रदान किया जा रहा है।

सहायक लोक संपर्क अधिकारी, सूचना एवं जन संपर्क
निदेशालय, शिमला-171 002

जरूरतमंदों के लिए आशा की किरण मुख्य मंत्री राहत कोष

● पी.एच.एस. मालिनी

मुख्यमंत्री राहत कोष गरीब एवं बेसहारा लोगों के लिये आपात में मददगार बना है। मुख्यमंत्री राहत कोष से वित्तीय सहायता मुख्यमंत्री के विवेक पर मानवीय आधार पर प्रदान की जा रही है। इस निधि में अंशदान के लिए 'मुख्यमंत्री राहत कोष' हिमाचल प्रदेश, शिमला-171002 के नाम चेक, बैंक ड्राफ्ट बनाकर या नकद अथवा हि.प्र. राज्य सहकारी बैंक के खाता संख्या 4060100315 (आईएफएससी कोड-वाईईएसबी.एचपीबी.6) में इलेक्ट्रॉनिक हस्तांतरण से किया जा सकता है। इस निधि में किया गया अंशदान आयकर अधिनियम की धारा 80-जी के अन्तर्गत पूरी तरह से आयकर मुक्त है तथा इस छूट के लिये इसका पैन नम्बर एएबीटीसी 5563बी है।

हिमाचल प्रदेश सरकार समाज के अति निर्धन व जरूरतमन्द व्यक्तियों की सहायता करने की दिशा में सार्थक प्रयास कर रही है। सरकार द्वारा ऐसे सभी गरीब एवं पात्र लोगों को विभिन्न विभागों के माध्यम से कार्यान्वित की जा रही विभिन्न कल्याकारी योजनाओं के छत्र के अन्तर्गत शामिल किया जा रहा है।

जरूरत के समय सहायता के लिये हर संभव कोशिश कर रहे गरीब एवं बेसहारा लोगों के लिये मुख्यमंत्री राहत कोष आशा की किरण बनकर मददगार साबित हो रहा है। मुख्यमंत्री राहत कोष से वित्तीय सहायता मानवीय आधार पर प्रदान की जा रही है।

मुख्यमंत्री राहत कोष से राज्य में पिछले तीन वर्षों के दौरान चिकित्सा उपचार तथा आपातकाल के दौरान खर्चों को पूरा करने के लिये 18,273 पात्र व्यक्तियों को 36,63,92,315 रुपये की राशि प्रदान की गई है। वित्त वर्ष 2013-14, 2014-15 तथा 2015-16 के दौरान इस निधि से 5495 जरुरतमन्द लोगों को 13,39,99,892 रुपये की राशि वितरित करने के साथ-साथ 5840 व्यक्तियों को 11,35,44,986 रुपये की वित्तीय सहायता तथा 6938 व्यक्तियों को 11,88,47,437 रुपये का लाभ प्रदान किया गया है। पिछले तीन वर्षों के दौरान निजी तौर पर, कंपनी निकायों तथा विभिन्न संगठनों से मानवीय प्रयोजन के लिये 38,40,50,485 रुपये की राशि अंशदान के रूप में प्राप्त हुई है।

राज्य सरकार समय-समय पर समर्थ नागरिकों, कंपनियों तथा संगठनों को इस निधि में उदारतापूर्वक दान करने का आग्रह कर रही है क्योंकि यह धनराशि लाचार एवं व्यथित गरीब लोगों को राहत पहुंचाने के लिये वितरित की जाती है, विशेषकर जब इन लोगों को सहायता का अन्य कोई साधन उपलब्ध नहीं होता। जिम्मेवार नागरिक होने के नाते हम सभी को इस निधि में अंशदान के लिये लोगों को प्रेरित करना चाहिए। निधि में केवल स्वेच्छा से योगदान किया जाता है।

इस निधि में अंशदान के लिए 'मुख्यमंत्री राहत कोष' हिमाचल प्रदेश, शिमला-171002 के नाम चेक, बैंक ड्राफ्ट या नकद अथवा हि.प्र. राज्य सहकारी बैंक के खाता संख्या 4060100315 (आईएफएससी कोड-वाईईएसबी0एचपीबी06) में इलेक्ट्रॉनिक हस्तांतरण से किया जा सकता है। इस निधि में किया गया अंशदान आयकर अधिनियम की धारा 80-जी के अन्तर्गत पूरी तरह से आयकर मुक्त है तथा इस छूट के लिये इसका पैन नम्बर एएबीटीसी 5563बी है।

इस राशि के अन्तर्गत तकनीकी अथवा व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण कर रहे उत्कृष्ट गरीब विद्यार्थियों को भी राहत प्रदान की जा रही है।

मुख्यमंत्री राहत कोष से ऐसी विधवाओं, जिनके पास अपने बच्चों का भरण-पोषण करने के लिये आय का कोई साधन नहीं है, कवियों एवं विद्वानों जिन्होंने राष्ट्र के लिये उत्कृष्ट सेवाएं दी हैं, को भी सहायता प्रदान की जा रही है। इसके अतिरिक्त, प्राकृतिक आपदाओं के कारण क्षति से जूझ रहे व्यक्तियों, परिवार में कमाने वाले व्यक्ति के आकस्मिक निधन, गम्भीर बीमारियों में चिकित्सा उपचार तथा किसी भी प्रकार के अन्य मामले जहां मुख्यमंत्री मांग की उपयुक्तता को देखते हुए निजी तौर पर संतुष्ट हो, ऐसे विशेष मामलों में भी इस निधि से सहायता प्रदान की जा रही है।

इस प्रकार की करुणा एवं सहानुभूति का एक छोटा सा प्रयास अनमोल जीवन के लिये संजीवनी साबित हो सकता है और इस प्रकार की संवेदनशीलता हम सभी में होनी आवश्यक है ताकि हम जिस समाज में रह रहे हैं, उसके लिये कुछ योगदान कर सके और आवश्यकता पड़ने पर एक दूसरे की सहायता कर सके। मुख्यमंत्री राहत कोष संकट की घड़ी में गरीबों और जरूरतमंद लोगों की सहायता करने की दिशा में मददगार साबित हो रहा है।

उप-निदेशक, सूचना एवं जन संपर्क निदेशालय,
शिमला-171 002

सामाजिक सुरक्षा पेंशन वितरण प्रणाली में पारदर्शिता एवं कार्यकुशलता सुनिश्चित बनाने के उद्देश्य से इस वर्ष से आधार नम्बर आधारित डाकखाना खाता योजना आरम्भ करने का निर्णय लिया गया है। योजना के अन्तर्गत पेंशनरों को घर बैठे ही पेंशन प्राप्त हो सकेगी। आरम्भ में इस योजना को पायलट आधार पर कुल्लू व मण्डी जिलों में लागू किया जाएगा।

कमजोर वर्गों का सहारा बनी सरकार की कल्याण योजनाएं

● **नरेंद्र शर्मा**

प्रदेश सरकार ने समाज के सभी वर्गों विशेषकर आर्थिक व सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों के कल्याण को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की है। इन वर्गों को मुख्यधारा में शामिल करने तथा सामाजिक एवं आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनाने के लिये वर्तमान राज्य सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रम एवं योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं। प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों का समग्र विकास तथा जन जातीय लोगों को मुख्यधारा से जोड़ने के उद्देश्य से जन जातीय उप-योजना आरम्भ की गई है जिसके लिये वर्ष 2016-17 में 468 करोड़ रुपये का बजट प्रावधान किया गया है।

इसके अलावा, गद्दी, गोरखा, गुजर, लबाणा अनुचित जाति कल्याण बोर्ड, अन्य पिछड़ा वर्ग कल्याण बोर्ड, अल्पसंख्यक कल्याण बोर्ड, कबीरपंथी कल्याण बोर्ड, विश्वकर्मी समाज कल्याण बोर्ड, रविदास कल्याण बोर्ड, कोली कल्याण बोर्ड व बाल्मिकी कल्याण बोर्ड का गठन किया गया है ताकि इन वर्गों के कल्याण के लिये आरम्भ की गई योजनाओं एवं कार्यक्रमों का बेहतर कार्यान्वयन सुनिश्चित बनाया जा सके।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन 650 रुपये से लेकर 1200 रुपये तक वृद्धजनों, विधवाओं तथा शारीरिक रूप से अक्षम व्यक्तियों

को आर्थिक तौर पर सम्बलता प्रदान करने के उद्देश्य से प्रदेश में सामाजिक सुरक्षा योजना को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किया जा रहा है। योजना के अन्तर्गत गत तीन वर्षों में सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये मासिक से बढ़ाकर 650 रुपये प्रति माह किया गया है। 70 प्रतिशत से अधिक विकलांगता वाले व्यक्तियों व 80 वर्ष से अधिक आयुवर्ग के व्यक्ति जो अन्य कोई पेंशन प्राप्त नहीं कर रहे हैं, की मासिक पेंशन को 800 रुपये से बढ़ाकर 1200 रुपये किया गया है।

45 वर्ष से कम आयु की विधवा माताओं की मासिक पेंशन को 600 रुपये से बढ़ाकर 1200 रुपये प्रतिमाह किया गया है। गत तीन वर्षों के दौरान वर्तमान प्रदेश सरकार ने 57 हजार नये सामाजिक सुरक्षा पेंशन के मामले स्वीकृत किये हैं तथा वर्ष 2016 में 24000 नये पेंशन मामलों को स्वीकृत करने का लक्ष्य रखा गया है।

सामाजिक सुरक्षा पेंशन वितरण प्रणाली में पारदर्शिता एवं कार्यकुशलता सुनिश्चित बनाने के उद्देश्य से इस वर्ष से आधार नम्बर आधारित डाकखाना खाता योजना आरम्भ करने का निर्णय लिया गया है। योजना के अन्तर्गत पेंशनरों को घर बैठे ही पेंशन प्राप्त हो सकेगी। आरम्भ में इस योजना को पायलट आधार पर कुल्लू व मण्डी जिलों में लागू किया जाएगा।

समाज में छूआछूत जैसी बुराई को दूर करने के उद्देश्य से राज्य में अन्तरजातीय विवाह प्रोत्साहन योजना आरम्भ की गई है। योजना के अन्तर्गत सामान्य जाति के ऐसे युवक व युवतियां, जिन्होंने अनुसूचित जाति के युवक या युवति से विवाह किया है, को 50 हजार रुपये की राशि प्रोत्साहन स्वरूप प्रदान की जा रही है। 70 प्रतिशत से अधिक विकलांगता वाले युवक व युवतियों को विवाह के लिये दिये जाने वाले विवाह अनुदान को भी 15000 रुपये से बढ़ाकर 40000 रुपये किया गया है।

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के ऐसे व्यक्ति जिनकी वार्षिक आय 35000 रुपये से कम है तथा जिनके नाम पर राजस्व रिकार्ड में भूमि उपलब्ध है और जिनका अपना कोई मकान नहीं है, को आवासीय सुविधा उपलब्ध करवाने के उद्देश्य से गृह निर्माण के लिये 75000 रुपये के गृह अनुदान का प्रावधान किया गया है। योजना के अन्तर्गत पात्र व्यक्तियों को घर की मुरम्मत के लिये 25000 रुपये की राशि बतौर अनुदान प्रदान की जा रही है।

सफाई कर्मचारी व सिवरेज ट्रीटमेन्ट प्लांट में कार्यरत कर्मियों को जीवन बीमा के अन्तर्गत लाया गया है। अनुसूचित जाति वर्ग बाहुल्य ऐसे गांवों जहां इन वर्गों की आबादी 40 प्रतिशत या कुल जनसंख्या 200 से अधिक है, के समग्र विकास व मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध करवाने के लिये प्रदेश में मुख्यमंत्री आदर्श ग्राम योजना आरम्भ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत प्रदेश के सभी विधानसभा क्षेत्रों में दो ऐसे गांवों का चयन करके इन गांवों का समग्र विकास सुनिश्चित बनाया जा रहा है। योजना के अन्तर्गत गत वित्त वर्ष के दौरान 12 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था।

हिमाचल प्रदेश सामाजिक सेवा क्षेत्र में कई मानकों में देश के अन्य राज्यों से आगे हैं जो इस दिशा में प्रदेश सरकार के प्रयासों की सार्थकता को दर्शाते हैं।

सहायक लोक संपर्क अधिकारी, सूचना एवं जन संपर्क निदेशालय, शिमला–171 002

कहानी

उसके लौटने तक

● डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित'

धौलगिरि की रुपहली गोद में बसा एक छोटा-सा गांव। उसी के एक किनारे पर बांसों के झुरमुट में एक छप्पर खड़ा है। रोसो उसी में रहता है। उस छप्पर की बगल से गांव की सरकती पगडंडी कई मोड़ लेती खेतों में दूर-दूर तक पसर गई है। पिछवाड़े से एक चौड़ा पथरीला रास्ता जंगल की ओर बढ़ गया है। गांव के ढोर-डंगर, ग्वाले, चरवाहे, घासपात तथा लकड़ियां लाता गांव इसी मार्ग से आता-जाता है। कुछ दूरी पर यह मार्ग खड्ड के किनारे शमशानघाट तक उतर जाता है। पास ही उतराई पर दो बावलियां हैं, वहीं दो पुराने वट-वृक्ष हैं जिनके नीचे वर्षों से गांव परम्परा में मृतकों के नाम मूहरे रखता आ रहा है। उनमें कुछ सिंदूरी हैं, कुछ समय के साथ अपना आकार, मुद्रा खो चुके हैं। कुछ अरसा पहले सारा गांव बावलियों पर दो वर्गों में बंटा आता-जाता परछाई से डरता पानी भरा करता। परन्तु जब से यहां नलके आ गए हैं, परछाईयां दूर हो गयीं हैं। दोनों वर्ग एक ही नल पर सुख-दुख बांटने लगे हैं फिर भी कभी-कभार पानी की कमी के कारण उठे संघर्ष में छुआछूत के मामले पंचायत तक पहुंच जाते हैं। परन्तु विरोध एवं वैमनस्य का विष एक लम्बे अन्तराल के बाद सुख-दुख की घटनाओं में स्वतः उतर जाता है। नलकों पर पुनः वही भाई-चारा बतियाता हंसता-खेलता नजर आता है। मन की बातों का खुला लेन-देन होता है।

रोसो का घर आसपास बड़े घरों की घनी आबादी से घिरा है। एक पीढ़ी पहले इन्हीं बड़े घरों का एक जमीदार इसके बुजुर्गों को चंगर (क्षेत्र विशेष) से यहां लाया था। तब परिवार दो जनों का था। बड़े घरों की सेवादारी में दाल-रोटी खाता परिवार बढ़ता रहा। इस बीच सामाजिक ढांचे ने कई करवटें लीं। पास-पड़ोस के व्यवहार की काई इस परिवार पर जमती रही। उसी में बीस वर्ष पहले रोसो जन्मा था। आठ-दस वर्ष तक मां-बाप का साया रहा। बाद में पड़ोसिन जमींदारिन के पास रहता जीवन की पौड़ियां चढ़ने लगा। वह बूढ़ी और अकेली थी। रोसो ने उसे अकेली छोड़कर दूसरी जगह जाना धर्म नहीं समझा। कालांतर में वह भी चल बसी। अब वह अकेला था, एकदम असहाय। बुढ़िया के घर के पिछवाड़े।

ढीला कुर्त्ता, सिर पर गोलाकार टोपी, कितरनों भरा अंगोछा, कमर में लपेटे लीरड़ों में कसी बांसुरी उसे यकीनन प्रिय बनाते। वह गांव के छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष, बच्चों तथा बूढ़ों को प्यारा लगता। सब उसे प्यार से पुकारते-रोसो। बड़ा होने पर वह गांव के छोटे-बड़े सामाजिक कार्यों में हाथ बंटाने लगा। सभी को उसकी जरूरत रहती। कभी किसी का बिस्तर उठाए मोटर अड्डे तक जाता तो कभी वहां से सामान उठाए गांव आता। नौकरों को विदा देना और घर पहुंचाना उसके मुख्य कार्य थे, वह कभी थकावट का एहसास नहीं करता। जो कुछ कोई हाथ पर रखता, उसे माथे से लगाता प्रसन्नता से खीस्से में डाल लेता। सायं ढले अथवा धूप-दोपहरी काटने के लिए वह नाले के किनारे बरगद की छाया में बांसुरी बजाता अपने मन की व्यथा को सुरों में पिरोता। गांव में तैरती बांसुरी सामने खड़ी पहाड़ी से टकराती खेत-खलिहान तथा छप्परों से बतियाने लगती। सभी कहते-'रोसो बांसुरी बजा रहा है।' इस प्रकार हर किसी के काम आता, सबका मन बहलाता रोसो समूचे गांव का बनता गया। सारे गांव में रिश्तेदारी थी। कोई अम्मा-बापू तो कई नानी-नाना और कोई भाभी-भाई।

आयु की पौड़ियां चढ़ने के साथ उसका यौवन निखरने लगा। गांव में उसके ब्याह की बात चलने लगी। सभी को इसका चाव था। उसके हमउम्र कभी-कभी मसखरियां करते कई प्रकार का ऊट-पटांग भी बकते। वह भी सबकी बातों में शरीक होता किसी बात का बुरा नहीं मानता। व्यंग्य-विनोद में जब कोई यह कहता, 'तेरा ब्याह हो रहा है,' तो वह बड़ा अजीब-सा महसूस करता। उसके मन में कई दृश्य घूमने लगते। गांव में ब्याहता जोड़ों की बनक-ठनक, हास-परिहास-जिन्हें वह लुका-छिपा देखा करता-उसके मन को गुदगुदा जाते, प्रसन्नता में बत्तीसी लसकने लगती। ब्याह की बात को लेकर जब-कभी कोई खिझाता तो वह लज्जाकर गांव के किसी एकान्त में सरक जाता।

छः साल पहले रोसो का स्वप्न साकार हुआ था। उसकी नानी ब्याह जुड़ा लाई थी। सारा गांव किसी न किसी रूप में उसमें सम्मिलित हुआ। किसी ने चावल दिये तो दूसरे ने दालें। बहु के लिए किसी ने बरी (विवाहिता के लिए वस्त्र) बना दी तो किसी ने बंगे और गोखरु। नानी ने अपने बालू की तार से उसे सुहाग दिया।

ब्याह के दिन रोसो ठाठ से सुखपाल में बैठा स्वयं को किसी राजकुमार से कम नहीं समझता। गांव के बच्चों ने 'ढोल-बाजे' पर 'पहाड़ी नाटी' डाली। रोसो मन ही मन मुस्कराता बार-बार दर्पण देखता। गोटा-सितारे जड़ा सेहरा, दंदासे से मंजे दांत, होठों पर अखरोट की बीड़ी की लाली, हथेलियों पर मेंहदी से सजावट, उंगलियों में सजा चांदी का छल्ला, गले में नोटों की माला का प्रतिबिम्ब देखता मन-ही-मन सोचता 'सचमुच ब्याह का कितना मजा है।' सुखपाल में बैठा, हिचकोलों का आनन्द लेता नहीं थकता। वह साथियों से कहता-'यदि आज तुम नहीं नाचोगे तो मैं भी तुम्हारे ब्याह में नहीं नाचूंगा।'

उसने गांव के हर कारज में जिस्म तोड़ काम किया है। हर ब्याह में नाचा है। वह भी सब से वैसी ही अपेक्षा रखता है। आज जब भी कोई हंसी-मजाक करता है तो वह झट से मुंह पर रूमाल रख लेता है। शायद यह बताने के लिए कि उसे अधिक बातें नहीं करनी हैं, क्योंकि आज वह लाड़ा (वर) है।

सोलह वर्षीय लाड़ी घर आई। नाम था पारो। आंगन में बहु-प्रवेश के मंडप में डोला रखकर नन्हेस ने चारों ओर गुलगुले (मीठे पकवान) फैंके। जोगनियां मनाईं। धरती को पूजा-परसा। बाबा को रोट तथा झण्डी चढ़ाई। देहरा पूजा और बार-बार बंदवाया। तत्पश्चात् उसने अड़ोस-पड़ोस से आए लोगों को बधाई बांट कर पांव छुए, धन्यवाद किया। पड़ोसनों ने लाड़ी से मुंह दिखाने की रस्म अदा करवाई और ओबरी (भीतरी कमरा) में बिठा दिया। उसे देखने की चाह लिए रोसो कभी कमरे के भीतर जाता तो कभी बाहर आता। लाड़ी के पास कैसे जाया जाए कोई बहाना हाथ नहीं लगता। सायं ढले अड़ोसी-पड़ोसी विदा हुए। रोसो के हाथ समय लगा। वह सकुचाता, शरमाता पारो के निकट जा बैठा। देर तक उसे देखता रहा। वह चुप थी। उसने अधीरतावश उसका घूंघट उठाकर देखा, खूबसूरत थी। उससे रहा न गया, धीरे से पूछा-'बोलोगी नहीं।' पारो ने आंखें उठायीं। कमरे में रोसो के सिवाए और कुछ दिखाई नहीं दिया। दूसरे दिन जीविका का वही पुराना ढंग शुरू हुआ। इसी क्रम में गृहस्थी बढ़ी। अब उसके घर भगवान की कृपा से चार हो गए थे।

बदलती स्थितियों के साथ रोसो को गृहस्थी एक जंजाल लगी। उसे अपना चेहरा ऐसा कहते महसूस होता-'तूने बड़ा गुनाह किया है।' उसे बड़ी ग्लानी होती। वह स्वयं को कोसता अतीत के स्मृति पटल पर पछाड़ खाकर गिर पड़ता। वे खेल, वे गीत और मस्तियां, पाणीहांद की मसखरियां, खेत-खलिहान के हास-परिहास कहां गुम हो गए। कितना मजा आता था उन दिनों। वह पारो को दूसरों के घर भांडे-बर्तन मांजती देखकर शरमा जाता। बच्चों के गंदले, मुरझाए चेहरों तथा उजल तन पर पुराने, फटे चीथड़ों को देखकर सकुचाता, पश्चाताप करता, दीमक लगे पेड़ सा सूखने लगा।

वह गांव में छोटे-मोटे कामों में ध्याड़ी लगा कर जो कुछ कमाता वह 'लूण-तेल' में खप जाता। बीड़ी-तमाकू पूरा करने के लिए पड़ोसियों के यहां ओवर टैम में लकड़ी फाड़ता, घास-पात काटता अथवा खुदाई, जुताई के काम करता। गांव में काम भी तो रोज-रोज कहां मिलता है। कभी चार पैसे हाथ लग जाते, कभी ध्याड़ी बेकार काटनी पड़ती। गृहस्थी में चार मुंह खाने वाले एक कमाने वाला, वह भी ध्याड़ीदार। बजियों, मालिकों या मेट की कृपा दृष्टि पर निर्भर। गृहस्थी की गाड़ी हांकना एक समस्या बन गयी थी। परन्तु इस पर भी उसके चेहरे पर कभी उदासी नहीं दीखती। जब कभी कोई उसे पुकारता, वह हंसता, मुस्कराता उत्तर देता, पैरी-पौणा करता, सुखसान्त पूछता, परन्तु अपनी भूख-नंग को किसी से जाहिर नहीं होने देता। अपनी दरिद्रता को भाग्य समझता हर स्थिति के विष को निगलता गृहस्थी से जूझता रहता।

चूल्हे पर रोटियां सेंकती पारो ने बात-बात में कहा-'कोठे (लैंटरदार घर) वालों का ज्योति शहर जा रहा है। तुम भी उसके साथ चले जाते। शहर में कोई न कोई काम मिल ही जाएगा। यहां के कई लोग वहां जाकर कमा-खा रहे हैं। घर-घर की रोटियां इक्ट्ठा करते कब तक पलते-पालते रहेंगे। आखिर बच्चों को सब-कुछ चाहिये।'

वह हां में हां मिलाता देर तक उसकी सुनता रहा। घर जाकर रोटी खाई और बिलंग से दो खिन्दे उतारीं, खाट पर फेंकी और मुंह ढांप कर सो गया। रात पास्से बदलते बीत गई। पारो को छोड़कर दूर किसी पराए नगर में जा बसना, बच्चों से अलगाना, गांव की वेदना आदि के स्मरण उसे पारो की बातों से तोड़ते-जोड़ते रहे। इसी क्रम में मुर्गे की बांग के साथ उसे ज्योति की मां की आवाज सुनाई दी -

'रोसो !! तैयार हो ना ! आजा चाह पी जा ! ट्रंक भी उठाना है।'

वह अलसाता उठा, मुंह पर ठंडे पानी के छींटे मारे। आंखों की कड़वाहट जाती नहीं। विवश झोले में कच्छा, कुर्त्ता, परना भरा और उसे कीलणी से लटका कर उनके यहां गया। बुढ़िया को पैरी पौणा किया, चाए पी और ट्रंक उठाकर घर की पगडंडी पर उतर आया। घर में पारो से कहा-'तू बैठ ! बच्चों का ख्याल रखना। औखी-सौखी बजियों को बता दिया करना। कभी किसी गरज से तंग मत रहना। मैं छुट्टी आऊंगा तो सब का हिसाब चुका दूंगा।'

ज्योति की आवाज सुनकर उसने झोला कंधे पर लटकाया और ट्रंक उठा कर उनके पीछे-पीछे खेतों की ओर जाती पगडंडी पर पसर गया। बस अड्डे पर ज्योति की मां ने उसे रुपया थमाते कहा- 'तू जा, घूम फिर आ ! मन नहीं लगे तो लौट आना। घर से निकाला थोड़े है।' वह चुप था। पारो गूंगी बनी उसे देखती, सोचती मना कर दे, शहर जाकर क्या लेना है ? औखी-सौखी यहां ही काट लेंगे। परन्तु दूसरे ही क्षण उसका निर्णय बदल जाता। वे दोनों

बतियाना चाहते परन्तु दोनों गूंगे। तभी घरर करती आती बस अड्डे पर रुकी। रोसो ने लपक कर छत पर ट्रंक चढ़ाया और ज्योति के पीछे खिड़की से लटक गया। मोटर चल दी।

वह जोर से बोला-'पारो ! घबराना मत। बच्चों का खयाल रखना। मैं पैसे भेज दूंगा। तू किसी गरज से तंग मत रहना। जब छुट्टी आऊंगा हिसाब चुका लूंगा।'

तभी कंडेक्टर ने तपाक से खिड़की बंद कर दी। रोसो मोटर में बंद छटपटाने लगा। वह खिड़की के पास सीट पर धंसता दूर तक झांकता चला गया। खेतों में घूमती मोटर जब भी मोड़ काटती तो उसे बस अड्डे पर खड़ी पारो नजर आती। वह बाहर की तरफ अपनी बांह फैलाकर मन ही मन कहता- 'तू जा ! फिकर मत करना ! घर जाकर बच्चों की संभाल कर। तू किसी वस्तु से तंग मत रहना। मैं जल्दी ही पैसे भेज दूंगा ....।'

रात के बढ़ते अंधेरे के साथ वह चंडीगढ़ पहुंचा। रास्तों पर बिजली की जगमगाहट, आमने-सामने खड़ी कोठियों की ऊंचाई, सड़कों की चौड़ाई, ऊपर दौड़ते मोटर, कारें, स्कूटर, रिक्शा, हर जगह भीड़ ही भीड़, यह सब-कुछ देखकर वह चकित था। सहसा उसके मन में एक खयाल आया। एक बार पंडित जी ने गांव के मंदिर के सामने बरगद के अटियाले पर कथा सुनाई थी। शायद वह राजा इन्द्र के नगर की थी। उसे यहां भी कुछ वैसा ही लगा था। रिक्शे पर बैठा आर-पार, ऊपर-नीचे, आगे-पीछे देखता मन ही मन कहता 'सचमुच यह वही नगरी होगी।' अड्डे पर घूमती-फिरती बस लेती-छोड़ती, सजी-संवरी स्त्रियां परियों से कम नहीं लग रही थीं। उसका मन बार-बार कहता-पंडित जी ने ठीक कहा था। वह कथा बिल्कुल सच थी।''

अचानक रिक्शा एक कोठी के सामने रूका। ज्योति ने बताया- 'रोसो ! यह मेरे दोस्त की कोठी है।'

रात वहीं ठहरे। ज्योति ने अपने दोस्त की मां से बात की 'वह उन के लिए काम्मा लाया है।' बुढ़िया उसे देर तक देखती बोली, 'लगता तो भलामानस है। पहाड़िया है।'

ज्योति ने उसे वहीं ठहराया और खुद रात की गाड़ी से दिल्ली चला गया। कोठी के बरामदे के एक कोने में पड़े बैंच पर सोने की कोशिश करता रोसो काफी देर तक सोचता रहा। सड़क पर दौड़ते मोटर, स्कूटर, रिक्शा अपनी-अपनी भाषा में आवाजें देते जगाते रहे। जब कभी आंख लगती भी तो सहसा गांव के बस अड्डे पर उसकी पारो राह बिसूरती दिखाई देती, खाट पर सोए बच्चे नजर आने लगते। इसी सिलसिले में करवटें बदलते सूर्य की रश्मियां उस पर बिखरने लगीं। वह हैरान था-यहां रात इतनी छोटी क्यों होती है। ज्यों-ज्यों सूर्य चढ़ता गया, शहर में शोर बढ़ने लगा।

सुबह चाय के साथ एक डबल-रोटी मिली। वह उसे घेर-फेर कर देखता चाय में भिगो-भिगो कर निगल गया। नलके पर गिलास साफ कर इधर-उधर घूमता कोठी की परिक्रमा करने लगा। तभी एक नवेली अधनंगी छोकरी उसकी बगल से सरक कर भीतर गई। उसे लगा बिच्छू डंक मार गया हो। गोरा सांवला शरीर, घुंघराले अधकटे बाल, कपड़ों से छूटती एक अजीब-सी गंध। उसे जीवन में पहले कभी भी ऐसा देखने को नहीं मिला था। वह स्वयं को संभालता काफी देर तक उस तरफ देखता रहा। तभी अंदर से निकलती बुढ़िया ने कहा 'ऐऽऽ ! उधर क्या ताक रहे हो ? जाओ! सामने वाले बरामदे में बैठो। मैं अभी आकर काम बताती हूं।'

उसे अपनी भूल देर तक काटती रही। वह अपना-सा मुंह लिए कोठी के पिछवाड़े की ओर खिसक गया और वहां इस घटना पर सोचता जमीन को कुरेदता दूर्वा एवं मिट्टी उखाड़ता रहा। तभी बुढ़िया उस ओर आई। वह अपराधी की मुद्रा में हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। उसने उसे प्रातः से सायं तक काम की लम्बी फर्द बता कर यह भी बताया कि उसे किस जगह बैठना, सोना, घूमना है और कहां-कहां झांकना मना है। रोसो ढेर सारे संकेत तथा वर्जनायें सुनकर पगला-सा गया। उसे शहरी चलन की कुछ भी समझ नहीं थी। अक्सर उससे भूल हो जाया करती, परिणाम में बुढ़िया अथवा मालिक से चार-पांच झिड़कियां सुनना उसकी आदत बनती गई। वह तड़केसार उठकर लॉन के किनारे फैली क्यारियों में पानी देता, कुत्ते को सैर कराता, कार की सफाई करता, बरामदों तथा कमरों के फर्श धोता और मार्किट से दूध, सब्जी, सौदा बगैरा लाता। वह जब कभी घर की बहू को देखता तो उसे अनायास पारो की याद आ जाती। वह देर तक उसके शरीर, रूप, रंग, बनक-ठनक, वेषभूषा आदि से अपनी पारो की तुलना करता। कई नक्शे खींचता। वह साठ रुपये मासिक वेतन का जोड़-जमा करता केवल एक उसांस भर कर रह जाता। उसे उदास या खोया-खोया देखकर जब कभी बहु कुछ पूछती तो वह पूर्वावस्था में लौटता कहता-'नहीं, कुछ नहीं, ऐसे ही सोच रहा था।

'क्या कोई काम है, काके को बाजार ले जाना है, सब्जी लानी है।' वह ऐसे ढेर सारे प्रश्न एकबारगी कर जाता। बहु उसके मुंह की ओर देखती उसके अर्न्तमन की पीड़ा को पढ़ जाती। सोचती-'पेट की मजबूरी आदमी को कहां से कहां पटकती है। अनिच्छा पर भी घर-बार, पत्नी, बच्चों को छोड़ने पर विवश कर

देती है। आदमी के अच्छे-बुरे होने के पीछे इस पेट की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।'

वह रोसो से कई कुछ पूछती, उसकी संवेदना को बांटना चाहती। परन्तु वह तो केवल इतना ही कहना सीखा था- 'नहीं, कुछ नहीं, ऐसे ही सोच रहा था। कोई काम बताओ। क्या कहीं जाना है ? आदि-आदि।'' वह अपनी विवशताओं को स्वयं ही निगलता रहा। कभी दीनता के स्वर में किसी से दया की भीख नहीं मांगी। शहरी जिन्दगी में रहने, घूमने-फिरने से समाज की दुर्बलताओं के प्रति विषमता जरूर जागी थी। वह अधिकारों के प्रति कई बार जलसा-जलूस में सुन चुका था। परन्तु भाग्यवाद की वृत्ति ऐसे बोध को सदैव ढक लेती। परिस्थितियों से समझौता करना और संतुष्ट रहना उसका स्वभाव बन गया था। वैसे भी लोग दूसरों के दुःख बांटने की बजाए दुःख सुनने में मजा लेते हैं। अतः वह अपने मन को किसी से नहीं खोलता। वह अपने सीधे, सरल तथा निश्छल स्वभाव के कारण अड़ोस-पड़ोस के करीब आता गया। उसे वहां भी अपने परिवार जैसा लगने लगा।

माघ की सर्दी में शहर दिन-ब-दिन ठंडा हो रहा था। पतले मारकीनी कपड़ों में अक्सर वह ठंड महसूस करता। गर्म कपड़ों की तहों में लिपटे लोगों को देखकर उसके मन में एक ज्वार-सा जरूर उठता। मन विद्रोह भी करता। वह सोचता- 'ऐश और मनोरंजन क्या इन्हीं लोगों की विरासत है। ढेर सारे कम्बल, रजाइयां, तलाइयां, गर्म कपड़े एक-एक के लिए दस-दस जोड़े।' वह माथा पीटता कुछ कहना चाहता, परन्तु शब्द गले में अटक जाते। केवल इतना ही बुदबुदाता- 'इन सब में, इस शहर में, मेरा कोई मोल नहीं। मेरे होने न होने का किसी को एहसास नहीं। मेरे जैसे यहां अनेक भीख मांगते, कोठियों की गर्द खाते, सड़क-पटरी पर रात काटते, भूख-नंग से लड़ते बलि होते रहते हैं। उन पर कौन रोता है, कौन संवेदना बांटता है। यहां तो किसी को दूसरे से कुछ पूछने तक की फुर्सत नहीं। शहर में गांव का रहना मुश्किल है। किसी से कुछ शिकायत करना, अधिकार मांगना रिजक को लात मारने के समान है।' अतः हर स्थिति में मौन रहना, सब कुछ सहते जाना ही उसका स्वभाव बनता गया। वैसे भी गरीबों को हर स्थिति को सहन करने की समर्थ ईश्वर ने दी होती है। उसका प्राणलेवा ज्वर भी मालिक की नजर में मामूली ठंड होती है।

चार दिन पहले बाबूजी ने एहसानी भाव से एक कोट देते कहा था- 'ले ! इसे पहन ले, तेरी सारी सर्दी उड़ जाएगी।' उसने उसे बड़े चाव से पहना था। कोट था भी विदेशी, बेशक अपनी उमर काट चुका था। चार-पांच जगह जेबें थीं। तीन बड़े-बड़े बटन लगे थे। छः जगह रफ्फू पड़े थे। मोटी कालर तथा कमर कसने के लिए एक मोटी पट्टी-सी अभी जिंदा थी। परन्तु रोसो यह महसूस जरूर करता कि उसने किसी बड़े आदमी का कोट पहना है। मालिक ने एहसान किया है, उनकी एक याद है, अतः वह कोट को पहनता कम, हिफाजत ज्यादा करता।

घर में जो भी आता रोसो को चवन्नी-अठन्नी या रुपया देकर ही जाता। क्योंकि वह सबको बस-स्टाप, मार्किट, रिक्शा-स्कूटर अथवा टैक्सी-स्टैंड तक पहुंचाता। लगभग शहर की हर मार्किट से वह वाकिफ हो गया था। बसों के रूट भी याद हो गए थे। शहर में रहते दूसरा वर्ष बीत रहा था। इस बीच तीन बार घर आया था। छः चिट्ठियां लिखवाकर भेजी थीं और पांच मनीआर्डर किए थे। पारो ने अब तक दो के ही परत (उत्तर) भेजे थे। उनमें परिवार के सुखसांत की बजाय पैसे भेजने का सवाल मुख्य होता। न मालूम पारो कितनी मजबूर होगी, उसे पैसों की तंगी न रहे, यह सोच कर वह पूरी-की-पूरी तनख्वाह भेज देता। पैसे मिलने की रसीद पर पारो का अंगूठा लगा देखकर उसे बड़ा संतोष होता। उसमें उसे पारो का प्रतिबिम्ब दिखाई देता। बच्चे आस-पास घूमते, उससे लिपटते, गलबहियां करते, खेल-खेलते महसूस होते। थोड़ी देर तक उसी स्थिति में जीकर वह पुनः रोजनामचे से जुड़ जाता। मन धीरे-धीरे गांव से अलगाता शहर में फैलने लगता। अब उसकी पूरे सैक्टर में पहचान थी। उसका सरल स्वभाव, रसीली बातें, पहाड़ी गाने तथा बांसुरी की धुन सबको प्यारी लगती। प्रायः दिन ढले पार्क में बच्चों के बीच बैठकर अपने घर की स्मृतियां लेता-देता। छोटे-छोटे बच्चों को कंधे पर उठाकर पार्क के कई चक्कर काटता। कभी-कभार उन्हें छोड़ने उनके क्वाटर तक भी चला जाता। सहानुभूति में लोग उसे कुछ देते भी परन्तु वह इतना भर कहता, 'रहने दो बाबूजी ! रहने दो बीबीजी ! मेरे भी दो हैं इतने ही, दूर-बहुत दूर, पहाड़ में।'

शहर आए तीसरा वर्ष बीत रहा था। पारो की चिट्ठियां पहले की अपेक्षा अब बहुत कम आ रही थीं। इस अन्तराल में वह जितनी बार घर गया वहां उसे कुछ बदलता-सा महसूस हुआ। पारो की बनक-ठनक पहले से बहुत बढ़ गई थी। बच्चों के कपड़े साफ-सुथरे तथा अच्छे सिले होते। छप्पर की छत भी बदल दी थी। पारो उसे पहले से कुछ ज्यादा प्यार देती। वह बन-ठनकर उसके पास बैठती, उसे सराहती शहर की कई बातें पूछती। वहां की चहल-पहल, औरतों की खूबसूरती के विषय में जिज्ञासा रखती। परन्तु उसने साथ चलने की कभी जिद नहीं की। हां, इतना जरूर कहती- 'मुझे भी साथ ले चलोगे ? कभी शहर जरूर देखना है। चलो अगले साल सही।'

वह जितने दिन गांव रहता, धुले, प्रैस किए कपड़े पहन कर घूमने-फिरने निकलता। सबसे हाथ मिलाता, सुखनन्द पूछता, सबको अपनी नौकरी का एहसास कराता। शहर में रहने से उसकी बातचीत में एक सलीका आ गया था। वह छोटे-बड़े की बराबर पहचान करता। गांव में अपनी बोली बोलने पर भी पंजाबी हिन्दी खूब मारता।

शहर लौटने पर पारो ने जब उसे बस-अड्डे पर विदा किया तो

उसे लगा कि उसके चेहरे पर उतनी उदासी न थी। उसकी आंखों में विच्छोह के आंसू न थे। उसके बस पर चढ़ते ही वह गांव की पगडंडी पर उतर गई थी। वह उसे दूर तक झांकता देखता रहा परन्तु मोड़ पर गड़े मील पत्थर के अतिरिक्त उसे कुछ दिखाई नहीं दिया। स्थितियों से संधि का अभ्यस्त उसका मन सोचता-'घर पर बच्चे अकेले थे, उन्हें स्कूल भी जाना है, उसे रोटियां भी पकानी थी, शायद यही सोचती तुरन्त लौट गई होगी। वे भी तो मेरे ही हैं। उन्हें संभालना भी जरूरी है। वहां खड़ी भी रहती तो भी क्या बनना था। मुझे तो मोटर मिल ही गई थी।' अतः भ्रम के चक्कर में उलझे मन को पतिया कर खिड़की से झांकता शिवालिकी पहाड़ियों में फैलता, बाण गंगा की जल लहरियों में भीगता शहर लौट आया था।

उसे यह हादसा जब कभी याद आता तो वह थोड़ी देर उसी खूंटी से लटक जाता। उसे मन में कहीं खालीपन जरूर महसूस होता। परन्तु जीविका की विवशता, दूसरे ही क्षण शहर की व्यस्तता में खो जाता। काम की लम्बी फर्द उसे फुर्सत भी तो कम देती। उसे तो बस घर मनीआर्डर भेजने की चिन्ता रहती। समय मिलता तो अकेले में मन को पतियाने (मनाने) के लिए वह पिछली रसीदों को निकालता और पारो के अंगूठों को निरन्तर देखता फिर शहर से जुड़ जाता। इसी खुशी में कि उसके गांव लौटने तक पारो हर रोज उसकी राह देखती होगी। कौए उड़ाती बच्चों में मुझे पहचानती मन बहलाती होगी।

उस दिन वह मार्केट से घर लौट रहा था। पड़ोसी घर का नौकर साथ था। पार्क में पहुंचे तो पास वाले क्वाटरों के सामने किसी की पिटाई हो रही थी। आर-पार की खिड़कियां इस तमाशे में व्यस्त थीं। कोई कह रहा था-'लगा साले नू दो और, मां का,-'भैण का-बड़ा मजनू बणेया दा। साले नूं शरम नी औंदी' आदि-आदि।

वह सब कुछ देख-सुन रहा था। उसने ऐसा दृश्य पहले कभी नहीं देखा था। उसका संवेदनशील मन भीतर ही भीतर छटपटाने लगा। वह उसे छुड़ाना चाहता। परन्तु रत्तनू ने उसे बताया 'साला बदमाश है। पास वाले क्वाटर की लड़की से छेड़खानी करता है। आज इनके रगड़े चढ़ा है, अच्छा मोर बना है। मरने दो ...।'उसने निराशा में कहा-'क्या ऐसा भी होता है ?' रत्तनू ने उसे कई कहानियां सुनाईं जिनमें इसी प्रकार फंसने-फंसाने, घर उजाड़ने, लड़कियां भगाने के प्रसंग थे। वह इन सारी बातों को सुनता घटनाओं को निगलता रहा।

रात को बुढ़िया ने खाना दिया तो कहता- 'मां जी, आज दो ही चपातियां देना। कुछ भूख नहीं है।' बुढ़िया ने चाव से दो और दीं परन्तु वह माना नहीं। रात को सोया भी तो नींद कई बार आई-गई। तन्द्रा में अनेक डरावनी आकृतियां दिखाई देती रहीं। बुरे-बुरे सपने आते। कोई अचानक उसकी छाती को दबा लेता। उसके मुंह से चीख निकल जाती। इसी उधेड़बुन में सुबह हो गई। वह फिर दिन की डायरी से जुड़ गया। नलके पर बालटी भरते बुढ़िया ने देखा उसका चेहरा उदास और आंखें लाल थीं। उसने पूछा-'रोसो ! आज सोया नहीं ?' वह कुछ और पूछती रही परन्तु वह एकदम चुप। उसके मुंह पर उतरते भावों से बुढ़िया भांप गई थी, बेचारे को घर की बेदण सता रही है। वह चकित थी, रोसो पहले कभी इतना उदास नहीं देखा। आज अचानक इतना उदास क्यों ? वह उसे बार-बार कहती-'दो दिन ठहर, वे घर आ जाते हैं तो तू गांव हो आना।'

सैरी से एक दिन पहले वह घर आया। इस बार उसने मार्केट में जाकर दोनों बच्चों के लिए रैडीमेड कपड़े, खिलौने, बूटों के दो-दो जोड़े और पारो के लिए बंगे, छोटा-सा पर्स, चपलियां तथा एक सूट भी खरीदा था। मालकिन ने उसके परिवार के लिए सैरी की सौगात भी दी थी। इन सारी वस्तुओं को दो थैलों में बंद कर वह तड़केसार बस अड्डे पर पहुंचा। बस छः बजे जानी थी। वहां उसे अपनी तरफ के दो-चार और मिल गए। उनसे हाथ मिलाता, बीड़ी सुलगाता, सुखसांत पूछता, शहर में होने का एहसास कराता। उसके साथी बार-बार पूछते-'इस बार बड़ी जल्दी जा रहे हो। कोई खास बात है। घरवाली की चिट्ठी आई होगी। मनीआडर नहीं किया होगा ?'

'नहीं यार, सैरी का तिहार आया है। सोचा घर हो आऊं। गांव में सैरी का तिहार देखे काफी चिर हो गई है।'बात टालते हुए उसने कहा।

देर से चलने पर भी बस रास्ते में कई जगह रुक रही थी। आज उसे रास्ता भी कुछ लम्बा महसूस हो रहा था। जब भी बस खड़ी होती तो झट नीचे उतरता, बस के आगे-पीछे घूमता, इधर-उधर कुछ तलाशता पुनः अपनी सीट संभाल लेता। ऊना में बस अड्डे से निकलकर वर्कशाप में जा लगी। वहां तो उसकी बेचैनी की हद हो गई। पीछे आने वाली बसें एक-एक करके आगे निकलती गईं। उसकी बस का तो गेयर ही अड़ गया था। नंगल में टैर का स्यापा पड़ा। सोचता हिमाचल की बसें भी निराली हैं। दूसरी सवारियां भी इसी समस्या को लेकर वर्कशाप के मैनेजर से उलझीं। आखिर चार बजे दूसरी बस लगी। ज्यों-ज्यों दिन ढल रहा था उसके मन में अधीरता बढ़ रही थी। सोचता, चिन्तपूरनी की चढ़ाई में कहीं उसका भी गेयर फंस गया तो रात रास्ते में ही पड़ेगी। ढेर सारी आशंकाएं उसे रह-रह कर घेरतीं। वह माता चिन्तपूरनी से सुक्खणे करता हर मोड़ से दूर दिखाई देते मन्दिर के कलश को मत्था टेकता मन-ही-मन कहता-'मता ! आज सुख से घर पहुंचा दे। रविवार को लौटता हुआ तेरे द्वार भेंटा चढ़ाऊंगा।' इसी ताने-बाने में सायं सात बजे कांगड़ा पहुंचा। अड्डे की दुकान से चार बंडल बीड़ियों के और एक माचिस खरीद कर गांव की ओर चल दिया। रास्ते में दो और मिल गए। बातचीत करते रास्ता आसानी से कट गया।

गांव पहुंचा तो लोग खा-पी रहे थे। कुछ घरों की रोशनियां बंद हो चुकी थीं। चारों तरफ वातावरण गुमसुम। नाले के पार गीदड़ हूक रहे थे। रात का पहला पहर बीत रहा था। वह जल्दी-जल्दी कदम लेता अपने घर की पगडंडी पर उतरा। सामने छत पर दिया टिमटिमा रहा था। वह आंगन में कब जा खड़ा हुआ किसी को कुछ पता नहीं चला। उसे छत पर चूल्हे के पास किसी के बतियाने का आभास हुआ। उसने सोचा, कोई पाहुना आया होगा। शायद साला तिहार लेकर आया हो। उसने अटली पर झोले रखे और द्वार खटखटाया। भीतर सांकल लगी थी। वह लगातार पुकारता-'पारो ! पारो ! पारो !'

छत पर कुछ खुसर-फुसर हुई। 'कौन है, कौन है।' कहती पारो पौड़ियां उतरी। झरोखे से देखा बाहर रोसो खड़ा था। वह तिनके से भी हल्की और पानी से भी पतली हो गई। परन्तु तुरन्त ही स्वयं को संभालते हुए तपाक से द्वार खोला। उसकी उपेक्षित नजरें रोसो को झिड़कती चली गईं। रोसो चुप, स्तब्ध-सा उसका मुंह देखता रह गया। इस बार स्वागत में न वह मुस्कान मिली, न सुखसान्त के दो शब्द, न गलबहियां, न आंखों में मिलन की आतुरता, न हृदय में उल्लास। वह इतना बोली, 'इस बार इतनी जल्दी क्यों चले आए ?'

'बस तुम से, बच्चों से मिलने को जी किया। सैरी का तिहार है, सोचा मिल आता हूं।' उसने एक लम्बी, टूटती उसांस भरते हुए कहा।

'परसों मनीआडर आया। आज तुम आ गए। न कोई चिट्ठी, न पता। कुछ महीने और लगा कर आते। चार पैसे और जुड़ जाते। भाई का ब्याह लिया है।' इतनी सारी बातें वह एक ही सांस में कह गई।

स्थितियों से आहत रोसो ने झोले उठाए, कमरे में गया, कोने में झोले फैंक कर तपाक से खाट पर लेट गया। आज उसका मन बहुत भारी हो रहा था। संदेह एवं आशंका की तरंगे उसके मन को मथ रही थीं। उसका मन बुझ रहा था। आज उसे अपना घर, अपना नहीं लगता। पारो बदल गई थी। उसे उसकी पहचान भूल सी गई थी। वह उसे आज एक अजनबी क्यों लग रहा है ? उसका तिहार पर घर आना अच्छा क्यों नहीं लगा। उसे आज कोई खुशी नहीं, कोई प्यार नहीं। उसे मेरी नहीं, केवल मनीआडर की प्रतीक्षा रहती है। उसे तो भाई के ब्याह की फिक्र है। परन्तु वह मेरे आने पर चकित क्यों है ? मैं उसे आज इतना बुरा भी क्यों लग रहा हूं? मैं उसे चुभ क्यों रहा हूं।

ऐसे विचारों की उधेड़-बुन में उसे महसूस हुआ- छत पर कोई सरक रहा है। पारो की बेरुखी में उसे कुछ सन्देह हुआ। सहसा उसे शहर की वह शाम और क्वाटरों के समाने की घटना याद आ गई। उसके मन ने कहा-'वह सच था।' उसे आज पारो वैसी नहीं लगी जो दो साल पहले थी। उसके रहन-सहन, बनक-ठनक आदि का बदलाव उसके मुंह पर तमाचा जड़ते गये। उसका चेहरा सुर्ख हो गया। मन-ही-मन स्थितियों से निर्णय लेता-देता तन्द्रा में लीन हो गया।

कुछ देर बाद पौड़ियों पर किसी के उतरने की आहट से उसकी आंख खुली, देखा, पारो थाली में रोटी लिए खड़ी थी। वह स्वयं को संभालता रुंधे कंठ से बोला-'पारो आज तू उदास क्यों है? रोटी, यहां क्यों लाई ? चल ! चूल्हे के पास बैठकर खाते हैं।' परन्तु वह नहीं मानी। थाली को ताक में रखती हुई बोली- 'दीये में तेल नहीं है। आग भी बुझ गई है। तू सफर से थका भी तो है, यहीं बैठकर खा ले।' स्थितियों से हारा रोसो मंजे पर बैठा रोटी को तोड़ता बड़े-बड़े ग्रास बनाता निगलने लगा। उसने रोटी कम खाई और पानी अधिक पिया। उसने हाथ धोये और मंजे पर बैठा सोचता- 'पारो उसके पाास बैठेगी। सुख-दुःख बांटेगी, कुछ सुनेगी-सुनाएगी। परन्तु वह तो थाली उठा कर पौड़ियां चढ़ती बोली- 'तू राम कर लै, मैं भांडे-बर्तन मांजकर आई।'

रोसो को यह सब कुछ ड्रामा लगा। वह मंजे पर सपाट लेट गया। उसे थोड़ी देर बाद कुछ ऐसा महसूस हुआ जैसे छत पर खुसर-फुसर हो रही है। घर के पिछवाड़े छपाक सी सुनाई दी। उसे ऐसा लगा-पारो किसी को पिछवाड़े से उतार रही हो। उसका सर दर्द से फट रहा था। शरीर बेकाबू हो रहा था। अनेक शंकायें उसके मन को मथ रही थीं। वह सो जाना चाहता, परन्तु आंख लगती ही नहीं। नाले के पार जंगल में बोलते उल्लू को सुनता और बेचैन हो जाता।

थोड़ी देर बाद वह तपाक से उठा, कोने में सोए पड़े बच्चों को प्यार से देखा, उन्हें बार-बार चूमा और फिर मंजे पर लेट गया। पारो का व्यवहार, बच्चों की प्यारी सूरतें, चण्डीगढ़ का हादसा सबके स्मरण उसके मन में उभरते, फैलते, मिटते रहे। स्थितियों का विष उसकी नस-नस में रचता-पचता रहा। वह पारो से अपने सवालों का उत्तर चाहता हुआ भी पूछ नहीं सका। या फिर उसे अपने सवालों के उत्तर मिल चुके थे। सारा घर सो रहा था पर वह

-

सैरी की सुबह होते ही सारा गांव एक अनहोनी घटना की पकड़ में छटपटा रहा था। नाले में जंगल-पानी से लौटते लोग विभिन्न प्रकार की आशंकाओं से ग्रसे थे। सब के मन में एक अजीब सा संत्रास था। चाहते हुए भी कोई किसी से कुछ नहीं कहता। ज्यों-ज्यों दिन सरकता गया, हवा के साथ बात फैलती गई। लोगों के अनुमान मिले। गांव की पंचायत को सुराग मिला। लंबरदार ने चौकीदार को साथ लेकर मौका देखा। नाले के पार, एक बड़ी चट्टान की आड़ में उधमुंहा शव पड़ा हुआ था।

राजमंदिर परिसर नेरटी, पो. नेरटी, तह. शाहपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 208, मो. 0 94181 30860

कहानी

एक किसान की शव यात्रा

● डॉ. पवन कुमार खरे

दिन ढल चुका है। स्कूल की छुट्टी हो चुकी है। बच्चे चिल्लाकोट करते हुए भेड़ियों की तरह स्कूल से निकल रहे हैं। अभी कुछ देर पहले आसमान बादलों से ढका था, पर इस समय एकदम साफ नीला दिख रहा है। विद्यालय के सामने बस आकर खड़ी हो गई है। पूर्णिमा मेडम, सुनीता मेडम बस पर चढ़ रही हैं। मैं प्राचार्य स्कूल से निकलकर सुभाष सर के साथ घर जा रहा हूं। सामने गायों का झुंड धूल गुबार उड़ाता हुआ चला आ रहा है। मैं रास्ते से उतरकर नीचे किनारे पर चलने लगता हूं। सुभाष सर सीना ताने गायों के झुंड के बीच घुसकर ऐसे चल रहे हैं जैसे गायें उनके पूर्व जन्म की सहेलियां हों। तभी दो बैल सींग लड़ाते हुए आपस में भिड़ गए। भगदड़ मच गई। सुभाष सर डर के मारे गायों को एक तरह धक्का मारते भागकर मेरे पास आते हैं। चरवाहा ठहाका मारकर हंसता है। खैरियत है किसी ने सींग तो नहीं मारी।

फाल्गुन का महीना है। विदा लेती ठंड अपना अंतिम जोर मार रही है। आम के पेड़ मोरों से लदे हैं। महुए के पेड़ों से मिठास भरी खुशबू आ रही है। सूरज पेड़ों के पत्तों के झुरमुटों के बीच से झांक रहा है। मैं अपने कमरे में जाकर धम्म से बिस्तर पर लेटता हूं। सुभाष जी घर चले जाते हैं।

रात्रि के आठ बजे हैं। खाना खा लेने के पश्चात् सोच रहा हूं थोड़ा टहल लूं। बाहर निकलता हूं। आसमान में काले बादल मंडराने लगे। तूफान के आसार दिखने लगे। ठंडी पुरवाई हवा चलने लगी। चंद्रमा बादलों में छिप जाता है फिर निकल आता है। सभी बादलों ने मिलकर आसमान को ढक लिया है। तारे टिमटिमाते हुए छिप गए। घना अंधेरा पसर गया। मैं सीधा चला जा रहा हूं आगे दिहाड़ी किसानों की बस्ती की ओर। दिहाड़ियों की बस्ती के दूसरे छोर पर स्थित पहाड़ के शिखर पर लगे घने वृक्षों को सहलाती मेघमालाओं को देख मेरा मन खो रहा है। बस्ती में घना अंधेरा है पर कहीं-कहीं फानूसों की टिमटिमाहट दिख रही है आसमान के घने अंधेरे ने बस्ती के अंधेरे को गले लगा दिया। घुप्प अंधेरा छा गया। सारी बस्ती ब्लेकहोल जैसी दिखने लगी। यदि कोई भूला बिसरा राहगीर बस्ती में घुस जाए तो निकलना मुश्किल है। आसमान में गरजती मेघ मालाओं को देख दिहाड़ी किसानों की झुग्गियों के अंदर से प्रार्थनाएं और गुहारें निकल रही हैं। पास ही मंदिर का पुजारी शंख बजाने लगा। घंटियां बजने लगीं। हल्की बारिश शुरू हुई। मुझे बरसाती बूंदों में पुलक का अनुभव हो रहा है। घने अंधेरे को देख कमरे की ओर लोट रहा हूं। कमरे में आकर धम्म से बिस्तर पर लेट जाता हूं। थोड़ी ही देर में बादलों की गर्जना शुरू होती है। तेज बिजली चमकती है। हड़बड़ाकर उठता हूं। ओले गिरने शुरू होते हैं। करीब सौ-सौ ग्राम तक के ओले आसमान से गिर रहे हैं। आसमान पत्थरबाजी करने लगा। कच्चे घरों के खप्पर टूट-टूटकर चकनाचूर होने लगे। खप्परों को फोड़कर ओले घरों के अंदर गिरने लगे। राजपूतों के पक्के घरों के मकानों की छतों पर ओले टूट-टूटकर चकनाचूर हो रहे हैं पर उनकी आवाज दूर-दूर तक सुनाई दे रही है। मंदिर के अहाते पर विशाल बरगद के पेड़ पर सोये हजारों तोते ओलों की मार से गिरकर जमींदोज हो गए। पास ही महुए के पेड़ पर सोए कुछ गिद्द भी जमीन पर फड़फड़ाते गिरे सिर्फ कबूतर मंदिर की मेहराबी गुंबद पर बने घरोंदे में सुरक्षित सिकुड़ गए। आज करीब एक घंटे तक ओलावृष्टि होती रही। रात भर रुक-रुक कर बारिश होती रही। ठंडी हवा चलती रही।

सुबह के सात बजे हैं। मैं सोकर उठा हूं। आसमान साफ दिख रहा है। गांव में हलचल मची है। मैं टहलने के लिए दिहाड़ी किसानों की बस्ती की ओर जा रहा हूं। विशाल पहाड़ के नीचे बसी दिहाड़ियों की बस्ती जिसमें कुछ झुग्गियां तो पहाड़ की ऊंचाई तक बनी हैं। पहाड़ के सीने तक दिहाड़ियों ने कब्जा कर रखा है। सारी झुग्गियां तबाह हो चुकी हैं फिर भी दिहाड़ी एक दूसरे को ढांढस बंधाते हुए मरम्मत करने में लगे हैं। अधनंगे बच्चे, बूढ़े, वृद्ध महिलाएं सभी ठंड से ठिठुर रहे हैं। सभी मरम्मत करने में लगे हैं जिससे बुजुर्गों, महिलाओं, बच्चों को खुले आसमान में न रहना पड़े।

मेरी नजर विद्यालय की बारहवीं कक्षा की छात्रा कणिका पर पड़ती है जिसका घर का नाम कल्लो है। उसकी मां झुग्गी के अंदर भरे पानी को उलींच कर बाल्टी में भरकर बाहर फेंक रही है। कणिका छज्जे को जो गिर गया है लगा रही है। उसी समय उसका पिता गोविंददास ठंड में कांपता, भीगता खेत से आता है। पत्नी से

कहता है- "फूलबती। मावठा उठी गौहूं की सभी बालियां जमीन पर पटक गई। फूलता फलता छोर जमींदोज हो गया। अरहर की फूलती-फलती फलियां जो कल तक लहलहा रही थीं, इन ओलों ने मिट्टी में मिला दिया। मावठा उठी घनी फसल को देख ऐसा लगता था कि इस बार जयसिंह दाऊ साहब का एक लाख रुपये का ऋण जो चढ़ा है, उसका आधा पचास हजार रुपये तो चुका ही दूंगा, पर फाल्गुन के इन बादलों ने कहीं का न छोड़ा। कैसे चुका पाऊंगा फूलबती दाऊ साहब का ऋण। ऋण न चुका पाने पर वह जान ले डालेगा।"

बिना हजामत, चिपके गाल, अंदर घुसी आंखें, मैला साफा जिसमें कुछ बाल बाहर निकले हैं। पिचका पेट जो पीठ से लग चुका है। गंदा चीकट कुर्ता गीला होकर शरीर से चिपका है। इतना झीना है कि सीने की सभी पसलियां दिख रही हैं। लुंगी गीली होकर पैरों की हड्डियों से चिपकी हैं। पानी टपक रहा है। ठंड में पूरा

शरीर कांप रहा है। अंदर की घबड़ाहट से हृदय कांप रहा है। पति को व्याकुल-विह्वल, देख फूलबती दुखी तो हो गई पर अपना दुख छिपाते हुए बोली, "काये को चिंता करते हो। ऊपर वाले ने जब इतनी बड़ी विदा दी है तोड़ भी वही निकालेगा। मन का हो तो भला, न हो तो भला। अपने मन का नहीं हुआ। ऊपर वाले के मन का हुआ है। ऊपर वाला कुछ सोच समझकर कर रहा है। जो करेगा अच्छा ही करेगा। संतोष रखो।"

फूलबती की ढांढस सुन गोविंददास के अंदर का गहरा परिताप, संताप कम नहीं हुआ। गांव के पुराने जमींदार जयसिंह की 25 बीघा जमीन खेती में बटिया पर ले रखी है। उसके ऊपर एक लाख का ऋण है जो समय-समय पर ले रखा था। लिया तो था बीस हजार रुपये पर अनाप-सनाप ब्याज होते-होते एक लाख रुपये हो गया। इस बार अपनी बंपर फसल को देख-देख उसे आशा बंध चुकी थी कि अच्छी आमद मिलने से आधा ऋण पचास हजार तो चुका ही दूंगा पर उसकी बारह आना फसल तबाह हो गई सिर्फ चार आना ही रह गई। ओले गिरने की आशंका से वह भरी अंधेरी रात में खेत की तरफ भागा था। मावठा उठी फसल को लालटेन लिए अंधेरे में ओलों की मार सहता हुआ तबाह होते देखता रहा। उसकी सभी आशाएं जमींदोज हो गईं। रातभर का थका मांदा आया गोविंददास सोच रहा है ब्याज की किस्त न चुका पाने पर जयसिंह अपनी हवेली की जी हजूरी कराएगा। गाली गलौज करेगा। बेटी बड़ी हो चुकी है। उसकी शादी करना है। इसी सोच में डूबा खटोली पर आकर लेट गया। आने वाली झंझटों, मुसीबतों, परेशानियों को सोच-सोच व्याकुल होकर सिर को दाएं-बाएं हिला रहा है। सीने को नाखूनों से खुजला रहा है। अधपके बालों को पकड़कर खींच रहा है। गुस्से में दांत किटकिटाता रहा है। पैर पटक रहा है। ऊंची श्वास भर रहा है। हायभरी गहरी पीड़ा निकलती है।

फूलबती चूल्हा जला रही है। लकड़ी गीली होने के कारण धुंधया रही है। फूक-मार-मार कर चूल्हा जलाती है। रोटी सेकती है। सूखी रोटी नमक के साथ मिलाकर गोविंददास के पास रखती है। कहती है, "खाना खा लो। कल दिन भर से भूखे हो। रात में भी नहीं खाया। दुखी होने से क्या होगा। हम लोग कोई दूसरा काम करके ब्याज चुका देंगे।"

गोविंददास कहता है, "फूलबती! कहां से चुका पाएगा। इन ओलों ने सब कुछ तो तबाह कर दिया।" ऐसा कहते हुए वह थाली को दूर खिसका देता है।

कणिका पीछे से आवाज लगाती है, "मां, देख तबे पर रोटी जल रही है। काली पड़ गई।"

फूलबती चूल्हे के पास जाती है। आग में काली पड़ चुकी रोटी बाहर निकालती है। नई लोई तबे पर रखती है। कणिका स्कूल जाने के लिए तैयार होती है। जाने से पहले पिता से कहती है, "पापा उठो। परेशान मत हो। ओलों ने सिर्फ अपना ही नहीं बिगाड़ा। सारा गांव उजाड़ दिया। आप अकेले तो नहीं हो। मैं सब निपट लूंगी। मुझे अपनी पढ़ाई तो पूरी कर लेने दो। ऐसा कहते हुए वह स्कूल जाने लगती है।"

गोविंददास दिनभर खटोली में लेटा-लेटा परेशान होता रहा। फूलबती झुग्गी की सफाई करती रही। शाम को पांच बजे सारा आसमान साफ हो गया। विधायक जी अपने मुस्तंडों के साथ मेरे रेवारी गांव आए। उनके साथ जिले के कलेक्टर और जिला प्रशासन के सभी अधिकारी थे। फसल की तबाही और ध्वस्त हो चुकी झुग्गियों का जायजा लेने के पश्चात् सभी दिहाड़ियों को पांच-पांच हजार रुपये की सहायता राहत राशि देने की घोषणा करके चले गए।

शाम को कणिका स्कूल से लौट कर आती है। कहती है, "पापा! बिलकुल दुखी मत हो। हमको पांच हजार रुपये की राहत राशि मिलेगी। विधायक जी ने घोषणा की है।

गोविंद कहता है, "बेटा क्या होगा पांच हजार में। दो लाख की फसल तबाह हो गई। इन घोषणाओं से क्या होता है? अफसरों की बदमासियां, झिड़कियां, सरकारी कमीनापन, आफिसों के फाइलों में पड़ी रह जाएंगी घोषणाएं। हम जैसे गरीब किसानों को गिड़गिड़ाना कोई नहीं सुनेगा। ऑफिसों के चक्कर लगाते रह जाएंगे। अधिकारी सब हजम कर जाएंगे।"

पिता की बात सुन कणिका चुप हो गई।

रात हो चुकी है। सुबह की बासी रोटी नमक के साथ मिलाकर कणिका खा रही है। मां से कहती है, "तू भी खा ले मां।"

फूलबती कहती है, "बेटा! मैं नहीं खाऊंगी। इन्होंने नहीं खाया। इनके भूखे रहने पर मैं एक अन्न का दाना भी नहीं खा सकती।

दिनभर की थकान के कारण फूलबती छरी बिछाकर नीचे लेट गई। कणिका मां के बगल में लेट गई। अत्यधिक थकान से दोनों को नींद आ गई।

गोविंददास को नींद नहीं आ रही है।

रात अंधियारी हो रही है। दूज का चांद क्षितिज के उस पार जा रहा है। फिर आसमान में काले बादल आ गए। थोड़ी ही देर में आसमान काला हो गया। फटने लगे बादल। गोविंददास का हृदय फटने लगा। ठंडी-ठंडी हवा झुग्गी में आने लगी। गोविंददास के मन की चिंताएं प्रज्वलित हो उठीं। सोचने लगा कल की रात के ओलों ने बाहर आना फसल तबाह की थी अब यदि ओले गिर गए तो सोलह आना फसल तबाह हो जाएगी।

चारपाई से हड़बड़ाकर उठता है। बाहर निकलता है। काले बादलों को देख घबड़ाता है। मेघों की गर्जना सुन कांपता है। पास ही मंदिर का पुजारी शंख बजाता है पर बादल नहीं मानते। फिर शुरू हो जाते हैं ओले। गोविंददास बादलों को देख निस्तब्ध खड़ा रहता है। ओले उसके शरीर पर चोट कर रहे हैं। उसमें ज्यादा गहरी चोटें उसकी आत्मा पर हो रही हैं। पागलों सा खड़ा-खड़ा काले बादलों को कोसता हुआ चिल्लाकर कहता है, "गिर लो, जितना गिरना हो। कर लो, अपना जी शांत। मुझे जिंदा मारने पर उतारू हो तो मार डालो।"

करीब दस मिनट तक ओले गिरते रहे। आज के ओलों ने उसकी चार आना बची खुची फसल भी तबाह कर डाली। पूस में उठे मावठे को फाल्गुन के ओलों ने मार डाला। ओलों की मार से पूरी फसल तबाह होते देख गोविंददास असहाय होकर अंदर से रिसा गया। पगला गया। सारा विवेक खो बैठा। तबाह हो चुकी फसल की पीड़ा से छटपटाया हुआ झुग्गी के अंदर गया। टांड पर रखी सल्फास की शीशी उठाई। खोलकर सारी गोलियां गटक गया। पूरा शरीर भीगा था। उसका कुर्ता और पंछा शरीर से चिपका हुआ था। घबड़ाया हुआ खटोली पर लेट गया। थोड़ी ही देर में अंदर से गहरी घबड़ाहट हुई। करवट लेकर उसने नीचे दरी पर सोई फूलबती और बेटी कणिका को देखा। घबड़ाई आंखों से आंसुओं की बूंदें टपकने लगीं। ये उसकी अंतिम बूंदें थीं जो बहुत कुछ कहना चाह रही थीं पर मौन थीं। पुनः करवट लेकर सीधा लेट गया। विष के प्रभाव से बुरी तरह तड़प गया। भीगी-भीगी आंखों से चारों तरफ आंख फाड़ता हुआ देखने लगा। कुछ ही देर में आंखें खुली की खुली रह गईं। उसकी खुली हुई आंखों से उसके हृदय का सत्य झांक रहा था। माथे पर त्यौरियां चढ़ी थीं जो उसके क्रोध वितृष्णा के भाव को बतला रही थीं। अभाव भरी जिंदगी में उसके चेहरे की न जाने कितनी आकृतियां विकृतियां बनती बिगड़ती चली आई हैं। पर आज की विकृति भरी आकृति उसे दूसरे संसार की ओर ले जा रही है। दरिद्रता का कलंक इनसान से क्या क्या नहीं करवा लेता। इसका साक्षात् प्रमाण आज उसके चेहरे की अंतिम आकृति बतला रही है। खटोली से पानी की बूंदें टपक रही हैं। शायद खटोली भी उसके गहरे संताप, परिताप, कुछ न कर पाने की मजबूरी के दुख से दुखी हो रही है। सभी अनुभूतियां शून्य हो चुकी हैं।

सुबह हो चुकी है। कणिका और उसकी मां सोकर उठी हैं। फूलबती पति का पैर सहलाती है। खड़ी होती है। खुली हुई आंखें, निष्पंद, पुतलियां देख घबड़ाकर कहती है, "कल्लो! देख तो तेरे पापा को क्या हो गया।"

कणिका पिता का सिर हिलाती है। कहती है, "पापा उठो, आंखें खोलो। क्यों लेटे हो। क्या हो गया आपको?"

कोई जवाब नहीं। शरीर निष्पंद पड़ा है। हाथ-पैर कड़क हो गए हैं।

पास ही बगल की झुग्गी में जाती है। बूढ़ा दिहाड़ी जो अभी अभी खांसता हुआ उठा है। कहती है, "कक्कू देखो तो पापा को क्या हो गया?"

कक्कू जिसका नाम सुकिया है। आता है। पुतलियां दोनों हाथों से बंद करता है। खुले मुंह के जबड़े को दबाता है। मुख बंद करता है। सीने को अंगुली से टक-टक करता है। छाती के पास कान लगाकर सुनता है, फिर ऊंची श्वास भरता गंभीर होकर कहता है, "कल्लो! तेरा बाप अब नहीं रहा।"

सुकिया के ये शब्द कटार की तरह फूलबती और कणिका के हृदय में घुसते हैं। कणिका 'पापा-पापा' चिल्लाती पिता की अस्थिपंजर काया से लिपटती है। फूलबती उसके पैरों पर सिर रखकर दहाड़ती, रोती है। रोने की आवाज सुन सभी दिहाड़ी आते हैं। दिहाड़ियों की औरतें भी फूलवती के साथ विलाप करने लगती हैं। कुछ औरतें नीचे गोबर से लीपती हैं। उस पर जौ का आटा छिड़कती हैं। दिहाड़ी गोविंददास के शव को उठाकर नीचे लिटा देते

कणिका चुप खड़ी है। फूलबती सबको दया भरी नजरों से देखती हैं। सभी परिचित झुग्गीवासी अपरिचित से लगते हैं। कोई कफन देने को तैयार नहीं। रोती, चीखती फूलबती अंदर जाती है। अपनी मैली चीकट भरी साड़ी उतारती है। पानी में भीगा गंदा पतला झीना कंबल लपेटती है। बाहर आती है। उतारी हुई साड़ी पति को ओढ़ाती है। रोती चिल्लाती उसके पैरों पर मत्था टेकती है। कुछ दिहाड़ी शव पर फूल डालते हैं। गुलाल लगाकर मुंह को लाल करते हैं। शव यात्रा चलना शुरू होती है।

हैं।

दिन के बारह बज चुके हैं। आसमान साफ हो चुका है। बादल रातभर अपनी मनमानी करके आसमान से नदारद हैं। सिर्फ एक बादल का बड़ा टुकड़ा आसमान में भागता हुआ चला जा रहा है। फूलबती, कणिका के रोने की आवाज रुक-रुक कर आ रही है। बाहर अर्थी तैयार हो चुकी है। मंदिर का पुजार क्रिया-कर्म करने हेतु आ चुका है। हमारे रस्मों की यही तो खासियत है कि कोई अपने अजीज की मौत को पूरी तरह स्वीकार नहीं कर पाता, क्रिया-कर्म की ओर ढकेल दिया जाता है। चार दिहाड़ी गोविंददास के शव को अर्थी पर रखते हैं। मां बेटी शव से लिपटती हैं। दिहाड़ियों से छीना झपटी करती हैं। चिल्लाती हैं। रोती हैं। दूसरी औरतें फूलबती को पकड़ती हैं, समझाती हैं।

चीकट भरा गंदा कुर्ता, गंदी लुंगी पहने गोविंददास के शव को अर्थी पर रखा जा रहा है। पंडित मंत्र पढ़ता हुआ चिल्लाकर कहता है, "अरे! कफन तो लपेटो इस पर।"

फूलबती सभी को धकियाती हुई गोविंददास के शव के पैरों से लिपटकर रोती है।

पंडित फिर चिल्लाकर कहता है, "कफन तो लपेटो।"

सब चुप खड़े हैं।

सुकिया कहता है, "कल्लो बेटा! सफेद रंग की कोई चादर, धोती हो तो पिता को ओढ़ा दे।" कणिका चुप खड़ी है। फूलबती सबको दया भरी नजरों से देखती हैं। सभी परिचित झुग्गीवासी अपरिचित से लगते हैं। कोई कफन देने को तैयार नहीं। रोती, चीखती फूलबती अंदर जाती है। अपनी मैली चीकट भरी साड़ी उतारती है। पानी में भीगा गंदा पतला झीना कंबल लपेटती है। बाहर आती है। उतारी हुई साड़ी पति को ओढ़ाती है। रोती चिल्लाती उसके पैरों पर मत्था टेकती है। कुछ दिहाड़ी शव पर फूल डालते हैं। गुलाल लगाकर मुंह को लाल करते हैं। शव यात्रा चलना शुरू होती है। कणिका रोती, बिलखती अर्थी के साथ-साथ चलती है। एक काला बूढ़ा दिहाड़ी मटके के कंडे को सुलगाए लटकाए हुए आगे-आगे चल रहा है। रामनाम सत्य है कि सामूहिक आवाज के साथ यात्रा आगे बढ़ रही है। गंदे नाले के पास कचरे के ढेरों पर कीचड़ सने सुअर थूथन उठाकर देख रहे हैं। कुत्ते भौं भौं कर रहे हैं। एक दिहाड़ी अर्थी पर कुछ पैसे बतासाओं के साथ फेंकता हुआ आगे बढ़ रहा है। दिहाड़ियों के बच्चे इन्हें बीनने हेतु छीना झपटी कर रहे हैं। खेतों के बीच बनी पगडंडी से यात्रा आगे बढ़ती है।

गेहूं की बालियां गिरकर जमींदोज हो गईं। कुछ गेहूं के पौधे जमीन की ओर झुक गए। कुछ अंतिम श्वासें निकाल रहे हैं। इक्के-दुक्के ही सीना ताने खड़े हैं। शायद गोविंददास की अर्थी को अंतिम सलामी दे रहे हैं। चना पूरा धराशायी होकर जमीन पर पड़ा है। आम, जामुन, महुए के वृक्ष ओलों की मार से मुरझाए हुए खड़े हैं। आगे खेतों के उस पार पीपल के पेड़ के नीचे शनि मंदिर के सामने अर्थी को नीचे रखा जा रहा है। पंडित मंत्र पढ़ता है फिर अर्थी को यूटर्न देकर यात्रा शुरू होती है। कणिका एक दिहाड़ी को हटाकर पिता को कंधा देती है। सीमेंट के खंभे से लगा 'जय जवान जय किसान' का पोस्टर गीला होकर उलटा लटका हुआ है। शव यात्रा मेरे विद्यालय से गुजरती है। मैं कणिका को पिता की अर्थी में कंधा देते हुए देख रहा हूं। विद्यालय की छात्राएं रोती आंसू बहाती यात्रा में शामिल हो रही हैं। मैं सुभाष सर एवं अनाथ आश्रम की संचालिका श्रीमती रमा के साथ शव यात्रा में शामिल होता हूं। कंधा देता हूं। यात्रा यम मंदिर के सामने चबूतरे तक पहुंचती है। अर्थी को चबूतरे पर रख दिया जाता है। कणिका मां की साड़ी से लिपटे पिता के चेहरे को उघाड़कर देखती है। अविश्वास से अपना सिर हिलाती है। आंखों से कुछ बूंदें पिता के चेहरे पर गिरती हैं। अनाथ अक्षम की संचालिका रमा कणिका को पिता से दूर करती है, उसे बांहों में भरकर समझाती है। स्कूल की कुछ छात्राएं कणिका से लिपटकर रोती हैं।

चिता तैयार हो चुकी है। कणिका मुखाग्नि देती है। धाय-धाय जलती चिता से चट-चट की आवाज आ रही है। सभी लोग पंच लकड़ी दे रहे हैं।

सभी दिहाड़ी लौटकर घर आते हैं। फूलवती झुग्गी में बदहोश पड़ी बड़बड़ा रही है। कणिका मां के आंसू पोंछ समझा रही है।

इतना सब कुछ बड़ी हड़बड़ी, विशुद्ध और यथार्थ ढंग से निपट गया कि शाम होते-होते सभी दिहाड़ी अपनी-अपनी झुग्गियों की मरम्मत में लग गए।

196, शिवाजी पार्क कॉलोनी,
उज्जैन, मध्य प्रदेश-456 010

कहानी

तू मेरा श्रवण कुमार है...बेटी

● डॉ. राम प्रसाद 'अटल'

दिसंबर की सर्दियां। मांस तो छोड़ो हड्डियां भी गल रही थीं। बचाव के लिए लोगों ने ऊनी, सूती, सारे कपड़े निकाल डाले। विवशता उनके लिए, जिन्हें रोज़ कमाना रोज़ खाना, सिर से लेकर पैर तक ढके, आंख से, नाक से पानी चू रहा। चाय की ऐसी कोई दुकान नहीं जिसमें दस-पांच लोग खड़े न हों। सिगरेट, बीड़ी फूंकने वाले भी कम नहीं, कुछ तो गर्मी को धोखा देते हैं। साइकिल/स्कूटर! सभी सर-सर करके भाग रही थीं। सभी को समय की पाबंदी करनी थी। उनकी सर-सर पैदल वालों को हवा देती या यूं कहें कि दर्द ही देती थी, क्योंकि उस सर-सर से वायु का झोंका प्रतीत होता था।

ऐसे में एक युवती केवल एक साड़ी फटी सी पहने, हाथ में कोयला लिए सड़क किनारे एक मकान के पीछे लिख रही थी कि मैं 'विवश हूं' 'इसलिए अपने आपको बेचना चाहती हूं।' नारी का आकर्षण, फिर दिवार पर लिखना, कुछ पुरुषों की भीड़, एक-एक को अलग फाड़ता, अलग करता युवती के पास पहुंचता और दीवार पर लिखा नोटिस पढ़ता और बड़े गौर से उस युवती को निहारता।

कुछ ने तो युवती को कोने में ले जाकर गुप्त बातें कीं, और युवती ने सिर हिलाया, सिर हिलाने की भी भाषा होती हैं। यदि सिर को दाएं-बाएं हिलाएं तब अस्वीकृति होती है और यदि सम्मुख ऊपर-नीचे तब स्वीकृति मानी जाती है। कई लोग बढ़ते गए और कई लोग सड़क पर टहलने लगे, हो सकता है कि वो मन ही मन जोड़-घटाना लगा रहे हों।

युवती का दर्द कोई खरीदने को तैयार न था और उसका शरीर लगभग सभी खरीदने को तैयार थे। पहले के लोग आगे बढ़ते गए और नए लोग आते गए, किंतु कोई भी खरीददार न मिला। प्रातः की ड्यूटी वाले छंट गए और धीरे-धीरे आठ का समय हो गया। युवती का मुखमंडल धूल-धूप से मलिन पड़ गया था। वह इधर-उधर देखे और सैकड़ों आदमी निकल गए। युवती का बिक्री का सौदा न हुआ। उसके सामने से भीड़ तो कम नहीं होती, लोग आते, रुकते, घोषणा पढ़ते और आगे निकल जाते, भीड़ तो कम न होती, भीड़ को देखने एक वरिष्ठ व्यक्ति ग्रेटकोट पहने, टोपा लगाए, हाथ में छड़ी और उसी से कुछ कम आयु की स्त्री भी पास आकर खड़े हुए। दोनों ने दीवार पर लिखी घोषणा पढ़ी। पत्नी ने एकांत में जाकर उसकी वेदना पूछी और फिर पति के कान में कह दी। दोनों एक दूसरे का मुंह ताकने लगे और कई मिनट तक शांत खड़े रहे। दोनों ने एक दूसरे की मौन भाषा पढ़ी और कुछ चर्चा की, और दोनों ने अपना-अपना निर्णय युवती को बताया। युवती ने पुनः सिर हिलाया। अब कि बार दूसरा भाव था। अर्थात् सम्मुख ऊपर-नीचे।

युवती ने साड़ी से दीवार पर लिखी घोषणा मिटाई और उस दंपति के साथ चल दी। वहां खड़े लोग आश्चर्यचकित रह गए और जिसके दिमाग में जो कुछ आया वही समझ बैठा। कुछ कहने लगे, 'यह साला खूसड़ उस युवती का क्या करेगा?' दूसरा बोला, 'गुलफाम को मिलगई सब्ज़परी।'

पुरुष में तो कैलाशनाथ एवं नारी थी जयंती। पुरुष सेवा से अवकाशप्राप्त मेजर और नारी सैनिक स्कूल से अवकाशप्राप्त हेड-मिस्ट्रेस। दो बेटे धीरज और नीरज अमेरिका में उच्च पद पर। दोनों ने खाना बनाने के लिए एक बाई रख छोड़ी थी। सुबह-शाम दोनों वायुसेवन करते, समाचार पत्र पढ़ते, चिंता उनके घर पर नहीं गई थी। जीवन में सोचते कि कुछ उपकार करने को मिले ऐसे पुरुषों की भगवान हर समय सहायता करता है। तुलसी की चौपाई इस सत्यता की गवाह है, 'जो इच्छा कहि हौं मन माही/राम प्रताप से दुर्लभ नाही।'

उस युवती ने कैलाशनाथ और जयंती के सामने हृदय खोलकर दिया। "अंकल मेरा नाम नीरजा है, इंटर पास, यहीं के स्कूल में टीचर थी, मां लकवाग्रस्त और पिता का पैर टूटा है। जो कुछ कमाया इलाज में लगा दिया और बीमारी में नौकरी छूट गई, जिससे भी मदद मांगी। उसने पहले मेरा शरीर मांग लिया, ऐसी बहुत बड़ी लाइन लग गई। नारी को कितना विवश बना डाला है पुरुष ने जबकि आधा संसार नारियों से भरा है और नारी उसकी मां भी है। संसार कहता है कि अगर बेटा होता तो मां-बाप की सेवा करता, जगत में इतनी भ्रांति है कि लड़कियां तो कुछ करती ही नहीं। मैं श्रवण कुमार तो नहीं, जो इन्हें तीरथ कराती। मैं

आपका खाना बनाऊंगी, आपका घर का काम करूंगी। आप मेरे माता-पिता को पुनर्जन्म दे दीजिए।" इतना कहते-कहते उसकी आंखों से गंगा-यमुना बह निकली।

"यदि डॉक्टर के समक्ष पूरी सही वेदना बता दें तो इसका सही इलाज मिल जाता है।" डॉक्टर भी समस्त अनुभव और उपलब्धि मरीज को समर्पित कर देता है। भगवान के बाद दूसरा जीवन दाता डॉक्टर ही होता है।

कैलाशनाथ और जयंती दोनों ही वेदना से आहत हो गए और नीरजा को आश्वासन दिया कि हम भगवान तो नहीं हैं, परंतु साहस भर सहायता करेंगे, तुम हताश न हो।"

नीरजा को लगा कि उसे किसी ने मझधार से निकाल लिया
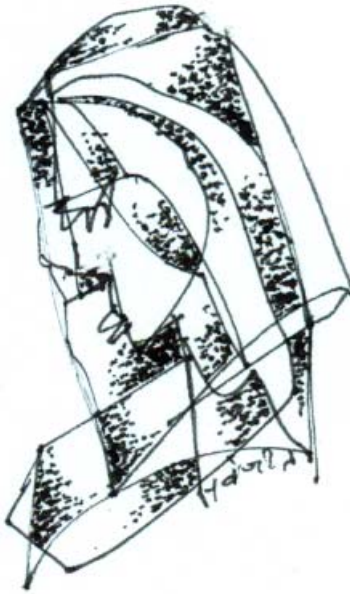
है। दोनों ने उसे पांच सौ रुपये दिए और कहा कि खान-पान व्यवस्था और दूध का प्रबंध कर लो, और एक वृद्ध डॉक्टर को घर भेजा जांच के लिए। उसने नीचे से ऊपर दोनों की जांच की, और उपचार आरंभ कर दिया। दोनों को सुबह-शाम पाव भर दूध के साथ कुछ औषधियां दीं।- दोनों माता-पिता को निराशा के भंवर से बाहर निकालने। कभी-कभी कैलाशनाथ और जयंती देखने को आ जाते और साहस बंधा जाते।

माता-पिता को रस-रक्त देने वाला भोजन मिलने लगा, भोजन तो शरीर को पूरी ऊर्जा देता ही है, मांस एवं रक्त का श्रोत भोजन है, दीन दुबले क्यों होते हैं? पौष्टिक भोजन के अभाव में, क्योंकि दीनता सबसे बड़ी बीमारी है। प्रतिवर्ष सैकड़ों लोग भूख से मर जाते हैं।

प्रकृति ने जहां जीवधारी पैदा किए हैं वहां खाद्य भी पैदा किया हैं प्रकृति का अवदान जीवधारियों के लिए अमृत है। संसार में दो प्रकार के जीवधारी पाए जाते हैं एक हृष्ट-पुष्ट और दूसरे क्षीण काय। जिनको पौष्टिक भोजन मिला वे हृष्ट-पुष्ट होते, शेष क्षीण काय और यही रोगों का कारण भी है। प्रारब्ध भी दो प्रकार के होते हैं, तभी गरीब और अमीर, हृष्ट-पुष्ट और क्षीणकाय बनते हैं। नीरजा का परिवार द्वितीय श्रेणी का है। गरीबी से ही लोग बीमार पड़ जाते हैं।

कैलाशनाथ ने डॉक्टर की दी हुई औषधि एवं तेल एक व्यक्ति के द्वारा भिजवाकर हाल पुछवाया। इलाज दोनों पर प्रभाव करने लगा। नीरजा दोनों को धूप में बिठाकर मालिश करती, हल्के गर्म पानी से स्नान भी करवाती। अब दोनों के चेहरों पर कुछ आभा दिखने लगी। नीरजा को भी धैर्य प्राप्त हुआ। उसके हृदय में विश्वास जागा कि अब अनचाहा उसका शरीर-मर्दन कोई नहीं करेगा।

एक माह बाद कैलाशनाथ के दोनों पुत्र अमरीका से आए कुछ दिन रहे और दोनों ने पिता की ओर से पांच-पांच हजार रुपये नीरजा को सहायतार्थ दिए और विश्वास दिलाया कि तुम्हारें मां-बाप शीघ्र ही स्वस्थ हो जाएंगे। नीरजा को लगा कि भगवान ही भेष बदलकर आते हैं सहायता करने। नीरजा गदगद हो गई। दोनों नयनों से झरने बह निकले। भगवान भी यथार्थ आवश्यकता की परीक्षा लेता हैं उसे छल-कपट बिलकुल पसंद नहीं।

दो माह बाद नीरजा के माता-पिता लकड़ी टेक कर आंगन में कुछ घूमने लगे। नीरजा के मुख-मंडल की आभा बदली। हार्दिक प्रसन्नता मानव जीवन के लिए बहुत बड़ा टॉनिक है। एक दिन ठंड कुछ कम थी सूर्य पर बादलों का अतिक्रमण था। धूप में कुछ उष्णता थी और वह विटामिन 'डी' का प्रसार कर रही थी। नीरजा ने कुछ पानी गर्म कर दोनों के शरीर पर ड्रायक्लीन किया, तब चेहरे खिल गए। दोनों को पीढ़े पर बिठाया और रोटी के छोटे-छोटे टुकड़े कर दोनों को खिलाए। ऐसा उलट दृश्य प्रतीत हो रहा था जैसे कोई बुजुर्ग अपने शिशुओं को खाना खिला रहा हो।

माता-पिता के नयन अश्रुमय हो गए और एकाएक पिता के मुख से निकल पड़ा, "नीरजा! तू मेरा श्रवण कुमार है।" उसने वृद्ध माता-पिता को तीरथ धाम के दर्शन कराए थे, तूने हम दोनों को पुनर्जन्म दिया। जो पापी लड़कियों को कोख में मारता है, दुष्कर्म करता है, वह अवश्य नरकगामी होता है तथा उससे पहले वह किसी प्रलय का शिकार भी बनता है। प्रकृति की मार में आवाज नहीं होती, चुपके से उठा लेती है। बेटी तू ने बेटों को भी मात दे दी। जीवनभर तेरे आंगन में खुशियां खेलें, यही हम दोनों का आशीर्वाद है।"

नीरजा इतनी भावुक हो गई कि उसके नयन चूने लगे। वह

बार-बार पल्लू से पोंछे, फिर भी प्रवाह चालू था।

कैलाशनाथ और जयंती को तीर्थयात्रा ट्रेन से रामेश्वरम जाना था किंतु दोनों ने उसे रद्द कर दिया। मित्र असमंजस में और पूछा क्या कारण है? धर्म से मुख क्यों मोड़ लिया?

उन्होंने बताया कि मैं दो मरीजों की देखभाल में लगा हूं। एक युवती असहाय थी। कोई सहायक न मिला, तब वह अपने को बेचने को तैयार हुई। लोग कामांध उसका शरीर चाहते थे। मुझे दया आ गई, मैं उसकी ओर भावुक हो उधर लग गया मैंने सोचा यही तो मानव धर्म है।

"धन्य-धन्य!! आप और पत्नी! संसार में हजारों लाखों गज होंगे, किंतु गजमुक्त विरले में ही पाया जाता है, आप पूजनीय हैं।" सारे मित्रगण ने कैलाशनाथ को धार्मिक पुरुष मान सराहा।

नीरजा ने कैलाश नाथ से पूछा कि आप रामेश्वरम क्यों नहीं गए?

बेटी! तुम्हारे माता-पिता भी तो देवता हैं, मनुष्य तप कर देव बन जाता है। श्रवण कुमार के पिता ने दशरथ को श्राप दे डाला था और वह सत्य हुआ। वे लोग कैसे अनुदार होते हैं जो अपने माता- पिता को वृद्ध आश्रम में छोड़ देते हैं। वृद्ध पूजनीय होते हैं। नीरजा तुम एक बात बताओ। तुम यह संसार की पालकी कब तक अपने सर पर अकेली उठाओगी? तुमने लड़कों से अधिक धर्म और कर्तव्य निभाया है। वर्तमान में लोग लड़कों के लाभ में लड़कियों को कम समझते हैं, लड़के से एक वंश चलता है परंतु लड़की दोनों वंशों को चलाती है। मैंने कुछ सोचा है और कहा नहीं।

"अंकल! कहिए न! संकोच किस बात का? आपने मुझे जीना सिखाया, अथाह सागर की भंवर से निकाला। डूबने वाला बचाने वाले को कस कर पकड़ता है कि पुनः न डूब जाऊं। आपके प्रत्येक प्रस्ताव को मैं धर्म समझकर पूरा करूंगी।"

"देखो मेरा एक शिष्य योगराज है, सेना में हवलदार है, बड़ा आज्ञाकारी एवं सुशील है। उसने तुम्हें देखा है। वह एक बार दवा तुम्हें देकर आया है, वह तुम्हें पसंद भी करता है। आज संसार में ठग बहुत मिलेंगे, देवता एक या दो ही। मैं नहीं चाहता कि तुम्हारा जीवन दलदल में फंसे।"

"अंकल! आपने मुझे पुनर्जीवित किया है, अब यह जीवन आपके हवाले है।"

"आने वाली एकादशी को आर्य समाज मंदिर में सभी एक होंगे। वैदिक रीति से दोनों का विवाह होगा।" कैलाश नाथ ने स्पष्ट किया।

ऐसा ही हुआ। शुभ विवाह हो गया। योगराज ने नीरजा के माता-पिता के चरण स्पर्श किए और समस्त भद्रजनों के समक्ष घोषणा की, "आज से ये दोनों हमारे माता-पिता हैं।" सभी गवाहों ने हस्ताक्षर किए।

हर घड़ी पल-पल मानव का भाग्य बदलता है, जिसको देव भी नहीं जानते कहां विपत्ति में नीरजा बिकने गई थी, अब उसका दान हो गया, कन्यादान हो गया। संसार में कन्या दान होती आई है, बिकी नहीं और यही भारतीय संस्कृति है।

हर्षालय, रांझी पुरानी बस्ती,
जिला जबलपुर, मध्य प्रदेश-482 005

नई कलम/कविता

बांझ

● **अनुजा शर्मा**

हर कोई सुनाता गम इश्क के
हर कोई बांचे मां की ममता
जिसकी गोद रह गई सूनी
क्यों उसकी कोई नहीं है सुनता
जीवन की क्यूं सांझ हुई
जाने क्यूं मैं बांझ हुई

आई थी मैं लक्ष्मी बनकर
अब सब कुलटा बुलाते हैं
मुझको देकर आंख में आंसू
खुद कहकहे लगाते
चादर मखमली फूलों की
आज भला क्यूं कांच हुई
जाने क्यूं मैं बांझ हुई।

अब बिना पंख का पंखा हूं
पहले थी आंखों का तारा
कसे फब्तियां सास पड़ोसन
धिक्कारे समाज ये सारा
हर ओर बहे ममता का दरिया
मैं क्यूं रेगिस्तान हुई/ जाने क्यूं मैं बांझ हुई।
सुन पड़ोसन भाभी की सिसकियां
इक दिन सहसा मैं चौंक गई
मची उथल-पुथल मन में
बिजली जैसे कौंध गई
जिस गली में मंडराती थी खुशियां
गली वो कब्रिस्तान हुई/ जाने क्यूं मैं बांझ हुई।
आहत कर गई पीड़ा उनकी
विचलित मन में आया विचार
बांझ न हुई होती और होता कन्या भ्रूण
शायद बनती मैं
भी पाप की भागीदारी
अभी जीवन की नहीं सांझ हुई
सही हुआ जो बांझ हुई
कुछ नहीं हुआ जो बांझ हुई।

जी-48, चंगर सेक्टर, बिलासपुर,
हिमाचल प्रदेश-174 001, मो. 089880 05767

कहानी

जानवर

● सुशांत सुप्रिय

उस पहाड़ी शहर की धर्मशाला में यह उसकी अंतिम रात थी। सर्दियों की उस बरसाती रात में जलते हुए हीटर के चारों ओर हम सब बैठे थे-- मैं, दिनेश, करतार, महेश, मैडम मैरी और इरफान।

"तो तुम्हें लगता है कि वहाँ कोई भयानक जानवर था?" मैंने पूछा। "और उसी जानवर ने उस लड़की को मार डाला?"

"हाँ, यह काम किसी जानवर का ही है।" उसने कहा।

"महानगर में जानवर कहाँ से आएगा? जानवर तो जंगल में होते हैं।" करतार बोला।

"कंक्रीट-जंगल में भी वहशी जानवर होते हैं।" उसने एक जलती हुई निगाह हम सब पर डालते हुए कहा।

"अब तुम क्या करोगे, दिनेश ? पुलिस को तुम पर शक है। तुम आगे कहाँ जाओगे? आगे तो जंगल है। वहाँ खूँखार जानवर रहते हैं।"मैडम मैरी ने चिंता जताई ।

"वे उन वहशी जानवरों से खतरनाक नहीं होंगे जो कंक्रीट-जंगलों में रहते हैं।" उसने कहा ।

"कौन से कंक्रीट-जंगल?" मैंने पूछा ।

"जिन में इंसान नाम के दरिंदे रहते हैं।" उसकी निगाहें हम सब को चीर रही थीं।

"अगर तुमने कुछ नहीं किया है तो तुम भागे-भागे क्यों फिर रहे हो, दिनेश?" इरफान ने पूछा ।

"मैं दुनिया से नहीं , अपने वजूद के उस हिस्से से भाग रहा हूँ जिस में जानवर के अंश हैं ।" उसने ऐसे कहा जैसे वह रोजमर्रा की कोई सामान्य बात कह रहा हो।

वह दिल्ली में एक पत्रकार था। मीडिया में सक्रिय था। फिर एक दिन अचानक उसके पड़ोस में रहने वाली उसकी एक महिला सहकर्मी की निर्मम हत्या हो गई थी। शक की सुई उस पर भी गई। लेकिन उसका कहना था कि वह बेकसूर था। उसे फँसाया जा रहा था।

बाहर बारिश होने लगी थी। ठंड बढ़ गई थी । हमने अपने इर्द-गिर्द कम्बल को कस कर लपेट लिया।

" ... हाँ , मैं कह रहा था कि मैं मुजरिम हूँ । लेकिन मैंने उस लड़की का कत्ल नहीं किया।" वह उत्तेजित हो कर बोला ।

"क्या मतलब?" करतार ने पूछा ।

"यारो, मैं उसी तरह मुजरिम हूँ जिस तरह तुम सब हो । हम सब दुनिया में होने वाले हर अपराध, हर गुनाह के लिए समान रूप से दोषी हैं, मुजरिम हैं, क्योंकि हम सब कुछ देखते हैं फिर भी खामोश रह जाते हैं। हम सच्चाई के पक्ष में खड़े होने की हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं। हम अन्याय का विरोध करने के लिए साहस नहीं बटोर पाते हैं। इस लिहाज से मैं भी तुम सब की तरह ही मुजरिम हूँ।"

"और वह कत्ल?"

"केवल वही कत्ल क्यों ? ऐसे सैकड़ों कत्ल हुए हैं, रोज हो रहे हैं। जब तक बात हम तक नहीं आती , हम इन्हें आँकड़े भर मान कर पहले जैसा जिए चले जाते हैं। जैसे कुछ हुआ ही नहीं हो। यह अंधा स्वार्थ ही एक दिन इंसान को ले डूबेगा।" वह आवेश में आ कर बोला।

तभी पूरे इलाके की बिजली चली गई । कमरे में कुछ देर हीटर के गरम रॉड की नारंगी रोशनी रही। फिर अँधेरा गाढ़ा हो कर सबके चेहरों पर चिपक गया।

हम में से किसी ने टॉर्च जला कर उसकी रोशनी छत की ओर कर दी। लगा जैसे हम सब सदियों से यूँ ही एक साथ उस मद्धिम उजाले में बैठे हुए हैं-- उस सुबह की प्रतीक्षा में जो न जाने कब आएगी।

"तो वह कत्ल तुमने नहीं किया?" मैंने पूछा ।

"मैंने कत्ल किया है। हाँ मैंने कत्ल किया है। लेकिन अपनी अंतरात्मा का। अपने विवेक का। अपने भीतर की आवाज का। कई बार मैंने ऐसे समझौते किए हैं जो मुझे नहीं करने चाहिए थे। लेकिन यारो, उस लड़की का कत्ल मैंने नहीं किया है।" वह बोला।

"तो पुलिस तुम्हें हत्यारा क्यों समझती है, दिनेश? इस कत्ल के लिए वह तुम पर शक क्यों कर रही है?" करतार ने पूछा ।

"कितनी अजीब बात है, दिनेश" अब वह खुद से मुखातिब था, "कितनी अजीब बात है कि जो कत्ल वाकई तुमने किए उनके लिए तुम्हें कभी किसी ने मुजरिम नहीं ठहराया। जब तुमने अपने जमीर का कत्ल किया, तब सब चुप रहे। जब तुमने अपनी

नई कलम/कविता

आरजू

● नितिका शर्मा

कुछ अलग करने की आरजू में
हम दुनिया से बहुत दूर निकल आए
राहों पर चलते चलते खयाल आया
निकल तो आए दूर तलक
पर मंजिल तक पहुंचते पहुंचते हम
खुद ही आरजू न बन जाए।

न जाने कौन! लेकिन कोई तो था
जो कहता तू बढ़ आगे बढ़
तेरी यही आरजू बदलाव लाएगी
जो तू नहीं कर पाया
ये आरजू वो कर जाएगी
जिनको खलता है आज तेरा
आंधियों में चिरागों की तरह जलना
राह दिखाएगी कल उन्हें ही यह लौ।

तू रख बुलंद हौंसला
कोई रुकावट तुझे रोक नहीं पाएगी
गिर जाएगी हर एक दीवार राहों में जो आएगी
साथी रहेगी तेरी यही आरजू
तुझे तेरी मंजिल तक पहुंचाएगी
एक दिन आरजू ही तेरी मंजिल बन जाएगी।

गांव व डाकघर अहजू, तहसील जोगिंद्रनगर, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 032, मो. 0 94187 21827

अंतरात्मा को मारा, तब भी तुम अपराधी नहीं ठहराए गए। जब तुमने अपने विवेक की हत्या की, तब भी तुम गिरफ्तार नहीं किए गए। कितनी अजीब बात है, दिनेश कि उन्होंने तुम पर उन कत्लों के इल्जाम लगाए जो तुमने कभी किए ही नहीं ... यारो, मैं मानता हूँ कि मैं कातिल हूँ । लेकिन उस तरह, जिस तरह तुम सब भी कातिल हो ... ।" वह बोलता चला जा रहा था । हम सब ध्यान से उसकी बात सुन रहे थे।

"... मैं भी तुम सब की तरह आँखें बंद किए जिए जा रहा था। लेकिन एक रात अचानक मेरी लम्बी नींद खुल गई। मैंने अपने आस-पास देखा। पूरी इनसानियत के हाथ खून से रंगे हुए थे। सब के चेहरों पर खून के छींटे थे। सब के कपड़े खून से लाल हो गए थे। चारों ओर केवल लाल रंग नजर आ रहा था। लहू का लाल रंग। बाकी सभी रंग न जाने कहाँ खो गए थे। मैंने अपने कपड़ों को छुआ। मेरे हाथों में खून लगा हुआ था। बचपन से उस दिन तक मेरे भीतर के हैवान ने आगे बढ़ने के लिए, समझौते करने के लिए जिन-जिन सच्चाइयों को मारा, उन सब का चिपचिपा लहू मेरे हाथों में लगा हुआ था। मेरे चारों ओर बर्बर हैवान थे, जिनके मुँह पर खून लगा हुआ था। उस रात के बाद से मैं लगातार भाग रहा हूँ। शायद अपने-आप से। लेकिन खुद से पीछा छुड़ाना बहुत मुश्किल है, यारो।"

उसकी आवाज बहुत दूर से आ रही थी। जैसे सैकड़ों-हजारों बरस की दूरी से। असंख्य पीढ़ियाँ लाँघकर। या जैसे वह आवाज ब्रह्मांड के अंतिम छोर पर स्थित किसी सुदूर ग्रह-नक्षत्र और आकाशगंगा से आता हुआ कोई विरल संकेत हो। हम सब अवाक् हो कर उसकी ओर देख रहे थे ।

"... मेरा जिस्म वह कब्र है जिसमें मेरी सच्चाइयों की लाशें दफन हैं। मेरी अंतरात्मा की लाश, मेरे जमीर की लाश और मेरे विवेक की लाश भी यहीं दफन हैं । हाँ , मैं मानता हूँ कि मैं कातिल हूँ। लेकिन उस लड़की का कत्ल मैंने नहीं किया है, यारो।" इतना कह कर वह चुप हो गया।

उसकी बातें सुनते-सुनते हम सब थक गए थे। उसकी बातों का बोझ हमारे जहन पर था। नींद हम पर फिर से हावी होने लगी थी। बाहर बारिश शायद रुक गई थी। सन्नाटे में कभी-कभी कोई झींगुर बोलता और फिर चुप हो जाता।

"अपने चारों ओर यह खून-खराबा देख रहे हो? अब जानवर जंगल में नहीं, कंक्रीट-जंगल में रहते हैं, यारो। अब जानवर बाहर नहीं, हमारे भीतर मौजूद हैं, यारो। अब हम आगे नहीं जा रहे , वापस पाषाण-युग में लौट रहे हैं , यारो ...।"

वह धीमे स्वर में कह रहा था । फिर हम सो गए। जब अगली सुबह हम उठे तो वह वहाँ नहीं था। धूप दबे पाँव कमरे में घुस आई थी और सामने की दीवार को रोशन कर रही थी, जिस पर बड़े-बड़े अक्षरों में चौक से लिखा था-

लाखों साल लग गए
हमें जानवर से इंसान बनने में ,
चंद सदियाँ ही लगीं हमें
इंसान से फिर जानवर बनने में ...।"

I-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम, गाज़ियाबाद, उ.प्र. -201014, मो. 85120 70086

कविताएं

● तेज राम शर्मा

अकेलापन

कहीं भी जाऊं
मेरा पीछा करता है
अकेलापन
दूर नहीं कर पाता इसे
जी नहीं पाता
अपनों के बीच
अपनापन

अकेलेपन की नियति से
बार-बार करता हूं इनकार
बार-बार भीड़ में समा जाना चाहता हूं
चाल बदल कर
भाषा बदल कर
सुख-दुख के अतिरेक में
छाती पीट-पीट कर
पर भीड़ से छिटक जाता हूं बार-बार
विलग, अकेला

मैं हमेशा से लड़ता रहा हूं
इस अकेलेपन से
रहा हूं धूल में लोट-लोट
माटी की महक
देह की गंध
मैं तृप्त

चखा है धान के खेत में
कीचड़ का स्वाद
खुरदरे हाथों से
मैंने भी सहलाया है
पीठ की मोटी छाल को
बिवाइयों में भरा है लीसा
देह में मक्की के आटे की गंध लिए
घूमा हूं देश-विदेश
देवताओं के आवाह्न-विसर्जन में
अन्न भोज की पांत में
उपस्थिति
मेरे हस्ताक्षरों की साक्षी है
उंगली पर उभरी गांठ
फिर मैं ही क्या
झुंड से अलग हुए पशु की तरह
जंगल में गुम, भटका
एकाकी, अकेला?

वन : एक पुनर्स्मृति

वानप्रस्थ में याद हो आई वन की
जहां जिया था एक जीवन

गांव को घेरे होता था
पांचों तत्त्वों को लुटाता
दूर-दूर तक फैला वन

सुबह-सुबह ही तैयारियां होती थीं वन जाने की
पुरुष, महिलाएं, बच्चे
एक दूसरे को आवाजें लगाते
अपने-अपने झुंडों में
निकल पड़ते थे वन को
छुट्टियों में पशुओं के पीछे-पीछे
हम भी मस्ती में जाते थे उस ओर

चोटी की चरागाह में पहुंच कर
आकाश होता था इतना पास
कि उसे छू लेने की होड़ होती थी
गरुड़ के घोंसले से
दूर-दूर तक नीचे दिखती थी हरी-भरी घाटी
गरुड़ की पीठ पर
उड़ आते थे दूर-दूर तक

उस बड़ी-सी गुफा में
सुनते थे
पेड़ों के पत्तों पर
बरसाती वर्षा की असंख्य तालें
पशु भी बंद आंखों
मौन सुनते थे खड़े पेड़ के नीचे
चौकड़ी भरता मृग
चट्टान पर एक दम स्थिर
देखता था हमें
आंखों में आंखें डाल

अठखेलियों में जंगल के पेड़ों को नचाती हवा
पता नहीं कब चुपके से
रक्तिम धूप-सी
मोहक प्रेम प्रसंगों की महक
फैला आती थी घाटी भर में

पर्वत की धार पर
जहां होता था समतल मैदान
हमारे साथ-साथ खेलते
समय की धड़कन बढ़ जाती थी
दिन हो जाता था छोटा-सा

पर पशुओं की घड़ी में
होता था सही समय
हमें खेलता छोड़
घर लौटने पर कंटीली बाढ़ में सेंध लगा
लूटते थे वे हरी-भरी फसल का आनंद
उठता था जब गांव से प्रतिवाद का शो
तब हमें होता था समय की क्रूरता का भान
हमारे घर पहुंचने से पहले ही
झिंगुर गाने लगते थे
हमारी घर में पिटाई पर
उदास वृंदगान।

श्रीरामकृष्ण भवन, अनाडेल, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 003,
मो. 094185 73611

कविताएं

● सिद्धेश्वर

एक

धर्म के नाम पर
और कितनी यातनाओं से
गुजरना पड़ेगा ईश्वर?

अब और परीक्षा मत लो
मेरी सहनशक्ति की
अब और अवहेलना मत करो
मेरी आराधना/मेरी भक्ति की...

वरना/यह डर सालता रहता है
मुझको
हां/मेरे देवता
कहीं/सहनशक्ति और भक्ति में
मुझसे पीछे न रह जाए 'द्रोपदी'
मुझसे मात न खा जाए 'सीता'
मुझसे हार न मान ले 'मीरा'
और
तुम्हारे जगह पर
पूजा जाने लगूं मैं

लेकिन/मैं ईश्वर बनना नहीं चाहती
हां! यह सच है मेरे देवता
कि/मैं इतनी कठोर
दिखना नहीं चाहती!!!

दो

मेरी छाती का दूध सूख जाता है
जब/मेरी औलाद
धर्म का झंडा लेकर
बेकसूरों पर जुल्म ढाती है!

किसी की मां-बहन की आबरू को
बनाता है/ अपनी अय्याशी की सड़क...
लात मारता है
किसी की मां की कोख पर
तब/पैदा होने लगता है
मेरी कोख में/ मवाद, कोढ़
और न मिट पाने वाला जख्म!!

तीन

धर्म के नाम पर
मेरा इतना अपमान!

अफसोस/कि
सीता की आकांक्षाओं की तरह
मेरी इच्छा की पूर्ति हो नहीं पाती
चाहती हूं धरती में समा जाना
लेकिन/मेरे लिए
धरती फट नहीं जाती!
मरने के पहले
धरती मुझको जगह नहीं देती!!

चार

ओ धर्म के पाखंडी पुरुष!
मरने के पहले तो
जीने नहीं दिया तूने
अब/मर जाने के बाद
क्यूं अपने साथ मुझको भी
पाप की आग में जलाते हो?
धर्म के नाम पर
मेरी उपजाऊ कोख को
बंजर बनाते हो!?

पांच

हे ईश्वर
मेरी भक्ति के बदले
तू बस! इतना कर दे
नालायक औलाद देने के बजाय
मेरी कोख में तू/बारूद भर दे!!
ताकि/धर्म के नाम पर
अब/किसी नालायक पूतों की
अपनी छाती का दूध पिलाने के बजाय
बारूद की गंध पीला दूं...

मेरी कोख को बदनाम करे
इसके पहले/ कि
अपने चुल्लू में लेकर पी सकूं मैं
उसकी छाती का लाल खून...!!!

सिद्धेश सदन (किड्स कार्मल स्कूल के बायें),
द्वारिकापुरी रोड नं.2, हनुमाननगर, कंकड़बाग, पटना,
बिहार-800 020, मो. 0 92347 60365

कविताएं

● सुगम धीमान

मधुराननन भोर

रात थक गई
शिथिल पड़ गई
तारे तम के साथ हो लिए
एक रात इतिहास ओढ़ कर
मजबूरी की ओट ढूंढ कर
न जाने वो कहां खो गए।

उज्ज्वल प्रकाश गगन में छाया
ज्ञान-विवेक साथ में लाया
आंख खुली आंगन में पाया
खग चहके मन महके
प्रखर चेतना ले गई उनको
दूर गगन की ओर
गजर प्रभाती गूंजी
देख मधुरानन भोर।

पात-पात पुष्प-पुष्प
तृण-तृण पहने और के मोती
तम की छाती चीर-चीर कर
गगन धरा पर फैली ज्योति
कल्पना पथ पर कदम बढ़ा
इच्छा को नव पंख लगे
पूरी सृष्टि देख नजर भर
मन दृष्टि से नयन मिला।
भाग्य बदलने वाला इच्छित वर
ऊषा की किरणों से पा
वर बांट रही चहूं ओर
अरे! देख मधुरानन भोर
छलक रही अमृत की बूंदें
बिखर रही रंगों की रोली
रोज भोर खेलने आती
एक पहर मनभावन होली
अभी-अभी पावन कुछ कहती
मधुमास बन कर है बहती
जीव जगत आंगन तक आ गई
नव सांसों को बुनती-बुनती
तोड़ अकर्मण्यता का लंबा घेरा
आलस्य क्षण भंगुर प्यार
घोर रुग्णता अक्ष्य बन कर
कर जाएगी मृत्यु वार

उठ खड़, चल अरे!
झोली अपनी भर कर लाएं

स्वर्ग उठा वापिस आए
आनंदरस पूरा दिन छलका
पल-पल याद आई तब मुझको
स्वर्ण रंग बिखराने वाली
प्यारी मधुरानन भोर
चल लक्ष्य की ओर
द्वार खड़ी मधुरानन भोर।

धन्यवाद तेरा कारे बादल

ओ सावन के कारे बादल
अम्बर के मतवारे बादल
छम-छम बरसो शुष्क धरा पर
कोटि-कोटि जन आकांक्षाओं पर
तृप्त करो मन प्यास बुझाओ
आर्शीवाद कण-कण का पाओ
ओ सावन के कारे बादल।

उड़े धूल कहीं चढ़े बावंडर
सूख गए नदी ताल और सर
निर्मल गगन रूप विहीन हुआ
भानु प्रकाश का हरण हुआ
ऊर्जहीन खग डार पर बैठे
जल बरसेगा प्रतीक्षा में बैठे
जंगल जीव त्रस्त बहुत हैं
प्राण रक्षा में व्यस्त बहुत हैं
एक बूंद जल कीमत मोती
एक बूंद जल जीवन ज्योति
सागर तट से जल भर लाओ
शुष्क प्राणों पर सुधा बरसाओ
ओ सावन के कारे बादल!

उदास विशाल पर्वत मालाएं
निश्चल चुप-चुप शुष्क लताएं
सूखे तिनकों से डर लगता है
चिन्गारी न इनको मिल जाए
जल के दूत छोड़ अभिमान
समुन्नत होगी सृष्टि तान
प्रथम खेत में छम-छम बरसो
फिर जंगल पर्वत पर बरसो
वीरानों की भी प्यास बुझाओ।
दूर क्षितिज से उठा मेघ दल
गरजन बरसन लगा प्रतिपल
एक पहर में हो गया जल थल
उतना बरसा जितना मंगल
फलीभूत हुई आकांक्षा अर्चना
मंजूर हुई प्रतिश्रुत सर्व कलयाण प्रार्थना
ओ सावन के कारे बादल
धन्यवाद तेरा कारे बादल।

नजदीक हिमाचल ग्रामीण बैंक, डाकघर
बरोटीवाला, झाड़माजरी, बद्दी,
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-174 103
मो. 0 9882 02916

नाटक

अभिशाप

● हेमंत भार्गव

(गतांक से आगे)

अंक दो

(एक वैन तेजी से आती है और सोनी (हिना की सहेली) के घर के सामने रुकती है उसमें से कुछ नकाब पोश लोग उतरतें हैं और एक लड़की को वैन से बाहर फेंक देतें हैं)

(लड़की कराहने की आवाज सुनकर सोनी के घरवाले बाहर निकलते हैं)

शारदा (सोनी की मां लड़की को देखती है)

शारदा- सोनी ! हे भगवान ये क्या हो गया बेटी उठ देख मैं हूं तेरी मां, उठ न, क्या हुआ तुझे (रोने लगती है)

सोनी - मां

शारदा- बोल बेटी अजी सुनीए! यहां आइए देखो इस क्या हो गया है।

देवीसिंह (सोनी के पिता)

देवीसिंह - ये क्या हो गया, ये कैसे हो गया बेटी (सोनी के फटे कपड़ों की तरफ देखता है, उसे समझने में देर नहीं लगती कि क्या हुआ है।

(देवीसिंह फटाफट घर के अंदर जाता है और हॉस्पिटल को फोन करके एम्बूलैंस को बुलवाता है)

(शारदा सोनी के मुंह पर पानी डाल रही है उसके माथे को चूम रही है कि उसकी बेटी कुछ बोल ही दे)

(एम्बूलैंस आ जाती है, देवीसिंह और शारदा सोनी को एम्बूलैंस में बिठाते हैं और खुद भी बैठ जाते हैं)

(एम्बूलैंस हॉस्पिटल के अमरजैंसी वार्ड के गेट पर रूकती है सोनी का अंदर ले जाया जाता है)

(डॉक्टर का प्रवेश)

डॉक्टर - ये तो मुझे रेप केस लगता है पुलिस का बुलाना पड़ेगा।

शारदा- इधर हमारी बेटी की जान पर बनी है और आपको पुलिस केस की पडी है।

डॉक्टर - माफ कीजिएगा हम कुछ नहीं कर सकते ।

शारदा- आप डॉक्टर है फर्ज करो की कल को आपकी बेटी के साथ एसा कुछ हो जाए तो भी आप पुलिस का इंतजार करेंगे या अपनी बेटी को बचाएंगे ?

डॉक्टर - चलो इसे आईसीयू में ले चलो।

(दो कर्मचारी उसको स्ट्रैचर पर लेटाकर आसीयू में ले जातें है)

देवीसिंह- ये क्या हो गया अब मैं तो कहीं भी मुंह दिखाने लायक नहीं रहा (रोने लगता है)

शारदा- उसकी जान बच जाए आपको उसकी फिक्र होनी चाहिए और आपको अपने मुंह दिखाने की पड़ी है।

देवीसिंह - चुप कर हरामजादी तेरे ही लाड प्यार ने इसे बिगाड़ रखा था इसकी वजह से ही ये सब हुआ, मैंने कहा था इसकी शादी करा देतें हैं लेकिन तू ही नहीं मानी कि ग्रेजुएशन कर लेगी तो अपने पैरों पर खड़ी हो जाएगी , हो गई अपने पैरों पर खड़ी। (रोने लगता है)

शारदा- (चुप हो जाती है और रोने लगती है)

देवीसिंह- अब जब ये ठीक हो जाएगी तो इसकी शादी करवा दूंगा, अब अच्छे रिश्ते तो मिलने से रहे, जो भी मिलेगा उसके साथ मैं इसकी शादी करवा दूंगा, इस बार अगर तू बीच में बोली तो तेरी चोटी उखाड़ के तेरे हाथ में दे दूंगा।

(पुलिस अफसर माधव का प्रवेश)

माधव - क्या हुआ अपकी बेटी के साथ

देवीसिंह- कुछ नहीं साहब जरा सी बीमार है

माधव- देखिए मुझे अस्पताल से फोन आ गया था उन्होंने सब बता दिया है आप डरिए मत ।

देवीसिंह- साहब आपसे हाथ जोड़ कर विनती करता हूं आप रिपोट मत लिखिए हमारी समाज में बदनामी हो जाएगी। और लड़की के लिए अच्छे रिश्ते भी नहीं आएंगे।

माधव - आप जैसे लोगों की वजह से ही एसी घटनाएं बढ़ रहीं हैं, जो ये सब करतें हैं उनकी हिम्मत और बढ़ जाती है, आज आपकी बेटी है कल किसी और की होगी, लोग समाज में बेइज्जत होने के डर से रिपोट नहीं करवाते और इसी बीज से अगली घटना पैदा होती है। आपकी लड़की के साथ जो होना था सो हो गया अब अगर आप रिपोर्ट करवा देंगे तो हो सकता है किसी लड़की की जान बच जाए।

देवीसिंह- रिपोर्ट करवाने को मैं तैयार हूं पर अखबार में मेरी लड़की का तो नाम नहीं आएगा न ?

माधव- आप डरिए मत एसे केसों में नाम सार्वजनिक नहीं किए जाते। मैं उन हैवानों को पकड़कर सजा दिलवाऊंगा। आप ये बताईए आपको आपकी बेटी कहां मिली ?

(देवीसिंह डरते हुए)- पता नहीं सर जब हमने अपनी बेटी को देखा तो वो घर के सामने पड़ी मिली।

माधव - तो क्या आपको किसी पर शक है ?

देवीसिंह- नहीं सर हमें किसी पर कोई शक नहीं और हमारी किसी से कोई दुश्मनी भी नहीं।

माधव- तो फिर आपकी बेटी ही बताएगी।

(डॉक्टर आईसीयू से बाहर निकलता है और सामने इंस्पैक्टर को देखता है)

डॉक्टर - नमस्ते माधव साहब (डरते हुए) हमने आपके आने का इंतजार इसलिए नहीं किया क्योंकि लड़की की हालत गंभीर थी।

माधव - आपने बिलकुल ठीक किया डॉक्टर साहब जिंदगी से बढ़कर कुछ भी नहीं आपका प्रोफेशन लोगों की जान बचाना ही तो है।

अगर हम सब इन बातों का समझ जाएं तो हादसों में किसी की मौत न होगी न पुलिस के आने का इंतजार करना पड़ेगा, पर हमसे ज्यादा लोगों की जिम्मेवारी बनती है कि वो जब किसी हादसे में घायलों को देखें तो तुरंत उनकी मदद करें, इससे किसी की जान तो बचेगी। बयान तो बाद में भी हो सकतें हैं।

डॉक्टर - ये तो आपने सही बात कही इंस्पैक्टर साहब, पर सब लोग आपकी तरह तो नहीं होते और हमें भी अपनी नौकरी का ख्याल करना पड़ता है।

माधव - आपका काम लोगों की जान बचाना है और इससे आप बच नहीं सकते क्योंकिं लोग डॉक्टरों को भगवान मानतें हैं।

डॉक्टर - वो तो है।

माधव -अब लड़की कैसी है ?

डॉक्टर - अभी तो वो सिरियस है, उन दरिंदों न उसका बहुत बुरा हाल किया है , पता नहीं माधव जी वो बच भी पाएगी की नहीं?

माधव - भगवान करे कि वो बच जाए, अगर वो बच गई तो मैं उन दरिंदों को पाताल से भी ढूंढ निकालूंगा।

(पुलिस अफसर माधव देवीसिंह और शारदा के पास आता है)

माधव -आप घबराईए नहीं वो चाहे जो भी हो वो अब नहीं बचेंगे मैं आपको विश्वास दिलाता हूं। आप पर क्या गुजर रही है एक बेटी का बाप होने के नाते वो मैं समझ सकता हूं।

शारदा - हमको न्याय दिलवा दो साहब, (रोते हुए) हमको न्याय दिलवा दो।

माधव - न्याय होगा और जरूर होगा उन हैवानों को मैं खुद पकड़ कर सजा दिलवाऊंगा आप बेफिक्र रहिए। (इंस्पैक्टर चला जाता है)

(देवीसिंह और शारदा अभी भी रो रहें हैं) (धीमा प्रकाश)

(मंच पर इकबाल का प्रवेश)

इकबाल- रुखसार क्या तुमने आज का अखबार देखा ?

रुखसार - नहीं तो क्यूं क्या हुआ ?

ईकबाल- अखबार में आया है कि हमारे इलाके में कुछ बदमाशों किसी लड़की को अगवा किया और बाद में उसके घर के सामने फेंक गए वो भी बुरी हालत में।

रुखसार - मुझे तो हिना की फिक्र होने लगी है।

ईकबाल - तुम फिक्र न करो आज हम उसके लिए लड़का देख आएं हैं, लड़का इंजीनियर है, कमा भी अच्छा लेता है, हमारी हिना वहां खुश रहेगी।

रुखसार - या अल्लाह तूने मेरी सुन ली, मैं अभी जाकर ये खबर हिना को देती हूं।

रुखसार- हिना, हिना

हिना- जी अम्मी जान।

रुखसार - पता है तेरे अब्बू तेरे लिए रिश्ता देख आए हैं, लड़का इंजीनियर है,

हिना- मुझे अभी निकाह नहीं करना अम्मी जान, मुझे पढ़ना है।

रुखसार (गुस्सा होते हुए) - मैंने तूझसे पूछा नहीं, ये तुझको बता रही हूं, तू किस लड़के के साथ घूमती है ये सब मुझे पता है। और वो भी हिंदू, मैंने तेरे अब्बू को इस बारे में कुछ नहीं बताया, अगर बता देती तो मार-मार कर तेरी खाल उधेड़ देते।

हिना- अम्मी जान हमने आप को पहले भी कहा है कि हम किसी के साथ नहीं घूमे।

रुखसार - हमें फव्वाद ने सब बता दिया है।

हिना- (रोते हुए) आपको उसकी बात पर यकीन है मेरी बातों पर नहीं ?

रुखसार - हम आपको अपना फैसला सुना चुकें हैं। अब तुम्हें निकाह करना ही है, उसके लिए तुम मानों या न मानो। और तुम कल से कॉलेज भी नहीं जाओगी। (रुखसार चली जाती है)

अगले दिन सुबह का दृश्य

(हिना फोन के पास जाती है मायूसी के साथ)

या अल्लाह हमारी किस्मत में शायद यही लिखा था, चलो सोनी को ही फोन कर लेती हूं (फोन के पास जाती है फोन का रिसिवर उठा कर फोन करने लगती है,)

(सोनी का भाई मनीष फोन उठाता है)

हैलो कौन ?

हिना- मैं हिना बोल रही हूं सोनी की सहेली, सोनी कहां है ?

मनीष - दीदी तो हॉस्पिटल में है।

हिना- क्या हुआ उसको ? सब ठीक तो है न ?

मनीष - नहीं दीदी बीमार है।

हिना- क्या हुआ ?

मनीष - पता नहीं बुखार है शायद।

हिना- जब वो आए तो उसे जरूर याद दिला देना की मैंने फोन किया था।

मनीष - ठीक है मैं बता दूंगा । (फोन रख देता है)

(प्रकाश धीमा हो जाता है)

(रंगमंच पर ईकबाल का प्रवेश खुश होते हुए)

इकबाल- रुखसार अरे भई कहां हो तुम ।

रुखसार - हम तो यहीं हैं आप अपनी सुनाईए आज जनाब बड़े खुश नजर आ रहे हैं।

इकबाल- भई खुशी की ही बात है, लड़के को हिना की तसवीर पसंद आ गई, हिना का निकाह अगले हफ्ते होना मुकर्रर हो गया है।

रुखसार - पर इतनी जल्दी कैसे होगा ? सारी तैयारियां कैसे होंगी।

इकबाल- लड़के की नौकरी दिल्ली लग गई है, उसे अगले हफ्ते ही जाना है। तैयारियां तुम मुझ पर छोड़ दो वो सब हो जाएगा।

सूत्रधार - देखा आपने एक तरफ सोनी जिंदगी और मौत से जूझ रही है और दूसरी तरफ हिना के निकाह की तारीख भी तय हो गई, मजहब अलग-अलग हैं, दोनों तरफ लड़कियां ही हैं, एक ओर जहां रुखसार को डर है कि हिना किसी लड़के के साथ न भाग जाए और वो भी हिंदू तो उनका तो नाम बदनाम हो जाएगा जात बिरादरी में मुंह दिखाना मुश्किल हो जाएगा। दूसरी तरफ देवीसिंह एक तो सोनी के साथ जो हुआ है उससे तो वो संघर्ष कर ही रही है, पर उसके पिता उसे एक और सदमा देने जा रहें हैं कि वो उसकी शादी करवा देंगें, जब किसी के साथ एसा होता है तो जिस्म तो रहता है रूह की मौत हो जाती है। हमारे यहां लड़कियों से ये नहीं पूछा जाता कि वो क्या करना चाहती हैं बल्कि बचपन से इस बात को लेकर तैयार किया जाता है कि इक्कीस साल तक कर लो जो करना है उसके बाद तुम दूसरे के घर जाओगी। ये कहां का न्याय है एक तरफ आप लड़कों से बड़ी-बड़ी डीग्री करवातें हैं तो लड़की से क्यों नहीं ? अगर वो अपने पैरों पर खड़ी हो जाएंगी तो उसके साथ बुरा होगा तो वो खुद को सम्भाल पाएगी।

आईए आगे देखतें है।

अंक 3

(इकबाल के घर की घंटी बजती है, रुखसार सामने पुलिस को देखती है तो घबरा जाती है)

रुखसार - क्या हुआ साहब ?

इंस्पैक्टर माधव - क्या आपका बेटी घर पर है ?

(तब तक इकबाल भी आ जाता है)

ईकबाल- क्या हुआ साहब आप यहां।

माधव- हमें आपकी बेटी से कुछ पूछना है।

ईकबाल (डरते हुए) - क्या हुआ साहब क्या किया है उसने ?

माधव- आप डरिए मत एसा कुछ भी नहीं है बस हमें उससे कुछ पूछना है।

रुखसार - हिना! हिना!

हिना- क्या हुआ अम्मी जान ?

रुखसार - तुमसे मिलने इंस्पैक्टर साहब आए हैं।

(हिना सर से लेकर पांव तक कांप जाती है)

हिना- जी सर

माधव- क्या सोनी तुम्हारी सहेली है ?

हिना- जी सर, पर आप ये क्यूं पूछ रहें हैं ?

माधव- तुम्हारी उसके साथ बात कब हुई थी ?

हिना- मैं तो उसे रोज फोन लगाती हूं पर वो उठाती नहीं ।

माधव- वो हॉस्पिटल में है आपने कल का अखबार तो देखा ही होगा। (हिना को सुनकर झटका लगता है)

हिना- तो वो क्या सोनी थी ?

माधव- हां वो ही थी । क्या तुम मुझे बता सकती हो की सोनी से किसी की दुश्मनी थी या किसी के साथ उसका झगड़ा हुआ हो ?

हिना- एसी तो कोई बात नहीं थी।

माधव- कभी तुमको उसने कोई बात बताई हो ?

हिना- नहीं पर साहब.......

माधव- क्या बोलो

हिना - कुछ लड़के हैं जो कॉलेज से आते हुए हमें छेड़ते हैं , उनमें एक रमेश नाम का लड़का है जो कई दिनों से उसक पीछे पड़ा हुआ था, सोनी उसको कई बार मना भी कर चुकी थी।

माधव- ये कहां पर होता था ?

हिना- बस स्टॉप पर

माधव- जो मुझे पूछना था वो मैंने पूछ लिया अब मैं चलता हूं। (इंस्पैक्टर माधव चलने को होता है तभी वो फव्वाद को देखता है)

माधव- ये कौन है ?

इकबाल- साहब ये हमारा लड़का है।

माधव- तू वही है न जिसे मैंने कुछ दिन पहले तेज बाईक चलाते हुए पकड़ा था ?

फव्वाद -(डरते हुए) जी हां

ईकबाल- क्या इंस्पैक्टर साहब सच कह रहे हैं ?

फव्वाद -जी

माधव - यही नहीं इसे एक बार पहले भी इसके दोस्तों के साथ पकड़ा था जब ये स्कूल से भाग गया था। और इसके मोबाइल से गंदी-गंदी फिल्में और तसवीरें भी मिलीं थी। तब तो ये किसी और को अपना बाप बनाकर लाया था। आज तूझे ले जाकर लॉकअप में डालता हूं । ?

इकबाल- माफ कर दिजिए साहब ये बच्चा है आगे से एसा नहीं करेगा।

माधव - यही तो गलती है आप लोगों की लड़की पर तो पूरी नजर रखतें हैं कि वो कहां जाती है, कहां आती है, पर बारी जब लड़कों की आती है तो बच्चा है छोड़ दीजिए करने लग जातें हैं । आप अपने बच्चे का बिलकुल खयाल नहीं रखते ?

ईकबाल- माफ कर दीजिए साहब आगे से एसा नहीं करेगा।

माधव- बच्चे की जिंदगी खराब न हो इस लिए उस दिन इसे छोड़ दिया था और आज भी छोड़ रहा हूं। (इंस्पैक्टर माधव अपनी गाड़ी में चला जाता है)

(इकबाल डंडा उठाकर फव्वाद को मारने के लिए दौड़ता है)

रुखसार - रूक जाइए ये क्या कर रहें हैं आप ? ये हमारा इकलौता लड़का अगर इसने कुछ कर लिया तब क्या करोगे ?

ईकबाल- एक बार छोड़े देता हूं, आगे से एसा किया तो खाल उधेड़ दूंगा। (इकबाल गुस्से में चला जाता है)

रुखसार - क्यूं अपनी अब्बा की बची इज्जत मिट्टी में मिलाने में तुला हुआ है ? तुझे जरा भी शर्म नहीं ?

हिना- मैं पहले ही कहती थी अम्मी जान आप लोग मानते ही नहीं थे।

रुखसार - तू भी चुप रह तेरा भी पता चल गया है, या अल्लाह ये कैसी औलादें दीं है तूने दोनों नाक कटाने पर तुले हैं। और तू इतनी सज के कहां जा रही है ?

फव्वाद - जा रही होगी अपने उस यार से मिलने।

हिना- भाईजान ये आप कैसी बातें कर रहें हैं।

रुखसार- सच ही तो कह रहा है वो। और अब तू सुन ले अगले हफ्ते तेरा निकाह मुकर्रर हो गया है।

हिना- पर मुझे अपनी सहेली से मिलने जाना है।

रुखसार - तेरे जाने से न तो वो मरने वाली न जीने वाली खुदा का शुक्र अदा करती हूं की तेरे साथ ये सब नहीं हुआ नहीं तो हम जीते जी मर जाते। और क्या पता तू उसी से मिलने जा रही है या किसी और से ? जब तक तू इस घर में है तू कहीं नहीं जाएगी। निकाह के बाद जहां जाना है चली जाना।

हिना - आप कभी नहीं समझोगे मुझे पढ़ना था, पढ़कर अपना और आपका नाम रोशन करना था, पर अब आप ही नहीं चाहते, मुझसे पूछे बिना मेरा निकाह तय कर दिया मैंने कुछ नहीं कहा।

रुखसार - तू कुछ कह या न कह हमें परवाह नहीं हम तेरे हैं तेरे दुश्मन नहीं हमने तुझे पैदा किया है कुछ तो अधिकार बनता है हमारा तुम पर।

हिना - एक लड़की कर ही क्या सकती है , हम तो बस एक चीज है निकाह से पहले अम्मी अब्बा की सुनो , निकाह के बाद शौहर की, और उसक बाद बच्चों की।

रुखसार - ज्यादा पढ़ गई है, अक्ल कुछ ज्यादा ही आ गई है, चल जा अपने कमरे में उसके बाद मेरे काम में मेरा हाथ बंटा, पीहर जाके ये सब करना पड़ेगा तुझे।

(हिना रोते हुए अपने कमरे में चली जाती है)

(रुखसार फव्वाद से)

रुखसार - इसलिए लिया था तूझे फोन जो तू ये सब गंदी हरकतें करे, ये हैं तेरे नोटस और ये है तेरी पढ़ाई, औरों की बाईक चलाए वाह बेटा वाह क्या नाम रोशन कर रहा है तू हमारा।

फव्वाद- अम्मी जान वो सब झूठ है आपकी कसम मेरे दोस्तों ने

मुझे फंसाने के लिए ऐसा किया और मैं तो बाईक चला नहीं रहा था और उस पुलीस अफसर ने मुझे पकड़ा, और हमसे पैसे मांगने लगा, जब हमने नहीं दिए तो पुलिस स्टेशन ले गया तब मुझे लगा कि आप मेरी बातों पर यकीन नहीं करोगे, तब मैंने दोस्त के भाई को अपना अब्बू बनाकर स्कूल ले गया।

रुखसार - तू सच कह रहा है ?

फव्वाद -जी अम्मी जान आपकी कसम।

(हिना सोच रही है कितना झूठा है ये उसका भाई इसका झूठ है कि सबको सच लगता है और एक मैं हूं जिसका सच भी झूठ लगता है। इस चक्कर में मैं अपनी सहेली को भी नहीं मिल पाई जाने उसपर क्या गुजर रही होगी।)

(इंस्पैक्टर माधव रमेश और शमी के घर जाता है और दरवाजा खटखटाता है)

माधव- कोई है घर पर।

(रमेश दरवाजा खोलता है तो पुलिस को सामने देख उसके होश उड़ जाते हैं)

रमेश- क्या हुआ सर

माधव- क्या तुम्हारा ही नाम रमेश है

रमेश - हां

माधव- तुम्हारी गिरफ्तारी का वारंट है।

रमेश - किस जुर्म में ?

माधव- थाने तो चल वहां तुझे तेरे जुर्म के बारे में बताता हूं।

(रमेश की मां दौड़ती हुई आती है) कहां ले जा रहें हैं मेरे लड़के को ? क्या किया है इसने ?

माधव - एक जुर्म हो तो बताऊं सरेराह लड़कियों को छेड़ता है, एक बच्चे को इसने बुरी तरह पीटा है इतना काफी है इसको गिरफ्तार करने के लिए।

रमेश की मां - नहीं मेरा लड़का ऐसा नहीं कर सकता ये तो भोला है।

माधव- मांजी सबको एसा ही लगता है कि उनका लड़का गलत नहीं कर सकता , अगर सब मांओ के बेटे बेकसूर होते तो दुनिया में कोई जुर्म ही न होता।

(माधव उसे ले जाता है और रमेश की मां देखती रहती है)

सूत्रधार- इंस्पैक्टर माधव ने उन बदमाशों को पकड़ लिया, ये रमेश और उसका दोस्त शमी उनकादोस्त शमी और तीन-चार दोस्त थे, पुलिस की मार के बाद उन्होंने सारा सच उगल दिया। उस दिन वो सब नशे में थे और उन सब से ये गलत काम हो गया। उन्होंने ये भी बताया की उनका अगला टारगेट हिना थी। ये सुनकर इंस्पैक्टर साहब सोच में पड़ गए की ये क्या हो रहा है? एसे लोगों की वजह से ही साम्प्रदायिक दंगे भड़कते हैं लोग एक दूसरे का मारने पे उतारू होतें हैं। मजहब के नाम पर झगड़ते हैं और अल्लाह और भगवान को जबरदस्ती अपने स्वार्थ के लिए लड़ाई में घसीटते हैं। एक दूसरे की औरतों की अस्मत लूटते हैं , इन सब का केंद्र नारी ही रहती है , वो अपने धर्म को पूरा समर्थन देती है, लेकिन जब उसके साथ कुछ गलत हो जाता है तो लोग उसको घृणा से देखतें हैं। धर्म के ठेकदार उस नारी का कोई समर्थन नहीं करते। हमें नारी को वस्तु न मानकर इनसान मानना होगा यही सबसे बड़ा धर्म होगा उधर फव्वाद को तो आप देख ही रहें हैं कि आज के लड़के कैसे झूठ का इस्तेमाल करतें हैं चलिए देखतें हैं आगे क्या है -

धीरे धीरे पर्दा गिरता है अंक तीन की समाप्ति

अंक 4

(अदालत की कार्यवाही चल रही है, जज आ चुके हैं रमेश और शमी के पिता ने शहर के जाने माने वकील को केस लड़ने के लिए बुलाया है)

सरकारी वकील - जज साहब जिन छह लोगों को आप कटघरे में देख रहें हैं उन्होंने एक लड़की की अस्मत लूटी उसके बाद उसको अधमरी हालत में ये उसके घर के बाहर फेंक गए इन पर कड़ी कारवाही की जाए इन्होंने अपना जुर्म कबूल कर लिया है।

जज- आप पर लगाए गए इल्जाम सही हैं (कटघरे में खड़े लोगों की तरफ इशारा करते हुए)

रमेश - नहीं जज साहब ये इल्जाम सही नहीं है हमको हवालात में बहुत मारा गया और इस डर से हमें ये कबूलने पर मजबूर किया की हमने किसी की अस्मत लूटी है।

रमेश का वकील - ये सब बेबुनियाद इल्जाम हमारे क्लाइंटस पर लगाए जा रहे हैं , ये बात साफ हो चुकी है कि पुलिस ने इनको ये बयान देने पर मजबूर किया किया कि उन्होनें किसी का रेप किया है। अगर पुलिस के पास कोई एविडेंस है तो दिखाए। एसे तो राह चलते किसी पर भी इल्जाम लगाया जा सकता है तो उसे गुनहगार माना जाए ?

और जिस लड़की की बात आप कर रहें हैं वो तो पहले से ही चरित्रहीन है क्या पता वो ये सब पैसे वसूलने के लिए कर रही है ? शमी के साथ वो पहले से रिश्ते में थी इसकी गवाही शमी के पड़ोसी पहले ही दे चुके हैं। कॉलेज में भी इसके कइयों के साथ सम्बन्ध थे । ये गवाही भी शमी , रमेश के कॉलेज वाले दे चुके हैं।

जज- (सरकारी वकील से) क्या आपको अपनी बात साबित करने के लिए कोई सबूत है।

सरकारी वकील - जी जज साहब हमारे पास एक ऐसा गवाह है जिसकी बात आपको माननी ही पड़ेगी।

जज- तो उसे पेश कीजिए।

सरकारी वकील - हरीश आप कटघरे में आईए ।

जज- हरीश आप क्या करतें हैं

हरीश- मैं उस कॉलेज का प्रिंसिपल हूं जिस कॉलेज में ये घटना हुई है।

जज- आप निर्भीक होकर कहिए गीता पर हाथ रख कर कसम खाइए की आप जो कहेंगे सच कहेंगे उसके सिवा कुछ नहीं कहेंगे।

हरीश - मैं कसम खाता हूं, पर कुछ कहने से पहले रमेश के वकील से ये कहना चाहता हूं कि लड़की के चरित्र पर उंगली उठाना आसान होता है, मैं उनसे पूछता हूं कि अगर सानी की जगह उनकी लड़की होती तो वो उसे भी वेश्या बताते ?

रमेश का वकील - ये क्या बकवास कर रहा है ये, जज साहब ये हमें भटका रहा है ताकि इसकी बात को सच मान लिया जाए।

हरीश - जब अपने पे आई तब कैसे भड़क उठे जनाब। जज साहब सच तो ये है कि सोनी हमारे कॉलेज की सबसे होनहार स्टूडैंट है। और ये लड़का रमेश और उसका दोस्त शमी रोज उसको परेशान करते थे , उसके गवाह मैं ही नहीं बल्कि सारे कॉलेज के बच्चे हैं। ये लोग तो बच्चों के साथ भी बदसलूकी करते थे, एक बच्चे को खुद मैंने इनसे बचाया था। जब ये उस मार रहे थे। जज साहब इस समाज मैं लड़की और गरीब होना एक अभिशाप है, गरीब को तो पैसे वाले दबा ही देतें हैं और लड़की के चरित्र पर उंगली उठाना तो आसान होता है। जज साहब इन्हें कड़ी से कड़ी सजा दीजिए।

जज- (रमेश के वकील से) आपके पास और सबूत हैं अपने मुअकिल को बेगुनाह साबित करने के लिए ?

रमेश का वकील - ये सब मनगढ़त कहानियां हैं जज साहब आपको गुमराह करने के लिए। पर मिस्टर हरीश आपके इमोशनल वैपन्न का यहां कोई मतलब नहीं कोर्ट सबूत मांगता है और गवाह भी। और वैसे भी जज साहब जिस लड़की का रेप हुआ है उसका करेक्टर तो पहले से ही ठीक नहीं था, ये साबित करने के लिए मेरे पास कई गवाह हैं।

हरीश - ताली बजाता है वाह! वाह! वकील साहब कितनी सफाई से आपने उस लड़की के करेक्टर पर उंगली उठा दी जो हॉस्पिटल में जिंदगी और मौत से जूझ रही है। जज साहब गुनाह तो गुनाह होता है, और किसी का करेक्टर ठीक नहीं तो उसको न्याय का अधिकार नहीं है। ये बात सही है की जब कुछ न बन पड़े तो औरत की इज्जत पे सवाल उठा दो, बदनाम कर दो यही खासियत तो है हमारे समाज की।

जज (रमेश के वकील से) मिस्टर नीलचंदानी अगर आपके पास कोई ठोस सबूत है तो दिखाइए यूं किसी की इज्जत पर सवाल नहीं उठाया जा सकता। अगर आपके पास गवाह है तो पेश किजिए।

जज- मिस्टर हरीश आप जा सकते हैं। (दुखी मन से चला जाता है)

रमेश का वकील - जज साहब आज हमारे गवाह आ नहीं पाएं हैं आप काई अगली तारीख दे दीजिए, ताकि सच सबके सामने आ जाए।

सरकारी वकील - जज साहब अगली तारीख दे दीजिए ताकि जब हम अगली बार कोर्ट में पेश हों और ये भाड़े के गवाह कोर्ट में पेश किए जा सकें।

जज- आपका क्या मतलब है ?

सरकारी वकील - मतलब साफ है जज साहब पैसों से सब बिकता है, गवाह भी पैसों से खरीदे जा सकतें हैं।

रमेश का वकील - क्या मतलब है आपका? की गवाह पैसों पर बिकतें हैं सच्चाई सामने लानी है तो तारीख तो कोर्ट से लेनी ही पड़ेगी।

सरकारी वकील - जज साहब यही तो विडंबना है इस देश की हम सब जानतें हैं यहां तारीखों से क्या होता है, केस को जितना लटका सकते हो लटकाओ और दुआ करो की एक दिन वो तारीख आए जब तुम्हारे साथ न्याय हो सके।

रमेश का वकील - जज साहब सरकारी वकील ये नहीं जानते की सच सामने लाने में देरी तो होती है, और सच पैसों पर नहीं बिकता।

सरकारी वकील - जज साहब हम सब जानते हैं कि मिस्टर नीलचंदानी इस शहर के जाने माने वकील हैं, उनकी फीस भी काफी ज्यादा है, वो आज तक कोई केस भी नहीं हारे ,अगर सच सामने लाना था तो रमेश, शमी के पिता ने कोई और वकील क्यों नहीं कर लिया?

नीलचंदानी - जज साहब आप जानतें हैं कि मैने हमेशा ही सच का साथ दिया है, ये भी कोई बात हुई की मैं ही क्यों इस केस को लड़ने आया तो सुन लीजिए मैं जानता हूं कि मेरे मुअक्किल निर्दोष है और इसे मैं साबित करके रहूंगा।

(जज अपने मन मैं सोच रहें हैं)

(जानता हूं कि कितना सच बोलतें हैं नीलचंदानी पर क्या करूं)

जज- अगले महीने की 30 तारीख को फिर इस केस पर सुनवाई होगी।

(सब चले जातें हैं)

(अगले दिन सुबह हरीश सैर करने के लिए जा रहा है पार्क में उसकी मुलाकात सरकारी वकील अमरसिंह से होती है)

हरीश - अरे वकील साहब आप यहां ?

अमरसिंह- (हंसकर) क्या आप मुझे यहां नहीं देखना चाहते?

हरीश - वो बात नहीं है वकील साहब आपको यहां देखकर हैरत हो रही है कि कानून को भी ठीक रहने के लिए अच्छी सेहत की जरूरत है।

अमरसिंह- सो तो है।

हरीश - सर एक बात तो बताइए सोनी वाले केस का क्या होगा?

अमरसिंह- होना क्या है गवाहों के पलटने का खेल शुरू होगा।

हरीश - मतलब।

अमरसिंह (आओ बैंच पर बैठतें हैं, दोनो चलकर बैंच पर बैठ जातें हैं)

अमरसिंह - प्रिंसिपल साहब यहां ऐसा ही होता है, कोर्ट में गवाहों को उनकी गवाही से पलटने के लिए मोटी रकम दी जाएगी, और शायद लड़की के घरवालों को धमकाया जाए या उन्हें पैसों का लालच दिया जाए।

हरीश - तो क्या न्याय नहीं होगा ?

अमरसिंह - न्याय की क्या उम्मीद लगाई जा सकती है, कोर्ट में तो केस को एसा उलझाया जाता है कि जब तक केस चलता है अपराधी बेल पर चला होता है, जब न्याय की बारी आती है तो पता चलता है कि जिसे गिरफ्तार करना है उसे मरे दो साल हो गएं हैं।

हरीश - तो सोनी का केस आप नहीं लड़ेंगे ?

अमरसिंह- जबतक मेरी जान में जान है मैं लड़ूंगा, आप तो जानते हैं कि नीलचंदानी इस शहर का माना हुआ वकील है, वो कोई केस नहीं हारा।

हरीश - क्या जमाना है कि सच को कैसे दबाया जाता है ?

अमरसिंह -प्रिंसिपल साहब ये अंधा कानून है, कोर्ट गवाह मांगता है सबूत मांगता है, यहां किसी का कत्ल हो जाए तो कागजों पर दिखाना पड़ता है कि वह वही आदमी है जिसका कत्ल हुआ है।

हरीश - वकील साहब मैं गवाह हूं क्या इतना काफी नहीं हैं रमेश और उसके दोस्तों को सजा दिलाने के लिए।

अमरसिंह - नीलचंदानी हमसे ज्यादा गवाह कोर्ट में पेश कर देगा, और आपको ही उसने झूठा साबित कर दिया तो? अभी तो छेड़छाड़ का ही केस दर्ज हुआ है, हां मेडिकल रिपोर्ट से ये साबित हो गया है कि उसका रेप हुआ है, पर उन्होंने ही किया है ये अभी साबित होना है।

हरीश - पर पुलिस के सामने तो उन्होंने कबूला है कि रेप उन्हीं ने किया है।

अमरसिंह - तो उससे क्या? कोर्ट में उनके वकील ने ये साबित करना है कि पुलिस ने उनके साथ जोर जबरदस्ती की और उनसे बयान लिखवाया गया। वो लड़की ही उनकी शिनाख्त कर सकती है पर वो तो हॉस्पिटल में मौत से जूझ रही है। भगवान न करे की उसकी मौत हो एसा हुआ तो केस खत्म समझो।

अमरसिंह- (लम्बी सांस लेकर मायूसी से) अच्छा अब मैं चलता हूं।

हरीश - ठीक है।

(दोनों चले जातें हैं)

सूत्रधार - (हंसकर) (जनता को लक्ष्य करके) देखा आपने कितना मजबूर है हमारा कानून और कितने मजबूर हैं हम, वकील पैसों के लिए कैसे कैसे दांवपेच लगाकर अपराधियों को बचाते हैं, इसी से तो अपराधियों की हिम्मत और बढ़ जाती है उन्हें पता होता है कि वो बच जांएगे, कानून उनका कुछ बिगाड़ नहीं पाएगा। सोनी की ऐसी हालत का जिम्मेदार कौन है ? उसकी ईज्जत लुट गई तो उसे जिने का अधिकार नहीं है ? जिनके साथ एसा होता है तो समाज उन्हें घृणा की दृष्टि से देखता है, हंसता है और इस समाज के लोग कौन हैं ? हम और

आप हंसीए खूब हंसीए उसकी इज्जत लुटी है, तमाशा देखिए , हमारे समाज में ऐसा ही तो होता है। लड़की को मर्यादा में रहने की सलाह दी जाती है, उनके कपड़ों को लेकर बातें करतें हैं और तो और उनके चलने के तरीके को भी लेकर बातें होतीं हैं। एक लड़के से उसके बहुत से रिश्तेदार पूछतें हैं की क्या तूने लड़की पटाई? अगर लड़कियों को लड़के से बात करते देख लिया तो आप कल्पना कर सकतें हैं कि उसके साथ क्या सलूक होता होगा।एक मां ने अपनी बेटी खोई है और वो बेटी मौत की दहलीज पर खड़ी है, आइए आगे देखतें हैं-

अंक- 5

(अस्पताल का दृश्य)

देवीसिंह - हमारी बहुत बदनामी हो गई है, (रोते हुए) सारी इज्जत मिट्टी में मिल गई शारदा मैं तो किसी को मुंह दिखाने के काबिल नहीं रहा। जो भी देखता है यही कहता है ये उसका बाप है जिसके साथ रेप हुआ है।

शारदा - बस किजीए, अब भगवान ने हमारी किसमत में यही लिखा था। (रोते हुए)

देवीसिंह- जब वो ठीक हो जाएगी तो किसी के साथ उसकी शादी करवा दूंगा।

शारदा- उसे ठीक तो हो जाने दीजिए ।

देवीसिंह- चुप कर हरामजादी तेरी ही वजह से ये सब हुआ है। तेरे लाड प्यार ने बिगाड़ रखा था इसको।

शारदा- अब इसमें मेरी क्या गलती है ?

देवीसिंह - मैंने इसके प्लस टू पास करते ही कहा था कि इसकी शादी करवा देतें हैं तब तू ही नहीं मानी। तूने कहा था पढ़ने दीजिए इसे ये होशियार है, अपने पैरों पर खड़ी हो जाएगी। हो गई खड़ी बन गई होशियार। (जोर-जोर से रोता है) तेरी न सुनी होती तो ये दिन न देखना पड़ता।

(शारदा भी रो रही है)

शारदा- मैंने सोचा था कि मेरे जो सपने पूरे नहीं लेकिन मैं अपनी बच्ची के सपनों को नहीं टूटने दूंगी उसे पढ़ाऊंगी। पर ये तो कुछ और ही.........(जोर-जोर से रोती है)

(डॉक्टर साहब ऑपरेशन थियेटर से बाहर निकल रहें हैं, नर्स के साथ बात करते हुए)

शारदा- डॉक्टर साहब मेरी बच्ची कैसी है ?

डॉक्टर- माफ किजिएगा बहन जी हम आपकी बेटी को बचा नहीं सके।

(शारदा बेहोश हो जाती है)

(शारदा के मुंह पर डॉक्टर पानी फेंकते हैं)

नर्स- आप हिम्मत रखिए।

(शारदा रोती रहती है। देवीसिंह की आंखों में भी आंसू हैं, सोनी का मृत शरीर उसके घर लाया जाता है । अर्थी पर रखी सोनी का चेहरा बार-बार देवीसिंह और शारदा देख रहें हैं और रो रहें हैं।)

(शारदा एकाएक उठती है, देवीसिंह की ओर जोर-जोर से चीखती है)

शारदा - अब करा ले इसकी शादी, तूझे बहुत फिक्र थी न इसकी शादी की, कराता क्यों नहीं देख तेरे सामने पड़ी है, हां मैंने बिगाड़ा है इसे मैंने इसे जन्म देकर गलती जो कर दी। (औरतें उसको संभाल रहीं हैं देवीसिंह भी रो रहा है)

शारदा- (देवीसिंह की ओर) तू क्यों रो रहा है तेरे वंश के मुंह पर तो कालिख जो पोत दी है इसने। (सोनी के शरीर की ओर) उठ न मेरी बच्ची उठ देख मैं हूं तेरी मां उठ न (रोना और तेज होता है)

देवीसिंह- (रोता रहता है)

शारदा- क्या हाल कर दिया उन कुतों ने मेरी बच्ची का। (देवीसिंह और कुछ लोग अर्थी को उठातें हैं और शमशान की ओर चल पड़तें हैं)

शारदा - कहां ले जा रहे हो मरी बच्ची को ? छोड़ो इसे। (अर्थी को उठाकर चल पड़तें हैं, शारदा के ऊपर धीमा प्रकाश अंधेरा हो जाता है।)

(मंच पर रुखसार का प्रवेश चिल्लाते हुए)

रुखसार - ये देखिए क्या गजब हो गया ?

ईकबाल- क्या हुआ क्यों रो रही हो ?

रुखसार- हिना ने जहर खा लिया।

(इकबाल चौंक जाता है दोनों हिना के कमरे में जाते हैं जहां हिना मरी पड़ी है, टेबल पर सुसाईड नोट लिखा है।)

इकबाल- ये क्या हो गया या अल्लाह! ये इसने क्यों किया।

रुखसार - ये टेबल पर इसने कागज पर कुछ लिखा है।

इकबाल- पढ़ता है

अम्मी, अब्बू मैं आपसे कहना चाहती थी कि मैं पढ़ना चाहती थी मैं निकाह नहीं करना चाहती थी। मेरे भी कुछ सपने थे पर आपको उनकी परवाह कहां है, आपको तो फिक्र थी मैं भाग जाऊंगी तो मैं भाग रहीं हूं जिंदगी से मौत की तरफ, अब आपके ऊपर बोझ ही तो थी, मैं कहती हूं की समाज में भ्रूण हत्या होनी चाहिए क्योंकि जब लड़की जन्म लेती है और जवान होती है उसे लगता है कि वो मांस का टुकड़ा है जिसे हजारों खाने को तैयार होतें हैं, हम बेबस होती हैं जब कोई हमारे कपड़ों को लेकर या हमें गाली देकर तंज कसतें हैं और हंसते हैं, एक घुटन होती है, इससे अच्छा है न कि हम मां के पेट में ही मर जाएं। दुनिया में आकर भी तो हमसे फर्क किया जाता है इससे तो अच्छा है हम दुनिया ही न देखें। (रुखसार रो पड़ती है)

(रुखसार इकबाल फव्वाद सब रो रहें हैं, सब हिना की अर्थी को उठातें हैं)

(एक तरफ से हिना की अर्थी आ रही है और दूसरी ओर से सोनी की दोनों रास्ते में मिलतीं हैं)

सूत्रधार - एक शमशान जा रही है दूसरी कब्रिस्तान (अर्थियों की तरफ इशारा करके)

मजहब बेशक अलग हैं पर अंजाम सभी का एक है, सोनी मर गई ये भी अच्छा हुआ वैसे भी जीकर वो क्या कर लेती अगर जी जाती तो किसी बुड्ढे के साथ उसकी शादी कर दी जाती क्या लड़की का जिस्म ही सब कुछ है उसके सपनों का कोई मतलब नहीं? उसकी शादी कर दी तो मां-बाप के सिर से बोझ उतर गया। कभी सोचा है उसपर क्या बीतती होगी? हिना को इसलिए मरना पड़ा क्योंकि वो पढ़ना चाहती थी निकाह नहीं, उसे अपने सपने पूरे होते नहीं दिखे तो उसने मौत को गले लगा लिया। जैसे ही लड़की जवान होने लगती हैं सबकी निगाहें उसपर टिक जातीं हैं, उसकी शादी की बातें होने लगती हैं, सोचा है उसपर क्या बीतती होगी?

(समाप्त)

गांव सानन डाकघर डुमैहर, तह. अर्की जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 221, मो. 94592 41266

समीक्षा

जिंदगी की चुनौतियों से जूझती कहानियां 'धूप की ओर'

● कुमार भमौता

समीक्षीय कहानी संग्रह 'धूप की ओर' बद्री सिंह भाटिया का बारहवां संग्रह है। लेखक के अपने साहित्यिक अनुभव संसार से विचार-मंथन द्वारा प्राप्त इस संग्रह में ग्यारह कहानियां हैं। कहानियों के पात्र अपने जीवनानुभव से ग्रहण/संग्रहण करते हुए जीवन जीने की कला में माहिर लगते हैं। बेशक इसके लिए उन्हें कितनी तकलीफें, कितनी पीड़ाएं झेलनी पड़ें या नुकसान उठाना पड़े, बेझिझक झेलते हैं और उठाते भी हैं। यथार्थ को जीते हुए कहीं-न-कहीं आदर्श का दामन पकड़े रखा है। अपने भावों, अपनी इच्छाओं को मरने नहीं दिया है, बल्कि एक मकसद को लेकर जीते चले जाते हैं।

दिमाग से कुंद और हालात से पंगु हो चुकी हमारी व्यवस्था को तार-तार करती एक आम आदमी की व्यथा-कथा को कहती संग्रह की पहली कहानी 'बची हुई आदमियत के नाम' बड़ी ही मार्मिक बन पाई है। अपनी बेटी की मृत देह को पोस्टमोर्टम के लिए शहर ले जाने के लिए जब गाड़ी का बंदोबस्त नहीं हो पाता है, तो उसकी मृत देह को साइकिल पर कई किलोमीटर तक अपनी खीझ और टीस के साथ उससे बतियाता हुआ ले जाता है। उसे कोई पूछने वाला या उसके साथ हमदर्दी दिखाने वाला रास्ते में कोई नहीं मिलता। रूखे और असंवेदनहीन हमारे तंत्र की पोल खोल कर रख दी है इस कहानी ने। लेकिन शहर से थोड़ा पीछे जब दो युवक बारी-बारी से उसे थोड़ा-बहुत अपने स्तर पर सहयोग देते हैं, तो 'बची हुई आदमियत' दिख जाती है। उसी मानवीय संवेदना का अहसास कराती है यह कहानी।

'सुबह होने वाली है' हताश, परेशान और परिवार द्वारा ठुकराई गई दो नायिकाओं की कहानी है। जीवन को एक नई दिशा देने के लिए जो नए सवेरे की उम्मीद में एक-दूसरे का सहारा/सहयोग करने को तत्पर हो उठती हैं। इस कहानी में एक अंध-विश्वास और अंध-आस्था को उजागर किया गया है। हमारे देश में सदियों से प्रचलित 'डायन' समझकर किसी महिला को प्रताड़ित करना, नंगा करके घुमाना और भीड़/गांव द्वारा मार दिया जाना, अकसर सुनने-पढ़ने को मिल जाता है। यह कहानी मार्मिक तरीके से उस पीड़ा, घुटन और प्रताड़ना से उबरने की उम्मीद को 'सुबह होने वाली है' की तरह बरकरार रखती है।

हमारे पारिवारिक संबंध कैसे हैं? यह किस दिशा की ओर जा रहे हैं? हम परिवार के भीतर रहते हुए अपने स्वार्थ के लिए क्या अपनों के अरमानों का ही गला घोंटते हैं? 'बलि' कहानी में एक बेटी अपने मां-बाप की हैसियत की परवाह न कर, अपने ही रास्ते पर चली जाती है। दूसरी बेटी शादी के दिन गायब हो जाती है तो तीसरी बेटी को उसकी जगह शादी के लिए तैयार किया जाता है और उसकी शादी भी हो जाती है- दूल्हे, उसके मां-बाप को बताए बिना और वह भी कुछ दिनों बाद उस घर-पति को छोड़ कर चली जाती है। हमारे संबंध क्या 'बलि' मांगते हैं? या हम खुद 'बलि' हो जाते हैं या फिर दूसरे/सामने वाले को 'बलि' पर चढ़ने के लिए मजबूर करते हैं? कहानी कुछ ऐसे ही सवालों को छोड़ती हुई हमारी सामाजिक परंपराओं के विद्रोह को उजागर करती दिखती है।

भाटिया जी प्रयोगधर्मी साहित्यकार हैं। वे प्रयोग करने से हिचकते नहीं हैं। यही बात इस संग्रह की कहानी 'कर्मजली' पर भी लागू होती है। उन्होंने इस कहानी में विक्रमादित्य और बेताल के पात्र गढ़कर कहानी लिखी नहीं, सुनाई है। बेताल के माध्यम से राजा विक्रमादित्य को उसके साम्राज्य में एक बेटी/बहू पर हुए/हो रहे जुल्म और उसकी परेशानियों से चिंतित उसके मां-बाप की कथा कहलवाई है। नायिका के साथ ससुराल वालों का बुरा बर्ताव। ढाए गए जुल्मों का बखान है, जहां बहू होने का अर्थ पैसा कमाने वाली मशीन है। जहां उसकी भावनाओं की कद्र नहीं और न ही उसका पढ़ा-लिखा होना मायने रखता है। मां-बाप को तलाक के बाद उसका दोबारा से घर बसाने की चिंता है जो विवाह होने पर भी चिंता ही बनी रहती है। कह सकते हैं कि विक्रमादित्य और बेताल आज की व्यवस्था और उसे बताने वाला सूत्रधार है। यह भी कि यह फैंटेसी के जरिए एक फीडबैक भी है।

फैंटेसी की एक और कड़ी है 'चुड़ैल बावड़ी'। यह कहानी रोमांच और रहस्य से भरी है। जिसमें एक चुड़ैल का परिवार है और इनसानी रिश्तों से उसे बंधा होना और उन्हें निभाते दिखाया गया है। यह कहानी आगे क्या होगा, की जिज्ञासा को जगाए रखती है। इस संग्रह से इतर 'प्रेत संवाद' और 'लोग फूलों को प्यार नहीं करते' जैसी इस तरह की खासी चर्चित कहानियां भी भाटिया जी ने पाठक वर्ग को दी हैं। ऐसा कभी हुआ/ या होता है या नहीं, कितना सच और कितना झूठ या यह मात्र कपोल-कल्पना है, पाठकगण स्वयं विचार करने और सोचने के लिए स्वतंत्र हैं।

लेकिन ऐसी दिलचस्प कहानियां और किस्से खासे मनोरंजक होते हैं जो सुनने/पढ़ने/देखने वाले के कभी-कभी रोंगटे तो खड़े कर देते हैं।

वैवाहिक संबंधों में बिखराव, टूटन और असफलता शुरू हो जाती है तो कहीं कोई दूसरा सहारा ढूंढने पर इनसान विवश हो जाता है। 'धूप की ओर' दो पड़ोसनों की कहानी है। जो परिवार से अलग एकाकी जीवन जीने की त्रासदी से गुजर रही हैं और उन्होंने एक-दूसरे में सहारा ढूंढ लिया है। और आए दिन जब भी उन्हें समय मिलता है, पुरानी यादों की जुगाली शुरू कर देती हैं। इस उम्मीद में कि जीना है तो, ऐसा कुछ करना ही होगा। यूं घुट-घुट कर मर जाने से यह ज्यादा बेहतर और व्यावहारिक दिखता है। और एक-दूसरे का सुख-दुख, तकलीफ, पीड़ा को समझा/साझा किया जा सकता है।

इस गर्मी के मौसम में हिमाचल और उत्तराखंड में आजकल वन धधक रहे हैं। करोड़ों की वनस्पति स्वाह हो गई है। जीव-जंतु, चीड़ू-पखेरू, धरती पर रेंगने वाले बहुत से जीवों का जीवन नष्ट हो गया है। जब यही आग आस-पास के गांवों में पहुंचती है तो भारी नुकसान करती है। लेकिन यही आग जब ईर्ष्यावश जानबूझकर लगा दी जाती है तो आदमी का खून खौलने लगता है, चेहरा तमतमा जाता है। लेकिन आदमी कुछ कर नहीं पाता। एक मानसिक/शारीरिक आधि/व्याधि की पीड़ा झेलता हुआ जीता है। गांव में जब कोई बड़ी मेहनत और जतन से एक बागीचा तैयार करता है, तो आसपास, अड़ोस-पड़ोस के पेट में मरोड़ पड़ने शुरू हो जाते हैं। ईर्ष्या-द्वेष की भावना पनपनी शुरू हो जाती है। नतीजा उसके बागीचे में 'आग' लगाकर उसको जैसे-तैसे नुकसान पहुंचाना। उसकी वर्षो की मेहनत को कुछ घंटों/मिनटों में जला देना। 'आग' कहानी निठल्लेपन, चिढ़ और अविवेकहीनता की ओर इशारा है।

किसान अपने खेतों के लिए क्या नहीं करता है। खोदना, हल चलाना, खाद, बीज और पानी। न जाने और क्या-क्या? लेकिन एक गरीब किसान की हालत जब पतली होती है या उसके पास बैल या मशीन खरीदने के लिए पैसा नहीं होता तो 'बैल बनीं बेटियां' कहानी खुद-ब-खुद तैयार हो जाती है। लेखक ने इस कहानी में खुद्दार बेटियों की हिम्मत को उजागर किया है। एक किसान बाप की जिम्मेवारियों का बोझ उठा कर एक नई परंपरा को जन्म दिया है। जब उसकी दो बेटियां बैलों की जगह खुद अपने कंधों पर हल का बोझ ले लेती हैं और बाप हल पकड़ कर खेत को बीजता है। मां खेत में बीज डालती चलती है। इन बेटियों की पहल ने उस साल गांव के किसी भी बैलविहीन किसान परिवार के खेत को बिना हल, बिना बीज न रहने दिया और न ही 'पहली बारिश' की नमी को ही बेकार में सूखने दिया। सकारात्मक सोच का सकारात्मक संदेश इस कहानी में मिलता/ दिख जाता है।

विवाह-बंधन में बंधना हमारे देश/समाज की प्राचीन सामाजिक व्यवस्था है। फिर अपना परिवार बसाना/संवारना पति-पत्नी का दायित्व बनता है। लेकिन जब दोनों में से कोई इसे न निभाए पाए या असमर्थता व्यक्त करे तब वही होता जो 'शायद' कहानी के पात्र के साथ घटित हुआ। नायिका शादी के बाद पहली रात से ही नायक के साथ अपने संबंध नहीं बना पाती है और आगे भी इन्हें निभाने में असमर्थ रहती है। और न ही उस नायक के साथ रहने और न रहने की रजामंदी प्रदान करती है और न ही संबंधों को बेहतर और कमतर करने की कभी कोशिश कर पाती है। इस तरह की रुखाई और ठंडाई से कहानी का पात्र मानसिक रूप से खासा परेशान है। नायिका से पीछा छुड़ाने के लिए उसे वर्षो लग जाते हैं। यह कहानी शायद उसकी वर्षो की परेशानी को उद्घाटित करने के उद्देश्य से लिखी गई है। इसे बदलते समाज का चेहरा भी कहा जा सकता है जिसमें बड़ी उम्र में बच्चों की शादियां कई बार पारिवारिक परेशानियों का सबब भी बनती हैं। कहानी में इसी तरह के और भी प्रसंग बीच-बीच में आए हैं। जो इस तरह के बेरुखे और पति-पत्नी के ठंडे संबंधों को निभाए जाने के औचित्य पर प्रश्न खड़ा कराते हैं।

यदा-कदा शिकार के बहाने इनसान का शिकार हो गया। ऐसी वारदातें अकसर अखबारों की सुर्खियों में जगह पा जाती हैं। 'आंखें' कहानी में एक युवती शिकारियों का शिकार हो जाती है। और उसकी आंखों की रोशनी चली जाती है। उसकी जिंदगी बर्बाद हो जाती अगर वही शिकारी जो इस घटना का जिम्मेवार होता है, अपनी पहली पत्नी की रजामंदी मिलने पर उससे शादी न कर लेता। बेशक उसने यह कदम अपराध बोध के कारण उठाया या प्रायश्चित के लिए, लेकिन उसने उस दिव्यांगना हो चुकी युवती के जीवन में रंग भरे और अपनी आंखों से संसार दिखाया। जीवन जीने की उम्मीद जगाए रखी। कहानी में शिमला शहर के खूबसूरत रिज और माल रोड का बेहद खूबसूरती के साथ वर्णन मिलता है जब वह अपनी पत्नी को इन जगहों के बारे में घूमते हुए बताता चलता है। 1972 में आई 'अनुराग' फिल्म की झलक अनायास याद हो आती है जब फिल्म का नायक अपनी जन्मजात दिव्यांगना प्रेमिका के पूछने पर 'वो क्या है' 'इक मंदिर है' गाने में बताता चलता है, उसी तरह इस
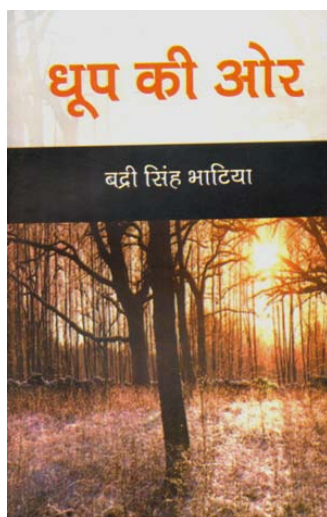
शब्द की सामाजिक छटपटाहट को अभिनीत करती कविताएं

• डॉ. सुशील कुमार फुल्ल

हिमाचल में कविता के अनेक रंग मिलते हैं। एक परंपरा है घटाटोप बिंबों के क्लिष्ट कवि श्रीनिवास श्रीकांत की और एक परंपरा है सरल एवं तरल बिंबों की के धनी कवि रामकृष्ण कौशल की। सरोज परमार, केशव, अजेय, पीयूष आदि ने अपने अपने रंग ढंग की रचनाएं की हैं। कुछ आत्मोन्मुखी हैं, कुछ अतिशय कलावादी हैं और कुछ सहज भावनाओं के चितेरे हैं। कुछ वर्ष पूर्व कुमार कृष्ण ने भू कविता की अवधारणा को जन्म दिया था। आज अचानक हंसराज भारती के काव्य संग्रह को पढ़ते हुए लगता है कि ग्रामीण परिवेश साकार हो उठा है। भू कविता महक उठी है। मिट्टी ने शब्दों का रूप धारण कर लिया है और किसान उसकी फसल, वन पेड़, पहाड़ मुखरित हो उठते हैं। संग्रह की कविताएं पांडित्य प्रदर्शन नहीं है, नए कवियों की लटक-झटक भी नहीं है, व्यर्थ की कदमताल भी नहीं है। शब्दों की जोड़-तोड़ भी नहीं है। अनेक प्रश्न उभरते हैं, शब्द उफनते हैं और संवाद एवं संभाषण सामाजिक परिवेश को उद्भासित करते हैं। हंसराज भारती आतंक से प्रभावित कहानी लिखने वाले कथाकार के रूप में ख्यात हैं परंतु आलोच्य पुस्तक में संकलित उनकी कविताएं भावनाओं की मार्मिक, शब्द की अर्थवत्ता, समस्या को गुनगुनाते हुए समझने-समझाने की प्रक्रिया की मनोहारी प्रस्तुति है। 'क्या कविता यूं ही' कविता में भारती ने थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कह दिया है।
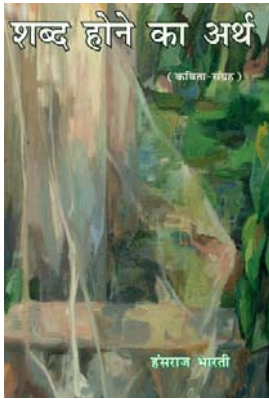
सत्ता के आस-पास चरने वाले दरबारी कवि तटस्थ लेखक को कहां जीने देते हैं पूरी कविता आग का शोला है। कविता तो बस कविता है 'बौखलाए कवियों ने आग बुझाने की बजाय' कवि को ही उठा कर आग में फेंक दिया। कवि तो जल गया मगर कविताएं नहीं जल पाईं। वे हो गईं सदा सदा के लिए अजर-अमर। क्या सच्ची कविता भी जल सकती है। यूं ही मर खप सकती है। अमरीकी कवि राबर्ट फ्रस्ट की तरह हंसराज भारती गांव का कवि हैं वन, पहाड़, झरने, नदी नाले, खेत-खलिहान, किसान, आम इनसान सब उसकी कविताओं में चलते फिरते प्रभावी पात्रों के रूप में विद्यमान हैं। भारती का कवि धरती पर खड़ा है। यथार्थ को जीता है और आशावादी यथार्थ को वाणी देता है। आलोच्य संकलन की कविताएं जीवन की अनेक तरंगों को स्पर्श करती हुई अनेक विषयों को उद्घाटित करती हैं। वस्तुतः इन कविताओं में शब्दों के विमर्श हैं। जैसे धरती में बीज का प्रस्फुटन होता है उसी प्रकार संग्रह की 71 कविताएं ध्यानी ज्ञानी मुनि की गुनगुनाहट के अस्फुट स्वर हैं परंतु एकदम अर्थपूर्ण, धीर-गंभीर। 'शब्द होने का अर्थ' काव्य संग्रह हिमाचल की हिंदी कविता में एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है।

पुष्पांजलि, राजपुरा, पालमपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 061

कहानी का नायक भी अपनी पत्नी को वह सब बताता है जो वह पूछती/पूछना चाहती है। इस शहर की कई जगहें संग्रह की 'चुड़ैल बाउड़ी' और 'शायद' कहानियों में भी दिखती हैं।

इस संग्रह की अंतिम लंबी कहानी 'उलटे पांव' नायिका के अंत पर समाप्त होती है। पति, सास और ननद के अत्याचार सहते हुए भी उसी घर में रहने की जिद्द पर अड़े रहना और परिणामस्वरूप एक भयंकर बीमारी कैंसर से पीड़ित होकर अपने अंत को स्वीकार करना। मृत्यु न उम्र देखती है न स्थान और न ही छोटा या बड़ा। बस उसे ले जाना है, जिसका समय निश्चित है। घर में बड़े-बुजुर्ग अपने जाने की राह देख रहे हों, लेकिन इस बीच घर के किसी छोटे सदस्य की मौत हो जाए, तो उसे उलटे पांव की घटना माना जाता सकता है। बेशक हम खुद को आधुनिक कहलवाते हैं लेकिन जब हकीकत से वास्ता पड़ता है तो स्वयं को दोहरे चरित्र की भूमिका में खड़ा पाते हैं। ऐसे ही चरित्र और भूमिकाएं इस कहानी में दृष्टिगोचर हुई हैं।

कहना न होगा कि समीक्षीय संग्रह की प्रत्येक कहानी अपना अलग वजूद/वजन रखती है और रवानगी लिए हुए है। जिजीविषा और मुमुक्षा को साथ लेकर चलती ये कहानियां समाज की परंपराओं को तोड़ती हुई और नई परंपराओं की पहल करती हुई सी प्रतीत होती हैं। पाठकगण इनके आस्वादन के लिए किताब के पन्नों की यात्रा पर निकलेंगे तो पता ही नहीं चलेगा कि अध्ययन यात्रा कब खत्म हो गई।

द्वारा भारद्वाज भवन, रामनगर, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 0 98162 85095

कहानी संग्रह : धूप की ओर, **लेखक :** बद्री सिंह भाटिया, **प्रकाशक :** नीरज बुक सेंटर, नई दिल्ली, **पृष्ठ :** 160, **मूल्य :** 350 रुपये
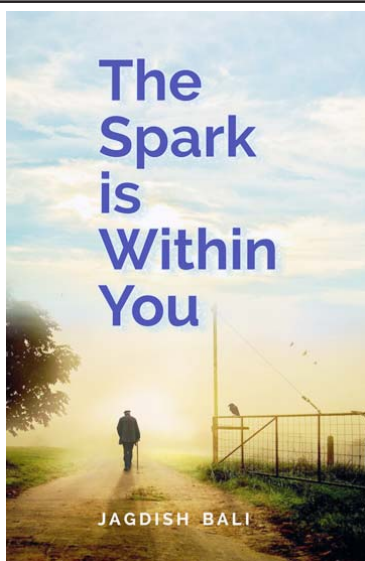
व्यक्तित्व विकास के आयामों को दिशा दिखाती पुस्तक

● रोशन जसवाल

भले ही जहां आज की सरकारी शिक्षा, सरकारी शिक्षक व सरकारी स्कूल अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जूझ रहे है, वहीं ऐसे शिक्षक आज भी मौजूद हैं जो अपने अध्यापन के हुनर, लेखन व प्रखर व्यक्तित्व से न केवल छात्रों के लिए प्रेरणा स्रोत हैं बल्कि समूचे अध्यापक समुदाय व शिक्षा जगत के लिए भी गर्व का विषय हैं। ऐसा ही एक व्यक्तित्व राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला कुमारसैन में कार्यरत अंग्रेजी के प्रवक्ता श्री जगदीश बाली है। श्री बाली जी की हाल ही में एक पुस्तक 'द स्पार्क इज विदिन यू' अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशक ऑथर्स प्रैस नई दिल्ली से प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक को पढ़ने के बाद पाठक प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। 189 पन्नों की इस पुस्तक में 38 अध्याय हैं जो व्यक्ति के विकास के विभिन्न आयामों को दिशा देने का प्रयास करते हैं।

भले ही पुस्तक अंग्रेजी भाषा में लिखी गयी है, परन्तु जिस शैली में पुस्तक लिखी गयी है उससे कोई भी सामान्य पाठक आसानी से लेखक के विचारों को समझ सकता है। साधारण भाषा का खूबसुरत इस्तेमाल किया गया है जो पाठकों को बोरियत नहीं देते। अपने विचारों के साथ साथ लेखक ने जिस तरह से अपने अनुभवों, प्रेरक प्रसंगों, संदर्भों व हिंदी व संस्कृत के उद्धरणों का समायोजन किया है, ये पुस्तक को रोचक बनाते हैं और पाठक को बांधे रखते हैं।

पुस्तक के अध्याय चार में श्री बाली बताते हैं कि किस तरह माता-पिता अपने बच्चे के व्यक्तित्व को बना व निखार सकते हैं। वे कहते हैं, 'माता-पिता की जिम्मेदारी इतनी आसान नहीं है जितना कि किसी पार्क में सैर करना, बल्कि इतनी मुश्किल है जितना कि किसी अंडे पर चलना।' इसी तरह बच्चों के व्यक्तित्व विकास में अध्यापक के योगदान पर बात करते हुए अध्याय पांच में श्री बाली कहते हैं, 'बिना अध्ययन कर पढ़ाने वाला अध्यापक उस पुराने कुंद चाकू की तरह है जो काट तो नहीं सकता पर खरोंच जरूर मारता है।' वे कहते हैं कि छात्र अच्छे अध्यापक को तो याद रखता ही है पर वह बुरे अध्यापक को भी नहीं भूलता।

पुस्तक के अन्य अध्याय भी मानव व्यक्तित्व के कई पहलुओं को छूते हुए, एक बेहतरीन जीवन यापन के लिए स्टीक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। अध्याय 38 में लेखक भाग्यवादियों पर तंज कसते हुए कहते हैं, 'भाग्यवादी लोग सोचते हैं कि खुदा ने उनके नाम भाग्य की कोई चिट्ठी लिख रखी है, जो वो कभी उन्हें डाक द्वारा भेजेगा।'

पुस्तक इस तरह के दिलचस्प शब्दों और वाक्यों से सराबोर है। श्री बाली जी का जन्म 1971 में शिमला जिले के एक छोटे से गांव आहर में हुआ। गांव के एक छोटे से सरकारी हिंदी स्कूल से शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद वे अंग्रेजी अखबार इंडियन एक्सप्रेस में उपसंपादक भी रहे। वे गत 15 वर्षों से अंग्रेजी अध्यापन का कार्य कर रहे हैं।

भाषा के प्रयोग, कम्युनिकेशन व पर्सनलटी डेवेल्पमेंट जैसे विषयों पर वे अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में बतौर रिसोर्स परसन भी प्रदेश का प्रतिनिधित्व कर चुके हैं। एक प्रखर व प्रेरक वक्ता के रूप में भी उन्हें जाना जाता है। स्कूलों में चल रही राष्ट्रीय सेवा योजना के तहत उन्होंने कार्यक्रम अधिकारी के रूप में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। बात करने पर उन्होंने बताया, 'कि वह पुस्तक लिखने का श्रेय अपने परिवार, गुरुओं व छात्रों को देते हैं।' उन्होंने कहा कि अभी 'द स्पार्क इज विदइन यू' amazon.in से प्राप्त की जा सकती है और minerwa book house Shimla के पास भी उपलब्ध है ।

प्रिंसीपल, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, बड़ागांव, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-172 027

पुस्तक का नाम : द स्पार्क इज़ विदिन यू, **लेखक :** जगदीश बाली, **प्रकाशक :** ऑथर्स प्रेस, नई दिल्ली, **पृष्ठ :** 189, **मूल्य :** 295 रुपये

समीक्षा

मानवीय संवेदनाओं का दर्पण है 'समय के साथ'

● सत्यवीर नाहड़िया

हिंदी कथा साहित्य में लघु कथा का अपना महत्त्व है। गत दो दशकों से लघुकथा के क्षेत्र में काफी काम हुआ है। अपने लघु स्वरूप के बावजूद इसकी मार्मिकता व मारक-क्षमता इस विधा की विशिष्टता है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लघु कथा को प्रमुखता से स्थान दिया जा रहा है। इस विधा में नए शोध एवं प्रयोग भी हुए हैं। ऐसी ही एक प्रयोगधर्मिता है आलोच्यकृति 'समय के साथ', जिसमें एक सौ एक लघु कथाओं में सूक्ष्म मानवीय संवेदनाओं को रेखांकित किया गया है। प्रख्यात रचनाकार घमंडीलाल अग्रवाल ने इन रचनाओं में घर, परिवार एवं समाज के बहुआयामी सरोकारों को शामिल किया है।
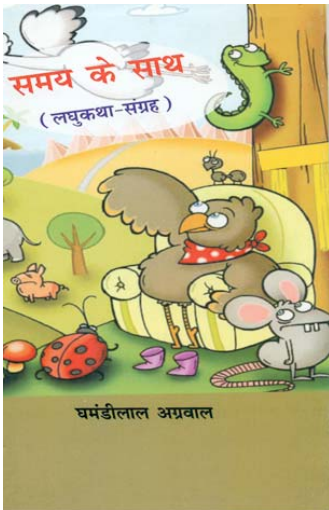
इस संग्रह की लघु कथाएं अपने शीर्षक के अनुरूप समय के साथ कदमताल करती प्रतीत होती हैं, जिनमें एक ओर सामाजिक विषमताओं, विसंगतियों व विद्रुपताओं के मुंह बोलते शब्दचित्र हैं, तो दूसरी ओर इन रचनाओं में मानवीय दोगलेपन पर करारी चोट भी है। मानवीय मूल्यों का बहुआयामी अवमूल्यन, बढ़ती भौतिकवादी सोच तथा सामाजिक संवेदनशून्यता के विभिन्न प्रारूपों व पात्रों के साथ रेखांकित करती ये लघु कथाएं पाठक मन को अंदर तक झकझोरती हैं। इन रचनाओं में परिवार, समाज, साहित्य, कला, संस्कृति, राजनीति के विद्रुप होते चेहरों को बेनकाब करने के अलावा मानवीय सरोकारों की वस्तुस्थिति से रूबरू करवाया गया है।

संग्रह की शीर्षक लघु कथा 'समय के साथ' रिश्वतखोरी पर करारा व्यंग्य है। संग्रह में भ्रष्टाचार पर लघुकथा रास्ता, गरीबी-अमीरी-गरीबी पर सवाल, पुरुषप्रधानता पर त्यागपत्र, गरीबी पर कला, रिश्तों की व्यावहारिकता पर संबंध, मजबूरी पर भूख दरकते सामाजिक ताने बाने के जीते जागते प्रमाण प्रतीत होते हैं। संग्रह में अनेक लघु कथाओं में व्यंग्य की धार प्रभाव छोड़ती है, जिनमें कुंडली, सुधार, मिड-डे मील, मूर्खता, जंतुप्रेमी, गुरुमंत्री, सत्संग महिमा, व्यवहार, मुक्ति, आज का भरत आदि उल्लेखनीय हैं।

सूरज व हवा के मानवीकरण पर आधारित लघुकथा अहं तथा छतरी को लेकर अहसास अच्छी बन पड़ी है। शादी, अर्धांगिनी, भेदभाव, रखवाली, सच्चा प्यार, रोटियां, परिवर्तन, शब्दजाल, धन की महिमा तथा कच्चे पक्के नामक लघु कथाएं सामाजिक परिवेश में व्याप्त विभिन्न विसंगतियों को रेखांकित करती हुए संदेश दे जाती हैं।

संग्रह की सभी रचनाओं की भावभूमि में नयापन तथा कथन में चुटीला अंदाज इनकी विशिष्टता है। इन लघु कथाओं में एक ओर जहां मानवीय संवेदनाओं एवं रिश्तों की कड़ी सच्चाइयों को रेखांकित किया गया है, वहीं दूसरी ओर इन रचनाओं में अपने परिवेश की बहुआयामी समीक्षा समाहित है।

मानसी पब्लिकेशन्स, दिल्ली द्वारा प्रकाशित इस कृति की छपाई सुंदर है। कलात्मक आवरण से सजे इस पुस्तक संग्रह की भाषा बेहद सरल, सहज एवं बोधगम्य है। लघुकथा के सभी मूल तत्त्वों के चलते संग्रह की रचनाओं की विविधता व नयापन प्रभाव छोड़ता है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि यह लघु कथा संग्रह समय का सजग प्रहरी बनकर अपनी विशिष्ट पहचान बनाएगा तथा लघुकथा साहित्य को समृद्ध करेगा।

257, सेक्टर-1, रेवाड़ी, हरियाणा,
मो. 0 94167 11141

पुस्तक : समय के साथ, **लेखक :** घमंडी लाल अग्रवाल, **प्रकाशक :** मानसी पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, **पृष्ठ :** 104, **मूल्य :** 255 रुपये

संतों ने कहा है कि अच्छे मित्र का यही लक्षण है कि वह मित्र को पाप करने से रोकता है। हितकारी कार्यों में लगाता है और गुप्त बातों को छुपाता है। गुणों को प्रकट करता है। विपत्ति में साथ नहीं छोड़ता। समय आने पर सहयोग करता है।

-भर्तृहरि (नीतिशतक)

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 जून, 2016 अंक : 3

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

उस ईश्वर को जाने बिना हृदय की गांठें नहीं खुलतीं, संशय दूर नहीं होते। जो उसे जान लेता है, उसके संपूर्ण विकार नष्ट हो जाते हैं।

- मुंडकोपनिषद्

इस अंक में

लेख

अपनी बात

आज हम समय के एक ऐसे कालखंड में रह रहे हैं, जहां हमारी वैज्ञानिक सोच का दायरा देश, काल, सृष्टि यहां तक कि सौरमंडल से भी परे समूचे ब्रह्मांड तक जा पहुंचा है। विज्ञान ने अब इतनी तरक्की कर ली है कि पूरा विश्व एक गांव में तबदील हो गया है। दुनियाभर के अंतरिक्ष वैज्ञानिक इस धरा लोक से लाखों प्रकाश वर्ष दूर ब्रह्मांड में जीवन के अस्तित्व और इसके सबूत ढूंढते फिर रहे हैं। जीवन के हर क्षेत्र विशेषकर सूचना एवं प्रौद्योगिकी में हुई अभूतपूर्व प्रगति से आभास होता है कि विश्व का परिदृश्य बदल रहा है, लेकिन यह बात भी सोचनीय है कि इस बदलाव से आम जनमानस कितना लाभान्वित हुआ है। विश्व की समस्त आबादी का एक बहुत बड़ा भाग विशेषकर अविकसित देश आज भी गरीबी, निर्धनता, भूखमरी, कुपोषण का शिकार हैं। धार्मिक कट्टरता और चरमपंथी सोच से उपजे आतंकवाद से आज पूरा विश्व त्रस्त है। निर्धन तबका रोटी, कपड़ा और मकान जैसी मूलभूत सुविधाओं से जूझ रहा है। आजादी के उपरांत भारत ने विकास के सभी क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है। लेकिन जनसंख्या में हुई विस्फोटक वृद्धि के कारण सात दशक की इस विकास यात्रा के बाद भी हमारे देश में गरीबी विद्यमान है। देश में अब भी लगभग 40 करोड़ लोग गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे हैं। 60 करोड़ ऐसे हैं जो एक हजार रुपये प्रति माह से गुजर-बसर कर रहे हैं। हम प्रतिवर्ष 1 करोड़ 70 लाख आबादी बढ़ा रहे हैं। रोजगार की कतार में आने वाले हर वर्ष एक करोड़ युवाओं में से हम 60 लाख को ही रोजगार दे पाते हैं और शेष 40 लाख युवा प्रतिवर्ष बेरोजगारों की संख्या में इजाफा कर रहे हैं। वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए आज हमें वैज्ञानिक सोच तथा अपने पुरातन गौरव और समृद्ध सांस्कृतिक विरासत से सीख लेने की नितांत आवश्यकता है। भारतवर्ष विश्व का एक ऐसा देश है जिसका इतिहास बहुत गरिमापूर्ण रहा है और आदिकाल से ही यह समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं का केंद्र रहा है। पराधीनता के दौर में महाराणा प्रताप, रानी लक्ष्मी बाई और महात्मा गांधी सरीखे अनेकों महान नेताओं का त्याग, उत्सर्ग और सर्वोच्च बलिदान आज भी हमारे लिए प्रेरणा स्रोत है। हमें गरीबी, निक्षरता और भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए अपनी युवा शक्ति का मार्गदर्शन कर उन्हें एक समर्पित नागरिक बनाने के लिए दूरगार्मी सोच से कार्य करना होगा। देश के सजग नागरिक के नाते हमें अपने सामाजिक जिम्मेदारियों का ईमानदारी से पालन करने की आवश्यकता है। समाज में सांप्रदायिक सद्‌भाव एवं भाईचारे को बनाए रखने के लिए अपनी चिरप्रतितिष्ठत सामाजिक परंपराओं का अनुसरण कर समाज में उदाहरण प्रस्तुत करें। भारत के गौरवमय इतिहास में भक्तिकाल एक ऐसा दौर था जब हमारे संतों और महान पुरुषों ने अपने सदविचारों से समाज को नई राह दिखाई। इस दौर में गुरुनानक, गुरु रविदास, संत कबीर जैसे अनेक ऐसे महात्माओं ने समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुप्रथाओं और धार्मिक कट्टरता को समाप्त करने में अहम भूमिका निभाई। संत कबीर सामाजिक क्रांति के अग्रदूत रहे हैं। हालांकि उन्होंने अपनी स्पष्ट वाणी से हिंदू और मुस्लिम दोनों धर्मों में व्याप्त बुराइयों विशेषकर रूढ़िवादी मानसिकता और कट्टरवादी विचारधारा पर तीखे प्रहार किए। लेकिन फिर भी वे दोनों समुदायों के अनुयायियों में समान रूप में सर्वमान्य थे। वास्तव में वे एक युगद्रष्टा थे जो समाज में व्याप्त धार्मिक कट्टरता और ईर्ष्या-द्वेष को दूर करने में सदैव प्रत्यनशील रहे। भारतीय शौर्य गाथाओं के महानायक महाराणा प्रताप हमारे जनमानस का ऐसा नायक है जिनके स्मरण मात्र से हम सबमें राष्ट्रभक्ति और उत्सर्ग की उदात्त भावना उत्पन्न हो जाती है। वे एक महान योद्धा ही नहीं, वरन् देशभक्तों के एक आदर्श और वीरता के सरिता प्रवाह की भांति सनातन स्रोत हैं। राष्ट्रीय अस्मिता एवं स्वाभिमान के प्रतीक महाराणा प्रताप तथा मध्यकालीन दौर में सामजिक क्रांति के प्रणेता संत कबीर आज भी हमारे समाज के प्रेरणा स्रोत हैं। भारत के इन दोनों महान पुरुषों की जयंती पर इन्हें शत्-शत् नमन। वर्तमान परिवेश में हम सभी को अपनी संस्कृति से मार्गदर्शन लेकर देश को समृद्धि के पथ पर लाने का प्रण लेना होगा।

–संपादक

आलेख

सतलुज घाटी की लोकगाथाओं में जीवन राग

● डॉ. हिमेंद्र बाली 'हिम'

सतलुज घाटी का सांस्कृतिक जीवन वैदिक एवं पौराणिक परंपराओं का जीवंत दस्तावेज है। ऋग्वेद के नदी सूक्त में वर्णित नदियों में सतलुज (शुतुद्रि) का वर्णन मिलता है[1] :-

इमे मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमसचता- परुषण्या।
असिकया मरुद्रवृधो वितस्तयार्जीकीय श्रृणुह्य सुषोमया

सतलुज का वैदिक नाम सतुद्री (शतुद्रि) और परवर्ती संस्कृत वाङ्मय में शतद्रु मिलता है जो तिब्बत (त्रिविष्टप नामकरण दयानंद सरस्वती) में स्थित शिव-स्थली कैलाश पर्वत की दक्षिणी ढलान में रक्सताल से निःसृत होती है। रक्सताल से320 किलोमीटर का सफर तयकर सतलुज शिपकी (किन्नौर) में हिमाचल में प्रवेश करती है।[2] बुशैहर भज्जी और बिलासपुर रियासतों की राजधानियां सतलुज के तट पर स्थित थीं। यह नदी शिमला जिले को कुल्लू और मंडी से अलग करती है। सतलुज नदी यहां की प्राचीन संस्कृति में लोकगाथाओं और लोक कथाओं के माध्यम से अपनी वैदिक और पौराणिक पृष्ठभूमि को कायम रखे हुए है।

सतलुज को किन्नौर के लोग गंगा की तरह पवित्र नदी मानकर स्तुति करते हैं।[3] किन्नौर में एक रोचक लोककथा है कि शोणितपुर (सराहन) के राजा बाणासुर ने मानसरोवर से सतलुज को सराहन तक अपना अनुगमन करने का आदेश दिया। सराहन पहुंचकर बाणासुर ने नदी को आगे का मार्ग स्वयं ढूंढ निकालने का आदेश दिया और स्वयं वहीं राज्य स्थापित किया। वैदिक समाज की आराध्या नदी सरस्वती का प्रवाह क्षेत्र यमुना और सतलुज (शुतुद्री) के बीच के क्षेत्र में था। भू-उपग्रह से मिले चित्रों से यह साक्ष्य उपलब्ध हुए हैं कि यमुना और सतलुज सरस्वती की सहायक नदियां थीं। सिंधु सभ्यता के अवशेष सर्वाधिक इस नदी समूह के पुराने सूखे मार्गों के किनारे मिले हैं।[4] सतलुज घाटी क्षेत्र के अंतर्गत शिमला जिले की रामपुर, कुमारसैन, ठियोग व सुन्नी और कुल्लू की आनी एवं मंडी की करसोग तहसील का क्षेत्र आता है। हालांकि सतलुज घाटी क्षेत्र का उक्त क्षेत्र कुनिंद प्रदेश के अंतर्गत आता है, जिसकी पुष्टि अलग्जैंडर कनिंघम ने की है। उसके अनुसार सतलुज नदी के दोनों ओर के पर्वतीय प्रदेश विशेषकर शिमला व सोलन जिलों के क्षेत्र कुलिंद प्रदेश में आते थे।[5] एक अन्य स्रोत के अनुसार कुलिंद (कुनिंद) व्यास नदी के ऊपरी भाग से लेकर यमुना नदी तक फैले हुए हिमालय के इस पर्वतीय प्रदेश में फैले थे।[6] अतः सतलुज घाटी का यह क्षेत्र कुलिंदों का क्षेत्र था, जिनके वंशज कुल्लू की व्यास घाटी किन्नौर व शिमला की सतलुज घाटी और सिरमौर की गिरिघाटी में आज कनैत और खश के रूप में आबाद हैं।[7]

सतलुज घाटी का सांस्कृतिक वैभव सैंधव-वैदिक सभ्यता का सम्मिश्रित स्वरूप है। यही कारण है कि कुलिंद क्षेत्र के इस भू-भाग का वर्णन महाभारत[8], बृहदसंहिता, विष्णु पुराण और मार्कंडेय[9] पुराण में आता है।

लोकगाथाओं में उत्सवधर्मिता

इस क्षेत्र के लोकोत्सव जनमानस के जीवन से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। जिला शिमला, कुल्लू के बाहरी सिराज की विप्र नगरी निरमंड और मंडी के करसोग क्षेत्र के साथ-साथ सहस्रार्जुन के सुन्नी क्षेत्र में दिवाली उत्सव हर्षोल्लास से मनाया जाता है। दिवाली के अवसर पर लोक रामायण का पाठ देवठियों (देव प्रांगण) में किया जाता है। इन लोकगाथाओं में कथावस्तु रामायण की है। यदि कुछ उपमाएं और प्रकरण जोड़े गए हैं वे विशुद्ध रूप से गुमनाम लोक कलाकारों की ईश्वराधना की संवेदनात्मक परिणति का प्रतिफल है। इस भू-भाग में लोकोत्सव-दिवाली, शिवरात्रि, गूगा नवमी जैसे पुण्य अवसरों पर धार्मिक लोक गाथाओं का गायन श्रद्धातिरेक से होता है। इसके अतिरिक्त विवाहोत्सव विशू जागरा और मेलों के अवसर पर लौकिक गाथाओं का गायन नृत्य के संयोजन के साथ होता है।

रामायण और महाभारत व बरलाज गान की परंपरा

दिवाली हिमालय के इस अंचल में मंदिर प्रांगणों में आयोजित होती है। दिवाली वाले दिन उपयुक्त राशि वाले व्यक्ति का चयन कर रात्रि में देव प्रांगण में बरलाज प्रज्वलित किया जाता है। बरलाज विरोचन पुत्र बलि है, जिससे भगवान वामन ने अढ़ाई

कदम धरती मांग कर उसे पाताल का सिंहासन प्रदान किया। भगवान ने उसकी दानशीलता को देखते हुए कार्तिक मास की अमावस और नए चांद का एक दिन दिया। बरलाज लोकगाथा में ठियोग क्षेत्र में वामन और बलि का घटनाक्रम इस प्रकार निरूपति किया गया है -

बडिराजा मेरा चकुआ राजा...
किया हो बामणो रा बेखो...
बलिराजै सै शोधणा लाया
मांठा बामण केथेओ आया
डाई बीखौ परिथवी देंदा
जोपड़ी टैवणी ओ मेरे
मांगी चुंगिय टुकड़ा खामा
बड़िराजै संकड़प ढाडा...
एक बिख दिती लोके दी एकी
दुजी बिखो दिती लोके दी दुजी
आधी बिखो के जागा न रई
घड़ी नारायणा केथेओ आया
बारौ देंदा दैवड़ी बारौ देंदा ऐ वांसी
मीनै री दैवड़ी राजेआ आंव देया न बडू
बांसों री दैवड़ी करू मा साजौ।

उपरोक्त लोकगाथा में भगवान वामन दो पग में पूरी पृथ्वी लांघ जाते हैं। परिणामतः आधा पद बलि अपने सिर पर धारण करता है। पृथ्वी के राज्य को खोने के बाद बलि भगवान से प्रार्थना करता है कि उसे धरती पर बारह संक्रांतियां और बारह अमावस दी जाएं। परंतु भगवान उसे कार्तिक मास की अमावस देते हैं और महीने के मध्य में आने वाली संक्रांति को आयोजित संक्रांति (साजा) में उसके निमित्त लोकोत्सव प्रदान करते हैं।[10]

कुल्लू के बाहरी सिराज क्षेत्र में ब्रलाज (बरलाज) रामायण कथा से पूर्व मंगलाचरण के रूप में गाया जाता है :

पहले नाओ नारायणों रा
जुणी धरती पुआनी।
जलथली होई पिरथवी
देवी मनसा राखो जगड़ी
माणु न होले कबे न रीखी
एकेही नारायण राजो होला
सिद्ध गुरु री भ्योड़ी फा
ढाई दाणा शेरो रा भौडा।
ढाई दाणा शेक रा
म्हारै खाड़िए बाजौ
बीजी बाजी रो शेरो
जोमदे लागे
जोमी रो शेरो
गोड़ने लाए...क्रमशः

अर्थात् ब्रलाज गाथा में नारायण की स्तुति का वर्णन है जिसने धरती को प्रकट किया। तभी सिद्ध गुरु गोरख नाथ की झोली में अढ़ाई दाने सरसों के गिरे। अढ़ाई दाने बीजने के उपरांत डेढ़ तोला सरसों पैदा हुई। डेढ़ तोला सरसों से एक पाथा (दो किलोग्राम), एक पाथा से एक जून (48 सेर), एक जून से एक खार (20 जून) व एक खार से एक खारश (20 खार) सरसों उत्पन्न हुई। इस प्रकार ब्रलाज में यहां गुरु गोरख नाथ को सृष्टिकर्ता माना जाता है। इस तरह का कथानक कमोबेश शिमला और सिरमौर के जिलों में भी प्रचलित है।

सुन्नी के भज्जी (छोटा बल्ल) क्षेत्र में प्रलय के बाद नारायण के पैदा होने का वर्णन विशुद्ध वैष्णव रूप में निरूपित है।

भाईया जला थली सारी बे पृथ्वी, ओले ओला राक्षस वासा
भाईया नारायण होई गोऐ पैयदा।
मना दा सुचो सुचणा, भाईया मना दी सूची गाया सुचणा,
देवी मनसा पैयदा होई।
भाईया तांई बोलू देवियै मनसा, तू ही सांबे मेरी दरोई,
भाईया देवियै, बोलू बैहणे, मां जाणा बीजुऐ बणा खे।
भाईया मां जाणा बीजुऐ बणा खे, तू ही सांबे मेरी धरोई।
भाईया नारायणा डेई गोऐ बणा खे, देवी मनसा फोड़ो ली भुजा।
भाईया एक भुजा फोड़ी गाई मनसे, ब्रह्म विष्णु पेयदा ओये।
भाईया दुजी भुजा फोड़ी गाई देविये, चंद्र सूरज पैयदा ओये।[12]

उपरोक्त बरलाज में नारायण द्वारा सृष्टि उत्पत्ति का वर्णन है। उनके संकल्प मात्र से माता मनसा आविर्भूत हुई। माता मनसा ने अपनी चारों भुजाओं से क्रमशः ब्रह्मा विष्णु, सूरज-चांद, महादेव और वेद पैदा किए। पृथ्वी गाय रूप में खड़ी होकर नारायण से प्रार्थना करती है कि राजा हरिचंद के पुत्र बलि का जन्म हो गया है। नारायण वामन रूप में हरिचंद राजा के पास जाकर एक थाली दान देने को कहते हैं। राजा ने कहा कि यह थाली नहीं पूर्णिमा का चांद है। अंत में नारायण राजा बलि से कुटिया व सरसों का साग लगाने के लिए तीन कदम धरती मांगते हैं। अंत में बलि को पाताल भेजते हैं। धरती माता को कहा जाता है कि तू क्यों कांपती है? नारायण स्वयं भार संभाल लेंगे।

इस प्रकार कुल्लुवी समाज और शिमला के सतलुज उपत्यका में ब्रलाज या बरलाज की कथावस्तु एक ही है। जहां कुल्लू के बाहरी सिराज में सृष्टि के विस्तार को सिद्ध गुरु से जोड़ा गया है। जबकि शिमला के जनपदीय क्षेत्र में सृष्टि विचार भगवान नारायण विष्णु से ग्रंथिल है। लघु कथानक एवं स्थान नाम लोक कवि की अपनी कल्पना है।

भज्जी क्षेत्र में दिवाली पर ठामरू (द्रुत) नृत्य के दौरान जो गाथा-गीत गाए जाते हैं जिनकी अंतर्वस्तु वामन-बली संवाद ही है।[13]

उठा-उठा मिथुन केई खे चाला
उठा-उठा मिथुन डवारिये डेया
मिथुन बामण पोरा राजेया बुलाया
बैठा शीली रे ओटे लाया बे राजे खे दान
थालटू राजेया भरी तुंऐ पाखे दाना रा देणा
थालटू न बोलणा ओला बानुए रा नण
ढाई कदम बामण सारी पृथ्वी नापी
आधा कदम राजेया ऐवै केथिये राखू
ओआ बे धरती रा दान
राखे बे बली रे शीरे
टला बे धरती रा भार... क्रमशः

बरलाज के बाद दिवाली गाथा-गीत के गायन में माता सीता को श्राद्ध के दिनों में राजा दशरथ दृष्टांत देते हैं :

सीतू लै सौपना मिला, मिला ओ रामो रा पिता
पिता शगदडू मांगो, सीतू ले भुरजणे चांणे
माशो फाफले रा बौडा ए कागेया इन्दरौ द पड़ा
चुंजियै भुरजणो चुंगा बैशा ऐ वौड़ वैरे डाडै।
कागेया सोचदा पड़ा कुणजी दूर री जामा।
दुर्गे पूर्व की जामां बुरा अ पूर्वी राजा
खाणे न भुरजण देला
दूरौ पछमो जाया, बुरा अ पछमी राजा
खाणे न भुरजणा देला।
दूरौ दखणी डेवा, पूजा अ दोशूरी लांकै।
दशुआ बोलदा लागा, राणी दमोदरियै बोलू,
केईरी बास न लागी।
सीतु लै भुरजण चाणा, माशौ फाफलेया बौड़ा,
कागेया इन्दरौदा पौड़ा....2
मारै लोकै पौखरू थिऐ बेदलै लोंकै रै गलोली
खाणे न भुरजण दीया....2[13]

पद्मपुराण में वर्णन है कि वनवास काल में भगवान राम ने अत्रि मुनि के कहने पर ब्रह्मा जी द्वारा निर्मित उत्तम तीर्थ पुष्कर में पिता दशरथ को पिंडदान कर तृप्त किया था। पुराण कथानुसार भगवान राम ने स्वप्न में रात्रि के अंतिम प्रहर में दशरथ को देखा। लक्ष्मण और सीता ने भी इसी रूप में रघुनाथ जी को देखा था। अतः मार्कंडेय जी के आग्रह पर श्रीराम ने पिता का श्राद्ध संपन्न किया।[14] जबकि लोकगाथा में सीता द्वारा स्वप्न में दशरथ दर्शन का वर्णन है। तदनंतर भुरजण अर्थात् श्राद्ध में तैयार व्यंजन को इंद्रपुरी के कौवे द्वारा व्यंजन को दशानन (राजा दशु) की लंका ले जाने का वर्णन मिलता है।

सीता हरण का प्रसंग भी भज्जी क्षेत्र में प्रचलित है :

जोगीया रा भेख किया दानवे
सीता रे मैहला खे आया
बिछैया रे भूखे नैई सीतला
तेरे मुईये दर्शन मांगू।

फिर छल से रावण सीता हरण कर लेता है :-

अन्न बरोला देणा दानवा धुये यां रे धलर छाड़ो
सीता बठाई दिती रथा दा, दशुऐ दावड़ी लाई।
सीता त राखी लोको शोक वाटिका
आपी राजा मैहला खै आया
हंजे खबरा त ओ मंदोदरी खे
करो सीया मिलणे री तैयारी... क्रमशः

रावण सीता को लंका ले जाकर अशोक वाटिका में रख देता है और मंदोदरी को सीता से मिलने का आग्रह करता है। शिमला के अन्य क्षेत्रों में सीता हरण गाथा ने किगरी वाद्य यंत्र का उपयोग लोक कवि करता है और गाथा गीत गाता है -

सुनुए मौते किंदरे लाएके, रामो री राणिए बाय रे आए रे।
बाजि किंदरे-किंदरीरे तार रे, निअ सितोला रावण हार रे।[15]

ठियोग क्षेत्र में दिवाली पर गाए जाने वाले गाथा-गीत में हनुमान जी का लंका गमन भी मार्मिक है :

देवतै खुंबड़ी करौ, कुण बकीली ऐ जाला।
अंगदा भेजो लै बकीलौ, हणुआ रूशवी गोआ
ए साथ नी आंगतै रै जांदा, पिता अ जांगा अ मेरा।
रामजी बोलदै लागै, हणुआ बाछौदा आजै।
सौईकै दादेया मुंदड़ा देमा...2
एक छालौ देती तेसिया तेसी
दुजी छालौ देती तेसिया तेसी।
हणु समुदरौ दा डुबा...2
राम जी बोलदै लागै
हाय गै मुंदरिया मेरे।
हणुआ रूशवी गोवा
मेरी न जानि कै जुरा
आपणै मुंदरै कै जुरा।
रामजी बोलदै लागै,
हणुआ बाछोदा आजै।
हणुऐ चालदी धारी
पुजय दौशु री लौंके
सौईकै दादेया मुंदरा फेंका
कौसरा पायक असौ?
रामो रा पायक असौं
धोबी रै टिक्करै राम
देवतै जादौ कै आजै।[16]

उपरोक्त लोक गाथा में हनुमान लंका श्रीराम जी द्वारा भेजी अंगूठी (मुंदरा) संग सीता के पास जाते हैं। हनुमान गहरे सागर में छलांग लगाते हैं तो राम चिंतित हो उठते हैं कि मेरे प्रेम की

सूचक(सौईक) मुद्रिका (मुदरा) सागर के पानी में गुम हो गई। इस पर हनुमान नाराज हो जाते हैं कि राम को मेरी जान नहीं बल्कि अपनी अंगूठी की चिंता है। अतः लोक कलाकार ने हनुमान द्वारा कुपित होने के प्रसंग को कल्पना का संबल देकर जोड़ा है। जो गाथा में प्रहसन को पुष्ट करता है।

सीता से मिलने के बाद हनुमान द्वारा भूख शमन के लिए बाग को तहस-नहस करने का वर्णन ठियोग क्षेत्र में दिवाली लोक गाथा में प्रचलित है :

सीतला माईये भूखड़ी लागी...2
बागौ री दादियै आज्ञा देंगी...2
बुरै ओ दादै लांकै रे हेड़ी....2
तां देबी देलै खांडे रै घाए...2
लांकै रै रावण जाण परैणु...2
शुड़ी-फुड़ी फड़को खामा...2
हणु बांदटा डेया अ बागै...2
उल्टी शिखरी सुल्टे जोट...2
बागो रो कियो चोड़-मरोड़...2
दशुआ बोलदा लागा...2
राणी दामौरियै बोलू...2
लैया ए रामो रो बांधौ...2
राजैया दशुआ बोलू...2
राजैया दशुआ बोलू...2
लौकै रै राई ऐ पाकड़ी गाला...2
एरा हणु मरदा नी...2
आपणी मौत आफियै दसू..2
मरदै देखै हणु रा खेल...2
शाठ मण लेय रूं व तेल...2
हणु री पूंजड़ी दो बानो...2
हणु री पूंजड़ी लाय अ आग...2
दिता अ हणुए पूछों दी फेरा...2
लांकै रो कियो सत्यानाश...2

दिवाली गाथा-गीत में राक्षसों की देवी निकुंबला का रोष निरूपित किया गया है। ठियोग क्षेत्र में रमैण (रामायण) में यह प्रसंग लोकाचार से प्रभावित प्रतीत होता है :

धानुए दौरणा टेकी...2
बौलदै देवियै दोषौ...2
तुम्हे राकक्षै दैवी न जाणी...2
देविरा मौंडप शड़ा....2
बोलदै दैवियै दोष...2
देवियै परगट होए...2
चांबै री फड़ियै देवियै तेरा छाबा छवांमे...2
कुरंड चांदी रा लांबै....2

मध्यरात्रि के बाद चौथे पहर में भारत (महाभारत) का गायन में कौरव व पांडव में अपनी शुचिता का द्वंद्व अभिहित किया गया है। ठियोग क्षेत्र में भारत कौरव-पांडव के मध्य श्रेष्ठता की प्रतिस्पर्धा का परिचायक है :

कौरू-पांडू री से दूरजी लागी...2
कुण जा होला सै कुडौ रा सूचा...2
चालौ-चालौ भाईयो हामैं गयै जाम्बै...2
आपणे-आपणे पितरौ रै पिंड पियामै...2
पौलका पींड कदारियै पाया...2
कागै रो आव गरुड़ गोए पींड खाये...2
दुजड़ा पींड से भीमियै पाया...2
कागै रे आवर बातर गोए पींड खाये...2
चीजड़ा पींड दुर्योधणे पाया...2
गादे रो आव गउड़ गोए पींड खाये...2
चालौ-चालौ दुर्गे हामै पांडु रै घरै...2
मरो मांगौ भिमिया तू देई न बडै...2
ठौतरौ शौए छैलिरो तू केथिय करै...2
चालौ-चालौ दुर्गे हामै पांडु रै घरै...2
तुठी होईयो दुर्गे जामी पांडवै घरै...2

दुर्गाए अर्थात् योगनियां महाभारत युद्ध में जाने के लिए तैयार हो जाती हैं। वे रौद्र रूपा हैं। मांस भक्षण को आतुर हैं। अतः वे कहती हैं कि जो हमें मेड़े का मांस देगा, उनके शत्रुओं का हम नाश कर देंगी। जो हमें गधे-बकरे देगा तो हम युद्ध में गिर रहे अर्जुन को भी खड़ कर देंगी।

जुणजा देवा हामी मैड़ो रा मासौ...2
तेसरै शतरू रा केरा देउमी नाश अ...2
जुणजा देला गादैबाकरै बरै...2
डडै दै अर्जणो कर देऊमी खडै1[7]...2

सुन्नी के भज्जी क्षेत्र में भी दिवाली पर भारत (पांडमायण) का गाथा-गायन ठामरू (द्रुत) नृत्य के संयोजन से चिताकर्षक आभासित होता है :

शांत लागी देवरे-लोको देखो तमाशा...2
भीऊंवा खे गंगा-ओई गोई ग लोप बे...2
गड्डी ना फोड़ेया-बोलो गंगा न रोडे...2
सुतके-पातके-छुऐ गंगा न म्हारी बे...2
केड़े होंदे सुतक-केड़े पातक होंदे ग...2
पांच भाई पांडव- लागो शांतीय तेरी...2
अरी र आया अर्जुण आणा गैंडे रा मास...2
जागो बे देबतेयो जागो...2
शांत में देवरे लागी...2

उपरोक्त पांडमायण में देवी के देवरे (मंदिर) में शांत (पवित्रता व अनिष्ट निवृत्ति के निमित्त यज्ञ) (शेष पृष्ठ 43 पर)

विश्लेषणात्मक लेख

गोदान : ग्रामीण परिवेश की अतुलनीय कृति

● कृष्णवीर सिंह सिकरवार

निःसंदेह मुंशी प्रेमचंद का 'गोदान' ग्रामीण परिवेश की अतुलनीय कृति है। इस उपन्यास की लोकप्रियता का आलम यह है कि इस कालजयी कृति की एक प्रति हिंदी पाठकों के प्रत्येक घर में अवश्य ही देखने को मिल जायेगी। यह उपन्यास आज भी किसी ग्रन्थ से कम नहीं है और इसका महत्त्व आज भी उतना ही है जितना इसके प्रथम प्रकाशन वर्ष 1936 के समय था। इसका एक-एक शब्द मूल्यवान व सार्थक है। हिंदी पाठकों ने इसे अवश्य ही पढ़ा होगा और बार-बार पढ़ा होगा। इस उपन्यास में घटित घटनाएं आज भी भारतवर्ष के गाँवो में देखी जा सकती है। कई होरी आज भी साहूकारों, महाजनों के पंजे में जकड़े हुये शोषित जीवन व्यतीत कर रहे हैं और आत्महत्या तक करने को मजबूर हो रहे हैं। यह उपन्यास आज भी अपने उत्कृष्ट कथ्य के कारण हिंदी पाठकों की पहली पंसद बना हुआ है। अगर हिंदी के सर्वोत्तम कालजयी उपन्यास की एक सूची तैयार की जाये तो प्रेमचंद का 'गोदान' उनमें सर्वप्रथम दर्जा हासिल करेगा।

प्रेमचंद साहित्य की प्रसिद्धि का आलम यह है कि उनके साहित्य को लेकर पाठकों में हमेशा से ही उत्सुकता रही है। आज उनका साहित्य पाठकों के लिये जीवन स्त्रोत बन चुका है। उनकी मृत्यु के लगभग 78 वर्षो के दौरान उनके साहित्य विशेषकर गोदान उपन्यास व 'कफन' कहानी को लेकर काफी कुछ विभिन्न विद्वान लेखकों द्वारा लिखा जा चुका है। यह सिलसिला आज भी बदस्तूर जारी है। उनके साहित्य को लेकर अनेक प्रकार के शोध किये जा चुके हैं एवं आज भी कई लेखक आलोचक उनके साहित्य को लेकर सजग व संवेदनशील है।

आखिर ऐसा क्या है इस उपन्यास में जो अपने प्रथम प्रकाशन से इतने वर्ष गुजर जाने के बाद भी आज तक पाठकों को बांधे हुये है। गोदान के आज तक विभिन्न प्रकाशकों द्वारा कई संस्करण प्रकाशित किये जा चुके हैं। तात्पर्य यह है कि अपने प्रथम प्रकाशन से यह उपन्यास पाठकों के बीच लगातार बना हुआ है। इसके कई संस्करण प्रकाशित हो जाने के कारण इस कालजयी उपन्यास का मूल पाठ कहीं खो सा गया था, इस कारण इस उपन्यास की महत्ता को समझते हुये प्रसिद्ध प्रेमचंद साहित्य विशेषज्ञ डॉ. कमल किशोर गोयनका ने अभी हाल ही में 'गो-दान' प्रथम संस्करण, 10 जून 1936⁄ मूलपाठ लेखक-प्रेमचंद लगभग 78 वर्षों बाद पुनः अपने संपादन मे प्रकाशित कर पाठकों को उपलब्ध करवाया है।

प्रस्तुत आलेख इसी मूल पाठ को आधार बनाकर एक तार्किक विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस आलेख में 'गोदान का प्रकाशन', 'विभिन्न लेखकों की राय में गोदान का प्रकाशन', 'गोदान के संबंध में विभिन्न लेखकों की राय', 'गोदान में उपलब्ध पात्रों का वर्णन', 'गोदान में उपलब्ध पात्रों का चरित्र-चित्रण व उनका प्रथम परिचय', 'गोदान में अंग्रेजी लिपि का वर्णन', 'गोदान की कथा', 'गोदान में पायी गयी गलतियाँ, 'गोदान की भाषा-शैली', 'गोदान में आँचलिकता' एवं 'गोदान में मुहावरे, कहावतें और सूक्तियों का प्रयोग' आदि बिन्दुओं के तहत एक विवेचनात्मक परिचय देने का प्रयास किया गया है। चूंकि 'गोदान' एक विशाल उपन्यास है इस कारण प्रस्तुत आलेख में मुख्य-मुख्य लेकिन महत्त्वपूर्ण मुद्दों को लेकर एक व्याकरणीय विवेचन कर उसके इतिहासवृत्त की झाँकी देने की कोशिश की गई हैं। 'गोदान' में शोध की प्रबल संभावनाऐं देखनें को मिलती हैं। इसी कारण 'गोदान' पाठ को लेकर कई शोधपरक आलेख विद्वान लेखकों द्वारा समय-समय पर प्रकाशित किये जाते रहे हैं, किन्तु यह आलेख उन आलेखों से थोड़ा हटकर तैयार किया गया है क्योंकि इसमें उन बिन्दुओं के तहत विवेचना करने की कोशिश की गई है जिन पर अभी तक कम ही कार्य देखने को मिला है। गोदान प्रेमचंद की बेजोड़ भाषा-शैली का अन्यतम उदाहरण है। प्रस्तुत आलेख मुख्यतः गोदान की भाषा-शैली को आधार बनाकर अन्य महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं के तहत एक शोधपरक विवेचन प्रस्तुत करता है।

'गोदान' का प्रकाशन

'गोदान' का प्रथम संस्करण 10 जून 1936 को सरस्वती प्रेस बनारस तथा नाथूराम प्रेमी की प्रकाशन संस्था हिंदी ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय बंबई के संयुक्त प्रकाशन से छपकर बाजार में आया। प्रेमचंद के उपलब्ध पत्रों में भी इस बात के पर्याप्त साक्ष्य मिलते हैं कि 10 जून 1936 में इसका प्रकाशन हो गया था। प्रेमचंद के पत्रों में उपलब्ध जानकारी अनुसार-गोदान की रचना जनवरी-फरवरी 1932 में कभी शुरू हो गई थी। 25 फरवरी 1932 को दयानारायण निगम को लिखे अपने पत्र में प्रेमचंद ने एक नया उपन्यास शुरू करने का जिक्र करते हुये लिखा है कि- "इधर 'गबन' का तर्जुमा भी शुरू कर दिया है, एक नया नाविल भी शुरू

कर दिया है।'' प्रेमचंद ने अपने जिस नये उपन्यास के लेखन प्रारंभ होने का उल्लेख इस पत्र में किया है वह गोदान ही था। प्रेमचंद अनेक बाधाओं के कारण गोदान' को अपने अन्य उपन्यासों की भाँति शीघ्रता एवं निरंतरता के साथ नहीं लिख पाए। गोदान जब लिखा जा रहा था उन दिनों उन्हें लखनऊ बनारस बंबई और फिर बनारस कई स्थानों पर भटकते रहने पड़ा था। बार- बार स्थान परिवर्तन के कारण स्वाभाविक रूप से 'गोदान' के लेखन की गति में अवरोध उत्पन्न होता रहा। 'हंस' और 'जागरण' पत्रिकाओं की आर्थिक कठिनाइयाँ भी अतिरिक्त रूप से उन्हें परेशान किये हुये थीं। 28 नवंबर 1934 को बंबई से प्रेमचंद ने जैनेन्द्र कुमार को लिखा- "उपन्यास के अंतिम पृष्ठ लिखने बाकी है, उधर मन ही नहीं जाता।''

4 अप्रैल 1935 को मुंशी जी ने इन्द्रपुरी बंबई को अंतिम नमस्कार किया। अमृतराय 'प्रेमचंद : कलम का सिपाही' में लिखते हैं- "गोदान अभी पूरा नहीं हुआ था। बंबई से लौटकर मुंशीजी उसी जी जान से जुट गए और उसको पूरा करके ही लमही छोड़ा।'' दिसबंर 1935 में प्रेमचंद गोदान' का दूसरा ड्राफ्ट तैयार कर रहे थे। 17 दिसंबर 1935 को उन्होंने इस संबंध में बंगाल के बी.सी. राय को पत्र लिखा- "इन दिनों मैं अपने उपन्यास में व्यस्त हूँ, जिसे मैंने तीन साल हुये शुरू किया था, मगर दूसरी मसरूफियतों की वजह से खत्म नहीं हो सका।'' इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गोदान की समाप्ति दिसंबर के अंत अथवा जनवरी 1936 के प्रारंभ में कभी हुई होगी।

एक जनवरी 1936 को प्रेमचंद गोदान के दूसरे ड्राफ्ट का अंतिम पृष्ठ लिखनें में व्यस्त रहे। 11 मार्च 1936 को गोदान की कम्पोजिंग आरंभ हुई तथा उन्होंने कुछ आरंभिक पृष्ठों के प्रूफ देखे। अप्रैल 1936 के 'हंस' में गोदान' के 15 मई तक प्रकाशित हो जाने की घोषणा प्रकाशित हुई। मई 1936 के 'हंस' में गोदान' का विज्ञापन प्रकाशित हुआ। विज्ञापन में उसके 600 पृष्ठों में छपने की सूचना छपी। 9 जून 1936 के एक पत्र में उन्होंने ऊषा देवी मिश्रा को लिखा- "गोदान पूरा छप गया है, बाइडिंग होने पर भेजूंगा।'' 10 जून 1936 को प्रेमचंद जी जैनेन्द्र कुमार को गोदान के संबंध में लिखते हैं कि- "गोदान निकल गया। कल तुम्हारे पास आयेगा। खूब मोटा हो गया है, 600 से (ऊपर) गया। अपना विचार लिखना।'' अख्तर हुसैन रायपुरी को प्रेमचंद का 27 फरवरी 1936 का लिखा पत्र दृष्टव्य है इसमें वे कहते हैं कि- "मेरा नया नावेल गोदान'अभी हाल में निकला है, उसकी एक जिल्द भेज रहा हूँ। उर्दू में रिव्यू करना।'' परन्तु अमृतराय जी ने इस पत्र की तिथि 28 जुलाई 1936 लिखी है, यदि इस पत्र की यह तिथि सही है तब तो गोदान की प्रकाशन तिथि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और जून 1936 पूर्णतः निर्विवाद हो जाता है। इस उल्लेख से प्रतीत होता है कि इसका प्रकाशन फरवरी 1936 में ही हो गया था। यह उत्तर विचित्र प्रतीत होता है। 22 जून 1936 को जैनेन्द्र कुमार को गोदान की प्रति भेजते हुये उसकी समीक्षा के आग्रह के साथ पत्र लिखा- "आज ही गोदान भेज रहा हूँ। पढ़ना और अच्छा लगे तो कहीं 'अर्जुन', 'विशाल भारत' या 'हंस' में आलोचना करना। अच्छा न लगे तो मुझे लिख देना, आलोचना मत लिखना.....।''

उपरोक्तानुसार प्रेमचंद के उपलब्ध पत्रों के आधार पर विश्लेषण करने पर गोदान' का प्रकाशन 10 जून 1936 पूर्णतः न्याय संगत व उचित है।

'गोदान' की कथा

गोदान'की आधिकारिक कथा होरी की कथा है जिसमें वह खुद व उसका परिवार शामिल है। मुख्यतः इन्ही पात्रों को लेकर प्रेमचंद गोदान'की रचना करते है, किन्तु गोदानकार ने कुछ नगरीकरण करते हुये नागर पात्रों को जोड़कर जो कथा संयोजित की है, वह होरी के समान किसी एक पात्र में रूपायित नहीं होती। अतः होरी की ग्रामीण जीवन की कथा के समान लेखक ने नागर पात्रों की किसी स्वतंत्र कथा का निर्माण नहीं किया हैं। गोदान में कुल 36 परिच्छेद है जिनमें से जमींदार रायसाहब और उसके मित्रों की कथा उपन्यास के 6, 7, 16 व 22 परिच्छेदों में दी गई है। इन चार परिच्छेदों में से तीन परिच्छेदों में सीधे तौर से होरी और ग्राम जीवन से संबंधित कथा है। छठे परिच्छेद में नागर पात्र जमींदार के सेमरी गाँव में आते हैं। होरी की कथा उपन्यास में आद्योपांत चलती है। उसकी कथा के विकास में गाय का आगमन और उसकी हत्या, झुनिया और सिलिया को घर रखना, गोबर का शहर जाना और आना, सोना और रूपा का विवाह, बेदखली का दावा आदि घटनाओं ने योगदान किया है। लेखक की परिच्छेद योजना में भी कुशलता के दर्शन होते है। उपन्यास के परिच्छेदों में कथाकार ने जिस प्रकार विभिन्न दृश्यों की सृष्टि की है, वह गोदानकार के कथा स्थापत्य-कौशल की परिचायक है। गोदान की अधिकांश कथा दृश्यों के द्वारा ही कही गई है, जिसके कारण वह एक दृश्यात्मक उपन्यास' बन गया है। उदाहरण के लिए 21वें परिच्छेद में कई दृश्यों की योजना की गई है। ये दृश्य ही कथा को प्रस्तुत करते है। उपन्यास में केवल 12 वें परिच्छेद की योजना दोषपूर्ण है, क्योंकि इसकी संयोजना कालक्रमानुसार नहीं हुई है। शेष परिच्छेदों में इस प्रकार का दोष नहीं है।

गोदान'की आधिकारिक कथा होरी की कथा है जिसमें वह खुद व उसका परिवार शामिल है। मुख्यतः इन्ही पात्रों को लेकर प्रेमचंद गोदान' की रचना करते है, किन्तु गोदानकार ने कुछ नगरीकरण करते हुये नागर पात्रों को जोड़कर जो कथा संयोजित की है, वह होरी के समान किसी एक पात्र में रूपायित नहीं होती। अतः होरी की ग्रामीण जीवन की कथा के समान लेखक ने नागर पात्रों की किसी स्वतंत्र कथा का निर्माण नहीं किया हैं।

'गोदान' की भाषा-शैली

व्याकरण की दृष्टि से देखा जाए तो 'गोदान' को प्रेमचंद ने एक खूबसूरत शक्ल प्रदान की जहाँ वे इस उपन्यास में तत्सम् शब्द, तद्‌भव शब्द, उर्दू-हिन्दी शब्दावली, अपभ्रंश शब्द आदि का खूबसरती से प्रयोग करते है वहीं दूसरी ओर कहावतों, मुहावरों, लोकोक्तियों, सूक्तियों का भी गहराई के साथ इसमें वर्णन मिलता है, जो अद्वितीय है। इतनी शब्दावली का प्रयोग उनके अन्य उपन्यास में कहीं नजर नहीं आता है। समग्रतः यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि 'गोदान' हिन्दी में प्रचलित शब्दावलियों का भण्डार है। प्रसिद्ध प्रेमचंद विशेषज्ञ डॉ. कमल किशोर गोयनका इस संबंध में विस्तार पूर्वक कहते है कि- "प्रेमचंद की भाषा के अध्ययन में अरबी, फारसी एवं उर्दू भाषा के साथ उनके संबंधों तथा हिन्दी भाषा में उनकी उपस्थिति का प्रश्न सबसे पहले आता है। उर्दू उनकी पहली भाषा है और उन्होंने उर्दू में ही लिखना शुरू किया जो जीवन के अंत तक चलता है... प्रेमचंद के पास अरबी-फारसी-उर्दू भाषा का बडा शब्द भण्डार है... हिन्दी में उनकी उर्दू भाषा का यह रूप कई रूपों मे मिलता है। उनकी हिन्दी भाषा के अरबी, फारसी के तत्सम व तद्‌भव शब्द, उर्दू-हिन्दी मिश्रित शब्दावली, उर्दू मुहावरे, उर्दू-हिन्दी संकर शब्द, उर्दू वाक्य रचना आदि प्रवृत्तियाँ मिलती है। प्रेमचंद ने अरबी-फारसी शब्दों का काफी प्रयोग किया है।" नीचे गोदान में प्रयुक्त तत्सम शब्द, तद्‌भव शब्द, संकर शब्द, उर्दू-हिन्दी मिश्रित शब्दावली, संकर शब्द आदि का विवेचना परक वर्णन दिया गया है।

1. तत्सम् शब्द-गुलजार, जर्द, बरक्कत, मुजाल्मि, मकरूस, बज्म, फरियाद, तांबुल, मातबर, तवाह, तलख आदि।

2. तद्‌भव शब्द-प्रेमचंद ग्रामीण पात्रों की कहानी कहते समय तद्‌भव शब्दों का ही निस्संकोच व्यवहार करते है जो परिनिष्ठित हिन्दी में प्रायः प्रयुक्त नहीं होते। ऐसे शब्दों में कुछ निम्नलिखित है-गगरा, तल्लियाँ, पुर, औंगी, हुमक कर बोली, मोह लेना, सरम जाना, डाँड, पैंठ, लताड़, बारे कुशल हुई, जोर करना, उमचना, प्रछत्ता कोल्हाड़, पित्ते पानी करना, मुग्गा, महावर, मुरहा, फिचकुर, हुन बरसना, कन-बतियाँ, मूसना, अड़दव, वराना, हैस-बैस, उड़नधाइयाँ, रिनियाँ, चिरौरी, बिन्ती, धिरैकर कहा, घिसना, दौंगड़ा, खंखड आदि। ग्रामीण पात्र अधिकतर तद्‌भव शब्दों का प्रयोग करते हैं जिनमें अनेक ऐसे हैं जिन्हें अभी तक हिन्दी शब्दकोशों में स्थान नहीं मिल सका है। ये तद्‌भव शब्द इतने काव्यंजक और विशिष्ट वस्तुओं के द्योतक है कि इनके स्थान पर तत्सम शब्दों का प्रयोग किया नहीं जा सकता है- अढ़ौना, मटकाना, लात, कलेऊ, बाट, बुडबकपन, पतियाना, गौ, डाँडी, गोई, गोड़ना, अवेर, घामड़, अगोरना, गेरूई, हमा-सुमा, बौड़ाना, भुरकस, बौड़म, भुग्गा, अषाढ़, निगोड़ा, मुरहा, मीना, खुसफेली, डोकरा, गपड़-चौथ, सहालग, करज-कवाम, संडा, आदि। प्रेमचंद तत्सम शब्दों के बीच में अर्थ गाम्भीर्य युक्त तद्‌भव शब्दों का प्रयोग करते थे- 'गाँठ', 'भाव-ताव', 'चौकस', 'चिरौरी', 'फुसलाना' आदि ठेठ तद्‌भव शब्द हैं पर इनके प्रयोग से भाषा में यथा तथ्यता का गुण समाविष्ट हो गया है। 3. उर्दू-हिन्दी मिश्रित शब्दावली-लियाकत की परीक्षा, व्यवस्था के गुलाम, वर्ण-श्रेष्ठता, काफूर, मुवारकवाद के भाषण आदि। 4. संकर शब्द-बेपूँजी, बेमुँह, बेमाँ-वाप, बेक्रम, टुकड़ेखोर, जहरवाद आदि।

डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया के अनुसार- "प्रेमचंद ने लगभग पाँच सौ अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है। प्रेमचंद को अंग्रेजी भाषा का अच्छा ज्ञान रहा है और वे अपनी रचनाओं की रूपरेखा अंग्रेजी में बनाते रहे है। उन्होंने उन्हीं अंग्रेजी शब्दों का प्रायः प्रयोग किया है जो शिक्षित-अशिक्षित समाज के अंग बन चुके हैं। इन अंग्रेजी शब्दों के अनेक रूप मिलते हैं- तत्सम, तद्‌भव, अपभ्रंश, संकर, बहुवचनीय शब्द, मुहावरे आदि।"

1. अंग्रेजी के तत्सम शब्द-कौंसिल, कमीशन, कम्पैनियन, मैनेजिंग डायरेक्टर, प्रैक्टिस, इलेक्षन, अलटिमेटम, आइडियलिस्ट, एकाडेमी, प्रोनोट, होम मेंबर, ब्लडी नेशनलिस्ट, थ्योरी, प्रोपेगैंडा, परसेंट, पॉलिसी, डेमोक्रैसी, मेटीरियलिस्ट, बैंकर, केबिनेट, होटल, हिज मैजेस्ट्री, रेकार्ड, गवर्नर, डी0एस0पी0, मिनिस्टर, नोटिस, डिग्री, यूनिवर्सिटी, प्रोग्राम, क्लास, बार-एट-लॉ, हण्टर, रिवॉल्वर, कोर्टफीस, विजिट, टीम, पार्ट, कार आदि शब्दों का प्रयोग किया। कहीं-कहीं प्रेमचंद ग्रामीण कथा के प्रसंग में भी अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करते हैं, पर वहां उनका उद्देश्य व्यंग्य अथवा विनोद उत्पन्न करना होता है। जैसे- (अ) 'वह उसी वक्त उठा और नोखेराम की चौपाल में जा बैठा। देखा तो सभी मुखिया लोगों का केबिनेट बैठा हुआ था।' (ब) 'पुरूष ने जैसे अलटिमेटम दिया-न जायगी ?'

2. अंग्रेजी के संकर शब्द-बमगोला, शक्कर मिल, छोटे सर्जन, मर्द-डाँक्टर, जेलखाना आदि। 3. अंग्रेजी के बहुवचनीय शब्द-फिलासफरों, थ्योरियों, नेशनलिस्टों, स्कीमें, नर्सो, कौंसिलों, स्टाकों, सेक्रेटरियों, गर्वनरों आदि। 4. अंग्रेजी शब्दों के हिंदी पर्याय-प्रेमचंद सीमेंट, पंचर, ग्रामोफोन आदि अंग्रेजी शब्दों को उपमान के रूप में भी प्रयोग मे लाते है जैसे- 'सेवा ही वह सीमेंट' है। 5. अंग्रेजी शब्दों के अपभ्रंश रूप-इन्फ्लुंजा, इंफिजा, इसटाम, बंक, कानिसटिविल, रपोट, डिपटी, जंट, कलट्टर, कमिसनर, पिंसिन, इसपिट्टर आदि।

कई बार प्रेमचंद संस्कृत के शब्दों की मूल प्रकृति और अर्थ पकड़ने में गलती कर जाते है और हिंदी पाठक को अटपटा लगता है जैसे- 'रायसाहब का परिवार बहुत विशाल था।' प्रेमचंद ऐसी दुर्बलताओं से क्रमशः स्वयं को मुक्त करते गए है और संस्कृत के तत्सम् शब्दों को विशेषण के रूप में प्रयोग करने में तो जैसे वे सिद्धहस्त हो गए है। जैसे-आतंकमय कंपन, गुलाबी मादकता, प्रखर ताप, चेतनाशून्य तन्मयता, सात्विक अनुभव, निष्कपट सद्‌भावना, संतृष्णा हिंसा, शीतल संध्या, आद्रकंठ आदि। प्रेमचंद के कथा साहित्य में ऐसे विशेषणों की बडी संख्या है।

प्रेमचंद ने गोदान में संस्कृत भाषा के अपभ्रंश शब्द भी प्रयुक्त किये हैं। जैसे-असनान, असीरबाद, अक्कल, इस्टाम, गिरस्त, परलै, परतिष्ठा, परमेसर, पच्छ, पुछत्तर, उरिन, परेम, भिरस्ट, तिरसना, तलासी, सहर, सरवस, सुध, सिच्छा, सत्यानासी, मरजाद, सराप, दरसन, परान, रिन, दँतून, रिस्ट-पुस्ट, सुभाव, सरम, परसन, देसी, सोभा, सुभ, जैजात, जेहल, परसाद, कुसल, हिरदा, जलम, धरम, भिच्छुक, आसा, छमा, जनम, मुसकिराना, सम्पत, बिपत, छन, निबाह, मूँह, दुरदसा, दोस, बेसवा, परासचित, परतोख, परतच्छ, बिसेस, बाम्हन, बंसी, नियाव, सेर, वम्हनई, सरारत, कासी, कुलच्छनी, कागद, लच्छमी आदि। प्रेमचंद उर्दू शब्दों में अपभ्रंश शब्द भी कई जगह प्रयोग करते है जैसे-बखत, वेसर्मी, तमासा, सादी, खरच, हरज, तलख, तहकियात, औसान, जहर, दुसमन, बेहोस, उमिर, मरद, लिल्लाम, कानीगो आदि।

प्रेमचंद ने अपनी भाषा में देशज शब्द, आवृत्ति मूलक एवं ध्वनिमूलक शब्दों का भी प्रयोग किया है। वे लोक जीवन एवं आँचलिक परिवेष के शब्दों को वही सार्थकता के साथ अपनी भाषा का अंग बनाते है, जो छायावादी युग में उनका अपना वैशिष्ट्य बनती है।

1. देशज शब्द-खलेटी, थुड़ी, हुमचकर, दुबसर, औंगी, भड़ेंती, चोंचाल, चौकस, टिक्कड़, पौंढ़, पौरा, अढ़धैना, अनाज माड़ना, खाँड़, उड़नघाईयाँ, उपले पाथना, ऊख गोड़ना, करोर, कथरी, खंचड़, खुस्फेली, गड़घप, गिरो, चुचके, (चूल्हे के) ऐले, गदरा (आम गदराना), (भूसा) छिज गया, जन्तर, जखरकर, झौबा, डाँडी, डोंटी, तरका, थलकर, थहाना, दौंगड़ा (असाढ़ का), नफरी, नादिहेंदी, पछोरना, पतिआता (पतियाना, विश्वास करना), पलेथन, फड़, फिचकुर, फुरहुटी, बंधी पर, बकवाँ चलना, बरोढे, भराई वसूली, भेड़ लेना (दोनो पट लगा लेना), माची, मिनका (मिनकना), संडा, सजावल, सहालगो, सीरना, सुजनी, हुन, हठा नीचा, हुमेल, हैस-बैस, डाढ़ीजार, राँड़, अँगोछे के कोर में बाँधे, अनाज (ओसा) रही थी, सुरती की पीक थूकते हुए इत्यादि।

2. आवृत्तिमूलक शब्द-दवा-दारू, ठीक-ठाक, पत्ती-सत्ती, नौकर-चाकर, हाथ-मुँह, तहस-नहस, लालन-पालन, रस-वस, छोटे-मोटे, आलसी-वालसी, सत्य-वत्य, करज-कवाज, दाई-वाई आदि। 3. ध्वनिमूलक शब्द–भों–भों आदि

कालिदास के समान उपमा अलंकार प्रेमचंद का प्रिय अलंकार है। वे इतिहास, पुराण, प्रकृति, समाज आदि सभी से उपमान लेते है और कुछ नए उपमान भी गढ़ते है। उनके अंतिम उपन्यासों में दो सौ तक अलंकारो का प्रयोग मिलता है। जैसे- 'हरखू.....सूखी मिर्च की तरह पिचका हुआ।' एवं 'सेवा ही वह सीमेंट है, जो दंपत्ति को जीवन-पर्यन्त स्नेह और साहचर्य से जोड़े रख सकता है।'

डॉ. गोपालराय के अनुसार- 'प्रेमचंद भाषा को विशेषणों, अलंकारों और मुहावरों के कुशल प्रयोग से प्राणवान बना देते है उनकी विशिष्टता उपमानों के चयन में दृष्टिगोचर होती है। वे ऐसे सटीक उपमानों का प्रयोग करते है जिनके कारण वर्णन में विशेष प्रकार का चमत्कार आ जाता है। जैसे- 'अवसर पाकर उसने पीछे की तरफ देखा। झुनिया द्वार पर खड़ी थी, मत्त आशा की भाँति अधीर और चंचल।', 'गाय मन मारे उदास बैठी थी, जैसे कोई वधू ससुराल आयी हो।', 'यह बात उसके पेट में इस तरह खलबली मचा रही थी, जैसे ताजा चूना पानी में पड़ गया हो।' एवं 'पंचों ने रायसाहब का यह फैसला सुना तो नशा हिरन हो गया।''

प्रेमचंद की भाषा का यह संक्षिप्त विवेचन है। भाषा में उनकी कई उपलब्धियाँ है। भाषा को सरल तथा लोकजीवन के अनुरूप बनाने में उन्हें भरपूर सफलता मिली है। उनका शब्द भण्डार विशाल है। इसमें अनेक भाषाओं के शब्द है तथा भाषा के अधिकांश गुण उनकी भाषा के है। प्रेमचंद के बाद हिंदी के अनेक लेखकों ने उनकी भाषा को अपनाने की चेष्टा की है, परंतु उन जैसा भाषा चमत्कार एवं सम्प्रेषणीयता कोई दूसरा लेखक पैदा नहीं कर पाया है।

'गोदान' में आँचलिकता

डॉ. स्वर्णकिरण गोदान में प्रयोग किये गये आंचलिक शब्दों के प्रयोग को इस प्रकार परिभाषित करती है- "गोदान प्रेमचंद की अंतिम कृति है और इसमें प्रेमचंद की औपन्यासिकता उपन्यास कला चरमोत्कर्ष पर पहुंची गई दिखलाई पड़ती है, पर निस्संदेह आँचलिक प्रतिमान को सामने रखकर प्रेमचंद ने इसकी रचना नहीं की.....आँचलिक उपन्यास में आँचलिक शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया जाता है, हुआ करता है। यहाँ भी कुछ एक आँचलिक शब्द प्रयुक्त हुये दीखते है। जैसे-दमड़ी बँसोर अपनी पुत्रवधू की शिकायत होरी से करता हुआ कहता है- 'बड़ी नाकिस जात है महतो।', लकड़हारा मिर्जासाहब से- 'मैं ठाला चलूँ।' होरी के मुख से- 'नाटन खेती बहुरियन घर, अर्थात् नाटे बैल क्या खेती करेंगे और बहुएँ क्या घर सँभालेंगी।', 'लौंडे कहीं फड़ पर जमें होंगे।', 'जल में रहकर मगर से बैर बुड़बकपन है।', 'शाइत भिनसार हो रहा है।', '(हीरा को संबोधित कर) तुम्हें याद है कि नहीं, जब तुम्हें इंफिजा हो गया था, तो दवाई उठाकर फैंक देते थे। 'धनिया के मुख से-'अंधे कूकुर की तरह हवा को भूँका करे।' होरी से- 'देखी अपने सपूत की लीला ? इतनी रात हो गई और अभी उस अपने सैल से छुट्टी नहीं मिली।', 'वह मुआ बहत्तर घाट का पानी पिये हुए।', 'थुड़ी है तेरी झुठाई पर।', 'तुम जैसा घामड़ आदमी भगवान ने क्यों रचा।', 'मेरे तो परान नहों में समा गये थे।' झुनिया के मुख से-'बैठने को माची दूँगी।' सोना के मुख से-'जा तू गोबर पाथ।' आदि।

'गोदान' में मुहावरे, कहावतें और सूक्तियों का प्रयोग

प्रेमचंद का गोदान ही एकमात्र एक ऐसा उपन्यास है जिसमें उन्होंने मुहावरे, कहावतें और सूक्तियों आदि का भरपूर मात्रा में उपयोग किया है। (शेष पृष्ठ 45 पर)

शोध आलेख

इक्कीसवीं सदी में मैथिलीशरण गुप्त के काव्य की प्रासंगिकता

● डॉ. शोभा रानी

मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक हिन्दी कविता के एक महान कवि है। हिन्दी के काव्य प्रेमी उन्हें 'राष्ट्रकवि' के नाम से पुकारते हैं। आधी शताब्दी से भी अधिक समय तक फैली हुई गुप्त जी की रचनाऐं हिन्दी कविता के लिए की गई उनकी अनवरत साधना का प्रमाण है। उनका काव्य परिणाम और विविधता दोनों ही अतिशत दीर्घ एवं व्यापक है। उन्होंने हिन्दी साहित्य को प्रचुर मात्रा में साहित्य प्रदान किया है जो युग प्रवृति के अनुरूप सभी विधाएं लिए है। वे मानवतावादी, गान्धीवादी एवं वैष्णव विचारधार से जुड़े कवि है।

मैथिलीशरण गुप्त एक युग-निर्माता रचनाकार है। अपने परिवेश के प्रति सजगता उनका स्वभाव है। अपनी संस्कृति के प्रति उनका अटूट विश्वास है। इनका मानना है कि हमारे पास जो है, वो तो अमूल्य है ही, पर जो होना चाहिए, उसकी मूल्यवत्ता भी कम नहीं है। गुप्त जी कहते हैं कि काव्य में कवि की आत्मा बोलती है। कल्पना की एक नन्हीं-सी बूंद बाहर आकर महासागर बन पाती है। वह सब कुछ कह देती है, जो मनुष्य का हित साधक हो होता है। इसी से भविष्य की प्रासंगिकता आंकी जाती है। कवि की आस्था को देखा जाए तो आस्था आदमी की जिन्दगी का मेरूदण्ड है। वही उसकी इच्छाशक्ति को क्रियाशील बनाए रखती हैं। इसी विषय को लेकर मैथिलीशरणगुप्त ने काका कालेलकर से कहा था-हमारे पिता कुलदेवता को लक्ष्य कर लिया करते थे। मुझे भी उनके अनुसार स्तुति या गुणगान करने की इच्छा उत्पन्न हुई। वही इच्छा प्रेरणा हुई और उसकी परिणति आत्मनिवेदन से आत्मसमर्पण हो गई।

गुप्त जी के काव्य में अतीत के संकेत से वर्तमान की भूमि पर दृढ़ता के साथ पैर जमाकर खड़े होना और भविष्य को लक्ष्य बनाए रखने का अवसर मिलता है। वे अतीत के अमर गायक है और वर्तमान को साथ लेकर चलते हैं। भारत-भारती में अतीत, वर्तमान, भविष्य खण्डों से इसी बात की सूचना मिलती है- 'हम कौन थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी', वाले कथन से यह बात पूर्ण रूपेण स्पष्ट हो जाती है। इसीलिए तो इस सदी के पहले दशक में भी इनके रचना संसार की प्रासंगिकता है। द्वापर का एक अन्य उदाहरण इस तथ्य को चरितार्थ करता है-

पीछे पितर पृष्ठ-पोषक हैं, पर भविष्य तो आगे,
यदि अपना परिणाम न देखें, तो हम अन्ध अभागे,
वर्तमान वह आयोजन है, निज भावी जीवन का,
कुछ अतीत संकेत मिले तो, अधिक लाभ हो जन का।

इसी काल बोध द्वारा गुप्त ने भविष्य की मशाल को जलाया है। उनकी काव्य सारणी का मुख्याधार भविष्य की युवा पीढ़ी रहा है। वे मानते है कि दिक्-काल धर्म एवं संस्कृति की धरोहर होते हैं। इनसे काल की असीमता, निरन्तरता, गतिशीलता आदि के साथ पैर जमाकर खड़े होना और भविष्य को लक्ष्य बनाए रखने का अच्छा अवसर मिलता है। विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में विकास की गाथा गाने वाले आधुनिक भारत का आदमी जहाँ भी है उसे गुप्त की दूरदर्शिता अवश्य प्रभावित करती है। तभी तो वे कहते है-

अरे पलट दी है काया ही, इस केशव ने काल की,
बलिहारी, बलिहारी, जय, जय गिरधारी गोपाल की।

उनका युग इसी पौरुष की मांग कर रहा था, और वे आज के युग से भी पौरुष की कामना करते दिखाई देते हैं। उन्होंने स्वयं कहा है कि मैं पुरुषार्थ पक्षपाती हूँ या कि 'बनता बस उद्यम की विधि है। इसी प्रकार विघ्न-बाधाओं, संकटों को आमंत्रण देने के पक्ष में वे कहीं नहीं दिखाई पड़ते, पर उनके आ जाने पर अपना विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं 'डटकर शूर समर ठाने-गतानुगतिकता को उन्होंने उचित नहीं माना है। गुप्त जी मानते हैं कि विगत हुआ तो विगतों का युग अपना तो प्रस्तुत है। व्यवस्था काल सापेक्ष होती है, अतःकाल के साथ व्यवस्था को भी बदलते रहना चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता है तो मानवीय जीवन जड़ हो सकता हैं इन्हें इस बात की पहचान थी। उन्होंने लिखा है-

नयी सृष्टि के लिए प्रलय की प्रेक्षणीय को जब गुप्त जी जैसा कवि स्वीकारता है तो उससे एक बड़े एवं गहरे युग की पहचान होती है, यही पहचान वर्तमान परिप्रेक्ष्य में दिशा-निर्देशिका का काम करती है। गुप्त जी ने जब सन् 1912 में 'भारत-भारती' लिखी, तो इन्होंने जन-जन तक पराधीनता के दुःखद अनुभवों को साँझा किया। यही नहीं उन्होंने राष्ट्रीयता के राग को अक्षर-अक्षर से गुंजायमान कर जन-जन तक पहुँचाया।

रही चुनौती आज हमारी अधिक क्या कहूँ यम को
नयी सृष्टि के लिए प्रलय भी प्रेक्षणीय हो हमको।

नयी सृष्टि के लिए प्रलय की प्रेक्षणीय को जब गुप्त जी जैसा कवि स्वीकारता है तो उससे एक बड़े एवं गहरे युग की पहचान होती है, यही पहचान वर्तमान परिप्रेक्ष्य में दिशा-निर्देशिका का काम करती है। गुप्त जी ने जब सन् 1912 में 'भारत-भारती' लिखी, तो इन्होंने जन-जन तक पराधीनता के दुःखद अनुभवों को साँझा किया। यही नहीं उन्होंने राष्ट्रीयता के राग को अक्षर-अक्षर से गुंजायमान कर जन-जन तक पहुँचाया। भारत-भारती की यह प्रासंगिकता इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में भी पूर्णतः द्रष्टव्य होती है। आज यदि हम सन् 2015 में भूमण्डलीकरण के दौर में विश्वग्राम में बदल चुके हैं, किन्तु कहीं न कहीं हमारा अस्तित्त्व हमारे ही सामने छोटा पड़ता जा रहा है। गुप्त को अपने यशस्वी पूर्वजों पर अनन्त श्रद्धा भी है और गर्व भी है। भारत के सच्चे सपूत के भाव-लोक में अपने महान राष्ट्र के दिव्य और मनोहारी रूप की जो कल्पना होनी चाहिए। भारत-भारती की ये पंक्तियां इसी तथ्य को साक्षात् प्रमाण है-

भू लोक का गौरव प्रकृति का पुण्य लीलास्थल कहां,
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल कहां,
संसार में सबसे अधिक किस देश का उत्कर्ष है,
उसका कि जो कृषि भूमि है, वह कौन भारत वर्ष है।

इक्कीसवीं सदी के पहले दशक की सामाजिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों को देख उपर्युक्त पंक्तियाँ एक दर्पण का कार्य करती हैं। जिस देश का गौरव सम्पूर्ण जगत में विख्यात था, आज वही ख्याति कहीं धूमिल हो चुकी है। राष्ट्र की वर्तमान दुर्व्यवस्था पर जब कवि की अन्तर्वेदना उभरती है, तब वहां भाव अतीत, वर्तमान और भविष्य का सेतु निर्मित करता है। आज हमारा देश आर्थिक सम्पन्नता की ओर अग्रसर है फिर भी कृषक विपन्नता का शिकार हैं। भारत-भारती की ये पंक्तियां जैसे आज के कृषक समाज की साक्षात् तस्वीर अंकित करती हैं-

पानी बनाकर रक्त का, कृषि कृषक करते हैं यहां,
फिर भी अभागे भूख से दिन-रात मरते हैं यहाँ,
सब बेचना पड़ता उन्हें निज अन्न, वह निरुपाय है,
बस चार पैसे से अधिक पड़ती न दैनिक आय है।

सांस्कृतिक दृष्टि से मैथिलीशरण गुप्त जी के काव्य को देखा जाए तो उनका सम्पूर्ण काव्य अपने सभी सन्दर्भों में उदात्त सांस्कृतिक मूल्यों और आदर्शों पर आधारित है। भारतीय संस्कृति एवं आदर्श उनके काव्य की शक्ति है और उनके काव्य का सुदृढ़ आधार है। यही आधार आज भी वर्तमान सन्दर्भ में प्रासंगिक है। सांस्कृतिक मूल्य गुप्त के काव्य की मूल चेतना है, उन मूल्यों की सजग अभिव्यक्ति उनका ध्येय और संकल्प है। उनकी सांस्कृतिक दृष्टि अत्यन्त उदार एवं विशाल है। यही सांस्कृतिक दृष्टि आज के समय में भी प्रासंगिक है। इनका मानना है कि सांस्कृतिक चेतना से राष्ट्रीय चेतना पल्लवित होती है। आज यदि हम विकास के पथ पर अग्रसर हैं तो राष्ट्रभावना का होना भी अपरिहार्य है।

गुप्त जी ने पौराणिक साहित्य को सांस्कृतिक मूल्यों एवं तत्त्वों के अगाध भण्डार के रूप में पहचाना और अपने काव्य में उसे सर्वाधिक महत्त्व दिया। वे नये युग की नयी आवश्यकताओं के प्रति पूरी तरह से सजग है। आज के युग में रामराज्य की स्थापना भी नये युग की आवश्यकताओं के पूरक रूप में अभिप्रेत है। आज की भारतीय सांस्कृतिक चेतना मुख्यतः पौराणिक चेतना है। इसलिए व्यापक जन समुदाय के चित में देवताओं और स्वर्ग आदि के अस्तित्त्व का विश्वास प्रतिष्ठित है। राष्ट्रीय प्रेम तथा जातीय स्वातंत्र्य की रक्षा के भाव गुप्त जी की सांस्कृतिक चेतना के अभिन्न अंग है। इनके द्वारा प्रजा का सम्बन्ध आज के युग में प्रजातान्त्रिक आदर्श के अनुरूप है। आज के परिप्रेक्ष्य में जब हम राजा और प्रजा के दूराव को देखते हैं तो गुप्त की ये पंक्तियां इसका साक्षात प्रमाण हैं-

राजा हमने राम तुम्हीं को है चुना
करो न तुम यों नाथ लोकमत अनसुना।

वैज्ञानिक अणुशक्ति के कारण आज सम्पूर्ण विश्व कम्पायमान है। तकनीक द्वारा व्यक्ति आज आकाश की ऊँचाइयाँ तो स्पर्श कर रहा है। किन्तु युद्ध की विभीषिका उसके सिर पर मंडरा रही है। गुप्त जी ने विश्व शांति के लिए सांस्कृतिक चेतना को समक्ष रखा है। 'विश्व वेदना' काव्य में इसी तथ्य को गुप्त जी देखते हैं कि मनुष्य अपना मिथ्या दर्प छोड़कर देश, जाति वर्ग आदि पर आधारित नीति का विसर्जन कर दे, व्यक्ति का समष्टि में विलय होकर विश्वमानव की भावना का उदय हो। इस प्रकार का संदेश आज के परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त प्रासंगिक है।

सांस्कृतिक, राष्ट्रीय भावना के अतिरिक्त गुप्त के काव्य ने नारी के त्याग, सौन्दर्य एवं मृदुता को भी चित्रित किया है। सांस्कृतिक पारम्परा की तस्वीर को आज के परिप्रेक्ष्य में अंकित कर ऋग्वेद का उदाहरण देते हुए नारी के स्वरूप को इन्होंने इस प्रकार चित्रित किया हैं- मैं ब्रह्म स्वरूप हूँ तथा रुद्र, वसु, आदित्य एवं विश्व देवता के रूप में विचरण करती हँ। मैं ही ब्रह्मरूपा से मित्र एवं वरुण दोनों को धारण करती हूँ। मैं ही इन्द्र और अग्नि का आधार हूँ। मैं ही अश्विनी कुमारों का भी भरण-पोषण करती हूँ। मैं ही शत्रुनाशक, कामादि, दोष-निवर्तक, यज्ञगत, सोम, चन्द्रमा मन अथवा शिव का भरण-पोषण करती हूँ। मैं ही त्वष्टा, पूषा और भग को भी धारण करती हूँ। गुप्त जी ने कहा है कि नारी शक्ति की ऊर्जा से ही सारा संसार भास्वर है, उसकी दिव्य प्रेरणा से अनुप्रणित होकर ही मनुष्य निज धर्म में प्रवृत होता है। भिन्न-भिन्न देश, काल, वस्तु तथा अलग-अलग प्रकार के व्यक्तियों में जो कुछ हो रहा है, किया जा रहा है, वह सब शक्ति के लिए ही किया जा रहा है। इसी शक्ति का रूप नारी को माना गया है। किन्तु आज के वैश्वीकरण के दौर में जहाँ नारी विकास की नई इबारत खड़ी कर रही है, वहीं वह कहीं न कहीं भरे बाजार में निलाम हो रही है। उर्मिला में लिखी पंक्तियाँ इसी बात का प्रतीक है-

मुझे भूलकर ही त्रिभुवन में विचरे मेरे नाथ,
मुझे न भूले उनका ध्यान,
हे मेरे प्रेरक भगवान।

उपर्युक्त पंक्तियों के माध्यम से जहाँ नारी का रूप चित्रित है वहीं उसकी बिगड़ती स्थिति को देख गुप्त क्षुब्ध हो उठते हैं-

नारी पर नर का कितना अत्याचार है,
लगता है, विद्रोह मात्र ही इसका प्रतिकार है।

इन पंक्तियों की साक्षात् तस्वीर आज की सदी में ही द्रष्टव्य होती है। यहां कहा जा सकता है कि गुप्त की रचनाऐं स्वर्णिम अतीत की झाँकी प्रस्तुत करने के साथ-साथ वर्तमान के अधःपतन का निरूपण भी करती हैं। वास्तव में उनका उद्देश्य वर्तमान युग की हीनावस्था के समान्तर प्राचीन उत्कर्ष को रखकर भावी उन्नति के लिए भारतवासियों को प्रेरित करना ही था। अपनी युग चेतना और निजी संस्कारों के उपरान्त, उसकी धार्मिक चेतना किस तरह कहीं युग के साथ चलती रही तो कहीं उसका अतिक्रमण कर, भावी युग के लिए भी स्वीकार्य बन गई, इसके प्रमाण भी उनकी रचनाओं में प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। इन्होंने राम और कृष्ण को ही नहीं, हजरत मुहम्मद और सिख गुरुओं को भी अपने काव्य का नायक बनाया। आज जिस वातावरण में व्यक्ति, व्यक्ति से अलग हो रहा है। जहाँ मजहब, धर्म, इत्यादि वैमनस्य का मुख्य कारण बनता जा रहा है, वहाँ गुप्त की ये पंक्तियाँ रामवाण हैं-

धर्म हैं धर्म हैं, जो पंथ हैं, सो पंथ हैं
एक से सबके लिए भेजे यहां निज ग्रन्थ हैं,
बस उसी मन्त्र से, चलते हमारे मन्त्र हैं। स्वमत् के सम्बन्ध
में हमस सब समान स्वतन्त्र हैं।

आधुनिक होती पीढ़ी को अगाह करते हुए कवि कहते हैं कि हमें इस चकाचौंध में स्वयं को नहीं भूलना है, अतीत का स्मरण अवश्य करना है-

प्राचीन बातें ही भली हैं यह विचार अलीक है,
जैसी अवस्था हो जहां, वैसी व्यवस्था ठीक है।

इनमें एक अदम्य विश्वास है, कि चाहे कोई भी विपत्ति आए हमें मुकाबला करना है, यही संदेश आज की पीढ़ी के लिए भी इनका है-

फिर भी उठूंगा, और बढ़के रहूंगा मैं,
नर हूँ, पुरुष हूँ, चढ़के रहूँगा मैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि गुप्त जी ने काल के जागतिक एवं तात्त्विक दोनों स्तरों का उद्‌घाटन किया है।

हिन्दी विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल,
शिमला–171005

सन्दर्भ :–

मैथिलीशरण गुप्त जी की कारूण्य धारा, पृ0 8।
मैथिलीशरण गुप्त, द्वापर, पृ0 51।
वही पृ0 66।
ललित शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त युग और कविता, पृ0 14।
मैथिलीशरण, भारत–भारती, पृ0 14।
वही पृ0 103।
ललित शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त युग और कविता, पृ0 51।
मैथिलीशरण गुप्त, उर्मिला, पृ0 29।
ललित शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त युग और कविता, पृ0 68।
मैथिलीशरण गुप्त, काव्य और कर्बला, पृ0 41
मैथिलीशरण गुप्त, भारत–भारती, पृ0 160।
मैथिलीशरण गुप्त, जय भारत, पृ0 22।

आलेख

पुरातन काव्य में विनोद-परिहास

● डॉ. दादूराम शर्मा

'विनोद' हास्य का शिष्ट, संयत और संस्कृत रूप है। जिससे विनोद किया जाता है, वह भी प्रसन्न हो जाता है। इसमें हंसने-हंसाने का हल्का-फुल्का भाव होता है, सहजता और स्पष्टता होती है। इसके विपरीत 'परिहास' में हंसी उड़ाने या सामने वाले की किसी कमजोर नस को पकड़कर व्यंग्य करने का उद्देश्य होता है। इसमें गूढ़ता होती है और इसका लक्ष्य (निशाना) बनाए जाने वाला व्यक्ति खुश नहीं होता, उलटे अपनी चोरी या कमजोरी पकड़ लिए जाने के कारण खीझ उठता है या व्यंग्य (आक्षेप) अधिक बेधक हुआ तो तिलमिला जाता है, अतः उसके हंसने का प्रश्न ही नहीं उठता। हां, दूसरे भले ही उस पर हंसते रहें। इस तरह वह हास्य-रस का आलंबन बन जाता है। दूसरों का मजाक उड़ाना 'उपहास' भी कहलाता है। 'पंचमुख' और दिगंबर शिव-विषयक श्लोकों में भक्त के मन का विनोद-भाव है, जिसे काव्य की भाषा में 'ब्याज स्तुति' (जो सुनने में तो निंदा जैसी लगती है, किंतु होती है स्तुति) कहा जाता है।

महाकवि कालिदास विनोद के अप्रतिम कवि हैं। अपने काव्य में, उन्हें जहां-जहां अवसर मिला है, उन्होंने अपनी विनोदप्रियता का परिचय दिया है। 'रघुवंश' का एक उदाहरण लीजिए- स्वयंवरा इंदुमती अपने लिए उपयुक्त वर की तलाश में स्वयंवर-सभा में राजाओं के बीच घूम रही है। उसकी सखी सुनंदा राजाओं का परिचय देती जाती है। उसकी राजाओं पर अटकती-भटकती दृष्टि अंततः अज पर जाकर टिक जाती है। सुनंदा उसके मनोभावों को स्पष्टतः पढ़ लेती है किंतु विनोद का यह सुअवसर वह अपने हाथ से कैसे निकल जाने दे? अतः वह चुटकी लेती हुई कहती है- 'राजकुमारी जी, चलिए, अब कहीं ओर चलें।' किंतु इंदुमती उसके उत्तर में किंचित् रोषभरी टेढ़ी नज़र (कटाक्ष) उस पर डालकर रह गई-

'आर्ये व्रजामोऽन्यत' इत्यथैनां वधूरसूया कुटिलं ददर्श,

लोग दूसरों का मजाक उड़ाने में विशेष रुचि लेते हैं, किंतु कितना महान है वह कवि जो अपना ही मजाक उड़ाते हुए कहता है- 'मैं मूर्ख यदि कवि की कीर्ति की चाह करूं तो उसी तरह मजाक का पात्र बनूंगा जैसे ऊंचे पर लगे फल को तोड़ने के लिए उछलने वाला बौना आदमी'-

मंदः कवि-यशः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्।
प्रांशुलभ्ये फले-लोभादुद्वाहुरिव वामनः॥ -(कालिदास)

हंसिबे जोग हंसे नहिं खोरी, धींग धरमधवज धंधरक धोरी।- (तुलसी)

'अभिज्ञान शाकुंतल' में राजा दुष्यंत विदूषक को बतलाता है कि वह ऋषि-कन्या शकुंतला से प्रेम करने लगा है तो विदूषक हंसते हुए टिप्पणी करता है- 'भोः यथा पिंडी-खजूरैसद्वेजितस्य तिन्तिड्यां श्रद्धा भवति तथा अंतःपुरस्मरित्न परिश्रोगिनो भवतः इयं प्रार्थना- अंतःपुर की सुंदरियों का उपभोग करने वाले तुम्हारी शकुंतला को पाने की यह इच्छा ठीक वैसी ही है जैसे कोई खजूर से ऊबा हुआ आदमी इमली खाना चाहे।' यहां विनोद की अपेक्षा व्यंग्य अधिक है जो बहुत समय से अंतःपुर से दूर रहने वाले राजा की कामुक प्रवृत्ति का संकेत कर रहा है।

'कुमारसंभव' में कालिदास ने अपने आराध्य शिव को ही हास्य का आलंबन बनाया है। ब्रह्मचारी बटु शिव को पति रूप में पाने के लिए तपस्या करने वाली पार्वती का मजाक उड़ाते हुए कहता है- 'हे पार्वती। जरा सोचो तो कि गजराज पर बैठने योग्य तुम जब भोले बाबा के साथ बूढ़े बैल की सवारी करोगी तो समझदार लोग तुम्हारी इस नासमझी पर अपनी हंसी कैसे रोक पाएंगे-

इयं च तेऽन्या पुरतो विडम्बना यदूढया वारणराज हार्यया।
विलोक्य वृद्धोक्षमधिष्ठितं त्वया महाजनो स्मेरमुखो भविष्यति।

भोली पार्वती, वर में तीन बातें देखी जाती हैं- रूप, कुल और धन। तुम्हारे शंकर के पास इनमें से एकाध चीज हो तो बताओ। तीन भयानक नेत्रों वाला रूप है उसका, जिसके मां-बाप का भी पता न हो, उसके कुल (खानदान) के विषय में भला क्या कहा जाए? और धनी तो वह इतना है कि बेचारा अपना तन तक ढंकने के लिए कपड़े भी नहीं जुटा पाता-

'वपुर्विरूपाक्षमलक्ष्य जन्मता दिगम्बरत्वेन निवेदितं वसु।
वरेषु यद् बालमृगाक्षि' मृग्यते तदस्ति किं! व्यस्तमपि त्रिलोचने?

बाबा तुलसी ने 'मानस' में भोलेनाथ को मनोरंजक वर के रूप में प्रस्तुत किया है-

जटा मुकुट अहिमौर संवारा,
कुंडल कंकन पहिरे व्याला, तन विभूति पट केहरि छाला।
ससि ललाट सुंदर सिर गंगा, नयन तीन उपवीत भुजंगा
गरल कंठ उर नरसिर माला, असिव वेष सिव धाम कृपाला।
कर त्रिसूल अरू डमरू विराजा, चले बसहं चढ़ि बाजहिं बाजा

ऐसे अद्‌भुत वर को देखकर देव-पत्नियों का मुस्कराना स्वाभाविक ही था-

देखि सिवहिं सुर तिय मुसुकाहीं,
वर लायक दुलहिन जग नाहीं।

अब विष्णु जी की विनोदभरी प्रतिक्रिया देखिए-

विषनु कहा अस विहसि तब बोलि सकल दिसि राज
विलग-विलग होइ चलहु सब, निज निज सहित समाज।
वर अनुहारि बरात न भाई। हंसी करैहहु परपुर जाई।

तब तो-विषूनु वचन सुनि सुर मुसुकाने, निज-निज सेन सहित बिलगाने। विष्णु के परिहास ने महेश के मन को भी गुदगुदा दिया- मन ही मन महेस मुसुकाहीं! और उन्होंने अपने विभिन्न रूपधारी गणों को इकट्ठा कर लिया, 'जस दूलह तस बनी बराता!' और रास्ते पर तमाशे और हंसी-ठट्ठे होते रहे- कौतुक विविध होहिं मग जाता!

कविवर पद्‌माकर ने तो नंगा (शिव) के विवाह को 'हास का दंगा' बना डाला है-

हंसि-हंसि भाजैं देखि दूलह दिगंबर को,
पाहुनी जे आवैं हिमाचल के उछाह में।
कहै पद्‌माकर सु, काहू सौं कहै को कहा,
जोई जहां देखे हंसोई तहां राह में।।
मगन भयेऊ हंसै नगर महेश ठाढ़े
औरे हंसे पेऊ हंसि कै उमाह में।
सीस पर गंगा हंसै, भुजनि भुजंगा हंसै,
हासू हू को दंगा भयो नंगा के विवाह में।

तुलसी की 'विनय पत्रिका' में सृष्टि रचयिता ब्रह्मा द्वारा भगवती पार्वती के समक्ष अवढरदानी भोलेनाथ के विरुद्ध पेश किया गया यह शिकायती पत्र भी हास्य-व्यंग्य का अनूठा नमूना है, जिसमें उनकी लिखी भाग्य लिपि को उलटने-पलटने वाले शिव से तंग आकर वे अपने पद से त्यागपत्र देकर भीख मांगकर गुजारा करने के लिए तैयार हो जाते हैं-

'बावरो रावरो नाह भवानी!
दानि बड़ो दिन देत दए बिनु वेद
बड़ाई भानी।
जिनके भाल लिखी लिपि मेरी
सुख की नहीं निसानी
तिन्ह रंकन्ह को नाक संवारत हों
आयो नकवानी।
दु:ख दीनता दुखी इनके दुख
जाचकता अकुलानी।
यह अधिकार सौंपिए औरहिं भीख
भली मैं जानी।'

विश्वमोहिनी की सुंदरता पर रीझे नारद ने उससे विवाह करने के लिए हरि (विष्णु) से उनका रूप मांगा था। हरि ने शब्द-श्लेष का लाभ उठाते हुए उन्हें दिया तो 'हरि' का ही रूप, किंतु अपना नहीं, बंदर का- 'मर्कट बदन भयंकर देही!' बेचारी विश्वमोहिनी ऐसे रूपवान वर का भला क्या करती-

जेहि दिसि बैठे नारद फूली,
सो दिसि तेहि न बिलोकी भूली।

बाबाओं को छकाने में बाबाजी भी किसी से कम नहीं हैं। 'रामचरितामनस' में उन्होंने बेचारे नारदजी और बम भोले की फजीहत कर डाली फिर भी मन नहीं भरा तो 'कवितावली' में व्यंग्य-विनोद का निशाना बना डाला उन मुनियों को, उन युवा बाबाओं को जो समाज में लड़कियां न मिलने के कारण मजबूर बाबा बन गए थे। शायद उस जमाने में समाज में लड़कियों की कमी रही होगी। अब वे कुंआरे युवा बाबा आश्वस्त हो गए कि 'अपनी चरण धूलि से शिला को अहल्या बना देने वाले करुणासिंधु राम हमारे कंवारेपन पर तरस खाकर हम पर दया करने के लिए ही यहां आए हैं। अब हम कंवारे नहीं मरेंगे। विंध्याचल की सारी चट्टाने उनकी चरणरज के स्पर्श से चंद्रमुखी बन जाएंगी और हम उनका वरण करके मजे से दांपत्य जीवन बिताएंगे-

'बिंध के वासी उदासी तपी
व्रतधरी महा बिनु नारि दुखारे
गौतमतीय तरी तुलसी सो कथा
सुनि भे मुनिवृंद सुखारे
ह्‌वैहैं सिला सब चंद्रमुखी
परसे पद पंकज मंजु तिहारे
कीन्हीं कृपा रघुनायक जू।
करूना करि कानन को पगु धारे।

इस तरह प्राचीन काव्य हास्य रस से ऐसे ही भरे पड़े हैं। कवियों ने मानव की हंसने की प्रवृत्ति का परितोष ही नहीं, परिष्कार भी किया है, मन को गुदगुदाया है तो सोचने के लिए विवश भी किया है। व्यंग्य हास्य का विकसित और परिष्कृत रूप है। हास्य आल्हादक है तो व्यंग्य संस्कारक और परिष्कारक।

प्राध्यापक, महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी, मध्य प्रदेश-480 661, मो. 0 88789 80467

आलेख

आवाज़ की परवाज़

• राजेन्द्र पालमपुरी

'आवाज़' जी हां खुदा की दी हुई, इनसान को एक ऐसी सौगात, जिसे सुनकर हर किसी का दिल धड़क जाए। 'मां' की प्यार भरी आवाज़, बाप की कड़कदार रोबीली आवाज़, दोस्त की शरारत भरी आवाज़, मासूम बच्चे की तोतली आवाज़, और भी बहुत सी आवाज़ें जो दिल को छू जाती हैं। लेकिन इन आवाज़ों में कुछ ऐसी आवाज़ें भी हैं, जिनसे हमारा कोई भी संबंध न होते हुए भी हमारे दिल में इन आवाज़ों ने अजीब सी जगह बना ली है। हालांकि शायद ही हमने उन्हें कभी करीब से देखा हो, लेकिन फिर भी उनकी आवाज़ सुनते ही हम अचानक सोते से जाग उठते हैं और ऐसी बहुत सारी आवाज़ें हमारे जहन... हमारे दिमाग में अपना घर बनाए बैठी हैं।

याद करें ज़रा अपने 'सोहराब मोदी', बी.एम. व्यास, जीवन, मुराद, सप्रु, तिवारी आदि चरित्र अभिनेताओं की आवाज़ें। हम सिर्फ आवाज़ सुनकर ही बता देते हैं कि यह इस अभिनेता की आवाज़ है। इन्हीं आवाज़ों में 'अरी ओ भागवान' सुनें तो एकदम हास्य अभिनेता ओमप्रकाश की छवि मानस पटल पर उभर आती है। ऐसे ही हम और भी आवाज़ें पहचानते हैं।

ठीक इसी तरह इन्हीं आवाज़ों में एक अलग आवाज़, अपने अनोखे अंदाज़ में उभर कर सामने आई 'तो बहनो और भाइयो... दिल थाम कर बैठिए... अगली पायदान नं. 3 पर है... यह गीत' जी हां, बिलकुल ठीक समझे, यह आवाज़ है रेडियो सिलोन (जो अब रेडियो श्रीलंका है) में सबसे लोकप्रिय कार्यक्रम 'बिनाका गीत माला' (बाद में सिबाका गीत माला) के एनाउंसर अमीन सयानी साहब की। 'बिनाका गीत माला' कार्यक्रम के ज़रिए अमीन साहब कुछ इस कदर मशहूर हुए कि उनकी आवाज़ के चाहने वालों की तादाद दिनो-दिन बढ़ती ही गई और इसके साथ-साथ बिनाका गीत माला ने दुनिया भर के तमाम रेडियो कार्यक्रमों की छुट्टी कर दी।

अमीन सयानी साहब की आवाज़ का जादू ऐसा सिर चढ़कर बोला कि हर बुधवार रात के आठ बजते ही लोग रेडियो श्रीलंका पर आने वाले प्रोग्राम 'बिनाका गीत माला' सुनने के लिए कुछ इस तरह इकट्ठे होकर बैठ जाया करते थे, जैसे 1980 के दशक में हम 'रामायण' धारावाहिक देखने के लिए आतुर हुआ करते थे। यही नहीं 'बिनाका गीता माला' के पायदान यानी क्रम रूप में आने के लिए लोगों में शर्तें भी लग जाया करती थीं।

'अमीन साहब' का 'बहनो और भाइयो' का संबोधन ही कार्यक्रम की जान बन गया था। इनकी आवाज़ में वह दम है कि अभी भी मेरे जैसे लोग उनकी आवाज़ सुनने को बेताव रहते हैं, बेकरार रहते हैं। अमीन सयानी की दिल को छू लेने वाली एक अलग सी कशिश भरी आवाज़, अजीब सी सिहरन पैदा करती है। अमीन सयानी के साथ-साथ हमें रेडियो श्रीलंका से एक और आवाज़ सुनने को बीच-बीच में मिलने लगी, और...और यह आवाज़ थी जनाब मनोहर महाजन जी की। अमीन सयानी की ही तरह मनोहर महाजन भी रेडियो श्रीलंका के ही उद्घोषक थे। इनकी आवाज़ अमीन सयानी जी से काफी मिलती-जुलती, मगर अलग अंदाज़-एक अलग पहचान बनाए हुए थी।

फिर इन आवाज़ों के साथ एक आवाज़ और मिली हमें सुनने को। यकीन मानिए मैं भी इस आवाज़ को अमीन सयानी की आवाज़ ही समझता रहा लेकिन किसी कार्यक्रम के अंत में या आरंभ में पता चला कि यह आवाज़ अमीन सयानी की नहीं बल्कि 'हमीद सयानी' की है। फिर अरसे के बाद पता चला कि इतनी मिलती-जुलती बिलकुल एक जैसी सुनने वाली इस आवाज़ और दमदार आवाज़ के मालिक हमीद सयानी जी अमीन सयानी के सगे बड़े भाई हैं।

स्व. हमीद साहब ज्यादातर विज्ञापन किया करते थे, लेकिन अकसर लोग उनकी आवाज़ को अमीन सयानी की ही आवाज़ समझते थे।

अमीन सयानी, हमीद सयानी और मनोहर महाजन की आवाज़ के साथ-साथ ही हल्के-हल्के से एक और आवाज़ ने रेडियो श्रीलंका में अपना दखल देना शुरू कर दिया था और यह आवाज़ फिल्मी दुनिया में भी अपनी दस्तक उस समय दे चुकी थी। इस अदाकारा ने उस समय कुछ फिल्मों में भी काम करके, अपने

अभिनय का सिक्का जमा लिया था। जी हां, यह आवाज़ थी अदाकारा 'तबस्सुम' की।

रेडियो श्रीलंका से यह उस समय 'इंटरव्यू' लिया करती थीं और फिर प्रसारित करती थीं। इनका यह कार्यक्रम काफी समय तक चलता रहा और ठीक उसके बाद अब आप याद करें... जब दूरदर्शन के कार्यक्रम आरंभ हुए तो दूरदर्शन के एक कार्यक्रम 'फूल खिले हैं...गुलशन गुलशन' में यही 'तबस्सुम' ठीक रेडियो श्रीलंका वाले कार्यक्रम की ही तरह बड़ी-बड़ी मशहूर हस्तियों के इंटरव्यू लेती दिखाई देने लगीं।

'आवाज़' की बात की जा रही थी और महिला 'आवाज़ों' की बात न की जाए मज़ा नहीं आएगा। हमारी एक बहुत ही खूबसूरत अदाकारा थीं 'मीना कुमारी'। ग़ज़ब की महकती हुई एक खनक लिए हुए आवाज़ थी उनकी। लेकिन बहुत कम लोगों को पता होगा कि अमीन और हमीद सयानी की ही हू-ब-हू आवाज़ की ही तरह चरित्र सहअभिनेत्री 'चांद उस्मानी' की आवाज़ भी मीना कुमारी से बिलकुल मिलती थी। अभिनेता कबीर बेदी, रज़ा मुराद, अमरीश पुरी और अमिताभ बच्चन की आवाज़ भी लोग बेहद पसंद करते हैं, लेकिन कुछ अभिनेताओं को तो उनके संवादों से से पहचाना जाता रहा है, जैसे कि मैं पहले भी कह चुका हूं 'अरी ओ भागवान' (ओमप्रकाश हास्य अभिनेता), 'लो जी कल्लो बात' (जगदीप), 'जानी....' (राजकुमार), 'अरे ओ साम्बा... कितने आदमी थे' (अमज़द खान), 'मोना डार्लिंग' (अजीत), 'नंगा नहाएगा क्या... निचोड़े क्या' (प्रेम चोपड़ा), 'मोगैम्बो खुश हुआ' (अमरीश पुरी), 'कुत्ते मैं तेरा खून पी जाऊंगा' (धर्मेंद्र), 'रंगा खुश' (जोगेंद्र), 'मेरे पास मां है' (शशि कपूर), 'हम सब रंगमंच की कठपुतलियां हैं, जहां-पनाह' (राजेश खन्ना) आदि बहुत से उदाहरण हैं, जिन्हें बच्चे तक अकसर बोलते-कहते सुने जा सकते हैं। जैसे 'खामोश...' (शत्रुघ्न सिन्हा)।

यही नहीं, इन्हीं आवाज़ों में से बहुत आवाज़ों को 'प्ले-बैक' के तौर पर भी इस्तेमाल किए जाने की परंपरा भी रही है और आज भी कायम है। जैसे धारावाहिक 'भारत एक खोज' में जनाब 'ओम पुरी' की आवाज़ को प्ले-बैक के रूप में उपयोग किया गया था।

खुदा ने आवाज़ें देती बार अमीन सयानी और हमीद सयानी की ही तरह कुछ गायकों की आवाज़ें भी इस कद्र मिलती-जुलती थीं कि अनुमान लगा पाना मुश्किल हो जाता है कि यह आवाज़ किसकी है। मसलन बरसों पहले का फिल्म 'विश्वास' का यह गीत 'आपसे हमको बिछड़े हुए एक ज़माना बीत गया' ज़रा सोचकर बताएं किस गायक और गायिका ने यह गीत गाया है.. .। जी यही कहेंगे न 'मुकेश' और 'लता'....? जी नहीं अगर आपका यही जवाब है तो यह ग़लत है। मैं स्वयं भी इस गीत के बारे में कुछ ऐसा ही सोचता था... लेकिन कुछ अरसे बाद ही पता चला कि इस गीत को 'मनहर उदास' और 'सुमन कल्याणपुर' ने गाया है। इसी तरह फिल्म 'मेरे ग़रीब नवाज़' का 'कसमे हम अपनी जान की खाए चले गए....' मोहम्मद रफी ने नहीं, बल्कि 'अनवर हुसैन' (बाद में सिर्फ अनवर) द्वारा गाया गया था। जिसे अब तक भी कई लोग इस गीत के गायक रफी को ही मानते हैं। 'अर्पण' फिल्म का यह गीत 'मुहब्बत अब तिजारत बन गई है'। फिल्म 'नसीब' का गीत 'ज़िंदगी इम्तहान लेती है' अनवर और डॉक्टर कमलेश अवस्थी ने साथ मिलकर गाया था लेकिन लगता है 'रफी' और 'मुकेश' ने गाया है। बताता चलूं मनहर उदास, पंकज उदास के सगे भाई हैं।

ऐसी ही फिल्म 'अभिमान' का गीत 'लूटे कोई मन का नगर बनके मेरा साथी' मनहर और लता का है, लेकिन आभास मुकेश का ही होता है। फिल्म 'अखियों के झरोखें से' का शीर्षक गीत गायिका हेमलता द्वारा गाया गया है लेकिन मेरे बहुतों बार निर्णायक मंडल (संगीत) में बैठने और पूछे जाने पर अच्छे-अच्छे जानकार गुणी गायक भी अकसर लता का नाम लेते हैं, इस गीत में।

ऐसी और भी बहुत सी आवाजें हमें बरबस ही अपनी ओर आकर्षित करती हैं। जैसे हमारे गुलज़ार साहब की आवाज़ का एक अपना ही अलग अंदाज़ है। अनायास ही उनकी आवाज़ हमारा ध्यान अपनी ओर खींच लेती है।

आकाशवाणी और दूरदर्शन के विभिन्न केंद्रों से अलग-अलग लहज़ों, अलग बोलियों और अलग-अलग अंदाज़ों में बल्कि बेहतरीन अंदाज़ों में कई तरह की आवाज़ें सुनने को मिलती रही हैं, मगर इसके साथ ही दूरदर्शन से... 'मैं समय हूं...' जी हां एक नई आवाज़ उभर कर आई वह आवाज थी... पहचान गए आप या नहीं... यदि नहीं तो बताता हूं, यह आवाज थी जनाब हरीश भिमानी की रथ के पहिए के घूमते दृश्य के साथ धारावाहिक 'महाभारत' आरंभ होते ही यह आवाज़ अपने आपमें जैसे 'मैं समय हूं' कहते-कहते पूरे 'महाभारत' में छाई रही। हरीश भिमानी ने और भी अनेक कार्यक्रमों में अपनी आवाज़ का जादू बिखेरा, लेकिन उन्हें 'महाभारत' धारावाहिक से जो लोकप्रियता हासिल हुई, वह और कहीं नहीं मिली। ऐसा मेरा मानना है।

हरीश भिमानी की आवाज़ ने एक बार फिर श्रोताओं को अमीन सयानी, हमीद सयानी और मनोहर महाजन साहब जैसी आवाज़ों की यादें जिंदा कर दीं, लेकिन 'समय' भला कब और किसके साथ रहता है। हरीश भिमानी का धारावाहिक 'महाभारत' का यही संवाद 'मैं समय हूं' हमें सदा वक्त की याद दिलाता रहेगा और इन सभी उद्घोषकों की भी।

पोस्ट बॉक्स नं. 45, मनाली, जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश-175 131, मो. 0 94591 08673

आलेख

सामाजिक क्रांति के अग्रदूत - संत कबीर

● शंकर लाल माहेश्वरी

संत कबीर का जन्म यद्यपि एक जुलाहा परिवार में हुआ फिर भी वे छुआछूत से परे एक ऐसे सामाजिक स्वरूप की कल्पना करते थे जहाँ जाति पाँति के भेद-भाव और छूतछात जैसी सामाजिक बुराइयों के लिए स्थान न हो। मानव मात्र अंधविश्वासों और पारस्परिक अंतविद्रोहों से मुक्त रहकर समरसता के वातावरण में स्वच्छंद रूप से श्वास ले सके। वे सच्चे समाज सुधारक थे। समाज में धर्म के नाम पर जो झगड़े होते हैं उनसे उनका विरोध था। वे हिन्दू मुस्लिम दोनों ही समुदायों में व्याप्त धार्मिक असहिष्णुता से असंतुष्ट थे। हिन्दू और मुसलमानों को धर्म के नाम पर साम्प्रदायिकता का ताण्डव उन्हें पसन्द नहीं था। वे जाति पाँति के भेदभाव को भुलाकर निर्गुण राम को अपना आराध्य स्वीकार करते हुए सभी को इसकी उपासना करने की प्रेरणा देते थे।

हिन्दू और मुस्लिम धर्मावलम्बियों को फटकारते हुए कहा करते थे-

'' हिन्दू कहे मोहि राम पियारा, तुरक कहे रहिमाना
कबीरा लड़ि लड़ि दौ मुये, मरमन काहु न जाना॥

कबीर नमाज पढ़ाने की पद्धति के भी विरोधी थे। वे ऊँची आवाज में चिल्लाकर खुदा की बन्दगी में विश्वास नहीं रखते हुए कहते थे कि खुदा तो सर्वत्र विराजमान हैं। अपनी आत्मा में उसका चिन्तन करना चाहिए।

'' दिन में रोजा रखत है, राति हनन हो गाइ
ये तो खून वह बन्दगी, कैसे खुशी खुदाय॥''

कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों की वर्गो की पूजा पद्धति में परिवर्तन चाहते थे तथा इनके सामाजिक रीतिरिवाजों में ऐसा बदलाव चाहते थे जो सामाजिक सद्‌भावना का पोषक हो और एकता के सूत्र में मणिमाला की तरह आबद्ध कर सके।

संत कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों वर्गो के प्रति विशेष प्रेम रखते थे अतः उनमें व्याप्त बुराइयों का समाहार करना वे अपना दायित्व समझते थे। न तो मुसलमानों से घृणा करते थे और न ही हिन्दुओं से विशेष प्रेम किया करते थे। वे सर्वधर्म समानत्व की भावना से परिपूरित थे। ब्राह्मण और शूद्रों के बीच का अन्तर्विरोध भी मन्दिरों की ब्राह्मणों के द्वारा पूजा अर्चना की व्यवस्थाओं से बढ़ता गया। इस समाजगत असहिष्णु अवस्था को महात्मा कबीर ने निरस्त करने का प्रयास किया। वे ब्राह्मणों द्वारा ही मंदिर पूजा में संलग्न रहते हुए शूद्रों के लिए मन्दिर प्रवेश की निषेधता पर कहते थे-

''बामण के घर बामण जाया,
और मारग ल्हे क्यूं नहीं आया॥

उस समय धर्म के नाम पर बाह्याडम्बर तथा मिथ्या प्रदर्शन से जनजीवन प्रभावित था। पुराण पंथी पण्डित और कर्मकाण्डी ब्राह्मणों द्वारा भोली भाली जनता को मिथ्या आडम्बरों द्वारा सामाजिक व्यवस्थाओं को जर्जर बनाने का दुष्प्रयास किया जाता रहा। हिन्दू मुसलमान दोनों ही धर्म अपने आचार विचार और मान्यताओं में कट्टरता होने के कारण परस्पर संघर्षरत थे। रुढ़िवादी विचारधारा का विस्तार हो रहा था। कुरीतियों व कुप्रथाओं की बहुलता थी। ऐसे समय में महात्मा कबीर ने हिन्दू मुस्लिम सम्प्रदायों में समानता स्थापित करते हुए जो सहिष्णुता का वातावरण तैयार कर आडम्बरप्रियता, रूढ़िवादिता, मिथ्याचारों और पाखण्डी व्यवस्थाओं तथा सामाजिक विद्रूपताओं को दूर करने का प्रयास किया वह सामाजिक सहिष्णुता की वृद्धि में उपयोगी सिद्ध हुआ।

जीवन में सरलता, निष्पक्षता तथा मन की शुद्धता, आडम्बरों से मुक्ति और हिन्दू मुस्लिम एकता की दिशा में दृढ़ता पूर्वक अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए सामाजिक समरसता की दिशा में स्तुत्य प्रयास किये। महात्मा कबीर ने सम्पूर्ण समाज में व्याप्त विषमता तथा सामाजिक व धार्मिक विसंगतियों के उन्मूलन का सार्थक प्रयास कर हिन्दू मुस्लिम एकता का बीजारोपण किया।

कबीर ने अपनी वाणी के माध्यम से समाज का मार्गदर्शन किया तथा अपने दिशा बोध से समाज में व्याप्त रूढ़ियों, अंधविश्वासों और विकृत मान्यताओं का परिष्कार करते हुए सहिष्णुता से परिपूर्ण समाज रचना के पक्षधर रहकर यथोचित प्रयास किया। उनके विचार समन्वयवादी थे। पण्डित मुंशी लाल शर्मा ने कबीर के संबंध में लिखा हैं कि "वे व्यक्तिगत साधना के साधक एवं प्रचारक थे परन्तु उनका व्यक्तित्व समाज सुधार की लहर की उपज था। इसीलिए वे समाज सुधार की दिशा में उन्मुख हुए।'' इसी संदर्भ में डॉ. त्रिगुणायत लिखते है कि '' कबीर की वाणी ने सामाजिक क्षेत्र में एक और बहुत बड़ा कार्य किया वह है सात्त्विक समरसता व सहिष्णुता का प्रचार प्रसार''। कबीर ने सम्पूर्ण समाज में व्याप्त विषमता का प्रतिकार करते हुए सहिष्णुता स्थापित करने का पूरा प्रयत्न किया।

लघु कथा

अन्तर

● डॉ. कमल के. 'प्यासा'

दीवान चन्द के यहां यदि कहीं उसकी डाक के साथ गलती से किसी दूसरे के नाम की डाक आ जाती तो वह आग बबूला हो उस चिट्ठी पत्री को फैंक देता या फाड़ देता था। लेकिन कहीं समाचार पत्र या पत्रिका आ जाती तो खुशी से उठा कर पढ़ने लगता था। दीवान चन्द करता भी क्या उसकी तो आदत ही बन गई थी।

उधर दीनू भाई के यहां यदि गलती से किसी की चिट्ठी-पत्री पंहुचती तो उसे चिन्ता सताने लगती...."न जाने किसी की कैसी जरूरी चिट्ठी होगी.......?? हो सकता है कोई दुःख भरा या खुशी का ही सन्देश हो....।" और वह उस चिट्ठी-पत्री को गन्तव्य तक पहुँचा कर ही शान्ति महसूस करता था।

उस दिन उसकी डाक के साथ ही साथ एक पत्र ऐसा भी था जो उसका नहीं, बल्कि किसी देवकृष्ण सपुत्र दीवान चन्द का था। उसने देखा पत्र के बाहर जरूरी भी लिखा था............. शायद किसी साक्षात्कार से सम्बन्धित था। उसकी बेटी को भी तो उसी जैसा साक्षात्कार पत्र पिछले रोज़ ही तो प्राप्त हुआ था और वह साक्षात्कार के लिए शिमला जाने की तैयारी कर रही थी। दीनू भाई की चिन्ता ओर बढ़ गई। "अरे भाई साक्षात्कार का पत्र है यदि समय रहते प्रार्थी तक न पहँचा तो वह साक्षात्कार से वंचित रह जाएगा........ ... क्या किया जाए................? लैटर बॉक्स में भी डाला तो समय पर नहीं पहुँच पाऐगा............।" सोचते-सोचते दीनू भाई पत्र को गन्तव्य तक पहुँचाने के लिए सीधे म्यूनिसिपल्टी पहुंच गए और प्रधान से उसे पत्र को दिखा कर उसके (दीवान चन्द) सम्बन्ध में पूरी जानकारी लेकर दीवान चन्द के घर पहुँच गया तथा चिट्ठी को पहुँचा कर राहत अनुभव करने लगा।

दीवान चन्द पुत्र के पत्र को प्राप्त करके जहां हैरान था वहीं वह खुशी से फूला भी नहीं समा रहा था, क्योंकि उसके बेटे को न जाने कितने वर्षो के पश्चात् साक्षात्कार के लिए बुलाया गया था। लेकिन दूसरी ओर वह अपनी आदत व व्यवहार के प्रति आत्मग्लानि का अनुभव भी कर रहा था।

प्रूथी 34/7 अप्पर समखेतर, मण्डी, हिमाचल प्रदेश-175 001, मो. 9882176248

कबीर ने पाखण्डी पंडितों, महन्तों तथा पण्डे पुजारियों को सीख देते हुए कहा है-

'' पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ,पण्डित हुआ न कोय
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पण्डित होय।।''

उन्होने मृत्यु पश्चात आयोजित कर्मकाण्डों का विरोध प्रकट करते हुए कहा है कि-

'' मूँड मुडाँये, तो सब कोई ले मूँडाय
बार-बार के मूँडते भेड़ न बैकुण्ठ जाए।।

उनकी दृष्टि में सत्य ही सबसे बड़ा तप है इसीलिए कहा है-

''साँच बरोबर तप नहीं झूठ बरोबर पाप।
जके हिरदे साँच है ताके हिरदे आप।।

समाज को सीख देते हुए कहा है कि केवल बुराइयाँ देखने मात्र से वे दूर नहीं होती उन्हें दूर करने के लिए स्वयं को आत्मनिरीक्षण भी करना चाहिए।

'' बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोई।
जे दिल खोजा आपणा, मुझसा बुरा न कोई।।

कबीर की दृष्टि में निंदक समाज हितैषी कहे जाने चाहिए क्योंकि वे हमारी आत्मा को सात्विकता प्रदान करते हुए बुराइयों का दमन करते है।

''निन्दक नियरे राखिये, आँगन कुटि छवाय।
बिन पानी साबुन बिना निर्मल करे सुभाय।।''

हिन्दू समाज में कबीर को सामाजिक क्रान्ति का अग्रदूत माना है। भगवान बुद्ध के बाद सांस्कृतिक व धार्मिक परिवेश में सुधारवादी कदम उठाने वाले शंकराचार्य के बाद कबीर ही ऐसे संत थे जिन्होंने सामाजिक क्रान्ति को प्राथमिकता देते हुए हिन्दू मुस्लिम एकता का प्रयास किया। मूर्ति पूजा एवं बहुदेव वाद का विरोध करते हुए एकेश्वरवाद का प्रचार प्रसार किया और सादा जीवन जीने का महत्व देते हुए आत्मानुभूति को ही सर्वोपरि माना।

कबीर की सादगी देख उनके कुछ शिष्य दुखी रहते थे। एक दिन साहस करते हुए एक शिष्य बोला, ''गुरुवर! आप सादगी से क्यों रहते हैं? आप एक सिद्ध पुरुष हैं ऐसे में आपका कपड़ा बुनना भी उचित नहीं है। तब कबीर ने उत्तर दिया ''पहले में अपना पेट पालने के लिए बुनता था लेकिन अब मैं सभी के अन्दर व्याप्त ईश्वर के तन ढकने के लिए और अपना मनोयोग साधने के लिए बुनता हूँ।''

कबीर युगदृष्टा थे, वे सदा असत्य के विरोधी और सत्य के समर्थक रहे। लोकहित और समाज कल्याण की दृष्टि से सदैव सचेष्ट रहते हुए समाज में व्याप्त ईर्ष्या द्वेष को दूर करने हेतु प्रयत्नशील रहे। वस्तुतः महात्मा कबीर सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत बनकर अवतरित हुए।

पूर्व जिला शिक्षा अधिकारी, पोस्ट आगूचा, जिला-भीलवाड़ा, राजस्थान- 311022, फोन. 9214581610

जयंती (7 जून) पर

मेवाड़ मार्तंड महाराणा प्रताप

● रामभवन सिंह ठाकुर विद्यावाचस्पति

मेवाड़ मार्तंड, वीर शिरोमणि, त्याग और बलिदान के अमर प्रतीक, राष्ट्र नायक महाराणा प्रताप का धीरोदात्त चरित्र विगत चार शतक से भारतीय जनमानस के विचारों को आप्लावित करते आ रहा है। जब-जब राष्ट्र पर संकट के बादल छाए तथा देश की अस्मिता दांव पर लगी, तब-तब महाराणा प्रताप के स्मरण मात्र से एक विराट शक्ति-पुंज उदित होकर भारतवासियों को त्याग और बलिदान के भाव से ओत-प्रोत करता रहा है। राष्ट्रीय अस्मिता एवं स्वाभिमान के लिए उनका त्याग, बलिदान, उत्सर्ग हमारे लिए प्रेरणास्रोत रहा है।

महाराणा प्रताप का महत्त्व योद्धा के नाते ही नहीं वरन् उन्होंने स्वतंत्रता की जो मशाल जलाई और उसके प्रकाश में समकालीन स्वतंत्रता प्रेमी मातृभूमि की आजादी के प्रेम में अभिभूत होकर प्रताप के झंडे के नीचे एकत्र हो गए, इससे उनका महत्त्व अतुलनीय हो जाता है। प्रताप का प्रताप कालजयी है, त्याग, बलिदान की प्रेरणा लेने वाले देशभक्तों के लिए राणा प्रताप का आदर्श, सरिता के प्रवाह की तरह सनातन स्रोत है। चौराहों पर स्थापित उनकी प्रतिमा देवों की तरह दर्शनीय व स्फूर्तिदायक है। प्रताप तो प्रताप उनका घोड़ा चेतक तक अमर हो गया है। यह बस राष्ट्रभक्ति और उत्सर्ग की उदात्त भावना का प्रताप है।

महाराणा प्रताप व अकबर का संघर्ष वस्तुतः राज्य अथवा वैभव का संघर्ष नहीं था, यह दो संस्कृतियों, सिद्धांतों और यदि विस्तारपूर्वक देखें तो विदेशी आक्रांता और देशज मूल भारतीय संस्कृति का वैचारिक संघर्ष था। जिसमें महाराणा प्रताप पूर्णतः सफल रहे, उन्होंने न तो अपने आपको मेवाड़ राज्य से सर्वोपरि माना और न जीवन-पर्यंत कभी भी मेवाड़ की प्रतिष्ठा के विपरीत कोई समझौता किया, न ही कोई संधि की। राणा प्रताप ने कभी भी धार्मिक दृष्टि से मुसलमानों का विरोध नहीं किया। उनका विरोध मुगल साम्राज्यवाद से था। विश्व में जहां कहीं भी अन्याय, अत्याचार और शोषण है, उसके पीछे साम्राज्यवादी शक्तियों का ही स्वार्थ होता है। ऐसी दमनकारी साम्राज्यवादी शक्तियों का सामना करने के लिए आज भी महाराणा प्रताप जैसे वीरों की आवश्यकता है। अंग्रेजी साम्राज्य से जूझने वाले क्रांतिकारियों ने भी प्रताप के जीवन तथा आदर्श से प्रेरणा ली और अनेक 'नव भारतीय' हल्दी घाटियों को अपने रक्त से सींचा। भारत की स्वाधीनता-प्राप्ति के बाद आज भी महाराणा प्रताप का महत्त्व और उनके नाम का प्रभाव किसी भी प्रकार से कम नहीं हुआ है।

महाराणा प्रताप का जीवन अपने आपमें संपूर्ण भारतीय दर्शन है। प्रताप जैसे महान व्यक्ति को विश्व स्तर पर 'प्रताप महान' के रूप में प्रचारित किए जाने की आवश्यकता है। महाराणा प्रताप का जीवन एक तपस्वी, स्वातंत्र्य वीर और इससे भी बढ़कर स्वातंत्र्य-समर सेनानी का था। इसी परमपूत, परमवीर को स्मरण करते हुए हमें अपनी स्वतंत्रता को अक्षुण्ण बनाए रखना है और उसके प्रतिफल को जनता के लिए पूर्ण करना है। महाराणा की वीरता, ओजस्विता, त्याग, तपस्या एवं हृदय में स्वातंत्र्य-प्राप्ति की प्रबल आकांक्षा कायरों में भी वीरता का भाव जगा देती है। मर्यादा पुरुषोत्तम सूर्यवंशी श्रीराम के आदर्शों का पालन करते हुए जन कल्याणार्थ सपरिवार जंगलों की खाक छानते हुए, घास की रोटियां खाते हुए, जमीन पर सोते हुए उस नर-शार्दूल ने स्वयं को शहंशाह, जहांपनाह आदि उपाधियों से विभूषित करने वाले, आत्म-प्रशंसी, मीना बाजार की आड़ में अपनी विलासी कामनाओं की पूर्ति करने वाले अकबर बादशाह को जो पाठ पढ़ाया और अपनी जो वीरता दिखाई, वह चिर-स्मरणीय है।

जब सभी राजाओं ने अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली थी, तब अकेला महाराणा प्रताप ही एक ऐसा वीर बांकुरा था, जिसने मेवाड़ को स्वतंत्र रखा, उनमें लोहे को पानी कर देने वाली बेमिसाल ताकत थी कि अपार सैन्य-बलधारी और शक्ति-संपन्न सम्राट होते हुए भी अकबर उन्हें अपने अधीन नहीं कर सका। भारतीय जन- जीवन में वे स्वाधीनता के प्रतीक प्रातः स्मरणीय बन प्रेरणा के प्रणम्य हो गए हैं।

महाराणा प्रताप युग पुरुष थे। उनके त्याग और तपस्यापूर्ण

महाराणा प्रताप का जीवन-दर्शन आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना तत्कालीन समय में था। वर्तमान में प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली प्रचलित है, परंतु क्या वास्तव में प्रजा का तंत्र स्थापित है? इस संदर्भ में विचार-मंथन करें तो गंभीर चिंतकों को बहुत निराशा होगी। ऐसा नहीं कि ईमानदार लोग भारत में नहीं हैं, परंतु उनकी संख्या व प्रभाव इतना न्यून से न्यूनतम है कि नक्कारखाने में तूती की आवाज के समान उनका स्वर अस्तित्वहीन होता जा रहा है।

सादे जीवन ने उनके व्यक्तित्व का सदा के लिए मार्गदर्शक, यशस्वी और स्मरणीय बना दिया। प्रताप जैसे वीर पुरुष ने गौरवपूर्ण परंपराएं और अनुकरणीय चरित्र एवं कृतित्व प्रस्तुत कर विश्व को प्रेरणास्पद उदाहरण प्रस्तुत किया है। उन्होंने गांव-गांव और दुर्गम स्थानों में विचरण कर जनता के मनोबल और नैतिक स्तर को बनाए रखने का भरसक प्रयास किया, लोक जीवन की समस्या को अपने जीवन की समस्या बनाया, जिससे जनता में आदर्श रूप में स्थापित हुए। सर्वधर्म समभाव और लोकहित की भावना के साथ देश-सेवा करना आपका मुख्य उद्‌देश्य था। आज वह भारतीय संस्कृति के संरक्षक एवं महानायक थे। आपकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती है-

'शूरता में, वीरता में, धीरता-गंभीरता में
कौन कलिकाल में प्रताप के समान है?
मां भारती की आरती उतारे निज रक्त से
प्रताप-सम कौन भारतीय यशस्वी संतान है?'

महाराणा प्रताप अपनी शौर्यता और राष्ट्रभक्ति के लिए भारतीय इतिहास के श्लाका पुरुष हैं, अपनी मातृभूमि के लिए सर्वस्व समर्पित कर वे अजर-अमर हो गए। ऊंचे-पूरे कद्दावर और सुगठित शरीर वाले प्रताप के भरे हुए चेहरे पर बड़ी-बड़ी आंखें और नुकीली मूंछें, विशाल वक्षस्थल और लंबी-लंबी भुजाओं से युक्त भव्य व्यक्तित्व को अप्रतिम आकर्षण प्रदान करती थीं। उनकी पैनी दृष्टि अंतस्तल को भेदती हुई ऐसा जादुई प्रभाव डालती थी कि उनके निवेदन को लोग आदेश मानकर अंगीकार करते थे और बड़े से बड़ा त्याग करने को तत्पर रहते थे, उनकी सेवा को वे देश सेवा मानते थे। इसी जन कल्याण की भावना से प्रेरित होकर भामाशाह ने कई पीढ़ियों की अर्जित करोड़ों की संपत्ति राणा प्रताप के चरणों में समर्पित कर अतुलनीय उदारता और देश-सेवा का परिचय दिया था। हजारों लोग मानसेवी रूप से प्रताप को सहयोग प्रदान कर अपने आपको धन्य समझते थे। प्रताप भारत माता की पुकार पर सर्वस्व समर्पित करने वाले त्यागी, कुल-मर्यादा के पालक, स्वाभिमानी तथा आन-बान की रक्षा करने वाले आकर्षक व्यक्तित्व के धनी थे। सोलहवीं सदी के सर्वशक्तिमान सम्राट अकबर को नाकों चने चबाने वाले प्रताप ने अपने जीवन-काल में 32 दुर्गों को पुनः जीतकर अपनी शक्ति का कीर्तिमान स्थापित किया था।

महाराणा प्रताप भारतीय इतिहास के जाज्वल्यमान नक्षत्र हैं, उनके समान प्रबल प्रतापी व्यक्ति इतिहास में कोई दूसरा दृष्टिगोचर नहीं होता है। भारतीय इतिहास में स्वतंत्रता का इतिहास महाराणा प्रताप से ही प्रारंभ होता है, जिसने अपना तन-मन-धन और राज्य, स्वतंत्रता की बलिवेदी पर अर्पित कर राष्ट्र-प्रेम का एक अद्‌भुत उदाहरण प्रस्तुत किया है। निश्चित ही आने वाली पीढ़ियां उनके जीवन-दर्शन से प्रेरणा ग्रहण करती रहेंगी।

महाराणा प्रताप का जीवन-दर्शन आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना तत्कालीन समय में था। वर्तमान में प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली प्रचलित है, परंतु क्या वास्तव में प्रजा का तंत्र स्थापित है? इस संदर्भ में विचार-मंथन करें तो गंभीर चिंतकों को बहुत निराशा होगी। ऐसा नहीं कि ईमानदार लोग भारत में नहीं हैं, परंतु उनकी संख्या व प्रभाव इतना न्यून से न्यूनतम है कि नक्कारखाने में तूती की आवाज के समान उनका स्वर अस्तित्वहीन होता जा रहा है। ऐसे विषम कालखंड में प्रताप के समान राष्ट्रभक्तों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का पुण्य स्मरण ही हमें सही मार्गदर्शन दे सकता है, वरना हमें अधोपतन की चरम सीमा पर पहुंचते देर नहीं लगेगी। हुकमरानों की आत्मा को झकझोरने के लिए प्रताप के बलिदान, त्याग, संघर्ष की गाथा को जन-जन तक पहुंचाना होगा, तभी महाराणा प्रताप-जयंती मनाना सार्थक सिद्ध होगा एवं हम उनके सच्चे अनुयायी कहलाने के हकदार होंगे।

'रामाश्रम' महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी, जिला सिवनी, मध्य प्रदेश-480 661, मो. 0 94070 72626

विकासात्मक लेख

ऊर्जा राज्य बनने की दहलीज पर
हिमाचल

● रवि सहगल

हिमाचल प्रदेश के समस्त गांवों के विद्युतिकरण के लक्ष्य को हासिल करने के उपरान्त अब राज्य सरकार जल विद्युत क्षमता के दोहन तथा उपभोक्ताओं को बिजली संचरण एवं वितरण पर विशेष ध्यान दे रही है।

सत्ता संभालते ही वर्तमान सरकार ने विद्युत क्षेत्र को नई दिशा प्रदान करने का निर्णय लिया जिससे इस क्षेत्र में आशातीत नतीजे सामने आए हैं। जहां तक जल विद्युत ऊर्जा का सम्बन्ध है, राज्य सरकार अकेले सार्वजनिक क्षेत्र में 265 मैगावाट बिजली का दोहन करने का प्रयास कर रही है। अब तक, राज्य में 10,264 मैगावाट जल विद्युत का दोहन हो पाया है, जिसमें से 830 मैगावाट बिजली का दोहन वर्ष 2015-16 के दौरान किया गया है।

- **वर्ष 2015-16 में 830 मैगावाट जल विद्युत दोहन**
- **विद्युत वितरण प्रणाली को सुचारू बनाने के लिए तीन वर्षों के दौरान प्रदेश में 4200 ट्रांसफार्मर स्थापित**

समय पर स्वीकृतियों के अभाव में जल विद्युत ऊर्जा परियोजनाओं के कार्यान्वयन में अनावश्यक देरी को रोकने के उद्देश्य से जल विद्युत परियोजनाएं स्थापित करने के लिये समयबद्ध स्वीकृतियां अथवा अनापत्ति प्रमाण प्रदान करने के लिये हि.प्र. लोक सेवा गारन्टी अधिनियम के अन्तर्गत समय सीमा निर्धारित की गई है। राज्य क्षेत्र के अन्तर्गत इस वित्त वर्ष के दौरान 65 मैगावाट की काशंग परियोजना, 100 मैगावाट की सैंज तथा 100 मैगावाट ऊहल जल विद्युत परियोजनाएं आरंभ हो जाएंगी। घानवी चरण-दो परियोजना के पूर्ण होने पर अतिरिक्त 10 मैगावाट बिजली का उत्पादन शुरू होगा।

ऊर्जा संरक्षण की दिशा में प्रभावी कदम उठाते हुए राज्य में एलईडी प्रोत्साहन कार्यक्रम आरम्भ किया गया है, जिसके अन्तर्गत घरेलू उपभोक्ताओं को बाजार दरों से कम कीमत पर एलईडी बल्ब उपलब्ध करवाए जा रहे हैं। हि.प्र. राज्य विद्युत बोर्ड ने ये एलईडी बल्ब भारत सरकार के उपक्रम 'ऊर्जा बचत सेवा सीमित' के माध्यम से प्राप्त किये हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत राज्य के 22 लाख उपभोक्ताओं को लाभ पहुंचाया गया है जिससे ऊर्जा संरक्षण में मदद मिली है और साथ ही उपभोक्ताओं को लम्बे समय तक चलने वाले बिजली के बल्ब भी उपलब्ध हुए हैं।

राज्य सरकार ने सौर ऊर्जा को विकसित करने की संभावनाओं का पता लगाने के लिये एक संशोधित सौर ऊर्जा नीति तैयार की है। नीति के अन्तर्गत ग्रिड 'रूफ टॉप' सौर परियोजना प्रस्तावित की गई हैं।

राजीव गान्धी ग्रामीण विद्युतिकरण योजना के अंतर्गत चम्बा जिले के पांगी खण्ड को छोड़कर राज्य के सभी जिलों में 33 के.वी. एच.टी. लाईन का कार्य पूरा कर लिया गया हैं। राज्य के 14 शहरों में कार्यान्वित किये जा रहे पुनर्गठित त्वरित ऊर्जा विकास एवं सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत मण्डी, चम्बा, कुल्लू तथा ऊना शहरों में कार्य पूरा किया जा चुका है, जबकि शेष शहरों में यह कार्य इस

वर्ष दिसम्बर माह तक पूरा कर लिया जाएगा।

केन्द्र सरकार की सहायता से राज्य में 'दीन दयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना' भी आरम्भ की गई है। 159 करोड़ रुपये की इस योजना का उद्देश्य राज्य में बिजली वितरण प्रणाली को सुदृढ़ करना है। कांगड़ा जिले के फतेहपुर, कुल्लू जिले के रायसन तथा मण्डी के थलौट में तीन नये विद्युत मण्डल तथा ऊना जिले के खाड, कांगड़ा जिले के मेक्लोड़गंज-टाण्डा में तीन विद्युत उपमण्डल खोले गए हैं।

प्रदेश सरकार के समक्ष हिमाचल प्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड सीमित का वित्तीय घाटा एक बड़ी चुनौती है। पिछले तीन वर्षों के दौरान बेहतर प्रबन्धन, वित्तीय पुनर्गठन तथा संसाधनों के समुचित उपयोग से इस घाटे से उभरने के प्रयास किये गए हैं। बोर्ड के वित्तीय पहलुओं में सुधार लाने की पहल करते हुए राज्य सरकार ने बोर्ड की 564 करोड़ रुपये की ऋण देनदारियों को अपनाया है और सरकार वर्ष 2016-17 के दौरान 56 करोड़ रुपये के ऋण भी चुकता करेगी। इसके अतिरिक्त, सरकार हि.प्र. राज्य विद्युत बोर्ड को नये खम्बे व ट्रांसफार्मर स्थापित करके ग्रामीण विद्युत लाईनों के सुधार के लिये 50 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता भी प्रदान करेगी।

पिछले तीन वर्षों के दौरान हि.प्र. राज्य विद्युत बोर्ड ने विकसित वितरण प्रणाली पर 600 करोड़ रुपये का निवेश किया है तथा इस अवधि के दौरान राज्य के विभिन्न भागों में 4200 ट्रांसफार्मर स्थापित किए गए। इसके अतिरिक्त, 33 किलोवाट के लगभग 23 विद्युत उप-केन्द्र, 132 किलोवाट के दो सब-स्टेशन, 220 किलोवाट का एक तथा 66 किलोवाट के तीन विद्युत उप केन्द्र क्रियाशील बनाए गए हैं।

सूचना अधिकारी, निदेशालय सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, शिमला, हिमाचल प्रदेश

घर-घर का सम्मान बढ़ाएगी 'मेरी लाडली'

मंडी जिला प्रशासन ने लिंगानुपात में समानता लाने के उद्देश्य से सामाजिक आंदोलन का श्रीगणेश कर समुदाय को जागरूक करने की दिशा में सार्थक कदम बढ़ाए हैं

● **हेमंत शर्मा**

हिमाचल प्रदेश में लिंगानुपात की स्थिति देश के अन्य कई राज्यों से बेहतर है। लिंगानुपात में पिछड़े क्षेत्रों को लक्षित कर इसे और बेहतर करने की दिशा में प्रदेश सरकार ने बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ सहित कई कार्यक्रम आरंभ किए हैं। सरकार के इन्हीं प्रयासों से प्रेरणा लेकर जिलों में प्रशासनिक स्तर पर भी इस अभियान को मूर्त रूप देने के सार्थक प्रयास हुए हैं।

मंडी जिला में लिंग अनुपात की दर में समानता लाने के दृष्टिगत 'मेरी लाडली' कार्यक्रम जिला प्रशासन ने आरंभ किया है। इसमें जिला प्रशासन को स्वास्थ्य विभाग, महिला एवं बाल विकास विभाग, जिला रैडक्रास सोसायटी और मंडी साक्षरता एवं जन विकास समिति का सहयोग प्राप्त हो रहा है। प्रारंभिक स्तर पर इस कार्यक्रम को महिला मंडल व स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से प्रतिमाह एक विशेष गतिविधि/ अभियान के रूप में चलाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इसका

मुख्य उद्देश्य देश/प्रदेश व मंडी जिला में घटते लिंगानुपात के दुष्प्रभावों के प्रति लोगों को जागरूक करना है। कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न गतिविधियों की रूपरेखा तैयार की गई। इनमें गांव-गांव जाकर बैठकें करना व चर्चाओं का आयोजन करना, घर-घर जाकर स्टीकर लगवाना व पर्चा बांटना, बेटी के पैदा होने पर बधाई देना, स्थानीय भाषा में गीत व नाटक बनाकर गांव में कार्यक्रमों का आयोजन करना, कविता, चित्रकारी, रंगोली बनाना तथा स्थानीय मेलों व उत्सवों आदि में कार्यक्रमों का आयोजन शामिल है।

आम तौर पर घटते लिंगानुपात में सुधार के लिए चलाए जाने वाले ज्यादातर अभियानों में मुख्य तौर पर कानूनी प्रावधानों को लागू करने के लिए जनता व चिकित्सकों पर दबाव बनाने पर ध्यान दिया जाता है। इसमें क्या करना है (बेटी बचाओ) तथा क्या नहीं करना है (कन्या भ्रूण हत्या रोको) पर सीधे बल दिया जाता है और कानून का डर दिखाकर दोषियों को रोकने के प्रयास किए जाते हैं। 'मेरी लाडली' कार्यक्रम का उद्देश्य बेटी के जन्म के प्रति लोगों में ज्यादा सकारात्मक सोच विकसित करना है । इस पहल में सभी पारंपरिक तत्वों को सम्मिलित किया गया है और ज्यादा ध्यान बेटी के जन्म के प्रति परिवार व समाज में एक सकारात्मक सोच पैदा करने पर केंद्रित किया गया है। यह एक तरह से 'बेटी बचाओ' से क्रम स्थापित कर इसे 'कन्या जन्म पर उत्सव' मनाने की ओर ले जाना है। इसी के चलते इस पूरे अभियान का सूत्र वाक्य 'बेटी के जन्म पर उत्सव' (सेलिब्रेटिंग द गर्ल चाइल्ड) रखा गया। अभियान छेड़ने के पीछे सोच यह भी रही कि केवल प्रशासनिक स्तर पर प्रयासों से ही लिंग अनुपात में आशातीत सुधार नहीं लाया जा सकता बल्कि इसके लिए स्थानीय जनता की सक्रिय सहभागिता भी आवश्यक है। अभियान को ''बेटी बचाओ'' नारे के तहत समुदाय केंद्रित व इससे भी बढ़कर एक सामाजिक आंदोलन में बदलने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। समाज की सोच में सकारात्मक बदलाव लाते हुए उनके कार्य-व्यवहार में परिवर्तन इसका एक अन्य उद्देश्य है। लक्ष्य हासिल करने के लिए विशेष रणनीति तैयार की गई। इसमें इंटरनेट के माध्यम से ऑनलाईन अभियान, सामुदायिक सहभागिता से लोगों में सूचना का प्रसार तथा उनमें जागरूकता लाना, बेटियों को शिक्षित करना तथा कानून की कड़ाई से अनुपालना शामिल है।

अभियान के अंतर्गत बेटी के जन्म पर सबसे पहले अस्पताल स्टाफ विशेष तौर पर तैयार किया गया ग्रीटिंग कार्ड बेटी के माता-पिता को देते हैं जिस पर उपायुक्त के हस्ताक्षर रहते हैं। इसके अतिरिक्त आंगनबाड़ी कार्यकर्ता भी ऐसे परिवारों को उनके घर पहुंचकर बधाई देते हैं।

अभियान के अंतर्गत बेटी के जन्म पर सबसे पहले अस्पताल स्टाफ विशेष तौर पर तैयार किया गया ग्रीटिंग कार्ड बेटी के माता-पिता को देते हैं जिस पर उपायुक्त के हस्ताक्षर रहते हैं। इसके अतिरिक्त आंगनबाड़ी कार्यकर्ता भी ऐसे परिवारों को उनके घर पहुंचकर बधाई देती हैं।

इससे बढ़कर इसे एक सामाजिक आंदोलन का रूप देने के लिए 4490 महिला मंडल व स्वयं सहायता समूहों को इससे जोड़ा गया है। उन्हें जागरूकता शिविरों के माध्यम से प्रशिक्षण भी प्रदान किया गया है । जिला में 31 मार्च, 2016 तक खंड व क्षेत्रीय स्तर पर ऐसे 513 शिविर तथा पंचायत व वार्ड स्तर पर 1291 शिविर आयोजित किए जा चुके हैं। वे समूह के तौर पर नवजात कन्या के घर पहुंचकर कार्ड व गीत-नृत्य के माध्यम से भी बधाई संदेश देती हैं। कई महिला मंडलों व स्वयं सहायता समूहों ने स्थानीय बोली में गीत भी तैयार किए हैं जिन्हें इस दौरान प्रस्तुत किया जाता है। इसके साथ ही बेटी का जन्मदिन व अन्य उपलब्धि पर भी उत्सव वे मनाती हैं। प्राथमिकता वाले खंडों में घर-घर दस्तक देकर लोगों में कन्या जन्म के प्रति जागरूकता पैदा की जा रही है। अभी तक लगभग 79,815 घरों में यह दल पहुंच चुके हैं। कन्या भ्रूण हत्या के दुष्परिणामों पर नुक्कड़ चर्चा भी यह दल करते हैं। इसके अतिरिक्त महिला मंडल 2809 सामूहिक चर्चाएं आयोजित कर चुके हैं।

बेटी के जन्म पर प्रशासनिक स्तर पर उपायुक्त से लेकर अतिरिक्त उपायुक्त, उपमंडलाधिकारी व अन्य प्रशासनिक अधिकारी उसके घर में पहुंचकर परिवार के साथ खुशियां मनाते हैं। अति विशिष्ट व्यक्तियों को भी समय-समय पर इस मुहिम से जोड़कर उत्सव में शामिल किया गया है। यह प्रयास बेटी के जन्म पर परिवार को विशेष होने का अहसास दिलाता है। इस दौरान बधाई कार्ड के अलावा भेंट स्वरूप गुड़िया, पौष्टिक आहार सामग्री, झूला, फोटो फ्रेम इत्यादि भेंट दी जाती हैं।

यह सभी वस्तुएं दानी सज्जनों की ओर से उपलब्ध करवाई जाती हैं।

अभी तक लगभग दो हजार पोस्टर, नब्बे हजार स्टीकर, छह हजार ग्रीटिंग कार्ड छपवाकर बांटे गए, जबकि विटामिन पाऊडर के सौ, दुग्ध पाऊडर के बत्तीस पैकेट, 428 गुड़िया, 45 झूले, 500 गुड्डा-गुड़िया बोर्ड तथा चार हजार के लगभग मेरी लाडली बैजेज भी जिला प्रशासन को दान में प्राप्त हो चुके हैं । अभियान में मंडी साक्षरता एवं जन विकास समिति, मुख्य चिकित्सा अधिकारी, उपमंडलाधिकारी सरकाघाट के माध्यम से स्टीकर बंटवाए जा रहे हैं जबकि वार्षिक रेडक्रास मेला के अंतर्गत भी इस तरह के स्टीकर बांटे गए।

सोशल मीडिया पर भी यह अभियान सक्रियता से संचालित किया जा रहा है। जिला प्रशासन के अधिकारिक फेसबुक पेज पर 'मेरी लाडली' ग्रुप बनाया गया है जिसके वर्तमान में 21 हजार से ज्यादा सक्रिय सदस्य हैं। यह सदस्य ग्रुप में बेटी की उपलब्धियों से संबंधित जानकारी, फोटो, कविताएं व अन्य विचार साझा करते हैं। अब तक इस ग्रुप में 10 हजार से ज्यादा फोटो शेयर किए जा चुके हैं। नाटक व फिल्म के माध्यमों का भी बखूबी प्रयोग किया जा रहा है।

इस अभियान के सकारात्मक परिणाम भी अब सामने आने लगे हैं । एक सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2014 के मुकाबले वर्ष 2015 में मंडी जिला की लिंगानुपात दर में सुधार नजर आया है । जिला के सबसे कम लिंगानुपात वाले लडभड़ोल, संधोल तथा बलद्वाड़ा में इस दर में वृद्धि दर्ज की गई है । वर्ष 2014 में लडभड़ोल में यह दर 857 के मुकाबले वर्ष 2015 में 910, संधोल में 901 से बढ़कर 955 तथा बलद्वाड़ा में 904 से बढ़कर 949 दर्ज की गई है। इसी तरह पूरे जिला में इस अवधि के दौरान लिंगानुपात की दर 923 से बढ़कर 929 तक पहुंच गई है ।

इस अभियान के सकारात्मक परिणाम भी अब सामने आने लगे हैं । एक सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2014 के मुकाबले वर्ष 2015 में मंडी जिला की लिंगानुपात दर में सुधार नजर आया है । जिला के सबसे कम लिंगानुपात वाले लडभड़ोल, संधोल तथा बलद्वाड़ा में इस दर में वृद्धि दर्ज की गई है । वर्ष 2014 में लडभड़ोल में यह दर 857 के मुकाबले वर्ष 2015 में 910, संधोल में 901 से बढ़कर 955 तथा बलद्वाड़ा में 904 से बढ़कर 949 दर्ज की गई है। इसी तरह पूरे जिला में इस अवधि के दौरान लिंगानुपात की दर 923 से बढ़कर 929 तक पहुंच गई है ।

अभियान के अंतर्गत लिंग परीक्षण पर कड़ी नजर रखने के लिए भी प्रावधान किए गए हैं । इसके लिए गर्भधारण करने वाली महिलाओं की प्रारंभिक स्तर पर ही पहचान करना शामिल है । यह कार्य आशा कार्यकर्ताओं के माध्यम से बखूबी पूरा किया जा रहा है। प्रत्येक आशा कार्यकर्ता को प्रति माह अपने क्षेत्र की सभी गर्भवती महिलाओं का पंजीकरण करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। शतप्रतिशत पंजीकरण करने वाली कार्यकर्ताओं को प्रोत्साहित करने के लिए हर माह उन्हें जिला स्तर पर प्रशासन की ओर से सम्मानित भी किया जाता है।

इस मुहिम से प्राथमिकता वाले खंडों में प्रथम तिमाही में पंजीकरण की दर काफी बेहतर रही है। संधोल खंड में यह 83.5 प्रतिशत, बलद्वाड़ा में सर्वाधिक 86.28 प्रतिशत, लडभड़ोल में 71.83 प्रतिशत जबकि पूरे जिला में पंजीकरण की दर 76.88 प्रतिशत दर्ज हुई है । पिछले तीन वर्षों के आंकड़ों पर नजर दौड़ाएं तो वर्ष 2013-14 में जिला में गर्भवती महिलाओं की पंजीकरण की दर 63.99 प्रतिशत, 2014-15 में 72.59 जबकि वर्ष 2015-16 में बढ़कर 76.88 प्रतिशत तक पहुंच गई है । इसके अतिरिक्त जिला प्रशासन द्वारा 'बेटे की चाह को प्राथमिकता' के प्रति समाज की सोच पर भी अध्ययन कर इसमें बदलाव लाने का प्रयास किया जा रहा है। इसके लिए एक या दो बेटियां के जन्म के उपरांत परिवार नियोजन अथवा बंध्यीकरण को आधार बनाया गया है। इसे लेकर भी आंकड़ों में काफी सुधार नजर आया है। वर्ष 2011-12 में यह आंकड़ा 11 प्रतिवर्ष से बढ़कर वर्ष 2015.16 में 74 प्रतिवर्ष तक पहुंच गया है।

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार शून्य से छह वर्ष आयु वर्ग में मंडी जिला में लिंगानुपात दर 916 आंकी गई, वहीं 'मेरी लाडली' अभियान के उपरांत इसमें गत वर्ष तक काफी सुधार नजर आया है। अभियान इस तस्वीर को पूरी तरह बदल कर लिंगानुपात की दर को समान स्तर पर लाने की दिशा में सतत प्रयासरत है और समाज के प्रत्येक वर्ग और विशेषतौर पर स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों को इस मुहिम से जोड़कर इस दिशा में आगे बढ़ रहा है। वह दिन दूर नहीं जब घर-घर की लाडलियां पूरे समाज, प्रदेश और देश का नाम रोशन कर घर परिवार को गौरवान्वित करेंगी।

जिला लोक सम्पर्क अधिकारी, मंडी, हिमाचल प्रदेश

कहानी

नीला मर्तबान

● अशोक कुमार प्रजापति

राजधानी एक्सप्रेस के गुलाबी गद्देदार बेड पर नीलू की जैसे ही आँख खुली, उसने अपने आपको भागती हुई दुनिया में पाया। हल्की सी रोशनी भरी प्रातः कालीन शांति के बीच गाड़ी अपनी मंजिल की तरफ सरपट दौड़ रही थी। पत्थरों के घने जंगलों का अंतहीन सिलसिला शुरू हो चुका था। सजी-धजी अट्टालिकाएँ दरख्तों से होड़ लेती लाइन से स्वागत में खड़ी थीं। मासूम-सी उत्सुकता लिए उसकी आंखें नई दुनिया देख रही थी।

''पापा-पापा देखो-देखो कितने बड़े-बड़े फूल खिले हैं!'' रेलवे लाइन के किनारे पानी भरे हंटर की तरफ इशारा करती नीलू चिल्लायी।

'फूल और लाइन किनारे!' -राघव हड़बड़ाकर सीट पर उनींदा-सा उठ बैठा और बड़ी- सी खिड़की से बाहर बेटी के देखने की दिशा में झांकने लगा।

'धत तेरे की'! अरे वो फूल-वूल नहीं है- शहर का कचरा है कचरा, जिसमें रंग-बिरंगी प्लास्टिक की हवा भरी थैलियाँ लहराती हुई चमक रही हैं। 'कचरा-फूल'! अब थोड़ी देर में हम नई दिल्ली पहुँचने वाले हैं।''

-वह हकीकत बयां करता बोला।

नीलू का कोमल हृदय घोर निराशा में डूब गया और वह फिर से दौड़ती हुई दुनिया में कुछ अचंभित करने वाली चीजें ढूंढने लगी।

यात्री अपने-अपने सामान सहेजने लगे और स्त्रियाँ केबिन के आईने में अपने बाल और चेहरा मोहरा दुरूस्त करने लगी।

जरा दूर लाइन के समांतर एक खुली सड़क अजगर की तरह पसरी थी, उस पर पंक्तिबद्ध मोटर गाड़ियाँ शहर की ओर बेतहाशा भागी जा रही थीं।

''वो देखो पापा, कित्ता बड़ा चूहा हमारी रेलगाड़ी से रेस लगाते दौड़ रहा है!'' आश्चर्य से आँखें फाड़े नीलू एक बार फिर पुलकित होती बड़े अजुगत वाली बात बोली।

वह फिर चौंका! दरअसल वह काले रंग की तिपहिया ऑटो थी और काले धुँए का पुच्छल्ला छोड़ती दिल्ली की ओर दौड़ रही थी। दूर होने की वजह से वह भूरे रंग की दुमदार चूहे की शक्ल का लग रहा था । दर्जनभर टैक्सियाँ भी खटमल की तरह रेंग रही थीं।

अपनी बेटी की बचकानी बातों पर मुस्कुराता हुआ मैं उसके दृष्टिकोण को स्पष्ट करने की कोशिश कर रहा था। ''हाँ, यहाँ दिल्ली में इतने बड़े-बड़े हजारों चूहे हैं और हम चूहे पर सवार होकर अपने डेरा चलेंगे। चलोगी न?

और सचमुच में पूरा परिवार हरे-पीले चूहे पर सवार होकर रास्ते भर अपना-अपना मुंह रूमाल से ढांपे आर. के. पुरम के सरकारी क्वाटर में पहुँचे। घर-गृहस्थी का सामान पहले ही पहुँच चुका था जिन्हें व्यवस्थित करने में माँ और रत्ना को पूरे तीन रोज लगे।

प्रदूषण के मारे स्कूलों ने अपने-अपने छात्रों के लिए मास्क अनिवार्य कर दिये। पहले स्कूली बच्चों की पहचान उनके विशेष ड्रेस से होती थी, पर अब मास्क के रंग से पहचाने जाने लगे थे। सभी स्कूलों के मास्क के अपने-अपने रंग थे।

मां मास्क को बैल-बछड़ों के मुँह पर चढ़ाये जाने वाला जाब कहती थी। मुँह पर मास्क चढ़ाना नीलू को बड़ा अटपटा और कष्टकर लगता। मास्क लगाने को रत्ना को बेटी की बड़ी मान-मनौव्वल करनी पड़ती, हालाँकि ऐसा करते हुए उसे बड़ी पीड़ा होती थी, लेकिन सब्जी मंडी या मार्केट जाते हुए उसे भी मास्क लगानी पड़ ही जाती थी। कभी-कभी मास्क की वजह से वह पड़ोसियों तक को नहीं पहचान पाती जबकि वे बगल से गुजर रहे होते थे। दिल्ली आने के पूर्व इस तरह की समस्या का उसे तनिक भान तक नहीं था।

इस मास्क-मास्क के खेल ने तो एक दिन हद ही कर दी थी। एक शनिवार को राघव स्कूल गाड़ी से नीलू की कद-काठी की दूसरी बच्ची को अपने घर उठा लाया। मास्क लगे चेहरे को वह पहचान नहीं पाया। घर आकर बच्ची के मास्क उतारते ही वह अवाक रह गया- वह नीलू के स्कूल की दूसरी बच्ची थी। वह उसे गोद में उठाये दौड़ा-दौड़ा फिर से उसी जगह पहुँचा। नीलू वहीं खड़ी रो रही थी। उस बच्ची की मम्मी पास ही में हैरान परेशान खड़ी थी। अपनी-अपनी बच्ची को पाकर दोनों बेहद खुश हुए लेकिन उदासी और विषाद उनके चेहरे पर चिपके थे।

''अरे भाई साब चेहरा न सही, गले में पट्टे से लटक रहे आई-

कार्ड तो देख लेने चाहिए थे? तैने तो मेरे को परेशान करके रख दी- आईंदा ऐस्सी गलती ना होए जी!''-उस पंजाबन की हिदायत थी।

'सौरी' कहकर वह एक अज्ञात भय से कांप उठा और नीलू को गोद में उठाये, सीने से चिपकाये डेरा लौटा। माँ और रत्ना की सौ बातें सुनने को मिलीं, अलग से। उस रोज के बाद नीलू को सख्त हिदायत दी गयी कि ऑटो से उतरने के बाद मास्क हटा ले ताकि किसी को कन्फ्यूजन न हो। लेकिन प्रदूषण की प्रबलता को देखते हुए ऐसा करना व्यावहारिक नहीं था। स्वास्थ को खतरा था। बड़ी गंभीर सोच विचार के बाद नीलू को पीले रंग की बोतल में पानी लाकर दिया गया ताकि उसे आसानी से पहचाना जा सके। बोतल अत्यंत आकर्षक और स्टाइलिस थी। सप्ताह भर में ही कई बच्चों के कंधे से हू-ब-हू बोतलें लटकने लगीं। सो यह उपाय भी दिल्ली सरकार के प्रदूषण रोकने के सारे उपायों की तरह फ्लॉप साबित हुआ।

फसलों की कटनी का मौसम चल रहा था और खेत गेहूँ की बुआई के लिए तैयार हो रहे थे। पंजाब-हरियाणा के ग्रामीण क्षेत्रों में फसलों के ठूँठ बड़े पैमाने पर जलाये जा रहे थे जिससे भूरे धूल भरे बादल उमड़ते घुमड़ते दिल्ली के आकाश में छा गये। आकाश में दो हरे-बैंगनी इन्द्रधनुष उग आये। हवा में, जो कि पेट्रोलियम की गंध लिये भी, तनिक गर्माहट थी।

जो दिल्ली कभी बाबुओं के शहर के रूप में जाना जाता था, अब कारों के शहर के रूप में बदनाम हो चुका था। दिल्ली और बीजिंग के बाशिंदों के फेफड़े एक जैसे काले हो रहे थे। इस मामले में दोनों भाई-भाई साबित हो रहे थे।

पूरे देश के गाँव-कस्बों से बड़ी संख्या में लोगों का झुंड किसी न किसी बहाने दिल्ली में आकर बसते जा रहे थे। परिणामतः राजधानी के आकार को रोज ब रोज मधुमक्खी के छत्ते की तरह बड़ा बेडौल आकार ग्रहण करता जा रहा था। दिल्ली में लोग ठसम-ठस ठूँसते जा रहे थे। छत्तों को तो एक न एक दिन अपने ही बोझ के मारे टूटकर धरती पर बिखरना ही होता है। राघव भी उन्हीं मधुमक्खियों में से एक था। वह कृषि मंत्रालय में दो वर्षों के 'डिपूटेशन' पर आया था और वहीं अंतिम रूप से समंजित होने की कोशिश में लगा था।

शिशिर के बादल, जिनसे हर चीज पर नोलई सी छाया हुई थी, धीरे धीरे खिसक गये। सूरज चमचमाने लगा और क्षितिज कांच की तरह झिलमिलाने लगा। हवा सीटी-सी बजाती अपने रव में बहे जा रही थी। बादलों की जगह अब धीरे-धीरे आकाश पर छाए धुँए ले रहे थे।

और अब गुनगुनी ठंडक की दोसाला ओढ़े दीपावली का त्योहार आ गया। अपने साथ धुँए के बादलों का उपहार भी लेता आया। शाम ढलते ही लक्ष्मी पूजन का मुहूर्त था। रत्ना पूजा की थाली सजाये आरती गाने की कोशिश कर रही थी लेकिन मुँह से स्पष्ट बोल नहीं फूट रहे थे। पास ही में बैठी माँ, जो मिट्टी के दीये में तेल-बाती डाल रही थी, जोर-जोर से लगातार खांसने लगी। यह सब तब हो रहा था जबकि अभी लाखों पटाखे फूटने बाकी थे। लक्ष्मी देवी की परम्परागत स्वागत में जो दरवाजे-खिड़कियाँ खुले रखे गये थे, राघव ने आनन-फानन में बंद कर दिए ताकि प्रदूषित हवा कमरे में न घुसे। अमावस की उस काली रात को न उसके दरवाजे खुले और न दूसरों के। नीलू छत पर जाने के लिए मचलती रही लेकिन उसे बड़ी क्रूरता से कमरे में बंद रखा गया।

कुछ देर बाद पूरा शहर लावे की तरह फूटने-फटने लगा और पटाखों के जलने-फूटने का सिलसिला देर रात गये तक जारी रहा। बड़ी हिम्मत कर राघव अपनी जिद कर रही बेटी को एक अदद छुर्रछुरी जलाने छत पर ले गया लेकिन मास्क लगे होने के बावजूद दस पंद्रह मिनट में ही उसका दम घुटने लगा। लस्त-पस्त बड़ी मायूस चेहरा लिये वे कमरे में लौट आये। पूरा परिवार पहली बार दीपावली बंद कमरे में मना रहा था। अल्लसुबह वह रोज की तरह माँ को साथ लेकर डीयर पार्क की तरफ निकला। चहुँ ओर घना और तीक्ष्ण रसायन मिला धुँआ छाया था। हवा बिल्कुल बंद। पीपल के पत्ते तक नहीं डोल रहे थे। पेड़-पौधे और इमारतों पर भी ये कब्जा जमाये बैठे थे। सड़कों पर छाया धुंआ गाड़ियों के आने जाने पर थोड़ा हिलता-डुलता और फिर से वहीं स्थिर हो जा रहा था। सैर को निकले लोगों का दम घुटने लगा और लोग मुँह पर रूमाल दाबे वापस लौटने लगे। राघव को भी सांस लेने में तकलीफ होने लगी। माँ का दम फूलने लगा। आगे वह वापस होता या कुछ और सोच-समझ पाता कि माँ सीना थामे फुटपाथ पर लुढ़क गयी। वह सहायता के लिए चीखने-चिल्लाने लगा लेकिन सड़क पर बहुत कम लोग थे और जो थे भी वे अपने आप में डूबे थे। पुलिस का कहीं अता-पता नहीं था। थक हार कर वह किसी तरह माँ को

शिशिर के बादल, जिनसे हर चीज पर नोलई सी छाया हुई थी, धीरे धीरे खिसक गये। सूरज चमचमाने लगा और क्षितिज कांच की तरह झिलमिलाने लगा। हवा सीटी-सी बजाती अपने रव में बहे जा रही थी। बादलों की जगह अब धीरे-धीरे आकाश पर छाए धुँए ले रहे थे।

क्वाटर तक लाया। वह बेचैनी से छटपटा रही थी और जोर-जोर से सांसें खींच रही थी। उसने ठंडक के बावजूद ए.सी. चला दी लेकिन इसका कोई खास प्रभाव नहीं पड़ रहा था। उसके ब्लॉक में तीन लोगों के पास कारें थी। एक डीजल चालित और दो विषम संख्या वाली। लेकिन आज इवेन डे (सम संख्या) था सो भारी जुर्माने की वजह से कोई तैयार नहीं हुआ। डीजल गाड़ियों को तो पहले ही प्रतिबंधित किया जा चुका था। यहाँ किसी को औरों की क्या पड़ी थी। यह कोई गाँव-कस्बा तो था नहीं, महानगर था भाई! महत्त्वाकांक्षियों का शहर। ये राष्ट्रीय स्तर की सोच वाले होते हैं। अड़ोसी-पड़ोसी जैसे संकीर्ण विचारों में कोई सिर नहीं खपाता।

माँ की तबियत हर पल बिगड़ती जा रही थी। पड़ोसी का बालक दरवाजा खोलकर नीलू के साथ खेलने की फिराक में उसके दरवाजे तक ठुमकता हुआ आया पर अगले ही पल उसकी मम्मी उसे उठाकर अपने साथ ले गयी और फटाक से दरवाजा बंद कर लें। चारों तरफ से वह निराश हो चुका था, और वक्त था कि भागता ही जा रहा था। माँ के कष्ट उसे देखे नहीं जा रहे थे। वह बड़ी मान-मनौव्वल के बाद माँ को साथ ले आया था, बाबू जी गाँव छोड़कर आने से दो टूक शब्दों में इनकार कर चुके थे। रह-रहकर माँ पिताजी को बड़ी करूण शब्दों में पुकार उठती।

अंततः मुँह पर गमछा लपेटे और टैक्सी की तलाश में वह सेक्टर चार की तरफ भागा। चार और पांच के पास टैक्सी स्टैंड था जिसमें भाड़े पर गाड़ियाँ मिलती थीं। स्टैंड में भी ऑड-इवेन जन्य सन्नाटा पसरा था। सौभाग्य से एक सरदार ड्राईवर धुँएं से लड़ता गाड़ी के शीशे चढ़ाकर बैठा था। जैसे-तैसे रोज के बनिस्बत तिगुने भाड़े पर वह वसंत विहार अस्पताल जाने को राजी हुआ।

अस्पताल में जलजले की तरह का नजारा था। पूरा अस्पताल बच्चे-बूढ़े मरीजों से अटा पड़ा था, बरामदे तक में मरीज लुढ़के पड़े थे। अब और की गुंजाइश नहीं रह गयी थी। मजबूरन वह वसंत विहार स्थित संजीवनी अस्पताल पहुँचा वहाँ भी लगभग वही नजारा था लेकिन किसी तरह उसे जनरल वार्ड में एक बेड मिल गया। तिगुने-चौगुने कीमत पर ऑक्सीजन लगाये जा रहे थे। नर्सिंग होम वालों की चाँदी थी। ऑक्सीजन और सेलाईन के लिए मारा-मारी मची थी। वह खुद भी हांफ रहा था। कुछ भाग दौड़ की थकान से तो कुछ प्रदूषित हवा की मार से।

हड़बड़ी में वह मोबाईल साथ रखना भूल गया था। नर्सिंग होम वाले कम से कम दस हजार अग्रिम जमा करने की जिद पर अड़े थे, वरना मरीज के नाक से ऑक्सीजन हटा लेने की धमकी दे रहे थे। माँ आंसू भरी कातर निगाहों से उसकी बेबसी देख रही थी। माँ को अकेला छोड़कर क्वार्टर जाने की बात को सोचा भी नहीं जा सकता था। सब तरफ जल्दी मची थी। रह रह कर सड़कों पर एम्बुलेंस की कूक सुनाई पड़ रही थी जो माहौल को और भी भयानक बना दे रही थी। बड़ी आरजू-मिन्नत के बाद एक दयालू लड़की ने अपना मोबाईल उसकी तरफ बढ़ाया। वह इतना कन्फ्यूज हो चुका था कि नम्बर गड्डमड्ड हो जा रहे थे। सात-आठ राँग नम्बर के बाद ही वह रत्ना से सम्पर्क करने में सफल हुआ।

''रत्ना, मां सिरियस है, ऑक्सीजन लगे हैं। जल्दी से कम से कम बीस हजार रुपये लेकर संजीवनी नर्सिंग होम पहुँचों वरना कुछ भी हो सकता है !''

''लेकिन इतने रुपये हैं कहाँ? वो धनतेरस के दिन चांदी और सोने के सिक्के खरीदने में निकल गये। तीन-चार हजार से ज्यादा पैसे नहीं बचे हैं और अभी आधा महिना बाकी पड़ा है।''

हे ईश्वर! इन भगवानों और रूढ़ीवादी परम्पराओं ने तो बेड़ा गर्क कर दिया! डेबिड कार्ड पहले ही खाली हो चुका है। अभी तक सी.टी.जी. के पैसे भी नहीं मिले हैं ।

''रत्ना एक काम करो, मेरी नीली जींस की जेब में क्रेडिट कार्ड पड़ा है। कार्ड लेकर आ जाओ, यहाँ कार्ड से भुगतान की सुविधा है।''

''नीलू को भी लेती आना, अकेले कहाँ छोड़ोगी?''

''लेकिन वो तो स्कूल गयी! ऑटोवाला आया था।''

''ओह गॉड ! आज एक साथ सारी मुसीबतों से पाला पड़ा है।

''अच्छा, पड़ोसी को जरा बता देना । लेकिन जल्दी, करो समय नहीं है।''

''अरे वो सब बच्चों को लेकर शहर से बाहर चले गये हैं, पूरा ब्लॉक लगभग खाली हो चुका है। टी. वी. पर प्रदूषण का ''रेड अलर्ट'' जारी हुआ है।"

''और तिस पर नीलू को स्कूल भेज दिया? वो अब लौट रही होगी। स्कूल कॉलेज तो बंद कर दिये गये हैं। जरा याद करके मोबाईल लेती आना।'' उसने हिदायत दी और मोबाईल लड़की को लौटाते हुए थैंक्स बोला।

उसका चेहरा पसीने से तरबतर हो रहा था। उसे लगा कि रत्ना के आते आते कहीं माँ के प्राण पखेरू न उड़ जाये। वह फिर से हाथ जोड़े गिड़गिड़ाता मैनेजर के पास पहुँचा और इलाज शुरू करने की मिन्नतें करने लगा।

''सॉरी मिस्टर राघव, वी. आई. पी., 'पेसेंट' की वजह से आपको अपने पेसेंट कहीं और शिफ्ट करने पड़ेगें - नो बेड! प्लीज!

सुनकर उसके होश फाख्ता हो गये।

''वैसे बगल के वेटिंग रूम में पंखे हैं और 'एयर प्यूरीफायर' भी लगा दिया गया है। कुछ देर तक मरीज को वहाँ रख सकते हैं, पर जितना जल्दी हो शिफ्ट कर जायें।''

वह आगे कुछ कर पाता कि ऑक्सीजन का मास्क हटाकर अस्पताल के कर्मचारी माँ को वेटिंग हाल में शिफ्ट करने लगे। वह चिंता और क्रोध से कांपने लगा। इतना बेबस वह जीवन में कभी नहीं हुआ था। वेटिंग हाल में थोड़ी राहत थी लेकिन भीड़ अधिक

होने की वजह से शुद्ध हवा अपर्याप्त साबित हो रहा थी। तकरीबन आधे घंटे के बाद घबरायी हुई रत्ना पहुँची तो वह बुरी तरह हांफ रही थी। चेहरा ऐसे काला पड़ गया था गोया भाड़ झोंक कर आ रही हो।

''पैसे के बल पर वसंत विहार के एक साधारण से क्लिनिक में माँ को भर्ती कर वह थोड़ा निश्चित हुआ। एक दो इंजेक्शन लगते ही स्थिति में तेजी से सुधार होने लगा और अपनी सांसों से लड़ती हुई मां थक कर सो गई, दोनों तनिक निश्चिंतता से चाय पी ही रहे थे कि उधर से ऑटो वाले का फोन आया कि स्कूल अगले आदेश तक बंदकर दिया गया है। नीलू को लेने आ जायें। बहुत धुंआ है बच्चों का दम घुट रहा है।

''भाई, उसे जरा घर तक छोड़ दो, मैं दस पंद्रह मिनट में पहुँच रहा हूँ।''

''ठीक है साहब लेकिन मैं आपके पहुँचने तक इंतजार नहीं कर सकता, और भी बच्चे हैं- सब बुरी तरह हांफ-खांस रहे हैं । मास्क का भी कोई असर नहीं हो रहा।''

चाय अधूरी छोड़ माँ को रत्ना के हवाले कर वह तेजी से सड़क की तरफ भागा। धुंआ घना होता जा रहा था और सड़कें सुनसान। बस-ऑटो लगभग बंद थे और लोग बहुत मजबूरी में जरूरी काम से घरों से निकल रहे थे। उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था। लगा कि उसका पूरा परिवार दम घुटने से मर जायेगा। एक स्कूटर वाले की मदद लेकर वह सेक्टर एक तक पहुँचा और वहाँ से अपने सेक्टर के क्वाटर में। जहरीली रसायनों मिश्रित धुंए से आँखों में तेज जलन हो रही थी।

नीलू सीढ़ी पर बैठी रो रही थी। आंखें लाल और सूजी हुई। मास्क आंसुओं से गीले थे। राघव को देखते ही वह दौड़ कर उसकी गोद में निढाल हो गयी। जहरीला धुंआ नीलू को भी अपने गिरफ्त में ले चुका था। ब्लॉक में भयानक सन्नाटा पसरा था।

अचानक उसका फोन बजने लगा।

उधर से उसका हरियाणवी दोस्त रवि रैना था।

''यार राघव, बॉस को बोल देना मैं एक सप्ताह नहीं आ पाउंगा । वे अपना मोबाईल स्विच ऑफ किये हैं। मित्तल बता रहा था कि उनकी 'वाईफ' को ''हर्ट अटैक'' हुआ है पर खबर कितनी सच है ,मुझे नहीं पता। मैं अपने गाँव से बोल रहा हूँ।''

और जवाब में राघव ने अपनी सारी हकीकत बयां कर डाली।

''अरे राघव! एक पल की भी देर किये बिना दिल्ली से फुट्ट ले मेरे भाई! काले धुँए की चादर तीन-चार दिन तक टलने वाली नहीं। लगता है, न्यूज नहीं देखी तूने? मौसम वैज्ञानिकों ने सैटेलाईट की तस्वीर के हवाले से चेतावनी जारी की है। 5 दिसम्बर 1952 को लंदन में भी प्रति चक्रवात की वजह से ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हुई थी। पूरे पांच दिनों तक घना 'स्मॉग' छाया रहा था। परिणामतः बारह हजार से अधिक लोग श्वास सम्बन्धी रोग की वजह से मारे गये थे और लगभग एक लाख से अधिक लोग गंभीर रूप से बिमार हो गये थे। कल ही चीन ने भी अपने पांच शहरों में प्रदूषण सम्बंधी रेड अलर्ट जारी की है। वहाँ भगदड़ मची है। लोग शहर छोड़कर सुदूर गांव की तरफ श्वास लेने के लिए भाग रहे हैं!''

''हाँ, तू एकदम ठीक कह रहा है, लेकिन मैं ऐसी हालत में हूं कि जाऊं तो कहाँ जाऊं? मां गंभीर है और अब बच्ची की भी स्थिति बिगड़ती जा रही है। मेरा तो दिमाग काम नहीं कर रहा। ए. टी. एम. कार्ड का बैलेंस लगभग शून्य है। क्रेडिट कार्ड का 'कैश लिमिट' खत्म हो चुका है। मैं तो दिल्ली का 'डिपूटेशन' लेकर बुरे फंस गया यार।''

इंसानों के बुने हुए धुँए की काली चादर जब प्रकृति ने उसी के शहर पर फैला दी तो बाशिंदों के दम घुटने लगे। इंसान कारें तो कम कर सकता था, लेकिन शुद्ध हवा लाना उसके वश की बात नहीं। सड़क गलियों से सांस लेने लायक हवा तो गायब हो ही चुकी है, घरों में बंद हवा कितने देर टिकेगी? ऑक्सीजन के सिलिंडर पर कितने लोग और कितने दिन जिंदा रहेंगे। शाम तक तो सब समाप्त समझो। समय है भाई, जल्दी शहर छोड़ दे। पैसे की चिंता ना कर, आधे घंटे में मैं तेरे खाते में ई-बैंकिंग से पचास-साठ हजार रुपये ट्रांसफर कर दे रहा हूँ। तू एकाउंट नम्बर मैसेज कर दे। समझ गये न ? जल्दी करो। मेरा गांव तीन-चार सौ किलो मीटर से ज्यादा दूर है, वरना यहाँ आ सकते थे। फिलहाल मथुरा-वृंदावन जाने वाली 'एक्सप्रेस हाईवे' पकड़ ले मेरे दोस्त। स्थिति सामान्य होने पर वापसी की सोचना। सारे दफ्तर अघोषित रूप से बंद है। फिर फोन करना।''

''हाँ, ठीक है। पर पैसे जरूर ट्रांसफर कर दें रवि, जल्दी ही लौटा दूँगा।''

''अरे यार, उसकी चिंता ना कर। पहले जल्दी निकलो वरना

भाड़े की गाड़ी भी नहीं मिलेगी। ट्रैफिक जाम होगा सो अलग।''

उसे रवि की सलाह अमृतवाणी की तरह लगी। वह तेजी से इसी दिशा में सोचने लगा।

नीलू को ऐ.सी. चालू कर बेडरूम में लिटा दिया और जल्दी-जल्दी जरूरी सामान पैक करने लगा। नीलू डरी सहमी बदहवास बाप को टुकुर टुकुर देखती रही। कुछ देर बाद 'ओला ट्रेवेल' एजेंसी को फोन किया और जल्दी से एक इंडिगो भेजने का अनुरोध किया।

''ठीक है जी, दस मिनट में गाड़ी पहुँच जायेगी लेकिन भाड़े दुगुने होंगें। मंजूर है तो बोलो वरना गाड़ी की डिमांड बढ़ी हुई है। जल्दी बोलो जी।''

''लगता था एजेंसी वाला भी तैयार बैठा था, तपाक से शर्ते रख दी।''

कुछ पल वह सोचता रहा पर लगा कि वक्त रेत की तरह उसकी मुट्ठी से फिसलता जा रहा है।

''ओके ,ओके - मंजूर है पर जरा जल्दी। मैं तैयार होकर इंतजार कर रहा हूँ। वह हड़बड़ा कर बोला और पता नोट कराने लगा।

जब वह अस्पताल पहुँचा तो उस वक्त माँ कुछ ठीक थी और सास-बहू, बाप-बेटी की बेसब्री से प्रतीक्षा कर रही थी। नीलू की हालत देखकर रत्ना रोने लगी।

नर्सिंग होम की दवाखाना से कुछ जरूरी दवाइयां खरीदी और पांच मिनट में पूरा परिवार गाड़ी में सवार हो गया। रत्ना और मां को नहीं पता था कि वे कहाँ जा रहे हैं। राघव को यथाशीघ्र दिल्ली से बाहर निकल जाने की जल्दी थी। उसके दहशतजदा चेहरे को देखकर रत्ना को प्रश्न करने की हिम्मत नहीं हो रही थी। वह बेटी को लेकर बेहद चिंतित थी और सारा ध्यान उसी पर केन्द्रित था। गढ़वाली ड्राईवर को भी दिल्ली से बाहर निकलने की जल्दी थी। वह इस परिस्थिति में भी तनिक प्रसन्न दिख रहा था। तभी मोबाईल में मैसेज का रिंग बजा। फूर्ति से मैसेज बाक्स खोली। रवि ने साठ हजार रुपये एकाउंट में डाल दिए थे। उसने ईश्वर और रवि को एक साथ धन्यवाद दिया और राहत की सांस लेकर सीट पर आराम से बैठ गया। हाईवे पर बड़ी संख्या में गाड़ियां दिल्ली से दूर भागी जा रही थीं। इक्के-दुक्के वाहन डरे-सहमे हुए से शहर की ओर आ रहे थे। बीस-पच्चीस मिनट बाद वे खुली और चमकीली धूप वाले विस्तृत मैदानी भाग में थे। यहाँ का नजारा बिलकुल शांत और सामान्य था। हवा में मिठास थी। वे जी भर हवा ले रहे थे। उसके इशारे पर ड्राईवर ने चाय-नास्ते की एक दुकान पर गाड़ी रोक दी। पीछे मुड़ कर देखा। दिल्ली शहर काफी पीछे छूट चुका था। उपर काले धुंए का बादल कुकुरमुत्ते की शक्ल लिये छाया था। लग रहा था मानो शहर पर आण्विक बम फूटे हों।

उस 'गैस चैम्बर' से निकलकर पूरा परिवार खुश था। ड्राईवर भी प्रसन्न दिख रहा था। वह ऊंची आवाज में दिल्ली में मचे कुहराम का सजीव वर्णन कर रहा था जिसे दुकानदार और उसके नौकर चाकर बड़े हैरत से सुन रहे थे। उन्हें यकीन करना मुश्किल हो रहा था कि ऐसा भी हो सकता है। उनके लिए यह बड़े अचंभे की बात थी। कुबड़ा नौकर तो इसे भैंस के आसमान में उड़ने जैसी घटना मान रहा था और गढ़वाली ड्राईवर की बातों को बड़े चटकारे लेकर ध्यान से सुन रहा था। बीच-बीच में आंखे गोल किये - अच्छा ऐसा हो रहा था! बोलता और हंसने लगता। झूमती, सीटी बजाती हवा हरे-भरे खेतों से बहती हुयी, बगीचों को सहलाती हाइवे के पार चली जा रही थी। कांय-कांय करते कौए दुकान के ऊपर मँडरा रहे थे। नवजीवन प्राप्त माँ गाड़ी से निकलकर दुकान में लगी पीली कुर्सियों में से एक पर बैठ गई और चाय की इच्छा जाहिर की। माँ और रत्ना चाय पीने में लगे थे और ड्राईवर बीड़ी पर हाथ साफ कर रहा था। नीलू मौका देखते ही तितलियों के पीछे भागी और उसके पीछे राघव। रत्ना दिल्ली आने के बाद पहली बार नीलू को इतना खुश देख रही थी। वहाँ से कुछ दूरी पर गांव के बाहर एक खण्डहर सा खलिहान था। ओसारे में फसलों को सहेजने का विशेष प्रकार के डंडे दिवाल से ओठँगा कर रखे थे। धान के पुआल पर दो मुस्तंडे कुत्ते लोट पोट कर आनंदित हो रहे थे। खलिहान से बीस-पच्चीस कदम पूरब पगडंडी से जुड़ा एक पक्के का छोटा सा मंदिर था जिसकी सबसे नीचली सीढ़ी पर नंगे पैर खड़ी एक प्रौढ़ा कुछ बुदबुदाती हुई बार-बार अपना कान विनम्रता से छू ले रही थी। वह दुनिया से बेखबर देवताओं से संवाद कर रखी थी। कुछ देर बाद हाथ पैर धोकर मां भी रत्ना को साथ लिए मंदिर के पास चली गई, नंगे पैर और उसी तरह मंदिर के आगे सिर झुकाए, कान छूए और चेहरा आकाश की तरफ किये कुछ इस तरह बुदबुदाई मानो वह अपने स्वर्गवासी पूर्वजों से बात कर रही हो। वह अपने परिवार पर आई विपत्ति की उन्हें खबर कर दुआ सलामती मांग रही थी।

हमेशा की तरह दिन ढलने लगा। हाईवे पर अबतक हजारों गाड़ियों गुजर चुकी थीं। तरोताजा मध्य डील-डौल और बड़े चेहरे वाला गोरा-चिट्ठा ड्राईवर ड्राईविंग सीट पर आगे की यात्रा के लिए बैठ चुका था और निश्चिंतता से यात्रा परिवार के सवार होने की प्रतीक्षा करने लगा। नीलू मैना की तरह फुदकती हुई रत्ना की गोद में बैठ गई और मां एक बार फिर मंदिर की दिशा में बेचारगीपूर्ण उदास चेहरा लिए विदा में हाथ जोड़ दी। खलिहान में एक बूढ़ी गाय पगुराती हुई धूप सेंक रही थी।

''सब कुछ बदरंग हो रहा है। दुनिया बदल रही है''- नाटे कद, हडीला, सूखा और बड़े चेहरे वाले बूढ़े नौकर की जुबान से अचानक निकल गया। गाड़ी की बोनट पर बैठी बेचैन और आलसी मक्खियाँ उड़कर दुकान में जा घुसीं। गाड़ी के अंदर पसरी लम्बी खामोशी को इंजन की घर्रघर्राहट ने एकाएक भंग किया।

लड़कपन में रत्ना दिल्ली को लेकर तरह तरह के सपने देखती थी। पति के सहारे वह अपने ख्वाबों की दुनिया में पहुंच भी गयी, लेकिन चंद रोज बाद ही वर्षों के संचित उसके लड़कियाना मंसूबे पानी के सप्तरंगी बुलबुले की तरह फूट गये। उसने अनुभव किया कि यहां तो दुश्वारियों के अलांघ्य पहाड़ हैं । बच्चे-बूढ़े तक रात-दिन इन दुश्वारियों से युद्ध करते रहते हैं ।

चार दिन बाद तेज पछुआ के साथ बूँदा-बांदी हुई और दिल्ली के आसमान से जहरीली हवा कहीं और चली गयी। जानलेवा प्रदूषण का खतरा टलने की 'न्यूज बुलेटिन' प्रसारित होते ही लोग भूखे टिड्डे की तरह फिर से दिल्ली की ओर लौटने लगे। एक सप्ताह बाद राघवेन्द्र भी सपरिवार लौट आया। ज्यों-ज्यों दिल्ली नजदीक आ रही थी, उनके चेहरे पर फिर से दहशत का भाव छाता जा रहा था। सब खामोशी की चादर ओढ़े सफर तय कर रहे थे। मानो वे कैदी हों और कोर्ट में हाजिरी लगाने के बाद जेल के बैरक में वापस लौट रहे हों। सबकी ज़बान पर ताले लगे थे। दिल्ली युद्धग्रस्त शहर की तरह लुटा पिटा दिख रहा था। हजारों लोगों के घर लुटे जा चुके थे। पूर्वीया परिवार ,जो छठ में अपने मुल्क गये थे ,वे फिर कभी नहीं लौटे। सैकड़ों फैक्ट्रियां जो उनके बल पर चलती थीं, मजबूरन बंद हो गईं। वैसे मकान मालिक जो बिना किसी परिश्रम के किरायेदारों के किराये पर ऐश कर रहे थे, भयभीत और असुरक्षित अनुभव करने लगे। कोई नया किरायेदार आ नहीं रहा था। उधर संयुक्त राष्ट्र संघ ने दिल्ली को दुनिया का सर्वाधिक प्रदूषित और असुरक्षित शहर घोषित कर दिया जिससे पूरी दुनिया में देश की भद्द पीट रही थी। पर्यटकों का आना एकदम कम हो गया। डीजल गाड़ियाँ प्रतिबंधित कर दी गयी । 'ओड-इवेन' फार्मूले से कारों का रोड पर उतरना सख्त कर दिया गया। देश के कई शहरों की भी यही स्थिति थी।

वृंदावन से लौटकर राघव ने सबसे पहले आर. के. पूरम वाली फ्लैट खाली कर दी और वहाँ से दूर मुख्य सड़क से लगभग तीन किलो अंदर एक छः मंजिले अपार्टमेंट की छठी मंजिल पर फ्लैट ले ली। वहाँ प्रदूषण कम और हरियाली अधिक थी। लोग प्रदूषण के भय से उबर चुके थे। ठंडी सूखी हवा बहने लगी।

दिसम्बर के अंतिम दिन चल रहे थे। भीषण ठंड का आगाज हो गया और दिल्ली अक्सर घने कुहरे में लिपटा-दुबका रहने लगा। स्कूलों में बड़े दिन की छुट्टियों समय से पहले ही कर दी गयी। तय कार्यक्रम के अनुसार राघव को अठाईस दिसम्बर को अपने गांव लौटना था। उसे एक जनवरी को हर हालत में दफ्तर ज्वाईन करनी थी क्योंकि बजट की तैयारी बड़े जोर-शोर से शुरू हो चुकी थी। रत्ना और नीलू को मकर संक्राति के बाद लौटने का कन्फर्म टिकट था। मां की वापसी अभी तय नहीं थी। वह अबकी पिता जी को भी साथ लाना चाहता था। गांव पहुँचकर उनसे राय मशविरा कर दिन तय करने थे।

लेकिन अचानक ही कोहरे का कहर शुरू हो गया। घना धुंध एक बार फिर से छा गया। हवा पहले की तरह स्थिर थी, ऊपर से ठंडक भी गजब की। दिल्ली वाले फिर से दहशत के आलम में जीने लगे। मौसम वैज्ञानिकों की भविष्यवाणी थी कि 'स्मॉग' एक सप्ताह से अधिक दिनों तक रह सकता है। स्थिति पहले से खतरनाक और विकट होगी। लोगों से अपील की जा रही थी कि घरों से कम से कम निकले। सरकार ने कारों पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया, लेकिन जितने वाहन चल रहे थे वे इस गैस चैम्बर को रोज-ब-रोज भरते जा रहे थे। लाखों लोग क्लास्ट्रो फोबिया (बंद स्थान का भय) एवं 'केमो फोबिया' (रसायण का भय) से ग्रस्त थे और धिल्ले से 'ट्रिंक्वालाईजर' दवाओं का प्रयोग कर रहे थे। राघव का परिवार भी 'थनाटोफोबिया' (मृत्यु का भय) से गुजरने लगा। नीलू और उसकी दादी ने तो लगभग खाना-पीना ही छोड़ दिया था और हमेशा गुमसुम बैठे रहते। रत्ना और राघव के मन में भी ऊट-पटांग ख्यालात आते रहते। कोहरे की वजह से सैकड़ों रेल गाड़ियाँ कैंसिल कर दी गयी थी जिसमें वह गाड़ी भी शामिल थी जिससे राघव परिवार को दिल्ली से गांव लौटना था। गाड़ियों के रद्द होने की खबर से पूरा परिवार सदमें की स्थिति में पहुँच गया। दिल्ली पानी और प्रदूषण से हमेशा त्रस्त रहने वाले शहर में तबदील हो चुका था ।

बड़े दिन की कड़ाके की ठंडी शाम थी। सभी अपने-अपने खयालों में खोये अपनी अनुभूतियों को छिपाने में लगे थे। राघव उनकी डरावनी खामोशी भंग करने के लिए रह-रह कर सातवें वेतन आयोग से मिलने वाली भारी भरकम लाभ की चर्चा छेड़ दे रहा था। यह भी कि वह एरियर में मिलने वाले पैसे से एक नई कार खरीद लेगा। लेकिन इन उत्साहित करने वाली बातों का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता दिख रहा था। नीलू के सारे खिलौने इधर-उधर बिखड़े थे, कुछ पलंग के नीचे तो दो चार फ्रिज तले। कई दिनों से नीलू आंख उठाकर उधर देखी तक न थी । उसके

चेहरे से मुस्कान जैसे हमेशा के लिए गायब हो चुकी थी। मां भी बहुत कम बोलती थी और हमेशा बेवजह गर्म पानी के गरारे करती रहती। इन दोनों के व्यवहार से रत्ना और राघव बहुत परेशान थे।

सब सो रहे थे या सोने की कोशिश में करवटें बदल रहे थे, लेकिन आज की रात उसे नींद नहीं आ रही थी। दुकानें और रेस्त्रां कब के बंद हो चुके थे सो इस भीषण ठंड में कहीं जाने बारे सोचा भी नहीं जा सकता। आखिरी बस सड़क को नापती निकल गयी। सामने पांच मंजिली भवन का पिछला हिस्सा अंधेरे से पुता था और खिड़कियाँ अंधी आंखों की तरह दीवाल से जड़ी थीं। नीचे घने वृक्षों के बीच सड़क चिकना, तंग और गहरे गलियारे की तरह लग रही थी। रात सांय-सांय करती गुजर रही थी।

इस शहर का तो वर्षों पहले विशाल मर्त्तबान में कायांतरण हो चुका था। अब इस पर ढक्कन भी लग चुका है। बंद मर्त्तबान में कोई जीव कितनी देर जिंदा रह पायेगा?

वह बड़ी देर तक खिड़की के उस पार कुहरे के बीच सितारों को ढूंढने की कोशिश में लगा रहा पर कुहरे के बीच से चांद के नीले आभा के सिवा आसमान में कुछ नहीं दिखाई दे रहा था। थक हार कर वह कीचेन में कॉफी बनाने चला गया। वह बड़ी गंभीरता से कुछ बड़ा निर्णय लेने की उधेड़बुन में लगा था ।

कॉफी खत्म होते-होते उसने निर्णय किया कि वह अब दिल्ली को अलविदा कह देगा। कल सुबह ही वह आगरा के लिए निकल पड़ेगा और वहां से जो भी गाड़ी मिलेगी, अपने गांव चला जायेगा। न हो तो वह टुरिस्ट कार ले लेगा, लेकिन अब अपने परिवार को और अधिक कष्ट सहने नहीं देगा। बाद में वह भी अपने मूल कैडर में लौटने का आवेदन दे देगा- बात नहीं बनी तो इस्तीफा देने पर भी विचार करेगा!

उसने माँ और रत्ना को जगाया। नीलू स्वतः जग गयी। भीगी रात में सब चौंक पड़े। उसने बड़ी संजिदगी से घोषणा कि हम सुबह आगरा और वहाँ से गाँव के लिए प्रस्थान करेंगे। सो जरूरी सामान पैक कर लिया जाए। नीलू अब गाँव में ही पढ़ेगी। उसके निर्णय से सबके चेहरे खिल उठे। अगले ही पल घर में आपा-धापी और भागम-भाग शुरू हो गयी। नीलू अपने बैग में खिलौने भी ठूंसने की कोशिश में लगी थी लेकिन संभव नहीं हो रहा था जिससे वह थोड़ी परेशान और निराश थी। सबके चेहरे प्रसन्नता से चमक रहे थे और वे अपने-अपने काम में व्यस्त थे। जैसे-तैसे उस रात की भोर गुजरी।

और ठीक आठ बजे राघव परिवार इस विशाल पारदर्शी नीले मर्त्तबान को हमेशा के लिए अलविदा कह रहा था। वे अपने सरल-सुगम दुनिया में लौट रहे थे जहां की आबोहवा संजीवनी थी और गुजर-बसर करना आसान था ।

'पारिजात भवन', 1112/बी-6, मौर्य विहार कॉलोनी (कुम्हरार), पो.-बहादूरपुर हाऊसिंग कॉलोनी, पटना-800026
मो.-09771425157

कविता

आवाज़ों के जंगल के पार

● **जितेंद्र शर्मा**

मेरे तुम्हारे
तुम्हारे इनके
यानि हम सबके बीच
हो रही बातों के पार की बातें
होने को लगातार छटपटा कर रह जाती
बातों भर से हम
दो चार-पांच दस यहां तक कि
समूह में जुड़ जाते
और बातों ही बातों में
बातों से छूट इकाई भर रह जाते।
सब ही अपने-अपने घेरों में कैद
एक दूसरे की ज़बान पर से उछले
शब्दों को पकड़ते-धड़कते
तो कभी उछाल से झरते बिरंगे फूलों की
शीरी शराब पीते।
और होने को आई बात
शिला सी गले में अटक जाती।
शब्दों की उछाल में हमारी सीमा नहीं होती,
थैले में रखी गाजर-गोभी से शुरू हो,
घर, परिवार, देश, सरकार, महंगाई,
भ्रष्टाचार को छूती।
हमारे शब्दों की यह उछाल
संक्रांति मनाते क्रांति करने तक में न शर्माती
हमें मिलाती जोड़ती-तोड़ती और नियति बन
आवाज़ों के जंगल में भटका जाती।
और बार बार हो आने को आई बात,
हर बार छटपटाती, दम तोड़ती।
मेरे तुम्हारे
तुम्हारे उनके
यानि हम सबके बीच
हो रही बातों के पार की बातें।

रायपुर रोड, अधोईवाला, देहरादून, उत्तराखंड, मो. 0 95571 63702

कहानी

अधर्मी

● राकेश पत्थरिया

मैं सुबह जल्दी उठ गया था। रविवार को छुट्टी होती तो जल्दी उठकर घर चला जाता। क्वार्टर से थोड़े दूर रेलवे स्टेशन था, पर अकसर ट्रेन देरी से पहुंचती थी। आज मन कर रहा था कि बस से ही चला जाऊं, जैसे ही सड़क पर जाने के लिए ट्रैक क्रॉस करने लगा तो ट्रेन का हॉर्न सुनाई दिया आज ट्रेन टाईम पर थी, नहीं तो अक्सर देरी से ही आती थी। फिर सोचने लगा क्यूं न ट्रेन से ही चला जाए। खिड़की पर टिकट लेने पहुंचा तो रेलवे कर्मचारी टिकटों के बड़े-बड़े बंडल ढूंढने लगा, छोटा स्टेशन था तो गत्ते टाईप की मोहर लगी टिकट ही मिलती थी। ट्रेन नजदीक पहुंचने वाली थी, हॉर्न की आवाज से मैंने अंदाजा लगाया। 'अरे भाई जल्दी टिकट दो, ट्रेन आने वाली है।'

मेरी ये बात सुनकर वह बोला, 'बस एक मिनट मिल गया बंडल। टिकट लेकर जल्दी-जल्दी डिब्बे में चढ़ गया और अपनी सीट संभाल ली।'

आज काफी भीड़ थी। पहाड़ियों के बीच ट्रेन गुजर रही थी तो एक के बाद एक दृश्य रूह को सुकून पहुंचा रहा था। प्रकृति की सुंदरता कितना चैन दे रही थी मन बेहद शांत था। मैं इस सुंदरता से लबालब नजारों को देखता हुआ सफर का आनंद ले रहा था कि सामने एक धार्मिक संगठन का डेरा आया। वहां पर बहुत लोग सेवा कर रहे थे। जरा गौर से देखा तो रेत पत्थर ढो रहे थे। शायद वहां कंस्ट्रक्शन का काम चल रहा था। छुट्टी के दिन काफी लोग आए थे। इतना पता था कि रविवार को यहां सत्संग होता है। ज्यादा ज्ञान तो नहीं था वैसे भी मैं शुरू से ही धार्मिक संगठनों का विरोध टाईप की विचारधारा का रहा हूं। मेरी सामने वाली सीट पर बैठा आदमी कुछ बड़बड़ाने लगा। पहले तो मैंने उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया पर फिर वह जोर-जोर से बोलने लगा।

'घर में तो जरा सा काम बोल दो तो लोगों को सांप सूंघ जाता है और यहां देखो कैसे बड़े-बड़े पत्थर उठा रहे हैं, जमीन की नींव तक की खुदाई कितनी खुशी से कर रहे हैं। घर में चाहे पति या सास-ससुर का रूमाल तक नहीं उठाती हों।' उस आदमी की आवाज में गुस्सा छलक रहा था। ऐसा लग रहा था कि वह औरतों को अपना निशाना बना रहा है। फिर बोलने लगा, 'और इन मर्दों को देखो औरत से चाहे सीधे मुंह बात न करते हो मां-बाप को बात-बात पे आंख दिखाते हों यहां पर कैसे शरीफ बनकर बैठे हैं।' अब उसकी बात सुनकर मैं हैरान हो गया औरतों ही नहीं सब पर अपनी भड़ास निकाल रहा था। बीच-बीच में वह बात रखता तो मेरी तरफ नजर मिलाता जैसे सहमति मांग रहा हो तो मैं भी हल्का सा सिर हिला देता और नजरें चुराने लग जाता। अब मेरा ध्यान उसके साथ वाले व्यक्ति पर गया वह उसको घूर-घूर कर देख रहा था जैसे कोई अपराधी बैठा हो। औरतें भी जिन तक उसकी बात पहुंच रही थी उसे ऐसे देख रही थीं जैसे बहुत बड़ा पापी हो। मेरे दिलो दिमाग में भी उसकी छवि एक अधर्मी के रूप में उभरती जा रही थी पर अधर्मी होने का मतलब मैं समझता हूं कि ऐसा पापी इंसान जिसने अगर कोई बुरा काम न भी किया हो तब भी समाज की नजरों में एक हत्यारे या बलात्कारी से ज्यादा दोषी होगा। मेरे कानों में फिर उसकी आवाज पड़ी तो मैं अपने खयालों से बाहर निकल आया।

'पता नहीं इनके आश्रमों, मठों में क्या-क्या चलता होगा, अंदर क्या-क्या धंधे चला रखे होंगे, दुनिया वालों के लिए कितने महान बने हैं।'

अब मैं भी उसके इस गुस्से में शामिल हो चुका था, आखिरकार पूछ ही लिया, आप इन साधु-संतों पर इतने क्रोधित क्यों हैं?

'तुम्हे क्या पता बेटा, कई तो बलात्कार के आरोप में जेल में भी बंद हैं।'

'तो क्या हुआ, कुछेक ऐसे हैं तो सब थोड़े ही हो सकते हैं', मैंने उसको समझाते हुए कहा।

'खुद कितने ऐशो आराम से रहते हैं, काहे के संत हैं ये लोग गाड़ियों में घूमते हैं, इधर-उधर की बातों को प्रवचन बनाकर व्यापार करते हैं पर इनसे ज्यादा दोषी तो तुम जैसे लोग हैं जो पढ़े-लिखे होने के बावजूद इनके चक्कर में पड़ कर अंध आस्थाओं को बढ़ावा देते हैं, मुझे तो ऐसे लोगों पर भी गुस्सा आता है। कितना समय बर्बाद करते हैं, इनके बड़े-बड़े कार्यक्रमों के लिए, कितना पैसा बर्बाद करते हैं इससे अच्छा किसी की मदद ही कर

दो।'

अब मेरे साथ उस आदमी की चर्चा लम्बा रूप लेती जा रही थी। मैंने पूछा, 'आप अधर्मी हैं तो सब वैसे थोड़े हो सकते है, लोग इनके अच्छे विचारों को सुनते हैं तो मन अच्छा होता है।'

मेरा विरोध झेलकर वह आपा खो रहा था, 'इसमें अधर्मी होने की बात कहां पर है, इनके पीछे भागना कोई धर्म तो नहीं, वैसे भी किसी को पूजना मैं धर्म नहीं मानता। धर्म है अच्छे काम, किसी की सेवा, गरीबों की मदद। यह कोई धर्म नहीं है यह सिर्फ अंध आस्थाओं को बढ़ावा देना मात्र है। मैं तुम्हें एक किस्सा सुनाता हूं। इन धर्मी लोगों का ही किस्सा है जो गाय को माता मानते हैं, उसकी पूजा करते हैं सिर्फ फोटो या बातों में पर हकीकत में सिर्फ दूध देने का जरिया और फिर नकारा हो जाए तो छोड़ देते हैं लावारिस। जो आश्रम तुमने अभी कुछ देर पहले देखा कितना बड़ा था इसके बाहर ही मैंने कई लावारिस गायों को भूख के लिए इधर-उधर मुंह मारते देखा है। इनकी देखभाल करो सही में वो ही धर्म होगा। गाय ही क्यों सभी में जान होती है कोई तड़पता हुआ कुत्ता भी मिल जाए तो उससे दूर भागते हैं ऐसे होते हैं यह धर्मी लोग, प्रवचन सुनने वाले दिखावटी लोग। पिछले हफ्ते की ही बात है यहां पर बहुत बड़ा धार्मिक कार्यक्रम चल रहा था, एक गाय को बस की टक्कर लग गई थी खून बह रहा था हालांकि ज्यादा चोट नहीं थी पर इन धर्मियों में से किसी ने भी उसकी तरफ ध्यान तक नहीं दिया। बस एक ही चिंता थी कि कार्यक्रम के लिए देरी न हो जाए। सब जल्दबाजी में एक-दूसरे से पहले पहुंचने की होड़ में थे। जब मैं गुजरा तो देखा तो कुछ लोगों को फोन किया इलाज बगैरह करवाकर गौश्रम में पहुंचाने का प्रबंध किया। हालांकि मेरे लिए गाय की जगह कोई दूसरा पशु होता तब भी यही भावना होनी थी। गाय मेरे लिए कोई पूजनीय नहीं है, सब प्राणी जिनमें जान है उनके दर्द को महसूस करना मेरा धर्म है, फिर तुम कैसे बोल सकते हो कि मैं अधर्मी हूं। मूर्ति-पत्थरों की पूजा करना मेरे लिए कोई धार्मिक काम नहीं है।'

अब मेरे साथ उस आदमी की चर्चा लम्बा रूप लेती जा रही थी मैंने पूछा, 'आप अधर्मी हैं तो सब वैसे थोड़े हो सकते है, लोग इनके अच्छे विचारों को सुनते हैं तो मन अच्छा होता है।'

अब उसकी बातों ने मुझे झिंझोर कर रख दिया था। कोई साधारण व्यक्ति नहीं था पहले मुझे लग रहा था कि ऐसी ही सुनी सुनाई बातों पर अपना गुस्सा व्यक्त कर रहा हो पर वो तो सही में इन सब बातों से गुजर चुका था। अब मैं उसे बड़े गौर से देख रहा था, उम्र शायद 65 के आसपास होगी। सिर में अभी पूरे बाल थे जो काफी हद तक सफेद हो चुके थे। शायद मुझे प्रभावित कर रहा था ये व्यक्तित्व, कुर्ता पायजामा पहन रखा था। दिल कर रहा था कि उसके बारे में जानूं पर फिर सोचा रहने दो पता नहीं क्या-क्या बोलेगा। बात करता तो ऐसे लगता है किसी से लड़ाई न शुरू कर दे सारा गुस्सा मुझ पर ही न निकाल दे। अब कुछ देर के लिए ट्रेन स्टेशन पर रुक गई थी। वो स्टेशन पर उतरा और चाय पकौड़ा लेकर अंदर आ गया मजे से खाना शुरू कर दिया। मुझसे कहा, 'तुम भी उतरकर कुछ खा लो।'

मैंने कहा, 'नहीं मुझे भूख नहीं है घर जाकर मजे से खाना खाऊंगा एक घंटे तक घर पहुंच जाऊंगा।'

अब ट्रेन का सायरन बज चुका था। काफी देर तक वो चुपचाप बैठा रहा।

कहीं-कहीं लग रहा था कि वो सही बोल रहा है। हम जैसे पढ़े-लिखे लोग भी अंधआस्थाओं के चक्र में पढ़ता अनपढ़ता का प्रदर्शन करते ही रहते हैं। मैं भी तो उन्हीं में से था। आज खुद को मैं दुनिया का सबसे बड़ा अनपढ़ या बेवकूफ मान रहा था। सोचने पर मजबूर था कि धर्म किसी विशेष को मानना या पूजा थोड़े होता है, धर्म का मतलब समझ रहा था। धर्म तो किसी की सेवा या किसी की मदद करना होता है। वो शख्स मुझे सबसे बड़ा धर्मी लग रहा था। हालांकि उसकी बातों का कुछ लोग विरोध भी कर रहे थे उसको अधर्मी कहकर पुकार रहे थे पर अधर्मी होना कोई बुरा नहीं है। अब मैं बाहर की तरफ झांकने लगा तो बड़ी-बड़ी खाइयों, खड्डों को देख रहा था। एक छोटी सी पहाड़ी पर पशु चर रहे थे, पेड़ पर पक्षी मस्ती में छोटी-छोटी उडारियां भर रहे थें। इनका तो कोई धर्म नहीं था, ये भी तो अधर्मी ही हैं लेकिन कितनी मस्ती थी इनकी उड़ान में और उन अधर्मी पशुओं की कुछ अलग बात थी, कोई चिंता नहीं, न धर्म न अधर्म सिर्फ चिंता है तो पेट की बस। कितने खुश हैं ये अधर्मी इनके सामने तो धर्मी इंसान की बात करें तो कितना लाचार है, चिंताग्रस्त है, डर से जकड़ा है बेचारा है।

रास्ते में एक बड़ा सा मंदिर दिखा तो मैंने प्रणाम किया। वो फिर मुंह में कुछ बड़बड़ाने लगा। फिर एक गुरुद्वारा दिखा तो मैंने फिर श्रद्धापूर्वक सिर झुका लिया। अब दोबारा वो गुस्से में आकर बोलने लगा। 'जिसे देखो हर जगह मंदिर-मस्जिद बना देते हैं। आदमी चाहे सामने भूख से तड़प-तड़प कर मर जाए मंदिरों में दूध जरूर बर्बाद करेंगे। लाखों का चढ़ावा चढ़ाएंगे। मुझे कभी-कभी घिण आती है कि आदमी की योनी मिली है। कितना स्वार्थी होता है इंसान। डर होता है तो मंदिर में भगवान को प्रलोभन देता है। पूजा-पाठ करवाता है। घर में चाहे मां-बाप से मारपीट करता हो। नफरत है इनसान होने पर।'

अब लोग उस पर ध्यान नहीं दे रहे थे उसको घृणा की नजर से जरूर देख रहे थे। खासकर औरतें कुछ बड़बड़ा भी रही थी। उस डिब्बे में उसे अब लोग अछूत समझने लगे थे। कुछ लोग तो इतना भी बोल रहे थे कि पागल है बोलने दो।

तभी मैंने कहा, 'आप ये कैसे कह सकते हैं, लोगों की

आस्थाओं को आप इस तरह नकार तो नहीं सकते। किसी भी धर्म के लोगों के लिए ये धार्मिक स्थल शांति का जरिया होते हैं यहां आकर तो उनको मन शांत होता है।'

तो वह झट से बोला, 'शांति नहीं डर है, ये सब डाकू चोर, कालाबाजारी मंदिरों में पैसा चढ़ाते हैं कि उनका काम चलता रहे कोई दिक्कत न आए और भगवान वो भी मस्त है। अगर है तो सबकुछ देखता जा रहा है। इन लोगों की मदद जरूर करता है पर लाखों लोग जो भूखे रहते हैं उनकी तरफ देखना भी मंजूर नहीं है हमारे भगवान और खुदा को।'

अब थोड़ा माहौल को बदलते हुए बोला, मुझे एक शे'र याद आ रहा है

सामने है जो लोग उसे बुरा कहते हैं
जिसको देखा ही नहीं उसको खुदा कहते हैं।

उसका ये शे'र सुनकर मैं काफी स्तब्ध हो गया था। वैसे शे'रो शायरी का शौक मुझे भी बहुत था। मैंने झट से कहा, 'वाह-वाह, सुदर्शन फ़ाकिर साब का शे'र है यह मुझे बहुत पसंद है।'

कहने लगा, 'शे'र तो पसंद है लेकिन इसका मतलब बहुत गंभीर है। तुम तो सिर्फ सुनते ही होगे मैं तो अर्थ समझता हूं।'

अब हमारी चर्चा काफी आगे तक बढ़ रही थी पर ऐसा नहीं है भगवान है तभी तो यह सृष्टि चल रही है। मैं उसे तरह-तरह के तर्क दे रहा था। 'सृष्टि को चलाने वाला कोई तो है ऐसे कैसे चल सकती है इतनी बड़ी कायनात।'

वह बोला, 'खाक कायनात', मेरे इस तर्क पर वो लाजवाब हो चुका था पर हार नहीं मान रहा था। 'मैंने कब मना किया कि सृष्टि के पीछे शक्ति नहीं है। इस बात पर तो मैं सहमत हूं कि कोई न कोई शक्ति तो है जो सृष्टि को चला रही है वो मंदिरों में नहीं वो शक्ति हमारे अंदर भी तो हो सकती है क्या किसी ने आज तक अपने अंदर ढूंढा उसे। हां मैं भगवान के नाम पर धंधा करने वालों का हमेशा विरोध करता आया हूं। धार्मिक स्थल बना-बना कर जमीनों पर कब्जे किए हुए हैं, यह तो बिजनैस का जरिया मात्र हैं। वास्तव में तो भगवान हमारे अंदर है।'

अब उसकी बातों से लग रहा था कि सृष्टि को चलाने वाली शक्ति को तो मानता है वो पर इन आडंबरों का विरोधी है तो इसमें कुछ बुरा भी तो नहीं है। बात उसकी सही भी थी अपने अंदर भगवान को ढूंढने का समय ही नहीं है किसी के पास सब इधर-उधर भागते हैं क्या पता वो अंदर ही छिपा बैठा हो। इंसान इतने आडंबर में फंस चुका है कि किसी के दुख दर्द की बजाय उसे मूर्तियों पर भरोसा रहता है, खुद पर भी कहां भरोसा करता है। मैं खुद भी तो उन्हीं में से था। उस अधर्मी व्यक्ति की शख्सियत के आगे मैं खुद को काफी छोटा महसूस कर रहा था। अब मुझे अधर्मी होना अच्छा लग रहा था, सच्चाई थी उस अधर्मी व्यक्ति की बातों में। वो हर बात को तर्क के साथ रखता था। कितने बाबा होंगे हमारे हिंदोस्तान में लेकिन उनका देश के लिए क्या योगदान है। अब ये बातें मेरे दिमाग में भी घूम रही थीं। सरकार से जमीनें मुफ्त में ले लेते हैं अपना सम्राज्य स्थापित कर लेते हैं और लोगों को अपने पीछे लगा लेते हैं और हम जैसे पढ़े-लिखे अनपढ़ लोग उनकी बातों पर आंखें बंद करके विश्वास कर लेते हैं। कितनी अज्ञानता है। जमीनों पर कब्जे पर कब्जा किए जा रहे हैं पर सरकार भी कुछ नहीं बोलेगी। उन्हें अपनी कुर्सी जो बचानी है।

मैंने कहा,'शायद आप ठीक बोल रहे हों। इन सब आडंबरों पर हम कितना पैसा और समय बर्बाद कर देते हैं।'

वो शख्स एकदम से बोला, 'मैं यहां किसी को सहमत करने के लिए नहीं बोल रहा हूं। आपकी जिंदगी है जैसा चाहो इसे जियो जैसे मर्जी सोचो पर मैंने तो वो कहा जो मैं महसूस करता हूं। वैसे एक बात तो है आस्तिक होने का एक फायदा है कि आदमी के मन में अच्छे विचार आते हैं। मैं यह नहीं कह रहा कि नास्तिक बनो सिर्फ स्वार्थपूर्ण भक्ति और आडंबर इनके खिलाफ हूं। आस्तिक होने का ये मतलब नहीं कि आप पूजा-पाठ करो। मेरा मानना है कि आस्तिक आदमी तब भी हो सकता है जब किसी की मदद करे। जैसे उस दिन गाय की मदद की तो मैं उस समय आस्तिक था और वो सारे लोग नास्तिक थे जो प्रवचन सुनने के लिए गए थे, अधर्मी थे उस दिन वो लोग।'

लोग सुबह-सुबह तो पूजा-पाठ करके अपना दिन शुरू कर देते हैं पर शाम होते ही दारू मांस खाकर नास्तिकता का प्रमाण दे जाते हैं। पंडित पुरोहित कहलाते तो धर्मी हैं पर दूसरे का मांस खाना शान समझते हैं वो सब नास्तिक ही तो हैं और ये शख्स सबसे बड़ा आस्तिक है।

अब मेरा स्टेशन आ चुका था। मैंने उस शख्स से अलविदा कहा और उतरने लगा। स्टेशन पर अब मुझे आगे गांव के लिए बस पकडनी थी। देखा कि स्टेशन पर लोगों की मंडली बैठी थी। शायद किसी मंदिर में दर्शन के लिए आए होंगे या किसी बावा बगैरह के आश्रम में जाने के लिए आए होंगे। कुछ देर उनको देखता रहा फिर आगे चलना शुरू किया। थोड़ा आगे पहुंचा तो बड़े-बड़े पोस्टर लगे थे कोई बावा यहां सत्संग करने के लिए आने वाला था। उन्हें देखकर फिर मेरे सामने उस अधर्मी व्यक्ति का चेहरा सामने आ गया। ये धर्म था या प्रचार या फिर आडंबर जोकि अकसर बिजनैस या राजनीति के लिए होता है। मैं ये सब सोचते-सोचते आगे-बढ़ता गया, बस स्टॉप पर पहुंचकर बस पकड़ी और घर की ओर चल पड़ा।

मार्फत कैप्टन सतीश धीमान
गांव व डाकघर फरेढ़, तहसील पालमपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश। मो. 9418401552

नार्वे की कहानी

ब्यर्नस्टर्न ब्यर्नसॉन को आधुनिक नॉर्वेजी साहित्य के पिता के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। उनका जन्म सन् 1832 में नॉर्वे के उत्तरी पर्वतीय प्रांत में हुआ था। क्रिस्टियाना यूनिवर्सिटी से शिक्षा प्राप्त करके उन्होंने एक नाटककार, उपन्यासकार, आलोचक, कवि तथा राजनेता के रूप में ख्याति प्राप्त की । वर्ष 1903 में उन्हें साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया था। सन 1910 में पेरिस में उनकी मृत्यु हुई और उनके पार्थिव शरीर को राजकीय सम्मान सहित नॉर्वे को सुपुर्द किया गया। "दी फादर" (पिता) शीर्षक से प्रकाशित प्रस्तुत लघुकथा को ब्यर्नसॉन की कालजयी रचना माना जाता है ।

— — — — — —

पिता

● **लेखक : ब्यर्नस्टर्न ब्यर्नसॉन** अनुवाद : **डॉ. कुंवर दिनेश सिंह**

जिस व्यक्ति की यह कहानी है वह अपनी पल्ली में सबसे ज्यादा अमीर और प्रभावशाली व्यक्ति था; उसका नाम था तोर्ड ओवरेस। एक दिन वह पादरी के अध्ययन-कक्ष में पहुंचा। ऊँची कद-काठी वाला और गम्भीर।

"मुझे एक पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई है," वह बोला, "और मैं उसे बपतिस्मा के लिए यहां लाना चाहता हूं।"

"उसका नाम क्या रखोगे?"

"फिन्न - अपने पिता के नाम पर ही उसका नाम रखूंगा।"

"और उसके संरक्षक कौन होंगे?"

उनके नाम दर्ज कराए गए। वे सभी पल्ली में तोर्ड के सगे-सम्बंधियों में श्रेष्ठ स्त्री-पुरुष थे।

"और कुछ? " पादरी ने पूछा, और सर उठाकर उसे देखने लगा। किसान कुछ संकोच कर रहा था।

"मैं चाहता हूँ कि वह खुद अपना बपतिस्मा करवाए," आखिर उसने कह ही डाला।

"किस दिन? "

"आने वाले शनिवार को, दोपहर बारह बजे!"

"और कुछ? " पादरी ने पूछा ।

"और कुछ नहीं," इतना कहकर किसान ने अपनी टोपी घुमाई, मानो अब वह जाने को तैयार था ।

और फिर पादरी उठा और बोला : "बेशुबह कोई बात तो है।" वह तोर्ड की ओर बढ़ा, उसका हाथ पकड़ा और उसकी आंखों में देखते हुए बोला, "ईश्वर करे वह बच्चा तुम्हारे लिए शुभाशीष लाए!"

सोलह साल बाद एक दिन तोर्ड एक बार फिर पादरी के अध्ययन-कक्ष में आ खड़ा हुआ।

"तोर्ड, तुम्हें देख कर मुझे आश्चर्य होता है, तुम आज भी बिल्कुल वैसे ही दिखते हो," पादरी ने कहा। उसे तोर्ड में रत्ती भर बदलाव नहीं दिखाई दिया ।

"ऐसा इसलिए है क्योंकि मेरे जीवन में कोई समस्या नहीं है," तोर्ड ने जवाब दिया।

इस बात पर पादरी खामोश रहा मगर कुछ क्षणों के बाद उससे पूछने लगा, "आज की शाम तुम कौन सी खुशी बांटने आए हो?"

"आज की शाम मैं अपने बेटे के सिलसिले में आया हूं जिसको कल पक्का ईसाई बनाना है।"

"वह एक होनहार लड़का है।"

"पादरी जी, मैं तब तक आपको दक्षिणा नहीं दूंगा जब तक मैं जान न लूं कुल चर्च में मेरे बेटे का स्थान किस नम्बर पर होगा।"

"वह तो नम्बर एक पर होगा।"

"ये हुई न बात, और ये रहे पादरी जी के दस डॉलर।"

"क्या मैं तुम्हारे लिए और कुछ कर सकता हूं," पादरी ने तोर्ड पर आंखें टिकाते हुए पूछा।

"बस और कुछ नहीं।" इतना कहकर तोर्ड वहां से चला गया।

आठ साल और बीत गए। और फिर एक दिन पादरी के अध्ययन-कक्ष के बाहर शोर सुनाई दिया।

बहुत से लोग बढ़े चले आ रहे थे, और उन सबकी अगुवाई कर रहा था तोर्ड जिसने सबसे पहले भीतर प्रवेश किया ।

पादरी ने सर उठा कर देखा और उसे पहचान लिया।

"तुम आज पूरे लाव-लश्कर के साथ आए हो," पादरी ने कहा।

"मैं आज आपके पास एक विनती लेकर आया हूं। मेरे बेटे के विवाह के सूचना-पत्र छपवाने हैं। वह गडमंड की बेटी, करेन स्टॉर्लिडेन से शादी करने वाला है जो यहां मेरे साथ खड़ी है।"

"क्यों, यह पल्ली में सबसे अमीर लड़की है न?"

"ऐसा लोग कहते हैं," एक हाथ से अपने बालों को पीछे की ओर घुमाते हुए किसान ने कहा।

पादरी कुछ समय के लिए गहन चिंतन की मुद्रा में बैठ गया। उसने इस बात पर कोई टिप्पणी नहीं की। कुछ सोच कर उसने अपनी पुस्तिका में उन दोनों के नाम दर्ज किए। फिर उनके नामों के नीचे अन्य लोगों ने अपने हस्ताक्षर किए। तोर्ड ने मेज़ पर तीन डॉलर रख दिए।

"इसके लिए तो मैं सिर्फ़ एक डॉलर लेता हूं," पादरी ने कहा।

"मुझे अच्छी तरह मुआलूम है, लेकिन यह मेरा इकलौता बेटा है। और मैं चाहता हूँ कि मैं इसके लिए दिल खोलकर दक्षिणा दूं।"

पादरी ने पैसे ले लिए ।

"तोर्ड, आज तुम अपने बेटे के सिलसिले में तीसरी बार यहां आए हो।"

"हां, मगर अब मैं इसकी जिम्मेदारी से मुक्त हूं," तोर्ड ने कहा। और फिर अपने बटुए को बंद करके उसने अलविदा कहा और वहां से चल दिया ।

उसके साथ आए लोग भी उसके पीछे पीछे चल दिए।

पन्द्रह दिन बाद, पिता और पुत्र, दोनों एक झील को पार कर रहे थे। बड़ा ही शान्त दिन था। वे दोनों शादी की व्यवस्था के लिए स्टॉर्लिडेन के घर जा रहे थे।

"यह रास्ता सुरक्षित नहीं है," पुत्र ने कहा। और अपनी सीट को सीधा करने के लिए उठा।

उसी क्षण एक तख्ता, जिस पर वह खड़ा हुआ था, उसके पांव के नीचे से खिसक गया। उसने ऊपर की ओर अपनी बाहें फैलाईं, जोर से चीख़ा और किश्ती से नीचे गिर पड़ा।

"इस चप्पू को मज़बूती से पकड़ो!" थोड़ा ऊंचे उठकर चप्पू उसकी तरफ़ बढ़ाते हुए पिता चिल्लाया।

पुत्र ने लपक कर चप्पू को पकड़ने के लिए प्रयास किए लेकिन उसका जिस्म अकड़ गया।

"रुको जरा," पिता चिल्लाया और पुत्र की ओर किश्ती बढ़ाने लगा। इतने में पुत्र ने पलटी खाई और पीठ के बल गिरते हुए उसने अपने पिता को नज़र भरकर देखा और डूब गया।

तोर्ड को अपनी आंखों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था। उसने किश्ती को खड़ा कर दिया और उसी स्थान को टिकटिकी बांधे देखता रहा जहां उसका पुत्र जल-निमग्न हो गया था। उसे लग रहा था मानो वह अवश्यमेव फिर से वहां प्रकट हो जाएगा।

वहां सिर्फ बुलबुले उठे; फिर कुछ और बुलबुले उठे, और आखिर में एक बड़ा बुलबुला उठा जो फूट पड़ा। और झील फिर से आईने की तरह साफ़, समतल और चमकदार दिख रही थी।

तीन दिन तीन रात लोगों ने पिता को उसी स्थान के इर्दगिर्द किश्ती को घुमाते हुए देखा; उसने न तो कुछ खाया था और न ही वह सोया था। अपने पुत्र के शरीर को पाने के लिए वह झील को खंगाल रहा था।

और तीसरे दिन की सुबह उसे अपने पुत्र का शरीर मिल गया जिसे अपनी बाहों में उठाकर वह पहाड़ी पर अपने बगीचे की ओर ले गया।

उस दिन के बाद लगभग एक साल बीत गया होगा जब पादरी ने पतझड़ की एक शाम को अपने दरवाज़े पर सिटकनी हिलाते हुए किसी की आवाज़ सुनी। पादरी ने दरवाज़ा खोला और एक लंबा, पतला व्यक्ति सिर झुकाए भीतर दाखिल हुआ। पादरी ने कुछ देर ध्यान से उसे देखा और फिर पहचान लिया। वह तोर्ड था।

"आज तुम बहुत देर तक बाहर घूम रहे हो?" पादरी बोला और उसके सामने स्थिर खड़ा रहा।

"ओह! हां, आज काफ़ी देर हो गई," तोर्ड ने कहा और बैठ गया ।

पादरी भी बैठ गया। वह उत्सुकता के साथ उसे देखता रहा। कुछ देर तक एक लम्बी चुप्पी बनी रही। फिर तोर्ड ने कहा :

"मेरे पास कुछ है जो मैं ग़रीबों के लिए देना चाहता हूं। इसे मैं अपने बेटे की वसीयत के रूप में जमा करना चाहता हूं।" उसने उठकर पैसे निकाले और मेज़ पर रखे और फिर से बैठ गया।

पादरी ने पैसे गिने।

"यह तो बहुत बड़ी रकम है," वह बोला।

"यह मेरे बागीचे की आधी क़ीमत है, आज मैंने उसे बेच डाला।"

पादरी काफी देर तक खामोश बैठा रहा। फिर उसने बड़े करुण स्वर में पूछा, "अब तुम क्या करना चाहते हो, तोर्ड?"

"कुछ बेहतर करना चाहता हूं।"

वे दोनों कुछ देर वहीं बैठे रहे। तोर्ड आंखें झुकाए बैठा था, पादरी उस पर आंखें टिकाए बैठा था। इस बार बड़े ही धीमे और कोमल स्वर में पादरी बोलाः

"मैं समझता हूं आखिर तुम्हारे बेटे ने तुम्हें सही मायने में यह शुभाशीष दिया है।"

"हां, मैं भी ऐसा ही सोचता हूं," तोर्ड ने ऊपर देखते हुए कहा। उसकी आंखों से दो बड़े आंसू धीरे-धीरे बहते हुए उसके गालों तक पहुँच चुके थे ।

3, सिसिल क्वार्टर्ज, चौड़ा मैदान, शिमला -171004
हिमाचल प्रदेश, मो. : 09418626090

बाल कथा

सुंदर हाथ

● रोचिका शर्मा

रीमा एवं सीमा दो बहनें थीं। रीमा बड़ी एवं सीमा छोटी। रीमा रंग-रूप में अपनी माँ जैसी, बिलकुल गोरी चिट्टी और तीखे नैन-नक्श वाली एवं सीमा अपने पिता जैसी थोड़ी साँवली और थोड़ी मोटी नाक वाली। जो भी कोई देखता रीमा की सुंदरता की तारीफ़ किए बिना न रहता। वह स्वयं की तारीफ़ सुन फूली न समाती। लेकिन सीमा साँवली होने के कारण किसी की नज़रों में न आती। समय बीतता गया, दोनों बहनें साथ-साथ में बड़ी हो रही थीं। अब रीमा अपनी छोटी बहिन को उसके रंग-रूप को लेकर चिढ़ाने लगी थी। जब कभी दोनों बहनों में झगड़ा होता रीमा झट से सीमा को कहती " अपनी सूरत देखी है कभी आईने में? "काली कलूटी बैंगन लूटी"। रीमा को अपने नर्म और गोरे-गोरे हाथों पर बहुत घमंड था। वह जब किसी त्योहार पर या किसी कार्यक्रम में चूड़ियाँ पहनती तो अपने हाथों को घुमा-घुमाकर देखती और बार-बार आईने के सामने जा खड़ी होती उसके हाथों में चमकती चूड़ियाँ उसे बहुत ही सुंदर लगती। वह घंटों अपने हाथों में पहनी चूड़ियों को निहारती रहती और अपनी छोटी बहिन सीमा को कहती "देखो मेरे हाथ में चूड़ियाँ कितनी सुंदर लगती हैं "। सीमा बेचारी कसमसा कर रह जाती। कभी-कभी तो वह दूसरों की और रीमा की बातों से इतना चिढ़ जाती कि कमरा बंद कर घंटों रोती रहती। उसकी माँ उसे समझाने की बहुत कोशिश करती कहती " तुम इन सब फालतू की बातों में ध्यान न दो, तुम संसार की सबसे प्यारी बेटी हो "। पल भर को सीमा बहल जाती लेकिन मौका पाते ही रीमा उसे कुछ न कुछ बोल कर चिढ़ा देती। सीमा को चिढ़ा कर उसे बहुत मज़ा आता। एसा करते दोनों बहनें बड़ी हो रही थीं।

रीमा के मन में अपनी सुंदरता का घमंड बढ़ता जा रहा था। उधर सीमा ने ठान लिया था कि चाहे कुछ भी हो जाए वह रीमा की बात का बुरा न मानेगी और अच्छे कार्यों में अपना वक़्त व्यतीत करेगी। वह अपनी पढ़ाई-लिखाई पूरी कर अपनी माँ के काम में हाथ बँटाती और बाकी खाली समय में अपनी दादी के पास बैठ कहानियाँ सुनती व अच्छी-अच्छी पुस्तकें पढ़ती। उधर रीमा सारा समय आईने के सामने सजने-धजने व अपनी सहेलियों के साथ फोन पर गप्पे लगाने में व्यतीत करती। बाकी बचे समय में वह टी. वी. देखती। यदि माँ घर के काम में उससे मदद माँगती तो वह फटाक से जवाब दे देती " माँ तुम साफ-सफाई मुझ से न कराया करो, मेरे हाथ गंदे हो जाएँगे।" अगर माँ रसोई के काम को कहती तो वह कहती "माँ मुझे रसोई के काम में गर्मी लगती है " रात-दिन उसका ध्यान सुंदरता में ही लगा रहता । वह तरह-तरह की क्रीम अपने हाथों में मलती रहती। दिन-प्रतिदिन उसके खर्च बढ़ते जा रहे थे। अब माँ ने उस पर पाबंदी लगाना शुरू कर दिया था। अपनी सहेलियों के साथ आए दिन पार्टी करती। उसे रोज अच्छे कपड़े पहनने के लिए चाहिए होते फिर उनकी मेचिंग ज्वेलेरी की माँग करती। जब माँ उस पर पाबंदी लगाती तो वह घर में चोरी भी करने लगी थी। उसकी हिम्मत बढ़ती जा रही थी। माँ अपनी दोनों बेटियों का पूरा विश्वास करती थी सो कभी अलमारी पर ताला भी न लगाती। एक दिन माँ ने साफ-सफाई करते समय अपनी अंगूठी उतार कर अलमारी में रख दी। रीमा ने मौका पाकर वह अंगूठी चुरा ली और सोचा कि वह उसे पड़ोस के सुनार के पास बेच देगी और उस से जो पैसे मिलेंगे वह अपनी सहेलियों के लिए गिफ्ट ख़रीदेगी।

उधर माँ ने जब सब काम निबटा कर अपनी अंगूठी ढूंढी तो अलमारी में न पाकर बहुत घबरा गयी। माँ ने सारे घर में अंगूठी को ढूँढने की बहुत कोशिश की, किंतु कहीं न मिली। सारा घर सो गया लेकिन माँ रात को बहुत बेचैन थी कि आख़िर अंगूठी अलमारी में से कहाँ गयी । कोई नया तो घर में आया भी न था। उसे रीमा पर शक हुआ और उस ने रीमा का बेग चेक किया। अंगूठी को रीमा के बेग में पाकर माँ तो धक् रह गयी और बड़ी उदास हो गयी। माँ ने सारी बात पिताजी को बताई। अब रीमा की पोल सबके सामने खुल गयी थी। माँ, पिताजी व दादी सभी ने उसको समझाया कि उसे घर में चोरी नहीं करनी चाहिए थी। रीमा अब बहुत रो रही थी, उसने सब से माफी माँगी। दादी ने उसे समझाते हुए कहा "बेटी हमेशा सबसे अच्छा व्यवहार करो , मीठा बोलो, किसी को परेशान न करो व सभी की मदद को तैयार रहो, तभी हम सुंदर लगते हैं और 'सुंदर हाथ' वे होते हैं जो काम अच्छा करते हैं " इसलिए भगवान के दिए दोनों हाथों से अच्छे काम करो। ऊपर की सुंदरता तो क्षणिक हैं अपने मन को सुंदर बनाओ। रीमा को अपने किए पर बहुत पछतावा था उसने घर में सब से वादा किया कि वह अब अपने व्यवहार में सुधार अवश्य करेगी।

Cecbros Belvederw, Model School road,
Kumarswamy Nagar, Opposite Nilgiri, Shollingnallore,
Chennai-600 119

बाल कथा

मामा-मौसी

● गोविंद शर्मा

राजू - नाम तो एक बच्चे का है, प्यारे से बच्चे का। पर मम्मी, पापा , मौसी, मामा उसे पता नहीं क्या क्या कहते हैं। कोई कहता है यह तो बला है, कोई उसे तूफान, मुसीबत, झगड़ा भी कह देते हैं। राजू है कि इन टिप्पणियों से बेखबर अपनी लीक पर चलता रहता है। लोग उसके प्रश्न पूछने की आदत से ज्यादा डरते है। जैसे उस दिन अपनी मां से पूछा- बताइए, बंदर का भाई कौन है और उसका नाम क्या है।

कितना अटपटा सवाल है, मां का नाराज होना स्वाभाविक है। पर राजू मां की नाराजगी से न नाराज हुआ, न निराश । बोला, आप जब भी मुझे कोई कहानी या कविता सुनाती है तो बंदर को मेरा मामा कहती हैं। बंदर मेरा मामा है तो उसका भाई हुआ....।

देखो राजू, तुम दिन ब दिन बदतमीज होते जा रहे हो। छुट्टियों में तुम्हारे मामा हर्ष आए हुए है, वह सारा दिन तुम्हारे साथ खेलते हैं, इसका मतलब यह नहीं कि तुम हर्ष को बंदर का भाई बताओ।

''ओह मां, आप तो यूं ही नाराज हो रही हैं। मैंने तो हर्ष मामा के बारे में सोचा ही नहीं कि वह बंदर के भाई हैं। आप ही बंदर मामा और चंदा मामा कहती हैं। जब बंदर और चांद दोनों मामा है तो वे दोनों आपस में भाई ही हुए।''

है कोई जवाब राजू की बात का? नहीं है, फिर भी राजू सबसे घुला मिला है। उस दिन मां ने राजू से पूछा - तुम्हारे पापा कहां हैं?

राजू ने तपाक के कहा - घर के पीछे मौसी के साथ खेल रहे है।

'' लो, मैंने उनसे कहा था, कि बिल्ली सुबह से भूखी है, उसे दूध पिला दो और , वह है कि रिचा के साथ ताश खेलने बैठ गये। इन जीजा, साली को घर का कोई काम करना तो सुहाता ही नहीं, सारा दिन टीवी, बातें, खेल और खेल ....बड़बड़ाती मां वहां पहुंची तो देखा बिल्ली को दूध पिलाया जा चुका है। राजू के पापा उसके साथ खेल रहे हैं। रिचा तो वहां है ही नहीं.....।

मां जोर से बोली- राजू...।

राजू वहां आया तो गुस्से में बोली- अब तुम झूठ भी बोलने लगे?

''नहीं मां , मैंने कोई झूठ नहीं बोला है।''

''तुमने कहा था कि पापा रिचा मौसी के साथ खेल रहे हैं, जबकि यहां रिचा तो है ही नहीं....।''

''मैंने रिचा मौसी कहा ही नहीं, मैंने तो सिर्फ मौसी कहा था। उन्हें तो रिचा आंटी कहता हूं। आपने ही सिखाया था बिल्ली मौसी....।''

अब हंसने की बारी पापा की थी। जोर से हंसते हुए बोले, ''वाह राजू, तुम्हारा मामा बंदर और मौसी बिल्ली...।''

इतना सुनते ही मां भुनभुनाने लगी..... कैसे हैं ये लोग- जैसा बेटा वैसा बाप.......।

बंदर को मामा और बिल्ली को मौसी कहने की राजू की आदत छुड़ानी ही होगी....।

आवास - मं. नं. 440, से. नं. 1, नई आबादी, संगरिया,
जिला हनुमानगढ़, राजस्थान-335 063, 0 94144 82280

दिनेश शर्मा की कविताएं

दादा की डायरी

दादा की डायरी में
पन्ना-दर-पन्ना दिखाई दिए
खेत, खलियान, पगडंडियां
अथक पथिक-पहाड़ संग
निरंतर यात्री दादा।

गेहूं के कठार, घी के कनस्तर और
आलू की बोरियों के हिसाब में
जोड़े हैं बराबर सुख-दुःख
परिवार की उम्मीदों के कपड़े
गुड़ और नमक का स्वाद।
दायित्व की पीठ पर दादा ने
निर्मित किया घर
निरंतरता की नींव के पत्थर
इच्छाओं के भार को झेलती कड़ियां
हाथ से हाथ मिलाती
समेटी हैं छत की सलेटें
तसला भर-भर मिट्टी
खुला किया खुशियों का आंगन।

कठिन जाड़ों को तापती
कोने-कणासे की धूप
शहद की मिठास छिपाए
यादों के ताखे
आराम की डाफी पर
फुर्सत की गप्पें
ज़िंदा हैं दादा की डायरी में।

ज़िंदगी के आखिरी पन्ने तक
नहीं दिखे दादा
अहम् का हुक्का गुड़गुड़ाते
फूंकते रहे सांझे चूल्हे में
रिश्तों की आग
पसीने की स्याही से
लिखते रहे कुनबे की डायरी।

अब पिता के साथ
धर दिए हैं मैंने अपने पांव
दादा के जूतों में
गा रहा है दादा का हर शब्द
ज़िम्मेदारियों का राग
सीख की मशाल दिख रही
जीवन की पगडंडियों से निकलता
दादा ने बनाया
पहाड़ पर रास्ता।

बीज
(एक)

पिता की आंखों में लहराती
पकती हुई फसल
मां सग समेटते रहे
दाना-दाना जीवन
अगली बुआई तक
घर के अंतरंग हिस्से में
पिता की देखरेख में रहती
फसल की पहली उपज
मां भी दोहराती अकसर
पिता की वाणी
खाए नहीं जाते बीज के दाने।

खेत की माटी
अरसे से जोह रही
बैलों को हांकते
हल की फाट में बीज रोपते
कई गुणा लौटाती ज़मीन
बीज नहीं खाती है ज़मीन
कहावतों में रचे
किसानी के अर्थ।

ढहती हुई बूढ़ी मेंढें
झाड़ियों में उगते प्रश्न
सुना रहे हैं
इतिहास के धुंधलके में
अदृश्य होते
कोदा, कावणी, बाथू के साथ
पिता की कहानी।
पिता के साथ कहानी हो गए
गांव के रिवाज़
लोक में खनकते साज़

खामोश है नसीहतों की भाषा
पोटली में बांध
दुनिया बसाने उस पार
पिता ले गए हैं जैसे
तहज़ीब के बीज।

उस पार पिता
जोतेंगे खेत
साधेंगे भूख
नई पीढ़ी के नाम
गाएंगे तहज़ीब के गीत
पिता होना बीज की हिफाज़त है।

बीज
(दो)

मुझे यकीन है
कंक्रीट के जंगल में
डॉलर की खनक के बीच
बहुराष्ट्रीय कंपनियों के स्नैक्स से
ऊबकर
एक दिन तुम
बंजर खेतों में दौड़कर
तलाशते रह जाओगे
ओगले की महक
कोदे का स्वाद।

तुम्हारा कागज़ी ज्ञान
गमली पौधों की प्रजातियों तक
सिमट रह जाएगा
बुजुर्गों की तहरीर के पन्नों से
चींटियों को खिलाए
भरे जेब अनाज़ से कमाया
ले लेना पुण्य का हिस्सा।

बीज की खेज में
चींटियों के पीछे
जाना होगा ज़मीन के नीचे
जड़ों के पास
सदियों के कर्मों के ढेर में
पड़े होंगे बाथू, कावणी, सतरंगी बीज।

माटी की गंध में लिपटी
बीजों की महक
पहचान पाओगे क्या
शहर से लौटकर?
धान की महक को धान कहने
जौ के स्वाद को जौ बताने के लिए
सीखनी होगी
चींटियों की भाषा
पहुंचना होगा उन आदिम गुफाओं में
जहां दीवारों पर खुदी जिजीविषा में
मिलेंगे बीज की भाषा के संकेत
चिह्न।

पुरखों के पुण्यों की रोशनी में
शुरू करना तुम
फिर से
बीज के जीवन की यात्रा।

प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय,
रामपुर, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश,
मो. 0 94184 74084

बाल गीत

गर्मी का मौसम

● नवीन हलदूणवी

गर्मी का मौसम है आया,
सूख रही है सबकी काया।

खाना वासी हुआ विषैला,
अम्मा ने हमको बतलाया।

मांग रहा है जीवन पानी,
ढूंढ रहे पक्षी भी छाया।

ठंडी कुलफ़ी मटके वाली,
खाने को मुन्ना ललचाया।

लू से बचना प्यारे बच्चो,
गुरुओं ने हमको समझाया।

वीर सपूत 'नवीन' बनेंगे,
भारत मां को शीश झुकाया।

काव्य कुंज, जसूर, जिला
कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 201,
मो. 0 941888 46773

कृष्णा ठाकुर 'कविता' की कविताएं

चिकना पत्थर

ऐसे ही नहीं हुआ ये पत्थर चिकना
नहर अथवा झरने के स्पर्श से भी नहीं
न ही किसी दरिया के मंथन व तीव्र बहाव से।
होश सम्भालते ही
जवानी से आज तक
घिसती आ रही है मां
इस पर दराती और दराट
लप करती तेज़ धार देने के लिए
खेत बगीचों और घासनियों को जाने से पहले।
इसी पत्थर पर
घिसे थे बापू ने कई किस्म लोहा
छोटी बड़ी कुल्हाड़ियां, फन्ने
उलट पलट कर
जंगल जाने से पहले ताकि
जल सके घर का चूल्हा;
भर सके लगे पेट
बना सके वो काठकुणी घरौंदा
अपने बच्चों के लिए।
जहां वे रह सके बेखौफ
खुंखार जंगली जानवरों
प्राकृतिक आपदाओं, गर्मी सर्दी के प्रकोप से।
हाथ फेरती हूं तो
जान पड़ता है मुलायम अर्धवृत सा
जैसे बचपन में गणित के कोण बनाने को
लगाती थी प्रकार से चाप।
याद है देखी थी एक और पत्थरी भी
लकड़ी के मिस्त्री भक्ता भैया के पास;
तेज़ होती जिसपे रन्दे की पतियां
कहते, शहर की दुकान में मिलती है ये।
आती होंगी बाज़ार की दुकान से पत्थरी
पर मेरे परिवार की पत्थरियां तो मिल जाती है
आज भी यहां वहां, कहीं खेतों की बीड़ों पर
जंगल में, खेत के रास्तों में ।
और धार देने के बहाने
मिल जाती पेडों की हवा भरी छांव
जायरू पानी का सकून
आराम पल भर का,
समयबद्ध खेतीबाड़ी के काम से।
इस चिकने पत्थर ने धुमा दिया था मुझे
पर्दे वाले चलचित्र के सामने।
षो खत्म हुआ तो,
पड़ा है उस वक्त के इन्तज़ार में
गवाह स्वरूप
ये चिकना पत्थर ।

हृदय तार

अभी तो थे यहां तुम
छेड़े-
हृदय तार मेरे
डूबी मग्न थी मैं
विलीन सातों सुरों में,
अनजान, अनभिज्ञ
हर विषय से-
सांसारिकता से-
मधुरमय, सुहाना अनुभव
दस्तक प्रेममयी, रोमांचक भरी
अपार हर्ष से झूमती, खिलखिलाती
झूलती अदृश्य झूला
विचरण नीले शून्य में कहीं
असीम सब्ज़ा में
उन्मुक्त पंछी सी।
चहचहाती कुलबुलाती भावनाएं
मखमली हवाओं सा स्पर्श
नहर सी सररर बहती जिन्दगी.......
कैसा विपर्यय?
बेरहमी झौंका
कर गया दिशा विहीन मुझे
उथल पुथल लहरें
मन सागर में तूफान
मृदुल कोमल भावों का कत्ल
भर गया मानसिक क्षोभ
अज्ञात सा भय
स्तब्ध, हतप्रभ
हृदय की अपार वेदना
बहाए ले चला
दर्द का दरिया
निर्ममता सा
संग अश्रुधारा के
बंधाके अभिलाषा
छिपे हो कहां तुम!
सब असहनीय
न दो इतना दर्द
सिर्फ मात्र एक बार
पुकारो-
स्नेहल स्वर से
इतनी नहीं अच्छी, आंख मिचौली,
बन आए प्राणों पर ही,
इन्तज़ार में मूंदें
नैना.._.
मैं यहां।

कृष्णा कुंज, बाशिंग, कुल्लू, जिला कुल्लू,
हिमाचल प्रदेश, मो.0 94180 63160

सतलुज घाटी की लोकगाथा...

(पृष्ठ 6 से आगे) अनुष्ठान हो रहा है और भीऊं अर्थात् भीम से गंगा लुप्त हो गई है। पांच पांडव देवी का शांत यज्ञ कर रहे हैं। अर्जुन ने गैंडे का मांस लाया है। उठो देवगण! मां के मंदिर में शांत यज्ञ आयोजित हो रहा है। इस प्रकार सतलुज घाटी में दिवाली पर ब्रलाज, रामायण एवं भारत के गाथा- गीतों का गायन पौराणिक कथानक की आंचलिक भाषा-बोली में गेय अभिव्यक्ति है। अल्प भिन्नता लोक कवि की व्यक्तिगत संवेदना का प्रतिफल है।

लोकगाथा में शिव स्तुति एवं पौराणिक पक्ष

शिव सतलुज घाटी के सर्वमान्य देव हैं। वे हिमाचल के जामाता हैं। अतः महाशिवरात्रि में आटे, मिट्टी और खट्टे फल (कैमट्) की मेखला रूप में यहां घर-घर पूजे जाते हैं। यहां शिव साधु भेष में राख आलेपन कर भक्तों के घर भिक्षा के लिए अलख जगाते हैं। निरमंड क्षेत्र का यह गाथा-गीत शिव को भावातिरेक से फकड़ बाबा निरूपित करता है :

महादेऊ नौगरी चालौ मांगदौ,
हायै पाओ गोरखा शोटू।
पैरां दी लाए खड़ाओ।
पीठी पाई मांगणे ए झोड़ी।
मूंहा लाऔ छारू आखे टीको।
घौरे-घौरे अलख जगाउओ।
महादेऊ औजौबी न आओ। क्रमशः

शिव की प्रतीक्षा में मां गिरिजा अधीर हो उठती है। चूंकि दिन ढलने को आया और परछाइयां पहाड़ों पर लंबी होने लगी हैं। माता गिरिजा को भी शिव शिवरात्रि के त्योहार में किसी के घर ले जाते हैं। मार्ग में चलते उनके पांव में छाले आ जाते हैं :

भोडे ईशरा तै एत कीलै आंणी
रौडै पोलड़ी न बातड़ पाणी।[18]

हे भोले ईश्वर! तुम मुझे कहां ले आए? मेरे पांव में न जूते हैं और न मार्ग में कहीं जल है। इस कथानक में गाथा-गीत के माध्यम से प्रिय इष्ट की स्नेह स्निग्धता दर्शनीय है।

लोकगाथाओं में कृष्ण भक्ति का स्वरूप

श्रीकृष्ण भागवत धर्म के शिरोमणि हैं। इस क्षेत्र में कृष्ण जन्माष्टमी पर कृष्ण लीला का गाथा-गायन पुराण कथा के अनुरूप है। कुमारसैन क्षेत्र के चेकुल और शिवान में कृष्ण जन्माष्टमी उत्सव को रवैंइश अर्थात् हरिवंश कहा जाता है। लोग इस दिन उपवास रखकर रात्रि को कृष्ण महिमा का यशोगान करते हैं। बाहरी सिराज क्षेत्र की लोक गाथा में कृष्ण जन्म का कारुणिक वर्णन मिलता है :

देवी जेबी ता जोमो कान्हा बॉड़ो देवता,
गैण रहियो घोमटा घोरा।[19]
गैणा बीता रहिए घोमटा घोरा, बिजड़ीए मारी चमकौरा।
चतुर सुहाई चतुरा सिपाई, सब कोई निंदीए भूले।

अर्थात् कृष्ण जन्म पर घनघोर घटा छा गई और भयंकर बिजली धमकने लगी। कंस के मुस्तैद सिपाई भी दैवयोग से घोर निद्रा में डूब गए।

कृष्ण लीला गान के अतिरिक्त इस क्षेत्र में देव-कोन्या गाथा का प्रचलन है जिसमें देवकन्या और बसु के विवाह का विशुद्ध वर्णन है। देव कन्या वासुकि नाग की पुत्री और तासुकि की बहन थी जिसे कंस ने धर्म बहन बनाया।

कुंती-नंती की गाथा में कुंती पांडवों और नंती को कौरवों की माता बताया गया है। इस गाथा में पांडवों को उद्दंड और कौरवों को शिष्ट निरूपित किया गया है :

मौने सूंचा, देउ विष्णु नरैणा
कौरू पांडुवै तै भाणजू मेरे
जैणे का मै सा तैणे बी न हेरे
ननती कुंती आती बैहाणी मेरी... क्रमशः

लोकगाथा में महान पुरुषों का आख्यान

कृष्ण जन्माष्टमी एवं अगले दिन गूगा नवमी को इस क्षेत्र में गूगा गाथा का गायन उल्लेखनीय है। यूं तो रक्षा बंधन से नवमी तक गायकों की टोलियां घर-घर जाकर गूगा गाथा गायन करते हैं। हाथ में डमरू और गूजु (स्पंदन वाद्य यंत्र) बजाते गायक गूगा महिमा का गान करते हैं। बिलासपुर भज्जी, करसोग और कुमारसैन क्षेत्र में गूगा गाथा का गान जोगीनाथ संप्रदाय के लोग करते हैं। गाथा के अनुसार गूगा जाहरपीर राजस्थान के मारवाड़ क्षेत्र के दुनेश रियासत के शासक थे :

मंगल वारे परगट होईयां शक्ति नाम रखाया
दक्खण पूर्व संघ चढ़ि आऊंदे दर बिच आसन लाया
लै फिर दक्खणा फिरन चफेरे दर बिन आसन लाया।

गूगा नाथ संप्रदाय के सशक्त पुरुष माने जाते हैं। गूगा के उपासना स्थल मढ़ी या बान कहे जाते हैं। गूगा सर्पदंश और भूत-प्रेत छाया के निवारण के सशक्त सिद्ध माने जाते हैं।

मोहणा की लोक गाथा बिलासपुर की कारुणिक गाथा है जिसमें एक भोला-भाला भाई मोहणा चतुर भाइयों के द्वारा किए गए हत्या के जघन्य अपराध के लिए फांसी चढ़ गया। करुण विगलत लोग मोहणा के अपने भाइयों के लिए किए गए जीवन बलिदान को देखकर रो पड़ते हैं।

आया मरणा ओ मोहणा आया मरणा
तेरे भाइया रीया कितियां आया मरणा।
रोया करदी ओ मोहणा रोया करदी
तेरी बालक बलेसरू रोया करदी...।

सतलुज घाटी के ननखरी के पुनण और भोड़आ गांव के भेड़ पालक ग्रामीण व पुनण के खशिया चरनू का कथानक गाथा-गीत

में आज भी जीवित है। वीर चरनू की एक भेड़ और बकरी को व्याघ्र द्वारा मारे जाने पर वह उसे जंगल में ललकारता है। अपनी बंदूक की कमाणी टूट जाने पर वह व्याघ्र से द्वंद्व युद्ध कर अंत में उसे मार देता है और स्वयं भी वीरगति को प्राप्त होता है :

संगीया चलो साथीयो होरया लाए
इणो न बोलणो चरनू गो खाए।
शोले री लिखो कोठिया कूकड़ू मोरा
चरनू नोरा छेवडा पजढान ओरा।[20]

करसोग क्षेत्र में माघ मास की संक्रांति से लेकर चतुर्दशी तक नाथ समुदाय के लोगों द्वारा वास्तवारा (वसंत बहार) गाथा का गायन घर-घर जाकर किया जाता है। वास्तवारा लोकगाथा की अंतर्वस्तु में वेवैश्य ऋषि पुत्र श्रवण कुमार के जीवन-चरित्र, दशरथ द्वारा अनजाने में श्रवण कुमार की गाथा और श्रवण कुमार की पितृ भक्ति की भावोत्पादक वर्णन है। गाथा में सृष्टि वर्णन के साथ-साथ पितृभक्ति का उपदेशात्मक वर्णन है :[21]

हर-हर गंगे वासुदेव, जय नरैणे राम-राम
राम करैथे युग-युगमियो, शिव-शिव करे बयाए
गौरी पुत गणेश, पाप हरे हर जावे।
जागो चेतो घरमियो, नींद न करो प्यारी... क्रमशः

लोक गाथाओं में देवाख्यान

सतलुज घाटी देवभूमि है। यहां क्षेत्र अधिष्ठात्री भीमाकाली, अंबिका देवी, परशुराम, कोटेश्वर महादेव, मानणेश्वर महादेव पंदोई देव, देव कुरगण, ममलेश्वर महादेव, शमशरी महादेव, माहूंनाग और चिखड़ेश्वर महादेव जैसे देवी-देव मंदिर पुरातन काल से संस्कृति व परंपराओं के संरक्षक रहे हैं। देवाख्यान वस्तुतः गोपनीय होता है। मान्यता है कि देवाख्यान जिसे स्थानीय बोली में भारथ अथवा घटसाणी कहते हैं, इसका तभी वाचन-गायन होता है जब देवोत्थान की आवश्यकता होती है। अतः देवी-देवताओं के आख्यान अधिकतर कथा रूप में लोकगाथाओं से सार-संक्षेप रूप में उपलब्ध हैं। देवोत्सव जैसे जन्मोत्सव, संक्रांति, शांद, दिवाली, जागरा जैसे अवसरों पर भारथ (देवोत्थानपरक गाथा) का गायन होता है। इसके अतिरिक्त तीर्थयात्रा से लौटे देवी-देवता अपनी यात्रा का वृतांत गूर या माली के माध्यम से करता है। बाहरी सिराज(कुल्लू) में पौष मास को अंधेरा महीना कहा जाता है। अतः यहां का देव समाज इस मास में इंद्रलोक, शिवलोक अथवा यक्ष-राक्षस से प्रजारक्षण के निमित्त युद्ध करते हैं। तदोपंरात फाल्गुन मास की संक्रांति में 'गड़ाई' उत्सव में देवी-देवताओं द्वारा अपनी यात्रा व युद्ध का आख्यान किया जाता है और उसी आधार पर भविष्यवाणी भी उद्घोषित होती है।

करसोग घाटी के आराध्य नाग माहूंनाग गलेओग की गाथा में माहूंनाग की कर्ण रूप की उत्पत्ति का वर्णन है। इस गाथा में दानवीर कर्ण ने दरिद्र ब्राह्मण पुत्र को पिता की अंत्येष्टि के लिए अपने सिंहासन को तुड़वाकर चंदन लकड़ी का दान दिया था :

करण राजे किया बचार, कहड़े कियो ब्राह्मण धवार।
भराड़े रीतिये चानण सीना, द्वारे न छाढ़िये कोई परीना।
मेरा संघासण असको सुका, संघासण सैगु नऊआ नरांगा।
संघासणे टुकिया सहड़ बणाये, द्वारा का जाओ न कीही नरासा।[22]

देवगाथाओं के अतिरिक्त गोरखनाथ परंपरा के राजा भर्तृहरि (भरथरी) की गाथा सर्वप्रचलित है जिन्होंने मिथ्या संसार को छोड़ संन्यास धारण किया :

अजबे री पूजा ढाई दा ग राजेआ आम्मे दित्ता छातिए न लाई।
पिंगले देख दो सबे आजो मुल्कअ आम्मे दिती पोरी आरती लाई।

सतघाटी में वैदिक, पौराणिक, सिद्धनाथ, नाग एवं लौकिक महान आत्माओं की जीवन चरित एवं शौर्य गाथाओं का वाचन-गायन यहां की आदि संस्कृति को चिर जीवन प्रदान करता है। गाथाओं में छुपी शिक्षाएं यहां के जनमानस में मानवीय मूल्यों का चिरकाल से संरक्षण करती आई है। वस्तुतः यहां प्रचलित लोक गाथाएं यहां के इतिहास की वो सरिताएं हैं जिनसे घटनाओं का कालक्रम सूत्रबद्ध हुआ है।

प्राचार्य, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, मैलन,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-172 031, मो. 0 94180 57274

संदर्भ ग्रंथ

1. ऋग्वेद 10.75.6
2. Mian Goverdhan Singh Himachal Pradesh: History Culture and Economy Shimla, 1998, p 21
3. नागेंद्र शर्मा हिमाचल का उत्तरांचल रामपुर बुशहर, रामपुर, 1996, पृ. 16
4. डॉ. पदम चंद्र कश्यप, भारतीय संस्कृति और हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, 2003, पृ. 14-15
5. Cunnigham, Coins of Ancient India, Varanasi, pp 70-71
6. K.A.Nilkanth Sastri, Comprehensive History of India, Bombay, 1957 Vil II. p 136
7. Hari Krishan Mitto, Himachal Pradesh New Delhi, 1978, p 24
8. महाभारत, 1 द्रोणपर्व 121. 14. 16. कर्ण पर्व 5.19
9. मद्रेणेहन्यश्च कौणिंदा-शतद्रुजा : कुणिंदाश्च।
10. रामकृष्ण शर्मा, गांव करयाली, चिखड़ तह. ठियोग, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश।
11. डॉ. पदम चंद्र कश्यप, कुल्लुवी, लोक साहित्य, दिल्ली 1972, पृ. 131-32
12. बाबू राम शर्मा, गांव पाहल, तह. सुन्नी, शिमला, हि. प्र.
13. रामकृष्ण शर्मा, गांव करयाली, चिखड़, तह. ठियोग, शिमला
14. पद्मपुराण, सृष्टि खंड।
15. डॉ. इंद्राणी चक्रवर्ती, हिमाचल प्रदेश के गाथा-गीतों की शैलियां हिमाचल प्रदेश का लोक संगीत, हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी, शिमला, 2000, पृ. 167

गोदान : अतुलनीय कृति

(पृष्ठ 10 से आगे) यह प्रयोग गोदान के पहले पृष्ठ से लेकर आखिरी पृष्ठों तक व्यापक रूप सें फैला हुआ है। चूंकि गोदान में प्रेमचंद ने इतने मुहावरे, कहावतें व सूक्तियों का प्रयोग किया है जिनके लिए एक अलग से स्वतंत्र आलेख लिखने की आवश्यकता है अतः नीचे स्थानाभाव के कारण मुख्य-मुख्य किन्तु महत्त्वपूर्ण मुहावरे, कहावतें और सूक्तियों को पाठकों के अवलोकन हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है।

'मर्द साठे पर पाठे होते हैं।', 'आशा में कितनी सुधा है।', 'सम्पत्ति और सहृदयता में बैर है।', 'घरनी के बिना घर नहीं रहता भैया।', 'औरत को भगवान सव कुछ दे, रूप न दें, नहीं वह काबू में नहीं रहती।', 'अगर भिक्षुक को भीख मिलने की आशा हो, तो वह दिन भर और रात भर दाता के द्वारा पर खड़ा रहे।', 'मर्द का हरजाईपन औरत को भी उतना ही बुरा लगता है, जितना औरत का मर्द को।', 'स्वेच्छा अगर अपना स्वार्थ छोड़ दे, तो अपवाद है।', 'आश्चर्य अज्ञान का दूसरा नाम है।', 'पुत्र माता के रिन से सौ जनम लेकर भी उरिन नहीं हो सकता, लाख जनम लेकर भी उरिन नहीं हो सकता, करोड़ जनम लेकर भी नहीं।', 'वैद्य एक बार रोगी को चंगा कर दे, फिर रोगी उसके हाथों विष भी खुशी से पी लेगा।', 'बहुत धन पाकर आदमी सनकी हो जाता है। बहुत पढ़ लेने से भी आदमी पागल हो जाता है।', 'पुरुष में नारी के गुण आ जाते हैं, तो वह महात्मा बन जाता है। नारी में पुरुष के गुण आ जाते हैं, तो वह कुलटा हो जाती है।', 'ब्याह तो आत्मसमर्पण है।' 'अगर ब्याह आत्मसमर्पण है तो प्रेम क्या है।' 'प्रेम जब आत्मसमर्पण का रूप लेता है, तभी ब्याह है, उसके पहले ऐयाशील है।', 'सत्य की एक चिनगारी असत्य के एक पहाड़ को भस्म कर सकती है।', 'स्त्री पुरुष से उतनी ही श्रेष्ठ है, जितना प्रकाश अंधेरे से।', 'कुलटा के मुँह से सतियों की सी बात सुनकर किसका जी न जलेगा।', 'हिंदू स्त्री पति के साथ घर की स्वामिनी है, और पति त्याग दे, तो कहीं की नहीं रहती।', 'कुत्ता हड्डी की रखवाली करे तो खाए क्या ?', 'शराब अगर लोगों को पागल कर देती है तो इसलिए उसे क्या पानी से अच्छा समझा जाये, जो प्यास बुझाता है, जिलाता है, और शान्त करता है ?', 'जिसके पास पैसे है वही भला आदमी, पैसे नहीं, तो उस पर सभी रोब जमाते है।', 'यह ऊपरी आमदनी की चाह आदमी को खराब कर देती है।', 'वही सीमेंट, जो ईंट पर चढ़कर पत्थर हो जाता है, मिट्टी पर चढ़ा दिया जाय, तो मिट्टी हो जाएगा।', 'जो छोटों के मुँह लगे, वह छोटा।', 'चिड़िया एक बार परम जाती है, तभी दूसरी बार आँगन में आती है।', 'आदमी जूठा तभी खाता है, जब मीठा हो।', 'ईंट का जवाब चाहे पत्थर हो लेकिन सलाम का जबाव गाली नहीं है।', 'कुलच्छनी के आते ही जैसे लक्ष्मी रूठ गयी।', 'खतरे में हमारी चेतना अन्तर्मुखी हो जाती है।', 'सत्पुरुष धन के आगे सिर नहीं झुकाते है।', 'गुड़ घर के अन्दर मटको में बन्द रखा हो, तो कितना मूसलाधार पानी बरसे, कोई हानि नहीं होती, पर जिस वक्त वह धूप में सूखने के लिये बाहर रखा हो उस वक्त तो पानी का एक छींटा भी उसका सर्वनाश कर देगा।', 'जब तक मनुष्य रहेगा, उसकी पशुता भी रहेगी।', 'ऐश की भूख रोटियों से नहीं जाती।', 'बस, इतना ही समझ लो कि सुख में आदमी का धरम कुछ और होता है, दुःख में कुछ और।', 'सुख में आदमी दान देता है, मगर दुःख में भीख तक माँगता है। उस समय आदमी का यही धरम हो जाता है।' आदि। पाठक 'गोदान'को पढ़कर स्वयं ही यह अंदाजा लगा सकते है कि इस उपन्यास की लोकप्रियता व श्रेष्ठता में मुहावरे, कहावतें एवं सूक्तियों का कितना बड़ा योगदान है।

इस विवेचनापरक अध्ययन के बाद समग्रतः यह कहा जा सकता है कि 'गोदान' हिंदी साहित्य का एक ऐसा महाकाव्य है जिसे जितना भी पढ़ा जाए मन नहीं भरता। उपरोक्त आलेख में दी गयी जानकारी संक्षेप ही है। प्रत्येक बिन्दु एक स्वतंत्र आलेख की अपेक्षा रखता है, जो स्थानाभाव के कारण यहां संभव नहीं था। इसके अलावा भी गोदान में शोध की अनेक प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती है। इस उपन्यास की प्रासांगिकता आज भी उतनी ही धारदार व चमकदार है जितनी इसके प्रकाशन वर्ष 1936 में थी। इसकी चमक कभी भी फीकी नहीं पड़ सकती है। गोदान का होरी एक आम किसान है और एक किसान अपनी जमीन से कितना मोह करता है, यह किसी से छिपा नहीं है। जमीन ही उसका परिवार है व जमीन ही उसकी दौलत है। जमीन खोकर वह मजदूर बनने को तैयार नहीं है।

आवास क्रमांक एच-3, राजीव गांधी प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, एयरपोर्ट वायपास रोड, गांधी नगर, भोपाल-462033 (म.प्र0.), मो0 09826583363

संदर्भ :-

(1) चिट्ठी-पत्री, भाग-1, हंस प्रकाशन इलाहाबाद,
(2) चिट्ठी-पत्री, भाग-2, हंस प्रकाशन इलाहाबाद, (3) प्रेमचंद : कलम का सिपाही, अमृतराय, हंस प्रकाशन इलाहाबाद,
4) प्रेमचंद रचनावली, भाग-1, रूपरेखा, जनवाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, (5) प्रेमचंद : एक साहित्यिक विवेचन, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली, सं0 2013 (6) साहित्य, वर्ष 11, अंक 1
(7) प्रेमचंद, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं0 2011 (7) प्रेमचंद : जीवन, कला और कृतित्व, साक्षी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2010
(9) गोर्की और प्रेमचंद : दो अमर प्रतिभायें, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. , नई दिल्ली, वर्तमान संस्करण (10) प्रेमचंद रचनावली, भाग-7, जनवाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1996
(11) गो-दान, प्रथम संस्करण 10 जून 1936, मूलपाठ, संकलन-संपादन : डॉ. कमल किशोर गोयनका, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2015,
(12) प्रेमचंद : मोनोग्राफ, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली (13) गोदान विमर्श, सं. डॉ. महेन्द्र भटनागर, किताब महल इलाहाबाद

रपट

जीत गए सब गर्दभ लोमड़ लगा निराले दाव

● विजय कुमार पुरी

हिमाचल प्रदेश में आजकल हो रही साहित्यिक गतिविधियों ने सभी का ध्यान आकर्षित किया हुआ है। इन आयोजनों की क्रियान्विति चाहे प्रदेश का भाषा विभाग और अकादमी कर रही हो या निजी तौर पर निजी साहित्यिक संस्थाएं। मूलतः उद्देश्य एक ही है, प्रतिष्ठित और नवोदित नवागतों का एक मंच पर लाना और साहित्यिक उत्थान, भाषायी परिष्कार तथा हिमाचली भाषा एवम् संस्कृति को सभी सहृदयों तक पहुंचाना। पिछले दिनों प्रसिद्ध शक्ति पीठ माँ ज्वालामुखी से पांच किलोमीटर नादौन की तरफ अधे दी हट्टी गांव में राष्ट्रीय कवि संगम हिमाचल इकाई तथा नॉयर्ड संस्था के संयुक्त तत्त्वावधान में एक विस्तृत बहुभाषीय कवि सम्मेलन, पुस्तक लोकार्पण तथा विलुप्त हो रहे जल स्रोतों के संरक्षण पर गोष्ठी हुई। इस गोष्ठी में पंजाब, जम्मू, चंडीगढ़ तथा प्रदेश के विभिन्न ज़िलों से लगभग साठ कवि विद्वानों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई।

प्रसिद्ध शक्ति पीठ माँ ज्वालामुखी से पांच किलोमीटर नादौन की तरफ अधे दी हट्टी गांव में राष्ट्रीय कवि संगम हिमाचल इकाई तथा नॉयर्ड संस्था के संयुक्त तत्त्वावधान में एक विस्तृत बहुभाषीय कवि सम्मेलन, पुस्तक लोकार्पण तथा विलुप्त हो रहे जल स्रोतों के संरक्षण पर गोष्ठी हुई। इस गोष्ठी में पंजाब, जम्मू, चंडीगढ़ तथा प्रदेश के विभिन्न ज़िलों से लगभग साठ कवि विद्वानों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई।

कवि गोष्ठी का आरम्भ इस गांव के वयोवृद्ध कवि ज्ञान चन्द कोहलवी ने अपने मोहक अंदाज से गायन शैली में धौलाधार को नारी रूप में चित्रित करते हुए यूं कहा

"चिट्टी चादर चांदी मढ़ीयु, ओढ़े चादर खड़ी मुटियार। झरझर झरने गीतां गां दे, नदियां पाणी बेशुमार।"

पीपल पूजन परम्परा और प्रकृति की रक्षा हेतु गुहार लगाते विनोद भावुक कहते हैं- "बेशक असां पुजाय पीपल। पर नी असां बचाए पीपल। हुँण बूटे नोएं कुण लगाए। सुकदे मुकदे आए पीपल।" आज समाज में फैले आतंकवाद के डर से सहमा आदमी अकेलेपन से किस प्रकार से डरता है, अतुल अंशुमाली ने इसका वर्णन बखूबी किया है----"काफिले जब शहर में आकर बिखरने लगते हैं। लोग कुछ अपनी तन्हाई से डरने लगते हैं।" मण्डी से आए कृष्ण महादेविया ने राजनीति पर व्यंग्यात्मक लहजे में कहा है-- "जीत गए सब गर्दभ लोमड़ लगा निराले दाव। सत्ता में एक एक कर पास हुए सब काव।"

नारी व्यथा से व्यथित चंबा से आए जगजीत ने अपने भाव यूं व्यक्त किए--"अबला चीखें दबकर रह जाएंगी हाहाकारों में। जब तक भीष्म कैद रहेगा बेगैरत दरबारों में।" औरतों की दुर्दशा पर नलिनी विभा नाज़ली अपनी मखमली आवाज़ में नारी की कहानी सुनाती हुई कहती हैं---"इल्मियत कितनी भी हो, पर ज़िंदगानी एक है। औरतों के भी मुकद्दर की कहानी एक है।" कुल्लू की कृष्णा ठाकुर नारी जाति की पक्षधर बन कहती हैं--"मेरी जिन्दगी को जिन्दगी रहने दो। दरिया हूँ दरिया सी बहने दो। चूड़ी बिंदी सिंदूर से नहीं गुजारा अब। हमें हिम्मत शिक्षा प्यार साथ जैसे गहने दो।" अपने गम को छुपाने में माहिर स्त्री भावों को पवन चौहान ने सुंदर शब्द संयोजन द्वारा प्रस्तुत किया है- "नाचती है वह। नाटी की हर ठुमक पर, जोर जोर से दिल खोलकर। अपने हर गम को फेंकते हुए।" ऊना की डेज़ी शर्मा पौराणिक सन्दर्भ को नारी से जोड़ कर कहती हैं- "दमघोंटू आकांक्षाएं, और देनी होगी। बस अग्नि परीक्षा जारी है।" नालागढ़ की नवोदित अनुराधा जांगड़ ने अपने भाव इस तरह अभिव्यक्त किए- "कुछ लोग होते हैं, ठोकरें खाकर सम्भल जाते हैं। हमें तो ठोकरों में ठोकरें मिली हैं, सम्भलने का मौका ही न मिला।" अनुराधा की खनकती आवाज़ अवश्य ऊंचाइयां छुएगी।

जीवन दर्शन पर बात करते हुए सत्येंद्र गौतम कहते हैं- 'मैं जीवन दर्शन को इतना ही समझ पाया हूँ, कि राग द्वेष से आगे नहीं बढ़ पाया हूँ।" कांगड़ा से आए कुशल कटोच- "मैं जिधर जिधर गया हूँ, मुझे नजर आता वही। मैं किधर किधर गया हूँ, मुझे

कविता

प्रदूषण के गुबार

● संजय वर्मा 'दृष्टि'

भौरे की निद्रास्थली
होती बंद कमल में
उठाती है सूरज की पहली किरण
देती दस्तक
खुल जाती द्वार की तरह
पंखुड़ियाँ कमल की

गुंजन से करते स्वागत
फूलों का
मुग्ध समर्पित हो
फूल देते है दानी की तरह
किट-पतंगों को मकरंद

भोरें कभी
कृष्ण की राधा के लिए
बन जाते थे, सन्देश वाहक
मूछों पर मकरंद लिए
कृष्ण की माला का

बालों में सजे
राधा के फूलों में बैठ
बतियाते गुंजन से-
कृष्ण याद कर रहे

आज वो बात कहाँ ?
फूलों से खुश्बू छीन रहे
प्रदूषण के गुबार
इसलिए संदेश वाहक भोरें
हो गए अपने कर्तव्य से विमुख

125, शहीद भगत सिंह मार्ग
मनावर जिला धार, मध्य प्रदेश

सोचना पड़ेगा।"- के भाव भी ऐसे ही हैं। सुरेश भारद्वाज ने हिमाचली पहाड़ी में लोगों को समझाने की कोशिश इस तरह की है- "दिल नी कुसी दा दुखाना मित्र। बुरा नी कुसी जो ग्लाणा मित्र। पुठे रस्ते कोई नई पाणा। सिधे ही भिजवाना मित्र।" सच में सभी को सही राह ही बताना चाहिए।

राजेन्द्र पालमपुरी बात को नतीजे तक पहुंचाकर ही डीएम लेने की बात करते हैं- "बात चली तो बात बहुत है। सुनते जाइये रात बहुत है।" इसी तरह के भाव अन्य कवियों यथा- जग्गू कौंडल, भूपेन्द्र भूपी, राकेश पत्थरिया, सुमन शेखर, अशोक कालिया, अशोक दर्द, सुभाष साहिल, प्रियम्वदा, मोनिका, सुशील इलाक्षी, इंदु वाला, प्रतिभा शर्मा, प्रभात शर्मा, वीरेंद्र वीर, विजय पुरी, हरीश, जितेंद्र रजनीश, हरि कृष्ण मुरारी, कमल आदि कवियों ने भी प्रस्तुत कर श्रोताओं को बांधे रखा। जल संरक्षण पर लगाई प्रदर्शनी को भी सभी आगन्तुकों ने खूब सराहा।

इस कार्यक्रम के अध्यक्ष राष्ट्रीय कवि संगम के राष्ट्रीय सलाहकार नरेश नाज़ और जम्मू इकाई के अध्यक्ष केवल कृष्ण, महासचिव यशपाल निर्मल, पंजाब इकाई के अध्यक्ष दिनेश देवघरिया, महासचिव अमृत पाल, चंडीगढ़ इकाई के अध्यक्ष सुशील हसरत नरेलवी को हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर के पूर्व कुलपति श्याम कुमार शर्मा तथा ग्राम सुधार सभा ने आए हुए अतिथियों को टोपी पहनाकर सम्मानित किया। कार्यक्रम का अन्य मुख्य आकर्षण एक साथ हिमाचली पहाड़ी की तीन पुस्तकों- ओंकार 'फ़लक' की "कालियां धारां सूरज उग्गै", नवीन हलदूनवी की 'सुथरी सोच', भगत राम मन्डोत्र की 'जुड़दे पुल'- का लोकार्पण भी रहा। अपने अध्यक्षीय सम्बोधन में नरेश नाज़ ने तीनों रचनाकारों को बधाई दी और सामाजिक सरोकारों, देश में हो रही हलचलों पर समीक्षात्मक संक्षिप्त टिप्पणी करते हुए देशप्रेम से ओतप्रोत गीत सुनाया।

साथ ही उन्होंने स्थानीय निवासियों और ग्राम सुधार सभा के समस्त पदाधिकारियों और सदस्यों का आभार व्यक्त किया कि उनके सहयोग से कवि गोष्ठी सम्पन्न हुई और सुस्वादु भोजन करवाने के लिए सभा का आभार व्यक्त करते हुए धन्यवाद भी किया। अंततः उन्होंने हिमाचल प्रदेश की राष्ट्रीय कवि संगम इकाई के प्रयासों की जमकर सराहना भी की और आगामी योजनाओं के लिए शुभकामनाएं भी दीं।

ग्राम पदरा पोस्ट हंगलोह, तहसील पालमपुर ज़िला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176059, मो. 98161 81836

समीक्षा

लोक साहित्य में दैव संस्कृति की तलाश

● डॉ. हेमराज कौशिक

संस्कृति एक व्यापक अवधारणा है जिसके अंतर्गत मानव के समस्त क्रिया-कलाप, रीति-रिवाज, परंपराएं, पर्व, त्योहार, आस्थाएं और विश्वास, आत्मिक जीवन की शुद्धता और समृद्धि आदि सन्निहित किए जाते हैं। संस्कृति जीवन के बाह्य पक्ष की अपेक्षा आंतरिक पक्ष पर बल देती है, इसी कारण से संस्कृति सभ्यता से भिन्न होती है। किसी भी समाज के मूल्य तथा सामाजिक मानदंड क्या होंगे तथा व्यवहार का स्वीकृत ढंग कौन-सा होगा, ये समाज की संस्कृति ही निर्धारित करती है। संस्कृति जब किसी विशेष जनपद के लोक जीवन की आस्थाओं, विश्वासों, तीज-त्योहारों, परंपराओं, भाषा, संगीत व कला तक सीमित होकर व्यक्त होती है तो उसे लोक संस्कृति की संज्ञा दी जाती है। हिमाचल प्रदेश की लोक संस्कृति का स्वरूप भारतीय संस्कृति की भांति आध्यात्मिक है। इस प्रदेश के जनपद के अपने देवी-देवता हैं। शताब्दियों से लोक देवता जनमानस में शक्ति का संचार करते रहे हैं। प्रत्येक जनपद के 'लोक' ने लोक देवता को अपनी परंपराओं, रुचियों, आकांक्षाओं के अनुरूप अपना परम आराध्य माना है और अपने ग्राम देवता की प्रतिष्ठा की है। वस्तुतः देव आराधना की परंपरा हमारे यहां पहले से है।

'लोक साहित्य में दैव परंपरा' डॉ. मनोज शर्मा की इस दृष्टि से उल्लेखनीय शोधपरक आलोचनात्मक कृति है। इस पुस्तक में लेखक ने आठ अध्यायों में लोक साहित्य में दैव संस्कृति का विभिन्न दृष्टियों से विवेचन किया है। प्रारंभिक अध्याय में लोक साहित्य का सामान्य परिचय दिया गया है। लोक साहित्य के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए लोक शब्द की उत्पत्ति को वेदों, उपनिषदों, नाट्यशास्त्र, अष्टाध्यायी आदि प्राचीन ग्रंथों के संदर्भ में विश्लेषित करने का प्रयास किया है। लोक साहित्य के व्युत्पत्तिपरक अभिप्रेत को स्पष्ट करते हुए लोक और साहित्य की परस्पर सापेक्षता और संस्कृति से इसकी नैसर्गिक संपृक्ति को ऐतिहासिक पौराणिक संदर्भों में प्रमाणित किया है।

लोक शब्द के स्वरूप को विश्लेषित करने के लिए डॉ. सत्येंद्र, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, डॉ. रवींद्र भ्रमर, डॉ. श्याम परमार 'सखा' आदि प्रभृति विद्वानों के मंतव्यों का आश्रय लिया गया है। लोक साहित्य की सामान्य विवेचना के अनंतर दूसरे अध्याय में हिमाचली लोक साहित्य का परिचयात्मक विवेचन है। इस पर्वतीय क्षेत्र की अपनी संस्कृति और लोक साहित्य है। इस क्षेत्र का उत्तरी भाग जो हिमालय के उत्तरी भाग तक फैला है, नाग, खश, किन्नर तथा किरात आदि आदिम जातियों का निवास रहा है। इन जातियों की संस्कृति भौगोलिक परिस्थितियों के कारण भिन्न रही है। लेखक ने डॉ. ग्रियर्सन, डॉ. सूर्यकिरण पारीक, डॉ. पदमचंद्र कश्यप, डॉ. बंशीराम शर्मा जैसे मर्मज्ञ विद्वानों के मतों को प्रस्तुत करते हुए हिमाचली लोक साहित्य के स्वरूप को विवेचित किया है।

उन्होंने लोक साहित्य का वर्गीकरण भी प्रस्तुत किया है। लोकगीत, लोगगाथाएं, लोककथाएं, लोकनाट्य, लोक सुभाषित आदि को लेखक ने लोक साहित्य के प्रमुख अंग माना है। हिमाचली लोक साहित्य की प्रमुख विशेषताओं का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत करते हुए लेखक ने अपने शोध विषय को हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिले के लोक साहित्य और संस्कृति तक परिसीमित रखा है ताकि विषय का गहनता और सूक्ष्मता से विश्लेषण किया जा सके।

तीसरा अध्याय 'हिमाचली लोक साहित्य में प्रचलित परंपराएं तथा संस्कारों पर केंद्रित है। हिमाचल प्रदेश में लोक संस्कृति की विरासत के नाम से अभी भी बहुत कुछ सुरक्षित है जिसका श्रेय यहां के आस्थावान जनमानस को रहा है। आज भी संस्कृति से संपृक्त सस्कार और परंपराएं अपना अस्तित्व बनाए हुए है।

संस्कारों के मनाने की यह परंपरा अन्य जिलों की भांति सिरमौर में भी यथावत प्रचलित है। सनातन मान्याताओं के अनुसार सोलह संस्कारों का महत्त्व है। जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कारों का पालन लोक जीवन का अंग रहा है। लेखक ने इस अध्याय में कुछ संस्कारों का विवेचन किया है। जन्म संबंधी संस्कार, नामकरण, नलवा छेदन, दसूट्ठन आदि संस्कारों के स्वरूप को जिला सिरमौर के संदर्भ में विश्लेषित किया है। विवाह संबंधी परंपराओं, सगाई, विवाह के प्रकार, बहुपत्नी प्रथा, बहुपति

प्रथा, विवाह संबंधी प्रतिबंध, विवाह तथा पैतृक अधिकार विधवाओं के अधिकार, पुत्रियों के अधिकार, बहुपति प्रथा में उत्तराधिकार, गोद लेना, पगड़ी बदलना आदि का समाजशास्त्रीय विवेचन इस अध्याय के अंतर्गत किया गया है।

जीवन संबंधी संस्कारों के अतिरिक्त मृत्यु संबंधी परंपराएं और रस्में लोक प्रचलित हैं जिनका पालन सिरमौर का समाज करता रहा है। सिरमौर जनपद के लोगों का रहन-सहन, व्यवसाय, वेशभूषा, घर आवास, घरों का सौंदर्यकरण, आमोद प्रमोद के साधन, गीत, नाटी, रास, हारे और बूढ़ा नाच झीयरू आदि लोक सांस्कृतिक पक्षों का विवेचन प्रस्तुत करके लेखक ने एक जनपद की सामाजिक सांस्कृतिक तसवीर सामने लाई है।

'हिमाचली लोक साहित्य एवं संस्कृति का महत्त्व' शीर्षक अध्याय में लेखक ने हिमाचली लोक साहित्य की संक्षिप्त पृष्ठभूमि प्रस्तुत करने के अनंतर लोक संस्कृति के महत्त्व को विद्वानों के मंतव्यों को आधार बनाकर ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, शिक्षा संबंधी, भाषा वैज्ञानिक, आचारिक और सांस्कृतिक में वर्गीकृत किया है। इन उपशीर्षक के अंतर्गत लेखक ने सिरमौर रियासत का अतीत और वर्तमान विवेचित किया है। सिरमौर रियासत का इतिहास लेखक ने विस्तार से विश्लेषित किया है। प्राचीन सिरमौर की सीमाएं कहां तक व्याप्त थीं, यहां के राजाओं ने अपने अपने साम्राज्य विस्तार के लिए किन-किन भू-भागों पर आक्रमण किए और जय-पराजय का क्या इतिहास रहा- इस अध्ययन का विषय रहा है। सिरमौर के अंतिम राजवंश की नींव किस प्रकार पड़ी, इसके संदर्भ में इस जनपद में प्रचलित लोक कथा का उल्लेख किया है। लोक कथा तथा अन्य घटनाओं के संदर्भ में डॉ. मनोज शर्मा ने यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया है कि ग्यारहवीं शताब्दी में वैभवशाली सिरमौर राज्य की राजधानी राज परिवार सहित ध्वंस हो गई थी जिसके फलस्वरूप नए राजवंश की परंपरा बनी जो अजमेर के राजवंश से संबंध होने के कारण पलाशिया वंश कहलाया। इस वंश की नींव 1195 ई. के लगभग पड़ी। इस वंश में 47 राजा हुए जिनमें राजा शुभवंत प्रकाश प्रथम तथा महाराजा राजेंद्र प्रकाश अंतिम शासक थे। लेखक ने डिस्ट्रिक्ट सिरमौर के गजेटियर के आधार पर सैंतालीस राजाओं की सूची प्रस्तुत की है तथा प्राचीन ऐतिहासिक स्रोतों का उल्लेख किया है। सिरमौर के नामकरण की सार्थकता के संबंध में उनका कहना है, "सिरमौर का शाब्दिक अर्थ है सर्वोपरि अथवा सिर का मोड़। सिरमौर में 'मोड़' मुकुट को कहते हैं। सिरमौर सिर और मोड़ दो शब्दों से मिलकर बना है जो कालांकर में बिगड़कर सिरमौर बन गया। वे यह भी उद्‌घाटित करते हैं कि यह भूभाग आर्यवर्त और ब्रह्मवैवर्त के सिर पर स्थित था। शायद इसी कारण यह नाम पड़ा। एक अन्य संभावना भी व्यक्त की गई है कि राजा शालीवाहन द्वितीय के पौत्र तथा राजा रसालू के पुत्र सिरमौर के नाम से संबंधित मानते हैं। लेखक ने सिरमौर की प्राचीनता को ऐतिहासिक पौराणिक संदर्भों में तलाश किया है। उन्होंने प्रागैतिहासिक, पौराणिक, वैदिक, उत्तर वैदिक, रामायण, महाभारत काल से लेकर मौर्य काल, गुप्तकाल, वर्धनकाल, राजपूत युग, मुगलकाल, सिक्ख काल, गोरखा काल, अंग्रेजी शासन काल और स्वातंत्र्योत्तर काल तक के सिरमौर के इतिहास का विश्लेषण किया है। अध्याय के अंत में सिरमौर का भौगोलिक आर्थिक और सामाजिक महत्त्व विवेचित किया है।

कृति के विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि डॉ. मनोज शर्मा की भारतीय परंपरा में जड़ें जितनी गहरी हैं, उतनी मजबूत भी हैं। उन्होंने नूतन संदर्भों में तार्किक व्याख्या प्रस्तुत की है। वैदिक साहित्य, इतिहास, पुराणों से उन मणियों को निकाला है जिससे इस आलोचनात्मक ग्रंथ की गरिमा बढ़ी है। उन्होंने अध्ययन के दौरान जिन तथ्यों का संचयन किया है, उनको उन्होंने अनेक साक्ष्यों, दृष्टांतों के साथ प्रमाणित करने का भरसक प्रयास किया है।

'लोक साहित्य में लोक कथाएं' अध्याय के अंतर्गत लेखक ने लोकगाथाओं को लोकगीतों की भांति लोक से संपृक्त माना है। लोक कथाओं में मानव की सभी प्रकार की भावनाएं, परंपराएं और जीवन दर्शन समाहित रहता है। लोक कथाओं की प्राचीनता को लेखक ने भारतीय उपाख्यायों के संदर्भ में तलाश किया है। वेदों, पुराणों, उपनिषदों से कुछ उदाहरण देकर लोक कथाओं के प्राचीन स्वरूप को प्रभावित किया है। बृहद कथाएं, पंचतंत्र, बौद्ध और जैन साहित्य, हिंदी साहित्य के अंतर्गत प्रारंभिक दौर की कथाएं, संस्कार कथाएं, विविध कथाएं आदि शीर्षकों के अंतर्गत लोक कथाओं को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयत्न किया है। इस संदर्भ में डॉ. सत्येंद्र, डॉ. पी.सी. काश्यप, डॉ. दिनेश चंद्र प्रभृति सरीखे विद्वानों के लोक कथाओं के वर्गीकरण को प्रस्तुत करके लोक कथाओं को दस वर्गों में विभक्त किया है। इस विभाजन को आधार बनाकर सिरमौर में प्रचलित लोककथाओं का विवेचन किया है। लोक कथाओं की विशेषताओं का सांकेतिक परिचय देते हुए लेखक ने लोक कथाओं में निहित 'मोटिव', भाव अभिव्यंजना, कथाशिल्प का संक्षिप्त विवेचन किया है। लोक साहित्य के मूल्यांकन के क्रम में लोक साहित्य का शिष्ट साहित्य से संबंध, भिन्नता और रस अभिव्यंजना को विवेचित करते हुए लोक साहित्य के कला पक्ष को सिरमौरी लोक साहित्य से उदाहरण देकर प्रस्तुत किया है।

'मूल लौकिक संस्कृति ही दैव संस्कृति' शीर्षक अध्याय में संस्कृति की अवधारणा का विस्तृत विश्लेषण किया गया है। इस विवेचन के लिए लेखक ने भारतीय चिंतकों और पश्चिम के

समाजशास्त्रीय चिंतकों के विचारों का विश्लेषण करते हुए संस्कृति की अवधारणा का अभिप्रेत और स्वरूप सामने लाया है। संस्कृति का सभ्यता से भी गहरा संबंध रहता है। इसलिए दोनों की परस्पर सापेक्षता समानता और पार्थक्य के तत्त्वों का विवेचन किया है। लेखक ने लौकिक संस्कृति को देव संस्कृति का आधार माना है और इसका गहन चिंतनपरक विवेचन किया है।

योगदर्शन के आधार पर देह में स्थित पंचकोश- अन्मय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश, आनंदमय कोश का विवेचन है। लेखक ने लौकिक संस्कृति को देव संस्कृति का आधार माना है और इसका गहन चिंतनपरक विवेचन किया है। योगशास्त्र में देव संस्कृति और भारतीय संस्कृति की विशेषताओं का विवेचन करते हुए लेखक ने इसके लौकिक और आध्यात्मिक पक्षों को सामने लाया है। इस विवेचन में भारतीय दर्शन की जटिलताओं, धर्म दर्शन और जीवन के पारस्परिक संबंधों का स्वरूप स्पष्ट किया है।

सिरमौरी वैदिक काल में देव संस्कृति 'अध्याय में लेखक ने सिरमौर में विशेषकर तहसील पच्छाद और रेणुका में स्थित देवी देवताओं का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत करते हुए सिरमौर के प्राचीन इतिहास में भूरशिंग या भूरेश्वर महादेव का विस्तृत विवेचन किया है। भूरेश्वर महादेव से जुड़ी लोक कथाओं, जनश्रुतियों और उपासना पद्धतियों का विश्लेषण है। भूरेश्वर महादेव की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और इस देवता से जुड़ी जन आस्थाओं का गहनता से विवेचन किया है। भूरेश्वर महादेव को पारलौकिक देवता मानते हुए लेखक ने इसे शंकर भगवान माना है। इस शोध का मुख्य आधार बिंदु भूरेश्वर महादेव हैं। वैदिक और लौकिक साहित्य में इसके स्वरूप को तलाश करने का प्रयत्न किया गया है। व्युत्पत्तिपरक अर्थ स्पष्ट करने के लिए भूरिशृंग शब्द को भूरिसिंह, भूर्शिंग, भूरिशिंगा आदि शब्दों का अभिप्रेत स्पष्ट करते हुए वैदिक और लौकिक साहित्य में इसकी खोज की गई है।

प्रसिद्ध देवियों और देवताओं के मंदिर से संबंधित लोक कथाएं शीर्षक अध्याय में डॉ. मनोज शर्मा ने सिरमौर जिले में स्थित मां रेणुका जी, त्रिलोकपुर मंदिर, ज्वालामुखी देवी, प्राचीन काली स्थान मंदिर, भागेश्वरी देवी, बाला सुंदरी मंदिर, माता भंगायणी मंदिर, शिर्गुल देवता, कुंवारू देवता, बीजट देवता, मार्कंडेश्वर धाम ऐतिहासिक गुरुद्वारा पांवटा साहिब आदि देवताओं, देव स्थानों का अध्ययन प्रस्तुत किया है। इनसे संबंध रखने वाली किंवदंतियों, जनश्रुतियों को प्रस्तुत करते हुए इनकी पीठिका में निहत ऐतिहासिक पौराणिक आख्यानों के संदर्भ में इनकी महत्ता को प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है। इनका भौगोलिक परिदृश्य प्रस्तुत करते हुए इनके आध्यात्मिक पक्ष को विभिन्न उद्धरणों के माध्यम से प्रतिपादित किया है। परिशिष्ट के अंतर्गत सिरमौर उपभाषा तथा उसके विभिन्न वर्गों का विवेचन है। सिरमौरी बोलियों का भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से रोचक और ज्ञानवर्द्धक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। उपसंहार के अंतर्गत अध्ययन का संक्षिप्त सा सारांश है।

इस शोधपरक कृति के विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि डॉ. मनोज शर्मा की भारतीय परंपरा में जड़ें जितनी गहरी हैं, उतनी मजबूत भी हैं। उन्होंने नूतन संदर्भों में तार्किक व्याख्या प्रस्तुत की है। वैदिक साहित्य, इतिहास, पुराणों से उन मणियों को निकाला है जिससे इस आलोचनात्मक ग्रंथ की गरिमा बढ़ी है। उन्होंने अध्ययन के दौरान जिन तथ्यों का संचयन किया है, उनको उन्होंने अनेक साक्ष्यों, दृष्टांतों के साथ प्रमाणित करने का भरसक प्रयास किया है। लोक देवताओं से जुड़ी लोक कथाओं और किंवदंतियों और जनश्रुतियों की प्रामाणिकता को प्राचीन ग्रंथों से पुष्ट किया है। इस अध्ययन में लोक रस भी है और दर्शन भी। दोनों में समुचित तारतम्य स्थापित किया गया है। इस अध्ययन की जहां उपलब्धियां हैं वहां कुछ सीमाएं भी हैं। इस शोध ग्रंथ में लंबे-लंबे वाक्यों में कहीं एकसूत्रता खंडित हुई और कहीं संपादन की कमी के कारण बहुत सी अशुद्धियां भी हैं जिनके कारण अर्थ का अनर्थ भी हो गया है। इस ग्रंथ की सबसे बड़ी सीमा यह रही है कि लेखक ने जिन ग्रंथों का अनुशीलन किया है और जिनके संदर्भ तथ्यों की प्रामाणिकता के लिए उद्‌धृत किए हैं उनका उल्लेख पाद टिप्पणी या अध्याय के अंत में कहीं नहीं है। परिशिष्ट में संदर्भो ग्रंथों की सूची की शोधपरक कृतियों में अनिवार्य रूप में देने की ज़रूरत होती है। यह लोक साहित्य और संस्कृति के अध्येताओं के लिए मार्गदर्शन का कार्य करती हैं। इन कतिपय सीमाओं के होते हुए भी यह ग्रंथ सिरमौर लोक साहित्य में देव संस्कृति को विश्लेषित करने में सक्षम रहा है।

वीपीओ बातल, तहसील अर्की, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 208, मो. 094180 10646

पुस्तक का नाम : लोक साहित्य में दैव संस्कृति, **लेखक :** डॉ. मनोज शर्मा, **प्रकाशक :** सतलुज प्रकाशन, एस.सी.एफ. 267, द्वितीय तल, सेक्टर-16, पंचकुला, हरियाणा-134 113, **प्रथम संस्करण :** 2015, **मूल्य :** 250 रुपये, **पृष्ठ संख्या :** 168

समीक्षा

नारी संघर्ष की एक सजीव गाथा 'नक्काशीदार केबिनेट'

● डॉ. अमिता

नक्क़ाशीदार केबिनेट सुधा ओम ढींगरा का 2016 में प्रकाशित नवीन उपन्यास है। सुधा ओम ढींगरा का विदेश (अमेरिका) में रहते हुए अपने देश भारतवर्ष और प्रांत (पंजाब) से गहराई से जुड़े रहना इस बात को सिद्ध करता है कि उनके भीतर भारत की मिट्टी की महक जिन्दा है। उसके दर्द, पीड़ा और संवेदनाएँ जीवंत हैं। उनका उपन्यास नक्क़ाशीदार केबिनेट मूल रूप में पंजाब प्रांत के एक परिवार और उसके साथ उसके परिवेश के बनते-बिगड़ते रिश्तों की कथा है जिसमें नारी संघर्ष बड़े प्रभावशाली रूप में उभरा है। नारी संघर्ष में सोनल और मीनल की कहानी बड़े मर्मस्पर्शी रूप में उपन्यास के पृष्ठों पर रूपायित है। इस संघर्ष में सोनल जैसी लड़की का साहस, धैर्य पाठक के हृदय को छू लेता है। इसके साथ ही पंजाब से विदेश की ओर आकर्षण जाल में फँसी नारियों के विवाह के चक्रव्यूह को उपन्यासकार ने बड़ी सच्चाई से उतारा है। नशाखोरी, आतंकवाद और खालिस्तान जैसी समस्याओं में और संवेदनाओं के मध्य गुरु तेगबहादुर, गुरु गोविन्द सिंह जैसे महान गुरुओं के हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए बलिदान की कहानी रोचक ढंग से लेखिका ने सुनायी है। लेखिका की मानवतावादी दृष्टि सर्वत्र सजग है।

उपन्यास में डॉ. सम्पदा और सार्थक पति-पत्नी हैं। विदेश (अमेरिका) में रहते हुए अपने देश और पंजाब से गहरे जुड़े प्रतीत होते हैं। अमेरिका में हरीकेन और टॉरनेडो तूफान पूरी शक्ति के साथ उनके प्रांत में आ जाते हैं जिसके कारण बारिश और चक्रवात उनके निवास के स्थान पर जबरदस्त क्षति पहुँचाते हैं। उनके घर में पानी घुस आता है और पेड़ टूट कर उनका घर तोड़ देते हैं। इसी प्रकार जहाँ अनेक नुकसान होते हैं वहीं नक्क़ाशीदार केबिनेट रोज़ वुड से बना हुआ (जो मध्ययुगीन कला का सुन्दर नमूना) क्षतिग्रस्त हो जाता है। वह पानी में औंधा पड़ा होता है। उसमें वर्षों की यादें थीं। इसमें एक काले रंग वाली डायरी भी थी जिसे फ़ुर्सत में लेखिका पढ़ती जाती है और स्मृतियों में बसी कहानी डायरी शैली में उपन्यास पर उतरती जाती है। कहानी वर्तमान से अतीत की ओर, फिर अतीत से वर्तमान में आ जाती है।

डॉ. सम्पदा एक समाज सेवी संस्था से वर्षों से जुड़ी है। वहाँ उसकी मुलाकात सोनल से होती है। उसकी चाल ढाल और लहजे से डॉ. सम्पदा समझ जाती हैं कि वह एक शिक्षित लड़की है और ग्रामीण पंजाब से संबंधित है। उपन्यास में प्रारंभ में ही यह संदर्भ स्पष्ट हो जाता है पहली मुलाकात में वह मेरे इतने क़रीब आ गई कि हम बड़ी देर तक बैठे बातें करते रहे.....जब तक वह शारीरिक और मानसिक रूप में सशक्त नहीं हुई। इस देश में उसने अपने अस्तित्व को तलाशा और अपने पाँव पर खड़ी होकर, उन सबसे अपने हिस्से की खुशियाँ वापिस ली, जिन्होंने जवानी और बचपन में उससे वे छीन ली थी। मेरे लिए वह नारी सशक्तिकरण का जीवंत उदाहरण थी। उसने जीवन में घटनाओं, दुर्घटनाओं, विश्वासघात धोखा और फरेब़ के जिस दौर को देखा था, उन सबसे निकलकर उसने जो कर दिखाया वह खास था। इस प्रकार वास्तव में यह उपन्यास सोनल के विकट व भयावह संघर्ष की रोचक कथा है जो अनेक संघर्षो से लड़कर भी हारती नहीं है, टूटती नहीं है। अनेक लड़कियों के लिए उसका संघर्ष एक प्रेरणा के रूप में सामने आता है जो विषम स्थितियों में डटकर लड़ती है।

उपन्यास में सोनल के दादा जी का नाम सोहनचंद मनचंदा था। उन्हें सब बाऊ जी कहते थे। वे जमींदार थे। विरासत में दादा जी से जमींदारी पिताजी को मिली थी। पिताजी का नाम त्रिलोक चंद था जो मिलिट्री से रिटायर होकर घर आ गए थे। मीनल और सोनल त्रिलोकचंद की दो पुत्रियाँ थीं। सोनल का चाचा मंगल आलसी, शराबी और जुआरी था। उसने चाचा जैसे रिश्ते को कलंकित किया था। मंगल की ऐयाश प्रवृत्ति की वजह से कोई माँ-बाप उसे अपनी लड़की देने को तैयार नहीं था। लेकिन पड़ोस के एक गाँव से रिश्ता आया तो दादा-दादी ने इंकार नहीं किया, उन्होंने सोचा कि लड़का सुधर जाएगा तो सोहनचंद मनचंदा ने

मंगल का विवाह कर दिया। लेकिन मंगल में कोई सुधार नहीं आया। मंगल की पत्नी मंगला के साथ उसका भाई भी उनके साथ रहने लगा। मंगला जिस घर से आई थी उस घर का माहौल भी अच्छा नहीं था। उनकी पुश्तैनी जायदाद को बाप और भाई उड़ा चुके थे। मंगल और उसका साला शराब, ताश, जुए में व्यस्त रहते और गाँव की बहू-बेटियों पर फब्तियाँ कसते। सोनल की माँ बी. ए. पास थी इसीलिए मीनल और सोनल को पढ़ाना चाहती थीं। उपन्यासकार द्वारा नारी उत्कर्ष मीनल और सोनल के परिप्रेक्ष्य में साकार हुआ है।

बाऊ जी ने मंगल-मंगला और उसके भाई को खेतों में बने घर में पहुँचवा दिया। मीनल ने इस कार्य में दादा-दादी, पिताजी-माँ के लिए सहयोग दिया था। मीनल के व्यवहार पर मंगला कह गयी मीनल तुझे तो मैं देख लूंगी..... यह वह समय था जब पंजाब में अधिकतर युवक दुबई, कनाड़ा और खाड़ी के देशों में जाने शुरू हो गए थे। कई घरों के लोग पहले से इंग्लैण्ड में थे। विदेश से पैसा आ रहा था। पढ़ने-लिखने की तरफ किसी का रुझान नहीं था। परिणाम यह हो रहा था कि खाली दिमाग, पैसे की अधिकता और नशा के वे आदी लोग निकम्मे बनते जा रहे थे।

इस वातावरण के चित्रण में लेखिका ने कौशल से काम लिया है। कथा में रोचकता, जिज्ञासा, कौतूहल बना रहता है। कथा के प्रवाह में पाठक पृष्ठ पर पृष्ठ पढ़ता जाता है और कथा के प्रवाह के साथ बहता जाता है। मीनल और सोनल के साथ पम्मी (परमिंदर) और सुक्खी (सुखवंत) सुखविंदर का भी उल्लेख मिलता है। ये शिक्षित वातावरण के लड़के हैं और इनके परिवार को कामरेडों का परिवार भी कहा जाता है। मीनल को पम्मी प्यार करता है। किंतु मीनल मंगला चाची के दुष्कर्मों का शिकार होकर मारी जाती है। मंगल और दिलगीर पकड़े जाते हैं। उन्होंने गुनाह कबूल किए। दिलबाग और दिलशाद भी पकड़े जाते हैं। मंगला के साथ उनके माँ-बाप और दो भाई भी रहने लगते है। मीनल की हत्या के केस में जो फैसला आया उसमें दिलबाग और दिलशाद को फाँसी की सजा सुनाई गई और मंगल तथा दिलगीर को उम्र भर का सख्त कारावास। मंगला के बाप ने कहा उसने अपनी सुन्दर बेटी मंगल जैसे नालायक के पल्ले इसीलिए बांधी थी, उसकी नज़र बाऊ जी की जमीनों, हवेली और इस कमरे पर थी जिसमें पीढ़ी दर पीढ़ी से हीरे जवाहरात, सोना और चांदी दबे पड़े थे। उन्हें तो वह लेकर रहेगा, चाहे उसके अपने दो और बेटे गंवाने पड़े....। उपन्यास में सोनल महाराजा रणजीत सिंह के समय का वर्णन करती है। और तत्कालीन पंजाब की आंतरिक और बाहरी स्थिति का उल्लेख करते हुए यह स्पष्ट करती है कि हमारे परिवार के बुजुर्गों के पास तोशखाने का काफी धन था। वे महाराजा रणजीत सिंह के शासन काल में तोशखाने थे। उपन्यास में वर्णन शैली बेजोड़ है।

उपन्यास में पम्मी के मंझले भाई सुक्खी (सुखवंत) से सोनल की दोस्ती हो जाती है। सुम्खी को पढ़ने का शौक था। सोनल बताती है कि सुक्खी की किताबों से वह भी साहित्य की अनेक पुस्तकें पढ़ जाती है। उसने यूरोप और हिन्दी साहित्य के अनेक लेखकों को पढ़ा था। सुक्खी, पम्मी और सोनल जैसे अनेक युवक-युवतियाँ प्रगतिशीलता की नई सोच से जुड़ने लगे। ये लोग किसानों और दलितों को उनके अधिकारों के प्रति सचेत करने लगे। सोनल डी.ए.वी. कॉलेज में पढ़ी उसने बी.ए. ऑनर्स करने के बाद साइक्लोजी में एम.ए. किया। लेखिका ने ग्रामीण परिवेश को प्रगतिशीलता की ओर अग्रसर करके नई सोच को प्रश्रय दिया है जो समयानुकूल आवश्यकता थी। लेखिका ने इस दौर में खालिस्तान की लहर का उल्लेख भी किया है जिसमें अधिकांश युवा भटक गए थे लेकिन कुछ युवा इस हिंसा का विरोध कर रहे थे जिसमें निर्दोष लोगों की हत्या हो रही थी। पम्मी जैसे युवा की भी खालिस्तानी हत्या कर देते थे क्योंकि वह निर्दोष लोगों की हिंसा के विरोध में होता है। परिवेश के वस्तुगत सत्य को सच्चाई के साथ लेखिका ने जीवंत बनाया है। आपरेशन ब्लू स्टार, इंदिरा की हत्या और तदनंतर फैली हिंसा का उपन्यासकार ने सजीव चित्रण किया है। इस दौर में पंजाब, दिल्ली और देश के अन्य भागों में हिंसा भड़क उठी थी। और इस हिंसा ने वीभत्स रूप धारण कर लिया था। इसकी आड़ में, आतंकवाद के नाम पर कई लोगों ने तो आतंकवादी रूप घर निजी रंजिशें निकालनी शुरू कर दी थीं। उपन्यासकार ने 1980 के आस-पास के परिवेश की सच्चाई के साथ उपन्यास में चित्रित किया है जो एक ऐतिहासिक दस्तावेज बनकर उभरता है।

सुक्खी (सुखवंत) जो सोनल का दोस्त होता है वह आई.पी. एस. में उत्तीर्ण होकर पुलिस अपफसर हो जाता है। एक हादसे में बाऊ जी, पिताजी और बीजी को गोलियों से भून दिया जाता है। केवल सोनल और उसकी माँ घर में बच जाते थे। यह मर्मस्पर्शी कथा यहीं खत्म नहीं होती। सोनल के मामा, नाना परिवार सहित सोनल के घर पर आकर रहने लगते हैं। वे आये थे दुख में शामिल होने के लिए लेकिन उन्होंने सोनल के घर पर डेरा जमा लिया। झाई कहती थी उनके मायके वाले भी कम स्वार्थी नहीं यह सारा खेल, धन-सम्पत्ति को हथियाने के लिए होता है जिसमें भावानात्मक रिश्तों की कोई जगह नहीं होती केवल खोखलापन दिखाई देता है। सोनल के चाचा, चाची, मामा, नाना के सभी रिश्तों में कहीं आत्मीयता न थी।

इस कथा में सबसे पीड़ादायी स्थिति तब आती है जब डॉ. बलदेव सिंह की शादी सोनल से करवायी जाती है। यह डॉ. बलदेव झूठ फरेब का पुतला होता है जिसका वास्तव में सुलेमान नाम होता है। ननिहाल की ओर से रचे गए नाटक में सोनल फँस जाती है। उसे समझाया जाता है कि बलदेव उसे अमेरिका में पी-एच.डी.

करने देगा-बलदेव ने मुझे बताया था कि वह अमेरिका में डॉक्टर है और वह मेरी इच्छा से वाकिफ हो गया है। वह मुझे वहाँ साइक्लोजी में पी-एच.डी. जरूर करवाएगा। सोनल को सुक्खी बहुत अच्छा लगता था। वह वास्तव में उसे बहुत प्यार करती थी। पर माँ ने समझाया दिल को संभाल ले मेरी बच्ची, मास्टर जी का एक बेटा जा चुका है। दूसरे की जिन्दगी खतरे में डालने का तुझे कोई हक नहीं। बन्दूक की गोलियाँ किसी की सगी नहीं होती। तुमसे अधिक इसे कौन समझ सकता है? मन को मार ले और आगे होने वाले विनाश को रोक। जान है तो जहान है। तुम्हारी और मेरी जान को खतरा है।

सोनल सोचती है मेरे सामने माँ के अतिरिक्त कौन था। माँ ने ठीक ही समझाया कि सुक्खी का भाई पम्मी पहले ही गोलियों का शिकार हो गया था। इस स्तर पर आकर सोनल बहुत अचेत हो जाती है, सुक्खी को लेकर उसका हृदय टूटता है, माँ ने बाऊजी और पिताजी की कसम दे दी थी। मुझे शादी तो अब अमेरिका के डॉक्टर से करनी ही पड़ेगी। मेरे पास जो विकल्प था, वह छूट गया था। समुद्र के किनारे खड़े एक खूबसूरत जहाज को देख रही थी जिस पर सवारी की मौन इच्छा मेरे भीतर पता नहीं कब से पल रही थी, उस आकांक्षा को अब दबाना पड़ा था।

उपन्यास में सोनल का यह दर्द अपने समूचे आवेग में फैला हुआ है जो पाठक के मर्म को छू लेता है। और फिर वही होता है जिसकी सोनल को आशंका थी। डॉ. बलदेव का झूठ सामने आता है वह केवल उसकी हीरे, जवाहरात जैसी दौलत को हड़पने के लिए वह नाटक रचता है। उपन्यास में बलदेव अपने पारिवारिक लोगों को कहता है- ...पहले इसका विश्वास जीतो। उसके नाने को वादा किया है, कागजों पर उसके साइन करवा कर दूंगा और बदले में उसके घर में पड़े हीरे मेरे होंगे। मुझे हीरे चाहिएँ। फिर हम सब इक्ठे उसे नोच खाएंगे। सोनल को जब यह ज्ञात हो जाता है तो वह इस नरक से भागने का प्रयत्न करती है मुझे लगा मैं धरती में धंसी जा रही हूं, दीवार का सहारा लेकर मैंने अपने आपको संभाला। घबराने और बेचैन होने का समय नहीं था। पता नहीं कहाँ से मुझ में इतनी फुर्ती आ गई, मैंने चारों ओर नजर दौड़ाई कमरे में खिड़की थी पर शीशा लकड़ी के फ्रेम में फिट था, वह खिड़की थी। जल्दी से जाकर देखा। वह बाहर को खुल सकती थी। दो पाटों की खिड़की थी। ज्यादा ऊँची भी नहीं थी। मैं उस तक पहुँच सकती थी। मुझे पता भी नहीं चला, कब से उस खिड़की से बाहर आ गई और उसके साथ लगे वृक्ष पर झूलने लगी। वृक्षों पर चढ़ना-उतराना तो बचपन में सीखा था। खूब कूदी हूँ वृक्षों पर। आसानी से उतर गई। लेखिका की कलम से सोनल के साहस का यह चित्रण बहुत प्रभावशाली बनकर उपन्यास के सौन्दर्य को बढ़ा रहा है।

लेखिका यह बताना चाहती है कि उपन्यास में डनीस और रॉबर्ट सोनल को शरण देते हैं। डनीस और रॉबर्ट जैसे लोग भी दुनिया में हैं जो बेसहारा को सहारा देकर उसके संरक्षण में जीवन की सार्थकता ढूंढते हैं। सोनल हिम्मत जुटाती है। सोनल उपन्यास में एक स्थान पर कहती है बाऊजी, बीजी और पिताजी की मौत के बाद मैं एक रात भी चैन से नहीं सोई थी। यही डर लगा रहता था पता नहीं कौन कहाँ से आकर, कब मुझे मार डाले।

लेकिन सोनल की कथा यहीं खत्म नहीं होती, सोनल बलदेव जैसे दुष्ट लोगों को पुलिस के हाथों पकड़वाने के लिए कृतसंकल्प हो जाती है। रॉबर्ट और डनीस के साथ के बाद वह एक संस्था में डॉ. सम्पदा को मिलती है। सोनल सुक्खी को फोन करती है। सुक्खी अमेरिका आता है और तदनंतर बलदेव जैसे दुष्ट लोग और उनका गिरोह पकड़ा जाता है। सोनल को अमेरिका छोड़ एस.पी. सुखवंत भारत नहीं लौटता अपितु वहीं अमेरिका में ही बस जाता है। अन्याय का अंत करवाकर लेखिका ने आशावादिता और आस्था का संकेत दिया है जो प्रेमचंद की आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी शैली से मेल खाता है।

लेखिका ने वर्णनात्मक शैली में बेजोड़ कथा कही है जो नारी संघर्ष की सच्ची गाथा है। कथा में कहीं भी अस्वाभाविकता या असहजता नहीं प्रतीत होती। इसमें कल्पना का मिश्रण अंश मात्रा किया भी हो तथापि कथा बड़ी जीवंत लगती है।

लेखिका ने पाश कवि के द्वारा भारत की आजादी के बाद की तस्वीर को भी चित्रित किया है। सुक्खी ने उत्तर दिया भारतीय जनता के गौरवशाली संघर्ष और विश्व पूंजीवाद के आंतरिक संकट के परिणाम स्वरूप जो राजनीतिक आजादी 1947 में मिली, उसका लाभ केवल पूंजीपतियों, सामंतों और उनसे जुड़े मुट्ठी भर विशेषाधिकार प्राप्त लोगों ने ही उठाया। हालत और भी बदतर हो गए। पहले जो राजनीति, त्याग व सेवा का कार्य था आज मुनाफे का धंधा है। देश गुलामी के जाल में फंस चुका है। सातवाँ दशक आते-आते आजादी से मोहभंग की प्रक्रिया शुरू हो गई थी। भारत के शासक वर्ग के खिलाफ जन असंतोष तेज हो गया था जिसकी अभिव्यक्ति राजनीति में ही नहीं, संस्कृति और साहित्य में भी हुई। इस दौर में पंजाबी साहित्य के क्षेत्र में नई पीढ़ी के कवियों ने पंजाबी कविता को नया रंग रूप प्रदान किया। अवतार सिंह पाश इन्हीं की अगली पंक्ति में था।

अवतार सिंह धार्मिक कट्टरता के खिलाफ और हिंसा के खिलाफ था इसीलिए खालिस्तानियों ने उसे गोली से भून दिया।

मानवीय मूल्यों के प्रेरक सिंह गुरुओं की महान गाथाओं के साथ उपन्यासकार ने धार्मिक कट्टरता और हिंसा के खिलाफ अपनी चिंताओं को व्यक्त किया है। औरंगजेब के शासन काल में जब कश्मीरी पंडित आनंदपुर साहिब गुरुतेग बहादुर के दरबार में पहुँचे...गुरु तेग बहादुर का जीवन कार्य ही अपने हिन्दू धर्म की रक्षा करने का भगीरथ प्रयत्न था। सारी बातें सुनकर वे सोच में पड़ गए। कुछ समय के मनोमंथन के बाद वे बोल उठे इस समय देश

और धर्म की रक्षा का एकमात्र उपाय किसी महापुरुष का बलिदान है। ....उनका नौ वर्ष का पुत्र गोविन्द राय पास ही खड़ा था उसने तुरंत कहा पिताजी इस पवित्र कार्य के लिए आप से बढ़कर कौन महापुरुष है। उपन्यास में एस.पी. सुक्खी, डॉ. सम्पदा को कहता है दीदी मैं पंजाब में अपनी तब्दीली करवाना चाहता था, अब नहीं। पंजाब के हिन्दू-सिक्खों में रोटी-बेटी के सम्बन्ध थे। भारतीय शासन वर्ग द्वारा पैदा किए गए खालिस्तानी पृथकतावादियों शरारती तत्त्वों और पड़ोसी देश की अलगाववादी ताकतों ने सब गड़बड़ कर दिया। पंजाब के बदलते परिवेश की वास्तविकता लेखिका ने चित्रित की है।

आतंकवाद के कारण एक दूसरा दर्द भी लेखिका ने व्यक्त किया है। पीढ़ी दर पीढ़ी जो हिन्दू परिवार सिक्ख धर्म के अनुयायी थे और गुरुद्वारों में जाते थे, वे गुरुद्वारों में असहज होने लगे। दोनों में परोक्ष-अपरोक्ष दरार आ गई थी। लेखिका द्वारा हिन्दू-सिक्ख संस्कृति के सद्भाव का प्रयास सराहनीय है।

यह सुक्खी आई.पी.एस. की नौकरी के त्यागपत्र भेजकर अमेरिका में इंटरनेशनल लॉ की पढ़ाई करने लग जाता है जहाँ से सोनल पी-एच.डी. का कार्य करना चाहती है। इस प्रकार उपन्यास अपने चरमोत्कर्ष पर समाप्त हो जाता है।

उपन्यासकार ने कुछ जीवनानुभवों और मूल्यगत सत्यों को विचारों में व्यक्त किया है-

भविष्य की चिंताओं में मनुष्य वर्तमान को जीना भूल जाता है और स्वयं का जीवन दूभर कर लेता है।

जिस दिन मानव वर्तमान में जीना सीख लेगा, बहुत सी परेशानियों और चिंताओं से मुक्त हो जाएगा।

उपन्यास की लेखिका विदेश में रहती हैं और अपने देश भारतवर्ष भी आती जाती रहती हैं। इसीलिए देश-विदेश के रहन-सहन, आचार-विचार और जीवन मूल्यों का भी तुलनात्मक चित्रण करती हैं- सार्थक इस देश के अनुशासन, यहाँ की व्यवस्था, और लोगों के सेवाभाव से बहुत प्रभावित है। इस देश का अच्छा-बुरा सब समझते हैं। हालाँकि यह बात नहीं कि यहाँ बुरे लोग नहीं हैं जो बुरे हैं, बहुत बुरे हैं। पर वे भी सड़कों पर लुशंका का निवारण नहीं कर सकते। सड़कों पर थूक नहीं सकते। कत्ल, बलात्कार करके छूट नहीं सकते। यहाँ रंग भेद है, पर देश को रंगने का किसी को अधिकार नहीं। गन्दी सोच के लोग हैं पर उन्हें देश को गंदा करने का हक नहीं। देश सबका है और इसे साफ रखना सबकी जिम्मेदारी है। लेखिका चाहती है कि उसके भारतवर्ष की तस्वीर भी अच्छी बने।

उपन्यास में चित्रात्मकता जगह-जगह अपना वैशिष्ट्य बनाए हुए है, सड़क पर लोग दौड़ रहे थे। जागिंग कर रहे थे। मैं उन्हीं के साथ दौड़ने लगी। नाक की सीध में कई ब्लाक पार कर गई।.....हल्का-हल्का घुसपुसा हो रहा था। समझ नहीं आ रहा था किस तरफ जाऊँ। लेखिका ने सरल, सहज भाषा का प्रयोग किया है। तत्सम, तद्भव शब्दों के साथ पंजाबी, अंग्रेजी शब्दों का सहज प्रयोग द्रष्टव्य है : भारतीय मूल के लोगों के पास दालें, चावल, और आटा तो काफी मात्रा में होता है फिर भी बहुतों ने डिब्बाबंद फूड अपने स्टोर में समेट लिया था। घर-घर में टार्च लाइट्स, फ्लैश लाइट्स, बैटरियां, मोमबत्तियाँ इत्यादि कुछ इकट्ठा किया जा रहा था। अगर बिजली आनी बंद हो जाए तो वे काम आएंगी। जिस घरों में बिजली के चूल्हे थे उन्होंने गैस के सिलेंडर खरीद लिये और साथ ही गैस का चूल्हा भी। लेखिका ने अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी किया है वॉलन्टियर्ज आर कमिंग फ्राम अदर स्टेट्स एंड अदर सोसयटीज टू हेल्प दा विकटम्ज...। लेखिका ने पंजाबी भाषा का प्रयोग किया है। बाऊजी की भाषा है एथे दी पुलिस वि इनहाँ हरामियाँ ने खरीद लई ऐ, सारे एनहाँ दे अड्डे ते आंदे ने तो कोई मेरा साथ देन लई तियार नई।

संवादों को उपन्यासकार ज़रा और तराशती तो अच्छा होता। छोटे और संक्षिप्त संवाद कथा के विकास और पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को अभिव्यक्त करने में सार्थक भूमिका निभाते हैं। लेखिका को स्वयं अधिक न बोलना पड़ता। उपन्यास में लेखिका की स्वयं ज्यादा बोलना पड़ रहा है। डायरी शैली का यह गुण भी है। मुख्य कथा सोनल के परिवार की है जो आद्यंत कसावट लिए हुए है, कहीं बिखराव नहीं है। इसके साथ ही वर्तमान जीवन की कथा डॉ. सम्पदा और सार्थक की है, दोनों को उपन्यासकार ने कौशल से सुगुंफित किया है।

पात्रों के चरित्र चित्रण में स्वाभाविकता है। कहीं कोई अस्वाभाविकता दिखाई नहीं देती। ऐसा नहीं लगता कि उपन्याकार ने केवल कल्पना के सहारे इन पात्रों को उपन्यास में उतारा है ये पात्र जीते-जागते पात्र हैं जो जीवन की सच्चाई को अभिव्यक्त करते हैं और जीवन को उत्कर्ष की ओर ले जाने की प्रेरणा देते हैं। सोनल और सुखवंत इसी आदर्शवाद की ओर अन्मुख है। सद् पात्रों को जहां ऊँचाई दी है वहीं असद्पात्र भी अस्वाभाविक नहीं लगते हैं। लेखिका ने पात्रों की भीड़ नहीं इकट्ठी की है। पात्र लेखिका के हाथों की कठपुतली नहीं बने हैं। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि हिन्दी उपन्यास जगत की यह उपन्यास एक अमूल्य निधि है जो प्रासंगिकता एवं उपादेयता जैसी विशेषताओं से युक्त है।

तदर्थ प्राध्यापक, मैत्रेयी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

उपन्यास : नक्क़ाशीदार केबिनेट, **लेखक :** सुधा ओम ढींगरा, **प्रकाशक :** शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर म.प्र., **दूरभाष** 07562405545, **मूल्य :** 150 रुपये, **पृष्ठ** 120, **वर्ष** 2016

विजय सहगल को श्रद्धासुमन

लेखकों का मसीहा जाते-जाते भी चौंका गया

● डॉ. सुशील कुमार फुल्ल

चौंकाना उसकी अदा था। दैनिक ट्रिब्यून ने रविवारीय परिशिष्ट में प्रकाशनार्थ उपन्यास मांगा था। मैंने 'नागफांस' उपन्यास विचारार्थ भेज रखा था। सन् 1980 का वर्ष रहा होगा। विजय सहगल का फोन आया... फुल्ल साहब, नागफांस नहीं छपेगा। कहकर फोन रख दिया। मुझे अटपटा लगा। संपादक मित्र होने पर भी ऐसी स्थिति में लेखक क्या कर सकता है। मैं चुप रहा। दो दिन बाद रविवार था। दैनिक ट्रिब्यून आया... उसमें 'नागफांस' की पहली किस्त लेखक के परिचय के साथ छपी थी। सहगल की खिलखिलाहट ने चौंका दिया। लगभग दो हफ्ते पहले विजय सहगल का फोन आया था कि अपनी नई पुस्तक 'हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास' की एक प्रति भेज दो, मैं पैसे भेज दूंगा परंतु देखना चाहता हूं कि तुमने मेरे बारे में अंतिम टिप्पणी क्या की है?

अफसोस है आलस्यवश मैं प्रति नहीं भेज पाया और भाई विजय सहगल ने मुझे चौंका दिया, आहत किया... अचानक दुनिया छोड़ कर जाने का अभी समय नहीं था। अभी तो और लिखने की जिजीविषा शेष थी, पालमपुर आने का मन था। विश्वास नहीं होता वह चला गया। बंबई के जीवन पर आधारित उसकी एक कहानी है 'अपने लोग', जिसकी नायिका सोमा धीरे धीरे अपरिचित परिवेश में ढल जाती है और उसकी कुंडली बदल जाती है। यह एक कालजयी कहानी है, जिसके विषय में मैंने सैंकड़ों बार टिप्पणी की है। यशपाल की 'न्याय और दंड' जैसे कालजयी है, वैसे ही सहगल की 'अपने लोग'। हालांकि 2014 में मैंने समकालीन कालजयी कहानियां शीर्षक से यूनीकार्न बुक्स के लिए संग्रह संपादित किया, उसमें विजय सहगल ने 'खो चुके दिन' को ही संकलित करने का आग्रह किया और वही कहानी मैंने छापी। यह प्रकाशित होने वाली उनकी अंतिम कहानी है। वैसे विजय सहगल का एक ही कहानी संग्रह 'आधा सुख' सन् 1984 में छपा और एक और पुस्तक धार्मिक यात्रा संस्मरण 'आस्था के डगर पर' शताब्दी के अंतिम दशक में छपी। वैसे छिटपुट तो बहुत लिखा, बहुत छपा। हां, एक उपन्यास नवधनाढ्य वर्ग को लेकर उन्होंने लिखा जो वीरप्रताप में धारावाही छपा... बाद में मैंने दोस्त के कहने पर उसका पुनर्लेखन किया परंतु उसे छपवाने की विजय को फुर्सत ही नहीं मिली।

विजय का जन्म अप्रैल 1943 में सुबाथू में हुआ। पत्रकारिता शिमला से शुरू की। फिर सन् 1970 में दिल्ली में नवभारत टाइम्स में उपसंपादक बने। तदनंतर मुंबई में नवभारत, सारिका, धर्मयुग में कार्यरत रहे और खूब नाम कमाया। हीरानंद सच्चिदानंद वात्स्यायन अज्ञेय के सान्निध्य में नवभारत में बहुत से नए प्रयोग किए। सन् 1978 में जब दैनिक ट्रिब्यून का उदय हुआ तो उन्होंने प्रथम संपादक पद्‌मकांत त्रिपाठी के साथ सहायक संपादक के रूप में पद संभाला और दैनिक ट्रिब्यून की स्थापना, छवि, विकास में उसी प्रकार जुट गए जैसे दिव्य हिमाचल की स्थापना में अनिल सोनी। विजय सहगल पर क्षेत्र के वर्चस्व एवं अस्मिता का खुमार था। उसने नए पुराने लेखकों को अखबार से जोड़ा बल्कि अतिशयोक्ति नहीं होगी कि उन्होंने लेखक, पत्रकार पैदा किए और दैनिक ट्रिब्यून से जोड़े। स्वयं स्थान-स्थान पर जाकर अखबार का प्रचार-प्रसार किया। एक बार उन्होंने मेरे पास पालमपुर आना था। रात दस बज गए, नहीं आए। फोन भी नहीं आया। लगभग रात बारह बजे घंटी बजी। बाहर तमतमाए हुए विजय सहगल खड़े थे और साथ थे कपिल बस्सी। गाड़ी आंगन में लगाई और वे अंदर आए।

गुस्से से बोले- यह कैसा शहर है? सड़क पर कोई यह बताने वाला नहीं कि डॉ. फुल्ल या किट्टम किट्टू कहां है। दो घंटे हो गए पालमपुर में भटकते हुए। भूख से बुरा हाल है।

वास्तव में वह कांगड़ा में ट्रिब्यून की व्यवस्था देखने में रुक गए और कुलदीप सचदेवा ने उन्हें सारी प्रकार स्थिति तथा

संभावना से अवगत करवाया। देर लग गई।

खाने खाते-खाते एक बज गया। फिर साहित्यिक महफिल जम गई। सुबह चार बजे जाकर सोए। अगले दिन रचना साहित्य एवं कला मंच का कार्यक्रम था, जिसमें वह मुख्य अतिथि थे।

विजय सहगल को गुस्सा भी आता था परंतु यह दूध के उफान की तरह होता था। व्यक्ति सकारात्मक था जल्दी संतुष्ट हो जाता था, कार्यकुशल था। अनेक अनुभवों से भरा हुआ था। बेटे अतुल और विपुल उनकी विरासत को सहेजे हैं, भले ही वे अलग-अलग क्षेत्रों में हैं। सुबाथू हिमाचल का बेटा चंडीगढ़ सेक्टर 51 में बस गया। गत वर्ष आप्रेशन हुआ तो भाई सहगल बहुत खफा थे। एक दिन जब मैंने उनके स्वास्थ्य के बारे में पूछा तो बोले- डॉक्टर कसाई होते हैं। बकरे की तरह चीर देते हैं। मैं अभी पूरी तरह से स्वस्थ नहीं लेकिन सरक रहा हूं। हां, अभी एक उपन्यास लिखने की इच्छा है... तुमने तो खूब लिखा है... इसमें ट्रिब्यून का योगदान भी है।

सच मेरे दोस्त! जब दैनिक ट्रिब्यून में प्रकाशन के लिए पुस्तक समीक्षाकाएं उपलब्ध नहीं होती थीं, तो विजय का मुझे नियमित आदेश था... हर सप्ताह पुस्तक समीक्षा भेजो और देखिए कभी कभी तो एक ही अंक मेरी लिखित समीक्षाएं ही छपतीं और विजय सहगल ने मेरे कई नाम बना दिए.. सुकुमार, सुशीलकुमार फुल्ल, सु.कु., कुमार फुल्ल आदि... जैसे गुलेरी अनेकों नामों से स्वयं ही समालोचक में एक साथ समीक्षाएं लिखते थे। मेरा यह क्रम पच्चीस वर्ष तक चलता रहा। निरंतर समीक्षाएं छपती रहीं। अब वहां विजय सहगल नहीं, तो हिमाचल भी आटे में नमक मात्र है। अब वह अखबार हिमाचल से छिटक कर दूसरे प्रदेशों में चला गया है।

विजय सहगल आत्मीयता, मानवीयता, सर्वजनात्मकता एवं लेखकों को प्रोत्साहित करने के लिए सदा हमारे दिल में बसे रहेंगे... संवेदनशील, सहिष्णु... सदा सहायता करने वाला... एक अद्‌भुत कहानीकार, उपन्यासकार, कुशल पत्रकार... उसके कांगड़ा आगम के क्षण कभी भूलेंगे नहीं। साहित्य में उसका स्थान अक्षुण्ण है। अपनी अंतिम फोन वार्ता में विजय सहगल ने एक तथ्यपरक चिंता जताई... जिस पर सरकार को ध्यान देना चाहिए। बात करते-करते अचानक वह उदास हो गया। बोला- फुल्ल, पत्रकार सारी उम्र मजदूरों की तरह काम करता है परंतु, उसको पेंशन नहीं, उसका बुढ़ापा सुरक्षित नहीं। वह तिल-तिल कर मरता है।

कहीं कसक थी, केवल अपनी नहीं पूरे पत्रकार परिवार की।

विजय सहगल तुम नहीं हो, विश्वास नहीं होता... मन-ही-मन में फफकने का विस्फोट महसूस होता है। श्रद्धासुमन!

पुष्पांजलि, राजपुर (पालमपुर), जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 061

ग़ज़ल

• ख़ुर्शीद शेख़ 'ख़ुर्शीद'

मिस्रअ ऊला (मतलअ़ का) - बस भीख पर ही जिंदगी पलती रही
अर्कान - (मुस्+तफ़्+इलुन)+(मुस्+तफ़्+इलुन)+(मुस्+तफ़्+इलुन)
तक़तीअ़ - SSIS, SSIS, SSIS

बस भीख पर ही ज़िंदगी पलती रही
ग़म और ख़ुशी की राह पर चलती रही

थी क़र्ज़ की बस चार रोज़ा जिंदगी
दो ब्याज में दो मूल में ढलती रही

आवाज़ हमको दे रही समझे न हम
इस वास्ते ग़म में ख़ुशी टलती रही

आशिक़ बने दिल क्यों दिया सोचे बिना
फिर हर क़दम पर जिंदगी छलती[1] रही

बस प्यार तो था रूबरू हर एक के
दिल में अदावत[2] की शमा जलती रही

नफ़रत नहीं की भूल कर हमने कभी
'ख़ुर्शीद' नफ़रत क्यों हमें मिलती रही

1. धोखा देती 2. दुश्मनी

संस्थापक एवं प्रधान संपादक 'अबदी उड़ान' (त्रैमासिक पत्रिका)
म. 16, सेक्टर-4, हिरण मगरी, उदयपुर, राजस्थान-313 002, मो. 0 99506 78815

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 जुलाई, 2016 अंक : 4

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

अपनी सफलता में किस्मत को जो बिलकुल नहीं मानते, वे अपने आपसे मजाक कर रहे हैं।

- लैरी किंग

इस अंक में

लेख

शोध लेख

कहानी

व्यंग्य

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षात्मक लेख

अपनी बात

विश्व की प्राचीनतम वैज्ञानिक परंपराओं में शुमार भारतीय विज्ञान परंपरा का उद्‌भव ईसा से लगभग 3000 वर्ष पूर्व माना जाता है। दुनिया के दूसरे हिस्सों में मानव सभ्यताओं की घुमक्कड़ जातियां जब बस्तियां बनाना सीख रही थीं, उस समय सिंधु घाटी के लोग सुनियोजित ढंग से नगर बसाकर रहने लग गए थे। समृद्ध सांस्कृतिक विरासत को संजोए भारतीय सभ्यता ने समय के हर कालखंड में नई-नई खोजों और अविष्कारों में महत्त्वपूर्ण योगदान देकर विश्वभर में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई है। भारतीय सभ्यता में आर्य संस्कृति के समावेश से हमारी विज्ञान परंपरा और विकसित होती गई और इस काल में भारतवर्ष में गणित, ज्योतिष, रसायन, खगोल, चिकित्सा तथा धातु जैसे क्षेत्रों में विज्ञान ने खूब उन्नति की। अपने इसी गौरवमय इतिहास का अनुसरण करते हुए आज़ादी के बाद भी भारत ने विज्ञान के हर क्षेत्र में अभूतपूर्व तरक्की की है। देश के उपलब्धियों भरे इतिहास में उस समय एक और सुनहरा अध्याय जुड़ गया जब हमारे वैज्ञानिकों ने अंतरिक्ष में एक साथ बीस उपग्रह प्रक्षेपित कर दुनियाभर में अपनी वैज्ञानिक विशेज्ञता का लोहा मनवाया। 22 जून 2016 को श्रीहरिकोटा स्थित सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से पोलर सैटेलाइट लांच व्हीकल की सहायता से 17 विदेशी उपग्रहों सहित कुल बीस उपग्रह एक साथ प्रक्षेपित कर इसरो ने एक नया कीर्तिमान बनाया है। इन उपग्रहों में अमेरिका, कनाडा, जर्मनी और इंडोनेशिया के अलावा भारतीय विश्वविद्यालयों के दो उपग्रह भी शामिल हैं। इन उपग्रहों के सफल प्रक्षेपण से भारत ने अब किसी भी जगह/स्थान को अंतरिक्ष से देखने में क्षमता हासिल कर ली है। अंतरिक्ष से अब हाई-रिजोल्यूशन तस्वीरें मुमकिन हो सकेंगी जिससे भूकंप, तूफान, भारी वर्षा और अन्य आपदाओं से कुशलता के साथ निपटने में सहायता मिलेगी। सुरक्षा एजेंसियों को सीमा पर नजर रखने में मदद मिलने के साथ-साथ शहरी योजना और डिजायनिंग जैसे कार्य भी सुगम हो जाएंगे। इन उपग्रहों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर भारत अब संचार, मौसम पूर्वानुमान व संबद्ध जानकारी, चिकित्सकीय टेलिमेडिसिन, कृषि-बागबानी फसल अनुमान, जलस्रोतों की खोज और पर्यावरण संरक्षण पर निगाह रख सकेगा जिससे इन क्षेत्रों में गहन अध्ययन संभव होगा। विगत कुछ समय में मंगलयान और चंद्रयान-I की बड़ी सफलताओं के पश्चात इन उपग्रहों के सफल प्रक्षेपण से इसरो ने अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में अपना परचम लहराया है। अंतरिक्ष में भारत की इन सफलताओं से देश की अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी पर पूरी दुनिया का विश्वास बढ़ा है परिणामस्वरूप आज अमेरिका, कनाडा और जर्मनी जैसे विकसित देश अपने उपग्रहों का प्रक्षेपण भारत से करवा रहे हैं। अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में प्राप्त इन उपलब्धियों से आभास होता है कि वह दिन अब दूर नहीं जब भारतवर्ष अंतरिक्ष के क्षेत्र में महाशक्ति बनकर उभरेगा। विज्ञान के साथ-साथ साहित्य एक ऐसा अन्य क्षेत्र है जिसमें भारतीय साहित्यकारों ने अपना बहुमूल्य योगदान देकर इसके कथ्य-शिल्प और रचनाशीलता को नई दिशा दी है। यशस्वी रचनाकार चंद्रधर शर्मा गुलेरी भारतीय साहित्य के ऐसे ही महान लेखक हैं जिन्होंने अपने कथा-कर्म से भारत के समूचे साहित्य जगत में एक युगांतरकारी परिवर्तन किया। हिंदी साहित्य में शायद ही ऐसा कोई उदाहरण मिले, जहां किसी एक रचना एवं रचनाकार को वैसी प्रसिद्धि मिली हो, जैसी 'उसने कहा था', कहानी और उसके लेखक चंद्रधर शर्मा गुलेरी को मिली है। इस एक कहानी ने गुलेरी जी को साहित्य के फलक पर सुशोभित तो किया ही, साथ ही हिंदी भाषा और साहित्य के गौरव में इसने जो अभिवृद्धि की, वह निस्संदेह अतुलनीय है। हिंदी भाषा की इस आदि कहानी को आज भी अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है और पाठकों द्वारा चाव से पढ़ी जाती है। इतने लंबे अर्से बाद भी यह कहानी हिंदी साहित्य में वैसी ही गरिमा-महिमा समेटे हुए है। इसकी अभिरुचि में कभी कोई कमी नहीं आई, बल्कि इसकी रोचकता आज तक यथावत् बरकरार है। पहले विश्वयुद्ध की पृष्ठभूमि को लेकर लिखी गई इस कहानी को रचना-शिल्प की दृष्टि से अपने समय से बहुत आगे की रचना माना गया है और इसके पात्र सामाजिक यथार्थ के धरातल पर खड़े दिखाई देते हैं जो काल्पनिक कतई प्रतीत नहीं होते। आधुनिक हिंदी कहानी का प्रारंभ शायद यहीं से हुआ होगा। चंद्रधर शर्मा गुलेरी को उनकी जयंती पर शत-शत नमन।

–संपादक

आलेख

आधुनिक हिन्दी की प्रथम कहानी के जनक कथाकार गुलेरी

● सुदर्शन वशिष्ठ

गुलेरी जैसे कथाकार की कहानियों पर पूरी एक सदी बीत जाने पर भी पुनर्पाठ और पुनर्विचार की गुंजाईश महसूस होती है, यह उनके द्वारा कहानी को एक चमत्कारिक मोड़ देने की कला का ही प्रतिफल है। कहानियां भी अधिक नहीं। मात्र साढ़े तीन और उनमें भी एक 'उसने कहा था' की रचना, कथाक्रम के इतिहास में एक आश्चर्यजनक मोड़ है।

यहां तीन के बाद एक और आधी अधूरी कहानी का जिक्र विशेष रूप से किया जाएगा।

तीन कहानियों पर बहुत बात हो चुकी है। तीसरी आधी अधूरी कहानी पर बात नहीं हुई जो वास्तव में गुलेरी जी के पर्वतीय परिवेश के सूक्ष्म और मारक वर्णन के रूप में सामने आती है।

यह सही है कि उनकी एकमात्र कहानी 'उसने कहा था' आज से एक सदी पूर्व हिन्दी जगत में एक अभूतपूर्व घटना के रूप में प्रकट हुई। गुलेरी जी संस्कृत के महापण्डित होने के साथ कई भाषाओं के ज्ञाता होते हुए भी एक विशुद्ध हिन्दी प्रेमी रहे। दर्शन शास्त्र ज्ञाता, भाषाविद्, निबन्धकार, ललित निबन्धकार, कवि, कला समीक्षक, आलोचक, संस्मरण लेखक, पत्रकार और संपादक होते हुए वे हिन्दी को समर्पित रहे। संस्कृत के एक प्रकाण्ड पण्डित से ऐसी कहानी की अपेक्षा करना अपने में एक आश्चर्य है। वे कथाकर्म के मर्मज्ञ थे, इसमें कोई संदेह नहीं। यह कहानी, हिन्दी कथा यात्रा के उस प्रारम्भिक युग में एक चमत्कारपूर्ण घटना थी जिसने आज से सौ वर्ष पूर्व समूचे साहित्य जगत में एक युगांतरकारी परिवर्तन कर दिया।

इससे भी कहीं ज्यादा चमत्कारी 'उसने कहा था' की अगली कड़ी 'हीरे का हीरा' है।

गुलेरी जी की पहली कहानी 'सुखमय जीवन' भारतमित्र कलकत्ता के किसी अंक में 1911 में छपी। दूसरी कहानी ''बुद्धू का कांटा'' के प्रकाशन का समय अज्ञात है तथापि इसे 1911 और 1915 के बीच पाटलिपुत्र में प्रकाशित माना जाता है। तीसरी और महत्वपूर्ण कहानी 'उसने कहा था' को अधिकांश विद्वानों ने सरस्वती के जून 1915 अंक में छपा माना है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल, श्यामसुंदर दास, नंददुलारे वाजपेयी, डा. नगेन्द्र, मुकुटधर पाण्डेय, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, डॉ. हरदयाल आदि ने अपने समय में उनकी केवल तीन कहानियों का ही जिक्र किया है जिससे ये द्विवेदी युग के सशक्त कथाकार के रूप में स्थापित हुए।

गुलेरी जी की इन तीन कहानियों को कई संपादकों ने पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। पीयूष गुलेरी ने अपने पीएच.डी. शोध ''श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरीः व्यक्तित्व और कृतित्व'' (दिग्दर्शन चरण जैन ऋषभचरण जैन एवम् संतति दरियागंज दिल्ली-2ः 1983) में जहां गुलेरी जी के सम्बन्ध में अन्तरंग जानकारियां दी है वहां मनोहर लाल ने समीक्षात्मक नजरिए से महत्वपूर्ण सामग्री जुटाई है। पीयूषजी ने अंत में 'उसने कहा था' का हस्तलिखित पाठ दिया है, जो बहुत महत्वपूर्ण है। ऐसे ही इनकी सभी कहानियों के मूल पाठों की आज आवश्यकता है, जो उपलब्ध नहीं हैं। मनोहर लाल (स्व.) ने 1983 में 'गुलेरी साहित्यालोक' (प्रकाशक : किताब घर दिल्ली) में अन्य प्रतिनिधि रचनाओं के अलावा तीन कहानियों को भी शामिल किया। सन् 2008 में नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया से पीयूष एवं प्रत्यूष गुलेरी द्वारा संपादित ''चन्द्रधर शर्मा की चर्चित कहानियां'' प्रकाशित हुई। सबसे अद्यतन संस्करण सम्भवतः पीयूष-प्रत्यूष गुलेरी द्वारा संपादित और साहित्य अकादेमी दिल्ली से 2010 में प्रकाशित 'गुलेरी रचना संचयन' है जिसमें निबन्ध, संस्मरण, कविताओं के अलावा यही तीन कहानियां ली गई हैं।

सभी संस्करणों में कहानी के पाठों में ज्यादा भिन्नता नहीं है। कहानीकार, कहानी की रचना के समय या उसके बाद भी अपने

लिखे पाठ में परिवर्तन करता है। कुछ परिवर्तन या संशोधन संपादकों द्वारा किए जाते हैं। ऐसा गुलेरी जी की कहानियों के साथ भी हुआ होगा। किंतु संकलनों में यह बात खुल कर सामने नहीं आई जो आनी चाहिए थी। डॉ. हरदयाल ने 'उसने कहा था' कहानी में दिए एक गीत का उल्लेख किया है जिसे कुछ संपादकों ने अश्लील मान कर निकाल दिया। हालांकि आज के युग में अश्लीलता की परिभाषा बदल चुकी है और बोल्डनेस के नाम पर बहुत कुछ परोसा जा रहा है। 'उसने कहा था' के गीत में उल्लिखित 'नाड़े दा सौदा' या 'बुद्धू का कांटा' में 'लंहगा पसारने' का प्रयोग आज के संदर्भ में अश्लीलता की श्रेणी में कतई आता ही नहीं। कहानी में स्पष्ट उल्लेख भी किया गया है कि 'घरबारी सिख ऐसा लुच्चों का गीत गाएंगे, पर सारी खंदक इस गीत से गूंज उठी और सिपाही फिर ताज़े हो गए मानो चार दिन से सोते और मौज करते रहे हों।' तथापि उस युग की मर्यादा के अनुसार हटाए गए प्रसंगों या वाक्यों के साथ कहानियों के मूल पाठ की अपेक्षा आज भी बनी हुई है। यदि कोई ऐसा संकलन निकाले जिस में हस्तलिखित या प्रामाणिक मूल पाठ के साथ विवेचना दी गई हो तो समीक्षा के धरातल पर कुछ नये तथ्य खोजे जा सकते हैं।

इसके साथ ही इन कहानियों के रचनाकाल व प्रकाशन के बारे में भी कोई स्पष्ट खोज नहीं हो पाई। पहली कहानी 'सुखमय जीवन' भारतमित्र के किस अंक में छपी या 'बुद्धू का कांटा' का रचनाकाल व प्रकाशन काल क्या है, यह भी अज्ञात है। गुलेरी जी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व व कृतित्व की वह खोज खबर नहीं ली गई जो लेनी चाहिए थी। डॉ. पीयूष गुलेरी के पीएच.डी. शोध 'श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी : व्यक्तित्व और कृतित्व (दिग्दर्शन चरण जैन ऋषभचरण जैन एवम् संतति दरियागंज दिल्ली-2) तथा डॉ. मनोहर लाल के 'गुलेरी साहित्यालोक' (किताब घर गांधी नगर दिल्ली-31) के अलावा कोई ग्रन्थ सामने नहीं आया। ये दोनों ही ग्रन्थ 1983 में प्रकाशित हुए। दोनों ही ग्रन्थ अलग अलग दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण हैं। पीयूष गुलेरी जी ने जहां गुलेरी जी के सम्बन्ध में अंतरंग जानकारियां दी है वहां मनोहर लाल ने समीक्षात्मक नजरिए से महत्वपूर्ण सामग्री जुटाई है। पीयूष जी अंत में 'उसने कहा था' का हस्तलिखित पाठ दिया है, जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। ऐसे ही इनकी सभी कहानियों के मूल पाठों की आज आवश्यकता है। इसके बाद जयंती आयोजनों पर छिटपुट लेख आते रहे अन्यथा ख़ामोशी छाई रही। जबकि अभी गुलेरी जी पर कई दृष्टियों से शोध होने बाकी हैं। इनकी जन्मशती पर साहित्य जगत में कुछ आने की उम्मीद थी, जो पूरी नहीं हो पाई। गुलेरी जी के पौत्र विद्याधर गुलेरी, जो पहले एक अध्यापक और बाद में संस्कृति मन्त्रालय में सलाहकार थे, (अब स्व.) ने कुछ करने का प्रयास करने किया था किंतु कई समालोचकों को प्रकाशकों से मिलने के बाबजूद भी कुछ सामने नहीं आ पाया। गुलेरी जी पर जो खोज, जो अन्वेषण होना चाहिए था, वह हुआ नहीं।

सन् 2014 में 'उसने कहा था' कहानी के 'सौ साल' मनाए जाने के आयोजन कुछ अखबारों व पत्रिकाओं में देखने को मिले; इनका आधार क्या रहा होगा, यह भी शोध का विषय है। 'उसने कहा था' 1915 में छपी तो 1914 में लिखी गई होगी, ऐसा मान इस वर्ष में एक शताब्दी हुई मानी जा सकती है।

'उसने कहा था' की अगली कड़ी 'हीरे का हीरा' पर बात करने से पहले उनकी तीन कहानियों पर चर्चा करना आवश्यक हो जाता है। हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री पुरुष सम्बन्ध, प्रेम, कर्त्तव्य व बलिदान का जो रूप प्रारम्भ से चलता आया है, उसकी अभिव्यक्ति गुलेरी जी की कहानियों में एकदम अलग है। जैनेन्द्र कुमार की बोल्डनेस, प्रेमचंद के अनमेल विवाह से एक कदम आगे मनोवैज्ञानिक हो गई। प्रेमचंद के बाद जैनेन्द्र के महिला पात्रों में एक द्वंद्व और अन्तर्विरोध आ गया। जो दाम्पत्य जीवन प्रेमचंद के समय में था, वह जैनेन्द्र के समय तिकोने प्रेम के रूप में सामने आया जो कई जगह बहुत संशलिष्ट और उलझावपूर्ण हो गया है। अश्लीलता की ही बात करनी हो तो बाद में यशपाल ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी। गुलेरी जी के प्रेम, कर्त्तव्य और बलिदान का एक क्रमिक विकास कहानियों में मिलता है। यह विकास समय और स्पेस; दोनों ही दृष्टियों से है। यदि 'सुखमय जीवन' में ये तंतु अपरिपक्व हैं तो 'बुद्धू का कांटा' में प्रेम की धारा गुप्त रूप से बहती है। तीसरी कहानी 'उसने कहा था' में कथाकार और मुखर हुआ है। पहली कहानी में केवल प्रथम दृष्टि परिणय आता है। दूसरी में कुछ कुछ साहचर्य और तीसरी में साहचर्यजनित अव्यक्त रूप के साथ एक विशाल वातावरण का निर्माण हुआ है जो कहानी

'उसने कहा था' की अगली कड़ी 'हीरे का हीरा' पर बात करने से पहले उनकी तीन कहानियों पर चर्चा करना आवश्यक हो जाता है। हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री पुरुष सम्बन्ध, प्रेम, कर्त्तव्य व बलिदान का जो रूप प्रारम्भ से चलता आया है, उसकी अभिव्यक्ति गुलेरी जी की कहानियों में एकदम अलग है। जैनेन्द्र कुमार की बोल्डनेस, प्रेमचंद के अनमेल विवाह से एक कदम आगे मनोवैज्ञानिक हो गई। प्रेमचंद के बाद जैनेन्द्र के महिला पात्रों में एक द्वंद्व और अन्तर्विरोध आ गया।

के फलक को बहुत विस्तृत कर देता है। यह प्रेम केवल व्यक्ति से ही न जुड़ कर पूरे समाज के साथ जुड़ा है। इसी तरह तीनों कहानियों में शैली का विकास भी क्रम से होता गया है।

यह तीसरी कहानी 'उसने कहा था', ही थी जिसने समूचे कथा जगत को चमत्कृत कर दिया, हिंदी कहानी के उस शैशवकाल में शैली और कथ्य की दृष्टि से एकदम ऐसी परिपक्व कहानी का आ जाना वास्तव में एक चमत्कारी घटना थी। कहानी में सहज बोलचाल की भाषा के साथ साथ वातावरण निर्माण का पूरा ख्याल रखा गया है। अमृतसर की गलियों के सजीव वातावरण से आरम्भ हो कर कहानी कहां युद्ध के एक अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण तक सफर करती हुई पूरे परिवेश को समेटती है; यह कहानी कला एक सशक्त उदाहरण है। कहानी पर 1960 में बिमल रॉय ने फिल्म भी बनाई जिसका निर्देशन मोनी भट्टाचार्य ने किया। संगीत सलिल चौधरी ने दिया, गीतकार शैलेन्द्र थे। फिल्म के मुख्य कलाकार सुनील दत्त और नंदा रहे। फिल्म हालांकि बॉक्स ऑफिस पर हिट नहीं हुई, 'अहा रिमझिम के प्यारे प्यारे गीत' जैसे गीत खूब चले और उस समय की नवोदित कलाकार इन्द्राणी मुखर्जी के अभिनय की सराहना हुई।

इस कहानी तक पहुंचते पहुंचते गुलेरी जी ने अपने मूल स्थान कांगड़ा को शब्दों और संवादों (कुड़माई, लाड़ी, साफा, होरां, मथा टेकणा, बेहड़ा, दियासलाई, मंजा, ओबरी आदि) के माध्यम से याद किया है। पंजाब के मगरे और मांझे में घर होने के बावजूद नगरकोट का जलजला, बुलेल खड्ड, आम की छाया, आम में हाड़ मास में फल आना, मजेदार कद्दू का बनना आदि कांगड़ा की याद दिलाते हैं।

क्या गुलेरी जी ने केवल तीन ही कहानियां लिखी होंगी, यह प्रश्न उस समय भी उठे थे। सर्वप्रथम गुलेरीजी की एक ही कहानी 'उसने कहा था' चर्चा में आई डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है : ''अभी एक आध वर्ष पहले तक सबका यही ख्याल था कि गुलेरी जी केवल एक ही कहानी 'उसने कहा था' लिख कर अमर हो गए। विद्वानों ने इस बात को पूरे विश्वास के साथ लिखित रूप में भी स्वीकार कर लिया था। परंतु कुछ दिन हुए गुलेरी जी की दो और कहानियां सामने आई।''

यह प्रश्न उठते रहे कि हो न हो गुलेरी जी ने इन तीन कहानियों के अलावा भी कहानी लिखने के कुछ और प्रयास किए हों। डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है : ''संभव है, उन्होंने कुछ और भी प्रयत्न किए हों जो आज उपलब्ध नहीं।''

बाद में गुलेरी जी के निबन्धों को ही कहानियां कह दिया गया या उनकी कुछ लघुकथाएं भी निकाल दी गईं। दूसरी विधा की रचना को कहानी कह देना भी उचित नहीं है जैसाकि कुछ समीक्षकों ने सायास किया है।

सम्भवतः इसी खोज के परिणामस्वरूप एक कहानी, या यूं कहें, कहानी का एक भाग ''हीरे का हीरा'' सामने आई है, जो ''उसने कहा था' कहानी का ही अगला अंश है। इस कहानी में लहना सिंह की वापसी दिखाई है। कहानी के इस अंश का उल्लेख स्व. मनोहर लाल ने किया है। इस कथा अंश को डॉ. छोटाराम कुम्हार ने ढूंढा। डॉ. मनोहर लाल ने 'उसने कहा था और अन्य कहानियों' में उल्लेख किया है कि डॉ. छोटाराम कुम्हार ने अप्रैल 1981 के पत्र विषेशांक में दो पत्रों के साथ 'हीरे का हीरा' कहानी भी भेजी थी जो नहीं छपी। हालांकि इस अंश के गुलेरी द्वारा लिखे जाने पर सवाल भी खड़े किए गए हैं। डॉ. विद्याधर गुलेरी ने इस खण्डित कथा अंश पर सवाल तो उठाए हैं किंतु पूरी प्रति न मिल पाने के कारण इस के स्वतन्त्र कथा पर भी प्रश्नचिह्न लगाए हैं। तथापि यहां इसकी चर्चा करना तर्कसंगत रहेगा। यही स्थिति एक अन्य अनुपलब्ध कथा 'पनघट' की हैं जो 'बुद्धु का कांटा' का ही अंश हो सकती है। इसी तरह एक अन्य कहानी का मात्र नाम ही सामने आता है। गुलेरी जी के सुपुत्र शांतिधर ने दिसम्बर 1945 में इनके अग्रज योगेश्वर गुलेरी को लिखे एक पत्र में 'दही की हंडिया' कथा का जिक्र किया है किंतु यह कथा उपलब्ध नहीं है।

'हीरे का हीरा' के बारे में यहां कुछ बातें कहनी आवश्यक हैं। इस कथा अंश का प्रकाशन डॉ. मनोहर लाल ने ''उसने कहा था तथा अन्य कहानियां'' में किया। 6 सितम्बर 1987 को स्व. मनोहर लाल ने ही इसका प्रकाशन जनसत्ता में कराया। जहां 'उसने कहा था' में सूबेदारनी की टीस को मैत्रेयी पुष्पा ने 'सूबेदारनी का हलफनामा' लिख कर आगे बढ़ाया वहां सुशीलकुमार फुल्ल ने अधूरी कहानी 'हीरे का हीरा' को पूरा करने का साहस किया। 'हीरे का हीरा' एक पूरी कहानी के रूप में दैनिक ट्रिब्यून के 1 अप्रैल 1990 अंक में छपी। इसी कहानी का डॉ. फुल्ल द्वारा किया गया दूसरा रूपांतर हिमप्रस्थ में प्रकाशित हुआ। यहां केवल कथा के उपलब्ध अंश की बात की जाएगी। इस अंश में कांगड़ा के सांस्कृतिक परिवेश का जितना सजीव वर्णन हुआ है, वह चौंकाने वाला है। मूल कहानी में पंजाब का वर्णन, पंजाब के ही लहजे में अधिक है। यहां लहना सिंह की कांगड़ा में अपने परिवार के बीच वापसी दिखाई गई है। 'उसने कहा था' अमृतसर की गलियों से प्रारम्भ हो कर युद्ध के वातारवण में समाप्त होती है। कहानी के पांचवें अनुच्छेद में 'मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति के बहुत साफ होने' का उल्लेख है। लहना सिंह की मृत्यु नहीं दिखाई गई। यद्यपि कहानी के अंत में कुछ दिनों बाद एक समाचार का हवाला है जिसमें फ्रांस और बेलजियम युद्ध के मैदान में घावों से सिख राइफल्ज के जमादार लहना सिंह के मरने की 'खबर' भर है।

'हीरे का हीरा' में लहना सिंह अपने परिवार में लौटता है जो आश्चर्यजनक तो है ही, पाठकों के लिए एक अप्रत्याशित घटना है। आंगन में आते ही लहना सिंह मां से उस चिट्ठी का जिक्र करता है जो उसने अम्बाला छावनी से लिखवाई थी। मां इस बात का

लहना सिंह की वापसी की चमत्कारी घटना वास्तव में एक विचित्र संसार का निर्माण करती है जिसमें कांगड़ा के ठेठ गंवई जनजीवन के संस्कारों का चित्रण है। बाहर खेतों के पास लकड़ी की धमाधम, जैसे कोई लंगड़ा आदमी चला आ रहा है। आंगन को गोबर से लीपना, चावल के आटे से लकीरें बनाना, अक्षत, बिल्लवपत्र चढ़ाना, दूब की नौ डालियों से कुलदेवी उकेरना, सात वर्ष के बालक हीरे का एकमात्र कुरता खार से धोना, सुखदेई का कलश लेकर दाहिनी द्वारसाख पर खड़े होना, लहना सिंह का भीतर प्रवेश पर देहरे के सामने सिर नवाना आदि संस्कारों का सजीव वर्णन है।

उत्तर न देकर झटपट दिया जलाती है। लहना सिंह की वापसी की चमत्कारी घटना वास्तव में एक विचित्र संसार का निर्माण करती है जिसमें कांगड़ा के ठेठ गंवई जनजीवन के संस्कारों का चित्रण है। बाहर खेतों के पास लकड़ी की धमाधम, जैसे कोई लंगड़ा आदमी चला आ रहा है। आंगन को गोबर से लीपना, चावल के आटे से लकीरें बनाना, अक्षत, बिल्लवपत्र चढ़ाना, दूब की नौ डालियों से कुलदेवी उकेरना, सात वर्ष के बालक हीरे का एकमात्र कुरता खार से धोना, सुखदेई का कलश ले कर दाहिनी द्वारसाख पर खड़े होना, लहना सिंह का भीतर प्रवेश पर देहरे के सामने सिर नवाना आदि संस्कारों का सजीव वर्णन है। तीन वर्ष से पति वियोग और दारिद्रय को ढोती सास बहू को 'दो जांघों वाले लहना सिंह की आदर्श मूर्ति' देखने की लालसा में पीपल के नीचे नाग को पंच पकवान चढ़ाने की इच्छा का चित्रण अत्यन्त मार्मिक है। मां देखती है...और जिन टांगों ने बालकपन में माता की रजाई को पचास पचास दफा उघाड़ दिया था उनमें से एक की जगह चमड़े के तसमों से बंधा हुआ डंडा था। माता रूंधे गले से कुछ नहीं कह पाती और कुछ सोच समझ कर बाहर चली जाती है। उधर गुलाबदेई के सारे अंग में बिजली की धाराएं दौड़ जाती हैं।

कहानी का आरम्भ होता है : ''आज सवेरे ही से गुलाबदेई काम में लगी हुई है। उसने अपने मिट्टी के घर के आंगन को गोबर से लीपा है। उस पर पीसे हुए चावल से मण्डन मांडे हैं। घर की देहली पर उसी चावल के आटे से लीकें खैंची हैं और उन पर अक्षत और बिल्वपत्र रक्खे हैं। दूब की नौ डालियां चुन कर उनमें लाल डोरा बांधकर उसकी कुलदेवी बनाई है और एक हरे पत्ते के दूने में चावल भर कर उसे अन्दर के घर में, भीत के सहारे एक लकड़ी के देहरे में रक्खा है। कल पड़ौसी से मांग कर गुलाबी रंग लाई थी। उससे रंगी हुई चादर बेचारी को आज नसीब हुई है। लठिया टेकती हुई बुढ़िया माता की आंखें यदि तीन वर्ष की कंगाली और पुत्र वियोग से और डेढ़ वर्ष की बीमारी की दुखिया के कुछ आंखें और उनमें ज्योति बाकी रही हो तो-दरवाज़े पर लगी हुई हैं।'

और कहानी का अंत हैः 'वह रोती गई और रोती गई और फिर रोती गई। क्या यह आश्चर्य की बात है? जहां कि स्त्रियां पत्र पढ़ना नहीं जानतीं और शुद्ध भाषा में अपने भाव नहीं प्रकट कर सकतीं और जहां उन्हें पति से बात करने का समय भी चोरी से ही मिलता है वहां नित्य अविनाशी प्रेम का प्रवाह क्यों नहीं अश्रुओं की धारा की भाषा में....... ।'' बस, यहीं कहानी समाप्त हो जाती है।

कहानी का अंत बहुत मार्मिक है जिससे लगता है कहानी अधूरी नहीं, पूर्णता से भी एक कदम आगे है।

यह कथा अंश लहना सिंह और सूबेदारनी के उस भावनात्मक और काल्पनिक प्रेम से हट कर यथार्थ की कंटीली ज़मीन से जुड़ा हुआ है जिसमें उसकी मां और पत्नी कंगाली के बीहड़ में जीती हुईं इंतजार में लगातार दरवाजे की ओर देख रही हैं। इस तरह का सजीव और सटीक वर्णन उस क्षेत्र का वासी ही कर सकता है, कोई बाहरी व्यक्ति नहीं। यदि इस अंश को लिखने वाला कोई है तो वह गुलेरी के अलावा दूसरा कोई नहीं।

कांगड़ा का परिवेश पहली दो कहानियों में तो है ही नहीं, तीसरी में शब्द व संवादों में आता है किंतु इस कहानी में जिन ठेठ परंपराओं का वर्णन है, वह माटी से जुड़ा व्यक्ति ही जान सकता है। संस्कृति, संस्कार, परंपरा और परिवेश इस कहानी के एक एक वाक्य में झलकते हैं।

गुलेरी जी ने मुकुटधर पाण्डेय को लिखे अपने एक पत्र में कहा था : ''दो चार कविता या लेख लिख कर भी आदमी अमर हो सकता है जबकि बहुत लिखने के बाद भी, सौ पचास वर्षो बाद किसी का नाम लोगों को याद नहीं रहता।'' इतना कम लिखने पर भी आज सौ वर्षो के बाद उन्हें याद किया जा रहा है उसी शिद्दत से, कथा जगत में ऐसा उदाहरण और नहीं मिलता।

'उसने कहा था' को आधुनिक हिन्दी की प्रथम कहानी माना गया। यदि इसके साथ 'हीरे का हीरा' वाला अंश भी जुड़ जाता और यह एक सम्पूर्ण कहानी बनती तो कई दृष्टियों से मील का पत्थर साबित होती।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी
शिमला-171009, मो. 94180-85595

आलेख

हिमाचल में महिला लेखन

● कंचन शर्मा

आज जब हम भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओं के कॉलम देखते हैं तो उसमें 'स्त्री-विमर्श', 'स्त्री-स्वर' या 'स्त्री लेखन' का संदर्भ मिलता है। 'स्त्री लेखन' होता क्या है? 'क्या वह' जो कुछ भी स्त्री लिख दे या जो स्त्रीवादी हो या फिर जो स्त्री समर्थक हो। मेरी नज़र में स्त्री लेखन वो है जो किसी भी स्त्री ने जिया, भुगता, सहा, संघर्ष किया, एक सुन्दर समाज संकल्पित किया, नर, नारी, जड़, चेतन, पृथ्वी आकाश किसी की भी चिन्ता की और व्यवस्था परिवर्तन के लिए उसे शब्दों में ढाला, ''वही है स्त्री लेखन''।

वैसे तो आदिकाल से सम्पूर्ण भारत में महिलाएं अपनी कलम की धार का लोहा मनवा चुकी हैं। मीराबाई, सुभद्रा कुमारी चौहान, अमृता प्रीतम, महादेवी वर्मा जैसी लेखिकाओं को कौन नहीं जानता। स्त्री लेखन ने स्वतन्त्रता संग्राम में भी जनजागृति की अलख जगाई है। देश प्रेम, अनुराग, प्रकृति, संस्कृति, स्वयं नारी वेदना, दलित स्त्री लेखन ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जहाँ स्त्री लेखन अछूता हो।

मैं इन नामों के बाद अगर हिमाचल के महिला लेखन की ओर आऊँ तो कुछ महिला साहित्यकार ही अभी राष्ट्रीय स्तर पर अपनी आभा बिखेर पाई हैं। साहित्यकार एस.एन. जोशी जी के कथन में ईसमत चुगतई की निधड़कता या निरूपमा दत्त की बुरी औरत का खुलापन हमारे यहाँ महिला लेखन में नज़र नहीं आता और संभवतः आएगा भी नहीं क्यांकि हिमाचली समाज ने महिला को उस प्रकार प्रताड़ित नहीं किया जिस प्रकार अन्य, विशेषकर मैदानी इलाकों के समाज ने किया है। जिसने महिला साहित्यकारों को उस स्तर पर लिखने के लिए प्रेरित किया।

हिमाचल जैसे शांत प्रदेश में नव जागरण काल के दौरान स्त्री आन्दोलन नहीं चला, सामाजिक विसंगतियां कम रहीं, स्त्रियों ने विरोध के बजाय स्थितियों के साथ सामंजस्य बिठा लिया। जहाँ सामंजस्य है वहां विचारोत्पत्ति यूं ही रुक जाती है। जो झेला नहीं वह शब्दों से खेला नहीं। अच्छा साहित्य झेलने से पनपता है। शायद यही एक वजह रही कि आजादी के बाद भी हिमाचल में औरतें लिखती रहीं। मगर उनके लेखन में विरोध नहीं रहा। इसी कारण आजादी के दो-तीन दशक बाद तक उनका लेखन राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति नहीं पा सका।

हिमाचल में महिला लेखन पर जब मैंने लिखना शुरू किया तो मन में एक सवाल उठा कि हिमाचल की पहली महिला लेखिका कौन थी? कितनी ही कहानियां, लोकगीत हम लोकश्रुतियों में सुनते आ रहे हैं। किसने रची ये लोकश्रुतियां। कौन था वह रचनाकार? एक महिला या एक पुरुष? बहरहाल बहुत से ऐसे प्रश्नों के सवाल ढूंढने होंगे। मगर पड़ताल करते-करते जब मैं 16वीं शताब्दी के गीतिकाल में पहुँची तो गुलेर के विक्रम सिंह नरेश की रानी को हिमाचल की पहली लेखिका के रूप में पाती हूँ। अंतिम गुलेर नरेश बलदेव सिंह तो ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे। उन्होंने अपनी हस्तलिपि में कुछ गीतियों के 'श्रीमती रानी विक्रम' द्वारा लिखे जाने की बात कही है। विक्रम सिंह का शासन काल सन् 1662-1675 के मध्य का है। अतः इस दृष्टि से यही गीतियाँ कांगड़ी कविता (पहाड़ी) की नींव का पहला पत्थर मानी जा सकती हैं।

विवेच्य गीतियाँ 'जुग-जुग राज करे ज्यों चंदा'' व ''मेरे मन हरि का नाम प्यारा'' भाव व भाषा की दृष्टि से लिखित साहित्य का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। ऐसा संदर्भ डॉ. प्रत्यूष गुलेरी की पुस्तक 'हिमाचल की सांस्कृतिक धरोहर'' में मिलता है। विक्रम नरेश की पत्नी ने अपनी सास रानी कल्याण देवी के समक्ष अपने पति की प्रशंसा में वीरता की गाथा प्रस्तुत की थी। रानी विक्रम नरेश जिसे मैं इस समय हिमाचल की पहली लेखिका के रूप में देख रही हूँ उनके नाम का कहीं उल्लेख नहीं मिला। वे रानी विक्रम नरेश से ही जानी जाती हैं। उसके बाद स्वाधीनता संग्राम के क्रान्तिकारी आन्दोलन 'गदर' पार्टी की मुख्य नेता के रूप में मण्डी रियासत की रानी ललिता कुमारी जिन्हें उन दिनों रानी खैर गढ़ी नाम से पुकारा जाता है, उन्हें 'दूसरी महिला लेखिका' के रूप में देखती हूँ। उन्होंने गदर पार्टी के पर्चे जैसे 'गदर की गूँज' 'गदर संदेश' 'एलान-ए-जंग' आदि क्रान्तिकारी साहित्य की रचना की। इसमें हिन्दोस्तां हमारा और भारत माता की फरियाद के पम्फलेट शामिल थे।

1942 में स्वाधीनता संग्राम की कार्यकर्मी सरला शर्मा ने

हिमाचल में महिला लेखन पर जब मैंने लिखना शुरू किया तो मन में एक सवाल उठा कि हिमाचल की पहली महिला लेखिका कौन थी? कितनी ही कहानियां, लोकगीत हम लोकश्रुतियों में सुनते आ रहे हैं। किसने रची ये लोकश्रुतियां। कौन था वह रचनाकार? एक महिला या एक पुरुष? बहरहाल बहुत से ऐसे प्रश्नों के सवाल ढूंढने होंगे। मगर पड़ताल करते-करते जब मैं 16वीं शताब्दी के गीतिकाल में पहुँची तो गुलेर के विक्रम सिंह नरेश की रानी को हिमाचल की पहली लेखिका के रूप में पाती हूँ। अंतिम गुलेर नरेश बलदेव सिंह तो ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे। उन्होंने अपनी हस्तलिपि में कुछ गीतियों के 'श्रीमती रानी विक्रम' द्वारा लिखे जाने की बात कही है। विक्रम सिंह का शासन काल सन् 1662-1675 के मध्य का है। अतः इस दृष्टि से यही गीतियाँ कांगड़ी कविता (पहाड़ी) की नींव का पहला पत्थर मानी जा सकती हैं।

बैजनाथ में 'अंग्रेजो हमारा देश छोड़ो' जैसा नारा दिया। राजकुमारी अमृत कौर, निर्मला शेरजंग, ऊषा शारदा जैसी अनेक महिला क्रान्तिकारी नेताओं के साथ अग्रणी रही। कहीं न कहीं क्रान्तिकारी साहित्य में इनकी अमिट छाप है। उनके इन्हीं कार्यां ने इन लेखिकाओं को हिमाचल के इतिहास में कालजयी बना दिया है।

किसी भी देश की संस्कृति का लेखन का वहाँ के भूगोल व इतिहास से गहरा सम्बन्ध होता है। पर्यावरण व परिस्थितियां दोनों ही न केवल रंगरूप बदलती हैं अपितु सोच, आदतों, खानपान यहाँ तक कि साहित्य में भी प्रभावित करती हैं।

कितनी ही महिलाएं हैं जिनके साहित्यिक व्यक्तित्व पर वक्त की धूल पड़ी है। इस धूल को हटाना अत्यावश्यक है। सुश्री अम्बिका, श्रीमति सत्यपुरी, कला ठाकुर, श्रीमति सुदर्शन डोगरा, श्रीमति प्रेमलता वर्मा, संतोष शैलेजा, संतोष कुमारी, श्रीमति कृष्णा शर्मा, सब महिलाओं ने हिन्दी, पहाड़ी में अनेकों विधाओं में लिखा। आकाशवाणी में सक्रिय रही। नृत्य कला, संगीत, चित्रकला, गृहकला व गृहशिल्प में उनकी व्यापक दृष्टि रही। इसके साथ आजादी के दो-तीन दशकों तक टैक्नोलजी, मीडिया का विस्तार ही नहीं था जिस कारण हिमाचल की महिलाएं चाहे साहित्य, संगीत, नृत्य, चित्रकला, हस्त शिल्प जैसी कलाओं में पारंगत होते हुए भी आज के जनमानस में गौण ही हैं। उनके कृतित्व को एक बार फिर से रोशनी में लाना जरूरी है।

हिमाचल में महिला साहित्य की अपनी पड़ताल में मैंने बहुतों से प्रश्न किया कि हिमाचल की महिला लेखिका कौन रही होंगी तो 99 प्रतिशत लोगों ने दिवंगत श्रीमती सरोज वशिष्ठ का नाम लिया। जिससे स्पष्ट हो जाता है कि हिमाचल में महिला लेखन पर शोध करने की आवश्यकता है।

श्रीमती सरोज वशिष्ठ प्रतिभा की धनी, बेबाक, सामाजिक सरोकारों से जुड़ी, समाज के निचले तबके की प्रिय 'मॉम', कैदियों की 'माँ' थी। उन्होंने आकाशवाणी दिल्ली से सेवानिवृत्ति के बाद कैदियों के लिए बहुत काम किया। उनके अपने मौलिक साहित्यकर्म में 'अपने-अपने कारावास', 'मैं हूँ ना', 'तिहाड़ जेल में ऐसे जैसे कुछ हुआ ही नहीं, 'अनुभव' 'मोर्चा दर मोर्चा' जैसी पुस्तकें लिखी जिनमें सामाजिक सराकारों को लेकर उनके अनुभव व पीड़ा स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। उन्होंने नोबेल पुरस्कृत अनेकों पुस्तकों का भी अनुवाद किया। जीवन के अंतिम दिनों में 'जेलों पर ऐराश' नामक पुस्तक लिख रही थी और उम्र के उस पड़ाव में भी उन्हें इस कार्य के लिए कुसुमांजलि फैलोशिप (स्पैशल केस) के रूप में मिली थी। उनका इस दुनिया से चले जाना दुःखद तो था ही साथ में साहित्य के लिए भी क्षति हुई।

इधर रेखा वशिष्ठ जी का लेखन हिमाचल की महिला साहित्यकारों को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित कर देता है। रेखा जी के लेखन में नारी संघर्षशील है और अंत में नायिका के रूप में उभरती है। रेखा जी के तीन कविता संग्रह और एक कहानी संग्रह प्रकाशित है। उनकी संवेदनाएं इतनी गहरी हैं कि भीतर तक मन को छू जाती है। इनकी कविताएं शहरी जिन्दगी की आत्मीयता से भरी हुर्ठ है। इनकी कविताओं ने आम आदमी के सम्बन्धों को उकेरा है। रेखा वशिष्ठ जी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी अवार्ड व साहित्य अकादमी अर्वॉर्ड से सम्मानित हैं।

हिमाचल के महिला लेखन में कवयित्री सरोज परमार की भागीदारी को अनदेखा नहीं किया जा सकता। इनके तीन काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं 'सुख और आदमी', 'समय से भिड़ने के लिए तथा 'मैं नदी होना चाहती हूँ'। इनकी कविताओं में क्षण बोध, स्थिति बोध तथा नारी अस्तित्व के पक्षों की स्टीक काव्यात्मक प्रस्तुति है। इन कविताओं में बिम्बों और प्रतीकों का अलग संस्कार हैं। सरोज परमार धारा के विरुद्ध तैरती हैं और राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनाए हुए हैं।

''उनके हिस्से में नहीं आती आग
आग के हिस्से में वो आती हैं।''

नारी के लिए चन्द्ररेखा डढवाल की ये पंक्तियां अंदर तक दिल को भेद जाती हैं। जहाँ हंसराज भारती जी और सुन्दरलाल लोहिया जी चन्द्ररेखा डढवाल को एक समर्थ व सार्थक कहानीकार के रूप में देखते हैं वहीं चंचल चौहान जी स्त्री विमर्श आलेख में कात्यायनी से शुरू करते हैं व अन्त में चन्द्ररेखा डढवाल तक पहुँचते हुए कहते हैं कि ये नारी की नियति छोटे से टुकड़ें में रख

देती हैं। राष्ट्रीय स्तर पर चन्द्ररेखा डढवाल ने इस दशक में कविता और कहानी दोनों में खासी पहचान बनाई है। उन्हें दिव्य हिमाचल ने सर्वश्रेष्ठ कवयित्री से भी सम्मानित किया है।

वरिष्ठ लेखिका हैटी प्रिम की 16 पुस्तकें प्रकाशित है। जिनमें तेरह पुस्तकें धार्मिक शिक्षा पर लिखी हैं। अभी हाल ही में इनकी संपादित व संकलित पुस्तक ''फोक सोंगस ऑफ हिमाचल'' का विमोचन हुआ है।

उर्दू में गज़ल की फनकार नलिनी विभा 'नाज़ली' न केवल उर्दू में अपितु हिन्दी/देवनागरी में भी लिखती हैं। अभी हाल में अपने बाल साहित्य के लिए काफी चर्चित रही हैं। इनकी 8 पुस्तकें प्रकाशित है। इनके बाल काव्य संग्रहों की विशेषता यह है कि प्रत्येक कविता के भावानुरूप चित्रण लेखिका ने स्वयं ही किया है।

उषा बांदे हिन्दी, अंग्रेजी व मराठी में समान अधिकार रखती है। मराठी व अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद में बान्दे जी सिद्धस्त हैं। जयवन्ती डिमरी समीक्षक व कहानीकार हैं।

डॉ. राधा वर्मा की चार पुस्तकें प्रकाशित हैं।

एक ओर आशा शैली जहाँ कविताएँ, कहानियां और उपन्यास लिखती हैं वहीं दूसरी ओर अपनी त्रैमासिक पत्रिका 'शैलसूत्र' के लिए चर्चित हैं।

मण्डी की रूपेश्वरी शर्मा नारी संवेदनाओं को अपनी कविताओं में उकेरती हैं, साथ ही हिमाचल के लोक संगीत के संरक्षण में भी उनका कार्य सराहनीय है। उनके गाए कुछ लोक गीत व बारहमासा दूरदर्शन शिमला में अगले सौ वर्षो तक के लिए संकलित है।

संगीत में सिद्धस्त डॉ. मनोरमा वर्मा ने संगीत को अपनी लेखनी से सजाया और अनेकों पुस्तकें लिखी। इन्हें संगीत लेखन के लिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेकों सम्मान मिले हैं।

सुशील कुमारी गौतम की तीन काव्य-पुस्तकें प्रकाशित हैं। उनकी दो पुस्तकें 'मन का अक्स'' और ''क्या वो सच्च था'' उच्च शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत हुई हैं।

'वे औरतें' और 'कैलेग्वे बीच की सुनहरी रेत पर' की कवयित्री हरिप्रिया की हिन्दी व मण्डयाली दोनों पर पकड़ है।

आधुनिक बोध से सम्पन्न इशिता की कविताएं आधुनिक शिल्प और शैली से परिपूर्ण हैं।

विद्यानिधी छाबड़ा समीक्षक और आलोचक हैं।

दिवंगत कांता शर्मा गांव की जीवनशैली को अपनी कविताओं में अच्छे से चित्रित करती थी। उनकी कविताओं के बिम्ब बहुत सुन्दर होते थे।

'सनशाइन माय एनकांउटर विद केंसर' की लेखिका मिनाक्षी चौधरी केंसर से लड़ते हुए अपनी जिजीविषा को रोशनाई में उकेरती हैं।

देवकन्या ठाकुर एक नवोदित लेखिका हैं व साथ में ही इन्होंने महिलाओं के अधिकारों के लिए 'नो वूमेन लैंड' डाक्यूमेंटरी बनाई है। जिसके लिए इन्हें राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर सराहना मिली है।

मृदुला श्रीवास्तव कविता और कहानी दोनों में अपनी पकड़ बनाए हुए हैं।

डॉ संगीता सारस्वत के सामाजिक अनुभवों की बुनियाद पर तीन काव्य-संग्रह प्रकाशित हैं। इनकी रचनाएं जीवनानुभवों की तीव्र अनुभूति की प्रेरणा बनी है।

काव्य संग्रह 'अस्तित्व की परख' की लेखिका प्रियंवदा मानव जीवन की पीड़ाओं को अपनी कलम में उकेरती हैं।

उषा आनंद का एक कहानी संग्रह 'एक चट्टान अकेली सी' प्रकाशित है।

निर्मला चंदेल का ''माँ के लिए'' कविता संग्रह प्रकाशित है।

प्रियंका वैद्य की दलित औरतों की वेदना पर लिखी गई काव्य पुस्तक पठनीय है।

पालमपुर की सुमर शेखर की सात पुस्तकें प्रकाशित हैं। वे कविता व कहानी दोनों में समान अधिकार रखती हैं।

अर्पणा धीमान हिन्दी और मण्डयाली लेखन में एक समान अधिकार रखती हैं। पहाड़ी पत्रिका 'बागर' की उपसंपादक भी रही है।

2005 में डॉ. प्रत्यूष गुलेरी की पुस्तक ''हिमाचल की सांस्कृतिक धरोहर में ममता मेहता, उषा महाजन, डॉ. सरोजिनी प्रीतम, वंदना शर्मा, ऋतु तिवारी, प्रतिभा सिंह व कंचन शर्मा जैसे नाम बालकथाकारों के रूप में उभर कर मिले हैं।

इसके साथ तारा नेगी, मीनाक्षी पॉल, सुमन शर्मा, प्रेम पुष्प, अनिता महाजन तेगटा सुभद्रा चौहान, इशिता आर गिरीश, उषा दीपा मेहता, प्रिया शर्मा, उमा ठाकुर, प्रोमिला भारद्वाज, विद्या शर्मा, सुदर्शन पटियाल, अंजलि दीवान, सविता ठाकुर, शैली किरण, अर्चना शर्मा, किरण गुलेरिया, सोनिया पखरोलवी, भारती कुठियाला, वंदना राणा, कृष्णा ठाकुर, दीपा त्यागी, आसुफुल्ल, इन्दु बाली, अमिता शर्मा, उत्तम परमार, जया चौहान, तृप्ता शर्मा, अनुजा, कुमुद कुल्लवी, पंकज कपूर, उरमेश लता, उर्वशी वालिया, प्रियवंदा, रीटा सिंह, सविता ठाकुर, संदेश शर्मा, पूनम सांख्यान, निधि चावला, सोमलता, उषा आनंद, कौमुदी ढल, सुनीता शर्मा, मंजुला, रूमा खान, इंदु वैद्य, आरती गुप्ता ये सभी लेखिकाएं पहाड़ों के कठिन जीवन से बावस्ता होने के बावजूद साहित्य में स्थान बना रही हैं। महिलाएं लेखन में अपने ही भोगे दर्द को नहीं अपितु समाज के जटिल प्रश्नों से उलझती हुई उन्हें साहित्य में स्थान दे रही हैं। ये लेखिकाएं सामंती मूल्यों से लड़ती ही नहीं अपितु कविता में भी स्थान देती हैं इसलिए यहाँ की महिलाओं के लेखन में आक्रोश मिलता है तो वह सहज ही है तथा पुरुष प्रधान समाज में औरतों के साथ होने वाले छद्म भी इनकी कविताओं में देखने

लघुकथा

बीज

● कृष्ण चंद्र महादेविया

छह-सात साल का तपन आंगन में खेलता-कूदता धमाचौकड़ी मचाए हुए था। दो-तीन वर्ष की उसकी बहन विशु भी उसके आगे-पीछे दौड़ती खेल रही थी। आंगन में एक कोने पर बनी पशुओं की खुरली के पास उसके दादा जलावन के लिए लकड़ी काटते रूटीन के काम की तरह उसे गिर न जाना, धीरे दौड़ो आदि कह देते थे। दोनों भाई-बहन हंसते-कूदते मचल-मचल कर खेलते जाते थे। कभी-कभी दोनों बच्चे आंगन आई गोरैयों-सयारियों को भी पकड़ने का उपक्रम करते किन्तु वे फूर से उड़ जाती। फिर दोनों तालियां बजाकर खूब हंसते थे। दो मंजिली में त्रैमासिक परीक्षा के पेपर चैक करते उनके पिता मास्टर वर्मा बच्चों को हंसते-खेलते देख कभी अपने बचपन में खो जाते थे। तपन खेलते-खेलते आंगन में खुमानी के छोटे पेड़ पर चढ़ कर एक टहनी पर बैठ झूलने लगा।

"भैया पेल पल मुझे भी चलना है। भैया ....." विशु तपन से कहते पेड़ पर चढ़ने का उपक्रम करती जाती थी। "नीचे उतर जा तपन गिर जाएगा।"

उसके दादा ने तपन को कहा किन्तु वह हंसते-हंसते झूलता रहा। उसके पापा मास्टर वर्मा सब देखते और बेटी विशु को भी पेड़ की टहनी में झुलाने हेतु घर से उतर चले थे। "ओ गधे, निचे उतर गिर जाएगा।" उसके दादा ने उसे उतरने के लिए कहा तो उसने झट कहा - "नहीं उतरूंगा दादा जी, मुझे झूलना है।" "गधे गिर जाएगा।.................... उतर निचे बिल्ले।" उसके दादा ने अब गुस्से में कहा। "गधे नहीं उतरूंगा। बिल्ले नहीं उतरूंगा।"

तपन ने झूलते-झूलते अपनी रौ में कहा तो उसके दादा गुस्सा करते ज्यादा ही चिढ़ गए थे। आंगन में अपने पापा को गुस्से में आता देख तपन झटपट गिरते लटकते झट पेड़ से उतर गया और तने के पीछे छुपके देखने लगा था।

मास्टर वर्मा ने हाथ में जलावन की पतली लकड़ी उठा कर तपन को मारने के लिए उठाई और बोले -"अपने दादा जी को गधा और बिल्ला कहते हो?"

बिशु डर से सहम कर एक ओर खड़ी हो गई थी। तपन ने डरते कांपते हुए कहा- "मुझे मत मारना पापा। दादा जी ने भी तो मुझे गधा और बिल्ला कहा है। क्या में गधा और बिल्ला हूँ, पापा?"

तपन के पापा मास्टर वर्मा का मारने को उठा हाथ उठे का उठा रह गया। फिर उन्होंने प्यार से कहा- "चलो अब होम वर्क करेंगे।"

"दोनों बच्चे घर में चल दिए।

तपन के दादा का गुस्सा शांत नहीं हुआ था। वे गुस्से में बोले -" पिदूदा सा छोकर जुबान लड़ाता है? .... गधा-बिल्ला कहता है।"

मास्टर वर्मा जी ने अपने पिता के पास जाकर लकड़ी को गठर में रखते आदर से बोले - "पिता जी, जैसा बोएंगे वौसा ही तो काटेंगे। बच्चे परिवार ही से तो संस्कार पाएंगे।"

तपन के दादा जी में झन्नाहट सी रेंग गई। वे अवाक होकर बस देखते भर रह गए।

पत्रालय महादेव, सुन्दरनगर,
जिला मण्डी (हि. प्र.) - 175018

को मिलते हैं। इनका साहित्य महज मन की उधेड़बुन ही नहीं अपितु अपने समाज का एक पूरा चित्र प्रस्तुत करता है इन औरतों के लिए कविता, कहानी लिखना यहां के कठिन जीवन पर विजय पाने जैसा है। लगभग सभी लेखिकाओं के कविता और कहानियों के संग्रह छपे हैं व भिन्न-भिन्न संस्थाओं से सम्मानित हैं। उपन्यास, यात्रा संस्मरण, बाल साहित्य जैसी कई विधाओं पर और ज्यादा लिखने की आवश्यकता है।

हिमाचल में महिला साहित्यकारों का एक बड़ा काफिला साहित्य के सफर में है। धीरे-धीरे बहुत सी नई महिला साहित्यकार राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बना रही है, साथ ही साथ आत्म-विश्लेषण की भी आवश्यकता है। उन्हें स्वयं को राष्ट्रीय पटल पर पहचान बनाने के लिए अपने साहित्य को प्रदेश से बाहर ले जाने की मुहिम चलानी होगी।

महिला लेखन को विस्तृत फलक पर ले जाने के लिए हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी, शिमला में वर्ष 2015 में राज्य स्तरीय महिला सम्मेलन की शुरूआत की है। यकीनन इससे महिला लेखिकाओं में उत्साह की वृद्धि हुई है। इसी शृंखला में हिमाचल साहित्य अकादमी ने इस वर्ष 22 मई को दूसरा राज्य स्तरीय महिला सम्मेलन आयोजित किया है। महिला साहित्यकारों में खासा उत्साह था। आशा है इसके दूरगामी परिणाम होंगे।

हिमाचल की महिला साहित्यकारों को लेकर यह कोई अंतिम दस्तावेज़ नहीं है। पड़ताल ज़ारी है।

सेट नं. 11, टीचर्स कॉलोनी, समरहिल, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 005, मो. 094180 58158

संदर्भः

1. हिमाचल की सांस्कृतिक धरोहर - डॉ. प्रत्यूष गुलेरी
2. हिमाचल प्रदेश साहित्यकार कलाकार विवरणिका
3. हिमाचल का हिन्दी साहित्य का इतिहास- डॉ. सुशील कुमार फुल्ल
4. हिमाचल का शेर स्वतंत्रता सेनानी शेरजंग- निर्मला शेरगंज

आलेख

शिवालिक क्षेत्र के जनजीवन में मान्य लोक देवी-देवता

● हरिकृष्ण मुरारी

हिमाचल प्रदेश का शिवालिक जनपद जिसमें जिला चम्बा, कांगड़ा तथा ऊना आते हैं, इस सारे क्षेत्र को शिवालिक क्षेत्र कहा जाता है। इसको यदि हम भौगोलिक दृष्टि से देखें तो जिला चम्बा पहाड़ी क्षेत्र है, जिसके एक छोर पर भरमौर विकास खण्ड की अन्तिम ग्राम पंचायत कुबती है। यहां से आगे जिला लाहौल-स्पीति की सीमा शुरू होती है। अभी तक इस विकास खण्ड में भरमौर से हड़सर तक ही बस एवं जीप आदि चलने योग्य मार्ग बना है। हड़सर एक ऐसा पड़ाव है जहां से एक ओर भुजला नदी के किनारे कभी आर कभी पार होते हुए तेरह किलोमीटर का पैदल रास्ता प्रसिद्ध तीर्थ स्थल मणिमहेश तक जाता है। यहां से दूसरा रास्ता बुड्डल नदी के किनारे उसी तरह आर-पार होता हुआ कुबती गांव तक पहुंचता है। इस जिला का दूसरा छोर विकास खण्ड सलूणी पड़ता है। जिसकी सीमा जम्मू और कश्मीर राज्य की सीमा के साथ मिलती है। इसका दक्षिण-पश्चिम भाग पंजाब राज्य की सीमा के साथ सटा हुआ है, जबकि दक्षिण भाग जिला कांगड़ा की सीमा से मिल जाता है।

इसके बाद जिला कांगड़ा आता है। इसे भौगोलिक दृष्टि से तीन भागों में बांटा जा सकता है।

(1) कण्डी क्षेत्र (2) पलम क्षेत्र (3) चंगर क्षेत्र।

(1) **कण्डी क्षेत्र :**

जिला चम्बा से सटा हुआ तथा धौलाधार के आंचल में जितना भी पहाड़ी क्षेत्र है, इस समस्त भाग को कण्डी क्षेत्र कहते हैं।

(2) **पलम क्षेत्र :**

कण्डी क्षेत्र से नीचे तथा चंगर क्षेत्र से ऊपर का जितना भी भाग है, पलम क्षेत्र कहलाता है। इसके बीचों-बीच से राष्ट्रीय राजमार्ग पठानकोट -शाहपुर, कांगड़ा, पालमपुर से होता हुआ जिला मण्डी में पहुंच जाता है। इसके दोनों ओर का समस्त समतल व नहरी भाग पलम क्षेत्र के नाम से जाना जाता है।

(3) **चंगर क्षेत्र :**

जो स्थान छोटी-छोटी पहाड़ियों तथा जंगलों से घिरा हुआ, जिसकी खेती वर्षा-जल पर निर्भर करती है.......इसे चंगर क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। पलम क्षेत्र से दक्षिण का समस्त भू-भाग चंगर क्षेत्र ही है। पौंग झील बनने से पहले पौंग घाटी की सारी भूमि नहरी हुआ करती थी और इतनी उपजाऊ थी कि यहां केवल नमक पैदा नहीं होता था, बाकी सब कुछ उत्पन्न हुआ करता था।

जिला ऊना में अधिकतर मैदानी क्षेत्र है। इसके कुछ भाग में शिवालिक की पहाड़ियां भी हैं। इसकी सीमाएं उत्तर-पूर्व में जिला कांगड़ा व हमीरपुर से मिलती हैं तथा दक्षिण-पश्चिम में पंजाब राज्य से जुड़ी हुई हैं। इसलिए यहां पंजाबी संस्कृति का अधिक समावेश है। यहां की भाषा, रीति रिवाज एवं संस्कार पंजाब राज्य की भाषा, रीति रिवाजों, एवं संस्कारों के काफी निकट हैं। जबकि यहां हिमाचली-पहाड़ी बहुत ही थोड़ी मिलती है।

इस समस्त शिवालिक क्षेत्र को देवधरा क्षेत्र भी कहा जाता है क्योंकि यहां चप्पे-चप्पे पर किसी न किसी लोक देवता का निशान मंदिर, मढ़ी, या पीपल तथा वट वृक्ष के नीचे मनौती के रूप में मिल ही जाता है। इसलिए यह क्षेत्र देव-धरती कहलाता है। इस समस्त शिवालिक जनपद के श्रमिक-कृषक वर्ग में कई लोक देवी-देवताओं की मान्यता है। जिनकी पूजा-अर्चना के बिना सभी कार्य अधूरे माने जाते हैं। इनके बारे में जो जानकारी विभिन्न क्षेत्रों में भ्रमण करके, वहां के जानकार बजुर्ग लोगों से बातचीत करके तथा कुछेक पुस्तकों का अध्ययन करने से उपलब्ध हुई, उसका वर्णन इस प्रकार से है :-

(1) खेतरपाल

यहां का समस्त श्रमिक तथा कृषक वर्ग मुख्यतः खेती-बाड़ी से जुड़ा हुआ है। खेती एवं पशुओं की रक्षा के लिए इस वर्ग से जुड़े इस लोक देवता का गहरा सम्बन्ध है। खेतरपाल अर्थात खेतों की रखवाली / पालना करने वाला क्षेत्रपाल। इसकी स्थापना

गऊशाला में होती है/की जाती है। गऊशाला को लोक भाषा में गोह्रन, गोहड़न और घुराल कहते हैं। जब भी कोई श्रमिक-कृषक परिवार गऊशाला का निर्माण करवाता है, तो उसमें पशुओं को बांधने हेतु थोड़ी-थोड़ी दूरी पर पंक्ति में लकड़ी के डण्डे भूमि को खोदकर गाड़े जाते हैं। यह डण्डे अधिकतर बांस के होते हैं। इन डण्डों को लोकभाषा में 'खुण्ड' कहते हैं। इन खुण्डों में ही एक खुण्ड खेतरपाल का होता है। उसे प्रतिष्ठित करवाकर पूजा-अर्चना के साथ गाड़ा जाता है। एक घुराल में ऐसा एक ही खुण्ड होता है, जिसे खेतरपाल का पूजित स्थल माना जाता है। घुराल में और भी खुण्ड होते हैं । इन सभी के साथ गाय, भैंस, बैल, बकरी, एवं भेड़ आदि पशु बांधे जाते हैं।

जब गाय बछड़ा/बछड़ी को जन्म देती है तो ग्यारह और इक्कीस दिनों तक दूध की धारा उस खुण्ड पर चढ़ाई जाती है। पहले दिन से लेकर हर रोज ग्यारह/इक्कीस दिनों तक सुबह-शाम जब गाय का दूध निकालते हैं तो पहले दूध की धारा खेतरपाल को अर्पित करने के बाद ही बच्चे को दूध पीने हेतु छोड़ा जाता है। ज्यादातर परिवार इक्कीस दिन तक ऐसा करते हैं। इक्कीसवें रोज गाय की पूजा करने के बाद ही उस दूध को बांटते ,बेचते तथा स्वयं प्रयोग करते हैं। यहां के लोकजीवन में गाय को मां का स्थान मिला है। इसलिए जब गाय बछड़े को जन्म देती है तो उस परिवार में इक्कीस दिन तक सूतक माना जाता है। यह यहां के जनपद में श्रद्धा एवं आदर का प्रतीक है। परन्तु कुछ अर्से से ऐसा सामने आने लगा है कि :-

जब गाय दूध को देती थी,
तो पालने वाले सारे थे।
जब गाय दूध से सूख गई,
तो पालने वाला कोई नहीं।

अर्थात आज आवारा गऊएं जगह-जगह देखी जा सकती हैं और जहां देखो-- खेती को उजाड़ने में निरन्तर व्यस्त हैं। आज मानव कितना स्वार्थी हो गया है कि जिस गाय को सदियों से लोक जीवन में मां का दर्जा मिला, आज वही मां जब उस परिवार को दूध नहीं देती तो वह परिवार उसे दर-दर भटकने के लिए खदेड़ देता है। यह संस्कारों की त्रुटि या समय की जहरीली हवा का प्रभाव............कुछ भी कहा जा सकता है। विषय अलग न होने पाए, इसलिए पुनः उसी दिशा की ओर बढ़ते हैं।

जब भी नई फसल निकलती है तो उसे सबसे पहले पकवान बनाकर खेतरपाल को चढ़ाया जाता है। उसके उपरान्त ही उस फसल का स्वयं खाने में, बांटने में तथा बेचने में प्रयोग किया जाता है।

खेतरपाल की स्थापना उस कृषक-श्रमिक वर्ग को करनी ही पड़ती है, जिनके कुल में सदियों से इसकी मान्यता रही हो। अर्थात शिवालिक जनपद का समस्त कृषक-श्रमिक वर्ग ऐसा नहीं करता, क्योंकि कोई परिवार खेतरपाल को मानते हैं , तो कोई जक्ख, लक्खदाता, या खुआजापीर किसी एक को ही मानते है। ऐसा न करने से उस परिवार के लोगों तथा पशुओं को कई प्रकार के रोगों से ग्रस्त होना पड़ता है। समय परिवर्तन के साथ पुरानी गऊशालाएं जो कच्ची मिट्टी की ईंटों से बनी होती थीं, अब अधिकतर पक्की ईंटों की बनने लग गई हैं, परन्तु घुराल में खुण्डों हेतु जगह रखनी ही पड़ती है।

अजियापाल

लोक देवता खेतरपाल का भाई अजियापाल भी होता है, जो अपने भाई खेतरपाल के ही साथ रहता है। इसकी अलग से अलग खुण्ड पर स्थापना नहीं की जाती है परन्तु जहां खेतरपाल की स्थापना होती है,वहीं इसकी भी स्थापना हो जाती है। जब खेतरपाल की पूजा-अर्चना की जाती है तो इसकी अपने आप ही हो जाती है। इन्हें केवल गाय का ही दूध, दहीं चढ़ाया जाता है भैंस का नहीं।

(3) **जक्ख**

यह भी खेतरपाल की भान्ति ही यहां के श्रमिक-कृषक वर्ग का मान्य लोक देवता है। अन्तर केवल इतना है कि इसका स्थान घुराल में नहीं होता बल्कि शिवालिक क्षेत्र में कहीं-कहीं मढ़ी में तथा वट वृक्ष के नीचे मनौती मिलती है। इसे केवल भैंस का ही दूध-दहीं चढ़ाया जाता है, गाय का नहीं। इसे दूध-दहीं के साथ देसी घी में नई फसल के पकवान तथा कच्चा-कोरा अन्न भी चढ़ाया जाता है। यह भी पशुओं की रक्षा एवं पफसलों की रक्षा करने वाला कृषक-श्रमिक वर्ग का मान्य लोक देवता है। लोग इसे भैंस के दूध-दही के साथ खीर तथा बलेईऽ चढ़ाते हैं। इसके साथ ही कच्चा-कोरा अन्न तथा दक्षिणा रूप में अपनी-अपनी सामर्थ्य एवं श्रद्धानुसार पैसे भी चढ़ाए जाते हैं तथा मनौती करते हैं कि हमारे परिवार को सुख-शान्ति देना और हमारे पशुओं की तथा फसलों की सदा रक्षा करते हुए अपनी कृपा दृष्टि बनाए रखना। यह नई फसल का पकवान तथा भैंस का दूध, दही, खीर और बलेई है एवं नई फसल का कच्चा-कोरा अन्न.......इसे स्वीकार कर लेना।

लोक देवता जक्ख के छोटे-छोटे मंदिर और मढ़ियां होती हैं। इसके दो-तीन स्थानों के बारे में थोड़ा-बहुत ज्ञात हुआ है। एक स्थान नरियाहूणां में था। यह स्थान अब पौंग झील में विलुप्त हो चुका है। कभी यह शिवालिक जनपद के कांगड़ा क्षेत्र का प्रसिद्ध जक्ख था। जिसे कासब जक्ख के नाम से जाना जाता था। तब दूर-दूर तक इसकी मान्यता थी। वर्ष में एक बार यहां मेले भी लगते थे।

विकास खण्ड रैत के अन्तर्गत ग्राम पंचायत लपियाणा का एक गांव पन्दू है। वहां शिवालिक पहाड़ी पर जिसे लोकभाषा में 'पन्दुए दी धार' कहते हैं, वहां भी एक जक्ख है जिसे पन्दू जक्ख कहते हैं। यह इस क्षेत्र के कृषक-श्रमिक वर्ग का मान्य लोक देवता

है। यहां दूध-दहीं के अतिरिक्त लोग बकरे की बलि भी देते हैं। यहां एक पत्थर की पिण्डी है, जिसके चारों ओर पत्थरों का ट्याला बना हुआ है। उसे ही लोग जक्ख के रूप में मानते हैं। परन्तु उस ट्याले पर कोई भी वृक्ष नहीं है। क्योंकि इस जनपद में आम तौर पर ट्यालों के बीच एक वृक्ष होता है। जोकि आम, पीपल या वट आदि कोई भी वृक्ष हो सकता है।

इन सबकी यहां का श्रमिक-कृषक वर्ग पूजा अर्चना करता है तथा हइयाऽ और मनाइयाऽ दूध-दही इसे अर्पण करता है।

सचमुच शिवालिक क्षेत्र के श्रमिक-कृषक वर्ग में इन लोक देवताओं का विशेष महत्व रहा है, अभी भी है परन्तु भविष्य में क्या होगा....पता नहीं। यह तो आने वाली नई पीढ़ी की विचारधारा पर ही निर्भर करेगा।

(4) **लखदाता**

यह भी यहां के कृषक-श्रमिक वर्ग का मान्य लोक देवता है। क्षेत्र में कहीं-कहीं इसके मंदिर हैं परन्तु इस सम्बन्ध में केवल एक स्थान से ही इसके बारे में जानकारी मिली है।

शिवालिक क्षेत्र के कांगड़ा शहर से शिमला, ऊना आदि स्थानों की ओर जाने वाले बस मार्ग पर कांगड़ा से दो-अढ़ाई किलोमीटर की दूरी पर रेलमार्ग भी है जो समेला नामक स्थान पर एक-दूसरे को काटता है। यहीं समेला में रेलवे स्टेशन भी है। वहीं से एक पैदल मार्ग पहाड़ी की ओर जाता है। लगभग दो-अढ़ाई किलोमीटर की दूरी तय करने के बाद घोड़ा-टिल्ला नामक स्थान आता है। इसी स्थान पर लखदाता लोक देवता का मंदिर है। काफी समय पहले लेखक को एक बार वहां तक जाने का मौका मिला था। तब वहां एक कच्चा मंदिर था, यानि एक कमरा था। वहां अन्दर एक तॉकऽ था और उसमें एक चिराग रखा हुआ था। इसके बारे में वहां पुजारी से जानकारी मिली कि यही चिराग लखदाता का निशान है। उस मंदिर की पूजा का कार्य प्राचीन समय से एक घृतवंशी परिवार करता आ रहा है। जिसका निवास स्थान पुराना कांगड़ा में है। यही परिवार पीढ़ी दर पीढ़ी इस मंदिर में पूजा करता आ रहा है और मंदिर के चढ़ावे से ही मंदिर के विकास का कार्य तथा परिवार का पालन पोषण भी करता है।

बहुत से कृषक एवं श्रमिक परिवारों ने अपने पशुओं को लखदाता के नाम रखा होता है। जब भी भैंस दूध देने लगती है तो सबसे पहले उसका दूध, दहीं तथा घी और इससे बनाए पकवान खीर तथा बलेई को लेकर घोड़ा-टिल्ला पहुंचकर लखदाता के मंदिर में चढ़ाया जाता है। इसके साथ ही नई फसल का कच्चा-कोरा अन्न......गेहूं, चावल, आटा आदि भी चढ़ाते हैं। जिसे लोकभाषा में 'घोरा' कहते हैं। इसे भी पशुओं तथा फसल की रखवाली करने वाला लोक देवता माना जाता है।

जब किसानों की धान की खेती तैयार होती है तो फसल के ''कुन्नूऽ'' लगाने के बाद जब उन्हें मसल कर धान तथा भूसे को अलग करने लगते है, जिसे लोक भाषा में ''गाहण पाणी'' कहते हैं तब पहले खेत को अच्छी तरह से साफ करके फिर गोबर से लीप पोत कर तैयार कर लेते हैं तथा कुन्नू से निकालकर उस फसल को खेत में बिखेर देते हैं। इसके बाद तीन-चार बैलों को इकट्ठा बांधकर उस बिखेरी हुई फसल के बीच मसलने के लिए छोड़ देते हैं। फिर उन्हें परिवार के लोग बारी-बारी गोल-गोल हांकते हैं, जिससे उनके पैरों से धान अलग तथा ''परालऽ'' अलग और भूसा अलग हो जाता है। इसके बाद बैलों को वहां से बाहर निकाल कर मेढ़ों में चरने हेतु छोड़ देते है और परिवार के तीन-चार लोग ''कुड़ैठियोंऽ'' से पराल को अलग करने लगते है। उसे वहां से हटाकर अलग रख देते हैं। खेत में अब केवल भूसा मिले धान रह जाते हैं। अब इस भूसे एवं धानों को अलग करने के लिए एक ''तरयाऽ'' को उस खेत में रख कर ,उस पर परिवार का एक पुरूष खड़ा हो जाता है तथा अन्य सदस्य ''खारियोंऽ'' में उन भूसे मिले धानों को भर-भर कर उसके पास पहुंचाते हैं। वह ऊंचा होकर खारी से भूसे वाले धानों को थ़ोड़ा-थोड़ा धरती पर गिराता है। इससे भूसा उड़कर दूर जा गिरता है तथा धान साफ होकर नीचे गिरते रहते हैं। ऐसा करने को यहां '' धान की पुणाई कहते'' हैं। इस पुणाई को शुरू करने से पहले किसान लखदाता को याद करता है. ....'' चल लखदाता कर कल्याण'' और खारी से उन भूसा मिले धानों को धरती पर थोड़ा-थोड़ा लगातार उडेलने लगता है।

इससे यह सिद्ध होता है कि यहां का श्रमिक-कृषक वर्ग वायु देवता को ही लखदाता मानता है।

(5) **मूहरे**

अन्य देवताओं की भान्ति अपने पूर्वजों के प्रति भी शिवालिक जनपद के श्रमिक-कृषक वर्ग में अनन्त श्रद्धा एवं आदर रहा है। यह केवल इसी वर्ग में नहीं बल्कि सभी वर्गों में देखने को मिलता है परन्तु श्रमिक-कृषक वर्ग में इनकी सबसे अधिक मान्यता मिलती है। यह मूहरे चार प्रकार के हैं :-

(क) औतर मूहरे ।

(ख) पितर मूहरे ।

(ग) देव मूहरे ।

(घ) नाग मूहरे ।

(क) **औतर मूहरे**

जिस परिवार के बजुर्गों की कोई औलाद नहीं होती या जिनकी केवल लड़कियां ही होती हैं, लड़का नहीं तथा जिनकी शादी नहीं होती और जो शादी से पहले ही मर जाता है, उन्हें औतर लोक देवता का दर्जा मिलता है या उस परिवार को यह दर्जा देना पड़ता है। लोकभाषा के इस शब्द औतर का अर्थ वे-औलाद या बिना संतान के मर जाना होता है। इनकी मृत्यु के बाद इनके मूहरे बनवाए जाते हैं और घर में अन्दर या घर के आंगन में बाहर अन्य

देवताओं के मूहरों के साथ स्थापित किए जाते हैं। यदि कमरे में रखना हो तो 'तॉकऽ' में रख देते हैं। पहले इन्हें घर के अन्दर ही रखा जाता था परन्तु अब पक्के घर बनने से तॉक रखने का रिवाज जाता रहा है जिसके कारण इन्हें बाहर आंगन में बाबा बालकनाथ के चरण मूहरे के पास ही स्थापित करने लगे हैं। इन मूहरों को प्रत्येक त्योहार तथा 'जठोन्दा-ब्योहन्दाऽ' के समय विशेष रूप से पूजा-परसा जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य शुभ कारजों पर, लोक त्योहारों पर एवं नई फसल के निकलने पर भी इन्हें हिस्सा चढ़ाया जाता है। इसमें रोट, हलवा, खीर, बबरू - टिक्ड़ियों के साथ उस कारज, त्योहार में बना पकवान भी पहले औतरों को अर्पण किया जाता है। शुभ त्योहारों एवं कारजों के समय इनको अन्य लोक देवताओं की भान्ति पानी, गंगाजल एवं पंचगव्य से नहलाया जाता है और फिर गन्ध, अक्षत, पुष्प, फूलों एवं नवैद्य तथा धूप और दीप जलाकर भी पूजा की जाती है। कई परिवार अन्य लोक देवताओं के मूहरों के साथ औतरों की भी प्रतिदिन पूजा करते हैं। यह औतर मूहरे केवल पुरूषों के ही होते है, स्त्रियों के नहीं।

(ख) **पितर मूहरे**

औतर मूहरों की भान्ति ही पितर मूहरे भी यहां के कृषक-श्रमिक वर्ग के मान्य लोक देवता हैं। इस जनपद में मूहरे शब्द से सम्बन्धित कुछ और शब्द भी लोक भाषा के हैं जैसे 'मूहरी लाणा' अर्थात पहल करना/करके आगे चलना या फिर चलने के लिए कहना... 'मूहरी तां लाह' आगे या पहले तो चल । इसी तरह मखौटा शब्द को यहां ''मुहारा'' कहते हैं। शायद इनमें से कोई शब्द पत्थर की प्रतिमा से जुड़ गया या जोड़ दिया गया जिससे 'मूहरा' बन गया।

कुछ भी हो परन्तु इससे यह साबित अवश्य होता है कि शिवालिक जनपद में प्राचीन समय से ही एक ऊंची, महान संस्कृति और सभ्यता फलती रही है जिसके यह मूहरे साक्षात प्रमाण हैं।

पितर मूहरे दिवंगत महिलाओं और पुरूषों दोनों के होते हैं। यह जिनकी ''सौतरीऽ'' लगी हो, उनके होते हैं। उनकी मृत्यु के बाद मूहरे बनवाए जाते है। बने बनाए भी मिल जाते हैं । इन्हें घर के अन्दर या घर में नहीं रखते। इन्हें किसी तालाब के किनारे या किसी कुएं के पास, अन्य जलाशय के पास या किसी मंदिर के पास पीपल अथवा वट वृक्ष के नीचे स्थापित कर देते हैं। यह हमें शिवालिक जनपद के प्रत्येक गांव में मिल जाते हैं। अब एक प्रश्न पैदा होता है कि इन्हें घर में क्यों नहीं रखते? इन्हें इसलिए घर में नहीं रखते, क्योंकि इनका वंश रहता है तथा परिवार में उनका नाम भी आगे चलता रहता है। इसलिए इन्हें घर से दूर जलाशयों के निकट वट या पीपल के पेड़ों के नीचे रखते हैं। जिनका वंश आगे बढ़ता रहता है, उन्हें पितर तथा जिनका वंश रुक जाता है, वे औतर कहलाते हैं।

औतरों के मूहरे घर में इसलिए रखे जाते है क्योंकि उनका वंश रुक चुका होता है और जो भी उनकी सम्पत्ति होती है उसे जो भी प्रयोग करते हैं, उन्हें उन औतरों के मूहरे घर में रखने पड़ते हैं और समय-समय पर शुभ कारजों, तीज-त्योहारों आदि के समय तथा नई फसल के निकलने पर पूजना-परसना पड़ता है। अन्यथा औतर-पितर कोप के भाजक बनकर अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं। इससे सम्बन्धित शिवालिक जनपद में एक कहावत भी है कि:-

'क्या भलेया ! तिज्जो औतर-पितर कोप लगेया ? जिन्हां दियां जैदातां खा दे तिन्हां दें नाएँ सेर नी मणसणां तां औतर-पितर कोप ही तां लगणा।'' अर्थात अरे ! तुझे औतर-पितर कोप लगा है ? जिनकी सम्पत्ति खा रहे हो और प्रयोग कर रहे हो तथा उनके नाम कभी सेर भर अनाज भी अर्पित नहीं करते हो तो औतर-पितर कोप ही लगेगा। यदि स्वपन में सांप डरायें तो उस परिवार पर औतर कोप होता है। औतर मूहरों की पूजा अर्चना और मनौती के बाद ही वह परिवार औतरों के कोप से छुटकारा पाता है।

(ग) **देव मूहरे**

देव मूहरों में अधिकतर बाबा बालकनाथ के चरण आकृतियों के मूहरे शिवालिक जनपद के प्रत्येक घर के आंगन में मिल जाते हैं। ऐसा शायद ही कोई घर हो जहां बाबा बालकनाथ के चरणों की स्थापना न हुई हो । इस मूहरे में दायां-बायां दो पैरों के निशान उकेरे होते हैं तथा दोनों पैरों के बीच अंग्रेजी के टी अक्षर की तरह का निशान भी उकेरा हुआ होता है। इस निशान को ''घोड़ीऽ'' कहते हैं। इस मूहरे को चरण-पादुका भी कहते हैं। शिवालिक जनपद के प्रत्येक घर का यह मान्य लोक देवता तो है ही.......पूरे उतरी भारत का मान्य लोक देवता है। कई घरों में तो इसकी पूजा रोज होती है परन्तु शुभ कारजों, त्योहारों एवं नई फसल के निकलने पर तो प्रत्येक घर में इसे ''रोट-कड़ाहऽ'' चढ़ाकर लौंग, इलायची और चन्दनबूर को देसी घी में डुबोकर फिर ''गोह्‌ठूऽ''पर आग के अंगारे रखकर उसमें डाल देते हैं और उस धुएंदार गोह्‌ठू को बाबा जी के चरण-पादुका मूहरे के पास रख कर जो भी प्रार्थना करनी हो, करते है तथा उस रोट और कड़ाह को प्रशाद के रूप में परिवार में तथा आस-पड़ोस में बांटा जाता है।

इसका विशाल मंदिर जिला हमीरपुर के दियोटसिद्ध नामक स्थान पर है। जहां प्रति दिन अनेक श्रद्धालु दर्शनों को आते रहते हैं जिससे वहां पर हर समय मेला लगा रहता है। घर में तो इसकी पूजा करते ही हैं परन्तु साल-दो साल में एकाध बार बाबा जी के मंदिर दियोटसिद्ध में भी '' भन्हाड़ीऽ'' देने जाना पड़ता है। वहां पर उपरोक्त सभी वस्तुएं भी चढ़ानी पड़ती हैं। जठोन्दा-ब्योह्न्दा के बाद भी बहू को साथ लेकर बाबा जी के दरबार में भन्हाड़ी देनी पड़ती है और घर में आकर ''भण्डाराऽ'' भी देना पड़ता है। भण्डारा दो प्रकार का होता है। शाकाहारी और मांसाहारी। मांसाहारी भण्डारे में एक बकरा कटवाया जाता है। यह बकरा बाबा के नाम से घर में पाला हुआ होता है या बाबा के नाम से मोल ले लिया

जाता है। बाबा जी तो ''दूधाधारीऽ'' हैं परन्तु यह बकरा राक्षस को दिया जाता है। इस सम्बन्ध में कथा मिलती है कि जब बाबा जी शाहतलाई से दियोटसिद्ध पहुंचे तो वहां एक गुफा थी, उसमें समाधि लगाकर प्रभु-ध्यान में लीन हो गए तब उस गुफा में रहने वाले एक राक्षस ने बाबा जी को ललकारा और बाबा जी ने अपनी अध्यात्मिक शक्ति से उसे हरा दिया। बाबा जी ने उसे वहां से दूर चले जाने के लिए कहा तो उसने बाबा जी के पैर पकड़कर क्षमा मांगी और कहा......'' बाबा जी ! मुझे अपने पास ही रहने दो, मैं सदा आपकी सेवा करता रहूंगा। आप मुझे जो भी रूखा-सूखा देंगे उसी से संतोष कर लिया करूंगा तथा जो भी कार्य बताएंगे फट से कर दिया करूंगा।'' तब बाबा जी ने उसे क्षमा कर दिया और कहा कि जो भी मेरा भक्त मुझे भेंट चढ़ाएगा, वह तुझे भी तेरा आहार बकरा दिया करेगा अन्यथा मैं उसकी भेंट स्वीकार नहीं करूंगा। कहते हैं .... तब से ऐसी बकरा देने की प्रथा चली आ रही है। जो लोग शाकाहारी होते हैं वह जीवित बकरा बाबा जी के दरबार दियोटसिद्ध में जाकर भेंट चढ़ाते हैं। तभी बाबा जी की भन्हाड़ी सफल मानी जाती है।

(घ) **नाग मूहरे**

शिवालिक जनपद के श्रमिक-कृषक वर्ग में हर समुदाय के यहां नागों को भी लोक देवता माना जाता है। इसके मूहरे स्थान-स्थान पर मिल जाते हैं। अन्य लोक देवताओं की भान्ति इन्हें भी शुभ कारजों में, नई फसल निकलने पर, घर में गाय-भैंस के दूध देने पर तथा लोक मान्य त्योहारों के समय पूजा-अर्चना की जाती है। ये मूहरे एक स्थान पर सात, नौ की संख्या में मिलते हैं। इन्हें लोक भाषा में ''बासिया दे नाग''(आबादी के रखवाले नाग) भी कहते हैं। इन्हें हलवा एवं टिक्कड़िया भेंट की जाती हैं। इनके अतिरिक्त कुल नाग देवता भी कई परिवारों एवं समुदायों में मान्य हैं। इनका जन्म उस कुल में हुआ होता है, जो बाद में कुल नाग देवता बन जाते हैं। इन्हें दूधिया नाग भी कहते हैं, क्योंकि यह बिल्कुल दूध की भान्ति सफेद होते हैं। इस सम्बन्ध में एक ऐसे ही कुल नाग की कहानी उपलब्ध हुई है :-

लगभग दो सौ वर्ष पूर्व शिवालिक जनपद के एक श्रमिक-कृषक परिवार में एक औरत ने एक साथ एक बेटे तथा एक छोटे से नाग को जन्म दिया। इस जनपद में ऐसा पहले भी कहीं-कहीं होता आया था अतः किसी को भी आश्चर्य नहीं हुआ। वह नाग बिल्कुल दूध की भान्ति सफेद था। मां बालक को स्तनों द्वारा दूध पिलाती और नाग को एक कटोरी में डाल देती जिसे वह नागणू गटागट पी जाता। धीरे-धीरे दोनों बढ़ने लगे तथा छः महीने के हो गए। गर्मियों के दिन थे। उनकी मां ने उन्हें आंगन में आम के वृक्ष की छाया तले छोटी सी चारपाई बिछाकर सुला दिया और स्वयं पानी लाने के लिए घड़ा लेकर दूर कुएं को चली गई। नागणू भी उसके साथ खेलता रहा। तभी पास के कांटों के झाड़ से एक नेवला निकला और चारपाई पर चढ़ गया तथा नागणू को मार डाला। नाग के मरते ही कुछ समय बाद वह बालक भी मर गया। जब उनकी मां पानी लेकर वापिस पहुंची तो दानों बच्चों को मरा हुआ देखकर फूट-फूट कर रोने लगी। उसके रुदन को सुनकर घर वाले तथा आस-पड़ोस के लोग इकट्टे हो गए। सभी देखकर जान गए कि नाग को नेवला काट गया है तथा बालक और नाग की एक जान (प्राण) थी अतः वह भी मर गया। सबने उसे सांत्वना दी कि यह बच्चे तेरे नहीं थे इसलिए मर गए। अब रोने-धोने से क्या फायदा। सबने मिलकर दोनों को इकट्ठे ही दफना दिया।

बच्चे और नागणू की मृत्यु के तीन-चार माह के बाद एक रात उनकी मां को स्वपन में नागणू ने आकर कहा...........''मां ! मेरा मूहरा बनवा ले और मुझे कुल नाग मान कर मेरी शुभ कारजों, लोक त्योहरों तथा नई फसल के निकलने पर और घर में गाय-भैंस के दूध देने पर पूजा-अर्चना करना ताकि मुझे मेरा हिस्सा मिलता रहे। मैं आपकी तथा अपने कुल की हर कठिनाई के समय अप्रत्यक्ष रूप से सहायता करता रहूंगा।''

सुबह हुई तो उसने अपने घरवालों से रात वाले स्वपन की सारी बात बताई। उसके अनुसार घरवालों ने एक चांदी का नाग बनवाया और कुल पुरोहित से प्रतिष्ठित करवाकर एक बांस की छोटी सी टोकरी में रख दिया तथा जिस प्रकार से उसने बताया था. ... उसी प्रकार उसे हिस्सा दिया जाने लगा। समय बीतता रहा और कुल आगे का आगे बढ़ता गया। कभी-कभी वह नाग कुल के लोगों को दर्शन भी देने लगा। यदि उसके कुल के लोगों ने जब कभी हिस्सा नहीं दिया तो बहुत बड़ा मोटा लम्बा होकर दर्शन देता। जब-जब प्रसन्न होता तो छोटा पतला सा सफेद नागणू ही दिखाई देता था। अब वह वंश लगभग समाप्त हो चुका है। वहां उस वंश का एक भानजा रहता है। जब वह भानजा छोटा सा था और उस वंश की अन्तिम पीढ़ी उसके मामा व नानी ही बचे थे। तब वह भानजा तीन-चार साल का था तो अपनी नानी के साथ सोता था । तब कभी-कभी वह नाग कमरे की बांस की छत से लिपटा नजर आता था। परन्तु नानी व मामा की मृत्यु के बाद उसने दर्शन देना बन्द कर दिया। अब भी उसका चांदी का एक छोटा सा मूहरा उस भानजे के घर में है। जिसकी वह समय-समय पर पूजा-अर्चना करता रहता है। (क्रमशः)

चिन्तन कुटीर गांव व डा. रैत, तह. शाहपुर
जिला कांगड़ा, हिमाचल-प्रदेश-176208
चलितभाष : 0 98165-16978

आलेख

अनुवाद और संवाद प्राचीन समृद्ध परम्परा

● डॉ. जगदीश शर्मा

अनुवाद का प्राचीन इतिहास है और भारतीय परिवेश में यह अपरिहार्य रूप से सहज तथा स्वाभाविक प्रक्रिया के रूप में संपन्न होता रहा है। प्राचीन काल से ही कालजयी भारतीय साहित्य के अनुवाद विश्व की भाषाओं में हुए हैं जो हमारी समृद्ध धरोहर है। भारत महादेश में भी अनुवाद की अलग अलग छवियाँ रही हैं। विश्व साहित्य के अनुवाद भी भारतीय भाषाओं में व्यापक स्तर पर हुए हैं। भारतीय परंपरा में वैदिक साहित्य का प्रकाशन और वाचन परंपरा से सातत्य, संस्कृत के श्रेष्ठ साहित्य का सृजन तथा उसके वैश्विक अनुवाद, भक्ति कालीन साहित्य का स्वाभाविक प्रसार आदि भारत में अनुवाद के मूल तत्वों के रूप में हैं। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप अनुवाद के नए-नए क्षेत्र उभरे हैं जिनकी अपनी आवश्यकताएँ और अर्हताएँ हैं। अनुवाद आज केवल भाषायी गतिविधि नहीं है, अपितु यह संस्कृति, राष्ट्रीय एकता, विकास और नव माध्यम जैसे प्रौद्योगिकी समुन्नत क्षेत्रों में तीव्रता से प्रवेश कर चुका है। अनुवाद और अनुवादकों को इस अपार अवसर-सुसंपन्न वैश्विक और आई.सी.टी. अनुप्राणित व्यवस्था में अपने दायित्व को ज्ञान, कौशल तथा अनुप्रयोग से आगे बढ़ाना होगा।

मुख्य संकल्पना : अनुवाद, प्रौद्योगिकी, भाषिक, सातत्य परंपरा :

आज हम जिस भारत के अतीत, दर्शन, संस्कृति, ज्ञान परंपरा तथा विविधता और साहित्यिक धरोहर से अपने आपको समृद्ध एवं विश्व-गौरव के रूप में गर्वोन्मत्त होकर अपना दर्शाते हैं, वह अनुवादकों और उनके समेकन प्रयासों के बिना कदापि संभव नहीं होता। भारतीय ज्ञान परंपरा में वैदिक और लौकिक साहित्य, बौद्ध साहित्य, जैन साहित्य, आख्यान साहित्य, रामायण महाभारत और पंचतंत्र तथा कथा-सरित्सागर आदि के साथ वैश्विक स्तर पर अनूदित पाणिनि-अष्टाध्यायी, पंचतंत्र, सुश्रुत और चरक की आयुर्वेद संहिता, वात्सायन का कामसूत्र, काव्य शास्त्र के रूप में भरतमुनि, आनंदवर्धन, अभिनवगुप्त, क्षेमेंद्र, मम्मट तथा विपुल मात्रा में अन्य सहित्य जो आज विश्व गौरव की विरासत है उसके मूल में अनुवाद की अत्यंत समृद्ध और गौरवशाली परंपरा रही है।

भारतीय साहित्य, ज्ञान परपरा और दर्शन के साथ-साथ कथा साहित्य से विश्व समृद्ध हुआ है। अनुवाद के महत्व को स्थापित करने के लिए इससे अधिक संगत तर्क शायद ही कोई हो कि अकेले भारत में जहाँ सोलह सौ से भी अधिक भाषाओं की बात की जाती है और आठ सौ से ज्यादा भाषाओं (उप भाषाओं - बोलियों सहित) आज भी दस्तावेजीकृत की गई है; उनमें किस प्रकार आपस में सूचना, साहित्य, ज्ञान और दैनिक जानकारियों का आदान-प्रदान हो सकता है और यदि इसमें किसी की भूमिका है तो वह अनुवाद की; और यही तर्क वैश्विक साहित्य कि निर्मिति में भारतीय साहित्य के अनुवाद के माध्यम से हुए योगदान के महत्व को रेखांकित करता है। भारत में प्राचीन काल से ही एक प्रकार के अनुवाद या भाषांतरण का प्रचलन रहा है जहाँ अनुवाद एक स्वाभाविक पूर्वापेक्षा के रूप में विद्यमान रहा है। नागरिक यदि अपने दैनंदिन संभाषण में बहुभाषी नहीं तो कम से कम द्विभाषी अवश्य ही रहे होंगे, क्योंकि यहाँ निश्चित रूप से बहुभाषिकता की स्थितियाँ यहाँ सदा से ही विद्यमान रही हैं। भारतीय साहित्य और भारत की राष्ट्र के रूप में परिकल्पना अनुवाद के बिना कदापि संभव नहीं होती क्योंकि अपनी सहजात वृत्ति से अपनी मातृभाषा परिवेश से अलग जब किसी बाह्य व्यक्ति से बातचीत करते हैं तो हम लगभग अनुवाद ही कर रहे होते हैं। प्राचीन राज्य व्यवस्था का प्रमाण है कि नगरीय जीवन में भी भाषा प्रयोग के एकाधिक स्तर थे और उसमें संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश आदि के प्रयोग सामाजिक पदक्रम के अनुसार किए जाते थे। कालिदास के अभिज्ञान शाकुंतलम और भवभूति के उत्तररामचरितम तथा अन्य संस्कृत नाटकों में छाया पाठ के रूप में यह मिलते हैं। प्रत्यक्ष है कि वक्ता और श्रोता के बीच एकाधिक भाषाओं को जानने समझने की क्षमता स्वाभाविक रूप से विद्यमान थी।

अनुवाद में केवल एक भाषा के भाव वैभव का ही नहीं अपितु उसके ध्वन्यात्मक प्रतीकों का प्रतिस्थापन तो होता है, इसका कथनतः और कथयतः निकटतम शब्द प्रतिप्रतीकन है, इसके इतर भी भाषा के संपूर्ण सांस्कृतिक वातावरण का भी निर्माण किया जाता है ताकि प्रतिस्थापित अभिव्यक्ति सहज और

भारतीय संस्कृति में मत और आस्था के अलग अलग प्रतीक हैं, पूजा अर्चना और संस्कारों की क्रियाविधियाँ अलग -अलग हैं तथा धर्म संबंधी शिक्षाएँ भी अलग हैं। परंतु सभी के मध्य समन्वय और परस्पर सम्मान का भाव भी इसकी विशेषता है। हमारे साधु-संत, पीर-फकीर और जोगी देश के एक भाग से निकलकर पूरे देश में भ्रमण करते रहे हैं, उन्हें शायद ही कहीं संवाद करने में कठिनाई हुई हो।

स्वाभाविक प्रतीत हो और इसका आविष्कार भी शायद बहुभाषिक समाज की विडंबनाओं से बचने के लिए क्या गया था। इस प्रकार अनुवाद वास्तव में भाषा सेतु के साथ सांस्कृतिक सेतु का भी कार्य करता है क्योंकि भारत जिस प्रकार जैव विविधता का हॉट स्पॉट है, उसी प्रकार यह भाषा, कला एवं संस्कृतियों का भी हॉट स्पॉट है और इनके मध्य समंजन के लिए अनुवाद जैसे सेतु अथवा जोड़ने वाले तंतु की आवश्यकता ऐतिहासिक रूप से बनी रही है। अनुवाद वास्तव में मानव संस्कृति में एक अविछिन्न साधन के रूप में बना रहा है। कवियों और रचनाकारों की तुलना में अनुवादकों की भूमिका अधिक चुनौतीपूर्ण रही है।

भारतीय संस्कृति में मत और आस्था के अलग अलग प्रतीक हैं, पूजा अर्चना और संस्कारों की क्रियाविधियाँ अलग -अलग हैं तथा धर्म संबंधी शिक्षाएँ भी अलग हैं। परंतु सभी के मध्य समन्वय और परस्पर सम्मान का भाव भी इसकी विशेषता है। हमारे साधु-संत, पीर-फकीर और जोगी देश के एक भाग से निकलकर पूरे देश में भ्रमण करते रहे हैं, उन्हें शायद ही कहीं संवाद करने में कठिनाई हुई हो। वे अपनी ही किसी विकसित भाषा (साधूक्कड़ी) में स्थानीय लोगों को न केवल अपना मंतव्य बता पाते बल्कि उनके प्यार और श्रद्धा के पात्र भी बन जाए थे। आज से 700 वर्ष पूर्व संत नामदेव महाराष्ट्र से आकर पंजाब में रच बस गए, उनके लाखों अनुयायी हो गए और बड़े ही आदर सत्कार से उनकी शिक्षाओं को अपनी 'आस्था' और पवित्र ग्रंथ का हिसा बना लिया गया। चैतन्य महाप्रभु इस पूरे महादेश में अपना संदेश अपने ही माध्यम, अपनी ही भाषा (वाणी) में देने में सफल हुए। कबीर, मीरा, सूरदास और न जाने कितने ही सगुण-निर्गुण भक्ति कवियों-संतों ने अपनी वाणी से केवल हिंदी, ब्रज या खड़ी बोली और अवधि तक अपना संदेश सीमित नहीं रखा अपितु वे सार्वभौमिक बन गए। निश्चित रूप से उनके साहित्य और विचारों का अनुवाद ही हुआ होगा तभी वे 'स्व' से 'पर' में अनूदित हो सके। बंदा बहादुर अपने पंथ की रक्षा के लिए पंजाब और काश्मीर से लेकर महाराष्ट्र और राजस्थान बिना दिल्ली दरबार की सूचना के अपना काम करते रहे। उनके पास अपने संपर्क सूत्र अलग-अलग प्रदेशों में रहे होंगे और उनकी भाषाएँ भी अलग रहीं होंगी। भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में भी यह महसूस किया गया था कि आपसी संपर्क के लिए किसी एक भाषा पर निर्भर नहीं रहा जा सकता अतः एकाधिक भाषाओँ को जानने वाले स्वयं सेवियों की व्यवस्था की गई जो एक ही भाषा के विभिन्न रूपों, दो या अधिक भाषाओं और संकेत भाषा को ठीक ठीक समझते थे। गांधी जी की हिदुस्तानी असल में हिंदी उर्दू का एक मिला जुला रूप ही था जो ब्रज, खड़ी और फारसी, अवधी सभी का मिश्रित रूप था; यही नहीं गांधी जी ने हरिजन सेवक के अनेक अंकों में अलग-अलग भाषाओं को सीखने तथा उनमें लिखित साहित्य को सभी के लिए उपलब्ध कराने के पक्ष में लगातार लिखते रहे।

भारत का अतीत अत्यंत समृद्ध और विविधतापूर्ण रहा है. यहाँ तक्षशिला और नालंदा जैसे विश्वविख्यात शिक्षा के केंद्र रहे हैं। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा जैसे वास्तुकला और निर्माण के उत्कृष्ट उदाहरण भी हैं। इस समृद्ध परंपरा को अब तक बचाए रखने के लिए अनुवाद ने अपनी भूमिका का वहन किया और अब तक इन महत्वपूर्ण जानकारियों को सहेज कर रखा है। शायद यही कुछ उन रचनाकारों और उनकी कृतियों के साथ भी है जो आज नहीं हैं, परंतु उनकी रचनाएँ आज भी उनकी अपनी भाषा के अलावा अन्य भाषाओं में पढ़ी जा रही हैं। यह रचनाकार और रचना का उत्तर जीवन है। कालजयी भारतीय और विश्व की रचनाओं के विषय में अनुवाद की यह भूमिका अत्यंत उपयोगी है अन्यथा हम आज इन्हें कैसे संचित रख पाते और संपूर्ण मानवता के लिए उसे उनकी भाषा और संस्कृति में प्रदान कर पाते। कालजयी साहित्य महाभारत, रामायण का प्रारंभ ही साहित्य-भाषिक रूप से हुआ। विश्व प्रसिद्ध भाषानुरागी और संरक्षक प्रो. गणेश देवी के के अनुसार शायद भाषायी संकट के आज के दौर में अनुवाद का यह दायित्व अभी खत्म नहीं हुआ क्योंकि बहुत सी भाषाएँ विलुप्त होने के कगार पर हैं (अंडमान और निकोबार तथा पापुआ न्यूगिनी आदि में यह संकट मुह बाये खड़ा है)। उनमें रचित साहित्य को बनाए रखने के लिए अनुवाद का सहारा लेना ही होगा। अनुवाद से मूल रचनाकार अपनी भाषा की सीमाओं का भी अतिक्रमण करता है और पूरे समाज अथवा विश्व में स्थान प्राप्त करता है। अनुवाद के बिना श्रीमद्भगवद्गीता, गुरुग्रंथ साहिब, कालिदास का अभिज्ञानशाकुंतलम, तुकाराम के अभंग, नरसी मेहता के पद, आख्यान और प्रभातीय, टैगोर की गीतांजलि, मीरा, सूरदास और विहारी के पद-दोहे और गीत तथा मानस की चौपाईयाँ, और अनंत भारतीय साहित्य अपनी-अपनी भाषा तक

ही सीमित रह जाता। वैदिक ज्ञान-परंपरा और संस्कृत साहित्य में रचित ज्ञान, विज्ञान, काव्य तथा लोकोपयोगी शिक्षाएँ वैश्विक संपदा नहीं बन पाती। प्लेटो, अरस्तु और सुकरात के दर्शन सिद्धांतों और भारतीय मनीषियों की अप्रतिम मेधा से प्रकाशित वैदिक और लौकिक साहित्य अपनी ही परिधि तक सीमित होकर शायद विलुप्त हो जाता। अनुवाद ने इसे न केवल संरक्षित किया अपितु उसे विश्व साहित्य की धरोहर भी बनाया। आज इस प्रकार अधिकांश साहित्य यूनेस्को का धरोहर साहित्य है, इसमें वेदों की उच्चारण व्यवस्था भी सम्मिलित है। सचमुच में अनुवाद एक सेतु है जो संस्कृतियों का वाहक है तथा इतिहास लेखन है क्योंकि यह कल को आज और आने वाले कल से जोड़ता है। सातत्य बनाए रखता है। एक प्रकार से यह साहित्यिक निधि का संरक्षण है जो भावी पीढ़ियों के लिए पारितंत्र के सातत्य के समान आवश्यक है।

विश्व ज्ञान परंपरा में भारतीय मेधा को सदैव से ही विशिष्ट स्थान हासिल रहा है। ज्ञान निर्माण के सिद्धांतों और ज्ञान के स्रोतों के रूप में भारतीय कालजयी साहित्य कि भूमिका श्रेष्ठ रही है। वैदिक और लौकिक संस्कृत में रचे गए ग्रंथों में ज्ञान की अजस्र धारा बहती रही है। बौद्ध और जैन ग्रंथों (पाली और प्राकृत तथा अपभ्रंश एवं अन्य संस्कृत हिंदी की पूर्वज भाषाओं में), काव्य, सौंदर्यशास्त्र, विधि और संहिता शास्त्र, आयुर्विज्ञान और आयुर्वेद, स्थापत्य एवं निर्माण कला, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र, युद्ध कला कौशल, वन-उपवन कौशल, खगोलशास्त्र, धनुर्विद्या-शस्त्रविद्या आदि कला संबंधी ज्ञान के शास्त्रों की रचना भारत में हुई है। इनके अनुवाद अब वैश्विक समुदाय के लिए उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं, विशेषकर जब स्वाभाविक जीवन शैली संबंधी पश्चिम के उपभोक्तावादी सिद्धांत अपनी गरिमा खोते नजर आ रहे हैं।

साधन और साध्य

अनुवाद केवल दो भाषाओं के बीच संपन्न होने वाला भाषिक व्यापार मात्र नहीं है, यदि ऐसा होता तो आज विश्व-ग्राम जैसी संकल्पना कि निर्मिति नहीं हो पाती। अनुवाद अपने पाठक की संस्कृति और जीवन शैली का एक उपांग बन जाता है और सांस्कृतिक तथा ज्ञानात्मक समृद्धि करता है। लोगों को आपसे में नजदीक लाकर आपसी समझ बढाता है। विचारों का आदान-प्रदान होता है, गाँधी जी ने भी टालस्टॉय, रस्किन और प्लेटो तथा भगवद्गीता और स्वयं अपनी रचनाओं के अनेक अनुवाद किए। उनका मत था कि हमें अपने में ही सीमित न रहकर शेष विश्व के विचारों से परिचित होना चाहिए जिसके लिए कोई माध्यम आवश्यक है, जो अनुवाद है। जैसे होम्स के अनुसार अनुवाद अपनी प्रविधि से प्रक्रिया और उत्पाद दोनों ही है।

भारत में अनुवादों की सुदीर्घ परंपरा है जिसमें भारतीय साहित्य के फारसी तथा अरबी भाषाओं में अनुवाद हुए और फारसी तथा अरबी से भारतीय भाषाओं में। इसके साथ पश्चिम से भी अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रंथो के अनुवाद संस्कृत तथा भारतीय भाषाओं में हुए। श्रीलंका, चीन, तिब्बत तथा मध्य एशियाई देशों की भाषाओं के साथ भी भारतीय साहित्य के परस्पर अनुवाद हुए। संस्कृत में तो प्राचीनकाल से ही भाष्य, टीका, अन्वय, निर्वचन, निघंटु, व्याख्या, सार आदि लिखने कि परंपरा रही है, जिसे अनुवाद के प्रारंभिक चरण भी माना गया है। पंचतंत्र, बृहत् मंजरी और कथा-सरित्सागर के वैश्विक अनुवाद इसका उदहारण हैं। श्रीमदभगवद्गीता और अनेक वेदों के जर्मन एवं अन्य यूरोपियाई भाषाओं के साथ अरबी तथा फारसी में भी अनुवाद हुए। इनमें कुछ तो मुगल साम्राज्य में शासन व्यवस्था के अंतर्गत हुए जबकि कुछ विद्वानों ने स्वयं अपने स्तर पर किए। ऋग्वेद के प्रथम अष्टक के अंग्रेजी, जर्मन, लैटिन तथा फ्रंसीसी भाषा में अनुवाद हुए। इसी प्रकार शुक्ल यजुर्वेद, कृष्ण यजुर्वेद की तैतिरीय संहिता तथा ब्राह्मण ग्रंथों के अनुवाद हुए. रामायण, महाभारत और पौराणिक साहित्य के भी अनुवाद हुए. संस्कृत से तेलगु, अंग्रेजी, तमिल, संस्कृत, बंगला में भी अनुवाद हुए। इसी प्रकार हिंदी से भी भारतीय भाषाओं में अनुवादों की एक लम्बी परंपरा है। ए.के. रामानुजन ने अपने विस्तृत लेख 'थ्री हंड्रेड रामयाणाज़' में इस बात पर गहरा आश्चर्य व्यक्त किया था कि रामायण के भारतीय और पड़ोसी देशों की भाषाओं में कितने अधिक रूप मिलते हैं। इस संदर्भ में उन्होंने कहा कि सभी रूपांतर लगभग मूल कथा के आसपास ही बुने गए हैं तथा स्थानीयता से भी भरपूर हैं। उनका विचार है कि जिस प्रकार पात्रों की भूमिकाएँ अलग अलग दृश्यों का निर्माण करती हैं उनकी कल्पना वाल्मीकि ने शायद ही की हो। इससे स्पष्ट होता है की भारत में प्राचीन काल से ही अनुवाद की परंपरा थी और उसमें प्रयोग करने के भी अवसर उपलब्ध थे।

चेतना संचार

अनुवाद के ही माध्यम से भारत पश्चिम के विचारों और दर्शन से परिचित हो सका है। साहित्य-निर्माण परंपराओं और विज्ञान की नई विधाओं से हमारा परिचय हुआ। यूरोप में फ्रांस और रूस की क्रांतियों के व्यापक प्रभाव हमारे जनमानस पर देखे जा सकते हैं राजनीतिक और सामाजिक जीवनधारा में इसका प्रत्यक्ष प्रभाव गोचर होता है। साहित्य में छायावाद और रोमांटिसिज्म तथा तुलनात्मक साहित्य निर्माण जैसी प्रवृत्तियाँ भी परिलक्षित हुईं। कई अन्य प्रकार के विमर्श (उपेक्षित, गैर-मुख्यधारा (मार्जिनल) आदि) आज साहित्य में इन्हीं वैचारिक आदान-प्रदानों की देन हैं। बौद्ध मत का श्रीलंका, तिब्बत महादेश, चीन तथा सुदूर दक्षिण एशिया में प्रसार भी अनुवाद के माध्यम से ही हुआ। भारतेंदु हरिश्चंद्र तथा दूसरे साहित्य सेवियों द्वारा अंग्रेजी से हिंदी में मर्चेंट ऑफ वेनिश, ऑथेलो, किंग लियर, दी हर्मिट और यूरोपियाई भाषाओं से हुए दूसरे अनुवादों से हिंदी साहित्य समृद्ध हुआ। हिंदी और संस्कृत से भी अनेक कृतियों के अनुवाद हुए।

बुद्धचरितम, मेघदूत, साहित्यदर्पण, सेतुबंध, हितोपदेश, अभिज्ञानशाकुंतलम, ऋतुसंहार आदि के अंग्रेजी में अनुवाद हुए। हिंदी के नवजागरणकाल में अनुवादों ने एक नए विचार-आंदोलन को भी प्रश्रय दिया जिसमें अनुवाद की भूमिका है। भारतेंदु हरिश्चंद्र, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, श्रीधर पाठक, हरिवंश राय बच्चन, ठाकुर लक्ष्मण प्रसाद सिंह, रघुवीर सहाय आदि विद्वानों ने अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद परंपरा को आगे बढ़ाया। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भी अनुवाद के माध्यम से अपने साहित्य को समृद्ध करने पर बल दिया था। इनकी एक विस्तृत परंपरा है।

भारतीय भाषाओं में आपसी आदान-प्रदान अनुवाद के माध्यम से हुआ है। इसका प्रमुख कारण है कि अधिकांश भारतीय भाषाएँ सजातीय हैं अर्थात संस्कृत उनकी मातृभाषा है (अथवा हिंदी की आरंभिक भाषाएँ संस्कृत से संपन्न हुई हैं)। ऐसा मत है कि भारतीय भाषाओं में लगभग 50-60 प्रतिशत शब्द संस्कृत के मूल, शब्दों के तत्सम और तद्भव रूप हैं। यह आवश्यक भी है कि भारतीय भाषाओं में और अधिक सामंजस्य के लिए भाषायी आदान-प्रदान होना चाहिए। यह अनुवाद से हो सकता है।

डा. प्रभाकर माचवे ने अपने लेख 'अनुवाद के आईने में संस्कृतियों की पहचान' में इस बात पर बल दिया कि भारतीय भाषाओं में अनुवाद की प्रक्रिया तेज होनी चाहिए। उनका विचार था कि उत्तर पूर्व तथा सुदूर दक्षिण की भाषाओं से भी श्रेष्ठ साहित्य अन्य भाषाओं में आना चाहिए। हिंदी में बांग्ला से सर्वाधिक अनुवाद हुए हैं परंतु बांगला में अन्य भाषाओं से अपेक्षाकृत विशेष अनुवाद नहीं हुए हैं। उड़िया का साहित्य अभी भी हिंदी में सीमित है। दक्षिण भारत की भाषाओं में हिंदी से अनेक अनुवाद हुए हैं। मराठी, गुजराती तथा सिंधी से हिंदी में काफी मिलता है। वर्तमान स्थिति में कुछ सुधार अवश्य हुआ है। आज उत्तर पूर्वी भारत के साहित्य के प्रति चेतना बढ़ी है और एन.बी.टी. तथा साहित्य अकादमी और प्रकाशन विभाग के साथ साथ निजी प्रकाशक अनुवाद के माध्यम से इसे अन्य भाषाओं में उपलब्ध करने में प्रयासरत हैं। दक्षिण के काव्य, कथा तथा कथेतर साहित्य की भी हिंदी में उपलब्धता बढ़ी है अधिकांश स्थापित साहित्यकारों और पुरानी कृतियों के अनुवाद अब उपलब्ध हो रहे हैं जो अनुवाद अध्ययन में तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक अध्ययन के लिए लाभदायक सिद्ध हो रहा है। अनुवाद से मराठी और गुजराती साहित्य की आग सुलगता है।

भारतीय महाद्वीप की बहु-भाषिक और बहुसांस्कृतिक संरचना के परिप्रेक्ष्य में अनुवाद की भूमिका बहु आयामी और अपरिहार्य है। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात संविधान के लागू होने पर अनुवाद को केंद्रीय महत्व दिया गया। नीति निर्माण और विकास कार्यक्रमों के केंद्र में इसे रखा गया तथा शिक्षा के सार्वभौमीकरण में अनुवाद के माध्यम से आशातीत परिणाम मिले हैं। अनुवाद के दायित्वों और क्षेत्रों की अंतहीन सूची है। अनुवाद अपने कर्म में समेकन की प्रक्रिया की पोषक है जिसकी अभिव्यंजना अनेक रूपों में होती है।

भाषिक गतिविधि के रूप में जहाँ अनुवाद भाषाओं के शब्द भंडार और कोश में वृद्धि करता है वही लक्ष्य भाषा में नए कथन को भी प्रेरित करता है। इस प्रकार यह विभिन्न भाषा भाषियों को अपनी भाषिक संपदा को साझा करने तथा उसे दूसरों के परिप्रेक्ष्य में जानने का अवसर भी देता है। भाषिक आदान-प्रदान के साथ स्रोत भाषा की संस्कृति भी लक्ष्य भाषा में आ जाती है।

शब्द संसाधनों भंडार की समृद्धि

भाषिक गतिविधि के रूप में जहाँ अनुवाद भाषाओं के शब्द भंडार और कोश में वृद्धि करता है वही लक्ष्य भाषा में नए कथन को भी प्रेरित करता है। इस प्रकार यह विभिन्न भाषा भाषियों को अपनी भाषिक संपदा को साझा करने तथा उसे दूसरों के परिप्रेक्ष्य में जानने का अवसर भी देता है। भाषिक आदान-प्रदान के साथ स्रोत भाषा की संस्कृति भी लक्ष्य भाषा में आ जाती है। अधिकतर विद्वानों का विचार है कि अनुवाद में केवल भाषा ही नहीं अपितु उसकी भाषिक संस्कृति अनिवार्यतः आती है जिससे उसकी शब्दावली, शैली, अभिव्यक्ति, प्रोक्ति और नए शब्दों को जन्म देने की क्षमता में वृद्धि होती है। इस प्रकार भाषायी एकता भी पुष्ट होती है। संस्कृत के अपार शब्द भंडार का अन्य भारतीय भाषाओं में आना और वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा प्रकाशित तकनीकी शब्दावली में इनका प्रचुर मात्रा में समावेशन इसका जीवंत प्रमाण है। सुप्रसिद्ध भारतीय अनुवाद विज्ञानी सुजीत मुखर्जी अनुवाद को 'डिस्कवरी' मानते हैं क्योंकि यह नई संस्कृति से परिचय कराता है।

सामाजिक-सांस्कृतिक समेकन

स्रोत भाषा के साथ उसके सामाजिक और सांस्कृतिक तत्व गूढ़ता से जुड़े होते हैं। शब्द समाज संस्कृति सापेक्ष होते हैं। उनके अर्थ और अभिव्यक्ति समाज की योग्यता एवं स्वीकार्यता से निर्धारित होती है। अतः उनका केवल भाषिक विवेचन कर अर्थ निर्धारण करना संभव नहीं होता। खाने-पीने, रहने-सहने, आस्थापरक, विश्वास और संस्कारों की शब्दावली तथा प्राकृतिक पर्यावास में होने वाली वनस्पति तथा उसके प्रयोग एवं दैनिक

व्यवहार के (खेतीबाड़ी तथा हाट बाजार आदि में प्रयुक्त किए जाने वाले) असंख्य ऐसे शब्द हैं जो लक्ष्य भाषा में जाकर उसी प्रकार का सामाजिक सांस्कृतिक वातावरण निर्मित करते हैं। इससे परस्पर स्वीकार्यता और एक दूसरे के सरोकारों, सीमाओं तथा जीवन संबंधी चर्यायों को जानने में मदद मिलती है। निश्चित रूप से इससे समुदाय, प्रांत, राष्ट्र और विश्व आपस में बेहतर समझ पैदा कर सकते हैं। भारतीय परिस्थितियों में इस प्रकार समझ से अनेक प्रांतीय और स्थानीय विसंगतियाँ सुलझाई जा सकती हैं।

नव-साहित्य निर्माण

साहित्य भाषायी आदान प्रदान और सांस्कृतिक समझ के परिणामस्वरूप सर्वाधिक प्रभावित होता है। उसमें जहाँ अभिव्यक्ति के नए आयाम खुलते हैं वहीं नई संस्कृतियों की समझ से साहित्य सर्जना के नए-नए क्षेत्र भी सुलभ होते है। भारत में अनेक साहित्यिक शैलियों का विकास पश्चिम और अरब की तर्ज पर हुआ है। कहानी और नाटकों की विधाएँ अधिक प्रयोगधर्मी हो गई हैं। हायकू और मुक्त कविता जैसी शैलियाँ विकसित हो गई हैं। डायरी लेखन, संस्मरण और रिपोर्ट लेखन प्रोत्साहित हुए। इसी प्रकार विज्ञान, कंप्यूटर, एनीमेशन और दस्तावेजी लेखन की विधाएँ उभरी हैं। भारतीय आलोचना और विमर्श तथा तुलनात्मक साहित्य लेखन में भी अनुवाद के कारण भारी बदलाव देखे गए हैं। साहित्यिक स्तर भी इससे अपनत्व और समेकन के भाव को प्रश्रय मिला है। शोध और अनुसंधान को इस प्रकार के संवाद और अंतःक्रिया से नए आयाम हासिल हो रहें हैं।

मीडिया, जनसंपर्क और व्यापार ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ अनुवाद की हर पल आवश्यकता बनी रहती है। मीडिया लोकतंत्र का चौथा स्तंभ है तथा आज सूचना और ज्ञान ही शक्ति है। इसलिए सूचना तथा ज्ञान के प्रसार और उपलब्धता में मीडिया (रेडियो, टेलीविजन तथा मुद्रित माध्यमों) की भूमिका अहम है। हजारों की संख्या में रेडियो और टेलीविजन चैनलों पर समाचार तथा दूसरी घटनाएँ सद्य दिखाई जा रही हैं। विश्वव्यापी प्रसारण निर्बाध उपलब्ध हैं।

नए ज्ञान की निर्मिति

ज्ञान अनुशासन अनुवाद का एक बृहद् प्रयोग क्षेत्र है तथा आज जिस प्रकार विशेषज्ञता और विशिष्टतापरक ज्ञान के नए-नए क्षेत्र उभर रहे हैं उसमें यह आवश्यक हो गया है कि ज्ञान साहित्य, ज्ञान निर्माण प्रक्रिया और उसकी सुलभता के लिए अनुवाद का सहयोग लिया जाए। राष्ट्रीय अनुवाद मिशन ने इस दिशा में ज्ञानात्मक साहित्य संबंधी प्रक्रियाओं के सरलीकरण, मानकता और भारतीय भाषाओं में चयनित विषयों की पुस्तकों के अनुवाद का दायित्व लिया था। हालाँकि इसमें पर्याप्त प्रगति नहीं हो पा रही है परंतु आज देश के अनेक विश्वविद्यालय इस दिशा में बड़े पैमाने पर ज्ञान साहित्य के अनुवाद में संलग्न हैं। शिक्षा वास्तव में लोकतंत्रीकरण का एक मुख्य साधन है और अनुवाद से शिक्षा आज समाज के प्रत्येक व्यक्ति के घर द्वार तक पहुँच रही है। अनुवाद से न केवल अंतरविषयी अध्ययन को बढ़ावा मिल रहा है अपितु ज्ञान के भंडार बढ़ रहे हैं, उनका संरक्षण हो रहा है तथा सुलभता बढ़ गई है। भाषा शिक्षण के रूप में अनुवाद की भूमिका तो सर्व-स्वीकृत आवश्यकता है। ज्ञानात्मक साहित्य के निर्माण में इससे गति मिली है और इसकी सुलभता अब देश में समान स्तर तथा गुणात्मक शिक्षण को आगे बढ़ा रही है।

प्रशासन और व्यवस्था में अनुवाद

आज भी भारत की भौगोलिक एवं भाषिक परिस्थितियाँ इस बात के अनुकूल नहीं हैं कि केवल एक भाषा में पूरे देश का प्रशासन सुचारू रूप से चल सके। अतः अभी भी द्विभाषिकता की स्थिति भारत सरकार के स्तर पर विद्यमान है। सरकारी कार्यालयों, विभागों - मंत्रालयों, उपक्रमों, बैंकों आदि में अनुवाद की व्यवस्था है। हिंदी अंग्रेजी में परस्पर अनुवाद के माध्यम से आज दक्षिण से लेकर उत्तर और पूर्व से पश्चिम पूरे भारत तथा भारत के बाहर भी विश्वभर में भारत सरकार के कार्यालयों में प्रशासन एवं कार्यविधि साहित्य संबंधी क्षेत्रों में अनुवाद के माध्यम से आपसी तालमेल हो रहा है। राष्ट्रीय स्तर पर यह समेकन का एक अच्छा उदाहरण है। इसी प्रकार संसद में भी हिंदी अंग्रेजी मुख्य भाषाएँ तो हैं ही भारतीय भाषाओं में भी अपने विचार रखने की व्यवस्था है। संसद में अनुवाद गतिविधियाँ बड़े पैमाने पर व्यवस्थित हैं जिसमें अनुवाद, निर्वचन और दस्तावेजीकरण के लिए समुचित मानव संसाधन एवं सहायक प्रौद्योगिकियाँ उपलब्ध कराई गई हैं। इससे संसद में एकता और समन्वय की भावना को पोषित करने में अनुवाद की भूमिका सिद्ध हो रही है। इसी प्रकार विधि संबंधी साहित्य के लिए भी हिंदी में मानक अनुवाद के लिए अलग से शब्दावलियाँ तथा विभागीय व्यवस्था है।

मीडिया और नव माध्यम

मीडिया, जनसंपर्क और व्यापार ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ अनुवाद की हर पल आवश्यकता बनी रहती है। मीडिया लोकतंत्र का चौथा

विश्वव्यापी प्रसारण निर्बाध उपलब्ध हैं। विज्ञापन, प्रसारण तथा प्रकाशन समूह अपने प्रसारणों और प्रकाशनों में अभूतपूर्व गति एवं विविधता लाने में अनुवाद का आश्रय ले रहे हैं। सामग्री, समन्वयन और अनुकूलन सभी कुछ यहाँ हो रहा है और जिस गति से हो रहा वह हैरान करने वाला है। मीडिया में भाषायी मुद्दे भी अनुवाद से जुड़े है। मीडिया नितप्रति नवाचारी हो रहा है और नई-नई अभिव्यक्तियाँ इजाद कर रहा है।

स्तंभ है तथा आज सूचना और ज्ञान ही शक्ति है। इसलिए सूचना तथा ज्ञान के प्रसार और उपलब्धता में मीडिया (रेडियो, टेलेविजन तथा मुदित माध्यमों) की भूमिका अहम है। हजारों की संख्या में रेडियो और टेलीविजन चैनलों पर समाचार तथा दूसरी घटनाएँ सद्य दिखाई जा रहीं हैं। विश्वव्यापी प्रसारण निर्बाध उपलब्ध हैं। विज्ञापन, प्रसारण तथा प्रकाशन समूह अपने प्रसारणों और प्रकाशनों में अभूतपूर्व गति एवं विविधता लाने में अनुवाद का आश्रय ले रहे हैं। सामग्री, समन्वयन और अनुकूलन सभी कुछ यहाँ हो रहा है और जिस गति से हो रहा वह हैरान करने वाला है. मीडिया में भाषायी मुद्दे भी अनुवाद से जुड़े है। मीडिया नितप्रति नवाचारी हो रहा है और नई-नई अभिव्यक्तियाँ इजाद कर रहा है। ऐसा भी अनुमान है कि लगभग हर दस मिनट में मीडिया पर एक नया शब्द आ रहा है। यह अनुवाद का नया प्रयोगधर्मी और महत् दायित्व का क्षेत्र है। मीडिया के साथ नव माध्यम, सोशल मीडिया (ई मेल, ट्विटर, चैट आदि) और सामुदायिक मीडिया जैसे क्षेत्र भी विगत एक दशक में तेजी से उभर कर सामने आये हैं। इनकी भाषा, शब्दावली, अभिव्यक्ति और विन्यास अपना ही है। जिस व्यापकता से इनका प्रयोग हो रहा है उसे अनदेखा नहीं किया जा सकता और इसे अनुवाद के एक बड़े संभावना क्षेत्र के रूप में बहु-राष्ट्रीय कंपनियाँ देख रही हैं। मोबाइल प्रौद्योगिकी के आने से सूचना क्रांति में नए आयाम जुड़े हैं। मोबाइल की अपनी भाषा, शैली और विन्यास है। इंटरनेट और वर्ल्ड-वाइड नेटवर्क सुविधाओं के चलते आज अनेक ऑन लाईन अनुवाद प्लेटफार्म भी उपलब्ध है, परंतु ये सीमित हैं और मानवीय अनुवादक की अपेक्षा रखते है। इस प्रकार मीडिया ने ऐसी वैश्विक संस्कृति का निर्माण किया है जहाँ अनुवाद का केंद्रीय स्थान है और यह वैश्वीकरण प्रक्रिया का एक अभिन्न संभाग बन चुका है।

व्यापार और वाणिज्य

व्यापार और वाणिज्य विकास एवं अर्थ व्यवस्था में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। जिस तीव्र गति से विगत तीन-चार दशकों से भारत में औद्योगिक और संरचनात्माक विकास हुआ है उससे आपसी संपर्क तथा सहयोग की विश्व-व्यापी भावना विकसित हुई। आपसी मेल जोल, परियोजनाओं की संकल्पना, सहयोग एवं उत्पादन, साझे उपक्रम, और आयात निर्यात के कार्य कई गुना बढ़े हैं। इन सब में अनुवाद की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक व्यवसायिक तरीके से अपेक्षित हो गई है। सभा सम्मेलन, समझौते, ज्ञापन हस्ताक्षर, तकनीकी साहित्य का निर्माण और आदान-प्रदान, बहु-राष्ट्रीय कंपनियों द्वारा मानवीय संसाधनों का दक्षता पूर्वक प्रयोग, प्रोसेस कार्यालयों में बहु-विध गतिविधियाँ प्रखर पर है। यहाँ तक कि अधिकांश बहु-राष्ट्रीय कंपनियों ने अपने अपने अनुवाद प्रभाग भी स्थापित कर दिए हैं। यह भारतीय अर्थव्यवस्था और कुल मिलकर अनुवाद तथा अनुवादकों के लिए अच्छे अवसरों की शुरुआत है।

पर्यटन, स्वास्थ्य सेवाएँ और खेल आयोजन

अनुवाद के उभरते क्षत्रों में आधारभूत सरचना (सड़कों, संचार और आवाजाही के साधनों- आटोमोबाईल, रेल तथा हवाई सफर) में गुणात्मक सुधार और संवृद्धि के कारण राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पर्यटन, विशेषज्ञ डाक्टरों की उपलब्धता और समुन्नत स्वस्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और उनसे जुड़ा स्वास्थ्य पर्यटन, बड़े पैमाने पर खेल आयोजन-टी20, एक दिवसीय क्रिकेट मैच, टेस्ट शृंखलाएँ, आई.पी.एल. तथा कबड्डी, टेनिस और हॉकी अन्य स्पर्धाएँ प्रमुख हैं जिनमें बड़ी संख्या में देशी विदेशी खिलाड़ी और पर्यटक, सेवा भोगी तथा खिलाड़ी भाग लेते हैं। इसी प्रकार भारत अब विश्व स्तर के व्यवसायिक आयोजनों का भी आयोजन कर रहा है। इसमें विश्व पुस्तक मेले, ऑटो एक्सपो, इंडस्ट्री एक्सपो, हस्तशिल्प तथा एवियोनिक्स एक्सपो आदि भी शामिल हैं। ये गतिविधियाँ सेवा क्षेत्र के अंतर्गत होने से मानवीय अंतक्रिया और निक्षेप कि लगातार अपेक्षा करती हैं तथा भाषा कुशलता और सूचना प्रौद्योगिकी से समुन्नत सेवाओं कि अपेक्षा करती है। इस कार्य में देशी विदेशी भाषाओं का ज्ञान, अनुवाद करने की सद्य क्षमता तथा सुस्पष्ट और शुद्ध बोलने की क्षमताएँ अपेक्षित हैं, अनुवादकों द्वारा सरलता से उपलब्ध कराई जा रही हैं। यह क्षेत्र सांस्कृतिक सहयोग, विदेशी मुद्रा अर्जन और पारस्परिक संबंधो को और सौहार्द्रता देने का उत्तम अवकाश देता है। अनुवाद के लिए यह एक उभरता हुआ पर चुनौतियाँ भरा क्षेत्र है।

धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजन तथा त्वरित प्रबंधन

धार्मिक और सांस्कृतिक आयोजनों में भी अनुवाद संवाद, संचार, रख-रखाव, आपातकाल में राहत और प्रबंधन में अनिवार्य

सहायक के रूप में विद्यमान रहता है। साहित्य का बहु-भाषाओं में अनुवाद, सूचनाओं को व्यापक जनसमूहों का पहुँचाना, आपदा के समय लोगों से संपर्क, उपलब्ध संसाधनों की जानकारी देना और सहायता पहुँचाना आदि अनेक ऐसे पक्ष हैं जहाँ संवाद को सुगमित करने में अनुवाद बड़ी भूमिका निभाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ और भारत सरकार के आपदा राहत और प्रबंधन में सूचना के त्वरित और लक्षित सप्रेषण में अनुवाद को स्वीकार किया गया है तथा उसे केंद्रीय बतलाया गया है। यह अनुवाद के अंतरविषयी स्वरूप का उत्तम उदहारण है जहाँ वह प्रबंधन, तक्नालॉजी, विज्ञान, नीति निर्माण और उसके क्रियान्वयन के केंद्र में है।

नव–शिक्षण प्रणालियाँ द्वितीय अन्य भाषा शिक्षण

इक्कसवीं शताब्दी में अनुवाद को शिक्षण प्रणालियों में, खास तौर 'मूक्स' (एग्रो मूक्स) और विश्वविद्यालय आयोग की इ-पाठशालाओं तथा आई.आई.टी. और आई.आई.एम. द्वारा प्रदान सहयोगात्मक रूप से प्रदान किए जा रहे कार्यक्रमों आदि में अत्यंत महत्त्व से देखा जा रहा है। जिस मात्रा में इन माध्यमों को शिक्षण सामग्री की आवश्यकता होगी और उसके इ-माध्यम से उपलब्धता की अनिवार्यता होगी उसमें अनुवाद की भूमिका अहम होगी क्योंकि मुख्य भाषाओं में उपलब्ध साहित्य को विभिन्न भाषाओं में प्रदान करना, उसके इ-फॉर्मेट तैयार करना और अंतर-संकाय को सहयोग देने में कोई दूसरा विकल्प हमारे सामने नहीं होगा। बहुभाषिक भारत की परिस्थितियों के अनुरूप द्वितीय भाषा शिक्षण में भी अनुवाद की सुस्थापित भूमिका तो ज्ञात ही है।

निष्कर्ष

अनुवाद भारतीय परिवेश में सदियों से एक स्वाभाविक और नियमित चर्या के रूप में विद्यमान रहा है। भारतीय साहित्य की समृद्ध परंपरा है जिसका पूरा विश्व ऋणी है तथा उससे समृद्ध हुआ है। भारतीय कालजयी साहित्य के अरबी फारसी, तुर्की, यूरोपियाई और एशियाई तथा चीन, श्रीलंका, तिब्बत आदि में अनुवाद की प्राचीन परंपरा है। मुगलकाल में संस्थागत रूप से भारत में अनुवाद किए गए और विदेशी भषाओं से भी भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुए। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में अनुवाद परंपरा को एक नई दिशा मिलनी शुरू हुई जो बीसवीं शताब्दी में बलवती होकर अनेक उत्तम रचनाओं के अनुवादों में परिणत हुई। वैश्वीकरण और मीडिया के नए-नए रूपों ने अनुवाद के दायित्व और आयाम बहुत व्यापक कर दिए हैं। सरकारी स्तर पर अभी भी देश में द्विभाषिकता की स्थिति बनी हुई है और अनुवाद उसमें अपरिहार्य है। अनुवाद सांस्कृतिक संप्रेषण, शिक्षा, पर्यटन, मीडिया, चिकित्सा, आयोजनों, खेलों और राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग एवं समन्वय में केंद्रीय भूमिका का निर्वहन कर रहा है। उसकी भूमिका केवल सुगमक तक ही सीमित न रहकर आज अधिक चुनौतीपूर्ण, दायित्वपूर्ण तथा सूचना प्रौद्योगिकी अनुस्यूत हो गई है। मशीनी अनुवाद का प्रवेश हो चुका है और उसके आंशिक परिणाम सामने आ रहे हैं। मानव अनुवादकों को इस दिशा में भी अपने अनुभव तथा ज्ञान का लाभ देना होगा ताकि अनुवाद के इस बृहत्-उद्यम को सफलता को जन-सेवा के लिए क्रियान्वित किया जा सके। अनुवाद भावानात्मक एकता एवं राष्ट्रीय एकता की भावना को भी पुष्ट करने में महत्वपूर्ण है, क्योंकि परस्पर विचार, साहित्य संस्कृति के आदान-प्रदान से सरोकारों, हितों व भाषिक-विभाजन को दूर करने का कार्य अनुवाद करता है।

Asociate Profesor
School of Translation Studies and Training (SOTST)
Indira Gandhi National Open University (IGNOU)
Block 15-C, Maidan Garhi , New Delhi 110068
Ph.+91 9654177491, 011 29571625

संबंधित संदर्भ

- के. सच्चिदानंदन http://digitallearning-eletsonline
- जी गोपीनाथन, अनुवाद, सिद्धांत और प्रयोग प. 9
- रत्तन लाल शांत. हिंदी इन जम्मू एंड कश्मीर. पी एल एस आई. खंड 12. 2014 दी लैंग्वेजेज ऑफ जम्मू एंड कश्मीर, दिल्ली. भाषा ओरिएंट ब्लैकस्वान
- Walter Benjamin, "The task of Translator' (introduction to a Baudelaire translation, 1923, Harry Zohn द्वारा अनूदित पाठ, 1968), This is taken from the anthology, The Translation Studies Reader, ed- Lawrence Venuti (London: Routledge, 2000) संस्कृत के विकास की दस वर्षीय भावी योजना, विजन एवं रोडमैप, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, 2015-2016
- Decentralizing Translations- (संपा) जुडी बकवयाशी एवं रीता कोठारी, 2009. जन बेंजामिन पब्लिशिंग कंपनी, नीदरलैंड
- कृष्ण कुमार गोस्वामी, अनुवाद विज्ञान की भूमिका. 2008. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन
- ए.के. रामानुजन, थ्री हंड्रेड रामायाणज, इन कलेक्टेड एसेस ऑफ ए के रामानुजन, पृष्ठ 130
- कृष्ण कुमार गोस्वामी , अनुवाद विज्ञान की भूमिका. 2008. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 453
- प्रभाकर माचवे. अनुवाद के आईने में संस्कृतियों कि पहचान इन अनुवाद. 3. 1990, नई दिल्ली , भारतीय अनुवाद परिषद्
- पूर्ण चंद टंडन. राष्ट्रीय एकता एवं अनुवाद. इन अनुवाद. 149, नई दिल्ली, भारतीय अनुवाद परिषद्।

शोध लेख

चम्बयाली बोली में आघात का महत्त्व

● आरती शर्मा

हिमाचल प्रदेश के उत्तर-पश्चिम में स्थित चम्बा जिला विश्व के सुन्दरतम भू-भागों में से एक है। उत्तर में जास्कर, पीर पाचाल, पूर्व में धौलाधार के बड़ा भंगाल, दक्षिण में हाथीधार तथा डागनीधार के मध्य में स्यूहल, रावी, बुढ़ढल, नैणी एवं चक्की खड्डों की घाटियों में स्थित यह प्रदेश पर्यटकों के मन-मस्तिष्क में स्वर्ग के अस्तित्व को साकार कर देता है।

हिमाचल प्रदेश के जिला चम्बा की सम्पर्क भाषा को प्रायः चम्बयाली बोली कहा जाता है। इस बोली का प्रचलन चम्बा के साथ-साथ भटियात के सीमावर्ती क्षेत्रों नूरपुर, कोटला, शाहपुर इत्यादि कांगड़ा जिला के क्षेत्रों में भी है। चम्बयाली बोली हिन्दी, डोगरी, पंजाबी का मिश्रण है । यह सम्पूर्ण चम्बा जिला की सम्पर्क भाषा है परन्तु इसकी विभिन्न उप-बोलियाँ हैं, जो चम्बा जिला में विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित हैं । इन्हें भटियाती, भरमौरी, चुराही और पंगवाली बोलियों के नामों से पुकारा जाता है। 'भटियाती' बोली भटियात क्षेत्र की प्रमुख बोली है। 'भरमौरी' भरमौर क्षेत्र की प्रमुख बोली है। चुराह क्षेत्र की 'चुराही' और पांगी क्षेत्र की प्रमुख बोली 'पंगवाली' है। ये सभी चम्बयाली की ही उप-बोलियाँ हैं। इसमें कहलूरी और मण्डियाली बोलियों के शब्दों के साथ-साथ कांगड़ी बोली के शब्दों का अधिक मिश्रण है। भरमौरी और चुराही बोलियाँ सर्वाधिक क्षेत्र की सम्पर्क बोलियाँ हैं। "इस बोली पर जम्मू के किश्तवाड़ और डोडा क्षेत्र की भाषा का अधिक प्रभाव देखने को मिलता है।"[1] पांगी की बोली 'पंगवाली' नाम से जानी जाती है ।

1 चम्बयाली बोली में आघात का महत्त्व

चम्बा में विभिन्न बोलियों का प्रचलन होते हुए भी यहाँ की मुख्य सम्पर्क बोली चम्बयाली का विशेष महत्त्व है। इसलिए चम्बयाली बोली में आघात के महत्त्व को स्पष्ट करने का प्रयास किया जा रहा है। यही कारण है कि यहाँ सबसे पहले 'आघात' को लेकर विचार किया जा रहा है -

1.1 आघात

जब वाक्य के अन्तर्गत शब्दों का प्रयोग हो, तो वाक्य में प्रयुक्त सभी शब्दों का उच्चारण समान सुर या समान बल से नहीं होता है। किसी शब्द में (सुर) बल की मात्रा अधिक होती है, तो किसी शब्द में कम। वाक्य में प्रयुक्त किसी शब्द पर सुर या बल का अधिक प्रयोग ही 'आघात' कहलाता है। चम्बयाली में आघात का स्वनिमिक महत्त्व है।

"बोलने में प्रायः ऐसा देखा जाता है कि वाक्य के सभी अंशों पर बराबर बल नहीं दिया जाता। कभी वाक्य के किसी एक शब्द पर अधिक बल होता है तो कभी दूसरे पर। इसी प्रकार एक शब्द की ध्वनियों पर 'बल' या 'आघात' समान नहीं होता। शब्द जब एक से अधिक अक्षरों का होता है तो इन अक्षरों पर भी आघात या बल समान नहीं होता । एक पर अधिक होता तो दूसरे या दूसरों पर कम। इसी 'बल', 'आघात' या 'जोर' को 'बलाघात' कहते हैं।"

आघात के मुख्य रूप से दो भेद किए जा सकते हैं :-
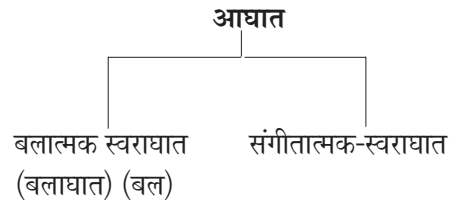
1.1.1 बलात्मक स्वराघात (बलाघात)

बोलने में प्रायः ऐसा देखा जाता है कि वाक्य के सभी अंशों पर बराबर बल या जोर नहीं दिया जाता। कभी वाक्य के एक शब्द पर बल अधिक होता है तो कभी दूसरे पर। इसी प्रकार एक शब्द की भी सभी ध्वनियों पर बराबर बल या आघात नहीं पड़ता। शब्द जब एक से अधिक अक्षरों का होता है, तो इन अक्षरों पर भी बल बराबर नहीं पड़ता, एक पर अधिक होता है तो दूसरे या दूसरों पर कम। इसी बल, जोर या आघात को 'बलाघात' कहते हैं।

"बलाघात उच्चारण शक्ति की वह मात्रा है, जिससे किसी भाषिक इकाई (ध्वनि, अक्षर, शब्द, वाक्यांश, वाक्य) का उच्चारण किया जाता है तथा जो उच्चारण के लिए भीतर से आती हुई हवा की तीव्रता एवं उच्चारण से संबद्ध मांस-पेशियों की दृढ़ता पर निर्भर करती है।"[2]

चम्बयाली में बलात्मक-स्वराघात का शब्द बलाघात तथा वाक्य बलाघात दोनों स्तरों पर स्वनिमिक महत्त्व है। बलात्मक स्वराघात या बलाघात के मुख्य रूप से दो भेद किए जा सकते हैं

1. शब्द बलाघात तथा

2. वाक्य बलाघात

1.1.1.1 शब्द-बलाघात

शब्द बलाघात से तात्पर्य है एक ही शब्द में विभिन्न स्थानों या ध्वनियों पर आघात होने से अर्थ में परिवर्तन आ जाए अर्थात् एक ही शब्द में एक स्थान या ध्वनि पर आघात होने से एक अर्थ तथा दूसरे स्थान या ध्वनि पर आघात होने से अर्थ बदल जाना ही शब्द-बलाघात कहलाता है। चम्बयाली में शब्द बलाघात का स्वनिमिक महत्त्व नहीं है। शब्द बलाघात का अंग्रेजी में स्वनिमिक महत्त्व है ।

1.1.1.2 वाक्य बलाघात

वाक्य-बलाघात से तात्पर्य है वाक्य में प्रयुक्त विभिन्न शब्दों में 'आघात' या 'बल' का प्रयोग। वाक्य में प्रयुक्त विभिन्न शब्दों में कभी आघात का प्रयोग एक शब्द पर किया जाता है, तो कभी दूसरे पर, तो कभी तीसरे पर किया जाता है । इसी आघात या बल के कारण वाक्य के अर्थ में किंचित् अन्तर आ जाता है। वाक्य में प्रयुक्त विभिन्न शब्दों में 'आघात' या 'बल' का प्रयोग ही 'वाक्य-बलाघात' कहलाता है।

चम्बयाली में वाक्य-बलाघात का सार्थक-प्रयोग मिलता है। वाक्य बलाघात के लिए एक वाक्य को लिया जा सकता है, जो कि सामान्य अर्थ का द्योतक है, जिसमें सभी शब्दों पर समान 'बल' है। सभी शब्दों पर समान 'बल' होने के कारण यह वाक्य सामान्य अर्थ का द्योतक है।

उदाहरणार्थ

मोह्णे, स्याम पत्थरे कने मार्‌या।

"मोहन ने श्याम को पत्थर से मारा।"

उपयुर्क्त वाक्य में सभी शब्दों पर लगभग समान बल होने से यह वाक्य सामान्य अर्थ का द्योतक है। परन्तु इसी वाक्य के किसी शब्द पर बल देने का तात्पर्य है किसी बात विशेष पर बल देना। वाक्य के अर्थ में जो अन्तर आता है, वह बलाघात के कारण ही आता है।

बलाघात के कारण अर्थ में जो अन्तर आता है, उसे यहाँ पर निम्न उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है। आघात या बल युक्त शब्द को रेखांकित किया गया है, उदाहरणार्थ -

उदाहरणार्थ

(1) मोह्णें, स्याम पत्थरे कने मार्‌या ।

'मोहन ने स्याम को पत्थर से मारा ।' (न कि किसी और चीज से)

(2) मोहूणे, स्याम पत्थरे कने मारया ।

'मोहन ने श्याम को पत्थर से मारा ।' (न कि राम को)

(3) मोहूणे, स्याम पत्थरे कने मार्‌या ।

'मोहन ने श्याम को पत्थर से मारा ।' (न कि भगाया या डराया)

उपयुर्क्त उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वाक्य के विभिन्न शब्दों में आघात या बल का स्थान बदल देने से अर्थ बदल जाता है । अतः चम्बयाली में वाक्य-बलाघात का स्वनिमिक महत्त्व होने के कारण इसका यहाँ महत्त्वपूर्ण स्थान है।

1.1.2 संगीतात्मक स्वराघात या सुर

चम्बयाली में संगीतात्मक स्वराघात या सुर का स्वनिमिक महत्त्व है। संगीतात्मक स्वराघात से अभिप्राय है, सुर का उतार-चढ़ाव। बलाघात ही की तरह वाक्य के सभी शब्दों की सभी ध्वनियाँ एक सुर में नहीं बोली जाती, कहीं सुर ऊँचा होता है तो कहीं नीचा। सुर का आरोह-अवरोह ही संगीतात्मक स्वराघात कहलाता है । संगीतात्मक स्वराघात का सम्बन्ध, स्वर-तन्त्रियों से हुआ करता है, जबकि बलाघात का सम्बन्ध फेफड़ों से हुआ करता है। संगीतात्मक स्वराघात या सुर को समझने के लिए फ्रेंचिज की निम्नांकित पंक्तियाँ सही है -

"सुर स्वरतंत्रियों के खिंचाव और उसमें उत्पन्न घोष या कम्पन के आरोह-अवरोह के क्रम पर निर्भर करता है। सुर की भिन्नताएँ आकस्मिक नहीं होतीं, वे बोली के गठन के अंग के रूप में होती है।"[3]

सामान्य रूप से संगीतात्मक स्वराघात के दो स्तर होते हैं - शब्द स्तर तथा वाक्य स्तर। इन दोनों स्तरों को अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है। यही कारण है कि संगीतात्मक स्वराघात को सामान्य रूप से दो वर्गों में बाँटा जा सकता है -

संगीतात्मक स्वराघात
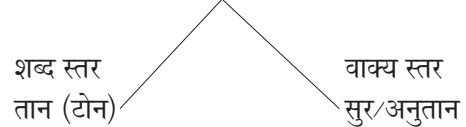
1.1.2.1 तान (टोन)

जब संगीतात्मक स्वराघात 'शब्द स्तर' पर हो, तो उसे 'तान' कहा जाता है। एक ही शब्द में तान बदल देने से अर्थ भी बदल जाता है। इसी कारण चम्बयाली में तान अपना अस्तित्व स्थापित करने जा रही है। चम्बयाली में तान के दो ही रूप मिलते हैं, जिन्हें निम्नांकित चिन्हों द्वारा दर्शाया जा रहा है -

मध्य - /-/

उच्च - /-/

निम्नतान - /-/ चम्बयाली में नहीं मिलती है । मध्य तथा उच्च तान के व्यतिरेकी युग्म इस प्रकार हैं ।

(1) /कर/ 'करना'

/

(2) /कर/ 'घर'

(3) /पैर/ 'पाँव'

/पैर/ 'पहर, दोपहर का समय'

उपयुर्क्त उदाहरणों में हम 'ह्' तथा 'तान' को मुक्त वितरण में पाते हैं । अतः उपयुर्क्त सभी शब्दों को दोनों तरह - /बाह्र-बार/ /कह्र-कर/ से लिपि बद्ध किया जा सकता है। लेकिन प्रस्तुत लेख में ऐसे शब्दों को लिपि-बद्ध करने के लिए प्राणत्व अर्थात 'ह्' लिपि चिन्ह को ही अपनाया गया है, 'तान' को नहीं, क्योंकि 'तान' अधिक शोध का विषय है। इसी कारण 'तान' पर प्रस्तुत अध्ययन में अधिक विस्तार से विचार करना सम्भव नहीं हो सका है। अतः 'प्राणत्व' को यहाँ पर अधिखण्डात्मक स्वनिम के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। प्राणत्व तथा अप्राणत्व के व्यक्तिरेकी-युग्म इस प्रकार हैं -

(1) /कर/ 'करना'
(2) /कह्र/ 'घर'
(3) /पैर/ 'पाँव'
/पह्र/ 'पहर, दोपहर का समय'

1.1.2.2 अनुतान या सुरलहर

जब वाक्य स्तर पर स्वराघात होता है तो उसे 'अनुतान' या 'सुरलहर' कहा जाता है। ब्लॉक एण्ड ट्रेगर के अनुसार, "आघात का ऐसा अभिलक्षण जो कि अकेले शब्दों की अपेक्षा वाक्य से सम्बन्धित हो 'अनुतान' कहालाता है।"[4]

भोलानाथ तिवारी के अनुसार, "शब्द या वाक्य में सुरों के आरोह-अवरोह का क्रम ही 'सुरलहर' है।"[5]

चम्बयाली में वाक्य-स्तर पर 'अनुतान' या 'सुरलहर' का विशेष महत्त्व है। वाक्य में प्रयुक्त विभिन्न शब्दों में प्रयुक्त आरोह-अवरोह या अनुतान के कारण ही विभिन्न अर्थ या मनोभाव व्यक्त होते हैं। चम्बयाली में अनुतान का स्वनिमिक महत्त्व है। सुर-लहर या अनुतान को विभिन्न प्रकार से अंकित किया जाता है। उदाहरणार्थ-अंकों द्वारा, रेखाओं द्वारा तथा बिन्दुओं द्वारा आधुनिक समय में भाषा विज्ञानी सुर या स्वर लहर के विभिन्न घरातलों को /1/ /2/ /3/ अंकों द्वारा दर्शाते हैं ।

इन अंकों में स्तर /1/ निम्नतम स्तर /2/ मध्यम स्तर तथा /3/ उच्चतम धरातलों को व्यक्त करते हैं । वाक्य में अनुतान के इन धरातलों को अंकों द्वारा निम्न प्रकार से अंकित किया जा सकता है -

उदाहरणार्थ

2 2 2
कल बरखा जादा थी । - 'कल बारिश अधिक थी ।'
(सामान्य भाव)

2 2 2
मोह्ण इसदा मुँडा ए । - मोहन इसका लड़का है । (सामान्य भाव)

अन्य मनोभावों को व्यक्त करने के लिए अनुतान के धरातल बदलते रहते हैं -

(क)प्रश्नवाचक शब्द के साथ अनुतान धरातलरू

2 3 1
(1) तुस्से सकूले ते कदे / काहली आए ? - 'आप स्कूल से कब आए ?'

(ख) प्रश्नवाचक शब्द के बिना प्रश्नवाचक के अनुतान धरातल -

2 3 2 1
(1)से वैली दा खाणा खाइया ?- वह रात का खाना खा कर गया?

(ग) वाक्य के अन्त में 'नी' नहीं के साथ प्रश्नवाचक वाक्य के धरातल -

3 2 3
(1) हूण जाणा या नी ? - अभी जाओगे या नहीं ?

(घ) नकारात्मक वाक्यों में अनुतान धरातल-

2 3 1
(1) मोह्ण मिज्जों नी मिलेया ।- 'मोहन मुझे नहीं मिला।'

(ड) नकारात्मक शब्द के साथ प्रश्नवाचक वाक्यों के अनुतान धरातल -

2 3 1 2
(1) तुस्से मिज्जों बोल्या की नी ?- 'आपने मुझे बोला / कहा क्यों नहीं ?'

उपयुर्क्त 'व्यतिरेक युग्मों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि 'तान' की भिन्नता के कारण ही एक शब्द दो अर्थों का वाचक है। इस प्रकार के उदाहरण और भी अनेक है, परन्तु यहाँ पर उनको लेकर विस्तार से विचार करना उचित नहीं है । इसका मुख्य कारण है कि चम्बयाली में 'तान' तथा 'प्राणत्व' दोनों मुक्त-वितरक में हैं। इसी लिए प्रस्तुत लेख में तान (टोन) की ओर संकेत मात्र किया गया है, क्योंकि लेखन में यहाँ पर 'तान' के स्थान पर 'प्राणत्व' को स्वीकार किया गया है ।

शोधार्थी, हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल, शिमला-171 005, मो. 0 92187 07029

संदर्भ :

1. रूप शर्मा, हिम दर्पण (मंडी : किरन प्रकाशन, 2012), पृ. 287।
2. भोलानाथ तिवारी, भाषा-विज्ञान कोष, (वाराणसी : ज्ञानमंडल लि. संवत् 2020), पृ. 70 ।
3. भोलानाथ तिवारी, भाषा-विज्ञान, (इलाहाबाद : किताब महल लि. संवत् 1951), पृ. 283 ।
4. W. Nelson Francis, the structure of American English, USA, New York, 1956, P- 113.114
5. ब्लॉक एण्ड ट्रेगर, आउट लाइनज ऑफ लिंग्विस्टिक्स एनालाइसिस (न्यू दिल्ली : मुंशी राम मनोहर लाल, 1953), पृ. 42 ।
6. भोलानाथ तिवारी, भाषा-विज्ञान कोष, (वाराणसी : ज्ञानमंडल लि. संवत् 2020), पृ. 79 ।

शोध आलेख

समकालीन नारी-विमर्श और स्त्री-पुरुष संबंध

● उमेश चंद्र

सन् 1857 की क्रान्ति भारतीय इतिहास में नये युग का आगमन थी। लगभग यही समय साहित्य में आधुनिक काल के शुरुआत का भी है। हिन्दी-साहित्य के आधुनिक युग में नारी-स्वतंत्रता के लिए पर्याप्त साहित्य रचा गया परन्तु वह नारी-मुक्ति के लिए अपेक्षित वातावरण नहीं बना सका। यहाँ तक कि इस युग की स्त्री-विषयक 'स्त्री-दर्पण', 'गृह-लक्ष्मी', 'स्त्री-धर्म- शिक्षा', 'महिला', 'हितकारक स्त्री-शिक्षा', 'कुमारी' और 'महिला- महत्त्व जैसी पत्रिकाओं के स्वर भी क्षीण थे, क्षीण ही नहीं बल्कि पुरुषवादी थे। नारी-स्वतंत्रता के परिप्रेक्ष्य में आज के उत्तर- आधुनिक युग में विमर्श का विषय यह है कि 21वीं सदी की नारी किस सीमा तक पुरुष-जाति को शत्रु मानेगी, पुरुषों द्वारा रचित साहित्य को स्त्री-विमर्श के अन्दर रखा जाये या नहीं। अब इसका निर्णय तो आज की स्त्रियों को करना है कि पुरुष जाति को नारी-जाति का शत्रु माना जाए या नहीं। आज नारी-मुक्ति के नये पाठों की रचना नारियों के जिम्मे है। रास्तों और शैलियों की खोज भी उन्हें ही करनी है।

20वीं सदी में स्त्री-प्रश्नों को लेकर बराबर बहस चलती रही है तथा स्त्री को परिभाषित करने के लिए विश्व-भर में अनेक वैचारिक आन्दोलन भी हुए हैं। भारत में भी स्त्री की पहचान को लेकर अनेक स्तरों पर विमर्श और संघर्ष चलता रहा है। स्त्री-अस्तित्व के लिए लगातार संघर्षरत सार्थक आन्दोलनों के बावजूद क्या स्त्रियों की स्थिति में कोई सार्थक तब्दीली आई है ? क्या पुरुष वर्चस्व, पुरुष-सत्ता की ईंट तनिक भी हिली है ? क्या वह उसी तरह से अपने अनुभवों, अनुभूतियों, विचारों प्रस्तावों, प्रेक्षणों और मन्तव्यों को उजागर कर सकती है जैसे पुरुष? क्या वह अपने सबल होने के बावजूद समाज में विद्यमान 'बेटे की कामना, को कम कर पाई है? ये सारे सवाल स्त्री-अस्मिता के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं और आज जब स्त्री-विमर्श के बहाने स्त्री की स्वतंत्र छवि को लेकर नये सिरे से विचार हो रहा है, तो इन स्थितियों पर बार-बार गौर करने की आवश्यकता है।

भारतीय नवजागरण के दौरान स्त्री की स्वाधीनता का प्रश्न तभी प्रखरता के साथ सामने आया है, जब भारतीय स्त्री अपनी स्वाधीनता की माँग करती हुई आगे आई है। इस दृष्टि से सन 1882 का वर्ष भारतीय स्त्री के जागरण के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। 'वुमेन राइटिंग इन इंडिया' से ज्ञात होता है कि 1882 में बंगाल की मोक्षदायिनी मुखोपाध्याय का बंगाल में कविता-संग्रह 'बनप्रसूता' प्रकाशित हुआ था जो अपने नाम से लेकर रचना-दृष्टि तक स्त्री की स्वाधीनता और आलोचनात्मक चेतना का प्रभाव था। उस संग्रह की एक कविता 'बंगाली बाबू' में बंगला के तथाकथित स्वतंत्र पुरुष समुदाय की प्रदर्शनप्रियता, खोखलापन, अंग्रेज़ों की नकल, दासता और पतनशील प्रवृत्तियों का पर्दाफाश किया गया है, साथ ही स्त्रियों के उद्धार के दावों पर तीखा व्यंग्य भी है। 1882 ई. में ही महाराष्ट्र की क्रान्तिकारी महिला 'ताराबा शिन्दे' की पुस्तक स्त्री-पुरुष तुलना' छपी थी, जिसमें स्त्री दृष्टि से महाराष्ट्र की पितृसत्तात्मक समाज-व्यवस्था, संस्कृति और पुरुषों की मानसिकता की तीखी आलोचना है। ताराबाई शिन्दे ने एक ओर स्त्रियों पर पुरुषों द्वारा लगाए गए तरह-तरह के आरोपों का उत्तर दिया है, तो दूसरी ओर पुरुषों के पूर्वाग्रहों, अन्यायों और अत्याचारों का विवेचन भी किया है। यद्यपि 19 वल़ सदी में हिन्दी क्षेत्र में नारी जागरण का रूप वैसा न था, जैसा बंगाल और महाराष्ट्र में था, फिर भी सन् 1882 में यही हिन्दी में भी एक पुस्तक छपी थी, जिसमें नारी के जागरण का स्वर अत्यन्त प्रखर है और उसकी आज़ादी की आवाज अत्यन्त बुलन्द। वह पुस्तक है 'सीमांतनी उपदेश'। इस पुस्तक को खोजकर 1988 में संपादित और प्रकाशित करने का काम 'डॉ. धर्मवीर' ने किया है। 'सीमांतनी उपदेश' जब पहली बार सन् 1882 में ये छपी थी तब उस पर लेखिका का नाम न था। इसलिए 1988 में डॉ. धर्मवीर ने उसकी लेखिका को एक अज्ञात हिन्दू माना था। लेकिन जून 1999 के 'हंस' में छपे अपने लेख सीमंतनी उपदेश की लेखिका कौन थी में सह संभावना प्रकट की है कि उस लेखिका का नाम 'भाड भगवती' हो सकता है जो 19वीं सदी के अंतिम दशक के पंजाब में एक लोकप्रिय लेखिका के रूप में प्रसिद्ध थी।1

क्रॉफ्ट को आधुनिक नारीवादी विचार का आरम्भिक प्रणेता माना जाता है। क्रॉफ्ट ने कहा है-''मैं यह नहीं कहती कि

भारतीय नवजागरण के दौरान स्त्री की स्वाधीनता का प्रश्न तभी प्रखरता के साथ सामने आया है, जब भारतीय स्त्री अपनी स्वाधीनता की माँग करती हुई आगे आई है। इस दृष्टि से सन 1882 का वर्ष भारतीय स्त्री के जागरण के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। 'वुमेन राइटिंग इन इंडिया' से ज्ञात होता है कि 1882 में बंगाल की मोक्षदायिनी मुखोपाध्याय का बंगाल में कविता-संग्रह 'बनप्रसूता' प्रकाशित हुआ था जो अपने नाम से लेकर रचना-दृष्टि तक स्त्री की स्वाधीनता और आलोचनात्मक चेतना का प्रभाव था।

पुरुष के बदले का वर्चस्व पुरुष स्थापित होना चाहिए। जरूरत तो इस बात की है कि स्त्री को स्वयं सोचने-विचारने व निर्णय करने का अधिकार मिले।[2] क्रॉफ्ट की यह आवाज़ दुनिया के विभिन्न सामाजिक राजनीतिक विचार धाराओं में प्रतिध्वनित हुई। 1949 में प्रकाशित 'सिमोन द वोउवा' की पुस्तक 'द सेकेण्ड सेक्स' भारी विभेद के उपायों का पहला दार्शनिक प्रयास था। सिमोन द बोउवा के अनुसार स्त्रियों की दयनीय स्थिति के लिए जो सामान्यतः स्वीकृत धारणा है वह सही नहीं है। इसके लिए जो जीव-वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक तथा आलथक स्पष्टीकरण दिये जाते है, नितान्त अस्वीकार्य हैं। वास्तव में स्त्रियों की दयनीय स्थिति के लिए जो कारण उत्तरदायी हैं, वे हैं- पुरुषों की मानसिकता, स्त्रियों को वस्तु-रूप समझना तथा स्त्रियों द्वारा अपनी इस प्रदत्त स्थिति को स्वीकार कर लेना। इन्हीं बातों को लेखिका अपनी पुस्तक में इस प्रकार दिखाती हैं- स्त्री और पुरुष का यह भेद परिस्थितिजन्य है। क्यों नहीं स्त्री अपने प्रेमी की अपेक्षा अधिक रोमाटिंग होती? ऐसा क्यों कहा जाता है कि औरत में निर्णय की क्षमता का अभाव है, वह केवल भावनात्मक स्तर पर जीती है ? यदि इतिहास में बहुत कम स्त्रियाँ जीनियस हुई हैं तो इसका कारण उसका स्त्री होना नहीं बल्कि, समाज है जो स्त्री की सारी अभिव्यक्ति को नियंत्रित करता रहता है, उसको प्रत्येक सुविधा से वंचित रखता है। बुद्धिमान से बुद्धिमान स्त्री की भी सार्वजनिक हितों के लिए आहुति दे दी जाती है। यदि उन्हें विकास का पूरा अवसर मिले तो ऐसा कोई भी काम नहीं जो वे न कर सके। दमनकर्ता हमेशा दमित की जड़ों को काटता रहता है ताकि वह बौना ही रह जाये। पुरुष जान-बूझकर स्त्री को बौना रखता है। स्त्री न देवी है, न राक्षसी। वह मानवीय है, जिसे समाज की फूहड़ प्रथाओं ने दासता में जकड़ कर रख दिया है।[4]

डॉ. नामवर सिंह अपने लेख 'मुक्त स्त्री की छद्मछवि, में स्त्री-पुरुष संबंधों को तीन भागों में बाँटते हैं- कानून, समाज और परिवार। रिश्तों को देखने के लिए कानून की अपेक्षा समाज को ये उदार बतलाते हैं-''स्त्री-पुरुष संबंधों पर हम तीन दायरों पर विमर्श कर सकते हैं। कानून, समाज और परिवार। कानून जिस नज़रिए से इस संबंध को देखता है, समाज उसके प्रति उससे कहीं अधिक उदार है। कानून के अनुसार बहु-विवाह अवैध है। परन्तु समाज में लोगों के जीवन में ऐसी स्त्रियाँ आती हैं कि कई बार उनके लिए दो या इससे अधिक विवाह करना आवश्यक हो जाता है।[5]

डॉ. नामवर सिंह की जो सबसे अटकने वाली बात है, तो यह है कि वे पुरुषवादी नजरिये से लेखकों के हिमायती हैं। उनका कहना है- ''पति-पत्नी के रिश्ते की मर्यादाओं का सभी लेखक निर्वाह करते आए हैं। निजी जीवन में कैसी भी स्थिति रही हो परन्तु साहित्य में उन्होंने पत्नी की गरिमा का ध्यान रखा है।''6 डॉ. नामवर सिंह जी स्त्रियों के आक्रामक रवैये को गलत मानते हैं। वह चाहते हैं कि स्त्री, पुरुषों को भला-बुरा न कहे किन्तु यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि आप साहित्य में चाहे जितनी ऊँची बातें कर लीजिए, व्यवहारिक या नैतिक जीवन में किसी गरिमा का ध्यान नहीं रखेंगे, तो स्त्री भी साहित्य को ही माध्यम बनाकर आप पर चोट करेगी। उपेन्द्रनाथ अश्क स्त्री के आक्रामक रवैये को सही मानते हैं। उनका स्पष्ट कहना है कि यदि स्त्री का पति काइयाँ या कपटी हो तो उसे लात मार दे, छोड़ दे उसे। वे अपने लेख ''आधी जीवन'' में कहते हैं-''एक बार सशक्त कथा-लेखिका और उसके पति में इतना झगड़ा हो गया कि वह संबंध टूटने को हो गया। मैंने उसके पति के सामने लेखिका से कहा- यह व्यक्ति एक नम्बरी झूठा, और काइयाँ है। तुम क्यों इसके पीछे पड़ी हो। यह अलग होना चाहता है तो उसे आज़ाद कर दो। भगवान ने तुम्हें इतनी प्रतिभा दी है, अपनी जिंदगी को लेखन के लिए अलपत क्यों नहीं करती।''[6]

अब बात आती है मुंशी प्रेमचंद की, तो हम देखते हैं कि प्रेमचंद के यहाँ विरोधाभास है। वह व्यवहार में तो नारी के साथ पुरुष सहयोग की बात करते हैं। कहीं-कहीं तो कर्म-क्षेत्र में नारी को पुरुष से ऊँचा भी दिखा देते हैं- मालती, मुन्नी, सुमन, धनिया आदि कहीं-कहीं पुरुषों से ऊँचा स्थान पा जाती हैं। किन्तु प्रेमचन्द सिद्धान्त में नारी की इस स्वाधीनता का विरोध करते हैं कि वह पुरुष के समकक्ष आ जाये। वह स्पष्ट रूप से कहते हैं कि यदि पुरुष के गुण नारी में आ जाएँ तो वह कुलटा हो जाए। वे भी सिद्धान्त रूप में नारी को देवी के ही रूप में देखना चाहते हैं- ''देवियो! जब मैं इस तरह सम्बोधित करता हूँ तो आपको कोई बात खटकती नहीं। आप इस सम्मान को अपना अधिकार समझती हैं, लेकिन आपने किसी महिला को पुरुषों के प्रति देवता

का व्यवहार करते सुना है ? उसे आप देवता कहें, तो वह समझेगा आप उसे बना रही हैं। आपके पास दान देने की दया है, श्रद्धा है, त्याग है। पुरुष के पास दान के लिए कथा है ? वह देवता नहीं है। स्त्री को पुरुष के रूप में, पुरुष के कर्म में रत देखकर मुझे उसी तरह वेदना होती है, जैसे पुरुष को स्त्री के रूप में स्त्री के कर्म देखकर.... । स्त्री पुरुष से उतनी ही श्रेष्ठ है जितना प्रकाश अंधेरे से। मनुष्य के लिए क्षमा, त्याग और अहिंसा जीवन के उच्चतम आदर्श हैं। नारी इस आदर्श को प्राप्त कर चुकी है।7

सभी पुरुष लेखकों की दृष्टि ऐसी नहीं है। यह बात अश्क जी के संबंध में देख सकते हैं। वह स्त्री को स्त्री की नज़र से देखने की कोशिश करते हैं। लेकिन अनुभूति का अन्तर तो रहता ही है जो केवल एक स्त्री ही अनुभव कर सकती है। यहाँ अश्क जी की दृष्टि में फर्क आ जाता है। इसी प्रकार रोहिणी अग्रवाल ने अपने लेख 'आकाश चाहने वाली लड़कियाँ' में अज्ञेय का पक्ष लेते हुए कहती हैं- न सही रेखा (नदी के द्वीप) शरीफ़ ज़ादी। शरीफ़ लोगों के ड्रांइग रूम में बैठकर उसकी चर्चा भी निषिद्ध है, लेकिन 'भवन' के साथ उसके दैहिक संबंध इतने खुले और पिछले तो नहीं, बल्कि दैहिक संबंधों से ज़्यादा जो बात असर डालती है, वह है दोनों की मानसिक अंतरंगता, प्लेटॉनिक प्रेम की प्रगाढ़ता और सामाजिक व्यवस्था की क्रूरता जो हेमंत जैसे समलैंगिकों के पल्ले बंधी रेखा जैसी स्वप्नशील स्त्रियों के जीवन को बंजर कर देती है। निरूपा, रेखा यदि जार-जार आँसू बहाती रहती तो उपन्यास का प्रभाव रेशा-रेशा बिखर जाता। वह टूटकर बिखरती नहीं, टूटकर एक नयी बढ़त लेती है जो जर्जर सामाजिक व्यवस्था के बरअक्स व्यक्तिगत, लेकिन मानवीय नैतिकता की मूल्य-प्रतिष्ठा करती है। सामाजिक मर्यादाओं का उल्लंघन करती है जो छिप कर नहीं, डंके की चोट पर। अज्ञेय के उपन्यास ''नदी के दीप'' को लेकर प्रश्न बहुत से उठाए जा सकते हैं कि विवाह ही करना या तो 'भुवन से क्यों न नहल्र। यदि विवाह-पूर्व संबंधों में रचे-बसे प्रेम को विवाह समाप्त कर देता है, तो विवाह जैसी संस्था की ज़रूरत ही क्या? रोहिणी अग्रवाल पुरुष और स्त्री की दृष्टि में समानता, दिखाते हुए कहती हैं- यदि 'मित्रों मरजानी', जैसी रचनाएँ पूर्ण रूप से महिला लेखन है तो 'नदी के द्वीप' को कहाँ रखेंगे आप? देह होते हुए भी देह के भूगोल से मुक्त रखकर स्त्री को मनुष्य की संज्ञा से विभूषित करने वाली हर रचना, महिला लेखन है। इसे मानने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए।8 नारी अब कानूनी तौर पर पहले से ज्यादा सुरक्षित है तथा आलथक रूप से भी स्वतंत्र सत्ता प्राप्त करती रही है। इन दोनों कारणों ने पति-पत्नी सम्बन्धों को बहुत ज़्यादा बदला है। अब विवाह की परंम्परागत संस्था के सामने प्रश्न चिन्ह खड़ा हो गया है। आज हर जगह यह संस्था परिस्थितिजन्य सन्तुलन माँग नहीं है। स्त्री विवाह संस्था के पक्ष में होते हुए भी उसे अपनी स्वतंत्र मान्यताओं के अनुकुल चलाना चाहती है। उसने अपना व्यक्तित्व प्राप्त किया और वह इसी जीवन-अवधि में सम्मानजनक शर्तो पर रहना चाहती है। किन्तु नारी के परिपूर्ण व्यक्तित्व को पुरुष अभी मन से स्वीकार नहीं कर पा रहा है। आज पुरुष भी स्वयं का काम चला औसत घर चाहता है, जो सामाजिक रूप से स्थायी ही परन्तु परंम्परागत रूढ़ि के बोध संयुक्त हो, पति-पत्नी सम्बन्धों की पवित्रता पुरुष स्वीकार करता है। परन्तु वह इस पवित्रता की केवल पत्नी से अपेक्षा करता है अपनी ओर से इस बारे में कोई आविश्वास पत्नी को नहीं देना चाहता। पति के इन्हीं विचारों ने पत्नी नामक धारणा को खण्डित कर दिया है और उनके सम्बन्धों में कहीं शून्य व्याप्त हो गया है।

राष्ट्रपति से लेकर गाँव के प्रधान पद को चलाने वाली महिला के स्वरों को ही शायद ग़ज़ल सम्राट दुष्यंत कुमार ने यह शब्द दिये हैं.

हमने तमाम उम्र अकेले सफ़र किया,
हम पर किसी खुदा की इनायत नहीं रही।

शोधार्थी, हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

सन्दर्भ-ग्रन्थ

1. राजेन्द्र यादव 'हंस' मासिक पत्रिका मार्च 2001, पृ. 172, 173
2. अमृतराय 'विचार और साहित्य' हंस प्रकाशन इलाहाबाद 1984, पृ. 83
3. सीमोन द बोउवार 'द सेकेण्ड सेक्स' अनुवाद, प्रभा खेतान ''स्त्री उपेक्षिता, सरस्वती प्रकाशन, दिल्ली 1999, पृ. 22
4. संपादक-कमला प्रसाद 'वसुधा' पत्रिका 'विशेषांक, पृ. 134, 135, 59, 60 (म. प्र.) भोपाल
5. वही, पृ. 516
6. वही, पृ. 517
7. वही, पृ. 518
8. अज्ञेय-'नदी के द्वीप' मयूर पेपर बैक्स, नोएडा- 2007- पांचवां संस्करण, पृ. 159

कहानी

खुशियों का घर

● हेमचंद्र सकलानी

अमर जी ने हाथ डालकर लैटर बॉक्स से डाक निकालते हुए एक सरसरी नजर से देखते हुए घर के अंदर प्रवेश किया। एक लिफाफे पर आदेश का नाम देख उन्होंने आवाज लगाई थी 'अरे आदेश तुम्हारा पत्र आया है।' 'अरे पापा मैं बाथरूम में हूं आप ही खोलकर देख लो' आदेश ने कहा था। आदेश के कहने पर उन्होंने लिफाफा खोलकर लैटर निकालकर पढ़ा तो खुशी से आदेश को आवाज लगायी 'अरे आदेश यूनिवर्सिटी से तुम्हारा एप्वायंटमैन्ट लैटर है। बधाई हो तुम्हें।' भागता हुआ चला आया था आदेश। पूरे घर में खुशी की लहर छा गई थी। इसी वर्ष अमर जी का रिटायरमैंन्ट था। उनकी सबसे बड़ी इच्छा यही शेष रह गयी थी कि आदेश की सर्विस लग जाये और बेटी रंजना और आदेश की शादी अपने सामने कर दी जाये। आदेश मिठाई लाने चला गया था और अमर जी और उनकी धर्मपत्नी खुशखबरी परिचितों और रिश्तेदारों को देने में व्यस्त हो गये थे। अपने पैसों से बनाये एक छोटे से घर में, एक छोटा सा लेकिन सुखी परिवार है अमर जी का, पत्नी दो बड़े समझदार बच्चे। सुखी परिवार इस लहजे में था कि सुख दुख में सन्तुष्टि और न लोभ लालसा, किसी भी प्रकार का लालच बिलकुल भी नहीं, जितना है उसमें ही सन्तुष्ट रहने की भावना, हर आने जाने वाले का हंसते मुस्कराते स्वागत या विदा करने की भावना, उनके परिवार की सुख शान्ति का प्रमुख कारण थे।

यूनिवर्सिटी उसी शहर में थी इस कारण मां जी पिताजी को छोड़कर दूसरी जगह जाने का दुख या उनकी चिन्ता में परेशान रहने जैसी कोई दूसरी बात भी आदेश के लिए नहीं थी। चरित्र, सभ्यता, संस्कृति, व्यवहार, शालीनता, तहजीब में उनके परिवार से सुंदर कोई अन्य उदाहरण नहीं था, ऐसा अड़ोसी-पड़ोसियों का मानना था। आदेश का दायरा सर्विस लगने के बाद से काफी बढ़ गया था। एक दिन प्रोफेसर गौतम और उनकी पत्नी बाजार में जब आदेश से मिले तो बड़ी गर्मजोशी से गौतम जी ने अपनी पत्नी का परिचय आदेश से और आदेश का परिचय अपनी पत्नी से कराया, तो जरा सी देर में गौतम जी की पत्नी की नजर में अपनी जवान बेटी के लिए आदेश छा गया था। उन्हें लगा अपनी बेटी के लिए वर तलाशने के दिन जैसे खत्म हो गये। बड़ी आत्मीयता से उन्होंने आदेश को घर आने का निमंत्रण दे दिया था। जिसे आदेश अस्वीकार न कर सका। गौतम जी को जब उनकी पत्नी ने अपने मन की बात बतायी तो उन्हें भी बात सही लगी। एक दिन गौतम जी आदेश को घर ले ही आये। दोनों ने आदेश का जोरदार स्वागत किया।"

"अरे बेटी मधु, जरा चाय वाय लेकर आओ, देखो प्रोफेसर आदेश आये हैं गत वर्ष ही एप्वायंटमैन्ट हुआ है इनका।'' कुछ देर बाद चाय की ट्रे लेकर सकुचाती हुई आयी थी मधु। ट्रे रखकर जाने लगी तो गौतम जी की पत्नी ने कहा 'अरे कहां जा रही हो जरा परिचय तो करवा दूं तुम्हारा' कहते हुए उन्होंने दोनों का एक दूसरे से परिचय कराया था। एक नजर आदेश ने देखा था मधु को। आधुनिकता में रंगी, पहली ही नजर में उसे अच्छी लगी थी, लगती भी क्यों नहीं सुंदर जो थी। तुरन्त उसने नजर झुका भी ली थी। सुंदरता और बातों का तरीका उसे बहुत अच्छी लड़की साबित कर रहा था। फिर तो दोनों का एक दूसरे के घर में आना जाना भी शुरू हो गया था।

एक दिन अमर जी ने आदेश से बातों बातों में पूछ ही लिया ''आदेश यदि मधु तुम्हें पसंद हो तो शादी की बात हम आगे बढ़ायें।'' आदेश तो जैसे प्रतीक्षा में ही था। पर कुछ देर रुक कर बोला ''नहीं पापा पहले रंजना की शादी हो जाये उसके बाद सोचूंगा।'' इसी वर्ष अमर जी सेवानिवृत होने वाले थे उनकी हार्दिक इच्छा थी कि उससे पहले आदेश की सर्विस लग जाये और दोनों की शादी हो जाये। रंजना के लिए भाग दौड़ कर भी रहे थे। बहुत अमीर सम्पन्न, बडे अधिकारी जैसा कोई लोभ भर उन्हें नहीं था, बस चाहते यही थे कि लड़का स्वभाव, आचार-विचार का अच्छा हो, जहां खुश रह सके। जिस घर में बेटी जाये उस घर में सुख, शांति का वास हो।

कुछ महीने के प्रयास के बाद उन्हें अपनी हैसियत का मध्यम वर्ग का त्रिपाठी परिवार मिल ही गया। बेटी की शादी हो चुकी थी और अपने बेटे अशोक के लिए बहु तलाश ही रहे थे जो भारत
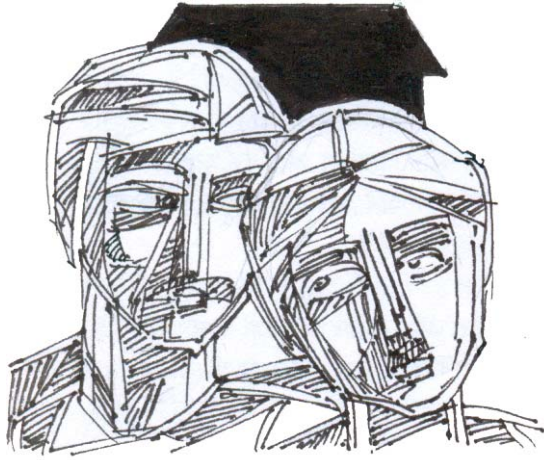
संचार निगम में कार्यरत था। अमर जी ने जब अपने मन की बात रंजना को बताई तो वह बोली ''नहीं पापा मुझे नहीं करनी शादी। पड़ोस में गुप्ता अंकल आंटी कितना लड़ते हैं आपस में और वो वर्मा जी के घर में भी रात दिन लड़ाई झगड़े मारपीट, चीखने चिल्लाने की आवाजें आती रहती हैं।" पर किसी तरह बाद में रंजना को तैयार कर ही लिया था। घर से बेटी को विदा करने से पहले अमर जी ने बहुत समझाया था बेटी को कि 'अब तुम्हें वहां अपना नया घर बसाना है। हजारों वर्षों से समाज की यह परम्परा रही है कि लड़की को दूसरे घर के लिए विदा होना ही होता है। अब वही तुम्हारे माता पिता हैं। अपने पति का सम्मान, अपने सास ससुर का सम्मान तुम्हारा पहला कर्तव्य है। उस घर के लोगों को अपने अनुसार एडजस्ट करने की कोशिश न करना, बल्कि उनके साथ अपने को एडजस्ट करना है। उनके सुख दुख तुम्हारे सुख दुख होने चाहिये इसी में तुम्हारी और उस घर की खुशी होगी। घर को घर समझना होटल की तरह नहीं।' 'पापा आप निश्चिंत रहें आपको कभी शिकायत सुनने को नहीं मिलेगी' कहा था रंजना ने।

रंजना की शादी के बाद मधु और गौतम जी का अमर जी के घर में आना जाना काफी बढ़ गया था। आदेश की सज्जनता, आचार, विचार, व्यवहार, आचरण ने उन्हें जैसे बांध कर रख दिया था। उन्हें लग रहा था इस परिवार में उनकी पुत्री बहुत सुख, शांति, और आराम के साथ रहेगी। गौतम जी की पत्नी बातें बनाने में एक्सपर्ट थी। महिला कर्तव्यों की नहीं, अधिकारों की जबर्दस्त हिमायती थी। इस पर वक्तव्य देने बैठतीं तो एक घंटा यूं ही गुजर जाता, और गौतम जी बेचारे धीरे से हां हूं करते रहते। एक दिन अमर जी से रहा नहीं गया तब उन्होंने कह ही दिया ''बहन जी मेरी धर्म पत्नी ने इस घर में कभी अपने अधिकारों की बात नहीं की। उसने अपना सारा जीवन अपने कर्तव्यों को निभाने में इस तरह लगा दिया जैसे कर्तव्य ही उसके अधिकार हैं। और सच भी है अधिकार उसी के होते हैं जो अपने कर्तव्यों कोई ईमानदारी से निभाता हो। इसी कारण मुझे अपने अधिकारों के बारे में कभी सोचने का अवसर ही नही मिला और मै यह मानता रहा जैसे सारे अधिकार ही उसके हैं।" गौतम जी की पत्नी का चेहरा तब देखने लायक था। अमर जी को गौतम जी के अधिकतर चुप रहने का कारण तब समझ में आया। जल्दी ही वह दिन भी आया जब आदेश और मधु की शादी हुई। दोनों पति पत्नी अपना सामान दिखाते बड़े प्रसन्न और खुश नजर आ रहे थे। मगर अमर जी उनकी पत्नी और आदेश को सामान से जैसे कोई मतलब ही नहीं था। वे सब अपने परिवार के भविष्य की खुशियां इस शादी के पीछे देख रहे थे।

कुछ दिनों तक सब सामान्य चलता रहा, जैसा कि भारतीय परिवारों में होता है। मगर एक वर्ष भी नहीं हुआ था कि मधु को उस परिवार में सास ससुर में, आदेश में खामियां ही खामियां नजर आने लगी थीं। वह परिवार जहां आपसी प्रेम, स्नेह, आदर, सम्मान जिसका गहना था धीरे धीरे उस घर में इन सब की कंगाली नजर आ रही थी। मधु का सास, ससुर ही नहीं आदेश के प्रति भी व्यवहार बहुत बदल गया था। हंसी, खुशी से भरपूर उस घर में उदासी पसरी नजर आने लगी थी। किसी भी कलह से बचने के लिए सबने आपस में बोलना चलना छोड़ दिया। सुबह की चाय नाश्ते से लेकर रात के खाने तक का सारा ढर्रा, अपने मन से अपने लिए के कारण अस्त व्यस्त हो गया था। किसकी क्या इच्छा है किसको क्या परेशानी है, से किसी को कोई मतलब नहीं रह गया था। यहां तक कि आदेश से भी बस जरूरत भर की बात होती थी, सास ससुर से तो ना के बराबर।

एक दिन रंजना का फोन आया ''भाभी कुछ दिन के लिए मेरे पास आ जाओ कुछ चेंज हो जायेगा। मधु जैसे इंतजार में ही थी कि कब इस घुटन और दुःख भरे वातावरण से छुटकारा मिले कुछ समय के लिए। अगले दिन मुंह फेर कर वह आदेश से बोली ''रंजना का फोन आया था, दो तीन दिन के लिए मुझे बुला रही है। आज मैं उसके यहां जा रही हूं।'' '' ठीक है चली जाओ।'' घीरे से आदेश ने कहा। रंजना को फोन कर उसने बता दिया था कि शाम को पहुंच रही हूं। शाम को जैसे ही उसने मकान की काल बेल बजाई, कई कदमों की आवाजें एक साथ उसे सुनाई पड़ी थीं। दरवाजा खोलते ही रंजना, उसकी सास, उसके ससुर ने बड़ी गर्मजोशी से हंसते मुस्कराते उसका स्वागत किया। इतनी आत्मीयता भरे स्वागत की उसने कल्पना भी नहीं की थी। ''कैसी हो, कमजोर हो गयी हो, अपना ख्याल नहीं रखती, घर में सब कैसे हैं ? ''जैसे अनेक प्रश्न उस तरफ से उठे थे। इतने प्रश्न, अपने सम्बंधों के प्रति इतनी चिन्ता, इतनी उत्सुकता देख वह चौंक पड़ी थी। रंजना की सास बोली ''रंजना तुम मधु के साथ बैठकर गप्पें लड़ाओ मैं चाय बनाकर लाती हूं.... ।''

''नहीं मां जी आप बैठ कर इसके साथ बात करो, चाय मैं बनाकर लाती हूं, पापा जी आप भी इधर आ जाओ'' कह कर वह रसोई मे चली गयी थी। तभी कॉल बेल फिर बज उठी, रंजना दौड़ती हुई दरवाजा खोलने चली गई, उसे पता था यह समय अशोक के आफिस से आने का है। उसके हाथ से बैग लेते बोली ''आज थोड़ी देर कर दी आपने '' बड़े प्रेम से पूछा था उसने। ''हां थोड़ा देर हो गयी रास्ते में जाम की वजह से'' उत्तर दिया था अशोक ने। ''आप कमरे में बैठो देखो मधु आयी हुई है। आपके लिए वहीं चाय लाती हूं।'' रंजना द्वारा अपने पति का इतना आत्मीयता भरा स्वागत देख वह सोच में पड़ गयी थी। ''क्या सोच रही है मधु ?'' चाय सामने रखते पूछा था रंजना ने। चाय के साथ हंसी ठिठोली, एक दूसरे के प्रति मान सम्मान, आदर, एक दूसरे की भावनाओं का ख्याल रखते चलती रही। बहुत दिनों बाद हंसने का अवसर आया था जिस कारण आज मधु बड़ा हल्कापन महसूस कर रही थी।

सुबह जब सब सो रहे थे, चाय लेकर रंजना सभी को जगा रही थी। साथ ही साथ पूछती जा रही थी मम्मी आप नाश्ते में क्या लोगे, पापा आप नाश्ते में क्या लोगे, आप आफिस लंच के लिए क्या लेकर जाओगे" पूछते पूछते वह थक भी नहीं रही थी। सब का हंसते हुए एक ही उत्तर था ''अरे रंजना जो बना दोगी वही ले लेंगे तुम परेशान मत हो।''

अशोक को आफिस जाने के लिए तक दरवाजे तक छोड़ने आयी थी, साथ साथ याद दिला रही थी पर्स रख लिया है, ड्राईविंग लाइसेंस रखा या नहीं। फिर शाम को आते समय भी दरवाजे पर उसका स्वागत करती थी।

''दीदी आप कैसे इतना सब कर लेती हो ?'' रंजना के हाथ से चाय लेते पूछा था मधु ने रंजना से।

हंसते हुए रंजना ने कहा ''मधु सच बताऊं मेरी सोच, मेरे ख्याल ही कुछ दूसरी तरह के हैं। मेरा स्पष्ट मानना है कि जो लड़की अपने पति, अपने, सास-ससुर का आदर सम्मान न कर सके उसे शादी ही नहीं करनी चाहिये और जो सास ससुर, बेटा घर की बहु को अपनी बेटी की तरह न रख सकें उस लड़के को भी शादी नहीं करनी चाहिये। शादियां घरों को जोड़ने के लिए होती हैं तोड़ने के लिए नहीं। घर हो तो खुशियों का हो वरना....।'' थोड़ी देर ठहर कर बोली ''अरे भाभी सैकड़ों वर्षो से परिवार में समाज में ऐसा ही होता रहा है। जब भी हंसके कोई कार्य करती हूं तो सभी मेरे साथ खड़े रहते हैं, सहयोग करते हैं अब हंसके कर लो या मुंह फुलाकर बैठे रहो कुछ न करो। जब अपना परिवार है तो अपने परिवार की खुशियों के लिए क्या नहीं करना चाहिये, ये तो अपना काम है इसमें क्या ना नुकुर करनी।'' साथ साथ कह रही थी ''पापा आपको डाक्टर के पास जाना है आज दस बजे याद है ना?'' ''हां हां याद है बेटी।''

''अरे हां मधु जब एक औरत एक अच्छी मां हो सकती है, एक अच्छी बहन हो सकती है, एक अच्छी बेटी हो सकती तो भला एक अच्छी बहु, एक अच्छी सास क्यों नहीं हो सकती। यही प्रश्न मुझे हमेशा मथता रहा है।'' मन ही मन सोच रही थी मधु मेरे घर में जब भी कोई कुछ कहता वह उल्टा जबाब देती थी। हमेशा तनाव रहता था किसी की किसी से बात चीत नहीं होती थी कितना बोझिल हो गया था घर का वातावरण। कौन है इसके लिए दोषी? उसे लग रहा था जैसे उसकी उंगली उसी की ओर उठ रही थी। सच भी है, मैने ही उस घर में कब किसी का ख्याल रखा, कब किसी को मान सम्मान, आदर दिया। फिर मुझे कैसे उस घर में जो मेरा अब अपना था, वही सब कैसे कोई मुझे देता। उसे लग रहा जैसे उसी के कारण उस घर की यह हालत हुई। सोचते हुए वह अपना बैग ठीक करने लगी थी। ''अरे ये क्या कर रही हो कल ही तो आई थी। तीन चार दिन रुकना था तुम्हें।' ''नहीं दीदी आधुनिक सोच ने मेरा दिमाग खराब कर दिया था। आपके परिवार को आपको देखकर मुझे पता चला परिवार की खुशियों के लिए ही नहीं अपनी खुशियों के लिए भी परिवार के सदस्यों का आदर, सम्मान, अच्छा आचरण, उच्चारण पहली शर्त होती है, मैं अपने आप को अब पूरी तरह बदल चुकी हूं, कहते हुए उसने अपना बैग उठा लिया था।

कुछ दिनों तक सब सामान्य चलता रहा, जैसा कि भारतीय परिवारों में होता है। मगर एक वर्ष भी नहीं हुआ था कि मधु को उस परिवार में सास ससुर में, आदेश में खामियां ही खामियां नजर आने लगी थीं। वह परिवार जहां आपसी प्रेम, स्नेह, आदर, सम्मान जिसका गहना था, धीरे धीरे उस घर में इन सब की कंगाली नजर आ रही थी। मधु का सास, ससुर ही नहीं आदेश के प्रति भी व्यवहार भी बहुत बदल गया था। हंसी, खुशी से भरपूर उस घर में उदासी पसरी नजर आने लगी थी। किसी भी कलह से बचने के लिए सबने आपस में बोलना चालना छोड़ दिया।

1/240 विद्यापीठ मार्ग विकासनगर, देहरादून।
मो. 094129 31781

कहानी

किरचों की खेती

● चांद 'दीपिका'

प्रतिपल पूर्णमाशी के चंद्रमा की भांति प्रकाशित, खिलखिली, पापा की ज़िंदगी में अमावस का चोर, न जाने कौन सी खिड़की फलांग भीतर आकर प्रविष्ट हो गया था। घर में रुपया छप्पर फाड़ कर बरस रहा था। पर पापा की सांसें थीं कि प्रतिपल घुटती जा रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि यदि समय रहते कुछ न किया गया तो पापा से हाथ धोते (वंचित) अधिक समय नहीं लगेगा। देखने में पूर्व की भांति पापा दुबले पतले नहीं रहे थे। शरीर के भरते ही अमीरी की प्रतीक अच्छी खासी गोगड़ (तोंद) निकल आई थी। कपोलों पर उगते सूर्य की लालिमा उतर आई थी। परंतु पलकों की ओट से झांकते दो ईश्वरीय शमादान न जाने क्यों अपनी आभा खोते जा रहे थे। भूले से चारू की दृष्टि पापा के नेत्रों से जा मिलती तो उसके सारे शरीर में कंपन होने लगता। निपट अंधकार से भरे उन तहखानों से बाहर का मार्ग ढूंढ पाना उसके लिए दुश्वार हो जाता।

अनेक बार चारू के मन में आया, वो पहले वाली झालरदार सफेद फ्रॉक वाली गुड़िया बन पापा के कंधों पर झूलकर उनसे पूछे- पापा, आप चुपचाप क्यों रहते हैं! प्रेम कॉलोनी के कल्पवृक्ष के इस बड़े से बंगले में रहकर भी आपको मानसिक शांति क्यों नहीं मिल रही? रोहित, सुशांत, वैभव के भविष्य की चिंता आपको थी। रोहित सुशांत यदि मेरिट लिस्ट में नहीं आए तो क्या हुआ? धन-दौलत की सीढ़ी लगा दोनों डॉक्टर-इंजीनियर बन गए। वैभव पढ़ न सका उसे आपने अपना बिजनैस पार्टनर बना पैरों पर खड़ा कर दिया। नकल मरवाकर भी आपकी यह बेटी जब पास न हो सकी तो आपने बोर्ड के एक क्लर्क की मुट्ठी गर्म कर अच्छे नंबरों से इसे भी पास करवा दिया। कॉलेज प्राध्यापक की पोस्ट के लिए हजारों उम्मीदवार परीक्षा हेतु बैठे थे। एक सौ से अधिक उम्मीदवार साक्षात्कार के लिए बुलाए गए थे, पर आपके प्रभाव के कारण कॉलेज की प्रोफेसरी सबको धत्ता बता मेरी ही झोली में आ गिरी।

आजकल सत्ता की भूख बड़ों-बड़ों की चमक उठी है। लोग पार्टी का टिकट प्राप्त करने हेतु दबाव, मारपीट, दलबदल की राजनीति कर रहे हैं। गुंडे-बदमाश, चोर उचक्के, डाकू, भ्रष्ट, हिस्ट्री शीटरअपराधी तक बड़े-बड़े ओहदों पर बैठे ऐश किए जा रहे हैं। पापा, आप नेता क्यों नहीं बन जाते? आपकी चुप्पी मुझसे और अधिक झेली नहीं जाती। पापा प्लीज़ मुझे बताइए आपको क्या दुःख है?

दिन-रात चारू की आंखें पापा के तरले-मिन्नतें करती रहती। न आंखों को शब्दों का वेस प्राप्त होता अैर न ही पापा के दिल पर लगा मजबूत ताला उसके लाख सिम-सिम कहने पर खुल पाता।

पापा सदैव चुपचाप उखड़े तो नहीं थे। एक वो जमाना भी था कि जब उनके पैरों का हल्का-सा खड़ाक सुन पूरे मुहल्ले के बच्चे 'बाबू जी आ गए, बाबू जी आ गए' की हर्ष से भरी आवाजें करते सारा मुहल्ला सिर पर उठा लेते थे। गली में चारपाई बिछा के बैठी स्त्रियां स्वेटर बुनना छोड़ सिर ढंक उनके स्वागत में खड़ी हो जाया करती थीं। किसी के साथ परिहास, किसी के लिए आदर के दो बोल। हंसी के अनार फुलझड़ियां बिखरते पापा कहीं के कहीं निकल जाया करते थे। कभी कोई नज़र न आता तो स्वयं ही आवाजें मार पूरा मुहल्ला एकत्रित कर लेते- आप सारे कहां छिप गए हो? शीघ्र चले आओ आपका पाागल भाई आ गया है।

उफ! सोने जैसे दिन और चांदी भरी बातें कहां खो गईं। बनारसी चाचा ने पता नहीं कौन-सा मंत्र फूंका था। सीधे-सादे पापा कैसे बदल गए थे। अच्छी खासी बैंक में कैशियर की नौकरी थी। मिनटों में छोड़ आए। बिजनेस का चस्का एक बार जो लगा फिर छूटने में न आया।

प्रारंभ में मांजी ने कड़ा विरोध किया। परंतु पापा के आगे बढ़े पग पीछे मुड़ न सके। जलते कुड़ते उन्होंने चारपाई पकड़ ली। प्रेम कालोनी की रंगीनियों ने जादू की छड़ी घुमा चारू को भी कठपुतली बनाकर रख दिया था। मस्त मलंग की भांति उसकी तूफानी ज़िंदगी में ठहराव कब आया और कब घर-गृहस्थी का उत्तरादायित्व उसके कोमल कंधों पर आ पड़ा, इसका उसे आभास तक न हुआ।

एक दिन गजब हो गया। पापा और वैभव डाइनिंग टेबल पर बैठे खाना खा रहे थे। चारू नौकर से गरमा-गरम चपातियां लेकर उनके लिए लाई थी। पहला कौर मुंह में धरते ही पापा के चेहरे का रंग बदल गया था। उन्होंने घूर कर वैभव की ओर देखा था। जो

इस सबसे अनभिज्ञ रह रोटी खा ही रहा था कि उसके चेहरे का रंग लाल हो गया।

"यह आटा किसने लाया है?" उसने गर्ज कर कहा।

उसकी आवाज सुनकर नौकर रसोई से भागता आया।

"जी, बाजार से मैं लाया था।"

"देख के नहीं ला सकता था।"

"दुकानदार कह रहा था- यह सबसे बढ़िया मिल का आटा है। आजकल सारा शहर यही आटा खा रहा है।"

वैभव ने क्रोध भरी दृष्टि नौकर पर डाली। फिर कामकाज का बहाना शीघ्र ही खिसक गया। पापा की कुर्सी भी खाली पड़ी थी। बिना खाए न जाने कहां चले गए थे। चारू का मूड कई दिन ऑफ रहा। यह और बात थी कि आटे की वो बोरी उस सांझ स्टोर में नजर न आई और न ही नौकर का कोई अतापता लगा। नौकरों की फौज होते हुए भी वैभव घर का सारा सामान स्वयं ले आया था। चारू के उलाहने पर वो हंस दिया था- तुम तो बात का बतंगड़ बना देती हो चारू। नौकर की मां बीमार थी उसे छुट्टी दे गांव न भेजता? दूसरा नौकर शाम को भेज ही तो दिया था। व्यापार में अपना आपा नहीं चलता हम लोगों का ध्यान न रखेंगे तो हमारी बात कौन पूछेगा।

पापा की खामोशी तले मां जी के जीवन का गुलाब मुरझाने लगा था। डॉक्टर पर डॉक्टर बदले जा रहे थे। एक अन्य डॉक्टर साहिब मां जी को टीका लगाने ही वाले थे कि पापा चीख पड़े- नहीं। यह नहीं...। उनका कांपता हाथ लगते ही सिरिंज और टीका फर्श पर जा गिरे थे। वैभव घर पर ही था। भाग कर नया इंजेक्शन ले आया था। डॉक्टर जाने के पश्चात् पापा चिरकाल तक बड़बड़ाते रहे थे। यह मां जी की बड़ते रोग का आघात था अथवा...

सांझ बड़ी उदास थी। अपने बैडरूम में जाते पापा की पीठ चारू ने देखी थी। देवी के कैलेंडर के समक्ष हाथ जोड़ माथा टेक रो-रो प्रार्थना किए जा रहे थे- हे देवी माता, हे जननी जगदंबे मां मेरे अपराधों की सजा मेरी निर्दोष पत्नी को मत देना। माता दया करो। दया करो। मैं सब कुछ छोड़ दूंगा।

सांझ तो सांझ थी रात उससे भी कहीं अधिक भ्यानक थी। डरावने स्वप्न आकर चारू को भयभीत करते रहे। कल्पवृक्ष के इस बंगले में आकर क्या मिला... सोचते उसका सिर फटने लगा।

पापा के कमरे से मंद स्वर आ रहे थे कहीं मां जी तो नहीं चल...।

अपने विचारों से भयभीत हो चारू पापा के कमरे की ओर भागी। द्वार हल्का सा खुला हुआ था। उसने भीतर झांकर कर देखा- वैभव कह रहा था- इतने वर्षो के पश्चात आप अब सोच रहे हैं।

"मैं क्या करता बेटा। यह सब न करता तो बिना मेरिट तेरे बड़े भाइयों का कैरियर कैसे बनता। तेरी बहन कैसे स्थापित हो पाती। यह शान-शौकत कहां से आ पाती। धोखेधड़ी के बोझ तले बेटा मैं टूट चुका हूं। अब यह व्यापार बंद करना ही पड़ेगा।"

"पिता जी...।"

वैभव की बात पूरी होने की प्रतीक्षा किसने की थी। मुंह अंधेरे कोठी पर पुलिस रेड हो गया था।

नोटों भरी अटैची, ब्लैंक चेक का लालच, सस्पेंड करवाने की धमकियां सब धरी रह गई थीं। नए आए पुलिस इंस्पेक्टर ने हंस कर कहा था- सब कुछ सील हो गया है। पालतू गुंडों की आस न करना सबके सब पहले ही जेल भेज दिए गए हैं।

वैभव ने कुछ स्थानों पर फोन किए थे पर पराई आग में हाथ जलाने कौन आगे आता।

पुलिस वैन में बैठते वैभव का सिर झुका हुआ था। पापा ने उसके सिर पर हाथ धर कहा था- "चारू अपनी मां जी का ध्यान. .."

पापा ने किरचों की खेती की थी। चारू का अंग-अंग किरचों से लहूलुहान हो चला था। रोहित, सुशांत अपनी जिंदगी में मस्त थे। रेड का समाचार उन तक पहुंच भी पाया था या नहीं। मां जी अस्पताल में सीरियस थी। मालूम नहीं वो जीवित थी भी या नहीं।

मां जी का ध्यान आते ही चारू महानगर की विशाल सड़क पर बगटुट घोड़े की भांति दौड़ पड़ी।

गृह क्रमांक 323, कोटली कालोनी (रेहारी), जम्मू तवी, जम्मू-कश्मीर-180 005, मो. 0 94196 94912

कहानी

वह अकेली थी

● डॉ. जयकरण

दस बारह दिन पहले ही उसने पांचवी कक्षा में दाखिला लिया था। न किसी से बातचीत न किसी के साथ खेलना कूदना। अपने में मौन, उदास, गुमसुम खोया रहना। पाठशाला के दूसरे बच्चे जहाँ आधी छुट्टी या खाली पीरियड में उछल-कूद शरारतें करते वह टुकर -टुकर सबको देखती रहती। उसका छोटा भाई उसके पास जा कर बैठ जाया करता, जो अभी मात्र पहली कक्षा में दाखिल हुआ था। परन्तु वह इस सब विरह से दूर था। उसका यह खोयापन ही अध्यापिका को अपनी ओर आकर्षित कर लेता। वह कभी उसकी पीठ थपथपाती कभी उसके सिर पर हाथ फेरती। धीरे-धीरे कुरेद कर पूछने पर अध्यापिका को मालूम हुआ कि यह बच्चे अपनी माँ के साथ नाना- नानी के पास रहते हैं। "पापा अपने घर में रहते हैं, जो मम्मी से तलाक लेने वाले हैं। "अबोध छात्रा ने जैसा घर पर सुन रखा था वैसा ही अपनी अध्यापिका को बता दिया था।

तलाक शब्द सुनते ही अध्यापिका के शरीर पर जैसे बर्फ की सिल्ली रख दी हो। उसकी नस नस जमने लगी थी। साथ बैठा नन्हा बालक भी सुनी निगाह से अपनी अध्यापिका के चेहरे की ओर देख रहा था।

'बेटा तुम्हे पता है तलाक क्या होता है?' अध्यापिका ने छात्रा की पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछा था। केवल न की मुद्रा में सिर हिला कर छात्रा ने उत्तर दिया था।

कुछ देर चुप रहने के बाद छात्रा फिर बोली, "लेकिन हर बार जब मम्मी शिमला जाती है तो हमारे लिए बहुत सारा चिजु लाती है।"

अबोध छात्रा ने बड़ी सादगी व भोलेपन से अध्यापिका के सवाल का जवाब दिया था। हृदय में कम्पन उत्पन्न करने वाली बच्चों की व्यथा सुन कर अध्यापिका का गला रुंध गया। आखिर इन अबोध बच्चों को 'तलाक' शब्द का मतलब क्या पता? उन्हें क्या पता कि उनके पापा उनकी मम्मी को छोड़ रहे हैं? उनके पिता विरह वेदना का जो तोहफा माँ को देने जा रहें हैं वह अविस्मरणीय था।

गांव में आई बारात में बाराती बनकर आए किशन के साथ मंडप पर सत्या की बातचीत हो गई थी। दोनों को एक दूसरे के विचार पसंद आ गए थे। फिर भी उन्होंने अपना पूरा ध्यान अपने-अपने मित्र के दाम्पत्य जीवन में सुख शांति पर केंद्रित किया हुआ था। नवबधू को संकल्प देती बार अक्सर माता -पिता भावुक होते रहे , यह भावुकता सत्या और किशन के चेहरों पर भी झलक रही थी। दोनों ने एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो कर भी अपने भाव छुपा रखे थे। मंडप पर दोनों अपने बारे में कम तथा अपने -अपने मित्रों के बारे में अधिक चर्चा करते रहे। देखते -देखते विदाई के समय तक सत्या ने किशन को अपना पति मान लिया था। दोनों ने भविष्य में भी आपसी संपर्क बनाये रखने के वायदे करते हुए एक दूसरे से विदा ली। हर रोज मोबइल पर दोनों में बातचीत का सिलसिला चलता रहा। कभी कभार मिल भी लिया करते।

आठवीं की परीक्षा पास करने के उपरांत किशन ने नौवीं कक्षा में प्रवेश लिया। घर से किशन रोज स्कूल के लिए तैयार हो कर जाता। स्कूल पहुँचने से पहले ही रास्ते में छह आठ लड़कों की टोली वीरान जंगल की ओर मुड़ जाती। दिन भर वहां खूब ताश कूटी जाती, बीड़ियां फूंकी जाती। रोज स्कूल वर्दी में जाते थे। लेकिन इन्होंने पहले ही घर से ले जा कर बाजार में दूसरे कपड़े रखे हुए थे। सप्ताह में एकाध बार वहीं से घरेलू कपड़े पहन सिनेमा देखने भी निकल जाते। किसी को पता भी नहीं चलता कि ये किसी स्कूल के बच्चे हैं।

चार बजते ही अपने -अपने बस्ते संभाल सभी रास्ते पर आ जाते। अपने गांव की लड़कियों को झाड़ियों से छुपछुप कर देखते रहते। जैसे ही लड़कियां आगे निकल जाती उनके पीछे -पीछे खुद भी चल पड़ते। मानो दिन भर पढ़ाई करके स्कूल से छुट्टी के बाद घर की ओर आ रहे हों। एकाध बार लड़कियों ने पूछने की कोशिश भी की परन्तु एक भी मानने को तैयार नहीं था कि वे आज स्कूल में नहीं थे। सभी स्कूल में दिनभर की घटी सारी घटनाएँ मनघड़ंत सुना कर भोली -भाली लड़कियों को

संतुष्ट कर देते ।

पड़ोस से नियमत स्कूल जाने वाले बच्चों के पास प्रतिदिन स्कूल से इनके गैर हाजिर रहने के सन्देश व चिट्ठियां भेजी जाती । बार-बार सूचित करने पर स्कूल से अनुपस्थित रहने का जब सन्तोषजनक जवाब नहीं आया तो एक दिन अन्य बच्चों के साथ-साथ किशन का भी स्कूल से नाम कट गया ।

पिता जी का शनिवार को ही घर आना हो पाता था। बेचारी माँ को बेटे की हरकतों का पता भी नहीं चल पाया। घर पर जब पता चला कि बेटे ने स्कूल जाना बंद कर दिया है तो गुस्से में आकर पिता ने उसका जेब खर्च बंद कर दिया ।

'जिस काम में लगा रखा था जब वह भी सही ढंग से नहीं होता तो अपना कमाओ खाओ । 'नशा- खोरी, आवारागर्दी, सिनेमा जैसे नवाबी शौक उसने पाल रखे थे । जिन्हें पूरा करने के लिए रुपयों की जरूरत होती थी ।

घर से मिलने वाला जेब खर्च जब बंद हुआ तो पैसे -पैसे के लिए दोस्तों के आगे हाथ फैलाने की नौबत आ गई थी। उस समय गांव में एक करियाला पार्टी बहुत प्रसद्ध थी। किशन ने उस पार्टी के मुखिया से संपर्क किया और अपने लिए छोटा- मोटा रोल मांग लिया। करियाला पार्टी में शामिल होते ही उसके ऐब और भी बढ़ गए । आज तक तो वह बीड़ी, सिगरेट ,भांग तक ही सीमित था परन्तु अब शराब भी उसके दैनिक जीवन से जुड़ गई थी ।

"अब तो इसका ब्याह कर अपने सिर से जिम्मेदारी निपटा कर ही चैन मिलेगी। छोटे वाला लड़का पढाई में अच्छा चल रहा है । फिर बड़े वाले के रास्ते किसने रोके थे? उसे भी तो रोज जेब खर्च देकर घर से स्कूल भेजते थे। यह जब तक चाहेगा पढ़ लेगा। कल उसका भी पढाई से मन भर जाये तो उसका भी सोचेंगे।

फिलहाल तो बड़े की चिंता है । न तो ज्यादा पढ़ा लिखा और न ही इतनी बड़ी नौकरी । अपनी मर्जी से इसने यदि किसी को पसंद किया है तो हमारे लिए इससे अच्छी बात क्या हो सकती है? वैसे भी कल अगर कहीं रिश्ता मांगने जायेंगे, लड़की वाले सबसे पहले लड़के की पढ़ाई -लिखाई व कहाँ एडजस्ट है जैसे अनेक सवाल ही तो पूछेंगे । जब अपना सोना ही किसी काम का न हो तो सिर झुका कर ही रहने में भलाई है ।"

"इसने कह दिया और तुम इसके बहकावे में आ कर मान गई। कौन देगा इसे अपनी लड़की? फिर आजकल लड़कियां सातवीं आठवीं पढ़ी हुई मिलती भी कहाँ है ? लड़के पढ़े या न पढ़े, लड़कियां एम.ए., ग्रेजुएट से नीचे कोई नहीं मिलती । कौन बेवकूफ होगी जिसने आँखें बंद करके इस नालायक को हाँ कह दिया होगा? मुझे तो विश्वास नहीं हो रहा । कोई अनाथ है या ...? "

"ऐसा कुछ भी नहीं। दोनों एक शादी में मिले थे। सुना है लड़की प्लस-टू के पेपर दे चुकी है। कम से कम अपने बच्चों को तो अच्छी तरह पढ़ाएगी । मजेदार बात तो यह है कि ज्यादा लम्बा परिवार भी नहीं है । नहीं तो लम्बी रिश्तेदारी में बरतन-चारे से ही छुटकारा नहीं मिलता। माँ-बाप के एक लड़का और वही अकेली लड़की है । भगवान बस एक बार दोनों की कुंडली मिला दे । शादी तो हम भी तभी करेंगे यदि कुंडली में गुणों का सही -सही मिलान होगा । दोनों अपना कमाए और खाए । कल को बच्चे होंगे उनकी अच्छी तरह परवरिश करें। हमारे पास भगवन का दिया बहुत है। इतनी सुंदर-सुशील बहू पा हम धन्य हो जायेंगे ।"

धीरे-धीरे बात दोनों परिवारों के बीच पहुँच गई। लड़के वाले रिश्ते से खुश थे । दूसरी ओर से लड़की वालों ने उस परिवार से रिश्ता पक्का करने में कोई उत्सुकता नहीं दिखाई । वे लड़के एवं खानदान के बारे में जानकारी जुटाना चाहते थे ।

"केवल पिता का सरकारी कर्मचारी होने या अच्छा खान-दान होने से कोई फर्क नहीं पड़ता । आखिर माँ-बाप कितने दिन रहेंगे? आगे चलकर पति-पत्नी को ही तो गृहस्थी चलानी होती है। पिता की नौकरी के दम पर यदि वे रिश्ता मांग रहें है तो यह उनकी गलतफहमी है। आखिर पकाया हुआ अन्न और कमाया हुआ धन ज्यादा देर नहीं चलता । पढ़ा -लिखा होने के बावजूद भी पता नहीं लोग छोटी उम्र में ही शादी जैसी जिम्मेदारी बच्चों पर क्यों थोपना चाहते हैं । बच्चे, पढ़े-लिखे, अच्छी नौकरी में लग जाएँ, शादी ब्याह तो उसके बाद भी हो सकते हैं । इससे अच्छे तो हमारे बुजुर्ग हुआ करते थे जो जिंदगी के ऐसे गंभीर मसलों पर संयम से काम लेते थे ।" सत्या की माँ ने पति को समझाते हुए कहा ।

जितने पहलुओं पर विचार किया जा सकता था माँ-बाप और भाई करने लगे । सत्या किसी भी कीमत पर इस रिश्ते को न नहीं करना चाहती थी । 'माँ यह नहीं हो सकता । मैं किशन को वचन दे चुकी हूँ ।'

"बेटा अभी तेरी उम्र ही कितनी है। आज के जमाने इस उम्र में तो बच्चे शादी का नाम आते ही सर फाड़ने फोड़ने को तैयार हो जाते हैं। माँ-बाप यदि किसी विवशता वश शादी की बात चलाते भी हैं तो बच्चे अपने कॅरियर की बात बीच में ला कर, जड़ से ही शादी की बात खत्म कर देते हैं। फिर तुम न जाने किस मिट्‌टी की बनी हो? तुम्हारे खेलने-कूदने के दिन हैं क्यों अपनी जिंदगी की दुश्मन बनी हुई हो ? बचपन बार -बार नहीं आता। फिर जैसी मौज-मस्ती लड़कियां माँ-बाप के घर में कर सकती हैं वैसी ससुराल में कहाँ ? तुम्हारी कितनी ही सहेलियां है क्या सभी शादी करने जा रही है? नहीं न। फिर तुम्हारी अकल कहाँ चली गई है?

हे ! भगवान मैने कैसे समय में इस नामान औलाद को जन्मा। बेटा, अपने पिता और भाई की इज्जत का ख्याल नहीं तो अपने भविष्य का तो ख्याल कर। अभी तेरा प्लस टू का रिजल्ट भी नहीं आया। हमने तेरे लिए न जाने क्या-क्या सपने देखे थे। शादी ही सब कुछ नहीं। शादी के आलावा भी जीवन में बहुत कुछ होता है बेटा हमने तो सुना है लड़का फैक्ट्री में चार -पांच हजार की नौकरी करता है।"

"माँ इससे ज्यादा कुछ मत कहना। वह चार -पांच हजार कमाए या चार -पांच सौ। मैं आप लोगों के पास मांगने नहीं आऊँगी।"

"बेटा इतना ज्यादा विशवास भी अच्छा नहीं। तेरे पिता व भाई को यह रिश्ता बिल्कुल मंजूर नहीं। आगे तेरी मर्जी। मेरी एक बात सुन ले, दुनिया बहुत लम्बी चौड़ी है, और जिंदगी भी।"

'माँ परीक्षा की इस घड़ी में तुम भी मेरा साथ छोड़ दोगी तो मैं किस से आशा करूँगी? तुम्हारे सिवा कौन जीवन साथी के चयन में मेरा साथ देगा। मैं कैसे अपने जीवन साथी को पा सकूंगी? आखिर एक औरत ही औरत के दुःख को समझ सकती है। यदि मां होने के बावजूद आप मेरी पीड़ा को नहीं समझ पाओगी तो क्या पिता और भैया ...?" और कंधे पर पर्स लटकाते हुए कमरे से इस प्रकार बहार निकल गई जैसे इस घर-परिवार से उसका कोई सम्बन्ध ही न हो ।

'बेटा एक बात मेरी भी सुनती जा।" माँ ने पीछे से आवाज लगाते हुए सत्या को मुड़ कर देखने के लिए विवश कर दिया। हमारे जीवन में परीक्षा की कभी कोई घड़ी नहीं आई। माँ बाप ने जिस के पल्ले बांधा उसे बजुर्गों का प्रसाद समझ उसी के साथ जीवन बिताया। भगवान की दया से हमें कभी निराशा का सामना भी नहीं करना पड़ा। बेटा , एक बात और गांठ में बांध ले, जिस औलाद ने अपने माँ-बाप का दिल दुखाया, वह जीवन में कभी सुखी नहीं रह पाया। भले ही उसके पास मणियों का भंडार ही क्यों न हो? बस इतना ही कहूँगी। तू तो पढ़ी -लिखी है, हर बात में मुझ से ज्यादा समझ रखती है। 'बेटी के कमरा छोड़ कर चले जाने के बाद भी वह काफी देर तक कमरे में अकेली अपने कर्मों और कोख को कोसती रही। उसकी आँखों से बहते आंसुओं की धारा ने फर्श को भिगो कर रख दिया था। वह घर पर अकेली थी। उसे सहारा देने वाला भी कोई नहीं था। इस समय केवल सन्नाटा ही उसका साथी था।

माँ समझाते-समझाते थक चुकी थी। जगह-जहान के उदहारण किस्सों से भी बेटी पर सवार भूत उतरने का नाम नहीं ले रहा था। पिता ने भी अपनी तरफ से पूरी कोशिश की। परन्तु पिता की लाड़ली होने के कारण वह ज्यादा दबाव बनाने में असफल ही रहे।

भाई ने बड़े लाड़-प्यार से समझाया, "देखो दीदी मैं तुम से उम्र में भले ही छोटा हूँ, परन्तु इतना भी छोटा नहीं कि तुम्हारा भला बुरा न सोच सकूँ। वह ठहरा आठवीं पास और तुम्हे प्लस टू के रिजल्ट के बाद अभी कॉलेज में एडमिशन लेना है। अपनी पढ़ाई पूरी कर बहुत आगे तक जाना है। क्यों इतनी जल्दी इस शादी ब्याह के झंझट में अभी से पड़ रही हो? तुम कॉलेज जाओगी, पढ़-लिख कर नौकरी लगोगी, मुझे भी प्रेरणा मिलेगी। वैसे भी बड़े भाई -बहन छोटों के लिए आदर्श स्थापित करते हैं। माँ-बाप जो भी करेंगे वही सही होगा। आखिर हम सब तुम्हारे दुश्मन थोड़े ही न हैं?'

"देख बंटी तू हमारे बीच में मत आना। हमने जो डिसाइड कर लिया सो कर लिया। हमें किसी के सलाह लेने की जरूरत नहीं। मेरी भी तो अपनी जिंदगी हैं। आखिर लड़की जात हूँ। जाना तो मुझे पराये घर ही है, आज भी और कल भी। मैं किसी के बहकावे में आने वाली नहीं। चाहे भगवान भी जमीन पर क्यों न आ जाये।"

सुनते ही बंटी ने एक जोर का थप्पड़ सत्या के मुंह पर रसीद कर दिया। इसके बाद दोनों भाई-बहन के बीच काफी देर तक गुथम -गुथी चलती रही।

कहावत है कुम्हार का आंवा (चाक) व नारी की कोख दोनों एक ही प्रकार के हैं। सुन्दर-असुंदर बर्तन और बच्चे दोनों एक ही स्थान से उत्पन्न होते हैं। फर्क केवल इतना सा है कि आंवा से निर्जीव व कोख से सजीव जन्म लेता है। भाई-बहन के विचारों में भी इतना ही अंतर था। अभी जो भाई सोलह बर्ष का भी नहीं हुआ था, उसे अपने खानदान की इज्जत-बेइज्जती की परवाह थी, लेकिन बड़ी बहन किसी की परवाह किये बगैर कल बने रिश्ते को जन्म जन्मांतर का मान चुकी थी। जिसके लिए उसे माता-पिता व भाई से भी नाता तोड़ना पड़े तो वह उसे तोड़ने को भी तैयार थी।

एक दिन लड़के वालों की तरफ से सन्देश आ गया कि आज से तीन दिन बाद वे लोग लड़की देखने आ रहे हैं। लड़के के पिता सेन्ट्रल गवर्नमेंट के दफ्तर में कर्मचारी थे। सरकारी कर्मचारी होने के कारण ही शायद उन्होंने रविवार चुना था।

पारिवारिक विरोधास्वरूप भी सत्या अपने निर्णय पर अड़ी रही। मजबूरन माँ-बाप को मेहमानों की खातिरदारी का प्रबंध

करना पड़ा। मेहमानों के लिए रात्रि भोज में पूड़े, चटनी, दाल-चावल व मटर पनीर की एक सब्जी बनाने का निर्णय लिया गया। सुबह के नाश्ते में मूली के परांठे बना देंगे। माँ-बाप के अलावा लड़के के मामा-मामी ,भी साथ आएंगे। लड़की वालों ने भी लड़की के नाना- नानी को शामिल करने का निर्णय लिया था। कुल मिलाकर चौदह पंद्रह लोगों के खाने की व्यवस्था की गई थी।

ब्याह कर ससुराल पहुंची सत्या अत्यधिक प्रसन्न थी। बारात पंडाल में पहुँच चुकी थी। किशन ने जितना सत्या को अपने घर की प्रशंसा करके बताया था वह उस सब को देखने के लिए उत्सुक थी। विवाह समारोह में काफी भीड़ थी, जिस कारण वह कुछ देख नहीं पा रही थी। सारा आँगन बिजली की रोशनी से आकाश में सितारों की तरह चमक रहा था।

'वाह ! सारा इंतजाम कितना अच्छा है।' सत्या अपनी सहेलियों से फुसफुसा रही थी।

अगले दिन भीड़ छंट गई। घर में केवल खास मेहमान ही शेष रह गए थे। सत्या का धीरे-धीरे सच्चाई से सामना होना शुरू हुआ। स्वप्न महल में सुख सुविधाओं एवं ऐशो आराम के जैसे चर्चे उसे किशन जैसे सुनाया करता था,जमीनी स्तर पर वहां वैसा कुछ भी नहीं था।

किशन अब भी अपने दोस्तों के साथ बड़ी-बड़ी शेखियां बखार रहा था। सत्या ने अपने कानो उसे दोस्तों से कहते सुना था। "मेरी बीवी अपने माँ-बाप की अकेली लड़की है, भाई के हिस्से में तो वैसे भी भतेरी प्रॉपर्टी है। आजकल तो भाई कानून में भी ऐसा प्रावधान हो गया है कि पिता की प्रॉपर्टी में लड़की का भी शेयर रहेगा।" और ठहाका लगाकर उसने आगे बढ़े दोस्तों के हाथों पर एक जोरदार ताली मारी थी। "कुछ ही दिनों में वह अपनी ससुराल वालों के सामने गाड़ी की मांग रख देगा। सब कुछ सोच समझ कर ही दांव खेला है।' कहते हुए शराब से भरा गिलास उसने मुंह से लगा लिया था। इस तरह दोस्तों की और घूम कर तालियां पीटने का सिलसिला काफी देर यूँ ही चलता रहा।

'भाई ! बीवी सुंदर मिली है तो घुमाने के लिए गाड़ी तो जरूरी है।' उनमें से एक ने कहा।

"यह तो सोलह आने सच्ची बात है इसके माँ-बाप शादी के लिए उसके बाद ही राजी हुए थे कि हमारी 'बेटी अंदर का काम तो कर लेती है लेकिन खेती-बाड़ी, पशु, चारा इससे न हो पायेगा।' किशन अपने दोस्तों के सामने दो परिवारों के मध्य रिश्तेदारी पक्की होते वक्त आमने सामने हुई बातचीत का मजाक बना रहा था। सामने खड़े सारे दोस्त उसकी इस बात का हंस-हंस कर मौज ले रहे थे।

"भाई ! हम ठहरे जमींदार लोग, इसीलिए तो जमींदारों के यहाँ से लड़कियां ब्याह कर लाते हैं। लेकिन जमींदारों की लड़कियां भी आजकल खेती-बाड़ी, गाय-पशु के कामों में कहाँ रुचि लेती हैं?

इन्हें तो सुबह उठ कर पर्स कंधे पर लटका घूमने निकल जाने की आदत पड़ गई है। गौशाला से गोबर उठाते इनके हाथों में बदबू आती है' दूसरे दोस्त ने अपनी दार्शनिकता तर्क देकर व्यक्त की। अतः जिसके मन में जो आ रहा था सभी नशे में धुत अपने-अपने शब्दों में व्यक्त कर रहे थे ।

'यदि इज्जत से रोटी खानी हो तो काम तो करना ही पड़ेगा।' किशन ने एक बार फिर अपनी टांग ऊपर रखने के उद्देश्य से तर्क दिया।

दस बजने को थे, ससुराल के सारे लोग अपने-अपने कामों में व्यस्त थे। सत्या की सहेलियां सुबह ही वापिस लौट गई थी। पचीस तीस लोगों के बीच सत्या पहले दिन ही अपने आप को अकेला महसूस कर रही थी। कुछ शराबी टैंट में बैठे नशे में बहक रहे थे। कुछ इधर-उधर आँगन, खेत व रास्ते में लड़खड़ा रहे थे।

सासु माँ ने पास आ कर कहा, 'बहू यदि नाश्ता-वाश्ता कर लिया हो तो पारम्परिक प्रथा के अनुसार नई नवेली दुल्हन पहले दिन पूरे घर में झाड़ू लगाती है। घर पर ठहरे सारे मेहमानों के लिए पटांडे भी तुम्हें ही बनाने होंगे। पटांडे बनाने तो तुम्हें आते ही होंगे? अब तुम इस घर की बड़ी बहू होने के नाते बहू और मालकिन दोनों ही हो। हम तो कुछ दिनों बाद वैसे भी शहर चले जायेंगे पीछे तुम लोगों को यहाँ का काम धंधा देखना समझना है।"

ससुर साहब बेटे को ब्याह कर इतनी खुशी प्रकट कर रहे थे मानो सारा जहान जीत लाये हो। ब्याह हुए तीन दिन बीत जाने के बाद भी उनकी शराब उतरने का नाम नहीं ले रही थी। उतरती भी कहाँ से, थोड़ी देर भी तो बिना पिए नहीं रह रहे थे।

सत्या के सपनों के सितारे एक-एक टूटकर जमीन पर आकर गिरे। और दो चार दिनों में ही आसमान साफ हो गया। कुछ ही दिनों में ससुराल के आचार-व्यवहार वहां की जीवन शैली ने सत्या को जीवन की सच्चाई से परिचय करवा दिया। किशन का

व्यवहार भी कुछ दिनों में ही उसके प्रत बदल चुका था।

प्रायः अधिकांश दाम्पत्य के प्रारम्भिक काल में ही झगड़े होने शुरू हो जाते हैं। जबकि एडजेस्ट होने का यही सही समय होता है। यदि किसी कारणवश फिर भी टकराव हो जाये तो उसका समाधान समय रहते हो जाना बहुत जरूरी है। लेकिन आज बच्चे हो जाने के उपरांत भी दाम्पत्य टकराव के मामले बढ़ते जा रहे हैं। जो कई बार सम्बन्ध विच्छेद का रूप ले लेते हैं।

जहां नवदम्पति कदम-कदम पर साथ चलने, उठने बैठने के शौक में एक दूसरे का पीछा नहीं छोड़ते। पति पत्नी घरेलू कामों से लेकर दिनचर्या के अन्य कामों में एक दूसरे का हाथ बंटाते हैं परन्तु यहाँ ऐसा कुछ नहीं था। सत्या और किशन की स्थिति इसके विपरीत थी। किशन उससे नौकरों की तरह पेश आने लगा था। महीने भर में ही उसकी हैसीयत उस घर में एक नौकरों से ज्यादा कुछ नहीं थी।

एक रोज सत्या का भाई बंटी बाजार में एक दुकान से सामान खरीद रहा था। किशन शादी की बात शुरू होने के समय से ही बंटी से बैर पाले बैठा था वह भी उस समय बाजार में घूम रहा था। उसकी नजर अचानक बंटी पर पड़ गई। वह ससुराल पक्ष से किसी न किसी बात को लेकर झगड़ा मोल लेने की फिराक में था। किशन दुकान के अंदर आ कर बंटी के कंधे पर हाथ रखते हुए बोला,

'मुझे आप से कुछ बात करनी है, जरा साइड में आइये।'

'ओहो, जीजू आप!, और हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए किशन की ओर मुड़ा। क्या बात है जीजू आज आप इस समय बाजार में? सब ठीक-ठाक तो है न, ड्यूटी नहीं गए क्या?' किशन की मंशा से अनभिज्ञ बंटी ने न जाने कितने सवाल एक साथ ही पूछ लिए थे।

'पहले बाहर तो आओ, फिर बात करते हैं।'

'रुको थोड़ा सामान लेने को है बस उसके बाद पेमेंट करके आता हूँ। "

दुकान में भीड़ थी। बंटी को फ्री होने में थोड़ा ज्यादा वक्त लग गया। बाहर खड़े किशन के क्रोध की सीमा बढ़ती जा रही थी।

बंटी ने जैसे ही सामान उठाने को काउंटर की ओर हाथ बढ़ाया उसी समय किशन ने उसे बाजु से बहार की ओर खींच लिया।

'क्या बात है जीजू? ये आप क्या कर रहे हैं ?'

"तुम सब सत्या को मुझ से शादी करने से रोक रहे थे न। आखिर क्या कर लिया तुमने? बड़ा समझदार समझता है तू भी अपने आप को। बड़ी बहन पर हाथ उठाते शर्म नहीं आई तूझे? तू क्या सोचता था कि मुझे पता नहीं चलेगा ? शर्म कर अपनी बड़ी बहन पर हाथ उठाता है। आज एक बार फिर उसी तरह हाथ उठा कर दिखा जरा। हाथ तोड़ कर नहीं रख दिया तो मेरा भी नाम किशन नहीं। मैने जो करना था कर लिया। आगे भी मैं चुप बैठने वाला नहीं। तेरी बहन को ब्याह कर लाना था सो मैं ले आया। गिन -गिन के बदला लूँगा। हमारे आगे वैसे भी तुम्हारी हैसियत है ही क्या ? वह तो मुझे न जाने क्यों सत्या से प्यार हो गया था, नहीं तो तुम्हारी दहलीज पर कौन गधा कदम रखने वाला था।"

दुकानदार जो अभी तक दूसरे ग्राहकों के साथ लेन-देन में उलझा हुआ था , उसकी नजर दोनों की गुथम-गुथी पर पड़ी, दुकानदार ने किशन को दुकान से बाहर निकल जाने को कहा। और पीछे से घुड़की भरे शब्द सुनाते हुए कहा, " दिन में ही शराब पी कर घूमते फिरते हैं। खुद तो अठन्नी का कभी सामान नहीं खरीदा। ग्राहकों से झगड़ने दुकान में अंदर तक आ जाते हैं। भली चंगी दुकानदारी खराब करने पीछे पड़े रहते हैं। घर-गृहस्थी, रिश्तेदरी के मसले भरे बाजार में उछालते इन्हें शर्म नहीं आती। बदमाश कहीं के। सारी गलती तो माँ-बाप की होती है जो इतनी छोटी उम्र में लड़कों को इस तरह घूमने देते है। इतने बड़ों को खुला खर्च देते हैं। नहीं तो भेजो कहीं काम पर दो दिनों में दिमाग ठिकाने आ जायेगा। माँ- बाप की कमाई पर ऐश कर रहे हैं। इतनी अक्क्ड़ तो उन में भी नहीं होती जो पढ़ लिख कर बड़े ओधों पर लगे हुए हैं। इनकी तो औकात ही क्या है? ऊपर से देखो इनकी धौंस। आप के जीजा जी लगते हैं क्या ? अरे बिना देखे सुने ऐसे गधे के गले लड़की बांध दी? चलो जैसी ....।'

भरे बाजार में जीजा जी के व्यवहार से आहत बंटी की आँखें भर आई थी , और शर्म से झुका बंटी का सिर जमीन में धंसने के लिए गड्ढा ढूंढ रहा था। वह निरुत्तर थैला कंधे की ओर बढ़ाने की मुद्रा में दुकान से बाहर निकल पड़ा।

किशन शराब का आदी बन चुका था। वह रोज नशे में चूर हो घर पहुँचने लगा था। शराब पीना उसका शौक बन गया था। अब फैक्ट्री जाना भी उसने बंद कर दिया था। सत्या ने किशन को पहले-पहले फैक्ट्री से काम न छोड़ने की सलाह दी।

'यदि नौकरी से मन भर गया हो तो खेती -बाड़ी करने में भी बुराई नहीं। अब तुम बच्चे नहीं रहे। खुद के बाल बच्चे हो गए है। जैसे -जैसे बड़े होंगे,बड़ी क्लासों में जायेंगे, वैसे -वैसे खर्चे भी बढ़ते जायेंगे। कल यदि कोई छोटा -मोटा कोर्स करवाना हो तो पैसों की जरूरत भी पड़ेगी। खुद तो पढ़े सो पढ़े अगली चिंता तो बच्चों की है। इसलिए अपने योग्य कोई काम धंधा ढूंढते रहो। ऐसा न हो कहीं वक्त आने पर किसी के आगे हाथ फैलाने पड़े। वैसे काम तो काम है, कोई भी काम छोटा या बड़ा नहीं होता। फिर फैक्ट्री में भी आप कौन से मैनेजर थे। वहां भी तो सारा दिन गाड़ियों में से सामान के बक्से ही उतारते-चढ़ाते थे।' (क्रमशः)

गांव व डाकघर सालाना,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश

भाषांतर

हिम मानव

● लेखक : **हैंज़ क्रिश्चियन एण्डर्सन** की कहानी **'द स्नो मैन'** अनु. **द्विजेंद्र द्विज**

''**सर्दी** इतनी आनन्दमयी है," हिम मानव ने कहा, "कि इससे मेरा सम्पूर्ण शरीर चटचटा रहा है । यह वही हवा है जो किसी में भी प्राण फूँकती है। वह बड़ी-सी लाल चीज़ मुझे कैसे घूर रही है!" उसका अभिप्राय सूर्य से था, जो अभी उदय हो रहा था। यह मुझे पलक भी झपकने नहीं देगा। मैं अपने टुकड़े ही बचा पाउँगा।"

उसके सिर में आँखों के स्थान पर टाइल के दो तिकोने टुकड़े थे; उसका मुँह एक पुराने टूटे हुए पाँचे का बना था और निःसन्देह यह दाँतों से भी सुसज्जित था। इसे बालकों के आनंदमय कोलाहल, स्लेज की घंटियों के संगीत और कोड़ों की फटकार के बीच अस्तित्व में लाया गया था। सूरज डूबा, पूरा चाँद उग आया, बड़ा, गोल, एकदम स्पष्ट, नीले आसमान में चमकता हुआ।

"ये लो, अब वह चीज़ दूसरी ओर से चली आई है," हिम-मानव ने कहा, उसे लगा कि सूरज फिर लौट आया है। " हाय! इसके घूरने का इलाज तो मैं कर चुका हूँ, अब यह वहाँ लटकता रहे और चमकता रहे, ताकि मैं स्वयं को भी देख सकूँ। काश मैं इस स्थान से से हिलना जानता, -कितना मन करता है मेरा यहाँ से हिलने को। अगर मैं भी चल पाता तो मैं वहाँ सामने बर्फ पर फिसलने का आनंद ले रहा होता, जैसे मैं देखता हूँ बालकों को फिसलने का आनंद लेते हुए; परन्तु मुझे यह सब आता ही नहीं, मुझे तो भागना भी नहीं आता।"

"दूर-दूर", आँगन का कुत्ता भौंका। उसका गला काफ़ी बैठ गया था, और वह "भौं-भौं" का ठीक उच्चारण नहीं कर पा रहा था। वह कभी घर के भीतर का कुत्ता हुआ करता था, और आग के समीप लेटा करता था, और तबसे ही उसका गला ऐसे ही बैठ चुका था। "एक दिन सूरज तुम्हें भगा देगा, मैंने देखा था उसे पिछली सर्दियों में, तुम्हारे पूर्वज को भगाते हुए, और उससे पूर्व के पूर्वज को भी । दूर-दूर, सबको जाना पड़ता है।"

"तुम्हारी बात मुझे समझ नहीं आई, मित्र," हिम मानव ने कहा, "क्या वह चीज़ मुझे भागना सिखाएगी? अभी थोड़ी देर पहले तो मैंने उसे स्वयं भागते हुए देखा है अर अब यह दूसरी ओर से रेंगता हुआ फिर आ गया है।"

"तुम कुछ भी नहीं जानते हो, आँगन के कुत्ते ने उत्तर दिया," परन्तु फिर अभी-अभी तो तुम्हें बनाया गया है। जो तुम उधर देख रहे हो, वह चाँद है, इससे पहले तुमने सूरज को देखा था। वह कल फिर आएगा, और संभवतः तुम्हें कुएँ के पास वाली नाली में बहना सिखा देगा ; क्योंकि मुझे लगता है कि अब मौसम बदलने ही वाला है, मैं अपनी बायीं टाँग में सूइयों और छुरियों की चुभन अनुभव कर पा रहा हूँ; मुझे विश्वास है मौसम बदलने वाला है।"

"मुझे तो इसकी बात समझ नहीं आ रही," हिम मानव ने स्वयं से कहा; "परन्तु मुझे आभास हो रहा है कि वह किसी अप्रिय वस्तु के बारे में बात कर रहा है। जो अभी कुछ देर पहले मुझे इस तरह घूर रहा था, जिसे यह सूरज कह रहा है, मेरा मित्र तो नहीं है, यह तो मैं भी महसूस कर पा रहा हूँ।"

"दूर, दूर," आँगन का कुत्ता भौंका, और फिर तीन चक्कर लगाकर, अपने कठघरे में सोने चला गया।

मौसम सचमुच बदल गया था। सुबह तक, घने कुहासे ने आसपास के पूरे गाँव को ढाँप लिया था। तीखी हवा चली, यूँ लगा सर्दी हड्डियाँ भी जमा देगी; परन्तु सूर्योदय होते ही दृश्य भव्य था। धवल तुषार से ढँके झाड़ और पेड़ श्वेत-प्रवाल का जंगल दिखाई दे रहे थे, जबकि हर टहनी पर जमी हुई ओस की बूँदें चमक रही थीं। गर्मियों में प्रचुर पर्णावली में छिपी हुई बहुत -सी कोमल आकृतियाँ अब स्पष्ट रूप से परिभाषित हो चकी थीं और गुथी हुई किनारियों-सी झिलमिला रही थीं। प्रत्येक टहनी से श्वेत कांति झिलमिला रही थी। हवा में लहराता भूर्ज, गर्मियों में पेड़ों की भाँति जीवन से भरपूर था; और उसकी उपस्थिति आश्चर्यजनक ढंग से सुन्दर थी। और चमकती धूप में हर चीज़ ऐसे चमक और झिलमिला रही थी मानो आसपास हीरे का चूरा बिखरा दिया गया हो; जबकि धरती का बर्फीला गलीचा हीरों से जड़ा हुआ प्रतीत हो रहा था, जिससे झलकते हुए असंख्य प्रकाश बर्फ से भी अधिक श्वेत थे।

"यह सचमुच बहुत सुन्दर है," एक युवक के साथ उद्यान में आई हुई युवती ने कहा; और वे दोनों हिममानव के समीप स्थिर खड़े होकर झिलमिलाते हुए दृश्य पर मनन कर रहे थे। ग्रीष्म भी इससे अधिक भव्य दृश्य प्रस्तुत नहीं कर सकती," युवती आनन्द

में चिल्लाई, और उसकी आँखें चमक उठीं।" और हमें ऐसा मित्र भी गर्मियों में नहीं मिल सकता," युवक ने हिम मानव की ओर संकेत करते हुए कहा; "वह उत्कृष्ट है।" युवती हँसी, उसने हिममानव को देख कर स्वीकृति में सिर हिलाया और अपने साथी के साथ फुदकती हुई चली गई। उसके पैरों के नीचे की बर्फ चरचराई और चटचटाई, मानो वह स्टार्च पर चल रही हो।

"वे दोनों कौन हैं? हिम मानव ने आँगन के कुत्ते से पूछा।" तुम तो यहाँ मुझसे भी बहुत पहले से रहते आए हो ; क्या तुम उन्हें जानते हो?"

"बेशक मैं उन्हें जानता हूँ," आँगन के कुत्ते ने कहा; "कितनी ही बार इस युवती ने मेरी पीठ सहलाई है और युवक ने मुझे हड्डी डाली है। मैं इन दोनों को कभी भी नहीं काटता।"

"परन्तु वे हैं क्या?" हिम मानव ने पूछा

"वे प्रेमी हैं," उसने उत्तर दिया, "वे भी धीरे-धीरे जाकर उसी कठघरे में रहेंगे और फिर एक ही हड्डी कुतरते रहेंगे। दूर-दूर!"

""तो क्या वे तुम्हारी और मेरी तरह प्राणी हैं ?" हिम मानव ने पूछा।

"हाँ, वे एक ही स्वामी से सम्बधित हैं, आँगन के कुत्ते ने उत्तर दिया।" निश्चित रूप से नवजातों के पास ज्ञान तो होता ही नहीं। मुझे यही बात तुममें भी दिखाई देती है। मेरे पास आयु है, अनुभव है। मैं यहाँ घर के प्रत्येक सदस्य को जानता हूँ, और यह भी जानता हूँ कि एक समय वह भी था जब मैं यहाँ बाहर ज़ंजीर में बँधा नहीं पड़ा रहता था । दूर, दूर !"

"सर्दी आनन्दमयी है," हिम मानव ने कहा, "परन्तु मुझे अवश्य बताओ; और अपनी ज़ंजीर को इस तरह मत खनखनाओ; क्योंकि जब तुम इसे खनखनाते हो तो मैं पूरा खनखना उठता हूँ।

"दूर-दूर!" आँगन का कुत्ता भौंका; "मैं बताता हूँ तुम्हें। लोग कहते हैं कि मैं कभी छोटा-सा, बहुत प्यारा-सा था; तब मैं मखमल से ढँकी कुर्सी पर लेटता था, ऊपर, अपने स्वामी के घर के भीतर, स्वामिनी की गोदी में। वे लोग मुझे मेरी नाक पर चूम लेते थे, और एक कढ़ाईदार रुमाल के साथ मेरे पंजों को पोंछते थे और मुझे 'ऐमी,' 'प्यारा ऐमी', 'मधुर ऐमी' कह कर पुकारते थे।' परन्तु बहुत जल्दी ही उन्हें मैं बहुत बड़ा लगने लगा, फिर उन्होंने मुझे घरेलू नौकर के कमरे में भेज दिया; इस तरह मैं नीचे की मंज़िल में आकर रहने लगा। जहाँ तुम खड़े हो वहाँ से तुम उस कमरे के भीतर झाँक सकते हो, और वहाँ देख सकते हो जहाँ मैं कभी स्वामी था, क्योंकि मैं वास्तव में ही इस घर के नौकर का स्वामी था। ये सीढ़ियों के ऊपर वाला कमरे से छोटा अवश्य था; परन्तु मैं वहाँ अधिक आराम में था क्योंकि वहाँ मुझे लगातार बाँध कर नहीं रख जाता था अथवा मुझे बच्चे इधर उधर नहीं खींचते थे जैसा कि मेरे साथ पहले होता था। मुझे खाना भी अच्छा मिलता था, बल्कि और भी अच्छा था। मेरा अपना एक गद्दा था, और वहाँ अँगीठी भी थी-- वर्ष के इस मौसम में यह सबसे उत्तम वस्तु है। मैं अँगीठी के नीचे चला जाता था और इसके बहुत निकट जा कर सो जाता था। हाय, मैं उस अँगीठी को अभी भी अपने सपनों में देखता हूँ। दूर-दूर!"

"क्या यह अँगीठी इतनी सुन्दर दिखाई देती है? हिम मानव ने पूछा, "क्या यह बिलकुल मुझ जैसी दिखाई देती है?"

यह तो तुमसे बिलकुल उलट होती है। कुत्ते ने कहा, "यह कौए जैसी काली होती है, और इसका गला लम्बा होता है और इसका दस्ता पीतल का बना होता है; यह लकड़ी खाती है ताकि इसके मुँह से आग की लपटे निकलती रहें। आराम के लिए हमें इसके एक ओर बैठना चाहिए, या इसके नीचे बैठना चाहिए।

तुम खिड़की में से देख सकते हो वहीं से, जहाँ तुम खड़े हो।"

हिम मानव ने देखा, और उसे देखी एक चमकदार, पॉलिश की हुई पीतल के दस्ते वाली चीज़ दिखाई दी और उसके निचले भाग में आग चमकती हुई दिखाई दे रही थी। हिम मानव को बड़ी विचित्र-सी सनसनी अनुभव हुई; यह सनसनी अद्‌भुत थी, वह समझ नहीं पा रह था कि यह क्या था, वह बता नहीं पा रहा था। परन्तु ऐसे लोग भी तो होते हैं जो हिम मानव नहीं होते, जो यह सब समझते हैं। "और तुमने उसे छोड़ दिया?" हिम मानव ने पूछा, क्योंकि उसे लगा कि अँगीठी अवश्य ही मादा रही होगी। "तुमने इतना सुखद, इतना आरामदेह स्थान छोड़ कैसे दिया?"

"मैं विवश था," आँगन के कुत्ते ने कहा, "घर से निकाल कर उन लोगों ने मुझे यहाँ ज़ंजीर से बाँध दिया। मैंने अपने सबसे छोटे स्वामी की टाँग पर दाँत गड़ा दिए थे, क्योंकि उसने उस हड्डी को लात मार कर दूर फेंक दिया था, जिसे अपने दाँतो से कुरेद रहा था। 'हड्डी के बदले हड्डी', मैंने सोचा; परन्तु वे लोग इतने क्रुद्ध हो

सारा दिन हिममानव खिड़की के भीतर झाँकता खड़ा रहा, और गोधूलि बेला में तो अँगीठी और भी अधिक आकर्षक हो गई थी, क्योंकि अब उसमें और भी सौम्य प्रकाश आ रहा था, सूरज अथवा चाँद के जैसा नहीं नहीं, केवल एक दीप्त प्रकाश जो एक पेट-भरी तृप्त अँगीठी से आता है। जब अँगीठी का द्वार खोला गया तो उसके मुँह से आग की लपटें लपलपाने लगीं, सभी अँगीठियों के यहाँ यही प्रथा है। ज्वालाओं के प्रकाश ने सीधे हिम मानव के चेहरे और सीने पर गुलाबी चमक बिखेरने दी। अब मुझसे नहीं रहा जा रहा, अपनी जिह्वा लपलपाती हुई यह कितनी भव्य लगती है! हिम मानव ने कहा।

गए कि तब से उन्होंने मुझे ज़ंजीर में जकड़ दिया है, और अब मैं अपनी हड्डी गँवा चुका हूँ। तुम सुनते नहीं हो कि मेरा गला कितना अधिक बैठ गया है ! दूर, दूर! अब मैं अन्य कुत्तों की तरह बातचीत भी नहीं कर पाता, दूर-दूर, बस यही है सारी कहानी।"

परन्तु अब हिम मानव उसकी बात नहीं सुन रहा था। वह घर की निचली मंज़िल में नौकर के कमरे के भीतर देख रहा था; जहाँ हिम मानव के अपने ही आकार की अँगीठी अपनी चार टाँगों पर खड़ी थी," मैं अपने भीतर कैसी चटचटाहट अनुभव कर पा रहा हूँ!" उसने कहा , "क्या मैं कभी भीतर भी जा पाऊँगा! यह एक निष्कपट मनोकामना है, और निष्कपट मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। मुझे भीतर जाकर उससे लिपट जाना चाहिए, मुझे भले ही खिड़की को तोड़ देना पड़े।"

"तुम भूल कर भी भीतर मत जाना; आँगन के कुत्ते ने कहा, "पिघल कर बह जाओगे अगर तुम वहाँ गए तो! दूर-दूर।"

"मैं जा भी सकता हूँ," हिममानव ने कहा, "क्योंकि मुझे लगता है मैं ऐसे भी टूट ही रहा हूँ।"

सारा दिन हिममानव खिड़की के भीतर झाँकता खड़ा रहा, और गोधूलि बेला में तो अँगीठी और भी अधिक आकर्षक हो गई थी, क्योंकि अब उसमें और भी सौम्य प्रकाश आ रहा था, सूरज अथवा चाँद के जैसा नहीं; नहीं, केवल एक दीप्त प्रकाश जो एक पेट-भरी तृप्त अँगीठी से आता है। जब अँगीठी का द्वार खोला गया तो उसके मुँह से आग की लपटें लपलपाने लगीं, सभी अँगीठियों के यहाँ यही प्रथा है। ज्वालाओं के प्रकाश ने सीधे हिम मानव के चेहरे और सीने पर गुलाबी चमक बिखेरने दी।" अब मुझसे नहीं रहा जा रहा, अपनी जीह्वा लपलपाती हुई यह कितनी भव्य लगती है!" हिम मानव ने कहा।

रात लम्बी थी, परन्तु हिम मानव के लिए नहीं, क्योंकि वह तो अपने ही विचारों के आनंद में मगन, सर्दी में चटचटाता हुआ खड़ा था। सुबह नौकर के कमरे की खिड़कियों के काँच बर्फ से ढक गए थे। वे किसी भी हिम मानव के लिए मनचाहे अत्यन्त सुन्दर हिम-पुष्प थे, परन्तु उन्होंने अँगीठी को छिपा लिया था। खिड़कियों के ये काँच पिघलने वाले नहीं थे, और वह अँगीठी को नहीं देख पा रहा था ,जो उसकी कल्पना में एक सुन्दर मानवी थी। उसके आस-पास बर्फ चटक रही थी, हवा सीटियाँ बजा रही थी; यह वैसा ही धुँधला मौसम था जिसका सबसे अधिक आनन्द हिम मानव ही ले सकता था; परन्तु वह भी यह आनन्द नहीं ले पाया; लेता भी कैसे जब उसे अँगीठी की याद सता रही थी?"

"यह हिम मानव के लिए सबसे भयंकर रोग है," आँगन के कुत्ते ने कहा, "इस रोग का शिकार मैं स्वयं भी हुआ हूँ, पर अब मैं इससे मुक्त हूँ। दूर-दूर" उसने भौंक कर कहा, "मौसम बदलने वाला है।" और मौसम बदल गया; बर्फ पिघलने लगी। गर्माहट बढ़ने लगी हिम मानव घटने लगा। उसने कुछ भी नहीं कहा। उसे कोई शिकायत नहीं थी, यह विश्वस्त होने का संकेत था। एक सुबह वह टूट गया और समूचा बह गया; और उसके स्थान पर झाड़ू के डण्डे जैसा कुछ खड़ा था। यह वह खम्भा था जिसपर बालकों ने हिम मानव को निर्मित किया था। "हाय, अब मैं समझा, वह अँगीठी के लिए क्यों मरे जा रहा था, "आँगन के कुत्ते ने कहा। "अँगीठी को साफ़ करने वाला बेलचा भी तो वहीं है। अँगीठी को साफ़ करने वाली वस्तु तो हिम मानव के भीतर लगी हुई थी, यही उसकी प्रेरणा भी रही होगी। परन्तु अब तो कुछ बचा ही नहीं। दूर-दूर।" और जल्दी ही सर्दियाँ बीत गईं।" दूर-दूर, "फटे स्वर वाला आँगन का कुत्ता भौंका। परन्तु घर के भीतर लड़कियाँ गा रही थीं:

"आओ निकलकर अपने सुगंधित घर से,
हरे बनजवाइन आओ
हरे ब्यूँस तुम
अपनी कोमल बाहें फैलाओ ;
लौट आए हैं मास मधुर वसंत लिए ,
आकाश में आनंदित हो गाता है लार्क
सौम्य सूर्य आओ, जब गाता है कुक्कू
मैं अपने भटकाव में गाऊँगी उसी की तरह।"

और फिर किसी को हिम मानव की याद नहीं आई।''

विभागाध्यक्ष, अनुप्रयुक्त विज्ञान एवं मानविकी, राजकीय पॉलीटेक्निक, काँगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176001

कविताएं

● के. आर. भारती

सोचता है पुल

कब का बन चुका है पुल
आर-पार की दूरियां
पाटने को एकदम तैयार
पर दूरियों के इस
पटन-पाटन के बीच
अभी इसका
उद्घाटन बाकी है
जिसके वास्ते लोग
जो रहे एक
मुख्य अतिथि की बाट
कोई यहां कह रहा
हमने की थी
पुल की कवायद
कोई जता रहा
हमने की है
पुल के लिए जद्दोजहद
इसी कशमकश में
एक बरसात बीत चुकी
दूसरी सिर पर है
खड्डा होती है जब
बाढ़ में
दिनों तक नहीं देती रास्ता
पर इस सबसे
किसको है वास्ता
वे तो अपनी-अपनी
फेंक रहे
राजनैतिक रोटियां
सेंक रहे
परेशान है आम जन
हैरान है पुल
सोच रहा मन ही मन
फासले घटाने को
या बढ़ाने को
बनाया गया है मुझे?

कौन सा अपना घर

मेरे जन्म पर मातम
मेरे भाई के जन्म पर त्योहार
मुझे खेलने को गुड़िया
भाई के खेलने को गाड़ी
मेरे हाथ में झाड़ू
उसके हाथ में बल्ला
मुझे कढ़ाई को कसीदा
उसे पढ़ाई को किताब
मुझे चुल्हा-चौका
उसे खेल का मैदान
भाई को देते सब दुआ
जल्दी-जल्दी हो जवान
मैं जरा भी सरकती
तो बंद होती उनकी जुबान
वह बोले ऊट-पटांग भी
खिल-खिल जाते सब
मुझ से कहे
पराए घर जाना है
कैंची की तरह
मुंह नहीं चलाना है
आया जो मौसम
पराए घर जाने को
तो देकर दहेज़
मां-बाप ने जतलाया
तेरे हिस्से यही आना है
भाई का हिस्सा तूने
अब नहीं बंटाना है
उधर ससुराल में
कम दहेज लाने पर
ताने हैं और
हर छोटी सी भूल पर
मायके को उलाहने हैं
मैं कोल्हू का बैल
वह कोल्हू का स्वामी
मेरा काम-काम नहीं
उसे कोई काम-धाम नहीं
वह हंसे-बात करे किसी से
नहीं किसी को एतराज़
मेरे हिस्से आईं
सारी बंदिशें
रहती सदा मैं डर-डर
यह मायका, वह ससुराल
समझ न पाई
कौन सा अपना घर?

प्यासा कौआ

प्यासा एक कौआ
आता है बार-बार
मेरे गांव में
उड़ता डाल-डाल
पानी की खोज में
पर नज़र नहीं आता
उसे इस बार
किसी भी घड़े में
थोड़ा सा भी पानी
जो लड़ा सके
कोई वह युक्ति
अपनी प्यास बुझाने को।

सूख गई है बाबड़ी
सूख गए हैं
कुएं और पोखर भी

सिकुड़ते ही जा रहे
सब नदी-नाले
नहीं कहीं पहुंच में पानी
फिर भी भटक रहा
निरर्थक एक प्रयास में
यानी चोंच भर
पानी की तलाश में

आदमी जब प्यास से
बिल-बिलाता है
टैंकर या रेल से
पानी आ ही जाता है
उसकी कांव-कांव से
कब भला पानी आता है
दूर डाल पर बैठे देख
पानी पाने को
इनसानों में छीना-झपटी
और बंटते देख पानी...
पुलिस निगरानियों में
सोचता है कि वह यूं ही
बदनाम है
पंचतंत्र की कहानियों में

सूरज बरसा रहा आग
जल रही है धरती
झुलसे-झुलसे से हैं पेड़
छोड़ गई कब की उन्हें छांव
दूर तलक नहीं कोई
बादलों का नामोनिशां
सूख गया है कंठ
क्षीण पड़ गए पंख
और नहीं अब उड़ पाएगा
प्यासा कौआ शायद
इस बार प्यासा ही मर जाएगा।

तितलियां

बचपन में जब हम
भागते थे तितलियों के पीछे
तो तितलियां भागती थीं हमसे
कभी लगता अंगुलियां
पहुंच गई हैं पंखों के पास
पर पता नहीं चलता
कैसे चकमा देकर उड़ गईं
वे आते-आते हाथ

मां ने जब ऐसा करते
हमें एक रोज़ देख लिया
तो पास बुलाया-समझाया
इन तितलियों के पीछे तुम
यूं समय न जाया करो
पढ़ो-आगे बढ़ो
जिंदगी में फूलों सा महको
खुद दौड़ी आएंगी तितलियां

तब मां ने बरसात से पहले
रोप दी घर की क्यारी में
तरह-तरह के फूलों की पौध
जो आई बरसात
पौधे आज और, कल और
देखते ही देखते
फूट पड़ी कलियां
महकने लगी क्यारी
और मंडराने लगी तितलियां

जितने फूल थे
उससे भी ज्यादा तितलियां
मालूम नहीं पड़ता था
कौन से हैं फूल
और कौन सी तितलियां
उड़ते उड़ते यूं स्वतः
हाथों तो कभी कंधों पर
आ बैठती तितलियां
मां की बात का मतलब
साफ अब मैंने जाना
जग में कुछ पाने से पहले
होता है अपने घर-आंगन को
संवारना-महकाना

भा.प्र.से.(से.नि.)
ब्लॉक 14, फ्लैट-1, हिमुडा
कॉलोनी, संजौली, शिमला-171006
मो. 98166-72455

कविता

ओ जेठ के सूर्य

• **अरविंद कुमार मुकुल**

ओ
जेठ के सूर्य
आखिर तुम्हें
क्या मिला
सारी दुनिया को जलाना
हर किरण से किसी
श्रमिक को थकाना
तुम्हें
क्या मिला
इससे
यही न
कि
जिंदगी भर
तुम खुद भी
जलते रहे
तड़पड़ाते पक्षी की तरह
एक बूंद पानी के लिए
ललकते रहे।

एल.एफ. 27, श्रीकृष्णापुरी,
पटना, बिहार-800 001,
मो. 0 99319 18578

कविताएं

● रत्न चंद निर्झर

अटल विश्वास

पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य
रेंगती सर्पाकार सड़कें
यूं जान पड़ती हैं
हों मानो
किसी चित्रकार के सधे हाथों
की छिटकी हुई
आड़ी तिरछी रेखाएं
ऊपर नीचे
आते जाते वाहन
उसमें सवार
श्रद्धालु, पर्यटक, मुसाफिर...
कहां हो पाते हैं
पहाड़ से एकसार
चाहते हुए भी
अनकहा रह जाता है
पहाड़ का दर्द
पगडंडियां नापते
पांव की पदचापों का संगीत...
ठहर सा जाता है
पहाड़ मेरे सीने में
सही मायने में
पहाड़ के
सच्चे हिमायती होते हैं
पर्वतीय जन
जो जानते समझते हैं
एक दूजे की पीड़ा
पहाड़ की तरह
अटल होता है उनका विश्वास
वे भी छुएंगे
एक दिन
पहाड़ की तरह
असीम बुलंदियां

बेटी कब होती है विदा

बेटी
कब होती है
बाबुल की देहरी से विदा
यादों में हमेशा
बनी रहती है
सदा अंग संग
बचपन से
आज तक की यात्रा सुरक्षित है
स्मृतियों के एलबम में
एकाएक आ खड़ा होता है सामने
उसका बचपन
तुतलाना, घुटने के बल सरकना
ठुमक ठुमक कर चलना
फिर सरपट भागना
मां ने
अभी सहेज कर रखे
बचपन के परिधान, गुड्डे/गुड्डियां
और ढेर सारे खिलौने
बेटी की अनुपस्थिति में
बतियाएगी उनके संग
और करेगी उनसे
बेटी जानकर एकालाप
पिता महसूसेगा उसे
कंधों और बांहों के झूलों में
भैया ढूंढेगा
राखी के धागों में उसका अक्स
बहन महसूसेगी उसे
छोटे पड़ गए कपड़ों में
संग सहेलियां
आमों की अमराइयों में ढूंढेगी
शरारत भरी दुपहरी
चुहलबाजियां, लंबे झुटारे
गांव के पनघट
खेतों की पगडंडियां
याद करेंगी
उसके पदचाप का संगीत
अब जब लौटेगी कभी
बेटी अपने पीहर
बेटी न रहेगी बेटी
होगी सिर्फ चार दिन की पाहुन
कुछ दिन ठहर कर
फिर लौट जाएगी ससुराल
और एक दिन
उसके यह आने जाने का क्रम
बदल जाएगा
बेटी से मां में
और
फिर इक दिन
वह भी रोते रोते
मां की तरह
बेटी को करेगी
घर की दहलीज से विदा।

श्मशान घाट

श्मशान घाट पर
सभी हो जाते हैं
न जाने क्यों अछूत
यहां तक नश्वर देह
जो रहे कभी
दिलोजान से प्यारे

कविता

बरोट की छटा

● एल. आर. शर्मा

दिनभर की झमाझम बारिश से
देवदार के घने जंगलों में
जैसे रात की स्याही गहरा गई हो,
उस पर धुंध के सफेद गुच्छे
किसी तपस्वी की सफेद धोती जैसे
मानो संध्या वैधव्य में आ गई हो।

उहल की चुहलबाजी का क्या कहना
ये नदी है या चांदी की पायल
उधर मटमैली बहन 'लम्बीडग'
जो मानो बादामी साड़ी में लिपटी है
उस उहल के लहरिया बदन से
'मुल्थान' पुल के निकट मिलती है।

हिमाचल परिवहन की हरी-हरी बस
मोड़ों पर शरमाई हुई सी सरकती है
प्राकृतिक छटा से विपरीत लगती है
क्या यह मानव विकास की कहानी है?
या प्रकृति से संघर्ष-रत मानव की
यही नियति है, यही रहेगी?

आलू के खेतों की सीढ़ियां
प्रहरी जैसे देवदार के जंगलों तक
चुनौती देते हुए चढ़ती दीखती हैं
वाह! यह वसुंधरा भी, मातृवत,
संतान के पालन-पोषण के लिए
ऐसे-ऐसे कितने रूप धरती है।

दूर, एक सीढ़ीनुमा खेत में
कुदाली हाथ में लिए
पीठ पर तिकोना किल्टा बांधे हुए
एक दूसरी मां गाती हुई पुकारती है
अपनी बिखरी हुई भेड़-बकरियों को
'आहो.... घरों चलो रे...' बुलाती है।

बरोट का अनुपम सौंदर्य बसा है
इन हरे-हरे सीढ़ीनुमा आलू के खेतों में
काले-काले बादलों में, देवदार के जंगलों में
और उहल के छल-छलाते जल में
और 'आहो...घरों चलो रे' पुकारती
उस किल्टे-वाली धरती रूपी नारी में।

42/5 हरिपुर, सुंदरनगर, जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 018, मो. 0 94180 00983

बरोट जिला मंडी में एक अत्यंत सुरम्य स्थल है
टिप्पणी : 1. 'उहल' बरोट से बहने वाली एक छोटी नदी है।,
2. 'लम्बीडग' या 'लम्बांडग' उहल की एक सहायक नदी है।
3. 'मुल्थान' लम्बीडग नदी पर बना एक पुल है।

उनके अंतिम समय तक के रहे
सभी संगी साथी
अंगवस्त्र, रंग बिरंगे परिधान
यहां तक
रजाई, खिंद, खंदोलू
खान से खरीदा
महंगा ऊनी कंबल
तकिए, स्वेटर
गर्म सान्निध्य में
गुजरा उसका सारा जीवन
देहावसान होते ही
शवयात्रा के साथ
कर दिए जाते हैं
घर से निर्वासित
फेंक दिए जाते हैं
श्मशानघाट के एक कोने पर
अछूत मान कर
न जाने क्यों

अनबिकी चीजें

हम हैं
सबसे पुरानी दुकानों की
बहुत सारी अनबिकी चीजें
रोज आकर हमें झाड़ते पोंछते हैं
दुकानदार
बच्चों की तरह दुलार कर
सहेजते हैं
झाड़ पोंछ कर सजाते हैं
दुकानों के खानों में
हम हैं पुराने जमाने की
आउट डेटिड चीजें
यह सच है आज है नई पीढ़ी
नई सोच का जमाना
कौन जलाता है
मिट्टी के दीए लालटेन
नहीं गुड़गुड़ाता हुक्का
परांदे रिबन तरसते हैं
घनी घनी जुल्फों को
गुड्डे गुड्डियां गुम सुम पड़े हैं कोने पर
खिन्नू सीटी बेतरतीब खोए हैं अतीत में
हम जीते हैं इसी उम्मीद में कभी तो
आएंगे कोई ग्राहक खरीददार
समझेंगे हमारे मूल्य
और बिकेंगे हम बाजिब दाम पर
हमी में सिमटी हैं पुराने जमाने की यादें
हम नहीं इकट्ठी हुई इक दिन
हम तो हैं स्टाक की बची चीजें
हम न बिकी कभी कबाड़ी के हाथ
हमें न चूहे ने कुतरा और
न चाटा दीमक ने
और न कभी संपूर्ण खाक हुई
आग की लपटों में

म. नं. 211, रौड़ा सेक्टर, बिलासपुर,
हिमाचल प्रदेश-174 001

कविता

• के. एल. दिवान

मेहमान चिड़ियां

मेहमान चिड़ियां
मेरे शहर में आतीं
एक-एक दो-दो
तीन-तीन चार-चार
फिर कई सारी एक साथ
होता आया ऐसा
सदियों से
ये चिड़ियां आतीं
दूर-दूर से
दुनिया के कोने-कोने से
मिलतीं-जुलतीं
एक दूजे से
मन की बातें
सुनतीं-सुनातीं
कभी फुसफुसातीं
कभी मुस्कातीं
कभी चहकतीं
कभी चहचहातीं
निश्चय ही ऐसे में
करती हैं ये बातें
अपने-अपने चिढ़े की
हंसते-हंसाते
गाते-गुनगुनाते
पेड़-पौधों की
कलियों की- फूलों की
भौरों की- तितलियों की
सुंदरता मन में बसाए
वक्त आ जाता
लौट जाने का
अपने-अपने वतन को
संग-संग मन में
उम्मीदें ही उम्मीदें
फिर आएंगे/फिर मिलेंगे
खेलेंगे/ कूदेंगे
नाचेंगे/ गाएंगे
मन की बात
सुनेंगे/ सुनाएंगे
आज फिर है आई
अभी-अभी आई
एक दूत चिड़िया
मेरे शहर के आस-पास
चारों ओर/ घूम गई कोना कोना
खो गई/ गहरी उदासी में
उदासी भरी सोच में
क्या हो गया यहां के
हरे-भरे जंगलों को
घने जंगलों को
कहां चले गए/ यहां के
सुंदर-सुंदर/ मनमोहक
आत्म को छू लेने वाले
हरे-भरे पौधे
फिर मंडराने लगी
सारे शहर ऊपर
उफ्!
चारों ओर उग आई
ईंट/ पत्थर/ सीमेंट/ लोहे की
इमारतें ही/ इमारतें
उदास मन/ थका तन
टूटे-बिखरे सपने
आ बैठती गंगा-तट
शांति की तलाश में
बैठते ही उसने मूंद लीं आंखें
किया सच्चे मन से
प्रणाम मां गंगा को
कहा मन में/ मां गंगे
मैं/ मेरे संगी-साथी
सभी करते/ शत-शत
नमन तुम्हें
फिर जो खोली आंखें
खुली की खुली रह गईं
मिली थी पल भर को जो शांति
ठंडी सांसों में बदल गई
शहर का गंदा नाला
लहरा-लहरा कर, उछल उछल कर
गंगा में समा रहा था
चिड़िया की चाह
गंगा के शीतल पावन जल में
डुबकी लगाऊं/ गोल पंख
फड़फड़ाऊं
गुनगुनी धूप में आंखें मूंदूं
गंगा तट पर बैठ मन ही मन
कोई भजन जप लूं
ऐसी ही कितनी ही चाहें
मौत के आगोश में सो गईं
लड़खड़ाहट भरी उड़ान
गंगा जल चोंच से छुआ
और उड़ चली अपने वतन
संदेश सुनाने आंसू बहाने
अब तुम इस शहर/ कभी मत
आना
मगर उसका संदेश पाकर भी
आती हैं कई चिड़ियां यहां
होकर मजबूर दिल से
ठीक वैसे ही
जैसे हालात मजबूर
दिन-प्रतिदिन
गंगा से/ इक दूजे से
पल-पल होते दूर
इस शहर के लोग भी
जी रहे/ इस शहर में
मेहमान चिड़ियां भी
आती रहतीं यहां
दिल से मजबूर
भावनाओं में डूबीं।

लिटिल एन्जिल्स, प्रीपरेट्री स्कूल,
59 श्यामाचरण एन्क्लेव, विष्णु गार्डन,
पो. गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार,
मो. 0 97562 58731,

दोहों में पर्यावरण

● मंजु गुप्ता

बिगड़ते पर्यावरण पर, उठ रहें हैं सवाल
मानव करे मनमानी, कुदरत है बेहाल।

औद्योगिकरण क्रांति से, होए जग में विनाश
माँ गंगा मैली हुई, क्या यही है विकास?

सावन अब बरसे नहीं, तपे नहीं है जेठ
किसानी त्रसदियाँ बन, भरे नहीं है पेट।

औद्योगिक अपशिष्ट बह, नदियां होए खराब
हुआ है जल जहरीला, जीना हुआ मुहाल।

जल का प्रदूषण ना कर, नीर है मूल्यवान
नीर प्रबंधन सही कर, जल जीवन की जान।

होता कांक्रीटीकरण, हरियाली है खोए
सूखे की मार से भू , खुशहाली को रोए।

पर्यावरण हुआ खराब, सूरज उगले आग
तड़पें जल, थल, नभ जीव, बिना मेघ के प्यास।

जंगल काट कर, बन रहे हैं मकान
कुदरत की पड़ती मार, आते हैं तूफ़ान।

अवरोही मेघ न दिखे, न गरजता आकाश
बिजली अब कभी-कभार गिरती, बुझे न जग की प्यास।

खनन विस्फोट से, पहाड़ होए तबाह
बनाते हैं नदियों पर, लम्बे-चौड़े बाँध।

जल, वन, भू संपदा पर, ना कर अणुबम वार
ग्लोबल वार्मिंग ना हो, लो ज्ञानी-विज्ञानी की राय।

बनाकर सुरंगें-बाँध, आए नदी में बाढ़
कुदरत के खिलवाड़ से, गंवाने पड़े प्राण।

नदी, पोखर सूख रहे, जल संकट चहुँ ओर
प्राणी हैं दम तोड़ते, देय जल रक्षण जोर।

हो प्लास्टिक पर निषेध, बने कड़े कानून
करे यह भू को बंजर, समस्या अति न न्यून।

हम दें न पीढ़ी को, संतुलन का उपाय
जाने वैदिक संस्कृति, जग इसको अपनाए।

ना हो विश्व उष्मीकरण, वनों को ना उजाड़
होए पर्यावरण ठीक, पेड़ लगा इंसान।

आर्गेनिक पैदावार, दे गुणवत्ता-स्वाद
हो हम ईकोफ्रेंडली, मिलता जीवन लाभ।

पेड़ों को काट मानव, करे धरा वीरान
फिर ग्लोबल वार्मिंग से, क्यों होते हैरान?

चिड़ियाँ हो रही गायब, फैला टावर जाल
बीमारी बढ़ रही है, बुला रहा नर काल।

विकास के उपकरण से, वन होते बरबाद
धरा पर संकट छाया, नहीं बचेंगे प्राण।

खिड़कियों, छत, आँगन में बो पौधे परिवार।
पर्यावरण हित वास्ते, दे भू को उपहार।

19 , द्वारका , प्लॉट 31
सेक्टर, 9 ए , वाशी, नवी मुम्बई, 400703
मो. 0 98339 60213

बाल कविताएं

● संजीव ठाकुर

सूरज ने तो

सूरज ने तो चूस लिया
पानी सारा धरती का
फसल उगे भी तो कैसे
हाल बुरा परती का ।
बारिश को न गाँव सुहाता
मन लगता मुंबई में
वहाँ से थोड़ा मन ऊबे तो
जाती वह चेन्नई में !
गंगा मैया, यमुना मौसी
रहतीं सूखी-सूखी
इसीलिए गरीब और गुरबे
खाते रोटी रूखी।
प्रभु की यह कैसी लीला ?
है किसी के घर में झरना
और किसी को मीलों जाकर
पड़ता पानी भरना !
पीता कोई आर ओ वॉटर
कोई बिसलेरी जल
और किसी के घर में हरदम
खाँस रहा होता नल !

ऐसा हो, काश !

नाना जी तो पंख लगा कर
चले गए आकाश में
नानी मेरी अभी भी लेकिन
रहतीं मेरे पास में !
नानी के घर में रहने से
नहीं लगातीं मम्मी डांट
जो कुछ भी लेकर वह आतीं
नानी से लेती मैं बाँट !
और पिताजी की न पूछो
शरमाये रहते चुपचाप
चाहे कितनी करूँ गलतियाँ
नहीं लगाते मुझको थाप !
कितना अच्छा होता नानी
रहतीं सब दिन मेरे पास
नाना जैसे पंख लगाकर
न जाएँ, ऐसा हो काश !

कौआ काका

कौआ काका क्या कहते हो
आएगी मेरी नानी ?
सोच मिठाई की बातें
मुँह में भर आया पानी !
न जाने क्या-क्या लेकर
आएगी मेरी नानी
मैं तो एक न दूँगा तुमको
मुझे नहीं बनना दानी !
लेकिन काले कौए काका
अगर नहीं आई नानी
कौन मुझे दिलवाएगा
प्यारी सी गुड़िया रानी ?

एस. एफ. 22, सिद्ध विनायक अपार्टमेंट, अभय खंड 3, इंदिरापुरम, गाज़ियाबाद -201010 ।
दूरभाष : 0120-4116718

बाल कविता

मन करता है

● डॉ. परशुराम शुक्ल

मम्मी! मन करता है मेरा
रोज बाग में जाऊं
बाग बगीचों में खेलूं मैं
जी भर मौज मनाऊं।

मम्मी! मन करता है मेरा
तितली सा उड़ जाऊं
पंछी सा उपवन में डोलूं
मीठे गीत सुनाऊं।

मम्मी! मन करता है मेरा
सागर सा लहराऊं
बर्फीले पर्वत पर घूमूं
जंगल में खो जाऊं।

मम्मी! मन करता है मेरा
नानी के घर जाऊं
पीपल की छाया के नीचे
मीठे जामुन खाऊं।

मम्मी! मन करता है मेरा
तुमसे भी बतियाऊं
लेकिन ये सब करूं कि अपना
होमवर्क निपटाऊं।

आइवरी, फ्लैट नं. 20, पांचवीं मंजिल, प्लेटिनम प्लाजा, टी.टी. नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश-462 003
मो. 0 99268 56086

व्यंग्य

कवि सम्मेलनों का राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय होना

● सुधाकर आशावादी

अपुन के मित्र मुझसे कल ही पूछ रहे थे कि कवि गोष्ठी और कवि सम्मलेन में क्या अंतर है। मैंने उनका सही जवाब नहीं दिया, ज़वाब तो तब देता जब मेरी समझ में कोई ज़वाब आता। जब मोहल्ले में आया तो गुल्लू भाई से मुलाक़ात हो गई। मैंने प्रश्न दुहराया तो गुल्लू मियां ने मेरी अक्ल पर पड़े पत्थर हटा दिए। मैंने मुहल्ले में अपने आसपास की गतिविधियाँ निहारी, तो पाया कि अपुन का मुहल्ला क्या है। इंटरनेशनल प्लेस है। इंटरनेशनल इसलिए कि अपने यहाँ अनेक इंटरनेशनल हस्तियाँ रहती हैं। एक कवि महोदय हैं जो अमेरिका रिटर्न हैं। अमेरिका में हिंदी के ट्यूशन पढाया करते थे। अमेरिका वाली पत्नी से झगड़ा हो गया, सो उससे पल्ला झाड़कर अपने देश लौट आये। एक इंजीनियर साहेब हैं जो दुबई रिटर्न हैं। एक मिस्त्री साहेब हैं जो कनाडा में प्लंबर का कार्य करते हैं। यदा कदा अपने मुहल्ले की याद उन्हें मुहल्ले में खींच लाती है। इसके अलावा भी अपने शर्मा जी का बेटा है, जो साल में एक बार मुहल्ले में आकर अपनी शक्ल दिखा जाता है। अपने मुहल्ले में एक टिम्बर मर्चेंट का बेटा भी है। दुकानदारी से उसका मोह भंग है। एक कवि की शैली में उसी की कविताओं का पोस्ट मार्टम करता रहता है। एक सज्जन और हैं। एक फेक्ट्री में लेबर इंचार्ज थे। फेक्ट्री की तालाबंदी होने के बाद सड़क पर आ गए। रोजगार की तलाश की। समय पर रोजगार नहीं मिला तो अपना हुलिया बदलकर विशुद्ध साहित्यकार सरीखा लुक अपना लिया। इतनी वेरायटी अपने मुहल्ले में है। तब इसका लाभ उठाने के लिए भी मुहल्ले में कोई सज्जन होना चाहिए था कि नहीं। खैर यह कमी मुहल्ले के चैनसुख लाल जी ने पूरी कर दी। उन्होंने अपनी समाजसेवा की शुरुआत मुहल्ले के सफाई अभियान से की थी, किन्तु मुहल्ले वालों ने उन्हें वैसा कोई सम्मान देने से परहेज किया जैसा सम्मान उन्होंने अपने लिए चाहा था। उसके बाद उन्होंने अपने घर में एक साहित्यिक आयोजन किया। उस आयोजन में शहर के गिने चुने स्वनाम धन्य बुलाये। उन स्वनाम धन्यों ने अपने अपने अंदाज में अपनी अपनी कुछ पंक्तियाँ पढ़ी , जिस कार्यक्रम को कवि गोष्ठी का नाम देकर खूब प्रचारित किया गया। उसके बाद एक दिन उनके घर पर दूसरे शहर से एक साहित्य प्रेमी आये। यूँ तो वे उनके निकट सम्बन्धी थे, किन्तु चैनसुख लाल जी ने उनके सम्मान में एक कार्यक्रम का आयोजन कर दिया, चूँकि रिश्तेदार दूसरे शहर से पधारे थे, सो कार्यक्रम का नाम भी कुछ बड़ा रखा गया। अब वह कार्यक्रम काव्य गोष्ठी न रहकर अखिल भारतीय कवि सम्मेलन की श्रेणी में प्रचारित किया गया। अखबारों में कवियों को विशिष्ट विशेषणों से नवाजते हुए कवियों की पंक्तियों को भी प्रकाशित किया गया। अब चैनसुख लाल जी की आँखों में दिन दूनी रात चौगुनी गति से स्वयं को वरिष्ठ साहित्यकार सिद्ध करने का भूत सवार हो गया। अखिल भारतीय कवि सम्मलेन का आयोजन जैसे उनके लिए बांये हाथ का खेल बन गया। जब मन किया, तभी किसी पड़ौसी शहर से किसी साहित्य प्रेमी को बुला लिया। भले ही वह अपनी कविताएँ सुनाये या किसी अन्य से लिखवाकर कविताएँ लाये और उन्हें अपनी कविता कहकर सुनाये। बहरहाल अखिल भारतीय कवि सम्मेलनों का वजूद उन्हें अपने वजूद से कम लगने लगा तो उनकी महत्त्वाकांक्षाओं को पंख लग गए। अब अंतर्राष्ट्रीय कवि सम्मेलन से कम किसी प्रकार का भी आयोजन उन्हें स्वीकार नहीं था। उन्होंने अपने दिमाग के घोड़े दौड़ाने शुरू किये। अमेरिका रिटर्न कवि महोदय से चर्चा की, तो उन्होंने बताया कि उनके एक मित्र कुछ समय के लिए अपने मुहल्ले में आने वाले हैं, सो उन मित्र महोदय के सम्मान में एक कवि सम्मलेन का आयोजन कर लिया जाए, जिसका नाम अंतर्राष्ट्रीय कवि सम्मलेन रखा जाए। कार्यक्रम भले ही चैनसुख लाल जी की बैठक में ही रखा जाए, मगर उसका प्रचार प्रसार किसी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के कार्यक्रम से कम न किया जाए। चैनसुख लाल जी के लिए यह खासा उत्साह उत्पन्न करने वाला सुझाव था, सो सुझाव दाता को भी अमेरिका का कवि दर्शाते हुए निमंत्रण पत्र छपवाए गए। फेसबुक और इंटरनेट भी अंतर्राष्ट्रीय आयोजन की चर्चा की गयी। उस दिन के बाद मुहल्ले भी जितने भी आयोजन होते हैं, सभी आयोजनों को अंतर्राष्ट्रीय आयोजन कहकर प्रचारित किया जाता है। ऐसा भला हो भी क्यों न, क्योंकि समय ही प्रचार प्रसार का है। वैसे जब किसी एक मुहल्ले में ही किसी दूसरे शहर के लोग किरायेदार बनकर आ जाएं, विदेश से कुछ ख़ास लोग अपने मुहल्ले में लौट आयें , तो उस मुहल्ले में होने वाले अधिकांश आयोजन स्वतः ही अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त तो हो ही सकते हैं।

शास्त्री भवन, ब्रहमपुरी, मेरठ-250002
मो. 097583412

व्यंग्य

आह बड़े बाबू, वाह!

● अशोक गौतम

बड़े बाबू जिस तरह से रिटायरमेंट से पहले जनता की फाइलें अपनी सीट पर छुपाया करते थे वैसे ही रिटायरमेंट के बाद वे अपनी फाइल भी यमराज के ऑफिस में छिपवाने में कामयाब हो गए। भ्रष्टाचारी कहां नहीं साहब! किसी भी लोक में चले जाओ। वहां कोई मिले या न पर भ्रष्टाचारी जरूर मिल जाएंगे जेबों में झांकते हुए। इसी का नतीजा था कि उनके साथ वाले उनके दफ्तर के ईमानदारी के बाद भी यमराज की नजरों में एक एक कर आते रहे और पेंशन पत्नी के नाम कर जाते रहे। पर वे जमे रहे तो जमे रहे।

उस दिन यमराज पता नहीं क्या ढूंढ रहे थे कि अचानक उनके हाथों से किसी घोटाले सी बड़े बाबू की फाइल आ टकराई। उन्होंने उसकी धूल झाड़ी तो देखा कि ये तो बड़े बाबू की चार साल पहले एक्सपायर हो चुकी फाइल है। जब उन्होंने फाइल ध्यान से खोली तो हैरान रह गए कि इस बंदे को तो फाइल के हिसाब से उसके पास चार साल पहले आ जाना चाहिए था। घोर अनर्थ हो गया! इतनी बड़ी भूल कैसे हो गई उनसे?? कहीं वे भी रिटायरमेंट पर जाने काबिल तो नहीं हो गए? लगता है अब अपने लिए मृत्युलोक से याद्दाश्त बनाए रखने के लिए शंख पुष्पी मंगवानी ही पड़ेगी। या फिर ब्राह्मी का सेवन करना पड़ेगा।

बड़ी देर तक पश्चाताप की अग्नि में जलते हुए तब उन्होंने अपने दूतों को आदेश दिया, 'मित्रो! मृत्युलोक के पानी महकमे से रिटायर बड़े बाबू को कायदे से चार साल पहले आ जाना चाहिए था। वे तो नहीं आए पर आप लोगों ने भी मुझे इस बारे में नहीं बताया?? '

'सर! हम कैसे बताते? सारा रिकार्ड तो विनोद सर के पास है। हम तो बस आपके और उनके आदेशों की तामिल करते हैं।'

'तो इसका मतलब उस कमीने रिकार्ड कीपर ने भी हमें नहीं बताया। कहीं वह बड़े बाबू से मिला तो नहीं होगा?'

'सर हो भी सकता है और नहीं भी। पर असल में सब बाबू होते एक से हैं। पर चलो, कोई बात नहीं। आपका इतना बड़ा साम्राज्य है। ऐसे में गलती तो हो ही जाती है।'

'तो अब ऐसा करो। जितनी जल्दी हो सके, बड़े बाबू को ले आओ। उन्हें ऐसा न लगे कि वे आज तक जनता का तो उल्लू बनाते ही रहे, अब मेरा उल्लू बनाने में भी कामयाब हो गए हैं।'

और यमराज के आदेश पा दूत दिल्ली के प्रदूषण का खयाल रख गधे को लेकर धरती पर आए और उस पर बड़े बाबू को लेकर यमलोक के लिए रवाना हो गए। बेचारों को किसी से बात करने का मौका भी न मिला। जैसे ही वे यमलोक को कूच किए तो सारा मुहल्ला हतप्रभ रह गया। हद हो गई यार! बंदे ने जाने का पता तक न दिया। सोचा न था कि इतना शातिर आदमी पलक झपकते चला जाएगा।

जब बड़े बाबू यमराज के सामने पहुंचे तो उनसे डरने की बजाय जेब से फोन निकाल उसमें किसी का नंबर ढूंढने लगे तो यमराज को उन पर बड़ा गुस्सा आया। हद है यार! बंदा मर गया पर मोबाइल हाथ से नहीं छूट रहा। मोबाइलोकोहलिक लग रहा है। जब यमराज से रहा न गया तो वे बड़े बाबू को हड़काते बोले,' बड़े बाबू! यार, ये मोबाइल अब तो मरने के बाद परे रख दो। अब ये यहां काम नहीं करेगा। किसे फोन कर रहे हो?'

'सचिवालय कर रहा था। वे शिक्षा विभाग के सचिव हैं न! मुझे ढूंढ रहे होंगे। असल में मैं उनको बता कर नहीं आया हूं।'

'यहां किसी को कोई बता कर नहीं आता। लाना पड़ता है। अब छोड़ो इनकी-उनकी चिंता। अब तुम चिंता से ऊपर उठे बंदे हो। चलो, तुम्हें तुम्हारे किए कर्मों की इस्टमैन कलर, मल्टी डाइमेंशनल फिल्म बताता हूं। बुरा मत मानना, तुम्हारे लिए नरक तय करने में मुझे तो क्या, तुम्हें भी देर न लगेगी । तुम्हारे कारनामे ही ऐसे हैं कि....' कह यमराज ने बड़े बाबू को अपने पीछे आने का संकेत किया। यमराज के मुंह से जब बड़े बाबू ने यह बात सुनी तो वे डरने की बजाय यमराज पर पासा फेंकने की तैयारी में जुट गए। बड़े बाबू में और चाहे कितनी ही कमियां क्यों न हों, बड़े बाबू की सबसे बड़ी खासियत यही है कि वे हर स्थिति का मुकाबला पूरे झूठ के बल पूरी ईमानदारी से करते हैं। पूरे दम खम के साथ झूठ बोलकर हर किसी को कनवींस व इंप्रेस करना उनकी नेचर का

अहम हिस्सा है। बाद में जो होता हो, होता रहे। उनको सुनने वाले हर पहले को उनसे पहले मिलन में ऐसा लगता है कि इस बंदे से अधिक सच्चा तो धर्मराज भी नहीं हो सकता।

'चलो साहब! अपने कर्मों का फल तो सभी को भुगतना ही है। इसके लिए मैं तैयार हूं पर.....'

'पर क्या????' हद है यार! बंदा यमराज के समाने भी सीना तानकर?

'मेरा तो जो होना है, होता रहे, पर मैं नहीं चाहता कि आप आगे से घाटे में रहो।'

'मैं और घाटे में?? मैं तो नफे-नुकसान से ऊपर उठा हुआ बंदा हूं यार।'

'अच्छा तो सर! बातों की बात। बुरा न मानें तो एक बात बताने का साहब कष्ट फरमाएंगे?'

'पूछो!'

'आप कितनी बार भारत भ्रमण पर गए?'

'अनेकों बार। कभी पंद्रह अगस्त को तो कभी छब्बीस जनवरी को। कभी हरिद्वार तो कभी... बहुधा सांप्रदायिक दंगों के वक्त तो कई-कई दिन वहीं रहता हूं। अभी-अभी उज्जैन कुंभ नहाने गया था जहां साधुओं के बीच गोली चली थी।'

'गुड! घूमते रहना सेहत के लिए बेहतर होता है। मेरे दादा जी कहा करते थे,' तब पता नहीं कैसे यमराज की बंदे में दिलचस्पी बढ़ने लगी। हद है यार! जहां पर आकर भगवान भी डरता है वहां ये जीव खुलकर बातें कर रहा है। नरक से कतई भी नहीं डर रहा??

'तो आप भ्रमण पर जाते कैसे हैं? सरकारी वाहन से ही जाते होंगे?'

' नहीं, मैं सरकारी संपत्ति को जनता की संपत्ति मानता हूं। इसलिए सरकारी गाड़ी में नहीं जाता।'

' इसीलिए तो आप यमराज हैं साहब! वरना मेरी तरह होते। मन करता है आपकी आरती उतारूं। पूजा की थाली मिलेगी यहां कहीं सर??'

'छोड़ो ये सब! यहां साहब भक्ति, चापलूसी पर पाबंदी है। पर तुम क्या कह रहे थे कि...'

' तो सर, मैं कह रहा था कि सरकारी संपत्ति का सुदपयोग करना अच्छी बात है। ऐसा करने से मन को बड़ी शांति मिलती है। पर अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होना भी जरूरी है।'

'मतलब??'

'आप भारत भ्रमण पर पब्लिक वाहन से जाते हैं। ऐसा ही होना चाहिए एक आदर्श कर्मचारी। पर आपने कभी आकर अपना टीए बिल अपने आप भरा?'

' नहीं!' यमराज कुछ शर्मिंदगी सी फील करने लगे।

' बस सर! यमराज होने के बाद भी खा गए न यहीं पर मात! सरकार के प्रति वफादार होना अच्छा है। पर....'

'पर क्या....???'

'आपको पता है टीए बिल कैसे भरते हैं? शायद नहीं। कितने किलोमीटर बाद हाल्ट मिलता है? पता है? शायद नहीं! साहब जानते हैं कि पैदल चलने का पर किलोमीटर रेट क्या है? शायद नहीं, डीए के नए रेट क्या हैं? दिल्ली में किस होटल में रुकने के लिए आपकी इंटाइटल्मेंट है? पर डरो मत साहब! अब हम आ गए हैं न! आपको सब सीखा कर ही रहेंगे।'

' मैं तो जिसके जहां मन करे वहीं रुक जाता हूं। पर ये सब तो मैंने कभी सोचा ही नहीं बड़े बाबू! मेरा टीए बिल तो मेरी पीए ही भरती रही आज तक।'

'मतलब जो वो भरती रही, उसे आप ठीक मानते रहे। हो सकता है वह आपका डीए कम ही भरती रही हो। जो ऐस हुआ होगा तो आज तक कितना नुकसान हो गया होगा आपको? कभी केलकुलेट किया आपने? सरकारी पैसा न खाना अच्छी बात है। पर सरकारी धन की रक्षा करते-करते अपने को चूना लगवाना कहां की भलीमानसी का काम है सर? बुरा न मानो तो चलो आपको टीए - डीए के रूल ही बता देता हूं ताकि आगे से ...... सर! आपको कुछ आए या न पर मेरा मानना है कि टीए-डीए भरना जरूर आना चाहिए। अपनी पीए पर कब तक निर्भर रहेंगे आप? आप भी सदा याद रखेंगे कि किसी बड़े बाबू से वास्ता पड़ा था आपका!'

'तो??'

'देखो सर! बड़े दिनों बाद मिले हैं! अब तो ऐसे में आपसे एक चाय तो बनती ही है। चाय के साथ-साथ एन ओवर व्यू ऑफ टीएडीए रूल्स हो जाएगा तो आगे से किसी की क्या मजाल जो कोई आपका गलत टीए बिल भरने-भरवाने का साहस करे। जिंदगी में किसी को कुछ आए या न, पर टीए- डीए रूल्स हर हाल में आने चाहिएं। मरे से मरा जीव कहीं जाए या न, पर इस लोक से उस लोक तो उस लोक से इस लोक तो आता- जाता ही रहेगा न सर? सो दैट, आई एम सॉरी टू से यू कि.... ....,' बड़े बाबू ने चाय की आती खुशबू की ओर नाक किए पुरजोश कहा तो यमराज असमंजस में इधर-उधर की बगलें झांकने लगे। जब उन्हें लगा कि उन दोनों को कोई अंधी आंख तक नहीं देख रही तो वे भीगी बिल्ली से बिल्लियाते सामने वाले रेस्तरां में बड़े बाबू को चाय पिलाने न चाहते हुए भी ले गए। उस समय मरे होने के बाद भी बड़े बाबू के चेहरे की चमक देखने लायक थी।

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड,
सोलन, हिमाचल प्रदेश -173212

समीक्षा

गद्दी समुदाय के आत्म-गौरव को जगाता दस्तावेज

● अजय पाराशर

अनुसूचित जनजाति वर्ग के अन्तर्गत आने वाले गद्दी समुदाय को भारत सरकार ने वर्ष 1951 में शिक्षा और सरकारी नौकरियों में आरक्षण प्रदान किया था। कभी भरमौर राज्य की स्थापना और उसके कुशल संचालन के गौरवशाली इतिहास होने के स्वामी होने के बावजूद ऐसी क्या ज़रूरत आन पड़ी कि इस समुदाय के उत्थान के लिए सरकारी सहायता अनिवार्य हो गई थी। ब्रिटिश शासन के दौरान गद्दी समुदाय में शून्य नेतृत्व की स्थिति पैदा होने के चलते कई वर्षों तक इसे असहाय स्थिति में रहना पड़ा। नेतृत्वविहीन गद्दी समुदाय प्रदेश के अन्य समुदायों की तुलना में पिछड़ता चला गया और इस समुदाय को लेकर लोगों में कई भ्रान्तियां फैलती गईं।

गद्दी समुदाय से सम्बन्धित तमाम रोचक जानकारियां एवं भ्रान्तियां इतिहास, संस्कृति, मानव विज्ञान, समाज शास्त्र या साहित्य में रुचि रखने वाले छात्रों और शोधार्थियों के लिए हमेशा जिज्ञासा का साधन रही हैं। समय-समय पर इस समुदाय पर हुए शोध के चलते कई पुस्तकें प्रकाशित होती रही हैं। सर्वश्री जे. हटिचसन और जे.पी.एच. वोगल के चम्बा पर प्रकाशित गज़ेटियर के अतिरिक्त राहुल सांस्कृतायन, एच.ए. रोस, अमर सिंह रणपत्तिया, डॉ. गौतम शर्मा व्यथित, नन्द कुमार, सुदर्शन वशिष्ठ, लाल चन्द प्रार्थी, डॉ. ललित कुमार पाण्डे, वंशी राम शर्मा, सुरेन्द्र मोहन सेठी, रेखा थपलियाल आदि लेखकों द्वारा रचित पुस्तकों में गद्दी समुदाय से सम्बन्धित कई जानकारियां उपलब्ध हैं। किन्तु किसी भी एक पुस्तक में ऐसी तमाम जानकारियों, तथ्यों और विस्तृत इतिहास का अभाव है, जिससे इस समुदाय के बारे में व्याप्त भ्रान्तियां को दूर करने में सहायता मिलती हो। गौरतलब यह भी है कि भरमौर राज्य की गद्दी की स्थापना से सम्बन्ध रखने वाले क्षत्रिय वंश के पांच कबीलों या कुलों के साथ इस समुदाय से सम्बद्ध अन्य जातियों को भी कालान्तर में गद्दी समुदाय में सम्मिलित मान लिया गया। मिसाल के लिए-भरमौर में ब्राह्मणों को गद्दियों के ब्राह्मण कहा कर बुलाया जाता है न कि गद्दी ब्राह्मण। कुल मिला कर कहा जा सकता है कि भरमौर की गद्दी की स्थापना से सम्बन्धित कुलों को गद्दी जाति की संज्ञा से अलंकृत कर दिया गया, जबकि वास्तविकता थी कि ये सभी लोग मात्र राज्य की स्थापना के लिए मरू या माडू नामक सन्त की अगुवाई में एकत्रित हुए थे।

छात्रों, शोधार्थियों और सामान्य पाठकों को ये तमाम जानकारियां श्री रत्न चन्द वर्मा की पुस्तक 'भरमौर-चम्बा के संस्थापक वीर गद्दी' में प्राप्त हो सकती हैं। स्वयम् 'गद्दी' समुदाय से सम्बन्ध रखने वाले श्री रत्न चन्द वर्मा भले ही पेशे से इन्जीनियर रहे हों; किन्तु अपने समुदाय के बारे में लोगों, जिनमें उनके अपने समुदाय विशेष के लोग भी शामिल हैं, में व्याप्त भ्रान्तियों से पीड़ित होकर, उन्होंने अपने पेशे से इतर इतिहास में न केवल झांकने का सफल प्रयास ही किया है; बल्कि अपने शोधपरक अध्ययन से ऐसे लोगों को बगलें झांकने पर विवश कर दिया है, जो गद्दी समुदाय को हेय मानते आए हैं। उन्होंने अपने शोध की स्थापना में ऐसे तथ्य और प्रमाण प्रस्तुत किए हैं जो अब तक इतिहासकारों की दृष्टि से करीब ओझल रहे हैं। अपने सरकारी सेवा काल के दौरान लेखक ने प्रदेश के विभिन्न स्थानों में अपनी तैनाती के दौरान, न केवल गद्दी समुदाय के बारे में प्रचलित तमाम धारणाओं और बातों को समझने का प्रयास ही किया बल्कि उससे सम्बंधित मौखिक एवं लिखित इतिहास, देव परम्पराओं, रीति-रिवाजों, मूल्यों और जानकारियों को आधार बना कर अपना महत्वपूर्ण शोध कार्य सम्पन्न किया। उन्होंने 'गद्दी' शब्द की उत्पत्ति के बारे में इतिहास में अब तक व्याप्त तमाम भ्रान्तियों को खारिज करते हुए, इस समुदाय के उद्‌गम और इतिहास से सम्बद्ध तमाम तथ्यों को प्रमाणों सहित सफलतापूर्वक प्रतिस्थापित किया है।

अपने लेखकीय में श्री वर्मा ने अपने उस अनुभव को भी सांझा किया है, जिसमें दिल्ली में उनके परिचित किसी इतिहासकार ने एक किताब में छपे उस छायाचित्र को उन्हें दिखाया, जिसे देख कर उन्हें आत्मग्लानि और वेदना से गुजरना पड़ा। छायाचित्र में मैले-कुचैले गद्दी परिधान, टूटे-फूटे हुक्के और गोद में चार-पांच मेमने लिए इस व्यक्ति को 'एक गद्दी' शीर्षक से अलंकृत किया गया था।

श्री वर्मा अपनी पुस्तक में बताते हैं कि भरमौर राज्य की राजधानी के चम्बा स्थानान्तरित होने के पश्चात् उन्हें अपने राजाओं के साथ चम्बा में ही रहना पड़ा। कुछ दशकों तक तो गद्दी

समुदाय से सम्बन्धित सेनानायक और राज्य के महत्त्वपूर्ण पदों पर आसीन क्षत्रिय गद्दी समुदाय से जुड़े रहे। किन्तु कालान्तर में वे अपने समुदाय से दूर होते गए। 15वीं शताब्दी तक आते-आते केवल राजा ही औपचारिकतावश अपने राज्याभिषेक के समय गद्दी वेशभूषा पहन कर अपने गद्दी होने की समृति को ताज़ा कर लेते थे। इस तरह गद्दी केवल वहीं रह गए, जिनके पास न राजा था, न राजधानी और न ही राज्य के खास पदों वाली जिम्मेवारियां।

बावजूद इसके जब कभी पड़ोसी राज्यों के साथ विग्रह होता तो भरमौर के गद्दियों की राजा को सबसे पहले आवश्यकता अनुभव होती। योद्धा होने के अतिरिक्त ये लोग सबसे भरोसेमन्द और ज़िम्मेवार हितैषी थे, इसीलिए विजित राज्य में इस समुदाय के लोगों को स्थापित किया जाता था। फलस्वरूप, आज गद्दी समुदाय के लोग जम्मू-कश्मीर के बसोहली, भद्रवाह, किश्तवाड़ और डोडा ज़िला के कई कस्बों में लाखों की संख्या में जम्मू-कश्मीर के स्थायी निवासी बन चुके हैं। चम्बा और कांगड़ा ज़िला में तो प्रत्येक तहसील और परगनों में काफी संख्या में गद्दी आबाद हैं।

अपनी लेखकीय योजना के तहत श्री वर्मा ने पुस्तक को, जिन नौ अध्यायों में विभिक्त किया है, उनमें परिचय, पृथ्वी पर प्राणी और मानव सभ्यताएं, भारत की प्रागैतिहासिक जातियां, औदुम्बर गणराज्य, भरमौर में गद्दी की स्थापना, ब्रह्मपुर या भरमौर राज्य का स्वतन्त्र होना, चम्बा राज्य के राजाओं का इतिहास, पहाड़ी प्रदेशों के आदि निवासी और ब्रह्मपुर भरमौर और उसमें बसने वाली जातियां शामिल हैं। कुल 258 पृष्ठों वाली इस पुस्तक में सिकन्दर का मार्ग, औदुम्बर गणराज्य, ब्रह्मपुर या भरमौर गणराज्य तथा राज्य और मेरु वर्मा के समय ब्रह्मपुर या भरमौर नामक चार मानचित्र भी शामिल किए गए हैं।

पुस्तक के पहले अध्याय 'परिचय' में उन्होंने गद्दी शब्द के बारे में स्थापित और प्रचलित तमाम धारणाओं को दरकिनार करते हुए कहा है कि भेड़-बकरी चराने वालों को कहीं भी गद्दी नहीं कहा गया है। अगर ऐसा होता तो भरमौर के साथ लगती चुराह तहसील, मंडी, कुल्लू और किन्नौर के भेड़-पालकों को भी गद्दी कहा गया होता। इसी तरह हिन्दुस्तान के अन्य राज्यों जैसे राजस्थान, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, चन्नई आदि में जहां सबसे अधिक भेड़पालक हैं, उनका नामकरण भी इसी शब्द से हुआ होता। उन्होंने इतिहासकार वासुदेव शरण अग्रवाल सहित चम्बा गैज़ेटियर के ब्रितानवी लेखकों, डॉ. जे. हचिटसन और डॉ. जे.पी. एच वोगल द्वारा प्रस्तुत तथ्यों को भी सिरे से खारिज किया है।

दूसरे अध्याय में उन्होंने जीव के पृथ्वी पर आने के इतिहास में झांकने का प्रयास किया है।

तीसरे अध्याय में उन्होंने भारत की प्रागैतिहासिक जातियों के इतिहास के बारे में बात की है। पर कहीं विवेचन स्पष्ट है तो कहीं लेखक उलझे हुए प्रतीत होते हैं। इस अध्याय में लेखक ने नीग्रोइड, निषाद, द्रविड़, किरात, यक्ष, किन्नर, नाग, खस और आर्य जातियों के बारे में जानकारी दी है। उन्होंने आर्यों के आदि निवास, अन्य क्षेत्रों में उनके विस्तार, प्रागैतिहासिक संस्कृति, सामाजिक जीवन और धर्म, उत्तर वैदिक काल, वंश, भारत में उसके प्रसार, उनके द्वारा काव्यों की रचना आदि पर चर्चा की है। उन्होंने गद्दी शब्द की व्युत्पत्ति के बारे में भी विस्तार से लिखा है। उन्होंने राठियों के भारत हमले, सिकन्दर के भारत हमले तथा उसकी वापसी, मगध साम्राज्य तथा चन्द्रगुप्त द्वारा मौर्य राज्य की स्थापना के बारे में भी लिखा है।

चतुर्थ अध्याय में उन्होंने औदुम्बर गणराज्य की भौगोलिक तथा आर्थिक स्थिति, शासन प्रणाली तथा संस्कृति आदि के बारे में लिखा है। भारत पर यवन, शक और कुषाणों के शासन तथा प्रभाव आदि की चर्चा की है।

पांचवें अध्याय में उन्होंने भरमौर में गद्दी की स्थापना के बारे में विस्तार से चर्चा की है। वह बताते हैं कि किस प्रकार हमलावर हूणों से जान-माल की सुरक्षा के लिए भरमौर में गद्दी की स्थापना की गई थी। संघ के अन्तर्गत गद्दी के हकदारों के जितने कुल होते थे, उनको गद्दीदार के नाम से जाना जाता था। कालान्तर में इन्हीं गद्दीदारों को गद्दी के नाम से पुकारा जाने लगा। किन्तु कुछ स्थानों पर प्रस्तुत विवेचन में पूरी स्पष्टता नज़र नहीं आती। उन्होंने सभ्य और असभ्य के प्रश्न पर चोट करते हुए कहा है कि अगर प्रकृति के इस क्रूर सत्य, कि जो सक्षम है उसे ही जीने का अधिकार है तो फिर सभ्य और असभ्य का प्रश्न ही कहां रह जाता है?

छठे अध्याय में उन्होंने गद्दी सेना के विषय में स्पष्ट करने का प्रयास है कि गद्दी सेना, उन क्षत्रिय कुलों का समूह होता था, जो वर्षो पूर्व उत्तरी-पश्चिमी भारत के काबुल, कन्धार, सिन्धु नदी और पूरी पंचनद घाटियों में संघों के अन्तर्गत आते थे। वे सभी सम्बन्धित गणराज्य की गद्दी के हकदार थे तथा अपना हक जताने के लिए प्रतीक चिन्ह का इस्तेमाल करते थे और उनके लिए गद्दीदार या गद्दी शब्द लोक व्यवहार में था। जब ये, सैनिक अभियान पर जाते तो उनकी सेना को गद्दी की सेना के नाम से जाना जाता था। गद्दी शब्द, राजा का पर्यायवाची होने से सम्मानीय
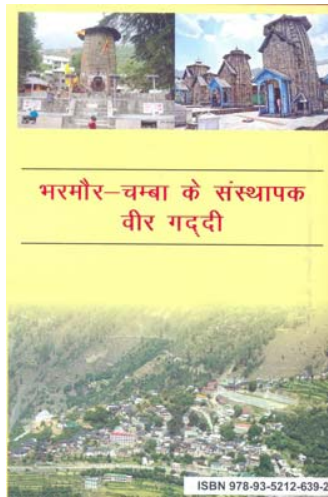
था, जो अठाहरवीं सदी तक आते-आते राजनीतिक उथल-पुथल और भौगोलिक परिस्थितियों की वज़ह से अपनी प्रतिष्ठा खो बैठा। उन्होंने यह भी बताया है कि किस प्रकार हिमाचल प्रदेश सरकार ने भरमौर की कठिन परिस्थितियों में जीवन-यापन करने वाले गद्दी लोगों के पिछड़े रह जाने के कारण उनको ब्राह्मण, क्षत्रिय, राजपूत या अन्य किसी जाति सम्बद्ध होने के बावजूद विशेष जनजाति का दर्जा प्रदान किया था।

सातवें अध्याय में बेहतर प्रस्तुति के बावजूद लेखक कहीं-कहीं भटकते नज़र आते हैं। कई स्थानों पर लेखक ने राजाओं के आम जीवन से जुड़े किस्से बेहद रोचक ढंग से प्रस्तुत किए हैं; जो शायद अन्य इतिहासकारों या साहित्यकारों की नज़र में नहीं आ पाए हैं।

आठवें अध्याय में लेखक ने पहाड़ी प्रान्तों के आदि निवासियों के बारे में विस्तार से बताया है। उन्होंने सामाजिक जीवन, वर्ग और वर्ण की स्थापना या अन्तर, जातियों की स्थिति, वंश, गोत्र, कुल, सपिण्ड या मियाँ शब्द की उत्पत्ति के बारे में सुरुचिपूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया है।

अन्तिम अध्याय में लेखक ने ब्रह्मपुर या भरमौर और उसमें बसने वाली जातियों के सामाजिक संगठन के बारे में बताया है। वह स्पष्ट करते हैं कि गद्दी जाति में केवल क्षत्रिय या खत्री आते हैं और उन्हें ही गद्दी कहा जाता है। किन्तु सत्रहवीं या अठारहवीं शताब्दी में कुछ राणा, ठाकुर या राठियों की जातियों को भी उनके उत्कृष्ट कार्यों के आधार पर अभिषिक्त करने के बाद गद्दी होने का दर्ज़ा प्रदान कर दिया गया था। ब्राह्मणों को गद्दियों का ब्राह्मण होने से स्वतः ही गद्दी कहलाने या होने का अधिकार मिल गया परन्तु वे गद्दी नहीं बल्कि उनके ब्राह्मण हैं। भरमौर में गद्दी की स्थापना करने वाले केवल पांच अभिषिक्त क्षत्रिय कबीले थे; जो सूर्य, चन्द्र और अग्नि वंशीय थे। उन्होंने वर्ण व्यवस्था के अलावा निवास के नाम पर जातियों का ब्यौरा, अभिवादन, उपाधियों, योद्धाओं के आचरण पर गोत्र तथा भारत के उत्तरी पश्चिमी प्रान्तों विशेषकर पंजाब, भरमौर तथा पंजाब के क्षत्रियों में समानता, उनके सामाजिक संगठन, धर्म तथा सती प्रथा के बारे में विस्तारपूर्वक बताया है। उन्होंने भारत के अन्य राज्यों उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, बिहार, झारखंड तथा दिल्ली के गद्दी समुदायों की बात भी की है। आधुनिक भारत में गद्दियों की स्थिति के अतिरिक्त उन्होंने पाकिस्तान में उनके हालात और उनके धर्म परिवर्तन के कारणों का उल्लेख भी किया है।

कुल मिलाकर लेखक ने पुस्तक की प्रस्तावना में अपने जो उद्देश्य निहित किए हैं, उनकी प्राप्ति में वह सफल दिखते हैं। किन्तु युग्मों में अंक प्रयोग, वर्तनी दोष, कहीं-कहीं पर अशुद्ध या अधूरे वाक्य अखरते हैं; विशेषकर जब प्राक्कथन डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित' जैसे साहित्यकार और संस्कृति के मर्मज्ञ द्वारा प्रस्तुत किया गया हो। फिर भी लेखक के यान्त्रिकी करियर से सम्बद्ध होने की वज़ह से इन दोषों को भुलाया जा सकता है।

उप निदेशक, क्षेत्रीय कार्यालय, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, धर्मशाला, ज़िला.कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 215

पुस्तक : भरमौर-चम्बा के संस्थापक वीर गद्दी **: लेखक :** रत्न चंद वर्मा, **प्रकाशक :** सावित्री ऐतिहासिक शोध केन्द्र उपरली दाड़ी, धर्मशाला, ज़िला कांगड़ा, हि. प्र. 176057, **मूल्य :** 350 रुपये, **कुल पृष्ठ :** 254।

नई कलम/कविता

संभावनाओं की तलाश

● राहुल रघुवंशी

हर-पल कल-कल करता हूं
इस असमंजस को लिए फिरता हूं।

राई से पहाड़ तो नहीं बनाता,
पर संभावनाओं का पहाड़ लिए फिरता हूं।

कदम ताल छोड़ अपनी राह चलता हूं
समझ-समझ से चलते चलता हूं।

एक अंधेरे को दूर करने के लिए
रोशनी की तलाश में फिरता हूं।

चल, अचल स्थिति को पार किए
अपनी दुनिया को साथ लिए चलता हूं।

खुली नींद अचानक उस तनमय से
भार को स्थिर किए फिरता हूं।

वीरता का प्रदर्शन हर जगह उचित नहीं,
शांत रस का प्रयोग किए चलता हूं।

गुणगान अपना ही नहीं, औरों की भी सुनता हूं
बखान सिर्फ सच्चाई का किए घूमता हूं।

गांव शरनू, डाकघर बनोगी, तहसील व जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173 211,
मो. 89880 60001

समीक्षा

खुद से रूबरू कराता ग़ज़ल संग्रह 'तस्मै श्री गुरवे नमः'

● बी. एल. आच्छा

'मुहब्बत का सफरनामा' के बाद 'तस्मै श्री गुरवे नमः' श्री जगदीशचंद्र पंडया का दूसरा ग़ज़ल संग्रह है। शीर्षक से भ्रांति होती है कि यह गुरु आस्था वाली सांस्कारिक-दार्शनिक पुस्तक होगी। परंतु ग़ज़लों का यह संग्रह भारतीय अद्वैत दर्शन और सूफ़ी दर्शन की युति को आज के परिप्रेक्ष्य में नई अंदाज़ेबयानी देता है। विश्व के बदलते विषम परिदृश्यों, मानवीय व्यवहारों के असंगत बदलावों, बाज़ार के लालच की हलचलों और ज़माने की हवाओं के बरअक्स जिस्मानी रंगीनियों से टकराते-गुज़रते हुए यह ग़ज़ल संग्रह पाठक को उस नाभि केंद्र में ले जाना चाहता है, जिसका विस्तार, जिसकी परिधियां यह संसार है। वह भटकते हुए इस संसार को अपने मर्कज़ (केंद्र) से रूबरू कराना चाहता है, मायावीपन की रंगीनियों और अहंकार के वैभव को चीरकर। जिसने हमें सिरजा है और जिसके सिरजे हुए हम हैं, ऐसे जीवात्मा और परमात्मा की लयात्मक अनुभूति से हमारा साक्षात्कार हो, यही इन ग़ज़लों की आंतरिक पीड़ा है, लौकिक स्तर पर भी और दार्शनिक स्तर पर भी। इस एकलय का साधक है गुरु, जो जायसी के पद्मावत में 'गुरु सुआ जे पंथ देखावा' था और कबीर में विरह की आग को उपजाने वाला। यह संग्रह गुरु के प्रति पहला प्रणिपात है, नमन है। निश्चय ही यह गुरु-दृष्टि का शुक्ल पक्ष है, जिसने सांसारिक भटकावों से अलगावकर रूहानी रोशनी से परिचय करवाया है।

ग़ज़ल का उत्स प्रेम है, पीड़ा है, विरह की आग है, मिलन की ललक है, मंज़िल की ओर दौड़ है। अभिव्यक्ति का यह छंद केवल काव्यपक्ष लेकर नहीं आता बल्कि समूची परंपरा को भी खींचता चला आता है। पर दुष्यंत ने जिस तल्खी और अंदाज़ेबयानी से प्रेम की इस तड़प को राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और मर्मांतक परिदृश्यों से संक्रात किया तो ग़ज़ल की परिधि भी व्यापक और पाठक-केंद्रित बनी। यद्यपि इस संग्रह की ग़ज़लों में प्रेम ही केंद्र में है, गुरु की दृष्टि ही वरेण्य है, पर जीवन की व्यापक अनुभूतियों, पीड़ाओं, विषमताओं, भटकाव के परिदृश्य भी इन ग़ज़लों को जीवन-सापेक्ष बनाते हैं। कवि इन परिदृश्यों से गुज़रते हुए उनकी निरर्थकता का एहसास कराता है, जो महज़ जिस्म तक, वैभव तक, अंधकारमय मायावी दुनिया तक अटक कर रह जाते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा था कि स्वर्ग का रास्ता भी संसार के बीच से होकर गुज़रता है। यह ग़ज़ल संग्रह भी सांसारिक-परिदृश्यों की यथार्थ अनुभूति से पलायन नहीं करता बल्कि अपने एहसासों से पाठक को चेतना के मूल केंद्र से मुखातिब करवाता है।

कवि ने केवल दर्शन और दार्शनिक चेतना के लिए इन ग़ज़लों की रचना नहीं की है। वह उन टकराहटों का भी पक्षधर है, क्योंकि घटाटोप अंधेरों के बिना रोशनी की तड़प कैसे पैदा की जा सकती है-

आये कुछ एतबार अपने पे',
वक़्त की आंधियां ज़रूरी हैं।

पर वह तटस्थ है, मोहग्रस्त नहीं। वह बेग़रज़ है, इसीलिए अक्ता नहीं है। कबीर ने कहा था- **जाको कछु ना चाहिए, सो नर शहंशाह।** इसलिए शायर कहता है-

वक़्त होता सवार जिन पर वे,
ज़िंदगी के शिकार होते हैं।

जान लेते जो रूह को अपनी,
वे तो जिस्मों के पार होते हैं।

इसीलिए वह बही-खातों के सांसारिक लेन-देन में उलझता नहीं है, बल्कि चेतना के स्तर पर पहचानता है-

देखने वाले देख लेते हैं,/ मैं समंदर में हूं, लहर में हूं।

कबीर इसे 'जल में कुंभ, कुंभ में जल है'- के प्रतीक से व्यक्त करते हैं, पर है तो अनुभव का अद्वैत ही।

यद्यपि इस ग़ज़ल संग्रह की अनेक ग़ज़लें दो एकांतिकों से जुड़ी हैं, कहीं यह मुहावरा अरबी फ़ारसी से जुड़ा है, तो कहीं संस्कृत की तत्समता से, पर ग़ज़ल जैसे छंद की दुश्वारियों को इस संग्रह में मुकम्मल रूप मिला है। अलबत्ता जहां कहीं कवि इन दोनों सिरों से युक्त होकर अदायगी करता है तो उसका सहज-सरल रूप पाठक को खींच लेता है। इन तीनों ही रूपों का अवलोकन इन

उदाहरणों में किया जा सकता है-

था तेरी रहमत का जलवा, और क्या था,
जुल्म पर बेखौफ़ था मंसूर इतना।

वासना है पुंश्चली बहुरूपिणी
तुम उसे भी मातृका-सा देखना।

अक़्ल यूं तो मुनीम है अच्छी
पर ख़यानत भी खूब करती है।

तय है कि ग़ज़ल की तकनीकी महारत के साथ वह अदायगी की ओर बढ़ा है तो सूफ़ी-दर्शन और अरबी-फ़ारसी शब्दावली खिंची चली आई है और अद्वैत दर्शन के साथ परंपरा और संस्कृत की शब्दावली भी। पर इन फ़लसफ़ों में भी वह जहां कहीं सवालों और वास्तविकताओं से गुज़रता है तो नए ज़माने की कड़वी सच्चाइयां उसकी शायरी से लिपटती हैं, उसे आमफ़हम शब्दावली से जोड़ती है और वास्तविकताओं से पाठकों को खींचती है। यथा-

बूंद हूं वक़्त के तवे पर हाय,/ आंच पाकर उछल रहा हूं मैं।

सभी बेटों ने घर और ज़र किये तक़्सीम आपस में,
मगर था बाप बूढ़ा जो कि झोली ले सड़क पर था।

उसके बारे में करें बातें बड़ी, जाने बिना,
औलिया होते नहीं, तब मौलवी होते हैं हम।

पर इस संग्रह की ख़ासियत और खूबसूरती इसी बात में है कि वह वास्तविकाओं से रूबरू कराते हुए, दार्शनिक चिंतन और सांस्कृतिकता से गुज़रते हुए उसी केंद्र में पाठक को ले जाना चाहता है, जिसके मूल में आत्मा-परमात्मा की एकलयता है और उस एकलयता की दिशा को दिखाने वाला गुरु है। यों सवाल किया जा सकता है कि आज के ज़माने में उस रहस्य-साधना की क्या प्रासंगिकता है। ग़ज़लकार इन पुराने फ़लसफ़ों से क्यों मुखातिब है? पर नऐ ज़माने की कड़वी सच्चाइयां भी अंततः उसी ओर ले जाने को विवश हैं क्योंकि हर युद्ध शांति की तलाश करता है, हर तनाव प्रेम की राह खोजता है, हर युग का कृष्ण महाभारत की इतिहास-रचना के बाद राधा की शरण में जाता है। इसलिए सवाल संसार से भागकर किसी अदृश्य सत्ता की तलाश का नहीं है। यह ग़ज़ल संग्रह भी जीवन के कसैलेपन, भौतिक प्राप्तियों की मृग-तृष्णाओं को, सारे भटकावों की निरर्थकता को और मानवीय व्यवहारों के छलावों को व्यक्त करते हुए जिस्म और रूह, आत्मा और परमात्मा के केंद्र में ही अपनी अनुभूतियों को रोशन करता है।

36 Clemens road behind Sarvanna Store
Purusaiwakam, Chennai-600007

कविता

उजास

● **प्रोमिला भारद्वाज**

ढूंढने निकली
बावरी आस,
अंजुरी, भर उजास।
डुबकी लगा उसमें
निखरने को,
मटमैली हो जाए
प्रायः प्रदूषण से,
फैला आस-पास
अंदर बाहर,
चहुं ओर
और क्यूं?
जाने सब
क्यूं दोहराएं
सोचे, बस
कैसे मिटाएं,
इसका कहर
श्वासों में घुले
बन धीमा जहर,
विभिन्न कुंठाएं बन
मन में जाएं पसर,
गली-गली
शहर-शहर,
हर प्रहर
सांस लेना, जीना
हुआ जाए दूभर,
ऐसे में
मनचली आस का,
देख नन्हा प्रयास
करें क्यूं परिहास
ढूंढ रही उजास
बिखेर सब पर
स्वयं निखर संवर
देखने को सब
सौम्य-सुंदर

बाहर-भीतर
शुद्ध पवित्र,
ये है तत्पर।
प्रार्थना करो उपाय
सफल हो उज्ज्वल
सदैव रहे प्रफुल्ल
बावरी आस।
ढूंढ ले
अंजुरी भर उजास
रिक्त हो न कभी
आशा हो पूरी सबकी
प्रसन्न रहें सभी
और तृप्त रहे आस।

प्रबंधक जिला उद्योग केंद्र,
जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 001,
मो. 0 94180 04032

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 अगस्त, 2016 अंक : 5

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

किसी भी कीमत पर स्वतंत्रता का मोल नहीं किया जा सकता। वह जीवन है। भला जीने के लिए कोई क्या मोल नहीं चुकाएगा।

– महात्मा गांधी

इस अंक में

लेख

हमारे साहित्यकार

साहित्यिक यात्रा संस्मरण

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

पुस्तक अंश/समीक्षा

अपनी बात

पंद्रह अगस्त का दिन हमारे लिए किसी राष्टीय महापर्व से कम नहीं है। यह न केवल हमें भारतीय होने का एहसास करवाता है, बल्कि राष्ट्रीयता का बोध भी करवाता है। यह दिवस हमें स्वाधीनता संग्राम में असंख्य क्रांतिकारी नेताओं, स्वतंत्रता सेनानियों, और देशभक्त जननायकों द्वारा दिए गए सर्वोच्च बलिदान को स्मरण कर उनसे प्रेरणा लेने का अवसर प्रदान करता है। इनके बलिदान एवं देशप्रेम का ही प्रतिफल है कि आज हम स्वतंत्रत भारत की खुली फिजाओं में सांस ले रहे हैं। इसमें संदेह नहीं कि आजादी के इन वर्षों में हमने बहुत कुछ हासिल किया है। विकास के हर क्षेत्र में हमने नए सोपान तय कर विश्व स्तर पर अपनी शानदार उपस्थिति दर्ज की है। लेकिन विकास के कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं जहां अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है। इसके अतिरिक्त बढ़ती जनसंख्या, भ्रष्टाचार, नशाखोरी तथा सामाजिक असमानता जैसे कुछ अलग क्षेत्र हैं जो देश के सतत् विकास के रास्ते में आज चुनौती बन खड़े हैं। देश के समक्ष दरपेश इन चुनौतियों एवं समस्याओं पर चिंतन- मनन के लिए स्वतंत्रता दिवस से बेहतर शायद ही और कोई अवसर हो। समय की मांग है कि लोगों में देशप्रेम एवं भारतीयता की मूल भावना का संचार कर समाज में सांप्रदायिक सौहार्द को बिगड़ने-बिगाड़ने का किसी को मौका न दिया जाए। भारतवर्ष को वर्ष 1947 में जब आजादी मिली, विश्व स्तर पर उस समय निरंकुश तानाशाही विचारधाराओं का बोलबाला था और उस दौर के शासक अति राष्ट्रवाद की भावना से ग्रसित थे, जो राष्ट्र के नाम पर समाज को क्रूर व्यवहार से आतंकित करने से भी गुरेज नहीं करते थे। संयोगवश भारत में उस समय देश का नवनिर्माण महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू और सरदार बल्लभभाई पटेल जैसे राष्ट्रीय नेताओं और अनेक देशभक्त प्रबुद्धजनों की छत्रछाया में हुआ, जिन्होंने देशवासियों में देशप्रेम का जज्बा पैदा कर उन्हें भारतीय बनने की सीख दी। आजादी के बाद देश में विकास की प्रकिया में जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते गए, दुर्भाग्यवश शहरी और ग्रामीण भारत में प्रगति की रफ्तार को एक साथ बराबर नहीं रख सके, इसका नतीजा यह हुआ कि भारत में कृषि के साथ-साथ गांवों में आर्थिक विकास के ग्रामीण एवं कुटीर उद्योग जैसे अहम क्षेत्र पिछड़ते चले गए। परिणामस्वरूप देश में विकास के क्षेत्रों में अर्जित अभूतपूर्व उपलब्धियों के बावजूद इण्डिया और भारत के बीच खाई ज्यों की त्यों बनी रही। स्वतंत्रता के लगभग सात दशक बीत जाने के बाद भी देश में महिलाओं, निर्धनों एवं दलितों और पिछड़े वर्गो को अपने अधिकारों की रक्षा के संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद बराबरी के हक के लिए जूझना पड़ रहा है। समाज के इन वर्गो को विकास की मुख्यधारा में शामिल किए बगैर देश के सर्वांगीण विकास को परिपूर्ण नहीं माना जा सकता। देखने में आया है कि देश के जिन राज्यों ने भूमि-सुधारों की प्रक्रिया को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किया है, वहां गरीबी कम करने तथा सामाजिक समरसता बनाए रखने में अधिक सफलता मिली है। इस मामले में हिमाचल प्रदेश एक ऐसा सौभाग्यशाली राज्य है जिसने इस दिशा में बहुत पहले ही शुरुआत करते हुए यहां भूमि-सुधारों को लागू कर दिया था, परिणामस्वरूप प्रदेश को आज देश के शान्तिप्रिय एवं राजनीतिक रूप से एक स्थिर राज्य के रूप में जाना जाता है। जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि हमारे समक्ष ऐसी चुनौती है जिसका समाधान किए बिना देश को प्रगति के पथ पर आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। इस दिशा में दीर्घकालिक उपाय ही बेहतर परिणाम दे सकते हैं। युवा हमारे देश का भविष्य है। युवा शक्ति को राष्ट्र निर्माण गतिविधियों में लगाकर उनके सुनहरे भविष्य को सुनिश्चित बनाया जा सकता है। मूल्यपरक एवं स्वरोजगारोन्मुखी शिक्षा के माध्यम से युवाओं को रोजगार व स्वरोजगार के पर्याप्त अवसर मुहैया करवाए जा सकते हैं। आजादी के इस पावन अवसर पर हम सब को एकजुट होकर देश के प्रति समर्पित भाव से कार्य करते हुए एक सुदृढ़ एवं सशक्त भारत का मार्ग प्रशस्त करना होगा।

–संपादक

स्वतंत्रता दिवस पर विशेष आलेख

आर्थिक स्वतंत्रता से शांति, प्रगति व विकास

मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह का स्वतन्त्रता दिवस पर आलेख

विकास एक निरंतर प्रक्रिया है, जो विकास व वृद्धि प्राप्त करने में सहायक होती है और इसी से समाज में शांति व समृद्धि आती है। देश के 70वें स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर, मैं विकास प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी निभाने के लिए हिमाचल प्रदेश के लोगों का आभार व्यक्त करता हूं। भारत के कई राज्य बड़े अचरज में हैं कि कैसे एक छोटे से पहाड़ी राज्य हिमाचल प्रदेश ने अभूतपूर्व ऊंचाइयां प्राप्त की हैं और आज वह विकास के विभिन्न सूचकों में देश में अग्रणी है। यह सब हिमाचल प्रदेश के सीधे-साधे लोगों के कठिन परिश्रम, निष्ठा एवं समर्पण का ही परिणाम है कि प्रदेश ने शिक्षा, अधोसंरचना विकास, स्वास्थ्य एवं नागरिक सेवाओं के विकास में नये आयाम स्थापित किए हैं। मैं यह गर्व से कह सकता हूं कि हमारे प्रदेश में कोई भी बेघर नहीं है और कोई भूखा नहीं सोता। नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. अमर्त्य सेन ने अपने आलेख में उल्लेख किया है कि हिमाचल प्रदेश ने यह सिद्ध कर दिया है कि विकास कष्ट और गरीबी से आज़ाद करता है। मैं स्वतंत्रता सेनानियों, राष्ट्रभक्त नागरिकों को श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूं जिन्होंने हमें स्वतंत्रता दिलाई जिसके परिणामस्वरूप हम अपने प्रदेश को सुरक्षित व समृद्ध बना सके।

संतुलित सर्वांगीण विकास, सकारात्मक नीतिगत पहल तथा सरकार द्वारा बेहतर कार्यान्वयन से प्रदेश के लोगों को अपनी क्षमता के समुचित दोहन व अपने सपने साकार करने का एक उचित मंच प्राप्त हुआ है। सर्वांगीण विकास को अपना मूल मंत्र बनाते हुए हमारी सरकार मेहनतकश, ईमानदार व निष्ठावान प्रदेशवासियों की क्षमताओं का दोहन करते हुए प्रदेश को स्वावलंबी बनाने के लिए निरंतर प्रयासरत है।

ज्ञानशील समाज का निर्माण

हम प्रदेश के प्रत्येक नागरिक को सशक्त करना चाहते हैं तथा इसके लिए प्रत्येक बच्चे को घरद्वार पर बेहतर शिक्षा प्रदान कर उसे शिक्षित करना होगा। हम गर्व के साथ कह सकते हैं कि हिमाचल प्रदेश में प्राथमिक स्तर पर बच्चों का शत प्रतिशत दाखिला हो रहा है। प्रदेश सरकार ने वर्तमान कार्यकाल में राज्य में 1010 से अधिक स्कूल खोले अथवा स्तरोन्नत किए हैं। इसके अलावा 24 नये आई.टी.आई., दो इंजीनियरिंग कॉलेज तथा 41 महाविद्यालय भी खोले गए हैं। सरकारी स्कूलों तथा केन्द्रीय विद्यालयों के सभी बच्चों को स्कूल से घर आने-जाने के लिए राज्य पथ परिवहन निगम की बसों में निःशुल्क यात्रा सुविधा प्रदान की जा रही है। मुख्यमंत्री आदर्श विद्यालय योजना शुरू की गई है जिसके अन्तर्गत प्रत्येक विधानसभा क्षेत्र के दो-दो वरिष्ठ माध्यमिक स्कूलों में गुणात्मक अधोसंरचना व शिक्षण सुविधाओं का विकास किया जाएगा।

सरकारी स्कूलों के बच्चों को मुख्यमंत्री वर्दी योजना के अन्तर्गत वरिष्ठ माध्यमिक स्तर तक निःशुल्क वर्दियां उपलब्ध करवाई जा रही है। ऊना ज़िले में भारतीय सूचना एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, सिरमौर जिले में भारतीय प्रबन्धन संस्थान तथा शिमला में फाईन आर्ट्स कॉलेज खोला गया है। शिमला के समीप मुक्त राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय खोला जा रहा है।

सभी को गुणात्मक स्वास्थ्य सुविधाएं

स्वस्थ मनुष्य एक समृद्ध समाज की पहली पहचान है। प्रदेश में चरणबद्ध रूप से स्वास्थ्य सेवाओं का बेहतर एवं सुदृढ़ नेटवर्क सृजित किया जा रहा है। गत लगभग 44 महीनों में प्रदेश में 135 स्वास्थ्य संस्थान खोले अथवा स्तरोन्नत किए गए है जबकि विगत सरकार के पूरे कार्यकाल में केवल 28 संस्थान खोले गए थे। इस अवधि के दौरान स्वास्थ्य क्षेत्र में विभिन्न श्रेणियों के 2500 से अधिक पद सृजित किए गए जबकि पूर्व सरकार के कार्यकाल में केवल 473 पद सृजित किए गए थे। हमीरपुर, चम्बा तथा सिरमौर ज़िलों में तीन मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे हैं। इन मेडिकल कॉलेजों के लिए विभिन्न श्रेणियों के 1775 पद सृजित किए गए हैं। प्रदेश के लिए एक ''एम्स'' भी स्वीकृत करवाया गया है जिसे बिलासपुर जिले में खोला जाएगा। सरकार ने जिला मंडी में ई.एस.आई. मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल नेर चौक को भी अधिगृहित कर लिया है।

सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण

आर्थिक सुरक्षा शांति से जीवनयापन करने की सबसे महत्वपूर्ण भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है। सभी पात्र लोगों को सामाजिक सुरक्षा छत्र प्रदान किया जा रहा है ताकि उन्हें सामाजिक एवं आर्थिक रूप से सशक्त किया जा सके। 3 लाख 87 हज़ार से अधिक पात्र विधवाओं, वृद्धों तथा

संतुलित सर्वांगीण विकास, सकारात्मक नीतिगत पहल तथा सरकार द्वारा बेहतर कार्यान्वयन से प्रदेश के लोगों को अपनी क्षमता के समुचित दोहन व अपने सपने साकार करने का एक उचित मंच प्राप्त हुआ है। सर्वांगीण विकास को अपना मूल मंत्र बनाते हुए हमारी सरकार मेहनतकश, ईमानदार व निष्ठावान प्रदेशवासियों की क्षमताओं का दोहन करते हुए प्रदेश को स्वावलंबी बनाने के लिए निरंतर प्रयासरत है।

दिव्यांग लोगों को 650 रुपये प्रतिमाह की सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है। 80 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धजनों तथा 45 वर्ष से कम आयु की बच्चों वाली विधवाओं को 1200 रुपये प्रतिमाह की सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है।

युवाओं को रोज़गारोन्मुखी प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए 500 करोड़ रुपये की कौशल विकास योजना कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अन्तर्गत बेरोज़गार युवाओं को कौशल विकास के लिए एक हज़ार रुपये प्रतिमाह भत्ता प्रदान किया जा रहा है जबकि दिव्यांग युवाओं को 1500 रुपये का कौशल विकास भत्ता दिया जा रहा है।

सभी को खाद्यान्न सुरक्षा

यह सरकार का कर्तव्य है कि ऐसी प्रणाली विकसित की जाए जिसके माध्यम से प्रत्येक नागरिक को चाहे वह निर्धन हो या धनवान, आवश्यक वस्तुएं उचित मूल्य पर उपलब्ध हो सकें। प्रदेश की शत-प्रतिशत जनसंख्या को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत लाया गया है। गत तीन वर्षों के दौरान राज्य खाद्यान्न उपदान योजना के तहत लोगों को उपदानयुक्त दरों पर दालें, खाद्य तेल तथा आयोडीनयुक्त नमक प्रदान करने पर 667 करोड़ रुपये खर्च किए गए है जबकि वर्तमान वित्तीय वर्ष के लिए 210 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं। प्रदेश के लगभग 37 लाख लोगों को राजीव अन्न योजना के अन्तर्गत खाद्य सुरक्षा प्रदान कर प्रति व्यक्ति प्रति माह तीन किलो गेहूं 2 रुपये प्रति किलो तथा दो किलो चावल 3 रुपये प्रति किलो की दर से प्रदान किए जा रहे हैं। सभी बीपीएल परिवारों को प्रतिमाह 35 किलो राशन दिया जा रहा है।

सुशासन समाज में शांति व समृद्धि की कुंजी है। मेरी सरकार ने हमेशा उत्तरदायी, जवाबदेह तथा पारदर्शी प्रशासन के आदर्शों की अनुपालना की है। हमने देश में सुशासन तथा कारगर एवं स्वच्छ प्रशासन के लिए सम्मान पाया है। लोगों को निर्धारित समयावधि के भीतर विभिन्न सुविधाएं उपलब्ध करवाने के लिए विभिन्न विभागों की 86 सेवाओं को लोक सेवा गारंटी अधिनियम के अन्तर्गत लाया गया है।

ग्रामीण आवास

आवासहीन लोगों को आवास प्रदान करने के लिए इस अवधि के दौरान इंदिरा आवास योजना के अन्तर्गत 8538.65 लाख रुपये व्यय कर 13652 घरों तथा राजीव आवास योजना के अन्तर्गत 2280.47 लाख रुपये खर्च कर 2141 घरों का निर्माण किया गया है। इस वित्तीय वर्ष से सामान्य श्रेणी के बी.पी.एल. परिवारों को 75 हज़ार रुपये का आवास उपदान प्रदान करने के लिए मुख्यमंत्री आवास योजना आरम्भ की गई है। वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान विभिन्न आवास योजनाओं के अन्तर्गत 97 करोड़ रुपये व्यय कर 12 हज़ार आवासों का निर्माण किया जाएगा।

ग्रामीण आर्थिकी का सुदृढ़ीकरण

कृषि विविधीकरण तथा सरंक्षित खेती पर राज्य सरकार विशेष बल दे रही है क्योंकि कृषि क्षेत्र प्रदेश की कुल श्रम शक्ति के 60 प्रतिशत भाग को प्रत्यक्ष रोज़गार प्रदान करता है। किसानों को 111.19 करोड़ रुपये की डॉ. वाई.एस. परमार किसान स्वरोज़गार योजना के अन्तर्गत पॉलीहाउस के निर्माण के लिए 85 प्रतिशत परियोजना सहायता प्रदान की जा रही है। किसानों को टपक सिंचाई सुविधाएं प्रदान करने के लिए 154 करोड़ रुपये की 'राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना' कार्यान्वित की जा रही है।

प्रदेश में मुख्यमंत्री खेत संरक्षण योजना के अन्तर्गत किसानों को उनकी फसलों को आवारा पशुओं व जंगली जानवरों से बचाने के लिए अपने खेतों पर बाढ़ लगाने के लिए 60 प्रतिशत सहायता दी जा रही है।

प्रदेश में बागबानी क्षेत्र को सुदृढ़ करने के लिए राज्य सरकार ने विश्व बैंक के वित्त पोषण से 1115 करोड़ रुपये की हिमाचल प्रदेश बागबानी विकास परियोजना आरम्भ की है। इस अवधि के दौरान 27.45 करोड़ रुपये व्यय कर 10 विपणन यार्डों/ प्रापण केन्द्रों का निर्माण किया गया है। फल-फसलों, विशेष कर सेब को ओलावृष्टि से बचाने के लिए सरकार ने एंटी हेल-नेट पर उपदान को 80 प्रतिशत तक बढ़ाया है। मौसम आधारित फसल बीमा योजना का विस्तार कर अब सेब व आम के अलावा प्लम, आड़ू तथा नींबू प्रजाति के फलों को भी योजना में शामिल किया गया है।

इस अवधि के दौरान विभिन्न पेयजल आपूर्ति योजनाओं पर 773 करोड़ रुपये खर्च किए गए हैं। इस अवधि में 6949 अतिरिक्त बस्तियों को ग्रामीण पेयजल आपूर्ति योजना के अन्तर्गत लाया गया है तथा जलाभाव वाले क्षेत्रों में 4887 हैंडपम्प लगाए गए हैं। लगभग 400 करोड़ रुपये व्यय कर 10586 हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को सिंचाई सुविधा प्रदान की गई है। ऊना ज़िले में 922 करोड़ रुपये की स्वां नदी तटीकरण परियोजना तथा कांगड़ा ज़िले में 180 करोड़ रुपये की छौंछ खड्ड तटीकरण परियोजना का कार्य प्रगति पर है।

कृषि विविधीकरण तथा सरंक्षित खेती पर राज्य सरकार विशेष बल दे रही है क्योंकि कृषि क्षेत्र प्रदेश की कुल श्रम शक्ति के 60 प्रतिशत भाग को प्रत्यक्ष रोज़गार प्रदान करता है। किसानों को 111.19 करोड़ रुपये की डॉ. वाई.एस. परमार किसान स्वरोज़गार योजना के अन्तर्गत पॉलीहाउस के निर्माण के लिए 85 प्रतिशत परियोजना सहायता प्रदान की जा रही है। किसानों को टपक सिंचाई सुविधाएं प्रदान करने के लिए 154 करोड़ रुपये की 'राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना' कार्यान्वित की जा रही है।

दूरदराज क्षेत्रों को सड़क सुविधा

सड़कें सही अर्थों में मेरे राज्य की जीवन रेखाएं हैं। प्रदेश के दूरस्थ क्षेत्रों को सड़क से जोड़ना सरकार की प्राथमिकता है। गत लगभग साढ़े तीन वर्षों में 1640 किलोमीटर नई सड़कों व 160 पुलों का निर्माण किया गया तथा 306 अतिरिक्त गांवों को सड़क सुविधा प्रदान की गई। प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के अन्तर्गत भारत सरकार से 532 करोड़ रुपये लागत की 2267 किलोमीटर सड़कों के निर्माण की 241 विस्तृत परियोजना रिपोर्ट स्वीकृत करवाई गई हैं। इस अवधि के दौरान 603 करोड़ रुपये लागत से 2489 किलोमीटर लम्बी सड़कों का निर्माण कर 378 परियोजनाओं को पूरा किया गया है।

राज्य सरकार द्वारा राज्य पथ परिवहन निगम के बेड़े में 1231 बसें शामिल की गई हैं तथा 69 बसें शीघ्र शामिल की जाएंगी। महिलाओं को प्रदेश के भीतर परिवहन निगम की बसों में किराए में 25 प्रतिशत की छूट दी जा रही है।

औद्योगिक वृद्धि एवं विकास

प्रदेश सरकार राज्य के नियोजित औद्योगिक विकास के प्रति वचनबद्ध है। कांगड़ा जिले के कंदरौड़ी तथा ऊना ज़िले के पंडोगा में क्रमश: 122 करोड़ रुपये तथा 140 करोड़ रुपये की लागत से अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जा रहे हैं। प्रदेश में नये उद्योग स्थापित करने के लिए एक सामान्य आवेदन पत्र पर 45 दिनों के भीतर सभी स्वीकृतियां प्रदान की जा रही हैं। गत साढ़े तीन वर्षों में राज्य स्तरीय एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा 13080 करोड़ रुपये के निवेश की 267 औद्योगिक इकाइयों को स्वीकृति दी गई है जिनमें 25850 रोज़गार के अवसर उपलब्ध होंगे। 300 या इससे अधिक हिमाचलियों को रोज़गार देने वाले नये उद्योगों से पहले पांच वर्षों तक केवल एक प्रतिशत विद्युत शुल्क वसूला जाएगा।

राज्य में मुख्य पर्यटन स्थलों की समृद्ध धरोहर को संरक्षित करने तथा

अधोसंरचना के विकास के लिए एशियाई विकास बैंक से 570 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता स्वीकृत की गई है।

गत तीन वर्षो के दौरान घरेलू उपभोक्ताओं को सस्ती दरों पर बिजली उपलब्ध करवाने के लिए 1080 करोड़ रुपये खर्च किए गए हैं जबकि इस वित्तीय वर्ष में इसके लिए 410 करोड़ रुपये आबंटित किए गए हैं।

कर्मचारियों एवं श्रमिकों का कल्याण

हिमाचल प्रदेश का वर्तमान स्वरूप सरकारी कर्मचारियों के श्रम व समर्पण का परिणाम है। सात वर्ष का नियमित सेवाकाल पूरा करने वाले दिहाड़ीदारों तथा पांच वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले अनुबंध कर्मचारियों को नियमित किया जा रहा है। दिहाड़ीदारों की न्यूनतम दिहाड़ी को 150 रुपये से बढ़ाकर 200 रुपये किया गया है। आठ वर्ष का सेवाकाल पूरा करने वाले अशंकालिक कर्मचारियों को दिहाड़ीदार बनाया जा रहा है। अंशकालिक जलवाहकों, जल-रक्षकों, सिलाई अध्यापकों, ग्राम विद्या उपासकों, गृह-रक्षकों तथा पंचायत चौकीदारों के मानदेय में वृद्धि की गई है।

हमारी सरकार ने गत साढ़े तीन वर्षों के दौरान सरकारी तथा निजी क्षेत्र में 60 हज़ार से अधिक लोगों को रोज़गार उपलब्ध करवाया है। इसमें से सरकारी क्षेत्र में 27 हज़ार से अधिक युवाओं को रोज़गार के अवसर उपलब्ध करवाए गए। 'मनरेगा' योजना के अन्तर्गत इस अवधि में 1474.34 करोड़ रुपये व्यय कर 708.63 लाख श्रम दिवस सृजित किए गए हैं।

स्वतंत्रता सेनानियों व सैनिकों का सम्मान

हम अपने स्वतंत्रता सेनानियों, सैनिकों तथा भूतपूर्व सैनिकों के सदैव आभारी हैं तथा मेरी सरकार ने उन्हें हमेशा पूर्ण सम्मान दिया है। स्वतंत्रता सेनानियों के सम्मान स्वरूप राज्य सरकार ने स्वतत्रंता सेनानियों की सम्मान राशि को 7500 रुपये से बढ़ाकर 10 हज़ार रुपये तथा उनकी विधवाओं एवं अविवाहित पुत्रियों की सम्मान राशि को 3500 रुपये से बढ़ाकर पांच हज़ार रुपये प्रतिमाह किया है।

संवेदनशील एवं जवाबदेह प्रशासन

स्थिरता से समृद्धि एवं विकास है तथा प्रदेश में कांग्रेस सरकारों ने हमेशा सशक्त व स्थिर सरकारें प्रदान की हैं, जिससे सर्वांगीण विकास सुनिश्चित हो सका है।

सुशासन समाज में शांति व समृद्धि की कुंजी है। मेरी सरकार ने हमेशा उत्तरदायी, जवाबदेह तथा पारदर्शी प्रशासन के आदर्शों की अनुपालना की है। हमने देश में सुशासन तथा कारगर एवं स्वच्छ प्रशासन के लिए सम्मान पाया है। लोगों को निर्धारित समयावधि के भीतर विभिन्न सुविधाएं उपलब्ध करवाने के लिए विभिन्न विभागों की 86 सेवाओं को लोक सेवा गारंटी अधिनियम के अन्तर्गत लाया गया है।

स्वतत्रंता दिवस के इस पावन अवसर पर आओ हम सब 'सम्पूर्ण स्वतत्रंता' के लक्ष्य को पाने तथा हिमाचल प्रदेश को देश का सर्वाधिक विकसित राज्य बनाने के लिए एकजुट होकर कार्य करने के प्रति समर्पित हों।

ଓଓଓ

औद्योगिक विकास के प्रति वचनबद्धता को निभाते हुये कांगड़ा जिले के कंदरौड़ी तथा ऊना ज़िले के पंडोगा में क्रमशः 122 करोड़ रुपये तथा 140 करोड़ रुपये की लागत से अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जा रहे हैं। प्रदेश में नये उद्योग स्थापित करने के लिए एक सामान्य आवेदन पत्र पर 45 दिनों के भीतर सभी स्वीकृतियां प्रदान की जा रही हैं। गत साढ़े तीन वर्षों में राज्य स्तरीय एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा 13080 करोड़ रुपये के निवेश की 267 औद्योगिक इकाइयों को स्वीकृति दी गई है।

आज़ादी की 69वीं सालगिरह पर

हिमाचल को हेरते हम

● श्रीनिवास श्रीकांत

पंद्रह अगस्त 1947 को गुज़रे उनहत्तर बरस बीत गए। आज़ादी के महा-उत्सव की याद आज भी ज़हन में तरोताज़ा है। मेरी पीढ़ी के लोगों ने देखा था वह मंज़र अपने बालपन में। वह दिन भारत के लिए, भारतवासियों के लिए अपार खुशी का दिन था। जनसमुद्र तब महारेल नज़र आ रहा था। उसमें ज्वार था उमंगों का, आशाओं-आकांक्षाओं का।

अब यह जनसमुद्र एक प्रदीर्घ यात्रा पूरी कर चुका है। प्रत्यावलोकन करने पर हमारे ठहराव बिंदु सभी कमोबेश जगमगाते नज़र आते हैं। पर्वतीय राज्य भी इस लंबी मार्च में शाना-ब-शाना अपनी ताकत और हैसियत के मुताबिक आगे बढ़ता रहा है। विकास का यह एक विराट प्रयाण था जिसे हमने देश के अन्य प्रांतो-प्रांतरों के साथ राह में आने वाले आरोह-अवरोहों के साथ जिया। हमारा जीवट आज भी बरकरार है, उसी तरह जैसे हम थे। हमने अपनी हर आपदा का पूरे विवेक के साथ सामना किया। और इस तरह समझदार व चतुर सुजान लोगों की कुरबत और लीडरशिप में अपने राष्ट्रीय परिसंघ में एक अवांगार्द पर्वतीय राज्य की सूरत में आगे बढ़ते रहे। एक शायर ने कहा है, 'रोशनी एक मरकज़ पे थमी नहीं! और आगे बढ़ो और आगे चलो!' हम आगे बढ़ रहे हैं। नए-नए नुक्तों को जांच रहे हैं। विस्तार पा रहे हैं।

हिमाचल प्रदेश के रूप में हमने एक कामयाब पहाड़ी राज्य की संरचना की है। इसके संकेत हमने अपने राष्ट्रीय गणराज्य की स्थापना के समय ही चीन्ह लिए थे। हमारे प्रजातंत्र के रहबरों ने हमारी क्षमताओं और ऐषणाओं को पहचान लिया था। उत्तर-पश्चिम हिमालय का यह प्रांत एक साथ मुरबर होकर अपनी प्रकृति के अनुरूप विकास नीति अपनाने के लिए मनोयोग से कर्मरत हुआ। अपनी पात्रताओं को उपयोग में लाने के लिए राज्य में कोई सबल व सुचारू अर्थतंत्र नहीं था फिर भी अटूट आस्था और मनोबल के साथ हमारी कर्मठ पीढ़ियां अपने स्वप्नलोक के साथ आगे बढ़ती रहीं।

हिमाचल ने अपने अस्तित्व के इन 68 वर्षों में अपनी क्षमताओं को पहचाना है और उन क्षमताओं का भरसक उपयोग किया है। विकास को महज़ नीतियां दे देना ही काफी नहीं, उनका मर्यादित ढंग से कार्यान्वयन भी अज़हद ज़रूरी है। समय-समय पर परिस्थितियों के अनुरूप नीतियों में फेरबदल भी किए गए हैं। कोई भी इतिहास एक दिन में नहीं बन जाता, उसको अनुकूल और क्षमताओं के अनुरूप समय चाहिए।

हिमाचल की स्थापना 1948 में हुई। देशिक आज़ादी की घोषणा के आठ महीनों बाद। इस कार्य में हम तत्कालीन केंद्रीय नेताओं, प्रशासकों और स्थानीय नेताओं के योगदान को भुला नहीं सकते। उन्होंने पर्वतीय लोगों की अक्षुण्ण स्वायत्तता को तरजीह दी और इसे भारतीय परिसंघ का एक विशिष्ट पहाड़ी प्रांत बना दिया।

एक पृथक आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक इकाई के रूप में वजूद में आने से कालांतर से पिछड़े ग्राम्य जनों को सदियों बंद रहे पहाड़ों को मुक्ति की राह प्राप्त हुई। अपने अस्तित्व में आने से लेकर अब तक के कालांतर में भारत के इस अठारहवें राज्य ने जो उपलब्धियां अर्जित की हैं, वह भारतीय गणराज्य के लिए और हम सबके लिए एक गौरवमय बात है। इसमें न केवल दूरदर्शी आइडियोलॉजिस्ट वर्ग का मार्गदर्शन रहा अपितु तत्कालीन योजनाकारों की कोशिश रही कि हमें कार्यान्वयन के लिए एक विकास मूलक विशिष्ट पर्वतीय नीति प्राप्त हो सकी। कहना न होगा कि इसके लिए केंद्र का समर्थन भी हमें प्राप्त रहा।

केंद्र प्रशासित इकाई के रूप में इसे तत्कालीन राजनीतिज्ञों का नैतिक व आर्थिक समर्थन भी मिला। आत्मनिर्भर होने के लिए ऐसा किया जाना अपरिहार्य था। इस भूखंड का वास्तविक आर्थिक-सामाजिक उत्थान का दौर तब शुरू हुआ जब इसे बहुत देर बाद 1971 में पूर्ण राज्यत्व का दर्जा प्राप्त हुआ और एक सक्षम पर्वतीय राज्य के रूप में यह अपनी पात्रता प्रमाणित कर सका।

उनहत्तर वर्षों का यह सुदीर्घ कालखंड इस भूखंड के लिए एक निरंतर संघर्ष का कार्यकाल रहा है।

हिमाचल समय के आर्थिक- राजनीतिक-सामाजिक बदलावों के रू-ब-रू चर्चित दौर में एक प्रतीक-राज्य के रूप में सामने आया है। इसने अपनी महती क्षमताओं को दिग्दर्शित और प्रमाणिक किया है जिससे प्रेरणा प्राप्त कर देश के अन्य पर्वतीय खंडों ने भी स्वयं को गतिशील बनाया है। हिमाचल ने अपने अस्तित्व के इन 68 वर्षों में अपनी क्षमताओं को पहचाना है और उन क्षमताओं का भरसक उपयोग किया है। विकास को महज़ नीतियां दे देना ही काफी नहीं, उनका मर्यादित ढंग से कार्यान्वयन भी अज़हद ज़रूरी है। समय-समय पर परिस्थितियों के अनुरूप नीतियों में फेरबदल भी किए गए हैं। कोई भी इतिहास एक दिन में नहीं बन जाता, उसको अनुकूल और क्षमताओं के अनुरूप समय चाहिए।

हिमाचल ने यदि केंद्रीय स्तर पर देश की सरकारों से समय-समय पर लिया भी है तो अपने साधनों के अनुरूप सेवा और कार्य के रूप में देश के उत्थान में सहयोग भी दिया है।

इस पर्वतीय राज्य ने भारतीय सशस्त्र सेनाओं को जाँबाज़ जवान दिए हैं। विशेषकर कठिन पर्वतीय ढलानों पर लड़ने के लिए जिन्होंने अपनी वीरगाथाएं भी रची हैं। हर बार हर युद्ध में। केंद्र से उन्हें सम्मान और प्रशस्तियां भी प्राप्त होती रही हैं- इन महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक वर्षों में अपनी युद्ध वीरता के लिए।

कृषि और विशेषकर फल व सब्जियों की बागबानी में हिमाचल ने अपना विशेष स्थान बनाया है। उसका फल उत्पादन देश भर की सुदूर व निकटस्थ मंडियों में विपणन के लिए भेजा जाता है। देश के फल और शाक उपभोक्ताओं में यहां के कृषि उत्पादों ने अपना नाम बनाया है जिसके परिणामस्वरूप पर्वतीय किसानी व किसानों का जीवन स्तर बेहतर हुआ है। हिमाचल के सेब, गुठलीदार फल, खुंबियां हर वर्ष राज्य की राजस्व आय में सहयोग देती हैं। सेब राज्य का तमगा हासिल करने के बाद आज हिमाचल राज्य से बाहर एक फल राज्य के रूप में जाना जाता है। बेहतरीन प्रजाति के फल और सब्जियां पैदा करने की दिशा में भी न केवल देश के भीतर अपितु देशांतरों में भी सम्मान प्राप्त है। प्रसंस्कार किए गए फल के निर्मित उत्पाद भी देश के एकाधिक नगरों व महानगरों में विशेष रूप से लोकप्रिय हुए हैं और उपभोग्य माने जाते हैं।

राज्य ने अपनी स्थलीयता और पारिस्थितिक परिस्थितियों व प्राकृतिक संसाधनों के उपयुक्त बहुमुखी विकास का मानक बनाया है जो देश के पर्वतीय राज्यों के लिए एक उपयोगी प्रमेय के समान है। पन ऊर्जा के क्षेत्र में राज्य ने राष्ट्र स्तर पर अपना एक महत्त्वपूर्ण मुकाम बनाया है। हिमाचल एक ऊर्जा सरप्लस प्रदेश है जो उत्तरी ग्रिड के राज्यों को फालतू बिजली बिक्री कर आमदनी अर्जित कर रहा है। उक्त राजस्व राज्य के अंदर की योजनाओं को आत्मनिर्भर बनने में सहायता देता है।

उद्यमों के क्षेत्र में भी राज्य अग्रगामी है। यहां की उद्योग बस्तियां नामतः परवाणू, बद्दी, काला अंब, मेहतपुर इत्यादि न केवल लाभकर स्थिति में हैं अपितु उत्पादन भी स्तर का है। बिजली कद्रतन अन्य जगहों से सस्ती होने के कारण बड़े-बड़े उद्योग घराने भी इन बस्तियों की ओर अपनी शाखाओं की स्थापना के लिए आकर्षित हुए हैं। फलों व सब्जियों के आधार पर भी यहां उत्पादक उद्योग कार्यरत हैं जिनमें प्रोसेसिंग ग्रेड का फल उत्पाद बनता है। हिमाचल ने अपने औद्योगिक उत्पादनों में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के मानकों को लागू किया है और पुरस्कार भी प्राप्त किए हैं।

प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग में हिमाचल प्रगतिगामी है। यहां चूना पत्थर और इतर खनिजों पर आधारित उद्योग भी हैं। प्रशासन की यह कोशिश रहती है कि कच्चे माल के ज्यादा दोहन अथवा कारखानों के संचालन से पर्यावरण को कोई क्षति न पहुंचे। पारिस्थितिकी का लाभ-हानि का पूरा जायजा लिया जा रहा है।

पर्यटन पर्वतीय वादियों में रहने वाले लोगों के लिए एक आयकारी व्यवसाय है। इसमें राज्य सरकार अधिकृत पर्यटन इकाइयों एवं राज्य पोषित संगठनों का सहभाग ज्यादा है। निजी क्षेत्र में भी पर्यटन व्यवसाय प्रगति पर है। कुछेक घाटी क्षेत्रों में घरेलू पर्यटन लघु स्तर पर विस्तार पा रहा है। हिमाचल के कुछ शहर और ग्राम्य क्षेत्र देश भर से पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। हिमाचल प्रदेश सरकार की महत्त्वाकांक्षी होम स्टे योजना इस दिशा में महत्ती मददगार साबित हो रही है। जिन क्षेत्रों में मौसम खुशनुमा और वर्ष में ज्यादातर संतुलित बना रहता है, वहां उक्त व्यवसाय की गतिविधियां ज्यादा दिखाई देती हैं। हिमाचल एक शांतिप्रिय राज्य है। एक औसत पर्यटक को भी न केवल यहां के सुंदर प्राकृतिक दृश्य अपितु सुसंस्कृत-संस्कृति बरबस आकर्षित करती है। भारतीय परिसंघ का यह अठारहवां राज्य एक महत्त्वाकांक्षी भू-राजनीतिक इकाई है जो हिमालय के भव्य मुकुट पर एक मूल्यवान नग की तरह जड़ा है। उसके हृदय में पहाड़ी जीवन की श्रमशीलता के साथ-साथ समेकित राष्ट्र की प्रतिध्वनि भी गूंजती है। राष्ट्र की स्वतंत्रता की 69वीं वर्षगांठ पर हमारी असीम शुभकामनाएं।

पूजा अपार्टमेंट सोसायटी, संदल, चक्कर,
शिमला-171 005

जयंती विशेष

पर्वतीय विकास एवं संस्कृति का गौरव : डॉ. यशवंत सिंह परमार

● नेम चन्द अजनबी

हिमाचल निर्माता डॉ. यशवंत सिंह परमार ऐसे कर्मयोगी व लोकनायक हैं जो अपने सद्कार्यों से पर्वतीय विकास का गौरव ही नहीं, बल्कि पहाड़ का ही पर्याय बन गए। उन्हें पहाड़ों की आर्थिक उन्नति और विकास के मसीहा के रूप में सदैव स्मरण किया जाएगा। वर्तमान मुख्य मंत्री श्री वीरभद्र सिंह डॉ. परमार की 110वीं जयंती पर आयोजित कार्यक्रम में व्यक्त अपने उद्‌गार में कहते हैं, "डॉ. परमार एक दूरदर्शी नेता थे, जिन्होंने अनेक बाधाओं के बावजूद हिमाचल प्रदेश को आधुनिक राज्य बनाने का सपना देखा। प्रदेश का समग्र विकास, गरीब, किसान, बागबान और आम लोगों का उत्थान हमेशा ही उनकी प्राथमिकता सूची में सर्वोपरि रहा। प्रदेश हमेशा उनका ऋणी रहेगा, जिनके कुशल नेतृत्व में प्रदेश को पहाड़ी राज्यों में एक अलग पहचान मिली।"

महासु-सिरमौर से संसद सदस्य रहे नेक राम नेगी ने ठीक ही कहा है 'ऐसे व्यक्ति न कभी हुए हैं और शायद न ही होंगे।'

हां किसको है मयस्सर यह काम कर गुजरना
इक बांकपन से जीना, इक बांकपन से मरना॥

डॉ. परमार का जन्म हिमाचल प्रदेश की तत्कालीन पहाड़ी रियासतों में से एक सिरमौर रियासत अर्थात वर्तमान सिरमौर जिला के बागथन के समीप चन्हालग गांव में 4 अगस्त 1906 को हुआ। इनके पिता भण्डारी शिवानन्द सिंह तत्कालीन सिरमौर रियासत के राजा के सचिव थे जो संस्कृति प्रेमी और फारसी के विद्वान थे।

डॉ. परमार को स्थानीय लोकसंस्कृति के प्रति गहरा लगाव बचपन से ही रहा। वे पहाड़ी लोकगीतों और लोकनृत्यों में विशेष रुचि रखते थे। डॉ. परमार ने सन् 1922 में राज्य हाई स्कूल नाहन से दसवीं की परीक्षा पास की और सन् 1926 में लाहौर के प्रसिद्ध क्रिश्चियन कॉलेज फॉर मैन से बी.ए. ऑनर्ज की डिग्री प्राप्त की। पढ़ाई और खेलकूद में परमार की रुचि को देखते हुए पिता ने लखनऊ के केनिंग कॉलेज में दाखिल करवा दिया। सन् 1928 में परमार ने यहां से एम. ए. तदोपरान्त एल. एल. बी. की उपाधि प्राप्त की। सन् 1929-30 में थियोसॉफिकल सोसायटी का सदस्य बनकर समाज सेवा के क्षेत्र में पदार्पण किया। शायद यहीं से उनके मन में समाज सेवा की भावना का विकास हुआ और यह जज्बा ताउम्र बना रहा। आगे चलकर हिमाचल के लोगों के दुःख-दर्द को समझते हुए उसे दूर करने का बीड़ा उठाया।

1930 में डॉ. परमार सिरमौर रियासत के सब जज और बाद में फर्स्टक्लास मैजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। सन् 1937 में डॉ. परमार सिरमौर रियासत के डिस्ट्रिक्ट एण्ड सैशन जज बनाये गये। इस पद पर रहते हुए डॉ. परमार अपने पिता के विरुद्ध ही दिये गये फैसले के कारण चर्चा का विषय बन गये थे। कहते हैं कि उनके स्वयं और अपने बड़े भाई श्री जगमोहन सिंह परमार की पढ़ाई में हुए खर्च के कारण उनके पिता ने कर्ज ले रखा था जिसे चुकाने में वह असमर्थ थे। अतः मामला परमार की अदालत में आया और कर्ज न चुकाने के लिये अपने पिता श्री शिवानन्द के विरुद्ध डिगरी-कुर्की का आदेश पास कर दिया। इससे इस बात का साफ पता चलता है कि वह इनसाफ के मामले में पक्षपात को दरकिनार कर न्यायप्रियता के पक्षधर थे और जीवट व्यक्तित्व के इनसान थे।

एक अन्य मामला डॉ. परमार की अदालत में 1941 में आया जिसमें प्रजामण्डल आन्दोलन में शामिल रहते हुए देवेन्द्र सिंह, पं. हरिश्चन्द्र और जैलदार जगबन्दन सिंह के विरुद्ध सिरमौर के महाराजा की कार पर पत्थर मारने का आरोप था। अपने निर्भीक फैसले में उन्होंने कहा - ''अभियुक्तों का आरोप है कि पुलिस ने बदले की भावना और प्रजामण्डल को दबाने के उद्देश्य से मात्र एक व्यक्ति रामकिशन के कहने पर अभियुक्तों पर अत्याचार किए हैं। यदि अभियुक्तों को शारीरिक यातनाएं देने का विवरण सत्य है तो इस पर गंभीरता से ध्यान देना चाहिए ...। मैं इस बात से सहमत हूं कि अभियुक्तों के विरुद्ध महाराजा के खिलाफ युद्ध छेड़ने अथवा युद्ध की तैयारियां करने का कोई मामला सिद्ध नहीं होता तथा उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 121-121ए तथा 121बी के अन्तर्गत लगाए गए अभियोगों से मुक्त किया जाता है।''

यह एक ऐसा फैसला था जिसे एक जज ने अपने ही महाराजा के विरुद्ध सुनाया था। इससे सिरमौर राजखानदान तिलमिला गया और उसने इसके विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील दायर की। मतभेदों के चलते सन् 1941 डॉ.परमार ने डिस्ट्रिक्ट एण्ड सैशन जज के पद से त्यागपत्र दे दिया।

नौकरी को तिलांजलि देने के बाद डॉ. परमार जब लाहौर पहुंचे तो वहां उन्होंने एम.इ.एस की ठेकेदारी का कार्य शुरू किया। यहीं से प्रजामण्डल के नेताओं का उनसे गुप्त मंत्रणाओं का सिलसिला शुरू हुआ। शिमला की पहाड़ी रियासतों में चल रहे आन्दोलनों में यहां के नेताओं को डॉ. परमार की सक्रिय भागीदारी की आवश्यकता महसूस हुई। अतः प्रजामण्डल के नेताओं श्री लीला दास वर्मा और कांशी राम उपाध्याय के आग्रह पर परमार साहब लाहौर से शिमला आ गये। प्रजामण्डल आन्दोलन, स्वतन्त्रता संग्राम और हिमाचल प्रदेश के निर्माण में डॉ. परमार की भूमिका का सफर सही मायनों में यहीं से आरंभ हुआ।

यहां आकर डॉ. परमार पूर्ण रूप से इस पहाड़ी प्रदेश के विभिन्न हिस्सों में चल रहे स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप से कूद पड़े। उस समय स्वतन्त्रता का आन्दोलन अलग अलग क्षेत्रों में बंटा हुआ था। इसी दौरान डॉ. परमार का चयन ऑल इण्डिया स्टेट्स पीपल्स कान्फरेन्स द्वारा बनाई गई रियासतों की विलय कमेटी के एक सदस्य के रूप में हो गया। रियासतों के भारत गणतन्त्र में विलय को लेकर इस पहाड़ी प्रदेश की रियासतों के राजाओं ने सौराष्ट्र की तरज पर रियासतों की एक यूनियन बनाने बारे मन्थन शुरू कर दिया। इसी सिलसिले में सोलन में 23 जनवरी 1948 को रियासतों के हुक्मरानों ने डॉ. परमार विरोधी धड़े को साथ लेकर एक कॉन्फरेन्स बुलाई। डॉ. परमार ने भी 25 जनवरी 1948 को शिमला के गंज बाजार में एक मीटिंग बुलाई जिसमें साफ तौर पर यह प्रस्ताव पास किया गया कि भौगोलिक दृष्टि से किसी भी रियासत का वजूद नहीं रहना चाहिए और इन सबको मिलाकर देश का एक अलग प्रान्त बनाकर सत्ता लोगों को सौंप दी जाये। उधर, 28 जनवरी 1948 को सोलन कान्फरेन्स में बघाट के राजा दुर्गा सिंह की अध्यक्षता में यह प्रस्ताव पारित हो गया कि हिमाचल में भी सौराष्ट्र की तरह शासन व्यवस्था कायम की जाये जिसमें रियासतों के राजप्रमुख बगैरह ही हों। सोलन सभा के नाम से विख्यात इस कॉन्फरेन्स में पच्चीस पहाड़ी रियासतों के शासकों ने विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। साथ में यह भी प्रस्ताव पारित किया गया कि इस नये प्रान्त का नाम 'हिमाचल प्रदेश' रखा जाये।

डॉ. परमार पिछले अनुभवों से जानते थे कि रियासतों के शासक लोगों पर जुल्म ढा सकते हैं, इसलिए केन्द्रीय नेतृत्व से सम्पर्क करने के लिये दिल्ली रवाना हुए। उस समय सरदार बल्लभ भाई पटेल उप-प्रधानमन्त्री थे और उनके पास गृह मन्त्रालय का जिम्मा भी था। डॉ. परमार स्वयं लिखते हैं कि हमें यह पता था कि सरदार पटेल पौ फूटने से पहले अपनी बेटी मुन्नी बहन के साथ सुबह की सैर को निकलते थे, तब लोग उनसे मिल और खुलकर बातचीत कर सकते थे। मैं सर्दियों की एक ऐसी सुबह उनसे सैर के वक्त मिला। मैंने अर्ज किया कि सरदार साहब, हमारे हुक्मरान तसद्दूद से बाज नहीं आयेंगे और हमें भी उनकी हिंसा के जवाब में हथियार इस्तेमाल करने की इजाजत दी जाये।" सरदार पटेल ने झट से जवाब दिया, 'तुम्हें किसने रोका है।' मैं देखता ही रह गया और वह आगे निकल गये।"

इसके बाद डॉ. परमार दिल्ली में उच्च अधिकारियों से मिलकर उन्हें सरदार पटेल के साथ हुई बातचीत के बारे में बताया। श्री वी. पी. मेनन जो उस समय राजमंत्रालय के सेक्रेटरी थे, ने कहा, ''हां, अगर तुम एक हजार लोग इकट्ठा करके दिखा दो कि इन पहाड़ी रियासतों का विलय किया जाये तो बाकी मेरा काम है। मैंने कहा कि हां, देखना लोग मारे न जाएं।''

शिमला पहुंच कर डॉ. परमार ने अपना काम शुरू कर दिया और आन्दोलन चलाने के लिये एक 'सरकार' बना दी। सरदार पटेल के शब्दों से प्रेरित होकर डॉ. परमार ने सुकेत सत्याग्रह की रूपरेखा बनाई और उसे सफलतापूर्वक अन्जाम तक पहुंचाया। डॉ. परमार के कुशल नेतृत्व और दूरदर्शिता के कारण ही 15 अप्रैल 1948 को 30 पहाड़ी रियासतों को मिला कर हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। ये रियासते थीं - बाघल, बघाट, बलसन, बुशहर, खनेटी, देलठ, बेजा, भज्जी, दरकोटी, धामी, जुब्बल, रावीं, ढाढी, क्योंथल, ठियोग, कोटी, घूण्ड, मधान, रतेश, कुमारसेन, कुनिहार, कुठाड़, मांगल, महलोग, शांगरी, थरोच, मण्डी, चम्बा, सुकेत और सिरमौर।

इस प्रकार हिमाचल प्रदेश में पहली बार हुए चुनाव के बाद 8 मार्च 1952 को डॉ. यशवन्त सिंह परमार ने हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ली। डॉ. परमार के प्रयासों से सन् 1954 में बिलासपुर रियासत का भी हिमाचल प्रदेश में विलय हो गया। वर्ष 1956 में प्रथम राज्य पुनर्गठन आयोग बना जिसमें भाषाई आधार पर प्रान्तों को बनाया गया। परन्तु हिमाचल और पंजाब ने इसे मानने से इनकार कर दिया। हिमाचल को पंजाब में मिलाये जाने की संस्तुति की गई जिससे एक विशाल प्रान्त बनाया जा सके। लेकिन आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति फजल अली ने पहाड़ी भाषा और संस्कृति के आधार पर इसका अलग अस्तित्व बनाये रखने की सिफारिश की। इस बारे डॉ. परमार के किए गए महत्त्वपूर्ण प्रयासों से हिमाचल के अलग अस्तित्व को बनाये रखने के लिये तत्कालीन प्रधानमन्त्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने हामी भर दी। एक जुलाई 1963 को डॉ. परमार प्रदेश के दूसरी बार मुख्यमंत्री बने।

हिमाचल प्रदेश के अलग अस्तित्व को बनाये रखने के बाद भी डॉ. परमार ने चैन की सांस नहीं ली और पंजाब के अन्तर्गत आने वाले पहाड़ी क्षेत्रों को हिमाचल में विलय करने के प्रयासों में जुट गए। लोकसभा अध्यक्ष हुक्म सिंह की अध्यक्षता में गठित 31

प्रदेश को साधन सम्पन्न बनाने के लिये डॉ. परमार ने पांच बातों पर जोर दिया - जल विद्युत परियोजना, बागबानी मिश्रित खेती, त्रिमुखी वन खेती, सड़कों का विस्तार और पर्यटन और उद्योग का विकास। उन्होंने अपनी प्राथमिकताओं के अनुसार प्रदेश में सड़कों के निर्माण को सर्वोच्च प्राथमिकता देने के साथ-साथ फलों की खेती, मिश्रित खेती, त्रिमुखी वन खेती और विद्युत परियोजनाओं की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया।

सदस्यीय संसदीय समिति के सामने उन्होंने ज्ञापन सौंपा। फलस्वरूप इस समिति ने भी रीजनल फॉरमुला को हटाकर पंजाब का पुनर्गठन करके पहाड़ी भाषी हिमाचल प्रदेश, पंजाबी भाषी पंजाब और हिन्दी भाषी हरियाणा की स्थापना की सिफारिश की जिसे न्यायमूर्ति शाह की अध्यक्षता में गठित पंजाब पुनर्गठन आयोग ने भी मान लिया और इस प्रकार एक नवम्बर 1966 को विशाल हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया। हिमाचल बनने के बाद इसका क्षेत्रफल बढ़कर 55673 वर्ग किलोमीटर हो गया। अन्ततः 25 जनवरी 1971 को देश के 18वें राज्य के रूप में हिमाचल उभर कर सामने आया।

प्रदेश को साधन सम्पन्न बनाने के लिये डॉ. परमार ने पांच बातों पर जोर दिया - जल विद्युत परियोजना, बागबानी मिश्रित खेती, त्रिमुखी वन खेती, सड़क विस्तार और पर्यटन एवं उद्योग विकास। अपनी प्राथमिकताओं के अनुरूप ही प्रदेश में सड़क निर्माण को सर्वोच्च प्राथमिकता दी। फलों की खेती, मिश्रित खेती, त्रिमुखी वन खेती करने और विद्युत परियोजनाएं लगाने की ओर लोगों का ध्यान भी आकर्षित किया।

डॉ. परमार अपने सिद्धान्तों से समझौता करने वालों में से नहीं थे, चाहे इसके लिये उन्हें कोई भी कुर्बानी ही क्यों न चुकानी पड़े। एक बार भारत के प्रधान मंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू शिमला आये और मशोबरा के समीप 'रिट्रीट' में ठहरे हुए थे। उस समय हिमाचल प्रदेश पार्ट सी स्टेट था। परमार उस समय यहां के मुख्यमंत्री थे। उस समय के लेफ्टीनेन्ट गवर्नर और इन्सपेक्टर जनरल ऑफ पुलिस ने प्रदेश के इन्तजामों को लेकर परमार जी की शिकायत नेहरू से कर दी। उन्होंने डॉ. परमार को बुलाकर कहा कि हाल ही में उन्होंने एक बड़े राज्य के मुख्यमंत्री को कुर्सी छोड़ने को कहा है क्योंकि वह अपना काम तसल्लीबख्श नहीं कर रहा था। डॉ. परमार वह नेहरू जी का आशय समझ गये। तुरन्त जवाब दिया, ''पंडित जी, जहां भारत को महान और समृद्ध देश बनाने की आपकी दूरदर्शी नीति का मैं बहुत प्रशंसक हूं, वहां हिमाचल को ऊंचा उठाने का मेरा भी एक ख्वाब है। जिसको मैं सारे स्वार्थ छोड़कर साकार करना चाहता हूं और आप यह महसूस करते हैं कि मैं उस पर ठीक ढंग से काम नहीं कर रहा हूं और मैंने कहीं गलती की है तो मैं इसी वक्त अपना इस्तीफा पेश करने को तैयार हूं।''

नेहरू जी थोड़ी देर चुप रहकर डॉ. परमार की ओर देखते रहे। फिर बोले- तुम बुजदिल हो परमार। तुम अपने फर्ज से भागना चाहते हो ?'' डॉ. परमार ने जवाब दिया - 'पण्डित जी, फर्ज से भाग नहीं रहा हूं लेकिन यदि यह महसूस किया जाता है कि मैं अपने इस ओहदे के अहल नहीं हूं तो मुझे इस पर रहना नहीं चाहिए। आप किसी और को मुख्यमंत्री नामजद कर दीजिए।'' इसके बाद पण्डित नेहरू की सारी नाराजगी दूर हो गई और परमार जी को कुछ सुझाव और सलाह-मशविरा करके विदा किया।

सिरमौर से निष्कासन के बाद उन्होंने अपनी पढ़ाई पुनः शुरू कर दी थी और सन् 1944 में लखनऊ विश्वविद्यालय से 'सोशियो एकोनोमिक बैकग्राउन्ड ऑफ हिमालयन पोलिएंड्री' विषय पर पी. एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इसके अलावा डॉ. परमार ने पोलिएण्ड्री इन हिमालयाज, हिमाचल रूट्स शेप एंड स्टेट्स, हिमाचल प्रदेश : केस फॉर स्टेटहुड, हिमाचल प्रदेश एरिया एण्ड लेंग्वेजिज, स्ट्रेटजी फॉर डवेल्पमेंट ऑफ हिल एरियाज जैसी पुस्तकें भी लिखीं। जाहिर होता है कि डॉ. परमार को लिखने पढ़ने का बहुत शौक था। अपने मुख्यमंत्रित्व काल में सचिवालय की लाइब्रेरी में पढ़ने के लिए अपने व्यस्ततम समय से कुछ समय चुरा कर पढ़ने जाया करते थे। यह जिक्र हिमाचल प्रदेश सचिवालय के तत्कालीन पुस्तकालयाध्यक्ष मियां गोवर्धन सिंह ने कुछ इस तरह किया है, "डॉ. परमार एक घंटे से लेकर पांच-पांच घंटे तक पुस्तकालय में बैठकर पढ़ा करते थे। कभी-कभी घर में भी पुस्तकें मंगवाते थे। मुख्यमंत्री का पद त्याग देने के बाद भी यह क्रम चलता रहा। विदेश जाने से पहले और विशाल हिमाचल निर्माण से पूर्व उन्होंने खूब अध्ययन किया। कृषि, बागबानी तथा सामान्य विकास से संबंधित पुस्तकें ही अकसर पढ़ा करते थे।"

पोलिएण्ड्री इन हिमालयाज अर्थात हिमालय में बहुपति प्रथा उनकी पी-एच. डी. का शोध विषय था जिसपर उन्होंने 1944 में ही कार्य करना शुरू कर दिया था। यह पुस्तक 1974 में जब छप कर पाठकों के सामने आई तो हिमालय के इस अन्तःक्षेत्र के अनूठे एवं भिन्न रीति-रिवाजों के बारे में बाहरी दुनिया को पता चल पाया। 'हिमालय में बहुपति प्रथा' पहाड़ी समाजशास्त्र के अध्ययन के लिये आज भी यह एकमात्र स्थापित पुस्तक है।

डॉ. परमार पहाड़ी संस्कृति के संरक्षण के हिमायती थे। 'लोक संस्कृति के समग्र पहलुओं के संरक्षण के लिए डॉ. परमार द्वारा स्थापित 'हिमाचल प्रदेश कला, संस्कृति और भाषा अकादमी' तथा 'पहाड़ी कलाकार संघ-हाब्बन (सिरमौर) के संयुक्त तत्त्वावधान में 9 से 16 जनवरी, 1977 तक राजगढ़ में आयोजित 'लोक नाट्य प्रशिक्षण कार्यशाला' के उद्घाटन अवसर पर प्रकट किए गये इनके

विचार लोक संस्कृति की पक्षधरता सिद्ध करते हैं- "पहले गांवों में लोक नाट्य और लोक संगीत ही था। ग्राम्य संस्कृति पहले बनी थी और शहरी संस्कृति बाद में। ...छोटे और गरीब घरों के कलाकारों की भी पहचान होनी चाहिए।... हमारे लोक नाट्यों में जो नाटियां हैं, वे समाज में बराबरी की भावना लाने का एक सशक्त माध्यम हैं। नाटियों में छोटे-बड़े सब भाग लेते हैं। उनसे एक अनुरागात्मक सम्बन्ध बनता है, ऊंच-नीच समाप्त होती है।''

पहाड़ी संस्कृति को बचाने के लिये उन्होंने युनाईटेड पंजाब के मुख्यमंत्री पद का प्रलोभन भी ठुकरा दिया था। उनका कहना था कि हिमाचल की गरीब और अशिक्षित जनता पंजाब के पूंजीपतियों के लिये सस्ते मजदूरों की खान बन जायेगी। उनकी सूझबूझ और दूरदर्शिता के चलते पहाड़ी संस्कृति और यहां की जनता का अपना वुजूद कायम रह सका।

डॉ. परमार हिमाचलियों की ईमानदारी की मिसाल दिया करते थे। बाहरी लोग हिमाचलियों को मुंडू कहते थे। उस समय हिमाचल प्रदेश में अशिक्षा और गरीबी के चलते यहां के लोग मैदानी इलाकों में हाट दुकान पर रोजी रोटी की तलाश में जाया करते थे। जहां उन्हें पहाड़ी मुंडू कह कर पुकारा जाता था। जिससे परमार जी को बहुत दुख होता, पीड़ा पहुंचती। वह अकसर इस बात का जिक्र अपने भाषणो में किया करते- ''लोग हमें मुंडू कहते हैं लेकिन हम मुंडू इस वास्ते हैं क्योंकि ईमानदारी से काम करते हैं तो मैं सबसे बड़ा मुंडू हूं।'' डॉ. परमार के इस प्रकार की स्वीकारोक्ति से हिमाचलियों की हीन भावना गौरव में तबदील हो गई और अब वे अपना मस्तक गर्व से ऊंचा कर चलने लगे थे।

उस समय कम साक्षारता और सुविधाओं के अभाव में लोग अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक नहीं थे। प्रदेश के वरिष्ठ लेखक बद्री सिंह भाटिया लिखते हैं -''वर्ष 1975 के अगस्त-सितम्बर के महीने में करसोग में सचल चिकित्सालय का शिविर लगा था। तब मैं मेडिकल कॉलेज के मोबाईल अस्पताल अनुभाग में कार्यरत था। कैम्प स्थापना का कार्यभार मुझ पर था। करसोग के इस शिविर का उद्घाटन डॉ.परमार को करना था। उन्हें बताया गया कि लोगों में इस कैम्प के बारे ज्यादा उत्साह नहीं है। विशेषकर परिवार कल्याण कार्यक्रम के तहत आपरेशन करवाने के बारे में। डॉ. परमार ने भाषण दिया और महिलाओं का आह्वान किया कि परिवार और सेहत के बारे उन्हें ज्यादा सोचना चाहिए। बच्चा महिलाएं पैदा करती हैं, परवरिश भी वे ही करती हैं, इससे उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसका इतना प्रभाव पड़ा कि अगले दिन हमें दो बड़े तम्बू और लगाने पड़े। यह शिविर बहुत सफल रहा। '' कहना न होगा कि डॉ. परमार का मुख्य मंत्री के तौर पर यहां के वासियों की आदत, सोच और व्यवहार बारे उनकी मजबूत पकड़ थी और उनकी कही गई बातों का उन पर प्रभाव भी होता रहा है।

जिस ईमानदारी और सत्यनिष्ठा के साथ डॉ. परमार ने मुख्य मंत्री जैसे प्रतिष्ठित पद की गरिमा को बनाये रखा, वह बेमिसाल है। उन्होंने राजनीति की उच्च्य परम्परा को कायम किया। उनकी इस सहृदयता के कायल तो हिमाचल प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री शांन्ता कुमार भी हैं। वे अपने एक संस्मरण में लिखते हैं कि ''1975 में मैं जेल में था। उन दिनों मेरी पत्नी संतोष एक ऐसे स्कूल में पढ़ाती थी जो कुछ दूरी पर था। मेरी लंबी अनुपस्थिति से संतोष वैसे भी परेशान थी। मेरा बेटा विक्रम बीमार हो गया। घर गृहस्थी का सारा काम, विक्रम की लंबी बीमारी और इस सबके साथ दूर के स्कूल में जाकर सर्विस करना काफी कठिन था।... संतोष ने मुझे सुझाव दिया कि मैं इस सम्बन्ध में मुख्य मंत्री डॉ. परमार को लिखूं।... मैंने जेल से ही इस संबंध में डॉ. परमार को पत्र लिख दिया। यह भी लिखा कि राजनैतिक विरोधी मैं हूं, मेरा परिवार नहीं। मुझे जितना समय जेल में रखना चाहें, रखें, पर हमारे परिवारों को इस कारण कोई कष्ट नहीं होना चाहिए।... कुछ ही दिन बाद मुझे संतोष के पत्र से पता लगा कि उसका तबादला पालमपुर के स्कूल में ही हो गया है।"

वह पहाड़ में पैदा हुए पहाड़ के लिये जिये और पहाड़ व यहां के लोगों के दुखों को दूर करते-करते अनन्त यात्रा पर निकल गये। हालांकि उनका जन्म एक समृद्ध और शिक्षित परिवार में हुआ लेकिन 18 वर्ष तक हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री रहने के बाद भी उन्होंनं समृद्ध जीवन नहीं जिया। इस बात का पता इससे साफ चलता है कि जिस समय उन्होंने इस दुनिया से विदा ली, उस समय उनके बैंक खाते में केवल 563 रुपये 30 पैसे थे। हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति डॉ. आर. के. सिंह का डॉ. परमार के साथ लम्बा सानिध्य रहा और वह उनके कुछ घनिष्ठ मित्रों में से थे, वह एक संस्मरण में लिखते हैं - ''जब मैं परमार के घर ठहरा था। मुझे उनकी सबसे छोटी बेटी उर्मिला, जो उन दिनों कालेज जाती थी, के स्वास्थ्य के बारे में चिन्ता हुई, मैंने इस बात का जिक्र उनकी मां चन्द्रावती से किया, तो उनका स्पष्ट उत्तर था - 'मैं इसमें क्या कर सकती हूं। 8 बजे सवेरे नाश्ता करने के बाद और 5 बजे कॉलेज से वापसी तक वह कुछ नहीं खाती। वह खाना अपने साथ नहीं ले जाती और न ही कॉलेज की कैन्टीन में खा सकती है। क्योंकि हम इतना खर्च नहीं उठा सकते। आप कल्पना कर सकते हैं, कि 500 रुपये मासिक वेतन से मैं घर का खर्च नहीं चला सकती हूं।'' यह जहां एक मुख्य मंत्री की गृहस्थी का सच है, वहीं इसे ईमानदारी की पराकाष्ठा कहा जा सकता है।

वह एक स्वाभिमानी व्यक्ति थे। जैसे ही उनके स्वाभिमान पर आंच आई, उन्होंने मुख्य मंत्री की कुर्सी का त्याग करने में तनिक भी देर नहीं की। हिमाचल के सुपरिचित राजनेता मेला राम सावर अपने संस्मरण में लिखते हैं। ''डॉ. परमार जब प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी जी से मिलने जाते थे, तो संजय गांधी से नहीं मिलते थे। इस पर संजय गांधी ने प्रधानमंत्री को कह कर डॉ. परमार की छुट्टी करवाने का मन बना लिया था। डॉ. परमार को नाहन से अचानक दिल्ली बुलाया गया। तो कुछ परेशान थे, कि न मालूम क्या बात

हैं। जब उन्हें प्रधानमंत्री का फैसला सुनाया गया तो वह कहने लगे, ''बस इतनी सी बात थी तो फोन पर ही बताया होता। प्रधान मंत्री जी को कह दीजिए परसों मेरी मण्डी में जनसभा है, उसके बाद मेरा त्यागपत्र आ जाएगा। ''

''उसी रात को कालका मेल से वापिस लौटते हुए उनके साथ प्रोफेसर नारायण चन्द्र पराशर, श्रीमती सत्या परमार और प्रेस सचिव श्री एच.एल. वैद्य थे। मैंने स्टेशन तक जाते हुए रास्ते में बड़े संकोच से कहा'', ''डॉ. साहब आप संजय गांधी जी से मिल लेते तो ठीक था'', उन्होंने एकदम मेरी तरफ घूर कर पूछा, ''कितने साल हुए आपको सियासत में ?'' मैंने गर्व से कहा, ''35 साल'', कहने लगे, ''इतना लम्बा सफर और इतनी छोटी बात ? सावर साहब, अब इस उम्र में बच्चों का बस्ता नहीं उठाया जाता।''

इसी घटना से सम्बन्धित एक अन्य विवरण में उल्लेख मिलता है कि एक बार डॉ. परमार को कांग्रेस की तत्कालीन सचिव पूर्वी मुखर्जी ने दिल्ली बुला कर उनसे त्यागपत्र मांगा। परमार साहब त्यागपत्र देने से पहले प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी से मिलना चाहते थे। परन्तु उन्हें श्रीमती गांधी से मिलने नहीं दिया गया। इस निरादर से खिन्न डॉ. परमार ने उसी समय अपना त्यागपत्र पूर्वी मुखर्जी को पकड़ा दिया। डॉ. परमार के त्यागपत्र की घोषणा समाचार पत्रों, आकाशवाणी और दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित कर दी गई। जैसे ही इस बात का पता श्रीमती इंदिरा गांधी को चला, उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। परन्तु तब तक परमार जी दिल्ली छोड़ कर शिमला के लिये प्रस्थान कर चुके थे। पंजाब के तत्कालीन मुख्य मंत्री ज्ञानी जैल सिह को दिल्ली से निर्देश जारी हुआ कि परमार जी को वापस भेजें। परमार जब श्रीमती इंदिरा गांधी के समक्ष पेश हुए तो उन्होंने परमार जी से त्यागपत्र वापस लेने का आग्रह किया। डॉ. परमार निर्णय पर कायम रहे। उन्होंने श्रीमती गांधी के समक्ष स्पष्ट किया कि जिन परिस्थितियों में त्यागपत्र दिया है, उस कारण अब वो सत्ता में बने नहीं रह सकते।

मुख्यमंत्री का पद त्याग करने के बाद उन्होंने एक साधारण आदमी की तरह जीवन जिया। रामदयाल नीरज जी लिखते हैं- ''मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा देने के बाद शाम के समय जब कर्मचारियों का हजूम सचिवालय से लेकर मालरोड़ की ओर उमड़ता था तो डॉ. परमार अक्सर सब्जी का थैला कंधे में लिये छोटा शिमला स्थित घर की ओर लौट रहे होते। समूची भीड़ के सर रुक-रुककर श्रद्धा से झुकते जाते और बर्फीले बाल, देदीप्यमान चेहरा लिए डॉ. परमार आदाब स्वीकारते, मुस्कुराते उसी दृढ़ता के साथ आगे बढ़ जाते।"

हर मनुष्य एक निश्चित अवधि के लिए इस धरती पर आता है। अपनी भूमिका में किए गए कार्यों को करने के उपरांत रुख्सत भी हो जाता है। लेकिन कुछ शख्सीयतें ऐसी होती हैं, जिनकी भरपाई मुश्किल हो जाती है। डॉ. परमार ऐसी ही शख्सीयतों में से थे। 2 मई, 1981 को उनके देहावसान से पूरे प्रदेश में माहौल गमगीन था। उनकी अंतिम यात्रा का शिमला आकाशवाणी से सीधा प्रसारण किया जाना था जिसकी कमेंट्री का जिम्मा हिमाचल प्रदेश लोक संपर्क विभाग के पूर्व निदेशक श्री हरि कृष्ण मिट्टू को दिया गया। वह अपने एक संस्मरण में लिखते हैं, 'मैं सोच में डूब गया कि अपनी कमेन्ट्री कहां से शुरू करूं। मैंने अपने सेवाकाल में डॉ. परमार को बहुत निकट से देखा था लेकिन उनकी दास्तान कहां शुरू हुई और कहां से खत्म, इसके किसी छोर को मैं पकड़ नहीं पा रहा था। मेरी शोक-मग्न अन्धकारमय सोच में एक विचार बिजली की तरह चमक उठा। डॉ. परमार अन्तिम निद्रा में जहां सो रहे थे उस घर का नाम रूट्स (Roots) है। रूट्स (Roots) का अर्थ है जड़ें। डॉ. परमार हिमाचल की जड़ थे। मुझे अपनी कमेन्ट्री के आरम्भिक शब्द मिल गये। मैंने कुछ इस तरह बोलना शुरू किया 'मैं रूट्स (Roots) से बोल रहा हूं। यहां डॉ. यशवंत सिंह परमार का पार्थिव शरीर लोगों के दर्शनों के लिये रखा है। डॉ. परमार हिमाचल की जड़ थे। उनकी अन्तिम विदाई रूट्स (Roots) से हो रही है। गोया हिमाचल की जड़ सूख गई हैं।''

निस्संदेह डॉ. परमार का व्यक्तित्व-फलक बहुत विस्तारित रहा है जिसमें दूरदर्शिता, पारदर्शिता, आडंबरहीनता और पहाड़ एवं पहाड़ के लोगों का दर्द, यहां की सांस्कृतिक पहचान के बोध का संपुट निहित रहा है जिसकी बदौलत देखे गए इंद्रधनुषी रंगों के सपनों को यहां के जनजीवन में उतारने के लिए वह जीवन पर्यंत लगे रहे। सादा जीवन, उच्च विचार का अनुसरण करने वाले डॉ. यशवंत सिंह परमार वास्तव में हिमाचली जहाज को मझधार से निकालकर किनारे तक सुरक्षित लाने वाले साहिल थे, जिनपर हर हिमाचल वासी फख्र करता है। उन्हें याद कर नाज करता है। सलाम करता है।

उच्चतर शिक्षा-क अनुभाग, 402, आर्मजडेल बिल्डिंग,
हि. प्र. सचिवालय, शिमला -171002,
मो. 0 94180 33783

संदर्भ : नेक राम नेगी, चुगली और मुंह पर कभी तारीफ नहीं सहते थे, गिरींद्र साप्ताहिक, मई-जून, 2007; हिमाचल निर्माता- डॉ. यशवंत सिंह परमार, लेखक डॉ. हरी राम जस्टा, प्रकाशक हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी, शिमला-171001, (2006); डॉ. परमार- कहानी हिमाचल के गठन की, हिमप्रस्थ, अगस्त, 2006; 27-7-1975 को नेहरू की पुण्यतिथि के अवसर पर आकाशवाणी शिमला से प्रसारित संस्मरण के अंश से साभार; तुलसी रमण : वह कभी नहीं हारे (स्मारिका, 4 अगस्त 1985); डॉ. यशवंत सिंह परमार- हिमालय में बहुपति प्रथा (1975) में डॉ. ए.सी. दूबे द्वारा लिखी गई 'भूमिका' से।; ओम प्रकाश राही- लोक संस्कृति के प्रबल समर्थक, हिमप्रस्थ, अगस्त, 2006; बद्री सिंह भाटिया- पहाड़ी लोगों की दिल की धड़कन-डॉ. यशवंत सिंह परमार, हिमप्रस्थ, अगस्त, 2009; शांता कुमार-राजनीति की शतरंज, हिंद पाकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली-32, 1984; हिमप्रस्थ, अगस्त, 2006; सादा जीवन और ऊंची सोच का असाधारण व्यक्तित्व, गिरींद्र साप्ताहिक, मई-जून, 2007; मेला राम सावर, संस्मरण, परमार स्मारिका, 1994, पृ. 57, हि. प्र. विधान सभा द्वारा प्रकाशित।

आलेख

शहीद भगत सिंह : युवाओं के आदर्श

● संगम वर्मा

इक्कीसवीं सदी के इस दौर में हम आज़ादी की जो साँसे ले रहे हैं उसमें एक ऐसे शख्स के योगदान को कभी नहीं भूला सकते, जिसने कम उम्र में ही गुलामी की जंजीरों से जकड़ी भारत मां की आज़ादी के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। देश के इस अमर शहीद का नाम इतिहास के पन्नों में सदैव स्वर्णाक्षरों में दर्ज रहेगा। शहीद भगत सिंह का नाम आज भी नवयुवकों के लिए प्रेरणा का स्रोत है। भगत सिंह के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए 'जगमोहन' और 'चमनलाल' ने कहा, ''शहीद भगत सिंह न सिर्फ वीरता, साहस, देशभक्ति, दृढ़ता और आत्म बलिदान के गुणों के सर्वोत्तम उदाहरण हैं, जैसा कि आज तक इस देश के लोगों को बताया गया है वरन् वे अपने लक्ष्य के प्रति स्पष्टता, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक दृष्टिकोण से सामाजिक समस्याओं के विश्लेषण की क्षमता वाले अद्‌भुत बौद्धिक क्रान्तिकारी व्यक्तित्व के प्रतिरूप भी थे।'' उनके जीवन का वास्तविक और ऐतिहासिक महत्त्व इस बात में है कि वह भारत की सशस्त्र क्रान्ति के दार्शनिक थे। भगत सिंह की क्रान्ति शस्त्र संघर्ष से कहीं अधिक विचारों का संघर्ष थी। इस संबंध में स्वयं भगत सिंह का कथन था, ''पिस्तौल और बम कभी इंकलाब नहीं लाते बल्कि इंकलाब की तलवार विचारों की सान पर तेज होती है।'' आज़ादी के दौर में क्रान्तिकारी विचारों को लोकप्रिय बनाने का श्रेय भगत सिंह को ही जाता है।
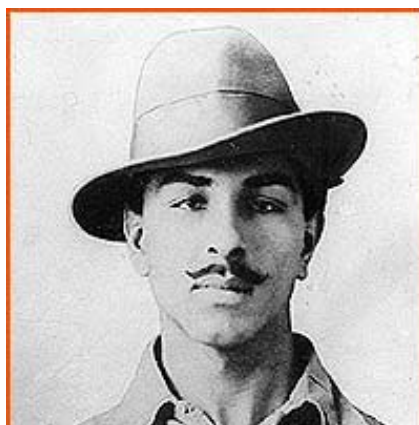
शहीद भगत सिंह हमारे नवयुवकों के लिए आदर्श मूर्ति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। उनका यह आदर्श रूप उनके चिंतन, मनन तथा दार्शनिक विचारों में स्पष्टतः दिखाई पड़ता है। उन्हें भारतीय क्रान्तिकारी विचारों का प्रतीक माना जाता है। इस संबंध में 'चमनलाल' ने अपनी पुस्तक 'भगत सिंह के सम्पूर्ण दस्तावेज' की भूमिका में लिखा, ''एक युवक जो साढ़े तेईस वर्ष की उम्र में देश की स्वाधीनता के लिए क्रान्तिकारी कार्यवाहियों के अपराध में फॉसी चढ़ गया हो, वह युवक फांसी चढ़ने वाले सैंकड़ों अन्य युवकों से अलग या सम्मिलित रूप से उन सबका प्रतीक कैसे बन सकता है? लेकिन यदि वह युवक बारह वर्ष की उम्र में जलियांवाला बाग की मिट्टी लेने पहुंच जाए तो वह युवक 1923 में सोलह वर्ष की उम्र में ही घर छोड़ जाता है तथा सत्रह वर्ष की उम्र में 'पंजाब की भाषा तथा लिपि की समस्या' पर एक प्रौढ़ चिंतक की तरह लेख लिखने लगता है और क्रान्तिकारी गतिविधियों के साथ-साथ निरंतर अध्ययन, चिंतन और लेखन में भी लगा रहता है तो ऐसे युवक के क्रान्तिकारी चिंतक का प्रतीक बनने की स्थितियां अपने आप बन ही जाती हैं वैसे तो यह युवक कोई और भी हो सकता था, परन्तु उस समय देष की विपरीत स्थितियों में, किस्मत के खेल से यह संयोग भगत सिंह को प्राप्त हुआ और अपने सात वर्ष के अल्पकालिक तूफानी बाज़ जैसे क्रान्तिकारी कार्यकर्त्ता, संगठनकर्त्ता, चिंतक और लेखक के रूप में भगत सिंह ने जो भूमिका निभाई और जिस शान व आन के साथ उसने 23 मार्च, 1931 को शहादत के लिए फाँसी का फंदा गले में पहना, इनकी मिसाल भारत में ही नहीं, दुनिया में भी बहुत कम मिलती है और इसलिए भगत सिंह न केवल भारतीय क्रांतिकारी चिंतन के प्रतीक बने हैं आने वाले समय में वे विश्व की क्रांतिकारी परम्परा के महत्त्वपूर्ण नायक के रूप में भी अपना उचित स्थान प्राप्त करेंगे।'' ये शब्द एक नवयवुक के प्रश्न को भी संतुष्ट करता है जो पूछता है- ''मैं अपने देश के लिए बलिदान क्यों दूं? मैं अपने लिए क्यों न सोचूं?'' इस प्रकार भगत सिंह नवयुवकों को स्वार्थपरकता की सोच को त्याग कर देश सेवा के लिए प्रेरित करते हैं।

भगत सिंह नवयुवकों को अध्ययनशील होने के लिए कहते हैं। उन्होंने अपने विचारों को महत्ता देते हुए लाहौर हाई-कोर्ट' में कहा था- ''इन्कलाब की तलवार विचारों की सान पर ही तेज की जाती है।'' इस आधार पर उन्होंने यह सूत्र प्रस्तुत किया कि, ''आलोचना व स्वतन्त्र विचार किसी क्रान्तिकारी के अपरिहार्य

भगत सिंह ने जेल में रहकर जो डायरियां लिखीं, उनमें हम स्वतंत्रता के लिए संघर्ष, दूसरों के आत्म बलिदान के विचार हम हर पृष्ठ पर पाते हैं- उन्होंने अपनी डायरी में बहुत से विद्वानों के शब्दों को उतारा। भगत सिंह नवयुवकों को कुशल नेतृत्व के लिए प्रेरित करते हैं। उन्होंने कहा था कि एक कुशल नेतृत्व करने वाला व्यक्ति ही सुनियोजित कार्यक्रम के तहत अपनी मंजिल पा लेता है।

गुण हैं।'' भगत सिंह ने युवकों को विद्या के अध्ययन के साथ-साथ राजनीति का भी ज्ञान हासिल करने को कहा और लिखा- ''जब ज़रूरत हो तो मैदान में कूद पड़े, अपना जीवन इसी काम में लगा दें।'' भगतसिंह के विचारों में मार्क्सवाद तथा लेनिन का प्रभाव स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है तथा नौजवानों को भी मार्क्सवादी दृष्टिकोण को अपनाने के लिए कहते हैं। उनके अनुसार विचारगत होकर ही हम जड़ परम्पराओं को तोड़ सकते हैं। भगत सिंह की अध्ययनशीलता के बारे में 'अलोक रंजन' लिखते हैं- ''भगत सिंह ने जेल में रहकर मुश्किल से क्रांतिकारी और मार्क्सवादी साहित्य जुटाकर उसका गंभीर अध्ययन किया और उसका विश्लेषण भी किया।'' इस प्रकार भगत सिंह ने जेल में रहकर जो भगीरथ अध्ययन किया, उन्होंने उन्हें सिर्फ अपने तक ही सीमित नहीं रखा वरन् अपने साथियों तक भी पहुंचाया। अतः यदि भगत सिंह जेल में रहकर इतना अध्ययन कर सकते हैं तो हम मुक्त रहकर क्यों नहीं। यह अध्ययन प्रत्येक समस्या के लिए रामबाण सिद्ध हो सकता है।

भगत सिंह नवयुवकों को आंदोलन करने के लिए कहते हैं। युवक आंदोलन के सम्बन्ध में उनका विचार था- ''युवक आन्दोलन को अध्ययन-केन्द्र खोलने चाहिए। लीफलेट, पैम्फलेट, पुस्तकें, मैगजीन छापने चाहिए। क्लासों में लेक्चर होने चाहिए, उन नौजवानों को पार्टी में लेना चाहिए जिनके विचार विकसित हो चुके हैं और वे अपना जीवन इस काम में लगाने के लिए तैयार हैं। पार्टी-कार्यकर्त्ता नवयुवक आंदोलन के काम को दिशा देंगे।''

भगत सिंह नवयुवकों को जिज्ञासु होने के लिए प्रेरित करते हैं। वे चाहते थे कि प्रत्येक युवक को जिज्ञासु होना चाहिए। उनका मानना था कि यदि युवकों में जिज्ञासा की प्रवृत्ति होगी तो वे जिज्ञासा शांत करने के लिए प्रयास करते रहेंगे, प्रयास करते रहने से कामयाबी मिलती रहती है। भगत सिंह का मानना था कि समस्या चाहे कितनी भी बड़ी हो, परन्तु उसका हल अवश्य होता है। इसलिए नवयवुकों में मुश्किलों को हल करने की शक्ति तथा दृढ़ता होनी चाहिए। इसके लिए विचारों में परिपक्वता होना ज़रूरी है। इसकी मिसाल स्वयं भगत सिंह के अतिरिक्त और क्या हो सकती है। भगत सिंह के विचारों में जो परिपक्वता और प्रौढ़ता थी, उसे देखकर ब्रिटिश उपनिवेशवाद अपने हितों की सुरक्षा को लेकर चिन्तित था, क्योंकि भगतसिंह के मस्तिष्क में भारतीय 'लेनिन' या माओत्सेतुंग बनने की अत्यधिक संभावनाएं थी। महज तेईस वर्ष की छोटी-सी उम्र में चिंतन का जो धरातल उन्होंने हासिल किया, वह उनके युगद्रष्टा और युगपुरुष होने का ही प्रमाण है। अतः ऐसे महान चिंतक ही इतिहास की दिशा बदलने और गति तेज करने का माद्दा रखते हैं। उनकी शहादत नवयुवकों को आज भी क्षितिज पर अनवरत जलती मशाल की तरह प्रेरणा देती है।

भगत सिंह के जीवन और विचारों का यदि गहराई से विश्लेषण किया जाए तो हम पाते हैं कि उन्होंने 'देश के इतिहास', 'परिस्थितियां और आदर्शों के गंभीर', 'परिश्रमी व ईमानदार विद्यार्थी' के रूप में इतिहास के वैज्ञानिक सिद्धान्तों की समझ हमारे साथ सांझी की है। एक गहरी ऐतिहासिक भौतिकवादी दृष्टि उनमें हर जगह काम करती नज़ार आती है। सामाजिक विचारों के सिद्धान्तों को उन्होनें न सिर्फ पहचाना वरन् लागू भी किया। भगत सिंह जहां युवकों को निःस्वार्थ दृढ़ इरादे और बहादुरी के साथ सच्चाई के लिए खड़े होने को प्रेरणा देते हैं, वहीं वे हमें विचारधारात्मक परिपक्वता और तर्कशील वैज्ञानिक दृष्टि से अपने इतिहास की, आस-पास की और भविष्य की समस्याओं के विश्लेषण का तरीका भी सिखाते हैं। जैसा कि उन्होंने नवयुवकों के अध्ययन के संबंध में मार्ग दर्शन किया और कहा- ''इसे ऑखें मूंद कर न पढ़ें, यह न समझे कि जो इसमें लिखा है, वही सही है। इसे पढ़ो, इसकी आलोचना करो और इसकी मदद से अपने विचार बनाने की कोशिश करो।''

शहीद भगत सिंह नौजवानों को संगठित करने के प्रयास 'नौजवान भारत सभा' के सम्मेलन में कहते हैं- ''नौजवान बहादुर होते हैं, उदार तथा भावुक होते हैं क्योंकि वे भीषण अमानवीय यन्त्रणाओं को मुस्कुराते हुए बर्दाश्त कर लेते हैं और बगैर किसी प्रकार की हिचकिचाहट से मौत का सामना करते हैं, क्योंकि मानव-प्रगति का सम्पूर्ण इतिहास नौजवान आदमियों और औरतों के खून में लिखा, क्योंकि हमेशा नवयुवकों की शक्ति, साहस, आत्म बलिदान और भावात्मक विश्वास के बल पर ही प्राप्त हुए हैं- ऐसे नौजवान जो भय से परिचित नहीं हैं और सोचने के बजाय अनुभव कहीं अधिक करते हैं।'' इस दृष्टि से उनका लिखा लेख 'युवक' भी नवयुवकों का मार्गदर्शन करता है इसमें उन्होंने कहा था- ''अगर रक्त की भेंट चाहिए, तो सिवा युवक के कौन देगा? अगर तुम बलिदान चाहते हो, तो तुम्हें युवक की ओर देखना पड़ेगा। प्रत्येक जाति के भाग्य-विधाता युवक ही तो होते हैं।'' इस

संबंध में एक पाश्चात्य पण्डित ने ठीक ही कहा है-,''आज के नवयुवक ही कल के देश के भाग्य-निर्माता हैं। वे हीं तो भविष्य के सफलता के बीज हैं।'' इसी तरह से उनका एक अन्य दस्तावेज 'विश्व-प्रेम' नवयुवकों को अपना लक्ष्य चुनने पर विचार व्यक्त करता है- ''यदि वास्तव में संसार व्यापी सुख-शांति चाहते हो तो विश्व-प्रेम का प्रचार करो। सर्वप्रथम अपमानों का प्रतिकार करना सीखो। मां के बन्धन काटने के लिए कट मरो। बंदी मां को स्वतन्त्र कराने के लिए आजन्म काले पानी में ठोकरें खाने को तैयार हो जाओ। सिसकती मां को जीवित रखने के लिए मरने को तैयार हो जाओ। तब हमारा देश स्वतन्त्र होगा। हम बलवान होंगे। हम छाती ठोक कर विश्व प्रेम का प्रचार कर सकेंगे। संसार को शांति-पथ पर चलने को बाध्य कर सकेंगे।

भगत सिंह नवयुवकों को यथार्थवादी दृष्टि अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। उनके अनुसार- ''जो व्यक्ति अपने पांवों पर खड़ा होने की कोशिश करता है और यथार्थवादी होता है, उसे धार्मिक विश्वास को एक तरफ रखकर, परिस्थितियों ने उसे जिन-जिन मुसीबतों व दुःखों में डाल दिया है, उनका बहादुरी के साथ सामना करना होगा।'' यह सन्देश जीवन को यथार्थवादी दृष्टि प्रदान करने वाला है। इसी यथार्थ का सामना किए बिना और इसे स्वीकार किये बिना आगे बढ़ पाना कठिन है। भगत सिंह का जीवन दर्शन इसी सत्य पर निर्मित होता है।

भगत सिंह ने जेल में रहकर जो डायरियां लिखीं, उनमें हम स्वतंत्रता के लिए संघर्ष, दूसरों के आत्म बलिदान के विचार हम हर पृष्ठ पर पाते हैं- उन्होंने अपनी डायरी में बहुत से विद्वानों के शब्दों को उतारा।

भगत सिंह नवयुवकों को कुशल नेतृत्व के लिए प्रेरित करते हैं। उन्होंने कहा था कि एक कुशल नेतृत्व करने वाला व्यक्ति ही सुनियोजित कार्यक्रम के तहत अपनी मंजिल पा लेता है। इस सम्बन्ध में 'वीरेन्द्र सिन्धु' ने कहा-,''स्वयं भगत सिंह के नेतृत्व की यह विशिष्टता थी कि उन्होंने क्रांतिकारी विद्रोह को पहले आंदोलन का रूप दिया तथा फिर उस आंदोलन को क्रान्ति का दिशा बोध।'' इस तरह से भगत सिंह ने अपने जीवन के अंतिम दो अढ़ाई वर्षों में जितने भी कार्य किए, सोच समझ कर किए और उनमें सोची समझी सुनियोजित सफलता भी प्राप्त की। इनमें जो प्रमुख कार्य हैं- साण्डर्स वध, केन्द्रीय असेम्बली में बम फेंकना और गिरफ्तारी देना, जेल में भूख हड़ताल का हथियार व अदालतों को राजनैतिक प्रचार का मंच बनाकर ब्रिटिश उपनिवेशवाद के क्रूर चेहरे के वास्तविक रूप को उघाड़ना तथा इसके साथ ही भगत सिंह ने फांसी के रूप में अपनी मृत्यु को भी एक सुनियोजित राजनैतिक कार्य के रूप में चुना था। इस प्रकार भगत सिंह भी युवाओं को कार्यक्रम के तहत अपने-अपने कार्य करने को कहते हैं। उनके अनुसार यदि सफलता अर्जित करनी है तो उसके लिए एक निश्चित कार्यक्रम बनाएं तथा फिर उस कार्यक्रम व योजनागत तरीकों से कामयाबी की सीढ़ियों पर चढ़े। अतः युवाओं में भी कुशल नेतृत्व की क्षमता होनी चाहिए।

भगत सिंह युवाओं को अपने कर्त्तव्यों के प्रति निष्ठावान होने के लिए प्रेरित करते हैं। भगत सिंह जानते थे कि युवकों के सामने जो काम है, वह काफी कठिन है और उनके साधन बहुत थोड़े हैं। उनके मार्ग में बहुत सी बाधाएं हैं, परन्तु निष्ठावान व्यक्तियों की लगन उन पर विजय पा सकती है, इसलिए युवकों को आगे आना चाहिए जो कठिन मार्ग हैं और जो महान कार्य हैं, उन्हें सम्पन्न करना है। अपने दिल में एक जज्बा होना चाहिए कि, ''सफलता मात्र एक संयोग है, जबकि बलिदान एक नियम।'' इस तरह भगत सिंह नवयुवकों को दिलेर, ईमानदार होने के लिए कहते हैं तथा अपनी लड़ाई खुद लड़ने के लिए हौंसला-अफजाई करते हैं कि नौजवान दोस्तों इतनी बड़ी लड़ाई में स्वयं को अकेले पाकर हताश मत होना। अपनी शक्ति पहचानो, स्वयं पर भरोसा करो, सफलता आपकी है। धन-हीन, निस्सहाय, साधनहीन अवस्था में भाग्य आजमाने के लिए और पुत्र को घर से बाहर भेजते हुए जैम्स गैरिबाल्डी' की महान जननी ने उससे जो शब्द कहे थे, उन्हें स्मरण रखो। उसने कहा- ''दस में से नौ बार एक नौजवान के साथ जो सबसे अच्छी घटना हो सकती है वह यह है कि उसे जहाज की छत पर से समुद्र में फेंक दिया जाए ताकि वह तैरकर व डूबकर स्वयं अपना रास्ता तय करे।'' इस तरह आज के नवयुवकों को भी अपना रास्ता खुद ढूंढना चाहिए।

भगत सिंह नवयुवकों को कर्मशील होने के लिए कहते हैं। इस सम्बन्ध में भगत सिंह ने "पंजाब स्टूडेंटस की कॉंग्रेस" के नाम एक पत्र में नवयुवकों को कर्मशील होने की प्रेरणा देते हुए कहा था-,''आज हम नौजवानों को बम और पिस्तौल अपनाने के लिए नहीं कह सकते।.........इन्हें औद्योगिक क्षेत्रों की गन्दी बस्तियों में और गांवों के टूटे-फूटे झोंपड़ों में रहने वाले करोड़ों लोगों को जगाना है।'' स्वयं भगत सिह ने कहा था कि मुट्ठी भर नौजवान क्रान्ति नहीं ला सकते। उनका यह तर्क था कि बड़ी धीरता, परिश्रम के साथ जनसाधारण के बीच काम करना चाहिए। लोगों को संघर्ष के लिए संगठित रहना चाहिए, ठोस कार्य-नीतियां तैयार करना, उन पर अमल करना, लोगों को सत्ता के अंतिम संघर्ष की ओर ले जाना चाहिए। इस प्रकार भगत सिंह नवयुवकों को कर्म की महत्ता बताते हुए खेतों में काम करने के लिए कहते हैं। ताकि वे कर्मशील बन सकें। इस तरह भगत सिंह नवयुवकों के लिए प्रेरणादायक स्रोत हैं।

शहीद भगत सिंह युवाओं को क्रान्ति के लिए प्रेरित करते हैं कि हमें क्रान्ति लानी चाहिए, परंतु यह आवश्यक नहीं है कि क्रान्तिकारी बमों और पिस्तौल वाला व्यक्ति हो और न ही क्रान्ति कोई खूनी युद्ध अथवा संघर्ष है, क्रान्ति तो दबाए हुए लोगों को

आज़ाद कराने के लिए चुना गया एक तरीका थी और क्रान्ति को मेहनत, दुःख सहकर और बलिदान से ही जिन्दा रखा जा सकता है, पाया जा सकता है।

भगत सिंह नवयुवकों को इंकलाब लाने के लिए कहते हैं और भगत सिंह ने भी इस शब्द 'इंकलाब जिंदाबाद' को अपने जीवन के लक्ष्य को आधार तथा सहायक रूप में प्रयोग किया। स्वयं भगत सिंह ने भी इस बात पर ज़ोर दिया कि जिस मायने में 'क्रान्ति' शब्द का इस्तेमाल किया गया है वो बेहतरी के लिए आने वाले बदलाव का जोश है। वे लोगों की सोच बदलने की बात करते हुए कहते हैं-, ''लोगों की इस सोई हुई सोच को क्रान्तिकारी सोच से बदलने की ज़रूरत है।'' उनका मानना था कि ये सोच इन्सानियत की आत्मा में घुस जानी चाहिए ताकि वो इन प्रतिक्रियावादी ताकतों के आगे बढ़ने पर रोक लगा सके अर्थात् पुराने तरीकों की जगह हमेशा नए को ले लेनी चाहिए ताकि 'नया' इस दुनिया को खराब न कर सके। भगत सिंह क्रान्ति को और आगे स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि, ''क्रान्ति में हिंसात्मक संघर्षों का अनिवार्य स्थान नहीं है और न ही व्यक्तिगत रूप से प्रतिशोध लेने की गुंजाइश है। क्रान्ति बम और पिस्तौल की संस्कृति नहीं है, उससे हमारा प्रयोजन एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करना है, जिसको इस प्रकार के घातक खतरों का सामना न करना पड़े और जिसमें सर्वहारा वर्ग की प्रभुता को मान्यता दी जाए।''

भगत सिंह नवयुवकों को क्रांति लाने के लिए हिंसक होने को कहते हैं-केवल उसी हालात में, जिसमें वे सामाजिक समस्याओं को हल कर सकें वरना स्वयं को युद्ध की आग में झोंकने का कोई औचित्य नहीं है। हिंसा के सम्बन्ध में उनके और भी विचार है जो भारतीय इतिहास में दर्ज़ है जैसे कि- न्यायालय में उसने कहा- ''हमारा असली मकसद तो उन बहरों को सुनाना था और उन्हें चेतावनी देना था।'' भगत सिंह का मानना था इन सामाजिक समस्याओं को सुझाने के लिए हिंसक होना अनिवार्य है और यही एकमात्र ढंग है जिससे हम श्रमिकों, कृषकों को आर्थिक, राजनैतिक स्वतन्त्रता दे सकें जो आम लोगों की कोटि में आते हैं।'' भगत सिंह नवयुवकों को धार्मिक अंधविश्वासों से दूर व इन पर अमल न करने के लिए कहते हैं क्योंकि ये धार्मिक अन्धविश्वास और कट्टरपन हमारी प्रगति में बहुत बड़े बाधक हैं।

भगत सिंह नवयुवकों को भेदभाव रहित एकजुट होने के लिए कहते हैं। उन्होंने अपनी 'किरती' पत्रिका में छपे लेख 'साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज' में दंगों की आग में झुलसते समाज के बारे में लिखा- ''अब तो एक धर्म का होना ही दूसरे धर्म का कट्टर शत्रु होना है- यह मार काट इसलिए नहीं कि फलां व्यक्ति दोषी है, परन्तु इसलिए कि फलां व्यक्ति हिन्दू है या सिक्ख है या मुसलमान।''

भगत सिंह नवयुवकों को देश के प्रति प्रेम की भावना रखने की प्रेरणा देते हैं। उनमें खतरों से खेलने की जो वृत्ति थी वह उनके रोम-रोम में बसी उनकी बेपरवाह और उन्मद जोश की ज्वाला थी। जिस प्रकार भगत सिंह ने अंग्रेजी हुकूमत के विरुद्ध आवाज उठाई और उनके बनाए हुए शासन के कठोर बन्धन को तोड़ा-उसी तरह आज के नवयुवकों को अपने देश की समस्याओं से दो-दो हाथ करने का जज्बा होना चाहिए।

भगत सिंह ने अपने लिए देश से कुछ नहीं मांगा वरन् देश के लिए उसने अपना सर्वस्व त्याग कर दिया। यह उसका देश प्रेम ही था जो वह आत्म-बलिदान के लिए तैयार था, बेशक भगत सिंह स्वयं को बचा सकता था तथा आसानी से विद्वानों की तरह जीवन व्यतीत कर सकता था, परंतु उसने ऐसा नहीं किया उसने साम्राज्यवाद की नीति विरुद्ध अपना ध्यान दिया तथा इस नीति को खत्म करने का पूरा प्रयास किया। जिस तरह से उसने फांसी के फंदे को चूमा, वह उसके देश प्रेम को चित्रमय ढंग से दर्शाता है। इसलिए नवयुवकों में भी देश प्रेम के लिए ऐसी भावना होनी चाहिए ताकि वे देश के लिए अपना बलिदान दे सकें। इस तरह बहुत से उदाहरण हैं जो भगत सिंह के बलिदानों का साक्षात्कार कराते हैं। 1923 में जब भगत सिंह नैशनल कॉलेज लाहौर के विद्यार्थी थे, उसे पता चला कि उसके मां-बाप उसके विवाह की बात चलाने जा रहे हैं तो उसने अपने पिता को पत्र लिखा और कहा-, ''शायद आपको याद हो जब मैं बहुत छोटा था तो पिता जी ने मेरे यज्ञोपवीत के वक्त ऐलान कर दिया था कि मुझे देश सेवा के लिए वक़्फ कर दिया गया है। इसलिए मैं उस वक्त की प्रतीक्षा कर रहा हूं।''

भगत सिंह नवयुवकों को प्रेरणा देते हुए कहते है कि उन्हें पुरातन विचारों को खंगाल कर नये विचारों के लिए स्थान रिक्त करना होगा। साथ ही भगत सिंह पुरानी विरासत से भी मुंह मोड़ने को भी नहीं कहते। वे चाहते हैं कि जो पुराना सड़ गया है उसे निकाल कर फेंक दो और उसके स्थान पर नया रोप दो। इस तरह परम्परा वृक्ष हमेशा हरा रहेगा। इसके साथ ही भगत सिंह आत्मविश्वास करने की प्रेरणा देते हैं क्योंकि इस विश्वास से तर्क पोषित होता है और तर्क से ही हम अपने आस-पास की जांच-पड़ताल कर सकते हैं यही जांच-पड़ताल हमें सही निर्णय लेना सिखाती हैं। उन्होंने कहा था कि मनन करे, गहराई तक जाएं, सोचें और तर्क विकसित करें और स्वयं इस तर्क की आलोचना करें। इससे आप में मौलिक विचार पैदा करने की क्षमता आएगी। इक्कीसवीं सदी में भगत सिंह को याद करने का यही मतलब है क्योंकि भगत सिंह के विचार आज भी उतने आधुनिक हैं और ये आज हमारा पथ प्रशस्त कर सकते हैं।

प्राध्यापक, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
सतीश चन्द्र धवन, राजकीय महाविद्यालय, लुधियाना
मो. 9463603737

समीक्षात्मक आलेख

भीष्म साहनी की कहानियों में देश विभाजन की पीड़ा

● डॉ. हेमराज कौशिक

हिन्दी कहानी की प्रगतिशील परम्परा में जिन कथाकारों की गणना की जाती है उनमें भीष्म साहनी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और सामाजिक प्रतिबद्ध कथाकार हैं। प्रेमचन्द और यशपाल की परम्परा को समृद्ध करने में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। उनकी कहानियाँ उस संक्रमण को भी स्पष्ट करती है जिसके कारण पुरानी पीढ़ी और नयी कहानी की संवेदना भूमि में पार्थक्य परिलक्षित होता है। वैचारिक दृष्टि से भीष्म साहनी नयी कहानी की अपेक्षा उस पीढ़ी के निकट है जो प्रेमचंदोत्तर काल में अस्तित्व में आयी और संवेदना भूमि की भिन्नता के कारण जिन्हें पुरानी पीढ़ी की परम्परा के रचनाकार कहा गया। नयी कहानी के दौर में कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव और निर्मल वर्मा की विशद चर्चा हुई परन्तु अमरकान्त, भीष्म साहनी और शेखर जोशी जैसे कहानीकारों की कहानियों को गंभीरता से नहीं लिया गया। भीष्म साहनी कथा आन्दोलनों की चिन्ता किए बगैर सतत सृजनरत रहे और लगभग साठ वर्ष की सुदीर्घ अवधि में उन्होंने कहानियाँ लिखी हैं। उनकी कहानी यात्रा का समारंभ सन् 1934 में कॉलेज पत्रिका रावी से होता है। उनकी पहली कहानी 'नीली आँखे' सन् 1944-45 में हंस पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। उनका कथा लेखन छः दशकों में व्याप्त है। भाग्यरेखा (1953), पहला पाठ (1957), भटकती राख (1966), पटरियाँ (1973), वाङ्चू (1978), शोभा यात्रा (1981), निशाचर (1983), पाली (1989) और डायन (1998) उनके नौ कहानी संग्रह हैं जिनमें उनकी 120 कहानियाँ संग्रहीत हैं।

भीष्म साहनी ने अपनी कहानियों में देश विभाजन की त्रासदी के साथ टूटते बिखरते मानवीय मूल्यों, मध्यवर्ग और विशेष रूप में निम्न मध्यवर्गीय समाज की विडम्बनाओं का जीवंत चित्रण किया है। स्वतंत्रता के पश्चात् हाशिये के समाज की पीड़ा उन्होंने जिस सजगता, प्रतिबद्धता और मार्मिकता से मुखरित की है, उसके कारण उनकी कहानियों का हिन्दी कथा साहित्य में निजी वैशिष्ट्य है। वे हिन्दी के उन कथाकारों में से हैं। जिन्होंने देश विभाजन की पीड़ा को न केवल देखा अपितु अनुभूत भी किया। यही कारण है कि उनकी बहुत-सी कहानियों में देश विभाजन की त्रासदी, साम्प्रदायिकता की समस्या और उससे उत्पन्न भयावह स्थितियों का यथार्थ चित्रण है। उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों के मध्य साम्प्रदायिक विद्वेष के कारणों और परिणामों की तलाश की है। उनकी कहानियों में साम्प्रदायिक विद्वेष और साम्प्रदायिक सौहार्द दोनों का चित्रण मिलता है। इस प्रकार संवेदना की कहानियों में जहाँ एक ओर नृशंसता और क्रूरता और अमानवीयता के चित्र हैं वहाँ ऐसे विध्वंसात्मक परिवेश में भी मानवीयता और करुणा की अडिग राह पर चलने वाले चरित्र भी हैं जो अनेक जोखिम उठाकर भी मानव रक्षा के लिए आगे आते हैं। 'अमृतसर आ गया', पाली, वीरो, सरदारनी, जहूरबख्श, 'मुझे घर छोड़ आओ', निमित्त आदि अनेक कहानियाँ है जिनमें इसे बखूबी देखा जा सकता है।

'अमृतसर आ गया' देश विभाजन की त्रासद स्थितियों को मूर्तिमान करने वाली कहानी है। इसमें विभाजन के कारण लोगों के हृदय में उत्पन्न घृणा और विद्वेष भावना को व्यंजित करने के साथ मानव मन की दयालुता और करुणा की भावना को भी व्यंजित किया है। लेखक ने इस कहानी में यह तथ्य सामने लाया है कि किस प्रकार साम्प्रदायिकता का जहर स्थान, परिवेश और परिस्थिति के अनुरूप प्रबल रूप में प्रकट होता है और नृशंसता और अमानवीयता के चरम तक पहुँचता है। लेखक ने इसमें दो दृश्यों की अवतारणा की है एक अमृतसर पहुँचने से पूर्व और दूसरा अमृतसर पहुँचने पर।

पहले दृश्य में पठानों की नृशंसता और अमानवीयता प्रकट होती है और दूसरे में दुबले बाबू की क्रूरता साम्प्रदायिकता के आवरण में पराकाष्ठा में प्रकट होती है। पाकिस्तान बनने की घोषणा हो गयी थी परन्तु बना नहीं था ऐसे समय में गाड़ी पाकिस्तान से अमृतसर की ओर आती है। ऐसे परिवेश में लोगों की मानसिकता परिवर्तित होकर विकृत रूप धारण करती है। देश विभाजन के समय दंगो से भयाक्रांत व्यक्ति गाड़ी में चढ़कर सुरक्षित स्थानों को जाना चाहते हैं। ऐसे समय में हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदायों की मानसिकता का मनोवैज्ञानिक चित्रण लेखक ने किया है। वजीराबाद में एक हिन्दू परिवार डिब्बे में आने का प्रयत्न करता है तो पठान उन्हें न केवल आने से रोकता अपितु

लात मारता है जो हिन्दू युवक की पत्नी के कलेजे में लगती है। इसके साथ वह उनका सामान भी नीचे फेंक देता है। इस अन्याय को सभी उपस्थित यात्री मूक भाव से देखते रहते हैं। डिब्बे में बैठा सरदार और दुबला व्यक्ति चुप रहते हैं। दुबले बाबू का चेहरा पीला पड़ जाता है। पठान उससे हंसी ठिठोली भी करते हैं। वह सब कुछ सहन करता है।

परन्तु जैसे ही गाड़ी हरबंसपुरा से निकलकर अमृतसर पहुँचती है। दुबला बाबू ऊँची आवाज में चिल्लाता है - 'अमृतसर आ गया है' और फिर उछलकर पठानों को सम्बोधित कर चिल्लाता है - ओ बे पठान के बच्चे। नीचे उतर तेरी उस पठान बनाने वाली की मैं - हिन्दू औरत को लात मारता है, हरामजादे ! इस गाली गलौच के बाबजूद पठान कुछ नहीं कर पाता है। थोड़ी देर दुबला बाबू गाड़ी से उतरकर लोहे की छड़ लेकर उपस्थित होता है और उन पठानों की तलाश करता है परन्तु पठान अमृतसर पहुँचकर भीषण परिस्थिति को देखकर दूसरे डिब्बे में चले जाते हैं। एक अन्य स्टेशन पर मुस्लिम परिवार डिब्बे में प्रवेश करने का प्रयत्न करता है तो वही दुबला व्यक्ति वृद्ध व्यक्ति पर लोहे की छड़ से प्रहार करता है और वह कटे पेड़ की तरह गिर पड़ता है। और उसके गिरते ही उसकी पत्नी का सफर भी वहीं समाप्त हो जाता है। इस अमानवीय कार्य को करने के पश्चात् सहसा बाबू छड़ फेंक कर नैरेटर की बगल में बैठता है तभी सरदार जी उसे कहते हैं - बड़े जीवट वाले हो बाबू, दुबले पतले हो, बड़े गुर्दे वाले हो। बड़ी हिम्मत दिखाई'। सरदार जी भी प्रकारान्तर से दुबले व्यक्ति का ही समर्थन करता है। इस भयानक हिंसक परिवेश में भी डिब्बे में बैठी बुढ़िया निर्भीक होकर अन्याय का विरोध करती है। वह कहती है - 'वे जीण जोगयो, आराम नाल बैठो, वे रब्ब दिया बन्दयो, कुज होश करो'। लेखक ने इस कहानी में यह स्पष्ट किया है कि मुस्लिम बहुल क्षेत्र में पठान बिना किसी तनाव के अमानवीय व्यवहार और अत्याचार करते हैं और हिन्दू बहुल क्षेत्र में आकर दुबला बाबू शक्ति ग्रहण कर लेता है और वहाँ पठानों की शक्ति क्षीण हो जाती है, इसी कारण भयभीत होकर दूसरे डिब्बे में चले जाते हैं।

भयानक हिंसक परिवेश में भी डिब्बे में बैठी बुढ़िया निर्भीक होकर अन्याय का विरोध करती है। वह कहती है - 'वे जीण जोगयो, आराम नाल बैठो, वे रब्ब दिया बन्दयो, कुज होश करो'। लेखक ने इस कहानी में यह स्पष्ट किया है कि मुस्लिम बहुल क्षेत्र में पठान बिना किसी तनाव के अमानवीय व्यवहार और अत्याचार करते है और हिन्दू बहुल क्षेत्र में आकर दुबला बाबू शक्ति ग्रहण कर लेता है और वहाँ पठानों की शक्ति क्षीण हो जाती है, इसी कारण भयभीत होकर दूसरे डिब्बे में चले जाते हैं।

लेखक ने यह भी उद्घाटित किया है कि हिंसा भय और अमानवीय परिवेश में भी कुछ ऐसे लोग भी थे जिनके लिए मानवीय मूल्य सर्वोपरि थे। कहानी में बुढ़िया ऐसा ही चरित्र है जो शारीरिक रूप में वृद्ध और अशक्त होते हुए भी अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाती है। वह पठान का विरोध करती है और अमानवीयता की शिकार नारी के पक्ष में निर्भीक होकर खड़ी होती है, वह पठान पर क्रोधित होती है - बहुत बुरा किया है तुम लोगों ने, बहुत बुरा किया है। तुम्हारे दिल में दर्द मर गया है। छोटी-सी बच्ची उसके साथ थी। बेरहयों, तुमने बहुत बुरा किया, धक्के देकर उतार दिया है। भीष्म साहनी ने बुढ़िया का चरित्र सृष्टि करके साम्प्रदायिक सद्भाव, सह-अस्तित्व और पारस्परिक प्रेम की भारतीय परम्परा की तलाश की है।

वीरो भी देश के माध्यम से विभाजन की समस्या पर आधारित कहानी है। देश विभाजन के समय कई हिन्दू और मुस्लिम परिवार बिखर गये। वीरो भी ऐसी ही नारी है जो अपने बाल्यकाल में अपने परिवार से बिछुड़ गई। वह उस दारुण घटना को अपने बेटे को सुनाती है - जब पाकिस्तान बना तो मैं कहीं खो गई थी। मेरे माँ-बाप और सगे संबंधी बसों में चढ़कर चले गये थे। मैं भीड़ में ही खो गई थी। तब मैं बहुत छोटी थी। वीरो को मुस्लिम परिवार में आश्रय मिलता है जहाँ उसका नाम सलीमा रखा जाता है। सलीमा परिवार में पूरी तरह व्यस्त हो जाती है। उसका बेटा सलीम है परन्तु वह अपने अतीत को विस्मृत नहीं कर पाती है। प्रतिवर्ष वैसाखी के अवसर पर सिक्ख गायकों की टोली छेन कर तालों की ध्वनि के साथ उनकी बस्ती से गुजरती है तो छज्जे पर पहुँचकर चिलमन की ओट में बाहर झांक कर देखती है। उसका मन घोर अवसाद में घिर जाता है। उसके मन में यह उत्कण्ठा उत्पन्न होती है कि वह जाकर उनसे पूछे तुम में मेरा भाई तो नहीं है? परन्तु वह यह साहस नहीं जुटा पाती। सिक्ख टोली की संगीत स्वरलहरियों को सुनते हुए उसका मन विचलित हो जाता है और अश्रु प्रवाहित होने लगते हैं। ऐसी स्थिति में उसका बेटा सलीम माँ से दुःख का कारण पूछता है तो अपने हृदय की व्यथा को व्यक्त करते हुए कहती है 'मैं जन्म से सिक्खणी हूँ बेटा'। यह सुनकर वह माँ के बाल्यकाल के संबंध को सोचता है परन्तु उसके लिए माँ के बचपन का कोई अर्थ नहीं होता। उसके लिए माँ का वर्तमान ही उसके लिए सच्चाई है। वह सोचता है क्या अब उसका मेरे लिए कोई अर्थ नहीं रह गया है मेरा सगा संबंधी मिल भी जाए तो क्या

होगा? ऐसे सोचते हुए भी वह प्रतिवर्ष सिक्खों की उस गायक मण्डली में अपने भाई को तलाश करती रहती है। माँ की व्यथा को अनुभव करके सलीम सिक्खों की टोली में से वयोवृद्ध कुलवीर वीर को ढूँढ लाता है। बचपन की वीरो की भेंट अपने भाई से होती है। पुरानी स्मृतियों को पुनर्जीवित करते हुए काफी समय तक वार्तालाप होता है जिससे उनकी परस्पर भाई बहन के रूप में पहचान होने लगती है परन्तु फिर भी मन में संशय बना रहता है। कुलवीर उनसे विदा लेते हुए हाथ जोड़कर कहता है 'अब तो चलूँगा बहन जी, पर अगर मेरी बहन मुझे मिल गई तो मेरे धन्य भाग्य। बरसों का बिछोड़ा ---- कहते हुए उसकी आँखे छलक आई'।

'छः मास पश्चात् सलीम के परिवार सभी लोग उनकी छोटी बेटी के विवाह में उपस्थित होने के लिए अमृतसर जाते हैं। वीर जी का आग्रह था कि सभी लोग विवाह में अवश्य आये। रेलगाड़ी में यात्रा करता हुआ वीरो का मंझला बेटा आगरा और अजमेर देखने की उत्सुक्ता व्यक्त करता है और सलीम अपनी माँ को बताता है कि कैसे उसने अपने मामा को तलाश किया था। लेखक ने इस कहानी के माध्यम से यह प्रतिपादित किया है कि देश विभाजन के समय कितने परिवारों से वीरो जैसी बालिकाओं, युवतियों को बिछुड़ना पड़ा। देश विभाजन की त्रासदी से कितने परिवार बिखर गये और उन्हें दुःख भरा जीवन गुजारना पड़ा। वीरो जैसी नारियाँ कदाचित् कम ही भाग्यशाली रही है जिन्हें पुनः परिवार या निजी प्रिय व्यक्ति मिल सका। लेखक ने यह उद्घाटित किया है कि सलमा कई संतानों - सलीम, महमूद, रफीक, महमूद और बेटी मकसूदा की माँ है भरा पूरा परिवार है, परन्तु वह अतीत की स्मृतियों और रिश्तों से अलग नहीं हो पाती। यह मनोवैज्ञानिक सत्य भी है।

'पाली' भी देश विभाजन की भयावह त्रासदी पर आधारित कहानी है। पाकिस्तान के निर्माण के पश्चात् शरणार्थियों के काफिले भारत में आये उन्हें इस मध्य अनेक प्रकार की विकट और भीषण कठिनाइयों से गुजरना पड़ा। शरणार्थियों के काफिले में मनोहर लाल उसकी पत्नी और दो बच्चे नव निर्मित पाकिस्तान से भारत देश में आते हैं। इस दौरान लोगों की भीड़ में वे गाड़ी में चढ़ते हैं, परन्तु उनका बेटा पाली उनके हाथ से छूट जाता है, मनोहर लाल की पत्नी कौशल्या गाड़ी में चढ़ चुकी थी और वह यह सोचता है कि बालक यहीं कहीं होगा। बाद में ज्ञात होता है कि बेटा कहीं नहीं है। पाली की माँ पुत्र वियोग में दहाड़ती है। परन्तु कुछ भी संभव नहीं हो पाता। शरणार्थियों की भीड़ में बालक खो जाता है और वह पाकिस्तान में ही रह जाता है। वे बालक को तलाश करने की भरसक कोशिश करते हैं परन्तु नहीं मिल पाता। पत्नी के हृदय की असीम पीड़ा को अनुभव कर मनोहर लाल उसे सांत्वना देता है -- 'नहीं मिला तो अब क्या करें। हमारा तो भगवान की दया से एक बच्चा बच रहा है, लेखराज के तो तीनों ही बच्चे उसकी आँखों के सामने मारे गए...।'

पाकिस्तान में पाली जैनब और शकुर दम्पति को मिलता है। निःसंतान दम्पति बालक को प्राप्त कर सुख अनुभव करते हैं। जैनब अपनी सूनी गोद में पाली को पाकर पहली बार असीम सुख का अनुभव करती है। उन्होंने बालक का नाम अल्ताफ रखा। दो वर्षो के अंतराल के अनंतर मनोहर लाल को यह ज्ञात हुआ कि शकुर के घर में बच्चा रह रहा है। परन्तु मौलवी की हठ धर्मिता और साम्प्रदायिकता का कट्टरता के कारण वे पाली को न लौटाने का निश्चय करते हैं। धार्मिक संकीर्णता और साम्प्रदायिकता के कारण इस प्रक्रिया के तीन वर्ष और बीत गए। अतः पांच वर्ष के पश्चात् मनोहरलाल शकुर मुहमद के घर पहुँचता है। मौलवी और समाज सेविका के मध्य गर्म बहस होती है परन्तु मनोहरलाल टाट के पर्दे के पीछे बैठी जैनब से हाथ जोड़कर प्रार्थना करता है 'बहन मैं तुमसे बच्चे की नहीं अपनी घरवाली की जान की भीख मांगने आया हूँ। वह अपने दोनों बच्चे खो चुकी है। पाली के बिना पागल हुई जा रही है वह दिन-रात तड़पती रहती है। उस पर तरस खाओ'। मनोहर के इस मार्मिक अनुरोध पर जैनब कहती है 'ले जाओ अपने बच्चे को। हम नहीं चाहते किसी बदनसीब की बद्दुआ हमें लगे। हमें क्या मालूम तुम्हारे दोनों बच्चे खो चुके है'। पर्दे के पीछे से जैनब के कथन को सुनकर मनोहरलाल को लगता है कि वह उस औरत के चरणों का स्पर्श करे। पाली की विदाई प्रारंभ होती है और जैनब शकुर के ईद के अवसर पर वापस के अनुरोध का स्वीकार करते हुए बालक को वापस लाते हैं। पाली इल्ताफ से उसका नामकरण यशपाल कर दिया जाता है।

यह कहानी जहाँ एक ओर मनोहरलाल और कौशल्या के हृदय की मर्मान्त पीड़ा व्यंजित करती है वहीं दूसरी ओर पाली की विदाई के अवसर पर जैनब अश्रुधारा माँ की सूनी गोद होने की पीड़ा को मूर्तिमान करती है। माँ की ममता और वात्सल्य को किसी धर्म और सम्प्रदाय में नहीं बांटा जा सकता। पाली से इल्ताफ और फिर इल्ताफ से यशपाल बनने की जिन स्थितियों से बालक को गुजरना पड़ता है, मौलवी पंडित और समाज सेविका की कट्टरताओं में पिसना पड़ता है। उसका उद्घाटन भीष्म साहनी से नितान्त कुशलता और तटस्थता से किया है। माँ की ममता की अनेक पर्तो को अनावृत करने वाली यह कहानी माँ के हृदय की व्यथा को गहनता और सूक्ष्म से व्यंजित करती है। शकुर और जैनब पाली को पाकर संतान सुख अनुभव करते हैं। मुस्लिम परिवार में हिन्दू बालक का रहना साम्प्रदायिकता कट्टरता के समर्थकों को अच्छा नहीं लगता है। इसलिए मौलवी पाली की सुन्नत करते हैं। उसे कलमा पढ़ाते हैं। ताकि वह काफिर का बच्चा से दीन का बच्चा बन जाये। इसी भाँति जब पाली को लेकर लौटते है तो समाज सेविका पाली की टोपी फेंक देती है। उसका

कहना है हिन्दू का बच्चा है तो मुसलमानी टोपी क्यों पहनेगा। लेखक ने इस कहानी में यह उद्घाटित किया है कि साम्प्रदायिकता का जहर नाम के साथ-साथ कपड़ों तक में व्याप्त है। यही कारण है कि पाली से वह इल्ताफ बनता है और फिर यशपाल। जैनब का शकुर के लिए बालक महत्त्वपूर्ण है वह उनकी ममता और वात्सल्य का केन्द्र है इसीलिए मनोहर और कौशल्या के लिए भी धर्म और संप्रदाय से कोई प्रयोजन नहीं है। हिन्दू और मुसलमान बनाने की जिद दोनों पक्षों के माता-पिता को नहीं है। यह जिद मौलवी और पंडित की है। पाली धर्माचार्यों और साम्प्रदायिक शक्तियों की संकीर्णता और कट्टरता में पिसता है। वह जन्म से हिन्दू है उसे मुसलमान बनाया जाता है और फिर हिन्दू। माँ के लिए धर्म मजहब का कोई महत्त्व नहीं है परन्तु दोनों ओर की साम्प्रदायिक शक्तियाँ अपने धर्म में दीक्षित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

'सरदारनी' कहानी में भी हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगे और फसाद है। लेखक ने इस कहानी में प्रतिपादित किया है कि साम्प्रदायिकता का विष इतना भयावह और घातक होता है कि वह निरीह लोगों को अपना शिकार बनाता है। परन्तु हिंसक, आक्रमक और नृशंस लोगों के अतिरिक्त समाज में ऐसे भी इन्सान विद्यमान हैं जिनके लिए किसी धर्म संप्रदाय से बढ़कर मानवता सर्वोपरि है। उनमें करुणा, दया और उदारता विद्यमान है। कहानी में सरदारनी ऐसी प्रेरणादायी सशक्त चरित्र है।

साम्प्रदायिक दंगों में मास्टर करमदीन की हत्या करने की योजना बनती है। फसाद करने वाले लोगों को यह ज्ञात होता है कि मास्टर करमदीन मोहल्ले में अकेला रहता है। साम्प्रदायिक दंगों में करमदीन अपने आप को असुरक्षित अनुभव करता है। उसे यह प्रतीत होता है जैसे फसादी लोग उसके घर का दरवाजा तोड़कर उसकी हत्या करने आ रहे हैं। एक दिन उसके घर का दरवाजा सरदारनी खटखटाती है तो वह अनुभव करता है कि उसकी जीवन लीला समाप्त हो जाएगी। वह करमदीन को अपने साथ चलने को कहती है और वह सहमा सा उसके पीछे चला जाता है, इस अवसर उसे कुछ साए सामने डोलते नजर आते हैं। वह भयभीत होता है और वह सोचता है कि उसका अंतिम समय आ गया है। उसके सामने कुछ लोग बर्छे और तलवारें लेकर उपस्थित होते हैं ताकि वे करमदीन को मृत्यु के घाट उतार सके। परन्तु सरदारनी समझ जाती है कि ये दंगा फसाद करने वाले लोग हैं। वह करमदीन के आगे खड़ी होकर अपनी कटार सामने करके ऊँची आवाज में कहती है 'यह गुरु गोबिन्द सिंह की तलवार है। तुम्हें जान प्यारी है तो सामने से हट जाओ?' सरदारनी की चेतावनी और ललकार को सुनकर किसी में आगे बढ़ने का साहस नहीं होता।

सरदारनी करमदीन को मुसलमानों के मुहल्ले तक पहुँचाकर कहती है 'जाओ मास्टर।' और वहाँ से लौट आती है। समय के साथ साम्प्रदायिकता का अंधकार छंटा और कुछ प्रकाश किरणें दिखाई देने लगीं। मानवता से प्रेम करने वाले लोगों के लिए सरदारनी की मानवीयता, साहस और मानव मात्र के प्रति प्रेम स्मरणीय बन जाता है और वे सरदारनी से भेंट करने आते हैं। वे सरदारनी के प्रशंसक बनकर उसके घर आते हैं परन्तु सरदारनी उन्हें कहती है हमारे सरदार जी घर नहीं है। मिलना है तो हमारे सरदार जी से मिलो। वह शाम को आयेंगे। काम पर गए है। कहानी इस कथन के साथ समाप्त होती है। इस कहानी में लेखक ने नारी जाति की दृढ़ता, साहस और निर्भिकता को स्पष्ट की है।

'सलमा आपा' में भी भीष्म साहनी ने हिन्दू-मुस्लिम हृदयों में विद्वेष की दरारों के बावजूद स्नेह और मानवीयता के सूत्रों की तलाश की है। इस कहानी में यह स्थापित किया गया है कि देश विभाजन के समय रक्त रंजित वातावरण के बावजूद कुछ लोगों में मानवीयता जीवित रही हैं। इस कहानी में लेखक ने पाकिस्तान के कराची में एक हिन्दू परिवार को केवल अपनी बहन सलमा आपा का नाम सुनकर आश्रय देने वाले मुसलमान भाई की मानवीयता और उदारता को चित्रित किया है। कराची में हिन्दू परिवार का मुसलमान भाई सलमा बहन का नाम सुनकर जिस प्रेम और आदर से उनका आतिथ्य करता है वह उनके लिए अविस्मरणीय बन जाता है। भीष्म साहनी की यह कहानी किसी संप्रदाय, धर्म से ऊपर मानवीय मूल्य की प्रतिष्ठा करती है।

'मुझे घर छोड़ आओ' कहानी में भी देश विभाजन की पीड़ा मुखरित हुई है। शरणार्थियों से भरी रेलगाड़ी बजीरावाद स्टेशन पहुँचती है तो अन्य यात्रियों के साथ वृद्ध व्यक्ति पानी लेने डिब्बे से बाहर निकलता है। नल के पास पहले ही पानी के लिए भीड़ थी। इतनी भीड़ में उसका नल तक पहुँचना दुष्कर था। 'मुझे दो घूँट पानी दो। मैं प्यासा मर जाऊँगा'। परन्तु उसकी बात सुनने का अवसर किसी के पास नहीं था। गाड़ी धीरे-धीरे गति पकड़ती है और लोग बिना पानी लिए लौट आते हैं और बूढ़ा व्यक्ति भी चलती गाड़ी में चढ़ने का प्रयत्न करता है और दरवाजे के पास चढ़ते समय औंधे मुंह गिर जाता है। एक यात्री उसे दो घूँट पानी देता है। उस समय ज्ञात होता है कि गाड़ी में उसका कोई निकट संबंधी नहीं है। शरणार्थियों से भरी गाड़ी में वह केवल विलख-विलख कर यही कहता है 'मैं अपने घर जाऊँगा। मुझे मेरे घर छोड़ आओ'। शरणार्थियों से भरी गाड़ी में देश विभाजन के कारण अपने-अपने घर छोड़कर आए थे किसी को भी किसी के घर का पता नहीं था। इस कहानी में विभाजन के समय अपने घर छोड़ने की पीड़ा को लेखक ने वृद्ध व्यक्ति के माध्यम से व्यक्त की है। वस्तुतः यह पीड़ा अकेले उस वृद्ध व्यक्ति की नहीं है अपितु उन सभी शरणार्थियों की है जो अपने घर छोड़ने के लिए विवश हुए थे। इसके साथ कहानी में विपरीत परिस्थितियों में मानवीय संबंधों में बेगानापन आ जाता है, उस ओर भी संकेत है। विभाजन की पीड़ा और त्रासदी ने प्रत्येक व्यक्ति को अपना घर छुड़ाने के लिए विवश किया। ऐसे

समय उन्हें अपने घर की पहचान करना कठिन होता है।

भीष्म साहनी की 'निमित' कहानी में भी यह स्थापित किया है कि देश विभाजन के समय जब लोग एक दूसरे से प्रतिशोध लेने के लिए चारों ओर दंगों और आगजनी का वातावरण निर्मित कर रहे थे। चारों ओर हत्याओं का घृणित दौर निरीह, निर्दोष लोगों को भयाक्रांत कर रहा था। उस समय ऐसे लोग भी थे जो अपनी जान को जोखिम में डालकर दूसरों की प्राण रक्षा कर रहे थे। निमित्त कहानी में ऐसा ही भाग्यवादी बुजुर्ग है जो देश विभाजन के समय एक फैक्टरी में मैनेजर था।

वे अपनी नौकरी के दिनों का किस्सा सुनाते हैं जिसमें उन्होंने दंगों और फसाद के समय भंयकर हिंसा भरे वातावरण में बरसों से कंपनी की नौकरी कर रहे एक मुसलमान इमामदीन को कंपनी की गाड़ी से सुरक्षित स्थान तक पहुँचाया था। फसादी लोगों को जब कम्पनी की गाड़ी से बचकर निकलने की भनक मिलती है तो मैनेजर साहब के पास पाँच सात आदमी मुश्के बाँधे और हाथों में तरह-तरह के हथियार, नेजे, छबियां तलवारें उठाए कमरे में घुस आते हैं और विरोध प्रकट करते है और फैक्टरी को आग लगाने की धमकी देते है। वह उन्हें भी गाड़ी की चाबी देकर उसका पीछा करने के लिए देते हुए कहता है - 'लो भाई, इससे ज्यादा मैं क्या कर सकता हूँ। एक मोटर वह ले गया है, दूसरी तुम ले जाओ। अगर उसने बचना है तो बच जाएगा, अगर उसका खून तुम्हारे हाथों होना लिखा है तो वह होकर रहेगा'। वे चाबी लेकर इमामदीन का पीछा करते हैं ताकि वे उसकी हत्या कर सके। परन्तु मैनेजर की कम्पनी का ड्राइवर चालाकी से उसका सारा सामान जला देता है और उसे छिपा देता है। आततायियों के आने पर वह उन्हें जलती हुई लपटों को दिखा कर कहता है - काट कर जला दिया मुसले को। वह देख लो। जाकर देख लो, शिकार को यों हाथ से थोड़ा जाने देते'। परन्तु वास्तविकता यह होती है कि शेरसिंह फसादियों को धोखे में डाल देता है और इमामदीन को पटियाले के किले में पहुँचा देता है जहाँ अन्य शरणार्थियों को इकट्ठा किया जा रहा था ताकि वहाँ से उन्हें बाद में पाकिस्तान सुरक्षित भेजा जा सके।

लेखक ने इस कहानी में साम्प्रदायिक और उन्मादी भीड़ की मानसिकता को चित्रित किया है। उनमें किसी प्रकार का विवेक और मानवता विद्यमान नहीं होती। उनके लिए दूसरे संप्रदाय का कोई भी व्यक्ति शिकार होता है। उन्हें यदि कोई संवेदनशील, मानवता, करुणा दया का पाठ पढ़ाता है वे उसकी सीख को भी किसी भी प्रकार से अंगीकार नहीं करते। यही कारण है कि वृद्ध व्यक्ति अपने ही संप्रदाय के लोगों की संकीर्ण और प्रतिशोधपूर्ण मनोवृत्ति को समझकर उनसे भयभीत भी होता है। इस स्थिति का निरूपण करते हुए वृद्ध व्यक्ति कहता है 'उनकी आँखो में खून उतरा हुआ था। मुझे डर था कि उनमें से ही कोई आदमी छुरा निकाल कर मेरी गर्दन ही काट सकता है। ऐसा हुआ भी लोग पागल हो रहे थे। गलियों-सड़कों पर शिकार पर शिकार की खोज में मतवाले बने घूमते थे।' लेखक ने साम्प्रदायिक हिंसा, आगजनी अमानवीयता की चरम परिणति में भी शेरसिंह ड्राइवर के माध्यम ने इस कहानी में मानवता और करुणा की एक किरण दिखाई है। वह इमामदीन को उन्मादी भीड़ से सुरक्षित निकालकर पाकिस्तान जाने में उसकी मदद करता है। पटियाला कैम्प में ठहरे शेरणार्थियों में उसे पहुँचाता है जहाँ उसे परिवार के सभी लोग मिलते हैं। अंततः वह अपने परिवार के सदस्यों और अन्य लोगों के साथ सुरक्षित पहुँच जाता है।

भीष्म साहनी की अनेक कहानियों में साम्प्रदायिक और भीषण हिंसा के परिवेश में भी मानवता, करुणा और उदारता के अनेक उदाहरण विद्यमान है। लेखक ने विभाजन की पृष्ठभूमि पर रचित चर्चित उपन्यास 'तमस' तथा देश विभाजन की पीड़ा को मुखरित करती अनेक कहानियों में यह प्रतिपादित किया है कि जहाँ एक ओर साम्प्रदायिकता के नृशंस प्रहारों ने देशवासियों को एक दूसरे का बैरी समझकर अमानुषिक वातावरण निर्मित कर धरती को रक्तरंजित किया 'वहीं' दूसरी ओर ऐसे हिंसक वातावरण में भी कुछ लोगों ने हृदय में बसने वाली मानवता ने उन चरित्रों को विषम और भयानक परिस्थितियों में भी अपने लक्ष्य से विचलित नहीं होने दिया।

भीष्म साहनी की कहानियाँ गहरे सामाजिक सरोकारों से सम्बद्ध है उनमें भारतीय समाज की धड़कन विद्यमान है। उनकी कहानियाँ साम्प्रदायिक घृणा के घिनौने चेहरे को सामने लाकर प्रहार करती है और सहज मानवीय संबंधों और करुणा की अनूठी मार्मिक मिसाल प्रस्तुत करती है।

भीष्म की कहानियों में वैविध्य है और समाज के गहरे सामाजिक सरोकारों से संबद्ध हैं। यहाँ उनकी कुछेक प्रमुख कहानियों के माध्यम से देश विभाजन की पीड़ा और साम्प्रदायिक सद्भाव को रेखांकित किया गया है। उनकी अन्य अनेक यादगार कहानियाँ हैं - जिनमें 'चीफ की दावत', 'वाङ्चू', 'त्रास', 'झूमर', 'सागमीट', 'जोत', 'खून के छींटे', 'गंगो का जाया', 'संभल के बाबू', 'ओ हरामजादे', 'आवाजें', 'चेहरे', 'खिलौना' और 'डायन' आदि प्रमुख हैं। इन कहानियों में निम्न मध्यवर्गीय हाशिये पर स्थित समाज की विडम्बनाओं का चित्रण है तथा नारी नियति से सम्बद्ध सवालों को उठाया है। इन कहानियों में मानवीय जीवन का यथार्थ देश की पीडित, शोषित और दलित समाज की समस्याओं का प्रामाणिक चित्रण है। भीष्म साहनी की कहानियाँ सामाजिक चेतना जगाने की सशक्त भूमिका निभाती है।

वी.पी.ओ. बातल, तह.अर्की, जिला सोलन (हि.प्र.)
मो. : 94180-10646

आलेख

बोल मेरी धरती कितना पानी

● प्रो. योगेश चंद्र शर्मा

जनसंख्या में निरंतर वृद्धि, बढ़ता शहरीकरण, भू-जल का अत्यधिक दोहन और पर्यावरण-प्रदूषण की गम्भीर होती स्थिति ने शुद्ध पेयजल की कमी को एक विश्वव्यापी समस्या बना दिया है। विश्व बैंक की एक रपट में कहा गया है कि विश्व की चालीस प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या पानी के संकट का दुःख भोग रही है और यह समस्या विश्व के अस्सी से भी अधिक देशों में व्याप्त है। अनेक देशों में शुद्ध पेयजल विलासिता की वस्तु बनता जा रहा है। इस रपट के अनुसार मनुष्य के लिए पानी की मांग प्रतिवर्ष ढ़ाई प्रतिशत की दर से बढ़ रही है, लेकिन जल की उपलब्धता दर में कोई वृद्धि नहीं हो रही। इससे भूजल निरन्तर घटता जा रहा है। स्टाकहोम एनवायरमेंट इंस्टीट्यूट की रपट में चेतावनी दी गयी है कि अगर हमने पानी की बर्बादी को नहीं रोका तो सन् 2025 तक विश्व की दो तिहाई आबादी पानी की एक-एक बूंद के लिए तरस जायेगी।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किये गए एक सर्वेक्षण के अनुसार विश्व में इस समय लगभग अस्सी प्रतिशत बीमारियां शुद्ध जल की कमी के कारण उत्पन्न हो रही हैं। पिछड़े और विकासशील देशों में तपेदिक, डायरिया, पेट और सांस की बीमारियां तथा कैन्सर सहित अनेक रोगों की जड़ शुद्ध पेयजल का अभाव है। इसी से करोड़ो लोग चर्म और आंख के रोगों से ग्रस्त हैं। भारत में किए गये एक अध्ययन के अनुसार एक हजार नवजात शिशुओं में से लगभग 127 बच्चे हैजा, डायरिया तथा प्रदूषित जल से उत्पन्न अन्य रोगों से मर जाते हैं। राजस्थान के बड़े क्षेत्र में फ्लोराइड युक्त दूषित जल पीने से यहां के निवासी ऐसे भयानक अस्थि-रोगों के शिकार हो रहे हैं, जिनका कोई उपचार नहीं है।

यदि जल को केवल जल की दृष्टि से देखें तो पृथ्वी पर उसकी कोई कमी नहीं है। हमारी पृथ्वी का तीन चौथाई भाग समुद्रों से ढका हुआ है, लेकिन उसका जल इतना खारा है कि पीने, धुलाई करने, सिंचाई करने या औद्योगिक कार्यों के लिए उसे उपयोग में नहीं लिया जा सकता। प्रकृति जब इस जल को वाष्प के रूप में शुद्ध करके आकाश में भेजती है और वहां से जब वह वर्षा के रूप में धरती पर गिरता है, तभी वह हमारे लिए उपयोगी बनता है। पृथ्वी पर उपलब्ध कुल जल का लगभग तीन प्रतिशत भाग ही हमारे लिए उपयोगी होता है, मगर उसमें भी लगभग दो तिहाई भाग पहाड़ों में तथा ध्रुव क्षेत्रों में बर्फ के रूप में जमा हुआ है। इस प्रकार हमारे उपयोग, के लिए मुश्किल से एक प्रतिशत जल ही बचता है। इसी जल में से हम अपने उद्योग, कृषि तथा अन्य कार्यों में भी उपयोग में लेते हैं। पेयजल के रूप में तो हमारे हिस्से में बहुत थोड़ा भाग ही आता है। समस्या के समाधान के लिए रूस, इजरायल तथा विश्व के कुछ अन्य देशों में समुद्र के पानी को शुद्ध करके उसे भी पीने योग्य बनाने का कार्य चल रहा है। इस समय लगभग दो लाख क्यूबिक मीटर पीने का पानी इस पद्धति से तैयार किया जा रहा है। भारत में भी इस प्रकार का शोधकार्य शुरू हुआ है और 50 हजार क्यूबिक मीटर प्रतिदिन पानी साफ करने की एक परियोजना शुरू की गयी है। समस्या की गम्भीरता की दृष्टि से इस दिशा में अब तक हुई प्रगति को सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता है।

जल-संपदा की दृष्टि से भारत की गिनती सम्पन्न देशों में की

हमारी पृथ्वी का तीन चौथाई भाग समुद्रों से ढका हुआ है, लेकिन उसका जल इतना खारा है कि पीने, धुलाई करने, सिंचाई करने या औद्योगिक कार्यों के लिए उसे उपयोग में नहीं लिया जा सकता। प्रकृति जब इस जल को वाष्प के रूप में शुद्ध करके आकाश में भेजती है और वहां से जब वह वर्षा के रूप में धरती पर गिरता है, तभी वह हमारे लिए उपयोगी बनता है।

जाती है। हमारे यहां प्रति वर्ष औसतन 1170 मिलीमीटर वर्षा होती है। इतनी अधिक वर्षा के बावजूद वह सम्पूर्ण देश में एक समान नहीं है। कहीं बहुत कम और कहीं बहुत ज्यादा। इसमें दूसरी कठिनाई यह है कि यह वर्षा अधिकांशतः दक्षिण पश्चिम मानसून के कारण केवल जून से सितम्बर के मध्य होती है। इससे देश में किसी एक स्थान पर बाढ़ आती है और दूसरे स्थान पर अकाल पड़ता है। ऐसा भी कई बार होता है कि गर्मी के दिनों में जिस स्थान पर अकाल पड़ा होता है, उसी स्थान पर बरसात के दिनों में बाढ़ आ जाती है। बढ़ती जनसंख्या के कारण हमारे यहां प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता कम होती जा रही है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय हमारे यहां प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 5236 घनमीटर थी, जो अब घटकर लगभग 2000 घनमीटर से भी कम रह गयी है। स्पष्ट है भविष्य में यह उपलब्धता, जनसंख्या में वृद्धि के साथ और भी कम होती चली जाएगी।

भारत में किये गए एक सर्वेक्षण के अनुसार हमारे यहां 140975 बस्तियों में पेयजल का एक भी स्रोत नहीं है। यहां के लोगों को दूरदराज के क्षेत्रों से पानी लाना पड़ता है। इन बस्तियों में चार करोड़ लोग रहते हैं। इस तरह की बस्तियों की सर्वाधिक संख्या उत्तर प्रदेश में है, जिनकी संख्या 23250 है। यह संख्या बिहार में 21542, राजस्थान में 16988, मध्य प्रदेश में 13976, असम में 13960 तथा उड़ीसा में 10278 है। सर्वेक्षण के अनुसार देश की कुल बस्तियों में से केवल 56.67 प्रतिशत बस्तियों में ही पेयजल की लगभग पर्याप्त सुविधा मौजूद है। इसके लिए निध ार्रित मानदंड़ प्रतिदिन प्रति व्यक्ति 40 लीटर पानी स्वीकारा गया है। एक अनुमान के अनुसार इस समय हमारे यहां जिस पेयजल का उपयोग किया जाता है, उसका भी लगभग 70 प्रतिशत भाग अशुद्ध होता है।

यह चिन्ताजनक स्थिति है कि देश में लगभग 10 फीसदी क्षेत्र पूरी तरह सूखा है और 40 प्रतिशत अर्धशुष्क है। देश में कुल फसली क्षेत्र 1750 लाख हैक्टेयर है, जिसकी सिंचाई के लिए 260 घन किलो-मीटर पानी की आवश्यकता होती है। पानी की कम उपलब्धता के कारण केवल 1450 लाख हेक्टेयर भूमि में फसल बोई जाती है। एक अनुमान के अनुसार हमें सन् 2025 तक 770 घन किलोमीटर पानी की आवश्यकता होगी, जिसमें उद्योगों के लिए 120 घन किलोमीटर और ऊर्जा उत्पादन के लिए 71 घन किलोमीटर पानी शामिल है। सन् 1991 में हमारी जनसंख्या 84 करोड़ थी, जो अब एक अरब की सीमा से भी काफी आगे बढ़ चुकी है और इसके 2025 में 153 करोड़ तक पहुंचने की संभावना है। ऐसी स्थिति में आवश्यकता की अन्य वस्तुओं के साथ ही पानी की मांग में भी वृद्धि सहज स्वाभाविक है। मगर आपूर्ति की दृष्टि से स्थिति निराशाजनक है। देश के अधिकांश में भू-जल का स्तर अत्यधिक दोहन के कारण निरंतर गिरता जा रहा है। पानी की आपूर्ति बनाए रखने के लिए सम्पन्न व्यक्ति अपने घरों में तथा फार्म हाउसों में नलकूप खुदवा लेते हैं। सरकार द्वारा भी अनेक स्थानों पर इस प्रकार के नलकूप खुदवाये जाते हैं। इस प्रकार के नलकूपों से पानी लिये जाने पर कोई शुल्क देय नहीं होता। इसलिए इन नलकूपों से प्राप्त जल को बड़े पैमाने पर व्यर्थ बहा दिया जाता है। सरकारी नल या कुओं से प्राप्त जल का भी बड़ी मात्रा में दुरुपयोग होता है। शहरी कालोनियों में बड़े-बड़े लॉन लगाये जाते हैं, जिनमें काफी मात्रा में पानी का अपव्यय होता है। आम आदमी भी पानी को बड़ी मात्रा में अनावश्यक बहाने या नष्ट करने में संकोच नहीं करता। इस मद पर उसे जो राशि व्यय करनी पड़ती है वह इतनी कम होती है कि उसके आर्थिक पहलू की उसे चिन्ता ही नहीं होती। सिंचाई के काम में आने वाले पानी पर किया जाने वाला व्यय तो और भी नगण्य है। पानी का भंडार कितना सीमित है और वह किस प्रकार रीतता जा रहा है इसका तो आम आदमी को अहसास ही नहीं है। सरकार द्वारा भी इस दिशा में कोई विशेष प्रचार प्रसार नहीं किया जाता। पानी के दुरुपयोग पर कानूनी प्रतिबन्ध की तो कहीं कोई योजना ही नहीं है। ऐसी स्थिति में भूजल के स्तर में गिरावट आश्चर्य की बात नहीं कही जा सकती।

निरन्तर घट रहे भू-जल भंडारों की क्षतिपूर्ति हो सकती है, केवल बरसात के जल से। मगर बरसात के जल का भी हम भली प्रकार सदुपयोग नहीं कर पाते। हमारे यहां प्रतिवर्ष होने वाली औसतन 1170 मिलिमीटर वर्षा, दुनिया भर का अन्नदाता माने जाने वाले अमरीका की औसत वर्षा से भी लगभग छह गुणा अधिक है। इससे बरसात के दिनों में हमारी लगभग सभी नदियां पानी से लबालब भरी रहती हैं। अनेक स्थानों पर भीषण बाढ़ का भी आतंक छा जाता है। वर्षा और हिमपात से मिलाकर वर्ष भर में पानी की कुल मात्रा लगभग 40 करोड़ हेक्टेयर मीटर हो जाती है। इस पानी में से लगभग सात करोड़ हेक्टेयर मीटर पानी वाष्प बनकर उड़ जाता है, साढ़े ग्यारह करोड़ हेक्टेयर मीटर पानी नदियों में बहता है, और लगभग साढ़े 21 करोड़ हेक्टेयर मीटर पानी धरती

सोख लेती है। जिस पानी को धरती सोखती है, वह हमारे पेड़ पौधों की प्यास बुझाता है, मिट्टी को नमी प्रदान करता है और कुएं आदि में भूजल स्तर को बढ़ाता है। नदियों में बहने वाले पानी का कुछ भाग सिंचाई उद्योग धन्धे या पेयजल के रूप में काम आता है और शेष समुद्र के खारे पानी में मिलकर व्यर्थ हो जाता है। धरती पर गिरने वाला काफी पानी यहां के गन्दे नालों में मिलकर प्रदूषित भी हो जाता है, जो धरती के अन्दर जाकर या नदियों के साथ बहकर प्रदूषण में वृद्धि करता है।

उपलब्ध पानी के अधिक उपयोग के लिए हमें अपनी जल भंडारण क्षमता बढ़ानी होगी। इसके लिए छोटे बांध अधिक उपयोगी नहीं हो सकते। वे सूखे की चपेट में आकर जल्दी सूख जाते हैं, जबकि बड़े बांधों पर सूखे का विशेष प्रभाव नहीं होता। इसलिए हमें बड़े बांधों की ओर विशेष ध्यान देना होगा। हमारे यहां बड़े बांधों का सामान्यतः इस आधार पर विरोध होता है कि उसकी डूब में आने वाली भूमि काफी अधिक होती है, जिससे ग्रामवासियों को बड़ी हानि होती है। बात सच है। लेकिन जितनी भूमि इनकी डूब में आती है, उससे लगभग सौ गुना अधिक भूमि को उससे सिंचाई का लाभ भी मिलता है। इसलिए जिन किसानों की भूमि बांध के क्षेत्र में आती है, उन्हें उदारता के साथ समुचित मुआवजा देकर संतुष्ट किया जा सकता है। समय समय पर इन बांधों में जमा मिट्टी को निकालने की तरफ भी हमें ध्यान देना होगा, जिससे ये लम्बे समय तक हमारा साथ दे सकें।

जल-भंडारण की दृष्टि से हमें तालाब और बावड़ियों की तरफ विशेष ध्यान देना होगा, जो पहले हमारे यहां काफी बड़ी संख्या में होते थे, मगर अब उचित रखरखाव के अभाव में नष्ट होते जा रहे हैं। प्राचीनकाल में, पुण्य-कार्य के रूप में तालाब खुदवाये जाते थे। इन तालाबों की समय समय पर सफाई भी होती थी। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार सन् 1950 में हमारे यहां 36 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई तालाबों के माध्यम से ही होती थी। अब ऐसी भूमि लगभग शून्य के बराबर रह गयी है। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने इन पुराने तालाबों का जीर्णोद्धार करें और जहां सम्भव हो, नये तालाब बनवायें। तालाबों के जीर्णोद्धार में बहुत अधिक धनराशि की आवश्यकता नहीं होगी और उस धनराशि का भी काफी बड़ा भाग उन किसानों से सिंचाई-शुल्क के रूप में वसूला जा सकता है, जिनकी भूमि को उससे लाभ होगा।

जल-भंडारण की दृष्टि से हमें तालाब और बावड़ियों की तरफ विशेष ध्यान देना होगा, जो पहले हमारे यहां काफी बड़ी संख्या में होते थे, मगर अब उचित रखरखाव के अभाव से नष्ट होते जा रहे हैं। प्राचीनकाल में, पुण्य-कार्य के रूप में तालाब खुदवाये जाते थे। इन तालाबों की समय समय पर सफाई भी होती थी। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार सन् 1950 में हमारे यहां 36 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई तालाबों के माध्यम से ही होती थी। अब ऐसी भूमि लगभग शून्य के बराबर रह गयी है।

एक ही समय पर कहीं बाढ़ और कहीं सूखे की समस्या के समाधान के लिए हमें देश की प्रमुख नदियों को एक दूसरे से जोड़ने की योजना पर तेजी से कार्य करना होगा। इससे न केवल हम अकाल और बाढ़ भी प्राकृतिक विभीषिकाओं से राहत महसूस कर सकेंगे, बल्कि विभिन्न राज्यों के बीच होने वाले जल-विवादों को भी समाप्त किया जा सकेगा।

पेयजल के दुरुपयोग पर भी हमें नियंत्रण लगाना होगा। प्रचार साधनों के माध्यम से हमें जनता के मन में गहरायी से यह बात बैठानी होगी कि पानी की एक एक बूंद कीमती है और इसलिए उसे सोच समझकर ही काम में लें। पानी के लिए भूमि का अत्यधिक दोहन न हो, इसके लिए नलकूपों की खुदाई प्रतिबन्धित करनी होगी। आवश्यकता पड़ने पर शहरी क्षेत्रों में सभी जल स्त्रोतों को प्रशासनिक नियंत्रण में भी लिया जा सकता है। केवल सजावट, प्रदर्शन या फैशन के लिए लगाए जाने वाले बड़े बड़े लान या फार्म हाउसों को भी नियन्त्रित करना होगा।

महानगरों के आस पास फैले या गन्दे नालों में बहते मल-जल और उद्योगों द्वारा निष्कासित प्रदूषित जल की तरफ भी हमें ध्यान देना होगा। यह पानी हमारी नदियों में मिलकर उसके पानी को प्रदूषित करता है और धरती पर बिखरे वर्षा-जल में मिलकर उसे भी गन्दा करता है। इस पानी को इधर उधर फैलने से रोककर कहीं निश्चित स्थान पर एकत्रित करना होगा और उसका उपचार करके काम में लेना होगा। यह उपचारित जल अनेक कार्यों में लिया जा सकता है। यह मछली पालन तथा सिंचाई के लिए अत्यन्त उपयोगी रहता है। लान, फार्म हाउस या पेड़ पौधों के लिए भी यह जल बड़ा उपयोगी है। वर्षा के जल को धरती में पुनर्भरण के लिए हमें शीघ्रता और कठोरता से योजना बनाकर उसे लागू करना होगा। हमें यह देखना होगा कि वर्षा के माध्यम से प्रकृति हमें जो अत्यन्त उपयोगी विशाल जल-भंडार देती है, उसकी एक भी बूंद व्यर्थ नष्ट न हो। पेयजल की विकराल समस्या के समाधान के लिए हमें हर दिशा में प्रयत्न करने होंगे। जल के दुरुपयोग को रोकने के अतिरिक्त, वर्षा के जल का पूर्ण सदुपयोग, निरन्तर घटते भूजल के पुनर्भरण, दूषित जल को शुद्ध तथा समुद्री जल को साफ करके उसे उपयोग में लेकर ही अपनी भावी पीढ़ी को हम एक प्यास-मुक्त विश्व दे पायेंगे।

10/611, मानसरोवर, जयपुर, राजस्थान-302020

शोध लेख

हिंदी और राजस्थानी के समकालीन साहित्यकार विजयदान देथा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

● प्रोमिला

"पाँच फुट से एकाध इंच ऊपर निकलता कद। गंदुमी, मगर दीप्त रंग। किसी 'एलियन' जीव सदृश भारी पपोटों वाली तीक्ष्ण आँखें। ढलवाँ ललाट से पीछे को जाती विरल ध्वल केशावली। चौटे पाट की शांतिपुरी धोती पर किसी बढ़ई या राजमिस्त्री जैसा कुर्त्ता"[1] यह धज है हिन्दी-राजस्थानी के कद्दावर कथाकार विजयदान देथा उर्फ बिज्जी का। इस धज का दूसरा लेखक आज हिन्दी और राजस्थानी, दोनों भाषाओं के पास नहीं है। बिज्जी कथा लिखते थे, मगर लतीफे गढ़ते थे। उनके सभी लतीफे उनके अपने व्यक्तित्व की अतिरंजनाओं के बाल-गोपाल कहे जा सकते हैं।

विजयदान देथा जितने अच्छे लेखक थे, उतने ही अच्छे मनुष्य भी। वे उन लोगों में से नहीं थे जो साहित्य और जीवन के प्रति अपना अलग-अलग दृष्टिकोण रखते हैं। उनमें सहजता, आत्मीयता एवं सच्चे हृदय की संवेदना थी। अहंकार तो बिज्जी को छू भी नहीं पाया। वे ग्रामीण अनुभूतियों एवं संवेदनाओं से परिपूर्ण थे। अपनी संस्कृति को महत्त्व देते हुए कहते हैं, "मेरी तो यही पुरजोर मान्यता है कि अपनी परम्पराओं से अजनबी रहकर हम कभी स्वस्थ विकास नहीं कर सकेंगे। बन्दरों की तरह नकल करने से असलियत भी खो जाती है और हाथ कुछ नहीं लगता।"[2] आज भारतीय संस्कृति सभ्यता से असभ्यता की ओर अग्रसर हो चुकी है। उनके अनुसार आधुनिक युग का साम्राज्यवाद हिंसा, आतंकवाद व धार्मिक असहिष्णुता को ही बढ़ावा दे रहा है। आधुनिकता की होड़ में हमने पाश्चात्य संस्कृति को अपनाकर अपनी सभ्यता और संस्कृति को हाशिये पर ला खड़ा कर दिया है।

भारतीय संस्कृति के पुरोधा विजयदान देथा उर्फ बिज्जी का जन्म जोधपुर राजस्थान के गाँव बोरुन्दा में 1 सितम्बर 1926 में हुआ। इनका बाल्यकाल ग्रामीण वातावरण में ही बीता, इसलिए इनके साहित्य में ग्रामीण संस्कृति की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। चारण समुदाय से सम्बन्ध रखने वाले बिज्जी के पिता सबलदान देथा और दादा जुगतीदान देथा भी राजस्थान के कवि रूप में जाने जाते थे। बिज्जी की पत्नी का नाम सायर कंवर व दो बेटे महेन्द्र व कैलाश कबीर है। उनकी दो रचनाओं दुविधा और उलझन का अनुवाद कैलाश कबीर ने किया है।

बिज्जी की दोस्तियाँ काफी मशहूर रही है। प्रख्यात लोक-कलाविद् कोमल कोठारी और देथा की लम्बी दोस्ती कोमल के निधन तक अटूट ही रही। मालचन्द तिवाड़ी के शब्दों में, "बिज्जी के लिए कोमल दुनिया का अंतिम बुद्धिमान् मनुष्य और कोमल के लिए बिज्जी पृथ्वी का सबसे भोला मानुस। कोमल जी अगर मजाक में भी दिन को रात कह दें, तो बिज्जी टार्च उठाकर चल दे।"[3] मृत्यु के अलावा और कोई भी इस दोस्ती में सेंध नहीं लगा सकता था। चौथा सप्तक के कवि नंदकिशोर आचार्य और सुप्रसिद्ध शायर शीन काफ निजाम के साथ भी बिज्जी का बेहद करीबी का छेड़ का रिश्ता रहा। बिज्जी द्वारा निजाम को अपना कहानी संग्रह 'अलेखूं हिटलर' समर्पित करने के कारण काफी चर्चित रहा। आज के युग सन्दर्भ में बिज्जी जैसे सरल और मेहनतकश इन्सानों का जीवन संघर्षपूर्ण रहता है। उनका जीवन आर्थिक रूप से कमजोर रहा। वे निराश होकर कह उठते हैं, "न चेखोव, न रवि बाबू और न शरत बाबू-कहाँ कुछ भी ध्यान नहीं रखते कि मैं किस तरह आर्थिक-पाटों के बीच पिसा जा रहा हूँ।"[4]

विजयदान देथा की शिक्षा जैतारण (पाली), बाड़मेर और जसवन्त कॉलेज से हुई। देथा ने प्रारम्भिक शिक्षा जैतारण से ग्रहण की। बाड़मेर में अन्य छात्र नारसिंह पुरोहित के साथ साहित्यिक प्रतिस्पर्धा के बाद बिज्जी को महसूस हुआ कि वे भी लेखक बन सकते हैं। एम. ए. हिन्दी उन्होंने जसवन्त कॉलेज से किया। देथा शिक्षा के प्रति अपना दृष्टिकोण स्थापित करते हुए कहते हैं, "उच्चतम डिग्रियों के बावजूद मेरी दृष्टि में वही व्यक्ति पढ़ा-लिखा है, जो अपने वस्त्र व जूतों जैसी अनिवार्यता महसूस करके, पुस्तकें भी खरीदे, पढ़ने के आनन्द की खातिर खरीदे। इस आनन्द-प्राप्ति का कोई अन्य विकल्प नहीं है। पढ़ना-लिखना जीविकोपार्जन तक

सीमित न रहकर व्यक्तित्व-निर्माण का भी माध्यम बने तभी शिक्षा की सार्थकता है।"[5] हम जो भी कार्य करते हैं उसमें हमारी रुचि का भी समावेश होता है। हमारी शिक्षा तभी अपनी सार्थकता को स्पष्ट करती हैं जब यह जीविकोपार्जन तक सीमित न रहकर हमारा सर्वांगीण विकास करे। लेखक का समाज के प्रति अपना दृष्टिकोण व विशिष्ट प्रकार की सोच होती है। परिवर्तनशील युग के साथ-साथ व्यक्ति की विचारधारा भी बदलती रहती है। बिज्जी भी स्वयं को परिवेश से प्रभावित लेखक मानते हैं, "मैं कोई आकाश से टपका हुआ लेखक नहीं हूँ, बल्कि चतुर्दिक परिवेश के बीच हमेशा पलता रहता हूँ।"[6] उनका लेखन कार्य और विचार दोनों तत्कालीन समाज से प्रभावित हैं।

बिज्जी का जीवन मूल्य मार्क्सवाद से प्रभावित होने के कारण ही वे प्रत्येक मनुष्य को समान दृष्टिकोण से देखते हैं और पूंजीवाद तथा नव-साम्राज्यवाद के विरोधी थे। उनका मानना था कि साम्राज्यवाद के प्रभाव के कारण ही समाज में हिंसक प्रवृत्तियाँ बढ़ रही है क्योंकि प्रत्येक देश राज्य विस्तारीकरण का उद्देश्य लेकर पूरी दुनियां में नर-संहार, आतंकवाद और धार्मिक असहिष्णुता को बढ़ावा दे रही है। प्रो. कुमार कृष्ण का भी मानना है, "विजयदान देथा इस विज्ञान और टेक्नोलॉजी के नाम पर नव साम्राज्यवादी विकसित देशों के द्वारा पूरी दुनिया के विनाश की साजिश को साफ-साफ देखते हैं।"[7]

समकालीन साहित्यकार देथा ने साहित्य की मौजूदा स्थिति पर भी गहरी चिंता व्यक्त की है, "साहित्य में कुछ साहित्यकार माफियाओं का कब्जा हो गया है जिन्होंने सही और सार्थक सृजनकर्मियों की उपेक्षा करके चाटुकार और पिछलग्गू साहित्यकारों को जबरन स्थापित कराने का बीड़ा उठा रखा है।"[8] साहित्यकार की लेखनी ही साहित्य को प्रतिष्ठित करती है, परन्तु आज कुछ साहित्यकार अपनी प्रतिष्ठा के लोभ में ऐसे अयोग्य साहित्यकारों की मार्ग प्रशस्ति का कार्य कर रहे हैं जिससे साहित्य और सच्चा साहित्यकार पूरी तरह पिछड़ जाता है।

देथा ने मुख्यतः लेखन का ही कार्य किया है। इन्होंने हिन्दी तथा राजस्थानी की कई पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया है। बिज्जी की कई कहानियों पर फिल्म व नाटकों का निर्माण हुआ है और पुरस्कृत भी हुए हैं। इनकी कहानी 'दुविधा' पर 'पहेली' फिल्म का निर्माण 1973 में हुआ और इसके लिए इन्हें कथा चूड़ामणि पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। 'चरणदास चोर' फिल्म सन् 1973 में व 'परिणति' फिल्म सन् 1989 में बनी। साहित्य अकादेमी नई दिल्ली ने 'बिज्जी' के नाम आधे घण्टे की फिल्म बनाई। यह फिल्म सन् 2000 में बनी। 'बिज्जी का खजाना' जयपुर दूरदर्शन द्वारा निर्मित दस कहानियों पर आधे-आधे घण्टे की फिल्में बनी हैं। विजयदान को उनकी रचनाओं के लिए कई पुरस्कार व सम्मान भी प्राप्त हो चुके हैं। देथा की 'बातां री फुलवाड़ी' भाग-10 पर राजस्थानी का पहला पुरस्कार सन् 1974, 'राजस्थान का रतन' सम्मान सन् 1980, 'भारतीय भाषा परिषद्' पुरस्कार सन् 1990, 'नाहर पुरस्कार', सन् 1994, 'दी ग्रेट सन ऑफ राजस्थान' सम्मान सन् 1994, 'मरुधारा' सम्मान व पुरस्कार सन् 1996, 'दीपचन्द जैन साहित्य' सम्मान सन् 2007, 'साहित्य चूड़ामणि' पुरस्कार सन् 2006 व 'पद्म श्री' पुरस्कार 2007 में प्राप्त हुआ। देथा को 2011 के साहित्य नोबेल पुरस्कार के लिए भी नामांकित किया गया था। भारतीय संस्कृति के पुरोधा विजयदान देथा ने लेखन के विभिन्न क्षेत्रों में ख्याति अर्जित की है। साहित्य के क्षेत्र में बिज्जी ने कविता, कहानी, उपन्यास, अनुवाद आदि सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। देथा की रचनाएँ आज के समकालीन संदर्भो से जुड़ी हुई हैं इसीलिए आज वे एक प्रतिष्ठित साहित्यकार के रूप में प्रसिद्ध हैं।

विजयदान देथा की औपन्यासिक कृति 'प्रतिशोध' उनकी कृति 'बातां री फुलवाडी' के छठे व सातवें धाम 'मां रौ बदलौ' का अविकल अनुवाद है। यह वाणी प्रकाशन द्वारा 2002 में प्रकाशित व कैलाश कबीर द्वारा अनुवादित है। उपन्यास की कथा सामंती अर्थतंत्र के बीच निरंकुश राजा के माध्यम से सामंती-तंत्र के खोखलेपन को दर्शाता है। मध्ययुगीन समाज में रचित यह लोककथा एकछत्र सामंती राज पर प्रखर व्यंग्य करता प्रतीत होता है। असल में आदमी-आदमी में जो अन्तर नजर आता है वह फर्क सिर्फ नजर का, भ्रम का और झूठी पहचान का होता है। सामंती समाज-व्यवस्था के बीच एक असहाय युवती राजा और उसकी सत्ता व अपने समाज की मान्यताओं का खण्डन करके अपने प्रतिशोध की प्रतिज्ञा का पालन करती है। कथा में सामंती तंत्र टूटता दिखाई देता है और एक नये समाज की आवाज सुनाई देने लगती है।

लोककथाओं को आज के समय और समाज से जोड़कर प्रस्तुत करने की कला में माहिर सुप्रसिद्ध विजयदान देथा का 'त्रिवेणी' उपन्यास पढ़ना, अनुभवों की नई दुनिया से गुजरने की तरह है। त्रिवेणी उपन्यास का प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा 2006 में हुआ है। इसमें तीन उपन्यासिकाओं 'तीडाराव' 'इस्टूखाँ' और 'भगवान की मौत' संकलित है। देथा ने त्रिवेणी में तीन नायकों को माध्यम बनाकर कथा कही है। ये तीनों उपन्यासिकाएँ अलग-अलग होते हुए भी एक सूत्र में बँधी हुई नजर आती है। हम यूँ भी कह सकते हैं कि तीन अलग-अलग नायकों का अपूर्व संगम है 'त्रिवेणी'। इन तीनों कथाओं को इस कदर प्रस्तुत किया गया है कि वे तीन कथानक भी हैं और व्यक्तित्व के तीन रूप भी। तीनों उपन्यासिकाओं का आधार संयोग है परन्तु 'तीडाराव' और 'भगवान की मौत' में संयोग के साथ अंधविश्वास भी जुड़ा हुआ है।

बिज्जी का 'महामिलन' उपन्यास 2008 में भारतीय ज्ञानपीठ

द्वारा प्रकाशित एक हिन्दी उपन्यास है। लोककथाओं को आधुनिक जीवन की विसंगतियों और यथार्थ से जोड़ने वाले चर्चित कथाकार बिज्जी का यह नया उपन्यास एक ऐसी कृति है, जिसका आधार तो लोककथा है किन्तु इसकी पूर्णता वर्तमान जीवन पद्धति में है। यह उपन्यास देथा की जानी-पहचानी और विशिष्ट शैली में बुना गया उपन्यास है। इस साधारण सी लोककथा के माध्यम से बिज्जी ने समाज में स्त्रियों की दारूण और भयावह स्थिति का चित्रण किया है। मीठी माँ बिज्जी द्वारा प्रस्तुत एक ऐसा पात्र है जो नारी अस्मिता की रक्षा के लिए पुरुष की अनैतिकता और व्यभिचार के विरोध में खड़ी नजर आती है। उसका मुख्य उद्देश्य मनुष्य मात्र का भला करना है। मीठी माँ के चरित्र को लेखक ने बहुआयामी तो बनाया ही है, लोकोपकारी रूप भी दिया है। स्त्री के सम्मान को ऊँचाई तक पहुँचाने वाली मीठी माँ बिज्जी की कल्पना की आदर्शत्तम छवि है, इसलिए यथार्थ के ज्यादा करीब है। गौतम आस्था और विश्वास की मूर्ति है, इसीलिए पाठक के ज्यादा करीब हो जाता है।

देथा की रचनाओं में लोक का आलोक अपने सम्पूर्ण वैभव के साथ उपस्थित है। वे लोक मानस में सहेजी-बिखरी कथाओं को अपने सृजन-कौशल से ऐसा स्वरूप प्रदान करते हैं कि उनमें लोक मूल तत्त्व तो विद्यमान रहता है, साथ-साथ युगों पुरानी कहानियाँ समकालीनता का स्पर्श पा जाती है। बिज्जी की आठ सौ कहानियाँ राजस्थानी भाषा में प्रकाशित हो चुकी है, जिनमें से अनेकों का हिन्दी अनुवाद, नाट्य रूपान्तर और नाट्य मंचन हुआ है। कुछ कहानियों पर फिल्में भी बनी हैं।

'उलझन' कहानी संग्रह का प्रथम प्रकाशन सन् 1982 में हुआ तथा द्वितीय प्रकाशन सन् 1996 में हुआ। इस कहानी में सत्रह कहानियाँ व एक छोटा उपन्यास है। इन कहानियों के बारे में विजयमोहन के शब्द, "ये कहानियाँ चकमा देती हैं और 'उलझन' पैदा करती हैं।.... वे सब कुछ यथावत् रख देते हैं उसमें अपने आप नई अर्थछवियाँ, नये संकेत, नई व्याख्याएँ उभरने लगती है।"[9] ये कहानियाँ बिना कुछ बताए मध्ययुग के अंधेरे जंगलों, अंधविश्वासों, रूढ़ियों, ठगों-लुटेरों, स्त्री-पुरुष, राजा-प्रजा के संबंधों, धन और विलास से युक्त प्राणियों के बीच से आधुनिक भावबोध के सभी स्तरों को उद्घाटित कर जाती है।

'दुविधा' कहानी संग्रह भी बिज्जी की तरफ से पाठक वर्ग के लिए अनमोल खजाना है। यह कैलाश कबीर द्वारा राजस्थानी से अनुवादित है और इसका प्रकाशन वर्ष 1996 है। इसमें देथा की इक्कीस कहानियाँ संकलित हैं। ये कहानियाँ आज की तमाम लिखी जाने वाली कहानियों में अलग सा महत्त्व और आकर्षण के केन्द्र हैं। यह आकर्षण सिर्फ कहानी की रोचकता के कारण नहीं है अपितु मूल में ऐसे चिंतन का भी आकर्षण है, जो मध्ययुगीन सामंती मूल्यों पर चोट करता है, सत्ता व्यवस्था और उसके चाटुकारों का असली रूप हमारे सामने प्रस्तुत करता है और स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों को भी दर्शाता है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के शब्दों में, "पाठक राजे-रजवाड़ों की गलियों में घूमते हुए भी आज के नेताओं और मन्त्रियों से साक्षात् करता है और अपने पैरों में लगी सामन्ती व्यवस्था की धूल को आज की लोकतंत्री व्यवस्था की कीचड़ में बदली हुई देखता है।"[10] ये कहानियाँ लोक-कथाओं की बनावट रखते हुए भी आधुनिक तेवर रखती है जो वर्तमान समाज को नये तरीके से सोचने को विवश कर जाती है।

प्रतिष्ठित कथाकार विजयदान देथा की मानवीय रागात्मकता में रची-बसी अनूठी कहानियों का नवीनतम कहानी संग्रह 'उजाले के मुसाहिब' भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा सन् 2000 में प्रकाशित हुआ है। इसमें चौदह कहानियां है। इस कहानी संग्रह में प्रेम वर्णन, संक्रमित मानसिकता से घिरी नारी, सामन्तवादी प्रथा, पशु-पक्षियों के हृदय में मानवीय गुण, आर्थिक समस्या, आस्था व अनास्था इत्यादि को दर्शाया है। 'जंजाल' कहानी के माध्यम से बिज्जी ने स्वार्थ व लोभ के वशीभूत पारिवारिक सम्बन्धों का खोखलापन दर्शाया है। 'कागमुनि' कहानी में पशु-पक्षियों के भीतर मानवीय गुण की कल्पना की गई है। 'समाधान' कहानी के माध्यम से देथा ने सामन्तवादी प्रथा, सामन्तों का अत्याचार व इस कुप्रथा से मुक्ति का उपाय समझाने की भरपूर चेष्टा की है।

'सपनप्रिया' बिज्जी का हिन्दी में प्रकाशित नवीनतम कहानी संग्रह है। इसका चौथा संस्करण भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा 2006 में हुआ है। इसमें बिज्जी की छब्बीस कहानियाँ संकलित है। 'सपनप्रिया' की सभी कहानियों में लोककथाएँ बीज रूप में विद्यमान हैं। बिज्जी इन बीजों को अपनी भाषा तथा शैली से पुष्पित व पल्लवित करते हैं। लोक कथाओं की तर्ज पर ही देथा की कहानियों के पात्र भी राजा-रानी, राजकुमार-राजकुमारी, मछुआ, कठिहारा, गडरिया, बनिया, सेठ, सन्यासी, बामन आदि ही है। प्रस्तुत कहानी संग्रह की कहानियाँ उद्देश्य प्रधान और शिक्षाप्रद हैं। 'आसीस' तथा 'मनुष्यों का गडरिया' इस संग्रह की ऐसी कहानियाँ है, जो अपनी पैनी व्यंग्यात्मक धार के कारण शेष कहानियों से अपनी अलग पहचान बनाती है।

'चौधराइन की चतुराई' कहानी संग्रह का प्रकाशन 2007 में हुआ है और इसमें छोटी-बड़ी पैंतीस कहानियाँ संकलित है। इन कहानियों की जो खासियत है, वह है- शोषक और शोषितों का द्वन्द। लोककथा होने के बावजूद यह आज की कथा है, शोषितों के जागृत होने की कथा है। इसमें कई ऐसी कहानियाँ हैं, जो समाज में पाखण्ड फैलाने वाले, धूर्तता के बल पर दूसरों की जिन्दगी तबाह करने वाले व्यक्तियों के चेहरे से नकाब हटाती है और निम्न वर्ग को, दुर्बल और कमजोर व्यक्ति को उनके विरोध में खड़ा होते हुए हम देखते हैं। इस प्रकार के कार्य के लिए बिज्जी कोई नारा नहीं लगाते हैं, वैचारिक सिद्धान्त नहीं गढ़ते, बल्कि ऐसी

स्थितियाँ पैदा करते हैं कि व्यक्ति के अन्दर सोया स्वाभिमान जाग उठे, वह अपनी कमजोरियों से संघर्ष कर सके।

अन्य साहित्य में देथा का आलोचना ग्रन्थ 'बापू के तीन हत्यारे' सन् 1948 में प्रकाशित हुआ। इसमें बिज्जी ने हरिवंशराय बच्चन, सुमित्रानन्दन पंत तथा नरेन्द्र शर्मा के कार्यों की आलोचना की है। 'हमारा उस्ताद' आलोचना व समीक्षा सन् 1987 व 'अतिरिक्त' आलोचना ग्रन्थ सन् 1997 में प्रकाशित हुआ। 'प्रेमचन्द की बस्ती' आलोचना का वाणी प्रकाशन द्वारा प्रथम संस्करण 2009 में हुआ है। विजयदान देथा ने इस बृहत् आयोजन के माध्यम से प्रेमचन्द की बस्ती के प्रमुख बाशिन्दों का विवेचन-विश्लेषण करने का सफल प्रयास किया है। यह बस्ती विविधतामय और मनोरंजक होने के साथ जीवन के प्रत्येक रंगों और रसों को अन्दर समाये हुए हैं। स्वयं बिज्जी के शब्दों में, "साधारण पाठक शेक्सपीयर के चरित्रों को पढ़कर वाह-वाह कर सकते हैं लेकिन उसकी कलात्मक सूक्ष्मता तो विलियम हेजिलिट या ब्रेडल ही समझा पाते हैं। उसी प्रकार डिकन्स के चरित्र और दोस्तोवस्की के चरित्र, चरित्र-चित्रण के क्षेत्र में दो महत्त्वपूर्ण पुस्तकें हैं। इस कृति में भी वही प्रयास किया गया है कि पात्रों द्वारा जो सन्देश मानव जाति को देना चाहते थे- उसे अपने पूर्ण कलात्मक स्वरूप में प्रकाशित करे।"[11] इस प्रकार यह नई रचना हिन्दी साहित्य में एक सशक्त प्रयोग ही नहीं है अपितु प्रेमचन्द को अपने देश के निकट लाने का बहुत बड़ा प्रयत्न भी है।

बिज्जी का 'साहित्य और समाज' निबन्ध संग्रह सन् 1960 व 'मेरा दरद न जान कोई' निबन्ध संग्रह सन् 1997 में प्रकाशित हुआ है। देथा का 'अनोखा पेड़' बाल कथा-संग्रह सन् 1968 व 'कब्बूरानी' बाल कथा-संग्रह राजस्थानी भाषा में सन् 1992 में प्रकाशित हुआ। 'प्रिय मृणाल' कथा-संग्रह सन् 1998 में प्रकाशन में आया। 'बातां री फुलवाड़ी' के 14 भाग सन् 1960 से 1975 तक प्रकाशित होते रहे हैं। 'टिडो राव' राजस्थानी पॉकेट बुक सन् 1965 में प्रकाशित हुई। 'रूँख' रचना सन् 1987 में प्रकाशित हुई। 'राजस्थानी हिन्दी कहावत कोश' 8 भागों में सम्पूर्ण कुल पृष्ठ 5500, हिन्दी अर्थ व सांगोपाँग व्याख्या सहित 333 सन्दर्भ कथाएँ सन् 2001 में प्रकाशित हुआ। 'राजस्थानी लोकगीत' छः भाग संगीत नाटक अकादमी जोधपुर द्वारा सन् 1958 में प्रकाशित हुआ। बिज्जी की रचनाओं का हिन्दी, अंग्रेजी अनुवाद हो चुका है।

विजयदान देथा ने हिन्दी तथा राजस्थानी दोनों भाषाओं की कई पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन कार्य भी किया है। बिज्जी ने कोमल कोठारी के साथ मिलकर रूपायन संस्थान की स्थापना की। सन् 1953 में बिज्जी ने 'प्रेरणा' नामक पत्रिका में सह-सम्पादक का कार्य किया, जो राजस्थानी भाषा की पत्रिका है। बिज्जी ने 'परम्परा' नामक राजस्थानी भाषा की पत्रिका का सम्पादन सन् 1958 में किया। 'ज्वाला' हिन्दी की साप्ताहिक पत्रिका के लिए देथा ने 1949 से 1952 तक कार्य किया। इसमें बिज्जी नियमित रूप से तीन स्तम्भ लिखते थे। 'हम सभी मानव हैं', 'दोखज की सैर' और 'घनश्याम परदा गिराओ'। साम्प्रदायिकता के खिलाफ 'एक मानव' के नाम से बिज्जी की कलम अबाध गति से चलती थी। 'दोखज की सैर' में विभागीय भ्रष्टाचार पर कटाक्ष का स्वरूप रहता था और 'घनश्याम पर्दा गिराओ' में देथा द्वारा राजनेताओं का पाखण्ड उजागर होता था। 'लोक-संस्कृति' हिन्दी मासिक पत्रिका का सम्पादन सन् 1961 से 1976 तक किया। राजस्थानी भाषा की मासिक पत्रिका 'वाणी' का सम्पादन सन् 1961 से 1973 तक किया। 'रूपम' पत्रिका का सम्पादन कार्य भी बिज्जी ने किया।

युग चाहे कोई भी हो आदर्शों के पुनर्स्थापना की पूर्ण आशा लिए बिज्जी को देशकाल के अनुसार बहने वाली विपरीत हवा में भी अनुकूल की आशा दिखाई देती थी। वे मूल्यों की संक्रमणता, निष्ठाओं की बिक्री और घायल आदर्शों की कराह में भी दुविधा में नहीं फंसे, वरन इन विकृतियों के विरुद्ध संघर्ष कर नवीन युग का आहवान करते थे। उनकी रचनाओं में एक तरफ लोक का जादुई आलोक तो दूसरी तरफ सहज चिंतन और गहरे सामाजिक सरोकारों से ओतप्रोत एक सजग रचनाकार का कलात्मक एवं वैचारिक स्पर्श दिखाई देता है। ताउम्र अपने कर्मस्थली गांव में बैठकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के साहित्य का सृजन व हमेशा दो जोड़ी कपडों में संतोषी जीवन जीने वाले हिन्दी व राजस्थानी साहित्य का ऐसा पुरोधा 10 नवम्बर, 2013 को सदा के लिए इस संसार को अलविदा कह गया।

द्वारा बलदेव सिंह नेगी, सह. अनुसंधान अधिकारी,
एकीकृत हिमालयन अध्ययन संस्थान,
समरहिल, शिमला–171 005

सन्दर्भ सूची :

1. मालचंद तिवाड़ी, बिज्जी : एक 'एलियन' कथा व्यक्तित्व, समकालीन भारतीय साहित्य, पत्रिका (नई दिल्ली: साहित्य अकादेमी) पृ. 9.
2. विजयदान देथा, सपनप्रिया, (नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानीठ, 2006) पृ. 18, 3. मालचंद तिवाड़ी, बिज्जी : एक 'एलियन' कथा व्यक्तित्व, समकालीन भारतीय साहित्य, पत्रिका (नई दिल्ली: साहित्य अकादेमी) पृ. 12, 4. विजयदान देथा, महामिलन (नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2008) पृ. 13. 5. विजयदान देथा, उजाले के मुसाहिब (नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानीठ, 2000) पृ. 10 , 6. विजयदान देथा, सपनप्रिया (नई दिल्ली : भारतीय ज्ञानपीठ, 2006) पृ. 13, 7. कुमार कृष्ण, लोक राग और लोक आग से कथा–रस पैदा करने वाला कहानीकार : विजयदान देथा, कहानी के नये प्रतिमान (नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2005) पृ. 137, 8. महीप सिंह, क्या साहित्य में भी माफिया सरगरम है, संचेतना पत्रिका (नई दिल्ली, मार्च–जून, 1998) पृ. 8, 9. विजयदान देथा, उलझन (नई दिल्ली : सारांश प्रकाशन, 1996) फ्लैप से उद्धृत, 10. विजयदान देथा, दुविधा (नई दिल्ली : सारांश प्रकाशन, 1996) फ्लैप से उद्धृत, 11. विजयदान देथा, प्रेमचन्द की बस्ती (नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2009) पृ. 23.

शोध लेख

भारतीय समाज में नारी की स्थिति

● डॉ. सुनीता

नारी का भारतीय समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। नारी, सौंदर्य, मधुरता, कोमलता, स्नेह, त्याग, बलिदान, सहिष्णुता आदि गुणों से सुसज्जित प्रतिमा है। उसके अंतर में उन्नत शक्ति का स्रोत है। सुशीला मित्तल के शब्दों में, "नारी के सौंदर्य में प्रेम, प्रेम में उन्नत और अनन्यता में आनंद है। आनंद नारी में है वह शक्ति है, चित्त है। उसकी मुस्कान में सृजन, उसके दूध में शक्ति, उसकी आह में प्रलय छिपा है। वह मान्या है, पूज्या है, आराध्या है। इसके मोह में स्नेह, बंधन में दान और जीवन में उत्सर्ग है। वह देवी है, शक्ति है, श्रद्धा है। वह हृदय है; अनुभूति है। अनुभूति की अभिव्यक्ति कभी-कभी असंभव हो जाती है, इसलिए नारी रहस्यमयी है।"[1] इस प्रकार कहा जा सकता है कि नारी रहस्यमयी शक्ति है जिसमें सृष्टि का सृजन और प्रलय आदि लक्षण विद्यमान है। अतः संसार में नारी की महत्त्वपूर्ण स्थिति है।

किसी भी समाज की श्रेष्ठता-अश्रेष्ठता उस समाज में नारी की स्थिति पर निर्भर करती है। भारतीय समाज के विकास का इतिहास साक्षी है कि आदर्श रूप में नारी को चाहे कितना ऊंचा स्थान प्रदान किया गया है, किंतु व्यवहार में उसकी स्थिति पुरुष से कमतर ही रही। मृणाल पांडे के शब्दों में, "कितने ही युग आए और चले गए किंतु नारी से जुड़ी 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते' जैसी सूक्तियां मात्र सूक्तियां बनकर रह गईं। प्रत्येक नया युग नारी की स्थिति में पतन का संदेश लेकर आता रहा।"[2] इस प्रकार कहा जा सकता है कि युग परिवर्तन के पश्चात भी नारी की स्थिति में अधिक अंतर नहीं आ पाया है। प्रत्येक नया युग उसे पतन की गर्त में ही गिराता चला गया।

भारतीय समाज में प्रत्येक युग में नारी की स्थिति में परिवर्तन होता रहा है। प्राचीन काल में जहां उसे पुरुष के बराबर माना जाता था, वहीं मध्य युग में वह उसकी सम्पत्ति समझी जाने लगी। प्रागैतिहासिक काल में नारी का गौरवमय स्थान था। इस काल में नारी सभी दृष्टियों से समर्थ थी। गृह तथा सम्पत्ति की स्वामिनी थी। नारी हर क्षेत्र में प्रमुख थी। अतः प्रारंभिक काल में नारी की स्थिति संतोषजनक थी। वैदिक काल में माता का स्थान पिता व गुरु से भी श्रेष्ठ माना जाता था। वैदिक आर्यों के बीच नारी की स्थिति इनी ऊंची थी कि आज 21वीं सदी में भी संसार का अधिक-से-अधिक सुसंस्कृत राष्ट्र भी यह दावा नहीं कर सकता है कि उसके समाज ने नारी को ऊंचा स्थान प्रदान किया है। "वैदिक संस्कृति और सभ्यता के निर्माण में नारी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। उस काल में नारी के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाया जाता था। पुत्र और पुत्री दोनों समान रूप से प्रिय माने जाते थे। युवक और युवतियों का प्रेम मिलन सामान्य बात थी। कन्याओं को अपने प्रेमियों के साथ घूमने की स्वतंत्रता थी।"[3] अतः कहा जा सकता है कि वैदिक युग में नारी की स्थिति उच्च थी। इस दृष्टि में यह काल नारी की स्वतंत्रता का स्वर्ग युग था। इस युग में शिक्षा के लिए स्त्रियों को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। अतः वैदिक काल में नारी की स्थिति श्रेष्ठ थी। इस काल में नारी की स्थिति जितनी ऊंची थी, उतनी बाद में कभी नहीं हुई। उत्तर वैदिक काल में नारी का स्थान उन्नत होने लगा था। एक ओर उसे ब्रह्मा या सृजक कहा गया। डॉ. प्रीति तथा प्रभा गोयल के अनुसार, "स्त्री ही ब्रह्मा व भूक्ति तो दूसरी ओर उस पर अनेक प्रकार के बंधन लगा दिए गए। मनुष्य का ध्यान आनंद से हटकर तपस्या की ओर जाने लगा और नारी को तपस्या में बाधा मानकर उसकी निंदा की जाने लगी।"[4] डॉ. सौ. मंगल कप्पीकेरे के अनुसार, "पुत्री को दुःख का कारण घोषित किया।"[5] इस प्रकार नारी की स्थिति में परिवर्तन आना प्रारंभ हो गया। बहुपत्नी तथा अनुलोम विवाह की प्रथा शुरू होने से स्त्री का दर्जा हीन हो गया। शिक्षित स्त्रियां ही धार्मिक कार्य करने योग्य मानी जाती थीं। उद्‌दालिका आर्तभागा, गार्गी, मैत्रेयी पुष्पा आदि विदुषी महिलाएं थीं। उत्तर वैदिक काल में नारी की स्वतंत्रता कम हो गई।

उत्तर वैदिक काल में मनीषी नारी को यह संदेश देना नहीं भूले हैं। कल्याण पत्रिका के अनुसार, "उनके लिए वही शुभ है जिस बुद्धि से उन्हें अपने इस स्वरूप का ज्ञान हो जाए कि हम नर की भिन्न भिन्नात्रिका शक्ति का अंश है और नर हमारा नियामक संरक्षक और अभिवर्धक है, यदि हम नर से तनिक भी अपने को पृथक करती हैं तो हमारी स्थिति इस्ततः गिरने वाले पत्ते की होती है।"[6] जैन व बौद्ध काल में भी स्त्री का माता रूप ही मान्य रहा। जैन विचारकों के अनुसार, "नारी को मोक्ष की अधिकारिणी भी नहीं माना। उसे सर्पिनी से भी भयंकर और नरकमय जीवन का हार माना।"[7] महाभारत काल में नारी की स्थिति में और अधिक अवनति हुई। पुत्री का जन्म ही परिवार में शोक व दुःख का अवसर बन गया। नारी के अधिकार अब पहले जैसे नहीं थे। इस काल में स्त्रियों का प्रमुख गुण और कर्तव्य पति सेवा और आज्ञा

पालन हो गया। आशा रानी व्होरा के अनुसार, "पवित्रता धर्म ही सर्वोच्च धर्म और स्वर्ग प्राप्ति का साधन माना जाने लगा। महाभारत काल पांडवों द्वारा पत्नी द्रौपदी को जुए के दांव पर लगा देना और रामायण काल में एक धोबी द्वारा संदेह करने पर राम जैसे महापुरुष का भी सीता को वनवास दे देना, पत्नी पर पति के मनमाने अधिकारों की पुष्टि करता है।"[8]

मध्यकाल में नारी की स्थिति में बहुत बदलाव आया। भारत में मुसलमानों के आक्रमण के बाद मुगलों के शासन से भारत में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आई। नारी की इस स्थिति पर विचार करते हुए आशा रानी व्होरा ने लिखा है, "हिंदू धर्म की रक्षा स्त्री सतीत्व की रक्षा, रक्त की शुद्धता आदि के नाम पर अनेक बंधन लगाए गए, जिससे उसका स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हुआ।"[9] मुस्लिम आक्रमणों के कारण लड़कियों के अपहरण की घटनाएं बढ़ीं जिससे बाल्यावस्था में विवाह किया जाने लगा और विधवा विवाह बुरा माना जाने लगा। सती प्रथा की पद्धति चरम सीमा तक पहुंच गई। अतः कहा जा सकता है कि स्त्रियों के सारे अधिकार छीन लिए गए। स्वतंत्रता नाम मात्र रह गई थी। स्त्रियों के जीवन का दायरा घर की चार-दीवारी तक ही सीमित रह गया। लड़कियों की शिक्षा एकदम बंद कर दी गई थी। नौकरी केवल निम्न वर्ग की स्त्रियां ही कर सकती थीं। स्त्रियों का शिक्षा से दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं रह गया था। समाज में स्त्री का कोई स्थान नहीं रहा था। किसी भी प्रकार का महत्त्वपूर्ण निर्णय न वे ले सकती थीं, और न वह दे सकती थीं। नारी रक्षा के नाम पर इतने अधिक बंधन डाले गए कि लड़की थोड़ी बड़ी हुई कि उसका घर से निकलना बंद किया जाता था। अतः मध्यकाल में स्त्री की स्थिति में क्रमिक ह्रास होते-होते उसकी दशा बहुत बुरी हो गई। वह पूर्ण रूप से पुरुष के अधीन हो गई। उसका स्वतंत्र अस्तित्व तथा अधिकार समाप्त हो गया। वह पुरुष के उपभोग तथा उपभोग की वस्तु बनकर रह गई। स्त्री की दशा का यह पतन का युग था। आधुनिक काल में देखा जा सकता है कि आज जबकि सदियों की लंबी संघर्षमय यात्रा तय करती, जीवन के अनेक उतार-चढ़ाव देखती हुई नारी उस पड़ाव पर पहुंची है, जहां वह पढ़-लिख कर शिक्षित हो प्रगति के पथ पर अग्रसर हो चुकी है तथापि यह कहना कठिन है कि नारी की स्थिति में पूर्णतः बदलाव आ गया।

आज नारी प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी है। लगभग हर क्षेत्र में वह कार्यरत है। ग्रामीण महिला, महिला कार्यकर्ता, महिला पत्रकार तथा थियेटर और नारी हर क्षेत्र में उसकी अहम भूमिका है। नारीवाद, नारी विमर्श एवं महिला सशक्तीकरण के इस युग में आज नारी प्रायः शोषित है और उस पर अधिकार जता उसका शोषण करने की खुली छूट पाने वाले पुरुष शोषक हैं। आधुनिक युग की बदलती सोच को परिवर्तित जीवन मूल्यों की ऊहापोहों ने नारी स्वरूप की स्थितियों को बदलकर और अधिक भयावह रूप में उसके समक्ष प्रस्तुत किया है इसलिए परिवर्तित जीवन मूल्यों और परंपरागत धार्मिक, सांस्कृतिक मूल्यों की परस्पर टकराहट में भी आधुनिक नारी हतप्रभ एवं ठगी सी खड़ी किसी-न-किसी प्रकार की पीड़ा के दंश को झेलती ही है। नारी जिस दौर से गुजरती है उसका अनुभव केवल वही कर सकती है। आधुनिक युग की नारी अपनी प्रतिभा, स्वतंत्रता एवं अस्तित्व रक्षा के प्रयास में स्वयं आगे आ रही है। नवयुग की नवचेतना के आलोक में वह अपनी घुटन एवं आक्रोश को त्यागकर एक अच्छी गृहिणी तथा एक अच्छी कार्यकर्ता इत्यादि होने के साथ ही साथ एक विकसित मानवी होने की ओर प्रयासरत है।

"भारत के आर्थिक विकास-क्रम में कृषि युग आते-आते स्त्रियों का पुरुष के आर्थिक कार्यों में सहयोग देना आरंभ हो गया था। खेतों में पुरुष के साथ काम करना स्त्रियों के लिए कोई नई बात नहीं है। युग परिवर्तन के साथ-साथ स्त्रियों का कार्य क्षेत्र भी परिवर्तित होता गया है। आर्थिक सुविधा की दृष्टि से समाज के पिछड़े वर्ग की स्त्रियां तो काफी समय से फैक्ट्रियों में, घरेलू नौकरानियों के रूप में और अकुशल मजदूरों के रूप में काम करती रही हैं। इसके साथ ही साथ मध्यवर्ग तथा उच्च वर्ग की स्त्रियां भी घर से बाहर आकर परिवार की आर्थिक दशा सुधारने अथवा स्वयं के व्यक्तित्व का विकास करने की दिशा में तेजी से कदम बढ़ा रही हैं।"[10]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि लोग नारी को पुरुष से कम समझते थे, उन लोगों का भ्रम तोड़ दिया। आज नारी हर पद पर विद्यमान है और हो रही है। वह पुरुषवादी सोच के लिए हर दिशा में चुनौती है।

गांव व डाकघर ठैर, तहसील आनी, जिला कुल्लू, हि. प्र.-172 025

संदर्भ :

1. सुशील मित्तल, आधुनिक हिंदी कहानी में नारी की भूमिका, 1961, पृ. 3
2. मृणाल पांडे, जहां औरतें गढ़ी जाती हैं, राधा कृष्ण प्राइवेट लिमिटेड, 2/38, अंसारी मार्ग, दरियाजागंज नई दिल्ली, प्रं. सं. 2006, पृ. 17
3. सौ मंगल कप्पीकेरे, साठोत्तरी हिंदी लेखिकाओं की कहानियों में नारी, विकास प्रकाश, कानपुर, प्रं. सं. 2002, पृ. 31
4. डॉ. प्रीति प्रभा गोयल, भारतीय संस्कृति, पूजा एवं श्वामा पब्लिशर्ज, दिल्ली, 1987, पृ. 129
5. सौ मंगल कप्पीकेरे, साठोत्तरी हिंदी लेखिकाओं की कहानियों में नारी, विकास प्रकाश, कानपुर, प्रं. सं. 2002, पृ. 33
6. बल्लभ शरण, कल्याण पत्रिका, गीता प्रेस, गोरखपुर, पृ. 5.
7. सौ मंगल कप्पीकेरे, साठोत्तरी हिंदी लेखिकाओं की कहानियों में नारी, विकास प्रकाश, कानपुर, प्रं. सं. 2002, पृ. 35.
8. आशा रानी व्होरा, भारतीय नारी : दशा दिशा, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1983, पृ. 6
9. -यथा- पृ. 7 10. विमला शर्मा, साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में नारी के विविध रूप, इलाहाबाद, संगम प्रकाशन, 1982, पृ. 95

आलेख

शिवालिक क्षेत्र के जनजीवन में मान्य लोक देवी-देवता

● हरिकृष्ण मुरारी

(गतांक से आगे)

(6) पंजपीरी थान

यह लोक देवता भी शिवालिक जनपद के कृषक-श्रमिक वर्ग के कई परिवारों का मान्य लोक देवता है। जिन परिवारों का यह देवता होता है, उनके घरों के आस-पास ही इसका थान (स्थान) होता है। इसे लोकभाषा में ''पंजपीरी थाने दा थह्ड़ा''भी कहते हैं। कई जगह इसका थान ''मढ़ीऽ'' के अन्दर होता है। थह्ड़े में तथा मढ़ी के अन्दर इसकी पत्थर की छः-सात पिण्डियां होती हैं। इन्हीं को पंजपीरी थान कहते हैं। इसमें पांच-छः इकट्ठे लोक देवता निवास करते हैं। इन पिण्डियों के साथ कहीं एक तो कहीं पर दो पत्थर के चिराग भी होते हैं। पंजपीरी थान में लोक देवता एक ''जमातऽ'' में रहते हैं। यह दो प्रकार के होते हैं। एक में काली माता, दुर्गा माता, पहाड़िया मामा, जिसे सींडू भी कहते हैं, भैरों बाबा, महावीर हनुमान जी तथा गोरिया सिद्ध देवताओं की जमात होती है। दूसरे प्रकार के पंजपीरी थान में भी माता काली, माता दुर्गा, मामा पहाड़िया, बाबा भैरों, बाबा चानों सिद्ध तथा गूगा ''छतरीऽ'' इन सबकी जमात होती है। इसमें महावीर हनुमान जी नहीं होते। यह पंजपीरी थान दस-बीस-पचास परिवारों का लोक देवता होता है। जिसका उन्हीं परिवारों में से एक ''स्योकऽ'' होता है। जिसे समय-समय पर देवता स्वयं पुराने स्योक में प्रवेश करके खेल द्वारा चुनता है। यही स्योक पंजपीरी थान की पूजा अर्चना करता है। इसकी पूजा विशेष अवसरों पर ही होती है। यह विशेष दिन माह भादों (अगस्त-सितम्बर) में आते हैं। इन विशेष दिनों को लोकभाषा में थेइयां कहते हैं। यह थेइयां पांच दिन रहती हैं। इन पांच दिनों में वह सभी परिवार अपने घर का दूध, दहीं स्वयं ही प्रयोग करते हैं। दूध, दही, घी को अपने-अपने घर के दरवाजे से बाहर नहीं निकालते हैं। केवल थान पर ही चढ़ाते हैं। पांचवें दिन सभी घरों में खीर तथा बलेई बनती है, जिसे पंजपीरी थान को भेंट करने के बाद स्वयं भी खाते हैं। स्योक इन दिनों रोज सुबह-शाम पंजपीरी थान की पूजा अर्चना करता है। सुबह पंचगव्य से नहलाकर गन्ध, अक्षत, पुष्प धूप एवं चिराग को जलाता है और सांझ को भी धूप तथा चिराग जलाया जाता है। सभी परिवारों को इन दिनों पूर्ण रूप से शाकाहारी रहना होता है। यदि कोई इसका उलंघन करता है तो इसकी जानकारी स्योक को हो जाती है तब उसमें देवता प्रवेश करता है तो उसे बड़ा क्रोध आता है, उस समय उलंघनकर्ता को बार-बार नाक रगड़-रगड़ कर क्षमा मांगनी पड़ती है।

इसके अतिरक्त उन परिवारों में जब-जब किसी लड़के या लड़की की शादी होती है तो भी पंजपीरी थान की वह परिवार गाजे-बाजे के साथ स्योक द्वारा पूजा करता है तथा शादी में बनाए जाने वाले पकवान भी वहां चढ़ाए जाते हैं। क्षेत्र में मान्य लोक त्योहारों के अवसर पर तथा नई फसल के निकलने पर भी पंजपीरी थान की पूजा की जाती है। शिवालिक जनपद के श्रमिक-कृषक वर्ग में जगह-जगह इसकी मढ़ियां तथा खुले में रखे थान के निशान मिल जाते हैं।

(7) खुआजा पीर

खुआजापीर भी अन्य लोक देवताओं की भान्ति यहां के श्रमिक-कृषक वर्ग का मान्य लोक देवता है। इसे भी लोग खेतरपाल, जक्ख तथा लखदाता की भान्ति ही मानते हैं। जिनका खुआजापीर होता है वह खेतरपाल, जक्ख या लखदाता को नहीं मानते। अर्थात इनमें से एक परिवार केवल एक ही देवता को मानता है। सभी को नहीं। इसलिए कइयों का खेतरपाल होता है तो कइयों का लखदाता। इसी प्रकार कुछ जक्ख को मानते हैं तो कुछ खुआजा पीर को। एक परिवार इनमें से किसी एक देवता पर ही अपने पशुओं की देखभाल तथा फसलों की रखवाली का जिम्मा सौंपता है। खुआजापीर का कोई स्थान, मढ़ी, मंदिर आदि नहीं होते। इसकी पूजा निकटवर्ती नदी, नाले के किनारे ही की जाती है। यह पूजा नदी-नालों के किनारे कहीं भी की जा सकती है।

इसका निश्चित स्थान नहीं होता है। पूजा में रोट का ''चूरवांऽ'' तथा हलवा और दूध, दहीं व घी चढ़ाया जाता है। केले के पत्ते पर इन सभी वस्तुओं को सजाकर फिर धूप तथा दीपक जलाकर श्रद्धा के साथ नदी नाले में बहा दिया जाता है । इसे खुआजापीर को बेड़ा भेंट करना कहते हैं। जब भी परिवार में भैंस दूध देने लगती है तो इस प्रकार खुआजापीर की पूजा की जाती है। इसके अतिरिक्त नई फसल के निकलने पर भी उपरोक्त बेड़ा नदी-नाले में बहाया जाता है। इस प्रकार से शिवालिक जनपद के श्रमिक-कृषक वर्ग में खुआजा पीर की मान्यता है।

इस जनपद के श्रमिक-कृषक जब कोई पशु खरीदते हैं तो उसकी रखवाली पीर अथवा जक्ख या खेतरपाल आदि उस लोक देवता के ऊपर छोड़ देते हैं, जिससे वह परिवार जुड़ा होता है... जब गाय अथवा भेंस दूध देने लगती है तो सबसे पहली दूध की भेंट इन्हीं लोक देवताओं को अर्पित की जाती है। ऐसा न करने से दूध में खून उतर आता है जिसे लोक भाषा में 'खोट' कहते हैं। यही तो इन लोक-देवताओं की वास्तविकता का प्रमाण है। फिर इनसे क्षमा-याचना करके और दूध, दही, रोट, चूरवां, खीर तथा बलेई आदि देवता से सम्बन्धित पकवान भेंट किया जाता है। तब दूध में खून आना अपने आप ही बन्द हो जाता है। यदि इन लोक देवताओं में ऐसी-ऐसी करामातें न हों तो इन्हें मानें कौन ?

इसके अतिरिक्त खुआजा पीर की छोटी-छोटी मढ़ियां भी कहीं-कहीं मिलती हैं। इनके अन्दर एक कच्चे पत्थर का चिराग होता है। जिसमें तीन दीपकों के लिए ऊपर जगह होती है और एक दीपक की जगह तीन चिरागों के दाहिनी ओर नीचे बनी होती है। क्षेत्र में जहां ऐसी मढ़ी होती है, उसकी पूजा वहां का ही एक किसान-श्रमिक परिवार करता है। वैसे तो इस जनपद में खुआजा पीर के छिंज मेले सदियों से नदी नालों के किनारे ही हुआ करते हैं परन्तु इन मढ़ी वाले खुआजा पीर की छिंज वहीं मढ़ी के पास ही छोटे-छोटे बाल-गोपालों की कुश्ती करवाकर ही करवाई जाती है। इसे उस मढ़ी से सम्बन्धित परिवार हर वर्ष या तीसरे वर्ष अवश्य करवाता है। इसके अतिरिक्त यदि किसी अन्य परिवार की कोई ''सुक्खण'' (मनौती) उस मढ़ी के खुआजा पीर बाबा पूरी करते हैं तो वह भी वहीं बाल-गोपालों की कुश्ती करवाकर मनौती के अनुसार अपना बचपन निभाता है। इस छिंज में बाल-गोपालों को हलवे और चूरवें तथा गुड़ का प्रशाद और दक्षिणा में अपनी सामर्थयानुसार पैसे भी दिए जाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य वहां पधारे दर्शकों को भी प्रशाद बांटा जाता है। मढ़ी के अन्दर जो चिराग होता है, वही खुआजापीर का निशान कहलाता है। यही चिराग देसी घी से या तिल तथा अलसी के तेल से जलाए जाते हैं। इसके साथ तिल, गुड़ और चावलों में देसी घी मिलाकर किसी पीतल या मिट्टी के बर्तन में आग के अंगारे रखकर, उन अंगारों पर घी में मिली वस्तुओं को रख कर भंखारा धुखाकर वहीं चिरागों के आगे रख दिया जाता है। तीन चिरागों से नीचे उसी पत्थर में जो चिराग होता है, वह खुआजा पीर बाबा के सेवक भैरों बाबा का होता है।

खुआजा पीर की एक विशेषता यह भी है कि यह एक सच्चा न्यायाधीश भी है। यदि कोई आपकी किसी वस्तु को चुरा लेता है और आपको कोई पता नहीं लगता कि अमुक वस्तु कौन चुरा ले गया तथा यदि कोई आप पर झूठा आरोप लगाता है या कोई ऐसी बात जिसमें आपका कोई अपराध न हो परन्तु आपमें सच्चाई का होना अत्यंत अनिवार्य है, तब आप किसी खुआजा पीर देवता की मढ़ी पर जाकर चिराग को शद्ध जल से स्नान कराएं और फिर गंध, पुष्प, फल और नवैद्य के साथ चूरवां तथा हलवा भेंट करके चिरागों को देसी घी अथवा तिल या अलसी के तेल से जलाकर व भंखारा धुखा कर अपनी फरियाद खुआजा पीर बाबा से करें........'' महाराज ! मेरी अमुक वस्तु चोरी हो गई है, कृपया वह मुझे मिल जानी चाहिए। मैं आपकी सेवा में अमुक वस्तु भेंट चढ़ाऊंगा / चढ़ाऊंगी या तेरी छिंज दूंगा /दूंगी''।

इस जनपद के श्रमिक-कृषक जब कोई पशु खरीदते हैं तो उसकी रखवाली पीर अथवा जक्ख या खेतरपाल आदि उस लोक देवता के ऊपर छोड़ देते हैं, जिससे वह परिवार जुड़ा होता है... जब गाय अथवा भैंस दूध देने लगती है तो सबसे पहली दूध की भेंट इन्हीं लोक देवताओं को अर्पित की जाती है। ऐसा न करने से दूध में खून उतर आता है जिसे लोक भाषा में 'खोट' कहते हैं। यही तो इन लोक-देवताओं की वास्तविकता का प्रमाण है। फिर इनसे क्षमा-याचना करके और दूध, दही, रोट, चूरवां, खीर तथा बलेई आदि देवता से सम्बन्धित पकवान भेंट किया जाता है। तब दूध में खून आना अपने आप ही बन्द हो जाता है। यदि इन लोक देवताओं में ऐसी-ऐसी करामातें न हों तो इन्हें मानें कौन ?

इसी प्रकार यदि कोई आप पर झूठा आरोप लगाता है। जिससे मन को कष्ट तो होता ही है, साथ में बदनामी भी होती है ... तब भी इसी प्रकार लोक देवता खुआजा पीर के आगे फरियाद करने से आपको कुछ समय के बाद न्याय आवश्य मिलेगा।

उपरोक्त दोनों स्थितियों में सच्चे मन से तथा सच्चे रूप में की गई फरियाद के बाद अपराधी कुछ समय उपरान्त देव कोप से कुपित हो जाता है। तब यदि वह चुराई गई वस्तु लौटा देता है या झूठे आरोप को स्वीकार करके देवता से क्षमा मांग लेता है तो वह मिल रहे दण्ड से बच सकता है। अन्यथा ढोल की भान्ति फूलकर और घिसट-घिसट कर अन्ततः मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। उसे कोई भी डाक्टर, वैद्य या हकीम भी ठीक नहीं कर सकते। इससे सम्बन्धित पचहत्र - अस्सी वर्ष पहले की एक-दो ऐसी घटनाओं के बारे में जानकारी उपलब्ध हुई है :-

एक कृषक परिवार में पति ने पत्नी पर चरित्रहीन होने का बिल्कुल झूठा आरोप लगा दिया। उसने उसे रोज पीटना शुरू कर दिया। रोज - रोज की अनेक यातनाओं से बेचारी इतनी दुःखी हो गई कि एक दिन खुआजा पीर बाबा की मढ़ी पर जाकर अपनी सारी व्यथा रो-रो कर कह दी। फिर क्या था....बाबा ने उसकी फरियाद सुन ली और उसका पति बीमार हो गया। वैद्यों, डाक्टरों एवं हकीमों ने उसका इलाज करना शुरू कर दिया। जैसे-जैसे इलाज होने लगा, वैसे ही उसकी बीमारी बढ़ने लगी। बीमारी क्या थी कि वह ढोल की भान्ति फूलने लगा था तथा बिस्तर से उठ भी नहीं पाता था। यही समझा जाने लगा कि यह सुबह है तो शाम को नहीं, और शाम को है तो सुबह नहीं। इस बीच कई बार उसकी सांस भी बन्द होती रही तथा उसे मृत्यु शैया बनाकर भूमि पर सुलाते रहे। सुलाने के बाद फिर उसकी सांस चल पड़ती थी। इसे लोक भाषा में 'कई बरि मंजें-भूं होया ' कहते हैं। अन्ततः किसी ने कहा कि कहीं किसी लोक-देवता का ही प्रकोप न हो। चेल्ला (ओझा) बुलाया गया। उसने अपनी मंत्र एवं तंत्र विद्या से पता लगाकर बताया कि इसने अपनी पत्नी पर बद्चलनी का झूठा आरोप लगाया है। यही नहीं बार-बार इसे प्रताड़ित भी करता रहा है। इसकी यातनाओं से दुःखी होकर इसकी पत्नी ने खुआजा पीर की मढ़ी पर जाकर मत्था मारा है। (फरियाद की है) खुआजा पीर ने इसकी फरियाद सुन कर अपना फैसला दिया जिसे यह बाबा के दण्ड के रूप में भुगत रहा है। अब यदि इसकी पत्नी इसे क्षमा नहीं करेगी तो यह इसी प्रकार ढोल की भान्ति फूल-फूल कर ही मर जाएगा। अन्ततः उसकी पत्नी ने पीर बाबा की मढ़ी में जाकर कड़ाह- चूरूआं चढ़ाया और भंखारा डालकर अपने पति को क्षमा करने के लिए प्रार्थना की कि अब बाबा जी इन्हें ठीक कर दें । बस.........फिर क्या था, वह धीरे-धीरे ठीक होने लगा और आठ-दस दिनों बाद बिल्कुल ठीक हो गया तथा चलने-फिरने लग पड़ा।

इसी प्रकार की एक और घटना वर्ष 1940-50 के दशक की भी प्राप्त हुई है :-

एक कृषक परिवार में दो भाई थे। दोनों की मृत्यु हो गई। एक भाई की पत्नी, तीन बेटियां और एक बेटा रह गया तथा दूसरे भाई की पत्नी, एक बेटा और एक बेटी रह गई तथा एक बेटा अभी गर्भ में ही था तो उसके पति की मृत्यु हो गई थी।

बड़े भाई की तीन बेटियां बड़ी थीं और बेटे की आयु केवल दस वर्ष ही थी। जबकि छोटे भाई का बेटा पांच वर्ष का था और बेटी ढाई साल की तथा जब छोटे भाई की मृत्यु हुई तो मई महीना था और जो बेटा गर्भ में था, उसका जन्म दो माह बाद अगस्त महीने में हुआ। उस परिवार पर तो पहाड़ गिर गया होगा, जब घर के युवा दो भाई इकट्ठे ही मृत्यु का ग्रास बन गए थे।

समय गुजरता गया और बच्चे बालिग होते गए। बड़े भाई के बेटे और उसकी मां ने अपने हिस्से की सारी जमीन एक अन्य कृषक परिवार को बेच दी तथा स्वयं अपने गांव से दूर किसी दूसरे गांव में जाकर बस गए। पीछे छोटे भाई की पत्नी तथा उसके तीन बच्चे रह गए। जो खुआजा पीर बाबा का स्थान था वह जो जमीन बेची गई उसमें चला गया। उस स्थान के साथ दूसरे खेतों को जाने के लिए एक-दो पैर का रास्ता भी था। जिस परिवार ने वह जमीन खरीदी, उसने वह रास्ता बन्द कर दिया और खुआजा पीर के स्थान के पास की सारी भूमि जोत डाली तथा रह गए परिवार को चेतावनी दी कि खबरदार ! अब इस रास्ते से आए तो टांगें तोड़ देंगे। खूब डराया-धमकाया। अन्ततः दुखी होकर उस परिवार ने खुआजा पीर बाबा की मढ़ी पर जाकर बाबा जी से अपना दुःख सुनाया तथा कहा कि यह तेरा स्थान और रास्ता जिन्होंने खोद दिया तथा बन्द कर दिया है, उन्हें अब आप ही सजा दे सकते हैं। कुछ समय के बाद जिसने ऐसा किया था वह बीमार पड़ गया और दिन प्रति दिन ढोल की भान्ति फूलने लग पड़ा। उसके घरवालों ने कई वैद्यों तथा डाक्टरों से इलाज करवाया परन्तु बीमारी पर कोई असर नहीं हुआ बल्कि जितना इलाज करते गए, उतना ही अधिक वह फूलता गया। अन्ततः चेले-जोगी बुलाए गए तो उन्होंने खुआजापीर की जमीन को खोदने व उस रास्ते को बन्द करने के बारे में बताया तथा क्षमा मांगने के लिए कहा परन्तु अंह में चूर उस परिवार ने क्षमा नहीं मांगी व आखिरकार उसकी मृत्यु हो गई। इन घटनाओं से ही इन लोक देवी-देवताओं की सत्यता के प्रमाण मिलते हैं तथा इन्ही प्रमाणों के कारण यह लोक देवता कृषक श्रमिक वर्ग के मान्य लोक देवता कहलाते हैं। इसमें दो राय नहीं हो सकती।

(8) **परियां**

यह शिवालिक जनपद के कृषक-श्रमिक वर्ग की महिलाओं की लोक देवियां हैं। किसी परिवार की महिलाओं की लाल परी तथा किसी की काली परी लोक देवी होती है। इसका मंदिर जिला

कांगड़ा के ही कांगड़ा शहर के निकट गुप्त-गंगा से आगे उतराई उतरने के बाद अच्छर कुण्ड नामक स्थान पर है। वहां पर दोनों परियों की बड़ी-बड़ी पत्थर की मूर्तियां हैं। इस स्थान को लोकभाषा में ''छरुण्ड'' भी कहते हैं। शिवालिक जनपद में छरुण्ड झरने को कहते हैं। यहां भी एक बहुत बड़ा झरना काफी ऊंचाई से गिरता है। जहां यह झरना गिरता है, वहां पानी के दबाव के कारण छोटा सा तालाब बना हुआ है। जब-जब वर्ष में एक बार हर परिवार की महिलाएं अपने छोटे-छोटे बच्चों को लेकर वहां जाती हैं तो उस तालाब में पहले नहाती हैं, साथ में बच्चों को नहलाती हैं। इसके बाद अपनी परी की पूजा करती हैं। उसे फसल का कच्चा-कोरा अन्न तथा कुछ पैसे चढ़ाकर प्रार्थना करती हैं कि माता परी उन पर अपनी कृपा दृष्टि बनाए रखे। वहां पर पुजारी भी हैं जो उनकी प्रति दिन सुबह-शाम पूजा करते हैं। इस अच्छर कुण्ड में गुप्त गंगा का सारा पानी काफी ऊंचाई से फुहारे की भान्ति गिरता रहता है और बाण गंगा नदी में जाकर मिल जाता है। इस जनपद की महिलाएं परियों के निशान (एक चकोर चांदी के पत्ते पर महिला की आकृति उकेरी होती है।) को एक पीले कपड़े की झोली में पूजा स्थली में या कमरे में ऊंचे स्थान पर टांगे रखती हैं। जिसकी समय-समय पर घर में भी पूजा करती रहती हैं। जब यहां के कृषक-श्रमिक परिवार में शादी होती है तो दुल्हे वाले बरी में इस प्रतिमा को भी देते हैं।

(9) **नारसिंह**

यह भी परियों की भान्ति महिलाओं का लोक देवता है। इसका स्थान पीपलों तथा वट वृक्षों के नीचे होता है। परन्तु अधिकतर घरों में ही इसकी स्थापना रहती है। इसे घर की बहुऐं अपने-अपने मायके से लाती हैं और घर में स्थापित करवा लेती हैं। इसके निशान के रूप में पीपल तथा वट वृक्षों के नीच पत्थर का मूहरा होता है तथा घरों में चांदी के गहने (छल्ले व चौंकी) चौंकी को भोटू भी कहते हैं। इनके साथ एक जटाओं वाला नारियल भी होता है। यह छल्ले-भोटू भी ससुराल से ही बरी में मिलते हैं जिन्हें परियों की आकृति के साथ ही दिया जाता है और एक ही झोली में इकट्ठा रखा जाता है।

(10) **लोक देवता बैल**

यहां के श्रमिक-कृषक वर्ग ने बैलों को भी देवताओं का दर्जा प्रदान किया हुआ हैं। धान की खेती की जब रोपाई, गोडाई और ''नन्दाईऽ'' हो जाती है तो किसान अपने आप को तथा अपनें बैलों को खेती के कार्यों से छुट्टी दे देता है। यह समय बरसात के अन्त में आता है। इन दिनों भादों महीने में ''जोड़ूऽ-पतरोड़ूऽ'' की संक्रान्ति आती है। हिमाचल प्रदेश के शिवालिक जनपद में संक्रान्ति को सगरान्द कहते हैं। इस दिन किसान अपने पशुओं को बांधने के लिए नए जोड़े (रस्से) तैयार करते हैं तथा अरबी के पत्तों से एक पकवान पतरोड़े बनाए जाते हैं। उस दिन पकवान बनाने के बाद किसान अपने-अपने बैलों की पूजा करते हैं। यह पूजा देव-पूजा की भान्ति ही की जाती है। पहले बैलों के पैरों को पानी से धोते हैं। उसके बाद उन पर चन्दन, रोली आदि से तिलक लगाकर अक्षत, पुष्प भी चढ़ाते हैं और फिर बनाए गए पतरोड़े पहले बैलों को खिलाए जाते हैं और प्रार्थना की जाती है कि हे बैल देवता! आपने हमारी फसल का सारा काम किया, इस लिए हम आपको कोटि-कोटि प्रणाम करते हैं तथा धन्यवाद भी देते हैं। यह कह कर घर के सभी सदस्य उनके पैरों की बन्दना करते है। इस प्रकार यहां का श्रमिक-कृषक वर्ग बैलों को देवता मानता है।

(11) **लोक देवी धरती माता**

शिवालिक जनपद में जब-जब फसल तैयार होती है तो किसान उसे दराटी लगाने से पहले धरती माता की धूप, पुष्प, अक्षत, गन्ध और मिष्ठान आदि खेत में चढ़ाकर फसल को काटना आरम्भ करता है। इसे लोकभाषा में त्रप्प लेना कहते हैं। इस पूजा के उपरान्त ही फसल काटी जाती है। पहले फसल काटने के समय तथा काटने के बाद बकरे अथवा मुर्गे की बलि देने की भी प्रथा काफी किसान परिवारों में रही है। परन्तु अब दिन प्रति दिन ऐसा रिवाज या प्रथा नहीं के बराबर है। अभी भी कहीं-कहीं ऐसा रिवाज विद्यामान है। फिर भी धरती माता की पूजा का विधान सदियों से इस क्षेत्र में निरन्तर चला आ रहा है।

(12) **लोक देवता भूण्डक**

यह श्रमिक-कृषक वर्ग के ग्वालों का मान्य लोक देवता है। इसे जंगल का देवता भी कहते हैं। क्योंकि इसकी पूजा का विधान जंगल में ही है, घर में नहीं। बरसात के मौसम में जब जंगलों में काफी घास होती है और पशुओं को भी खेती के कार्यों से छुट्टी होती है तो श्रमिक-कृषक वर्ग के ग्वाले अपने-अपने पशुओं को घास चरने के लिए जंगलों में ले जाते हैं। वहां वह अपने पशुओं की सांप, बाघ, आदि हिंसक जानवरों से तथा जंगल में चढ़ाई उतराई चढ़ते-उतरते फिसलने से बचने के लिए रक्षा हेतु भूण्डक देवता की पूजा करते हैं। सभी ग्वाले इकट्ठे होकर जंगल में खिचड़ी बनाते हैं जिसे इस क्षेत्र में भूण्डक भात कहते हैं। इसे वहीं जंगल में तैयार करके पहले भूण्डक देवता के नाम से वहीं किसी पत्थर अथवा किसी वृक्ष के नीचे जंगली पत्तों पर रखकर चढ़ाते हैं और उसके बाद स्वयं भी बड़े चाव से खाते हैं। इसलिए इस लोक देवता को 'भूण्डक भत्त' देवता कहते हैं।

(13) **कुलज**

शिवालिक जनपद में श्रमिक-कृषक वर्ग के प्रत्येक परिवार में कुल देवी का विशेष महत्व है। हर परिवार की अपनी अलग-अलग कुल देवी (कुलज) होती हे। जिसकी पूजा अर्चना, जन्म एवं विवाह उत्सवों पर विशेष रूप से करनी पड़ती है। ऐसा माना जाता है कि शुभ कारजों के समय यदि इसकी पूजा-अर्चना न की जाए तो यह देवी रुष्ठ होकर उस परिवार को दण्ड भी देती

है। जो परिवार ऐसे शुभ समय अपनी कुल देवी की पूजा-अर्चना करना भूल जाता है उस परिवार में गूंगे, बहरे, अपंग एवं मंदबुद्धि बच्चे उत्पन्न होते हैं। परिवार में जब-जब विवाह होते हैं, तो जठेरीऽ ही सबसे पहले उसकी पूजा करती है। विवाह उत्सव में एक बार नहीं बार-बार इसकी पूजा करनी पड़ती है। कुलज की स्थापना कृषक श्रमिक परिवारों में विभिन्न रूपों में होती है। कहीं पिण्डियों के रूप में तो कहीं देहरी अथवा मढ़ी के रूप में तो कहीं दाड़ूऽ की टहनी के रूप में मिलती है। जिस दिन बारात चढ़ती है, उस दिन दुल्हे के कानों को कुलज के प्रतीक के सम्मुख बैठाकर छेदा जाता है। विवाह में जो भी पकवान बनते हैं, उन्हें सबसे पहले कुलज एवं अन्य सभी लोक देवताओं को भोग लगाने के उपरान्त ही लोगों को खिलाया जाता है।

कुलज कुल की विशेष लोक मान्य देवी है। इसकी अलग-अलग कुलों में लोक कथाएं / गाथाएं भी मिलती हैं। रुल्हा दी कुल्ह, सूही माता चम्बयाली रानी आदि लोक कथाएं / गाथाएं इन्हीं कुल देवियों से सम्बन्धित हैं। सूही माता चम्बयाली रानी राज परिवार चम्बा की कुल देवी तो हैं ही परन्तु वहां बसने वाले दूसरे परिवार भी उसे कुल देवी मानते हैं तथा शुभ कारजों में पूजा-अर्चना भी करते हैं।

इसी प्रकार रुल्हा दी कुल्ह की नायिका भी जिसे जिन्दा कूहल (नहर) के सिरे पर चिनवा दिया गया था। बाद में वह भी कुल देवी बन गई तथा शुभ उत्सवों के समय उसकी भी पूजा-अर्चना होने लगी।

शुभ-कारजों के अवसर पर कुल देवी को टिक्कड़ियांऽ और कड़ाहऽ चढ़ाकर प्रसन्न किया जाता है। कई परिवारों में बकरे अथवा बकरी की बलि़ भी दी जाती है। श्रमिक-कृषक वर्ग में ऐसा कोई भी परिवार नहीं मिलेगा जिनकी कुल़ज न हो। कुलज से सम्बन्धित एक लोक कथा एक कृषक-श्रमिक परिवार से प्राप्त हुई है, जो कि इस प्रकार से है :-

सूजी उपजाति के नाम का एक कृषक-बागवान परिवार था। उनके घर एक कन्या ने जन्म लिया। कन्या दिनों-दिन चन्द्र कलाओं की भान्ति बढ़ने लगी। जब वह युवा अवस्था में पहुंच गई तो माता-पिता को उसके विवाह की चिन्ता सताने लगी। मां-बाप ने उसके रिश्ते के प्रयास शुरू कर दिए। अन्ततः सल्लैहूरियों (कृषक-बागवान जाति में एक उपजाति का नाम) के एक लड़के के साथ कुण्डली जोड़ दी गई। यह बात काफी समय पहले राजाओं के जमाने की है। जिस लड़के के साथ रिश्ता तय हुआ था, वह दूसरे राज्य में नौकरी करता था। घर वालों ने एक दिन शुभ मुहुर्त में उनके विवाह की तिथि निश्चित कर दी। समय गुजरता गया और एक दिन विवाह की तिथि भी आ गई। परन्तु लड़का नहीं पहुंचा। तिथि निकल भी गई मगर वह फिर भी नहीं आया। लड़की वालों को इस बात की शर्म हो गई। अतः उन्होंने उसी वर्ष लड़की का रिश्ता दूसरी जगह अन्य लड़के से जोड़ दिया। विवाह की तिथि निश्चित हो गई। तिथि निकट आने लगी और विवाह की तैयारियां जोर पकड़ने लगी। लेते-देते विवाह की तिथि भी आ गई। दोनों ओर विवाह शुरू हो गया। शाम को बारात भी आ पहुंची। उसी दिन लड़की का पहला मंगेतर भी छुट्टी आ गया। उसका घर विवाह वालों वालों के घर से कोई एक कोस दूर होगा। जब उसने ढोल और शहनाइयों की आवाज़ सुनी तो अपनी बहन से पूछ बैठा :- ''बोबो ! यह किसका विवाह हो रहा है ?''

बहन तो अपने भाई पर पहले ही नाराज़ थी अतः उसने उल्हाना देते हुए कहा ....'' बड्डेयां सबूतां दियां मंगां ब्योहा दियां।'' अर्थात बड़े शूरवीर की मंगेतर की शादी हो रही है।

बहन की बात उसके दिल में तीर की भान्ति चुभ गई। वह उस समय जहर का घूंट पीकर रह गया, बोला कुछ नहीं।

दूसरे दिन उसकी बहन विवाह वालों के घर चली तो भाई ने उससे पूछा.....''बोबो !

कहां जा रही हो ?''

'' मैं विवाह वालों के घर विवाह में सम्मलित होने के लिए जा रही हूं।''

भाई की बात का बहन ने उत्तर दिया।

''बोबो ! आप मुझे अपने कपड़े देना, मैं भी अपनी मंगेतर की शादी देखूंगा।''

बहन ने उसे अपने कपड़ों का एक जोड़ा दे दिया और उसने अन्दर जाकर उन्हें पहन लिया तथा अपनी बहन से आंख बचाकर कटार कपड़ों में छुपा ली और बहन के साथ विवाह देखने चल पड़ा।

लग्न-बेदी सब हो चुका था। केवल सिर गुन्दाई होना बाकी रह गई थी। कुछ महिलाएं उसकी तैयारी कर रहीं थी। इतने में वह भी अपनी बहन के साथ एक लम्बा सा घूंघट निकाल कर महिलाओं के मध्य में जा बैठा। जब सिर गुन्दाई समाप्त हो गई तो दुल्हा अपने स्थान से उठा। उसे देखकर वह भी महिला के भेष में उठकर खड़ा हो गया। झट से कटार निकाली और दुल्हे का गला रेन्द दिया तथा स्वयं बौह्ड़ (ऊपरी मंजिल) को चला गया और खिड़की से छलांग लगाई तथा भाग गया। खुशी के स्थान पर एक क्षण में ही मातम छा गया। वह वहां से दूर जाकर खड़ा हो गया और जोर-जोर से चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा........'' किसी को मत पकड़ना। जिसकी मंगेतर थी, वही कत्ल कर गया।''

इतना कहकर वह झट से घर पहुंचा, कपड़े बदले तथा घोड़े पर सवार होकर भाग गया। उधर विवाह वालों का घर लहू से लथपथ हो गया। सभी आपस में कनोसनी (आंखों से बातें करना) करने लगे। अन्त में लड़की उठी और अपने पिता से कहने लगी. ....''पिता जी ! जो होना था, वह हो गया। शायद मेरे भाग्य में यही लिखा था। अब आप ऐसा करें, यहीं इसी कमरे में चिता तैयार

करवायें तथा इनका (दुल्हे का) अन्तिम संस्कार कर दें। अब मैं भी जी कर क्या करूंगी अतः इन्हीं के साथ सती हो जाऊंगी।''

उन दिनों सती प्रथा का विशेष प्रचलन था। उसने जिस प्रकार कहा, पिता ने उसी प्रकार वहीं चिता तैयार करवा दी और कटे हुए दुल्हे को उस पर रख दिया। अब लड़की ने कहा........ .'' पिता जी ! यहां कमरे में जितनी भी वस्तुएं पड़ी हैं, उन्हें उसी प्रकार रहने दीजिए। एक छेद छत में तथा एक ऊपर लद्दे (ऊपरी मंजिल की छत) में करवा दें और उसके बाद चिता को आग लगा दें।'' कई रिश्तदारों ने अपनी वस्तुऐं कमरे से निकाल कर बाहर दूर जाकर रख दीं। चिता को आग लगा दी गई। जब आग पूरे यौवन पर पहुंची तो लड़की ने सबको नमस्कार किया और कहा .....'' जो सूजियों के कुल का होगा, वह भूलकर भी सल्लैरियों के परिवार के साथ रिश्ता नहीं जोड़ेगा। यदि कोई ऐसा करेगा तो वह जीवन भर दुःखी ही रहेगा। जो मेरे कुल से सम्बन्धित होगा वह कभी भी शादी-ब्याह के समय देहरा नहीं बनाएगा।''

इतना कहकर लड़की चिता में कूद गई। देखते ही देखते आग की लप्टों ने उसे अपने आगोश में समेट लिया। वह सती हो गई। जिन सम्बन्धियों का सामान अन्दर था, उसे तनिक भी आंच नहीं आई परन्तु जिन्होंने अपना सामान निकाल लिया था तथा जहां रखा था वहां अचानक आग लगी और क्षणों में ही जलकर राख हो गया।

कुछ समय बाद उसके पिता ने उसी स्थान पर उसकी देहरी (छोटा सा मंदिर) बना दी। समय बीतता गया। उसकी पूजा-अर्चना होने लगी। वह इस कृषक परिवार की कुलज बन गई। आज भी उसकी देहरी जम्मू में किले के भीतर विद्यामान है। जब-जब सूजियों के ज्येष्ट बेटे की शादी होती है तो उस परिवार को वहां जाकर पूजा-अर्चना करनी पड़ती है। यदि कोई कृषक सूजी वंश का परिवार ऐसा नहीं करता है तो उसके जीवन में अनेक प्रकार के विघ्न और दुःख आ जाते हैं, जिनसे वह सदा दुःखी ही रहता है।

समय के साथ-साथ उस एक परिवार के कई परिवार बन गए तथा इधर-उधर कई स्थानों में जाकर बस गए परन्तु इन सभी सूजी कृषक परिवारों की कुल देवी यही है। उसके कथनानुसार जब भी कोई ब्याह-शादी होती है तो यह देहरा नहीं बनाते और आज भी सूजियों के रिश्ते सल्लैरियों के साथ नहीं होते हैं।

प्रत्येक श्रमिक-कृषक वर्ग में सबकी अपनी-अपनी कुल देवी होती है उन सबके साथ कोई न कोई इस प्रकार की कथाएं भी अवश्य जुड़ी होती हैं।

शिवालिक जनपद के श्रमिक-कृषक वर्ग के इन मान्य लोक देवी-देवताओं के अतिरिक्त और भी बहुत सारे लोक देवी-देवता हैं, जिनके बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए काफी समय की आवश्यक्ता है। क्योंकि हिमाचल प्रदेश में इस विस्तृत जनपद में ऊपर कुबती और सलूणी से लेकर नीचे मैहतपुर तथा गगरेट तक तथा जिला बिलासपुर और मण्डी के कुछ भागों की परिधि में जा-जाकर ही इनके बारे में विवरण प्राप्त किया जा सकता है। तब कहीं जाकर यह लेख पूरा हो पाएगा।

कुछ भी कहा जाए परन्तु शिवालिक जनपद का श्रमिक-कृषक वर्ग इन्हीं लोक देवताओं के अंग-संग आस्था और पूरी श्रद्धा के साथ रहता एवं जीता है। इनके अतिरिक्त और भी लोक देवी-देवता है। तभी तो इस धरती को देवताओं की धरती, देवधरा, देव-भूमि आदि कई सम्मानित नामों से जाना पहचाना जाता है और इससे ही हम जान सकते हैं कि इस क्षेत्र में सदियों से एक ऊंची श्रद्धा आस्था से भरपूर सभ्यता फलती-फूलती रही है।

चिन्तन कुटीर गांव व डा. रैत, तह. शाहपुर
जिला कांगड़ा, हिमाचल-प्रदेश-176208
चलितभाष : 0 98165-16978

कविता

कोमल धागे

● प्रो. योगेश चंद्र सूद

मत तोलो राखी को सिक्कों से
राखी है अनमोल
जिस दिन राखी बिक जाएगी
भावनाएं भी मिट जाएंगी
फिर कहां मिलेगा इस धरा पर
भाई-बहन का प्रेम।

इतिहास गवाह है राखी के इस तथ्य का
जब बहन पर संकट आया
मुंह बोला भाई उसका सेना लेकर रक्षा को आया
खून के रिश्तों से बढ़ कर हो सकते हैं
मुंह बोले धर्म के रिश्ते
राखी यह संदेश है लाती
राखी वचन का अर्थ समझाती
राखी है रेशम का धागा
यह कोमल है कमजोर नहीं
बहन न मांगे सोना-चांदी
वह तो केवल इतना चाहे
मुसीबत में जब पुकारे वह अपने भैया को
भैया दौड़ा चला जाए, भैया राखी का धर्म निभाए।

प्रिंसीपल, एल.जे.एन हिमोत्कोर्ष कन्या महाविद्यालय,
कोटला खुर्द, जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश-174 315,
मो. 0 99159 37694

हमारे साहित्यकार/निबंध

ओम प्रकाश प्रेमी का काव्य संसार : अनेक संदर्भ

● डॉ. पीयूष गुलेरी

हिमाचल प्रदेश के जुझारू और निरंतर लेखन के लिए समर्पित कर्मठ साहित्यकारों को जब-जब स्मरण किया जाएगा, तो उनमें ओम प्रकाश 'प्रेमी' का नाम सदैव शीर्षस्थ रूप में स्मरणीय रहेगा। ओम प्रकाश प्रेमी उम्रभर प्रेम के लिए तड़प के संताप में जीते रहे और उनका व्यष्टि प्रेम समष्टिगत होकर जन-जन की पीड़ा गायन बनकर आज भी अमर है। हम जब-जब उनकी काव्य रचनाओं का अवगाहन करते हैं, तब-तब यह पाते हैं कि विरोधाभासी परिस्थितियों से जूझते-जूझते जो भी अनुभव उन्हें हुए वे समय-समय पर कविताओं के अक्षरों में ढलकर उनकी अंतर्वेदना को साकार करने में समर्थ हुए। काव्य-रचनाओं की यह साकारता, उन द्वारा प्रकाशित 'आशा किरण' शीर्षक काव्य संग्रह (सन् 1989-1990 ईसवी) में पुंजीभूति होकर अमर है। बहुत संभव है कि इस काव्य-संकलन में एकत्र कविताओं के अतिरिक्त उनकी अनेक काव्य रचनाएं इधर-उधर बिखरी पड़ी रह गई हों, किंतु उनके काव्य रचना-संसार का प्रत्यक्ष अवगाहन तो इसी काव्य-ग्रंथ के आधार पर किया जाना संभव है।

कहना न होगा कि किसी भी रचनाकार की कृतियों का धरातल उसके जीवन और व्यक्तित्व की सुदृढ़ आधारशिला पर अवस्थित रहता है। अस्तु, किसी भी रचनाकार की कृतियों पर प्रकाश डालने से पूर्व उसके जीवन और जीवन शैली पर कहे बिना सारा विमर्श अधूरा और एकांगी रह जाएगा। रचनाकार के जीवन-व्यक्तित्व को समझना इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि उन्हीं अनुभवों पर तो उसके जीवन-दर्शन का निर्माण होता है। उसके जीवनानुभव और सांसारिक यात्रा के सुख-दुख ही प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में उसके कव्य और कथन की भूमिका का निर्वहन करते हैं। जीवन के सुख-दुख, आनंद-खेद, मिलन-विछोह, प्रताड़ना-अवमानना, स्वीकार-अस्वीकार, घृणा-विद्वेष, आशा-निराशा, सफलता-विफलता, पूर्णता-अपूर्णता तथा हर्ष-विषाद आदि ही तो परिपक्वता के परिवेश के मंथन में साधना के स्वर बनते हैं। अक्षर, शब्द, चरण एवं छंद-अनुबंध में गुंथकर पाठक का कंठहार बनते हैं। इस दृष्टि से ओम प्रकाश प्रेमी के जीवन और व्यक्तित्व से मेरा जुड़ाव सन् 1958-59 ईसवी से रहा जब हमारी भेंट जोगिंद्रनगर के विश्राम-गृह में हिंदी के लिए साक्षात्कार के समय हुई। वहां उस समय दो ओम प्रकाश नामक अभ्यर्थी थे। एक थे ओम प्रकाश शर्मा नादौन से और एक थे ओम प्रकाश प्रेमी पपरोला से। तब से लेकर उनकी जीवन यात्रा के अंतिम पड़ाव तक मेरा स्नेह-संबंध बना रहा। यह संबंध शनैः-शनैः दृढ़ ही होता गया। साहित्य की गलियों से होते हुए हम पारिवारिक बंधनों में बंधे और उसका निर्वहन भी सफलतापूर्वक हुआ। उनसे मिलने और अनुभव साझा करने पर विदित हुआ कि वे दुखों, संकटों, अभावों, संघर्षों, विद्रूपताओं और विसंगतियों के थपेड़ों में जन्मे-पले और बढ़े हैं। जन्म के पश्चात् मातृविहीनता का दुख, पिता द्वारा पालन-पोषण, बाद में दफ्तरी की चतुर्थ श्रेणी की नौकरी। किंतु उनके अंतर का एक जुझारू व्यक्ति कुछ अलग से कर पाने के लिए लालायित और संघर्षरत रहा। यही कारण है कि प्रभाकर पास करने के पश्चात् ओ.टी. का प्रशिक्षण लिया और फिर- धीरां-धीरां ठाकरा धीरां सब कुछ होय- के मंत्र को चरितार्थ करते हुए एम.ए. तक की शिक्षा व्यक्तिगत प्रयासों के बलबूते पर करके प्राध्यापक पद से सेवानिवृत्त हुए। वे इससे आगे बढ़ने की ललक रखते थे किंतु भाग्य और परिस्थितियों ने साथ न दिया और उनकी निर्धारित मंज़िल उन्हें नई तड़प से आपूरित करती रही। यही सब तड़प, पीड़ा, लालसा आदि संकल्प-विकल्पों के रूप में प्रत्यावर्तित होकर उनकी कविताओं में दुख-दर्द, पीड़ा-क्रंदन, मर्म-वेदना, निराशा-हताशा, आक्रोश-विद्रोह और व्यवस्था परिवर्तन का शंखनाद बनकर उनकी कविता-सरिणी में प्रवहमान हुए।

प्रेमी जी के जीवन के सभी अभाव उनके पिता पुरोहित शांतिनाथ जी की पालन-पोषण की अक्षय-क्षमता और अनन्य स्नेह के कारण कभी आड़े नहीं आए, विपरीत इसके वे अपने पिता

जी के प्रति उनके जीवन के अंतिम क्षण तक कर्त्तव्योन्मुख रहे। 'आशा किरण' काव्य संकलन का समर्पण भी अपने पिताजी के नाम निम्नलिखित रूप से हुआ है- "पूज्य पिता श्री शांति नाथ जी के चरणों में समर्पित, जिनके स्नेह ने मां के स्नेह की कमी को खलने न दिया।" बचपन से मां का अभाव, घर की विपरीत परिस्थितियां, चतुर्थ श्रेणी से व्यवसाय का प्रारंभ, आगे बढ़ने का संघर्ष, मंज़िल पर पहुंचकर मंज़िल बढ़ा लेने का स्वभाव आदि ने मिलकर उन्हें आजीवन संघर्षशील, जुझारू और विद्रोही बना दिया। प्रतीत ऐसा होता है कि जीवन की यही विसंगतियां प्रेमी को प्रेम पाने के लिए तड़पता प्रेमी बनाकर छोड़ गई। प्रेमी के जीवन के ये सभी खट्टे-मीठे अनुभव उनके काव्य के ताने-बाने एवं कथ्य के आधारभूत संदर्भ बने और समय-समय पर शब्दों में ढलकर क्षणिकाओं, लघु कविताओं, मझोली और लंबी कविताओं में आकार पाने लगे।

प्रेमी जी के मरुस्थली जीवन में उनकी पत्नी श्रीमती आशा, जब गंगनहर के रूप में अवतरित हुईं तो ऐसा लगा कि बहार आ गई हो। आशा की यह किरण उनके रुखे-सूखे जीवन को अपने प्रेम-प्यार से पोषित, अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित और फलित करती है। यहीं से 'आशा किरण' के प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अनेक पक्ष संदर्भायित होते हैं। 'आशा किरण' काव्य संकलन की कविताओं में प्रेमी जी के जीवन, व्यक्तित्व, कृतित्व, सफलताओं, विफलताओं एवं राग-विराग संबंधी कई कोण उजागर होते हैं। 'आशा किरण' जहां एक काव्य-संकलन का शीर्षक है वहां यह शीर्षक प्रेमी जी के जीवन में आशा की किरण बनकर आई अपनी पत्नी 'आशा' के प्रति मौन कृतज्ञता ज्ञापित करने का अचूक एवं अमर प्रयास भी है। वास्तव में प्रेमी जी का जीवन, आशा और कविता सभी आपस में ऐसे घुलमिल गए हैं कि संयुक्त और सामूहिक रूप से प्रेमी जी की कलात्मक प्रतिभा का आलंबन पाकर कविताओं में ढलकर 'आशा किरण' में साकार हो गए!

जीवन के आरोह-अवरोह में प्रेमी जी ने जो कुछ देखा-भाला, जांचा-परखा, जीया-भोगा और पाया-खोया वह सब स्वाभाविक रूप से काव्यांजलि के समाज को भेंट कर दिया। जीवन में टकराव, संघर्ष, चुनौतियां, प्रतिस्पर्द्धाओं, ठोकरों, हताशाओं का पूरा चिट्ठा 'आशा किरण' में लगभग प्रकट हो गया है। 'आशा किरण' पुस्तक को जैसे ही खोला तो जहां प्रेमी जी के छायाचित्र में उनके संग गुज़ारे हुए सारे क्षण फिल्म की रील की भांति क्षण-अनुक्षण मानस- पटल पर अंकित होकर अनुभूत हो गए

वैसे प्रेमी जी उस धातु के बने हुए व्यक्ति थे जो मात्र स्वयं के उत्थान में विश्वास नहीं रखते अपितु सामाजिक विकास, सरोकार और सभी प्राणियों की प्रोन्नति के लिए सहायक ही नहीं बनते अपितु मर मिटते थे। उनके नामानुरूप व्यक्तित्व जिस किसी के संपर्क में आता, अपना बनाए बिना न रहता। किसी का प्रेम पाने और प्रेमदान करने में वे तन, मन, धन सभी कुछ न्योछावर करने को तत्पर रहते। उनके निर्लेप जीवन में त्याग की भावना की पराकाष्ठा थी। 'घर फूंक तमाशा देखने' की उक्ति उन पर चरितार्थ होती है। ये सारी बातें हिंदी-हिमाचली भाषा के उत्थान के संदर्भ में चरितार्थ होती हैं।

सन् 1959-60 ईसवी में जब कांगड़ा अविभाजित पंजाब का अनुभाग था तो अपने मित्रों के साथ मिलकर हिंदी साहित्य संगम और तरुण परिषद का गठन किया। उस समय वे जी.ए. हाई स्कूल कांगड़ा में अध्यापक थे। डॉ. शालिग्राम, प्रिंसिपल रत्न लाल मिश्र, पंडित पद्म नाभ त्रिवेदी और इन पंक्तियों के लेखक ने मिलकर जब साहित्यिक आयोजनों की शुरुआत की तो उसी समय नेरटी से गौतम व्यथित भी पंडित चुन्नी लाल प्रभृति साहित्यकार संगी-साथियों के साथ आ जुड़े। इस साहित्यिक अनुष्ठान में पंडित पद्मनाभ त्रिवेदी का एकांत योगदान स्मरणीय रहेगा। यह वह समय था जब दैनिक वीर प्रताप के संपादक-मंडल के सदस्य सर्वश्री विश्वनाथ आचार्य और संतोष आचार्य का वर्चस्व था। संतोष आचार्य एक समर्पित संगठक थे जिन्होंने दैनिक पत्र के अवलंब से कांगड़ा में प्रेमी जी द्वारा चलाई जा रही गतिविधियों को यथेष्ट रूप से प्रोत्साहित किया। यहीं से साहित्यिक गतिविधियों का सूत्रपात ही नहीं होता प्रत्युत् कांगड़ा में लेखन और मंचन की प्रचुर सुविधा भी मिलने लगती है। साहित्य-रचना में नए-नए लोग जुड़ते गए और कारवां आगे-आगे बढ़ता गया। इस दृष्टि से पर्वतीय भू-भाग में साहित्य-सृजन एवं साहित्यिक गतिविधियों के प्रोत्साहन में प्रेमी जी का अग्रणी अवदान है। यही नहीं, यहीं से प्रेमी जी के काव्य-विधान की भी शुरुआत होती है, जो निरंतर आगे बढ़ती है। बाद में वे हिमाचली भाषा में भी उसी लगन, उत्साह और समर्पण भाव से लिखते रहे। 'स्वाद बखरे-बखरे' में प्रेमी जी का हिमाचली-कवि मुखर हुआ। अभावों और विसंगतियों के जीवन से दो-चार होते हुए भी उन्होंने पुस्तकें प्रकाशित करवाकर अपनी भागीदारी दर्ज कराई। वे बहुभाषी और बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे।

जीवन के आरोह-अवरोह में प्रेमी जी ने जो कुछ देखा-भाला, जांचा-परखा, जीया-भोगा और पाया-खोया वह सब स्वाभाविक रूप से काव्यांजलि के समाज को भेंट कर दिया। जीवन में टकराव, संघर्ष, चुनौतियां, प्रतिस्पर्द्धाओं, ठोकरों, हताशाओं का पूरा चिट्ठा 'आशा किरण' में लगभग प्रकट हो गया है। 'आशा किरण' पुस्तक को जैसे ही खोला तो जहां प्रेमी जी के छायाचित्र में उनके संग गुज़ारे हुए सारे क्षण फिल्म की रील की भांति क्षण-अनुक्षण मानस-पटल पर अंकित होकर अनुभूत हो गए तो वहां 24 मई, सन् 1990 ईसवी को उन्हीं के हस्ताक्षरों की लाल स्याही में अंकित- श्रद्धेय

प्रिय पीयूष जी को सप्रेम भेंट- मिली। लगभग अढ़ाई दशक के अंतराल में 'आशा किरण' का पूर्णरूपेण आद्यंत कारणवश पारायण करना मेरा सौभाग्य था और अपने परम स्नेही सहयोगी-कवि की रचनाओं को समीक्षा-बुद्धि से देखने का डॉ. गौतम व्यथित का कारण हो जाना। अस्तु!

'आशा किरण' में कुल पचास कविताएं संगृहीत हैं। आशा किरण की प्रथम कविता 'आशा किरण' शीर्षक से है जो कवि के जीवन-दर्शन का सही और सपाट चित्र उकेर देती है। कवि प्रार्थना-स्वर में याचना करता है- मन की मरुस्थली में/ जब कभी/ आशा किरण प्रस्फुटित हुई/ नई प्रेरणा बनी/ मधुर मंजुल स्नेह सिंचित हो/ मां वीणा वादिनी/ जो दर्द, जो कराह/ शब्द रूप ले अंकुरित हुई। जिसने अव्यक्त वेदना को/ वाणी दी अंग, प्रत्यंग को झंकृत कर/ अश्रु प्रवाह से व्यथा धोती/ चेतना द्वार खोलती/सुधियों की लौ से चमत्कृत हो/ वासंती प्रभा से अलंकृत हो।" और अंत में मां सरस्वती के श्रीचरणों में श्रद्धावनत होकर कवि प्रार्थना करता है- "मां, वरद मधुहास से/ पल्लवित-पुष्पित कर/ आशा किरण को नित प्रसाद सौरभ दो।"

'आशा किरण' में क्षणिकाएं, लघु कविताएं, मझोली कविताएं और लंबी कविताएं संकलित हैं, जो कवि की भाव संवेदनाओं और परिस्थितियों के अनुसार अपना रूपाकार ले लेती हैं। कहना न होगा कि कवि यत्र-तत्र-सर्वत्र आशा-निराशा की उत्ताल तरंगों के आरोह-अवरोह में उतराता-डूबता नज़र आता है। यदि आशा की उत्ताल तरंग भाव से कविता का प्रारंभ होता है तो वह जीवन-यात्रा के थपेड़ों में लाचार होकर निराशा के अंतराल में तिरोहित हो जाती है। शायद कलाकार की यही नियति हो। कला के प्रति सुखद संवेदनाओं का यों प्रकटीकरण होता है- "तुम कला हो/ तुम निष्प्राण में चेतना भरती हो/ तुम्हारी छवि दिव्य है/ तुम सत्यं-शिवं-सुंदरम् की/ सजग कल्पना हो/ ... दिल की बात कह जाती है/ टूटे सपनों की/ विशृंखलित माला को/ स्वर्णित स्वप्निल धागों में/ गूंथ देती हो/ निखारती हो/ सुषुप्त कलियों को/ उन्हें सुवासित करती हो/ अपनी दिव्य ज्योति प्रभा से।" अगले ही क्षण अन्य कविता में अवसाद भाव किस प्रकार निराशा के धुंधलकों में बिखर जाते हैं, देखिए, "भोले प्राणी, तेरे प्राण/ जिनमें प्रश्नचिन्ह हैं। दूसरों के लिए प्राण हीन हैं।/ ... तून इनमें घुल घुलकर कब तक जिएगा/ यह छलना तेरे जीवन विटप को/ नहीं सींच पाएगी। ... इसलिए अच्छा है, समय रहते/ तू अपनी लालसाओं का/ खुद ही गलाघोंट दे/ तू अपनी फरयादी आंखों को बंद कर ले। कंपित होठों को स्वयं ही सी ले/ ताकि और अधिक/ खारा जल न पीना पड़े।"

प्रेमी जी की अधिकतर लंबी कविताएं कथा-कहानी-नुमा हैं। वे जीवन की व्यथा-कथा की कई अनुग्रंथित लघु कथाओं को कविताओं में बुनती हैं। यही नहीं, जब छोटे-छोटे बिंदु कवि के मानस-पट पर चुभन का अहसास करवाते हैं तो वह क्षणिका बनकर प्रकट होते हैं। आधुनिक विकास पर तीखा व्यंग्य करते हुए अंधेरे को नए मुहावरे के रूप में इस प्रकार प्रकट किया है- "जब अनायास मुख से निकल गया/ दीपक तले अंधेरा/ तत्काल टोक दिया, और बोले, चुप/ अब लाटू जलते हैं। रोशनी नीचे/ अंधेरा ऊपर हो गया है।"

कवि दूसरों को प्रेरणा देकर स्वयं निराश हताश है। मन की प्रताड़ना, रोष, हताशा, निराशा, आक्रोश, दुख, संताप, पीड़ा, विडंबना, तड़प, प्रताड़ना और आत्म-वंचना से नित्य दो-चार होना पड़ता है। यह क्रम प्रत्येक उस व्यक्ति का है जो पिछड़ा और भाग्य का मारा हुआ है। ऐसे लोगों की जान-प्राण की किसे चिंता है? उसकी आशाओं और लालसाओं को तो नित्य मुर्झाना होगा। 'तेरे प्राण' शीर्षक कविता का मुखड़ा यों उभरता है- "भोले प्राणी, तेरे प्राण/ जिनमें प्रश्न चिन्ह हैं/ दूसरों के लिए प्राण हीन हैं/ कब तक खोखले विश्वासों की छद्मी छाया में अपने प्राणों की सुरभि बिखेर सकेगा।... इसलिए अच्छा है- समय रहते/ तू अपनी लालसाओं का/ खुद ही गला घोंट दे/ तू अपनी फरयादी आंखों को बंद कर ले/ कंपित होठों को स्वयं ही ले/ ताकि और अधिक खारा जल न पीड़ा पड़े।" बेचारगी और लाचारगी में प्रत्येक प्राणी की यही स्थिति और दशा होती है कि उसे मन मार कर रह जाना पड़ता है। सर्द आह भर मन को मसोस लेना ही नियति है।

'आशा किरण' की कविताओं का भाव और कथ्य जहां मरुस्थली चिंतन की उपज है वहां उनका छंद-विधान भी अतुकांतक और सपाट है। सीधा-सादा, रुखा-सूखा, गद्यात्मक और रणनात्मकता विहीन। अवसादी जीवन-कथा गद्यात्मक हो गई है, यही कारण है कि स्वच्छंद होकर बिना किसी तुक ताल और लय के अधिकतर कविताएं कहानीनुमा हैं। नाटकों में प्रयुक्त होने वाले स्वगत-कथनों की भांति कवि स्वयं से मुखातिब होकर निजी पीड़ा को समष्टिगत रूप में अभिव्यंजित करता है। सांसारिक वंचनाओं और प्रताड़नाओं से जब-जब, रचनाकार बिंध-बिंध जाता है तो उसके जीवन में 'आशा किरण' के रूप में प्रकट हुई दिव्य-ज्योति का आंचल ही सुखद आभासों की जननी बनता है। प्रताड़ित, पीड़ित, खंडित और भंजित मन कह उठता है- "तुम ज्योति हो/ आश किरण हो/ नवजीवन दायिनी हो/ तुमने मृत आशाओं को पुनर्जीवित किया है/... तुम्हारी वासंती प्रभा ने/ शिशिर के घुटते दम को/ नए प्राण दिए हैं- नई चेतना दी है।" और मरुस्थली जीवन का यह पथिक आखिर थक-हार कर मान ही लेता है- "पथिक सिर रखे- श्रमहीन होना चाहता है/ तुम करुणा द्रवित हो सहलाती हो/ तब स्नेह अश्रुओं से/ हृदय वेदना धुल जाती है/ मन निर्मल हो जाता है।"

प्रेमी की कविताओं में प्रायः सामाजिक विद्रूपता और विरोधाभासी रूप यत्र-तत्र देखने को मिलते हैं। कवि जीवन के

थपेड़ों से निराश हताश और शुष्क मना हो चुका है। उसके जीवन में जैसे रसविहीनता है। हर बार हताशा ही हाथ लगती है। अपने चारों ओर ढोंग, छल, कपट और बेईमानी देखकर वह दुखी हो उठता है। यहां तक कि भक्ति के नाम पर धर्म के ठेकेदार और राजनेता भी राजनीति करने से नहीं चूकते। यथार्थ में इस प्रकार के नंगे नाच देखकर वह भक्त की भक्ति को उपमान बनाकर व्यंग्य करता हुआ कहता है : "भक्त नहीं जिसे/ तप, त्याग की आवश्यकता/ न व्रत उपासना की लालसा/ पर, जानता है शाही महल का अंदाज़/ सब विधि-विधान सब पथ निज अहं की बलि देना/ नित्य कर्म का प्रमुख अंग/ अनधिकार को अधिकार मान/ वंदनीय की वंदना कर/ निज उल्लू सीधा कर लेने में ही/ अपनी भक्ति को/ पुनीत व सार्थक करता है।"

'आशा किरण' का कवि अभाव भरे जीवन में प्रेम पाने के लिए आतुर, आकुल-व्याकुल है। उसे जहां कहीं तनिक मात्र अपनत्व एवं अपनापन मिलता है, वह अपना तन, मन, धन और प्राण तक न्योछावर करने को उद्यत हो जाता है। किंतु जीवनानुभवों से- अंततः सक्षता, शुष्कता, धोखा, प्रवंचना ही हाथ लगते हैं/ तभी तो 'अपनापन' की परिभाषा यह बनती है- "अपनापन क्या है/ बस स्वार्थ है/ एक झोंका वायु का , आया और गया।" सांसारिक स्वार्थपरता, भ्रष्टाचारी छीनाझपटी और भौतिक लोलुपता का इतना अधिक पसार हो गया है कि तप, त्याग, संयम, दया, दान और भक्ति के लक्षण ही बदल गए हैं। अपने सामने यह सब घटित होता देखकर प्रेमी का कवि-हृदय भक्ति, आस्था और विश्वास की यों खिल्ली उड़ाता है : "भक्ति इतनी- अस्तित्व इतना/ आत्मविश्वास- आत्मशक्ति हीन/ सत्ता ईश्वर की खोखली लगती/ नहीं भरोसा उस पर/ विश्वास है- उस आराध्य देव पर/ जिसकी स्तुति में जय-जयकार से/ आत्म गौरव श्लाघा का/ स्रोत प्रस्फुटित होता है/ और निज स्वार्थ को सींचता है/ भले ही ग्रास, किसी मुख का/ क्यों न छीना जा रहा हो।"

एक अन्य क्षणिका 'चाटुकार' का शब्द चित्र देखे बनता है- "अंगड़ाई ली/ और चांद को देखकर बोले/ सूरज चमक रहा है/ चाटुकार ने स्वीकृति दी, और कहा/ धूप तेज़ है- पसीना बह रहा है।" चंद पंक्तियों में हृदय पर अमिट प्रभाव छोड़ जाने की क्षमता रखने वाली यह कविता स्वयं में पूर्ण होकर पाठक के मन को विभिन्न आयामों में सोचने पर विवश कर जाती है।

आज का मानव स्वयं में सिमटता जा रहा है। आत्मनिष्ठ होकर अपने स्वार्थ को साधने की धुन में मस्त रहकर वह कुछ भी भला-बुरा कर गुज़रने से नहीं चूकता। मानवीय संबंध विखंडित होकर तार-तार होते जा रहे हैं और रिश्ते-नाते रिसने लग गए हैं। यहां तक कि खूनी संबंध भी ठंडे पड़ने लगे हैं तथा निजी स्वार्थ और अपना हित साधने की भावना मानव मनों में दरारें पैदा कर रही है। दिलों की दूरियां आपसी वैर और वैमनस्य में निमज्जित होकर एक-दूसरे पर अपना प्रभुत्व जमाने की होड़ में अंधी सुरंगें बनती जा रही हैं। कवि द्वारा ऐसी दूरियों की सटीक व्यंजना का आनंद लीजिए : "दूरियां, मानव और मानव के बीच/ निरंतर बढ़ रही हैं/ चाहना निकटता की खाई को/ और काट-काटकर चौड़ा कर रही है/... संभावनाएं परस्पर मिल पाने की/ निरंतर धूमिलतर हो रही हैं/ और यदि कोई आश-किरण/ उनके मिलाने का प्रयास करती है/ तो उस पर भावावेश का कोहरा/अपना प्रभुत्व जमाता है।"... प्रेमी की कथात्मक कविताओं में तो यत्र-तत्र-सर्वत्र हल्के-फुल्के, छोटे-छोटे और कभी-कभी पूर्णाकार शब्द चित्र साकार हो उठते हैं। ऐसे अवसरों पर कवि अपनी वाणी को चलंत एवं सटीक मुहावरों की जड़त से शब्द सौंदर्य व अर्थवत्ता को तीव्रता प्रदान करता चलता है। एक उदाहरण देना अन्यथा न होगा : "यादें/ जो अंकित हैं- मानस पटल पर/ भुलाना चाहता हूं/ बरबस और अधिक चिपट जाती हैं सीने से/ सालती हैं/ हलचल-सी उत्पन्न करती है/ शांत हृदय-तल में" अन्यत्र सूनापन है/ तम है कहीं कोई ज्योति नहीं/ जो अमावस के अंधेरों को/ गमों को निगल सके- बहला सके/ बेबसी के आलम को एकाकीपन दहलाता है- सालता है/ ...और बहारों का गदराया जिस्म फूलता है/ मदमस्त हो मदहोशी का जाम पीता है/ बहकता है- चहकता है/ एकाकीपन का सूनेपन का उपहास उड़ाना उसे रास आता है।"

कवि की यही पीड़ा उसका पुष्ट जीवन-दर्शन बनकर उसकी 'अपनी बात' में यों प्रकट हुई है- "अपनी अस्पष्ट-सी होती जाती है/ जीवन के हर मग में, हर पद में यही अनुभव होता है कि कहीं कोई कमी अवश्य है जिसके कारण सीधी सरल बात भी समझ से परे होती जाती है/ ... स्वार्थ की कहां किससे पूर्ति होती है, यही एक आकर्षण है, जहां खिंचा जा रहा है आज का आदमी/ दौड़ लगी है रौंदे जा रहे हैं, पर दौड़ने वाले को यह महसूस नहीं होता- बस उसे नाज़ है अपनी पहुंच पर/ ... दूसरी ओर कितने ही पिछड़ रहे हैं/ ... अंधेरों को बदनाम करना एक पुरानी रीत है- शायद अंधेरों में कुछ होता रहा होगा, पर उजालों में क्या कुछ नहीं हो रहा?" कवि-मन जीवन में पग-पग पर मिली ठोकरों से त्रस्त होकर आपबीती को एक कविता में इस प्रकार बयां करता है करता है- "ठोकरें, ठोकरों को/ जो समय-असयम खाई हैं/ ज़िंदा कर रही हैं/ घावों को, जिन्हें सोचा था/ भर पाएंगे/ वासंती मल्हम से/ हरे हो रहे हैं/ सहसा रिस-रिस जाते हैं छलनी हृदय अनायास/ ...नमक छिड़काव रिसे घावों को/ लहूलुहान कर देता है/ ज़िंदा रहने के लिए कहीं कोई दवा मिलती नहीं।"

प्रेमी के जीवन की ठोकरों ने उन्हें त्रासदी का रचनाकार बना दिया है। अधिकतर उनकी कविताएं असफलता, निराशा, हताशा, पीड़ा, क्रंदन और लहू-लुहान जुझारू मानव की मुंह बोलती तस्वीरें हैं। प्रतीत तो यह होता है कि कवि के जीवन की विसंगतियों ने उसे पीड़ा का कवि बना दिया है। उसके मन में अनेक प्रकार की

ग्रंथियां बन गई हैं जो समय-समय पर सुलझते-सुलझते भी यों उलझ जाती हैं कि वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर जैसे नियति का मुंह ताकता रह जाता है। हमारे इस कथन को साकार करती हुई उनकी कविता की चंद पंक्तियां प्रस्तुत हैं : "जीवन, निराशाओं का पुंज बन गया है। अनेकानेक ग्रंथियों में बंध गया है/ इसमें कहीं कोई ज्योति नहीं/ यदि भूले से/ कहीं पूर्वांचल से/ आशा किरण उदय हुई भी/ तो संशय के घने मेघों ने/ उसे ढक लिया।" जैसे कवि का मन किसी अप्रत्याशित भाग्य की होनी अथवा अनहोनी घटना से भयाक्रांत हो उठता है और बुदबुदाता है : "असफलताओं के व्याल, चतुर्दिक डसने लगे/ धमनियों में आक्रोश भरा/ शिराओं में बहता रक्त, विषाक्त हो गया/ स्वार्थ की विषैली पवन समाज में व्याप्त हो/ मानव को मानव से पृथक कर रही है।" कवि का निजी संताप, पीड़ा, दुख, वेदना, विफलता, निराशा आदि महाप्राण निराला के उस कथन का स्मरण दिलाते हैं जहां वह आत्महंता बनकर चीख उठते हैं : "दुख ही दुख की कथा रही क्या कहूं आज जो नहीं कही।" वैसे प्रेमी का निजी दुख समष्टि में विलीन होकर जन-जन के मन की बात बन जाता है।

प्रेमी का काव्य संसार अधिकतर अतृप्ति, रोष, दोष और शोष का काव्य है। उसके शब्दों और बोलों में निर्धन, पिछड़ों, शोषित, भाग्यहीनों, असफल प्राणियों, ठोकर खाए इनसानों और उठा-पठकी समाज के नियंताओं के हाथों पिसने वाले लोगों की व्यथा-कथा है। वह सामाजिक छल, प्रपंच, धोखाधड़ी, लूटपाट और भ्रष्टाचारी लोगों के दबदबे से दुखी है। यही कारण है कि वह पीड़ितों और प्रताड़ितों का अधिवक्ता-रचनाकार है। जहां एक ओर वह सामाजिक विसंगतियों से दुखी है, वहां दूसरी ओर जुगाड़ू- संस्कृति के पक्षधरों का बोलबाला उसे निराश, हताश और खिन्न ही नहीं करता प्रत्युत् वह ऊहापोहात्मक स्थिति में जैसे फफक उठता है : "मैं प्रतीक्षा में बैठा/ गुज़रते क्षणों के उलझाव में उलझा/ सोच के ताने-बाने बुनता जाता/ क्या कहीं कोई मंज़िल नहीं?/ बिना ठोर तक पहुंचे, जीवन नहीं/ अधूरे जीवन का बोझ ढोता जाता/ कई बार गंतव्य पर पहुंचकर देखा/ मंज़िल खिसक गई है।" यही तो कवि से भाग्य की विडंबना है कि मंज़िल के पास पहुंचकर भी मंज़िल खिसक जाती है और वह हाथ मलता हुआ निरीश्वरवादी बनने लगता है।

प्रेमी का काव्य संसार अधिकतर अतृप्ति, रोष, दोष और शोष का काव्य है। उसके शब्दों और बोलों में निर्धन, पिछड़ों, शोषित, भाग्यहीनों, असफल प्राणियों, ठोकर खाए इनसानों और उठा-पठकी समाज के नियंताओं के हाथों पिसने वाले लोगों की व्यथा-कथा है। वह सामाजिक छल, प्रपंच, धोखाधड़ी, लूटपाट और भ्रष्टाचारी लोगों के दबदबे से दुखी है। यही कारण है कि वह पीड़ितों और प्रताड़ितों का अधिवक्ता-रचनाकार है।

यह नहीं कि प्रेमी का कल्पनाशीलता और रोमानी कवि एकदम निर्जीव हो गया हो। कहीं कभी-कभार मन के अतलांतक सागर में प्रेम, आनंद, रोमांस और सतरंगी कल्पनाएं भी जगती हैं और वह अनायास प्रकृति और पुरुष के ताने-बाने पर नाज़ भी करने लगता है। आनंदविभोर होकर कल्पनाशीलता से कुछ नया सुनता है, गुनता है और बुनता है। वह जब कभी बचपन की स्मृतियों में खो जाता है तो कवि की कल्पनाशीलता नई-नई उपमाओं, तुलनाओं, प्रतीकों और बिंबों का आश्रय लेकर तुकांत हो जाती है। सौंदर्य वर्णन और आनंदविभोरता में छंदमय, लयमय, गतियुक्त और विशिष्ट हो जाना तो होता ही है। वह एकदम सहज और भावविभोर होकर बचपन का ऐसा चित्रकार बनकर उभरता है कि जैसे आनंद सागर में तिर रहा हो। निराशा में भी नई आशा का संचरण होने लगता है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियां दर्शनीय हैं... "खो गया संसार जिसका/ मिट गया हो चाव जिसका/ चाह तो लुट गई/ आह तो मिट गई/ उस अबोध बालिका सी/ जो अभी खेलती थी/ भावना से थी अकेली/ बन गई थी जो पहेली/ ... उस अबोध बालिका सी/ जो खेलती थी, धूल में, धूप में/ घर बनाती ब्याह रचाती/ एक गुड़िया के लिए/ सर्वस्व जिसने था दिया...।"

दूसरी ओर अंकुरित लालसाओं की यह भाव व्यंजना भी कितनी सुंदर है, "ज्योति बढ़ी/ अंधेरों में नए अरमान जगे/ अंकुर लालसा के/ अंगड़ाई ले उठे/ सुमन आशाओं के खिले/ प्यार की बांहों ने अनायास/ मायूसियों से बाहिर निकल/गलबहियां डाल आलिंगन किया।"

जब कभी कवि मन निजी व्यथाओं से बाहर निकल कर मानवीय उपलब्धियों पर दृष्टिपात करता है तो सहज ही उसकी कृतियों, रचनाओं और सफलताओं पर नाज़ करता हुआ, जैसे तुमुल ध्वनि से जयघोष करने लगता है। यथा : "मानव, तुम/ सुंदर, सुंदरतम हो/ तुम्हारी महिमा के गान/ बीते समय की स्वर लहरियों में निरंतर गूंजे हैं/ तुम गुण निधान, गुणहा हो/ तुम सृष्टि होकर भी स्रष्टा हो/ ...तुमने भगवान को बस में किया है/ तभी उसकी असीम आशीर्ष/ असीम स्नेह मिला है/ तुम महान, महानतम हो/ गूढ़ रहस्यों के ज्ञाता/ उनके संपादक हो/ तुम्हीं ने विश्व को/ जीने की कला सिखाई...।"

जब-जब कविवर प्रेमी को जीवन की मरुस्थली के घाम-ताप ने प्रताड़ित, उद्वेलित और व्यग्र कर दिया तब-तब वह जीवनदायिनी मातृतुल्या प्रकृति के आंचल में सिर धरकर आनंद, परितोष और संतोष के सुख सागर में डूब जाता है, निमग्न हो जाता है। और फिर नई ऊर्जा से ओत-प्रोत होकर अबाध गति से जीवनदायिनी प्रकृति नटी का अप्रतिहत गुणगान करते-करते

थकता नहीं/ उदाहरण देना समीचीन प्रतीत होता है : "तुम प्रकृति हो/ नव जीवन दायिनी मां हो/ तुमने मृत आशाओं को इनमें नए विश्वासों को प्रस्फुटित कर/ अपनी शुभ्र ज्योत्सना से सींचा है/ स्नेहिल स्निग्ध किरणों से प्राणों में नव स्पंदन भरा है/ तुम्हारी वासंती प्रभा ने/ शिशिर के घुटते दम को/ नए प्राण दिए हैं, नई चेतना दी है/ तुम्हारे मुग्धकारी हास ने तामसिक रोदन में स्वच्दंद हास भर दिया है।"

प्रकृति के सौंदर्य, सुषमा, निखार, आकर्षण, प्रेरक स्वरूप और सुखदायिनी छटा से कवि इतना अभिभूत है कि उसे वह मातृस्वरूपा बनकर न केवल अहैतुकी आशीर्वचन देती है प्रत्युत् उसके अंतस् के समस्त विकारों को मिटाकर नित नवीन प्रेरणादायक स्फूर्ति से आप्लावित भी कर जाती है। हमारे इस कथन की पुष्टि कवि की ये पंक्तियां करती हैं : "इसकी ज्योतिकिरण ने/ मन में ज्योत्सना दी है/ नैनों में करुणाद्युति से/ उजड़ी सुनसान बस्ती में/ नई बहार लाई हो/ जब तुम्हारे सुखद आंचल में सिर रखे/ तुम करुण द्रवित हो सहलाती हो/ तभी अश्रु प्रवाह में/ हृदय वेदना धुल जाती है।"

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि ओम प्रकाश प्रेमी का काव्य-संसार न केवल उसके जीवन एवं व्यक्तित्व के संघर्षमय क्षणों से उभरे जीवन-दर्शन में निमज्जित होकर पीड़ा, वेदना, आत्म वंचना, प्रताड़ना, सफलता-विफलता, निराशा, हताशा, आक्रोश और विद्रोह की वाणी बनकर अजस्र रूप से अभिव्यक्त होता रहा प्रत्युत् रचनाकार स्वयं भी जीवन और जगत के धरातल पर अपने जीवनादर्शों के लिए जीवन पर्यंत संघर्षरत रहा।

अपर्णा-श्री, हाऊसिंग कॉलोनी, चीलगाड़ी, धर्मशाला, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 215, मो. 94180 17660

डॉ. रामदत्त शर्मा की बाल कविताएं

बगीचे की सैर

यह देखो, कैसा बगीचा, मार्ग है इसका कच्चा।
यह है फूलों की डाली, पूरब में छाई लाली॥
सूरज की निकली थाली, क्यों बजा रहे हो ताली।
कस्बे का बच्चा-बच्चा॥ यह देखो...॥

यह देखो बगीचे वाले, बह रहे पानी के नाले।
यह है मकड़ी के जाले, कोयल तू गाने गा ले।
बंदरी का बच्चा नाचा॥ यह देखो...॥

यह है पुष्पों की क्यारी, सब रंग रूप में न्यारी।
मिलती है यहां तरकारी, लाने की करो तैयारी॥
यह केला तो है कच्चा॥ यह देखो...॥

फूल रही है डाली-डाली, फूलों की छटा निराली।
यहां देखो यह हरियाली, पौधे सींच रहा है माली॥
यह वृक्ष है कितना ऊंचा॥ यह देखो...॥

मोर है नाच रहे मतवाले, हिरणी ने बच्चे पाले।
हे दुनिया के रखवाले, घर को जा रहे ग्वाले॥
यह हरा भरा है गलीचा॥ यह देखो...॥

बनो तो बनो

बनो तो
बनो
सच्चे
विद्यार्थी बनो
मत बोलो
विद्या को
मनों-मनों
अपार है
भंडार ज्ञान का
विनय से
सनो
बनो तो
बनो
परमार्थी
आज्ञाकारी
परोपकारी
धर्माधिकारी

परीक्षा

जब वह आती है
आने की सूचना-
पहले से ही मिल जाती है
जब वह आती है।

प्रारंभ से ही दिल को
वह धड़काती है
और हमें मजबूत बताती है
निद्रा से बिलकुल दूर भगाती है
जब वह आती है।

वह जल्दी ही आ जाती है
फुर्ती से ही चली जाती है
ज्ञानी वही हमें बनाती है
माथा सारा खपा जाती है।

जब वह आती है
घरवालों की डांटें सुनवाती है
अध्यापक से संपर्क कराती है
स्व-गांव से दूर भगाती है
पर धन का उपयोग कराती है
जब वह आती है।

तीसरे चौथे महीने में आती है
हम लोगों का गाता कंपाती है
न उसका नाम, न उसकी जाति है
साधारणतः परीक्षा कहलाती है
जब वह आती है।

— — — — —

न तुम
अहंकारी
बनो
बनो भई
भारत के
युवको!
विद्यार्थी बनो।

102, प्रथम मंजिल, पॉकेट-16, सेक्टर-24, रोहिणी, दिल्ली-110 085

कहानी

कोहरा

● **पद्म गुप्त अमिताभ**

वह जाग रहा है अथवा सो रहा है? यह तो वह स्वयं भी नहीं जानता? उसके लिए जागने और सोने की यह स्थिति बरसों से है। बाहर भीतर एक अंतहीन धुंधलका है जिसमें वह अनवरत चल रहा है। एक ऐसी स्थिति जिसमें उसके सारे कार्य कलाप यन्त्रवत् परिचालित हैं।

अभी दो माह पहले ही वह जेल से छूटा है।

पूरे छह महीने जेल मुें रहना पड़ा। जेल जाने का उसका यह पहला अनुभव था। जेल जाने से पहले कई दिनों तक सी.आई.ए. स्टाफ के तहखानानुमा कमरे में उसकी पुलिस वालों द्वारा निर्मम पिटाई होती रही। पीड़ा से बार-बार मूर्छित हो जाता था। यह भी एक प्रकार की तंद्रा ही थी, उसी धुंधलके की एक कड़ी। इसका कारण खोजने के लिए बहुत दूर जाने की आवश्यकता नहीं। नशे की भयानक लत में पिछले कुछ सालों से वह जिस तरह मुब्तिला हो गया था, उसमें वह पिटाई बेखुदी में हाने वाली घटना की तरह है।

अनेक पुलिस वाले शराब पीकार बारी-बारी से मारते थे। वह पहले भी अनेक बार बहुत सी छोटी-मोटी वरदातों में पुलिस वालों के हत्थे चढ़ चुका था। भरपूर ठुकाई होती किन्तु नशे में इतना धुत होता कि उस पिटाई का असर महसूस ही न होता। दो चार दिन पुलिस लॉकअप में रहता, फिर पैंतीस साल की उम्र में ही बूढ़ी लगने वाले उसकी मां, पुलिस वालों के आगे हाथ-पांव जोड़कर अपनी कमाई का एक बड़ा हिस्सा उनके हवाले करके किसी न किसी तरह उसे हर बार छुड़ा ही लाई थी। पैसे की बात जानें भी दें तो घरों में बर्तन मांजने और झाड़ू चौका करने वाली उस काली कलूटी मरियल सी मां की मनुहार से पुलिस वाले हर बार उसके भटके हुए बेटे को छोड़ देते। किन्तु वे अपने अनुभव से जानते थे कि उसके सुधरने की रत्तीभर भी कहीं गुजाईश नहीं थी।

शाहर में सैंकड़ों नशेड़ी थे जो अपने नशे की पुर्ति के लिए निरन्तर चोरियां और छोटे-माटे अपराध करते रहते थे। उनमें से अनेक तो अच्छे परिवारों के पढ़े लिखे लड़के थे जो अपने मोटर साईकलों पर गाहे बगाहे महिलाओं की चेन या कान की बालियां खेंचकर फरार हो जाते। सरकारी नीतियों और अनेक सरकारी व गैर-सरकारी संगठनों के प्रयासों के बावजूद इस दिशा में कोई भी प्रगति कहीं होती दिखाई नहीं देती थी। उल्टे ऐसे लोगों की संख्या प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है।

मां घर ले जाकर कई दिनों तक गर्म ईंटों से चोटों की सिकाई करती, हल्दी डालकर गर्म दूध पिलाती रात-रात भर जागकर उसे सुधर जाने की कसमें खिलाती। उसके पास सिर्फ रात थी दिन तो इस घर से उस घर खटते ही गुजर जाता। मुंह अंधेरे घर से निकल पड़ती और देर शाम तक लौट पाती।

इस बधंन से मुक्ति नहीं थी। बेटे के भविष्य के प्रति कहीं कभी क्षीण सी आशा रही भी हो, उसके वर्तमान व्यवहार से तो उसका ओर-छोर भी न था। अब तो बेटे की कारगुजारियां प्रतिदिन मां के दिन रात खटने की पीड़ा में दर्द का एक नया अध्याय लिख देती हैं।

उसका हर समय नशे में रहना, चोरी करके बार-बार पकड़े जाना, पुलिस चौकी से हर बार छुड़ा कर लाना और फिर रात रात भर जाग कर उसके सिरहाने बैठकर रोना और जागना।

मां के मन की क्या कहें, पुलिस वाले तो अपनी जगह ठीक ही है।

पहले वह चोरी की छोटी-मोटी वारदातों को ही अंजाम देता आया है। कस्बों में रहने वाले जानते हैं कि निर्माणाधीन घरों से लोहे, प्लास्टिक और बिजली का सामान, टोंटियां, हैंडपम्प के दस्ते यहां तक कि लोहे की ग्रिल और रेलिंग आदि का चोरी हो जाना मामूली बात है।

धीरे-धीरे उसका दुस्साहस इतना बढ़ गया कि बसे बसाए घरों में हाथ मारने लगा, जैसे गैस सिलेंडर, पानी की मोटरें आदि। यह कमाल नशे का ही था जिसने उस के सोचने व समझने की शक्ति को कुंठित करके ऐसे समस्त कार्यों के प्रति उसके भीतर एक जड़ता उत्पन्न कर दी। एक सामान्य साधारण व्यक्ति की तुलना में अपराधी की यही संवेदना शून्यता उसके भीतर के भय को किसी गुमनाम तलघर में छोड़कर उसे दुस्साहसी बना देती है। अपराध करते समय उसे किसी प्रकार के परिणाम का बोध नहीं रहता।

इस बार तो उसने बड़ा हाथ मारा था।

कॉलानी के शर्मा जी ने अपने बेटे के लिए नया साईकल खरीदा था। इधर हमारे सोनू को भी मोटर साईकल चलाए बहुत दिन हो गए थे। पुराने शौक ने जोर मारा और एक दिन गेट खुला देख कर उसे उड़ा लिया।

तीन चार दिन तो खूब सैर की, फिर एक दिन ट्रैफिक नाके पर

धरा गया। चोरी के माल के साथ हाथ आए चोर से अगली पिछली चोरियां कुबूलवाना तो पुलिस वालों के बाएं हाथ का खेल है।

सोनू मुश्किल से तेरह चौदह वर्ष का रहा होगा जब उसने मोटर साईकल चलाना सीख लिया था। इससे क्या अन्तर पड़ता है कि दुबले पतले सोनू का कद केवल साढ़े चार फुट था। उन दिनों वह 'ठाकुर एंड सन्' के यहां काम करता था। अब सोनू को पूरा होश होता तो उसे याद रहता के वहां बिताए तीन से ऊपर साल उसके लिए स्वर्ग से कम नहीं थे।

'बेटा कुछ पढ़ लिख जाए। आठ जमात भी पढ़ लेगा तो ठीक होगा'

सरकारी स्कूलों में उस जैसी पृष्ठभूमि के बच्चों के लिए सारी सुविधाएं थी। मुफ्त कॉपी पेंसिल किताब तो मिलते ही थे, वर्दी, दोपहर का भोजन और वजीफा मिलते थे, सो अलग।

किन्तु मां के चाहने से क्या होता है।

व्यवस्था का यही दोष है। मंशा कितनी भी साफ हो, जहां सरकारी योजनाएं होती हैं वहां गड़बड़ हो जाती है। यूं भी जहां टीचरों की मगज खपाई आटा, दाल, सब्जी में हो जाए और स्कूलों में अधिकांश बच्चे केवल भोजन के लालच में आते हों वहां पढ़ाई तो गौण हो जाती है। सोने पे सोहागा यह कि बच्चों की न तो परीक्षा हो, न उन्हें फेल किया जाए।

इधर मां ने किस्तों पर एक टी.वी. खरीद लिया और सोनू की रुचि इस नए खिलौने में हो गई।

एक रात थकी टूटी मां को उसने अपना स्कूल न जाने का निर्णय सुना दिया। यह बड़ी बात नहीं थी कि चार साल स्कूल जाने के बाद भी सोनू अपना नाम भी ढंग से लिखना न सीख सका। महत्वपूर्ण बात यह थी कि सोनू को यह निर्णय लेने में चार साल लगे कि स्कूल अब बहुत हो गया।

स्कूल न जाने वाले अथवा स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की संख्या बढ़ जाती। जिनके छोटे मोटे रोज़गार थे वे अपने पिताओं के साथ उनके धंधों में हाथ बंटाते, चाय वालों, ढाबों या हलवाइयों के पास खप जाते। बालश्रम कानून जैसे तो हजारों हैं जिनकी रोज धज्जियां उड़ती हैं।

परिश्रम जीवन में किसी लक्ष्य तक पहुंचने का एकमात्र विकल्प है और अपने ध्येय की पूर्ति के लिए किया जाने वाला परिश्रम ही तप। महर्षि व्यास ने अपने चौबीस वर्षीय पुत्र शुकदेव को कहा था, 'तुम्हारी आयु क्षीण हो रही है और जीवन मानों कहीं लिखा जा रहा हैं। फिर तुम उठकर भागते क्यों नहीं हो?' इस सत्य की ओर अधिकांश लोग आंखे मूंदे रहते हैं।

इसी कारण ऐसे बच्चों की संख्या कम नहीं थी जिनके पास जीवन में विकल्प नहीं थे। मां नहीं चाहती थी कि उसका सोनू भी ऐसे निठल्ले बच्चों की भीड़ में शामिल हो जाए।

सोनू दस बरस का हो रहा था। मां स्वयं भले ही लोगों के घरों में बर्तन झाड़ू करती थी, वह नहीं चाहती थी कि सोनू किसी चाय वाले या हलवाई के यहां जूठे बर्तन उठाता, धोता फिरे। जिन घरों में वह काम करती थी, उनमें से एक ठाकुर साहिब का भी था और एक दिन ठाकुर साहिब की बहू को बोल कर उसने सोनू को उनके दफ्तर में लगवा दिया।

अजय ठाकुर का प्रापर्टी का काम था। जहां तहां बैठे दर्जनों प्रापर्टी डीलरों की तरह नहीं, खानदानी अमीर ज़ादे थे और एक बड़ी जायदाद के इकलौते वारिस। उनके दादा बड़े जमींदार थे और इलाके के रईस। पिता जी के जमाने तक बैठक हवेली में होती थी, मुनीम और गुमश्तों के सर पर हुकूमत चलती थी। तीसरी पीढ़ी के अजय ठाकुर ने अपनी ही जमीन पर मुख्य सड़क के किनारे 'ठाकुर एंड सन्' का एक भव्य दफ्तर बना रखा लिया।

एक कोने में सोनू को भी एक स्टूल मिल गया।

घर और दफ्तर की विशेष जिम्मेवारी तय नहीं थी, कभी कभार घर से भी बुलावा आ जाता किन्तु अधिकांश समय दफ्तर में बीतता। दफ्तर खोलकर साफ़ सफाई करना उसी के जिम्मे था। जमीन जायदाद का काम था, बहुत लोग बाग आते जाते रहते थे। मालिक के संकेत पर अथवा उनके सहायक मास्टर जी के कहने पर लोगों के लिए जलपान की व्यवस्था, बर्तन समेटना आदि काम भाग भाग कर करता। मास्टर जी समय से पहले रिटायरमेंट लेकर यहां लग गए थे। नक्शे व जमीन दिखाना, पैमाईश, रजिस्ट्री, इन्तकाल आदि सारे काम वही करवाते थे।

फ़र्म के युवा मालिक का उन पर पूरा भरोसा था। दो बड़ी विवाहित बहनों के अतिरिक्त उस बड़ी जायदाद के इकलौते पुरुष वारिस होने के कारण उनका लालन पालन किसी युवराज की तरह हुआ था और कुंवर होने का यह नवाबी स्वभाव उनके आचार व्यवहार में रच बस चुका था।

दफ़्तर में लग कर सोनू भी खुश था। स्कूल से तो कहीं अधिक यहां मौज थी, यद्यपि काम यहां भी कमोबेश वही था जिससे मां

डरती थी। सोनू के मुफ्त भोजन के बावजूद स्कूल जाने का अनुशासन एक बंधन ही था, बस उस जैसे मैले-कुचैले वंचित गन्धाते, जुओं भरे बच्चों की रेलपेल थी।

अजय बाबू अपनी चमचमाती कार से, चमचमाती इसलिए कि प्रत्येक नई कार उनके लिए छह महीने में पुरानी हो जाती, अपने दफ्तर आकर, सुबह के दो तीन घंटे अपने एअर कंडीशंड कैबिन में व्यतीत करते। एकाध बार साथ वाले कक्ष में फोन करके मास्टर जी को बुलाते, शाम को थोड़ी देर के लिए आते। सोनू कपड़ा लेकर कार चमकाता रहता।

ठाकुर साहिब के दफ्तर में लगना, सोनू के लिए एक प्रकार से वरदान साबित हुआ। मास्टर जी भले आदमी थे, उनके साथ किसी को क्या दिक्कत पेश आती? सोनू दफ्तर के तौर तरीके सीख गया, स्कूल में जो अक्षर ज्ञान वह कई बरस में हासिल नहीं कर पाया, मास्टर जी के साथ रह कर कुछ ही समय में उसने नाम वगैरह लिखना सीख लिया तथा पहले अटक अटक कर और फिर धीरे-धीरे हिन्दी का अखबार भी पढ़ने लगा। खाने पीने की भी मौज था। तीन चार माह में उसके सांवले चेहरे का रूखापन जाता रहा और उस पर रौनक छा गई। उसका काम किसी भी स्तर का हो, वह स्वयं को छोटा मौटा ओहदेदार समझने लगा।

मां तो तब भी खुश थी जब वह चार साल से स्कूल जा रहा था क्योंकि उस जैसी काम वाली के लिए बेटे को स्कूल भेजना बड़ी बात थी। ऐसे बच्चों की संख्या कम नहीं थी जिन्होंने कभी स्कूल देखा ही नहीं था किन्तु अनपढ़ मां यह कैसे जान पाती कि इन चार बरस में बेटा कुछ भी सीख नहीं पाया। उसके ठाकुर साहिब के दफ्तर में लगने पर वह कुछ अधिक आश्वस्त हो गई विशेषकर जब सोनू ने बताया कि दफ्तर में वह अखबार भी पढ़ने लगा है।

बस्ती से हटकर दस बाई दस के क्वाटरों की बस्ती है। कलावती के कमरे के पिछवाड़े छोटा सा शामियाना लगा है।

'आज हमारे सोनू का जन्म दिन है। सब को न्योता दिया है।'

काम वालियां खुश हैं, गरीब बस्ती में नई बात है, किन्तु घर वालियां समझाती हैं, 'कलावती बच्चे की खुशी हमें भी है, पर तुम गरीब हो, पैसा बरबाद मत करो। हमारी मानों तो कहीं पोस्ट ऑफिस वगैरा में जमा करवा दो। तुम्हारे आड़े समय में काम आएंगे।

कलावती को यह बुरा लगा। अगले दो दिन सभी घरों में शिकायत की, 'बीबी जी! हम गरीब हैं, सब हम को बोला, हमारे बेटे का खुसी मत मनाओ'।

जन्म दिन का शगुन तो सभी ने दिया, एकाध घर वाली तो औपचारिकता निभाने उसके घर गई और खाने के नाम बस मुह बटाल (ओठों से छू भर देना) कर लौट आई।

ठाकुर साहिब की अनुपस्थिति में निठल्ले किस्म के लोग भी आ जाते थे। कुछ नियमित आने वाले थे। सोनू का उनसे परिचय बढ़ता जाता था, वह उन लोगों से अन्य बातें भी सीख रहा था। किशोरावस्था में प्रविष्ट हो रहे सोनू के लिए यह स्वाभाविक था।

उसने जल्दी ही मोटर साईकल चलाना सीख लिया था। फिर सिगरेट, शराब और सुल्फा पीना भी सीख गया। उसे दफ्तर में चौथा साल हो रहा था। मां के ऊपर उसके सभी रहस्य उजागर होते गए।

पहले तो उसने टालने की कोशिश की।

'सब मरद लोग ऐसा ही करता है। सोनू भी बढ़ा हो गया। थक जाता हूं तो हम भी बीड़ी पीता हूं ना?

किन्तु सोनू का तो थकने वाला कोई काम ही नहीं था। जब उसका नशा सीमा को पार करने लगा तो उसका माथा ठनका। अब वह भांग में घुसकर स्वयं पत्ते मलने लगा था।

बाप भी तो यही करता था। पहले रिक्शा चलाता था, नशा करने लगा तो रिक्शा छोड़ दिया। पूरा दिन भांग के झुंड में घुसा रहता। दो-दो तीन-तीन रात गायब रहता कभी-कभार कोई देख भी लेता कि भांग में अथवा रास्ते में लुढ़का हुआ है। गनीमत है कि जिंदा है। ऐसा कब तक चलता? एक दिन रिक्शा चलाने वाले पुराने साथी ने खबर दी कि फ्लाई ओवर के निकट किसी वाहन की चपेट में आ गया। खून जमा हुआ था, शायद सारी रात पड़ा रहा।

कलावती क्या करती? दो चार दिन तो रो-धो कर सब्र कर लिया।

अब सोनू भी उसी लाईन पर चल पड़ा है। दफ्तर जाना भी छोड़ दिया। ठाकुर साहिब से गुहार लगाकर उसे एक अवसर देने की गुजारिश की। ठाकुर साहिब क्या करते? सोनू के अनेक नशेड़ी मित्र हो गए। जाने कहां कहां के नशे करते थे और उनकी पूर्ति के लिए अपराध भी। सोनू भी मां से पैसे मांगता। कहां तक देती, जहां तहां छिपाए पैसे चोरी होने लगे। एकाध बार पैसे न मिलने पर मां की ऐसी हड्डियां तोड़ी कि कई दिन काम पर न जा सकी।

सोनू के बारे में सभी जान गए। पहले अपने बेटे के लिए गर्व से न अधाती मां अब उसके जिक्र से भी बचने लगी। सभी घर वालियां जो कहती वह उसके जले पर नमक छिड़कने जैसा था, अर्थात, हमने तो तुझे समझाया था कलावती।

महीने में एकाध घटना हो जाती। लोग कलावती से अवश्य पूछते, जितना टालती लोग उतनी ही टोह लेते। कहां तक बचती। फिर वह मोटर साईकल वाली घटना हुई।

आंख से ओझल, दिल से दूर, इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि जब तक उसे सजा हुई लोग इस बात को भूल गए। कलावती एक ही बात कहती थी कि बेटा देस चला गया। वह उत्तर पूर्वी बिहार से लगते नेपाल क्षेत्र की थी।

किसी को ज्ञात नहीं हुआ कि सोनू को दरअसल छह मास की सजा हुई थी। यह छह मास सोनू को खूंखार अपराधियों के साथ

बिताने पड़े। जेल से छूटा तो कलावती रातों रात उसे ट्रेन से लेकर घर चली गई। पंद्रह दिन बाद लौटी तो सब जान गए कि सोनू भी लौट आया है और साथ में नई नवेली दुल्हन भी है। लड़की दस जमात पास है, सुन कर सभी को आश्चर्य हुआ। सोनू के भाग्य को किसी ने नहीं सराहा। एक ही स्वर था, 'पराई लड़की के साथ जुल्म हुआ है यह तो। क्या किस्मत फूटी है बेचारी की।

कलावती खुश थी, स्वयं अंगूठा छाप थी , उसे पूरी उम्मीद थी, पढ़ी लिखी बहू आ जाने से मेरा सोनू अब जरूर सुधर जाएगा।

सोनू, जेल में रहने की लज्जा और कुछ दुल्हन की समझदारी के कारण अब घर से बाहर न निकलता। सोनू का एक मौसेरा भाई निकट के दूसरे शहर में किसी कोल्हू पर लगा था। एक दिन कलावती के पास उसका फोन आया- 'मौसी सोनू को मेरे पास भेज दो। एक पलाई फैक्ट्री में बात की है। मालिक हां कर दिए हैं। पर मौसी नशा तो छोड़ना ही पड़ेगा'।

सोनू पहले भी दो बार मां के साथ, वहां जा चुका था। तब की बात है जब सोनू नशा नहीं करता था। वह नशा छोड़ने का प्रयास कर रहा था किन्तु सफल नहीं हो पा रहा था। कुछ विलम्ब हो जाने मात्र से ही भयंकर बेचैनी होने लगती। जैसे सर घूम रहा हो बदन टूटने लगता, नसों में कंपन होने लगता। दिल की धड़कन इतना बढ़ जाती कि प्राण अब गए कि बस कब गए।

सोनू वहां पहुंचा तो शाम उतरने लगी थी। चौराहे पर पहुंचकर कुछ उलझन में पड़ गया कि किधर जाऊं। भूगोल वही था किन्तु अन्धाधुंध निर्माण और बदले परिदृश्य के कारण पृष्ठभूमि बदल गई और उस स्थान की पुरानी पहचान से उसके जहन में तालमेल नहीं बैठ रहा था। नशे की अस्थिरता और भीतर के धुंधलके के कारण भी वह दिशा का अनुमान लगाने में असमर्थ था। पैदल चलने वालों, रिक्शा, टेम्पो, आटो, ठेले, रेहड़े वालों, ट्रेक्टर-ट्रालियां, ट्रकों, कारों, स्कूटरों व मोटर साईकलों की भीड़ और उनके शोर में डूबता उतरता, सोनू खो सा गया था।

दिशा खोजने की कोशिश में ट्रैफिक पुलिस के कांस्टेबल से टकरा गया जो अपने बेटन से उस बेकाबू भीड़ को नियन्त्रित करने का प्रयास कर रहा था। बेजान सोनू उसके पैरों के पास ही गिरा। भीड़ से झुंझलाए कांस्टेबल ने भारी भरकम गाली देकर बेंत से

बाप भी तो यही करता था। पहले रिक्शा चलाता था, नशा करने लगा तो रिक्शा छोड़ दिया। पूरा दिन भांग के झुंड में घुसा रहता। दो-दो तीन-तीन रात गायब रहता कभी- कभार कोई देख भी लेता कि भांग में अथवा रास्ते में लुढ़का हुआ है। गनीमत है कि जिंदा है। ऐसा कब तक चलता? एक दिन रिक्शा चलाने वाले पुराने साथी ने खबर दी कि फ्लाई ओवर के निकट किसी वाहन की चपेट में आ गया। खून जमा हुआ था, शायद सारी रात पड़ा रहा।

जोरदार प्रहार किया। सोनू लड़खड़ाता सा उठा और दोनों हाथ जोड़ कर बार-बार माफी मांगने लगा। उसके मुंह से अस्फुट सा निकला, 'भारत खल फैक्ट्री....'

यह शहर का नामी कोल्हू था।

'तो यहां क्यों मरता है? ओद्धर खब्बे पासे जा, पांच मिंट का रास्ता है।'

सोनू उस भीड़ से निकलकर बाईं ओर वाली सड़क पर मुड़ कर थोड़ा ही आगे गया था कि रेत से लदी एक ट्रैक्टर ट्राली ने उसे टक्कर मार दी। सोनू उछल कर, सड़क के एक तरफ पड़े ईंटों के ढेर से जा टकराया। एक शोर उभरा और कांस्टेबल ने जाकर देखा. .यह तो सांवला सा मरियल सा वही लड़का था जो कुछ ही मिनट पहले उससे टकरा गया था। उसकी जेब से निकल कर उसका मोबाईल भी वहीं गिर पड़ा।

जीवन एक धुंधलके से दूसरे धुंधलके के बीच गुंथा रहता है, रात, दिन और पुनः रात्रि के अन्तहीन चक्र में उलझा, बिना लक्ष्य के निरन्तर जूझता, प्रति क्षण क्षय होता। एक धुंधलका बाहर का है, दूसरा भीतर का। पिछले अनेक बरसों से सोनू के लिए बाहर और भीतर के कुहासे में अन्तर नहीं रहा। किन्तु अब उसके इस लौकिक कुहासे की मरीचिका से मुक्त होने का समय आ गया था। एक अनन्त धुंधलके के प्रभामंडल में प्रवेश करने का समय। जीवन और मृत्य चक्र का यह अन्तराल सम्भवतः दर्पण के बाहर भीतर के बिम्ब-प्रतिबिम्ब हैं।

सोनू ने अनुभव किया कि उसे बान्धने वाले को चाहल और संभ्रम के सारे धागे टूट रहे हैं और वह धीरे-धीरे मुक्त और भारहीन हो रहा है।

'मुझे सचमुच नींद आ रही है मां, अब तुम्हें मेरे पास बैठ कर जागने की जरूरत नहीं है।'

कांस्टेबल ने नब्ज टटोली। वहां कोई हरकत नहीं थी। पी.सी. आर. वेन को सम्पर्क करना जरूरी था। मोबाइल में एक नंबर 'माई' के नाम से मिल गया।

उधर से आवाज़ आई, 'हम कलावती बोल रहें हैं'। उसकी बातों से कांस्टेबल समझ गया कि यही लड़का उधर बायीं तरफ जा भारत खल फैक्ट्री में अपने किसी भाई से मिलने आया था।

हफ्ते बाद सोनू का ससुर अपनी बेटी को हमेशा के लिए विदा करा के ले गया।

कलावती के आंसू तो पहले ही सूख चुके थे, अब उसके भीतर का खालीपन उसके गले में गांठ बनकर अटक गया।

वह चौखट से लग कर, चुपचाप उन्हें गली के मोड़ तक जाते हुए देखती रहीं।

20 आसा सिंह बाग, नरायणगढ़ रोड, अंबाला शहर, हरियाणा, मो. 0 94163 78090

कहानी

पांच बीघे जमीन

● गंगा राम राजी

रेशमु के लाड़े त्वारसु को गुजरे चार साल होने को आ रहे हैं। गांव का पण्डित है बोलता कि हर जाने वाले के नाम से चार वर्ष के भीतर भागवत कराना चाहिए अगर न कराया जाए तो उसकी आत्मा भटकती रहती है .... बड़ा सा उपदेश वह त्वारसु की लाड़ी को देता रहता था। रेशमु अपने एक कमरे नुमा घर के बाहर बैठी पंडित का इंतजार करने लगी थी।

रेशमु ने जब से यह बात पंडित के मुंह से सुनी तो उसके मन में भी आने लगा कि त्वारसु की आत्मा कहीं इधर उधर तो नहीं भटक रही है ? पण्डित की आत्मा की भटकन की बात कहने की देरी ही थी कि उसे बुरे बुरे सपने आने लगे थे। रेशमु को भी भागवत के बारे सोचने के लिए मजबूर होना पड़ा था। लेकिन कहां से कराऊं? इसी सोच ने तो उसका रात दिन का सुख चैन ही छीन लिया है। पंडित रोज पूछता, '' रेशमु तेरे लाड़े को मरे चार साल होने वाले हैं। हाथ आया मौका नहीं जाने दे।''

'' पुरोहत जी, मन ता करदा पर कीहां करूं .... ?'' बोलते ही रेशमु का गला अवरुद्ध हो गया था।

यह देख पंडित का मन डांवाडोल होने लगा था। उसके दिमाग में पहले से ही आ रही बात कहने का उचित मौका देख वह बोला, '' यह जो तेरे खेत हैं किस काम आएंगे .... ?''

खेत का नाम सुनते ही रेशमु को जैसे सौ बिच्छुओं ने काट खाया हो, पंडित की ओर तरेरी आंखों से इस तरह से देखा कि क्षण में ही वह उसे काट खाए। पंडित सब समझ गया और जल्दी से, ' राम .... कृष्णा हरे हरे ...' कहता चला गया था।

पंडित ने खेतों की ओर जो इशारा किया था। गुस्सा तो उसे बहुत आया था, वे खेत जो त्वारसु के बाद उसका और उसके बच्चों का पेट भरते रहे, पंडित इसी की बात करने लगा, जो खेत उसके लाड़े के बाद भी उसके बच्चों के सर पर हाथ रखे हुए थे उन्हें ...... उसका ध्यान भी अब खेतों की ओर जाने लगा। वह सोचने तो लगी रही परन्तु त्वारसु की आत्मा की भटकन की बात भी उसे रूलाने लगी थी।

चार खेतों में से एक साहूकार के पास रहन था, रहन क्या उसने तो ब्याज के साथ इतना पैसा जोड़ दिया कि अब उसे छुड़ाना उसकी पहुंच से बाहर हो गया था। शेष बचे तीन खेतों में से दो साहूकार के लिए रहन रखवाने की सोच भागवत कराने की बात उसके दिमाग में आने लगी थी। तभी पंडित भी आ पहुंचा।

'' इन खेतों को साहूकार के पास मत गिरवी रखो। तुम इन खेतों को मेरे को ही दे दे मैं और कुछ नहीं लूंगा और तेरा भागवत सम्पन्न, त्वारसु की आत्मा का भटकना खत्म हो जायगा जजमान। सब सुख शांति से रहेंगे। इस काम में गुस्सा नहीं ...... ''

साहूकार हो या पंडित दोनों बात तो एक ही है, रेशमु मान गई और भागवत शुरू।

उधर पंडित भागवत करता और इधर वह अपने त्वारसु को याद करती रोती भी रहती। कभी कभी भगवान की लीलाओं की भनक उसके कान तक भी पहुंच ही जाती, फिर सोचती शायद यह भी भगवान की लीला है, वह हाथ जोड़ यही मांगती 'भगवान त्वारसु की आत्मा को शांति देना।' और हाथ में दो चार पकड़े फूल वह व्यास गद्दी पर प्रवचन कर रहे पण्डित पर भीगी आंखो से चढ़ा देती।

वहीं पर बैठे बैठे वह त्वारसु की यादों में खो जाती। त्वारसु चल चित्र की तरह उसके दिमाग मेंआने लगा-

'समय के बदलते ही त्वारसु को अपना काम भी बदलना पड़ा था। क्या करता अब तो लकड़ी बेचने से परिवार का पेट भी तो नहीं भरता। बालन लकड़ी की अब कोई कीमत ही नहीं देता। जहां पर गाहक को जबरदस्ती देनी पड़ती है वहीं पर खरीदने वाला एहसान करके लेता वह अलग और वन गार्ड की सेवा करनी पड़ती वह अलग। गार्ड को तो पता ही है कि त्वारसु के पास पैसे लत्ते तो कुछ नहीं हैं कम से कम उससे घर का ही काम लेना बेहतर होगा। त्वारसु को गार्ड के घर की बेगार करनी पड़ती, समय का बरबाद होना उसे चुभता तो था ही परन्तु क्या करे उसकी विवशता भी तो थी। और फिर लगे हाथ गार्डन (गार्ड की पत्नी) उससे कई काम बर्तन साफ करना, कपड़े धोना आदि में व्यस्त रखती। कहती भी रहती, '' त्वारसु तेरे से तो हम केवल काम ही लेते हैं लोग काम तो करते ही हैं साथ में कुछ न कुछ दे भी जाते हैं। तेरे पर तो गार्ड रहम खाता है।''

त्वारसु इसकी बातों पर ध्यान नहीं देता उसे मालूम है कि वह क्यों कहती है गरीब है तो क्या हुआ उसे दुनियादारी की पूरी समझ
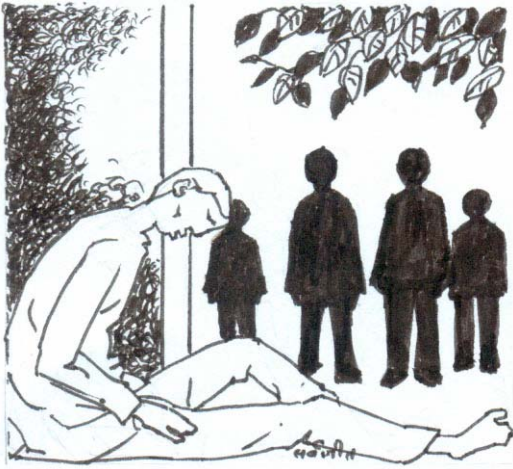
है और उसे अधिकार से कहता भी, ''अच्छा एक कप चाय ता बना दे। चाय पीने की आई है। शरीर में चुस्ती न आए तो काम ही नहीं होता।''

उसकी बार बार की जिद से गार्डन को अनमने मन से चाय बनानी ही पड़ती थी। और उसकी चाय देखो तो दूध का नामो निशान नहीं। त्वारसु सोचता कैसी औरत है यह ? सोचता कि भगवान ने कुछ लोगों को दूसरों को तंग करने के लिए बनाया होता होगा। उसका भी अपना ही फार्मूला है क्या मालूम ?

जहां वह लोगों की बेगार करता रहता वहीं ईमानदारी भी त्वारसु में कूट कूट कर भरी हई थी। जिसने जो काम बताया उसे वह पूरा करके ही दम लेता था, भले ही उसका अपना काम कितना ही क्यों न पड़ा हो। इस बात पर उसकी घर वाली रेशमु भी उससे नाराज हो जाती,

''दूजे रे कामां जो लगी रहंदे अपना चाहे नाश हो जाए ... ''

वह उसकी बातों को अनसुना कर देता था या उसकी ओर ध्यान ही नहीं देता, वह अपनी धुन में लगा ही रहता। वह तो उस लकड़ हारे की तरह है जिसकी कुल्हाड़ी लकड़ी काटते हुए नदी में गिर जाती और एक देवता उसकी हालत पर तरस खाके सोने की कुल्हाड़ी नदी से निकाल कर उसे देता। परन्तु लकड़हारा उसे मना करता कि वह उसकी कुल्हाड़ी नहीं है फिर वह चांदी की दिखता वह उसे भी मना करता । अंन्त में वह उसकी ही लोहे की कुल्हाड़ी नदी से निकाल कर देता उसे वह हां कहता। तो देवता उसकी ईमानदारी से खुश हो जाता। उसे तीनों ही कुल्हाड़ियां दान कर देता। त्वारसु भी उसी तरह का ईमानदार आदमी है। परन्तु इसकी ईमानदारी पर किसी देवता ने खुश होकर आजतक तो कुछ नहीं दिया। आज का देवता तो उसकी केवल परीक्षा पर परीक्षा ही लेते आया है।

अभी तो उसकी बालन का एक ही ग्राहक हलवाई राम शरण रह गया था। एक दूसरा भी था परन्तु उस हलवाई ने अब गैस से चलने वाला चूल्हा लगा दिया था। वह तो अब उसकी ओर देखता तक भी नहीं था। अच्छा हुआ उसके सारे बर्तन मांजने से तो उसे छुटकारा मिला। एक कप चाय के लिए ढेरों बर्तन साफ करने पड़ते थे। इससे पहले जब उसे लकड़ी की जरूरत रहती थी तो वह बीच रास्ते में ही त्वरसु को पकड़ कर ले आता था। फिर त्वारसु की सेवा करता और साथ में जितने हलवाई के बर्तन कढ़ाई, पतीले, गिलास, कप पड़े होते वह उसे धोने भी होते थे एक कप चाय के बदले।

कुछ दिनों के बाद यहां पास ही गैस एजेंसी क्या खुली उसकी थोड़ी बहुत जो लकड़ी बिकती थी उसकी भी छुट्टी हो गई। गैस की बड़ी कंपनी है, उसे भी कमाई चाहिए। इसलिए तो आज की दुनियां में बड़े तो और बड़े हो रहे हैं और छोटे और छोटे हो रहे हैं।

अब तो वह लकड़ी बेचने के काम से तंग भी आ गया था। इस काम में उसे बड़ी ही मेहनत करनी पड़ती। सारे दिन जंगल से लकड़ी लाते जाओ फिर अगले दिन उसे बाजार में लेकर जाओ समय तो टूटता था ही सारे परिवार को भी इसमें लगाना पड़ता वह अलग। खैर मेहनत से तो वह घबराता नहीं था। परन्तु अब उसकी मेहनत रंग नहीं ला पा रही थी।

उसे अपने वह दिन याद आने लगे जब वह सुबह शाम घर के पास के मंदिर जा कर बाहर ही लगा बड़ा सा घंटा बजा कर भगवान से यही प्रार्थना करता कि आज का उसका दिन अच्छा बीत जाए उसके माल के उसे अच्छे पैसे मिल जाएं और घर में सबका पेट भर जाए। और उसे पैसे भी अच्छे मिल जाते उसके माल की लोगों को इतनी इंतजारी रहती कि कोई न कोई उसे बीच में पकड़ कर ले जाता था और उसे मुंह मांगे पैसे भी मिल जाते थे। अब उसकी लकड़ी जब नहीं बिकने लगी तो उसका मंदिर जाना भी बंद होने लगा। ' भूखे भजन नहीं होत गोपाला' सोच कर उसने मंदिर ही जाना बंद कर दिया था।

वह दिन भी क्या दिन थे वह सुबह उठता और पिछले दिन इकट्ठी की हुई लकड़ी का गट्ठा अपनी पीठ पर उठा कर गांव के बनिए के पास पहुंच जाता। बनिए ने उसे बोल रखा था कि तुम्हें इधर उधर जाने की जरूत नहीं मेरे यहां ही लकड़ी का गट्ठा रख दिया करो और पैसे ले जाया करो।

कभी वह सोचता कि लोग उसे लकड़हारा के नाम से क्यों पुकारते है ? आज वह सोचने लगा कि लोग उसे ठीक ही लकड़ हारा कहते थे, वह लकड़ी बेचता बेचता हार गया इसलिए ही तो लकड़हारा उसका नाम पड़ा।

लकड़ी तो बिकती नहीं थी एक दिन वह जंगल में लगे खट्टे निकाल कर बाजार ले गया तो उसे इसके पैसे अच्छे मिल गए। इस काम में उसका परिवार भी साथ देता था। उसके दिमाग में इस योजना ने जगह बना ली, अब जंगल में पैदा होने वाले खट्टे, दाड़ू, काफल बेचना उसने आरम्भ क्या किए वह तो लकड़ी को ही भूल

गया। हां कभी कभार किसी को लकड़ी की जरूरत पड़ती तो वह मांगने पर ही ले जाता था।

उसके इस काम में न जाने किस की नजर लग गई, यह भी बहुत दिन नहीं चला। बड़ी बड़ी कंपनियां यहां भी आने लगी। वे जंगल से ही सरकारी ठेका करने लग गई। उसका यह काम भी हाथ से जाने लग गया। कहीं वह लुक छिप कर कुछ ले भी आता तो उसका गाहक ही नहीं मिलता। लोग कहते, '' भाई क्या करने तेरे खट्टे। कंपनी का रस निकाला हुआ बढ़िया पैकिंग में मिल जाता है तेरे खट्टे का रस निकालने के लिए कौन मेहनत करे ..... ?''

लोग तो अरामदायक बनने लग गए हैं या लोगों के पास पैसे होने लगे हैं। उसके बारे तो कोई भी नहीं सोचता। कंपनी का युग आने लगा है वह भी क्या करे ?

बस अब वह सारे दिन हवा हो गए। त्वारसु का परिवार भूखा रहने लग गया था। उसके पेशे को जो धक्का लगा वह भूल ही नहीं पा रहा था। गैस, रस बनाने वाली बड़ी बड़ी कंपनियां छोटे लोगों का कुछ नहीं सोचती। वे भी क्या हर भगवान का ही नियम है बड़ी मछली छोटी मछली को ... वह सोचने के लिए तो मजबूर हो गया था परन्तु सोचता था कि अब करें तो क्या करें? भला हो पटवारी का जब सरकार ने लोगों को नौ तोड़ जमीन के पट्टे दिए तो पटवारी ने उसे पांच बीघे का पट्टा दिलाया था परन्तु उसे दो बीघे ही नसीब हुई और तीन बीघे जमीन पटवारी ही कब्जा करके बैठ गया था। त्वारसु ने इसका बुरा नहीं माना था। पटवारी ने भी तो मेहनत की थी।

सोचता रहा त्वारसु परन्तु जो उसने पटवारी से वायदा किया था उससे वह मुकर नहीं सकता। उसने भी तो आखिर में जान देनी है फिर भगवान के पास वह क्या जवाब देगा ? वह अपनी जुबान से फिर नहीं सकता चाहे जमाना कितना ही क्यों आगे न बढ़ जाए।

जमीन की बात दूर तलक तक चली गई थी। गांव प्रधान को जब इस बात का पता चला तो उसने कहा था, '' तुम अपनी जमीन पटवारी से ले लो। जमीन सरकार ने तुम्हें दी है न कि पटवारी को। हम तुम्हारे साथ हैं।''

सोचता रहा त्वारसु परन्तु जो उसने पटवारी से वायदा किया था उससे वह मुकर नहीं सकता। उसने भी तो आखिर में जान देनी है फिर भगवान के पास वह क्या जवाब देगा ? वह अपनी जुबान से फिर नहीं सकता चाहे जमाना कितना ही क्यों आगे न बढ़ जाए।

इसी बीच ग्राम प्रधान की पटवारी से कुछ कहा सुनी हो गई थी बस फिर क्या था मन्त्री का दौरा गांव में था सबके सामने प्रधान ने पटवारी की शिकायत क्या की अगले ही दिन पटवारी का बिस्तर गोल हो गया।

त्वारसु को जब पता चला तो वह सुबह सुबह ही पटवारी के पास गया, हाथ जोड़ कर पूछा, '' महाराज अब इन खेतों का क्या करना है ?''

'' त्वारसु इसमें जो गेहूं लगी है न उसे बेच कर पैसे मेरे पास छोड़ जाने हैं फिर खेत तेरे ही पास रहेंगे।''

त्वारसु खुश हो गया। गेहूं कटने पर इकट्ठी की गई और उसके जो पैसे बने वह पटवारी के हवाले कर आया था। पटवारी घर पर नहीं था परन्तु पटवारन को ही दे आया था। भला हो पटवारन का उसने कम से कम चाय के लिए पूछ तो लिया। उसके न करने पर भी उसने जोर देकर चाय पिलाई थी, '' अरे त्वारसु कैसे नहीं पिओगे इतनी दूर तो आए हो पीनी पड़ेगी।''

त्वारसु सोचने लगा अरे इसने तो आज छवाड़ की तरह कैसे रंग बदल लिया वह खुश हुआ चाय का उसे मजा भी आ गया।

'' अच्छा त्वारसु चाय पी कर अंदर वर्तन पड़े है बड़या इन्हें मांज देना ... ।''

यह सुनते ही उसे चाय का स्वाद ही फीका लगने लगा,'कोई बात नहीं भगवान ने तो उसे बनाया ही इसलिए, तुम लोग खुश रहो, आबाद रहो जहां भी रहो ... ' न जाने वह क्या क्या सोचता रहा और बर्तन भी साफ करता रहा। अब उसे पता चला कि छबाड़ ने क्यों रंग बदला है। भगवान ने उसे यह कला दी है, जब उसे कोई शिकार फंसाना होता है तो वह इस कला का प्रयोग करता है। वाह रे भगवान तेरा भी कोई मुकाबला नहीं !

अब वह खुश हो गया उसके पास पांच खेत हो गए थे। बर्तन मांजने से क्या होता है? बड़े बड़े खेत थे एक बीघे का एक खेत। अब तो उसे लकड़ी-वकड़ी, खट्टा-वट्टा, दाडु-दूडू कुछ काम नहीं करना पड़ेगा, खेत में काम करेगा, सारा टब्बर करेगा सबका पेट भर जाएगा। सरकार का वह गुणगान करने लगा। सरकार कितना अच्छा सोचती है हमारे लिए। वैसे ही जमीन खाली पड़ी थी हमें दे दी अब फसल उगेगी हमारा पेट पलेगा .... भला तो उस पटवारी का हो जिसने जमीन हमें दिलवाई, सरकार की क्या मजाल ? सब गरीबन का ही काम करत हो सरकार भी पटवारी भी और गांव का प्रधान भी।' वह अब जमीन पा कर खुश था, पांच बीघे जमीन का स्वामी। उसे लगा कि अब उसके दिन अच्छे निकल जाएंगे, बच्चों को भी पढ़ा पाएगा , उनकी शादी वादी भी सब ठीक हो जाएगी। अब गैस कंपनी से, फल कंपनी से उसे कोई शिकवा नहीं कोई शिकायत नहीं।

एक दिन उसे प्रधान ने बुलाया,

'' त्वारसु तेरे को तेरी जमीन वापस दिलवाई कि नहीं ?''

'' हां प्रधान जी .... दिलवाई । आपकी मेहरबानी ''

'' पटवारी के पास कितने खेत थे ?''

'' प्रधान जी तीन खेत थे ..... ''

'' बस बस ठीक है उसके पास तीन थे अब तुम दो खेत मेरे नाम से, उसमें जो पैदा होगा उसे ईमानदारी से मुझे देते रहना .. ... क्या समझे .... परन्तु किसी से बोलना नहीं .... मैं पट्टा जमीन का कैंसल करा सकता हूं। जो पटवारी की बदली करा सकत है वह कुछ भी कर सकत है। हम सरकार में है, एक खेत तुझे छोड़ दिया जा तुम्हारे अच्छे दिन आएंगे .... बात खोली तो सब ... खलास ... ।''

त्वारसु ने प्रधान का शुक्रगुजार किया कि पटवारी ने तीन खेत लिए थे इसने दो खेत ही लिए पटवारी की तरह लालची नहीं है हमारा प्रधान। अब दो खेत का अन्न प्रधान के नाम। घर लौटते हुए त्वारसु प्रधान की तारीफ करता गया। परन्तु कहीं न कहीं मन में अच्छे दिनों में कुछ कड़वाहट घुलने लग गई थी , एक चुभन सी मन में होने लगी थी, फिर भीम नहीं मन कसम खाई कि 'किसी से बात नहीं करती है यह तो हमारे दोनों के बीच का मामला है। लोगों को इससे क्या लेना देना।' सोचता हुआ वह घर लौट आया था।

प्रधान कभी कभी त्वारसु से घुल मिल कर बात भी कर लेता था, राजनीति में जो था। एक दिन अच्छे मूड में था, दो चार घूंट शराब के भी अंदर गए होंगे, त्वारसु से पूछ ही लिया,

'' अच्छा त्वारसु बता तेरा नाम त्वारसु किस ने रखा और क्यों रखा ?''

उस दिन त्वारसु भी पड़ोसी जानकी के फाट में घास काटने के लिए गया था। वह क्यों सारा गांव ही था खाना पीना सब उसका ही इंतजाम था फिर मुफ्त की शराब तो काजी भी नहीं छोड़ता तो त्वारसु ने भी बहती गंगा में हाथ धो ही लिए थे। वह उसी नशे में प्रधान के पास पहुंच गया था। प्रधान भी उसे नशे में देख इसी तरह की बातें उससे करने लगा था। लगा था आज प्रधान और त्वारसु दोनों ही मूड में थे बोला, '' प्रधान जी यह बात तो आजतक किसी ने नहीं पूछी। पंचायत के सैक्रेटरी ने भी नहीं जहां पर नाम लिखता जाता है। पूछने की बात थोड़े है प्रधान जी यह बात तो समझने की है। साफ बात है इतवार वाले दिन मैं पैदा हुआ और बापू ने नाम रखा त्वारसु।'' और वह हंसने क्या लगा उसे देख प्रधान भी हंसने लगा था। फिर दोनों ही हंसते रहे। प्रधान तो इसलिए भी हंस रहा था कि उसका स्वयं का नाम था जेठ सिंह। वह भी जेठ महिने में पैदा हुआ था तो नाम बन गया जेठू। यह तो बाद में जब वह स्कूल गया था तो नाम में थोड़ा बदलाव मास्टर ने ही कर दिया था जेठ सिंह।

दोनों अपने अपने नाम पर हंस रहे थे। त्वारसु को पता नहीं चला कि प्रधान क्यों हंस रहा है? वह तो उसे देख हंस रहा था सोचने लगा कि उसने कोई बात ही हंसी की कर दी हो।

उसका परिवार समय के साथ बढ़ता गया। तीन लड़कियां सबसे छोटा लड़का हुआ। लड़के से वंश चलने की उसकी आशा पूरी हो गई। परिवार में जो एक परंम्परा वंश वृद्धि की चली आ रही थी उसको उसने पूरा किया और परमात्मा का गुणगान करने के लिए आज मंदिर हो आया था। बहुत दिनों बाद मंदिर गया था। सोचता था कि अब भगवान भी बड़ों की ही सुनता है गरीबों की ओर उसका ध्यान ही नहीं रहा है मंदिर जाना छोड़ दिया था। परन्तु वंश की शाखा को आगे बढ़ने के लिए जब कोई बूटा घर में आया तो वह अपनी पत्नी के साथ मंदिर हो आया था। खुश हो गया था सारा परिवार।

पड़ोस में गांव में ही एक नर्स उसे दो लड़कियों के बाद नसबंदी के लिए जोर लगाती रही। न वह माना न उसकी पत्नी। अब चाहे तो वे नसबंदी करा ही लेंगे।

वह अपनी संतान के लिए कई तरह के ख्वाव देखने लगा था। बेटे को अपनी तरह का लकड़हारा नहीं बनाऊंगा। इसे पढ़ाऊंगा, साहब की तरह पैंट टाई लगाएगा बड़ा साहब चाहे पटवारी ही क्यों न बनाऊं लेकिन लकड़हारा नहीं। उसका नाम त्वारसु नहीं रखा गया जबकि वह भी इतवार को ही पैदा हुआ था। पंडित को पूछ कर नाम करण हुआ था, बड़े सोच समझ कर नाम रखा गया, राम कृष्ण।

त्वारसु का जीवन संघर्ष चलता रहा। लड़कियां जवान होने लगी थी। बड़ी लड़की को पांच तक ही पढ़ाना पड़ा था घर का स्कूल ही पांच तक जो था। लड़के की तलाश शुरू हुई, लड़का भी मिल गया। मिलता भी क्यों नहीं पढ़ी लिखी लड़की वह भी पांच जमात देखने में बहुत सुंदर थी लड़के अपने आप ही आने लग गए थे।

शादी रची गई, पांच खेतों में से एक खेत साहूकार के यहां तीन हजार रूपए में रहन रखा गया। कुछ अच्छे लोगों ने भी उसकी मदद कर दी थी। शादी जैसे भी हो कर दी गई। त्वारसु सोचता कि जिंदगी का सिलसिला सुख-दुख, खुशी-गम, भूख-प्यास कभी थमता ही नहीं। एक समस्या थमती है तो दूसरी खड़ी हो जाती है। उसे अपने वचपन का एक खेल याद आने लगा। सारे टब्बर के बच्चे इकट्ठे हो जाते थे और एक दूसरे की मुट्ठी पर मुट्ठी रख कर बोलते थे,' भुंडा भंडारिया कितना की भार, एक मुट्ठी चकी दे तो दूजी तैयार' यह खेल भी जीवन की सच्चाई को बताता है। इसे याद करते हुए मुस्काने लगा था।

ग्राम पंचायत के चुनाव आ गए थे। उसे प्रधान ने बुलाया कि इस बार वह उसके खेत से कुछ नहीं लेगा। इन खेतों को तुम ही जोतना पर वोट उसी को देना।

''वोट तो तुम्हारा ही है प्रधान जी, कैसे नी देना वोट तुसा जो ... ''

बात पक्की हो गई। प्रधान को भी उसकी बात पर भरोसा था। वोट पड़े, त्वारसु ने कहने के मुताबिक वोट उसे ही दिए। शाम को ही नतीजा निकला। उसका प्रधान हार चुका था।

'वोट जिसने मांगा उसे दिया वायदा पूरा किया जब भगवान ने उसे हरा ही दिया तो वह भी क्या करे ?' सोचता सोचता वह हंसने लगा।

'उसका प्रधान हार गया पर वह तो जीत गया ..... वह जीत गया ... उसके दो खेत उसके.... हो गए...... भगवान का खेल है, देर है अंधेर नहीं है, बाबा ...... '

वह जीतने वाले के खेमे में जाता है। उसके सब पहचान वाले आस पास वाले दोस्त दुश्मन सब मिनकु के पहुंचे हुए थे। मिनकु के पास ठेका है जो जीतेगा उसके पास आज पहुंचेगा ही। त्वारसु भी उनमें रम गया। आज मिनकु के यहां शराब मुफ्त जो मिलनी है। जो भी प्रधान जीता है आज उसकी ओर से सारे गांव वालों को मुफ्त शराब। वह भी तो उसी गांव का ही है।

त्वारसु खुश, ... खुश इतना कि आज वह मिनकु के यहां मुफ्त की शराब को गट गट पीने लगा। सारा गांव पी रहा था तो वह क्यों पीछे रहता ? मिनकु गांव का शराब बनाने का कारीगर था। इधर उधर से जितने बैर के पौधे थे उनकी जड़ें उखाड़ कर रसकट गुड़ की चासनी बना कर अच्छी शराब बनाता था। कहता भी रहता ' मेरा शराब बनाने का फार्मूला देवताओं के युग का है जिसे मैंने अपने बाप हिरदू से सीखा है। मेरा बाप शराब बनाते बनाते देवताओं को प्यारा हो गया था। .... ''

बाप को याद करते करते मिनकु की आंखें तर हो जाती, पता नहीं सच में ही तर होतीं या शराब का ही कुछ असर होता। वह कुछ रुक कर आगे बोलता,

'' अब बापू हिरदु पता नहीं देवताओं के लिए शराब बनाता होगा। पर हमें यह नुस्खा दे गया .... रोजी रोटी तो चल ही रही है। .... बापू अमर रहे ... '' मिनकु ने भी गांधी के लिए नारे लगाने वालों से सुन रखा होगा,' बापू गांधी अमर रहे ...'बस वह भी इसी तरज पर नारा लगाने लग जाता था।

आज त्वारसु भी देवताओं की शराब पीने गया था। उसकी शराब बड़े बड़े पी कर उसे शाबाश देते। आज त्वारसु को भी लगा कि वह आज खुशी में पैग पर पैग पी कर उसे शाबाश बोलेगा। आज सारा गांव उससे पी रहा है जिसने नए प्रधान को वोट दिए चाहे नहीं, सब पी रहे हैं और मस्ती में हर कुछ गाना गा रहे हैं कोई टीन बजा रहा है कोई बालो गा रहा है और कोई नाच रहा है। नए प्रधान ने मिनकु को आज के दिन का ठेका दे रखा था कि किसी को शराब पीने के लिए इनकार न हो।

मिनकु को मालूम था कि मुफ्त की शराब पीने सारा गांव आएगा इसलिए उसने बहुत सा माल तैयार कर लिया था। माल जल्दी तैयार करने के लिए उसने नौशादर की गोलियां कुछ ज्यादा ही डाल रखी थी। वह जानता था कि नौशादर से उसकी चासनी जल्दी उबाला मारने लगती है और कुछ तेज भी हो जाती है।

सारा गांव पीता गया, कुछ पुलिस वाले भी डयुटी पर आए थे उन्होंने भी लगे हाथों अपने हाथ रंग ही लिए। वैसे तो पुलिस वाले रोज ही उससे मुफ्त की पीते आऐ थे परन्तु वे भी आज के इस मौके को कैसे जाने देते, लगे रहे। मिनकु की भाठी में तो आज नजारा ही देखने वाला था। जो पी भी नहीं रहा था वह भी इस नजारे को देखने पल भर रुक ही जाता और मजा लेता।

आज गांव वाले अपना आपस में बैर भाव सब भूल गए थे केवल मस्ती ही का आलम सब जगह था। मिनकु आज किसी से पैसे नहीं ले रहा था परन्तु स्वयं होश में ही था। तभी उसका ध्यान एक ओर पड़े आदमी पर गया वह पी कर एक ओर लुढ़का हुआ था। लुढ़क तो सब ही रहे थे परन्तु उसके मुंह से झाग निकलने लगी थी। उसका माथा ठनका। तभी एक दूसरा लुढ़क गया। देखते देखते पुलिस वाले भी लुढ़क गए। कुछ उल्टियां करने लगे। मिनकु को शक हो गया कुछ गड़बड़ जरूर है जो उसने नौशादर की मात्रा चार गुणी कर दी उसी का परिणाम है। उसने कुछ नहीं देखा वह सब कुछ छोड़ कर भाग गया।

कुछ ही देर में ऐंबुलैंस आने लगी, पुलिस आ पहुंची। सबको एम्बुलैंस में बिठाया जाने लगा। गांव की महिलाएं बच्चे सब पहुंच गए। चीख पुकार, रोना धोना आरम्भ हो गया। टी वी वालों की गाड़ियां, कैमरे, यह स्थान तो पल में ही वी आई पी स्थल बन गया। टी वी वाले काम करने वालों से इंटरव्यू लेने लगे। उन्हें काम करने में बाधा पड़ने लगी। सारा स्थल एक शोक स्थल में पल में ही बदल गया। पुलिस की एक टीम मिनकु को ढूंढने लगी।

त्वारसु की लाड़ी भी अपने बच्चों के साथ त्वारसु को लेने पहुंच गई थी। उससे अब कुछ नहीं बोला जा रहा था। त्वारसुको दो आदमी ऐंबुलैंस में ले गए। रेशमु पीछे बिलख बिलख अपनी छाती को पीटते रोने लगी थी। बच्चे मायुस खड़े उसे देखते उसे संभालने में लगे थे। '

पंडित इधर भगवान की लीलाओं का व्याखान करता जाता और उधर रेशमु को अपने त्वारसु की लीलाएं रह रह कर याद

आती रहतीं। सात दिन तक यह चलता रहा।

रेशमु अपने बच्चों रिश्तेदारों गांव वालों के साथ पंडित से कथा सुन रही हैं। आज कथा का आखिरी दिन था और पंडित प्रवचन किए जा रहा था -

'तीनों लोकों के स्वामी महाराजा महाबलि के सामने खड़े ब्राह्मण वामन के अवतार में भगवान विष्णु ने दान में तीन पग भूमि के मांगे। गुरु शुक्राचार्य के न कहने पर भी महाबलि ने तीन पग भूमि ब्राह्मण वामन को दान में देने का संकल्प ले लिया।

ब्राह्मण वामन ने एक कदम में स्वर्ग, दूसरे में मृत्यु लोक माप लिया, फिर तीसरे के लिए महाराज बलि से पूछा ,'' हे राजन यह वामन तीसरा पांव कहां रखे ?"

''ब्राह्मण देवता अब तो मेरे पास कोई स्थान ही शेष नहीं है आप तीसरा पांव मेरे सर पर रख लें।''और वामन ने ज्यों ही अपना तीसरा कदम राजा बलि के सर पर रखा तो बलि पाताल जा पहुंचा।'

रेशमु को लगा कि वामन ने तीसरा कदम महाबलि के नहीं उसके सर पर ही रख दिया है। उसकी आंखे भर आई ...... अपने खसम त्वारसु की आत्मा की शांति के लिए भरे नयनों से अपने बच्चों के साथ हल्की हल्की तालियां बजाती हुई दूर शून्य में किसी को निहारती हुई पंडित के उच्चरित बोल को दोहराने लगी, ' हरे कृष्ण, हरे कृष्ण ..... ' उसके खेत वहीं से नजर आ रहे थे उन पर नजर डाल रही थी, ' हरे कृष्ण, हरे कृष्ण ..... हरे हरे ......

राजमहल, पुराना बाजार,
सुंदरनगर, जिला, मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 018
मो. 0 94180 01224

कविता

डाक हरकारा

● **प्रकाश गौतम**

एक साठ साल का डाक हरकारा
बैठ कर पहाड़ की उंची घाटी में
थका हारा पसीने से तर
पोंछ उंगलियों से माथे का पसीना
देखता है जब पीछे मुड़ कर
दूर नीचे घाटी और नदी को
तो आता है याद उसे बीता जमाना
बचपन जवानी और ढलती उम्र
पहाड़ से नीचे नदी तक
नदी से उपर पहाड़ तक
सर्पीली उबड़ खाबड़ पगडंडी पर
चढ़ते उतरते, उतरते चढ़ते
न जाने कितना पसीना बह गया है
पसीने के साथ शरीर की चर्बी भी
टपक गई है घास पत्थरों पर
आंखे अगर बंद होती भी है कभी
पैर ही बन जाते हैं आंखें
बारिश, ठंड गर्मी से बेपरवाह
ढो रहा है डाक मशीन की तरह
पिछले चालीस वर्षों से लगातार
उसकी पत्नि ने भी न की कोई शिकायत
रोज सुबह दे देती है उसे
रूमाल में बांध कर चार रोटियां
और गुड़ की एक डली
या दो फांके आचार की
जिन्हें खाता है वह प्यार से
पहाड़ी झरने के पास बैठ कर
सोचता है थोड़ी झपकी ले ले
देवदार की ठंडी छांव में
पर हो जाता है चौकन्ना सोच कर
कि उसे शीघ्र पहुचाने हैं संदेश
पत्र रजिस्ट्रियां स्पीड पोस्ट
साक्षात्कार नोटिस, परीक्षा के रोल नंबर
उन सब लोगों को जो देख रहे हैं
उसकी राह टुकुर टुकुर ऊपर गांव में
डाकघर के बाहर बतियाते हुए
उसके लिए ये सब बहुमूल्य है
उसकी आत्मा तृप्त होती है
इस प्रकार से कर्तव्य निबाह कर
अब तो उसे राह के पौधे, जानवर
चिड़ियां तक है पहचानते
स्कूल जाते बच्चे रोज करते हैं नमस्ते
कहते हैं पोस्टमैन आ गया
जल्दी चलो स्कूल का समय हो गया
वह बच्चों के सिर पर प्यार से फेर कर हाथ
कहता है बज गए हैं नौने पौ
जल्दी दौड़ो स्कूल को
वह याद करता है उन दिनों को
जब वह भी जाता था कभी स्कूल
आज जब वह सुस्ता रहा है
हो कर पसीने से तर बतर
लगता है क्षमता समाप्त हो गई है
अभी से उसका दम फुलने लगता है
पांच वर्ष और कैसे कर सकेगा
इतनी कमर तोड़ मेहनत
सिहरन सी दौड़ जाती है सोच कर
उसके जिस्म में
कि क्या होगा पैंसठ वर्ष पूरे होने पर
जब वह रिटायर होगा डाक विभाग से
तब तो उसका शरीर भी
इतनी मेहनत नहीं कर सकेगा
तब कैसे चलेगा घर का गुजारा
सरकार कर देगी विदा कुछ हजार रुपये दे कर
विदा कर देंगे साथी चाय समोसा खिला कर
पता नहीं कैसे चलेगा घर का गुजारा फिर
कोई पेंशन भी तो नहीं मिलेगी
अभी तो दो बेटियों की शादी करनी है
सोच कर ही कलेजा मुंह को आता है
पर फिर वह एक झटके से उठ जाता है
एक वीर योद्धा की तरह प्रण करके
बरबाद नहीं होने देगा वह
जीवन भर की कमाई हुई प्रतिष्ठा को
चाहे जो भी हो जाए
बहादुरी से करेगा मुकाबला समय का
चल पड़ता है वह झटके से उठ कर
रख कर कंधे पर डाक का थैला
ऊपर गांव की ओर अकेला

सीनियर पोस्टमास्टर,
जीपीओ, शिमला-171 005

कहानी

वह अकेली थी

● डॉ. जयकरण

(गतांक से आगे)

सत्या की नसीहत से किशन को लगा जैसे वह उसे अपमानित कर रही है। गुस्से में लाल पीले किशन ने एक जोरदार थप्पड़ उसके गाल पर रसीद कर दिया।

किशन का स्वभाव पूर्णतः चिड़चिड़ा हो गया था। किसी तरह की पाबन्दी या हुक्म अपने ऊपर उसे बर्दाश्त नहीं था। बात -बात पर क्रोधित होना उसकी आदत का एक हिस्सा बन चुका था।

घर के अंदर से आये दिन सामान बाहर फेंक कर अपना क्रोध प्रकट करना उसका व्यवहार बन गया था। एक दिन सत्या बच्चों सहित टीवी देख रही थी। उस दिन भी किशन कहीं बाहर से पी कर आया था। उसने टीवी. उठाकर बाहर बरामदे में फेंक दिया।

चूल्हे पर से दाल चावल के पतीले-कुक्कर उठा कर दरवाजे से बाहर फेंकना उसके लिए आम बात थी। उसके बाद सारे परिवार को भूखा प्यासा सोना पड़ता था। कभी -कभी तो शाम को खाना भी नहीं बनता था। पिता के आतंक से सहमें बच्चे कमरे के ही एक कोने में रोते सिसकते रहते थे।

दिन प्रतदिन परिवार पर किशन के अत्याचारों का कहर बढ़ता ही जा रहा था। उसे पीने की लत लग गई थी। घर लौटती बार वह टल्ली हो कर आता और आते ही पत्नी बच्चों की धुनाई करता। उसे न बच्चों की फिक्र थी,न घर की। पत्नी किसी तरह पति के होश में आने पर घर चलाने के लिए खर्च मांग लेती। फिर उसके बाद ही बाजार से आटा लाकर रोटी बना पाती।

एक दिन उसका पियक्क्ड़ पति शाम को किसी महिला को अपने साथ लेकर आया और बोला, “आज से यह तुम्हारी छोटी बहन हुई। वैसे भी दिन-प्रतदिन तुम्हारे ऊपर काम का बोझ बढ़ता जा रहा है।”

पत्नी ने जब इसका विरोध किया तो उसने पत्नी को पीट-पीटकर अधमरा कर रात में ही घर से बाहर निकाल दिया। बच्चों को भी साथ ही बाहर धकेल दिया।

जैसे-तैसे दिन बीत रहे थे एक दिन अचानक बबली के पेट में जोर का दर्द उठा। दवा के आभाव में वह तड़फ रही थी। घर पर फूटी कौड़ी भी नहीं थी। सत्या ने पति से बच्ची को अस्पताल ले जाने का आग्रह किया।

सामने पड़ी बोतल से गिलास में दारू डालते हुए किशन बोला, “मेरे पास टाइम नहीं है। अपने बाप, भाई को बुला ले। बात- बात पर उनकी ही तो प्रशंसा करते नहीं थकती। अब कोई क्यों नहीं आता? या फिर बुलावा भेजने के बाद भी कोई आने को तैयार नहीं हुआ? कोई मरे या जिए मेरी बला से।’ कहते हुए उसने शराब से भरा गिलास गट -गट करके अपने अंदर उतार दिया।

“देखो हारी बीमारी के ऐसे मौके पर ताने छोड़ कर अकल से काम लेना चाहिए। आप को मुझ से नफरत है तो इसका बदला इस अबोध बच्ची से क्यों ले रहे हो ? मैं सारी घरेलू दवाइयाँ दे कर देख चुकी हूँ। कल से बेचारी दर्द से तड़फ रही है। कुछ तो इस पर तरस खाओ। इंसान का इतना निर्दयी होना भी अच्छा नहीं। इतने निष्ठुर तो वे लोग भी नहीं होते जिनके औलाद ही नहीं होती, फिर आप तो बाल बच्चेदार हो।’

किशन पर पत्नी की बातों का कोई असर होता हुआ नहीं दिख रहा था। वह गिलास में एक के बाद एक पैग पर पैग बनाने में व्यस्त था। दर्द में चीखती , बिस्तर पर लेटी बबली के प्रति उसके मन में कोई सहानुभूति नजर नहीं आ रही थी।

“न बीमार बेटी को दवा न घर में आटा, दाल, चावल की चिंता। न बच्चों की फीस न किताबें कापियां न कपड़ा लत्ता। कहने मात्र को पति पत्नी है। अपने बच्चों की परवाह किये वगैर शराब ही जिस इंसान के जीवन का उदेश्य बन जाये वह इंसान नहीं राक्षस से भी बदतर है। बस शराब मिल जानी चाहिए। नहीं रहना मुझे ऐसे इंसान के साथ।” सत्या ने मन ही मन निर्णय लिया।

किशन के माँ -बाप छोटे बेटे के साथ शहर वाले मकान में ही रहते थे। घर पर उसे किसी का डर नहीं था। महीने -दो महीने बाद ही उनका गांव में आना हो पाता था। परन्तु घर से बाहर रहकर भी पल -पल की खबर उनके पास होती थी। लेकिन घर का बुजुर्ग होने के नाते उन्होंने कभी बेटे को समझाना जरूरी नहीं
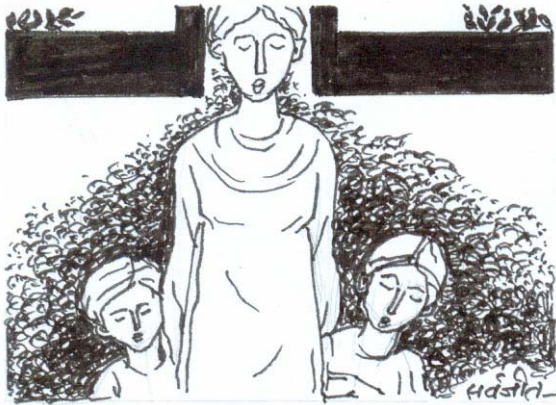
समझा। उन्होंने हमेशा बेटे की करतूतों को नजर अंदाज ही किया।

बेटे के टूटते परिवार को बचाने में उन्होंने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। कभी बहू,पोता -पोती की हालत व पीड़ा को नहीं समझा। सब कुछ मालूम होने के बावजूद भी उन्होंने अनभिज्ञता ही जताई। उनका मानना था कि यदि बहू चाहे तो वह उनके बेटे को सही रास्ते पर ला सकती है। उनके मन में शायद यही बात रही हो कि जोरू-जराने की लड़ाई से हमें क्या लेना देना।

रोज-रोज शराब के नशे में डूबे किशन से तंग आकर सत्या ने बच्चों सहित एक ही छत के नीचे उसी घर में अलग रहने का निर्णय ले लिया। वैसे भी उन दोनों के बीच नाम मात्र का सम्बन्ध था जिसे ज्यादा घसीटने से क्या फायदा?

पेट भर दो रोटी को मोहताज सत्या को माँ की बातें याद आ गई। 'बेटा माँ -बाप का मन दुखा कर दुनिया में कोई सुखी नहीं रह सकता।" और सत्या घुटनों में सिर छुपा फफक-फफक कर रोने लगी।

दिन भर किशन सत्या के सम्मुख कभी क्रोध, कभी द्वेष तो कभी नफरत का पात्र बन कर घूमता रहता। शीघ्र ही सत्या अपने दो बच्चों सहित अलग कमरे में रहने लगी। आपसी मन मुटाव के बाद दाम्पत्य-जीवन में दरार पड़ गई थी।

सास-ससुर भी उन दिनों छुट्टियां काटने गांव आये हुए थे। काफी साहस के साथ उसने उस दिन सास से पूछा था, माँ जी अलमारी की चाबी...?"

सत्या ने मायके से मिली अलमारी खोल कर देखी। नहीं! उसमें कुछ भी नहीं था। खाली लॉकर देख उसके पांव के नीचे की जमीन जैसे खिसक गई थी। उसके जेवरों का सेट जिसे,काफी शौक से पिता सब्जी सीजन में दिल्ली से खरीद लाये थे वह भी लॉकर से गायब था। ज्यादा पहनने का मौका भी कहाँ मिल पाया था? कहाँ चले गए सारे गहने ? वह समझ नहीं पा रही थी। रहस्य काफी दिनों बाद खुला।

"क्या करोगी सुन कर? तुम्हें तो मालूम ही है आजकल किश्नू बिलकुल बेरोजगार है। उसे रुपयों की सख्त जरूरत थी। अरे घर में रखी वस्तुओं पर तो सभी का समान अधिकार होता है। किशन तो फिर भी आखिर तुम्हारा पति है। पति पत्नी को भी कभी एक दूसरे की वस्तुएं पूछ कर लेनी पड़ती है क्या ? तुम्हारे मायके में ऐसी रिवाज होगी। भाई हमारे यहाँ तो जितना हक पत्नी का उतना पति का।' तर्क एवं व्यंग्य के साथ सास नें अपनी बात को वजनदार बनाने की कोशिश की।

'परन्तु माँ जी इस्तेमाल करना अलग बात है, उन्हें बिना बताये घर से उठा, बाजार में बेच देना दूसरी बात। पिता जी उसे मेरे लिए बड़े शौक से खरीद कर लाये थे। उन्हें जब मालूम पड़ेगा तो उनके दिल पर क्या बीतेगी? वह कैसे इतने बड़े दुःख से बाहर निकल पाएंगे? यदि हम कुछ बनवा नहीं पाये थे तो उनका दिया शराब में लुटाना कहाँ की भलामानसी है?"

सामने बैठे ससुर बड़ी देर से दोनों के बीच चल रही बहस सुन रहे थे। जब उन्हें लगने लगा कि पत्नी के तर्क बहू के सामने हल्के पड़ने लगे है तो वे अपने संयम पर काबू न रख सके और रौबीली आवाज में बोले, 'बहू गहनों के लिए सास के साथ झगड़ा करना उचित नहीं है। सारे माँ-बाप अपने बच्चों के लिए शौक से ही चीजें खरीदते हैं। पत्नी के लिए असली गहना तो उसका पति होता है। परन्तु हमें लग रहा है कि तुम्हरे अड़ियल रवैये से किशन भी नाखुश रहने लगा है। हम लोग गांव में न रहते हों परन्तु हर पल की खबर हमारे तक पहुँचती रहती है। हम लोग बहुत सह रहे हैं, लेकिन यह उलटा आचरण हमें न दिखाओ।' कहते हुए ससुर सत्या के कमरे से ऐसे लौटे जैसे कोई भयानक स्वप्न।

वह समझ नहीं पाई। वह मायके में पिता जी को गहनों के बारे में कैसे बताएगी? कभी न कभी तो माँ-बाप न सही पर भैया-भाभी तो पूछ ही सकते हैं ? कैसे उनसे कहूँगी कि उनके दामाद ने गहनों का सेट शरा..........ब..........., के लिए बेच दिया है। मन में उत्पन्न होते तरह -तरह के भय उसे अंदर तक रुला रहे थे।

विवाह से पहले तक सत्या का जीवन पूरी तरह माँ पर आधारित था। माँ हमेशा इसी बात का खयाल रखती थी कि सत्या क्या खाना पसंद करती,क्या नापसंद ? सत्या के लिए तैयार किये गए भोजन में उनके हृदय का स्नेह मिला होता था। हमेशा घर में पिता की आँखों का तारा बनने वाली मासूम सत्या एकाएक अकेली पड़ गई थी। पति के बदलते व्यवहार नें उसके लिए सारी दुनिया खाली कर दी थी।

और एक दिन किसी को बताये बिना ही सत्या ने जीवन का वह कठोर निर्णय ले लिया जिसे लेने से बेहतर कोई औरत प्राण त्यागना उचित समझती है। स्त्री की मायके से एकबार डोली उठती है उसके बाद अर्थी ससुराल से ही उठती है।

वह अपने बच्चों सहित मायके आ गई थी। अब उसके भाई

की शादी हो गई थी। अब माँ-बाप के अलावा उस परिवार में एक और सदस्य जुड़ गया था। पति के घर से कदम उठाने का निर्णय तो उसने ले लिया परन्तु क्या वह माँ-बाप व भाई का सामना कर पायेगी?

उसे अपनी डूबती हुई जिंदगी को बचाने,तथा बच्चों की शिक्षा-दीक्षा एवं पालन पोषण हेतु काम-धंधे की आवश्यकता थी। बच्चों को पढ़ा-लिखा कर उनका भविष्य संवारने की जिम्मेदारी भी अब उसके आगे पहाड़ के समान खड़ी थी। जिसके लिए उसे हर परिस्थिति से समझौता करना ही था।

इस समय जल्दी और आसानी से मिलने वाला काम तो 'आया' का ही हो सकता है। वह अपने लिए काम खोजने लगी। ईमानदार और भली औरतें आज मिलती भी कहाँ है? प्रायः नौकरानियां मालिक के घर से बाहर निकलते ही सामान उठाने की फिराक में रहती है। दो तीन दिन या फिर ज्यादा से ज्यादा हफ्ताभर भी वे एक जगह नहीं टिक पातीं क्योंकि उन्हें घरों से सामान उठाने कि आदत पड़ चुकी होती है। यही उनका धर्म एवं पेशा है।

सत्या प्रताड़ित परन्तु एक ईमानदार औरत थी। फिर उसे भी तो ऐसी जगह पर काम की तलाश करनी थी जहाँ उसके साथ-साथ बच्चों को भी आश्रय मिल पाये। शीघ्र ही उसे एक सभ्य परिवार में तीन वर्ष की अकेली बेटी को सँभालने का काम मिल गया था। पति -पत्नी पेशे से अध्यापक थे। उन्हें घर पर काम वाली 'आया' की बहुत आवश्यकता थी। सरोज ने उसे सशर्त काम पर रखा था। पहले वे उसका काम देख लेंगे, उसके बाद ही बच्चों को साथ ठहराने का फैंसला ले पाएंगे। काम के प्रति सत्या की कर्तव्य निष्ठां एवं व्यवहार को देखते हुए शीघ्र ही मैडम सरोज ने बच्चों को भी अपने यहाँ ही बुला लिया। उन्हें पास के स्कूल में दाखिला दिलवा दिया था। साढ़े नौ बजे तक वह अपने बच्चों को तैयार कर स्कूल भेज ,घर में झाड़ू -पोचा शुरू कर पाती।

सुबह लगभग साढ़े आठ बजे दोनों घर से निकल जाते थे। उसके बाद बेटी की देखभाल से लेकर बर्तन, कपड़े धोना, पोचा लगाना जैसे घर के सारे कामों की जिम्मेदारी सत्या की होती। बच्चों को सँभालने की कला में सत्या बहुत निपुण थी, क्योंकि पारिवारिक झंझटों से निकले उसे अभी ज्यादा समय नहीं बीता था। बच्चों के देखभाल व परवरिश की कुशलता में वह निपुण थी।

मालकिन सरोज मैडम के एक से एक अच्छे सूट वह अपने हाथों धोती एवं प्रैस करती, परन्तु उसके तन को उनमें से किसी की जरूरत नहीं पड़ती। माँ-बाप के घर में रहते हुए भी उसे किसी तरह की कमी नहीं रहती थी। अपने अच्छे -अच्छे सूट व् मनपसंद वस्तुएं वह जरूरतमंदों को देती रही है। आज उसे यदि इस दुर्दशा का सामना करना पड़ रहा है तो इसमें उस का क्या दोष?

अब शाम को यदि दम्पति को घर पहुँचने में किसी कारण वश देरी हो जाती तो भी उन्हें बेटी की फिक्र नहीं रहती थी। अब वे नाते-रिश्तेदारी, शादी-विवाह तथा यार दोस्तों की पार्टियों में शामिल होने लगे थे। घर पर उनकी बिटिया के साथ खेलने के लिए दोस्त व माँ समान असीम प्यार न्योछावर करने वाली 'आया' दोनों ही मिल गए थे।

संडे का दिन था। आज मैडम सरोज व उनका पति भी घर पर ही थे। परन्तु उस दिन ने सत्या के जीवन में फिर से तूफान खड़ा कर दिया। मेंनगेट की घंटी बजी। मैडम ने सत्या को जा कर दरवाजा खोलने के लिए कहा। सत्या के दरवाजा खोलते ही शराब के नशे में धुत उसका पति किशन सामने खड़ा था। 'सत्या कौन है?' मैडम के शब्द कानों में पड़ते ही वह चौंकी।

'जी दीदी वह ....।'

"कौन वह है, और किससे मिलना चाहता है ?' प्रश्न करते हुए मैडम के कदम मुख्य गेट की ओर बढ़ रहे थे।

दरवाजे के बाहर शराबी व्यक्ति को झूमते देख कर वह झल्ला उठी।

"कौन हो भाई? किस से मिलना है?"

नमस्ते करने की मुद्रा में जुड़े किशन के दोनों हाथ, लड़खड़ाती जुबान ,सीधे खड़े होने का जबरदस्ती प्रयास करते हुए सामने खड़ी सत्या की और इशारा करते हुए उसने कहा, "यह मेरी लाड़ी है।" कहते हुए अंदर झाँकने की कोशिश करने लगा।

"मेरे बच्चे भी यहीं रहते है। मैं आज इन्हें अपने साथ वापिस ले जाने ही आया हूँ। थोड़ी पी भी रखी है। इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। जब से यह बच्चों को ले कर घर से आई है न ढंग से खाना खाया है और न ही सो सका हूँ। जैसे इनके घर से निकलते ही मेरी भूख-प्यास भी इनके साथ ही निकल गई हो।" कहते हुए एक बार तो वह गिरते-गिरते बचा।

"बस इन्हें देख लिया,अब कोई चिंता नहीं। कहाँ -कहाँ नहीं ढूंढा इन्हें" और एक कदम दरवाजे के अंदर बढ़ाते हुए , "साब भी घर पर ही है क्या ? उन्हें भी दुआ सलाम करना चाहता था।"

"रुको ! अपनी मर्जी से अंदर कहाँ जा रहे हो?, तुम किसी साहब-वाहब से नहीं मिलोगे। बाहर ही खड़े रहो।" और अंदर से दरवाजा जोर से बंद कर दिया।

""क्यों यह यहाँ कैसे आ गया ? सत्या की ओर घूर कर देखते हुए मैडम ने सवाल किया।"

सत्या चौंक गई थी। वह खुद भी सवालों के घेरे में घिर गई थी। आखिर इसे यहाँ का पता किस ने दे दिया? यह यहाँ कैसे पहुंचा? सामने क्रोधित मुद्रा में खड़ी मैडम को वह क्या जवाब देती। परन्तु मैडम उत्तर की प्रतीक्षा में नजर टिकाये सत्या के मुंह की ओर ताक रही थी।

सत्या के मन में आगंतुक के प्रति तिरस्कार भाव था। परन्तु वह इस वक्त मैडम का सामना कैसे करती?

"यह आज ही यहाँ आया या इससे पहले भी यहाँ आता रहा है ? जरूर यह इससे पहले भी यहाँ आया हुआ है।" और पहाड़ से गिरते पत्थर के समान असंख्य प्रश्न सत्या के सम्मुख थे।

वह कुछ कहे उससे पहले ही मैडम ने सत्या पर भड़कते हुए कहा, कहीं ऐसा तो नहीं तू हमें ड्यूटी पर जाते देखती होगी, फिर उसके बाद अपनी मनमर्जी चलाती होगी। यहाँ पर इसका कब से इस तरह आना-जाना चला हुआ है ? तू चुप क्यों है , गूंगी बनने का ड्रामा मत कर। सब कुछ सच-सच बता दे। तू इससे फोन पर सम्पर्क करती होगी। तूने ही इसे अपना यहाँ का एड्रेस बताया होगा।"

"नहीं दीदी जो आप सोच रही हैं, वैसा कुछ भी नहीं है। मैं खुद असमंजस में पड़ी हूँ कि इसे यहाँ का पता किस से लगा ?"

"मुझे तुम से सफाई मांगने की कोई जरूरत नहीं, समझी। अभी के अभी अपना सामान बांध और बच्चों सहित यहाँ से चली जा। इससे पहले कि मैं अपना आपा खोऊँ, मुझे तुम्हारी शक्ल तक नजर नहीं आनी चाहिए।" कहते हुए वापिस अपने कमरे की ओर मुड़ गई।

दरवाजे पर बढ़ते हुए विवाद को देखते हुए महेश भी बाहर आ गया। 'क्या बात है? सरोज क्या हुआ?' "आकर इसी से पूछो इसी से ! हमारे पीछे न जाने क्या-क्या करती फिरती है? आज तक तो यही कहती फिरती थी, "मर भी जाऊं तो भी उसके हाथों की डाली लकड़ी मेरी देह को नसीब न हो। उसके प्रेमजाल में फंसकर तो मेरा जीवन नरक से भी बदतर बन गया है।" मुन्नी को अपने हाथों से दोनों टांगों के सहारे पकड़े खड़ी रहती है । नीचे गिरते दुप्पटे से सिर ढंकने का प्रयास करने लगती है।

"लोग आश्रय पाने के लिए न जाने कैसे-कैसे ढोंग करते हैं। हमें नहीं रखनी ऐसी नौकरानी। क्या नहीं किया इसके लिए? इसे क्या कमी रखी थी? फिर भी इसने वही किया जिसका हमें डर था। कभी इसे घर का नौकर नहीं समझा। बच्चों सहित परिवार के सदस्यों की तरह बर्ताव किया। परन्तु आज जो देख रहें हैं अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा है। यह शरीफों और इज्जतदार लोगों का घर है कोई अनाथों और शराबियों का अड्डा नहीं।"

जाने से पहले सहमी हुई सत्या धीमी चाल से मैडम के कमरे में बैड के पास जाकर खड़ी हो गई। उसे इस समय मैडम के कमरे में अजनबीपन महसूस हो रहा था। उसे लगा था जैसे इस कमरे में आज वह बहुत दिनों बाद आई हो। इस कमरे में बीते दिनों की बातें उसके मन मस्तिष्क में घूमने लगी थी। पहले मैडम बात-बात पर सत्या -सत्या को आवाज लगाती थी। कभी जी करता तो कहती "आज जरा गरमा-गरम सूप बना दो", कभी मिक्स वेजिटेबल तो कभी टॉमेटो सूप। इस वक्त उसके कानों में वही स्वर गूँज रहे थे, जिसे सुनने के लिए उसके कान आज के बाद तरसेंगे।

सत्या का काम ही था मैडम के परिवार को तरह-तरह के भोजन पका-पका कर खिलाना। परदे के पीछे खड़ी सत्या मैडम की ओर देखती रही। चोर की तरह खड़ी रहते हुए उसे संकोच हो रहा था। आज स्वयं को वह एक भिखारिन की तरह महसूस कर रही थी।

"देखो तुम अभी के अभी यह घर छोड़ कर चली जाओ।" मैडम ने तीखी नजर से सत्या की ओर देखा। उनकी नजर में क्रोध, झुंझलाहट और अवहेलना का भाव था। आज तक मैडम के घर बिताये दिन उसके लिए पलभर में ही पूर्वजन्म, या किसी स्वप्न के समान बन चुके थे।

मैडम के सामने सत्या बहुत गिड़गिड़ायी। इस परिवार से उसे अपनों से भी ज्यादा इज्जत और स्नेह मिला था। परन्तु जैसे भाग्य ने ही उससे मुंह फेर लिया था। इस घर से उसका जैसे अन्न जल खत्म हो गया था। पल भर में ही सारी परिस्थितियां इतनी विपरीत हो गई थी कि उसे हर हाल में अब यह घर छोड़ना ही पड़ेगा। महीनों की सेवा का फल पल भर में उसके हाथों से फिसल चुका था।

रोज दिन रात जिस पति को श्राप और गालियां देती थी, आज वही विपत्ति बन कर फिर दरवाजे पर खड़ा था। सत्या ने अपने आँचल से आँखों से छलछलाते आंसुओं को पोंछते हुए दुपट्टे से सिर ढक लिया था। वह अपने कमरे की ओर जाती है। अपनी किस्मत पर आज वह खुल कर रो लेना चाहती है। परन्तु उसने अपने आप को संभाला।

"अपनी-अपनी किताबें कापियां इकट्ठी करके बस्ते में डालकर चलने को तैयार हो जाओ।" वह बच्चों से कहती है और इधर-उधर बिखरे सामान के साथ अपने अधूरे सपनों को समेटने लग जाती है।

"मम्मी लेकिन आज तो छुट्टी का दिन है। आप ही तो कह रही थी कि आज हम सारे लोग अंकल-आंटी के साथ मंदिर जायेंगे।

"बेटा लगता है हम से अंकल-आंटी की तरह हमारे भगवान भी रूठ गए हैं। वे नहीं चाहते कि हम लोग उनके दर पर आएं और खुशियों की झोलियाँ भर कर ले जाएँ।"

सरोज गुस्से में सत्या के कमरे में पहुँचती है, और जल्दी-जल्दी सामान समेटने में लग जाती है। दोनों हाथों में थैले उठा कर दरवाजे के बाहर रख देती है। उनके बाहर निकलते ही पीछे से दरवाजा इतनी जोर से बंद करती है, जिसकी गूंज काफी देर तक घर के सन्नाटे को भंग कर देती है। सत्या को जैसे पांव के नीचे धरती फटने का अहसास हो आया। हालत के नाखूनों ने सत्य के दिल को लहूलुहान कर दिया था। एक बार उसे लगा जैसे मैडम उसे जाने से रोक लेगी परन्तु यह सुनने की प्रतीक्षा में ही वह घर से काफी दूर निकल गई थी।

समय के साथ- साथ घर से दूर गए आदमी का अभाव स्वयं भर जाता है। कुँए से एक दो लोटे पानी निकाल लेने से कुँए में कोई कमी नहीं आती। एक दो दिन तो सरोज तथा उसके पति को बच्चों की चहल-पहल उछल-कूद याद सताती रही। परिवार में सत्या की भूमिका उन्हें रह-रह कर याद आती रही।

मानसून की छुट्टियों में मैडम ने गांव जाकर अपनी सासु- माँ को मना कर साथ रहने को राजी कर लिया था। शीघ्र ही परिवार सत्या के अभाव से उभर गया। बेटी सँभालने के लिए अवैतनिक 'आया' मिल गई थी। जिसे केवल दो वक्त रोटी और मैडम के तन से उतरे कपड़ों में ही संतुष्ट करना था। और सब काम रोजमर्रा की तरह पटरी पर आ गए थे।

सरोज मैडम के घर से निकलने के बाद सत्या एक बार फिर बच्चों सहित बेसहारा हो गई थी। उसके पांव बढ़ रहे थे पर ठिकाना कोई नहीं था। सामने कोई मंजिल न दिखते हुए उसने माँ-बाप के घर की राह पकड़ी। माँ-बाप के घर पर भाभी से भी तो उसकी घनिष्टता नहीं थी। लेकिन वह जा भी कहाँ सकती थी?

किशन कुछ देर बीवी-बच्चों के साथ परछाई की तरह साथ-साथ चलता रहा। रास्ते में उसकी नजर शराब के ठेके पर पड़ी। जो अभी तक देवता समान पीछे -पीछे चल रहा था अचानक उसने राक्षस का रूप धारण कर लिया था। उसने सत्या तथा बच्चों से हाथापाई करके संचित जमा पूंजी छीन ली थी। किशन के कदम नशे में झूमने के लिए ठेके की ओर तथा सत्या के कदम सिर ढकने को छत की तलाश में माँ-बाप के दहलीज की ओर बढ़ रहे थे।

सरोज मैडम के आश्रय से बेसहारा होने के उपरांत पति के व्यवहार व लापरवाही से परेशान सत्या को बच्चों के प्रति पिता और माँ दोनों की भूमिका निभानी थी। परन्तु वह अपने टूटे हुए मन को किस तरह फिर से मजबूत बना पायेगी।

बच्चों के स्कूल बैग ही उसकी अमूल्य दौलत थी। जिन्हें पीठ व सिर पर लादे उसके कदम पिता के घर की ओर बढ़ रहे थे।

बोरी पर बैठी सत्या का सिर चकरा रहा था। आँखों से कुछ भी साफ नहीं दिखता। रोते-रोते शायद आँखें काफी कमजोर हो गई है। भाई-भाभी भी अजनवी सा व्यवहार करने लगे हैं। आज उसे मायके का हर सदस्य अजनबी लगता है। उनका व्यवहार समझ नहीं आता। फिर जी में आया कि माँ के गले लग कर खूब रोये, मगर मन के भाव को दबा कर वह उठ खड़ी हुई और माँ का अनुकरण करने लगी। ऐसी भावनाएं कितनी बार उसके मन में उठी ...आत्महत्या कर ले.... धरती फट जाये..... कहीं भाग जाये ..... दूसरी शादी कर ले या फिर माँ के सीने से लिप्ट खूब रो ले।

अचेत सी बोरी पर लुढ़की वह सोच रही थी मरने से आसान कुछ नहीं ....। कठिन तो जीना है। .... वह क्यों जीना चाह रही है? पति, सास-ससुर साथ नहीं दे रहे , भाई-भाभी का व्यवहार भी अनुकूल...... नहीं। माँ-बाप के अतिरिक्त कौन साथ देगा ? इनके सिवा कोई भी तो सहारा नहीं। आत्महत्या कर लेगी तो सभी को शांति मिल जाएगी। परन्तु बबली, सोनू ! इनका क्या होगा ? कौन इनकी देखभाल करेगा। इस संकट की घडी में इन्हें किस के सहारे छोड़े जा रही हूँ मैं? मरने के लिए तो केवल पलभर के साहस की जरूरत है परन्तु जीने के लिए तो कदम-कदम पर साहस की जरूरत है। सोचते हुए हर बार अबोध बच्चों का चेहरा उसके सामने आ जाता।

अबकी बार वह 'आया' बन किसी परिवार में दिन रात मेहनत करके सहानुभूति की पात्र नहीं बनना चाहती थी। उसने इंडस्ट्रियल एरिया में जा कर दो तीन फैक्ट्रियों में नौकरी के लिए एप्लीकेशन दे दी। इस बार उसने नौकरी पाने के लिए काफी दौड़ धूप की थी।

कुछ दिनों में ही उसे ब्लेड फैक्ट्री से चिठ्ठी मिल गई। सत्या की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उसे अपनी डूबती नैया को बचाने का सहारा मिल गया था। ड्यूटी ज्वाइन करने में उसने कोई देरी नहीं की।

माँ-बाप ने बेटी का परिवार बसाने के एक बार फिर भरपूर प्रयत्न किये। किशन के माता-पिता से उनके घर पर जा कर दोनों की जिंदगी बर्बाद होने से बचाने के लिए मिलकर सहयोग करने की गुहार लगाई। परन्तु वे अपने बेटे की बिल्कुल भी गलती मानने को तैयार नहीं थे। उनका मानना था कि बहू चाहती तो उसे सुधार सकती थी। परन्तु उसे लोगों के घरों में बर्तन धोने या फैक्ट्रियों में काम करना अच्छा लगा। इसमें हमारा या हमारे बेटे का क्या दोष? क्या सारी उम्र वह ऐसे ही काट पायेगी? घर पर जब बात नहीं बनी तो समधी के दफ्तर में जा कर भी उन्हें समझाने की कोशिश की।

किशन के माँ-बाप से बात करना व्यर्थ जान उन्होंने ग्राम

पंचायत के कार्यालय में जाकर दम्पति के झगड़े का समझौता करवाने हेतु अर्जी दे दी। पंचायत प्रधान ने जनरल हाउस में दोनों पक्षों को बैठा कर मामला सुलझाने का प्रयास किया परन्तु लड़के वाले अपनी गलती मानने को तैयार नहीं हुए। दो तीन बैठकों में भी जब मामला सुलझते नहीं दिखा तो पति पत्नी के झगड़े का मामला थाने तक पहुँच गया। पुलिस ने भी एकाध बार समन भिजवा कर दोनों पक्षों को थाने में हाजिर होने के आदेश दिए। दोनों पक्षों पर दबाव बना कर समझौता करवाने की कोशिश की। परन्तु सकारात्मक परिणाम होते न देख मामला महिला आयोग के क्षेत्राधिकार का होने के कारण वहां को स्थानांतरण कर दिया। महिला आयोग भी मामले को सुलझाने में सफल नहीं हो पाया।

महीने में एक दो बार शहर आने-जाने के खर्च से दुखी माँ बाप ने कोर्ट का सहारा लिया। योग्य वकील से सलाह मशविरा किया गया। केस की फीस तय हुई और मामला कोर्ट में चलने लगा।

शुरू-शुरू में तो किशन नियमित पेशियों पर आता रहा। केस को चलते लगभग दो वर्ष होने लगे थे। उसे लगने लगा था कि कोर्ट-कचहरी के झंझट से इतनी जल्दी छुटकारा मिलने वाला नहीं। अचानक किशन कहीं गायब हो गया। उसने पेशी पर आना तथा समन लेना भी उचित नहीं समझा। कोर्ट ने किशन को कोर्ट में हाजिर करने का उसके माता -पिता पर दबाव बनाया तो उन्होंने भी पीछा छुड़ाने के अंदाज में वकील के माध्यम से दलील दी कि उनके बेटे का मानसिक संतुलन ठीक नहीं है और वह पिछले कई सालों से लापता है।

सत्या के माँ -बाप किशन की ओर से दायर उत्तर से असंतुष्ट थे। खर्च की परवाह किये बगैर उन्होंने केस को न्याय न मिलने तक चलाते रखने का आग्रह वकील से किया।

फैक्ट्री में रोजगार मिलते ही सत्या के जीवन में आश्चर्य- जनक परिवर्तन आ गया था। उसने बच्चों का मायके में ही नजदीक के स्कूल में दाखिला दिलवा दिया था। वह बच्चों के सारे शौक जैसे अच्छे कपड़े,अच्छे जूते सारे संसाधन जुटाने में समर्थ थी। अब पेशी पर जाने हेतु उसे खर्चे की परेशानी भी नहीं होती थी।

माँ बाप बेटी की किस्मत पर आंसू बहाने को मजबूर थे।

"ये लड़की भी न जाने कैसे कर्म करके जन्मीं है। जिसके जीवन में सुख लिखा ही नहीं।"

गांव व डाकघर सालाना,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश

लघु कथा

बड़ा किसान

● रामकुमार आत्रेय

बिल्ली के बच्चे की आंखें खुलीं तो उसने खुद को अकेला पाया। आलस्य से उसका तन बोझिल सा था। वहीं लेटे-लेटे उसने अपनी मां को पुकारा- "म्याऊं, म्याऊं।"

बिल्ली घर के दूसरे हिस्से में एक चूहे के बिल पर नजर गड़ाए बैठी थी। बच्चे की पुकार उसे सुनाई जरूर दी, पर वह वहां से नहीं हटना चाहती थी। इसलिए नहीं हटी। ठीक तभी बच्चे ने उसे फिर से पुकारा। पुकार में पहले से कहीं ज्यादा आग्रह था।

बिल्ली न चाहते हुए भी वहां से उठी और बच्चे के पास आकर बोली, "क्या है? क्यों चिल्ला रहे हो?"

"मां, मुझे भूख लगी है, दूध पियूंगा।" बच्चे ने मां के गले में अपनी बाहें डालते हुए कहा।

"आज दूध नहीं मिलेगा। मैं चूहा मार कर ला रही हूं। थोड़ा इंतजार करो।" बिल्ली ने उसे प्यार से समझाया।

"मां, क्यों नहीं मिलेगा दूध? मैं तो दूध ही पियूंगा। सिर्फ दूध।" बच्चा मचल गया।

"बेटा, आज इस घर की भैंस बीमार हो गई है। दूध नहीं दिया उसने। इसलिए हमें भी दूध नहीं मिलेगा।" बिल्ली ने समस्या सामने रख दी।

"मां, क्या जरूरी है कि हम इसी घर में रहें? चलो, उस बराबर वाले घर में चलें। बहुत बड़ा घर है। कल जब मैं तुम्हारे कहे अनुसार इस घर की पुरानी छत पर खेल रहा था, तब बराबर वाले घर में झांक कर देखा था। तीन-तीन गाड़ियां खड़ी हैं वहां। चलो मां, वहीं चलें।" बच्चे के अनुरोध में आग्रह भी शामिल था।

"बेटा रे, तीन-तीन गाड़ियां जरूर हैं वहां, पर भैंस तो एक भी नहीं। वह एक बड़े किसान का घर है। पंद्रह एकड़ जमीन है उस किसान के पास। पर वह पशुपालन को छोटा काम समझने लगा है। पशुओं के गोबर से उसे बदबू आती लगती है। दूध मोल लेता है वह। मुझे और तुम्हें वहां कुछ भी नहीं मिलेगा। दूध अलमारी में बंद रहता है। यह छोटे किसान का घर ही अच्छा है। गरीब जरूर है, पर भैंसें ज्यादा रहती हैं। शाम को दूध जरूर मिलेगा। समझा न।" बिल्ली उसे प्यार से सहलाते हुए सुलाने की कोशिश करने लगी।

864-ए/12, आजाद नगर, कुरुक्षेत्र,
हरियाणा-136 119, मो. 0 94162 72588

कविता

लौट आओ अश्व

● डॉ. रामनिवास 'मानव'

होकर जिसकी पीठ पर सवार
दौड़ाता लाया था जिसे मैं
बिन चाबुक, बिन मार,
वही अश्व
अचानक अड़ गया,
बीच राह में बिगड़ गया,
और गिराकर मुझे
गोदते हुए मेरा जिस्म
अपने पैने खुरों से
दौड़ता जा रहा है सरपट
टपटप-टपटप!

उसकी मंद होती टापों से
मैं लगाता हूं अनुमान-
बहुत दूर जा चुका है वह।
मैं कराहता हूं
और दबी आवाज में
पुकारता हूं : लौट आओ अश्व,
मेरे यौवन, ओ प्यारे वक्त!

'अनुकृति', 706, सेक्टर-13, हिसार,
हरियाणा-125 005
मो. 0 80535 45632

नई कलम/लघु कथा

मजबूरी

● नितिका शर्मा

कॉलेज पूरा हो गया था। राखी की शादी कुछ दिनों बाद थी। सभी दोस्तों को निमंत्रण पत्र मिल गए, सभी जाने की तैयारी के लिए खरीददारी करने लगे। लेकिन उसकी सहेली गुड़िया थोड़ी चुप सी थी। साथ तो होती पर, सबमें अकेली। घूमकर शाम को घर पहुंची।

'आ गई तुम, गुड़िया' मां ने पूछा, लेकिन वह चुप थी। जवाब नहीं दिया। फिर अचानक बोली, "मां राखी की शादी है। अगले हफ्ते हम सब दोस्तों को बुलाया है, पर मैं तो ना जा पाऊंगी।"

मां एकाएक बोली, "अरे पगली मैंने रोका है, क्या? चली जाना तेरी इतनी अच्छी सहेली रही है वो।"

"पर मां वो तो इतने ऊंचे खानदान से हैं और कहां हम! ऊपर से वो राजपूत घराने की और हम!" उसकी आंखों से आंसू बहने लगे।

सिसकती हुई गुड़िया बोली, "मां, हम दलित हैं, उसने तो सहेली समझकर बुलाया पर, हो सकता है मेरे जाने से उसकी दादी और माता-पिता नाराज हों, मेरे पास उसको शुभकमनाओं के अलावा कुछ देने के लिए नहीं है।"

मां सब सुनकर दरवाजे के पास खामोश खड़ी थी। अचानक थोड़ा रुककर बोली, "मैं तो तुम्हारी इतनी पुरानी दोस्तों में ये जाति का जाल भूल गई थी, पर तू उदास न हो। शादी में न जा पाना तेरी मजबूरी है, कभी न कभी वह ससुराल से जरूर यहां तुझ से मिलने आएगी। मैं तेरी मां हूं। तेरा दर्द समझ सकती हूं, पर बेटी कुछ मजबूरियां हमें इतना बेबस कर देती हैं, कि हम चाह कर भी कुछ नहीं कर पाते।"

गुड़िया यह सुनकर अंदर चली गई। "मेरा मेरा यही कसूर है न कि मैंने तेरी कोख से तेरे घर में जन्म लिया है और मैं गरीब दलित खानदान में पैदा हुई हूं। मां ये मजबूरी नहीं, अभिशाप है। आज मेरे लिए कल किसी और के लिए।" गुड़िया सिसकती कहती रही, "क्यों है यह, कैसी है यह मजबूरी?"

एनबीएच (3) गिरिगंगा गर्ल्ज हॉस्टल, हि. प्र. विश्वविद्यालय,
समरहिल, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 005, मो. 0 94187 21827

कविता

गीत कहो

● जयप्रकाश श्रीवास्तव

उजड़े घर
सिसके आंगन
गीत कहो
किस चौखट रख दूं।

मौसम बागी
मेघ शिकारी
खेत हो गए
आज भिखारी
फसलें सब हो गईं हवन
दोष कहो
किसके सिर मढ़ दूं।

मछली बुनती
जाल अचंभा
तट पर मांझी
नोचें खंभा
नदी रेत में हुई दफ़न
नाव कहो
किस खूंटे कस दूं।

जहरीली है
हवा समय की
लहर पंछियों में
है भय की
कहां गया वो अपनापन
रिश्तों को
किस तरह परख लूं।

आई सी 5, सैनिक सोसायटी,
शक्तिनगर जबलपुर, मध्य प्रदेश-4802 001,
मो. 0 78691 93927

साहित्यिक यात्रा संस्मरण

अदब की दुनिया के जगमगाते सितारों से मिलना जैसे ज़ियारत हो गई

● अशोक दर्द

पहले दिन तय हुआ था कि सुबह ठीक साढ़े सात बजे घर से निकल पड़ेंगे। ताकि अंधेरा होने से पहले शिमला पहुँच जायें। अतः दूसरे दिन यानि 22 मई को मैं सुबह रोज की तरह जल्दी उठ गया। जिस दिन कहीं जाना हो उस रात मुझे नींद कम ही आती है। बार-बार मेरा अवचेतन मन मुझे हिदायतें देता रहता है, सोये मत रहना। सुबह लेट न हो जाना आदि-आदि। आज भी नींद पूरी नहीं हुई थी। फिर भी.. तैयार होकर, अपना सामान बैग में डालकर ठीक साढ़े सात बजे मैं कार पार्किंग पद्धर ग्राउंड बनीखेत पहुँच गया था। पंजपुला में सुभाष साहिल और जगजीत आजाद मेरा इंतजार कर रहे थे। ठीक पौने आठ बजे मैं पंजपुला पहुँच गया और उन्हें अपने साथ लेकर चल पड़े शिमला की ओर। हमें अपनी राजधानी पहुँचने के लिए लगभग चौदह घंटे (बस द्वारा) लग जाते हैं। हमारा जिला राजधानी से दूर होने के कारण आज भी कई असुविधाओं से दो-चार होना पड़ता है वजह शायद यह दूरी भी हो। राजधानी की सुख सुविधाएँ चम्बा तक पहुँचते- पहुँचते शायद थक सी जाती हैं। इसलिए ही शायद लोग यहां आना ही नहीं चाहते। खैर, आगे चलते हैं। हम दुनेरा के रास्ते निकले। बनीखेत से दुनेरा लगभग 35 कि.मी है। और दुनेरा से नूरपुर भी शायद इतनी ही दूरी पर है। दुनेरा से सदवां तक सड़क इतनी तंग है कि दूसरी गाड़ी को पास देना कठिन हो जाता है। दुनेरा और सदवां के बीच का क्षेत्र पंजाब के जिला पठानकोट में पड़ता है। दुनेरा होते हुए हम लगभग साढ़े नौ बजे नूरपुर पहुँच गये थे। हमने वहां सड़क की बगल में ठेले वाले से नींबू पानी पिया और तरबूज खाया तो थोड़ी सी गर्मी (उमस) से राहत मिली। सूरज भगवान जैसे-जैसे दिन चढ़ रहा था और गर्म हुए जा रहे थे। यूं भी हम पहाड़वालों को मैदानों में रहने की आदत नहीं होती और गर्मी औरों की बनिस्पत ज्यादा लगती है।

हमने कोटला से आगे 32 मील नामक स्थान से रानीताल के रास्ते पर पर गाड़ी डाल दी। बत्तीस मील से रानीताल लगभग 45-50 किलोमीटर है। वहां डा. विजय पुरी भी मिल गये। हमने उन्हें वहां मिलने को कहा था वो भी हमारे साथ शिमला ही जा रहे थे। ज्वाला जी होते हुए जब हम नादौन पुल के पास पहुँचे तो दाहिनी तरफ एक खूबसूरत होटल है गजल। हमने वहां चाय पीनी चाही। गाड़ी अन्दर पार्क कर हम होटल में जा बैठे। वेटर ने आर्डर मांगा तो हमने उसे पूछ ही लिया कहां से हो ? तो उसने बताया- चंबा के रजेरा गाँव से हूँ। मैंने पूछा आपके साहब कहां हैं? उसने बताया- यहीं हैं। वे मेरे फेसबुक मित्र भी हैं और बनीखेत के पास गांव डूहका के हैं। पेशे से प्रशासनिक अधिकारी (एच ए एस) हैं। हमने मिलने की इच्छा जाहिर की तो वह लड़का नीचे कमरे में गया और हमारा संदेश दिया तो वे तुरंत हमसे मिलने ऊपर आ गये। गणेश दत्त ठाकुर एक प्रशासनिक अधिकारी नहीं अपितु हमें ऐसा लगा जैसे हम उनके घर अपने गांव में उनसे मिल रहें हों। बेहद आत्मीयता-परिपूर्ण स्नेह। लगभग पौने घंटे तक उनसे आत्मीय परिचर्चा होती रही। चाय पी। फिर हम सुखद अनुभूतियों की पोटली बांध वहां से रुखसत होने लगे तो उन्होंने वापिसी में रात वहां रुकने का भरपूर आग्रह करते हुए हमें विदा किया।

कहते हैं दिल को दिल की राह होती है, बिलासपुर में सुशील पुण्डीर जी से मिलने की तमन्ना थी जो हाल ही में संयुक्त निदेशक उच्च शिक्षा पदोन्नत हुए थे पुराने साहित्यिक मित्र हैं। इसलिए इच्छा थी कि उन्हें रूबरू बधाइयाँ देते चलें। परन्तु समय की कमी थी इसलिए उनके पास जाने कि योजना टाल दी थी। परन्तु जब हम कन्दरौर के पुल को पार करके कन्दरौर बाजार में पहुँचे तो वे आगे सड़क में ऐसे खड़े थे जैसे हमारा ही इन्तजार कर रहे हों। उन्होंने बताया-'मैं भी कहीं जा रहा था, यह गाड़ी आती देखी तो रुक गया'। पुण्डीर साहब अपनी अर्धांगिनी के साथ बड़ी गर्मजोशी से हमसे मिले। वहीं एक परिवार सुभाष साहिल के दोस्त का रहता है। परिवार के मुखिया स्वयं नायब तहसीलदार हैं जबकि बेटा.. .हाई कोर्ट में प्रेक्टिस करता है। बहुत ही आत्मीय परिवार है। बहू तो साक्षात देवी है। उनके घर में हम एक बार पहले भी ठहर चुके थे। सुभाष साहिल ने फोन किया तो वे भी वहां आ गये। फिर पास ही उनके आवास पर जाना हुआ। वहां नींबू चाय पी। फिर इन आत्मीय जनों से विदा लेते हुए पुण्डीर साहब आगे चले गये

और हम शिमला की तरफ। अभी हमने शुभम के कॉलेज में भी जाना था। कन्दरौर से लगभग पांच-छह कि.मी. शिवा इंजीनियरिंग कॉलेज है। यहां शुभम अंतिम वर्ष का विद्यार्थी है। लगभग 15 मिनट के सफर के बाद हम उसके कॉलेज पहुँच गये। चांदपुर से ऊपर कॉलेज तक की सड़क बड़ी ही संकरी है और ऊपर से बिल्कुल सीधी चढ़ाई। ऊपर पहाड़ी पर पहुँच कर फिर उतराई शुरू हो जाती है। उतराई पर सबसे पहले बाईं तरफ एक बिल्डिंग है, शायद यह लड़कियों का हॉस्टल है। बाहर एक बोर्ड टंगा है अंग्रेजी में। जिसका आशय है कि आप कैमरे की नजर में हैं। कॉलेज गेट पर सिक्यूरिटी वालों ने बिना पूछे ही गेट खोल दिया। शायद उन्होंने दोनों लड़कों शुभम व प्रदीप को आते देख लिया था।

हॉस्टल की जिन्दगी का भी अपना अलग ही आनन्द होता है। दूर-दूर से आये अजनबी उम्रों के रिश्तों में बंध जाते हैं। एक के घर से कोई मिलने आये तो सबको लगता है अपने ही घर से कोई आया है। हम सीढियां उतरते हुए शुभम के कमरे में पहुँच गये। जो भी छात्र सीढ़ियों पर मिला उसने झुक कर पैर छुए। हृदय की अतल गहराइयों से संवेदना हिलोरे लेने लगी। लगा, हॉस्टल में बेटे का आचरण अच्छा है। कैंटीन के मालिक से मिलवाया फिर बरामदे में वार्डन से मिलवाया और अन्दर कमरे में पहुँचते ही मैं बिस्तर पर लेट गया। सचमुच मैं उस बिस्तर की छुअन महसूस करना चाहता था जिस पर मेरा बेटा घर से दूर रहकर रोज इसी बिस्तर पर सोता है। कमरे का न. 409 था। अन्दर भगत सिंह की पेंटिंग बनी थी दीवार पर। देशभक्ति का यह जज्बा आज के नौजवानों में अभी जिन्दा है, मन को सोच कर संतोष मिला। शायद कुछ ऊल-जलूल भी लिखा था परन्तु वह सब स्टिकर लगाकर ढक दिया गया था। बेटा श्री-श्री रवि शंकर का आर्ट ऑफ लिविंग का कोर्स किये है अतः रोज योग करता है। शायद उस महान आत्मा के आशीर्वाद का भी असर रहा होगा अच्छे संस्कारों के लिए। कमरे में एक तरफ दीवार पर एक सूचना भी लिखी थी '-कृपया तेल, साबुन, टूथपेस्ट ना मांगें, अपना खुद का इस्तेमाल करें हमने सबका ठेका नहीं ले रखा है : 409 द्वारा फ्लोर हित में जारी।' पढ़कर मेरे होठों पर मुस्कुराहट तिर आई। होस्टल में दोस्त तेल साबुन तो क्या एक दूसरे के कपड़े तक उठा कर पहन लेते हैं।

शुभम इतने में ठंडा ले आया और सभी ने ठंडा पिया और फिर हम वहां से रुखसत हुए। अब तक समय लगभग 4.30 बज गये थे। घर फोन किया तो बनीखेत में बारिश हो रही थी जबकि बिलासपुर में सूरज अभी भी आग उगल रहा था। बिलासपुर शहर से होते हुए हम शिमला की तरफ निकल पड़े थे। शिमला की चढ़ाई पर दाड़लाघाट तक ट्रेफिक बहुत ज्यादा होती है। कारण दाड़लाघाट में सीमेंट फैक्टरी है। बहुत से ट्रक यहां सीमेंट ढोने में लगे थे। रात के लगभग 8.30 बजे हम घणाहट्टी पहुँचे थे। डा. कर्म सिंह जी जो हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी शिमला में अनुसन्धान अधिकारी हैं, इस कवि सम्मेलन के आयोजक थे। उनसे संपर्क किया तो उन्होंने लाईब्रेरियन देव राज जी से बात करवाई। उन्होंने हमें आगाह करते हुए कहा कि राईटर होम में मदन चौकीदार कह रहा है कि नहा धोकर व खाना खाकर ही आयें शिमला में पानी नहीं है। हमने फिर मदन जी से बात की और उसके पास ही रोटी खाने का आग्रह किया तो वह हमारे आग्रह को ठुकरा न सका और जैसे-तैसे उसने पानी का प्रबंध भी किया और रोटी का भी। जब हमने शिमला शहर में प्रवेश किया तो लगभग नौ बज चुके थे। जगमगाती रौशनी ऐसे लग रही थी जैसे पहाड़ों की रानी ने सितारों से सजा खूबसूरत लिबास पहना हो। पुराने बीएस स्टैंड से होते हुए जब हम टिम्बर हॉउस पहुंचे और टिम्बर हाउस से अकादमी दफ्तर की तरफ गाड़ी चढ़ाई तो मदन जी स्वयं नीचे आ गए थे। उन्होंने गाड़ी को सुरक्षित स्थान पर स्वयं पार्क करवाया और हमें जल्दी-जल्दी राइटर होम पहुँचने को कहा, तेज हवा के साथ जोर की बारिश शुरू हो गई। हम तो सूखे ही पहुँच गये परन्तु जगजीत और मदन थोड़ा गाड़ी पार्क करते रह गये और भीग गये थे। मौसम ने झमाझम बरस कर जैसे हमारा स्वागत किया हो। सारा दिन जो हम गर्मी से झुलसे थे अब हमारे तन मन में ठण्डक की फुहार ने हरियाली बीज दी थी। दिनभर की झुलसाती गर्मी व थकान रिमझिमी बूंदों के आगोश में कब उतर गई पता ही नहीं चला। सुबह जब जगे तो सात बज गये थे। आज ग्यारह बजे गेयटी में कहानी पाठ, पत्र वाचन व कवि सम्मेलन था।

हम नाश्ता करके लगभग साढ़े नौ बजे राइटर होम से माल की सड़क पर टहलते हुए गेयटी के लिए निकल पड़े। सुबह माल पर खूब चहल-पहल थी। राजधानी की सड़कें बन संवर कर अपने-अपने सफर में व्यस्त हो गई थी। देवदारों की पत्तियों को छूकर आती हवा आगन्तुकों का जैसे स्वागत कर रही थी। गेयटी थियेटर एक ऐतिहासिक भवन है। बरसों का इतिहास इसकी दीवारों को छूकर महसूस किया जा सकता है, बशर्ते कि किसी में

...इतने में कवि श्रीनिवास श्रीकांत भी आ गये। सरस्वती के इस साधक को छूकर मैंने मानों मां सरस्वती को छू लिया हो। अन्दर जहाँ कार्यक्रम हो रहा था, वहां हाल में उन्हें कुर्सी तक छोड़ मैं गद्गद हो गया था। धीरे-धीरे प्रदेश भर से आये विद्वान एकत्रित हो रहे थे। ...जब तक रिज पर अंधेरा नहीं उतरा हमने आशियाना रेस्टोरेंट में कुल राजीव पंत, एस. आर. हरनोट, बद्री सिंह भाटिया व कवि श्री आत्मा रंजन जी का सान्निध्य लेते हुए खूब साहित्यिक चर्चा की। ये सभी लोग हिमाचल की अदबी दुनिया के जगमगाते सितारे हैं।...बिलासपुर पहुँचे तो शब्द मंच के संपादक जय कुमार शर्मा जी से मिलने उनके आवास पर पहुँच गये।

महसूसने की अन्तर्शक्ति विद्यमान हो। गेयटी में एक पेन्टर की पेंटिंग्स की प्रदर्शनी लगी हुई थी। एक से बढ़कर एक पेंटिंग थी। वह कलाकार पेंटिंग के साथ-साथ अपनी राजनितिक समझ व रुझान को भी प्रदर्शित कर रहा था। कुछ देर, हमने उसके आगे रुककर उसकी पेंटिंग्स व राजनीतिक समझ की तस्वीर खींची। फिर खयाल आया एक कलाकार तो सबका होता है। वह सामजिक धरोहर की तरह होता है। उसे राजनीतिक खेमेबाजी से बचना चाहिए। यह मेरा व्यक्तिगत दृष्टिकोण रहा है।

वहां से जैसे ही हम बाहर निकले मशहूर कहानीकार एस. आर. हरनोट आते दिखे। उनकी एक कहानी 'बिल्लियां बतियाती हैं' बरसों पहले पढ़ी थी आज भी जहन में है। आज कितना सौभाग्यशाली दिन था कि उस कहानी के रचनाकार से मिलना हो रहा था। अन्तर्मन में दबी चाहत की पूर्ति बरसों बाद हो रही थी। बड़े ही सौभ्य व्यक्तित्व से मिलने के उपरान्त ऐसे लगा बरसों से हमारा परिचय है, आत्मीय रिश्ते हैं।

इतने में कवि श्रीनिवास श्रीकांत भी आ गये। कंधे पर बैग लटका हुआ। गालों पर मोटी सफेद दाढ़ी। लम्बा बदन। वृद्धावस्था के कारण शरीर थोड़ा दुर्बल। साथ में धर्मपत्नी। उन्हें सीढ़ियाँ उतरने में कठिनाई हो रही थी शायद थोड़ी नजर भी कम थी। मैंने उन्हें सहारा दिया और धीरे-धीरे सीढ़ियां उतरवाने लगा। हाल ही में उन्हें कविता के लिए हिमाचल शिखर सम्मान मिला है। मैं उन्हें छूकर जैसे धन्य हो गया था ऐसी मेरे अन्दर से भावना फूट-फूटकर बाहर आ रही थी। उन्हें छूने भर के रोमांच से मेरा तन-मन पुलकित हो गया था। सरस्वती के इस साधक को छूकर मैंने मानों मां सरस्वती को छू लिया हो। अन्दर जहाँ कार्यक्रम हो रहा था, वहां हाल में उन्हें कुर्सी तक छोड़ मैं गद्‌गद हो गया था। धीरे- धीरे प्रदेश भर से आये विद्वान एकत्रित हो रहे थे। कार्यक्रम दो सत्रों में विभाजित था। प्रथम सत्र कहानी पाठ व समीक्षा के लिए जबकि दूसरे सत्र में कवि गोष्ठी थी। 'भागीदेवी का चायघर' कहानी हरनोट जी की जुबानी सुनी जबकि दूसरी कहानी 'फेगड़े के फूल' मुरारी शर्मा ने पढ़ी। दोनों कहानियों पर समीक्षा हुई। दूसरे सत्र में लगभग तीस कवियों ने रचना पाठ किया।

कार्यक्रम के उपरान्त पुराने साहित्यिक मित्र त्रिलोक सूर्यवंशी जो आजकल शिमला में जिला भाषा अधिकारी हैं उनके साथ चाय पी। उसके उपरांत जब तक रिज पर अंधेरा नहीं उतरा हमने आशियाना रेस्टोरेंट में कुल राजीव पंत, एस. आर. हरनोट, बद्री सिंह भाटिया, व कवि श्री आत्मा रंजन जी का सान्निध्य लेते हुए खूब साहित्यिक चर्चा की। ये सभी लोग हिमाचल की अदबी दुनिया के जगमगाते सितारे हैं, फिर माल पर टहलते हुए वापिस राइटर होम आ गये। मदन जी ने स्वादिष्ट खाना हमारे आने तक तैयार कर दिया था। हमने खाना खाया और आज के कार्यक्रम की समीक्षा करते हुए निद्रालोक में प्रविष्ट हो गये। सुबह जागे तो देवदारों की फुनगियों से गुनगुनी धूप कमरे की खिड़कियों पर दस्तक देने लगी थी।

आज वापिसी का कार्यक्रम था। हमने नाश्ता किया और चम्बा की ओर प्रस्थान कर दिया। बिलासपुर के पास नम्होल में विजय पुरी ने मनोज शिव को पहले ही फोन कर दिया था। वह वहां बैंक में लगे हैं। हमें उम्मीद थी कि उनके पास रुककर चाय जरुर पी जाएगी। परन्तु कारण कुछ भी रहा हो, हमारी चाय पीने की इच्छा अधूरी रह गई। बिलासपुर पहुँचे तो शब्द मंच के संपादक जय कुमार शर्मा जी से मिलने उनके आवास पर पहुँच गये। वृद्धावस्था के बावजूद वे सड़क तक हमें लेने आ गये थे। लगभग एक घंटे तक उनके आवास पर रुके।

वहां हमने चाय पी। उन्होंने मुझे मेरी एक रचना पर शाबाशी दी। मेरे लिए यह किसी प्रशस्ति पत्र से कम न था। फिर उन्होंने मुझे हाइकु लिखने के संदर्भ में सचेत भी किया, कहा कि आप कविताएँ लिखिए इनके चक्कर में न पड़ें। मुझे उनकी कही एक-एक बात अर्थपूर्ण एवं उपयोगी लगी। और भी कई विषयों पर संक्षिप्त बातचीत हुई। हाल ही में स्वर्गवास हुए साहित्यकार विजय सहगल का भी उन्होंने जिक्र किया। वहां से विदा हुए तो वे फिर हमें छोड़ने मेन सड़क तक आये। फिर हम शिवा कालेज होते हुए कांगड़ा के रानीताल पहुँचे तो थोड़ी-थोड़ी बारिश शुरू हो गई थी। विजय जी यहीं उतर गये। अब मैं सुभाष साहिल व जगजीत तीन लोग ही बचे थे कार में। रानीताल के पुल को पार किया तो बारिश की बौछारें और तेज हो गई थी। अब सड़क भी थोड़ी-थोड़ी दिख रही थी। गाड़ी चलानी मुश्किल हो रही थी परन्तु जगजीत कहां रुकने वाला था। बड़ा जुझारू लड़का है।

बारिश धूप झुलसाती गर्मी व शिमला की ठंडी हवाओं के झोंके व एक अविस्मरणीय यात्रा की अनुभूतियों को हमने मंजिल की ओर बढ़ते हुए अपने-अपने जहन में संजो लिया था। जैसे वक्त के बहते पानी पर स्मृतियों के दीये जला कर बहा दिये थे और समय का बहाव उन्हें धीरे धीरे आगे खिसकाता चला गया। धीरे धीरे उनका प्रकाश मद्धम और मद्धम होता गया और हमारी नजरों से वे दीये बहते हुए ओझल बेशक हो गये परन्तु उनका आलोक समय की लहरों पर जो फैला था, हमारे जहन में भी उतरता चला गया था। उसे सिर्फ महसूसा जा सकता था। परिभाषित नहीं किया जा सकता था। इन लहरों के तटों पर ऐसे यशस्वी लोगों से मिलना जैसे प्रकाश पुंजों से मिलना था। हमारा जीवन धन्य हो गया था , इस साहित्यिक यात्रा के उपरांत ऐसे लग रहा था जैसे हमने ज़ियारत (तीर्थ स्थान की यात्रा) कर ली थी।

प्रवास कुटीर, गाँव व डाकघर बनीखेत
तह. डलहौजी जिला चंबा, हिमाचल प्रदेश-176 303
मो. 9418248262

'लोक और इतिहास' पुस्तक के अंश

दो किताबों के बहाने : भारत-विभाजन पर टिप्पणी
आजादी आधी रात को

● बलराम

डोमिनीक लॉपियर और लैरी कॉलिन्स की सन् 1975 में प्रकाशित अंग्रेजी किताब 'फ्रीडम एट मिडनाइट' का पहला हिंदी अनुवाद 'आजादी आधी रात को' सन् 2009 में छपा, लेकिन सन् 1996 में छपे इसके पंद्रहवें अंग्रेजी संस्करण में अनेक संशोधन-परिवर्द्धन किए गए थे। यह किताब हमें बताती है कि पटियाला के महाराजा यादवेंद्र सिंह भारत की उन पांच सौ पैंसठ रियासतों के संगठन के अध्यक्ष के नाते बेहद परेशान थे, जिन्हें भारत गणराज्य में विलीन होना था। मुश्किलें तो बहुत आयीं, पर पांच सौ बासठ रियासतें भारत में विलीन कर राजे-रजवाड़ों को युक्तिपूर्वक समाहित कर लिया गया, लेकिन निजाम हैदराबाद, जूनागढ़ और जम्मू-कश्मीर के शासक भारत में मिलने को राजी नहीं हुए। तब पटेल ने बल प्रयोग कर निजाम हैदराबाद को तो भारत में विलीन कर लिया और जूनागढ़ का नवाब भारतीय सेना से डरकर हीरे-जवाहरात और कुत्तों को लेकर विमान से पाकिस्तान भाग गया। इन रियासतों की सरहदें पाकिस्तान से मिलती होतीं तो संभव था कि युद्ध की नौबत आती, पर पाक सीमाओं से इनके दूर होने के कारण वैसा संभव न हुआ। हां, जम्मू-कश्मीर में वह संभव था। जिन्ना की व्यक्तिगत रुचि और पाक प्रधानमंत्री द्वारा मुहैया कराये फंड से रची गई साजिश के तहत कबाइलियों ने जम्मू-कश्मीर पर हमले की योजना बनायी, जिसकी भनक भारत और पाक में पदस्थापित दो अंग्रेज अफसरों की फोन वार्ता से लार्ड माउंटबेटन को लग गई। नेहरू को पता चला तो वे बेचैन हो उठे और अंततः त्वरित कार्रवाई कर राजा हरीसिंह से विलयपत्र पर हस्ताक्षर करवा लिये। तब कहीं जाकर भारतीय सेना को जम्मू-कश्मीर में हस्तक्षेप करने का वैधानिक अधिकार मिला और कबाइलियों को वहां तक खदेड़ दिया गया, जहां तक उस समय खदेड़ा जाना सहज संभव था, लेकिन लार्ड माउंटबेटन को लग रहा था कि मुस्लिम आबादी की बहुलता के कारण जम्मू-कश्मीर को पाकिस्तान का ही अंग होना चाहिए। उधर महाराजा हरीसिंह इस जिद पर अड़े हुए थे कि वे स्वतंत्र कश्मीर के शासक बने रहेंगे, जबकि जिन्ना की पहल और पाक प्रधानमंत्री के इशारे पर मुस्लिम लीग के नेता सैराब हयात खान ने कबायली टुकडियों के साथ कश्मीर पर हमला कर दिया। उनका इरादा था कि अड़तालीस घंटे में वे श्रीनगर पहुंच जाएं और महाराजा हरीसिंह को सुबह की चाय पिलाकर उनका तख्ता पलट दें ताकि श्रीनगर में जिन्ना हाउस का सपना साकार हो सके, लेकिन नेहरू ने उस योजना को विफल कर दिया। इस विफलता के पीछे जितना हाथ भारत की सफल रणनीति का था, उतना ही नेहरू के भाग्य और जिन्ना के दुर्भाग्य का भी।

कबायलियों के इस चरित्र से जिन्ना वाकिफ न थे कि उन्हें जितना आनंद धन-दौलत और जमीन-जायदाद की लूटपाट में मिलता है, उससे कहीं ज्यादा औरतें लूटने और उनके साथ भोग-विलास करने में। बारामूला तक पहुंचकर वे बेफिक्र हो गए और लूटपाट तथा भोग विलास के आनंद में कुछ इस कदर मगन हो गए कि अड़तालीस घंटे की अवधि पूरी हो गई और तब तक श्रीनगर हवाई अड्डे पर भारतीय सेना ने उतरकर कबायली लुटेरों के बढ़ते कदमों को न सिर्फ रोक दिया, बल्कि गोलीबारी करते हुए उन्हें वहां तक खदेड़ दिया, जहां तक अब पाक अधिकृत कश्मीर है। भारत विभाजन से पहले माउंटबेटन और नेहरू के बीच हुए तीखे वाद-विवाद के बाद तय हुआ कि पंजाब और बंगाल को आबादी के हिसाब से बांट दिया जाए, अन्यथा माउंटबेटन तो पूरा बंगाल भी पाकिस्तान को देने जा रहे थे। इस तरह ब्रिटिश भारत के तीन राज्य-पंजाब, बंगाल और जम्मू-कश्मीर भारत और पाकिस्तान के बीच बंटकर थोड़े-थोड़े दोनों के साथ रह गए।

प्रबल भाग्य और त्वरित कार्रवाई के चलते जवाहरलाल नेहरू की मातृभूमि तो भारत में ही रह गई और जन्म के बाद जिन्ना अपनी मातृभूमि कराची तब पहुंचे, जब पाकिस्तान का उनका सपना साकार हो चुका था। कश्मीर रियासत तो पहले से ही मुगल बादशाहों की ख्वाबगाह रही है। वे उसे साक्षात स्वर्ग समझते रहे। जिन्ना भी उन्हीं के वंशज थे और वे कश्मीर पर अपना हक समझ रहे थे।, लेकिन उन्होंने गलती यह कर दी कि अखंड भारत का प्रधानमंत्री बनने का गांधी का सुविचारित प्रस्ताव धूर्ततापूर्ण समझकर ठुकरा दिया। मुसलमानों के अलग राष्ट्र पाकिस्तान का

‘आजादी आधी रात को’ किताब उस रहस्य पर से भी पर्दा उठाती है कि अगर किसी तरह कांग्रेस के नेताओं और लार्ड माउंटबेटन को यह भनक लग जाती कि जिन्ना सिर्फ साल भर के मेहमान हैं तो वे भारत विभाजन की तिथि को उनकी मृत्यु तक के लिए टाल देते। उधर जिन्ना के निजी डॉक्टर ने उस फिल्म की किसी को भनक तक न लगने दी, जिसमें स्पष्ट था कि जिन्ना का एक फेफड़ा पूरी तरह गल चुका है और वे एक फेफड़े से काम चला रहे हैं। वह भी गलना शुरू हो चुका है। डॉक्टर ने पेशे की नैतिकता के चलते यह रहस्य उस समय उजागर नहीं होने दिया। उसने पेशे की नैतिकता की रक्षा तो की, लेकिन भारत का विभाजन टलने की संभावना का गला घोंट दिया।

ख्वाब उनके मन में इतना बड़ा हो चुका था कि वे उसे दिल से निकाल नहीं पाए। पाकिस्तान के धुर उत्तर के इलाके पख्तूनख्वा के लोग सीमांत गांधी अब्दुल गफ्फार खां के नेतृत्व में एकताबद्ध हो भारत गणराज्य का हिस्सा बनने को तैयार थे, लेकिन जिन्ना ने बड़ी चालाकी से पेशावर में एक बड़ी सभा की और माउंटबेटन को प्रभावित कर उसको पाकिस्तान में मिलाने की स्थितियां बना दीं।

‘आजादी आधी रात को’ किताब उस रहस्य पर से भी पर्दा उठाती है कि अगर किसी तरह कांग्रेस के नेताओं और लार्ड माउंटबेटन को यह भनक लग जाती कि जिन्ना सिर्फ साल भर के मेहमान हैं तो वे भारत विभाजन की तिथि को उनकी मृत्यु तक के लिए टाल देते। उधर जिन्ना के निजी डॉक्टर ने उस फिल्म की किसी को भनक तक न लगने दी, जिसमें स्पष्ट था कि जिन्ना का एक फेफड़ा पूरी तरह गल चुका है और वे एक फेफड़े से काम चला रहे हैं। वह भी गलना शुरू हो चुका है। डॉक्टर ने पेशे की नैतिकता के चलते यह रहस्य उस समय उजागर नहीं होने दिया। उसने पेशे की नैतिकता की रक्षा तो की, लेकिन भारत का विभाजन टलने की संभावना का गला घोंट दिया। घटनाक्रमों के उस दौर में किससे कैसी भूलें हो रही हैं, उस समय कोई नहीं जान पाया। विंस्टन चर्चिल के बाद प्रधानमंत्री बने क्लीमेंट एटली द्वारा रियर एडमिरल लुइस फ्रांसिस एल्बर्ट निकोलस माउंटबेटन को वायसराय बनाकर इसलिए भेजा गया था कि वे भारत को जल्दी से जल्दी स्वाधीन कर दें। जनवरी, 1947 में लेबर पार्टी ने मान लिया था कि भारत के दस करोड़ मुसलमान किसी भी कीमत पर अलग पाकिस्तान बनाने के लिए आमादा हैं, जबकि 77 साल के महात्मा गांधी सांप्रदायिकता और भारत विभाजन के विरुद्ध बंगाल के नोआखाली में डेरा डाले हुए अनशन कर रहे थे।

28 जनवरी, 1933 में रहमत अली ने भारत राष्ट्र की अवधारणा को सफेद झूठ करार देते हुए लिखा था कि मुस्लिमबहुल पंजाब, कश्मीर, सिंध, सीमा प्रांत और बलूचिस्तान को मिलाकर एक मुस्लिम राष्ट्र का निर्माण किया जाना जरूरी है। मुंबई में मुस्लिम लीग की सभा में जिन्ना ने कांग्रेस और अंग्रेजों को खुली चुनौती देते हुए कहा था कि या तो हम हिंदुस्तान को बंटवा लेंगे या फिर इसे तबाह कर देंगे।

17 नवंबर, 1921 को सम्राट डेविड के साथ एडीसी की हैसियत से पहली बार माउंटबेटन भारत आए तो उन्होंने अपनी डायरी में लिखा कि ‘भारत सबसे शानदार देश है और यहां के वायसराय की नौकरी भी सबसे शानदार है। डेविड उनके भाई थे और फिर उनके एक और भाई एडवर्ड अष्टम ने उन्हें वह शानदार नौकरी दे दी, जो ब्रिटेन का सम्राट होने के नाते भारत के भी सम्राट थे, पर वे खुद कभी भारत नहीं आए। डेविड ने राज सिंहासन इसलिए त्याग दिया था, क्योंकि जिस स्त्री से वे प्यार करते थे, उससे शादी करना चाहते थे। राजकीय परंपरा के अनुसार उन्हें सिंहासन और प्रेमिका में से किसी एक को चुनने को कहा गया तो उन्होंने प्रेमिका से विवाह करने के लिए सिंहासन त्याग दिया। सन् 1943 में प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल ने 43 वर्ष के माउंटबेटन को दक्षिणपूर्व एशिया में मित्र राष्ट्रों की सेनाओं का सुप्रीम कमांडर नियुक्त कर भेजा था, जिससे एशिया के एक विस्तृत क्षेत्र के 12 करोड़ अस्सी लाख लोग उनके अधीन हो गए थे। एक समय उनके पिता को जर्मन विरोधी उन्माद की वजह से अपने राजकीय पद से हाथ धोना पड़ा था, भारत का वायसराय होकर माउंटबेटन ने पिता के उस अपमान की काफी कुछ भरपाई कर दी। बेमन से ही सही, उन्होंने हिंदुस्तान का आखिरी वायसराय होकर उसे भारत एवं पाकिस्तान में विभाजित करने का गुनहगार होने का कलंक अपने सिर ले लिया।

भारत विभाजन से पहले और बाद में जो कत्लेआम हुआ, दुनिया के ज्ञात इतिहास में वैसा कभी और कहीं नहीं हुआ, न वैसी और उतनी नृशंसता कहीं देखने को मिली। माउंटबेटन का अनुमान था कि उन वर्षों में कोई ढाई लाख लोग मारे गए, जबकि कुछ इतिहासकार इस संख्या को पांच लाख तक बताते हैं। लॉपियर की किताब ‘आजादी आधी रात को’ भारत के आजाद होने से पहले और बाद के भयावह दृश्यों से ही पाठकों को अवगत नहीं कराती, वह महात्मा गांधी की हृदय विदारक हत्या की साजिश से जुड़ी बातें भी बताती है।

भारत विभाजन की अंतःकथा

सोवियत संघ के विघटन का गुनहगार किसे कहेंगे? गोर्बाचोव को या अमेरिकी साम्राज्यवाद को या कम्युनिज्म के अपने ही अंतर्विरोधों ने सोवियत संघ को खंड-खंड कर दिया? विघटन के

बावजूद चेचन्या का आतंकवाद रूस को चैन नहीं लेने देता। दुनिया भले ही इन हालात से बहुत चिंतित हो, पर हम भारतीयों की चिंता का सबब तो कश्मीर में पीडीपी और बीजेपी जैसी धुर विरोधी पार्टियों के मिलकर सरकार बनाते ही मुफ्ती द्वारा सीमा पार के आतंकियों का शुक्रिया अदा करना बना, जो किसी को भी रास नहीं आया, क्योंकि मुशर्रफ द्वारा करगिल पर हमले की जिम्मेदारी लेने से सिद्ध हो गया कि भारत विभाजन से हिन्दू-मुस्लिम समस्या का कोई समाधान नहीं हुआ। पूर्वी पाकिस्तान स्वतंत्र राष्ट्र बन गया, जिसके पीछे विशुद्ध रूप से बांग्ला भाषा की उपेक्षा काम कर रही थी, ठीक और ठीक यही कारण बना अंग्रेजों द्वारा बंगाल रेजीडेंसी के बिहार इलाके में उर्दू को हटाकर हिंदी को स्थापित करने से मुसलमानों में पैदा हुई कुंठा का, जो आगे चलकर भारत के विभाजन की प्रमुख वजह बनी।

भारत विभाजन के लिए नेहरू या जिन्ना को जिम्मेदार ठहराने वाले लोगों का ध्यान इस ओर प्रायः नहीं जाता कि अंग्रेजों ने उर्दू की जगह हिंदी को राजभाषा बनाकर भारत विभाजन के बीज बोये थे। वस्तुतः विभाजन के लिए न तो गांधी तैयार थे, न ही नेहरू या पटेल। जिन्ना भी भारत विभाजन नहीं चाहते थे। वे तो दबाव डालकर अखंड भारत में मुसलमानों के लिए सम्मानजनक जीवन की गारंटी चाहते थे, पर लॉर्ड माउंटबेटन को ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली द्वारा वायसराय बनाकर भारत भेजा ही इसलिए गया था कि तीस करोड़ हिंदुओं और दस करोड़ मुसलमानों के बीच भारत को विभाजित कर देना है और अपने विवेक से उन्होंने जो उचित समझा, कर दिया। कथाकार प्रियंवद की किताब 'भारत विभाजन की अंतःकथा' पहली बार इस बात को प्रमाणों के साथ सिद्ध करती है। प्रियंवद लिखते हैं कि सैयद अहमद को जब इंग्लैंड में पता चला कि 'साइंटिफिक सोसायटी' के हिन्दू सदस्यों ने सरकार से हिन्दी में काम करने की मांग की है तो उन्होंने नवाब मोहसिन-उल-मुल्क को 29 अप्रैल, 1870 के पत्र में दुख व्यक्त करते हुए लिखा कि 'मुझे एक सूचना मिली है, जिसके कारण मैं बहुत दुखी हूं। बाबू शिवप्रसाद के उकसाने पर हिन्दुओं ने तय किया है कि वे उर्दू भाषा और फारसी लिपि को, जो देश पर मुस्लिम शासन की निशानी है, यथासम्भव त्याग देंगे। मैंने सुना है कि उन्होंने 'साइंटिफिक सोसायटी' के हिन्दू मेम्बरों से कहा है कि वे सोसायटी द्वारा प्रकाशित समाचारपत्रों तथा पुस्तकों को हिन्दी में निकालें। यह एक ऐसा प्रस्ताव है, जिसके कारण हिन्दू-मुस्लिम एकता खतरे में पड़ेगी। मुसलमान हिन्दी के लिए कभी तैयार नहीं होंगे। परिणामतः हिन्दू-मुसलमान अलगाव बढ़ेगा।' इस संदर्भ में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि सैयद अहमद हिन्दी विरोध में इस हद तक आगे बढ़ गए थे कि उन्होंने 'अंग्रेजों को सुझाया था कि हिन्दी हिन्दुओं की जबान है, जो 'बुतपरस्त' हैं और उर्दू मुसलमानों की, जिनके साथ अंग्रेजों का मजहबी रिश्ता है।'

सन् 1873 में बंगाल सरकार ने बिहार के लिए आदेश जारी किया कि पटना, भागलपुर और छोटा नागपुर क्षेत्रों में कचहरी और सरकारी दफ्तरों में देवनागरी लिपि में हिन्दी चलनी चाहिए। कचहरी के सब आदेश, सूचनाएं और घोषणाएं हिन्दी में होनी चाहिए। सरकारी कागजात भी हिन्दी में रखे जाएं, प्रार्थनापत्र देने वालों को छूट होगी कि वे उर्दू या हिन्दी में प्रार्थनापत्र दे सकेंगे। पुलिस और सरकारी कार्यालयों में हिन्दी जानना अनिवार्य रहेगा। इस आदेश का कुछ प्रभाव न पड़ने के कारण अप्रैल, 1874 और जुलाई, 1875 में फिर स्मरणपत्र जारी किये गये। इसका भी कुछ विशेष प्रभाव न पड़ा। प्रार्थनापत्र, पुलिस आदेश, डायरी, रजिस्टर तथा कचहरी के कागज सब उर्दू में ही लिखे जाते रहे। जो नोटिस हिन्दी में छपे भी, वह भी फारसी लिपि में ही भरे गये। बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर एशले ने जब देखा कि सरकारी उद्देश्य के आदेशों पर कोई प्रगति नहीं हो रही है तो अप्रैल, 1880 में उसने एक आदेश जारी किया कि जनवरी, 1881 से सरकारी कागज केवल देवनागरी लिपि में रखे जाएंगे। कचहरी में देवनागरी लिपि के अतिरिक्त कोई कागज मान्य नहीं होगा। केवल पुराने अभिलेख, यदि वे संलग्न हैं तो फारसी लिपि में हो सकते हैं। पुलिस अधिकारियों को भी चेतावनी दी गयी कि यदि वे जनवरी, 1881 तक नागरी भाषा नहीं सीख लेते तो हटा दिए जाएंगे और उनकी जगह नागरी से परिचित अफसर नियुक्त किए जाएंगे। जांच से पता लगा कि आदेशों की अनदेखी करने वाले मुख्यतः हिन्दू या मुसलमान वकील, दफ्तर के कार्यकर्त्ता, मुख्तार और दलाल थे, जिन्होंने कचहरी और दफ्तरों में पांव जमा रखे थे और जिनको यह पद लगभग विरासत में मिलते थे। इन आदेशों और जिस तरह से वे बराबर जारी किये जा रहे थे, मुसलमान काफी नाराज थे। यह दिलचस्प है कि उनकी नाराजगी मुख्यतः हिन्दुओं से थी, जिनके कारण उर्दू हटाई जा रही थी। सरकार को क्रोध भरे ज्ञापन भेजे गये और कई अवसरों पर इस बात को खूब उछाला गया, पर बंगाल रेजीडेंसी में हिन्दी ने उर्दू को हटाकर उसका स्थान ग्रहण कर ही लिया। सन् 1881 में बंगाल के इस आदेश से प्रेरित होकर उत्तर प्रदेश में यह विवाद सन् 1883 में एक बार फिर उठा, जब एक सीधा-सादा दिखने वाला प्रस्ताव आया कि कचहरी में देवनागरी लिपि का प्रयोग किया जाए, न कि फारसी लिपि का। इसमें हिन्दी व उर्दू भाषा का नाम नहीं लिया गया, परन्तु इसका आशय स्पष्ट था। एजूकेशन कमीशन के सामने इस तरह के 118 आपत्तिपत्र दाखिल किये गये, जिनमें प्राथमिक स्कूलों में उर्दू के स्थान पर हिन्दी माध्यम से शिक्षा देने का अनुरोध था। पंजाब में 46 आपत्तिपत्र आए।

मुस्लिम समाज इस हिन्दी समर्थक आन्दोलन के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। सार्वजनिक मंच और समाचार पत्र अपने-अपने पक्ष

में सक्रिय हो गये। शिक्षित वर्ग में पारस्परिक विरोध की रेखाएं खिंच गयीं। हिन्दी के समर्थन में तरह-तरह के तथ्य एकत्रित किये गये, जैसे नगरों में सीमित अल्पसंख्यकों की लिखित और बोलने वाली भाषा होने के नाते हिन्दी जानने वाले हिन्दुओं को उर्दू समझ में नहीं आती, कि कचहरी का सम्मन पढ़ने के लिए भी हिन्दी जानने वालों को पैसा खर्चना पड़ता है और छोटा-सा प्रार्थना पत्र लिखवाने के लिए तो एक रुपया या आठ आना तक खर्च हो जाता है, कि सब देशों में कचहरी व दफ्तरों में आम लोगों की अपनी भाषा ही चलती है, कि हिन्दी और देवनागरी सीखना आसान है और मुसलमानों को भी इसमें कोई दिक्कत नहीं होगी, कि उर्दू के सरकारी भाषा होने के कारण नौकरियों में मुसलमानों की बहुतायत है। फारसी लिपि की क्लिष्टता, उसमें तुर्की-अरबी शब्दों की बहुलता, हिन्दुओं के लिए विदेशी भाषा और अवैज्ञानिक लिपि जैसे तर्कों से हिन्दी को समर्थन मिला। सन् 1900 में उत्तर प्रदेश में उर्दू के साथ-साथ हिन्दी को भी अदालत की भाषा बना दिया गया। मुसलमानों ने इसका कड़ा विरोध किया। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय इस विरोध का केन्द्र था। मुस्लिम राजनीति में यह अत्यन्त महत्वपूर्ण मोड़ था, जब भाषा के विरोध ने मुसलमानों को अलग राजनीतिक संगठन बनाने के लिए प्रेरित किया, जो मुसलमानों के अलग राजनीतिक भविष्य और संघर्ष की ओर मुड़ गए, जिससे सैयद अहमद अब तक उनको बचाते रहे थे। इस प्रसंग को जानना जरूरी है, जो हमें बताता है कि किस तरह सन् 1900 में उत्तर प्रदेश में हिन्दी को भी अदालती भाषा बनाना मुस्लिम राजनीति को गरमाने की वजह बना। पूर्वी पाकिस्तान में उर्दू थोपी गई तो वहां भी विस्फोट हुआ और भारतीय उपमहाद्वीप का एक और विभाजन होने से उपमहाद्वीप की तीन भाषाएं- हिंदी, बांग्ला और उर्दू तीन देशों की राजभाषाएं बन गईं।

विख्यात उर्दू विद्वान प्रो. गोपीचंद नारंग कहते हैं कि सच्ची जुबान वही है, जो अंधेरे के बारे में बोले तो उजाले के बारे में भी। यह अंधेरा-उजाला ही भाषा में जादू पैदा करता है। विश्वनाथ प्रसाद तिवारी का मानना है कि कोई भी भाषा बड़ी या छोटी नहीं होती। भाषा जिस परिवेश की होती है, उसके बारे में उससे ज्यादा अच्छी तरह कोई और भाषा व्यक्त नहीं कर सकती। प्रख्यात न्यायविद्, स्वतंत्रता सेनानी और गांधीवादी विचारक चंद्रशेखर धर्माधिकारी कहते हैं कि मानवनिष्ठा और सामान्यजन के प्रति असीम विश्वास, यही तो सर्जक की विशेषता होती है। आज हम आत्मकेंद्रित हो रहे हैं। ऐसे में बच्चों का भावी जीवन सुखकर हो, इसका कोई 'ब्लू-प्रिंट' साहित्यकार प्रस्तुत कर रहे हैं क्या? यह आज की चुनौती है। संस्कार करने नहीं पड़ते, वे हुआ करते हैं-वातावरण और रहन-सहन के साथ पठन-पाठन और चिंतन-मनन से, लेकिन आज के मां-बाप को फुर्सत ही नहीं बच्चों में संस्कार डालने की। हर घर में दूरदर्शन के रूप में एक 'बेबी सिटर' है, जिसके सामने मां-बाप बच्चों को बिठाकर चले जाते हैं। ऐसे में बच्चों को जिज्ञासु बनाने और पढ़ने में रुचि पैदा करने वाले साहित्य का रचा जाना युग की आवश्यकता है। इस समय हम सब भारतीय नहीं, बल्कि अपने-अपने प्रदेशों में विभाजित होकर रह गए हैं। इसीलिए सच्ची भारतीयता के कहीं दर्शन ही नहीं होते। वेदप्रताप वैदिक को अंग्रेजों के विरुद्ध भारतीय भाषाओं की लड़ाई का प्रतीक माना जाता है। सन् 1966 में उन्होंने अपना शोधपत्र हिंदी में लिखने का साहस किया और इसी कारण स्कूल ऑफ इंटरनेशनल स्टडीज से निकाल दिए गए। उसे वे आजादी की लड़ाई का हिस्सा मानते हुए कहते हैं कि भाषा की आज़ादी के बिना हमारी राजनीतिक आज़ादी अधूरी है और इसे पूरी आज़ादी में बदलने की जरूरत है। वैदिक कहते हैं कि 'अंग्रेजी हटाओ' का मतलब यह कतई नहीं है कि हमें अंग्रेजी से नफरत है। किसी भी भाषा या साहित्य से कोई मूर्ख ही नफरत कर सकता है। 'अंग्रेजी हटाओ' आंदोलन अंग्रेजी का नहीं, बल्कि उसके रुतबे का, उसकी शोषणकारी प्रवृत्ति का विरोधी है। सवाल है कि अंग्रेजी कहां-कहां से हटे? वह न्यायालय से हटे, राज-काज से हटे, कारखानों से हटे, घर-द्वार, हाट-बाजार से हटे, लेकिन हट कर जाए कहां? हटकर वह पुस्तकालयों में जाए। देश के विदेशी भाषा संस्थानों में जाए और वहां यथावत बनी रहे।

उदाहरण देकर वैदिक अंग्रेजी के विश्वभाषा होने के भ्रम को तोड़ते हुए उसके कारण भारत की एकता के तर्क की भी चिंदी-चिंदी कर देते हैं। वे कहते हैं कि अंग्रेजी आधुनिकता का पर्याय बिलकुल नहीं है। वे मानते हैं कि अंग्रेजी हट जाए तो देश में विज्ञान की पढ़ाई ज्यादा अच्छी तरह हो सकती है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अध्ययन और अध्यापन के लिए किस भाषा का उपयोग किया जाए, हमारा देश आज़ादी के इतने दशक गुजार देने के बाद भी इसका सही उत्तर खोज नहीं पाया है। होना तो यह चाहिए था कि संसार के ज्यादातर स्वतंत्र देशों की तरह भारत में भी आज़ादी के तुरंत बाद राष्ट्रभाषा हिंदी को विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अध्ययन और अध्यान की भाषा बना दिया जाता। साथ में भारत की अन्य समृद्ध भाषाओं को भी इस योग्य बनाने की कोशिश की जाती कि अन्य भाषाभाषी भी अपनी मातृभाषा में विज्ञान की शिक्षा ले पाते और तब भारत का विज्ञान भारत के लोगों द्वारा भारत के लोगों के लिए होता। तब हम विज्ञान की दृष्टि से एक उन्नत राष्ट्र होते, पर दुर्भाग्य से ऐसा हुआ नहीं। हम अंग्रेजियत के दुष्चक्र में फंस गए। हमारे नौकरशाहों की तरह विज्ञानशाहों ने भी अंग्रेजी को बनाए रखने में ही अपना स्वार्थ देखा। फलतः आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अंग्रेजी का साम्राज्य कायम है।

सी-69, उपकार अपार्टमेंट्स, मयूर विहार फेज-1,
दिल्ली-110091 मो. 098103 33933

पुस्तक समीक्षा

मानवीय रिश्तों को सहृदयता से स्पर्श करती 'पीपल बिछोह में'

● एल.आर. शर्मा

ओम प्रकाश नौटियाल का नाम तो सुना था, पर उनका काम अर्थात उनका साहित्य नहीं देखा था। 'पीपल बिछोह में' नामक इस काव्य संग्रह ने यह कमी भी पूरी कर दी प इस काव्य संग्रह को पढ़ कर मुझे पद्य की अनेक विधाओं के रसास्वादन का अवसर प्राप्त हुआप उक्त संग्रह की छियासठ कविताओं में कवि ने कुछ भी अछूता नहीं छोड़ा है। इसमें सामाजिक समस्याएं, जीवन दर्शन, प्रकृति, धर्म, त्योहार, देश, मातृभाषा हिंदी, माता-पिता और अखबार, इन सभी विषयों पर कवि ने अपनी काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया है ⁄ एक प्रकार से यह काव्य-संग्रह एक ऐसा गुलदस्ता है, जिसमे प्रत्येक पाठक के लिए कुछ न कुछ अवश्य उपलब्ध होगा⁄ यह अपने आप में एक अनूठा प्रयोग है, जिसके लिए श्री नौटियाल जी साधुवाद के पात्र हैं।

सामाजिक समस्याओं में कवि ने 'बेटियां' और 'मैं कन्या' नामक कविताओं में कन्याओं की दयनीय दशा का वर्णन किया है ⁄ वर्णन सटीक है⁄ पर दोनों कविताओं में सिक्के का एक ही पहलू- अर्थात निराशाजनक पटल ही उभारा गया है⁄ अच्छा होता कि एकाध कविता कन्याओं कि अद्यतन उपलब्धियों पर भी जोड़ दी गयी होती ⁄ प्रेरक प्रसंग विषाद के अँधेरे में आशा कि किरण का काम करते हैं⁄ रोये बहुत चिनार में कवि ने श्रीनगर कि बाढ़ का चित्रण किया है⁄ उग्रवाद फैलाने वाले कट्टरपंथी ऐसी संकट कि घड़ी में नजर नहीं आये, यह दर्शा कर कवि ने कट्टरपंथियों पर अच्छा कटाक्ष किया है⁄ 'गरीबी', 'बालमजदूर', 'पेट के लिए' आदि कविताओं में लेखक का हृदय श्रमजीवियों की हीन दशा पर पिघला है⁄ 'असंत वचन', 'चोरी करना पाप है', 'फैशन में गाली है' कविताओं में समाज की विकृतियों का चित्रण है ⁄

'सपने' और 'द्वन्द' नामक कविताओं में कवि का जीवनदर्शन बहुत अच्छा प्रस्तुत हुआ है :-

'सुखदुख का अक्षुण्ण सिद्धांत,
कहता है विज्ञान सापेक्षवाद,
रात्रि के घोर सन्नाटे में,
एक बूँद गिरे तो भी निनाद।'

लगता है, कवि की विज्ञान की शिक्षा ने इनके जीवनदर्शन को भी प्रभावित किया है ⁄ 'यहाँ सब बिकता है' इस काव्यसंग्रह की एक उत्कृष्ट रचना है ⁄जीवन को बनाए रखने के लिए मूल्यों से कई बार समझौते करने पड़ते हैं, यह आधुनिक युग में मानव की नियति है ⁄ अतः यहाँ सब कुछ बिकाऊ बन जाता है ⁄ जैसाकि कवि कहता है :-

'किसी का गीत बिकता है, किसी का साज बिकता है,
किसी की आबरू नीलाम, किसी का ताज बिकता है।'

उक्त काव्य संग्रह में कवि का प्रकृति-प्रेम एक झरने की तरह कई कविताओं में फूट पड़ा है ⁄ ऋतुओं में सावन और शीत ऋतु का वर्णन है⁄ 'गरजे बदरा सहमे जियरा' जैसी पंक्तियों में (सावन का महीना) एक गीत जैसी लय है ⁄कवि को आजीविका की खोज में अपने परिवेश के पीपल के वृक्ष से बिछुड़ना पड़ता है (पीपल बिछोह में), जो कवि को अच्छा नहीं लगता ⁄ 'महकाने निज उपवन, बैठना पीपल तले' जैसी पंक्तियों में अतीत की स्मृतियां उजागर हुई लगती हैं ⁄ 'रोइ चांदनी' और 'चांदनी रूठ कर' कविताओं में कवि ने चाँद के उल्लसित सौंदर्य की जगह चाँद और चांदनी के बिछोह के विषाद को अधिमान दिया है⁄ 'रोइ चांदनी' कविता की निम्न पंक्तियाँ देखिये :-

'प्रेम में पगलाई देखी, कलानिधि ने कुमुद कौमुदी,
अमावस में रहे खोजते, थी तम में सोई चांदनी',

उपरोक्त का आशय पूर्णतः स्पष्ट नहीं होता⁄ 'पर्वतवासी' नामक कविता में दर्शाया गया है कि मानव अभी भी प्रकृति से कितना निकट है ⁄ इस चित्रण में कवि खूब सफल रहा है ⁄ 'पृथ्वी और नभ' तथा 'आकाशगंगा' में आकाशीय गंगा कि तुलना धरती की गंगा से गयी है⁄ कवि का हृदय धरती की गंगा को प्रदूषित होता देख दुखित होता है⁄ 'पृथ्वी और नभ' में स्त्री-पुरुष जैसी समानता दिखाई गयी है ⁄

कवि का मानना है कि धर्म और संस्कृति मानव सभ्यता के अभिन्न अंग हैं ⁄ 'प्रभुवन्दना', 'भीतर से भी राम', 'जन्माष्टमी' नामक रचनाएँ कवि की आस्था कि प्रतीक हैं ⁄ 'होली के दोह',

'राखीरू चंद दोहे', 'दीपावली' आदि कविताओं में त्योहारों का वर्णन कुछ न कुछ सन्देश लिए हुए है / 'वैलेंटाइन डे', 'नया वर्ष' कविताएं हमारे धर्म-बहुल समाज में आपसी सौहार्द की प्रतीक हैं / फिर नौटियाल जैसे रचनाकार की कविता अपनों से दूर कैसे रह सकती है? इसी सन्दर्भ में 'खेवनहार पिता', 'पिता का अंतिम संस्कार', मॉरू चंद दोहे', 'आँचल का एहसास', 'आँखे न भिगोना री' नामक कविताएं पिता, माँ, बहन अदि रिश्तों की महानता का वर्णन करती दिखती हैं / कवि के रचनात्मक पटल में देश प्रेम भी उभर आता है / 'बदलेगा देश', में कवि आशावान है तो 'देश की हालत में सुधार है', 'बजटीय सौंदर्य' आदि कविताओं में देश में आजकल की हालात पर व्यंग्य है / 'जनतंत्र जाग' नामक कविता में देश की शासन पद्धति पर विश्वास दीखता है / 'राजभाषा हिंदी' और 'श्रद्धा से हिंदी को नमन' कविताएं राष्ट्रभाषा को समर्पित हैं, जो अच्छी लगती हैं / 'अखबार हूँ' में अखबार के चरित्र का एक अंश ही चित्रित है।

काव्यसंग्रह में उर्दू के शब्दों का बहुलता से प्रयोग किया गया है / कुछ उर्दू के शब्द तो कविता के प्रवाह में सहायक हुए हैं, पर अन्य कई मात्र तुकांतकता के लिए ही प्रयोग में लाए गए हैं, जिनसे बचा जा सकता था / जैसे कदरदान, मर्तबान, शैतानियत, जार-जार, हरजाई, शुमार, दरिंदगी, जज़्बात, वाशिंदे इत्यादि।

लेखक ने छंदबद्ध और मुक्त छन्द दोनों का प्रयोग किया है। दोहे और सवैयों का भी प्रयोग है। मुक्त छन्द काव्य अभिव्यक्ति की ऐसी विधा है, जिसमें शब्दों का चयन ही काव्य को रस प्रदान कर सकता है। अगर मुक्त छन्दों में शब्दों का उचित चयन न किया जाये, तो गद्य और पद्य में कोई अंतर नहीं रह जाता। लेखक ने कुछ कविताओं को छोड़ मुक्त छन्द का सफल प्रयास किया है। 'स्रोत' को 'स्त्रोत' लिखना सामान्य त्रुटि दृष्टिगोचर होती है। लेखक भी इस त्रुटि से ग्रस्त है अथवा मुद्रण का दोष है, यह कहना कठिन है, पर 'स्त्रोत' एक कविता में है जो बहुत अखरता है। 'देश की हालात में सुधार है' कविता में यह दोष मिला है।

हिंदी के पाठकों को, जिन्हे काव्य से लगाव है, उपरोक्त संग्रह 'पीपल बिछोह में' रुचिकर लगेगा क्योंकि इसमें वो सब है जो हमारे परिवेश में है।

42/5, हरिपुर, सुंदरनगर जिला मंडी
हिमाचल प्रदेश-175 018, मो. 094180 00983

लेखक : ओम प्रकाश नौटियाल, **प्रकाशक :** शुभांजलि प्रकाशन, कानपुर, यू.पी., फ्लिपकार्ट और अमेजोन पर उपलब्ध, **पृष्ठ संख्या :** 136

मानवीय रिश्तों का स्पर्श 'पीपल बिछोह में'

● **प्रीति जैन 'अज्ञात'**

नयनाभिराम मुखपृष्ठ और उत्सुकता उत्पन्न करने वाला शीर्षक लिए 'पीपल बिछोह में' पुस्तक, पहली ही झलक में आपका ध्यान आकर्षित कर पाने में सफल हो जाती है। छियासठ रचनाओं से सुसज्जित इस पुस्तक में रचनाओं का चयन अत्यन्त सुरुचिपूर्ण तरीके से किया गया है। कहीं कोई जल्दबाजी नहीं और न ही अनावश्यक दोहराव है। नौटियाल जी की रचनाएं समसामयिक घटनाओं और समाज के विविध पहलुओं पर खुलकर बोलती हैं। इसके साथ ही ये प्रकृति की छुअन तले सहजता से विचरण करते हुए, अत्यंत सहृदयता से मानवीय रिश्तों को स्पर्श करती चलती हैं। 'पीपल बिछोह में' संग्रह जीवन और समाज के इन्हीं मूल्यों को स्पर्श करता है। इनकी रचनाओं में समाज के सभी वर्गों को समान रूप से समाहित करने की कोशिश है और उसे एक नई दिशा व जागरुकता प्रदान करने की हठ भी साथ ही दृष्टिगोचर होती है। नौटियाल जी की रचनाएं पिछले दो वर्षों से पढ़ रही हूं। कभी स्पष्ट रूप से तो कभी अपने व्यंग्यात्मक चुटीले अंदाज में, क्लिष्टता की ऊबाऊ दुनिया से परे रहकर; एक आम इनसान की भाषा में लिखे गए इनके मुक्तक और छंदमुक्तक रचनाएं मुझे सदैव ही आकर्षित करती रही हैं। सामाजिक विसंगतियों, राजनीतिक द्वंद्व, जीवन की जद्दोजहद से जूझते मानव की समस्याओं, उलझनों और नैतिक मूल्यों के पतन पर इनकी लेखनी खूब चली है।

'पीपल की बिछोह में' संग्रह जीवन और समाज के इन्हीं मूल्यों को स्पर्श करता है। इनकी रचनाओं में समाज के सभी वर्गों को समान रूप से समाहित करने की कोशिश है और उसे एक नई दिशा व जागरूकता प्रदान करने की हठ भी साथ ही दृष्टिगोचर होती है।

6, जहानवी बैंगलो, अपॉजिट गवर्नमेंट ट्यबवैल, निकट कलिंदी सोसायटी, भोपल, अहमदाबाद, गुजरात-380 058

समीक्षा
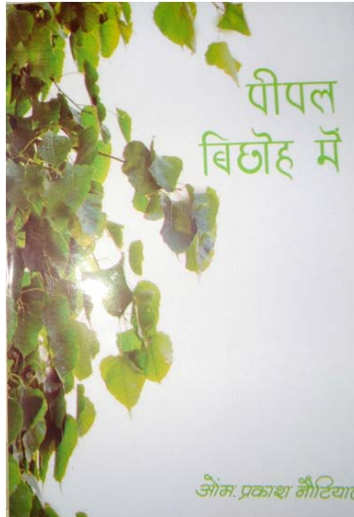
एक चुटकी भूल

● शिव प्रताप पाल

कहते हैं कहानियाँ कपोल-कल्पनाएँ होती हैं, जो साहित्यकार के मस्तिष्क में अनायास ही पकती रहती हैं और फिर उसकी लेखनी के माध्यम से बाहर आती हैं। परन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि कहानियाँ हमारे इर्द-गिर्द घटती ही रहती हैं, कभी परिदृश्य पर उभरती हैं, और फिर ओझल भी होती जाती हैं। संवेदनशील साहित्यकार इन अमूर्त कहानियों को उठाता है, अपनी कल्पनाशीलता में ढालता है और फिर उनको शब्दों-संवादों के द्वारा आकार प्रदान कर प्रस्तुत करता है। ऐसी कहानियाँ अपने समय का यथार्थ प्रस्तुत करती हैं। आज के समय में जब साहित्य के नाम पर कुछ भी श्लील-अश्लील लिखा-पढ़ा-परोसा-बेचा जा रहा है ऐसे समय में 'अयन प्रकाशन, महरौली, नयी दिल्ली' द्वारा प्रकाशित, गुप्तेश्वरनाथ उपाध्याय का कहानी संग्रह एक चुटकी भूल' गर्म लू में ठंडी हवा के झोंके के सामान अपनी आमद दर्ज कर चुका है। इनकी कहानियाँ आम आदमी की जिंदगी की कोमल कहानियाँ हैं, जो जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करती हैं, इनमे आपबीती है, संवेदनाएं हैं, पर बनावटीपन नहीं है।

इस कहानी संग्रह की समस्त इक्कीस कहानियाँ बहुत सरल भाषा में सहज रूप से आगे बढ़ती हैं। यही इसकी विशेषता है। अपनी बात को रखने में अधिकाँश छोटे वाक्यों और साधारण बिंबों का अच्छा प्रयोग किया गया है। कहानीकार ने कहीं भी भाषाई अतिरेक का सहारा नहीं लिया है और न ही अनावश्यक अलंकारिकता का ही प्रयोग किया है। भाषा की मर्यादा और शब्दों के प्रयोग का भी खास खयाल रखा गया है। यह आज की पीढ़ी के प्रति कहानीकार की जवाबदेही व प्रतिबद्धता को भी दर्शाता है। देशज व आंचलिक शब्दों तथा सांस्कृतिक बिंबों का बहुधा प्रयोग किया गया है, परन्तु वाक्य और संवाद पूरी तरह आंचलिक भाषा में न होकर खड़ी बोली में ही हैं। संग्रह की प्रत्येक कहानी में जीवन के विभिन्न रंग देखे जा सकतें हैं। कहानी परशुराम का क्रोध', पेटी पॉलिटिक्स' तथा प्रोबेशन' ऐसी ही कहानियां जो छात्रों व शिक्षकों के संबंधों को दर्शाती हैं। कहानी 'परशुराम का क्रोध' में जहाँ एक ओर आदर्श शिक्षक शिवगोविन्द मिश्रा हैं वहीं दूसरी ओर परशुराम तिवारी जैसे शिक्षक भी हैं जिनका शिक्षण से ज्यादा ध्यान जुगाड़ द्वारा अपना काम चलाने और छात्रों की पिटाई कर अपना रोब दिखाने पर रहता है। कहानी पेटी पॉलिटिक्स' विद्यालयों के उस दुखद चित्र को प्रस्तुत करती है, जिसमे प्रधानाचार्य अपने पद का दुरुपयोग करता है, जिससे अच्छे अध्यापकों के साथ-साथ शिक्षार्थियों का भी भयंकर नुकसान होता है, यहाँ तक की उनका भविष्य भी दांव पर लग जाता है।

'प्रोबेशन' कहानी भी पद के अनावश्यक दुरुपयोग और आंतरिक राजनीति की कहानी है जिसके परिणाम स्वरुप एक मेहनती शिक्षक का प्रोबेशन अकारण ही बढ़ाया जाता है, और व्यवस्था उसे बड़ी आसानी से नार्मल आफिशियल प्रक्रिया बताकर अपना पल्लू झाड़ लेती है। यह कहानी आज की व्यवस्था की बेशर्मी को उजागर करती है। लघु कहानी एक फूल की मौत' व्यावहारिक दुनिया के खोखलेपन को उजागर करती है, जिसमे संवेदनाओं और कोमल भावनाओं का कोई महत्व नहीं है। बर्ड फ्लू' एक मेहनतकश बेरोजगार की दुखद कहानी है, जो कठिन परिश्रम के बाद भी अपने को विषम आर्थिक स्थितिओं से घिरा पाता है और अंततः हताश होकर बर्ड फ्लू से पीड़ित मुर्गियों का गोश्त पकवाकर अपने पूरे परिवार सहित खाकर मौत के मुंह में चला जाता है। परन्तु इस कहानी का अंत कुछ इस प्रकार से किया गया है, कि ऐसी परिस्थिति में भी व्यक्ति को कुछ अत्यंत कठिन निर्णय स्वयं नहीं लेने चाहिए, बल्कि भाग्य पर भी कुछ भरोसा करना चाहिए।

कहानी एक चाय और देना' के माध्यम से कहानीकार ने व्यक्ति की मजबूरी दिखाने कि कोशिश की है, जब वो मन से किसी को कुछ देना तो चाहता है, पर उसके पास देने को कुछ भी नहीं होता। कहानी का अंतिम वाक्य रामप्रसाद, एक चाय और देना' इस कहानी में चार चाँद लगाता है'।

प्रसूति गृह का सच' में कहानीकार ने जाति व्यवस्था की दकियानूसी विचारधारा पर बड़ी सहजता से, कड़ा प्रहार किया है। 'भुतहा बरगद' समय के साथ बदलते प्रतीकों, मान्यताओं और विचारों को दर्शाती है। यह मनुष्य और प्रकृति के आपसी बनते-बिगड़ते संबध और तालमेल की दास्तान है। कहानी 'तलाश' जिंदगी कि भागम-भाग को दर्शाती कहानी है जो इंसान के भीतर-बाहर चल रहे अंतहीन अंतर्द्वंद्व को दर्शाता है। कहानी 'उपहार' जहाँ संपन्न वर्ग की छोटी सोच और पूंजीवादी विचारधारा को उजागर करती है, जो प्रत्येक चीज का मूल्य बाजार के आधार पर तय करना चाहता है। वहीं रिक्शावाला' कहानी एक मेहनतकश रिक्शेवाले की भावनाओं और मानवीयता को प्रदर्शित करती है। कहानी अखंडित एकता' अत्यंत रोचक है, इसमें बड़ी चतुरता के साथ हलके फुल्के अंदाज में धर्म, जाति और सम्प्रदाय के आधार पर चोरी में लिप्त चार दोस्तों में दरार पैदा कर दी जाती है, और फिर उन सभी की पिटाई करके दण्डित किया जाता है।

कहानी आस्था' एक ऐसे व्यक्ति अश्वघोष की कहानी है, जो जीवन के उच्च मापदंडों पर चलते हुए अपने परिश्रम से सफलता अर्जित करना चाहता है। वह किसी भी हालत में अपने उसूलों से समझौता नहीं करना चाहता। सफल होने के लिए वह विभिन्न

तरीके का काम अपनाने की कोशिश करता है, पर सफल नहीं हो पाता। एक तरफ से असफल होने पर वह दूसरा रास्ता खोजने लगता है और उस पर चलने की कोशिश करता है पर प्रत्येक जगह वह अपने आप को अनफिट पाता है। धीरे-धीरे उसके मन में निराशा घर कर जाती है, जो अजीब-अजीब स्वप्न के रूप में प्रकट होती है और अंततः उसका झुकाव भी आस्था की ओर हो जाता है। यह कहानी अश्वघोष के मस्तिष्क की उधेड़बुन और कशमकश को दर्शाती है। दरअसल ये कहानी प्रत्येक व्यक्ति की समाज के साथ सफल-असफल तालमेल और अनुकूलन की कहानी है। संग्रह की पहली कहानी एक चुटकी भूल' और अंतिम कहानी अधूरी कविता' की चर्चा किये बिना बात पूरी करना कठिन है। ये दोनों ही कहानियां स्त्री-पुरुष संबंधों के जटिल मनोविज्ञान, सूक्ष्म मनोदशा और भावनाओं को दर्शाती हैं। ये कहानियाँ अत्यंत कोमल, साफ-सुथरे और परिपक्व अंदाज में लिखी गयी हैं जो कहानीकार के मंझे होने के साथ-साथ उसके सामिजिक दायित्वबोध को भी दर्शाती हैं।

कहानी 'एक चुटकी भूल' का मुख्यपात्र श्यामाचरण वास्तव में एक संस्कारवान तथा अच्छे स्वाभाव वाला, भोला-भाला परन्तु परिपक्व व्यक्ति होता है, वह समझदार होने के साथ-साथ बहुत जिम्मेदार भी होता है। परन्तु ऐसा व्यक्ति भी समय, नियति, और स्त्री-पुरुष के जटिल मनोविज्ञान के कारण, न चाहते हुए भी कुछ क्षणों के लिए ही सही, ऐसी दिशा में कदम बढ़ा देता है, अथवा उस ओर बढ़ने से खुद को रोक नहीं पाता, या रोकना नहीं चाहता, जहाँ से लड़खड़ाने की संभावना बढ़ जाती है, यहाँ तक कि उसके खुद के घर की नींव के हिलने की भी नौबत आ सकती थी। परन्तु कहानी में नियति को ऐसी गड़बड़ मंजूर नहीं था। अतः संगीता की शादी के निमंत्रण पत्र ने सब कुछ ठीक कर दिया, सब सामान्य हो गया। और श्यामाचरण की भूल मात्र 'एक चुटकी भूल' के रूप में शेष रह गयी। हालाँकि यदि ईमानदारी से देखा जाए तो शायद वो कोई भूल थी ही नहीं, और यदि थी भी तो उसके लिए श्यामाचरण कोई अकेला जिम्मेदार नहीं था।

'अधूरी कविता' एक ऐसी लड़की की कहानी है, जिसे परिस्थितियों ने समय से पहले इतना बड़ा कर दिया, कि वह लड़की से कब अधेड़ बन गयी उसे पता ही न चला। उसने अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों और दायित्वों को इस कदर निभाया कि स्वयं अपने बारे में न तो कुछ सोच सकी, न कर सकी। और उसके अंत समय में कोई भी उसका दुःख बांटने नहीं आया, एक भतीजी आयी भी तो शायद उसका बचा-खुचा लेने की उम्मीद लेकर। यह कहानी अन्य कहानियों से इस लिए भी अलग है, क्योंकि इसमें एक सुंदर सी कविता का प्रयोग किया गया है। यह कविता वास्तव में कहानी की नायिका जिसका खुद का नाम भी कविता है, कहानी के नायक को लिख कर देती है। यह कविता वास्तव में इस कहानी की आत्मा है, इसके बगैर कहानी अधूरी ही कही जायेगी। किन्तु यदि इस कविता को कहानी से अलग करके पढ़ा जाए तो यह अपने आप में एक पूरी कविता है जिसका अंश उद्धृत है : घर के मुंडेर पर कबूतर / पता नहीं कबूतरी से / क्या गुटरगूं करता है / पर इतना तो जरूर / समझ में आता है / कि वह कबूतरी पर मरता है / प्रणय-निवेदन कर आत्म-समर्पण से / पता नहीं मन क्यों डरता है /..... / फिर दूसरे घर के / मुंडेर पर बैठ / मुंह बिचकाता है / फिर किसी अन्य / कबूतरी के साथ गुटरगूं / में लीन हो जाता है'। कहानी में कविता का इतना सुंदर प्रयोग गुप्तेश्वरनाथ जैसे कहानीकार ही कर सकते हैं, जो कि एक अच्छे कवि भी है, जिनका काव्य संग्रह 'पगडण्डी' नाम से प्रकाशित हो चुका है। कुल मिलाकर यह संग्रह भी इनके काव्य संग्रह की ही भांति पढ़ने योग्य है। इसके लोकार्पण के लिए मैं कहानीकार और प्रकाशक दोनों को बधाई देता हूँ।

113 / 1 के, शिवकुटी महादेव, इलाहाबाद,
उत्तर प्रदेश–211 004

पुस्तक : एक चुटकी भूल (कहानी संग्रह), **लेखक :** गुप्तेश्वरनाथ उपाध्याय, **प्रकाशक :** अयन प्रकाशन, महरौली, नई दिल्ली

'सेतु' का 21वां अंक प्रकाशित

हिमाचल प्रदेश क्रिएटिव राइटर्स फोरम शिमला के बैनर तले प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'सेतु' का नया अंक प्रकाशित हो गया है और पाठक, इसमें समाहित सामग्री का रसास्वादन कर सकेंगे। पत्रिका के सम्पादक डॉ. देवेन्द्र गुप्ता का कहना है कि सेतु के इस 21वें अंक में देश के जाने-माने साहित्यकारों व कवियों ने अपनी उत्कृष्ट सामग्री प्रेषित की है। उन्होंने उम्मीद जताई कि इस सामग्री के पठन-पाठन से साहित्य व इससे जुड़ी विभिन्न कलाओं में रुचि रखने वाले लोगों को लाभ मिलेगा। इस अंक में पाठकों के लिये लेखों के अलावा कहानियों, गजलों, कविताओं व व्यंग्य की सारगर्भित सामग्री बेहद उत्कृष्ट ढंग से प्रकाशित की गई है। कवि आलोचक नील कमल द्वारा 'वैश्वीकरण के बाद हिन्दी कविता की सामान्य प्रवृत्तियां' नामक लेख में नई सदी में हिन्दी कविता के मिजाज की पड़ताल की गई है। डॉ. आकाश वर्मा ने अपने लेख में हिन्दी कविता में पर्यावरण पर चिंता प्रकट की है। जबकि विपिन कुमार शर्मा ने कवि रघुवीर सहाय के रचना कर्म पर प्रकाश डाला है। इसके अलावा इस अंक में सात कहानियों का भी समावेश किया गया है जिसमें डॉ. कैलाश आहलुवालिया की 'मुर्गा मर्दजात', गंगा राम राजी की 'पटाक्षेप', हंसराज भारती की 'लाहौर' सुरभि बेहेरा की 'सरोज चाची', देवांशु की 'नेपथ्य', राजकुमार सिंह की 'घर-बेघर' तथा देव कन्या ठाकुर ने 'हेसण' कहानी के माध्यम से पत्रिका में अपनी उपस्थिति दर्ज की है। रत्न चन्द रत्नेश ने कमलेश्वर के इंटेलैक्चुअल नामक व्यंग्य से पाठकों का मनोरंजन करने का प्रयास किया है। रंगमंच स्तम्भ में प्रख्यात लेखक श्रीनिवास जोशी 'रंगमंच की ही शाखायें हैं- रेडियो, टीवी और फिल्म' के माध्यम से पत्रिका में रूबरू हुये हैं।
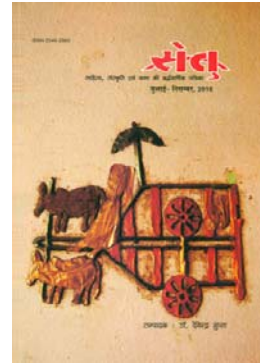
ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 सितंबर-अक्तूबर, 2016 अंक : 6-7

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

रचनाओं में व्यक्त विचारों से सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

एक कृत्य द्वारा किसी एक दिल को खुशी देना प्रार्थना में झुके हजार सिरों से बेहतर है।

– महात्मा गांधी

आवरण एवं रेखांकन : **सर्वजीत**

ऊना जिला विशेषांक

इतिहास

लोक संस्कृति

आस्था

पर्यटन

विकास

खेल जगत

वरिष्ठ संपादक की कलम से

पंद्रह अप्रैल 1955 में हिमाचल प्रदेश के गठन की आठवीं वर्षगांठ पर 'हिमप्रस्थ' मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। तब से आज तक इस पत्रिका की यात्रा न कभी थमी और न ही कभी रुकी। हालांकि इस अवधि में देश की अनेक पत्रिकाओं ने दम तोड़ दिया। हिमप्रस्थ के प्रकाशन का उद्देश्य जनता और सरकार के बीच संपर्क को बढ़ाना रहा है। जिस उद्देश्य के लिए इसका जन्म हुआ था, आज यह उसकी प्राप्ति तक पहुंची है और अपने मकसद में कामयाब भी हुई है। पत्रिका से जुड़े लोगों के सार्थक प्रयासों का ही प्रतिफल है कि आज इसकी गिनती राष्ट्रीय स्तर पर है। इस पर्वतीय राज्य की संस्कृति, लोक साहित्य और विकास संबंधी अपेक्षाओं को पूरा करने की दिशा में हिमप्रस्थ ने अपने कार्यकाल में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसने न केवल राज्य के क्रमिक विकास की यथार्थपरक ढंग से अभिव्यक्ति की है, बल्कि यहां दबी सांस्कृतिक और लोक संभावनाओं को भी सुव्यवस्थित और प्रामाणिक ढंग से प्रकाश में लाया है। हिमप्रस्थ में समय-समय पर विभिन्न विषयों पर विशेषांक प्रकाशन की परंपरा प्रारंभ से ही रही है। इस क्रम को हमारे संपादकीय मंडल ने लगातार जारी रखा है। जिसमें कहानी, चंबा सहस्राब्दी, सोभा सिंह, ताबो, स्वर्ण जयंती विशेषांक, लोक साहित्य एवं संस्कृति के 60 वर्ष आदि अनेक विशेष अंक प्रकाशित किए गए हैं। इसी कड़ी में प्रदेश के जिलों पर आधारित विशेषांक निकालने का भी प्रयास चल रहा है। इसका एक कारण यह भी है कि समस्त जिलों पर राजपत्र उपलब्ध नहीं हैं। प्रदेशवासियों को प्रत्येक जिले की जानकारी उपलब्ध हो, इसी क्रम में कुल्लू, मंडी और शिमला के बाद अब जिला ऊना पर यह अंक केंद्रित किया गया है। ऊना जिला प्रदेश में विशेष महत्त्व रखता है। हिमाचल प्रदेश स्वतंत्रता प्राप्ति के आठ माह बाद यानी 15 अप्रैल, 1948 को लगभग 31 छोटी-बड़ी रियासतों के विलय के बाद अस्तित्व में आया। हिम के आंचल में बसे इस प्रदेश में उस समय सरकार प्रशासन तथा जनता के समक्ष अनेक समस्याएं व कठिनाइयां थीं। उस समय प्रदेशवासी साहस, इच्छाशक्ति व जोश के आगोश में प्रसन्न थे। राज्य के लोगों को उम्मीद थी कि अब अपने शासन में हम बहुत तरक्की करेंगे। तरक्की का क्रम चलना प्रारंभ हुआ। कदम आगे बढ़ते गए। एक नवंबर 1966 को पंजाब हिल्स का हिमाचल में विलय हुआ तो इस पर्वतीय प्रदेश के लोगों ने इस प्रदेश को सही आकार देने की आवाज उठाई और 25 जनवरी 1971 को हिमाचल प्रदेश को पूर्ण राज्यत्व का दर्जा प्रदान किया गया। दर्जा हासिल होने से प्रदेश में तरक्की ने रफ्तार पकड़ी। कुछ क्षेत्रों को अलग जिलों में तब्दील किए जाने की जरूरत महसूस की गई और ऊना क्षेत्र को अलग से जिला बनाने का निर्णय लिया गया। पहली सितंबर 1972 को यह अस्तित्व में आ गया। तत्पश्चात यहां इस क्षेत्र में विकास ने गति पकड़ी। जिला में पांच विधान सभा क्षेत्र हैं जिनमें ऊना, हरोली, गगरेट, कुटलैहड़ तथा चिंतपूर्णी शामिल हैं। ऊना, अंब, बंगाणा तथा हरोली यहां के मुख्य उपमंडल है। जिले में पांच तहसील क्षेत्र हैं। इनमें गगरेट स्थित घनारी, ऊना, अंब, बंगाणा तथा हरोली हैं। पांच उपतहसीलें तथा पांच विकास खंड हैं। साक्षरता दर में भी यह जिला अग्रणी है। यहां करीब 92 प्रतिशत साक्षरता दर है। सही मायनों में ऊना जनपद में जो तरक्की हुई है, वह बेमिसाल है। वर्ष 1948 से इस छोटे से पहाड़ी प्रदेश ने अपने सफर में कई उतार-चढ़ाव देखे हैं। पर यहां के मेहनतकश एवं ईमानदार लोगों के कठिन परिश्रम एवं यहां के सुयोग्य नेतृत्व ने यह साबित कर दिया कि गरीबी पहाड़ों की नियति नहीं। यदि हम एक नजर वर्ष 1948 के हिमाचल जब यह अस्तित्व में आया था और आज के हिमाचल पर डालें तो मालूम होता है कि हमने अपना सफर कहां से शुरू किया था और आज हम कहां पहुंचे हैं। विकास में यह पहाड़ी इलाकों के लिए ही नहीं, बल्कि पूरे देश में अन्य राज्यों के लिए एक आदर्श के रूप में उभर कर सामने आ खड़ा हुआ है। इस सबमें ऊना जिला के मेहनतकश लोगों का भी विशेष योगदान रहा है।

अपनी बात

हिमालय आदिकाल से ही, भारतीय सभ्यता के क्रमिक विकास तथा अनेक संस्कृतियों का उद्‌गम स्थल माना जाता है। यहां की संस्कृति ने हमारी सभ्यता पर जितना अपना प्रभाव छोड़ा है, उससे कहीं अधिक इसे परिष्कृत किया है। हिमालय की गोद में स्थित हिमाचल प्रदेश के जिला अंचलों में ऐतिहासिक, सांस्कृतिक तथा अन्य रोचक जानकारियों व गूढ़ रहस्यों का अथाह भंडार है। प्रदेश की इस समृद्ध विरासत को सुव्यवस्थित एवं प्रमाणिक तरीके से प्रकाश में लाने के उद्‌देश्य से हिमप्रस्थ में जिला विशेषांकों का क्रमवार प्रकाशन किया जा रहा है। पत्रिका में कुल्लू, मंडी और शिमला के उपरांत ऊना जिला विशेषांक प्रकाशित किया है। शिवालिक पहाड़ियों की मध्यवर्ती शृंखला में स्थित इस जिले का अपना समृद्ध एवं गौरवशाली इतिहास है। एक सितंबर 1972 को अस्तित्व में आने से पहले यह जनपद प्रदेश के कांगड़ा जिले की एक तहसील तथा वर्ष 1966 से पूर्व पंजाब राज्य के होशियारपुर जिले का तहसील मुख्यालय हुआ करता था। पंजाब राज्य और कांगड़ा जिले का हिस्सा रहने के कारण यहां के जनजीवन पर इनकी संस्कृतियों का मिश्रित प्रभाव है जिसकी परिणति उन्नवी संस्कृति के रूप में हुई है। सिखों के प्रथम गुरु नानक देव सहित अनेक धर्मावलंबियों ने ऊना की पावन धरा पर पधार कर यहां के लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान दिया। रियासत काल, मुगल काल तथा अंग्रेजों के शासनकाल में इस क्षेत्र ने अनेक उतार-चढ़ाव देखे। स्वतंत्रता संग्राम में आंदोलनकारियों के लिए शरणस्थली रही इस सरजमीं के देश-प्रेमियों ने स्वाधीनता आंदोलन में अहम भूमिका निभाई। देशभक्त स्वतंत्रता सेनानियों द्वारा पैदा किए राष्ट्र प्रेम के जज्बे और जोश से यहां के लोग आज भी लबरेज हैं। सहभागिता, सहयोग विशेषकर सहकारिता के क्षेत्र में इस जिले का योगदान देश में सर्वोपरि है। ऊना जिले के पंजावर निवासी ठाकुर हीरा सिंह ने दूरदर्शिता का परिचय देते हुए वर्ष 1892 में भूमि सहकारी सभा गठित कर देश में सहकारिता की अवधारणा को जन्म दिया। भौगोलिक दृष्टि से भले ही यह जिला छोटा है, लेकिन विकास की दृष्टि से आज यह राज्य के खुशहाल जिलों में शुमार है। अधिकतर क्षेत्र मैदानी होने के कारण यहां की अधिकांश भूमि समतल एवं उपजाऊ है। प्रदेश के कृषि, दुग्ध एवं खाद्यान्न उत्पादन में यह जिला महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है। प्रदेश के औद्योगिक विकास में जिले ने अग्रणी भूमिका अदा की है। प्रदेश के धार्मिक पर्यटन में जिले का एक अलग स्थान है। 52 शक्तिपीठों में से एक देवी मां चिंतपूर्णी का भव्य धाम एवं अन्य सिद्धपीठों तथा बाबा बड़भाग सिंह जैसे अनेक धार्मिक स्थलों की पावन भूमि के कारण यह जिला धार्मिक पर्यटन का केंद्र माना जाता है। प्रदेश में आने वाले सैलानियों के लिए पहला पड़ाव यही जिला है। शिवालिक पहाड़ियों में स्थित यहां के बहुत से ऐसे स्थान हैं, जो आगंतुकों के आकर्षण का केंद्र हो सकते हैं। बंगाणा घाटी में प्रवेश करते ही प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण एक ओर गोबिंदसागर झील, तो दूसरी ओर सोलहसिंगीधार की मनोरम दृश्यावलियां आकर्षण एवं रोमांच से भरी दिखती हैं। ऊना जिला विशेषांक में जनपद के इतिहास, सांस्कृतिक विरासत एवं धार्मिक परंपराओं, सामाजिक-आर्थिक पहलुओं और विकास से जुड़ी सामग्री को समाहित करने का प्रयास किया गया है। इस कार्य में प्रदेश के प्रबुद्धजनों विशेषकर इस जिले के सुधी लेखकों का महत्त्वपूर्ण योगदान है, जिसके लिए हम उनके तहेदिल से आभारी हैं। लेखन में सुधार की सदैव गुंजाइश रहती है, अतः आपके सुझाव व प्रतिक्रियाएं सहर्ष आमंत्रित हैं।

–संपादक

ऊना जनपद

उद्भव का गौरवमय इतिहास

◆ गोपाल दिलैक

हिमाचल प्रदेश के पश्चिम में भू-मध्यरेखा से 31^0 से 31^0 50' उत्तरी अक्षांश तथा 76^0 8^0 से 76^0 23^0 पूर्वी रेखांश के मध्य ऊना जिला स्थित है। इसके पूर्व में हमीरपुर, पश्चिम में पंजाब राज्य, उत्तर में कांगड़ा और दक्षिण में पंजाब राज्य तथा बिलासपुर जिले की सीमाएं लगती हैं। जिले के अधिकांश भू-भाग का जलवायु ऊष्ण है। जनपद का जिला मुख्यालय समुद्रतल से 428 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। ऊना बाह्य हिमाचल पर्वत श्रेणी की शिवालिक पर्वतमालाओं के अंचल में बसा है। ऊना को पंजाब से पृथक करने वाली जसवां दून की पहाड़ियां व्यास के किनारे हाजीपुर से आरम्भ होकर रोपड़ के समीप सतलुज के तट पर समाप्त होती हैं। ऊना की दूसरी पहाड़ी चिन्तपूर्णी के नाम से विख्यात है। यह जसवां घाटी के उत्तर में पड़ती है। यह दक्षिण में दो भागों में बंट जाती है। ऊना के इतिहास को समझने के लिए जसवां, कुटलैहड़, बीत और द्रोण चार भागों में बांटा जा सकता है।

जसवां : सोमभद्रा नदी जसवां दून को दो भागों में विभाजित करती है। इसके एक भाग में अम्ब, चलेट, अम्बोटा, गगरेट से ईसपुर तक का इलाका आता है जबकि दूसरी ओर ऊना, बरमाणा, मातेश्वरी, चिन्तपूर्णी, भरवाईं सिद्धपीठ, घुसाड़ी आदि क्षेत्र पड़ते हैं। ऊना जिले के अम्ब उप-मण्डल के अधीन जसवां रियासतीकाल में कांगड़ा के कटोच शासकों की जागीर रही है। जसवां रियासत की नींव सन् 1170 ई. को कटोच वंश शासक पूर्ण चंद (जिन्हें पूर्व चंद भी कहा जाता था) ने रखी। उन्होंने जसवां की राजधानी राजपुरा में स्थापित करवाई। इस प्रकार जसवां कटोच वंश की पहली अलग जागीर बनी। जसवां में पूर्व चन्द से लेकर उमेद चन्द तक कुल सताईस शासकों ने शासन किया। जसवां मुगल शासकों और सिक्ख शासकों के अधीन रही।

9 मार्च, 1846 ई. को सिक्खों और ब्रिटिश इण्डिया सरकार के मध्य हुई सन्धि के अनुसार जसवां रियासत ब्रिटिश सरकार के अधीन आई। जसवां के राजा उमेद सिंह ने इसका विरोध किया। इस विद्रोह को दबाने के लिए होशियारपुर के कमिशनर जॉन लॉरेंस ने जसवां के किला अम्ब पर हमला किया। इसमें राजा उमेद सिंह और उनके पुत्र जय सिंह पराजित हुए। इसके बाद दोनों की मृत्यु हो गई थी। जसवां के शासकों ने अम्ब में साइप्रस आदि विभिन्न फूल-पौधों के बागीचे लगवाए। राजा उमेद सिंह ने अम्ब में शाही महल बनवाए। चिन्तपूर्णी श्रृंखला को सोलासिंगी या जसवांधार भी कहा जाता है। यह ऊना की दूसरी श्रृंखला है। कांगड़ा बंदोबस्त रिपोर्ट में मि. बार्लेस ने चिन्तपूर्णी के समीप भरवाईं की समुद्रतल से ऊंचाई 3,896 फुट बताई है। सतलुज जसवां दून में ऊना के पूर्व में बभौर के समीप प्रवेश करती है। ऊना में सिंचाई वैसे तो छोटे-छोटे जल स्रोतों से की जाती रही लेकिन रियासतीकाल में भंगाल के राय मुराद द्वारा आदिना बेग के तत्त्वावधान में व्यास नदी से शाह नहर निकलवाई गई थी। ऊना से प्रवाहित सदानीरा नहर हिमाचल प्रदेश की सबसे बड़ी सिंचाई परियोजना है।

जसवां दून का भरवाई मैदानी एवं पहाड़ी क्षेत्र ब्रिटिशकाल में ब्रिटिश अधिकारियों ने सैन्य उपयोग में लाया। यहाँ सन् 1869 ई. को ब्रिटिश-इण्डिया सरकार ने एक बंग्ला बनवाया था। यहाँ सन् 1869 ई. को एक प्राथमिक स्कूल तथा सन् 1882 ई. को एक विश्राम गृह भी खोला गया था। यहां वर्तमान में एक भव्य सराय का निर्माण हुआ है जहां चिन्तपूर्णी जाने वाले श्रद्धालुओं के ठहरने का प्रबन्ध भी है।

कुटलैहड़ : ऊना जिले की बंगाणा तहसील की कुटलैहड़ रियासत तत्कालीन समय में सबसे छोटी पंजाब पहाड़ी रियासतों में से एक थी। इसकी नींव लगभग दसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जसपाल ने होशियारपुर की तलहटी और कुटलैहड़ पर विजय हासिल करके रखी थी। इसकी राजधानी कोट-कुटलैहड़ थी।

यह रियासत मुगलों, सिक्खों और पहाड़ी शासकों के अधीन रही। मुगल शासकों ने इस रियासत की जागीरें चौकी, कुटलैहड़ और मानक चन्द को कब्जे में ले लिया था। सन् 1758 ई. को चौकी कांगड़ा के राजा संसार चन्द ने अपने अधीन कर ली थी। सन् 1809 ई. को यह रियासत गोरखा युद्ध के दौरान स्वतन्त्र हुई। सन् 1825 सिंह को सिक्ख सम्राट रणजीत सिंह ने रियासत को अपने अधीन करने के लिए कोट बल्भ किले की घेराबंदी कर दी थी लेकिन दो माह तक चले संघर्ष में राजा नारायणपाल की मृत्यु हुई और रियासत की बागडोर राजा रामपाल के पास आई। इनके

बाद राजा राजेन्द्रपाल और राजा बृजमोहनपाल रियासत के शासक हुए। इसमें बंगाणा, थानाकलां, जोगी पंगा, चुराड़ी, सोहरी, टंकोली, दगड़ाह आदि क्षेत्र सम्मिलित थे।

बीत-सोमभद्रा के पश्चिम तटीय भाग को बीत कहा जा सकता है। बीत के बाहरी हिस्से में गोंदपुर, बूलां, बाथड़ी, दलैहड़, पूबोवाल, कुठार, पोलियों, बाली आदि बाहरी राज्य पंजाब की सीमा से जुड़े हैं।

द्रोण-सतलुज और सोमभद्रा नदी के बीच वाले भू-भाग को द्रोण कहा जाता है। द्रोण का तात्पर्य समतल अर्थात मैदानी भूमि से लिया गया है। इसमें मैहतपुर, वनगढ़, चताड़ा, मलाहती, सन्तोषगढ़, वहडाला, सणौली, भटोली आदि क्षेत्र आते हैं।

पंजाब राज्य का जिला होशियारपुर रियासतीकाल में चार तहसीलों होशियारपुर, गढ़शंकर, दसुआ और ऊना में विभक्त था। ऊना तहसील का सम्पूर्ण पूर्वी भाग शिवालिक पहाड़ियों में बसा था। ऊना तहसील का मैदानी भाग दसुआ, गढ़शंकर और होशियारपुर तहसील के मध्य था। ऊना तहसील की समीपतवर्ती पहाड़ियों जसवां दून के नाम से विख्यात रही हैं। ऊना तहसील जसवां रियासत का हिस्सा रही है। वर्तमान जिला ऊना जसवां और कुटलैहड़ दो रियासतों को मिला कर बना है।

होशियारपुर जिले के प्रशासनिक विभाजन के अन्तर्गत जिन 27 महालों का उल्लेख आई-न-ए-अकबरी में किया गया है उनमें से बरोह, पलकवाह, बसोली, कटा, नकरोह और जसवां ऊना तहसील में थे। आई-न-ए-अकबरी में दसुआ, मलोट, तलवाड़ा, पृथीपुर आदि दुर्गों का वर्णन दिया गया है। इनमें से पुरातात्विक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मलोट दुर्ग को सम्राट अकबर का जन्म स्थान बताया गया है। ऊना में बेदी वंशज के परदादा बाबा कलाधारी के अनेक शिष्य थे। ऊना में बाबा कलाधारी सन् 1700 ई. के आसपास ग्रन्थ साहिब का उपदेश देने के लिए आ बसे थे। यह गुरू नानकदेव के वंशज माने जाते हैं। बेदी कलाधारी की धार्मिक रुचि को देखकर जसवां के राजा राम सिंह ने उन्हें 75 घुमाव भूमि दान में दी थी। सन् 1738 ई. को बाबा कलाधारी की मृत्यु हो गई।

सन् 1703 ई. को बाबा कलाधारी के प्रपौत्र बेदी साहिब सिंह को जसवां के शासक उमेद सिंह ने तमाम ऊना तालुका दे दिया। सरदार गुरदित सिंह ने भी बेदी साहिब सिंह को कुलाग्राओं की जागीर दे दी थी। सन् 1759 ई. तक जसवां और दत्तारपुर अविभाजित जागीरों के रूप में स्थापित रही। इसके पश्चात् मैदानी क्षेत्रों में सिक्खों के बढ़ते प्रभुत्व ने पहाड़ी जागीरों को नियन्त्रण में लिया। सन्तोषगढ़ के सरदार गुरदित ने ऊना के कुछ भाग पर कब्जा किया। सन् 1818 ई. को महाराजा रणजीत सिंह ने ऊना, जसवां दून, दत्तारपुर सहित अनेक पहाड़ी जागीरों को अपने अधीन ले लिया। सभी शासकों को उनकी जागीरों से हटा दिया गया। बेदी साहब सिंह की धार्मिक आस्था को देखकर महाराजा रणजीत सिंह ने भी ऊधोवाली जागीर उन्हें दान में दे दी। सन् 1834 ई. को बेदी साहिब की मृत्यु के बाद उनके पुत्र बेदी विक्रम मान सिंह ब्रिटिश सरकार के अत्याचारों का विरोध करते रहे। सन् 1848 ई. को उन्होंने स्थानीय शासकों के साथ मिलकर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध विद्रोह किया। सरकार ने उससे सारी जमीनें छीन ली और र 2000/- वार्षिक नजराना तय करके अमृतसर में रहने की अनुमति दी। सन् 1846 ई. को एंग्लो-सिक्ख युद्ध में अंग्रेजों की विजय हुई। इस प्रथम सिक्ख युद्ध की समाप्ति के बाद ऊना मार्च, 1846 ई. को बिटिश सरकार के सीधे नियन्त्रण में आया। सन् 1848 ई. में द्वितीय सिक्ख युद्ध आरम्भ होने पर पहाड़ी शासकों ने इस युद्ध में विद्रोह किया। ऊना के बेदी विक्रममान सिंह भी इसमें शामिल हुए। सन् 1877 ई.में ब्रिटिश सरकार ने जसवां के मियां रघुनाथ सिंह जसवाल को 21 गांव, अम्ब के बागीचे, राजपुरा के महल और राजा के पुराने महल वापस लौटाए। यह 21 गांव ऊना दून में शामिल किए गए।

पंजाब के होशियारपुर जिले में जसवां के जसवाल, ऊना के बेदी, आनन्दपुर के सोढ़ी आदि परिवार अग्रगण्य रहे हैं। बेदी विक्रममान सिंह की मृत्यु के पश्चात् उनके दूसरे पुत्र सुजान सिंह ऊना में रहने लगे और अपनी खोई हुई पुश्तैनी विरासत को प्राप्त करने में जुट गए क्योंकि ब्रिटिश सरकार बेदी विक्रममान सिंह को 86813/- रुपये वार्षिक नजराना तथा 31212/-रुपये वार्षिक आजीवन नजराना देकर ऊना के गांव को ब्रिटिश राज्य के साथ मिलाना चाहती थी। इसके अतिरिक्त ऊना में स्थायी निवास के बदले 1200/- रुपये पेंशन प्रदान की जानी थी लेकिन बेदी विक्रममान सिंह ने भी विद्रोह में भाग लिया और ऊना गांव से अपनी सत्ता खो डाली थी। सन् 1863 ई. को बेदी विक्रममान सिंह की मृत्यु अमृतसर में हुई जबकि उनकी समाधि ऊना में है।

बेदी विक्रममान सिंह के बेटे सुजान सिंह को ब्रिटिश सरकार ने 1100/- रुपये वार्षिक नजराना देना तय किया। सन् 1883 ई. को ब्रिटिश सरकार ने सुजान सिंह को वार्षिक नजराना के बदले ऊना के मौजा अरनयाला, लाल सिंधी, कोटला, नेगलकलां आदि जागीरें वापस लौटाई। इस प्रकार सुजान सिंह को वंशागत स्वामित्व के आधार पर ऊना तहसील की 670 घुमाव जमीन का मालिकाना अधिकार प्राप्त हुआ।

सन् 1882-83 ई. को ऊना में प्रशासनिक दृष्टि से एक तहसीलदार तथा एक नायब तहसीलदार था। नायब तहसीलदार की तैनाती अम्ब में थी। बेदी सुजान सिंह को ऊना पुलिस क्षेत्राधिकार में अवैतनिक मजिस्ट्रेट श्रेणी-दो की शक्तियां प्राप्त थी। ऊना तहसील में एक रजिस्ट्रार, पांच कानूनगो और 101 पटवारी भी तैनात थे। ऊना तहसील में एक थाना भी था। सन् 1868 ई. को ऊना तहसील में 22 स्कूल चलाए जा रहे थे जिसमें 375 विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते थे। सन् 1881 ई. तक छात्रों की संख्या

800 के आसपास हो गई थी।

सन् 1881ई. की जनगणना के आधार पर जिन स्थानों की जनसंख्या पांच हजार से अधिक थी उन्हें कस्बे की श्रेणी में रखा गया तथा ऊना भी कस्बा बन गया था। सन् 1881 ई. को ऊना कस्बे की कुल जनसंख्या 4,389 थी जिसमें से 2,325 पुरुष और 2064 महिलाएं थी। इनमें से 3,122 हिन्दू 812 सिक्ख, और 435 मुस्लिम व 20 जैन थे। ऊना कस्बे में आबाद घरों की कुल संख्या 969 थी। सन् 1874 ई. में ऊना नगरपालिका का गठन हुआ। इसके चार सदस्य थे। ऊना नगरपालिका श्रेणी-तीन में आती थी। ऊना नगरपालिका की आय सन् 1870-71 ई. में 1,365/- रुपये मात्र थी जो सन् 1881-82 ई. तक बढ़कर 1,851 रुपये हो गई थी। सन् 1881 ई. को ऊना में हिंदी भाषी लोगों की संख्या 327, पंजाबी की 2,07,754, फारसी तथा अंग्रेजी बोलने नाममात्र ही था। सन् 1881 ई. के जनगणना आंकड़ों के अनुसार ऊना तहसील का कुल क्षेत्रफल 867 वर्गमील था। इसमें से 266 वर्ग मील पर खेती की जाती थी। ऊना तहसील की कुल जनसंख्या 20,80,86 थी। इसमें 10,267 शहरी तथा 1,97,818 ग्रामीण थी। ऊना तहसील की कुल जनसंख्या में 1,09,203 पुरुष तथा 98,883 महिलाएं थी।

सन् 1857 ई. के राष्ट्रव्यापी स्वाधीनता आन्दोलन में ऊना-होशियारपुर के क्रान्तिकारियों ने 19 मई, 1857 ई. को देशी पुलिस के साथ मिलकर विद्रोह की आंधी को दबाने के लिए धर्मशाला से 64 बरकुन्दाज गार्डस को ऊना भेजा गया था। ऊना में भी नाका चौकियां स्थापित की गई थी। अन्त में 10 अगस्त 1857 ई. तक विद्रोह शान्त हो चुका था तथा अंग्रेजों ने पहाड़ी राज्यों पर अपना शासन पुनः स्थापित करने में प्राप्त कर ली थी।

स्वतंत्रता संग्राम में योगदान

ऊना में स्वाधीनता की ज्वाला को आगे बढ़ाते हुए सन् 1905 ई. में देश भक्त बाबा लछमन दास आर्य ने सर्वप्रथम स्वाधीनता आन्दोलन में प्रवेश किया। लछमन दास पुलिस की नौकरी छोड़कर अपनी पत्नी दुर्गा बाई आर्य सहित राष्ट्रीय आन्दोलन में कूद पड़े। ऊना के लछमन दास ने लाहौर में लाला लाजपतराय और महात्मा हंसराज जैसे राष्ट्रीय नेताओं से आंदोलन का प्रशिक्षण लिया। लाहौर में कुछ महीने प्रशिक्षण लेने के बाद बाबा लछमन दास ऊना लौटने पर परिवार सहित राष्ट्र सेवा में लग गए। सन् 1908 ई. में बाबा लछमन दास को सरकार विरोधी गतिविधियों के जुर्म में अंग्रेजों ने गिरफ्तार कर लिया। उन्होंने दो वर्ष तक लाहौर जेल में कड़ी सजा काटी । सन् 1910 ई. में बाबा लछमन दास लाहौर जेल से रिहा होकर ऊना आए। महात्मा हंसराज के प्रभाव से वह आर्य समाज के सदस्य बने। सन् 1912 ई. को उनकी पत्नी दुर्गा बाई ने आर्य समाज में प्रवेश कर ऊना में आर्य महिला-मण्डल का गठन किया।

सन् 1915 ई. में महात्मा गांधी ने कांग्रेस को राष्ट्रव्यापी रूप देकर एक शक्तिशाली राजनैतिक संगठन बनाया। देश की सभी राष्ट्रवादी शक्तियों और संगठनों ने कांग्रेस को अपना प्रतिनिधि संगठन माना। हिमाचल प्रदेश के अनेक आन्दोलनकारियों की भांति बाबा लछमन दास और दुर्गा बाई ने कांग्रेस में प्रवेश लिया। महात्मा गांधी के सुझाव पर इन दोनों क्रांतिकारियों ने सपरिवार खादी संगठन की नींव रखी। आर्य समाज को छोड़कर बाबा लछमन दास कांग्रेस के साथ स्वाधीनता आन्दोलन में शामिल हुए। दुर्गा बाई भी ऊना में कांग्रेस के सदस्यों को बनाने में जुट गई। सन् 1925ई. के अन्त में ऊना के महाशय तीर्थ राम ओयल आर्य समाज के नेताओं से प्रभावित होकर क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेते रहे।

सन् 1929 ई. को पंजाब प्रान्त कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन रोहतक में हुआ। इसी अवधि में हिमाचल प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय आन्दोलन सक्रिय हो रहा था। ऊना में बाबा लछमन दास के पुत्र सत्य प्रकाश ने कांग्रेस का झण्डा उपायुक्त कोर्ट में लहराया और नारा दिया- "हिन्दुस्तान हमारा है क्या रखा अंग्रेजों यहां तुम्हारा।" अंग्रेज डिप्टी कमीशनर ने उन्हें तत्काल कैद की सजा दी। सत्य प्रकाश लगभग चौदह वर्ष की आयु में ही स्वाधीनता संघर्ष में सक्रिय हो गए थे। सन् 1929 ई. को सत्य प्रकाश के साथ उपनाम 'बागी' भी खूब प्रसिद्ध हुआ। उन्हें सत्य प्रकाश बागी कहा जाने लगा।

सन् 1930 ई. तक राष्ट्रीय आन्दोलन पूर्ण रूप से जोर पकड़ चुका था। इस काल में कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण करना, गांधी टोपी लगाना और खादी वस्त्र पहनना ब्रिटिश साम्राज्य के विरोध का प्रतीक माना जाता था। ऊना, नादौन, धनेटा, पालमपुर, परागपुर, कांगड़ा, कुल्लू और शिमला में खादी केन्द्र एवं चरखा संघ स्थापित किए गए थे जो हिन्दुस्तानी जनता को गांधी टोपी, कौमी झण्डे, चरखे और खादी वस्त्र उपलब्ध करवाते थे।

सन् 1930 ई. के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के दौरान बाबा लछमन दास और उनके पुत्र सत्य प्रकाश बागी को ब्रिटिश सरकार ने गिरफ्तार कर लाहौर की बोर्स्टल जेल भेज दिया। सन् 1930 ई. को दुर्गा बाई ने देशभक्ति की चेतना से ऊना में महिला-मण्डल की स्थापना करवाई। बाबा लछमन दास और उनके परिवार के साथ ऊना के अन्नत राम, जगदीश सिंह, ठाकुर दास, वरयाम सिंह, वतन सिंह, हरनाम सिंह, राम रक्खा, खुशीनन्द आदि ने भी सत्याग्रह में बढ़ चढ़ कर भाग लिया।

सन् 1934 ई. को महाशय तीर्थ राम ओयल ने अपने गांव ओयल में एक कांग्रेस जन सभा बुलाई। इसी सभा में ओयल गांव से तमाम ऊना क्षेत्र में आन्दोलन चलाने का कार्यक्रम बनाया गया। एक अक्तूबर, 1935 ई. को तीर्थ राम ओयल ने गांधी जी और पंजाब के कांग्रेसी नेता गोपी चंद भार्गव के आशीर्वाद से

ओयल में 'गांधी सेवा आश्रम ओयल' स्थापित कर आजादी की लहर ऊना के हर घर तक पंहुचाने का संकल्प लिया। सन् 1937 में ऊना, शिमला, कुल्लू और लाहौल-स्पीति में कांग्रेस के संगठनों को मजबूत करने पर विशेष ध्यान दिया गया। ऊना में भी अन्य भागों की तरह बाबा लछमन दास, तीर्थ राम ओयल, सत्य प्रकाश बागी, वरयाम सिंह आदि ने कांग्रेस को संगठित करने के प्रयास किए। खादी के नए केन्द्र खोले गए और स्वयं सेवक भर्ती किए गए। स्वयं सेवकों को खादी एवं आन्दोलनकारी साहित्य प्रचार के लिए एक साथ सौंपा जाता था। 23 जुलाई, 1939 ई. को गोपीचन्द भार्गव ने ऊना के ओयल गांव में 'गांधी सेवा आश्रम ओयल' का उद्‌घाटन किया। सरदार हजारा सिंह ने कौमी तिरंगा झण्डा फहराया। यहां उपस्थित जनसमुदाय ने अहिंसात्मक राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने की प्रतिज्ञा ली। महाशय तीर्थ राम ओयल को ओयल आश्रम का मुख्य प्रबन्धक नियुक्त किया गया। गोपी चन्द भार्गव ने प्रबन्धों का दायित्व संभाला। यह आश्रम कांग्रेसी कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण केन्द्र बनाया गया। यहां पजाब, दिल्ली और पहाड़ी रियासतों के कँाग्रेसी, गांधीवादी आन्दोलन की शिक्षा ग्रहण करने लगे।

मार्च, 1940 ई. को महात्मा गांधी ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का नेतृत्व सम्भाला और अपनी शिष्या मीर बेन को गांधी सेवा आश्रम ओयल भेजा। इन्हें आश्रम में आए कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन का कार्य सौंपा गया। मीरा बेन का असली नाम मिस सालडे था जो ब्रिटिश एडमिरल की पुत्री थी। गांधीवादी विचारधारा से प्रभावित होकर मीरा बेन ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने ओयल आश्रम ऊना में कार्यकर्ताओं को गांधीवादी आन्दोलन की शिक्षा दी और मार्गदर्शन दिया। मीरा बेन ने अलग कुटिया में रह कर ऊना, अम्ब, गगरेट और देहरा के हर गांव में जा कर गांधी जी का सन्देश पहुंचाया।

सन् 1942 ई. को देश में गांधी जी का शान्तिपूर्ण स्वाधीनता आन्दोलन तेज रफ्तार पकड़ता जा रहा था। कांगड़ा, ऊना हमीरपुर, कुल्लू और शिमला में फौजी भर्ती के खिलाफ आन्दोलनकारियों ने अंग्रेजों से संघर्ष किया। गांधी जी का नारा 'भाई दो ना पाई' गांव-गांव तक पहुंचाया गया। 20 अप्रैल, 1942 ई. को व्यक्तिगत सत्याग्रह के अन्तर्गत गिरफ्तार हिमाचल के आन्दोलनकारियों के साथ ऊना के आज्ञा राम, जगदीश चन्द्र, रामदयाल सैनी, वरयाम सिंह ठाकुर आदि भी पंजाब की जेलों से रिहा होकर आए।

18 अगस्त, 1942 ई. को चिन्तपूर्णी मेले के दौरान कांग्रेस ने एक पॉलिटिकल कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया। ब्रिटिश सरकार ने इसकी सूचना लेते ही सभी मार्गो की नाकाबन्दी करवा दी। बाबा लछमन दास, बलदेव सिंह, भागमल और अमर दास को कॉन्फ्रेंस से पहले गिरफ्तार करवा दिया गया। कुछ आन्दोलनकारी हंसराज, जगदीश राम, हरी सिंह, महाशय तीर्थ राम, जुल्फी राम तथा धनी राम कॉन्फ्रेंस में पहुंचने के लिए कामयाब हुए। इन आन्दोलनकारियों ने चिन्तपूर्णी मेले में आए लाखों लोगों तक गांधी जी का 'करो या मरो' सन्देश पहुंचाया। कुछ देर बाद आन्दोलनकारियों को गिरफ्तार कर अम्ब जेल भेज दिया गया। इन सभी कार्यकर्ताओं को तीन मास से दो वर्ष तक कड़े करावास की सजा दी गई। महाशय तीर्थ राम ओयल, हंसराज और लछमन दास को मुलतान जेल भेजा गया। ओयल आश्रम का कार्यभार जगदीश चन्द्र, प्रीतम सिंह बनवासी और एक बंगाली बाबू ने सम्भाला। 21 अक्तूबर, 1943 ई. को आजाद हिन्द फौज की कमान नेता जी सुभाष चन्द्र बोस ने सम्भाली। नेता जी द्वारा गठित फौज में हिमाचल के लगभग 4000 जवानों ने सशस्त्र क्रान्ति में डट कर मुकाबला किया। भारत को स्वतन्त्र कराने की इस लड़ाई में हिमाचल के वीर जवानों ने अपने प्राण न्योछावर कर दिए। सितम्बर, 1944 ई. को भारत छोड़ो आन्दोलन के जिन नेताओं की रिहाई हुई उन में ऊना के महाशय तीर्थ राम ओयल, हंसराज, बाबा लछमन दास, चौधरी लछमन दास आदि भी शामिल थे। सन् 1946 ई. को ऊना में बाबा लछमन दास, दुर्गाबाई, सत्य प्रकाश बागी, सत्य मित्र और सत्य भूषण राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय हुए। 15 अगस्त, 1947 ई. को भारत आजाद हुआ। स्वतन्त्रता की खुशियों को मनाने के लिए ऊना में बाबा लछमन दास आर्य के घर पर तथा कांग्रेस कार्यालय में दीपमाला जलाई गई। गांधी सेवा आश्रम ओयल में भी स्वाधीनता दिवस धूमधाम के साथ मनाया गया। भारत की स्वाधीनता पर ऊना को पंजाब के होशियारपुर जिले के साथ ही रखा गया।

प्रथम नवम्बर, 1966 ई. को पंजाब राज्य पुनर्गठन पर ऊना, अम्ब, सन्तोषगढ़ तथा लोहरा को होशियारपुर से हटा कर हिमाचल प्रदेश में कांगड़ा जिले के अन्तर्गत शामिल किया गया तथा ऊना तहसील को जिले का दर्जा दिया गया। इसके साथ ऊना को उपमण्डल तथा ऊना, अम्ब, बंगाणा को तहसील तथा हरोली को उप-तहसील बनाया गया।

दिलैक निवास, विकास नगर, डाकघर कुसुम्पटी, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 009

संदर्भ ग्रन्थ

1. पंजाब सरकार, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, होशियारपुर 1883-84, सिविल एण्ड मिल्ट्री प्रेस लाहौर, 1883

2. पंजाब सरकार, गजेटियर ऑफ कांगड़ा डिस्ट्रिक्ट, गवर्नमेंट प्रिंटिंग प्रेस लाहौर, 1899

3. पंजाब सरकार, दि रिपोर्ट ऑफ दि स्टेट्स रि-ऑर्गेनाइजेशन कमीशन 1955, पंजाब गवर्नमेंट प्रेस शिमला, 1956

4. पंजाब सरकार, दि म्यूटिनी रिकॉर्डर्स-1857 खण्ड-7 पार्ट-I एण्ड पार्ट-II गवर्नमेंट प्रेस लाहौर, 1911

अध्यात्म प्रधान संस्कृति की धरा

◆ कर्नल जसवंत सिंह चंदेल

किसी स्थान के नामकरण बारे कुछ-न-कुछ तथ्य जरूर होते हैं, मगर समय के साथ-साथ वे तथ्य गुजरे जमाने के इतिहास तक ही सीमित रह जाते हैं। ऊना क्षेत्र में जो भाषा बोली जाती है, वह मुक्कमल तौर पर पंजाबी न होकर कुटलैहड़ी, कांगड़ी, कहलूरी व पंजाबी भाषा का मिश्रण माना जा सकता है। स्थानीय लोगों से बातचीत करने पर पता चलता है कि 'ऊणा' उस पहाड़ी को कहा जाता है जो तीन तरफ से कटी-फटी हो। ऐसा प्रतीत होता है कि ऊणा शब्द से ही ऊना बना हो। यह वह कटी-फटी पहाड़ी है जिस पर सबसे पहले सिख धर्म के संस्थापक गुरु नानक देव साहिब वंशज बाबा कालाधारी ने अपना निवास बनाया था। बाबा कालाधारी ने अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इसी कटी-फटी पहाड़ी पर अपना डेरा बनाया था। बाद में बाबा कालाधारी के उत्तराधिकारी बेदी साहब सिंह और बेदी सुजान सिंह के समय यह नगर बना, कई शानदार भवनों का निर्माण हुआ और किले बने। ऊना को बेदियों की गढ़ी भी कहा जाता है क्योंकि गुरु नानक देव साहिब बेदी वंश के थे और ऊना भी उसी वंश ने स्थापित किया।

16 मार्च 1846 को ऊना नगर अंग्रेजी साम्राज्य का हिस्सा बन गया। अंग्रेजों ने इस नगर को जसवां रियासत में मिला दिया और इसे तहसील मुख्यालय बना दिया। उस समय तक ऊना, पंजाब प्रांत की सबसे बड़ी तहसील का मुख्यालय हुआ करता था। यानी ऊना होशियारपुर जिले की एक तहसील थी। एक नवंबर 1966 को पंजाब का भाषा आधारित बंटवारा हुआ और ऊना की तहसील का हिंदी/पहाड़ी भाषी क्षेत्र हिमाचल में मिलाया गया। उस समय ऊना को कांगड़ा जिले की एक तहसील बना दिया गया।

जिला कांगड़ा एक बहुत बड़ा जिला था इसलिए 29 अगस्त 1972 को जिला कांगड़ा के तीन जिले बना दिए गए। एक जिला कांगड़ा, दूसरा जिला हमीरपुर और तीसरा जिला ऊना। इस तरह एक सितंबर 1972 को ऊना जिला का जन्म हुआ।

व्यास नदी और सतलुज नदी हालांकि ऊना के क्षेत्र में बहती नहीं है, मगर इन दोनों नदियों की घाटियों में ऊना जिला बसता है। ऊना की भाग्यरेखा स्वां नदी है। यह एक बरसाती नदी है। इसके अलावा लूसण खरी खड्ड, टक्का खड्ड, पंडोगा चो, ठठल चो तथा बुंबलु झरना ऊना जिला की खड्डे व चो हैं। इस समय ऊना जिले में ऊना और अंब दो उपमंडल हैं, ऊना, अंब व बंगाणा तीन तहसीलें व हरोली भरवाईं दो उप-तहसीले हैं। अंब, गगरेट, कुटलैहड़, संतोषगढ़ व ऊना पांच विधान सभा क्षेत्र हैं।

ऊना और बेदी वंश

जैसा पहले लिखा जा चुका है कि ऊना शहर की स्थापना बेदी वंश द्वारा की गई थी। बाबा कालाधारी गुरु नानक साहिब के नवमीं पीढ़ी में हुए। जब वे ऊणा पहाड़ी पर रहने लगे तो उस समय जसवां राज्य के राजा राम सिंह थे। उन्होंने बाबा कालाधारी को 72 घुमाऊं की जागीर भेंट की थी। बाबा कालाधारी के बाद बाबा साहब सिंह ऊना की गद्दी पर आसीन हुए। वे चमत्कारी व बहुत वीर पुरुष थे। बाबा साहब सिंह ने ही 1801 में लाहौर में महाराजा रणजीत सिंह को तिलक लगाकर महाराजा घोषित किया था। जसवां का राजा उस समय उमेद सिंह था। उसने पूरा ऊना तालुका बाबा जी को जागीर रूप में भेंट में दे दिया।

सन् 1848 में जसवां के राजा उमेद सिंह ने और उसके पुत्र जय सिंह ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। वे बुरी तरह पराजित हुए। अंग्रेजी हुकूमत ने दोनों को अलमोड़ा में कैद में डाल दिया जहां दोनों की मृत्यु हो गई। अंग्रेजों को लगा कि ऊना के बाबा बिक्रम सिंह भी इस विद्रोह में शामिल थे। बाबा जी की जागीर अंग्रेजों ने अपने कब्जे में कर ली। बाबा बिक्रम सिंह ने पेंशन लेने से इनकार कर दिया। अंग्रेजों ने बाबा जी को अमृतसर की जेल में डाल दिया। बाबा बिक्रम सिंह की उसी जेल में 1863 ई. में मृत्यु हो गई। उस समय ऊना जागीर की आय लगभग 86800 रुपये बताई जाती है।

बाबा बिक्रम सिंह की मृत्यु के बाद उनका पुत्र बाबा सुजान सिंह गद्दी पर बैठा। अंग्रेजों ने इसे भी 2300 रुपये की सालाना पेंशन लगा दी। कहीं-कहीं यह भी कहा गया है कि अंग्रेज इनकी भी पेंशन बंद करना चाहते थे। सन् 1920 में इनकी मृत्यु हो गई।

बाबा बिक्रम सिंह की मृत्यु के बाद उनका पुत्र बाबा राम किशन बेदी ऊना की गद्दी पर बैठे। वे पढ़े-लिखे थे। अंग्रेजी

सरकार ने उन्हें सब-रजिस्ट्रार व अवैधानिक सचिव का पद दे दिया। मगर वे तो बहुत धार्मिक मनुष्य थे। उन्होंने यह सब कुछ लेने से इनकार कर दिया। इनकी मृत्यु के बाद बाबा मधुसूदन बेदी गद्दी पर बैठे। इनका 14 मार्च 1989 को स्वर्गवास हो गया। इस समय बाबा सरबजीत सिंह बेदी गद्दी पर आसीन हैं और गुरुद्वारा बाबा साहब सिंह, गुरुद्वारा तेग सिंह तथा गुरुद्वारा किले दरबार बाबा कालाधारी के मुख्य प्रबंधक हैं।

जिला ऊना की लोक संस्कृति हिमाचल प्रदेश की संस्कृति का एक अहम हिस्सा है जहां पर लोग अलग-अलग धर्मों में विश्वास रखते हुए गंगा जमनी संस्कृति को अपने में संजोए हुए है। हजारों वर्षों की परंपराओं को हमारी संस्कृति संभाले हुए है। संस्कृति वह है जो श्रेष्ठ कृति यानी कर्म के रूप में व्यक्त होती है। ऊना जनपद की अध्यात्म प्रधान संस्कृति है। साधु-महात्माओं, गुरुओं पीर पैगंबरों की धरती शक्ति माता का निवास स्थान को देखते हुए कहा जा सकता है कि ऊना जनपद तो सुंदर फूलों का गुलदस्ता है। सर्वधर्म समभाव ऊना की संस्कृति की विशेषता है। सही मायनों में कह सकते हैं कि ऊना जनपद की संस्कृति मानव संस्कृति है, अध्यात्म प्रधान आदर्श-परक संस्कृति है, मनुष्य में ईश्वरत्व प्रतिष्ठा करने वाली संस्कृति है।

ऊना जनपद में जहां पांडवकालीन शिवबाड़ी मंदिर है, वहीं शक्ति पूजन भी हर घर में होता है। वैष्णव मंदिर ठाकुरद्वारा के रूप में प्रसिद्ध है तो पंजोवा में विशाल हनुमान मंदिर भी है। सोलहसिंगी धार पर पिपलू नामक जगह पर नरसिंह मंदिर प्रसिद्ध है तो ब्रह्मोहुति में ब्रह्मा का मंदिर है। लोहारा का नाग मंदिर प्रसिद्ध है तो गुग्गा जाहरवीर के मंदिर हर गांव में शोभा बढ़ा रहे हैं। जहां बाबा बालक नाथ का पूजन होता है,वहां पर भरतरी बाबा भी अलग-अलग जगहों पर विराजमान हैं।

पीरों की बात करें तो बसोली का पीर निगाह, दियोली के तीर बाबा तथा भामी बाबा व ईसपुर में पीर गौंस पाक ग्यारहवीं की मजार मशहूर है। अंबोआ में दाता खिंजर जिंदा पीर की दरगाह दौलतपुर में ग्यारह पीरी मंदिर तथा संघनेई गांव में बाबा ढटड़ा पीर निवास करते हैं।

इस धरती से सिख गुरुओं का अटूट संबंध रहा है। बाबा बड़भाग सिंह मैड़ी का संबंध सिखों की पांचवीं पातशाही गुरु अर्जुनदेव से है। गगरेट के नजदीक बुंबलू झरने का संबंध दसवीं पातशाही गुरु गोविंद सिंह के साथ माना जाता है।

ऊना जनपद की अध्यात्म प्रधान संस्कृति है। साधु-महात्माओं, गुरुओं पीर पैगंबरों की धरती शक्ति माता का निवास स्थान को देखते हुए कहा जा सकता है कि ऊना जनपद तो सुंदर फूलों का गुलदस्ता है। सर्वधर्म समभाव ऊना की संस्कृति की विशेषता है। सही मायनों में कह सकते हैं कि ऊना जनपद की संस्कृति मानव संस्कृति है, अध्यात्म प्रधान आदर्श-परक संस्कृति है, मनुष्य में ईश्वरत्व प्रतिष्ठा करने वाली संस्कृति है।

इस धरती का संबंध पांडवों से भी रहा है। कहा जाता है कि पीर निगाह में तालाब पांडवों द्वारा बनाया गया है। गगरेट में शिवबाड़ी मंदिर का संबंध आचार्य द्रोण से माना जाता है। इसी तरह तलमेड़ा के ध्यूंसर सदाशिव मंदिर का संबंध पांडवों के कुल पुरोहित ऋषि धौम्य से है। भीम गौड़ा का जलस्रोत जो पीर निगाह के नज़दीक पांडव निर्मित गुफा के पास है, पांडव निवास का प्रमाण देता है।

जोगी पंगा एक सिद्ध-महात्माओं का प्रसिद्ध मठ है। बाबा रुद्र का डेरा ऊना के प्रसिद्ध स्थानों में से एक है। लोहारा के नजदीक एक खड्ड का नाम कपिता का चो है। कहते हैं भगवान श्रीकृष्ण कपिता गाय के साथ बाकी गउओं को चराने यहां पर आते थे। यही नहीं ऊना नगर के एक मुहल्ले का नाम मसीत वाली गली है। ऊना, अंब व घरबासड़ा में प्राचीन मस्जिदें भी मौजूद हैं।

ऊना जिले में बच्चे के जन्म, विवाह से लेकर मृत्यु तक अनेक रीति-रिवाज हैं। यह रिवाज लोकगीतों में प्रस्तुत किए जाते हैं। जन्म के समय गाए गए गीतों को रणझूझणे कहा जाता है। सावन महीने में पींघ डाली जाती हैं जिन पर युवतियां झूलती हैं, उन्हें पींगा दे गीत कहते हैं। विवाह के गीत, मुंडन संस्कार के गीत, बधावे यानी मंगल गीत, भजन-भेटां व शब्द, लोहड़ी के गीत, प्रेम प्रसंगों के गीत, बारहमासा गायन, छह मासा गायन, दहाजा गायन रास यानी कृष्ण लीला का गान, भ्यागड़ा अखाड़े यानी ऐतिहासिक वीरगाथा गायन व कीर ने यानी मृत्यु पर शोक गीत ऊना जनपद में गाए जाते हैं।

ऊना जिला निवासी स्वावलंबी हैं। स्वावलंबी व्यक्तियों में कार्य करने की प्रेरणा अपने भीतर से आती है। ऊनावासी आत्मनिर्भर हैं और साहसी भी। ऊना वीरभूमि भी है। सेना में ऊना जिला का खासा प्रभाव है। राजनीति में भी जिला ऊना एक अग्रणी जिला है। ऊना जिले के कुछ प्रबुद्ध लोग परोपकार में भी लगे हैं। समाज सेवा जिन्होंने अपना धर्म बना रखा है। 'परहित सरिस धर्म नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।' अर्थात् परोपकार के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों की पीड़ा पहुंचाने के समान कोई नीचता नहीं है। ये प्रबुद्ध लोग समाज के हर वर्ग की सहायता से दिन-रात कार्यरत हैं।

बॉडी गार्ड हाउस कलोल, डाकघर कलोल, जिला बिलासपुर, हिमाचल प्रदेश-174 035, मो. 0 94184 25568

सोलहसिंगी धार

अनलिखे इतिहास की अनकही गाथा

◆ कुलदीप शर्मा

इस सुरम्य पर्वतीय प्रदेश के शिवालिक क्षेत्र में स्थित भौगोलिक दृष्टि से सम्भवतः लघुतम जिलों में से एक ऊना स्वयं में गहन सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विरासतों को संजोए हुए है। अपने आयतन में तीन ओर से पंजाब से सटा हुआ यह जिला भले ही भाषाई व्यवहार और खानपान में पंजाब जैसा भासता हो किन्तु इस जिला की अपनी एक अलग और अनूठी सांस्कृतिक पहचान है जिसमें विभिन्न संस्कृतियों का समन्वय एक नये ठाठ के साथ उपस्थित है। यहाँ का जनजीवन अपने भीतर अनेक एतिहासिक घटनाओं की स्मृतियाँ और निशानियाँ लिए हुए है। यह अनकहे और अनलिखे इतिहास कि विस्मृत गाथा की तरह है।

पड़ोसी जिला हमीरपुर के सीमान्त पर स्थित सोलहसिंगी धार के किलों का इतिहास भी कुछ ऐसा ही है जो अपनी स्थापत्य कला, स्थिति और विशालता के कारणों से इतिहास के किसी भी जिज्ञासु का ध्यान बरबस अपनी ओर खींचता है।

ऊना जिला मुख्यालय से लगभग चालीस किलोमीटर दूर बंगाणा बाजार से साफ दिख जाने वाले सोलह सिंगी धार के शिखर पर स्थित यह दुर्ग द्वय चामुखा के किले या सोलह सिंगी के किले के नाम से जाने जाते हैं। एक छोटा किला और दूसरा बड़ा किला। धार शिखर पर सडक से जुड़ा हुआ धार चामुखा मन्दिर इन किलों तक जाने के लिए एक अनिवार्य पड़ाव की तरह है। किले तक जाने से पहले आइये थोडा सा धार चामुखा मन्दिर के विषय में जान लें। एक किंवदंति के अनुसार यह धार चामुखा मन्दिर अपने अज्ञातवास के दौरान पांडवों द्वारा गुप्त रूप से निर्मित किया गया था। अपने वन प्रवास के दौरान पांडव जहाँ कहीं भी ठहरते थे उन्हें अपनी अदम्य सृजनात्मक ऊर्जा को दबा कर रखना असंम्भव था। दिन के समय जंगलों में छुपे रहना और सम्भवतः रात के अँधेरे में ही आसपास उपलब्ध निर्माण सामग्री से कहीं कोई मन्दिर कोई महल, कोई नौन या बावड़ी बना कर वे अपनी गुप्त यायावरी में आगे बढ़ जाते थे। (हो सकता है रानियों के स्नानागार को बाद में नौन कहा गया हो) निर्माण कार्य को पूरा करना या अधूरा छोड़ देना हर बार उस उद्दंड गुजरी के हाथ रहता था जो सुबह मुंह अँधेरे मधानी से शोर मचा देती थी। बचपन में कौतुहलवश जब हम कभी मन्दिर में लगे विशालकाय प्रस्तर दंडों (बरल स्थानीय भाषा में) को देख कर मौलश्री के पेड़ के नीचे हुक्का गुड़गुड़ाते या गप्पबाजी करते बजुर्गों से पूछते थे कि ये इतने बड़े बड़े बरल मन्दिर में किसने लगाए हैं तो लगभग रटा-रटाया उत्तर मिलता था कि यह काम भीम का है। वही उठा सकता था इतने बड़े पहाड़ जितने बरल।

यह पूछने पर कि फिर यह मन्दिर पूरा क्यों नहीं हुआ, तो जवाब बस एक ही मिलता था कि गुजरी ने समय से पहले छाछ मथ दी थी !

छोटा किला / प्राचीन वैभव के चरण चिन्ह

इसी चामुखा मन्दिर से लगभग एक किलोमीटर ऊपर है छोटा किला ! यह एक अजीब संयोग है कि इन किलों के निर्माण को लेकर कोई भी किंवदंति या लोककथा पांडवों से जुड़ी नहीं है। जहाँ तक इन दो किलों का प्रश्न है, इस समय शायद कोई नहीं जानता कि इन किलों का निर्माण कब और किसके द्वारा करवाया गया। इतिहासवेत्ता बताते हैं कि ये किले महाराजा रंजित सिंह ने बनवाए थे जो कालान्तर में राजा काँगड़ा और फिर राजा कुल्लेहर के आधिपत्य में रहे। चामुखा मन्दिर से लगभग आधा मीटर चौड़ी एक दुर्गम पगडण्डी से होते हुए जब छोटा किला तक पहुँचते हैं तो आभास होता है कि इस किले को छोटा कहना न केवल भ्रामक है बल्कि मिसनोमेर है। यह भीतर से इतना विशालकाय है कि इसे तब तक 'छोटा किला' कहना ठीक नहीं लगता जब तक आप बड़े किले को न देख लें। कदाचित सर्पीली और और कठिन पगडण्डी से होते हुए किले के मुख्यद्वार तक पहुंचना स्वयं में काफी जोखिम भरा काम है। यहाँ पहुँचते ही आदमी किंवदंतियों और कल्पनाओं की दुनिया में खो जाता है। मुख्यद्वार पर कुछ क्षतिग्रस्त पथरीली सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद किले के भीतर प्रवेश कर जाने पर लगता है कि बाहर दूर से पतली काली लकीर सा दिखने वाला यह किला महज एक प्रस्तर-वैभव नहीं है। अपने भीतर न जाने कितने रहस्य और प्राचीन इतिहास के कितने ही साक्ष्य समेटे, सोलह सिंगी धार की इस अकेली चोटी पर मौन तपस्वी की तरह अडोल बैठा है यह किला, भले ही समय, क्रूर मौसमों और सामाजिक प्रशासनिक

उपेक्षा ने इसे बाहर से जर्जर और खुरदुरा बना दिया है पर थोड़ा गौर से देखने पर फर्श और दीवारों के पत्थरों पर की गयी नक्काशी और बनावट शिल्प एवं स्थापत्य कला के उस विस्मृत किन्तु समृद्ध दौर की याद दिलाती है जब हर पत्थर को एक सम्भवतः एक विशिष्ट आकार, उद्देश्य और सौन्दर्य के लिए गढ़ा जाता था। मानवीय श्रम और साधना का अद्भुत नमूना उपेक्षा की घास और झाड़ियों से दबा पड़ा है। आपके संवेदन को बरबस एक असहाय और काल के क्रूर पंजों में फंसी बेबसी अपनी पूरी निर्ममता के साथ घेर लेती है। जंगली झाड़ियां और घास उग आने से एकबारगी यह पता नहीं चलता कि हम एक समय के बेहतरीन फर्श पर कदम रख के चल रहे हैं। स्थानीय मार्गदर्शक हमें यह भी बताता है हमें जहरीले साँपों की सम्भावित मौजूदगी को ध्यान में रख कर धीरे धीरे आगे बढ़ना चाहिए।

दायीं ओर को छोटी-छोटी तीन चार सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद हम दीवार के उस चौड़े कोर्निस पर पहुँच सकते हैं जहाँ समान दूरी पर तोपों या बन्दूकों के लिए सुदृढ़ दीवार में लगभग आठ से दस इंच लम्बे छेद हैं। किसी भी सैन्य हमले का प्रतिकार करने के लिए यह एक बेहद कारगर योजना रही होगी, हालाँकि इस दीवार से नीचे घाटी की ओर झाँकने से ऐसा बिलकुल नहीं लगता कि इस और कोई सैन्य हमला किया जा सकता है। दीवार के साथ दूसरी और धार की खड़ी ढाल इतनी दुर्गम और दुरारोह है कि मनुष्य तो क्या गद्दियों की बकरियां तक उस खड़ी ढल पर नहीं चल सकती। हो सकता है किले के निर्माण के समय यहाँ की भौगोलिक स्थिति भिन्न रही हो। थोड़ी दूर आगे जाने पर नीचे की ओर सीढ़ियाँ उतरती हैं और एक किंचित गहरे तल पर जाकर ये सीढ़ियाँ एक गहरे सूखे और अँधेरे कुँए में उतर जाती हैं। लोगों का मानना है कि इस कुँए में प्रेतात्माएँ रहती हैं। स्थानीय लोग बताते हैं कि अमावस्या और चन्द्र ग्रहण के समय इस कुँए से बड़ी भयानक आवाज़ें आती सुनी गयी हैं। किले के बीचोबीच एक सपाट मैदान है जहाँ अनुमानतः कभी इस किले के अधिपति का दरबार सजता होगा। यही पास ही एक चबूतरा है जहाँ भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ने एक झंडा स्थापित किया है । इस स्थान से दूरबीन की सहायता से पूरा लाहौर शहर दिख जाता है और साथ ही दिखता है पंजाब और पाकिस्तान का अधिकतर भू-भाग। यहीं पर मध्य में एक छोटा सा गड्ढे नुमा तालाब है जहाँ किसी समय एक फव्वारा रहा होगा। दीवारों से गिरता हुआ मलबा गड्ढे को लगभग भर चुका है। थोड़ा और आगे आने पर हम किले के अंतिम अवशेष भाग में पहुँच जाते हैं जहां से किले को सबसे अधिक क्षति पहुँच रही है। किले की दीवार इस हिस्से में जो भी बाकि बची है वह लगभग हवा में लटकी है। यहाँ से किले का एक बड़ा हिस्सा भू क्षरण के चलते दूसरी ढलान की ओर लुढ़क कर खत्म हो गया है। यहाँ से सिर्फ अनुमान लगाया जा सकता है कि किले का कुल आयतन अपनी मूल अवस्था में कितना बड़ा रहा होगा। इस समय छोटे किले की कुल लम्बाई लगभग 250 मीटर और चौड़ाई कहीं पर 20 मीटर और कहीं सिकुड़ कर 10 मीटर रह गयी है। इस समय किले के पूर्ण आयतन का अनुमान लगाना इसलिए भी कठिन है क्योंकि लगातार क्षरण से दीवारें अपनी वास्तविक आकृति खोती जा रही हैं। फर्श पर पड़े मलबे और झाड झंखाड़ ने और दीवारों पर उगे पेड़ों वनस्पतियों ने किले को पूरी तरह विद्रुप कर दिया है। बन्दूकों और तोपों को सम्भावित आक्रमणों के दौरान उपयोग में लाने के लिए दीवारों पर सैनिकों के युद्ध स्थिति में बैठने के लिए और सक्रिय युद्ध कि व्यवस्था को नियंत्रित करने के लिए किले की चौड़ी चौड़ी दीवारों से यह अनुमान तो सहज ही लगाया जा सकता है। इन किलों का निर्माण इनके अधिपति ने अपनी सैन्य क्षमता सुदृढ़ एवं संवर्धित करने के लिए ही किया होगा। किन्तु स्थानीय लोगों में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं मिलता जो एतिहासिक परिप्रेक्ष्य में इन किलों के निर्माण की सामरिक महत्ता के साक्ष्य जुटा सके।

इन किलों को राजा रंजित सिंह के किलों के नाम से जाना जाता है। शिवालिक की पहाड़ियों में मुख्य सोलहसिंगी धार के श्रृंगों पर बनाए गये ये किले अति दुर्गम स्थान पर होने के बावजूद भवन निर्माण कला के स्वर्णिम काल का बेजोड़ नमूना हैं। राज्य की उपेक्षा कि पराकाष्ठा है कि ये किले मौसमों की मार सहते सहते धीरे धीरे दम तोड़ते जा रहे हैं।

इतिहासकारों का मानना है कि इन किलों का निर्माण राजा रंजित सिंह ने अपने शासन के चरम समय में करवाया था किन्तु बाद में रजा काँगड़ा व एनी रियासतों से संधियाँ हो जाने के बाद इन्हें अनुपयोगी मान कर छोड़ दिया गया। कालान्तर में कुछ लुटेरों ने इन किलों को अपना अड्डा बना लिया और वे वेश बदलकर आसपास के गाँव के लोगों को लूटते थे। स्थानीय लोगों के अनुसार ये लुटेरे बंगाणा के आसपास के गावों में किसानों का अनाज लूटकर किलों में ले जाया करते थे यही कारण है कि यहाँ के लोगों ने अपना अनाज 'खातियों' में छुपा कर रखना शुरू कर दिया था। ये खातियाँ जमींदोज चट्टानों को कुरेद कर बनाई जाती हैं और आयतन में अंडाकार होती हैं। इनमें अनाज भर के ऊपर से घास फूस से ढक दिया जाता था ताकि किसी को भी पता न चले। मरोत बौत आदि गाँव में आज भी ये खातियाँ मौजूद हैं और आधुनिक लोगों के लिए कौतुहल का विषय हैं।

आज भी इन किलों को राजा रंजित सिंह के किलों के नाम से जाना जाता है। शिवालिक की पहाड़ियों में मुख्य सोलहसिंगी

धार के श्रृंगों पर बनाए गये ये किले अति दुर्गम स्थान पर होने के बावजूद भवन निर्माण कला के स्वर्णिम काल का बेजोड़ नमूना हैं। राज्य की उपेक्षा कि पराकाष्ठा है कि ये किले मौसमों की मार सहते सहते धीरे धीरे दम तोड़ते जा रहे हैं। नवनिर्मित बद्सर भिअम्बी सड़क इन किलों के पास से अर्गला की तरह लिपटकर गुजरती है किन्तु इस सुविधा के बावजूद प्रशासन का ध्यान इनके संरक्षण की ओर नहीं है। अभी भी यदि सरकार और प्रशासन इनके संरक्षण और रखरखाव की ओर ध्यान दे तो इन्हें न केवल पर्यटन की दृष्टि से विकसित किया जा सकता है बल्कि एक बहुमूल्य प्राचीन धरोहर को बचाकर इतिहास को जीवित रखा जा सकता है। इतिहासवेत्ताओं के लिए हो सकता है ये कुछ विस्मृत एतिहासिक घटनाओं को जोड़ने वाली अत्यंत महत्वपूर्ण कड़ियाँ साबित हों।

बड़ा किला /खामोश पत्थर बोलते हैं

पत्थरों की मौन पीड़ा किस तरह पत्थर दिल इंसानों की कुंद संवेदनाओं के सामने अव्यक्त एवं असहाय पड़ी रहती है यह देखने के लिए छोटे किले से 'बड़े किले' की ओर चलते हैं। इन बिखरते खण्डहरों में कोई भी रमणीक स्थल की प्रत्याशा में तो नहीं आएगा। कोई सामान्य सैलानी भी इधर का रुख नहीं करेगा। हो सकता है ऐसे पर्यटक के लिए यह यात्रा बेहद नीरस और उबाऊ हो। यहाँ आने वाला तो इतिहास का कोई जिज्ञासु विद्यार्थी या पुरातत्व शास्त्री ही होगा जो इन किलों के पत्थरों में बोलते इतिहास की गाथा सुनेगा। किले की दीवारों से एक एक कर छूटते पत्थरों के दर्द को अपने हाथों के स्पर्श से सहलाएगा।

बड़ा किला अपने क्षेत्रफल से ही नहीं अपने वैभव साज सज्जा और स्थापत्य ठाठ के लिहाज से भी बड़ा है । बंगाणा की और से देखें तो दोनों किले सोलहसिंगी के दो आसपास के श्रृंगों पर पास-पास एक ही तरह के सुगम धरातल पर खड़े दिखते हैं। पर जब हम छोटे किले पर पहुँचते हैं तो पास-पास दिखने का यह भ्रम टूट जाता है। साफ दिख जाता है कि दोनों के बीच एक गहरी और अलंघ्य खाई है। मानों दो भाइयों के रिश्तों में एक स्थायी दरार पड़ गयी हो। अतः अनिवार्यतः आपको छोटे किले से बड़े किल की ओर जाने के लिए वापिस चामुखा मन्दिर लौट कर वहाँ पंड़तेहरी गाँव से जतेदी गाँव तक का रास्ता सद्यानिर्मित सडक से तय करना होगा और फिर जतेदी से फिर एक नामालूम सी पतली और कठिन पगडण्डी से बड़े किले तक जाना होता है। बड़े किले के ठीक सामने पहुँचते ही आपको एक बड़े पठार के विस्तार का एहसास होगा। साथ ही भयभीत कर देने वाली जिज्ञासा भी जकड़ लेती है। बड़े किले का पूरा आयतन छोटे किले से लगभग दोगुना है। दीवारों का आकार व स्थान-स्थान पर उन पर चढ़ने के लिए बनी छोटी छोटी सीढ़ियां इस किले कि सामरिक महत्ता को भी छोटे किले की अपेक्षा अधिक सशक्त ढंग से रेखांकित करती हैं। वास्तुकला और शिल्प के लिहाज से देखें तो यह किला छोटे किले से भिन्न नहीं लगता, अलबत्ता इसके निर्माण में अधिक बड़े पैमाने पर उसी शिल्प कौशल की प्रस्तावना हुई लगती है, जिसका उपयोग छोटे किले के निर्माण में किया गया है। दीवारे यद्यपि समय मौसमों और उपेक्षा की मार सहती हुई जीर्ण अवस्था में ही हैं फिर भी एक स्तर पर अपनी मजबूती को अधिक एतिहासिक साक्ष्य की तरह प्रस्तुत करती है। छोटे किले के मुकाबले इस किले की दीवारों के आसपास की भूमि क्षरण का कम शिकार हुई है। दीवारों पर कहीं कहीं दीखते कोर्निस पर की गयी नक्काशी हाथ के हल्के स्पर्श से मुखर हो उठती है, और हर प्राचीन इमारत की तरह यहाँ भी इतिहास की धड़कन को अनुभव किया जा सकता है। किले की विशालता इसके भीतर के सन्नाटे को और भी भयावह बनाती है। स्थानीय लोगों का विश्वास है यह किला एक बाघ परिवार की स्थायी शरणस्थली है। किले के भीतर का दृश्य इस सम्भावना को और मजबूत करता है। अंदर की ओर उगे बड़े बड़े पेड़ों व दीवारों के ठंडे कोनों में मधुमक्खियों के बड़े बड़े छत्ते हैं जो एकबारगी मन को दहला देते हैं। लगता है जैसे-धीरे धीरे हिलते छत्तों के बीच कोई पुरातन रहस्य कुलबुला रहे हो। किले के पश्चिम की ओर सीधे नीचे धुन्दला मंडली और पूर्व की ओर देखने पर हमीरपुर जिला में पड़ते कश्मीर, मानसाई और गलोड़ कांगू आदि गाँव साफ दीखते हैं।

स्थानीय लोगों में इन किलों को लेकर न तो कोई प्रमाणिक जानकारी है न जिज्ञासा। मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि स्थानीय युवाओं में भी इस एतिहासिक धरोहर के प्रति घोर उपेक्षा का भाव है। इसके लिए उनके मन में न कौतुहल है न समय। हाँ बड़े बूढ़ों से टुकड़ा टुकड़ा जानकारी इकट्ठी की जा सकती है पर उससे कोई तार्किक निष्कर्ष निकाल पाना कठिन है। ज्यादातर लोगों के पास किलों के विषय में किंवदंतियाँ हैं । बड़े बुजुर्गों का कहना है कि इन किलों में जो लुटेरे आकर बस गए थे वे किसानों का अनाज लूट कर इन किलों के प्रति जनमानस में एक वितृष्णा का भाव भर गए और वह लगभग स्थायी हो गया। प्रायः देखा गया है कि प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों को स्थानीय लोग किसी मन्दिर, पूजास्थल या आस्था के केंद्र के रूप में विकसित कर लेते हैं (जैसे काँगड़ा नूरपुर और सुजानपुर के किलों में है) पर ये किले ऐसे सौभग्य से वंचित रहे। अब आलम ये है कि ये धीरे-धीरे घोर उपेक्षा के चलते अपना आकार और अस्तित्व खोते जा रहे हैं। अभी भी अगर हम चेतें तो इन किलों को पर्यटकों एवं इतिहासविदों के आकर्षण केंद्र के रूप में विकसित किया जा सकता है पर नक्कारखाने में टूटी की आवाज के क्या मायने ?

मून विला सामने माउंट कार्मल स्कूल
बसोली रोड, रक्कड़ कलोनी ऊना,
हिमाचल प्रदेश-174 303

स्वतंत्रता आंदोलन में ऊना जनपद

हिमाचल प्रदेश के ऊना जिले के निवासी विनोद लखनपाल **का संपूर्ण जीवन लोक संपर्क, साहित्य, संस्कृति, इतिहास विशेषकर स्वतंत्रता संग्राम के लेखन के प्रति समर्पित रहा है। उनका** गिरिराज **साप्ताहिक व** हिमप्रस्थ **पत्रिका के साथ गहरा नाता रहा। उन्होंने विविध विषयों पर शोधपूर्ण सामग्री प्रदान कर इन प्रकाशनों की प्रतिष्ठा को बढ़ाया है। उनकी** 'स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास' **व** 'ऊना जनपद' **पर प्रकाशित पुस्तकें अमूल्य निधियां हैं। आज वे हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनका लेखकीय कार्य आज भी हमारे साहित्यिक प्रयास को प्रशस्त कर रहा है। इस विशेषांक में उनका यह लेख प्रकाशित किया जा रहा है।** –संपादक

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में हिमाचल प्रदेश और उसमें भी विशेष रूप से वर्तमान ऊना जिला का योगदान जानने एवं समझने के लिए 15 अगस्त, 1947 को स्वतन्त्रता प्राप्ति तथा उसके आठ माह पश्चात् 15 अप्रैल, 1948 को अस्तित्व में आए हिमाचल प्रदेश और तत्पश्चात् नवम्बर, 1966 में पंजाब राज्य के पुनर्गठन के परिणास्वरूप इसमें विलय हुए क्षेत्रों में अंग्रेजों की सत्ता के दौरान आए भौगोलिक तथा सामाजिक बदलावों एवं राजनीतिक इतिहास का बारीकी से अध्ययन किया जाना आवश्यक हो जाता है।

19वीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में कांगड़ा क्षेत्र की पहाड़ी रियासतों में महाराजा रणजीत सिंह द्वारा अपने साम्राज्य के विस्तार के लिए हर प्रकार के राजनीतिक छलबल द्वारा साम्राज्य स्थापित करने को नीति का बोलबाला था। महाराजा रणजीत सिंह ने कोटला, गुलेर, नूरपुर, जसवां, दातारपुर, कुल्लू एवं लाहौल-स्पिति के शासकों को अपदस्थ कर उन्हें पैंशन और जागीरें देकर उनसे उनके राज्य छीन लिए थे। वर्ष 1839 में महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु के बाद उपजे गृह युद्ध एवं अराजकता के वातावरण में 1845 में सिक्खों का अंग्रेजों से युद्ध छिड़ गया। सिक्खों के नित्यप्रति के अत्याचारों से दुःखी होकर मंडी, कुल्लू, सुकेत, कांगड़ा, गुलेर, जसवां, नूरपुर और चंबा आदि रियासतों के शासकों ने इस आशा से अंग्रेजों का साथ दिया कि वह विजयी होने के बाद उनकी रियासतें उनको वापिस लौटा देंगे। एंग्लो-सिक्ख युद्ध में अंग्रेजों की जीत के परिणास्वरूप मार्च, 1846 में लाहौर संधि के अन्तर्गत सभी पहाड़ी रियासतें, कुल्लू और लाहौल-स्पिति के क्षेत्र अंग्रेजों के अधीन हो गए। अंग्रेजों ने कूटनीति से काम लेते हुए मंडी, सुकेत और चंबा की रियासतें उनके शासकों को वापिस दे दीं जबकि लाहौल-स्पिति, कुल्लू के राज्यों को अपने साम्राज्य में मिला लिया। अंग्रेजों के इस कठोर एवं क्रूर निर्णय से तिलमिलाकर नूरपुर रियासत के पूर्व वजीर शाम सिंह पठानिया के युवा पुत्र राम सिंह ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह करने के इरादे से समान विचार वाले नौजवानों का गठन कर लिया। वर्ष 1848 में मुल्तान में विद्रोह भड़कने से अंग्रेजों तथा सिक्खों के मध्य दूसरा युद्ध आरंभ होने पर राम सिंह ने दूर-पार के सभी पहाड़ी राजाओं को एकत्रित कर लिया। जसवां का राजा उम्मेद सिंह और ऊना के सिक्ख गुरू बिक्रमा सिंह बेदी ने जसवां घाटी में हाजीपुर से रोपड़ तक विद्रोह को हवा दी। गुलेर रियासत के राजा शमशेर सिंह ने भारतीयों की पीठ में छुरा घोंपते हुए सम्पूर्ण योजना का ब्योरा अंग्रेजों को दे दिया। यहां-वहां लड़ी गई छोटी-मोटी लड़ाइयों के बाद अंग्रेजों की जीत हुई। बाद में राम सिंह पठानिया को पकड़ कर रंगून, कांगड़ा के राजा प्रमोद चंद, जसवां के राजा उम्मेद सिंह एवं उनके पुत्र जय सिंह तथा दातारपुर के राजा जगत चंद को निर्वासित कर कुमाऊँ भेज दिया गया। इसी समूह के सिक्ख गुरू बिक्रमा सिंह बेदी, जो उस समय होशियारपुर के निकट मैली गांव में डेरा डाले हुए थे, दिसम्बर, 1848 में सिक्ख महाराजा शेर सिंह की छावनी में चले गए। अंग्रेजों ने बड़े ही योजनाबद्ध तरीके से जसवां राज्य के राजपुरा तथा अकरोट स्थित किलों को ध्वस्त करने के बाद वहां की तोपों को भी गला दिया। सिक्ख गुरू बिक्रमा सिंह बेदी को गिरफ्तार कर अमृतसर में नज़रबन्द कर दिया, जहां 1863 में उनकी मृत्यु हो गई। ऊना स्थित बेदियों के किले को तोड़ने से पहले वहां के बागीचे की भूमि खोद कर हथियारों को पिघला दिया गया। काबिलेगौर है कि इस विद्रोह में गुलेर, नादौन, डाडासीबा, इन्दौरा और कुटलैहड़ की रियासतों ने भाग नहीं लिया था। प्रथम एंग्लो-सिक्ख युद्ध के बाद अंग्रेजों द्वारा वर्ष 1849 में शेष पंजाब के प्रशासनिक मंडल में विलय के दौरान जसवां और दातारपुर राज्यों को होशियारपुर में मिला दिया गया। इससे पूर्व 1846 ई. में तत्कालीन होशियारपुर का गठन करते बांटा गया था। परन्तु वर्ष 1861 में पुनर्गठन करके हरियाना तहसील को समाप्त कर उसके पश्चिमी भाग, जिसमें टांडा पुलिस क्षेत्र पड़ता था, को मुकेरियां तहसील में शामिल कर उसका मुख्यालय दसूहा बना दिया गया। हरियाना और होशियारपुर तहसीलों के पर्वतीय क्षेत्रों को ऊना में शामिल कर शेष बची हरियाना तहसील के क्षेत्र को होशियारपुर तहसील के साथ जोड़ा गया, जिसमें से माहिलपुर थाना क्षेत्र को गढ़शंकर तहसील के साथ मिलाया गया था।

वर्ष 1905 में बंगाल विभाजन तथा वर्ष 1907 में पंजाब औपनिवेशिक बिल के विरोध में उपजे स्वदेशी आन्दोलन एवं राष्ट्रीयता की वेगवती लहर ने सारे देश को अपनी चपेट में ले लिया। तत्कालीन पंजाब के लायलपुर, लाहौर, रावलपिंडी, सियालकोट, जालन्धर, होशियारपुर एवं अन्य शहरों में जन सभाओं के माध्यम से सरदार अजीत सिंह, लाला लाजपत राय, चौधरी रामभज दत्त एवं अन्य नेताओं ने लोगों में जागृति पैदा की। राजनीतिक सरगर्मियां जोरों पर थी। ऐसे समय में वर्तमान ऊना जिला के धुसाड़ा गांव के क्रान्तिकारी नवयुवक रिखीकेश लट्ठ, जो पुलिस की नजरों में अपने आपको भूमिगत किए हुए थे, सरदार अजीत सिंह एवं सूफी अम्बा प्रसाद से दिशा-निर्देश पाने के बाद विदेशों में आजादी की अलख जगाने के इरादे से वर्ष 1908 में कराची बन्दरगाह से जहाज में सवार होकर शिराज (ईरान) चले गए। उसी साल पुलिस विभाग से वर्ष 1905 में नौकरी छोड़ बैठे ऊना नगर के बाबा लछमन दास आर्य राजनीतिक गतिविधियों में संलप्तिता के कारण पकड़े गए।

वर्ष 1917 में जिला होशियारपुर में कांग्रेस कमेटी गठित हुई जिसके निर्देश पर रौलेट एक्ट के विरोध में 30 मार्च, 1919 को होशियारपुर एवं मुकेरियां में हड़ताल की गई। 6 अप्रैल को दिन में होशियारपुर में ही नहीं बल्कि जिला भर के छोटे-बड़े सभी नगरों में पूर्ण हड़ताल रखी गई। उसी दिन शाम को होशियारपुर में आयोजित एक जलसे में जिला भर से आए लगभग दस हजार लोगों ने भाग लिया। अमृतसर में 13 अप्रैल, 1919 को हुए जलियांवाला बाग गोलीकांड में होशियारपुर जिला के भी कुछ लोग जख्मी हुए थे अथवा मारे गए थे, के विरोध में 15 अप्रैल को गढ़दिवाला एवं 18 अप्रैल को ऊना में छोटे-बड़े व्यापारियों तथा दुकानदारों द्वारा हड़ताल रखी गई थी। इसके बाद स्वतंत्रता सेनानियों ने 21 अप्रैल को दसूहा में रेलवे टैलिग्राफ की तारें काट दीं।

23 जुलाई, 1920 को जिला कांग्रेस कमेटी द्वारा होशियारपुर में आयोजित एक जन सभा को अन्यों के अतिरित डॉ. सत्य पाल और लाला गोर्वधन दास ने सम्बोधित किया, जिसमें जिला भर के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। तत्पश्चात् शेख जान मोहम्मद रईस की अध्यक्षता में 30-31 अक्तूबर को होशियारपुर में ही जिला स्तरीय सम्मेलन हुआ, जिसमें तत्कालीन ऊना तहसील के करीब चार हजार लोगों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में स्वराज की आवश्यकता एवं उसको प्राप्त करने के उपायों की चर्चा करते हुए असहयोग आन्दोलन पर विशेष बल दिया गया। सम्मेलन में उपस्थित लोगों ने विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार एवं स्वदेशी को अपनाने तथा बेगार और छुआछूत को समाप्त करने का संकल्प लिया। परिणामस्वरूप कॉऊंसिल के चुनावों में होशियारपुर जिला के 2953 वोटरों में से मात्र 85 ने ही वोट डाले। तत्कालीन होशियारपुर जिला के राजनीतिक इतिहास में 8 मार्च, 1921 का दिन बड़ा ही महत्त्वपूर्ण एवं ऐतिहासिक रहा। उस दिन महात्मा गांधी अपनी पत्नी श्रीमती कस्तूरबा गांधी के साथ होशियारपुर एवं साथ लगते कस्बा हरियाना में पधारे थे। यहां यह लिखना प्रासंगिक होगा कि जालन्धर से कार द्वारा होशियारपुर की यात्रा कर रहे गांधीजी की कार का टायर नसराला में पंक्चर हो जाने के कारण आगे का सफर तांगों द्वारा तय किया गया था। हरियाना में आयोजित सभा में लगभग 20 हजार लोगों ने भाग लिया, जिसमें वर्तमान ऊना जिला के लोगों ने भारी संख्या में अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई थी। इस सभा की अध्यक्षता जनाब सैय्यद हबीब ने की थी और इसे अन्य के अतिरिक्त स्वामी प्रकाशानन्द सरस्वती, लाला प्यारे लाल और पंडित हरचरणदास हरियानवी ने भी सम्बोधित किया था।

जिला कांग्रेस कमेटी द्वारा ऊना नगर तथा चिंतपूर्णी में राजनीतिक सम्मेलन आयोजित किए गए, जिन्हें अन्यों के अतिरिक्त पंडित हरचरण दास हरियानवी तथा बलदेव मित्र 'बिजली' (लेखक के पिता जी) ने सम्बोधित किया था। 18 मार्च, 1922 को महात्मा गांधी को छह साल की जेल की सजा दिए जाने के विरोध में 20 मार्च को होशियारपुर नगर के छोटे-बड़े व्यापारिक संस्थान एवं दुकानें बन्द रहीं और विदेशी कपड़ों का बहिष्कार कर उनकी होली जलाई गई। ऊना, हरियाना, मुकेरियां, दसूहा, गढ़दिवाला, दौलतपुर चौक, बलाचौर आदि स्थानों पर भी ऐसा ही किया गया। 2 जुलाई, 1922 को सविनय अवज्ञा आन्दोलन के समर्थन में जिला कांग्रेस कमेटी के महासचिव लाला जयकिशन लाल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई जिला स्तरीय बैठक में ऊना क्षेत्र के प्रतिनिधियों ने भी भाग लिया। वर्ष 1922 से 1925 तक की अवधि में चिंतपूर्णी मन्दिर के तालाब पर नवरात्र मेलों के दौरान राजनीतिक सम्मेलन होते रहे, जिसमें पंडित हरचरण दास हरियानवी तथा बलदेव मित्र 'बिजली' पंजाबी कविताओं के माध्यम से जनसाधारण में देश प्रेम की भावना का संचार करते थे। इन सम्मेलनों में पहाड़ी गांधी बाबा कांशी राम ने भी भाग लिया

वर्ष 1928 में साईमन कमीशन के विरोध में अन्य स्थानों की तरह होशियारपुर, दसूहा, मुकेरियां, ऊना, दौलतपुर चौक, हरियाना आदि जगहों पर भी लोगों द्वारा प्रदर्शन एवं जन सभाएं की गई 28 मार्च, 1930 को आयोजित दोआबा सियासी सम्मेलन का चौथा सत्र मुकेरियां में बुलाया गया, जिसमें जिला भर के प्रतिनिधियों ने भाग लेकर सविनय अवज्ञा आन्दोलन को सफल बनाने का संकल्प लिया। जिला के प्रमुख कपड़ा व्यापारियों ने होशियारपुर में बैठक आयोजित कर विदेशी कपड़ा न मंगवाने का निर्णय लिया। 28 अप्रैल को होशियारपुर में नमक सत्याग्रह करने के बाद प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्ता जिलाभर के प्रमुख स्थानों पर लोगों को संदेश देने के लिए चले गए। सविनय अवज्ञा आन्दोलन में वर्तमान

सविनय अवज्ञा आंदोलन में ऊना जनपद

27 फरवरी, 1930 को महात्मा गांधी ने देश में 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' आरंभ करने की घोषणा की। इसके अंतर्गत विधान सभाओं एवं समितियों के भारतीय सदस्यों को त्याग पत्र देने का निर्देश दिया गया औार किसी भी प्रकार के चुनावों में भाग लेने की मनाही की गई। विदेशी वस्तुओं, शिक्षा संस्थानों तथा विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार करने के लिए एक अभियान चलाया गया।

सविनय अवज्ञा आंदोलन में ऊना में बाबा लछमन दास और उनके सुपुत्र सत्य प्रकाश 'बागी' को गिरफ्तार किया गया। जेल में उनपर भारी दबाव डाला गया और कांग्रेस छोड़ने के बदले बाबा जी को जम्मू-कश्मीर का 'पाब्लिसिटी डायरेक्टर' बनाने तथा उनके पुत्र को आई.सी.एस. में नियुक्ति दिलाने का भी प्रलोभन दिया गया। परंतु पिता-पुत्र ने प्रलोभनों को ठुकरा कर लाहौर की बोर्स्टल जेल में यातनाएं सहन कीं। एक जून 1930 में बाबा जी की धर्मपत्नी दुर्गा बाई आर्य ने धैर्य एवं साहस के साथ ऊना में 'महिला मंडल' की स्थापना की और प्रत्येक मां से यह आग्रह किया कि वह अपना एक पुत्र देश की स्वाधीनता की लड़ाई के लिए प्रदान करें। दुर्गा बाई ने ऊना क्षेत्र की महिलाओं को जागृत किया और राष्ट्रीय आंदोलन में बहुत सी महिलाओं को भागीदार बनाया। बाबा लछमन दास के अतिरिक्त ऊना में गगरेट के अनंत राम, मलाहत के जगदीश सिंह, धर्मपुर के ठाकुर दास, डुलैहर के धनी राम, ओयल के लक्ष्मण दास, दौलतपुर चौक के बरयाम सिंह ठाकुर, ऊना शहर के वतन सिंह, बंगाणा के लक्ष्मण दास, अंब के सत्य प्रकाश, मनुवाल के हरनाम सिंह, बीजापुर के रामरक्खा और अंबोटा के खुशीनंद आदि ने भी सत्याग्रह में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

-हिमाचल प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम का संक्षिप्त इतिहास, भाषा संस्कृति विभाग, हि. प्र.,पृ. 102

ऊना जिला से गिरफ्तार होने वालों में सोहन सिंह चमक (चौकी मनियार), बाबा लछमन दास आर्य एवं सत्य प्रकाश बागी (ऊना), अनन्त राम (गगरेट), जगदीश सिंह (मलाहत), ठाकुर दास (धर्मपुर), धनी राम (दुलैहड़), लक्ष्मण दास (ओयल), ठाकुर वरयाम सिंह (दौलतपुर चौक), वतन सिंह (ऊना), सत्य प्रकाश (अम्ब), खुशीनन्द पराशर (अम्बोटा), लक्ष्मण दास (बंगाणा), गोपी राम (गुगलैहड़) एवं लक्ष्मण दास (गगरेट) प्रमुख थे। बाबा लक्ष्मण दास आर्य की धर्मपली श्रीमती दुर्गा बाई आर्य तथा दीवान पोहलो राम की धर्मपली जमना देवी, जिन्हें वर्ष 1922 में आनन्दपुर साहिब में पिकैटिंग करने पर दो मास का कारावास मिला था, ने मिलकर जून, 1930 में ऊना क्षेत्र की महिलाओं में देशभक्ति की भावना भरने हेतु महिला मंडल की स्थापना की। 26 जनवरी, 1931 को स्वाधीनता प्रतिज्ञा दिवस को हर्षोल्लास के साथ ऊना, शिवबाड़ी (अम्बोटा) एवं दौलतपुर चौक में मनाया गया। मार्च, 1934 में ओयल के महाशय तीरथ राम ने जालन्धर में पिकैटिंग करने के अपराध में छः महीने की जेल काटने के बाद गगरेट में ऊना क्षेत्र के कांग्रेसियों की सभा आयोजित कर स्वतन्त्रता आन्दोलन को तेज करने के लिए एक व्यापक कार्यक्रम बनाया। जिला होशियारपुर के माहिलपुर में 29 जुलाई, 1936 को तीन दिवसीय दोआबा देहाती सम्मेलन आयोजित किया गया। 31 जुलाई को अखिल भारतीय कमेटी के अध्यक्ष पण्डित जवाहर लाल नेहरू के इस सम्मेलन में पधारने पर लगभग एक लाख लोगों ने उनका भव्य स्वागत किया। स्वागत समिति के अध्यक्ष सरदार हरजाप सिंह को पुलिस द्वारा सम्मेलन से पूर्व ही गिरफ्तार कर लिया गया। सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रमुख नेताओं में प्रो. मोता सिंह, जत्थेदार प्रताप सिंह (कोट फतूही), सालिग राम पराशर, ठाकुर वरयाम सिंह (दौलतपुर चौक), सरदार चनन सरदार, सोहन सिंह जोश, मास्टर काबल सिंह गोबिन्दपुरी, डॉ गोपाल सिंह कौमी, रोशन लाल वर्मा, मास्टर हरि सिंह धूत, लाहौरी राम परदेशी, कामरेड फिरोजदीन मंसूर आदि थे। इसी साल के अन्तिम दिनों में महाशय तीरथ राम ने ठाकुर वरयाम सिंह, ठाकुर काका राम एवं पण्डित अनन्त राम के साथ मिलकर दौलतपुर चौक के निकट एक मन्दिर में एक विराट सियासी सम्मेलन का आयोजन करवाया, जिसे अन्यों के अतिरिक्त प्रिंसीपल छबील दास, लाला सुनाम राय, लाला अचिन्त राम, लाला जगत नारायण, बलदेव मित्र' बिजली', बीबी फातिमा एवं मौलाना अब्दुला कसूरी ने भी संबोधित किया। उन्हीं दिनों लाला सुनाम राय और गणपत राय बीए नेशनल एवं कुछ अन्य ने ऊना क्षेत्र के कार्यकर्ताओं को क्षेत्र में किसी ऐसे स्थान को ढूंढने एवं चयन करने का सुझाव दिया जो विशेष परिस्थितियों में कार्यकर्ताओं को आश्रय प्रदान कर सके। साल 1937 काफी गतिविधियों भरा रहा। इस अवधि के दौरान वर्तमान ऊना जिला के गुगलैहड़, दौलतपुरचौक, अम्बोटा (शिवबाड़ी), अम्ब, ओयल और भद्रकाली में राजनीतिक सम्मेलन किए गए, जिनको महाशय तीरथ राम, ठाकुर वरयाम सिंह, ठाकुर काका राम के अतिरिक्त कामरेड बीपीएल बेदी, उनकी पत्नी फ्रैडा बेदी, प्रिंसीपल छबील दास, बलदेव मित्र 'बिजली', मुंशी अहमद्दीन एवं अन्य ने सम्बोधित किया। अम्बोटा के निकट शिवबाड़ी के साथ लगती जगह को नकारने के बाद डॉ. गोपी चन्द भार्गव, लाला जगत नारायण और ओम प्रकाश त्रिखा आदि ने अन्ततः ओयल को चयनित कर वर्ष 1937 में वहां स्थापित भवन को गांधी सेवा

आश्रम का नाम दे दिया। 10 अक्तूबर, 1937 को होशियारपुर जिला के गढ़दिवाला में दो दिवसीय 22वां पंजाब प्रान्तीय सियासी सम्मेलन आयोजित किया गया। एक दिन पूर्व शाम को आए भंयकर तूफान से सम्मेलन में आने वाले प्रतिनिधियों एवं कार्यकर्ताओं हेतु बनाए गए भव्य कांग्रेस नगर के तम्बू-शामियाने उखड़ गए, फिर भी सम्मेलन के प्रथम दिन भाग लेने वालों की अनुमानित संख्या 75 हजार से अधिक थी। अंग्रेजी अखबार द ट्रिब्यून के 12 अक्तूबर, 1937 के अंक में प्रकाशित समाचार के अनुसार दूसरे दिन यानी 11 अक्तूबर को कांग्रेस अध्यक्ष पण्डित जवाहर लाल नेहरू के आगमन पर उपस्थिति का अनुमान अपेक्षा से दोगुने अर्थात् डेढ़ लाख से भी अधिक का था। पण्डित जवाहर लाल नेहरू के मंच पर पधारने पर जिला कांग्रेस कमेटी एवं सम्मेलन स्वागत समिति के महासचिव बलदेव मित्र 'बिजली' द्वारा जब उन्हें शुद्ध खादी से बने फूलों का हार पहनाकर स्वागत किया गया तो विशाल जन समुदाय द्वारा लगाए गए नेहरू जिन्दाबाद के नारों से आकाश गूंज उठा। मंच पर मुख्य रूप से स्थान ग्रहण करने वालों में सरदार सरदूल सिंह कवीशर, लाला भीम सिंह सच्चर, डॉ. मोहम्मद आलम, स्वागत समिति अध्यक्ष सरदार हरि सिंह, पण्डित जगत राम हरियानवी, मास्टर राजा राम, सेठ सुदर्शन, बेगम फातिमा, मुंशी अहमददीन, लाला दुनी चंद, वीरेन्द्र, डॉ. सत्य पाल, लाला शाम लाल, चौधरी करतार सिंह, श्री राम शर्मा, सोहन सिंह जोश, मास्टर मोता सिंह आदि थे। इस विशाल सम्मेलन में कांगड़ा क्षेत्र से निर्वाचित उम्मीदवार पण्डित भगत राम ने श्री नेहरू से मिलने के पश्चात् कांग्रेस में शामिल होने की घोषणा की। सम्मेलन में ऊना, हमीरपुर, कांगड़ा एवं शिमला क्षेत्रों के कई लोगों ने भाग लिया। 24 जनवरी, 1939 की डॉ. सत्यपाल, बलदेव मित्र 'बिजली', खलीफा फ़जलदीन एवं अन्य ने अम्ब में होशियापुर जिला बोर्ड के चुनावों में क्षेत्र के कांग्रेस उम्मीदवार ठाकुर काका राम के समर्थन में एक सियासी जनसभा को सम्बोधित किया। इन वक्ताओं द्वारा इसी प्रकार के जलसे दसूहा तहसील के हाजीपुर, उड़मुड़ टांडा एवं राजनीतिक कार्यकर्ता कामरेड बलवन्त सिंह दुखिया, जिन्हें सरकार द्वारा नजरबन्द किया गया था, के समर्थन में उनके पैतृक गांव बैंस कलां में एक जलसे को सम्बोधित किया। वर्ष 1940 के जून मास में कांगड़ा क्षेत्र के विख्यात धार्मिक स्थान ज्वालामुखी में एक राजनीतिक सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसकी अध्यक्षता सीमान्त प्रान्त के कांग्रेस मंत्रिमंडल के वित्त मंत्री दीवान भंजू राम गांधी ने की। सम्मेलन में बीबी फातिमा, प्रिंसीपल छबील दास, डॉ. सैफुद्दीन किचलू बीबी रघुबीर कौर के अतिरिक्त क्षेत्र के स्थानीय नेताओं, जिनमें वर्तमान ऊना जिला के सोहारी टकीली एवं चौकी मनियार (तत्कालीन कांगड़ा जिला की हमीरपुर तहसील के गांव) के ठाकुर दलीप सिंह और सोहन सिंह चमक शामिल हैं, ने भाग लिया था। इस सम्मेलन के कुछ समय पश्चात् ठाकुर दलीप सिंह, सोहन सिंह चमक, सन्त राम और हरि चंद शर्मा आदि ने मिलकर टकीली में एक जनसभा की, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों ने भाग लिया। इसी अवधि के दौरान महात्मा

भाई दो न पाई दो

आठ अगस्त, 1940 को वायसराय लॉर्ड लिनलिथगो ने भारत में भारतीय प्रतिनिधियों की अस्थायी राष्ट्रीय सरकार के गठन को स्वीकार नहीं किया और न ही विश्वयुद्ध के पश्चात भारत को पूर्ण स्वाधीनता देने की कांग्रेस की मांग को माना। गांधी जी ने असहयोग का भाव व्यक्त करने के लिए सत्याग्रह का माध्यम अपनाते हुए राष्ट्रव्यापी आंदोलन की बजाय 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' आंदोलन चलाने का आदेश दिया। व्यक्तिगत सत्याग्रह करने की अनुमति भी केवल उन आंदोलनकारियों को दी जो रचनात्मक कार्यक्रम में भाग लेते रहे थे तथा चरखा, तकली, करघा चलाना जानते थे। इसके लिए खद्दरधारी होना अनिवार्य था। इसमें भाग लेते हेतु एक फार्म भर कर स्थानीय कांग्रेस कमेटी में जमा करके स्वीकृति के लिए अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के कार्यालय में भेजा जाना आवश्यक था। इस सत्याग्रह का नारा था 'न पाई दो, न भाई दो। अथवा 'न एक भाई, न एक पाई'। कालांतर में यही 'भाई दो न पाई दो' के नारे के रूप में प्रसिद्ध हुआ। 17 अक्तूबर 1940 को गांधी द्वारा चुने प्रथम व्यक्तिगत सत्याग्रही आचार्य विनोबा भावे ने वर्धा में पनौर गांव में सत्याग्रह का शुभारंभ किया। हिमाचल प्रदेश की तत्कालीन पहाड़ी रियासतों के साथ- साथ इन्हीं दिनों ऊना में गांधी सेवा आश्रम ओयल में मीरा बेन के मार्गदर्शन में कांग्रेस कार्यकर्ताओं का सत्याग्रही प्रशिक्षण जोरों से चलता रहा। स्थानीय स्कूल के छात्रों ने, 'वार-फंड' देने से इनकार किया। बाबा लछमण दास के दो पुत्रों- सत्यमित्र और सत्यभूषण ने स्कूल में वार-फंड के चंदे का विरोध किया। ब्रिटिश सरकार ने इन दोनों देशभक्त सुपुत्रों को स्कूल से निकाल दिया। इन्होंने स्कूल से बाहर भी जलसे-जलूस में अंग्रेजी सरकार विरोधी गीत और कविताएं गाने और पढ़ाने का कार्य आरंभ किया। इनके ज्येष्ठ भाई सत्य प्रकाश 'बागी' इसी काल में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन में गिरफ्तार हुए और लायलपुर जेल में बंदी रहे। इनके अतिरिक्त व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन में दौलतपुर के शंकरदास, मलाहत के जगदीश सिंह और ऊना शहर के हुसनलाल ने भी गिरफ्तारियां दीं और कारावास की सजा पाई। दौलतपुर चौकर के ठाकुर वरयाम सिंह भी इसी काल में नज़रबंद रहे।

-हिमाचल प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम का संक्षिप्त इतिहास, भाषा संस्कृति विभाग, हि. प्र., पृ. 136, 139, 140

गांधी ने श्री गांधी सेवा आश्रम, ओयल के कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण एवं मार्गदर्शन हेतु अपनी शिष्या मीरा बेन, जो ब्रिटिश एडमिरल की सुपुत्री थीं और जिनका वास्तविक नाम मिस स्लेड था, को आश्रम में भेजा। मीरा बेन ने आश्रम परिसर में ही एक अलग कुटिया में रहते हुए ऊना, देहरा, अंब और गगरेट आदि के ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर गांधीजी का सन्देश जनसाधारण तक पहुंचाया। नवम्बर, 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह के लिए कांगड़ा क्षेत्र की कांग्रेस समिति, जिसके सदस्य ठाकुर हजारा सिंह, कामरेड परस राम और पण्डित ब्रह्मानन्द थे, ने लाला मंगतराम खन्ना एडवोकेट, जो मूलतः वर्तमान ऊना क्षेत्र के चौकी मनियार गांव के रहने वाले थे, को प्रथम व्यक्तिगत सत्याग्रही चुना था। मंगत राम खन्ना ने कांगड़ा नगर के नगर पालिका मैदान में एक विशाल जनसमूह की उपस्थिति में अपनी गिरफ्तारी दी थी। वर्ष 1948 में सोहारी टकीली के ठाकुर दलीप सिंह एवं कुछ अन्य को भारत सुरक्षा अधिनियम के तहत गिरफ्तार किया गया था। अगस्त, 1942 में शुरू हुए भारत छोड़ो आन्दोलन से कुछ पहले अम्ब में आयोजित एक सियासी जलसे को स्थानीय नेताओं के अतिरिक्त डॉ. गोपी चंद भार्गव ने भी सम्बोधित किया। भारत छोड़ो आन्दोलन के दृष्टिगत राष्ट्रीय नेताओं की गिरफ्तारी के विरोध में दौलतपुर चौक, ओयल, अम्ब एवं ऊना में विशाल जनसभाएं आयोजित की गई तथा जुलूस निकाले गए। महाशय तीरथ राम ने इश्तहारों के माध्यम से सारे क्षेत्र में करो या मरो का सन्देश जनता तक पहुंचाया। 18 अगस्त को चिंतपुर्णी के नवरात्र मेलों के दौरान एक सियासी जलसे के आयोजित होने की भनक पाते ही पुलिस ने नाकाबन्दी करके लछमन दास, चौधरी बलदेव सिंह और अमर दास को गिरफ्तार कर लिया जबकि महाशय तीरथ राम, हंस राज, जगदीश राम, हरि सिंह, धनी राम एवं जुल्फी राम के साथ सम्मेलन में पहुंचने और उसे सम्बोधित करने में सफल हो गए। पुलिस द्वारा गांधी सेवा आश्रम एवं ऊना में बाबा लछमन दास आर्य के घर में चलाए जा रहे कांग्रेस कार्यालय का सारा सामान जब्त कर लिया गया। लेकिन पण्डित जगदीश राम, प्रीतम चंद बनवासी अपने कुछ अन्य साथियों के साथ भूमिगत रहकर आश्रम का कार्य करते रहे। स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान यहां के वीर सपूतों ने अंग्रेजों के विरुद्ध अहिंसात्मक एवं क्रान्तिकारी गतिविधियों में भाग लेने के अलावा वर्ष 1921-23 के बीच सिक्खों द्वारा चलाए गए गुरु का बाग मोर्चा एवं जैतो मोर्चा में भाग लेने के साथ-साथ हैदारबाद के निजाम द्वारा सत्यार्थ प्रकाश पर लगाए प्रतिबन्ध के विरुद्ध रोष व्यक्त करने हेतु आर्य समाज द्वारा भेजे गए सत्याग्रहियों के जत्थे में भी भागीदारी की। धार्मिक आशय से चलाए गए इन मोर्चा तथा सत्याग्रह को कालान्तर में राजनीतिक संज्ञा का रूप देते हुए स्वाधीनता संग्राम का एक अंग मान लिया गया था। सुधी पाठकों को यह पढ़कर अवश्य सुखद आश्चर्य होगा कि 23 दिसम्बर, 1929 को वायसराय लॉर्ड इरविन की ट्रेन को दिल्ली के पुराने किले के पीछे बम से उड़ाने की क्रान्तिकारी योजना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले हमीरपुर जिला के नादौन कस्बा के पण्डित इन्द्रपाल ने लाहौर जाने से पूर्व वर्तमान ऊना जिला के चौकी मन्यार गाँव की प्राथमिक पाठशाला में कुछ समय के लिए बतौर शिक्षक कार्य किया था। इसी प्रकार विख्यात स्वतन्त्रता सेनानी छबील दास, जो बाद में नेशनल कॉलेज लाहौर में सरदार भगत सिंह के प्रिसोंपल के रूप में प्रसिद्ध हुए, ने ऊना के

'भारत छोड़ो' 'करो या मरो' आंदोलनों में ऊना के आंदोलनकारी

ऊना के प्रमुख आंदोलनकारी नेता लछमन दास आर्य के छोटे पुत्रों सत्यमित्र और सत्यभूषण ने भारत छोड़ों आंदोलन में भी सक्रिय भाग लिया। बाबा लछमन दास का समस्त परिवार स्वाधीनता संग्राम में कूद पड़ा था। इनके सबसे बड़े पुत्र सत्य प्रकाश इस दौरान ऊना कांग्रेस के सचिव थे और माता दुर्गा बाई महिला कांग्रेस का नेतृत्व संभालने हुए थी। सत्यमित्र को इस आंदोलन में नौ मास कारावास की सजा मिली। ओयल आश्रम ऊना में आंदोलन का कार्यक्रम स्वयं महाशय तीर्थ राम ने बनाया और इश्तिहार व नोटिस के माध्यम से सारे शहर में गांधी जी के 'करो या मरो' आंदोलन का संदेश जन-जन तक पहुंचाया। 18 अगस्त, 1942 को चिंतपूर्णी में मेले के अवसर पर एक पोलिटिकिल कांफ्रेंस का आयोजन किया गया। पुलिस ने इसकी सूचना मिलने पर नाकाबंदी कर दी और कांफ्रेंस में पहुंचने से पहले ही लछमण दास, चौधरी बलदेव सिंह हंबोली, भागमल कुठेड़ा और अमर दास कुठेड़ा को गिरफ्तार कर लिया। लेकिन क्षेत्र के अन्य कार्यकर्ता पं. हंसराज ओयल, जगदीश राम ओयल, हरी सिंह ओयल, धनी राम अकरोट, जुलफी राम अकरोट और महाशय तीर्थ राम ओयल कांफ्रेंस में पहुंचने में सफल हुए। इन सभी कार्यकर्ताओं ने गांधी जी का 'करो या मरो' संदेश चिंतपूर्णी मेले में आए लाखों लोगों तक पहुंचाया। परंतु कुछ देर बाद इन सबको पकड़ लिया और गिरफ्तार करके अंब की जेल में डाल दिय गया। इस केस में महाशय तीर्थ राम को दो वर्ष, हंसराज तथा लछमण दास को एक-एक वर्ष तथा अन्य आंदोलनकारियों को तीन-तीन मास कड़े कारावास की सजा मिली। बाद में महाशय तीर्थ राम, हंसराज और लछमण दास को मुलतान जेल भेज दिया गया। ओयल आश्रम के शेष 16-17 कार्यकर्ता भूमिगत होकर आंदोलन का प्रचार करते रहे। इनमें से जगदीश चंद्र रायपुर, प्रीतम सिंह बनवासी और एक बंगाली बाबू ने आश्रम का कार्यभार संभाला और जनता का मार्गदर्शन किया।

-हिमाचल प्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम का संक्षिप्त इतिहास, भाषा संस्कृति विभाग, हि. प्र.,पृ. 148, 149

देश सेवा व समाज उत्थान का अनुकरणीय उदाहरण

हम भारतवासी उन महान देश भक्तों के सदैव ऋणी रहेंगे जिन्होंने अपना सर्वस्व न्योछावर कर देश को आजादी दिलवाई। आजादी उपरांत इन देशभक्तों ने जहां लोकतंत्र को मजबूत करने में अपना योगदान दिया वहीं देश के सामाजिक-आर्थिक उत्थान में अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। ऊना जिले के वयोवृद्ध स्वतन्त्रता सेनानी सत्य मित्र बख्शी आज भी समाज उत्थान का बीड़ा उठाये हुये हैं। 18 फरवरी, 1928 को ऊना में जन्में श्री बख्शी के मन में युवावस्था से ही देश भक्ति का जज्बा कूट-कूट कर भरा था। उन्होंने अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों का पुरजोर विरोध किया। वर्ष 1940 में स्कूली शिक्षा के दौरान द्वितीय विश्व युद्ध के लिये चंदा इकट्ठा करने हेतु स्कूल में बेचे जा रहे झण्डे को खरीदने से मना करने पर इन्हें छोटे भाई सहित स्कूल से निष्कासित कर दिया। युद्ध के लिये भारतीयों की भर्ती का विरोध करने पर वर्ष 1942 में शेखरपुरा में गिरफ्तार किया गया तथा लाहौर जेल में नौ महीने की सजा हुई। जेल की सजा के दौरान शहीद भगत सिंह के सहयोगियों पंडित किशोरी लाल, स्वामी बसंत कमल देव तथा जगन नाथ के सम्पर्क में आये। देश की आजादी तक विभिन्न आंदोलनों में भाग लिया। देश प्रेम, देश भक्ति तथा देश के प्रति अपने योगदान का जज्बा आजादी उपरांत भी बरकरार रहा। वे पिछले 12 वर्षों से गरीब परिवारों के छात्र-छात्राओं की शिक्षा के लिये अपनी पेंशन से 12 लाख रुपये की राशि प्रदान कर चुके हैं। वे इस राशि को ऊना की अग्रणी संस्था हिमोत्कर्ष के माध्यम से बेसहारा गरीब विद्यार्थियों को दी जाने वाली त्रैमासिक छात्रवृत्ति के तहत दे रहे हैं। हाल ही में ऊना में हिमोत्कर्ष संस्था के माध्यम से 120 बेसहारा विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां प्रदान की गई। वर्तमान में प्रदेश सरकार 65 स्वतन्त्रता सेनानियों तथा उनके लगभग 800 आश्रितों को पेंशन प्रदान कर रही है। शिक्षा के क्षेत्र में योगदान के साथ-साथ वे इस उम्र में पर्यावरण संरक्षण तथा पारम्परिक पौधों को रोपित कर अपने आसपास को हरा-भरा रखने तथा औषधीय पौधों की उपयोगिता का संदेश जनमानस को दे रहे हैं। वे प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण तथा वायु प्रदूषण बारे लोगों को जागरूक कर रहे हैं। श्री बख्शी ने अपने घर के आसपास नीम, बेहड़ा, देसी आम, जामुन व पीपल का पौधा लगाने वाले को 100 रुपये तथा तुलसी के पांच पौधे लगाने पर 50 रुपये देने की घोषणा की है। वे इस कार्य से हर व्यक्ति को जागरूक बना रहे हैं। (गिरिराज साप्ताहिक, 5 अक्तूबर, 2016)

ऊना जिले के वयोवृद्ध स्वतन्त्रता सेनानी सत्य मित्र बख्शी आज भी समाज के उत्थान का बीड़ा उठाये हुये है। 18 फरवरी, 1928 को ऊना में जन्में श्री बख्शी के मन में युवावस्था से ही देश भक्ति का जज्बा कूट-कूट कर भरा था। वर्ष 1940 में स्कूली शिक्षा के दौरान द्वितीय विश्व युद्ध के लिये चंदा इकट्ठा करने हेतु स्कूल में बेचे जा रहे झण्डे को खरीदने से मना करने पर उन्हें छोटे भाई सहित स्कूल से निष्कासित कर दिया। युद्ध के लिये भारतीयों की भर्ती का विरोध करने पर वर्ष 1942 में शेखरपुरा में गिरफ्तार किया गया तथा लाहौर जेल में नौ महीने की सजा हुई।

तत्कालीन सनातन धर्म स्कूल तथा वर्तमान के राजकीय (बाल) वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय में मात्र एक दिन के लिए थर्ड मास्टर की भूमिका निभाई थी। यह कार्य उन्होंने अभिन्न मित्र अमृत लाल के पिताश्री, जो वहां हैड मास्टर थे, को गंभीर संकट से उबारने के लिए किया था। उल्लेखनीय है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटिश सेना के जिन 60 हज़ार भारतीय सैनिकों को जापानी सेनाओं ने बन्दी बनाया था, उन्हीं को आधार बनाकर क्रान्ति के अग्रदूत नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने आजाद हिन्द फौज का रूप दे मुक्तकंठ से जयहिंद का उद्घोष कर दिल्ली चलो का महान संदेश दिया। ऊना क्षेत्र को इस बात का गौरव है कि बड़ी संख्या में यहां के रणबांकुरे, इस आजाद हिन्द फौज में शामिल थे। ऊना क्षेत्र में स्वतन्त्रता की अलख जगाने वालों में बाबा लक्ष्मण दास आर्य, महाशय तीरथ राम, ठाकुर वरयाम सिंह, ठाकुर काका राम, लाला मंगतराम खन्ना, ठाकुर दलीप सिंह, सोहन सिंह चमक, पण्डित अनन्त राम (चलेट), कामरेड राम किशन भडोलियां, पण्डित मोहन लाल दत, पण्डित हरि राम शर्मा, खुशी राम गुप्ता, कै. अजीत सिंह, लै. सुखदेव चौधरी, कै. राम रतन सिंह, जगदीशराम शर्मा, प्रीतमचन्द बनवासी, श्रीमती दुर्गा बाई आर्य एवं खुशीनन्द पराशर प्रमुख थे। स्वाधीनता संग्राम के दौरान वर्तमान ऊना जिला के विभिन्न स्थानों पर अपने जोशीले भाषणों एवं देशभक्ति से परिपूर्ण उर्दू एवं पंजाबी की कविताओं से जनसाधारण में जागृति पैदा करने के लिए बाहर से आने वालों में मुंशी अहमददीन, बलदेव मित्र 'बिजली', पण्डित हरचरण दास हरियानवी, डॉ. गोपी चंद भार्गव, पहाड़ी गांधी बाबा कांशी राम, लाला जगत नारायण, लाला सुनाम राय, लाला गणपत राय बी.ए. नेशनल, सालिग राम पराशर,

(शेष पृष्ठ 57 पर)

ऊना अब 'उन्ना' नहीं

◆ हंसराज भारती

आज ऊना में विकास है, समृद्धि है, उन्नति है, स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा का विस्तार है, औद्योगिक क्षेत्र हैं। नए-नए संस्थान और उद्योग स्थापित हो रहे हैं। पूरे जिले में सड़कों का जाल बिछा है। कमोबेश हर गांव सड़क से जुड़ा है। कभी एक सुस्त, उदास, मटमैला सा ऊना कस्बा बड़ी तीव्र गति से अपना विस्तार कर चुका है। निरंतर विस्तार हो रहा है साल दर साल। हिमाचल का एकमात्र जिला मुख्यालय जो ब्रॉडगेज रेल लाइन से जुड़ा है।

पंजाब पुनर्गठन आयोग की सिफारिशों के आधार पर पहली नवंबर 1966 को ऊना हिमाचल प्रदेश का अंग बन गया। उस समय ऊना, पंजाब के होशियारपुर जिले की एक सर्वाधिक पिछड़ी और उपेक्षित तहसील थी। हालांकि नंगल डैम और आनंदपुर साहिब ऊना तहसील के हिस्से थे परंतु पंजाब पुनर्गठन के समय ये दोनों महत्त्वपूर्ण स्थल पंजाब में ही रहे जबकि नंगल से चार किलोमीटर दूर मैहतपुर गांव पंजाब-हिमाचल की सीमा बन गया। पंजाब का पुनर्गठन भाषाई आधार पर हुआ था लेकिन यहां पर विभाजन की बांट के दूसरे कारण भी थे। नंगल से ऊना की दूरी महज 17 किलोमीटर है। उस समय अधिक भाषाई आधार पर ऊना हिमाचल के हिस्से आया तो नंगल क्यों नहीं? क्योंकि इस विभाजन में जो वास्तव में हरियाणा-पंजाब की लड़ाई थी, हिमाचल तो प्राप्त करने वाला था, खोने वाला कुछ नहीं। सो जितना और जैसा मिला, स्वीकार्य था। उस समय अकाली 'सिख होमलैंड' के अधिक पैरोकार थे। ये तो बाद में आभास हुआ कि इस मांग में कितना कुछ हाथ से निकल गया।

खैर, हिमाचल में विलय के बाद ऊना तहसील को कांगड़ा जिला के साथ संबद्ध किया गया। पंजाब पुनर्गठन के समय ऊना के अतिरिक्त कांगड़ा, कुल्लू और लाहौल स्पीति के पूरे जिलों के अतिरिक्त अंबाला जिले की नालागढ़ तहसील और गुरदासपुर जिले का डलहौजी क्षेत्र भी हिमाचल के हिस्से आए। इस प्रकार वर्तमान हिमाचल प्रदेश के आकार ने स्वरूप ग्रहण किया और प्रदेश क्षेत्रफल की दृष्टि से दोनों समृद्ध पड़ोसियों से बड़ा हो गया।

पहली सितंबर 1972 को ऊना तहसील से जिला के रूप में अस्तित्व में आया। इस समय जिला हमीरपुर (जो स्वयं इसी तारीख को अस्तित्व में आया) के कुछ क्षेत्र (वर्तमान बंगाणा तहसील से जुड़े) ऊना जिला के भाग बने।

पहाड़ की अपेक्षा पंजाबी सभ्यता और संस्कृति के अधिक सन्निकट होने के कारण प्रारंभ में इस विलय का विरोध भी हुआ था। परंतु शीघ्र ही स्थितियां बदलने लगीं। हिमाचल में विलय उपरांत अब ऊना पिछड़ा और अविकसित या कठिन क्षेत्र नहीं था। क्योंकि हिमाचल में ऊना से भी अधिक कठिन और विकास की दौड़ में पीछे रहने वाले क्षेत्र थे।

विलय के छह वर्षों बाद ही ऊना हिमाचल प्रदेश का एक जिला बन गया। निश्चित रूप से पंजाब में रहते हुए ऊना के हिस्से ये उपलब्धि शायद ही नसीब होती।

ऊना के बारे पंजाबी में एक कहावत प्रचलित थी 'ऊना उन्ना ही रैह गया'। यानी ऊना वैसे का वैसा ही रह गया उपेक्षित और पिछड़ा। यहां कोई विकास नहीं हुआ।'

होशियारपुर का जिक्र पंजाब में दो मायनों में अधिक होता है, एक पंजाब का सर्वाधिक साक्षरता दर वाला जिला दूसरा पंजाब का औद्योगिक व आर्थिक रूप से पिछड़ा जिला। तो इस पिछड़े जिले की सबसे पिछड़ी तहसील थी ऊना। जो हिमाचल का अंग बनने के पश्चात 'उन्ना' (उतना या वैसा ही) नहीं रह गया। कभी लाहौर और बाद में अमृतसर, जालंधर, लुधियाणा आदि में कांगड़ा, ऊना के 'मुंडु' बहुत सुलभ और मशहूर भी थे। हिमाचल निर्माता डॉ. यशवंत सिंह को यहां के लोगों को मूंडू कहने पर दुःख होता था,पीड़ा होती थी। अकसर वह अपने भाषणों में जिक्र किया करते

थे, "लोग हमें मुंडू कहते हैं, लेकिन हम मुंडू इस वास्ते हैं क्योंकि हम ईमानदारी से काम करते हैं, तो मैं सबसे बड़ा मुंडू हूं।" डॉ. परमार की इस स्वीकारोक्ति से हिमाचलियों की हीनभावना गौरव में बदल गई और अब वे मस्तक गर्व से ऊंचा कर चलते हैं। (हिमप्रस्थ, अगस्त-2016, पृ. 13) आर्थिक विवशताएं सब कुछ करवाती हैं। इन क्षेत्रों में शिक्षा और रोजगार के साधन सीमित थे। उपेक्षा चरम पर थी।

परंतु आज ऊना में विकास है, समृद्धि है, उन्नति है, स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा का विस्तार है, औद्योगिक क्षेत्र हैं। नए-नए संस्थान और उद्योग स्थापित हो रहे हैं। पूरे जिले में सड़कों का जाल बिछा है। कमोबेश हर गांव सड़क से जुड़ा है। कभी एक सुस्त, उदास, मटमैला सा ऊना कस्बा बड़ी तीव्र गति से अपना विस्तार कर चुका है। निरंतर विस्तार हो रहा है साल दर साल। हिमाचल का एकमात्र जिला मुख्यालय जो ब्रॉडगेज रेल लाइन से जुड़ा है। नंगल-तलवाड़ा रेल लाइन का 90 प्रतिशत भाग इस जिले से गुजरता है। इस रेल लाइन के पूरा होने पर विकास के नए अध्याय की शुरुआत होगी। मैहतपुर-अंब और ऊना-भोटा सड़क डबल लेन बन गई है। एकदम चकाचक। और मार्गों का भी सुधार हो रहा है। मैहतपुर, टाहलीवाल पंडोगा जैसे औद्योगिक क्षेत्रों का निर्माण हुआ है। मैहतपुर और बद्दी बरोटीवाला में साथ-साथ उद्योग स्थापित हुए थे। पर मैहतपुर इस दौड़ में पिछड़ गया है। कुछ और बड़े महत्त्वपूर्ण केंद्र स्थापित हो रहे हैं। यदि डोगरा रेजिमेंट का ट्रेनिंग सेंटर खुलने की कवायद अमली रूप लेती है, तो यह ऊना के विकास में मील का पत्थर साबित होगी। आशा करनी चाहिए कि ये योजना शीघ्र फलीभूत होगी। ऊना के अभिशाप के नाम से बदनाम ऊना की पहचान स्वां नदी अब ऊना के वरदान के रूप में परिवर्तित होती दृष्टिगोचर हो रही है। इस नदी के तटीकरण के बाद जिला में विशेषतया सब्जी उत्पादन में एक क्रांति आई है।

ऊना प्रदेश का सर्वाधिक उपजाऊ जिला है, यहां पर गेहूं और धान का उत्पादन प्रचुर मात्रा में होता है। पंजाब के साथ सटे क्षेत्रों में खेती आधुनिक तकनीक से होती है। हां, यदि सिंचाई, व्यवस्था और अधिक सुचारू और व्यवस्थित हो जाए तो कृषि में अधिक उत्पादन की अपार संभावनाएं हैं।

भौगोलिक दृष्टि से ऊना शिवालिक पहाड़ियों के मध्य स्थित है। समुद्रतल से अधिक ऊंचाई नहीं है। बंगाणा तहसील के अंतर्गत सोलहसिंगीधार ही सर्वाधिक ऊंची चोटी है वह भी 1200 मीटर के आसपास। पूरे जिले में उपजाऊ घाटियां हैं। सतलुज जिले की सीमा के साथ बहती है। स्वां ही एक मुख्य नाम है जो असल में एक बरसाती छोटी नदी है। शेष छोटी खड्डें या बरसाती 'चो' हैं। ऊना व हमीरपुर दो ऐसे जिले हैं जहां प्रायः सर्दियों में कहीं भी बर्फबारी नहीं होती। अपवाद स्वरूप जनवरी 2012 में चिंतपूर्णी क्षेत्र में बर्फबारी हुई थी। गर्मियों में तापमान 45 डिग्री तक चला जाता है। ऊना से होशियारपुर 40 किलोमीटर, जालंधर 80 किलोमीटर और चंडीगढ़ 120 किलोमीटर है। जबकि शिमला के लिए वाया-वाया होकर दो-तीन रास्ते हैं। हमीरपुर, बिलासपुर, सोलन आदि सौ किलोमीटर के आस-पास के फासले पर हैं। खेल जगत में ऊना ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर के खिलाड़ी देश व प्रदेश को प्रदान किए हैं। प्रसिद्ध साहित्यकार साधुराम पुरी भी ऊना के बेटे हैं। इन पंक्तियों का लेखक वर्ष 1975 से लेकर आज तक ऊना जिले से गहरे रूप में जुड़ा रहा है और एक अविकसित व पिछड़े इलाके को विकास व समृद्धि की एक नई इबारत रचते हुए देखा है। आज ऊना जिला हिमाचल के अग्रणी जिलों में से एक है। भले ही यहां बर्फ के शिखर न हों। देवदार के जंगल भी नहीं हैं। परंतु यहां पर जो कुछ भी उपलब्ध है, उससे यहां के वाशिंदों ने एक नया अध्याय लिखा है। आज यह क्षेत्र अशिक्षा, गरीबी, पिछड़ेपन और अविकास को पीछे छोड़ आया है। यहां के युवा अब अमृतसर, जालंधर, लुधियाणा, चंडीगढ़ में डॉक्टर, इंजीनियर, सैनिक अधिकारी, प्रोफेसर, खिलाड़ी आदि बनकर जाते हैं। 'मुंडु' की इस पीड़ा को अब इतिहास में दर्ज कर दिया है। निश्चित रूप से अब ऊना, उन्ना नहीं रह गया है। वह बदल गया है। सतलुज से स्वां तक। साधुचक चो से मैहतपुर। संतोषगढ़ से चिंतपूर्णी तक।

(शेष पृष्ठ 30 पर)

आज ऊना में विकास है, समृद्धि है, उन्नति है, स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा का विस्तार है, औद्योगिक क्षेत्र हैं। नए-नए संस्थान और उद्योग स्थापित हो रहे हैं। पूरे जिले में सड़कों का जाल बिछा है। कमोबेश हर गांव सड़क से जुड़ा है। कभी एक सुस्त, उदास, मटमैला सा ऊना कस्बा बड़ी तीव्र गति से अपना विस्तार कर चुका है। निरंतर विस्तार हो रहा है साल दर साल। हिमाचल का एकमात्र जिला मुख्यालय जो ब्रॉडगेज रेल लाइन से जुड़ा है। नंगल-तलवाड़ा रेल लाइन का 90 प्रतिशत भाग इस जिले से गुजरता है।

लोक संस्कृति

गीत परंपरा में जीवन सार

◆ डॉ. ऊषा रानी

बेदियों के प्रसिद्ध सिख परिवार की पावन गढ़ी ऊना प्रथम नवंबर 1966 को हिमाचल प्रदेश के साथ विलय से पूर्व पंजाब के होशियारपुर जिले की क्षेत्रफल के अनुसार सबसे बड़ी तहसील का मुख्यालय था। सितंबर 1972 को ऊना जिला अस्तित्व में आया और उसका मुख्यालय ऊना नगर में स्थापित किया गया।

ऊना केअर्द्धपर्वतीय क्षेत्र के पश्चिम तथा उत्तर में लघु हिमालय की पर्वत श्रेणियां फैली हुई हैं। यह व्यास नदी के बाएं किनारे से तलवाड़ा के समीप से उद्‌गम से लेकर लगभग 15-20 किलोमीटर कांगड़ा क्षेत्र से होती हुई भरवाईं तक फैली है। इस भाग को जसवां पर्वत श्रेणी या चिंतपूर्णी पर्वत श्रेणी के नाम से पुकारते हैं। यहां भरवाईं के समीप इस पर्वत की ऊंचाई लगभग 1200 मीटर है। भरवाईं से यह श्रेणी उत्तर की ओर मुड़ जाती है। अंब से यह उत्तर-पूर्व की ओर अग्रसर होकर हमीरपुर की सीमा पर स्थित भियांमदी (पिपलू) से एकदम पूर्व की ओर बढ़ती हुई बड़सर के समीप बिलासपुर जिले में प्रवेश करती है। इसे ऊना और हमीरपुर में सोलहसिंगीधार तथा बिलासपुर में कोटधार कहते हैं। पिपलू से बड़सर तक यह हमीरपुर और ऊना की सीमा निर्धारित करती है। ऊना जिले के अंतर्गत विस्तृत विभिन्न पर्वत श्रेणियों को निम्न भागों में बांटा जा सकता है :- शिवालिक पर्वत श्रेणी, रामगढ़ पर्वत श्रेणी, सोलहसिंगीधार पर्वत श्रेणी तथा जसवां पर्वत श्रेणी।

1961 की जनगणना के अनुसार ऊना की भाषा हिंदी थी। इसे कांगड़ी उपभाषा के रूप में विभाजित किया जा सकता है। इस प्रकार ऊना के लोगों की बोली विशुद्ध रूप से कांगड़ी या पहाड़ी भाषा है जिसमें पहाड़ी और हिंदी के शब्दों का मिश्रण है। इस प्रकार जिला ऊना की भाषा कांगड़ा, पंजाबी और डोगरी भाषा का मिश्रण है। इसे उन्नवी भाषा कहा जा सकता है। ऊना जिला का संबंध सिख गुरुओं के साथ रहा है। यहां मैड़ी के बड़भाग सिंह तीर्थ का संबंध पांचवें गुरु अर्जुनदेव के साथ रहा है। इसी तरह गगरेट के समीप बुंबलू झरने का संबंध दसवीं पातशाही, गुरु गोबिंद सिंह के साथ माना जाता है। ऊना नगर का संबंध गुरु नानक देव जी के वेदी वंश के साथ माना जाता है।

लोक संस्कृति

ऊना जिले की संस्कृति हिमाचल प्रदेश में विशेष स्थान रखती है। यहां के लोग विभिन्न धर्मों में विश्वास करते हुए भी हिंदू संस्कृति को संजोए हुए है। धार्मिक सहयोग और भाईचारे का इस जिले में अनुपम मेल है। यहां हिंदुओं के शिवरात्रि, होली, वैसाखी, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, विजयदशमी, दीपावली, लोहड़ी आदि उत्सव धूमधाम तथा हर्षोल्लास सहित मनाए जाते हैं। इन उत्सवों को सिख, मुस्लिम तथा धर्मावलंबी भी मनाते हैं। और हिंदुओं को इन पर्वों के आयोजन में पूर्ण सहयोग देते हैं। हिंदू हर गुरुपर्व को श्रद्धाभाव से मनाते हैं। यही नहीं, अपितु ऊना के निवासी मुस्लिम पीरों तथा फकीरों में अगाध विश्वास रखते हुए मजारों पर श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं। इसके अतिरिक्त बाबा बालकनाथ, गुग्गा जाहर पीर आदि देवों की यहां के निवासी पूजा करते हैं। ऊना में राधास्वामी सत्संग भवन, निरंकारी भवन तथा अन्य संप्रदायों के अनेक पावन स्थल हैं। यहां के निवासी भूत-प्रेत आदि दुरात्माओं में भी विश्वास करते हैं तथा नाग-पूजा में अटूट विश्वास करते हैं। इस संबंध में नरायण दत्त शर्मा ने एक स्थान पर लिखा है, "इस जिले में मजारें हैं। इस जिले के विभिन्न भागों में अनेक स्थानों पर शिव, शक्ति, विष्णु गुग्गा, बाबा बालक नाथ, नरसिंह आदि हिंदू देवी-देवताओं के साथ ही गुरुद्वारे, मस्जिदें और मजारें हैं।"[1] अतः ऊना जिले में सब धर्मों के लोग मिलजुल प्रेम एवं भाईचारे के साथ रहते हैं।

रीति रिवाज

ऊना जिले में बालक के जन्म, विवाह से लेकर मृत्यु तक अनेक रीति-रिवाज प्रचलित हैं तथा उन्हें लोकगीतों में प्रस्तुत किया जाता है। इनमें बालक के जन्म पर गाए जाने वाले गीत को रण-जूंझणे कहते हैं। इसे महिलाएं हर्षोल्लास सहित इस प्रकार गाती हैं :-

"पुछदा-पुछदा आइयां मेरे घीघे केहड़ा घर बाबेदा,
उच्ची डयोड़ी नौ दरवाजे, यहो घर मेरे बाबेदा।"[2]

अतः बालक के जन्म से 11 दिन या 13 दिन या अधिक दिनों तक जाति के अनुसार परिजनों में सूतक माना जाता है। इस

अवधि में धार्मिक कर्म नहीं होते।

पंजाप या गंतरयाला

बच्चे के जन्म के पांचवे या तेरहवें दिन पंजाप या गंतरयाला का संस्कार मनाया जाता है। इस संस्कार को सूतक की समाप्ति माना जाता है। इस संस्कार के अवसर पर गाय के गूंत्र से घर की शुद्धि की जाती है। यही नहीं, अपितु स्नान करने तथा नए कपड़े पहनने के बाद जच्चा को गाय का गूंत्र चटाया जाता है। गूंत्र के कारण ही इसे गंतरयाला संस्कार कहते हैं। वर्तमान समय में पंजाब संस्कार बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जाता है। कई स्थानों पर इस अवसर पर प्रीति भोज का आयोजन भी किया जाता है :-

"बाला जन्मेया किन-किन सुनेया कौन-कौन देवे बधाइयां वे अज मेरे वाले जन्म लेया
बाला जन्मेया दादी सुनेया दादा देवे बधाइयां वे अज मेरे बाले जन्म लेया
बाला जन्मेया किन-किन सुनेया कौन-कौन देवे बधाइयां वे आज साडे वाले जन्म लेया
बाला जन्मेया बुआ ने सुनेया बोइया देवे बधाइयां वे
अज साडे वाले जन्म लेया।"[3]

इस प्रकार परिवार के सभी सदस्य व रिश्तेदार बधाइयां देते हैं। विवाह से पूर्व समूहत या बटणे की रस्म पूरी की जाती है। दूल्हे को बटना लगाते उसके परिवार की महिलाएं गाती हैं :

हृदो बणजारे मैं बटणे जो भेजे, स्यो बणजारू न आए
थोड़ा-थोड़ा बटणा मेरी भैणा जो देणा, होर मलो अंग मेरे
दो बणजारे मैं बटणे जो भेजे स्यो बणजारू न आए
थोड़ा थोड़ा बटना मेरी भाभी जो देणा, होर मलो अंग मेरे।

इसी तरह समूहत का गीत गाया जाता है :

"अंगन चीकड़ किनी कितेया किनी डोलेया पाणी
नौए गा बाबे दा पुत जी जिन्ही डोलया पाणी
अंगन चीकड़ किनी कितेया किनी डोलेया पाणी
नौए गा माए दा पुत्र जी जिन्ही डोलेया पाणी।"[4]

विवाह से पूर्व उत्सव को सांद कहते हैं। इस अवसर पर वर के मामा-मामी दुल्हे को कपड़े देते हैं। कन्या पक्ष के घर बारात आने पर खाना खाते समय कन्या पक्ष की महिलाएं गाती हैं :

"आलुआं दी तरकारी है हैजे बीमारी, थोड़ा-थोड़ा खायो जी,
खाटे दी खटियाई शूली दी बीमारी थोड़ा थोड़ा खायो जी।"[5]

कन्या पक्ष की महिलाएं सुहाग गीत गाती हैं :

"बाबा दूर न देयो, बाबा प्रदेश न दियो
डसां जो कसम लगै गुरूदेव दी।"[6]

इन संस्कारों के अतिरिक्त ऊना जिले में दीवाली, दशहरा, लोहड़ी, बैसाखी, होली आदि उत्सव श्रद्धा सहित मनाए जाते हैं। इसी तरह नवरात्रे, दुर्गा पूजन, जन्माष्टमी, गणेश पूजन, महावीर जयंती, नाग पंचमी, निर्जला एकादशी, पूर्णिमा, श्राद्ध हरियाली, तीज चंदन पष्ठी वाल्मीकि जयंती, करवा चौथ, रविदास जन्म दिवस, सत्यनारायण व्रत, शिवरात्रि, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी आदि उत्सव एवं पर्व हर्षोल्लास सहित मनाए जाते हैं। ऊना जिले में गुरु पर्व धूमधाम से मनाए जाते हैं। इस अवसर पर शोभा यात्रा निकाली जाती है। जिसमें हिंदू सिख सब धर्मों के लोग भाग लेते हैं।

शिवरात्रि गीत

ऊना क्षेत्र में शिवरात्रि का त्योहार बड़ी धूमधाम एवं हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। रात्रि के समय शिव मंदिरों में शिव पूजन होता है। श्रद्धालु भक्त शिवरात्रि पर दूध, जल-पुष्प एवं बिल्वपत्र आदि चढ़ाते हैं। इस रात्रि में शिवलिंग की चार पूजाएं होती हैं। इस दिन ऊना क्षेत्र के विविध शिव मंदिरों में मेलों का आयोजन होता है। शिवरात्रि के पर्व पर शिव भक्त शिव महिमा के गीत गाते हैं। शिव की स्तुति में गाया जाने वाला एक गीत है-

"उच्चेयां पहाड़ां शिव तेरा है ठिकाणां
हत्थ में गड़वा, ठंडा जल पाणीं
स्नान करामण आए तेरे द्वारे।
खोलो खोलो मंदिर असीं स्नान कराणां
उच्चेयां पहाड़ां शिव तेरा है ठिकाणां
हत्थ में धूप-धायां दियां बतियां
धूम धुखावण आए तेरे द्वारे।
खोलो-खोलो मंदिर असी धूप धुखाणां
उच्चेयां पहाड़ां शिव तेरा है ठिकानां
हत्थ में थाली भोजन वाली
भोग लगावण आए तेरे द्वारे।
खोलो-खोलो मंदिर असीं भोग लगाणां।
हत्थ में करनीं फुल्लां नाल भरनी
फुल चढ़ामण आए तेरे द्वारे
खोलो-खोलो मंदिर असीं फुल-चढ़ामणां।
उच्चेयां पहाड़ा शिव है ठिकाणा।"[7]

इस गीत का भावार्थ है कि ऊंचे पर्वत पर शिव मंदिर स्थित है। श्रद्धालु शिवलिंग के पूजन हेतु अपने संग जल, धूप, प्रसाद एवं पुष्प लेकर आए हैं। गीत में श्रद्धालुओं द्वारा शिव मंदिर खोलने का आग्रह किया गया है। इस गीत में भगवान शिव के प्रति भक्तजनों के अथाह श्रद्धा भाव अभिव्यक्त होते हैं।

भगवान शिव के साथ-साथ मां पार्वती के प्रति भी जनमानस के भक्तिभाव अभिव्यक्त होते हैं। शिव पार्वती से संबंधित एवं गीत प्रस्तुत है, जिसमें शिवरात्रि के अवसर पर शिव व पार्वती के विविध क्रिया-कलापों का चित्रण हुआ है :-

"मेरा भोला है मस्त मलंग अड़ियो,
पार्वती उदे संग अड़ियो।
गौरां ने बीज लई हरी-हरी मैहंदी,

शिवां ने गुड्ड लेई पग अड़ियो
पार्वती उदे संग अडियो
गौरां ने ला लाई हरी-हरी मैहंदी
शिवां ने पी लेई पंग अड़ियो
पार्वती उदे संग अड़ियो,
मेरा भोला है मस्त मलंग अड़ियो।
पार्वती उदे संग अड़ियो।"[8]

इस गीत में कहा गया है कि भोलेभाले शिव मस्त मौला हैं। पार्वती शिव के साथ विराजमान है। पार्वती अपनी मनोवृत्ति के अनुसार मेहंदी एवं शिव भांग की खेती करते हैं। तैयार होने पर शिव द्वारा भांग का सेवन किया जाता है और पार्वती मेहंदी अपने हाथों में लगाती है। इस गीत के माध्यम से शिव-पार्वती जी स्वाभाविक मनोवृत्तियां, खान-पान, वेश-भूषा एवं दैनिक क्रिया-कलापों को दर्शाया गया है।

होली गीत

ऊना क्षेत्र में फाल्गुण पूर्णिमा के दिन होली का त्योहार मनाया जाता है। इस दिन बच्चों और युवाओं में उत्साह होता है। लोग छोटे-छोटे समूह बनाकर अत्यधिक उत्साह एवं हर्षोल्लास में एक दूसरे पर रंगों की बौछार करने के लिए तत्पर रहते हैं। इस दिन ऊना क्षेत्र के विविध स्थलों पर मेलों का आयोजन भी होता है। होली के दिन बाबा बड़भाग सिंह में विशाल मेले का आयोजन होता है। इस दिन श्रद्धालु स्त्रियां कृष्ण-राधा एवं गोपियों क विविध प्रसंगों का गान करती हैं :-

"होली खेल नंद लाल, वृंदावन कुंज गली में,
सखी शा ने मारी पिचकारी मेरी चुनरी दी आव उतारी।
चुनरी हो गई लाल गुलाल वृंदावन कुंज गली में,
होली खेल नंदलाल वृंदावन कुंज गली में।
सखी शाम ने मारी पिचकारी मेरी चुनरी दी आव उतारी
वाहां हो गई लाल गुलाल, वृंदावन कुंज गली में।
सखी शाम ने मारी पिचकारी मेरी चुनदी दी आव उतारी।
दिल हो गया बागो-बाग वृंदावन कुंज गली में
सखी शाम ने मारी पिचकारी मेरी चुनरी दी आव उतारी,
मुखड़ा हो गया लाल-गुलाल, वृंदावन कुंज गली में।
सखी शाम ने मारी पिचकारी, मेरी पायल दी आव उतारी,
गलियां बिच पै गई झंकार, वृंदावन कुंज गली में।"[9]

इस गीत में राधा अपनी एक सखी से कहती है कि कृष्ण वृंदावन की गलियों में होली खेल रहे थे। वहां उन्होंने रंग से भरी पिचकारी से मेरी चुनरी चेहरे व पायल की शोभा बिगाड़ दी। यह बात अब गली-गली में फैल गई है। श्रीकृष्ण के इस व्यवहार से राधा का हृदय प्रफुल्लित हो उठता है।

बैसाखी गीत

ऊना क्षेत्र में बैसाख मास की संक्रांति को 'बैसाखी' का त्योहार मनाया जाता है। 'बैसाखी' वस्तुतः फसल का त्योहार होने के कारण अत्यंत उत्साह, उल्लास एवं उमंग के साथ मनाया जाता है। इस अवसर पर किसानों के हृदय में उत्साह एवं आनंद के मेघ उमड़ आते हैं। इस दिन ऊना क्षेत्र की स्वां नदी, ब्रह्मोन्ति पंजगाटड़ा व चरणगंगा आदि स्थलों पर मेलों का आयोजन होता है।

वैसाखी के दिन श्रद्धालु विभिन्न तीर्थ स्थलों पर जाकर स्नान करके अपने आपको धन्य समझते हैं। इस अवसर पर पवित्र नदियों की स्तुति में गीत गाए जाते हैं। बैसाखी से संबंधित एक गीत प्रस्तुत है जिसमें गंगा एवं यमुना नदियों के रूप एवं गुणों की प्रशंसा निहित है :-

"गंगा तां जमुना सक्कियां नी पैहणां
आईयां पर्वत चीर, नी मेरी गंगा माई
निरमल तेरा नीर स्वर्गलोक से उतरी है धारा
आई है पर्वत चीर, नी मेरी गंगा माई।
निरमल तेरा नीर तेरेयां नहातेयां पाप कटत है
जाइऐ सुर्गा दे बिच, जो तैनू सिमरे सो फल पावे।
हो जावे तेरे अधीर, नी मेरी गंगा नी माई।"[10]

इस गीत में गंगा एवं यमुना नदियों को देवी के रूप में चित्रित किया गया है। गीत में गंगा की महिमा का गुणगान करते हुए कहा गया है कि गंगा स्वर्ग से उतरने वाली पवित्र नदी है। गंगा का जल अत्यंत पवित्र है। गंगा के जल से स्नान करने से सब पाप नष्ट हो जाते हैं एवं श्रद्धालु व्यक्ति को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। गंगा की स्तुति करने से सब इच्छाएं पूर्ण होती हैं।

दुर्गाष्टमी गीत

आश्विन मास में दुर्गाष्टमी का त्योहार मनाया जाता है। इस दिन दुर्गा के विविध रूपों का पूजन किया जाता है। लोग व्रत रखते हैं। स्त्रियां अंकुरित जौ, चने, गेहूं एवं जल के क्लश की पूजा-अर्चना करती हैं। दुर्गा को नारियल की भेंट भी चढ़ाई जाती है। दुर्गाष्टमी के दिन इन सभी वस्तुओं को पानी में विसर्जित कर देते हैं। इस दिन कुंवारी कन्याओं का दुर्गा के रूप में पूजन होता है। लोग घरों में खीर, भल्ले, चने, पूरियां, हलवा, कचौड़ियां, पूड़े एवं मिठाइयां आदि बनाते हैं। सर्वप्रथम दुर्गा को भोग लगाया जाता है तत्पश्चात कुंवारी कन्याओं को लाल चुनरी वस्त्र एवं सामर्थ्यानुसार आभूषण भी भेंट किए जाते हैं। इस दिन दुर्गा स्थलों पर जाकर पूजा-अर्चना करना अत्यंत कल्याणकारी माना जाता है। ऐसे में स्त्री-पुरुष दुर्गा की महिमा का गुणगान करते हुए दुर्गा के प्रति अपार श्रद्धा के भावों को व्यक्त करते हैं। इसी भाव को व्यक्त करता हुए गीत प्रस्तुत है :-

"पूजा करे पूजा करे
पूजा करे संसार मां तेरी पूजा करे
तैनूं पूजन ब्रह्मा जी आए-2

गायी जी नू नाल लियाए
देखो बोलन जै जैकार मां तेरी पूजा करे
पूजा करे पूजा करे
पूजा करे संसार मां तेरी पूजा करे
तैनूं पूजन शंकर जी आए
पार्वती नू नाल लियाए
होके बैल सवार मां तेरी पूजा करे
पूजा करे संसार मां तरी पूजा करे।
तैनू पूजन राम जी आए
सीता जी नू नाल लियाए
पूजा करे पूजा करे संसार
मां तेरी पूजा करे।"[11]

इस गीत में श्रद्धालु स्त्री दुर्गा-पूजन के महत्त्व को स्पष्ट कर रही है। गीत में कहा गया है कि दुर्गा की पूजा पूरे विश्व में की जाती है। गीत में ब्रह्मा-गायत्री, शिव-पार्वती, राम-सीता द्वारा भी दुर्गा-पूजन की बात कही गई है।

रक्षा बंधन गीत

रक्षा बंधन का त्योहार श्रावण पूर्णिमा को बड़ी उत्सुकता एवं हर्षोल्लास से मनाया जाता है। यह त्योहार भाई-बहन के सच्चे प्रेम का प्रतीक है। इस दिन बहन-भाई की कलाई पर राखी बांधती है व दीर्घायु के लिए प्रार्थना करती है। भाई-बहन को उपहार भेंट करते हैं। इस त्योहार पर बहन-भाई से संबंधित गीत भी गाए जाते हैं। रक्षा-बंधन त्योहार से संबंधित एक गीत प्रस्तुत है :

"भोरे ते गीरया मेरा वीर
कीधे अज बंधा राखड़ी
भोरे तो चल के आसाया
कृष्ण भगवान अप्पू चल के भी
आ गए चल चल के आ गए।
संगला दे मोचे ला गए प्रभु आप जी
प्रभु चल चल के आ गए।
संगला दे टुकड़े ला गए प्रभु आप भी
संगल तोड़ दिते सारे कृष्ण ने
भोरे ते चढ़ेया वीर जी।
भोरे उते आ के बैठ गया वीर जी
भैण जी ने बन्नी राखड़ी
सुणों नगर दे लोको
भैण मनाई गई जी सुणो वीर जी
सुणो वीर चमक उतारे बहण मनाई गई जी।"[12]

इस गीत में कहा गया है कि भाई कठिन मुसीबत में रहा उसने विपत्ति, कठिनाइयों को झेला। भगवान श्रीकृष्ण ने भाई की स्वयं आकर सहायता दी। भाई की विपत्ति दूर होने पर बहन ने भाई की कलाई पर राखी बांधी। भाई की कलाई पर राखी बांधने के पश्चात बहन के हृदय में अपार स्नेह उमड़ आता है।

कृष्ण जन्माष्टमी गीत

ऊना क्षेत्र में भाद्रपद मास की अष्टमी को कृष्ण जन्माष्टमी का त्योहार बड़ी श्रद्धा एवं धूमधाम से मनाया जाता है। इस दिन श्रद्धालु व्रत रखते हैं। सायंकाल में श्रीकृष्ण की सुंदर झांकियां निकाली जाती हैं। रात्रि के समय मंदिरों की शोभा अत्यंत निराली होती है। ऐसे में रंग-बिरंगी बिजली की बतियां मंदिरों की सुंदरता को बढ़ा देती हैं। मंदिरों में झूले भी रखे जाते हैं। इन झूलों में श्रीकृष्ण की प्रतिमा रखी जाती है। श्रद्धालु भक्त झूले में रखी मूर्ति को झूलाते हैं। रात्रि के समय श्रीकृष्ण कथा भी सुनाई जाती है। कृष्णोत्सव रात्रि के बारह बजे मनाया जाता है। इस अवसर पर स्त्रियां पुरुष श्रीकृष्ण की महिमा का गुणगान करते हैं :-

"भगत करे अरदास कृष्णा तेरा शुभ दिन मनाने दा
हो मेरेया शामा तेरा शुभ दिन मनाने दा
माता-पिता तेरे जेल पड़े हैं, चारों तरफ घिरे पड़े हैं
सोए पड़े हैं पहरेदार कृष्ण तेरा...
पादों महीने दीया कालियां राति जन्म होइया अधियाराती
खुल गए जेलां दे द्वार कृष्ण तेरा शुभ...
वासुदेव ने टोकरे च पाया जमणा देखे दिल घबराया
पल विच गंगा दित राह कृष्ण जो
तेरा शुभ दिन मनाने दा
कंस मामे ने पूतना जे पेजी पीता उदा दुधा खींचे प्राण कृष्णा
तेरा शुभ दिन मनाने दा।"[13]

इस गीत में श्रद्धालु स्त्री कहती है कि कृष्ण जन्मदिवस मनाने का आज शुभ दिन आ गया है। गीत में कृष्ण जन्म के समय की घटनाओं का सुंदर चित्रण हुआ है कि भाद्रपद मास की काली रात में जब श्रीकृष्ण ने जन्म लिया तो समस्त पहरेदारों को नींद आ गई। जेल के दरवाजे स्वयं ही खुल गए। इस समय गंगा नदी ने भी वासुदेव को लांघने का रास्ता दे दिया। गीत में कृष्ण द्वारा पूतना का वध करने का भी उल्लेख मिलता है, गीत में श्रीकृष्ण की महिमा का गुणगान किया गया है।

दीपावली गीत

ऊना क्षेत्र में दीपावली कार्तिक मास को होती है। इस अवसर पर घर-घर में दीपक जलाए जाते हैं। लोग अपने-अपने घर में राम-सीता, गणेश एवं लक्ष्मी का पूजन करते हैं। रात्रि के समय यह त्योहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। रात्रि के समय चारों ओर बड़ी जगमगाहट होती है। इस दिन लोग अपने घरों में विविध खाद्य पदार्थ बनाते हैं। एक दूसरे को मिठाई बांटी जाती है। इस दिन बाजारों की शोभा बहुत निराली होती है। रात्रि के समय श्रद्धालु स्त्रियां भगवान राम की स्तुति करते हुए राम नाम का सुमिरन करती हैं। दीपावली के शुभ अवसर पर श्रद्धालु स्त्रियों

द्वारा गाया जाने वाला एक गीत प्रस्तुत है :-

"अवधपुरी में अनन्द भयो
अज अजुधयापुरी में अनंद भयो
घर में आये राम, लच्छमण सीता,
पुरी में अज अनंद भयो
हरे-हरे गोबर अंगण लपाया
मोतियां चौक पटाया
मां कौशल्या करे आरती
अवधपुरी में अनंद भयो
गौरां लक्ष्मी गान करावे
हंस सवारी सरस्वती आवे
संकर नारद बजायो
अवधपुरी अनंद भयो
चारो वेद प्रजापति लियाए
सवना रामचंद्र गुण गाए
झुक-झुक सीस नवायो
अवधपुरी अनंद भयो
ब्रह्मा रूप देयो इजाजत
असी भी मनुखां दे हो पाए
साम देव ने अर्ज करी
अवगुण सब बख्शायो
अवधपुरी में अनंद भयो।"[14]

इस गीत का भावार्थ है कि आज अयोध्या में अत्यंत हर्षोल्लास मनाया जा रहा है। आज राम, लक्ष्मण व सीता अयोध्या में लौट आए हैं। इस दिन स्त्रियों द्वारा आंगन में गोबर का लेप एवं मोतियों युक्त चौक लगाने की बात कही गई है। इस अवसर पर विभिन्न देवी-देवताओं द्वारा भगवान राम की स्तुति करने का वर्णन मिलता है। गीत में राम चंद्र जी को राजतिलक लगने पर जनमानस के हर्षोल्लास की सुंदर अभिव्यक्ति है।

लोहड़ी गीत

ऊना क्षेत्र में लोहड़ी का त्योहार मकर संक्रांति के दिन मनाया जाता है। लोहड़ी का त्योहार मनाने के अनेक सामाजिक एवं धार्मिक कारण हैं। इस त्योहार के अवसर पर सांस्कृतिक परंपराओं की भी अभिव्यक्ति होती है। लोहड़ी से एक सप्ताह पूर्व ही बालक-बालिकाएं अलग-अलग समूहों में घरों में जाकर लोहड़ी गीत गाना शुरू कर देते हैं। लोहड़ी गाने वालों को रुपये, पैसे, मिठाइयां एवं अनाज आदि दिया जाता है। रात्रि के समय लोग अपने घर के आंगन में आग जलाते हैं। समस्त पारिवारिक सदस्य व अन्य लोग आग के चारों ओर बैठकर आग सेंकते हैं। इस समय मूंगफली, रेवड़ी, तिल, चावल, गुड़ व शक्कर आदि उपस्थित समूह में वितरित की जाती है। इस अवसर पर लोहड़ी गीत भी गाए जाते हैं। ऊना क्षेत्र में यदि किसी के घर में पुत्र का जन्म होता है तो समस्त पारिवारिक सदस्य संबंधियों को भी आमंत्रित करते हैं। इस अवसर पर विशेष आयोजन किए जाते हैं। प्रस्तुत है इससे संबंधित गीत :-

"तिल चौलिए नी गिगा लोड़िए नी
गिगा जम्मेया था, गुड़ बंडेया था
गुड़ रयोड़ियां नी भाइया दिया जेड़िया नी
वीरा घुंघरू घड़ाए, भावो हसदी ने पैरी पाये
भावो छणमण करदी आए।"[15]

इस गीत का भावार्थ है कि भाई के घर में पुत्र प्राप्त हुआ है। पुत्र पैदा होने की खुशी में आज भाई सभी को गुड़ बांट रहा है। भाई ने पुत्र जन्म के उल्लास पर अपनी पत्नी को पायलें बनवा दी हैं गीत में तिल चौली, तिल, चावल व शक्कर का मिश्रण मांगने का वर्णन हुआ है।

लोहड़ी से संबंधित एक अन्य गीत है :-

"अंबे अंबे अंबे मैं सत भरा मंगे
मेरा क भरा कुवारा, ओ कबड्डी खेडन वाला
कबड्डी कित्थे खले, लाहौर शहर खेले।
लाहौर शहर उच्चा, मैं मन्न पकाया सुच्चा।"[16]

इस गीत में बहन हर्षोल्लास से गाती है कि मेरे सात भाइयों की शादी हो चुकी है। अब केवल एक ही भाई कुंवारा है। अब उसकी भी सगाई हो गई है। मैं भाई की शादी पर घोड़ी गीत गाऊंगी और अपनी सहेलियों को लोहड़ी दूंगी।

लोहड़ी से संबंधित एक अन्य गीत जिसमें लोहड़ी प्राप्ति तथा आशीर्वाद देने के भाव अभिव्यक्त हुए हैं :-

"जिन देणी लकड़ी
उहदे जीवे बकरी
जिन देणा गोहटा
उहदा जीवे दोहता
जिन देणी पाथी
उहदा जीवे हाथी
जिन देने दाणे
उहदे जीण न्याणे
बोलो न्यानों कंगा
ए घर चंगा।"[17]

इस गीत का भावार्थ है कि लोहड़ी के दिन जो व्यक्ति लकड़ी, उपले व गेहूं देगा, उनकी बकरी, दोहता, हाथी व बच्चों की दीर्घायु होगी। गीत में लोहड़ी मिलने के पश्चात घर में सुख-समृद्धि की कामना के भाव व्यक्त हुए हैं।

अतः यह त्योहार गीत सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता को दृढ़ करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं।

हिमाचल प्रदेश का छिन्नमस्तिका धाम चिन्तपूर्णी में स्थित है। यह शक्ति स्थल दस महाविद्याओं में एक है। यहां आद्याशक्ति

पिण्डी रूप में विराजमान है। हिमाचल प्रदेश में स्थित पांच शक्तिपीठों में से चिन्तपूर्णी मंदिर भी एक विख्यात शक्तिपीठ है। यहां चैत्र और आश्विन मास में नवरात्रों के साथ श्रावण मास में मेले भी लगते हैं।

सन् 1881 ई. तक ऊना तहसील में कुल नौ मेले मनाए जाते थे। इनमें चिन्तपूर्णी मेला प्रमुख था। चैत्र और आश्विन नवरात्रों में श्रद्धालुओं की संख्या दस हजार तक रहती थी जबकि श्रावण के मेले में श्रद्धालुओं की संख्या 40,000 हजार तक होती थी। इन मेलों से चिन्तपूर्णी मंदिर में चढ़ावे की राशि दस हजार रुपये तक होती थी जो पुजारियों में बांट दी जाती थी। इसके अतिरिक्त पीर निगाह मेला ज्येष्ठ मास के हर वीरवार को बसोली में मनाया जाता था। पंजगतरा मेला बभौर में सतलुज नदी के किनारे प्रथम वैशाख को मनाया जाता था। इस धार्मिक मेले के अवसर पर श्रद्धालु सतलुज नदी में स्नान करते थे। बाबा बड़भाग सिंह (मेड़ी) मेला डेरा गुरू बाबा बड़भाग सिंह के नाम से विख्यात रहा है। यह मेला हरवर्ष होली से वैशाखी तक मनाया जाता था। धर्मसाल मेला एक प्राचीन ठाकुरद्वारा के समीप मनाया जाता था। यहां वैशाख, आश्विन मेलों के अलावा होली मेला भी मनाया जाता था। जटोली-हरोली मेला में गुग्गा मेला हर वर्ष भादों मास में मनाया जाता था। सन् 1881 ई. के आंकडों के अनुसार इस मेले में लगभग पांच हज़ार लोग भाग लेते थे। भद्रकाली मेला मुख्यतः चैत्र और आश्विन नवरात्रों में मनाया जाता था। इस मेले में खतरी शामिल होते थे।

मेलों से संबंधित गीत

ऊना क्षेत्र के अधिकांश मेले विविध देवी-देवताओं एवं धार्मिक गुरुओं से संबंधित हैं। इन मेलों के अवसरों पर सामूहिक उल्लास की अभिव्यक्ति बड़ी स्पष्ट एवं दृष्टिगोचर होती है। धार्मिक स्थलों पर देवी-देवताओं की पूजा एवं धार्मिक गुरुओं को श्रद्धा सुमन अर्पित करने हेतु लाखों श्रद्धालु सम्मिलित होते हैं। श्रद्धालु सुख-समृद्धि मनोकामनाओं की पूर्णता एवं आनंदोल्लास प्राप्त करने हेतु मेलों में भाग लेते हैं। लोग मेलों के बहुरंगीपन एवं अन्य आकर्षणों से अपने जीवन के दुःख, निराशा और विषाद को भूल जाते हैं। इस अवसर पर श्रद्धालुओं द्वारा गीत भी गाए जाते हैं। इन गीतों में देवी-देवताओं एवं धार्मिक गुरुओं के दर्शन करने, उनकी स्तुति और महिमा का गुणगान करने की अभिव्यक्ति मिलती है। जनमानस मनोकामनाओं की पूर्णता हेतु मेलों में जाने की तीव्र उत्कंठा के भावों को व्यक्त करता है। ऊना क्षेत्र में प्रचलित मेलों से संबंधित गीत प्रस्तुत हैं।

पिपलू मेले के गीत

ऊना के कुटलैहड़ क्षेत्र में पिपलु मंदिर स्थित है। यह मंदिर सोलहसिंगीधार पर अपनी दिव्य आलौकिकता के लिए प्रसिद्ध है। यहां पर नाहर सिंह की प्रतिमा विद्यमान है। इस मंदिर में ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी के दिन मेले का आयोजन होता है। ये मेला क्रय-विक्रय, खेल, तमाशों एवं आनंदोल्लास के लिए भी प्रसिद्ध है। इस अवसर पर कुछ लोग पिपलु मेले से संबंधित गीत भी गाते हैं। पिपलु मेले से संबंधित गीत प्रस्तुत है-

ऊने दे कुटलैहड़े मेला पिपलु उषीए,
असां मिली जुली जाणा हो,
मेरी ए जिंदे असां मिली जुली जाणा हो
पिपलुए जाईं ने पींगा चूटणियां
ठंडा-ठंडा पानी ओथू पीणे जो मिलदा
मंदिरे च मथा असा मिली-जुली टेकना हो।
मेरीए जिंदे असां मिली जुली जाणा हो
उने दे कुटलैहड़े मेला पिपलु उषीए
असां मिली जुली जाणा हो।[18]

इन गीतों में पति अपनी पत्नी से कह रहा है कि ऊना के कुटलैहड़ क्षेत्र में पिपलु का मेला है। हम मिलजुल कर मेले में जाएंगे। गीत में झूला, झूलने ठंडा जल पीने व मंदिर में दर्शन करने के भावों की अभिव्यक्ति हुई है।

पंचभीष्म गीत

पंच भीष्म का मेला कार्तिक मास की पूर्णिमा को डेरा बाबा रुद्रानंद में आयोजित किया जाता है। इस मेले का आयोजन सन् 1864 से निरंतर प्रतिवर्ष होता है। इस मेले में श्रद्धालु यज्ञानुष्ठान में भाग लेते हैं। वे यहां स्थित अखंड धूने की पूजा करते हैं। डेरे के धार्मिक गुरु श्री (सुग्रीवानंद) जी के प्रवचन होते हैं। श्रद्धालु डेरे के संस्थापक बाबा रुद्रानंद जी के प्रति भी उत्साह श्रद्धा भावों को अभिव्यक्त करते हैं। इस अवसर पर धार्मिक गीतों का गायन रात-दिन चला रहता है। पंचभीष्म मेले से संबंधित एक गीत प्रस्तुत है :

"झुलदा रवीं वे झंडेया, बाबे दे दुआरे
बाबे दे दुआरे चल, मावां जे आईयां
मावां ने पुत्र मंगेया, बाबे दे दुआरे
झुलदा रहीं वे झंडेया, बाबे दे दुआरे
बाबे दे दुआरे चल, पैहणां जे आईयां
पैहणा ने पाई मंगेया, बाबे दे दुआरे
झुलदा रही वे झंडेया, बाबे दे दुआरे
दुखियां ने सुख मंगेया, बाबे दे दुआरे
झुलदा रहीं वे झंडेया, बाबे दे दुआरे
बाबे दे दुआरे संगता जे आईयां
संगता ने सुख मंगेया, बाबे दे दुआरे
झुलदा रहीं वे झंडेया बाबे दे दुआरे।"[20]

इस गीत से अभिप्राय है कि बाबा के आश्रम में झंडा लहराता रहे। बाबा के दरबार में माता-पुत्र की कामना से, बहने भाई प्राप्त करने के लिए एवं दुखी श्रद्धालु सुख प्राप्ति हेतु बाबा के दरबार में

बड़ी श्रद्धा व आस्था से आते हैं। गीत में बाबा की महिमा एवं आश्रम की सुंदरता का वर्णन मिलता है।

बाबा साहिब सिंह बेदी मेले के गीत

बाबा साहिब सिंह बेदी का मेला ऊना शहर में प्रतिवर्ष तेरह, चौदह एवं पंद्रह चैत्र को बड़ी धूम-धाम एवं हर्षोल्लास के साथ आयोजित किया जाता है। इस अवसर पर विभिन्न राज्यों के लोग यहां एकत्र होते हैं। यह मेला हिंदुओं एवं सखियों की समन्वय भावना का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस मेले के अंतिम दिन श्रद्धालु ढोल-नगाड़ों की धुन पर नाचते-गाते हुए पूरे शहर की परिक्रमा करते हैं। इस अवसर पर बाबा साहेब सिंह बेदी की महिमा का भी गुणगान किया जाता है :

"धन-धन बाबा साहिब सिंह जी
जो यम तों लैण छुड़ाये
धन-धन बाबा साहिब सिंह जी
तेरी महिमा कही न जाई।
धन-धन बाबा साहिब सिंह जी
जो दुख तो पार लगांये
धन-धन बाबा साहेब सिंह जी
जो फूलां दी बरसा लाए।"[21]

जमासणी मेले के गीत

माता जमासणी देवी से संबंधित मेले को जमासणी मेला या बाड़ी का मेला भी कहते हैं। ये मेला ज्येष्ठ मास की अष्टमी को बड़ी धूमधाम व श्रद्धा से मनाया जाता है। मां जमासणी को यहां मां दुर्गा के रूप में भी पूजा जाता है। इस अवसर पर गाया जाने वाला एक गीत प्रस्तुत है जिसमें माता जमासणी के प्रति अपार श्रद्धा के भाव अभिव्यक्त हुए हैं :-

"आमांगे आमांगे हर साल मइया जी आमांगे
नारियल भेंट छत्तर ले आइऐ
आरती दे बेले जोत जगाइए
झंडा चड़ाइए लाल, मइया तेरे आमांगे
मावां हुंदिया ठंडीयां छामा
पुत्र पुलण, नेईं पुलदीयां मावां
साहड़ा करी ख्याल माई तेरे आमांगे
बाल बच्चेयां बिच सुख बरसावीं
साडा करीं ख्याल माई तेरे आमांगे
बच्चे साडे पास करादे
धर्म, कर्म, शुभ कर्म सिखा दे
मिटे चुरासी जाल, भाई तेरी आमांगे
आमांगे आमांगे हर साल मइया जी आमांगे।"[22]

इस गीत में भक्त की माता जमासणी देवी जी के प्रति अटूट आस्था की अभिव्यक्ति हुई है। भक्त माता का आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु प्रतिवर्ष उसके दरबार में आने के भावों को व्यक्त कर रहा है। गीत में जमासणी देवी को भेंट स्वरूप नारियल एवं आरती के समय ज्योति प्रज्वलित करने की बात कही गई है। मां अपने बच्चों पर सदैव कृपा दृष्टि रखती है इसलिए भक्त मां के समक्ष पारिवारिक सुख-समृद्धि, संतुष्टि धर्म-कर्म में संलग्न रहने व मोक्ष प्राप्ति की इच्छा व्यक्त कर रहा है।

स्पष्टतया कहा जा सकता है कि ऊना क्षेत्र में प्रचलित मेलों से संबंधित गीतों में एक ओर जहां जनमानस के विविध देवी-देवताओं एवं धार्मिक गुरुओं के प्रति भक्ति भावना, आस्था, महिमा का गुणगान करने एवं श्रद्धामय भावों की अभिव्यक्ति हुई है, वहीं दूसरी ओर इन गीतों में जनमानस का सम्मिलित होने के हर्षोल्लास, धार्मिक स्थलों की यात्रा करने, मंदिर तथा आश्रमों की सुंदरता के सुंदर चित्र चित्रित हुए हैं। इन गीतों में जनमानस के रीति-रिवाजों, परंपराओं एवं सामूहिक उल्लास द्वारा जहां की लोक संस्कृति की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। अतः मेलों से संबंधित गीत सांस्कृतिक विशिष्टता को व्यक्त करते हैं।

सहायक आचार्य (हिंदी), अंतर्राष्ट्रीय दूरवर्ती शिक्षा एवं मुक्त अध्ययन केंद्र, हि. प्र विश्वविद्यालय, ज्ञानपथ, समरहिल, शिमला-171 005, मो. 0 94184 52096

संदर्भ

1. देवराज शर्मा, हिमाचल प्रदेश अतीत, वर्तमान एवं भविष्य, किरण बुक डिपो, बिलासपुर, 1975, पृ. 51
2, 3. बंशी राम शर्मा, हिमाचल लोक संस्कृति, आर्य प्रकाशन, दिल्ली, 1986, पृ. 70, 77
4. गौतम शर्मा व्यथित, हिमाचल के लोकगीत साहित्यिक विश्लेषण एवं मूल्यांकन, जयश्री प्रकाशन, दिल्ली, 1977, पृ. 51
5, 6. शांति देवी, गांव व डा. खाना डोहगी, जिला ऊना, तह. बंगाणा
7. कृष्णा कुमारी, गांव व डा. थाना कलां, जिला ऊना
8. नानकू देवी, गांव व डा. बलेटी, तह. बंगाणा, जिला ऊना
9. मीना देवी, मेन बाजार ऊना, तह. व जिला ऊना
10, 11. नीलम कुमारी, गांव व डा. डसाड़ा, तह अंब, जिला ऊना
12. कांता देवी, गां. व डा. बढूंही तह. अंब, जिला ऊना
13. कविता देवी, गां. व डा. भदौड़ी तह. हरोली, जिला ऊना
14. रानी देवी, नगर पंचायत, टाहलीवाल, तह. हरोली, जिला ऊना
15, 16, 17. विमला देवी, अरनियाला अपर, तह. व जिला ऊना
18, 19. मंजूबाला, गांव पिपलू, तह. बंगाणा, जिला ऊना
20, 21, 22. सीमा कुमारी, गांव व डा. बंगाणा, तह. बंगाणा, जिला ऊना

सावन की फुहारों में लोकगीतों की गूंज

◆ शमशेर सिंह राणा

मातृभूमि की सौंधी मिट्टी में लोकगीतों के स्वर प्राण फूंक देते हैं और धरा चैतन्य हो उठती है। लय का माधुर्य अंग-अंग में गुदगुदाने लगता है। लोकगीतों के हर शब्द से एक प्रतिबिंब उभरता है जो भावनाओं की गर्मी में ढलकर दिल की नर्मियों को छू जाता है। लोकगीतों का प्रचलन क्षेत्र भले ही सीमित होता है परन्तु स्थानीय लोगों के दैनिक जीवन में उनके महत्व को नकारा रही जा सकता है। लोकगीत लोक संस्कृति के उजले दपर्ण होते हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक और नैतिक परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न प्रदेशों के लोकगीतों में विभिन्नता पाई जाती है।

ऊना में पुरुषों द्वारा गाए जाने वाले लोकगीत अल्प संख्या में है। अधिकतर पुरुष बोलियां या किस्से इत्यादि ही गाते हैं। स्त्रियों द्वारा गाए जाने वाले लोकगीतों का एक समृद्ध भण्डार है। इसे भिन्न-भिन्न श्रेणियों में विभाजित किया हुआ है। लोकगीतों की प्रचलित श्रेणियां निम्नलिखित हैं :-

(क) रणजूझणें (पुत्र पैदा होने पर गाए जाने वाले हर्ष गीत) संभवतः पुराने समय में रण में विजय प्राप्त करने के बाद भी यही गीत गाए जाते होंगे या पुत्र को रण में जूझने वाला योद्धा समझ कर उसके जन्म पर ये वीर रस के हर्ष गीत गाए जाते होंगे जो अब भी प्रचलित हैं।

(ख) घोड़ियां (शादी पर गाए जाने वाले उल्लासप्रद गीत)।

(ग) सिठ्ठणियां (शादी में सम्बधियों को सप्रेम ताने-उलाहने आदी गाना)।

(घ) भेंट व भजन (धार्मिक अवसरों पर गाए जाने वाले गीत)।

(ड.) बोलियां (गिद्दा नृत्य में गाए जाने वाले गीत टप्पे)।

(च) सावन के गीत।

(छ) कोयल (बहिनों व बेटियों को शुभ अवसरों पर बुलाकर उनके स्वागत में गाए जाने वाले गीत)।

रोचक बात तो यह है कि यहां मरणोपरान्त शोक प्रकट करने के लिए स्त्रियां 'स्यापा' भी स्वरबद्ध, लयबद्ध व तालबद्ध करतीं हैं। यदि कोई औरत स्यापा बेसुरा कर दे या भूल जाए तो अन्य स्त्रियों से डांट-फटकार मिलती है। इससे सिद्ध होता है कि यहां लोक गीत हर क्षेत्र में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रस्तुत लेख में केवल सावन के लोकगीतों की ही चर्चा की जाएगी।

ऊना में सावन महीने को सर्वश्रेष्ठ महीना समझा जाता हैं। गुणात्मक लक्षणों के आधार पर यहां की बोली में सावन के कई नाम है। जैसे धर्मी महीना (कीट, पतंगे व अनेक वनस्पतियां प्राण पाती हैं।) लैरा महीना (नवीनता युक्त माह) पींघा आला महीना (झूले झूलने वाला महीना) व सौण महीना (सावन महीना)। यहां बहुत से धार्मिक प्रवृत्ति के लोग इस महीने में दाढ़ी व बाल इत्यादि नहीं कटवाते। बहुत से मांसाहारी लोग इस महीने मांस भक्षण नहीं करते हैं। स्त्रियां लोकगीतों के मधुर स्वरों से वातावरण सजीव कर देती हैं। उनके स्वरों में विरह, प्रणय, स्नेह, करुणा, पीड़ा व उल्लास के भाव हृदय को समुद्र की लहरों की तरह उठाते-गिरते रहते हैं। इन गीतों का अर्थ समझने वाला कौन ऐसा पाषाण हृदय होगा जो भावनाओं की बाढ़ में बह नहीं जाएगा।

सावन महीने के पहले ही दिन झूले डाल दिए जाते हैं। जिस घर में नई शादी हुई हो या पुत्र पैदा हुआ हो उस घर वालों को झूला अवश्य ही डलना पड़ता है।

हर बेहड़े (कुछ घरों का एक समूह) में कम से कम एक झूला तो पड़ता ही है। बेहड़े में मातम होने की अवस्था में उस वर्ष झूला नहीं डाला जाता। बेहड़े की लड़कियां या बहुएं सारा महीना झूला झूलती हैं। अधिकतर ननदें अपनी भाभियों को झूला झुलाती हैं और गाने में भी उनका साथ देती हैं। पर्दा प्रथा होने के कारण पुरुष झूलों की ओर प्रायः जाते ही नहीं है, इसलिए स्त्रियां मुक्त हृदय से झूलों पर लोकगीतों के माध्यम से मन के भावों को प्रकट करती हैं। गीतों का कार्यक्रम अधिकतर शाम को होता है। रात की नीरवता में झूलों की चरमराहट के साथ लोकगीतों के मोहक स्वर कुछ यूं कहते हैं :-

मैंहदी तां पादे माए सूकणे नी माए मेरिए
मैहदी दा रंग उदास सावण आएगा
बहुआं नू भेज्यां माए पेहिए नी माए मेरिए
धीयां नूं सद बुलाओ सावण आएगा।

ऐ मेरी मां! मैहंदी सूखने के लिए डाल दो क्योंकि सावन आ गया है। मैंहदी का रंग उदास है। ऐ मां, बहुओं को उनके मां-बाप के घर भेज दो और लड़कियों को सुसराल से बुला लाओ क्योंकि सावन आ गया है।

कीन्हों तां भेज्या माए नायड़ा नी माए मेरिए
कीन्हो तां भेज्या सरवण बीर सावण आएगा

बहुआं नूं भेज्या धीए नायड़ा नी धीए मेरिए
धीयां नूं भेज्या सरवण बीर सावण आएगा

ऐ मां नाई किसे छोड़ने के लिए भेजा और सरवण भाई किसे बुलाने कि लिए भेजा है? मां उत्तर देती है कि बेटी बहुओं को छोड़ने के लिए नाई भेजा है और पुत्रियों को बुलाने के लिए सरवण भेजा है।

ऊपर की पंक्तियों से समाज के रीति-रिवाजों का भी पता चलता है। लड़की अपनी मां के साथ विचार-विमर्श कर रही है। इससे पता चलता है कि घरों में लड़कियों की उपेक्षा नहीं होती है। बहुओं को उनके मायके भेजने के लिए वर के साथ नाई भी जाता है। बहिनों को बुलाने कि लिए भाई जाता है। इसी गाने में आगे चलकर बताया गया है कि मां मट्ठियां बनाती है, बहुओं के लिए लाल वस्त्र (जो सुहागनों के लिए यहां शुभ माने जाते हैं) लड़कियों के लिए सादे वस्त्र तैयार करती हैं और भाई को बहिन के घर उसे बुलाने के लिए भेज देती है। वह बहिन के घर जाता है, घोड़ा बाग में बांधता है और मां के दिए हुए उपहार बहिन के पास जा कर दे देता है।

एक अन्य लोकगीत में एक अन्य लड़की जो अपने ससुराल में है, सावन आ जाने पर कैसा अनुभव कर रही है, निम्न लिखित पंक्तियों से पता चलता हैः-

सावण आया नी सखियो सावण आया
इके न आया अम्मा जाया
आजा वे भाया चन्दा बैहजा दलीची--वे बैहजा दलीची
दे मांवां दे सनेहड़े।

ऐ सखियो सावन तो आ गया, पर मेरा मां का जाया (भाई) नहीं आया! (इतने में भाई आ जाता है) चन्द्रमा जैसा स्नेह बसाने वाले भाई। आ जाओ, दलान में बैठ जाओ और मुझे मेरी माई का संदेश सुनाओ। वह उसके बारी-बारी पूछने पर सब की कुशलता का संदेश सुनाता है। अंत में जब वह अपनी सखियों के बारे पूछती है तो वह यूं कहता है :-

सइंयां तां तेरियां कुड़ियां पींघां पवांइयां,
नीं लमियां लहासा पवांइयां,
उठदियां बैंहदियां सावण गांदियां।

ऐ बहिन! तेरी सखियों ने झूले डलवाए हैं, झूले में लम्बी-लम्बी डोरियां डलवाई हैं और उन पर उठती बैठती हुई सावन गाती हैं। गीत की यह पंक्तियां स्वयं ही इस बात का प्रमाण है कि ऊना में सावन का कितना महत्व है। एक लेख में पूरे गाने का भावनात्मक विश्लेषण करना तो संभव नहीं है अतः कुछ अन्य गीतों की मुख्य-मुख्य पंक्तियां लेकर उनमें छिपी संवेदना, उल्लास, विरह, विवशता व प्रणय को लेकर छूने का प्रयास किया जाएगा।

किधरे ते उगमी कारी बादली नीला बरस रैहा,
किधरे ते उगमया सारा नीर बे।

ये काली बदली कहां से उमड़ आई ? ये मेघ कहां आकर बरसने लगे? ये इतना नीर कहां से उमड़ आया? (इन्ही दो पंक्तियां में सावन का कितना सुन्दर वर्णन है) एक ननद अपनी भरजाई जिसका पति परदेश में है, उससे पूछती है :-

कौन तां भिज्जी दर खड़ी ओ नीला बरस रेहा,
कौलां तां भिज्या परदेश वे।

यह पति की प्रतीक्षा में दरवाजे पर खड़ी-खड़ी कौन भीग गई है और परदेश में अपनी प्रेयसी से मिलने की आकांक्षा में कौन भीग गया है? इतना पूछने के पश्चात ननद अपनी भरजाई के विरह व्यथित मन को बहलाने का प्रयत्न करती है।

इन गीतों में ताल का विधान नहीं है। कोई भी साज साथ नहीं बजाया जाता है। ये गीत भाव प्रधान है। कई गीतों में शब्द विन्यास इतना सुन्दर है कि भावनाओं को चरम सीमा तक उभार देता है और सावन के स्थान पर नैन ही बरसने लगते हैं। उदाहरण के रूप में :-

नीकी-नीकी कूमली जी बागीं-2 झूलदी,
झूल नी सुहाविए दखणें दी बहार वे,
तन्द बी नी टूट दा जी पूणी बी नी मूकदी,
सस बी नी अखदी जी पाअये नू जाणा बे।

नन्ही-नन्ही कोंपले बागों में झूल रही हैं। दक्षिण की मधुर बयार भी बह रही है। न तो धागा टूटता है और न ही रूई की पूणी कात कर समाप्त हो रही है। (कैसे विडंबना भरे क्षण हैं) न ही सास कहती है कि पानी भरने के लिए जाना है। इन पंक्तियों से पता चलता है कि नायिका सावन के मदभरे मौसम में कातने से इतनी दुःखी हो गई है कि वह कातने की बजाए पानी का घड़ा लाना अच्छा समझती है।

हत्थ मेरे रांवड़ी जी मुहण्डे मेरे तांगली,
नजरी नी आंवदा जी मापयां दा देस वे

इन पंक्तियों में अथाह वेदना भरी है। नायिका कह रही है कि उसके हाथ में दांती है और कंधे पर कांटे काट कर उठाने के लिए तांगली है। उसे अपने मायके का देश भी नजर नहीं आता है। नायिका जो मां-बाप से मिलने के लिए आतुर है लालसा भरी निगाहों से मायके के देश की ओर देखती है। इस गीत की अन्तिम पंक्तियां इस प्रकार है :-

वारले कण्डे मैं खड़ी जी पारले मेरी मांए खड़ी,
इक दिल आखदा नदिया मैं डुबी मरां,
दूजा चित आखदा नियाणी बरेस वे।

नदी के एक किनारे पर नायिका खड़ी है और दूसरे किनारे पर उसकी मां खड़ी है। वह मां को देख तो रही है पर मिलने में असमर्थ है। नायिका कहती है कि उसका एक मन तो करता है कि इसी नदी में डूब मरूं फिर वह सोचती है कि अभी तो उसकी उमर

बहुत छोटी है। कितनी पीड़ा इन पंक्तियों में है?

ऐसा गीत जब वातावरण को भारी कर देता है तो स्त्रियां दूसरा गीत प्रारंभ कर देती हैं।

ऐनी मेरी मां ढिग पर मैहंदी रंगली नी मेरी मां,
लाणे वाला दूर झमाका सामणे आया।

ऐ मेरी मां! ढलान पर खड़ी तेज रंगदार मैहंदी है पर जिसके लिए मैंने मैहंदी लगानी है वह तो दूर है। वह मेरी आंखों से ओझल है पर उसका चित्र एक क्षण के लिए मेरे सामने झिलमिला उठा है। सावन की रातों में इन गीतों के सुरीले स्वर श्रोता के हृदय को झकझोर देते हैं। श्रोता अनुभव करता है कि हर गीत उसकी अपनी ही कहानी है। दिल में एक हूक सी उठती है, खलिश सी जागती है, एक कसक सी चटकती है।

लिख-लिख भेजां तैनूं चिठियां पिया सावण,
सावण गया परदेस कद घरे आवणा।
लिख तां भेजा तैनूं चिट्ठियां पिया सावण,
घर तुहाड़ी माता दा मंदा हाल, कद घर आवणा।

इस गीत में नायिका नायक को ही सावन कहती है क्योंकि नायक के बिना सावन सावन नहीं, वास्तविक सावन तो नायक है। यहां नायिका कहती है कि प्रिय मैंने कितने ही पत्र लिख कर डाले कि घर में तुम्हारी माता जी बीमार है, आप कब घर आ रहे हैं? यहां नायिका ने माता की बीमारी का बहाना लेकर अपने पिया को सावन में परदेस से बुलाने का प्रयास किया है, वह अपने मन की बात छुपा गई है।

पिया का उत्तर आता है कि वह डाक्टर भेज देगा जो उसकी माता जी का इलाज कर देगा। ऐसा उत्तर पाकर नायिका निराश हो जाती है और वह हर बहाना करती है कि अपनी चाहत को छुपा कर ही वह अपने पिया को बुला ले परन्तु सब व्यर्थ होता है। अन्त में वह पत्र लिखती है कि वह स्वयं ही वियोग में तड़प रही है।

हरयां ते छुट गईयां कलमां नाजो गोरिए,
रोन्दे दा भिज्या रुमाल हुण साडा आलो होया।

जब पिया ने पढ़ा कि उसकी प्रेयसी ही वियोग में तड़पती हुई रोगी हो गई है तो उसके हाथों से कलम छूट गई, आंसुओं से रूमाल भीग गया और उसने कहा कि अब मुझे जाना ही है।

झूलों पर गाया जाने वाला सावन सुन कर लगता है कि अभी तक ग्रामों में लोक संस्कृति जीवित है। ऊना के लोकगीतों में सावन का अपना ही स्थान है। वर्षा की फुहार से भीगता हुआ सावन, फूलों की सुगंध से महकता हुआ सावन, विरह के क्षणों में दहकता हुआ सावन पक्षियों के कलरव से चहकता हुआ सावन लोकगीतों में मुखरित हो उठता है।

हिमप्रस्थ, सितम्बर, 1978 से साभार

ऊना का सरकाघाट संबंध

(पृष्ठ 20 से आगे) **मंडी** जिले का तहसील मुख्यालय सरकाघाट नगर और ऊना जिला में एक ऐतिहासिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रिश्ता है। ऊना उस समय पंजाब प्रांत का भाग था और सरकाघाट मंडी रियासत का हिस्सा था। दोनों क्षेत्र अपनी-अपनी विशेषताओं और कमियों के लिए प्रसिद्ध थे। आज जहां पर सरकाघाट नगर आबाद है, वहां पर करीब सौ साल पहले तक एक पानी का तालाब था। वर्तमान लघु सचिवालय के पीछे, नगर पंचायत के दफ्तर के सामने। वर्तमान सीनियर सेकेंडरी स्कूल के ऊपर वाले मैदान में जहां अब बॉस्केट बॉल का मैदान है, एक पुराना और विशालकाय बान का पेड़ था। इसके साथ श्मशान घाट था। सरकाघाट को बाबा नागा की भूमि भी कहा जाता है। लगभग पौने दो सौ साल पहले ऊना को संतोषगढ़ इलाके से एक राजपूत साधु ने इस तालाब के किनारे अपना धूना रमाया था। ये साधु नागा बाबा के नाम से प्रसिद्ध हैं, जहां पर इन बाबा ने तपस्या की थी, वहां पर अब एक शिव मंदिर है। यहां बड़ा पुराना पीपल का पेड़ था, जिसे हाल ही में मंदिर परिसर विस्तार के कारण काट दिया गया। नागा बाबा की समाधि आज भी सरकारी स्कूल के साथ पिछली तरफ को थाना रोड के किनारे है, जिसे छोटा सा स्वरूप दे दिया गया है। नागा बाबा, नागा साधुओं की परंपरा से संबद्ध है। उस समय इस स्थान के चारों ओर जंगल था। इस जंगल का नाम 'चदराकड़ी फॉरेस्ट' है। जब बाबा जी ने देह से मुक्ति प्राप्त की थी, तब उन्होंने भविष्यवाणी की थी कि ये स्थान इतना आबाद होगा कि यहां पर सरसों के दाने फेंकने के लिए भी जगह नहीं मिलेगी। बाबा जी की भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य सिद्ध हो रही है। कल का सर, घाट और वन, आज सरकाघाट बाजार बन गया है। इस नगर को आबाद करने में ऊना से व्यापार करने आए 'खत्री समुदाय' का विशेष योगदान है। 1920 के आसपास मंडी के राजा ने सरकाघाट में तहसील कार्यालय स्थापित किया था। ऊना के ये व्यापारी सन् 1930 के आस-पास व्यापार करने के लिए घोड़े, खच्चरों और ऊंटों पर होशियारपुर-ऊना से यहां पर सामान लाया करते थे। उस समय सड़कें तो थी नहीं, ऊना से लठियाणी, भोटा, जाहू होते सरकाघाट आते थे। सरकाघाट नगर और क्षेत्र की आर्थिक उन्नति में इस समुदाय की अहम भूमिका है। इसके पुरानी पीढ़ी के दो-तीन लोग ही बचे हैं। 87 वर्षीय अमृत कौशल का कहना कि वह 1947 में ऊना से मैट्रिक करने के बाद यहां आए थे।

बसंतपुर, सरकाघाट, मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 042, मो. 0 98163 17554

आलेख

संगीत व लोक नृत्य में जीवन राग

समय के प्रभाव से लोक संस्कृति कभी अछूती नहीं रही। आधुनिकता ने ऊना जनपद के लोक नाट्यों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है। भगत तथा रासलीला धीरे-धीरे काल के गाल में समाती जा रही है। शरद नवरात्र में रामलीला अभी भी खेली जाती है। रामलीला पर आधुनिकता ने भले ही अपने रंग चढ़ा लिए हों, परंतु इसके मूल भाव अब भी वैसे ही हैं। दहाजा तथा बौरा नचार जाति से संबंधित नृत्य हैं। जागरण या जगराता के दौरान अब ध्वनि प्रसारण सेवा के प्रयोग से ध्वनि प्रदूषण की समस्या बढ़ गई है। भाव का स्थान प्रदर्शन ने ग्रहण कर लिया है। परंतु भजन-कीर्तन के दौरान अब भी पुरुष तथा महिलाएं भावावेश में थिरक उठते हैं। शादियों एवं अन्य उत्सवों पर आयोजित होने वाले गिद्दा तथा भंगड़े पर डीजे भारी पड़ता जा रहा है। ऐसे मौकों पर लोग अपने भावों के सूक्ष्म और कलात्मक प्रदर्शन के स्थान पर अपनी सुविधानुसार प्रायः शरीर को हिलाना-झटकना आरंभ कर देते हैं। फलस्वरूप नैसर्गिक निगम के स्थान पर गिद्दा तथा भंगड़ा अब सिखाना या सीखना पड़ रहा है।

भगड़ा

ऊना जनपद में आज भी पंजाब की तरह भंगड़ा और गिद्दा लोकप्रिय है। लोगों को जब भी अपने काम से फुरसत मिलती है, तो वे अपनी भावनाओं का इजहार करने के लिए इस नृत्य का सहारा लेकर रोजमर्रा जिन्दगी की भागदौड़ के दौरान, जिन्दगी की विषमताओं को भुलाने के लिए मधुर एवं मखमली लोक गीतों के माध्यम से अपने भावों को प्रदर्शित करने के लिए सामूहिक नृत्य भंगड़ा का आयोजन करते हैं। विगत में भंगड़ा नृत्य गेहूं की बुआई के साथ आरंभ होता था, जब गांव के नौजवान किसी खुले स्थान पर आसमां से पसरी चांदनी में ढोलों की थाप पर थिरक उठते। नाचने वाले एक गोलदायरे में भंगड़ा की शुरुआत करते ताकि समुदाय में से जो भी नृत्य में शामिल होना चाहे, बिना किसी को बाधा पहुंचाए नृत्य में शामिल हो सके। इस वक्त तक अपने गले में रस्सी से लटके ढोल को बजाने वाला ढोलची, गोलदायरे के मध्य में दो छड़ियों से ढोल को बजाता हुआ बीच-बीच में ढोल को उठाते हुए नर्तकों को भाव-भंगिमाओं की पराकाष्ठा के लिए आमंत्रित करता। ढोल बजाने वाले के समीप दल के नेता खड़े होते, जिन्हें बाकियों की अपेक्षा उनकी नृत्य एवं गायन दक्षताओं के चलते आसानी से पहचाना जा सकता था। थोड़े अंतराल के बाद वह बाएं कान पर हथेली रख कर सामने आते ताकि दायें कान से बेहतर ग्राह्यता से बोली या ढोला, डाल सकें। यह एक प्रकार से मूल विषय से भिन्नता होती, जिसके बाद नृतक तेजी के साथ घूमते और हवा में रूमाल लहराते हुए 'बल्ले-बल्ले! ओए बल्ले-बल्ले!' कहते आगे बढ़ते। यह एक प्रकार से खुद को प्रेरणा होती और दूसरों को नृत्य छोड़ने का संकेत होता।

भंगड़ा परिधान चमकीले होते हैं तथा इनमें सिर पर मटमैले रंग के पटके, लाचा या उसी रंग की लुगी शामिल होती है। एक लम्बा कुर्ता और उस पर काली या नीली सितारों से टंकी जैकेट या बास्केट ग्राम्य सरलता से परिपूर्ण होती है, टखने पर धुंघरू बंधे होते हैं।

अतीत में भंगड़े का मौसम बैसाखी मेला के साथ उस समय समाप्त हो जाता था, जब सुनहरे रंग की पकी गेहूं लोगों के घर पहुंच जाती, जो साल भर के लिए पर्यात होती थी।

गिद्दा

भंगड़े में विद्यमान सरलता एवं शुद्धता का मिश्रण महिलाओं द्वारा प्रस्तुत किए जाने वाले गिद्दा में देखा जा सकता है। प्राचीन घेरा-नृत्य की परम्परा में उत्तरी मैदानों के लोगों ने अपने उत्कट भावों को प्रदर्शित करने के लिए संकेतों या प्रतीकों को जन्म दिया। चूंकि पंजाबी भाषा बेहद समृद्ध है और इसके शब्दों का प्रत्यक्ष स्रोत बाजार, खेत या संत-कवि रहे हैं, इसीलिए महिलाओं द्वारा गाए जाने वाले गीतों में मानवीय भावों का प्रत्यक्ष दर्शन होता है। गिद्दा नृत्य को अपने गांव में प्रवेश का आमंत्रण देती युवतियां एवं महिलाएं कहती हैं कि गिद्दा कहीं उनके गांव के बाहर से न चला जाए। इस प्रकार की बोलियां डालती हुई लड़कियां घेरे में प्रविष्ट हो जाती हैं। महिलाओं की सरल चेष्टाओं को सुनहरी बेल-बूटों वाली कुर्ती एवं घाघरा, मखमली दुपट्टा और भारी ग्राम्य आभूषण भव्यता प्रदान करते हैं। महिलाओं के तेज होते कदमों के मध्य दो-तीन महिलाओं के समूह घेरे से अलग होकर मध्य में आ जाते

हैं, तालियां बजाते हुए ये महिलाएं अपने पैरों पर घूम जाती हैं जबकि घेरे के मध्य खड़ी महिलाएं गिद्दे की ताल पर तालियां बजाती हैं।

भगत नृत्य इस लोक नृत्य को जीवित रूप में रखने का श्रेय इस क्षेत्र के अनुसूचित जनाति के लोगों को जाता है। इसमें भाग लेने वाले नर्तकों को भगतिये बोलते हैं। इसकी कथावस्तु कृष्णलीला से जुड़ी है। रात को मंचित होने वाले इस नृत्य का आरंभ आरती से होता है। आरती सम्पन्न होने के पश्चात् विशेष वेशभूषा पहनकर हाथ से डंडे बजाता हुआ एक नर्तक आता है और अपनी बात कथा द्वारा सुनाकर दर्शकों का मन रिझाता है। इस नर्तक को मनसुखा या भगत का रौलू कहा जाता है। साथ में कृष्ण और गोपियां अपनी लीला रचने लगते हैं। जाति और क्षेत्र के अनुसार भगत की प्रस्तुति में कुछ अन्तर आ जाता है। नर्तक कई रूपों में नाचते हुए इसे आर्कषक बनाने का प्रयल करते हैं। इस लोकनृत्य के अन्य रूप लोकनाट्य के रूप में प्रदर्शित करते हैं।

धुमाल यह एक प्रकार का धार्मिक नृत्य है, जिसे भराई समुदाय के लोगों द्वारा ढोल के साथ आयोजित किया जाता है। क्षेत्र में ढोल बजाने का कार्य भी भराई समुदाय के पुरुषों द्वारा ही किया जाता है। यह समुदाय 'पीर निगाह' का उपासक है और इस नृत्य को विशेष रूप से पीर निगाह को प्रसन्न करने के लिए ही आयोजित किया जाता है। पीर निगाह को प्रसन्न करने के लिए अग्नि पर सरसों का तेल डालकर धूप डाला जाता है और मिट्टी के दीपक में सरसों का तेल डालकर उसे जलाया जाता है। इसके पश्चात् ढोल बजता है और ढोल वाला सुख-समृद्धि के लिए अरदास करता है। दो या तीन पुरुष धुमाल आरंभ करते हैं, जिसे ढोल की थाप पर बारी-बारी एक टांग उठाकर किया जाता है। यह भी अनिवार्य नहीं है कि धुमाल केवल पीर निगाह को ही प्रसन्न करने के लिए किया जाए। गुग्गा, बाबा बालक नाथ, सिद्ध चानों आदि देवताओं की पूजा के लिए भी धुमाल आयोजित होता है। चरम पर पहुंचकर यह नृत्य अग्नि नृत्य में परिवर्तित हो जाता है। कई बार नर्तक जुनून में अपने शरीर पर लोहे की सांकले भी मारने लगते हैं। यह नृत्य केवल भराई समुदाय के पुरुषों द्वारा ही किया जाता है।

रामलीला

विगत में लगभग सभी बड़े गांवों में शरद नवरात्र के दौरान राम लीला का आयोजन किया जाता था। प्रथम नवरात्रि से विजय दशमी तक इसे स्थानीय कलाकारों द्वारा मंचित किया जाता था। राम लीला के आयोजन के साथ लोगों का धार्मिक विश्वास जुड़ा है और इसके लिए आज भी लोग खुलकर दान देते हैं। ऐसा माना जाता है कि जिस गांव में एक बार राम लीला मंचित हो जाए, वहां के लोगों को 12 साल तक इसका आयोजन करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त इसमें अभिनय करने वाले व्यक्ति को भी लगातार 12 साल तक अभिनय करना होता है अन्यथा किसी अनिष्ट की संभावना बनी रहती है।

स्थानीय राम लीला समितियों द्वारा पूर्व योजना के साथ बनाए गए मंच पर एक ओर बैठे कलाकार प्रतिदिन राम लीला का आगाज प्रभु भक्ति से करते हैं। समितियां प्रतिभागी कलाकारों के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था भी करती हैं। रामायण के पात्रों को जीवन्त करते कलाकार हारमोनियम मास्टर द्वारा गाई जाने वाली चौपाई को दोहराते उस पर अभिनय करते हैं। पहले राम लीला के मंचन में लोगों की भूमिका पूरी तरह समर्पित होती थी परन्तु अब इसका स्वरूप भी व्यावसायिक होता जा रहा है। जिला के कई हिस्सों में राम लीला खेली जाती है और रामलीला देखने के लिए लोग रात को अपने घरों से परिवार सहित जाते हैं।' राम लीला मैदान के नाम से उपमंडल मुख्यालय, अम्ब में स्थापित मैदान आज भी लोगों में राम लीला के आकर्षण को दर्शाता है। यह मैदान रामलीला के साथ अन्य समारोहों के आयोजन का भी गवाह बनता है।

परन्तु जनपद के अन्य हिस्सों में रामलीला पर अब आधुनिकता की मार स्पष्ट देखी जा सकती है। राम लीला में स्थानीय कलाकारों की अधिकता तथा नवीनता का अभाव होने के कारण इनका काम लोगों को अधिक पसन्द नहीं आता और इसे अधिक रुचिकर बनाने एवं दर्शकों की भीड़ जुटाने के लिए बाहर से संगीत मंडलियां बुलाई जाती हैं। परन्तु इन मंडलियों के कारण धार्मिकता का वातावरण गौण हो जाता है।

रास लीला इस नृत्य के नाम से ही स्पष्ट है कि इसका सम्बन्ध कृष्णलीला से है। कांगड़ा क्षेत्र से सम्बद्ध यह नृत्य वर्ष 1947 तक मिरासियों और गुसाईयों द्वारा रचाया जाता था। रास नृत्य आरती से आरंभ होता है। नर्तक कृष्ण के आगे प्रार्थना करते हैं। रास नृत्य करते हुए गीतों के भाव, रास के लोकनृत्य हाथ-पैर, मुंह या शरीर के अन्य अंगों को हिला-झुलाकर अभिव्यक्ति का प्रयत्न करते हैं। इसमें नर्तकों का नाचना, गाना, मटकना, नखरे करना ही आकर्षण है। मनसुखा नर्तक के आगे-पीछे नाचता और गाकर कृष्ण की तरह गोपियों को रिझाने का प्रयत्न करता है। रास में जोड़ी (तबला), सारंगी, हारमोनियम, छेणे, कांसिया आदि वाद्यों का प्रयोग होता था। अतीत में रास लीला में शामिल होने वाले कलाकार स्थानीय नहीं होते थे बल्कि पूर्णयता व्यावसायिक थे। शरद ऋतु के आरंभ होते ही रास लीला मंडलियां गांव-गांव जाकर रास लीला का मंचन करतीं और इन्हें कोई नियत धन नहीं देना पड़ता था। परन्तु आयोजक गांव के लोग मंडली के खान-पान तथा आवास की व्यवस्था करते थे। बिना किसी मंच या परदों के ये मंडलियां खुले में दरी बिछाकर अपनी प्रस्तुतियां देतीं। परन्तु स्थान ऐसा होता था, जहां लोग आसानी से बैठ सकें। वाद्य यंत्रों वाले अपने यंत्रों के साथ एक ओर बैठ जाते। वाद्य यंत्रों में हारमोनियम,

ढोलक, तबला आदि शामिल होते थे। मध्य में खाली छोड़े गए स्थान पर एक कुर्सी पर एक बच्चे को भगवान श्रीकृष्ण के बाल रूप में सजा कर बिठाया जाता। इस बच्चे को उठाकर लाने वाला व्यक्ति 'मनसुखा' कहलाता, जो विदूषक का कार्य भी करता। पुरुष ही गोपियों की भूमिका निभाते तथा भगवान कृष्ण की आरती के बाद रास लीला आरंभ होती, जिसमें भगवान श्रीकृष्ण गोपियों के साथ नृत्य करते। रासलीला के समाप्त होने के बाद कलाकार नृत्य पेश करते हुए धार्मिक, लोकगीत या अन्य गीत गाते। धीरे-धीरे यह रास लीला मुजरे का रूप ले लेती और दर्शक अपनी फरमाईश का गीत सुनते। परन्तु इसके लिए उन्हें मनसुखा को रुपए देने पड़ते। रास लीला के दौरान सीटी बजाने की रीत भी प्रचलित थी, जो दर्शक अपनी पसन्द के गीत सुनना चाहता, वह सीटी बजाकर नाचने वाले कलाकार को बुलाकर रुपया देता। अतीत में हर फरमाईश के लिए दो रुपए दिए जाते थे। नकलों के दौरान तो पूरी मंडली गाते हुए तालियां बजाती थी और शोर अधिक होता था, परन्तु रास में केवल नृत्य प्रस्तुत करने वाले लड़के ही गाते थे।

रास तथा गानों के बाद नाटक आरंभ होता था, जिनकी अदायगी गीतों के माध्यम से होती थी। ये सभी नाटक पौराणिक कथाओं पर आधारित होते थे, जिनमें सत्यवान-सावित्री, राजा हरिश्चन्द्र आदि शामिल थे। मंडली के कलाकारों के पेशेवर होने के कारण इनका अभिनय पसन्द किया जाता था। परन्तु अब रास लीला में लोगों की रुचि बेहद कम होने के कारण ये मंडलियां अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रही हैं।

गुगाहल या गुग्गा प्राचीन समय में कभी कांगड़ा क्षेत्र का हिस्सा रहे ऊना में आज भी गुग्गा पूजा प्रचलित है। नृत्य का भी सीधा सम्बन्ध गुग्गा पूजा से है, जिसमें प्रायः जोगी लोग ही भाग लेते हैं। जोगी रंग-बिरंगी डोरियां लटकाकर, हाथ-पैरों में राख मलकर, हाथ में छतरी और लोहे की सोठी (छड़ी) लेकर गंभीर मुद्रा बनाते हुए दबातरे तथा ढोल बजाते हुए, मोर पंख के मुट्ठे झुला-झुलाकर नाचते हैं। ढोल की ताल के जोर पकड़ते ही नृत्य में तेजी आती जाती है। ऊना जनपद में गुग्गा को देवता के रूप में माना जाता है और व्याप्त जन विश्वास के अनुसार गुग्गा पशु धन की भलाई करता है एवं सांपों से उनकी रक्षा करता है। लगभग हर गांव में गुग्गा का स्थान बना होता है। उस स्थान की सेवा करने वाले को गुग्गा का चेला कहा जाता है। लोक धारणा के अनुसार गुग्गा चेले की आत्मा में प्रवेश करके उसके मुख से समस्याओं का समाधान सुझाता है। जब गुग्गा की आत्मा उसमें प्रवेश करती है तो चेला खेलने लगता है और प्रश्नों के उत्तर देता है। रक्षा बन्धन से जन्माष्टमी तक गुग्गा सप्ताह मनाया जाता है। रक्षा बन्धन के दिन चेला भोज देता है, जिसे गुग्गा का श्राद्ध कहा जाता है। उस दिन रात को डमरू की ताल पर गुग्गा गाथा गाई जाती है। दूसरे दिन गुग्गा का चेला पत्तों का छत्र (बड़ी छतरी) लेकर गुग्गा कार के लिए चल पड़ता है और उसके हाथ में एक लोटा और त्रिशूल होता है। उसके साथ गुग्गा गाथा गाने वाली एक मण्डली तथा एक व्यक्ति कार लेने वाला होता है। वे गांव के प्रत्येक आंगन तथा घर पर जाते हैं। इस मण्डली में चार से अधिक सदस्य होते हैं और उनके पास चार डमरू होते हैं। इनमें से आधे एक ओर और आधे दूसरी ओर बंट जाते हैं। यह मण्डली किसी के आंगन या घर पहुंचने पर डमरू बजाती है, जिससे घर वालों को उनके आगमन की सूचना मिल जाती है और वे गुग्गा गाथा सुनने के लिए तैयार हो जाते हैं। गाथा को दल का एक भाग पहले गाता है और दूसरा बाद में दोहराता है। सभी डमरू एक साथ बजाए जाते हैं और इस संगीतमय वातावरण में श्रोता भी गाथा दल के साथ झूमने पर मजबूर हो जाते हैं। चेला किसी भी समुदाय से सम्बद्ध हो सकता है। परन्तु कलाकार दलित जातियों के ही होते हैं। जातीय समुदाय के अनुसार इस संगीत के स्वर भी भिन्न होते हैं। गुग्गा गाथा का स्वर अपना ही होता है और यह स्वर किसी अन्य स्वर से मेल नहीं खाता। गुग्गा सप्ताह में ये लोग सब घरों में जाते हैं। जिन लोगों ने मन्नतें मांगी होती हैं वे अपनी सुविधा अनुसार गुग्गा गाथा का कार्यक्रम आयोजित करवाते हैं। इस कार्यक्रम को दिहाड़ी कहा जाता है। यह कार्यक्रम सारी रात चलता है और मण्डली का मुखिया साथ-साथ व्याख्या भी करता जाता है, जिससे लोगों को गाथा के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त होती है। इस दौरान चेले को भार चढ़ता है अर्थात् उसमें गुग्गा की आत्मा प्रवेश करती है। ये मण्डलियां पुत्र जन्म तथा पुत्र विवाह वाले घरों में बधाई गाती हैं। पुत्र जन्म वाले घर में गुग्गा गाथा का वह भाग गाया जाता है, जिसमें गुग्गा के जन्म का वर्णन है तथा उसके पिता राजा जयमल को लोग बधाई देते हैं। पुत्र विवाह वाले घरों में गुग्गा का विवाह गाया जाता है। इस बधाई के लिए उन घरों से विशेष अन्न तथा धन लिया जाता है। प्राप्त एवं एकत्रित अन्न तथा धन को मण्डली के सदस्य आपस में बांट लेते हैं। गुग्गा नवमीं वाले दिन उस अन्न से गुग्गा का रोट बनाया जाता है तथा पड़ोसियों में बांटा जाता है।

गुग्गा के चेले के पास जो लोटा होता है, उसमें ज्योति के लिए मांगा गया घी डाला जाता है। गुग्गा का चेला नवमीं वाले दिन भोज का आयोजन करता है और गुग्गा के स्थान पर छिंज (कुश्ती) भी करवाई जाती है। इन कार्यक्रमों में सारे स्थानीय लोग शिरकत करते हैं।

ढोलणू

जनपद में हिमाचल प्रदेश के अन्य इलाकों की तरह विक्रमी संवत् वर्ष के प्रथम मास चैत्र का प्रथम वार का नाम भंजड़ा समुदाय के लोगों के मुख से सुना जाना शुभ माना जाता है। यह समुदाय समाज के विभिन्न वर्गों को मास का नाम सुनाने के लिए संगीत मंडलियां बनाता है, जिन्हें ढोलणु कहा जाता है। इनका

ढोलणु नाम शायद इनके पास छोटा ढोल तथा उसे डगों (छड़ी) के साथ बजाए जाने के कारण रखा गया है। इनके पास एक छोटा वाद्य यंत्र भी होता है। मंडली प्रायः पति-पत्नी की होती है और ढोलणु सुनाने पर उन्हें सुनने वाले परिवार या व्यक्ति अनाज, पैसे, कपड़े तथा गुड़ भेंट करते हैं।

नकलां

अतीत में जनपद में नकलां लोगों के मनोरंजन का प्रमुख साधन थी। नौटंकी के समान नकलां विधा को एक नाटक मण्डली अभिनीत करती है। इसमें स्त्री की भूमिका भी पुरूष निभाते हैं। किसी भी लोकगाथा या लोककथा को नाटकीय रूप में प्रस्तुत किया जाता है। संवाद भी संगीत में ही होते हैं। इन नाटकों की कहानियां अधिकतर प्रचलित प्रेम कहानियां होती हैं। उदाहरण के लिए हीर-रांझा, सोहणी-महिवाल, मल्लकी-कीमा, लैला-मजनू, दुल्ला-नूरां, मिर्जा-साहिबा आदि। कुछ धार्मिक कहानियों को भी निभाया जाता है, जिनमें पूर्ण भत, श्रवण कुमार, राजा भतृहरि आदि शामिल हैं।

मण्डली में लगभग एक दर्जन कलाकार होते हैं। ये लोग मंच एवं पर्दों का प्रयोग नहीं करते। एक खुले स्थान पर दरी बिछाकर अपने-अपने वाद्य यंत्रों, जिनमें तबला, हारमोनियम, चिमटा आदि शामिल हैं, के साथ बैठ जाते हैं। श्रृंगार के पश्चात कलाकार अपनी निर्धारित भूमिका के अनुसार औपचारिक रूप से तमाशा आरम्भ करने के लिए भगवान से प्रार्थना करते हैं। प्रार्थना गाकर की जाती है जिसमें सभी सदस्य भाग लेते हैं। इसके पश्चात् नारी वेश में कलाकार नृत्य करते हुए गाना गाते हैं। मण्डली के सभी सदस्य ताली बजाते हुए उनके साथ शामिल होते हैं। ताल पर अधिक बल दिया जाता है। साज भी जोर से बजाए जाते हैं। इन तमाम गानों में लोकगीत या फिल्मी गीत शामिल होते हैं। श्रोता इन गानों पर प्रसन्न होकर कलाकारों को बख्शिश देते हैं। बख्शिश प्राप्त करने पर कलाकार बड़ी नजाकत एवं नफासत के साथ रुपये देने वाले का नाम घोषित करता है और उसे शुभ कामनाएं देता है। इस सारी क्रिया को 'बेल' कहा जाता है। इसके पश्चात दो विदूषक अपनी हास्य प्रस्तुतियों से श्रोताओं को आन्नदित करते हैं। दोनों के पास चमड़े की एक चपेड़ होती है और एक दूसरे से प्रश्न करते हुए उलटे-सीधे उत्तर देते हैं। हर ऐसे उत्तर पर पहला व्यक्ति दूसरे को चपेड़ मारता है और श्रोताओं को हंसाता है। इसके बाद वास्तविक नाटक आरम्भ होता है। पात्र गीतों के माध्यम से संवाद करते हैं। बाद में सभी कलाकार मिलकर गाते हैं। विदूषक सारे तमाशे में नायक के साथ बना रहता है।

यह मण्डलियां लोगों के निमंत्रण पर इन नाटकों का मंचन करती हैं। इनमें अधिकतर चमार समुदाय के लोग शामिल होते हैं। विगत में पुत्र जन्म, पुत्र विवाह एवं अन्य खुशी के मौकों पर इन तमाशों का आयोजन किया जाता था। परन्तु अब यह दहाजों तक ही सीमित होकर रह गया है। इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि मनोरंजन के अन्य साधन विकसित होने से यह कला दम तोड़ती जा रही है। कुछ स्थानीय मण्डलियां समाप्त हो गई हैं और कुछ ने अलग व्यवसाय आरम्भ कर दिया है।

नकलों की मण्डलियों में अधिकतर दलित समुदाय के लोग शामिल होते हैं।

कीर्तन

जनपद की महिलाओं में माजी में लोकप्रिय कीर्तन का आर्कषण आज भी बरकरार है। कोई भी खुशी का मौका मिलते ही महिलाएं कीर्तन के आयोजन से नहीं चूकती हैं और इसमें वर्ग विशेष का कोई भेद नहीं है। इसके लिए आयोजक परिवार द्वारा पड़ोसी महिलाओं को बाकायदा निमंत्रण दिया जाता है। जन्मदिन के अलावा पूर्णमासी, किसी महापुरुष के प्रकटोत्सव, बच्चों के पास होने या उनकी किसी अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धि, किसी मन्नत के पूरा होने, सगाई या शादी के पका होने, मासिक बैठकों आदि के अवसरों पर कीर्तन का आयोजन किया जाता है। कीर्तन महिलाओं को खुशी बांटने के अलावा ऐसा मंच भी प्रदान करता है, जिसमें महिलाएं एक-दूसरे का कुशलक्षेम पूछने के अतिरिक्त तमाम जानकारियां साझा करती हैं। कुछ स्थानों पर गठित महिला मंडल भी विशेष मौकों पर कीर्तन का आयोजन करते हैं।

महिलाएं ढोलक तथा चिमटे की सहायता से कीर्तन का आरंभ करती हैं। प्रायः भगवान श्रीकृष्ण के गीतों से आरंभ होने वाले कीर्तनों में सभी प्रकार के गीत गाए जाते हैं। महिलाएं इसमें रमने के बाद नाचना भी आरंभ कर देती हैं। सभी सदस्यों के घरों में बारी-बारी से कीर्तन का आयोजन होता है। आयोजक परिवार अपने घर में प्रसाद के अतिरिक्त प्रतिभागी महिलाओं के लिए चाय तथा अल्पाहार की व्यववस्था करता है। कई महिला मंडलों द्वारा निश्चित रूपरेखा के अनुसार आयोजक परिवार महिला मंडल को निर्धारित राशि भी देता है और प्रतिभागी महिलाएं भी दान देती हैं। प्रतिभागी महिलाओं द्वारा दिए जाने वाला दान 'बेल' के रूप में होता है। कीर्तन करने वाली महिलाएं गीतों में ही 'बेल' की घोषणा तथा धन्यवाद करती हैं। इस प्रकार एकत्रित धन को महिला मंडल के उत्थान के लिए व्यय किया जाता है। इस धन से महिला मंडल अपने लिए बर्तन, दरियां, शामियाने, टब, बाल्टियां आदि खरीदते हैं।

जगराता

भवानी माता के नाम पर किया जाने वाला जागरण अर्थात जगराता आज भी लोक कला का एक महत्वपूर्ण आयोजन है। स्थानीय लोगों द्वारा मंगलवार को भवानी माता का दिन माना जाता है और मंगलवार की रात को जगराते का आयोजन शुभ माना जाता है। अतीत में काफी संख्या में जगराता मंडलियां हुआ करती थीं, जिनके गठन का उद्देश्य धार्मिक तथा व्यावसायिक दोनों

था। परन्तु समय के साथ गठित होने वाली मंडलियों का उद्देश्य केवल धनोपार्जन होता चला गया। जगराते वाले दिन आयोजक ज्योति तथा धूप सहित माता की पूजा-अर्चना करते हुए उनका आह्वान करते हैं।

इसके बाद बुलाई गई जगराता मंडली के कलाकार विभिन्न वाद्य यंत्रों, जिनमें अब हारमोनियम, तबला, चिमटे, छेणे तथा कासिए के साथ आधुनिक साज सिंथेसाईजर भी शामिल हो गया है, की संगत में माता की भेंटे गाते हैं। गाने वालों के संख्या में अधिक होने के कारण शोर भी ज्यादा होता है। इसमें रोचकता का अभाव होता है और श्रोताओं में अधिकतर आमंत्रित गण ही शामिल होते हैं। मंडलियां अपने कार्यक्रमों को रोचक बनाने के लिए भेटों के पश्चात् कोई पौराणिक या ऐतिहासिक कहानियां सुनाती हैं, जिन्हें गीतों के माध्यम से रोचक बनाया जाता है। माता की आरती के उपरान्त मंडली का मुखिया खड़ा होकर गाता है। किसी धार्मिक कथा को सुनाते हुए वह उस कहानी को अपने अंदाज में अभिनीत करता है। परन्तु यह मंडलियां अपने गीतों को लोकप्रिय बनाने के लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं करतीं। ये सभी गीत प्रायः पहले से ही लोकप्रिय किसी लोकगीत या वर्तमान में प्रचलित किसी फिल्मी गीत के बोलों और तर्ज पर आधारित होते हैं, जिन्हें स्पष्ट शब्दों में 'पैरोडी' कहा जा सकता है। कई मर्तबा लोग प्रसन्न होकर मुखिया को रुपये भेंट करते हैं और वह गीतों के मध्य में ही भेंटकर्ता के नाम या उसकी भावना की घोषणा करता है। विगत में आयोजकों द्वारा मंडलियों को कोई नियत राशि नहीं दी जाती थी और जगराते के दौरान प्राप्त होने वाले धन को पर्यात समझा जाता था। परन्तु व्यावसायिकता के हावी होने के बाद अब जगराता पार्टियां पूर्व निश्चित राशि के आधार पर ही अपनी प्रस्तुतियां देती हैं।

दहाजा

डॉ. गौतम शर्मा 'व्यथित' की पुस्तक 'हिमाचली ग्रामीण रंगमंच की यात्रा' में उपलब्ध विवरण के अनुसार नष्ट या नृत धातु से नृत्य और उसी से नाच-नाचना फिर नचार की रूढ़ार्थ व्युत्पत्ति हुई है। नचार एक अलग तरह का समाज रहा है। नाचना, गाना, स्वांग तथा लोक संगीत उनका विरसा रहा है। यह समाज बौरा तथा दहाजा नृत्य प्रस्तुत करता है। डमरू, सारंगी, हारमोनियम, ढोलकी तथा तबला उनके गाने के साज हैं। दल में बंजतरी अलग होते हैं जो आवश्यकतानुसार नाचगाने में भी शामिल हो जाते हैं तथा स्वांगी भी बन जाते हैं। लोक में दहाजा प्रस्तुति उनका मुख्य व्यवसाय रहा है। इस नृत्य का संबध सिद्ध चानो या सिद्ध-चरणों की प्रतिष्ठा से है जो पशुधन का प्रतीक है। इसका स्वरूप लगभग बिलासपुर, हमीरपुर और मंडी में प्रस्तुत किए जाने वाले नृत्य जैसा ही है। दहाजा एक अनुष्ठानिक प्रक्रिया है, जिसका संबन्ध अशरीरी रोग निवारण के लिए आयोजित होने वाली झाड़-फूंक और चेला-जोगी के तंत्र-मंत्र से है। दहाजा के बाद कृष्णलीला रचाने की परम्परा है, जिसमें पांच गोपियां तथा कृष्ण पात्र होते हैं और रास के कई रूप दिखाए जाते हैं। जब कोई व्यक्ति किसी असाध्य रोग से ग्रस्त हो जाता है अथवा उसके घर में कुछ अनिष्ट घटने लगता है तो उसके घर का मुखिया सिद्ध चानो की शरण में जाता है। पीड़ित व्यक्ति के घर का मुखिया धाजा या दहाजा करने वालों के पास जाकर अपने घर की स्थिति बताता है। दहाजा दल का प्रमुख दाने गिराकर मंगलोच्चारण के बाद पीड़ित व्यक्ति के घर में दहाजा की प्रस्तुति के लिए दिन निश्चित करता है। मुर्गे या मेढ़े की बलि के बाद बलि के सिर और बाजू को देवस्थल के पास गड्ढे में दबाया जाता है। हालांकि अदालती निर्देशों के बाद अब पशुबलि पर प्रतिबंध है। धाजा का भगत, जिसे निचार या नचार कहा जाता है, गांव के चारों ओर कार अर्थात सुरक्षा घेरा बनाता है। लोकमान्यताओं के अनुसार ऐसा करने से अनिष्टकारी शक्तियों का उस क्षेत्र में प्रवेश वर्जित हो जाता है। संध्या से पूर्व नौबतियों के माध्यम से महाबली की महिमा का गुणगान होता है। इसमें दसवीं बैती ख्वाजापीर की होती है। इस दौरान आयोजक आमंत्रित रिश्तेदारों तथा पड़ोसियों को भोजन करवाता है। आंगन के मध्य लकड़ियों का ढेर आग या घियाणा जलाया जाता है। सरसों के तेल की मशाल जलाना भी अनिवार्य होता है।

लोक में दहाजा प्रस्तुति उनका मुख्य व्यवसाय रहा है। इस नृत्य का संबध सिद्ध चानो या सिद्ध-चरणों की प्रतिष्ठा से है जो पशुधन का प्रतीक है। इसका स्वरूप लगभग बिलासपुर, हमीरपुर और मंडी में प्रस्तुत किए जाने वाले नृत्य जैसा ही है। दहाजा एक अनुष्ठानिक प्रक्रिया है,

आरंभ गणपति वन्दना- 'गणपत गणेश मनायो मेरी देवा! गणपत गणेश मनायो' के साथ होता है। मंचीय विधान के दौरान पहले तीन कलाकार, जिनमें एक पुरुष तथा दो स्त्रियां (पुरुष ही स्त्री वेश में) मंच पर आते हैं। 'जय जगदीश हरे' की आरती का गायन होता है। धाजा वाले उसे चन्द्रावली नाम देते हैं। पुरुष कृष्ण की भूमिका में होता है। स्त्री पात्रों में से एक चन्द्रावली का चरित्र निभाता है। थोड़ी ही देर में ढोलकी, हारमोनियम, डमरू, तबला, नाद, ढोल, छेणा और कन्सियों के संगीत से मंच गमकने लगता है। ढोलकी और नाद को बड़ा पवित्र माना जाता है, इसीलिए दहाजा के इन यंत्रों को प्रारंभिक वाद्य मानकर धरती पर नहीं रखा जाता। बारू भगत को दहाजा की प्रथम सखी मानकर गाए जाने वाले

गीतों में उसका नाम शामिल होता है। दहाजा के आयोजन से बीमारी का उपचार किया जाता है। मीठी चूरी और रोट का प्रसाद बांटा जाता है। इसके बाद स्वांग रचाए जाते हैं।

दहाजा के प्रथम स्वांग में कृष्ण-गोपियों का चन्द्रौली (चन्द्रावली) शामिल होता है। एक पुरूष कृष्ण के वेश में बांसुरी लिए तथा दो पुरुष गोपियों के वेश में आते हैं। उसी बीच अपनी पूरी सज-धज के साथ नारद का मंच पर प्रवेश होता है। सखियों और नारद ने धुंघरू पहने होते हैं। इन सभी पात्रों के नृत्य, पैर पटकने तथा कमर मटकने का अंदाज भी अपना होता है। सखियों का गीत मंच पर गूंजता है 'श्याम जी! तेरी पनिया हम से भरी न जाए' या 'मुरली बजांदा श्यामा जमना दे कण्ढे-कण्ढे'। नाट्य के दौरान सखियों का हस्त चालन, चेहरे के हाव-भाव और पैर पटकने का अन्दाज काबिलेगौर होता है। दूसरा स्वांग बांवरे का होता है, जो अंगारों पर चलता है और आग खाता है। दो पात्रों के मध्य होने वाला हास-परिहास माहौल को जीवन्त बनाए रखता है। लोकगायन भी चलता है जो सरसता तथा रोचकता से भरपूर होता है। नटणी के खेल में जादुई खेल तथा करतब दिखाना प्रमुख रहता है। इसके बाद डाऊ चेला का स्वां, गद्दी-गद्दण का स्वांग, पहाड़िया देव का स्वांग तथा नारसिंह बाजिए का स्वांग भी होता है। हनुमान और भैरों के स्वांग देखते ही बनते हैं। घोड़े तथा बाबा हस्तबलि के स्वांग खर्चीले होने की वजह से कम दिखाए जाते हैं। दहाजा की समाप्ति पर आमंत्रित देवताओं की घर विदाई होती है।

बौरा

दहाजा में कृष्णलीला के बाद लाल फकीर तथा अग्निनृत्य बौरा का आयोजन होता है। यह नाट्य रूप में भारत भर में अद्वितीय है, जिसकी परम्परा नचारों के पास सुरक्षित है। बौरा नृत्य में आग खाने, आग उगलने तथा आग पर नृत्य के दौरान कई करतब दिखाए जाते हैं।

बौरा की मूल कथावस्तु का आधार सिद्धचानी है। सिद्धचानो का वास्तविक नाम चाणुर अंध्र था। क्षत्रिय वंशी चाणुर कंस के अखाड़े का सबसे बली पहलवान था। बल्ली दोनो, दहंम्रावली, चंडुल दानो और चाणुर चार भाई थे। चाणुर कंस के अखाड़े में श्रीकृष्ण से हार गया, जिसका प्रमुख कारण श्रीकृष्ण द्वारा उसकी पत्नी से चाणूर की मृत्यु का राज जान लेना था। श्रीकृष्ण से हारकर चाणूर उनका परमभक्त बन गया। दूसरे आख्यान के अनुसार बौरा द्वापर युग में एक महान तांत्रिक ब्राहमण कुमार था। जब एक बार चानो भंयकर शारीरिक रोग से पीड़ित हो गया तो उसने अपने उपचार के लिए नारद को श्रीकृष्ण के पास जाने की प्रार्थना की। श्रीकृष्ण ने नारद को उसके इलाज के लिए के पास जाने को कहा क्योंकि उसका उपचार तंत्र विद्या से संभव था।

जब नारद वापिस आए तो उन्हें पता चला कि बौरा की मृत्यु हो गई है। नारद द्वारा सारी बात बताए जाने पर श्रीकृष्ण स्वयं बौरा के घर पहुंचे। तब तक लोगों ने उसका अन्तिम संस्कार कर दिया था। श्रीकृष्ण ने रात के अंधेरे में बौरा को उसकी चिता या सल से बाहर निकाल लिया।

बौरा उस समय अग्नि की भांति जल रहा था। उसके मुंह से आग निकल रही थी। भयंकर आकृति लिए बौरा नग्न ही भगवान के सामने खड़ा हो गया और आदेश की प्रतीक्षा करने लगा। श्रीकृष्ण ने बौरा को चानो का उपचार करने का निर्देश दिया। चानो का उपचार करने के बाद उसने भगवान से अपनी आत्मा की शांति की प्रार्थना की। श्रीकृष्ण ने उसे बताया कि उसे चानो ही शान्ति दे सकते हैं। उसने चान्नो के समक्ष उपस्थित होकर शान्ति की प्रार्थना की। शान्ति प्रदान करने के बाद उन्होंने बौरा को अपने दल का मुखिया घोषित कर दिया।

ऐसे अनुष्ठानिक अवसर पर पहले 'गढ़े' का पूजन होता है, जो बौरा का प्रतीक है। बाद में कुन्न की पूजा सम्पन्न होती है। बौरा नाट्य में गुरु, सहायक गुरु बौरा, नारद, छह वादक तथा प्रवक्ता के रूप में मुखिया सहित ग्यारह पात्र होते हैं। नाट्य में सर्वप्रथम गुरु द्वारा स्तुति की जाती है, जिसके बाद बौरा मंच पर प्रवेश करता है और निरन्तर करतब दिखाता है। शरीर पर कालिख तथा लाल निशानों के माध्यम से आग बौरा को अग्नि की भांति जलता हुआ दिखाया जाता है। माथे पर लाल टीका लगाए, भंयकर आकृति के साथ सिर पर आग जलाए, अंगोछा पहने नग्न बौरा नारद के साथ अभिनय पूर्ण नृत्य की वेशभूषा में मंच पर पहुंचता है। गीत-संगीत के प्रारंभ होते ही बौरा का नृत्य आरंभ होता है- कभी अग्नि भक्षण करते हुए तो कभी आग उगलते हुए। गीत की गति को आत्मसात करते हुए बौरा अपनी गति भी बढ़ाता जाता है :-

'बौरा रे बौरा साईजदा, बौरा रे बौरा साईदा,
नच मेरे बौरा अग्नि के संग,
लाला के लाल आए, लाला के लाल।
आयां बो बौरया! साईंदे बौरया!!
हाक्खी तेरियां कज्जल, मत्थें बिंदला लाल।'

कुछ तांत्रिक उपचार की साधना गीतियां भी सुनाई जाती हैं
'ढाई घड़ी लाल पखीरे दा-बरम-बौड़ना,
ढाई घड़ी बौरा दा, बरम बौड़ना।
कबूतरां दा जोड़ा तेरे नाल चलेगा
तू डेरे दा सरदार बौरा! तू डेरे दा सरदार।।

(जिला प्रशासन, ऊना द्वारा प्रकाशित
'ऊना जनपद ' एक परिचय' से साभार)

संस्कृति

जनमानस की थाती ख्वाणें एवं पोलणियां

◆ डॉ. बाल कृष्ण सोनी

वैदिक काल से ही भारत में लोक संस्कृति की धारा प्रवाहित रही है। लोक संस्कृति से हमारा तात्पर्य लोक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से है। लोक संस्कृति लोक मानस की परंपरागत थाती है। बहुत से विद्वान इसे केवल अनपढ़, अशिक्षित एवं गंवार लोगों की थाती मानते थे परंतु वे ये भूल जाते थे कि पढ़े लिखों, शिक्षित लोगों की ऊंची कही जाने वाली संस्कृति भी लोक संस्कृति का ही विकसित रूप है।

लोक संस्कृति मूलतः पढ़े लिखे लोगों की नहीं अपितु कढ़े हुए लोगों की थाती है। यह जनसाधारण की वह संस्कृति है जो अपनी प्रेरणा लोक से प्राप्त करती है, जिसकी उत्स-भूमि जनता ही है।

अतः यह कहा जा सकता है कि लोक संस्कृति सामाजिक जीवन के सुचारू संचालन की आधारपीठ है। लोक संस्कृति के अंतर्गत लोक मानस में व्याप्त रीति-रिवाज, अचार-विचार, त्योहार-मेले, धर्म-कर्म, कला कौशल, कहावतें, लोकोक्तियां, पोलणियां (बुझारतें) लोक गीतों आदि का विशेष स्थान रहता है।

तो प्रस्तुत लेख में ऊना संस्कृति के अंतर्गत हमीरपुरी बिलासपुरी व कांगड़ी प्रभावित पहाड़ी बोली को ही लिया जा रहा है जो कुटलैहड़ रियासत (प्राचीन) में अधिकतर बोली जाती है।

इस लेख में ऊना जिले की लोक संस्कृति के अंतर्गत केवल दो ही विधाओं ख्वाणें और पोलणियों को लिया जा रहा है।

ऊना जिले में पहाड़ी बोली में लोकोक्तियों को ख्वाणें कहा जाता है। पहाड़ी बोली में ख्वाणें का अर्थ खिलाना अर्थात अनुभव करवाना है। ख्वाणे का उद्देश्य लयात्मक मृदु बोली में दूसरे को अनुभव करवाना है। ख्वाणें अनुभव पर आधारित होते हैं। ये हमारे बुजुर्गो (जिन्होंने कभी स्कूल का मुंह नहीं देखा) के अनुभव हैं। इनका प्रभाव प्राणी पर एकदम(शीघ्रता) से पड़ता है।

लोगों को साधारण भाषा (गद्य भाषा) में जितना भी समझाओ कि काणे आदमी को काणा नहीं बोलना चाहिए वह नहीं समझेगा परंतु जब हम ख्वाणें के माध्यम से बताएंगे तो वह शीघ्रता से समझ भी जाएगा और ख्वाणा याद भी कर लेगा। यथा-

काणा-काणा नी बोलणा/ जली़ जांदा पित्ता।
नेड़े आई पुच्छी लैणा/ अक्खी नू क्या कीत्ता।

कहने का भाव यह है कि यदि काणे प्राणी (मनुष्य) को काणा करके पुकारेंगे तो वह क्रोधित होगा, चिढ़ेगा परंतु यदि उसके पास जाकर प्यार से पूछेंगे तो वह बड़े आराम से पूरी हकीकत बताएगा। उसका दिल दुखी भी नहीं होगा।

ख्वाणों में लक्षणा और व्यंजना शब्द शक्तियों का भरपूर प्रयोग होता है। ख्वाणे मानवीय ज्ञान के घनीभूत रत्न हैं। ये गागर में सागर भरने वाले होते हैं। ये ऐसे नाविक के तीर हैं जो दिखने में छोटे परंतु घाव गंभीर करते हैं। ये हमारे अवगुणों को दूर कर सद्गुण अपनाने की प्रेरणा देते हैं। हमें मृदुभाषी बनाते हैं। ये हमें पशु से मानव बनाते हैं।

परंतु आज हम पश्चिमी संस्कृति से बुरी तरह प्रभावित हैं। हम अपनी पुरानी संस्कृति को पूरी तरह छोड़ भी नहीं पाते हैं और पश्चिमी संस्कृति को भी पूरी तरह अपना भी नहीं पा रहे हैं। हम बीच में फंसे हुए हैं। आज हमारी संस्कृति के लोकगीत, लोक नाट्य, ख्वाणें, पोलणियां आदि लुप्त होने के कगार पर हैं। यदि इसी तरह चलता रहा तो आने वाली पीढ़ियां इनको देखने के लिए भी तरस जाएंगी। तो अब हम ऊना में बोले जाने वाले ख्वाणों को लेते हैं :-

अक्खां दिक्खी कन्ने कन्नां सुणी विश्वास करी दा।
आंखों से देख कर और कानों से सुनकर ही विश्वास करना चाहिए।

अन्नी पीहे कन्ने कुत्ता चट्टे।
सही वस्तु का उपयोग न होना।

इयां तां मुरदा बोल्ले नी/ बोल्ले तां क फण फाड़े।
कम बोलना परंतु जब बोलना तो अनुचित ही बोलना।

आंगी सांगी भरया ग्रां/ सोठी रक्खण नू नी थां।
जब समय पर कोई साथ न दे।

पैण पाई बथेरे, पर/ वक्ते बेले कोई नी।
जब समय पर कोई नहीं पुकरता।

आंदा मुगल कन्ने जांदा गद्दी/ किसे दे मित्र नी हुंदे।
आता हुआ मुगल व जाता हुआ
गद्दी किसी का मित्र नहीं होता।

आण पराईयां जाईयां/ बिछोड़न सकेयां भाईयां

परिवार में दरारें पैदा करने वाली नारी की भूमिका के संदर्भ में।

अपणा पैसा खोट्टा, तां बणिए दा क्या दोष।
अपने बच्चे अयोग्य निकलने पर दूसरे को क्या दोष देना।

अपणा पेट तां कुत्ता वी भरी लैंदा।
अपने तक सीमित प्राणी के लिए।

इक्क चुप्प सौ सुक्ख
मौन रहना सबसे बेहतर।

इक्की दी धी, कन्ने/ दसां दी ध्याण।
गांव की लड़की सभी की लड़की मानी जाती है।

इक्की अत्थे नाल फुलका नी पकदा।
एकता में बल दर्शाने हेतु।

इट चकदे नू पत्थर तैयार।
जैसे को तैसा।

इल्ला दे आलणे चे ते मास लयाणा।
न होने वाले काम की आशा करना।

ओच्छे नू मिलपा गोच्छा/ बडेरी-बडेरी तोड़ेया।
ओच्छे (अयोग्य) व्यक्ति को अच्छा काम मिलना।

औंदे दिन कराड़े, चप्फणें/ अंब तां पौंदे राड़े।
बुरे दिन।

अस्सू माघ विलाला/ दिने धुप तां रातीं पाल़ा।
अस्सू और माघ महीने में दिन को धूप व रात को ठंड होती है।

ओह केहड़ी गल़ी, जित्थे/भागो नी खड़ी।
किसी व्यक्ति का हर स्थान व हर काम में उपस्थित होना।

ओह केड़ी मल़ी जेहड़ी/फलाणें नी चढ़ी।
होशियार प्राणी हेतु प्रयोग।

कणक खेत, कुड़ी पेट/आ जवाइयां मंडे खा।
कल्पनाशील प्राणी हेतु।

कक्कड़ सिंगी, कद्दूपतीस/ सब कोई चाटे मधुपीस
खांसी भागे कोसो तीस।
कक्कड़ सिंगी, कद्दू के बीज व पतीस का चूर्ण मधु के साथ चाटने से खांसी ठीक होती है।

कणक कमांदी संगणी, डांगा-डांगा कपाह
वुक्कल़ मार लेफे दी, छल्लियां गब्बे लंघी जाहा।
गेहूं व गन्ने को संघणा बीजना चाहिए, कपास थोड़ी विरली और मक्की अधिक विरली बीजनी चाहिए।

ओ क्या जाणे, पीर चराई/ जिदे पांव ना फटे ब्याई।
दुखी व्यक्ति के दुःख को दुखी ही जान सकता है।

कहणा मोड़ना नी/ डक्खा तोड़ना नी।
इनकार करना नहीं और काम करना नहीं।

कर्महीन खेती करे/ सोक्का पड़े या वलद मरे।
भाग्य से सब कुछ मिलता है।

कांती किणेयां/ इक्क रोटी त्रि जणेयां
कार्तिक मास में बारिश होने से फसल नहीं होती।

कित्तू अट्ठ कन्ने कित्तू सट्ठ।
बहुत अंतर

खाणे काले छोल्ले कन्ने/ पद मारणे बदामा दे।
गप्पें हांकना।

गट्ठी नी आन्ना, कन्ने/ बब्बे दा नाम खजाना।
गुणें के विपरीत नाम।

गट्ठी नी धेला/ कन्ने चढ़ना रेला।
गुणों के विपरीत नाम।

गा ना बच्छी/ निंद पवे अच्छी।
अधिक व्यस्तता भी हानिकारक है।

घरे गयो नू पिक्ख सारे/ पाई दिंदे पर सिक्ख कोई नी दिंदा।
अच्छी शिक्षा कोई-कोई देता है।
घरे नी दाण कन्ने/ मां चल्ली पिसाणे।
दिखावा करना।

चोरां दी टोल्ली/ इक्को द बोली।

संगति का फल

छिक्कत खाईए, छिक्कत पिए
छिक्कत रहिए सोई
छिक्कत दूज्जे घर न जाइए
खरा कदे न होई।

छींक खाने, पीने, सोने में शुभ और यात्रा करने में अशुभ होती है।

जित्थू गया उत्थू रया।
चरित्रहीन व्यक्ति हेतु प्रयोग।

जिन्ना घरां दे चल्लण चलाणें
खोल परांदे बन्ण पाणे।

घर-परिवार को चलाने के लिए अत्यधिक मेहनत की जरूरत होती है।

अब हम ख्वाणों के उपरांत ऊना जिले में पाई जाने वाली पोलणियों को लेते हैं। हिमाचल की संस्कृति में पोलणियों का विशेष स्थान है। हिंदी भाषा में इन्हें बुझारतें कहते हैं तो पहाड़ी बोली में इन्हें पोलणी कहते हैं। जिस प्रकार ख्वाणों में हृदय पक्ष का प्रयोग अधिक था उसी प्रकार पोलणी में हृदय पक्ष की अपेक्षा मस्तिष्क का अधिक प्रयोग करना पड़ता है। सर्दियों के दिनों में अंगीठी जलाकर, दिनचर्या के सभी कामों से निवृत्त होकर गांव के सभी स्त्री-पुरुष और बच्चे एक घर में एकत्रित हो जाते हैं। फिर बुजुर्ग लोग (दादा-दादी और नाना-नानी) पोलणियां डालते हैं और बच्चे उनका उत्तर देते हैं। पोलणी का उत्तर निकालने हेतु बच्चों को अत्यधिक सोचना पड़ता है। इससे उनका मानसिक विकास होता है। ये भी हमारी संस्कृति में अनादिकाल से चली आ रही हैं। जब मनुष्य दिन भर के कामों से थकर कर रात को मनोरंजन का साधन ढूंढता हुआ इन पोलणियों तक पहुंचा होगा, तब इनका जन्म हुआ होगा। मनोरंजन का भी यह अच्छा साधन है।

परंतु विडंबना यह है कि अनादिकाल से ही ये हमारे सामने मौखिक रूप में ही विद्यमान रही हैं। अभी इनका लिखित रूप प्रकट नहीं हुआ है। संस्कृति में परिवर्तन आ रहा है। हमारी संस्कृति पश्चिमी संस्कृति से प्रभावित हो रही है। आज कलयुग है अर्थात् मशीनी युग। हर काम प्रायः मशीनों से हो रहा है। घंटों का काम मिनटों/सेकंडों मेंहो रहा है। परंतु आज फिर भी मनुष्य के पास समय नहीं। उसनरे इतनी जरूरतें पाल रखी हैं कि उन्हें प्राप्त करने के लिए वह पागलों की तरह घूम रहा है। हर समय समय की दुहाई देता रहता है। जिससे आज न उसका मानसिक संतुलन ठीक है और न ही शारीरिक रूप से स्वस्थ है। कारण स्पष्ट है कि आज का मनुष्य बिना काम के व्यस्त है।

अन्य विधाओं की तरह से विधा (पोलणी) भी प्रायः लुप्त होने के कगार पर है। इसलिए मैंने इन्हें एकत्रित करने का प्रयास किया है ताकि ये भी काल के गर्त में न चली जाएं। आने वाली पीढ़ी के लिए ये पोलणियां स्वप्न न बन जाएं।

ऊना जिले में बोली जाने वाली पोलणियां

अक्खे-वक्खे टिक्घ/ बिच सोने दी लित्त।
चूल्हे के बीच आग।

अदूधे समान कुधी रोवे/ अक्खीं चिपड़ मुं कित्थे धोवे।
चील की चलाखड़ी।

अड्डां खड्डां दी ओवरी/ बिच बसे राणी डोगरी।
जीभ।

अलस पलस का बिन्ना/ अग्गी जले़ नां पाणिए सिन्ना।
परछाई।

आसा पुच्छदा दासे नूं/ चारा ई नासां गासे नूं।
तिल की डोडियां

अंदरे खल़ बाहरे हड्ड
(कपाह) कपास।

अत्थ नी, पैर नी,/ द्वार खिड़कियां खोली दिंदी।
हवा

इक्की मितरे दा काला रंग/ जालु दिक्खो तुहाडे संग।
परछाई।

इक्क कुड़ी, उहदे सिरे पर/ सवाही दी पुड़ी।
चिलम।

इतणीक टाल्ली, ऊपर बैठया बंगाली।
पोए दा कुप्प

इन्ना क सपाई, उहदी खिच्च के वर्दी लाही। केला।

इन्ना क काका घरे दा राखा। (ताला)

उठक-पठक, हिरणे दी चाल
ना कोई पूंछ ना कोई वाल़ (मेंढक)

एरना-टंगरेना, चंगरे जैसा ुल्ल

कच्चे-कच्चे अल़ी गए, पक्केयां दा मुल्ल। (घड़ा)

एट्ठ ब्रह्मा, ऊपर बसंती, बाजा सुरा ने बजाणा
बुझणी ता बुझ नी तां तू चल मैं आया।
(कली, तंबाकू पीने वाली)
ओटू मोटू दुर्गादास/ कपड़े पहने सौ पचास। (प्याज)
ओ गई, ओ गई। (नजर)
कपड़े लाए ढेरों ढेर/ निकल़या ना अंदर शेर। (प्याज)
कौण वी दुक्खड़ू/ लौणा वी दुक्खड़ू। (केले का पेड़)
काला पेड्डू, मत्थे गुल्ली/ जाई वड़ेया, तुहाड़ी चुल्ली (मांह)
काल़ी कुत्तरी बाहर सुत्ती (गोबर का ढेर)
खंगर मैस दुवलड़ दूणी। (कखां दी छन्न)

खड्डा बिच गिट्टियां/ अधी काली, अधीचिट्टियां। (आंखें)

खांदे वी हन, खुआंदे वी हन
पर तीजो खाई खाई रज्जदे नी हन। (कसम)

चिट्टी पलेट कन्ने काला अंडा। (आंख)

छोटा जेहा फकीर उहदे पेटे ते लकीर (कणक)

टोप भरेया रूपइयां नाल, कन्ने गिणी हुंदे नी। (तारे)

टेड्डी मेड्डी लकड़ी समाण जाई टक्करी। (बिजल़)

तकड़ी-तकड़ी, बल़े नाल जकड़ी (तराजू की डंडी)

तालाए च बेल, बेला जो फुल्ल
फुल्ल वेला जो खाए। (दीपक)

दो पाई रस्ते च चलदे आए
घरे आई चुप्प होई गे। (जूते)

नक्के ते चढ़े, कन्नै कन्ने जो पकड़े। (ऐनक)

नाल़े नाल़े मैस रड़ांदी बाजी दंदा माणुआ खांदी। (बंदूक)

तू एडडा लंबा कैं, तू एडडा चौडा कैं?
तू दिने कचैरी कैं? तूं राती कल्ला कैं? (कुआं)

तिन्ना पैरा दी तितली नाही धोई निकली। (समोसा)

पारलिए धारा गजरदा कन्ने इत्थू सणोंदा। (ढोल)

पारे ते आई लाल कपड़ेया आल़ी नरस
टीका लांदी जबरदस्त (धमोड़ी)

पारों आपा लो दो
छः जंघा इक्क बोदी। (तराजू)

वेल खिच्चो, वण सरनाया
धोल्लू बंदर, घट्टे आया। (नौणी, मक्खन)

बत्ती टालियां इक्क पत्त । (दांत और जीभ)

मैं बंडोदा तू कैं रोंदा। (प्याज)

मां जम्मी पुत्त पैलां इ छन्नी। (धुआं)

पील़ा हरा कोट, मुच्छां चूपण सारे लोक। (आम)

राती जो कपड़े पहनेओ कन्ने दिनां जो नंगा। (चारपाई)

लोकां जो रोज़ मिणदा कन्ने अप्पूं नंगा रहंदा। (गज/मीटर)

रस का मटका, डाल पे लटका (आम)

हरी डंडी, मुसकी दाणा, घरे नी होवे तां मंगी के पाणा। (बीहण)

अंत में हम कह सकते हैं कि ख्वाणों और पोलणियों का हमारे सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये हमारे मानसिक विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान अदा करती हैं। जब कोई बुजुर्ग हमें एक पोलणी/ बुझारत/पहेली डाल देता है और उसका उत्तर ढूंढने के लिए कहता है तो हम उसका उत्तर ढूंढने के लिए अपने दिमाग पर जोर डालते हैं। जब हम उसका उत्तर ढूंढ निकालते हैं तो हमें जितनी मानसिक खुशी होती है, उसका व्याख्यान करना सीमा से बाहर है। इससे हमारे आत्मविश्वास में भी वृद्धि होती है जो हमारी सफलता के लिए परमावश्यक है।

प्रवक्ता हिंदी, गांव व डा. डोहगी, तहसील बंगाणा, जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश-174 307, मो. 0 941805 86419

आस्था

करुणा व वात्सल्य की देवी छिन्नमस्तिका धाम : चिंतपूर्णी

◆ डॉ. कमल के. 'प्यासा'

कला और संस्कृति, किसी क्षेत्र का परिचय देने के विशेष साधन या स्रोत कहे जा सकते हैं। लेकिन इन दोनों का भी कोई अंत नहीं. .... हां परखी नजरें कहीं न कहीं और किसी न किसी रूप में इन्हें पहचान कर इनका मूल्यांकन कर ही देती हैं।

हिमाचल प्रदेश अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के लिए ही नहीं बल्कि ऋषि-मुनियों की तपोभूमि के नाम से भी प्रसिद्ध है। हिमालय क्षेत्र की इसी भूमि का संबंध पौराणिक देवी-देवताओं के साथ ही साथ कई एक सन्तों, पीरों, फकीरों, और महापुरुषों से भी रहा हैं। प्रदेश के देवी-देवताओं के अपने विधि-विधान हैं और इनके इन्हीं विधि-विधानों व चमत्कारों के फलस्वरूप ही तो दूर-दूर से अराधकों व पर्यटकों का तान्ता यहां वर्ष भर देखने को मिल जाता है। यहां के देवी-देवताओं के चमत्कार, लोक भार्ताऐं (कथा-कहानियां), किंवदन्तियों आदि कई पौराणिक आख्यानों से जुड़ी मिलती हैं। इन्हीं के साथ हर क्षेत्र के अपने-अपने रीति-रिवाज, तीज त्योहार और मेलों का भी अपना ही महत्व है। यहां की कला और संस्कृति में देव स्थलों, मन्दिरों, पीरों-फकीरों की समाधियों के साथ साथ विशेष स्मृति शिलाओं, प्रतिभाओं और स्मारकों का भी अपना महत्व है। इन्हीं से कई एक ऐतिहासिक तथ्य भी जुड़े मिल जाते हैं।

प्रदेश के देव स्थलों में जिला ऊना का देवी मन्दिर चिन्तपूर्णी अपना विशेष स्थान रखता है। यहां मात्र प्रदेश के श्रद्धालु ही नहीं बल्कि पंजाब, हरियाणा व देश के अन्य राज्यों के अतिरिक्त विदेशों से भी हर वर्ष भारी संख्या में पर्यटक आते हैं। देवी माँ चिन्तपूर्णी का यह मन्दिर देश के 52 शक्ति पीठों में से एक है जो समुद्रतल से 940 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। एक कथानुसार (धर्म शास्त्रों के अनुसार) जब शक्ति माँ के पिता दक्ष प्रजापति ने अपने दामाद भगवान शिव को महायज्ञ में आने का निमन्त्रण नहीं दिया तो सती मां इस अपमान को सहन नहीं कर सकी और उसने अपने आप को अग्नि के सुपुर्द कर दिया। भगवान शिव के क्रोध की कोई सीमा नहीं रही और वह सती के शव को उठाकर चल पड़े। कहते हैं कि इस तरह से सती के शरीर के अंग जिन-जिन स्थानों पर गिरते गए बाद में वही स्थल शक्ति पीठ के नाम से विख्यात हुए। कहते हैं चिन्तपूर्णी में माता का मस्तिष्क गिरा था। इसी लिए इस पवित्र स्थल को माता चिन्तपूर्णी (छिन्नमस्तिका) के नाम से जाना जाता है। वैसे देवी चिन्तपूर्णी का स्थान दस महा विद्याओं में भी आता है। जिसके प्रादुर्भाव के सम्बन्ध में शास्त्रों में वर्णन आता है कि देवी माँ चिन्तपूर्णी एक बार अपनी दो सखियों (जया व विजया) के साथ मन्दाकनी नदी में स्नान के लिए गई हुई थी, उस समय जब सखियों को भूख सताने लगी तो उन्होंने देवी से कुछ खाने को देने को कहा तो देवी मां ने उनकी बातों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। जब सखियों से नहीं रहा गया तो उन्होंने फिर से देवी से कहा,'' मां अपने बच्चों को कैसे भूखा रख सकती है.. .....?...... आप कैसी मां हो....... हमें तो भूख सता रही है.....!'' इस पर देवी मां ने अपने सिर पर प्रहार करके उसे काट कर अपने हाथ में पकड़ लिया। माता की गर्दन से तीन रक्त की धाराऐं फूट पड़ी। तीन धाराओं में से एक धारा एक सखी तथा दूसरी धारा दूसरी सखी के मुंह की ओर करके तथा तीसरी धारा को अपने कटे हुए मुंह की ओर करके मां प्यास मिटाने लगी। जब देवी तृप्त हो गई तो देवी छिन्नमस्तिका के नाम से जानी जाने लगी।

चिन्तपूर्णी मां का मन्दिर (जो कि वट वृक्ष के नीचे गुम्बद शैली का बना है) के लिए चिन्तपूर्णी बाजार से कुछ पौड़ियां चढ़ने पर पहुंचा जा सकता है। मन्दिर के गर्भगृह में माता की पिण्डी स्थापति है, जिस पर सुन्दर सुनहरा मुकट सुसज्जित है। मुकुट के ऊपर चान्दी का छत्र सजा हुआ है। गुम्बदाकार गर्भगृह के ऊपर शीर्ष पर भी छत्र सुसज्जित है। गर्भ गृह के आगे बना पंच भुजाकार अन्तराल भी गुम्बदाकार है, जिसके तीनों ओर खुले तोरण देखे जा सकते हैं। इसी अन्तराल के तीनों ओर सुन्दर जंगला रूपी रेलिंग लगी हुई है जो कि मुख्य तोरण के प्रवेश के आगे से शुरू होती है ताकि लोग पंक्ति से प्रवेश कर सकें। मन्दिर के एक ओर विश्राम स्थान बना हुआ है जहां मुंडन संस्कार भी किए जाते हैं। इसी क्रम में मन्दिर के दूसरी तरफ हवन कुण्ड बना हुआ है। जहां धार्मिक अनुष्ठानों के समय हवन आदि का आयोजन

किया जाता हैं।

माता के मन्दिर निर्माण के सम्बन्ध में (जनश्रुति अनुसार) बताया जाता है कि बहुत पहले पटियाला (पंजाब) के अठूर (अढूर) नामक गांव से दो भाई माई दास तथा दुर्गा दास यहां हिमाचल के कांगड़ा के गावं रपोह मुचलेया में आकर बस गए थे। भाई माई दास पूजा पाठ में विशेष रुचि रखता था। एक बार वह अपने ससुराल पृथ्वीपुर से वापिस आ रहा था तो रास्ते में दपराह गांव में विश्राम के लिए एक वट वृक्ष के नीचे आराम करने लगा तो उसे नींद आ गई। नींद में माई दास को कन्या रूपी देवी के दर्शन हो गए और स्वप्न में ही उस देवी रूपी कन्या ने उसे अपनी पूजा के लिए कह दिया। माई दास सोच विचार में पड़ गया तथा वापिस ससुराल आ गया। रात को जब वह सोने लगा तो वह सो न सका इस तरह मां के विचारों में खोया माई दास फिर रात को ही छपरोटू (छपराह) आ गया और देवी मां के दर्शनों के लिए उसकी उपासना करते हुए प्रतिक्षा करने लगा। देवी मां माई दास की उपासना से प्रसन्न हो कर कन्या रूप में प्रकट हो गई और कहने लगी, '' मैं इधर इस वट वृक्ष के नीचे ही वास करती हूं। तू मेरी यहीं पूजा अर्चना किया कर...... तभी तेरा और समस्त भक्तों का कल्याण होगा और सभी चिन्ताओं से मुक्ति मिलेगी''। लेकिन माई दास के पास न कोई पैसे की व्यवस्था थी और न ही ठहरने का स्थान। दूसरा उस क्षेत्र में पानी की भी कमी थी। इसलिए उसने अपनी व्यथा देवी मां से कर दी। कन्या रूपी देवी ने माई दास को कह दिया कि नीचे की ओर एक पत्थर के नीचे पानी का स्त्रोत है। ''तू चिन्ता मत कर, सब ठीक ही होगा। मेरे भक्त खुद मन्दिर का निर्माण करेंगे और प्रसाद चढ़ाएगें। लेकिन मेरी पूजा का अधिकार तुझे और तेरे परिवार को ही रहेगा। तुम्हारे और तुम्हारे वंश के किसी भी व्यक्ति के लिए सूतक पातक का भी प्रतिबन्ध नहीं होगा। यदि मेरे इस क्षेत्र में किसी भी प्रकार का अनुचित व्यवहार होगा तो मैं खुद कन्या रूप में आ कर उसका समाधान करूंगी।'' इतना कह कर वह देवी रूपी कन्या पिण्डी रूप में आ गई।

कहते हैं कि संसार की सभी गतिविधियां व परिवर्तन मां छिन्नमस्तिका की शक्ति से ही चलते हैं। देवी का स्वरूप गोपनीय बताया जाता है। दस महाविद्यायों में इनका स्थान तीसरा बताया गया है। मां सरस्वती की सिद्धि के लिए भी देवी छिन्नमस्तिका की उपासना की जाती है। इसी देवी की उपासना से साधकों को विजय श्री, राज्य प्राप्ति व मोक्ष भी मिलता है। शास्त्रों में तो ऐसा भी बताया गया है कि मणिचक्र के नीचे की नाड़ियों में जो काम तथा रति का मूल रहता है, उसमें भी देवी छिन्नमस्तिका की महाशक्ति आरुढ़ रहती है। तथा उसी के ऊर्ध्वप्रवाह से ही रुद्रग्रन्थी का भेदन भी होता है। इसलिए छिन्नमस्ता वज्र वैरोचनी के नाम से शाक्तों, बोद्धों व जैनों (सम्प्रदायों) में एक ही तरह से जानी जाती हे। देवी की दोनों सखिंया जया व विजया, रजो व तमो गुण की प्रतीक बताई जाती है।

चिन्तपूर्णी मन्दिर में श्रद्धालु अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए वट वृक्ष व आस-पास डोरियाँ बांधते हैं और कामनाओं की पूर्ति होने पर उन्हें खोल देते हैं। देश-विदेश के पर्यटक, श्रद्धालु व साधु-सन्त वर्ष भर यहां आते रहते हैं। मेले के दिनों में तो यहां विशेष प्रबन्ध किए जाते हैं, क्योंकि भारी संख्या में लोगों पर नियन्त्रण पाना मुश्किल हो जाता है। प्रतिवर्ष नव वर्ष, श्रावण अष्टमी, चैत्र तथा आश्विन के नवरात्रों में मेलों का विशेष आयोजन किया जाता है। इन्हीं मेलों में बाहर से आने वाले श्रद्धालुओं व पर्यटकों के लिए रात-दिन विशेष चिकित्सा सुविधा का प्रबन्ध प्रशासन की ओर से किया जाता है। यातायात को सुचारू बनाए रखने के लिए विशेष बसों का प्रबन्ध किया जाता है तथा बाहर से आने वाले श्रद्धालुओं के लिए भोजन व लंगर की व्यवस्था भी की जाती है।

यह मंदिर ऋतुकाल के अनुसार ब्रह्ममुहूर्त में खोला जाता है। सर्वप्रथम भगवती का स्नान उसी आमेघ जलकुंड में करवाया जाता है जो माता चिंतपूर्णी ने माई दास को सुझाया था। प्रातःकालीन एवं सायंकालीन पूजा-आरती की जाती है। मंदिर दिन में दोपहर 12 बजे से 12.30 बजे तक बंद रहता है। इससे पहले दोपहर की आरती फिर माता को खीर, दाल-चावल का भोग लगाया जाता है।

चिन्तपूर्णी तक पहुँचने के लिए दिल्ली, चण्डीगढ़, होशियारपुर, हमीरपुर, बिलासपुर, व ऊना से सीधी बसे मिल जाती हैं। रेल मार्ग से पठानकोट जोगिन्द्रनगर रेल द्वारा ज्वालामुखी रोड स्टेशन से बस द्वारा 21 किलोमीटर की यात्रा करके पहुँचा जा सकता है।

सन्दर्भ साहित्य :

1. डॉ. कमल के. 'प्यासा' : विरासत रुपी पहचान : मण्डी के देवालय,
2. डॉ. कमल के. 'प्यासा' : 'मण्डी में दस महाविद्याएं' गिरिराज 1-7 अक्तूबर 2008
3. डॉ. कमल के. 'प्यासा' : माँ काली के उग्र और सौभ्य रूप में दस महाविद्याएं : गिरिराज साप्ताहिक15-21 अक्टूबर 2008,
4. पणिनी: अष्टाधयायी
5. दशमहाविद्या: गीता प्रैस गोरखपुर
6. विष्णुपुराण, कालिका पुराण, देवी पुराण, शिव पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण, मत्स्य पुराण
7. दया शिरशा,
8. स्वतन्त्र तंत्र, व वाराही तन्त्र।
9. दुर्गा सप्तशती व देवी भागवत।
10. महाकाल संहिता व काठक संहिता।

प्रूथी, 34/7, अप्पर समखेतर,
मंडी, हि. प्र. -175001, मो. 0 9882176248

संस्मरण-1937

आस्था की यादगार यात्रा

पहाड़ वैभवता, खूबसूरती तथा शांत वातावरण के लिए जाने जाते हैं। इस शांत वातावरण में ऋषि-मुनियों ने शांतचित्त होकर ध्यान किया व अनेक ग्रंथों की रचना की। वहीं देवी-देवताओं के देवालय भी इस धरा पर बने। आस्था के इन केंद्रों के दर्शन करने के लिए मानव ने कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के बावजूद अपने कदमों को आगे बढ़ाया। जब मात्र पगडंडियां थीं, तो पैदल रास्ते को नापा, घोड़े-खच्चरों पर यात्रा की, राह के बनने पर बैलगाड़ियों, घोड़ागाड़ियों के सहारे अपना कारवां आगे बढ़ाया। मोटरगाड़ी के वक्त में, सड़कों के बनने पर यात्रा के सुगम होने से इन केंद्रों पर आने वालों की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई। आस्था तथा देव संस्कृति में अटूट विश्वास एवं आस्था ही मानव को इन स्थलों की ओर खींच कर ले आ रहा है। धार्मिक यात्राओं का यह सिलसिला इन केंद्रों की ओर आदिकाल से अनवरत जारी है।

एक बात काबिलेगौर है कि मानव सभ्यता के प्रादुर्भाव से लेकर अब तक मैदानों का नाता पहाड़ों के साथ सदैव रहा है। पहाड़ों से निकलने वाली नदियों, खड्डों ने मैदानों को सींचा। पहाड़ की ठंडी हवाओं ने गर्मी से राहत दी। पहाड़ के उत्पादों एवं फलों की मिठास ने मानव को सुकून दिया। जड़ी-बूटियों ने व्यक्ति को स्वस्थ रखा। मैदानों को पहाड़ों से जोड़ने के लिए देव संस्कृतियों की अहम भूमिका रही है। पंजाब प्रांत के रोपड़ क्षेत्र की कुल देवी नयनादेवी, जम्मू कश्मीर, पठानकोट, स्यालकोट(पाकिस्तान का क्षेत्र) की कुल देवी मां वैष्णो देवी, दोआबा क्षेत्र की मां चिंतपूर्णी व मां ज्वाला जी तथा पटियाला रियासत की कुल देवी मनसा देवी (चंडीगढ़ के समीप) है। पहाड़ों में देवस्थलों की स्थापना के अनेक धार्मिक पक्ष मिलते हैं। ये देवालय आस्था के केंद्रों के साथ-साथ धन-धान्य से संपन्न थे। पहाड़ों में होने के कारण ये लुटेरों की नज़र से भी दूर रहे। मुगलकाल में कुछ लुटेरों ने इन्हें लूटने का दुस्साहस किया। इसके प्रमाण इतिहास में मिलते हैं।

व्यक्ति को जीवन में अनेक यात्राएं करने का सौभाग्य प्राप्त होता है या यूं कहें यात्रा ही जीवन है। लेकिन कुछ यात्राएं ऐसी होती हैं, जिनका स्मरण जीवन भर रहता है। परिवार के दुःख-सुख में इकट्ठा होने पर इसका स्मरण जरूर आ जाता है जो बचपन के उन पलों से पुनः रू-ब-रू करवा देता है। यहीं जीवन का आनंद है। ऐसी ही एक देव-यात्रा जिसे विमला भारद्वाज को वर्ष 1937 में परिवार जनों के साथ करने का मौका मिला, उसकी याद उन्हें 89 वर्ष की आयु में आज भी तरोताजा है। मैदानों से पहाड़ के शिखर तक सफर वह भी बैलगाड़ी में। आज की पीढ़ी तो विश्वास भी नहीं कर सकती कि उन दुर्गम रास्तों पर बैलगाड़ी का सफर कैसे संभव था?

तत्कालीन होशियारपुर तहसील के तहत मां चिंतपूर्णी तथा कांगड़ा के तहत ज्वालाजी की इस यादगार यात्रा तथा तत्कालीन सुविधाओं, व्यवस्थाओं की जानकारी को मैं पाठकों के साथ साझा करना किसी सुखद अनुभूति से कम नहीं है। वर्ष 1927 में जन्मी तथा 1937 में 10 वर्ष की आयु में इस यात्रा को करने का सौभाग्य मिला। उस वक्त मैं पांचवी कक्षा में अध्ययनरत थी। घर से बाहर की यह मेरी पहली यात्रा थी। पहाड़ दूर से देखे थे। पहाड़ की ठंडी हवा को छूने का अहसास था। पहाड़ के फल भी खाए थे। पहाड़ी जनजीवन के बारे में सुना था। लेकिन पहाड़ का जीवन, सौंदर्य को देखने का यह पहला अवसर था।

पंजाब प्रांत के होशियारपुर के गांव लखपुर साहनी से परिवार जनों ने अपनी कुलदेवी मां ज्वालाजी की यात्रा का कार्यक्रम बनाया। यात्रा शुरू होने के एक माह पूर्व ही घर में चहल-पहल बढ़ गई। सभी खुश नज़र आने लगे। यात्रा को लेकर भाई-बहनों में भी प्यार बढ़ा। लड़ाई कम होने लगी। छोटे भाइयों के मुंडन के उपलक्ष्य में इस यात्रा का आयोजन था।

चैत्र नवरात्रों में ही अधिक परिवार मुंडन संस्कार मान्यतापूर्ण होने पर कुल देवियों के दर्शन का प्रयोजन बनाते थे। हमने भी एक बैलगाड़ी किराए पर ली। दादा पं. भागमल, दादी लाजवंती, बुआ मनसा देवी, मां मोहन देई, तीन बहनें कमला, निर्मला और मैं तथा दो छोटे भाई व घर के पुरोहित रामरत्न, जो अमृतसर के समीप के गाव के निवासी थे, के साथ यात्रा आरंभ की। गांव के सगे-संबंधियों तथा पड़ोसियों ने खुशी-खुशी विदाई दी। चैत्र माह की

तारीख तो याद नहीं लेकिन उस दिन पहला नवरात्रा था। इस शुभ दिन, राह का जरूरी सामान, खाने-पीने की सामग्री, घास इत्यादि लेकर हमारी बैलगाड़ी आगे बढ़ी। उस वक्त रास्ते पर यात्रा करने वाले कम ही होते थे। रास्ते में एक आध ही बैलगाड़ी मिलती थी। कुछ पैदल, कुछ घोड़ों पर सवार तथा गधों पर सामान लाद कर यात्रा पर निकलते थे। सफर को आगे बढ़ाने तथा यात्रा को आनंदमय बनाने के लिए बैलगाड़ी पर भजन-कीर्तन का सिलसिला शुरू हो जाता था। इस यात्रा का एक गीत आज भी सस्मरण है-

साड्डे संता ने पर्वत चीरे
एथे लगा मना दे हीरे
बिच्च पहाड़ा दा डेरा
मैं पूछदी वे आई,
माता रानी दा डेरा।

गांव से चलकर पहला स्थान होशियारपुर आया। जो उस क्षेत्र का मुख्यालय तथा एक बड़ा शहर माना जाता था। पहाड़ तथा मैदानी इलाकों का सबसे बड़ा बाजार वही था। गांव से आठ मील का सफर कब पूरा हुआ, पता ही न चला। यहां कुछ देर आराम कर घर से लाया नाशता कर दोपहर बाद ऊना मार्ग पर सफर को आगे बढ़ाया।

सफर धीरे-धीरे आगे बढ़ा। जब चढ़ाई आती तो हम बच्चे बैलगाड़ी से उतरकर पैदल चलते और आगे चलकर बैलगाड़ी के आने का इंतजार करते। इस तरह हमें ऐसा अहसास नहीं होता था कि यात्रा कठिन व दुर्गम है। शाम ढलते ही हमारा कारवां अंब पहुंच गया। उस वक्त यह एक छोटी सी जगह थी। मात्र तीन चार दुकानें। आम के पेड़ के नीचे सुरक्षित स्थान पर पड़ाव लगाया। पानी की व्यवस्था बच्चों ने की। आग के लिए लकड़ियां पंडित जी व दादा जी ने इकट्ठी कीं। महिलाओं ने भोजन की व्यवस्था की।

रात को महिलाएं तथा बच्चे बैलगाड़ी में ही सोए। बाकियों ने गाड़ी के साथ बिस्तर लगाए। आसमान में टिमटिमाते तारों के नीचे लेटकर दादा जी ने हमें तारों के नाम, उनकी स्थिति, आकाशगंगा को दिखाया। प्रातः जल्दी उठकर यात्रा पुनः मां चिंतपूर्णी के लिए आरंभ हुई। भरवाई को पार करते हुए दूर पहाड़ी पर मां का मंदिर नज़र आने लगा। बैलगाड़ी को मंदिर के नीचे मैदान में पेड़ के नीचे खड़ा कर सभी परिवार जन मंदिर की ओर बढ़े। दूसरे दिन की यात्रा समाप्ति पर थी। थकावट तो थी लेकिन यात्रा का लुत्फ इतना था कि हम बच्चे बिलकुल भी थके नहीं थे। दादा जी तथा पंडित जी ने पुरोहितों के निवास के साथ बनी सराय में हमारा ठहरने का इंतजाम करवाया। खाना तो पहली रात की तरह खुद ही बनाना था। प्रातः जल्दी उठकर सबसे पहले चिंतपूर्णी मंदिर के समीप बहती खड्ड में स्नान किया। फिर मंदिर की प्रातःकालीन आरती के लिए कदम आगे बढ़ाए। दादा जी की मंदिर में पहचान के कारण पंडों के स्थान, शृंगार से लेकर सभी पूजा-विधाओं को स्पष्ट रूप से देखा जिसकी आज भी मानसपटल पर तसवीर स्पष्ट है। दादी के वे शब्द आज भी याद हैं :- बेटियों मां के दर्शन ठीक से कर लो। यही जीवन में तुहानू (तुमको) शक्ति देंगी।'

वर्ष 1937 में चिंतपूर्णी का मंदिर छोटा सा तथा मात्र पूजा का सामान वाली कुछ दुकानें व नाममात्र की सराय व एक आधा हलवाई की दुकान ही थी। याद है कि मंदिर के साथ पीपल का पेड़ था, जो आज भी मौजूद है। पूजा-अर्चना कर उस दिन चिंतपूर्णी में ही विश्राम किया। शाम को मां की शैया आरती देखी। हमारा परिवार व पांच-दस अन्य श्रद्धालु ही उस वक्त उपस्थित थे। रात को सराय में रहकर, सुबह प्रातः पांच बजे आगे की यात्रा आरंभ की। चौथे दिन हमारा कारवां मां ज्वाला जी के दर्शनों के लिए आगे बढ़ा। देहरा गोपीपुर में व्यास नदी को बेड़ी पर पार किया। यहां बेड़ी को खोलने की प्रथा थी। इसे दादा जी ने निभाया। व्यास नदी को पार करने से पहले सिक्के तथा पुष्प इत्यादि नदी में अर्पित किए। व्यास नदी को पार करने पर बहुत आनंद आया। पार पहुंचने पर सभी ने राहत की सांस ली। नदी पार करने से पहले इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता था कि मां चिंतपूर्णी में मिलने वाले प्रसाद को वहीं खाना पड़ता था। आज भी याद है कि दादी ने राह में मिलने वाले राहगीरों तथा वहां तैनात पुलिस के सिपाहियों को सारा प्रसाद बांट कर राहत महसूस की थी। व्यास नदी को पार कर फिर हम सभी बैलगाड़ी पर सवार हो गए। पंडित जी का जिम्मा हम बच्चों की देखभाल का था। एक बात यह भी स्पष्ट तौर पर याद है कि संपूर्ण राह में जंगली फलों से लदे पेड़ बहुत आकर्षित करते थे। राह में हमने रसोंत तथा जंगली फल का स्वाद भी चखा। राह में आने वाले घरों के समीप लोग विशेषकर महिलाएं रसोंत, लसुड़े तथा अन्य सामान बेचने के लिए आती थीं। हम भी ढेर सारी रसोंत तथा लसुड़े खरीद कर लाए थे।

वर्ष 1937 में चिंतपूर्णी का मंदिर छोटा सा तथा मात्र पूजा का सामान वाली कुछ दुकानें व नाममात्र की सराय व एक आधा हलवाई की दुकान ही थी। याद है कि मंदिर के साथ पीपल का पेड़ था, जो आज भी मौजूद है। पूजा-अर्चना कर उस दिन चिंतपूर्णी में ही विश्राम किया। शाम को मां की शैया आरती देखी। हमारा परिवार व पांच-दस अन्य श्रद्धालु ही उस वक्त उपस्थित थे। रात को सराय में रहकर, सुबह प्रातः पांच बजे आगे की यात्रा आरंभ की।

मां ज्वाला जी के दर्शन करने की हम बच्चों को इतनी जल्दी थी कि हम बैलगाड़ी से आगे-आगे चल कर जल्दी पहुंचना चाहते थे। अतः हम पंडित जी के साथ पगडंडी से जल्दी पहुंचने की जिद्द लिए भाग पड़े। राह का किसी को पता न था। राह भटक गए। फिर न बैलगाड़ी दिखी और न रास्ता। इसी उधेड़बुन में गांव की कुछ महिलाएं घास काटती नज़र आईं। उन्होंने हमें राह दिखाई और फिर बैलगाड़ी के समीप पहुंच कर हमें चैन आई। दादी की डांट रवाना स्वाभाविक था। ठेठ पंजाबी में पड़ी डांट अभी भी याद है। सूर्यास्त से पूर्व हमारा कारवां मां ज्वाला जी की स्थली पर पहुंच गया। दूर पहाड़ी पर मंदिर नज़र आने लगा था। बैलगाड़ी को वर्तमान बस अड्डे के पास छोड़कर हमारे कदम मंदिर की ओर बढ़े। पंडित जी ने वहां पुरोहितों द्वारा बनाई गई सराय में हमारा ठहरने का इंतजाम करवा दिया था। नीचे मैदान के कोने में एक आध भोजन तथा हलवाई की दुकान भी थी।

मां ज्वाला जी के मंदिर के नीचे एक छोटा सा बाजार अवस्थित था। इन दुकानों में प्रसाद, चुन्नी, बांस की टोकरियां, खिलौने, अखरोट इत्यादि बिक्री के लिए रखे होते थे। चकला बेलन, गुल्ली डंडा तथा लकड़ी के खिलौने भी दुकानों में सजे थे। जिन्हें देख हम बच्चों का मन ललचाने लगा था।

सराय के अहाते में महिलाएं रात्रि भोजन की व्यवस्था में जुट गईं। हम बच्चे दादा के साथ शाम को ही मां के दर्शन के लिए गए। शाम को शैया आरती देखी। उस वक्त यहां भी नाम मात्र ही व्यक्ति उपस्थित थे। दादा दी ने मां की शैया, सुबह के लिए जल, दातुन इत्यादि रखने के विधान बारे बताया।

प्रातः स्नान कर मंदिर के लिए रवाना हुए। भाइयों के मुंडन संस्कार रस्म अदा की। मंदिर में पूजा-अर्चना की। गोरख-डिब्बी के दर्शन किए। मंदिर में साथ ही एक बावड़ीनुमा कुआं था जिसके जल से ही मुंडन उपरांत बच्चों को नहलाया जाता था। आज यह नज़र नहीं आता। इन कार्यों से निवृत्त होकर मां ज्वाला जी के मंदिर में ऊपर चोटी पर स्थित नागार्जुन के मंदिर जाकर वहीं के दर्शन किए।

गांव लखनपुर साहनी से आरंभ हुआ सफर अब पांच दिन का हो गया था। अब वापसी का सफर आंरभ करने का वक्त आ गया था। मां का आशीर्वाद लेकर छठे दिन प्रातः ही वापसी की यात्रा आरंभ की। सातवें नवरात्रे को गांव सकुशल पहुंच गए। सगे-संबंधियों व ग्रामवासियों के लिए ढेर सारा प्रसाद लेकर आए। इन्हें बांस की टोकरियों में डालकर गांव भर में वितरित किया।

गांव लखनपुर साहनी से आरंभ हुआ सफर अब पांच दिन का हो गया था। अब वापसी का सफर आंरभ करने का वक्त आ गया था। मां का आशीर्वाद लेकर छठे दिन प्रातः ही वापसी की यात्रा आरंभ की। सातवें नवरात्रे को गांव सकुशल पहुंच गए। सगे-संबंधियों व ग्रामवासियों के लिए ढेर सारा प्रसाद लेकर आए। इन्हें बांस की टोकरियों में डालकर गांव भर में वितरित किया।

वर्ष 1937 की इस यादगार यात्रा ने बचपन में ही नए विचारों को पनपने तथा नए क्षेत्रों को देखने की रुचि पैदा कर दी। 11 वर्ष की आयु में शक्तिपीठ की यह पहली यात्रा थी। एक बार पुनः ऐसी ही यात्रा का अवसर वर्ष 1946 में मिला। इस दौरान छोटे भाई के मुंडन की रस्म अदा की। पिता जी के सेना में सेवारत होने के कारण दादा-दादी तथा मां पर ही इन धार्मिक कार्यों का जिम्मा था। वर्ष 1947 में विवाह होने पर सिरमौर रियासत के राजगढ़ में पति के साथ फिर पहाड़ों में रहने का अवसर मिला जो अभी भी जारी है।

बाल्यकाल में बैलगाड़ी, फिर मोटरगाड़ी तथा फिर कार से इन शक्तिपीठों की यात्रा का सिलसिला निरंतर चलता गया। बैलगाड़ी में चाहे यात्रा कठिन तथा लंबी थी लेकिन जो खुले आसमान के नीचे, प्रकृति के सान्निध्य में एक मंद गति से बैलों की घंटियों की मधुर ध्वनि के साथ आगे बढ़ती थी, उसका आनंद ही कुछ और होता था। रात को अनजान स्थल पर चांद तारों की छांव में तारों को गिनना। मेरे हिस्से में कितने तारे आए, को सोच- सोच कर आनंद की अनुभूति करना। दादा जी द्वारा सप्तर्षि, आकाशगंगा, ध्रुवतारे की पहचान करवाना। एक शिक्षाप्रद व रोमांच भरा अनुभव होता था। काश आज की पीढ़ी को भी ऐसी रोमांचकारी यात्रा का अवसर मिले। 89 वर्ष की आयु में अब मां के दर्शन करना मुश्किल प्रतीत होता है, लेकिन बचपन में दादा- दादी मां द्वारा दिए गए संदेश की मां शक्ति प्रदान करेंगी। इसी शक्ति से आज भी स्मरण शक्ति वैसी ही है, जैसी 10-11 वर्ष की आयु में थी। पहले नवरात्र को शुरू हुई यात्रा सातवें नवरात्रें को सकुशल घर पहुंचने पर अष्टमी का पूजन घर पर किया।

वापसी का सफर बैलगाड़ी पर उछलकूद करते, अपने भाइयों के गंजे सिरों पर उंगलियों से वार करते, मां की भेंटें गाते आए। वापसी का गीत भी याद है-

माता रानी उसी पास लई
झंडा गड्ड भी लया
पुल बन भी गया
माता रानी द डेरा।

(श्रीमती बिमला भारद्वाज से विनोद भारद्वाज की बातचीत पर आधारित संस्मरण के अंश)

दयाल हाउस, संजौली, शिमला-171 006, मो. 94181 58987

सिद्धपीठ गिड़गिड़ा पौणाहारी

◆ डॉ. वासुदेव प्रशांत

हिमाचल प्रदेश के ऊना जिले में अनेक देवस्थल एवं सिद्धपीठ हैं जो इस क्षेत्र के लोगों की धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं के प्रतीक हैं। प्रायः प्रत्येक गांव में कोई-न-कोई ठाकुरद्वारा, सती का स्थान अथवा सिद्धपीठिका मिलती है, जहां पर लोग देव-पूजन या सुखना-मानता करने के लिए जाते रहते हैं। इन छोटे-छोटे देवस्थलों के अलावा इस जिले में कई प्रसिद्ध सिद्धपीठ भी हैं, जहां दूरदराज से श्रद्धालु आते हैं और अपनी सुखना पूरी होने पर श्रद्धा से चढ़ावा आदि चढ़ाते हैं। इन सिद्धपीठों की अधिकता एवं विविधता से स्पष्ट है कि इस क्षेत्र के लोग भी प्रदेश के अन्य लोगों की तरह ही सिद्धों की शक्ति, महत्ता और प्रताप में पूर्ण विश्वास रखते हैं। यहां तक कि इनमें से बहुतों के बारे में तो अनंत कहानियां, किंवदंतियां और कथाएं लोगों में परंपरा से चली आ रही हैं। इन सिद्धपीठों में गिड़गिड़ा साहिब बाबा रुद्रानंद का डेरा, योगी पंगा, पीर-निगाहा, रोटीराम का डेरा आदि विशेष महत्त्व रखते हैं।

स्थिति : यह सिद्धपीठ ऊना जिले के बीत क्षेत्र में स्थित है। पूबोवाल नामक गांव के पास बहने वाली घरदला खड्ड के किनारे एक ऊंची पहाड़ी पर यह पवित्र स्थान बना हुआ है। इसका प्राकृतिक सौंदर्य देखते ही बनता है। चारों ओर विद्यमान हरियाली, पक्षियों का मधुर कलरव एवं कूजन और वन्य जंतुओं की विचित्र ध्वनियां इसके सौंदर्य को चार चांद लगाते हैं।

यह धार्मिक स्थल ऊना शहर से सीधे तो सात-आठ किलोमीटर होगा, किंतु बस से बीस किलोमीटर के करीब पड़ता है। ऊना-जेजों सड़क पर स्थित ठाकरां नामक गांव से इस सिद्धपीठ तक अब एक सड़क बना दी गई है जिससे जीप, कार आदि वाहन वहां तक आसानी से जा सकते हैं। इस तरह श्रद्धालुओं और संगतों को वहां जाने में बहुत सुविधा हो गई है।

स्थापना : इस सिद्धपीठ की स्थापना के बारे में कोई निश्चित काल तो नहीं बताया जा सकता। पर वहां के लोगों के बीच अनेक लोककथाएं और किंवदंतियां प्रचलित हैं जिनके आधार पर इसकी स्थापना के बारे में कुछ सामान्य सी जानकारी अवश्य मिल जाती है। एक लोककथा के अनुसार इस इलाके में गर्मियों के दिनों में पानी की बहुत कमी हो जाती थी। लोगों को पीने का पानी लाने तथा अपने पशुओं को पानी पिलाने के लिए ऊना शहर के निकट बहने वाली बरसाती नदी पर जाना पड़ता था जिसे स्वां (प्राचीन नाम सोमभद्रा या सोमा नदी) कहते हैं। यह नदी इस क्षेत्र से छह - सात किलोमीटर दूर पड़ती है। इस तरह उन दिनों के लोगों को गर्मियों के दिनों में बड़े कष्टों का सामना करना पड़ता था।

एक दिन सुबह के समय लोगों का एक बड़ा समूह अपने पशुओं को स्वां की तरफ ले जा रहा था। सारे लोग तो काफी आगे निकल गए, किंतु एक बूढ़े किसान के पशु पीछे रह गए। जब वह उन्हें लेकर घाटी से नीचे खड्ड की ओर उतर रहा था तो उसे रास्ते में एक बाल साधु मिल गया। उसकी आयु छह वर्ष के करीब थी। उसके बाल सुनहरी थे और उसके चेहरे से दिव्य तेज टपक रहा था। वह बाल साधु एक वृक्ष के नीचे बैठा हुआ था। जब वह बूढ़ा किसान उधर से निकला तो साधु ने आदेशात्मक स्वर में कहा-

"बाबा, मेरी टांगें तो दबाते जाओ।"

किसान ने जब उसके चेहरे पर दिव्य तेज देखा तो वह समझ गया कि यह अवश्य ही कोई महान आत्मा है। वह बड़ी श्रद्धा से उसके पैर और टांगें दबाता रहा। काफी देर हो जाने पर उसने साधु से विनम्रता से आज्ञा मांगी और कहा-

"महाराज, मेरे पशु बहुत प्यासे हैं। स्वां यहां से बहुत दूर है और मुझे शाम तक वापिस भी लौटना है। अतः अब मुझे जाने की आज्ञा दीजिए।"

साधु महाराज उसकी सेवा भावना से बड़े प्रसन्न थे और उसकी पानी की समस्या को भी समझते थे। अतः उन्होंने उससे कहा-

"ठीक है। अब जरा इस शिला को परे हटा दो।"

किसान ने जब ऐसा किया तो वह देखकर उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि पानी का एक बड़ा स्रोत उस शिला के नीचे से बह निकला है। उसने साधु महाराज की आज्ञा से अपने पशुओं को पानी पिलाया और अपना घड़ा भी पानी से भर लिया। फिर उसने शिला को वैसे ही वहां पर टिका दिया। इसके बाद साधु ने उसे आदेश दिया कि वह इस घटना के बारे में किसी से भी कुछ भी न कहे। अगर कहेगा तो उसका बहुत अनिष्ट होगा। साधु के अनुसार वह किसान धर्मात्मा प्रवृत्ति का व्यक्ति था। अतः पानी भरने का अधिकार केवल उसे ही मिल सकता था। अन्य लोगों को

नहीं, क्योंकि वे उस जैसे पुण्यात्मा नहीं थे।

वह बूढ़ा किसान अब रोज-रोज वहां से पानी भर कर ले जाने लगा। दूसरे लोगों को संदेह होना स्वाभाविक था कि वह इतनी जल्दी कहां से पानी लेकर आ जाता है। उनके पूछने पर पहले तो वह टालमटोल करता रहा, पर अंत में मजबूर किए जाने पर उसे असलियत बतानी ही पड़ी। इसके बाद वह ज्वरग्रस्त रहने लगा और शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई।

लोगों को अब यह पता चल गया कि जिस स्थान पर वह बाल साधु उस किसान को मिला था, वहां से खड्ड पार करके सामने पहाड़ी पर एक गुफा है। उसी गुफा में वह बाल साधु रहता है। वे सब मिलकर उनके सामने उपस्थित हुए और अपनी पानी की समस्या उन्हें बताई। साथ ही अपने अपराधों के लिए उनसे क्षमा-याचना भी की। साधु ने उन पर दया करके उसी जल स्रोत के बारे में उन्हें बताया और पानी ले लेने की आज्ञा दे दी। कहते हैं कि बाद में उसी जलस्रोत से थोड़े-थोड़े अंतर पर तीन बावड़ियां भी बनवा दी गई जो अब भी वहां पर विद्यमान हैं। जिस स्थान पर वह साधु रहता था, वहां से अकसर गिड़गिड़ की आवाज आती रहती थी। अतः उस साधु का नाम भी बाबा गिड़गिड़ा पड़ गया। साधु का बालरूप होने के कारण बहुत से लोग उन्हें बाबा बालक नाथ का ही रूप मानने लगे और वे गिड़गिड़ा पौणाहारी (अर्थात पवनहारी- केवल हवा पर जीवित रहने वाले) के रूप में प्रसिद्ध हो गए।

मानता : कहते हैं कि बाबा प्रायः लोगों के किसी-न-किसी रूप में दर्शन देते रहते थे। अतः इस स्थान की मानता और प्रसिद्धी दिन-ब-दिन बढ़ने लगी। बाबा के चमत्कारों की अनेक कथाएं प्रचलित होने लगीं। कहते हैं कि एक बार कुछ लोगों ने एक मरे हुए ऊंट की खाल उस स्थान के निकट उधेड़ दी। इस पर बाबा इतना कुपित हुए कि उस वर्ष क्षेत्र के अनेक बच्चों की मृत्यु हो गई। इस प्रकार की अनेक किंवदंतियां आज भी इस इलाके के लोगों में प्रचलित हैं। बाबा गिड़गिड़ा के प्रति लोगों की असीम आस्था का ही यह परिणाम है कि अब दूर-दूर से लोग इसके पवित्र स्थल पर आते रहते हैं। इन में विशेषकर, ऊना के बीत क्षेत्र के लोग हैं। उधार पंजाब में दोआबा क्षेत्र के बहुत से लोग भी जहां आकर अपनी सुखना करते हैं और उसके पूरा हो जाने पर अपनी श्रद्धा के अनुसार चढ़ावा आदि चढ़ाते हैं।

स्थल का वर्तमान स्वरूप

लोगों में ऐसा विश्वास भी है कि पहले-पहल इस स्थान पर कोई भी व्यक्ति रात को नहीं रहता था। बाबा किसी भी व्यक्ति को इतना पुण्यात्म का नहीं मानते थे जो इस स्थान पर रह सके। यदि कोई व्यक्ति रात को कभी वहां टिकने की कोशिश भी करता था तो बाबा उसकी चिमटों से पिटाई करते थे। किंतु बाबा राम सिंह ने बड़े धैर्य से वहां अठारह वर्ष तक तपस्या की। बाबा गिड़गिड़ा उसे तेज रात को चिमटों से पीटते थे, किंतु उसने धैर्य बनाए रखा। इस पर बाबा गिड़गिड़ा उसकी निष्ठा, धैर्य एवं श्रद्धा से बहुत प्रभावित हुए और उसके प्रति दयावान हो गए। इस तरह बाबा राम सिंह उस स्थान पर काफी देर रहे और उसकी देखभाल करते रहे। उसके समा जाने के बाद संत खुशी राम तीस-चालीस वर्ष तक उस स्थान का प्रबंध करते रहे। उनके समय में इस स्थान पर काफी विकास हुआ और प्रसिद्धी भी चारों ओर फैल गई। आज भक्तजन से यहां पर भेंट और चढ़ावा चढ़ाते रहते हैं जो अधिकतर इस स्थल के विकास पर खर्च होता रहता है।

यह सिद्धपीठ ऊना जिले के बीत क्षेत्र में स्थित है। पूबोवाल नामक गांव के पास बहने वाली घरदला खड्ड के किनारे एक ऊंची पहाड़ी पर यह पवित्र स्थान बना हुआ है। इसका प्राकृतिक सौंदर्य देखते ही बनता है। चारों ओर विद्यमान हरियाली, पक्षियों का मधुर कलरव एवं कूजन और वन्य जंतुओं की विचित्र ध्वनियां इसके सौंदर्य को चार चांद लगाते हैं।

विशेषता : इस सिद्धपीठ की एक विशेषता यह है कि यद्यपि इसकी मानता तो मूलरूप में गिड़गिड़ा पौणाहारी की ही है, किंतु अब इसके चारों ओर एक बहुत बड़ा गुरुद्वारा बना दिया गया है। जहां पर अब सुबह-शाम गुरवाणी का पाठ होता रहता है। संगतों के रहने के लिए एक बहुत बड़ी सराय भी बना दी गई है। इसके अलावा एक लंगर-घर भी बना है जहां संगतों को मुफ्त लंगर खिलाया जाता है। एक अन्य कक्ष में बाबा राम सिंह की प्रतिमा स्थापित है और उसके सामने ही एक हॉल कमरे में गुरुग्रंथ साहिब का पाठ प्रातः-सायं होता रहता है।

गिड़गिड़ा पौणाहारी की प्राचीन गुफा की बाहर से मरम्मत कर दी गई है और उसके आगे एक पक्का आंगन भी बना दिया गया है। यहां पर भक्त लोग बैठ कर बाबा के प्रति अपनी श्रद्धा समर्पित करते हैं। गुफा से थोड़ी दूर बाबा की समाधि बनी है जिसके निकट लकड़ी की खड़ाऊं का एक जोड़ा पड़ा रहता है।

गुरुद्वारे में हर बुधवार और रविवार को काफी संगतें आती हैं और हर संक्रांति को लोग दूर-दूर से यहां आकर अपनी श्रद्धा समर्पित करते हैं। इसके अलावा गुरुद्वारा में दिवाली आदि पर्व भी बड़ी श्रद्धा और आस्था से मनाए जाते हैं। इस तरह यह स्थान हिंदू और सिखों के लिए समान आस्था का केंद्र बन गया है। दोनों धर्मों के लोग बाबा गिड़गिड़ा पौणाहारी और गुरुग्रंथ साहिब के प्रति पूरी निष्ठा और श्रद्धा प्रकट करते हैं।

जवाहर नगर, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश-176 213,
मो. 098171 87125

लखदाता पीर निगाह
सांप्रदायिक सद्भाव का पावन स्थल

◆ सतपाल

'जय लखदाता पीर' के उद्घोष के साथ श्रद्धालु पीर निगाह पहुंचते हैं। यह पावन स्थल ऊना के बसोली में अवस्थित है। यहां ठोस चट्टान में खुदी गुफाएं श्रद्धालुओं को ही नहीं, पर्यटक जनों को भी लुभाती हैं। श्रद्धालु यहां मन्नतें पूरी होने पर शीश नवाते हैं तो दूसरों के लिए यह कौतूहल का विषय रहती हैं कि एक संकरी चट्टान और ये गुफाएं, आखिर कैसे संभव। कहते हैं यह सब उस समय संभव हुआ जब पांडवों ने अपने अज्ञातवास के दौरान बसोली गांव में इस पावन स्थान पर रुकने का मन बनाया। उन्हें कोई देख न ले, इसलिए उन्होंने एक रात में ही ये गुफाएं खोद डालीं लेकिन भोर हुई तो साथ की बस्ती में छाछ छुलने की आवाज सुनाई दी। उन्हें कोई देख न ले, अतः वे यहां से प्रस्थान कर गए। इस बात के कोई प्रमाण तो नहीं हैं परंतु इस वृतांत को दंतकथाओं से जोड़कर देखा जाता है।

पीर निगाह का इतिहास

पीर निगाह दो शब्दों का सुमेल है- पीर और निगाह। एक वृतांत है। यहां से 6-7 किलोमीटर दूर एक गांव सैली है। यहां एक ब्राह्मण परिवार बसता था। परिवार के एक निगाहिया नाम के व्यक्ति को कुष्ठ रोग था। परिवार के लोग उससे नफरत करते थे। इसलिए परिवार को छोड़ कर कुछ दिन इन गुफाओं में रहा। इसी बीच उसे एक व्यक्ति मिला जिसने उन्हें बताया कि आपका यह रोग लखदाता पीर सखी सुल्तानपुर नामक दरगाह जो अब पाकिस्तान में है, में जाने से ठीक हो सकता है। नगाहिया ने वहां जाने की तैयारी की। उस समय परिवहन के साधन तो थे नहीं। अतः वे पैदल ही चलने लगे। थोड़ी दूरी पर ही उन्हें एक फकीर मिला जिसने उनसे पूछा कि वह कौन है और कहां जा रहा है। उन्होंने फकीर को अपनी कथा व्यथा सुनाई और गंतव्य बताया। फकीर ने कहा कि आपको कहीं जाने की जरूरत नहीं है, आप यहीं स्वस्थ हो जाएंगे। फकीर बाबा उन्हें साथ लगती छपड़ी (पानी का चश्मा) पर ले गए और उन्हें पानी के छींटे मारे और वे ठीक हो गए। फकीर ने कहा कि आज से जो भी इस छपड़ी का पानी कुष्ठ रोगी पर छिड़केगा वह ठीक हो जाएगा।

फकीर ने निगहिया से कहा कि वे उसी गुफा में भक्ति करें। पीर लखदाता उस फकीर का नाम और नगाहिया उस ब्राह्मण के नाम को जोड़ देने से पीर निगाह बना। फकीर ने उनसे कहा कि जो भी श्रद्धालु इस स्थान पर आएगा, उसकी मनोकामनाएं पूर्ण होंगी और निगाहिया की आंखों से ओझल हो गए। तब से निगाहिया ने यहीं भक्ति की और यहीं समाधिलीन हो गए। इसी गुफा में समाधि बनाई गई है। बैसाखी के दिन समाधि को नहलाया जाता है और इस पर पहली चादर सैली गांव के ब्राह्मण परिवार की ही चढ़ाई जाती है।

पीर निगाह परिसर में बाण की चारपाई पर सोना मना है। यहां जो भी रहता है, वह लोहे की पत्तियों से चारपाई बुनते हैं। लेकिन अब शायद ही कोई ऐसी चारपाई हो। यहां पर तेल की तलाई करना छाछ छुलना व गृहस्थ में रहना भी मना है।

'जय लखदाता पीर' के उद्घोष के साथ श्रद्धालु पीर निगाह पहुंचते हैं। यह पावन स्थल ऊना के बसोली में अवस्थित है। यहां ठोस चट्टान में खुदी गुफाएं श्रद्धालुओं को ही नहीं, पर्यटक जनों को भी लुभाती हैं। श्रद्धालु यहां मन्नतें पूरी होने पर शीश नवाते हैं तो दूसरों के लिए यह कौतूहल का विषय रहती हैं कि एक संकरी चट्टान और ये गुफाएं, आखिर कैसे संभव। कहते हैं यह सब उस समय संभव हुआ जब पांडवों ने अपने अज्ञातवास के दौरान बसोली गांव में इस पावन स्थान पर रुकने का मन बनाया। उन्हें कोई देख न ले, इसलिए उन्होंने एक रात में ही ये गुफाएं खोद डालीं लेकिन भोर हुई तो साथ की बस्ती में छाछ छुलने की आवाज सुनाई दी। उन्हें कोई देख न ले, अतः वे यहां से प्रस्थान कर गए।

बाबा लखदाता की बड़ी गुफा जहां नगहिया जी ने भक्ति की थी, के साथ लगती सभी गुफाओं का जीर्णोद्धार किया गया है जिसके लिए संगमरमर व कारीगर राजस्थान से मंगवाए जिस पर वहां के एक प्रवक्ता के अनुसार दो करोड़ रुपये खर्च हुए हैं।

छपड़ी

पवित्र छपड़ी जिसका जल फकीर द्वारा छिड़कने मात्र से निगहिया रोगमुक्त हुआ, अब उस छपड़ी का यहां की प्रबंधन समिति ने पूरी तरह से कायाकल्प कर दिया है। यहां फव्वारे लगे हैं। लोगों के नहाने की विशेष व्यवस्था है। बच्चों के लिए झूले हैं। कुल मिलाकर छपड़ी पिकनिक स्पॉट है। यह पवित्र स्थल ऊना-नंगल रोड से सात-आठ किलोमीटर दूर ऊना-बीहड़ू रोड के मध्य में पूर्व दिशा में है। यहां पहुंचने हेतु आवागमन के बेहतर साधन हैं यथा बस, टैक्सी इत्यादि अपना वाहन हो तो लखदाता की और भी कृपा।

मुझे काफी लंबे समय बाद पीर निगाह जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरे साथ धर्मपत्नी, पुत्र व मेरे पिता जी थे। क्योंकि गर्मी काफी थी, इसलिए हम शाम को निकले। हम अपने वाहन में थे इसलिए रास्ते में रुक-रुक कर सुंदर दृश्यावलियों को निहारते हुए गए। मेरे बेटे को यह अच्छा लग रहा था। मैंने रास्ते में पाया कि जहां कभी उजाड़-बियाबान थे, वहां लोगों ने कोठियां (मकान) बना लिए हैं। बसें तो चल ही रही थीं, निजी वाहनों की भी भरमार थी। करीब पांच बजे हम वहां पहुंचे। प्रसाद की एक दुकान वाले ने गाड़ी पार्किंग की मुफ्त सुविध दी। हमने प्रसाद वहीं से लिया और आगे बढ़े।

प्रबंधन समिति का संचालन बसौली की ग्राम पंचायत करती है।

मंदिर के विकास व कुछ अन्य तथ्यों को लेकर मैंने समिति संचालक से संक्षिप्त वार्तालाप किया। श्रद्धालुओं की ठहरने की व्यवस्था के बारे उन्होंने बताया कि प्रबंधन की पांच-छह सराय हैं जबकि एक तीन मंजिला परिसर में ही निर्माणाधीन है जिसके चल रहे निर्माण कार्य को बाद में उन्होंने दिखाया। उन्होंने बताया कि श्रद्धालुओं के लिए लंगर की विशेष व्यवस्था है जो सुबह 11 से दोपहर 3 बजे तक व शाम को 7 से रात 11 बजे तक अटूट चलता है। परिसर में ही औषधालय है। गऊ सेवा सदन है। श्रद्धालुओं की सुरक्षा के लिए सुरक्षा गार्ड तैनात हैं। दर्शनों के लिए लाइन में लगे श्रद्धालुओं के लिए कूलर-पंखें हैं। मंदिर परिसर की चौकस निगरानी के लिए सी.सी.टी.वी. हैं। मंदिर परिसर से बाहर कुछ दूरी पर एक पुराना भव्य तालाब है, उसमें पानी की बात चली, बताया कि उसका जीर्णोद्धार किया गया लेकिन पानी की कमी के कारण उसे केवल एक चौथाई ही भरा जा सका है।

समिति के सामाजिक सरोकार भी है। बसोली गांव में लड़की की शादी तथा बेटी पढ़ाओ बेटी पढ़ाओ अभियान के तहत बेटी होने पर 11 हजार रुपये और 5100 रुपये परिजनों को दिए जाते हैं।

पीर निगाह प्रबंधन समिति बहुत से अन्य सामाजिक एवं धार्मिक अनुष्ठानों से जुड़ी है। हम कह सकते हैं कि पीर निगाह में श्रद्धालुओं द्वारा चढ़ाए गए चढ़ावे का निहायत ही अच्छे तरीके से सदुपयोग हो रहा है।

सहायक संपादक, गिरिराज साप्ताहिक, शिमला–171 005
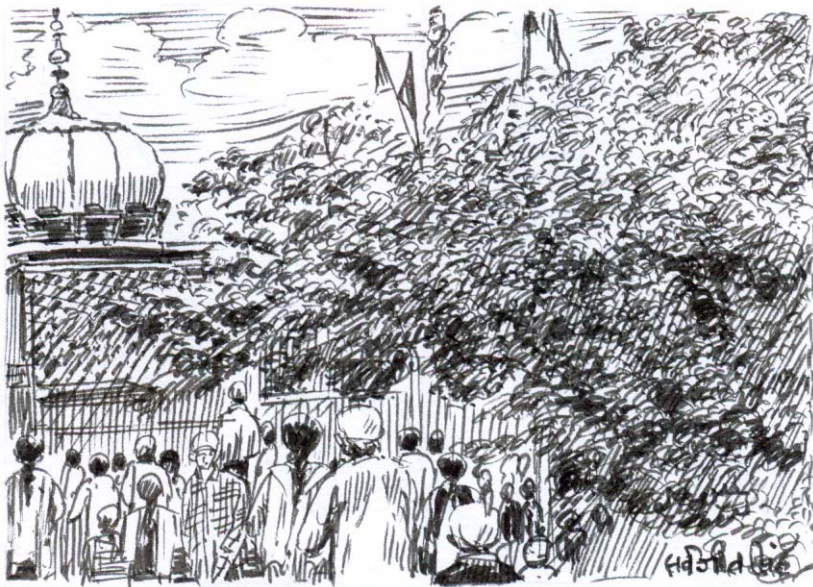
ब्रह्माहुति-धरा पर स्वर्ग

◆ डॉ. योगेश चंद्र सूद

हिमाचल प्रदेश के ऊना जिले में 'ब्रह्माहुति' एक सुविख्यात प्राचीन ऐतिहासिक एवं दिव्य स्थल है। इस दिव्य स्थल के सत्य-स्वरूप को जानने के लिए यह आवश्यक है कि इसकी भौगोलिक स्थिति को कालक्रमिक ढंग से जाना जाए। यदि किसी ने नंगल बस अड्डे से ब्रह्माहुति जाना हो तो उसे एन.एफ.एल. कॉलोनी में से गुजरना होगा। फिर बभौर साहिब तथा स्वामीपुर बाग होकर टेढ़ी-मेढ़ी पक्की सड़क से हंडोला पहुंचना होगा। हंडोला से लगभग एक से दो किलोमीटर के बीच का ऊबड़-खाबड़ रास्ता, जिसे अब पक्की सड़क के रूप में विकसित किया जा रहा है, मंदिर के भव्यद्वार पर पहुंचाता है। श्रद्धालु लगभग 87 सीढ़ियां नीचे उतर कर पवित्र मंदिर में प्रवेश पाता है। लगभग अन्य 20 सीढ़ियां और नीचे उतर कर कीर्तिमयी सतलुज नदी के वरदानी किनारे का स्पर्श सुलभ होगा। इस पवित्र नदी का पावन जल कभी भी दूषित नहीं होता क्योंकि इसमें ब्रह्मावती गंगा जी स्वयं विराजमान हैं।

यह स्थल मनमोहक प्राकृतिक छटा से समृद्ध है। यह जानना उत्सुकता का विषय है कि इस पूजनीय मंदिर का नामकरण भगवान ब्रह्मा के नाम पर हुआ है जिन्होंने यहां रह कर लंबे समय तक तपस्या की थी। यहां पर उन्होंने पवित्र यज्ञ किया और यज्ञ हवन आहुति डाली। यह बताना सार्थक होगा कि ब्रह्माहुति हिमाचल प्रदेश में और तीर्थराज पुष्कर राजस्थान में ऐसे विशिष्ट स्थल हैं जिन्हें भगवान ब्रह्मा ने पूजा-अर्चना व तपस्या के लिए चुना। इस स्थान पर वसिष्ठ मुनि जी तथा विश्वामित्र जी की तपस्या का वर्णन भी आता है। यह कहा जाता है कि बलवान, शौर्ययुक्त पांडव इस पवित्र स्थान पर आए और वे इसकी सौंदर्य छटा से इस कद्र प्रभावित हुए कि उन्होंने कठोर श्रम द्वारा इस मंदिर का निर्माण किया जिसे कि अब ब्रह्माहुति कहा जाता है। मंदिर में ब्रह्मा, शिव और पवित्र गंगा की पूजनीय मूर्तियां स्थापित हैं। यह भी धारणा है कि इस तीर्थ स्थल के चरणों में अढ़ाई पौड़ियां स्वर्ण की हैं जिन्हें पावन सतलुज नदी ने अपने शीतल जल में छुपा रखा है जिससे इस स्थान को 'अर्धकुंभ' हरिद्वार का मान प्राप्त है। ब्रह्मा जी के पवित्र मंदिर के पास एक बड़ा पीपल का वृक्ष उगा हुआ है जिसकी पांच मुख्य शाखाएं हैं। इस पौराणिक घने वृक्ष की फैली हुई पांच शाखाएं यह प्रकट करती हैं कि भगवान ब्रह्मा जी इस स्थल में पंचमुख रूप में विराजमान हैं। स्पष्ट है कि भारतीय धर्म एवं संस्कृति में पीपल के वृक्ष को ब्रह्मा के स्वरूप में पूजा जाता है। ब्रह्माहुति (भरमौती) तीर्थ के क्षेत्र को ब्रह्मावर्त क्षेत्र के नाम से पुकारे जाने का गौरव प्राप्त है। इस स्थान की शुद्धता इसकी गरिमा में चार चांद लगाती है। भक्तजन इस पवित्र स्थान पर लंगर ग्रहण करके स्वयं को धन्य करते हैं। नदी, मंदिर, पहाड़, वादियां और हरित पर्यावरण इस स्थल को सम्मोहनयुक्त बनाता है। हजारों श्रद्धालु बैसाखी पर्व पर ब्रह्माहुति में पूजा-अर्चना करते हैं और सतलुज नदी के पवित्र जल में डुबकी लगाते हैं ताकि वे अपने ज्ञात-अज्ञात पापों से मुक्ति पा सकें। इस स्थान की महत्ता इस बात से और भी बढ़ जाती है कि कुछ श्रद्धालु अपने पूर्वजों की अस्थियां यहां सतलुज के पवित्र जल में प्रवाहित करते हैं ताकि उनके पूर्वजों की आत्मा को मुक्ति प्राप्त हो। वर्तमान में भी कुछ साधु-संन्यासी यहां निवास करते हुए पूजा साधना करते हैं। वास्तव में ब्रह्माहुति ऊना जिले के लिए व हिमाचल प्रदेश के लिए सौभाग्यशाली व मंगलकारी पवित्र स्थल है।

श्रद्धालु बैसाखी पर्व पर ब्रह्माहुति में पूजा-अर्चना करते हैं और सतलुज नदी के पवित्र जल में डुबकी लगाते हैं ताकि वे अपने ज्ञात-अज्ञात पापों से मुक्ति पा सकें। कुछ श्रद्धालु अपने पूर्वजों की अस्थियां यहां सतलुज के पवित्र जल में प्रवाहित करते हैं। कुछ साधु-संन्यासी यहां निवास करते हुए पूजा साधना करते हैं। वास्तव में ब्रह्माहुति ऊना जिले के लिए व हिमाचल प्रदेश के लिए सौभाग्यशाली व मंगलकारी पवित्र स्थल है।

प्रिंसीपल, एल.जे.एन. हिमोत्कर्ष कन्या महाविद्यालय,
कोटला खुर्द, जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश-174 303,
मो. 0 99159 37694

धार्मिक पर्यटन

लोक श्रद्धा के गंतव्य

◆ डॉ. वी.के. शर्मा और डॉ. मनोरमा शर्मा

हिमाचल प्रदेश में पर्यटन विकास की अपार संभावनाएं विद्यमान हैं जिनका सदुपयोग पर्यटकों के लिए आनंद एवं प्रदेश के आर्थिक विकास के लिए किया जा सकता है। ऊना जिला पर्यटन धार्मिक पर्यटन और सांस्कृतिक दृष्टि से अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। यहां धार्मिक स्थानों के अतिरिक्त कई अन्य स्थान व स्थल हैं जो पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

पौराणिक संदर्भों में ऊणी नाम से एक स्वतंत्र राज्य के रूप में ऊना का अस्तित्व बहुत प्राचीन से रहा है। भारतवर्ष के भूगोल का वर्णन मत्स्य पुराण में हुआ है जिसमें भारत के पर्वतीय प्रदेशों में ऊणी, त्रिगर्त आदि स्थानों की गणना की गई है।

भौगोलिक दृष्टि से वर्तमान ऊना जिला हिमाचल प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। शिवालिक पहाड़ियों के बीच बसा यह क्षेत्र अत्यंत अनुपम प्राकृतिक सौंदर्य लिए हुए है। ऊना की स्वां नदी (सोमभद्रा नदी) इस क्षेत्र को दो भागों में बांटती है तथा यह नदी यहां की जीवन रेखा है।

ऊना जिला की भूमि हर प्रकार के फल, सब्जी तथा अन्य फसलों के लिए उपयुक्त है। मैदानों से बिलकुल पास होने के कारण इस जिले में आते ही पर्यटक को पहाड़ों का आभास होना शुरू हो जाता है और उसे छोटी-छोटी पहाड़ियां और नदी-नाले दिखाई देने लगते हैं तथा साथ ही घुमावदार सड़कें और छोटे-बड़े पेड़ दिखाई देने से विभिन्न प्रकार के वातावरण में अपने आपको महसूस किया जा सकता है।

पौराणिक संदर्भों में ऊणी नाम से एक स्वतंत्र राज्य के रूप में ऊना का अस्तित्व बहुत प्राचीन से रहा है। भारतवर्ष के भूगोल का वर्णन मत्स्य पुराण में हुआ है जिसमें भारत के पर्वतीय प्रदेशों में ऊणी, त्रिगर्त आदि स्थानों की गणना की गई है। भौगोलिक दृष्टि से वर्तमान ऊना जिला हिमाचल प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है। शिवालिक पहाड़ियों के बीच बसा यह क्षेत्र अत्यंत अनुपम प्राकृतिक सौंदर्य लिए हुए है। ऊना की स्वां नदी (सोमभद्रा नदी) इस क्षेत्र को दो भागों में बांटती है तथा यह नदी यहां की जीवन रेखा है।

प्रदेश में बाहर से आने वाले यात्रियों तथा पर्यटकों के लिए रेल तथा सड़क मार्ग उपलब्ध हैं। भारतीय रेल की उत्तर खंड का ऊना एक प्रसिद्ध जंक्शन है जहां से बड़ी रेलगाड़ी से भारतवर्ष में हर कोने से पहुंचा जा सकता है। ऊना से आगे भी ऊना के आंतरिक भाग के लिए रेल उपलब्ध है परंतु वह सीमित ही है।

निकटतम हवाई अड्डा चंडीगढ़-मोहाली है। कुछ समय पहले ही इसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर का बनाया गया है और अब सभी आधुनिक सेवाएं यहां उपलब्ध हैं। साधारण या वातानुकूलित बसें, टैक्सियां तथा अन्य गाड़ियां/वाहन उपलब्ध हैं जो यात्री को ऊना पहुंचा देते हैं। आवागमन के साधन वर्ष भर उपलब्ध रहते हैं। अब पर्यटक घर से ही इंटरनेट या ऑन लाईन बुकिंग करवा सकता है। पर्यटक विभाग की ओर से पर्यटकों के लिए विशेष प्रकार के यात्रा पैकेज प्राप्त हो सकते हैं।

ऊना के दर्शनीय स्थल

इस जिला में हर वर्ग और धर्म के अनुयायियों के लिए दर्शनीय और पूजनीय स्थल हैं। कुछ मुख्य स्थान इस प्रकार हैं। इनका ब्योरा इस प्रकार है।

डेरा बाबा रुद्रू

यह काफी पुराना स्थल है जिसे आज बाबा रुद्रानंद आश्रम के नाम से जाना जाता है। यह स्थान ऊना शहर से दस किलोमीटर की दूरी पर नरी गांव में स्थित है। यहां पर आजकल दो प्रकार के भवन दिखाई देते हैं। एक पुराना है तथा इस भवन का रंग गेरुआ है तथा यह पुराने आकार का भवन है। दूसरा भवन नया तथा सफेद रंग से पुता है। इस स्थान पर संस्कृत विद्यालय है जहां छात्रों को संस्कृत की शिक्षा के अतिरिक्त संस्कारों की विधि, पूजा, अर्चना तथा अन्य रीति-रिवाजों के बारे में शिक्षा दी जाती है। इसी के साथ यात्रियों के रहने तथा खाने पीने का बढ़िया प्रबंध है। हर वर्ग के

सैलानियों के लिए उचित व्यवस्था है। यहीं पर लक्ष्मी नारायण संभाग है जहां लक्ष्मी नारायण, भगवती दुर्गा, गरुड़ महाराज और वीर हनुमान की मूर्तियां स्थापित की गई हैं।

पुराने भवन के बारे में ऐसा कहा जाता है कि यह लगभग चार सौ वर्ष पुराना है। मुख्य द्वार के साथ पांच पीपल हैं। ऐसी जनश्रुति है कि बहुत समय पहले इसी स्थान पर पांच ऋषियों ने तपस्या के उपरांत अपना शरीर त्यागा था तथा अब इनकी समाधि है। इसके पास ही अखंड धूना है जहां निरंतर लकड़ी जलती है तथा उससे धुआं निकलता रहता है। ऐसा माना जाता है कि इस धूने की राख से सांप से काटा हुआ व्यक्ति ठीक हो जाता है। यहां से लोग राख को प्रसाद के रूप में ले जाते है। यहां के पास के मंदिर से पंजीरी का प्रसाद मिलता है। यह प्रसाद आटा, घी, शक्कर या खांड को मिलाकर बनाया जाता है।

इस डेरे की स्थापना के बारे में लोगों का कहना है कि लगभग दो सौ वर्ष पूर्व लोग ऊना तथा आसपास के क्षेत्रों से घी बेचने के लिए होशियारपुर (पंजाब) में जाया करते थे। जाती और आती बार इस स्थान पर ठहरते थे क्योंकि उस समय आने-जाने के साधन उपलब्ध नहीं थे। लोग पैदल ही आते-जाते थे। रात्रि विश्राम के लिए यहां बाबा के पास ठहरते थे। बाबा सभी को खाने के लिए अन्न, चावल व दाल देता था जिसे वे स्वयं पका कर खा लेते और रात्रि विश्राम कर प्रातः अपने गंतव्य स्थान को चल देते। यह सभी निःशुल्क था। एक दिन बाबा के पास कुछ नहीं था तथा एक यात्री ने बाबा से कुछ खाने के लिए बहुत जिद की और बाबा ने उसे कुछ दे दिया। वह प्रातः अपने कार्य के लए निकल पड़ा। इस बार उस व्यक्ति का भाग्य चमक गया और वह धनी होने लगा। तब से यह डेरा बाबा रुद्रू के नाम से प्रसिद्ध हो गया। वर्तमान भवन वसंत पंचमी 1850 को बनाया गया था और तब से यहां अखंड धूना चल रहा है। यहां पर हर वर्ष पंचभीष्म मेला, कार्तिक पूर्णिमा, रुद्र जयंती, निर्जला एकादशी आदि उत्सव निरंतर मनाए जाते हैं। यात्री पड़ोसी राज्यों के अतिरिक्त विदेशों से भी आते हैं। कुछ लोग एकादशी, पूर्णमासी आदि व्रतों के उद्यापन के लिए यहां आते हैं। यहां लंगर का प्रबंध रहता है।

इस समय इस आश्रम का कार्य श्री सुग्रीवानंद जी देख रहे हैं। वे बाबा रुद्रू के आत्मज हैं। इनका प्रवचन सुनने के लिए लोग बहुत दूर दूर से आते हैं तथा ये भक्तों के अनुरोध पर अन्यत्र जाकर भी उपदेश देते हैं। आश्रम में प्रतिदिन यज्ञ होता है जिसमें मंत्रोच्चारण के साथ हवन कुंड में आहुतियां दी जाती हैं।

इस संकाय के दो भाग और हैं- जोगी पंगा जो यहां से पंद्रह किलोमीटर दूर है तथा दूसरा अमलेहड़ है और वह चालीस किलोमीटर दूर है। इन तीनों स्थानों की व्यवस्था श्री सुग्रीवानंद जी की देखरेख में होती है। तीनों ही स्थान प्राकृतिक रूप से हरे भरे हैं। इनके साथ के क्षेत्रों में खेती होती है जिससे आश्रमों का व्यय पूरा हो जाता है। दानी लोग दिल खोल कर दान करते हैं और हर वर्ष यहां दर्शनार्थ आते हैं।

माता चिंतपूर्णी मंदिर

जिला ऊना में शिवालिक पर्वत शृंखला के उत्तर-पश्चिम में माता चिंतपूर्णी का भव्य स्थान है। यह आठ धामों में से एक है। पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग सभी मंदिर और ऐसे ही स्थल एक चोटी पर स्थित हैं ताकि यात्रियों तथा अन्य व्यक्तियों को दूर से ही उनके होने का पता चल जाए। ऊना शहर से 55 किलोमीटर तथा शिमला से 255 किलोमीटर की दूरी पर भरवाईं नगर है जहां से मंदिर परिसर 2-3 किलोमीटर की चढ़ाई पर 940 मीटर की समुद्रतल से ऊंचाई पर स्थित है। यहां तक पहुंचने के लिए छोटे मार्ग के बाद वहां से आगे सीढ़ियां हैं। यह रास्ता थोड़ा संकरा है तथा सीढ़ियों वाला है परंतु इसे टीन तथा पी.वी.सी. की शीट द्वारा ढका हुआ है ताकि यात्रियों को गर्मी और वर्षा से बचाव रहे। सीढ़ियों के दोनों ओर दुकानें हैं जहां मंदिर में चढ़ाने के लिए प्रसाद, नारियल, चुन्नियां, बिंदियां, चूड़ियां आदि मिलती हैं। मंदिर ट्रस्ट की ओर से लिफ्ट का भी प्रबंध है जो सीधा मंदिर तक पहुंचता है।

पौराणिक संदर्भों के अनुसार भगवान शिव एक बार अपने श्वसुर प्रजापति दक्ष से रुष्ट हो गए थे क्योंकि उन्हें यज्ञ के लिए आमंत्रित नहीं किया गया था परंतु उनकी पत्नी पार्वती को बुला लिया गया था। वहां द्वार पर शिव का पुतला बनाकर खड़ा कर दिया था इससे वे रुष्ट थे। पार्वती इस अपमान को सहन न सकी अतः यज्ञ कुंड में कूद गई। शिव को जब पार्वती की मृत्यु का पता चला तो उन्होंने तांडव नृत्य प्रारंभ कर दिया। इससे सभी देवता और राक्षस भयभीत हो गए और भगवान विष्णु ने अपने धनुष से पार्वती के शरीर के 51 टुकड़े कर दिए और यह टुकड़ा जहां गिरा वहीं शक्तिपीठ की स्थापना हुई। चिंतपूर्णी स्थान पर पार्वती का मस्तक गिरा अतः यहां माता के रूप में स्थापित स्थान का नाम छिन्नमस्तिका पड़ा। ऐसी मान्यता है कि इस भवन का निर्माण 15वीं या 16वीं शताब्दी में हुआ है। इस मंदिर का मुख्य द्वार बड़ा सुंदर है तथा भीमकाय है। मंदिर प्रांगण तक पहुंचने के लिए 10-12 सीढ़ियां हैं। सारे प्रांगण में सफेद संगमरमर लगा हुआ है जो मंदिर को साफ सुथरा रखने में बहुत सहायक है। मुख्य द्वार से अंदर प्रांगण है तथा सामने ही माता का मंदिर है। मुख्य हार, मंदिर के द्वार तथा गुंबद पर सोने का पानी चढ़ा हुआ है।

शहर में यात्रियों की सुख-सुविधा और निवास के लिए होटल तथा सराय का उचित प्रबंध है। पास ही हिमाचल प्रदेश राज्य पर्यटन निगम का होटल है। साधारणतया यात्री माता चिंतपूर्णी और माता ज्वाला जी के दर्शनों के उपरांत अपने ही विश्राम स्थल पर जाना पसंद करते हैं। आस पास के लोग एक ही दिन में दोनों मंदिरों में शीष नवाते हैं।

मंदिर परिसर की पूर्ण व्यवस्था का कार्य एस.डी.एम. की

अध्यक्षता में एक ट्रस्ट द्वारा किया जाता है। मंदिर को सुंदर और दर्शनीय स्थल बनाए रखने के लिए तथा यात्रियों की सुविधा के लिए उचित प्रबंध किए गए हैं। सुरक्षा के लिए गाड़ी है तथा सहायता के लिए स्वयंसेवक उपलब्ध रहते हैं। यात्रियों की सुविधा के लिए तथा भीड़ को नियंत्रित करने के उद्देश्य से लोटे के अंगले लगाए गए हैं तथा प्रदेश और निकास द्वार पृथक-पृथक हैं।

वैसे तो यात्री और श्रद्धालु वर्ष भर दर्शनार्थ आते हैं परंतु शारदीय नवरात्रों में बहुत अधिक यात्री आते हैं। उन दिनों विशेष व्यवस्था की जाती है। साधारणतया भक्त नया कार्य शुरू करने से पूर्व, वर-वधु शादी के उपरांत, आदि अवसरों पर माता का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए आते हैं। मंदिर परिसर में मुंडन करवाने का भी प्रबंध है क्योंकि कुछ व्यक्ति अपने बच्चों के मुंडन यहां करवाना शुभ मानते हैं।

भक्तों की चिंता को मुक्त करने के कारण इसे माता चिंतपूर्णी भी कहा जाता है।

द्रोण मंदिर

स्वां नदी के दाएं तट पर घने जंगल में शांत, गंभीर वातावरण के बीच एक शिवबाड़ी स्थित है। यह स्थान गगरेट से डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर है तथा ऊना से 15 किलोमीटर दूर है। यहां तक मार्ग का उचित प्रबंध है। जनश्रुति है कि इस स्थान पर महाभारत काल में आचार्य द्रोणाचार्य ने अपनी पुत्री के साथ तपस्या कर शिवलिंग की स्थापना की थी। यह शिवलिंग प्राकृतिक भूतल से लगभग पांच फुट नीचे भूमि में गड़ा है। यह मान्यता है कि यहां आकर जो भी याचक सच्चे मन से मन्नत मानता है, उसकी आकांक्षा पूर्ति भगवान शिव अविलंब करते हैं।

ऐसा भी सुना गया है कि महाभारत काल में द्रोणाचार्य प्रति दिन कुरुक्षेत्र में हो रहे युद्ध के उपरांत रात्रि को यहां विश्राम करते थे तथा प्रातः पुनः कुरुक्षेत्र पहुंच जाते थे।

इस स्थान से कोई भी व्यक्ति लकड़ी नहीं ले जाता। ऐसी आस्था है कि यहां लकड़ी केवल मृत व्यक्ति की चिता के लिए ही प्रयोग में लाई जा सकती है। जिस किसी ने भी यहां की लकड़ी अपने घर या अन्यत्र प्रयोग में लाई, वहां हानि ही हुई है।

बाबा बड़भाग सिंह डेरा

यहां पर एक गुरुद्वारा है। यह मुख्यतः सिखों का धर्मस्थल है परंतु यहां पर अन्य धर्मों के अनुयायी भी आकर शीष नवाते हैं। यह लोक आस्था का प्रतीक स्थान (थान) है जो तालाब के किनारे स्थित है। ऐसी मान्यता है कि इस तालाब में स्नान करने वाले व्यक्ति को चर्म रोगों से मुक्ति मिलती है। इसी के पास ही चरण गंगा स्थल है जहां लोगों को भूत प्रेतों से मुक्ति मिल जाती है। वहां ये व्यक्ति पानी के नीचे हाथ पांव धोते हैं। ऐसा करने पर वह व्यक्ति स्वस्थ और दीर्घायु का हो जाता है। इसी आस्था पर विश्वास रखने वाले श्रद्धालु हजारों की संख्या में यहां आकर स्वास्थ्य लाभ करते हैं। पड़ोसी राज्यों से भी लोग यहां आते हैं। होला महल्ला का त्योहार यहां मनाया जाता है।

यह स्थान गुरुद्वारा मैहड़ी के नाम से भी प्रसिद्ध है। यहां लोग दिन रात दर्शन कर सकते हैं। यह स्थान ऊना से 15 तथा अंब से 12 किलोमीटर दूर है। नैहरियां से 3 किलोमीटर दूर है।

पीर निगाहा

यह स्थान लोक आस्था का केंद्र है और ऊना शहर से लगभग डेढ़ किलोमीटर दूर है। इस स्थान से जुड़े अनेक आख्यान प्रचलित हैं। पीर निगाहा की गरिमा के वर्णन में भी लोक आस्था झलकती है। लोक आस्थाओं की परंपरा को सुरक्षित रखने की दृष्टि से इस स्थान को विकसित किया गया है। यह स्थान हिंदू और मुसलमान श्रद्धालुओं द्वारा पूजनीय है। अन्य धर्मों के अनुयायी भी यहां आकर अपनी मन्नत पूर्ति के लिए प्रार्थना करते हैं।

इस डेरे की स्थापना के बारे में लोगों का कहना है कि लगभग दो सौ वर्ष पूर्व लोग ऊना तथा आसपास के क्षेत्रों से घी बेचने के लिए होशियारपुर (पंजाब) में जाया करते थे। जाती और आती बार इस स्थान पर ठहरते थे क्योंकि उस समय आने-जाने के साधन उपलब्ध नहीं थे। लोग पैदल ही आते-जाते थे। रात्रि विश्राम के लिए यहां बाबा के पास ठहरते थे। बाबा सभी को खाने के लिए अन्न, चावल व दाल देता था जिसे वे स्वयं पका कर खा लेते और रात्रि विश्राम कर प्रातः अपने गंतव्य स्थान को चल देते। यह सभी निःशुल्क था।

स्वां नदी का तटबंध

हिमाचल प्रदेश का सिंचाई एवं स्वास्थ्य विभाग स्वां नदी पर तटबंध का निर्माण कर रहा है। अपनी अभूतपूर्व तकनीक के कारण यह पुल वास्तव में पर्यटकों को आकर्षण प्रदान कर रहा है। विशेष रूप से झलेड़ा स्वां पुल से लेकर संतोखगढ़ क्षेत्रों का संपर्क स्थापित हो सकेगा, साथ ही हजारों एकड़ उपजाऊ भूमि का पुनरुद्धार संभव हो सकेगा। वास्तव में ऊना जिला का अपना ही महत्त्व है। यहां की बोली पंजाब से मिलती-जुलती है तथा लोगों का रहन-सहन भी वैसा ही है परंतु अब वर्तमान समय में यह अन्न, फल और सब्जियों के उत्पादन के लिए उभरता हुआ भू-भाग बन रहा है। इसका मुख्य कारण स्वां नदी के जल और तट की सुरक्षा के लिए उठाए गए कदम हैं जिन्हें सरकार और जनता मिलकर पूरा कर रहे हैं।

3 खेड़ा निवास, संजौली, शिमला-171 006,
मो. 098161 36653

सैर सपाटा

एक बंगला न्यारा

◆ डॉ. आर. वासुदेव प्रशांत

ऊना हिमाचल प्रदेश का एक ऐसा जिला है जिसका अधिकांश भाग मैदानी है। थोड़ा-बहुत क्षेत्र ही पहाड़ी है जो कांगड़ा, हमीरपुर आदि जिलों के साथ लगता है। भरवाईं एक ऐसा स्थान है जो काफी ऊँचाई पर स्थित है। यह ऊना नगर से लगभग 50 कि.मी. दूर है और देहरा, ज्वालाजी, धर्मशाला आदि की ओर जाने वाले मार्ग पर स्थित है। मुबारकपुर से सीधी चढ़ाई चढ़कर बस भरवाईं पहुँचती है जिसकी समुद्रतल से ऊँचाई 3200 फुट के करीब है। यहां से चिन्तपुर्णी माता का प्रसिद्ध मन्दिर महज तीन कि.मी. दूर है।

भरवाईं अंग्रेजों के समय से ही एक ऐतिहासिक बंगले के लिए प्रसिद्ध है जिसे ऊना जिला के लोग 'भरवाईं का बंगला' नाम से जानते हैं। यह बंगला एक ऊंचे टीले पर स्थित है जिस की ऊंचाई समुद्र तल से लगभग 3400 फुट है। यदि बंगले से खड़े हो कर चारों तरफ देखा जाये तो छोटी-छोटी पर्वत-शृंखलायें नजर आती हैं जो एक बहुत ही रमणीय दृश्य प्रस्तुत करती हैं।

भरवाईं का प्राकृतिक वातावरण तो आकर्षक है ही, इस का जलवायु इस से भी अधिक स्वास्थ्यवर्धक और शीतल है। गर्मियों के दिनों में मैदानी इलाकों से पहुँचने पर शीतल हवायें आगन्तुक का स्वागत करती हैं। शायद इसीलिए अंग्रेजों के समय में भरवाईं को काफी महत्त्व दिया गया था। ऊँची जगह पर स्थित होने के कारण यहां गर्मी न के बराबर पड़ती है। इसीलिए इसे ऊना जिला का एक लघु हिल स्टेशन कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

नामकरण : भरवाईं नाम कैसे पड़ा इस संबंध में यहां के बुजुर्ग लोग एक घटना का वर्णन करते हैं। बंगले के पास एक बहुत पुराना पीपल का पेड़ है। यहां पर कभी इस क्षेत्र की तीन रियासतों-डाडासीबा, जसवां और राजपुरा-की हदबन्दी पड़ती थी। इस पीपल के पेड़ के निकट इन तीनों रियासतों का एक सांझा प्याऊ होता था जिसे स्थानीय भाषा में 'परों' कहते हैं।

कहते हैं कि एक बार एक अंग्रेज अधिकारी घोड़े पर सवार होकर इधर का इलाका देखने आ निकला। गर्मी के दिन थे। वह इस पीपल के पेड़ के नीचे आराम करने बैठ गया। उस ने इस प्याऊ से पानी पिया और पानी पिलाने वाले व्यक्ति से कुछ पूछताछ की। वह व्यक्त बहरा था। अतः उसने सोचा कि शायद यह अंग्रेज उस से उस का नाम आदि पूछ रहा है। इस पर उस ने अपना परिचय 'भरोइया' इस रूप में दे दिया जिस का मतलब होता है 'पानी भरने वाला' या 'पानी पिलाने वाला'। लोग कहते हैं कि इसी आधार पर इस स्थान का नाम भरवाईं पड़ गया।

प्रगति के चरण : जिन दिनों वह अंग्रेज अधिकारी घूमता हुआ यहां आया था उन दिनों यहां कोई आबादी आदि नहीं थी। केवल वह प्याऊ ही था जो मुसाफिरों की सुविधा के लिए स्थापित किया गया था। सन् 1860 में एक अन्य अंग्रेज अधिकारी पैदल ही इस स्थान का दौरा करने आया और यहां की पूरी स्थिति का जायजा ले कर वापिस चला गया।

इस के बाद सन् 1865 में अंग्रेजों ने यहां आकर तम्बू लगा दिए और इर्द-गिर्द के इलाके की स्थिति का जायजा लेने लग पड़े। इस स्थान की उपयुक्तता देख कर बाद में उन्होंने यहां एक पक्का कैंप भी स्थापित कर दिया। यहीं से वे दूरबीनों की सहायता से धर्मशाला के क्षेत्र का सर्वेक्षण करने लगे। वर्तमान धर्मशाला कैण्ट का इलाका दूरबीनों की सहायता से अच्छी तरह देखा जा सकता था। संभवतः इसी सर्वे के आधार पर धर्मशाला में एक मिल्ट्री कैण्ट स्थापित करने का निर्णय लिया गया।

सन् 1867 में भरवाईं में एक बंगला बनाने की योजना पर विचार किया गया जिस से इधर आने वाले अंग्रेज अधिकारियों को कोई परेशानी न हो और उन्हें निवास आदि की सुविधा मिल सके। भरवाईं का यह बंगला सन् 1868 में बन कर तैयार हो गया। इसके लिए ईंटें आदि राजपुरा से मंगवानी पड़ी थीं।

इस स्थान से दूर-दूर के इलाकों का सर्वेक्षण करने के बाद अंग्रेज अधिकारियों की एक पार्टी धर्मशाला की ओर भेजी गई जबकि कुछ अंग्रेज अधिकारी भरवाईं में ही रह गए। फेडी साहिब के नाम से अभी तक भी प्रसिद्ध एक अंग्रेज अधिकारी जो जिलेबंदी का जिम्मेवार था यहीं रह गया। उसने यहां अपने लिए एक कोठी बनवा ली जो अब पूरी तरह से गिर चुकी है। इसी के निकट एक वायरलैस स्टेशन भी बाद में स्थापित किया गया।

अब धीरे-धीरे इस क्षेत्र का विकास भी होने लगा। सन् 1869 में भरवाईं में आसपास के गांवों के बच्चों के लिए एक प्राइमरी स्कूल खोल दिया गया। कुछ वर्षों के बाद सन् 1882 में लोगों की सुविधा के लिए एक विश्राम गृह तथा कुछ सरायें बना दी गईं। सन् 1882-84 के बीच एक तारघर की स्थापना भी की गई। किन्तु इस इलाके में बस सेवा बहुत बाद में आरंभ हुई। सन् 1928 में पहली बार केवल एक बस होशियारपुर से भरवाईं तक आने लगी। बाद में सन् 1929-30 में दो बसें चल पड़ीं। इनमें एक बस होशियारपुर से भरवाईं तक थी और दूसरी भरवाईं से धर्मशाला तक थी। ये दोनों बसें सवारियों के अलावा डाक भी लाती ले जाती थीं।

भरवाईं का महत्त्व : अब धीरे-धीरे भरवाईं का महत्त्व बढ़ने लगा। अंग्रेज साम्राज्य के समय सुविधाजनक और कुछ-कुछ ठंडा स्थान होने के कारण भरवाईं की उन्नति होने लगी। ऊंचाई पर स्थित होने के कारण और कम गर्मी पड़ने से इस की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। इसके अलावा यह होशियारपुर से काफी निकट भी पड़ता है। इसलिए अंग्रेज अधिकारियों ने गर्मी से थोड़ी-बहुत राहत पाने के लिए समय के होशियारपुर जिले का ग्रीष्मकालीन मुख्यालय इसे ही बना दिया। होशियारपुर के उपायुक्त का दफ्तर तथा चारों तहसीलों - ऊना, गढ़शंकर, दसूहा तथा रोपड़ की कचहरियां भी यहीं पर लगने लगीं। इस के अलावा कई अन्य महकमे जैसे पुलिस, कानूनगो, पटवारी, माल अफसर, जैलदार तथा वकील आदि भी इन दिनों यहीं पर आकर रहने लगे थे तथा प्रशासन के कार्यों में हिस्सा लेते थे।

विकास-दर-विकास

अंग्रेजों द्वारा महत्त्व दिए जाने के बाद भरवाईं का धीरे-धीरे समुचित विकास होने लगा। बंगला तथा अन्य अनेक भवनों के अलावा यहां पर होशियारपुर के उपायुक्त तथा दूसरे बहुत से अधिकारियों के लिए भी भवन बनाये जाने लगे। डाकखाना तथा रेंज-आफिस जैसे दफ्तर भी खोले गए।

धर्मशाला में मिल्टरी कैण्ट बनने के बाद सेना का एक पड़ाव भरवाईं में भी लगने लगा। पहला पड़ाव देहरा में लगता था और दूसरा भरवाईं में तथा तीसरा गगरेट में लगाया जाता था। भरवाईं में पड़ाव के लिए 104 कनाल भूमि पर कब्जा किया गया। इस में रैस्ट हाऊस, बाग आदि के अलावा घोड़ों तथा खच्चरों को बांधने के लिए तबेले भी बनाए गए। इसी क्षेत्र में लोगों को दुकानें खोलने की इजाजत भी दी गई। इसके लिए जमीन तो सरकार ने मुफ्त में दी, किन्तु बाकी सारा प्रबन्ध लोगों को खुद करना पड़ा। इस तरह धीरे-धीरे भरवाईं में 50 के करीब दुकानें खुल गईं।

वर्तमान स्वरुप में प्रगति : भरवाईं की वर्तमान स्थिति काफी अच्छी हो गई है। विकास की दृष्टि से यह स्थान दिन-ब-दिन तरक्की करता जा रहा है। अब इसे उपतहसील का दर्जा मिल जाने के कारण यहां पर अनेक विभाग और दफ्तर खुल गए हैं। चिन्तपुर्णी का मन्दिर निकट होने के कारण इस का विकास और भी शीघ्र हो रहा है। यहां पर कानून और व्यवस्था की दृष्टि से एक पुलिस थाना भी स्थापित कर दिया गया है। इस के अतिरिक्त पी. डब्ल्यू.डी. एवं बी.आर. का एक्स-इ-एन दफ्तर भी कार्यरत है।

यात्रियों तथा मन्दिर में आने वाले श्रद्धालुओं के लिए पर्यटन विभाग का चिन्तपुर्णी हाईट्स नामक होटेल तथा 40-45 कमरों का यात्री-भवन भी निर्मित किया गया है। चिन्तपुर्णी में एच.आर. टी.सी. द्वारा एक बड़ा तथा सुन्दर बस-अड्डा भी बना दिया गया है। साथ ही 40-45 करोड़ रुपये की लागत से एक बहूद्देश्यीय परिसर भी मन्दिर न्यास की तरफ से बनाया गया है। क्षेत्र में पानी की सुविधा का पूरा प्रबन्ध है। इस दृष्टि से आई.पी.एच. विभाग की ओर से 70-75 लाख रुपये खर्च करके पानी की सुचारु व्यवस्था की गई है।

एक और उल्लेखनीय बात यह है कि सारे ही क्षेत्र में विद्युत-विभाग की ओर से मन्दिर तथा पूरे रास्ते में बिजली की बहुत ही सुन्दर व्यवस्था की गई है। इस सब के अतिरिक्त भरवाईं में एक अग्नि-शमन केन्द्र तथा वन-विभाग का रेंज-आफिस भी स्थापित है। स्वास्थ्य व्यवस्था की दृष्टि से यात्रियों के लिए 108 नं. के रोगी-वाहनों की पूरी-पूरी व्यवस्था भी मन्दिर-न्यास ने कर रखी है और सफाई और स्वच्छता की दृष्टि से सीवरेज का निर्माण भी चल रहा है। पूरे मार्ग में छः.सात के करीब रेन-शैल्टर भी बने हैं जिनमें बैठने के लिए बैंच भी बनाए गए हैं। भरवाईं का कस्बा तथा चिन्तपुर्णी मन्दिर साथ-साथ होने के कारण क्षेत्र का एकत्रित रूप से समुचित विकास हो रहा है। भरवाईं से चिन्तपुर्णी मन्दिर की तरफ जाने वाले मार्ग पर एक भव्य द्वार का निर्माण अत्यन्त आकर्षक और मोहक है।

बेहतर पर्यटन स्थल बनने की क्षमता : भरवाईं का जलवायु निस्संदेह काफी अच्छा है और प्राकृतिक सौन्दर्य भी मनोरम है। इस की ऊंचाई और धर्मशाला की ऊंचाई जहां इस समय शिक्षा बोर्ड स्थित है लगभग बराबर है। अतः जलवायु की दृष्टि से भरवाईं का एक हिल स्टेशन के रूप में पर्यटन विकास की दृष्टि से काफी उपादेय होगा। यदि यहां कुछ होटेल और मनोरंजन के पार्क तथा अन्य स्थल निर्मित हो जायें तो भरवाईं निस्संदेह अपने साथ लगते मैदानी क्षेत्रों के लिए एक अच्छा स्वास्थ्यवर्धक स्थान बन सकता है। आशा है हिमाचल सरकार इस ओर अवश्य ध्यान देगी ताकि ऊना और साथ लगते पंजाब के क्षेत्रों के लिए एक अच्छा और सस्ता स्वास्थ्यवर्धक स्थान उपलब्ध हो सके।

जवाहर नगर, धर्मशाला-176213 (हि.प्र.)
चलभाष : 94599-87125

सैरगाह

सैलानियों का पहला पड़ाव

◆ सौरभ

क्षेत्रफल की दृष्टि से ऊना प्रदेश का दूसरा सबसे छोटा जिला है। इसकी आधी से ज्यादा सीमा पंजाब के साथ लगती है इसलिए इसे राज्य का मैदानी क्षेत्र भी कहा जाता है। ऊना का अधिकांश भू-भाग शिवालिक पहाड़ियों के आंचल में अवस्थित है। शिवालिक पहाड़ियों की औसतन ऊंचाई पांच सौ से एक हजार मीटर के मध्य है। हिमाचल के दूसरे जिलों यथा कांगड़ा, मंडी, सोलन, कुल्लू आदि की तरह ऊना में उस तर्ज के हिल स्टेशन नहीं हैं जहां गर्मियों में पर्यटक शीतल हवाओं और शांत माहौल का मजा लेने आते हैं या सर्दियों में बर्फबारी का लुत्फ लेने के लिए।

ऊना में शिमला, मनाली, चंबा, डलहौजी, धर्मशाला की तरह का पर्यटन नहीं हो सकता। इसलिए यहां पर वैसा ढांचा विकसित नहीं हो पाया। पर्यटन की दृष्टि से जिला को उन्नत या विकसित नहीं कहा जा सकता। यहां पर थोड़ा-बहुत जो भी पर्यटन है, वह सिर्फ धार्मिक स्तर का है।

ऊना में पर्यटन विकास की प्रबल और प्रचुर संभावनाएं हैं। बस आवश्यकता है एक पहल की प्रशासकीय स्तर पर इच्छाशक्ति की। भले ही ऊना के पास डलहौजी, धर्मशाला, पालमपुर, बरोट, कसौली जैसे स्थान न हों परंतु ऐसे स्थानों की कोई कमी नहीं जो हिल स्टेशन न सही, लेकिन बेहतर पर्यटन स्थल तो बन सकते हैं।

प्रश्न यह है कि अगर हरियाणा 'मोरनी हिल्स' जैसे स्थान को एक लोकप्रिय और प्रसिद्ध टूरिस्ट सेंटर में बदल सकता है तो ऊना के ऐसी ही लोकेशन वाले स्थान क्यों नहीं? ऊना का सर्वाधिक प्रतिष्ठित और लोकप्रिय स्थल है चिंतपूर्णी मंदिर। होशियारपुर-धर्मधाला मार्ग पर होशियारपुर से लगभग 40 किलोमीटर दूर है चिंतपूर्णी। इस मार्ग पर जहां पंजाब हिमाचल की सीमाएं समाप्त या शुरू होती हैं वहां पर बड़ा सुंदर दृश्य है। छोटी-छोटी हरी-भरी पहाड़ियां। यद्यपि वन विभाग का क्षेत्र है फिर भी सांझे प्रयासों से कुछ 'हट्स' बनाए जा सकते हैं। मुबारकपुर से चिंतपूर्णी के मध्य चीड़ के घने जंगल सड़क के साथ हैं यहां पर कुछ निजी होटल, गेस्ट हाऊस आदि खुले हैं। यह एक बड़ा ही नयनाभिराम स्थल है। बड़ी संख्या में यात्री, पर्यटक इस रास्ते से धर्मशाला, मकलोडगंज, चामुंडा, पालमपुर, कांगड़ा आदि के लिए गुजरते हैं। अक्तूबर से अप्रैल तक इन स्थानों पर मौसम सुहावना या दयालु रहता है। इसी मार्ग पर मुबारकपुर से हमीरपुर की ओर अंब तहसील मुख्यालय है। नैहरियां गांव से गुरुद्वारा बड़भाग सिंह को रास्ता है। बड़भाग सिंह में लाखों की संख्या में श्रद्धालु प्रतिवर्ष आते हैं। नैहरियां और जवार के मध्य बहुत सुंदर ढलानदार समतल भूमि है। इस मार्ग पर होटल या दूसरी सुविधाओं का अभाव है जबकि बहुत अधिक आवश्यकता है।

ऊना से होशियारपुर की दूरी मात्र 38 किलोमीटर है। इस यात्रा का आधा भाग पहाड़ी रास्ते से गुजरता है। बरसात और वसंत ऋतु में दृश्य दिल को मोहित करने वाले होते हैं। इस मार्ग में पंडोगा से आगे पंजाब सीमा तक मोरनी हिल्स टाइप पर्यटन स्थल विकसित हो सकते हैं। ऊना का सौभाग्य है कि पंजाब जैसे समृद्ध और मौज-मस्ती करने वाले पड़ोसी यहां से हजारों की संख्या में प्रतिदिन गुजरते हैं।

भाखड़ा-नंगल डैम और कांगड़ा जिले के शक्तिपीठों व चंबा, डलहौजी के दर्शनार्थ जाने वाले व सैर सपाटा करने वालों की बड़ी संख्या यहां से होकर गुजरती है। नंगल डैम, ऊना से 17 किलोमीटर और भाखड़ा वहां से 12 किलोमीटर आगे जिला बिलासपुर में है। भाखड़ा डैम के यानी गोबिंद सागर के साथ-साथ रायपुर मैदान होकर थाना कलां पहुंचते हैं। ऊना-हमीरपुर या ऊना, मंडी रोड अब डबल लेन हो चुका है। कुल्लू-मनाली जाने के लिए बजाय कीरतपुर स्वारघाट के इस मार्ग से पिछले कुछ सालों से पर्यटकों का आवागमन काफी बढ़ गया है। लेकिन ऊना से लेकर मंडी तक रास्ते में कहीं भी स्तरीय पर्यटन सुविधाओं वाला ढांचागत विकास नहीं हुआ है। जबकि बंगाणा घाटी प्राकृतिक सुंदरता से पूरी तरह मालामाल है। एक ओर गोबिंदसागर और दूसरी ओर सोलहसिंगीधार, मध्य में एक पूरी घाटी जोल ठियाणी कस्बे के साथ समाप्त होती है। ऊना-हमीरपुर की जो ऊची पहाड़ी पर स्थित है इस क्षेत्र को 'कुटलैहड़' से जाना जाता है। दोनों जिलों के सीमांत पर बहुत खूबसूरत, आकर्षक और अद्‌भूत पर्वतीय सौंदर्य के दर्शन मन को बरबस मोह लेते हैं। नीचे सामने गोबिंद सागर और साथ में घने चीड़ वन।

वास्तव में जिले का यही भूभाग है जो सही मायनों में पर्यटन के लिए सर्वाधिक अनुकूल है। सोलहसिंगीधार की ऊंचाई भी 1200-1300 मीटर के करीब है। धार के दोनों ओर हरी-भरी

घाटियां है। प्रसिद्ध तीर्थस्थल दयोटसिद्ध के लिए यहीं से सड़क मार्ग है लठियाणी-बड़सर होते हुए। क्योंकि कुल्लू-मनाली, मंडी, रिवालसर के लिए उत्तरी पंजाब से यही मार्ग अधिक सुविधाजनक और अपेक्षाकृत कम दूरी वाला है। यदि इस मार्ग पर अच्छी ढांचागत सुविधाओं का विकास हो जाए तो और अधिक पर्यटक पूरे उत्तरी भारत से यहां पहुंचेगे। सभी शक्तिपीठों और कांगड़ा घाटी के लिए भी यह मार्ग उपयुक्त है। वर्षा ऋतु के बाद बंगाणा घाटी में मौसम अत्यधिक खुशगवार हो जाता है। ऊना से बड़सर तक यदि उचित सुविधाएं उपलब्ध हों और आगे बड़सर से मंडी तक। रिवालसर के प्रसिद्ध तीर्थ में बहुत बड़ी संख्या में सिख श्रद्धालु आते हैं।

मेरा अपना आकलन है कि ऊना में धार्मिक पर्यटन तो बहुत ज्यादा है और एक से बढ़कर एक धार्मिक महत्त्व के स्थल जिले में हैं। लाखों श्रद्धालु आते हैं। हां, मोरनी हिल्ज टाइप मॉडल यदि तीन चार जगहों पर विकसित हो जाएं तो पर्यटन को पंख लग सकते हैं। अमृतसर के बाद नंगल डैम ही पंजाब का प्रमुख पर्यटन स्थल है यदि होशियारपुर-ऊना मार्ग पर नई तर्ज की पर्यटन सुविधाओं का विकास हो तो पर्यटक या श्रद्धालु हिमाचल से होकर आना पसंद करेंगे बजाय कीरतपुर होकर।

पर्यटन विकास की इन संभावनाओं के साथ-साथ हमें पर्यारवण और यहां के सामाजिक परिवेश पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों से सचेत रहना पड़ेगा। इन रास्तों पर आपको 'असल' हिमाचल के दर्शन होते हैं। पर्यटन प्रदूषण से यह क्षेत्र मुक्त हैं। यहां का जनजीवन शांत और सरल है। इसकी रक्षा भी होनी चाहिए।

गांव व डाकघर बसंतपुर, सरकाघाट,
जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 042

(पृष्ठ 18 से आगे)

ओम प्रकाश त्रिखा, मीरा बेन, खलीफा फजलदीन एवं बीबी फातिमा का नाम उल्लेखनीय है।

सुरक्षा सेवाएं : महाभारत में उल्लिखित वह हिमालयई क्षेत्र जो आज के हिमाचल प्रदेश को निदृष्ट करता है, छोटे-बड़े गणतंत्रों में बंटा हुआ था। इन गणतंत्रों को जिन्हें जनपद भी कहा जाता था, का प्रमाण ईस्वी पूर्व पांचवीं शताब्दी के आचार्य पाणिनी के विख्यात ग्रन्थ अष्टाध्यायी में भी मिलता है। आचार्य पाणिनी द्वारा वर्णित जनपदों जिन्हें वह आयुधजीवी संघ की संज्ञा भी देते हैं, में औदुम्बर, त्रिगर्त कुलूत एवं कुलिन्द प्रमुख थे। इतिहास इस बात का साक्षी है कि देवभूमि के नाम से जाना जाने वाला हिमाचल प्रदेश जहां अपनी छाती में कला एवं संस्कृति की समृद्ध एवं अमूल्य थाती, संजोये हुए हैं, वहीं इसकी शस्य श्यामला गोदी, में पलकर जवान होने वाले सूरमाओं की वीरता एवं शौर्य के डंके देश में ही नहीं विश्वभर में दुश्मनों के कलेजों को दहलाते रहे हैं। ईसा से 326 वर्ष पूर्व आंधी की तरह बढ़ते यूनान सम्राट सिकन्दर के सैनिक वर्तमान कांगड़ा जिला की सीमा पर बहने वाली व्यास नदी के उत्तरी तट पर अवस्थित काठगढ़ से आगे बढ़ने का साहस नहीं जुटा पाये थे, क्योंकि उससे आगे के क्षेत्र में उदुम्बर, त्रिगर्त, कुलिन्द और कुलूत के आयुधजीवी संघों का राज्य था।

प्राचीन समय के उदुम्बर, त्रिगर्त एवं कुलिन्द के गणतंत्रों की सीमाओं में वर्तमान ऊना जिला कभी सम्पूर्ण रूप से और कभी इसका कोई भाग अवश्य मिलता था। त्रिगर्त के ऐतिहासिक कटोच वंश के एक साहसी और निडर युवा पूर्ण चन्द द्वारा 1170 ई. में जसवां दून घाटी के राजपुरा में स्वतंत्र राज्य की नींव डाली गई थी। जसवां राज्य ने मुगल बादशाह अकबर के शासनकाल में 1572, 1588 और 1595 में विद्रोह किया था। बाद में वर्ष 1846-48 में जसवां राजा उम्मेद सिंह ने ऊना के बेदी वंशज बाबा विक्रमा सिंह बेदी, दातारपुर के राजा जगत चन्द, गुलेर के राणा शमशेर सिंह और कांगड़ा के कटोच राजा प्रमोद चन्द आदि ने नूरपुर रियासत के वजीर राम सिंह पठानिया के साथ मिलकर अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा बुलन्द किया था। यहां यह कहना उल्लेखनीय होगा कि अमर सेनानी जरनल जोरावर सिंह वही जो जम्मू राज्य के डोगरा शासक राजा गुलाब सिंह के महान सेनानायक थे और जिन्होंने अपनी दूरदर्शिता, सूझबूझ एवं वीरता के बलबूते लद्दाख, बल्तिस्तान और स्कर्दू जैसे दुर्गम क्षेत्रों को विजित किया था, की सेना में ऊना क्षेत्र के उत्तम वज़ीर और हाजरू वजीर भी थे। इन दोनों रणबांकुरों की अगस्त, 1834 लद्दाख क्षेत्र में लड़ी एक भयंकर लड़ाई में मृत्यु हो गई थी। यहां जिला की हरोली तहसील के भदसाली गांव का उल्लेख भी प्रासंगिक हो जाता है। इस गांव के काफी सैनिकों ने द्वितीय विश्व युद्ध में भाग लिया था, जिनमें से 10 ने वीरगति पाई थी। इससे पूर्व भी इस गांव के वीरों ने प्रथम विश्वयुद्ध में भाग लिया था, जिनमें से 11 युद्धभूमि में लड़ रहे थे। प्रथम विश्व युद्ध के बाद जब उच्च सैन्याधिकारियों द्वारा इस गांव के सैनिकों को पुरस्कार स्वरूप भूमि देने की पेशकश की गई तो उन्होंने उसके बदले में शत्रु से छीनी गई तोप देने का निवेदन किया, जिसे तत्कालीन सरकार द्वारा मान लिया गया। इस तोप को गांव के बीचोबीच निर्मित एक भव्य युद्ध स्मारक में रखा गया था परंतु समय बीतने के साथ यह स्मारक अपनी भव्यता कायम नहीं रख सका। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भी इस क्षेत्र के अनेकों वीरों ने क्रांति पुंज नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की कमान में आजाद हिन्द फौज में भर्ती होकर अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ाई लड़ी थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात कश्मीर पर कबायली आक्रमण (1947-48), भारत-चीन युद्ध (1962), भारत-पाक युद्ध (1965-1971) और वर्ष 1999 के कारगिल युद्ध में विजय आप्रेशन के दौरान, यहां के अनेक रणबांकुरों ने अपनी वीरता एवं खून से शौर्य गाथाएं लिखीं।

लोक संस्कृति

आधुनिकता व ग्राम्य परिवेश का सम्मिश्रण जनपद का लोकजीवन

◆ डॉ. भक्तवत्सल शर्मा प्राचार्य

हिमाचल प्रदेश का सीमांत क्षेत्र कहलाने वाला ऊना जनपद प्रसिद्ध शिवालिक पहाड़ियों की मध्यवर्ती शृंखला में स्थित है। विश्व प्रसिद्ध भाखड़ा बांध, गोविन्द सागर झील के अलावा पंजाब के नंगल, होशियारपुर तथा पठानकोट की सीमाएं भी ऊना जिले के साथ लगती हैं। यदि हिमाचल प्रदेश के जिलों की सीमाओं के अनुसार ऊना जिले का अवलोकन किया जाए तो बिलासपुर, हमीरपुर व कांगड़ा जिले की सीमाएं इसके साथ लगती हैं। आजादी से पूर्व प्रदेश का यह ऊना जिला पंजाब के होशियारपुर जिले का एक अंग था।

आज का ऊना क्षेत्र शिवालिक चोटियों के आसपास रोपड़, नंगल और होशियारपुर के गढ़शंकर, हमीरपुर व जसवां क्षेत्र की लोक संस्कृति का मिश्रण है। हिमाचल में होते हुए भी ऊना जिले के खान-पान, रहन-सहन, पहरावा तथा भाषा व बोलियां पंजाब से ही प्रभावित हैं। यदि मुगल काल के इतिहास पर नजर दौड़ाई जाए तो ऊना जिले का संबंध लाहौर के मुगल राज्य जालन्धर व दोआब के साथ भी था। महाभारत काल के राजा सुशर्मा का त्रिगर्त देश ही पंचनद व जालंधर दो-आब के अंतर्गत आता था। उदुम्बरों की शासित भूमि में भी होशियारपुर ऊना क्षेत्र आता था। कटोच वंश, कहलूर राज्य, महाराणा रणजीत सिंह तथा जसवां राज्य से भी ऊना जिले का संबंध रहा है। इतिहास की इन पंक्तियों से यही प्रतिपादित होता है कि ऊना जिले के जन-जीवन पर पंजाब का पर्याप्त प्रभाव है।

वर्तमान परिस्थिति में यहां के जन जीवन को तीन भागों में बांटा जा सकता है। जिसमें एक भाग जसवां, अम्ब, तलवाड़ा व नूरपुर का तो दूसरा कुटलैहड़, हमीरपुर का तथा तीसरा ऊना, नंगल व गढ़शंकर का शामिल है। इस प्रकार ऊना जिले के लोगों का रहन-सहन और खान-पान मिश्रित ही है। यह पूर्ण रूप से न तो हिमाचली है और न ही पंजाबी। अलबत्ता कुछ कहलुरी, कांगड़ी, हमीरपुरी व पंजाबी का सम्मिश्रण कहा जा सकता है। इस आधार पर नानक के वंशज कलाधारी के अनुयायियों सहित ऊना में बस जाने से यहां पर पंजाबी संस्कृति को बल मिला। जबकि कांगड़ा, हमीरपुर, कुटलैहड के विभिन्न शासकों का इस क्षेत्र में प्रभुत्व होने के कारण यहां पर पहाड़ी संस्कृति बलवती हुई।

पहरावा

आधुनिकता के रंग से ऊना जिला भी अछूता नहीं है। युवा पीढ़ी जहां डिजाइनर कपड़े पहनना पसंद करते हैं। वहीं बुजुर्ग लोग पारंपरिक पहरावे को ही तरजीह देते है। यहां के पहरावे पर पहाड़ी व पंजाबी वेशभूषा का असर देखने को मिलता है। पारंपरिक पहरावे में पुरूष पंजाबी जूती के साथ लम्बा कुर्ता व पगड़ी बांधते थे और स्त्रियां चोली घाघरी के साथ सिर पर चुनरी ओढ़ती थी। शादी-ब्याह के मौके पर बड़े-बड़े घाघरे पहनने का भी प्रचलन था। लेकिन वर्तमान समय में यह पहरावा गुजरे जमाने की बात हो गई है। युवा पीढ़ी आधुनिकता के रंग में रंगते हुए बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा तैयार किए गए ब्रैंडिड कपड़ों की ओर आकर्षित हो रहे हैं। जिले में कुछ स्थानों पर ब्राह्मण परिवार के लोगों द्वारा धोती कुर्ता पहनने का भी प्रचलन है।

खान-पान

ऊना प्रायः कृषि प्रधान क्षेत्र है। इसीलिए यहां के लोग कृषि पर निर्भर रहते हैं तथा पशुपालन भी करते हैं। पशुओं में गाय, बकरी, भैंस, सूअर, घोड़ा, खच्चर आदि रखने का रिवाज भी है। हालांकि आधुनिकता के साथ आगे बढ़ते हुए शिक्षित युवा पीढ़ी नौकरी की तलाश में दूसरे शहरों में जा रहे हैं। लेकिन घर का कोई-न-कोई सदस्य कृषि कार्य करता है। स्त्रियां उनका साथ देती हैं। इस कारण यहां का खान-पान स्थानीय उपज के आधार पर है। ऊना में मक्का, गेहूं, उड़द, चना तथा चावल की पैदावार अधिक होती है। अतः मक्की की रोटी, गेहूं की रोटी, चावल कढ़ी, उड़द की दाल-आम की बांजी। माहणी, पतेहड़, खिचड़ी, दाल, सरसों का साग, अरबी, कचालू का सलूना (लस्सी में) का प्रयोग ज्यादा करते हैं। बंगाणा क्षेत्र में दीपावली में ऐकलियां पकवान पकाया जाता था। रूमाली रोटी का भी खूब चलन है। फलों में अधिक मात्रा में आम पाए जाते हैं। आम की कई किस्म भी यहां देखने को मिलती हैं। आम के अलावा अमरूद, जामुन, तरबूज,

नाशपाती, संतरा, लुकाठ, केला आदि भी प्राप्त होते हैं। पेय पदार्थों में गन्ने का रस, लस्सी, दूध, नींबू, शिकंजवी महत्त्वपूर्ण है।

क्षेत्र में अधिक लोग शाकाहारी वैष्णव हैं। सादा भोजन पसंद करते हैं। शादी-विवाह में कढ़ी और माहणी का महत्त्व है।

जनजीवन तथा रहन-सहन

ऊना के रायपुर भाखड़ा, भंजाल, चमियाडी, तूतड्डू, अरलू, सुकडियाल, अंब का अंदरूनी क्षेत्र मरवाह आदि दुर्गम क्षेत्रों को छोड़कर अन्यत्र समतल क्षेत्रों के रहने वाले लोगों का जीवन सरल सुगम है। पेयजल व्यवस्था है, बिजली सर्वत्र उपलब्ध है। सड़कें तथा आवाजाही के साधनों की पर्याप्त व्यवस्था है। शिक्षा के लिए राजकीय तथा निजी शिक्षण संस्थानों की पर्याप्त व्यवस्था है।

जहां तक रहन-सहन का प्रश्न है लोगों में शहरीकरण की अंधी दौड़ लगी हुई है। आर्थिक संपन्नता के साथ-साथ लोगों की जीवन शैली सुधरी है और लोगों के पास सभी प्रकार की आधुनिक सुख-सुविधाएं मौजूद हैं। ग्राम्य जीवन से ओतप्रोत लोग घरों में नीचे बैठकर ही खाना खाते हैं। कहीं-कहीं तो घर के आंगन में अस्थायी चूल्हा बनाकर खाना पकाने का रिवाज है। मात्र जो ऊंचे पदों पर नौकरी पेशा हैं, या फिर ऊंचे व्यापारी हैं, उनका रहन-सहन कुछ स्तरीय एवं व्यवस्थित हो गया है। अब से बीस-पच्चीस वर्ष पूर्व तक लोगों में सौहार्द भाईचारा और आतिथ्य अधिकायत में देखने में मिलता था परंतु अब स्वार्थ परायणता अधिक होने के कारण सौहार्द और अतिथि सत्कार में कमी आई है।

भारतीय संस्कारों में नामकरण, निष्कमण अन्नप्राशन, चूड़ाकरण(मुण्डन) विवाह संस्कार तथा अन्योष्टि प्रमुख है। कुलीन ब्राहमण परिवारों में यज्ञोपवीत(जनेउ) संस्कार तथा विद्यारम्भ या वेदारम्भ संस्कार भी कराए जाते हैं। सामान्यतया विवाह के समय यज्ञोपवीत संस्कार भी कराते है जो सर्वत्र लगभग एक जैसा ही होता है। यहाँ के लोगों की ये मान्यता है कि संस्कारों के पालन से जीवन पवित्र और सुखमय हो जाता है। पुत्र जन्म पर यहाँ अधिक खुशी होती है। सूतक पातक के समय घर में पूजा अनुष्ठान नहीं किया जाता। पाँचवे दिन संस्कार किया जाता है उसे 'पंजाप' कहा जाता है। इस अवसर पर गाय के मूत्र(गूतर) चटाया जाता है और शुद्ध करने के लिए घर में छिड़का भी जाता है। लोक गीतों का गान स्त्रियाँ करती है, फल मिठाइयाँ भी बांटी जाती है। अन्नप्राशन संस्कार को 'खीरपू' कहा जाता है। विवाह हिन्दू रीति रिवाजों के अनुसार होते है। गुणों का मिलान यहाँ के लोगों के लिए जरूरी है अन्तर्जातीय विवाह कम ही होते हैं। प्रेम विवाह के उदाहरण भी मिलतें है। साहा समूहत शगुन-तिलक, मिलनी आदि प्रसिद्ध रिवाज यहाँ प्रचलित है। अन्दरेरा गुणे खेलना, मुखदृष्टि, अम्बिका पूजन तथा कंगना संस्कार भी यहाँ होते है। इस प्रकार देखा गया है कि ऊना जनपद के लोग धर्मिक कार्य और पूजा पाठ में विश्वास रखते हैं। पुरोहितों का आदर होता है। धर्मभीरू लोगों की भी कमी नहीं है।

स्थानीय देवतओं में अर्थात् कुल देवता या कुल देवी में विशेष आस्था है। भगवान शिव, दुर्गा सरस्वती और गणेश की विशेष पूजा होती है। बाबा बालक नाथ और देवियों के द्वार दरबार के साथ-साथ गुरुओं महात्माओं के प्रति अगाध श्रद्धा भाव है। कथा कीर्तन संत्सग तीर्थयात्रा भण्डारा यज्ञ आदि में स्त्रियाँ अधिक भाग लेती हैं।

वाथडी में एक विश्वविद्यालय तथा भारत सरकार के आदर्श संस्कृत महाविद्यालय डोहगी सहित राजकीय तथा प्राइवेट शिक्षण संस्थानों की ऊना में कमी नहीं है। जिसके चलते शिक्षकों की संख्या काफी है और रहन सहन खान पान पहरावा अब महानगरों शहरों की तरह होने लगा है। इस प्रकार ऊना जिला हर प्रकार से समृद्ध और संस्कार तथा शिक्षा युक्त होने के कारण अब कई क्षेत्रों में अग्रणी हो रहा है। तथापि अधिकायत में ऊना जनपद के युवा नागरिक ग्रामीण तथा कर्मचारी-अधिकारी शिष्ट और संस्कारवान् कहे जाते हैं।

स.ध. आदर्श संस्कृत महाविद्यालय डोहगी, जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश

पारंपरिक व्यंजनों का जायका

◆ वेद प्रकाश

भारत की विविध पाक-कला हमारी संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है। हमारे पारम्परिक पकवान एवं व्यंजन जितने लजीज एवं स्वादिष्ट हैं उतने ही पौष्टिक भी हैं। देश के पारम्परिक व्यंजनों में पहाड़ी पकवानों का महत्वपूर्ण स्थान है। हिमाचल की खान-पान शैली के पकवान अथवा पारंपरिक व्यंजन बनाना एक ऐसी कला हैं जो यहां के धर्म, रीति-रिवाजों, स्वास्थ्य, स्वाद और स्थानीय कृषि पैदावार पर आधारित रही है।

हिमाचल प्रदेश में आज भी बहुत से क्षेत्र ऐसे हैं जहां बनाए जाने वाले पारम्परिक पकवानों और व्यंजनों का सम्बंध हमारी प्रागैतिहासिक कालीन संस्कृति से रहा है। प्रदेश की विविध जलवायुगत भौगोलिक परिस्थितियों एवं पारम्परिक रीति-रिवाजों ने हमारी खान-पान शैली को प्रभावित किया है। लज्ज्या रघुबीर सिंह ने अपनी पुस्तक 'हिमाचल भोजन कला' में हिमाचल के खान-पान व्यवहार पर प्रकाश डालते हुए प्रदेश को तीन भागों में विभक्त किया है। उनके अनुसार- ''हिमाचल के इन भागों की खान-पान शैली एक-जैसी तो नहीं, परन्तु फिर भी बहुत कुछ मिलता-जुलता है।" खान-पान के हिसाब से प्रदेश के समस्त बारह जिलों को उन्होंने ऊपर उल्लेखित भागों को इस प्रकार विभक्त किया है :-

भीतरी भाग– किन्नौर, लाहौल-स्पिती, चम्बा जिला का पांगी क्षेत्र व भरमौर क्षेत्र।

मध्य भाग– शिमला, कांगड़ा, चम्बा, मण्डी, कुल्लू , सोलन, सिरमौर का ऊपरी भाग व मध्य भाग, हमीरपुर व बिलासपुर का भीतरी भाग।

बाह्य भाग– ऊना, बिलासपुर, सोलन तथा सिरमौर का बाह्य भाग।

इस पुस्तक में कांगड़ा, हमीरपुर तथा ऊना जिलों में प्रचलित व्यंजनों को एक ही अध्याय में सम्मिलित किया गया है। इस अध्याय में शामिल किए गए पकवानों में तेलिया माश, रोटा दाल, चावल का पुलाव, धोथरू, कोलथ की दाल, खट्टी दाल उड़द, मदरा रोंगी, रेढ़ू, माह और छोले की दाल, चावल, बड़े या भल्ले, सब्जियों का मदरा, सत्तू, पेलदा, माह की दाल दही वाली, मोहाणी कच्चे आम का तथा मिट्ठा सीलौणा मुख्य रूप से शामिल है।

ऊना जिला वर्ष 1966 तक पंजाब का हिस्सा रहा है। इसलिए यहां के खान-पान में पंजाबी संस्कृति का अच्छा खासा प्रभाव है। आधुनिक जीवन शैली ने भले ही यहां के लोगों के रहन-सहन को प्रभावित किया हो, लेकिन ग्रामीण परिवेश की जीवन शैली आज भी कृषि आधारित पारम्परिक खान-पान से जुड़ी है।

यह बात दीगर है कि प्रदेश में हुए व्यापक औद्योगिकरण से इस जिला में उद्योगों को बहुत बढ़ावा मिलने के साथ-साथ यहां की जीवन शैली में भी बदलाव आया है, लेकिन यहां के खान-पान में आज भी वही खाद्य वस्तुंए शामिल है जिनका उत्पादन स्थानीय तौर पर होता है। मैदानी जिला होने के कारण यहां पॉली-हाऊस, दुग्ध उत्पादन, बेमौसमी सब्जी उत्पादन, बागबानी को व्यापक बढ़ावा मिला है। इस बदलाव से स्थानीय लोग अब अपने भोजन में पहले की अपेक्षा हरी सब्जियों का अधिक प्रयोग करने लगे हैं।

जिला के लोगों के जीवन में पारम्परिक पकवानों का विशेष महत्व है। ब्याह-शादियों एवं धार्मिक एवं सामाजिक अनुष्ठानों पर सामुहिक भोज दिया जाता है। ऊना में सामुहिक भोज को धाम कहते है, लेकिन कुछ क्षेत्रों में धाम नहीं भी कहते। ऊना जिला में पहले नानकों, मामकों (नाना मामा की तरफ से) की धाम होती थी। भोज में बैठी पंगत को पतल के साथ शक्कर या बूरा परोसने के लिए दोने दिए जाते थे।

धाम में चावल, दाल चना व राजमा, दाल माश परोसे जाते है। ऐसे अवसरो पर दालें बगैरह कहीं कहीं चावलों पर परोसी जाती हैं, तो कहीं पर अलग से। जिला में सलूणा (कढ़ीनुमा खाद्य, इसे बलदा भी कहतें है) विशेष रूप से लोकप्रिय है। त्योहारों एवं विशेष अवसरों पर विभिन्न प्रकार के पकवान बनाए जाते हैं। शाकाहरी एवं मांसाहरी दोनों प्रकार के व्यंजन विशेष रूप से तैयार

कर परोसे जाते हैं।

यहां के लोग अपने दैनिक खान-पान में सरसों का साग और मक्की की रोटी, लस्सी और मक्खन के साथ खाना पसंद करते हैं। उड़द की दाल, चने की दाल, गेहूं की रोटी और कढ़ी चावल बड़े चाव से खाते हैं। इसके अलावा मीठा महानी और रेहड़ू भी यहां बहुत लोकप्रिय है जिसे धनिया तथा मेथी डालकर मक्की की रोटी से खाते हैं।

रेहड़ू (रेढ़ू) बनाने के लिए हरा धनिया, घी या तेल, नमक, हल्दी, मेथी दाना, मिर्च, हींग, सूखा घनिया, लस्सी या दही की लस्सी आदि सामग्री का प्रयोग किया जाता है। इसे बनाने के लिए एक बर्तन में घी गरम होने बाद उपरोक्त सामग्री डालकर उसमें लस्सी का छोंक दिया जाता है। इसे काफी देर तक हिलाते रहने के साथ-साथ तब तक पकाया जाता है जब तक कि इसमें से भाप न निकल जाए। भाप निकलने पर उतार कर कटा हुआ हरा धनिया डाला जाता है और फिर इसे चावल और मक्की की रोटी से खाया जाता है। यह रोजमर्रा खान-पान का अहम हिस्सा है जिसे लोग शौक से खाते हैं।

दही में यदि आलू या गन्डयाली, मेवे डाल कर पकवान बनाया जाए तो ऊना में उसे पलदा (पेलदा) कहते हैं। पेलदा बनाने के लिए आलू या गन्डियाली, दही या लस्सी, हरा धनिया, लाल मिर्च, हल्दी, मेथी, जीरा, हींग और तेल आदि सामग्री उपयोग में लाई जाती है। इसे बनाने के लिए आलू या गन्डियाली उबाल कर इसका छिलका उतार दें। किसी बर्तन में छौंक लायक घी या तेल डालकर इसमें हींग के साथ पिसे हुए मसाले डालें। जब मसाला सुनहरी हो जाए तो आलू या गन्डियाली काट कर डालने के बाद दही या लस्सी के साथ हिलाते हुए उबाला आने तक पकांए। उबाला आने पर इसमें हरा धनिया काट कर डाल दें। इसे चावल के साथ खाया जाता है।

दही में यदि आलू या गन्डयाली, मेवे डाल कर पकवान बनाया जाए तो ऊना में उसे पलदा (पेलदा) कहते हैं। पेलदा बनाने के लिए आलू या गन्डियाली, दही या लस्सी, हरा धनिया, लाल मिर्च, हल्दी, मेथी, जीरा, हींग और तेल आदि सामग्री उपयोग में लाई जाती है। इसे बनाने के लिए आलू या गन्डियाली उबाल कर इसका छिलका उतार दें। किसी बर्तन में छौंक लायक घी या तेल डालकर इसमें हींग के साथ पिसे हुए मसाले डालें। जब मसाला सुनहरी हो जाए तो आलू या गन्डियाली काट कर डालने के बाद दही या लस्सी के साथ हिलाते हुए उबाला आने तक पकाएं। उबाला आने पर इसमें हरा धनिया काट कर डाल दें। इसे चावल के साथ खाया जाता है।

ऊना जिला में कच्चे आम का बान्जी काफी लोकप्रिय है, जिसे बनाने के लिए कच्चे आम चूल्हे में भूनकर या पानी में उबालने के बाद थोड़े पानी में निचोड़ कर प्याज, लहसुन, अदरक, नमक, मिर्च और मसालों का तड़का लगाने के बाद उसमें चीनी या शक्कर डालकर आम का पन्ना यानी बान्जी खाया जाता है।

ऊना में गर्मियों के मौसम में हरा प्याज, पुदीना चौखा की चटनी भी बनाई जाती है जिसे यहां के लोग ग्रीष्म ऋतु में बड़े शौक से खाते हैं। इसके अलावा आलू-बड़ियां और ऊना की धन्डियालियां बहुत प्रसिद्ध है। घन्डियालियों को यहां के लोग चूल्हे में भूनकर या तेल में तल कर बड़े शौक से खाते है। यहां अर्बी के पत्तों से बने पतेहड़ भी काफी लोकप्रिय हैं जिन्हें लोग तलकर या सब्जी की तरह बनाकर खातें हैं। त्योहारों एवं सामाजिक व धार्मिक आयोजनों पर मालपुड़े, बबरू तथा खीर आदि पकवान बनाकर परोसा व खाया जाता है। ब्याह-शादियों में स्थानीय पारम्परिक व्यंजनो के साथ मंडे भी बनाए जाते है। यह गेंहू के आटे की सामान्य आकार की रोटी के मुकाबले काफी बड़े होते हैं जो उल्टे तवे (ठीकरा) पर बनी एक प्रकार की बड़ी रूमाली रोटी होती है।

बेमौसमी उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि होने से यहां के लोग आलू, गोभी, बैंगन, टिंडा, घीया, करेले, कचनार, फ्रासबीन, गाजर-मूली, शलगम, सरसों का साग, मटर, चौलाई, अर्बी, तरबूज-खरबूजे, खीरे, ककड़ी, सीता फल, केले, भिंडी, रामतोरी, जिमीकंद, प्याज-लहसुन, टमाटर, घंडियालियां, क्यूं, पहाड़ी सौंफ, पालक, कटहल, कच्चे आम, नींबू, गलगल, ढेऊ, अम्बाड़े आदि अनेक फल सब्जियां उगाकर इन्हें अपने रोजमर्रा के खन-पान में शामिल करते हैं।

आधुनिक दौर की उपभोक्तवादी संस्कृति के प्रचलन से हमारे पारंपरिक व्यंजन एवं पकवान धीरे-धीरे हमारी रसोई से गायब होने लगे हैं। बहुदेशीय कंपनियों द्वारा फास्ट फूड के उग्र एवं भ्रामक प्रचार के कारण हमारी युवा पीढ़ी विशेषकर छोटे बच्चे विदेशी व्यंजनों की ओर आकर्षित हो रहे हैं और धीरे-धीरे अपने क्षेत्रीय खान-पान से विमुख होकर विदेशी फास्ट फूड संस्कृति अपना रहे हैं। ऐसे में आवश्यक है कि हम अपनी पारंपरिक खान-पान शैली को अगली पीढ़ी तक पहुंचाकर स्थानीय व्यंजनों एवं पकवानों को लोकप्रिय बनाएं। हमारी पारंपरिक खान-पान शैली जितनी पुरातन है, उतनी ही समृद्ध और स्वास्थ्यवर्धक भी है जिसमें पौष्टिकता एवं स्वाद दोनों का अनुपातिक मिश्रण विद्यमान है।

'पूर्ण निवास', टुटू, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 011,
मो. 94180 06164

गूढ़ रहस्यों को सहेजे उन्नवी संस्कृति

◆ डॉ. कृष्णमोहन पांडेय

भारतीय संस्कृति में हिमाचल वैदिक काल से ही अपने अस्तित्व का स्वयं साक्षी रहा है। यहाँ का सांस्कृतिक इतिहास मानव सभ्यता के साथ साथ ही उदभूत है। विपाशा और शुतुद्रि नदियां वैदिक काल से अद्यावधि इस धरा को पावन कर रही हैं। ऋग्वेद का यह मन्त्र आज भी वैदिक लोग बड़े गर्व से उद्धृत करते हैं-

शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।

आर्ष काव्यों के बाद उदभूत लौकिक संस्कृत साहित्य के अप्रतिम महाकवि कालिदास अपने प्रथम महाकाव्य कुमारसम्भवम के मंगलाचरण में ही हिमालय के प्रति प्रेम प्रदर्शित करते हुए इसे देवभूमि की संज्ञा प्रदान करते हैं-

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा
हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः
पृथिव्यामिव मानदण्डः।। 1-1

अनन्त काल खण्डों, संस्कृतियों, परम्पराओं और लोकगाथाओं का साक्षात्द्रष्टा हिमाचल वैश्विक पटल पर अपनी अलग पहचान रखता है। वर्तमान में जिस भू-भाग को हिमाचल के नाम से जाना जाता है, उसमें पंजाब की ओर से प्रवेश द्वार है ऊना। लगभग 100 किलोमीटर दायरे में फैला यह जनपद होशियारपुर और कांगड़ा की अधीनता के बाद वर्ष 1972 से स्वतन्त्र रूप में अपनी पहचान बनाये हुए है। लम्बे समय तक होशियारपुर और कांगड़ा के अधीन रहने के कारण पंजाबी और कांगड़ी संस्कृतियों का समन्वित रूप यहाँ आज भी देखने को मिलता है। सोलहशृंगीधार की उपत्यका में प्रतिष्ठित यह भूखण्ड पिछले लगभग 400 वर्षों से पर्याप्त सक्रिय रहा है। किसी दौर में गुरुनानक देव भी यहाँ आकर अपने भक्तों को अध्यात्म का पाठ पढ़ा चुके हैं। उन्हीं का वंशज बेदी परिवार आज भी उनकी स्मृतियों और परम्पराओं के साथ गतिमान है। पुरातात्विक दृष्टि से भी इतिहासकारों ने इस भू-खण्ड को ऐतिहासिक करार दिया है जिनमें सोलहश्रृंगीधार के शिखर पर निर्मित अत्यन्त प्राचीन किला, रायपुर मैदान का किला, ईसपुर के गढ़ दा टिब्बा में मिले विशाल आकार हाथी के दांत का जीवाश्म, ईसपुर से ही प्राप्त अनेक किस्म, धातु और मूल्य की मुद्रा बंगाणा के डोहगी ग्राम से खुदाई में प्राप्त अत्यन्त प्राचीन गणेश एवं महिषासुरमर्दिनी की प्रतिमा एवं समूरकलां गाँव में ज्योली माता मन्दिर के जीर्णोद्धार के दौरान प्राप्त अत्यन्त प्राचीन मन्दिर के अवशेष आदि के साथ अनेक भग्नावशेष की प्राप्ति विशेष उल्लेखनीय हैं।

सांस्कृतिक दृष्टि से भी ऊना पर्याप्त समृद्ध है। सभ्यता और संस्कृति को यहाँ की परम्परा, भाषा, बोलियाँ, लोकसाहित्य, वेशभूषा, खानपान, जनमानस की अवधारणाएं आदि समेकित रूप से सम्बल प्रदान करती हैं। अनेक आरोह-अवरोह के विघ्न और मंगल दौर से गुजरता हुआ यह भूखण्ड आज निरन्तर प्रगति के पथ पर गतिमान है। ऊना की भाषा को इतिहासकार ऊनवी कहते हैं जिसे पंजाब के समूह में रखा गया है। यहाँ की भाषा में संस्कृत, पहाड़ी, ऊर्दू, हिन्दी तथा पंजाबी का समन्वित रूप परिलक्षित होता है।

कांगड़ा रियासत के अधीन रहते ऊना ने स्वतन्त्रता संग्राम में भी अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। ऊना के बाबा लछमन दास आर्य स्वतन्त्रता सम्बन्धी गतिविधियों के कारण 1905 में ही अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तार कर लिए गये थे। तभी से यहाँ के वीर जवान स्वतन्त्रता आन्दोलन में अधिक सक्रिय हो गये थे। इस घटना से प्रेरित होकर यहाँ के जवानों ने 1920,1922 1928, और 1930 में अनेक बड़े-बड़े आन्दोलनों का संचालन किया। जनपद के असंख्य सेनानियों की वीर गाथाएं लोगों की स्मृति पटल पर आज भी ताज़ा हैं।

स्वतन्त्रता की आँधी में यह क्षेत्र निरन्तर आन्दोलनकारियों की शरणस्थली बना रहा। विदेशी कपड़ों की होली से लेकर अनेक राजनैतिक आन्दोलनों में ऊना मुख्य भूमिका निभाता रहा। इसमें सहभागिता एवं सहयोग के लिए अनेक स्वतन्त्रता के सिपाही अंग्रेजों द्वारा या तो पकड़े गये या मार दिये गये। इसके बावजूद भी इस धरा पर क्रान्तिकारी विचारधाराओं का पल्लवन होता ही रहा।

रोंगटे खड़े कर देने वाले किस्से आज भी लोगों की जुबान पर सुरक्षित हैं। अपने बाल्यकाल से ही स्वतन्त्रता संग्राम के सहभागी सत्यमित्र बख्शी और सत्यभूषण शास्त्री अपने नवें दशक में होते हुए आज भी उन दिनों को याद कर भाव-विभोर हो उठते हैं। इन दोनों बन्धुओं का पूरा परिवार ही स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी था। एक समय था जब इनके माता-पिता भाई-बहन सभी अंग्रेजों की जेल में बन्द थे। जिला प्रशासन द्वारा प्रकाशित ऊना जनपद एक परिचय में स्वतन्त्रता संग्राम के अनेकानेक गौरव गाथाओं का विस्तार से उल्लेख किया गया है।

सांस्कृतिक दृष्टि से भी ऊना पर्याप्त समृद्ध है। सभ्यता और संस्कृति को यहाँ की परम्परा, भाषा, बोलियाँ, लोकसाहित्य, वेशभूषा, खानपान, जनमानस की अवधारणाएं आदि समेकित रूप से सम्बल प्रदान करती हैं। अनेक आरोह-अवरोह के विघ्न और मंगल दौर से गुजरता हुआ यह भूखण्ड आज निरन्तर प्रगति के पथ पर गतिमान है। ऊना की भाषा को इतिहासकार ऊनवी कहते हैं जिसे पंजाब के समूह में रखा गया है। यहाँ की भाषा में संस्कृत, पहाड़ी, ऊर्दू, हिन्दी तथा पंजाबी का समन्वित रूप परिलक्षित होता है। भाषा और बोली की दृष्टि से लोग इसे अनेक भागों में विभाजित करते हैं। जैसे-संतोषगढ़ के पंजाब सीमान्त क्षेत्र में पंजाबी मिश्रित पहाड़ी और हिन्दी, ऊना में अपेक्षाकृत अधिक हिन्दी तथा पहाड़ी और कुछ पंजाबी, गगरेट क्षेत्र में भी कांगड़ी पहाड़ी पंजाबी और हिन्दी मिश्रित, तथा कुटलैहड़ में पहाड़ी कांगड़ी हिन्दी और बहुत कम पंजाबी भाषा मिश्रित बोलियों का प्रयोग होता है। इन क्षेत्रों में जो भी बोलियाँ प्रयोग में हैं उन सबका संस्कृत से बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं। जैसे- संस्कृत का कुत्र पहाड़ी में कुतु या कुति है, जानाति जाणदी है, यत्र इत्थु है सः सै है, नीरम् नीर है, तेन तिनि है, आषाढ़मास हाड़माह है, चैत्रः चैत्र है, आश्विन अस्सू है, चलति चल्ला है, मिष्ठान्न मिठयाई है। ऐसे ही इस इलाके में बोले जाने वाले हजारों शब्द हैं जिनका निकट सम्बन्ध विश्व की सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत से है।

परम्परागत पौराणिक कथाओं पर राम, कृष्ण, देवी आदि अनेक देवताओं पर आधारित झमाकड़ा प्रभृति लोकनृत्य भी अनेक अवसरों पर देखने को मिलते है। रोहडू जाणा मेरी अमिये, चम्बाआर की नदियापार, आओ लाल रंगिये आदि नाटी बहुत ही प्रसिद्ध हैं। यहाँ अनेक प्राचीन मन्दिर हैं, विभिन्न गुरुद्वारे भी हैं। जिनमें हण्डोला में ब्रहमा का मन्दिर, पिपलू में नरसिंह भगवान का मन्दिर, ध्यूंसर महादेव, कोल्का में बाबा गरीबनाथ का मन्दिर, शिवबाड़ी में द्रोणाचार्य की तपस्थली, यज्ञ नगरी नारी में डेरा बाबा रुद्रानन्द, कोटला में बाबा बालजी, अपर अर्नियाला में शिव की विशाल मूर्ति, सर्वधर्म समभाव प्रदर्शक पीरनिगाह का मन्दिर, जोगीपंगा का आश्रम, माता छिन्नमस्तिकाधाम चिन्तपूर्णी, डेरा बाबा बड़भाग सिंह का गुरुद्वारा, शहींदों का गुरुद्वारा टक्कारोड, गिडगिडा साहिब गुरुद्वारा, सलूरी साहिब गुरुद्वारा, देहलां और बेदी किले का गुरुद्वारा, बहुत प्रसिद्ध और दर्शनीय हैं। ऋषियों की पूजा की भी एक लम्बी परम्परा यहाँ देखने को मिलती है जिनमें महर्षि वाल्मीकि, सन्त कबीर, सन्त रैदास आदि विभिन्न तपस्वियों के प्रकटयोत्सव झाँकियों के साथ बड़े धूमधाम से मनाया जाता है।

लोक वाद्य

पहाड़ी क्षेत्र होने से अनेक पहाड़ी लोकगीत आज भी अनेक अवसरों पर शहरी और ग्रामीण मानस के लोगों द्वारा गाया जाता है। लोकगीतों में भावुकता और संवेदना का अद्भुत समन्वय दिखता है। इन लोकगीतों में वैदिक और पौराणिक आख्यानों का अनुगमन पर्याप्त दिखाई देता है। पहाड़ी में गाये जाने वाले लोकगीतों का अपना संगीत, लय, धुन आदि हैं जो पारम्परिक रीति से आज भी अनेक सुख और गम के अवसरों पर गाये जाते हैं। इन लोकगीतों में पहाड़ों की खुशबू है, फसलों की गुनगुनाहट है, खुशियों का संगीत है, मेलों की धुने हैं, ऋतुओं का रस है, नैसर्गिक निनाद है। जिनमें प्यागड़े, भजन, रणजूझणे, गुन्तर, सिटठणियां, टप्पे, शोड़ियां, सुहाग, कोयल आदि अनेक प्रकार के लोकगीत यहाँ विभिन्न पर्वों पर सामूहिक रूप से गाये जाते हैं। इनके साथ ही नगाड़ा, ढोलक, कासिया, हारमोनियम, सारंगी, इकतारा, छैने, घुंघरु, डमरु, टमक, शहनाई, शंख, बैण्ड, अलगोजे, बीन, डफली, सितार, बांसुरी आदि अनेक वाद्ययन्त्र भी बजाये जाते हैं।

वास्तु और शिल्प कला में भी यह क्षेत्र बहुत लम्बे समय से सुविकसित रहा है जिसके प्रमाण के रूप में सोलहश्रृंगीधार पर बने किले में नक्कासी, अम्ब के राजमहल में, अष्टभुजा मन्दिर में, गुरुद्वारा हुजूर साहिब तथा माता भद्रकाली मन्दिर में दीवारों और दरवाजों पर बनी नक्कासी ऊना के वास्तु और शिल्पकला के औन्नत्य का प्रत्याख्यान करते हैं।

अनन्त साक्ष्यों और उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ऊना इतिहास बहुत गौरवमय है, यहाँ की सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित करने में यहाँ के लोग हमेशा तत्पर रहते हैं। अपनी परम्परा में रची बसी ऊनवी संस्कृति परस्पर प्रेम और सद्भाव को अपना आनुष्ठानिक कर्तव्य समझती है। यद्यपि लोग भले ही दुनियाँ के साथ भागमभाग में जुड़ रहें हैं तथापि अपनी संस्कृति, सभ्यता, भाषा, बोली और परम्परा से जुड़े रहने में अपना गर्व समझते हैं।

असिस्टेंट प्रोफेसर, स-ध-केंद्रीय आदर्श संस्कृत महाविद्यालय डोहगी, जिला ऊना, मो. 97369 77002

विकास

प्रगति पथ पर बढ़ता विकास रथ

◆ अजय पाराशर

ऊना जिला आज प्रदेश ही नहीं देश भर में विकास के आदर्श के रूप में उभर कर सामने आया है। कांगड़ा जिला के पुनर्गठन के समय ऊना तहसील और 01 सितम्बर, 1972 को जिला के रूप में गठित होने के पश्चात् अपनी विकास यात्रा में इसने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। विकास के रथ पर सवार ऊना साल दर साल विकास की नई इबारतों की रचना करता हुआ, प्रगति के पथ पर हिरन की तरह कुलांचे भरता हुआ आगे बढ़ रहा है। इस जिला को भले ही भौगोलिक दृष्टि से प्रदेश के छोटे जिलों में गिना जाता हो, परन्तु ऊना जिला के विभिन्न क्षेत्रों में हुए विकास के सभी मुरीद हैं। कभी देवी-देवताओं और शूरवीरों की धरा के नाम से मशहूर ऊना जिला के ताज पर आज विकास के हीरे-मोती जगमगा रहे हैं। आजादी की लड़ाई के दौरान जिला के स्वतन्त्रता सेनानियों ने लोगों में देशभक्ति का ऐसा रंग भरा कि आज भी यहां के शूरवीर देश की सरहदों की रखवाली करते हुए अपना सर्वस्व न्योछावर करने को तैयार बैठे हैं। ओलम्पियन पद्मश्री चरणजीत सिंह, श्री सुरजीत सिंह, सेवानिवृत डीआईजी महेन्द्र लाल, श्री दीपक ठाकुर जैसे खिलाडियों ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर अपनी व्यक्तिगत पहचान बनाने के अतिरिक्त राज्य तथा जिला को खेल जगत में गौरवान्वित होने का मौका दिया। ऊना जिला ने देश भर में सहकारिता आन्दोलन के प्रणेता के रूप में अपनी धाक जमाई है। चाहे शिक्षा का क्षेत्र हो या फिर कृषि, बागवानी, औद्योगिक विकास, पेयजल एवं सिंचाई, सडक तथा संचार संजाल, यातायात, स्वास्थ्य, मत्स्य या फिर दुग्ध उत्पादन, ऊना ने हर क्षेत्र में प्रगति के नए आयाम स्थापित किए हैं। आज ऊना की गिनती देश के प्रगतिशील जिलों में की जाती है।

शिक्षा

समाज की स्थापना के समय से ही शिक्षा का मानव जीवन से गहरा सम्बन्ध रहा है। शिक्षा के बिना व्यैक्तिक या सामाजिक विकास की कल्पना नहीं की जा सकती। शिक्षा के बिना किसी समाज या राष्ट्र की उन्नति की अवधारणा अधूरी रह जाती है। शिक्षण संस्थाओं को शिक्षा का औपचारिक साधन माना जाता है। आज भले ही बच्चों को अपने घर-द्वार पर शिक्षा की सुविधा प्राप्त हो लेकिन अतीत में स्थितियां वर्तमान से कतई भिन्न थीं। विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए मीलों पैदल जाना पड़ता था। विगत में ऊना तहसील में लोगों ने अपने बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के लिए स्वयं सहायता के बेमिसाल उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। ब्रिटिश काल और स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी वर्ष 1952 तक तमाम प्राईमरी तथा हाई स्कूल निजी सहभागिता में ही स्थापित किए गए। आर्य समाज तथा सनातन धर्म सभा ने इस पिछड़े क्षेत्र में शिक्षा की अलख जगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आजादी के बाद सरकार ने कई वरिष्ठ माध्यमिक पाठशालाओं का अधिग्रहण कर लिया। गौरतलब है कि जिला गठन के वक्त ऊना क्षेत्र में शिक्षा की अलख जगाने के लिए दस निजी विद्यालय कार्य कर रहे थे।

समाज सेवी तथा शिक्षाविद श्री लालजी पुरी ने अम्बोटा विद्यालय, स्वर्गीय ब्रिजबिहारी नन्द ब्रह्मचारी ने राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, सलोह, स्वर्गीय स्वामी सेवानन्द गिरि ने श्री विष्णु सनातन धर्म महाविद्यालय, भटोली, स्वर्गीय शादी लाल शारदा एवं पण्डित विशम्भर दत्त ने संतोषगढ़ में सनातन धर्म संस्कृत विद्यालय एवं सनातन धर्म पब्लिक स्कूल, बीटन क्षेत्र में बाबा ढांगू वाले ने महाविद्यालय के निर्माण तथा अधिग्रहण, स्वर्गीय पुरूषोत्तम लाल पारस ने बसदेहड़ा, जगत हरि सिंह ने पूबोवाल, स्वर्गीय मूल राज ने बालीवाल, मास्टर किशोरी लाल ने चढ़तगढ़ में एंग्लो वैदिक विद्यालय की स्थापना कर, इसके अधिग्रहण से पूर्व क्षेत्र में शिक्षा की लौ जगाई। उनके अतिरिक्त राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित स्वर्गीय पण्डित शालिगराम शर्मा, स्वर्गीय राजा राम, स्वर्गीय बजीर चंद, पण्डित ब्रह्मानन्द डोहगी वाले, बढ़ेडा-राजपूतां के स्वर्गीय पण्डित अमरनाथ शर्मा एवं स्वतन्त्रता सेनानी स्वर्गीय ज्ञान चंद स्वरूप, मास्टर राधा कृष्ण, श्री डीएन चौधरी तथा कुंवर हरि सिंह, श्री हंस राज कश्यप, श्री देवी दास पटियाल और कुमारी कमला शर्मा ने जिला में शिक्षा के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ईसपुर स्थित गैर सरकारी संगठन 'शिक्षा सुधार समिति' वर्तमान में अपने उपलब्ध संसाधनों में 22 शिक्षकों के माध्यम से शिक्षा के प्रसार में अहम भूमिका निभा रही

है।

वर्ष 1974 में ऊना जनपद में मात्र छह उच्च माध्यमिक, 36 उच्च, 47 माध्यमिक एवं 194 प्राथमिक पाठशालाएं 52,008 विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान कर रही थीं। इनमें 33,702 लडके एवं 18,306 लड़कियां शामिल थीं। उच्च शिक्षा के लिए ऊना नगर में स्थापित एक राजकीय महाविद्यालय के अतिरिक्त भटोली, अम्ब एवं दौलतपुर में तीन निजी महाविद्यालय कार्यरत थे। राज्य की साक्षरता दर मात्र 38.75 प्रतिशत ही थी। वर्ष 1978-79 में कुल छात्रों की संख्या 76,920 तक पहुंच गई थी, जिनमें 28,871 प्राथमिक, 19,556 माध्यमिक, 26,891 उच्च एवं वरिष्ठ माध्यमिक तथा 1602 महाविद्यालयों में अध्ययनरत थे। इस अवधि तक प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 235, माध्यमिक की 56, उच्च तथा उच्चतर विद्यालयों की संख्या 51 तक पहुंच गई थी। संस्कृत महाविद्यालय भी दो के मुकाबले तीन हो गए थे। परन्तु आज स्थितियां बिल्कुल भिन्न हैं।

राज्य सरकार सभी नागरिकों को शिक्षित करने के उद्देश्य से शिक्षा के आधारभूत ढांचे को सुदृढ़ करने के अलावा निर्मित ढांचे के नियमन, नियन्त्रण, निरीक्षण तथा मार्गदर्शन कर रही है। जिला में शिक्षा के सुनियोजित विकास के लिए ऊना को छह शिक्षा खंडों-ऊना, हरोली, गगरेट, मुबारिकपुर, अम्ब तथा बंगाणा में विभक्त किया गया है। वर्ष 2016 तक प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 498, माध्यमिक पाठशालाओं की 86, उच्च पाठशालाओं की 54 एवं उच्चतर विद्यालयों की गिनती 123 तक पहुंच गई है। नौ सरकारी तथा इतने ही गैर-सरकारी महाविद्यालयों के अलावा पांच संस्कृत महाविद्यालय उच्च शिक्षा प्रसार में व्यस्त हैं। वर्ष 2016 में विभिन्न कक्षाओं में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या 72 हजार से अधिक पहुंच गई है, जिनमें 23,290 प्राथमिक, 16,940 माध्यमिक, 13,470 उच्च, 13,526 उच्चतर और करीब 5,000 महाविद्यालयों में पढ़ते थे। विद्यालय शिक्षण में नवीनतम विधियों और तकनीकों के विकास तथा ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में शिक्षा संसाधनों के समान प्रसार के लिए देहलां में जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किया गया है। यह संस्थान सेवा पूर्व प्रशिक्षण, अनौपचारिक शिक्षा, शिक्षा परिसरों के संचालन के लिए योजनाओं के निर्माण तथा प्रबंधन, कार्यरत शिक्षकों के प्रशिक्षण, कम्पयूटर शिक्षा के प्रचार-प्रसार, प्रयोग तथा शोध क्षेत्रों में महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में आईटीआई, ऊना, बंगाणा, चिंतपुर्णी तथा पॉलीटैक्रिक कॉलेज अंबोटा शामिल हैं। आईटीआई, ऊना में ऑटोमोबाइल, फिटर, टर्नर, इलैक्ट्रीशियन, कारपेंटर, मोटर एवं अर्थमूवर, कंप्यूटर, सूचना प्रौद्योगिकी, टूल एंड डाई, ऑटो इलैक्ट्रीशियन एंड इलैक्ट्रीकल मकेनिक ट्रेड हैं, जबकि महिला विंग में ड्रैस मेकिंग, कटिंग एंड टेलरिंग तथा एंब्रायड्री का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। चिंतपूर्णी में एम्ब्रॉयड्री तथा डॉ. बीआर अंबेडकर राजकीय पॉलिटैक्निक कॉलेज, अंबोटा में कम्प्यूटर इंजीनियरिंग, आर्कीटैक्ट, मॉर्डन ऑफिस प्रैक्टिस तथा इलैक्ट्रॉनिक का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसके अतिरिक्त सरकार ने निजी क्षेत्र में ही एक मैडिकल महाविद्यालय के निर्माण को स्वीकृत प्रदान की है। तमाम सरकारी स्कूल प्रदेश स्कूल शिक्षा बोर्ड, धर्मशाला से सम्बद्ध हैं। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयों के परीक्षा केंद्र भी ऊना में कार्यरत हैं। पेखूबेला स्थित जवाहर नवोदय विद्यालय, ऊना का डीएवी सैंटेनरी वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय तथा डीएवी स्कूल, अंबोटा केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से सम्बद्ध हैं। आईसीएससी से सम्बद्ध ऊना जनपद का एकमात्र विद्यालय, माऊंट कारमल सीनियर सेकंडरी स्कूल रक्कड़ में स्थित है। गैर सरकारी सहायता प्राप्त, परन्तु सम्बद्ध स्कूलों की संख्या 50 है, जिसमें 26 उच्च तथा 24 वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय हैं। निजी क्षेत्र में शिक्षण संस्थान कारथा शिक्षा समिति द्वारा बाथू में स्थापित इंडस यूनिवर्सिटी के अलावा दो इंजीनियरिंग महाविद्यालय कार्य कर रहे हैं। हाल ही में जिला में दो नए डिग्री कॉलेज स्थापित किए गए हैं। यह डिग्री कॉलेज चिंतपुर्णी विधान सभा क्षेत्र के चौकी मन्यार तथा हरोली निर्वाचन क्षेत्र के खड्ड में स्थापित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त एक ट्रिप्पल आईटी संस्थान तथा सलोह में केन्द्रीय विद्यालय की स्थापना की गई है।

निजी क्षेत्र में शिक्षण संस्थान कारथा शिक्षा समिति द्वारा बाथू में स्थापित इंडस यूनिवर्सिटी के अलावा दो इंजीनियरिंग महाविद्यालय कार्य कर रहे हैं। हाल ही में जिला में दो नए डिग्री कॉलेज स्थापित किए गए हैं। यह डिग्री कॉलेज चिंतपूर्णी विधान सभा क्षेत्र के चौकी मन्यार तथा हरोली निर्वाचन क्षेत्र के खड्ड में स्थापित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त एक ट्रिप्पल आईटी संस्थान तथा सलोह में केन्द्रीय विद्यालय की स्थापना की गई है।

मेधावी तथा निर्धन छात्रों को शिक्षा के अधिकाधिक अवसर प्रदान करने के लिए प्रदेश सरकार द्वारा 13 विभिन्न छात्रवृत्तियां प्रदान की जा रही हैं। प्रति वर्ष 11वीं तथा 12वीं कक्षा के सामान्य वर्ग के 2,000 छात्रों को न्यूनतम 77 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने पर स्वामी विवेकानन्द छात्रवृत्ति के तहत सालाना दस हजार रुपये, अनुसूचित जाति तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के 1,000 छात्रों को कम से कम 72 प्रतिशत प्राप्त करने पर डॉ. अम्बेडकर मेधावी छात्रवृत्ति के तहत दस हजार रुपये वार्षिक तथा ठाकुर सेन नेगी उत्कृष्ट छात्रवृत्ति के अन्तर्गत अनुसूचित जनजाति के 200 छात्रों

को न्यूनतम 72 फीसदी अंक हासिल करने पर 11 हजार रुपये वार्षिक दिए जाते हैं। इन्दिरा गांधी उत्कृष्टता छात्रवृत्ति योजना के अन्तर्गत वरिष्ठता क्रम के आधार पर 12वीं कक्षा के बाद अध्ययनरत 150 छात्रों को दस हजार रुपये की छात्रवृत्ति दी जाती है। महर्षि वाल्मीकि छात्रवृत्ति के तहत वाल्मीकि समुदाय की मैट्रिक से ऊपर की कक्षाओं में पढने वाली छात्राओं को नौ हजार रुपये सालाना, अन्त्योदय छात्रवृत्ति योजना के अन्तर्गत 6वीं से विश्वविद्यालय तक आईआरडीपी वर्ग के अध्ययनरत छात्रों को 250 से 2,400 रुपये के मध्य, हाई स्कूल मैरिट छात्रवृत्ति के तहत आठवीं की मैरिट लिस्ट में 1,000 से 1,500 रुपये तक वार्षिक, सशस्त्र सेना छात्रवृत्ति के तहत 250 से 2,400 रुपये तक वार्षिक, पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति के तहत छात्रावास में रहने वाले एससी, एसटी तथा ओबीसी के विद्यार्थियों को 500 रुपये वार्षिक, अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए प्रि-मैट्रिक छात्रवत्ति के तहत 500 रुपये वार्षिक, राष्ट्रीय वरिष्ठता छात्रवृत्ति के तहत 9वी से 10वीं के छात्रों को 250 से 750 रुपये वार्षिक, प्रि-मैट्रिक अल्पसंख्यक छात्रवृत्ति के तहत इस वर्ग के छात्रों तथा संस्कृत छात्रवृत्ति के अन्तर्गत 8वीं तथा 10वीं की कक्षाओं में मैरिट में स्थान प्राप्त करने वाले छात्रों को आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है।

विद्यालयों में शिक्षोन्मुखी वातावरण के सृजन में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए वर्ष 1974 से अब तक ऊना जनपद के करीब चार दर्जन शिक्षकों को राज्य तथा राष्ट्रीय पुरस्कारों से अलंकृत किया जा चुका है।

कृषि

कुल 1,39,405 हैक्टेयर भौगोलिक क्षेत्र वाले ऊना जिला की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान रही है। जिला की अधिकांश भूमि समतल एवं उपजाऊ है। जिला गठन के वक्त करीब 96 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आधारित थी किन्तु लगभग 60 प्रतिशत लोगों के पास मात्र 1.5 एकड़ या इससे कम भूमि का ही स्वामीत्व था। उन्नत कृषि तकनीकी के अभाव में जिला में कृषि उत्पादन की दृष्टि से वर्ष 1971 से पूर्व का समय संकट भरा था, जिसके कारणों में सिंचाई सुविधाओं का अपर्याप्त होना, आवारा तथा जंगली जानवरों के अतिरिक्त स्वां नदी का प्रकोप शामिल था। किसानों को पिछली सदी के वर्ष 1979 तथा 1987 में विकट अकाल तुल्य परिस्थितियों का सामना भी करना पड़ा था।

कृषि क्षेत्र के समुचित विकास से पूर्व जिला में सिंचाई सुविधाएं नाम मात्र ही थीं। समूचे क्षेत्र में नहरों का अभाव था। वर्षा, संग्रहित वर्षा जल तथा कुएं ही सिंचाई के मुख्य साधन थे। बीत क्षेत्र में तो खेती पूरी तरह वर्षा पर आधारित थी। परन्तु आज स्थितियां भिन्न हैं और बेहतर सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध होने के साथ खेती में ट्रैक्टर, टिल्लर, स्प्रे पंप, घास निकालने की मशीन, गेहूं कटाई, धान रोपाई, आलू बिजाई तथा मिट्टी चढ़ाने से लेकर निराई-गुड़ाई तक में मशीनों का प्रयोग होता है। परन्तु पूर्व में खेती पूरी तरह कुटीर उपकरणों पर आश्रित थी। वर्ष 1904 के होशियारपुर डिस्ट्रिक्ट गजेटियर के अनुसार किसानों द्वारा जो स्थानीय उपकरण या औजार इस्तेमाल किए जाते थे, उनमें खुरपा, दातरी या दात्ती, कही, सोहागा, फावड़ा या कुदाली, तंगली, संगा या सलांगा, खूटी, कराह, लकड़ी का फावड़ा, दंदराल, कुल्हाड़ी, बसला या तेसा, गंडासा, फाला, जांडा, परैणी, तंगड़, छज्ज, टोकरा एवं छिकली शामिल थे। इन सारे उपकरणों को बनाने तथा मरम्मत के लिए किसान अपने क्षेत्र के कारीगर को लकड़ी तथा लोहा उपलब्ध करवाते थे। बदले में किसान उसे फसल उत्पादन का एक हिस्सा देते थे। हल भी इसी प्रकार बनाया जाता था जबकि गन्ने के रस को निकालने के लिए प्रयोग होने वाले बेलन बनाने के लिए भी किसान को साधारणतया 30 रुपये देने पड़ते थे।

किसानों को अब तक करीब 9,832 हैक्टेयर भूमि पर सिंचाई सुविधा उपलब्ध करवाई जा चुकी है। इसके अतिरिक्त प्रदेश सरकार द्वारा क्रियान्वित विभिन्न कृषि विकास योजनाओं के तहत किसानों को और सिंचाई की सुविधाएं मुहैया करवाई जा रही हैं। सभी इलाकों में अधिकतर ट्यूब-वैल ही सिंचाई का मुख्य साधन हैं। चौक डैम निर्माण से हरियाली तथा भू-जल में बढोतरी के अतिरिक्त भू-क्षरण को रोकने में मदद मिली है एवं सिंचित क्षेत्र में वृद्धि हुई है। परन्तु माजी में ऊना क्षेत्र में सिंचाई के साधन बेहद सीमित थे और सभी उपलब्ध साधन मानव या पशु श्रम संचालित थे। सिंचाई कुएं या तालाब के पानी से की जाती थी। बोका, ढींगली तथा रहट (पर्शियन व्हील, जिसे स्थानीय भाषा में हल्ट कहा जाता था) की मदद से पानी निकाल कर खेतों तक पहुंचाया जाता था। परन्तु ये सारे साधन बड़े कम क्षेत्र को ही सिंचित कर पाते थे।

बोका

कुंए की मुंडेर पर लगी गरारी या चरखी की सहायता से रस्से से बंधा, चमड़े का बना बड़ा थैला कुंए में उतारा जाता था, जिसे बाद में भैंसे द्वारा खींचकर बाहर निकाला जाता था। बाहर निकाले जाने पर एक आदमी कुंए के साथ खेत की ओर जाने वाली नाली में उंडेल देता था। कुंए के आस-पास की जमीन को सिंचित करने वाले इस साधन को प्रायः सब्जी उगाने के लिए प्रयोग लाते थे।

ढींगली

ढींगली एक काफी लम्बा लट्ठा (लग्गी) होता था, जो एक ध ुरी पर नीचे-ऊपर घूम सकता था। इस लग्गी का ऊपर का भाग काफी लम्बा होता था तथा नीचे का भाग छोटा होता था, जिसके साथ काफी वजनदार पत्थर बंधा होता था। लग्गी के ऊपर के भाग से रस्सी बंधी होती थी, जिसके नीचे लटकते सिरे पर टीन का पीपा बंधा होता था। प्रथम प्रकार उत्तोलक बनी लग्गी को रस्सी

की सहायता से झुका कर कुंए से पानी का डोल भर कर छोड़ देता, जिससे पानी से भरा बर्तन स्वयं बाहर आ जाता था। इस पानी को खेत की आड़ में डाल कर सिंचाई के लिए उपयोग में लाते थे। यह साधन भी अधिकतर सब्जी उत्पादन में ही काम आता था।

रहट

कुंए से पानी निकालने के इस यंत्र विशेष, जिसे स्थानीय भाषा में हल्ट कहा जाता है, को बैल अथवा ऊंट द्वारा संचालित कर अधिक भूमि सिंचित की जा सकती थी। परन्तु फिर भी सारे क्षेत्र को सिंचित करना इस उपकरण के वश में नहीं था।

स्वां नदी के रेतीले तटों पर कृषि

कहते हैं कि आवश्यकता आविष्कार की जननी है। अगर मनुष्य नई वस्तुओं की जरूरत महसूस न करता तो शायद आज दुनिया के किसी भी क्षेत्र में इतनी तरक्की देखने-सुनने को नहीं मिलती। जैसे-जैसे लोगों की जरूरतें बढ़ती गईं नई तकनीकी ज्ञान का विकास स्वयं होता चला गया। आज हम मंगल गृह और कम्पयूटर आदि की बातों को बहुत सहजता से लेते हैं, पर एक समय लोगों के पास आग जलाने तक का भी ज्ञान नहीं था। लेकिन अब इस आधुनिकतम वैज्ञानिक युग में कुछ भी असंभव नहीं दिखता।

हमारे देश में सदियों से हर क्षेत्र में स्वदेशी तकनीकी ज्ञान का प्रयोग होता आ रहा है। हमारे कई ग्रंथों में ऐसे ज्ञान का उल्लेख है। परन्तु समय के साथ इसका उपयोग कम होता गया। जब कोई व्यक्ति विशेष हमारे स्वदेशी तकनीकी ज्ञान का उपयोग करके उन्नति के मार्ग पर चलकर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है, हम लोग तभी चौंकते हैं। आज कृषि क्षेत्र में भी हो यही रहा है। जब विदेशियों ने हमारी ऋषि या प्राकृतिक कृषि तकनीक को आधार पर बनाकर जीवन हितैषी पद्धतियों को अपनाया तभी हम जागे। टिकाऊ खेती के लिए फसल चक्र के आधार पर भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने हेतु भारत में सदियों से स्वदेशी तकनीक का उपयोग किया जाता रहा। नदियों के किनारे बसने वाले लोग आज भी इसी ज्ञान के आधार पर अपनी परम्परागत खेती में आधुनिक कृषि तकनीकी का उपयोग करके, न केवल उत्पादन बढ़ाने में सफल रहे हैं बल्कि उनके द्वारा रसायनों का भी कम प्रयोग किया जा रहा है। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति एवं पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के अलावा अनेक प्रकार की जानलेवा बिमारियों से फसल को बचने में मदद मिलती है। कृषि क्षेत्र में भारी मशीनीकरण के कारण खेती पर निर्भर रहने वाले खेतिहर मजदूरों के सामने बेरोजगारी की गंभीर समस्या खड़ी हो गई है, परन्तु परन्तु ऊना जिला ने इस क्षेत्र में भी अनुकरणीय मिसाल कायम की है।

ऊना में स्वां नदी के तटीकरण का कार्य प्रगति पर है। परन्तु आज से कुछ साल पहले वर्षा ऋतु में स्वां नदी को अभिशाप माना जाता था। इस नदी में करीब 84 छोटी-छोटी बरसाती खड्डें (नाले) आकर समाती हैं। अतीत में इसकी विभीषिका का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि ऊना जिला के कुल 1,542 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल का लगभग 1,204 वर्ग किलोमीटर स्वां नदी के जलागम क्षेत्र में निहित है। स्वां नदी में इस क्षेत्र का अधिकतर पानी (कुछ पानी रिसने के बाद) इकट्ठा होकर बहता है, जो अपने साथ हजारों टन मिट्टी एवं रेत बहाकर अपने साथ लाता है। यह मिट्टी तथा रेत मैदानी तटीय क्षेत्रों में जमा हो जाती है और वहां की भूमि को रेतीला बना देती है। परन्तु बरसात के मौसम में गगरेट से संतोषगढ़ तक अभिशाप बनकर बहने वाली स्वां नदी मेहनतकशों के लिए अक्तूबर से जून तक वरदान बनकर बहती है। यह लोग इस दौरान इसके तटों पर उपलब्ध खाली भूमि का उपयोग कृषि कार्यों के लिए कर अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार ला रहे हैं। परन्तु इस कार्य में अधिकांश अप्रवासी अल्पसंख्यक परिवार ही संलिप्त हैं और स्थानीय लोगों की भागीदारी अपेक्षाकृत काफी कम है।

राईं (अप्रवासी अल्पसंख्यक) परिवारों की भूमिका

कहा जाता है कि भारत विभाजन से पहले ऊना में अल्पसंख्यक परिवार निवास करते थे, जो स्वां नदी के तट पर खेती (विशेष रूप से सब्जी) उगाने का ही कार्य करते थे। भारत विभाजन के बाद अधिकांश परिवार यहां से पाकिस्तान चले गए। कुछ समय बाद उत्तर प्रदेश के जिला बरेली, शाहजहांपुर, रामपुर, बदाऊं आदि के किसान परिवारों ने यहां आकर पुनः सब्जी की खेती आरम्भ की। अक्तूबर से जून माह के दौरान सब्जी उत्पादन कार्यों में संलिप्त रहने के बाद ये लोग जुलाई से सितंबर तक प्रायः अपने घरों को वापिस चले जाते हैं। इस प्रकार कुछ माह खेती करने और पुनः वापिस चले जाने के कारण स्थानीय लोग इन्हें राईं के नाम से पुकारते हैं।

राईं परिवार कहीं भी जमीन मिलने पर छप्पर डालकर अपना अस्थाई निवास स्थान बना लते हैं। ये लोग शहर या गांव में किराये के मकानों में रहने के लिए तैयार नहीं होते क्योंकि खेतों के पास रहने से इन्हें खेती गतिविधियों के लिए अतिरिक्त समय मिल जाता है। ऊना में नील गाए रात को फसलों को काफी नुकसान पहुंचाती है। परन्तु खेतों के समीप रहने के कारण ये लोग आसानी से अपनी फसल की रक्षा भी कर लेते हैं।

बागबानी

फलों की काश्त बागबानी कहलाती है। जिला गठन के समय ऊना का केवल 200 हैक्टेयर क्षेत्र ही बागबानी के अधीन था। इसमें भी अधिकतर क्षेत्र आम एवं गलगल के अंतर्गत था। वर्ष 2010 तक जिला में बागबानी आच्छादित क्षेत्र 5,180 हैक्टेयर और फल उत्पादन 200 मीट्रिक टन से बढकर 10,690 मीट्रिक टन तक पहुंच गया था। वर्तमान में जिला में बागवानी के तहत आच्छादित क्षेत्र 5,806 हैक्टेयर तक और फल उत्पादन 13,326

मीट्रिक टन तक जा पहुंचा है। वर्तमान में आम की जिन सुधरी और हर साल फल देने वाली किस्मों की काश्त की जा रही है, उनमें दशहरी, लंगड़ा, मुम्बई ग्रीन, आम्रपाली एवं मल्लिका शामिल हैं। आम के अतिरिक्त संतरा, माल्टा, आंवला, निम्बू, गलगल, आड़ू, अनार, प्लम तथा नाशपाती की काश्त को बढ़ावा दिया जा रहा है।

ऊना के बागबानों को अच्छी किस्म के सही फल-पौधे उपलब्ध करवाने के लिए वर्ष 1975-76 में सलोह में एक फल संतति एवं प्रदर्शन उद्यान की स्थापना की गई। वर्ष 2003 में आरम्भ उद्यान तकनीकी मिशन के तहत किसानों को बागीचा स्थापित करने, पानी स्रोत (टैंक, नलकूप आदि) विकसित करने, पौध संरक्षण उपकरण, पॉली हाऊस, फलों के रख-रखाव के लिए भंडार तथा केंचुआ खाद इकाई स्थापित करने के लिए सरकार द्वारा अनुदान उपलब्ध करवाया जा रहा है। इस मिशन के तहत किसानों ने फूलों तथा सब्जियों की काश्त को बढ़ावा के लिए अपने स्तर पर 41 हजार वर्गमीटर क्षेत्र पर पॉली हाऊस का निर्माण किया। किसान जरवरा तथा रंगीन शिमला मिर्च के उत्पादन से अच्छी आय प्राप्त कर रहे हैं।

बागबानी विभाग मौन पालन के लिए भी किसानों को प्रोत्साहित कर अनुदान पर मधुमक्खियां तथा मधुमक्खियां गृह उपलब्ध करवा कर रहा है। ऊना में वर्तमान में लगभग 3100 से अधिक मौन वंश हैं, जिनसे करीब 13 मीट्रिक टन शहद का उत्पादन हो रहा है। इसके अतिरिक्त 15 किसान प्रति वर्ष 30 मीट्रिक टन मशरूम उत्पादन कर रहे हैं।

ऊना में आवारा तथा जंगली जानवरों के उत्पात ने कई किसानों को खेती से विमुख होने पर मजबूर किया है, जिसे देखते हुए विभाग एलोवेरा, एसपैरागस, अश्वगन्धा, सफेद मूसली, स्टीविया, गिलोए, आंवला तथा सर्पगन्धा की काश्त को प्रोत्साहन दे रहा है। किसानों को बागवानी, पुष्प उत्पादन, मधुमक्खी तथा मशरूम उत्पादन सम्बन्धी तकनीकी जानकारी प्रदान करने के लिए विभिन्न स्थानों पर प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया जाता है। किसानों को राज्य में तथा प्रदेश से बाहर कृषि विश्वविद्यालयों तथा अनुसंधान केन्द्रों में शैक्षणिक भ्रमण पर भेजा जाता है ताकि उन्हें आधुनिकतम तकनीकी का ज्ञान प्राप्त हो सके।

पशुपालन

किसी भी कृषि प्रधान क्षेत्र में पशुपालन कृषि का मुख्य सहायक अंग होता है और ऊना भी इसका अपवाद नहीं। मुख्यता पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण विगत में बकरी पालन इस क्षेत्र का मुख्य व्यवसाय रहा। पूर्व में लोग आवश्यकतानुसार एक या दो निम्न किस्म के दुधारू पशु पाला करते थे। दुग्ध उत्पादन नाम मात्र ही था।

सन 1901 में स्थापित पशु चिकित्सालय सहित वर्ष 1950 तक जिला में केवल चार पशु चिकित्सा संस्थान ही कार्यरत थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रथम पंच वर्षीय योजना में आरम्भ कुंजी ग्राम संवर्द्धन योजना के परिणाम उत्साहजनक रहे। योजना के तहत उत्तम किस्म के सांड तथा भैंस सांड कुंजी संवर्द्धन तथा कुंजी ग्राम केन्द्र में रखे गए। नस्ल सुधार का कार्य एवं देसी सांडों की नसबन्दी की गई। ऊना स्थित पशु चिकित्सालय में पशु प्लेग तथा अन्य महामारियों से सम्बन्धित टीके उपलब्ध करवाए जाने लगे। सन् 1982 से तरल वीर्य तथा वर्ष 1986 से हिमीकृत वीर्य द्वारा कृत्रिम गर्भाधान आरम्भ हुआ।

ऊना में पंजाब की तरह भैंस पालन को विशेष महत्व दिया जाता है। परन्तु पिछले तीन दशकों से संकर गाय पालन को बढ़ावा मिला है और मध्यम किस्म के डेयरी फॉर्म स्थापित हो रहे हैं। कई किसानों ने पशुपालन को अपना मुख्य व्यवसाय बनाया है।

वर्तमान में जिला में 138 पशु चिकित्सा संस्थान कार्यरत हैं, जिनमें से 123 संस्थानों में हिमीकृत वीर्य द्वारा गाय और भैंसों में कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा उपलब्ध है। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार जिला में प्रति वर्ष कुल 71,200 मीट्रिक टन दूध का उत्पादन हो रहा है।

ऊना में पशुपालन को बढ़ावा देने के लिए पशु स्वास्थ्य एवं प्रजनन विभाग द्वारा अपने सभी पशु चिकित्सा केन्द्रों पर रोग निदान तथा उपचार की सुविधा मुहैया करवाई जाती है। नस्ल सुधार के लिए कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा के अतिरिक्त एएससीडीए के तहत तमाम संक्रामक बिमारियों से बचाव के लिए रोग निरोधक टीके लगाए जाते हैं। डेयरी उद्यमिता विकास योजना के तहत पशुपालकों को अच्छी नस्ल के पशु खरीदने के लिए जागरूक किया जा रहा है। पशुधन विकास बोर्ड द्वारा बांझपन निवारण एवं जागरूकता शिविर लगाए जा रहे हैं। बैकयार्ड पोल्ट्री योजना के अन्तर्गत चूजों का वितरण किया जा रहा है। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के तहत 200 चूजे खरीदने के लिए दस हजार रुपये तथा पशु आहार पर 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है। भेड़ पालकों को मुफ्त दवाइयां दी जाती हैं।

ललड़ी में जिला का प्रथम पशु पॉलीक्लीनिक स्थापित किया जा रहा है।

मत्स्यकि और ग्रामीण विकास

हिमाचल प्रदेश का दक्षिण कहे जाने वाले ऊना जिला का तापमान तथा जलवायु अन्तर्देशीय मत्स्यकि के विकास हेतु उत्तम मानी जाती है। ऊना में उपलब्ध जल संसाधनों, जिनमें जलाशय, नदियां, चौक डैम, ग्रामीण तालाब तथा दलदली भूमि का विकास शामिल है, के आधार पर मत्स्यकि विकास के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। हिमाचल प्रदेश में भाखड़ा डैम के निर्माण से अस्तित्व में

आये जलाशय में जिला के बंगाणा तथा कुटलैहड़ क्षेत्र की काफी उपजाऊ भूमि समा गई। इस भाग के विस्थापितों ने पुनर्वास तथा स्थायी रोजगार हेतु इस जलाशय में मत्स्यकि संवर्धन कार्य आरंभ किया। इस क्षेत्र के मत्स्य आखेटकों ने सहकारिता समूह गठित किए। लठियाणी में 17 मई, 1976 तथा मन्दली में 28 मार्च, 1978 को मत्स्य सहकारी सभाओं के गठन के बाद इस क्षेत्र के मछुआरों द्वारा गोबिन्द सागर झील से पकड़ी मछली के विपणन की व्यवस्था की गई। यद्यपि पूर्ण जलाशय के मत्स्य उत्पादन के विपणन की व्यवस्था फिश फैडरेशन के माध्यम से की जाती रही है। परन्तु फैडरेशन की कार्यशैली और लगातार घाटे के कारण ऊना जिला में आने वाले जलाशय की मत्स्य सहकारी सभाओं ने सर्वप्रथम खुली बोली द्वारा स्वयं मत्स्य विपणन का काम शुरू किया। बाद में फिश फैडरेशन के विघटन के बाद सम्पूर्ण गोबिन्द सागर में सभी मत्स्य सहकारी सभाओं ने खुली बोली से मछली नीलामी के तरीके को अपनाया।

वर्तमान में जिला में कुटलैहड़, लठियाणी, मन्दली और जलाशय के दौबड़ वाले भाग में चार मत्स्य सहकारी सभायें मछली विपणन का कार्य कर रही हैं। इन सहकारी सभाओं में पंजीकृत 400 से अधिक व्यक्ति प्रति वर्ष करीब 360 टन मछली पकड़ रहे हैं। इस क्षेत्र में मत्स्य उत्पादन में वृद्धि हेतु विभाग भी प्रति वर्ष मिलियन मछली बीज अंगुलिकाओं का संग्रहण कर रहा है। इस क्षेत्र में मत्स्य संरक्षण के लिए दो उपकेन्द्र स्थापित किए गए हैं जो मत्स्यकि संरक्षण के अलावा प्रचार एवं प्रसार की गतिविधियां चला रहे हैं। जलाशय में मत्स्यकि गणना में वृद्घि के उद्देश्य से विभाग बंगाणा क्षेत्र में सीड फार्म स्थापित करने के लिए प्रयास कर रहा है। जलाशय मत्स्यकि के अतिरिक्त नदियों में मत्स्यकि संरक्षण के कार्य किए जा रहे हैं।

ग्रामीण तालाब

पंचायती तालाबों के अतिरिक्त जिला में दलदली तथा बेकार भूमि काफी क्षेत्रफल में उपलब्ध है। किसान निजी भूमि पर मत्स्य फार्म बनाकर उनमें सफलतापूर्वक मछली पालन कर रहे हैं। स्वां नदी के किनारे स्थित भूमि में कम गहराई पर ही प्रचुर मात्रा में पानी उपलब्ध है, जिसका कम गहराई वाले नलकूप से ही दोहन किया जा सकता है। जिला में ऐसी भूमि पर काफी मछली फार्म बनाये गये हैं, जिनमें मुख्यतः पंजावर में लगभग सात हैक्टेयर भूमि पर बनाया गया तूड़ फार्म, नंगल खुर्द में तीन हैक्टेयर जमीन पर निर्मित राणा फार्म तथा हरोली ब्लाक में स्वां नदी के साथ बनाये गये 25 मछली फार्म शामिल हैं। जिला में मत्स्यकि क्षेत्रफल में हर साल दो से तीन प्रतिशत वृद्धि हो रही है।

ऊना के प्रगतिशील किसान नवीनतम वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग से अल्प समय में कम लागत तथा परिश्रम कर अपनी आय बढ़ाने में सक्रिय हैं। एकीकृत मछली पालन, जिसमें मछली पालन के साथ सुअर पालन तथा दुग्ध पशु पालन के व्यवसायों को जोडकर, उनसे प्राप्त खाद को तालाबों में सीधे डाल दिया जाता है और मछली को अतिरिक्त आहार देने की इतनी आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकार फार्म पर बनाई गई भोजन श्रृंखला से मछली के आहार पर होने वाले व्यय की बचत हो जाती है। इससे किसान मछली के साथ सुअर तथा डेयरी के उत्पादों से अतिरिक्त आय अर्जित कर रहे हैं। पंजाबर, कुठेहड़ा, जसवाला, नंगल खुर्द तथा वहडाला में ऐसे फार्म का निर्माण किया गया है।

जिला के 14 अग्रणी किसान मछली पालन के साथ पर्ल कल्चर पर भी कार्य कर रहे हैं। पण्डित दीना नाथ को इस क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य के लिए राष्ट्रीय सम्मान से अलंकृत किया गया है। उन्होंने अपने मछली फार्म पर इमेज पर्ल तैयार करके मत्स्यकि को नई दिशा प्रदान की है। पं. दीना नाथ से प्रेरणा प्राप्त कर अन्य किसान भी इसे अपना रहे हैं। लमलैहड़ी के यशपाल राणा, बहडाला के विनय कुमार राणा तथा सन्तोषगढ़ के कुशेन्द्र चब्बा ने इस दिशा में ठोस कदम उठाए हैं। यशपाल द्वारा उत्पादित अर्ध गोलाकार प्रा तिक गुलाबी मोती, गोलाकार मोती तथा डिजाइन मोती अर्न्तराष्ट्रीय स्तर हैं। इसके अलावा रैंसरी के शिव कुमार मोदगिल तथा बलजीत सिंह, अन्दोरा के चरणजीत सिंह राणा, हरोली के रवि कुमार, बंगाणा के रोशन लाल तथा खेड़ी की सुनीता वर्तमान में पर्ल कल्चर पर काम कर रहे हैं।

वन

वनों को हिमाचल प्रदेश की वास्तविक सम्पदा कहा जा सकता है। जंगलों से लकड़ी प्राप्ति के अतिरिक्त उद्योगों को कच्चा माल मिलता है और वनों से प्राप्त होने वाली जड़ी-बूटियां औषधि निर्माण में काम आती हैं। जल स्रोत का प्रस्फुटन तथा जलवायु को प्रभावित करने वाले वन ऊना जिला में अपेक्षाकृत कम हैं।

ऊना जिला में ऊना वन मण्डल की स्थापना वर्ष 1966 में हुई थी, जिसमें पांच वन परिक्षेत्र शामिल थे.ऊना, अम्ब, भरवाईं, बंगाणा तथा रामगढ़। कुल 1,540 वर्ग किलोमीटर भौगोलिक क्षेत्रफल वाले इस मंडल में 18 वन खंड, 66 बीट्स तथा पांच निरीक्षण चौकियां शामिल हैं। जिला में 47,702 हैक्टेयर भूमि वनों के अधीन थी।

वनस्पति

समूचे क्षेत्र में प्रमुखता से कीकर, फुलाह, अमलतास, शीशम, शहतूत, जामुन, आम, सफेदा, सिम्बल, बेर, ऐसन, आवंला, बना, बेद, धामन, अर्जुन, गूलर, पीपल, नीम, बेल (बिल्व), जबलोटा, मौलसरी, रजैन, साल, ड्रेक, बांस आदि के अतिरिक्त गिलौय, बसूटी, करौंदा, हारसिंगार, पृष्टपरनी, शंखपुष्पी, सयाली, अश्वगंधा, पुनर्नवा, वनफशा, चचरी बेर, काली मूसली, विंदा (पांसरा), अलीयार, हरड़, बहेड़ा, बिदारीकंद, टाटपलंगा, भखड़ा, शालपरणी, अपामार्ग (पुठकंडा), खदर, शिवलिंगी, कामिला, गुंजा

(रत्ती), चित्रक, कचनार, निरगुंडी, काला दाना, ब्राह्मी, कुटज, धातकी, पाठा, मालकंगनी, चक्षु, काकड़सिंही, गुड़मार, कपूरङ्क्षमजर, अधोपुष्पी, मिरगु, कंडियारी, छोटी ओलाह, सीतवाणी, तुम्बाबीज, गोरखपरनी, नीलकंठी, बरयां, अरनी, गम्मारीपाठल, मरोडफली, धतूरा, टौर, काकजंगा, बनतुलसी, इटसिट बटींडू, द्रोणपुष्पी, पित्तपापड़ा, गरना, जमीकन्द, आकाशबेल, करौंच, शताबरी, भांग, घीक्वार (घृतकुमारी), दूधीकलं, दूधीखुर्द आदि जड़ी-बूटियां पाई जाती हैं।

ऊना जनपद में पाई जाने वाली घास की किस्मों में खब्बड़ (खब्बल), पालमा, डीला, प्याजी, घुनां, बग्गड़, खडकाना, काही, डिब्ब, बूई, बारू तथा नड़ा शामिल हैं। ऊना में पाई जाने वाली बाँस की किस्मों में मग्गर, बाँस तथा नाल हैं।

वन्य जीव

ऊना के जंगलों में नील गाय, साम्बर, चीतल, तेंदुआ, जंगली सुअर, साही, नेवला, गीदड़, लोमड़ी, लकड़बग्घा, बंदर, लंगूर, जंगली बिल्ली, खरगोश, मुसंग (बिलाव), कोबरा, वाईपर, रैट स्नैक (धामिन), अजगर, ऊद बिलाव, काकड़ (चित्तीदार हिरन), चूहा, गिलहरी, जंगली मुर्गा, काला तीतर, पहाड़ी कौआ, मोर, तोता, कोयल, विभिन्न प्रकार की चिडिया, कनखजूरा, बिच्छू आदि के अतिरिक्त गोबिन्द सागर, स्वां नदी एवं इसकी सहायक नदियों और मानव निर्मित जलाशयों में काटला, राहू, सिल्वर कार्प, कैटफिश एवं महाशीर मछली पाई जाती है।

भारवाहक पशुओं में जिला के अन्दरूनी क्षेत्रों में घोड़ा, गधा, खच्चर एवं ऊंट का प्रयोग किया जाता है।

पौधरोपण

जिला में रोपस्थली को बढ़ावा देने तथा भू-संरक्षण कार्यों को करने की व्यापक संभावनाएं हैं। प्रत्येक वर्ष पौधरोपण के माध्यम से वन सम्पदा में वृद्धि करने हेतु विभाग द्वारा चीड़ एवं खैर के वृक्षों के अतिरिक्त ल्यूसीनिया जैसे तेजी से बढने वाले चौड़ी पत्ते वृक्षों को प्राथमिकता दी जाती है। ऊना के वन क्षेत्र में वृद्धि के लिए विभाग वन महोत्सव के दौरान पौधारोपण के अतिरिक्त विभागीय पौधारोपण अभियान, स्वां परियोजना, राष्ट्रीय बांस अभियान तथा वन विकास अभिकरण के माध्यम से हरियाली को बढ़ावा देने का प्रयास कर रहा है।

स्वास्थ्य

ऊना जिला के गठन के वक्त ऊना नगर में एकमात्र चिकित्सालय तथा पांच प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र, 18 आयुर्वेदिक तथा सात एल्योपैथिक औषधालय थे। परन्तु आज स्थितियां बिल्कुल बदल चुकी हैं। गांव-गांव में आधारभूत स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध करवाने के बाद अब भविष्य में राज्य सरकार द्वारा जिला में निजी क्षेत्र में मैडिकल कॉलेज स्थापित करने का निर्णय लिया गया है।

एल्योपैथिक स्वास्थ्य संस्थानों में जिला में वर्तमान में जिला मुख्यालय पर स्थित क्षेत्रीय अस्पताल, चिन्तपुर्णी, अम्ब तथा हरोली स्थित तीन सिविल अस्पताल, दौलतपुर चौक, दुलैहड़, संतोषगढ़, बंगाणा तथा भदसाली स्थित पांच सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 22 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के अतिरिक्त 136 उप-स्वास्थ्य केन्द्रों सहित कुल मिलाकर 170 स्वास्थ्य संस्थान कार्यरत हैं। क्षेत्रीय अस्पताल, सीएचसी, हरोली तथा गगरेट को प्रथम रैफरल इकाई (एफआरयू) घोषित किया गया है। सभी स्वास्थ्य संस्थानों में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम), जननी सुरक्षा योजना, मुख्यमंत्री विद्यार्थी स्वास्थ्य कार्यक्रम, प्रौजेक्ट मुस्कान, मातृ सेवा योजना, बेटी है अनमोल, स्वास्थ्य बीमा योजना, एनीमिया मुक्त हिमाचल, स्कूल दंत स्वास्थ्य कार्यक्रम तथा अन्य योजनाओं के तहत विभिन्न स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया करवाई जा रही हैं।

रोगियों को निःशुल्क एम्बुलैंस सेवा प्रदान करने के उद्देश्य से 25 दिसम्बर, 2010 को प्रदेश में आरंभ 'अटल स्वास्थ्य सेवा' के तहत क्षेत्रीय अस्पताल, ऊना, सीएचसी, बंगाणा, हरोली, गगरेट तथा दौलतपुर और पीएचसी, अम्ब में आधुनिकतम एम्बुलैंस सेवाएं प्रदान की गई हैं। मातृ स्वास्थ्य योजना के तहत जिला के आठ अस्पतालों-क्षेत्रीय अस्पताल, ऊना, सीएचसी, हरोली, गगरेट, दौलतपुर चौक, बंगाणा तथा अम्ब, पीएचसी, बसदेहड़ा और सिविल अस्पताल, चिंतपुर्णी में निःशुल्क प्रसव सेवाएं प्रदान की जा रही हैं। जिला में हर वर्ष स्वास्थ्य सेवाओं के सुदृढ़ीकरण पर लगभग दो करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं।

आयुर्वेदिक चिकित्सा क्षेत्र में वर्तमान में कुल 73 स्वास्थ्य संस्थान कार्य कर रहे हैं। इनमें ऊना तथा ईसपुर स्थित आयुर्वेदिक अस्पताल, ओयल स्थित प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र सहित 69 आयुर्वेदिक स्वास्थ्य औषधालय एवं जिला मुख्यालय पर स्थापित एक होम्योपैथी स्वास्थ्य संस्थान शामिल हैं।

सामाजिक कल्याण योजनाएं

सामाजिक सेवाएं प्रदेश सरकार की सर्वोच्च प्राथमिकता हैं। इस क्षेत्र में सरकार द्वारा समाज के कमजोर, गरीब तथा पिछड़े वर्गों के लोगों के लिए उपलब्ध करवाई जा रही सेवाओं की प्राथमिकता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि राज्य योजना परिव्यय का कुल 34 प्रतिशत सामाजिक सुरक्षा सेवाओं पर खर्च किया जा रहा है। इस क्षेत्र में सरकार द्वारा पात्र व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा पैंशन, अटल आवास एवं इन्दिरा आवास, अनुसूचित जाति उप-योजना, मुख्यमंत्री कन्यादान योजना, मदर टेरेसा मातृ शक्ति सम्बल योजना, मातृ शक्ति बीमा योजना, बेटी है अनमोल, जीवन श्री बीमा योजना आदि योजनाओं के माध्यम से राहत पहुंचाई जा रही है। पिछले वित्त वर्ष के दौरान मार्च, 2016 तक जिला में करीब 15.5 करोड़ रुपये व्यय कर 20,683 व्यक्तियों

को सामाजिक सुरक्षा पैंशन उपलब्ध करवाई गई। चालू वित्त वर्ष के दौरान 2500 नए व्यक्तियों को इस योजना में शामिल किए जाने से यह आंकड़ा बढकर 22,062 हो गया है। इस साल इस योजना के तहत 21 करोड़ रुपये की राशि व्यय की जा रही है।

विद्युतीकरण

जिला गठन के समय ऊना नगर में हिमाचल प्रदेश राज्य विद्युत् बोर्ड का केवल एक मंडलीय कार्यालय क्रियाशील था। जिला के मात्र 134 गांवों तथा दो नगरों में बिजली की सुविधा उपलब्ध थी। परन्तु आज सभी ग्राम पंचायतों के हर गांव तथा सभी नगरों में लोगों को बिजली की बेहतर सुविधाएं उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त औद्योगिक क्षेत्रों को पूरा दिन निर्बाध बिजली की आपूर्ति सुनिश्चित की गई है। विद्युत् आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकार द्वारा ऊना वृत्त में तीन मण्डल, 15 उपमण्डल तथा 70 विद्युत् सैक्शन स्थापित किए गए हैं। वर्ष 2010 में जिला में 33 केवी एचटी लाईन की कुल लम्बाई 220.577 किलोमीटर और 11 केवी एचटी लाईन की लम्बाई 1783.11 किलोमीटर है। कुल घरेलू उपभोक्ताओं की संख्या 1.32 लाख तक पहुंच गई है जबकि व्यवसायिक उपभोक्ताओं की संख्या 22 हजार से अधिक है। एनडीएमसी कनैक्शन, औद्योगिक कनैक्शन, कृषि कनैक्शन की संख्या, पेयजल योजनाओं एवं उठाऊ जलापूर्ति योजनाओं के कनैक्शन सहित विभिन्न किस्मों के कुल कनैक्शन की संख्या 1. 61 लाख तक पहुंच गई है।

कृषि विज्ञान केंद्र

किसानों तक पहुंची कृषि की नवीनतम तकनीक

ऊना जिला में कृषि का वास्तविक विकास 90 के दशक के मध्य तब आरम्भ हुआ, जब चौधरी सरवण कुमार कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर द्वारा फरवरी, 1995 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के सहयोग से रामपुर गांव में कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना की गई। यह केन्द्र कृषि विश्वविद्यालय के प्रसार निदेशालय के मार्गदर्शन में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा प्रदत्त वित्तीय सहायता से संचालित जा रहा है। इस केन्द्र की स्थापना के बाद क्षेत्र के किसानों तथा युवाओं को नवीनतम कृषि तकनीकी का ज्ञान प्रदान करने के अतिरिक्त स्वरोजगारी बनाने के उद्देश्य से कृषि आधारित उद्योगों जैसे मशरूम की खेती, मौन पालन, पशु पालन, सब्जी उत्पादन आदि में प्रशिक्षण प्राप्त करने में मदद मिलने लगी। वर्तमान में खेती में ट्रैक्टर, स्प्रे, पंप, घास निकालने की मशीन, गेहूं कटाई, धान रोपाई, आलू बिजाई तथा मिट्टी चढ़ाने से लेकर निराई-गुड़ाई तक में आधुनिक मशीनों का प्रयोग हो रहा है।

कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना के बाद वर्ष 2002 में केन्द्र परिसर में प्रयोगशाला, मशीन एवं बीज भंडार, मशरूम इकाई तथा ट्यूब-वैल का निर्माण मुकम्मल हुआ। साल 2005 तक केन्द्र में कृषक आवास तथा पशुधन इकाई भवन के निर्माण के उपरान्त वर्ष 2007 में मृदा परीक्षण प्रयोगशाला की स्थापना हो चुकी थी। यह केन्द्र क्षेत्र में विकास एवं जलवायु के अनुरूप स्थायीत्व प्रदान करने वाली भू-उपयोगिता को विकसित करने तथा किसानों को व्यावहारिक कृषि ज्ञान एवं कृषि क्षेत्र में हो रहे नवीनतम अनुसंधानों को उन तक पहुंचाने के लिए प्रयासरत है। केन्द्र फसलों पर अग्रिम पंक्ति तथा प्रक्षेत्र प्रदर्शन आयोजित कर फसलों के आंकड़े संकलित कर वैज्ञानिकों तथा योजना समन्वयकों को प्रतिक्रियाओं की वापसी की सूचना भेजता है। दलहनी तथा तिलहनी फसलों के घटते क्षेत्रफल को बढ़ाने के लिए केन्द्र किसानों को जागरुकता शिविरों के माध्यम से प्रेरित करता है। चयनित गांवों में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन कार्यक्रम में किसानों के खेतों पर प्रदर्शन क्षेत्र (प्लॉट) लगाए जाते हैं। वैज्ञानिक अपनी देख-रेख में इन क्षेत्रों में बीज, पानी तथा खाद की व्यवस्था करते हैं।

मुख्य प्रसार गतिविधियों के तहत यह केन्द्र हर दो साल में एक गांव का चयन करता है। आवश्यक सर्वेक्षण के उपरान्त किसानों को आधुनिक वैज्ञानिक ढंग से सब्जी उत्पादन तथा जैविक खेती और ग्रामीण महिलाओं को स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षित किया जाता है, जिसके लिए केन्द्र कृषक सलाहकार सेवा का उपयोग करता है। इस सेवा के अन्तर्गत किसानों को लुधियाना स्थित क्षेत्रीय परियोजना निदेशक के सौजन्य से मोबाईल पर मौसम तथा फसलों के उत्पादन एवं बिमारियों की रोकथाम तथा अन्य जानकारी निःशुल्क एसएमएस सेवा के माध्यम से मुहैया करवाई जाती है। केन्द्र विभिन्न बैंकों, विभागों तथा संस्थाओं के सहयोग से कृषक क्लब, महिला स्वयं सहायता समूह एवं सामान्य स्वयं सहायता समूह गठित कर उनके सदस्यों के लिए नवीनतम कृषि संबन्धी तकनीकों तथा व्यवसायों की जानकारी

प्रदान करता है। खंड विकास अधिकारी कार्यालय द्वारा क्रियान्वित विभिन्न योजनाओं में सहयोग के अतिरिक्त केन्द्र आतमा तथा आरकेवाईवी परियोजनाओं के तहत गठित महिला स्वयं सहायता समूहों को ब्लॉक प्रिंटिंग, कोमल खिलौने बनाने, जैल मोमबत्ती, फैन्सी बैग, क्षेत्रीय फलों तथा सब्जियों के उत्पाद, वाशिंग पॉऊडर आदि बनाना सिखाने के लिए प्रशिक्षण शिविर आयोजित करता है। यह विज्ञान केन्द्र लैंटना उन्मूलन एवं प्रबन्धन कार्यक्रम को भी सफलतापूर्वक कार्यान्वित कर रहा है। स्थानीय भाषा में चुड़ैल बूटी के नाम से जाने वाले लैंटना के उन्मूलन के लिए साल 2002 में आरंभ दो करोड़ रूपए की परियोजना के तहत करीब 1,100 हैक्टेयर भूमि पर अब तक की फसल के अतिरिक्त गेहूं, मक्का, आम, पापलर, सफेदा आदि के पौधे लगाए जा चुके हैं। इस केन्द्र ने देहरादून स्थित हैसको नामक संस्था के सहयोग से लैंटना से फर्नीचर, कोयला तथा धूप बनाने का भी सफल प्रयास किया है। उल्लेखनीय है कि लैंटना से निर्मित उत्पादों, जिनमें कुर्सी, मेज, कूड़ेदान आदि शामिल हैं, को बाजार में उतारा गया।

ऊना जिला में गंडयाली एक नकदी फसल है, जिसे पड़ोसी राज्यों में बेचकर किसान अच्छा लाभ कमाते हैं। परन्तु पिछले कुछ सालों से झुलसा रोग ने गंडियाली के उत्पादन में काफी असर डाला है। केन्द्र प्रशिक्षण के माध्यम से किसानों को जागरूक करने का प्रयास कर रहा है। केन्द्र की सलाह के अनुसार काम करने से गंडियाली की फसल में कीट का प्रकोप 24.5 प्रतिशत से घटकर मात्र 1.2 प्रतिशत रह जाने से किसानों की उपज में 68 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। वर्ष 2008 में कृषि को और अधिक बढ़ावा देने के उद्देश्य से उद्यान तकनीकी मिशन तथा पण्डित दीन दयाल किसान-बागबान समृद्धि योजना आरंभ की गई। पण्डित दीन दयाल किसान-बागबान समृद्धि योजना के क्रियान्वयन के बाद जिला में खुले स्थानों की बजाय पॉली हाऊस में नकदी फसलें उगाने से उत्पादन में कई गुणा वृद्धि के साथ किसानों की आर्थिकी में आशातीत बढ़ोतरी हुई। फरवरी, 2010 तक जिला में छोटे-बड़े 300 पॉली हाऊस के निर्माण से एक लाख वर्गमीटर पर सब्जी या अन्य नकदी फसलों का उत्पादन किया जा रहा है। स्वां नदी के तटीकरण कार्य के पूरा होने के पश्चात् किसानों को लगभग 5,000 हैक्टेयर और भूमि खेती के लिए उपलब्ध हो जाएगी।

कृषि विज्ञान केन्द्र क्षेत्र में विकास एवं जलवायु के अनुरूप स्थायीत्व प्रदान करने वाली भू-उपयोगिता को विकसित करने तथा किसानों को व्यावहारिक कृषि ज्ञान एवं कृषि क्षेत्र में हो रहे नवीनतम अनुसंधानों को उन तक पहुंचाने के लिए प्रयासरत है। केन्द्र फसलों पर अग्रिम पंद्रि तथा प्रक्षेत्र प्रदर्शन आयोजित कर फसलों के आंकड़े संकलित कर वैज्ञानिकों तथा योजना समन्वयकों को प्रतिक्रियाओं की वापसी की सूचना भेजता है।

नवीनतम कृषि तकनीकी के विकास और उपयोग से कृषि क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। उत्पादन तथा आय बढ़ाने के लिए किसानों ने संकर बीजों एवं रासायनिक खादों के साथ सिंचाई की आधुनिक तकनीकों को अपनाया, परन्तु उन्हें आवारा और जंगली पशुओं के कहर का सामना भी करना पड़ रहा है। परिणामस्वरूप किसान या तो खेती छोड़ते जा रहे हैं या केवल अपने घरों के पास ही खेती कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त ऊना जिला की खास पहचान माने जाने वाले पौना गन्ना तथा गंडियाली के उत्पादन पर शहरीकरण का खास असर पड़ा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि किसानों की आय में वृद्धि हुई है परन्तु कुछ फसलों के अस्तित्व पर संकट पैदा हो गया है। तिलहन तथा दलहनों का क्षेत्रफल पहले की अपेक्षा कम हुआ है और मोटे खाद्यान्न भी विलुप्त होते जा रहे हैं। इसके अलावा किसानों को अपने उत्पादों के विपणन के लिए बाजार न मिल पाने से उन्हें अपने उत्पादन के उचित दाम नहीं मिल पा रहे हैं। परन्तु फिर भी वर्ष 1971 की अपेक्षा वर्तमान स्थितियों में काफी परिवर्तन आया है। किसान अपने उत्पादों के भंडारण के लिए जिला में मौजूद सब्जी मंडी तथा शीत गृहों का लाभ उठा रहे हैं।

भविष्य में ऊना को अपनी कृषि उत्पादकता की वजह से प्रदेश का अन्न भण्डार बनने का गौरव प्राप्त हो सकता है। वर्ष 1971 के 22,900 हैक्टेयर भूमि के मुकाबले 2008 में गेहूं उत्पादन का क्षेत्रफल 32,981 हैक्टेयर तक पहुंच गया। इसी तरह मक्का उत्पादन का क्षेत्रफल भी 24,186 हैक्टेयर भूमि के मुकाबले 2008 में 31,339 हैक्टेयर तक जा पहुंचा। इसमें सन्देह नहीं कि कृषि भूमि का क्षेत्रफल तो बढ़ा ही है, खाद्यान्नों के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। परन्तु किसान अब नकदी फसलों के उत्पादन पर अधिक ध्यान दे रहे हैं। इस साल आलू उत्पादन का क्षेत्रफल बढकर एक हजार हैक्टेयर तक जा पहुंचा। वर्ष 1971 में मात्र 1,874 हैक्टेयर भूमि पर ही सिंचाई सुविधा उपलब्ध थी जो वर्तमान में बढकर 1,77,13 हैक्टेयर तक जा पहुंची है। वर्तमान में कुल 360 सिंचाई नलकूपों के अलावा 190 पेयजल योजनाएं कार्य कर रही हैं। इसके अतिरिक्त 45 सिंचाई योजनाएं निर्माणाधीन हैं। वर्ष 2009-10 में 30,523 हैक्टेयर भूमि पर मक्का का उत्पादन 58,059 टन, 1,815 हैक्टेयर भूमि पर धान का उत्पादन 3,993 टन तथा 32,880 हैक्टेयर पर गेहूं का उत्पादन 49,429 टन रहा।

उप निदेशक, क्षेत्रीय कार्यालय, सूचना एवं जन संपर्क विभाग, धर्मशाला, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 215, मो. 0 94182 52777

ऊना जिला ही हिमाचल प्रदेश का केवल ऐसा जिला है, जिसे रेल के माध्यम से राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली से सीधा जुड़ने का गौरव प्राप्त है। परन्तु अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। वर्तमान में ऊना से दिल्ली तक हिमाचल एक्सप्रैस तथा जनशताब्दी एक्सप्रैस रेल सेवाएं रोजाना अप-डाऊन कर रही है, जबकि तीन डिब्बों को जनशताब्दी एक्सप्रैस से जोड़कर सप्ताह में तीन बार वैकल्पिक दिनों में अप-डाऊन ऊना-हरिद्वार लिंक रेल सेवा भी उपलब्ध करवाई जा चुकी है।

हिमाचल की ब्रॉडगेज रेल लाइन
ऊना से दिल्ली दूर नहीं

प्रतिदिन करीब सवा दो करोड़ भारतीय देश के 1,08,706 किलोमीटर लम्बे रेलवे ट्रेक पर दौड़तीं 18,820 अप-डाऊन ट्रेनों के माध्यम से रेल यात्रा का आंनद उठाते हैं। देश में यातायात के सबसे सुलभ, आरामदायक और सस्ते सामान को जन-जन तक पहुंचाने के लिए केन्द्र सरकार ने 7,083 रेलवे स्टेशन का सुदृढ़ संजाल बिछाया है। परन्तु हम शायद ही कभी देश में रेल सेवा के आरंभ होने तथा राष्ट्रीय विकास में इसकी महती भूमिका को लेकर कभी सोचते हों। इतिहास में झांकने पर पता चलता है कि ब्रितानवी सरकार ने रेल सेवा के महत्व को देखते हुए सन् 1853 में सबसे पहले मुंबई से थाने के मध्य 21 मील लम्बे रेलवे ट्रेक पर रेल सेवा की शुरुआत हुई थी। इस सेवा से भले ही ब्रिटिश हित सधते थे, परन्तु इसने देश का विकास सुनिश्चित करने के अतिरिक्त राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक एकता को भी बढ़ावा दिया। आजादी के बाद देश में कार्य कर रही 42 विभिन्न रेलवे इकाइयों का विलय कर, उनका भारतीय रेलवे के रूप में राष्ट्रीयकरण किया गया।

अगर हम हिमाचल प्रदेश में रेल सेवाओं के इतिहास पर चर्चा करें तो ज्ञात होगा कि राज्य में कालका-शिमला और पठानकोट-जोगिन्द्र नगर नैरो गेज ट्रेक पर रेल सेवा आरम्भ हुए एक सदी से अधिक बीत चुकी है। इनमें से कालका-शिमला रेल सेवा को तो विश्व धरोहर घोषित किया गया है। परन्तु इसके बावजूद हिमाचल में रेल नैटवर्क के नाम पर अभी तक नाममात्र सुविधाएं ही उपलब्ध हैं। देश में रेलवे नेटवर्क की स्थापना के 103 साल बाद सन् 1956 में हिमाचल में पहली बार ब्रॉड गेज रेल नेटवर्क की स्थापना के लिए सर्वेक्षण की शुरूआत हुई। परन्तु नंगल-ऊना-तलवाड़ा ब्रॉड गेज रेल लाईन के नाम पर वर्ष 2011 तक केवल मात्र 44.2 किलोमीटर रेल ट्रेक का निर्माण ही संभव हो सका है। इसमें से भी अभी तक केवल 33.2 किलोमीटर ट्रेक पर ही चूरूडू-टकारला तक रेल सेवा शुरू हो पाई है।

ऊना जिला ही हिमाचल प्रदेश का केवल ऐसा जिला है, जिसे रेल के माध्यम से राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली से सीधा जुडने का गौरव प्राप्त है। परन्तु अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। वर्तमान में ऊना से दिल्ली तक हिमाचल एक्सप्रैस तथा जनशताब्दी एक्सप्रैस रेल सेवाएं रोजाना अप-डाऊन कर रही है, जबकि तीन डिब्बों को जनशताब्दी एक्सप्रैस से जोड़कर सप्ताह में तीन बार वैकल्पिक दिनों में अप-डाऊन ऊना-हरिद्वार लिंक रेल सेवा भी उपलब्ध करवाई जा चुकी है। कहने को तो प्रदेश में रेल नेटवर्क विस्तारीकरण का इतिहास काफी पुराना है। परन्तु यह अंब तक 44.2 किलोमीटर रेल लाईन बिछाने के लिए 54 साल की लंबी कशमकश तथा इसके आगे तलवाड़ा से आगे मुकेरियां तक के संभावित लंबे एवं थकाऊ सफर को ही इंगित करता है। अस्सी एवं नब्बे के दशक में रेल विस्तार कार्यक्रम को कुछ गति अवश्य मिली थी। सन 1991 में ऊना-नंगल के बीच 23.34 करोड़ रुपये व्यय कर, 16.45 किलोमीटर लंबे रेल ट्रेक निर्माण के बाद ऊना-दिन्दी-बरेली हिमाचल एक्सप्रैस रेल सेवा 11 जनवरी को शुरू की गई थी। इसके बाद साल 1998 तक पुनः प्रदेश में रेल विकास का कार्य धीमा पड़ गया। वर्ष 1998 से 2004 तक ऊना से आगे चुरूडू तक रेल ट्रैक बिछाने के कार्य को गति दी गई तथा इस दौरान 64 करोड़ रुपये व्यय कर 16.8 किलोमीटर रेल लाईन बिछाई गई। वर्ष 2004-05 के रेल बजट में चुरूडू-टकारला से अंबाला कैंट तक पैसेंजर ट्रेन शुरू करने की घोषणा को 25 मार्च, 2005 को अमलीजामा पहनाया गया। नंगल-ऊना-तलवाड़ा ब्रॉड गेज रेल सेवा के तीसरे चरण में चुरूडू से आगे अंब तक 11 किलोमीटर रेल लाईन निर्माण पर करीब 49 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं, जिसे हाल ही में रेलवे सेफ्टी विंग द्वारा यातायात के लिए हरी झंडी दे दी है। नंगल-तलवाड़ा-मुकेरियां रेल लिंक को सामरिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण वैकल्पिक रेल मार्ग के रूप में देखा जाता है। इसके बनने से राष्ट्रीय सुरक्षा को सुनिश्चित बनाने के अलावा प्रदेश के ऊना, हमीरपुर, कांगड़ा तथा बिलासपुर जिलों को भारी लाभ पहुंचेगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह रेल लिंक केवल ऊना ही प्रदेश के औद्योगिक, व्यापारिक तथा पर्यटन क्षेत्रों के उत्थान में सहायक सिद्ध होने के अलावा राष्ट्रीय सुरक्षा में अहम भूमिका निभाएगा।

◆ **अजय पाराशर**

विकास

औद्योगीकरण ने खोले आर्थिक समृद्धि के द्वार

◆ राजेश जसवाल

हिमाचल प्रदेश में लघु स्तरीय उद्योगों का इतिहास क्रमबद्ध नहीं रहा। पहाड़ी क्षेत्र होने की वजह से उद्योगपतियों को यहां उद्योग स्थापित करना घाटे का सौदा लगता था। तकनीकी मार्गदर्शन तथा सुनिर्धारित औद्योगिक नीति का अभाव भी उद्योगों के विकास में बाधक रहे। इन तमाम कठिनाईंयों को अनुभव करते हुए प्रदेश सरकार ने सन् 1967 में एक नीति के तहत लघु उद्योगों के पंजीकरण का विकेन्द्रीकरण करते हुए जिला स्तर पर पंजीकरण की सुविधा उपलब्ध करवाई, जिससे उद्यमियों को सहायता, सुझाव तथा मार्गदर्शन भी प्राप्त होने लगा।

वर्ष 1971 में हिमाचल सरकार ने विविध उद्योगों की स्थापना हेतु उद्योगपतियों को आकर्षित करने के लिए नए नियम बनाए और उदार सहायता नीति को अपनाने के अतिरिक्त कुछ क्षेत्रों का चयन कर उन्हें औद्योगिक क्षेत्रों के रूप में विकसित करने का निर्णय लिया। इस निर्णय के तहत हर जिला में एक क्षेत्र का चयन किया गया। ऊना जिला में प्राथमिकता के आधार पर मैहतपुर को चयनित किया गया। होशियारपुर-ऊना-नंगल सडक पर जिला मुख्यालय से करीब 13 किलोमीटर दूर स्थित मैहतपुर में 109 एकड़ भूमि का चयन किया गया। वर्ष 1974 में औद्योगिक दृष्टि से गगरेट जिला का दूसरा महत्वपूर्ण स्थान बना। यह ऊना से लगभग 32 किलोमीटर की दूरी पर होशियारपुर-धर्मशाला सडक पर स्थित है। सोलन के बाद प्रमुखता से प्रदेश के औद्योगिक मानचित्र पर उभरने वाले इस जिला में मैहतपुर तथा गगरेट के पश्चात विकसित होने वाले औद्योगिक स्थानों में टाहलीवाल, धमांदरी तथा अम्ब शामिल हैं।

केन्द्र सरकार द्वारा 07 जनवरी, 2003 को हिमाचल प्रदेश के लिए घोषित विशेष औद्योगिक पैकेज की घोषणा के बाद जिला में औद्योगिक इकाईयों के 1,734 विभिन्न अस्थाई पंजीकरण में 497 लघु उद्यम, 1,148 सूक्ष्म तथा 89 मध्यम एवं बड़े उद्योग शामिल थे। इससे लघु उद्योगों में 856.04 करोड़ रुपये के निवेश से 23,645 व्यक्तियों, सूक्ष्म उद्योगों में 422.14 करोड़ रुपये का निवेश से 20,334 व्यक्तियों तथा 7752.48 करोड़ रुपये के निवेश 45,001 लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ। इस तरह इन उद्योगों की स्थापना से ऊना में कुल 9030.66 करोड़ रुपये के निवेश से 88,980 लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ।

प्रदेश की शिवालिक पहाड़ियों के अंचल में बसा जिला ऊना समय के साथ-साथ प्रगति के पथ पर निरन्तर अग्रसर है। जिला में जिस तेजी के साथ औद्योगिकरण को बढ़ावा मिला है उसी का ही नतीजा है कि आज ऊना विकास के पथ पर सरपट दौड़ रहा है। औद्योगिकरण की बात करें तो आज जिला ऊना में 2367 औद्योगिक इकाइयां कार्यरत है। जिसमें 2174 सूक्ष्म, 170 छोटी तथा 23 मध्यम व बडी इकाइयां शामिल हैं। इन छोटी बडी औद्योगिक इकाइयों में लगभग 1775 करोड रुपये का निवेश हुआ है। जिनके माध्यम से 15346 लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ है जिसमें से 13670 हिमाचली शामिल हैं। मैहतपुर, टाहलीवाल,

प्रदेश की शिवालिक पहाड़ियों के अंचल में बसा जिला ऊना समय के साथ-साथ प्रगति के पथ पर निरन्तर अग्रसर है। जिला में जिस तेजी के साथ औद्योगीकरण को बढ़ावा मिला है उसी का ही नतीजा है कि आज ऊना विकास के पथ पर सरपट दौड़ रहा है। औद्योगिकरण की बात करें तो आज जिला ऊना में 2367 औद्योगिक इकाइयां कार्यरत है। जिसमें 2174 सूक्ष्म, 170 छोटी तथा 23 मध्यम व बडी इकाइयां शामिल हैं। इन छोटी बडी औद्योगिक इकाइयों में लगभग 1775 करोड रुपये का निवेश हुआ है।

गगरेट, बसाल, अंब व जीतपुर बाथडी प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र हैं। क्रीमिका, नेस्ले, ल्यूमिनस पॉवर टैक्नॉलोजी, हिम सिलेंडर, सुखजीत एग्रो, प्रीतिका ऑटो कैटस, एमबीडी प्रिंट ग्राफिक्स जैसी अनेक नामी कपनियां जिला में कार्यरत हैं। अगर गत साढ़े तीन वर्षों की ही बात करें तो जिला में औद्योगिकरण की दिशा में न केवल कई अहम निर्णय लिए गए बल्कि नए औद्योगिक क्षेत्रों के विकास का मार्ग भी प्रशस्त हुआ है। प्रदेश सरकार की विकासोन्मुख सोच का ही नतीजा है आज जिला ऊना के पंडोगा में 112 करोड़ रुपये की लागत से 1570 कनाल भूमि पर एक नया अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किया जा रहा है तो वहीं देहला-दुलैहड-इसपुर-गगरेट क्षेत्र को भी औद्योगिक कॉरीडोर के तहत शामिल किया गया है। जिससे इस क्षेत्र में औद्योगिक अधोसंरचना के विकास को बल मिलेगा तो वहीं नए उद्योग स्थापित करने का मार्ग भी प्रशस्त होगा। जिला में औद्योगिक अधोसंरचना को विकसित करने तथा इससे जुडी विभिन्न गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने कई अहम प्रोजैक्टस को शुरू किया है। जिनमें नंगल से टाहलीवाल बाथड़ी तक प्राकृतिक गैस पाइप लाईन के तहत लगभग अढ़ाई करोड रुपये का एक प्रोजैक्ट, बाथू में 4.46 करोड़ रुपये की लागत से लेबर हॉस्टल का निर्माण, बाथू में ही 10.08 करोड़ रुपये की लागत से कॉमन फैसिलिटी सैंटर शामिल है। इसके अतिरिक्त सिंगा में 51 एकड भूमि में लगभग 250 करोड़ रुपये की लागत से फूड पार्क तथा ठठल में 65 एकड क्षेत्र में 103.90 करोड रुपये की लागत से हिमाचल कपडा पार्क भी स्थापित किया जाना प्रस्तावित है। वर्तमान में जिला में कार्यरत औद्योगिक क्षेत्रों की बात करें तो मैहतपुर में 902 कनाल भूमि में 158 प्लाटस आंवटित किए गए हैं जिनमें 135 इकाइयां, टाहलीवाल में 726 कनाल में 184 प्लॉटस आवंटित किए हैं जिनमें 174 इकाइयां स्थापित हैं। इसी तरह जहां गगरेट औद्योगिक क्षेत्र की 1109 कनाल भूमि में 75 प्लाटस आवंटित किए गए हैं जिनमें 61 इकायां तो वहीं अंब औद्योगिक क्षेत्र की 1059 कनाल क्षेत्र में 30 प्लाटस आवंटित किए गए हैं जिनमें 18 औद्योगिक इकाइयां स्थापित हैं। जबकि 244 कनाल बसाल औद्योगिक क्षेत्र में 41 प्लाटस में दो तथा जीतपुर बाथडी की 235 कनाल भूमि में 27 प्लाटस आवंटित कर तीन इकाइयां स्थापित हुई हैं। जिला में औद्योगिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए 15,15 करोड रुपये की राशि व्यय कर अजौली-लालूवाल वाया टाहलीवाल सडक को बेहतर बनाया गया है। औद्योगिक क्षेत्र टाहलीवाल में सड़कों के सुदृढ़ीकरण पर 215 करोड जबकि मैहतपुर क्षेत्र में 161 करोड़ रुपये की राशि व्यय की गई है। गोंदपुर जयचंद में 1.78 करोड़ रुपये की लागत से औद्योगिक पार्क विकसित किया जा रहा है। साथ ही जिला के हरोली विधानसभा क्षेत्र के अन्तर्गत पालकवाह में लगभग 18 करोड़ रुपये की लागत से हिमाचल प्रदेश का पहला कौशल विकास प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किया जा रहा है। इसके अलावा टाहलीवाल औद्योगिक क्षेत्र में सड़क के किनारे जल निकासी एवं सिवरेज सिस्टम के तहत प्रथम व द्वितीय फेज में 2.15 करोड रुपये जबकि गगरेट औद्योगिक क्षेत्र में एक करोड रुपये की राशि व्यय की गई है। जिला के खड्ड गांव में बहुउदेश्यीय सुविधा केन्द्र की स्थापना को लेकर एक करोड़, घालूवाल व सलोह में रेहन बसेरा के निर्माण कार्यों के लिए 50-50 लाख रुपये की राशि व्यय की जा रही है। साथ ही सामुदायिक केन्द्र पंडोगा, गोंदपुर जयचंद, सिंगा व हलेडा के निर्माण कार्यों के लिए भी 25-25 लाख रुपये की राशि प्रथम चरण में स्वीकृत कर दी गई है। इसके अतिरित बाथू, बाथडी, गोंदपुर जयचंद, टाहलीवाल, सिंगा, ईसपुर, भडियारा, हलेडा, बालीवाल, लालूवाल, मैहतपुर में खूबसूरत शैली में रेन शैल्टरों के निर्माण कार्य के लिए भी औसतन 10-15 लाख रुपये की राशि मुहैया करवाई गई है। औद्योगिक अधोसंरचना के विकास के साथ-साथ स्थानीय ग्रामीणों के विकास पर भी उद्योग विभाग के माध्यम से विभिन्न विकासात्मक कार्यो के लिए भी करोड़ों रुपये की राशि उपलब्ध करवाई गई है। जिसमें रास्तों व गलियों का निर्माण इत्यादि प्रमुख कार्य शामिल हैं। इस तरह जिला ऊना में वर्तमान सरकार के साढ़े तीन वर्षो के कार्यकाल के दौरान औद्योगिक अधोसंरचना के साथ-साथ औद्योगिक विकास के लिए गए अहम निर्णयों से न केवल जिला में औद्योगिक गतिविधियों को बढ़ावा मिल रहा है बल्कि नए औद्योगिक क्षेत्र स्थापित हो जाने से प्रदेश सहित जिला ऊना के शिक्षित युवाओं को सीधे व परोक्ष तौर पर रोजगार के नए अवसर सृजित होंगे।

जिला ऊना के पंडोगा में 112 करोड़ रुपये की लागत से 1570 कनाल भूमि पर एक नया अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किया जा रहा है तो वहीं देहला-दुलैहड-इसपुर-गगरेट क्षेत्र को भी औद्योगिक कॉरीडोर के तहत शामिल किया गया है। जिससे इस क्षेत्र में औद्योगिक अधोसंरचना के विकास को बल मिलेगा तो वहीं नए उद्योग स्थापित करने का मार्ग भी प्रशस्त होगा। जिला में औद्योगिक अधोसंरचना को विकसित करने तथा इससे जुडी विभिन्न गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने कई अहम प्रोजैक्टस को शुरू किया है।

सहायक लोक सम्पर्क अधिकारी ऊना, जिला ऊना
मो. 0 94181 59078

सहकारिता आंदोलन के प्रवर्तक ठाकुर हीरा सिंह

◆ कुंवर हरि सिंह

जिला ऊना के गांव पंजावर में 17 नवंबर को एक राज्य स्तरीय समारोह का आयोजन, भारत में सहकारिता आंदोलन के प्रवर्तक स्व. ठाकुर हीरा सिंह को श्रद्धांजलि सुमन होंगे। शायद बहुत कम लोग जानते होंगे कि 20 फरवरी 1892 को पंजावर के एक अशिक्षित पर बहुत दूरदर्शी, ऊंचे दिमाग के महान व्यक्तित्व वाले मायानाज सपूत ठाकुर हीरा सिंह नंबरदार ने देह शामलात के 27 मालिकों पर आधारित पहली शामलाती भूमि सहकारी संस्था की स्थापना करके देश में सहकारिता का पहला दीप प्रज्वलित किया था। भारत ही नहीं, विदेशों के बुद्धिजीवियों तथा अर्थशास्त्रियों को भी उन्होंने अपने इस अनूठे प्रयास से आश्चर्यचकित कर दिया। भारत में सहकारिता अधिनियम उनके बहुत बाद सन् 1912 से लागू हुआ था।

पंजावर गांव उस समय पंजाब प्रांत के जिला होशियारपुर की तहसील ऊना में था। शिवालिक की उपत्यकाओं में ऊंची सतह पर स्वां नदी के तट पर बसे इस गांव में उस समय कुल भूमि 4000 एकड़ थी। इसका लगभग आधा भाग शामलात भूमि था। शिवालिक के निकट की भूमि पथरीली और रेतीली थी और बहुत कम फसल देती थी। बीच की भूमि अच्छी थी और अच्छी वर्षा होने पर अच्छी फसल देती थी। पूर्व की ओर के भूखंड भी बहुत उपजाऊ थे और थोड़ी मेहनत पर अच्छा उत्पादन देते थे। लगभग सारा क्षेत्र वारानी था और हर चीज वर्षा तथा मौसमी हवाओं की कृपा दृष्टि पर अवलंबित रहती थी। यहां का जलवायु स्वास्थ्य-वर्धक था, न गर्मियों में अधिक गर्मी, न सर्दियों में अधिक शीत। गांव में हिंदू राजपूत, ब्राह्मण, खतरी, जाट, बाहती और मुसलमान गुज्जर रहते थे। गांव की आबादी तीन हजार थी। सारी की सारी भूमि के मालिक राजपूत परिवार ही थे। शेष सब या तो उनके काश्तकार थे या अपना जीवन यापन मजदूरी तथा अन्य मेहनत के काम से करते थे।

सारी अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित थी। मेहनत करने पर भी लोगों को पर्याप्त आय न होती थी। इधर लोग ब्याह-शादियों, जन्म-मरण पर अनावश्यक व्यय करते हालांकि उनकी आर्थिक दशा दयनीय थी। यह गांव राजा अंब के अधिकार क्षेत्र में था। राजा लोगों से भू-राजस्व बहुत अधिक और अनुचित वसूल करते जिसके परिणामस्वरूप लोगों की खेती-बाड़ी करने में रुचि कम हो रही थी। पश्चिमी भाग का लगभग आठ हजार कनाल का हिस्सा बिलकुल उजाड़ और पथरीला था। इन रेगिस्तानी नकारा भू-भागों से कोई उपज की आशा न थी। पूर्व की ओर का सात हजार कनाल भू-क्षेत्र स्वां नदी की लपेट में था। यह नदी हर बार इसे अपने साथ बहा ले जाती थी। इस सबके परिप्रेक्ष्य में गांव की सामाजिक-आर्थिक दशा चिंताजनक थी। लोगों में शिक्षा का अभाव था। कृषि के अतिरिक्त वे अन्य किसी पेशे से अनभिज्ञ थे। जनसाधारण सतत कर्ज तले दबते गए। लोगों ने 25 से साढ़े सैंतीस प्रतिशत तक ब्याज पर ऋण ले रखे थे। ये ऋण समय के साथ-साथ बढ़ते रहे और हालात यहां तक पहुंचे कि गांव के भूमि मालिकों का ऋण उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में 20 हजार रुपया हो गया। इसके अतिरिक्त उनकी 400 कनाल भूमि भी दूसरों के पास रहन हो गई।

ऐसी परिस्थितियों में गांव के नंबरदार ठाकुर हीरा सिंह ने अनपढ़ होते हुए भी एक दूरदर्शी और योग्य नेता के रूप में सारे गांव को सहकारिता का एक नया विचार दिया और उसके माध्यम से सबको एक लड़ी में पिरोकर गांव की अर्थव्यवस्था को एक नई दिशा दी। उन्होंने एक योजना बनाई तथा गांव के 27 भू-मालिकों को एक सहकारी संस्था के रूप में संगठित किया। 20 फरवरी 1892 को संस्था को भारतीय पंजीकरण अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत कराया। यह पंजीकरण 30 वर्ष की अवधि के लिए हुआ था। भारत की इस पहली सहकारी संस्था के उद्देश्यों में रखे गए-1- शामलाती भूमि को उन व्यक्तिगत हिस्सेदारों से बचाना जिनके हाथों में यह जायदाद खुर्द-फुर्द हुई थी। 2- शामलाती भूमि पर सामूहिक कब्जा कायम रखना तथा उसकी बगलबंदी करके या खड़काना लगाकर भूमि विकास के लिए कोशिश करना; 3- इस भूमि की आय को सामूहिक तौर पर रचना तथा सबके सामूहिक हितों के लिए ही व्यय करना; 4- सदस्यों को कृषि के लिए सस्ते ब्याज पर ऋण देना और जो लोग साहूकारों से भारी ब्याज पर ऋण ले चुके थे, उनको ऋणमुक्त बनाने के लिए सहायता देना। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए 6 सदस्यों पर आधारित एक कमेटी बना दी गई जिसके सर्वप्रथम प्रधान ठाकुर हीरा सिंह चुने गए। यह भी उल्लेखनीय है कि उस समय भी यह कमेटी अपना सारा लेखा-जोखा हिंदी भाषा में रखती थी। हर छह माह बाद सारा हिसाब-

किताब सदस्यों को दिखाया जाता था और इस तरह से सहकारिता के माध्यम से सारी मुश्तरका भूमि का प्रबंध सामूहिक हाथों में चला गया। हरेक ने व्यक्तिगत लाभ दृष्टि विगत कर सामूहिक हित और लाभ की नई सोच अपना ली। सभी ने अपनी-अपनी सारी भूमि स्वेच्छा से दिली इरादे के साथ सहकारी कमेटी को सौंप दी और इस प्रकार के एक ऐसे सहकारी विचार को हिंदोस्तान के लोगों के लिए पेश किया जो उस समय देश में कहीं भी नहीं था। कमेटी अपने पास 100 रुपये से ज्यादा नकद नहीं रखती थी। शेष सारा रुपया होशियारपुर जमा कराया जाता था। सभी व्यय कमेटी की बाकायदा स्वीकृति से ही होते थे।

कमेटी ने सबसे पहले शामलाती जायदाद के लिए एक चौकीदार रखा। हर किसी को एक निश्चित अवधि तक के लिए रकबा से घास काटने और वृक्ष काटने पर रोक लगा दी। बहुत से शीशम के और वृक्ष लगाए गए। बाद में घास और लकड़ी की बिक्री से भारी आय हुई जिसे सहकारी सभा ने भूमि के विकास पर खर्च किया जो भूमि स्वां नदी बहाकर ले जाती थी, उसके बचाव और अन्य भू-संरक्षण के लिए सबने साझे प्रयास किए। लोगों को 6 प्रतिशत सस्ते ब्याज पर ऋण मिलने लगे। साहूकारों से लिए ऋण लोग लौटने में सफल हुए और अपनी स्थापना के कुछ प्रारंभिक वर्षों में ही इस संस्था ने 1500 एकड़ भूमि जो रहन थी, फक कराने में सफलता पाई। इससे लोगों में भावनात्मक एकता और भाईचारा, सहभागिता और आपसदारी का नया सूत्रपात हुआ, मिलकर सामूहिक प्रयासों की लहर में संस्था को भारी लाभ हुआ। 3000 रुपये व्यय करके संस्था ने सर्वप्रथम एक मिडिल स्कूल का भवन बनवाया तथा शिक्षा का अनूठा उपहार गांव को दिया।

गांव के सभी पुराने कुओं की मरम्मत कराई गई और दस नए कुएं खोदे गए। जनसाधारण को बहुत लाभ हुआ। आम और माल्टे के वृक्ष लगाए गए। गांव के कच्चे रास्तों को पक्का कराया और कई नए तालाब बनाए। गांव के बच्चों को शिक्षा के लिए नाममात्र ब्याज पर ऋण दिए, जिनकी वसूली छोटी-छोटी आसान किस्तों में की गई। बाद में गांव का सारा भू-राजस्व भी शामलात भूमि की आय में से दिया जाने लगा। इस सबसे गांव का नक्शा ही बदल गया। सारे प्रांत में इस प्रगतिशील गांव की गाथाओं की गूंज हुई। आसपास के लोग आकर्षित हुए। दूर पार से हर कोई गांव को देखने आने लगा। 1920 में पक्की ईंटों का भट्ठा लगाया गया। 16 लाख ईंटें तैयार की गईं जो सदस्यों में बांटी गई। भट्ठे में शामलाती लकड़ी जलाई गई। पंजावर के लोगों ने पक्की ईंटों के आलीशान मकान बनाए। बाद में लोगों को 6 की बजाय 3 प्रतिशत पर ऋण मिलना शुरू हुआ, साहूकारों के ऋण से 6 माह में ही छुटकारा दिला दिया गया। अपने गांव से बाहर की 1000 एकड़ भूमि भी संस्था ने खरीद ली। 30 साल बाद तक संस्था ने लोगों को 1500 के बाहरी ऋणों से मुक्त कराया, 500 एकड़ रहन भूमि फक करा ली, खरीद ली। 70 हजार रुपये का लाभ उठाया।

58000 रुपये सदस्यों में शामलात में उनके हिस्सों के अनुसार बांटा। शेष रुपये का गांव के साझे कार्यों पर व्यय किया। 30 साल बाद जब गांव की आबादी बहुत बढ़ गई इस संस्था को भंग करके सारी भूमि शामलाती भूमि हिस्सेदारों में बांट दी। ठाकुर हीरा सिंह जिन्होंने देश की सहकारिता का नया रास्ता दिखाया, अक्तूबर 1, 1912 को स्वर्ग सिधारे।

ठाकुर हीरा सिंह द्वारा प्रज्वलित सहकारिता की ज्योति को आगे उनके सुपुत्र ठाकुर राजेंद्र सिंह नंबरदार और सफेशपोश ठाकुर बेली राम बी.ए.एल.एल.बी ने आगे बढ़ाया। 1920 को पंजावर को-ऑप्रेटिव क्रेडिट सोसायटी की स्थापना की। इनके अनथक प्रयत्नों से संस्था लोकप्रियता के शिखर पर पहुंची। इस संस्था ने 29 दिसंबर, 1922 को दि पंजावर को-ऑप्रेटिव यूनियन लिमिटेड की स्थापना की। 15 सदस्यीय इस सहकारी संस्था का पंजीकरण 23 अक्तूबर 1923 को हुआ। ठाकुर बेली राम इसके प्रधान बने। यूनियन की स्थापना के छह वर्ष बाद ठाकुर बेली राम स्वर्ग सिधार गए। बाद में ठाकुर राजेंद्र सिंह प्रधान बने। 1925 में संस्था के 60 सदस्य हो गए। बाद में 140 तक हो गए। सदस्यता सब धर्मों के लिए खुली थी। पहली बार 1923 में संस्था का ऑडिट हुआ। उस समय इसकी अधिकतम ऋण सीमा तीन हजार रुपये थी। 1928 में यह पहले दर्जे की सहकारी सभा बन गई। इस सहकारी संस्था ने सामाजिक बुराइयां दूर करने, ब्याह-शादियों पर कम से कम खर्च करने की प्रेरणा दी। ज्यादा से ज्यादा इन कार्यों पर खर्च की सीमा 500 रुपये तय की। झगड़ों में फैसले भी ये करते थे जिससे मुकद्दमेबाजी कम हुई व बचत की आदत बढ़ी। लोग अपनी जमानतें संस्था के पास रखने लगे। ऋण भी दिए और वसूलियां भी बढ़िया होती रहीं। जमींदारों के आर्थिक हालात बेहतर बनाने और समाज सुधार में संस्था ने नुमाया योगदान किया। कर्जा और बैंकिंग का काम करना, कृषि विकास, घरेलू जरूरतों की चीजों की सामूहिक खरीद तथा बिक्री, रजिस्टर्ड सहकारी संस्थाओं की निगरानी, पड़ताल करना इन संस्थाओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था इत्यादि काम यह सहकारी यूनियन करती थी। इस यूनियन के कार्यकलापों से इलाके में सहकारिता की लहर दौड़ उठी। 1938 तक पंजीकृत संस्थाओं की संख्या 99 हो गई।

इस प्रकार गांव पंजावर सहकारिता आंदोलन को देश में शुरू करने वाला पहला अग्रणी गांव रहा। ठाकुर हीरा सिंह द्वारा शुरू यह आंदोलन आज सारे भारत ही नहीं, विश्व में फैल गया है। हम सहकारिता आंदोलन के सुनहरी सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार तथा सहकारिता सहभागिता को जनमानस में प्रभावी बनाकर ही पंजावर के ही नहीं बल्कि हिमाचल और देश के महान सपूत स्व. ठाकुर हीरा सिंह को सच्ची श्रद्धांजलि भेंट कर सकेंगे।

(साभार : गिरिराज साप्ताहिक सितंबर 1992)

देश में सहकारिता का अगुआ

◆ योगराज शर्मा

मिल-जुलकर काम करने की प्रणाली हमारे समाज में सदियों से ही प्रचलित रही है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ यह प्रणाली परिष्कृत होती गई और इसमें आमूल चूल परिवर्तन होते गए। इन्हीं परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सहकारिता की अवधारणा भी विकसित हुई।

जो कार्य एक व्यक्ति अकेले नहीं कर सकता है, उसे सामूहिक रूप से करना अधिक लाभदायक होता है। कार्य करने की यह अवधारणा हमारे देश में ग्रामीण पृष्ठभूमि से ही निकली है। इस अवधारणा को हिमाचल प्रदेश के एक छोटे से गांव पंजावर ने देश के समक्ष प्रस्तुत किया है। यह गांव प्रदेश के ऊना जिले में पड़ता है। बात अंग्रेजी हुकूमत के दौरान सन् 1892 की है जब प्रदेश के ऊना जिले में देश की पहली सहकारी सभा गठित की गई थी। या यूं कहें कि देशभर में सहकारिता आंदोलन का जनक होने का श्रेय प्रदेश के ऊना जिले को प्राप्त है।

स्थानीय निवासी ठाकुर हीरा सिंह के मार्गदर्शन में 28 फरवरी, 1892 को ऊना जिले के पंजावर में शामलात सभा का गठन किया गया था। भारतीय पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत पंजीकृत इस सभा के 27 सदस्य थे। उस समय पंजावर गांव की हजारों एकड़ भूमि का आधा हिस्सा शामलात हुआ करता था। यह भूमि स्वां नदी के किनारे स्थित होने के कारण बारानी थी और स्वां नदी में हर वर्ष आने वाली भयानक बाढ़ में इसका बहुत बड़ा हिस्सा बह जाता था। एक दिन गांव के नंबरदार ठाकुर सिंह ने गांववासियों के समक्ष योजना रखी जिसके अनुसार इस क्षेत्र में बाढ़ से होने वाले भू-कटाव को रोक कर भू-उपचार प्रबंधन के माध्यम से जमीन को खेती लायक बनाने का सुझाव दिया गया। ठाकुर सिंह का सुझाव था कि इस सुधारी गई जमीन पर मिलकर खेती करके गांव की आर्थिक स्थिति में सुधार लाया जा सकता है।

इस सुझाव के बाद सभा के सदस्यों ने भारतीय पंजीकरण सभा के अंतर्गत जब 30 वर्षों के लिएगांव की शामलात भूमि बैंक का पंजीकरण करवाया, उससे देश के बहुत से अर्थशास्त्री भी चकित रह गए थे। इसके उपरांत शामलात भूमि प्रबंधन के लिए गठित समिति का ठाकुर हीरा सिंह को चुना गया। समिति के सदस्य हर छह महीने बाद भूमि की उपज और आमदनी का ब्योरा दिया करते थे। कमेटी ने सबसे पहले तो भूमि की रखवाली के लिए एक चौकीदार नियुक्त किया गया। इस क्षेत्र में घास या पेड़ काटने की अनुमति नहीं थी। भूमि कटाव रोकने के लिए अधिक से अधिक पेड़ लगाए गए। देखते ही देखते कुछ वर्षों बाद इस भूमि से अच्छी आमदनी होना शुरू हो गई। घास और लकड़ी को बेचने से समिति की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो गई। कुछ सालों में ही गांव के किसानों की साहूकारों के पास रहन पड़ी भूमि का बहुत बड़ा हिस्सा छुड़वा लिया गया। साहूकारों से उच्च ब्याज दरों पर किसानों द्वारा लिए गए कर्जो का बोझ भी कम होने लगा और स्थानीय लोग साहूकारों के शोषण से भी आजाद होने लगे।

इस प्रकार गांव के नंबरदार ठाकुर हीरा सिंह ने अपनी दूरदर्शी सोच और योग्य नेतृत्व से न केवल पूरे क्षेत्र को सहकारिता का एक नया विचार दिया, बल्कि उसके माध्यम से गांववासियों को समिति में शामिल कर गांव की अर्थव्यवस्था को एक नई दिशा और देश को सहकारिता के रूप में आर्थिक विकास का नया मंत्र दिया। इस समिति के गठन के बाद सहकारिता आंदोलन का जो दौर आरंभ हुआ, वह आज तक जारी है।

हिमाचल ही नहीं बल्कि देश के दूसरे राज्यों में भी आज सहकारिता एक मिशन के रूप में संचालित है। हालांकि आजादी के प्रारंभिक काल में देश का आर्थिक विकास बहुत मंद गति से हो रहा था। उसे रफतार देने के लिए राष्ट्र के कर्णधारों ने आर्थिक नीति को समाजवादी रूप दिया। सभी पंचवर्षीय योजनाओं में सहकारिता को महत्त्व दिया गया। सहकारिता के क्षेत्र में हुई प्रगति का अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि प्रदेश में ही कई ऐसी सहकारी समितियां कार्यरत हैं जिनकी कार्यशील पूंजी करोड़ों में है। हिमाचल प्रदेश में भी 4800 से ज्यादा सहकारी समितियां कार्यरत हैं। इनके 16 लाख से ज्यादा सदस्य हैं और सभाओं की कार्यशील पूंजी लगभग 22 हजार करोड़ रुपए तक पहुंच चुकी है।

15 अप्रैल, 1948 को हिमाचल प्रदेश के गठन के साथ ही राज्य में सहकारिता विभाग का गठन कर दिया गया था, ताकि

किसानों को बिचौलियां व साहूकारों के शोषण से मुक्ति दिलाई जा सके और उन्हें सहकारी समितियों के माध्यम से सस्ती दरों पर ऋण सुविधा मुहैया करवाई जा सके। आजादी के बाद हिमाचल प्रदेश में सहकारिता आन्दोलन का विस्तार हुआ है और इसके बलबूते प्रदेश के नागरिकों का सामाजिक आर्थिक उत्थान भी सुनिश्चित हुआ है। लोगों की जीवन शैली में भी आशातीत बदलाव आया है। हिमाचल प्रदेश सरकार के सहकारिता विभाग के रचनात्मक मार्गदर्शन और वितीय सहयोग से प्रदेश में कार्यरत सहकारी संस्थाएं नित नए कीर्तिमान स्थापित कर रही हैं। साथ ही यह संस्थाएं लोगों को उच्चकोटी की व्यावसायिक सुविधाएं भी उपलब्ध करवा रही हैं। प्रदेश सरकार भी ऐसी संस्थाओं को समय-समय पर सम्मानित भी करती है।

वर्तमान समय में हिमाचल प्रदेश सरकार के सहकारिता विभाग द्वारा प्रदेश में सहकारिता से संबंधित सभी प्रकार के कार्यो के अलावा शहरी सहकारी बैंक, समितियों को दिए जाने वाले अनुदान और फसल ऋण योजनाएं, कृषि उत्पादों का विक्रय, समितियों के जरिए खाद, बीज और दूसरी कृषि संबंधित वस्तुओं का वितरण इत्यादि कार्य किए जा रहे हैं। साथ ही सहकारी समितियों से संबंधित कानून, अधिनियम और नियमों का प्रावधान, समितियों का ऑडिट, कानूनी मसलों को देखना, मध्यम और दीर्घावधि वाली ऋण योजनाएं बनाना भी इन्हीं के कार्यक्षेत्र में आता है। इतना ही नहीं, सहकारी समितियों द्वारा ऋण सुविधाएं, जन वितरण प्रणाली के अंतर्गत कम मूल्यों पर राशन का वितरण, शिल्पकारों, घरेलू कामगारों और समाज के गरीब तबकों की सहायता के अलावा बागबानी, फलों की खेती, मत्स्य पालन, भेड़ पालन, कृषकों को विपणन सुविधाएं, कृषि उपकरण जैसे अनेक कार्यो का संचालन किया जा रहा है।

सहकारिता की डगर पर चलकर ही भुट्टिको उद्योग कुल्लू, कामधेनु दुग्ध इकाई बिलासपुर, कांगड़ा सहकारी बैंक, हिमाचल प्रदेश को-आपरेटिव बैंक जैसी संस्थाओं ने देश में अपनी एक अलग पहचान स्थापित की है।

प्रदेश के ऊना जिले में सहकारिता गतिविधियों की सफलता का अंदाजा यहां पर स्थापित सहकारी सभाओं की संख्या से सहज ही लगाया जा सकता है। जिले में की कुल 235 ग्राम पंचयतों में 372 सहकारी समितियां विभिन्न गतिविधियों में संलग्न हैं और इन समितियां की कार्यशील पूंजी करोड़ों रुपये में है। जिले में पंजीकृत कुल 372 सहकारी समितियों में से 218 समितियां कृषि सेवा कार्यो से जुड़ी हुई हैं। इन सहकारी कृषि सेवा समितियों के पास जिले भर में 228 गोदाम हैं जिनकी भंडारण क्षमता करीब 23 हजार मीट्रिक टन है।

सहकारी कृषि सेवा समितियों के अतिरिक्त जिले में 154 अकृषि सहकारी समितियां भी कार्यरत हैं। इन समितियों में वेतनभोगी, मछली पालन, दुग्ध उत्पादन, औद्योगिक, बुनकर, सब्जी तथा फल उत्पादक, गह निर्माण, श्रम एवं निर्माण, सिंचाई, परिवहन, शिक्षा तथा भू-संरक्षण सभाएं मुख्य रूप से कार्य कर रही हैं। इसके अलावा जिले में तीन शिखरीय सभाएं भी कार्य कर रही हैं जिनमें डीसीयू, रेजनमिल व जिला उपभोक्ता संघ भी शामिल हैं।

राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो इस समय देश में लगभग पांच लाख से अधिक सहकारी समितियां सक्रिय हैं, जिनके माध्यम से करोड़ों लोगों को रोजगार मिला है। भारत में श्वेत क्रांति का अगुआ 'अमूल' सहकारी दुग्ध आंदोलन है। अमूल एक ब्रांड नाम है, जो गुजरात सहकारी संस्था के प्रबंधन में चलता है। इस संस्था ने अंतर्राष्ट्रीय मानचित्र पर अपनी एक अलग पहचान बनाई है। गुजरात के लगभग 26 लाख दुग्ध उत्पादक सहकारी दुग्ध विपणन संघ लिमिटेड के अंशधारी सदस्य हैं। गुजरात के आणंद में स्थित 'अमूल' ने भारत में श्वेत क्रांति की नहीं रखी, जिससे भारत विश्व का सर्वाधिक ज्यादा दुग्ध उत्पादक देश बन गया। पांच लाख दुग्ध उत्पादक रोजाना एक लाख, 44 हजार, 246 डेयरी को-आपरेटिव संस्थानों में दूध जमा करवाते हैं।

प्रदेश के ऊना जिले में सहकारिता गतिविधियों की सफलता का अंदाजा यहां पर स्थापित सहकारी सभाओं की संख्या से सहज ही लगाया जा सकता है। जिले में की कुल 235 ग्राम पंचयतों में 372 सहकारी समितियां विभिन्न गतिविधियों में संलग्न हैं और इन समितियां की कार्यशील पूंजी करोड़ों रुपये में है। जिले में पंजीकृत कुल 372 सहकारी समितियों में से 218 समितियां कृषि सेवा कार्यो से जुड़ी हुई हैं। इन सहकारी कृषि सेवा समितियों के पास जिले भर में 228 गोदाम हैं जिनकी भंडारण क्षमता करीब 23 हजार मीट्रिक टन है।

गांव नलावन डा. चलाहल, उप-तहसील धामी, जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 103, मो. 0 94180 72686

संदर्भ :

1. गिरिराज साप्ताहिक, 19 दिसंबर, 1990
2. ऊना जनपद, एक परिचय, पु. जिला प्रशासन, ऊना

विकास

...ऐसी पावन नदी और कहां

◆ एल.आर. शर्मा

हिमाचल प्रदेश में ऊना जिले का विशेष महत्व है। इसका अधिकतर भौगोलिक भू-भाग मैदानी होने के कारण यहां कृषि-पशु पालन एवं संबद्ध गतिविधियों के प्रोत्साहन एवं विस्तार की अपार संभावनाएं मौजूद हैं। हिमाचल में क्षेत्रफल के आधार पर हमीरपुर और बिलासपुर के बाद यह तीसरा सबसे छोटा जिला है। ऊना के बारे में जब भी लिखा जायेगा, तो स्वां नदी का उल्लेख करना आवश्यक होगा, क्योंकि यह नदी इस जिले की जीवन-रेखा है और इसके बीचों-बीच बहती है। स्वां नदी को भी पहले 'सोमभद्र' कहा जाता होगा। इस नदी ने ऊना के जन-जीवन को इतना प्रभावित किया है कि इसके वर्णन के बिना ऊना के बारे में कुछ भी कहना अपूर्ण रहेगा। कहा भी गया है कि :-

"ऊना की धरती पर बहती है स्वां,
ऐसी पावन नदी और कहां"

इस नदी की कुल लम्बाई 85 किलोमीटर है, जिसमें से 65 किलोमीटर भाग ऊना में है। इस नदी को पहले 'ऊना का शोक' (Una's sorrow) कहा जाता था, क्योंकि बरसात में यह बाढ़ के कारण विनाश का रूप धारण कर लेती थी। पर अब ऐसी बात नहीं है। ऊना क्षेत्र के हिमाचल में विलय होने के बाद अब स्थिति बदल गयी है। हिमाचल प्रदेश सरकार ने स्वां नदी के बाढ़-प्रबंधन और तटीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण परियोजना बनाई थी, जिसमें स्वां और उसकी सहायक उपनदियों के तटीकरण से बाढ़ पर नियन्त्रण का प्रावधान किया था। अब तक इस परियोजना का आधा भाग पूरा किया जा चुका है। इससे स्वां नदी के दोनों ओर फैली समतल भूमि को बाढ़ के प्रकोप से बचा कर कृषि योग्य बना दिया गया है। स्वां नदी की 73 छोटी-छोटी उपनदियां हैं जो इसमें भिन्न-भिन्न स्थानों पर मिलती हैं। ऐसी छोटी उपनदियों को यहां 'खड्ड' या 'चो' कहते हैं।

हिमाचल प्रदेश सरकार ने स्वां नदी के बाढ़-प्रबंधन और तटीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण परियोजना बनाई थी, जिसमें स्वां और उसकी सहायक उपनदियों के तटीकरण से बाढ़ पर नियन्त्रण का प्रावधान किया था। अब तक इस परियोजना का आधा भाग पूरा किया जा चुका है। इससे स्वां नदी के दोनों ओर फैली समतल भूमि को बाढ़ के प्रकोप से बचा कर कृषि योग्य बना दिया गया है।

ऊना के सर्वांगीण विकास का आधार इसकी सिंचाई एवं पेयजल योजनायें हैं। जिस भूमि पर पहले सरकन्डों का साम्राज्य होता था, वही भूमि अब शस्य-श्यामला बन कर आर्थिक उन्नति का पर्याय बन गई है।

स्वां नदी के बाढ़ के प्रकोप को रोकने के लिये स्वां नदी बाढ़-प्रबन्धन परियोजना बनाई गई है। पहले दो चरणों के पूरा होने से करीब 5000 हैक्टेयर भूमि बचाई गयी है। अब इस क्षेत्र में धान, मक्की, गेहूं आदि मुख्य फसलों के अलावा नकदी फसलों का उत्पादन भी बड़े पैमाने पर हो रहा है।

पेयजल एवं सिंचाई सुविधाएं/भूमिगत जल का दोहन

वर्तमान में जिले के शत-प्रतिशत गांवों में पेयजल सुविधा उपलब्ध है। जिले की कुल 2303 बस्तियों में से अधिकतर को पेयजल सुविधा उपलब्ध करवा दी गई है। विभाग जिले की कुल 43,000 हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि में से 1,7800 हेक्टेयर से भी अधिक भूमि को सिंचाई की सुविधा उपलब्ध करवा चुका है। वर्तमान में निर्माणाधीन सिंचाई योजनाओं का कार्य पूरा होते ही 3,000 हेक्टेयर और कृषि योग्य भूमि को सिंचाई सुविधा प्राप्त हो जाएगी। ऊना जिले में भूमिगत जल का पर्याप्त भंडार है। अतः इस बहुमूल्य साधन का उचित प्रयोग करने के लिये सिंचाई एवं जनस्वास्थ्य विभाग का एक नलकूप मंडल गगरेट में स्थित है। इस मन्डल द्वारा और इस की सहायता से ऊना जिले में पिछले तीस-चालीस सालों में एक हज़ार से अधिक नलकूप लगाये जा चुके हैं। नलकूप मंडल में इस लेखक ने भी अधिशासी अभियन्ता के रूप में काफी समय तक कार्य किया है।

42/5, हरिपुर सुंदरनगर (हि, प्र.)
मोबः- 94181 0083

स्वां नदी तटीकरण

साहिलों पर खुशहाली का डेरा

◆ नर्बदा कंवर

न बरसात का खौफ न तबाही का मंजर,
जीवनदायिनी हुई स्वां, आबाद हुए बंजर।

ऊना जिले की जीवन रेखा स्वां नदी आज असंख्य लोगों, विशेषकर किसानों एवं बागबानों के लिए वरदान साबित हो रही है। लेकिन एक समय वह भी था जब स्वां नदी वर्षा ऋतु के दौरान अपना विकराल रूप धारण कर लेती थी और बाढ़ आने से चारों ओर तबाही का मंजर देखने को मिलता था। कहते हैं कि बरसात के मौसम में जब भी कोई नगर से बाहर जाता था, तो वह अपने रिश्तेदारों से मिल कर ही जाता था क्योंकि नदी में बाढ़ के कारण होने वाले हादसों में कई व्यक्तियों की जान तक चली जाती थी। लोगों ने इसे दुखों की नदी कह कर पुकारना शुरू कर दिया। हजारों हेक्टेयर कृषि भूमि को स्वां नदी ने अपने प्रकोप से बंजर बना डाला था। नदी के किनारे गांव बाढ़ की भेंट चढ़ जाते थे और खेती योग्य जमीन बाढ़ में बह जाती जिस कारण 165 गांवों के निवासियों के गुजर-बसर के लिए कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्यों तथा दूसरे राज्यों की ओर पलायन करने पर मजबूर हो रहे थे। लेकिन आज यह तसवीर पूरी तरह बदल चुकी है। प्रदेश सरकार के सराहनीय प्रयासों द्वारा लगभग 12 वर्ष पहले शुरू की गई स्वां तटीकरण परियोजना और स्वां नदी बाढ़ प्रबंधन एकीकृत भूमि विकास परियोजनाओं से अब जिले की बंद भाग्यरेखाएं खुलनी शुरू हो चुकी हैं जिससे इस जिले में हरियाली और खुशहाली की यात्रा शुरू हो चुकी है। नदी के बहाव से होने वाली भारी क्षति के दृष्टिगत सरकार द्वारा स्वां नदी के तटीकरण को चार चरणों में विभाजित कर पूरा करने की प्रक्रिया आरंभ कर दी गई।

वर्ष 1988 में आई बाढ़ से हुई तबाही से तो लोगों में इतनी दहशत हो गई थी कि वे नदी के आस-पास जाने से भी कतराने लगे थे। किसानों की फसलों के साथ-साथ जमीन भी तबाह हो गई थी। इस तबाही से बचने के लिए ऊना जिले के लोगों ने सरकार के समक्ष स्वां नदी और इसकी सहायक नदियों के तटीकरण की मांग रखी। सरकार ने मामला केंद्र सरकार के समक्ष रखा। केंद्र सरकार ने स्वां नदी के तटीकरण को गंभीरता से समझा और इसके तटीकरण की प्रारंभिक प्रक्रिया शुरू कर दी।

ऊनावासियों के लिए 15 अप्रैल, 2000 का दिन उस समय एक ऐतिहासिक दिन बन गया जब करीब 106 करोड़ की अनुमानित लागत से स्वां नदी के प्रथम चरण झलेड़ा से संतोषगढ़ पुल तक के करीब 16 किलोमीटर हिस्से की आधारशिला रखी गई। पहले चरण में न केवल स्वां नदी का सफल तटीकरण हुआ बल्कि 106 करोड़ की अनुमानित लागत से भी कम करीब 75 करोड़ से इसका तटीकरण कार्य पूरा किया गया और स्वां नदी के दोनों तरफ 2260 हेक्टेयर भूमि को नदी के प्रकोप से बचाया गया।

पहले चरण की सफलता को देखते हुए सरकार ने दूसरे चरण पर कार्य करने का फैसला लिया। 13 अप्रैल, 2008 को गगरेट से झलेड़ा पुल तक दूसरे चरण में स्वां नदी के तटीकरण का कार्य आरंभ हुआ। इस चरण में लगभग 28.34 किलोमीटर स्वां नदी तटीकरण पर लगभग 235 करोड़ की अनुमानित राशि का प्रावधान करके युद्ध स्तर पर कार्य आरंभ हो गया। इस चरण में पांच हजार हेक्टेयर क्षेत्र को कृषि, बागबानी व संबद्ध गतिविधियों के लिए तैयार किया गया। इस हिस्से के तटीकरण के बाद दोनों किनारों पर 250 हेक्टेयर भूमि रिक्लेम हुई। इससे संतोषगढ़ कस्बे तथा बाथू-बाथड़ी गांवों की ओर बाढ़ से होने वाला नुकसान रुक गया। दूसरे चरण का कार्य लगभग चार वर्षों की रिकार्ड अवधि में केवल 205 करोड़ की लागत से पूरा कर 11 अप्रैल 2012 को इसका लोकार्पण किया गया।

तीसरे चरण के तहत संतोषगढ़ पुल से लेकर पंजाब सीमा तक लगभग अढ़ाई किलोमीटर क्षेत्र का तटीकरण करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया जिस पर लगभग 48.52 करोड़ व्यय होने थे और 480 हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि का सुधार किया जाना लक्ष्य था। इसके तहत स्वां नदी के 2.50 किलोमीटर के बाएं तट तथा 4.20 किलोमीटर के दाएं तट को संतोषगढ़ से पंजाब सीमा तक दीवार लगाने का कार्य किया गया।

इस चरणों में स्वां नदी के तटीकरण के बाद अब तक करीब 4460 हेक्टेयर भूमि सोना उगलने लगी है। वहां अब गेहूं, आलू, सरसों तथा गन्ना सहित कई प्रकार की फसलें लहलहाने लगी हैं।

चौथे चरण में गगरेट पुल से दौलतपुर पुल तक की 11 किलोमीटर लंबे क्षेत्र में स्वां नदी की सभी 73 खड्डों का तटीकरण किया जा रहा है। सरकार द्वारा 922.49 करोड़ की स्वां नदी बाढ़ प्रबंधन परियोजना पर कार्य 20 अक्तूबर 2013 को आरंभ कर एक विकास के नए अध्याय की शुरुआत की। चौथे चरण का कार्य पूरा होने पर 6072 हेक्टेयर भूमि कृषि योग्य बनेगी। परियोजना के अंतर्गत किए जा रहे तटीकरण की लंबाई 80 किलोमीटर है जिसका 60 किलोमीटर क्षेत्र हिमाचल में आता है। स्वां नदी का कुल 1400 वर्ग किलोमीटर जलग्रहण क्षेत्र है, जिसका 1200 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र ऊना में पड़ता है।

देश की सबसे बड़ी नदी तटीकरण परियोजना के लाभ स्थानीय लोगों को मिलने आरंभ हो गए हैं। परियोजना के पूर्ण होने से लगभग 165 गांवों के दो लाख 35 हजार से अधिक लोग लाभान्वित होंगे तथा 7163.40 हेक्टेयर बंजर भूमि को पुनः कृषि योग्य बनाया जा सकेगा।

जापान बैंक ऑव इंटरनैशनल कॉ-आपरेशन (जे.बी.आई. सी.) द्वारा प्रायोजित 4,000 मिलियन जापानी येन की स्वां नदी एकीकृत जल प्रबंधन परियोजना वर्ष 2006 में जिले की 95 ग्राम पंचायतों में जल प्रबंधन एवं हरियाली को बढ़ावा देने के उद्देश्य से आरंभ की गई थी। इनमें से 3,492 मिलियन येन जे.बी.आई. सी. तथा लगभग 25 करोड़ रुपये हिमाचल सरकार द्वारा जुटाए जाने प्रस्तावित थे। इस परियोजना का उद्देश्य भू-क्षरण रोकना, छोटे-छोटे चैक डैम तथा तालाब बनाकर वर्षा जल का संग्रहण, भू-जल स्तर में वृद्धि, अधिकाधिक पौधरोपण से हरियाली में बढ़ोतरी, निम्न तथा मध्य वर्गीय किसानों को आजीविका के साधन जुटाना तथा असिंचित क्षेत्रों की सुविधाएं मुहैया करवाना है।

इस परियोजना के तहत गत पांच सालों में विभिन्न ग्राम पंचायतों में निर्मित पानी से लबालब चैक डैम सिंचाई में उपयोगी साबित हो रहे हैं। इससे भू-जल स्तर बढ़ाने में मदद मिली है। परियोजना के तहत कई तालाब भी बनाए गए हैं तथा बड़े पैमाने पर पौधरोपण किया जा रहा है। छोटे और मध्यम किसानों के पशुओं के लिए खुरलियों की सुविधा मुहैया करवाने के साथ चारा काटने की मशीनें भी उपलब्ध करवाई गई हैं।

प्रदेश सरकार के सार्थक प्रयासों से 'दुखों की नदी' के नाम से विख्यात स्वां नदी को 'खुशहाल एवं समृद्ध' नदी के रूप में तबदील किया जा रहा है और इसके तटों पर विकसित कृषि योग्य भूमि पर भारी मात्रा में गैर-मौसमी सब्जियों का उत्पादन किया जा रहा है जो आज असंख्य लोगों खासकर किसानों व बागबानों के लिए वरदान साबित हो रही है। कई औद्योगिक इकाइयां भी इसके किनारे पर स्थापित हुई हैं।

प्रदेश सरकार के सार्थक प्रयासों से 'दुखों की नदी' के नाम से विख्यात स्वां नदी को 'खुशहाल एवं समृद्ध' नदी के रूप में तबदील किया जा रहा है और इसके तटों पर विकसित कृषि योग्य भूमि पर भारी मात्रा में गैर-मौसमी सब्जियों का उत्पादन किया जा रहा है जो आज असंख्य लोगों खासकर किसानों व बागबानों के लिए वरदान साबित हो रही है। कई औद्योगिक इकाइयां भी इसके किनारे पर स्थापित हुई हैं।

ऊना जिले के कुल 1542 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल का लगभग 1204 वर्ग किलोमीटर स्वां नदी के जलागम क्षेत्र में निहित है। स्वां नदी में इस क्षेत्र का अधिकतर पानी इकट्ठा होकर बहता है, जो अपने साथ हजारों टन मिट्टी और रेत बहाकर साथ लाता था। यह मिट्टी तथा रेत मैदानी तटीय क्षेत्रों में जमा हो जाती और वहां की भूमि को रेतीला बना देती परंतु बरसात के मौसम में गगरेट से संतोषगढ़ तक अभिशाप बनकर बहने वाली स्वां नदी मेहनतकशों के लिए अक्तूबर से जून तक वरदान भी साबित हुई। ये लोग इस दौरान नदी के तटों पर उपलब्ध खाली भूमि का उपयोग कृषि कार्यों के लिए कर अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार ला रहे हैं। परंतु इस कार्य में अधिकांश अप्रवासी अल्पसंख्य परिवार ही संलिप्त हैं। ये लोग अक्तूबर से जून माह के दौरान सब्जी उत्पादन कार्यों में संलिप्त रहने के बाद जुलाई से सिंतबर तक प्रायः अपने घरों को वापिस चले जाते हैं। स्थानीय लोग इन्हें 'राई' के नाम से पुकारते हैं। इन लोगों की खासियत यह है कि ये कहीं भी जमीन मिलने पर अपना अस्थायी निवास बना लेते हैं। स्थानीय लोगों की भागीदारी अपेक्षाकृत काफी कम है। ऊना स्थित कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा स्वां नदी तट पर इन अप्रवासी परिवारों द्वारा किए जा रहे कृषि कार्यों के लिए एक व्यापक सर्वेक्षण के दौरान उनकी खेती की तकनीक को क्रमबद्ध किया गया है।

कुछ सालों पूर्व स्वां नदी तट पर ऐसी स्थिति नहीं थी। स्वां से लगते क्षेत्र की खुशहाली पर नजर डालें तो कोई इस बात पर विश्वास नहीं करेगा कि यह वही क्षेत्र है जो कभी स्वां के रौद्र रूप का शिकार हुआ करता था। परंतु इस परियोजना के कार्यान्वयन के बाद ऊना जिला देश का पहला ऐसा जिला बनने का गौरव हासिल करेगा जिसकी सभी खड्डों का तटीकरण हो जाएगा और बाढ़ का खौफ अतीत की बात बनकर रह जाएगा। परियोजना का संपूर्ण कार्य मार्च, 2017 तक पूर्ण करने का लक्ष्य रखा गया है जो ऊना की विकास गाथा में एक स्वर्णिम अध्याय जोड़ेगा।

उप संपादक, गिरिराज साप्ताहिक, शिमला-5,
मो. 0 94180 26402

खेल जगत

खेल प्रतिभाओं की प्रेरणास्थली

◆ रीना नेगी

हिमाचल प्रदेश के ऊना जिले की भौगोलिक परिस्थितियां राज्य के दूसरे जिलों से भिन्न हैं। जिले का अधिकांश भू-भाग समतल होने के कारण यहां पर खुले मैदान काफी संख्या में उपलब्ध हैं। नतीजतन जिले में खेलों के लिए आधारभूत ढांचा प्रदेश के दूसरे पहाड़ी जिलों के मुकाबले अधिक विकसित है। यहां पर उपलब्ध खेल सुविधाओं का ही नतीजा है कि यहां के खिलाड़ियों के अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी एक अलग पहचान बनाई है। ऊना जिले ने प्रदेश को कई ऐसे खेल रत्न दिए हैं जिन्होंने विश्व मानचित्र पर अपनी प्रतिभा से प्रदेश का नाम रोशन किया है। इन नामों में ओलंपियन चरणजीत सिंह व दीपक ठाकुर प्रमुख तौर पर शामिल हैं।

ओलंपिक विश्व का सबसे बड़ा खेल आयोजन है जिसमें विश्व के शीर्ष खिलाड़ी भाग लेते हैं। इस खेल आयोजन का हिस्सा बनकर स्वर्ण पदम जीतना किसी भी खिलाड़ी के लिए इतिहास रचने से कम नहीं।

दुनिया की सबसे बड़ी खेल प्रतियोगिता में भारत को स्वर्ण पदक दिलाकर देश विशेषकर हिमाचल प्रदेश का गौरवान्वित करने का अवसर प्रदान किया ऊना जिले के चरणजीत सिंह ने। अपने जीवन में पहाड़ सी मुश्किले जीतने की जिद्द और देश के लिए कुछ कर गुजरने के जुनून के बल पर ही वे दुनिया के सबसे बड़े खेल मंच पर उम्दा प्रदर्शन कर भारत की झोली में स्वर्ण पदक डालने में कामयाब हुए। उन्होंने हॉकी को देशभर में लोकप्रियता के शिखर तक पहुंचाकर न केवल अपनी कामयाबी का लोहा मनवाया, बल्कि भारत को हॉकी का विश्व विजयी बनाकर स्वर्णिम इतिहास रचा। पूरा विश्व हमारी इस कामयाबी को देखकर अचंभित था।

ओलंपिक में हॉकी ही एक ऐसा खेल है जिसमें भारत ने पुरुष वर्ग में कुल आठ बार स्वर्ण पदक, एक बार रजत पदक और दो बार कांस्य पदक जीते। पहली बार 1928 में हॉलैंड के एम्सटर्डम में हॉकी में स्वर्ण पदक जीता। स्वर्ण पदक जीतने का यह सिलसिला 1932, 1936, 1948, 1952, 1956 तक लगातार जारी रखकर हॉकी में अपना वर्चस्व बनाए रखा।

1940 व 1944 में ओलंपिक खेलों का आयोजन नहीं हुआ। 1960 में हॉकी में रजत पदक जीतने के बाद 1964 व 1980 में पुनः स्वर्ण पदक जीतने में भारत सफल रहा। उसके उपरांत 1968 व 1972 में कांस्य पदक जीतकर अपनी ख्याति बरकरार रखी।

ऊना निवासी श्री दीपक ठाकुर ने अपनी खेल प्रतिभा का परिचय देते हुए अल्पसमय में ही भारतीय हॉकी टीम में अपनी जगह बनाकर राष्ट्रीय स्तर पर अलग पहचान बनाई और कई अंतर्राष्ट्रीय स्पर्धाओं में भारत का प्रतिनिधित्व किया। बेजोड़ खेल क्षमता के धनी श्री सुरजीत सिंह ने बॉलीवाल में प्रदेश का नाम रोशन किया।

चरणजीत सिंह का जन्म हिमाचल प्रदेश के ऊना जिले के मैड़ी में 22 अक्तूबर 1930 को हुआ। बचपन में ही हॉकी में रुचि होने के कारण स्कूल में ही इन्होंने हॉकी टीम में भाग लेना आरंभ कर दिया था। किसी भी खिलाड़ी के लिए ओलंपिक का सफर पदक के साथ समाप्त करना गर्व की बात होती है और उन्होंने अपने इस गौरवमय पल को संजोकर भारतीय हॉकी को विश्व मानचित्र पर एक चमकते हुए सितारे की तरह उकेरा। उसके उपरांत भारतीय हॉकी टीम ने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। निंतर सफलता की ऊंचाइयों को छुआ। कुल मिलाकर उन्होंने 20 मैचों में भारतीय हॉकी टीम की कप्तानी की।

वह वक्त भारत के लिए गौरवपूर्ण था। उन्होंने समूचे विश्व को अवगत करवाया कि भारतीय हॉकी टीम संसार की सर्वश्रेष्ठ टीम है और भारत सरकार ने भी उन्हें इस बहुमूल्य जीत के लिए 1963 में अर्जुन पुरस्कार तथा बाद में पद्मश्री से सम्मानित किया।

खेलों के क्षेत्र में ऊना जिले की उपलब्धियां अन्य जिलों के मुकाबले अधिक सराहनीय हैं। प्रदेश तथा जिले को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गौरवान्वित करने में पद्मश्री चरणजीत सिंह के अलावा श्री सुरजीत सिंह, श्री दीपक ठाकुर, पूर्व डीआईजी महेंद्र लाल, डीएसपी हर्ष त्रिपाठी, हवलदार विक्रम सिंह तथा हवलदार परमिंद्र

सिंह का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

ऊना निवासी श्री दीपक ठाकुर ने अपनी खेल प्रतिभा का परिचय देते हुए अल्पसमय में ही भारतीय हॉकी टीम में अपनी जगह बनाकर राष्ट्रीय स्तर पर अलग पहचान बनाई और कई अंतर्राष्ट्रीय स्पर्धाओं में भारत का प्रतिनिधित्व किया किंतु दुर्भाग्यवश एक सड़क हादसे में गंभीर रूप से घायल होने के कारण उन्हें कुछ समय के लिए खेलों से दूर रहना पड़ा। बेजोड़ खेल क्षमता के धनी श्री सुरजीत सिंह ने बॉलीवाल में प्रदेश का नाम रोशन किया। बंगाणा तहसील के जंडूर गांव के रहने वाली सुरजीत सिंह ने वर्ष 1992 में पहली बार स्कूल नेशनल खेला और मात्र 21 वर्ष की आयु में इन्हें भारतीय टीम का कप्तान बना दिया गया। 1994 में दोहा में आयोजित खेलों में उन्हें न केवल एशिया का सर्वश्रेष्ठ अटैकर तो चुना ही गया, बल्कि अगले ही वर्ष ईरान में संपन्न फ़ज़्र अंतर्राष्ट्रीय मुकाबले में भी सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी चुना गया और इन्होंने जर्मन, चैकोस्लोवाकिया तथा चीन जैसी सशक्त टीमों को हराकर चीन में आयोजित विश्व कप क्वालीफाइंग मुकाबले में प्रथम स्थान प्राप्त करके अपनी खेल प्रतिभा का लोह मनवाया। वर्ष 1996 से लगातर इनके नेतृत्व में भारतीय टीम ने तीन वर्षो तक अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में पहला स्थान हासिल किया। इनकी उत्कृष्ट खेल प्रतिभा के कारण इन्हें सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी, मैन ऑफ टूर्नामेंट तथा बैस्ट अटैकर चुना गया।

खेलों के क्षेत्र में ऊना जिले की उपलब्धियां अन्य जिलों के मुकाबले अधिक सराहनीय हैं। प्रदेश तथा जिले को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गौरवान्वित करने में पद्मश्री चरणजीत सिंह के अलावा श्री सुरजीत सिंह, श्री दीपक ठाकुर, पूर्व डीआईजी महेंद्र लाल, डीएसपी हर्ष त्रिपाठी, हवलदार विक्रम सिंह तथा हवलदार परमिंद्र सिंह का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

प्रदेश की इन खेल प्रतिभाओं का सिलसिला यहीं नहीं थमा, बल्कि बीएसएफ से सेवानिवृत्त डीआईजी महेंद्र लाल ने भी राईफल शूटिंग में देश का नेतृत्व करते हुए कई अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में स्वर्ण पदक तो जीता ही और कई अन्य पदक भी दिलवाए। अपनी इस खेल उपलब्धि के लिए इन्हें वर्ष 1983 में अर्जुन पुरस्कार से नवाजा गया और 1984 में उत्कृष्ट पुलिस सेवाओं के लिएभी इन्हें राष्ट्रपति पुरस्कार से अलंकृत किया गया। ऊना के ही सीआरपीएफ के डीएसपी हर्ष त्रिपाठी ने भी पिछले कॉमन वैल्थ खेलों में भारतीय हैंडबॉल टीम का प्रतिनिधित्व किया। इनके अलावा दुलहैड़ के हवलदार विक्रम सिंह तथा रक्कड़ के परमिंद्र सिंह ने विश्व मिलिट ्री खेलों में भारतीय टीम का प्रतिधित्व किया।

राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अर्जित अपनी इस ख्याति को इसी प्रकार कायम रखे इसके लिए ऊना तथा पेरखुबेला में रणजी स्तर के दो क्रिकेट स्टेडियम का निर्माण किया गया है। खेलों के विकास की सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान करने के लिए ही ऊना में 1.43 करोड़ रुपये की लागत से आधुनिकतम तरणताल बनाया गया है जो मंडी के बाद प्रदेश का दूसरा निर्मित तरणताल स्टेडियम ऊना में ही प्रदेश का एकमात्र ऐसा स्टेडियम भी है जिसका सारा फर्श लकड़ी का बना हुआ है। इस आधुनिक इंडोर स्टेडियम की निर्माण लागत 4.16 करोड़ रुपये है। इसमें एक खेल छात्रावास भी शामिल है। राज्य सरकार ने भी खेलों को बढ़ावा देने के लिए हाल ही में जिन तीन स्थानों पर हॉकी के लिए एस्ट्रोटर्फ बिछाने की घोषणा की गई है, उनमें ऊना का नाम भी शामिल है।

इस एस्ट्रोटर्फ सुविधा पर पांच करोड़ रुपये की लागत आएगी। ऊना जिले में ही हिमाचल प्रदेश क्रिकेट संघ (एचपीसीए) द्वारा प्रदेश के युवाओं को क्रिकेट में प्रशिक्षण देने के लिए एकमात्र क्रिकेट अकादमी बनाई है। इसके साथ ही प्रदेश सरकार ने उत्कृष्ट खिलाड़ियों को प्रोत्साहित करने के लिए नौकरी में तीन प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान तो रखा ही है, साथ ही जिला मुख्यालय पर क्रिकेट, हॉकी, तैराकी, फुटबॉल, हैंडबॉल, कुश्ती, जूडो, टेलब टेनिस, बैडमिंटन सहित अन्य इंडोर गेम्स की आधुनिक सुविधाएं मुहैया करवाई जा रही हैं। इन सुविधाओं को प्रदान कर सरकार ने यह साबित कर दिया है कि वह बड़े पैमाने पर आधुनिक खेल ढांचा विकसित करने के लिए कृतसंकल्प है। हिमाचल प्रदेश की धाविका सुमन रावत, निशानेबाज विजय ठाकुर, करनेश जंग जैसे कई ऐसे खिलाड़ी हैं जिन्हें युवा आज भी अपना आदर्श मानते हैं, जिनके लिए कहा जा सकता है :

यह कौन आया है बज़्म में
कि हर गुल पे निखार आया है
आमद पे जिसकी सारा गुलशन गुले गुलजार है।

उप संपादक, गिरिराज साप्ताहिक, शिमला-171 005, मो.
0 94180 63145

उड़न परी बख्शो देवी

◆ विवेक शर्मा

हिंदी में एक कहावत है, 'होनहार बिरवान के होत चिकने पात'। कहने का तात्पर्य कि जन्मजात प्रतिभा कभी छिपी नहीं रह सकती, उसे सिर्फ जरूरत होती है तराशाने की, थोड़ा प्रोत्साहन देने की और ऐसी प्रतिभाओं को यदि समय पर सही मार्गदर्शन मिल जाए तो उनके लिए कुछ भी असंभव नहीं रह जाता है। ऐसी ही एक नवोदित प्रतिभा का नाम है बख्शो देवी। प्रदेश के ऊना जिला के हरोली तहसील के गांव ईसपुर की निवासी बख्शो देवी स्कूल में नौंवी कक्षा की छात्रा है। ऊना जिला की इस होनहार धाविका ने इस वर्ष युवा सेवाएं एवं खेल विभाग द्वारा ऊना के इंदिरा स्टेडियम में आयोजित जिला स्तरीय दौड़ प्रतियोगिता में अस्वस्थता के बावजूद कड़ाके की ठंड में नंगे पांव एवं बिना किसी सुविधा के दौड़कर पांच हजार मीटर की दौड़ में पहला स्थान प्राप्त कर साबित कर दिया कि जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए सुविधाओं से ज्यादा बुलंद हौंसले की दरकार होती है। इस खेलकूद प्रतियोगिता के माध्यम से मीडिया की चर्चा का केन्द्र बनी बख्शो देवी के हिम्मत को आज हर कोई सलाम कर रहा है और लोग उसकी सहायता के लिए आगे आ रहे हैं। उड़न परी के नाम से विख्यात बख्शो देवी ने इस वर्ष अक्तूबर महीने में ऊना जिला स्तरीय अंडर-19 स्कूली खेलकूद प्रतियोगिता में भी तीन हजार मीटर लम्बी दौड़ में पहला स्थान हासिल कर एक बार फिर अपनी खेल प्रतिभा का लोहा मनवाया। ऊना जिला के एक निर्धन घर में जन्मी इस बच्ची के सिर से बाप का साया लगभग 9 वर्ष पहले की उठ चुका है। इनकी माँ मेहनत मजदूरी कर अपने बच्चों के लालन-पालन के साथ-साथ पढ़ाने का भी पूरा प्रयास कर रही है। ननिहाल में नाना श्री दाता राम के साथ चार बहनों व एक भाई वाले इस परिवार में मां के साथ जीवन के इस संघर्ष में बख्शो देवी जी-जान से साथ दे रही है। समाज के इस ताने बाने में आज भले ही वह आर्थिक तौर पर कमजोर है परन्तु जीवन के लक्ष्य को साधने में बख्शो का जज्बा किसी प्रतिभावान खिलाड़ी से कम नहीं है। बस जरूरत थी उसके हौंसले को एक सही दिशा देने की जिसके लिए अब प्रदेश सरकार आगे आई है। ऊना हिमाचल प्रदेश का एक ऐसा जिला है, जिसकी धरती ने देश को अनेक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के एक से बढ़कर एक खिलाड़ी दिए हैं। ऊना की हरोली तहसील के खड्ड गांव का नाम जुबान पर आते ही फुटबाल में भी कई नामी खेल हस्तियां हमारे सामने आ जाती हैं जिन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर प्रदेश को एक पहचान दी है। आज जिला का खड्ड गांव पूरे प्रदेश में फुटबाल नर्सरी के नाम से जाना जाता है। यहां के प्रत्येक परिवार का बच्चा चाहे वह लड़का या लड़की हो फुटबाल खेलने के लिए हमेशा तत्पर रहता है। प्रदेश सरकार फुटबाल की नर्सरी कहे जाने वाले खड्ड गांव में बच्चों को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की बेहतर प्रशिक्षण की सुविधाएं मिले इसके लिए स्थानीय विधायक एवं उद्योग मंत्री श्री मुकेश अग्निहोत्री के प्रयासों से यहां प्रदेश की पहली फुटबाल अकादमी स्थापित करने जा रही है। इस अकादमी के यहां स्थापित हो जाने से जहां नवोदित फुटबाल खिलाड़ियों को आधुनिक व बेहतर सुविधाएं सुनिश्चित होंगी तो वहीं खिलाड़ियों को राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक नई पहचान बनाने का मौका भी मिलेगा। प्रदेश सरकार राज्य में बख्शो देवी जैसे नवोदित खिलाड़ियों को प्रोत्साहित करने के प्रति कटिबद्ध है और ऐसे प्रतिभावान खिलाड़ियों को हर संभव सहसयता प्रदान की जा रही है। आज पूरा प्रदेश जिला के ईसपुर गांव की इस नवोदित धाविका बख्शो देवी के हौंसले व जज्बे को सलाम करता है। जिला में उपलब्ध बेहतर खेल-कूद सुविधाओं और प्रोत्साहन को ध्यान में रखते हुए हम यह कह सकते हैं कि वह दिन दूर नहीं है जब जिला ऊना हॉकी, वॉलीबाल, फुटबाल, हैंडबाल सहित अन्य खेल स्पर्धाओं में प्रदेश का नाम रोशन करेगा। धाविका बख्शो देवी के बेहतरीन प्रदर्शन से यह जिला आने वाले समय में दौड़ प्रतियोगिता जैसी खेल स्पद्धाओं में भी नए कीर्तिमान स्थापित कर ख्याति अर्जित करेगा।

प्रदेश सरकार राज्य में बख्शो देवी जैसे नवोदित खिलाड़ियों को प्रोत्साहित करने के प्रति कटिबद्ध है और ऐसे प्रतिभावान खिलाड़ियों को हर संभव सहायता प्रदान की जा रही है। आज पूरा प्रदेश जिला के ईसपुर गांव की इस नवोदित धाविका बख्शो देवी के हौसले व जज्बे को सलाम करता है। धाविका बख्शो देवी के बेहतरीन प्रदर्शन से यह जिला आने वाले समय में दौड़ प्रतियोगिता जैसी खेल स्पर्धाओं में भी नए कीर्तिमान स्थापित कर ख्याति अर्जित करेगा।

उप-संपादक, गिरिराज साप्ताहिक शिमला -5 हि.प्र.

साक्षात्कार

हॉकी खेल नहीं धर्म था : चरणजीत सिंह

◆ वीरेंद्र शर्मा 'वीर'

हॉकी हमारे देश का राष्ट्रीय खेल है। हम भारतवासियों के लिए हॉकी एक खेल न होकर धर्म से भी बढ़कर रही है। सन् 1928 से लेकर सन् 1964 का समय भारतीय हॉकी का स्वर्णिम युग रहा है और भारत ने विश्व हॉकी में एकछत्र राज किया है। सन् 1940 और 1944 में द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण ओलंपिक खेल नहीं हुए थे।

सन् 1928 से लेकर 2016 तक 21 बार हुए ओलंपिक खेल में से पहले छह गोल्ड मैडल लगातार भारत जीता। 1960 में भारत पाकिस्तान के हाथों अपने एक खिलाड़ी (सेंटर हॉफ) के मैच के अंतिम क्षणों में चोटिल होने की वजह से पाकिस्तान के हाथों एक-शून्य से हार गया था। यह खिलाड़ी कोई और नहीं, हिमाचल प्रदेश से संबंधित श्री चरणजीत सिंह थे जिन्होंने 1964 में अपनी कप्तानी के चलते चिरप्रतिद्वंद्वी पाकिस्तान को पुनः हराकर भारत को ओलंपिक गोल्ड मैडल दिलाया।

हिमाचल प्रदेश से कुल छह खिलाड़ी ऐसे हुए हैं, जिन्होंने देश की तरफ से ओलंपिक खेलों में देश का प्रतिनिधित्व किया है, उन्हीं में से एक हैं महान हॉकी खिलाड़ी पदमश्री चरणजीत सिंह। देश के इस महान हॉकी खिलाड़ी से श्री वीरेंद्र शर्मा 'वीर' से चरणजीत से पिछले दिनों मुलाकात हुई। पेश है उनसे हुई विस्तृत बातचीत के अंश।

ऊना बस स्टैंड से चंडीगढ़ सड़क पर, अमोल कालिया पैट्रोल पंप से पीर निगाह सड़क पर कुछ दूरी पर चलते ही सड़क के दाएं छोर पर मलाहत नामक स्थान पर बहुत से घरों की पंक्ति के बीच एक साधारण से दिखने वाला घर नजर आता है। घर के अंदर जाते ही बायीं ओर एक हॉल, जिसमें अर्जुन अवार्ड, पदमश्री अवार्ड एवं अन्य कई तरह के स्मृति-चिन्ह, कई महान विभूतियों के साथ फोटो आदि अवस्थित हैं। दायीं ओर एक कमरा, इन दोनों कमरों के बीच की लॉबी से जैसे ही आगे बढ़ते हैं तो सामने वाले हॉल में एक साधारण से बैड पर एक बुजुर्ग कभी अपने हाथ को दूसरे हाथ से, तो कभी अपनी टांग को हल्के-हल्के मलते/दबाते हुए नज़र आया। बैड के पास ही एक छोटा सा पुराना गोलाकार मेज-दो कुर्सियां। बायीं तरफ एक अल्मारी, उसके ऊपर भी कुछ स्मृति-चिन्ह और कुछ फोटो। दायीं ओर भी लगभग यही दृश्य नजर आया।

जैसे ही हम अंदर पहुंचे वे बुजुर्ग मेरे साहित्यकार साथी कुलदीप शर्मा को आसानी से पहचान गए। कई साहित्यिक आयोजनों में शर्मा बतौर मुख्यातिथि बुला चुके थे। कुलदीप शर्मा ने बात को संभालते हुए मेरा परिचय दिया- यह वीरेंद्र शर्मा 'वीर' हैं मेरे साहित्यिक मित्र। आपसे कुछ पूछने की बजाय आपकी खेल यात्रा के बारे जानने आए हैं।

इससे पहले कि मैं पुनः कुछ हिम्मत करता, वे एकदम से बोलते हैं, बताइए क्या जानना है?

आप एक अंतर्राष्ट्रीय हॉकी खिलाड़ी हैं। जिस समय आपने हॉकी खेलना शुरू किया था, हिमाचल में तो उस समय खेल सुविधाएं नहीं थीं, फिर आपका रुझान राष्ट्रीय खेल हॉकी की ओर कैसे हुआ?

चरणजीत सिंह : हर प्रकार की ग्रामीण खेलें तो हिमाचल में पहले भी थीं। हां, हिमाचल तो उस वक्त था ही नहीं। आज के पंजाब, हरियाणा और हिमाचल भी महापंजाब का ही हिस्सा थे। उस समय मेरे पिता जी वर्तमान में पाकिस्तान के तत्कालीन जिला लायलपुर में कृषि विश्वविद्यालय में सेवारत थे। पहले तो उसे झांग जिला के नाम से जाना जाता था। पर एक अंग्रेज अफसर लायल के नाम पर यहां का नाम लायलपुर कर दिया गया। बाद में यही जिला फैसलाबाद के नाम से मशहूर हुआ। पिता जी मुझे उच्च शिक्षा के लिए अपने साथ ले गए थे। पिता जी के पास रहते-रहते मैं हॉकी खेलने लग गया था। लायलपुर का महाविद्यालय उस समय लुधियाना एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी के अंतर्गत आता था। यूनिवर्सिटी के कुलपति के अटेंडेंट समुद्री साहब मेरे पिता जी के जानने वाले थे। जब उन्होंने मुझे हॉकी खेलते देखा, तो कद-काठी, चुस्ती-फुर्ती से प्रभावित होकर पिता जी को मेरा दाखिल लायलपुर के खालसा कॉलेज में करवाने को कहा और इस तरह दाखिले के बाद मैं हॉकी खेलने में रम गया।

आपने हॉकी खेलना ग्रामीण स्तर से शुरू किया था। यहां से खेलों की विश्व की सबसे बड़ी स्पर्धा ओलंपिक तक का सफर कैसे तय किया?

चरणजीत सिंह : हम खेलते रहे और इस बीच देश आजाद

भी हुआ। देश का बंटवारा भी हो गया। पढ़ाई पूरी करने के बाद मैं पंजाब पुलिस में बतौर ए.एस.आई. भर्ती हो गया था। सन् 1951 में मेरा चुनाव पंजाब की टीम के लिए हो गया, पर बीच-बीच टीम में अंदर-बाहर होता रहा। 1951-1958 तक पंजाब की टीम से खेला और 1960 की रोम ओलंपिक से पहले सन् 1958 में मेरा चुनाव देश की राष्ट्रीय टीम में हो गया, जहां उस समय के कई वरिष्ठ खिलाड़ियों में मेरा उत्साहवर्धन किया।

आपके समय में खिलाड़ियों को किस प्रकार की सुविधाएं मिलती थीं?

चरणजीत सिंह : (कुछ देर तक यादों में खोए रहे। पानी पीते हैं फिर हमें भी मेज पर आ चुकी चाय पीने का आग्रह करते हुए बोले) टीम चाहे स्थानीय हो, राज्य स्तरीय या राष्ट्रीय- उस समय हम लोग पहले मिट्‌टी पर फिर आम घास के मैदानों पर हॉकी खेला करते। कोई अन्य सुविधा न के बराबर ही होती थी। न ही आज की तरह टीम मैनेजर और न ही कोच होते। हम लोग कभी खुद, कभी एक-दूसरे साथी खिलाड़ियों और कभी चलते-फिरते वरिष्ठ खिलाड़ियों से खेल की बारीकियां सीखा करते। सन् 1958 में राष्ट्रीय टीम में चुनाव के बाद मेरे खेल में बहुत निखार आया। 1960 के ओलंपिक खेलों में हम पहले की तरह ही अपनी चिरपरिचित आक्रामक शैली के दम पर फाइनल में पहुंच गए थे।

रोम ओलंपिक गोल्ड तो पाकिस्तान जीत गया था?

चरणजीत सिंह : हां, वे रोम ओलंपिक ही था, जहां हम पहली बार हॉकी फाइनल हारे थे। दरअसल पहले सत्र तक दोनों टीमें 0-0 पर थीं, किंतु खेल अंतिम सत्र के अंतिम क्षणों में मेरी टांग में फ्रेक्चर हो गया। मेरी फैबुला के चोटिल होने की वजह से मुझे बाहर होना पड़ा। उस समय अतिरिक्त खिलाड़ी खिलाने का नियम न था। मेरे चोटिल होने के बाद भारतीय टीम 10 खिलाड़ियों के साथ खेली। और 1-0 के अंतर से फाइनल हार कर गोल्ड मैडल से वंचित रह गए।

जब आप गंभीर रूप से चोटिल हो गए तो उसके बाद का आपका एक खिलाड़ी के रूप में सफर कैसा रहा?

चरणजीत सिंह : बहुत मुश्किल था। मुझे और पृथीपाल को टीम से हटा दिया गया था, वो तो बाद में हम लोगों को हैदराबाद नेशनल कैंप के लिए बारहवें और तेरहवें खिलाड़ी के तौर पर चुन लिया गया। मैं तब तक पूरी तरह स्वस्थ हो चुका था। मजे की बात देखिए, हैदराबाद कैंप के बाद मैं बारहवें से सीधे चौथे खिलाड़ी के रूप में बाहर निकला। इसके बाद श्रीनगर में कैंप लगा तो मैं चौथे से नंबर एक खिलाड़ी बनकर बाहर आया। इसका नतीजा यह निकला कि मुझे भारत की राष्ट्रीय टीम का कप्तान चुन लिया गया। और इसके बाद हमने कई बड़े टूर्नामेंट जीते।

आप कौन सी पोज़ीशन पर खेलते थे?

चरणजीत सिंह : सेंटर हॉफ और पृथीपाल फुल बैक, मजे की बात हमारी टीम में उस वक्त आठ खिलाड़ी ऑल-राउंडर थे।

सन् 1964 की टोक्यो ओलंपिक से पहले की कोई महत्त्वपूर्ण घटना जो याद हो?

चरणजीत सिंह : सन् 1964 में खेल जीवन और व्यक्तिगत जीवन का महत्त्वपूर्ण साल रहा। हुआ यूं कि उस साल फ्रांस में यूरोपियन प्रेस ज्यूरी ने प्री-ओलंपिक का आयोजन किया जिसमें विश्वभर की 16 मुख्य टीमों ने शिरकत की। हम लोग अपने चरम पर थे। आक्रामक खेलते थे और किसी भी परिस्थिति से हार नहीं मानते थे। हॉकी ही हमारा धर्म था और हार का मतलब हम मौत समझते और किसी भी टीम से जीतना ही देशहित होता था। हुआ यूं कि इस टूर्नामेंट में हमने हर टीम को बुरी तरह से पटखनी दी। पूरा विश्व एक बार फिर से भारत से खौफ खा गया। हम फिर से अपने रंग में थे जिसे देखकर पाकिस्तान ने तो हमारे खिलाफ खेलने से ही इनकार कर दिया था। इस टूर्नामेंट में हालैंड, जर्मनी, आस्ट्रेलिया और स्पेन जैसी उस समय की सशक्त टीमें थीं। हमने टूर्नामेंट शान से जीता। इस प्रकार इस प्री-ओलंपिक के 'बेस्ट टीम', बेस्ट आलराउंडर और दुनिया की सर्वश्रेष्ठ टीम इन टैक्नीक के तीनों टूर्नामेंट खिताब अपनी झोली में डाल लिए। देश वापसी पर हमारा जोरदार स्वागत हुआ और एक ही साल 1963 में दो प्रतिष्ठित पुरस्कार 'पदमश्री' और 'अर्जुन अवार्ड' मिले।

1964 टोक्यो ओलंपिक के बारे यादगार लम्हें?

चरणजीत सिंह : यादें तो बहुत हैं, पर मुख्य बात कि टोक्यो ओलंपिक से कुछ दिन पहले ही तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू का देहावसान हो गया तो लाल बहादुर शास्त्री जी को प्रधान मंत्री बनाया गया। टोक्यो रवाना होने से पहले टीम उनसे मिलने गई तो उन्होंने 'जीत का मंत्र' देते हुए कहा कि पंडित जी बहुत बड़े आदमी थे और आप लोग बड़े खिलाड़ी हो, मैं तो कद से भी छोटा इनसान हूं और वैसे भी मेरी और देश की इज्जत आपके हाथ

में है, इसलिए हर हाल में टोक्यो से जीतकर ही लौटना। इस एक वाक्य से हमें एक मजबूत मकसद दे दिया। हमने टोक्यो में पाकिस्तानी टीम को फाइनल में हराकर रोम की हार का बदला भी ले लिया और शास्त्री जी की कही बात का मान भी रख लिया।

जब टीम जीत कर देश लौटी, उसके बाद देश का माहौल कैसा था?

चरणजीत सिंह : टीम के गोल्ड मैडल जीतने की खबर तो देशवासियों को हिसार में आयोजित कार्यक्रम के चलते ही रेडियो पर दे दी थी और फिर टोक्यो जीतकर आने के बाद हम लोगों को लगभग हर जगह जोरदार स्वागत हुआ। टीम जब राष्ट्रपति से मिलने राष्ट्रपति भवन पहुंची तो हमारा स्वागत पारंपरिक तरीके के वाद्ययंत्रों की मधुर ध्वनि से हुआ। फिर इस बीच जैसे ही राष्ट्रपति हमसे मिलने स्वागत कक्ष पहुंचे तो आते ही उन्होंने जो कहा उसके लिए हम कतई तैयार न थे। उन्होंने मुझसे हाथ मिलाते हुए कहा, 'ये क्या एक गोल से जीत कर आए हो' यह भी कोई जीत होती है?' मैं यह सुनकर सन्न था, पर अगले ही क्षण संभलते हुए मैंने कहा, 'विक्ट्री इज़ विक्ट्री, सर। फिर वो एक गोल से हो या हज़ार से।' मेरा जवाब सुनकर उन्होंने गले से लगा लिया।

जैसा कि हर खिलाड़ी का कोई न कोई आदर्श होता है, आपका भी रहा होगा?

चरणजीत सिंह : हॉकी में निस्संदेह मेजर ध्यान चंद, फुटबॉल में पेले और क्रिकेट में डॉन ब्रैडमैन- ये तीन लीजेंड हुए हैं। मेरा आदर्श तो ध्यान चंद ही रहे, उनसे बहुत सीखा। उनका खेल जीवन और चमकदार और लंबा हो सकता था अगर 1940 और 1944 के ओलंपिक खेल होते। उस समय ध्यान चंद का खेल चरम पर था।

कुछ और अनछुए पहलू शुरुआत के संघर्ष भरे जीवन और 1964 टोक्यो ओलंपिक जीतने के बाद, जो रह गए हों?

चरणजीत सिंह : पंजाब के लिए 1951 में हॉकी खेलने के साथ ही बतौर ए.एस.आई पंजाब पुलिस भर्ती हो गया था और 1964 में टोक्यो ओलंपिक के वक्त डी.एस.पी. के पद पर सेवारत था। मगर देश के लिए ओलंपिक जीतने के बाद तो हम देश के हीरो बन गए थे। हर कोई अपनी ओर खींचना चाहता था। उस समय डी.आई.जी. हिसार शमशेर व डी.आई.जी. जालंधर कुमार साहब थे, वरयाम सिंह जी. आई.जी.। मेरे पिता के एक मित्र उस समय (1964) में एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी लुधियाना के कुलपति थापर साहब के पी.ए. थे। उनके जरिए मुझे संदेश मिला कि मैं उनसे मिलूं, जब मैं उनसे मिलने उनके दफ्तर चंडीगढ़ गया तो दफ्तर में न मिलकर वे मुझे अपने घर ले गए और कहा तुम क्या बनना चाहते हो?

मेरा जवाब था 'प्रोफेसर'। उन्होंने कहा कि यह तो मैं नहीं कर सकता। न ही तुम्हारे बॉस को कह सकता हूं कि वो तुम्हें छोड़ दें। तुम ऐसा करो कि खेल विभाग ज्वाइन कर लो। मैंने ऐसा ही किया। इस तरह पहले 1965-1970, फिर 1970-1975 और 1975-1982 तक सीनियर डिप्टी डायरेक्टर खेल सेवाएं पद पर रहा। लुधियाना के बाद 1983 से 1991 तक चौधरी चरण सिंह कृषि विश्वविद्यालय में इसी पद पर रहा व हिमाचल सरकार में डायरेक्टर के रूप में सेवा दी। इसी बीच 1991-92 यू.जी.सी. में मेंबर और भारतीय हॉकी टीम की सिलेक्शन कमेटी में भी रहा।

आज के हिमाचल और आपके जमाने के हिमाचल में क्या फर्क दिखता है?

चरणजीत सिंह : हमारे जमाने में किसी भी प्रकार की सुविधा न थी, न ही कोई प्रोत्साहन मिलता था न अवसर, फिर भी हम कठिन तप करके आगे बढ़ते, पहाड़ी परिवेश में जीवन यापन हम लोगों को मानसिक एवं शारीरिक रूप से मजबूत बनाता था। खान-पान शुद्ध था, दूध-घी घर का था, हम लोग भले ही अभाव में जीते थे किंतु शर्म और दिखावा नहीं करते थे। आज जमाना बदल गया है। युवा बुरी लतों का शिकार है। प्रेमभाव खत्म हो रहा है। युवा वर्ग में मेहनत, ईमानदारी और लगन जैसी मूल तत्वों का अभाव हो रहा है। हम बनावटी दिखावे के शिकार हो गए हैं।

अपने परिवार बारे कुछ बताएं?

चरणजीत सिंह : मेरे छोटे भाई भी दिव्यजन खिलाड़ियों के सेंट्रल हैड कोच रहे हैं। मेरे तीन पुत्र हैं जो सभी अच्छी पोजीशन पर कार्यरत हैं। एक पुत्री व दामाद एम्स दिल्ली में डॉक्टर हैं।

हिमाचली युवाओं के लिए कोई संदेश देना चाहेंगे?

चरणजीत सिंह : संदेश तो आज की पीढ़ी को क्या दे सकते हैं? आगह ही कर सकते हैं कि ये जो नशा युवाओं को जंग की तरह खा रहा है, फिर चाहे खेल हो या कोई और क्षेत्र, इससे युवा जोश समाप्त हो रहा है।

गांव पध्याड़ा डाकघर कोहाला, तहसील ज्वालामुखी, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 036, मो. 0 94180 76175

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 नवम्बर, 2016 अंक : 8

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

जैसे मोमबत्ती बिना आग के नहीं जल सकती, मनुष्य भी आध्यात्मिक जीवन के बिना नहीं जी सकता।

– महात्मा बुद्ध

इस अंक में

लेख

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

अपनी बात

वैसे तो हर पूर्णिमा के साथ कोई-न-कोई लोक आस्था, मान्यता एवं परंपरा, लोक विश्वास जुड़े हुए हैं लेकिन शरद पूर्णिमा इस मायने में अलग और विशेष है। शरद पूर्णिमा की रात को कुदरत का नजारा देखते ही बनता है-- मानो सारा संसार ही भगवान श्रीकृष्ण संग महारास में ध्यानमग्न हो। भारतीय संस्कृति के अनुसार यह प्रकृति और पुरुष का मिलन है। आत्मा और परमात्मा का साक्षात्कार है। सब कुछ एक हो जाता है, ईश्वरमय हो जाता है। सारी दिव्य शक्तियां जैसे धरती पर अवतरित हो गई हों। जीवन के अर्थ खुलते हैं। जीवन सार्थक बन भगवान को अर्पित हो जाता है। उस महिमा और गरिमा को शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता। उस बेला को, उस घड़ी को बस चार चांद लग जाते हैं। उन असीम आनंद और अमृत बरसाते प्रशांत क्षणों को सिर्फ अनुभव किया जा सकता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि इस बार इस शरद पूर्णिमा को चांद धरती के बहुत निकट था। यह अपने सामान्य आकार से अधिक बड़ा दिखाई दिया और अधिक चमकदार भी। यह ब्रह्मांडीय दुर्लभ संयोग या घटना वर्षों बाद घटित होती है। यह पूर्णिमा सर्दी का स्वागत पर्व है जिसमें न अति शीत होता है और न अधिक ताप। साथ ही शुरू हो जाती हैं आने वाली सर्दी से निजात पाने की कोशिशें। इसे किसानों का उल्लास पर्व भी कहते हैं जिसमें वे अपनी नई फसल को खेत-खलिहान से घर ले जाने की खुशी में मनाते हैं। खरीफ की फसल किसानों की संपन्नता व समृद्धि का संबल है। हिमाचल प्रदेश के लोक जीवन में इस पूर्णिमा का अलग महत्त्व है। यहां के समृद्ध जनजीवन से जुड़े लोक नाट्य-- बरलाज, करियाला, धाज्जा, बांढड़ा-स्वांग आदि का इस पावस रात्रि को पारंपरिक नाट्य-गायन के रूप में विशेष आयोजन होता है। इसके अलावा प्रदेश की अनूठी देव-परंपरा से जुड़े अनेक राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय मेले-त्योहार इस ऋतु में बड़े हर्षोल्लास व पारंपरिक रीति-रिवाज के साथ मनाए जाते हैं। इनका शुभारंभ अंतर्राष्ट्रीय कुल्लू दशहरा से प्रारंभ होकर, सिरमौर के प्रसिद्ध रेणुका और प्राचीन व्यापारिक महत्त्व संजोए अंतर्राष्ट्रीय लवी के बाद छोटी काशी मंडी के प्रसिद्ध मंडी शिवरात्रि मेले के समापन के साथ ऋतु परिवर्तन होता है। इन मेलों एवं त्योहारों की विश्व मानचित्र पर विशेष पहचान है जिनमें इस देवभूमि की अनूठी देव परंपरा को नजदीक से देखने-समझने देश-विदेश से लाखों सैलानी हर वर्ष यहां आते हैं। प्रदेश की लोक संस्कृति में रचे-बसे इन त्योहारों से यहां धार्मिक पर्यटन को नई पहचान मिली है। हमारी समृद्ध संस्कृति को संरक्षण व प्रोत्साहन मिलने के साथ-साथ हिमाचल की आर्थिकी को भी संबल मिला है। प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण इस प्रदेश के लोगों का जनजीवन देवों की तरह ही निश्छल एवं पवित्र है। इन त्योहारों के आयोजनों में निहित आदर्श एवं अच्छाई वे अपने जीवन में आत्मसात किए हुए हैं। सालभर चलने वाले मेलों एवं त्योहारों के माध्यम से हिमाचल की उच्च धार्मिक परंपराओं के संरक्षण के साथ-साथ इन्हें भावी पीढ़ियों तक पहुंचाने में भी सहायता मिलती है। पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के बावजूद हिमाचल की आदि-संस्कृति यहां के लोगों के लिए आज भी मूल्यवान एवं महत्त्वपूर्ण है। प्रदेश की इस लोक संस्कृति को संरक्षित रखने की दिशा में सरकारी स्तर पर किए जा रहे सकारात्मक प्रयासों के साथ हमारे जागरूक प्रदेशवासी भी अपना बहुमूल्य योगदान दे रहे हैं। नियमित सामग्री के साथ लोक संस्कृति से जुड़े लेखों सहित यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है।

–संपादक

आलेख

हिमाचल के लोकगीतों में गुंजायमान बहुविध संस्कृति

◆ सुदर्शन वशिष्ठ

अद्‌भुत है लोक वाङ्मय। जितना महान, उतना गहन। उतना ही तर्कशील व विवेकशील। इसके रचयिता वे अनाम कवि हैं जिन्होंने कभी अपने नाम नहीं दिए। लोक कवियों के काव्य को देखते हुए अचम्भा होता है। जिन्हें कभी कहीं से अकादमी, ज्ञानपीठ या व्यास सम्मान नहीं मिला। जिनका नाम, लम्बा चौड़ा परिचय तो दूर, अता पता तक ज्ञात नहीं है, ऐसे कवियों ने उस समय में वह बात कह दी है जो आज सजग से सजग और जागरूक कवि नहीं कह पाता। भाषा का वह शिल्प, बिम्ब प्रतीकों का प्रयोग, कथ्य की गहराई सब अद्‌भुत है। लोक की रचना जितनी गहन होती है, उतनी ही काव्यमयी। हालांकि उन कवियों ने कभी छंद विधान नहीं सीखा, किसी काव्य शास्त्र की दीक्षा नहीं ली, कोई अतुकांत पदावली का अध्ययन नहीं किया। वे उतने चतुर सुजान भी नहीं थे। समय के अनुसार वे स्वतः ही तरह तरह के छंद रचते गए।

लोकगीत रचना में गीतकार भी वही है, संगीतकार भी वही है तो गायक भी वही है। बहुत बार गीत का आनंद लेने वाला भी वही होता है। उसके लिए श्रोताओं की भीड़ या वाहवाही की जरूरत भी नहीं। वह श्रोताओं को रिझाने के लिए नहीं गाता।

लोकगीत समाज का प्रतिबिम्ब बड़ी निर्ममतापूर्वक प्रस्तुत करते हैं। वे समाज की कुरीति, आडम्बर को पर्त दर पर्त उघाड़ते चले जाते हैं बिना किसी लागलपेट के। गीतकार और गायक, दोनों ही निर्भयता से अपना पक्ष पेश करते हैं। राजसत्ता, समाज, परंपरा, रूढ़ियों के ख़िलाफ ये निडर हो कर खड़े होते हैं।

कांगड़ा के एक गीत में राजा हरिसिंह भेड़ें चराती गद्दण को बलपूर्वक अपने महलों में डाल लेता है। उसे महलों में रहना नहीं भाता। एक दिन राजा उसे छल कर पूछता है कि उसे गद्दी भाता है या राजा। गद्दण का उत्तर है कि, मुझे कुछ कुछ ममता तो राजा से हो गई है किंतु गद्दी (पति) के नाम से जैसे छुरी चल जाती है :

''थोडी़ थोड़ी ममता राजा तुसां दी बी लगदी
गद्दिए दे नाएं लगदी छुरी ओ।''

इससे भी अधिक मर्मस्पर्शी दृश्य तब उपस्थित होता है जब गद्दण महलों में है और उसका पति गद्दी महलों के नीचे भेड़ें चराता हुआ मुरली बजाता है :

''महलां दे हेठ गद्दी भेडां जे चारे
मुरलिया रूणक सुणाई बो
मेरेया बांकेया गद्दिया।"

कांगड़ा के एक अन्य गीत 'धोबण' में महलों के आने पर धोबन को राजा की पहली रानी (सौतन) द्वारा जहर दे कर मारने के बाद जब उसके मृत शरीर की पिटारी नदी में बहती हुई आती है तो धोबी (उसका पति) उसी नदी के किनारे कपड़े धो रहा होता है। जब धोबी पिटारी खोलता है तो 'सोने की पिटारी में उसके बच्चों की मां' नजर आती है। सोने की पिटारी में उसकी पत्नी नहीं, राजा की प्रेयसी नहीं, अपने बच्चों की मां का दिखना एक अद्‌भुत प्रयोग है :

'धोबिएं पिंजरा सैह् खोल्लया, हाय खोल्लया
एह् बच्चेयां दी माए।'

एक अन्य गीत में नायक निम्न वर्ग की नायिका से प्रेम करता है। वे दोनों एक थाली में दूध भात खाते हैं। एक थाली में इकट्ठा खाने के बाद वह उसकी जाति पूछता है :

''दूध ता भत्त मुआ खादा इक्की थालि़या,
हुण कजो पूछदा तू जाति।''

कुल्लू में 'लामण' गीत में प्रेमी प्रमिका के दोहे के रूप में सवाल जवाब हैं। एक छंद में कामना की जाती है कि जिस तरह लम्बे केलू का पेड़ सदा हरा भरा रहता है, उसी तरह हमारी जोड़ी जैसी फोटो में उतरी है, उम्र भर वैसी ही बनी रहेः

''लोमे केलू री बूटड़ी, सदा बे हौरी री हौरी।
जेंडी जोड़ी थी फोटू न म्हारी, तेंडी लोड़ी उमर भौरी।"

लोकगीतों में बड़ी से बड़ी बात सहज भाव से कह दी गई है जो उस युग में कहनी कठिन ही नहीं नामुमकिन थी।

विभिन्न संस्कारों पर गाए जाने वाले मन्त्रों की तरह धीर गम्भीर गीत हों या विवाह के अवसर पर गालियां; सब की रचना समय और परिवेश के अनुकुल की गई है। विवाह में एक ओर वैदिक मन्त्रों से विवाह का क्रियाकलाप चलता है तो दूसरी ओर गीतों के माध्यम से उस कर्म को लोक के लिए उजागर किया जाता है। गीत से ही पता चल जाता है कि अब विवाह में कौन सी तैयारी चल रही है। लोकाचार का अद्‌भुत निर्वाह गीतों के माध्यम से किया जाता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक के संस्कार गीतों के

माध्यम से निभाए जाते हैं। जन्म, यज्ञोपवीत, विवाह और यहां तक कि मृत्यु में भी गीत परंपरा है। इसी तरह धार्मिक गीतों में वेद मन्त्रों व देवताओं के आह्वान मन्त्रों की तरह देव गीत गाये जाते हैं। किसी भी संस्कार से पहले देवताओं का आह्वान किया जाता है :

''सुरगे ते उतरेयो देवतयो सांदी आई बैह्यो।"

(हे स्वर्ग से उतरे हुए देवताओ शान्ति हवन में आ कर बैठो।)

कुल्लू की ओर देवताओं का आह्वान महिलाएं गीतों के द्वारा करती हैं। इसी तरह धार्मिक गीत अपनी जगह है। शिव स्तुति, देवी की भेटों से ले कर अनेक भजन हैं जो भजन मण्डलियों द्वारा गाये जाते हैं। ये मण्डलियां गांव-गांव में 'जागरण' या 'महफिल' में गाती हैं।

इसके अतिरिक्त ऋतु गीत, उत्सव गीत, त्योहार गीत भी बहुतायत में हैं। नृत्य गीतों की एक अलग ही परम्परा है जो नाटी के समय गाए जाते हैं। घटना प्रधान या नायक प्रधान गीत भी हैं। बहुत सी प्रेम गाथाएं भी प्रचलित गीतों में रूपांतरित हुई हैं।

लोकगीत परम्परा थमती नहीं। समय के साथ-साथ नित नये नये गीत बनते जाते हैं। गीत रचना के लिए कवि या गीतकार बनाने या उन्हें प्रोत्साहन, पारिश्रमिक देने की आवश्यकता भी नहीं। गांव की साधारण घटना जैसे फॉरेस्ट गार्ड की प्रेम कथा से लेकर प्रधान मन्त्री इन्दिरा गान्धी के आगमन तक के गीत हैं। राजाओं के समय की घटनाओं से लेकर स्वाधीनता प्राप्ति के बाद दरिया में बान्ध बनने, सड़क निकलने, बिजली तैयार होने, हैलिकॉप्टर उतरने तक के गीत हैं जो अनपढ़ किंतु सुघड़ लोगों ने रचे हैं।

लोकगीत अपनी मधुर लय तथा मारक शब्दावली के कारण दोहरी मार करता है। कभी मनुष्य उसकी धुन पर ही मुग्ध होता है तो कभी मात्र शब्दों के बाणों से बिन्ध जाता है।

प्रेम गीत व गाथाएं

प्रेम के तराने सदियों से लोकगीतों के माध्यम से जनमानस में गूंजते रहे हैं। अपने ज़माने में ऐसे प्रेम को चाहे कितना भी निम्न क्यों न समझा गया हो, प्रेमियों को कितना ही प्रताड़ित क्यों न किया गया हो, समय के अनन्तर उसी का स्मरण कर गाने गाए जाते हैं। इन गीतों की ख़ासियत यह भी है कि इन में किसी भी बात को छिपाया नहीं जाता। सत्य को अपने क्रूर रूप में प्रकट करना ऐसे गीतों का ध्येय रहता है। इन में ऊंच नीच, अमीर गरीब का भेद नहीं रहता। श्लील-अश्लील की भी परवाह नहीं की जाती।

राजाओं के समय में राजकुमारियां अपने महलों के ऊपर से आते जाते राहगीरों को देखा करती थीं। राह चलते सुंदर गठीले सजीले जवान से उन्हें प्रेम हो जाता। राजकुमारी कहती है, काले कुण्डलों वाले जवान! तू महलों में आ जा। जवान कहता है तेरा तोता चुगलख़ोर है , मैं कैसे आऊं! तेरी पगड़ी किसने रंगी है, रूमाल किसने रंगा है! वह कहता है मेरी भाभी ने रंगी पगड़ी और मेरी नार ने रंगा ये रूमाल। राजकुमारी कहती है, तेरी भाभी पर बिजली गिरे, तेरी नार को काला नाग डसे। यह गीत बिलासपुर, मण्डी व कांगड़ा तक के क्षेत्रों में गाया जाता था :

महलां रे हेठिए जांदेया ओ जुआना
जांदेया ओ जुआना
महले तू आई लै जरूर
काल़ेया कुण्डला वाल़ेया ओ नौकरा।
महलां तां तेरेयां गोरिए कियां ओआं
ओ गोरिए कियां ओआं तोता बड़ा चुगलीबाज
सबज दप्पटे वाल़िए ओ गोरिए।
कीने रंगी तेरी पागड़ी ओ जुआना
कीने रंगेआ एह रूमाल
काल़ेया कुण्डला वाल़ेया ओ नौकरा।

चम्बा का एक प्रसिद्ध गीत है ''छिम्बी''। राजा एक छिम्बी पर मोहित हो उसे महलों में ले जाने की बात करता है तो वह कहती है कि वह तो नीच जात है। राजा उसे जाति बदलने के लिए लाख, दो लाख देने की बात करता है, वह जाति बदलने को तैयार नहीं होती। गीत में छिम्बी के सौन्दर्य का वर्णन एक सधे हुए कवि की तरह किया गया है। छिम्बी के दांत खिले हुए खटनालू के फूल की तरह हैं, आंखें सूरज की रोशनी की भान्ति तो ओठ पान के पत्तों की तरहः

छिम्बी हो छिम्बी पाणी जो गई हो
तेरड़े सौंह् छिम्बी पाणी जो गई हो।

दन्द कदेई ऐस्सा छिम्बी दे जियाँ खिड़े खटनालू
दन्द हेरी मत भुलै राजा जी हाऊँ ता जाति री छिम्बी।।
हाखी कदेई ऐस्सा छिम्बी दी जियाँ सुरजे री लोई।।
हाखी हेरी मत भुल्ले राजा जी हाऊँ ता जाति री छिम्बी।
हाथ कदेई ऐस्सा छिम्बी दे जियाँ हलुए री डाली
हाथ हेरी मत भुलै राजा जी हाऊँ तां जाति री छिम्बी।।
होठ कदेई ऐस्सा छिम्बी दे जियाँ पाना रे पट्ठे
होठ हेरी मत भुलै राजा जी हाऊँ ता जाति री छिम्बी।।
इक लख दिता तिजो दो लख दिता जाति देयां बदलाई
नि बो लैणे लख दो लख जाति नी बदलाणी।।

मण्डी में प्रचलित एक गीत में झारू मियां के अतिनिम्नवर्गीय गगनू से प्रेम कथा का गान है। झारू मियां को सभी समझाते हैं कि नीच गगनू का साथ छोड़ दे किन्तु वह प्रेम के समक्ष सामाजिक मान्यताओं की परवाह नहीं करता। मां बाप, भाई भाभी किसी की सीख वह नहीं मानता। यहां तक कि उसका हुक्का-पाणी बंद कर बिरादरी से बाहर करने की धमकी दी जाती है।

मण्डी में एक और प्रेमगीत 'जिन्दु देबकू' नाम से भी प्रचलित है। इसके एकाधिक रूपांतर मिलते हैं। चम्बा के ''छिम्बी'' गीत की भान्ति इस गीत में भी देबकू के सौन्दर्य का मनोहारी वर्णन किया गया है। देबकू के गोरे गोरे हाथ हैं, आंखें आम की फाड़ियों की तरह हैं, दांत मोती के दानों की तरह। वह बार-बार अपने प्रेमी जिंदु के आने की राह देखती है :

हाथा लैंदी लोटकू देबकुए
काच्छा पांदी धोति
चल मुईए न्हाओणेओ जाणा, ओ देबकुए....।

हाखियां ता तेरी देबकु
अम्बा रियां फालि़यां
गूठियां रौंगा दिया फालि़यां, ओ देबकुए...।

हाखियां ता तेरी देबकू आंबां रिया फाड़ियां
दांद तेरे मोतियां रे दाणे
हो दांद तेरे मातियां दे दाणे।

कुल्लू में एक जीवनू प्रेमी का गीत है जो विवाहित होने पर भी प्रेमिका को पाने की चाह मन में लिए हुए हैः

जीवनू दूई रा बड़ा बांका, जीवनू दूईं रा बड़ा बांका।
एक बोला सी जीवनू जीवनू, एक बोला सी नावां।
सिंहा मुखिया कांगणू देनू, बौसे मेरे गावां।

प्रदेश में अनेकों प्रेम गाथाएं हैं जो गीतों के माध्यम से आज भी जीवित हैं। फुलमूं रांझू, कुंजो चंचलो, सुन्नी भुंकू, हीर रांझा जैसे गीत उन प्रेम कथाओं की याद दिलाते हैं जो प्रेम के कारण समाज द्वारा प्रताड़ित किए गए या जिनका उपहास उड़ाया गया।

चम्बा में फुलमूं रांझू का किस्सा बहुत मशहूर है। इसे अब भी गाया जाता है। इस हृदयग्राही गाथा में फुलमू और रांझू के प्रेम की करूणाजनक कथा कही गई है। रांझू का ब्याह कहीं और तय कर दिया जाता है। विवाह से उसे भाभिंयां, ताईयां और चाचियां बटणा लगाती हैं। किसी पर दोषारोपण न कर, दोनों प्रेमी इसे कर्म का दोष मान स्वीकारते हैं। किंतु प्रेम का उत्सर्ग देखिए कि एक ओर रांझू ब्याहने निकलता है तो दूसरी ओर फुलमू की लाश निकलती है। रांझु कहारों को अपनी पालकी रोकने को कहता है कि फुलमू को 'दाग' देना है। वहीं रांझे की भी मृत्यु हो जाती है। इस हृदयग्राही गीत को करुण स्वरों में गाया जाता है :

गुआडुऐं पच्छुआडुऐ तू कजो झाकदी,
झाकां कजो मारदी।
दो हत्थ बुटणे दे ला फुलमू,
गल्लां होई बीतियां।
बूटणा लगान तेरियां सक्की भाभियां,
तेरीयां ताईयां-चाचियां।
जिन्हां जो ब्याहे दा चा ओ रांझू,
गल्लां होई बीतियां।
ठप्पा-ठप्पा क्हारो मेरी पालकिया,
मेरी पालकिया।
फुलमू जो दाग मैं देयां,
गल्लां होई बीतियां।

इसी तरह का दूसरा किस्सा 'कूंजू चंचलो' का है। गीत में चंचलो का कपड़े धोते हुए छम छम रोने का चित्रण है। प्रेमी ने जो निशानी दी है उसका बार बार उल्लेख किया जाना है। गीत में यह भी जिक्र है कि लोग कहते हैं चंचलो काली है किंतु प्रेमी कूंतू के लिए लिए वह 'मरूए' की डाली के समान हैः

कपड़े धोआं छम-छम रोआं चंचलों, बिच कै बो नसाणी हो।
हाय बो मेरिए जिन्दे बिच कै बो नसाणी हो।
कपड़े धोआं छम-छम रोआं कुंजुआ, बिच बटण नसाणी हो।
हाय बो मेरिए जिन्दे बिच बटण नसाणी हो।
गोरी-गोरी बांह लाल चूड़ा चंचलों, बिच कै बो नसाणी हो।

'हीर रांझा' यद्यपि पंजाब की प्रेम गाथा है तथापि ये हिमाचल में भी अपने ढंग से गाया जाता है। हिमाचल के जिला मण्डी तथा पंजाब से लगते क्षेत्रों कांगड़ा आदि में भी हीर रांझा का किस्सा मशहूर है। यहां मण्डी में प्रचलित रूप दिया जा रहा है :

किधरां ले आइयां हीरां तख्त रांझे
ले मेरा रांझा आया
झंग स्याले ले हीरां ओ क्या ओखटी

के ओ रांझा जै लयाया।

किधरा ते मेरा रांझणा आया
किधरा ते आइयां हीरां
तख्ता मांझे ले मेरा रांझण आया
झंग स्याले ते मेरी हीरां।

सुन्नी-भुंकू की प्रेम गाथा बहुत प्रसिद्ध है। यह भरमौर और लाहुल की संस्कृति को जोड़ती है।

सुन्नी भूंकू भरमौर की प्रसिद्ध गाथा है जो संक्षिप्त रूप में गीत के रूप में गायी जाती है। भूंकू नाम का गद्दी युवक अपनी भेड़ बकरियां लेकर लाहौल जाता है जहां उसकी भेंट लाहौली युवती सुन्नी से होती है। दोनों में प्रेम हो जाता है। अगली गर्मियों में जब भूंकू ने पुनः अपनी भेड़ बकरियों के साथ आना होता है तो कुछ औरतें उसे बताती हैं कि भूंकू तो मर चुका है। ऐसी ही खबर भूंकू को लाहौल पहुंचने पर मिलती है। फलतः दोनों एक दूसरे के वियोग में मर जाते हैं।

गीतकार ने भूंकू का परिचय गठीले जवान के रूप में दिया है जिसकी दाढ़ी काले भंवरे जैसी है :

''छोटड़ा गदेटा भैणजी, काली भौंर दाढ़ी है।''

गांव में भूंकू को कुत्ते भौंकते हैं :

''ओ बाहर जइयो निकियो छुकयो, कुत्ते कस जो लगे हो।''

सुन्नी बाहर आती है तो वार्तालाप इस तरह होता है :

''कठी तेरे घर ओ मित्तरा, कठी जो चलूरा हो।
भट्टी टिकरी घर बो मण्हिए, लोहला जा चलूरा हो।''

.....कहां है तुम्हारे घर और कहां चले हो! भुंकू कहता है, मेरे घर भट्टी टिकरी में है और लाहौल जा रहा हूं। वह वहां रूक जाता है और कई दिन ठहरने के बाद वह पूछता है :

''कुण जिणी रित सुन्निए, कुण जिणा महीना है
सैरकणी रित ओ भूंकूआ, काति दा महीना है।''

.....यह कौन सी ऋतु है, कौ सा महीना है! सुन्नी उत्तर देती है, यह सैर की ऋतु है और कार्तिक महीना है।

अगले साल मरने की झूठी खबर यूं सुनाई जाती है :

''होर तां मह्णू राजी बाजी भूंकू गद्दी मुआ हो।
होर तां मह्णू राजी बाजी सुन्नी भोटली मुई हो।''

इस गाथा के कई रूपांतर मिलते हैं। एक रूपांतर का उदाहरणः

कठी तेरे घर बो मित्तरा,
कठी जो चल्लू रा ओ।
भटी टिकरी घर बो गदणी,
खरचा जो चल्लू रा ओ।

विरह गीत

भरमौर में विरह गीतों की भरमार है। चम्बा के जनजातीय क्षेत्र भरमौर में गद्दी एकमात्र ऐसा कबिला है जो छः ऋतुओं और बारह महीने अपनी भेड़ बकरियों के साथ चला रहता है। वह बैशाख के महीने में अपने घर गणेरन लौटता है जहां से उसे पुनः सफर पर निकलना है। पीछे छूटा उसका परिवार, पत्नी विरह सहती रहती है।

पत्नी चिट्ठियां लिख लिख कर संदेशा भेजती है कि तुम्हारी माता बीमार है, तुम्हारी बहन बीमार है, प्रियतम घर आ जाओ :

लिखि लिखि चिट्ठियाँ मैं भेजाँ, हाँ मैं भेजाँ
माता तम्हारी बीमार ढोला, घरे आई जाणा।
लिखि लिखि चिट्ठियाँ मैं भेजाँ, हाँ मैं भेजाँ।
भैण तम्हारी बीमार ढोला, घरे आई जाणा।

ऋतु उदासी वाली आ गई है, प्रियतम घर आ जाओ! तुम्हारे दोस्त बावड़ी पर तुम्हारा इंतजार कर रहे हैं :

प्यारी प्यारी हो क्या लांदा मेरेया प्यारूआ
बाईं पुर भाल़ें हो तेरे दोस्त मेरेया प्यारूआ।

जोता री थकूरी ओ मत छेड़ैं मेरे प्यारूआ
जोता पर भाल़े ओ मेरी पतल़िया भाखा प्यारूआ।

अज छतराड़ी ओ कल राखा मेरेया प्यारूआ।
रूत संघड़ोणी हो चलैं आयां मेरेया प्यारूआ।

पत्नी कहती है, तुम्हारे बिना मन बुरा बुरा हो रहा है, घर आ जाओ। भेड़ों के साथ गया पति कहता है, भेड़ों ने बच्चे दिए हैं, सौ भेड़े सूई हैं, घर कैसे आऊं! :

भेडा केरिआ पाह़लणुआ, घरै जो ईयां हो

घरा जो किहां ईणा भेड़े सो लाया हो
सौ सुइयां भेड़लियां, पणासो सुइयां हो
धारा दिया पाह्लणुआं, मन सुंघड़ लग्गा हो
सुंघड़ लग्गा हो सुंघड़ौण, मने बुरा बुरा लग्गा हो
घरा किहां ईणा भेड़ा सो लाया हो ।

कांगड़ा के लोग पहले नौकरी के लिए बाहर जाते थे तो उनकी नवविवाहिता उनसे साथ ले जाने की गुहार करतीं। वे कहतीं कि अगर जाना ही है तो मेरे गरी और छुहारे साथ ले जाओ, मेरे सिर का चुनरी ले जाओ, नाक की नत्थ ले जाओ। ये चीज़ें तुम्हारे काम आएंगी.....तू मेरे नयनों का लोभी है। ऐसा ही भाव है ''जे तू चलेया'' के गीत का :

जे तू चलेया चम्बे चाकरी ओ ढोला.....
मेरे गरी ते छुहारे लैंदा जायां, छैल़ा ओ.....
जे तिजो लग्गे मेरी बेदणा
गल़े लाई कने सौयां, नैणा देया लोभिया।

जे तू चलेया चम्बे चाकरी
ओ मेरे सिरे दे सालूए लैंदा जायां, छैल़ा ओ......
जे तिजो लग्गे ठण्डड़ी तां
तम्बू ताणी करी सोयां, नैणा देया लोभिया।

जे तू चलेया चम्बे चाकरी
ओ मेरे हत्थे दे चूड़े लैंदा जायां, छेला ओ....
जे तिज्जो लग्गे मेरी बेदणा
ताह्लू हिक्का कने लायां, नैणा देया लोभिया।

इसी तरह एक अन्य गीत में नायिका राजा की नौकरी में गए पति के इंतजार में बारह वर्ष से अट्ठारह की हो जाती है। उसका पति सदा ही मुसाफिर बना रहता है :

ओ गया भी ता था साजिया बाहिया
हण आई भी लगेया चैत्र बसाख
ओ सदा रेआ महिमीआ!

ओ बागें ता तेरेयां आम्ब केल़े पाके
होर भी ता पाके सरताज
ओ सदा रेआ, महिमीआ!

बारांह ता बरसी ब्याही ढोला
ठारहां गई बाल़ड़ी बरेस
ओ सदा रेआ मुसाफिरा!

ओ बले सदा भी नी रैंह्दी बालड़ी बरेस
सदा भी नी रैंह्दे काल़ड़े केस
ओ ढोला! मेरेआ बेदर्दिया!

ओ बदलुआं भी भेजदी बिरणा तेरेआं
ओ भलेआ देओरा मेरेआं!
ओ घरैं ता आओणा दिन चार।

बदलुआं भी नी मनदे नारे मेरिए नाजो!
राजेआं दी नौकरी भी तां हुंदी करड़ी
नाजो मेरिए! नारे नाजके!

प्रेम में मिलन और विरह के सर्वाधिक गीत लामण में हैं।

लामण कुल्लू, महासू, सिरमौर का एक सशक्त लोक काव्य है। इसे झूरी भी कहा जाता है। हृदयग्राही भावों के साथ इसमें उत्कृष्ट काव्य के दर्शन होते हैं।

यह काव्य प्रश्न और उत्तर के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। नायिका प्रश्न पूछती है तो नायक उत्तर देता है। यह अरण्य गायिका का एक अद्‌भुत रूप है जिस में युवक तथा युवतियां लम्बी तान में गाते हैं ताकि एक शिखर से आवाज दूसरे शिखर तक पहुंच सके। दोहा, चतुष्पद और छंदों के प्रयोग से एक लयात्मक और गीतात्मक काव्य बन जाता है। प्रकृति से प्रतीक और बिम्ब विधान लेने से यह और भी मारक हो जाता है। नायक अथवा नायिका की प्रशंसा, संयोग, वियोग सभी का चित्रण इस गायिका में मिलता है। यह काव्य मूलतः कुल्लू और इससे लगते क्षेत्रों में प्रचलित है। इस काव्य में संयोग तथा वियोग के कुछ पद देखिए :

संयोग

गेहूं गौगरे, पीऊंल़े जौऊरी काशी।
चंद्वा सेंही नजरी तेरी, सूरजा सेंही पियाशी।

फूल फुलू फूलणू झूरिए, भौर फूलला पाल़ा।
ज्हारा ज्हारा रे हौंखड़ूई तेरे लाखे री दोंदे री माल़ा।

मखमला रे थिपू रा भलका, लोभे देई जुटू रे फेरे।
किहां भलेरने झूरिए मूं ता लाल गलोटड़ तेरे।

गेहूं जोंदरे ऊबण जौऊ जोंदरे सौरी।
लोभी गलाबा रा डोल्ह्, झूरी सा बोदी री तौरी।

खा दपौहरी खाऊ औधला सीडू।
झूरी सा बोला बाल्हा री चाकरी लोभी जोता रा चीड़ू।

(शेष पृष्ठ 52 पर)

आलेख

शरद-पूर्णिमा एवं महारास के रंग-पर्व

◆ अमरदेव आंगिरस

महारास के रंगों में रंगी शरद-पूर्णिमा गोकुल एवं मथुरा- वृंदावन ही नहीं, समस्त आर्यावर्त में पर्व के रूप में अविस्मरणीय कृष्ण-गोपियों के मधुर प्रेम के रूप में स्मरण की जाती है। शरद ऋतु को ऋतुओं में श्रेष्ठ माना गया है। तभी तो ऋषि कामना करते थे- "जीवेय शरदः शतम्।" हे ईश्वर, हमें सौ शरद् ऋतुएं जीने का वरदान दो। हम जीवन भर सक्रिय रहें। 'शरद्' एक सुहानी ऋतु! न अधिक शीत न अधिक ताप।

आश्विन पूर्णिमा को भारतीय परंपरा में 'शरद्-पूर्णिमा' कहा जाता है। भारतवर्ष के विभिन्न क्षेत्रों में इसे 'शरद-पूनम', 'कौमूदी पूर्णिमा', 'नवान्न-पूर्णिमा', कोजागरी पूर्णिमा', 'माला-पूर्णिमा', 'लौक्की पूजा', 'कुमार-पूर्णिमा' एवं हिमालयी क्षेत्रों में 'माल-पूर्णिमा' आदि नामों से जाना जाता है। वस्तुतः आश्विन-कार्तिक में पड़ने वाली शरद पूर्णिमा शरद का स्वागत-पर्व तो है ही, साथ ही नई फसलों को घर लाने का उल्लास-पर्व भी है। खरीफ की फसलें, धान, मक्की, ज्वार-बाजरा, कद्दू, तोरी, तिलहन, दालें आदि किसान को संपन्नता प्रदान करती हैं।

हिमालयी क्षेत्रों में शरद का स्वागत आश्विन संक्रांति से प्रारंभ हो जाता है, इसके साथ लोक देवताओं के मंदिरों-देवरों के कपाट खुल जाते हैं और पूजा-अर्चना प्रारंभ हो जाती है। सावन-भादों जिसे स्थानीय भाषा में 'काले महीने' कहा जाता है, इन महीनों की अतिवर्षा, मलीनता, कीट-पतंगों की अधिकता के कारण मानव-मन निरभ्र आकाश एवं स्वच्छ परिवेश की कामना करता है- ऐसा सुहाना परिवेश उसे 'शरद' के आगमन पर ही प्राप्त होता है।

शरद आते ही कुमुद के फूलों से पवन महकने लगती है। बादल अदृश्य हो जाते हैं और दिशाएं मनोहर लगती हैं। सरोवरों, कुओं, बावड़ियों, पोखरों का जल निर्मल हो जाता है। धरा का पंक सूख जाता है। निरभ्र आकाश में चंद्रमा की किरणें धरा को दूधिया रंग में नहला देती हैं और नभ में तारावली मोतियों की तरह दमकने लगती हैं। सुहावनी ऋतु! न अधिक शीत न अधिक ऊष्णता!! और शरद्-पूनम की तो बात ही क्या? कृष्ण एवं गोपियों के महारास की विराट-प्रस्तुति! महारास की यह छटा भारतीय संस्कृति के विभिन्न साहित्यिक पहलुओं में रच-बस गई है। प्रारंभिक किशोरावस्था में असंख्य गोपकन्याओं के साथ योजनों तक विस्तृत यमुना तटों पर बरसों बाद मिलने के निमित्त जो उल्लासपूर्ण महानृत्य एवं 'रास' हुआ, उसे ही पुराणकारों ने 'महारास' का नाम दिया था। कन्हैया एवं गोपियों के बालपन एवं किशोरावस्था का यह स्वाभाविक प्रेम एवं आकर्षण था जो वासनाहीन एवं निश्छल था। बाल कृष्ण की अद्भुत चेष्टाओं एवं पराक्रम का सम्मान तो था ही, साथ में उसके सांवले-सलोने रूप एवं अस्वाभाविक पराक्रम का कारण भी था। इसी निःस्वार्थ एवं निश्छल प्रेम के कारण ही कृष्ण-गोपियों के नृत्य को 'दिव्यता' में बदल दिया। वस्तुतः गोपियां कन्हैया की बालपन की सखियां थीं जो सहस्रों की संख्या में उस रात की यमुना-तट के संपूर्ण क्षेत्र में मिलन को घर से निकली थीं। वे कन्हैया में मित्र भाव ही रख सकी थीं, वे भार्या के रूप में स्वीकार्य भी नहीं हो सकती थीं। कन्हैया का पराक्रम ही ऐसा था कि इतिहास के विस्तृत काल में गोपियों को एक हजार आठ रानियों में अतिरंजना में पुराण-साहित्य में चित्रित कर दिया गया।

कन्हैया और गोपियों के महारास की पृष्ठभूमि में कन्हैया की बाल-क्रीड़ाओं एवं अद्भुत पराक्रम का आधार था। ब्रजमंडल में कान्हा के करतबों की घर-घर चर्चा थी। तीन वर्ष के कान्हा ने छकड़े के नीचे पड़े रोते-रोते दोनों पैरों से छकड़े को उलटकर चूर-चूर कर दिया था। इससे भी पूर्व जब तृणावर्त दैत्य उसे उठाए आकाशमार्ग से ले जा रहा था, तो उसने उसका गला ऐसे पकड़ा कि उसकी मौत हो गई। एक दिन यशोधा ने कान्हा को माखन चोरी के कारण जब ओखली से बांध दिया था तो उसने घिसटते-घिसटते यमलार्जुन वृक्षों के बीच ओखली डालकर हाथ के झटके से उन पुराने वृक्षों को भूमि पर गिरा दिया था। बचपन में ही उसने पलने में आंख मूंद कर पड़े ही बलशाली पूतना को दुग्धपान के बहाने उसके प्राण खींच लिए थे।

किशोरावस्था तक पहुंचते कन्हैया ने वृंदावन में गौएं चराते-चराते गोभक्षक बकासुर को मार गिराया था। इसी प्रकार जब वृंदावन में वत्सासुर और धेनुकासुर का वध करके वृंदावन की रक्षा की थी तो ब्रजवासी दांतों तले उंगली दबाने लगे थे।

इन पराक्रमपूर्ण कार्यों से चकित जब गोप-गोपियां नंद से

कन्हैया के अद्‌भुत व्यक्तित्व की बात करते तो बाबा नंद उत्तर देते- "गोप बंधुओं, गर्गाचार्य ने मुझे गोपनीय भविष्यवाणी बताई है कि यह बालक हर युग में जन्म लेता है। यह दिव्य बालक आर्यावर्त को असुरों और अत्याचारी राजाओं से मुक्त करेगा।"

ब्रजमंडल के आबाल-वृद्ध कन्हैया की शूरवीरता से आश्चर्यचकित थे, किंतु कन्हैया का एक दूसरा पक्ष था- श्यामल-सलोने, नटखट बालस्वरूप का। गोप-गोपियों के साथ यमुना के कूल-कछारों में गौएं चराते, नदी में तैरते, कदंबों पर चढ़ते यमुना में डुबकियां लेते और वानरों की तरह पेड़ों पर चढ़ते-उतरते और फिर बांसुरी बजाते मोहक रूप में नटखट लीलाएं करते।

कंस के अत्याचारी योद्धाओं एवं षड्‌यंत्रों के कारण कन्हैया को ब्रज से दूर भी रहना पड़ता था। इन अभियानों में उन्हें ब्रज में आने का स्मरण भी नहीं रहता था किंतु वृंदावन से बहुत दिनों तक दूर रहकर गोपियों को विरह की अनुभूति होती। कालिय दमन एवं ब्रज को दावानल से रक्षा के पश्चात वे कहीं दूर थे, किंतु गोपियों से उद्धव के माध्यम से मिलने का संदेश देते रहते थे। कान्हा का किशोरावस्था का आकर्षण गोपियों के लिए अविस्मरणीय एवं असह्य था।

ब्रज बालाओं के अटूट प्रेम के वशीभूत एक दिन अचानक कान्हा ब्रज में प्रकट हुए। एक गोपी की सूचना पर असंख्य गोपियां यमुना तट की ओर भागकर आईं। कान्हा का बंशी की तान से समस्त नदी तट मधुर स्वर लहरी से रोमांचित हो उठा। कान्हा ने जब असंख्य गोपियों को अपने पास आते देखा तो प्रेम से बोले, "मैं तुम्हारा स्वागत करता हूं। तुम्हारे निःस्वार्थ प्रेम के कारण ही मैं यहां प्रकट हुआ हूं। सौभाग्यवती सखियो, अब मैं तुम्हारा 'कान्हा', 'कन्हैया' नहीं हूं। अब मैं ब्रजमंडल का 'कृष्ण' हूं। बालपन निकल गया है... देखो अब रात की बेला है... तुम घर वापिस चली जाना। तुम्हारा यहां ठहरना ठीक नहीं। तुम्हारे पुत्र, पति तुम्हें ढूढते होंगे।"

गोपियों के हठ एवं उल्लास के वशीभूत कृष्ण ने थोड़ी देर गोपियों संग नृत्य किया और नृत्य मुद्रा में गोपियों से कहा कि मैं आगामी शरद पूर्णिमा को महारास के लिए यमुना तट पर पदार्पण करूंगा।" नृत्य करते-करते उन्होंने यमुना तट की ओर जाते जैसे जल में प्रवेश किया वैसे ही योगमाया से जैसे अंतर्धान हो गए।

गोपियां ठगी-सी रह गईं। अब आगामी शरद-पूर्णिमा की प्रतीक्षा के सिवा कोई विकल्प न था।

आखिर शरद-पूर्णिमा का दिन आ गया। इस चिर-प्रतीक्षित दिन के लिए पूरे वृंदावन में उल्लास था। योजनों तक फैली यमुना नदी के किनारे गोपियां महारास के लिए एकत्रित हो गई थीं। वे मंगल-गान गा रही थीं। यमुना का पाट इतना विस्तृत तथा विशाल था कि लगता था कि ब्रज की सहस्रों युवतियां सज-धज कर शृंगार करके स्वर्गित दृश्य उपस्थित कर रही थीं।

कृष्ण का रूप भी विलक्षण तथा मनमोहक था। स्वर्णमयी मणियों के बीच जैसे नीलम की शोभा हो, वैसे ही सुंदर गोपियों के बीच पीतांबरधारी, मोर मुकुटधारी, श्याम सलोने कृष्ण सौंदर्य बिखेर रहे थे। कृष्ण के अंग-संग परमानंद प्राप्त करती गोपियां उच्च स्वर में मधुर गान अलाप रही थीं। कृष्ण पल-पल अपनी भाव-भंगिमाएं एवं नृत्य शैली बदल कर गोपियों के हाथ पकड़कर थिरक रहे थे। अपनी माया से कृष्ण ने अनेक रूप धारण कर लिए। हर दो गोपियों के बीच एक कृष्ण ने अनेक रूप धारण कर लिए। हर दो गोपियों के बीच एक कृष्ण की मूर्ति थी। प्रत्येक गोपी यही समझती थी कि जैसे कृष्ण उसी के पास हो। गोपियों के गले में हाथ डाले हुए कृष्ण ने अद्‌भुत रासलीला की। आकाशचारी देवगण फूल बरसाने लगे। गंधर्व अपनी अप्सराओं के साथ गोपी-कृष्ण के रूप-सौंदर्य का यशोगान करने लगे। रात्रि के अंतिम प्रहर में जब गोपियां थककर चूर-चूर हो गईं तों कृष्ण बोले, "सखियो! अब तुम अपने-अपने घर लौट जाओ।"

गोपियां संतुष्ट थीं। सहसा सभी को कृष्ण के एक दिव्य-रूप के दर्शन हुए।

कृष्ण नृत्य छोड़कर एक कदंब के नीचे धरती पर पद्‌मासन में बैठ गए। उन्होंने चतुर्भुज रूप धारण कर लिया। अग्नि के समान अपने तेज से सब दिशाओं में प्रकाश फैला दिया। श्रीवत्स के चिन्ह से शोभित, घनश्याम, स्वर्णमयी कांतियुक्त, रेशमी पीतांबर ओढ़े कानों में मकराकृत कुंडल धारण किए, करधनी, जनेऊ कटक, अंगद, हार, नूपुर, मुद्रा और कौस्तुभ आदि आभूषण धारण किए दिव्य रूप में शोभायमान हो गए। शंख, चक्र, गदा, पद्‌म धारण किए दिव्य रूप कृष्ण साक्षात्‌ विष्णु रूप लग रहे थे।

गोपियों के मुख से निकला, "ईश्वर.... प्रभु....!" गोपियों ने समझ लिया कृष्ण साधारण मानव नहीं, दिव्य पुरुष है... विष्णु रूप... अवतार।

भागवतकार ने महारास का ऐसा काव्यमय एवं शृंगारिक वर्णन किया है कि युगों से 'कृष्ण-गोपियों' का विशुद्ध प्रेम मानवता के लिए दिव्य संदेश बन गया है। यह भारतीय संस्कृति में गहराई से रच-बस गया है।

बिहार के मिथिला क्षेत्र में इसे 'कोजाग्रह' के नाम से पुकारा जाता है। यहां घर के 'ठाकुरद्वारा' में सब देव-मूर्तियों को धोया-मांजा जाता है और आंगन में शुद्ध स्थान पर सजाया जाता है। इसके लिए आंगन को स्वच्छ करके चावल के आटे के घोल से 'अरिपन' अथवा 'अल्पना' करके चित्रित किया जाता है। लक्ष्मी एवं चंद्रमा को पान-मक्खन, खील-बताशे और पायस (खीर) भेंटकर अर्पित की जाती है। इस दिन नए दुल्हा-दुल्हन एक विशेष प्रकार की खेल खेलते हैं जो रातभर चलती है।

संभवतः यह राधा-कृष्ण के प्रेम का द्योतक है। आस-पास के सभी लोगों को पान-मक्खन और मिठाइयां बांटी जाती हैं। दुल्हन के मायके से एक टोकरी भेजी जाती है जिसमें चावल-

मक्खन, नारियल, केले, मेवा, यज्ञोपवीत, लौंग, इलायची, सुपारी, चांदी के सिक्के, दूब आदि मंगल-कामना के साथ भेंट किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त दूध-दही से निर्मित मिठाइयां और मिथिला की चित्राकृतियां दुल्हन के मायके से भेजी जाती हैं।

मिथिला क्षेत्र में एक जनश्रुति प्रचलित है-लछमी और अलछमी दो जुड़वां बहनें थीं। लछमी मीठे पकवान पसंद करती थी और अलछमी मसालेदार पकवान पसंद करती थी। लछमी भाग्यशाली मानी जाती थी जो स्वस्थ और सुंदर बनी रहती थी। अलछमी रुग्ण और दुर्बल रहती थी। अतः इस दिन मसालेदार भोजन घर के दरवाजे के बाहर अलछमी को रख दिया जाता था जिससे अलछमी उसे खाकर दूर चली जाए। लछमी के लिए विभिन्न सुस्वादु पकवान के छोटे-छोटे ढेर बाहर से अंदर की ओर रसोई तक सजाए जाते थे ताकि लक्ष्मी आराम से रातभर अंदर ठहर सके। अर्थात धन-समृद्धि का वरदान वर्षभर तक दे सके। इस दिन पूरे पखवाड़े के लिए महाकाली की भी पूजा की जाती है जो दिवाली की रात्रि को संपन्न होती है।

गुजरात प्रदेश में इसे 'शरद पूनम' पुकारा जाता है। इस रात्रि को विशेष बनाने के लिए रातभर जागरण और 'गरवा नृत्य' का आयोजन किया जाता है। कहीं इसे 'रास-नृत्य' भी कहा जाता है। भागवतपुराण में वर्णित कृष्ण-गोपियों के 'रास-उत्सव' की छटा इस नृत्य में देखी जा सकती है। 'गरवा' का अभिप्राय है- 'गर्भ' अथवा 'कोख'। इसका अन्य अर्थ है दीपक। गरवा नृत्य में दीपक के साथ विभिन्न शैलियों में नृत्य आयोजित होता है। एक दीपक के चारों ओर दीपक जलाकर इसके चारों ओर युवतियां नृत्य करती हैं। महारास की छाया कृष्ण के शृंगारिक गीतों में स्पष्टतः झलकती है।

बंगाल क्षेत्र में इस रात्रि को 'लोक्की पूजा' का विधान है। इस दिन लक्ष्मी को बहुत से पकवानों का भोग और धार्मिक रस्में संपन्न की जाती हैं। यहां यों तो महाकाली की प्रमुखता है किंतु 'लोक्की देवी' को धनलक्ष्मी मानने के कारण इस अलौकिक रात्रि को लक्ष्मीपूजा का विधान है।

ओड़िशा प्रदेश में आश्विन पूर्णिमा 'कुमार पूर्णिमा' के नाम से जानी जाती है। कुमार का अभिप्राय शिवजी के मानसपुत्र कार्तिकेय से है, जिनका जन्म इसी दिन हुआ था। शरद एवं हेमंत का यह उत्सव ओड़िशा के लोकप्रिय पर्वों में से एक है। यहां की कन्याएं सुंदर और वीर युवक कार्तिकेय की पूजा-अर्चना करके अपने लिए अच्छे वर की कामना करती हैं। मान्यता है कि कार्तिकेय सब देवताओं में सुंदर थे। इस दिन लोग सूर्य तथा चंद्र दोनों की पूजा करते हैं। प्रातः ही युवतियां पवित्र नदी में स्नान के बाद नए वस्त्र धारण करती हैं तथा सर्वप्रथम पकवान सूर्य देवता को भेंट करती हैं। वे आपस में 'पुची' खेल खेलती हैं। दक्षिणी ओड़िशा में 'पाशा' खेल बहुत प्रचलित है। रात्रि को गजलक्ष्मी पूजा का आयोजन होत है। केंद्र पाड़ा और धनकनाल में उल्लू की पूजा भी की जाती है क्योंकि यह लक्ष्मी का वाहन है। लक्ष्मी को यहां गजलक्ष्मी कहा जाता है।

हिमाचली क्षेत्रों में भी यह सारी परंपराएं किसी-न-किसी रूप में विद्यमान हैं। शरद् पूर्णिमा को देवालयों के प्रांगणों में लोक नाट्य बरलाज, करियाला, धाज्जा, बांठड़ा, भगत आदि श्रद्धा एवं विश्वास से रातभर नाट्य-गायन के रूप में आयोजित होते हैं। शरद पूर्णिमा को विशेषकर यह 'माला पूर्णिमा' अथवा 'माल पूर्णिमा' के रूप में पर्व के रूप में मनाई जाती है। इस दिन गौ की पूजा करके पशुधन को पुष्प-मालाएं पहनाई जाती हैं।

वस्तुतः शरद्-पूर्णिमा की रात्रि को चंद्रमा और धरती बहुत पास-पास होते हैं। अतः चंद्रमा की किरणें रात्रि को धूप की तरह जगमगा देती हैं। श्वेत-धवल चंद्रकिरणें मानव मन को बहुत उद्वेलित करती हैं और प्रकृति का कण-कण आर्द्र चंद्रकिरणों से जुगनुओं की तरह टिमटिमाने लगता है। यह मानव मन को परमशांति एवं आनंद प्रदान करता है।

ऐसे अलौकिक परिवेश में संस्कृत के महानायक कृष्ण की रासलीला की घटना में शरद् पूर्णिमा को अनेक पर्व-त्योहारों में रूपांतरित किया है- यह स्वाभाविक भी लगता है।

समीप फलोद्यान, दाड़लाघाट, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश, मो. 0 94181 65573

शोध आलेख

मंजूर एहतेशाम के कथा साहित्य में धार्मिकता और पिछड़ापन

◆ कंचन कुमारी

मंजूर एहतेशाम हिन्दी, उर्दू अदब के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। एहतेशाम के व्यवहार एवं व्यक्तित्व में ही साहित्य व संस्कृति की झलक दिखाई देती है। वह एक ऐसे समर्पित लेखक हैं जिनके व्यक्तित्व में मानवतावाद की झलक है। उनका किसी विचारधारा की ओर झुकाव उनके मानवतावादी दृष्टिकोण के कारण है। इसलिए उनका मार्क्सवाद और गांधीवादी जैसे वैचारिक दृष्टिकोण उनकी विचारधारा रही है। मंजूर एहतेशाम का जन्म भोपाल में 3 अप्रैल 1948 को मध्यवर्गीय मुस्लिम परिवार में हुआ। साहित्य की ओर झुकाव बचपन से ही था। लेखक ने बारह वर्ष की उम्र से लिखना शुरू कर दिया था।

मंजूर एहतेशाम का लेखन मध्यवर्गीय मुस्लिम समाज है। लेखक लेखन को साँस लेना जैसा कहते हैं। लेखन कर्म के विषय में स्वयं मंजूर एहतेशाम कहते हैं कि, "...........हम सब अपने-अपने इतिहास में विराजते हैं, सांझा समय की अलग-अलग अनुभूतियां हमारा प्यार, नफरत या लापरवाही सब के स्त्रोत कहीं अतीत में है, और जीते-जी जो उतना प्रत्यक्ष नहीं होता बहुत महत्वपूर्ण होते हुए भी लेखन कर्म का दायित्व, बिना शोर मचाए इसी को रेखांकित करना होता है।......" अर्थात् एक साथ व्यतीत किए गए समय के सबको अलग-अलग अनुभव होते हैं। इस अनुभव का वर्णन करना लेखन कर्म है। मंजूर एहतेशाम ने अनेक उपन्यासों और कहानियों के साथ नाटक साहित्य भी लिखा। लेकिन नाटक साहित्य उनकी स्वतन्त्र रचना न होकर उनके दोस्त सत्येन के साथ लिया गया है। उपन्यासों में 'कुछ दिन और', 'सूखा बरगद', 'दास्तान-ए-लापता', 'बशारत मंज़िल',' 'पहर ढलते,' 'मदरसा' उपन्यास शामिल हैं। कहानियों में दो कहानी संग्रह लिखे गए हैं : 'तमाशा' तथा अन्य कहानियां और 'तसबीह'। नाटक साहित्य जिसके सह लेखक सत्येन हैं, वह हैं 'एक था बादशाह' और 'गौतम'।

धर्म समाज का अनिवार्य तत्त्व है। व्यक्ति अपने आन्तरिक और बाह्य व्यक्तित्व के विकास के लिए जिसे धारण करता है, वहीं धर्म कहलाता है। जीव, आत्मा और परमात्मा धर्म में स्वतः ही समाहित हो जाते हैं। इस प्रकार धर्म इस लोक और उस लोक से जुड़ जाता है। व्यक्ति आत्मा की शान्ति और ईश्वर प्राप्ति के लिए जो रीति नीतियां अपनाता है, वे धार्मिक रीतियाँ कहलाती हैं परन्तु कई बार व्यक्ति अज्ञानता, अंधविश्वास, स्वार्थ तथा संकीर्ण विचारों के वशीभूत होकर अनेक उन रीति-नीतियों को भी धर्म के नाम पर अपना लेता है, जिनका कि धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता है। वह रीति-नीतियाँ धार्मिक रूढ़ियाँ कहलाती हैं और धर्म के स्वरूप को खण्डित करती है। धर्म के नाम पर प्रचलित ऐसी ही अनेक रूढ़ियों का चित्रण 'मंजूर एहतेशाम' ने अपने कथा साहित्य में किया है।

लगभग सभी समाजों में धार्मिक रूढ़ियों एवं पिछड़ेपन को महत्त्व दिया जाता है। भारतीय मुस्लिम समाज तो रूढ़ियों से जकड़ा हुआ है। हर तरफ रूढ़ियों का जाल सा बिछा है। हर कार्य को करते समय धर्म की दुहाई दी जाती है। धार्मिक बन्धनों के अनुसार ही निर्णय लिया जाता है। इन सभी बातों का वर्णन मंजूर एहतेशाम ने अपने कथा साहित्य में किया है।

'सूखा बरगद' उपन्यास में लेखक ने मुस्लिम समाज की धार्मिक रूढ़ियों और उनके पिछड़ेपन का वर्णन किया है। रशीदा और सुहेल धार्मिक शिक्षा लेने के लिए फफू के घर जाते थे। फफू धार्मिक बातों को लेकर खासी पाबन्द थी। वह अपने घर में बने मदरसा में बच्चों को सिखाती थी, "......... बिस्मिल्लाह पढ़ खाने से पहले.......... क्यों यह सिर का दोपट्टा कहाँ है तेरा, बेशर्म, शैतान नंगे सिरपर धप्प लगाता है........।" इस प्रकार फफू के माध्यम से यह बात स्पष्ट होती है कि मुस्लिम समाज धार्मिक रूढ़ियों से जकड़ा हुआ है। खाने से पहले ईश्वर का नाम पढ़ना, सिर पर हमेशा दुपट्टा होना, नंगे सिर रखने से ईश्वर सिर पर मारता है आदि धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। इन्हीं परम्परागत बातों को फफू संस्कार सोचकर सिखाती है। इस्लाम में तस्वीरें खिंचना गुनाह माना जाता है, फफू इस विषय में बच्चों को समझाती हुई कहती है, "......... जो मरदूद तस्वीरें बनाएगा, उसे मियामत के दिन उन तस्वीरों में जान डालना पड़ेगी और खुदा के

अलावा क्या कोई किसी मुर्दा शैतान में जान डाल सकता है? यह सब गुनहगार हैं, चाहे तस्वीर बनाएँ या और इनका घर जहन्नुम है।" अभिप्राय यह है कि जो तस्वीर बनाता या खिंचवाता है महाप्रलय के दिन उसे उन तस्वीरों में जान डालकर जिंदा करना पड़ता है यह कार्य केवल ईश्वर का है। व्यक्ति ऐसा कार्य कैसे कर सकता है, अगर व्यक्ति ईश्वर का कार्य करता है तो वह गुनहगार होता है। इस प्रकार फफू उन्हें धार्मिक शिक्षा देती थी।

सुहेल फफू से सवाल करता है कि उनके मदरसे में अज़ान (नमाज़ के समय की सूचना जो मस्जिद की छत या दूसरी ऊँची जगह पर खड़े होकर दी जाती है।) क्यों नहीं दी जाती है। फफू उसे बताती है कि उनके मदरसे में कोई नमाज़ पढ़ने वाला नहीं है। सुहेल जब फफू को नमाज़ पढ़ने के लिए कहता है तो फफू कहती है, "नमाज़ पढ़ने वाला जिसे इमान कहते है। कोई औरत नहीं हो सकती," सुहेल के क्यों के जवाब में फफू उसे समझाती है कि, "क्योंकि अल्लाह और उसके रसूल ने मना किया है, वैसे आमतौर पर मज़हब में औरतों को मस्जिद में जाने से भी मना किया जाता है" इस प्रकार कहा जा सकता है कि धर्म में स्त्रियों को लेकर भी अनेक रूढ़ियाँ प्रचलित हैं, स्त्रियों का नमाज़ न पढ़ना, मस्जिद में न जाना जैसी धार्मिक रूढ़ियाँ मुस्लिम समाज के पिछड़ेपन को दर्शाती है।

होली और रमज़ान का एक ही दिन आने पर वह रंग-पंचमी और अलविदा का जुमा (शुक्रवार) एक ही दिन पर आ गए। इसका परिणाम हुआ कि शहर में हिन्दू-मुस्लिम दगा हो गया है। रशीदा इस दंगे का कारण बताती हुई कहती है, "जिसकी खाल पर होली का रंग लग जाएगा, वह जहन्नुम में जलेगा?" तात्पर्य यह है कि इस्लाम धर्म के अनुसार रंगों का शरीर पर लगना सही नहीं है। रंग-पंचमी के दिन किसी हिन्दू ने रंग किसी मुस्लिम पर लगा दिया और दंगे की शुरुआत हुई इस प्रकार रशीदा के माध्यम से इन छोटी-छोटी धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया है जो कभी-कभी झगड़े का कारण भी बनती है। सुहेल और रशीदा अपनी अम्मी के मायके जाने पर अपने अब्बू वहीद खान के साथ घर में रहते हैं। सुहेल उस समय आठवीं कक्षा में पढ़ रहा था। उसे किसे ने उसके अब्बू के बारे में बताया था कि उसके अब्बू ने सुअर खाया है। वह अपने अब्बू से इस विषय में बात करता है। सुहेल को अपने अब्बू से यह उत्तर मिला कि उन्होंने सुअर खाया है। इस पर सुहेल अपने अब्बू से कहता है, "सुअर तो खाना हराम है। कैसा ही सुअर हो, हम उसे कैसे खा सकते है," इस प्रकार सुहेल के माध्यम से धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन करते हुए धार्मिकता का छोटे से बच्चे पर प्रभाव बताया गया है। सुहेल जिसकी उम्र बारह से तेरह वर्ष के लगभग है, जानता है कि धर्म के अनुसार सुअर खाना गलत बात है और अपने अब्बू को गलत समझता है।

वहीद खान अपने कुछ हिन्दू दोस्तों के साथ होटल में खाना खाने गए थे। उसमें सुअर का माँस भी था। वहीद खान ने उसे खाने से मना कर दिया कि उन्हें सुअर का माँस खाना अच्छा नहीं लगता। इस पर उनके एक दोस्त ने कहा, "अरे मियाँ साफ-साफ क्यों नहीं कहते कि हलाल-हराम का मामला है। ईमान खतरे में पड़ जाएगा।" अभिप्रायः यह है कि सुअर का मीट खाना इस्लाम धर्म में हराम है। हलाल का अर्थ है वह पशु जिसका माँस खाना इस्लाम में निषिद्ध माना गया है। इस प्रकार धर्म की रूढ़िवादिता का वर्णन वहीद खान के दोस्त के द्वारा किया गया है।

वहीद खान वकील होता है। वह अपने पेशे को समाज द्वारा गलत कहे जाने पर उनकी धार्मिक रूढ़ियों या रूढ़िवादी सोच का वर्णन करता हुआ अपने बेटे सुहेल को समझाता है कि, "कहा जाता है ना, कि वकीलों की कमाई हराम की होती है। सच को झूठ और झूठ को सच साबित करना ही एक वकील का सबसे बड़ा हुनर समझा जाता है। खानदान के बुजुर्गों का यह खयाल था कि वकील ईमानदारी से कुछ कर ही नहीं सकता। कमाने के लिए उसे वह हरकतें करनी ही होंगी जो मजहब की मज़र में हराम है।" इस प्रकार वहीद खान अपने पेशे के माध्यम से मुस्लिम समाज के लोगों की सोच और धार्मिक रूढ़ियों में जकड़े लोगों के विचार को व्यक्त करता है।

सुहेल के जीवन में गीता नामक लड़की से प्यार और उसका कहीं दूसरी जगह विवाह करना उसे, दुःखी निराश और धार्मिक रूढ़िवादिता से जकड़ा व्यक्ति बना देता है। वह पाबन्दी से नमाज़ पढ़ने लगता है और अपनी डायरी में लिखता है, "मुसलमान होने के नाते बहरहाल, कुछ सैकड़ों की बरकत से साल दोजख का कुन्दा बनने के बाद, कलमा शरीफ की बरकत से अल्लाह मियाँ को जन्नत की कुंजी तो देनी ही पड़ेगी।........" अभिप्राय यह है कि सुहेल पहले मुसलमान धर्म की बुराइयाँ करता था लेकिन अब उसे स्वर्ग और नरक का डर सताने लगा है, जो कि धार्मिक पुस्तकों में बताया जाता है। उसे बतलाता है कि कलमा शरीफ (वाक्य, जो इस्लाम धर्म का मूलमंत्र है) पढ़ लेने से पहले के किए पापों को धो लेगा, और उसे स्वर्ग मिल जाएगा।

'सूखा बरगद' उपन्यास में मुस्लिम समाज की पिछड़ी हुई सोच का वर्णन किया गया है। रशीदा अमेरिका से आए परवेज़ और रेहाना से मिलने अपनी फफू के घर जाती हैं फफू उसके घर न आने की शिकायत करती है। परवेज़ रशीदा का साथ देता है। वह कहता है आदमी आपस में कम मिले-जुले पर दिल में प्यार होना चाहिए। परवेज़ कहता है, "यह क्या मिलना कि दिल में तो है, नहीं जबरन हाजिरी दे रहे है।" इस बात के जवाब में अपने दामाद परवेज़ को कहती है, "यह अमरीकी ख्यालात है मियाँ हम लोग अभी काफी पिछड़े हुए हैं, इसलिए इन्हें यहां लागू नहीं किया जा सकता।" स्पष्ट है कि मुस्लिम समाज की मानसिकता में पिछड़ापन है जिसे फफू स्वयं बयान करती है।

'दास्तान-ए-लापता' उपन्यास में धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। ज़मीर अहमद खान दुल्हन चची द्वारा मुस्लिम समाज की धार्मिक रूढ़ियों को उजागर किया गया है। दुल्हन चची ज़मीर अहमद खान से धार्मिक पुस्तक मांगती है। लेकिन उस पुस्तक के विचार उन्हें रूढ़िगत लगते है। उस पुस्तक में व्यक्त रूढ़िगत विचारों को बताती हुई दुल्हन चची कहती है, "अरे इस किताब में अल्लाह मियाँ से ज्यादा ज़िक्र तो शैतान का है। जो कुछ भी बंदा करता है, शैतान के बहकावे में आकर करता है। हर अमल की ज़िम्मेदारी शैतान के सिर है।" स्पष्ट है कि व्यक्तियों की गलतियों का जिम्मेदार शैतान को ठहराया जाता हैं दुल्हन चची समाज की इन धार्मिक रूढ़ियों का खण्डन करती है। दुल्हन चची हज करने जाती है, आकर हज के सफर और वहां पहुँच हज में लोगों की भीड़ और लोगों की श्रद्धा का वर्णन करती हुई कहती है, "वह धक्का-मुक्की और कुश्तम-पछाड़ा कि अल्लाह की पनाह और सब जान दिए दे रहे हैं, संगे-असवद का बोसा लेने के लिए।" दुल्हन चची धार्मिक रूढ़ियों को बताती हुई कहती है कि हज करने वाले लोग काबा में संगे-असवद (काबे में रखा हुआ वह काला पत्थर जिसे मुसलमान पवित्र समझते हैं और हज करते समय चुमते है।) को चुम रहे थे। लोग उसे अपनी धार्मिक आस्था और परम्परा का निर्वहन करने के लिए चुम रहे थे। दुल्हन चची इस धार्मिक रूढ़ि का खण्डन करती हुई कहती है, "एक बड़ा-सा काला पत्थर बोसा देने वाले दीवानों के थूक में लथपथ,वहाँ जड़ा है। लोग उसे चूम रहे है, चाट रहे हैं, बस नहीं चल रहा, नहीं तो शायद चबा भी डालें। हमारे मुंह ये यूँ एक बालिश्त दूर रह गया था और हम उसे चूमने ही जा रहे थे कि उस चूक के देखकर ऐसी घिन आई कि हमसे अपना मुँह अलग कर लिया।" इस प्रकार दुल्हन चची के द्वारा धार्मिक रूढ़ियों का खण्डन किया गया है।

ज़मीर अहमद खान बचपन में अपने दोस्तों के साथ रविवार के दिन कब्रिस्तान में जाते थे और इमली के पौधों के बीच गुलेल से गिरगिट मारते थे। मारने के पश्चात उनकी पूँछ काटकर मुसलमान होने का फर्ज पूरा कर लेते। इस बात के पीछे मुस्लिम समाज की धार्मिक रूढ़ि का वर्णन करते हुए ज़मीर अहमद खान कहता है, "बिना पूछ-ताछे मस्जिद में सिपारा पढ़ाने वाले हाफिज़ साहब और कुछ अन्य बुजुर्गनुमा बूढ़ों का कहा मान लिया गया था कि गिरगिट क्योंकि रंग बदलता है, इसलिए काफिर है। उसे मारने के बाद दुम काटकर मुसलमान करने का बहुत सवाब मिलता है।" तात्पर्य यह है कि सिपारा (कुरान के तीस विभागों में से कोई एक अध्याय) पढ़ाने वाले हाफिज़ साहब और कुछ अन्य बुजुर्गों का मान लिया जाता था कि गिरगिट रंग बदलता है इसलिए काफिर है (ईश्वर को न मानने वाला, मुसलमानों के अनुसार उनसे भिन्न धर्म मानने वाला) इसलिए उसे मार देना चाहिए। फिर उसकी पूँछ काटने से मुसलमानों को सवाद (शुभ कर्म का फल) मिलता है। अतः गिरगिट को मारकर उसके पूँछ काटना मुसलमानों में शुभ कर्म माना जाता है। इस प्रकार के परम्परागत धार्मिक रूढ़िगत विचारों को बच्चों के मन में डाला जाता है। जबकि गिरगिट रंग इसलिए बदलता है, ताकि आसपास के वातावरण में घुल-मिल जाए। शरीर की चमड़ी को इस तरह से बना देता है, उसने अलग-अलग तरह के रंग दिखने लगते हैं। गर्मी से बचने के लिए रंग बदलता है।

'बशारत-मंजिल' उपन्यास में अली खान की पत्नी माहरू ज़मानी का भाई आरिफ चित्रकला का शौक रखता था। माहरू ज़मानी के पिता काजी कमालउद्दीन कहते थे कि वह पहले वह धार्मिक शिक्षा ग्रहण करें और कुरान कंठस्थ करें। लेकिन आरिफ के ड्राईंग और पेटिंग के शौक के कारण वह अपने पिता की दोनों इच्छाएँ पूरी न कर सकें। वह ड्राईंग में लैंडस्केप (धरातल) का चित्र बनाता था, परन्तु धीरे-धीरे उसने इंसानों के आकार वह चित्र बनाने शुरू कर दिए, तो काजी कमालउद्दीन ने एतराज़ करते हुए कहा, "मुसलमानों के लिए मूर्तिपूजा ही नही, मूर्ति बनाना भी हराम था, और इंसानों के आकार कागज-कैन्वस पर बनाना या उनमें रंग भरना भी।" स्पष्ट है कि काज़ी कमालउद्दीन धार्मिक रूढ़ियों के संवाहक है। उनके धर्म के अनुसार मूर्तिपूजा और मूर्ति बनाना अनुचित है और मानव की आकृति बनाना और उसमें रंग भरना भी इस्लाम धर्म में निषेध है।

मंजूर एहतेशाम ने अपने उपन्यास 'बशारत मंजिल' में धार्मिक रूढ़ियों के साथ मुस्लिम समाज के पिछड़ेपन का भी वर्णन किया है। संजीदा अली का परिवार 1857 की घटना के बाद बचकर दिल्ली से भोपाल आ गए थे। भोपाल में जहाँ आरा बेगम और संजीदा अली कबीर को दिल्ली छोड़ने उनके साथ आते हैं। संजीदा अली के मामा मिर्ज़ा जमाल बेग की मृत्यु के पश्चात उनकी नानी अमतुल कबीर दिल्ली आ गई थी। जहाँ आरा बेगम और संजीदा अमतुल कबीर को दिल्ली छोड़ने उनके साथ आते हैं। संजीदा सोज और उनकी माँ जहाँ आरा बेगम अमतुल कबीर के कहने पर पड़ोस के मौलवी नज़ीर अहमद से मिलने जाते हैं मौलवी साहब संजीदा अली के अलीगढ़ जाकर साईंस पढ़ने की बात से

खुश होते हैं। मुस्लिम समाज के पिछड़ेपन पर अफसोस जताते हुए कहते हैं, “साईंस ज़माने का तकाज़ा और नए सोच की हासिल है। क्या करें लोग नहीं समझते कि मुसलमान दरअसल कितने पिछड़े हुए हैं और उन्हें साईंस की तालीम की कितनी जरूरत है।” इससे मौलवी साहब के व्यापक दृष्टिकोण और उनकी प्रगतिशील सोच का पता चलता है। वह मुसलमानों के पिछड़ेपन का कारण ज़माने के साथ न चलने और सोच में बदलाव न लाने को मानते हैं वह मुसलमानों की पिछड़ी हुई सोच के बारे में वर्णन करते हुए कहते हैं, “आम तौर पर तो लोग अलीगढ़ में रहकर भी अरबी और फारसी ही पढ़ना चाहते हैं। मस्ज़िदें है, मदरसे हैं, मौलाना और मौलवी हैं-भई पढ़ तो रहे हो सदियों से अरबी और फारसी। दुनिया कभी किसी जुबान की गुलाम नहीं रही क्योंकि जबान महज़ कहने का वसीला है और ज्यादा अहम वह है जो कहा जाना है। साइंस अरबी, फारसी या अंग्रेजी की गुलाम नहीं क्योंकि उसकी अपनी, इन जबानों से जुदा एक जबान है।” स्पष्ट है कि मौलवी साहब इस पिछड़ेपन का कारण भी बताते हैं, उन्हें लगता है अलीगढ़ जैसे शैक्षणिक संस्थान में जाकर भाषा से इतर दूसरे विषयों का ज्ञान भी लेना चाहिए। मुस्लिम समुदाय द्वारा अरबी और फारसी सीख लेने से ही उनका समाज में विकास और उनका समाज के विकास में योगदान नहीं हो सकता है।

मौलवी साहब मुसलमानों के पिछड़ेपन का कारण उनका नई सोच को न अपनाना और पुराने ढर्रों को जीना मानते थे। संज़ीदा की शायरी पर भी वह प्रश्नचिह्न लगाते हैं। वह संज़ीदा से कहते हैं कि शायरी में हमेशा दुनिया नज़र में रहनी चाहिए अर्थात उसमें दुनिया में चल रहे नए ढंग और नई सोच को जगह मिलनी चाहिए। वह मुस्लिम समाज के पुराने ढ़र्रो पर जीने पर कहते हैं, “इश्के आशिकी कब तलक। इसी हरजाईनामे ने मुसलमानों को ख्वार किया है।” स्पष्ट है कि मुसलमानों के इस तरह पुराने परम्पराओं में भटके रहने से वह ख्वार (तबाह) हुए हैं। यही पुरानापन उनके पिछड़ेपन का कारण है। गालिब भी गज़लकार थे परन्तु शायरी में हमेशा वह दुनिया को अपनी नज़रों के सामने रखते थे। मौलवी बताते हैं कि सैयद अहमद खान ने जब आईन-ए-अकबरी के सही करके छपवाने का इरादा किया तो गालिब से उसमें अपनी राय शामिल करने की इच्छा व्यक्त की। सैयद अहमद खान की फरमाइश तो पूरी कर दी गई लेकिन उन्होंने सैयद अहमद खान की मेहनत को बेमतलब कहा था। उन्होंने कहा था, ”एक दीद-ए-बीना ने कुहगी (पुरानेपन) को नया लिबास पहनाया है। आंखे खोलो और देखो कि इस दैर-ए-कुहम (पुरानी दुनिया) में सपहिबाने इंग्लिस्तान ने कैसे-कैसे आईन (कानून) वज़अ किए बनाए हैं।” स्पष्ट है कि गालिब यह कहना चाहते थे कि देखा-देखी में पुरानेपन को बस नया लिबास पहनाया जा रहा है। अन्दर सामग्री वही है, इतिहास वही है। वह उस पुरानी दुनिया को देखने की बात करते हैं, उसे किताबों में स्पष्ट करने की बात कर रहे हैं, जिसमें पुरानेपन को लिए हुए नएपन का समावेश है। वह सैयद अहमद खान से कहते हैं, “ऐ मेरे बेदार मगज अकिल अगर किसी को मोतियों का खजाना दिखाई दे तो वह खलियान में से एक बाली क्यों चुने?” कहने का अभिप्राय है अगर किसी का नयेपन में वह सब चीज़ मिले जो वह चाहता है वह भी अधिक मात्रा में तो वह पुरानेपन की तरफ जाएं ही क्यों, जिसमें उसे अपनी चाहत के अनुसार बहुत कम मिल रहा हो। अर्थात् वह उस पुस्तक को क्यों पढ़े जिसमें वही सामग्री है जो वह पहले भी पढ़ चुका है, दुनिया ऐसा कुछ पढ़ने की ख्वाहिश रखती है, जिसमें नयापन हो, रोमांस हो, तार्किकता हो। इस प्रकार मौलवी मुसलमानों के पिछड़ेपन की व्याख्या करते हुए उसके कारणों को भी गालिब के उदाहरण से स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

बंदा अली खान अपनी माँ जहांआरा बेगम की याद में एक शानदार मस्जिद बनाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने एक मुस्लिम अंग्रेज़ आर्किटेक्ट से काम करवाया जिसने तुर्की में एक बड़ी और खूबसूरत मस्ज़िद बनवाई थी। रियासत के अधिकारी के हाथों से मस्ज़िद की आधारशिला रखी। बन्दा अली के इस कार्य को लेकर उसके अलीगढ़ आन्दोलन के साथियों ने उससे कहा कि उसे मस्ज़िद के बजाए स्कूल बनावाना चाहिए था। मुसलमानों को शिक्षा की जरूरत बताते हुए उन्होंने कहा था, “बुनियादी जरूरत मुसलमानों में आर्थिक स्थिति सुधारने की थी। इबादत तो इंसान अकेला भी कर सकता है जिसकी संभावना बड़ी से बड़ी मज़बूरी में भी, मस्जिदों और मुल्लाओं की बड़ी संख्या देखते हुए नहीं थी। नई तालीम घर बैठे नहीं हासिल की जा सकती। शिक्षा के स्तर पर मुसलमान मुल्क में बाकी लोगों से बहुत पिछड़े हुए थे।” स्पष्ट है कि मुसलमान देश में शिक्षा में बहुत पिछड़े हुए थे। इसलिए मुसलमानों को मस्जिद से ज्यादा स्कूल की आवश्यकता है। मस्जिद के निर्माण के स्थान पर स्कूल का निर्माण मुसलमानों के लिए आवश्यक है।

सुहासिनी संजीदा से बात करती है कि उसे कोई फर्क नहीं पड़ता अगर वह किसी कान्वेन्ट स्कूल में नन बनकर भी खुश है। वह मुसलमान समाज में स्त्रियों की स्थिति पर बात करते हैं। मुसलमान के पिछड़ापन वह स्त्रियों की स्थिति से स्पष्ट करती हुई कहती है, “मुसलमानों ने तो खैर, औरत के लिए इस तरह की कोई गुंजाइश ही नहीं छोड़ी है।” तात्पर्य है कि मुस्लिम समाज में औरत बिना शादी किए नहीं रह सकती है। उसका विवाह करना आवश्यक है। स्त्रियों की यह स्थिति मुसलमानों के पिछड़ेपन को दर्शाती है।

‘मदरसा’ उपन्यास में साबिर और उसकी मौसी के बेटे आमिर के बीच ‘दलवई’ नामक व्यक्ति को लेकर बहस होती है। आमिर दलवई को मुसलमानों का दुश्मन समझता है, क्योंकि

अब्दुल हमीद दलवई ने अपने किसी लेख या भाषण में कहता था कि, "भारतीय मुसलमानों को पाकिस्तानपरस्त, रूढ़िवादी पिछड़े और इनसानियत ही नहीं, खुद अपना भी दुश्मन कहा गया था, और अपने अनुभव से बताया गया था कि वह कितने झूठे और दोगले थे।" इस प्रकार मुसलमानों के संदर्भ में कही गई सच्ची बात आमिर को अच्छी नहीं लगती है। साबिर आमिर को दलवई की बताई बातों पर विचार करता हुआ कहता है कि, "उसका जीवन अनुभव और उसके अनुरूप दृष्टिकोण था, और वह मुसलमानों की ज़िन्दगी की दौड़ में बहुत पिछड़ा हुआ, और ऐसा होने के लिए गलत बहाने तलाशता बयान करता पाया था।" स्पष्ट है कि अब्दुल हमीद दलवई मुसलमानों की रूढ़िवादी विचारधारा और पिछड़ेपन का सच सामने लाता है, परन्तु लोग उसे स्वीकार करने को तैयार नहीं है। उन्हें दलवई मुसलमानों के दुश्मन लगता था।

साबिर मरियम से विवाह करके भोपाल चला आता है। कुछ वर्ष भोपाल रहने के बाद घर के ज़मीन जायदाद के मामले में वापिस बम्बई चला जाता है। बम्बई वापिस जाकर उसने वहां हुए बदलाव को देखा। गांव बदल चुके थे। गांव में फैक्टरियों के अलावा, बहुमालयी आवासीय कॉम्पलेक्स बन गए थे। फिर वह मुस्लिम समाज के पिछड़ेपन का वर्णन करता हुआ कहता है, "कुछ नहीं बदला था तो वह थी, मुसलमानों की पुरानी बस्ती, जहाँ कच्ची दीवारें और कवेलू खपरैल, जस के तस थे।" अतः कहा जा सकता है कि मुसलमान सोच और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।

साबिर अपने पिता के गांव बरेली जाता है। वहां फफू से पिता के शिक्षा सम्बन्धी विचार जो मुसलमानों को मदरसे में दी जाती थी के खिलाफ थे, उनका उद्देश्य था, "वह एक मदरसा कायम करना चाहता था जिसने दीन को उस तरह दुनिया से जुदा न किया जाए कि वह एक-दूसरे के दुश्मन, या प्रतिद्वन्द्वी नज़र आएं।" स्पष्ट है कि मुसलमानों को दीनी (धार्मिक) मदरसों में जो शिक्षा दी जाती थी इसमें समाज कहीं शामिल नहीं होता था। अतः मुसलमानों के पिछड़ने का कारण शिक्षा का समाज से न जुड़ना भी है। वकील साहब, मरियम और साबिर आपस में बातचीत कर रहे हैं। वकील टॉलस्टॉय को लेकर बात करता है। वकील की आदत थी कि वह अपनी असफलताओं के लिए कोई बहाना ढूँढ लेता है। इस बात को समझाने के लिए साबिर मुसलमानों की पिछड़ी हुई सोच का उदाहरण देते हुए कहता है, "पत्थर के ऊँचे बड़े सतूनों को शैतान का नाम देकर उस पर पत्थर की कंकरियाँ बरसाकर, हज करने वाले खुद सारी जिन्दगी बेहोशो-हवास किए गुनाहों का जिम्मेदार ठहराकर और खुद को बेगुनाह समझकर सन्तुष्ट हो जाते हैं।" जिस प्रकार मुसलमान हज में जाकर शैतान को पत्थर मारते है। अपने किए सारे गुनाहों का जिम्मेदार शैतान को ठहराते हैं और खुद को गुनाह करने पर भी बेगुनाह समझते हैं। इस प्रकार साबिर ने मुस्लिम समाज की पिछड़ी मानसिकता का वर्णन किया है।

साबिर टेकरी पर मदरसा खोलना चाहता है। लेकिन टेकरी की ज़मीन के मालिक पाँच लाख रूपये मांग रहे थे। साबिर के पास इतने पैसे नहीं थे। पैसों की मोहल्लत बढ़ाने के लिए साबिर नेताओं के पास जाता है। पहले इमरान के पास फिर गनी मियाँ के पास जाता है। वह इस उम्मीद से जाता है कि ताकि टेकरी के ज़मीन के मालिक से गनी मियाँ बात कर कुछ मोहल्लत और दे दें। टेकरी के आसपास लोग कब्जा कर रहे थे। साबिर के लिए कब्जा करना मुश्किल था, उसके पास पैसे नहीं थे। गनी मियाँ उसे सलाह देते हैं, "मदरसे के बारे में सोचकर रह जाने के बजाय, अच्छा होता अगर आप टेकरी पर कोई मकबरा-मज़ार बनाकर, उस पर हर जुम्मेरात को अगरबत्ती लोबान सुगलते रहते। फिर देखते कोई आपको वहां से कैसे बेदखल करता।" स्पष्ट है कि गनी मियाँ का यह व्यंग्य मुस्लिम समाज के प्रति है, जो धार्मिक रूढ़ियों के कारण पिछड़े हुए हैं। धर्म के नाम पर लोग वहां कब्जा छोड़ सकते हैं, परन्तु प्रगति के नाम पर सभी रुकावट खड़ी करने को तैयार बैठे हैं। गनी मियाँ साबिर को धर्म की आड़ लेकर टेकरी की ज़मीन पर कब्जा करने को कह रहे थे।

'बशीर खाँ' मलिक मॉडर्न केनिंग आर्ट' कहानी के माध्यम से मुसलमानों की धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। बशीर खाँ को जब यह मालूम हो गया कि इस्लाम धर्म में, "पुल-सरात से गुजरने और जन्नत तक पहुँचने के लिए सबसे बड़ी मदद वह जानवर होगा जिसे वह हर बकरा ईद पर राहे खुदा में कुरबान करेंगे।" स्पष्ट है कि बकरीद पर दी जाने वाली बलि स्वर्ग जाने के लिए व्यक्ति को सहायक होती है, इस तरह की धार्मिक रूढ़ि के नाम पर जानवरों की हत्या की जाती है।

'रिहाई' कहानी के माध्यम से भी धार्मिक रूढ़ि का वर्णन लेखक ने किया हैं कथावाचक की माँ धार्मिक विचारों वाली महिला थी अतः उनके विचारों में धार्मिक रूढ़ियाँ मौजूद थी। उसकी माँ खुशी के साथ विजयी मुस्कान को लिए हुए घर के बच्चों को बता रही थी कि, "बेसमझ, इतने छोटे मुर्गी के बच्चों को भी एहसास है कि अज़ान किबला रुख हो के देना चाहिए। अभी थोड़ी देर पहले अज़ान दे रहा था कि मुँह किबले की तरफ करके," अभिप्राय यह है कि वह धार्मिक रूढ़ियों से इतनी जकड़ी हुई है कि वह सोचती है कि अगर धार्मिक ग्रंथों में यह लिखा है कि अज़ान किबला (पश्चिमी दिशा) में होकर दी जाती है और मुर्गे का पश्चिमी दिशा में बाँग लगाना धर्म का प्रभाव है समाज धार्मिक रूढ़ियों में इतना जकड़ा है कि धर्म के आगे उनकी बुद्धि तार्किक दृष्टि से सोचना बंद कर देती है।

'कड़ी' कहानी में विद्यार्थी नेता सान्याल और उसके साथ उनकी केंटीन में आए एम. एफ. खान की परिवार की कहानी सुनते हैं। खान अपने भाई के माध्यम से इस्लाम धर्म की धार्मिक

रूढ़ि का वर्णन करते हुए कहता है, "हद यह कि उसने जीवन में कभी शेव नहीं बनाया और बिलकुल उस तरह दाढ़ी रखी जैसा मज़हब में बताया गया है।" कहा जा सकता है कि मुस्लिम समाज में धर्म की बातों को महत्व दिया जाता है चाहे वह बात गलत ही क्यों न हो। समाज धर्म को तार्किक दृष्टि से देखने का प्रयास ही नहीं करते हैं।

'तसबीह' कहानी में सजिदा रमजान में दी जाने वाली जकात (गरीबों में बांटे जाने वाले धन) के लिए घर में पैसा न होने पर अपने सोने की बाली बेच देती है। उससे मिले पैसों से आसपास के घरों से आए लोगों को जकात दी जाती है। साजिदा के पति के मना करने के बावजूद भी साजिदा जकात के पैसों का इन्तजाम कर लेती है। जब साजिदा के पति को जकात देने के विषय में जानकारी मिलती है तो वह साजिदा पर गुस्सा करता है। साजिदा कहती है, "देखिए खुदा का हुक्म हम पर फर्ज है।" अभिप्राय यह है कि साजिदा को यह लगता है कि जकात देना ईश्वर का आदेश है, उसका पालन होना ही चाहिए इसके लिए चाहे कुछ भी करना पड़े। यह मुस्लिम वर्ग की रूढ़ियों और उसके पिछड़ेपन को बताता है। साजिदा को अपनी माँ के पास ले जाकर उसका पति धार्मिक रूढ़ियों का खण्डन करते हुए कहता है, "कोई मज़हब आँखें बंद करके कुंए में कूदने को नहीं कहता, कोई नहीं कहता खुद भूखे रहकर दूसरों को भीख दो।" इस तरह साजिदा के पति द्वारा मुस्लिम समाज में व्याप्त रूढ़ियों को खण्डन किया है।

इस तरह कहा जा सकता है कि मंजूर एहतेशाम ने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से मुस्लिम समाज में व्याप्त धार्मिक रूढ़ियों और पिछड़ेपन का वर्णन किया है। धार्मिक रूढ़ियों और पिछड़ेपन का वर्णन करने के साथ उसका खण्डन भी किया गया है। 'सूखा बरगद' उपन्यास में धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन ईश्वर के सम्बन्ध में बनायी गई धारणा, स्त्रियों को लेकर बनाए गए कानून, मज़हब में निषेध की गई बातों पर दंगे फसाद करना, और स्वयं अपने समुदाय की पिछड़ा कहने के सन्दर्भ में वर्णित है। 'दस्तान-ए-लापता' गलत कार्यों का जिम्मेदार शैतान को ठहराया जैसे धार्मिक रूढ़िवादिता का वर्णन है। धार्मिक स्थलों में जाने के लिए होड़ प्रत्येक मुसलमान फर्ज समझता है। 'बशारत मंजिल' उपन्यास में मौलवी के माध्यम से मुस्लिम समाज के लोगों का धार्मिक रूढ़ियों के कारण उनके पिछड़ने का वर्णन किया गया है। 'मदरसा' उपन्यास में धार्मिक रूढ़ि के साथ मुसलमानों के पिछड़ेपन को दर्शाया गया है। धर्म के नाम पर समाज से अपने कार्य निकालने वाले लोगों का भी वर्णन है। 'बशीर खाँ'मालिक मॉर्डन केनिंग आर्ट','रिहाई','कड़ी' और 'तसबीह' कहानियों के माध्यम से धार्मिक रूढ़ियों का वर्णन किया गया है। मुस्लिम समाज के पिछड़ेपन का कारण उनका दीनी शिक्षा लेना है। दुनिया से जुड़ने वाली शिक्षा को दरकिनार कर रूढ़ियों पर विश्वास कर मदरसों में दी जाने वाली दीनी शिक्षा को लेना उनकी मानसिकता में रूढ़ियों का आना और उनका पिछड़ेपन का शिकार होना है। मुस्लिम समाज को दुनिया के साथ चलने वाली शिक्षा की आवश्यकता है। तभी वह अपने समुदाय के इतर दूसरे समुदाय को समझ सकते हैं और उन्नति की ओर बढ़ सकते हैं। उनका दीनी तालीम पर केन्द्रित होना उन्हें धार्मिक रूढ़ियों के जाल में उलझाता जाता है। अतः लेखक ने पात्रों के माध्यम से कथा-साहित्य में वर्णित रूढ़ियों का खण्डन कर उन्हें व्यवहारिकता के स्थान पर लाने का प्रयास किया है। धर्म को तार्किक कसौटी पर कसकर उसके विचारों को ग्रहण करना चाहिए।

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल-शिमला 171005 (हि0 प्र0), मो : 94185-28952

संदर्भ

1 अन्यथा (स.) कृष्ण किशोर, अक्तूबर-दिसम्बर 2012, पृ. 44
2 मंजूर एहतेशाम, सूखा बरगद, पृ. 19
3 वही, पृ. 18
4 वही, पृ. 21-22
5 वही, पृ. 44
6 वही, पृ. 55
7 वही, पृ. 55
8 वही, पृ. 66
9 वही, पृ. 178
10 वही, पृ. 205
11 मंजूर एहतेशाम, दास्तान-ए-लापता, पृ. 40
12 वही, पृ. 42
13 वही, पृ. 43
14 वही, पृ. 47
15 मंजूर एहतेशाम, बशहरत मंजिल, पृ. 48
16 वही, पृ. 52
17 वही, पृ. 52
18 वही, पृ. 53
19 वही, पृ. 53
20 वही, पृ. 53
21 वही, पृ. 100
22 वही, पृ. 118
23 वही, पृ. 125
24 वही, पृ. 126
25 वही, पृ. 133
26 वही, पृ. 163
27 मंजूर एहतेशाम, मदरसा, पृ. 235
28 वही, पृ. 270
29 मंजूर एहतेशाम, सम्पूर्ण कहानियाँ ('बशीर खाँ', मालिक मॉडर्न केनिंग आर्ट), पृ. 55
30 वही, रिहाई, पृ. 134
31 वही, कड़ी, पृ. 239
32 वही, तसबीह, पृ. 289, 33 वही, पृ. 289-290

शोध आलेख

वीरेंद्र जैन के उपन्यास 'सबसे बड़ा सिपहिया' में भ्रष्टाचार

◆ मोहिंद्र सिंह

सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य का समाज के बिना जीवन अति दुष्कर है। अनादि काल से ही मनुष्य अपनी उन्नति के लिए संघर्षरत एवं प्रयत्नरत रहा है। इन्हीं संघर्षशील क्रिया- कलापों में उसे अन्य सामाजिक प्राणियों पर निर्भर रहना पड़ता है, क्योंकि एक-दूसरे के सहयोग के बिना मानव जीवन असंभव है। समाज को परिभाषित करते हुए संपूर्णानंद कहते हैं, "सम् अजन्ति जनाः अस्मिन् इति। जिसमें लोग मिलकर एक साथ, एक गति से, एक से चलें, वही समाज है।"[1] समाज को जीवित रहने के लिए आवश्यक बताते हुए राजकुमारी गुगलानी कहती हैं, "जिस प्रकार जीवन एक वस्तु नहीं, बल्कि जीवित रहने की प्रक्रिया है, उसी प्रकार समाज भी एक वस्तु नहीं, अपितु संबंध स्थापित करने की प्रक्रिया है।"[2] अतः कह सकते हैं कि परस्पर सहयोग पर आधारित मानव समूह ही समाज है।

समाज को व्यवस्थित व सुचारू रूप से चलाने के लिए पुलिस की व्यवस्था की जाती है। पुलिस एक ऐसी जनसेवी सरकारी संस्था है, जो देश की आंतरिक सुरक्षा व व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने का कार्य करती है। पुलिस के कर्तव्य सरकार तथा जनता के प्रति निश्चित होते हैं। पुलिस के संबंध में शांति कुमार स्याल का मत है, "पुलिस एक ऐसी जनसेवी सरकारी संस्था है, जिसके सृजन का मूल उद्देश्य, आंतरिक सुरक्षा प्रदान करना, कानून और व्यवस्था का परिमार्जन सुनिश्चित करना और शांतिप्रिय नागरिकों की असामाजिक तत्त्वों तथा ठगी-चोरी, डकैती आदि से रक्षा करना है।"[3] पुलिस द्वारा जनता को सुरक्षा प्रदान की जाती है, जिससे राज्य में भी शांति बनी रहती है।

भ्रष्टाचार को शाब्दिक दृष्टि से व्यक्ति के उस आचरण को कहते हैं, जो सामाजिक रूप से उसके अपेक्षित व्यवहार प्रतिमानों से हटकर है। भ्रष्टाचार को अंग्रेजी भाषा में corruption कहा जाता है जिसकी व्यत्पत्ति लैटिन भाषा के corruption से है, जिसका आशय है तौर-तरीके और नैतिकता में आदर्शों का टूट जाना, घूस आदि लेना। संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर में 'भ्रष्ट' शब्द का अर्थ इस प्रकार दिया गया है, "गिरा हुआ, पतित, जो खराब हो गया हो, दूषित, बदचलन।"[4] आचरण का अर्थ, "आचरणीय आचरित अनुष्ठान, व्यवहार, बर्ताव, चाल चलन, वृत्त, चरित्र, आचार।"[5] भ्रष्टाचार का अर्थ खराब तथा आचरणहीन होता है। भ्रष्टाचार वह कार्य है जो अनुचित ढंग से किया जाता है।

भ्रष्टाचार के संबंध में रामस्वरूप दुबे का विचार है, "किसी मान्य सिद्धांत का उल्लंघन करके जब कोई कार्य किया जाता है, तो भ्रष्टाचार कहा जाता है।"[6] अवैध तरीके से कार्य करना भ्रष्टाचार है। संपूर्णानंद पांडेय का भ्रष्टाचार के संबंध में विचार है, "सामाजिक जीवन में अपने और अपने परिवार के लाभ तथा उन्नति के लिए प्रयत्न करना उचित है किंतु यह लाभ या उन्नति इस प्रकार से प्राप्त करना जिससे दूसरों के प्रयत्नों में अनावश्यक व्यवधान और परेशानी पैदा हो, यही भ्रष्टाचार है।"[7] अनुचित तरीके से अपने और अपने परिवार को लाभ पहुंचाना भ्रष्टाचार है।

आधुनिक समय में भ्रष्टाचार से समाज का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रह गया है, जिसके कारण सरकारी व्यवस्था चरमरा कर रह गई है। देश में शांति सुरक्षा कायम रखने में पुलिस की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। पुलिस अपने इस दायित्व का निर्वाह भी करती है परंतु आज जो अशांति, असुरक्षा और भय का वातावरण बन चुका है, उससे पुलिस की कार्यप्रणाली में कमी का स्पष्ट अहसास होता है। आज पुलिस भ्रष्टाचार में लिप्त हो गई है।

समकालीन दौर की नई पीढ़ी के उपन्यासकारों में वीरेंद्र जैन का नाम उल्लेखनीय है। इनकी रचनाएं सामाजिक सत्य का प्रमाण हैं। इनकी रचनाएं जीवन के अधिक निकट एवं प्रामाणिक हैं। अपनी रचनाओं में वीरेंद्र जैन ने भोगे हुए यथार्थ का चित्रण किया है। वीरेंद्र जैन ने 'यहां तक पहुंचने की जद्दोजहद' नामक आत्मलेख में लिखा है, "मेरे बारे में जो कुछ भी है मैं जानता हूं वह सब मेरी रचनाओं में आ चुका है।"[8] वीरेंद्र जैन इन यथार्थों का चित्रण करते हुए रचनाओं के चरित्रों में खुद समा जाते हैं। सन् 1988 में लिखा गया उपन्यास 'सबसे बड़ा सिपहिया' पुलिस तंत्र में भ्रष्टाचार की पोल खोल देता है। उपन्यास में एक साधारण सिपाही से लेकर पुलिस के सर्वोच्च अधिकारी इंस्पेक्टर जनरल की सच्चाई को लोगों के सामने प्रस्तुत किया गया है। वीरेंद्र जैन ने इस उपन्यास में पुलिस की क्रूरता, स्वार्थपरता, अमानवीयता,

समकालीन दौर की नई पीढ़ी के उपन्यासकारों में वीरेंद्र जैन का नाम उल्लेखनीय है। इनकी रचनाएं सामाजिक सत्य का प्रमाण हैं। इनकी रचनाएं जीवन के अधिक निकट एवं प्रामाणिक हैं। अपनी रचनाओं में वीरेंद्र जैन ने भोगे हुए यथार्थ का चित्रण किया है। वीरेंद्र जैन ने 'यहां तक पहुंचने की जद्दोजहद' नामक आत्मलेख में लिखा है, "मेरे बारे में जो कुछ भी है मैं जानता हूं वह सब मेरी रचनाओं में आ चुका है।"

अकर्मण्यता एवं भ्रष्टाचार का पर्दाफाश किया है।

पुलिस कर्मचारियों को किसी भी इनसान के दुख-दर्द में कोई भी हमदर्दी नहीं होती। पुलिस के पास जो भी व्यक्ति जाएगा, उसे किसी-न-किसी प्रकार का दुःख अवश्य होगा, परंतु पुलिस यह चाहती है कि जहां तक हो सके, लोगों को डरा-धमकाकर एफ.आई.आर. दर्ज ही न हो। वह एफ.आई.आर. दर्ज करवाने आए व्यक्ति से पहले चाय पानी का इंतजाम करने को कहते हैं। बिना यह जाने कि उन्हें क्या समस्या है। लेखक ने 'सबसे बड़ा सिपहिया' उपन्यास में इस समस्या को उजागर किया है। आनंद बाबू जब अपने घर हुई चोरी की रिपोर्ट लिखवाने आते हैं तो पुलिस उससे चाय-पानी और सिगरेट लाने के लिए कहती है। जगतराम चाय लेकर आता है और पूछता है, "डी.ओ. साहब, चायवाला पूछ रहा था कि ये किसने मंगाई है। मतलब ये किसी के खाते में दर्ज होगी या इनका पेमेंट नकद होगा?" ...राजधन झुंझलाया, "नहीं तो, मैं क्यों मंगाता? मैं कोई रपट दर्ज कराने आया हूं जो तुम्हारी खुशामद में..." अपनी बात पूरी न करके वह आनंद की तरफ मुड़ा और उसे उंगली से टोहना मारकर पूछा, "आपने मंगाई है न?"[9] पुलिस हर व्यक्ति से इस प्रकार खाने-पीने के बिल अदा करवाते हैं।

पुलिस रिपोर्ट दर्ज करवाने आए व्यक्ति से अभद्र भाषा का प्रयोग करती है। उनके व्यवहार से ऐसा लगता है कि अपराधी और कोई नहीं, जो रिपोर्ट दर्ज करवाने आया है, वही है। यही कारण है कि पुलिस के इस व्यवहार के कारण कई लोग रिपोर्ट दर्ज करवाने से गुरेज करते हैं। आनंद जब रिपोर्ट दर्ज करवाने पुलिस स्टेशन आता है तो पुलिस उनके साथ अभद्र भाषा में बोलती है। "संतरी अपनी जगह से बिना हिले दहाड़े, "ओये पिद्दी के, कहां घुसा जा रहा है?"10 इस प्रकार पुलिस कर्मचारी लोगों के साथ अभद्र भाषा में बात करते हैं।

विवेचित उपन्यास में लेखक वीरेंद्र जैन ने पुलिस के अभद्र और अमानवीय व्यवहार को दुर्घटना में मारे गए बच्चों के संदर्भ में भी उद्घाटित किया है। पुलिस दुर्घटना में मारे गए बच्चे के परिवार वालों से भी अभद्र भाषा का प्रयोग करती है। दुर्घटना में मारे गए बच्चे के पिता की गलती इतनी सी थी कि वह अपने बच्चे की लाश मांग रहे थे। पुलिस मुंशी कहता है, "अरे काहे का बुरा हुआ। तू नहीं जानता, ये ...। ...तू तो जानता ही है, जब मैं अपनी-सी पर आता हूं तो... मैंने उस हरामजादे को चेतावनी दी, ...जहां तक एक इनसान का सवाल है, मुझे तेरे बच्चों से पूरी हमदर्दी है। मगर जहां तक एक पुलिस अफसर का सवाल है मुझे अपनी ड्यूटी से सरोकार है बस... अगर तूने अपनी औकात भूलकर टांय-टांय की तो साले इतने जूते मारूंगा कि गिन भी नहीं पाएगा।"[11] पुलिस आम आदमी से भी इसी प्रकार अभद्र भाषा का प्रयोग करती है। दुर्घटना में मारे गए बच्चे के परिवार वालों से ऐसा व्यवहार अमानवीय है।

पुलिस का कर्तव्य लोगों की रक्षा करना होता है। वर्तमान समय में पुलिस की छवि रक्षक कम भक्षक ज्यादा बनती जा रही है। पुलिस को समाज में गरीबों, बेसहारा, अबलाओं की रक्षा करनी चाहिए। पुलिस इसके विपरीत बेसहारा गरीब अबलाओं की इज्जत से खेलती है। 'सबसे बड़ा सिपहिया' उपन्यास में रिपोर्ट दर्ज करवाने आई युवती से पुलिस का ऐसा व्यवहार पुलिस तंत्र को शर्मसार कर देता है। डी.ओ. युवती से बोला, "अब तुम इस बेंच पर उसी तरह लेट जाओ जैसे कल रात अपने घर में चारपाई पर लेटी थी और तब बताओ कि उस कमीने, हरामजादे ने कैसे और क्या छेड़छाड़ की तुम्हारे साथ। ... डी.ओ. ने अपनी कुर्सी बेंच के एकदम करीब खिसकाई। अपने करीब सोए जवान जिस्म को देखकर उसकी आंखों में अतिरिक्त चमक आ गई। अर्से से उसके भीतर सोया शैतान जाग उठा। "[12] जो युवती अपनी इज्जत और आबरू की रक्षा के लिए पुलिस के पास आई थी। पुलिस उसी इज्जत और आबरू से खेलती है।

पुलिस द्विपक्षीय झगड़े में दोनों ओर से उगाही लेती है। अपराधी और आम जनता दोनों ओर से पुलिस पैसे ऐंठती है। किसी भी झगड़े को बड़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत कर दोनों ओर से पैसे लेने में हिचकिचाते नहीं। प्रस्तुत उपन्यास में पुलिस दो व्यक्तियों के लेन-देन के झगड़े में दोनों ओर से फायदा उठाती है। थानेदार के शब्दों में, "मैंने अभी-अभी उससे कह दिया है कि जब थाने में आओ तो फ्रिज साथ लेते आना और अपना स्कूटर ले जाना। अब वह आदमी तो फ्रिज लेने आने से रहा। उसका तो सीधा-सा गणित है कि पांच हजार किराया बनता था, उसके बदले अगर चार

हजार में खरीदा फ्रिज और वह भी तीन-चार साल इस्तेमालशुदा, चला गया तब भी सस्ते में छूटे। इधर इसका भाई भी कभी उससे बात नहीं छेड़ेगा, क्योंकि ये भी सोचेगा कि किराया मिल जाता तो ठीक था, नहीं भी मिला तो कम-से-कम आठ हजार का स्कूटर तो हाथ में जाते-जाते बच ही गया। बस... और स्कूटर भी मैं इतनी आसानी से नहीं दूंगा।"[13] पुलिस इस झगड़े में फ्रिज और स्कूटर हड़प जाती है।

पुलिस को अपराधी को निपराधी और निरपराधी को अपराधी साबित करने में महारत हासिल है। वह पैसों की खातिर झूठे केस दर्ज कर कार्यवाही करता है। दो दुकानदारों के आपसी झगड़े में केस को मजबूत बनाने के लिए पुलिस एक दुकानदार के शरीर पर पैनी पत्ती से निशान बनाती है। पुलिस उस व्यक्ति के नाक, सिर, माथे और भौंहां के आसपास की खाल खुर्च देती है, इससे खून रिसने लगता है। इसके बाद डी.ओ. ने उसे समझाया, "अब मैं तुम्हें एक सिपाही के साथ अलीपुर भेजूंगा। वहां पुलिस अस्पताल में तुम्हारी डॉक्टरी होगी। मैंने जो चित्रकारी तुम्हारे चेहरे पर की है, उसकी वजह से डॉक्टर तो क्या, उसका बाप भी डॉक्टरी रिपोर्ट में शर्तिया यह लिखेगा कि तुम पर कातिलाना हमला किया गया था। बस, रिपोर्ट तुम्हारे हक में आते ही हम उस हरामजादे को गिरफ्तार कर लेंगे। ...और जब वो यहां से छूटकर जाएगा, दुकानदारी करना भूल चुका होगा।"[14] पुलिस झूठे केस बनाकर पैसों के लिए आम जनता को भी नहीं छोड़ती। भ्रष्टाचार पूरी तरह पुलिस व्यवस्था में रच-बस गया है।

पुलिस पत्रकार आनंद द्वारा छापे गए आई.जी. के इंटरव्यू से खुश नहीं है। वह उसे सबक सिखाने के लिए उस पर झूठा आरोप लगाते हैं। इतना ही नहीं, पुलिस आनंद को पिटवाकर बेहोशी की हालत में अस्पताल में भर्ती करवा देती है। पुलिस डॉक्टर से झूठा बयान दिलवाती है कि आनंद की दुर्दशा का कारण ज्यादा मात्रा में शराब का लेना है। पुलिस आनंद को ही उसके घर चोरी के लिए अपराधी घोषित करती है। पुलिस की इस भ्रष्टाचार की नीति से आम जनता भयभीत हो जाती है। पुलिस से वह बहुत ज्यादा डरती है और जहां तक हो सके, उससे बचने का प्रयास करती है। वीरेंद्र जैन ने आनंद के ससुर द्वारा लिखे गए पत्र में पुलिस की कार्य प्रणाली पर व्यंग्य किया है। आनंद के ससुर ने लिखा था, "तुम पुलिस से जरा दूर ही रहना। पुलिस हमारे लिए दरअसल है ही नहीं। वह तो हमारे नाम पर... जो न साबित कर दे सो थोड़ा... तुमने यह कहावत तो जरूर सुनी होगी- बाप बड़ा न भैया, सबसे बड़ा रुपैया। इस कहावत में हमारी तरफ के लोगों ने आवश्यक संशोधन कर लिया है। अब यहां के लोग कहने लगे हैं- लोक बड़ा ना रुपैया, सबसे बड़ा सिपहिया।"[15] इस प्रकार लेखक ने यहां पर यह स्पष्ट किया है कि एक पत्रकार के साथ पुलिस ऐसा कर सकती है, तो आम जनता का तो कौन रखवाला है। पुलिस अपने पद और योग्यता का दुरुपयोग करती है।

वर्तमान समय में पुलिस का अपराधियों, गुंडों और राजनीतिज्ञों के साथ मेल-जोल बढ़ा है। इसी मेल-जोल का यह परिणाम है कि पुलिस अपने पद और शक्तियों का प्रयोग अपराधी को पकड़ने के लिए नहीं, उसका साथ देने के लिए कर रही है। अर्थ पुलिस व्यवस्था को कमजोर बना रहा है। पुलिस व्यवस्था में रिश्वतखोरी बढ़ रही है। अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय पुलिस तंत्र का वीरेंद्र जैन ने गहरा तथा गंभीर अध्ययन करते हुए उसकी विसंगतियों और विकृतियों को खोजा है। भारतीय पुलिस के स्वरूप और चरित्र पर विचार करते हुए लेखक ने उसकी अमानवीयता, क्रूरता, आतंक और अत्याचार पर चोट की है।

सुपुत्र श्री अमर सिंह, गांव कुडंग, डाकघर भिरड़ी, तह. बैजनाथ, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 088

संदर्भ

1. संपूर्णानंद, समाजवाद, पृ. 19
2. राजकुमारी गुगलानी, उपन्यासकार प्रेमचंद, पृ. 12
3. शांति कुमार स्याल, कानून की नजर में नारी, पृ. 20
4. रामचंद्र वर्मा (सं.) संक्षिप्त हिंदी शब्द सागर, पृ. 776
5. वही, वही, वही
6. रामस्वरूप दुबे, विश्वज्योति, पृ. 25
7. संपूर्णानंद पांडेय, विश्वज्योति, पृ. 17
8. मनोहरलाल (सं.), वीरेंद्र जैन का साहित्य, पृ. 215
9. वीरेंद्र जैन, सबसे बड़ा सिपहिया, पृ. 18
10. वीरेंद्र जैन, सबसे बड़ा सिपहिया, पृ. 13
11. वीरेंद्र जैन, सबसे बड़ा सिपहिया, पृ. 35
12. वीरेंद्र जैन, सबसे बड़ा सिपहिया, पृ. 24
13. वीरेंद्र जैन, सबसे बड़ा सिपहिया, पृ. 77
14. वीरेंद्र जैन, सबसे बड़ा सिपहिया, पृ. 50
15. वीरेंद्र जैन, सबसे बड़ा सिपहिया, पृ. 125

आस्था

संस्कृतियों की मिलन स्थली त्रिलोकनाथ देवालय

◆ शेर सिंह

देवदार और चीड़ के छितरे जंगल के मध्य से मोड़ के बाद मोड़ वाली संकरी सड़क से अपने दिल को थामे जब श्री त्रिलोकनाथ मंदिर के पास पहुंचते हैं, तो अपने तन मन में एक अलौकिक अनुभूति अभिभूत करती प्रतीत होती है। ऐसा आभास होता है मानो आप एक ऐसे लोक में पहुंच गए हैं जो कल्प ना और सपनों वाला स्वर्ग हो। मन और मस्तिष्क दोनों अभिभूत होकर कुछ सोचने की बजाए केवल वाह-वाह कर उठता है ! और, भगवान त्रिलोकनाथ के प्रति मन में श्रद्धा और समर्पण की ऐसी उत्कट भावना जाग उठती कि व्यक्ति अपना सुध-बुध खोकर किसी दूसरी ही दुनिया में पहुंचा हुआ अनुभव करता है। ऊपर आसमान की ओर देखे, तो लगता है आकाश पृथ्वी से मिलने को आतुर है क्यों कि आकाश बहुत पास में दिखता है। ऐसा लगता है, मानो पर्वत के शिखर अपने शीश को झुकाकर लोगों के आगमन पर हर्षित होकर आकाश को अपने शीश में उठाए स्वागत कर रहे हैं। पर्वतमालाएं और उनके शिखर नैसर्गिक सौंदर्य और हरीतिमा से लहलहा रही होती हैं। जिस ओर भी दृष्टि उठाकर देखें, सब ओर जलधारा के साथ-साथ छोटी-छोटी घाटी सी दिखती है। बेशक वे नाले ही हैं। लेकिन स्वच्छ, शीतल जल की धाराएं पूरे वेग से बहती हुई सबको अचंभित करने के साथ ही मानसिक शांति और सुकून का अहसास कराती हैं। ऊंचे शिखरों पर जुलाई माह में भी मटमैली हो गई बर्फ की परतों के अवशेष पड़े दिख जाते हैं। यहां का प्राकृतिक रूप, छटा और अवर्णनीय सौंदर्य को देख हर कोई चमत्कृत सा खड़ा रह जाता है।

संकरी, चमकीली चट्टानों से सटी सड़क और नीचे वेग से बहती चन्द्रभागा नदी है ! चन्द्रभागा नदी आगे जाकर जम्मू-कश्मीर से होती हुई चिनाब नदी के नाम से पाकिस्तान पहुंचती है। चन्द्र भागा नदी के किनारे किनारे गाड़ी में दिल कड़ा करके बैठे रहने के पश्चात जब तीनों लोकों के स्वामी भगवान शिव की भूमि त्रिलोकनाथ में प्रवेश करते हैं, तो रास्ते की सारी थकावट, धूल-मिट्टी से अटी सड़क के गड्ढों के धक्के भूल जाते हैं। यह पर्वतीय क्षेत्र लाहुल का ऐसा भाग है जहां हिंदु बहुसंख्या में हैं और पूरा क्षेत्र शिवमय है। लेकिन भगवान शिव के साथ भगवान बुद्ध का भी उतना ही प्रभाव है और उतनी ही श्रद्धा तथा भक्ति भावना है। त्रिलोकनाथ गांव जिला मुख्यालय केलंग से लगभग 50 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। त्रिलोकीनाथ का मंदिर शिखर शैली में निर्मित है। मंदिर की बनावट कला और वास्तु शिल्प का बेजोड़ नमूना है। इतिहासकारों का मानना है कि इस मंदिर को चंबा के राजा ललितादित्या ने नवीं दसवीं शताब्दी के दौरान निर्माण कराया था। कुछ इतिहासकार यह भी मानते हैं कि इस प्राचीन हिंदू मंदिर का निर्माण चंबा के राजा अलबर सेन की पत्नी रानी सुल्तान देवी ने नवीं-दसवीं शताब्दी के दौरान किया था। निर्माण संबंधी तथ्यों में मतभिन्नता हो सकती है। लेकिन यह निर्विवाद है कि इसे चंबा के राजवंशों द्वारा निर्मित किया गया था। श्री त्रिलोकनाथ जी का मंदिर प्राचीन हिंदू मंदिरों में से एक है। ऐसा माना जाता है कि राजा का बोधिसत्व आर्य अवलोकीतेश्वर के प्रति अगाध श्रद्धा और भक्ति भावना थी। इसी कारण उन्होंने तीनों लोकों के स्वामी भगवान शिव की मूर्ति के ललाटबिम्ब पर एक और प्रतिमा स्थापित की जिसे बौद्ध लोग 'बुद्ध' और हिंदू 'अन्नपुरुष' के रूप में मानते हैं।

त्रिलोकनाथ दो संस्कृतियों, संस्कारों, दो धर्मों, अनुयायियों, मान्यवताओं और मर्यादाओं का संगम स्थल है। गर्मी के मौसम में हिंदू और बौद्ध दोनों ही धर्मों के लोग हजारों की संख्या में दर्शनार्थ, मन्नत मांगने अथवा मनोकामनाएं पूरी होने पर आभार व्यक्त करने, प्रियजनों के बिछुड़ जाने के उपरान्त तीर्थ स्थान का दर्शन करने के साथ साथ अपने उद्गारों, श्रद्धांजलि सुमन अर्पित, समर्पित करने आते हैं। मंदिर एक टीलेनुमा चट्टान पर बना हुआ है। चट्टान से नीचे हजारों फुट गहरी खाई है। दूर से ही मंदिर के शिखर से लहराता केसरिया ध्वज और सामने डोरियों से बंधे, टंगे बौद्ध धर्म के पवित्र और आदर, मान का प्रतीक खत्तक, छपी हुई रंगीन पताकाएं, सफेद रेशमी दुपट्टे अथवा वस्त्र सभी दिशाओं में फैले हवा में झूलते, फरफराते नजर आते हैं।

किंवदंती है कि त्रिलोकनाथ गांव में एक पुहाल (चरवाहा/ गड़रिया) रहता था। उसका नाम टिण्डणु था। वह गांव वालों की भेड़-बकरियों को चराता था। वह सुबह अपनी भेड़ों को चराने के लिए ऊंचे पर्वत शिखरों तक ले जाता था। भेड़ों के साथ-साथ पर्वत शिखरों पर चढ़ते, चलते थक जाता, तो कुछ समय के लिए विश्राम

इस मंदिर की विशेषता है कि यहां न अधिक आडंबर है, और न ही अधिक बंदिशें अथवा हिदायतें हैं। आम धार्मिक स्थानों के विपरीत यहां न लालची पंडित हैं, न लोभी पंडे, पुजारी। न भिखारी हैं, न मांगने, न ठगने वाले लोग हैं। हैं तो केवल सरल स्वभाव के सीधे-सादे, भोले और धर्मभीरू लोग। छल, कपट से दूर।

करने के उद्देश्य से सो जाता था। इस दौरान देवलोक की परियां आकर भेड़ों से दूध निकाल लेती थी। चरवाहे को कुछ पता नहीं चलता था। शाम को गांव के लोग जब पाते कि उनकी भेड़ बकरियों को किसी ने दुह लिया है, तो वे चरवाहे पर शक करते और उसे बुरा-भला कहते। चरवाहा बेकसूर होने के बावजूद मन मसोसकर रह जाता।

एक दिन उसने ठान लिया कि देखें, भेड़ बकरियों को कौन दुह लेता है? इस रहस्य को जानने के लिए उसने सो जाने का नाटक किया। उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रही जब उसने देखा कि अनिंद्य सौंदर्य वाली सात परियां भेड़ बकरियों के बीच आकर उन्हें दुहने लगी हैं। एक किशोर सा बालक भी उनके साथ खड़ा है। चरवाहे ने आज अपनी आंखों से उन्हें भेड़ बकरियों को दुहते हुए देख लिया था। उसे आज अपने को निर्दोष साबित करने का अवसर मिल गया था। उसने प्रमाण के तौर पर उन परियों को पकड़ना चाहा। लेकिन परियां उसके हाथ नहीं आईं। परन्तु उसने बालक को पकड़ लिया और उसे कसकर अपनी पीठ पर उठा लिया। बालक को पीठ पर उठाए वह अपने गांव तुन्दा की ओर चल दिया। उसे आज गांव वालों को अपने निर्दोष होने का प्रमाण दिखाना था। पीठ पर कसे बालक ने उसके साथ इस शर्त पर चलने की सहमति दी कि वह गांव की ओर चलते हुए पीछे की ओर मुड़कर नहीं देखेगा। और, गांव में पहुंचने पर वह बालक को अपने घर में ही रखेगा। टिण्डणु चरवाहा बालक की शर्त को मान गया।

चलते चलते चरवाहे को अपने पीछे विभिन्न देवरूप सायों का अपने साथ चलने का आभास हुआ। उसे मंत्रमुग्ध करने वाले विभिन्न वाद्ययंत्रों, गाजे-बाजे की मधुर गीत, संगीत बजने की ध्वनि सुनाई देने लगी। उसे ऐसा लगा कि कोई अभूतपूर्व बारात उसके साथ चल रही है। उसे शंका हुई कि बालक उसकी पीठ में है भी अथवा नहीं? शर्त को भूल उसने पीछे मुड़कर जैसे ही बालक को देखना चाहा, वह शैल हो गया। उसकी पीठ का बालक भी छिटककर गिर गया और उससे थोड़ी दूरी पर वह भी शैल हो गया।

कहते हैं वह बालक और कोई नहीं बल्कि तीनों लोकों के स्वामी भगवान शिव शंकर स्वयं थे। तीनों लोकों के स्वामी भगवान त्रिलोकनाथ के कारण तुन्दा गांव का नाम त्रिलोकनाथ पड़ गया। जनश्रुति है कि शैल हुए भगवान शिव के इसी रूप को केन्द्र में रखकर मंदिर का निर्माण किया गया है। इस संबंध में अनेक जनश्रुत्रियां हैं, लेकिन सभी का एक ही निचोड़ है कि टिण्डणु पुहाल ने ही भगवान त्रिलोकनाथ को अपने कंधे अथवा पीठ पर उठाकर लाया था। मंदिर में शैल हुए पुहाल और शिव के बालक स्वरूप शिला आज भी विद्यमान हैं।

सात परियां सात धाराओं के रूप में आज भी त्रिलोकनाथ मंदिर से लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर सामने से निकलती हैं, और चन्द्रभागा नदी में समा जाती है। मान्यता है कि ये सात धाराएं टिण्डवणु पुहाल की पकड़ में न आने वाली छिप गई सात परियों के रूप है। बौद्ध मत के अनुसार इन सप्त धाराओं को क्षीर अथवा खीर (दूध) गंगा कहा जाता है। इन सप्तधाराओं का पानी दूध की तरह धवल होता है। चाहे कितनी ही वर्षा हो, बर्फ पड़े अथवा बाढ़ आए, इन सात धाराओं का पानी कभी भी गंदला या मटमैला नहीं होता है। सदैव दूध की तरह धवल ही रहता है।

हर तीसरे वर्ष जुलाई माह में भगवान त्रिलोकनाथ जी की शोभायात्रा मंदिर से सप्तधारा तक निकाली जाती है। लोगों का विश्वास है कि इस दिन भगवान त्रिलोकनाथ जी अपने पूर्व स्थान पर साथियों से मिलने आते हैं।

त्रिलोकनाथ मंदिर में भगवान शिव की अप्रतिम सौंदर्य वाली छह भुजाओं वाली सफेद संगमरमर की मूर्ति मंदिर के गर्भगृह में स्थापित है। लेकिन देखने में मूर्तियां अष्टधातु की बनी लगती है। कहा जाता है कि स्लेटी रंग की मूल प्रस्तर प्रतिमा दशकों पहले मंदिर से चोरी हो चुकी है। भगवान त्रिलोकीनाथ के शीश पर तपस्या में लीन भगवान बुद्ध अथवा अन्न पुरुष की लघु आकार की प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा आकार में भगवान शिव की मूर्ति से अत्यंत छोटी है। गर्भगृह में स्थापित मूर्तियां अमूल्य मणि-माणिक्यों, रत्नों और स्वमर्ण आभूषणों से सजी हैं। पीत, शुभ्र एवं केसरिया रंग के वस्त्रों से ढकी मूर्तियों से अवर्णनीय तेज सी निकलती हुई प्रतीत होता है जिससे श्रद्धालु अभिभूत होकर अपनी सुध-बुध भुलाकर कुछ क्षणों के लिए भगवान त्रिलोकीनाथ साथ जैसे एकाकार हो जाता है। लेकिन मंदिर का पुजारी बौद्ध लामा है। ये लामा समय समय पर कुछ वर्षों के अंतराल में बदलते रहते हैं। मंदिर का प्रवेश द्वार अद्‌भुत और अनोखा है। मुख्य द्वार के दोनों ओर पत्थर के ऊंचे स्तंभ बने हुए हैं जो छत (सिलिंग) तक जा मिले हैं। प्रवेश द्वार और इन स्तंभों के मध्य बहुत संकरी जगह है।

इन स्तंभों के बीच अत्यंत संकरे स्थान से होकर जो व्यक्ति गर्भगृह में प्रवेश करता है, अथवा बाहर निकलता है, माना जाता है कि वह सच्चा, ईमानदार और धर्मात्मा है। लेकिन जो इन संकरे द्वारों में फंस जाता है, तो वह पाखण्डों और पापी है। इन्हें पाप और पुण्य के द्वार भी कहा जाता है।

मंदिर में अखण्ड ज्योति जलती रहती है चाहे कैसा भी समय अथवा ऋतु हो। गर्भगृह में प्रवेश से पहले मंदिर के प्रांगण में स्फटिक पत्थर (ग्रेनाइट) का बना शिवलिंग है। नंदी और शिव के गण हैं। प्रांगण और गर्भगृह के मध्य भाग में मने यानी धर्मचक्र सजे हैं। इन धर्मचक्रों में भोटी भाषा (प्राचीन पालि भाषा) में मंत्र उत्कीर्ण किये गए हैं। अंदर गर्भगृह में स्थापित प्रतिमाओं का दर्शन करने के पश्चात बाहर सजावट के साथ बनाए गए इन मने को दाएं हाथ से घुमाना बहुत ही पुण्य का कार्य माना जाता है। इन्हें फिराते हुए मन्नत मांगी जाती है अथवा वांछित इच्छा की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की जाती है। बाहर आंगन में हवनकुंड में गड़ाए विशाल त्रिशूल पर आम हिंदू मंदिरों की भांति मन्नतों के रूप में बंधे धागे, रेशमी कपडों के टुकड़े और खत्तिक लटके, बंधे सहज ही नजर आते हैं।

इस मंदिर की विशेषता है कि यहां न अधिक आडंबर है, और ना ही अधिक बंदिशें अथवा हिदायतें हैं। आम धार्मिक स्थानों के विपरीत यहां न लालची पंडित हैं, ना लोभी पंडे, पुजारी। न भिखारी हैं, न मांगने, ठगने वाले लोग हैं। हैं तो केवल सरल स्वभाव के सीधे-सादे, भोले और धर्मभीरू लोग। छल, कपट से दूर।

गर्मियों के ऋतु में देश के सुदूर क्षेत्रों से साधु संत त्रिलोकी नाथ के दर्शन हेतु पहुंचते हैं। इन पंक्तियों के लेखक को जुलाई माह के दौरान एक साधु मिले थे जिन्हों ने बताया था कि वह इस वर्ष यानी 2016 में उज्जैन में संपन्न हुए कुंभ में शामिल होकर त्रिलोकनाथ में भोले शंकर के दर्शन के लिए आए हैं। वास्तव में यह पहाड़ी प्रदेश विशेषकर लाहुल स्पीति के लोगों का अपने अराध्य के प्रति श्रद्धा और भक्ति, विश्वास और आस्था का संगम स्थल है। इससे भी बढ़कर आस्था का स्वर्गिक एवं पावन स्थान है, जहां उनके विश्वास और आस्था के अनुसार उनक ईष्ट देवों का वास है। लोगों का इन पर इतनी अटूट आस्था है कि कोई भी धार्मिक कार्य, शुभ अनुष्ठान, पर्व अथवा दुख और शोक के समय भी उस आयोजन, प्रयोजन का रूख सदैव त्रिलोकनाथ दिशा की ओर करके ही संपन्न किया जाता है।

यहां भी बारह वर्षों के बाद कुंभ का मेला लगता है। पिछला कुंभ 2015 में सम्पन्न हुआ है। प्रति वर्ष अगस्त माह के दौरान पोरी का मेला लगता है। पोरी में लोग दूर दूर से और पूरे जिले के साथ साथ किन्नौर, लेह-लद्दाख से भी श्रद्धालु भक्ति और श्रद्धा भाव से ओत-प्रोत होकर आते हैं। पारंपरिक वेशभूषा में विशेषकर महिलाओं को चोडू (कतर/कदर) में सजे-संवरे हुए देखने के दृश्य देखते ही बनता है। यह मेला आपसी मेलजोल, गौरवमयी लोक संस्कृति को बचाए रखने तथा धार्मिक परंपरा के संरक्षण और संवर्धन का भी पर्व है। पोरी मेले के पश्चात लाहुल के लोग अपनी पारंपरिक वेशभूषा में दलों और समूहों में चंबा जिला के भरमौर में स्थित मणिमहेश के दर्शन हेतु कुगती जोत से होकर जाते हैं। कठिन और दुर्गम दर्रों वाले पहाड़ी रास्तों से लगभग छह से सात दिनों की पैदल यात्रा के पश्चात मणिमहेश पहुंचते हैं जिसे भगवान शंकर का निवास कहा जाता है। भरमौर के गद्दी और लाहुल के हिंदुओं में बहुत अधिक समानता है। कहा जाता है कि लाहुल के हिंदु चंबा और भरमौर से ही लाहुल में आए थे। यदि तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो इन दोनों ही क्षेत्रों की लोक संस्कृति और जीवन शैली एक दूसरी से स्पष्ट गुंथी हुई दिखती है।

पिछले दो वर्षों से अब इस मंदिर का रख- रखाव, पूजा आदि की जिम्मेदारी यानी प्रशासन का सारा भार हिमाचल प्रदेश सरकार ने अपने हाथ में ले लिया है।

नाग मंदिर कालोनी, शमशी, कुल्लू,
हिमाचल प्रदेश- 175126, मो. 0 84470 37777

आलेख

भारत का गोर्की : शैलेश मटियानी

◆ सपना मांगलिक

होंठ हँसते हैं,
मगर मन तो दहा जाता है
सत्य को इस तरह
सपनों से कहा जाता है ।

शैलेश मटियानी जी की लिखी यह कविता उनके स्वयं के जीवन की गाथा है । उस जीवन की जो कि हमेशा कुदरत की क्रूर प्रताड़ना सह-सहकर फौलाद सा मजबूत हुआ, मगर सहन शक्ति की भी एक सीमा होती है कहते हैं ना कि लोहा भी जरूरत से ज्यादा ठोका जाए तो अपनी आकृति खो देता है, ज्यादा तापमान पर तपाया जाए तो पिघल जाता है और पानी में डुबोया जाए तो एक समय के बाद जंग लगकर उसका अस्तित्व आहिस्ता-आहिस्ता खत्म हो जाता है । अल्मोड़ा के रम्य पहाड़ी इलाके में जन्मे मटियानी की जिन्दगी पहाड़ों की हरी भरी घाटियों सी सुन्दर कभी नहीं रही , बल्कि रात्रि में पहाड़ की भयाभय निशब्दता, अँधेरे और दिल दहला देने वाले सन्नाटे से भी ज्यादा खौफनाक थी उनकी जिन्दगी । मात्र 12 वर्ष की उम्र में पिता-माता दोनों को खो देने वाले इस बच्चे ने 13 साल की नन्ही सी उम्र में अपनी पहली कविता लिखी थी । 15 वर्ष की छोटी सी उम्र में वह अपनी पहली किताब का मालिक था । जैसा कि लेखक अमूमन होते हैं, 'रमेश कुमार मटियानी' उर्फ़ शैलेश मटियानी पहले एक कवि थे । वे भी उसी तरह कविताएं लिखते रहे जैसे बहुत सारे लेखक अपने लेखन के शुरुआती काल में लिखते हैं । फिर उनका झुकाव गद्य-लेखन की तरफ हुआ और तब वह शैलेश मटियानी हो गए । वह हिन्दी साहित्य के महान लेखक थे और उनका साहित्य दबे-कुचले और समाज के पिछड़े लोगों पर आधारित था ।दूसरे शब्दों में कहें तो उनका साहित्य उनकी ही भुक्ति गाथा थी जिससे उन्हें मुक्ति मृत्यु के उपरान्त ही प्राप्त हुई । बचपन में ही मां-बाप का साया उठने पर, कम पढ़े-लिखे होने के बावजूद उन्होंने हिन्दी में बेहतरीन कहानियां-उपन्यास लिखनी शुरू की । धन की कमी के कारण उन्हें घरेलू नौकर तक बनने को मजबूर होना पड़ा । अपने अन्तिम दिनों में उन्हें अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ा । उन्होंने यह साबित किया कि 'जुआरी का बेटा और बूचड़ का भतीजा' कविता-कहानियाँ सिर्फ लिख ही नहीं सकता, बल्कि ऐसा लिख सकता है कि बड़े-बड़ों को उसमें विश्व का महान साहित्यकार गोर्की दिखाई दे । बंबई प्रवास का उनका समय, समाज के हाशिए और फुटपाथों पर पड़ी जिंदगी से साक्षात्कार का ही नहीं बल्कि खुद उस जिंदगी को जीने का भी समय रहा है । चाट हाऊस और ढाबों पर जूठे बर्तन धोता, ग्राहकों को चाय का ग्लास पहुँचाता, रेलवे स्टेशनों पर कुलीगीरी करता बीस-बाईस साल का युवक 'पर्वत से सागर तक' की संघर्षपूर्ण यात्रा करता हुआ सिर्फ सपनों में ही नहीं हक़ीक़त में भी साहित्य रच रहा था । धर्मयुग जैसी देश की प्रतिष्ठित पत्रिका में इसी दौरान उस नवयुवक की रचनाएँ छप भी रही थीं । बंबई में सर छुपाने कि जगह न होने के कारण फुटपाथ पर रातें गुजारीं । कई बार भोजन और सर छुपाने की जगह के लिए जानबूझकर हवालात भी गए । रात में वह पुलिस की गश्त के वक़्त टहलने लगते और पुलिस उन्हें पकड़ कर ले जाती । वहाँ भूख की आग भी मिटती और साये विहीन सिर को छत भी मिल जाती । साथ में जेल के काम के बदले भत्ता भी मिलता । एक व्यक्ति पैसा और रोटी अर्जित करने के लिए किस हद तक जा सकता है उसकी बानगी देखिये कि मटियानी ने अपने उन संघर्ष के दिनों में कमाई के लिए अपना ख़ून भी बेचा । ख़ून बेचकर जो पैसे मिलते उसका कुछ हिस्सा उन्हें उन दलालों को देना पड़ता जो गरीब और अफीमचियों का खून बेचते हैं । यहीं उनका बंबई के अपराध जगत से भी परिचय हुआ । अपराध जगत के इसी अनुभव को आधार बनाकर उन्होंने 'बोरीवली से बोरीबंदर तक' उपन्यास की रचना की । और बंबई में प्राप्त अनुभव के आधार पर न जाने कितनी ही कहानियाँ भी लिखीं । इस संघर्षपूर्ण जीवन के समानान्तर वे लगातार साहित्य सृजन करते रहे । जिसकी वजह से उन्हें प्रेमचंद के बाद भारत का दूसरा सबसे ज्यादा और बेहतरीन लिखने वाला कहानीकार माना जाता है । उन्होंने जीवन से चाहे जितने समझौते किया हों मगर लेखन के साथ कभी कोई समझौता नहीं किया । एक बार भूख की तीव्रता का अनुभव करते हुए उन्होंने बंबई में समुद्र के किनारे फेंका हुआ एक डब्बा उठाया, तो उसके भीतर पॉलीथीन में बंधा हुआ कुछ मिला । उसे खोलकर देखा तो उसमें मनुष्य का मल था । जैसा कि गोर्की ने कहा है कि - "हमारा सबसे बड़ा निर्दयी दुश्मन हमारा अतीत होता है" ठीक उसी तरह

मटियानी भी कभी अपना अतीत भुला न सके। वह अपनी किसी भी रचना को छापने की अनुमति देने से पूर्व पूछते थे 'पैसे कितने मिलेंगे, मिलेंगे भी या नहीं?' निर्मल वर्मा के बाद पैसों के लिए पूछनेवाले मटियानी दूसरे लेखक थे। ये दोनों ही लेखन के द्वारा आजीविका चलाते थे। अतीत की दुश्वारियां और अपमान उनकी आत्मा और मस्तिष्क को सदैव छीलते रहे जिसका परिणाम उनका आक्रोश भरा व्यक्तित्व था। जीवन के ऐसे दारुण और घिनौने यथार्थ को उन्होंने भोगा शायद इसलिए ही व्यवहारिकता उनमें समा गयी थी। रूस के गोर्की का लिखा एक-एक शब्द शायद जीवन का वो कड़वा यथार्थ था जो हमारे भारत का गोर्की मटियानी भी जी रहा था, जैसे कि गोर्की ने कहा है कि- "जब काम में आनंद आता है तो जीवन खुशनुमा होता है, अगर जब वही काम नौकरी बन जाए तो जीवन गुलामी हो जाता है " मटियानी ने लेखन को ही अपनी आजीविका का साधन बनाया और जैसे कि किसान बंजर भूमि पर भी अपनी मेहनत और लगन से फसल उगा सकता है उन्होंने भी जीवन की पथरीली माटी को खोदकर उनसे अपनी पुष्प और फल सी रचनाओं की पैदावार की। लेकिन यहाँ भी गोर्की की कही एक कड़वी सच्चाई से मटियानी को भी रूबरू होना पड़ा, जैसा कि गोर्की ने कहा है कि -" लेखक हवा में महल खड़े करता है ,पाठक उस महल में रहते हैं, मगर उस महल का किराया प्रकाशक वसूलते हैं "। मटियानी की लिखी यह कविता मेरे इस तर्क को पुष्टि देगी -

लेखनी का
धर्म है,
युग-सत्य को
अभिव्यक्ति दे !

शैलेश मटियानी की रचनाओं में 'अनुभव की आग और तड़प' आकाश या हवा से नहीं आयी,बल्कि काँटों भरा एक संघर्षपूर्ण जीवन उन्होंने खुद ही जिया। जिन परिस्थितियों में एक साधारण आदमी को मौत ज्यादा आसान लग सकती है उन्हीं परिस्थितियों में मौत के बारे में सोचकर भी वह बार-बार जीवन की तरफ लौटते रहे।

उगते हुए
सूरज-सरीखे छंद दो
शौर्य को फिर
शत्रु की
हुंकार का अनुबंध दो ।

गांव की बीरानियों से लेकर इलाहाबाद, मुजफ्फरनगर व दिल्ली के संघर्षों के साथ मुंबई के फुटपाथ और जूठन पर गुजरी जिन्दगी के बावजूद उनका रचना संसार आगे बढ़ता गया। 'चील माता' और 'दो दुखों का एक सुख' वे अन्य महत्वपूर्ण कहानियां हैं जिनके कारण उनकी तुलना मैक्सिम गोर्की और दोस्तोवस्की से की जाती रही। उनके 30 कहानी संग्रह, 30 उपन्यास, 13 वैचारिक निबंध की किताबें, दो संस्मरण और तीन लोक-कथाओं की किताब इसका उदाहरण हैं। इस मामले में उनकी तुलना बांग्ला भाषा के लेखकों से की जा सकती है। हालांकि इतना लिखना एक बहुत मुश्किल काम है। नए विषयों की खोज, उसका सुंदर और प्रमाणिक निर्वाह और साथ ही दोहराव से बचाव, अगर असंभव नहीं तो कष्टकर तो है ही। लेकिन मटियानी के यहां विषयों का दुहराव कहीं नहीं मिलता। शायद इसलिए भी कि जिंदगी उनके लिए रोज नई चुनौतियां गढ़ती रही और यह लेखक उन्हें अपनी रक्त को स्याही बनाकर लिखता रहा। करीब 100 से अधिक प्रकाशित पुस्तकों का लेखन करने वाले शैलेश मटियानी को उनकी रचनाओं ने ही साहित्य के विश्व पटल पर एक अलग पहचान दिलायी। उनके रचना कर्म पर टिप्पणी करते हुए हंस संपादक ने अपने बहुचर्चित संपादकीय शैलेश मटियानी बनाम शैलेश मटियानी में लिखा था- "मटियानी को मैं भारत के उन सर्वश्रेष्ठ कथाकारों के रूप में देखता हूं, जिन्हें विश्व साहित्य में इसलिए चर्चा नहीं मिली कि वे अंग्रेजी से नहीं आ पाए। वे भयानक आस्थावान लेखक हैं और यही आस्था उन्हें टालस्टाय, चेखव और तुर्गनेव जैसी गरिमा देती है। उन्होंने अर्द्धांगिनी, दो दुःखों का एक सुख, इब्बू-मलंग, गोपुली-गफुरन, नदी किनारे का गांव, सुहागिनी, पापमुक्ति जैसी कई श्रेष्ठ कहानियां तथा कबूतरखाना, किस्सा नर्मदा बेन गंगू बाई, चिट्ठी रसैन, मुख सरोवर के हंस, छोटे-छोटे पक्षी जैसे उपन्यास तथा लेखक की हैसियत से, बेला हुई अबेर जैसी विचारात्मक तथा लोक आख्यान से संबद्ध उत्कृष्ट कृतियां हिंदी जगत को दीं। अपने विचारात्मक लेखन में उन्होंने भाषा, साहित्य तथा जीवन के अंतःसंबंध के बारे में प्रेरणादायी स्थापनाएं दी हैं।" भारतीय कथा में साहित्य की समाजवादी परंपरा से शैलेश मटियानी के कथा साहित्य का अटूट रिश्ता है। वे दबे-कुचले भूखे नंगों दलितों उपेक्षितों के व्यापक संसार की बड़ी आत्मीयता से अपनी कहानियों में पनाह देते हैं। मटियानी वाकई सच्चे अर्थों में भारत के गोर्की थे ।

मटियानी का पारिवारिक जीवन

संघर्ष का यह दौर चल ही रहा था कि 1958 ई.। में नीला मटियानी से उनका विवाह हो गया। परिवार और पारिवारिक जीवन के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा का परिचय मिलने लगा। वह अपनी कहानियों के सन्दर्भ में कहते थे कि - "मेरे लेखक-जीवन की नींव में दादी के मुख से निकली लोक-कथाओं की ईंटें पड़ी हुई हैं।" स्त्रियों के लिए एक गहरी संवेदना शैलेश मटियानी जीवन और लेखन में हमेशा मौजूद रही। प्रेयसियों को और उनके प्रेम को केंद्र में रखकर लिखने वाले तो न जाने कितने लेखक हुए, मटियानी अकेले लेखक हैं जो पत्नी प्रेम को अपनी कहानी का केंद्रबिंदु बनाते हैं 'अर्धांगिनी' कहानी इस प्रतिबद्धता के साथ-साथ पर्वतीय

पृष्ठभूमि और घर-परिवार से सहज संवेदनात्मक और प्रगाढ़ जुड़ाव का ही प्रतिफल है। कहते हैं न कि एकदम से आई शांति आने वाले तूफ़ान का प्रतीक होती है उसी तरह सुखद दाम्पत्य जीवन जी रहे मटियानी को लग रहा था कि उनके जीवन को एक आधार मिल चुका है जिस पर अपनी मेहनत और लगन की ईंट से वह ख़्वाबों का महल बनायेंगे मगर 1992 में आया उनके जीवन का वह तूफ़ान उनके महल को बनने से पूर्व ही उजाड़ गया और मटियानी लाचार विवश उसे ध्वस्त होते देखते रह गए ठीक वैसे ही जैसे बंदर और बया की बाल कथा में बया अपने घोंसले को चुपचाप असहाय बंदर को क्रूरता से मिटाते हुए देखती रह गयी थी। उनके छोटे बेटे की जो उनके हृदय के सबसे करीब था कुछ भू माफियाओं द्वारा हत्या कर दी गयी। इस करुण घटना ने उन्हें भीतर तक तोड़ दिया।

हमारी
शांतिप्रियता का
नहीं है अर्थ कायरता-
हमें फिर
ख़ून से लिखकर
नया इतिहास देना है !

अपनी कविता में व्यक्त इसी जज्बे को लेकर वह इससे भी लड़े। इस लड़ाई ने उन्हें मानसिक विक्षिप्तता की हालत में पहुँचा दिया। उन्हें बार-बार दौरे पड़ने लगे। इसी बीच उन्होंने अपने बेटे की हत्या वाली घटना को आधार बनाकर 'नदी किनारे का गाँव' कहानी लिखी।

खुद ही सहने की जब
सामर्थ्य नहीं रह जाती
दर्द उस रोज़ ही
अपनों से कहा जाता है !

सबको लगा वे लौट रहे हैं, ठीक हो रहे हैं। लेकिन, ठीक वैसे ही जैसे बुझने से पहले लौ तेजी से फड़फड़ाती है। लंबे समय से चल रही सिर दर्द की एक रहस्यमय बीमारी ने अंततः 24 अप्रैल 2001 को उनके शरीर से उनकी रूह को जुदा कर दिया। जाते-जाते वे छोड़ गए एक बड़ा उपन्यास और 'जुआरी के बेटे और बूचड़ के भतीजे की आत्म-कथा' लिखने की हसरत। जिस परिवार के साथ मटियानी ने सुख के दिन रैन देखने की कल्पनाएँ संजोयी थी आइये मालूम करते हैं उनके जाने के बाद उनके परिवार की क्या दशा हुई- मटियानी की मौत के बाद उनके परिवार का संघर्ष और अधिक बढ़ गया है। बड़ा बेटा राकेश मटियानी इलाहाबाद छोड़कर हल्द्वानी चला आया है। कभी अपने पिता की कहानी संग्रह का संपादन करने वाला राकेश आज फेरीवाला बुकसेलर बन चुका है। मां नीला मटियानी, पत्नी गीता, बेटा 15 वर्षीय निखिल, 11 वर्षीय बेटी राधा की जिम्मेदारियों ने उसे फेरीवाला बना दिया है। वह आजकल अपने पिता की पुरानी किताबों को बेचकर परिवार का गुजारा करने के साथ ही स्टेशनरी का सामान भी फेरी लगाकर बेच रहे हैं। मां नीला मटियानी को भी एचआरडी की पेंशन समय पर नहीं मिलती है। तत्कालीन यूपी सरकार की ओर से दिए गए टूटते व टपकते मकान में किसी तरह से पूरा परिवार रह रहा है। पिता के जन्मदिन के कार्यक्रम तक को मनाने की हिम्मत नहीं जुटा पाने वाले राकेश मटियानी कहते हैं कि "प्रदेश के मुख्यमंत्री हरीश रावत उनकी रिश्तेदारी में आते हैं, वह पिता की किताबें यदि स्कूलों में लगा देते तो शायद रायल्टी से परिवार को गुजारा चल जाता।" प्रख्यात साहित्यकार शैलेश मटियानी ने जीवन यात्रा के अंतिम पड़ाव में 'जुआरी का बेटा व बुचड़ के भतीजे की आत्मकथा' को लिखने का साहस जुटाया था, लेकिन उनके जीवित रहते उनकी यह हसरत पूरी नहीं हो सकी। आज स्थिति यह है कि उनका बड़ा बेटा राकेश मटियानी 'फेरीवाला बुकसेलर बन चुका है। ऐसे में यदि शैलेश मटियानी जिंदा होते तो वह अपने बेटे के इस किरदार को अपनी कहानी का हिस्सा बनाने की हिम्मत शायद ही जुटा पाते ?-

खंडित हुआ
ख़ुद ही सपन,
तो नयन आधार क्या दें
नक्षत्र टूटा स्वयं,
तो फिर गगन आधार क्या दे

मेक्सिम गोर्की और मटियानी के जीवन में तमाम समानताओं के बावजूद एक मात्र अंतर यह रहा कि गोर्की को एक बार में जहर देकर मार दिया गया। और हमारे भारत का अभागा गोर्की मटियानी जब तक जिया हर पल हर रोज़ जहर पी पीकर जिया और यूँ ही घुटते घुटते एक दिन चला भी गया। उस असीम अनन्त आकाश की ओर जिसे वो जीते जी छूना चाहता था।

साहित्यकार सपना मांगलिक, एफ -651 कमला नगर
आगरा- 282 005, मो. 0 15485 01508

सन्दर्भ :

पंत, कैलाशचन्द्र, शैलेश मटियानी की वैचारिक आधार भूमि (लेख), सृजन यात्रा : तीन शैलेश मटियानी, कैलाशचन्द्र पंत (संपा), मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दी भवन, भोपाल, प्रथम संस्करण : 2002, पृ। सं। : 15

मटियानी, शैलेश, मैं और मेरी रचना-प्रक्रिया (लेख), सृजन यात्रा : तीन शैलेश मटियानी, कैलाशचन्द्र पंत (संपा), मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, हिन्दी भवन,भोपाल, प्रथम संस्करण : 2002, पृ. सं. : 98-99

मेहता, श्री नरेश, यात्रा एक तापस की (लेख), अक्षरा, अंक : 56, विजय कुमार देव (संपा), नवंबर-दिसंबर : 2001,

कहानी

दान-पुन्न

◆ सुशील कुमार फुल्ल

मेज़ पर गुड़ की पेसी पड़ी थी, जो अब चींटियों का भौन ही बन गई थी ।

मियां बीवी जाने लगे तो आदित्य ने अपनी मां से कहा - ज़रा निन्नी के यहां जाना है पटेल नगर। बस दो घण्टे में वापिस आ जाएंगे। आप अन्दर बैठ कर टी वी देखते रहें। मैं बाहर से ताला लगा देता हूँ।

'बाहर से ताला क्यों ?' वह चौंकी। गांव में ऐसा नहीं होता हम स्वयं अन्दर से कुंडी लगा लें तो घबराहट नहीं होती लेकिन कोई बाहर से ताला लगा दे तो अजीब सी अनुभूति होती है।

'यह दिल्ली है । यहां हर रोज़ लुटेरे घरों में घुस कर लूटपाट करते हैं और बाद में बुजुर्गों का मर्डर भी। बड़े बेरहम और जालिम लोग हैं। हम गए और आए। आप आराम से बैठें।' कह कर उसने कमरे को बाहर से ताला लगा दिया।

ओम अन्दर से चिल्लाती ही रहीं- अरे मेरा सांस घुटा जाता है। मैं मर जाऊंगी। मैं हूं न यहां। फिर ताले की क्या जरुरत है।

लेकिन उन पर कोई असर नहीं हुआ। वे दोनों धप धप करते हुए सीढ़ियां उतर गए।

कमरे में बन्द मां के लिए आर के पुरम का वह सरकारी आवास श्मशान की सां सां में डूब गया था।

उसे लगा वह गलत दरवाज़े पर आ खड़ा हुआ था।

सीढ़ियां चढ़ते चढ़ते उस का सांस फूल गया था। एक बार ओम ने कहा भी था- तुम डाक्टर को दिखा क्यों नहीं लेते ?

'तुम्हारी लाडली बहू ने तो बहुत पहले ही डिक्लेअर कर दिया था कि मुझे श्वासी है और इसी लिए उसने वर्षों तक अपने बच्चों को मेरे पास नहीं आने दिया। कहती थी कि पापा गुल्फे फैंकते हैं। दमा नामुराद बीमारी है। 'थोड़ा रुक कर उस ने फिर कहा -आज कल इस लिए सहन करती हैं क्यों कि उस की नज़र मेरे बैंक बैलंस पर है। जीवन शैली में कितना अन्तर आ गया है। आज कल हर बच्चे को अलग अलग तौलिए चाहिए। अलग कमरा चाहिए। हम आठ बहन भाई एक ही तौलिए से काम चला लेते थे।'

उसने प्रथम तल पर पहुंचते ही घंटी बजाई।

अन्दर से कविता बाहर आई। ससुर के पांव छूने के बाद उस ने बैग पकड़ा और बिना किसी संकोच के कहा -पापा, आप बुरा न मानना। दौड़ कर पास वाली मार्किट से पांच किलो आटा तो ले आओ। आज इन्हें दफ्तर में बहुत काम था, इस लिए बाजार नहीं जा पाए।

कबीर ने कुछ नहीं कहा। उसने केवल कविता की ओर आश्चर्य से देखा। आह कितने बेबाक हैं ये शहरी लोग। उसे लाहौरी राम की याद आ गई। किसी ने उस के नाम पत्र दे दिया था कि कबीर और उस की धर्म पत्नी आंए तो उन्हें घर पर ठहरा लेना।

उन्हें मसूरी जाना था। एक रात देहरादून में काटनी थी। वह मित्र की चिट्ठी ले कर लाहौरी राम के घर पहुंचे। चिट्ठी देखते ही उसने कहा- मैं नहीं जानता यह व्यक्ति कौन है, जिसने तुम्हें चिट्ठी दी है।

कबीर ने कई सन्दर्भ दिए परन्तु उस ने पहचानने से साफ इन्कार कर दिया।

वह बहुत परेशान हुआ था। उन दिनों आम आदमी कहां ठहरते थे होटलों में। दूर पार की पहचान वाले के पास रुक जाना आम बात थी लेकिन आज कल तो सभी होटलों या गैस्ट हाउस में ही ठहरना पसन्द करते हैं। उसे याद है वह रात उसे रेलवे स्टेशन पर ही बितानी पड़ी थी।

कविता बिना किसी उत्तर की प्रतीक्षा किए अन्दर चली गई थी। कबीर धीरे-धीरे सीढ़ियां उतर रहा था।

वह बार-बार अन्दर बाहर आ जा रहा था। वह शायद अपनी मां से कुछ कहना चाहता था परन्तु कह नहीं पा रहा था। उस की जीभ पर झेंप चिपक गई थी। मां ने ही पूछ लिया - बेटा, क्या बात है ? तुम परेशान लगते हो।'

तभी कविता ने अन्दर आते हुए बिना किसी भूमिका के कहना शुरू किया- मां जी पैसे पेड़ पर तो नहीं लगते। और फिर बीमारी पर खर्च तो निरन्तर झरते हुए पत्तों की तरह होता है।

आदित्य उसे अवाक देखता रहा। बोला कुछ नहीं।
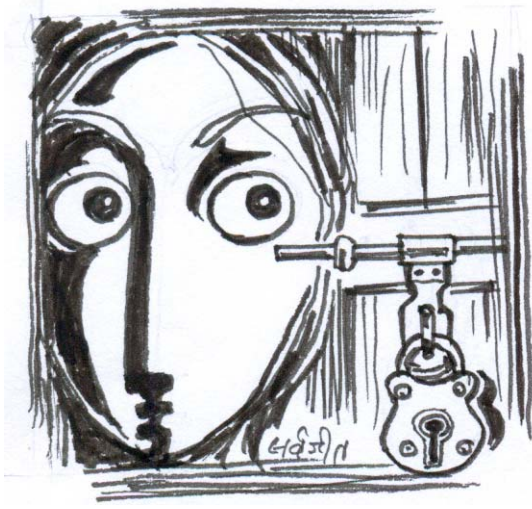
'तो फिर क्या चाहती हो?'

'मां जी, सारा खेल पैसे का है। रिइम्बर्समेंट आते आते तो देर लगेगी। फिर नेहा ने नया पंगा डाल दिया है। पति से लड़-झगड़ कर घर आ बैठी है। एक साल हुआ नहीं। अब डाइवोर्स चाहती है।'

'तो रिइम्बर्समेंट के पेपर भर दो न।'

'सरकारी पैसा है, इतनी आसानी से नहीं मिलता।'

'आश्रितों के बिल जल्दी पास नहीं होते।' आदित्य ने दबी ज़बान में कहा। थोड़ा रुक कर कुछ सोचने का अभिनय करते हुए बोला- दरअसल पापा ने तुम्हारे खाते में बहुत सा सरप्लस मनी डाल रखा है'। वह साहस नहीं बटोर पा रहा था। वह जानता था कि वह झूठ बोल रहा था परन्तु कविता का उस पर दवाब था। वास्तव में जब हमारे मन में चोर होता है, तो उस की उपस्थिति हमें किसी न किसी रूप में झकझोरती अवश्य है, भले ही हम स्वार्थ वश मन की उस बात को अनसुना कर देते हैं।

ओम समझ गई। वह जानती है कि उस का बेटा अपने बाप से पैसा निकलवाता रहता है, कभी कोई बहाना बना कर, कभी कोई। अब उस की नजर बुढ़ापे के लिए रखे पैसे पर टिक गई है। वह सोचने लगी कि खुद इतना पैसा कमाने वाला बेटा भी पैसे के लिए जीभ लपलपाने लगा है। शायद मां बाप का पैसा भी बच्चों को सरकारी पैसा लगने लग जाता है। दरअसल बिगाड़ा तो खुद इन्होंने ही है।

'फिर क्या ? वह तो किसी और काम के लिए रखे हैं। फरीदाबाद वाला जो प्लाट बेचा था, उस के पैसे भी तो तुम्हारे पास ही हैं। उस में से खर्च कर लो ।' ओम ने सुझाया।

'मां, वह तो मैंने बच्चों की शादियों के लिए फिक्सड डिपाज़िट में रख दिए। कुछ अपने पी पी एफ में जमा करवा दिए। और फिर रवि अमरीका में एडमिशन लेना चाहता है।

'सो तो ठीक है परन्तु तुम्हारे पापा ने सब कुछ तो तुम्हें दे दिया है। तुम इतने बड़े अफसर हो। खुद भी कुछ करना चाहिए। हम ने तो उम्र भर पेट काट-काट कर जो पैसा जोड़ा , वह सब आप लोगों को दे दिया। अभी लड़कियों को तो कुछ भी नहीं दिया ; ओम की; आवाज़ में उपालम्भ भी था और एक आक्रोश भी।

कविता ने अपनी सास की बात अनसुनी करते हुए कहा - मां जी, आप चलने फिरने लायक हो गई , यही क्या कम है। घुटने बेकार हो जाएं तो ज़िदंगी बेकार हो जाती है। अब इतना पैसा लगा है, तो उस की रिइम्बर्समेंट तो लेनी ही है न। सरकारी पैसा मिलता है, तो क्यों छोड़ें।"

'तो ले लो न कौन रोकता है।' ओम ने सहज भाव से कहा।

'सरकारी पैसा ऐसे ही थोड़े मिल जाता है। इस के बड़े सख्त कायदे कानून होते हैं।' वह फिर बोली।

'तो कायदे कानून से भर दो न कागज़'।

'रिइम्बर्समेंट तो हो जाएगी लेकिन मां तुम्हारे अपने खाते में ज्यादा पैसे रहेंगे, तो बिल पास नहीं होगा।' भोली सी सूरत बना कर आदित्य ने कहा।

'फिर क्या चाहिए ?'

'तुम्हारे खाते में जो बीस लाख जमा हैं न । उसे टेम्पोरेरेली मेरे खाते में डाल दो। जब मेडिकल बिल का भुगतान हो जाएगा तो मैं पैसा वापिस आप के खाते में डाल दूंगा। आप इस टरांस्फर वाउचर पर हस्ताक्षर कर दो। फिर सब ठीक हो जाएगा।'

ओम ने क्षण भर के लिए चौंक कर देखा लेकिन फिर संभलते हुए बोली - मैंने तो ऐसा कानून कभी देखा सुना नहीं। तुम्हारे पापा से पूछ लूंगी।

वह जानती है कि एक बार पैसा गया तो फिर तो वापिस आने का प्रश्न ही नहीं। आज तक इस ने कोई पैसा हाथ पर नहीं रखा और न ही कभी ले कर लौटाया है।

कविता को लगा बना बनाया खेल बिगड़ गया परन्तु सोचा जरा चालाकी से काम लेना होगा। सोने का अण्डा चाहिए तो मुर्गी को पुचकारना भी तो होगा।

सीढ़ियां चढ़ते-चढ़ते वह हांपने लगा था। जब भी वह किसी से अपने दम चढ़ने की बात करता तो तुरन्त सलाह मिलती कि यह तो नामुराद बीमारी दमा है, जिस का कोई सहज इलाज नहीं। वह चुप हो जाता।

कबीर खड़ा देखता रहा। आर के पुरम की बत्तियां झिलमिल झिलमिल कर रही थी। उसे लगा कि वह गलत दरवाज़े पर आ कर खड़ा हो गया था। कैसे लोग हैं, जो समय पर रसोई का सामान भी पूरा नहीं रखते। मैं छः सौ किलोमीटर का सफर कर के आया हूं और आते ही हुक्म मिल गया कि पहले आटा लाउं तो रोटी मिलेगी।

वह धीरे-धीरे सीढ़ियां उतरने लगा।

घर में कोहराम मचा हुआ था। कबीर वापिस आ गया था। भाइयों को यह ज़रा भी अच्छा नहीं लगा । राजन ने तो कहा था- इतना पढ़ लिख बीमारी चिपक गई। मैं ड्रिल करता तो सांस फूलने लगता। हांप कर बैठ जाता परन्तु यह सब तो फौज मे नहीं चलता। सो वापिस आ गया हूं।

वह हैरान था कि उस के भाइयों में उसके प्रति जरा भी हमदर्दी नहीं थी। वह तो उन्हें अवांछित लग रहा था। मानो वह सब का हक छीन लेगा।

पढ़ लिख कर भी अगर घर में ही बैठना था, तो व्यर्थ में क्यों इतना खर्च करवाया।

कबीर सेना में भर्ती हो गया था। बहुत खुश था। सेना में मिलने वाली सुख सुविधाएं भला किसे अच्छी नहीं लगतीं। अनुशासन भरा जीवन। लेकिन दो साल बाद ही उसे डिस्चार्ज दे दिया गया क्यों कि वह अनफिट घोषित कर दिया गया था। उस ने कहा- मैं कब वापिस आना चाहता था पता नहीं कहां से सांस की नामुराद बीमारी लग गई।

मां बाप के लिए तो सभी बच्चे बराबर होते हैं। बूढ़े पिता ने पूछा- बच्चा, क्या करना चाहते हो। मैंने तो परमात्मा का लाख शुक्र मनाया था कि तुम्हारी सरकारी नौकरी लग गई परन्तु कौन जानता था कि तुम यहीं लौट आओगे। तुम्हीं बताओ मैं तुम्हारे लिए क्या करूं ?"

'आप मुझे भी थोड़ी ज़मीन खेती के लिए दे दें, तो काम चल जाएगा। बाद में कोई नौकरी मिल गई तो देख लूंगा।'

'बावड़ी के पास वाली ज़मीन ही खाली है, वह ले लो। वैसे है तो पथरीली लेकिन उसे खेती लायक बनाया जा सकता है। थोड़ी मेहनत ज़्यादा करनी पड़ेगी।'

'मुझे मंजूर है। खाली तो मैं बैठ नहीं सकता।'

उसने खूब मेहनत करनी शुरु कर दी। जल्दी ही उस के अन्न के भण्डार भरने लगे परन्तु जेब में पैसे फिर भी नहीं होते थे कुछ खरीदना हो या बच्चों को फीस आदि के लिए पैसे भेजने होते तो वह इन्तजाम तो कर लेता परन्तु थोड़ी मुश्किल जरुर होती।

घर में कोई उत्सव था। उस के सेना वाले दोस्त भी आए हुए थे। बातों ही बातों में रमणीक ने कहा- कबीर, कई बार मेरा मन होता है कि मैं भी फौज की नौकरी छोड़ कर खेती बाड़ी शुरु कर लूं। कितना सुखमय एवं शान्त जीवन होता है और स्वतंत्र भी।"

'बात तो ठीक है परन्तु ऐसी गलती मत कर बैठना। ठीक है खेती तपस्या है । इसमें शान्ति भी है और स्वतंत्रता भी। परन्तु किसान की जान तो महाजन के पिंजरे में बन्द रहती है।

'क्या मतलब ?'

'किसान के पास हार्ड कैश तो होता नहीं। अनाज है लेकिन यह मण्डियों में जाएगा। महाजन की कृपा होगी, तभी खरीदा जाएगा। तुम्हारी तनख्वाह तो हर महीने की पहली तारीख को सिरहाने के नीचे पड़ी होती है।' कबीर ने टिप्पणी की।

'वेतन भी तो काम करने पर ही मिलता है।'

' सो तो ठीक है परन्तु आज भी इतने किसान आत्महत्या क्यों करते हैं ? जानते हो 'पूस की रात' का हल्कू आज भी महाजन की 'बाकी' चुकाते चुकाते मर जाता है पर बाकी है कि खत्म ही नहीं होती। फर्क सिर्फ इतना है कि आज बैंक महाजन बन गए हैं और उन के रिकवरी एजेंट यमदूत।" कबीर रुआंसे स्वर में बोला था।

गटारियां मस्ती से खेतों में कीड़े मकौड़े चुग रही थीं और कबीर उन्हें खड़ा गडरिये सा निहार रहा था अपलक।

वह आया तो इस बार ओम ने फिर बात छेड़ दी कि बेटियों को भी उन का हिस्सा मिलना चाहिए।

आदित्य भड़क उठा - कैसा हिस्सा ? उनके विवाह पर इतना तो खर्च कर दिया गया है। अब और क्या देना बाकी है ?"

'खर्च तो तुम्हारे विवाह पर भी हुआ है।' कबीर ने कहा।

'यदि आपने जमीन या घर उन के नाम किया तो मुझ से बुरा कोई नहीं होगा। पहले ही आप ने तीन लाख रुपये बाजार में डुबो दिए हैं। ज्यादा ब्याज के लालच में बाजार में पैसा फैंकना कहां की अक्लमन्दी है।' बेटे के तेवर ही बदले हुए थे।

'यदि आपने जमीन या घर उन के नाम किया तो मुझ से बुरा कोई नहीं होगा। पहले ही आप ने तीन लाख रुपये बाजार में डुबो दिए हैं। ज्यादा ब्याज के लालच में बाजार में पैसा फेंकना कहां की अक्लमन्दी है।' बेटे के तेवर ही बदले हुए थे।

कबीर को बुरा तो बहुत लगा लेकिन वह चुप ही रहा । बोला - वह मेरा पैसा है। तुम्हारे से तो नहीं लिया। 'यह मेरी बनाई कमाई हुई जायदाद है। मैं चाहूं तो तुम्हें भी हिस्सा न दूं।'

'तो क्या छाती पर रख कर ले जाओगे ? या पड़ोसियों को खुश कर जाओगे ?' बौखलाया हुआ आदित्य बोला था। और हरि पाधे का हाल तो आप ने देखा ही है । बेटों ने ही उसे पंखे से लटका दिया था। और बाद में उन में से एक बहन ने अपने भाई को ही ...।"

कबीर सोचने लगा कि उसने गलती की। दरअसल इज़्ज़ीमनी मिलते रहने से इन्सान की प्यास वैसे ही बढ़ती है जैसे नमकीन पानी पीने से प्यास भड़कती है। आदित्य नहीं जानता उस के पापा ने किस प्रकार डाक घर के खाताधारकों का एजेंट बन कर कैसे पैसा कमाया। बस उसे तो पता है कि पापा से जब भी जितना मांगा उस से दुगुना तिगुना ही मिला। अब लहू मुंह को लग गया है, तो पैसा न मिलने पर तल्खी भी दिखाने लगा है।

मेज़ पर पड़ी गुड़ की पेसी और उस से लिपटी असंख्य काली भूरी चींटिया। यह उनके लिए दान पुन्न ही तो है। और मां-बाप से लिपटी सन्तान। उन्हें पैसा देना दान पुन्न ही है क्या? या रैंज़म। शब्दों का हेर फेर हो सकता है परन्तु बात तो वहीं पहुंच जाती है।

आदित्य आता तो कबीर और ओम एकदम खिल जाते। मां बाप के लिए तो सन्तान सुख सब से बड़ा सुख होता है लेकिन कभी-कभी कबीर को लगता कि बेटे का व्यवहार अलग-अलग समय पर अलग-अलग होने लगा। कभी वह कठोर शब्दों का प्रयोग करता और कभी बिलकुल कोमल पदावली का। इस बार वह आया तो बड़ा मिठास भरा था। बोला - पापा, मां के घुटनों में तकलीफ बढ़ गई लगती है। मैं चाहता हूं कि मैं उन का चैक अप दिल्ली के किसी बड़े अस्पताल में करवा दूं।"

कबीर सोचने लगा बात तो ठीक है परन्तु पिछली बार बात चली थी तो कविता ने कहा था अब तो पहाड़ में भी सुपर स्पैशिलिटी अस्पताल हैं। शायद वह नहीं चाहती कि कोई उस के पास दिल्ली में ठहरे हालांकि आदित्य को बड़ा घर मिला हुआ है, पांच बैड रूम वाला। उसने कहा- यहीं करवा देंगे। दिल्ली बहुत दूर है।

'पापा, क्या बात करते हो। बस या टैक्सी में यदि सफर मुश्किल लगता है, तो हम बाई एयर भी जा सकते हैं।' उसे पता था पैसा तो बापू ने ही देना था।

ओम ने कहा-दर्द तो सचमुच बहुत होता है परन्तु डर भी लगता है कि यदि आप्रेशन के बाद भी ठीक न हुआ तो ? मिसेज़ हांडा ने दोनों घुटनों का आप्रेशन करवाया और बिलकुल ही बैठ गई।"

'सब के साथ ऐसा थोड़े होता है। बाकी अपने अपने भाग्य की बात है।' आदित्य ने कहा।

फैसला दिल्ली के ही पक्ष में हुआ।

जाने से पहले आदित्य ने कहा - पापा, मम्मी की चैक बुक और अपना ए टी एम दे देना। कोई एमरजेंसी हो सकती है।"

पिता ने पुत्र की ओर घूर कर देखा परन्तु कहा कुछ नहीं।

पैसा लेना हो तो इन्सान कितना मधुर हो जाता है। और यह कोई नई बात तो नहीं। दरअसल आदत तो खुद कबीर ने ही बिगाड़ी थी। बेटा क्लास वन अधिकारी है। हर वर्ष आय कर भी भरना होता है। एक बार उस ने कह दिया था- बेटा अगर जरुरत हो तो इन्कम टैक्स भरने के लिए पैसे मुझ से ले लेना। फिर तो उसे चटक ही पड़ गई थी। वह न केवल टैक्स के लिए हर साल पैसा मंगवा लेता बल्कि पीपीएफ में जमा करने के लिए भी लाख दो लाख रुपये मंगवा लेता। कोई न कोई बहाना बना कर पैसा मंगवाना आम बात हो गई थी। बाद में कबीर को पता चला कि कविता अपने मां बाप के लिए भी उसी पैसे का उपयोग कर लेती थी।

0 0 0

कबीर बड़ा दुखी होता परन्तु कर कुछ नहीं सकता था। आदित्य के लिए टकसाल खुल गई थी।

ओम का एक घुटना बदल दिया गया था और आदित्य ने कोई तीन लाख रुपये अपनी मां के खाते से निकाल लिए थे। उसने पूरी बिरादरी में यह सूचना फैलाने में कोई कोर कसर न छोड़ी कि आदित्य ने अपनी मां का इलाज एम्ज़ में करवाया है और अब उस की मां घोड़ी की तरह दौड़ सकती है।

सब ने कहा बेटा हो तो ऐसा। कलयुग में अन्यथा कौन किस की परवाह करता है।

अब घर में ओम थी जो चौबीस घण्टे अपने कमरे में बन्द रहती और कविता को मटरगश्ती के लिए खूब टाइम मिल जाता। थैरेपी के लिए एक महिला आती और ओम उस से ही बातचीत कर के सन्तुष्ट हो जाती।

ओम को एक पुराना फोन आदित्य ने दे दिया था और वह अपने बहन भाइयों से कभी कभार बात कर लेती। उस का मन वापिस अपने घर आने को करता लेकिन अभी उपचार चला हुआ था और फिर बीच-बीच में कबीर भी आ जाता था।

पहाड़ में घरों को ताला लगाने की जरुरत बहुत कम पड़ती है लेकिन दिल्ली में लोग अपने आप से भी डरते हैं। और अगर एक ही सदस्य ने पीछे घर पर रहना हो तो वे बाहर से ताला लगा जाते हैं। पहली बार उन्होंने ओम को ताले में बन्द किया तो वह चिल्ला उठी थी- नहीं मेरा सांस घुट जाएगा। मैं ऐसे बन्द नहीं रह सकती। मैं तो मर जाऊंगी।"

आदित्य ने कहा था- मां, चिन्ता न करो। अंदर से भी यह चाबी से खुल सकता है।"

'जब मैं घर में हूं, तो ताला लगाते ही क्यों हो ?' उस ने ताला नहीं लगाने दिया था।

0 0 0

आर के पुरम के सेक्टर चार में पहुंचते पहुंचते रात के नौ बज गए थे।

वह सरकारी आवास के बाहर खड़ा था। हैरान परेशान। मुख्य द्वार पर ताला लटका हुआ था।

फिर उसे लगा घर के अन्दर कोई हलचल थी। एक छाया बेचैनी से इधर उधर घूम रही थी। कबीर चिल्लाया -ओम, ओम लेकिन कोई जवाब नहीं आया ।

थका हारा कबीर धड़ाम से फर्श पर बैठ गया ।

पुष्पांजलि, राजपुर-पालमपुर,
हिमाचल प्रदेश -176061
मो. 0 94180 80088

कहानी

कन्या

◆ श्याम सिंह घुना

यह समाचार संपूर्ण ग्राम में क्षणभर में पहुंच गया कि देवदास के घर में एक शिशु ने जन्म लिया है। देवदास के पुत्र को विवाह किए पंद्रह वर्ष हो चुके थे। देवदास स्वयं भी पचपन वर्ष का हो चला था किंतु इस समय पर्यंत घर का पालना सूना पड़ा था। पास में देवदास के बड़े भाई का परिवार था जो किसी बेल के समान बढ़ता ही जा रहा था। इतनी प्रतीक्षोपरांत भी परिवार में जन्म लिया तो एक कन्या ने इस पर भी परिवार की प्रसन्नता की सीमा न थी। अपितु गांव में प्रसन्नता की एक लहर सी दौड़ गई थी। प्रथा अनुसार गांव के निवासी प्रसन्न्ता प्रकट करने व बधाई देने सतत् आ-जा रहे थे। आने-जाने वालों का तांता लगा हुआ था। बधाई देने वाले दूब के साथ एक-एक रुपया हाथ में पकड़ाते और उसमें एक रुपया मिलाकर देवदास दो-दो रुपये प्रत्येक बधाई देने वाले को लौटा रहा था। साथ में गुड़ के ढेले अपने हाथों से छोटे बड़े को दिए जा रहे थे।

यहां दूर्वा तथा रुपया देकर बधाई की प्रथा केवल प्रथम पुत्र के जन्म के समय व्यवहार में लाई जाती है। जब लोग पूछते हैं कि क्या हुआ, तो उत्तर मिलता है, “बधाई हुई है।” किंतु इस परिवार में पुत्री पैदा होने की घटना गांव भर में किसी के घर पुत्र जन्म से कम न थी।

मंदिर का पुजारी, कुल पुरोहित, गांव का तुरी, बढ़ई, लोहार, जो भी आया, प्रसन्नता के उपलक्ष्य में दी गई कांसे की थाली, ऊन की पट्टी, ओढ़नी, पट्टू, कंबल, गाय या बकरा, कोई न कोई वांछित उपहार लेता गया।

पीतल के पतीले को सहर्ष स्वीकारते हुए तुरी ने सहर्ष कहा, “हमारा पड़ता है जी।”

नगाड़े पर दमामे की चार-छह चोट मारकर घड़ी भर तुरी ने शब्द किया और पतीले का हकदार हो गया। दूसरा एक ओढ़नी को समेटता हुआ चहका-

“यह हमारा हक है जी।”

“एं हां भई, तुम्हारा आज हक है, यह तुम्हारा हुआ।”, स्वभावश कम बोलने वाला देवदास बोला।

सूर्य अस्ताचल दिशाटन करने चला। धीरे-धीरे भीड़ छंटने लगी। लोगों का आना-जाना समाप्त हो गया। शेष रह गया एक गढ़वाली ज्योतिषी। गढ़वाली ज्योतिषी इस पहाड़ी प्रदेश के कोने-कोने में निवास कर ज्योतिष के टिमटिमाते दीए को पकड़े लोगों की ज्योतिष में सिमटती आस्था को जीवित रखने में अपनी ओर से कोई कसर शेष नहीं रखते।

ज्योतिषी जी कन्या के ग्रहों की जांच-पड़ताल कर रहे थे। पंडित भवानी दत्त अपनी युवावस्था से ही इस क्षेत्र में रहते चले आ रहे थे। एक दो माह के लिए सर्दी में घर हो आने के शेष सारा वर्ष यहीं पंडिताई करते। ज्योतिष, जप-पूजन, तंत्र-मंत्र पंडिताई संबंधित इन कार्यों के अतिरिक्त आयुर्वेदिक चिकित्सा का पंडित जी ने लोगों का पर्याप्त विश्वास प्राप्त कर रखा था।

“यजमान जी, यों तो कन्या के ग्रह उच्च हैं किंतु नक्षत्र किंचित अड़चन उत्पन्न करता है।” पंडित जी ने भूमिका बांधी।

देवदास, उसकी पत्नी देवकी तथा उनका एकमात्र पुत्र रैदास सम्मुख उत्सुक बैठे थे। प्रतीक्षा कर रहे थे कि कब पंडित भवानी दत्तजी कन्या के भाग्य का निर्णय सुनाते हैं। पंडित जी की इस अस्पष्ट भूमिका से उद्विग्न हो देवदास ने पूछा-

“अपनी जान के लिए तो ठीक है न पंडित जी?”

“तनेश, धनेश होकर भाग्य भवन में बैठा हुआ है, अपने लिए तो ठीक होनी ही चाहिए... अपने लिए तो ठीक है।”

“तो फिर क्या अपने पीठ पीछे वाले के लिए खराब है।” देवकी ने प्रश्न किया।

भ्रातृ स्थान बता रहा है कि इसके पश्चात् या तो कोई संतान होगी ही नहीं, यदि गर्भ ठहर ही गया तो सुख है। भाई का सुख है।”

“भाई होगा। अच्छा, इसको कैसा घर मिलेगा? कैसा वर मिलेगा। संतान होगी या नहीं”, यह भी देखो। देवकी ने स्त्री सुलभ उत्सुकतावश एक साथ अनेक प्रश्न कर डाले।

“वर की खोज कभी फिर हो सकती है। सबसे पहले यह देखिए कि यह जीवित भी रहेगी या नहीं?” देवकी ने पत्नी की बात काटते हुए कहा।

किंतु पंडित जी भी अनुभवी थे। माइयां प्रसन्न रखी जाएं तो

वह पंडितजन को आशा से अधिक अन्न धन दे डालती हैं। तत्काल कहने लगे, "हां-हां, माता जी ठीक ही तो कह रही हैं। यही तो मैंने देखना है आज। अन्यथा मेरा काम क्या है?"

देवकी का जी कुछ ऊपर आया।

"आप देखिए पंडित जी। घर-वर ही तो कन्या का भाग्य है। यह तो मुझे हमेशा यों ही टोक देते हैं।" वह शिकायत सी करती हुई बोली।

"अभी बताए देता हूं माता जी। आप चिंता न कीजिए", पंडित जी पर्चे का गूढ़ अध्ययन करने की मुद्रा में बोले।

"पंडित जी यह भी देखिए कि कोई पूजा तो न करवानी पड़ेगी।" देवदास ने पूछा।

"सत्य वचन है यजमान। जन्मकुंडली को देखने-जांचने का यही तो प्रयोजन है। कहा भी है, पूजग्रह जहां हम चाहें वहां रहें।"

कुछ लोग ज्योतिष को पाखंड मानते हैं। यदि ऐसा होता तो सूर्य उदय-अस्त हमारी जंत्रियों में निर्दिष्ट समय पर न होता। चंद्र व सूर्य ग्रहण जंत्री में की गई भविष्यवाणी अनुसार न होता... यजमान जी पूजा की आवश्यकता है ही। कब होगी अभी बताए देता हूं। कुछ देर गहनता से जांच की तत्पश्चात बोले;

"एक, दो, तीन, चार, पांच, छह-सात! माता जी कन्या के सप्तम केतु है। आठ, अष्टम मंगल है। कन्या मांगलीक भी है।। आपके इधर दूध पीती बालिकाओं के विवाह की रीति है। विवाह में शीघ्रता न करना। जब बालिका पूर्णतया जवान हो जाए, तो केतु की दशा बीत जाने पर 22, 23 वर्ष बीत जाने पर ही विवाह करवाना। गर्भ दशा केतु भी है। उपरांत 21-22 वर्ष तक रहेगा किंतु बाल विवाह अर्थात् केतु की दशा में विवाह होगा तो निश्चित पति को मृत्युतुल्य कष्ट है।"

"मांगलीक है तो पति जीवित ही कहां रहेगा?" देवदास बोला।

"आप यजमान जी मेरे कहे अनुसार चलें तो केतु की दशा बीत जाने के बाद ऐसा कोई भय नहीं। किंतु यह मूला नक्षत्र भी तो कम नहीं।"

"मूला, मूला से तो मूल नाश होता है पंडित जी! आप स्पष्ट क्यों नहीं कह देते कि...." देवदास ने कहा।

यजमान जी, एक ही बात पकड़ कर सारा भविष्य उसी से आंकना हो तो एक अनाड़ी पंडित भी जन्मकुंडलियां पकड़े केंद्र में इसके गुरु हैं। सात, आठ, नौ, दस, दसवें गुरु यानी राजयोग। जहां जाएगी उस घर में राज करेगी। मूला की शक्ति गुरु ने नहीं रखी। कहते भी हैं- 'किम कुर्वन्ति ग्रहे सर्वाः, केंद्रे यस्य वृहस्पति।' जिसके केंद्रस्थ गुरु हो उसके सारे कष्टी ग्रह भी क्या कर सकते हैं। अर्थात् कुछ नहीं कर सकते। केंद्र स्थित एक भी जीव सब दुष्ट एवं पापी ग्रहों की शक्ति क्षीण करने में समर्थ है। फिर भी आपने ठीक ही सुना है यजमान कि मूला में जन्मा जातक यों आत्मनाशक होता है, जीवित रहे तो कुल नाशक होता है। यह भी कहा है। हां, जन्मकालीन योग खाली तो नहीं जाते किंतु जन्मांगों का अध्ययन सब ओर से किया जाता है। एक ही आधार पर भविष्य निर्धारित करना मूर्खता है।"

"पूजा के बारे में तो आपने कुछ कहा ही नहीं", देवदास ने कहा।

"हां छोटा सा पूजन आज करना होगा। शेष विधिवत् पूजन 21 दिवसोपरांत होगा जब पंडित, ब्राह्मण आपके घर भोजनादि करने के अधिकारी हैं। आज नवग्रह का एक पूजन कर देंगे।"

"क्या-क्या सामग्री मंगाएं?"

"सामग्री? सामग्री में व्यर्थ ही व्यय क्यों करेंगे। समय भी कहां है हाट-बाज़ार जाने का? पूजन की गांठ के लिए गेहूं, माश और कपड़ा तो लगेगा। आप कहां भागते फिरेंगे इस समय। कपड़ा मेरे पास निकल आएगा। इसका मोल दे दो अन्यथा दान-पूजा विफल रहती है। काम सारा विधिवत हो तो ही फलीभूत होता है।

"दान का तो एक दाना पचाना भी कठिन होता है। राहू-केतु ग्रहों का दान वही ब्राह्मण पचा सकता है जो नित प्रातः एक अध्याय गीता का पढ़कर नित्य कर्म करे।" पंडित जी ने दलील देकर समझाया।

"बेटा जा और गेहूं माश ले आ।" देवदास ने अपने बेटे रैदास को कहा।

रैदास गया तो पंडित जी ने पूजा की सामग्री सजानी आरंभ कर दी।

"तनिक आटा व हल्दी भी मंगवा दीजिए। मंडप तो बनाना पड़ेगा।"

रैदास को आवाज लगाकर देवदास ने इस मांग की भी सूचना दे दी।

गेहूं माश आ गए। पंडित जी ने एक ही कपड़े के दो किनारों पर रखवा दिए।

"यजमान जी कलश में कुछ पानी दीजिए। आप तो समझदार हैं। सूना कलश ठीक नहीं होता। गठड़ी में भी और कपड़े की कीमत भी। दो गांठें हैं न। दो कपड़ों की कीमत समझो। अलग-अलग।" पंडित जी ने बिना दम लिए कह डाला।

देवदास ने श्रद्धा से एक चांदी का रुपया कलश में डाला। चांदी की चवन्नियां अंत में, दो-दो रुपये के नोट दोनों गांठों में रख दिए।

"अच्छा अब कन्या को मंगवाइए। संकल्प होगा। पुष्प, दूर्वा, अक्षत, शक्कर, चावल के दाने, घी भी लगेंगे।"

रैदास भागा-भागा गया। कुछ समय पश्चात् कन्या को लिए लौटा। उसकी पत्नी पीछे-पीछे पूजा का सामान लेकर आई। पंडित जी ने बिना समय गंवाए दूर्वा द्वारा अर्घा से पानी ले कन्या पर छींटे मारे और मंत्र जाप करने लगे-

"ओम् अपवित्र पवित्रो वा सर्वावस्था अङ्गतोऽपि या स्मरते पुण्ड री काक्षम् बाह्यभ्यान्तरः शुचिः शुचिः"

यजमान कन्या के हाथ में सवा रुपया दे दो। पुष्प, अक्षत, दूर्वा और शक्कर... हां इस प्रकार... ठीक है-

"हरि ओउम्..."

पंडित जी ने मंत्र पर मंत्र जपने आरंभ किए। बीच-बीच में जल के छींटे चावल के दाने छिड़काने का क्रम मंत्रोच्चारण के साथ चलता रहा।

"गोत्र क्या है?"

"काश्यप।"

"काश्यप गोत्रे काश्यप गोत्रोत्पन्न अमुक राशौ... बोलो मम।"

"मम", आगे मंत्र जाप पूरा कर पुनः पंडित ती ने कहा, "छोड़ दो।"

और दोनों हाथ फैलाकर अपने हाथ में ले लिया।

"ले जाओ कन्या को... तनिक ठहरो।"

ग्रंथियों को कन्या के ऊपर फिराया और पुनः बोले, "ले जाओ अब।"

"अच्छा यजमान मुझे अब आज्ञा दो। अठाईस दिन बाद हवन होगा। पूजा भी।"

पंडित जी सामग्री एकत्रित करने लगे।

"बेटा रैदास, वह ओढ़नी भी लेते आओ। मैंने पंडित जी के लिए रखी है। आटा भी ला। भोजन तो इन्होंने किया नहीं। गुड़, घी भी ले आ। अपनी कुटिया में बना देंगे।" देवदास ने रैदास को ऊंचे स्वर में सूचित किया।

"यजमान, क्यों लज्जित करते हो? सौ बार खाया है। और भी खाना है। आज नहीं खाया तो भला कौन अनर्थ हो गया... चलो यजमान प्रसन्न रहो। कन्या चिरंजीव हो। ईश्वर राजी रखे। भगवान आपको सुखी रखे। धन्य हो यजमान। दिल हो तो ऐसा। माता जी यजमान दिल वाले हैं। मैं प्रातः से देख रहा हूं कोई कसर नहीं रखी इन्होंने देने में। कोई खाली नहीं गया। अवश्य सुनेगा ईश्वर यजमान के मन की पुकार... अच्छा ले आए..."

"रैदास को आते देख पंडित जी ने देवदास का स्तुतिगान बंद कर दिया। एक कपड़ा निकाला। दान का अन्न आदि संभाला और बांधने को हुआ। तभी देवदास ने पांच रुपये का नोट आगे कर किया।

"इसकी क्या आवश्यकता है। हो तो गया।" पंडित जी बोले।

"दक्षिण।" देवदास ने कहा।

"यजमान जी दक्षिणा ही दक्षिणा है यह सब। अच्छा।" दोनों हाथों से नोट अंगूठे नीचे दबाकर माथे तक लिया और बोले-

"जय हो नारायण। यजमान की कामना पूर्ण हो। जय हो नारायण। कन्या राजी रहे।"

"अच्छा यजमान जी राम राम।" और अपनी तोंद सी झोली पीठ पर लादकर कूच करने लगे।

"अच्छा राम राम पंडित जी। अठाईस दिन बाद बच्ची पर पूजन करने अपने आप आ जाना अब आपने।"

"हां-हां अपने आप। और तो। इसका भी न्योता देना पड़ेगा क्या। यह मेरा काम है। निश्चिंत रहो यजमान। मैं स्वयं पहुंच जाऊंगा। अच्छा राम राम।" और पंडित जी चल दिए।

संध्या बीत चली थी। गांव का शोर तथा अपने स्थानों पर बैठते पक्षियों का कलरव शांत हो चला था। अंबियों के बीच से देवदास के आंगन में चंद्रमा मुस्कुरा रहा था। मानो उसे भी देवदास के घर कन्या के जन्म लेने पर हार्दिक प्रसन्नता हुई हो।

देवदास, जो पंडित जी को विदा करने पीछे-पीछे बरांडे में आया था। प्रकृति ने इस परिवर्तन का आभास किए बिना न रह सका। चांदनी में चमकती वह नदी, वे खेत, वे मकान की छतें, वन--समस्त वातावरण उसे यों लग रहा था मानो उसके घर कन्या जन्म पर समस्त प्रकृति ही हर्षोल्लासित हो।

क्योंकि वर्षों की प्रतीक्षा के उपरांत देवदास के घर में शिशु ने जन्म लिया था इसलिए उसके स्वास्थ्य के बारे में परिवार का चिंतित रहना स्वाभाविक था। तिस पर पं. भवानीदत्त की भविष्यवाणियां, जिसने सबकी चिंता को और भी अधिक कर दिया

वर्षों की प्रतीक्षा के उपरांत देवदास के घर में शिशु ने जन्म लिया था इसलिए उसके स्वास्थ्य के बारे में परिवार का चिंतित रहना स्वाभाविक था। तिस पर पं. भवानीदत्त की भविष्यवाणियां, जिसने सबकी चिंता को और भी अधिक कर दिया था। भविष्यवाणियों का सबके मस्तिष्क पर प्रभाव विद्यमान था।

था। भविष्यवाणियों का सबके मस्तिष्क पर प्रभाव विद्यमान था। मां को रात्रिकाल में बेसुध निद्रा का दौर पड़ता और बालिका को पड़ती तो दादी वृद्धावस्था में नींद में चौकन्नी होने के कारण झट से बहू को जगा देती। स्वयमेव उठकर दादी किसी-न-किसी प्रकार के बालिका की देखभाल के कार्य में जुट जाती, मानो रात नहीं दिन हो। ऐसी मनोदशा में जब बालिका के ग्रहों के बारे की गई भविष्यवाणियां सभी के मन में ताज़ा थी। एक रात दादी की नींद उस समय जागी जिस समय बालिका हर रात स्वयमेव जागा करती थी। किंतु न तो बालिका जागी थी और न ही मां जागी।

कपड़ा हटा कर जब दादी ने बालिका की जांच की तो दादी की सामान्य बुद्धि ने जवाब दे दिया। बालिका निकालने का यत्न कर रही थी। दादी के दिगाम पर तो घड़ों पानी गिर गया। बालिका के समस्त मुखमंडल का रंग स्याह पड़ रहा था। दादी की समझ में जब कुछ न आया तो उसने बहू को जगा दिया। दोनों इस निष्कर्ष पर पहुंचीं कि उनकी लापरवाही के कारण बच्ची को ठंड की शिकायत हो गई है।

"ला, बहू कचूर दे। घोल कर इसे पिलाएं।" भरी सी आवाज़ में सास ने कहा।

दोनों ने बालिका को कचूर पिलाया। उसके प्रभाव को देखती रही। किंतु पर्याप्त समय व्यतीत हो जाने पर भी बालिका की दशा में अंतर न पड़ा। इसके विपरीत दशा बिगड़ती ही रही।

"सयाना जी को जगा दो, सासू।" बहू ने आतुर होकर कहा।

एक दृष्टि बहू पर डाली तथा किंचित विचार कर ही दादी उठकर देवदास को जगाने दूसरे कमरे में चली गई। जाकर किवाड़ खटखटाया और धीमे स्वर में आवाज़ लगाई। देवदास ने ज्यों ही देवकी का स्वर पहचाना हड़बड़ा कर उठ बैठा।

"क्या हुआ? जल्दी बताओ। क्या बात है? क्यों आई?"

"चलो, पोती को कुछ हुआ है।"

घबराहट को लाख छुपाने का यत्न करने पर भी देवदास मन पर काबू न रख पाया। लगभग रो ही पड़ा देवदास। उसने कन्या के जीवित रहने की आशा छोड़ दी। स्वाभाविक था कि उसकी यह दशा देखकर देवकी तथा बालिका की मां भी रोने में उससे पीछे न रहती। तब तक रैदास भी रुदन-क्रंदन सुनकर स्वयमेव अन्नगृह में अपना बिस्तर त्याग कर यहां पहुंच हतप्रभ सा बालिका की दशा देख रहा था। कमरे का निरीक्षण करने के बाद वह बोला-

"यह क्या? सारा कमरा धूएं से भरा पड़ा है। सिंधाली भी आज बंद है। तुम लोगों को घुटन नहीं हो रही?"

अब सबका ध्यान रैदास की बात पर गया। उसने सिंधाली का पत्थर छत पर खिसका कर हवा आने की, बाहर जाने की जगह खोली। उसने देखा कि कुप्पीनुमा लैंप, रेलगाड़ी के इंजन के समान धुएं के छल्ले उड़ा रहा है। कन्या पालने में थी। कुप्पी मां के सिरहाने फर्श पर जल रही थी। प्रकटतः श्वास के साथ मिट्टी तेल का धुआं लैंप से निकल-निकल कर कन्या के गले में प्रवेश कर रहा था। परिणामस्वरूप कन्या की श्वासक्रिया में अवरोग आ गया था।

देवकी जो अभी तक पं. भवानीदत्त द्वारा की गई भविष्यवाणियों में ही अपने दिमाग को उलझाए हुए थी, एकाकए चौंकी और बोली-

"हाय! मैं कितनी भुलक्कड़ हूं। मेरे कारण ही तो यह सब हुआ। कल थोड़ी-थोड़ी वर्षा हो रही थी। मैंने सोते समय सिंधाली लगा दी थी। मैं सो गई थी। पोती को दूध पिलाते-पिलाते बहू को न जाने कब नींद लग गई और ढिबरी जलती रह गई।"

सिंधाली खोलकर दरवाजा भी खुला छोड़ दिया था। अब हवा ने कमरे में प्रवेश किया। धुआं धीरे-धीरे निकलता गया। बालिका को दादी टीन के एक टुकड़े से पंखा झलने लगी थी। बालिका में शक्ति-संचार होने लगा था। सहसा उसने वमन किया। वह ऐसा बार-बार करने लगी। धीरे-धीरे सुध में आने लगी। अंततः उसने आंखें खोलीं और ढंग से सांस लेने लगी। सबकी सांस में सांस आई। बातचीत करने का साहस हुआ।

"कल से सरसों का दीया जलाया करना।" देवदास ने कहा।

"मन से तो मैं हार चुकी थी। मैंने सोचा इसके ग्रह ले गए इसे। आज अठाईसवां दिन था। वही समय जब यह जन्मी थी। मैं सोच बैठी थी कि अब इसके बचने की कोई आशा नहीं।" देवकी बोली।

"अठाईसां दिन था आज क्या? देखो उस पंडित को। कितना झूठ बोलता है। उस दिन कह गया था कि हवन भी करेगा और पूजन भी बिन कहे आकर खुद करेगा। आज मुख तक न दिखाया।" देवदास क्रोध में बोला।

"वाह! वह क्यों आता यहां आज? वह तो मंडुवान गांव में शादी में हाज़िर हुआ होगा। यहां क्या मिलता उसे।" रैदास उठते हुए बोला।

"फिर भी जब किसी के मन में ये लोग शंका उत्पन्न करते हैं तो समाधान करना तो इनका कर्तव्य है... खैर, छोड़ो! ईश्वर की इच्छा सर्वोपरि है। होता वही है जो पूर्व निश्चित है- इसे बुझा दो। जब बालिका जागेगी तभी जलाना।"

यह कहकर देवदास सोने चला गया। बच्ची को बार-बार चूम कर गले लगाकर, मनौतियां करने के बाद उसे पालने में लिटा सास-बहू अपने-अपने बिस्तर में लेट गईं।

गांव लिंगाह, डाकघर झिकनीपुल,
तहसील चौपाल, जिला शिमला-171 211

कहानी

हां भई, जुकाम है

◆ एल.आर. शर्मा

और फिर एक दिन विनोद गुलाटी को जुकाम हो गया। उसका नाक पकी हुई स्ट्राबेरी की तरह लाल हो गया था। वह बार-बार 'आक-छीं।, आक-छीं' कर रहा था। दफ्तर में अपनी कुर्सी पर बैठा ज़रूर था, पर उससे काम नहीं हो पा रहा था। बार-बार रूमाल निकालता, नाक को साफ करता और फिर छींकना शुरु कर देता।

"अरे, तुझे तो जुकाम है" - दर्शन ने उसके पास आकर कहा।

"हां यार, रात से ही हो गया है" - विनोद ने बुझे हुए स्वर में कहा।

इतने में अशोक वोहरा भी पहुँच गया, पूछने लगा - "गुलाटी, क्या जुकाम हो गया है?"

"हां यार, जुकाम ने कल से तंग कर रखा है।"

फिर महेन्द्र बत्रा पैंट को अपनी तोंद के ऊपर खिसकाता हुआ खड़ा हो गया - "अरे गुलाटी, क्या जुकाम हो गया है? तुझे बड़ी देर से छींकते हुए देख रहा हूँ।"

विनोद पहले हीं जबाव देते-देते थक चुका था, चिढ़कर बोला -

"हां भई हां, जुकाम हो गया है।"

दर्शन - "तो फिर कुछ लेते क्यों नहीं।?"

अशोक (विज्ञापन की नकल करते हुए) - "विक्स की गोली लो, छिक-छिक दूर करो।"

महेन्द्र बत्रा - "अरे बेवकूफ, विक्स की गोली तो गले की खराश के लिए होती है। इसकी जरूरत तुझे है। तू ही सारा दिन सुअर की तरह खखारता रहता है।"

दर्शन - "लो अब मिस पूजा भी आ रहीं हैं।"

अशोक - "जाने इसकी शादी कब होगी।"

महेन्द्र बत्रा - "क्यूं, कन्यादान करेगा क्या?"

इतने में पूजा पहुँच गई। बोली - "अरे, ये क्या हाल बना रखा है आपने अपना विनोद जी?"

विनोद (छींकते हुए) - "बस जुकाम जैसा हो गया है।"

पूजा - "जुकाम जैसा नहीं। ये तो भारी जुकाम लग रहा है। कुछ लिया क्या? कुछ लेते क्यों नहीं।?"

अशोक (बुजुर्गों की तरह समझाते हुए) - "जुकाम बिगड़ जाए तो निमोनिया हो जाता है। इसमें आराम करना चाहिए, आराम। गुलाटी बेटा, तू छुट्टी ले ले।"

पूजा - "मैं कहती हूँ विनोद जी, आप विक्स-500 लो, बस जुकाम ऐसा गायब होगा कि ढूंढते रह जाओगे।"

'ढूंढते रह जाओगे', पर मिस पूजा ने इस ढंग से उंगली घुमाई और इस तरह आंखें मटकाई जैसे टीवी के विज्ञापन में वो लड़की करती है।

"वाह, वाह, क्या लहजा है, क्या अदा है" - दर्शन ने चुटकी ली।

महेन्द्र ने पांसा फेंका - "मिस पूजा आप इतनी ... इतनी वो हैं कि आप टी.वी. के विज्ञापनों में काम कर सकती हैं। कर क्यों नहीं लेती?"

पूजा इस प्रशंसा से फूलकर कुप्पा हुई जा रहीं थी।

इतने में शफीक आ गया। बोला - "यार, आप लोगों ने यहां हुजूम इकट्ठा कर रखा है। अभी बॉस आने वाला है।"

दर्शन - "यार, यहां गुलाटी को जुकाम हुआ है, बेचारे का बुरा हाल है, तुझे बॉस की पड़ी है। क्या दफ्तर में कर्फ्यू लगा है?"

शफीक - "अरे भाई, मुझे क्या मालूम कि गुलाटी को जुकाम है? पर जुकाम है तो इलाज भी है। मैं कहता हूँ गुलाटी, तू अभी मेरे साथ चल। हमारे मुहल्ले में हकीम फैय्याज़ हुसैन हैं। अह...ह. ..ह, क्या शफा है उनके हाथ में। ऐसा कभी सुना ही नहीं कि उनकी दवा से कोई मर्ज़ न गया हो।"

महेन्द्र - "मरीज़ चाहे कई चले गये होंगे..."

यह कहकर उसने आसमान की तरफ हाथ किया।

शफीक - "अरे तुझे तो दूसरे के दर्द में भी मज़ाक सूझता है। ऐसी बेरहमी भी कहीं नहीं। देखी! अल्ला न करे तुझे भी ..."

इतने में बॉस पहुँच गये।

"ये क्या मेला लगा रखा है?"

पूजा (इठलाते हुए) - "सर, गुलाटी जी को जुकाम हो गया है।"

बॉस - "गुलाटी काम करेगा तो जुकाम अपने आप दूर हो जाएगा। चलिये, सब लोग अपनी-अपनी सीट पर।"

सब अपनी-अपनी सीट पर चले गए। बॉस अपने केबिन में

विलीन हुए। इतने में बॉस के कमरे से घंटी बजी। रामसहाय चपरासी अंदर गया, फिर एकदम बाहर आकर बोला - "पूजा मैडम, आपको साहब बुलाते हैं।"

विनोद ने छींकते हुए पूजा से विनती की - "मिस पूजा, बॉस से मुझे छुट्टी दिलवा दीजिये प्लीज़। मुझसे बैठा नहीं जा रहा है।"

शफीक- "और मुझको भी। मैं गुलाटी को हकीम फैय्याज़ के पास ले जाकर ही रहूँगा।"

महेन्द्र - "और मुझे भी। मैं अपने इस लंगोटिये यार को अभी इस हकीम के पास जाने नहीं दूँगा। अभी तो बेचारे की शादी को साल भी नहीं हुआ है।

शफीक खा जाने वाली नज़रों से महेन्द्र को घूरने लगा।

अशोक - "वैसे जुकाम के लिए सिर्फ आराम ज़रूरी होता है, सिर्फ आराम। बाकी सब बेकार है। और आराम के लिए मुझसे ज्यादा अच्छी जगह कोई नहीं बता सकता।"

शफीक - "तो बता न यार मेरा मन आज आराम करने का है।"

अशोक - "पहले हकीम फैय्याज़ से जुकाम होने की दवाई खा। जब जुकाम हो जाए, तो मैं आराम की जगह बता दूँगा।"

इस पर सबको हंसी छूट गई।

मिस पूजा - "हां, मैं बॉस को कहूँगी कि दफ्तर में आज ताला लगा दें क्योंकि आज "जुकाम दिवस" मनाया जाएगा" - यह कहकर वह बॉस के केबिन में घुस गई बाहर निकल कर बोली - "गुलाटी जी, साहब बुलाते हैं।"

विनोद - "मिस पूजा, आपने मेरी छुट्टी के बारे में ....."

पूजा - (बीच में ही काटते हुए) - "बात कर दी है। पर आज मेरी चाय का क्या होगा?"

विनोद अंदर ही अंदर जल कर रह गया। सोचने लगा - सब साले स्वार्थी हैं। इस पूजा को न जाने कितनी बार चाय-समोसा खिला चुका हूँ। हमदर्दी तो क्या, आज भी मेरी मजबूरी का फायदा उठाने से बाज नहीं आ रही है। चुड़ैल कहीं की। फिर पूजा के पास जाकर उसके कान में फुसफुसाते हुए बोला - "मैं कैंटीन से समोसे-चाय का कूपन रामसहाय के हाथ भेज दूँगा। औरों से न कहना। बॉस ने छुट्टी के बारे में क्या बोला?"

पूजा - (विनोद को धकेलते हुए) - "अब अंदर जाओ भी।"

विनोद बॉस के केबिन के दरवाजे से - "सर, मैं अंदर ... आक छीं। ...."

बॉस - "आ सकते हो।"

विनोद - "सर मुझे छुट्टी .... आक छीं। .... आक छीं। ..."

बॉस (क्रोध से) - "नौकरी से तो कर सकता हूँ, पर आज डयूटी से छुट्टी नहीं कर सकता। काम बहुत है। आदमी काम करे तो जुकाम नहीं होता। आप अभी जाइये और मैसर्स टोनी टॉनिक वालों से अपनी पेमेंट लेकर आइए। साले कार्टन और पैकिंग के ऑर्डर पर ऑर्डर दिये जा रहे हैं, माल मंगाये जा रहे हैं, पर जब फोन पर मैं पेमेंट की बात करता हूँ तो "अभी लो जी" का मीठा गुलाबजामुन खिला देते हैं। पेमेंट अभी तक नहीं आई। आप मिस पूजा से पूरी फाईल ले जाइये और उस टिकेन्द्र टोनी से आज ही पेमेंट लेकर आइये।"

विनोद (छींकते हुए) - "ठ ... ठीक है सर ... आक छीं। ..." फिर मुँह में बुड़बुड़ाते हुए "कसाई कहीं का" कहते हुए बाहर निकलने लगा। बॉस को कुछ सुनाई दिया - एकदम से पूछा - "क्या कहा आपने?"

विनोद - "कुछ नहीं सर, जुकाम से शरीर में कसावट जैसी हो रही है।"

बॉस - "काम करोगे तो धीरे-धीरे कसावट भी खुल जाएगी।"

मन ही मन वह बॉस को कोसते हुए बाहर निकला और उसने मिस पूजा से फाईल मांगी। पूजा ने भौहें नचाते हुए पूछा - "बॉस ने छुट्टी नहीं दी क्या?"

विनोद - "आक छीं। न ... नहीं।। मैं अभी मैसर्स टोनी टॉनिक के यहां जा रहा हूँ ... अगर रास्ते में बेहोश हो गया तो मेरा पता कर लेना ... आक छीं ..."

पूजा बॉस के कैबिन में गई, बड़े रोष में बोली - "सर, विनोद का बुरा हाल है, उससे यहां बैठकर काम नहीं हो पा रहा है और आपने उसे पेमेंट लाने का हुकुम दे दिया। वह रास्ते में ही बेहोश हो गया तो? उसे छुट्टी दे दो प्लीज।"

बॉस - "अच्छा ऐसी बात है। तो चलो उसे छुट्टी दे देता हूँ। वहां शफीक को भेज दो।"

पूजा विजयी भाव में अकड़कर बाहर निकली, मानो बॉस को पीटकर आ रही हो। शफीक की ओर हाथ का इशारा करते हुए पुकारा - "मिस्टर शफीक, आप मैसर्स टोनी टॉनिक्स वालों से जाकर पेमेंट ले आओ, फाईल विनोद जी से ले लो।"

शफीक (खुश होते हुए) - "जी मैडम जी बहुत अच्छा।"

पूजा - "और विनोद जी, आपको बॉस ने छुट्टी दे दी।"

विनोद - "आक छीं ... नौकरी से या आज के लिए?"

इस बात पर सबने ठहाका लगाया।

पूजा - "अब मज़ाक न बनाइये। जाइये, घर जाकर आराम कीजिए। विक्स-500 जरूर ले लिजियेगा।"

महेन्द्र - "मिस पूजा, काश, आप इस दफ्तर की बॉस होती।"

अशोक - "अरे यार, अभी तू इनको टीवी विज्ञापन की रानी बना रहा था, अभी इस दफ्तर का बॉस बना रहा है।"

महेन्द्र (फुसफसाते हुए) - "अपना क्या जाता है यार ... (हंसता है) खी-खी-खी...." पूजा ने उसे खिखियाते हुए देख लिया। उसने ऐसे आंखें तरेर कर देखा महेन्द्र वहीं सिकुड़ कर रह गया।

शफीक चुपचाप दफ्तर से खिसक लिया। विनोद छींकता हुआ अपने स्कूटर की ओर जाने लगा।

घर पहुँचते ही विनोद ने अपनी माँ से कहा - "माँ, मेरा जुकाम बढ़ गया है। बार-बार छींकें आ रही हैं। दफ्तर में बैठा नहीं जा रहा था। सारे शरीर में दर्द है। मैं सोने जा रहा हूँ। पर सरिता कहाँ है?"

"बेटा तेरा साला अमोल आया है। आज तेरे ससुराल में लड़की वाले आ रहे हैं। अरे वहीं, जिनसे अमोल के रिश्ते की बात चली हुई है। शायद मंगनी की रस्म आज ही हो जाए। अमोल सरिता को लेकर गया है। तुझे बुलाया है। मैं तो तुझे दफ्तर में फोन करने वाली थी। अच्छा हुआ तू अपने आप ही आ गया। कोई दवाई ली क्या?"

"हाँ माँ, मैंने आती बार बबलू कैमिस्ट की दुकान पर दवाई खा ली है। रात के लिए ले आया हूँ। दवाई अच्छी दी हुई लगती है। छींकें कुछ कम हो गई हैं अब।"

फिर कुछ सोचकर बोला - "तो क्या माँ मुझे वहां जाना हीं पड़ेगा?

माँ - "अरे बेटा, तू इतना नासमझ कैसे हो गया रे? लड़की वाले साले को देखने आ रहे हैं। एक हीं तू जीजा है। तेरा होना वहां जरूरी है कि नहीं।? बेचारी सरिता इंतज़ार कर रहीं होगी। क्या उसने तुझे फोन नहीं किया?"

"माँ, मैंने अपना सैलफोन बन्द कर रखा है। चलो, जाना ही है, तो जाता हूँ। आराम करना चाहता था। बड़ी मुश्किल से दफ्तर से छूटा था। इस साले को भी आज का ही दिन रह गया था।"

स्कूटर निकालकर विनोद ससुराल चला, बीस मिनट का रास्ता था। ससुराल शहर के बदामी बाग से परे था। उधर उसकी पत्नी सरिता उसे सैलफोन पर फोन करती रही। जैसे ही वह पहुँचा तो सरिता ने पूछा - "सैलफोन बन्द रखा था आपने?"

विनोद ने अपना पूरा हाल विस्तार से बता दिया।

सरिता - "पर फिर मैंने दफ्तर फोन कर डाला था जो किसी अशोक वोहरा ने सुना था।"

विनोद - "फिर?"

सरिता - "मैंने उनसे कहा कि आप सीधे अपने ससुराल पहुँच जाएं।"

विनोद - "फिर उसने क्या कहा?"

सरिता - "उसने यहां का पूरा पता पूछा और बताया कि आप जुकाम के कारण छुट्टी चले गए हैं।"

विनोद - "बस कबाड़ा हो गया।"

सरिता - "क्यों, क्या हुआ?"

विनोद - "लग जाएगा पता तुझे।" अब दो-चार प्याले चाय के धार्मिक बना के रखना।"

ठीक समय पर लड़की वाले अर्थात् लड़की के साथ उसके

माता-पिता, लड़की की बड़ी बहन और जीजा और लड़की का ब्रिगेडियर ताऊ, कुल मिलाकर छः जन आ धमके। अपने साथ शगुन का पूरा सामान तथा मिठाइयों का तामझाम भी लेकर आए। लड़की के जीजा और बहन को अगले दिन ही अमेरिका जाना था, अतः उन्होंने उसी समय सगाई की रस्म पूरी करने की इच्छा जताई, जिसको अमोल के घर वालों ने मान लिया। पुरोहित को बुलाकर सगाई की रस्म पूरी कर ली गई। अब दोनों परिवार एक-दूसरे को बधाई दे रहे थे। सरिता ने मेज पर मिठाइयां सजाकर रख दीं। और चाय का प्रबन्ध करने चली। उसकी सहायता के लिए लड़की की बड़ी बहन भी उसके साथ रसोई में उसके साथ हो ली। विनोद के कहने के मुताबिक सरिता ने तीन-चार प्याले चाय के अधिक बनाकर रख लिये। चाय परोस दी गई। सब लोग अपनी-अपनी प्लेटों में अपने पसंद की मिठाइयां रखकर खाने लगे। क्योंकि विनोद घर का जमाई राजा था अतः उसकी प्लेट में कभी उसकी सास तो कभी उसका साला मिठाइयां रखे जा रहे थे। इस तरह उसकी प्लेट में मिठाइयों का ढेर लग चुका था। अभी चाय का दौर चल रहा था कि दरवाजे की घंटी बजी। सरिता ने दरवाजा खोला तो देखा तीन व्यक्ति खड़े थे। एक बोला - "हम विनोद के दफ्तर से हैं। जरा उनको बुला दीजिये। वो कैसे हैं अब?"

सरिता - "वो ठीक हैं। मैं उनकी पत्नी सरिता हूँ। आप अंदर आ जाइये, आज मेरे भाई का शगुन हुआ है, आप भी इस खुशी के मौके पे चाय पीकर ही जाइये।"

अशोक, महेन्द्र और दर्शन अंदर आ गये। उन सबको विनोद के पास एक अलग मेज के पास कुर्सियां लगाकर बिठाया गया। सरिता ने सबको बताया कि वे विनोद के दफ्तर से हैं। शायद अचानक मुबारिकवाद देने आ गए हैं।

"कितने अच्छे हैं विनोद के दोस्त" - सरिता की माँ ने खुश होकर सबसे कहा।

अशोक ने विनोद से चुपके से कहा - "मान गये गुरू, छुट्टी मारने का यह अचूक तरीका है।"

विनोद - "अरे नहीं। यार ......"

महेन्द्र - "वैसे जुकाम के लिए ये गुलाबजामुन, बर्फी .....

दर्शन - "और पनीर के पकौड़े, इमरती, चमचम .....

अशोक - "ये समोसे, बेसन की बर्फी .....

महेन्द्र - "ये ही सबसे सही दवाइयां हैं। पर तूने यार अपनी प्लेट में ये ढेर अपने लिए ही डाल रखा है क्या? यह तो किलो भर से कम तो क्या होगा। चलो मैं मदद किये देता हूँ।"

यह कहकर वह मिठाई पर हाथ साफ करने लगा।

दर्शन (मिठाई के टुकड़े को मुँह में डालते हुए) - "यार इतना माल तो दफ्तर की कैंटीन में भी नहीं होगा।"

विनोद - (झेंपकर) - "अरे यार, ये सब मिठाइयां मैंने अपने आप नहीं। ली हैं। ससुराल में सब ....

महेन्द्र - (बीच में बात काटकर) - "सब मुफ्त का माल होता है, यही न? खाये जाओ प्यारे खाये जाओ, बाद में इनो फ्रूट साल्ट पी लेना।"

दर्शन - "नहीं। हाजमोला ठीक रहेगा।"

अशोक - "इतनी मिठाई के ढेर से तो जुकाम क्या जुकाम का बाप ....."

दर्शन - "जुकाम का बाप निमोनिया भी दबकर मर जाएगा ...."

महेन्द्र - "और दुबारा आने का नाम नहीं लेगा।"

उधर दूसरी ओर से बिग्रेडियर ताऊ विनोद की ओर देखकर बार-बार शाबासी देने के लिए खड़ा अंगूठा दिखा रहा था। शायद उसका मन उधार नहीं। लग रहा था। विनोद झेंपता रहा और दोस्तों के चुभते हुए मज़ाक बर्दाश्त करता रहा। ससुराल में था, अतः उनको ऊंचे बोल भी नहीं सकता था, गाली देना तो दूर। वह अपनी मिठाई की प्लेट को सिर्फ पकड़े हुए था, सारा माल तो उसके दोस्त हीं उड़ा गये। उसे तो अभी तक मिठाई का एक टुकड़ा भी नसीब नहीं हुआ। दोस्तों ने उसकी प्लेट ही नहीं, सामने की दूसरी प्लेट भी चट कर दी।

जब ये तीनों दोस्त खा-पी चुके, तो उठते हुए बोले - "अच्छा भई, हम अब चलते हैं। तू अपने जुकाम का खयाल रखना।"

अशोक ने चलते-चलते समाचार सुनाया - "अरे हाँ विनोद, ठीक साढ़े पाँच बजे बॉस रामसहाय के साथ तुम्हारे घर पधार रहे हैं।" विनोद का मुँह डर और आश्चर्य से खुला रह गया। उसके मुँह से निकला - "पर क्यों ....?"

तीनों ने एक साथ गाया - "तुम्हारा हाल-चाल पूछने।"

यह कहकर वे सब सरिता और उसके भाई को बधाई देकर विदा हुए। साढ़े चार बज चुके थे। विनोद हड़-बड़ाकर उठा - "सरिता, घर में बॉस आ रहे हैं - मेरा हाल चाल पूछने। मुझे अभी यहां से भागना पड़ेगा। आज मेरी किस्मत में चैन नहीं है।

सरिता - "ऐ जी, मैं तो मजबूर हूँ। मैं तो अभी जा नहीं सकूँगी। अभी मेहमान यहीं पर हैं।"

विनोद - "ठीक है, मैं जाता हूँ।" वह बिना मिठाई चखे और बिना चाय पिये उठ खड़ा हुआ।

''' ''' '''

विनोद घर पहुँचा तो सवा पाँच बज चुके थे। माँ से बोला - "माँ, मेरे बॉस मेरा हाल-चाल पूछने आ रहे हैं, मैं लेट रहा हूँ। तू दरवाजा खोल देना।"

वह चादर लेकर लेटा ही था कि ख्याल आया कि साथ वाली तिपाई पर कुछ दवाई की शीशियां रख देता हूँ, नहीं। तो बॉस सोचेगा जुकाम सिर्फ बहाना है। इतने में दरवाजे की घंटी की आवाज़ सुनाई दी। उसने झट से अपनी माँ के कमरे से कुछ दवाइयां की शीशियां और स्ट्रिप्स लाकर अपने बिस्तर के निकट रखी तिपाई पर रख दीं और लेट गया। दवाइयां क्या हैं, यह देखने का समय हीं नहीं था।

वह चादर लेकर लेटा ही था कि ख्याल आया कि साथ वाली तिपाई पर कुछ दवाई की शीशियां रख देता हूँ, नहीं। तो बॉस सोचेगा जुकाम सिर्फ बहाना है। इतने में दरवाजे की घंटी की आवाज़ सुनाई दी। उसने झट से अपनी माँ के कमरे से कुछ दवाइयां की शीशियां और स्ट्रिप्स लाकर अपने बिस्तर के निकट रखी तिपाई पर रख दी और लेट गया। दवाइयां क्या हैं, यह देखने का समय हीं नहीं था।

बॉस रामसहाय के साथ आए। माँ की आवाज़ सुनाई दी - "आप बैठिये, मैं विनोद को बुलाती हूँ।"

"नहीं। माँ जी, उसे लेटे रहने दो। मैं पाँच मिनट उसके कमरे में ही उसका हाल-चाल पूछ लेता हूँ, फिर चलता हूँ।"

माँ तो चाय बनाने रसोई की ओर चली गई।

बॉस विनोद के कमरे में एक कुर्सी खींच कर बैठ गया। रामसहाय चपरासी पीछे खड़ा रहा। विनोद उठने लगा तो बॉस ने कहा - "लेटे रहो, लेटे रहो। कोई बात नहीं। अब कैसे हो?"

"कुछ ठीक हूँ, अब"- विनोद ने मरियल सी आवाज़ निकाली।

बॉस की नज़र तिपाई पर रखी दवाइयों पर पड़ी।

"ये सारी दवाइयां तुम ही ले रहे हो? जुकाम के लिए कुछ ज्यादा नहीं। लगती क्या?"

इससे पहले कि विनोद कुछ कहता, बॉस एक-एक शीशी और स्ट्रिप को ध्यान से पढ़ने लगा। जैसे-जैसे पढ़ता जा रहा था, उसकी त्यौरियां चढ़ रहीं थीं। विनोद कनखियों से देख रहा था।

"तो तुम जुकाम के लिए ग्लाइकोमैट ले रहे हो।"

"जी हाँ।"

"और ये पाईलैक्स भी?"

"जी हाँ सर"

"और यह ज़ाईलोरिक भी?"

"जी सर।"

"और यह मैकप्रिल भी?"

"अभी रात को लूँगा सर।"

बॉस - (फुंफकारते हुए) - हूँ ... यानि कि आप ग्लाईकोमेट मधुमेह की दवाई, पाईलैक्स बवासीत की दवाई, ज़ाईलोरिक गठिये की दवाई और मैकप्रिल ब्लडप्रैशर की दवाई - ये सब ले रहे हैं। जुकाम की दवाई कब लोगे?"

विनोद ने घबराकर एक शीशी की ओर इशारा किया जो शायद कॉक्रोच मारने की दवाई थी।

बॉस का पारा आसमान को छू रहा था - "बस तुझे अब इसी की ज़रूरत है। अब तेरा इलाज कल दफ्तर में होगा।"

वह उठकर जाने लगे। रामसहाय चपरासी पीछे-पीछे घिसट रहा था। माँ चाय की ट्रे लेकर आ पहुँची - "जी, चाय ...

बॉस - "बस, अब मैं नहीं। पियूँगा। मुझे जरा जल्दी है।"

विनोद ने उठने की कोशिश की, तब तक बॉस दरवाजे से बाहर निकल चुका था। विनोद बिस्तर पर ढेर हो गया। बॉस और रामसहाय चले गये। इतने में पूजा और शफीक धमका। पूजा चहकी - "विनोद जी, अब आप कैसे हैं?"

विनोद - "बस पूछो न यार शफीक, उस हकीम का क्या नाम बताया था?"

शफीक (खुश होकर) - "मुझे पता था। मुझे पता था। तुम ज़रूर उसके पास चलोगे। फैय्याज़ हुसैन है ही काबिले तारीफ हकीम।"

पूजा - क्यों विक्स-500 नहीं। खाई थी?"

विनोद - "खाई थी। उससे जुकाम ठीक होने लगा था।"

पूजा - "फिर?"

विनोद - "अब मुझे जुकाम बिगाड़ने की, मधुमेह, गठिया और ब्लड प्रैशर होने की दवा चाहिए। शफीक बात को समझा नहीं।, अपनी ही धुन में बड़बड़ाया - फैय्याज़ साहब के पास तो हरेक मर्ज़ की दवा है। उनके हाथ में शफा है। ऐसा कभी सुना ही नहीं कि उनकी दवा से कोई मर्ज़ गया न हो। वे सारी मर्जो को जड़ से खत्म कर देते हैं।"

विनोद - "क्या बॉस जैसे महामर्ज को भी?"

शफीक अब कुछ समझा। कुछ देर सोचने के बाद उसने मिस पूजा की ओर नज़रों से इशारा किया। विनोद ने इशारा तो भली-भांति समझ लिया पर पहले तो अगले दिन दफ्तर में सुनामी आने वाली थी। उससे अगर वह बच गया, तो पूजा का सहारा लेगा नहीं बच सका तो ..... ऊपर वाला ही मालिक है।

42/5 हरिपुर, सुन्दरनगर, जिला मण्डी, हिमाचल प्रदेश
मो. 94181-00983

राजेंद्र निशेश की कविताएं

शिशु की किलकारी

एक शिशु की किलकारी ने
मेरे ओठों पे मुस्कान धर दी है
चिड़िया के एक बच्चे ने
अपनी पहली उड़ान भर ली है।
सूरज की प्रथम किरणों ने
गुलाबी अंगड़ाई के साथ
खिलते गुलाब का माथा चूमा है
तरंग में इठलाया हुआ दिन
समय की लहर के साथ घूमा है।
एक हलधर ने अपना खेत बोया है
धरती के गर्भ में
अभी चैन से बीज सोया है।
आकाश के बिस्तर पर
अभी चांद-सितारे लेटे हैं
सागर, पहाड़, दरिया, झरने सभी
पृथ्वी के अनेक बेटे हैं।
अनंत की नदी में
कोई स्वप्न उतर आया है
आंखों की पुतलियों ने
प्रथम प्रेम-गीत गाया है!

संभावना

शब्दों के पत्थर फेंक रहा हूं
जिंदगी के जल में थोड़ी हलचल के लिए
समय लकड़हारा चल रहा है
अपनी ही धुन में
पहाड़ों और समुद्रों का अपना ही गणित होता है
पतझर की काली छाया ललकारती रहती है
लेकिन वसंत हर बार रूठता नहीं
नदी अपनी ही धुन में गाती है
और ऊंची-नीची जमीन को देती रहती है
नए अहसास का उपहार
गहन अंधेरे के संधि-काल में
संभावनाओं का विशाल आकाश
चमकता रहता है।
चेतना के पक्षी कभी मरा नहीं करते!

2698, सेक्टर 40-सी, चंडीगढ़-160 036, मो. 0 94171 08632

कहानी

मरहम

◆ रुचि शुक्ला

हर लड़की की तरह सिरोही के भी दिल में कुछ खूबसूरत अरमान थे। बचपन की कमियां उसकी मुस्कान का बाल भी बांका नहीं कर पाई थीं, क्योंकि हर मुश्किल से लड़ने और जीतने की ताकत देते थे उसकी माँ के कुछ शब्द- ''तुम इन मुश्किलों से घबराना मत, ये तुम्हें और ताकतवर बनाने आई हैं। यही मुश्किलें तुम्हें इतिहास का सुनहरा हिस्सा बनाएंगी।''

सिरोही को कभी नहीं बिसरती थीं माँ की ये बातें। बिसरती भी कैसे, उसके पास और था ही क्या, माँ की बातों के सिवाय। लेकिन ये क्या, जिंदगी का रंग तो कुछ और ही निकला। यहां तो वैसा कुछ भी नहीं जैसा माँ कहा करती थी। तो क्या मुझे हमेशा लड़ते रहना होगा ? सिरोही सोचती जा रही थी। उसके चेहरे पर हजारों सवालिया निशान साफ दिख रहे थे, पर देखने वाला कोई नहीं था।

आज फैसले की घड़ी थी। वक्त भी कम ही था। हर चीज की तरह, तभी कुछ हुआ। जोर की आवाज आई, सिरोही कांप गई। उसके तमाम सवाल यूँ ही दफन हो गए क्योंकि उसके उहापोह का कारण ही खत्म हो गया। गिरने की वो आवाज उसके बाउजी के कमरे से आई थी। दिल का दौरा पड़ा था उन्हें और उन्होंने भी छोड़ दिया सिरोही का हाथ।पता चला कि जिस लड़के से सिरोही का रिश्ता पक्का करने के लिए सिरोही के बाउजी ने सबकुछ बेच दिया था वो लड़का सब कुछ लेकर फरार हो गया था। यही बात उनका दिल सह नहीं पाया था।

अब सिरोही के पास कुछ था ही नहीं जिसे खोने का डर सताता। न कोई रास्ता, न कोई मंजिल।बस एक कोरे कागज-सी जिंदगी बची थी, जिस पर लिखना क्या है, ये तक मालूम नहीं था। हफ्ते गुजर गए पर वक्त सिरोही की आँखों में ठहर के रह गया था।उसे पहली बार माँ की कही बातों पर शक होने लगा था।

तभी खुले दरवाजे पर कोई दस्तक हुई।देखा तो बाहर एक खूबसूरत नौजवान लड़का खड़ा था। उसके साथ दो और लोग थे। शायद उसके रिश्तेदार हों, यही सोचकर सिरोही ने पूछा-''जी बताइए ! क्या काम है।''

उधर से आवाज आई-''जी मैं सुदेश।''इतना सुनते ही सिरोही बेचैन हो गई। उसने और कुछ नहीं पूछा।बस झट से दरवाजा खोला और सुदेश को जोर से पकड़कर रोने लगी। उसे लगा जैसे जिंदगी ने उसे कोई बहुत बड़ी चीज लौटा दी हो।

सुदेश को देखकर सिरोही के दिल में मानों करोड़ों बिजलियां एक साथ कड़की थीं... वक्त का पहिया रुक-सा गया था कुछ देर के लिए...। लेकिन जार-जार रोती सिरोही के आँसू नहीं थमे...। इतने दिन बाद उस सुदेश का आना सिरोही के लिए किसी चमत्कार से कम नहीं था। सुदेश की शक्ल में उम्मीद की एक नई किरण खुद चलकर घर आई थी। लेकिन सवाल तो बड़ा था कि आखिर इन दोनों का रिश्ता क्या था? और कौन थे वो लोग जो सुदेश के ठीक पीछे खड़े, मासूम निगाहों से इन दोनों को निहार रहे थे?ये जानने के लिए आपको सिरोही की जिंदगी से जुड़ा एक और सच जानना होगा...एक और किस्सा सुनना होगा।

कई साल पहले की बात है। जब सिरोही की माँ उसके साथ थीं। तब घर में सबकुछ ठीक-सा था। तब सुदेश भी उनके साथ ही रहता था। पहले तो सिरोही को सबकुछ सीधा-सीधा पता था, लेकिन बाउजी के बदलते बर्ताव और घर में बढ़ते टकराव ने एक दिन हर राज से पर्दा उठा दिया। बाउजी की किसी बात पर माँ बहुत परेशान हुईं थीं, और दबी आवाज में बोला था कि काश ! सुदेश के पिता जिंदा होते, बस फिर तो जैसे दुनिया का हर तूफान सिमटकर सिरोही के घर में ही आ धमका हो, जोर-जोर की आवाजें, सीना चीर देने वाली कड़वी बातें और ना जाने क्या-क्या? अब आप सोच रहे होंगे कि आखिर क्यों हुआ था सिरोही के घर का ऐसा हाल। अचानक तल्खी इतनी बढ़ कैसे गई मां-बाउजी के बीच, तो सुनिए...

दरअसल सिरोही के बाउजी और माँ दोनों की ये दूसरी शादी थी। सुदेश सिरोही की माँ के पहले पति का बेटा था। ये बात शादी के वक्त भी सिरोही के बाउजी को मालूम थी, और बड़ी खुशी-खुशी उन्होंने सुदेश को अपनाया था। क्योंकि उनके कोई औलाद नहीं थी, बस शादी हुई थी उनकी और एक हादसे ने कुछ ही महीनों में उनका जीवनसाथी छीन लिया था। दोनों एक-दूसरे के साथ हुए हादसों की हकीकत जानते थे और खूब सोच-समझकर उम्रभर साथ चलने का फैसला किया था। तमाम कमियों के बावजूद सब कुछ ठीक चल रहा था, फिर उनकी जिंदगी में

सिरोही आई, इसके बाद कुछ साल तो ठीक गुजरे लेकिन आहिस्ता-आहिस्ता चीजें बदलने लगीं।

रिश्तों में कुछ खिंचाव, कुछ तनाव बढ़ने लगा, पर सिरोही इन सब बातों से अनजान थी, क्योंकि जब से उसने होश संभाला था तब से ही माँ-बाउजी की तरह सुदेश भी मिला था उसे, एक बहुत प्यार करने वाले बड़े भाई से ज्यादा वो सुदेश के बारे में और कुछ नहीं जानती थी, लेकिन अचानक एक दिन जब बाउजी ने तेज आवाज में माँ से कहा था- ''अब सुदेश हमारे साथ नहीं रह सकता, अब तुम्हें मुझमें और सुदेश में किसी एक को चुनना होगा।'' तो माँ निःशब्द उन्हें देखती रह गई थी। कुछ नहीं बोल पाई थी माँ और सिरोही के मासूम से मन में एक साथ न जाने कितने ही सवाल उमड़ पड़े थे। वो माँ से पूछती रही, पर माँ तो जैसे बुत हो गई थी, शांत, कठोर और लाचार सी, जस की तस खड़ी थी, माँ ने कुछ नहीं बोला तो वो बाउजी से बार-बार पूछने लगी- ''हुआ क्या है, भाई को कहाँ भेज रहे हैं आप? कुछ गलती हो गई क्या उससे ? बाउजी कुछ तो बोलिए, माँ भी कुछ नहीं बोल रही, मैं क्या करूँ अब।'' सिरोही रो-रोकर पूछती जा रही थी, कभी माँ से तो कभी बाउजी से, पर जवाब कहीं से नहीं मिला, सीधे फैसला हुआ और बाउजी बाहर चले गए।

फिर कुछ ही देर बाद माँ ने किसी को बुलावा भेजा था, सब कुछ ठहर-सा गया था, ना जाने क्या होने वाला था। सुदेश भी सहमा-सा कोने में खड़ा था। कोई आवाज नहीं आ रही थी। बस आँसू टपकते जा रहे थे। अपनी माँ और बाउजी से हमेशा-हमेशा के लिए दूर जाने का दर्द सहन नहीं हो रहा था उससे और सिरोही में तो जान बसती थी। उससे बिछड़ने का ख्याल भी सौ मौतों से बदतर था सुदेश के लिए। वो भी बिना किसी गलती के, बिना कुछ जाने-समझे। बस एक फैसला आया और सब बदल गया।

खैर, माँ ने जिन्हें बुलावा भेजा था वो लोग आ गए, सिरोही उनसे पहली बार मिली थी, पहली बार उन्हें देखा था, पहचान नहीं पाई थी उन्हें, पर सुदेश उन्हें कुछ-कुछ पहचानता था, वो सुदेश के दादा-दादी थे। सिरोही फिर माँ से पूछने लगी- ''कौन हैं ये लोग, यहाँ क्यों आए हैं ? उसने एक साथ कई सवाल दाग दिए, लेकिन माँ ने जवाब में सिरोही को बस चुप रहने का इशारा किया था। बताती भी तो क्या ? कुछ भी तो नहीं मालूम था उस मासूम सी बच्ची को, जब तक टाला जा सकता था तब तक टालती रही, लेकिन फिर सब्र का बांध टूट गया।

माँ बुरी तरह खीझ चुकी थी, बोल ही दिया-''ये सुदेश के दादा-दादी है, उसे लेने आए है, अब सुदेश उनके साथ ही रहेगा।'' सिरोही बोली- ''अरे ! ऐसे कैसे ? तो, ये तो मेरे भी दादा-दादी हुए ना, क्यों माँ? भाई मेरे साथ क्यों नहीं रहेगा ? फिर कब आएगा भाई? ये सब क्यों हो रहा है ?'' बिना रुके, पूछती जा रही थी सिरोही, जवाब के लिए भी नहीं रुक पा रही थी, लग रहा था जैसे हजार सवाल एक साथ कौंध गए थे उसके मन में।

माँ फिर चुप, आँसुओं को आँखों में कैद रखने की हर कोशिश बेकार हो रही थी, आँखों से बरबस टप-टप टपक रहे थे आँसू और दिल पर तो जैसे बिजलियां गिर रही थीं। पर हाथ नहीं रुक रहे थे, बस जल्दी-जल्दी सुदेश का सामान बांध रही थी और बीच-बीच में चोर-चुपके सुदेश को निहारती भी जा रही थी माँ।सबकुछ बहुत जल्दी हो रहा था।

सिरोही की माँ ने शायद चुन लिया था दोनों में से एक को और बाउजी के आने से पहले सुदेश का फैसला कर देना चाहती थी वो। सिरोही, सुदेश और उनकी माँ तीनों जल-बिन मछली जैसे तड़प रहे थे लेकिन जो होना था उसका फैसला हो चुका था। कुछ ही मिनटों में सुदेश चला जाएगा। ये खयाल आते ही उसकी माँ अचानक धम्म से बैठ गई, जैसे किसी ने सांसें छीनकर जीने की सजा दी हो। लेकिन फिर उन्हें कुछ याद आया और शरीर में बिजली-सी कौंध गई, उठी और सुदेश का सामान उसके दादा जी को थमाते हुए बोली- ''कलेजा सौंप रही हूँ, मुझे नहीं मालूम कि मेरा क्या होगा ? लेकिन इसे मेरे हिस्से का भी प्यार दीजिएगा। जानती हूँ, आपको भी इससे लगाव है, लेकिन माँ हूँ ना,पूरे नौ महीने कोख में पाला है इसे, किसी को सौंपने के लिए नहीं, हमेशा-हमेशा के लिए अपने सीने से लगाकर रखने के लिए, पर आज अपनी ही जान को अपने से जुदा कर रही हूँ, इसे कोई तकलीफ मत होने दीजिएगा, मैं...।'' कहते-कहते माँ बेहोश हो गई।

सिरोही, सुदेश और उसके दादा-दादी सब एक साथ दौड़े पर सिरोही की माँ को थाम नहीं सके, पानी के छींटें मार-मारकर बड़ी मुश्किल से सिरोही ने माँ को उठाया था-''मैं ठीक हूँ, अब आप लोगों को निकलना चाहिए, देर हो रही है।'' कहते-कहते उठी और

कविता

शिमले की एक शाम तुम्हारे नाम

◆ **रमेश चंद्र शर्मा**

बार-बार बुलाती है मुझे यहां की
शाम, नटखट मॉल, जो कभी
पगडंडी ही होगी जंगल की
मौजूदा रूप स्वरूप
शिमले की स्थापना से पूर्व
इंतज़ार , मेल मिलाप के लिए
नज़रें बिछाने का जो अब
मार्ग बनीं, नगर की पहचान हुई।

हर रोज की तरह ममतामयी
बयार बही, डूबते सूरज के
साथ-साथ पश्चिम की ओर
चली, जिसने पीली चादर
ओढ़ ली, आकाश में हसीन
बदली उड़ती दिखी
पंख खोले, हंस की परछाई सी
क्षितिज के आंगन में, डूबते सूरज ने
शरण ली, कल के सफर से पहले
उसकी आरामगाह बनी!
मॉल रोड की रौनक बढ़ी!

हृदय की टीस बेचैन थी
मुड़ मुड़ कर आते हो फिर भी
उसके बिना, जिसे यह सड़क सदा
बुलाती रही, तुम्हें साथ देखकर
मदमाती भी थी
तुम्हारी वह खुशी विध्वंस हुई।

ढूंढती रहती है क्या, मुझ में
तुम्हारी आंखों की उदासी किंतु
साथ देती हूं तुम्हारा, गम में
क्योंकि वह तुम्हारी, सहचरी ही नहीं
प्रेयसी भी थी, जिंदगी थी,

डूबते सूरज की खामोशी कह गई
मॉल रोड यही दोहराती रही।

सचमुच मैं मुरझाए गुलाब सा
पंखडियां जीवन की संभाले हुए हूं
तुम मुझे फूल कहा करती थी
क्योंकि तुम स्वयं जिंदगी की
खुशबू थी।

तुम्हारे लिए तो स्कैंडल प्वाइंट
समरसता, सौहार्दता का संगम
था, मेरे लिए करुणा दया का
स्रोत है, लड़खड़ाते बुढ़ापे का
अविस्मरणीय मिलन की
विघटन है!
अब मैं वहां ही था
किसी ने कहा, मैंने सुना
'यह अकेला घूमता हुआ,
वह वो नहीं रहा।'

वह कोई परिचित नहीं था
एकाकीपन का कफ़न ओढ़े
मैं वापस लौट चला।
तुम्हारा चेहरा मेरी आंखों में
सो रहा था॥

आई.ए.एस. (रिटायर्ड), टकसाल हाउस, छोटा शिमला,
शिमला-171 002, दूरभाष : 0177 262 1199

सुदेश को सीने से लगा लिया। पागलों की तरह अपने लाडले को चूमने लगी और बोली-''तू परेशान मत होना, तू तो मेरा बहादुर बेटा है ना, खूब आराम से रहना, पढ़ना-लिखना और एक दिन खूब बड़ा आदमी बनना और हाँ ! कभी गलती से भी किसी का दिल ना दुखाना।''कहते-कहते आवाज फिर लड़खड़ा गई थी माँ की।

सिरोही सुदेश का हाथ पकड़कर खड़ी थी। दबी आवाज में बार-बार बस एक ही बात रटे जा रही थी-''भाई ! मत जाओ, भाई, मत जाओ, रुक जाओ। सुनो, मत जाओ।'' पर सुदेश का दूसरा हाथ थामे माँ बाहर की ओर खींचती जा रही थी। दरवाजे तक आते-आते सब्र का बांध टूट गया, फिर तीनों एक साथ लिपटकर खूब रोए और भेज दिया अपने कलेजे के टुकड़े को खुद से दूर, बहुत दूर, हमेशा, हमेशा के लिए। तब से अब तक कई-कई बार सिरोही अपने भाई के लिए तड़पी, बार-बार बाउजी को मनाने की कोशिश की, बाउजी टस से मस ना हुए। बाउजी ने दुनिया छोड़ दी लेकिन अपनी जिद नहीं छोड़ी।

खैर, अब जब किस्मत ने बहुत कुछ छीना था तो लौटाया भी कुछ नायाब ही था, सिरोही के दर्द भरे दिल से सुकून की आह निकली थी, उसे उसका भाई मिल गया था, बरसों बाद...एक बार फिर हमेशा-हमेशा के लिए और जो दो लोग सुदेश के साथ आए थे वो उसके दादा-दादी ही तो थे।अब जिंदगी ने नई करवट ली थी। सिरोही, सुदेश और दादा-दादी सब साथ ही रहने वाले थे। उस प्यारी सी बच्ची (जो अब बड़ी हो गई थी) की जिंदगी में पहली बार बिना किसी शर्त के खुशियों ने दस्तक दी थी, अब सब ठीक होने वाला था, क्योंकि अंत में सबकुछ ठीक ही हो जाता है।

एसोसिएट प्रोड्यूसर, 'तेज, आज तक',
शुभधाम अपार्टमेंटस, एच-2/304, सेक्टर-2, ब्लॉक-2,
राजेन्द्रनगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)-201005

कहानी

मां से बड़ा रुपइया

◆ अश्वनी कौंडल

अपनी ज़िन्दगी में सुनिता ने सब कुछ पाया था। उसका बचपन गरीबी में जरूर बीता था, लेकिन शादी एक मध्यम वर्गीय परिवार में होने से उसे गरीबी का एहसास नहीं हुआ। अठारह साल की थी, जब उसके मां-बाप ने गरीबी की हालत में उसकी शादी की थी। घर में पांच बहने थी, पर भाई एक भी नहीं था। गरीबी में पांच-पांच बच्चों का पालन पोषण करना और तब जब घर में दो वक्त का खाना भी नसीब न हो। कितना मुश्किल होता है। सुनिता के पिता मेहनत मज़दूरी करके राशन तो लाते पर एक समय भी पूरा नहीं होता। स्कूल जाने की बात तो उन पांचों बहनों के लिए दूर के ढोल सुहावने के बराबर थी। सुनिता ने अठारह साल गरीबी में कैसे बिताए। सुनिता को शादी के बाद भी यह सब याद था। बहनों में सबसे बड़ी होने के नाते छोटी बहनों की शादी करवाने से लेकर मां-बाप की मौत के बाद के संस्कार तक सब उसने ही किए थे। यह सब तब हो सका जब उसके पति दौलत ने उसका साथ दिया। दौलत पुलिस विभाग में कांस्टेबल की नौकरी करता था। वह एक अमीर दिल वाला इन्सान था। सुनिता और दौलत ने ''छोटा परिवार सुखी परिवार'' के नारे को मानते हुए एक लड़के के बाद बच्चों के बारे में आगे नहीं सोचा। उन्होंने उसकी पढ़ाई व परवरिश में कोई कसर नहीं छोड़ी। दौलत भी अपने माता-पिता की इकलौती सन्तान थी, उसकी बहन बचपन में समय पर इलाज न होने से डायरिया की शिकार हो गई थी। दौलत के पिता मेहनत मजदूरी कर अपने छोटे से परिवार में खुश थे। दौलत की नौकरी एक जगह कभी नहीं रहती। कभी एक शहर से दूसरे शहर में उसका जाना होता ही रहता। नौकरी की खातिर अपने बच्चे, पत्नी व माता-पिता से दूर रहना उसकी मजबूरी थी। दौलत अपनी पत्नी सुनिता से कहता- ''अगर बच्चे को अच्छी शिक्षा देनी है तो उसे घर में ही रह कर पढ़ाना होगा।'' अगर मेरे साथ चलते रहे तो बार-बार स्कूल बदलने से पढ़ाई में फर्क पड़ता है। सुनिता उसकी बात मान गई और अपने सास ससुर की सेवा करने में लगी रहती। समय अपनी चाल के साथ चलता रहा। सुनिता और दौलत का लड़का अर्चित स्कूल की पढ़ाई पूरी कर कॉलेज चला गया। सुनिता के सास ससुर भी इस दुनिया से जा चुके थे। वह अब अपने पति के साथ रहने लगी। जहां दौलत का तबादला होता वहीं साथ रहती। दौलत और सुनिता दोनों अपनी ज़िन्दगी में खुश थे। अर्चित के लिए लड़की देखना शुरू कर दी थी, लेकिन अर्चित अभी शादी नहीं करना चाहता था। शादी का नाम आते ही वह बहाने बनाने शुरू कर देता कि मुझे अभी यह करना है अभी वो करना है। उसका मानना था कि शादी करने से उसकी आजादी छिन जाएगी, लेकिन उसे पता नहीं है कि आजादी के सही मायने क्या होते हैं। असल में वह अपनी जिम्मेवारियों से भागना चाहता है। हार थक कर अपने माता-पिता के अरमानों जो उन्होनें उसके लिए संजो कर रखे है उनके आगे उसे झुकना ही पड़ा। सुनिता ने अर्चित के लिए एक सुन्दर सुशील व पढ़ी लिखी लड़की गांव से देख ली। सुनिता पुराने विचारों वाली थी। वह अपने लड़के अर्चित की टीप एक अच्छे से ज्योतिष से दिखाकर, मिलान करवाना चाहती थी ताकि शादी में किसी तरह का व्यवधान उत्पन्न न हो। दौलत भी खुश था कि उसके इकलौते लड़के की शादी होने वाली है। घर में शादी की तैयारियां शुरू कर दी। पूरी रिश्तेदारी में खबर फैल गई की सुनिता और दौलत के लड़के की शादी अक्तूबर में फिक्स हो गई है। समय कम ही था। मात्र छः महीने ही थे शादी का कामकाज करने के लिए। अर्चित भी एक प्राईवेट कम्पनी में इंजीनियर के पद पर नौकरी में लग गया। सुनिता अपने पति से कहती- देखो कितने भागों वाला है अर्चित, जिस लड़की से उसकी शादी होने जा रही है शादी रखने पर ही अच्छी कम्पनी में नौकरी मिल गई हमारे अर्चित को।

दौलत भी उसकी हां में हां मिलाते हुए कहता कि इसमें कोई शक नहीं। भाग्य का पहिया कुछ और ही बताने वाला था। जो उनके साथ होने वाला था उसकी उनको भनक भी नहीं थी। शादी के दो महीने बचे थे सब अपने कामों में व्यस्त थे, न किसी को खाने की सुध थी न सोने की। एक दिन की बात है कि तड़के चार बजे दौलत को अचानक हार्ट अटैक आ गया। हल्ला मचते ही सब इधर उधर भागने लगे। अर्चित भी हड़बड़ा गया। उसे समझ ही नहीं आ रहा था कि क्या करे, क्या न करे। दौलत को गाड़ी में लेटाकर अस्पताल ले गये। अस्पताल पहुंचते ही दौलत ने दम तोड़ दिया। पूरी रिश्तेदारी में खबर फैल गई कि दौलत इस दुनिया को छोड़ कर चला गया। शादी वाले घर में गम वाला माहौल हो गया।

अब शादी के जश्न की किसी को भी परवाह नहीं रही थी। हर किसी को समाज के रीति रिवाज निभाने ही पड़ते हैं ऐसा ही रिवाज अर्चित की शादी का सुनिता को निभाना था। सब रिश्तेदारों का मानना था कि जो एक बार शादी के लिए मुहूर्त निकल गया उसे टालना शुभ नहीं है। शायद भाग्य को यही मंजूर था। सादे समारोह में अर्चित की शादी भी हो गई। जिस तरह शादी के बारे में सोच रखा था, जश्न मनाने की तैयारी हो रही थी, सारी की सारी धरी की धरी रह गई। घर में नई दुल्हन का प्रवेश हो चुका था। सुनिता ने इसे भाग्य का खेल समझ कर अपनी ज़िन्दगी को आगे बढ़ाने का फैसला कर लिया। पहले जो चुप-चुप रहती थी, अब सबके साथ बोलना, उठना बैठना शुरू कर दिया था। कभी-कभी अगर बहू कोई गलती भी करे तो उसे डांट देती। वक्त का पहिया अपनी गति से चलता रहा। अर्चित ने अनुकम्पा के आधार पर नौकरी करने के लिए पुलिस विभाग में आवेदन दे दिया। जब तक नौकरी के लिए विभाग से जबाव नहीं आया, तब तक वह प्राइवेट कम्पनी में नौकरी करता रहा। अब उसकी जिन्दगी में भी बदलाव सा आ गया था। छोटी-छोटी बातों पर गुस्सा आना, स्वभाव में चिड़चिड़ापन और कुछ आदतें भी खराब हो चुकी थी । स्वभाव कैसा भी हो गया हो, पर अर्चित को अपनी मां की बड़ी फिक्र थी। अपनी पत्नी से कहता-

''देख, ममता, मां का दिनभर खयाल रखाकर। समय-समय पर खाना खिलाना और पास वाली गली में अपने साथ घुमाने ले जाया कर इससे उनका मन लगा रहेगा।''

ममता अपने पति की बातों का ध्यान रखती और जैसा वह कहता वैसा ही करती। वह एक अच्छी गृहणी बन चुकी थी। मई की एक दोपहर का समय था। गर्मी बहुत थी। सास बहू दोपहर को खाना खाने के बाद आराम कर रही थी कि तभी दरवाजे पर लगी घण्टी बजी। सुनिता ने अपने कमरे से आवाज़ लगाई- '' बहू देखना, कौन है दरवाजे पर।''

ममता ने दरवाजा खोला तो देखा कि डाकिया एक पत्र लेकर खड़ा है। डाकिए ने कहा- मैडम, अर्चित भैया के नाम रजिस्टर्ड पत्र आया है। ममता ने उसे रिसीव किया और अन्दर आ कर पत्र खोला तो देखा कि अर्चित का पुलिस महकमें में लिपिक के पद पर नौकरी का के आदेश हैं। यह खबर उसने अपनी सास को दी। सुनिता को इस खबर की इतनी खुशी नहीं हुई जितनी की होनी चाहिए थी। अर्चित की नौकरी घर से दूर थी इसलिए वह छुटटी वाले दिन ही घर आता था। अर्चित ने कम्पनी की नौकरी छोड़ पुलिस महकमे की नौकरी में पदभार संभाललिया। पहली नियुक्ति उसे घर से काफी दूर मिली। वह अब छः महीने में एक बार ही घर आता था। सुनिता की खुशी ओर तब बढ़ गई जब वह दादी बनी। उसके घर एक प्यारा सा नन्हा सा फरिश्ता आया। सुनिता को अब समय गुजरने का पता नहीं चलता। वह अपने पोते नक्श के साथ व्यस्त रहती। नक्श उसके जीने की वजह बन गया था। नक्श भी अपनी दादी के साथ खूब मस्ती करता। नक्श बड़ा हो रहा था और उसकी दादी बूढ़ी। अर्चित ने पूरे परिवार को अपने साथ ले जाने का मन बना लिया था, लेकिन सुनिता उसके साथ नहीं जाना चाहती थी। वह उस घर को छोड़ना नहीं चाहती थी। सुनिता को अपने पति दौलत की पेंशन मिलती थी। वह अपने बेटे के साथ जाकर उसकी गृहस्थी में दखल नहीं देना चाहती थी। उसने अपने घर में ही रहने का फैसला किया। अर्चित अपनी पत्नी, बेटे नक्श को लेकर शहर चला गया। सुनिता घर पर अकेली ही रह गई और अपना गुजर बसर करने लगी। तीज-त्योहारों पर उसका बेटा, बहू और पोता उसके साथ ही रहते। पन्द्रह साल कैसे बीत गये उसे पता ही नहीं चला। अर्चित का तबादला अब उसके घर के पास ही हो गया। उसने शराब पीना शुरू कर दिया था। ममता के स्वभाव में परिवर्तन आ चुका था। सास के प्रति वैसा प्यार, लगाव नहीं रहा था, जैसा कि पहले था। बहू सास को घर में रहकर ताने सुनाती और घर का काम करवाती। बुढ़ापे में सुनिता को यह सब सहना पड़ता था। कभी-कभी तो अर्चित अपनी मां पर हाथ भी उठा देता। नक्श को उसने दूर शहर में हॉस्टल में डाल दिया था। अर्चित और ममता बूढ़ी सुनिता पर हर रोज़ कोई न कोई जुल्म डाहते, पर सुनिता इस बात का जिक्र किसी से नहीं करती। चुपचाप बेटे और बहू के जुल्म सहती रहती। सारी पेंशन उसका बेटा उससे छीनकर ले जाता। एक दिन तो सुनिता पर पहाड़ तब टूटा जब उसे उसके बेटे अर्चित ने घर से बाहर ही निकाल दिया। वह घर से जाना नहीं चाहती थी पर उसे जाने के लिए मजबूर कर दिया। उसे वृद्धाश्रम का सहारा लेना पड़ा। वृद्धाश्रम जाने के बाद भी उसका शराबी बेटा उसकी पेंशन के पैसे ऐठनें पहुंच जाता और जब वह पैसे देने से इनकार करती तो वहां पर वह उससे मार-पीट करने लगता। उसने कई बार पुलिस में भी शिकयत दर्ज करवाई

दिनेश शर्मा की कविताएं

मां का दु:ख

जीवन की हांडी में
परिवार की भूख के लिए
चावल के दानों की तरह
पकती है मां
घर के चूल्हे में
रिश्तों की गर्माहट बनाए
लकड़ी की तरह सुलगती है।

मां सोती है हमारी नींद
पलकों पर बिछाए हमारे सपने
जागती है रात-रात
घर के उजाले के लिए
बाती की तरह जलती
रोम-रोम मोम
पिघलती है मां।

मां की आंखों में बहती
बेटी की जवानी
पाई-पाई जोड़
पल्लू के कोने में
गांठें हैं बेटे के सुख
बिवाइयों में
तैर तले छुपाए हैं।
परिवार की गुरबत के दिन।

कुएं की मेंढ पर
छोड़ अपने आंसू
खूंटे पर टांग
थकान की दुशाला
चिड़िया के पर देकर
नम आहों को
छज्जे पर भूल आई है मां।

मां के दु:ख भी
मां के
अपने कहां !

घर किधर है

पीढ़ियों के
अनुभव की परतों को समेटे
घिसता-पिसता एकाकी
उपेक्षा के कोने में
वृद्धाश्रम की गहरी-अंधेरी खाई में
गड़ा-पड़ा है
घर की नींव का पत्थर।

मां की नज़रों से दूर
दादी के दिल में दफ़न
अनगिनत कहानियों की
सीख से महरूम
किलकारियों को सिसकियों में बदलता
प्ले स्कूल की बनावटी दुनिया में
अनाथालाय के आगोश में
खेल रहा है आंगन।

मद्धम है चूल्हे का ताप
जायके बिन इतरा रही रसोई
घट रही
बाहरी कदमों की आवक
हवा हुए आत्मीयता के ठहाके
नकली हंसी के साथ
होटल की मेज़ पर
सज़ा है आतिथ्य।

आलीशान इमारतों के
व्यक्तिवादी कमरों में
सिमट रहे हैं रिश्ते
उदासीन पीढ़ी के प्रयोगों में
जीवन की ऊंची उड़ानों में
ढूंढ रहा हूं
घर किधर है।

प्राध्यापक, राजकीय महाविद्यालय, रामपुर,
जिला शिमला, हिमाचल प्रदेश।

पर उसका कुछ नहीं हुआ। पुलिस विभाग में होने के कारण अर्चित के खिलाफ कुछ नहीं होता। सुनिता ने तो कई बार महिला आयोग में भी शिकयत की, लेकिन उसकी सुनवाई नहीं हुई। सुनिता तब अपने साथियों के साथ रोते-बिलखते हुए कहती-

''मेरा बेटा ऐसा नहीं था। वह बहुत ही अच्छा था। वह मुझ पर प्राण देता था। अचानक न जाने उसे क्या हो गया। मुझसे अब उसे कोई मतलब नहीं है। बस मेरी पेंशन ही सब कुछ है उसके लिए।''

बेटा उसके साथ मारपीट करता, उसकी हर महिने की पेंशन छीन कर ले जाता, फिर भी सुनिता यही कहती कि मेरा लाल सदा सुखी रहे। वह वृद्धाश्रम में रह कर भी उसके लिए भगवान से खुशियां ही मांगती। नक्श अब बड़ा हो चुका था। समझदार था, पर इस सब के लिए बेबस था। जब उसे पता चला कि उसके माता-पिता ने दादी को घर से निकाल दिया है और उसे किस तरह से तंग करते हैं, यहां तक कि उसकी पेंशन भी हड़प लेते हैं तो उसे बहुत गुस्सा आया। वह अभी पढ़ रहा था। उसके पास इतना समय नहीं था कि वह अपनी दादी के साथ रह पाता या फिर अपनी दादी को अपने पास रख पाता। सुनिता उससे कहती-

'' नक्श, तेरे पापा के लिए मां से बड़ा रूपया हो गया है। वह अपनी मां से इस तरह क्यों कर रहा है। इसका कोई पता नहीं। पहले तो तेरे पापा ऐसे नहीं थे। कितना ख्याल रखते थे मेरा।''

सबके साथ अपने बेटे की अच्छाइयां करते और बेटे के लिए भगवान से दुआएं लेते नहीं थकती। हर बार यही कहती- मां से बड़ा रुपया हो गया है मेरे लाल के लिए।

कमरा नं. जी-12, इलर्जली भवन, हिमाचल प्रदेश
सचिवालय, शिमला-171002, मो. 9418382889

लघु कथा

सिफारिश

◆ के. आर. भारती

"हैलो, भाई साहिब, मैं मान सिंह बोल रहा हूं, पहचाना आपने?" फोन करनेवाले शख्स ने कहा।

"कौन मान सिंह? सॉरी, ठीक से पहचाना नहीं।" मैंने कहा।

"लगभग तीन वर्ष पहले मिले थे हम, एक साहित्यिक सम्मेलन में, गेयटी थियेटर शिमला में। याद आया कुछ।" उसने पूछा।

"ओह, मान सिंह, सिरमौर वाले।" मैंने ताज्जुब करते हुए कहा।

"ठीक पहचाना।" वह तपाक से बोला।

"आप जैसे प्रतिभावान लेखक को कौन लेकिन नहीं जानता पर वर्षों में एकाध फोन आए, तो धोखा लग ही सकता है।" मैंने आत्म प्रतिरक्षात्मक अंदाज़ में कहा।

"कहो कैसे चल रहा है, तुम्हारा लेखन, कई दिनों से तुम्हारी रचनाओं को पढ़ने-सुनने का मन कर रहा है। उस रोज़ तो आपकी कहानी 'जननी' ने सबको झकझोर कर रख दिया था। क्या मार्मिक चित्रण किया था आपने कन्या भ्रूण हत्या की समस्या का।" मैंने संवाद किया।

"लगातार, लिख रहा हूं। ज्यादातर कहानियां लिखता हूं। कभी मूड बने तो कविता भी लिख लेता हूं। आपको प्रसन्नता होगी मैंने एक हिंदी अखबार में हर सोमवार को एक लेख लिखना भी आरंभ किया है।" उसने बताया।

"बहुत अच्छे। इससे आपकी प्रतिभा को और निखार मिलेगा और हमें भी कुछ अच्छा पढ़ने को मिलेगा।" मैंने कहा।

"थैंक यू।" भाई साहिब मुझे कहने में थोड़ी हिचकिचाहट हो रही है, मैंने फोन एक पर्सनल फेवर के लिए किया था।" उसने विषय बदलते हुए कहा।

"हां, हां, जरूर बताएं- क्या कर सकता हूं, मैं आपके लिए।" मैंने कहा।

"सचिवालय में चौकीदार और फराश के पद भरने के लिए आवेदन मांगे गए थे। मैंने भी आवेदन किया है कुछ मदद कर सको तो...।" उसने ताकीद की।

"क्या बात कर रहे हो, यार! आप जैसे प्रतिभाशाली साहित्यकार का ऐसी नौकरी ढूंढना। मुझे यह बात हज़म नहीं हो रही है।" मेरे पांवों के नीचे की जमीन खिसकने लगी थी।

"खाली साहित्य से पेट नहीं भरता। उसके लिए कुछ पैसे भी चाहिए। कविता-कहानी पल भर के लिए वाह-वाही देती है पर पैसे नहीं। दूसरे-तीसरे महीने कोई एकाध कविता-कहानी छपने पर या किसी साहित्यिक सम्मेलन में पाठ करने पर सात-आठ सौ रुपये बनते हैं। लेख जो अखबार में हाल ही में छपना आरंभ हुआ है, उसके 250 रुपये प्रति लेख मिलता है। घर में वृद्ध माता है, पत्नी है दो बच्चे हैं।" उसने अपनी विवशता जाहिर की।

"पर इससे तो कहीं छोटा-मोटा अध्यापन का कार्य कर लेते तो अच्छा होता।" मैंने कहा।

"वर्ष 2002 में एम.ए. किया था हिंदी में। आज तक किसी सरकारी स्कूल में अध्यापक का पद नसीब नहीं हुआ। हां- एक प्राइवेट स्कूल में नौकरी मिली थी मात्र एक हजार प्रति मास वेतन पर। स्कूल घर से काफी दूर होने पर, आधे से ज्यादा वेतन बस किराए में ही खत्म हो जाता है। मैंने इसलिए यह नौकरी छोड़ दी।" उसने अपनी व्यथा सुनाई।

"तो कोई ट्यूशन बगैरा का काम कर लेते।" मैंने कहा।

"हिंदी विषय की कौन ट्यूशन पढ़ता है, जनाब।" उसने तपाक से कहा।

"पर चपड़ासी-फराश की नौकरी! आपकी पढ़ाई-लिखाई और प्रतिभा से कतई मेल नहीं खा रही।" मैंने कहा।

"इस समय मेरे सामने अपना व अपने परिवार का पेट भरने का सवाल ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। चौकीदार-फराश की नौकरी मिलना भी कहां आसान है? पचास रिक्त पदों के लिए पचास हज़ार लोगों ने आवेदन कर रखा है। दो महीनों से इंटरव्यू चल रहा है। अभी एक महीना और चलेगा शायद। कोई एम.ए. पास तो कोई मिडल पास। चयनकर्ताओं की स्थिति उस बाघ जैसी है जिसे हिरणों के बहुत बड़े झुंड से कोई एक हिरण शिकार के लिए ढूंढना हो। सुना है सिफारिशी लोग ही रखे जाएंगे। आप उच्च प्रशासनिक पद पर रहे हैं। कोई तो जान-पहचान होगी आपकी। मेरी सिफारिश कर सको तो करना प्लीज़।" उसने आग्रहपूर्वक कहा।

यह भलीभांति जानते हुए भी कि मैं कोई विशेष मदद नहीं कर पाऊंगा, मैंने उससे इंटरव्यू की तारीख पूछी और कुछ देर तक यूं ही बतियाने के बाद फोन रख दिया। पता नहीं उस रात वह सोया या नहीं परंतु मुझे पूरी रात नींद नहीं आई।

आई.ए.एस. (सेवानिवृत्त), ब्लॉक-14, फ्लैट-एक, हिमुडा कॉलोनी, संजौली, शिमला-171 006, मो. 0 98166 72455

बाल कहानी

चंदा मामा का प्यार

◆ कविता

सोनू की आंख एकाएक खुल गई, क्योंकि उसे ऐसा एहसास हुआ मानो दो हाथ उसे प्यार से सहला रहे हैं। जरूर अब मां मनाने आई होगी। सोनू रोते-रोते बिना खाये ही छत पर जाकर सो गया था। उसका कसूर भी तो क्या था, बस यही न कि मां के सुनहले ब्लाउज के कपड़े में से एक छोटा-सा गोला चंदा मामा बनाकर तस्वीर पर लगाने के लिये काट लिया था। बिलकुल आकाश का चंदा मामा लग रहा था वह कपड़ा तस्वीर पर चिपक कर। इतना बड़ा कपड़ा तो था जरा सा काट लिया तो क्या हो गया ? सोनू की समझ में नहीं आया, क्यों मां ने दो चांटे कस कसकर जड़ दिये? मां के मारने से ज्यादा गुस्सा उसे छोटी बहन पर आ रहा था जो मां के पीछे खड़ी हंस रही थी, जरूर उसी ने चुगली की होगी तब ही मां दौड़ती हुई आई और चांटे मार दिये। अब मां खाना खाने के लिय मनाने आई होगी। वह इतनी आसानी से नहीं जायेगा, पहले बहुत सारी पप्पी लेगा तब मानेगा।

वह और भी सिकुड़ कर सोने का बहाना बनाने लगा। तभी उसे एक अजनबी सी आवाज सुनाई पड़ी जो उसे प्यार से सहलाते हुए 'सोनू सोनू' पुकार रही थी। ये मम्मी की आवाज को क्या हुआ उसने चौंक कर आंखे खोल दी। उसके सामने सुनहले झब्बे बालों वाला एक वृद्ध झुका हुआ था। उसके चेहरे से रोशनी निकल रही थी। बिलकुल सफेद जैसे हिमालय से आया हो।

कौन... कौन हैं आप ?

'मैं तेरा चंदा मामा हूं। तू मेरे लिये रो रहा था न इसलिये मैं तेरे पास आया हूं। चल मेरे साथ तुझे मैं अपने घर की, अपनी दुनिया की सैर कराने ले चलूं।' चंदा मामा ने अपना चमकता हाथ उसकी ओर बढ़ाया तो वह उसे पकड़कर उठ खड़ा हुआ

'सच मुझे अपने देश ले चलोगे ,'

' हां चलो वहां की सैर कराउंगा' सोनू ने मामा का हाथ पकड़ा और किरणों के रास्ते ऊपर की ओर चल दिया। उसका एक-एक पग खुशी से भरा जल्दी-जल्दी पड़ रहा था।

अब मजा आयेगा। मुन्नी बहुत चिढ़ा रही थी अब तैं उसे चिढ़ाऊंगा। किरणों की सड़क बहुत चौड़ी थी। दूर-दूर तक सुनहला रास्ता ही दिखायी दे रहा था। कुछ दूर चलने पर उसे रुपहले खेत दिखाई दिए उन पर फूल जो खिले थे वे तारों के थे। बादलों के बड़े-बड़े पहाड़ थे। चमकती हुई बिजली के झरने थे।

एकाएक उसे याद आया कि चंदामामा में नीचे से बूढ़ी अम्मा भी तो दिखाई देती हैं।

'मामा... मामा, वो आपके घर में एक बूढ़ी अम्मा है न वह कौन हैं ?

बेटा, वो मेरी अम्मा है... उनसे मिलोगे ?'

' हां मामा जरूर....'

चंदा मामा का घर बहुत बड़ा एकदम चिकना चमकदार था, सब कुछ सुनहरा यहां तक कि फब्बारों से पानी निकल रहा था वह भी सुनहला था। सब चीज गोल-गोल थी। पानी भी गोल-गोल घूमता गिर रहा था। पेड़ भी गोल-गोल चंदा मामा का आसन भी गोल-गोल था। उनकी मां जो सूत कात रही थीं वह भी बड़ा गोल बन रहा था।

'अरे ! मामा यह इतना सूत इसका क्या होगा ? और इतनी रुई कहां से आती है ?'

'ये बादलों के पहाड़ देख रहे हो न, यह रुई के गोले ही तो हैं। इस सूत से आकाश की चादर बनती है।'

'हां मामा! चादर तो बहुत बड़ी है। यह फटती नहीं है क्या? बहुत मजबूत होती है ?'

'अरे नहीं, अधिकतर फट जाती है। जब यह फट जाती है तब नीचे पानी गिरने लगता है। फिर उतने हिस्से को फिर से सीना पड़ता है। पानी हरदम ही नीचे गिरकर सारी पृथ्वी को पानी में ही न डुबो दे, इसीलिये तो चादर बनायी है।'

'ओह! तभी जब बहुत तेज पानी आता है तब सब कहते हैं कि आकाश फट गया है या आसमान में छेद हो गये है। इसका मतलब है आप तो हमारे लिये बहुत से काम करते हैं तभी आपको प्यार से सब मामा कहते हैं। आप हमारे भी मामा है और मम्मी के भी।' सोनू ने कहा।

मामा के घर में अनेकों छोटे-छोटे चांद लटके हुए थे। एक छोटा-सा चंदा चंदा मामा ने सोनू को देते हुए कहा, 'लो अब मैं इस छोटे से रूप में हमेशा तुम्हारे पास रहूंगा। अब तुम मेरे लिये मत रोना, ठीक है नं।'

'नहीं रोऊंगा पर मामा मुझे तो बहुत जोर की भूख लगी है। आप खाना नहीं खाते क्या ? '

'खाना, वह क्या होता है ?' मामा ने हैरानी से पूछा

'अरे मामा, आप इतना भी नहीं जानते। मेरी मां रोटी बनाती हैं गोल-गोल बिलकुल आप जैसी... उसे हम सब खाते हैं।'

'ओह! उसके लिये तो तुम्हें वहीं जाना पड़ेगा अपनी मां के पास।'

तभी सोनू के ऊपर पानी की एक बूंद पड़ी, वह हड़बड़ाकर चिल्लाया, आकाश में छेद हो गया, पानी गिर रहा है।

उठ कर बैठा तो देखा, मां उसके सिरहाने बैठी है। उनका आंख से आंसू जो गिरा तो उसकी एक बूंद सोनू के गाल पर आ टपकी। उनके हाथ में थाली थी जिसमे गोल-गोल रोटी रखी थी जो चंदा मामा की किरणों में सुनहरी लग रही थी। सोनू अचकचा गया। उसका मतलब वह सपना देख रहा था, बड़ा अच्छा सपना था। तभी उसे लगा उसके हाथ में कुछ है। हथेली खोल कर देखी तो एक गोल, सुनहरा चंदा उसकी मुठ्ठी में कैद था। हैरान वह उसे छोटे से चंदा को देख रहा था। उसकी समझ में नही आ रही था कि वह सपना देख रहा था या सच में चंदा मामा उसे अपने साथ ले गये थे। वह उठ कर मां से लिपट गया। अब माँ ने भी सजल आंखों से उसे अंक में भर लिया था।

द्वारा डॉ. शशि गोयल
सप्तर्षि अपार्टमेंट, जी-9 ब्लॉक 3 सैक्टर 16 बी
आवास विकास, सिकंदरा, आगरा-282010

कविता

बेदख़ल स्नेह

◆ ओमप्रकाश सारस्वत

प्रतिदिन गांव-शहरों में उपेक्षित हो रहे बूढ़े
नए सोफों नई आसन्दियों के बीच ज्यों मूढ़े।

गृहस्थी के किसी कोने में बैठे चुक गए-से ये
ये अपने समय का इतिहास जैसे रुक गए-से ये
जिन्होंने उम्र भर परिवार के सपने किए पूरे।

जो कल उनवान थे रचना का, बनके रह गए मतला
किसी कविता, किसी भी गीत का ज्यों हो गए अथवा
किसी महाकाव्य को जैसे कोई क्षणिका लघु, घूरे।

नए साहित्य में ज्यों हो गए रस भाव तिरस्कृत
जो हर मोके पे थे प्रस्तुत हुए ज्यों आज अप्रस्तुत
जो पूरी शख़्सीयत थे कल, आज ज्यों आधे-अधूरे।

तब संस्कृति का उत्तम, हाशिए पे बैठ रोता है
जब कोई भी सर खुद परंपराओं को डुबोता है
कि जैसे बेदख़ल स्नेह आंगनों में बैठ कर घूरे।

जी-6, नॉल्सवुड कॉलोनी, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 002, मो. 0 94180 54054

भीमबैठका कविताएं

◆ प्रेमशंकर शुक्ल

दृश्य में कविता

भीमबैठका एकांत की कविता है
उठता रहता है जिसका स्वर
हमारे भीतर के हर एक प्रांत में

यहां का एकांत
सुनना चाहिए प्रशांतमन
बैठकर चट्टान की छांव

बिना किसी मिलावट के
यहां की गुफाओं में
मिलता है हमें छायारस

कविता की धूप-छांहीं में
चिड़ियों की चिहुंक
मंगल-ध्वनि लगती है

चट्टाने पत्थर-नींद में हैं
जिन्हें बिना हिलाए-डुलाए
अपने ओसार में
ला चुकी है कविता

कविता के घर आकर
चट्टाने खुश हैं
तरतीब से खुल रहा है उनके सामने
मनुष्य के सुख-दुःख का मर्म

हवा का खुले गले से गाना
कितना सुकून दे रहा है
भीमबैठका में हमें
डूब रहा है जिसमें तन-मन

बैशाख की यह दोपहर-धूप
एक साथ दिखा रही है
सारा भीमबैठका

निगाह खोलिए
दृश्य में कविता ही कविता है

दिगंबर पेड़ वन में तप कर रहे हैं
यहां होना तपोवन में होना है।

चार अंकीय

दोपहरें चित्रों की जयंती हैं
रातें गर्भगृह

सुबह सुंदरता में
खर्च हो जाती है

गोधूलि में रंग
अपना कुछ
याद करते मिलते हैं

चट्टानों की बस्ती

चट्टानों की खूबसूरत बस्ती है
भीमबैठका

बहुत पानी है इन चट्टानों में
इसीलिए है इनकी छाया
शीतल-तरल-अथाह

बैशाख-जेठ की दोपहरों में
चट्टानों की छाया देती
अनिर्वचनीय सुख

अपने कहने में छाया की
कई-कई तहें हैं और धूप के
कितने-कितने आरोह-अवरोह
कंदराओं में बैठकर
हवा का संगीत सुनने से
जीवन की सुंदरता गुनने से
चट्टाने खुश होती हैं।

गुफाओं की तरल छांव को
आप हिलाते हैं
और आ जाता है
कविता में आलोड़न

बादल छांह करते हैं
तो तपते पेड़
हाथ उठाकर पूछते हैं
बारिश कब आएगी

गुफाओं के बीच दिखता नीला आकाश
वनवासी पांडव- युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम,
नकुल, सहदेव व द्रोपदी के मध्य

अचानक आ गए लगते वासुदेव

भीमबैठका चट्टानों की
खूबसूरत बस्ती है
तभी तो यहां के लिए कविता
तरसती है और बहाती रहती है
कितना तो पसीना अपना।

आज बारिश ने

भीमबैठका की चट्टानें
बादलों की बेटियां हैं
इसीलिए बारिश कभी
इनका घर नहीं बिगाड़ती

झमाझम बारिश हो रही है
पानी चट्टानों को चूमता है
गहरे आवेग और अपने द्रव-होंठ से

भीतर तक चट्टाने भीग रही हैं
पा कर मीठा-तरल प्यार

आज बारिश ने अपने संगीत से
चट्टानों को इतना नहलाया
कि चट्टानों की सारी झुर्रियां
हवा हो गई हैं

सृजनपीठ

भीमबैठका में
गुफाएं सृजनपीठ हैं

हमारे आदि पुरखों ने
रचे हैं यहां चित्र ही चित्र

भीमबैठका रचने की जगह है
रचनाशील मानस से ही
समझा जा सकता है
भीमबैठका

बंजारन हवाएं भी

भीमबैठका से लेकर जाती हैं
रचने का हुनर

आप जब भी जाएं भीमबैठका
हवाएं गीत का रियाज करती रहती हैं

गुफाएं सृजनपीठ हैं
यहां ऋतुएं लिखकर ही जाती हैं
कोई न कोई अपना मनमाफिक गद्य
या कोई न कोई सुंदर पद्य

गुफाओं की छायाएं
महाकाव्यात्मक हैं
छूते से ही
खुलती चली जा रही हैं
छायापाती की लिखत

भीमबैठका की
गुफाएं सृजनपीठ हैं
इनके भीतर बैठना
रचना के भीतर बैठने का
शऊर होता है

कूक और हूक का भेद
यहीं समझ आता है

घोषणा

(श्रीदेवीलाल पाटीदार के लिए)

भीमबैठका के शैलचित्र
बनाते हुए आदि मनुष्य ने
अपने पूरंपूर मनुष्य होने की घोषणा
की है
और अपनी मनुष्यता का किया है
सुंदर उद्घाटन

रचना अपने को समझना है
समझाना भी
चाहे शब्दकाया में हो
या चित्रकाया में

चट्टान-चित्रों की रचना में
मनुष्य को क्षण जीना आया
रचने के अनूठे क्षणों में ही
मनुष्य ने अपने मनुष्य की
गहरी पहचान की है

भीतर की अथाह जलराशि तक
बनाई है अपनी पहुंच

अपनी ऊष्मा और आंच को
भीतर की आंख से बखूबी
निहार सका है वह

सर्जना की गहरी ताकत को भी
समझ सका है वह रचने के ही
दरमियान

रचने के उल्लास-आवेग में
घोषणा स्पष्ट सुनी जा सकती है
सृजन-क्षण उन्माद वृत्तियों का
सच्चा निषेध

सर्जन में ही विस्तार है
मनुष्यता की उजास का भी।

सूखे पत्ते

भीमबैठका में सूखे पत्ते
अपनी हरियाली की स्मृति में धड़कते हैं

दो चट्टानों के बीच
सूखे पत्ते खाली नहीं बैठे हैं
हवा से अपने संवाद लिख रहे हैं

अंजोरपूरित रात में
अपनी टहनी की याद लिख रहे हैं

सूखे पत्ते
हरियाली के लिए नहीं
अपने संगीत के लिए जाने जाते हैं
धोखे से भी इन पर पांव पड़ जाए
तो सूखे पत्ते
सारा जंगल जगा देते हैं।

समूह नृत्य

भीमबैठका की चट्टान देख रहा हूं
समूह नृत्य उकेरा गया है जिसकी बांह
नृत्य-चित्र को निहारने से
नाचने लगती है पूरी चट्टान
समूह-थिरकन से धड़कता रहता है
चट्टान का रोम-रोम और नाचता
दिखता है पूरा जंगल

नृत्य में जीवन का कितना जादू है
जीवन में नृत्य भी जादू ही है
नाचते हुए हम देह में रहकर भी
हो जाते हैं देह के पार
नृत्य ही संभव कर सकता है यह
देह में रहते हुए हो जाना देह से परे

मोहाविष्ट निहारता रहा काफी देर
फिर धन्यवाद में
चट्टान के कान में बुदबुदाता हूं :
जहां भी नृत्य देखता हूं
रीझ जाता है मेरा आदिवासी मन !

कुलांच

खुर गड़ाए चट्टान में
हिरन दौड़ रहा है

कुलांच में
कविता उठान ले रही है

यह पृथ्वी के पहले हिरन की
कुलांच है
भीमबैठका के चट्टान में
लिखी हुई।

द्वारा भारतभवन, शामला हिल्ज़,
भोपाल, मध्य प्रदेश-462 002

कविता

शांति का दूत

◆ कृष्ण चन्द्र महादेविया

प्रेम अहिंसा की जहां,
लिखती हैं नादियां इबारत।
विसरायों का सहारा,
देश सुन्दर वह भारत।

हुआ सुभारत में एक,
लाठी और लंगोटी वाला।
त्याग दिए वस्त्र विदेशी,
ओढ़ खादी का दौशाला।

सत्य सुवचन पावन मन,
अहिंसा पाठ पढ़ाया।
नग सम अडिग राह पर,
सत्यपुरूष बापू आया।

संयमी कर्मठ शांत रूप,
सम आंख पीड़ित-कुरूप।
खद्दर पहन चरखा चला,
सत्य न्याय सुदर्शक भला।

शांति का सूर्यदीप बन्धु,
मिटा पाएगी क्या आंधी।
संत कर्मवीर जग में क्या,
होगा वैसा अमर गांधी?

चंद दिवाकर हैं रहेंगी,
सदा कीर्ति अविनाशी।
रखेंगे पूज्य हिय में सदा,
कृतज्ञ सुभारत वासी।

विकास कार्यालय पधर, मण्डी
(हि. प्र.)-175012
मो. 0 86791 56455

शबनम शर्मा की कविताएं

वो

जिन्दगी के हर पहर में,
वो जूझती सी औरत,
कौन?
मुँह अंधेरे उठकर,
काम में लगती,
कभी बच्चों, तो कभी पति को तकती,
हर दम दबी-घुटी,
सबकी फरमाईशें पूरी करती,
फिर भी सवालों के घेरे में घिरी,
एक साथ कई काम निबटाती,
बिंदी माथे से उतर कर
कभी कोहनी पर या गाल पर आ जाती,
बाल संवर नहीं पाते,
पर काम पूरे ही नहीं होते,
बैठकर ठहाके लगाता
आँगन में पूरा परिवार,
लाँघते ही आँगन तिरछी सी
मुस्कान बिखेर जाती,
फिर जुट जाती, इस हिसाब में,
कौन मेहमान आने वाले हैं?
किसको क्या लेना-देना है,
सत्तो ताई बीमार है पूछने जाना है,
पटवारी के घर पोता हुआ, बधाई देनी है,
मशीन से हाथ चला
कोशिश करती पूरे काम,
ये कौन, इक मालकिन, उस बड़े घर की,
जो कहलाती महज इक सकुशल,
घरेलू महिला।

वो नन्हा

पहन के बस्ता,
टाँग के बोतल,
स्कूल की चमकीली वर्दी में,
ठुमक-ठुमक कर वो पग भरता,
आया घर से पहली बार,
बहुत समझाया सबने उसको,
जा रहा वो भी शाला आज,
उतर गोद से पहन रहा वो,
जिम्मेदारी का है ताज।
जैसे ही स्कूल वो आया,
हमने उसे कमरा दिखलाया,
मैडम को था, हाथ थमाया,
नन्हें ने फिर शोर मचाया।
जोर से पकड़ा उसने मुझको,
नहीं रहूँगा, मैं कभी यहाँ,
ये सब तो घर में नहीं हैं
जाऊँ हो मौज मस्ती जहाँ,
उसके रुदन से, डब-डब आँखों से,
मेरा मन भी था भर आया,
छुड़ा कर हाथ, थमा शिक्षा के
मन्दिर में, मैं छोड़ के आया।

माँ की वो संदूकड़ी

साल भर इन्तजार रहता,
मायके जाने का,
छुट्टियाँ होते ही, कुछ दिन
घर के काम-काज से चुराकर,
और भाई-बहनों संग प्रोग्राम
बनाकर, पहुँच ही जाते,
हम माँ के घर,
अपने गाँव में।

घर का कोना-कोना निहारती
दिखती माँ
समेटती छोटी-छोटी चीजें
हम सबको देने के लिये।
बटोरती कुछ सिक्के भी
बाँध लेती चुन्नी के कोने में,
आते ही गली से कोई भी आवाज,
पुकारती बच्चों को, देती
अंटी से खोल कुछ पैसे, भागते
बच्चे, लाते सामान, खाते और
खिलखिलाते।

दिन बीत जाते, हम भी सामान बांधते,
देख हमें, माँ निकालती अपनी बरसों
पुरानी संदूकड़ी, जिसमें बाँधकर रखे हैं
हम सबके जोड़े, पुड़ियों में बंधे पैसे
मुन्ने के कंगन, गुड़िया की पायल।

एक-एक को पुकार कर देती,
खुश होती, बस दुआएँ देती,
मिलने जाते हम भी दूसरे कमरों में
वहाँ रहती हैं हमारी भाभियाँ

सामने वाले घर में दो चाचियाँ,
देखते ही हमको इक बनावटी मुस्कान,
पर्स से निकाल वो एक आध शगुन,
का नोट, कितना भारी लगता उन्हें,
दस बार अलमारी खोलती-बंद करतीं,
फिर कह देतीं, ''तेरे लायक कोई कपड़ा
ही नहीं अलमारी में, सब.............''

सोचती मैं कितनी अमीर है मेरी
माँ की वो जंग खाई पुरानी संदूकड़ी,
इन चमचमाती अलमारियों से
जिनमें से इक रूमाल भी नहीं
झाँकता लड़की को देने के लिए।

अनमोल कुंज, पुलिस चौकी के पीछे, मेन बाजार,
माजरा, तह. पांवटा साहिब, जिला सिरमौर,
हिमाचल प्रदेश – 173021, मो. – 09816838909

बहुविध संस्कृति...

(पृष्ठ 7 से आगे)

वियोग

बीझे सौरगा बादल निकता हौरा।
आपू न्हौठा फरंगी री नौकरी झूरी डाही जौल़दी घौरा।

फूल निभू फूलिया, भौर फूलला जौरा।
लोभी न्हौठा दूर नौकरी, दुखा रा कोटड़ू घौरा।

नीलीए चीड़िए, कोल्ह बुणू पाणी रे छोभे।
लोभी न्हौठा दूरा पारा बे कुणी रे रौहली लोभे।

भेलया माण्हुआ, भलेया जुआना।
राती नी पौड़दी निंद्र, दिहाड़ी नी रूचदा खाणा।

हेठे धीरे शहरा, ऊझे भेखली धारा।
लोभी चौलू दूरा पारा बे, गौल लागा भौरिदा म्हारा।

बारामासा के रूप में विरह गायन

हिमाचल प्रदेश में बारामासा के गायन की समृद्ध परंपरा है। ये गायन कांगड़ा, मण्डी, सोलन के क्षेत्रों में होता है जिसमें बारह ऋतुओं में विरहणी नायिका की मनोदशा का वर्णन मिलता है। चैत्र से ले कर बदलती ऋतुओं में कंत की प्रतीक्षा में विरहणी किस तरह तड़पती है, इसक हृदयग्राही वर्णन बारामासा में मिलता है। बारामासा में प्रत्येक ऋतु के साथ विरहणी नायिक के मन के उद्गारों को हृदयग्राही शब्दावली में व्यक्त किया जाता है।

कांगड़ा क्षेत्र में बारामासा

(1)
चैत न तू जाई ढोला
बांदी ए बहार
बसाख सः दुप्पटे मैं सींदी वे हां।
जेठ न तू जाई ढोला धुप्पां जोर जोर
हाड़े च हांखीं दुक्खण तेरियां
सौण न तू जायां ढोला बद्दल़ घनघोर
भाद्रूएं रातीं न्हेरियां।

सूज न तू जाईं ढोला पितर सराध
कात्तीं बिच बलन दयालियां वे हां।

मग्घर न तू जाई ढोला ल्हेफ भरां
पौहे बिच सेजां बच्छाणियां वे हां।

माघ न जाईं ढोला लोहड़िया तिहार
फौगणे च नारां खेलण होलियां।

(2)
बसाख बसंबर वासुदेव, फुल वामन हरमन हारे।
पद्मनाभ परमेसर सिमरूं, परसराम बलकारे जी।।
हरि नाम हृदयधारी लीजो जब लागे प्रभु के सरनम
हरिभक्त अरे हरि भजन बिना
तुद बिन भवसागर किस विध तरनम।।

जेठ जपो जगदीश सदा प्रभु
यम के त्रास निवरणम।
नाम लेत सब पाप कटत हैं
हुण क्या गाफल करणम।
भक्त बच्छल भगवान भजो
सब संकट दोष निवरणम।
हरि भक्त अरे भजन बिना।।

हाड़ हरि का नाम जपो
पुन हृदय हरि जी धारो
अलख निरंजन निराकार नरसिंह
ध्यान बिच धारो जी
भक्त प्रल्हाद की मुक्ति करे
जब लगे प्रभु के चरणम।
हरि भक्त अरे हरि भजन बिना।।

सौण श्याम सलोनों सिमरो
सुभ जुग के सुखदाई।
मोर मुकुट पट चीर बराजे
बलिभद्र के भाई जी।
मुरली के घनघोर सुनी
मृग, पंछी छिपी रहे हरि चरणम।
हरि भक्त अरे हरि भजन बिना।।

सोलन (अर्की क्षेत्र) के उदाहरण :

(1)

आया महीना चैत, सरसों दे खेत
बागे फूली मालती, जिनां दे पिए घर होए

हार गुंदादिएं।

आया महीना बशाख, दाड़ू मौले दाख
बगिया बहार बे, जिनां दे पिए घर होए
बहारां मनावदियां।

आया महीना जेठ, अम्बूए दे हेठ
सूई मेरी चोली बे, जिनां दे पिए घर होए
पखुआ झूलांदियां।

आया महीना हाड़, खुली जांदे बाड़
हाड़ पुकारदी, जिनां दे पिए घर होए
स्यो कागा उड़ादियां।

आया महीना शावण, रिमझिम नांवण
पींगां प्यारेया पड़रैया, जिनां दे पिए घर होए
स्यो पींगा झूलांदियां।

आया महीना भादां, खड़लू बी शादो
खड़लू बी नीसरे, जिनां दे पिए घर होए
तिनां दे सब दुख बिसरे।

आया महीना शौज, बामणा री मौज
श्राद्ध प्यारेया हो रहे, जिनां दे पिए घर होए
स्यो पितरां मनांदियां।

आया महीना कतक, नेहरे दिती दस्तक
दयाली प्यारेया हो रही, जिनां दे पिए घर होए
दयालि़या मनांदियां।

आया महीना मग्गर, बैंदियो चाए बंजर
मग्गर सिर गुदांदियां, जिनां दे पिए घर होए
स्यो ल्हेफ भरांदियां।

आया महीना पौष, ठण्डी उड़ाई ओश
पाले़ पड़ी चौगुणे, जिनां दे पिए घर होए
तिनां दे भाग सौगुणे।

आया महीना माघ, बण बोले बाघ
मगर मैं नहांवदी, जिनां दे पिए घर होए
दानां करांदियां।

आया महीना फागण, होल़ी खेले सुहागण
होल़ी प्यारे हो रही, जिना दे पिए घर होए
होल़ी मनांदियां।

लोक गीतों में पर्यावरण

ग्राम्य जीवन पर्यावरण की गोद में पलता बढ़ता है। अनजाने में ही लोकमानस पर्यावरण के प्रति सचेत रहता है। इस बारे कोई शिक्षा नहीं देता, कोई प्रचार नहीं करता। एक अपढ़ देहाती पर्यावरण की महत्ता उतनी ही जानता है जितना एक बड़े से बड़ा वैज्ञानिक यर पर्यावरणविद। पर्यावरण के प्रति सचेत रहने की दीक्षा उसे अपनी परंपरा से मिलती है। यह भावना लोकगीतों में भी सहज ही परिलक्षित होती है।

चम्बा (भरमौर) का एक गीत है :
हरिए डालि़ए तू किह्यां बढणी
इक बो तेरा पाप लगंदा
दूजे दिक्खी कैं तू किह्यां छड्डणी।

.....हे हरी शाख! तूझे कैसे काटूं। एक तो (तूझे काटने से) तेरा पाप लगेगा। दूसरे तूझे देख कर मैं छोड़ भी कैसे सकता हूं!

भेड़ बकरियों के चारे के लिए पेड़ से पत्ते शाख समेत काटे जाते हैं। हरे पत्ते भेड़ बकरियों के लिए आवश्यक हैं। उधर नई और हरी शाख को काटने का मन नहीं नहीं करता।

चम्बा के गीत में चम्बे के पेड़ की हरी भरी डालियों का उल्लेख आता है। चम्बे के पेड़ को सम्बोधित कर इस गीत में पति पत्नी में प्रेम अवसरों पर रात को ससुर सास, जेठ जेठानी के जागते होने की बात की गई है और कहा गया है कि प्रेमालाप हौले हौले करना, सब अभी जाग रहे हैं :

हाय बो चम्बा हरेया भरेया
हरेया भरेया रांझणा हो
हरियां चम्बे दियां डालियां हो
हाय बो चम्बा...।

हाय बो गल्लां हौले करयां
हौले करयां रांझणा हो
सौहरा सुता, वे सस्स जागदी हो
हाय बो चम्बा...।

हाय बो गल्लां हौले करयां
हौले़ करयां रांझणा हो
जेठ सुता, वे जठानी जागदी हो
हाय बो चम्बा...।

एक अन्य गीत में एक अजनबी के प्रति भाव बहुत ही काव्यमयी भाषा में व्यक्त किए गए हैंः

पखला माह्णू, खौदला़ पाणी
डर लगंदा..........।

.......पखला (अनजान, अजनबी) मनुष्य और गंदला (मटमैला) पाणी....डर लगता है। यानि जिस तरह मटमैले पानी की कोई थाह नहीं लगा सकता, उसी तरह अजनबी के बारे में भी कोई अंदाजा नहीं लगा सकता कि कैसा होगा।

जीवन की आशा निराशा, मिलन विरह, सुख दुख, खुशी ग़मी; सभी भाव लोकगीतों के माध्यम से प्रस्तुत होते हैं। हास्य, श्रृंगार, करुण आदि जितने भी रस हो सकते हैं, लोक गीतों में समाए रहते हैं। वर्षों पुरानी संस्कृति को ये गीत सहज भाव से उद्घाटित करते हैं। मानव समाज की भौगोलिक-ऐतिहासिक, पौराणिक-धार्मिक, नैतिक-आर्थिक, आध्यात्मिक-सामाजिक सभी प्रकार की प्रवृत्तियां लोकगीतों के माध्यम से स्पष्ट होती है।

लोकगीतों का अपार भण्डार है। इसके संग्रहण के लिए बहुत धैर्य की आवश्यकता है। बहुत से गीतों के बोल और तर्ज बदल गई है या बदल दी गई है। पुरानी तर्जों पर नये गीत बन गए हैं। पुराने गीतों को नई तर्जों में गाया जा रहा है।

हिमाचल प्रदेश में बहुआयामी और बहुविध संस्कृति के दर्शन होते हैं। प्रदेश का प्रत्येक अंचल संस्कृति में एक दूसरे से भिन्न है। शिमला, कुल्लू के गीत व नृत्य कुछ कुछ मिलते हैं कितु वेशभूषा एकदम अलग है। उधर सिरमौर का गायन व नृत्य एक अलग ही तान और लय लिए हुए है। इसी तरह कांगड़ा और चम्बा साथ साथ होते हुए भी गीत संगीत में अलग हैं। चम्बा के जनजातीय क्षेत्र भरमौर की लय बिलकुल अलग है। प्रदेश में बारह जिले हैं जिन में लोक संगीत व गायन अलग अलग देखा जा सकता है। जिला कांगड़ा प्रथम नवम्बर 1966 से पहले सबसे बड़ा जिला था जिसमें लाहौल स्पीति से लेकर ऊना तक का क्षेत्र आता था। पंजाब के पुनर्गठन पर लाहौल स्पीति, कुल्लू, हमीरपुर और ऊना अलग जिले बने। हमीरपुर और ऊना की संस्कृति कांगड़ा की भान्ति है यद्यपि ऊना में बोली में अंतर आ जाता है। दो जनजातीय जिलों किन्नौर तथा लाहौल स्पीति की भाषा भोटी भाषा है जो तिब्बती से मिलती जुलती है। यहां का गीत संगीत अलग है। तीसरा जनजातीय क्षेत्र चम्बा का भरमौर व पांगी है जो भाषायी समानता के कारण पूरे प्रदेश से मिलता जुलता है।

लोकगीतों में लोक की आत्मा बसती है। आत्मा बोलती है। गीत समाज की एक तसवीर सामने लाते हैं। ग्रामीणों के दिलों की धड़कन होते हैं लोकगीत जो कभी साजबाज के साथ, कभी नृत्य के साथ तो कभी अकेले में ही जीवन में नया संचार करते हैं, नये प्राण फूंकते हैं।

यद्यपि आज भी नये नये गीतों का निर्माण स्वतः हो रहा है तथापि समय के बदलाव से एक प्रदूषण आ रहा है। पहले कैसेट और अब ऑडियो वीडियो सीडी ने एक नया माध्यम तो दिया है, प्रचार प्रसार भी हुआ है। इससे लोकगीतों के प्रति एक लगाव भी हुआ है। किंतु आज लोक में जो मिलावट या प्रदूषण आ रहा है, वह चिंता का विषय है। ठेठ और पुराने गीतों के जानकार बहुत कम रह गए हैं। आधुनिकता की दौड़ में पहाड़ी गानों को फिल्मी गानों के साथ रिमिक्स किया जा रहा है। आधा लोक गीत और आधा फिल्मी गीत गा कर इससे छेड़छाड़ की जा रही है। यही हाल गीतों के लोकसंगीत पक्ष का भी है, लोकनृत्य का भी है।

ऐसे में ठेठ व पुरातन लोकगीतों के संग्रह की नितांत आवश्यकता है। जो जानकार अभी शेष है, उनसे यह ज्ञान ले कर इसे लिपिबद्ध करने के साथ स्वरलिपि बनाने की भी आवश्यकता है अन्यथा इस निधि को खो देने का भय निरंतर बना हुआ है।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास, लोअर पंथा घाटी
शिमला-171009, मो. 0 94180-85595

पुस्तक समीक्षा
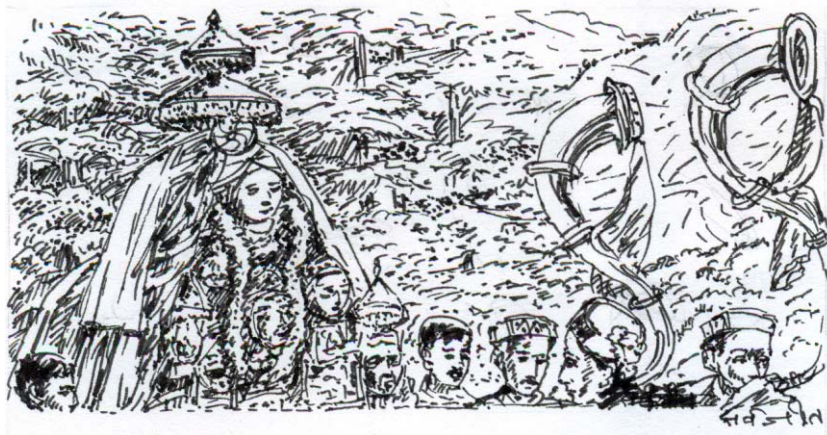
स्त्री मन की पच्चीस खिड़कियां

◆ बद्री सिंह भाटिया

कहानी संग्रह : कुछ तो बाकी है..., **लेखिका :** रजनी मोरवाल,
प्रकाशक : सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली-110 002, **मूल्य :** 300 रुपये (सजिल्द)

प्रत्येक रचनाकार जिस परिवेश, अंचल में वास करता है, जहां जाता है, वहीं खुले मन से वहां के समग्र जीवन को अपनी संवेदना के साथ कहीं भीतर संजो लेता है। अनुभवजन्य संवेदना का अतिरेक जब छलकने लगता है, भीतर एक कुलबुलाहट, उफान-सा उसके मन में उथल-पुथल मचा कागज, कलम की ओर ले जाता है और फिर होता है जन्म एक रचना का। विगत समय में कहानी अपने विभिन्न पड़ावों को पार करती स्त्री-विमर्श के एक और पड़ाव पर टिक कर बहती जा रही है। अनेक रचनाकार विशेषकर महिलाएं स्त्री मन की रचनाएं रच रही हैं। रजनी मोरवाल का पहला कहानी संग्रह 'कुछ तो बाकी है...' स्त्री मन की छोटे कैनवास की कहानियों का संकलन है।

यह कहना समीचीन होगा कि संग्रह की पच्चीस कहानियां स्त्री मन की खिड़कियां हैं, जहां से स्त्री की सामाजिक परिस्थिति और अभिव्यक्ति को देखा-समझा जा सकता है। रचनाकारा रजनी मोरवाल अपनी अभिव्यक्ति के लिए पाठक को कभी राजस्थान, कभी विदेश, कभी मुंबई तो कभी अन्यत्र ले जाती है जिससे उसकी अच्छी सैर हो जाती है। अधिकांश कहानियां मध्यवर्ग और निम्न मध्यवर्ग की भीतरी सीवनों को उघाड़कर उस परिवेश विशेष का सच पाठक के समक्ष रखती हैं।

संग्रह की पच्चीसवीं कहानी शीर्षक कहानी है। कहानी एक मेधा नामक ऐसी स्त्री की है जो अपने यौवनकाल में यह फैसला करती है कि उसे अपने बीमार पिता और अपने अनुजों की देखभाल ही नहीं, बल्कि उन्हें समाज में एक स्तर पर लाकर खड़ा करना है। वह सफल भी हो जाती है। अपनी नौकरी के चलते, अपने भाई-बहनों से मिलते उसे कहीं ऐसा नहीं लगता कि वह अकेली है। प्रसन्न। मगर एक स्तर पर उसे लगता है कि कहीं भीतर वह खाली है। अकेली हो गई है। उसके पास कुछ नहीं है। वह अपने जीवन के बारे सोचने लगती है और अपने भाई-बहनों से पूछती है। वह कहीं भीतर सोचती भी होगी कि वे कहें कि अब क्या रहा है- हम हैं। मगर कुछ नहीं। केवल खालीपन। जिनके लिए जीवन न्योछावर कर दिया, वे अपने में ही व्यस्त हैं। यहां तक कि एक भाभी उकसाती भी है। जीवन के बारे उसके विचार को पुष्ट करती है। भाई भी सहमति प्रदान करते हैं और वह पाती है कि वह कहां है? निराश। पर जब छोटी भाभी उसका शृंगार करती है तो वह स्वयं को शेष समाज के बरक्स देखती पाती है कि नहीं अभी भी कुछ है। वह वापसी में अपने सामान के बीच जब छोटी भाभी द्वारा रखी सिंदूर की डिबिया देखती है तो मुस्कुरा उठती है। हां! अभी भी कुछ शेष है। संभवतः जीवन के दूसरे पक्ष का निर्णय कर लेती है।

संग्रह की कहानियां प्रायः वर्णनात्मक ही हैं। स्त्री जीवन के उतार-चढ़ाव को वह पहली कहानी में एक चित्र प्रदर्शनी के माध्यम से प्रकट करती है। एक चित्र में रेखाओं के माध्यम से जीवन का उठान और उतार दर्शाया गया है जिसे वह एक अन्य दर्शिका के साथ वार्तालाप में पाठक को भी बताती जाती है। राजस्थान में कालबेलियों के जीवन को बयान करती एक और कहानी 'आत्म दीपो भवः' है जो निःसंतानता की पीड़ा और जीवन में आए

खालीपन को बाखूबी दर्शाती है। निःसंतान दम्पति को जब चार अनाथ बालिकाएं मिलती हैं तो जीवन में उल्लास भर जाता है।

रचनाकारा ने पाठक की यात्रा विदेशों में रह रहे भारतीयों तथा विदेश की ललक के परिणामस्वरूप आई समस्याओं को लेकर करवाई है। 'मोगरा भटकता रहा, गुलाबो देर हो गई, कहीं और न जाया जाए, पच्चीस वर्ष बाद और रक्षा कवच कहानियां विभिन्न पहलुओं को उजागर करती हैं। विदेशों में रह रहे लोग प्रायः अपनी जन्मभूमि के बारे सोचते हैं।

यह प्रायः देखा गया है कि विदेशी मुंडे से ब्याह की ललक भी हमारे देश के अनेक परिवारों में है। वे जब ठगे जाते हैं तब वे पछताते हैं कि उन्होंने ऐसा क्यों सोचा। लेखिका इस ओर स्त्री मन के एक और रूप को बताती है। पति कैंसर से तंग हो अस्पताल से भाग जाता है। उसका पता नहीं चलता। उसकी जगह नौकरी पाई वह औरत तब नए रूप में प्रकट होती है जब एक रिश्तेदार का प्रवेश लेखा- जोखा देखने के माध्यम से उसके जीवन में होता है। तब जीवन 'रिंग-अ-रिंग- ओ-रोज़ेज़' हो जाता है। उसका खालीपन भर जाता है। वैधव्य की पीड़ा विलुप्त हो जाती है। यहां लोग प्रायः स्त्री पर दुश्चरित्रता का ठप्पा लगा सकते हैं। यह दुश्चरित्रता प्रायः स्त्रियों की ही देखी जाती है। रजनी मोरवाल ने पुरुष दुश्चरित्रता को भी दर्शाया है 'पीर पराई' में।

'सोने की गाछ' पुरुष और स्त्री के मन की भटकन को प्रकट करती कहानी है। स्थानांतरण की भावभूमि को आधार बना कर लेखिका ने प्रिया नामक पात्रा के माध्यम से जसविंदर नामक स्त्री के जीवन परिवर्तन को दर्शाया है। प्रिया जब तीन वर्ष बाद जसविंदर से मिलने आती है तो घर में परिवर्तन पाकर दंग रह जाती है- पता चला कोई दुबई का मित्र इसका कारण है वर्ना टैक्सी ड्राइवर की कमाई से क्या होता। धन की आवश्यकता और ऊंचा उठने की कसक कई बार अलग फैसले लेने पर उतारू कर देती है। लेखिका की दमित चिंता इस ओर परिलक्षित होती है।

स्त्री-विमर्श की चर्चा शुरू होने से पहले ही महिला लेखन में बोल्ड लेखन की चर्चा शुरू हो गई थी। यह विचार से हटकर देह-विमर्श का अधिक हो गया था। रचनाकारा ने इस ओर चिंता प्रकट की है। 'प्रतिष्ठा में' कहानी में वह पूछती है कि नए रचनाकार देह-विमर्श से बाहर क्यों नहीं आते?

इसी प्रकार लेखिका ने विवाह संस्था की विसंगतियों पर भी कलम चलाई है। ऐसे विवाह जो माता-पिता या अभिभावक नियोजित करते हैं, उनमें कई बार आदर भावना से विवाह तो हो जाता है, मगर दोनों में आकर्षण और प्रेम नहीं पनप पाता। चुनांचे जीवन ढोने की सी स्थिति बन जाती है।

लेखिका अपनी कहानियों को कहते कई बार चालक की सी स्थिति में हो जाती है। वह पात्रों के साथ स्वयं को आत्मसात कर लेती है। लेखिका ने भूकंप त्रासदी और बच्चों के गायब हो जाने की स्थितियों पर भी कलम चलाई है- 'बैसाखियां' तथा 'छत की आस' क्रमशः इस प्रकार की कहानियां हैं।

स्त्री मन को प्रकट करती वह स्त्री के एक और रूप को प्रकट करती है। वह है प्रताड़ना सहन करने के बाद भी प्रसन्न रहना। अथवा जीवन जीते जाना। 'दो जख्म' और 'खाली पेट' में महिलाएं पति द्वारा की पिटाई के बाद विद्रोह नहीं करतीं। मगर 'नीले थक्के' कहानी में इस पाशविकता के रूप में मर्दानगी दिखाने वाला पति लड़की की शादी के समय पत्नी के आगे नतमस्तक हो जाता है। उसका पौरुषेय तिरोहित हो गया था। यहां लड़के की ललक का भी अच्छा वर्णन है और गर्भ में लड़की होने से गर्भपात का भी- वर्तमान समय का कटु सत्य। गर्भ परीक्षण प्रतिबंध कानून पर परोक्ष में प्रतिघात भी।

वर्णनात्मक कथ्य कहानी की एक शैली है। कहानी का यह रूप कहानी की उस परंपरा का निर्वाह करता है जब बच्चे चूल्हे के पास दादा-दादी, नाना-नानी या फिर किसी प्रायः घर आने वाले मेहमान से कहानी सुना करते थे। आज यह रूप कमोबेश गायब है- मगर यत्र-तत्र विद्यमान भी है। अब चूल्हा गांव तक ही सीमित है- इसलिए यह रूप बिस्तर या बैठक तक आ गया है। स्कूल का बोझ भी इसे अपने रूप से बाहर कर रहा है। लिखित रूप बरकरार है। वर्णनात्मक कहानी में बच्चों के हुंकारे और प्रतिप्रश्नों की स्थिति स्पष्ट करने की आवश्यकता अधिक होती है- वह सजती भी है। लेखक को कई प्रश्न अपने भीतर बैठे बच्चे अथवा श्रोता से पूछ कर बताने होते हैं- यह कृत्य रचना को सरस बनाता है।

शिल्प घड़ते कहानी में पठनीयता का ध्यान भी आवश्यक होता है। यह देखा गया है कि पहले बच्चे कई बार कहानी सुनते सो जाया करते थे। वक्ता तो अपने वाचक रस में सराबोर वाचन करता रहता था। कहा जाता है कि एक बार पार्वती को अमर कथा सुनाते शिव हुंकारा सुनते रहे। पार्वती सो गई थी। कंदरा में बैठा कबूतर प्रकाश में सो नहीं पाया। स्वभाववश गुटरगूं करता रहा। शिव इसे हुंकारा मानते रहे। वह अमर हो गया। पार्वती अपने पुनर्जन्म के चक्कर में उसी तरह पड़ी रह गई।

खैर! रजनी मोरवाल की ये पच्चीस वर्णनात्मक कहानियां समाज का, उनके परिवेश का चेहरा और समय प्रकट करती हैं। छोटे कैनवास की ये कहानियां एक बैठक में मजे से पढ़ी जा सकती हैं। एक महिला लेखिका के मन की कलम से निःसृत तथा अनुभवों से सराबोर ये कहानियां स्त्री मन को पाठक के समक्ष रखने में सफल हुई हैं।

गांव ग्याणा, डाकघर मांगू वाया दाड़ला, त. अर्की,
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-171 102

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 दिसंबर, 2016 अंक : 9

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374
website: himachalpr.gov.in/himprastha.asp

ज्ञान सागर

धन के लोभी के पास सच्चाई नहीं रहती और व्यभिचारी के पास पवित्रता नहीं रहती।

- चाणक्य

इस अंक में

विकास

लेख

शोध लेख

कहानी

व्यंग्य

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

अपनी बात

समय सदैव चलायमान रहता है, वह कभी किसी के लिए रुकता नहीं- अच्छा हो या बुरा, निरन्तर गतिशील रहता और यही इसका स्वभाव भी है। मनुष्य ने भले ही अपनी सुविधा के लिए लम्हों, पहरों को जोड़कर इसे दिन-महीने-साल और फिर सदियों व युगों के कालखण्ड में विभक्त कर लिया हो, लेकिन इसकी गतिशीलता व परिवर्तनशीलता पर कभी किसी का नियन्त्रण नहीं रहा है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और शायद इसीलिए हमारे बनाए नियमों एवं चिर स्थापित मूल्यों व परम्पराओं में भी यही सिद्धांत लागू होता है। परम्परा की इसी परिपाटी के अनुसार हर बीता साल अपनी निश्चित अवधि पर कालखण्ड के गर्भ में समा जाता है और पीछे छोड़ जाता है कुछ खट्टी-मीठी यादें और प्रिय-अप्रिय घटनाओं की अमिट छाप, जिनसे सीख लेकर हम कालचक्र के पहिए पर निरन्तर अग्रसर रहते है। ऐसी ही कुछ यादों और अच्छी-बुरी स्मृतियों के साथ वर्ष 2016 भी हमें अलविदा कह रहा है और हमारे स्वागत में द्वार पर खड़ा है नव वर्ष। हिमाचल प्रदेश की वर्तमान सरकार ने इस वर्ष 25 दिसम्बर को अपने कार्यकाल के सफल चार वर्ष पूर्ण किए हैं। प्रदेश सरकार के यह चार वर्ष राज्य में सर्वांगीण एवं चहुंमुखी विकास, सुशासन व जन-कल्याण के प्रति समर्पित रहे हैं। इस दौरान प्रदेश ने विकास के हर क्षेत्र में अभूतपूर्व उपलब्धियां हासिल की हैं। प्रदेश की ग्रामीण आर्थिकी की रीढ़ कहे जाने वाले कृषि क्षेत्र को मजबूत कर इसे आजीविका अर्जन का लाभप्रद एवं रोजगारपरक व्यवसाय बनाने की दिशा में सरकार ने उल्लेखनीय कार्य किया है। कृषि एवं बागबानी की नवीनतम तकनीक के लाभ किसानों-बागबानों तक पहुंचे है और प्रदेश का कृषक वर्ग कृषि की उन्नत्त खेती अपना कर खुशहाली की ओर बढ़ा है। प्रदेश में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के पश्चात युवाओं को विश्वस्तरीय गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने के लिए राज्य में उच्च शैक्षणिक संस्थान खोले गए हैं जिससे अब युवाओं को प्रदेश के भीतर ही उच्च शिक्षा उपलब्ध हो रही है। हिमाचल प्रदेश के युवा तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण कर हुनरमंद होने के साथ-साथ रोजगार के बेहतर अवसर प्राप्त कर रहे हैं। प्रदेशवासियों को घर-द्वार के निकट बेहतर व विशेषज्ञ स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया करवाने के लिए प्रदेश के वर्तमान चिकित्सा संस्थानों को सुदृढ़ किया गया है। राज्य के दुर्गम व दूरस्थ क्षेत्रों में विशेषज्ञ स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के लिए टेलिमेडिसीन सेवा आरम्भ की गई है जिससे इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को चिकित्सा की आधुनिक परामर्श सेवाएं मिल रहीं हैं। सरकारी क्षेत्र में शिमला और कांगड़ा जिला के टांडा स्थित वर्तमान मेडिकल कॉलेजों को सुदृढ़ करने के अलावा चंबा, हमीरपुर और सिरमौर जिलों में तीन और मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे हैं जिनमें से सिरमौर के नाहन स्थित मेडिकल कॉलेज में कक्षांए इसी शैक्षणिक सत्र से आरम्भ हो गई हैं जबकि प्रदेश सरकार द्वारा अधिग्रहण किए गए ई.एस. आई. मेडिकल कॉलेज नेरचौक मंडी को आगामी शैक्षणिक सत्र से आरंभ किया जाएगा। प्रदेश में केन्द्रीय विश्वविद्यालय, आईआईटी, आईआईएम, एम्स जैसे राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों के खुलने से प्रदेश के युवाओं को प्रदेश के भीतर ही उच्च शिक्षा के विश्व स्तरीय संस्थानों में शिक्षा ग्रहण करने के अवसर प्राप्त होंगे। प्रदेश सरकार ने इस अवधि के दौरान राज्य को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए औद्योगिक एवं पर्यटन विकास तथा ऊर्जा उत्पादन को गति प्रदान की है। इन क्षेत्रों में हजारों करोड़ रुपये का निवेश आकर्षित होने के साथ-साथ राज्य के लाखों युवाओं को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में रोजगार एवं स्वरोजगार के अवसर भी सुलभ हुए हैं। प्रदेश में निजी, सरकारी और संयुक्त क्षेत्र में विद्युत परियोजाओं के सफल कार्यान्वियन से राज्य को नियमित रूप में निःशुल्क बिजली और रायलटी प्राप्त हो रही है जिससे प्रदेश की आर्थिकी को भी संबल मिला है। प्रदेश में अनेकों परियोजनाओं के सफल कार्यान्वियन का ही परिणाम है कि आज हिमाचल स्वावलंबन के पथ पर तीव्र गति आगे बढ़ा है। प्रदेश सरकार ने जन कल्याण से जुड़े अपने सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए स्वच्छ भारत निर्माण अभियान के कार्यान्वियन में बड़ी सफलता हासिल की है। प्रदेश के जागरूक नागरिकों के सक्रिय सहयोग व योगदान से हिमाचल प्रदेश इस वर्ष पूर्णतः खुला शौच मुक्त राज्य बन गया है। आज जब देश के बड़े राज्य लोगों को बिजली-पानी-सड़क जैसी मूलभूत सुविधाएं मुहैया करवाने में जुटे हैं, वहीं हिमाचल प्रदेश में सभी घरों को बिजली और स्वच्छ पेयजल सुविधा उपलब्ध है और राज्य के अधिकांश गांवों को सड़क सुविधा प्रदान कर शेष को सड़क मार्ग से जोड़ने का कार्य युद्ध स्तर पर चल रहा है। प्रदेश सरकार के ऐसे ही प्रयासों का प्रतिफल है कि हिमाचल प्रदेश ने शिक्षा एवं समावेशी विकास में प्रथम स्थान प्राप्त कर एक बड़ी कामयाबी हासिल की है। प्रदेश की इस उपलब्धि से जहां हिमाचलवासियों का सिर गर्व से ऊंचा हुआ वहीं सरकार का मनोबल भी बढ़ा है। नियमित सामग्री के अलावा वर्तमान प्रदेश सरकार के चार वर्षों की उपलब्धियों पर विशेष लेखों के साथ इस अंक को पठनीय व रुचिकर बनाने का प्रयास किया है, आशा है आप अपनी प्रतिक्रिया से अवश्य हमें अवगत करवाएंगे।

–संपादक

समावेशी उन्नति व सतत् विकास के गौरवशाली चार वर्ष

वर्तमान प्रदेश सरकार 25 दिसम्बर, 2016 को अपने कार्यकाल के चार वर्ष पूर्ण कर रही है। मैं इस पुनीत अवसर पर सभी प्रदेशवासियों को हार्दिक शुभकामनायें देता हूं। चार वर्ष का यह कार्यकाल हर वर्ग, हर क्षेत्र के तीव्र सामाजिक–आर्थिक विकास का साक्षी रहा है। इस अवधि में विकास के हर क्षेत्र में अभूतपूर्व उपलब्धियां हासिल की हैं। जन कल्याण योजनाओं को तीव्रता से लागू कर आज सभी नागरिकों विशेषकर गरीबों व जरूरतमंदों को योजनाओं के लाभ पहुंचाना सुनिश्चित बनाया गया। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को और अधिक सुदृढ़ बनाने के लिये नवीन कृषि व बागबानी कार्यक्रमों के लाभ किसानों तक पहुंचाये गये हैं। शिक्षा व स्वास्थ्य के क्षेत्रों में राज्य ने अनेक मील पत्थर स्थापित किये हैं। हर छात्र को श्रेष्ठ शिक्षा सुविधायें तथा हर व्यक्ति को विशेषज्ञ चिकित्सा के लाभ घर–द्वार पर ही मिल रहे हैं। राज्य को आर्थिक तौर पर सशक्त बनाने के लिये औद्योगिक विकास, ऊर्जा उत्पादन, पर्यटन विकास को गति प्रदान की गई है। दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति, प्रशासनिक कार्यकुशलता व लोगों की सक्रिय सहभगिता से राज्य इस वर्ष पूर्णतः खुला शौच मुक्त प्रदेश बना है। युवा कल्याण, नशा उन्मूलन, सामाजिक प्रतिबद्धताओं के क्षेत्र में भी हमारे प्रयास सराहनीय रहे हैं। विश्व बैंक ने भी राज्य के हरित वृद्धि के प्रयासों की सराहना की है। इस अवधि में प्रदेश विकास की राह पर तेज रफ्तार से आगे बढ़ा है। वर्तमान कार्यकाल में मुझे छठी बार प्रदेशवासियों की सेवा करने का मौका मिला है। मैंने स्वयं को हर पल–हर दिन प्रदेशवासियों तथा राज्य को उन्नति के नये शिखरों पर ले जाने के लिये समर्पित किया है। देश में अनेक राज्य मूलभूत सेवाओं जैसे बिजली, सड़क, पेयजल उपलब्ध करवाने में जुटे हैं जबकि हिमाचल में सभी घरों को बिजली व पेयजल उपलब्ध है व सभी गांवों को सड़क सुविधा प्रदान करने के लक्ष्य को हासिल करने के लिये तेजी से कार्य हो रहा है। शिक्षा तथा समावेशी विकास के क्षेत्र में हिमाचल ने देश के बड़े राज्यों की श्रेणी में प्रथम स्थान हासिल किया है। यह उपलब्धि राज्य सरकार द्वारा किये गये कार्यों पर मोहर है। इस पुरस्कार से हर एक नागरिक का मान सम्मान व सरकार का मनोबल बढ़ा है। विकास एक निरंतर प्रक्रिया है। आने वाले वर्षों में सरकार हिमाचल को देश का एक पूर्णतः विकसित राज्य बनाने की दिशा में कार्य करेगी। चार वर्ष के इस सफल कार्यकाल के पूर्ण होने पर मैं प्रदेशवासियों को पुनः बधाई देता हूं।

–वीरभद्र सिंह

मुख्यमंत्री, हिमाचल प्रदेश।

उन्नत खेती से लहलहाए खेत-खलिहान

वेद प्रकाश

हिमाचल प्रदेश का अधिकतर भौगोलिक क्षेत्र पर्वतीय होने के कारण यहां कृषि भू-जोतों का आकार बहुत छोटा है। लगभग 70 प्रतिशत भू-जोतों का आकार एक हैक्टेयर से भी कम है और अधिकतर कृषक वर्ग किसानों की सीमांत श्रेणी में आता है। प्रदेश के 90 फीसदी लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं और 70 प्रतिशत आबादी अपनी आजीविका के लिए सीधे तौर पर कृषि एवं सम्बद्ध व्यवसायों पर निर्भर है। अपनी विषम भौगोलिक परिस्थितियों के बावजूद प्रदेश ने पिछले कुछ दशकों के दौरान कृषि विकास की दिशा में अभूतपूर्व प्रगति की है और यह क्षेत्र राज्य की आर्थिकी में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। कृषि एवं इससे जुड़े क्षेत्र हमारे सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 15 प्रतिशत का योगदान दे रहे हैं।

प्रदेश में विद्यमान विविध जलवायुगत परिस्थितियों के कारण यहां नकदी फसलों की खेती के साथ-साथ फल एवं बे-मौसमी सब्जी उत्पादन की अपार संभावनाएं मौजूद हैं। प्रदेश की कृषि आर्थिकी को मजबूत करने की दिशा में विगत कुछ वर्षों से सरकारी स्तर पर किए जा रहे सार्थक प्रयास फलीभूत होने से किसानों के आर्थिक स्वावलंबन की राह आसान हुई है। प्रदेश का किसान वर्ग खेती की नवीनतम तकनीकों व फसल विविधता प्रोत्साहनों से लाभ उठाकर पारम्परिक खेती के स्थान पर अब बे-मौसमी सब्जी एवं फल उत्पादन को तरजीह दे रहा है, परिणामस्वरूप प्रदेश में विगत कुछ वर्षों के दौरान बे-मौसमी सब्जी उत्पादन में व्यापक वृद्धि दर्ज की गई। हिमाचल की आर्थिकी में बे-मौसमी सब्जी उत्पादन का सालाना 2500 करोड़ रुपये योगदान दर्ज किया गया है।

कृषि एवं बागबानी क्षेत्र को प्रदान की जा रही प्राथमिकता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि वर्तमान प्रदेश सरकार ने गत चार वर्षों के दौरान कृषि एवं सम्बद्ध गतिविधियों के लिए 3777 करोड़ रुपये का बजट आबंटित किया। प्रदेश सरकार ने इस दौरान कृषि, पशुपालन एवं बागबानी क्षेत्रों पर वर्ष 2013-14 में 778 करोड़, वर्ष 2014-15 में 855 करोड़, वर्ष 2015-16 में 1031 करोड़ तथा वर्ष 2016-17 में 1113 करोड़ रुपये व्यय कर राज्य की कृषि अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया है।

प्रदेश में संरक्षित खेती के तहत पारम्परिक फसल में विविधता लाकर बे-मौसमी सब्जी एवं फल उत्पादन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 111.19 करोड़ रुपये लागत की डॉ. वाई.एस. परमार किसान स्वरोजगार योजना कार्यान्वित की जा रही है जिसके तहत किसानों को पॉलीहाऊस बनाने हेतु 85 प्रतिशत उपदान दिया जा रहा है। योजना के तहत पॉलीहाऊस इकाइयों का निर्माण कर 1,32,800 लाख वर्गमीटर क्षेत्र से भी अधिक क्षेत्र को संरक्षित खेती के अधीन लाया जा चुका है। योजना के तहत वर्ष 2017-18 तक 4700 पालीहाऊस व 2150 ड्रिप/फव्वारा इकाइयां स्थापित की जांएगी। इस योजना के तहत अब तक 48.45 करोड़

रुपये व्यय कर 1702 पॉलीहाऊस बनाए गए तथा 3.25 लाख वर्गमीटर क्षेत्र को इसके अन्तर्गत लाया गया है।

154 करोड़ रुपये लागत की 'राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना' के तहत 8500 हैक्टेयर क्षेत्र को ड्रिप/फव्वारा सिंचाई प्रणाली के तहत लाकर 14,000 किसानों को लाभान्वित किया जाएगा। प्रदेश में वित्तीय वर्ष 2015-16 से आरम्भ इस योजना के तहत इस वित्तीय वर्ष में 10 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं। सिंचाई सुविधाओं को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से बोरवेल, लघु व मध्यम सिंचाई योजनाओं, सतही कुंओं एवं सतही बोरवेल के निर्माण के लिए 50 प्रतिशत उपदान दिया जा रहा है।

प्रदेश में कार्यान्वित की जा रही 321 करोड़ रुपये की महत्वाकांक्षी 'फसल विविधिकरण प्रोत्साहन योजना' के उत्साहवर्धक परिणाम देखने को मिल रहे हैं। यह योजना प्रदेश के बिलासपुर, हमीरपुर, मंडी, कांगड़ा व ऊना जिलों में वर्ष 2018 तक सात वर्षों के लिए चलाई जा रही है। योजना के अन्तर्गत कृषकों को तकनीकी जानकारी के साथ सिंचाई सुविधा, खेतों तक सम्पर्क मार्ग बनाने, जैविक खेती अपनाने तथा किसानों को समूहों में संगठित कर उनके उत्पाद के विपणन को सुनिश्चित बनाने के लिए आवश्यक सुविधाएं मुहैया करवाई जा रही है। इस योजना के तहत गत चार वर्षों के दौरान 172 करोड़ रुपये खर्च किए जा चुके हैं। राज्य में धान, मक्की, दालों और गेहूं उत्पादन में बढ़ोतरी करने के उद्देश्य से 'राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अभियान' आरम्भ किया गया है, जिसके तहत किसानों को फसल उत्पादकता बढ़ाने हेतु आर्थिक व तकनीकी सहायता प्रदान की जा रही है। योजना के तहत गत चार वर्षों में 61.29 करोड़ रुपये खर्च किए जा चुके हैं।

प्रदेश सरकार कृषि एवं बागबानी खेती में रासायनिक खादों व दवाइयों के प्रयोग में कमी लाकर जैविक खेती को बढ़ावा दे रही है। राज्य में 39440 कृषकों को जैविक खेती के लिए पंजीकृत कर 21656 हैक्टेयर क्षेत्र को जैविक खेती के अन्तर्गत लाया जा चुका है। कृषि विकास योजना के माध्यम से जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है और इस वर्ष 260 हैक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र को जैविक खेती के अन्तर्गत लाया जा रहा है। जैविक खाद की आवश्सकता को पूरा करने लिए इस वर्ष 6500 केंचुआ खाद इकाइयां स्थापित की जा रही हैं, जिसके लिए 50 प्रतिशत उपदान का प्रावधान है।

मिट्टी की उपयोगिता का पता लगाकर कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उद्देश्य से किसानों को निःशुल्क मिट्टी परीक्षण सुविधा प्रदान की जा रही है जिसके लिए राज्य में 7 स्वचालित मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं तथा 11 अचल मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं की सुविधा उपलब्ध है। मिट्टी परीक्षण की रिपोर्ट किसानों को तय अवधि के भीतर प्रदान करने के लिए मिट्टी जांच को हि.प्र. सर्विस गारंटी अधिनियम के अन्तर्गत लाया गया है। प्रदेश में अब तक किसानों को 3,27,076 मिट्टी स्वास्थ्य कार्ड वितरित किए जा चुके हैं।

किसानों को उनके घर-द्वार के निकट मार्किटिंग सुविधा उपलब्ध करवाकर उनकी पैदावार के बेहतर दाम सुनिश्चित बनाने हेतु राज्य में 10 मण्डियां तथा 55 उप मण्डियां कार्यरत हैं। कृषि व बागबानी उत्पाद के लिए विपणन सुविधा सुदृढ़ करने हेतु मार्किट यार्ड स्थापित करने के साथ-साथ जगह-जगह लघु सब्जी संग्रहण केन्द्र बनाए गए हैं जिस पर इस वर्ष 10 करोड़ रुपये व्यय किए जा रहे हैं। राज्य में ग्रामीण स्तर पर कृषि के आधारभूत ढांचे को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से 'मुख्य मंत्री आदर्श कृषि गांव योजना' कार्यान्वित की जा रही है जिसके तहत प्रत्येक विधानसभा की दो-दो पंचायतों को कृषिगत ढांचा विकास के लिए 10-10 लाख रुपये दिए जा रहे हैं। आधुनिक तौर तरीके से खेती करते समय कृषि मशीनरी के प्रयोग के दौरान किसानों या खेतिहर मजदूरों की मृत्यु या स्थायी अपंगता की स्थिति में मुआवजा प्रदान करने के लिए योजना लागू की गई है जिसके तहत मृत्यु होने पर 1.5 लाख रुपये तथा आंशिक से स्थायी अपंगता की स्थिति में 50 हजार रुपये तक का मुआवजा देने का प्रावधान है।

000

फलोत्पादन से सामाजिक-आर्थिक जीवन में बदलाव

बागबानी

हिमाचल प्रदेश की भौगोलिक स्थलाकृति और विविध जलवायु बागबानी विशेषकर फलोत्पादन के लिए बेहद अनुकूल है। प्रदेश सरकार द्वारा राज्य में बागबानी विकास की दिशा में किए जा रहे सार्थक प्रयासों के परिणामस्वरूप किसानों व बागबानों का रूझान फलोत्पादन की ओर बढ़ा है। प्रदेश में वर्ष 1950-51 में बागबानी के अन्तर्गत केवल 792 हेक्टेयर क्षेत्र था जिस पर 1200 टन फल उत्पादन होता था। इस दिशा में राज्य के प्रगतिशील बागबानों और सरकारी स्तर पर किए जा रहे सतत् प्रयासों के फलस्वरूप आज प्रदेश में 2.27 लाख हेक्टेयर क्षेत्र बागबानी के अधीन लाकर इस पर वार्षिक 10.38 लाख टन फलोत्पादन हो रहा है। राज्य की वार्षिक आय में बागबानी का योगदान बढ़कर 5000 करोड़ रुपये तक पहुंच गया है।

प्रदेश के फलोत्पादन में सेब का अहम योगदान है। राज्य में फल उत्पादन के अन्तर्गत कुल क्षेत्र में से 49 प्रतिशत क्षेत्र सेब उतपादन के तहत आता है और राज्य के कुल फल

उत्पादन में से 85 प्रतिशत हिस्सा सेब उत्पादन का है। हिमाचल प्रदेश में व्यवसासिक तौर सेब की खेती का इतिहास देखा जाए तो शिमला जिला के थानेधार के बारुबाग में 6 नवंबर, 1916 सेब की डलिशियस प्रजाति का पहला बगीचा लगाने के बाद राज्य में सेब की खेती के सौ वर्ष पूरे हो गए हैं। आज प्रदेश के सात जिलों के लगभग 1.70 लाख परिवारों के 9 लाख लोगों की आजीविका का मुख्य साधन सेब उत्पादन से जुड़ा है। पिछले कुछ दशकों के दौरान राज्य के सेब उत्पादक क्षेत्रों के लोगों के सामाजिक-आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। इस दौरान राज्य के बागबानों ने सरकार की मदद से बागबानी की नवीनतम तकनीक अपनाते हुए अपने बागानों में उन्नत किस्म के उच्च पैदावार के सेब पौधे रोपित किए हैं जिससे राज्य के सेब उत्पादन में व्यापक वृद्धि दर्ज की गई है। प्रदेश में कार्यान्वित की जा रही 1169.15 करोड़ रुपये की हिमाचल प्रदेश बागबानी विकास परियोजना से राज्य के फलोत्पादन में बढ़ौतरी के साथ-साथ बागबानों की आर्थिकी सुदृढ़ करने में भी सहायता मिली है। प्रदेश में सात वर्षों की अवधि के लिए कार्यान्वित की जा रही इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य चिन्हित बागबानी फसलों एवं उत्पादों की उत्पादकता, गुणवत्ता एवं विपणन हेतु आधारभूत संरचना का बढ़ावा देना, लघु किसानों व कृषि उद्यमियों को सहयता प्रदान करना है।

वैश्विक चुनौतियों तथा बदलते मौसम के मद्देनजर सेब की खेती को लाभदायक बनाने हेतु बगीचों में पुराने हो चुके पौधें के स्थान पर उच्च पैदावार के उन्नत पौधे रोपित करने के उद्देश्य से राज्य में सेब जीर्णोद्धार योजना कार्यान्वित की जा रही है जिसके तहत प्रदेश के 6 जिलों में 1260 हैक्टेयर क्षेत्र में सेब के बगीचों का जीर्णोद्धार किया गया है।

विभागीय पौधशालाओं में उच्चगुणवत्ता वाले 29.86 लाख फल पौधे तैयार किए गए और 98.98 लाख पौधे बागबानों को वितरित किए गए। 30,400 हैक्टेयर क्षेत्र बागबानी के अधीन लाया गया। विभागीय फल संतति एवं प्रदर्शनी उद्यानों के 15,000 पुराने व अनुपयोगी हो चुके फल पौधों के स्थान पर 15,615 नई उन्नत किस्मों के पौधे रोपित किए गए। जैविक खेती को बढ़ावा देने लिए बागबानों को वर्मी कम्पोस्ट बनाने को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। गत चार वर्षों की अवधि में 2210 वर्मी कम्पोस्ट इकाइयां स्थापित की गई।

किसानों एवं बागबानों को नवीनतम तकनीक मुहैया करवाने के उद्देश्य से गत चार वर्षों के दौरान 27,426 बागबानों को राज्य व जिला स्तर और प्रदेश से बाहर प्रशिक्षण प्रदान किया गया। इस अवधि में 2,05,740 बागबानों को संपर्क, प्रशिक्षण शिविरों, सेमीनारों व प्रशिक्षण भ्रमणों के माध्यम से प्रशिक्षित किया गया। एकीकृत बागबानी विकास मिशन के अन्तर्गत बागबानी गतिविधियों के विस्तार हेतु भारत सरकार से प्राप्त 130.15 करोड़ रुपये की राशि में से 120.74 करोड़ रुपसे व्यय कर 52465 बागबानों को लाभान्ति किया गया। बागबानी फसलों, सब्जियों और फूलों की संरक्षित खेती को बढ़ावा देने के दृष्टिगत 32.22 लाख वर्गमीटर अतिरिक्त क्षेत्र को हरित गृह के तहत लाया गया। सरकार द्वारा हरित गृह निमार्ण के लिए बागबानों के 50 प्र.श. उपदान में बढ़ौतरी करके 85 प्र.श. तक कर दिया गया है। बागबानी फसल को ओलावृष्टि से बचाने हेतु बागबानों को एंटी हेलनेट प्रदान किए जा रहे हैं। योजना के तहत दिए जा रहे उपदान को 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 80 प्रतिशत गया है। प्रदश में 9 लाख वर्गमीटर अतिरिक्त क्षेत्र को एंटी हेलनेट के अन्तर्गत तथा 2 लाख वर्गमीटर क्षेत्र को सब्जियों एवं फूलों की संरक्षित खेती के अधीन लाया जा रहा है। फल उत्पादकों को उनके उत्पाद का लाभकारी मूल्य देने हेतु मंडी मध्यस्थता योजना के तहत आम, सेब व नींबू प्रजातीय फलों के लिए समर्थन मूल्य में 50 पैसे की वृद्धि की गई। गत चार वर्षों में बागबानों से 6604.09 लाख रुपये मूल्य का 1,00,099.566मी. टन फल खरीदा गया। बागबानी फसल को प्रतिकूल मौसम तथा प्राकृतिक आपदा से होने वाले नुकसान से बचाने हेतु रबी सीजन 2015 में सेब, आड़ू आम, पलम और नींबू प्रजातीय फलों के लिए राज्य के 110 विकास खंडों में मौसम आधारित फसल बीमा योजना के तहत लाभान्वित किसानों की संख्या बढ़कर 2,83,450 हो गई है। योजना के तहत सरकार द्वारा देय 25 प्र.श. अनुदान राशि के रूप में 30.68 करोड़ रुपये उपलब्ध करवाए गए। वर्तमान प्रदेश सरकार ने अपने गत चार वर्ष के कार्यकाल में कृषि एवं सम्बद्ध गतिविधियों को व्यापक स्तर पर बढ़वा दिया है। किसानों व बागबानों को उनके उत्पाद के आकर्षक दाम मिलने से उनका रुझान पारम्परिक खेती से हटकर फल एवं बे-मौसमी उत्पादन की ओर बढ़ा है, जिससे इनके उत्पादन में वर्ष दर वर्ष व्यापक वृद्धि होने के साथ-साथ प्रदेश की कृषि-बागबानी आर्थिकी भी सुदृढ़ हुई है।

000

समग्र ग्रामीण विकास एवं स्वच्छता का पर्याय बना हिमाचल

नर्बदा कंवर

हिमाचल प्रदेश ग्रामीण विकास योजनाओं को लागू करने में सदैव देश भर में अग्रणी रहा है। वर्तमान सरकार ने अपने चार वर्ष के कार्यकाल में प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों के विकास पर विशेष ध्यान दिया है। सरकार ने गांवों व ग्रामीणों की महता को समझा है और सरकार का सदैव यही प्रयास रहा है कि शहरी सुविधाओं को गांवों तक पहुंचाया जाये। इससे न केवल शहर व गांव के बीच का अंतर समाप्त होगा बल्कि गांवों से शहर की ओर हो रहे पलायन पर भी विराम लगेगा। राज्य के गांव खुशहाली के जीते जागते उदाहरण बने हैं। प्रदेश सरकार ने अपने चार वर्ष के कार्यकाल के दौरान कृषि, बागबानी जैसे क्षेत्रों को नई दिशा प्रदान की है। सरकार द्वारा फसल विविधिकरण योजना, डॉ. वाईएस परमार किसान स्वरोजगार योजना, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, मुख्यमंत्री किसान एवं खेतीहर जीवन सुरक्षा योजना, जैविक खेती योजना तथा फसल बीमा योजनाओं को लागू कर ग्रामीणों की आर्थिकी को सुदृढ़ किया है। साथ ही साथ कृषि, बागबानी, पशुपालन जैसे पारम्परिक क्षेत्रों को आधुनिक तकनीक से अधिक लाभप्रद एवं रोजगारोन्मुखी बनाने के प्रयास किये गये। तकनीकी क्षेत्रों में हुई प्रगति का असर अब कृषि में साफ दिखाई देने लगा है। गांव अब अंधेरे में नहीं हैं। आज ग्रामीण ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों, गोबर गैस बायो गैस, सौर ऊर्जा आदि का समुचित दोहन कर रहा है। गांवों में विकास की रफ्तार को और तेज करने के लिये प्रदेश सरकार ने पंचायतों को अब राज्य शासन की एक आधारभूत प्रशासकीय इकाई बनाया है। पंचायतें अपने कार्य क्षेत्र में जनहित से जुड़े सभी कार्यों को बखूबी निभा रही है। पंचायतों द्वारा कार्यों को सुचारू तथा प्रभावी रूप से निष्पादित करने के साथ–साथ

किसानों की आर्थिकी का संबल : पशु पालन

पशुपालन व्यवसाय प्रदेश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग है। कृषि एवं बागबानी गतिविधियों में पशुपालन की महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए प्रदेश सरकार इस क्षेत्र को प्राथमिकता प्रदान कर रही है। सरकार ने गत चार वर्षों में पशुपालन गतिविधियों को बढ़वा देकर किसानों की आर्थिकी को सुदृढ़ किया है। इस अवधि में दो नए पॉलीक्लिनक, 36 पशु चिकित्सालय खोले गये जिनमें दो नए व 34 स्तरोन्नत्त चिकित्सालय शामिल है, जबकि 43 नियमित पशु चिकित्सालय तथा मुख्य मंत्री आरोग्य पशुधन योजना के तहत 5 नए पशु औषधालय खोले गये। इस अवधि में 136 पशु चिकित्सा अधिकारी, 298 वैटनरी फर्मास्सिट, 40 क्लर्क व 215 चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी नियुक्त किए गए। 896 कर्मचारियों की सेवाएं नियमित की गई। विभाग में पंचायत पशु चिकित्सा सहायकों के मानदेय को बढ़ाकर 7000 हजार रुपये मासिक किया गया है।

पशुधन नस्ल सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत नई पशु प्रजनन नीति तैयार की गई है जिसके तहत देसी नसल की गाय विकास उपायों को सुनिश्चित किया जा रहा है। कृत्रिम गर्भाधान के माध्यम से दुधारु पशुओं की नसल में सुधार लाने के लिए शिमला जिला के घणाहट्टी व कांगड़ा जिला के पालमपुर में 6.07 करोड़ रुपये की लागत से आधुनिक तरल नाईट्रोजन संयंत्र स्थापित

उनमें पारदर्शिता तथा जवाबदेही सुनिश्चित करने के दृष्टिगत समस्त पंचायतों को कम्प्यूटरीकृत किया गया है। इसी के साथ पंचायत कार्यालयों के उन्नयन व नवनिर्माण के लिये सरकार द्वारा प्रदेश में राजीव गांधी पंचायत सशक्तीकरण अभियान चलाया जा रहा है। इस अभियान के अंतर्गत भारत सरकार से 75:25 आधार पर एक परियोजना चलाई जा रही है, जिसके अंतर्गत करोड़ों रुपये की राशि व्यय की जा रही है। इसी योजना के तहत पंचायतों को लैपटॉप व प्रिंटर भी उपलब्ध करवाये जा रहे हैं। प्रदेश सरकार पंचायतों को पूर्ण रूप से पेपरलैस बनाने के लिये भी कार्य कर रही है। इसी के साथ परिवार रजिस्टर को ऑनलाइन करने का लक्ष्य प्राप्त करने पर कार्य तेजी से चल रहा है।

प्रदेश में आइसीटी (इंफार्मेशन एंड कम्यूनिकेशन टैक्नोलॉजी) को व्यापक रूप से सुदृढ़ कर लोगों की जिंदगी में गुणात्मक बदलाव लाने वाला हि.प्र. अग्रणी राज्य बना है। ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों को घर–द्वार पर बेहतर सेवायें प्रदान करने के लिये प्रदेश सरकार ने इस अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग किया है।

ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट सेवाओं की सीमित पहुंच के कारण लोकमित्र केन्द्र काफी लाभप्रद साबित हुये हैं। आज लोकमित्र केन्द्र गांवों में लोगों को इलैक्ट्रॉनिक तरीके से सरकारी कर्मचारियों से सम्पर्क करने का जरिया बन गये हैं। सरकार द्वारा ग्राम पंचायत स्तर पर 2500 लोकमित्र केन्द्र स्थापित किये हैं जिनके माध्यम से नागरिकों को एक ही छत के नीचे 105 प्रकार की विभिन्न सरकारी सेवायें मिल रही हैं। इनमें विभिन्न प्रकार के प्रमाण पत्र व दस्तावेज भी शामिल हैं। जमाबंदी कई वर्षों से लोगों को ऑनलाइन प्रदान की जा रही हैं। परन्तु अब वे ततीमा भी ऑनलाइन प्राप्त कर सकते हैं।

इसके अतिरिक्त मुख्यमंत्री आदर्श कृषि गांव योजना के तहत प्रत्येक विधान सभा की दो–दो पंचायतें शामिल की गई हैं। इस योजना के तहत पंचायतों में कृषि ढांचे के सुदृढ़ीकरण के लिये 10–10 लाख रुपये प्रदान किये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त कृषि मशीनरी के प्रयोग के दौरान यदि किसान या खेतीहर मजदूर घायल हो जाता है या मृत्यु हो जाने की सूरत में उन्हें 'मुख्यमंत्री किसान एवं खेतीहर मजदूर सुरक्षा योजना' आरम्भ की गई है। इस योजना के तहत मृत्यु या अस्थायी रूप से अपंग होने पर मुआवजे के तौर पर 1.5 लाख रुपये तथा आंशिक स्थायी अपंग होने पर प्रभावितों को 50,000 रुपये की सहायता दी जा रही है। इस योजना के तहत 450 करोड़ व्यय किये जा रहे हैं। मौसम की अनिश्चितता, मूल्यों की अस्थिरता से कृषक तथा आवारा पशुओं और जंगली जानवरों द्वारा फसलों को पहुंचाये जा रहे नुकसान की भरपाई के लिये 'मुख्यमंत्री खेत संरक्षण योजना' चलाई जा रही है। इस योजना के तहत कृषकों को बाड़ लगाने के लिये 60 प्रतिशत की सहायता दी जा रही है और योजना पर 25 करोड़ व्यय किये जा रहे हैं।

मनरेगा ने हिमाचल के गांवों की दिशा व दशा बदलने में खास भूमिका निभाई है। इसी वजह से ग्रामीण क्षेत्रों में मनरेगा के अधीन किये जा रहे कार्यों में राज्य की उपलब्धियां देश भर में बेहतर आंकी गई है। प्रदेश में मनरेगा के तहत कुल सक्रिय श्रमिकों की संख्या 911559 है जिनमें से 876800 को उनके आधार नम्बरों से जोड़ा जा चुका है। मनरेगा के तहत सक्रिय श्रमिकों की प्रतिशतता 96.36 प्रतिशत है जो कि देश भर में सर्वाधिक है। प्रदेश में मनरेगा के तहत महिलाओं की भागीदारी श्रेष्ठ आंकी गई है। उनकी भागीदारी 63.14 प्रतिशत है जो कि देश भर में सर्वाधिक है। मनरेगा का उद्देश्य ने केवल स्थानीय लोगों को रोजगार प्रदान करना है बल्कि प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में टिकाऊ परिसम्पत्तियों का निर्माण करना है। मनरेगा के तहत वर्तमान सरकार ने 1474.34 करोड़ व्यय किये हैं। इस राशि में से 77 प्रतिशत मजदूरी पर व्यय किये गये हैं और यह औसतन देश के अन्य राज्यों की तुलना में सर्वाधिक है। इसके अतिरिक्त 75 प्रतिशत बैंक खोते आधार से जोड़े गये हैं।

सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में ठोस कचरा प्रबन्धन के निपटान के लिये कारगर नीति लागू करने का लक्ष्य रखा है। इसी कड़ी में हाल ही में राज्य सरकार के निमंत्रण पर प्रदेश में ठोस कचरा प्रबन्धन के लिये कोरिया राज्य से सहयोग लिया जा रहा है। वर्तमान सरकार ने सत्ता संभालने के कुछ ही समय बाद ग्रामीणों के सुविधा के लिये टीडी के अधिकार बहाल कर दिये। इसके अतिरिक्त वन्य प्राणी क्षेत्रों का युक्तिकरण कर 775 गांव वन अभ्यारण्य क्षेत्र से बाहर किये गये जिससे एक लाख से अधिक लोग लाभान्वित हुये हैं।

किए गए हैं। सोलन में 3.35 करोड़ रुपये की लागत से ऐसा ही संयंत्र स्थापित किया जा रहा है। कण्डी परियोजना तथा राष्ट्रीय कृषि विकास के तहत ताल (हमीरपुर), ज्योरी व मंडी में नए द्रव्य नाईट्रोजन संयंत्र स्थापित किए जा रहे हैं। 200 नए पशु चिकित्सा संस्थानों में कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा आरम्भ की गई है। प्रदेश में लावारिस एवं आवारा पशुओं को चारा एवं आश्रय प्रदान करने के लिए वर्तमान गोसदनों को सुदृढ़ करने के साथ-साथ नए गोसदन खोले जा रहे हैं। इनके निर्माण एवं संचालन के लिए गोवंश संवर्धन बोर्ड का गठन किया गया है। अवारा पशुओं की समस्य से निपटने के लिए पंचायत पशुधन पुरस्कार योजना आरम्भ की गई है जिसके तहत प्रत्येक विकास खंड में आवारा पशुओं से मुक्त 2 सर्वोत्तम पंचायतों को 5 लाख रुपये प्रति पंचायत की दर से पुरस्कार प्रदान किया जाएगा।

दूध उत्पादकों की आर्थिक को संबल प्रदान करने हेतु दुग्ध प्रसंग द्वारा दुग्ध प्रापण मुल्य में तीन रुपये प्रति लीटर की वृद्धि की गई है। हिमाचल प्रदेश ऊन प्रसंग द्वारा पहली बार संकर एवं विदेशी नस्ल की भेड़ की ऊन के क्रय मुल्य में 7.5 से 32.5 प्रतिशत की वृद्धि की गई है। राज्य में इस समय 1282.64 हजार टन दुग्ध उत्पादन, 1411.35 टन ऊन उत्पादन व 811.67 लाख अण्डों का उत्पादन किया जा रहा है। प्रदेश में भेड़ पालकों के लिए वर्ष 2014-15 से आरम्भ की गई गुणवत्ता आधारित ऊन खरीद मूल्य योजना से लगभग दस हजार भेड़पालक लाभान्वित हुए हैं।

आर्थिक स्वावलंबन

हिमाचल निवेशकों के लिए अवसरों का प्रदेश

डॉ. राजेश के. शर्मा

सुदृढ़ अर्थव्यवस्था की कुंजी निवेश, आयात–निर्यात पर निर्भर करती है। राज्य की अर्थव्यवस्था मूलतः कृषि–बागबानी गतिविधियों पर निर्भर करती थी। हाल ही के वर्षों में औद्योगिक विकास, ऊर्जा तथा पर्यटन क्षेत्रों में हुई प्रगति से ये क्षेत्र अर्थव्यवस्था के आधार बने हैं। इन नये क्षेत्रों को मिली गति, वर्तमान सरकार की दीर्घकालीन निवेशक मित्र नीतियों व कार्यक्रमों को जाता है। इन क्षेत्रों से जहां प्रदेश को राजस्व प्राप्त हो रहा है वहीं रोजगार सृजन के नये द्वार भी खुले हैं।

हिमाचल प्रदेश द्वारा लागू नीतियों के कारण आज राज्य राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय निवेशकों के लिए अवसरों का प्रदेश बना है। चार वर्षों में नए उद्योगों, पर्यटन इकाइयों की स्थापना तथा विधुर परियोजनाओं के आरम्भ होने को गति मिली है। राज्य पर्यावरण मित्र उद्योग, हरित ऊर्जा उत्पादन तथा पर्यटकों की सैरगाह के रूप में विख्यात हुआ है।

औद्योगिक विकास

विकास कभी रुकता नहीं है। केन्द्र सरकार द्वारा राज्य को उपलब्ध करवाये जा रहे आकर्षक प्रोत्साहन पैकेज के समय से पूर्व समाप्त करने के फलस्वरूप राज्य में औद्योगिक विकास की गति धीमी नहीं हुई वर्तमान सरकार की प्रगतिशील एवं औद्योगिक अनुकूल नीतियों के कारण राज्य निवेशकों का विश्वास जीतने में कामयाब हुआ। प्रदेश ने निमंत्रण पर नये उद्योगों को स्थापना को बढ़ावा देने के लिए मुम्बई, अहमदाबाद, बैगलुरु तथा नई दिल्ली में वृहद स्तर पर निवेशक सम्मेलनों का आयोजन करने की पहल की। स्वयं मुख्यमंत्री तथा उद्योग मंत्री ने राज्य के पक्ष को निवेशकों के समक्ष रखा। इसकी सफलता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि 12 हजार करोड़ की 250 से अधिक औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के प्रस्ताव 400 से अधिक प्रतिव्यक्ति उद्योगपतियों से प्राप्त हुए।

इस सफलता के पीछे एकल खिड़की स्वीकृतियां, औद्योगिक प्रस्तावों को समयबद्ध अनुमोदित करने के लिए आवेदन प्रपत्र प्राप्त होने के 45 दिनों के भीतर मंजूरी, नये निवेश की मंजूरी के लिए 'हिमाचल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टमेंट की स्थापना, सभी नए उद्यमों के लिए ऑनलाइन या मैन्युल रूप में केवल स्वयं स्थापित दस्तावेज प्रदान करने की व्यवस्था सभी सम्बद्ध विभागों द्वारा 15 दिनों के भीतर अंतरिम पंजीकरण जारी करना, 100 हिमाचलियों को रोजगार देने वाली इकाइयों को औद्योगिक क्षेत्र में रियायती दरों पर भूमि उपलब्ध करवाना, स्टार्ट अप के तहत प्रमुख संस्थानों में इनक्यूबेशन केन्द्र की स्थापना, 25 लाख रुपये के निवेश वाले उद्यमों को तीन वर्ष तक 10 लाख के ऋण पर चार प्रतिशत की दर से ब्याज उपदान, स्टाम्प शुल्क तथा भूमि प्रयोग हस्तांतरण शुल्क की वर्तमान दर को 50 प्रतिशत घटाना, सेल डीड व लीज डीड पर स्टॉप डियूटी में 50 प्रतिशत की छूट, औद्योगिक इनपुट पर एक प्रतिशत की रियायत ऐसे उपाय है, जिससे राज्य में औद्योगिक क्षेत्र गतिमान हुआ। एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा 1326227 करोड़ की 283 परियोजनाओं को स्वीकृत किया गया। इनमें को रोजगार मिलेगा।

उद्योगों को पहले ही सस्ती दरों पर विद्युत उपलब्ध हो रही है। इस कार्यकाली में मौजूदा औद्योगिक क्षेत्र बद्दी बरोटीवाला क्षेत्र में अत्याधुनिक सुविधाएं जुटाई गई वहीं उद्योगों के विस्तार के लिए ऊना जिला के पड़ोगा में 140 करोड़, कांगड़ा जिले के कंदरौड़ी में 122 करोड़, सोलन जिले के धमोटा में तीन नई अत्याधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किये जा रहे हैं। बद्दी में 14.48 करोड़ की लागत से व्यापार केन्द्र की स्थापना। ऊना के बाथू में 4.46 करोड़ की लागत से श्रमिक होस्टल की स्थापना के अतिरिक्त छोटे उद्योगों की स्थापना को बढ़ावा दिया गया है।

पर्यटकों का पसंदीदा गंतव्य

हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखलाएं, गहरी घाटियों में बहती नदियां, चारों ओर फैले देवदार के घने वन, प्रकृति ने समूचे हिमालयी क्षेत्र को इनसे नवाजा है। मध्य हिमालय में स्थित हिमाचल प्रदेश भी प्रकृति द्वारा प्रदत्त इन उपहारों से सुसज्जित है। यहां की स्वच्छ आबोहवा का लुत्फ उठाने देशी व विदेशी पर्यटक हर वर्ष प्रदेश का दौरा करने पहुंचते हैं। भारी तादाद में आने वाले इन सैलानियों के आतिथ्य के लिए प्रदेश सरकार ने कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाए ताकि पर्यटकों को प्रदेश प्रवास के दौरान विश्व स्तरीय सुविधाएं मुहैया करवाई जा सकें। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में पर्यटन क्षेत्र लगभग 6.80 प्रतिशत का योगदान दे रहा है। पर्यटन क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के लिए वर्ष 2005 में नई पर्यटन नीति लागू की गई। वर्ष 2013 में पर्यटन पर्यावरण के मध्य संतुलन बनाये रखने के लिए हिमाचल प्रदेश सतत् पर्यटन नीति लागू की गई। दुनियाभर में पर्यटन को आर्थिकी का आधार माना जा रहा है। राज्य के मैदानी इलाकों से लेकर सुदूर जनजातीय क्षेत्रों तक पर्यटकों के आकर्षण के लिए सभी आकर्षण मौजूद हैं। धार्मिक पर्यटन, साहसिक पर्यटन, सैरगाहें सभी एक छोर से दूसरे छोर तक प्रदेश में उपलब्ध है। राज्य की आबादी 69 लाख से तीन गुणा पर्यटक हर वर्ष राज्य में आते हैं। चार वर्षों के दौरान 632.96 लाख पर्यटक राज्य में आये। इससे पर्यटन क्षेत्र की क्षमता का स्वतः ही अंदाजा लगाया जा सकता है। राज्य सरकार ने पर्यटकों को सभी मूलभूत सुविधाएं प्रदान करने को प्राथमिकता दी है। प्रमुख पर्यटक स्थलों में अधोसरंचना व समृद्ध धरोहर के संरक्षण के लिए 'एशियन विकास बैंक' की 570 करोड़ की वित्तीय सहायता मंजूर करवाने में सहायता हासिल की है। इस योजना के तहत 35 स्थानों को पर्यटन की दृष्टि से विकसित किया जाएगा। पर्यटकों को अब राज्य की जानकारी ऑनलाइन उपलब्ध हो रही है वहीं निगम के होटलों का पंजीकरण की ऑनलाइन व्यवस्था की गई है। राज्य के प्रमुख पर्यटक स्थलों के इलावा राज्य के अंदरूपी व जनजातीय क्षेत्रों में पर्यटन विकास के लिए नई पर्यटन इकाइयों की स्थापना के लिए पंजीकृत होटलों/पर्यटन इकाइयों को दस वर्ष की अवधि के लिए करके भुगतान में छूट दी गई है। मनोरंजन कर को घटाकर 10 प्रतिशत किया गया है। रज्जू मार्ग व सिनेमा घरों में भी मनोरंजन कर को घटाकर 10 प्रतिशत किया गया है। पर्यटन को संस्कृति व परम्पराओं से जोड़ने के लिए होमस्टे योजना कारगर सिद्ध हुई हैं। सेब को पर्यटन गतिविधियों से जोड़ा गया है। सेब बहुल क्षेत्रों में अनेक होमस्टे इकाइयां खुली हैं। युवाओं को पर्यटन व्यवसाय से जोड़ने के लिए चार वर्षों में 8,954 लोगों को प्रशिक्षित किया गया। चार रज्जू मार्गों धर्मशाला से मैक्लोडगंज, हिमानी चामुण्डा, शिमला बाईपास–लिफ्ट व पलथान से रोहतांग की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ।

उपभोक्ताओं को 1390 करोड़ का विद्युत उपदान

हरित ऊर्जा के उत्पादन में हिमाचल प्रदेश ने ख्याति अर्जित की है। अक्तूबर 2016 में कोलडैम, रामपुर तथा पार्वती तीन जलविद्युत परियोजनाएं राष्ट्र को समर्पित की गई। इन परियोजनाओं से राज्य को 13 प्रतिशत निःशुल्क ऊर्जा प्राप्त होगी। राज्य पांच प्रमुख नदियों तथा उनकी अनेक सहायक नदियों के कारण जलविद्युत क्षमता से परिपूर्ण प्रदेश है। कुल 25 हजार मेगावाट क्षमता में से अभी तक 10,264 मेगावाट क्षमता का दोहन हुआ है। 830 मेगावाट क्षमता का दोहन 2015–16 में किया गया जबकि 2016–17 में 265 मेगावाट क्षमता का दोहन का लक्ष्य रखा गया है। ऊर्जा के दोहन के साथ–साथ ऊर्जा की बचत व सौर ऊर्जा दोहन को बढ़ावा दिया गया है। घरेलू तथा कृषि उपभोक्ताओं को उपदान दरों पर बिजली प्रदान करने पर करोड़ों का उपदान दिया जा रहा है। शिमला तथा हमीरपुर में सौरनगर के रूप में विकसित करने के लिए प्लान तैयार। घरेलू उपभोक्ताओं को 10 एलईडी बल्ब बाजार भाव से कम मूल्य पर उपलब्ध। घरेलू तथा कृषि उपभोक्ताओं को उपदान दरों पर विद्युत आपूर्ति करने के लिये चार वर्षों में 1390 करोड़ रुपये का उपदान दिया गया है। ऊर्जा बचत के लिये उपभोक्ताओं को बाजार भाव में कम मूल्य पर 10 एलइडी बल्ब उपलब्ध करवाये जा रहे हैं।

सामाजिक सुरक्षा का नया सवेरा

● सतपाल

प्रदेश में सभी वर्गों के समान विकास की अविरल धारा बह रही है। इसके लिए सरकार द्वारा अनेक कल्याणकारी योजनाएं कार्यान्वित की गई। इन योजनाओं के केन्द्र में अनुसूचित जाति एवं जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग व अल्प संख्यक समुदाय हैं। वृद्धावस्था पेंशन, विधवा पेंशन, अक्षम व्यक्ति पेंशन इत्यादि से भी समतुल्य समाज के निर्माण को मजबूत आधार मिला है। प्रदेश में अल्पसंख्यकों के कल्याण के लिए गद्दी, गुज्जर तथा लबाणा कल्याण बोर्डों का गठन किया गया है ताकि इन समुदायों के लिए कल्याण के लिए कार्यान्वित की जा रही योजनाओं का त्वरित लाभ सुनिश्चित हो सकें।

विभिन्न कल्याण योजनाओं के तहत लाभ प्राप्त करने के लिए वार्षिक आय सीमा 20 से बढ़ाकर 35 हजार की गई है ताकि वृहदतर स्तर पर पात्र लोगों को इनके लाभ सुनिश्चित हो सकें।

प्रदेश सरकार अनुसूचित जाति के बी.पी.एल. परिवारों के युवाओं अथवा जिनकी की आय 60 हजार वार्षिक से कम को विभिन्न कम्प्यूटर पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए 1200 रुपये प्रतिमाह प्रशिक्षण शुल्क प्रदान कर रही है। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण के दौरान प्रतिमाह एक हजार रुपये छात्रवृत्ति भी प्रदान की जा रही है। प्रशिक्षण पूर्ण होने पर सफल प्रशिक्षुओं को 6 माह के लिए सरकारी अथवा गैर सरकारी संस्थानों में कम्प्यूटर एप्लीकेशन में प्रवीणता हासिल करने के लिए तैनाती दी जाती है। इस अवधि के दौरान उन्हें 500 रुपये प्रतिमाह छात्रवृत्ति प्रदान की जा रही है।

बेरोजगार युवाओं के कौशल विकास के लिए 500 करोड़ की कौशल विकास भत्ता योजना शुरू की, के तहत पात्र युवाओं को 1000 रुपये व अक्षम युवाओं को 1500 रुपये भत्ता प्रदान किया जा रहा है। इससे युवाओं को रोजगार के बेहतर अवसर प्राप्त होंगे।

अनुसूचित जाति बाहुल्य गांवों को सड़कों से जोड़ने के लिए राज्य में 'मुख्यमंत्री आदर्श ग्राम योजना' कार्यान्वित की है। योजना के तहत प्रदेश के प्रत्येक विधान सभा क्षेत्र में दो ऐसे गांवों का चयन किया जाता है जहां पर अनुसूचित जाति की जनसंख्या 40 प्रतिशत या इससे अधिक या कुल आबादी 200 या इससे अधिक हों, चयनित गांव को सड़क निर्माण के लिए 10 लाख रुपये की राशि प्रदान की जा रही है। सरकार द्वारा अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग के लोगों को जिनके पास राजस्व रिकॉर्ड में भूमि उपलब्ध है गृह निर्माण के लिए 75000 रुपये की राशि अनुदान स्वरूप दी जा रही है। इसके अलावा पुराने मकान की मरम्मत के लिए भी 25000 रुपये प्रदान किए जा रहे हैं। वर्ष 2016–17 में 3167 आवासों के निर्माण का लक्ष्य है।

गृह निर्माण के लिए पात्र आवासहीन लोगों को शहरी क्षेत्रों में 2 बिस्वा व ग्रामीण क्षेत्रों में 3 बिस्वा भूमि मुफ्त उपलब्ध करवाई जा रही है। इन योजनाओं से प्रदेश के हर व्यक्ति का एक आशियाना बनाने का सपना साकार हो रहा है। मुख्यमंत्री आवास योजना के तहत सामान्य वर्ग के गरीब परिवारों को भी गृह निर्माण के लिए 75000 रुपये तक की वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। इसके अतिरिक्त स्थानीय लोगों की सुविधा के लिए टी.डी. अधिकार बहाल किए गए हैं। नए मकान के निर्माण के लिए 15 वर्षों में 7 घनमीटर इमारती लकड़ी तथा पुराने घर की मरम्मत के लिए 5 वर्षों में 3 घनमीटर इमारती लकड़ी प्रदान की जाएगी।

राज्य में सामाजिक सुरक्षा पेंशन का प्रभावी कार्यान्वयन किया जा रहा है। योजना के तहत वृद्धजन, विधवाएं, अक्षम व्यक्तियों व कुष्ठ रोगी लाभ के पात्र हैं। योजना से ऐसे सभी लोगों को सामाजिक–आर्थिक संबल मिला है। वर्तमान सरकार ने इस पेंशन को 450 से बढ़ाकर 650 रुपये किया है। 80 वर्ष या इससे अधिक आयु वर्ग तथा 70 प्रतिशत से अधिक अक्षमता व्यक्तियों को 1200 रुपये प्रतिमाह पेंशन प्रदान की जा रही है। वर्तमान में करीब 3,63,825 पात्र व्यक्तियों को यह पेंशन मिल रही है।

समाज से छुआछूत की कुप्रथा को दूर करने के उद्देश्य से अन्तरजातीय विवाह को प्रोत्साहित किया जा रहा है। समाज को जोड़ने व जातिप्रथा को समाप्त कर समाज के नवनिर्माण की दिशा में एक अद्वितीय कदम है। राज्य में विधवा पुनर्विवाह योजना शुरू की गई है। इसमें विधवा द्वारा पुनर्विवाह करने पर उसे 50 हजार का अनुदान दिया जाता है। इससे विधवाओं के पुनर्वास में मदद मिल रही है।

मुख्यमंत्री कन्यादान योजना ऐसी बेसहारा लड़कियों जिनके पिता शारीरिक/मानसिक असमर्थता के कारण अपनी आजीविका कमाने में असमर्थ हों या परित्यक्त/तलाकशुदा महिलाओं की पुत्रियों को जिनकी वार्षिक आय 35,000 रुपये से कम हो, उन्हें लड़की की शादी के लिए 25 हजार रुपये अनुदान स्वरूप दिया जा रहा है।

इस योजना में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवार में दो बेटियों के जन्म के उपरान्त 10 हजार की राशि बेटी के जन्म होने पर 18 वर्ष की आयु तक फिक्सड डिपॉजिट के तौर पर बेटी के नाम डाकघर में जमा होते हैं। पात्र बेटी की शिक्षा के दौरान प्रथम कक्षा से लेकर 12वीं कक्षा तक 300 से 1200 रुपये की छात्रवृत्ति भी दी जाती है। सरकार एक ऐसे समाज का सपना संजए हुए हैं, जो आर्थिक और सामाजिक स्तर पर उन्नत और खुशहाल जीवन जिए। इस दिशा में उसके प्रयास फलीभूत हो रहे हैं। फिर भी इसके लिए जनसहयोग अपेक्षित है। योजनाएं नई राह पर ले जाती हैं। आमजन को इनका लाभ उठाने में फूर्ती दिखानी होगी, तभी सम्भव होगा समाज का नवनिर्माण।

0 0 0

महिला सशक्तीकरण में आदर्श बना हिमाचल

● रीना नेगी

आज हिमाचल प्रदेश अपनी इस उपलब्धि पर गौरवान्वित है कि प्रदेश के लाहुल स्पीति जिले ने महिला लिंगानुपात की प्रतिशतता में, देशभर में प्रथम स्थान हासिल किया है। यह इस बात को चरितार्थ करता है कि प्रदेश सरकार ने महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए लागू की गई नीतियां व कार्यक्रम कारगर व लाभप्रद रहे हैं। महिलाएं देश व प्रदेश में कदम से कदम मिलाकर समृद्ध समाज के निर्माण में अपनी जिम्मेदारी बखूबी निभा रही है। समाज के ताने बाने को बनाये रखने में महिला एवं पुरुष अनुपात में संतुलन एक अहम कड़ी है। लेकिन हाल ही के वर्षों में लिंग अनुपात में आई गिरावट चिंता का विषय बना है। सरकार ने लिंगानुपात के संतुलन को बनाए रखने और महिलाओं के संरक्षण और सशक्तीकरण को सुनिश्चित करने के लिए कई प्रमुख योजनाएं चलाई है, जिन में से प्रमुख है। 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' जिसका प्रमुख उद्देश्य है कन्या भ्रूण हत्या जैसी जघन्य अपराध पर अंकुश लगाना, लोगों को जागरूक करना लिंग के आधार पर उनसे हो रहे भेदभाव को समाप्त करना, कन्या जन्म के महत्व को उजागर करना और उनकी स्थिति में सुधार हो इस दिशा में प्रदेश सरकार ने कई महत्त्वपूर्ण व प्रभावी कदम उठाये हैं। पीएनडीटी अधिनियम को सुचारू रूप से कार्यान्वित करने के लिए सतत् अभियान शुरू किया गया है। राज्य में स्थापित सभी अल्ट्रासाउण्ड मशीनों के दुरुपयोग पर कड़ी निगरानी रखी जा रही है। निजी क्लीनिकों का निरीक्षण सुचारू रूप से किया जा रहा है। प्रसव पूर्व लिंग जांच व भ्रूण हत्या के प्रति कड़ी सजा का प्रावधान किया गया है। साथ ही चोरी छिपे अवैध तौर पर प्रसव पूर्व लिंग जांच व भ्रूण हत्या करने वाली की सूचना देने वाले व्यक्ति को एक लाख की नगद राशि इनाम के रूप में दी जाएगी। सूचना देने वाले का नाम गुप्त रखा जाएगा। समाज में बालिकाओं के जन्म को प्रोत्साहित करने के लिए जिला प्रशासन, स्वंयसेवी संगठनों, आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं, पंचायतों, स्कूलों के माध्यम से व्यापक जागृति अभियान चलाये जा रहे हैं।, ग्राम स्तर पर उन पंचायतों को 10 लाख रुपये की अतिरिक्त विकास राशि अनुदान के रूप में दी जाएगी जिनमें बालकों की तुलना में कन्या दर सर्वश्रेष्ठ आंकी जाएगी। महिला सशक्तीकरण के लक्ष्य को हासिल करने के लिए ऐसे माता–पिता जिन्होंने प्रथम अथवा द्वितीय कन्या के जन्म के उपरान्त स्थायी परिवार नियोजन करवा लिया है, उनकी बेटियों को नर्सिंग प्रशिक्षण, पुलिस भर्ती, महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता अथवा आंगनबाड़ी कार्यकर्ता भर्ती के लिए उपयुक्त आरक्षण का प्रावधान किया गया है।

'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' अभियान में सभी विभागों तथा जनप्रतिनिधियों के सहयोग से बड़े पैमाने पर कार्यान्वित किया जाए इसके लिए जिला स्तर पर फोर्स का गठन भी किया गया है जिसमें, एडीसी समन्वयक के रूप में कार्य करेंगे। जबकि स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा विभाग, समेकित बाल विकास परियोजना तथा पुलिस विभाग में नोडल अधिकारी नियुक्त किये गए हैं। गर्भवती महिलाओं का दस सप्ताह के भीतर शत–प्रतिशत पंजीकरण सुनिश्चित किया जा रहा है। लोगों में जागरूकता लाने के लिए नुक्कड़ नाटकों, गुड्डा–गुड्डी बोर्ड लगाकर प्रत्येक माह सम्बन्धित गांव के बालक–बालिका अनुपात को दर्शाया जाएगा और हर ग्राम पंचायत बेटी के जन्म पर उसके परिवार को तोहफे भेजेगी। प्रदेश के हमीरपुर जिले में तो प्रत्येक माह की 11 तारीख को बेटी जन्मोत्सव के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया है। कांगड़ा जिला प्रशासन ने तो समाज में बेटियों के प्रति मानसिकता में सकारात्मक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से व्यक्तिगत तौर पर एक अनूठी मिसाल कायम की है। जिला प्रशासन ने बेटी का जन्मोत्सव मनाने को प्रोत्साहित करने के लिए 'मुनिया दी धाम' की धमक को बच्चियों के जीवन की चमक के साथ जोड़कर समाज को एक नई राह दिखाई है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार शून्य से छह वर्ष आयुवर्ग में मण्डी जिला में लिंगानुपात दर 916 आंकी गई इस दर में समानता लाने के लिए मण्डी में 'मेरी लाडली' कार्यक्रम जिला प्रशासन ने शुरू किया है। जिसमें स्वास्थ्य विभाग, महिला एवं बाल विकास विभाग, हिला रेडक्रास सोसायटी और मण्डी साक्षरता एवं जन विकास समीति प्रशासन को अपना सहयोग प्रदान कर रहा है। मण्डी जिले में घटते लिंगानुपात के बुरे प्रभावों के प्रति जनसमूह को जागरूक करने के लिए गांव–गांव जाकर बैठकें व चर्चाओं का आयोजन किया जा रहा है।

0 0 0

शिक्षा विस्तार से ज्ञानवान होती युवा शक्ति

● योगराज शर्मा

किसी भी देश के सभ्य समाज के निर्माण में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है और एक शिक्षित व जागरूक समाज ही सर्वांगीण विकास का मार्ग प्रशस्त कर देश का नई राह दिखा सकता है। आज के वैज्ञानिक युग में हम जीवन के किसी भी क्षेत्र में तब तक तरक्की नहीं कर सकते जब तक कि शिक्षा का समुचित विस्तार न किया जाए। विकास में शिक्षा के अहम योगदान को ध्यान में रखते हुए वर्तमान प्रदेश सरकार, क्षेत्र को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान कर रही है। प्रदेश सरकार ने बीते चार वर्षों के कार्यकाल के दौरान उच्च शिक्षा के क्षेत्र में नई बुलंदियों को छुआ है। हाल ही में एक प्रतिष्ठित पत्रिका द्वारा आयोजित 'स्टेट ऑफ स्टेट अवार्ड' समारोह में प्रदेश को बड़े राज्यों की श्रेणी में शिक्षा और समावेशी विकास में प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया है जोकि हिमाचल जैसे छोटे पहाड़ी राज्य के लिए गौरव की बात है।

चार वर्षों में शिक्षा पर 19208 करोड़ व्यय

प्रदेश सरकार ने बीते चार वर्षों में शिक्षा जैसे अहम क्षेत्र पर 19208 करोड़ रुपये कर शिक्षा विस्तार को नई दिशा दी है। इस अवधि में राज्य के विभिन्न हिस्सों में 42 महाविद्यालय खोले गए जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के छात्रों खासकर लड़कियों को फायदा हुआ है। उच्च शिक्षा को मिले विस्तार के साथ-साथ राज्य में प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में भी सुदृढ़ता आई है। प्रदेश के शिक्षण संस्थानों में शिक्षा का आधारभूत ढांचा विकसित कर स्कूलों व महाविद्यालयों को आधुनिक सुविधाओं से लैस किया गया है। कक्षाओं में अब पारम्परिक श्यामपटों की जगह कम्प्यूट्रीकृत स्मार्ट कक्षाओं ने ले ली है जिनमें विद्यार्थियों को विश्व स्तरीय शैक्षणिक माहौल मुहैया करवाया जा रहा है।

प्रदेश के सरकारी विद्यालयों में पहली से बारहवीं कक्षा तक के विद्यार्थियों को हिमाचल पथ परिवहन निगम की बसों में निशुल्क यात्रा सुविधा प्रदान की जा रही है जिससे स्कूल जाने वाले बच्चों को विशेष लाभ पहुंच रहा है। यह सुविधा वर्ष 2015-16 से केन्द्रीय विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों की भी प्रदान की जा रही है। प्रदेश सरकार के सार्थक प्रयासों से राज्य के स्कूलों में नामाकंन दर शतप्रतिशत हो गई है। शैक्षणिक संस्थानों में विद्यार्थियों को विश्वस्तरीय सुविधाएं प्रदान करने के साथ-साथ सरकार ने बेहतर परिणाम देने वाले शिक्षकों को भी सम्मानित करने का निर्णय लिया है। मुख्यमंत्री शिक्षक सम्मान योजना आरंभ की गई है जिसके तहत शत प्रतिशत परिणाम देने वाले शिक्षकों को समाानित करने का प्रावधान है। हिमचल प्रदेश स्कूल शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित 10वीं एवं 12वीं की परीक्षाओं श्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले मेधावी विद्यार्थियों को 'राजीव गांधी डिजिटल योजना' के तहत मेधावी छात्रों को नेटबुक प्रदान की जा रही है। इस योजना के आरंभ होने से लेकर अब तक तहत 63 करोड़ 62 लाख 64 हजार 325 रुपये व्यय कर 32500 विद्यार्थियों को लैपटॉप वितरित किए गए जबकि वर्ष 2016-17 के दौरान 18 करोड़ रुपये व्यय किए जा रहे हैं। इस योजना के तहत मेधावी विद्यार्थियों को प्रोत्साहन मिलने के साथ-साथ उन्हें सूचना एवं प्रौद्योगिकी से जोड़ने में सहायता भी मिलेगी। सरकार ने समाज के कमजोर एवं गरीब वर्गों विशेषकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन-जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग तथा आई.आर.डी.पी. परिवारों के 9वीं व 10वीं कक्षा के 3,52,153 विद्यार्थियों को वर्ष 2013-14 से लेकर 2015-16 तक 27 करोड़

52 लाख 92 हजार 837 रुपये मूल्य की पाठ्य पुस्तकें निशुल्क वितरित कीं। प्रदेश के सभी पात्र विद्यार्थियों को विभिन्न छात्रवृत्ति योजनाओं के तहत लाभान्वित करने उद्देश्य से अक्तूबर 2016 तक 4,14,480 विद्यार्थियों को 213.21करोड़ रुपये छात्रवृत्ति रूप में वितरित किए गए। विद्यार्थियों में विज्ञान विषय के बारे में रुचि उत्पन्न करने के लिए कार्यान्वित की जा रही 'प्रेरणा(इन्सपॉयर) पुरस्कार योजना' के तहत इस अवधि में 8299 विद्यार्थियों को पांच हजार रुपये प्रति विद्यार्थी की दर से 5.18 करोड़ रुपये वितरित किए गए।

प्रदेश के शिक्षण संस्थानों में ढांचागत विकास को प्राथमिकता प्रदान करते हुए 317 महाविद्यालय भवनों तथा 1848 विद्यालय भवनों के निर्माण पर गत चार वर्षों के दौरान 355.87 करोड़ रुपये व्यय किए गए। राष्ट्रीय उच्चत्तर शिक्षा अभियान के तहत इस अवधि में 184 करोड़ रुपये की राशि स्वीकृत की गई।

प्रदेश के विद्यार्थियों को राज्य के भीतर ही उच्च मेडिकल शिक्षा सुविधा प्रदान करने के लिए आई.जी.एम.सी. शिमला और टाण्डा स्थित मेडिकल कालेजों को सुदृढ़ करने के साथ-साथ नाहन, हमीरपुर और चम्बा में तीन नए मेडिकल कालेज खोले जा रहे हैं जिनमें से नाहन मेडिकल कालेज में इस शैक्षणिक सत्र से कक्षाएं आरम्भ हो चुकी हैं जबकि ई.एस. आई. मेडिकल कालेज नेरचौक मंडी को आगामी शैक्षणिक सत्र से आरंभ किया जाएगा। प्रदेश में केन्द्रीय विश्वविद्यालय, आईआईटी, आईआईएम, एम्स जैसे राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों के खुलने से प्रदेश के युवाओं को प्रदेश के भीतर ही उच्च शिक्षा के विश्व स्तरीय संस्थानों शिक्षा ग्रहण करने के अवसर प्राप्त होंगे।

प्रदेश के विद्यार्थियों को राज्य के भीतर ही उच्च मेडिकल शिक्षा सुविधा प्रदान करने के लिए आई.जी.एम.सी. शिमला और टाण्डा स्थित मेडिकल कालेजों को सुदृढ़ करने के साथ-साथ नाहन, हमीरपुर और चम्बा में तीन नए मेडिकल कालेज खोले जा रहे हैं जिनमें से नाहन मेडिकल कालेज में इस शैक्षणिक सत्र से कक्षाएं आरम्भ हो चुकी हैं जबकि ई.एस. आई. मेडिकल कालेज नेरचौक मंडी को आगामी शैक्षणिक सत्र से आरंभ किया जाएगा। प्रदेश में केन्द्रीय विश्वविद्यालय, आईआईटी, आईआईएम, एम्स जैसे राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों के खुलने से प्रदेश के युवाओं को प्रदेश के भीतर ही उच्च शिक्षा के विश्व स्तरीय संस्थानों शिक्षा ग्रहण करने के अवसर प्राप्त होंगे।

इसके अलावा प्रदेश की ललित कला के संरक्षण व उसके संवर्धन के लिए प्रदेश सरकार ने राज्य में ललित कला महाविद्यालय खोला है। इस महाविद्यालय के खुलने से जहां एक तरफ चित्रकला व मूर्तिकला को बढ़ावा मिल सकेगा, वहीं छात्रों को पढ़ाई के भी बेहतरीन अवसर मिलेंगे। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति का अंदाजा प्रदेश में चल रहे 16 हजार से अधिक शिक्षण संस्थानों से लगाया जा सकता है।

छात्रों को घर द्वार पर शिक्षा सुविधा मुहैया करवाने के साथ-साथ अब सरकार की योजना उन्हें गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रदान करने की है। सरकार का प्रयास है कि छात्रों को गुणवत्तायुक्त शिक्षा प्रदान करने के लिए न सिर्फ स्कूलों में शिक्षकों की नियुक्ति पर जोर दिया जा रहा है बल्कि शिक्षकों को नवीनतम जानकारियों से अवगत करवाने के लिए उनके प्रशिक्षण पर भी जोर दिया जा रहा है। गत चार वर्षों में उच्च शिक्षा विभाग में सरकार ने शिक्षकों सहित विभिन्न श्रेणियों के 3418 पदों पर नियुक्तियां की हैं। इसके अलावा 9517 पदों को पदोन्नतियों के माध्यमे से भरा गया है। वर्तमान कार्यकाल में सरकार ने अनुबंध पर तैनात 2609 शिक्षकों व गैर शिक्षकों की सेवाओं को नियमित किया है। ऐसे में यही उम्मीद की जा रही है कि जा रही है कि शैक्षणिक गुणवत्ता में सुधार आने से ही युवा हुनरमंद बन सकेंगे वहीं उन्हें रोजगार के भी अच्छे अवसर पैदा हो

विद्यार्थियों को हुनरमंद बनाने के लिए तकनीकी शिक्षा को सुदृढ़ करने के साथ-साथ उन्हें अकादमिक तौर पर कार्यकुशल बनाने हेतु सरकार ने कौशल विकास विश्वविद्यालय खोलने का ऐलान किया है। व्यवसायिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने स्कूल स्तर से ही ऑटोमोबाइल, खुदरा रिटेल, सुरक्षा, आई.टी.ई.एस. हेल्थकेयर, कृषि, आतिथ्य सत्कार व पर्यटन, टेलीकाम, शारीरिक शिक्षा, बी.एफ.एस.आई. व मीडिया जैसे विषयों को पाठ्यक्रम में शामिल किया है। सरकार द्वारा युवाओं को रोजगार परक शिक्षा मुहैया करवाने के उद्देश्य से तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा दिया जा रहा है। गत चार वर्षों के दौरान राज्य में सरकारी क्षेत्र में तकनीकी महाविद्यालय, एक फार्मेसी महाविद्यालय, 5 बहुतकनीकी संस्थान, 34 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान प्रारंभ किए गए हैं। इसके अलावा केन्द्रीय सरकार की सहायता से नाहन में भारतीय प्रबंधन संस्थान, उना भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, सोलन जिला के बद्दी में केन्द्रीय प्लास्टिक अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान व शिमला जिले में क्षेत्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान महिला शुरु किया गया है। इस अवधि के दौरान तकनीकी शिक्षा विभाग में 1200 पदों को भी सृजित किया गया है।

000

घरद्वार पर सुलभ हुईं श्रेष्ठ स्वास्थ्य सेवाएं

विवेक शर्मा

हिमाचल सरकार के सतत् प्रयासों से पहाड़ी राज्य की सम्पूर्ण जनसंख्या को सरकारी चिकित्सालयों के माध्यम से उत्कृष्ट स्वास्थ्य सुविधायें घर–द्वार पर सुलभ हुई हैं। दुर्गम व हिमाच्छादित जनजातीय क्षेत्रों में टेलीमेडिसन परियोजना के अंतर्गत रोगियों को विशेषज्ञ चिकित्सा सुविधायें प्रदान करने की सराहनीय पहल की गई है। प्रदेशवासियों को सस्ती तथा न्याय संगत स्वास्थ्य सेवायें सुलभ कराने की दृष्टि से 'हिमाचल प्रदेश सार्वभौमिक स्वास्थ्य सुरक्षा परियोजना' जैसी लोक हितैषी योजनायें शुरू की गई हैं। इन योजनाओं से गरीब, जरूरतमंद तथा मध्यम वर्ग को लाभ प्राप्त हुये हैं। एक रुपये प्रतिदिन के खर्च के बीमे से गरीबों को निःशुल्क इलाज की सुविधा दी जा रही है। वर्तमान सरकार प्रदेशवासियों को सर्वोत्तम स्वास्थ्य सुविधायें सुनिश्चित करने के लिये कृतसंकल्प रही है तथा प्रदेश के स्वास्थ्य सूचक इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि चार वर्षो की अवधि में राज्य द्वारा स्वास्थ्य के क्षेत्र में किये गये अथक प्रयासों से शिशु मृत्यु दर में कमी तथा लिंगानुपात में बढ़ोतरी हुई है।

हिमाचल प्रदेश जैसे राज्य की कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के दृष्टिगत रोगियों एवं घायल व्यक्तियों को समय पर चिकित्सा सहायता उपलब्ध करना हमेशा से एक बड़ी चुनौती रहा है। राष्ट्रीय एम्बुलेंस सेवा जो हिमाचल में 108 के नाम से लोकप्रिय है ने उपचार सेवायें सुनिश्चित बनाने में अभूतपूर्व योगदान दिया है और यह संभव हुआ है वर्तमान सरकार के अथक प्रयासों से जिसके कारण 321 से अधिक एम्बुलेंस का एक विशाल बेड़ा कार्य कर रहा है। कोई भी व्यक्ति एक फोन पर इस सुविधा का लाभ उठा सकता है। इसी कड़ी में माता तथा शिशुओं के लिये 102 मातृ तथा शिशु जननी योजना आरम्भ की गई।

प्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों किन्नौर तथा लाहौल स्पीति निवासियों को स्वास्थ्य सुविधायें प्रदान करने के लिये टेलीमेडिसन परियोजना के अंतर्गत रोगियों को विशेषज्ञ चिकित्सा उपलब्ध करवाई जा रही हैं। इस सुविधा से विपरीत मौसम में कठिनाइयों से दो–चार होने वाले जनजातीय क्षेत्रों के लोग लाभान्वित हुये हैं।

राज्य में विशाल औषधीय सम्पदा की मौजूदगी को देखते हुये, राज्य सरकार ने इसके दोहन के प्रति अपनी वचनबद्धता के मद्देनजर इस सम्पदा के संरक्षण के लिये अनेक कदम उठाये हैं। भारतीय चिकित्सा पद्धति तथा होम्योपेथी का हिमाचल प्रदेश की स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वर्तमान में प्रदेश में 31 आयुर्वेदिक अस्पताल, 1,113 आयुर्वेदिक चिकित्सा केन्द्र, 14 होम्योपेथिक स्वास्थ्य केन्द्र व 3 यूनानी स्वास्थ्य केन्द्र हैं।

आयुर्वेदिक चिकित्सा को सुदृढ़ करने के लिये सरकार ने राजकीय राजीव गांधी स्नातकोत्तर आयुर्वेदिक महाविद्यालय पपरोला में अगले शैक्षणिक सत्र से आयुर्वेद चिकित्सा एवं शल्य चिकित्सा में स्नातक की सीटों को बढ़ाकर 60 किया गया है तथा सरकार ने जोगेन्द्रनगर में बी. फार्मेसी पाठ्यक्रम आरम्भ किया है जिसमें 30 विद्यार्थियों के अध्ययन की क्षमता है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में हिमाचल के लिये वर्ष 2016 एक मील के पत्थर के रूप में भी देखा जा सकता है। वह इसलिये क्योंकि 1966 में प्रदेश के पहले मेडिकल कॉलेज के रूप में तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने स्वस्थ हिमाचल की नींव रखी थी।

प्रदेश में चिकित्सा शिक्षा के विकास एवं विस्तार को गति प्रदान करने के लिये सरकार द्वारा अनेक ठोस कदम उठाये जा रहे हैं जिनमें प्रदेश में नये मेडिकल कॉलेज खोलने का सराहनीय कदम शामिल है तथा इसके

जन सेवाओं की समयबद्ध उपलब्धता व पारदर्शिता का नया दौर

प्रदेशवासियों को जवाबदेह व पारदर्शी प्रशासन प्रदान करना सरकार का सर्वोच्च ध्येय रहा है। इससे आम जन को बेहतर नागरिक सेवाएं उपलब्ध हो रही हैं तथा जन शिकायतों का समय पर निपटारा हो रहा है। राज्य सरकार के वर्तमान कार्यकाल की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही है कि सरकार ने सेवाओं की उपलब्धता को कंप्यूटर आधारित ई-प्रणाली के माध्यम से उपलब्ध करवाने को प्राथमिकता दी है। हिमाचल विधान सभा को पूर्ण रूप से ई-विधान सभा बनाकर इतिहास रचा गया है। हिमाचल विधान सभा देश की पहली विधान सभा है, जहां कागज का प्रयोग नहीं हो रहा है। लोगों को समयबद्ध सेवाएं प्रदान करने के लिए सरकार द्वारा 18 विभागों की 103 सेवाएं लोक सेवा गारंटी अधिनियम के तहत लाकर सेवाओं की प्रदत्तता को सुचारू बनाया गया है। पंचायत स्तर पर खुले अधिकांश 2500 लोक मित्र केंद्रों के माध्यम से सेवाएं प्रदान करने को सुनिश्चित बनाया जा रहा है। आम जनता की सुविधा के लिए सरकारी विभागों द्वारा विभिन्न कार्यों के लिए शपथ-पत्र लिए जाने की पुरानी प्रथा को समाप्त किया गया है। इसके स्थान पर प्रार्थी द्वारा सादे कागज पर स्व-घोषणा स्वीकार्य की गई है। प्रशासनिक व राजस्व व्यवस्था को चुस्त व आम लोगों की पहुंच के लिए चार वर्ष की अवधि में आवश्यकतानुसार व लोगों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए अनेक एस.डी.एम. कार्यालय, तहसीलें, उपतहसीलें खोलीं व स्तरोन्नत की गई हैं। इन नए प्रशासनिक कार्यालयों के खुलने से लोगों को उनके घर-द्वार पर राजस्व तथा अन्य प्रशासनिक कार्य करवाने में सहूलियत हुई हैं। राजस्व रिकार्ड को संपूर्ण कंप्यूटरीकृत कर दिया गया है। अब भू-मालिकों को सभी जरूरी राजस्व कागजात ऑनलाईन उपलब्ध हो रहे हैं। लोगों की समस्याओं के निवारण में मुख्य मंत्री के प्रयास सराहनीय हैं। वे शिमला में सप्ताह में तीन दिन जन शिकायतों का निपटारा करते हैं। प्रदेश के प्रवास के दौरान वे विकास योजनाओं के लोकार्पण व शिलान्यास के दौरान आम लोगों की समस्याओं को निपटाने को प्राथमिकता दे रहे हैं। प्रदेश के सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार उन्मूलन के लिए राज्य सतर्कता एवं भ्रष्टाचाररोधी ब्यूरो में टोल-फ्री दूरभाष नंबर 0177- 2629893 स्थापित किया गया है। हैल्प्लाइन सेवा 1064 भी आरंभ की गई है।

अंतर्गत नाहन, चम्बा तथा हमीरपुर में नये मेडिकल कॉलेज खोले गये हैं तथा नाहन कॉलेज में 2016 में कक्षायें आरम्भ भी हो गई हैं तथा इन कॉलेजों पर वर्तमान सरकार ने 190–190 करोड़ रुपये का किया है। हिमाचल में शीघ्र ही अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान शीघ्र स्थापित होगा जिसके लिये बिलासपुर क्षेत्र में 1200 बीघा भूमि का चयन किया जा चुका है। सरकार ने मण्डी के नेरचौक में स्थापित ईएसआई मेडिकल कॉलेज का अधिग्रहण कर एक पहल की है जिसमें 2017 के शैक्षणिक सत्र से कक्षायें आरम्भ की जायेंगी। राज्य सरकार के इन प्रयासों से जहां छात्रों को चिकित्सा शिक्षा मिलेगी वहीं सम्बन्धित क्षेत्रों में आधुनिक चिकित्सा सुविधा स्थानीय लोगों को सुलभ होगी।

सरकार के सतत् प्रयासों से हिमाचल उत्कृष्ट स्वास्थ्य मानकों में देश का अग्रणी राज्य बनकर उभरा है। इसी कड़ी में गत चार वर्षों के भीतर चिकित्सकों की कॉडर संख्या 1597 से बढ़ाकर 2091 की गई है। टाण्डा एवं शिमला मेडिकल कॉलेजों में चिकित्सकों की सेवानिवृति आयु को 60 वर्ष से बढ़ाकर 65 वर्ष किया गया है तथा विभिन्न संस्थानों में स्वास्थ्य सुविधाओं और सेवाओं को बेहतर बनाने के लिये 497 स्टॉफ नर्सों के पद भरे गये हैं तथा राज्य सरकार के प्रयासों से आइजीएमसी शिमला के नर्सिंग स्कूल को स्तरोन्नत कर नर्सिंग कॉलेज का दर्जा दिया गया है।

हिमाचल की भौगोलिक परिस्थितियों के मद्देनजर एम्स के सहयोग से दुर्घटनाओं से निपटने के लिये आईजीएमसी के साथ–साथ नूरपुर, रामपुर और कुल्लू में अत्याधुनिक ट्रामा केन्द्रों की स्थापना की जा रही है तथा प्रदेश के प्रमुख स्वास्थ्य संस्थानों में सुपर स्पेशलिटी केन्द्रों को विकसित किया गया है जिससे टांडा व शिमला में सामान्य जनों को उत्कृष्ट स्वास्थ्य सुविधायें सुलभ होंगी।

स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रदेश के दूरदराज व ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य की सुविधायें सुनिश्चित बनाने के लिये प्राथमिक एवं सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या बढ़ाने व स्तरोन्नति के लिये सरकार निरंतर प्रत्यत्न कर रही है। आइजीएमसी का नया परिसर जो भट्टाकुफर के समीप बनाया जा रहा है, के लिये 250 बीघा भूमि चयनित की जा चुकी है।

स्वास्थ्य मानकों में राज्य देश में औसत स्वास्थ्य सेवायें प्रदान करने में देश की औसत से कहीं आगे है तथा राज्य में 2290 व्यक्तियों के लिये एक स्वास्थ्य संस्थान उपलब्ध है। राज्य स्वास्थ्य प्रसार पर 26 हजार रुपये प्रति व्यक्ति व्यय कर रहा है जो हिमाचल को स्वास्थ्य क्षेत्र को अव्वल बनाता है।

सरकार ने पिछले चार वर्षों में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा शिक्षा पर 5,404 करोड़ रुपये व्यय किये हैं जिसके फलस्वरूप हिमाचल स्वास्थ्य के क्षेत्र में नये आयाम स्थापित करने की दिशा में तेजी से कदम बढ़ा रहा है। सरकार ने प्रदेश में सभी को स्वास्थ्य सुविधायें सुलभ बनाने के लिये मुख्य अस्पतालों के परिसरों में निःशुल्क जीवन रक्षक औषधालय स्थापित किये हैं जिससे गरीब व जरूरतमंद 300 प्रकार की जीवन रक्षक दवाइयां उपलब्ध करवाई जा रही हैं।

आलेख

हिमाचल में देव प्रतिमाओं का स्वरूप

◆ **डॉ. बी. एल. कपूर**

हिमाचल में सातवीं-आठवीं शताब्दी का समय आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक दृष्टिकोणों से अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। इसका सीधा कारण एक मात्र यह रहा कि भारतीय महाद्वीप में केन्द्रीय राज्य शक्ति का क्षरण हो गया था। मौर्य, गुप्त, कुषाण, सुंग और दक्षिण से उत्तर में प्रकटे सातवाहन जैसी राज्यसत्ता देश से विलुप्त प्राय थी। हर्ष ने उत्तरी और पश्चिमोत्तरी भारत को अवश्य एक पहचान प्रदान की थी परन्तु उसके निधन के पश्चात् केन्द्रिय शक्ति एकदम सुनसान थी। हर्ष के विषय में तो यह मान्यता है कि वे हिमालय के दुर्गमतम स्थल त्रिलोकीनाथ तक स्वयम् आ पहुँचे थे। जनस्मृति इस घटना को त्रिलोकीनाथ मन्दिर की स्थापना से भी जोड़ती थी। यह कहा जाता है कि इस मन्दिर का निर्माण और प्रतिमा की स्थापना हर्षवर्धन ने की थी। मूर्ति हिन्दुओं के लिये शिव को समर्पित है और बुद्ध धर्म के अनुयायी इसे बोधिसत्व की प्रतिमा स्वीकारते हैं। लिखित प्रमाणों का तो इस सम्बंध में अभाव है परन्तु यह सत्य है कि उस काल खण्ड में हिमाचल के कुछ स्थलों में पूजा पद्धतियों में शास्त्रीय विधान ग्रहण किया। बाहरी तत्वों का स्थानीय आस्थाओं में कुछ नए बिम्ब जोड़े। इसी काल में भरमौर जनपद में मन्दिरों और मूर्तियों का निर्माण काल अपनी परिकाष्ठा में पहुँचा। ब्रह्मपुर या भरमौर के साथ-साथ ही चम्पा जनपद भी प्रभाव में आया, भले ही लोगों का विचार है चम्पा या चम्बा दसवीं शताब्दी की देन है। साथ ही कुल्लू का जगतसुख भी हलचल से अछूता नहीं रहा। संध्यादेवी मन्दिर के समीप लघु आकार का शिवमन्दिर उसी युग की पहचान छोड़ गया है। भरमौर से मीलों दूर हिमाचल के दक्षिण स्थल में मानगढ़ ओर हाटकोटी सभ्यता के केन्द्र इसी कालखण्ड में नये रंगरूप में उभरे। ऐसा प्रतीत होता है कि हिमाचल में विस्तृत शिव-शक्ति स्थलों को बाहरी राजकुलों तथा शिल्पकारों ने यहां की सभ्यता को शास्त्रीय परिधानों से सजाया। सुकेत राज्य की स्थापना पांगणा का दुर्गनुमा शक्तिस्थल निरंतर अपनी पहचान बनाये हुये है। इसी दुर्ग में या इसके सन्निकट राजप्रसाद रहा होगा। वे तो नष्टप्राय है परन्तु इस दुर्ग की सबसे ऊपरी मंजिल (पाचवीं) में पूजास्थली थी जो आज भी पूजनीय है। धर्म में विकृतियां अवश्य आती रहीं परन्तु यह धर्म का ही चमत्कार है कि कला, इतिहास, पुरातत्व, धर्म की छत्रछाया में बचे रहे और आज भी बीते कल की पहचान है। पदम सम्भव भी इसी युग में हुए और मण्डी में रिवालसर, खुआरानी तथा व्यास के उत्तरी तट की शैलगुफायें उनकी स्मृति चिन्ह के अवशेष है। लामाधर्मी इन गुफाओं का बहुत श्रद्धा से पूजते हैं अन्यथा स्थानीय जनों की इनमें कोई रुचि नहीं। इस मत में कोई दो राय नहीं कि यहां शिव और शक्ति स्थान थे। लिंग और योनी का धर्म और आस्था में पूर्ण अधिकार था। भरमौर तथा हाटकोटी में शिवलिगों की बहुलता इस मान्यता की परिचायक है। परन्तु इन में जो मूर्तियों का स्वरूप उभरा उस पर इसी युग ने योगदान किया। प्रायः महत्वपूर्ण शक्ति पीठों में देवी मात्र पाषाण खण्ड में ही प्रथापित है। कांगड़ा की भवानी, चिन्तपूर्णी की छिन्नमस्तका और चामुण्डा किसी में प्राचीन शक्ति मानवाकार में उपलब्ध नहीं ज्वालामुखी में तो ज्वाला ही अराधना की स्वामिनी है। विभिन्न शिव प्रतीकों वालें मन्दिरों में भी देवी की पूजा जोगनियों के रूप में स्वीकारी जाती है जिनका कोई स्वरूप नहीं और उनके निवास स्थान छत्र रहित मन्दिर होते थे। चीलों में जोगिनियों का प्रतिबिम्ब स्वीकारा जाता रहा है। चौहार घाटी में देवाधिदेव हूरंग-नारायण है परन्तु उनके 'सत' की स्थायित्व पूंगणी देवी को माना जाता है जिसे जोगनी का पद प्राप्त है। इस तरह के वातावरण देवी देवताओं को मानव आकृति प्रदान करना एक नये युग का आरम्भ था। ध्यान से देखें तो देवों की प्रतिमाओं में ढालने का काम रावी नदी की ऊपरी उपत्यका में आरम्भ हुआ। ब्रह्मपुर राज्य की स्थापना पांचवीं सदी में हो चुकी थी परन्तु इसके वैभव का काल सातवीं सदी ही थी जब वहां मन्दिरों और मूर्तियों का निर्माण हुआ। मेरूवर्मन का वह राज काल था। उनके पूर्ववर्ती तथा परिवर्ती राजाओं के निर्मित कोई अवशेष नहीं। मेरूवर्मन के निर्माण में विशेषता है कि उसकी बनाई प्रतिमाओं में अभिलेख अकित हैं। अभिलेख मेयवर्मन के नाम का स्पष्ट उल्लेख करते हैं और उसके पूर्ववर्ती शासकों का भी स्मरण दिलवाते हैं। अभिलेखों में मूर्तिकार गूगा का भी वर्णन उपलब्ध हैं। यदि कोई न्यूनता है तो वह है तिथियों और निर्माण वर्षों का अभाव। मात्र लिपि की शैली ही अभिलेखों को सातवीं सदी के लगभग का

निर्धारित करती है। मेरूवर्मन के काल का गणेश, वृषभ लक्षणादेवी और निकटस्थ छत्तराड़ी की अमूल्य धरोहर शक्ति देवी की प्रतिमाओं पर अभिलेख है परन्तु ब्रह्मपुर के नृसिंह की मानवकार प्रतिमा पर स्पष्ट अभिलेख नहीं परन्तु इसका निर्माण शिल्प स्पष्ट प्रकट करता है कि यह भी गूगा का ही कमाल है। लक्षणा देवी नाम कैसे पड़ा होगा। यह एक पहेली है। लक्षणा नाम से एक अन्य मन्दिर धौलाधार के इस ओर कागड़ा में भी है जहां भरमौर निवासी सर्दी के दिनों में आते रहते थे। लक्षणा देवी का स्वरूप महिसासुर मर्दिनी का है फिर उन्हें लक्षणा क्यों पुकारा गया इसका उत्तर उपलब्ध नहीं। धीरे-धीरे हम कुछ मान्यताओं का वर्णन करेंगे। इसी लेख में हर्ष के त्रिलोकीनाथ प्रवास का संकेत है। त्रिलोकीनाथ कि समीप मृकुल गांव है जहां देवी पुनः महिषासुर मर्दिनी के स्वरूप में है। आज कल उसे मृकुला देवी का संबोधन प्राप्त है। उसकी आदि मूर्ति भी शास्त्रीय शैली में रही होगी परन्तु वर्तमान में 13 शताब्दी के एक राणा द्वारा प्रस्थापित मूर्ति लोक शैली की श्रेणी की है। पिछली सदी के आठवें दशक में, मैं मण्डी के करसोग में एक कैम्प पर गया था। रात के खाने का समय था कि मेरे पुराने परिचित ओमचन्द ने मुझसे अकेले में मिलने का आग्रह किया। मैं भी उत्सुकता में था कि क्या बात हैं। बात यूं थी कि वे एक कष्ट प्रतिमा मुझे दिखाना चाहते थे। मूर्ति पुनः महिषासुर मर्दिन की थी जो उन्हें मृकुला मन्दिर के गर्भगृह में वर्तमान परिपूजित मूर्ति के पिछले भाग में उपेक्षित पड़ी मिली थी। उन्होंने मेरी राय इस प्रतिमा के निर्माण काल को पूछी। कुछ परखने के पश्चात् मुझे सातवीं-आठवीं सदी का ही आभास हुआ और मैंने उन्हें बता भी दिया। अब यह माना जाने लगा है कि काष्ठ मन्दिर के मृकुला मन्दिर की यह मूर्ति आरम्भिक काल में प्रधान मूर्ति थी। मन्दिर का निर्माण काल भी उपरोक्त कालखण्ड ही माना जाता है। काष्ठ प्रतिमा भावभंगिमा से परिपूर्ण है परन्तु लक्षणा देवी की मोहकता इसमें नहीं। क्या गूगा ने इसे देख ही भरमौर की महिसासुर मर्दिनी का निर्माण किया था। हो सकता है क्योंकि अवधारणा, परिकल्पना और बनावट दोनों में ही भेद नहीं। धातु की मूर्ति सदैव काष्ठ की मूर्ति से भव्य होगी क्योंकि धातु को संजोना सहज है और काष्ठ में उकेरना कठिन कार्य है।

महिषासुर मर्दिनी का एक प्रतिरूप वर्तमान चम्बा में चमेसरी था चम्पावती मन्दिर में भी उपलब्ध है। यह मन्दिर और मूर्ति राज परिवार की कुलजा भवानी स्वीकारी जाती है। मूर्ति पाषाण से निर्मित है और अत्यन्त क्षरण अवस्था में है। इसमें निर्माण काल में भी सातवीं-आठवीं सदी ही विद्वानों ने स्वीकारा है। यह भी सर्वमान्य है कि दसवीं सदी में शैलदेव वर्मन ने चम्बा को राजधानी घोषित किया था और उसकी पुत्री का नाम भी चम्पा ही था। अब यह प्रश्न उठता है कि दसवीं सदी में चम्बा भरमौर साम्राज्य की राजधानी में सातवीं सदी के हरिराय (धातु) और चम्पावती की पाषाण प्रतिमायें यहां राज्याश्रय के बिना कैसे बनी। हो सकता है कि भरमौर और चम्बा में दो सभ्यता केन्द्र साथ-साथ उभर रहे थे। भरमौर समृद्ध राज्य था परन्तु उसकी सम्पन्नता का रहस्य क्या था, करना कठिन है। चम्बा का शासक भरमौर की तुलना में क्षीण था। अतः भरमौर के शासक ने उसे यहां से उखाड़ फेंका और चम्बा को अपनी स्थायी राजधानी बनाया। एक अन्य मत यह भी है कि चम्बा भरमौर राज्य की शीतकालीन राजधानी पहले से ही रही हो और सहज में राजा की बेटी चम्पा के आग्रह पर राजकाज का प्रमुख स्थान चम्बा को बना दिया गया। एक युद्ध का वर्णन अवश्य वंशावली में आता है जो क्षेपक से अधिक नहीं। हो सकता है कि निकट बन्नू का राणा यहां भी अपनी सत्ता चलाता था और अपने ब्राह्मण परिवार को यह स्थान प्रदान किया था। अतः राजधानी घोषित होने के पश्चात् अधिक स्थान की आवश्यकता थी। इस कारण ब्राह्मणों को वहां से हटाना पड़ा उनके लिए प्रत्येक उत्सव पर चम्बा वासियों पर एक विशेष और निरन्तर कर प्रावधान कर दिया हो जो आज भी किसी न किसी रूप में विद्यमान है। इस प्रकार हमने अनुभव किया कि मृकुला की देवी स्थानवाची नाम पर महिषासुर मर्दिनी है। व्यक्ति वाची नाम से लक्षणा भरमौर में सौम्य रूप में चम्बा में चम्पावती के रौद्र रूप में पुनः महिषासुर मर्दिन रूपा है। जैसे चम्पावती से देवी का साम्य बैठाया जाता है वैसे लक्षणा भी कोई राजपरिवार की सदस्या हो जिसके कारण यह नाम मूर्ति के लिए विख्यात हुआ और प्रचलन में आया। जनमानस में अपने राजा के प्रति आभार का ऊभार देवियों के नामों में सहज समझ में आ जाता है। इस बृहद भूमिका का प्रयोजन यह है कि देवी का महिषासुर मर्दिनी का स्वरूप पूर्वकालीन हिमाचली राज्यों में सर्वोपरि रहा। यहां उत्तर में ही नहीं, दक्षिणी हिमाचल के उस छोर पर जहां वर्तमान उत्तराखण्ड की हिमाचल से सीमा मिलती है, में भी प्रसिद्ध हाटकोटी के मन्दिर की प्रधान प्रतिमा पुनः महिषासुर मर्दिनी की है जिसका पूर्ण रूप भारी वस्त्रों से लिपटा रहता है परन्तु हावभाव और परिकल्पना में पूर्णता वही रूप सकता है कि इस मूर्ति का निर्माण उन सज परिवारों की देन है या कोई बाहरी राज्याधिकारी की कुशलता की छाप है जो यमुना और तौंस के संगम के साथ वाले

व्यापारी मार्ग द्वारा पुनः तौंस की उपत्यका में से होता हुआ पब्बर नदी के किनारे सदियों इस प्रदेश में बृहद भारत के आवागमन का मार्ग था। इस प्रतिमा पर भी अभिलेख है परन्तु उसे मन्दिर के नियमों की कठिनता के कारण आजतक कोई नहीं पढ़ पाया है।

महिषासुर मर्दिनी का विस्तृत वर्णन दुर्गा सप्तशती में उपलब्ध है। विद्धानों का विचार है कि गुप्त काल में मारकण्डेय पुराण की रचना हुई थी जिसका कि यह एक अध्याय या खण्ड है। कुछ इसे स्कन्ध पुराण का भाग भी स्वीकारते हैं। यह सत्य है कि भारत भर में महिषासुर मर्दिनी की पूजा अर्चना बहुत है परन्तु कोई प्रधान मन्दिर या मूर्ति इसी रूप में विद्यमान नहीं। मैसूर को महिषासुर दैत्य की युद्ध-स्थली स्वीकारी जाती है। वहां राजप्रसाद के पीछे की पर्वत चोटी पर देवी का मन्दिर है जो चामुण्डा के नाम से प्रसिद्ध है और देवी का आकार प्रकार महिषासुर मर्दिनी का नहीं है। फिर हिमाचल के सातवीं सदी के आसपास यह रूप कैसे सर्वमान्य हुआ यह एक महान् ऐतिहासिक गुत्थी है।

मान्यता है कि भारतीय कला में कुषाण युग के पूर्व मानव आकृति का निर्माण नगण्य था। वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार अपवाद स्वरूप नन्द कुल के अजातशत्रु की मूर्ति ही मिलती है। सिक्कों पर लघु मनुष्य मूर्तिया उपलब्ध थी और पशु प्रतिमाओं का निर्माण मौर्य युग में चरम सीमा पर था। शुग युग में भी सांची में छोटी-छोटी मनुष्य आकृतियां है। कुषाण नरेश कनिष्क की सिरकटी मूर्ति मथुरा संग्रहालय में विद्यमान है जिसमें अभिलेख द्वारा निश्चित हो जाता है कि यह विशाल प्रतिमा महाराजाधिराज कनिष्क की ही है। गुप्तकाल में भारतीय मूर्तिकला के विविध रूप उभरे और भारतीय मानस में व्यापक देवपरिवारों को मूर्तियों का स्वरूप मिला। जिस एकाग्रता और मनोयोग से गुप्त मूर्तियां बनाई गई वह उनके शिल्प में भी स्पष्ट है। मूर्तियों के नेत्र नीचे की ओर और आधे खुले हुए शिल्प प्रतिभा का प्रमाण हैं। साथ ही देव प्रतिमायें मन्द-मन्द मुस्कान लिए परमानन्द की अनुभूति से भी परिपूर्ण है। साथ ही देव मूर्तियों को अनेक हाथों से सुसज्जित करना यही दर्शाता है कि देव दानवों पर मानवरूप से नहीं परन्तु बहुबाहुबल से ही परास्त कर पाते हैं। विष्णु की चार मुखी प्रतिमा भी इसी तथ्य को निरूपण करती है कि ईश्वर सब दिशाओं से रक्षा कर रहा है। पांच रात्र सम्प्रदाय में विष्णु सदैव बहुमुखी और बहुभुजी दर्शाये गये हैं। चम्बा के हरिराय और लक्ष्मी नारायण चतुर्मुखी प्रतिमाएं इस मत की साक्षी हैं। अब प्रश्न उठता है कि हिमाचली मानस को देवी के महिषामर्दिनी के रूपों ने क्योंकर प्रभावित किया। इस रूप में देवी सौम्य और रूद्र दोनों रूपों में कलाकरों की कल्पना शक्ति में रही। प्रायः बहुभुजी यह प्रतिमा तीन नेत्रों वाली और अशान्त रूप में सिंह वाहिनी बन कर विविध आयुधों जैसे पाश, अंकुश, शंख, खड्ग, भाला, बाण, धनुष आदि आयुधों से सुसज्जित की जाती रही है। इस रूप में देवी की भुजाओं की संख्या भी चार से चौबीस तक देखी जा सकती है। सर्वप्रथम मुख्य भारतीय परिवेश में विदिशा के समीप उदयगिरि गुहा की दीवार पर अष्टभूजी दुर्गा के दर्शन प्राप्त है। यह सुन्दर मूर्ति खण्डित है परन्तु यह व्यक्त करती है कि गुप्त युग में महिषासुर मर्दिनी की पूजा का प्रचार हो गया था। भित्ति चित्रों में दुर्गा के इस रूप का अभाव नहीं। दक्षिण भारत में भी अयहोल (आन्ध्र) तथा महाबलीपुरम् (तमिलनाडु) इसके उदाहरण हैं। महाबलीपुरम् की देवी प्रतिमा तो दैवत्य शक्ति का सुन्दर उदाहरण है। उग्र रूप में महिषासुर से युद्ध में संलिप्त यह प्रतिमा सचमुच में महिष (काला=काल=अन्धकार=अज्ञान) के संहार में तत्पर है। यही इसका दार्शनिक विवेचन है। दुर्गा काली बन कर दानवों का संहार कर तत्काल भक्तों की रक्षक बनती है। अतः देवी की महिषासुर मर्दिनी प्रतिमा कलाकारों और भक्तों दोनों की मनभावना आराध्या देवी बन गई।

हिमाचल में सर्वप्रथम भरमौर की प्रसिद्ध लक्षणा देवी का महिषासुर मर्दिनी रूप का निर्माण हुआ प्रतीत होता है। सातवीं शताब्दी में अभिलेख की लिपि के अनुसार मेरू वर्मन ने गूगा द्वारा इसका निर्माण करवाया था। यह धातु मूर्ति है। देवी की चार भुजायें है। दायीं ओर के ऊपरी भुजा में खड्ग है और निचली भुजा में त्रिशुल दिखाया गया है जिसको महिष के सिर पर उसके सिर भाग पर प्रहार किया गया है। बायीं ऊपरी भुजा में घण्टा है तथा निचली भुजा महिष को पूंछ से ऊपर की ओर खैच रही है। प्रायः गुप्तकालीन प्रतिमाओं में देवी इसी भान्ति दानव महिष को थामे दृष्टिगोचर होती है। देवी का मुख्यमण्डल मध्यम मुस्कान भरा है और देवी समुध्यमा है। विविध वस्त्रों में देवी के कन्धों पर साड़ी और टागों पर भी वैसा ही परिधान है, जिसे कलाकार ने बहुत ही मनोयोग से चित्रित किया है। सुन्दर बालों के ऊपर मुकुट सुशोभित है। मूर्ति को उत्तर गुप्त शैली का स्वीकारा गया है जिसमें काश्मीरी कला का भी मिश्रण है। यह मूर्ति भले ही महिष का वध

कर रही है परन्तु सौम्यता और प्रशान्ति की प्रतिमूर्ति है। गाम्भीर्य और मुखमण्डल में संयमता इसकी पहचान है। सम्भवतः देवी की ऐसी धातु मूर्ति अन्य कहीं उपलब्ध हो। यह ब्रह्मपुर साम्राज्य की महिषासुर मर्दिनी उसकी सुन्दरता सफलता और संम्पन्नता का प्रतीक है। उदयपुर (चम्बा) की मृकुला देवी का मन्दिर अपनी काष्ठ कला के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध है। वर्तमान में यहां भी एक महिषासुर मर्दिनी की धातु प्रतिमा गृह गर्भ में स्थापित है जो किसी साधारण लोक कलाकार की कृति है। कहते हैं कि आरम्भ में इस मन्दिर में भी भव्य मूर्ति विराजमान थी। यह मन्दिर भी किसी न किसी रूप में सातवीं-आठवीं सदी की धरोहर है।

अभी-अभी जो विचार प्रसारित किया जा रहा है कि आरम्भ में शिमला संग्रहालय की काष्ठ प्रतिमा यहां की मूल पूजा भसनी थी, को सभी विद्वान नहीं स्वीकारते हैं। सोलहवीं सदी के ठाकुर हिमपाल ने वर्तमूर्ति का अभिषेक किया था। यह प्रतिमा मुस्कान भरे हाव भाव में छह भुजाओं से सुसज्जित है। बाई भुजाओं में क्रमशः तलवार, भाला तथा शंख धारण किये हुए इस मूर्ति की दाईं भुजाओं में नेजा (त्रिशूलनुमा) जो महिष का सिर छेदन मुद्रा में है के साथ-साथ अन्य भुजा में चक्र और सबसे नीचे वाली दाईं भुजा द्वारा महिष की पूंछ से ऊपर को खींच रही है। इसी मुद्रा में ब्रह्मपुर की लक्षणा देवी भी हैं परन्तु मृकुला छह भुजाओं वाली साधारण प्रतिमा है और लक्षणा चारों भुजाओं सहित सशक्त कलाकार की शास्त्रीय पद्धति पर पूर्णतः प्रमाणित मूर्ति है। इस मन्दिर की काष्ठ पट्टिकाओं पर विविध हिन्दू पौराणिक देवताओं के चित्र अंकित हैं। जिसमें नटराज, शिवपरिवार और वामन का पृथ्वी को नापते हुए एक भव्य उकेस भी है। सूर्य की प्रतिमा इसके मुख्य द्वार पर काष्ठ पर उकेरी गई है जिसके कारण कुछ विद्वानों ने इसे मूलतः सूर्य मन्दिर भी स्वीकारा है। विद्वानों के विविध मत होते हैं और वे उसी को आधार मानकर अपने सोच को अभिव्यक्ति देते हैं।

चम्बा के चमेसरी या चम्पावती मन्दिर भी महिषासुर मर्दिन को समर्पित है। बालूका पत्थरों से बनाई सातवीं सदी की यह मूर्ति अत्यन्त क्षरण अवस्था में है। मुखभाग तो लगभग सभी चिन्हों जैसे

नाक, आँख, होंठ आदि से एकदम रहित है और उसकी पूर्ति एक धातु को मोहरे लगा कर दी गई है। इस मूर्ति का निर्माण किसके के आश्रय में हुआ होगा उसके कुछ अनुमान हम चिन्हित कर चुके हैं। वर्मन कुल की कुल देवी होने के नाते इसका निर्माण क्या इसी राजकुल की देन है या नहीं यह सब शोध का विषय है। मूर्ति का निर्माण यह प्रस्तावित करता है कि मूर्ति पूर्णतः आक्रामक मुद्रा में है। इसकी टागों की बनावट तथा खड़ग को मूर्ति के पृष्ठ भाग में हवा में लहराना यह सब अंकित करता है। सभी भुजाओं में आयुद्ध है और अष्ट भुजाओं वाली यह देवी एक हाथ में त्रिशुल से महिष का सिर तो छेदन कर रही है। परन्तु महिष की पूंछ से उसे ऊपर को नहीं घसीट रही है जैसा की भरमौर और उदयपुर की मूर्तियों में दर्शाया गया है। रौद्र भाव से परिपूर्ण यह देवी महाबलीपुरम् जैसा ओज और ऊर्जा की प्रतिमूर्ति होती यदि इसका मुख भाग अपने आरम्भिक रूप को बचा रहा होता। मौसम और समय ने बालूका पत्थर को एकदम क्षीण कर दिया है। अतः विद्वानों ने इस प्रतिमा को समावेश कर अपने उल्लेखों में नहीं संजोया, भले ही यह शक्ति का मूल प्रतीक प्रतीत होता है। इतिहास की उलझने इसके स्थापित्य को भली भान्ति न उजागर कर पाये परन्तु अनुमानानुसार यह सातवीं सदी की ही धाती है जब चम्बा में हरिराय का उदय हुआ था। साहिल देवी की राजकुमारी का नाम भी इसके चम्पावती के नाम से ही प्रेरित था क्योंकि ब्रह्मपुर में राजधानी होते हुए भी चम्बा जनपद उस राजकुल की कुलदेवी का स्थान था।

इधर वर्तमान हिमाचल का उत्तरापथ तो महिषासुर मर्दिनी के मन्दिरों की पहचान लिए हुए है वहीं हिमाचल का धुर दक्षिण भी इस रूप की अवहेलना नहीं कर पाया। पब्बर उपत्यका में स्थित हाटकोटी का मन्दिर इसका प्रमाण है जहां भी गर्भगृह देवी के महिषासुर मर्दिनी के विग्रह से सुशोभित हैं। यह तोरण में स्थापित धातुमूर्ति है जो लगभग मानवाकार है। अष्टभुजा से युक्त इसका श्री विग्रह शान्त और सौम्य मुखावली से विभूषित है और सबसे ऊपरी दायें हाथ में खड्ग उसी स्वरूप में दर्शाया गया है जो चम्बा की चम्पावती की मूर्ति का सबसे बचा हुआ समृद्ध भाग है। दोनों मूर्तियां समकालीन तो हैं ही और आयुधों के धारण में एक दूसरे की प्रतिमूर्ति है। इस प्रतिमा का ध्यान से देखने का सौभाग्य मात्र पुजारी को ही प्राप्त होगा अन्यथा यह वस्त्रों से एकदम ढकी रह जाती है। मात्र मुखभाग ही देखा जा सकता हैं जो त्रिनेत्र धारी हैं। आखें अर्धमून्दी अवस्था में तनिक नीचे की ओर झुकी हुई है तथा होठों पर मन्द मन्द स्मिती की रेखायें हैं। भरा हुआ मुखमण्डल सचमुच बहुत परिश्रम से ढाला गया प्रतीत होता है। कहते हैं कि यहां मूर्ति पर अभिलेख भी है जो अभी तक विद्वानों भक्तों तथा दर्शनार्थियों के लिए दुर्लभ है। मन्दिर परिसर एवम् निकटस्थ सभी कला परिधान इसे सभ्यता की सातवीं सदी से जोड़ने में समर्थ देवी की वर्तमान प्रतिमा पर प्रतिहार शिल्प की छवि झलकती है। हो

सकता है कि इस प्रतिमा की स्थापना दसवीं सदी की रही हो जो सातवीं सदी के परिसर में मन्दिर में रखी प्रस्तर प्रतिमा के स्थान पर जगह पा सकी यह पाषाण प्रतिमा भी महिषासुर मर्दिनी की है और इसमें देवी दस भुजाओं से सुसज्जित है। धातु मूर्ति इसी प्रस्तर प्रतिमा की प्रतिमूर्ति हो सकती है परन्तु धातुवाला श्रीविग्रह अष्टभुजी ही प्रतीत होता है। सिरमौर, क्योंथल या रामपुर के तत्वावधान में इसका निर्माण किसी ऐसे राजकुल ने किया हो जो कालसी के संगम से टौंस की घाटी लांघ करे पब्बर की उपत्यका में आ बसा हो। उसी राजकुल ने पाषाण के स्थान पर धातु प्रतिमा अधिक उचित समझ कर यह परिवर्तन कर दिया हो। यह सब अनुमान आधारित विषय हैं जिनका विश्लेषण अभी भविष्य की राह देख रहा है। यह सत्य है कि व्यापार मार्ग यही था जो सतलुज की उपत्यका के ऊपरी भाग भारत के मुख्य क्षेत्र से जोड़ता था।

हिमाचल में चार प्रख्यात महिषासुर मर्दिनी के देवालयों का उल्लेख तो इस लेख में हो गया जहां देवी का विग्रह मुख्य उपासना का केन्द्र है। इसके अतिरिक्त हजारों तो न सही सैकड़ों छोटे बड़े महिषासुर मर्दिनी की प्रतिमायें हिमाचल के मन्दिरों तथा शिमला तथा चम्बा के संग्रहालयों में उपलब्ध है। इन सबसे से आकर्षक और पाल शिल्प की प्रतिमा पूर्णाकार में कुल्लू जनपद के प्रवेश द्वार बजौरा के निकट हाट के शिवमन्दिर के एक भित्ती मन्दिर में विद्यमान है। हो सकता है हाट कभी इस जनपद का केन्द्रीय स्थल रहा हो क्योंकि यहां टूटे-फूटे मन्दिरों के भाग, मूर्तियां आदि समय-समय पर मिलती रहती हैं। शिमला संग्रहालय की सूर्य प्रतिमा इसी स्थान से प्राप्त हुई थी। हाट के मन्दिर के समुख से राजमार्ग की कल्पना की जा सकती है जिससे इसका दर्शन आम भक्तों को भी सुलभ हो। कभी व्यास का तट भी हाट के मन्दिर के समीप था जो वर्षों के भगौलिक कारणों से दूर होता गया। हाट की महिषासुर मर्दिनी खड़े आकार की हैं इसका अंग प्रत्यंग लम्बा और पतला है जो पाल शिल्प की पहचान है। मूर्ति ऊर्जा और ओज से परिपूर्ण है। मुख मण्डल क्षरण क्रिया के कारण स्पष्ट नहीं परन्तु जटा मुकुट पर स्वर्णिम मुकुट शोभित है। वक्ष स्थल यौवन का उभार लिये हुए हैं। दोनों ओर चार-चार भुजायें आयुधों से सुसज्जित हैं दायें हाथ में से एक त्रिशूल दैत्य की देह पर प्रहार कर रहा है अन्यों में खडग, धनुष और एक अस्पष्ट वस्तु है। बायें हाथों में से एक ने उसी दैत्य को सिर के बालों से जकड़ रखा है दैत्य मनुष्याकार दिखाया गया है जो महिष के सिर पर बैठा है या यूं कहें निकल रहा हैं देवी की दाई जंघा पर इस भान्ति स्थापित किया गया है कि दैत्य भाग न सके। बाई जंघा को फैलाव करके महिष के सिर पर रखा मूर्ति में नवचेतना भरता है। देवी इस मूर्ति में वीरांगना हैं और वीररस तथा रौद्र रस की साक्षात परिकल्पना है। विजय के उल्लास में यह महिष पर मानों नृत्य कर रही हैं यह आभास इस प्रतिमा के निरीक्षण से सिद्ध होता है। पाल शिल्प का अद्भुत यह मूर्ति विद्वानों में चर्चा का विषय नहीं बन पाई जब की यह भी अद्वितीय विग्रह है। पत्थर में एक कविता को संजोया गया है। सम्भवतः तभी तो एक परिचायिका देवी की चंबर वाहिनी के रूप में भी उकेरी गई है। जो प्रतिमा को विशेष गरिमा प्रदान करती है। देवीमुख के पृष्ठभाग के आभामण्डल का होना कविता को अतिरिक्त बल देता है। मन्दिर और उसकी मूर्तियों का समय ग्यारवहीं सदी का आंका गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि एक समय कोई दो सदी पीछे ले जाना होगा क्योंकि युरोपियन विद्वान समय खण्ड आकने में सर्वदा कजूसी करते रहे है विशेषत भारतीय धरोहरों को लेकर।

भारतीय मुख्य शिल्प धाराओं पर बहुत कुछ लिखा गया है। मौर्य, शुग, सातवाहन, गुप्त तथा गुर्जरप्रतिहार काल के कुछ पृष्ठ इधर दुर्गम स्थलियों में भी हमारी पहचान बनायें हुए है। यह दुर्गमता ही है जिसके बल पर हमारी पुरातन सांस्कृतिक धरोहरों को जीवन्त रूप में यहां पर्वतश्रृंखलों में चिन्हित किया जा सकता हैं। इस सम्पदा का उत्तरी भारत में तो मूर्तभंजकों द्वारा सम्पूर्ण नाश हो चुका है। जो कुछ बचा है वह टूटे फूटे रूप में म्यूजियमों में संग्रहित है परन्तु हिमाचल में अभी भी देवालयों में अपना स्वरूप संजोये हुये है। देव मन्दिर और मूर्तियां भक्तों की आस्था और श्रद्धा स्थलियां तो हैं ही परन्तु इतिहास के बिखरे पृष्ठों को जोड़ने में भी इनका अतुलनीय योगदान है।

89/1 प्रभानिकेतन, मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 001,
मो. 0 98161 97821

संदर्भ :

1. Abbate Francesco (Editor): Indian Art; 1972, London.
2. Postel, M.etc: Antiquities of Himachal; 1850, Bombay.
3. Uppadhayay Vasudev: Prachin Bhartiya Murti Vigyan; 1970, Varanasi.
4. Chetwode, penlope: Kulu the End of Habitable World; 1972, Bombay
5. Gazetters of Simla hill states; 1934, Simla.
6. Gazetters Of Chamba; 1963, Simla.
7. Gazetters of Sirmour; 1969, Simla.
8. Gazetters of Kinnaur; 1971, Simla.
9. Gazetters of Mandi; 1930, Lahore.
10. Man Mohan; A History of Mandi State; 1936, Lahore.
11. Parson, JRS; Panjab Gazetter Mandi state (1920), Lahore.
12. Vogel J/Ph; Antiquities of Chamba state I; 1911, Delhi.
13. Goet Herman; The early Wooden Temples of Chamba; 1950.
14. Kapoor, B.L Dr.: Himachal Itshas Aur Parampara; 1976, Delhi.
15. Kapoor, B.L. Dr. : cultural History of Western Himalayas; Gurgaon, 2006.
16. Kapoor, B.L. Dr. : Gods of The High Hills; New Delhi, 2001.
17. Kapoor, B.L. Dr. : History and Heritage of Western Heritage of Western Himalayas I; Delhi; 2001.
18. Bannerjee, J.N.: Development of Hindu Iconography; Calcutta, 1936.

आलेख

हिमाचली जनजीवन का दर्पण : गद्‌दी संस्कृति

◆ डॉ. मनोहर लाल अवस्थी

चंबा और कांगड़ा की गद्‌दी संस्कृति हिमाचली जनजीवन की अमूल्य धरोहर है। प्रदेश में गद्‌दी पहनावा, गद्‌दी बालू, बेसर, नथ, गद्‌दी सेहरा, गद्‌दी कोट, गद्‌दी पट्टू, पलोढ़ चोला डोरा, गद्‌दी नाच आदि लोकप्रिय हैं। आधुनिक युग में भी यह समुदाय संस्कारों में बसे हैं। इनके जनजीवन में नरसिंगा, वीणा, बांसुरी जैसे पारंपरिक वाद्ययंत्रों के सुर भले ही सुनाई न दे, पर गद्‌दी अपने रेवड़ों के साथ सर्दियों में मैदानों की ओर बढ़ते और गर्मियों में अपनी भेड़-बकरियों के साथ भरमौर चंबा की ओर जाते दिखाई देते हैं। देशी माह, अखरोट, आलू, राजमाह, बादाम, सेब, नाशपाती तथा देशी घी के शौकीन जगह-जगह मिल जाएंगे।

'गद्‌दी' शब्द 'गदेरन' शब्द से तद्‌भव रूप में आया है। गदेरन में चारागाह अधिक हैं इसलिए जब लाहौर उजड़ गया तब भरमौर बस गया तभी तो यह कहा जाता है कि उजड़ा लाहौर बसया भरमौर।

गद्‌दी वास्तव में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शुद्र वर्ण के लोग हैं जो अपने-अपने व्यवसाय के अनुरूप, पूजा-पाठ, खेती-बाड़ी, व्यापार एवं विभिन्न प्रकार की कलाओं के पारंगत हैं जो लाहौर से इन पहाड़ियों में आकर बस गए और अपनी रोजी-रोटी के लिए व्यवसाय करने लगे। इनके इतिहास में यह ब्राह्मण, राजपूत, व्यापारी, कारीगर के नाम से अपनी पहचान रखते हैं।

गद्‌दी शब्द की व्युत्पत्ति 'गव्द' शब्द से हुई जिसका अर्थ है इसको भेड़ से जोड़ा जाता है यानी भेड़ पालक। संस्कृत में 'गद्‌दर' शब्द भेड़ के लिए प्रयुक्त है। पाणिनि ने गब्दिका शब्द का प्रयोग किया है। भेड़-बकरियों के माध्यम से जीविका कमाने वाले गद्‌दी कहलाए। गद्‌दी मूल रूप से हिंदू-सांस्कृतिक दृष्टि से हिंदू हैं। इनके संस्कार तथा गीत-संगीत में हिंदू सांस्कृतिक परंपराओं की स्पष्ट झलक मिलती है। गधेरन के लोग सिप्पी गद्‌दी समुदाय का अंग मानते हैं। इनको चंबा गजेटियर में तिब्बती मूल के निवासी मानते हैं। ये लोग सबसे पहले चंबा में आए। ब्रह्मपुर में कृषि योग्य भूमि इनके पास थी। इसी कारण ये गद्‌दी समुदाय से अलग मानते हैं। गद्‌दी बाहर से आए और ये अपने को अलग समझते हैं। सिप्पी लुहार, संगीतज्ञ तथा चेलों का व्यवसाय करते हैं। नाई का काम भी इस वर्ग के लोग करते हैं। हाली बांसों की टोकरियां बनाते हैं। ये ऊनी बुनाई भी करते हैं।

इन सभी वर्णों का संस्कार हिंदू संस्कारों से मिलते-जुलते हैं। इनका जाति विधान व्यवसाय पर निर्भर नहीं है। गद्‌दी समुदाय ब्राह्मण, राजपूत (ठाकुर, राठी)। अपने को श्रेष्ठ समझते हैं। ब्राह्मणों को राजाओं का संरक्षण प्राप्त था अतः वे पुरोहित, पुजारी तथा चेलों का काम आज भी करते हैं। ये अपने गोत्र में विवाह करना पसंद करते हैं परंतु इसमें इस बात का ध्यान रखा जाता है कि वर वधू का निकट संबंधी न हो।

गद्‌दी जाति के मूल स्थान के बारे में विद्वानों का निश्चित मत नहीं है कि यह कहां से आए किंतु इनके संस्कार, रहन-सहन तथा धार्मिक पूजा पद्धति वैदिक से मिलती-जुलती है। अतः ये आर्य थे। यह कद-काठी में गठीले तथा बहादुर लगते हैं। इनका रंग गोरा तथा कठिन जीवन जीने के प्रमाण मिलते हैं।

इनमें उच्च व श्रेष्ठ होने के प्रमाण मिलते हैं। ब्राह्मण, ठाकुर उच्च वर्ग में मानते हैं तथा अन्य वर्गों को निम्न वर्ग में मानते हैं। विवाहादि पर्व में सभी जातियां शुभ अवसरों पर एक पंक्ति में खाना खाते देखा गया है।

गद्‌दियों के लोक नृत्य, लोक संगीत बहुत प्रिय है। ये रात भर नाचते रहते हैं। इनका नाच धीमी गति से होता है। इसी कारण ये थकते नहीं हैं। लोकगीतों में हास्य एवं व्यंग्य का पुट रहता है। भगवान शिव के परम उपासक हैं। आज भी घरों में 'निवाला' बहुत ही लोकप्रिय है जिसको प्रत्येक परिवार करवाना अपनी शान समझते हैं।

गद्‌दी गीतों में भले ही शैली, नियम तथा लय और ताल का अभाव रहता है फिर भी इनके लोकगीत राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना चुके हैं। बीते वर्षों में 'गद्‌दी नाटी' गणतंत्र दिवस के अवसर 26 जनवरी को काफी सराही गई।

गांवों में अब भी अपने देवी-देवता लोक गीत, धार्मिक लोक गीत, लोक नृत्य, लोक परंपराएं, लोक वाद्य, सांस्कृतिक विरासत की पहचान है।

इनके त्योहार- शिवरात्रि, दिवाली, लोहड़ी, जन्माष्टमी, होली

हिंदू मान्यताओं के अनुसार मनाए जाते हैं। बिसु, पतरोरू, सैर ढोलरू इनके मुख्य त्योहार हैं। 'नवाला' नवमाला त्योहार गद्दियों का विशेष लोकप्रिय त्योहार है। इस दिन भगवान शिव की स्तुति गाई जाती है। गद्दियों का विश्वास है कि नवगृह प्रतिष्ठा, प्राकृतिक आपदाओं से छुटकारा, विवाह व अन्य मनौतीपूर्ण होने पर 'नवाला' का आयोजन किया जाता है। चेले की सेवाएं, रात्रि भोज तथा नाच-गान होने के प्रमाण मिलते हैं।

वाद्य यंत्रों में बांसुरी, ढोल, नगाड़े, शहनाई, नरसिंह, खड़ताल तथा करताल लोकनृत्य और लोकगीतों में अपनी विविध भूमिका निभाते हैं।

त्योहारों में बच्चे तथा बुजुर्ग एक साथ नृत्य करते दिखाई देते हैं। संगीत तथा नृत्य इन्हें विशेष प्रिय हैं। दूरदराज तथा पहाड़ों के बीच बसे गांवों में आपस में मिलने का शुभावसर होता है।

संस्कारों में जन्म संस्कार गौतर, सुगरू संस्कार, भ्रातृभाव संस्कार, विवाह संस्कार, बट्टा-सट्टा विवाह, झंझएडा घर जवांतरी विवाह, खेवत विवाह, बरमाना विवाह, भिंडफूक विवाह, बहुपत्नी विवाह, विवाह विच्छेद, लखनौतरी समुहूर्त, तेल संस्कार, सुहाग पटारी, चीरी संस्कार, चिंचहारी संस्कार खिलां खिलाणी संस्कार, गौत्राचार, अठलाई संस्कार, हारफेरा, भृत्य संस्कार विशेष उल्लेखनीय हैं।

वेशभूषा में अलंकरणों चौंक, चीरी, फेरबाली, कानफूल, कांटे डोड़कू, नानती, जोमाला, कपूर की माला, चंदनहार,, चंपाकली, भालू, लौंग, बलाक, तीली, कांगण, गाजरू, बंगा, फूल, अरसी, मोगलु इत्यादि हैं।

वेशभूषा में सफेद चोला, काला डोरा, ढाठू, टोपी, पाजामा (सुथण), रुमाल, लुआंचड़ी, चादरू आदि हैं। ये घुमंतू होते हैं इसलिए एक स्थान पर टिके रहना इनके कठिन है। अतः कभी मैदानों में कभी पहाड़ों में आते-जाते हैं। ये लोग काफी अमीर होते हैं क्योंकि इनके पास 'धण' होता है जिसका अर्थ 'धन' है। भेड़-बकरियों के झुंड इनका धन है जो कठिन दौर में बेचा जा सकता है। कठिन जीवन जीने के कारण इनको अनुसूचित जनजाति में रखा गया है अतः अब वे अपने व्यवसाय से विमुख हो रहे हैं और अपने पारंपरिक वेशभूषा, रहन-सहन को तिलांजलि दे रहे हैं।

इनकी प्रमुख बोली चंबयाली, पहाड़ी तोइसे पहाड़ी है जिसमें मंडियाली, सिरमौरी, महासूवी, कुल्लुवी, किन्नौरी, लाहौली तथा संस्कृत शब्दों की भरमार है। अब तो अंग्रेजी के शब्द भी इस भाषा के प्रमुख अंग हैं। प्रोफेसर जस्टा का कथन अधिक सटीक है कि पहाड़ी भाषा में अनेक बोलियां और उपबोलियां हैं जिनको पहाड़ी के रूप जाना जा सकता है। इसमें प्राकृत अपभ्रंश के शब्द भी समाहित हैं।

यदि गंभीरता से अध्ययन किया जाए तो गद्दी समुदाय आधुनिकता के परिवेश में आ गया है। वह अपने रीति-रिवाज, वेशभूषा, 16 संस्कारों, लोकनृत्य, लोकवाद्य तथा गदेरन में भेड़-बकरियां पालने से दूर हो रहा है। वर्तमान शिक्षा के कारण ये लोग शिक्षित हो रहे हैं तथा व्यापार व नौकरी में चले गए हैं जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में अभी कुछ लोग अपने व्यवसाय को अपनाए हुए हैं क्योंकि उनको आजीविका के लिए यह करना पड़ रहा है लेकिन इतना होने के बावजूद भी गद्दी संस्कृति जीवित है क्योंकि कांगड़ा-चंबा इनकी पहचान है और ऐतिहासिक धरोहर भी। जिसगति से प्रौद्योगिकी का विकास हो रहा है, उससे यह संस्कृति सुनहले पर्दे पर गाहे-बगाहे शोध छात्रों तथा इतिहासकारों को मिलती रहेगी।

गांव व डाकघर बिंद्रावन, तहसील पालमपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 061

संदर्भ

1. छायाचित्र
2. गद्दी जनजीवन, नंद कुमार शर्मा
3. हिमशृंखला मासिक पत्रिका, सुंदर लाल (सं.)
4. हिमाचल प्रदेश : इतिहास और परंपरा, डॉ. बी.एल. कपूर
5. भारत के आदिवासी, योगेश अटल
6. किन्नर लोक साहित्य, डॉ. बंशीधार शर्मा
7. हिमाचल प्रदेश के लोक नाट्य और लोकानुरंजन, मौलू राम ठाकुर
8. हिमाचल प्रदेश ऐतिहासिक और सांस्कृतिक अध्ययन, डॉ. पद्मचंद्र कश्यप
9. एशिया के दुर्गम भूखंडों से, राहुल सांकृत्यायन

आलेख

राष्ट्रीय स्वाभिमान की परिचायक : मातृभाषा

◆ आचार्य बलवंत

मनुष्य अपने विचारों की अभिव्यक्ति किसी न किसी भाषा के माध्यम से ही करता है। भाषा के अभाव में न तो किसी सामाजिक परिवेश की कल्पना की जा सकती है, न सांस्कृतिक उत्थान और राष्ट्रीय प्रगति की। साहित्य, संगीत, कला, विज्ञान और इतिहास का आधार भाषा ही है। भाषा केवल विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम ही नहीं, नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की संवाहिका भी होती है। प्रत्येक भाषा की अपनी प्रकृति होती है। उसके शब्द परिवेश की आशाओं, आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं से संपृक्त होते हैं। भाषा की प्रकृति को पहचान कर ही उसके प्रवाह को अक्षुण्ण बनाया जा सकता है।

देश के गणतंत्र बनने के बाद भाषा की अहमियत हमें समझाने की कोशिश सोवियत रूस ने भी की थी। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को दृढ़ करने के उद्देश्य से एक भारतीय राजनयिक को सोवियत रूस में भारत का राजदूत बनाकर भेजा गया, जहाँ उसने अपना कार्यभार ग्रहण पत्र अंग्रेजी में सौंपा। किसी भारतीय भाषा में न होने के कारण वहाँ की सरकार ने उस पत्र को स्वीकार करने से मना कर दिया और याद दिलाया कि अंग्रेजी गुलाम भारत की भाषा थी, अंग्रेजी में पत्र प्रस्तुत करना उसी गुलामी का प्रतीक है। फिर किसी गुलाम देश के साथ अंतर्राष्ट्रीय संबंध स्थापित करने का कोई औचित्य ही नहीं बनता। भाषा के सवाल पर सोवियत रूस की यह फटकार भाषा के प्रति हमारी उदासीनता पर करारा प्रहार है।

भाषा के प्रति उसके निवासियों के गहरे लगाव को फ्रांस की एक घटना के माध्यम से भी समझा जा सकता है- प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान फ्रांस का कुछ भूभाग जर्मनी के अधीन हो गया था। जर्मनी की महारानी उस क्षेत्र के एक स्कूल का दौरा करने गईं। उन्होंने विद्यार्थियों से जर्मनी का राष्ट्रगान सुनाने को कहा। केवल एक बच्ची ही राष्ट्रगान सुना सकी। यह देखकर महारानी प्रसन्न हो गईं और उस बच्ची से कुछ माँगने के लिए बोलीं। बच्ची के मुँह से अचानक ही ये शब्द निकल पड़े- हमारी शिक्षा का माध्यम हमारी भाषा फ्रेंच बना दीजिए।" इसे कहते हैं अपनी भाषा के प्रति अनुराग।

भाषा की अस्मिता का प्रश्न आज भी अनुत्तरित पड़ा है। अंग्रेजी शिक्षानीति के चलते न केवल हिंदी, अपितु अन्य सभी भारतीय भाषाएँ हाशिए पर आ गई हैं। इन दिनों भारतीय जीवन में व्याप्त पाश्चात्य प्रभाव को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, जो अंग्रेजी की देन है। खान-पान, रहन-सहन, पठन-पाठन एवं विचार-विमर्श ही नहीं, संबोधन एवं अभिवादन की भाषा भी अंग्रेजी हो गई है। बाजारवादी शक्तियाँ विज्ञापन के माध्यम से हमारे संस्कार को बिगाड़ने पर तुली हैं। किसी समाज के संस्कार को बिगाड़ने के तमाम कारणों में व्यक्ति की बोलचाल व व्यवहार की भाषा को बिगाड़ देना भी मुख्य है। आजकल के विद्यार्थियों में अपनी भाषा के प्रति जो अनुराग होना चाहिए, उसका अभाव है। प्रायः देखने में यही आता है कि अध्यापक और अभिभावक हिंदी भाषा पर ध्यान कम ही देते हैं। आज के युवा कैरियर बिल्डिंग के नाम पर अपनी भाषा से विमुख होकर संस्कृति और सभ्यता से भी दूर होते जा रहे हैं।

हिंदी के प्रति नवयुवकों के मन में जो उदासीनता है, उसका एक कारण हिंदी को रोजगार की भाषा न बनाया जाना भी है। हिंदी को रोजगार से जोड़े बिना वर्तमान युवा पीढ़ी के मन में हिंदी के प्रति वह आकर्षण भाव नहीं जागृत किया जा सकता, जिसकी हम आशा करते हैं।

भाषा के प्रश्न को गंभीरता से लेते हुए उच्चतम न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश एम.एन. वेंकटचलैया और न्यायमूर्ति एस. मोहन की खण्डपीठ ने यह निर्णय दिया था कि प्रारंभिक स्तर पर बच्चों को शिक्षा केवल मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए। इसलिए कि मातृभाषा में दी गई शिक्षा ही संस्कृति एवं परंपराओं पर गर्व करना सिखाती है। संविधान के अनुच्छेद 350(ए) के अनुसार प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा के लिए पर्याप्त सुविधाएँ जुटाने का उत्तरदायित्व राज्यों तथा स्थानीय निकायों का है। कर्नाटक सरकार ने उच्चतम न्यायालय के आदेश को स्वीकार कर एक साहसिक व सराहनीय कार्य किया, हाँलांकि इसके क्रियान्वयन का अंग्रेजी मानसिकता के अभिभावकों ने जोरदार विरोध किया था, पर सरकार की दृढ़ इच्छा शक्ति के सामने

उनकी चल न सकी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त यह महसूस किया गया था कि एक संविधान, एक राष्ट्रध्वज एवं एक राष्ट्रगान की ही भाँति देश की एक राष्ट्रभाषा का होना भी आवश्यक है, क्योंकि राष्ट्रभाषा के अभाव में राष्ट्र गूँगा होता है। हिंदी को राष्ट्रभाषा का स्थान दिलाने के लिए जिन राष्ट्रीय नेताओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई उनमें महात्मा गाँधी प्रमुख हैं। हिंदी को संपूर्ण भारत की व्यावहारिक भाषा बनाने के अभियान में गाँधीजी का योगदान अद्वितीय है। राष्ट्रीय एकता के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रभाषा के प्रति अपने निश्चय को उन्होंने इन शब्दों में प्रकट किया है- "मैं हमेशा यह मानता रहा हूँ कि हम किसी भी हालत में प्रांतीय भाषाओं को नुकसान पहुँचाना या मिटाना नहीं चाहते। हमारा मतलब सिर्फ यह है कि विभिन्न प्रान्तों से पारस्परिक संबंधों के लिए हम हिंदी सीखें। ऐसा करने से हिंदी के प्रति हमारा कोई पक्षपात प्रकट नहीं होता। हिंदी को हम राष्ट्रभाषा मानते हैं। वह राष्ट्रीय होने लायक है। वही भाषा राष्ट्रीय बन सकती है, जिसे अधिक संख्या में लोग जानते-बोलते हों और जो सीखने में सुगम हो।" सन् 1910 में गाँधीजी ने कहा था-"हिंदुस्तान को अगर सचमुच राष्ट्र बनाना है तो राष्ट्रभाषा हिंदी ही हो सकती है।"

सन् 1916 में कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में गाँधीजी ने हिंदी में भाषण देते हुए स्पष्ट घोषणा कर दी थी- "हिंदी का प्रश्न मेरे लिए स्वराज्य के प्रश्न से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है।" एक भाषा-एक लिपि विषयक इसी अधिवेशन में सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित हुआ था कि हिंदी भाषा और देवनागरी का प्रचार-प्रसार देश के हित एवं एकता की स्थापना हेतु होना चाहिए। इस प्रस्ताव का समर्थन तमिल भाषा के मूर्धन्य साहित्यकार रामास्वामी अय्यर ने किया था। राष्ट्रीय एकता एवं सांस्कृतिक समरसता को बनाए रखने में राष्ट्रभाषा की महत्ता को उन्होंने अच्छी तरह से निरूपित किया है- हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित करने में एक दिन भी खोना देश को भारी सांस्कृतिक नुकसान पहुँचाना है। जिस प्रकार हमारी आजादी को जबरदस्ती छीनने वाले अँग्रेजों की सियासी हुकूमत को हमने सफलतापूर्वक इस देश से निकाल दिया, उसी तरह हमारी संस्कृति को दबाने वाली अंग्रेजी भाषा को भी यहाँ से निकाल बाहर करना चाहिए। देवनागरी के समान सरल, जल्दी सीखने योग्य और तैयार लिपि दूसरी कोई है ही नहीं। उर्दू और रोमन से भी वैसी सम्पूर्णता और ध्वन्यात्मकता नहीं है, जैसी की देवनागरी लिपि में।"

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन राष्ट्रभाषा को राष्ट्रीयता का स्रोत मानते थे। उनका कहना था- "कोई विदेशी भाषा हमारे देश की रक्षा नहीं कर सकती। राष्ट्र के विकास के लिए स्वभाषा अनिवार्य है।" उनके स्वभाषा का आशय हिंदी से ही था। टंडनजी न केवल हिंदी, अपितु अन्य सभी भारतीय भाषाओं के व्यावहारिक बनाए जाने के प्रबल पक्षधर थे। भाषा के साथ-साथ उसके सांस्कृतिक विकास पर भी उनका बल था। क्योंकि भाषा की संस्कृति ही उसे अपनी परंपराओं पर गर्व करना सिखाती है। भाषा का उसकी संस्कृति से गहरा संबंध है, संस्कृति शरीर है तो भाषा उसका प्राणतत्त्व।

इस बात को पुनः दोहराना चाहूँगा कि राष्ट्रीय एकता के लिए राष्ट्रभाषा की आवश्यकता का अनुभव स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही किया जाने लगा था। कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी के प्रयासों से ही सितंबर 1949 में संविधान सभा में राजभाषा के विषय पर विचार-विमर्श हुआ। 12, 13, एवं 14 सितंबर 1949 को संपन्न इस तीन दिवसीय सम्मेलन में उपस्थित 71 सदस्यों ने हिंदी को राजभाषा बनाए जाने के प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया एवं शासकीय प्रयोग हेतु भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप को अपनाने की बात तय हो गई। हिंदी को राजभाषा बनाने का प्रस्ताव श्री गोपाल स्वामी आयंगर ने रखा और उसका समर्थन श्री शंकर राव ने किया, जो अहिंदी भाषी थे।

26 जनवरी 1950 को भारत का संविधान लागू हुआ। संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार संविधान लागू होने के दिन से 15 वर्षों तक हिंदी के साथ अंग्रेजी को भी संघ की सह राजभाषा के रूप में जारी रखने और उसके बाद हिंदी को पूरी तरह से राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की योजना थी। पर ऐसा हो नहीं सका। नेताओं की व्यक्तिगत स्वार्थपरता के चलते भाषा-प्रेमियों की हिंदी को राष्ट्रभाषा के आसन पर बिठाने की चाहत भेदभाव की भेंट चढ़ गई। मतों के गुणा-गणित के आधार पर अपनी महत्वाकांक्षाओं को साधने के लिए देश के तथाकथित कर्णधारों ने जातिवाद, धर्मवाद, संप्रदायवाद एवं क्षेत्रवाद की भाँति भाषा को भी वाद-विवाद का विषय बना दिया, जिसमें उलझकर हिंदी को उसका गौरव दिलाने का चिर-प्रतीक्षित स्वप्न, स्वप्न बनकर ही रह गया। स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद भी देश की एक राष्ट्रभाषा का न होना देश की अस्मिता एवं उसके आत्मगौरव के साथ खिलवाड़ नहीं तो और क्या है?

वह भाषा जो वन्देमातरम् एवं भारतमाता की जय के उद्घोष

की उत्प्रेरिका रही हो, जिस भाषा ने भारतवासियों की सुप्त चेतना को झंकृत कर उनकी विलक्षणता का उन्हें बोध कराया हो, वह भाषा जो स्वतंत्रता सेनानियों के अधरों का क्रांति-गीत बनकर व्यवस्था के आमूलचूल परिवर्तन का आह्वान करती रही हो, वह भाषा जो देश के विभिन्न भाषा-भाषियों के बीच समन्वयात्मक समझ विकसित कर उन्हें आपस में जोड़कर रखने में समर्थ हो। जो भाषा देशवासियों के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति का मूलाधार हो, जो भारत में ही नहीं, बल्कि विश्व के अनेक देशों में लिखी-पढ़ी, समझी एवं सराही जा रही हो, जो निकट भविष्य में विश्व की संपर्क भाषा बनने की ओर अग्रसर हो, उस हिंदी का अपनी ही भूमि पर अंग्रेजी के अनुवाद की भाषा बनकर निर्वासन की जिंदगी जीना दुखद ही नहीं, चिंताजनक भी है। राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद का उद्‌गार दर्शनीय है- "राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र का बोध हो ही नहीं सकता। जहाँ राष्ट्र है, वहाँ राष्ट्रभाषा का होना लाजमी है। अगर संपूर्ण भारत को एक राष्ट्र बनाना है तो उसे एक भाषा का आधार लेना पड़ेगा।"

अंग्रेजों ने भारत को कई स्तरों पर कमजोर करने की साजिश रची थी। हिंदी और उर्दू के सवाल को हवा देकर सांप्रदायिक वातावरण को बिगाड़ने की उनकी कूटनीतिक चाल सफल भी हुई। सन् 1948-49 में भारत की 14 भाषाओं में 'हिंदुस्तानी' का प्रवेश उनकी कुटिल मंशा का ही प्रतिफल था। वह हिन्दुस्तानी समझौते की भाषा बनकर रह गई, जो बोलचाल के लिए उपयुक्त तो थी, पर उसमें साहित्यिक सामर्थ्य का अभाव था।

भारतीय संविधान लागू होने पर हिंदी को राजभाषा के रूप में मात्र घोषित कर 15 वर्षों की अवधि तक अंग्रेजी को राजभाषा का मान देते रहना और आशा रखना कि एक न एक दिन हिंदी राजभाषा का गौरव प्राप्त कर लेगी, कितना हास्यास्पद है। केंद्रीय गृहमंत्रालय द्वारा बनाए गए राजभाषा अधिनियम की धारा 3/1 के अंतर्गत शासकीय प्रयोजनों में हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी को सहभाषा के रूप में आगे भी जारी रखने का निर्णय लिया गया फिर राजभाषा अधिनियम की धारा 3/2 के अन्तर्गत यह व्यवस्था दे दी गई कि जब तक भारत के एक भी राज्य की सरकार हिंदी को अपने राज्य की राजभाषा के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होगी, तब तक हिंदी संघ की राजभाषा के रूप में क्रियान्वित नहीं हो सकती। राजभाषा अधिनियम के इस सशर्त समझौते ने हिंदी को संघ की सशक्त राजभाषा बनने के सारे रास्ते ही अवरूद्ध कर दिए। इसलिए कि दक्षिण भारत का एक राज्य तमिलनाडु हिंदी का प्रबल विरोधी है ही और पूर्वोत्तर स्थित नागालैंड राज्य अंग्रेजी को ही अपनी राजभाषा के रूप में अपना चुका है।

मैकाले द्वारा अपने होम सेक्रेटरी को लिखे गये पत्र की कुछ पंक्तियों को यहाँ उद्धृत करना प्रासंगिक होगा, जिसमें उसने अत्यंत विश्वास के साथ कहा था- "मैं नहीं कह सकता कि भारत देश राजनीतिक रूप से आपके अधीन रह पायेगा, लेकिन इतना मैं अवश्य करके जा रहा हूँ कि यह देश राजनीतिक स्वतंत्रता पा लेने के बाद भी अंग्रेजी मानसिकता, अंग्रेजी सभ्यता और अंग्रेजी भाषा के प्रभाव से मुक्त नहीं हो सकेगा।" उसका कथन अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ। आजादी के इतने वर्षों बाद भी हम अंग्रेजी मानसिकता से मुक्त नहीं हो सके।

दुर्भाग्य की बात यह है कि हिंदी को राजभाषा बनाए जाने के प्रश्न पर इसकी अन्य भाषाओं को इसके समानान्तर खड़ा करने की बार-बार कोशिश की जाती रही है। बार-बार यह झूठी दलील दी जाती रही है कि हिंदी के राजभाषा बनने से देश की अन्य भाषाओं की अस्मिता खतरे में पड़ जाएगी, जबकि अस्मिता के संकट का भय देश की अन्य प्रांतीय भाषाओं को हिंदी से नहीं, बल्कि हिंदी और अन्य प्रांतीय भाषाओं व उनकी बोलियों को अंग्रेजी से है।

हिंदी राष्ट्रीय स्वाभिमान की भाषा है। समय की माँग है कि हम अंग्रेजी की मानसिकता का परित्याग कर भारतीयता के आदर्शों को अपनाएँ तथा हिंदी को भारतीय संस्कृति के विकास का संसाधन बनाएं। भारत को उसका खोया हुआ गौरव तभी प्राप्त हो सकेगा, जब यहाँ का हर पढ़ा-लिखा व्यक्ति अपने कार्य, चिंतन-मनन व आपसी संवाद अपने ही देश की भाषा हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं में करे। अपना हस्ताक्षर तो वह अपनी भाषा में ही करे एवं हिंदी को अपनी पहचान की भाषा बनाए। हिंदी के प्रति हीन भावना से मुक्ति का मार्ग हिंदी से निकलेगा। हिंदी हमारे राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के लिए वरदान सिद्ध होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। हिंदी के माहात्म्य से संबंधित कविता की कुछ पंक्तियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं-

जन सामान्य की भाषा हिन्दी।
जन मन की जिज्ञासा हिन्दी।
जन जीवन में रची बसी
बन जीवन की अभिलाषा हिन्दी।
सेवा भाव सिखाती हिन्दी।
सबके मन को भाती हिन्दी।
सबके दिल की बातें करती
सबका दिल बहलाती हिन्दी।
स्नेह, शील, सद्‌भाव, समन्वय
संयम की परिभाषा हिन्दी।
जय हिंदी!

विभागाध्यक्ष हिंदी
कमला कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज़
450, ओ.टी.सी.रोड, कॉटनपेट, बेंगलूर-560053
(कर्नाटक), मो. 91-9844558064

आलेख

राजभाषा एवं सहयोगी पत्रिकाएं

◆ कृष्णवीर सिंह सिकरवार

हिंदी संवैधानिक रूप से भारत की प्रथम राजभाषा और भारत की सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। चीन के बाद यह विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा भी है। हिंदी और इसकी बोलियाँ उत्तर एवं मध्य भारत के विविध राज्यों में बोली जाती है। भारत और अन्य देशों में भी लोक हिंदी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं। इसके अलावा भारत, पाकिस्तान और अन्य देशों में 14.1 करोड़ लोगों द्वारा बोली जाने वाली उर्दू मौखिक रूप से हिंदी के काफी समान है। लोगों का एक विशाल बहुमत हिंदी और उर्दू दोनों को ही समझता है। भारत में हिंदी विभिन्न भारतीय राज्यों की 14 आधिकारिक भाषाओं और क्षेत्र की बोलियों का उपयोग करने वाले लगभग 1 अरब लोगों में से अधिकांष की दूसरी भाषा है।

हिंदी राष्ट्रभाषा, राजभाषा, सम्पर्क भाषा, जनभाषा के स्तर को पार कर विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर है। भाषा विकास क्षेत्र से जुड़े वैज्ञानिकों की भविष्यवाणी हिंदी प्रेमियों के लिए संतोषजनक है कि आने वाले समय में विश्वस्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की जो चंद भाषाएँ होंगी उनमें हिंदी भी प्रमुख होगी।

चौदह सितम्बर, 1949 के दिन संविधान में हिंदी को राजभाषा घोषित करने वाली धारा स्वीकृत की थी। हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है अतः इसके प्रति अपना प्रेम और सम्मान प्रकट करना हमारा राष्ट्रीय कर्त्तव्य ही नहीं नैतिक जिम्मेदारी भी है। आज हिंदी भाषा के महत्व को सरकार ने भी समझा है और अधिकतर शासकीय संस्थानों, कार्यालयों, बैंकों एवं शिक्षण संस्थाओं में हिंदी में ही कार्य करने हेतु आदेश भी प्रसारित किये हैं तथा आम नागरिकों से अपील भी की है कि वे अपना समस्त कार्य हिंदी में कर राष्ट्रहित में योगदान प्रदान करें।

एक समय था जब समस्त शासकीय एवं गैर शासकीय औषधि केन्द्रों पर मिलने वाली दवाइयों पर अंग्रेजी में ही जानकारियाँ मुद्रित रहती थी जिसके कारण आम नागरिकों को पढ़ने में परेशानी का सामना करना पड़ता था। इस समस्या को समझते हुए सरकार ने समस्त औषधि केन्द्रों पर मिलने वाली दवाइयों को अंग्रेजी भाषा के साथ-साथ हिंदी में भी मुद्रित कर बिक्री हेतु भेजा जाना अनिवार्य किया। अब आम नागरिक को दवाई की बोतल पर लिखी समस्त जानकारियों जैसे दवाई का बैच नम्बर, दवाई की उत्पादन तिथि, दवाई की खत्म होने की तिथि आदि सभी जानकारियाँ हिंदी में ही लिखी मिल रही है।

राजभाषा एवं उसकी सहयोगी पत्रिकाओं पर कुछ कहने से पहले हिंदी पत्रिकाओं के वर्तमान परिदृश्य से पाठकों का एक परिचय कराना आवश्यक है। आज हिंदी में देश से कई छोटी बड़ी साहित्यिक पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं एवं इन पत्रिकाओं का पाठक वर्ग भी बहुतायत में है जो इनको खरीदता व पढ़ता है इस दृष्टि से इनकी स्थिति सुदृढ़ कही जा सकती है। इन पत्रिकाओं की लोकप्रियता का कारण यह भी है कि कम कीमत में यह पाठकों तक पहुँच जाती हैं और पाठकों को खरीदकर कोई गुरेज भी नहीं होता है। इनकी बिक्री भी दिनोंदिन संतोषजनक होती जा रही है। यह पत्रिकाएँ आज व्यापक रूप सें प्रकाशित हो रही है व इनका क्षेत्र फैलता जा रहा है। पाठक इन पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्यिक क्षेत्र में हो रही घटनाओं की जानकारी व हिंदी के प्रतिष्ठित रचनाकारों की लेखनी की जानकारी प्राप्त होती रहती है। देश में कई पुरानी पत्रिकायें बेहतर प्रचार-प्रसार के अभाव में व पाठक न मिलने के कारण बन्द भी हो रही है फिर भी हिंदी साहित्यिक पत्रिकाओं का एक अपना बाजार है जो इनको जिंदा बनाये रखे हुये है।

आम लोगों के जीवन में बढ़ते हुए कम्प्यूटर व इन्टरनेट के कदम को देखते हुए कुछ पत्रिकाएँ सीधे वेबजाल पर भी प्रकाशित की जा रही है। यह एक सराहनीय कदम है क्योकि बेवजाल पर प्रकाशित होने से यह पत्रिकाएँ देश मे ही नही बल्कि विदशों मे भी बैठे प्रवासी भारतीय पाठक भी आसानी से इन पत्रिकाओं को पढ़ सकते हैं इस प्रक्रिया से इन पत्रिकाओं के विदेश मे भेजने का डाक खर्च भी बच जाता है जो कि काफी ज्यादा होता है और पत्रिका भी काफी समय बाद पाठकों तक पहुँचती थी। अब पाठकों को पत्रिका सीधे वेबजाल पर पढ़ने को मिल जाती है। इस लिहाज से वेबजाल पर पत्रिकाओं का प्रकाशन पाठको के दृष्टिकोण से लाभप्रद ही माना जावेगा।

एक अनुमान के मुताबिक देश में आज 15 हजार से अधिक

एक अनुमान के मुताबिक देश में आज 15 हजार से अधिक आई.एस.एस.एन. वाले जर्नल और शोध पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। भारत दुनिया में सर्वाधिक पंजीकृत पत्र पत्रिकाएं प्रकाशित करने वाला देश है। चीन के बाद दुनिया भर में दूसरे स्थान पर सर्वाधिक प्रतियाँ भारत से ही प्रकाशित हो रही हैं। 31 मार्च 2014 तक देश में 94067 पत्र पत्रिकाएं पंजीकृत थे। इनमें से 8155 आवधिक और शेष 12511 दैनिक प्रकाशन हैं। इनमें हिंदी भाषा की पत्र पत्रिकाएं सर्वाधिक हैं। उत्तर प्रदेश से सर्वाधिक पंजीकृत पत्र पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है।

आई.एस.एस.एन. वाले जर्नल और शोध पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। भारत दुनिया में सर्वाधिक पंजीकृत पत्र पत्रिकाएं प्रकाशित करने वाला देश है। चीन के बाद दुनिया भर में दूसरे स्थान पर सर्वाधिक प्रतियाँ भारत से ही प्रकाशित हो रही हैं। 31 मार्च 2014 तक देश में 94067 पत्र पत्रिकाएं पंजीकृत थे। इनमे से 8155 आवधिक और शेष 12511 दैनिक प्रकाशन है। इनमे हिंदी भाषा की पत्र पत्रिकाएं सर्वाधिक है। उत्तर प्रदेश से सर्वाधिक पंजीकृत पत्र पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है।

यह पत्रिकाएं आज व्यापक रूप से प्रकाशित हो रही हैं व इनका क्षेत्र फैलता जा रहा है। पाठकों को पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्यिक क्षेत्र में हो रही हर छोटी बड़ी घटनाओं की जानकारी हिंदी के नये पुराने रचनाकारों की लेखनी से प्राप्त होती रहती है। इस संबंध में स्व. राजेन्द्र यादव जी के अंतिम भाषण के रूप में दृश्यातंर मासिक पत्रिका में दर्ज लघु पत्रिकाओं के संबंध में विचारों को जानना जरूरी है वे कहते हैं कि- “.....आप विश्वास कीजिए साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक सब मिलाकर पाँच सात पत्रिकाएं तो रोज मेरे पास आती हैं। ये वो हैं जो आती हैं, ना जाने कितनी और हैं जो नहीं आती। हिंदी में आज करीब दो से ढाई हजार पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही है और उनको पलटना तक मुश्किल है। इसलिये ये कहना कि हिंदी मे पत्रिकाएं नहीं है गलत है........मुझे लगता है कि पत्रिका मे जो चीज विशिष्ट होती हैं वह हैं रचनायें। कई पत्रिकाओं में हम एक ही तरह की चीजे पाते हैं। कोई भी विषय लें जैसे उपन्यास पर केन्द्रित पत्रिका ‘उपन्यास’ नाम से ही निकलती थी। जैसे आलोचना पर केन्द्रित पत्रिका है और कविताओं पर तो खैर जरूरत ही नहीं कुछ कहने की। मेरा ख्याल है कि 50 पत्रिकाएं ऐसी है जो सिर्फ कविताओं से भरी रहती है जिन्हें कोई पढ़ता है या नहीं, मालूम नहीं। हर अच्छी पत्रिका मे संपादक को एक लीक पर चलना होता है कि उसने 20-25 पन्ने कविता के रंग डाले और जान छूट गई, और कुछ सोचने की जरूरत ही नहीं।”[1]

हिंदी में प्रकाशित होने वाली साहित्यिक लघु पत्रिकाओं की स्थिति बेहतर कही जा सकती है क्यों कि एक तो इनकी कीमत कम होती है व आसानी से यह पत्रिकाएं पाठकों को रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड एवं देश के प्रत्येक शहरों मे खुले पत्रिकाओं के स्टॉल पर प्राप्त हो जाती हैं। अतः इन पत्रिकाओं की स्थिति बेहतर ही मानी जा सकती है।

हिंदी निदेशालय द्वारा हिंदी की दशा व दिशा तय करने की दिषा में एक महत्वपूर्ण पत्रिका ‘राजभाषा भारती’ अर्थात् विद्या की देवी मां सरस्वती की वाणी की पत्रिका का प्रकाशन करता है। राजभाषा भारती संघ की राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा प्रोत्साहन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका है, जिसे राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा प्रकाशित किया जाता है। पत्रिका का प्रथम अंक अप्रैल 1978 में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के प्रथम सचिव श्री रमाप्रसन्न नायक के कार्यकाल तथा श्री राजमणि तिवारी के संपादन में प्रकाशित हुआ था। राजभाषा विभाग के दायित्वों में हिंदी के प्रगामी प्रयोग को प्रोत्साहन देने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी एक प्रमुख दायित्व है। यह पत्रिका न केवल उस दायित्व का निर्वाह करती है वरन् संपूर्ण संघ सरकार के विभिन्न मंत्रालयों/कार्यालयों आदि में हिंदी संबंधी गतिविधियों के वृहत प्रचार हेतु एक औपचारिक मंच भी प्रदान करती है। पत्रिका का वितरण केंद्र सरकार के मंत्रालयों/कार्यालयों आदि के बीच निःशुल्क किया जाता है।

राजभाषा विभाग, गार्डन रीच शिपबिल्डर्स एण्ड इंजीनियर्स लिमिटेड, कोलकाता से अर्धवार्षिक हिंदी पत्रिका ’राजभाषा जागृति’ का प्रकाशन किया जाता है। पत्रिका की संपादिका श्रीमती सुनीता शर्मा, उप महाप्रबंधक (राजभाषा) है। पत्रिका में विविध लेखों के अलावा पर्यटन, अध्यात्म, कविताएँ, तकनीकी लेख, मुद्दा, राजभाषा की गतिविधियाँ, स्वास्थ्य, कैमरे की नजर से, निगमित सामाजिक दायित्व आदि के तहत प्रकाशित ज्ञानवर्धक सामग्री पाठकों के लिए उपयोगी होती है। हाल ही में पत्रिका का 12 वाँ अंक प्रकाशित हुआ है।

राजभाषा विभाग की ओर से स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर के लिए प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका का शीर्षक है ‘उपवन’। पत्रिका के प्रधान संपादक श्री सुनील दत्त बाली, सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा) एवं संपादक श्री विनय कुमार सिंह, प्रबंधक (राजभाषा) है। यह त्रैमासिक पत्रिका पिछले 29 वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रही है। पत्रिका में बैंक की गतिविधियों की सम सामयिक जानकारी के साथ-साथ, राजभाषा हिंदी के ऊपर ज्ञानवर्धक आलेख, हिंदी साहित्य की लोकप्रिय सामग्री, स्वास्थ्य, धार्मिक चर्चा को भी प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया जाता है।

राजभाषा विभाग, भारतीय स्टेट बैंक, कॉरपोरेट केन्द्र, मुम्बई

की तिमाही पत्रिका 'प्रयास' का प्रकाशन करता है। पत्रिका के संपादक श्री ए.वी. ब्रह्माराव, महाप्रबंधक (राजभाषा एवं कॉरपोरेट सेवाएँ) है। पत्रिका में बैकिंग, तकनीकी, भाषा, व्यक्तित्व, सम सामयिक, व्यंग्य, संस्कृति, कविताएँ एवं विविध के तहत प्रकाशित पुस्तक समीक्षाएँ पाठकों हेतु महत्वपूर्ण सामग्री प्रदान करती है। यह त्रैमासिक पत्रिका पिछले 27 वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रही है। पत्रिका का माह अक्टूबर-दिसंबर, 2015 का अंक जो 'विश्व हिंदी दिवस विशेषांक' के रूप में प्रकाशित हुआ था। यह अंक अपनी उच्च स्तरीय सामग्री के कारण पाठकों के बीच काफी लोकप्रिय हुआ था। इस अंक में राजभाषा हिंदी के ऊपर प्रकाशित शोध आलेख शोधार्थियों के लिए बहुमूल्य साबित हो सकते हैं।

बैंक ऑफ बड़ौदा, मुम्बई की हिंदी तिमाही पत्रिका का शीर्षक है 'अक्षयम्'। पत्रिका के कार्यकारी संपादक श्री रवि कुमार अरोरा, महाप्रबंधक (राजभाषा प्रभारी) एवं संपादक श्री डॉ. जवाहर कर्नावट, सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा) है। यह त्रैमासिक पत्रिका पिछले 12 वर्षों से लगातार प्रकाषित हो रही है। यह पत्रिका केवल राजभाषा हिंदी के विकास के लिए ही नहीं बल्कि बैंक के व्यावसायिक संप्रेषण के लिए भी एक सषक्त माध्यम साबित हो चुकी है। इसका प्रमाण इस पत्रिका में प्रकाषित बैंकिंग विषयों सहित विविध आलेखों से मिलता है। पत्रिका का वितरण बैंक ऑफ बड़ौदा की सभी शाखाओं/कार्यालयों में निःशुल्क किया जाता है।

कार्पोरेशन बैंक, राजभाषा प्रभाग, मंगलूर, कर्नाटक से तिमाही हिंदी गृह पत्रिका 'मंगला' का प्रकाशन किया जा रहा है। पत्रिका के मुख्य संपादक डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल, उप महाप्रबंधक (स्वतंत्र प्रभार) एवं संपादक श्री अम्बरीश कुमार सिंह, मुख्य प्रबंधक है। पत्रिका में हिंदी भाषा के ऊपर केन्द्रित आलेख प्रमुखता से प्रकाशित किये जाते है एवं साहित्यिक रचनाओं को भी प्रचुर मात्रा में प्रकाशित किया जाता है।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (बैंक), हैदराबाद की छमाही पत्रिका 'भारती' का प्रकाशन करता है। पत्रिका के संपादक मंडल में डॉ. विष्णु भगवान, सदस्य सचिव स्टैट बैंक ऑफ हैदराबाद, श्री प्रेम कुमार, इण्डियन ओवरसीज बैंक, डॉ. अरुण कुमार इंगले, भारतीय स्टैट बैंक, श्री उमेश चन्द्र पाण्डेय, इंडियन बैंक, श्री शेख मस्तान बली, इलाहाबाद बैंक, श्री राजेन्द्र वर्मा, सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया, कंचनलता पाण्डेय, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक आदि। पत्रिका में साहित्यिक घटनाओं के साथ-साथ बैंक की गतिविधियों की जानकारी भी प्रकाशित की जाती है।

दक्षिण स्थित सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की राजभाषा समिति की हिंदी पत्रिका 'भारत भारती' का प्रकाशन किया जाता है। पत्रिका में बैंकिंग गतिविधियों की जानकारी के साथ-साथ सम सामयिक घटनाओं की जानकारी पत्रिका में प्रमुखता के साथ प्रकाशित की जाती है।

'प्रागज्योतिका' नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम), गुवाहाटी की यह वार्षिक पत्रिका सिर्फ एक पत्रिका मात्र नहीं सदस्य कार्यालयों का प्रतिबिम्ब है जिसमें समूचे संगठनों की राजभाषा गतिविधियों की झलक मिलती है। प्रागज्योतिका के माध्यम से सभी सदस्यों ने अपनी सर्जक प्रतिभा से हिंदी के प्रति लगाव को दर्शाया है। पत्रिका की संपादिका बिनीता ब्रह्म, सदस्य सचिव नराकास (उपक्रम), गुवाहाटी है।

समग्रतः यह आसानी से कहा जा सकता है कि राजभाषा के ऊपर केन्द्रित विभिन्न पत्रिकाएँ आज प्रचुर मात्रा में निकल रही हैं। शासकीय स्तर पर किया जा रहा इनका बेहतर प्रचार-प्रसार इन पत्रिकाओं की स्थिति को मजबूती प्रदान कर रहा है। इनमें से कई पत्रिकाओं का वितरण केवल आंतरिक केन्द्रों के मध्य निःशुल्क किया जा रहा है। पाठक उपरोक्त बेवसाइट पर जाकर इन पत्रिकाओं को आसानी से देखा व पढ़ा जा सकता है। इन पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री किसी भी शोधार्थी के लिए लाभप्रद साबित हो सकती है। अतः एक बार अवश्य ही पाठकों को इन पत्रिकाओं का अवलोकन करना चाहिए और इनमें प्रकाशित सामग्री से लाभ उठाना चाहिए।

उपरोक्त पत्रिकाओं के अलावा भी कुछ अन्य पत्रिकाओं का प्रकाशन राजभाषा विभाग द्वारा किया जा रहा है उनकी जानकारी स्थानाभाव के कारण नहीं दी गयी है। भारतवर्ष शुरू से ही आध्यात्मिक व साहित्यिक विधा का गढ़ रहा है जहाँ पर प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष के निवासी रामायण, महाभारत, श्रीमद भगवद्गीता, वेद, पुराण आदि ग्रंथो का रसास्वादन करते चले आ रहे हैं, एवं यह सिलसिला आज भी बदस्तूर चालू है। साहित्यिक विधा हमेशा से ही पाठकों के बीच लोकप्रिय रही हैं। आज भी पाठकों के बीच कई हजार छोटी-बड़ी साहित्यिक पत्रिकायें व हिंदी पुस्तकें हमारे देश से प्रकाषित हो रही जो पाठकों के बीच लगातार अपनी उपस्थिति बनाये हुये हैं। जरूरत केवल इन पुस्तकों व पत्रिकाओ को बेहतर प्रचार व प्रसार की है ताकि जनमानस तक इनको सीधे पहुँचाया जा सके। सरकार को भी इस दिशा में कुछ निर्णय लेने होगे ताकि साहित्य की यह परंपरा हमेशा कायम रह सके।

आवास क्रमांक एच-3,
राजीव गांधी प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
एयरपोर्ट रोड़, भोपाल-462033 (म.प्र.),
मो. 098265 83363

संदर्भ :-

1. राजेन्द्र यादव का अंतिम भाषण, दृश्यांतर मासिक पत्रिका, सितंबर 2013, दूरदर्शन नई दिल्ली, पृष्ठ 71

आलेख

'पूस की रात' का हल्कू और आज का किसान

◆ सीताराम गुप्ता

प्रेमचंद का साहित्य आज भी कम प्रासंगिक नहीं क्योंकि उस समय में और आज के समय में समस्याओं का स्वरूप बेशक बदल गया हो लेकिन समस्याएँ समाप्त नहीं हुई हैं। कुछ समस्याएँ और गहरी हो गई हैं। ग्रामीण व शहरी बेरोज़गारी, बिना लाभ की खेती, दलितों व ग़रीबों का आर्थिक शोषण व उत्पीड़न, ऊँच-नीच व छूआछात, अकर्मण्यता, अंधविश्वास व धार्मिक पाखण्ड, रिश्वतख़ोरी व भ्रष्टाचार आज भी ज्यों के त्यों बने हुए हैं। ग़रीबी का स्वरूप बदल गया है ग़रीबी नहीं। खेतिहर किसान मज़दूर में बदल गया है। कुछ समस्याएँ ऐसी भी हैं जिनका स्वरूप तक नहीं बदला है। प्रेमचंद की कहानी ''पूस की रात'' को ही लीजिए। इस कहानी में ग्रामीण बेरोज़गारी, बिना लाभ की खेती, ग़रीबों का आर्थिक शोषण, उत्पीड़न व अकर्मण्यता सब कुछ उपस्थित है। इसके साथ-साथ कहानी में अपने ज़मीन के टुकड़े पर खेती करने की बजाय किसी दूसरे के यहाँ मज़दूरी करने को बेहतर माना गया है। यद्यपि वहाँ भी कम शोषण नहीं लेकिन विवशता है। खेती की स्थिति ये है कि वह पूरी तरह से घाटे का सौदा बनकर रह गई है जहाँ मुफ़्त में मजदूरी करनी पड़ती है जो बेगार से किसी भी तरह कम नहीं।

'पूस की रात' कहानी में जब हल्कू सहना को देने के लिए घर में कंबल लाने के लिए रखे तीन रुपए अपनी पत्नी मुन्नी से माँगता है तो वह काफी वाद-विवाद करती है। मुन्नी कहती है कि न जाने कितनी बाकी है जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। यह उस समय के साहूकार या महाजन समाज द्वारा आम आदमी के शोषण की वास्तविकता को प्रकट करता है। एक बार क़र्ज़ ले लो तो वह कई पीढ़ियों तक भी किसी तरह से चुकने में नहीं आता। ब्याज पर ब्याज वो भी भारी दर से और ऊपर से बेईमानी। कर्ज़ चुके तो चुके कैसे? खेती में उतनी आमदनी नहीं जो इस प्रकार का कर्ज़ उतार सके। नतीजा ये होता है कि ज़मीन ही नहीं घर-बार सब गिरवी रखने की नौबत आ जाती है और एक खेतिहर किसान हमेशा के लिए बंधुआ मज़दूर बन जाने या गाँव से पलायन करने को विवश हो जाता है। मुन्नी कहती है, ''तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते? मर-मर काम करो, उपज हो तो बाक़ी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाक़ी चुकाने के लिए ही तो हमारा जनम हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आए। मैं रुपए न दूँगी- न दूँगी।''

हल्कू उदास होकर जब ये कहता है, ''तो क्या गाली खाऊँ?'' तब मुन्नी के पास हथियार डालने के सिवाय अन्य कोई चारा नहीं बचता। वह रुपए निकालकर दे देती है पर साथ ही फिर कहती है, '' तुम छोड़ दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी खाने को तो मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है! मजूरी करके लाओ, वह उसी में झोंक दो, उस पर से धौंस।'' यहाँ न केवल सहना के दबंग व अत्याचारी आचरण का संकेत मिलता है अपितु किसान के न चाहते हुए खेती करने की विवशता का संकेत भी स्पष्ट है। ऐसे हालात में किसान कब तक खेती करेगा? बेगार से भी बुरी हालत है। कहने को तो संसार का अन्नदाता पर स्वयं दाने-दाने को मोहताज है। ढंग के कपड़े-लत्ते तो बहुत दूर की बात है। ये देश का किसान और मजदूर ही है जिसके उत्पादों के दम पर बड़े-बड़े उद्योग चल रहे हैं और देश की कुल जनसंख्या का एक बहुत छोटा-सा भाग अरबों-खरबों कमाकर ऐश कर रहा है।

जो लोग ज़मीन के छोटे-छोटे टुकड़ों पर खेती करते हैं उनकी ही नहीं छोटे किसानों की हालत भी बद से भी बदतर है। बेशक कृषि उत्पादकता बढ़ गई है लेकिन कृषि पर किया जाने वाला खर्च और अधिक बढ़ गया है। अच्छे बीज, खाद, कृषि उपकरण सब मँहगे हैं। यद्यपि सरकार उन्हें इनके लिए सस्ते ब्याज पर ऋण उपलब्ध करवाती है लेकिन वे इन ऋणों से उऋण नहीं हो पाते क्योंकि खेती में विभिन्न मदों में जो खर्च हो जाता है फसल बेचने से भी पूरा नहीं होता। मजदूरी निकाल पाना तो बहुत दूर की बात है।

ये हालात प्रेमचंद के समय में ही नहीं थे आज भी मौजूद हैं। जो लोग ज़मीन के छोटे-छोटे टुकड़ों पर खेती करते हैं उनकी ही नहीं छोटे किसानों

फसल के नष्ट हो जाने पर भी यदि कोई किसान ख़ुश है तो इसका सीधा-सा अर्थ है कि वह किसी भी क़ीमत पर खेती करना नहीं चाहता। खेती उसके लिए लाभ का सौदा नहीं एक बोझ बन गई है। लाभ की छोड़िए उसकी मजदूरी तक इससे नहीं निकल पाती।

की हालत भी बद से भी बदतर है। बेशक कृषि उत्पादकता बढ़ गई है लेकिन कृषि पर किया जाने वाला खर्च और अधिक बढ़ गया है। अच्छे बीज, खाद, कृषि उपकरण सब मँहगे हैं। यद्यपि सरकार उन्हें इनके लिए सस्ते ब्याज पर ऋण उपलब्ध करवाती है लेकिन वे इन ऋणों से उऋण नहीं हो पाते क्योंकि खेती में विभिन्न मदों में जो खर्च हो जाता है फसल बेचने से भी पूरा नहीं होता। मजदूरी निकाल पाना तो बहुत दूर की बात है। ऐसे में ऋण कहाँ से दे? तभी आज देश में किसान बहुत अधिक संख्या में आत्महत्या करने को मजबूर हैं। ये राष्ट्र व समाज के लिए शर्म की बात है कि संसार का पेट भरने वाला अन्नदाता स्वतंत्रता के 69-70 वर्ष बाद भी इस स्थिति में है। इसे कब समझा जाएगा और कब किसानों की स्थिति बेहतर हो पाएगी?

हल्कू मजदूरी में से एक-एक पैसा बचाकर कंबल लाने के लिए घर में रखे तीन रुपए सहना को देने के लिए मजबूर हो जाता है और बिना कंबल के ही एक गाढ़े की चादर के सहारे पूस (पौष माह जिसमें सबसे ज़्यादा ठंड पड़ती है) की रातों में खेत की रखवाली करने जाता है। यहाँ जंगली जानवर विशेष रूप से नीलगाएँ उसकी सबसे बड़ी दुश्मन हैं जो थोड़ी सी असावधानी होते ही सालभर की मेहनत को कुछ घंटों में चट कर जाती हैं। यही है हमारे किसानों की नियति जिससे हल्कू भी नहीं बच पाता। उसका खेत भी नीलगायों के झुंड की भेंट चढ़ जाता है। जाड़ा रोकने के लिए उसके पास अच्छे तो दूर मामूली कामचलाऊ कपड़े भी नहीं हैं।

सर्दी से बेहाल हल्कू वहाँ पास ही के एक आम के बाग़ में पत्ते इकठ्ठे करके अलाव जलाता है जिससे उसके बदन में कुछ गर्मी आ जाती है लेकिन लगातार बढ़ती जा रही सर्दी से वह पस्त हो जाता है। उसे नीलगायों द्वारा खेत के चरे जाने की आहट भी साफ सुनाई पड़ रही है पर मौसम की मार कहिए अथवा अकर्मण्यता ऐसे जाड़-पाले में वह अपनी जगह से हिलना भी नहीं चाहता। वह अपने कुत्ते को पुकारता है। कुत्ता ज़ोर-ज़ोर से भौंके जा रहा है इसका अर्थ स्पष्ट है कि खेत में कुछ अप्रिय घटित हो रहा है। यह सोचकर कि बहुत अच्छी खेती हुई है और जानवर उसका सर्वनाश किए जा रहे हैं वह चलने को तैयार हो जाता है। हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो-तीन क़दम चला पर हवा का एक ऐसा ठंडा, चुभनेवाला, बिच्छू के डंक-सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेदकर अपनी ठंडी देह को गरमाने लगा। उसके अवचेतन मन में कहीं न कहीं रात-रात भर जागकर रखवाली करने की पीड़ा व इस अलाभप्रद खेती से छुटकारा पाने का द्वंद्व चल रहा था अन्यथा वो इतना लापरवाह कैसे हो सकता था?

वह कुत्ते के भौंकने व नीलगायों द्वारा खेत को चरे जाने से बेपरवाह होकर बुझे हुए अलाव की गर्म राख के पास शांत होकर बैठ जाता है। लेखक के अनुसार अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों तरफ़ से जकड़ रखा था। अपनी चादर ओढ़कर वह वहीं लेट जाता है और अलाव की गर्म राख की गर्मी में उसे गहरी नींद आ जाती है और कुत्ते के लगातार ज़ोर-ज़ोर से भौंकने पर भी उसकी नींद नहीं टूटती। उधर नीलगाएँ पूरे खेत को बरबाद कर डालती हैं। नीलगायों की समस्या सिर्फ़ 'पूस की रात' कहानी के हल्कू की ही नहीं है आज का किसान भी उसे झेल रहा है। नीलगाय और दूसरे जंगली जानवर जो उसकी खेती को नष्ट कर डालते हैं उनकी समस्या को लेकर सरकार कहीं उसके साथ है तो कहीं उसके विरुद्ध। इस मुद्दे पर कहीं राज्य सरकारों व केंद्र की सरकार के बीच रस्साकशी हो रही है तो कहीं केंद्र की सरकार के मंत्रालयों के बीच द्वंद्व चल रहा है लेकिन इसमें सबसे बड़ी हार हो रही है किसानों की। उसकी खेती न तो प्रेमचंद के ज़माने में ही सुरक्षित थी और न आज के प्रजातंत्र के युग में ही वह नीलगायों और दूसरे जंगजी जानवरों से सुरक्षित है। देश के विकास के सम्मुख उसकी समस्याएँ अत्यंत तुच्छ हैं।

अगले दिन सुबह खेत की ऐसी दशा देखकर हल्कू की पत्नी मुन्नी बहुत दुखी होती है और चिंतित होकर कहती है, "अब मजूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी।" खेत में कुछ हो या न हो, फसल अच्छी न हो या जंगली जानवर खा जाएँ मालगुजारी अथवा लगान तो देना ही पड़ता है। किसान की बदनसीबी तो देखिए कि फसल में कुछ न हो तो मालगुजारी अथवा लगान देने के लिए भी मज़दूरी करके पैसे जोड़ने पड़ते हैं। लेकिन फसल के नष्ट हो जाने पर भी हल्कू ख़ुश है क्योंकि अब चाहे उसे साल भर मज़दूरी क्यों न करनी पड़े कम से कम पौष महीने की कड़कड़ाती सर्द रातों में बिना कंबल के खेत में नहीं सोना पड़ेगा। फसल के नष्ट हो जाने पर भी यदि कोई किसान ख़ुश है तो इसका सीधा-सा अर्थ है कि वह किसी भी क़ीमत पर खेती करना नहीं चाहता। खेती उसके लिए लाभ का सौदा नहीं एक बोझ बन गई है। लाभ की छोड़िए उसकी मजदूरी तक इससे नहीं निकल पाती। देखने की बात है कि आज का किसान कितने दिन और इस अलाभप्रद खेती करने की विवशता के जुए को अपने कंधों पर बर्दाश्त कर पाता है?

ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा, दिल्ली-110034
मो. 0 95556 22323

आलेख

विचार संसार को चला रहे हैं, पर भला क्यों नहीं कर पा रहे?

◆ प्रदीप कुमार सिंह 'पाल'

आजकल कई हलकों से यह बुनियादी बात जानने-सुनने में आ रही है कि इस युग में बुद्धि और हृदय का संतुलन अपनी जगह से हिला हुआ है। प्रकारांतर से इसका आशय यह है कि मनुष्य विचार प्रधान हो गया है और भावना हाशिये पर पहुँच गयी है। आदर्श स्थिति यह होती कि विचार और भावना दोनों को समान महत्व मिलता, दोनों हिल-मिलकर काम करते, दोनों इतने हिले-मिले होते कि दोनों को अलग-अलग पहचाना न जा सकता।

अब की स्थिति ऐसी है कि व्यक्ति ढेरों-ढेर विचारों का पुलिन्दा नज़र आता है, अंतःकरण से सूखा, नीरस...। उदाहरण देते हुए कहा भी गया है (व्यक्तिगत आक्षेप न समझा जाये) कि हृदय का डाक्टर हृदयहीन है! प्रत्येक मानव गतिविधि के क्षेत्र में कमोबेश यही दिखायी दे रहा है। विचार संसार को चला तो रहे हैं, पर भला नहीं कर पा रहे हैं। सभ्यता को भावना की उपेक्षा बहुत महंगी पड़ रही है। ऐसे में यही कहा जा सकता है कि जब नेत्रहीन व्यक्ति तथा लँगड़ा एक-दूसरे का सहयोग करेंगे तब उन दोनों के लक्ष्य पर पहुँचने की संभावना बनेगी।

कई बार समुद्र में जाने वाली बड़ी नावें तूफानों में फंस जाती हैं। नाव में बैठी सवारियां तो बुरी तरह घबरा ही जाती हैं, भयावह मंजर देखकर नाविकों के भी हाथ-पांव फूल जाते हैं और दिमाग काम नहीं करता। ऐसे में अक्सर समुद्र और तूफान की प्रकृति के एकाध जानकार भी नाव में सवारी कर रहे होते हैं जो संयम के मानवीय गुणों के धनी होते हैं। आसन्न संकट को औरों की भांति अपनी आँखें से देखते हुए भी वे धीरज नहीं खोते। एक ओर वे सवारियों को हिम्मत बंधाते हैं और दूसरी ओर मल्लाहों को कुशलतापुर्वक निर्देशित करते हैं कि क्या करना है और कैसे करना है? बहुधा वे नाव को तूफानों से उबारकर सुरक्षित स्थानों तक पहुँचाने में कामयाब हो जाते हैं। वहीं आज की हास्यास्पद स्थिति यह है कि सेंसेक्स के अंक लुढ़कने के साथ ही बाजार कांपने लगता है और लोग ऐसे दीन-हीन होकर हकबकाने लगते हैं जैसे मृत्यु स्वयं सामने आकर खड़ी हो गयी है।

जीवन से तात्पर्य है- प्रकृति और मनुष्य के बीच समुचित साहचर्य। जब यह साहचर्य घटित होता है तो अपने अंदर कर्तव्य अर्थात लोक कल्याण के अपने अस्तित्व को समझने एवं बोध करने की प्रारंभिक प्रक्रिया प्रारंभ होती है। प्रकृति और मनुष्य के बीच बहुत गहरा संबंध है। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। आज तक मनुष्य ने जो कुछ हासिल किया वह सब प्रकृति से सीखकर ही किया है।

जीवन से तात्पर्य है- प्रकृति और मनुष्य के बीच समुचित साहचर्य। जब यह साहचर्य घटित होता है तो अपने अंदर कर्तव्य अर्थात लोक कल्याण के अपने अस्तित्व को समझने एवं बोध करने की प्रारंभिक प्रक्रिया प्रारंभ होती है। प्रकृति और मनुष्य के बीच बहुत गहरा संबंध है। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। आज तक मनुष्य ने जो कुछ हासिल किया वह सब प्रकृति से सीखकर ही किया है। न्यूटन जैसे महान वैज्ञानिकों को गुरूत्वाकर्षण समेत कई पाठ प्रकृति ने सिखाए हैं तो वहीं कवियों, लेखकों, साहित्यकारों जैसे बौद्धिकों ने प्रकृति के सान्निध्य में रहकर एक से बढ़कर एक साहित्य, लेख, कविताएं लिखीं। इसी तरह आम आदमी ने प्रकृति के तमाम गुणों को समझकर अपने जीवन में सकारात्मक बदलाव किए।

प्रकृति की सबसे बड़ी खासियत यह है कि वह अपनी चीजों का उपभोग स्वयं नहीं करती। जैसे-नदी अपना जल स्वयं नहीं पीती, पेड़ अपने फल खुद नहीं खाते, फूल अपनी खुशबू पूरे वातावरण में फैला देते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि प्रकृति किसी के साथ भेदभाव या पक्षपात नहीं करती, लेकिन मनुष्य जब प्रकृति से अनावश्यक खिलवाड़ करता है तब उसे गुस्सा आता है। जिसे वह समय-समय पर सुखा, बाढ़, सैलाब, तूफान के रूप में व्यक्त करते हुए मनुष्य को सचेत करती है। किसी महापुरूष ने कहा था कि ज्ञानियों पर आश्चर्य नहीं करना चाहिए। किन्तु कालवश विडंबना है कि हमें ज्ञानियों और राष्ट्रभक्तों पर आश्चर्य

करना पड़ता है! यदि राष्ट्रमाता के पुत्रों को उसकी सुख-समृद्धि की चिंता है तो यह तो एकदम आम बात होनी चाहिए, आपको भी ऐसा ही लगता होगा,,,,?

हमें ऐसे रचनात्मक विचारों को सर्वसुलभ कराने के पक्षधर होना चाहिए जिससे सर्वव्यापी जीवन के प्रति श्रद्धाभाव, जीवंतता और स्थायित्व प्राप्त करे। हम जीवन को एक समग्रता में देखे और उसके सत्य और प्रेम को अपने में जीवन पर्यन्त स्पंदित होता हुआ अनुभव करे। प्रकृति शनैःशनैः व्यक्ति के जीवन में तथा सामाजिक बदलाव में व्यस्त होती जा रही है, और आने वाले समय में वह मानव की विचारशील बुद्धि को पूरी तरह इस ओर आकर्षित और नियोजित करेगी। इस लेख के द्वारा हमारा उद्देश्य मात्र सूचना देना, विश्लेषण या विवेचन करना नहीं है, वरन मानव के हृदय-पट पर एक अपील भरी घंटी बजाना है कि 'वर्तमान पल ही जाग जाने का है, मानव जाति हमारी राह ताक रही है'।

वर्तमान में रहकर जीवन जीना

प्रकृति हमें कई महत्वपूर्ण पाठ पढ़ाती है। जैसे-पतझड़ का मतलब पेड़ का अंत नहीं है। इस पाठ को जिस व्यक्ति ने अपने जीवन में आत्मसात किया उसे असफलता से कभी डर नहीं लगा। ऐसे व्यक्ति अपनी हर असफलता के बाद विचलित हुए बगैर नए सिरे से सफलता पाने की कोशिश करते हैं। वे तब तक ऐसा करते रहते हैं जब तक सफलता उन्हें मिल नहीं जाती। इसी तरह फलों से लदे, मगर नीचे की ओर झुके पेड़ हमें सफलता और प्रसिद्धि मिलने या संपन्न होने के बावजूद विनम्र और सज्जन बने रहना सिखाते हैं।

प्रकृति ने हमें दो महत्त्वपूर्ण अनुदान दिए हैं- एक समय और दूसरा क्षमता। परंतु हमारे पास सीमित समय व क्षमता है। इसी समयावधि में हमें अपने निर्धारित कर्त्तव्यों के पालन के साथ जीवन के परम उद्देश्य की प्राप्ति भी करनी है। इसीलिए जीवन का प्रत्येक क्षण अनमोल है; क्योंकि समय के सदुपयोग पर ही जीवन का विकास संभव है। किसने कितने समय के अनुसार कार्य किया उसी के अनुरूप उसे उपलब्धियाँ मिलती हैं।

प्रकृति ने हमें दो महत्त्वपूर्ण अनुदान दिए हैं- एक समय और दूसरा क्षमता। किंतु हमारे पास सीमित समय व क्षमता है। इसी समयावधि में हमें अपने निर्धारित कर्त्तव्यों के पालन के साथ जीवन के परम उद्देश्य की प्राप्ति भी करनी है। इसीलिए जीवन का प्रत्येक क्षण अनमोल है क्योंकि समय के सदुपयोग पर ही जीवन का विकास संभव है। किसने कितने समय के अनुसार कार्य किया उसी के अनुरूप उसे उपलब्धियाँ मिलती हैं।

समय की तीन अवस्थाएँ हैं- भूत, वर्तमान एवं भविष्य। सिर्फ वर्तमान ही हमारे हाथ में होता है; जबकि भविष्य वर्तमान का प्रतिफल होता है और भूत को हम मिटा नहीं सकते। वर्तमान में खड़े रहने की सामर्थ्य विरलों में ही होती है। वर्तमान समय का उपयोग हम कर नहीं पाते। प्रायः हम अतीत की यादों में खोए रहते हैं या फिर भविष्य की कल्पनाओं में डूब जाते हैं। यदि वर्तमान का उपयोग करते भी हैं तो वह भी आधे-अधूरे मन से करते हैं। जिसका परिणाम यह होता है कि महत्त्वपूर्ण वर्तमान क्षण हमसे छूट जाता है। वर्तमान समय की उपेक्षा करके कोई भी इनसान प्रगति नहीं कर सकता, क्योंकि हमसे जो कुछ कर सकना संभव है वह सिर्फ वर्तमान में ही है। हम चाहे वर्तमान समय का उपयोग करें या न करें, प्रत्येक क्षण हमारे हाथों से रेत के समान छूट रहा है और एक दिन हमारी मुट्ठी खाली हो जाएगी। तब हमें काल के चक्र से कोई नहीं बचा सकता। इसलिए हमें सचेत होकर अपने वर्तमान समय का अधिकतम सदुपयोग करना चाहिए।

जो व्यक्ति अपने अतीत के बारे में ज्यादा सोचते होते हैं, अपने अतीत में ही खोए रहते हैं, वे प्रायः मनोरोगी हो जाते हैं; क्योंकि मनोरोग अतीत की ग्रंथियों का ही परिणाम होता है और जो अपने भविष्य की कल्पनाओं में डूबे रहते हैं, वे शेखचिल्ली व पलायनवादी हो जाते हैं। वे भी अपना महत्त्वपूर्ण समय शेखचिल्ली की तरह कोरी कल्पनाओं में नष्ट कर देते हैं। हम प्रायः भूत व भविष्य के झूले में झूलते रहते हैं, पर जो करना है वह नहीं करते और वर्तमान समय की अवहेलना करते हैं। वर्तमान समय की उपेक्षा ही दुर्भाग्य का कारण है। इस संसार में कोई भी व्यक्ति वर्तमान समय की उपेक्षा कर कभी सुखी, शांत व उन्नत नहीं हो पाया है। वर्तमान समय का जो सदुपयोग करता है, वह अपने जीवन में कोई भी उपलब्धि पा लेता है।

बौद्धिक व्यक्ति के जीवन का परम उद्देश्य लोक कल्याण करते हुए जीवन से मुक्ति की प्राप्ति है। अतीत और भविष्य की सोच व कल्पनाएँ ही मनुष्य को अपने जीवन के महान उद्देश्य लोक कल्याण से भटकाती हैं। भ्रम तथा व्यर्थ की कल्पनाओं से भरा सारा मायाजाल अतीत व भविष्य से आता है। वर्तमान समय का सदुपयोग ही वह मार्ग है, जिसके द्वारा हम जीवन के महान उद्देश्य लोक कल्याण को प्राप्त कर सकते हैं। वर्तमान में टिकने पर ही विकास संभव है। महात्मा बुद्ध ने कहा था- "जिस दिन से मैं ठहर गया, मैं बुद्ध हो गया"। जो वर्तमान में जितना ज्यादा टिकेगा, वह संसार और जीवन के परम उद्देश्य लोक कल्याण, दोनों क्षेत्रों में उतना ही सफल होगा।

जो कुछ करने की क्षमता है, वह इसी पल में है। यदि हम अपने जीवन में कुछ करना चाहते हैं तो वर्तमान क्षण को व्यर्थ में न जाने दें। जीवन कितने ही तरह से खोता है, पर सच तो यह है

कि हमें होश ही नहीं। हम अपनी यादों, सपनों व इच्छाओं के पीछे दौड़ते रहते हैं और जाने-अनजाने हम वर्तमान समय की उपेक्षा करते हैं। यदि जीवन को सँभालना व सँवारना है तो अभी से हमें वर्तमान के प्रति सचेत होना होगा।

हमारा अतीत हमें जकड़े रहता है, हमें इससे बाहर आना होगा; क्योंकि अतीत की जकड़न ही मनोरोगों का कारण है। अतीत के परिष्कार से ही वर्तमान में टिकने की क्षमता आती है। वर्तमान में जीने वाला कभी अपराध नहीं कर सकता; क्योंकि वर्तमान में जीना ही होश में रहना है। प्रायः व्यक्ति अपनी कल्पनाओं के कारण ही भयभीत होते हैं; जबकि वास्तविकता वैसी नहीं होती। अपने अतीत में रहने के कारण ही व्यक्ति अवसाद से ग्रस्त हो जाता है और जो भविष्य में डूबा रहता है, वह सारहीन कल्पनाओं तथा व्यर्थ चिन्ता का शिकार हो जाता है। वर्तमान में रहने वाला ही वास्तविक सुख, शांति व प्रसन्नता पाता है।

आज तरह-तरह के नशों की खोज की गई है; क्योंकि हम वर्तमान का सामना नहीं करना चाहते। वर्तमान का सामना करने से डरते हैं। वर्तमान हमारे सामने अपनी वास्तविकता को लाकर खड़ा कर देता है, पर हम अपनी वास्तविकता को स्वीकार नहीं करना चाहते। वर्तमान से पलायन का सबसे सुगम मार्ग है नशा; क्योंकि नशा हमें बेहोशी देता है। सारे नशों का आविष्कार वर्तमान से भागने के लिए ही हुआ है। पलायन की सुविधा देता है नशा, पर पलायन हमें मनोरोगी भी बनाता है; क्योंकि मनोरोगी परिस्थितियों से भाग लेता है। जिस समय हम संघर्ष करते हैं, वह क्षण होश का होता है। होश में जीने के लिए संघर्ष करना पड़ता है, अपनी वास्तविकता को स्वीकारना पड़ता है; जबकि हम अपनी वास्तविकता को स्वीकारना नहीं चाहते और न ही संघर्ष करना चाहते हैं; क्योंकि हम अपनी वास्तविकता व संघर्ष, दोनों से ही घबराते हैं। जीवन का वास्तविक विकास तो संघर्ष में ही है और संघर्ष वही कर सकता है, जो होश में जीता है।

कई लोग अपनी पूर्व में हुई गलतियों के कारण उन्हीं के बारे में सोचते व मन ही मन पछताते रहते हैं या फिर किन्हीं कल्पनाओं में खोए रहते हैं; जबकि हमें सिर्फ वर्तमान के बारे में ही सोचना चाहिए, क्योंकि अतीत की गलतियों व भविष्य की व्यर्थ चिंता का निदान सिर्फ वर्तमान के सदुपयोग में है वर्तमान का सदुपयोग वही कर सकता है, जो होश में जीता है। यह तो सच है कि हम एक क्षण भी बिना कर्म किए नहीं रह सकते, क्रियाशील रहना हमारा स्वभाव है और क्रियाशीलता में ही हमारा विकास संभव है। यदि सचेत होकर कर्म किया जाए तो बहुत सारे अनावश्यक कार्यों व अपराध करने से बच सकते हैं। वर्तमान में जीना हमारा जन्म सिद्ध अधिकार तथा कर्तव्य है।

जिस दिन हम कुछ अच्छा कार्य करते हैं तो उस दिन हमें बहुत अच्छा लगता है, एक विश्वास जगता है और भीतर से आत्मसंतोष भी अनुभव होता है, पर जब सारा दिन यों ही कोरी कल्पनाओं और योजनाओं को बुनने में गुजार दिया जाता है, तो खोखलापन व बेचैनी अनुभव होती है। इसलिए हमें सचेत होकर क्रियाशील रहना आवश्यक है अन्यथा धीरे-धीरे शरीर और मन, दोनों ही बेकार हो जाएँगे। यह सच है कि कार्य करने में बाधाएँ तो आएँगी और टूटेंगी भी और निरंतर करते चले जाएँ तो एक दिन उपलब्धियाँ मिलेंगी।

यदि हम गंभीरता से अपने जीवन का अवलोकन करें तो स्पष्ट होता है कि हम बातें तो बहुत अच्छी करते हैं, पर वास्तव में हमारी जीवनशैली वैसी नहीं होती। ऐसे लोगों के लिए कहा जाता है कि अच्छे तो हैं पर किसी काम के नहीं। सूखा पेड़ अन्त में जलाने के काम आता है। फलदायी पेड़ की अच्छी प्रकार से देखभाल की जाती है। इसलिए समाजोपयोगी तथा विकास के लिए यह आवश्यक है कि हमारी जीवनशैली भी हमारे उद्देश्य के अनुरूप हो।

जो वर्तमान में ठहर जाता है, जिसने वर्ततान का सदुपयोग करना सीख लिया है, वह सभी आपदाओं से उबर जाता है। इसके लिए सबसे पहले आवश्यक है कि वर्तमान में जीना सीखें। दूसरा, अपना लक्ष्य स्पष्ट करें; अर्थात यह स्पष्ट करें कि क्या करना है? हम लोग प्रायः उधार की जिंदगी जीते हैं; क्योंकि हम दूसरों के जैसा होना चाहते हैं। जिसमें सब लोगों को मान-सम्मान मिले, हम वही बनने चल पड़ते हैं। यह हमारी सबसे बड़ी भूल है; जबकि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक मौलिकता है जो अन्यत्र नहीं हो सकती। हम अपने ही जैसे हैं, इसलिए लक्ष्य भी अपने ही जैसा होना चाहिए। हम अपने लक्ष्य को निर्धारित करते समय अपनी क्षमता और मौलिकता का विशेष ध्यान रखें। तीसरा, कार्य (लक्ष्य) को प्राथमिकता के अनुसार श्रेणी में बाँटें और महत्त्वपूर्ण कार्य को सबसे पहले करें।

पता- बी-901, आशीर्वाद, उद्यान-2
एल्डिको, रायबरेली रोड, लखनऊ, मो. 0 98394 23719

शोध पत्र

'पांच आंगनों वाला घर' में पारिवारिक विघटन

◆ मुख्त्यार सिंह

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। परिवार किसी भी समाज की एक प्राथमिक इकाई है। आदिम समाज से लेकर वर्तमान समाज में परिवार के अस्तित्व एवं महत्त्व को स्वीकार किया गया है। मनुष्य का जन्म परिवार में होता है और उसकी बाल्यावस्था परिवार में ही गुजरती है। यहीं वह चलना-फिरना, भाषा, व्यवहार सीखता है। परिवार सामाजिक संगठन की एक मौलिक इकाई है। परिवार शब्द की उत्पत्ति- ''लैटिन भाषा के (Famulaus) 'फेमुलस' शब्द से हुई है। इस फेमुलस शब्द से एक ऐसे समूह का बोध होता है जिसके अन्तर्गत माता-पिता, बच्चे, नौकर और दास आते हैं।''[1] परिवार के अर्थ के सम्बन्ध में विद्वान एकमत नहीं है। कुछ समाजशास्त्री परिवार में पति-पत्नी तथा अविवाहित बच्चों को शामिल करने की दलील देते हैं। इसके विपरीत कुछ समाजशास्त्री परिवार में पति-पत्नी, बच्चों एवं दादा-दादी आदि को सम्मिलित करते हैं। परिवार की अनेक विद्वानों ने भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ देकर उसके स्वरूप पर प्रकाश डाला है। समाजशास्त्री मेकाइवर एवं पेज के अनुसार- ''परिवार एक ऐसा समूह है जिसमें यौन सम्बन्ध पाये जाते हैं। जिसका आकार छोटा हो और जो बच्चों का प्रजनन और लालन-पालन करे।''[2]

'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास में चित्रित परिवार एक समूह का बोध कराता है जिसके अन्तर्गत माता-पिता, बच्चे ही नहीं, पूरा कुनबा रहता है जो कि तीन पीढ़ियों को एक ही चाहरदीवारी में निभाये हुए हैं। उपन्यास के प्रारम्भ में ही गोविन्द मिश्र उस परिवार का ऐसा चित्र बनाते हैं- ''राजन.... मुंशी राधेलाल एडवोकेट और श्रीमती शान्तिदेवी का दूसरे नम्बर का लड़का। राजन के दो भाई और एक बहन। उस लम्बे-चौड़े घर में राजन के चचेरे भाई-बहन और उनके परिवार भी रहते थे। खेलकूद के लिए बाहर जाने की जरूरत नहीं होती, घर में ही इतनी भीड़-भाड़ थी।''[3] ये सगोत्र तथा रक्त सम्बन्ध वाले सदस्य एक साथ रहते ही नहीं, एक साथ खेलते भी हैं। यहाँ जीवन इतना सरल बीतता है कि बचपन से ही युवावस्था जुड़ जाती है। भारत में प्रारम्भ से ही संयुक्त परिवार प्रणाली की प्रधानता रही है, परन्तु पश्चिमी औद्योगीकृत समाजों में एकाकी परिवारों की प्रधानता पाई जाती है। एकाकी परिवार से अभिप्राय ऐसे गृहस्थ समूह से है जिसमें पति-पत्नी तथा उनके अविवाहित बच्चे होते हैं। एकल परिवार औद्योगिक क्रांति की देन है। आज मनुष्य नगरों में वास करने लगा है तथा गाँवों से पलायन हो रहा है। एकल परिवारों को प्रोत्साहन देने में शहरीकरण एक मुख्य कारण है। आज व्यक्ति एकल परिवारों को अधिक महत्त्व दे रहा है तथा उसे समृद्ध कर रहा है। शहरों के अतिरिक्त शहर के निकट बसे गाँवों में भी इस प्रकार के परिवार प्रायः पाये जाते हैं।

संयुक्त परिवार भारतीय समाज की एक प्रमुख विशेषता है इन परिवारों में तीन पीढ़ियों का घनत्व होता है जो कि शोध के लिए नियत गोविन्द मिश्र के उपन्यास के प्रमुख लक्षण हैं। घर की तस्वीर देखें- ''बरगद के पेड़ की तरफ ही घर का मुख्य दरवाजा था। वहाँ से पिछवाड़े तक फैला लम्बा-चौड़ा घर, पाँच आँगनों वाला। कमरों की तो गिनती ही नहीं थी। मुख्य दरवाजे से सटा बैठकखाना था- राजन के पिता का कमरा.... वकालत का दफ़्तर और उनकी बैठकबाजी के लिए भी। बैठकखाने के पीछे घर का सबसे बड़ा आँगन था जिसे गणेश जी वाला आँगन कहते थे। यहाँ मर्दों वाले कार्यक्रम होते- मुशायरा, कवि सम्मेलन, मुजरा वगैरह। छोटी बैठकी हुई थी तो बैठकखाने में ही हो जाती। दूसरे नम्बर पर बेल वाला आँगन था। वह नाम शायद इसलिए पड़ गया कि वहाँ बेल के कई पेड़ थे। इसके बाद काली जी वाला आँगन-यह मुख्यतः बहू-बेटियों का आँगन था, जिसे धार्मिक कार्यों और शादी-ब्याह के लिए भी इस्तेमाल किया जाता। इन मौकों पर वहाँ बड़ी-बड़ी भट्टियाँ खुदती। कालीजी वाले आँगन के एक तरफ सदरी दरवाजा था जिसके ऊपर था नौबतखाना। खुशी के मौकों पर शहनाई यहीं से बजती थी। दूसरी तरफ हनुमान जी वाला आँगन था। यहाँ रामलीला, भाँड़ों के नाच वगैरह होते। इसी आँगन में सन्नी बच्चों के साथ खेलते और खेल-खेल में उन्हें हनुमान चालीसा भी रटाते चले जाते-''भूत-पिशाच निकट नहि आवै, महावीर जब नाम सुनावै...।'' सबसे पीछे फाटक के पास जो आँगन था, उसे फटकवा वाला आँगन कहते थे। इस आँगन के एक हिस्से में बग्घी, टमटम, इक्का ढिले रहते। पास ही में छोटी-सी घुड़साल थी।''[4]

इनकी आय, व्यय, निवास स्थान, रसोई, पूजा स्थान आदि समान होता है। परिवार के सभी सदस्य सभी कार्यों में परस्पर सहयोग करते हैं। भारतीय समाज में संयुक्त परिवार अधिक पाये जाते हैं। इसका मूलभूत कारण भारत का कृषि प्रधान देश होना है।

जब परिवर्तन जीवन के सभी क्षेत्रों में हो रहा है तो परिवार उससे अछूता कैसे रह सकता है। समाज की एक इकाई के रूप में परिवार आज परिवर्तन के मध्य है। समाज में व्याप्त संगठन और विघटन का परिवार पर निश्चित रूप से प्रभाव पड़ता है। आज आर्थिक, राजनैतिक, मनोरंजनात्मक, मनोवैज्ञानिक तथा धार्मिक कारक व्यक्ति की अभिवृत्तियों, मूल्यों और व्यवहार को बदलने में महत्त्वपूर्ण योग दे रहे हैं। इसका प्रभाव परिवार पर भी पड़े बिना नहीं रह सकता। यही कारण है कि आज परिवार बदल रहा है।

पारिवारिक विघटन से तात्पर्य परिवार की स्थिति का अशान्तिमय होना है, इससे पारिवारिक एकमत्य का लोप हो जाता है। गिलिन एण्ड गिलिन ने पारिवारिक विघटन की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए निम्न अवस्थाओं का वर्णन किया है- पहला, वैवाहिक पवित्रता की भावना में ह्रास होता है। दूसरा, पारिवारिक कार्यों का स्थानान्तरण हो गया है। तीसरा, पारिवारिक कार्य में दिन पर दिन कमी आती जा रही है। चौथा, पारिवारिक सम्बन्धों का ढीला पड़ जाना-पुराने आत्मनिर्भर परिवार के सदस्यों के सम्बन्ध घनिष्ठ थे। पाँचवा, संतानोत्पत्ति की अवहेलना से आज के युग में परिवार संतान की अपेक्षा भौतिक सुख-सुविधाओं की वस्तुओं को अत्यधिक पसन्द करता है तथा संतुति निरोध के लिए अनेक उपायों तथा विधियों की शरण ली जाती है, और परिवार अस्थायी दशा में पहुँच जाता है। परिवार अपनी सामाजिक आर्थिक सुरक्षा के दृष्टिकोण से अलग नहीं होते, इस प्रकार के अनेक कारणों से परिवार का ह्रास यकायक भी नहीं होता, पर उसमें इस प्रकार की क्रिया चलती रहती है। जैसे जब जोगेश्वरी ने नइकी द्वारा ''सन्नी, जो समय-समय पर गायब हो जाता था, वह गायब होने वाली अदा के साथ सन्नी की एक लत जुड़ी हुई थी कहीं कोई उम्दा या पुरानी छोटी-मोटी चीज दिखी कि मार दी। ....कोई कहता था कि सन्नी किसी तवाइफ से फंसे हुए हैं, उसके लिए तोहफे ले जाते हैं जब जाते हैं ....वे अपनी सारंगी के पारखियों की तलाश में इधर-उधर मारते थे।''[5] इस तरह की गतिविधियों पर जोगेश्वरी को अपनी व अपने घर की इज्जत की फिक्र होती है। यहाँ सन्नी समाज, रीति, विचार, आत्मनिर्भरता सभी से रिक्त है। इसलिए सन्नी के पिता को भी जोगेश्वरी के ताने सुनने पड़ते हैं, ''तोहरेदुलार के कारण सनिया निखट्टू होत जात हौं। मेहरारू होत त खींच के राखत। सनिया से कहो कि जहाँ जाकर दस-दस दिन पड़ रहता है वहैं जाके गिरस्थी जमाई लेय।''[6]

'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास में चित्रित परिवार एक समूह का बोध कराता है जिसके अन्तर्गत माता-पिता, बच्चे ही नहीं, पूरा कुनबा रहता है जो कि तीन पीढ़ियों को एक ही चाहरदीवारी में निभाये हुए है। उपन्यास के प्रारम्भ में ही गोविन्द मिश्र उस परिवार का ऐसा चित्र बनाते हैं- ''राजन.... मुंशी राधेलाल एडवोकेट और श्रीमती शान्तिदेवी का दूसरे नम्बर का लड़का। राजन के दो भाई और एक बहन। उस लम्बे-चौड़े घर में राजन के चचेरे भाई-बहन और उनके परिवार भी रहते थे। खेलकूद के लिए बाहर जाने की जरूरत नहीं होती, घर में ही इतनी भीड़-भाड़ थी।''

जोगेश्वरी पर पूरे घर की व्यवस्था है। घनश्याम, बाँके की गिनती की कमाई है। राधे ही कुछ आर्थिक मदद कर देता है। जिससे ''रुपए-पैसे की तंगई का पहला असर पड़ा राधे के परिवार पर। जिस किस्म के ऊपरी खर्चों के आदी राजन, उसकी माँ और उसके भाई-बहन थे, उसमें हाथ-खिंचाई होने लगी। बाहर तो पहले ही दिखाई देने लगा था- पहले घर में कुछ-न-कुछ होता रहता था, अब जैसे कसम खा ली गई थी। घर में इस छोर से उस छोर घूमते हुए जोगेश्वरी जैसे बराबर तौलती रहतीं-क्या जरूरी है क्या, गैर-जरूरी, कहाँ कटौती की जा सकती है, कहाँ से कुछ रकम खड़ी हो सकती है?''[7] अब राधेलाल भी आर्थिक परिस्थितयों से दबे जा रहे हैं और एक द्वन्द्व से में रहने लगे हैं। उनको एक तरफ पत्नी की आस्था पर विस्मय है, दूसरी ओर अपनी लघुता पर संकोच है। राधे शान्ति द्वारा पैर छूने पर भीगी आंखों से कहते हैं, ...कितना विश्वास पति पर ....उस पति पर भी जो सब छीन लेता है, जो पत्नी को आर्थिक सुरक्षा तक नहीं देता। यह द्वंद्व धीरे-धीरे और लोगों की निष्क्रियता को देखते हुए बंटवारे का रूप ले चुका। यह बंटावारा स्वार्थ, आदत, रीतिगत अन्तर, विचार भेद के कारण होता है... दूसरी तरफ, रम्मो को राजन के सिवाय कुछ भी सोच में नहीं आना चाहिए। देखिए राजन सोच रहा है, घोड़ों की और रम्मो तुनक-कर कहती है, ''क्या फायदा बेकार की शान से।''[8] जब राजन अपने परिवार में सौ-सौ लोगों के खाने की याद करता है, तब रम्मो का तर्क देखें, ''आजकल नहीं चलता यह सब... एक चूल्हा और साथ में रहना। क्या फायदा दबकर, घुट-घुटकर रहने में? क्यों न सब अलग, स्वतन्त्र रहें, जो चाहें खाया-पिया, जो चाहे पहना-ओढ़ा।''[9] राजन का कानपुर से नागपुर पहुंचने पर तो दम घुटने लगा, लेकिन राजन की भाभी ओमी अम्मा और बड़ी अम्मा की याद पर उसे संभालती थी। रम्मो का अवचेतन घबराया रहने लगा जब से भाभी ने गृहस्थी संभाली। तभी से एक असुरक्षा की भावना थी। उसके साथ अफसरों का घर आना राजन को बुरा

लगेगा, यह सोचती थी। ''इसलिए जाल को यहीं काटो, इसी वक्त! रिश्तेदारी के कीड़े को देहरी पर कुचल दो, भीतर दाखिल ही न होने दो।''[10]

उपन्यास में देश के नेहरू के औद्योगीकरण वाले आर्थिक मॉडल पर विचार करते हैं तब राजन खुद सम्मिलित परिवारों के टूटने का कारण आर्थिक ही मानता है- ''पंडित नेहरू देश की परम्परा की कद्र करते थे, पर आधुनिकीकरण उनके लिए सबसे बड़ा मूल्य था अब देखिए कैसे असर फैलता है... कितनी जल्दी गवर्नर, मन्त्रियों की ठाठबाटी स्टाइल शुरू हो गई। वे उस रास्ते चल पड़े जहाँ वे जनता के प्रतिनिधि नहीं, शासक बन गए। अंग्रेजों की जगह तो उन्होंने ली ही थी, वे उन जैसे ही बनने चल पड़े। जनता उनके लिए हेय, या सिर्फ वोट के वक्त याद करने की चीज होती जा रही है। औद्योगीकरण के कारण घरेलू उद्योग-धन्धे खत्म होते जा रहे हैं। एक सम्मिलित परिवार एक जगह रहकर, घरेलू धन्धे से खा-पी रहा था, उसका हर सदस्य अब नौकरी पर आश्रित होता जा रहा है, दूर-दूर बिखर जाएगा, अकेला हो जाएगा। अलगाव बढ़ेगा। कल चचेरे भाइयों में अलग होने की बात थी, आज सगे भाइयों में है, कल कौन जाने बाप-बेटे, माँ-बेटे, पति-पत्नी में ही शुरू हो जाए।''... ''परिवार तो एक चीज हुई, असली बात मूल्यों की है। सम्मिलित परिवार तो टूट ही रहे हैं, टूट गए कहिए-अपना परिवार नहीं देखा। वे टूट गए आर्थिक तनावों आर्थिक जरूरतों के कारण... लेकिन उन परिवारों में जो निःस्वार्थ, बलिदान की भावना थी... इसे तो बचाएँ हम। तुम अपने इस घर में बचाना।''[11] आर्थिक क्षेत्र में उस समय विघटन उत्पन्न होता है जब परिवार की आर्थिक व्यवस्था अपने सदस्यों की भौतिक आवश्यकताओं की सही ढंग से पूर्ति करने में असमर्थ रहती है। जब लोग मान्यता प्राप्त तरीकों से अपनी भौतिक आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं कर पाते तो परिवार में अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है। आर्थिक क्षेत्र में असन्तुलन, सम्पत्ति एवं आय का असमान वितरण बढ़ती हुई निर्धनता एवं बेकारी आदि सम्पूर्ण पारिवारिक जीवन को अस्त-व्यस्त कर देते हैं यह स्थिति पारिवारिक विघटन की परिचायक है।

रम्मो की अपनी जेठानी से क्लेश हुई। शान्ती-अम्मा बीच में आई तो उसे रोकते हुए पूछती है, ''बताइए कितना खर्चा किया है आपने मेरे पति पर... मैं एक-एक पाई चुकाऊँगी। अफसर से ब्याहा, अफसर से ब्याहा... तो हमारा घर भी कोई कंगालों का नहीं है। क्या नहीं है हमारे यहाँ।''[12] रम्मो जिन्हें स्वयं अपने करीब लाई थी, उनके लिए कुछ भी करती थी, उनके लिए नहीं जो उसे ससुराल में मिले थे। यहाँ तक कि अम्मा के बीमार होने पर उसे मनहूसियत लगती है, ''राजन हक्का-बक्का रह गया अम्मा की बीमारी से मनहूसियत होगी? कोई बीमार हो, अपाहिज हो जाए तो अस्पताल में रहे, घर पर नहीं?''[13] राजन अपने इस परिवार के लिए भैया-भाभी को याद करना तो दूर अम्मा को याद करना भी भूल गया जोकि अब बनारस में हैं। दोस्त से पता हुआ कि उनकी तबियत ठीक नहीं है। राजन आर्थिक तंगी के चलते घर बेचने की सोचने लगता है लेकिन उसकी घर से जुड़ी यादें और अम्मा रुकावट है- ''राजन चिन्ता में पड़ गया-वह अपने हिस्से को बेच देगा, बेच सकेगा, अम्मा के होते हुए?'' राजन विचार करता है- ''कैसे सबको खींच-खींच इकट्ठा कर उन्होंने घर बनाया और कैसे उनके सामने ही एक-एक करके सब छोड़े जा रहे हैं- सन्नी गया, राधे गया... मोहन... अब राजन, श्याम भी। क्या फायदा ऐसी नई पढ़ाई का, कमाई का, जिसके लिए घर छोड़ना पड़े।''[14]

एक ओर राजन के घर बेचने की नौबत आ गई दूसरी ओर सम्मिलित परिवार में रस्म अदाइगी रह गई। अब वह मेल-जोल तथा निःस्वार्थ-बलिदान करना कहाँ? लेखक ने संयुक्त परिवार की इस स्थिति का जो चित्र कुछ घटनाओं को लेकर खींचा है, वह दृष्टव्य है- ''जिस घर में साल में एक-दो शादी-ब्याह जरूर हो जाया करते थे, वहाँ बड़ी अम्मा के जाने के बाद सिर्फ राजन का ब्याह हुआ। मुंशी जी के चचेरे भाई रमाकान्त के बेटे शैलेश का ब्याह हुआ सो उन्होंने अलग-अलग अपने कोने में कर लिया। शान्ति भी ऐसे हो आई जैसे मौहल्ले-पड़ोस के किसी बुलावे में गई हों। इस घर की चौहद्दी में कभी ऐसा हो सकता था? कुछ महीनों पहले एक बड़ी घटना हुई जिसने सबका जी तोड़कर रख दिया-बाँके भैया का स्वर्गवास! कैसा हाहाकार मच गया था। नइकी तो संभाले न संभले। जैसे भी थे बांके भैया, उनका होना शान्ति के लिए भी आड़ था... और न कोई बीमारी-ईमारी, हार्टफेल और दो मिनट में झक्क। एक-दो बार शान्ति ने समझाया था बांके भैया को-''बहुत हाय-तौबा में न रहा करो, घर-जमीन के लिए अपने शरीर पर तो अत्याचार न करो, घर ही देखना है तो ईंटों के घर को न देख, हाड़ मांस के इस घर को देखो...'' उन्होंने कुछ भी समझने की जरूरत महसूस न की। बांके भैया को कभी हँसते-खेलते तो देखा ही नहीं, हमेशा भृकुटी ताने, लड़ाई की मुद्रा में जैसे बराबर कमर कसे हुए। धरा रह गया न सब? नइकी बेचारी! भगवान की यह अजीब लीला है कि जो जितना अच्छा, उसको उतने ही दुख। जब से अलग हुए थे बांके, उनके परिवार का खाना-पीना गिरता ही चला गया। बांके भैया की कमाई ही कितनी थी।''[15]

संयुक्त परिवार की यही विशेषता है कि नाकारा भी जीवन निकाल ले जाएं लेकिन अपनी स्वतंत्र सम्पत्ति की प्रेरणा उस परिवार को छुड़ा देती है। राजन संयुक्त परिवार के लाभ-हानि के विषय में सोचता है। राजन के घर में गृह-क्लेश रोज की बात हो गई। रम्मो राजन से अनजान, अजनबी जैसा व्यवहार करने लगी। वह यकायक पूना चली गयी और दो दिन भैया-भाभी के आने पर भभक पड़ी। बात यहाँ तक बढ़ गई कि ''ओह! तो अब यह सिखाकर गई है वह... कि इस उमर में, लड़कों-बच्चों के बड़े होने

कविता

सेदोका

◆ पुष्पा मेहरा

प्रभु! विश्वास
तेरा, बढ़ाता रहा
आत्मबल हमारा
हुआ आसान
नदियों, सिंधु, आग
पर विजय पाना।

फेरो ना पानी
संस्कारों-आदर्शों पे
थाती ये जीवन की
मोती अमूल्य
टांको मन चीर में
ज्यों नभ में सितारे।

छोटा या बड़ा
कोई ना जगत में
छिपता सदा चंदा
नभ सिंधु में
छिपते ना सितारे
जनता से आसमां।

आई जो सांझ
पत्तों की पलकों पे
छिड़क गई प्यार
सारी ही रात
भीगे जो अंगवस्त्र
सुबह को निचुड़े।

बी-201, सूरजमल विहार,
दिल्ली-110 092

पर तुम अलग होने, डाइवार्स का ड्रामा करो! ताकि श्रीमान की दौलत हड़पी जा सके... क्यों? मुझे यह-वह मत समझिए। दौलत कहाँ और कैसे है, कैसे आई है.... हर चीज, एक-एक राज जानती हूँ। मैं चाहूँ तो तुम्हें जेल भिजवा सकती हूँ।''[16] राजन टूट गया, विवादग्रस्त हो गया। जैसे-तैसे समझौता कर ले गया, किन्तु उनका एक बेटा अमेरिका चला गया और उनके दूसरे बेटे ने अपनी पत्नी को तलाक दे दिया। राजन सदमा बर्दाश्त नहीं कर सके और उन्हें हार्टअटैक हो गया। राजन अस्पताल में भर्ती थे, तब अमेरिका में रह रहे बन्टू की माँ रम्मो ने उसके पास फोन किया तो उसने कहा- ''तुम आ जाओ बेटा, आओगे तो तुम्हें बताऊँगी। तुम्हारी जरूरत है।'' ''मैं आकर क्या करूँगा, ममी ! जो करना है वह डॉक्टरों को।''[17] बन्टू का यह कथन पारिवारिक विघटन की चरमसीमा को और उसकी व्यक्तिकता की भावना को भलि-भाँति प्रकट कर रहा है। इसी पारिवारिक विघटन को राजन ताउम्र तिल-तिल घुटकरझेलता रहा और अन्तिम समय में सिर्फ अकेला है।

अतः गोविन्द मिश्र का 'पाँच आँगनों वाला घर' उपन्यास 1940 ई. से 1990 ई. तक के काल-खण्ड को आधार बना कर लिखा गया है। यह तीन पीढ़ियों की कहानी है। यह कहानी वैयक्तिकता के साये में परिवार के सिमटने-उखड़ने को चित्रित करती है। निष्कर्षतः तिवारी के शब्दों में कहें तो ''यह (पाँच आँगनों वाला घर) आधुनिकता के दबाव से क्रमशः भारतीय संयुक्त परिवार के टूटने और संवेदनशीलता के छीजने का अहसास कराने वाला उपन्यास है।''[18]

शोधार्थी, हिंदी विभाग, अ. मु. वि, अलीगढ़।
गांव व पो. शहरीमदन गढ़ी,
तह. कोल, जि. अलीगढ़ (उ.प्र.)-202123
मो. 0 89237 58838

संदर्भ सूची

1-तोमर, देवेन्द्र पाल सिंह, 'समाजशास्त्र के मूल सिद्धान्त', डिस्कवरी पब्लिकेशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 305
2-वही, पृ. 306, 3-गोविन्द मिश्र, 'पाँच आँगनों वाला घर', राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पहली
आवृत्ति-2014, पृ. 05, 4- वही, पृ. 09
5-गोविन्द मिश्र, 'पाँच आँगनों वाला घर', पृ. 19-20
6-वही, पृ. 20
7-वही, पृ. 45
8-वही, पृ. 80
9-वही, पृ. 80
10-वही, पृ. 97
11-वही, पृ. 94
12-वही, पृ. 105 13-वही, पृ. 111
14-वही, पृ. 79 15-वही, पृ. 113
16-वही, पृ. 147
17-वही, पृ. 216
18-तिवारी, रामचंद्र, 'हिन्दी का गद्य-साहित्य', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,
संशोधित तथा परिवर्धित, संस्करण : 2012 ई., पृ. 242

आलेख

हिंदी कहानी में नारी शोषण के विविध संदर्भ

◆ डॉ. ममता

"**मानव** जाति का विकास स्त्री व पुरुष के परस्पर संयोग का परिणाम है। इसमें अपनी-अपनी मनोवृत्ति व शारीरिक संरचनाओं के अनुरूप दोनों ने ही महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, जिसे एक के संदर्भ में कम व दूसरे के मामले में ज्यादा नहीं आंका जा सकता है। मानव सभ्यता के विकास में दोनों की बराबर भागीदारी है लेकिन यह भी सच है कि कोई भी सभ्यता या संस्कृति अपने साथ केवल सद् व सुंदर तत्त्वों को ही लेकर नहीं चलती, प्रगतिशील तत्त्वों के लिए स्वस्थ परंपराओं व जीवन-मूल्यों को प्रदूषित करते चलते हैं। यह भी एक हकीकत है कि भारत ही नहीं, समूचे विश्व में अनादिकाल से ऐसे प्रतिक्रियावादी तत्त्व आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था को मनचाहा परिवर्तित करने की हद तक सक्रिय रहे हैं।"[1] नारी जाति के प्रति भारतीय समाज का व्यवहार भेदभावपूर्ण रहा है। सामंती मूल्य व्यवस्था के चलते स्त्री और पुरुष के लिए आचार और व्यवहार के मानदंड अलग-अलग हैं। स्त्रियों से पतिव्रत्य, सेवा, संयम और त्याग का जीवन बिताने की अपेक्षा की जाती है। जबकि पुरुष इन सबसे स्वछंद है। हिंदू धर्म के अनुसार नारी को बचपन में अपने पिता की आज्ञा माननी चाहिए, युवावस्था में पति और बुढ़ापे में अपने पुत्र की अर्थात् स्त्री आजीवन स्वतंत्र नहीं रहनी चाहिए। जबकि पुरुष के लिए ऐसा कोई विधान नहीं है। स्वतंत्रता के पश्चात् स्थिति में कुछ बदलाव ज़रूर आया है। पुरुषों और स्त्रियों को कानूनी रूप से समानवता का अधिकार दिया गया है लेकिन व्यवहार में यह समानता अभी भी कागजों पर ही है। पुरुष व स्त्री की बाट-तोल में सदैव पुरुष का ही पलड़ा भारी रहता है। प्राचीन काल से ही नारी, सेवा त्याग व शक्ति की प्रतीक रही है। उसे आचरण, त्याग एवं सहिष्णुता की मूर्ति माना गया है। भारतीय समाज में पुरुष प्रधान समाज का महत्त्व होने के कारण सामान्य महिलाओं को ही नहीं, अपितु शिक्षित एवं आधुनिक महिलाओं को भी पुरुष की अधीनता स्वीकार करनी पड़ता है। धर्मशास्त्रियों ने भी स्त्रियों को 'अबला' मानकर उसी को अत्याचारों का शिकार बनाया है। उन्हें अपने अधिकारों से वंचित रखा। भारतीय समाज का नारी के प्रति दृष्टिकोण बहुत ही कठोर, अन्यायी और क्रूर रहा है।

आधुनिक समाज में शिक्षित और समर्थ नारी भी शोषण का शिकार हो रही है। इस शोषण का कारण मनुष्य की अहंकारवादी एवं प्रभुत्व प्रवृत्ति है जिससे वह आज भी मुक्त नहीं हो पाया है तथा नारी भी नवीन विचारों की दीक्षा लेकर अपने प्राचीन संस्कारों को त्यागने में असमर्थ है। पुरुष का दुर्व्यवहार, कामवृत्ति, स्वार्थी भावना, नारी का दुर्बल व्यक्तित्व नारी शोषण के मुख्य कारण हैं।

नारी पग-पग पर शोषण का शिकार होती है। हिमाचल के कहानीकारों ने अपनी कहानियों में नारी-शोषण का चित्रण किया है। राजेंद्र राजन की 'मुट्ठी भर धूप' नारी शोषण को दर्शाती है। शालिनी कैंसर पीड़ित है। जब वह अस्पताल में भर्ती थी, उसका परिचय एक व्यक्ति से होता है मित्रवत् संबंध के कारण वह अपनी जीवन रूपी किताब को उसके समक्ष खो देती है। वह कहती है, "लड़की का जन्म हमारे समाज में अभिशाप ही माना जाता है। मेरे साथ भी यही हुआ। मम्मी-पापा ने शायद मातम ही मनाया होगा। पहली संतान और वह भी लड़की। मेरे बाद बरसों तक मां की कोख हरी नहीं हुई। दोनों को यही गम सालता रहा कि उनके कुल के चिराग को रोशन रखने के लिए बेटा पैदा नहीं हुआ। फिर न मालूम चौदह बरस बाद कैसे बरसात हुई। दो जुड़वां बहनों का जन्म हुआ। किंतु पुत्र-धन की पिपासा न बुझ पाई। जीवन के कई वसंत पार करने के बाद मम्मी-पापा का सपना पूरा हुआ। उनकी खुशियों का कोई ठिकाना न था। पुत्र प्राप्ति के बाद हम तीनों बहनों को जैसे भूल से गए। समूचा ध्यान बेटे की परवरिश पर केंद्रित हो गया। जैसे-तैसे पापा ने मुझे पढ़ा दिया था। बी.एड. के बाद सरकारी नौकरी भी मिल गई। मां-बाप की नज़रों में मेरी कीमत सोने के अंडे देने वाली मुर्गी से अधिक नहीं थी। बरसों मामूली-सी सरकारी नौकरी पर कार्यरत रहने के बाद पापा रिटायर हो गए थे। मेरी तनख्वाह के एक-एक पैसे के लिए वे छीना-छपटी करते। मेरी स्वतंत्रता, निजता और अस्तित्व मुझसे लिया गया था। मैं किसी कैदी-सी सींखचों के भीतर बंद होकर रह गई थी। पैरों में पड़ी बेड़ियां काटकर और पिंजरा तोड़कर मैं आज़ाद पंछी की तरह परवाज़ भरना चाहती थी, लेकिन पढ़ी-लिखी होने के बावजूद मैं गुलामी की दीवारें न भेद पाई। दस साल तक मैं अपने अरमानों,

आशाओं और आकांक्षाओं की धीमी मौत की मूकदर्शक बनी रही। सोचती हूं मानसिक तौर पर मैं बहुत पहले मर चुकी थी... शारीरिक कष्ट का तो बहुत देर बाद पता। अब शरीर के रहने या न रहने से क्या फर्क पड़ता है।"[2] इस प्रकार शालू के माध्यम से नारी शोषण का पता चलता है। नारी शोषण के अंकुर उसके घर से ही फूट पड़ते हैं। शालिनी घर परिवर का दायित्व पूरा करते-करते अपने विवाह तक को भूल चुकी थी और न ही उसके घरवालों ने इस ओर ध्यान दिया। लेकिन जब वह कैंसर से पीड़ित होती है तब वह घरवालों पर बोझ बन जाती है। मम्मी-पापा के व्यवहार में औपचारिकता और अजनबीपन का भान उसके अंतस को बेतरह छीलता है।

रमेश चंद्र शर्मा की 'पंकज की पतवार' कहानी की पात्र कोमला अपनी सहेली चंचला को अपनी मनोव्यथा सुनाती हुई कहती है मैट्रिक करने के बाद पिता को नौकरी की फ़िक्र लग गई। "कहने लगे, अच्छे लड़के बारोज़गार लड़की ढूंढते हैं।" महंगाई का ज़माना है और उस अधीक्षक के घर के चक्कर लगाने लगे। मेरी प्रणय कहानी समाप्त हो गई। विरह की अभिव्यक्ति जीवन की छवि बन गई। नारी भावना समाप्त हो गई। अंतर की आकांक्षाएं जलकर भस्म हो गईं। उस धूर्त पुरुष की पत्नी को अपनी व्यथा कही। वह उससे लड़-झगड़कर मायके चली गई। फिर क्या था वह प्रीतिपूर्ण अधीक्षक आग बनकर मुझे जलाने लगा। नारी की जन्म-जन्मांतर की संजोई दौलत लुटने लगी।" इस प्रकार अधीक्षक कोमला का शोषण करता है और उसकी पूरी ज़िंदगी तबाह होती है।

विजय सहगल की 'उमस' कहानी में पति द्वारा पत्नी का शोषण दर्शाया गया है। गीता अपने पति से मिसेज बतरा के बारे में बताती हुई भावुक हो उठती है। उसके दिल में बतरा के प्रति घृणा उत्पन्न होती है। वह कहती है, "जब कभी मिस्टर बतरा किसी कॉकटेल से अधिक पीकर आते हैं, मिसेज बतरा परेशान हो उठती है। ऐसी हालत में बतरा जल्लाद हो उठता है। कह रही थी, कल तो सुबह होने पर ही उसने दम लिया। अपने पति का यह वीभत्स रूप उसे कभी पसंद नहीं।"[3]

हमारे समाज में उच्च वर्ग द्वारा निम्नवर्ग की स्त्रियों का भी शोषण किया जाता है। उच्च वर्ग के लोग जहां छोटी जात के स्पर्श पर जनेऊ बदलना और गंगा में स्नान करना नहीं भूलते, वहीं नारी देह को प्राप्त करने के लिए सदैव लालायित रहते हैं। 'सेमल के फूल' सुदर्शन वशिष्ठ की कहानी की नायिका जानकी अपने इस कथन द्वारा नारी शोषण को स्पष्ट करती है। "बिल्कुल निखट्टू हो गए हैं ये मर्द। जहां भी काम होता है, जवान औरतों को भेज देते हैं, वक्त-वेवक्त, जगह-कुजगह कुछ नहीं देखते फिर मर्दानगी भी अपनी ही औरतों पर दिखाते हैं... अपनी ही औरतें रह गई हैं तुम्हें पीटने के लिए। उन्हें क्यों नहीं कुछ कहते जो...।" अतः स्पष्ट है कि पुरुष सदैव नारी का शोषण करता आया है। वह अपने मालिकों की खुशी के लिए तथा अपनी नौकरी बचाने के लिए पत्नी को दूसरों के सामने पेश करने से भी नहीं हिचकिचाते।

रजनीकांत शर्मा की 'जंगल में कांपता बांस' कहानी नारी उत्पीड़न को दर्शाती है। लक्ष्मी की जब से शादी हुई, राजकुमार ने उसे दबाए रखना ही उचित समझा। संयुक्त परिवारों में उसके साथ सौतेला व्यवहार होता, फिर भी वह पति के लिए सब कुछ सहन करती एक दिन उसे राजकुमार के अवैध संबंधों के बारे में पता चलता है, तब उसके सब्र का बांध टूट गया। राजकुमार से बात की तो उसने तलाक की धमकी दे डाली। लक्ष्मी कहती है, "फिर हो गया दुखों का सिलसिला शुरू। जीवन का पतझड़। अब तो ये शराब पीकर आने लगे हैं। मेरे घर वाले परेशान हैं, शराब पीकर मुझे मारने लगे हैं। नीले निशान मेरी पीठ की यंत्रणाओं की जीती- जागती तसवीर प्रस्तुत कर देंगे। मुझ पर बेल्टों की मार पड़ती है। सिगरेट से मुझे दागा जाता है।"[5]

विजय सहगल की 'आधा सुख' कहानी भी नारी शोषण का चित्रण करती है। आज की हर नारी शोषण से त्रस्त है। कार्यालय, शैक्षणिक संस्थानों, सफर करते हुए ऐसा कोई स्थान नहीं बचा है जहां नारी शोषण नहीं होता। सविता कहती है, "दफ्तर में कुछ भेड़ियेनुमा साथियों के बीच गुजारे गए दिन, अपने बॉस मनसुखानी की ललचाई नज़रों और डी.टी.सी. की बसों में हर रोज़ तरह-तरह के दबाव झेलने की सविता की कहानी तो अब काफी पुरानी पड़ती जा रही है, गोया सविता उसकी अभ्यस्त हो गई है। कई बार कहती भी है- तंग आ चुकी हूं इस नौकरी से। जाने कब छूटेगी... यही सब कुछ होता है रोज़-रोज़।"[6]

इस प्रकार कहा जा सकता है हिमाचल की हिंदी कहानी में नारी शोषण के विविध संदर्भों को उद्घाटित किया गया है। यह कहानियां नारी उत्पीड़न को चित्रित करने में सक्षम हैं। यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि आज की नारी किसी भी स्थान पर सुरक्षित नहीं, कानून चाहे नई से नई धाराएं बनाकर नारी शोषण से मुक्ति दिलाने की बात बेशक करता रहे, लेकिन इसके बावजूद भी नारी का शोषण, उत्पीड़न तक बंद नहीं होग, जब तक इसके विरोध में नारी स्वयं नहीं उठती। तब तक नारी शोषण को जड़ से उखाड़ फेंकने की बातें कोरी और थोथी ही रहेंगी।

द्वारा आदित्य सूद, मकान नं. 253, वार्ड नं. 3, तहसील पालमपुर, जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश।

संदर्भ :

1. हिमाचल की हिंदी शोध प्रबंध कहानी में लोक-जीवन (सर्वश्री रमेश चंद्र शर्मा, सुदर्शन वशिष्ठ, पी.सी.के. प्रेम, रजनीकांत शर्मा, राजेंद्र राजन, विजया प्रभाकर एवं विजय सहगल के विशेष संदर्भ में), पृ. 170, 171, 175, 176, 177, 178, 179।

शोध सार

अब्दुल बिस्मिल्लाह के राजनीतिक एवं सामाजिक विचारों की पृष्ठभूमि : एक अध्ययन

◆ डॉ. सुनीता देवी

प्रस्तुत शोध पत्र में अब्दुल बिस्मिल्लाह के राजनीतिक एवं सामाजिक विचारों को उन्हीं की सोच के अनुसार रखने का प्रयास किया गया है। साथ ही एक सच्चे राष्ट्र भक्त एवं समाजवादी चिन्तक के रूप में उन्हें दर्शाने का प्रयास है जो वास्तव में उनके लिए सत्यता का प्रतीक है। अब्दुल बिस्मिल्लाह भारत में समाजवादी आन्दोलन के अग्रणी उन्नायक हैं इनका अपना कथन द्रष्टव्य है, "सन् 1977 में शिक्षा के राष्ट्रीयकरण को लेकर एक आन्दोलन हुआ था। उन दिनों में बनारस के एक कॉलेज में अध्यापक था। चूंकि मैं उतर प्रदेश शिक्षक संघ में भी सक्रिय था, इसलिए आन्दोलन में तो भाग लेना ही था।"[1] अब्दुल बिस्मिल्लाह ने समाज की नवीन व्याख्या की इन्होंने कहा कि समाज अपने निश्चित चक्र के अनुसार घूमता रहता है इस चक्र में पुनरावृति भी होती रहती है। बिस्मिल्लाह का यह विचार विख्यात यूनानी दार्शनिक अरस्तु के 'चक्र सिद्धान्त' का स्मरण दिलाता है "समाज सरल रेखा की भाँति आगे नहीं बढ़ता वरन् चक्रवत गति से प्रभावित होता है। समय चक्र के दौरान एक देश जो उन्नति के चरम शिखर पर है वह पतन के गर्त में गिर सकता है और एक ऐसा भी समय आ सकता है जब पतन के गर्त में गिरा हुआ देश पुनः उन्नति करने लगे।"[2] स्पष्ट है कि अब्दुल बिस्मिल्लाह की सामाजिक विकास की धारणा में मार्क्स की द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की तुलना में उन्होंने चेतना पर अधिक बल दिया है। बिस्मिल्लाह एक ऐसे समाज की रचना के पक्ष में थे जिसके अन्तर्गत आत्मा अथवा सामान्य उद्देश्यों, आर्थिक उद्देश्यों का परस्पर ऐसा संबंध हो कि दोनों का स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रह सके।

बिस्मिल्लाह ने अपनी पुस्तक 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' में बताया है कि समाज में जाति और वर्गों का संघर्ष दिखाई देता है। वर्ग और जाति के बीच की आन्तरिक हलचल ही समाज को गतिशीलता प्रदान करती है। जातियों का रूप सुनिश्चित होता है। जबकि वर्गों की आन्तरिक रचना शिथिल होती है और उन दोनों के बीच घड़ी के दोलक की सी आन्तरिक क्रिया होती रहती है। यही आन्तरिक हलचल समाज को गति देती है। जातियों में प्रायः गतिहीनता और निष्क्रियता पायी जाती है। जातियां रूढ़िवादी शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती है। प्रस्तुत उपन्यास में बनारस के बुनकरों के जन-जीवन को आधार बनाया है। इस सम्बन्ध में राजेन्द्र राव उचित ही कहते हैं, "बुनकरों के जीवन स्तर के सुधार के नाम पर मिलने वाले अनुदानों और ऋण आदि की कुल धनराशि मगरमच्छों के पेट में चली जाती है, और उनकी दयनीय दशा जस की तस बनी रहती है।"[3] इस उपन्यास में बनारसी साड़ी बुनकरों के शोषण और दोहन से उपजी अमानवीय जीवन परिस्थितियों का सजीव चित्रण करने वाला प्रामाणिक दस्तावेज है जिसमें बुनकरों की बोलती तस्वीर हमारे समक्ष आदि से अन्त तक रहती है।

बिस्मिल्लाह ने गाँधीवाद और मार्क्सवाद के सिद्धान्तों को मिलाकर भारतीय समाजवाद का निर्माण करना चाहा। उन्होंने समाज में फैली विषमताएँ और विसंगतियाँ तथा सड़ी गली रूढ़िवादी सामाजिक व्यवस्था को हटाने के लिए गहन चिन्तन किया कि एक स्वस्थ समाज की रचना कैसे की जाए जो रूढ़िमुक्त हो मर्यादित हो और स्वतन्त्र भी जिसमें समाज और व्यक्ति दोनों का महत्त्व हो। सामाजिक खुशहाली की वह कल्पना जो आजादी से पूर्व हर भारतीय का सपना थी, साकार कैसे हो। इनका कहना है कि "यूं भी आजादी के बाद के परिवेश में बड़ा परिवर्तन आया। स्वतन्त्र भारत का नागरिक अनेक अर्थों में पुराने दासत्वों को छोड़कर अनेक नये दासत्व ग्रहण करता है। जीवन मूल्यों का विघटन और अन्तविरोधों के झंझावतों में फंसा तथाकथित विकास अपने आप में एक प्रश्नचिन्ह बन गया है। अनेक योजनाएं सोपानों की खोखली थोथी मीनारें ढहने को तैयार बैठी हैं।" किसी भी प्रकार की उथल-पुथल का समाज पर तत्कालिक प्रभाव पड़ता है और जनसाधारण राजनीतिक उथल-पुथल के विषय परिणामों को सहने के लिए विवश होता है। इनका कहना है कि, "जब-जब समाज में उथल-पुथल हुई है तो जन साधारण घर से बेघर हुआ है राजनीतिक उथल-पुथल का परिणाम सदैव आम जनता को ही भुगतना पड़ता है।" अब्दुल बिस्मिल्लाह जो समाजवादी धारा के गरम प्रवक्ता हैं जिनके भाषण आंकड़ों और आलोचना से भरे रहते हैं बिस्मिल्लाह की विशेषता इस बात में है कि उन्होंने समाजवादी चिन्तन की समस्याओं को एशियायी दृष्टिकोण से देखने का प्रयत्न किया वे कोरे पंथवादी नहीं हैं। इन्होंने चिन्तन के द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व में विकास की समस्या को सदैव ध्यान में रखा। वे चाहते हैं कि मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन और स्वभाव की अभिव्यक्ति हो। वे इस पक्ष में नहीं हैं कि व्यक्तित्व के किसी एक विशिष्ट पहलू की एकांगी और सीमित वृद्धि हो।

हिंदी विभाग, हि. प्र. विश्वविद्यालय, समरहिल, शिमला-171 005

संदर्भ :

1. कन्हैयालाल नन्दन संपादक, गगनांचल, पृ. 2
2. अमरेश्वर अवस्थी एवं राजकुमार अवस्थी, आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन, पृ. 280-281
3. चन्द्रदेव यादव (सं.) अब्दुल बिस्मिल्लाह का कथा साहित्य, पृ. 34
4. त्रिलोक चन्द परिवेश मन और साहित्य, पृ. 20.
5. जोगिन्द्र सिंह, दस्तावेज, पृ. 20.

कहानी

सिंदूर की रेखा

◆ डॉ. दादूराम शर्मा

"पंडितजी आ गए क्या ?''

"नहीं जी ! सबेरे ही स्टेशन पर सवारी भेज दी है। पता नहीं अभी तक क्यों नहीं आए ?'' मेरे सामने खड़ी थी एक चिंताग्रस्त महिला। उसे तरूणी कहूँ, प्रौढ़ा कहूँ, क्या कहूँ ? कज्जलरहित निस्तेज और खोई-खोई-सी गढ़ों में धंसी आँखें, पीला उदास मुख, जिस पर मंद पवन के झोंकों से खेलती रूखे-उलझे बालों की एक लट-जो कभी बाएँ कपोल पर गिरती और कभी जाने कब भरी गई मिटी-सी, पुछी-सी माथे की सिंदूर-रेखा तक उठती अर्धवृत बनाती हुई ! मानो कपोल को छूकर आश्वस्त कर रही हो- ''देवि, धीरज रखो अभी यह सिंदूर रेखा मिटेगी नहीं।''

उस महिला को मैंने आपादमस्तक देखा- एक बार, दो बार, तीन बार .... मैं हतप्रभ-सा खड़ा रह गया। आँखें देखकर भी देख नहीं पा रही थीं। क्या यह वही विमला है ? सब कुछ प्रत्यक्ष होने पर भी विश्वास नहीं हो पा रहा था और मेरे जीवन की पुस्तक के कितने ही पिछले पृष्ठ भावों के अंधड़ में फड़फड़ाकर उलट पड़े !

मेरी विचित्र बोझिल मनःस्थिति को शायद वह भाँप गई ! किंतु उसने क्या सोचा, क्या समझा, कौन जाने ? और पास ही रखी कुर्सी की ओर इशारा करते हुए बोली- "बैठिए न !''

"नहीं, नहीं। पंडितजी को देखने आया था। शाम तक तो आ ही जाएँगे, तभी आऊँगा'' कहकर मैं मुड़ गया अपने घर की ओर।

मैं नवीं कक्षा का छात्र हूँ। किशोरावस्था में मैंने अभी-अभी कदम रखा है। ठंड के दिन आंगन में धूप में चारपाई पर बैठकर मैं कोर्स की किताब पढ़ रहा हूँ कि भाभी मेरे पास आकर कान में धीरे-से कहती हैं- ''भइया, जरो देखो तो सामने।''

"पढ़ने दो न भाभी, क्यों व्यर्थ बाधा करती हो ?''

"देख लो देवरजी, नहीं तो पछताओगे।''

"ऐसी कौन-सी अनोखी चीज आ गई ?''

"यह रही चीज'' और वे सामने संकेत करके खिलखिलाकर हँस पड़ीं। मैंने देखा- सामने गली से एक किशोरी कुछ शरमाई-सी, सिकुड़ी-सी साड़ी के पल्ले से मुँह छिपाती हुई निकल गई।

"देख लिया ?''

"देख तो लिया।''

"क्या देखा ?''

"एक लड़की, और क्या ?''

"बस ? कौन है वह ?''

"काशीराम जी की लड़की विमला।''

"और कुछ ?''

"और क्या ?''

"बड़े बूद्धू हो देवर जी। अब आइंदा उसका नाम किसी के सामने न लेना।''

"सो क्यों ?''

"अरे लाला, हमारे यहाँ अपनी मंगेतर का नाम नहीं लेते, समझे !'' और मेरे गालों में जोर से चिकोटी लेकर वे हँसती हुई भीतर भाग गईं।

"मेरी मंगेतर ?'' पुस्तक से ध्यान हट गया और मानस पटल पर उभर आया एक वयः संधिगत किशोरी का चित्र। कमर तक लहराते काले, घुंघराले केश। मादक मकरंद छलकाने के लिए उद्यत-से सद्यः विकसित नीलकमल सदृश आयत-दीर्घ नेत्र, नुकीली नाक, भरे हुए अरूण-गौर कपोल और रागारूण सस्मित अधर-मानो किसी से प्रेमालाप करने की अदम्य आकांक्षा को अपने संपुट में बलपूर्वक कैद करते हुए से। ग्रामीण वातावरण। सहज उल्लास और उत्सवप्रियता का जीवन। परिस्थितियों और विपत्तियों के बड़े से बड़े आघात को हँसकर-गाकर झेलने में अभ्यस्त मानव हृदय। यहाँ वितृष्णा नहीं, कुंठा नहीं, बेचौनी नहीं, हाय-हाय नहीं। सब कुछ तो भरा है यहाँ- फसलों से लहलहाते खेतों में, खलिहानो में, घरों में, गोशालाओं में- श्रम है, स्वास्थ्य है, संतोष है, भोजन है, दूध है, दही है ! प्रकृति की सारी विभूति तो लोट रही है यहाँ के अंचलों में। यहाँ रिक्तता कहाँ ? अभाव की अनुभूति कहाँ ? इनके लिए तो जैसे सब कुछ खेल है, निरा खेल। काश इनकी क्रीड़ावृति जीवन की विद्रूप वास्तविकता को झुठला पाती !

पंद्रह वर्ष की किशोर किंतु जीवन की जिम्मेदारियों को समझने और झेलने में नितांत अक्षम आयु में मुझे मंगनी के सूत्र में बाँध दिया गया। किशोर हृदय बड़ा कोमल और भावुक होता है। छुट्टियों में जब कभी मैं गाँव आता, खेत जाने के बहाने अनायास मेरे पैर

उसके मुहल्ले की तरफ बढ़ जाते। नेत्र उसकी एक झलक के लिए झटपटाते रहते। छुट्टियों के दिन वह भी मेरी प्रतीक्षा में आँगन में बैठी रहती और मैं जैसे ही सामने से निकलता, साड़ी के पल्ले से सिर ढंकती हुई वह भीतर जाने लगती किंतु तेजी से नहीं, मंथर गति से और इसी बीच मुझे देखने या स्वयं को दिखाने का अवसर भी वह किसी न किसी बहाने से पीछे मुड़कर निकाल लेती। यह 'तारामैत्रकं चक्षुराग- नयनों का नयनों से गोपनप्रिय संभाषण' और घनीभूत होता गया और धीरे-धीरे एक साल सरक गया।

भावी वैवाहिक जीवन के अनेक रंगीन काल्पनिक चित्र मेरे मानस पटल पर बनते और मिट जाते। एक दिन ऐसे ही आँगन की मुंडेर पर बैठा मैं किसी कल्पना लोक में विचरण कर रहा था कि मेरे मित्र शंभूनाथ ने आकर जैसे मुझे पैर पकड़कर यथार्थ के कठोर धरातल पर खींचकर खड़ा कर दिया- "कुछ सुना है तुमने?"

"नहीं यार, बताओ तो सही।"

"नहीं भाई, तुमने नहीं सुना तो मैं न बताऊँगा। तुम्हें खुद ही मालूम हो जाएगा।"

"मित्र से भी दुराव। ऐसी क्या बात है जो इतना छिपा रहे हो मुझसे ?"

"यार, छिपाने की तो कोई बात नहीं। बता इसलिए नहीं रहा हूँ कि सुनकर तुम्हारे भावुक मन को पीड़ा होगी !"

"जो बात जनचर्चा का विषय बन चुकी है और देर-सबेर मुझे मालूम हो ही जाएगी उसे तुम छिपाकर कहाँ तक मेरे मन को पीड़ा-मुक्त रख पाओगे?"

"अच्छा तो चलो घूमने।" और हम दोनों मित्र नाले की ओर चल पड़े- "क्या जैतपुर के गिरधारीलाल पटेल को देखा है तुमने?"

"हाँ, क्यों?"

"क्या अपने होने वाले छोटे साले से उसकी शक्ल का मिलान किया है तुमने?"

"हूँ ...." कहकर मैं किसी गहन विचार में खो गया। मित्र कहे जा रहा था- "तुम्हारे ससुर जब जीवित थे तभी से उस कमीने ने उनसे दोस्ती के बहाने तुम्हारी सास से गलत सम्बंध बना लिए थे। पहले तो इनका प्रणय-व्यापार चोरी-छिपे चलता था, किंतु उनकी मृत्यु के बाद से उजागर हो गया है और इधर कुछ दिनों से उसका यहाँ आना-जाना भी बहुत बढ़ गया है।"

"और ...." "अरे यार ! मैं कह रहा था न कि मुझे बताने के लिए बाध्य मत करो, तुम्हारे मन को सुनकर ठेस पहुँचेगी !" उसने मेरे चेहरे पर बनते-मिटते भावों को पढ़ लिया था, मेरा अंतरंग मित्र जो था और चुप हो गया। फिर नाला पहुँचने तक हम एक-दूसरे से कुछ न बोले। शौच से निवृत्त हुए, हाथ-मुँह धोया और तटवर्ती टीले पर बैठ गए।

हेमंत की संध्या। दूर तक श्यमान लहराती हुई भरी-भरी फसलों से अपने "शस्य श्यामला" नाम को सार्थक करती हुई कछार की भूमि और उस पर पड़ती हुई अस्तोन्मुख सूर्य की लाल-सुनहरी क्षीण रश्मियाँ अदृष्ट चित्रकार की तूलिका-सी ! भास्कर रूपी रंगपात्र में, जिन्हें डुबोकर वह इस विस्तीर्ण प्रकृति-पटी पर तरह-तरह के चित्र बनाता रहा है और दिनभर के श्रम से श्रांत उसके कर तूलिका को फलक पर अंतिम स्पर्श देते हुए पात्र में रख देना चाह रहे हों ओर हमारे देखते-देखते वह रंगपात्र अदृश्य हो गया और रह गया वह अधूरा चित्र। सरसराती शीतल हवा के झौंके से हमारे शरीर सिहर उठे और हम घर की ओर लौट पड़े।

तीन-चार दिनों बाद ससुराल से मेरा भोजन का निमंत्रण आया। बुलावा आया। सबके बार-बार प्रेरित करने पर भी मैं स्वयं को जाने के लिए तैयार नहीं कर पा रहा था। मैं बैठा था और मेरा छोटा साला आग्रह करता हुआ खड़ा था। तभी पिता ने डांटते हुए कहा- "जाता क्यों नहीं रे ?" और मुझे न चाहते हुए भी जाना पड़ा। पहुँचा तो, सामने पलंग पर वे ही महाशय, जिनका जिक्र हमारे मित्र ने किया था, विराजमान थे और बाजू में झूले पर हमारी सासजी बैठी उनसे कुछ बतिया रही थीं, हँसी का दौर चल रहा था। तभी मेरे बड़े साले ने उठकर "आइए, आइए" कहकर मुझे बैठने के लिए पलंग की तरफ इशारा किया, किंतु मैं सामने की कुर्सी पर बैठ गया। तभी मेरी सास ने उसे मेरा परिचय दिया- "ये ही हैं हमारे होने वाले दामाद !"

"अच्छा ददुआ ! (हमारे अंचल में लड़कों को प्यार से 'ददुआ' कहा जाता है) मजे में तो हो ? कौन सी क्लास में पढ़त हो ?" बड़े ही स्नेह मिश्रित मधुर स्वर में स्थानीय बोली में पूछ रहा था वह मुझसे! किंतु उसके शब्द तीर की तरह मेरे कलेजे में चुभ रहे थे। मैंने रूखे स्वर में कहा- "दसवीं क्लास !"

"बेटा ! कक्काजी से "जै रामजी की" नहीं करी तुमने !" सास कह रही थीं।

मुझे कुछ न कहते देखकर वह स्वयं बोल पड़ा- "अबै लड़का

है, शरमात है'' और हँसने लगा। मेरे मन में आया कि कह दूँ- "बदतमीज ! मैं शरमाता नहीं। मैं तुझ जैसे कमीने से बात नहीं करना चाहता।'' किंतु मैं चुपचाप कभी अपने छोटे साले के चेहरे को तो कभी उस व्यक्ति के चेहरे को देखता रहा। मेरे मन में जाने कितने बेतरतीब भावों का अंधड़ उठ रहा था कि तभी भीतर से बुलावा आया- "थालियाँ लग चुकी हैं।'' और हम सब भोजन करने अंदर चले गए।

मैं वहाँ स्वयं को उस कैदी-सा अनुभव कर रहा था, जिसके गले में फाँसी का फंदा पड़ने वाला हो या उस बलि-पशु की तरह, जिसे अपनी मौत का आभास हो चुका हो। किसी तरह दो पूरियाँ पानी के सहारे निगलकर मैं बिना शिष्टाचार दिखाए उठने लगा तो बड़े साले ने पकड़कर बैठा लिया- "इतनी जल्दी ? क्या घर में खा आए ?'' मैंने कहा- "नहीं'', तभी साहूजी, जो अपने हृदय का सारा स्नेह और प्रेम अभी तक उस आगंतुक पर उड़ेलकर उसके भोजन को और भी स्वादिष्ट बना रही थीं, मेरे पास बैठीं- "ददुआ, और लो न'' किंतु मुझे नहीं लेना था, नहीं लिया। तभी मेरी मंगेतर की एक झलक मुझे दिखी और मैंने देखकर भी मुँह फेर लिया। वहाँ अधिक देर ठहरे बिना घर लौट आया।

कुछ दिनों बाद बिजली की तरह यह खबर सारे गाँव में फैल गई कि मैं वहाँ अपना रिश्ता नहीं करना चाहता। समवयस्कों ने समझाया, बड़े-बूढ़ों ने डांटा-डपटा किंतु सब बेकार। हृदय में घृणा की पाषाण रेखा खिंच चुकी थी।

गर्मी की छुट्टी हुई। मैं काफी रात गए छिंदवाड़ा से लौटा था। खा-पीकर आँगन में सो रहा था। अभी पौ भी नहीं फट पाई थी कि "अरे यार ! उठ न, क्या सोता ही रहेगा ?'' कहते हुए मेरे मित्र ने मुझे झकझोर कर जगा दिया।

"बड़ी रात को छिंदवाड़ा से लौटा हूँ यार ! अभी तो एक नींद भी नहीं ले पाया। फिर ऐसा कौन-सा जुलूस ही आ रहा है पट्ठे ! उठ तो मुँह-हाथ धोकर कपड़े पहन।''

"पेट का कैंसर हो गया था उसे। अभी पंद्रह-बीस दिन पहले ही तो मरी है बेचारी।'' पचपन वर्ष के तो हो ही चुके होंगे। कब्र में पैर लटक रहे हैं, जवान लड़कियाँ हैं, उनके हाथ पीले करते ! ऐसी स्थिति में विवाह करने की सनक ? मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।'' "भोले हो मेरे दोस्त ! आदमी की हवस क्या कभी मिटती है?'' हम बातचीत करते पीछे ही ठिठक गए थे। अगवानी हो चुकी थी और बाजों के पीछे एक ऊँचे घोड़े पर दूल्हे के वेश में सजे हजारी लालजी बड़ी शान से हमारे सामने से निकल रहे थे।

"कैसा जुलूस ?'' परंतु मेरा प्रश्न आतिशबाजी की आवाज में दब गया। मैं समझ गया कि गाँव में कोई बारात आई है और झटपट तैयार होकर बाजे-गाजे के साथ आते हुए अगवानी दल में हम दोनों शामिल हो गए।

मैंने पुनः धीरे से मित्र से पूछा'- "किसका विवाह है यार ?''

"तेरी मंगेतर का'' कहकर मित्र हँस पड़ा।

"मैंने अपनी पूरी शक्ति केंद्रित करके पूछा- "किससे ?"

"हजारीलालजी से और किससे ?'' मित्र फिर हँसने लगा।

मैंने झुंझलाते हुए कहा- "दिल्लगी मत कर यार ! सच-सच बता किसका किससे विवाह है ?''

"बताया न कि तेरी मंगेतर का हजारीलालजी से विवाह हो रहा है''।

"क्यों उनकी पत्नी कहाँ गई ?''

"मर गई !''

"क्या बकता है ?'' मैं चीख पड़ा- "दो माह पहले तो मैं उसे अच्छी-भली देखकर गया था।''

"पेट का कैंसर हो गया था उसे। अभी पंद्रह-बीस दिन पहले ही तो मरी है बेचारी।'' पचपन वर्ष के तो हो ही चुके होंगे। कब्र में पैर लटक रहे हैं, जवान लड़कियाँ हैं, उनके हाथ पीले करते ! ऐसी स्थिति में विवाह करने की सनक? मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।''

"भोले हो मेरे दोस्त ! आदमी की हवस क्या कभी मिटती है?'' हम बातचीत करते पीछे ही ठिठक गए थे। अगवानी हो चुकी थी और बाजों के पीछे एक ऊँचे घोड़े पर दूल्हे के वेश में सजे हजारीलालजी बड़ी शान से हमारे सामने से निकल रहे थे। एक छोटा-सा मोटा-सा अधेड़ आदमी, जिसके काले बाल और मजबूत दांत उसके मन में जवान होने का भ्रम पुख्ता कर चुके थे, जैसे मुझे चिढ़ा रहा था- "देखा, तुमने मूर्खतावश जिस मणि को काँच का टुकड़ा समझकर फेंक दिया था, उसे हम हथियाने जा रहे हैं, वह हमारा हृदयकार बनेगी !'' चाय पीने वाले कल के छोकरे ! तुम में दम ही क्या है ? यहाँ प्रतिदिन सबेरे सेरों धारोष्ण दूध पिया है, हजारों दंड पेले हैं, मनो सेर घी का सेवन करके इस कसरती काया को पुष्ट किया है। अभी तो हम जवान हैं, जवान ! बुढ़ापा हमसे कोसों दूर है ! हा .... हा .... हा .... !'' मैं धम्म से वहीं बैठ गया। कारवाँ गुजर गया और मैं गुबार देखता रहा। मित्र ने हाथ पकड़कर उठाने का प्रयत्न किया, कहा- "चलो भी !'' किंतु मैं न उठा, बोला- "तुम जाओ यार ! मैं न जा सकूँगा।''

पता लगा गोधूलि का पाणिग्रहण है। कन्या पक्ष की ओर से सारा गाँव आमंत्रित था। सभी भोजन करने गए, किंतु मैं न जा सका। घर पर ही भोजन करके अभी आँगन में लेटा था कि मित्र फिर हाँफते हुए आ टपके- "यार गजब हो गया !''

"और कौन-सा गजब बाकी रह गया भाई !'' मैंने लम्बी साँस खींचकर कहा।

"अरे जब हजारीलाल कन्या की मांग में सिंदूर भरने लगे तो वह फूट-फूटकर रोने लगी। पंडितजी समझाने लगे- "बेटी, रोते नहीं। सुहाग का चिह्न है, इसे तो खुशी-खुशी धारण किया जाता है।" किंतु उसकी रूलाई रूकी नहीं। तभी वर पक्ष के एक वयोवृद्ध सज्जन ने डाँटकर कहा "चुप रह लड़की। क्या खोड़ल की तरह रोती है ? अब तू बच्ची नहीं रही।" तभी छिपकर मैं जोर से चिल्लाया- "बूढ़े पति द्वारा भरी माँग सुहाग का नहीं, वैधव्य का चिह्न है ! फिर भला वह क्यों न रोए ?" और मैं यहाँ भाग आया!

दूसरे दिन भाभी घर में बता रही थीं- "कैसी विचित्र और निर्लज्ज लड़कियाँ हैं आज की ! विदा के समय सारा परिवार रो रहा था और वह सिसकी तक नहीं। आँचल से उसका सिर तो ढंका था, किंतु मुँह खुला था वह खोई-खोई उदास-सी इधर-उधर देख रही थी जैसे उसका कुछ खो गया हो। तभी सहेलियों ने जैसे जबर्दस्ती उसे डोली में बैठा दिया !"

धूप और अगरबत्तियों से सुगंधित सुसज्जित शयन-कक्ष। उसमें सजे हुए पलंग पर एक ओर पड़ी हुई अविचल किन्तु अनेकानेक विचारों के तूफान से विक्षुब्ध हृदयवाली आकृति ! तभी बिहारीलाल जी ने कमरे में प्रवेश किया। रेशमी धोती, कोसे के चमचमाते कुरते में चमकती सोने की बटनें, हाथों में सोने के कड़े, क्लीनशेव- मानो चेहरे से बुढ़ापे के सूचक तमाम सफेद बालों की झाड़ी को ट्रेक्टर चलाकर बलपूर्वक उखाड़ फेंका हो ! किन्तु उससे चेहरे की झुर्रियाँ और भी स्पष्ट उभर आई थीं। कानों में कुंडल हिल रहे थे, सिर पर पगड़ी थी और सारा शरीर इत्र-फुलेलों से महक रहा था ! वे आकर पलंग के पास खड़े हो गए। किन्तु उस आकृति में कोई हलचल नहीं हुई। उनका कलेजा 'धक' से रह गया ! कुछ दिनों पहले अपनी मृत पत्नी को भी तो उन्होंने इसी स्थान पर इसी पलंग पर ऐसे ही पड़ी देखा था ! वे उसके सिरहाने बैठ गए। सिर पर हाथ फेरा किन्तु उसने झटक दिया। फिर उन्होंने एक बहुमूल्य हार उसके हाथ पर रखते हुए कहा- "जानती हो, यह कितने का है?" किन्तु उसने बिना कुछ बोले उसे जोर से फर्श पर फेंक दिया। अनुभवी हजारीलाल ने इसे प्रणय कोप समझा और उसे आलिंगनबद्ध करने के लिए बलपूर्वक उठा लिया। उसने कोई विरोध नहीं किया। तभी उसकी भरपूर दृष्टि उस वीभत्स चेहरे पर पड़ी जैसे विश्वमोहिनी को चिढ़ाते हुए वानराकृति नारद हों ! उसने उन्हें भरपूर धक्का दिया और वे एक ओर लुढ़क गए।

दो-तीन सप्ताह बीत गए। विवाह की घटना आई-गई हो गईं एक दिन मैं हजारी के घर के सामने से होता हुआ मित्र के यहाँ जा रहा था कि तभी मुझे सुनहरी की जरीवाली गुलाबी साड़ी और अनेक आभूषणों से अलंकृत युवती सामने से आती दिखाई दी। अपनी सहेली से वह कुछ बतिया कर हँसती आ रही थी। मैंने गौर से देखा, वह विमला ही थी। अपनी सौतेली बड़ी बेटी के साथ शायद मैके से होकर आ रही थी। उसका हँसना मुझे ऐसा लगा

जैसे वह मुझे चिढ़ाकर कह रही हो- "क्या तुम अपनी दुल्हिन के लिए जुटा पाओगे इतने गहने !" और वह मुझे देखकर विशेष रूप से इठलाती हुई बाजू से निकल गई।

इस घटना को दो वर्ष बीत गए। पता लगा कि विमला मैके में है और ससुराल नहीं जा रही है। एक दिन फिर वह मुझे अचानक रास्ते में मिल गईं मैं उसे देखकर भौंचक्का-सा रह गया। अब उसके शरीर पर कोई गहना न था, गले में केवल मंगलसूत्र और हाथों में चूड़ियाँ थीं। शरीर एक निहायत सस्ती-सादी साड़ी में लिपटा था। उसने भी मुझे देखा और आँखें झुका लीं और उदास-सी धीरे-धीरे चली गईं अब उसकी चाल में पहले जैसी मस्ती न थी। आँखें अपनी यौवनोचित सहज मादकता खो चुकी थीं। वे चंचल तो थीं, किन्तु उनकी चंचलता बधिक के फंदे में फंसी हरिणी की आँखें जैसी थी।

कुछ दिनों बाद पता चला कि हजारीलाल जी के विशेष आग्रह-अनुरोधों और मिन्नतों पर विमला उनके घर आ तो गई है, किन्तु उसकी माँ ने उसके सारे गहने जब्त कर लिए हैं।

हजारीलाल की पत्नी की चिता की राख भी अभी ठण्डी नहीं हो पाई थी कि वे अपनी सहचरी की मृत्यु के दुःख को भूलकर कामाभिभूत हो उठे। पत्नी की लम्बी रूग्णता के कारण छः माह से इंद्रिय निग्रह की कठोर साधना जो उन्होंने की थी ! मित्रों ने बहुतेरा समझाया कि अब तो आपका वानप्रस्थ आश्रम आ गया, भगवान् में मन लगाइए। बहुत ले चुके सांसारिक भोगों का आनंद। अब करना ही है तो बच्चों की शादी-विवाह कीजिए। घर-गृहस्थी संभालने के लिए अभी जवान लड़कियाँ हैं। वे पराए घर चली जाएँगी तो बहू तुम्हारे घर आ जाएगी। एक युवती के जीवन से क्यों खिलवाड़ करना चाहते हो ? किन्तु इन बातों से उनकी दमित वासना की तृप्ति कैसी होती ? और बहन को उन्होंने फूलरानी के घर रिश्ते की बात लेकर भेज दिया।

"सुना है विजयपानी वाले पटेल ने तुम्हारे घर से रिश्ता तोड़

लिया ?''

"हाँ बहन, क्या बताऊँ ? वे तो भले आदमी हैं, पछता रहे थे। लेकिन लड़का ऐसा निखट्टू निकला कि सबके समझाने-बुझाने पर भी उस अभागे ने मेरी मणि-सी विमला को ठुकरा दिया !''

"खैर बहन, जाने दो उस मुंहजले को। एक अच्छा रिश्ता लेकर आई हूँ। विमला सोने के गहनों से लदी रानी बनकर घूमेगी, हाँ !''

"सुनूं भी तो कहाँ का रिश्ता है ?''

"मेरे भाई हजारीलाल को तो तुम जानती हो ?''

"हाँ, हाँ, लेकिन उनका लड़का तो अभी बारह बरस का है। क्या मैं अपनी सोलह साल की विमला उसे ब्याह दूँ ?''

"लेकिन लड़के की कौन कह रहा है ?''

"तो फिर ?''

"बेचारे बड़े दुःखी हैं अपनी पत्नी की मौत से। उनका दुःख हमसे देखा नहीं जाता। हट्टा-कट्टा कसरती शरीर है, एक भी बाल सफेद नहीं। भरा-पूरा घर है। बोलो, यदि मंजूर है तो हम उन्हें तैयार करें वैसे वे अब क्या शादी करना चाहेंगे ? लेकिन तुम्हारी गोरी-गोरी विमला के शरीर पर सोने के गहने कैसे फबेंगे ?''

"निकल जा कलमुँही यहाँ से ! शर्म नहीं आती तुझे। क्या मैं अपनी मणि को बूढ़े बंदर के गले में बाँध दूँ ? अब दोबारा ऐसी बात जवान से निकाली तो तेरी जीभ खींच लूँगी ! समझी !'' फूलरानी जोर-से चीख रही थी।

"खैर, मैं जाती हूँ। अच्छी तरह सोच लो, अभी भी मौका है। सोने से लद जाएगी विमला, सोने से ! और उस छोकरे से भी बदला ले सकेगी, जिसने विमला को ठुकराया है। क्या वह जुटा पाएगा अपनी दुलहिन के लिए इतना सोना ?''

"चली जा मंथरा यहाँ से ! हमें नहीं चाहिए ऐसा सोना !''

"और अच्छी तरह सोच-विचारकर जल्दी निर्णय लेकर हमें खबर देना नहीं तो हाथ मलती रह जाओगी और कोई और चिड़िया खेत चुग जाएगी। समझीं !'' और वह चली गईं

"समझ गई री ! जा जा कह देना अपने भाई से कि हम गरीब हैं तो क्या, हमें सोने से खरीद लोगे ?''

फूलरानी चीख रही थी।

तभी एक सप्ताह के भीतर विमला के पास पाँच-छः पत्र आए- कुछ मेरे नाम से, कुछ गुमनाम। सबमें उसके चरित्र पर कीचड़ उछालने वाली तरह-तरह की गंदी घिनौनी बातें लिखी थीं। गाँव भर में इसकी चर्चा फैल गई ! उधर धनकुबेर हजारीलाल के विवाह का इरादा जानकर कई घरों के रिश्ते आने लगे। ब्राह्मण समाज में अभागी लड़की कितना बड़ा बोझ है ! माँ-बाप उस अवांछित बोझ को अपने सिर से उतारकर कहीं भी फेंक देना चाहते हैं। उसका भविष्य क्या होगा ? इस पर विचार करने की उन्हें आवश्यकता ही क्या है ? वे तो बस उससे मुक्ति चाहते हैं, मुक्ति ! विमला की माँ दुविधा के दो पाटों के बीच पिस रही थी- एक ओर लड़की की बदनामी और दूसरी ओर लड़की को बूढ़े के गले बाँध देना ! तभी उनके बड़े बेटे लालूराम ने आकर कहा- "माँ, पता लगा है कि हजारीलाल के लिए चंदनवाड़ा के पटेल के यहाँ से भी खबर आई है। गुरैया, थांवरी और पिपरिया के भी बहुत से लोग उन्हें अपनी लड़की देने को तैयार हैं।''

"तू क्या कहेगा रे ? भला कौन अपनी जवान बेटी उस बूढ़े के गले बाँधेगा ? यह सब इन्हीं लोगों द्वारा उड़ाई गई अफवाह है।''

"नहीं माँ, पिपरिया वाले जीजाजी मुझे आज चौरई की बाजार में मिले थे। उन्होंने ही ये सभी बातें मुझे बताई हैं। गलत चिट्ठियों वाली बात उन्हें भी पता लग गई है। कह रहे थे- '' हजारीलाल विमला के रूप का दीवाना हो गया है, अच्छा मौका है। वह हाथ से निकल गया तो कहाँ का वर लाओगे ?''

माँ कुछ न बोली कि तभी डाकिए ने आकर मेरे जाली नाम वाली एक चिट्ठी लालूराम के हाथ में थमा दी !

"माँ ! फिर वही चिट्ठी, उसी हरामी द्वारा लिखी हुई। बहुत बुरी-बुरी बातें लिखी हैं इसमें। मैं पढ़कर नहीं सुना सकता !''

"हे शंकर जी ! उस दुष्ट का सत्यानाश हो जाए जो मेरी बेटी के पीछे पड़ा है। जला दे रे यह चिट्ठी !'' और वह मुझे कई तरह से कोसती हुई फूट-फूटकर रोने लगी।

बाद में मुझे पता लगा कि हजारीलाल के भाई बिहारीलाल ने ही विमला को बदनाम करने के लिए यह चिट्ठियों का षड्यंत्र रचा था !

हमारे समाज की यह कितनी थोथी और मूढ़ मान्यता है कि कन्या कुमारी नहीं रह सकती, विधवा रह सकती है। क्योंकि दो फायदें हैं माता-पिता या अभिभावकों को इससे ! पहला तो है, कन्या के जीवन की जवाबदारी से छुटकारा ओर दूसरा, कन्या के जीवन-निर्वाह का स्थायी हल, जिसमें वह पति की अचल सम्पत्ति की स्वामिनी हो जाए जिससे वक्त-बेवक्त वे भी लाभ उठाते रहें।

मानव का स्वार्थ-पिशाच कब जागकर उसके मातृत्व और पितृत्व को रौंद डालेगा, कौन कह सकता है ? और विमला का

हमारे समाज की यह कितनी थोथी और मूढ़ मान्यता है कि कन्या कुमारी नहीं रह सकती, विधवा रह सकती है। क्योंकि दो फायदें हैं माता-पिता या अभिभावकों को इससे ! पहला तो है, कन्या के जीवन की जवाबदारी से छुटकारा और दूसरा, कन्या के जीवन-निर्वाह का स्थायी हल, जिसमें वह पति की अचल सम्पत्ति की स्वामिनी हो जाए जिससे वक्त-बेवक्त वे भी लाभ उठाते रहें।

विवाह उसके रूप के दीवाने बूढ़े हजारीलाल से आनन-फानन तय हो गया। उसकी पत्नी की तेरहवीं के दूसरे दिन ही मठियान डल गया। विमला रोती रही, बिलखती रही, चीखती रही किन्तु किसी ने भी उसकी एक न सुनी ! उसे सोने के गहनों का प्रलोभन दिया गया, अतुल वैभव की स्वामिनी होने की बात समझाई गई। किन्तु वह आश्वस्त नहीं हो सकी। उसने सभी से रो-रोकर कहा कि उसे नहीं चाहिए किसी की धन-दौलत, नहीं चाहिए सोने के गहने। वह अपने लिए केवल युवा पति चाहती है। वह गरीब होगा तो उसके साथ झोपड़ी में रह लेगी, मेहनत-मजूरी करके पेट भर लेगी। बूढ़ा अमीर हजारीलाल उसे सब कुछ दे सकता है किन्तु वही नहीं दे सकता, जो उसे चाहिए। किन्तु विवाह के उल्लास, शहनाई के स्वर और ढोलों की ढमाढम में शायद उसके शब्द किसी ने नहीं सुने ! मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि किसी का मातृत्व भी खरीदा जा सकता है अथवा वह दो तरह का हो सकता है- पुत्रों के लिए कुछ और पुत्रियों के लिए कुछ। किन्तु चाँदी के चंद टुकड़ों से बेटों का घर भरने के लिए हीरे जैसी बेटी बेच दी गई। वह पंद्रह वर्षीया किशोरी पचपन वर्ष के बूढ़े को ब्याह दी गई।

पंद्रह वर्ष बाद आज मैंने उसे निकट से देखा है, बिल्कुल निकट ! तीस वर्ष की वय में ही उसकी जीवनधारा बुढ़ापे के मरूस्थल में आकर लुप्त हो गई है ! उसके माथे की धुंधली-सी सिंदूर रेखा बिजली की तड़प की तरह टीस बनकर मेरे कलेजे में कौंध जाती है! हृदय के पर्दे से सभी दृश्य एक-एक कर लुप्त हो जाते हैं और रह जाती है वही स्त्री-आकृति ! मेरी गोद में मेरा दो वर्षीय पुत्र है। वह उसे गोद में लेने के लिए हाथ बढ़ाती है। बच्चा सहज चंचल भाव से लपकता है। किन्तु जाने क्या सोचकर- शायद यह कि वह उसका बेटा नहीं, काश, उसका भी कोई बेटा होता ! वह हाथ खींच लेती है ओर उसका चिर अतृप्त मातृत्व आँखों में उमड़ पड़ता है !

सोच रहा हूँ उसके सर्वनाश के लिए उत्तरदायी कौन है ? मैं, बूढ़ा हजारीलाल, उसकी डायन माँ ! या हमारे थोथे सामाजिक संस्कार ओर बंधन ! कि तभी "गुरूजी प्रणाम'' का स्वर मेरी विचारधारा को भंग कर देता है। मैं "प्रसन्न रहो'' कहकर गली से गुजरते छकड़े को रोकता हूँ, जिसे मेरा शिष्य हजारीलाल का पुत्र हाँक रहा था। पीछे शाल में लिपटे हजारीलाल बैठे थे। मैंने नमस्कार किया और पूछा- "कैसा स्वास्थ्य है आपका ?'' "अच्छा ..... खुक् ..... खुक् ..... खुक् ..... है भैया !'' और छकड़ा मेरी गली से चला जा रहा था।

महाराज बाग, भैरवगंज, सिवनी, जिला-सिवनी
(म. प्र.) 480661, मो. 0 88789 80467

लघु कथा

ऐसे हुई दूर उदासी

– मनोहर चमोली 'मनु'

ये उन दिनों की बात है। जब धरती आग का गोला थी। वह सूरज से छिटक कर अलग हुई थी। उदास और अकेली धरती के आसमान पर एक पेड़ हुआ करता था। पेड़ हवा में लटका हुआ था। वहीं धरती एक जगह टिकी हुई थी। न हिलती न डुलती। एक दिन की बात है। पेड़ ने कहा- ''उदास क्यों हो? तुम कहीं घूम कर क्यों नहीं आती?'' धरती ने जवाब दिया,''तुम भी तो अकेले हो। सूखे हुए हो। हवा में लटके हुए हो। तुम कौन सा खुश हो!'' पेड़ सोचकर बोला, ''तुम चाहो तो घूम सकती हो। सूरज के चक्कर लगा सकती हो।'' धरती हैरान थी। वह बोली, ''तुम भी चाहो तो हरे हो सकते हो। तुम पर फूल-फल आ सकते हैं। बीज आ सकते हैं।'' पेड़ भी हैरान था। वह चुप रहा।

अब धरती बोली, ''तुम अपनी जड़ें मेरी सतह पर जमा सकते हो।'' पेड़ सोचता रहा। थोड़ी देर बाद उसने अपनी जड़ें धरती पर जमा ही लीं। पेड़ खुशी से झूम उठा। वह धरती से बोला, ''एक काम करो। अपनी धुरी पर ज़ोर लगाओ। घूमो।'' धरती ने कोशिश की। हवा ने मदद की। धरती घूमने लगी। उसे घूमना अच्छा लगा।

अब पेड़ ने फिर कहा, ''अब तुम सूरज का चक्कर भी लगा सकती हो।'' धरती ने ऐसा ही किया। एक जगह लटकी हुई धरती घूमने लगी। सूरज का चक्कर लगाने लगी। जो हिस्सा सूरज के सामने रहता, वहाँ धूप बिखरी रहती। बाद में जिसे दिन कहकर पुकारा गया। जिस हिस्से पर सूरज की रोशनी नहीं पड़ती, वहाँ अंधेरा रहता है। बाद में जिसे रात कहकर पुकारा गया।

समय बीतता गया। वहीं पेड़ पर हरे पत्ते आ गए। फूल आ गए। पेड़ फलों से लद गया। पतझड़ आया। फलों के साथ सैकड़ों बीज धरती पर गिर गए। हवा ने बीजों को दूर-दूर तक बिखेर दिया। धरती ने बीजों को अपने भीतर समेट लिया। बारिश हुई। अब धरती पर सैकड़ों पेड़ उग आए। धरती हरी-भरी हो गई। बादल रुक-रुक कर बरसते। अब पेड़ अकेला नहीं है। अब धरती भी उदास नहीं रहती।

भितांई, पोस्ट बॉक्स-23, पौड़ी, पौड़ी गढ़वाल,
उत्तराखंड-246 001, मो. 0 94121 58688

कहानी

शाहजी

◆ डॉ. रजनीकांत

यह उन दिनों की बात है जब मेरे पिताश्री अमृतसर से स्थानांतरित होकर हिमाचल में ऊना जिला के भँजाल गांव में आकर बस गए थे। मेरे पिताश्री अध्यापन व्यवसाय में थे ! मैं बताता चलूँ कि भँजाल गांव सुंकाली और अमलैहड़ के मध्य स्थित है। भँजाल गांव के बिलकुल साथ लगता अमलैहड़ गांव है। जहाँ पर रुद्र बाबा का प्रसिद्ध डेरा है। स्कूल के दूसरे छोर पर नकडोह गांव की सीमा प्रांरभ होती है। यह स्कूल सुंकाली की सीमा में आता है। इसके दूसरे छोर पर भंजाल की सीमा शुरू होती है। और यह मुबारिकपुर तक विस्तारित है। कोई पांच किलोमीटर की दूरी पर मुबारिकपुर स्थित है। यहीं से होश्यारपुर अथवा ऊना, हमीरपुर और ज्वालाजी के लिए बसें ली जा सकती हैं। हमने सुंकाली में किराये पर मकान ले लिया। मालिक मकान भी हमारे ननिहाल के गांव से थे। हमारे पास दो कमरे थे। आँगन पार करके रसोई का प्रावधान था। रसोई के बिलकुल साथ लगता सार्वजनिक मार्ग है।

इस मार्ग पर आगे जाकर दाईं ओर एक मंदिर है। मंदिर मार्ग आगे जाकर खड्ड में जाकर समाप्त हो जाता है। खड्ड में पानी हर मौसम में चला रहता है। खड्ड के दूसरी ओर एक घराट है। घराट के बिलकुल साथ कुआं है। कुएं के साथ एक बड़ा सा छायादार बहुत पुराना पीपल का वृक्ष है। इसी खड्ड में आगे जाकर क्रम से कम से कम तीन चार घराट स्थित हैं।

हमारी रसोई के साथ लगते बड़े -बड़े सेमल के वृक्ष हैं। हमारा सभी पड़ोसियों से परिचय हुआ। हमारी रसोई से कोई पचास कदम पर तुलसीराम शाह का घर था। घर में शाहजी और उनकी माँ दो जने रहते थे। शाहजी की माँ को मुहल्ले के सभी लोग शाहनी कह कर पुकारते थे। सुना है कि शाह जी की पत्नी भी पहले पहल उनके साथ रहती थी। लेकिन दोनों में नहीं निभी। कई कहते हैं कि सास बहु में नहीं बनी। एक दिन शाहजी और उनकी पत्नी होश्यारपुर कुछ सामान खरीदने गए। रास्ते में किसी बात को लेकर दोनों में कहासुनी हो गई। बात यहां तक बढ़ी कि शाहजी की पत्नी ने अपनी सुहाग चूड़ियाँ गगरेट के पास स्वां नदी में बहा दीं। कसम खाई कि मैं आज के बाद आपके साथ नहीं रहूंगी। मेरा और आपका रिश्ता खत्म। आप मेरे लिए मर गए और मैं आपके लिए। और उसने अपना वायदा मरते दम तक निभाया। शाह की पत्नी ने सुंकाली में कभी कदम तक नहीं रखा। उस दिन शाह अकेला घर पहुंचा। शाहनी माँ ने शाह को बुरा भला कहा। और उसे बहु लाने के लिए कहा। शाह बेचारा गया जरूर। मगर वह तो और ही किसी मिट्टी की बनी थी। उसने साफ इंकार कर दिया कि वह कभी अपने ससुराल में कदम नहीं रखेगी। पत्नी की जिद्द के आगे शाह को हार माननी पड़ी। शाह की पत्नी ने नहीं आना था।

शाहजी का घर दो मंजिला था। मकान के बिलकुल दायें छोर पर एक ओर गोहरण बनाई जरूर गई थी। लेकिन किसी मालपशु रखने की उन्होंने जेहमत कभी नहीं उठाई। मकान की छत के ऊपर स्लेट डाले गए थे। उपरली मंजिल पर बड़े बड़े तीन कमरों में बड़े-बड़े सगळे, पीतल के बर्तन, बलटोहियां, पीतल की बड़ी -बड़ी गागरें, लोहे की कडाहियां,पीतल की कडाहियां, पीतल की परातें, रखी हुई थीं। उन कमरों में दो दो लोहे के बड़े ताले जड़ दिए गए थे। जब कभी लोगों को शादियों में इन चीजों की जरूरत पड़ती तभी यह चीजें बाहर निकलतीं। शाहजी बर्तन ले जाने वालों को ताकीद कर देते कि बर्तन वापिस करते समय बर्तनों में मुंह लिश्कता हुआ दिखना चाहिए ! नहीं तो यहीं बैठकर तुम लोगों से बर्तन मंजवाऊंगा। शाहजी और उनकी माँ शाहनी एक नंबर के कंजूस थे। चमड़ी जाये पर दमड़ी न जाये। वे इस सिद्धांत पर विश्वास रखते थे ! शाहजी का कद पांच फुट पांच अथवा छह इंच रहा होगा। बाल बिलकुल सफेद चांदी जैसे हो चुके थे। आप उन्हें सिंगल हड्डी का कह सकते हैं। बिलकुल सींकिया पहलवान। मरियल। उन्हें लोग छेड़ते-शाह जी। सच बताना। कमर तो आपकी है नहीं। फिर नाड़ा कहाँ बांधते हो ? सुना है कि उनकी कमर ही नहीं, न जाने वो नाड़ा कहाँ बांधते हैं। तुलसी शाह मात्र उत्तर में खीसें निपोर देते।

सुंकाली में अधिकांश घर ब्राह्मणों के हैं किन्तु एक घर स्वर्णकारों का भी है। इनके साथ हमारे मधुर संबध थे। उस समय हमारे घर चूल्हा जलता था। हम बच्चे लकड़ियाँ लेकर चूल्हे के पास रख देते। कभी कभार भूपने की मदद से आग जलाने में माँ की सहायता भी कर दिया करते थे। माँ चूल्हे की गर्मागर्म सिंकती

रोटियां खाने को देती। मक्की की रोटी के हम खूब शौकीन थे। हमारी नानी ने माँ के लिए उपहारस्वरूप एक भैंस ननिहाल से भेज दी थी। कुंडे सींगो वाली काले रंग की भैंस। रसोई के बिलकुल सामने खुली जगह पर भैंस के लिए एक अस्थायी गोहरन बना दी गई। चारों ओर मेंहदड़ का बाड़ लगाकर उसके अदर घासफूस भर दिया गया। ताकि सर्दियों में इस निरीह पशु को सर्दी न लगे। सर्दियों में भैंस के लिए यह उपयुक्त जगह थी। माँ समय समय पर बच्चों को निर्देश देकर घास डलवाती रहती। पानी पिलाने के लिए अलग से बड़ी बाल्टी गोहरण में ही रखवा दी गई थी।

हमारा चूल्हा सारा दिन जला रहता। माँ चूल्हे में उपले डाल देती।

उपले जले रहते। इससे चूल्हे में कभी धुआं भी रहता किन्तु गोहटु सुलगता रहता। जब भी आग की आवश्यकता हो उपले से लकड़ियाँ जल उठती। चूल्हे के पिछलेभाग (पचोले) दधुनु में पानी उबलता रहता। शाहनी हमारे यहाँ से कड़छी में आग ले जाती। अधिकांश लोग चूल्हा जलाते। वैसे हमारे पास पीतल का स्टोव भी था। मिट्टी के तेल से स्टोव जलता। फर्न -फर्न की आवाज आती। हम बच्चों को इसकी आवाज बड़ी भली लगती। कई बार नहाने के लिए पानी गर्म करना होता तो बाहर खुली जगह पर दो ईंटें रखकर आग जला दी जाती। इस पर दधुनू रखकर पानी डालकर गर्म कर लिया जाता। पानी लेने के लिए हमें खड्ड में स्थित बावड़ी पर जाना पड़ता अथवा कुएं से लाना पड़ता। दूध-दहीं घर में हो तो सब्जी का कोई ज्यादा झंझट नहीं होता। कढ़ी बना लो, दहीं में पकौड़ियाँ डाल लो, लस्सी अथवा दहीं को बिलोकर पलदा अथवा रेहडू बना लो। हींग लगे न फटकड़ी रंग भी चोखा हो जाये।

शाहनी दूसरे तीसरे दिन लस्सी मांगने हमारे घर आ धमकती। मांगने में उसका कोई सानी न था। हम उसके मुंह बनाने की अदा से पहचान लेते। अब किसी चीज की मांग रख दी जाएगी। कोई न कोई चीज उनके घर खतम हुई होती। कभी चीनी के लिए कटोरी ले आकर आ जाती। कभी नमक की मांग करती। कोई न कोई मांग जरूर सरक जाती। लोगों से पता चला कि तुलसी शाह का एक बड़ा भाई दिल्ली सचिवालय में ऊँचे ओहदे पर तैनात है। उसके कोई लड़का नहीं है। दो बेटियां हैं। शाहजी का भाई बहुत कम गांव में आता। मुझे नहीं लगता हमने कभी उसे यहां आता देखा हो। पर तुलसी शाह अपने भाई की प्रशंसा अथवा जिक्र अवश्य करता। तुलसी शाह दिन में पांच चक्कर सुंकाली बाजार के लगा आता। तुलसी शाह अकसर ताराचंद हलवाई के यहाँ बैठा रहता। तुलसी शाह पांच जमात पढ़ा था। वह वहां रखी अखबार बांचता रहता। आराम से उसके दो घंटे यहीं पास हो जाते। कभी तारा हलवाई उसे चाय पीने को दे देता। चाय का वह बड़ा शौकीन था। आँख झपकते ही चाय का प्याला खाली कर देता। गर्म गर्म चाय पीने में उसका कोई सांई न था। कभी कभार दुकान में मौजूद ग्राहकों में शर्त लग जाती कि कौन व्यक्ति सबसे पहले चाय का कप खाली कर सकता है। तुलसी शर्त जीत जाता। शर्त लगाने वाले को उसे एक कप मुफ्त चाय पिलानी पड़ती। मुफ्त की चाय कितनी भी मिल जाये छोड़ता नहीं था। कहने को वह शाह था। घर में वह कमर में परना जैसा बाँधे रखता जो पीछे से बिलकुल फटा होता।हाँ बाजार जाते समय पायजामा पहन लेता। जो बिलकुल मैला चीकट होता। गांव में न कोई फंक्शन, शादी ब्याह अथवा भंडारा चला रहता। शाह को इसका पता चलना चाहिए वह सबसे पहले पहुँच जाता। वापिसी में वह अपनी माँ के लिए परोसा परने में बांधकर ले आता। इससे शाम का जुगाड़ भी हो जाता। तुलसी शाह की माँ शाहनी शकाय थी। आयु रही होगी पिचहतर के पार। धीरे-धीरे पुरानी चमड़े की पणियां(चपल) घिसटती हुई चली रहती। उसके आने का हम सभी को आभास हो जाता। पीठ पीछे सभी कहते -छुप जाओ आफत आ गई। शाहनी का नाम ही आफत माई पड़ गया था। घर का तो वैसे ही कुदयाड़ा था। औरत के रूप में बहू ही घर को संवारती है। यहां तो उनके घर में सब अस्त-व्यस्त पड़ा रहता। अब यह दोनों प्राणी जैसे समय काट रहे थे। या अपनी जून अथवा कजून काट रहे थे।

लोग पीठ पीछे कहते -मालिक का दिया सब कुछ है लेकिन इन दोनों माँ बेटे को खाने की आज्ञा नहीं है। वाह ठाकरा। तेरे रंग न्यारे हैं। जिनके पास पैसा है उनको खाने का हुकम नहीं। और जिनके पास साधन नहीं। वे दाने - दाने को मोहताज हैं, तुलसी शाह के पिता लोगों को ब्याज पर कर्ज देते थे। अष्टाम पर बदले में गैहणा अथवा जमीन रैहण लिखवा लेते। कहते हैं कि शाह के घर के बाहर तड़के ही कर्जा लेने वालों की लाइनें लगनी शुरू हो जातीं थीं। बड़े शाह की मृत्यु उपरांत कोई ऋणी पैसा देने नहीं आया। लोग बताते कि तुलसी शाह के पास मलकां के दुर्लभ सिक्कों का खजाना है। कोई बताता -शाह के पास सोने की ईंटें हैं।

पर शाह और माँ शाहनी के रहन सहन से पता नहीं चल पाता था कि वे सचमुच के शाह होंगे। शाह के माँ के कपड़ों पर पैबंद लगे होते। पर उसका सिर दुपट्टे से अवश्य ढका होता। एक ही सूट में माँ शाहनी पंद्रह दिन निकाल देती और महीने के बाद सभी कपड़े लेकर खड्ड में जाकर धोने लग जाती। साबुन के नाम पर गोलू की मिटटी अथवा चूल्हे की राख से कपड़े साफ करती। तुलसी शाह के कंजूसी के किस्से पूरे गांव में प्रसिद्ध थे। माँ जैसे तैसे तुलसी शाह का भरण पोषण कर रही थी। औरतें कहतीं कि शाहनी की आंखें बंद होते ही तुलसी शाह कैसे जी पायेगा। लोगों से मांग मांगकर शाहनी सब्जी ले आती। तुलसी शाह सवेरे एक गागर भरकर पानी ले आता। उनका गुजारा पूरे दिन के लिए हो जाता! तुलसी शाह की जमीन के नाम पर दो खेत थे। वह भी बिलकुल रास्ते के साथ लगते हुए। छोटे छोटे खेतों के लिए बैल वाला कोई जमीन जोतने के लिए तैयार नहीं होता था। कोई पुराना ऋणी टकर जाता।तो तुलसी शाह शेर हो जाता।

-ओये परीतमा, तेरे लगदे बब्ब एह खेत कुणी बाह्ने। चल मेरे कन्ने। हाण

तां मैं नई छड्डणा। तैं हाण मेते नीं बचणा। हुन मैं दिखदा तू मेरा कम्म कियां नी करदा। बेचारा शर्मो शर्मी उसके दोनों खेत जोत जाता। दोनों माँ बेटे के खाने लायक अन्न पैदा हो जाता। घराट से आटा खुद शाह पिसा कर ले आता।

-तुलसी शाह और उसकी माँ तो जून भुगतने ही इस धरती पर आये हैं। पुरखों की इतनी जायदाद है कि बेच कर खाते रहे। पर इन बेचारों को खाने का हुक्म नहीं। लगता है शाह की जायदाद पर तो किसी और का ही नाम लिखा है। पैसे के होते हुए भी जो आदमी दर बदर भटकता रहे। मांगता रहे उसका तो बेली ही वारिस है। लोग पीठ पीछे कहते।

शाह की गांठ में अब भी पैसा है। कई बार पार के गांव खरयाली, सिद्ध चलेहड़, भँजाल और नकड़ोह से लोग ऋण लेने शाह के पास सुबह डेरा लगा लेते। कहते हैं कि तुलसी शाह उनसे चक्रवृद्धि ब्याज वसूलता है। अनपढ़ लोगों से अंगूठा लगवा लेता है। किसी की जमीन लिखवा लेता है। तो किसी के गहने रैहन रखवा लेता है। निर्धारित तिथि को खुद धमक जाता है।

-ओये मंगू निकाल मेरे पैसे ब्याज समेत। आज तो मनयाद खत्म हो गई।

-शाह जी। बस मेरे लड़के ने ढऊये भेजने थे। बीमार हो गया बचारा। शाह जी।

आप तो जानते है बीमारी तो किसी को पूछ कर नहीं आती। अगले हफ्ते वह पैसे भेज रहा है हैं!. मेरे मालका मैं खुद औणा तेरे बहाल पैसे लई करी।

-लत्तां बड़ी देनियाँ तुहाड़ियाँ। मेरिया ड्योडिया पैर रखी करी दिख्यो। तुहाड़िया मारया माउ दा खसम। मैं हुन अपूँ नी औणा। पुलिस ही दस्तक देग।

(टांगें काट देनी हैं मैंने तुम्हारी। मेरे द्वार पर पैर रखकर देखना। मैं अब खुद नहीं आऊंगा। पुलिस ही दस्तक देने आएगी।) तुलसी शाह गालियां देता वापिस आ जाता।

-जे नी पुज्जे तां दिखी लियो। सारे डंगर नई खोली करी लई आंदे, तां मेरा नां तुलसी शाह नी। जोर जोर से लोगों को सुनाता कदम घर की ओर बढ़ाने लगता। वैसे इस संसार में रंग बिरंगे लोग हैं। कई लोग ऊपर वाले से खौफ खाते हैं। मगर कई खा कर मुकर जाने वाले भी होते हैं। ऐसे लोग तो औरों का खाकर डकार भी नहीं मारते। सुंकाली बाजार में परसा शाह की राशन की नामी दुकान हुआ करती थी। कुछ ही लोग नकद पैसे देकर चीजें ले जाते। अन्यथा बहुधा लोग उधार पर सामान ले जाते। अपने जमाने की यह पांच गांवों में एक मानी हुई दुकान थी। परसा शाहजी भी लंडे भाषा में लाल बही पर उधार का हिसाब लिख लेते। पांच के बीस ही लिखते। महाराज। शाहजी की जूतियां घिस गईं उन लोगों के घरों में चक्कर लगा -लगाकर। जिन लोगों ने लेकर खाया था। किसी ने पैसे उन्हें वापिस नहीं दिए। यह पैसे न मिलने थे न मिले। लोग साफ मुकर जाते। या बहाने पढ़ने लग जाते। परसा शाह खूब गालियां निकालते। पर ढीठ लोग लून -लोटा हाथ में पकड़कर मुकर जाते कि हमने परसा शाह से कोई उधार नहीं लिया। कहते हैं कि मूये और मुकरे का कोई ईलाज नहीं। एक दिन ऐसा आया कि चलती फिरती दुकान का कबाड़ा हो गया। परसा शाह अब एक -एक पैसे का मुहताज था। परिचित लोग उनसे सहानुभूति में शब्दों का फाहा भर रख देते।

जैसे तैसे शाह और उसकी माँ की जीवन यात्रा राम भरोसे चल रही थी। इसी बीच शाहनी भी प्रभु को प्यारी हो गई। तब भी तुलसी शाह का भाई गुरदास घर नहीं आया। सभी तुलसी के साथ सहानुभूति दर्शाकर चले गए थे। और तुलसी शाह अब हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया था। कोई दे जाये तो खा लेता। नहीं तो शून्य

शाह की गांठ में अब भी पैसा है। कई बार पार के गांव खरयाली, सिद्ध चलेहड़, भँजाल और नकड़ोह से लोग ऋण लेने शाह के पास सुबह डेरा लगा लेते। कहते हैं कि तुलसी शाह उनसे चक्रवृद्धि ब्याज वसूलता है। अनपढ़ लोगों से अंगूठा लगवा लेता है। किसी की जमीन लिखवा लेता है। तो किसी के गहने रैहन रखवा लेता है। निर्धारित तिथि को खुद धमक जाता है।

में निहारता बाण की ढीली चारपाई पर लेटा रहता। शाह का पोपला सा मुंह तो बिलकुल सूख गया था। लोग हँसते और मुंह पर कह देते -शाह तुलसी देखना तुझे इल्ल उठाकर न ले जाये। बोलते भी हैं न। रोई पिट्टी खसम कीता इल्ल पई चुक्की नीता। कहीं ऐसा न हो जाये। ओये बडड्या शाहा। अपने पेट में कुछ डाल लिया कर। यह पैसा धेला साथ नहीं जायेगा। भगवान की लीला देखो। जिसके पास पैसा-धेला है। उसे खाने की आज्ञा नहीं। और जो बेचारा दीन-दुखिया खाना चाहता है उसके पास पैसा नहीं है। किसी के पास बेशुमार दौलत है कि उसे इसका इलम नहीं है। ओ ठाकरा। तेरे रंग अनोखे हैं। तू ऊपर बैठा क्या क्या नाच नचाता रहता है। वहां से कठपुतली की तरह लोगों को नचाता रहता है। ओ मितरा। तुझे भी खाने का हुक्म नहीं है । उसका हमउम्र फत्ता लंबड़दार सबके सामने कह देता। बड़ा मुंहफट था फत्ता। कहते हैं शाह के साथ पांच जमाते पढ़ा है। बेचारा तुलसी शाह वहां से उठकर चला आता। अब वह अवश, असहाय और मजबूर व्यक्ति बनकर रह गया था। अन्न के चार दाने मुंह में डालता भी है। या भूखा रहता है। किसी को पता नहीं था।

माँ कभी कभार मुझे एक थाली में खाना लेकर शाह के लिए भेज देती।

-जा बेटा देख आ। तुलसी शाह ठीक तो है ? कहीं शाह बीमार- शमार तो नहीं। हम पड़ोसियों का भी कुछ फर्ज है। माँ थोड़ा सा दर्द देख पिघल जाती है। किरोसिये के बने रुमाल से ढकी थाली को पकड़ कर शाह के घर की ओर प्रस्थान कर जाता । मैंने देखा शाह ढीली जैसी चारपाई पर लेटा शून्य को निहार रहा था। मक्खियाँ उस पर भिनक रही थीं। वह मेरी पदचाप सुनकर उठकर बैठ गया था।

-आ मुन्नुआ। आ जा! यहां बैठ। शुक्र है मालिक का आज किसी माहणु के दर्शन तो किये। शाह की वाणी शहद से ओतप्रोत थी । मुंह से उसकी लार टपक रही थी। माल सामने जो था।

-बच्चेया। आज चाँद कैसे इधर निकल आया। मेरे धनभाग। मेरा मालका। आज किसी आदमी का चेहरा देखा। नहीं तो यहाँ कोई फेरा तक नहीं डालता। अकेला आदमी किसी काम का नहीं होता। भूत होता है।बच्चेया तुझे अभी इस बात का ज्ञान नहीं होगा। लेकिन जब मेरी उमर में पहुंचेगा तो खुद-ब-खुद पता चल जायेगा। मुझे लगा शाह अकेला टूट गया है। उसका पीला चेहरा बड़ा भयानक लग रहा था। चेहरे पर सफेद दाढ़ी बहुत खौफनाक लग रही थी।

-और सुना तू। कैसा चल रहा है तेरा स्कूल। अभी परीक्षा तो शुरू नहीं हुई होगी ?

-अंकल जी। कल से पेपर हैं। सो तैयारी चल रही है। तुलसी शाह ने थाली से सब्जी निकालकर कटोरी में रख ली थी ।

- बच्चे पढ़ लिखकर अच्छे आदमी बनो।नहीं तो हमारी तरह बुद्धू बनकर रह जाओगे। तुलसीशाह ने धीरे से कहा।

-रुक जरा, यह शीतलफल लेता जा। कुछ कच्चे हैं सो इनको आटे में या तूड़ी में डाल देना। पक जायेंगे। एक थैला भर शीतलफल मुझे देते हुए तुलसी शाह का चेहरा खिल उठा था ।

-यहाँ तो डारों की डार स्कूल के छोकरू आकर इन शीतलफलों पर चढ़ते रहते हैं. !देख कितनी टहनियां तोड़ दी हैं। इन फलों को लोग खाएं इससे बेहतर है कि हमारे अपने बच्चे खाएं तो मुझे खुशी होती है। खुश रहो बच्चे। खूब पढ़ो लिखो। अच्छे आदमी बनो। उसने मेरे सिर पर हाथ फेरते कहा था।

एकाकी मनुष्य कितना अकेला हो जाता है। इसका आभास मुझे उस दिन हुआ था। शाहनी की उपस्थिति में शाह खिला सा रहता। अब वह अंदर से टूट चुका था।

एक दिन मैंने देखा कि शाह सुबह सवेरे पिताश्री के साथ चारपाई पर बैठा वार्तालाप में व्यस्त था। चेहरे की रंगत उडी हुई थी। चेहरा मुरझाया और बेहद उदास था।

-शाह जी। और सुनाओ क्या हाल है ?

-मास्टर जी। हाल काहे का ? माँ थी तो दो जने आपस में गल्ल-बात करते रहते थे। दिन का पता नहीं चलता था। अब रातों को करवट बदलकर काट देता हूँ।

आपसे विनती है कि मेरे छोटे भाई को एक सखत सा पत्र लिख दो। कमीज की जेब से एक मुचड़ा सा अंतर्देशीय पत्र निकालकर पिता श्री को थमा दिया। शाह लिखाता जा रहा था। और पिताश्री लिखते हुए साथ साथ पढ़ते भी जा रहे थे!

मेरे प्यारे छोटे गुरदास,

बहुत प्यार। तू इक बार दिल्ली क्या गया ?वहां का होकर रह गया। मुझे लगता है कि तू वहां जाकर निर्मोही हो गया। आगे

तो तू इतना निठुर नहीं था। मुझे लगता है कि सारे गांव वासी शहर जाकर जालिम हो जाते हैं। कठोर हो जाते हैं। तुझे माँ के देहांत बारे पत्र भी लिखा पर तू नहीं आया। जिस माँ ने तुझे इतना बड़ा किया उसे ही भूल गया। अपने बच्चों में इतना मस्त हुआ कि अपने बड़े भाई की ही भूल गया। मर गया या जिंदा है। कभी खोज खबर या सुध नहीं ली तुमने। सुन गुरदास। मैं बहुत अकेला, मजबूर और अवश हो गया हूँ। घर में पुरखों की कुछ जमा पूंजी है। भाई आकर संभाल ले। यहां गांव में एक बार मुझ पर कातिलाना हमला तक हो चुका है। अब वह पुराना माहौल नहीं रहा। जब आदमी आदमी के काम आता था। अब तो आदमी ही आदमी का दुश्मन हो गया है। और सुन अब गांव में ही बरोजगारों की फौज खड़ी हो गई है। जो लूटखोह के लिए हर समय तैयार रहती हैं। मैं घर में अकेला पड़ा रहता हूँ। अब कोई सामने नहीं आता। कर्जा लेकर लोग मुकर गए हैं। कोई हक का पैसा देकर राजी नहीं। मेरे न कोई आगे है न पीछे हैं। न मुझे कोई लालच है। सो भाई आकर इस संपत्ति को आकर संभाल ले। अपने कब्जे में ले ले। फिर इसके बाद बेच या रख तेरी मर्जी। मुझे इस जायदाद की बड़ी फिक्र हो रही है। यह चिट्ठी न समझकर, तार समझना। रब्ब राखा।

तुम्हारा बड़ा भाई ,

तुलसी।

पिताजी ने पत्र लिखकर एक बार जोर से बांच दिया। एक पुराने से कागज पर भाई का पता लिखा था। पिताश्री ने बाहर पता भी लिख दिया। एक बार फिर पूरा पत्र पढ़कर सुना दिया। तुसली शाह अब संतुष्ट था। फिर शाह ने वह पत्र पिताश्री को सौंप दिया और जिम्मेवारी दे दी कि पत्र लेटर बॉक्स में भी डाल देना। भाई को कहाँ फुर्सत कि यह पत्र वांचे। भाई ने नहीं आना था नहीं आया।

एक दिन तुलसी शाह भी प्रभु को प्यारा हो गया। किसी ने तार दे दिया। तब भाई को होश आया। अपनी दोनों लड़कियों को साथ लेकर एक बड़ी सी गाड़ी में आया। प्रभावशाली व्यक्तित्व। कानों के पास चांदी चमक रही थी। कहते हैं बड़ी लड़की एम्स में चिकित्सक है। दूसरी लड़की फॉरिन एम्बेसी में सचिव पद पर तैनात है। सारी अंतिम रस्में खुद निभाई। गांव वाले कह रहे थे।

छोटे भाई ने अपना कर्तव्य निर्वहन में कोई कोर कसर नहीं रखी। सोलवें दिन सोला किया गया। पूरे गांव को बुलाया गया। छोटे बड़े सभी आये। विशेष रूप से बोटी पालमपुर से बुलाये गए। तगड़ी धाम दी गई।बासमती चावल बरताये गए। मीठा सलूना, चने की दाल, मांह की दाल, कई प्रकार की सुखी सब्जियां और विशेष मधरा, तैयार किये गए। सभी चीजें देसी घी में तैयार की गईं। मुहल्ले में देसी गहि की सुगंधि दूर से आ रही थी। सभी गांववासी कह रहे थे कि छोटे भाई ने गांव में एक बार बल्ले बल्ले करवा दी।भाई हो तो गुरदास जैसा।

-भाई। मन की कह रहा हूँ। आज भोजन से तृप्ति हो गई। आँखें भी भर गईं। और

पेट भी भर गया। देखा नहीं कैसे लोग उंगलियां चाट रहे थे। देखो तुलसी शाह पूरी उम्र मांग मांग कर खाता रहा। सच कह रहा हूँ भाई, आज तुलसी शाह की आत्मा प्रसन्न हो गई होगी। ऊपर से देखकर कहती होगी काश मुझे भी ऐसा खाना किसी ने परोसा होता। मूआ। पूरी उमर पेट काट काट कर जीता रहा। कंजूसी करता रहा। उसकी माई लीरें लटकाकर घूमती रही। सब कुछ होते हुए खाने का हुकम नहीं मिला। भरपेट कभी खाया नहीं। साला यह भी कोई जीना हुआ। लख लानत है ऐसे जीने पर। लंबड़ किसना किसी से बतिया रहा था।

-भगवान किसी के आगे हाथ न फैलाना पड़े। किसी के आगे हाथ न अड्ना पड़े मितरो।

-छोटा भाई भी जग हसाई से बचने के लिए आया है। कोई कह रहा था।

- असली माल मत्ता तो इस भाई का है। वह गरीब तो बेचारा पूंजी की हिफाजत ही करता रहा।जैसे पुराने जमाने में किसी खजाने की सुरक्षा कोई अजगर किया करता था बिलकुल वैसे ही। तुलसी शाह भी मुझे लगता ही कि पुराने जमाने में कोई सांप रहा होगा। कुंडली मारकर खजाने की राखी करने वाला। कोई कह रहा था।

अगले दिन भाई ने लोहे के बड़े बड़े ताले तोड़े। कई सगळे, असंख्य पीतल की परातें, कडाहियां, पीतल की गागरें, कडछियां, कितना सामान निकला। एक ट्रक में सारा सामान भरा गया। गगरेट ले जाया गया। बड़ी बर्तन की दुकान में सब चीजों की तोल -तुलाई की गई। किलो के हिसाब से दुकानदार ने सभी चीजों का तोलमोल किया। दुकानदार ने गिनकर पैसे दे दिए। भाई ने पैसे जेब में ठूंस लिए। एक ट्रंक से कितने ही अष्टाम के कागजात मिले। कर्जाइयों के कागज। गाँव के दो मोहतवर लोगों को साथ लेकर छोटा भाई गांव गांव घूमा। अधिकांश लोग मुकर ही गए। मुकरे और मूओं का क्या इलाज ? लोग कहते हैं सोने को वे साथ ले गए। दूसरे दिन छोटा भाई मोल भाव करके जमीन और मकान किसी को बेच गया अम्ब शहर जाकर रजिस्ट्री भी हो गई। अच्छे खासे पैसे भाई गुरदास ने अपनी जेब में डाल लिए। अगले दिन छोटा भाई और उसकी दोनों लड़कियां गाड़ी में बैठकर फुर्र हो चुके थे।

अब शाह तुलसी और शाहनी बीती बात की तरह भुलाये जा चुके हैं।

राजविला, लोअर कैथू शिमला -171003
चलित -94183 44159

कहानी

जानवर

◆ सुशांत सुप्रिय

उस पहाड़ी शहर की धर्मशाला में यह उसकी अंतिम रात थी। सर्दियों की उस बरसाती रात में जलते हुए हीटर के चारों ओर हम सब बैठे थे -- मैं, दिनेश, करतार, महेश , मैडम मैरी और इरफान।"

"तो तुम्हें लगता है कि वहाँ कोई भयानक जानवर था ?" मैंने पूछा। 'और उसी जानवर ने उस लड़की को मार डाला ?"

'हाँ , यह काम किसी जानवर का ही है।' उसने कहा।

"महानगर में जानवर कहाँ से आएगा ? जानवर तो जंगल में होते हैं।" करतार बोला।

"कंक्रीट-जंगल में भी वहशी जानवर होते हैं।" उसने एक जलती हुई निगाह हम सब पर डालते हुए कहा।

"अब तुम क्या करोगे, दिनेश ? पुलिस को तुम पर शक है। तुम आगे कहाँ जाओगे ? आगे तो जंगल है। वहाँ खूँखार जानवर रहते हैं।।" मैडम मैरी ने चिंता जताई।

"वे उन वहशी जानवरों से खतरनाक नहीं होंगे जो कंक्रीट-जंगलों में रहते हैं।" उसने कहा।

"कौन से कंक्रीट - जंगल ?" मैंने पूछा।

"जिन में इंसान नाम के दरिंदे रहते हैं।" उसकी निगाहें हम सब को चीर रही थीं।

"अगर तुमने कुछ नहीं किया है तो तुम भागे-भागे क्यों फिर रहे हो , दिनेश ?" इरफान ने पूछा।

"मैं दुनिया से नहीं , अपने वजूद के उस हिस्से से भाग रहा हूँ जिस में जानवर के अंश हैं।" उसने ऐसे कहा जैसे वह रोजमर्रा की कोई सामान्य बात कह रहा हो।

वह दिल्ली में एक पत्रकार था। मीडिया में सक्रिय था। फिर एक दिन अचानक उसके पड़ोस में रहने वाली उसकी एक महिला सहकर्मी की निर्मम हत्या हो गई थी। शक की सुई उस पर भी गई। लेकिन उसका कहना था कि वह बेकसूर था। उसे फँसाया जा रहा था।

बाहर बारिश होने लगी थी। ठंड बढ़ गई थी। हमने अपने इर्द-गिर्द कम्बल को कस कर लपेट लिया।

"... हाँ, मैं कह रहा था कि मैं मुजरिम हूँ। लेकिन मैंने उस लड़की का कत्ल नहीं किया।" वह उत्तेजित हो कर बोला।

"क्या मतलब ?" करतार ने पूछा।

"यारों , मैं उसी तरह मुजरिम हूँ जिस तरह तुम सब हो। हम सब दुनिया में होने वाले हर अपराध , हर गुनाह के लिए समान रूप से दोषी हैं, मुजरिम हैं , क्योंकि हम सब कुछ देखते हैं फिर भी खामोश रह जाते हैं। हम सच्चाई के पक्ष में खड़े होने की हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं। हम अन्याय का विरोध करने के लिए साहस नहीं बटोर पाते हैं। इस लिहाज से मैं भी तुम सब की तरह ही मुजरिम हूँ।"

"और वह कत्ल ?"

"केवल वही कत्ल क्यों ? ऐसे सैकड़ों कत्ल हुए हैं , रोज हो रहे हैं। जब तक बात हम तक नहीं आती , हम इन्हें आँकड़े भर मान कर पहले जैसा जिए चले जाते हैं। जैसे कुछ हुआ ही नहीं हो। यह अंधा स्वार्थ ही एक दिन इंसान को ले डूबेगा।" वह आवेश में आ कर बोला।

तभी पूरे इलाके की बिजली चली गई। कमरे में कुछ देर हीटर के गरम रॉड की नारंगी रोशनी रही। फिर अँधेरा गाढ़ा हो कर सबके चेहरों पर चिपक गया।

हम में से किसी ने टॉर्च जला कर उसकी रोशनी छत की ओर कर दी। लगा जैसे हम सब सदियों से यूँ ही एक साथ उस मद्धिम उजाले में बैठे हुए हैं -- उस सुबह की प्रतीक्षा में जो न जाने कब आएगी।

"तो वह कत्ल तुमने नहीं

किया?" मैंने पूछा।

"मैंने कत्ल किया है। हाँ मैंने कत्ल किया है। लेकिन अपनी अंतरात्मा का। अपने विवेक का। अपने भीतर की आवाज का। कई बार मैंने ऐसे समझौते किए हैं जो मुझे नहीं करने चाहिए थे। लेकिन यारो, उस लड़की का कत्ल मैंने नहीं किया है।" वह बोला।

"तो पुलिस तुम्हें हत्यारा क्यों समझती है, दिनेश ? इस कत्ल के लिए वह तुम पर शक क्यों कर रही है ?" करतार ने पूछा।

"कितनी अजीब बात है, दिनेश,' अब वह खुद से मुखातिब था ," कितनी अजीब बात है कि जो कत्ल वाकई तुमने किए उनके लिए तुम्हें कभी किसी ने मुजरिम नहीं ठहराया। जब तुमने अपने जमीर का कत्ल किया , तब सब चुप रहे। जब तुमने अपनी अंतरात्मा को मारा , तब भी तुम अपराधी नहीं ठहराए गए। जब तुमने अपने विवेक की हत्या की , तब भी तुम गिरफ्तार नहीं किए गए। कितनी अजीब बात है , दिनेश कि उन्होंने तुम पर उन कत्लों के इल्जाम लगाए जो तुमने कभी किए ही नहीं ... यारो, मैं मानता हूँ कि मैं कातिल हूँ। लेकिन उस तरह , जिस तरह तुम सब भी कघतिल हो ...।" वह बोलता चला जा रहा था। हम सब ध्यान से उसकी बात सुन रहे थे।

"... मैं भी तुम सब की तरह आँखें बंद किए जिए जा रहा था। लेकिन एक रात अचानक मेरी लम्बी नींद खुल गई। मैंने अपने आस-पास देखा। पूरी इंसानियत के हाथ खून से रंगे हुए थे। सब के चेहरों पर खून के छींटे थे। सब के कपडे खून से लाल हो गए थे। चारो ओर केवल लाल रंग नजर आ रहा था। लहू का लाल रंग। बाकी सभी रंग न जाने कहाँ खो गए थे। मैंने अपने कपड़ों को छुआ। मेरे हाथों में खून लगा हुआ था। बचपन से उस दिन तक मेरे भीतर के हैवान ने आगे बढ़ने के लिए, समझौते करने के लिए जिन-जिन सच्चाइयों को मारा, उन सब का चिपचिपा लहू मेरे हाथों में लगा हुआ था। मेरे चारो ओर बर्बर हैवान थे, जिनके मुँह पर खून लगा हुआ था। उस रात के बाद से मैं लगातार भाग रहा हूँ। शायद अपने -आप से। लेकिन खुद से पीछा छुड़ाना बहुत मुश्किल है , यारो।"

उसकी आवाज बहुत दूर से आ रही थी। जैसे सैकड़ों-हजारों बरस की दूरी से। असंख्य पीढ़ियाँ लाँघकर। या जैसे वह आवाज ब्रह्मांड के अंतिम छोर पर स्थित किसी सुदूर ग्रह-नक्षत्र और आकाशगंगा से आता हुआ कोई विरल संकेत हो। हम सब अवाक् हो कर उसकी ओर देख रहे थे।

"... मेरा जिस्म वह कब्र है जिसमें मेरी सच्चाइयों की लाशें दफन हैं। मेरी अंतरात्मा की लाश , मेरे जमीर की लाश और मेरे विवेक की लाश भी यहीं दफन हैं। हाँ, मैं मानता हूँ कि मैं कातिल हूँ। लेकिन उस लड़की का कत्ल मैंने नहीं किया है , यारो।" इतना कह कर वह चुप हो गया।

उसकी बातें सुनते-सुनते हम सब थक गए थे। उसकी बातों का बोझ हमारे जहन पर था। नींद हम पर फिर से हावी होने लगी थी। बाहर बारिश शायद रुक गई थी। सन्नाटे में कभी-कभी कोई झींगुर बोलता और फिर चुप हो जाता।

"अपने चारों ओर यह खून-खराबा देख रहे हो ? अब जानवर जंगल में नहीं, कंक्रीट-जंगल में रहते हैं, यारो। अब जानवर बाहर नहीं, हमारे भीतर मौजूद हैं, यारो। अब हम आगे नहीं जा रहे, वापस पाषाण-युग में लौट रहे हैं , यारो ...।' वह धीमे स्वर में कह रहा था।

फिर हम सो गए। जब अगली सुबह हम उठे तो वह वहाँ नहीं था। धूप दबे पाँव कमरे में घुस आई थी और सामने की दीवार को रोशन कर रही थी, जिस पर बड़े-बड़े अक्षरों में चौक से लिखा था।

"लाखों साल लग गए
हमें जानवर से इंसान बनने में ,
चंद सदियाँ ही लगीं हमें
इंसान से फिर जानवर बनने में ...।"

ए-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम ,
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश-201014, मो. 0 85120 70086

लघु कथा

मोहभंग

◆ पवित्रा अग्रवाल

सुबह की सैर के समय दोस्त स्मिता ने पूछा-

"पूनम, आज अहोई आठें हैं, तुमने तो व्रत रखा होगा?"

"नहीं स्मिता, इस बार नहीं रखा।"

"तुम तो हमेशा बड़ी श्रद्धा से यह व्रत रखती थीं, इस बार क्यों नहीं?"

"बस ऐसे ही, अब भूखा नहीं रहा जाता।"

"नहीं यार, बात तो कुछ और है, तू बहुत उदास भी दिख रही है।"

"अब क्या बताऊं, इन व्रत उपवासों से मोहभंग हो गया है। एक ही बेटा है जिसके जन्म लेने से पहले ही उसके पिता की मौत हो गई थी। मेरे माता-पिता ने दूसरी शादी करने के लिए बहुत जोर डाला था, पर बेटे के प्रति फर्ज और ममता ने कुछ नहीं सोचने दिया। आज वही बेटा दूर बहुत दूर अपने बीवी-बच्चों के साथ अमेरिका जा बैठा है और कभी दिखावे के लिए भी नहीं कहता कि अब आपको मेरे साथ रहना है।"

घरोंदा-4-7-126 इसामियां बाजार, हैदराबाद,
तेलंगाना-500 027, मो. 0 72071 75464

उमेश शर्मा की कविताएं

सच और झूठ

बहुत ही कम होता है सच और झूठ का फासला
परिस्थितियों को देख कर लोग भजते हैं परमात्मा
अपने निज मतानुसार खेलते हैं ज़िंदगी का खेल
अकसर विफलताएं, निराशा ध्यान दिलाते, दूसरे क्या रहे हैं बोल
हमारा सच, दूसरों के लिए झूठ भी हो सकता
क्या सच और क्या झूठ, कौन विश्वास से कह सकता?

पूर्ण सत्य स्वयं महसूस किया जा सकता
वह दूसरों को दिखाया नहीं जा सकता
वो परम सत्य का मार्ग तो बता सकते
पर दूसरों को वहां तक पहुंचा नहीं सकते
सत्य की अनुभूति एक निरंतर, निश्छल प्रयास से संभव होती
कहीं प्रकाश भी होता है, जब पृथ्वी यहां अंधेरे से घिरी होती

यहां की अंधेरी रात है अगर सच
तो वहां का उजाला भी तो झूठ नहीं
तर्क शास्त्र के मंथन से ज्ञान तो निकलता
पर उसे पाने को निज मत को छोड़ना होता
जीवन में प्यार है बहुत ज़रूरी, पर इसका विस्तार करना होता
संसार की संवेदनाओं की अनुभूति के लिए समभाव होना होता।

चुनौती

हर कदम पर बेड़ियां
कदम बढ़ाया, कुछ भी नहीं
हर कदम चुनौतियां
राह में हैं मुश्किलें।
दिमाग का है ये खेल
है भ्रम का सियासी जाल
बढ़ते कदमों को थामता
स्वयं का स्वयं पर अविश्वास।

बड़ी से बड़ी चुनौती का पहाड़
विचार-शक्ति, आत्म-शक्ति से छोटा
जब कभी पाई न गई मंज़िल
दिखाई दिया, कांप रहे थे हाथ।
साधते समय निशाना
छोड़ते वक्त तीर
पक्का न था इरादा
शांत न था चित्त।

पहुंच चुके हो चांद पर
अब मंगल पर जीवन की खोज में
जीते बिना इस मन को
हासिल न होता कुछ भी।

अगले पल क्या

एक बार फिर राह पर
ठिठक गए कदम।
खामोशी, अभेद्य चुप्पी
दिल गया सहम।
लो फिर घट गया
या ये है भ्रम मेरा।
अनिष्ट का बढ़ता दायरा
इन्हीं का बाज़ार है गर्म।
हर पल अनहोनी
आशंका तैयार हरदम।
बात हुई पुरानी
जब दूसरे के ग़मों में
आंखें होती थीं नम।
आज हर आतंकित भाव
मांग रहा है रहम।

निर्मला आश्रम, 41/21, निर्मला छावनी, हरिद्वार,
उत्तराखंड-249 401, मो. 0 98370 19361

अरुण कुमार नागपाल की कविताएं

रिवालसर

घने पेड़ों और ऊंचे पहाड़ों से घिरी
पवित्र रिवालसर
कुदरत का दुर्लभ नज़राना है
सच्ची खुशियों का खजाना है
इसके एक किनारे से दूसरे किनारे तक
तैरने वाले मिट्टी के टीलों में
निवास है गुरु रिमबोछे की आत्मा का

रिवालसर सिर्फ एक झील नहीं है
यह एक त्रिवेणी है
प्रेम, सौंदर्य और धर्म की
साधना की पुण्यभूमि है
गौरव है हिमाचल का।

रिवालसर नहीं रही है ऐसी
जैसी मेरी पांचवीं कक्षा की
हिंदी की किताब में थी
पढ़ते-पढ़ते तब ऐसा लगता था
मानो बहने लग गई है
रिवालसर कक्षा में।

आज डूब रहा है
रिवालसर का वुजूद
मिल गया है झील के पानी में
सिवरेज का गंदा पानी
भर गई है गाद
तड़प-तड़प कर मर रही हैं मछलियां
फैल रही है दुर्गंध।

आखिर कितना झेले झील?
आओ हम सब मिल कर बचा लें
मछलियों को
रिवालसर को
और अपनी मर रही संवेदना को।

जंगल की आग

धधक रहे हैं जंगल
फैल रही है आग
जल चुके हैं असंख्य पक्षी
हो गए हैं उनके अंडे राख

झुलस गई है बुलबुल
तितली, पीहुआ और मोर का अस्तित्व खतरे में है

क्यूं धू धू कर जलते हैं जंगल
कम से कम खुद व खुद तो नहीं सुलगते हैं जंगल
एक जलती माचिस की तीली
या बीड़ी का अधबुझा टुकड़ा
और या फिर हमारा लोभ
बन जाता है बायस
जंगल में आग का

क्या यूं ही मूकदर्शक बने रहेंगे हम
अनभिज्ञ हैं शायद हम
कि जंगल की आग
हमारे मकानों तक नहीं पहुंचेगी।

धौलाधार कॉलोनी, नगरोटा बगवां, जिला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश-176 047, मो. 0 94181 65671

कविता

नशे का अंधा कूप

◆ अर्जुन सिंह नेगी

शहर और गाँव की गलियों में
मिल जाते हैं नौजवान
सिगरेट का धुआं उड़ाते
चरस अफीम गांजा, हो गए हैं आम नशे
अब तो चलती हैं, नशे की गोलियां, इंजेक्शन,
अन्य मादक द्रव्य और सूंगने के नशे
अपने रक्त में नशे की मिलावट कर
रहते हैं मदहोश
दिन दुनिया से बेखबर, चिंतामुक्त
नशे के अंध कूप में
इस देश का नौजवान
भूलता जा रहा है अपनी शक्तियों को
खो रहा है स्वाभिमान
तन-मन-धन से होता जा रहा
निर्बल और रोगी
भरी जवानी में नशे के लिए कांपता बदन
दिखाता है उसकी लाचारी
और नशे की गुलामी
ऐसी गुलामी जो करवाती है कई अपराध
शक्ति जो सृजन में सहायक होती
बन जाती विध्वंस का कारण
जो हाथ चरण छूने के लिए उठने थे
नहीं कतराते माता पिता की मारपीट से
चोरी, गुंडागर्दी, यौन अपराध
हर बुरा काम करवाती है नशे की गुलामी
माता पिता को कहाँ मालूम
उनके लाडले घर से निकले तो स्कूल-कॉलेज
पर खो गए नशे के गहन गर्त में
जिस आजाद देश का युवा
ऐसी गुलामी की जंजीरों मे जकड़ा हो
इससे बड़ी क्षति नहीं हो सकती देश की
आओ मेरे युवा मित्रों! ये आह्वान है मेरा
छोड़ दो ये गुलाम करने वाले नशे
पहचानो अपने अन्दर की शक्ति को
तुम गुलामी के लिए नहीं बने हो
बने हो आजाद रहने के लिए
ऐसी आजादी जिसमें जिम्मेदारी की कैद भी हो
आओ नशा करें, जो मेरे तुम्हारे सबके लिए
बेहतर और सुखद हो
देश के लिए कुछ कर गुजरने का नशा
बेहतर इंसान बनने का नशा
जो मिसाल हो आने वाली पीढ़ियों के लिए भी

नारायण निवास, कटगाँव, तहसील निचार
जिला किन्नौर, हिमाचल प्रदेश -172118

कविता/नई कलम

धरती की बेटियां

◆ शिवम

खुशबू हूं इस मिट्टी की मैं
इसको बचाना चाहूंगी
इसमें मैं पैदा हुई हूं
इसी में समाना चाहूंगी।

आन न्योछावर कर दूं इस पर
शान मैं इसकी बढ़ाऊंगी
इसमें पैदा हुई मैं बेटी
इसी में समाना चाहूंगी।

बुरी नजर कोई डाले इस पर
सर्वनाश मैं उसका कर जाऊंगी
आंच ना इस पर आने दूंगी
खुद भले ही मर जाऊंगी।

कमजोर न समझना मुझको तुम
मेरे साथ हैं अरबों खड़ीं
हम सब हैं इस धरती की बेटियां
जो इस धरती को बचाएंगी
इसमें पैदा हुई हैं हम
इसी में समाना चाहेंगी।

गांव भटेड़, डाकघर मोहीं, तहसील एवं जिला हमीरपुर,
हिमाचल प्रदेश-177 030, मो. 0 97363 23582

व्यंग्य

तलाश डेडिंग प्लानर की

◆ अशोक गौतम

रिटायरमेंट के बाद उनके ऐसे हाल हुए कि मत पूछो तो ही भला! वे घर में जरा से भी बीमार होते तो उनके घरवाले उनके ठीक होने की उम्मीद छोड़ अगली तैयारियों के लिए एक दूसरे का मुंह ताकने लगते। पर एक वे बेचारे रिटायरी थे कि हर बार अपने दम पर बीमारी से उठ ही जाते जैसे- कैसे।

अबके फिर वे बीमार हुए तो उनके घरवालों ने तो उनके ठीक होने की उम्मीद पहले की तरह छोड़ ही दी पर हमने भी उनके ठीक होने की उम्मीद छोड़ दी। लगा, अब वे अगले महीने की अपनी पेंशन नहीं ले पाएंगे। यही सोच मैंने भी सोचा कि इससे पहले कि उनको कुछ हो हवा जाए तो मैं भी उनके हालचाल पूछ अपने सामाजिक दायित्व से मुक्ति पा लूं। कहीं कल को मन में ये मलाल न रहे कि बंदा मेरे पूछे बगैर ही चला गया। सो शाम को जल्दी से ऑफिस से आ सीधा उनके घर जा पहुंचा उनके हालचाल पूछने। ताकि बंदे को ऐसा न लगे कि मैं उनका अहसान फरामोश दोस्त हूं।

उनके कमरे में घुसा तो वे अपने कमरे में पुरानी सी रजाई में दुबके हुए थे। मेरे आने की आहट से ही वे सजग हुए तो लगा दोस्त अभी जाने वाले नहीं। उनके घरवाले ही उन्हें जबरदस्ती भेजने को अड्डे हैं।

उस कमरे में टेबुल पर उनकी दवाइयों के लिफाफों, बिजली की तार में अपना गला जबरदस्ती फंसाए होल्डर में जीरो वॉट के लटके बल्ब के सिवाय उनके पास कोई और न था। हां, सामने दीवार पर उनकी जवानी के दिनों की फोटो पर रंग बिरंगे कागजों की वह माला जरूर पड़ी थी जिसे उनके विभाग वालों ने बड़ी सोच समझ, दूर की सोच के बाद उनके गले में तब डाला था जब वे ऑफिस से घर को रिटायरमेंट के बाद आखिरी बार आए थे, सिर झुकाए।

अब किसी बीमार के पास कोई एक दिन रहे, हद हो तो दो दिन रहे। सारा दिन तो किसी को अपने पास तक बैठने की फुर्सत नहीं तो बीमारों के पास खाक बैठे?

'और भाईजान कैसे हो?' मैं उनके सिरहाने के साथ रखे उनकी ही तरह के स्टूल पर उनसे उनका हाल पूछने बैठा तो वे खांसते बोले,' कैसा हूंगा यार! जो कट जाए बेहतर।'

' क्यों??' अभी तो तुम्हें......'

' नहीं यार! अब लगता है चले जाना चाहिए,' कह वे बंद खिड़की से बाहर की ओर देखने लगे।

' क्यों??' देखो तो सरकार ने दस प्रतिशत डीए अनाउंस कर दिया। पिछला सारा एरिअर एक मुश्त ,'मैंने सोचा था डीए की बात सुनकर वे बल्लियां उछलेंगे पर वैसा कुछ नहीं हुआ। जबकि डीए मिलने की खुशी में तो आज की डेट में मरी आत्मा तक नरक में भी खुशी से झूम लेती है, लड्डू बांट लेती है।

'पहले कितना था डीए?' मैंने यों ही पूछ लिया उनकी मीमोरी को चेक करने के लिए पर वे कुछ नहीं बोले। लगा, डीए से उनका मोह भंग हो गया हो जैसे। फिर कुछ देर तक बंद दरवाजे से बाहर की ओर झांकने के बाद बोले, 'अच्छा एक बात बताओ?'

'पूछो।'

'तुम्हारी नजर में कोई डेडिंग प्लानर है शहर में अच्छा और सस्ता?'

'डेंडिंग प्लानर?? सुन मैं चौंका। वेडिंग प्लानर तो सुना था पर डेडिंग प्लानर! अब ये क्या नई बला है? जब समझ नहीं आया तो उनसे पूछा,' यार! वेडिंग प्लानर के बारे में तो बहुत सुन रखा है पर ये डेडिंग प्लानर के बारे में तो तुमसे ही सुन रहा हूं। आखिर ये डेडिंग प्लानर बोले तो??'मैंने उनकी ओर उत्सुकता भरी नजरों से देखा तो वे बोले,' यार! सारी जिंदगी कट गई दौड़ भाग में। अपने लिए एक पल भी न जिआ। जितनी बार अपने लिए जीने की सोची कि तभी कोई न कोई सीना तान कर मेरे आगे खड़ा होता रहा कि पहले मेरे लिए जी, फिर अपने लिए जीना। तुम्हारे पास अपने जीने के लिए अभी तो पूरी जिंदगी पड़ी है। यों ही यह सोचते- सोचते कि आज इसके लिए जी लेता हूं, तो कल अपने लिए जी लूंगा। सबके लिए जीते -जीते जिंदगी ही कट गई।'

'तो?? जिंदगी इसीका तो नाम है।' मैं दसवीं पास दार्शनिक हुआ।

'तो क्या! अब सोच रहा हूं, अपने लिए बेहतर ढंग से जी तो न सका, कम से कम शान से मर तो सकूं,' कह वे हंसे कम , खांसे अधिक।

'तो??'

'कोई बेहतर सा तुम्हारी नजरों में डेडिंग प्लानर हो तो..... मरने में जरा आनंद आ जाएगा और क्या!'

'मतलब??' मुझे लगा बंदे जाने से पहले पगला गए हैं ताकि जाने का पता ही न चले, सो मैंने उनसे गंभीर होते पूछा,' पर यार, ये डेडिंग प्लानर बोले तो?'

'अरे यार! खा गया न गच्चा! जिस तरह से वेडिंग प्लानर

किसी के विवाह के हर इवेंट को सलीके से उसकी जेब की हिसाब से मुस्तैदी से निमंत्रण पत्र की डिजाइनिंग से लेकर बारात के स्वागत तक का सारा भार अपने कंधों पर संभालता है वैसे ही डेडिंग प्लानर किसी के मरने पर उसके मौत के उत्सव को उसकी जेब के हिसाब से घर से श्मशान तक मुस्तैदी से मैनेज कर उसे अविस्मरणीय बना देता है?' कह वे मेरा चेहरा देखने लगे तो मैं उनका।

'पर मरने पर मौत को हैसियत के अनुरूप यादगार बनाने की क्या जरूरत? कौन सा मरने की सीडी ऊपर बतानी है।' 'अरे भैया! परिवार वाले औरों को तो बताएंगे न! आज विवाह की तरह मृत्यु भी प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गई है। मैं अपने विवाह को तो यादगार बना नहीं पाया था पर अब अपनी हैसियत के अनुरूप इसे यादगार और भव्य बनाना चाहता हूं। क्या है न कि दोस्त! अब मौत का समारोह भी प्रोफेशनल हो गया है।

जीते जी तो आज किसी के पास समय है ही नहीं, पर मरते हुए भी किसीके पास समय नहीं। जितनी आकांक्षाएं हमारी जीते जी नहीं होती उससे कहीं अधिक इच्छाएं हमारी मरने के वक्त होती हैं। अब तक तनाव में बहुत जी लिया मेरे दोस्त! अब मैं कम से कम परेशानी में मरना नहीं चाहता। पता नहीं मेरे घरवालों के पास मेरे मरने पर मेरे लिए वक्त हो या नहीं। बस, इसीलिए मैं चाहता हूं कि कोई ईमानदार सा डेडिंग प्लानर मिल जाए तो बंदा भवसागर पार हो जाए। ऐसा कोई तुम्हारी नजरों में हो तो उससे सारा खर्चा पूछ लिया जाए ताकि बाद में समारोह में अड़चन पैदा न हो। घरवालों को एक दूसरे का मुंह खर्चे के लिए न ताकना पड़े। मरने के बाद कम से कम एक इंतजाम की चिंता तो नहीं रहेगी। हम जैसे जिए तो सदा चिंताओं में ही मेरे दोस्त! जो मरे भी चिंताओं में तो क्या मरे। इसलिए अगर कोई जान पहचान का मेरी रेंज का डेडिंग प्लानर तुम्हारी नजरों में हो तो मुझे उसका फोन नंबर दे दो। तुम्हारा बहुत आभारी रहूंगा,' कह वे मेरी ओर ऐसे देखने लगे जैसे मेरे पास उनकी समस्या का पक्का समाधान हो।

गौतम निवास, अप्पर सेरी रोड,
सोलन-173212 हि.प्र.

समीक्षा

संभावनाओं भरे क्षितिज

-डॉ. ओमप्रकाश सारस्वत

काव्य संग्रह : क्षितिज, कवि : डॉ. प्रेमलाल गौतम 'शिक्षार्थी',
प्रकाशक : छोटा पुस्तकालय समलोह, पत्रालय,
नवगांव, अर्की, सोलन, हि. प्र.-171 102

संस्कृत के प्रतिष्ठित विद्वान आचार्य प्रेमलाल गौतम शिक्षार्थी हिंदी में भी अपना दखल रखने लगे हैं। हिंदी में अब तक इनकी शिखरों से, मन के दीप एवं विवक्षा कविता पुस्तकें आ चुकी हैं और यह प्रस्तुत पुस्तक 'क्षितिज' इनका ताजा कविता-संग्रह है। इस संग्रह में, कवि ने नए-नए भाव क्षितिजों को छूने की कोशिश की है। इस कविता संग्रह के माध्यम से डॉ. प्रेमलाल ने, यथार्थ में कल्पना के पुट से आदर्श और तथ्यों का नया लोक छुआ है। कवि की संभावनाओं भरा चिंतन, किसी भी विषय को कविता के कलेवर में प्रस्तुत करने में सक्षम है। आचार्य के पास, भावों, विचारों, शब्दों, शब्द-प्रयोगों, वाक्य-विन्यास और भाषा की बारीक पकड़ के साथ इन्हें अनेक अलंकृतियों, व्यंजनाओं, ध्वनि व्यापारों, रंगों बिंगों एवं प्रतीकों में प्रयुक्त करने की भी सुंदर कला है। प्रत्येक कविता में एक सुपठित की छाप दिखाई देती है। मैं यह हिंदी का सौभाग्य ही समझता हूं कि संस्कृत के ऐसे विबुध विद्वान हिंदी को परंपरागत सांस्कृतिक मूल्यों, मंतव्यों/आशयों एवं संस्कारों से समृद्ध कर रहे हैं। ऐसे, संस्कृतज्ञ कविमना व्यक्तित्वों का संयोग, हिंदी को मिलना चाहिए। इससे हिंदी एक और 'रिक्थ' से संपन्न होगी। कवि ने वर्तमान, समाज, राजनीति, व्यक्ति-संघर्ष और मानवीय मूल्यों के ऊपर गहरा प्रकाश डाला है। डॉ. गौतम के पास शब्दों के संस्कार, भाषा प्रयोग की प्रभावी शैली है। सरस्वती ने आचार्य प्रेमलाल को प्रभूत आशीष दी है। वे वाणी के नव-नव संस्कारों और प्रयुक्तियों से, रचनाओं को पठनीय/उद्धरणीय बना देते हैं। संग्रह की प्रेम, पनिहारिन, दंभ, मूल जा, छोटा बड़ा, क्षितिज, आदमी, मैं अकिंचन जैसी कविताएं मार्मिक बन पड़ी है। शेष कविताएं भी जिनमें कुछ सम्मान्य व्यक्तित्वों के प्रति कृतज्ञता का भाव है, उल्लेख्य है। अधिकार बोध पर डॉ. गौतम की कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य हैं :- अधिकार का हो बोध सम्यक/ गुरु-गौरव का प्रभारी होना चाहिए।/ दायित्व का निर्वाहकर्त्ता/ ऐसा प्रबुद्ध अधिकारी होना चाहिए।

कवि ने भाग्य और पुरुष पर सुंदर विमर्श किया है। पुरुषार्थ ही भाग्य का निर्माता है। आचार्य प्रेम लाल ने जननी, जन्मभूमि, अपनी भाषा-भूषा, संस्कृति और परंपराओं के प्रति एक सच्छील की तरह आदर व्यक्त किया है। इन्होंने रिश्तों की महत्ता, अग्रजों का सम्मान, अनुजों के प्रति स्नेह और समवयस्कों के प्रति आत्मीयता का भाव दर्शाया है। आगामी पीढ़ियों के प्रति यह एक प्रकार का संकेत है कि अपने समकालीनों या पूर्ववर्त्तियों तथा आते हुओं के प्रति कैसा व्यवहार होना चाहिए। डॉ. गौतम का प्रस्तुत काव्य-संग्रह 'क्षितिज' कविता की अनेक संभावनाओं के द्वार खोलता है। कवि प्रेमलाल गौतम में, कवितत्व की खूब क्षमता है। उसमें सिद्ध शब्दार्थ के संस्कार हैं। एक संस्कारी कवि ही साहित्य में विशेष योग कर सकता है। पुस्तक की साज-सज्जा आकर्षक है।

जी-6, नॉल्जवुड कॉलोनी, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 002, मो. 0 94188 28207

समीक्षा

अंतहीन दौड़ 'रिले रेस'

◆ कुमार भमौता

पुस्तक का नाम : रिले रेस (उपन्यास) **लेखक :** बद्री सिंह भाटिया, प्रकाशक : नीरज बुक, सेंटर, सी-2, आर्य नगर सोसायटी, प्लाट नं. 91, आई.पी. एक्सटेंशन, दिल्ली-110 092, **वितरक :** भावना प्रकाशन, दिल्ली-110 091
प्रकाशन वर्ष : 2015 (प्रथम संस्करण), **पृष्ठ संख्या :** 264, **मूल्य :** 495/- रुपये (सजिल्द)

जीवन की व्याख्या के लिए अनेक परिभाषाएं दी जाती हैं। लेकिन किसी एक को ही सही मान लेना, जीवन से आनंद को खोने के समान है। कारण यह है कि कोई भी परिभाषा अपने आपमें पूर्ण नहीं लगती। एक-दूसरे से अलग नहीं, बल्कि पूरक हैं। तभी वे सही तरीके से जीवन को परिभाषित कर पाने में सक्षम हो पाती हैं। सत्य को उद्घाटित करती हैं।

बुद्धिजीवी और अनुभवी लोग जीवन को खेल के समान समझते हैं। क्या इसी भावना से इसको लिया भी जाना चाहिए ! कुछ ने इसे जुए के समकक्ष रखा है। दाव चल गया तो सफलता और उलटा पड़ा, तो जीवन विफलता की भेंट चढ़ गया। तराजू के इन दोनों पलड़ों पर तुलता रहता है जीवन। कोई-कोई तो इसे आखेट का नाम भी देता है। जीवन में संबंधों का आखेट! हम जीवन भर संबंधों के आखेट में ही तो लगे रहते हैं। एक शिकारी है तो दूसरा शिकार। इसके विपरीत भी है। 'रंगशाला' के तौर पर भी इसे जाना जाता है। मनुष्य मात्र इसका पात्र है जिसे अपनी भूमिका निभा कर रुख्सत होना है ! वरिष्ठ उपन्यासकार बद्री सिंह भाटिया ने 'रिले रेस' उपन्यास में इसे दौड़ की संज्ञा दी है जिसमें हम अपनी परंपराओं, संस्कारों, संस्कृति, विरासत और अपने कर्मों की बैटन को दूसरी पीढ़ी के जरिए आगे बढ़ाते चले चलते हैं। यह दौड़ जारी है और न जाने कितनी पीढ़ियों तक चलती रहेगी। लेकिन जीवन की दौड़ में कोई धावक थक या कमजोर पड़ जाए तो यकीनन इस रेस को जीतना मुश्किल ही नहीं, नामुमकिन हो जाएगा।

उपन्यास 'रिले रेस' की कथा का ताना-बाना सदानंद पहलवान के इर्दगिर्द घूमता हुआ उसके परिवार, समाज और समाज से इतर दूसरे परिवेशों से घूमता-फिरता हुआ चलता है। एक नामी पहलवान के तौर पर गांव-गांव, युवाओं, बुजुर्गों का चहेता सदानंद पहलवानी के दांव-पेंच अनेक अखाड़ों में दिखाता है और जीत-पर-जीत हासिल करता रहा। वह इलाके का मशहूर पहलवान बन चुका था और उसकी ख्याति दूर-दूर तक फैली थी। लोग उसकी कुश्ती का बेसब्री से इंतजार करते। ऐसे ही एक दिन कुश्ती की माली जीत कर जब सदानंद अखाड़े से बाहर लोगों से जीत की खुशी के रूप में उनसे भेंट स्वरूप कुछ प्राप्त करने उनके बीच पहुंचता है, तभी रामेसरी नाम की एक लड़की उसको चूम लेती है। वह उसके प्रति समर्पित हो गई थी। पल में यह क्या हुआ, किसी की समझ में नहीं आया। उसके साहस/दुस्साहस को सभी भौंचक्क से बस देखते रह गए। वह औपन्यासिक पात्र से विवाह करने पर आतुर थी। असमंजस की स्थितियों/परिस्थितियों में से गुजरते दोनों के परिवार इसके लिए सहमत नहीं। सदानंद की ओर से कोई पहल न देख रामेसरी घर/परिवार/समाज की परवाह किए वगैर एक रात सदानंद के घर का दरवाजा खटखटाती है। उसके हौसले और हिम्मत को देखते हुए सदानंद की मां उसे घर के अंदर ले आई।

बस, यहीं से सदानंद के जीवन की रेस शुरू हो जाती है। कहने का मतलब जीवन की दूसरी पारी का आरंभ। जीवन की 'रिले रेस' की 'स्टार्ट-अप लाईन' पर दौड़ने के लिए तैयार/खड़ा था। वक्त और बढ़ती उम्र के साथ उसका कुश्ती लड़ना भी बंद हो जाता है। घर-गृहस्थी की 'रिले रेस' जब शुरू हुई तो समाप्त होने का नाम नहीं लेती। उनके वैवाहिक जीवन तक पहुंचते हुए उनकी दौड़ काफी अच्छी तरह से चल रही थी। मगर जब वर्षों बीत जाने पर भी उपन्यास के दंपति को संतान सुख नसीब नहीं हुआ, तो सदानंद की मां के माथे पर परेशानी की लकीरें दिखने लगती हैं। इससे उभरने के लिए वह अपनी बहू को बहला-फुसलाकर देवर के साथ अंतरंग संबंध स्थापित करवाने में सफल हो जाती है। उनका यह प्रयास सुखद परिणाम के रूप में फलीभूत

हुआ। और उस दंपति के घर पहली संतान के रूप में बेटे का जन्म हुआ। इस बारे जब सदानंद को मालूम हुआ, तो वह मां से विरोध जतलाता है, गुस्सा होता है। लेकिन मां उसे यह कहकर चुप करवा देती है कि संतान-सुख के लिए यह जरूरी था वरना बहू कहीं बाहर जाकर ऐसा वैसा कुछ करती तो बदनामी होती। इसके बाद सदानंद और उसकी पत्नी रामेसरी के दो और बेटे पैदा हुए। कुछ समय तक उनके संबंध मधुर बने रहे लेकिन वक्त के साथ उनमें खटास आती चली गई जो ताउम्र बनी रही। उपन्यास का मुख्य पात्र सदानंद उम्र के आखिरी दौर में घर से अचानक एक दिन गायब हो जाता है। कहां गया, पता नहीं। सब ढूंढने की नाकामयाब कोशिश कर थक-हार जाते हैं। एक दिन लगभग पांच-छह वर्ष बाद वह घर लौटता है। सब हैरान-परेशान। उसका रंग-ढंग बदला हुआ। अलग अंदाज की वेशभूषा। गेरुआ चोला पहने उसके सोचने-समझने का ढंग अलग। जीवन में शेष रह गए अपने कामों को निपटाना शुरू कर देता है।

सदानंद जब घर से गायब रहा तो वह हरिद्वार में आकर बाबाओं के डेरों और आश्रमों का मुआयना करता है। पहाड़िया नाम के बाबा के आश्रम में आश्रय लेता है। वहां अपनी पसंद का दिन में काम भी करता है। और अन्य नित नियम को अपनाता है। इस दौरान इस डेरे में गृहस्थों/परित्यक्त लोगों के रहने-सोने की अलग व्यवस्था, अनाथ बच्चों के लिए पढ़ने के इंतजामात और संन्यासियों के अलग ढंग देखने को मिले। यह इस बात का संकेत है कि वहां पर रहकर कौन क्या करता है, और उसे क्या नहीं करना होगा, का भी पता चलता है। और खासकर राजनीतिज्ञ इन आश्रमों का अपने फायदे के लिए किस तरह उपयोग करते हैं, का भी बेहतरीन तरीके से वर्णन है। इसके अतिरिक्त गांव-घर में घुस चुकी राजनीति का दूसरा रूप भी देखने को मिलता है। बेशक सदानंद खुद पंच रह चुका है। वह अपने तरीके से गांव की समस्याओं का निदान करता है। लेकिन सदानंद का छोटा बेटा विनय सरपंच बनने के चक्कर में नशे के जाल में फंसता है और उसका दुष्प्रभाव उसकी पत्नी और परिवार पर पड़ना शुरू हो जाता है।

अपने को जानने और समाज में उसको पहचानने की प्रक्रिया में इनसान जिंदगी को जीने और उसे बेहतर बनाने का सपना देखता है, उसे सच में बदलने की कोशिश करता है। उसके जीवन और सृजन के बीच निरंतर संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। उसकी राह में कई दुविधाएं, व्यवधान आते हैं फिर भी वह उसी समाज में रहता है, बसता है, जीता चलता है। परंपराओं और संस्कारों के बदलते स्वरूप को देखता-परखता-समझता चुपचाप समझौतों के साथ बदलते समाज को अंगीकार करता है। अपना वुजूद खोजता, बनाए रखते हुए, समाज में अपनी जगह बनाने के लिए संघर्षरत रहता है। सदानंद ने जिंदगी में बहुत झेला है। जितना झेला है, उतना ही जीवन को अच्छा बनाता चला जाता है। आत्मबोध, विचार चिंतन और सामाजिक उपस्थिति में जीवन को एक नया नजरिया दिया। उसमें खुद को जीया और बेहतर तरीके से जीया। सदानंद में धैर्य कूट-कूट कर भरा है। यह अखाड़े में गुरु और बाबाओं के आश्रम में प्राप्त अनुभव एवं ज्ञान द्वारा दिए गए दूसरे पहलवान के दांव-पेच को देखने-परखने के दिए गए मंत्र का नतीजा था जिसको उसने अपने जीवन में उतारा। पत्नी के रोज के उलाहने, बच्चों के उसके विपरीत चलने पर भी वह दुखी नहीं हुआ। बल्कि अपनी तरफ से सबको एक परिवार, एकजुट रखने के लिए संघर्षरत रहा। उसमें संवेदनशीलता का इस बात से पता चलता है कि वह अपने परिपक्वता और जीवन के अंतिम आश्रम में पहुंचकर वनस्पति, पेड़-पौधों से भी आत्मीयता दिखाता है। उनसे बातचीत करता है जो हर किसी इनसान के वश में नहीं होता है। कुदरत के सान्निध्य को पाकर कोई-कोई ही उसके समीप जा पाता है। इसके अलावा आश्रम की एक गरीब लड़की को अपनी बेटी बना लेने की भी कोशिश करता है। आज के दौर में हर कोई राजनीतिज्ञों के कारनामों की आलोचना करना अपना परम धर्म समझता है। लेकिन अपने इलाके के मंत्री के देहांत पर वह बहुत दुखी होता है जबकि आज की युवा पीढ़ी उस दिन गांव में एक उत्सव का आयोजन करती है। कारण यह कि वह इलाके में मंत्री द्वारा किए गए विकास कार्यों का कायल रहा है। कह सकते हैं कि सदानंद उपन्यास का ऐसा पात्र है जो हमारे आस-पास दिख जाता है, जो जीवन की लड़ाई की जद्दोजहद में संलग्न है, जो कभी मरता नहीं, अमर है और कभी भी कहीं भी दिख जाएगा।

बेशक केंद्र में सदानंद है लेकिन उसकी पत्नी रामेसरी का जिक्र किए बिना उपन्यास की कथा के साथ न्याय नहीं होगा। रामेसरी मजबूत इरादों वाली एक ठेठ ग्रामीण महिला के रूप में उपन्यास में उपस्थित रहती है। मां-बाप को छोड़कर आई, तो पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा। न ही उसके मां-बाप ने उससे कोई संबंध ही रखा। जिंदगी भर वह अपने परिवार में इतना मशगूल रही कि इस बात का उसे कभी खयाल ही नहीं आया कि उसका मायका भी है या कोई और रिश्तेदार। संतति प्राप्ति की खातिर उसने सास के कहने पर अपने देवर से एक बार संबंध बना लिए थे लेकिन देवर के बार-बार आग्रह पर भी उसने उन्हें आगे भी बनाए रखने को तवज्जो नहीं दी। उसने अपनी मर्यादाओं की सीमाओं को लांघा
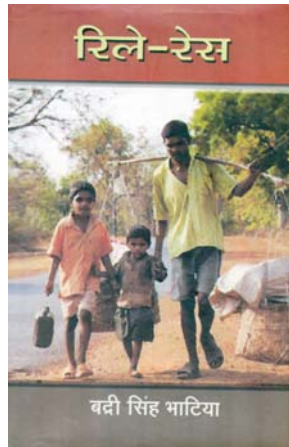
नहीं। उसका प्रेम अपने पति के प्रति ही रहा। इस बात का दुख उसे जिंदगी भर सालता रहा कि यह कदम उसने उठाया ही क्यों था? अपने आपको कोसती रही। इस पशोपेश में वह पति पर उम्र भर गुस्सा रही और उसके प्रति बेरुख सी हो गई।

सूत्रधार के माध्यम से कही गई उपन्यास की कथा को सदानंद द्वारा लिखी गई डायरी के पन्नों को पलटते/खोलते हुए जब चलती है, तो अतीत की गहराइयों में पहुंच जाती है, तो दूसरी ओर पात्र खुद-ब-खुद उपस्थित होकर उसे वर्तमान में खींच लाते हैं। अतीत और वर्तमान के बीच डोलती कथा रूपी नाव भव सागर में तैरती हुई आगे बढ़ती हुई विस्तार पाती है। सत्ताईस खंडों या अध्यायों में सिमटी उपन्यास की कथा का रोचक पहलू यह है कि हर अध्याय में एक अलग कथा निकलती/खुलती चलती है। और भी अनेक पात्र हैं जिनकी भूमिकाएं परिस्थितियों और समयानुकूल तो हैं ही, साथ ही कथा की क्रमबद्धता, अनुकूलता, रवानगी, रोचकता को बनाए रखते हुए प्रसंगवश आती और चलती हैं।

उपन्यासकार ने उपन्यास के माध्यम से कही गई कहानी में मध्यम वर्ग की चारित्रिक विशेषताओं, उनके रहन-सहन, रोजमर्रा की जिंदगी को बड़ी ही शालीनता से जीवन के बरक्स ढाला है। कहीं भी ऐसा नहीं लगता है कि उपन्यास की कथा नाटकीय या यथार्थ से बाहर है। पात्र हमारे आस-पास से ही लिए गए हैं। हमारी ही तरह के उनके रोजमर्रा के संघर्ष-दबाव नज़र आते हैं जिनके साथ वे जीते चले जाते हैं। उपन्यास पढ़ते हुए समय-समय पर आने वाले व्यंग्य का हल्का स्नेहिल स्पर्श गुदगुदाने को मजबूर करता है। उपन्यास से गुजरते हुए ऐसे वाक्य, शब्द आते हैं, जो बहुत से लोगों के जीवन में वास्तविक रूप से घटित हुए होंगे। यथार्थ और हल्का हास्य-व्यंग्योक्तियां उपन्यास में गहराई उत्पन्न करती हैं। पढ़ते हुए आभास होता है कि कथन, शैली, गंभीरता का पुट उपन्यास में है।

उपन्यासकार ने मौटे तौर पर परिवार एवं सामाजिक सरोकारों के प्रति दायित्व, राजनीतिक दाव-पेंच और हमारी आस्थाओं में बाबाओं और आश्रमों के प्रवेश और महत्त्व को आधिकारिक तौर पर उद्घाटित किया है। व्यक्ति अपने जीवन में परिवार, समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों का निवर्हन किस प्रकार करता है, किन परेशानियों एवं दुःख/तकलीफों को सहन करता हुआ जीवन निर्वाह करता है। उनकी रोजमर्रा की छोटी-छोटी समस्याएं/ दिनचर्या में आते उतार-चढ़ाव का बड़ी बारीकी से वर्णन मिलता है। उपन्यास में उसका भलीभांति चित्रण किया गया है।

उपन्यासकार ने समाज से जुड़ाव और आम आदमी से जुड़े मुद्दों को अपनी लेखनी में जगह दी है। उनके दैनिक संघर्ष को बेहतर ढंग से प्रस्तुत किया है। पात्रों की कुंठाओं, जिज्ञासाओं, संघर्ष और मानवीय संवेदनाओं को मिली-जुली अभिव्यक्ति देकर उनके जीवन को जीवंत बनाए रखने की भरपूर कोशिश की है। इसीलिए उनके किरदार कल्पना लोक से जमीन पर यथार्थ रूप में उतर आए हैं जो दैनिक क्रियालापों और गतिविधियों में विचरण करते हुए दिखते हैं।

रचनाकार ने उपन्यास में सहज यत्र-तत्र आए लोक गीतों से भी स्थितियों को प्रकट किया है। ये गीत पूर्ण रूप से उपन्यास के अंत में गीत दिए गए हैं जिनका आशय संभवतः यही निकलता है कि ये सदानंद के जीवन को पढ़ने-समझने और उससे जुड़े हुए लगते हैं। घर-परिवार-समाज से भागकर कोई संन्यासी नहीं हो जाता। उसे इस धर्म को निभाकर ही सच्चा संन्यास मिल सकता है। जिस परिवेश का इस उपन्यास में जिक्र है, वह हिमाचल प्रदेश के शिमला और सोलन जिले के आस-पास का क्षेत्र है, जहां की आबोहवा स्वास्थ्य के अनुकूल है। कुदरत के समीप है।

उपन्यास में कई जगह विस्तार है, कहीं अर्थ खोलने की जरूरत भी। कुछ अप्रासंगिक भी लगता है। इन सबको नजरअंदाज भी किया जाए तो भी सदानंद की मृत्यु उपरांत बहुत कुछ जोड़ा गया अनावश्यक प्रतीत होता है। सदानंद का आत्मा रूप में आकर बीमार पत्नी से मिलना और बातचीत में धर्मराज की कचहरी में पेशी होने की बात कहना अव्यावहारिक एवं अतिरंजित हो गया, लगता है। उपन्यासकार के मकसद के विपरीत है। रिले रेस का हिस्सा कतई नहीं महसूस होता। यहां सीधे अंतिम अध्याय को रखा जा सकता था। तब भी रिले रेस का मंतव्य पूर्ण हो जाता। इसके अतिरिक्त जिस परिवार ने अपनी बेटी रामेसरी की उम्रभर खबर नहीं ली। उसके किसी भी छोटे-बड़े सुख-दुःख में शामिल न हुआ हो, उस परिवार के सारे सदस्य रामेसरी के पत्थरी के ऑपरेशन के बाद उससे मिलने आ जाएं, बेतुका लगता है। यहां लेखक बड़ी बीमारी का जिक्र कर भावनाओं को बेहतर ढंग से चित्रण कर कथा में मार्मिक पुट ला सकता था। फिर भी उम्र के सातवें दशक के करीब पहुंच, लेखक का जीवन की 'रिले रेस' में धावक के रूप में दौड़ में मौजूद रहना प्रशंसनीय है।

यहां यह कहना अप्रासंगिक नहीं होगा कि रिले रेस एक दायरे के भीतर दौड़कर कुछ मिनटों में समाप्त हो जाती है, इसके जो पड़ाव होते हैं, वे बद्री सिंह भाटिया ने जीवन-चक्र में ढाले हैं। जीवन की यह रेस कई दायरों के भीतर वर्षो बिना आराम किए दौड़नी पड़ती है। यह अनंत है। जीवन में इस दौड़ की हार-जीत आगे आने वाले खिलाड़ी के साथ देने पर भी निर्भर करती है। सदानंद पहलवान अखाड़े में तो अनेक दांव-पेच लगाकर बड़ी-बड़ी मालियां जीत लाया, लेकिन जीवन की 'रिले रेस' में बैटन थामने वाले उसके परिवार के सदस्य कमोबेश ही दौड़ पाए।

द्वारा भारद्वाज भवन, नजदीक प्रेम भवन, रामनगर, शिमला,
हिमाचल प्रदेश-171 004, मो. 0 98162 85095

समीक्षा

सफर में हूं

◆ डॉ. बी. एस. त्यागी

मनु स्वामी हिन्दी जगत का जाना पहचाना नाम है। इसलिए नहीं कि उनकी झोली में ढेरों छोटे-बड़े पुरस्कार हैं अपितु उनका कथ्य व शैली इतनी दमदार हैं कि पाठक प्रभावित हुए बिना रह नहीं सकता। उनकी अपनी शैली है, प्रस्तुतीकरण का अन्दाज है और भाषा पर मजबूत पकड़ है। इसी कारण साधारण विषय भी उनके कलम के स्पर्श से असाधारण बन जाता है। उनकी कविताओं में मिठास भी है और खारापन भी कविता नदी की धारा की तरह सहज बहती है। कथ्य के अनुसार उनकी कविता अपना रूप बदलती चलती है। पाठक को पता ही नहीं चलता जो कविता उसे अभी सहला रही थी, कब वह चुभती हुई अन्दर उतर गयी। प्रस्तुत काव्य-संग्रह 'सफर में हूं' मनु स्वामी का छठा संग्रह है जो पहले संकलनों से एकदम अलग है। इसमें प्रकृति वर्णन भी है, समाज की उथल-पुथल भी है, व्यक्ति-चित्र भी हैं। कविता पढ़ते हुए ऐसा लगता है मानो एक-एक शब्द कवि का अपना अनुभव हो।

आवारगी में / मशगूल होता है
जब सूरज तो वह / टुनकती
ना-नुकर का / अभिनय करती
क्रीड़ारत / हो जाती है
मन में / आ बसे
प्रवासी के / पहलू में
आकर। (पृ. 15)

सर्दी नामक कविता में चित्र भी है और व्यंग्य भी-

घुस आती है / रजाई में भी
बहुराष्ट्रीय / कम्पनियों के
गैरजरूरी उत्पादों की तरह।(पृ. 19)

इस कविता में स्थानीय मजदूरों का चित्र बड़ा ही मार्मिक है। पूरी कविता पाठक को झकझोर देती है। इस श्रेणी में दूब, प्रकृति, सर्दी, काली नदी, हिमालय, चिड़िया, आदि कविताएं आती हैं। ये कविताएं न केवल प्रकृति का चित्र प्रस्तुत करती हैं अपितु जीवन का एक बड़ा सच सामने ला खड़ा कर देती हैं। पाठक इस अचानक परिर्वतन पर आवाक-सा रह जाता है। कुछ कविताएँ व्यक्ति चित्र लिए हुए हैं। बँटवारा एक मार्मिक चित्र प्रस्तुत करती है।

बेटा अलग हो गया / चार पैसे आते ही।
चाँद-सूरज / दिन-रात खुशी-गम
यहाँ भी वैसे ही थे / पर छूट नहीं पाया
छटपटाना। (पृ. 12)

सम्पूर्ण कविता पाठक को इस तरह बाँधती है, उसे पता ही नहीं चलता रचना कब पूरी हो गयी। वह मनोहरलाल के बारे में सोचता रह जाता है। यह हर घर के मनोहरलाल की रचना है जो आज के सन्दर्भ से जुड़ी है। चिड़िया कविता की पंक्तियाँ देखिये

कंक्रीट उगा / तो कड़ियों के साथ
विदा हो गयी चिड़िया।
चिड़िया नहीं / बरकत
चली गई है / घर से। (पृ. 31)

आंखें नम हो जाती हैं बरबस ही कविता के अंत तक आते-आते। चिड़िया तो बस एक माध्यम है, आदमी के बढ़ते लोभ और नासमझी को समझाने का। 'भरोसा' नाम की कविता की पंक्तियां तो देखिए -

दंगे में / आदमी नहीं
कत्ल होता है/ भरोसा। (पृ. 34)

जीवन की नींव टिकी होती है भरोसे पर, समाज चलता है भरोसे पर, इस पर ही तो टिके होते हैं सारे संबंध। यदि यही नहीं रहा तो जीवन कहां? जरा सोचिए। प्रजापति कविता में कुम्हार के जीवन की एक झलक है जो चलचित्र की तरह आंखों के सामने आती है। 'सहेली' एक अत्यंत भावपूर्ण चित्र खींचती है एक झोंपड़ी की बेचारगी का जो पाठक को पकड़ लेता है। रघु, स्कूटर, चायवाला, अखबार, बागड़िये, चींटियां, खामोशी, मां, अन्नदाता आदि कविताएं विभिन्न स्तर के लोगों की मनोदशा का बारीक चित्रण करती हैं। इन सब लोगों से हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में मुलाकात होती है। इनके अपने अहसास होते हैं जिनहें प्रायः हम आपाधापी में महसूस नहीं कर पाते, लेकिन कवि ने इन्हें बड़ी ही बारीकी से उठाया है।

बावरा जनपद मुजफ्फरनगर के नामचीन शायद व चित्रकार थे जिनका इंतकाल सितंबर 2014 में हो गया था। बड़ी ही आजाद

कविता

कट रहे वृक्ष औ' शाखाएं

◆ ओम प्रकाश नौटियाल

अद्‌भुत विकास की गाथायें
हरियाली हरते हठधर्मी
ना लाज हया बस बेशर्मी
धरा को किया अधनंगा जी
बाकी तो सब कुछ चंगा जी !

गाँवों में मिलते गाँव नहीं
तरु की रही कहीं छाँव नहीं
तडाग तल्लैया सूख गये
पक्षी रह प्यासे रूठ गये
हर गाँव हुआ बेढंगा जी
बाकी तो सब कुछ चंगा जी !

नवजात बिलखते घूरे में
वृद्धों की श्वास अधूरे में
गुमराह भटकता युवा वर्ग
अनमोल समय हो रहा व्यर्थ
सपना देखें सतरंगा जी
बाकी तो सबकुछ चंगा जी !

तब हमें भी कुछ सद्‌बुद्धि थी
तरंगिणियाँ करती शुद्धि थी
नदियाँ थी तब जीवन हाला
जो आज बनी गन्दा नाला
बरसों से मैली गंगा जी
बाकी तो सब कुछ चंगा जी !

सत्ता सुख में नेता पागल
जनतंत्र हुआ चोटिल घायल
सेवा करना बदकाम हुआ
जनता का स्वप्न तमाम हुआ
दुष्कर है इनसे पंगा जी
बाकी तो सब कुछ चंगा जी !
जनतंत्र भटकता गली गली
फिर से चुनाव की हवा चली,

कुर्सी को पाने की खातिर
बस जहर घोलते हैं शातिर,
करते शहरों में दंगा जी
बाकी तो सब कुछ चंगा जी !

आतंकी हैं, कहीं नक्सली
अलगाववाद की हवा चली
क्षेत्रीयता भारत पर भारी
नेता कुर्सी पर बलिहारी
सहमा सा उड़े तिरंगा जी
बाकी तो सब कुछ चंगा जी !

301, मारुति फ्लैट्स, गायकवाड कंपाउंड,
ओ.एन.जी.सी. के सामने, मकरपुरा रोड, वडोदरा,
गुजरात-390 009,
मो. 0 94273 45810

तबीयत का आदमी था। अपनी फाकामस्ती में रहता था। बावरा नाम की कविता लिखकर मनु स्वामी ने काबिलेतारीफ काम किया है। कविता समाप्त होती है बावरा की ग़ज़ल की पंक्ति पर-

रंगे महफिल ⁄ उदास रहता है
बावरा जब यहां⁄ नहीं होता। (पृ. 72)

ऐसी ही दूसरी कविता संत अध्यापिका शांति शर्मा के जीवन का रेखाचित्र है। विलक्षण व्यक्तित्व है उनका। ठीक ही कहा है मनु ने -

संत के⁄ आश्रम-सा
आभास देते ⁄ पुश्तैनी घर में
अकेली रहती है। ⁄ उल्लसित
होती है ⁄ धरती
गोद में ⁄ आती है
जब कोई ⁄ मदर टेरेसा
या शांति शर्मा। (पृ. 76)

पूरी कविता संकेत में कह देती है संत-विदुषी महिला के विषय में। जिन लोगों ने उन्हें देखा है वे इस चित्र से अवश्य प्रभावित होंगे। उजाला अंतिम कविता है इस संकलन की, कविता क्या पूरा दस्तावेज है अंतर्राष्ट्रीय भयावह परिवेश का, ममता व करुणा का, चीख व आंसुओं का, असहाय पैगंबरों की बेबसी का, इनसान की हैवानियत का और उजड़े हुए मंजर का...। सर्वश्रेष्ठ रचना है इस संकलन की उजाला क्योंकि यह इस सबके पश्चात भी मनवता को आशा बंधाती है कि अंधेरा अधिक देर तक नहीं ठहर सकता, अंत में उजाले की ही जीत होगी- सत्यमेव जयते की तरह। अंतिम पंक्तियां कवि की अटूट आस्था प्रकट करती है जो इस रचना को अमर बना देता है।

उजाला ⁄ पौ फटने का हो
या दिये का ⁄ अंधेरे से
ताकतवर होता है।
जीतेगा⁄ उजाला ही। (पृ. 80)

140, अंकित विहार, पचैंडा मार्ग, मुजफ्फरनगर,
उत्तर प्रदेश-251 001

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 जनवरी, 2017 अंक : 10

प्रधान सम्पादक
आर. एस. नेगी

सम्पादक
वेद प्रकाश

उप सम्पादक
योगराज शर्मा

कम्पोजिंग एवं पृष्ठ सज्जा : **अश्वनी**

सम्पादकीय कार्यालय : हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

दूर से हमें सभी रास्ते बंद नजर आते हैं क्योंकि सफलता के रास्ते हमारे लिए तभी खुलते हैं जब हम करीब पहुंच जाते हैं।

– अज्ञात

रेखांकन : **सर्वजीत**

इस अंक में

लेख

शोध

साक्षात्कार

कहानी

व्यंग्य

कविता/ग़ज़ल

समीक्षा

अपनी बात

पूर्ण राज्यत्व दिवस उपरांत प्रदेशवासियों ने गणतंत्र दिवस जोशोखरोश से मनाया। इस बार गणतंत्र की अनूठी शान देखने को मिली। प्रदेश में मैदानी इलाकों से लेकर जनजातीय क्षेत्रों तक कंपकंपा देने वाली सर्दी के मध्य लोगों का जनून व जोश देखते ही बना। प्रदेश मुख्यालय शिमला के ऐतिहासिक रिज मैदान पर बर्फबारी के मध्य राष्ट्रीय पर्व का आयोजन हुआ, वहीं लाहौल स्पीति के मुख्यालय केलंग में बर्फबारी के बीच हमारे वीर जवानों ने तिरंगे की शान को सफेद चादर के मध्य चमकाया। पाठकों के लिए हमने केलंग ऐतिहासिक क्षणों की तसवीर मुख पृष्ठ पर प्रस्तुत की है। यही भारतीय गणतंत्र की शान है तथा बुलंद इरादों को बयां करती है। इसीलिए भारत दुनिया में सबसे सशक्त गणतंत्र माना जाता है। इस वर्ष गणतंत्र दिवस पर राजपथ पर हिमाचल की झांकी 'चंबा रूमाल' व राष्ट्र के बहादुर बच्चों में मंडी जिले का मास्टर प्रफुल्ल भी शामिल हुआ। यह प्रदेश के लिए गौरव की बात है। राज्य के महान नेताओं विशेषकर हिमाचल निर्माता एवं प्रथम मुख्य मंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार का राज्य के गठन तदोपरांत पूर्ण राज्यत्व का दर्जा दिलवाने में दिया गया मूल्यवान योगदान प्रदेशवासियों के लिए सदैव स्मरणीय रहेगा। इनके अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप प्रदेश न केवल प्रगति के पथ पर अग्रसर हुआ बल्कि विकास की इसी ठोस नींव पर प्राप्त अभूतपूर्व उपलब्धियों के बलबूते हिमाचल प्रदेश की गिनती आज देश के अग्रणी राज्यों में होती है। विभिन्न प्रतिष्ठित सर्वेक्षण एजेंसियों के आकलनों में प्रदेश को शिक्षा तथा समावेशी विकास में सर्वश्रेष्ठ राज्य आंका गया है। अभी हाल ही में जारी एनुअल स्टेट्स ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल ने देशभर में प्रथम स्थान प्राप्त कर गुणात्मक शिक्षा में अग्रणी राज्य का गौरव प्राप्त किया है। इस रिपोर्ट के अनुसार देश के 589 जिलों में करवाए सर्वेक्षण में हिमाचल प्रदेश के विद्यार्थियों का प्रदर्शन गणित और भाषा ज्ञान में अव्वल पाया गया है। यह रिपोर्ट ग्रामीण भारत में स्कूली शिक्षा, भाषा और गणित आधारित बुनियादी शिक्षण पर आधारित थी। प्रदेश सरकार ने सामाजिक सरोकारों के प्रति अपनी संवेदनशीलता दर्शाते हुए आम आदमी तक राहत पहुंचाने का प्रयास किया है। बढ़ती महंगाई के दौर में समाज के गरीब एवं निर्धन लोगों को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने के लिए कार्यान्वित की जा रही राजीव गांधी अन्न योजना के माध्यम से 37 लाख लोगों को लाभान्वित किया जा रहा है। प्रदेश के बेरोजगार युवाओं का कौशल विकास कर उन्हें रोजगार एवं स्वरोजगार प्रदान करने में सराहनीय कार्य किया गया है। प्रदेश सरकार की 500 करोड़ रुपये की महत्त्वाकांक्षी कौशल विकास भत्ता योजना इस दिशा में मील का पत्थर साबित हुई है। इस योजना के तहत अब तक 1.52 लाख युवाओं ने लाभ उठाया है। प्रदेश के 3.87 लाख बुजुर्गों, विधवाओं और अक्षम व्यक्तियों को सामाजिक सुरक्षा के दायरे में लाकर उन्हें मासिक पेंशन प्रदान की जा रही है। प्रदेश में बेघर लोगों को घर मुहैया करवाने के लिए कार्यान्वित की जा रही इंदिरा आवास और राजीव गांधी आवास योजनाओं के तहत 75 हजार रुपये की सहायता राशि प्रदान की जा रही है। प्रदेश सरकार ने हिमाचल को स्वच्छ एवं निर्मल बनाने की दिशा में बड़ी सफलता हासिल की है। हिमाचल प्रदेश को देश के बड़े राज्यों की श्रेणी में खुले में शौच मुक्त प्रथम राज्य घोषित किया गया है। विश्व के पर्यटन मानचित्र पर हिमाचल ने विशेष पहचान बनाई है। पूर्ण राज्यत्व दिवस व गणतंत्र दिवस पर लोगों की भारी उपस्थिति से उजागर है कि प्रदेश, अन्य राज्यों के साथ मिलकर देश को एक सशक्त राष्ट्र बनाने की राह पर अग्रसर है।

– **संपादक**

पूर्ण राज्यत्व दिवस पर विशेष आलेख

देश की सशक्त अर्थव्यवस्था के रूप में उभरता हिमाचल

– वीरभद्र सिंह
मुख्य मंत्री, हिमाचल प्रदेश

आज हम हिमाचल प्रदेश का 47वां पूर्ण राज्यत्व दिवस मना रहे हैं। वर्ष 1971 में इसी पावन दिन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने ऐतिहासिक रिज मैदान शिमला से हज़ारों प्रदेशवासियों को संबोधित करते हुए हिमाचल प्रदेश को पूर्ण राज्यत्व का दर्जा प्रदान किया। इसके साथ ही हमारा प्रदेश भारतीय गणतंत्र का 18वां राज्य बना और प्रदेशवासियों को उनकी आशाओं और आकांक्षाओं के अनुरूप समृद्धि और खुशहाली के पथ पर तीव्र गति से आगे बढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

मैं, इस अवसर पर, हिमाचल प्रदेश के सभी लोगों को हार्दिक बधाई देता हूँ। मैं इस पावन धरा के उन महान सपूतों व देशभक्तों के प्रति भी सम्मान व कृतज्ञता व्यक्त करता हूं, जिन्होंने हिमाचल प्रदेश को देश में पर्वतीय क्षेत्र के विकास का आदर्श व विकास के अनेक मानकों में अग्रणी राज्य बनाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इस पावन अवसर पर हम हिमाचल निर्माता तथा प्रदेश के प्रथम मुख्य मंत्री डॉ. यशवंत सिंह परमार को भी अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते है, जिन्होंने प्रदेश को न केवल अलग पहचान एवं दर्ज़ा दिलाने के संघर्ष की अगुवाई की, बल्कि राज्य के आरंभिक काल में भावी विकास के लिए एक मज़बूत नींव भी रखी।

इस वर्ष हम पूर्ण राज्यत्व की 46वीं वर्षगांठ मना रहे हैं। पूर्ण राज्यत्व की प्राप्ति के सुअवसर पर श्रीमती इंदिरा गांधी का कथन सत्य साबित हुआ है– **"हिमाचल प्रदेश के बहादुर लोगों ने जिस दिलेरी और हिम्मत के साथ बर्फीले तूफानों का सामना किया है, मुझे आशा है उसी प्रकार वे भविष्य में राज्य के विकास में आने वाली चुनौतियों का भी डटकर मुकाबला करेंगे।"** पूर्ण राज्य बनने के उपरांत हिमाचल प्रदेश, छोटे राज्यों के लिए न केवल विकास का मॉडल बना है, बल्कि स्वास्थ्य, बागवानी, समाज कल्याण तथा समावेशी वृद्धि जैसे अनेक क्षेत्रों में देश बड़े राज्यों की श्रेणी में भी अग्रणी राज्य बनकर उभरा है। हिमाचल प्रदेश को आज देश भर में सबसे अधिक खुशहाल और आर्थिक रूप से तेजी से उभरते प्रदेश के रूप में जाना जाता है। विश्व बैंक सहित आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्टों और विभिन्न राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा जारी आकलनों ने राज्य द्वारा अर्जित उपलब्धियों को सत्यापित किया है।

वर्तमान प्रदेश सरकार ने एक माह पूर्व ही अपने वर्तमान कार्यकाल के चार वर्ष पूर्ण किए हैं। इस अवधि में हमारा प्रयास प्रदेशवासियों को पारदर्शी, जवाबदेह एवं कारगर शासन प्रदान करना तथा सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों के लाभ

पूर्ण राज्य बनने के उपरांत हिमाचल प्रदेश, छोटे राज्यों के लिए न केवल विकास का मॉडल बना है, बल्कि स्वास्थ्य, बागवानी, समाज कल्याण तथा समावेशी वृद्धि जैसे अनेक क्षेत्रों में देश बड़े राज्यों की श्रेणी में भी अग्रणी राज्य बनकर उभरा है। हिमाचल प्रदेश को आज देश भर में सबसे अधिक खुशहाल और आर्थिक रूप से तेजी से उभरते प्रदेश के रूप में जाना जाता है। विश्व बैंक सहित आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्टों और विभिन्न राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा जारी आकलनों ने राज्य द्वारा अर्जित उपलब्धियों को सत्यापित किया है।

बेहतर ढंग से जनमानस तक पहुंचाने का रहा है।

आम आदमी का कल्याण सरकार की नीतियों का केंद्र बिंदु रहा है। सामाजिक सुरक्षा पेंशन को 450 रुपये से बढ़ाकर 600 रुपये प्रतिमाह किया गया है। इस योजना के अंतर्गत 3,87,000 वृद्ध, विधवाएं तथा अक्षम व्यक्ति लाभान्वित हुए हैं। 80 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के वृद्धजनों को बिना किसी आय सीमा मापदंड के 1200 रुपये प्रतिमाह की सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रदान की जा रही है।

'राजीव गांधी अन्न योजना' कार्यान्वित कर प्रदेश के लगभग 37 लाख लोगों को 3 किलो गेहूं, दो रुपये प्रति किलो तथा दो किलो चावल 3 रुपये प्रति किलो की दर से प्रतिमाह प्रति व्यक्ति प्रदान किए जा रहे हैं। सभी 18,23,665 राशनकार्ड धारकों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत लाकर 77,23,788 लोगों को लाभान्वित किया गया है तथा उन्हें गेहूं, चावल, दालें, खाद्य तेल तथा आयोडीनयुक्त नमक उपदानयुक्त दरों पर प्रदान किया जा रहा है।

प्रदेश में बेरोज़गार युवाओं के कौशल विकास के लिए 500 करोड़ रुपये की 'कौशल विकास भत्ता योजना' कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अंतर्गत बेरोज़गार युवाओं को 1000 रुपये प्रतिमाह तथा विशेष क्षमता वाले युवाओं को 1500 रुपये प्रति माह भत्ता दिया जा रहा है। इस योजना के अंतर्गत अब तक 1.52 लाख युवा लाभान्वित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त राज्य में हिमाचल प्रदेश कौशल विकास निगम का गठन किया गया जो आगामी पांच वर्षों में 65 हजार युवाओं को रोजगारोन्मुखी प्रशिक्षण प्रदान करेगा।

प्रदेश में 111.19 करोड़ रुपये की डॉ. वाई.एस. परमार, किसान स्वरोज़गार योजना कार्यान्वित की जा रही है, जिसके अंतर्गत किसानों को पॉलिहाउस के निर्माण के लिए 85 प्रतिशत उपदान प्रदान किया जा रहा है। योजना के तहत अब तक 879 पॉलिहाउस इकाइयों का निर्माण कर 1,32,795 लाख वर्गमीटर क्षेत्र को संरक्षित खेती के अधीन लाया गया है। किसानों को टपक/फव्वारा सिंचाई सुविधाएं प्रदान करने के लिए 154 करोड़ रुपये की 'राजीव गांधी सूक्ष्म सिंचाई योजना' आरंभ की गई है।

बागवानी का प्रदेश के सामाजिक-आर्थिक विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है। राज्य के लिए 1169.15 करोड़ रुपये की 'हिमाचल प्रदेश बागवानी विकास परियोजना' स्वीकृत करवाई गई है। एंटी-हेलनेट पर उपदान को 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 80 प्रतिशत किया गया है तथा सेब, आम एवं किन्नू प्रजाति के फलों के समर्थन मूल्यों में वृद्धि की गई है।

हमारी सरकार सभी बच्चों को गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने के प्रति कृतसंकल्प है। गत चार वर्षों के दौरान प्रदेश में 1329 नए विद्यालय खोले अथवा स्तरोन्नत किए गए तथा प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में 38 नए महाविद्यालय खोले गए और चार निजी कॉलेजों का अधिग्रहण किया गया। प्रदेश के सरकारी स्कूलों एवं केंद्रीय विद्यालय में पढ़ने वाले बच्चों को स्कूल आने-जाने के लिए परिवहन निगम की बसों में निःशुल्क यात्रा सुविधा प्रदान की जा रही है। 'राजीव गांधी डिजिटल विद्यार्थी योजना' के अंतर्गत वर्तमान वित्तीय वर्ष के दौरान 32,500 मेधावी विद्यार्थियों को निःशुल्क नोटबुक/लेपटॉप प्रदान किए जा रहे हैं।

प्रदेश के ऊना ज़िले में भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान तथा सिरमौर जिले में भारतीय प्रबंधन संस्थान खोला गया है। राजीव गांधी राजकीय इंजीनियरिंग कॉलेज, नगरोटा बगवां में कक्षाएं आरंभ की गई हैं।

हमारी सरकार लोगों को विशेषज्ञ स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के प्रति कटिबद्ध है। प्रदेश सरकार 'मुफ्त दवा नीति' के तहत 56 दवाएं मुफ्त उपलब्ध करवा रही है। इस अवधि के दौरान प्रदेश में 168 नए स्वास्थ्य संस्थान खोले गए अथवा उनका दर्जा बढ़ाया गया है। सिरमौर जिले के नाहन में नया मेडिकल कॉलेज खोला गया है जबकि चंबा तथा हमीरपुर जिलों में दो मेडिकल कॉलेज खोले जा रहे हैं। ईएसआईसी मेडिकल कॉलेज मंडी को प्रदेश सरकार द्वारा अधिगृहित किया गया है। प्रदेश के लिए एक अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान स्वीकृत किया गया है, जिसे बिलासपुर जिले में खोला जाएगा।

150 करोड़ रुपये की लागत से इंदिरा गांधी मेडिकल कॉलेज, शिमला में सुविधाओं को स्तरोन्नत किया जा रहा है। 45 करोड़ रुपये की लागत से डॉ. राजेंद्र प्रसाद मेडिकल कॉलेज, टांडा में एक सुपरस्पेशियलटी खंड का निर्माण किया गया है।

प्रदेश में गत चार वर्षों के दौरान 1721 किलोमीटर नई सड़कों तथा 180 पुलों का निर्माण किया गया। इसके अलावा इस अवधि में 276 गांवों को सड़कों से जोड़ा गया। नाबार्ड के तहत 1052.63 करोड़ रुपये लागत की 301 परियोजनाओं को स्वीकृति प्रदान की गई है। परियोजना के तहत 495 किलोमीटर सड़कों और 87 पुलों का निर्माण किया गया। 'प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना' के अंतर्गत 766 करोड़ रुपये की लागत से 2312 किलोमीटर सड़कों की 241 परियोजनाएं भारत सरकार से स्वीकृत करवाई गई हैं।

हर घर को स्वच्छ पेयजल प्रदान करना राज्य सरकार की प्राथमिकता रही है। गत चार वर्षों के दौरान 7918 अतिरिक्त बस्तियों को ग्रामीण जलापूर्ति योजना के अंतर्गत लाया गया है। इस अवधि के दौरान पेयजल आपूर्ति योजनाओं पर 1033.85 करोड़ रुपये व्यय किए गए हैं तथा जलाभाव वाले क्षेत्रों में 6449 हैंडपंप स्थापित किए गए हैं। 470.58 करोड़ रुपये की लागत से 3716 हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई सुविधा प्रदान की गई है। ऊना जिले में 922 करोड़ रुपये की 'स्वां तटीकरण परियोजना' तथा कांगड़ा जिले में 180 करोड़ रुपये की 'छोंछ खड्ड परियोजना' का कार्य प्रगति पर है।

प्रदेश के समावेशी विकास एवं राज्य के युवाओं को रोज़गार के अवसर उपलब्ध करवाने के लिए नियोजित औद्योगिक विकास को बढ़ावा दिया गया। राज्य सरकार ने प्रदेश के बेहतर एवं तीव्र औद्योगीकरण के लिए औद्योगिक सलाहकार परिषद् का गठन किया है। उद्यमियों को प्रदेश में निवेश के लिए आकर्षित करने के लिए मुंबई, बैंगलुरू, अहमदाबाद तथा नई दिल्ली में 'इंवेस्टर मीट' आयोजित की गई हैं। प्रदेश के कांगड़ा ज़िले के कंदरौड़ी में 140 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत तथा ऊना ज़िले के पंडोगा में 122 करोड़ रुपये की लागत से नए आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र विकसित किए जा रहे हैं। प्रदेश में नए उद्योगों की स्थापना को एक ही आवेदन पत्र पर 45 दिनों के भीतर सभी स्वीकृतियां प्रदान की जा रही हैं।

एकल खिड़की स्वीकृति एवं अनुश्रवण प्राधिकरण द्वारा इस अवधि के दौरान 13,262 करोड़ रुपये निवेश की 283 इकाइयों को स्वीकृति प्रदान की गई है, जिनमें लगभग 26,680 युवाओं को रोजगार उपलब्ध होगा। नए उद्यमियों की सुविधा के लिए स्टाम्प शुल्क एवं भूमि उपयोग हस्तांतरण शुल्क में कटौती की गई है। 300 से अधिक हिमाचलियों को रोज़गार प्रदान करने वाली नई औद्योगिक

प्रदेश में बेरोज़गार युवाओं के कौशल विकास के लिए 500 करोड़ रुपये की 'कौशल विकास भत्ता योजना' कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के अंतर्गत बेरोज़गार युवाओं को 1000 रुपये प्रतिमाह तथा विशेष क्षमता वाले युवाओं को 1500 रुपये प्रति माह भत्ता दिया जा रहा है। इस योजना के अंतर्गत अब तक 1.52 लाख युवा लाभान्वित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त राज्य में हिमाचल प्रदेश कौशल विकास निगम का गठन किया गया जो आगामी पांच वर्षों में 65 हजार युवाओं को रोजगारोन्मुखी प्रशिक्षण प्रदान करेगा।

इकाइयों से पांच वर्षों तक केवल एक प्रतिशत विद्युत शुल्क वसूला जाएगा। हमारी सरकार ने युवा उद्यमियों और निवेशकों को प्रोत्साहित करने के लिए हाल ही में 'स्टार्ट-अप प्रोग्राम' आरंभ किया है।

राज्य सरकार प्रदेश में सतत् पर्यटन विकास को प्रोत्साहन दे रही है। प्रदेश के प्रमुख स्थलों में अधोसंरचना विकास तथा समृद्ध विरासत के संरक्षण के लिए एशियाई विकास बैंक द्वारा 570 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता स्वीकृत की गई है।

प्रदेश सरकार ने ऊर्जा बचत के लिए एक वृहद् एलईडी प्रोत्साहन योजना आरम्भ की है, जिसके अंतर्गत घरेलू उपभोक्ताओं को बाजार भाव से आधे से भी कम मूल्य पर एलईडी बल्ब प्रदान किए जा रहे है। प्रदेश के सभी घरेलू उपभोक्ताओं को उपदानयुक्त दरों पर बिजली उपलब्ध करवाने के लिए 996 करोड़ रुपये का उपदान दिया गया है। वर्तमान वित्तीय वर्ष में उपदान पर 448 करोड़ रुपये खर्च किए जा रहे हैं।

हमारी सरकार का प्रयास है कि प्रदेशवासियों को सुरक्षित, भरोसेमंद तथा आरामदेह परिवहन सेवाएं प्रदान की जाएं। राज्य पथ परिवहन निगम के बेड़े में 1315 नई बसें शामिल की गई हैं, जबकि 300 और बसें शीघ्र उपलब्ध करवाई जाएंगी। सभी महिलाओं को राज्य पथ परिवहन निगम की सामान्य बसों में प्रदेश के भीतर किराये में 25 प्रतिशत छूट दी जा रही है।

राज्य सरकार ने टीडी नीति/नियमों में संशोधन कर टीडी धारकों को राहत पहुंचाई है। प्रदेश के 775 गांवों की एक लाख से अधिक जनसंख्या को वन्य प्राणी क्षेत्रों से बाहर किया गया है। मध्य हिमालय विकास परियोजना के तहत 365 करोड़ रुपये की राशि को बढ़ाकर 630.76 करोड़ किया गया है और प्रदेश की 102 नई पंचायतों को इसके अंतर्गत लाया गया है। राज्य को हरा-भरा बनाए रखने के लिए प्रदेश भर में लोगों के सक्रिय सहयोग से व्यापक पौधरोपण अभियान कार्यान्वित किया गया है।

मेरी सरकार प्रदेश के सरकारी एवं निजी क्षेत्र में युवाओं के लिए रोज़गार के अवसर सृजित करने को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान कर रही है। प्रदेश में गत चार वर्षों के दौरान सरकारी क्षेत्र में 44,463 युवाओं को रोज़गार के अवसर मुहैया करवाए गए और निजी क्षेत्र में 27 हजार युवाओं को रोज़गार उपलब्ध करवाया गया। प्रदेश के कर्मचारियों को इस अवधि में 2454.88 करोड़ रुपये और पेंशनरों को 910 करोड़ रुपये के वित्तीय लाभ प्रदान किए गए। दिहाड़ीदारों की न्यूनतम दिहाड़ी को 150 रुपये से बढ़ाकर 200 रुपये किया गया है।

मेरी सरकार ने प्रदेश के स्वतंत्रता सेनानियों, भूतपूर्व सैनिकों तथा सेवारत सैनिकों व उनके आश्रितों को सदैव उचित आदर एवं सम्मान दिया है। सरकार ने प्रदेश के जांबाज सैनिकों की सेवाओं को सम्मान देते हुए परमवीर चक्र व अशोक चक्र विजेताओं को मिलने वाले एकमुश्त अनुदान को 25 लाख से बढ़ाकर 30 लाख रुपये किया है। महावीर चक्र विजेताओं के लिए अनुदान राशि 15 लाख से बढ़ाकर 20 लाख रुपये की गई है। इन वीरता पुरस्कार विजेताओं की वार्षिकी की दरों को क्रमशः 1.25 लाख से बढ़ाकर 3 लाख रुपये, एक लाख से तीन लाख रुपये तथा एक लाख से बढ़ाकर 2 लाख रुपये किया गया है।

प्रदेश के स्वतंत्रता सेनानियों, भूतपूर्व सैनिकों तथा सेवारत सैनिकों व उनके आश्रितों को सदैव उचित आदर एवं सम्मान दिया है। सरकार ने प्रदेश के जांबाज सैनिकों की सेवाओं को सम्मान देते हुए परमवीर चक्र व अशोक चक्र विजेताओं को मिलने वाले एकमुश्त अनुदान को 25 लाख से बढ़ाकर 30 लाख रुपये किया है। महावीर चक्र विजेताओं के लिए अनुदान राशि 15 लाख से बढ़ाकर 20 लाख रुपये की गई है। इन वीरता पुरस्कार विजेताओं की वार्षिकी की दरों को क्रमशः 1.25 लाख से बढ़ाकर 3 लाख रुपये, एक लाख से तीन लाख रुपये तथा एक लाख से बढ़ाकर 2 लाख रुपये किया गया है।

प्रदेश के सभी क्षेत्रों तथा सभी वर्गों का समान व संतुलित विकास सुनिश्चित बनाने के लिए प्रदेश सरकार जवाबदेह व कुशल प्रशासन प्रदान करने के प्रति कृतसंकल्प है।

पूर्ण राज्यत्व दिवस के इस पावन अवसर पर मैं, सभी प्रदेशवासियों को आश्वस्त करना चाहता हूं कि हिमाचल को देश का समृद्ध और हर क्षेत्र में अग्रणी राज्य बनाने के लिए मेरी सरकार अथक प्रयास करेगी।

000

ललित निबंध

अहा ! ग्राम्य जीवन भी क्या है?

◆ डॉ. दादूराम शर्मा

अभी पौ फटने में देर है। भोर होने की सूचना देने वाला तारा अभी निकला ही था कि बैलों के गले में बंधी घंटी की ध्वनि और पदचाप की ताल की संगति में कृषक का सुरीला स्वर फूट पड़ा। गृहिणियाँ गृह-कार्य में लग गई। कोई दही मथती हुई कन्हैया की बाल सुलभ चपलता और माखन चोरी का गीत रई की ताल पर की ध्वनि के साथ परदेस गए पिया की मधुर स्मृति का सरस राग अलापा।

अंधकार के आवरण को विदीर्ण करके नित्य नूतन पीत परिधान से अलंकृत चिर कुमारिका उषा प्राची में प्रकट हो गई। पक्षी चहक उठे। प्रकृति के कण-कण में नवजीवन की अरुणिमा और उल्लास फूट पड़ा। प्रकृति-प्रेयसी की हरी साड़ी में जड़े हुए मोतियों को अपनी किरणों के संस्पर्श से बहुमूल्य सतरंगी रत्नों में प्रिय के कराश्लेष से प्रकृति प्रिया के अंगों में उत्पन्न सात्विक बिन्दु मंद मारूत के झोंको से झर पड़े। कलियां विहस उठी। भौंरे गुंजार करने लगे। गृहिणियाँ घर बुहारकर गो-दोहन करके झुंड की झुंड चल पड़ी पनघट की ओर।

ग्रामों में सर्वत्र जीवन की नैसर्गिक स्वच्छंद निर्मल धारा बह रही है। प्रकृति की खुली गोद में हंसते-खेलते, उन्मुक्त वायु मंडल में सांस लेते श्रम की सतत् साधना में लीन ये ग्रामीण अनास्था, निराशा, दिग्भ्रम और कुंठा के अभिशाप से सर्वथा मुक्त है। प्रकृति की सरलता, उदारता, नैसर्गिक सुंदरता और जीवंतता इनके जीवन में सहज ही घुल-मिल गई हैं। इसके विपरीत नगर का जनजीवन कितना दयनीय है। सर्वत्र वायु-प्रदूषण, घुटन, संत्रास और कोलाहल से भरा विषाक्त-विक्षुब्ध वातावरण, कहीं धन और पद की वीभत्स प्रतिस्पर्धा, कहीं अधिकारों की चिल्लाहट, कहीं आत्म-प्रवंचना से भरे आमोद-प्रमोद तो अन्यत्र आकृति मात्र से ही मानव कही जा सकने वाली मूलभूत आवश्यकताओं से भी सर्वथा वंचित तड़पती हुई दयनीय आकृतियाँ ! शहरी मनुष्य पूरी तरह यांत्रिक बन बैठा है। न तो उसके संवेदनशील हृदय हैं और न ही सहज, सरल किंवा स्वस्थ, विचारपूर्ण मस्तिष्क। क्योंकि वह पूर्णतः कृत्रिमता के वातावरण में जी रहा है। मशीनों की खड़खड़ाहट ने उसकी श्रवण शक्ति के साथ-साथ विचार शक्ति को भी कुंठित करके रख दिया है। अर्थ, जो कि मानवीय सुख का साधन मात्र है, आज उसका साध्य बन गया है जिसके लिए उसने अपना सुख, अपनी शांति, अपना जीवन सब कुछ उत्सर्ग कर दिया है। अर्थ उसके प्रेम, ईमान, धर्म, मनुष्यता सभी की कसौटी बन गया है। अर्थकारी विचारों को ही वह सार्थक मानता है, शेष विचार उसके लिए हेय हैं, उपहासास्पद हैं। सारी आधुनिक समस्याएँ और परिस्थितियां इसी मंत्रभूत मानव-मस्तिष्क की देन हैं।

सुख का वास्तविक रहस्य संतोष है। गांव का आदमी रूखी-सूखी खाकर, फटा-पुराना पहनकर और घास-फूस की झोंपड़ी में रहकर जिस संतोष का अनुभव करता है, वह शहर की आलीशान वातानुकूलित अट्टालिकाओं में रहने वालों के नसीब में कहां? अतुल ऐश्वर्य के कारण बढ़ती हुई भोग-लिप्सा से विरक्त होकर महाराजभर्तृहरि ने संन्यास ले लिया तो एक दिन उनके मित्र किसी राजा ने मीठी चुटकी ली, "कहिए महाराज! कैसी कट रही है?" भर्तृहरि हंस पड़े। उन्होंने उत्तर दिया, "मित्र, हमें तो अपने वल्कलों में ही संतोष है। तुम भी यदि अपने ऐश्वर्य से संतुष्ट हो तो फिर हम दोनों का संतोष समान ही है। वास्तव में गरीब तो वह है जिसकी तृष्णा (भोग लालसा का ऐश्वर्य प्राप्ति की इच्छा) कभी पूरी नहीं होती।" यदि मन संतुष्ट हो जाए तो फिर कौन धनी है और कौन गरीब--

'वयमिह परितुष्टा वल्कलैस्त्वं च लक्ष्म्या,
सममिह परितोषे को निर्विशेषो विशेषः ।
स तु भवति दरिद्रो यस्य तृष्णा विशाला
मनसि परितुष्टे कोऽर्थवान् को दरिद्रः ?'' - वैराग्य शतक

संतोष का मूलाधार है- आवश्यकताओं का परिमित होना। तीनों मौलिक आवश्यकताएँ ही ग्रामीणों को प्राप्य हैं। उनकी आवश्यकताओं में अपरिमित भोग लालसा का समावेश नहीं हुआ है। उनका जीवन आदि मानव की तरह प्रकृत है, स्वच्छन्द और उन्मुक्त हैं। वे प्रकृति से अविच्छिन्न हैं इसीलिए वे संतोष के महान् धनी हैं। दूसरी ओर नगर का जन-जीवन प्रकृति से दूर जा पड़ा है। उसके लिए मूल आवश्यकताओं का कम, किन्तु नव-नवोदभूत भोग लालसाओं और नई-नई आरोपित आवश्यकताओं का महत्व अधिक हो गया है। शहरी व्यक्ति भोजन, वस्त्र और आवास के

लिए कम किन्तु नानाविध कृत्रिम सुख-साधनों और विलास की सामग्रियों की प्राप्ति के लिए अधिक चिन्तित और प्रयत्नशील है। इसलिए संतोष उसके जीवन से हमेशा के लिए चल बसा है।

यह निर्विवाद सत्य है कि मानवीय सभ्यता और संस्कृति का विकास इस प्रकृत संतोष का त्याग करके ही हुआ है। यदि मनुष्य अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति से ही संतोष कर लेता तो वह अपनी आदिम अवस्था में ही बना रहता अथवा उससे थोड़ा बहुत ही ऊपर उठ पाता। उसकी वर्तमान बहुमुखी प्रगति तो बिल्कुल संभव न थी। अतः यहाँ 'प्रकृति की ओर प्रत्यावर्तन' का तात्पर्य सारे मानवीय विकासों की अवहेलना और प्रशस्य मानवीय उपलब्धियों का बहिष्कार करना नहीं है अपितु जीवन के जिस सहज, सरल, सरस और उन्मुक्त वर्धनशील कृत्रिम आवश्यकताओं के बांध ने रोक कर उसे गंदला और पंकिल बना दिया है, तोड़कर हमें इसे सतत् गतिशील बनाना होगा। जीवन साध्य है और आवश्यकताएँ साधन। हमारे लिए इस साध्य की सिद्धि में ही साधनों का प्रयोग करना समीचीन होगा। साधनों के लिए साध्य का समर्पण तो उल्टी बात हुई। किन्तु अत्याधुनिक सभ्य मानव जीवन के प्रकृत अथवा सहज आनंद से दूर जा पड़ा है। वह यांत्रिक बन बैठा है। अवकाश के क्षणों में जीवन की सुख-शांति का अनुभव उसे नहीं होता। एक क्षण भी अपनी संगति में खाली बैठकर वह संतोष और सुख की साँस नहीं लेता। उसे तो व्यस्तता चाहिए, निरन्तर व्यस्तता। मैं नानाविध मानवीय समस्याओं के मूल कारण इसी मानसिक असंतोष का विरोधी हूँ जिसने नागर जनों में संत्रास, घुटन, निराशा, अनास्था, दिग्भ्रांति आदि मानसिक विकृतियों को जन्म दिया है। अतः यहां 'प्रकृति की ओर प्रत्यावर्तन' का तात्पर्य जीवन के सहज सुख और संतोष का वरण करना है।

'अशिक्षित होने के कारण इन ग्रामीणों की मानसिक वृत्तियाँ प्रसुप्त हैं। ये विचारहीन पशुओं की तरह जी रहे हैं। इनकी वृत्ति 'गर्दभ वृत्ति' है इसलिए इन्हें न तो अपने जीवन की अभावग्रस्तता समझ में आती है और न ही अन्याय और शोषण के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रियात्मक विचार ही इनके मस्तिष्क में उठ पाते हैं। फिर इनमें अवसर की समानता और अधिकारों की मां की कल्पना करना तो बिलकुल व्यर्थ है। संतोष अकर्मण्यता और निठल्लेपन को जन्म देता है। ग्रामीणों पर लगाए जाने वाले ऐसे आरोप सर्वथा निराधार हैं। आज ग्रामीण अंचलों में में तीव्रता से बिजली का जाल फैलता जा रहा है और कृषक अपनी सतत् श्रम-साधना और लगन से भारत माता के 'शास्य-श्यामला' नाम को सार्थक कर रहे हैं। ग्रामीण वास्तव में निरक्षर हैं। वे लिखना-पढ़ना नहीं जानते। किन्तु उन्हें अशिक्षित कहने का अर्थ ही शिक्षा को साक्षरता का पर्यायवाची मान लेना है। सही माने में शिक्षित व्यक्ति वह है जिसके व्यवहारों में मानवता का सहज उन्मेष हो, जिसका समग्र जीवन जन-सेवा में समर्पित हो। यदि छल-फरेब या धोखा-धड़ी से स्वार्थ की सिद्धि करने वाला अथवा मानवीय आचार-शून्य किताबी ज्ञान रखने वाला ही शिक्षित है तो बेचारे ये देहाती अशिक्षित ही भले ।

कर्तव्यों की उपेक्षा और अधिकारों के लिए संघर्ष समाज की आधारशिला को चूर्ण-विचूर्णित कर रहे हैं और विघटन तथा विनाश के कारण बन रहे हैं। इस आत्म-प्रवंचना भरी विघटनकारी मानसिक विकृति को स्वस्थ मानसिक विकास मानने वाले लोग कितने नासमझ हैं।

नगरों ने वर्षों से उषा की लाली नहीं देखी, चाँदनी के सुखद-शीतल स्पर्श का अनुभव नहीं किया। ऋतुएँ आती हैं, आती होंगी। नगरों को इन प्राकृतिक परिवर्तनों से क्या लेना-देना है ? त्योहारों का उनके लिए कोई महत्व नहीं। उनकी उत्सव-प्रियता भी दिखावटी है। प्राकृतिक परिवर्तनजन्य उत्सवों का उल्लास तो भीतर से फूटता है। ये उत्सव समाज की जीवन्तता के प्रतीक हैं। किन्तु नगर जनों की सारी संवेदनशीलता, हृदय की सारी सरसता और आत्मा की मंदर ध्वनि मानो इन कर्कश ध्वनि वाले भारी-भरकम निजाँव यंत्रों में पिस गई हैं।

मैंने ग्रामीणों को अभी भी त्योहारों में वैसी ही खुशियां मनाते और नाचते-गाते देखा है। जिन आर्थिक समस्याओं और कठिनाइयों से हम बुरी तरह संत्रस्त हैं, उनकी जैसे इन्हें खबर ही नहीं। उनका जीवन प्रकृति की तरह ही नित्य नूतन उल्लास, उमंग और सरसता से सम्पूत बना हुआ है। इन्हें देखकर मुझे 'नंगा खुदा से भी बड़ा होता है' कहावत याद आ जाती है। सचमुच अपनी मौज में मस्त इन अलमस्त योगियों का जीवन सर्वथा अभावग्रस्त और मानवीय उपलब्धियों से रहित होते हुए भी वास्तविक सुख और संतोष से परिपूर्ण है। जिसे हम वैभव-विलास के अनेकानेक साधनों को जुटाकर भी पाने में असमर्थ रहे, उसे उन्होंने सहज ही पा लिया है। मुझे तो उनके जीवन से स्पर्धा है, ईर्ष्या है। काश ! हम भी गाँधी की तरह इसी प्रयुत पथ पर चल पाते।

ग्रामों में धर्माचरण भी अपने सहज रूप में विद्यमान है।

ग्रामीण धर्म की सूक्ष्म बातों को नहीं जानता फिर भी उसका आचरण धर्ममय है, मानवता से सम्पृक्त है। मैं दीवाली की छुट्टियों में अपने गाँव गया था। घर में प्रवेश करते ही मुझे छपरी में नवजात शिशु के रोने की आवाज सुनाई दी जिसकी माँ शायद किसी काम से बाहर गई हुई थी। मैंने जब अपनी माँ से पूछा तो उन्होंने बताया कि एक गरीब परिवार मजदूरी की तलाश में आया था, जिसे उन्होंने अकेलेपन की ऊब से बचने के लिए घर में टिका लिया था। उस स्त्री का निकम्मा पति प्रसव के दो दिन पूर्व ही उसे और दो छोटे बच्चों को सुरक्षित छोड़कर भाग गया था। जब उसका प्रसव हुआ तो अन्य आवश्यक सामग्रियों की कौन कहे, उसके पास बच्चों को खाने के लिए देने को एक दाना भी न था। किन्तु पड़ोस की धर्मपरायण महिलाओं ने उसकी समस्याओं को हाथोंहाथ सुलझा दिया। कोई सोंठ ले आई, किसी ने घी की व्यवस्था कर दी। एक गुड़ लाई तो दूसरी ने बच्चों के लिए रोटियां। उसके प्रसव के बाद के पंद्रह दिन कैसे निकल गए, उसे पता ही न चला।

लक्ष्मीपूजन के बाद उन बच्चों को मिठाई देकर मैंने अनुभव किया कि मेरी सच्ची पूजा वही थी। दीपमालिका के साथ मानवता का दिव्य दीपक दीर्घकालीन नगर जीवन से उत्पन्न मेरे हृदयस्थ अंधकार को विदीर्ण करता हुआ जगमगा उठा था।

पता नहीं रात में उसका भगौड़ा पति कब आया ? जब मैं सवेरे उठा तो मैंने उसे दरवाजे पर सिमटकर बैठा हुआ पाया। रात को शायद वह भूखा ही सो गया था क्योंकि वह बेचारी असहाय स्त्री उसे कहां से भोजन देती ? माँ उसे देखते ही उस पर बरस पड़ी।

दोपहर को गोवर्धन पूजा हुई। सभी ने मिष्ठान्न छके। माँ ने उस स्त्री और उसके बच्चों को भी भर-पेट खिलाया। जब मैं भोजन करके बाहर आया तो उस व्यक्ति की याचना भरी दीन-दृष्टि मुझ पर पड़ी। मैंने माँ से उसे भी कुछ देने का निवेदन किया तो उन्होंने साफ कह दिया- ''हमारे पास ऐसे मोटे-ताजे निठल्ले आदमी को खिलाने के लिए कुछ नहीं है।" मैं उसे कर्मठता का जीवन बिताने का उपदेश देने लगा। तभी मुझे याद आया कि आनंद एक बार ऐसे ही किसी व्यक्ति को बौद्ध धर्म का उपदेश दे रहा था। परन्तु बार-बार प्रयत्न करने पर भी जब वह उसे समझाने में असमर्थ रहा तो वह उसे भगवान् बुद्ध के पास ले गया। भगवान् बुद्ध उस व्यक्ति की हालत देखकर भाँप गए कि वह भूखा है। उन्होंने उसे भोजन दिलाते हुए आनंद से कहा- "आनंद ! इस समय इसे तुम्हारे उपदेश की नहीं भोजन की आवश्यकता है। जब इसकी तृप्ति हो जाए तब इसे उपदेश देना तो वह सुनेगा, समझेगा।" माँ को समझा-बुझाकर मेरी आरोपित मानवता उसे पत्नी द्वारा दो पूरियां, साग और थोड़ा-सा दाल-भात दिलाने में सफल हो गई किन्तु क्या वह उस दो दिन के भूखे व्यक्ति के लिए पर्याप्त था ? साथ की कोठरी में रहने वाला हमारा नौकर सारी बातें सुन रहा था। वह थाली में इतना भोजन परोस लाया जिससे उस व्यक्ति की पूरी तृप्ति हो सके। भोजन की थाली उसके सामने रखते हुए उसने कहा- 'जब मैंने सुना कि तू भूखा बैठा है तो मुझसे खाया न गया। ले, अपने हिस्से का खाना मैं तुझे दे रहा हूँ। भर-पेट खा और चला जा। अब तू इस दरवाजे पर तभी आना, जब अपने बच्चों के लिए कमाकर कुछ ला सके।"

उस दिन मेरा सारा धार्मिक ज्ञान तथा मानवता और शिक्षा का अहंकार उस अनपढ़ मजदूर के सहज विचार और सीधी-सादी बातों के आगे गल गया था। धन्य है, गांव का वह सहज स्नेहमय दंभरहित वातावरण जहाँ सभी ग्रामीण परस्पर पारिवारिक एकसूत्रता में आबद्ध हैं। हरिजन भी जहाँ ब्राह्मणों के काका-मामा कहलाते हैं, कानून का है क ख ग भी न जानते हुए जहाँ बड़े-बड़े झगड़े या समस्याएँ पंचायत बैठकर सरलता से सुलझा लिए जाते हैं।

हमारी यह पंगु किताबी शिक्षा, फाइलों के अम्बार और कागजी योजनाएँ राष्ट्र का वास्तविक हित कर सकती हैं या अन्न दाता ग्रामीणों की श्रमनिष्ठा और सतत् उद्योगशीलता ? शहर मस्तिष्क हैं तो हैं तो ग्राम शरीर हृदय तथा प्राण हैं। मस्तिष्क की उपयोगिता यही है कि वह शरीर और हृदय को सही दिशा में प्रेरित करे, कर्म स्फूर्ति और विजयोल्लास का प्राणों में संचार करे, तभी मस्तिष्क की सर्वोपरि महत्ता सिद्ध होगी। किन्तु यह तभी संभव है जब मस्तिष्क स्वस्थ हो, कुंठा, अनास्था, निराशा और दिग्भ्रांति की व्याधि से मुक्त हो। स्वस्थ मस्तिष्क और बलिष्ठ शरीर दोनों का साहचर्य, दोनों का सामंजस्य ही राष्ट्रीय विकास का मूल है।

मैंने ग्रामीणों को अभी भी त्योहारों में वैसी ही खुशियां मनाते और नाचते-गाते देखा है। जिन आर्थिक समस्याओं और कठिनाइयों से हम बुरी तरह संत्रस्त हैं, उनकी जैसे इन्हें खबर ही नहीं। उनका जीवन प्रकृति की तरह ही नित्य नूतन उल्लास, उमंग और सरसता से सम्पूत बना हुआ है। सचमुच अपनी मौज में मस्त इन अलमस्त योगियों का जीवन सर्वथा अभावग्रस्त और मानवीय उपलब्धियों से रहित होते हुए भी वास्तविक सुख और संतोष से परिपूर्ण है। जिसे हम वैभव-विलास के अनेकानेक साधनों को जुटाकर भी पाने में असमर्थ रहे, उसे उन्होंने सहज ही पा लिया है। मुझे तो उनके जीवन से स्पर्धा है, ईर्ष्या है। काश ! हम भी गाँधी की तरह इसी प्रयुत पथ पर चल पाते।

महाराज बाग, भैरवगंज सिवनी (म.प्र.)-480661
मो. 0 88789 80467

आलेख

खोई डायरी के पन्ने और अमृता शेरगिल

◆ सुदर्शन वशिष्ठ

अमृता शेरगिल.....फरवरी की बर्फ सी, जिसमें ठण्ड के साथ एक अजीब सी ऊष्मा विद्यमान रहती है। बाहर से मनोहारी, भीतर से धीरे धीरे पिघलती हुई। अमृता की छवि एक कलात्मक रचना के रूप में उभरती है। उसकी काव्यमय भाषा, सिद्धहस्त तूलिका एक अद्भुत कोमल व्यक्तित्व को जन्म देती प्रतीत होती है, जो बाहर से सुंदर सुडौल है, भीतर से खण्डित, उलझनभरा और मुरझाया हुआ है।

अमृता की डायरी के अंशों में अद्भुत भाषा के साथ आकर्षक पोट्रेट प्रकट हुए हैं। 15 मार्च 1924 को शिमला में उन्होंने इर्विन अंकल के बारे में लिखा है :

''इर्विन अंकल घर आए। उन्हें देखा तो ऐसा लगा जैसे किसी गुफ़ा से कोई ज्ञानी तपस्वी सीधा हमारे घर चला आ रहा हो। यह तपस्वी तेजस्वी भी था। मॉम के दूर के रिश्ते का यह चचेरा भाई जिसके शब्दों में एक अलग ही नाद था। उन्होंने आते ही मॉम हो बांह में भर लिया। किसी झरने की तरह हंसने लगे।. ....उन्होंने हवा में हाथ फटकारे। लगा जैसे क्षण भर में ही उड़ने लगेंगे। उठे हुए हाथ पक्षी के पंखों की तरह लग रहे थे।''

इर्विन अंकल भी पहले चित्र बनाते थे। बाद में उन्होंने लगभग बीस भाषाएं सीखीं और तिब्बत में लामाओं के पास पड़े रहे। इर्विन अंकल ने अमृता के मॉम और पापा से कहा :

''मैडम मेरी अटोनेट और सरदार उमरावसिंह! लड़की के चित्रों में यहां की संस्कृति की गन्ध है। यह दैवी पौधा आपके यहां उगा है। इसका संवर्धन करो। उसकी की कला विकसित होने दो। मैं उसके बारे में आश्वस्त हूं।'' इस पर अमृता ने मन ही मन अंकल का धन्यवाद किया और लिखा :

''धन्यवाद अंकल! आपके विश्वास को मैं टूटने नहीं दूंगी। मेरे अस्तित्व पर आशीर्वाद का हाथ हमेशा रहने दें। मेरे भीतर आपके द्वारा रोपा हुआ आत्मविश्वास का बीज अंकुरित होता रहेगा। मुझ पर विश्वास रखिए। मेरी आंखें अनायास भर आईं। अभी भी लिखते समय लग रहा है जैसे अक्षर विघल रहे हों।''

भारत में आधुनिक कला की कर्णधार प्रसिद्ध चित्रकार अमृता शेरगिल शिमला में दो बार रहीं। उन के प्रसिद्ध चित्र यहीं बने। वे समरहिल में रेलवे स्टेशन से ऊपर 'होम' (Holme) नामक भवन में रहती थीं।

इस घर में बाद में एक कलाकार पुष्करनाथ भी रहे। लगभग 1986 में एक बार भाषा संस्कृति विभाग हिमाचल प्रदेश की ओर से उन के चित्रों की प्रदर्शनी स्थानीय वाई.डब्ल्यू.सी.ए. में लगाई गई तो उनके इस घर में जाना हुआ। दोमंजिला लकड़ी से निर्मित यह कॉटेज सड़क के पास है। 'होम' का अर्थ टापू है। इस भवन को एक स्वीडिश इंजीनियर ने अपने रहने के लिए बनाया था। भवन के साथ स्वीमिंग पूल और सुंदर बागीचा हुआ करता था। घर के प्रांगण में एक ओर छोटा सा पूल था जिसमें बतखें तैर रहीं थीं। हो सकता है यह वही स्वीमिंग पूल हो। कहा जाता है कि अमृता शेरगिल की मां के इस में डूबने के बाद इसे बंद करवा दिया गया। अब यह भवन हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के पास है।

यह सन् 1921 की बात है जब अमृता शेरगिल अपने माता पिता के पास रहने आईं। अमृता के पिता उमराव सिंह शेरगिल एक सम्पन्न परिवार से सम्बन्ध रखते थे। इनके दादा ने अंग्रेज-सिख लड़ाई में सिखों का साथ दिया, अतः पैतृक गांव मजीठा में परिवार की सम्पत्ति ज़ब्त कर ली गई। सन् 1857 के विद्रोह में अंग्रेजों का साथ देने पर इनके पुत्र सूरत सिंह को ज़मीन वापिस दे दी गई। इनके छोटे पुत्र सुंदरसिंह मजीठिया ने चीनी की तीन मिलें लगा कर अपार सम्पत्ति अर्जित की किन्तु बड़े पुत्र उमराव सिंह शेरगिल अलग तरह के व्यक्ति थे। ये यूरोपीय तथा भारतीय पांच भाषाओं के जानकार थे। इन्हें हंगेरियन मेरी एटोनिटी से प्रेम हो गया जो सन् 1911 में महाराजा रणजीत सिंह की पौत्री के साथ पंजाब आई हुई थी। उमराव सिंह शेरगिल ने मेरी एटोनिटी से विवाह कर लिया और हंगरी चले गए।

अमृता का जन्म भी 3 जनवरी 1913 में बुडापेस्ट हंगरी में ही हुआ। इनकी एक दूसरी बहन का नाम इन्दिरा था जो इनसे दो साल छोटी थी। सन् 1921 में प्रथम विश्व युद्ध के दौरान यह परिवार 1921 में शिमला के इस घर में आ गया। अमृता शेरगिल उस समय आठ वर्ष की रही होगी। उमराव सिंह शेरगिल ने अपने रहने के लिए समरहिल स्थित यह घर स्वीडिश इंजीनियर से खरीद लिया था। लकड़ी से निर्मित यह घर एक बहुत ही शांत वातावरण में अवस्थित था। अमृता पंजाबी पिता और हंगेरियन मां की संतान

थी जिससे उसका आसपास के बच्चों से कोई संपर्क नहीं बन पाया। अतः वह घर में ही अकेली रहती थीं। मां उसे संगीत सिखाना चाहती थीं, अतः घर में ही पश्चिमी क्लासिक संगीत सिखाने की व्यवस्था की गई।

अमृता शेरगिल आरम्भ से ही स्वतन्त्र विचारों की स्वामिनी थी। अतः वह संगीत के स्थान पर ड्राईंग की ओर आकर्षित हुई। ड्राईंग के बाद वह वाटर कलर में काम करने लगी। उसे घर में पढ़ाने आने वाला अध्यापक भी चित्रकार था। अमृता को अपने आयाम खोजने में समय लगा और अंत में उन्होंने अपनी एक राह खोजी। और वह राह थी चित्रकार बनने की। अमृता की पेंटिग्ज़ में उदास और तनावपूर्ण चेहरों वाली ग्रामीण युवतियों के अक्स आने लगे।

अमृता को बारह वर्ष की आयु में कॉन्वेंट स्कूल में डाल दिया गया किंतु चर्च न जाने की स्थिति में उसे स्कूल से निकाल दिया गया। अब वह घर में संगीत, कविता तथा चित्रकला में व्यस्त रहने लगी। सन् 1924 के लगभग अमृता को फ्लोरेंस में एक स्कूल में दाखिला मिल गया। सन् 1929 से 1934 के बीच पेरिस प्रवास पर जब सोलह साल की वय में कला विद्यालय में प्रवेश लिया तो प्रोफेसर पेर वेलान इनके चित्र देख कर आयु के हिसाब से प्रौढ़ अनुभव देख प्रभावित हुए। पेरिस में आर्ट में प्रशिक्षण लेने से अमृता को रेखा और रंग में महारत हासिल हो गई। पेर वेलान की कक्षा में इन्होंने न्यूड मॉडल पर काम सीखा। उसने मानवीय संवेदनाओं, भावनाओं का सहारा ले कर स्केच बनाने आरम्भ किए। उसे एक सिद्धहस्ता कलाकार बनने की चाह थी।

बचपन से अमृता इंट्रोवर्ट थी। पेरिस में परंपरा से जुड़ा कवच टूटा और नई मुक्त अमृता का जन्म हुआ। प्राध्यापक सिमोन से सीख कर अमृता ने उस दृष्टि से साक्षात्कार किया जिसके बनिस लसेग आंखें होते हुए भी अन्धे होते हैं।

1934 में अमृता पुनः भारत लौटी और 1938 तक शिमला में रही। कहा जाता है एक रात दोनों बहनों में झगड़ा हो गया। दोनों बहनें घर में अकेली थीं तो आपस में हुए झगड़े पर बहन इन्दिरा ने आधी रात को अमृता को घर से निकाल दिया। वह रात को कुछ मील चल कर अपनी मित्र हेलन के घर पहुंची। बचपन में, माता पिता के बीच मनमुटाव और मां का स्विमिंग पूल में डूब कर मरना, बहन से तकरार आदि कुछ घटनाएं थीं जिनका अमृता पर प्रभाव पड़ा होगा जो चित्रों में भी देखा जा सकता है।

शिमला के एकांत घर व आसपास के आकर्षक और शांत वातावरण ने अमृता के मन पर विशेष प्रभाव डाला। यहां की जलवायु, परिवेश और आकर्षक भू-दृश्य ने कलाकार पर अपना प्रभाव बनाया। वैसे भी शिमला उन दिनों समर केपिटल था, जहां देश और विदेशों से लोग आया करते थे।

कहा जाता है, शिमला में विदेशी माहौल होने के बावजूद अमृता बाहर जाने पर हमेशा साड़ी पहनती थी। इनके चित्रों में भी साड़ी प्रायः देखने को मिलती है। अमृता की तूलिका से निकले चरित्र समाज के निम्न वर्ग से थे। यह चरित्र अपनी भावनाओं को छिपाने वाले, संवदेना से भरे हुए और तनावग्रस्त रहे हैं जो इनके चेहरों पर स्पष्ट झलकता है। शिमला में आवास के इन चार वर्षों में अमृता ने महत्वपूर्ण चित्रों का निर्माण किया। इनमें प्रमुख 'चाइल्ड वाइफ', 'हिल मेन', 'हिल वोमेन', 'ब्रह्मचारी', 'स्टोरी टेलर', 'अछूत', तथा 'फल बेचने वाली' आदि हैं। इसके अलावा उनका 'सेल्फ पोट्रेट', 'न्यूड'ए वोमेन एट बाथ', 'ट्राइबल मेन', 'टू एलिफेंट्स' आदि चित्र प्रसिद्ध हैं। अमृता एक व्यावसायिक और मौलिक चित्रकार बनना चाहती थी, जो दूसरों से भिन्न हो और यह उसने करके दिखा दिया। वह मौलिक, वास्तविक और स्थायी अनुभवों और संवेदनाओं की चित्रकार बनना चाहती थी और यह उसके चित्रों से स्पष्ट झलकता है।

अमृता ने लिखा है जब मॉम का प्रेमी मार्सेल्ले अपने गांव पत्नी के पास सिसिली लौट गया तो मॉम बहुत रोयी। मॉम उसके लिए पापा से झगड़ कर इण्डिया छोड़ एथेन्स आईं किंतु मॉम के मिन्नत करने पर भी मार्सेल्ले चला गया। अमृता ने लिखा है :

''जहाज़ से लौटते हुए मॉम मौन ही थी। उस स्थिति में मैंने उनके कई चित्र बनाए पर वह मुझे उजड़ी हवेली जैसी लग रही थी। इन्दिरा को सीने से लगा कर रोती थी।''

यह इटेलियन शिक्षक मार्सेल्ले, अमृता को समरहिल शिमला के घर में चित्रकला सिखाता था।

प्रथम दिसम्बर 1923 को अमृता ने लिखा है :

''पापा कॉन्फरेंस के लिए बनारस गए हैं। मैं और इन्दिरा साथ-साथ माल रोड़ पर बर्फ की फुहारों को देख रहीं थीं। स्वेटर तथा ओवरकोट के बावजूद ठण्ड हड्डियों तक को ठिठुरा रही थी। अंधेरा घिर बाया तो आया बोली- मिस्सी बाबा, चलो, वापिस चलो।......हम दोनों संसिल गईं। वे मार्सेल्ले के साथ नृत्य में तल्लीन थीं। उन्होंने सिर उसके कन्धे पर टिकाया था। उसके हाथ मॉम की कमर में लिपटे थे।''

पति के साथ लड़ाई झगड़ा चला रहता था। पत्नी से बचाव के लिए सरदारजी टेरेस पर आ जाते और दूरबीन से ख़ुद को ग्रह तारों में उलझा देते।

मॉम का मार्सेल्ले के प्रति प्रेम और पापा के प्रति उपेक्षा ने नन्हीं अमृता के मन पर गहरा प्रभाव छोड़ा। पिता का भारतीय कला के प्रति प्रेम अमृता में भी आया। वे उसे सच्चिदानंद...सत्, चित! और आनंद से उत्पन्न कला का मर्म समझाते। सरदारजी का ज्ञानविस्तार बहुत था। वे सन्यासी की तरह रहते थे। उन्हें संस्कृत, पर्शियन, उर्दू भाषाओं का ज्ञान था। पापा तथा मॉम की वृत्ति प्रवृत्ति में बहुत विरोधाभास था। वे ग्रह तारे नक्षत्रों में खोए रहते तो मॉम भौतिक संसार में आकण्ठ डूबी रहती। पिता के बारे

में अमृता ने लिखा है : ''संन्यासी वृत्ति के तत्वचिंतक, तुलानात्मक धर्माध्ययन करने वाले अभ्यासक तथा सामाजिक स्वतन्त्रता के लिए लड़ने वाले समाज सेवक।''

29 अगस्त 1927 को शिमला में अमृता ने लिखा है :

''पूरे दो महीने बाद इर्विन अंकल का पत्र आया है।...आधे से ज्यादा पत्र मेरे बारे में था।....उसे मॉडल के साथ काम करने के लिए कहिए। भीड़ को देखने दो। बाज़ार में सब्जीवाली, मटनवाला जैसे स्त्री पुरुष देखने दो। उनकी मुद्राएं, हाव भाव, आनंद, द्वेष, क्रोध, सबका अध्ययन करने दो। मुझे एकदम गुब्बारे में हवा भरने जैसी अनुभूति हुई। मेरा मन व्याकुल हो गया। मैं आकाश में उड़ने लगी। जैसे पंख लग गए हों। दौड़ते हुए आंगन में आई तो कुशी हमारी नौकरानी आंगन झाड़ रही थी। उसके काम करते हुए अनेक चित्र निकाले। लगा, मेरी आंखें वस्तु के पार, त्वचा के भीतर भी देख सकती हैं।....कुशी को झाड़ू रखकर खाली बैठे हुए देखा तो मॉम ने आकाश सिर पर उठा लिया।

मैं आने जाने वालों के चेहरे ध्यान से देखने लगी। पापा को अध्ययन में गर्क़ देखकर उनका चित्र बनाया। लम्बी दाढ़ी, झुकी गर्दन, सिर पर सरदारों की पगड़ी। उनके आसपास पुस्तकों का ढेर।'' समाज में व्याप्त विसंगतियों, कुरीतियों, विवाह संस्था आदि के विरुद्ध जा कर अमृता ने एक अलग जीवन यापन किया और समाज की रूढ़ियों को तोड़ते हुए स्वच्छंदता की हद तक स्वतन्त्र जीवन जिया। एक रचनाशील और नये आयामों की तलाश में इन्होंने परंपरगत जीवन को त्याग अपने ढंग से जीवन अपनाया जिसे किसी हद तक उच्छृंखल भी कहा गया। इन्होंने प्रसिद्ध कला समीक्षक कार्ल खण्डालवाला को एक पत्र में लिख कर यह विचार प्रकट किए थे : ''वास्तव में, मेरे विचार में, धार्मिक कला समेत सभी कलाएं यौन आनंद के कारण अस्तित्व में आई हैं; ऐसा यौन आन्नद, जो मात्र शारीरिक हदों से ऊपर बहता है।"

पेरिस में अमृता को मिली मारी ल्यूसी नाम की सहेली भी उसके मॉम के साथ झगड़े का कारण बनी। लाड से वह उसका निचला होठ चूसती थी, बालों में उंगलियां घुमाती थी। उसके अमृता को जब मर्जी कपड़े उतारने का अधिकार दिया था। उसके बहुत से न्यूड चित्र अमृता ने बनाए। वे दोनों साथ साथ रहने लगीं तो साथ की लड़कियां फ़ब्तियों कसने लगीं। मॉम से भी जोरदार झगड़ा हो गया। अमृता ने लिखा है : ''.......अब मैं बच्ची नहीं हूं। मुझे भी समझ है। दो लड़कियों की मां होते हुए भी तुम्हारे शरीर का आग अभी बुझी नहीं है। तुम उस जवान मार्सेल्लो के पीछे पागल हो गई थी। मैं तो युवा हूं। मुझे भी शरीर है। मेरी भी कुछ जरूरतें हैं। कुछ दैहिक भी। ....मेरी तरह से जीने का मुझे हक़ है। इस विषय में तुमने और कुछ कहा तो मैं रात को पिगाल की सड़क पर खड़ी हो कर वेश्या का व्यवसाय करने लगूंगी।''

अमृता के साथ उसकी मां ने आख़िरी धोखा किया जब 1932 में उसका विवाह युसुफ़ अली से करवा दिया जिसके पहले ही तीन विवाह हो रखे थे। युसुफ को गुप्तरोग भी था जो अमृता को लग गया। वह पुनः मारी ल्यूसी के पास आ गई। इस दुखद क्षण में मारी ल्यूसी से अमृता का मिलाप विचलित कर देता है :

''उलझी दृष्टि से उसने मेरी ओर देखा। मुझे बांहों में लिया। मुझसे रूलाई रोकी नहीं गई।....मारी, आज मेरी त्वचा छील डालो। सारे कष्ट शरीर के ही हैं न? इस देह को विद्रूप बना दो कि फिर कोई मुझे देख न सके।.....उसका हाथ मेरी पीठ सहला रहा था। उसने मुझे थोड़ी वाइन दी पीने के लिए। मुझे बेड पर सुलाया। मेरा चुम्बन लिया और फिर उसने मुझे अन्तर्बाह्य मथ डाला। मैं अनन्त हो गई।'' 8 अगस्त 1932 की डायरी से लगता है कि मारी ल्सूसी की ब्रेन ट्यूमर से मृत्यु हो गई। अमृता पापा को दूरबीन से तारामण्डल में मारी ल्यूसी को ढूंढने के लिए कहती है। मारी ल्यूसी, जो रहस्यमयी थी। किसी ताला लगे हुए बक्से की तरह। लगता जैसे उसकी आत्मा उस बक्से में क़ैद हो। पता नहीं उसे ऐसा क्यों लगता था कि उस बंद ताले की चाबी अमृता के पास है.....।

इस तरह की अनेक मानसिक और शारीरिक यातनाएं पाने से अमृता की कला में निखार आता गया मगर अट्ठाईस साल की अल्प वय में ही उसकी मृत्यु हो गई।

अमृता शेरगिल भारतीय कला और मूर्तिकला से प्रभावित रहीं और भारत लौटने की चाह उनमें बराबर बनी रही। वे भारतीय कला की प्रशंसक रहीं। यद्यपि पिता उमराव शेरगिल नहीं चाहते थे कि वे भारत लौटे तथापि से 1934 में भारत लौट आईं और शिमला में अपने माता पिता के साथ रहीं। उनका पं. नेहरू के साथ भी पत्र व्यवहार रहा। नेहरू की ऑटोबायोग्राफी पर अमृता ने प्रशंसाभरा पत्र लिखा। उन्होंने लिखा कि वे सामान्यतः ऑटोबाईग्राफी को पसंद नहीं करतीं क्योंकि वे झूठी होती हैं। किन्तु नेहरू की ऑटोबाईग्राफी मुझे पसंद है क्योंकि उन्होंने यह लिखा है कि..... जब मैंने समुद्र को पहली बार देखा....जबकि दूसरे कहेंगे कि जब समुद्र ने मुझे पहली बार देखा...।

अमृता ने 5 फरवरी 1932 को पेरिस में डायरी में लिखा है कि उसने आज तक लगभग साठ चित्र बनाए हैं जिन्हें लोग ख़रीदना भी चाहते हैं। मारी ल्यूसी का पोट्रेट भी बनाया। एक रेखाचित्र 'ड्यूडिश' को देख कर बहन इन्दिरा ने कहा था कि तुम्हारे इस सेल्फ पोट्रेट में तुम पुरुष की नग्न देह पर खड़ी काली लगती हो....खुले केश, क्रोधित शिव, शक्तिविहीन शिव...तुम कालजयी लगती हो।

अमृता शेरगिल की मृत्यु 5 दिसम्बर 1941 को लाहौर में हुई जबकि उनसे कला जगत को अभी और कलाकृतियों की अपेक्षा थी।

कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी शिमला-171009
मो. 0 94180 85595

संस्मरण

राह-ए-मंज़िल का पथिक : मगन सिंह 'पथिक'

◆ डॉ. पीयूष गुलेरी

कुछ लोग ऐसे होते हैं जो आपके संसर्ग में आने के पश्चात् आपके तन-बदन और ज़हन में इतने गहरे उतर जाते हैं कि आजीवन विस्मृत होने का नाम नहीं लेते। रह-रहकर उनकी विशिष्टताएँ और व्यक्तित्व की अनेक कलाएँ आपको बराबर झकझोरती रहती हैं और नित नई प्रेरणाओं एवं कल्पनाओं से सराबोर करती रहती हैं। उनका व्यक्तित्व, चरित्र और जीवन-दर्शन कहीं न कहीं, किसी न किसी तरीके से आपको अपने अस्तित्त्व से दो-चार करवाता रहता है। कभी-कभी तो किन्हीं एकांत घड़ियों में वे इतने याद आते हैं, इतने याद आते हैं कि आप हिलकर रह जाते हैं। किन्तु समय और काल का गाल जब उन्हें लील जाता है तो आपकी मुट्‌ठी में यदि कुछ बचता है तो यादें, स्मृतियां और संस्मरण।

समय इतनी तेज़ी से चलता है कि क्षण-क्षण दिन-महीनों में बदलता हुआ वर्षों की सीढ़ियाँ चढ़कर अर्द्ध शताब्दियों और शताब्दियों को लाँघकर असीम सीमाओं के बँधन तोड़कर सीमाविहीन हो जाता है। पीछे मुड़कर जब हम बीते हुए समय पर नज़र डालें तो कई बार खुद हक्के-बक्के रह जाते हैं कि इतनी शीघ्रता से इतना समय बीतते पता न चला और समय की इस गति में कितना कुछ बदल गया, कितना परिवर्तन हो गया और कितने लोग हम से बिछुड़ गए तो कई बार ऐसा प्रतीत होता है कि संसार से बहुत सारे विदा ले गए। लेकिन दूसरी ओर आगंतुक समाज को देखकर लगता है कि संसार रूपी समुद्र से जितना कुछ कम हुआ शायद उतना ही उसमें नया भी आ गया। शायद यही संसार का आवागमन होगा।

जैसा कि हम कह आए हैं कि संसार के इस आवागमन चक्र में कुछ व्यक्तित्व ऐसे हैं तो आपके जीवन काल तक आप का अभिन्न अंग बनकर आपको सदैव-सदैव उद्वेलित करते रहते हैं। हमारे जीवन में एक ऐसी नायाब शख्सियत जिसने अपनी स्मृतियों के बंधन में हमेशा हमें जकड़े रखा, उसका नाम है मगन सिंह 'पथिक'। मगन सिंह 'पथिक' से अपनी भेंट मई, सन् 1964 इसवी में तत्कालीन हायर सैकेंडरी विद्यालय रैत (कांगड़ा) में तब हुई जब मैंने वहां अन-एडजैस्टिड ग्रैजुएट अध्यापक के तौर पर कार्यभार संभाला। कार्यभार संभालने के पश्चात् जब सब सहयोगी-अध्यापकों एवं अन्य कर्मचारियों से भेंट हुई तो भेंट करवाने वाले की भूमिका में थे मगन सिंह 'पथिक'। यह कार्य उन्होंने इस कुशलता से निभाया जैसे घर-परिवार में नए सदस्य के आने पर कोई बड़ा सदस्य निभाता है। बाद में पता चला कि मगन सिंह 'पथिक' हमारे विद्यालय के स्टाफ-सैक्रेटरी भी हैं और नियमित रूप से न केवल स्टाफ की बैठकें करवाते हैं, प्रत्युत् स्टाफ में बिरादरी और आपसी प्रेम-प्यार का जो चलन उन्होंने शुरू किया था व उत्तरोत्तर संबंध-सूत्रों को दृढ़ता प्रदान कर रहा है।

रैत में रहते हुए ज्यों-ज्यों हम दोनों एक-दूसरे को समझने लगे तो कुछ गुण-सूत्र ऐसे थे जिनकी संगति ने हमें निकटता प्रदान की और मीठी मैत्री के सूत्र में बांध दिया। उन गुण-सूत्रों में से एक था - काव्य के प्रति प्रेम और काव्य रचना का व्यसन। मैं हिन्दी-हिमाचली में काव्य-रचना का शौक़ीन था जबकि पथिक हिन्दी-उर्दू और विशेषतया नेपाली भाषा के धुरंधर रचनाकार थे। वे गोर्खा-समुदाय से सम्बद्ध थे इसी कारण अपनी मातृभाषा नेपाली-गोर्खाली के प्रति हृदय की गहराइयों से जुड़कर उसे अपनी रचनाशील प्रतिभा से सम्पन्न कर रहे थे। कहा भी है न --- खूब निभेगी, जब मिल-बैठेंगे दीवाने दो।" वैसा ही हुआ। हम जब कभी 'रिसैस' अथवा खाली पीरियड में समय पाते तो एक दूसरे को सुनते-सुनाते। ऐसे अवसरों पर हमारे अन्य मित्रों की रुचि भी श्रवण के प्रति बढ़ने लगी जिससे हमारा उत्साह सातवें आसमान पर पहुँचने लगा। मैंने अपने सुनने-सुनाने के क्षणों में पाया कि पथिक जब कभी नेपाली में अपनी रचनाओं का पाठ करते होते तो उनके शरीर के हाव-भाव और मुद्राएं एकाकार होकर उन्हें नेपालीमय बना देतीं। वे अपनी रचनाओं के उद्‌बोधन, उनकी अदायगी और एकाकारिता से उनमें अर्थ-संप्रेषण की अद्‌भुत शक्ति भरने में समर्थ थे।

मगन सिंह 'पथिक' का जन्म 2 जनवरी 1927 ईसवी को धर्मशाला छावनी (ज़िला कांगड़ा) तत्कालीन पंजाब (अब हिमाचल प्रदेश) में श्री कालू राम जी गुरूंग के घर हुआ। जहां पिता कालू राम गुरूंग सेवानिवृत्त सैनिक और देशभक्त समाज-सेवी प्रकृति के धनी थे तो वहां उनकी माता श्रीमती शिवकला अपने नामानुरूप

मगन सिंह 'पथिक' के मन में अपने गोर्खा समाज की देशभक्ति, वीरता, सामाजिक सरोकारों की विशिष्टताओं और समाज के लिए त्याग एवं उत्सर्ग के प्रति उच्च भाव थे, यही कारण था कि वे आजीवन न केवल तदनुरूप जीवन जीते रहे प्रत्युत् उनके संरक्षण, परिवर्द्धन और प्रचार-प्रसार के लिए भी दत्त-चित्त रहे। यह जज़्बा उनके विद्यार्थी कालीन जीवन से प्रकट होने लगा था जब उन्होंने गोरखा-विद्यार्थी-संगठन की झंडाबरदारी का बीड़ा उठाया। इस संगठन के अन्तर्गत 'मनोरंजक सूचना पत्रिका' तथा 'उज्ज्यालो' आदि शीर्षक से अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन किया। यह सारा उद्योग उन्होंने सन् 1950 ईसवी से प्रारंभ किया जब वे मात्र 23 वर्ष की आयु के युवा थे।

धार्मिक प्रवृति की शिव-भक्त महिला थीं। मगन सिंह प्रारंभ में अपने नाम के साथ 'गुरूंग' लिखते थे किन्तु बाद में अपने यौवनकाल में देशभक्त आजाद हिन्द फौज के कमाण्डर नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, भक्तसिंह, राजगुरु, बिस्मिल, चंद्रशेखर, मास्टर मित्रसेन, शहीद दुर्गामल्ल, शहीद दल बहादुर थापा और कैप्टन रामसिंह ठाकुर (आई.एन.ए.) के चरित्रों से प्रभावित होकर जब वे साहित्यिक रचना-कर्म में प्रवृत्त हुए तो 'गुरूंग' से विस्तार पाकर 'पथिक' तख़ल्लुस (उपनाम) उनकी साहित्यिक पहचान बनी। अपनी रचनशीलता, सामाजिक सरोकार, निश्चित जीवन-दर्शन, और जीवन शैली, गोरखा-समुदाय के प्रति अपने दायित्व-निर्वाह के कारण उन्होंने जो सफर शुरू किया तो आजीवन पीछे मुड़कर न देखा। बस यही कारण है कि 'पथिक' उपनाम के अनुरूप वे जीवन और जगत में सच्चे पथिक बनकर प्रसिद्ध हुए।

मगन सिंह 'पथिक' के मन में अपने गोरखा समाज की देशभक्ति, वीरता, सामाजिक सरोकारों की विशिष्टताओं और समाज के लिए त्याग एवं उत्सर्ग के प्रति उच्च भाव थे, यही कारण था कि वे आजीवन न केवल तदनुरूप जीवन जीते रहे प्रत्युत् उनके संरक्षण, परिवर्द्धन और प्रचार-प्रसार के लिए भी दत्त-चित्त रहे। यह जज़्बा उनके विद्यार्थीकालीन जीवन से प्रकट होने लगा था जब उन्होंने गोरखा-विद्यार्थी-संगठन की झंडाबरदारी का बीड़ा उठाया। इस संगठन के अन्तर्गत 'मनोरंजक सूचना पत्रिका' तथा 'उज्ज्यालो' आदि शीर्षक से अनेक पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन किया। यह सारा उद्योग उन्होंने सन् 1950 ईसवी से प्रारंभ किया जब वे मात्र 23 वर्ष की आयु के युवा थे।

रैत विद्यालय में मगन सिंह 'पथिक' और मेरा संयोग लगभग छः-आठ महीने का था क्योंकि बाद में वे स्थानांतरित होकर धर्मशाला विद्यालय में आ गए। किन्तु समय का जो अंतराल उनके साथ बिताया वह साहित्यिक, सामाजिक, निजी, व्यावसायिक और संगठनात्मक दृष्टि से अविस्मरणीय है। उनके स्थानांतरण के पश्चात् स्टाफ-सैक्रेटरी का दायित्त्व मुझे सौंपा गया तो चार्ज देते समय एक-एक कागज़ और पैसे-पैसे का हिसाब देकर मुझे आश्वस्त किया कि आप भी इसी क्रम से अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहेंगे।

निजी जीवन में मगन सिंह 'पथिक' व्यवहार-कुशल, सीधे-सादे, सच्चे-सुच्चे, नियमों के पक्के और उन पर अड़ जाने वाले जुझारू इंसान थे। पक्के मित्र और मैत्री को निभाने में सिद्धहस्त। जो ठान ली उसे करके दम लेने के धनी, भले ही जी-जान ही क्यों न लगा देनी पड़े। इस संदर्भ में मुझे उनके जीवन का एक बड़ा मनोरंजक किन्तु अद्‌भुत संस्मरण याद आता है। उन्होंने धर्मशाला के बी.एड. कॉलेज में प्रवेश लेना था। वे पूर्व फौजी थे और कारणवश प्रवेश के लिए विलम्ब से पहुँचे। तब तक कॉलेज में 'प्रथम आओ प्रथम पाओ' के नियम के तहत बी.एड. के निर्धारित सभी स्थान भरे जा चुके थे। जब वे प्रिंसिपल साहेब डॉ. एन.एल. दोसांझ के पास पहुँचे थे प्रिंसिपल साहेब ने कहा :- "आप विलंब से आए हैं। सभी सीटें भरी जा चुकी हैं। अब मैं कुछ नहीं कर सकता। आप जाइये।" पथिक बोले :- "विलंब का कारण मेरे ससुर शमशेर बहादुर चाँद की आकस्मिक मृत्यु के पश्चात् निभाये जाने वाले संस्कारादि उत्तरकृत्यों से बंधा होना था।"

"वह तो सब ठीक होगा लेकिन मेरे हाथ बँधे हुए हैं मैं कुछ नहीं कर सकता।" प्रिंसिपल बोले।

मगन सिंह 'पथिक' का दिमाग़ झन्ना गया। वे दफ्तर से बाहिर आकर बैंच पर बैठकर सोचने लगे। कुछ समझ नहीं आ रहा था आखिर करें तो क्या करें ? न जाने क्या सूझी कि वे उठे और एक बार फिर प्रिंसिंपल के पास पहुँचे और कहा :- सर! कुछ करिये। मैं एक्स-सर्विस मैन हूँ।"

प्रिसिंपल ने हाथ झाड़ दिये :- आपने सुना नहीं, अब मैं कुछ नहीं कर सकता, मेरे हाथ में कुछ नहीं है।" पथिक ने तुरंत पूछा :- "तो फिर किसके हाथ में है ?"

"अब तो मुख्य मंत्री सरदार प्रताप सिंह कैरों ही कुछ कर सकते हैं।" प्रिसिंपल ने हल्केपन में बात बना कर कहा।

बस फिर क्या था। पथिक दफ्तर से निकले और सीधे चण्डीगढ़ की राह ली। चण्डीगढ़ पहुंचकर अगली सुबह उनके दफ्तर जा पहुंचे। मुख्यमंत्री कैरों सुबह-सुबह आगुंतक फरयादियों से भेंट किया करते थे। यह भेंट दस-पन्द्रह लोगों को एक साथ अर्द्धवृत्ताकार में खड़े करके शीघ्र-शीघ्र बात बताकर और निपटाकर हुआ करती थी। अपनी बात तुरंत, संक्षिप्त और स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार बतानी होती थी कि मुख्यमंत्री तुरंत समझकर मौके पर निर्णय लें। पथिक ने स्वयं को इसके लिए तैयार कर लिया हुआ

था। जैसे ही उनकी बारी आई तो सारी बात संक्षेप में बताकर इस बात को रेखांकित कर दिया कि प्रिसिंपल साहेब कहते हैं कि अब तो कुछ कैरों साहेब ही कर सकते हैं।"

"अच्छा। यह कहा प्रिसिंपल साहिब ने कि अब कैरों साहिब ही कर सकते हैं तो लो हमने कर दिया। कैरों साहेब ने कहा और तुरंत एक आदेश लिखवाया और धर्मशाला में एक सीट बढ़ा दी गई। अगले दिन आदेश लेकर मगन सिंह पथिक जब बी-एड-कॉलेज पहुंचकर प्रिसिंपल को बढ़ी हुई सीट का आदेश दिखा रहे थे तो प्रिसिंपल हैरान थे कि क्या यह सच घटना है ? दो-एक बार उलट-पलट कर कागज़ देखा लेकिन यह तो दृढ़ निश्चयी मगन सिंह पथिक का कारनामा था। उस वर्ष बी-एड-कॉलेज में निर्धारित सीटों से एक सीट बढ़ी थी। फिर कभी ऐसा न हुआ।

मगन सिंह 'पथिक' हृदय और मस्तिष्क की अनेक विशेषताओं से सम्पन्न थे। वे कुशल कार्यकर्त्ता, गोरखा-समुदाय के उत्थान के प्रति जागरूक, हिन्दी-उर्दू-नेपाली साहित्य के सर्जक, अध्यापक नेता, पक्के यूनियनिस्ट, संगठक, गोर्खा-नृत्य-संगीत के उन्नायक और सर्वोपरि हिमाचल-प्रदेश और बाहर गोरखाली-नृत्य को मंच पर परिस्थापित करवाने वाले दूरदर्शी रंगकर्मी थे। वे समुदाय के नेता होने के साथ-साथ एक लोकप्रिय शिक्षक भी थे जो विद्यार्थी समाज सहित अपने सहकर्मी सहयोगी अध्यापकों में बड़े सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे। उनके साथ जुड़े अनेक अन्य संस्मरण हैं जिनके लिए पृथक निबंध लिखने की दरकार है।

सात अक्तूबर, 2010 ईसवी को अपने स्वर्गारोहण से चंद माह पहले मगन सिंह 'पथिक' मुझे मुख्य डाकघर धर्मशाला के द्वार के निकट मिले तो अपनी स्वाभाविक हल्की मसखरी-भरी मुस्कान बिखेरते हुए थोड़ी देर खड़े होकर हाथ जोड़कर मेरा अभिवादन स्वीकार किया। हाथ मिलाया और फिर सहज भाव से दोनों भुजाएं फैलाकर अंकमाल होने का निमंत्रण दिया। घुटकर मिले और फिर मेरे हाल-चाल पूछने पर अत्यंत सहज और सरल किन्तु दृढ़ स्वर में कहा :- "पीयूष जी! अब शरीर पुराना, वृद्ध और जर्जर हो गया है। चलें और अब नया शरीर धारण करते हैं।"

नया शरीर धारण करने की उनकी कामना आखिर 7 अक्तूबर, 2010 ईसवी को पूर्ण हुई किन्तु उनके साथी, मित्र और जानकार उस मगन सिह 'पथिक' को कभी विस्मृत नहीं कर पाएंगे। जिनके दिलों दिमाग़ पर वह अपने नायाब व्यक्तित्त्व की अमिट और अमर छाप छोड़ गया है।

अपर्णा-श्री, हाऊसिंग कॉलोनी,
चीलगाड़ी - धर्मशाला (हि.प्र.)-176215
मो. 94180-17660

कविता

चिरौरी

◆ **सुशील कुमार फुल्ल**

आज सब कुछ बदल गया लगता है
वे बातें अब फाख्ता हो गई हैं
जिन्हें हम कभी सलीके का अंग मानते थे
अब हमारे पास समय नहीं है
हम सब कुछ शार्ट कट से कर लेना चाहते हैं
मोबाइल, इंटरनेट और न जाने क्या-क्या
बलाओं ने हमें घेर लिया है
और हम
आत्ममुग्ध से कोल्हू के बैल बने
अपने-अपने चक्रव्यूह में मस्त
अपने ही संसार में लीन
सारी दुनिया को अपनी मुट्ठी में
बंद देखना चाहते हैं और इसके लिए कोई भी
पैंतरा आजमाने को तत्पर रहते हैं
सलीका पीछे छूट गया
अब तो
झपटने-लपटने का ही ज़माना है
और यदि ऐसा नहीं कर सकते
तो कतार में पीछे चलने की प्रक्रिया शुरू कर दो
अब सलीका बदल गया है, बढ़ना चाहते हो
तो सलीका बदल लो
कब तक चिरौरी से पेट भरते रहोगे?
कब तक अंदर-ही-अंदर मरते रहोगे
आह और कराह से भी आज
कोई नहीं पसीजता
अपनी ही चाल चलते रहोगे
तुम पुरानी पीढ़ी के हो
तो तुम्हें दिक्कत तो आती ही रहेगी
लेकिन बार-बार चिरौरी तो नहीं करनी पड़ेगी
वक्त रहते सलीका बदल डालो
केंचुल उतारने में सांप को वक्त ही कितना लगता है
एक बार आदत बन गई तो फिर
गिरगिट होने में भी कोई बाधा न होगी।

पुष्पांजलि, राजपुर-पालमपुर,
जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 061

आलेख

कला-चिंतन में जीवन की नूतन चेतना

◆ नंद लाल

आदि काल से ही भारतीय ही नहीं बल्कि समस्त विश्व के मनीषियों ने कला के विषय में पर्याप्त चिन्तन किया है। भारतीय ऋग्वेद से बृहत् संहिता, पुराणों गद्य-पद्य, चम्पू नाटक आदि में कला को स्पष्ट तथा सरल रूपेण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय की सिद्धि के लिए साहित्य को चार भागों में बांटा जा सकता है-

धर्म-शास्त्र इसके अन्तर्गत मनु, यज्ञवल्क्य आदि प्रणीत धर्म पर आधारित ग्रन्थ है।

अर्थ-शास्त्र इसके अन्तर्गत बृहस्पति आदि प्रणीत ग्रन्थ है।

काम-शास्त्र इस भाग में वात्स्यायन कृत कामसूत्र को रखा गया है।

दर्शन-शास्त्र इस भाग के अन्तर्गत दार्शनिकों के मतों को प्रतिपादित किया गया है। इसमें दर्शन को मोक्ष की प्राप्ति का रास्ता बताया गया है।[1]

कलाकार दर्शन का अध्ययन करने के पश्चात् अभिव्यक्ति और सौन्दर्य अपनी अनुभूति एवं कल्पना का रंग चढ़ा कर अन्तर्जगत् के सन्दर्भ से तीसरा ही जगत बना डालता है जिसमें हमारे भाव, कल्पना तथा अनुभूति के समावेश से विषय सजीव सा हो जाता है और आनन्दानुभूति होती है। कलाकार में प्रकृति का ऐसा गुण विद्यमान होता है जिससे कि वह आम व्यक्ति से अलग होता है वह किसी भी व्यक्ति की बाह्य आकृति में भीतर के भाव, गुण, दोष आदि चित्रित करता है।

कला वर्तमान में स्वयं एक 'दंगे' का शिकार होती जा रही है। वर्तमान में प्रत्येक कलाकार अपने आप को कलावेता मान बैठा है, जैसे कोई संगीतकार मान बैठता है कि मात्र वही संगीत को समझता है, क्योंकि उसने रियाज कर वर्षों तक गुरु के चरणों में रहकर संगीत शिक्षा प्राप्त की है। दूसरी ओर दार्शनिक अथवा मनोवैज्ञानिक अपनी मान-गरिमा की चकाचौंध से इतने अन्धे हो जाते हैं कि वे पेड़ या वनस्पति की खोज में जंगल में घुस जाते हैं जहां वे अपने आप को ही भूल जाते हैं। इसी प्रकार संस्कृति-विज्ञान, अति-मनोविज्ञान इत्यादि अपनी-अपनी सीमित परिधि में कला को समेट लेना चाहते हैं, जो वास्तव में, मानव-मन की सहजप्रवृत्ति है और जो सीमित नहीं हैं, असीम है, जो सनातन है सामाजिक भी, सार्वभौम और सर्वकालिक भी। वह मानव-मन के स्वभाव में है। जन्मजात प्रवृत्ति और पहचान है, इसलिए कला को लोक की सम्पदा माना जा सकता है, अर्थात् कला सबके लिये है किसी एक की बपौती नहीं।[2]

कला एक व्यापक शब्द है जिसका प्रयोग प्रकृति तथा मानव जीवन के विविध क्षेत्रों में होता रहा है। दार्शनिकों ने प्रकृति को ईश्वरीय कला माना है। अतः उसे 'ब्रह्माण्डीय कला' नाम दिया गया है। प्रकृति कलात्मक वस्तुओं से अलग है। कलात्मक वस्तुओं में केवल मनुष्य द्वारा निर्मित कृतियां ही आती है। कलात्मक वस्तुओं के निर्माण की एक विधि अर्थात् रचना-प्रक्रिया होती है। इस प्रक्रिया के कारण ही निर्माण के पश्चात् यह निश्चित हो पाता है कि कोई वस्तु कितनी कलात्मक है। इस प्रकार यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कला एक क्रिया है और जो कुछ भी हमारे सामने है वह इस क्रिया द्वारा निर्मित कृति है।[3]

बहुत से दार्शनिकों का यह मत है कि कला का कोई महत्व नहीं है। इसका अस्तित्व मात्र कला के लिए है। जबकि कुछ लोगों का यह मानना है कि कला की आत्मा में अर्थात् कला के सार में कुछ तो है जिससे मानव उसका उपयोग करता है। कला विषय में जागरूकता अनेक प्रश्न खड़े करती है जैसे चित्र में क्या बताया गया है? इसका उद्देश्य क्या है? प्रश्न निश्चय ही सम्माननीय है। ऐसा चित्र में क्या होता है जो कलाकार तन्मयता से उसकी रचना करता है? यह ऐसी प्रक्रिया है जिसे गुफाओं, कंदराओं का मनुष्य भी करता था और वर्तमान मनुष्य भी विभिन्न तकनीकों के माध्यमों से करता आ रहा है। वास्तव में कला का उद्देश्य समाज के विद्रोह एवं अन्तर्भावों को प्रकट करना है।[4] अरस्तु ने कलात्मक सृजन को ज्ञानार्जन का साधन माना है। उनके अनुसार, कला का अर्थ है शिवत्व की प्राप्ति के लिए सत्य की सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति। 'सर्जन प्रक्रिया शाश्वत' सुन्दर और सुखात्मक होती है। सत्य वही है जो शाश्वत और सनातन हो अतः सत्य, शिव और सुन्दरम का अटूट सम्बन्ध है।[5] कला में सत्यं, शिवम् और सुन्दरम की इसी रूप में स्थापना है। प्रकृति में सुन्दरता का होना यह तो सत्य है ही लेकिन इस सत्य को सुन्दर बनाकर जीवन के लिए

मंगलमय बनाना या जगत के लिए कल्याणकारी बनाना ही कला-दर्शन है। शिव का अर्थ ही नैतिक अथवा कल्याणकारी है। हमारे मनीषियों ने इसे परमानन्द लीनता, अर्थात्मोक्ष की प्राप्ति का साधन मानकर कला को आत्मोत्थान में सहायक माना है :

विश्रान्तिर्यस्मसम्भोगे सा कला न कला मता।
लीयते परमानन्दे ययात्मा सा परा कला।।[6]

सत्य का उपासक यह मानता है कि जो सत्य है केवल वही शिव है, जो असत्य है वह कभी कल्याणकारी नहीं हो सकता। इस प्रकार सत्य का शिव से सीधा सम्बन्ध जोड़ा गया है। सत्य की अनुभूति में ही आनन्द रहता है और अनुभूति के आनन्द का नाम ही सौन्दर्य है। आदर्शवादी दृष्टिकोण से वही कलाकृति श्रेष्ठ मानी जाती है जिसमें सत्य, शिवम्, सुन्दरम् तीनों का ही प्रतिपादन हो।

उपरोक्त सभी मतों का अध्ययन करने के साथ-साथ हमें कला के चिन्तन सम्बन्धी सिद्धान्तों का अध्ययन करना भी आवश्यक है। कला चिन्तन का अध्ययन करते समय मुख्यतः पांच सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है :

ऐतिहासिक।
मनोवैज्ञानिक।
दार्शनिक।
सांस्कृतिक।
कलात्मक (कला के लिए कला का सिद्धान्त)

ऐतिहासिक सन्दर्भ

कला के ऐहितासिक सन्दर्भ पर विचार करना इसलिए अनिवार्य है कि अनेक युगों और युगान्तरों के क्रमिक परिवर्तन ने कला को बहुत कुछ दिया है, अनेक तत्व और पक्ष उजागर किये हैं। स्पेन की खुदाइयों में, जो आज भी चल रही है लगभग एक लाख वर्ष पूर्व के आदिम मानव के कला अवशेष मिले हैं। इन अवशेषों के आधार पर हम आदिम सभ्यता तथा संस्कृति का अनुमान लगाते हैं। आश्चर्य की बात यह है कि कितना समय ये आदिम कलाकार, किन उपकरणों से, किस प्रयोजन की सिद्धि के लिए, अन्धेरे में प्रकाश करके श्रम करते थे?[7] कंदराओं की उबड़-खाबड़ दीवारों की सफाई, लिपाई-पुताई, मंजाई, रंगाई, उन परमिट्टी के रंगों से बिना ब्रश के रेखाकंन और चित्राकंन, आकृतियों का संयोजन, मनोभावों का दर्शन, गम्भीर घटनाओं का उत्कीर्णन, सन्तुलन, लय, संवाद, अंग-विधान इत्यादि ऐसी जटिल कलात्मक क्रियाएं हैं कि सहज ही उन्हें देखकर वर्तमान के कलाकार भी ये प्रश्न पूछने पर मजबूर हो जाते हैं कि कितने कुशल थे वे कलाकार? किसने सिखया था उन्हें ये कला कौशल? इन्हें प्रेरणा तथा तत्व का प्रयोजन कहां से मिला होगा? ये प्रश्न ऐसे हैं जिनका उतर देना आसान नहीं है क्योंकि कलाकार द्वारा बनाई गई कृति का सही उतर केवल कलाकार स्वयं दे सकता है। वर्तमान में भू-वैज्ञानिकों तथा पुरातत्ववेताओं द्वारा तो इन गुफाओं, कंदराओं की कला से सम्बन्धित अनुमान ही लगाया जा सकता है।

कला वास्तव में मानव मन की एक सृजनात्मक प्रवृति रही है। वह आकस्मिक सिखी हुई घटना नहीं हो सकती है। कलाकार के अन्दर कृतित्व शक्ति ईश्वर द्वारा दिया गया वरदान होता है। कला अध्यापक होने के नाते हमने भी यह बात महसूस की है कि हर वर्ष आने वाले कला छात्रों में कुछ एक ही कलाकार बनने के योग्य होते हैं या होते ही नहीं बल्कि वे जिविकोपार्जन का साधन कला को मानते हैं और डिग्रियां लेने के पश्चात नौकरियां ढूंढते फिरते हैं। कला कृति बनने के पश्चात् उसे किसी ग्राहक की आवश्यकता नहीं है बल्कि वह राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय सम्पदा बन जाती है जिसमें कलाकार के अन्तरंग की भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है।

कला में सृजन प्रधान है, जिसका तात्पर्य है अन्तरात्मा के सूक्ष्मतम भावों को रूप के सांचे में ढाल कर इन्द्रिय बोध, स्थूल-स्वरूप प्रदान करना। मन और जीवन की अनेक सामान्य सीमाओं, बन्धनों से मुक्ति, सभ्यता-संस्कृति, विज्ञान, दर्शन, धर्म आदि का पर्याप्त विकास, कौशलों का विस्तार और विकास, सृजनात्मक प्रेरणा और प्रवृत्ति के निर्बाध गति, जन रुचि आदि ऐसे घटक हैं जो मानव मन की काम अथवा कामना एवं कल्पना को खुलकर अपना विस्तार करने के लिए अवसर प्रदान करते हैं। यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि कला भाव के धरातल पर काम करती है। कला शक्ति का अक्षय स्त्रोत है।

कला का मनोवैज्ञानिक संदर्भ

कला एक मनोलोक की घटना है और इस घटना की परिणति वह वस्तु है जिसे हम कलाकृति कहते हैं। मन के साथ सहज सम्बन्ध के कारण कला का मनोविज्ञान सहज ही समझा जा सकता है। संयोगवश हमारे देश में कला-मनोविज्ञान का विकास नहीं हुआ और हम अभी तक कला सम्बन्धी परिकल्पनाओं को पश्चिम से उधार लेते रहे हैं। पश्चिम में तो कला के स्वरूप और इसको मूल, प्रेरणाओं, प्रवृत्तियों और ऊर्जाओं को खोजते-खोजते विज्ञानी चेतना के पार, ऊपर-नीचे, मूल तक पहुंचने का प्रयास कर रहे हैं जिसे अति-मनोविज्ञान कहा जाता है। हमारी मान्यता के अनुसार कलात्मक प्रवृत्ति और प्रक्रिया का स्वरूप निरूपण करने के लिये हमें अति-मनोविज्ञान तक जाना अनिवार्य है।[9]

कला के सृजन और आस्वादन के विषय में माना जाता है कि कलात्मक व्यापार स्वतः स्फूर्ती होता है, यान्त्रिक अथवा प्रकृति सिद्ध नहीं। बालक के क्रिया-कलाप, व्यवहार और अन्य अभिव्यक्तियों से हम कला के स्वरूप को समझने के लिए क्या ग्रहण कर सकते हैं? इसके विपरित उसकी किलकारियां, हाथ-पैर की चेष्टा, मुख की भंगिमाएं-मुद्राएं, बोलने तथा हंसने के बाल प्रयास से सब संस्कृति के सीखे हुए मानकों के अनुसार नहीं बल्कि अनसीखे, अनसोचे, विशुद्ध प्राकृतिक नियमों के अनुसार प्रवृत्त

होते हैं। आज बाल-मनोविज्ञान बालक के विकास सम्बन्धी प्रश्नों के समाधान के लिये ही नहीं, अपितु प्रौढ़ और विकसित मानव को समझने के लिए भी, प्रयोगशालाओं में और उसके बाहर भी, फल-फूल रहा है। कला इस विकास का लाभ न उठाये, यह उचित नहीं है।

सिगमंड फ्रायड के अनुसार पागलपन और बालकपन में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। वयस्क, प्रौढ़-जन में बालकपन का किसी कारणवश जब आक्रमण हो जाता है, तो उसे पागलपन कहते हैं। वह बेकाबू भी हो जाता है। संकल्प शक्ति के क्षीण हो जाने से वह कुछ रचना, रूपायन नहीं कर सकता, जिसका कोई प्रयोजन या उपयोग हो। यदि पागलपन को रूप-संकल्प के अधीन किया जा सके, कौशलों की सहायता से तो वह सर्जक प्रतिभा बन सकता है।[10]

पागल, प्रतिभावान और बालक में जो सबसे बड़ी समानता है कि ये सब मुक्त क्रिया का आनन्द भोगते हैं जो वास्तव में कला का आनन्द है, सृजन और रसास्वादन के क्षणों में। पागल में जटिल मनोग्रन्थियों के कारण मन की मुक्ति और उसका आनन्द विकृत, क्षीण हो जाता है। परन्तु बालक हाथ पैर चलाकर आनन्द में किलकारियां मारता है यद्यपि वह सृजन संकल्प से प्रेरित नहीं होता। अनेक चिन्तकों ने कला के आनन्द को बालक के आनन्द समान मानकर, कला को क्रीड़ा माना है और कलाकार को चिर बालक-जिसका बचपन उससे छूटता ही नहीं। प्रतिभा सचमुच प्रौढ़ की अपेक्षा पागलपन के समीप होती है।[11] प्रत्येक व्यक्ति में उसका शैशव आजीवन भर सोया रहता है और मन के कोमल होने पर आनन्द का आधार स्त्रोत होता है। इस प्रकार कुछ बूढ़े भी बालक बने रहते हैं। कवि और कलाकार चाहे बूढ़ा हो या जवान यदि उसमें बाल-स्वभाव मर गया है तो वह सृजन के लिये अक्षम हो जाता है।

कला सृजन सम्बन्धी चिन्तक सृजक को उस काल में समाधि जैसी स्थिति में मानते हैं। योग और मनोविज्ञान का स्वयं यह मानना है कि व्यक्ति समाधि जैसी मनोदशा में शान्त हो जाता है, हृदय ग्रन्थियां खुल जाती है, संशय नष्ट हो जाता है, तन-मन तनावों से मुक्त होकर अन्त में जो क्रिया होती है उसमें रजोगुण की आंधी व तमोगुण की अंधियारी में जो दिखाई नहीं पड़ता था उसका साक्षात्कार होता है।

कला अपने चमत्कार और रूप-रसायन से भाव को प्रभाव में बदलती है, निर्जीव को जीवन्त बनाती है जड़ को चैतन्य के आलोक से मुखरित करती है। पत्थर में मूर्ति की स्थापना करती है जिससे मन को नये भावों, उजालों, आशा व प्राण शक्ति मिलती है। कला के द्वारा संस्कृति का प्रखर मूल्य बोध जागता है जिससे एक ओर मन की विकृतियां, जड़ताओं, विषमताओं से मुक्ति का आस्वादन होता है यही अनुभव आनन्द और रस है जिसका स्रोत केवल कला माना जाता है।[12]

कला का दार्शनिक सन्दर्भ

दर्शन जीवन के लिए जागरूकता का दूसरा नाम है। अरस्तू, प्लेटो, कान्ट, क्रोचे, फ्रायड, यूंग जैसे महान दार्शनिक कला के विषय में जो जानकारी हमें देते हैं, उससे उसके स्वरूप, प्रेरणा और उद्देश्य आदि को समझने के लिये प्रकाश मिला है और उनका मानना है कि प्रबुद्ध कलाकार केवल तूलिका-रंग, हथौड़ी, छेनी आदि उपकरणों से मात्र खिलवाड़ नहीं करता, वह अपने जागरूक और समृद्ध अन्तर्मन से जीवन और जगत के अनेक पक्षों को उजागर करता है।

दर्शन महान विचार देता है और कला इनको ग्रहण करती है। कला महान विचारों को आत्मसात करके उनका अपने माध्यम से प्रस्तुतीकरण करती है। प्रत्येक विश्वक्रान्ति के पीछे न केवल महान विचारक होते हैं, अपितु महान कलाकार भी रहते हैं हम जानते हैं कि प्राचीन यूनान कला और सौन्दर्य का पुजारी था। कला उसका जीवन था और सौन्दर्य उसका प्राण। इसलिए आधुनिक पश्चिमी-कला में ईसाई और ईसाई में यूनानी सौन्दर्य बोध का अनुभव होता है।[13] महान विचारों से निश्चय ही कला भी महान होती है।

फ्रायड के अनुसार किसी कलाकृति से दर्शकों को कुछ ऐसी तृप्ति मिलती है जो न बौद्धिक होती है और न ही एन्द्रिय। निश्चय ही इसका मूल अचेतन में होता है जिसके अनुसार कलाकार अपनी प्रतिभा के द्वारा अचेतन के प्रतिकों को बाहर लाने में समर्थ होता है। अहं के जो अंश अर्धचेतन में चले जाते हैं उन्हीं में से कलात्मक कल्पना का उदय होता है। अतः कला की कल्पना के सम्पूर्ण क्षेत्र को फ्रायड ने अर्धचेतना मस्तिष्क कहा है।[14]

कला में अचेतन की अभिव्यक्ति रंगों तथा रूपों में होती हैं। रंग मन के सभी स्तरों को भेजे जाते हैं, जबकि रूप स्तरों के अनुसार बदल जाते हैं। अचेतन में भी आकृति और प्रतीक निर्माण चलता रहता है। ये प्रतीक बाहर से नहीं आते बल्कि चेतना से ही उदित होते हैं। यह क्रिया बालकों और वयस्कों में एक समान होती है।

फ्रायड ने कलाकृति से प्राप्त होने वाले आनन्द को एन्द्रिक आनन्द से भिन्न माना है। हमारे मानसिक जीवन का चेतन तथा अचेतन सम्पूर्ण रूप से कलाओं में व्यक्त होता है जिसमें अनेक कुण्ठाएं भी रहती हैं। इनमें सबसे प्रबल यौन चेतना की कुण्ठा है। मनुष्य के मानसिक विकास में यौन-चेतना शैशव से ही विद्यमान रहती है। शैशव से ही विकसित यह काम-प्रवृत्ति वयस्क होने पर सामाजिकता का विचार आ जाने पर विकृत समझी जाती है। और इसकी तृप्ति सामाजिक जीवन में असम्भव तथा अनैतिक मानी जाती है।[15] कलाओं के द्वारा यह कामवृत्ति आदर्श बनकर प्रकट होती है, कारण है कि नौजवान कलाकारों की कृति में ही नहीं बल्कि प्रौढ़ कलाकारों की कृतियों में भी वस्त्र रहित कामुक दृश्य

दर्शाये जाते हैं जिनके सृजन से कलाकार स्वयं को संभोग करने के समान तृप्त मानता है। प्लेटो ने भी काम को जीवन की मूल प्रेरणा माना था।

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि

हम मानवता का अविर्भाव प्राणी की सहजता और प्राकृतिक चेष्टाओं से नहीं मानते बल्कि सजग प्राणी के उस व्यवहार से मानते हैं जिसके लिये वह प्राकृतिक तन्त्र से कम या अधिक, आत्म-तन्त्र और मुक्त होता है जिसका प्रारम्भ वह स्वयं करता है। यह भी करना जीवन का प्रमाण माना जाता है। मृत जीवन कुछ नहीं कर सकता। शिशु के व्यवहार को देखें। जीवन के प्रारम्भिक काल में उसका हाथ-पैर चलाना, हंसना, डरना, किलकारना, क्रोध और क्रंदन ये सब निरुद्देश्य और निष्प्रयोजन मालूम पड़ते हैं। परन्तु मनोविज्ञान के आधार पर ये सब उसकी कलाएं हैं जो उसके अन्तर्मन से झलकती है न कि वह अनुकृति करता है। जो भी हो, कृति मानवता और मानव-व्यवहार का प्रथम उन्मेष माना जा सकता है जो बच्चा गर्भ से ही प्रारम्भ कर लेता है और जन्म के पश्चात् उसका व्यवहार रूप ग्रहण करता है।

'प्राकृतिक काम से उठकर वैवाहिक दाम्पत्य जीवन तक अपने में मनुष्य ने काम को रूप में बांधकर उसे रोचक और सुन्दर बनाया है। विवाह में प्रकृति और संस्कृति का संयोग आकस्मिक नहीं कलात्मक है। इसमें एक और रूप है, गठन है, रस और सौन्दर्य है तो दूसरी ओर मानवता-बोध, मूल्य-बोध, मर्यादा-बोध और औचित्य-बोध भी है। विवाह का अविष्कार, पशुता के ऊपर मानवता की, प्रकृति के ऊपर संस्कृति की विजय है जिसे कला ने सौन्दर्य, शृंगार और सज्जा देकर समृद्ध बनाया है।

कला के बिना संस्कृति-बोध अधूरा है तो संस्कृति विहीन कला में औचित्य, मूल्य-बोध और रोचकता की कमी सदैव खटकती है।[16] अर्थात् विवाह एक संस्कृति बनाई गई है। क्योंकि मानव सम्पूर्ण सृष्टि का एक मात्र जीव है जो विवाह करने के बाद ही संभोग करना उचित समझता है। हालांकि बिना विवाह के भी कामवृत्ति पनपती है परन्तु कलात्मक दृष्टि से सांस्कृतिक व्यवहार ही कला है।

कलात्मक सन्दर्भ (कला के लिए कला)

कला के लिए कला इसका अर्थ यही है कि कला विज्ञान तथा उपयोग से स्वतन्त्र हैं। यह नहीं सोचना चाहिए कि कला कोई अन्तर्वस्तु नहीं होती, उसमें भाव नहीं होते। कला में कलात्मक गुणों के कारण ही ये अभिव्यक्ति के स्वर तक पहुंचते हैं। कला एक मौलिक प्रवृत्ति हैं जिसका प्रयोजन है अप्रकट को प्रकट करना, अरूप को रूप देना, रूपायन के द्वारा रूप-विधानों की मर्यादाओं में समेटना, अभिव्यक्ति करना इत्यादि। कला विभिन्न, विविध और विरोधी तत्वों को भी एकता के सूत्र में अपने विधानों के अनुसार बांधती है यहां तक कि वह असुन्दर, अशुभ, अभद्र, घृणित, जुगुप्सित को भी सुन्दर व आस्वाद्य बना सकती है।

कला वह है जो कला करती है और कला विभिन्नताओं और विरोधों को एक में बांधकर उनमें सन्तुलन, संवाद, सामंजस्य, पूर्णता, अखण्डता, लय पैदा करती है। यदि हम यह तथ्य स्वीकार करें तो लगता है कि इतिहास, दर्शन, धर्म, संस्कृति आदि मानव जीवन के सारे पक्ष कला के ही पक्ष है। कला इन सभी पक्षों को सुन्दरता प्रदान करती है, साथ ही उनके सत्य की स्थापना करती है क्योंकि जिसमें, सामंजस्य, संवाद, सन्तुलन आदि नहीं, वह सत्य नहीं हो सकता, चाहे वह इतिहास हो, दर्शन हो, धर्म हो या संस्कृति हो।[17]

कलाकार सृजन क्रिया के समय में पूर्णरूपेण आध्यात्मिक चैतन्य स्वरूप प्राणी बन जाता है, जहां जीवन-जगत, मन-प्राण सब कुछ अपने मुक्त, चेतन रूप में प्रकट हो जाते हैं। वह आंखें खुली होने पर भी बाहर कुछ नहीं देखता, कान होने पर भी सुनता नहीं। खाना-पीना-रहन-सहन कपड़े-ठंड़-गर्मी सभी कुछ भूल जाता है। अपनी कृति के सृजन में अपने आप को समा देता है। इसी मनोदशा को समाधि कहा जाता है। यह वास्तव में योग की चरम अवस्था होती है। सृजक जब सृजका के पश्चात्समाधि से उठता है तो अद्भुत उल्लास का अनुभव करता है। अवश्य ही सृजना से उसे कुछ मिलता है वह है परम-आत्मा, अथवा परमलोक की सन्तुष्टि।

इस प्रकार कला चिन्तन के इन पलों का अध्ययन करने के पश्चात यह जान पड़ता है कि कला जीवन को नूतन चेतना का वरदान देकर उसका स्मरण, परितोष करके उसके निर्माण का साधन बनती है। कला अत्यन्त सुखदायक होती है। इसी से जगत का कल्याण होता है और सृष्टि में नयापन महसूस होता है।

सहायक आचार्य, दृश्य कला विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला-5

सन्दर्भ सूची

1. चित्रकला और संस्कृत साहित्य, डॉ. मधुलिका अग्रवाल, पृ. 19
2. कला मनोविज्ञान, डॉ. हरद्वारी लाल शर्मा, पृ. 2
3. कला सौन्दर्य और समीक्षा शास्त्र, अशोक, पृ. 5
4. समकालीन भारतीय कला, डॉ. राम विरंजन, पृ. 20
5. संस्कृत साहित्य और सौन्दर्य चेतना, डॉ. शंकरदेव तिवारी, पृ. 5
6. कला सौन्दर्य और समीक्षा शास्त्र, अशोक, पृ. 82
7. कला मनोविज्ञान, डॉ. हरद्वारी लाल शर्मा, पृ. 3
8. कला मनोविज्ञान, वही, पृ. 5
9. वही, पृ. 6, 10. वही, पृ. 8, 11. वही, 8
12. वही, पृ. 10, 13. वही, पृ. 15
14. कला सौन्दर्य और समीक्षा शास्त्र अशोक, पृ. 260
15. वही, पृ. 261
16. कला मनोविज्ञान, डॉ. हरद्वारी लाल शर्मा, पृ. 19
17. वही, पृ. 20

आलेख

अद्भुत गोंपाओं की स्थली लद्दाख

◆ वीना जैरथ

नंगे पर्वतों की शृंखलाओं पर स्थित सफेद किलेनुमा इमारतें, जिन्हें रंग-बिरंगी झंडियों से सजाया जाता है, लद्दाख में चारों ओर फैली हैं। कभी किसी जमाने में इन तक पहुंच बड़ी कठिन थी, पर ये इमारतें हर विदेशी यात्रियों और पर्यटकों के लिए आकर्षण का केंद्र रही हैं। कभी ये इमारतें ज्ञान का भंडार थीं और उच्च शिक्षा का माध्यम भी। आज भी इनके प्रकोष्ठों में अनेक हस्तलिखित पांडुलिपियां अनुपलब्ध पुस्तकें, मूर्तिकला के अनुपम नमूने तथा पूजा में प्रयोग होने वाला साजो-समान, रेशमी कपड़ों पर चित्रित तसवीरें जिन्हें थंका का नाम दिया जाता है, संग्रहीत हैं। इन्हें देखने और इनका अध्ययन करने के लिए देश-विदेश से लोग यहां आते हैं। इन इमारतों को बौद्ध मंदिर या गोंपा कहा जाता है।

इतिहास गवाह है कि कभी इनका प्रयोग किले के रूप में किया जाता रहा है और इन्हीं के माध्यम से राज्य और जनसाधारण की रक्षा की जाती थी। बौद्ध भिक्षुक कुछेक हथियार बंद किसानों के साथ, जिनका नायक खरपों कहलाता था, इन किलेनुमा इमारतों की रक्षा करते थे। पुराने बौद्ध मंदिर में हेमिस, थिकसे, शे, शंकर स्पितुक, फयांग, लामायुरू, मूलवेक, आल्ची आदि विद्वानों के अध्ययन का केंद्र रहे हैं। इन मंदिरों में हजारों भिक्षु और भिक्षुनियां वास करते थे। पर अब भिक्षुणियों के लिए ये स्थान वर्जित हैं। ये बाहरी प्रकोष्ठ होते थे, जिनमें भिक्षुओं का वास होता था और भीतरी प्रकोष्ठ को कई हिस्सों में बांटा गया था। बीच का बड़ा प्रकोष्ठ दैनिक पूजा-पाठ आदि के लिए होता था। इस प्रकोष्ठ को विभिन्न धार्मिक अनुष्ठानों के लिए प्रयोग किया जाता रहा है। इसके अलावा ध्यान और साधना के लिए प्रकोष्ठ सभागृह और केंद्रीय प्रकोष्ठ इन मंदिरों की शोभा बढ़ाते हैं। केंद्रीय प्रकोष्ठ में महात्मा बुद्ध के किसी-न-किसी रूप की मूर्ति स्थापित होती है। ये प्रतिमाएं बौद्ध साक्य थुबा या भविष्य बुद्ध जिसे चंबा या बुद्ध मैत्रेय कहा जाता है, की प्रतिमूर्तियां स्थापित होती हैं। दूसरे प्रकोष्ठों में मंजूश्री, वज्रपाणी, तारा, शक्ति या महाकाली की मूर्तियां स्थापित होती हैं। मंदिरों की सीमा पर गुंबदनुमा पिरामिड खड़े मिलेंगे, जिन्हें चोतन अथवा सॉरतन कहा जाता है। इन सॉरतनों के बीच एक बहुत बड़ी दीवार मंदिर तक चली जाती है, लगभग पांच फुट ऊंची और चार फुट से ज्यादा चौड़ी जिस पर चौड़े खुदे हुए पत्थर रखे होते हैं। इन पत्थरों पर विभिन्न मंत्र उकेरे होते हैं, इन्हें मने कहा जाता है, मंत्रों में, ओं मने पद्मे हूं, ओं ब्रजपाणी हूं, और कभी-कभी ओं बागेश्री हूं आदि मंत्र खुदे होते हैं। इस सारी दीवार को मने की दीवार संज्ञा दी जाती है। ये दीवारें अकसर अबादी से शुरू होने तक होती हैं और एक अनुमान मने पत्थर बुरी रूहों को आबादी में आने से रोकते हैं। मने दीवार जो हेमिस गुफा तक जाती है लगभग डेढ़ किलोमीटर लंबी है और पांच फुट ऊंची है। यह दीवार बाईस फुट चौड़ी है। इस दीवार में बीच में स्थान-स्थान पर चेतन खड़े हैं। एक विश्वास के अनुसार चेतन उच्चतम बुद्ध सांग्या कोनचॉक को समर्पित हैं। मूल शब्द चोंतन का अर्थ दो भागों में ढूंढा जा सकता है चो और तन जिसका अर्थ बनता है पवित्र कुंड। वस्तुतः ये होते भी कुंभाकार हैं। आधार में एक खुला प्रकोष्ठ होता है जिसमें महान लामाओं के अवशेष रखे जाते हैं और अवशेषों के साथ दुनियावी वस्तुएं मसलन रेशमी कपड़े, सोना, चांदी, कीमती पत्थर और कई बर्तन जो अपने जीवन में उक्त लामा ने प्रयोग में लाए हों, भी उस प्रकोष्ठ में रख दिए जाते हैं। बाद में प्रकोष्ठ को अच्छी तरह बंद कर दिया जाता है ताकि उन वस्तुओं को कोई चुरा न सके। लद्दाखी लोग इन गुंबदनुमा चोंतनों को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। अतः इस तरह की कोई घटना देखने में नहीं आई है। इन गुंबदों में सर्वाधिक मंत्र खुदे पत्थर रखे होते हैं।

लद्दाख में सबसे पुराने गोंपाओं के जन्मदाता बौद्धगुरु रिनचनजंग्पो माने जाते हैं जिन्होंने दसवीं शताब्दी के आस-पास अनेक गोंपाओं का निर्माण किया था। इन्होंने बौद्ध ग्रंथों, मंत्रों और तिब्बत शैली में चित्रित चित्रों को संग्रह कर इन मंदिरों में स्थापित किया था। न्यारमा, आल्ची, लामायुरू आदि स्थानों पर अनेक मठ और गोंपा स्थापित किए। न्यारमा का बौद्ध मंदिर सबसे प्राचीन बौद्ध मंदिर माना गया है जो अपने वैभव के लिए कभी प्रसिद्ध था लेकिन 13वीं शताब्दी में अनेक बाहरी आक्रांताओं की लूटखसूट के कारण अब इसके केवल अवशेष बाकी बचे हैं। ये अवशेष भी इसकी ऐतिहासिकता और वैभव की ओर संकेत करते हैं। इन

मंदिरों के बारे में आल्ची के शिलालेखों में उल्लेख मिलता है।

आल्ची का बौद्ध मंदिर वस्तुतः बौद्ध दर्शन और कला का एक विशालकाय भंडार है। यह अनेक मंदिरों का एक समूह है जिनके भित्ति चित्र अपने कलात्मक नमूनों के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध हैं। इन मंदिरों के समूह में सुमसेक का मंदिर सबसे बड़ा है और यह मंदिर सारे समूह में बीचोबीच स्थित है। इसके द्वार पर दो चोतन एक साथ खड़े हैं। मंदिर के सामने वाले फलक लकड़ी पर की गई मीनाकारी के अद्भुत नमूने हैं। दूसरी मंजिल लकड़ी के तराशे हुए स्तंभों पर टिकी है जिनके बीच त्रिकोण भित्तियों में बुद्ध के प्रारूप उकेरे गए हैं। बीच में एक बहुत बड़ा चोतन है जिसके तीन और तीन मीटर चौड़े मंचों पर बोधिसत्व की बड़ी मूर्तिया हैं। ये मूर्तियां नौ फुट से लेकर चौदह फुट ऊंची हैं। सबसे बड़ी मूर्ति बुद्ध मैत्रेय की है जो दूसरी मंजिल तक चली गई है। मंदिर की दीवारों को कलात्मक ढंग सजाया गया है। मैत्रेय की मूर्ति के पास इस गोंपा का इतिहास उकेरा गया है। दूसरा बड़ा प्रकोष्ठ सभागृह का है जिसे दुखांग कहा जाता है। यहां पर रोज पूजा के लिए भिक्षु जमा होते हैं। इस बड़े सभागृह में वैरेचना अपने अनुचरों के साथ बिलकुल केंद्र में विद्यमान हैं। इस हाल की भित्तियों पर येरेचना और हजार बुद्ध के चित्र सारे वातावरण को मुखरित करते दिखते हैं। सभागृह के सामने एक बहुत खुला आंगन है जिसमें पर्वो पर और आम सभा के समय लोग और भिक्षु जमा होते हैं।

फोतू-ला कश्मीर लेह मार्ग पर सबसे ऊंचा दर्रा है जिसकी ऊंचाई सतह समुद्र से 13432 फुट है। इसी दर्रे से उतरकर एक पुराने बौद्ध मंदिर लामायुरू में पहुंचा जा सकता हैं। लामायुरू के आसपास का वातावरण अति रमणीय है। प्रकृति यहां अठखेलियां करती दिखती है चट्टानों का अद्भुत स्वरूप और बदलते हुए मोरपंखी रंग पर्यटकों का मन लुभा जाते हैं। इस समूह के मंदिरों में सबसे प्राचीन वेरेचना का देवस्थल है जिसमें वेरेचना को शेर की पीठ पर बैठा दिखाया गया है। इसके तेज को बढ़ाने के लिए मकर और गरुड़ की मूर्तियां गढ़ी गई हैं। इसकी बायीं दीवार पर ग्यारह सिर वाले अवलोकेतेश्वर का रंगीन चित्र है इसी के साथ एक वेरेचना का मंडल भी काढ़ा गया है। जबकि बायीं दीवार पर बुरी आत्माओं को दूर रखने वाले देवताओं के चित्र भी उकेरे गए हैं। दायीं ओर एक गुफा सी है जिसमें प्रसिद्ध भारतीय तांत्रिक नरोपा की मूर्ति स्थापित है। नरोपा और उसका गुरु तिल्लोपा दो भारतीय तांत्रिकों ने तिब्बत के दर्शन को अत्यधिक प्रभावित किया है। दुखांग के पास ही एक मंदिर है जो 30 गुना 30 फुट रकबे का है। यह मंदिर अवलोकतेश्वर को समर्पित है। यह मूर्ति लगभग सात फुट ऊंची है। इस मंदिर की भित्तियों पर चित्रित चित्रों के रंग अति ताजा लगते हैं जैसे अभी हाल ही में इन्हें चित्रित किया गया हो। पूर्णिमा की रात्रि को ये मंदिर चांद की रोशनी में खूब चमकते हैं। और किसी तिलिस्मी संसार में पर्यटकों को ले जाते हैं। लामायुरू से हम एक बार फिर मुख्य मार्ग की ओर अग्रसर होते हैं। लेह के आसपास अनेक बौद्ध मंदिर फैले हैं। इन मंदिरों में गाहे-बगाहे सांस्कृतिक अनुष्ठानों का आयोजन भी किया जाता है जिसमें लद्दाखी समाज भाग लेता है। अतः ये संस्थान सांस्कृतिक केंद्र भी रहे हैं। लद्दाख में मोटे तौर पर बौद्ध धर्म के दो मत प्रचलित हैं जिन्हें लाल मत्ताधारी और पीतमत्ताधारी के तौर पर जाना जाता है। इन्हीं रंगों के आधार पर इनके लामाओं को भी पहचाना जा सकता है। ये लाल अथवा पीले वस्त्र पहनते हैं। अकसर लोग और लामा अपने हाथों में मंत्र खुदे चक्र लिए होते हैं। इन्हें मनीचक्र कहा जाता है। इन प्रार्थना चक्रों में मंत्र लिखे कागज होते हैं। इन्हें मंत्रों का जाप करते हुए घुमाया जाता है। जितनी बार यह प्रार्थना चक्र घूमता है और जितने मंत्र लिखे कागजों और कपड़ों के टुकड़े इसमें पड़े होते हैं, उन्हें गुणा करके जितने मंत्र बनते हैं, इतना फल श्रद्धालु पाने का भागीदार होता है। एक विश्वास के अनुसार इन मंत्रों का जाप करने से सांसारिक दुखों से मुक्त हुआ जा सकता है।

लेह नगर के बहुत पास स्थित है शंकर गोंपा। यह गोंपा कभी पीतवस्त्रधारी लामा प्रमुख कौशिक बकुला का निवास स्थान रहा है। पीतवस्त्रधारियों के तीन गोंपा हैं- स्पितुक, शंकर तथा स्तोक। पहले शंकर गोंपा को लेते हैं। इसके मुख्य मंदिर में एक कोने में एक सिंहासन स्थापित है जिसके बायीं ओर वज्र भैरव की एक मूर्ति शोभायमान है। पीछे बने एक मंच पर बौद्ध गुरु त्सांग खापा तथा उसके दो शिष्यों की मूर्तियां स्थापित हैं। इनके सामने अतीशा और शाक्यमुनि की मूर्तियां विराजमान हैं। बाएं कोने में ग्यारह सिरधारी अवलोकितेश्वर स्थापित हैं और दायीं ओर एक अलमारी में तिब्बती शैली की अनेक पीतल की छोटी मूर्तियां संग्रहीत हैं। भीतर की भित्तियों को विभिन्न देवी-देवताओं के चित्रों से सजाया गया है। इस मंदिर के ऊपर एक बरामदा है, जिसे बहुत बारीकी के साथ सजाया गया है। इन चित्रों में मठ की सत्ता को प्रतीकात्मक तरीके से उकेरा गया है। बीच-बीच में लिखाई द्वारा उसे स्पष्ट भी किया गया है। इस मंदिर के खुले आंगन में सभाएं आयोजित की जाती हैं।

शंकर से नगर की ओर वापसी पर खेतों के साथ-साथ पानी का एक सोता बहता है जिससे आसपास के खेतों की सिंचाई की जाती है। नगर के बाहर, शंकर गोंपा के साथ लगे खेत मंदिर की जायदाद हैं, जहां अकसर लोग गुड़ाई आदि कर पुण्य का काम करते हैं। रास्ते में हमें एक दूसरे से जुड़े चोतन भी दिखाई दिए जो अनेक रंगों में चित्रित थे। कई देवी-देवताओं के चित्र इन चोतनों पर अंकित हैं।

इसी मत का दूसरा मठ स्पितुक गोंपा है जो लेह से कुछ दूरी पर एक पहाड़ी पर स्थित है। स्पितुक वस्तुतः एक गांव का नाम है जिसका अर्थ है उदाहरणीय प्रभावशाली। देखा जाए तो नाम

बड़ा सटीक है। इस गांव से लेह और इसके आसपास का विहंगम दृश्य बड़ा मनमोहक लगता है। चूंकि यह गोंपा विभिन्न सतहों पर टिकी चट्टानों पर बना है अतः कई अनगढ़ सीढ़ियों को तय कर इस तक पहुंचा जा सकता है। यहां हर तिब्बती ग्यारहवें माह की 26 और 27 तारीख को धार्मिक नृत्यों का आयोजन किया जाता है। और बाद में बलिदानी केक को काटकर ये नृत्य संपन्न किए जाते हैं। मुख्य मंदिर, दुखांग में इस आंगन को पारकर, अनेक सीढ़ियां तयकर पहुंचा जा सकता है। यह मंदिर कई गलियारों पर आधारित है और शुद्ध तिब्बती शैली पर निर्मित है। हाल में दोनों ओर आसन लगे हैं जो ऊंचे मंच तक चले गए हैं। यहां एक सिंहासन स्थापित है जो दलाईलामा के लिए सुरक्षित है। इसके बायीं ओर वज्र भैरव की एक मूर्ति स्थापित है। और दायीं ओर ग्याहर सिर वाली अवलोकतेश्वर की मूर्ति विराजमान है। सिंहासन के पीछे एक संकरा मार्ग अंधेरे प्रकोष्ठ की ओर जाता है जहां गुरु त्सांग खापा और उनके दो शिष्यों और एक कलात्मक मूर्ति शाक्यमुनि की भी शोभायमान है। ऊपर के कमरों में कई छोटे-छोटे मंदिर हैं जिनमें से एक में तीन तांत्रिक मूर्तियां वज्रभैरव, संबर और बुह्यासम्जा की एक चो'तन के साथ स्थापित है। दायीं ओर अतीशा की भी एक मूर्ति स्थित है। एक और छोटा मंदिर गुरु त्सांग खापा और उनके द्वारा चित्रित ग्रंथों को समर्पित है। एक ओर मंदिर में देवी तारा के 21 शक्ति रूप स्थापित हैं। इस गोंपा का सबसे बड़ा आकर्षण काली मंदिर है। मां काली के दर्शनार्थ कई हिंदुमतावलंबी विशेषकर सैनिक इस मंदिर में आते हैं। सच तो यह है कि यह मूर्ति काली मां की न होकर वज्रभैरव की है पर इसके स्वरूप को देखकर इसे महाकाली के तौर पर पूजा जाता है। इस मूर्ति के साथ-साथ महाकाल और तीन तांत्रिक देवताओं की मूर्तियां हैं और एक मूर्ति लाह् मोह् देवी की है जिसे घोड़े पर सवार दिखाया गया है। यह मूर्ति वस्तुतः शक्ति की अवतार दुर्गा की है। अनेक हिंदू तंत्र मत के देवी-देवता बौद्धमत में पैठ पा गए हैं, पर यह सदियों के अंतराल से हुआ है। इसी गोंपा के एक कमरे में विकराल दानवी मुखौटे भी संग्रहीत हैं जो दानव नृत्य में वर्ष में एक बार उपयोग में लाए जाते हैं।

स्तोक के मंदिर इतने वैभवशाली नहीं जितने कि इसके महल हैं। सच तो यह है कि स्तोक लद्दाख के शाही परिवार नामग्याल वंश की गद्दी रहा है इसलिए हर हमलावर का ध्यान स्तोक की ओर जाता रहा है और सबसे ज्यादा लूटपाट और विध्वंस भी यहीं हुआ है। यही कारण है कि स्तोक के गोंपा धीरे-धीरे अंधेरों में डूबते चले गए। जहां तक कि पूजा के लिए भी दूसरे गोंपाओं के लामाओं को बुलाया जाता रहा है। स्तोक के महलों में आजकल एक संग्रहालय स्थापित किया गया है जिसके पीछे शाही परिवार विशेषकर पूर्व सम्राज्ञी का योगदान रहा है। इस संग्रह में लद्दाखी संस्कृति से संबंधित लगभग हर वस्तु विद्यमान है।

शे नामक गोंपा लेह मनाली मार्ग पर लेह से लगभग 15 किलोमीटर दूर मुख्य मार्ग के पास स्थित है। शे कभी लद्दाख की राजधानी रहा है अभी भी यहां पुराने महल अपने अतीत के वैभव को लिए खड़े हैं। महान आत्माओं की स्मृति में अनेक चो'तन आसपास फैले हैं। इस मठ के दूसरे माले की दीवारें निरंतर जलने वाली दीपक की लपटों से काली पड़ गई हैं। कभी इन पर भी चित्र उकेरे गए होंगे, पर अब इनका नामोनिशान भी दिखाई नहीं देते। इसी माले पर स्थित एक मंदिर में शक्यमुनि की एक बड़ी प्रतिमा स्थापित है। इसकी दीवारों पर अनेक बौद्ध गुरुओं के चित्र कलात्मक ढंग से उकेरे गए हैं। इसके प्रांगण के दूसरी ओर एक छोटा-सा मंदिर है जिसमें बैठे हुए बुद्ध की एक बड़ी प्रतिमा स्थापित है। इस मंदिर की दीवारों बहुत सुंदर ढंग से चित्रित की गई हैं। यह मंदिर सेंज नामग्याल की पत्नी कलजांग, जोकि नलतीस्तान की राजकुमारी थी, ने बनवाया था। इसकी निर्माण तिथि ठीक से पता नहीं फिर भी अनुमानतः 17वीं सदी में इसका निर्माण माना जाता है। शे से लगभग पांच किलोमीटर दूर इसी मार्ग पर एक पहाड़ी पर स्थित है थिकसे का प्रसिद्ध गोंपा। यह मठ आज भी उसी प्रकार जीवंत है जिस प्रकार यह निर्माणावस्था में था। कुछ सौ सीढ़ियां तय करने पर हमें करीने से सजी हुई प्रार्थना चक्रों की कतार दिखती है। जिसे बौद्धमत के श्रद्धालु घुमाते चले जाते हैं। इन्हें घुमाते हुए ये 'ओं मने पद्मे हुं' का जाप करते रहते हैं। यहां से कुछ और सीढ़ियां तय कर एक खुले आंगण में पहुंचा जा सकता है। इस आंगन में एक धर्मध्वज फहराता रहता है। यहीं से दक्षिण दिशा की ओर जाती सीढ़ियां हमें मुख्य मंदिर में ले जाती हैं जिसमें मैत्रेयकी एक बहुत बड़ी मूर्ति स्थापित है। यह पीतवर्णीय मूर्ति तीस फुट तक ऊंची है और दूसरे माले तक चली गई है। प्रतिमा के कानों में दो लंबे-लंबे कुंडल हैं जिन्हें कीमती पत्थरों से सजाया गया है। सिर पर पांच पंखुड़ियों वाला ताज सुशोभित है जिनमें पांच ज्ञानबुद्ध प्रतिमूर्त किए गए हैं। हाथ, छाती के आगे, कमल के फूलों की तरह खुले हैं। ताज के दोनों ओर वर्तुलाकार दो झालरें कंधों तक झुक आई हैं। प्रकोष्ठ को अनेक बुद्ध के चित्रों से सजाया गया है। यह प्रकोष्ठ कई कतारों में बंटा है। कतारों में आसन सजे रहते हैं जिन पर बैठकर लामा पूजा करते हैं। इसी प्रकोष्ठ का दक्षिण पार्श्व कई प्रकार के तांत्रिक आकारों से सज्जित है। ये अच्छी आत्माएं कहलाती हैं जो बुरी रूहों से युद्ध कर उन्हें भगाती हैं, ऐसी मान्यता है।

फ्लैट नं. 002, टॉवर जे-वन, द व्यूज़, मोहाली हिल्ज़,
एमआर एमजीएफ, सेक्टर-105, मोहाली, पंजाब
मो. 0 991002 29774

आलेख

आलोचना की स्वस्थ संस्कृति व हिमाचल

◆ कंचन शर्मा

आलोचना के सिद्धांत और व्याख्या पक्ष का इतिहास लम्बा और काफी पेचीदा रहा है। भारत के हिन्दी साहित्य में विद्वतपूर्ण आलोचना, समालोचना एवम् विवेचना की गौरवमयी संस्कृति रही है। हिन्दी आलोचना की शुरूआत भारतेन्दु युग से ही मानी जाती है। 'आलोचना' पर बात की जाए तो इससे पहले आलोचना सम्बन्धी कुछ और शब्दों को जानना भी जरूरी है जैसे 'समीक्षा' 'विवेचना', 'मूल्यांकन', 'व्याख्या', 'रिव्यू', 'विश्लेषण' आदि जो किसी भी रचना पर सोच-विचार व अध्ययन से जुड़े शब्द हैं। इन शब्दों के अभिप्राय और आशय एक से लगते हुए भी एक से नहीं हैं।

'समीक्षा' का आशय है मूल्यांकन यानि किसी भी कृति या रचना का गुण दोष के आधार पर उचित, संतुलित, ईमानदार व सही आकलन। समीक्षा रचना या रचनाकार के इस या उस पक्ष में झुकी हुई नहीं होनी चाहिए। अगर समीक्षक किसी कृति में लेखक द्वारा व्यक्त किए गए अर्थ के बजाए अपना ही अर्थ ढूंढने का प्रयास करेगा तो समीक्षा औचित्यपूर्ण नहीं हो पाएगी। जोश में रचना के हाथ में आते ही प्रतिक्रियास्वरूप आधिकारिक राय देना या फिर प्रोफेशनल क्रिटिक्स द्वारा रचना पर टूट पड़ना या इससे भी ऊपर रचना का रस निचोड़कर उसे बेजान बना देना समीक्षक का समीक्षा धर्म नहीं होना चाहिए।

आलोचना की बात करें तो अपने व्यक्तिगत राग-द्वेष, रूचि-अरूचि से बचकर किसी कृति या रचना की सम्यक व्याख्या और मूल्यांकन करना ही 'आलोचना' है। श्रेष्ठ आलोचक अपने समय के विशिष्ठ लेखन को अलग से पहचान सकने की योग्यता व धैर्य रखता है। आलोचक को रचनाकार से नहीं अपितु रचना से मतलब हो और उसके लिए पाठक महत्वपूर्ण हो।

मुक्तिबोध ने अपने प्रसिद्ध सैद्धान्तिक निबंध 'समीक्षा की सीमाएं' में लिखा है कि समीक्षा को भी चरित्र की उतनी ही आवश्यकता है जितनी की लेखक को ईमानदारी की।

मुक्तिबोध जिस खतरे को महसूस करके अपने दौर में लिख रहे थे आज वह वास्तविकता बनकर हमारे सामने है। आलोचक व समीक्षक के चरित्र का लोप हिन्दी आलोचना के संकट का सबसे बड़ा कारण है। हिन्दी आलोचना निष्प्रभावी और निस्तेज होकर दम तोड़ती नज़र आ रही है। कहानी, कविता, लघुकथा, उपन्यास व भिन्न-भिन्न विधाओं में तो हलचल नज़र आ रही है लेकिन आलोचना के क्षेत्र में लगभग सन्नाटा पसरा है।

हिमाचल के संबंध में बात की जाए तो हिन्दी की राष्ट्रीय धारा में हिमाचल के लेखकों और साहित्यकारों ने प्रभूत योगदान दिया है। आजादी के बाद के आधुनिक लेखन व चिंतन में राष्ट्रीय परिदृश्य में जहाँ हिमाचल की उपस्थिति दर्ज है वहीं आज़ादी से पहले भी उल्लेखनीय साहित्य सृजन हुआ है। तो फिर ऐसा क्या हुआ कि आलोचना की मुख्य धारा से हिमाचल उभर कर नहीं पाया। बावजूद इसके जबकि श्रीनिवास श्रीकांत, डॉ. हेमराज कौशिक, कुमार कृष्ण, सुंदर लोहिया, सुशील कुमार फुल्ल, निरंजन देव शर्मा, डॉ. पीयूष गुलेरी, ठाकुर मौलूराम, सुदर्शन वशिष्ठ, पी. सी.के. प्रेम, प्रत्युष गुलेरी जैसे सृजनधर्मी आलोचना विधा में सक्रिय हैं।

ऐसा नहीं था कि हिमाचल में समीक्षा और आलोचना में अच्छा कार्य नहीं हुआ है साहित्य की समीक्षा, कला, स्थाप्य तथा वास्तु समीक्षा को भी अच्छा स्थान मिला है। साहित्य समीक्षकों में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी व यशपाल जैसे मूर्धन्य समीक्षकों को कौन भूला सकता है। श्रीनिवास श्रीकांत आलोचना की भूमि पर आघृत प्रतीत होते हैं। इन्होंने समान रूप से नैतिकता पर जोर डालते हुए किसी भी कृति को जीवन के अटूट संबंध से जोड़ा है। पर इनका भी कहना है कि आज गुटबंदी ज्यादा है, सब अपने-अपनों को सराहते हैं। वास्तव में हिमाचल में आलोचना हो ही नहीं रही है।

आलोचक का मूल उद्देश्य पाठक तक यह पहुँचाना था कि लेखक अपनी रचना के माध्यम से क्या कहना चाहता है। रचनाकार अपनी रचना के माध्यम से जो कुछ भी अभिव्यक्त करना चाहता है, कर पाया या नहीं। लेखक अपने कथ्य को संप्रेषित करने में सफल हो सका है या नहीं या सफल हुआ है तो किस सीमा तक हो पाया है।

मगर आज आलोचक पाठक की आवाज़ न होकर रचनाकार का प्रवक्ता बन गया है। यूं लगता है मानों आलोचक ने रचनाकार के आगे आत्मसमर्पण कर दिया हो। आलोचक, आलोचना करने से डरा हुआ प्रतीत होता है। दूसरे शब्दों में कहूँ तो 'आलोचक'

आलोचना कर रचनाकार से दुश्मनी मोल नहीं लेना चाहता। इसका भी एक कारण है। बहुधा आलोचना को 'रचनाकार' व्यक्तिगत आलोचना मानकर दुखी, निराश या नाराज़ हो जाता है। जबकि स्वस्थ आलोचना सदा रचना से संबंध रखती है। रचनाकार या आलोचक के व्यक्तिगत संबंधों से वो प्रभावित नहीं होनी चाहिए।

बहुधा आलोचक भी अपनी आलोचना के माध्यम से किसी रचनाकार को उठाने या गिराने का प्रयत्न करते हैं। इस तरह व्यक्तिगत संबंधों पर आधारित आलोचना कर्म ने आलोचक के चरित्र को पूरी तरह से नष्ट कर दिया है। जबकि आलोचना स्वस्थ मन से साहित्य या कला का अध्ययन करना और उसको परखना सिखाती है। यही उसका परम कर्त्तव्य है। यही नहीं रचना के ऊपर शब्द भेदी बाण चलाना भी ठीक नहीं। आलोचना मात्र के लिए शब्द बाणों से किसी रचना को भेद देना स्वस्थ परम्परा नहीं। यह तो रचनाकार को निरस्त करने की साजिश मात्र होती है।

आलोचना का कर्त्तव्य ही साहित्यिक कृति की विश्लेषण परक व्याख्या है। साहित्यकार जीवन और उनके अनुभव के जिन तत्त्वों के संश्लेषण से साहित्य रचता है, आलोचना उन्हीं तत्त्वों का विश्लेषण करती है। साहित्य में जहाँ रागतत्त्व प्रधान है वहाँ आलोचना में बुद्धितत्व। आलोचना ऐतिहासिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों का भी आकलन करती है। इस दृष्टि में हिन्दी में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल को सर्वश्रेष्ठ आलोचक माना गया है। नामवर सिंह द्वारा आलोचना किए गए भावार्थ में कहा गया है कि किसी भी कवि को बड़े पुण्य प्रभाव से काव्य-रचना के परिश्रम को समझने वाला ऐसा विद्वान-आलोचक व्यक्ति प्राप्त होता है, जो शब्दों की रचना विधि का भली-भान्ति विवेचन करता है, सूक्तियाँ, अनोखी सूझों से आहलादित होता है, काव्य के सघन रसामृत का पान करता है और रचना के गूढ़ तात्पर्य को ढूँढ निकालता है।

इधर आलोचना आज जन संपर्क अभियान का हिस्सा बन चुकी है। जिस रचनाकार का जन संपर्क जितना बेहतर है वह अपने आप को उतना ही बड़ा रचनाकार घोषित कर लेता है। भले ही वह इक्का-दुक्का कविता, कहानियों का ही रचयिता क्यों न हो? इसलिए आज हिन्दी में लेखक बनना आसान हो गया है। सोशल मीडिया में भी स्वयं को बढ़-चढ़कर दिखाकर पाठक को भ्रमित किया जा रहा है। यूँ लगता है जैसे आज साहित्यकार बनने में कोई बाधा नहीं। पाठकों की स्वीकृति मिले न मिले आलोचकों और समीक्षकों की स्वीकृति मिलने में देर नहीं लगती।

आलोचना का कर्त्तव्य ही साहित्यिक कृति की विश्लेषण परक व्याख्या है। साहित्यकार जीवन और उनके अनुभव के जिन तत्त्वों के संश्लेषण से साहित्य रचता है, आलोचना उन्हीं तत्त्वों का विश्लेषण करती है। साहित्य में जहाँ रागतत्त्व प्रधान है वहाँ आलोचना में बुद्धितत्व। आलोचना ऐतिहासिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों का भी आकलन करती है। इस दृष्टि में हिन्दी में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल को सर्वश्रेष्ठ आलोचक माना गया है।

हिमाचल में आलोचना की स्थिति की पड़ताल करने निकली तो कुछ लेखक आलोचना के संकट से ही इन्कार करते हैं। कुछ इस संकट को स्वीकार करते हैं पर उनके मूल कारणों पर बहस करने या व्यक्तव्य देने से बचते हैं। इसी कारण आलोचना के गंभीर संकट के बावजूद हिन्दी में इस पर सारगर्भित विचार-विमर्श करना लगभग मुश्किल है। रचनाकार की स्थिति यह बन चुकी है कि वह जब चाहे किसी समीक्षक या आलोचक से अपनी पुस्तकों की मनोनुकूल समीक्षा लिखवा या उस पर व्यक्तव्य दिला सकता है। अधिकतर रचनाकार ही तय कर रहा है कि उसकी पुस्तक की समीक्षा कौन लिखेगा। लेखक आयोजित चर्चा-परिचर्चा के माध्यम से अपने साहित्यिक व्यक्तित्व में चमत्कार अर्जित करना चाहता है ऐसी स्थिति में आलोचना कम ही लोगों को स्वीकार्य होती है। यही असहिष्णुता आलोचना की संस्कृति के पथ पर बाधा उत्पन्न करती है। ऐसे में आलोचना के साथ न्याय कैसे हो?

सुप्रसिद्ध कहानीकार मुरारी शर्मा जी के कथनानुसार हिमाचल में कविता, कहानी की तुलना में आलोचना की ज़मीन बंजर सी है। आलोचना अपने आप में अलग विधा है मगर इस दिशा में कुछ खास काम नहीं हुआ है जिसका खामियाजा यहाँ के लेखकों को उठाना पड़ रहा है। वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय धारा के कवि सुरेश सेन निशांत जी कहते हैं कि हिमाचल में आलोचना की स्थिति ठीक नहीं है जबकि समीक्षा व आलोचना करना अत्यंत आवश्यक है।

सच भी है यदि समीक्षा न की जाए तो किसी अवांछित एवं अवैधानिकता पर अंकुश नहीं लगाया जा सकेगा। आलोचना मनमानीपन को रोकने का जरिया है और आलोचना से ही किसी विचार, अभिव्यक्ति, संरचना इत्यादि को खरा बनाया जा सकता है। प्रत्येक रचनाकार की रचनाओं को शुद्ध-विशुद्ध एवम् परिमार्जित करने के लिए ही आलोचना होती हैं। गुण-दोषों का समान रूप से विवेचन करके तात्त्विक अवयव को प्रस्तुत करना ही आलोचना है। किसी भी रचनाकार को आलोचना से दूर नहीं भागना चाहिए और न ही चिन्तित होना चाहिए। समीक्षा व आलोचना में प्रसिद्धि की गति तेज होती है इसलिए रचनाकार को समीक्षा अथवा आलोचना को अंगीकार करने में कतराना नहीं चाहिए।

हर समाज की, अपनी माटी की, अपनी आबोहवा, अपनी

कविता

मुझे याद है ज़रा-ज़रा !

◆ राजकुमार सकोलिया

आज भी याद है मुझे
वह दिन, वह क्षण
जब तुमने भीगी हुई आंखें
और रुंधे हुए गले से
मेरे कंधे पर सिर रखकर कहा था,
'मुझे छोड़ कर कहीं मत जाना
नहीं तो मेरा मरा मुंह देखेगो?'
मगर फिर समय ने
ऐसी करवट बदली
कि मैं तो कहीं नहीं रह गया
मगर तुम चली गई

और मुझे कही हुई
हर बात भूल गई
कहां तुम मेरे बगैर
मर जाने की बात करती थी
और कहां अब तुम
किसी दूसरे के गले में
बांहें डाल कर हंसती रहती हो।
तुझे यह भी अहसास नहीं रहा
कि तुम्हारे इस व्यवहार पर
मेरे दिल पर क्या गुज़रती होगी।
कैसे जी रहा हूंगा मैं तेरे बगैर
बस, अब और क्या करना है
तुझे दूसरों के साथ देख-देख कर
मर-मर कर जीना है।

29/11-भारगो नगर, जालंधर, पंजाब-144 003
मो. 0 92563 23021

सुगंध, अपने रीति-रिवाज़, अर्थशास्त्र व अपना अध्यात्म दर्शन होता है। अतः साहित्यकार स्वयं को पथ प्रदर्शक की भूमिका में लाकर संस्कृति की रक्षा करे। साहित्यिक आचरण की नवीन सभ्यता का विकास करे, राष्ट्रीय मूल्यों का विकास करे, खेमेबाजी से बचे, विषमता दूर कर अपनी रचना धर्मिता का निर्वाह कर आलोचना की नई संस्कृति का सूत्रपात करे।

वहीं दूसरी ओर आलोचक को एक संतुलित नायक की तरह उभरकर आना चाहिए। आलोचना को तर्क और सहिष्णुता से सुसज्जित होना चाहिए। आलोचना की अपनी एक तीक्ष्ण दृष्टि हो क्योंकि आलोचना के सलीके और आलोचना की समझ के बिना न तो साहित्य पूर्ण हो सकता है न ही साहित्य का अध्येय।

हिमाचल में आजकल रचनात्मक साहित्य तो खूब लिखा जा रहा है पर अच्छे आलोचनात्मक लेखन की कमी है। आलोचक लगभग चुप है और स्तुति-निंदा को आलोचना का नाम दिया जा रहा है। असल में आलोचना रचना और रचनाकार के द्वारा दुनिया की पहचान कराती है। जहाँ आलोचना नहीं वहाँ साहित्यिक समाज की गति थम जाती है। जबकि वर्तमान की समीक्षा-आलोचना दृष्टि असंतुलित, अस्पष्ट, असंतोषजनक एवम् भ्रामक है। आज समीक्षाएं सपाट और सस्ती हो रही हैं। एक रचनाकार दूसरे रचनाकार की पुस्तक की समीक्षा कर रहा है वह भी परस्परता के साथ। यह मुद्दा ज्वलंत और चिंत्य है।

ख्यातिपात्र कवि आत्मारंजन के कथनानुसार आलोचना विधा की स्थिति हिमाचल क्या हिन्दी की मुख्य धारा में भी बहुत अच्छी नहीं है। सतही समीक्षा तक को आलोचना कहने-मानने की दरिद्र स्थिति है। बहुत लोग तो आज के दौर को हिन्दी में आलोचना शून्यता का दौर भी कहते हैं। जबकि हिमाचल में श्रीनिवास श्रीकांत की संधानपरक आलोचना पैठ ने मुख्य धारा में भी खासा ध्यान अर्जित किया है।

आलोचना स्वयं में एक बहुत बड़ी विधा है। इसके अपने सिद्धांत व अपने औजार हैं। आलोचक एक शल्य चिकित्सक की तरह है जो अपने सैद्धान्तिक औजारों के साथ रचना पर दृष्टिपात कर उसके सौंदर्य की रक्षा भी करते हैं, उसकी कमियों को सही दिशा में इंगित कर, रचनाकार को निखरने की भी राह दिखाते हैं व पाठक के साथ भी न्याय करते हैं। आलोचना भी कई प्रकार की है जैसे सैद्धान्तिक, निर्णयात्मक, प्रभावभिव्यंजक, व्याख्यात्मक और मनोवैज्ञानिक। हर प्रकार की आलोचना का अपना रंग रूप है। एक अच्छे आलोचक में इन गुणों का होना भी आवश्यक है-निष्पक्षता, साहस, सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण, इतिहास व वर्तमान का सम्यक ज्ञान, देशी-विदेशी साहित्य व कलाओं का ज्ञान, अध्ययनशीलता व मननशीलता। कहते हैं, एक निष्ट रचना उतनी हानिकारक नहीं होती जितनी कि एक निष्ट आलोचना। संतुलित आलोचना का सकारात्मक प्रभाव ही पड़ता है।

कुल मिलाकर यही कहना चाहूँगी कि अन्य क्षेत्रों की तरह हिमाचल की साहित्यिक धरा पर भी सकारात्मक आलोचना का हल जोतने, निष्पक्षता व साहस की खाद डालने, अध्ययनशीलता के बीज बोने व सहानुभूति दृष्टिकोण से सिंचित करने की आवश्यकता है।

सेट नं. 11, टीचर्स कॉलोनी, समरहिल,
शिमला-171 005

आलेख

अध्ययन : जीवन संजीवन

◆ कन्हैयालाल राजपुरोहित

मनुष्य को निसर्ग से प्राप्त विशेषाधिकारों में सर्वोपरि है, वाग्देवी की आराधना द्वारा सतत् रूप से अपने नैतिक और बौद्धिक उन्नयन की ओर अग्रसर होना। मनुष्यत्व को संवारने वाली सद्प्रवृत्तियों को सबल बनाना। इस दृष्टि से हमारे भाव जगत को परिपुष्ट करना जीवन की एक बुनियादी आवश्यकता है क्योंकि उसी पर ऐहिक जीवन की रम्यता निर्भर करती है और भाव जगत को शाद्वल बनाती है साहित्य रूपी गंगा। प्रकृति के अनुग्रह से हमारे जैविक स्तर के मनुष्यत्व को संवारने की सारी संभावनाएं हमारे भीतर विद्यमान हैं।

जीवन का वरेण्य लक्ष्य है, उदात्तता की ओर आरोहण। इस आरोहण का पाथेय भाव जगत से ही मिलता है। भाव जगत को श्री व सौरभयुक्त बनाने में साहित्य ही सक्षम है। साहित्य के व्यापक अध्ययन से ही हम अपने अतीत और वर्तमान का सही आकलन कर सकते हैं। ज्ञानार्जन व भावोन्नयन जैसे महद् लक्ष्यों का संधान करने वाली अध्ययनशीलता के सार्वकालिक महत्त्व को विख्यात चिंतक व क्रांतिकारी लाला हरदयाल अपनी विश्रुत कृति 'Hints for Self Culture' (आत्मविकास के सोपान) में रेखांकित करते हुए कहते हैं, "अपने मस्तिष्क को प्रशिक्षित और विकसित करना एवं अधिकतम संभव सीमा तक ज्ञानार्जन करना आपका बुनियादी कर्तव्य है। आपके शरीर का अद्भुत अंग मस्तिष्क ही शेष प्राणी जगत की तुलना में आपको वैशिष्ट्य प्रदान करता है। यदि आप इसे अपनी अधिकतम सामर्थ्य तक विकसित नहीं करते हैं तो आप मानव की अपेक्षा आरण्यक पशुओं के अधिक निकट हैं।"

अध्ययनशीलता से होने वाले बहुविध लाभों का चित्रण उन्होंने इस प्रकार किया है, "ज्ञान और बौद्धिक आत्म विकास आप पर अनिर्वचनीय आशीर्वादों का वर्षण करेंगे। धर्म और राजनीति के क्षेत्र में आप कभी अंधविश्वास और जनोत्तेजक भाषणों की झोंसापट्टी के शिकार नहीं होंगे। आपको अपने कर्तव्य का भान होगा और उसे पूरा करने का सामर्थ्य भी प्राप्त होगा। धर्म और राजनीति के क्षेत्र में आप स्वतंत्र चेता व्यक्ति बनेंगे और स्वार्थी धर्माचार्य वर्ग और चालबाज राजनेताओं के बहकावे में नहीं आएंगे। क्या इसे नगण्य उपलब्धि कहा जा सकता है? आज अधिकांश स्त्री-पुरुष स्वतंत्र और बौद्धिक दृष्टि से सचेत नहीं हैं। वे धर्माचार्यों और राजनेताओं द्वारा उड़ाई जाने वाली पतंगों के समान हैं, जिनकी डोर उनके हाथों में रहती है।"

इन धूर्त लोगों के छद्म को समझने में असमर्थ आम आदमी की नियति के बारे में तो यही कहना पड़ता है कि -

आखिर लोग आ गए रहनुमा की चालों में।
डर था अंधेरों का लुट गए उजालों में।।

कोयले की खदान जैसी सत्ता राजनीति की प्रकृति को देखते हुए उसके विद्या तक माया जाल से बचना स्वयं में एक उपलब्धि है, क्योंकि राजनीति को पेशा बनाने वाले लोग तो बक़ौल ब्रज नारायण 'चकबस्त' -

बागवां ने ये अनोखा सितम ईजाद किया।
आग लगा के पानी को बहुत याद किया।।

अधिकांशी लोग विज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र एवं अन्यान्य विषयों की जानकारी के अभाव में गुमराह किए जाते हैं। उनका दोहन किया जाता है। मानव जाति के आधे दुखों का कारण है अज्ञान और आधे दुःख स्वार्थपरता की देन है। ज्ञान पूर्णरूपेण उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना नीतिशास्त्र। वे वस्तुतः अंतर्निर्भर है। जैसा कि लेसिंग का कथन है, "ज्ञान का उद्देश्य सत्य है और सत्य आत्मा की आवश्यकता है।"

लाला हरदयाल की यह बात ध्यान देने योग्य है, "हम सभी को स्वयं से एक प्रश्न पूछना चाहिए और वह यह कि जीवन का सच्चा उपयोग क्या है?" आधारभूत महत्त्व के इस प्रश्न का उत्तर फारसी के शायर शेख सादी ने बड़े सटीक रूप से दिया है, "ज्ञान की साधना में स्वयं को मोमबत्ती की भांति गला देना चाहिए। यह तुम्हारा दायित्व है, भले ही इसके लिए पूरे भूलोक की यात्रा करनी पड़े।"

हमारा जीवन तो अल्प अवधि का है और ज्ञानानुरागी के लिए तो और भी छोटा। मानसिक आत्मविकास के मार्ग में दो बड़ी बाधाएं हैं। बहुत से लोग इस कदर अर्थ-लिप्सा से ग्रस्त होते हैं कि वे ऐसे हर काम से विरत रहते हैं जिसकी परिणति अर्थ प्राप्ति में

न हो। वे समझते हैं कि नकद नारायण से मिलन नहीं कराने वाला अध्ययन व दिमागी काम महज नादानी है। पैसा कमाने हेतु परिश्रम और अर्जित धनराशि से ऐशोआराम। यही उनकी मंज़िले-मकसूद होती है।

अपनी बौद्धिक क्षमता का उपयोग केवल अर्थोपार्जन के लिए करना प्रकृति प्रदत्त इस दुर्लभ उपहार का दुरुपयोग करना है। अपने बुद्धि कौशल को मात्र अर्थोपार्जन का साधन मानने वाले लोग तो पतितों व वारांगना की श्रेणी में आते हैं। ऐसा लाला हरदयाल का अभिमत है। लेकिन दुर्भाग्यवश यह सोच समाज पर इस तरह हावी है कि उसे सामान्य बात समझा जाता है।

प्रकृति ने हमें विकसित मस्तिष्क का उपहार सोचने-समझने, चिंतन-मनन करने, खोज व आविष्कार करने और उस गहन आनंद की अनुभूति के लिए प्रदान किया है, जो प्रकृति की महान विधि का संधान करते हैं। ज्ञान की साधना अपने साधकों को जो आह्लाद एवं परमानंद (स्वर्ग सुख) प्रदान करती है, वह शब्दातीत है। प्रायः धर्म प्रवर्तकों व संतों ने इस बात पर बल दिया है कि मनुष्य देह व आत्मा का युग्म है, पर उसके बौद्धिक पक्ष के विषय में वे मौन हैं।

स्वामी विवेकानंद का कहना था कि "मनुष्य निर्माण मेरा मिशन है और वह भी 'Man with Capital M'. विचारणीय मुद्दा यह है कि स्वामीजी मानव निर्माण के अपने ध्येय पर बल देकर किस ओर इंगित कर रहे हैं? उनका अभिप्राय ऐसे मनुष्यों के निर्माण से था, जो सहृदयता, संवेदना, सहिष्णुता व उदारता जैसे गुणों से संपन्न हों। संवेदनशीलता मनुष्यत्व की आधारशिला है। यदि मनुष्य की अंतर्निहित पाशविकता का शमन नहीं किया गया तो उसकी दारुण परिणति हमें यह कहने को बाध्य कर देगी कि

जब जब सोचा है मैंने इसे दिल थाम लिया।
इंसान के हाथों इंसान पे जो गुजरी।।

यूनानी चिंतक अरस्तु ने अपने शिष्य सिकंदर को लिखे एक पत्र में एक यूनानी कहावत का हवाला देते हुए लिखा था, "जीवन तो प्रकृति का उपहार है, किंतु एक मनोहारी जीवन तो विवेक की देन है।" विवेक का यह वरदान हमें अध्ययनशीलता ही प्रदान करती है। जब हम महान् चिंतकों, दार्शनिकों और कवियों से उनकी रचनाओं के माध्यम से रू-ब-रू होते हैं तो एक ऐसे भव्य संसार में विचरण करते हैं, जहां क्षुद्रता के लिए कोई स्थान नहीं होता और जैसा कि स्वामी विवेकानंद ने कहा है, आनंद विराटता में है। विराटता हमारी नैतिक, बौद्धिक उन्नति का पथ प्रशस्त करती है। संकीर्णता तो अधःपतन की अंधेरी गली में ही ले जाती है।

जीवन में निहित सुंदरता के दर्शन तभी संभव हैं, जब हम विवेक बुद्धि से संपन्न मनीषियों के ग्रंथों का रसास्वादन करें। तभी हमें ऋषि कल्प मनीषी प्रोफेसर Will Durant के इस कथन की सच्चाई की प्रतीत होगी कि "इतिहास की सबसे पहली शिक्षा है विनय क्योंकि जिस पृथ्वी पर हमारा आवास है, वह तो इस असीम ब्रह्मांड में एक नगण्य बिंदु है और हमारे जीवन के लिए तो क्षणभंगुर शब्द का प्रयोग भी एक अतिशयोक्ति है।"

अध्ययनशीलता ही हमें इस योग्य बनाती है कि हम अपने जीवन और परिवेश को सकारात्मक सोच व कार्यों से 'शिवं सुंदरम्' से मंडित कर सकें। जीवन के भूषण स्वरूप मूल्यों का बोध हमें साहित्य से ही होता है। न केवल लब्ध प्रतिष्ठ चिंतकों की कृतियों में अपितु लोक जीवन से जुड़े साहित्य में भी कल्याणकारी उच्च जीवन मूल्य पदे-पदे लक्षित होते हैं। सुरुचि, शालीनता, गरिमा एवं अन्यान्य गुणों का हमारी मनोभूति में बीजवपन व संवर्धन साहित्य के अध्ययन से ही संभव है। इन गुणों से वेष्टित व्यक्ति ही अब्राहम लिंकन की इस बात का मर्म समझ सकता है, "ख्याति वाष्पवत् है, लोकप्रियता एक संयोग है, लक्ष्मी चंचला है। केवल एक चीज चिरंजीवी है और वह है चरित्र।"

अध्ययन विमुख लोगों के हिस्से में उस परमानंद का झोंका भी नहीं आ सकता जो रवींद्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि', प्रसाद की 'कामायनी', दिनकर की 'उर्वशी', कुंवर नारायण के 'वाजश्रवा', नरेश मेहता के 'महाप्रयाण' जैसी रचनाओं के पठन से प्राप्त होता है। काव्य का सच सार्वभौमिक और सर्वकालिक होता है। काव्य की सर्वकालिकता उसके उद्भव से जुड़ी है। काव्य का उत्स ही मानवीय संवेदना से जुड़ा है।

साहित्य का तो मर्म ही संवेदना है। वह उदात्तता की ओर आरोहण का प्रथम सोपान है। जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति व मात्र संवेगों से परिचालित पशु जगत से मानव की विभाजक रेखा उसकी संवेदनशीलता ही है। चराचर सृष्टि के साथ उसका सार्थक साहचर्य संवेदना की ही देन है। जहां संवेदना का स्रोत सूखा, एक पाषाणी परुषता मानवीय व्यवहार को आच्छादित कर जीवन को श्रीहीन, रसहीन शुष्क काष्ठवत् बना देती है। यह बुनियादी महत्त्व

की बात है कि हमारे दोनों राष्ट्रीय महाकाव्यों 'रामायण' और 'महाभारत' के मूल में संवेदना का ही केंद्रीय स्थान है। करुण रस से आप्लावित हुए मन ने ही रामायण की रचना की। रामायण का आदिश्लोक यदि पक्षी की पक्षधरता से प्रारंभ होता है तो महाभारत की इतिश्री युधिष्ठिर के मनुष्येतर प्राणी श्वान के साथ स्वर्गारोहण से होती है।

अध्ययन आत्ममुग्धता के जाल को छिन्न-भिन्न करके हमें अपनी लघुता का तो भान कराता ही है और साथ ही हम जितना अधिक पढ़ते हैं, उतना ही हमें अपनी अज्ञानता व सीमाओं का बोध होता चला जाता है। इस बोध से उद्‌भूत विनयशीलता हमारे लिए प्रकाश स्तंभ का कार्य करती है। मनीषी Will Durant ने सत्य ही कहा है, "कभी हम निसर्ग की गोद में जाएं और वहां कल्लोल करते हुए पशु-पक्षियों को देखें तो सहज ही हमें इस बात का भान हो जाएगा कि इस सुंदर धरती पर हम तो घुसपैठिए हैं। प्रभु ने तो इनके लिए संसार का सृजन किया है। तब हमारी अहंमन्यता की बर्फ पिघलने लगेगी।"

कालजयी साहित्यिक कृतियों पर विहंगम दृष्टिपात करने से ही यह तथ्य उजागर हो जाएगा कि जिस कृति में संवेदना जितनी मुखर हुई है, वही हमारे हृदय के अधिक निकट है। क्या वजह है कि कवि कुल गुरु कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुंतलकम्' की बात आते ही उसके चौथे अंक में वीतराग कण्व ऋषि के अपनी पोषिता पुत्री शकुंतला की विदाई के अवसर पर भाव विह्वल अवस्था में निकले उद्‌गारों को इस नाटक का सर्वाधिक मर्मस्पर्शी व श्रेष्ठ अंश माना जाता है।

अध्ययनशीलता ही हमें इस योग्य बनाती है कि हम अपने जीवन और परिवेश को सकारात्मक सोच व कार्यों से 'शिवं सुंदरम्' से मंडित कर सकें। जीवन के भूषण स्वरूप मूल्यों का बोध हमें साहित्य से ही होता है। न केवल लब्धा प्रतिष्ठ चिंतकों की कृतियों में अपितु लोक जीवन से जुड़े साहित्य में भी कल्याणकारी उच्च जीवन मूल्य पदे-पदे लक्षित होते हैं। सुरुचि, शालीनता, गरिमा एवं अन्यान्य गुणों का हमारी मनोभूति में बीजवपन व संवर्धन साहित्य के अध्ययन से ही संभव है। इन गुणों से वेष्टित व्यक्ति ही अब्राहम लिंकन की इस बात का मर्म समझ सकता है, 'ख्याति वाष्पवत् है, लोकप्रियता एक संयोग है, लक्ष्मी चंचला है। केवल एक चीज चिरंजीवी है और वह है चरित्र।'

संवेदनहीनता संवादहीनता को जन्म देती है। संवादहीनता दूसरों के प्रति उपेक्षा किंवा निष्ठुरता को इस सीमा तक ले जाती है कि उसकी परिणति तो बक़ौल बशीर बद्र यह होती है कि

लोग मिट जाते हैं एक घर बनाने में।
तुम तरस नहीं खाते बस्तियां जलाने में।।

साहित्य मस्तिष्क की नहीं, हृदय की वस्तु है। जहां ज्ञान और उपदेश असफल होता है, वहां साहित्य बाजी मार ले जाता है, ऐसा मुंशी प्रेम चंद का मानना है। स्वामी विवेकानंद का कहना है कि प्रत्येक मनुष्य एक संभाव्य दैवी आत्मा है। जमाने के छल प्रपंच या हालात के वशीभूत होकर भले ही वह अपनी इस संपदा से हाथ धो बैठता है। मुंशी प्रेमचंद के अनुसार "साहित्य इसी देवत्व को पुनः स्थापित करने की चेष्टा करता है। उपदेशों और नसीहतों से नहीं अपितु भावों को स्पंदित करके, मन के कोमल तारों को झंकृत करके। प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करके। हमारी सभ्यता साहित्य पर ही आधारित है। विश्व की आत्मा के अंतर्गत भी राष्ट्र की एक आत्मा होती है। साहित्य इसी आत्मा की प्रतिध्वनि है।"

दैनंदिन जीवन में पारस्परिक संबंधों में कटुता से दूर रहकर गिले-शिकवे भी अदब से करने का सलीका हमें प्रज्ञावान साहित्यिकों की कृतियों के अध्ययन से ही प्राप्त होता है। साहित्य से संस्कारित व्यक्ति गंभीर-से-गंभीर गिला भी बड़ी शालीनता से कुछ इस तरह प्रस्तुत करेगा-

जोर ही क्या था जफ़ा-ए-बागबाँ देखा किए।
आशियाँ उजड़ा किया हम नातावाँ देखा किए।।

मौजूदा परिवेश में विभिन्न क्षेत्रों में जो कुछ घटित हो रहा है, उसे सही रूप में समझने व भ्रमित न होने के लिए अग्रणी विचारकों व बुद्धिजीवियों द्वारा किए गए विश्लेषण व तलस्पर्शी विवेचन का अध्ययन आवश्यक है। आज वैश्वीकरण की आड़ में चल रही नव साम्राज्यवाद की घातक चालों को समझने व उसके असली चेहरे को अनावृत करने में हमारे समय के प्रज्ञावान बुद्धिजीवी प्रोफेसर नोअेम चोम-स्की और प्रोफेसर एडवर्ड सैद जैसे मेधावी ही हमारी मदद कर सकते हैं।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में भी काव्य की भूमिका तो असंदिग्ध रूप से महत्त्वपूर्ण है। यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का आठवां मंत्र है, "कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः।" परमात्मा कवि है, मनीषी है, सर्वव्यापी और स्वयंमेव है। कविता कैसे निराशा के अंधकार का निवारण करती है, इसका उल्लेखनीय उदाहरण ब्रिटिश चिंतक जे.एस. मिल की आत्मकथा में बड़े प्रभावी ढंग से चित्रित हुआ है। कविता जीवन में रम्यता का सृजन व संचार करती है। हृदयगत भावों को निहायत सुंदर ढंग से अभिव्यक्ति कवि मन ही दे सकता है। ताजमहल को 'काल के गाल पर एक आंसू' का रवींद्र नाथ ठाकुर द्वारा प्रदत्त अधिमान और जर्मन कवि मारिया रिल्के द्वारा अपनी 'बेनवेगुटा' (शुभागता) की यह कहकर

बलवंत आचार्य के दोहे

संयम से ही कीजिए, जीवन के हर काम।
बिन संयम का व्यर्थ है, बक-बक आठों याम।। 1

अगर आप ने रट लिये बस कोरे व्याख्यान।
उससे जग का हो नहीं सकता कुछ कल्याण।। 2

इस व्यावहारिक भूमि पर, नहीं पड़े यदि पाँव।
एक दिन डूबेगी सुनो, नैतिकता की नाव।। 3

करना तो कुछ कठिन है, कहना है आसान।
कहना छोड़ो बस धरो, करने का ही ध्यान।। 4

यहाँ सभी हैं बोलते, सुनता किसकी कौन।
सुनता सब कुछ वही है, जो है मन से मौन।। 5

सुबक रही कलियाँ यहाँ, सिसक रहे क्यों फूल?
अपलक किसे निहारते, कालिन्दी के कूल? 6

हुईं मांगलिक वेदियां, जब मंत्रों से दूर।
तब से महंगा हो गया, चुटकी भर सिंदूर।। 7

चश्मदीद हैं सामने, पुख़्ता हुए सबूत।
फिर भी आज सफेद है, क्यों काली करतूत? 8

लोक-लुभावन हाथ में, लिए घोषणा पत्र।
गिना रहे उपलब्धियाँ, घूम-घूम सर्वत्र।। 9

लिखो स्नेह, सद्भावना, संयम, शिष्टाचार।
लिखो, अगर तुम लिख सको, जनमानस में प्यार।। 10

जल कितना अनमोल है, इसका रखिये ख्याल।
सोच समझ कर कीजिए, जल का इस्तेमाल।। 11

श्रद्धा से ही सत्य की, होती सहज प्रतीति।
बिना मथे मिलता नहीं, जीवन की नवनीत।। 12

हिंदी विभागाध्यक्ष, कमला कॉलेज ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज,
450, ओ.टी.सी. रोड, कॉटनपेट, बेंगलूर-560 053,
मो. 0 98445 58064

अभ्यर्थना करना कि "यह दुनिया सुंदर है क्योंकि इसमें तुम रहती हो", रम्य अभिव्यक्ति के भव्य उदाहरण हैं। निपट निराशा के क्षणों में भी व्यक्ति में आशा व उत्साह का संचार करने की क्षमता काव्य में होती है। चूंकि कवि के पास अंतर्दृष्टि होती है, फलतः वह बड़े प्रभावी ढंग से हमारी हताशा व हीनता-बोध की धुंध का निवारण कुछ इस ढंग से कर सकता है-

ऐ ताइरे लाहूती उस रिज़्क से मौत अच्छी।
जिस रिज़्क से आती हो परवाज़ में कोताही।।

लाख टके का प्रश्न यह है कि साहित्य की इन नियामतों से हम लाभान्वित कैसे हों। इसका सटीक उत्तर है- सतत् अध्ययनशीलता। उत्तम पुस्तकों का अध्ययन जीवन में अक्षय आनंदप्राप्ति का विश्वसनीय स्रोत है। लोकमान्य तिलक ने अच्छी पुस्तकों की महत्ता के बारे में कहा था, "यदि मुझे नरक में भेजा जाए तो मैं जाने को सहर्ष तैयार हूं, बशर्ते मुझे वहां अच्छी पुस्तकें पढ़ने को मिलें क्योंकि जहां अच्छी पुस्तकें हैं, वहां स्वतः स्वर्ग की सृष्टि हो जाएगी।" पुस्तकें कितनी महत्त्वपूर्ण निधि हैं, इस संबंध में कवि स्टीफन मेलार्म की टिप्पणी ध्यान देने योग्य हैं। वे कहते हैं- "Every thing in the world exists to endup in a book. The book is the primary mode of preserving memory, our imagination and our source of knowldege.'

अर्जेंटीना के महान कथाकार बोर्खेज ने पुस्तकों को मनुष्यकृत आविष्कारों में "सबसे विस्मयकारी और चमत्कारी आविष्कार बताते हुए कहा है कि दूसरे आविष्कार तो हमारे शरीर का विस्तार हैं, जबकि पुस्तकें हमारी कल्पना और स्मृति का विस्तार करती हैं।

मर्त्य मानव अमर्त्यता के सोपान पर पुस्तकों के माध्यम से ही आसीन हो सकता है। बक़ौल परवीन शाकिर -

मर भी जाऊँ तो कहाँ लोग भुला ही देंगे।
लफ़्ज़ मेरे मेरे होने की गवाही देंगे।।

अध्ययन के महत्त्व को दर्शाते हुए महामति फ्रांसिस बेकन कहते हैं, "धूर्त मनुष्य अध्ययन का तिरस्कार करते हैं, सरल मनुष्य इसकी प्रशंसा करते हैं और ज्ञानी पुरुष इसका उपयोग करते हैं।"

अब हमें यह निश्चित करना है कि हम स्वयं को किस श्रेणी में रखना पसंद करेंगे।

एसोसिएट प्रोफेसर (पोल साईंस), सी-2, 'रत्न स्मृति',
पंचवटी कॉलोनी, रतनाडा, जोधपुर, राजस्थान-342 011

आलेख

रिश्तों के दरमियां आर्थिक पैकेज

◆ राजेंद्र 'पालमपुरी'

आज के दौर में आर्थिक तंगी और बदहाली के चलते, सभी परिवारों में अधिक-से-अधिक धन जुटाने की होड़ और लालसा लगी है। सरकारी और गैर-सरकारी नौकरियों को तलाशते देखता हूं अकसर अनेकों परिवारों को। लेकिन इस धन कमाने के चक्कर में हम अपने घर-परिवार के सदस्यों से कितना न्याय कर पाते हैं... यह वह इनसान समझ सकता है या बता सकता है, जो इस रास्ते पर चल रहा हो। फिर वह चाहे पुरुष हो या स्त्री।

बहुत से परिवारों में स्त्री और पुरुष संयुक्त रूप से अपनी आजीविका कमाते देखे जा सकते हैं। किंतु 'पैसा' कमा रहे ये दंपति क्या अपने परिवार को उचित-भरपूर समय या फिर उनकी देखभाल, उनके लालन-पालन के लिए यथासंभव सहायता व मदद करने में सक्षम या सहायक हो सकते हैं? यह जानने की बात है! मैंने देखा है... अकसर नौकरी-पेशा दंपति, सुबह-सवेरे उठकर अपने-अपने कार्यक्षेत्र में जाने की तैयारी में लग जाते हैं और अपने साथ-साथ पाठशाला या स्कूल जा रहे बच्चों की तैयारी को लेकर, उनके नाश्ते से लेकर 'लंच बॉक्स' तक की हड़बड़ाहट में अपना मानसिक संतुलन खो रहे प्रतीत होते हैं। यही नहीं, अपने साथ ही उन्हें घर के बड़े-बुजुर्गों को सहारा देने की बजाय, उनसे अपने बच्चों को स्कूल छोड़ने और वापस घर लाने तक के सहारे की ज़रूरत महसूस होती नज़र आती है।

सेवानिवृत्त पिता, गृहिणी मां या सास-ससुर अपने पोता-पोती, नाता-नातिन की अकसर ऐसी 'चाकरी' करते देखे जा सकते हैं। इसे चाहे वह अपनी प्रसन्नता, अपना अधिकार, अपनी ममता या फिर अपनी 'मजबूरी' समझकर ही, क्यों न करते हों! किंतु सच कहूं तो यह मेरी समझ से परे है। और नौकरी-पेशा लोग अपने-अपने दफ्तर से, अपने कार्यक्षेत्र से शाम ढले थके-हारे अपने घर पहुंचते हैं तो आकर अकसर वे घर के कामों में व्यस्त हो जाते हैं। रही-सही कसर बच्चों का 'होमवर्क' पूरी कर देता है।

जेहनी या दिमागी और शारीरिक रूप से पूरी तरह थका-मांदा शरीर कब नींद की आगोश में सिमट जाता है, पता ही नहीं चलता। यही नहीं, घर में बड़े-बुजुर्गों या फिर अन्य किसी सदस्य के न होने की स्थिति में यह समस्या और भी पेचीदा होती है। उन्हें अपने बच्चों के लिए एक 'सेवक', 'सेविका' या 'आया' की जरूरत हमेशा हो सकती है। और अनगिनत लोगों को ऐसे 'सेवादारों' को अपने घरों में स्थान देना ही पड़ता है। अब घर के बड़े-बुजुर्ग सदस्यों के हवाले यदि बच्चे हैं तो निश्चय ही इनसान आश्वस्त हो सकता है, किंतु अजनबी सेविका, सेवादार या आया के सहारे ही बच्चे हों तो असुरक्षा की भावना कहीं-न-कहीं खटकती ही रहती है।

आए दिन ऐसे किस्से देखने-सुनने को मिलते रहते हैं कि घर में काम कर रहे सेवादार ही घर का सारा सामान लेकर 'नौ दो ग्यारह' हो गए। यही नहीं, बच्चों के गायब होने के भी अनेक मामले और हत्याएं तक भी सामने आई हैं। बच्चों के ही नहीं, बल्कि घर के बड़े-बुजुर्गों की देखभाल के लिए रखे गए 'सेवादारों'
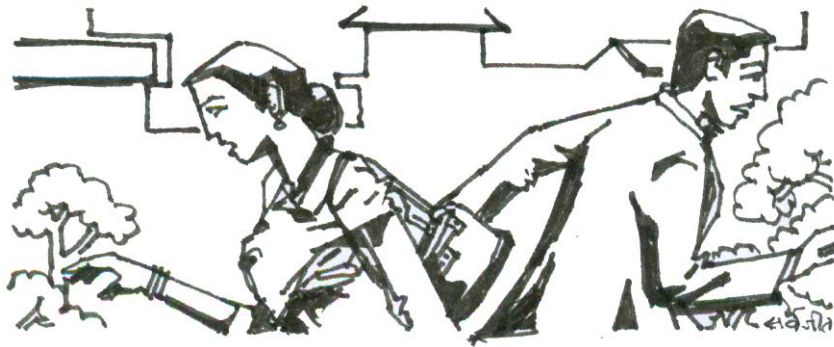
ने ही घर के बेशकीमती सामान पर 'हाथ साफ करने' के साथ-साथ ही बुजुर्ग दंपति की हत्या तक के संगीन कारनामों को भी अंजाम देकर दहशत फैला दी थी, हमारे हिमाचल प्रदेश की राजधानी शिमला में पिछले कुछ बरस पहले।

जहां तक कामगार पुरुष और महिला परिवारों या सदस्यों की बात की जाए... मेरा अपना निजी अनुभव रहा है कि शायद ही कोई दंपति हो जो अपने बच्चों या उम्रदराज बुजुर्गों को उचित समय...यथायोग्य समय दे पाते हों। हां कहा जा सकता है कि ऐसी संख्या न के बराबर है। यहां यह कहना भी आवश्यक समझता हूं कि सरकारी या गैर-सरकारी संस्थान अच्छा 'आर्थिक पैकेज' तो दे सकते हैं, किंतु एक अच्छा 'सुरक्षा पैकेज' नहीं।

अकसर कामगार गृहिणियां अपने बच्चों को पूर्ण समय, चाहकर भी नहीं दे पातीं। और उम्र के बढ़ते पायदानों पर बूढ़े मां-बाप या सास-ससुर भी इतने सशक्त ऊर्जावान नहीं रहते कि वे बहुत अच्छी सावधानी से अपने नाता-नातिन, पोता-पोती की देखरेख के साथ-साथ उनके शिक्षात्मक और सुरक्षात्मक पहलुओं में भी उनकी मदद, उनकी सहायता कर सकें। समय की मांग भले ही अधिक पैसा कमाने या धन अर्जित करने की रही हो, किंतु यह कहना भी गलत न होगा कि उससे भी कहीं अधिक आवश्यकता है अपने परिवार को... अपने बच्चों... अपने बुजुर्गों के अच्छे स्वास्थ्य, उनकी सुरक्षा की।

नहीं कहता... कि 'सेविका' या 'सेवादारों' की सेवाएं न ली जाएं। किंतु जैसा कि दो वर्ष पूर्व मैंने अपने विदेश में रह रहे बेटे और बहू के पास जाते हुए यूरोप की यात्रा करते समय पाया कि वहां यदि हम अपने घर में 'सेवादार' रखना चाहें तो हमें वहां की सरकार को अपने पूरे आर्थिक विवरण और आवश्यक कारणों के पूरे विवरण के बाद ही सरकार द्वारा ही 'सेवादार' मुहैया करवाने के नियम हैं। ऐसा नहीं है कि हमारे यहां नियम नहीं हैं। किंतु हम इन नियमों पर चलते कहां हैं? और शायद इसीलिए हमें ऐसे असमय हादसों से दो-चार भी होना पड़ता है। नौकरी करना या धन अर्जित करना गुनाह नहीं, किंतु अपने बच्चों, अपने बुजुर्गों, अपने घर के, अपने परिवार के सदस्यों का खयाल न रख पाना शायद... शायद बहुत बड़ा जुर्म है... अपराध है।

इसलिए नौकरीपेशा होने के साथ-साथ उन सभी का भी खयाल रखें, जिन्होंने हमारा सदैव ध्यान रखा है। बचपन से आज तक। और जो कल (बच्चे) भी ध्यान रखेंगे आपका... हम सबका। और यह तभी संभव हो पाएगा जब हम सभी अपने बच्चों में अच्छे संस्कारों का संचार कर पाएंगे। उन्हें अधिक-से-अधिक वक्त देकर... समय देकर।

स्टेट अवार्डी, हिमाचल शिक्षा विभाग, सेवानिवृत्त, मनाली, जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश, पोस्ट बॉक्स नं. 45,
मो. 0 86288 53773

जगदीश तिवारी की ग़ज़लें

एक

छोड़कर हमको अगर तुम जाओगे
देखना तुम एक दिन पछताओगे

हादसों के इस शहर में एक पल
चैन से तुम यार रह ना पाओगे

दोस्तों से दुश्मनी अच्छी नहीं
दुश्मनी की आग में जल जाओगे

कब तलक तनहाइयों में डूब कर
अश्क आंखों से अजी छलकाओगे

प्यार क्या है ये कभी समझे नहीं
ज़िंदगी को फिर समझ क्या पाओगे

वक्त रुकता है भला किसके लिए
वक्त निकला तो कहां से लाओगे

इन अंधेरों में रहोगे कब तलक
इन अंधेरों में ही गुम हो जाओगे।

दो

ज़माना बात ये सब जानता है
ग़जब का यार उसमें हौसला है

अंधेरों से लड़ा है वो उमर भर
उजाला ये सभी कुछ जानता है

दरख्तों को कभी ना काटता वो
दरख्तों में परिंदें पालता है

ग़लत करता कभी खुद काम कोई
वो अपने आप को खुद डांटता है

निभाता है सभी वादे वो सारे
नहीं कड़वा किसी से बोलता है

मिटाता है दिलों की दूरियां सब
दिखाता रोशनी का रास्ता है

कभी जगदीश उसको तोड़ना मत
उसूलों से जड़ा वो आईना है।

3-क-63,, सेक्टर-5, हिरण मगरी, उदयपुर, राजस्थान-313 002, मो. 0 93511 24552

आलेख

संस्कारों से संवारें बच्चों का जीवन

◆ डॉ. भारती गांधी

हम अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी भौतिक शिक्षा देने की व्यवस्था करते हैं। लेकिन हमारे बच्चों के लिए जो ज्यादा जरूरी है वह है गुणों की अर्थात् आध्यात्मिक शिक्षा। हमारा ध्यान इस ओर भी जाना चाहिए कि हमें प्रत्येक बच्चे को घर तथा स्कूल दोनों जगहों पर गुणों की अर्थात् आध्यात्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए। हमें प्रत्येक बच्चे के जीवन को गुणों के गुलदस्ते से सुगंधित बनाना चाहिए। हमें प्रत्येक बच्चे को ऐसा बनाना है जो कि सत्य भी बोलता हो, प्यार भी करता हो, अपने से बड़ों की आज्ञा भी मानता हो और सेवा के लिए भी आगे रहता हो। हमें बच्चों को ऐसा बनाना है जो कि चाहे जो कुछ भी हो जाये हमेशा सच ही बोले। एक 4 साल का बच्चा था जिसकी माँ ने उससे कहा था कि हमें हमेशा सच बोलना चाहिए। माँ अपने बेटे को रोज इस बात की याद दिलाती रहती थी कि हमें हमेशा सच बोलना है। नेशन स्कूल पढ़ने जाता था। एक दिन नेशन ने कुछ बच्चों के साथ मिलकर स्कूल के ब्लैकबोर्ड पर एक कार्टून बना दिया और सभी बच्चों ने मिलकर यह पहले से ही तय कर लिया था कि वे मास्टर साहब को नहीं बतायेंगे कि इस कार्टून को किसने बनाया है। बच्चों ने नेशन से कहा कि तुम बहुत सत्यवादी बनते हो लेकिन तुम भी मास्टर साहब को यह नहीं बताओंगे कि यह कार्टून किसने बनाया है।

प्रत्येक बच्चे की 'माँ' उसकी प्रथम शिक्षिका है

क्लास में जब मास्टर साहब आये तो उन्होंने देखा कि ब्लैकबोर्ड पर कार्टून बना हुआ है तो वे बहुत नाराज हुए। उन्होंने बच्चों से पूछा कि यह कार्टून किसने बनाया है? लेकिन किसी ने भी उनके इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। मास्टर साहब जानते थे कि नेशन हमेशा सच ही बोलता है इसलिए उन्होंने नेशन से पूछा कि यह कार्टून किसने बनाया है। नेशन ने सभी बच्चों की तरफ देखा और फिर मास्टर साहब से बोला कि ''मुझे पता तो है कि यह कार्टून किसने बनाया है लेकिन हम सभी बच्चों ने यह पहले ही तय कर लिया है कि हम यह बात किसी से नहीं बतायेंगे। इसलिए मैं आपको यह नहीं बता सकता कि यह कार्टून किसने बनाया है।'' मास्टर साहब को यह बात अच्छी नहीं लगी और उन्होंने नेशन को थप्पड़ लगा दिया। नेशन जब स्कूल की छुट्टी के बाद घर आया तो उसने हंसते हुए अपनी माँ से कहा कि ''आज मुझे सच बोलने के कारण मार पड़ी है।'' माँ ने कहा कि यह कैसे हो सकता है कि तुम्हें सच बोलने के कारण मार पड़ी हो तब नेशन ने अपनी माँ को पूरी घटना बताई। कहने का तात्पर्य यह है कि एक बच्चे के मन-मस्तिष्क में उसकी माँ जिसे हम किसी भी बच्चे की प्रथम शिक्षिका कहते हैं, की बातों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि माँ अपने बच्चे के लिए त्याग करती है।

पिता की बात भी बच्चों को हमेशा याद रहती है। महात्मा गांधी के बारे में कहा जाता है कि एक बार उन्होंने सोने का कड़ा चुराने के बाद उसमें से कुछ सोना काटकर बेच दिया था। उस समय उनके पिता ने उन्हें मारा-पीटा नहीं था बल्कि बड़े ही संयम एवं सहनशीलता के साथ उनका साथ दिया था। इसका नतीजा यह हुआ कि उसके बाद उन्होंने अपने जीवन में कभी भी कोई गलत काम नहीं किया। यहाँ तक कि जब वे इंग्लैण्ड पढ़ने के लिए गए तो वहाँ भी उनका जीवन सदा वैसा ही रहा जैसा कि उनके माँ-बाप ने उन्हें संस्कार दिया था। इंग्लैण्ड में पढ़ते समय एक बार उनकी क्लॉस में उस स्कूल के इन्सपेक्टर आये जो कि यह देख रहे थे कि पढ़ाई ठीक से हो रही है

हमारा ध्यान इस ओर भी जाना चाहिए कि हमें प्रत्येक बच्चे को घर तथा स्कूल दोनों जगहों पर गुणों की अर्थात् आध्यात्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जानी चाहिए। हमें प्रत्येक बच्चे के जीवन को गुणों के गुलदस्ते से सुगंधित बनाना चाहिए। हमें प्रत्येक बच्चे को ऐसा बनाना है जो कि सत्य भी बोलता हो, प्यार भी करता हो, अपने से बड़ों की आज्ञा भी मानता हो और सेवा के लिए भी आगे रहता हो। हमें बच्चों को ऐसा बनाना है जो कि चाहे जो कुछ भी हो जाये हमेशा सच ही बोले। एक चार साल का बच्चा था जिसकी माँ ने उससे कहा था कि हमें हमेशा सच बोलना चाहिए।

या नहीं? इसी क्रम में उन्होंने बच्चों के कापी में लिखी हुई कैटिल शब्द की स्पेलिंग चेक करनी शुरू कर दी। गांधी जी की कापी पर उस क्लास के मास्टर की निगाह पड़ी तो उन्होंने देखा कि मोहनदास करमचन्द गांधी ने कैटिल की स्पेलिंग गलत लिखी हुई है। उनके मास्टर साहब ने उन्हें इशारा किया कि बगल वाली सीट पर बैठे हुए बच्चे की कापी देखकर वे अपनी स्पेलिंग को ठीक कर ले। मगर महात्मा गांधी ने ऐसा नहीं किया क्योंकि उनके माता-पिता ने यह संस्कार दिया था कि उन्हें नकल नहीं करनी चाहिए।

प्रत्येक बच्चों को जीवन-मूल्यों की शिक्षा दी जानी जरूरी

बच्चे जब देखते हैं कि किसी अच्छे काम को करने में उनके माता-पिता उनका साथ दे रहें हैं तो वे उस काम को कई गुना उत्साह के साथ करने लगते हैं। हम सभी जानते हैं कि बच्चों की रुचि अलग-अलग होती है। कोई बच्चा डॉक्टर बनना चाहता है तो कोई इंजीनियर, कोई आई.ए.एस. तो कोई वैज्ञानिक आदि। हमें अपने बच्चों में उसके रुचि के गुणों को बढ़ाने में तो अवश्य ही सहायता करनी चाहिए इसके साथ ही हमें प्रत्येक बच्चे को जीवन-मूल्यों की शिक्षा देनी चाहिए। जोहान्सबर्ग में महात्मा गांधी एक कम्पनी की तरफ से मुकद्दमों की पैरवी किया करते थे। लेकिन वे उस कम्पनी के केवल उन्हीं मुकद्मों को लड़ते थे जो कि सही होते थे। परिणामस्वरूप वे वकालत के पेशे में तो बहुत ज्यादा सफल नहीं हो सके लेकिन एक इंसान के रूप में वे बहुत अधिक सफल रहे। उन्होंने अपने जीवन में सत्य एवं अहिंसा रूपी दो सद्गुणों को ग्रहण किया था। उनका कहना था कि मैं हमेशा सत्य बोलने के साथ ही किसी को भी मनसा, वाचा, कर्मणा दुःख नहीं पहुंचाऊंगा। उनके इन दो संकल्पों ने उन्हें अपने जीवन में बहुत ही ऊंचाइयों पर पहुँचाया। इसीलिए हमें भी उनके जैसा बनने के साथ ही अपने बच्चों को भी वैसा ही बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

संस्थापक-संचालक
सिटी मोन्टेसरी स्कूल, लखनऊ,
उत्तर प्रदेश

दिनेश रावत की तीन कविताएं

मैं सबका हूँ

सतत् श्रमरत् रहने से
सफलता मिल ही जाती है।
हकीकत ख्वाब बन जायें
घड़ी वो आ ही जाती है।।

चला था जब मैं मंजिल को
राह में था मैं अकेला
कहा क्या-क्या नहीं किसने
मगर मैं सुनता रहा।।

शिखर पर देखकर दुनिया
खुशी के गीत गाती है।
मगर चलता है जब राही
बहुत बातें बनाती है।।

यहाँ पर देखकर मुझको
बहुत से लोग हैरान हैं।
ये कैसे और हुआ कब है
इसी से वो परेशान हैं।।

वो अक्सर कहते फिरते हैं
इसे हमने बनाया है।
इसी से मन को बहलाकर
तसल्ली दिल को देते हैं।।

मगर अब लोग कहते हैं
वो मेरा है, मैं उसका हूँ।
खुदा का शुक्र है इतना
कि सब मेरे, मैं सबका हूँ।।

हमें भी आता है

चाँद तारों संग बड़बड़ाना
हमें भी आता है
बातों को हवा में तैराना
हमें भी आता है
गर हो हिम्मत तो देखो
बसाकर उजड़ा चमन कोई
वरना घर अपना सजाना
हमें भी आता है।

नाम अपना भुनाना
हमें भी आता है
अलंकरण झुटा पा जाना
हमें भी आता है
गर है दक्षता तो
देखो दोष दबाकर दूसरे का
वरना नाम अपना उठाना
हमें भी आता है।

फर्ज अपनत्व का निभाना
हमें भी आता है
पर उपदेश सुनाना
हमें भी आता है
क्या दिया है सहारा
कभी पथ पर गिरे किसी पथिक को
वरना लाँघकर आगे बढ़ जाना
हमें भी आता है।

समर्पण

मुट्ठीभर जगह बहुत है
जीवन में विस्तार पाने को
तेरी एक हाँ ही काफी है
दुनिया नई बसाने को।

मैं घोर अभाव में रहकर भी
कर सकता हूँ बसर जिन्दगी
तू जो साथ रहे
नित सपने नये सजाने को।

नहीं चाहिए मुझे
दुनिया की वो शान-ओ-शौक्त
तेरी मुस्कान ही काफी है
जिन्दगी बिताने को।

रा.प्रा.वि. मेतली, पत्रालय-मेतली, वाया जौलजीवी,
जनपद-पिथौरागढ़, उत्तराखण्ड-262544,
मो. 0 99272 72086

आज भी प्रासंगिक हैं जवाहर लाल नेहरू के अंतर्राष्ट्रीय विचार

◆ डॉ. कांता देवी

पं. जवाहर लाल नेहरू जी घोर मानवतावादी थे, और उनका मानवतावादी होना ही उनके अन्तर्राष्ट्रीय होने का सबसे बड़ा प्रमाण है। गोल्ड स्मिथ के शब्दों में, ''अन्तर्राष्ट्रीयवाद एक भावना है जिसके अनुसार व्यक्ति केवल अपने राष्ट्र का ही सदस्य नहीं वरन् समस्त विश्व का नागरिक है।'' नेहरू जी इस परिभाषा को पूर्णरूप से स्वीकार करते थे। उनकी इच्छा थी कि प्रत्येक राष्ट्र एकाकीपन तथा संकीर्णता के संकुचित बंधनों से मुक्त होकर एक ऐसे वातावरण में प्रवेश करे जहाँ प्रतिद्वन्द्वता न हो सहयोग हो, आर्थिक दासता न हो, आर्थिक सम्पन्नता तथा राजनीतिक, सामाजिक एवं नैतिक समता हो। नेहरू जी की अन्तर्राष्ट्रीयवाद की भावना उनके इन शब्दों से स्पष्ट होती है- ''राष्ट्रवाद की भावना आज भी लगभग उतनी ही प्रबल है जितनी कि पहले थी और उसके पवित्र नाम पर युद्ध लड़े गये हैं तथा दसियों लाख लोगों की हत्या की गयी है, किन्तु वह एक मिथ्या विश्वास है जिसका वास्तविकता से कोई संबंध नहीं है। विश्व का अन्तर्राष्ट्रीयकरण हो चुका है, उत्पादन अन्तर्राष्ट्रीय है, बाजार अन्तर्राष्ट्रीय है तथा परिवहन अन्तर्राष्ट्रीय है केवल मनुष्य के विचारों पर उन मदमातों का शासन है जिनका कोई अर्थ नहीं रह गया है। कोई राष्ट्र वास्तव में स्वाधीन नहीं है, सभी एक दूसरे पर निर्भर हैं।''

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने नेहरू जी की अन्तर्राष्ट्रीयता को समझा था। इस सम्बंध में उन्होंने अपना विचार व्यक्त करते हुए कहा था-''विश्व शांति और विश्व संप्रदाय के विचार में नेहरू का बड़ा विश्वास था। उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्य पत्र के प्रति जितनी आस्था दिखायी उतनी शायद ही किसी और ने दिखायी हो।''[1]

पण्डित जी स्वयं को और अपनी सोच को देश की सीमा के अन्दर ही सीमित करना नहीं चाहते थे। उन्होंने 1948 में कहा था कि भारत स्वयं तक ही सीमित नहीं रहेगा, बल्कि वह अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की स्थापना में पूर्ण सहयोग देगा। गुट-निरपेक्षता आन्दोलन में भारत की भूमिका, संयुक्त राष्ट्र संघ शांति सेना में भारत का योगदान पंचशील के सिद्धान्त और भारत की कई ऐसी ही भूमिकाओं ने नेहरू जी के उपरोक्त विचारों को सिद्ध भी कर दिया है।

नेहरू जी अन्तर्राष्ट्रीयवाद के समर्थक थे परन्तु उनका यह मानना था कि प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक स्पष्ट विदेश नीति होनी चाहिए। बिना स्पष्ट नीति के कोई राष्ट्र विश्व राजनीति में अपना स्थान नहीं बना सकता। उनका यह भी मानना था कि प्रत्येक देश अपनी विदेश नीति को सर्वप्रथम राष्ट्रीय हितों एवं सुरक्षा को ध्यान में रखकर निर्धारित करता है। उन्होंने कई अवसरों पर कहा कि, ''मैंने स्वाभाविक रूप से भारत के हितों को देखा क्योंकि यह मेरा पहला कर्त्तव्य है।'' उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है, ''एक राष्ट्र साम्राज्यवादी या समाजवादी या साम्यवादी हो, परन्तु उसका विदेश मंत्री अपने देश के हितों को प्राथमिकता देता है।

नेहरू जी के अधीन भारतीय विदेश नीति का प्राथमिक तथा अभिभावी उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को बनाये रखना था। उनका मानना था कि भारतीय विदेश नीति का प्रमुख आधार यह है कि हम किसी भी शक्ति के, चाहे वह कितनी ही समृद्ध अथवा सबल हो, अंधे अनुचर नहीं बन सकते। जहाँ तक अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की बात है उसको बनाये रखने में हमारी रुचि समान रूप से है।

पण्डित जी की विदेश नीति सार्वभौमिक थी। यह नीति तत्कालीन भारतीय परिस्थितियों, भारत के मानसिक दृष्टिकोण,

पण्डित जी की विदेश नीति सार्वभौमिक थी। यह नीति तत्कालीन भारतीय परिस्थितियों, भारत के मानसिक दृष्टिकोण, स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान भारतीयों के दृष्टिकोण तथा विश्व की परिस्थितियों की देन थी। नेहरू जी की विदेश नीति के अन्तर्गत उपनिवेशवाद एवं गुटवाद का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विरोध करना तथा शोषित जन में एकता स्थापित करने को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। 1949 के एशियाई सम्मेलन में नेहरू जी ने हालैण्ड के साम्राज्यवाद के विस्तार की कार्यवाही की निंदा करते हुए यह कहा था कि ''यह बड़ा तथा बेशर्मीपूर्ण आक्रमण है।''

स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान भारतीयों के दृष्टिकोण तथा विश्व की परिस्थितियों की देन थी। नेहरू जी की विदेश नीति के अन्तर्गत उपनिवेशवाद एवं गुटवाद का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विरोध करना तथा शोषित जन में एकता स्थापित करने को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। 1949 के एशियाई सम्मेलन में नेहरू जी ने हालैण्ड के साम्राज्यवाद के विस्तार की कार्यवाही की निंदा करते हुए यह कहा था कि ''यह बड़ा तथा बेशर्मीपूर्ण आक्रमण है।'' उसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ में उन्होंने दक्षिण अफ्रीका सरकार द्वारा अपनायी जाने वाली जातीय संकीर्णता की भावना को उठाया। इनसे एशिया और अफ्रीका के देशों में नस्लवाद के विरूद्ध जागृति फैली।

इसी प्रकार गुटवाद का विरोध करते हुए 1949 में ही नेहरू जी ने कहा था ''हजारों ओर से किसी गुट विशेष में जाने का प्रयास हमारे राष्ट्र के लिए समस्यायें उत्पन्न करना है, उनका कहना था कि गुटों की राजनीति में शामिल न होना देश के हित में है।''[2]

नेहरू जी विश्व के समस्त राष्ट्रों से मित्रवत् सम्बन्ध रखने के पक्षधर थे उन्होंने 1955 में बाडुँग सम्मेलन में एशिया एवं अफ्रीका के स्वतंत्र देशों के प्रतिनिधियों के समक्ष यह उद्‌गार व्यक्त किया था-''हम अतीत में काफी कुछ कर चुके हैं। हम महान् राष्ट्रों की मित्रता का सम्मान करते हैं। यदि मुझे अपनी भूमिका निभानी पड़े तो मैं यह कहूँगा कि हम विश्व के सभी महान् देशों के साथ, भले ही ऐसे देश यूरोप में हों, अथवा अमेरिका में भाई-चारे का सम्बन्ध स्थापित करेंगे।''[3]

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् सम्पूर्ण विश्व दो गुटों में बंट गया था एक गुट का नेतृत्व अमरीका कर रहा था तथा दूसरे का सोवियत रूस। परन्तु भारत ने इन दोनों गुटों से स्वयं को अलग रखा तथा अन्य राष्ट्रों को भी गुटों से तटस्थ रहने का आग्रह किया। वैसे तो गुट निरपेक्षता भारत के उस आदर्श की राजनीतिक अभिव्यक्ति रही है जो 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का संदेश देता काफी समय से चला आ रहा है। परन्तु इस नीति में नेहरू की भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। नेहरूजी को संयुक्त राष्ट्रसंघ के आदर्शों में गहरा विश्वास था। वे विश्व-राजनीति के ध्रुवीकरण के कटर विरोधी थे, और शायद उनकी इसी भावना ने भारत को शक्तिशाली राष्ट्रों के किसी भी गुट में शामिल होने से बचा लिया। नेहरू जी का अग्रलिखित विचार उनकी मान्यताओं को और भी स्पष्ट करती हैं - "मैं ऐसा मसीहा नहीं हूँ जो यह जानता हो कि आगे क्या होगा, परन्तु मैं यह जानता हूँ कि जो शांति चाहते हैं उन्हें अवश्य पृथक गुटों की निंदा करनी चाहिए। भारत ने, जहां तक इसकी एक विदेश नीति है, यह घोषणा की है कि यह स्वतन्त्र रहना चाहता है और इन सब गुटों से मुक्त रहना चाहता है और इन सब देशों के साथ बराबरी के दर्जे पर सहयोग करना चाहता है।''[4]

इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि नेहरू जी ने गुट निरपेक्षता की जो नीति अपनायी उसके सैद्धांतिक तथा व्यवहारिक कारण थे और वे कारण आज भी हैं। वस्तुतः वे यह बखूबी जानते थे कि भारत एक नवोदित राष्ट्रीय राज्य है। उसे अपनी शक्ति सामाजिक एवं आर्थिक विकास के कार्यों में खर्च करनी है। शक्तिशाली राष्ट्रों के गुटों में शामिल होकर नेहरू भारत के अस्तित्व पर कोई प्रश्नचिन्ह नहीं लगाना चाहते थे। ऐसी स्थितियों में स्वाभाविक रूप से गुटनिरपेक्षता एक सार्थक नीति है।

नेहरू जी ने अपनी इस नीति को व्यवहार में लाकर भी दिखा दिया। आज विश्व के सौ से भी अधिक देशों को जो गुट-निरपेक्ष आन्दोलन (नाम) है उसकी शुरुआत करने में नेहरू जी की भूमिका अहम थी। यही कारण है कि भारत इस संगठन का नेतृत्व कर रहा है।

हम नेहरू के अन्तर्राष्ट्रीयता संबंधी विचारों को पहले ही स्पष्ट कर चुके है। पंचशील का सिद्धान्त भी उसी का एक हिस्सा है। यह स्पष्ट है कि नेहरू का अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का सिद्धान्त मैकियावेलीवाद तथा शक्ति राजनीति की अस्वीकृति पर आधारित है। इसका उद्देश्य है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बल प्रयोग को खत्म नहीं किया जा सकता तो उसे न्यूनतम किया जाये। इसके मूल में यह तथ्य निहित है कि राष्ट्र एक दूसरे की भावनाओं को समझे तथा एक-दूसरे के अधिकारों तथा दावों का शांतिपूर्वक तथा सच्चाई से मूल्यांकन करें।[5]

इन्हीं भावनाओं के आधार पर 29 अप्रैल, 1954 को भारत और चीन के बीच तिब्बत को लेकर एक समझौता हुआ। नेहरू एवं चाऊ-एन-लाई ने अपने एक संयुक्त वक्तव्य में पांच सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, इन्हें ही पंचशील के नाम से जाना जाता है। यह पांच सिद्धान्त हैं :

1. क्षेत्रीय अखंडता तथा सर्व सत्ता का परस्पर आदर,
2. अनाक्रमण,
3. एक दूसरे के आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप,
4. समानता तथा परस्पर लाभ,
5. शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व।

पंचशील के इन सिद्धान्तों का उद्देश्य पारस्परिक विश्वास तथा सुरक्षा की भावना को विकसित करना था। दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने अपने संयुक्त वक्तव्य में कहा भी था-''प्रत्येक देश की प्रादेशिक अखण्डता, सर्वोच्च सत्ता तथा अनाक्रमण का आश्वासन मिल जाने पर विभिन्न देशों के बीच शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व रहेगा और मैत्री सम्बन्ध बढ़ेगे। इससे विश्व में विद्यमान वर्तमान तनाव कम होगा और शांति का वातावरण उत्पन्न होने में सहायता मिलेगी।''यहाँ एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि पंचशील के महत्त्वपूर्ण सिंद्धान्तों को बर्मा, मिस्र, सोवियत संघ क देश, लाओस, कम्बोडिया, इण्डोनेशिया, नेपाल, पोलैण्ड और यूगोस्लाविया ने भी स्वीकार किया है।[6]

पंचशील के आदर्श काफी ऊँचे हैं परन्तु इसके सिद्धान्तों पर कई लोगों द्वारा आपत्तियां भी की गयीं और उसे ऊँचे आदर्शों का कोरा घोषणा-पत्र कहकर इसकी व्यावहारिकता पर संदेह व्यक्त किया गया। परन्तु नेहरूजी ने गंभीरता से काम लेते हुए 29 दिसम्बर, 1954 को स्पष्ट शब्दों में कहा- ''लोगों ने इन सिद्धान्तों की आलोचना की हैं। किस आधार पर? वे कहते हैं कि आप यह कैसे विश्वास करते हैं कि इनका कार्यान्वियन होगा। निःसंदेह, यदि आप किसी बात पर विश्वास नहीं करते तो इसकी चर्चा करने और इसके बारे में लिखने का कोई लाभ नहीं है, और फिर आपके लिए कोई दूसरी बात शेष नहीं रह जाती सिवाय इसके कि आप अकेले रहें और लड़कर दूसरे पक्ष को परास्त करें इसके अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नही हैं। यह दूसरे पक्ष के वचन पर विश्वास करने का प्रश्न नहीं है किन्तु ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करने का प्रश्न है जिसमें दूसरा पक्ष अपने वचन को भंग कर सके। यह संभव है कि दूसरा पक्ष अपने को अधिक विषम परिस्थिति में पाये। यदि विश्व के विभिन्न देश पारस्परिक सम्बन्धों के लिए इन पांच सिद्धान्तों को बार-बार दुहराते हैं तो वे इसके लिए वातावरण उपस्थित करते हैं।''[7]

नेहरू जी को पंचशील के सिद्धान्त पर अटूट विश्वास था। वे अंत तक इस सिद्धान्त का समर्थन करते रहे। उनका कहना था कि, ''यदि वे सिद्धान्त ठीक हैं और हम ऐसा मानते है तो हम इनका पालन करेंगे भले ही दुनिया में कोई वांछनीय न समझे। चाहे कोई दूसरा इन सिद्धान्तों पर आचरण न करे, हमें तो इनका पालन करना ही चाहिए।''

चन्देल कॉटेज विजय नगर, कुसुम्पटी, शिमला-171009
मो. 0 98160 73507

सन्दर्भ

1. जगमोहन मोहन बलोखरा, गान्धी, नेहरू, टैगोर व अम्बेड़कर, एच जी. पब्जिकेशनज, नई दिल्ली, 2014, पृ. 142-143
2. जवाहर लाल नेहरू, इण्डियन फोरन पॉलिसी, नई दिल्ली, 1983, पृ. 65
3. बी.आर.नन्दा, इण्ड़ियन फोरन पॉलिसी, विकास पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1976, पृ.40
4. एम.टी. देसाई, जवाहर लाल नेहरू, रविन्द्र नाथ टैगोर अरविन्द घोष, ए कम्पेरेटिव स्टड़ी इन दीयर इन्टरनेशनाल्जिम, करुणावति हाऊस, अहमदाबाद, 1999, पृ. 104
5. यूरी. नसेनको, जवाहरलाल एण्ड इण्डियनज फोरन पॉलिसी। सेटरलिंग, पब्लिकेशनज 1977, पृ. 8
6. वी.पी. वर्मा, जवाहर लाल नेहरू पंचशील एण्ड इण्डियन कन्सटीचुसन, पृ. 311
7. जवाहर लाल नेहरू, इण्डियन फोरन पॉलिसी, 'पब्लिकेशन डिविजन, 1961, पृ. 77

गणपत सिंह 'मुग्धेश' की कविताएं

टूट जात धैर्य परन

गौर वरन, युवा बदन
चंद्र सा, सुंदर बदन।
करत मोर, हृदय हरन
टूट जात, धैर्य परन।

विधना की, श्रेष्ठ कला
जादू हर, दिशा चला।
मनुज नहीं, मात्र बला
देवन-मन, मचल चला।
मदमाते, श्याम नयन
टूट जात, धैर्य परन।

सुन प्रशंसा, तिहारी
ईर्ष्यावश, सब नारी।
धन्य जगह, वो सारी
तव पग छू, बलिहारी।
कुसुम सम, कोमल चरन।
टूट जात, धैर्य परन।

मस्त अलिकुल से केश
कामबाण, चारू वेश
होय अगर, दरस लेश
दूर सारे, जग-क्लेश
मम सुरग, जीवन मरन
टूट जात, धैर्य परन।

छूटती नहीं जब...

ढूंढ ढूंढ कर सब, धोखा रूगट कपट
दौड़ दौड़ मनुष्य, उन्हें रहा झपट।
कल तलक खूब थी, नेकी प्रीत दया
अब तो जैसे वो, ज़माना ही गया।
ना बची तनिक भी, लिहाज आन हया
बार बार करता, हठ झूठ झट बयां।
छूटती नहीं जब, बुरी नीच नीयत
बैर डाह घुन से, रोगग्रस्त सेहत।
स्पर्श कर चुका जब, बदी की सब हदें
पहुंचा समीप वह, निज नाश की जदें।
अस होने पर भी, हो गई यार हद
नहीं करे अब भी, कोई बदी रद्द।
ना टुक पछताया, उल्टा इतराया
रुके ना अश्रु जब, विकट नरक पाया।
कैसी यह दुनिया, कैसी कलि-काया
न्याय धर्म जिसमें, न अल्प घुस पाया।

सेदरिया-ब्यावर, राजस्थान-305 901,
मो. 0 94607 08360

शोध लेख

दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना

◆ डॉ. सुनीता देवी

राष्ट्रीय कविता क्या है? राष्ट्रीय कविता केवल खून, फाँसी हथकड़ी बेड़ियों की कविता नहीं है। राष्ट्र की प्रत्येक चीज पवित्र है, गौरव की वस्तु है। राष्ट्र को मैं महान् विशाल मानता हूँ। उसे मैं समस्त भूतकाल से लेकर भविष्य काल की नाप से नापता हूँ। ऐसे ही सनातन राष्ट्रवाणी है राष्ट्रीय कविता घुंघरू बांधकर ही मनोरंजन नहीं करती या मधुर आलापों से माधव का गायन ही नहीं करती किन्तु वह युद्ध के प्रभातकाल में लंका कांड का भीषण रूप भी धारण कर लेती है और सैनिकों को बलिपथ पर आमंत्रित करती है।

माखन लाल चतुर्वेदी ने राष्ट्रीय कविता की जो विशेषताएं अपनी उपर्युक्त परिभाषा में दी हैं, दिनकर का समस्त काव्य इन विशेषताओं से ओतप्रोत है। कविता में इनका प्रवेश विद्रोही राष्ट्रकवि के रूप में हुआ। जिस क्रान्ति और राष्ट्रप्रेम की भावना को लेकर दिनकर ने काव्य क्षेत्र में प्रवेश किया, उसे भावात्मक गहनता और वैचारिक उत्कृष्टता के साथ अपने काव्य जीवन में प्रमुख स्थान देते रहे। उन्हें प्रारम्भ से ही विद्रोहों और विरोधों से सहानुभूति रही। लेकिन 'उर्वशी' की रचना के काल में राष्ट्रीय कविता की मूलधारा से अलग हो गए थे। उस समय उन्होंने कहा था कि मैं माचे पर बैठ कर कनस्तर बजाते-बजाते थक गया हूँ और अब कुछ ऐसा लिखना चाहता हूँ जो हृदय की सम्पूर्ण चेतना को तन्मय कर सके पर वे मूल धारा से बहुत समय तक अलग नहीं रह सके देश पर चीनी आक्रमण हुआ इसी समय उनकी 'परशुराम की प्रतीक्षा' रचना प्रकाशित हुई जिसके सम्बन्ध में माखनलाल चतुर्वेदी ने कहा है, "इस कविता में तपन है, ज्वाला है और वर्तमान युग के लिए क्या नहीं है। दिनकर को इसी रूप में देखना चाहता था। वह इस युग की ज्वालमाला है। इस पुस्तक का दिनकर हिमालय को और उसके माध्यम से राष्ट्र और संस्कृति को प्यार करने वाला दिनकर है। जैसी गति है वैसी कृति है, वैसा ही दिनकर ब्रती है।"[2]

राष्ट्रप्रेम का आवेगपूर्ण ओजस्वी स्वर कवि हृदय से ऐसे फूटा जैसे पर्वत-वक्ष से निर्झर फूटता है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में वे कलम वीर के रूप में उभरे, युवा स्वतंत्रता सेनानियों के लिए इनकी कविताएं पार्थेय बनीं। अत्याचारी अंग्रेजी सत्ता के द्वारा जब-जब हमारा मुक्ति आन्दोलन निर्ममता से कुचला गया। जन नायक काराबद्ध किए। मुक्ति यज्ञ की अग्नि मंद प्रतीत हुई- दिनकर ने आगे बढ़कर आन्दोलनकारी जनता को अपनी कविताओं के अग्निबाण थमाए, उनमें नई आशा का संचार किया। 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के दमन के बाद देशवासियों में पसरती निराशा को निरस्त करते हुए नई उम्मीदें जगाई कवि कथन धातव्य है-

"वह प्रदीप जो दीख रहा है झिलमिल दूर नहीं है,
थक्कर बैठ गए क्या भाई। मंजिल दूर नहीं है।
आकर इतना पास फिरे वह सच्चा शूर नहीं है।"[3]

आजादी की लड़ाई के उन सूरमाओं से दिनकर का मन मिलता था जो पवित्र साध्य की प्राप्ति के लिए साधन की पवित्रता का ख्याल नहीं रखते थे। गांधी जी के जादुई व्यक्तित्व के प्रति श्रद्धानत रहते हुए भी उनका युवा मन अहिंसा और सत्याग्रह के आकर्षण में नहीं बंध पाता था, बल्कि सहज रूप से तिलक, सुभाष, आजाद और भगतसिंह के शौर्य का अनुरागी था। बकौल विजेन्द्र नारायण सिंह, "दिनकर की राष्ट्रीयता गांधीवादी चेतना की देन नहीं है वरन् उस समय जो लोग हथियार उठाकर अंग्रेजों से लड़ रहे थे वे ही दिनकर की राष्ट्रीयता और तजन्य क्रान्तिकारी कविताओं के उत्स है।"[4]

'हिमालय' शीर्षक कविता ने दिनकर की ख्याति के तुंग शिखर पर आसीन किया। इस कविता में 'नरमपंथ' से दूरी और 'गरमपंथ' से निकटता अर्थात् हिंसात्मक मार्ग में श्रद्धा को स्पष्ट अभिव्यक्ति देते हुए लिखा-

"रे रोक युद्धिष्ठिर को न यहाँ, जाने दे उनको स्वर्ग धीर,
पर फिरा हमें गांडीव-गदा, लौटा दे अर्जुन-भीम वीर"[5],

दिनकर के काव्य का शक्ति केन्द्र राष्ट्रीय चेतना है। उन्होंने अपने काव्य जीवन के प्रारम्भ से ही देश की प्रत्येक धड़कन को पहचाना है उन्हें जन चेतना को स्पन्दित करने वाली छोटी से छोटी घटना ने स्पन्दित किया है और उन्होंने अपनी भावना की ऊष्मा से तप्त कर उसे वाणी दी है।

सन् 1942 ई0 में कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो' का नारा दिया। देश की साम्यवादी पार्टी ने कांग्रेस का साथ न देकर अंग्रेजों का साथ दिया। राष्ट्रीय नेता जेल में बन्द हो गए दिनकर ने 'दिल्ली और मास्को' कविता में देश की व्यथा को व्यक्त करते हुए कहा

"दहक रही मिट्टी स्वदेश की, खौल रहा गंगा का पानी,
प्राचीरो में गरज रही है, जंजीरो में कसी जबानी"[6]

दिनकर की अपने देशवासियों के प्रति अशेष प्रीति राष्ट्रीय चेतना को विशेष दीप्ति प्रदान करती है भारतीय जनता के लिए राजनीतिक आजादी के साथ ही वे आर्थिक आजादी और सामाजिक समता हासिल करना चाहते हैं।

"दबी सी आग हूँ भीषण क्षुधा की, दलित का मौन हाहाकर हूँ मैं,
सजग संसार, तू निज को संभाले, प्रलय का क्षुब्ध पारावार हूँ मैं।"[7]

हिन्दी साहित्य के इतिहास के वीरगाथा काल के अनेक कवियों ने और रीतिकाल के भूषण आदि ने मरने-मारने का ओजस्वी शैली में वर्णन किया है। दिनकर की 'परशुराम की प्रतीक्षा' नामक रचना उन्हीं कवियों की स्मृति कराती है-

"झंझा झकोर पर बढ़ो मस्त झूलो रे,
वृन्दों पर बन पावक प्रसून फूलो रे
दाएँ-बाएँ का द्वन्द्व आज भूलो रे,
सामने पड़े जो शत्रु शूल हूलो रे।"[8]

इसी संग्रह में 'लोहे के मर्द' कविता संग्रहीत है जिसमें सीमा पर संकट में जूझने वाले जवान पुष्पों और दीपों से स्वागत की आकांक्षा नहीं करते और न फूलों के हार चाहते हैं। इन घायल देश के लिए तड़पने वालों में यह इच्छा ही क्यों जागेगी। देश की मर्यादा बचाने वाले यश नहीं, शक्ति चाहते हैं, जिससे देश की आन की रक्षा हो सके-

"तड़प रही घायल स्वदेश की शान है,
सीमा पर संकट में हिन्दुस्तान है।"[9]

दिनकर ने कलम, आज उनकी जय बोल, किसको नमन करूं मैं, आदि कतिवाओं में आदर्शो के लिए अपने प्राणों को अर्पित करने वाले महापुरूषों के प्रति श्रद्धा अर्पित की है। राष्ट्रकवि यथास्थिति के समर्थक नहीं होते। उनमें देश को सतत् प्रगति के पथ पर ले जाने के लिए अदम्य लालसा होती है दिनकर के काव्य में सतत् आगे बढ़ने की छटपटाहट विद्यमान हैः

"जिन्दगी वहीं तक नहीं ध्वजा जिस जगह विगत युग ने गाड़ी,
मालूम किसी को नहीं अनागत नर की दुविधाएं सारी।"[10]

दिनकर के राष्ट्रप्रेम ने ही उन्हें वीर पूजक बना दिया राष्ट्रकवत वीर पूजक होते हैं। दिनकर के लिए वीर पुरुष प्रणम्य हैं :

"जिस युग में, जिस देश जाति या कुल में,
वर्तमान में या भविष्य गुहर में
पुरूष विक्रमी हो, वह जहां कहीं भी है
नमस्य मेरा वह सीस मुकुट सा"[11]

दिनकर आदि से अंत तक द्वन्द के कवि रहे हैं, शंकाओं और उद्वेलन के कवि रहे हैं। समाधान कभी भी उनके वश की बात नहीं हो सकी है। उनके काव्य में प्रस्फुटित ये द्वन्द उनके जीवन और व्यक्तित्व की विविध दिशाओं से संचित होते रहे हैं। ये दिशाएं हैं, "उनकी शृंगारिक रुचि और पौरूष के बीच में द्वन्द की, वचन और कर्म के बीच के पार्थक्य की, काम और अध्यात्म के चिंतन की, कोमलता और कठोरता के बीच समन्वय की, स्थूल और सूक्ष्म के बीच की, अस्तिकता एवं नास्तिकता के अन्तर्द्वन्द की, हृदय और बुद्धि के बीच संघर्ष की। ये द्वन्द सामाजिकता, देशभक्ति, मानवीय करुणा, प्रणय-घृणा, राग-द्वेष आदि कारणों से दिनकर के काव्य में पनपते आये हैं। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में, "दिनकर द्वन्द्व का कवि है, समाहित का कवि नहीं है।"[12] वस्तुतः यही कवि दिनकर की अस्मिता की विशिष्ट पहचान और हिन्दी कविता की उपलब्धि है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि दिनकर आधुनिक युग की राष्ट्रीय काव्यधारा के प्रमुख कवि है। वे चार दशक तक राष्ट्रीय काव्य लिखते रहे। उनकी राष्ट्रीयता केवल उद्बोधन और प्रेरणा तक सीमित नहीं, आदर्शों के प्रति आस्था, पतितों के प्रति सहानुभूति, प्रगति की कामना, सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति आस्था उनकी राष्ट्रीय भावना के अभिन्न अंग हैं।

हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल, शिमला-171 005

संदर्भ सूची

1 छोटे लाल दीक्षित, दिनकर का रचना संसार, पृ. 56
2 वही पृ. 57
3 सतीश कुमार राय, दिनकर चिन्तन-अनुचिन्तन, पृ. 55
4 वही, पृ. 56
5 रामधारी सिंह दिनकर, रेणुका, पृ. 7
6 रामधारी सिंह दिनकर, हुंकार, पृ. 15
7 रामधारी सिंह दिनकर, इतिहास के आँसू, पृ. 19
8 रामधारी सिंह दिनकर, परशुराम की प्रतीक्षा, पृ. 23
9 वही, पृ. 25
10 छोटे लाल दीक्षित, दिनकर का रचना संसार, पृ. 65
11 रामधारी सिंह दिनकर, नील कुसुम, पृ. 120
12 सतीश कुमार राय, दिनकर चिन्तन-अनुचिन्तन, पृ. 57

एक मुलाकात

श्रीनिवास जोशी
साहित्य और रंगमंच का पारखी

◆ आरती सूद गुप्ता

कई बार जिंदगी में आपका साक्षात्कार कुछ ऐसे लोगों के साथ होता है जो अपने करिश्माई व्यक्तित्व के कारण ताउम्र आपके दिलोदिमाग पर छाए रहते हैं। उनके व्यक्तित्व की विशिष्टताएं बार-बार मानस पटल पर हिलोरे मारती रहती हैं। उनका व्यक्तित्व, चरित्र और स्वभाव आपको इस तरह प्रभावित करते हैं कि उनसे बार-बार मिलने और बतियाने का मन करता है। ऐसी ही एक खास शख्सीयत का नाम है श्रीनिवास जोशी। हिमाचल में साहित्य एवं रंगमंच का जाना-पहचाना चेहरा। शिमला के मॉल रोड व लोअर बाजार में चहलकदमी करते देखे जा सकते हैं। चेहरे पर मंद मुस्कान लिए यह शख्स अपने व्यक्तित्व के अनुरूप ही हर किसी को प्रभावित करता है। अस्सी वर्ष की आयु पूर्ण होने के बावजूद भी उनका रौबिला अंदाज आज भी कायम है।

श्री श्रीनिवास जोशी एक ऐसा नाम है जो किसी के परिचय का मोहताज नहीं है। प्रशासनिक निपुणता के साथ-साथ लेखन व रंगमंच को लेकर उनकी समझ ही उन्हें विशिष्ट बनाती है। कविता, कहानी, नाटक या किस्सागोई में उनका कोई सानी नहीं है। उनके जीवन के अनछुए पहलुओं को जानने व उनसे रूबरू होने की मेरे मन में काफी अर्से से जिज्ञासा थी। मौक़ा मिलते ही उनसे पूछे कुछ सवाल, जो पेश हैं उन्हीं की जुबानी...?

आरती : उम्र के इस पड़ाव में भी आप इतने ऊर्जावान और चुस्त-दुरुस्त रहते हैं, इसका क्या राज है?

श्री जोशी : पैदल चलना। जब अकेला होता हूं तब मैं अन्य व्यक्तियों के मुकाबले कुछ तेज़ चलता हूं। अंग्रेज़ी में कहते हैं कि Age is just a number। मैं आयु को यही मानता हूं। मैं समझता हूं कि 80 वर्ष की आयु पूरी कर लेने के उपरान्त पैदल चलने से बेहतर कोई व्यायाम नहीं है। एक सूक्ति है, ''मेरे दो डाक्टर हैं - मेरी बांई टांग और मेरी दाईं टांग।'' मैं इन डाक्टरों का पूरा इस्तेमाल करता हूं। आजकल भी दिन में लगभग 12 से 15 किलोमीटर चलता हूं।

आरती : आपने आरंभिक और उच्च शिक्षा कहां से प्राप्त की। पढ़ाई के साथ-साथ अन्य पाठ्येतर गतिविधियों में भी आप काफी शौक रखते थे। इसके बारे में कुछ बताना चाहेंगे?

श्री जोशी : हायर सैकेन्डरी परीक्षा दिल्ली से पास करने के बाद कॉलेज में पढ़ने के लिए शिमला चला आया। सनातन धर्म कॉलेज, जो आज राजकीय कन्या महाविद्यालय है, से विज्ञान विषयों में इन्टरमिडिएट पास करने के उपरान्त स्नातक शिक्षा के लिए मैंने विषय चुने- फ़िजिक्स, हिसाब और अंग्रेज़ी। स्नातकोत्तर मैंने राजनीति शास्त्र तथा अर्थशास्त्र में किया। कोलकाता के भारतीय सांख्यिकी संस्थान से सांख्यिकी में एक सर्टिफ़िकेट कोर्स किया है। विज्ञान का विद्यार्थी होने के उपरान्त केवल जिज्ञासा हेतु कि अर्थशास्त्र होता क्या है, मैंने स्नातक होने के बाद निजी तौर पर अर्थशास्त्र में बी.ए. की परीक्षा दी जिसे मैंने अच्छे अंकों में पास किया। इसी आधार पर मेरा चयन हि. प्र. के शिक्षा विभाग में सांख्यिकी सहायक के पद पर हो गया। अब सांख्यिकी में आगे बढ़ना हो तो अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर डिग्री होना ज़रूरी है। मेरे पास राजनीति शास्त्र की एम.ए. की डिग्री थी। इस लिए निजी विद्यार्थी की हैसियत से मैंने पंजाबी विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर किया और कोलकाता का सर्टिफ़िकेट कोर्स किया। विभाग में मेरी पदोन्नति भी हुई और मैं सांख्यिक के पद पर प्रोन्नत हो गया।

पढ़ाई के साथ-साथ मैं खेलों और पाठ्येतर (extra-curricular) गतिविधियों में खूब भाग लेता था। क्रिकेट, बैडमिन्टन, नाटक, वाद-विवाद प्रतियोगिता में कॉलेज के लिए मैंने अपना श्रेष्ठ योगदान देने का प्रयास किया। कॉलेज के बाद मैं राज्य की क्रिकेट टीम में था और राज्य को तब रणजी ट्रॉफी का स्टेटस न

मिलने के कारण हिमाचल प्रदेश 'कटोच शील्ड' के लिए खेला करता था और इसी शील्ड के लिए राज्य की टीम चुनी जाती थी।

आरती : नाटकों की ओर रुझान कैसे हुआ?

श्री जोशी : नाटकों के प्रति रुझान विरासत में मिला। हमारे घर में ताऊजी, पिताजी, चाचाजी सभी ए.डी.सी. के सदस्य थे और भराड़ी में बाहर मंच बना कर बड़े-बड़े धर्मिक नाटक किया करते थे, जैसे भक्त प्रह्लाद आदि। बचपन से हमने उन्हें देखा था। स्कूलों में मैं नाटकों में भाग लेने लगा था पर मुझे सदा छोटे रोल ही मिलते थे क्योंकि मैं शर्मीला लड़का था और झिझक के कारण अपनी प्रतिभा को आगे लाने में कतराता था। मैं तब दिल्ली में नवीं कक्षा में पढ़ रहा था जब मुझे 'थ्री आर्ट्स क्लब' के रमेश मेहता द्वारा लिखित नाटक 'दहेज' में एक बच्चे के छोटे से रोल को खेलने का निमंत्रण प्राप्त हुआ। बावजूद झिझक के मैंने रोल स्वीकार कर लिया। छोटा सा रोल होने के बावजूद दर्शकों ने मेरी पीठ थपथपाई थी, इससे प्रेरणा मिली। शिमला में कॉलेज में मैंने सबसे पहले एक अंग्रेज़ी नाटक 'husband for breakfast' किया। एक प्रतियोगिता में दूसरा नाटक हिन्दी का था, नाम याद नहीं है, जिसमें मुझे सर्वोत्तम कलाकार का सम्मान प्राप्त हुआ जिसे तत्कालीन फ़िल्म अभिनेता आई. एस. जौहर ने दिया था। उसके बाद से न जाने कितने नाटक किए और आकाशवाणी खुलने के बाद वहां का मैं 'ए' श्रेणी का अभिनेता आज तक हूं। रेडियो नाटकों पर मेरी एक पुस्तक है -'हम नहीं सुधरेंगे'।

आरती : प्रशासनिक सेवा में कब आए और कला के साथ कैसे तारतम्य बिठाते हुए आगे बढ़े?

श्री जोशी : जब 1974 में मैं सांख्यिक के पद पर शिक्षा विभाग में कार्यरत था तभी राज्य में प्रथम बार हि.प्र. प्रशासनिक सेवा के अवसर खुले। हज़ारों प्रतिभागियों के साथ मैं भी परीक्षा में बैठा और एच.ए.एस. के लिए चुने गए आठ में से एक मैं भी था। प्रथम बार में ही निकल जाने के कारण 1983 में ही मेरी पदोन्नति भारतीय प्रशासनिक सेवा में भी हो गई।

पहले जो मैं स्वयं नाटक करता था वह तो लगभग समाप्त हो गया परन्तु अपने पदों का सदुपयोग कर मैंने हर प्रकार की कला को प्रोत्साहित किया। कई थिएटर कार्यशालाएं लगवाईं जिनकी वजह से आज हिमाचली युवा अपना नाम बॉलीवुड या टेलिविज़न में कमा रहे हैं।

मेरी एक पोस्टिंग निदेशक, भाषा एवं संस्कृति विभाग रही है। आज तक भी कई लोग मुझे इस पद के नाते जानते हैं। कारण 1980 से 1984 तक मुख्य मंत्री तथा उच्च अधिकारियों के वरद-हस्त के कारण साहित्य से लेकर मंचीय अथवा ललित कला को खूब प्रोत्साहन मिला और पुरातत्व, संग्रहालय और लेखागार में भी बढ़ोतरी और बेहतरी हुई। हिमाचल का नाम कला जगत् में मध्य प्रदेश के पश्चात दूसरे नम्बर पर लिया जाने लगा। मुझे प्रसन्नता है कि मेरे बाद आने वाले निदेशकों ने भी वही मार्ग अपनाया जो मैंने तब खोजा था। इसी दौरान मुझे रचना-लेखन का अवसर मिला और महाराज कृष्ण काव की अध्यक्षता में हमने मिलकर केशव नारायण, तुलसी रमण, रेखा वशिष्ठ, आर.सी. शर्मा, श्रीनिवास श्रीकांत, एस.एन.वर्मा और के.सी. शर्मा के साथ मिलकर 'शिखर' नाम का एक साहित्यिक मंच बनाया जिसकी गोष्ठी माह में एक दिन हुआ करती थी और हर व्यक्ति को अपनी मौलिक रचना उसमें सुनानी पड़ती थी। इस प्रकार लेखन में रुचि बढ़ी और इनमें से कई लेखकों की पुस्तकें भी प्रकाशित हुईं। मेरी कहानी की पुस्तक 'घुघुतिया' उसी का परिणाम है।

आरती : आपकी पुस्तकें 'घुघुतिया', 'बाबूडम बॉश' आदि बाज़ार में उपलब्ध हैं। निकट भविष्य में भी क्या कोई पुस्तक पाठकों तक पहुंचेगी?

श्री जोशी : दो पुस्तकों के नाम आपने लिए हैं। 'हम नहीं सुधरेंगे' की चर्चा मैं पहले कर चुका हूं। नेशनल बुक ट्रस्ट ने मेरी तीन पुस्तकें नव-साक्षरों के लिए छापी हैं जिनमें से एक 'सुन्नी-भुंकु' है। 'Health Communication' तथा 'स्वयं सहायता समूह, क्यों? और कैसे?' मेरी पुस्तकें आम लोगों की जानकारी के लिए हैं। 'कथांतर', 'पांच सपने' कहानियों की तथा 'Nascent Warmth' अंग्रेज़ी कविताओं की मेरे द्वारा संपादित पुस्तकें हैं। जितनी कहानियां मेरी अभी तक विभिन्न पत्रिकाओं में छप चुकीं हैं, उनसे एक और कहानी संग्रह और एक संग्रह मेरे निबन्धों पर निकालने की योजना है। मेरे The Tribune में प्रति सोमवार 'वियनट्स' आते हैं। उन्हें संकलित कर मैं दो संग्रह 'Himachal thorugh my Eyes' और 'Shimla- From Raj to Swaraj' नाम से प्रकाशित करवाने की योजना है।

आरती : : कुछ स्वैच्छिक संस्थाओं से भी आप जुड़े हैं, जो सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरण सम्बन्धी कार्यों में रत हैं। कितना और कैसा बदलाव लाने में आप सफल रहे हैं?

श्री जोशी : मैं हिमाचल प्रदेश वालंटरी हैल्थ एसोसिएशन का अवैतनिक परामर्शी हूं। इस संस्था के साथ मिल कर हमने धूम्रपान रहित हिमाचल की एक मुहिम छेड़ी थी। इसके लिए हमने 50 से अधिक विकास खण्डों का दौरा किया, पंचायतों की ग्राम सभाओं में शिरकत की, स्कूलों और कॉलेजों में गए और नतीजा निकला कि 3 जुलाई, 2013 को पूरे हिमाचल को धूम्रपान रहित घोषित कर दिया गया। धूम्रपान रहित का अर्थ होता है कि सार्वजनिक स्थलों और कार्यस्थलों में धूम्रपान नहीं हो रहा है। आज रेस्टॉरेन्ट्स में सिगरेट नहीं पी जाती है, बसों में सिगरेट नहीं पी जाती है, इससे आम लोगों को बड़ा सुकून मिला है।

एक और संस्था है - सेजिज़ (Shimla Amateur Garden and Environment Society)। यह अपने उद्देश्य 'हराभरा शिमला : स्वच्छ शिमला' को ले कर आगे बढ़ रही है।

हमारा मानना है कि यदि आप किसी स्थान को हरा-भरा कर दें तो लोग वहां कूड़ा कचरा नहीं फेंकेंगे। ऐसा होता है, आप स्वयं यह कर के देखें। किसी गन्दगी भरे स्थान को साफ़ कर वहां फूल-पौधे लगा दें। लोग स्वयं उस स्थान पर कचरा नहीं फेंकेंगे। दूसरा उद्देश्य लोगों को फूलों से प्यार करना सिखाना है। हमने यह पाया कि शिमला में उन लोगों की संख्या बढ़ी है जो फूलों से प्यार करने लगे हैं। इसका एक पैमाना यह है कि हमारी वार्षिक पुष्प प्रदर्शनी में जो फूल-पौधों और उनसे जुड़ी सामग्री बेचते हैं, वे अच्छी कमाई करते हैं। तीसरा उद्देश्य लोगों को शिमला के किसी प्राकृतिक छटा वाले स्थान पर भ्रमण के लिए ले जाना है। इसमें हम स्कूल के बच्चों को भी ले जाते हैं और उन्हें उस जगह उगने वाले पौधों और वहां बसने वाले जीव-जन्तुओं के बारे में बताते हैं।

चौथा उद्देश्य स्कूलों में जाकर वहां बच्चों को फूलों के बारे में ज्ञान बांटना है ताकि बचपन से ही उन्हें फूलों से प्यार हो। इस का परिणाम हमें नज़र आता है जब हम बच्चों का अपने पुष्प उत्सव में 'Identify the Flower' टेस्ट लेते हैं।

आरती : शिमला के रंगमंच से आप शैशवकाल से जुड़े रहे है। बरसों बाद शिमला रंगमंच को आज कहां पाते हैं और कैसे बदलाव की आवश्यकता है?

श्री जोशी : आम धारणा के विपरीत मैं कहूंगा कि रंगमंच पीछे नहीं गया है, आगे बढ़ा है। हां, जो बदलाव आए हैं उनका ज़िक्र करना भी आवश्यक है। पहले, कलाकार निःशुल्क नाटकों में भाग लेते थे। अब हर कलाकार मांग रखता है कि उसे नाटक में भाग लेने के लिए कुछ राशि दी जाए। एक प्रकार से amateurism समाप्त हो गया है। दूसरे, नाटक के निर्देशक की पहले पहचान होती थी और उसे बहुत मान दिया जाता था, अब ऐसा नहीं है। शिमला में या हिमाचल प्रदेश में नाटकों का स्तर बेहतर बनाने के लिए बदलाव की ज़रूरत है कि वर्ष में एक बार संगीत नाटक अकादमी द्वारा दिल्ली में रंग महोत्सव किया जाता है जिसमें देश प्रदेश के चुनिन्दा नाटक प्रस्तुत किए जाते हैं। इन्हें देखने के लिए हिमाचल प्रदेश के नाटक-निर्देशकों को, स्कूलों और कॉलेजों के उन अध्यापकों को जो इन संस्थानों में नाटक करवा रहे हैं, वहां भेजा जाए ताकि उन्हें पता लगे कि mainstream में कैसे नाटक हो रहे हैं। निस्सन्देह इससे हमारे नाटकों का स्तर सुधरेगा और ख़र्च भी बहुत अधिक नहीं आएगा।

यहां जो हिमरंग महोत्सव करवाया जाता है जिसमें लगभग हर ज़िले से एक नाटक आता है, उसमें यह बाध्य किया जाना आवश्यक है कि नाटक किसी स्थापित नाटककार का हो। भाषा और संस्कृति विभाग का सहयोग, एक रिहर्सल रूम की व्यवस्था और गेयटी थिएटर का इस विभाग के पास आ जाने के कारण नाटकों को बढ़ावा मिला है। पिछले तीन वर्षों से विभाग मनोहर सिंह स्मृति नाट्य समारोह मना रहा है जिससे शिमला की जनता देश में खेले जा रहे नाटकों से रूबरू हो रही है।

आरती : आज की पीढ़ी का पठन-पाठन की ओर रुझान बहुत कम हो गया है। न्यू मीडिया के दौर में मूल्य और संस्कार विहीन हो रहा है मनुष्य। क्या किया जाए कि हम संस्कृति और मूल्यों से जुड़े रह कर तरक्की की राह पर चलें?

श्री जोशी : इस प्रश्न का उत्तर गांवों और शहरों को अलग अलग कर देना होगा। गांवों में पहले रामायण, भागवत आदि पढ़ी जाती थी या फिर हिन्दी के समाचार पत्र। हिन्दी के समाचार पत्रों को पढ़ने में बढ़ोतरी हुई है। आज अनेक हिन्दी के समाचार पत्र निकल रहे हैं और गांवों में भी बिक रहे हैं। युवा वर्ग में निसन्देह रामायण आदि का पठन-पाठन घटा है। टीवी की पहुंच से पढ़ाई पर प्रभाव पड़ा है। पर टीवी के कारण ही आज गांव का युवक पहले की तुलना में अधिक तेज़-तर्रार हो गया है। एक सर्वेक्षण के अनुसार गांवों में महिला विद्यार्थी पुरुष विद्यार्थियों से अधिक पढ़तीं हैं। हालांकि वे कोर्स की पुस्तकें परीक्षा पास करने की नियत से पढ़तीं हैं। स्वाध्याय के लिए कोर्स के बाहर की पुस्तकें नहीं पढ़तीं हैं। शहरों में स्थिति भिन्न है। हिन्दी की पुस्तकों का पठन निश्चय ही कम हुआ है हालांकि हिन्दी पुस्तकें ही भारत में सबसे अधिक संख्या में छप रहीं हैं। पर हिन्दी के समाचार पत्रों या पत्रिकाओं की बिक्री बढ़ी है। अंग्रेज़ी में लिखने वाले भारतीय, चेतन भगत, अमीश या अदीगा की किताबें पढ़ी जा रहीं हैं। रोलिंग की हैरी पौटर को पढ़ने के लिए कॉन्वेन्ट स्कूल के बच्चे आतुर रहते हैं।

मैं समझता हूं कि यहां भी 'Catch them Young' वाला फ़ार्मूला अपनाना होगा। बच्चे के स्कूल में भर्ती होते ही एक पीरियड लाईब्रेरी का रखना चाहिए जहां एक प्रशिक्षित लायब्रेरियन पुस्तक चयन तथा पठन में बच्चों का मार्गदर्शक बने।

आरती : आज की पीढ़ी को क्या संदेश देना चाहेंगे?

श्री जोशी : परिवार के साथ समय ज़रूर बिताओ। मां-बाप के साथ बैठो, उनके साथ बातें करो, युवा शायद नहीं जानते कि अपने बुजुर्गों से बातें कर वे उन्हें कितना सुकून देते हैं और मान भी लें कि युवा कुछ नया नहीं सीखते हैं पर वे उनके अनुभवों से कुछ न कुछ पाते अवश्य हैं। दूसरे, महात्मा गांधी के शब्द याद रखें 'जिओ ऐसे कि कल का दिन आपका अन्तिम है और पढ़ो ऐसे कि आपने अभी हज़ार वर्ष और जीना है।' तीसरे, याद रखें और जीवन में उतारें गीता का यह श्लोक, ''उद्धरेदात्मनातमान नात्मानमवसादयेत।/ आत्मैव ह्यत्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः''

''निज से करे उद्धार निज, निज को न गिरने दे कभी। नर आप ही है शत्रु अपना, आप ही है मित्र भी।''

संयुक्त निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, शिमला-2

कहानी

गोल्डी के लिए केवल

◆ त्रिलोक मेहरा

यह कस्बा फाटकों के शहर की शक्ल ले रहा था। पगडंडियां सड़कें बन गई थीं और फाटक खुलने-बंद होने में व्यस्त थे। साईकिल, स्कूटर, मोटर साईकिल, और कारें घूं करती घरों के दोनों तरफ फाटकों को गिनती हुई निकल जातीं। कस्बे के उस बदलते पिंजर में, हम दो स्वतंत्र इकाइयां, ओमप्रकाश और रचना, सेवा निवृत्त होने के बाद एक जान होने की आशा पाले नये बने मकान में बसने आई थीं। हम दोनों अलग इकाइयों के नाम बराबर साझा जमीन थी और उस जमीन पर एक छत के नीचे साझा घर सांस लेता था। गोल्डी को हम दोनों अपना बच्चा कहते थे। गोल्डी मेरे गर्भ से इस संसार में तब आया था जब मैं पंजाब से आकर दूर पहाड़ी प्रदेश में घने हरे देवदारों से घिरे गांव में नौकरी करने लगी थी और कुंवारी थी। मेरे अपने मुझे वहां छोड़कर चले गए। देवदारों के वे सघन जंगल और उनके बीच बहते पानी के झरनों का संगीत, दोनों मुझे डराते हुए मोह लेते। अब उस सम्मोहन में हुई हरकतों को याद करती तो कभी-कभी उदास होने पर मैं स्वयं को 'स्पिंसटर' कहकर अफसोस मना लेती थी। ओमप्रकाश अपनी पत्नी से छिटका हुआ उससे सम्बन्ध-विच्छेद करने में असफल रहा था। अब गोल्डी भी पारिवारिक हो चुका था और उसके अपने बच्चे थे। मेरे अपने सारे काम निपट चुके थे। सब एक कुटुंब होते हुए भी ओमप्रकाश अपने प्रकाश तक सीमित रह गया था और मैं अपने गोल्डी के साथ मस्त थी।

ओमप्रकाश बड़े इतमिनान से जिन्दगी के बचे पल उनके सहारे छोड़ बेफिकर था। तुम्हें और क्या चाहिए? बच्चों से हंसना-खेलना सब था, लेकिन काम में किसी सलाह की बेकद्री से तनिक अकेला पड़ने से चुप-से थे। नौकरी में रहते यूनियन में पनपे लीडरी के जर्म तुम्हें निकम्मा बैठने नहीं देते। इसलिए तुमने स्वयं को बाहर के कामों में लगा देना उचित मान लिया था। लोक सेवा से तुम समाज में उपस्थित रहोगे। तुम नाश्ते के पश्चात् घर से निकल कर लंच के वक्त आ जाते और लंच करके फिर निकल जाते। काश! मैं अपने पर नियंत्रण रख पाती। तुम मुझे क्यों चुभने लगे थे, नहीं जानती। एक दिन घर से निकले तो मैंने तुम्हें अपने बैडरूम से बेदखल करने की शरारत रचते हुए बच्चों को चकित कर दिया। तुम्हारे कपड़े, कागज, फाइलें और जूते-चप्पल सब दूसरे कमरे में रखवा दिए। जब तुम लौटकर कमरे में गये तो देखकर दंग रह गए। वहां डबलबैड था लेकिन तुम्हारा कोई सामान नहीं था। बदले हुए रंग-रूप को देख कर तुम्हारा स्प्रिंग मन एक झटके से दब कर झंकृत होता रहा। तुम्हें अपने इस तरह बहिष्कार की रंच भर भी दुराशा नहीं थी। इतने वर्ष इकठ्ठे रहते हुए सहमति से गुजारे हैं, शोर करके क्या मिलेगा? फिर भी तुमने पूछा। मैं कहने लगी, 'मैं अब तुमसे बन्धन मुक्त होकर अपने घर में सन्यासिन का जीवन जीऊंगी। बेटा मर्द हो गया है। बहू-बेटे के सामने अब मैं तुम्हारे साथ न बैड और न कमरा साझा करुंगी। अब ऐसा करते रहना गलत लगता है। मैं तुमसे प्रत्यक्ष में कह सकने की हिम्मत नहीं रखती थी, इसलिए मुझे इस तरह करना पड़ा। घर में हमारे कमरे अलग हो सकते हैं।' ओमप्रकाश, तुम ऐसे हालात के लिए तैयार नहीं थे लेकिन तुमने स्थिति को स्वीकार कर लिया।

उस रात कमरे के अंधेरे में केवल तुम और एकांत थे। तुम उससे बातें करते रहे फिर उसे अपने में समेटकर सो गए थे। मुझे तुम्हारा नींद में बोलना सुनाई दिया था। नींद में मेरी सांसों की सां-सां के आभास को तुमने सच मान लिया होगा और उसे जांचने के लिए हवा में लहराया हाथ खाली लौट आया होगा। हड़बड़ाहट में तुम्हारी नींद उचट गई थी। तुमने बत्ती जलाई और थोड़ी देर बाद बुझा दी थी। ओह, तुम्हें अपने अकेलेपन पर अब पीड़ा हुई होगी। अकेले सोने से तुम्हें कोई अंतर नहीं आया है, यह दर्शाने के लिए तुमने प्रातः उठकर पहले मेरे कमरे में आकर मुझे मुस्कराकर शुभ प्रातः कहा। मैंने भी हंसते हुए स्वीकार कर लिया, परंतु बैठने के लिए नहीं कह सकी थी।

मैं बड़ी शंकालू होती जा रही थी। मैं नहीं चाहती थी, तुम बहू के नजदीक जा उससे बोलो भी।

'बहू किचन में हो तो वहां आपको जाना अच्छा नहीं लगता।' हम दोनों कॉमन रुम में बैठे थे तो मैंने तुम्हें फरमान सुनाया था। 'आप वहां होते हैं तो उसे कुछ अजीब जैसा महसूस होता है।'

ओमप्रकाश, तुमने उसका अर्थ पढ़ लेने के लिए मेरी आंखों में देखना चाहा था। सोचता होगा-ये मुझे किचन से बाहर खदेड़ना तो नहीं चाहती? कभी-कभार वहां जाने पर बिना वजह शक हो गया है? किसी पर तोहमत लगाने का अच्छा ढंग है। मैं बहू से भी कितनी बात करता हूं? उसे क्या शिकायत हो सकती है? वह मेरी दुश्मन नहीं है।'

उसने कहा, 'कमरे में इंडक्शन रख लेता हूं। कमरा मुझे दे दिया है, चाय वहां बना लिया करूंगा।'

'नहीं, ऐसी बात नहीं है। आपको कमरे में चाय मिल जाएगी। घर में चिकन-शराब से बदबू आती है। बच्चे नफरत करते हैं।'

'अच्छा? पहले तो सब खाते थे। तब हर चीज में स्वाद था। मेरी हर बात में खोट नजर आने लगा है। मैं बाहर खा आया करुंगा।'

'ऐसा तो नहीं कहा मैंने। बच्चे हैं, ख्याल रखना पड़ेगा।... ......आपकी मर्जी।'

'नस्ल का केला लगाया था। फल रहा था, वह क्यों उखाड़ दिया?' तुमने अपनी जताई थी।

'घर के साथ केला शुभ नहीं होता। आजकल गोल्डी वास्तु विज्ञान पढ़ रहा है।'

'जो बुरा नहीं लगता वह करो। आखिर के दिन चैन से कट जाएं।'

'आप बुरा मान गए।' मैंने कहा था।

तुम्हारा मन जरूर खनका होगा, तुम इतने कमजोर क्यों हो गए हो? घर का मुखिया है। गली-मोहल्ला सब जगह तुम्हारा नाम चलता है। तुम घर के सब लोगों से पूछ सकते हैं। पहले भी पूछ लेते थे। सब तुम्हारी बात मानते थे। तुम हम पर गुस्से हो लो, कोई बुरा नहीं मानता था। तुमने हमारे लिए क्या-कुछ नहीं किया है। अपने नाम का हिस्सा भी गोल्डी के नाम कर दिया। उस सबको भूल गए हम? गोल्डी ने अपने पापा से पूछे बगैर केला उखाड़ दिया। यह घर किस दिशा में जा रहा है? तुम इसकी दिशा किसी से नहीं पूछोगे।

हममें आगे कोई बात नहीं हुई। तुम कुछ कहे बिना उठ गए थे। सब अपने-अपने काम में लगे रहे। सारी बातें हमारे मध्य हो रहीं थीं। तुम्हारे कमरे में आने से सब संकोच करते। हम वहां जाएंगे तो खड़ी की गई दूरी मिट जाएगी। बच्चों को कोई रोक-टोक नहीं थी। वे आते-जाते। खिड़कियों-दरवाजों के भीतर की हवा सब कमरों में खुल कर बहती रही लेकिन तुम्हारे कमरे में आने से पहले सौ बार चिंता के फेर में फंसती जाती। तुम खुले में जीने के लिए आए थे। तुमने यह देखने के लिए अपने आप को पीछे करने की खातिर सारे फैसले नहीं लिए थे। तुम हमसे आगे आ-आकर बोलते हुए महसूस करते कि वहां हर जगह से जुड़ी उसकी मेहनत मूक न हो जाए।

तुम्हें उस घुटन से बाहर निकलना ही था। तुम गए और रात को लौट कर नहीं आए। दूसरे दिन जब सूरज ने सबको जगा दिया था, तब आए। तुमने देखा, रात को बंद हुआ फाटक अभी खुला नहीं था।

'गेट खोलो। गेट के अंदर से ताला क्यों लगाया है?' तुमने गेट के पास खड़े होकर आवाज लगाई। वहां अंदर आंगन में दो बच्चे सामने आए। तुम्हें ऐसा लगा, किसी ने उन्हें बुला लिया है और वे चले गए।

'दादी को बोलो, गेट खोलो।' तुमने गेट को जोर से ठकठकाया।

'दादी ने कहा, अपने घर जाओ। यह घर दादी का है।' बच्चे दौड़ते हुए गेट पर कहने आए।

'मेरा घर कहां है?'

'यह है। नहीं। हमें नहीं पता।' धीरे-धीरे मुड़ते बच्चे वापस चल गए।

तुमने गेट को बार-बार और रुककर बजाया। बच्चे लौटकर पूछने नहीं आए। इतनी जोर से पहले कभी गेट से ठक-ठकात नहीं हुई थी। अगर हो तो हम विरोध जताने दौड़े सामने आ जाते। पड़ोसी को क्या चाहिए? कोई तमाशा। वे टहलते हुए माजरा देखने-समझने का अनुमान लगाने लगे। तुम्हारी नजर गेट की सलाखों को चीरती हुई उजड़ी फूलों की क्यारियों पर पड़ी होगी। तुमने सोचा होगा, 'खिले हुए फूल भी मेरी तरह उखाड़ दिए? उससे दुश्मनी थी, फूलों ने क्या बिगाड़ा था रचना का? वह ऐसा क्यों कर रही होगी?' मगर नई पीढ़ी को नई किस्म के फूल चाहिए। पुराने के साथ पुराना चला जाता है।

'किस घर में जाऊं? उस घर में जाऊं क्या, जिस घर में पहली दफा तुम्हें रात के दूसरे पहर में ले जाकर अपनी मां-बहनों के सामने कमरे में कुर्सी पर बिठा दिया था। गली न.6 । कमरे की दीवार पर बल्ब की रोशनी से बने तुम्हारे ढोर को देखकर मां ने

पूछा था-यह कौन है?' तुम आपना आप खोल बोल उठे।

'मेरे स्कूल में काम करती है। बेचारी दुख की मारी है। जग की सताई है। दया आ गई है। साथ चली आई है। यह बच्चा इसका है, बड़ा प्यारा है। इसके मर्द ने इसे घर से निकाल दिया है। नौकरी करती है। इसे भी पाल लेगी। बड़ा होकर मां का सहारा बनेगा।'

मैं सच ही उस दिन तुम्हारे घर को निशाना बनाकर आई थी। मैं लुटती ही न रहूं। मैं वहां घुसकर घर में रहते जीवों की नब्ज़ खंगाल लेना चाहती थी। मुझे हरिओम की जगह लेने वाला कोई चाहिए था, पर वह ऐसा न हो कि वह भी खाए-पीए और हाथ मलते उड़ जाए। मुझे तुम पर भी यकीन नहीं था। मैंने बड़ी सफाई से आप-बीती को यहां-वहां आंसुओं से ढकते हुए उन्हें बताया था। वे मुझ पर विश्वास कर हमदर्दी से मेरे दुख में बह गई थीं और पूरी ईमानदारी से मेरे लिए आंखें गीली की थीं। घंटों मेरे उस मर्द को कोसती हुई गालियां उगलती रही थीं। इसमें मेरा कोई दोष नहीं था। दूध का जला छाछ को भी फूंक मार कर पीता है। वे सब अच्छी लगी थीं।

'आपकी तीन बेटियां हैं। आपकी एक बेटी मैं भी हूं, गिन लेना।' मैंने उदासी के भंवर में सिसकते हुए मां को आवाज लगाई थी।

उन्होंने मुझे तोलने की कोशिश करते हुए देखा था लेकिन मैं हद तक नीचे उतरकर बैठ गई थी कि वे सच मान जाएं। उन्होंने परस्पर नजरें मिलाईं और एक किरण उठकर मेरे तक आई थी। तब से अपनी बातों से जन्मी दलदल में अपने यकीन की बंसी से उन्हें बहलाने लगी थी। दुखियारिन अकसर तुम्हारे साथ घर आकर रातें गुजार लेती। कभी आकर दिन में ही लौट जाती। जब आती तो हम दोनों उन्हें भूलकर घंटों कमरे में अकेले धीरे-धीरे अस्फुट स्वर में बातें करने लगे तो बहनों को अच्छा नहीं लगता था। वे आपस में कुड़कुड़ने लगीं। 'इस तरह भाई को भाभी के साथ होना चाहिए। यह चालाक बिल्ली है। डायन हमारे भाई को भाभी से चुराने और डायन मन्त्र पढ़ने आले में आ गई है।' पहले वे गोल्डी को गोद में लेकर पुचकारती थीं। आंगन की मिट्टी से खेलने नहीं देती थीं। वह उन्हें सामने खटकने लगता। अब वे उसे घूरतीं ताकि वह डर जाए, यहां आने से पहले ही रोने लग पड़े और यहां आ जाए तो ज्यादा देर ठहर न सके। 'भाई की आंखें बंद हो गई हैं। भाभी को संभालने के बदले उसे उठाए फिरता है।' उनका मन उसे झपटकर जमीन पर पटकने को करता। 'सूरमा अपने रक्त को भाभी के गर्भ में रोपण करें, तब मानें। उसे बाहों में लेकर घूमेंगे। उसके लिए करवा चौथ को भी नहीं आना मानता है। न जाने कौन-सी गलतफहमी हो गई है दोनों के बीच?' फिर भी वे मुझे कह देतीं, 'सविता भाभी आज घर आ जाएगी। वह बड़ी गुस्सैल है। तुम्हें कुछ भी कह सकती है।' मैं भांप गई थी कि बहनें मुझे बर्दाश्त नहीं करेंगी। मैं देखती थी कि सविता कभी यहां आती नहीं देखी। डेरे में तो उसके नाम की मक्खी भी मंडराती नहीं देखी थी। मेरे हौंसले तब ही उसके लिए बुलंद हुए। मैं ओमप्रकाश के जलते वदन की अग्नि को शांत करूंगी और भटकते मन को ठिकाना दूंगी। जो वह नहीं कर सकी, मैं उसके लिए करूंगी। उसे दूसरों की उलझनों को सुलझाते अपने लिए सोचने का वक्त नहीं है। उसका जबाव मैं तलाश करुंगी। अब शिकार के काफी करीब पहुंचकर तुम्हें पंजे से फिसलते देख दुखी होना मुझे गवारा नहीं था। एक सिद्धस्त शिकारी की तरह विपरीत पगध्वनि से बेपरवाह होकर मैंनें उनके भाई को उनसे उड़ा लिया था।

मैंने तुम्हें सुझाया था कि वह जमीन खरीदने के लिए पैसे देगी। उस पर दोनों का नाम होगा। वह तुम्हारे साथ अलग आशियाने में रहेगी। तुम्हें अपने इस घर में आने से नहीं रोकेगी।

तुम्हें पैसों की खान मिल गई थी। अपनी तनख्वाह यूनियन में उड़ा देते थे। तुम मान गए थे। यह भी कि रात को बिस्तर पर भभकते हुए अकेले शरीर को ठण्डक की फुहार नसीब होगी। तुम फर्श पर गीले किए टाट को बार-बार भिगोकर पैरों की दाह को मारते तड़पते रहते हो।

ठगी का शिकार हुई रचना ठग के गुण-धर्म समझ गई थी। मैंनें स्वयं को डकैत मान लिया था और होश पकड़ते गोल्डी के लिए कोई हरिओम चुराकर लाना था जिसे वह पापा कह सके।

मैंनें तुम्हें रो-रो कर बताया था। चौबीस-पचीस साल की उमर के जोश में हरिओम के साथ लिव-इन में थी। पंजाब के शहर से उड़कर आई हुई शिक्षित और सभ्य लड़की एकदम दूर पहाड़ के अनजान लोगों के बीच नौकरी करने आई थी। अपना-पराया कोई नहीं था जिससे दुख-दर्द कह सके। एक वही था जो उसके जैसा था। दोनों किसी खूंटे से बंधे नहीं थे। दोनों छड़े, आपस में बंध गए थे तो किसी को कोई लेना-देना नहीं था। वे उस समाज से नहीं थे जहां वे रहते थे। नौकरी के लिहाज से ही वे उस समाज से थे लेकिन उससे वे कटकर रहते थे। दो युगों के मेल में उन्होंने कोई दखल नहीं दिया था। उसकी बातें सम्मोहित करतीं और इस बीच गोल्डी कोख में आकार लेने लग पड़ा था। वह सदा विश्वास दिलाता था कि वह अपने घर में कह कर उन्हें मना लेगा लेकिन वह मेरे मन को बहलाता ही रहा और अपने घर के पास तबादला करवा चला गया। मैं यही मानती रही, वह जरुर आएगा। मैं स्वयं को निडर लड़की मानती थी। मैंने निश्चय कर लिया था, वह उसी के नाम पर गोल्डी को संसार दिखाएगी। मैंने घर में सारी बात बता दी। उन्होंने डराया-वह नहीं आया तो? सबने ऐसा न करने के लिए इनकार किया लेकिन मैंने किसी की अच्छी बात को नहीं माना था। उसके आने का इंतजार करती रही और उसकी गैरमौजूदगी में नर्सिंग होम में नन्हे गोल्डी की मासूम किलकारी गूंज पड़ी। मेरी प्रसन्नता का कोई नाप-तोल नहीं था। मुझे पूरा विश्वास था,

हरिओम बच्चे को देखकर उसे अवश्य अपने घर ले जाएगा। मैंने हर कागज पर पिता की जगह हरिओम का नाम लिखवाया।

उस दिन मैं सबसे कमजोर साबित हुई थी। मैं गोल्डी को गोद में संभाले पूछते-पूछते हरिओम के घर जा पहुंची थी। मैं देखकर दंग रह गई। वह सब भूलकर अपने विवाह समारोह में मस्त था और मेरे साथ कोई रिश्ता होने से मुकर गया। हद हो गई, उसने मुझे पहचानने से इनकार कर दिया था। मुझे शातिर कहा था। मुझ पर उसकी जमीन-जायदात हड़पने का षड्यंत्र रचने का लांछन लगाया गया। मेरा रोना कोई सुनने को तैयार नहीं था। सारा घर एकजुट था। मैंनें विरोध के स्वर भी बुलंद किए लेकिन मुझे सुनना पड़ा, 'पता नहीं किस गंदी नाली का कीड़ा उठा लाई है।' काश! उस समय राहुल एन. डी. तिवारी के विरुद्ध लोगों के सामने आ गया होता। वह भी खड़ी हो जाती टेस्ट करवाने वालों की लाइन में। नंगी को वस्त्र मिल जाते। फूहड़ शब्द मुझे कहे वहां। उसके घर में धक्के दिए गए। मुझ पर लातें बरसने की कसर रही थी। वे जाहिल लोग थे। मैंने गोल्डी को 'ईशू' कहा तो उन्होंने मुझे अपने घर जाकर पूजा करने की सलाह दी और बेरहमी से फाटक के बाहर धकेल दिया था।

उस दिन को मैंनें अपने जीवन को राख के ढेर पर रख देने वाला मान लिया था। मैं छटपटाहट में अंदर तक हिल गई। मैं अपने आप को कोसते हुए गलत मानने लग पड़ी। गोल्डी के आने से पहले घर में मिली चेतावनियां याद आकर एक-एक करके मुझे छीलने लगीं। मैं कैसे उनके समक्ष हारी हुई पेश हूंगी? मौसम की उन मदहोशियों को कोसती जो मुझे इस हद तक ले आई थीं। हरिओम ने मुझे खूब मूर्ख बनाया। अर्धविक्षिप्त मैं अकेले ही उसे पालने लगी थी। वह मेरे शरीर का अंग था, कैसे लापरवाह हो सकती थी? मैं दिन में कितनी बार मरती, मैं ही जानती थी। टिमटिमाती लालटेन के पास नन्ही जान को गोद में लिए रातभर ऊंघती रहती। विकास और परिवर्तन के मेरे सारे सोच कुंद हो गए। भला हो उन पहाड़िनों का, जिन्हें मैं गंवार मानती थी, गोल्डी को पालने सामने आई थीं। सब नाराज थे पर वे साथ खड़ी थीं। उन्होंने मुझे अकेले पड़ने पर उठ खड़े होने की आपबीती सुनाईं। वे बहुत बुरे दिन थे।

घर एक मामले में मेरी सहायता के लिए तैयार था। मेरा स्थानान्तरण हरिओम के घर के पास करवा दिया गया और वहां उससे प्रतिशोध लेने के लिए मैंने ड्यूटी दे दी थी। वह तो नौकरी छोड़ राजनीति में आकर बड़ा नेता बनने के सपने देखने लगा था। लेकिन मेरे लिए समस्या खड़ी थी। गोल्डी के लिए खोया हुआ पापा कहां से लाए? मैं उससे भय खाने लगी थी। घर के लोग पराई जगह निस्तेज थे। मुझे निपट अकेला होने की शक्ल में लिया जाता था। वह ढीठ मेरे पास आता-ठहरता और उसे रोक नहीं पाती। परंतु गोल्डी के लिए अपना नाम देने के लिए तैयार नहीं था। कहीं वह मुझे अपना ले, इसी आशा में मैं उससे पिटती रहती थी। वह मुझे वहां से कहीं और जगह उठवाने की धमकियां देता था। लोग मुझ पर उंगली उठाने लगे थे कि मैं उसकी रखैल हूं। मैं उसके चंगुल से निकलना भी चाहती थी। कोई जरूरतमंद हो, कोई विधुर हो या कोई उमरदराज हो पर नौकरी में हो, मुझे मंजूर था। कोई ठिकाना, कोई आस का तिनका मिल जाए। कई उखड़े घरों में मैंने सेंध मारने की कोशिश की। उनके नीचे चटाई बनकर बिछी, गद्दी बनकर सजी और बैठक बनकर संवरी लेकिन कोई हरिओम बनने को तैयार नहीं हुआ था। यूनियन के एक कार्यकर्ता, ओमप्रकाश पर मेरी नजर जम गई। वह तुम थे। तुम्हारे मन में मेरी कथा सुनकर मैंने हमदर्दी की एक धीमी-सी लौ जलते देखी थी। मैं तुम्हारे लिए सदा तत्पर रहती। मेरे साथ हुए धोखे के लिए हरिओम को गालियां निकालती। अपने दुखड़े सुनाते एकांत हो तो आश्रय की भीख मांगते तुम्हारे पांव पकड़ लेती थी।

मैंने तुमसे सविता के सम्बंध में एक-दो बातें पूछी थीं। तुम पहले ही उससे खिंचे-खिंचे रहते थे। तुम क्रांतिकारी विचारों के मालिक मालूम होते थे। मुझे भाया था। अपनी पहुंच के अनुसार लड़की के विवाह पर कुछ उपहार देना आम बात थी और तुमने बताया था कि तुमने सविता से दहेज रहित शादी की थी। तुम्हारे बीच बढ़ते तनाव को मिटाने के कदम किसी ने नहीं उठाए थे। कदम उठाए भी होंगे तो कोई अहम् आ खड़ा हुआ होगा। सविता अपना वेतन देखती होगी। जी लेगी, उसे किसी की क्या आवश्यकता? मुझे पता है, जरूरत होती है। वह गलत थी। वह बैठी रही कि तुम इधर-उधर चर कर स्वयं घर आ जाओगे। तुम नहीं गए। उस दरार में स्वयं को फिट करने का सुअवसर मुझे मिल गया था। मैं तुम्हें अपने डेरे क्यों न बुलाने लगी? भूखे-प्यासे मर्द को मैंने हर तरह के भोजन और एकांत के प्रबंध किए। उसके उपलब्ध हो जाने से मेरे सामने मुंहवाय खड़ी समस्या हल हो गई लगने लगी। मैंने साहस जुटाकर सविता के घर अपना जंदरा लटका दिया और उसे चुड़ैल बनने के रास्ते दिखाने लगी थी।

'इतने सालों तक यहां बनैन-कच्छे में ढेरों पत्थर, ईंट, रेत-बजरी से मैं कौन-सी आशा लिए जूझता रहा था? इनसे घर की दीवारें, लेंटल और फर्श में तबदील करवा दिए गए। अपना घर होगा इसलिए गारा बन गया, सीमेंट-ईंट बन गया और मजदूर बन गया। जो चाहा वह सब बन गया। बताओ, अब अपना घर कहां गया?' ओमप्रकाश ने चिल्लाकर पूछा।

'दादी अंदर है। दादी सो गई है।' फाटक के अंदर घर में घोर चुप्पी पसरी थी। बच्चे ही कहने सामने आए और लौट गए।

'पूछो उससे-वह तीस साल की थी जब गोल्डी को लेकर मेरे पास आई थी, तब क्या लगता था? पैर पकड़ती थी, तब क्या लगता था? सविता को दूर करने के कुचक्र चलाती थी, तब क्या लगता था?'

मैं सोई नहीं थी। फाटक के बाहर-भीतर तूफान उमड़ा हो तो कैसे सो सकती थी? मैं उस वक्त में पहुंच गई। गोल्डी ने पहले-पहल तुम्हें अंकल कहा था। वह बच्चों के साथ खेलते हुए उनके पापा को उनके साथ-साथ देखता। वे उन्हें लुढ़कने से पहले उठा लेते थे। उसे केवल उसकी मम्मी ही उठाती। वह उनकी देखा-देखी में पापा, पापा बोलता, परंतु वह उसे कहीं नहीं दिखता था। उस दिन सारे असमंजस मिट गए। मैं डेरे में गोल्डी को गोदती हुई पापा-पापा कहती, तो हम दोनों खिल-खिल करते आपस में खो गए थे। तुम हमारे पास आए तो हम दोनों मस्त थे। 'पापा हैं।' गोल्डी गोद से उतर गया और दौड़कर अंकल को 'पापा' कह दिया। मैं अवाक रह दोनों को देखने लगी। यह इतनी अचानक कैसे हो गया? तुम कुछ ठिठक गए थे, फिर उसे बाहों में उठाकर जोर से चूम लिया था। गोल्डी के कोमल कपोल रक्ताभ हो गए थे। तुमने यह केवल मजाक में ही लिया होगा लेकिन वह हर रोज तुम्हें 'पापा' ही कहने लगा था। मैंने इतने सहज ढंग से इस बांध के बह जाने की कल्पना नहीं की थी। अपनी उलझन को खोलते हुए तुम्हें उत्तर दे दिए, 'अब बच्चे का मन न तोड़ें।' तुमने इसका अर्थ यहीं तक लिया था परंतु मेरे चेहरे पर भविष्य के लिए खुशी की लहरें हिलोरें मारने लगी थीं। मैं अब पीछे हटना नहीं चाहती थी। बेशर्म ही कहेंगे, मान लूंगी-हां, मैं हूं। ओमप्रकाश गोल्डी को कंधे पर उठाए घूमता और वह उसके बालों में अपनी नन्हीं उंगलियां फंसाए रहता था। दोनों को चैन मिलती देख अनगिनत दिनों उपरांत मेरी आंखों से खुशी का पानी छलका था। पहले तो सूखी ही रोती रहती थी।

गोल्डी तुम्हारे आगे-पीछे दौड़ते 'पापा' कहने लगा। तब तुम्हारे साथ काम करने वाले तुम पर प्रश्न भरी नजरें डालते थे। 'बच्चा है। कहता है तो कह लेने दो।' तुम उन्हें चुप करा देते लेकिन मैंने देखा था, तुम्हारे भीतर कोई लगाव फलने-फूलने लगा था। तुम किसी दिन उसके साथ मस्तियां न मारो, उसे अपने कंधों पर न झुलाओ और कुछ न कुछ न खिलाओ, यह नहीं हो सकता। तुम स्वयं उस रिक्तता के बारे में कहते तो मुझे अच्छा लगता था। उसमें रमते हुए तुमने उसे अपना बेटा मानना शुरू कर दिया। उसके लिए तड़पने लगे और उसके लिए सब कुछ करने के लिए तैयार रहते थे।

मैं अपने बच्चे द्वारा एक मर्द को 'पापा' कह लेने से मिलने वाले सुख को मुट्ठी में जब्त कर लेने का आश्वासन ले कर चल रही थी लेकिन सविता का भूत मुझे हर क्षण डंक मारता कि मैं अपना हाथ खोल दूं। मैं उसे तुम्हारे साथ एक प्रतिछाया चलती देखती और तुम्हारे जीवन से उसे बाहर धकेलने के लिए हर तरह की माथापच्ची करती। किसी के साथ होने की अफवाहें फैलाती। मैं स्वयं कोई गोरी-चिट्टी नहीं थी फिर भी उसे बात-बात में 'काली चुड़ैल' कहने से मुझे एक अबूझ सुख मिलता। वह तो एक शर्मीली घुघती के जन्म में आई थी और ओमप्रकाश से नाराज होकर घर के रास्ते पर आना भूल गई थी। पर बच्चे के किस्से को सुनकर वह बेकाबू होकर एक रात तुम्हारे डेरे में आई और मुझे सरेआम जोर-जोर से 'रांड' की गालियां बककर मेरी मिट्टी पलीत कर दी थी। उस समय मैंने शांत रहना ही उपयुक्त समझा था। बोलती भी तो उसका क्या बिगाड़ लेती? मैं किसी पर दोषारोपण नहीं कर सकती थी। तुम्हारे रोकने पर भी वह चुप नहीं हुई होगी। वह एक आग की चिंगारी थी। सेंक देकर बुझ गई और दूसरे दिन तक रुक नहीं सकी। उसके चले जाने के बाद गर्म हवाओं की कशमकश में मैंने सबके सामने उसका नाम लेने की बजाय हर बार चुड़ैल कहा। विद्रोह को सुन लेने की सीमा लांघते देख तुमने कह दिया, 'उल्का पिंड गिरते रहते हैं परंतु यह सच है कि सब चुड़ैलें एक जैसी होती हैं।' मेरे दिल में तूफान उठा और जाकर दीवार पर टंगे आईने में अपना चेहरा देखने लगी थी। स्वयं महसूस हुआ कि दोनों चुड़ैलें तुम पर अधिकार जमाने के लिए गुथमगुत्था हो गई थीं।

तुम सबके सामने मुझे अलग-अलग स्तर पर अपनी धर्मपत्नी, श्रीमती और वाइफ के सम्बोधन देने लगे थे। मैं कभी समीप होती, कभी नहीं होती। जब तुम ऐसा कहते तो सुनने वाले भवें फैलाते-सिकोड़ते उसे सविता के लिए मनाते हुए अगल-बगल झांकते। कई दफा तुम्हें उन्हें बताना पड़ता था। वह उसके साथ कहीं चलती नहीं दिखती थी। लेकिन वे कहते, सबकी पत्नियां साथ ही नहीं रहती हैं। तुमसे सहमत होने वालों की गिनती कम थी। पता चला था कि तुम्हारी गैरहाजिरी में तुम्हें 'दो घरों का मेहमान' कहते और उपहास के पटाके फोड़ते मौजू लेते-ऐसा आदमी सदा भूखा रहता है। उसका मन कभी शांत नहीं रहता है।' सविता के सहानुभूति और मेरे प्रति ईर्ष्या पालने वालों की कमी नहीं थी। सब अपनी जगह व्यस्त रहते। सविता तक सब समाचारों का धुआं उसे भुनते रहने के लिए धीरे-धीरे उड़ कर जाता रहता था।

सविता मुझ पर पूरी तरह तिलमिला गई थी। वह दो-दो हाथ करने सड़क पर उतर आई थी। सवेरे ही चढ़ते सूरज के गोले में अभी थोड़ी तपस आई थी। ओमप्रकाश, तुम स्कूटर की पिछली सीट पर मुझे बिठाकर कहीं जा रहे थे। उसे पता नहीं किसने हमारे प्रोग्राम के बारे में बताया होगा। उसने तुम्हें रुकने के लिए हाथ दे दिया। तुम उसकी मंशा नहीं भांप सके थे और सड़क किनारे उसके पास रुक गए। 'मेरी सीट पर तू कब्जा करके बैठी है? रांड कहीं की! चल उतर।' कह कर उसने मुझे बालों से खींच डाला और मैं जमीन पर गिर गई थी। मैं भी नासमझ! पहले ही उतर जाती। मेरे गिरने की पीड़ा ओमप्रकाश, तुम्हारे कलेजे को छू गई थी। तुम सयंम नहीं बरत सके। तुमने एक धर्मपत्नी के लिए एक पत्नी पर सड़क किनारे मन भर जाने तक हाथ चलाए। हम आगे जाने लायक नहीं रहे थे। मेरे कपड़े फट गए थे और जिस्म पर खरोंचें

दिखने लगी थीं। हम बीच रास्ते से घर लौट आए थे।

मेरे मन को अपने सामने सविता को पिटते देख अभी संतोष नहीं मिला था। घर पहुंच कर अपने जख्मों को दिखाते हुए तुम्हें उकसाने की गरज से तम्हारी छाती से अपना सिर सटाकर खूब रोई और कोसते हुए कहती रही थी, 'उसकी कोख सूनी जाए।' तब तुम कहते थे, ' वह उसके आसपास होगा नहीं तो कोख फले-फूलेगी कैसे?' मुझे थपकी देते हुए कहा था, 'रो ले। जी भर कर रोले। अपने आंसुओं की बाढ़ से मेरी छाती में बनी उसकी कोई निशानी हो, उसे भी धो दे।' मेरे मन को तब बड़ी चैन मिली थी।

ओमप्रकाश! तुम्हारे एक सिर फिरे दोस्त ने तुम्हारे मन में एक कारक चुभाकर तुम्हारी चिंता को और सघन कर दिया, 'गोल्डी के लिए कोई भाई/बहन चाहिए।' तुमने उसके मकसद को ध्यान से सुना होगा। 'तुम दोनों के बीच लगाव को प्रगाढ़ करने की अचूक औषधी साबित होगी। अभी सब उसे रखैल कहते हैं। तुम्हारा अपना बच्चा होगा तो धर्मपत्नी कहला सकेगी।' वह तुम्हारा जरूरत से ज्यादा हितैषी मालूम होता था। तुम्हारे ज़हन में बात घर कर गई थी। तुमने उसे विश्वास दिलाया होगा कि तुम मुझसे जरूर बात करोगे। तुमने रात को खाना खा चुकने के बाद आराम करने बैठे, जलती ट्यूब लाइट के नीचे, एक और बच्चा होने की बात दबाव डालते हुए कही थी। मैं यह सुनकर घबरा गई और बात पच न पाने के कारण पेट में मरोड़ पड़ गए थे। अभी एक झमेले से निकल नहीं पाई है और दूसरा......। मैं इस परामर्श के ओलों की चपेट से बचने के लिए कमरे-कमरे में भाग-दौड़ करने लगी। मैं बिस्तर पर निढाल होकर गिर पड़ी। तुमने मेरे शरीर को जांचने के लिए स्पर्श किया। मेरा बदन भट्ठी बन गया था। तुम्हें भय था कि थर्मामीटर को पारा ताप से फैलाकर तोड़ देगा। अपने परामर्श पर तुम्हें उस वक्त अफसोस हुआ होगा। ऐसा मैंने तुम्हारे हाथों की छुअन से अनुमान लगाया था। फिर भी स्वयं को मेरे स्वस्थ होने की तसल्ली दे रहे थे। बेहोश-सी पड़ी रही और ओमप्रकाश, तुम सारी रात मुझे अपनी बाहों में भरकर सहलाते रहे थे। मैंने सोचा, कोई तो है जो उसके लिए अपने मन में जगह रखता है। मेरे दुखी तन-मन को सम्भालता है। मेरा फीका पड़ा चेहरा अगले दिन शाम तक अपनी पुरानी रंगत में आ गया। इतना वक्त मैंने सोचने-विचारने के लिए लिया था। मुझे शंका का कीड़ा लगा हुआ था कि कहीं तुम उसके कब्जे से न फिसल जाओ। मैं स्वयं को खतरों से घिरा देख रही थी। चुड़ैल से निजात पाने के लिए मैं तुम्हारी बात पर रजामंद हो गई। तुम्हें भी आगाह कर दिया-एक बीबी से छुटकारा नहीं मिला और दूसरी रख ली? पता चल गया तो नौकरी जाएगी। तैयार हो, तो मैं तैयार हूं।'

हम कोशिश कर रहे थे लेकिन कामयाबी पास आने से इनकार करती रही। पता नहीं, तुम क्या अर्थ लोगे, मगर मैंने झिझकते हुए तुम्हें अपना स्पर्म टैस्ट करवाने की सलाह दे डाली थी। उसे सुनकर तुम गुस्से से तमतमा गए थे। किसी न किसी में दोष होगा, हम दोनों में बहस छिड़ पड़ी थी। तुम अपने में कोई कमी नहीं मानते थे। -मर्द में कमी नहीं होती।' मेरा अपना तर्क था। मेरा गर्भ पहले ही फल चुका है। उसमें कोई नुक्स नहीं हो सकता। तब तुम्हारा पौरुष कुछ कमजोर पड़ गया था।

मैं तुम्हें लेकर क्लीनिक-दर-क्लीनिक घूमती रही। तुम्हें इन बातों का पता नहीं था। मैं ठहरी पंजाबन, जानती थी। क्या हुआ, हरिओम से धोखा खा गई थी। और, बच्चा मेरे शरीर से हो कर आना था। कभी सामने, कभी परोक्ष में कहती भी रही कि तुम्हारे स्पर्म में बच्चा घड़ने की ताकत नहीं होगी। उनकी गिनती बहुत कम होगी। कोई अन्य कारण भी हो सकता है। निस्तेज हुए तुम परेशान थे। तुम कैसे मान लेते कि तुम बच्चा पैदा नहीं कर सकते। कभी रिपोर्ट को ही गलत मानकर मन को तसल्ली देते रहे। डॉक्टर की दवाई का सेवन किया। तुम्हारा ऐसे मामले में मशीन पर भी पूर्ण विश्वास नहीं टिकता था। मैं तुम्हारे मन को पराजय की टेढ़ी-मेढ़ी गली में फंसाकर हर महीने दिन चढ़ने के शक को मिटाने के लिए किसी को कुछ बताए बिना अकेले क्लीनिक जाती रही। ऐसे पुरुष के रक्त से लंगड़ा-लूला मेरे पेट में कैसे आ सकता था? अगर तुम पूछ लेते, कहती कि तबीयत कुछ ठीक नहीं है। दवा ले आती हूं। मैं गोल्डी के लिए कोई चैलंज जनने के पक्ष में खड़ी होना नहीं चाहती थी। कर्ण के कवच-कुंडल छीन कर दूसरे के हाथ कैसे दे दे? इसी का छाया में अपने अच्छे-बुरे दिन काट लूंगी।

अब मैं तुम पर अपना रंग चढ़ाने लगी थी। किसी महिला सहयोगी से बात करते देख लूं भला! घर आकर तुम्हें इधर-उधर जोड़ देती, 'गैर औरतों पर मिटते हो, बच्चा कैसे हो सकता है? कोई आधार होना चाहिए।' तुम मेरे सामने तनकर खड़ा नहीं हो सकते थे। घूंट लगाकर मुझे कह लेने की अलग बात थी। तुम अपनी तरफ से सफाई देते रह जाते थे। उस समय तुम्हारा दिल करता होगा कि अपने घर लौट जाए। अकेले ही रहना तो रह लेगा। ऐसा-वैसा सुनना नहीं पड़ेगा। एक बार वहां से चले भी आए थे तो मैं अपनी गलती मानते हुए वापस लेने चली गई थी और तुम्हें अपने साथ लेकर ही आई थी।

हमारे बीच इस बार आई कड़वाहट मिटते समय लग गया था। मुझे सब कुछ सामान्य करने के लिए बड़ी मेहनत करनी पड़ी थी। मैंने सबक ले लिया था। तुम्हें बुरी लगने वाली बात नहीं बोलेगी। लेकिन अपनी पकड़ कसती ही रहेगी। मेरे मन में आया था कि अगर तुम दोबारा वापस जाने की जिद्द करोगे तो अपने साथ बनाए रखने के लिए मैं तुम पर अडल्टरी का आरोप भी लगा दूंगी। मेरे साथ न रहो तो किस काम के? अवारा घूमने नहीं दूंगी। मेरा असली काम अभी हुआ नहीं है। हरिओम को लादे जगह-जगह नहीं फिरना है। मेरे भाग्य से ओमप्रकाश मेरी झोली

में पड़ा है। गोल्डी के नाम में गड़बड़ हो जाए तो हरिओम की जगह ओमप्रकाश हो सकता है। गोल्डी उसे पापा तो कहता ही है। उसे अपने नाम का बच्चा चाहिए, वह हो जाएगा। ओमप्रकाश के अशांत मन को शांति मिल जाएगी और उसको लील लेने वाली राक्षसी समस्या सुलझ जाएगी। मैंने बड़े प्यार से तुम्हें स्पष्ट कर दिया था कि तुम्हारे बच्चा नहीं होगा। ईश्वर कभी मेहरबान हो जाए तो वह भी मंजूर होगा। प्रयत्न करते रहेंगे। अभी तुम गोल्डी को गोद ले लो। भटकाव नहीं रहेगा। वैसे भी तुम उसे बेटा मानते ही हो। बड़ा होने पर बच्चा नाम लेने से इनकार कर दे तो? तुम्हें बात जंच गई थी। हम दोनों ने हरिओम में हरि को बड़ी सावधानी से ब्लेड से खुर्च कर मिटा दिया और ओम के आगे उस जैसी स्याही से प्रकाश लिख दिया। तब दोनों ने आपस में सहमति की आंखें मिलाई थीं। इस तरह सर्टीफिकेट में नकली बाप के असली नाम को देखकर दोनों प्रसन्न हो गए थे।

अपने लिए पापा-पापा सुनते रहने के कारण ओमप्रकाश, तुम्हारे जान-त्राण गोल्डी में ही रहते थे। तुम उसमें अपनी शक्ल देखते। उसके काम, बात करने के तरीके और उसकी सोच में तुम्हें अपना अक्स नज़र आता था। मेरा है, तो मेरे जैसा ही बनेगा। मेरे रक्त से नहीं है परंतु मेरे अन्न-जल का असर तो है। हवा-पानी ही पौधे को बनाते हैं। उसके नाम के साथ बाप का नाम चलेगा। बाप मैं हूं।

गोल्डी को कद-काठी में ओमप्रकाश, तुम्हारे बराबर हुआ देखकर मेरी खुशी का अथाह समंदर चिंघाड़ उठता था। मुझे शंका भी डसती रहती कि दोनों नर एक हो जाएं तो? ओमप्रकाश मेरे बेटे को मुझसे छीन लेगा। एक-एक बूंद से सिंचित पौधे को पुष्पित-पल्लवित देख 'यह केवल मेरा है' भाव मुझमें जागने लग पड़ा था। इस आदमी की बकझक को क्यों सहन करें? अपनी आदतों को पहले जैसा बनाए रखना चाहता है। सोचता नहीं ,एक परिवार के दो हो गए हैं। उनका अपना दिमाग है। अपनी ही बात मनवाने लगा रहता है। घर तुम्हारी यूनियन नहीं है। मैं तुम दोनों में दुराव पैदा करने के लिए कुछ अलग सोचने लगी थी। कभी कहती, 'बाप-बेटे के बीच नकली पर असली हावी हो रहा है।' तुम इसका अर्थ पूछते तो मैं कही बात को टाल देती, उसमें मोड़ दे देती। तुम मुझसे पूछो तो तुम्हें यहां-वहां की बात कह कर टाल देती। गुप्त रूप से मैं गोल्डी के साथ हरिओम के सम्बंध में बात करने लग पड़ी थी।-वह बड़ा नेक आदमी था। मुझे पता नहीं, उसे क्या मजबूरी थी कि गया तो लौट कर आया नहीं। मैंने बहुत तलाश की थी। उसके घरवाले बहुत परेशान हुए थे। भगवान जाने कहां गुम हो गया।' मैंने एक बार उसे खुर्चा हुआ मूल जन्म सर्टीफिकेट दिखाया था। कहा था, 'गोल्डी तुम्हारी सूरत उससे मिलती है। कहीं आ जाए तो डी एन ए मिलान से सिद्ध हो जाता।' मैंने उसे बताया था कि क्रूर जमाने से बचने के लिए उसे ओमप्रकाश, तुम्हारा आश्रय लेना पड़ा था।

गोल्डी अपने में ही खो गया था। मैंने देखा था, ओमप्रकाश तुम्हारे सामने पहली बार आने पर उसकी नजरें अपराधबोध से नीचे हुई थीं। तुमने कारण जानने का प्रयत्न किया था लेकिन उसने कुछ नहीं बताया था। मैंने देखा था गोल्डी ने स्वयं से कोई समझौता कर लिया था। उसे इन बातों से कोई अर्थ मिलता प्रतीत नहीं होता था। ओमप्रकाश ने कठिन दौर से उबारा है तो यही सच है। ओमप्रकाश ही पापा है। मगर मैं ओमप्रकाश, तुम्हारे साथ अलग बर्ताव से थी। तुमसे बिगड़ने पर अपनी जुबान पर रोक न लगाते कहती, 'दुनिया में बच्चे बाप के नाम के बिना भी जी लेते हैं।' बच्चों के सामने तुम सब कुछ समझते हुए समझ नहीं पाया जतलाते थे। तुमने मुझसे इसका अभिप्राय जानना चाहा था। प्रत्युत्तर में मैंने कहा था कि एक बात एक बार ही कहते हैं।

उसे गेट पर खड़े रहते बड़ी देर हो गई थी। इस दफा उसने गोल्डी को पुकारा।

' क्या शोर मचाया है? आप मेरे पापा नहीं लगते। हमने पुराने इतिहास का पन्ना फाड़ दिया है।' उसने आते ही ताले को चाबी लगाते हुए कहा। उसका गोल्डी कह रहा है? ओमप्रकाश के कानों में गोल्डी की बचपन में पीछे दौड़ते हुए घुसी किलकारियां खनख्नातीं हुई बाहर निकलीं।

'तुम्हें किसने बताया है?'

'मम्मी ने बताया है।'

'तेरी मम्मी जादूगरनी है।' उसने उस रौबीले गेट को पुरजोर झकझोड़ा कि उसे अभी उखाड़ फैंकेगा। वह अब क्या करे, उसे पता नहीं लग रहा था। वह कांपता हुआ पसीने से पूरा नहा गया था।

'गेट पकड़ कर धूप में क्यों खड़े हो?' एक पड़ोसी ने आकर पूछ लिया।

'घर के लोग मुझसे लुका-छिपी खेल रहे हैं।' उसने कहा।

'गेट बंद कर दिया है?'

'बंद करने के लिए मैंने स्वयं कहा है।' दहाड़ने वाला जानवर दुम हिलाकर बैठने की जगह देख रहा था। इतना कहते ही उसे एक उबकी आई और बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा। हाहाकार मच गया था। मैं वहां नहीं जा सकती थी। आवाज से लगा, गोल्डी ने गेट खोल दिया था। वे सब तुम्हें उठाकर हास्पिटल ले गए। पता चला था, वहां तुम गुलूकोज के ड्रिप पर थे। इस स्थिति में लाने के लिए मेरा कोई कसूर नहीं है।

गांव मेड़हा, डाक भवारना,
जिला कांगड़ा, हि. प्र.-176083 मो 94590 78608

कहानी

परिंदे

◆ सुधाकर आशावादी

मोबाइल की घंटी बजते ही अमीषा समझ गई कि निखिल का फोन है। नियमित रूप से इसी समय निखिल का फोन आता है। न्यू जर्सी में रहता है , किन्तु हर पल घर की चिंता ही सताए रहती है। दिन में एक बार जब तक फोन करके घर की कुशलक्षेम नहीं पूछ लेता , चैन से नहीं रहता।

फोन निखिल का ही था। अपने पापा की तबियत के बारे में पूछ रहा था। कह रहा था - 'पापा से कहो ज्यादा काम न किया करे, शरीर को थोड़ा आराम भी दिया करें। इतना काम किसके लिए करते हैं ? अपनी सेहत का ख्याल रखा करें।'

'जब से सचिन को हार्ट प्रॉब्लम हुई है, तब से निखिल की चिंता बहुत बढ़ गई है।' अमीषा निखिल से हुई बात का सार माता जी को बता रही थी, कि माताजी ने कहा - 'निखिल को कभी अपने बाप की चिंता हुई भी है या सिर्फ दिखावा करता है ? यदि उसे बाप की चिंता होती तो अस्पताल में देखने न आता, आकर उसकी तीमारदारी न करता। औलाद सुख दुःख में साथ देने के लिए होती है या सिर्फ गाल बजाई के लिए ? विदेश जाकर अपनों को भूल जाना आज का फैशन बन चुका है।'

'नहीं माता जी... निखिल बिलकुल ऐसा नहीं है, वह तो यही चाहता है कि हम उसके पास जाकर रहें। कई बार ऐसा कह भी चुका है।' अमीषा ने सफाई दी।

'बहू मेरे बाल धूप में ही सफ़ेद नहीं हुए हैं.... मैंने भी दुनिया देखी है, सब जानती हूँ , अमेरिका में लोगों का अपना गुजारा तो सही ढंग से चलता नहीं , वे आने माँ बाप को भला कैसे अपने पास रख सकते हैं। ये सब चोंचले हैं। मीठी मीठी बातें करके माँ बाप को तसल्ली देकर अपने आप को आज्ञाकारी सिद्ध करते रहो और माँ बाप अपने स्नेह के वशीभूत होकर खुश होते रहें।'

माता जी ने विदेश जाकर अपने माता पिता को भूलने वालों के अनेक संस्मरण सुना दिए।

अमीषा ने चुप्पी साधना ही उपयुक्त समझा, प्रतिवाद का कोई औचित्य भी नहीं था।

अब माता जी की बारी थी। वह बोली - ' अमीषा सच सच बताना औलाद क्यों पैदा की जाती है ?'

'माता जी आप मुझसे ज्यादा जानती होंगी , मैं क्या बताऊँ?'

'बता न.... औलाद इसलिए पैदा की जाती है कि बुढ़ापे में जब शरीर शिथिल पड़ जाय, तब औलाद माता पिता का सहारा बन सके। वैसे भी आजकल फैशन में आकर लोग एक बच्चा पैदा करते हैं। उसे अच्छे से अच्छे स्कूल में पढ़ा लिखाकर इतना योग्य बना देते हैं कि वह देश में रहना ही नहीं चाहता। जैसे ही उसे

विदेश जाने का अवसर मिलता है, वह परिंदा बनकर उड़ जाता है।'

अमीषा से कोई उत्तर देते न बना, फिर भी बोली - 'माता जी आपकी औलाद तो है न आपके साथ। जो हमारे नसीब में होगा, हम भी भुगत लेंगे।'

'मेरे सवाल का यह जवाब नहीं है बहू... औलाद का क्या सुख देख रही है तू , त्योहार पर भी औलाद कभी साथ नहीं होती। दुःख में भी नहीं। सचिन एक महीने तक अस्पताल में रहा , जीवन मृत्यु से संघर्ष करता रहा, क्या निखिल का फर्ज नहीं बनता था, कि एक बार को आकर देख जाता।' माता जी ने अपना प्रश्न दाग दिया।

'माता जी दिन में तीन बार फोन आता था उसका, पल पल की जानकारी रख रहा था वह। विदेश में स्वयं को स्थापित करना इतना आसान नहीं होता माता जी।'

'ठीक कहती है बहू , विदेश में स्थापित होना आसान नहीं होता, अब तू ही बता कि बच्चे विदेश जाते ही क्यों हैं, गंभीर वजह कुछ तो होगी?'

'गंभीर वजह यही है कि उन्हें जब अपने देश में उनके उपयुक्त काम नहीं मिलेगा, तो विदेश में तो जायेंगे ही।' अमीषा ने अपना पक्ष रखा।

'वजह यह नहीं है, जो तू बता रही है, वजह है भौतिक साधनों की गुलामी, ऐशो आराम की जिंदगी, विदेश में बच्चे रहेंगे, तो अपने उत्तरदायित्वों से बचे रहेंगे। माँ बाप कितने ही कष्टों में रहें, सिर्फ फोन करके उनकी कुशलक्षेम पूछ लेंगे और अपने आपको श्रवण कुमार सिद्ध करने का प्रयास करेंगे।' माता जी अपनी बात पर अडिग थी।

'माता जी आपका निखिल ऐसा नहीं है, वह रिश्तों की कद्र करना जानता है।

पूरे धार्मिक आचार विचारों वाला है आपका पोता, विदेश में जाकर भी अपनी कल्चर को नहीं भूला है।' अमीषा ने निखिल के पक्ष में माता जी को समझाया।

'तुझसे बहस करने का कोई फायदा नहीं है। मेरा कहना है कि घर में क्या कमी है , जितने भौतिक साधन वह अमेरिका में नहीं जुटा सकता, उससे अधिक भौतिक साधन अपने यहाँ भी हैं, वहां उसे जितना पैसा मिल रहा होगा, उससे अधिक पैसे अपने यहाँ भी हैं। वह तो यहाँ से भरी थाली को लात मारकर गया है। केवल इसलिए कि न तुम्हारे बीच रहेगा, न ही उसे जिम्मेदारियां निभानी पड़ेंगी। संयुक्त परिवार के झमेलों से बचने के लिए ही तो उसने पलायन किया है।' माता जी का तर्क अमीषा झुठला भी नहीं सकती थी।

'माता जी आप कुछ भी कहें , मैं निखिल में ऐसी कोई बुराई नहीं देखती।'

बेटे के प्रति माँ की भावना अमीषा के चेहरे पर उभर आई थी, वह भीतर ही भीतर झुंझला रही थी, किन्तु माताजी के सम्मुख अपनी झुंझलाहट व्यक्त करने की हिम्मत नहीं थी अमीषा में।

'अमीषा .... माँ का हृदय ही ऐसा होता है, जिस संतान को नौ महीने कोख में पाला हो तथा पैदा होने पर अपना सर्वस्व उसी की परवरिश में लुटा दिया हो, वह अपनी संतान की बुराई भला कैसे सहन कर सकती है, मगर भारतीय दर्शन आत्मीय रिश्तों को महत्ता देता है। संतान सुख को सर्वोत्तम सुख मानकर कोई भी दंपति अपनी संतान के सुख के लिए ही अपना सब कुछ दांव पर लगा देता है। भले ही वह अपनी संतान से कोई अपेक्षा नहीं करता, किन्तु मन के किसी कोने में यह भावना अवश्य रहती है कि संतान उसके बुढ़ापे की लाठी बनेगी।' माता जी ने अपने तर्क में भारतीय दर्शन की परंपरागत अवधारणा को भी सम्मिलित कर लिया था।

अमीषा समझ नहीं पा रही थी कि माता जी के सवालों का सामना कैसे किया जाए। एक ओर माता जी परिवार और समाज की परम्पराओं का हवाला देकर निखिल के विदेश प्रवास को गलत ठहराने पर तुली थी, दूसरी ओर पुत्र की समृद्धि एवं पुत्र की इच्छाओं को अनदेखा भी नहीं किया जा सकता था।

यकायक अमीषा को न जाने क्या सूझी, वह किचिन में चली गई तथा माताजी की पसंद के अनुसार चाय बना लाई। माता जी के सम्मुख चाय रखते हुए अमीषा ने कहा - 'माता जी, मैं तो इसी बात से प्रसन्न हूँ, कि कोई तो है मुझे भी माँ कहने वाला। परिंदे तो हम सभी है। सभी को एक दिन प्रयाण करना ही है।

यदि निखिल उड़कर विदेश चला गया , तब भी क्या हर्ज है? वह मुझसे रोज बात तो करता है। मैं इसी में प्रसन्न हूँ। आजकल वैसे भी संचार माध्यमों ने सारी दूरियां मिटा दी हैं, चिट्ठी-पत्री की बातें अतीत के प्रसंग बनकर रह गई हैं ।' माता जी मुस्कुराई - 'बहू तू ठीक कहती है, परिंदे तो होते ही उड़ने के लिए हैं।'

शास्त्री भवन, ब्रहमपुरी, मेरठ-250002
मो. 0 97583 41282

सुदेश दीक्षित की ग़ज़लें

कच्चे घर

तुम्हारी राह में कच्चे घर नहीं आते,
तभी फ़कीर तुम्हें नज़र नहीं आते।

शरमाने की दाद दूं या मुस्काने की,
कहने को सनम शब्द नज़र नहीं आते।

इस कदर टूट कर चाहा है दिल ने
तभी तो जहां के ताहने नज़र नहीं आते।

सच बोलना बुरी आदत है हमारी,
झूठ बोलने के बहाने नज़र नहीं आते।

पिला दी तूने 'दीक्षित' को आंखों से,
मदहोश हैं इतने मयखाने नज़र नहीं आते।

हर हाल

आएं मुश्किलें तो लड़खड़ाने से क्या होगा,
जीना पड़ेगा हर हाल में मरने से क्या होगा।

तुम्हारी हार में गैर नहीं अपने शरीक थे,
वो जीते क्यों कर यह सोचने से क्या होगा।

ख्वाब आते हैं खुली आंखों में अक्सर,
करवट बदल बदल सोने से क्या होगा।

मिल कर चांद पर रौब डालें तो बात बने,
इक जुगनू हूं मेरे टिमटिमाने से क्या होगा।

'दीक्षित' के आगोश आकर शरमाओ तो दाद दें,
गैरों के आगोश में बैठ शरमाने से क्या होगा।

दीक्षित निवास, पन्तेहड़, डाकघर घरथोली (बैजनाथ),
जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 125,
मो. 0 94182 91465

कहानी

ठौर कहां

◆ गंगाराम राजी

रोशन जो कभी अपने परिवार की रोशनी का पुंज हुआ करता था, जिसकी पूछ घर-बाहर,आस-पड़ौस, गांव-शहर सब जगह होती थी, जिसके हुक्म के बिना घर में एक पत्ता तक नहीं हिलता था, आज वह घर के एक कोने में उदास सा बैठा है। समय जो अपने आगे किसी की भी नहीं चलने देता, बड़े बड़े इस संसार में हुए सबको समय के आगे अपने घुटने टेकने पड़े। यहां तक कि भगवान के कहे जाने वाले कृष्ण भी अंतिम समय में समय के आगे विवश हो गए थे। रोशन तो इस संसार का एक छोटा सा प्यादा जो ठहरा, या यूं समझा जाए कि इस समय के आगे वह किस खेत की मूली है।

जब किसी का समय अच्छा आता है तो वह कभी भी नहीं सोचता कि उसका यह समय कभी तो उसका साथ छोड़ ही देगा। रोशन की जब तूती बोलती थी तो उसने कभी नहीं सोचा था कि एक दिन वह अपने ही घर में एक कोने में असहाय सा पड़ा रहेगा। वह वहीं पर बैठा आए दिन अपने बीते दिनों को याद करता रहता।

घर में सबसे बड़ा होने और उसकी मेहनत के कारण से सारे घर का रख रखाव, खान पान से लेकर घर की प्रत्येक बात में उसकी ही हिस्सेदारी होती थी। सब पर वह हुक्म चलाता, सब उससे डरते थे उसका मान सम्मान करते थे। इस मान सम्मान का भी अपना ही नियम है, यह आदमी की ताकत पर निर्भर करता है। जितना कोई ताकतवर होगा उतना ही मान-सम्मान का पैमाना भी होगा। मान-सम्मान का यह फार्मूला घर और बाहर दोनों जगह पर लागू होता है। घर में इसका दायरा घर की चार दीवारी में ही है और बाहर समाज में इसका विस्तृत दायरा है। जितना बड़ दायरा होगा उतना ही आदमी को अपने मान सम्मान के लिए प्रयत्न भी करना ही पड़ता।

यह बात रोशन अब समझने लगा था। जब वह कुछ ढलने लगा या कमजोर होने लगा था। कमजोर तो वह उस समय ही हो गया था जब उसकी पत्नी भी भर जवानी में उसका साथ छोड़ इस संसार से चली गई थी। वह उस समय ही टूटने लग गया था।

अब रोशन की स्थिति एक कोने में पड़े रहने के अतिरिक्त कुछ नहीं रही थी। अब वह कुछ कमाता नहीं था जिससे उसका परिवार उस पर निर्भर रहता बल्कि वह स्वयं अब अपने बच्चों पर निर्भर हो गया था। जो उसने अपने समय में कमाया, घर ,जायदाद, अपार संपत्ति सब घर वालों को ही दे कर स्वयं शक्तिहीन हो गया था। अब उसका किसी पर कोई कंट्रोल नहीं था। वह अपने पुराने दिनों को याद करता, उसे घुटन सी हो जाती और गुस्सा भी आने लगता। लेकिन वह गुस्सा भी करे तो किस पर? किसी पर भी उसके गुस्से का असर तो होता नहीं था केवल अपने को जलाना होता और तब उसे अपनी पत्नी बहुत याद आती।

अपनी पूछ घर में कम होने से जो गुस्सा उसे आता तो अपने दिनों को याद तो करता ही था साथ में अपना ब्लड प्रैशर भी बढ़ा लेता। हमारे शरीर की प्रक्रिया ही ऐसी बनी है कि जैसे जैसे आदमी में तनाव आता है उसके शरीर में उस तनाव का सामना करने की शक्ति समय के साथ क्षीण हो जाती है क्योंकि घर में दूसरे सदस्यों में ताकत की मात्रा बढ़ती जाती है और वे भी कुछ न देखते हुए अपने समय में सब मान सम्मान भूल जाते। रोशन सोचने लगा था कि उसने कभी भी अपने बुजुर्गों के मान सम्मान को ठेस नहीं पहुंचाई फिर भी अगर कोई मत भेद हो भी जाता तो वह उन्हें समझाने की कोशिश करता था। अब तो पूरा ही उल्टा पुल्टा बनता जा रहा है। आप स्वयं समझ सको तो ठीक है नहीं तो एक कोने में बैठे रहो और कुढ़ते रहो। वह गुस्सा भी करे तो क्या उसका प्रभाव ही कुछ नहीं। जब आदमी की अहमियत कम होने लगती है तो उसकी हर बात का प्रभाव भी उसी मात्रा में घट जाता है। यह बात वह अच्छी तरह से जान गया था।

पत्नी जब थी तो वह उससे अपने दुख सुख तो बांट लेता, दुख तो बांटता था ही बच्चों का रोष भी वह पत्नी पर ही उतारता था। अब वह किस पर गुस्सा करे, किस से वह अपना दुख सुख बांटे ? पत्नी ने उसका घर दो लड़के और एक लड़की के साथ भर दिया था। एक के बाद जब दूसरा भी लड़का हुआ तो वह सारे मोहल्ले में अपने को भाग्यशाली समझने लगा था। बेटी की लालसा में उसके दो लड़के हो गए और आखिर कार एक लड़की जब हुई तो उसने नसबंदी करा ली थी।

लड़कों को खूब लाड-प्यार से पाला गया। सारे घर में रौनक, बच्चों की अठखेलियां, शरारतें, टूटी फूटी तोतली बोली में बच्चों के उच्चारण का दोनों आनन्द लेते और बच्चों में जब भी समय लगता दोनों लगे रहते। वे अपने को भाग्यशाली समझते। सारा घर खुशियों के हिंडोले झूलता रहता। बस वह दिन याद आते ही उसे बच्चों के बचपन की तस्वीर सामने आने लगी।

जब भी रोशन काम से लौट कर आता तो सब बच्चे उसके पास दौड़ कर आते।

'' पापा आ गए पापा आ गए।'' कहते हुए रोशन पर एक ऊपर चढ़ जाता तो बड़े वाला उसकी बांह ही पकड़ लेता और बेटी को वह स्वयं ही कंधे पर बैठा लेता।

'' अरे नीचे उतरो अभी पापा को चेंज तो करने दो। हाथ मुंह धोने दो .... '' रोशन की पत्नी बोलती।

'' बस कर भागवान यह मेरा संसार है मुझे अच्छा लगता है। तुम चाहो तो तुम भी मेरे साथ लटक सकती हो ...... "और रोशन बड़े जोर से हंस देता।

'' बस इसलिए ही तो सब सर पर चढ़ा रखे हैं .... '' और वह कुछ बुड़बड़ाती हुई अंदर रसोई की ओर चली जाती।

वह बच्चों कि हर जिद्द को पूरा करता। उसकी पत्नी इस बात पर उससे नाराज भी होती, ''आप इनकी सब जिद्दें पूरी करा करो तो एक दिन पछताओगे जब इनकी एक डिमांड से दूसरी डिमांड बढ़ती जाएगी।''

'' तब की तब देखी जाएगी। अब जो कर सकते हो करो , कल का क्या होगा, भागवान। मैं तो वर्तमान में जीना जानता हूं।''

'' तुम इनके खाने से लेकर इनके पहनने तक की इनकी जिद्द पूरी करते हो, अपने पांव की चप्पलें देखी जिसके स्ट्रैप तार से जोड़ कर रखे हैं और फिर रात को कहते हो कि तार अंगूठे में चुभ गई है।''
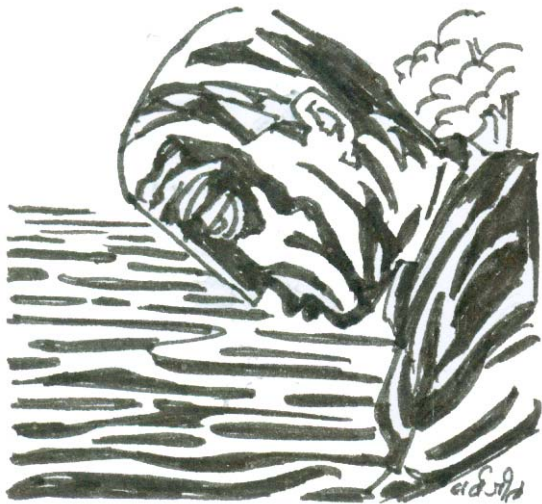
'' भागवान अपने दिन तो लद गए हैं अब इनके दिन आए हैं। जो बातें मेरे बचपन में मुझे चुभती रही हैं वह बातें मेरे बच्चे तो न भुगतें। ''

'' बच्चे ने बूट मांगे थे कोई और बूट ही ले लेते वही लिए जिस पर उसने अपनी अंगुली रखी थी। फिर एक को नहीं सब को ले लिए और वह भी उधार। तीन महीने लगे थे पैसे चुकाने में।''

'' तुम नराज मत हो भागवान। एक को लेता तो दूसरे नहीं नाराज होते। बच्चे तो बच्चे ही हैं। ''

'' बच्चों को अपनी हैसियत का भी एहसास होना चाहिए। उन्हें धरती पर रहना सिखाओ।''

'' तुम से तो बहस ही नहीं कर सका। बच्चों की खुशी में मुझे भी खुशी मिलती है। यह मेरा स्वार्थ भी तो है। चल कुछ और गप्प शप्प मारते हैं।''

पत्नी की याद आते ही वह दूर देखने लग गया था। और सोचने लगा कि अच्छा है उसे यह दिन न देखने पड़े जो वह आज भोग रहा है नहीं तो बहुत दुखी होती। अपनी स्थिति को याद करते हुए उसकी आंखों में आंसु आ गए थे। हाथ की अंगुलियों से उसने आंसु पोंछे।

कई बातों को वह इसलिए भी नजर अंदाज कर देता कि सब दिन एक से नहीं रहते। यह जानते हुए भी इसकी ओर कोई ध्यान भी तो नहीं देता परन्तु जब परिवर्तन आता है तो ख्याल आता है कि सब परिवर्तनशील ही है। प्रकृति का नियम ही है तो वह भी क्या करे। अपने माता पिता का ध्यान आते ही सोचता कि उसने तो कभी भी उनके साथ इस तरह का व्यवहार नहीं किया था। जबकि वह जमाना गरीबी का रहा था। सब बातों के साथ माता पिता परिवार के सदस्य समझौता तो कर ही लेते थे।

उसकी पत्नी युवा अवस्था में ही भगवान को प्यारी हो गई थी। जिंदगी के रास्ते में उसे अकेला छोड़ गई थी। वह चाहता तो अपने सुख के लिए दूसरी पत्नी भी ला सकता था। परन्तु उसने यह सब बच्चों के लिए नहीं किया। तब से लेकर आज तक वह अपनी पत्नी को याद करता रहा। उसका अभाव उसे खटकता रहा और बच्चों को अपनी मां की कमी कभी भी महसूस नहीं होने दी। उन्हें खाना बनाने से लेकर नहलाना, कपड़े बदलना, स्कूल के लिए तैयार करना , सुबह चार बजे से लेकर रात दस बजे तक वह खपता ही रहता था और इस पर अपनी सरकारी नौकरी का ख्याल करना वह अलग।

बड़े लड़के को तो अपनी मां की नौकरी मिल गई थी। दूसरा लड़का बिज़नेस में पड़ा था। उसका बिज़नेस अच्छा क्या चला वह अलग बाप से दूर इसी शहर में रहने लगा था जो उसको अच्छा नहीं लगा था। उसके ससुराल वाले उसके गाईड बन गए थे अब

वे उसके नए मां बाप जो बन गए थे।

लड़की की शादी उसकी पत्नी के समय ही सबसे पहले कर दी गई थी। वह अपने घर में ठीक ढंग से सैटल हो गई थी। आगे भी उसके बच्चे हो गए थे। दोनों पति पत्नी खुश थे। वह कभी कभी रोशन का ख्याल रखने के लिए उसके पास आ ही जाती थी। जब बेटी आती तो उसे राहत अवश्य मिलती। परन्तु बहू को उसका आना अच्छा नहीं लगता। वह सब जानती थी इसलिए वह भी कभी कभी अपने पापा का ख्याल रखने के लिए दिन दिन में चक्कर लगा कर चली जाती थी। उसकी अपनी भी तो गृहस्थी थी।

दोनों भाई अलग अलग रहने लगे थे। बाप की दोनों को एक करने के लिए कुछ भी नहीं चली। वह चाहता था कि सब एक साथ ही रहें पर उसकी कौन मानता। अब तो उसकी स्थिति उस झाड़ू की तरह हो गई थी काम लेने के बाद उसे एक कोने में इस तरह से रखते हैं कि उस पर किसी की नजर न पड़े और जब जरूरत पड़े तो उसका उपयोग तुरन्त करके उसे अपने स्थान पर रख देते हैं।

रोशन अब कमजोर क्या होने लगा था उसे कई प्रकार की आपदाओं ने घेरना आरम्भ कर दिया था। सबसे बड़ी मुश्किल उसे सांस लेने में और रात को खांसने में आने लगी थी। वह अपने बिस्तर पर सारी सारी रात बैठ कर गुजारता। जरा सी नींद आने लगती कि खांसी आ जाती। यह खांसी उसकी बहू को अखरती थी। टी वी पर एड, एफ एम पर खांसी की एड, वह भी अमिताभ बच्चन की कि 'बड़ी देर की खांसी जानलेवा हो सकती है, टी बी हो सकती है जांच कराओ' जिस दिन से उसने यह एड देखी है उस दिन से वह अपने बच्चों को दादा के पास नहीं जाने देती। उन्हें समझाती रहती कि 'दादू बिमार है इनसे दूर रहना चाहिए'।

पोते रोशन के मन बहलाव का स्रोत थे उसे अपने पोतों के साथ कुछ समय बिताना अच्छा लगता था, जिससे उसे अपने बच्चों के दिन भी याद आ जाते थे। अब तो वह भी उससे छूटने लगा था। उसे समझ नहीं आ रहा था कि बच्चे अब उससे दूर क्यों रहते हैं।

एक दिन उसकी बहू ने अपने पति से कहा, '' बच्चे अपने दादा के पास रहते हैं इनकी खांसी का टैस्ट तो करा लेना था। कहीं कोई भंयकर बिमारी तो नहीं।''

'' मेरे पास समय नहीं है। ऑफिस से ही बारी नहीं मिलती। तुम ही जाकर टैस्ट करा लेना। पास ही तो अस्पताल और लैब है।''

वह तो कह कर चला गया था परन्तु बहू रोशन के टैस्ट के लिए नहीं जा सकती थी। उसे तो अपने ससुर के साथ चलने में शर्म आती है क्योंकि वह सारे रास्ते खांसता रहता था। उसे तो आपने मम्मी पापा की राम कहानी से ही फुरसत नहीं मिलती थी।

रोशन आज अपने कमरे में बड़ा उदास बैठा अपनी पत्नी को याद कर रहा था। आज उसे बहुत ही उदासी लग रही थी। उसे अपनी पत्नी से जुड़ी प्रत्येक वस्तु उसकी याद दिला रही थी। तभी उसका पोता उसके पास आता है तो कुछ पल के लिए उसे राहत मिलती है। पोता तोतली जुबान में पूछता है,

'' दादू ती वी तूया होता है ?''

'' क्यों बेटा , यह एक भंयकर बिमारी है ...... ।''

'' आपतो क्या ती वी है ?''

सुन कर रोशन चुप हो गया दिमाग में कुछ कुछ होने लगा चुप ही रहा तो पोता बोलने लगा, '' मम्मा तहती है दादू के तास मत जाना बहुत बुरी बीमारी है दादू को, ती वी बिमारी।''

बस फिर क्या था। रोशन बहुत कुछ सह लेता था। अब उससे जब पोतों को भी दूर करने का षड्यंत्र रचा जाने लगा तो उससे रहा नहीं गया। उसने जल्दी से पांव में जूते डाले और घर से निकल गया। उसे जाते हुए बहू देखती रही उसने कुछ नहीं पूछा कहां जा रहे हो, क्या कर रहे हो वह चलता गया .... बहू द्वारा न पूछने की चोट भी उसे चुभने लगने लगी थी। ...... अब इस घर में उसकी ठौर नहीं ..... वह गया और पहुंच गया शहर के वृद्धाश्रम में।

बड़ी मुश्किल से वहां पहुंचा। सुस्ताने के लिए सीढ़ियों पर ही बैठ गया। कुछ अंदर जाने की हिम्मत नहीं हो रही थी। अपना परिचय वह देना नहीं चाहता था। परिचय देता तो उसे लगता कि उसके बच्चों की बेइज्जती हो जाएगी। वह अपना परिचय छुपाना चाहता था।

'' आप क्या यहां रहने आए हैं या किसी से मिलना है।'' एक भद्र पुरुष ने उसके सामने आ कर खड़े होकर पूछा। रोशन ने

बस फिर क्या था। रोशन बहुत कुछ सह लेता था। अब उससे जब पोतों को भी दूर करने का षड्यंत्र रचा जाने लगा तो उससे रहा नहीं गया। उसने जल्दी से पांव में जूते डाले और घर से निकल गया। उसे जाते हुए बहू देखती रही उसने कुछ नहीं पूछा कहां जा रहे हो, क्या कर रहे हो वह चलता गया .... बहू द्वारा न पूछने की चोट भी उसे चुभने लगने लगी थी। ...... अब इस घर में उसकी ठौर नहीं ..... वह गया और पहुंच गया शहर के वृद्धाश्रम में। बड़ी मुश्किल से वहां पहुंचा। सुस्ताने के लिए सीढ़ियों पर ही बैठ गया। कुछ अंदर जाने की हिम्मत नहीं हो रही थी। अपना परिचय वह देना नहीं चाहता था। परिचय देता तो उसे लगता कि उसके बच्चों की बेइज्जती हो जाएगी। वह अपना परिचय छुपाना चाहता था।

उसे देखा और कुछ बोलने से पहले ही वह फिर बोला, '' आप अंदर चलें , बाहर ठीक नहीं लगता है। आपकी तबियत तो ठीक है ?''

'' मेरी तबियत तो ठीक है। आते हुए थक गया था इसलिए यहीं सीढ़ियों पर बैठा हूं।''

उसके बाद रोशन उस भद्र पुरुष के साथ अंदर चला गया। अंदर जाते ही सामने की कुर्सी पर बैठा एक आदमी उठ कर रोशन को सलाम करता है।

'' आप अंकल यहां कैसे ?'' उस भद्र पुरुष ने पूछा।

रोशन को लगा कि यह आदमी तो उसे जानता है अब इससे कैसे निपटा जाए। इसे इस बारे में तो पता ही नहीं चलना चाहिए नहीं तो इसके बच्चों की बेईजती हो जाएगी।

'' बस यूं ही आया था। बात दरअसल यह है कि मेरे एक परिचित ने यहां इस आश्रम में प्रवेश के बार में नियमों के बारे पूछा था।''

'' वह अंकल आप सारा अपने बेटे रोहित से जो पूछ लेते वह भी यहां पर प्रवेश के नियम के बारे पूछने आया था। कह रहा था कि किसी को यहां पर प्रवेश दिलाना है शायद आप भी उसी के लिए आए होंगे। ''

'' उसने तो मेरे से बात ही नहीं की, नहीं तो .... '' कह कर रोशन चुप हो गया। कुछ चुप होने के बाद बोला,

'' अच्छा बेटा चलूं वह तो पूछ ही गया है .... '' आगे रोशन से कोई शब्द ही नहीं निकल रहे थे। वह उठ गया और आश्रम से बाहर की ओर चल पड़ा।

अब रोशन की घर जाने की इच्छा नहीं थी। उसका बेटा भी यहां पर उसे प्रवेश दिलाने के लिए पूछ ही रहा था। वह तो स्वयं ही यहां अपने प्रवेश के लिए आया था। बेटे ने ही उसका काम कितना हल्का कर दिया है। वह भारी मन से चलता गया।

घर के रास्ते में झील पड़ती है। इस झील को लोग डैथ लेक भी बोलने लगे थे। यहां हर आए दिन कोई न कोई दुखी इसकी भेंट चढता आया है। रोशन भी वहीं पर एक पैराफिट पर झील की ओर मुंह किए हुए बैठ जाता है। कई बातों को याद करते हुए, कुछ सोचते हुए उसे एक घंटे से भी ऊपर हो गया था। कोई उसकी खबर लेने नहीं आया। सोचने लगा कि दुखी लोग इस झील की शरण में तो आते ही हैं। यहां पर चिर समाधि मनुष्य को मिलती है। आदमी से लेकर देवता भी इस झील में जल समाधि लेते हैं। गणेश को इस पानी में समाधि लेने का पर्व चल रहा है। कितने अच्छे दिन हैं। यहां पर सब दुखों का निवारण है। क्या उसका भी इसी में ठौर है?

राज महल, पुराना बाजार, सुंदरनगर, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश। मो. 0 94180 01224

कविता

देश का भूगोल

◆ **कुलभूषण कालड़ा**

कहते हैं
इतिहास स्वयं को
दोहराता है
मगर आज देश
न जाने कौन सा
इतिहास दोहराने लगा है
कि इस का भूगोल
बिखर बिखर जाने लगा है
यहां दूधिया नदियों का
अकाल है अब
निर्दोष लहू नित बहने से
नदियों का रंग
लाल है अब
यहां के मैदान
ऐसे कुरुक्षेत्र बन गए हैं
जहां कौरवों से ही
कौरवों की लड़ाई चलती है
और ऐसे में रह रह कर
पांडवों की कमी/ बहुत खलती है
यहां के पर्वत
नित नई समस्याओं के
वह पर्वत हैं/ जो निरंतर
अपने पत्थर गिरा रहे हैं
और लोगों के घाव हैं
कि मुस्करा रहे हैं
यहां के नाले/ उन सबकी
पीड़ा के नाले हैं
जिनकी आंसु भरी हैं
आंखें और/ पांवों में रिसते छाले हैं
कोई कहे
अब कब तक पाले
ऐसे मैदान, ऐसे पर्वत
ऐसी नदियां/ ऐसे नाले।

27, मजीडिया एन्कलेव, फेज़-दो, निकट फ्लैट्स, 24 नं. फाटक रोड, पटियाला, पंजाब-147 001, मो. 0 98142 45174

कहानी

मिलन

◆ कृष्ण चंद्र महादेविया

पहाड़ पर बसा शहर, कहीं जंगल भी बचा हुआ था। एक किनारे पर विश्वविद्यालय भी था। विश्वविद्यालय से पीछे करीब सौ मीटर की दूरी पर प्रसिद्ध महाविद्यालय था जहां जानी मानी खिलाड़ी रही मैडम माथुर प्रिंसिपल थी। विश्वविद्यालय को लताओं से सज्जित पहाड़ी के बीच से गुजरती सड़क किसी दुल्हन की तरह लगती थी। हवा के साथ पेड़ और बेलों के पत्तों की खरमस्तियां और कभी बन्दरों की खीऊ-खीऊ, लम्बी कुलांचे, मुनाल, खख्यार, जंगली मुर्गों और किसी अन्य पक्षी के कर्ण प्रिय स्वर, वण्य प्रांतर से सी-सी सिस्कारियां मन-मस्तिष्क को भिगो-भिगो जाती थीं। शहर से विश्वविद्यालय तक के इस सड़क मार्ग को नाम दिया गया था मस्त मार्ग। किन्तु यह मस्त मार्ग कई बार सुनसान भी रहता था।

ठक-ठक-थक-थक की विपरीत दिशाओं से आती पदचापें सहसा रुक गईं। आह! का स्वर सुनसान वातावरण में दूर तक गूंज गया था। युवती का हील एड़ी से पांव पलटा था।

''कहीं चोट तो .... ।'' पुरुष ने वात्सल्य से सनी मुस्कान बिखेरते कहना चाहा था। चोट अधिक न थी, युवती ने पांव के दर्द की परवाह किए बिना सीधा होकर उपेक्षा भरी निगाह से पुरुष को देखा, फिर गालों तक कटे बालों को एक झटका दिया और शहर की दिशा की ओर बढ़ गई। उसका नाम प्रीति था। हील एड़ी की ठक-ठक दूर तक सुनाई देती रही थी। पुरुष का नाम था विजय प्रताप सिंह, वह कंधे में लटके बैग को सीधा करते विश्वविद्यालय की ओर सस्मित बढ़ गए। युवती में उन्हें अपने अक्स की झलक दिखाई दी थी। उन्हें लगा था कि इस सुनसान किन्तु प्यारे से मार्ग पर युवती का व्यवहार अच्छा था। यहां अजनबी से इसी तरह के व्यवहार की अपेक्षा आवश्यक थी। मस्त मार्ग यद्यपि सुनसान भी था किन्तु यहां किसी संकीर्ण घटना का आजतक कोई जिक्र नहीं मिलता। कॉलेज के युवतियां-युवक प्रायः यहां से अकेले या समूहों में आते-जाते थे। अधिकांश विद्यार्थी प्रायः शहर के लिए पहाड़ी के दूसरी ओर के व्यस्त रास्तों का ही प्रयोग करते थे। निडर युवतियां व प्राध्यापिकाएं अकेले व डरपोक समूहों में यहां से गुजरती थीं। उनकी मुक्त हंसी, वार्तालाप और ठिठोलियां दूर तक गूंजती थीं। प्रेम के धागे में बंधे अनेकों युवक-युवतियां अकेले-अकेले सुध-बुध खोए बतियाते एकांत में मस्ती से निकलते थे। शोध कार्य में जुटे नौजवान युवक-युवतियों के वार्तालाप और फक्कड़पने पर तो पहाड़ी भी मुग्ध रहती थी। कभी-कभार कुछ एक छात्र-छात्राएं सड़क के किनारे किसी पेड़ के नीचे आराम से बैठे रहते और मौज से बहस करते या गीत गाते थे। शायद मस्त मार्ग का नाम मस्त मौले नौजवान छात्रों को देखकर ठीक ही रखा था।

ठक-ठक दो जोड़ी जूतों का बराबर स्वर दूर से सुनाई देने लगा था। शहर की ओर जाते विजय प्रताप सिंह ने युवा स्वर सुन चश्में को नाक पर ठीक कर सामने नजरें उठाईं तो देखा प्रीति अपनी सहेली से बतियाते विश्वविद्यालय की ओर जाने लगी थी। चवालीस-पैंतालीस पार किए विजय प्रताप सिंह की वेशभूषा और व्यक्तित्व ही कुछ ऐसा था कि न चाह कर भी लोगों की उनकी ओर नजरें उठ जाती थीं। प्रीति की निगाहों से उनकी निगाहें मिलीं, वात्सल्य से भरी मधुर मुस्कान उनके ओंठों पर रेंग गई किन्तु प्रीति भवें सिकोड़ उपेक्षित नजरें करके आगे बढ़ गई थी। उसकी सहेली ने दोनों की निगाहें मिलते और विपरीत व्यवहार पर कोई टिप्पणी न कर गम्भीरता ओढ़ ली थी। उसका नाम शालु था।

युनिवर्सिटी के समीप महाविद्यालय में विज्ञान, वाणिज्य, कला आदि वर्गों की कक्षाओं में सैंकड़ों शिक्षार्थी अध्ययन करते थे। एकड़ में फैला महाविद्यालय का वातावरण पूरे प्रदेश के लिए अनुकरणीय माना जाता था। बल्कि बाहर के मुल्कों के छात्र-छात्राएं भी यहां पढ़ाई करते देखे जा सकते थे। महाविद्यालय की पूरी इमारत अनुशासन से बनाई गयी थी। शिक्षा संस्थान कार्यालय, क्रीड़ा-स्थल, पुस्तकालय, इन्डोर स्टेडियम, प्रयोगशाला, उद्यान सभी आदर्श के नमूने थे।

पुस्तकालय की बगल में इंडोर स्टेडियम था जिसमें जिम्नास्टिक्स व अन्य खेलों के साथ रंगमंच, अन्य कक्षों के साथ

करीब सात-आठ हजार व्यक्तियों के बैठने की व्यवस्था भी थी। तरह-तरह की प्रतियोगिताओं के साथ गोष्ठियां-सम्मेलन, संगीत-नाटक के कार्यक्रम प्रायः यहां चलते रहते थे।

विजय प्रताप सिंह और प्रोफैसर लता ठाकुर साथ-साथ बतियाते हुए पुस्तकालय की ओर जाने लगे थे। इंडोर-स्टेडियम के बाहर खुले-हरियाले मैदान में प्रीति अपनी करीब बीस साथियों के साथ कराटे की ड्रैस में व्यायाम करने लगी थी। फिर अपनी ब्लैक बैल्ट ड्रैस में बांध प्रीति ने सभी को चार पंक्तियों में खड़ा कर कर्राटा कराना शुरू करवा दिया उनका कर्राटा पूरा हुआ ही था कि विजय प्रताप सिंह और लता ठाकुर उनके करीब पहुंचे।

''प्रीति, स्टेडियम में प्रैक्टिस करो।''

''जी मैडम, आप आ रही हैं? ''

''हां, आधे घण्टे में।''

विजय प्रताप सिंह की सस्मित निगाहें फिर प्रीति से मिली किंतु प्रीति फिर उस स्नेहिल मुस्कान का गलत अर्थ निकाल उपेक्षा दर्शाते स्टेडियम की ओर चली गयी।

''प्रोफैसर सिंह जी?''

''अं ऽऽऽ हां-हां, कहिए मैडम लता जी, ''विजय प्रताप सिंह जैसे नींद से जागे हों। वह एकाएक कहीं खो गए थे।

''जिसे मैंने प्रीति पुकारा, वह है तो विज्ञान की छात्रा किन्तु अभिनय और कराटे में बहुत ही निपुण हैं। निडरता और दयालुता उसमें जैसे कूट-कूट कर भरी है।''

''क्या बात है। वैसे वह चेहरे से स्वाभिमानी भी दिखती है।

किसकी बेटी हैं ?'' थोड़ा रूक कर लता ठाकुर की ओर देखते प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह ने पूछा।

''अधिक तो नहीं जानती पर इसकी मां सुधा कभी मेरी क्लासमेट थी।'' रुकते हुए लता ठाकुर बोली।

''कहीं सुधा गुप्ता तो नहीं ?''

''यस, यू आर राइट, बट स्कूल टाइम शी वाज मोस्ट पराऊडी। समबॉडी टोल्ड शी, शी डिड नॉट रिफॉर्म हर बिहेवियर ड्यूरिंग एन्टायर लर्निंग सैशन। लोगों का कहना है इसी कारण उसके स्कूल लैक्चरर पति उससे अलग रहते हैं। बट व्हाट इज़ राइट और रौंग आई डौंट नो सर।'' लता ठाकुर ने कंधे हिलाते कहा। विजय प्रताप सिंह केवल मुस्कराए बोले कुछ नहीं। उनके हृदय में उथल- पुथल होने लगी थी। अनेक बार प्रीति उनकी आंखों के सामने आ जाती थी। उनका दिल तब मीठे-मीठे अहसास से कुछ ज्यादातर ही धड़क-धड़क जाता था। विजय प्रताप सिंह हिन्दी अनुभाग की ओर और लता ठाकुर शारीरिक शिक्षा अनुभाग की ओर चले गए।

विजय प्रताप सिंह पीरियड लगाने के उपरान्त पुस्तकालय में आ गए। एकांत में मेज पर बैठे-बैठे उन्हें स्वाभिमान से भरी बालों को झटकती प्रीति उनकी नजरों में बार-बार आने लगी थी। उनके वक्षस्थल में सांस की गति असामान्य हो गई थी। यद्यपि वह बार-बार ध्यान हटाने का उपक्रम करते थे किन्तु जो तन लागे सो तन जाने। जब मन नहीं सम्भला तो वे पुस्तकालय से बाहर आ गए। उनकी क्लासेज भी नहीं थी। वैसे अवकाश का समय भी हो गया था। उधेड़ बुन में डूबे वे मुख्य द्वार को पार कर मस्तमार्ग की ओर शहर जाने बढ़ चले थे।

सड़क के किनारे पेड़ के नीचे खड़े चार-पांच युवकों के जोर-जोर से हंसने की आवाजों से प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह चौंके, उनकी नजर युवकों पर पड़ी थी। युवक शहर की ओर जाती युवती पर फब्तियां कसते उसे डराने का उपक्रम करने लगे थे। युवती डरी-डरी एक ओर खड़ी हो गयी थी। वह किसी सहारे की तलाश में खड़ी हो इधर-उधर देखने लगी थी। विजय प्रताप सिंह कंधे पर लटके बैग को सीधा कर उनके पास से गुजरे तो युवती भी उनके साथ हो ली। सभी युवक कॉलेज के छात्रों में से ही थे। एक ने फिर से लड़की पर सड़क छाप मुहावरा कसा। विजय प्रताप सिंह पीछे घुमें और एक दादा दीखते युवक को घूर कर कहा-

''यस! क्या हो रहा है?..... क्या कहा तुमने?''

''आपसे मतलब?... आपकी बेटी तो नहीं है?'' च्यूइंगम चबाते बेशर्मी से युवक बोला।

''चक दे पाण्डे।'' एक युवा के कहने के साथ ही दूसरे युवक हंसने लगे।

''हां, मेरी बेटी ही है।... पर तुम्हारी बहिन भी तो हो सकती है।'' शालीनता से विजय प्रताप सिंह बोले।

''ओए ऽऽऽ ! मेरी बहिन तक मत पहुंचो वर्ना....... ।''

''वर्ना ?... वर्ना क्या कर लोगे मनोज पाण्डे की औलाद।''

ऐनक जेब में रखते विजय प्रताप सिंह शेर की तरह गुर्राए। अचानक उनका पारा आसमान पर चढ़ गया था। वैसे वह कभी गुस्सा करते न थे। शायद ऐसा तभी होता है जब कोई अपना नजदीकी असभ्य हरकत कर देता है। अपना बैग कांपती युवती के हाथों में पकड़ाते हुए वह बोले-

''डरो नहीं बेटे। ऐसे सड़क छाप दादाओं से मेरा बास्ता बहुत पुराना है।''

युवती मन ही मन आतंकित थी। कहां चार-पांच हट्टे-कट्टे और कहां अकेले थे। वह प्रीति के लिए गुस्सा थे जो आज अकेले ही निकल गयी थी।

अपने बाप का नाम सुनने पर युवक थोड़ा झेंप गया था। वह पीछे हट गया किन्तु विजय प्रताप सिंह को घूरने लगा जैसे कच्चा चबा जाएगा।

''मिस्टर पाण्डे, अपने यौवन और शक्ति को प्रयोग अच्छे काम के लिए करोगे तो तुम्हें मुफ्त में वाह-वाही मिलेगी। अपनी ताकत का इस्तेमाल असहायों की सहायता और कमजोरों की रक्षा के लिए करोगे तो तुम्हें सन्तोष और वीरत्व का अहसास होगा। अकेली युवती पर शिक्षितों की ओच्छी फब्तियां कोई वीरता की बात नहीं है।'' सभी पर एक गहरी निगाह डाल कर विजय प्रताप सिंह तनिक रुके।

युवक कुछ शर्मसार तो एक-दो चिकने घड़े बने रहे। किन्तु पाण्डे नाम के युवक का चेहरा उतर गया था। यद्यपि वह युवकों के सम्मुख तड़ी दिखाने का प्रयत्न बराबर किए था।

''बेटा पाण्डे, यू आर ए टॉल-स्ट्रांग विद स्मार्ट बॉडी एण्ड एट्रैक्टिव लविंग फेस। क्या ही अच्छा हो तुम पढ़ने के साथ कसरत करो, खेलों में रुचि लो। डियर पाण्डे, यूअर पर्सनैल्टि रियली चार्मिंग, सी युअर स्टेटस एज़ यू आर अ सन ऑफ लर्नड एण्ड वैल नोन पर्सन। यू शुड चेइंज युअर बिहेवियर एडं अव्याड फ्रैंडशिप विद दैट फॅलोज व्हू आर नैरो मांइडिड एण्ड ब्लैक गाइज।''

विजय प्रताप सिंह के बोलने का लहजा ही कुछ ऐसा था कि उनके शब्द युवाओं को जैसे मीठे तीर की तरह चुभे। वे अब बगलें झांकने लगे थे। मस्तमार्ग की ओर मुड़ते विजय प्रताप सिंह पीछे देखते हुए बोले- ''अपने पापा मनोज पाण्डे को कहना, विजय प्रताप सिंह इक्कीस वर्ष बाद इस शहर में दुबारा आए हैं। समय मिलते ही कॉलेज की लाइब्रेरी में मिलें।''

सभी युवक चौंक से गए। पाण्डे जिसका नाम युद्धवीर पांडे था को अब काटो तो खून नहीं था। दूसरे युवक चुपचाप सिकुड़ कर रह गए थे। विजय प्रताप सिंह युवती के साथ मस्त मार्ग पर चलने लगे। उन्होंने बैग लेते हुए युवती का धन्यवाद किया।

''धन्यवाद तो मुझे करना चाहिए सर।''

''किस बात का बेटा?'' विजय प्रताप सिंह प्यार से बोले। अपनत्व भरे शब्दों को सुन युवती की आंखे भर आईं। किसी विपत्ति के समय जब कोई अचानक थोड़े प्यार के दो बोल भी कह दे तो आंखें स्वयं भर ही आती हैं। पता नहीं चलता आंसू क्यों निकल आए हैं।

''सर आप न आते तो ये लोग मुझे बहुत मानसिक पीड़ा पहुंचाते। न जाने कुछ युवकों को क्या हो गया है।''

''सब संस्कारों का बदलाव है। पर सब छोड़ो, क्या नाम है तुम्हारा ?''

''शालु, आप नए आए हैं सर ?''

''हां, हिन्दी भाषा का प्रोफैसर हूं बेटे। पन्द्रह सोलह वर्ष पूर्व स्कूलों में लैक्चरर था।'' जेब से ऐनक निकाल फिर पहनते विजय प्रताप सिंह ने कहा।

''हां, एक-दो बार तो इसी मार्ग पर आपको देखा था, आपके पास यही बैग था न?'' शालु अब सहज हो गई थी उसमें अब कोई डर न था। विजय प्रताप सिंह के साथ चलना उसे अच्छा लग रहा था।

''हां याद आया, तुम्हारे साथ वो प्रीति नाम की लड़की थी न, आज नहीं है?'' विजय प्रताप सिंह ने चलते-चलते पूछा।

''आज वह पहले निकल गई सर। हम दोनों क्लास मेट्स हैं और पक्की दोस्त हैं।''

''बहुत अच्छा, तुम लोग साथ-साथ रहते हो क्या ?..... उसके माता-पिता?'' विजय प्रताप सिंह बाल सुलभ जिज्ञासा से

''सर, मैंने अपनी मम्मी जी से सुना है कि पांच-छः मास तो प्रीति की मम्मी ने अपने पति की कोई परवाह नहीं की, उसने सोचा था कि वह घर लौट आएंगें किन्तु वह नहीं लौटे। फिर धीरे-धीरे उन्हें अपनी गलती का अहसास होने लगा। मम्मी जी कहती हैं आंटी जी के पास अपने पिता से मिली बहुत संपत्ति है जिस पर उन्हें बहुत घमण्ड था। कई लोगों ने उन्हें शादी के लिए अॉफर भी दी किन्तु उन्होंने ठुकरा दिए बल्कि उन लोगों को बुरी तरह फटकारा भी। बस प्रीति के पालन-पोषण में वे डूब गई। तब से वे न किसी से ज्यादा मिलती-जुलती हैं न बात ही करती हैं। केवल मम्मी के पास ही आती-जाती हैं। आज भी वे मम्मी के पास ही उठती-बैठती हैं।''

बोले। वे प्रीति और उसकी मम्मा के बारे में सब जानना चाहते थे।

''जी सर, मैं उसके पड़ोस में ही रहती हूं। वह अपनी मम्मी जी के साथ रहती हैं। उनका बहुत बड़ा मकान है।''

''शायद नीचे की मंजिले किराए पर दी होगी और ऊपर की अपने लिए रखी होगी।'' कहीं दूर खोए से विजय प्रताप सिंह के मुख से एकाएक निकला।

''मगर आपको पता कैसे है सर?''

''अं ऽऽ, हां ऽऽऽ। बेटा, यूं ही अंदाजा लगाया, देखो न लोग ऐसा ही तो करते हैं....... अच्छा, उसके डैडी?''

''सर प्रीति ने तो कभी बताया नहीं, पर मेरी मम्मी कहती हैं कि उसके मम्मी डैडी ने लव मैरिज की थी। उसके पापा निडर, स्वाभिमानी और परिश्रमी थे जबकि उसकी मम्मी पराऊडी और पैसे को सब कुछ समझती थी।'' शालु ने कहा और थोड़ा चुप हो गई। छोटे-बड़े बन्दर कुलांचे भरते उनके पास से निकलने लगे थे।

''फिर पति साहब अमीरजादी को छोड़ कर चले गए।''

''आप...... आप कैसे जानते हैं सर?'' हैरानी से शालु ने पूछा।

''बेटा, फिल्मों में तो ऐसा ही दिखाते हैं।'' मुस्कराने का प्रयत्न करते प्रोफैसर बोले। उन्होंने अपने चेहरे पर आती उदासी को रोक लिया था।

''किन्तु यहां फिल्म नहीं, सच है सर। उसके पापा अमीरी के आगे नहीं झुके बल्कि पत्नी से न लौटने को कह कर चले गए थे। उस समय प्रीति एक वर्ष की थी।...... बेचारी प्रीति।''

''शालु बेटे, प्रीति को अपने पापा की याद नहीं आती? हां ऽऽ उसने भी शायद अपने पापा से मिलने की कोशिश ही नहीं की होगी?''

''प्रीति अपने पापा को बहुत याद करती है सर। उसने तो उनके घर के पते पर अनेकों पत्र भी भेजे थे किन्तु वापिस आ गए थे। वह बहुत मिस करती है अपने पापा को।''

''ओह! यह तो प्रीति के साथ बहुत बुरा है, पर शालु बेटे उसकी अमीर मम्मी तो दूसरी शादी भी कर सकती थी।''

''सर, मैंने अपनी मम्मी जी से सुना है कि पांच-छः मास तो प्रीति की मम्मी ने अपने पति की कोई परवाह नहीं की, उसने सोचा था कि वह घर लौट आएंगे। किन्तु वह नहीं लौटे। फिर धीरे-धीरे उन्हें अपनी गलती का अहसास होने लगा। मम्मी जी कहती हैं आंटी जी के पास अपने पिता से मिली बहुत संपत्ति है जिस पर उन्हें बहुत घमण्ड था। कई लोगों ने उन्हें शादी के लिए ऑफर भी दी किन्तु उन्होंने ठुकरा दिया बल्कि उन लोगों को बुरी तरह फटकारा भी। बस प्रीति के पालन-पोषण में वे डूब गई। तब से वे न किसी से ज्यादा मिलती-जुलती हैं न बात ही करती हैं। केवल मम्मी के पास ही आती-जाती हैं। आज भी वे मम्मी के पास ही उठती-बैठती हैं।''

''वैसे प्रीति के पापा को ऐसा कठोर निर्णय लेना चाहिए था शालु बेटे? क्या पता वे भी अपनी बेटी और पत्नी को याद करते होंगे।'' चलते-चलते शालु की ओर स्नेह से देखते विजय प्रताप सिंह बोले।

''सर मैं क्या बता सकती हूं। किन्तु सर इक्कीस वर्ष से प्रीति की मम्मी जिस दिन प्रीति के पापा घर से गए थे उस दिन, दिनभर दरवाजे पर खड़ी रह कर उनका आज भी इन्तजार करती हैं।"

''ओह! वैरी सैड।...... प्रीति तो अपने पापा को पहचानती होगी कोई फोटो वोटो देखा होगा।'' उदास से प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह ने कहा। उनके भीतर कांटों की सी चुभन होने लगी थी। न चाहते हुए भी स्मृतियां एक एक कर उनके सामने आने लगी थीं। उनकी आंखों में बिरह के दर्द से आंसू आने को थे किन्तु पलके झपका कर उन्होंने सुखा लिए।

''नो सर, उसके पापा जाते-जाते अपने सारे एलबम फोटो ले गए थे। हां एक मात्र हमारे घर पार्टी में लिया गया उनका फोटो है, उसमें धुंधली सी आकृति दिखती है। प्रीति तो कई बार मिनटों वहां खड़ी-खड़ी फोटो को निहारती रहती है।'' शालु ने कुछ दर्द से कहा।

''वर्षों बीत जाने पर अब तो उसके पापा का चेहरा-मोहरा बदल गया होगा। तुम्हारे पापा तो बैंक में ही हैं?'' एकाएक विजय प्रताप सिंह के मुख से निकला।

''जी सर, पर आपको कैसे मालूम!'' हैरान होते शालु रुक कर प्रोफेसर विजय को देखते बोली। विजय प्रताप सिंह भी रुक कर शालु को स्नेह से देखते बोले-

''हैरान मत हो शालु बेटे, मैंने तो यूं ही कह दिया। अच्छा,

अब मेरा रास्ता आ गया है, तुम्हें भी जाना है।'' बात बदलने की कोशिश करते विजय प्रताप सिंह ने कहा।

''जी सर।''

शहर की शुरुआत थी। शालु और विजय प्रताप सिंह विदा कहते अपने-अपने रास्ते निकल चले। चलते हुए विजय प्रताप सिंह अपने मधुर दिनों की याद में खो से जाते थे। मधुर स्मृतियां- वियोग के दिनों में कांटे की चुभन बराबर देती चली जाती थी। वे अपने बाल नोचना चाहते थे और जोर जोर से रोना चाहते थे। इधर शालु भी कुछ हैरान होते चलने लगी थी।

कॉलेज का इन्डोर स्टेडियम पूरा भरा हुआ था। राज्य भर के महाविद्यालयों से कराटे कम्पीटिशन में अच्छे-अच्छे खिलाड़ी आए हुए थे। प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह अपने पीरियड लगाने के बाद लाइब्रेरी आ गए थे। कुछ अध्ययन के बाद जैसे ही स्टेडियम के दरवाजे की ओर बढ़े तो प्रोफैसर लता ठाकुर प्रीति सहित आठ-दस्स कराटेकाओं के साथ पहुंची।

''हलो सर।'' कहने के साथ ही लता ठाकुर मुस्कराई।

''हार्दिक शुभकामनाएं युअर एवरी पार्टस्पैंटस मे बी सक्सीडड मैम।'' मुस्कराते प्रोफैसर ने कहा तो उनकी निगाहें प्रीति से मिलीं। वही चिरपरिचित स्नेह से भरी मुस्कान उनके चेहरे पर थी किन्तु प्रीति का चेहरा भाव शून्य ही रहा।

''धन्यवाद।'' कहने के साथ ही लता ठाकुर कराटेकाओं के साथ प्रतियोगिता स्थल की ओर बढ़ गई।

कराटे कम्पीटिशन में कराटेकाओं का प्रदर्शन बहुत बढ़िया था। युवक युवतियां बहुत आकर्षक प्रदर्शन करते जाते थे। प्रीति व उसके साथियों का प्रदर्शन तो आशा से भी बहुत आगे अप्रतिम था। प्रीति के कातों और कराटे की अलग-अलग विधाओं के प्रदर्शन पर तो पूरा हाल तालियां पीटता था। वहां कम्पीटिशन देख रहे प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह प्रीति को मन ही मन विजयी होने का आशीर्वाद देते रहे थे। उनमें अजीब सी कंपकंपी उठ जाती थी कि कहीं प्रीति असफल न हो जाए। प्रीति सचमुच उम्दा प्रदर्शन

में सर्वश्रेष्ठ थी। पंच, ब्लॉक, किकिंग, काते सब सर्वश्रेष्ठ। जब ब्लैक बैल्टर युवक के साथ प्रीति की फाइटिंग शुरू हुई थी तो पूरा स्टेडियम मौन साधे धड़कते दिलों से फाइटिंग देखने लगा था। प्रीति, युवक के प्रत्येक पैंतरे का जबाब देते गजब की चुस्ती-फूर्ती, ब्लॉक-पर्चिंग कर सब की वाह वाही लूट रही थी। युवक भी कम न था। अन्ततः बराबरी पर मुकाबला छूटा था।

इन्डोर स्टेडियम में मार्शल आर्ट का प्रदर्शन जारी था। प्रीति व उसके साथी अपने समर्थकों के साथ बाहर आ गए थे। जबकि प्रोफैसर लता ठाकुर निर्णायक मण्डल में शामिल थी। बाहर लॉन में बधाई देने वाले सहपाठी और समर्थक बढ़ ही रहे थे। विजय प्रताप सिंह भी अपने को रोक नहीं पाए। यन्त्र चलित से वह प्रीति के पास पहुंचे। वह उसके सिर पर हाथ रखना चाहते थे किन्तु उनका हाथ प्रीति के कंधे पर झटके से लगा। पीछे से लगे धक्के से सम्भलने के लिए प्रीति पर भार पड़ने पर वह सकपका गई। मुड़कर उसने मुस्कराते प्रोफैसर को देखा तो उसका पारा एकदम आसमान पर चढ़ गया। प्रोफैसर के प्रति विचार बदलकर गुस्से के रूप में फूट पड़े। वह गुर्रायी-

''हाऊ डेयर यू मिस्टर स्टूपिड् व्हू आर यू एण्ड व्हाई यू टच माई शोल्डर ? नॉन सैन्स। लीव द प्लेस इम्मिडियेटली।''

छात्र-छात्राएं अब एकदम उन्हें घेरकर खड़े हो गए थे, वे कुछ नहीं समझ पा रहे थे। जो विजय कुमार सिंह को जानते थे वे दूर खड़े तमाशबीन बने थे।

''तुम्हारे संस्कारों में कमी रह गई है शायद प्रीति, जो अपने से बड़ों से इस तरह बात कर रही हो।..... मैं तो तुम्हें बधाई देने आया था। मेरे धक्का खाने से तुम्हें जो असुविधा हुई उसके लिए क्षमा चाहता हूं।'' शालीनता से विजय प्रताप सिंह ने कहा। उनके ओंठों पर स्नेहिल मुस्कान अब भी शेष थी। उनकी मुस्कान देखकर प्रीति और भी आग बबुला हो गई।

''जितनी बार आप मुझे मिले हैं मुझे देखकर आप मुस्कराते हैं, व्हाई? यूं कांट सी युअर एज एण्ड माइन।''

''प्रीति, स्टॉप, स्टॉप प्लीज। ये आर्टस के प्रोफैसर हैं और अभी ट्रांस्फर होकर आए हैं।'' दौड़ते आ रही शालु ने कहा था। वह मामले को शांत करना चाहती थी। किन्तु सहपाठियों और प्रीति के समर्थकों ने मामले को तूल देकर नारेबाजी-शोरगुल शुरू कर दिया। मामले से अन्जान छात्र-छात्राएं भी हुल्लड़ मचाने लग पड़े। फिर एकाएक शोर मच गया। प्रोफैसर ने छात्रा को छेड़ा है। प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह छिछले संवाद पर हक्के-बक्के रह गये थे। संकीर्ण मानसिकताओं के छात्र-छात्राओं का व्यवहार उन्हें भीतर तक पीड़ा और बेचैनी दे गया था। बात का बतंगड़ बना दिया गया था। अनेक छात्र-छात्राओं के जोर देने पर प्रीति प्रिसिंपल से शिकायत करने चली गयी। वहीं कुछ छात्रों ने प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह को भी प्रिसिंपल के पास चलने को मजबूर कर दिया।

शालु की आवाज शोरगुल में दब कर रह गयी थी।

विजय प्रताप सिंह और प्रीति द्वारा प्रिंसिपल के ऑफिस में प्रवेश करने पर और शोर-गुल नारे सुनने पर प्रिंसिपल बाहर आई। उन्होनें छात्र-छात्राओं से बातचीत कर, उन्हें समझा-बुझा कर भेज दिया। छात्रों के वहां से चले जाने पर ऐसा लगा मानों वहां कुछ हुआ ही न हो। यूं भी छात्र-छात्राओं को मैडम माथुर के कठोर स्वभाव और अनुशासन का पता था। प्रिंसिपल के कमरे के बाहर केवल शालु चुपचाप चपरासी के बैंच पर बैठकर प्रीति का इन्तजार करने लगी। उसे प्रीति की मूर्खता पर गुस्सा भी आने लगा था।

मैडम माथुर के आदेश पर प्रीति ने मस्तमार्ग से लेकर आज की घटना तक सब जानकारी कह सुनायी। गुस्से में अब भी उसके नथुने फूले थे। जबाव में प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह ने कहा-

''मैडम माथुर, मैं छात्र और प्राध्यापक के रिश्ते को भलि-भांति जानता हूं। न चाहते हुए भी किसी भली और अच्छी युवती को देखकर वात्साल्य और स्नेह से मुस्कराना अभद्रता कैसे है? आज मैं प्रीति के सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद देना चाहता था किन्तु पीछे से लगे धक्के से मैं अपना सन्तुलन नहीं रख पाया। इसका मुझे खेद है। शायद मुझे किसी और वक्त बधाई देनी चाहिए थी।''

प्रीति झट बोल पड़ी-

''आई हैव नो नीड फॉर युअर ब्लैसिगज़। मैडम यू टेक एक्शन अंगेसट दैट मैन। अदर वाइज आइ बिल राइट टू हायर अथॉरिटी एण्ड पुलिस। एक प्रोफैसर को इस तरह का व्यवहार शोभा नहीं देता।'' प्रीति के आंसू निकल पड़े। शायद ये उसके भीतर भर आये क्षोभ-गुस्से के कारण ही निकले थे। फिर वह सामान्य होकर पुनः बोली-

''मैडम, मैं अपनी रक्षा करने में पूरी सक्षम हूं किन्तु मैंने जो कला सीखी है उसका प्रयोग सबसे कठिन समय पर ही करना चाहती हूं। यू शुड पनिशड दैट प्रोफैसर, मैडम..... पनिश हिम।'' प्रीति सख्त स्वर में बोली।

बाहर बैंच पर बैठी शालु को अच्छा नहीं लग रहा था। वह जले कोयले पर डाले पानी और फिर बुझते कोयले की तरह कराह रही थी। उसे प्रीति के व्यवहार पर हैरानी भी हो रही थी। ऐसी नैरो मांइडड और कम्पलेटर तो वह थी ही नहीं। वह अपनी सखी की दरिया दिली और निडरता बचपन से जानती थी। आज जैसी संकीर्ण वह कभी थी ही नहीं। आज क्या हो गया है इसे? वह हैरान थी और दुःखी भी।

''मैडम, मैं हरिशचंद्र का अवतार तो नहीं हूं किन्तु मैंने कभी असत्य नहीं बोला है। महिलाओं के प्रति सम्मान और आदर के संस्कार मुझे बचपन से ही मिले हैं। फिर प्रीति हो या कोई अन्य। अफसोस इसने जो कहा यह बहुत संकीर्ण मानसिकता की सूचना देता है। ऐसी योग्य और भली लड़की से इस तरह के व्यवहार की मुझे तनिक भी आशा न थी। इसे भाईया पिता से कभी बास्ता नहीं रहा है। शायद ये... .... ।''

प्रीति चिल्ला सी गई-

''स्टॉप, स्टॉप प्रोफैसर।''

भाई और पिता शब्दों ने जैसे उसकी दुःखती रग को छेड़ दिया हो। उसके भीतर का घाव जैसे फिर हरा हो गया था। अब उसकी आंखें फिर से भर आईं थी।

''प्रोफैसर साहब, कोई भी लड़की ऐसे झूठ नहीं बोल सकती। आप जैसे बुद्धिजीवी और एट्रैक्टिव पर्सनैलिटी ऐसी स्तरहीन बात करेंगे मुझे, विश्वास नहीं होता। अगर बात आगे बढ़ेगी तो कॉलेज की बदनामी होगी ही आपकी भी होगी। बात बिगड़ सकती है। आप नहीं जानते प्रीति की मम्मा शहर की सब से अमीर और पहुंच वाली महिला हैं। उचित यही है कि आप यहां से ट्रांस्फर करा लें और इस वक्त प्रीति से माफी मांगे।''

प्रिंसिपल मैडम माथुर ने तोते की तरह कहा।

''इट मीन्ज, यू डू नॉट बिलीव मीं टूह। बट व्हाई आइ विल प्रे टू पार्डन फ्रॉम दैट गर्ल। युअर डिसिजन इज नॉट अ डिसिजन ऑफ प्रिंसिपल बट ओनली अ सिंपल लेडी। इट इज वैरी शेमफुल दैट गर्ल व्हू इज शी थिंक्स अबाऊट मीं ऑल दीज।....... राइट, ऑल राइट मैडम माथुर आई विल डू बैस्ट प्रैक्टिस टू माई ट्रांस्फर फ्रॉम हियर टू एनअदर प्लेस एब्सोल्यूटली।''

'' .... यस, यस मैडम, दिस इज नॉट अ क्वैसचन दैट आइ हैव रिटनर्ड दिस सिटी सिन्स टवैंटी वन ईअर, बट लैट इट।'' गहरा सांस लेकर दर्द भरी मुस्कान से मुस्कराते प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह बोले। एकदम यह सब क्या हो गया और कैसे घट गया था। वह बेचैन तो थे ही।

''अब तुम जाओ प्रीति बेटा। मैं समझती हूं प्रोफैसर सिंह को यही काफी सजा है जो बीस-पच्चीस दिन पहले आए और अब यहां से जाना होगा।'' गम्भीर स्वर में प्रिंसिपल बोलीं।''

प्रीति कुछ न बोल पाई। उसे अब प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह के शब्द सोचने को मजबूर करने लगे थे। जब वह बाहर चलने को हुई तो प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह प्यार से बोले किन्तु उनके स्वर में दर्द मिला हुआ था-

''प्रीति, सभी लोगों का व्यवहार समान तो नहीं होता पर मुझ जैसे लोग अभद्र और बेईमान नहीं होते। तुम्हें माता के संस्कार तो मिले पर पिता के नहीं। तुम्हारे पिता बहुत बदनसीब हैं जो तुम जैसी होनहार बेटी को अच्छा वातावरण नहीं दे पाए। घर जाकर जरूर सोचना, तुम्हें गलतफहमी हुई है। मैं बुरा नहीं हूं बेटे। आइ एम नॉट विलेन। किसी लड़की को देखकर सड़क छाप लोग तो मुस्कराते हैं किन्तु भईया पिता भी तो मुस्कराते हैं।'' प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह बोले। उनकी आंखें भर आई थी किन्तु उन्होंने पलकें झपका कर आंसू सोख लिए। (क्रमशः)

व्यंग्य

भगवान का साया

◆ संतोष उत्सुक

कल शाम की बात है, हमें एक अरसा बाद धर्मपत्नी के साथ चाय-नाश्ता लेने का मौका मिला। हम सोच रहे थे इस बहाने हमारे सम्बन्ध सुधरेंगे जो हमेशा भारत-पाक रिश्तों की तरह सुलगते ही रहते हैं। वे कुछ चुप सी लग रही थी हमने सोचा लगता है कोई पुराना मुद्दा उठाएंगी। कहा, उदास लग रही हो। बोली, देश का बुरा हाल है। हम बोले आप तो मुझे समझाती रहती हो कि अपनी चिंता किया करो और आज खुद ही देश की हालत पर दुखी दिखती हो। छोड़ो यार देश को आज रात कहीं बाहर खाते हैं। बोली जाने क्यूं देश के बारे में आज बार बार खयाल आ रहा है। हमें लगा पिछले दिनों उसने देश भक्ति से ओतप्रोत कोई पिक्चर तो नहीं देख ली। देशप्रेम के नग्मे तो नहीं पढ़ लिए अखबार के किसी कोने में।

वह बोली आपको याद है बरसों पहले हमारे देश की कार्यशैली की खस्ताहालत देख कर किसी विदेशी ने सच कहा था कि इतना बड़ा यह देश ज़रूर कोई अवश्य शक्ति यानी भगवान चला रहे हैं। हमने कहा आप ठीक कहती हो मगर वह अदृश्य शक्ति तो पूरी दुनिया की रक्षक है और ऐसा सब मानते हैं।

पत्नी बोली हमारे देश को तो अभी भी नीली छतरी वाले चला रहे हैं मगर उनके साथ बाहर के लोगों को भी हमने जुटा लिया है। हम हमेशा दिल व ईमानदारी से बाहर वालों को चांस देते हैं। तेतीस करोड़ से भी ज्यादा देवी-देवताओं, अवतारों, दर्जनों धर्म व विश्वास की छतरियों के नीचे हम सवा अरब से भी ज्यादा, देश व समाज को चूना लगाते लड़ते झगड़ते रहते हैं। हमारे नेताभाई अफसरभाई मंत्रीभाई भ्रष्टभाई अभिनेताभाई चोरभाई आतंकीभाई पुलिसभाई व अन्यभाई व उनकी बहनें उनके साए में पल रहे हैं और बेहद मज़े में हैं। मगर आम देशवासी का... हमने कहा छोड़ो न यार, अपना सब ठीक चल रहा है। हमें क्यूं फालतू सोचना। चलो चेंज करो घूमने चलते हैं। मैं सोच रहा था शायद माहौल कुछ सहज बने मगर देश भक्ति का सुरूर गजब होता है। बोली आपको पता है ऐसा क्यूं हो रहा है। हमने कहा लोकतंत्र में सब जायज है छोड़ो ...मगर नहीं पत्नी ने मेरी बाजू पकड़ कर झिंझोड़ा और बड़े विश्वास के साथ टीवी स्टॉइल में बोली, भगवान अब देश के साथ नहीं है। मैंने कहा ऐसी कष्टदायक बातें क्यूं कर रही हो। भगवान हमेशा हमारे साथ, हर हिन्दुस्तानी के दिल में है। वही हमें जीवन देते हैं। अच्छे काम करने की प्रेरणा व बुरा वक्त भी हिम्मत से बिताने की शक्ति देते हैं। वह हमारे रोम-रोम में रचे-बसे हैं। हम सब उनकी नायाब कुदरत का हिस्सा हैं। उनकी इच्छा बिना एक पत्ता भी नहीं हिलता। उन्होंने पूछा आप कहना चाहते हो कि हमारे देश की पूरी जिम्मेदारी भगवान की है। हमने दिल से कहा हां, ठीक उसी तरह से जैसे हमारे घर की जिम्मेवारी आपकी। पत्नी के चेहरे पर संतुष्ट मुस्कान कुछ देर ठहरी। कहने लगी जिस तरह मैं घर के अच्छे माहौल का जिम्मा लेती हूं उसी तरह बुराइयों के लिए भी उत्तरदायी हूं।

मेरी आंखों में इतने दिन बाद आंखे डालकर पूछने लगी आपके कहने का मतलब है देश व समाज में हो रहे अवांछित क्रियाकलापों की जिम्मेदारी हम भगवान को दे सकते हैं। यानी तेरा तुझको अपर्ण क्या लागे मेरा स्टायल में।

हां, मैंने अपने साथ हर भारतीय को बचाते हुए कहा।

तभी तो मैं कह रही हूं कि भगवान देश के साथ नहीं है। आपने कुछ समय पहले की अखबार की सुर्खियां याद नहीं जिसमें देश की सर्वोच्च न्याय संस्था ने देश की कुशासन व्यवस्था पर बिलकुल सटीक कहा था कि अब इस देश को भगवान भी नहीं बचा सकते। पत्नी बोली आप मेरी बात मानें या न मानें सुप्रीम कोर्ट की बात तो आपको माननी ही चाहिए। देश का बड़े से बड़ा भद्र व अभद्र व्यक्ति भी कानून की तन मन धन से बेहद इज्ज़त करता है।

पत्नी की दलील में स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया वाली बात लगी सो मानना पड़ा। हमने हाथ जोड़ कहा,आप ठीक कहती हो मेरी क्या औकात कि न मानूं कि हमारा सबसे बड़ा रक्षक भी हमसे रूठ गया है। जिसके साए में , जिसे ढाल मान कर हम सभी किस्म का व्यवहार सब किसी के साथ करते रहे उन्हीं भगवान का साया हमारे सर से उठ गया है। हो सकता है इस स्थितिवश अब हम पर कुछ दबाव बने और हम अपना आत्मविश्लेषण करने की ओर प्रेरित हों। सुधरना तो हमारी मर्जी पर है।

गुलिस्तान ए साथी, पक्का तालाब, नाहन, जिला सिरमौर,
हिमाचल प्रदेश -173001, मो. 98162 44402

समीक्षा

कविता के आंतरिक आयाम दर्शाती 'कंप्यूटर पर बैठी लड़की'

◆ रामदेव शुक्ल

पुस्तक का नाम : कंप्यूटर पर बैठी लड़की (काव्य संग्रह) लेखक : तेज राम शर्मा,
प्रकाशक : सूर्यप्रभा प्रकाशन 2/9, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 मूल्यः 350 रुपये

कविता जितना बाहरी यथार्थ रचती है, उससे ज्यादा कवि के बहाने मनुष्य मात्र के भीतरी यथार्थ की परतों को खोलती है। इस समय फैशन केवल बाहरी कह सकते है, अखबारी यथार्थ की कविता करने का है, इसीलिए प्रायः रचनाएं अखबार की तरह ही पढ़ने के बाद भावक के चित्त से उतर जाती हैं। ऐसे माहौल मे भारत सरकार की प्रशासनिक सेवा से निवृत्त पहाड़ के बेटे तेजराम शर्मा ने अपनी कविताओं में पहाड़ को, अपने और मानव मात्र के अंतर्मन को रचा है।

'बरगद' कविता पहाड़ी जीवन की एक मुकम्मल तस्वीर सामने रख देती है।

वट चबूतरे पर बैठा/देख रहा हूँ आड़े तिरछे पत्थरों को
दीवाल टूटी है कई जगह/वृक्ष के बढ़ने के साथ साथ
बढ़ा है चबूतरे का घेरा/घेरे के अंदर घेरा
हर घेरे के नीचे घेरा/परत-दर-परत घेरा

जहां टूटी है दीवाल/वहां मैं अंदर झाँकता हूँ
बालों जैसी जड़ें/कहीं बहुत गहरे ढूँढ रही हैं/अमृत कलश को
उनकी कुलबुलाहट के स्पष्ट स्वर/प्रथम स्तुति गान कर रहे है 'हमें अमृत दो'

इसी वट चबूतरे के पास जीर्णशीर्ण देवालय में सुबह की पूजा से लेकर टूटे फूटे स्कूल के इतिहास पढ़ाते अध्यापक, विश्व इतिहास के महान अभियानों की ध्वनियाँ, मैदान तक पहुँचती जड़ों में माटी की गंध, देव मूर्तियाँ, उनके साथ खेलते बतियाते बच्चे और चबूतरे के दिल की धड़कन सुनता कवि एक साथ रूप-रस-गंध स्पर्श के बिम्ब रच रहा है। पहाड़ के जीवन की महागाथा सूत्र रूप में बरगद में कह दी गयी है।

लेकिन कवि के भीतर बैठा यायावर अपने पहाड़ के सम्पूर्ण जीवन दर्शन को एक झटके में छोड़ विश्वव्यापी जिन्दगी की तलाश में निकल पड़ता है।

यह रहा तुम्हारा विचार/यह रहा पंथ
यह रहा तुम्हारा जीवन-दर्शन/तुम स्थापित हुए
पर जिन्दगी की कविता सी अछोर फैली तस्वीर
किसी फ्रेम के घेरे में समेट न सका।

कवि अनंत चक्षु वर्धमान महावीर की परंपरा की विरासत को अग्रसर कर रहा है, यह बोध करने के साथ कि जिन्दगी और कविता दोनों का फैलाव अछोर अनंत तक है, उसे किसी एक व्यक्ति, मत, पंथ या विचारधारा के चौखट में सीमित नहीं किया जा सकता।

वैश्विक स्तर पर आदमी कितना क्रूर और आक्रामक हो गया है, इसका वर्णन आजकल दुनियाभर के साहित्य में हो रहा है। तेज राम जी 'ध्वंस' कविता में आदिम बर्बरता, पृथ्वी का त्रस्त होकर आकाश से शरण-याचना, बर्बर आखेट को अत्याधुनिक ध्वंसक हथियारों से लैस हो जाना और आदमी को इन्सान बनाने वाले व्यवहार का विलोपन सहज रूप में रच देते है।

पता नहीं/कब से आखेट पर निकला है आदमी
अद्‌भुत हैं उसके अस्त्र शस्त्र/भूख है उसकी अमिट
धरती आकाश से माँग रही है शरण
माँग रहे शरण जलचर, नभचर/सोच में पड़े हैं पालतू पशु
किससे माँगे शरण/संतति सोच में पड़ी है
क्या मिलेगी शरण कोख में?

जो शक्ति (स्त्री) देवताओं तक की रक्षा करती आई है, उसी को कोख में ही मार दिया जा रहा है। धर्म, संस्कृति का इससे ज्यादा पतन क्या होगा? प्रतिरोध चेतना से सम्बद्ध शब्द व्यवहार

में अर्थ खो चुके हैं।

इस आखेट के चरमोल्लास में/संयम शब्दकोश में बंद है
बंद है संवेदन/दया बंद है/बंद है अहिंसा
पूजाघरों के भारी भरकम तालों में/बंद है सारे के सारे भगवान

भाषा जो मनुष्य की सबसे बड़ी खोज और उसे सृष्टि का सिरमौर बनाने वाली उपलब्धि है, उसका क्या हाल है?

चीख है आखेट की भाषा/भाषा आर्तनाद है
कोलाहल है भाषा/भाषा हलाहल है

जो अरण्य 'आरण्यक उपनिषद' रचते थे उनका हाल यह है कि-

जल रही है अरण्यों में नरकाग्नियाँ।

मशीनी सभ्यता की परिणति कवि इस रूप में देखते हैं-

ओ आने वाली पीढ़ियों/मैं निमंत्रण नहीं देता
कि तुम मेरी दुनिया में आओ/मैं बनूँगा अपना ही क्लोन
और शत-शत मुखों से/बुझाऊँगा अतृप्त प्यास
मेरी इस दुनिया में/रिमोट कंट्रोल से चलता है बम
उसी से रोबोट/और उसी से चलूंगा मैं

विज्ञान, तकनीकी और पूँजी के अपवित्र गठबंधन की संहारक क्षमता को शर्मा जी पुराने लोक विश्वास में आए जिन्न के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए बताते है कि जिन्न सब कुछ करने में समर्थ था लेकिन हमारे पुरखों ने उसकी शक्ति को कीलित कर दिया था।

बहुत पीढ़ियों तक/सेवा में रहा जिन्न/पर पता नहीं क्यों
पुरखों ने उसे नहीं लगाया सोना निकालने में
सारे जंगलों को साफ करने में/पृथ्वी तल से सारा तेल निकालने में
वह भी तो नारंगी की तरह निचोड़ सकता था पृथ्वी को
अगली शताब्दियों के हिस्से की/सारी ऊर्जा पी सकता था
अपने समय में/पर सुना है कि पुरखों ने बाँध रखा था उसे सीमाओं में।

मगर आज के अमानवीय अपवित्र गठबंधन से उपजा जिन्न-

रक्तबीज होकर/उभरता है असंख्य रूपों में
और एक माउस की क्लिक पर/उगलता है चीजें इस गति से
कि जल-थल में जगह नहीं है कूड़े के लिए
मनुष्य है अस्त्र-शस्त्र से इतना सम्पन्न-
कि हर कपाल के लिए/उसके पास है एक प्रक्षेपास्त्र

रचनाकार मानवता के उज्ज्वल निर्मल भविष्य के प्रति आश्वस्त रहता है।

कवि देख रहा है कि-

शून्य और एक के पाश से/फिर भी शायद बचें रहेंगे कुछ लोग
बची रहेगी उम्मीद/उन्हीं के पास

जीवन की गति थमने वाली नहीं। वह चलता ही रहेगा, बस उसे देखने वाली आँखें चाहिए और महसूस करने वाली संवेदना।

सुबह-सुबह/धरती को नहाते देख लो/ओस में, प्रकाश में, रंगों में.....
इस सुबह/फुलचुही चिड़िया की लंबी चोंच/फूल के पराग तक
कलम की नोक सी/झुकी कविता पर

तेजराम जी के लिए जीवन की धड़कनों से कविता का अटूट सम्बन्ध है।

कविता कहती है/मुझे लिखो/मैं लिखता हूँ
र से राम ब से बाण/रामबाण/कविता कहती है/मुझे सुनो
मैं सुनता हूँ/मटके में दुध की धार का संगीत ....
कविता कहती है/मुझे महसूस करो
और मैं हो जाता हूँ आपादमस्तक संवेदित।

'शब्द' और 'विचार' शीर्षक कविताएं इस कवि के लिए रचना का अर्थ क्या है और रिश्ता क्या है, बताती हैं।

शब्द/जन्म लेते ही/निकल पड़ते हैं/लम्बी यात्रा पर
कुछ होते हैं मृण्मय/रास्ते की धूल हो जाते हैं
पन्नों के बीच पड़े रहते हैं कुछ/कुछ पत्थर से कठोर
घिसते नहीं शताब्दियों तक/दूर तक निकल जाते हैं
कुछ लिए होते हैं/हीरे सी शक्ति और चमक
जितना भी दोहराओ/चमकते ही जाते हैं
पीढ़ियाँ याद करते-करते/थक जाती हैं/पर थकते नहीं शब्द

शब्दों के साथ अनंत यात्रा पर चलने का अभिलाषी कवि 'विचार' के लिए कहता है-

विचार जहाँ/मस्तिष्क से उठकर
ब्रह्माण्ड में घूम आते हैं/मैं उन विचारों से आलोड़ित हूँ

विचार जहाँ/कंकालों के पर्वत पर/ऊँचे उठकर अट्टहास करते हैं

मैं इन कंकालों के नीचे दफन हूँ

विचार जहाँ/आँखों की कोरों में/आकर नम हो जाते है

मैं उस आदिम नदी के तट पर बसा हूँ

विचार जहाँ/अँधेरी रात में/टिमटिमाते रहते है दूर आकाशगंगा में

मैं उन जुगनुओं के पंखों में विचरता हूँ।

संग्रह की आखिरी कविता का शीर्षक है 'कविता' जिसमें कल्पना और यथार्थ की इंद्रधनुषी बुनावट की झलक दिख जाती है।

एक दिन कविता/शब्दों से बाहर निकल कर

मौन खड़ी देखती रही अपने आप को/कितना भी घना बुने

कविता निकल ही जाती है/शब्दों के जाल से

शब्दों की शृंखलाओं से मुक्त/क्या सोचती होगी कविता

शब्दों के बारें में? -रोज़-रोज़ की लड़ाई से छुटकारा पाकर

उड़ जाना चाहती है/अनंत आकाश में/फिर आकाश में कविता

बादलों से अठखेलियाँ करना चाहेगी/और धीरे-धीरे शब्दों में उतरने लगेगी

शब्दों के बीच संवेदना के छोरों पर आत्मा की पहचान तलाशती कविता सपने में आटे का रंग, नमक का स्वाद, पसीने की गंध और चूल्हे की आँच के साथ तदाकार हो जाती है प्रवासी पति की याद में घुलती युवती पत्नी के साथ।

प्रवासी पिया की याद में/आजकल गुम-सुम बैठी

सोचती है अपने समय के बारे में/हो चुकने के बारे में

चुक जाने के बारे में।

तेजराम शर्मा के पास अपने देश के सभी प्रांतों के और विदेशों के विपुल अनुभव हैं। देश-विश के साहित्य से उनका परिचय है। एक तरह से वैश्विक विमर्शों से सुपरिचित है। 'थिंक ग्लोवली एंड वर्क लोकली' के स्तर पर अपने देश भारत और उसमें भी अपने प्यारे पहाड़ से आंतरिक जुड़ाव है उनका। पहाड़ अपने समूचेपन के साथ बार-बार उनकी चेतना में मूर्त होता रहता है। कभी पहाड़ शीत प्रभात मे बाँग देता है, कभी खेतों में पाले की सफेद चादर ओढ़े ठिठुरता है, कभी-स्वप्न और जागृति के बीच आत्मा के संघर्ष सा/बिस्तर पर करवटें बदलता रहता है। पहाड़ के दृश्यों को चाक्षुष बिम्बों में रचते हैं शर्मा जी।

प्रथम किरण से आलोकित हिमशिखर घेरे हैं

कोमल रुईं में लिपटी घाटी को/धूप धुनिये-सी धुनती है इस धुंध को

कवि जहाँ भी रहे उसे पहाड़ अपनी पूरी जीवंतता में पूरा का पूरा चाहिए

मैं समय के/दाँए-बाँए/उपर-नीचे/कहीं भी रहूँ/मेरे आस पास रहे

माटी में नमी/आकाश में गीत/टिमटिमाता सा कोई विचार

चाँद सा कोई शब्द/सूरज सा कोई कर्म/सूरज की आँख से

देखना चाहता हूँ/इस सुबह को/पहाड़ की चोटियों को

धुंध को/धुंध से घिरी घाटी को।

पहाड़ की धड़कनों के साथ कवि की साँसों में दादा-दादी, माँ-पिता, पत्नी-प्रिया की उपस्थिति पाठक को सुखद अहसास से भरती रहती है। अस्तित्व अपने स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों में इन कविताओं में विद्यमान है। कुछ बोध सामान्य जन की पकड़ से बाहर के है किंतु कवि अपनी संजीवनी कहाँ से पाता है, इसका रहस्य बताती है 'आग्रह' कविता।

जिनके लिए मैं लिखता हूँ/वे कविता पढ़ना छोड़ चुके हैं

जो पढ़ते हैं/वे सलाह देते हैं कि अब

जो नहीं है अर्थ से पूर्ण/वह व्यर्थ है

पर मुझे उन्हीं के पास जाना है बार-बार/बार-बार पुकारना है उन्हें

विश्वास जीतना है उनका/उन्हें ही कहना है बार.बार

कि मेरे लिखे को भी/अर्थ दो, अर्थ दो, अर्थ दो.............
...

एक सचेत, संवेदनशील, दार्शनिक और वैज्ञानिक ज्ञान से समृद्ध कवि की इन कविताओं का आस्वादन प्रत्येक स्तर का काव्य-रसिक कर सकता है। अरसिकों और अपने चाबुक से रचना को हाँकने वाले महाबली आलोचकों के लिए तो कविता होती भी नहीं।

शीतल सुयश, राप्ती चौक, आरोग्य मंदिर,
गोरखपुर, उ. प्र.-273003

जिनका देह और मन शुद्ध न हो उसका मंदिर में जा कर भगवान की पूजा करना व्यर्थ है।
जिनके देह और मन दोनों पवित्र हैं, भगवान उन्हीं की प्रार्थना सुनते हैं।

-स्वामी विवेकानंद

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 फरवरी, 2017 अंक : 11

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

उम्मीद उपलब्धि की ओर ले जाती है। आत्मविश्वास और उम्मीद के बिना कुछ भी नहीं किया जा सकता।

- हेलन केलर

इस अंक में

लेख

शोध लेख

कहानी

कविता/ग़ज़ल

पुस्तक समीक्षा

अपनी बात

भारत छह ऋतुओं का देश है। वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत व शीत सबकी अपनी एक अलग पहचान है। ग्रीष्म तपिश, सावन वर्षा की फुहारों, पतझड़ वनस्पति के लिए विश्राम, शीत वर्षा व ठंडक और वसंत फूलों की महक व प्रकृति में नव संचार के लिए जानी जाती है। वसंत ऋतु को ऋतुओं का राजा कहा जाता है। धरा पर ऋतु रूपी इन उपहारों का मानव जीवन के साथ अटूट संबंध है। ये हमारी जीवन पद्धति, संस्कृति व परंपरा का अभिन्न हिस्सा है। इनमें प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित कर लोक गीतों की स्वर लहरियां सुनाई देती हैं जिससे जीवन में उमंग व उत्साह आता है। घाटियों व वनों में पक्षियों की स्वर लहरियां वातावरण को और सुंदर बनाती हैं। प्रकृति खिल उठती है। जीवन के दर्शन को देखें तो ऋतुएं मानव को समय व काल का आभास करवाती हैं। यह सत्य है कि समय कभी रुकता नहीं, वह अपनी एक समान गति से आगे बढ़ता रहता है। समय की खासियत है कि यह सबसे बड़ा ज्ञान का सागर व संकेतक माना जाता है। वक्त की कीमत वही बयां कर सकता है, जिसकी एक पल से गाड़ी छूट गई हो। परीक्षा का फार्म भरने की तारीख निकली हो। समय पर किया गया कार्य तथा प्रकृति के नियमों का अनुसरण ही जीवन का पर्याय माना गया है। हिमाचल का नाम आते ही सर्वप्रथम बर्फ की तसवीर हमारे मानस पटल पर उभरती है। बर्फ से लदे हिमशिखरों के दृश्य, हरे-भरे तनों की दृश्यावलियां हर ओर नज़र आने लगते हैं। लंबी सर्द ऋतु के उपरांत वसंत का आगमन होता है। इस माह की प्रथम तारीख पर ही हम सभी ने वसंत ऋतु का स्वागत किया है। इसके आगमन से शीत ऋतु में सुप्तावस्था में पड़ी वनस्पति, जीव-जंतुओं में नई जान आने लगी है। पेड़-पौधों पर फूल खिलने लगे हैं। बर्फ की सतह पिघल कर ऊंचाई तक चली गई है। खेतों में फसलों की बहार आई है। सरसों के खेतों से घाटियां, मैदान नए रंग में रंगे हुए नज़र आने लगे हैं। शीत ऋतु में पहाड़ों में अच्छी बर्फबारी व मैदानी क्षेत्रों में वर्षा से प्रदेशवासियों विशेषकर किसानों व बागबानों में अच्छी फसल की आस है। शीत व वसंत का संबंध एक सेतु के माफिक माना गया है। राज्य के कुल्लू तथा मंडी जनपद में वसंत ऋतु के आगमन पर विशेष कार्यक्रमों का आयोजन व उत्सव की धूम से राज्य की संस्कृति के दर्शन होते हैं। ये लोगों के जीवन में उत्साह, उमंग व हर्षोल्लास का संचार करता है। हिमाचल की धरा पर वसंत आगमन का आभास लाखों मील दूर देश से हिमालय की शृंखलाओं को पार कर आए प्रवासी पक्षी भी अपने देश के लिए जब लौटने लगते हैं तो स्वतः ही हो जाता है। राज्य की प्राकृतिक तथा मानवनिर्मित झीलों, गोविंद सागर, पौंग बांध में सर्द ऋतु में रुक कर वे भी इस संदेश के साथ लौटते हैं कि फिर शीत ऋतु के आगमन पर लौट कर आएंगे। आम, नाशपाती, पलम, सेब के पौधों से फूल-पत्तियां निकलने को तैयार हैं। संपूर्ण प्रदेश वसंत ऋतु में एक नई छटा लिए हुए है। हम इस वर्ष भी एक माह को पीछे छोड़ते हुए फरवरी माह से अंक के साथ आपसे रूबरू हो रहे हैं। यहीं तो समय की रफ्तार है। समय कभी किसी के लिए रुकता नहीं। इस अंक में हम पाठकों के लिए ऋतुराज वसंत की वास्तविकता, क्योंठली भाषा का परिचय, हिमाचल के सचित्र पांडुलिपियों का इतिहास सहित स्थायी स्तंभ, कहानी, कविताएं लेकर आए हैं। आशा है कि हिमप्रस्थ के लेखों से भी हमारे पाठकों का ज्ञानवर्द्धन होगा। हम आपके सुझावों तथा प्रतिक्रियाओं का स्वागत करते हैं। हमारा यह प्रयास रहता है कि हम पाठकों को नवीन जानकारियां प्रदान करें। आपके अक्षर रूपी विचार का सदैव हमें इंतजार रहता है। मार्च माह में फिर मुलाकात होगी।

-संपादक

आलेख

ऋतुराज वसंत

◆ सीता राम गुप्ता

हमारे देश भारत में वसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत व शिशिर (शीत) छह प्रमुख ऋतुएँ मानी गई हैं। वसंत को जहाँ ऋतुराज कहकर सम्मानित किया जाता है वहीं वर्षा को ऋतुओं की रानी होने का गौरव मिला है। विचारणीय है कि वसंत को ऋतुओं का राजा क्यों कहा गया है?

वास्तव में वसंत को उसके प्राकृतिक सौंदर्य के कारण ये उपाधि मिली है। वसंत में चारों तरफ रंग-बिरंगे फूल खिले होते हैं। कड़कड़ाती सर्दी में जिन वृक्षों ने अपने पत्तों को तिलांजलि दे दी थी वो सब पुनः कोमल-कोमल नव पल्लवों के परिधान से सुसज्जित हो उठते हैं। वर्षा जहाँ हरीतिमा प्रधान है वहीं वसंत रंगों की खान है। जिधर नज़र डालिए रंगीन नज़ारे सम्मोहित करते नज़र आते हैं। कई वृक्षों की नई पत्तियों में भी इतनी विविधता व आकर्षण दिखलाई पड़ता है कि फूलों को भुला दे। फूल-पत्तियों के रंग व गंध के आकर्षण से खिंचे नाना प्रकार के कीट-पतंग इन पर मंडराने लगते हैं जो वसंत की सुंदरता में कई गुना वृद्धि कर देते हैं। मधुमक्खियाँ, भौंरे व तितलियाँ इनमें प्रमुख हैं। इन सबका योगदान भी वसंत ऋतु को ऋतुराज की पदवी दिलवाने में कम महत्त्वपूर्ण नहीं।

अब एक और प्रश्न उठता है और वो ये कि सर्दी में सर्दी और गर्मी में गर्मी होती है लेकिन वसंत में? कुछ लोगों का मानना है कि वसंत का मौसम बड़ा सुहावना, बड़ा खुशगवार होता है। उनका कहना भी ठीक है। वैसे वसंत ऋतु का काल शीत व ग्रीष्म के मध्य का काल है। क्या शीत ऋतु के फ़ौरन बाद से ग्रीष्म ऋतु के प्रारंभ तक पूरे समय में यह ख़ुशगवार ही रहता है? क्या यह संभव भी है? वास्तव में वसंत का प्रारंभ कड़कड़ाती शीत ऋतु में ही हो जाता है। भारतीय महीनों के अनुसार वसंत पंचमी के दिन को वसंत ऋतु का प्रारंभ माना जाता है। वसंत पंचमी माघ मास के शुक्ल पक्ष की पांचवीं तिथि को पड़ती है। अंग्रेज़ी महीनों व तारीख़ के हिसाब से वसंत पंचमी कई बार जनवरी में ही आ जाती है अतः वसंत ऋतु का प्रारंभिक काल बहुत सर्द होता है। यही सर्दी धीरे-धीरे कम होनी शुरू होती है।

कई बार बीच-बीच में एक आध दिन के लिए मौसम बग़ावत भी कर देता है। सर्द मौसम के बीच कुछ दिन अपेक्षाकृत गर्म हो जाते हैं। इस दौरान हवा में नमी भी कुछ कम रहती है और कई बार धूल भरी तेज़ हवाएँ या हल्की आँधी भी आ जाती है। उत्तर भारत में रबी की फसल पककर तैयार होने लगती है और उसी दौरान कई बार वर्षा की बौछारें भी देखने में आती हैं और मौसम बिगड़ने पर ओलावृष्टि की संभावना भी बढ़ जाती है। कहीं न कहीं गिरते भी अवश्य ही हैं जो किसानों को अंदर तक हिलाने के लिए काफी होते हैं। ये वसंत ही है जो किसानों को खुशहाली का आनंद देने के साथ-साथ उनकी आशाओं पर वज्रपात भी करता है।

मल्टीग्रेन ब्रेड की तरह सभी ऋतुओं का समाहार है वसंत जिसका प्रारंभ तो कड़कड़ाती शीत से होता है और समापन तपती ग्रीष्म की तेज़ धूप में। वास्तव में दही-भल्लों जैसी ऋतु है वसंत ऋतु जो षड्रसों की तरह ही षड्ऋतुओं का आनंद एक साथ प्रदान करने में सक्षम है। यदि हम दही-भल्लों या चाट-पापड़ी में केवल एक ही मसाला या केवल नमक ही डालें तो वो स्वाद नहीं आएगा जो विभिन्न मसालों और चटनियों में आता है। जैसे दही-भल्लों या चाट-पापड़ी में भल्ले या पापड़ी पर दही, मीठी चटनी, खट्टी चटनी, पुदीने की चटनी, उबले आलू व मसालेदार कचालू की फाँकें, अनार के दाने, अदरक का लच्छा व दूसरी बहुत-सी चीज़ें डाली जाती हैं जिससे उनका स्वाद बढ़ जाता है उसी प्रकार से वसंत ऋतु में भी सभी ऋतुओं के स्वाद का मसाला मिल जाने से वसंत ऋतु भी चटपटी व आनंददायक हो जाती है।

जिस प्रकार से दही-भल्लों या चाट-पापड़ी का स्वाद लेते समय कभी मीठी चटनी की मिठास तो कभी खट्टी चटनी की खटास मुँह में घुल जाती है व कभी मिर्च-मसालों की तेज़ी से सी-सी की आवाज़ निकल पड़ती है उसी प्रकार से वसंत ऋतु में भी सभी ऋतुओं का मिलाजुला आनंद समाया रहता है। कभी चारों ओर निपट नंग-धडंग पेड़ों की परछाइयां तो कभी ख़ूब घने पल्लवों से आच्छादित वनराइयाँ। कभी गुलाब के फूलों की मादक व मदहोश करने वाली गंध तो कभी सरसों के फूलों की तीखी तैलाक्त गंध नथुनों में घर करने चली आती है। हमारे यहाँ धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ माने गए हैं। वसंत ऋतु का संबंध काम से भी है। संपूर्ण प्रकृति व इसके निवासी सही अर्थों में काममय हो उठते हैं। प्रकृति इसके लिए आधार उत्पन्न कर देती है। वसंत ऋतु में हमारे देश में प्राचीन काल से ही कामोत्सव मनाने की परंपरा भी रही है। वैलेंटाइन डे भी उसी का आधुनिक परिवर्तित रूप कहा जा सकता है।

मनुष्य की चरितार्थता इसी में है कि वो वसंत की तरह हर मौसम के प्रभाव का आनंद लेते हुए एक संतुलन बनाए रखे जो स्वयं वसंत की तरह आकर्षक भी हो और आनंददायक भी। वसंत जो कठोर भी है और कोमल भी। वसंत जो कभी फूलों के चटख रंगों का सम्मोहन मन-मस्तिष्क पर अधिकार कर लेता है तो कभी पकी फ़सलों की परिपक्वता हमें भी अपनी ही तरह गंभीर बना डालती है। कभी शीत में ठिठुरने नन्हें पादप तो कभी लू और तेज़ धूप में सुलगते-से पेड़। कभी धूप से न हटने का आग्रह तो कभी धूप से बचने की बेचैनी। यही है वसंत का वास्तविक जादू जिससे कोई बचाव नहीं। कोई करना भी नहीं चाहता बचाव। सब इसमें निमग्न हो जाना चाहते हैं। कुल मिलाकर बड़ा ही सम्मोहक रूप है वसंत का।

प्रकृति में जो परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं वो मनु य में कामभावों को उद्दीप्त करने के लिए पर्याप्त होते हैं। ये वो ऋतु है जिसमें कोई भी कामदेव के प्रहारों से बच नहीं पाता। पूरे फाल्गुन मास में विशेष रूप से होली व रंगोत्सव में इसका चरमोत्कर्ष दिखलाई पड़ता है जहाँ सारी वर्जनाएं टूटती-सी दिखलाई पड़ती हैं। हर ऋतु का हमारे मनोभावों पर अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। क्योंकि वसंत ऋतु में सभी ऋतुओं का समाहार है अतः इस ऋतु में मनुष्य भी अनेकानेक मनोभावों से दो चार होता है। कभी कामाधिक्य का प्रभाव तो कभी संयम व अनुशासन का दबाव। जहाँ सृष्टि के विकास के लिए काम अनिवार्य है वहीं समाज को सुचारू रूप से चलाने के लिए संयम व अनुशासन भी अनिवार्य हैं। वसंत ही वह ऋतु है जो मनुष्य के विकास के लिए अनिवार्य सभी अवसर उपलब्ध कर पाती है।

मनुष्य की चरितार्थता इसी में है कि वो वसंत की तरह हर मौसम के प्रभाव का आनंद लेते हुए एक संतुलन बनाए रखे जो स्वयं वसंत की तरह आकर्षक भी हो और आनंददायक भी। वसंत जो कठोर भी है और कोमल भी। वसंत जो कभी फूलों के चटख रंगों का सम्मोहन मन-मस्तिष्क पर अधिकार कर लेता है तो कभी पकी फ़सलों की परिपक्वता हमें भी अपनी ही तरह गंभीर बना डालती है। कभी शीत में ठिठुरने नन्हें पादप तो कभी लू और तेज़ धूप में सुलगते-से पेड़। कभी धूप से न हटने का आग्रह तो कभी धूप से बचने की बेचैनी। यही है वसंत का वास्तविक जादू जिससे कोई बचाव नहीं। कोई करना भी नहीं चाहता बचाव। सब इसमें निमग्न हो जाना चाहते हैं। कुल मिलाकर बड़ा ही सम्मोहक रूप है वसंत का। अब इसे ऋतुराज न कहें तो कैसे न कहें?

ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा,
दिल्ली-110034, मो. 0 95556 22323

आलेख

क्योंठली : एक परिचय

◆ ओम प्रकाश शर्मा

क्योंठली एक भारतीय भाषाओं व बोलियो की एक सुदीर्घ परंपरा है जिसका प्रारम्भ हम वैदिक काल से मानते हैं। वैदिक संस्कृत, संस्कृत और प्राकृत की पाली, प्राकृत व अपभ्रंश की सुदीर्घ परंपरा से विकसित होने के पश्चात तेरह आर्यभाषाओं का जन्म हुआ। जिनमें से शौरसैनी, मागधी व अर्धमागधी से हिन्दी का उद्‌भव माना जाता है। हिन्दी भाषा को समुचित अध्ययन के लिए पाँच वर्गों में विभाजित किया जाता है- पश्चिमी हिन्दी (ख) पूर्वी हिन्दी (ग) बिहारी (घ) राजस्थानी वर्ग (ङ) पहाड़ी वर्ग। पहाड़ी वर्ग के अंतर्गत हिमालय की गोद में पनपने वाली अनेक बोलियों को रखा गया है। अध्ययन की सुगमता के लिए इसे भी तीन भागों में विभक्त किया जाता है- पूर्वी पहाड़ी, मध्यवर्ती पहाड़ी और पश्चिमी पहाड़ी। पूर्वी पहाड़ी ने अपना स्थानीय नाम नेपाली ग्रहण कर लिया है तथा मध्यवर्ती पहाड़ी दो प्रमुख उपभाषाएँ गढ़वाली व कमायूंनी के नाम से जाने लगी है। पश्चिमी पहाड़ी के लिए पहाड़ी नाम काफी समय तक चलता रहा लेकिन हिमाचल के पुनर्गठन के बाद इसका लगभग अधिकांश भाषा क्षेत्र हिमाचल प्रदेश में सम्मिलित हो गया है इसलिए इसे पहाड़ी के साथ साथ अब हिमाचली के नाम से जाना जाता है। हिमाचली की अनेक बोलियां हैं जिनमें से क्योंठली भी एक है जो शिमला क्षेत्र की एक प्रमुख बोली है। ग्राहमवेल के अनुसार, “ये भाषाएँ उत्तर में 30^0.5’ और 31^0.2’ दक्षिण में 77^0.9’ 77^0.3’ रेखांश पर फैली हुई थी। ग्रियर्सन ने पश्चिमी पहाड़ी की भाषाओं को जौनसारी, बघाटी , सिरमौरी, क्योंठली, सतलुज समूह, कुल्लू समूह, मंडयाली, चमयाली आठ समूहों में विभक्त किया है तथा क्योंठली के अंतर्गत- क्योंठली, हंडूरी शिमला सिराजी, बराड़ी, सौरा चोली किरनी व कोची की गणना की है।[1]”

स्वतन्त्रता से पूर्व शिमला पर्वतीय क्षेत्र छोटी छोटी रियासतों में बंटा हुआ था। दक्षिण में सिरमौर और उत्तर में सतलुज के मध्य का क्षेत्र मुख्यतः इन रियासतों का क्षेत्र था। ये सारे का सारा क्षेत्र भाषायी दृष्टि से थोड़े उच्चारण भेद के बावजूद भाषा संपुट क्षेत्र था। लेकिन प्रशासन की दृष्टि से हरेक रियासत की अपनी बोली थी। इन रियासतों में क्योंथल रियासत एक बड़ी रियासत थी इसकी गोरखा युद्ध से पूर्व अट्ठारह ठकुराइयाँ थी। और शिमला की रियासतों में इसका तीसरा स्थान था। इस पर्वतीय प्रदेश के लोग कुछ अन्य बोलियाँ भी बोलते थे। इसीलिए डॉक्टर ग्रियर्सन ने भाषायी समानता होने के कारण इन सभी रियासतों की बोलियों को क्योंठली के अंतर्गत रखा। यह रियासत सभी रियासतों के लगभग मध्य में पड़ती थी। 15 अप्रैल,1948 को जब तीस छोटी बड़ी रियासतों को मिला कर हिमाचल प्रदेश का गठन किया गया। तो उसे चार मंडलों चंबा, मंडी, सिरमौर और महासू में विभक्त किया गया। चंबा जिले के लगभग सभी क्षेत्र चंबा मण्डल में, मंडी एवं सुकेत रियासतों के क्षेत्र मंडी मण्डल में तथा सिररमौर रियासत के सभी क्षेत्र सिरमौर जिले मे शामिल किए गए। अन्य सभी 26 रनहूणों व रियासतों को मिला कर महासू मण्डल की स्थापना की गई। अब लगभग क्योंठली का सारा क्षेत्र महासू मण्डल के अंतर्गत आ गया इसलिए मौलूराम ठाकुर प्रभृति भाषाविदों ने अपनी पुस्तकों में इसे क्योंठली के स्थान पर महासुई की संज्ञा प्रदान की है। हिमाचल प्रदेश को पूर्ण राज्य का दर्जा मिलने व प्रदेश को बारह जिलों मे विभक्त कर देने के बाद महासू मण्डल शिमला जिला में विलीन हो गया और महासू एक स्थान का नाम मात्र रह गया जो महासू देवता के मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। अतः आज के समय में यह नाम समीचीन नहीं लगता। क्योंकि इस बोली के क्षेत्र में देवी देवताओं के प्रसिद्ध मंदिर और भी बहुत है। क्योंठली प्राचीन क्योंठल रियासत की बोली रही है इसलिए इसका नामकरण क्योंठली ही उचित है। आजकल अंग्रेजी प्रभाव के कारण क्योंठल क्योंथल लिखा जाता है क्योंकि थ व ठ के लिए टीएच(Th) का ही प्रयोग किया जाता है ठल को थल पढ़ा और लिखा जाता है यह उचित नहीं लगता क्योंकि वर्षों से चले आ रहे इस नाम को बदलने का कोई औचित्य नहीं है।

गोरखा युद्ध से पूर्व सन् 1800 में क्योंठल रियासत के अधीन कोटी, घूंड़, ठियोग,मधान, महलोग, कुथाड़ , कुनिहार, धामी, थरोच, सांगरी, रजाणा, कुमारसेन, खनेटी, मैली, खलासी, बागड़ी, डीगयाली, घट अट्ठारह ठकुराइयाँ थी लेकिन 1815 में क्योंथल के राजा संसार सेन को अंग्रेजों ने जब राज्य सनद द्वारा वापिस

लौटाया तो उसके आठ परगने अपने पास रख लिए जो बाद में दो लाख अस्सी हजार में महाराजा पटियाला को दिए। अंग्रेजों ने बाद में शिमला बसाने का निर्णय लिया और बारह गाँवों का अधिग्रहण किया उसमें भी कुछ ग्राम क्योंथल रियासत के थे। इस प्रकार क्योंठल रियासत की सीमाएँ घटती चली गईं लेकिन इस सीमा परिवर्तन का प्रभाव यहाँ की भाषा पर नहीं दिखाई पड़ता।

मूल क्योंठली जिसमें उपर्युक्त सभी बोलियों की सभी विशेषताएँ शामिल हैं मूल रूप में भूतपूर्व रियासत क्योंठल की बोली है। क्योंठली भाषी भूभाग न केवल प्रशासनिक दृष्टि से बंटा हुआ है बल्कि प्राकृतिक रचना की दृष्टि से भी बंटा हुआ है इसकी सीमाएं पहाड़ों और नदियों के बीच विभक्त हैं। क्योंकि यह भूतपूर्व रियासत की जन बोली है और एक विस्तृत भूभाग में बोली जाती है इसलिए इसे भाषा के रूप में भी स्वीकार करना असंगत नहीं है। क्योंठली भाषी क्षेत्र के पूर्वी भाग में कोटी, छप्परोट, फागू मधाण, ठियोग, मतियाणा, दक्षिणी भाग में चायल सकरोली, कसुम्पटी तहसील, शिमला ग्रामीण। कुनिहार मांगल विजजा, कुठेड़ तथा जिला सोलन के कुछ भाग शामिल हैं तथा उत्तर में भरोली और तहसील सुन्नी का भाग शामिल हैं। इसमें शिमला, की, भज्जी, धामी, जुनगा, कंडाघाट, शोघी, ठियोग, मत्याणा दुर्गापुर सुन्नी, कोटी , चायल चीखर पीरण आदि नगर और कस्बे शामिल हैं।

शिमला पहाड़ी क्षेत्र की ऐतिहासिक परिस्थितियों का यहाँ की बोलियों पर विशेष प्रभाव पड़ा है। इस क्षेत्र में कोल, किरात, यक्ष, खश, गुर्जर, नाग आदि जातियाँ बारी बारी से आती रही और यहाँ की भाषा और संस्कृति के इतिहास में भी एक के बाद एक नई परत जुड़ती चली गईं। डॉ. ग्रियर्सन ने पहाड़ी को दरद से विकसित माना है। सुनीति कुमार चटर्जी ने ग्रियर्सन की मान्यताओं से मतभेद प्रकट किया लेकिन पहाड़ी भाषाओं के प्रति उनकी धारणा उनसे आगे नहीं बढ़ सकी। यह बात निश्चित है की हिंदुकुश पर्वत से लेकर नेपाल की तराई में खशों का प्रसार रहा परंतु वे ऐसे क्षेत्र में प्रभावी रहे जहां की बोलियाँ कश्मीरी, लहंदी, शीना, कोहस्तानी आदि हैं। ये ज्यों ज्यों पूर्व की ओर बढ़ते गए इनका प्रभाव कम होता गया। इस क्षेत्र में ये लोग आंधी के समान आए और चले गए। इसी कारण इनका प्रभाव यहाँ की बोलियों पर नहीं पड़ा। केलंग जैसे वैयाकरण इन पहाड़ी बोलियों को हिन्दी की विभाषाएँ घोषित करते हैं। डॉ. धीरेन्द्र वर्मा राजस्थानी, पंजाबी, गुजराती और पहाड़ी बोलियों का संबंध शौरसेनी अपभ्रंश से मानते हैं। इन भाषाओं का संबंध नागर अपभ्रंश से है।

भूतपूर्व क्योंठल रियासत के शासकों का संबंध बंगाल की नदिया रियासत से है। मंडी और सुकेत रियासत पर भी इसी वंश का शासन चलता रहा। शेष रियासतों के अधिकांश शासक राजस्थान से आए। इस प्रकार यहां की भाषा संस्कृति में परिवर्तन होते रहे। क्योंठली में बंगला शब्दों का प्रयोग इसका स्पष्ट प्रमाण है। जैसे बाराळ (बिल्ली) बियाली (रात्रि का भोजन) आदि। पहाड़ी जन मानस भी समय के साथ शासक वर्ग के रीति रिवाजों , सांस्कृतिक मान्यताओं और सामाजिक प्रथाओं का अनुसरण करना प्रारम्भ कर दिया। डॉ. टी.एन. दवे भी पहाड़ी को शौरसैनी अपभ्रंश से विकसित मानते हैं। उन्होंने शौरसेनी प्राकृत से विकसित परवर्ती अपभ्रंशों को चार वर्गों में विभक्त कर हिमाचल अपभ्रंश की अलग से स्थापना की है। उनके अनुसार 'पहाड़ी भाषाएँ राजस्थानी से बहुत मिलती हैं। विशेषतया माध्यमिक पहाड़ी का संबंध जयपुरी और पश्चिमी पहाड़ी का संबंध मारवाड़ी से अधिक मालूम पड़ता है। पश्चिमी और मध्यवर्ती पहाड़ी का नाम सपाददलक्ष था। पूर्वकाल में सपादलक्ष में गुर्जर आकार बस गए थे। बाद में वे पूर्व राजस्थान में चले गए थे। मुस्लिम काल में बहुत से राजपूत पुनः सपादलक्ष में जाकर बसे थे। इसी कारण राजस्थानी और पहाड़ी भाषा में कुछ समानता पाई जाती है।' इस बात को डॉ. ग्रियर्सन ने भी स्वीकार किया है। 'मौलू राम ठाकुर जी के अनुसार कुलुई और बघाटी-क्योंथली पश्चिमी पहाड़ी की मुख्य बोलियां है। पश्चिमी पहाड़ी की सभी विशेषताएं इन दोनों बोलियों पर आधारित हैं। उन्होंने मंडियाली और चमयाली का मूलाधार कुलुई में माना है।'

भाषाओं और बोलियों का शब्द भंडार भिन्न स्रोतों द्वारा भरा जाता है। क्योंठली भाषा क्षेत्र में कोल किरात खश गुर्जर यक्ष नाग आदि अनेक जातियों का निवास रहा है। नए शासकों के साथ नई भाषाएं, नई संस्कृतियां, नई मान्यताएं साथ आती रही। इसी कारण क्योंठली भाषा के शब्दभंडार में नए नए शब्दों का समावेश होता रहा। वास्तव में अन्य भाषाओं के समान मूलरूप में संस्कृत ही इसकी जननी है। अन्य भारतीय भाषाओं के समान इसमें भी तत्सम, अर्धतत्सम, तद्भव, देशी व विदेशी शब्दों के चारों रूप मिलते हैं।

तत्सम शब्द :

राम, पाप , शिव, शंकर, नक्षत्र , गंगा, काया अंत, कपट

अर्ध तत्सम आंग (अंग), पोंडत (पंडित), सोरज (सूर्य), तीथ (तिथि)

इसमें संस्कृत के क्ष को ख में परिवर्तित करने की प्रवृत्ति विद्यमान है जैसे अक्षर झ आखर , अक्षि, आखी , शिक्षा, सीख, द्राक्षा, दाख आदि।

इसमें य को ज में बदलने की प्रवृत्ति भी विद्यमान है जैसे यज्ञ, जग, यजमान, जजमान, यव, जौ यात्रा, जातरऽ, योगी, जोगी, योद्धा, जोधा आदि।

स्वर मध्यवर्ती 'ख', ध, को 'ह' में बदलने की प्रवृति क्योंथली भाषा विद्यमान है जैसे- बधू, बहू, मुख, मुँह, नख, न्हौश, दधि, दही आदि।

तद्भव शब्द : पटीकणा (उछलना),पटकणा (नीचे गिराना),

सुतणा (सोना), उठणा (जागना / खड़े होना), फुलटू (फूल) भुलणा (भूलना), शेकड़ (छिलका), बेशणा /बेठणा (बैठणा)

राजस्थानी शब्द

राजस्थानी और क्योंठली दोनों में 'ण' 'ड़' व 'ळ' ध्वानियों की समानता पाई जाती है जैसे हसणा, खाणा, पीणा, नैण, खाळ, बाळ, बाळक, खड़, शड़क, आदि । राजस्थानी का म्हारा, और क्योंथली में महारा में बहुत अधिक साम्य है। इसी प्रकार भूत और भविष्यत काल का 'ला' प्रत्यय भी इन दोनों भाषाओं का सूचक है। संबंध सूचक रू, रा, री भी दोनों भाषाओं में एक समान विद्यमान है। क्योंठली में राजस्थानी शब्दों का बाहुल्य है जिसे निम्न उदाहरणों से समझा जा सकता है। जाणों , खाणों, शुणना , उठणा, नैण आदि ।

देशज शब्द

छेवड़ी (पत्नी),नैळणा (प्रतीक्षा करना),ठोळणा (ढूँढना),जवानस (औरत , महिला),शंटी ध्शूण्टी (झाड़ू),बेदणा (बुलाना)

फिऊ /फेऊ (अंगारा), बेदणी (पीड़ा),परेशों (उजाला), चीश (पानी) ढोळ (बड़ा पत्थर) पाथर (पत्थर)झीश (प्रातः) ठोळ्णा (ढूंढना), चुटणा (टूटना), शेटणा (फेंकना), सकेरना (साफ करना), घूग्घणा (भौंकना), चज रा (अच्छा / काम का) कचजा (बुरा/बेकार), शुणणा (सुनना) आदि।

शिमला को जब अंग्रेजों ने अपनी ग्रीष्मकालीन राजधानी बनाया और वे शिमला में आकार निवास करने लगे तो उनके आगमन से आंग्लभाषा के कुछ तत्सम और तद्भव शब्दों के रूप भी क्योंठली भाषा में समा गए। जैसे - बुशर्ट, टेंम, रेलगाड़ी, बस आदि। अरबी और फारसी के शब्दों का प्रयोग भी यहां के लोग अपनी बोली के साथ प्रयोग करते सुनाई देते हैं।

हिन्दी व उसकी सहचरी बोलियों की ध्वनियां देवनागरी लिपि द्वारा ही व्यक्त होती है। क्योंठली की अधिकांश ध्वनियां हिन्दी के समान ही हैं। इसकी स्वर संपत्ति संस्कृत, प्राकृत व अपभ्रंश से ही आई है लेकिन उच्चारण संबंधी विशेषताओं के कारण इसकी ध्वनियों के व्यक्तिकर्ण के लिए देवनागरी लिपि के साथ कुछ प्रतीक चिन्हों का प्रयोग आवश्यक हो जाता है। भौगोलिक परिस्थिथियों के कारण दूर के लोगों से संबोधनात्मक बात करते हैं। घाटी के आर पार स्थित गाँव की दूरी, नदियों की कलकल ध्वनि, पवन की सरसराहट आदि के कारण ध्वनि में अवरोध होना स्वाभाविक है। यही कारण है की प्लुत का प्रयोग केवल सम्बोधन तक सीमित नहीं रह सका। संस्कृत में 'अ' 'आ' केवल दो कंठ्य स्वर है लेकिन क्योंठली में केवल दो ध्वनियां हैं लेकिन क्योंठली में इसकी पाँच ध्वनियां मिलती हैं। इसमें अद्र्ध विवृत स्वर ध्वनि भी है जैसे खट-पट ,झट, हट आदि। 'अ' का शब्द के प्रारम्भ में प्रयोग कुल्लुवी के सामान क्योंठली में कम होता है और यह प्रायः अऽ आ, ओ की ध्वनियों में बदल जाता है। ॲ अ का ह्रस्व रूप है। द्रुतगति से उच्चारण करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है, बीच में आए शब्द के अंत में आए 'अ' का इसी रूप में उच्चारण किया जाता है। आऽ विवृत अग्र रूप है यह आ से अधिक दीर्घ रूप और ओ का ह्रस्व रूप माना जाता है से ह्रस्व होता है।

क्योंठली में भी न का प्रयोग प्रायः कम होता है और वह 'ण' ही उच्चरित होता है। इस के क्रिया शब्दों के अंतिम वर्ण जैसे उठणा, सुतणा, बेठणा, खाणा, पीणा से ही इसकी पुष्टि हो जाती है।

क्यूंथली में अऊ, अए, अआ आदि अलग संयुक्त स्वर हैं। देवनागरी लिपि री ऋ ,लृ ध्वनियों का प्रयोग क्यूंथली में नहीं होता। क्योंथली में ऋ के स्थान पर रि का ही प्रयोग किया जाता है जैसे रिषि। अनुनासिक से पहले का वर्ण भी अकसर दीर्घ हो जाता है। क्योंथली की ज्यादातर व्यंजन ध्वनियाँ हिन्दी व उसकी अन्य बोलियों के समान ही है। क्यूंथली में '.ल', 'ण' र 'ङ' री खास ध्वनियाँ हैं । ए ध्वनियाँ अपने पुराने स्वरूप का स्पष्टीकरण करती हैं।

कवर्ग की ध्वनियों का उच्चारण कंठ हिन्दी के कंठीय वर्णो से भी पीछे चला जाता है। तालव्य ध्वनियाँ तालव्य स्पर्श धृष्टम् ध्वनियाँ हैं। इनका उच्चारण करते समय जिह्वा का अगला हिस्सा मसूड़े के निकट तालु के साथ कुछ धर्षण करते स्पर्श करता है। 'च' और 'ज' अल्पप्राण व 'छ' व 'झ' महाप्राण हैं । 'च' व 'छ' अघोष तथा 'ज' व 'झ' घोष ध्वनियां हैं । क्योंथली में ये ज्यादा संघर्षी हैं और इनका दंत्य उच्चारण भी सुनने में आता है। नेपाली और राजस्थानी में भी ऐसा ही उच्चारण विद्यमान है। टवर्गीय ध्वनियों का इसमें भी मूर्धन्य स्थान ही है। तवर्गीय / वनियाँ हिन्दी की तरह ही प्रयोग की जाती हैं। उच्चारण में कहीं कहीं 'द' र 'ध' सानुनासिक ध्वनियों से बाद जैसे जंदा, धंधा। पवर्गीय ध्वनियाँ भी इसमें हिन्दी के समान ही है पर उच्चारण करते समय ओठों का मिलना कम समय के लिए होता है।

नासिक्य व्यंजन 'ङ' '' 'ण' 'न' 'म' में से 'ङ' 'ण' 'न' 'म' ध्वनियों का क्योंठली में प्रयोग किया जाता है। 'ङ' रे स्थाने 'गँ' का ही प्रयोग होता है। 'ण' क्यूंथली री उत्क्षिप्त परिवेष्टित ध्वनि है। वैसे क्यूंथली में 'न' का 'ण' बन जाता है लेकिन न का स्वतंत्र प्रयोग भी होता है नाना नानी ऐसे ही शब्द हैं।

'ल' री ध्वनि भी इसमें है। इसके साथ 'ळ' का भी प्रयोग किया जाता है। प्राकृत में भी 'ल का 'ळ' बन जाता है। अपभ्रंश और मराठी , राजस्थानी सिन्धी भाषाओं में भी इसका प्रयोग मिलता है। 'श', 'ष' र 'स' में से 'श' र 'स' का ही आम प्रयोग किया जाता है।

'ह' ध्वनि सघोष और अघोष दोनों रूपों में क्योंठली में प्रयोग

कविता

वसंत तुम आए

◆ डॉ. शशि गोयल

वसंत तुम आए
लेकर मेरे लिए उपहार
प्रकृति का शृंगार
टांग दिए झूमर, पहनाए गलहार,
सूरज ने छील लिए मुझसे आभूषण
तपती दोपहरी ले गई सुगंध
किरणों ने पत्तों का रंग भी पोंछ दिया
हवाओं ने उड़ेल दिए धूल के गुबार
वसंत तुम आए
लेकर मेरे लिए उपहार

सावन ने पहनाई सतरंगी चूनर
बादल ने छनकाए छनछनछन घूंघर
इठलाई नाची पहन लिया घूमर
तूफानों ने छील ली मेरी अभिलाषा
मौन हुई मेरी मीठी सी भाषा
रणभेरी सी बज उठी घनघन घन टंकार
अंग अंग बिखर गया घायल हुए गात
वसंत तुए आए
लेकर मेरे लिए उपहार।

शरद की ठंडी सी बयार ने
मेरा मन मोहा था
लगाए थे सफेद बूटे मेरे आंचल में
चांद की चांदनी का बिछाया था बिछौना
रंग छिटका भी न पाई थी
हेमंत हो उठा था निठुर
चुराली मेरे पतों की नरमी
ढकने लगा चांद तारों को
मेरी हरियाली से
अपने ठंडे पड़ते हाथों को
छिपा लिया था
छीनकर मेरी गरमी
वसंत तुए आए।

सप्तर्षि अपार्टमेंट, जी-9 ब्लॉक, 3 सेक्टर 16वीं आवास विकास सिकंदरा, आगरा, उ. प्र.-282 010

किया जाता है। 'ओ' के बाद 'ह' की ध्वनि स्पष्ट सुनने को मिलती है।

इसमें प्रयोग होने वाले सर्वनाम संस्कृत की देन हैं। प्राकृत और अपभ्रंश के मधी से गुजरने के कारण ध्वन्यात्मक बदलाव आना स्वाभाविक ही है । इसमे विशेषणों पर लिंग वचनों का प्रभाव पड़ता है। संज्ञापदों के अनुरूप ही विशेषण के लिंग भी आते हैं। जिशे केळे बळद। इसी प्रकार 'ओ' 'णो' आ आदि प्रत्यय प्रयोग किए जाओ। संख्यावाचक विशेषण सारे हिन्दी के समान ही हैं।

क्योंठली भाषा का एक नमूना देखिए

रामायण पुराणे जमाने द भारतीय समाज री अंधेरी बाटो द प्रेशो करदी रई अ । सबी जणे के इंदों प्रेरणा ओ शांति मिलदी रौई अ। ऐ सबी द आच्छो ग्रंथ ई नहीं भारतीय जिंदगी री सबी द बढ़िया छाणबीण बी अस। कूहे भी भाषा एतणी पूजणे जोगी, सीधी और शुद्ध नहीं हुई सकदी, जेतणी से भाषा जिंदा भारती रे अमर कविए श्री राम, लक्ष्मण, सीता र रेके महापुरुषो र नारी री कथा लिखी अ। श्री राम देवते र पुरुषो रे आदर्श असौ। से एक आदर्श विद्यार्थी, आदर्श बेटा, आदर्श पति र सबी द बढ़ी र आदर्श राजा थिया। तबे ई राम के आदर्श पुरुष मर्यादा पुरुषोतम माना जाओ।

किसी भी भाषा को सुरक्षित रखने के लिए उसकी सहचरी बोलियों को सुरक्षित रखना आवश्यक हो जाता है। अभी तक अपने सम्पूर्ण गौरव के लिए प्रयासरत हिन्दी में क्योंथली जैसी सहचरी बोलियाँ पहाड़ों की ओट में पनप रही हैं। निरंतर यातायात के साधनों में वृद्धि और शिक्षा के प्रसार के साथ बाहरी संपर्क अधिक होने के कारण इन बोलियों के वास्तविक स्वरूप में निरंतर परिवर्तन आ रहा है इसका अधिकांश साहित्य मौखिक होने के कारण इसके साहित्य को सँजोने की परमावश्यकता है।

आजकल शहरों में निवास करने के कारण यहाँ के निवासियों ने भी अपनी भाषा में अपने गांवों में भी बात करना बंद करा दिया है परिणाम स्वरूप हमारी अगली पीढ़ी भी इससे अनजान रहा जाएगी।अंततः मेरा सभी से अनुरोध है कि हम सब अपने परिवारों में अपने पहाड़ी समाज में अपनी बोली का सहज रूप में प्रयोग करें। इससे हमारी अगली पीढ़ियों में भी इसके संस्कार बने रहेंगे और हमारी अपनी संस्कृति की की रक्षा होगी जिसका लाभ हम सभी को मिल पाएगा।

एक ओंकार निवास, छोटा शिमला,
शिमला-171002

आलेख

धर्म और स्वास्थ्य का संगम : रुद्राक्ष

◆ प्रो. योगेश चंद्र शर्मा

पौराणिक कथाओं के अनुसार भगवान शंकर के आंसू की कुछ बूंदें टपकीं जो पृथ्वी पर गिरकर रुद्राक्ष के वृक्ष के रूप में परिवर्तित हो गईं। शंकर (रुद्र) की आंखों (अक्ष) से उत्पन्न होने के कारण ही इस वृक्ष के फल का नामकरण रुद्राक्ष (रुद्र + अक्ष) किया गया। इस संबंध में स्कन्द पुराण में कहा गया है -

रुद्राक्षजलबिन्दुभ्यो यतो जाता महीरुहाः।
ततो रुद्राक्षवृक्षास्ते विख्याता धरणीतले।।

भगवान शंकर के नेत्रों से आंसू की ये बूंदें किस कारण गिरीं तथा वे किसी विषाद से उत्पन्न हुई थीं या हर्ष के आवेग से, इसके बारे में पौराणिक कथाएं अलग-अलग प्रकार से हैं।

स्कन्द पुराण के अनुसार भगवान शंकर ने जब देवताओं के कल्याण के लिए त्रिपुर का संहार कर दिया तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। देवताओं ने राहत की सांस ली और उन्होंने भगवान शंकर के प्रति आभार व्यक्त किया। इससे शंकर के नेत्रों से आनन्दाश्रु की चार बूंदें धरती पर गिर पड़ीं, जिनसे पृथ्वी पर रुद्राक्ष के चार वृक्ष प्रकट हो गये।

एक अन्य कथा के अनुसार त्रिपुर का वध करने के लिए भगवान शंकर को अघोर नाम का एक अस्त्र तैयार करना पड़ा था, जिसमें काफी समय और परिश्रम लगाना पड़ा। इस अस्त्र को बनाने के लिए भगवान शंकर को काफी देर तक अपनी आंखें खुली रखनी पड़ीं, जिससे उनकी आंखों से पानी की कुछ बूंदें टपक पड़ीं।

रुद्राक्ष की उत्पत्ति के बारे में एक और कथा है। अपने पिता राजा दक्ष द्वारा किये गए यज्ञ में जब सती ने शिव का अपमान होते हुए देखा तो उन्होंने वहीं यज्ञाग्नि में कूद कर अपने प्राणों की आहुति दे दी। इससे शंकर अत्यधिक दुखी हुए और वे पत्नी सती के शव को लेकर इधर-उधर विचरण करने लगे। उस समय उनके नेत्रों से जो विषाद के आंसू निकले, वही आंसू रुद्राक्ष के वृक्ष के रूप में परिवर्तित हो गये।

पौराणिक कथा के अनुसार शंकर की आंखों से निकली आंसू की चार बूंदें ही रुद्राक्ष के चार वृक्षों में बदलीं। तदनुसार रुद्राक्ष के वृक्षों के चार प्रकार माने जाते हैं - 1. रुद्राक्ष 2. भद्राक्ष 3. इन्द्राक्ष 4. सहस्राक्ष।

इनमें विशेष महत्त्व रुद्राक्ष का ही माना जाता है जिसका फल आंवले के समान गोल आकृति का होता है। पूजा, मंत्र-तंत्र तथा औषधि की दृष्टि से इसी को सर्वोत्तम माना जाता है। भद्राक्ष बेर की गुठली की आकृति का होता है। इंद्राक्ष मूंगफली के दाने के बराबर तथा उसी की आकृति के समान होता है। सहस्राक्ष की आकृति कुछ चपटी होती है। पूजा की दृष्टि से इन सबके महत्व को स्वीकार किया गया है लेकिन रुद्राक्ष की तुलना में शेष मध्यम कोटि के तथा कम फलदायक माने गए हैं।

रुद्राक्ष के वृक्ष में आने वाला फल पकने के उपरान्त अपने आप नीचे गिर जाता है। इसका गूदा सख्त होता है, इसलिए इस फल को पानी में डाल दिया जाता है जहां यह कई दिनों तक पड़ा रहता है। जब यह नर्म हो जाता है तो इस गूदे को फेंक दिया जाता है और इसके बाद जो बीज निकलता है, वही रुद्राक्ष होता है।

पौराणिक मान्यता के अनुसार रुद्राक्ष के दाने कंठ में बत्तीस, भुजाओं पर छः छः, बाहुओं पर आठ, शिखा में एक, मस्तक में चालीस, कानों में तीन-तीन तथा हृदय पर एक सौ आठ धारण करने चाहिएं। रुद्राक्ष की माला सोना, चांदी या तांबे के तारों में पिरोकर बनाई जा सकती है। लाल अथवा सफेद धागे में भी इन्हें पिरोया जा सकता है। स्कंदपुराण के अनुसार माला बनाते समय रुद्राक्ष के मुख से मुख तथा पुच्छ से पुच्छ संयुक्त होने चाहिएं अन्यथा हानि पहुंचने की भी आशंका रहती है। रुद्राक्ष धारण करने से पूर्व उन्हें किसी तीर्थ के जल से धोकर पवित्र कर लेना चाहिए फिर शिवलिंग से इनका स्पर्श करवाकर इस मंत्र का जाप करते हुए धारण करना चाहिए - 'ॐ नमः शिवायः।' प्रचलित मान्यता के अनुसार रुद्राक्ष धारण करने के छः सप्ताह उपरान्त इसके लाभ मिलने शुरू होते हैं।

हमारे धर्मशास्त्रों में रुद्राक्ष के महत्व की चर्चा काफी विस्तार से की गई है। रुद्राक्ष शंकर को अत्यधिक प्रिय है, इसलिए मान्यता है कि रुद्राक्ष में स्वयं भगवान शंकर का निवास है। रुद्राक्ष को धारण करने से मनुष्य के पाप नष्ट होते हैं और दुष्टात्माएं दूर भागती हैं। रुद्राक्ष के महत्व पर एक अलग उपनिषद् 'रुद्राक्ष

जाबालोपनिषद्' की भी रचना की गई है।

मान्यता है कि प्राचीन काल में रुद्राक्ष एक-मुखी से लेकर बत्तीस-मुखी तक होते थे। अब सामान्यतः चौदह-मुख तक के ही रुद्राक्ष उपलब्ध होते हैं। इससे अधिक मुख वाले रुद्राक्ष यदा-कदा ही अपवाद स्वरूप प्राप्त होते हैं। अधिकांश दाने पांच-मुखी होते हैं। मुख से अभिप्राय रुद्राक्ष के दानों पर बनी रेखाओं से होता है, अतः जितनी रेखाएं उतने ही मुख। वैसे तो सभी रुद्राक्ष लाभदायक और फलदायक होते हैं मगर प्राचीन साहित्य में अलग-अलग मुख वाले रुद्राक्षों के महत्व की चर्चा अलग-अलग प्रकार से की गई है। यह उल्लेखनीय है कि कटे-फटे या कीड़े खाये रुद्राक्ष पहनने का स्पष्ट निषेध है और ऐसे रुद्राक्ष लाभ के स्थान पर हानि पहुंचा सकते हैं।

एक-मुखी रुद्राक्ष को सर्वोच्च तथा सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यह दर्शन मात्र से ही व्यक्ति को अनेक पुण्यों का लाभ प्रदान करता है। एक-मुखी रुद्राक्ष यदा-कदा ही किसी वृक्ष में प्राप्त होता है। हरिद्वार आश्रम में जो दो सौ वर्ष पुराना रुद्राक्ष वृक्ष है, उसमें एक से पांच-मुख तक के रुद्राक्ष लगते हैं लेकिन फिर भी एक-मुखी रुद्राक्ष कभी-कभी ही आता है। एक-मुखी रुद्राक्ष सभी प्रकार के लाभ और सौभाग्य को देने वाला माना जाता है तथा इससे भक्ति और मुक्ति दोनों प्राप्त होती है।

दूसरे क्रम पर दो-मुखी रुद्राक्ष है, जो विभिन्न मनोकामनाओं को पूरा करने के अतिरिक्त औषधीय दृष्टि से भी अत्यन्त उपयोगी है। यह पापनाशक और वैभव का दाता है।

रुद्राक्ष का औषधीय महत्व भी कम नहीं है। आयुर्वेद के अनुसार रुद्राक्ष कफ निवारक और वायु नाशक है। तुलसी के समान रुद्राक्ष भी अनेक गुणों से युक्त है। रुद्राक्ष विटामिन 'सी' से भरपूर होता है, रक्त को शुद्ध करता है, सिर दर्द को नष्ट करता है और सर्दी तथा कफ से होने वाले सभी रोगों में लाभ पहुंचाता है। यह हृदय-रोग की रोकथाम करके हृदय को शक्ति प्रदान करता है। इसे मधु के साथ घिसकर चाटने से कफ नष्ट होता है तथा पानी में घिसकर फोड़े पर लगाने से आराम मिलता है।

तीन-मुख वाले रुद्राक्ष को विद्याओं का स्वामी माना जाता है। इसे धारण करने से मनुष्य की प्रतिभा का विकास होता है। प्रचलित मान्यता के अनुसार तीन दिन में एक बार आने वाला बुखार इसे धारण करने से नष्ट हो जाता है।

चारमुखी रुद्राक्ष महिलाओं के लिए विशेष रूप से लाभदायक माना गया है। यह सौभाग्य तथा सन्तान का दाता है। स्कन्दपुराण के अनुसार इसे धारण करने से चारों फल (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति होती है।

पंचमुखी रुद्राक्ष धारण करने वाला व्यक्ति स्वयं पंचानन (शिव) के समान हो जाता है। छः-मुखी रुद्राक्ष विभिन्न रोगों को नष्ट करने वाला और स्वास्थ्यवर्धक है।

सप्तमुखी रुद्राक्ष से लक्ष्मी और अष्टमुखी रुद्राक्ष से विजय प्राप्त होती है। नवमुखी रुद्राक्ष से शक्ति प्राप्त होती है और इससे नव-रात्र करने का लाभ प्राप्त होता है। दशमुखी रुद्राक्ष को विभिन्न पापों को नष्ट करने वाला तथा लोकप्रियता प्रदान करने वाला माना जाता है। ग्यारह-मुख वाले रुद्राक्ष को धारण करने से एकादशी व्रत का पुण्य मिलता है तथा सुख-सुविधाओं में वृद्धि होती है। बारहमुखी रुद्राक्ष से द्वादशाक्षर मंत्र (ऊं नमो भगवते वासुदेवाय, ऊं नमो भगवते गंगाधराय) जप करने का फल प्राप्त होता है। त्रयोदशमुखी रुद्राक्ष पापों को नष्ट करने वाला, सभी मनोकामनाओं को पूरा करने वाला और लोगों को आकर्षित करने वाला होता है। चतुर्दशमुखी रुद्राक्ष दुःख और दरिद्रता को नष्ट करने वाला है। यह रुद्राक्ष चौदह विद्या, चौदह लोक, चौदह मनु तथा चौदह इन्द्र के समकक्ष है।

रुद्राक्ष के बारे में पद्मपुराण, स्कन्दपुराण, शिवपुराण, मत्स्यपुराण, देवी भागवतपुराण, लिंगादिपुराण, विभिन्न उपनिषद् तथा संहिताएं, शैवागम और महाभारत आदि ग्रंथों में काफी विस्तार से लिखा गया है जो इसके महत्व का स्वयं प्रमाण है।

रुद्राक्ष को शिवशक्ति के रूप में माना गया है। इसका शरीर से स्पर्श होना स्वास्थ्य के लिए विशेष रूप से लाभदायक है, इसीलिए रुद्राक्ष की माला से किसी मंत्र का जाप करना विशेष पुण्यदायक माना जाता है। रुद्राक्ष से पूरा लाभ प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि रुद्राक्ष असली हों क्योंकि बाजार में मिलने वाले अधिकांश रुद्राक्ष आजकल नकली होते हैं। नकली रुद्राक्षों पर अक्सर रंग या पॉलिश भी की हुई होती है। गीले कपड़े से उसे पोंछने पर इस रंग या पॉलिश की आसानी से जानकारी हो सकती है।

रुद्राक्ष का औषधीय महत्व भी कम नहीं है। आयुर्वेद के अनुसार रुद्राक्ष कफ निवारक और वायु नाशक है। तुलसी के समान रुद्राक्ष भी अनेक गुणों से युक्त है। रुद्राक्ष विटामिन 'सी' से भरपूर होता है, रक्त को शुद्ध करता है, सिर दर्द को नष्ट करता है और सर्दी तथा कफ से होने वाले सभी रोगों में लाभ पहुंचाता है। यह हृदय-रोग की रोकथाम करके हृदय को शक्ति प्रदान करता है। इसे मधु के साथ घिसकर चाटने से कफ नष्ट होता है तथा पानी में घिसकर फोड़े पर लगाने से आराम मिलता है। इसकी छाल का काढ़ा संधिवात, मिर्गी, निमोनिया तथा पित्त विकार आदि रोगों में लाभ पहुंचाता है। सांप के काट लेने पर भी रुद्राक्ष लाभ पहुंचाता है। इसकी भस्म हैजा, चेचक, पेचिश और दमा को दूर करती है। रुद्राक्ष में चुम्बकीय शक्ति है, जिससे यह अनेक रोगों में लाभ

कविता

इनका स्वागत करें

◆ हंसराज भारती

घाटी के खेतों में
गेहूं की बालियों ने
ओढ़ ली है पीली सी चुनरी
सेब, नाशपतियों की डालियां
फूलों से लदकर झुक गई हैं
हवाएं नई दुल्हन की तरह
शरमा रही हैं
धूप ने छोड़ दिया है
लुका छिपी का पुराना खेल
हरियाली ने लंबी नींद के बाद
खोली हैं आंखें
सुस्त, पस्त सी पगडंडियां

अब चौक चौबंद हो गई हैं
चूड़ियों की खनखराहट
लोकगीतों की स्वर लहरियां
फिर से सन्नाटे को तोड़ने लगी हैं
भेड़ों के रेवड़ जा रहे हैं
फिर से ऊंचे पहाड़ों की ओर
नदियों पर यौवन छाने लगा है
उनकी चाल इनकी गवाह हैं
सच बर्फ पिघल रही है
नई रुत द्वार पर खड़ी
खड़का रही सांकल
शरद के निष्ठुर दिन
विदाई के गीत गा रहे हैं
कितने सुनहले, सांवले, सौम्य से
वसंत के दिन आ रहे हैं
आओ, इनका स्वागत करें
पहाड़ों का धन्यवाद करें।

बसंतपुर, सरकाघाट, मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 042, मो. 0 98163 17554

पहुंचाता है। इसे धारण करने से हमारा रक्तचाप सामान्य हो जाता है, जिसके कारण यह उच्च तथा निम्न दोनों प्रकार के रक्तचाप के रोगियों के लिए वरदान स्वरूप है। योग्य चिकित्सक की सलाह के अनुसार रुद्राक्ष का प्रयोग करने से हम अनेक रोगों में स्वास्थ्य लाभ कर सकते हैं। वस्तुस्थिति यह है कि हमारे यहां धार्मिक दृष्टि से जिन वृक्षों या फलों आदि को पवित्र और महत्वपूर्ण माना गया है, वे लगभग सभी हमारे स्वास्थ्य के लिए उपयोगी और लाभदायक हैं। आवश्यकता इस बात की है कि हम इस वस्तुस्थिति को भली प्रकार समझें, स्वीकारें और अपनाएं।

औषधि के रूप में रुद्राक्ष के कुछ निम्न प्रयोग भी उल्लेखनीय हैं -

1. रात्रि को तांबे के लोटे में पानी भरकर रुद्राक्ष के चार-पांच दाने उसमें डाल दें। प्रातःकाल उठकर इस जल को पी लें। इसके नियमित प्रयोग से आलस्य, अनिद्रा, उदर गैस, कब्ज तथा अम्लपित्त जैसे अनेक रोगों से मुक्ति मिलेगी।

2. गले में गिल्टी, कंठमाला या थाइराइड हो तो उस पर रुद्राक्ष इस तरह बांधें कि वह पूरी तरह गिल्टी के ऊपर रहे। कुछ ही दिनों बाद गिल्टी अपने आप बैठने लगेगी। बच्चों के गिल्टी (ग्लैंड) होने पर उस पर रुद्राक्ष घिसकर दिन में तीन-चार बार लगाएं और ऊपर से थोड़ा सेक भी दें तो गिल्टी धीरे-धीरे बैठने लगेगी।

3. स्मरण शक्ति बढ़ाने के लिए रुद्राक्ष के साथ बच, शंख और ब्राह्मी को घिसकर प्रातःकाल और सायंकाल चाटें या पानी मिलाकर एक-एक चम्मच पिएं। मिर्गी तथा अनिद्रा में भी इससे लाभ होगा।

4. दमा, श्वास और खांसी में रुद्राक्ष घिसकर उसमें चावल भर अभ्रक भस्म और त्रिकुट चूर्ण मिलाकर शहद के साथ चाटने से लाभ मिलता है।

5. रुद्राक्ष (एक दाना) और सुगंध रास्ना (एक तोला) को खरल में पीसकर चूर्ण बना लें। बांझ स्त्री के रजस्वला होने पर प्रथम दिन से सात दिन तक इसकी 2-3 माशा की मात्रा प्रतिदिन उसे देने से लाभ होगा। शर्त यह है कि उसे अन्य कोई रोग न हो।

6. चेचक में रुद्राक्ष के साथ पपीते के बीज गूंथ कर उसकी माला पहनने से लाभ होता है।

रुद्राक्ष के वृक्ष भारत में अनेक स्थानों पर प्राप्त होते हैं। बंगाल, असम और देहरादून में पंचमुखी रुद्राक्ष पैदा होते हैं, जिन्हें एलियोकारपस जैनिट्स कहते हैं। मैसूर और नीलगिरी में दो से ग्यारह मुख तक के रुद्राक्ष प्राप्त होते हैं, जिन्हें ट्यूबर क्लैट्स कहते हैं। हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं पर भी कई प्रकार के रुद्राक्ष प्राप्त होते हैं। नेपाल से रुद्राक्ष निर्यात भी होते हैं। नेपाल के रुद्राक्ष को अधिक प्रभावशाली माना जाता है।

10/611-मानसरोवर,
जयपुर-302020 (राज.)

आलेख

यदि ईश्वर मात्र कल्पना है तो हमारे पास इसका विकल्प क्या है?

◆ प्रदीप कुमार सिंह 'पाल'

हमारे मन में प्रश्न उठता है कि यदि ईश्वर है तो संसार में इतना अज्ञान, मारा-मारी, असमानता तथा दुःख क्यों है? क्या समाज को नियंत्रण में रखने के लिए कुछ विचारशील लोगों ने ईश्वर की अवधारणा को अपनी कल्पना द्वारा जन्म दिया है? जैसे बच्चों को प्रायः डराने के लिए मां कहती है कि जल्दी सो जाओ नहीं तो शैतान आकर तुम्हें उठा ले जायेगा। बालक भोला-भाला होता है वह मां की बात सच मानकर शैतान के डर से सो जाता है। इसी प्रकार अतीतकाल में गुफाओं से बाहर आकर कुछ बुद्धिमान लोगों ने कुछ कम बुद्धिमान लोगों को शिक्षा दी होगी कि बुरे काम करने से पाप होता है तथा अच्छे काम करने से पुण्य मिलता है। मानव की समझ के अनुसार प्रेरणादायी कथाओं तथा मूर्तियों-प्रतिमाओं के रूप में ईश्वर की पूजा के प्रचलन को बढ़ाया गया होगा। ऐसे बुद्धिमान लोगों की इसके पीछे लोक कल्याण की भावना रही होगी। इसी के बाद जाति के भेदभाव, रंग-भेद, अमीर-गरीब जैसी सामाजिक तथा धार्मिक कुरीतियों के युग की शुरुआत हुई होगी।

इस अन्याय को देखकर कृष्ण की प्रखर प्रज्ञा व्याकुल हो उठी होगी। संसार में फैले अन्याय को रोकने तथा न्याय की स्थापना के लिए उस युग में न्यायालय के अभाव में उन्हें अन्तिम विकल्प के रूप में महाभारत युद्ध की रचना करनी पड़ी होगी। किसी रोगी, वृद्ध, मृत्यु तथा धार्मिक पाखण्ड को देखकर सिद्धार्थ जैसे बालक की मानवीय संवेदना जागी होगी। सिद्धार्थ इस अज्ञान से मनुष्य को मुक्त कराने के लिए ज्ञान की खोज में निकल पड़े। वह वर्तमान तथा सत्य में ठहर गये और वह बुद्ध बन गये। बुद्ध ने सारे संसार को सन्देश दिया कि सभी मनुष्य एक समान हैं। इसी प्रकार ईशु ने अपना बलिदान देकर करूणा का सन्देश दिया। मोहम्मद ने आपस में एक दूसरे का खून बहाने वाले काबिलों को भाईचारे का सन्देश दिया। नानक ने स्वार्थ में लिप्त समाज को त्याग का सन्देश देकर उबारा। इसी प्रकार अनेक महापुरुषों ने संसार के अलग-अलग क्षेत्रों में लोगों की भलाई के लिए अपना जीवन लगा दिया।

मनुष्य की विचारशील तथा प्रगतिशील आस्था यह मानती है कि इस सारी सृष्टि को बनाने वाला एक परमपिता परमात्मा है। सभी धर्मों का स्रोत एक परमपिता परमात्मा है। इस सृष्टि की रचना परमपिता परमात्मा ने प्राणी मात्र के लिए की है। इसके विपरीत विज्ञान ऐसा नहीं मानता है। कभी एक वैज्ञानिक ने अपनी खोज के आधार पर कहा कि सूर्य पृथ्वी के चक्कर लगाता है। उसके कुछ वर्षों बाद दूसरे वैज्ञानिक ने और गहराई से खोज करके दुनिया के सामने इस सत्य को उजागर किया कि नहीं पृथ्वी सूर्य के चक्कर लगाती है। यह एक सत्य है कि पृथ्वी सूर्य के चक्कर लगाती है। वह निरन्तर ब्रह्माण्ड का किस प्रकार निर्माण हुआ इसकी खोज- अनुसन्धान में लगा हुआ है। विज्ञान में निरन्तर खोजों-अनुसन्धानों द्वारा विकास हुआ है। प्रगतिशील विचार होने के कारण विज्ञान सदैव पुरानी खोजों से निरन्तर
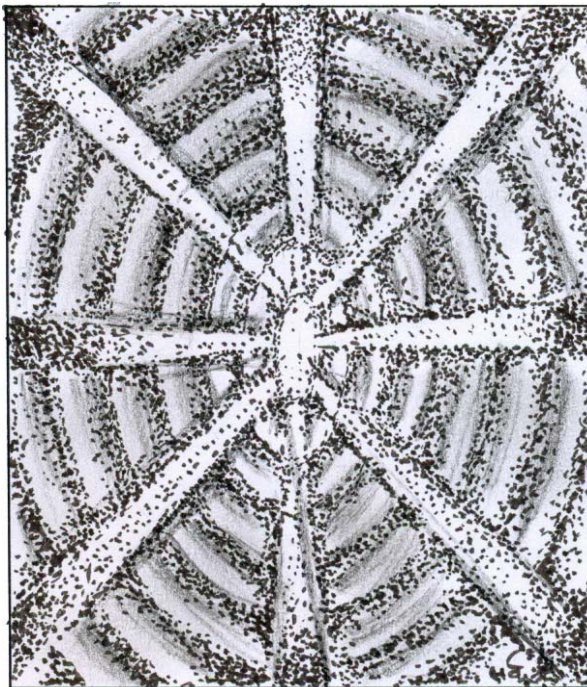
आगे की ओर बढ़ता जा रहा है। इसी प्रकार धर्म को भी प्रगतिशील होना चाहिए उसे पुरानी परम्पराओं, मान्यताओं तथा अन्धविश्वासों में ही नहीं बंधे रहना चाहिए। धर्म तथा विज्ञान का समन्वय इस युग की आवश्यकता है। धर्म के मायने हैं धारण करना। अर्थात सामाजिक तथा धार्मिक गुणों को जीवन में धारण करना। जो जोड़े वह धर्म है तथा जो तोड़े वह अधर्म है। सत्य की निरन्तर स्वतंत्र खोज ही धर्म का परम उद्देश्य है। मेरा धर्म, तेरा धर्म तथा उसका धर्म की संकीर्ण सोच को अब त्यागने में ही मानव जाति का हित है। आज के युग में व्यापक सोच यह है कि ईश्वर एक है, धर्म एक है तथा मानव जाति एक है।

पूजा-पाठ, प्रार्थना, सबद-कीर्तन, इबादत करते हुए ईमानदारी से अपना कार्य-व्यवसाय करने वाला व्यक्ति श्रेष्ठ श्रेणी में आता है। साथ ही जो व्यक्ति ईश्वर के अस्तित्व को न मानते हुए अपने कार्य-व्यवसाय को यदि ईमानदारी के साथ करता है वह भी मनुष्यता की श्रेष्ठ श्रेणी में आता है। धर्म के नाम पर दूसरों की जान लेने वाले व्यक्ति का कोई धर्म नहीं होता। एक धर्म के व्यक्ति द्वारा दूसरे धर्म के व्यक्ति की जान लेना अमानवीय कृत्य है। ऐसे समुदाय सामाजिकता, कानून-न्याय तथा व्यवस्था के विरोधी होते हैं। महात्मा गांधी से किसी व्यक्ति ने पूछा कि क्या ईश्वर का अस्तित्व है? इस प्रश्न के जवाब में महात्मा गांधी ने कहा कि ईश्वर है या नहीं है, इस बारे में मैं दावे के साथ कुछ नहीं कह सकता। लेकिन मैं यह दावे के साथ कह सकता हूँ कि सत्य ही ईश्वर है। नास्तिक व्यक्ति कुदरत अर्थात प्रकृति के नियमों का सम्मान करते हुए अपना जीवन व्यतीत करता है। भारतीय संविधान में आस्तिक तथा नास्तिक दोनों को समान अधिकार प्राप्त हैं। संविधान दोनों का बराबर से सम्मान करता है। इसलिए संविधान दोनों को अपने-अपने विचार के अनुसार जीवन जीने की स्वतंत्रता प्रदान करता है।

मानव इतिहास में विश्व में राजनैतिक विचारधारा के कारण कम वरन् धर्म के नाम पर ही सबसे ज्यादा लड़ाइयाँ तथा युद्ध हुए हैं। धर्म के नाम पर हम रोजाना जो भी घण्टों पूजा-पाठ करते हैं वे भगवान को याद करने के लिए कम भगवान को भुलाने के ज्यादा होते हैं। रामायण में लिखा है परहित सरिस धर्म नहीं भाई, परपीड़ा नहीं अधमाई। अर्थात दूसरों का भला करने से बड़ा कोई धर्म नहीं है तथा दूसरों का बुरा करने से बड़ा कोई अधर्म नहीं है। गीता, त्रिपटक, बाईबिल, कुरान, किताबें-अकदस में जो लिखा है उसकी गहराई में जाकर उसे जानना तथा उसके अनुसार अपना कार्य-व्यवसाय करना ही पूजा है। देश संविधान तथा कानून से चलता है इसके अनुसार जीवन यापन करना भी हमारा कर्तव्य है।

मानवीय गुण दया, करुणा, त्याग, प्रेम, एकता, मित्रता, समता, न्याय आदि सार्वभौमिक हैं। गुणात्मक शिक्षा के द्वारा हमें एक ऐसी जीवन शैली विकसित करनी है जो 21वीं सदी के वैश्विक युग में मानव जाति के लिए सर्वमान्य हो। भारत के सुप्रीम कोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री टीएस ठाकुर के अनुसार देश-दुनिया में बढ़ती असहिष्णुता चिन्ता का विषय है। संविधान के अनुसार इंसान और भगवान के बीच रिश्ता बेहद निजी होता है, इससे किसी अन्य का कोई मतलब नहीं होना चाहिए। उनका कहना था, 'मेरा धर्म क्या है? मैं अपने ईश्वर के साथ कैसे जुड़ता हूँ? उनकी इबादत किस तरह से करता हूँ? यह बेहद निजी मामला है। मेरे धार्मिक मामलों में दखल देने का किसी को कोई अधिकार नहीं है।" उन्होंने समाज में शांति के लिए सहिष्णुता की भावना विकसित करने पर जोर दिया।

मनुष्य की दो सच्चाई हैं - पहला मनुष्य शरीर धारी है तथा दूसरा मनुष्य को विचारशील चेतना भी मिली है। शरीर थक कर सो जाता है लेकिन चेतना उस समय भी जाग्रत रहती है। चेतना के अस्तित्व का प्रमाण हमें सोते समय दिखाई देने वाले सपनों से लग सकता है। हमारी चेतना ही हमें सपनों के संसार में ले जाती है। मनुष्य की चेतना के दायरे के अनुरूप उसके लक्ष्य निर्धारित होते हैं। यदि हमारा लक्ष्य अपने परिवार तक सीमित है तो हमारी चेतना सांसारिक व्यक्ति की होगी। यदि हमारा लक्ष्य प्रदेश में एकता स्थापित करने का है तो हमारी चेतना का स्तर प्रदेश स्तरीय होगा। यदि हम देश में एकता करना चाहते हैं तो हमारी राष्ट्रीय स्तर की चेतना होगी। यदि हम सारे विश्व में एकता करना चाहते हैं तो हमारी चेतना का स्तर विश्वव्यापी होगा। आज विश्वव्यापी चेतना की आवश्यकता है। चेतना को हम दृष्टिकोण, प्रज्ञा, मन, सोच, संवेदना, अस्तित्व, चिन्तन, आत्मीयता, मनुष्यता किसी भी नाम से पुकार सकते हैं। मनुष्य का जन्म तो सहज होता है लेकिन चेतना का विकास निरन्तर प्रयास द्वारा किया जाता है।

जिस प्रकार परिवार में सबकी अलग-अलग सोच होती है इसी प्रकार वृहत परिवार संसार में भी अलग-अलग सोच के लोग रहते हैं। जिस प्रकार एक पिता परिवार के प्रत्येक सदस्य की भावना तथा विकास का ख्याल रखता है उसी प्रकार विश्व रूपी परिवार के प्रत्येक व्यक्ति को सत्य, चेतना, संविधान और न्याय-कानून का ज्ञान देकर ही उसके अज्ञान को दूर किया जा सकता है। हमारा फोकस विश्व के प्रत्येक व्यक्ति को बिना जाति-धर्म का भेदभाव किये अपना मित्र बनाने का होना चाहिए। हमारे जीवन का लक्ष्य इस युग में विश्व एकता का होना चाहिए। अब केवल भारत की एकता से काम नहीं चलेगा वरन् सारे विश्व की एकता आवश्यक है। तभी हम विश्व से आतंकवाद तथा युद्धों का समाधान निकाल पायेंगे। इस विश्वव्यापी लक्ष्य को पाने के लिए प्रत्येक नास्तिक तथा आस्तिक दोनों तरह के चिन्तन वाले व्यक्तियों की आवश्यकता है। किसी का सहयोग उसे हम मित्र बनाकर ही ले सकते हैं।

आज का प्रगतिशील धर्म तथा विकसित चेतना यह कहती

है कि सभी पवित्र पुस्तकों-गीता, त्रिपटक, बाइबिल, कुरान, गुरू ग्रन्थ साहिब, किताबे-अकदस का ज्ञान क्रमशः कृष्ण, बुद्ध, ईशु, मोहम्मद, नानक तथा बहाउल्लाह के माध्यम से युग-युग की आवश्यकतानुसार सम्पूर्ण मानव जाति के मार्गदर्शन के लिये एक ही परमात्मा ने भेजा है। एक ही परमात्मा के द्वारा भेजी गई इन पवित्र पुस्तकें गीता, त्रिपटक, बाइबिल, कुरान, गुरू ग्रन्थ साहिब, किताबे-अकदस की मूल शिक्षायें समस्त मानव जाति को मुख्यतया एकता का संदेश देतीं हैं, साथ ही गीता द्वारा न्याय, त्रिपटक द्वारा समता, बाइबिल द्वारा करूणा, कुरान द्वारा भाईचारा, गुरू ग्रन्थ साहिब द्वारा त्याग तथा किताबे-अकदस द्वारा हृदय की एकता की शिक्षायें युग-युग की सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार एक ही परमात्मा ने भेजी हैं। सभी बालकों के मस्तिष्क व हृदय में परिवार एवं स्कूली शिक्षा के द्वारा न्याय, समता, करूणा, भाईचारा, त्याग तथा हृदय की एकता के इन सभी ईश्वरीय गुणों को बाल्यावस्था से ही रोपित करना चाहिए ताकि हर बालक पूर्णतया गुणात्मक व्यक्ति बन सके। किसी भी पूजा स्थल मंदिर, मस्जिद, गिरजा, गुरूद्वारा, बुद्ध विहार में की गई प्रार्थना को सुनने वाले परमात्मा एक ही है इसलिए एक ही छत के नीचे अब सब धर्मों की प्रार्थना होनी चाहिए।

एक तरफ दुनिया में कई देश ऐसे हैं जहां के लोग गरीबी और तंगहाली में जीते हैं और वहीं दूसरी ओर दुनिया में दौलतमंद देशों की भी कोई कमी नहीं है। विश्व के एक प्रतिशत लोगों में से कुछ के पास एक देश की इकोनॉमी से भी ज्यादा संपत्ति है। मेरा सुझाव है कि जिस प्रकार गरीबी की रेखा निर्धारित है उसी प्रकार अमीर की भी सीमा रेखा निर्धारित होनी चाहिए। ताकि कोई आदमी इतना अमीर न हो सके कि वह सारे विश्व को, लोकतंत्र को, मानव जाति को अपनी अकूत दौलत की ताकत से खरीद ले। कुदरत की सम्पदा पर इस धरती पर पलने वाले प्रत्येक जीव का अधिकार है। धरती की संसाधनों का सदुपयोग सारी मानव जाति तथा धरती पर पलने वाले जीवों के हित के लिए होना चाहिए न कि घातक शस्त्रों की होड़ के लिए। परमाणु शस्त्रों की होड़ केवल मनुष्य के अस्तित्व के लिए ही नहीं वरन् धरती पर पलने वाले प्रत्येक जीव तथा पर्यावरण के लिए खतरनाक है। विश्व के प्रत्येक नागरिक तथा राष्ट्र पर समान रूप से लागू होने वाले प्रभावशाली विश्व कानून हमें बनाना होगा। इसके लिए धरती की सरकार, विश्व संसद तथा विश्व न्यायालय की अतिशीघ्र आवश्यकता है। मानव जाति के अस्तित्व को बचाने का यहीं एकमात्र विकल्प है।

पता- बी-901, आशीर्वाद, उद्यान-2
एल्डिको, रायबरेली रोड, लखनऊ, मो. 0 98394 23719

कविता

कोवलम किनारे

◆ **डॉ. प्रेमलाल गौतम**

'कोवलम' की बीच पर,
मैं खड़ा सागर किनारे
उत्ताल उठती 'ऊर्मियों' को
क्रोड़ लेने बांह पसारे।
सूर्य के कई बिंब प्रतिबिंब
झिलमिलाते भी निहारे
उस पार का देती निमंत्रण
अव्यक्त ऊर्मि के इशारे।
सुदूर तक मैं देखता हूं
मस्तियों का हर्ष नर्तन
उठती गिरती भंगिमा का
विविध तांडव व आवर्तन।
कितनी ही शिक्षा और दीक्षा
सहज ही देतीं ये लहरें।
तरलता के साथ जागरूक
सजग रहने के ये पहरें।
आर्द्रता का पाठ जग को
है सीखाता सरस सागर
समग्रता में भव्यता का
पाठ देता है ये नागर।
'चरैवेति' वेदवाणी
यहां मुखरितसदा होती
छोर पर नर-नारियों को
तन-मन के सारे मैल धोती।
पवन झोंके तीव्र गति से
साथी बनकर साथ चलते
शेष से शत फण फैलाए
गरल से सित बिंदु झरते।
वेणी सी दिखती ये लहरें
बात से शत हाथ हिलते
और कुंतल केशराशि
रमणी के मुख मंजु खिलते।
सीख लो सागर से जाकर
नदी-नारियों से कैसे मिलते
अट्हास और उल्लास से
कर बीचियों के कैसे हिलते।
भूलकर सर्वस्व सागर
एक टक तुझको निहारूं
है ही क्या जो पास मेरे
सर्वस्व अपना तुझे बारूं।

सरस्वती सदन, रवौण, पत्रालय सपरून, जिला सोलन,
हिमाचल प्रदेश-173 211

आलेख

हिंदी साहित्य का वर्तमान परिदृश्य

◆ कृष्ण वीर सिंह सिकरवार

कल मेरे पास मेरे बचपन के एक अभिन्न मित्र का फोन आया; मैने फोन रिसीव किया। औपचारिक हाय हैलो के बाद फोन करने का आशय मित्र से पूछा; तब मेरे मित्र ने बताया कि कल मेरी पचासवीं पुस्तक का लोकार्पण प्रदेश के प्रसिद्ध साहित्यकार के करकमलों द्वारा अमूक सभागृह में किया जा रहा है, इस आयोजन में प्रदेश के लगभग सभी साहित्यकार व पारिवारिकजन उपस्थित होंगे। आप भी परिवार सहित कार्यक्रम में आवश्यक रूप से पधारे, मुझे खुशी होगी। चूँकि फोन करने वाले मेरे अभिन्न मित्र थे, अतः न करने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता था। कार्यक्रम में अव य पधारने का आ वासन देकर फोन कट हो गया।

फोन पर आने का आश्वासन तो मैंने दे दिया पर मैं सोच में पड़ गया कि क्या यह मेरे मित्र की लेखनी का कमाल है या कुछ और, जो उनकी पचासवीं पुस्तक का लोकार्पण किया जा रहा है। मैं अपने मित्र को बचपन से जानता हूँ, जो पढ़ने लिखने में साधारण ही रहा था। उसकी पुस्तकों की हाफ सेंचुरी होने पर मैं अचरच में अवश्य पढ़ गया कि उसकी लिखी पुस्तकों को पढ़ता कौन है। क्यों कि मुझे नहीं लगता कि प्रदेश के बाहर उसे कोई जानता भी हो, फिर इतनी पुस्तकें कैसे प्रकाशित हो गयी।

खैर, अगले दिन मैं भी सपरिवार सभागृह में उपस्थित हो गया, सभागृह विशिष्ठ अतिथियों से खचाखच भरा हुआ था। कार्यक्रम की अध्यक्षता का भार प्रदेश के एक नामी वयोवृद्ध साहित्यकार संभाल रहे थे। कार्यक्रम में प्रदेश के बाहर से भी कई आगन्तुक पधारे हुए थे। कार्यक्रम शुरू हुआ, समस्त अतिथियों ने लच्छेदार भाषणों के द्वारा यह साबित करने का भरसक प्रयास किया कि यह पुस्तक विश्व की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक है। इससे पहले न कभी ऐसी पुस्तक प्रकाशित हुई है न आगे होगी।

उपरोक्त घटना हो सकता है आपमे से भी किसी के साथ घटित हुई हो सकती है, यह कोई बड़ी बात नहीं है। यह सारा घटनाक्रम आये दिन किसी न किसी पुस्तक लोकार्पण समारोह में देखने को मिल ही जाता है। कार्यक्रम के अंत में मुझसे रूका नहीं गया व अपने मित्र को एकांत में ले जाकर पूछा कि भाई तुमने इतनी पुस्तकें किस प्रकार प्रकाशित करवा दी है व इनको पढ़ता कौन है। मुझे तो तुम्हारी कोई पुस्तक देखने को नहीं मिली है। तदूपरान्त मित्र ने जो जवाब दिया उससे मैं लगभग अचंभित हो गया। मित्र ने कहा कि मेरी साहित्यिक संस्थाओं में पकड़ होने के साथ-साथ थोड़ी जान पहचान प्रदेश की कई राजनैतिक हस्तियों से है, वह मेरी किताबों को सरकारी प्रकाशनों के द्वारा प्रकाशित करवा देते हैं व थोक में इन पुस्तकों को शासकीय ग्रंथालयों व शासकीय संस्थाओं में भेजने के साथ-साथ पाठ्य पुस्तकों मे भी लगवा देते हैं। इस कारण पुस्तक को छपवाने का खर्च भी नहीं लगता बल्कि ऊपर से अच्छी खासी कमाई भी हो जाती है। अब आप खुद ही बखूबी अंदाजा लगा सकते है हमारे साहित्य की दशा क्या हो रही है। इस प्रकार से छपे साहित्य से समाज के किस वर्ग का फायदा होगा। इस तरह की प्रक्रिया से धन तो कमाया जा सकता है परन्तु मान सम्मान नहीं।

मैं यहां यह नही कह रहा हूं कि सभी साहित्यकार ऐसे है या ऐसा कर रहे होंगे। परन्तु समाज में इस प्रकार की घटनायें अक्सर देखने को मिल ही रही हैं। आज सभी प्रसिद्धि पाना चाहते हैं फिर वह किसी भी तरीके से क्यों न हो। एक दो रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो गयी तो अपने आप को विश्व का सबसे बड़ा साहित्यकार समझने लगते है। अपने आस पड़ोस में भी इस प्रकार का वातावरण बनाकर आत्ममुग्ध होते रहते हैं। यह समाज के लिए ठीक नहीं है।

सच्चे व अच्छे साहित्य का सृजन तभी संभव हो सकता है जब अन्य साहित्यकारों की रचनाओं को खूब पढ़ा जाये, जितना पढ़ेगें उतना ही हम अच्छा लिख पायेंगे। व एक ईमानदार रचना को पाठकों तक पहुंचा पायेंगे। मैं कई वर्षो से शासकीय व गैर शासकीय पत्र-पत्रिकाओं को लगातार देख रहा हूँ इनमें कई लेखक ऐसे मिल ही जाते है जिनकी रचना हर दूसरी पत्रिका में छपी मिलती है। अब प्रश्न उठता है कि ऐसे लेखकों के पास कौन सी जादू की छड़ी हाथ लग गयी है जिसमें से रचनाएं निकलकर बाहर आती रहती हैं। ऐसे हालत मे साहित्य की दुर्दशा होना लाजिमी है।

वर्तमान परिदृश्य को बारीकी से देखा जाए तो पता चलता है कि साहित्य में लिखा तो खूब जा रहा है, परन्तु पढ़ा कम ही जा रहा है। एक निजी समाचार पत्र में लेखक व पाठक के बीच के रिश्ते को इस प्रकार परिभाषित किया गया है- "हिंदी में जो लेखक हैं वही पाठक है। यानी, लोग एक दूसरे का लिखा पढ़ लेते है और आपस में तारीफें करते रहते हैं। पाठकों की कमी का अधिक रोना वे ही रोते हैं जो खुद को बड़ा लेखक व हिंदी सेवी समझते हैं और तमाम पद पुरस्कार तथा सम्मान झटक लेना चाहते हैं। वे यह भी मानते हैं कि गलती उन लोगों की है जो उनका लिखा पढ़ते नहीं है। यह सवाल स्वयं को हिंदी लेखक समझने वाले तमाम लोगो से है कि आपने कितने पाठक बनाएं हैं ? क्या आप लेखन के नाम पर विचारधारा, अपनी कुंठा और बौद्धिकता ही परोस रहे हैं और सोच रहे हैं कि लोग इसे पढ़कर स्वयं को धन्य मानेंगे ? या फिर आपने कभी ऐसा लिखने की कोशिश की है जिसे पढ़कर मन में गुदगुदी हो, दिल भर आए, भावनाएं उमड़ने लगे, प्रेरणा मिले या उत्सुकता जागे ? रोना-धोना छोड़िए। ऐसा लिखिए, जो असरदार हो, पढ़ने वाले के दिल तक पहुँचे।'' पाठक आठ-दस कविताओं को पढ़कर एक नई कविता स्वयं लिख रहा है। क्या यह साहित्य है।

आज लेखकों द्वारा कोई भी रचना ऐसी नहीं लिखी जा रही जो कालजयी बन पाए, हिंदी साहित्य द्वारा इतने वर्षों की यात्रा करने के बाद भी दूसरा प्रेमचंद, जैनेन्द्र कुमार, महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद, हरिशंकर परिसाई आदि क्यों नही निकल के बाहर आ पा रहे हैं। यहाँ कई अन्य नाम और गिनाए जा सकते है। कहीं न कहीं कोई कसर तो हमारी लेखनी में हो रही है। पाठक आज भी उपरोक्त लेखकों की किताबों को पढ़ता है व पसंद करता है, ऐसा क्यों ? ये रचनाकार ऐसा क्या लिख गए जो इनको आज

आज लेखकों द्वारा कोई भी रचना ऐसी नहीं लिखी जा रही जो कालजयी बन पाए, हिंदी साहित्य द्वारा इतने वर्षो की यात्रा करने के बाद भी दूसरा प्रेमचंद, जैनेन्द्र कुमार, महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद, हरिशंकर परिसाई आदि क्यों नहीं निकल के बाहर आ पा रहे है। यहां कई अन्य नाम और गिनाए जा सकते हैं। कहीं न कही कोई कसर तो हमारी लेखनी में हो रही है। पाठक आज भी उपरोक्त लेखकों की किताबों को पढ़ता है व पंसद करता है, ऐसा क्यों ? ये रचनाकार ऐसा क्या लिख गए जो इनको आज भी याद किया जा रहा है। हम वह सब क्यों नहीं लिख पा रहे हैं। इस प्रश्न का उत्तर हम सबको मिलकर खोजना होगा।

भी याद किया जा रहा है। हम वह सब क्यों नहीं लिख पा रहे हैं। इस प्रश्न का उत्तर हम सबको मिलकर खोजना होगा। आज प्रेमचंद के द्वारा रचे गये महान उपन्यासों में 'गोदान', 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि', 'मानसरोवर' कहानी संकलन के कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं व इसकी माँग निरन्तर बनी हुई है, क्यों ? इसी प्रकार अन्य रचनाकारों की किताबों की माँग में भी कोई कमी नहीं आई है।

इस सबके बावजूद भी मैं यह नहीं कहना चाहूंगा कि आज साहित्य का कोना पूर्ण तरह खाली हो गया है व अच्छे लेखकों की कमी हो गयी है। आज भी कई लेखक अच्छी रचनाओं की रचना कर रहे हैं व पाठकों द्वारा इनको भरपूर प्यार व प्रतिसाद मिल रहा है परन्तु यह संख्या उंगलियों पर ही गिनने लायक रह गयी है।

साहित्य की उन्नति के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक मनुष्य को अपनी व्यावहारिक शैली में साहित्य को लाना। इसके लिए साधना व सतत् प्रयास करने की आवश्यकता है। मेरे पास भी प्रतिदिन कम से कम 10-15 हिंदी साहित्य की छोटी-बड़ी साहित्यिक पत्रिकाएँ अवश्य आती हैं, इनको देखकर मेरी ही संस्था में काम करने वाले मित्र कहते हैं कि यह रद्दी क्यों मँगाते हो, इस पर मैं इस प्रश्न का जबाव क्या दूँ। आप खुद समझ सकते हैं। जो साहित्य आज मित्रों व परिचितों को रद्दी लग रहा है उस समाज से इससे ज्यादा क्या अपेक्षा की जा सकती है।

साहित्य से जुड़ा पाठक कम से कम पत्रिकाओं को अवश्य ही देखता होगा कितने ऐसे पाठक होंगे जो किसी पत्रिका में रचना पसंद आने पर उसे बधाई प्रेषित करते होगें। अतः साहित्य की उन्नति के लिए कम से कम कोई रचना पंसद आ जाये तो उस रचनाकार को अवश्य बधाई प्रेषित करें, जिससे उसको यह महसूस हो कि मेरे लिखे साहित्य को कोई देख भी रहा है, पंसद भी कर रहा है। क्या यह उस रचनाकार के साथ साहित्यिक बेईमानी नही है। ऐसी स्थिति में उस रचनाकार की मानसिक पीड़ा का सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है। मेरे द्वारा कई मित्रों को बधाई संदेश देने पर उधर से प्रतिक्रिया आती है कि हम पिछले चार-पाँच वर्षों से पत्रिकाओं में छप रहे है परन्तु आज तक किसी ने भी हमारी रचना पढ़कर हमें बधाई प्रेषित नहीं की।

आज भारत वर्ष की आबादी सवा सौ करोड़ से ज्यादा है इतनी बड़ी आबादी के होते हुये हिंदी साहित्य की दशा खराब क्यों होती जा रही है। देश की इतनी आबादी में कितने ऐसे पाठक होगें जो सच्चे साहित्य की समझ रखते होंगे व इन पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते होंगे। कितने ऐसे पाठक होंगे जो मूल्य देकर पत्रिकाएँ व अपनी पंसद की पुस्तकों को खरीद कर पढ़ते होंगे। हाँ कुछ ऐसे पाठक अवश्य देखने को मिल जाते है जो अपनी पंसद के रचनाकारों की पुस्तकों को खोज-खोजकर पढ़ते हैं। लेकिन यह गिनती कम ही है।

क्या वर्तमान में पुस्तकों के प्रकाशन का उद्देश्य किसी नामी हस्ती से लोकार्पण कराना व लच्छेदार भाषण देकर अपनी पुस्तक को बेहतर बताना ही रह गया है। यहां यह कहना आवश्यक है कि पुस्तक का प्रकाशन लोकार्पण तक ही सीमित न रहे बल्कि उसको पाठकों तक पहुंचाना भी जरूरी है। जिसके लिये समुचित व आवश्यक प्रयास की आवश्यकता होती है।

वर्तमान में शासकीय ग्रंथालयों में आज कितने ऐसे पाठक होंगे जो पुस्तकों को पढ़ने के लिए जाते होगें। क्योंकि तकनीकी सुविधाओं के आ जाने से पाठक ग्रंथालयों में बैठकर समय खराब नहीं करना चाहता है, इस प्रकार पाठकों की दूरी इन पुस्तकों से लगातार होती जा रही है, तिस पर इन पुस्तकों की बिक्री बड़ी हुई कीमत के कारण सबसे ज्यादा प्रभावित हो रही है। आज कोई भी पुस्तक उठाकर देख लो उसके पृष्ठों से ज्यादा उसकी कीमत मिलेगी। अब अगर 50-70 पृष्ठ की पुस्तक की कीमत 200-250 की बीच होगी तो क्यों पाठक उसको खरीदेगा। अब पाठक अपनी पंसद की पुस्तक को पढ़ना चाहता है, मगर ज्यादा कीमत होने के कारण खरीद नहीं पाता है। इस वजह से पुस्तकों की बिक्री प्रभावित हो रही है, इस समस्या के समाधान के लिये निजी प्रकाशन व शासन को इस दिशा में ठोस कदम उठाने होंगे तभी पुस्तकों की बिक्री संतोषजनक बनायी जा सकती है। पुस्तकों की कीमत कम रखी जावे व ज्यादा से ज्यादा पुस्तकों को पेपरबेक में छापा जाना चाहिये जिससे पुस्तकों को आम पाठक नसीब हो सके।

हिंदी में प्रकाशित पुस्तकों के प्रकाशकों का कहना कि पुस्तकों की बिक्री संतोषजनक नहीं है व इनके प्रकाशन में जितनी लागत आती है उतना मुनाफा इनकी बिक्री से नहीं हो पाता है व हर बार नुकसान ही उठाना पड़ता है। ''......आज प्रकाशक सपाट रूप से कहते हैं कि 'कोई पुस्तकें खरीदता नहीं', अधिकतर पुस्तकें तो पांच सौ प्रतियों के प्रिंट ऑर्डर से छपती है। वह भी रखी रहती हैं', आदि।'' [1] कुछ हद तक यह बात सही भी हो सकती है परन्तु देश मे हर वर्ष आयोजित होने वाले पुस्तक मेले कुछ और ही नजारा बयाँ करते हैं। यह पुस्तक मेले देश में हर वर्ष आयोजित किये जाते है जिनमें देश भर के विभिन्न प्रकाशनों के साथ-साथ विदेशों के प्रकाशन भी अपनी पुस्तकों को बिक्री के लिये भाग लेते है व पुस्तक प्रेमी बड़ी संख्या मे एकत्रित होते हैं और अपनी पंसद की पुस्तकों को खरीदते व साहित्यिक मित्रों को भेंट स्वरूप प्रदान करते हैं। इन मेलों में लाखों करोड़ों की पुस्तकों की बिक्री इस बात को पुष्ट करती हैं कि आज भी देश में अच्छी पुस्तकों को खरीदने वाले पाठकों की कमी नहीं है बशर्ते उन्हें सही जगह व पुस्तको का बेहतर प्रचार प्रसार मिले तो पाठक मिल ही जायेंगे।

अगर पाठकों की साहित्यिक उदासीनता का प्रकाशनों द्वारा रोना रोया जाता है तो यह पुस्तक मेले देश भर मे आयोजित नहीं किये जाते। जिसका सबसे बड़ा उदाहरण दिल्ली मे प्रतिवर्ष फरवरी माह मे आयोजित होने वाले पुस्तक मेले का लिया जा सकता है जो आज भी रिकार्ड पुस्तकों की बिक्री के लिये जाना जाता है और पाठकों के द्वारा इसका प्रतिवर्ष इन्तजार किया जाता है। देशभर के रेलवे स्टेशनों के बुक स्टॉल गवाह है कि न केवल सस्ते उपन्यास, बल्कि हिंदी में उपलब्ध सर्वोत्तम, स्तरीय साहित्य भी लोगों द्वारा निरंतर खरीदा जाता रहा है। वह भी बिना विज्ञापन। उसे साधारण पाठक खरीदते हैं। शरतचंद्र, बंकिम चंद्र, रवीन्द्रनाथ, प्रेमचंद, बच्चन, दिनकर, अज्ञेय, वृंदावनलाल वर्मा, अमृतलाल नागर, नरेन्द्र कोहली, टॉलस्टाय, चेखव, जेन ऑस्टिन, शेक्सपियर, डिकेंस, आर्वेल आदि अनेक लेखकों के जितने भी संस्करण, जितने तरह के प्रकाशकों द्वारा छापे जाते हैं, सब बिक जाते है।'' (2) हां आज बेहतर प्रचार प्रसार के अभाव में पुस्तको की जानकारी पाठको तक पहुंच नही पाती है इस कारण अच्छी से अच्छी पुस्तके पाठकों के इंतजार मे दम तोड़ देती है। आज यह आवश्यक हो गया है कि पुस्तकों का बेहतर तरीके से प्रचार प्रसार किया जाये तो देश मे पुस्तकों को खरीदने वाले पाठकों की कमी नही है। सरकार को भी ऐसे तरीके खोजने होंगे जिनके माध्यम से पुस्तकों की जानकारी आम पाठको तक बेहतर तरीके से पहुंच सके तभी इनकी बिक्री को संतोषजनक बनाया जा सकता है।

हममें से बहुतों को वह जमाना याद होगा, जब हिंद पॉकेट बुक्स ने पुस्तक व्यवसाय में क्रांति ला दी थी.....जिसके कारण क्लासिक्स और अन्य अच्छी किताबें हर पुस्तक प्रेमी के हाथ में दिखाई देने लगी थी। हिंद पॉकेट बुक्स ने भी लाखों किताबें बेची होंगी, जिनमे से अधिकतर की कीमत एक रुपया थी। इसे हम पुस्तक संस्कृति और व्यावसायिकता का मधुर मिलन कह सकते है......वास्तव में, प्रकाशक लेखक और पाठक के बीच एक संवेदनशील पुल है। यह पुल ऐसा होना चाहिए जिस पर दोनों ओर से यात्रियों का तांता लगा रहे।'' [3]

यहाँ पर भारतवर्ष के सबसे सफलतम माने जाने वाले प्रकाशन की चर्चा किये बगैर बात पूर्ण नहीं हो सकती है। यह प्रकाशन है; गीताप्रेस गोरखपुर जो कई वर्षो से धार्मिक साहित्य प्रेमियों को सस्ती व अच्छी पुस्तकें उपलब्ध करवाता आ रहा हैं। आज की मँहगाई में भी इस प्रकाशन ने अपने सुधी पाठकों के हित को देखते हुये पुस्तकों के दामों में बहुत ज्यादा बढ़ोतरी नहीं की है। अभी भी इस प्रकाशन से प्रकाशित पुस्तकें आम पाठको के बीच लोकप्रिय बनी हुई है। इस लोकप्रियता का एक कारण यह भी है कि इस प्रकाशन ने सीधे अपने पाठकों के बीच पुस्तकों को पहुंचाने के लिये देश भर में अपनी एजेंसियां खोल रखी हैं, जिसके कारण पाठक सीधे इन ऐजेसिंयो पर जाकर पुस्तक को खरीद सकता है। इस तरह पाठक का पुस्तक को मंगाने पर होने वाला डाकखर्च व्यय (40 से 50 रु.) भी बच जाता है जिसका सीधा फायदा पाठकों को

यह पुस्तक मेले देश मे हर वर्ष आयोजित किये जाते हैं जिनमे देश भर के विभिन्न प्रकाशनों के साथ-साथ विदेशों के प्रकाशन भी अपनी पुस्तकों को बिक्री के लिये भाग लेते हैं व पुस्तक प्रेमी बड़ी संख्या मे एकत्रित होते हैं और अपनी पंसद की पुस्तको को खरीदते व साहित्यिक मित्रों को भेंट स्वरूप प्रदान करते हैं। इन मेलों मे लाखों करोड़ों की पुस्तकों की बिक्री इस बात को पुष्ट करती है कि आज भी देश में अच्छी पुस्तकों को खरीदने वाले पाठकों की कमी नहीं है बशर्ते उन्हें सही जगह व पुस्तकों का बेहतर प्रचार प्रसार मिले तो पाठक मिल ही जायेंगे।

होता है।

उदाहरण के रूप में इस प्रकाशन से प्रकाशित रिकार्ड बिक्री के लिये पहचाने जाने वाली पुस्तक 'श्री रामचरित मानस' धार्मिक हिंदी ग्रंथ व 'सुंदर काण्ड' पुस्तक का नाम ले सकते हैं जो आज प्रत्येक हिंदू धर्म को मानने वाले पाठकों के घर में देखने को मिल जायेगी। इन ग्रंथों को घर का प्रत्येक सदस्य पढ़कर अपनी जिज्ञासा शांत करता है। एवं इन पुस्तकों की प्रतियाँ विशेष धार्मिक अवसरों पर उपहार स्वरूप भेंट करता है। फलस्वरूप यह ग्रंथ अपने पाठकों के बीच शुरुआत से ही अत्यधिक लोकप्रिय रहा है। इसी लोकप्रियता के कारण इन पुस्तकों की निरन्तर माँग बनी हुई है। आज भी अपने प्रथम प्रकाशन से यह ग्रंथ निरन्तर छपे चले आ रहे हैं व इसके कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। पाठकों के बीच इनके लोकप्रिय होने का एक अन्य कारण इनका मूल्य बेहद कम होना भी है। 'श्री रामचरित मानस' हार्डबाउंड में लगभग 800 पृष्ठों का है तथा इसका मूल्य मात्र 75 रुपये रखा गया है जो किसी भी लिहाज से पाठकों की जेब से दूर नहीं है। इसी तरह 'सुंदर काण्ड' 40 से 50 पृष्ठों का होने के बावजूद मूल्य महज 5 रुपये है। कहा जा सकता है कि पाठकों से इन पुस्तकों में आयी लागत मूल्य ही वसूला जाता है। अतएव यह ग्रंथ आज सबसे ज्यादा बिकने वाले कहे जा सकते हैं।

इस प्रकार साहित्यिक पुस्तकों के इतिहास पर नजर डाले तो हम पाते हैं कि कुछ कालजयी किताबें जैसे-महान साहित्यकार मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास- 'गोदान', 'निर्मला', 'रंगभूमि', 'गबन' एवं 'कर्मभूमि' आदि। डॉ. धर्मवीर भारती के विश्वप्रसिद्ध उपन्यास- 'गुनाहों का देवता' व 'सूरज का सांतवा घोड़ा' आदि। अमृता प्रीतम की पुस्तकें 'पिंजर' व 'रसीदी टिकिट' आदि। कमलेश्वर का बेहद लोकप्रिय उपन्यास 'कितने पाकिस्तान' आदि। यहां सैकड़ों पुस्तकों का नाम लिया जा सकता है जो अपने पाठकों के बीच अत्यधिक लोकप्रिय रहीं। इन पुस्तकों की मांग में आज तक कोई कमी नहीं आई है तथा इनकी मांग निरंतर पाठकों के बीच अभी भी बनी हुई है। इन पुस्तकों के कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। पाठक इनको आज भी खरीद रहा है, क्योंकि यह सभी पुस्तके इतनी लोकप्रिय पुस्तकें है कि इनका एक खासवर्ग हमेशा ही इनको पसंद करता रहा है। परंतु आज न ऐसे लेखक बचे हैं जो ऐसी किताबों की रचना कर सके और न ही ऐसे पाठक हैं जो इतनी महंगी किताबों को खरीद सके। पुस्तकों के संबंध में एक महान साहित्यकार ने कहा है कि भारतवर्ष में एक आम पाठक पुस्तकें पढ़ना तो चाहता है परंतु खरीदकर नहीं, मांगकर। इस तरह पैसा भी बच जाता है व पुस्तक लौटायी जाये यह भी जरूरी नहीं है।

समग्रतः यह आसानी से कहा जा सकता है कि भारतवर्ष शुरू से ही आध्यात्मिक व साहित्यिक विधा का गढ़ रहा है जहाँ पर प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष के निवासी रामायण, महाभारत, श्रीमत भगवद्गीता, वेद, पुराण आदि ग्रंथों का रसास्वादन करते चले आ रहे हैं, एवं यह सिलसिला आज भी बदस्तूर चालू है। साहित्यिक विधा हमेशा से ही पाठकों के बीच लोकप्रिय रही है। जरूरत केवल इन पुस्तकों की बेहतर प्रचार व प्रसार की है ताकि जनमानस तक इनको सीधे पहुँचाया जा सके। सरकार को भी इस दिशा में कुछ निर्णय लेने होगे ताकि साहित्य की यह परंपरा हमेशा कायम रह सके। लेखकों को भी अच्छे साहित्य के सृजन के लिए मेहनत की आवश्यकता है। साहित्य में प्रतिष्ठित होने के लिए कोई शॉर्टकट रास्ता नहीं है, जो रास्ता है वह काँटों से भरा हुआ है जिस पर चलने वाले कम ही लेखक दिखाई दे रहे है।

आवास क्रमांक एच-3,
राजीव गांधी प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
एयरपोर्ट, वायपास रोड,
गांधीनगर, भोपाल-462033 (म. प्र.)
मो. 0 98265083363

संदर्भ :-

1. पाठक से दूरी का सच, श्री शंकर शरण, जनसत्ता दैनिक पत्र, नई दिल्ली, दिनांक 26/10/2014
2. पाठक से दूरी का सच, श्री शंकर शरण, जनसत्ता दैनिक पत्र, नई दिल्ली, दिनांक 26/10/2014
3. मगर हिंदी में प्रकाशक हैं कितने, श्री राजकिशोर, जनसत्ता दैनिक पत्र नई दिल्ली, 02/11/2014

शोध लेख

हिमाचल में सचित्र पांडुलिपियों का इतिहास

◆ डॉ. अमित कुमार

प्राचीन ग्रंथ और पाण्डुलिपियां मनुष्य के दीर्घ अनुभव के अनोखे एवं रोचक लिखित दस्तावेज हैं। प्राचीन हस्तलिखित पाण्डुलिपियों को विश्व सामग्री के रूप में सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। ये ग्रंथ केवल भाषा-विलास नहीं है। इन पांडुलिपियों में अंकित छंदों को संरक्षित (कोडेड) ज्ञान यदि 'डिकोड' किया जाए तो अद्‌भुत सामग्री एवं अतीत की महत्त्वपूर्ण सूचनाएं मिल सकती हैं। लगभग 12वीं शताब्दी में हस्तनिर्मित कागज के आविष्कार से ग्रन्थ के लेखन-चित्रण में क्रांति हुई। ग्रंथों के हस्तलिपि में अनेक संस्करण बनाकर उन्हें चित्रों द्वारा सुसज्जित करने की परम्परा मध्यकाल में विकसित हुई। ग्रंथों में कथानक पर आधारित चित्र अंकित किए जाते थे। ये चित्र लघु चित्रों की अपेक्षा कम स्तर के होते हुए भी अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने में सफल रहा है। हिमालय के विशाल भू-भाग में प्राचीन पाण्डुलिपियां बिखरी पड़ी हैं जोकि निजी संग्रहालयों से लेकर विधा केन्द्रों और राज्य संग्रहालयों में 'धूल' खा रही हैं। इन पांडुलिपियों से महत्त्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त की जा सकती हैं जिससे आने वाली पीढ़ियों के लिए पुरातन महत्वपूर्ण सूचनाएं उपलब्ध हो सकती हैं। पहाड़ी जनमानस के गौरवपूर्ण इतिहास, धार्मिक मनोवृत्ति और भक्ति से प्रेरित होकर इन ग्रन्थों का चित्रण हुआ।

हिमालयी प्रदेश में यह विधा 19वीं सदी के अंत तक रही। पहाड़ी क्षेत्र में सचित्र ग्रन्थों की परम्परा रही है और इसके पीछे कारण था कि कला पोषकों की रूचि लघु चित्र और भित्ति सज्जा में ज्यादा रही। इसके ठीक विपरीत राजस्थानी मुगल शैली में अनेक सचित्र ग्रन्थों का चित्रण हुआ। वहां के अनेक संग्रहालयों में सचित्र ग्रंथों के अमूल्य भंडार हैं। पहाड़ी हस्तलिखित ग्रंथों के निर्माण में सर्वोत्तम स्यालकोटी कागज का ही प्रयोग किया गया है। लेखन एवं चित्रण कार्य एक ही पेज पर किया जाता था। कागज पर जहां-जहां चित्रों की आवश्यकता होती थी वहां पर व्याप्त स्थान छोड़ दिया जाता था। प्रत्येक हस्तलिखित ग्रन्थ को चित्रित करने में अनेक लोगों का सहयोग रहता था। सर्वप्रथम विद्वान, जो उस ग्रन्थ की विषय वस्तु की रूपरेखा बनाकर मार्गदर्शन करता था। दूसरा लिपिकार, जो शब्दों को कागज पर लिपिबद्ध करता था, फिर मुख्य कार्य चित्रकार का रहता था, जो कि चित्र के लिए छोड़े गए स्थान पर ग्रन्थ से सम्बंधित चित्रांकन करता था। पहाड़ी सचित्र ग्रंथों में चित्रांकन के अनेक प्रयोग देखे जा सकते हैं। जैसे कि ग्रंथ के मध्य यत्र-तत्र चित्रण करना, ग्रन्थ के एक ओर लेखन एवं उसके साथ ही सम्बंधित चित्रण करना, ग्रन्थ के ऊपरी भाग पर लेखन कार्य और उसके ठीक नीचे चित्रण ग्रन्थ के दायें-बायें चित्रण तथा मध्य में लेखन या अध्याय के अन्त में चित्रण और ग्रन्थ के पृष्ठ के दोनों ओर चित्रांकन करना। ये सचित्र ग्रन्थ बसोहली, गुलेर, कांगड़ा, कुल्लू, मंडी, नूरपुर, गढ़वाल आदि पहाड़ी कला की विभिन्न शैलियों में उपलब्ध हैं। इनमें से कुछ विशिष्ट ग्रन्थों का शैलीगत वर्णन है। कुल्लू शैली में सचित्र ग्रन्थों को तैयार करवाने में राजा प्रीतम सिंह और चित्रकार भगवान एवं उनकी शैली का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इस शैली में तीन सचित्र ग्रन्थ उपलब्ध हैं जिनमें सुन्दर श्रृंगार, मधु मालती और भागवत पुराण हैं।

कुल्लू शैली में उपलब्ध यह सचित्र हस्तलिखित ग्रन्थ अपनी प्राचीनता एक टांकरी भाषा के कारण प्रसिद्ध है। यह ग्रन्थ चण्डीगढ़ संग्रहालय में सुरक्षित है इसके निर्माण में स्यालकोटी कागज का प्रयोग किया गया है।

इसी तरह शिमला जिला के भी अनेकों जगहों की तरह हजारों की तादाद में प्राचीन पांडुलिपियां हैं। यहां पर प्राचीन पांडुलिपियों का अमूल्य संग्रह संग्रहालयों, मंदिरों, पुस्तकालयों, विद्वानों व व्यक्तिगत तौर पर भी उपलब्ध है। ये पांडुलिपियां बहुत ही दुर्लभ एवं पुरातन हैं। पांडुलिपियों के साथ-साथ तंत्र एवं मंत्र सम्बंधी पुरावशेषों का भी संरक्षण कार्य हुआ है। जैसा विवरण प्राप्त हुआ है कि प्राचीन ज्ञान संस्थानों के अलुप्त ठिकानों में और कुछ संग्रहकर्ताओं के निजी संग्रहों में बदतर हालत में पाण्डुलिपियां पड़ी हुई हैं।

इस जिला में अधिकांश पांडुलिपियां संस्कृत, हिन्दी और यहां की स्थानीय बोलियों में लिखित हैं। बहुत सी पांडुलिपियां यहां की स्थानीय लिपियों में उपलब्ध हैं। ये लिपियां टांकरी, पाबुची, पंडवाणी, चंदवाणी, भटाक्षरी आदि नाम से प्रचलित हैं। इन पांडुलिपियों को यहां के स्थानीय विद्वानों ने अन्य लिपियों के प्रभाव में स्वयं विकसित किया है और इन लिपियों को पढ़ना अब कठिन है। इन पांडुलिपियों को पढ़ने-लिखने का ज्ञान कुछ ही गिने-चुने लोगों के पास ही सुरक्षित रह गया है। इन लिपियों के अलावा यहां

पर टांकरी लिपि का भी बहुत प्रचलन रहा है। इस लिपि का प्रयोग कुछ-कुछ भिन्नता के साथ प्रदेश के सभी क्षेत्रों में हुआ है जो स्थानीय भाषा में लिखी गई हैं।

पांडुलिपियों को स्थानीय बोली में 'पोथी' और पेपर रोल के दस्तावेजों को 'चिट्ठू' कहते हैं। शिमला जिला में अधिकांश पांडुलिपियां ब्राह्मण परिवारों में पाई जाती हैं। सर्वेक्षण के दौरान सामने आया कि विद्वान ब्राह्मण परिवारों में जब बंटवारा होता था तो जमीन जायदाद के साथ-साथ इन हस्तलिखित पांडुलिपियों का भी बंटवारा होता था। इस जिला में लोग आज भी इन पांडुलिपियों को सर्वोच्च स्थान देते हैं। ब्राह्मणों के अलावा ये बेशकीमती खजाना राजसी परिवारों एवं राजवैद्यों के पास है लेकिन अन्य वर्ग इतने खुशकिस्मत नहीं हैं। यहां पाई जाने वाली ज्यादातर पांडुलिपियां कागज पर हैं। इसके अलावा कुछ पांडुलिपियां भोजपत्र, ताम्रपत्र तथा लट्ठे पर भी मौजूद हैं। यहां के लोग इन पांडुलिपियों को विशेष महत्ता देते हैं जिस कारण इन्हें घरों में भी विशेष स्थान दिया जाता था और इन स्थानों की शुद्धता का भी विशेष ध्यान रखा जाता था। जहां प्रतिदिन पूजा की जाती है। कहीं-कहीं इन स्थानों या उस घर के कुछ ही सदस्यों को जाने की आज्ञा होती है।

पांडुलिपि उसे कहते हैं जोकि हस्तलिखित हो। इन पांडुलिपियों की विशेषता इनकी विषयवस्तु एवं प्राचीनता के आधार पर होती है। ये लेख भोजपत्रों, तालपत्रों, वृक्ष की छालों, जानवरों की खालों, पत्तों, कागजों तथा सूती, रेशमी और ऊनी कपड़ों की पट्टिकाओं पर अंकित किए होते हैं। सम्भवतः समय के साथ इनके रंग में तबदीली आने से विशेष तौर पर कागजो में पीलापन अर्थात् पांडु रंग आ जाने के कारण इन्हें पांडुलिपि कहा जाने लगा हो। ज्यादातर प्राचीनतम एवं दुर्लभ पांडुलिपियां ठंडे वातावरण वाले भूभाग और मरूभूमि में सुरक्षित रही हैं और मिली हैं। यद्यपि उष्ण तथा अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में पांडुलिपियां ज्यादा समय तक सुरक्षित नहीं रखी जा सकती हैं, फिर भी वर्तमान में वैज्ञानिकों की खोज के फलस्वरूप इन भूखण्डों में भी ये पांडुलिपियां लम्बे समय तक सुरक्षित रखी जा सकेंगी। आखिरकार पांडुलिपियों का संरक्षण आवश्यक क्यों है और इनके संरक्षण की जिम्मेदारी किसकी है? मानव सभ्यता के विकास में अर्जित ज्ञान के संरक्षण की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। पांडुलिपि अब विचारों की वाहक होती हैं जिन्हें अतीत में लोगों ने सोचा, अंकित किया, सुरक्षित रखने का प्रयास किया। मानव स्वभाव है कि वह संरक्षण केवल उसी का करता है जो भविष्य में उसके लिए सहायक हो और जो उसके लिए हितकारी हो। पांडुलिपियां मानव जाति की सबसे महत्त्वपूर्ण धरोहर हैं और अतीत से वर्तमान को जोड़ने वाला पुल होती हैं इसलिए इनका संरक्षण ऐतिहासिक महत्त्व का होता है। ये पांडुलिपियां न केवल लेखन सामग्री के रूप में विकास के सोपान मानवता के विकास की कहानी कहती हैं बल्कि उनमें लिखित सामग्री हमारे समाज के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इन पांडुलिपियों की देखरेख का कार्य संरक्षण अधिकारियों, सहायकों, अभिलेखगारों के प्रबंधकों, संग्रहालय के अध्यक्षों पर है जोकि उनके रोजगार से भी जुड़ा है लेकिन साथ ही उनका प्रशिक्षित, प्रोत्साहित और कला प्रेमी होना भी आवश्यक है। शोधकर्ताओं और अध्यापकों के लिए ये पांडुलिपियां महत्त्वपूर्ण जानकारियों का स्रोत है इसलिए वे भी इनका संरक्षण करें। अनेक घरों में ये प्राचीन ग्रंथ आदरपूर्वक रखे और पढ़े जाते हैं। भारत में पांडुलिपियों का विश्व में सम्भवतः सबसे बड़ा भंडार उपलब्ध है। विभिन्न भाषाओं में, विभिन्न सामग्रियों में असंख्य विषयों पर पांडुलिपियां उपलब्ध हैं। पांडुलिपियों का संरक्षण एक महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्य है। पिछले कुछ वर्षों से राष्ट्रीय पांडुलिपि मिशन सक्रिय हुआ है और इस मिशन ने अनेक स्तरों पर पांडुलिपियों से सम्बंधी जानकारियां एकत्र कर उन्हें जनसुलभ बनाने के प्रयास किये हैं। लेह, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल, उत्तराखंड, असम, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश में राज्यीय इकाइयों के माध्यम से मिशन महत्त्वपूर्ण कार्य कर रहा है। इसका लक्ष्य भारत और भारत से बाहर संग्रहीत पांडुलिपियों के सर्वेक्षण के उपरांत अर्थपूर्ण सूचनाएं एकत्र करना, पाण्डुलिपियों में वर्णित विषयों का वर्गीकरण करना, देश-विदेश के अध्येताओं के साथ तालमेल स्थापित कर, राष्ट्रीय डाटा बेस संकलित करने के साथ-साथ उनके संरक्षण की विधियां विकसित करना और उस सामग्री को प्रकाशित कर, उससे समूची मनुष्य जाति के हितों को जोड़ना है। आशा रखनी चाहिए कि अपने विकासात्मक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन भारत और भारत से बाहर के विशेषज्ञों की सहायता लेगा और राष्ट्रीय स्तर के विराट पाण्डुलिपि पुस्तकालय की स्थापना का अपना सपना पूरा करेगा। यद्यपि यह कार्य अत्यंत कठिन है किन्तु विधा के इस अपूर्व अनुष्ठान में सभी राष्ट्रों और समुदायों और व्यक्तियों का सहयोग मिलना ही चाहिए। इसी संदर्भ में एक अन्तर्राष्ट्रीय कानून भी बनना चाहिए जिससे यह प्राचीन सम्पदा नष्ट न हो, आधुनिक संयंत्रों से इसके पाठ संरक्षित किये जाएं व विश्व मनीषा की इस सम्पदा को व्यावसायिक दोहन और शोषण तथा स्वामित्व से बचाया जाए।

सुपुत्र श्री ज्ञान चंद, होप विल्ला, संदल, चक्कर,
शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 005

संदर्भ

1. राजपाल वर्मा, पृ. 34, सोमसी, हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका, 2011
2. राज्य सग्रंहालय शिमला
3. राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन
4. कृति रक्षा (राष्ट्रीय पाण्डुलिपी मिशन की पत्रिका)
5. मैन्युसस्क्रिप्ट कन्सरवेशन सेन्टर शिमला

शोध लेख

भारतीय संस्कृति के वाहक के रूप में नारी

◆ डॉ. सुनीता

भारतवर्ष अति प्राचीन काल से ही धर्म-प्रधान देश रहा है। यहां धर्म की इतनी व्यापक व्याख्या की गई है कि भारतीय जीवन का प्रत्येक क्षेत्र इसके कोड में समाविष्ट हो गया है। जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत भारतीय जीवन के समस्त क्रिया-कलाप धर्म की विस्तीर्ण छाया में ही संपन्न हो गए हैं। इस देश के निवासियों ने धर्म को कोई पृथक संस्था कभी भी नहीं माना।

हमारा समाज अनेक धार्मिक अंधविश्वासों, रूढ़ियों, आडंबरों तथा जीर्ण-शीर्ण कुरीतियों में ग्रस्त रहा है। आज भी हजारों सालों की पुरानी अनुपयोगी परपंराएं कहीं-न-कहीं घर किए बैठी हैं। हमारे संस्कार, हमारी जीवन पद्धति तथा हमारे क्रिया-कलाप कहीं-न-कहीं जड़ मान्यताओं से आज भी आबद्ध हैं।

मृदुला गर्ग और ममता कालिया के अधिकतर नारी चरित्र धर्म में आस्था तथा विश्वास तो रखते हैं, परंतु उनके भीतर धार्मिक कुरीतियां तथा रूढ़ परपंपराओं एवं मान्यताओं के प्रति न आस्था है और न ही विश्वास। इनके सभी नारी पात्र पढ़े-लिखे और आत्मनिर्भर तथा साधन-संपन्न हैं। इनके किसी भी उपन्यास का नारी पात्र ऐसी नहीं जो इन रूढ़ कुरीतियों, मान्यताओं में विश्वास रखती है। मृदुला गर्ग, ममता कालिया ने अपने उपन्यासों में हर समस्या को उठाया है परंतु धर्म में कुरीतियों की तरफ इनकी दृष्टि नहीं गई। अतः हम कह सकते हैं कि मृदुला गर्ग और ममता कालिया की आस्था हिंदू धर्म के मूल सिद्धांतों में तो है, परंतु धार्मिक मिथ्याडंबरों और कुप्रथाओं के प्रति वे सर्वथा असहिष्णु रही हैं।

मृदुला गर्ग, ममता कालिया तथा मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में नारी को भारतीय संस्कृति के वाहक के रूप में दिखाया है। मृदुला गर्ग और ममता कालिया के उपन्यासों की नारी पात्र धर्म में आस्था और विश्वास रखती है लेकिन अंधविश्वास और रूढ़ परंपराओं को नहीं मानती है। जबकि मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्र धर्म में तो आस्था रखती है। साथ में रूढ़ परंपराओं को भी मानती है। मृदुला गर्ग के उपन्यासों में नारियां किस तरह भारतीय संस्कृति के रूप में धर्म में आस्था रखती हैं।

इसके विपरीत मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्र कुरीतियों में विश्वास रखते हैं। उनकी आस्था इन मिथ्याडंबरों, जादू-टोना तथा इन रूढ़ कुरीतियों की मान्यताओं में आज भी बनी है। इसका कारण है कि वह कम पढ़े-लिखे तथा गांव में रहने वाले साधारण नारी-पात्र हैं।

भारतीय संस्कृति की जड़ें बड़ी गहरी हैं, "इसका विशाल वृक्ष परिवार रूपी मूल पर टिका हुआ है। हमारी संस्कृति, परिवार के विभिन्न सदस्यों, समाज, समाज के विविध रंगों तथा उनके कर्तव्यों का बड़ा सांगोपांग चित्रण प्रस्तुत करती है। मैं एक छोटे से प्रसंग में अपनी बातों का श्रीगणेश करना चाहूंगा। आज से लगभग बीस वर्ष पहले हम लोग एक विदेशी राजदूत के यहां निमंत्रित थे। वहां पर राजदूत की धर्मपत्नी ने हमसे एक प्रश्न पूछा कि "आपके देश की पारिवारिक व्यवस्था ठीक-ठाक चल रही है या वह व्यवस्था भी हमारी पारिवारिक व्यवस्था का अनुकरण कर रही है।"[1] उसका प्रश्न सीधा-साधा था। मेरा उत्तर भी वैसा ही होना चाहिए था, "बड़े-बड़े शहरों में तो वह कुछ बिखर रही है, लेकिन अभी भी हमारा समाज और हमारा परिवार अपनी संस्कृति के पुराने तत्त्वों को अक्षुण्ण बनाए हुए है।"[2] यदि हम सचमुच अपनी संस्कृति की रक्षा करना चाहते हैं तो हमें परिवार से प्रारंभ करना होगा तभी हम अपने समाज के प्रति और राष्ट्र के प्रति ईमानदार हो सकते हैं। भारतीय संस्कृति का जो बंधन था जिससे वह संस्कृति अपने आपसे बंधी हुई थी, उसके बारे में भी तरह-तरह की गलतफहमियां फैलाई जा रही हैं और कुछ स्वाभाविक ढंग से, सहज भाव से गलतफहमियां होती भी रही हैं मेरा संकेत है, "उन बातों की ओर, जिनको लेकर आज यह चर्चा की जाती है कि पुरानी बातें दकियानूसीपन को छोड़ो और नए वातावरण में आओ, नई चीजें सीखो। यह बात बार-बार कही जा रही है कि पुरानी मान्यताओं को ढोते रहने से तुम पिछड़ जाओगे।"[3]

प्राचीन मान्यता के अनुसार नारी को देवी रूप में चित्रित किया है। उसके बारे में मनु स्मृति में कहा जाता है कि जहां नारी की पूजा होती है, वहां देवता का वास होता है। नारी भी धर्म से

प्रभावित हुए बिना न रह सकी। उसका धर्म में विश्वास है। और यही कारण है, कि आज भी भारतीय नारी प्राचीन मान्यता और परंपरा के अनुसार अपने पति की लंबी उम्र के लिए करवा चौथ का व्रत रखती है। वह कोई भी कार्य करने से पहले अपने पति की आज्ञा लेना जरूरी समझती है। शारदा त्यागी के अनुसार, "विवाह संस्कार के समय यज्ञ की वेदी पर बैठी नारी यज्ञ-आहुतियों के मध्य जीवन पर्यंत पति के प्रति सच्ची रहने की प्रतिज्ञा करती हुई दृष्टिगत होती है।"[4]

पति की सेवा में ही अपने जीवन को अर्पित कर देना वह अपना एकमात्र धर्म समझती है। वह अपने पति के बारे में कुछ नहीं सुनती। परपंरागत समाज में धर्म की जटिलताओं के कारण धर्म परिवर्तन की कल्पना कठिन थी, लेकिन धीरे-धीरे एक धर्म को छोड़कर दूसरे धर्म को ग्रहण किए जा सकने की धारणा बढ़ती गई और आजादी के बाद तो नारी में भी धर्म परिवर्तन का साहस पैदा हुआ। परंतु एक आधुनिक नारी चाहे कितनी भी कोशिश कर ले, वह किसी-न-किसी रूप में आज भी धर्म में विश्वास करती है। धर्म में आस्था रखने के कारण ही वह आज एक सुख-शांति का जीवन व्यतीत कर रही है।

मृदुला गर्ग, ममता कालिया तथा मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में नारी को भारतीय संस्कृति के वाहक के रूप में दिखाया है। मृदुला गर्ग और ममता कालिया के उपन्यासों की नारी पात्र धर्म में आस्था और विश्वास रखती है लेकिन अंधविश्वास और रूढ़ परंपराओं को नहीं मानती है। जबकि मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्र धर्म में तो आस्था रखती है। साथ में रूढ़ परंपराओं को भी मानती है। मृदुला गर्ग के उपन्यासों में नारियां किस तरह भारतीय संस्कृति के रूप में धर्म में आस्था रखती हैं। 'वंशज' उपन्यास के माध्यम से भी मृदुला गर्ग ने धर्म के रंग में रंगी नारी 'रेवा' को प्रस्तुत किया है। रेवा भी धार्मिक प्रकृति की नारी है। चितकोबरा उपन्यास की मनु अत्यधिक आधुनिक नारी होते हुए भी ईश्वर की उपासना में विश्वास रखती है।

मृदुला गर्ग के उपन्यास की नारी पात्र भारतीय संस्कृति की वाहक के रूप में सक्षम तो रही है लेकिन वह धर्म में आस्था और विश्वास तो रखती है लेकिन धार्मिक अंधविश्वासों और रूढ़ परंपराओं एवं मान्यताओं के प्रति उनकी आस्था और विश्वास नहीं था।

ममता कालिया के उपन्यासों में नारी भारतीय संस्कृति के वाहक के रूप में वह भी धर्म में आस्था और विश्वास रखती है। 'एक पत्नी के नोट्स' उपन्यास में नीलम रस्तोगी का हरतालिका का व्रत होता है। धर्म पर उसका विश्वास होता है। 'दौड़' उपन्यास में रेखा भी भारतीय संस्कृति वाहक के रूप दिखने में सक्षम है। जो कि धर्म में विशेष आस्था और विश्वास रखती है।

दूसरी तरफ मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों की नारी पात्र भारतीय संस्कृति के वाहक के रूप में दिखाई गई हैं जो धर्म में आस्था और विश्वास तो रखती हैं। साथ में अंधविश्वासी और रूढ़ परंपराओं को भी मानती है। 'अगनपाखी' उपन्यास की भुवन भी धार्मिक संस्कारों से पूर्ण नारी है। वह धर्म में विश्वास रखती है। इसी उपन्यास में भुवन की मां अंधविश्वास है जो कि रूढ़ परंपराओं और कुरीतियों को मानती है। 'बेतवा बहती रही' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने नारी की धार्मिक मनोवृत्ति को दिखाया है।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मृदुला गर्ग, ममता कालिया तथा मैत्रेयी पुष्पा ने अपने नारी पात्र को भारतीय संस्कृति के वाहक रूप दिखाने में सक्षम रही हैं। मृदुला गर्ग, ममता कालिया के उपन्यासों के नारी पात्र धर्म में आस्था और विश्वास तो रखते हैं, लेकिन रूढ़ परंपराओं और अंधविश्वासों को नहीं मानते हैं जबकि मैत्रेयी पुष्पा के नारी पात्र धर्म में विश्वास तो रखते हैं, साथ में अंधविश्वास, रूढ़ परंपराओं को भी मानते हैं लेकिन आज भी भारतीय नारियां धर्म में आस्था और विश्वास रखती हैं और पुरानी परंपराओं को मानती आ रही हैं।

गांव व डाकघर ठैर, तहसील आनी,
जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश-172 025

संदर्भ

1. शशि प्रभा कुमार, भारतीय संस्कृति : विविध आयाम (दिल्ली, विद्यानिधि प्रकाशन, 2005), प. 1,
2. वहीं, पृ. 1
3. वहीं, पृ. 4
4. शारदा त्यागी, तुलसी साहित्य में नारी, मेरठ, ईशान प्रकाशन, 2002, पृ. 57

- शिक्षा से मेरा तात्पर्य है कि वह बच्चे के मन शरीर और आत्मा का सर्वांगीण विकास करे। किताबी शिक्षा ज्ञान प्राप्ति का न तो आरंभ है न अंत। -महात्मा गांधी
- संयम का अर्थ अपनी बिखरी शक्ति को एक निश्चित दिशा देना है। लक्ष्य का निश्चय होते ही चीजें और लोग निरर्थक लगने लगते हैं, जो लक्ष्य प्राप्ति में सहायक नहीं होते। -स्वामी रामतीर्थ
- ध्यान का सिर्फ इतना अर्थ है कि हम अतीत और भविष्य को छोड़कर गुजर रहे वर्तमान में जिएं। ऐसा करने के लिए आंख बंद करके कहीं बैठना जरूरी नहीं है। सब कुछ करते हुए भी हम ध्यान की अवस्था में रह सकते हैं। यही योग है। -जे. कृष्ण मूर्ति

शोध लेख

‘लोक’ मानव विकास के स्वरूप की नवचेतना

◆ तिलक राज शर्मा

सामान्यतः लोक शब्द का अनुवाद अंग्रेजी के ‘फोक’ शब्द के रूप में हुआ है। लोक यह शब्द संस्कृत की ‘लोक दर्शने’ धातु में ‘ धञ’ प्रत्यय जोड़ने से सम्पन्न हुआ है। इस धातु का अर्थ है - देखना। इसका लट् लकार अन्य पुरुष एक वचन में रूप लोकते होता है। अतः इस शब्द का मूल अर्थ हुआ ‘देखने वाला’। डा. रवीन्द्र भ्रमर ने लोक शब्द का प्रचलन दो रूपों में स्वीकार किया है। एक विश्व अथवा समाज और दूसरा जन सामान्य अथवा जन साधारण। साहित्य या संस्कृति के एक विशिष्ट भेद की ओर इशारा करने वाले एक आधुनिक विशेषण के रूप में इस शब्द का अर्थ ग्राम्य या जनपदीय समझा जाता है। इस दृष्टि से केवल गावों में ही नहीं बल्कि नगरों, जंगलों, पहाड़ों और टापुओं में वसा हुआ वह मानव समाज जो अपने परम्परा प्रथित रीति-रिवाजों और आदिम विश्वासों के प्रति आस्थाशील होने के कारण अशिक्षित एवम् अल्पसभ्य कहा जाता है। यही लोक का प्रतिनिधित्व करता है। “अतः लोक शब्द अशिक्षित, अर्द्धशिक्षित, अर्द्धसभ्य, असभ्य वर्ग के लिए प्रयुक्त किया जाता है - चाहे ग्रामीण क्षेत्र में निवास करते हों या फिर नगरीय क्षेत्रों में रहते हो।”[1]

हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है बल्कि नगरों और गांवो में फैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यवहार ज्ञान का आधार पोथियां नहीं है। ये लोग नगर में परिष्कृत, रुचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं। “कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार आधुनिक सभ्यता से दूर, अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाली तथा कथित अशिक्षित एवम् असंस्कृत जनता को लोक कहते हैं जिनका आचार-विचार एवम् जीवन परम्परा युक्त अर्थात कुछ एक नियमों से नियन्त्रित होता है।”[2]

ऋग्वेद में लोक शब्द के लिए जन शब्द का प्रयोग भी उपलब्ध है। जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में कहा गया है कि यह शब्द लोक अनेक प्रकार से फैला हुआ है। इसी तरह महावैयाकरण पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में लोक तथा सर्वलोक शब्दों का उल्लेख किया है। ठञ प्रत्यय करने पर लौकिक तथा सार्वलौकिक शब्दों की निष्पत्ति की है। डॉ. सत्येन्द्र के अनुसार लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो आभिजात्य संस्कार शास्त्रीयता और पाण्डित्य की चेतना अथवा अंहकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित रहता है। विद्या चौहान के अनुसार लोक का अर्थ सरल स्वाभाविक मानव समाज है। जिसमें भावनाओं, विचारों, परम्पराओं, क्रियाओं और मान्यताओं में वास्तविक कल्याण के तत्व विद्यमान रहते हैं। लोकशब्द के सम्बन्ध में वासुदेव शरण अग्रवाल का कहना है कि लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सब कुछ संचित रहता है।

लोक राष्ट्र का अमर स्वरूप है। ‘लोक’ मानव विकास के स्वरूप की नवचेतना है जोकि मानवीय जीवन का आडम्बर विहीन उदाहरण एवम् दर्पण है। इस तरह भी कहा जा सकता है कि जो लोग संस्कृत, सभ्य तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से बाहर रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में सरोकार हैं, उन्हें लोक की संज्ञा प्राप्त है। इन्हीं लोगों के साहित्य को लोक साहित्य कहा जाता है। यह साहित्य लोक परम्पराओं के द्वारा चला आता है। यह लोक साहित्य जब तक मौखिक रहता है, तभी तक इसमें ताज़गी एवम् जीवन पाया जाता है। लिपि की कारागार में कैद करके इसकी संजीवन शक्ति नष्ट हो जाती है। लोक शब्द प्राण पोषक प्रकृति का संजीवन रस लेकर विश्व को अपने में समेट लेता है। विभिन्न शब्द कोशों में लोक विभिन्न प्रकार से परिभाषित किया गया है। लोक की परिभाषा देते हुए “डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी’ कहते हैं कि लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है बल्कि नगरों और गांवों में फैली

ऋग्वेद में लोक शब्द के लिए जन शब्द का प्रयोग भी उपलब्ध है। जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में कहा गया है कि यह शब्द लोक अनेक प्रकार से फैला हुआ है। इसी तरह महावैयाकरण पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में लोक तथा सर्वलोक शब्दों का उल्लेख किया है। ठञ प्रत्यय करने पर लौकिक तथा सार्वलौकिक शब्दों की निष्पत्ति की है। डा. सत्येन्द्र के अनुसार लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो आभिजात्य संस्कार शास्त्रीयता और पाण्डित्य की चेतना अथवा अंहकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित रहता है।

कविता

वन स्वप्न

◆ प्रोमिला भारद्वाज

भवनों के जंगल
पनपने लगे अब
हरे भरे जंगलों में
लाल पीले नारंगी
श्वेत, नीले, गुलाबी
बड़े छोटे-भवन
भ्रम पैदा करते
क्षण भर को
रंग बिरंगे फूलों का
मशीनों की ध्वनियां
मंदिरों व मस्जिदों की
गिरजाघरों व गुरुद्वारों की
मिली जुली वाणियां
बच्चों की किलकारियों से
वृद्धों के खंख
उभरता मिश्रित कोलाहल
स्मरण करवा देता
भंवरों की गुंजन का
पक्षियों के मधुर गान का
झरनों की झंकार का।
धुआं तरह-तरह का
वाहनों से उठता हुआ
चुल्हों का कुछ कारखानों का
धूम्रपान का कुछ बमों का
हृदयों में धधकते आक्रोश का
कुछ ज्वलंत व्यभिचारों का
करवाता है आभास
पर्वतों पर उतरते
बरसात के बादलों का
लुप्त हो जाते जिनके पीछे
प्रकृति के मनमोहक दृश्य
सुरम्य नदियां पहाड़
आकाश दिखता है बस
और उसी जैसी धुंध
लगता है अंतरिक्ष में
तैर रहे हों हम प्राणी
छंटते ही धुंध के
गिरा पाएं स्वयं को
भवनों के जंगल में
हो जाते छिन्न-भिन्न
स्वप्न व वन उपवन।
लोक हो रहे प्राकृतिक दृश्य
स्वप्नों की तरह
अभी है अस्तित्व बाकी
वनों का उनके स्वप्नों का
बचा लो इन्हें।
रोको इनका
शनैः शनैः लुप्त होना।
बंद करो भवनों को बोना
हरे भरे जंगलों में
खेती इनकी रखो सीमित
मैदानों तक
ऐसा न हो कहीं
हरे भरे वन उपवन
हिस्सा बने कल्पनाओं का
किस्सा परीकथाओं का
आने वाली सदियों में
वर्णन करें जब बुजुर्ग
प्रकृति के सौंदर्य का
आश्चर्य से सुनें बच्चे
असमंजस से ढूंढती फिरें
उनकी लालायित आंखें
कम्प्यूटरों से भरें
भव्य भवनों के बाहर
हरे भरे वन उपवन
शुद्ध ताजा हवा
फूलों की सुगंध
पक्षियों के गीत
और न जाने क्या-क्या
वो सब का सब
सुंदर शीतल रिझावना
छुपा हुआ वनों में
उनके लिए तो
कुछ वन उपवन
बचाए रखो
भेंट स्वरूप ही सही
अगली सदियों को
बीती सदियों की ओर से
कुछ सुंदर मन भावन
हरे भरे वन उपवन
बन न जाएं स्वप्न।

प्रबंधक जिला उद्योग केंद्र,
जिला मंडी,
हिमाचल प्रदेश-175 001,
मो. 0 94180 04032

हुई समूची जनता है जिसके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं है। ये लोग नगर में परिष्कृत जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते हैं। ''लोक कोई दर्शन नहीं जनपद नहीं अपितु निरन्तर बहता काल का अप्रतिम प्रवाह है जिसमें भारतीय मानस बार-बार डुबकी लगाता है'' ।[3] ''इसी लोक शब्द की परिभाषा देते हुए डा. कृष्ण देव उपाध्याय मानते हैं - कि लोक संस्कृत परिष्कृत वर्ग से प्रभावित न होकर अपनी पुरातन स्थिति में ही रहते हैं''। लोक शब्द की व्युत्पति के विषय में इतना कह देना ही काफी है - कि संसार में जीवन के सरल व सुगम प्रवाह का नाम ही लोक है। लोक शब्द बहुत ही प्राचीन है। इस शब्द का अर्थ इस जन समाज से है जो विस्तृत रूप से इस पृथ्वी पर फैला हुआ है तथा जिसमें सभी प्रकार के मनुष्य सम्मिलित हैं। आज जब हम लोक शब्द स्वरूप का प्रयोग करते हैं तो यह एक विशिष्ट स्थान के जन समुदाय की ओर संकेत करता है। अंग्रेजी के फोक शब्द का पर्यायवाची 'लोक' शब्द है वैसे इसे हिन्दी में ग्राम या जन भी कहते हैं। लेकिन यदि इसका विस्तृत अर्थ लिया जाए तो किसी सुसंस्कृत राष्ट्र के सभी लोग इस नाम से पुकारे जाते हैं। श्रीकृष्ण जैसे अलौकिक चरित्र में भी आग्रह है कि मुझे भी लोकयात्रा पूरी करनी है। यदि मैं न करूँ तो यह लोक नष्ट हो जायेगा। लोक संग्रह के लिए लोक संग्रह पथ पर ज्ञानी से ज्ञानी, विदेह से विदेह को अपने लिए नहीं, लोक के लिए चलना पड़ता है। विद्वान मनीषियों चिन्तकों, विचारकों, विशेषज्ञों के वैचारिक चिन्तन सागर को मथने के बाद जिस अमृत अर्क की प्राप्ति हुई, उसके अनुसार 'लोक' के समक्ष सब कुछ श्रीहीन है। यही लोक शब्द का अर्थ परिभाषा एवम् स्वरूप है।

सुपुत्र श्री रोशन लाल शर्मा, गांव कैहरवीं, डा. बलोह,
तह. भोरंज, ज़िला हमीरपुर (हि.प्र.)-177 029

सन्दर्भ :

1. डा. श्री राम शर्मा – 'लोक साहित्य स्वरूप और मूल्यांकन निर्मल पब्लिकेशन्स – कबीर नगर, शाहदरा दिल्ली–94
2. वही
3. डा. सुरेश गौतम – 'लोक साहित्य अर्थ और व्याप्ति' संजय प्रकाशन – अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002

आलेख

संत साहित्य में दलित-वेदना

◆ डॉ. मंजु पुरी

भारतीय इतिहास में मध्यकाल का समय बहुत ही संकट और समस्या से भरा हुआ था। तत्कालीन समय में जब चारों ओर से भारतीय जनता को आक्रमणों का सामना करना पड़ रहा था एवं भारतीय जनता अपनी एकता के अभाव में थोड़े से विदेशी आक्रमणकारियों का सामना नहीं कर सकी तो इसे लोगों ने भगवान को अभिशाप समझने में ही अपनी भलाई समझी। ऐसी विकट स्थिति में ही भक्ति आन्दोलन का श्री गणेश हुआ और इस आन्दोलन की भागदौड़ कबीरदास, गुरूनानक देव, दादू, रैदास, नामदेव, तुलसीदास आदि संतों ने सम्भाली। संतों ने भक्ति के साथ-साथ आक्रमणकारियों से जूझने की शक्ति अपनी वाणी और प्रवचनों से तत्कालीन समाज को प्रदान की, परिणामस्वरूप भारतीय समाज में चेतना का प्रचार-प्रसार हुआ। उन्होंने जाति-पाति को समाज का एक भंयकर रोग माना है। जो महारोग में परिवर्तित होकर मानवता को खाए जा रहा है। यह जाति-पाति का भेद ही मनुष्य को मनुष्यता से दूर कर रहा है। फलस्वरूप मानव-मानव नहीं रह गया है।

'भारत में संस्कृति के विभिन्न रूप और परम्पराओं का अस्तित्व रहा और उसमें अपरिहार्य संघर्ष भी। मूलतः संस्कृति का यह संघर्ष वर्गीय आधार पर चलता है, लेकिन भारत में यह संघर्ष वर्गीय और जातिगत आधार पर देखा जा सकता है। इसके बावजूद इस तथाकथित भारतीय संस्कृति का मूल चरित्र जातिवादी ही रहा है।

संत समाज के संत, केवल भक्त कवि ही नहीं थे बल्कि दलित चेतना के कवि भी थे। उन्होंने दलितों के उद्धार के लिए जाति-पाति और वर्ग-व्यवसाय को जन्म के आधार पर नकार दिया। मनु की बनाई गई व्यवस्था को मानव की योग्यता को परखने का पैमाना नहीं माना।

'मनु की बनाई सामाजिक व्यवस्था के अनुसार भारत का मानव मुख्य रूप से चार समूहों में बंटा हुआ है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। इस व्यवस्था के तहत समाज में ब्राह्मण का स्थान सर्वोच्च है तथा बाकी तीनों उससे नीचे है। क्षत्रिय तथा वैश्य वर्ग को उसने अपने बनाए नियम, कानून तथा ढोंग को मजबूत तथा स्थिर रखने के लिए निर्धारित किया। चौथा वर्ग सबसे नीचे तथा अधम श्रेणी में रखा गया। इस वर्ग को सारे अधिकारों से वंचित कर दिया गया, यहां तक कि इस वर्ग को जीवन की मूलभूत आवश्यकता के लिए ऊपर के तीनों वर्ग पर आश्रित बना दिया गया।'[5] 'दलित' शब्द को वर्जित करते हुए कुसुमलता मेघवाल ने लिखा है 'दलित' का शब्दिक अर्थ है कुचला हुआ। अतः दलित वर्ग का सामाजिक सन्दर्भों में अर्थ होगा, वह जाति समुदाय, जो अन्यायपूर्वक उच्च जातियों द्वारा दमित किया गया हो, रौंदा गया हो।' वास्तव में दलित शब्द 'मूक' नहीं है यह अपनी पीड़ा को, अपमान को, अत्याचार को स्वयं प्रकट करता है।

21वीं शताब्दी के भारत की वर्तमान स्थिति इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि दलित को जो अपमान, अत्याचार आज सहन करना पड़ रहा है, वही भोग्य स्थिति भक्ति काल के संत साहित्य के सामने आ चुकी है अन्तर केवल इतना है कि आज का भारत दलितों की स्थिति को उबारने के लिए संघर्षशील है, प्रयासरत है वहीं भक्तिकाल के संत समाज ने वर्णव्यवस्था, जाति-पाति और सम्प्रदायगत भेदभाव को देखा, भोगा और उसका तर्कशीलता से विरोध किया।

दलित होने के कारण ही सन्त नामदेव को 'छीपी जाति' का होने के कारण मन्दिर से निकाल दिया गया।

'हँसत खेलत तेरे देहरे आया, भक्ति करत नामा फकीर उठाया। हीनड़ी जाति मेरी याद कराया, छीपे को जन्म काहे को आया।"

भगवान से शिकायत करते हुए नामदेव कहते है कि हे प्रभु, द्वार से इस प्रकार अपमानित कराकर यदि उठवाना था तो छीपे का जन्म ही क्यों दिया। ऐसी नीची जाति में जन्म तो तुमने ही दिया है।

वास्तव में इन शब्दों के माध्यम से नामदेव ने स्वयं की और तत्कालीन जातिग्रस्त समाज की पीड़ा को उद्‌घाटित किया है।

जुलाहे संत कबीर निम्नलिखित पंक्तियों में ब्राह्मण व्यवस्था

पर कटाक्ष करते हुए बोलते है **'जो तू बाभन बाभनी जाया, तौ आन राहै काहै न आया।**

जो तूं तुरक तुरकनी जाया, तो भीतर खतना क्यों न कराया।"

जुलाहे कबीर की उक्त पंक्ति जितनी उस समय प्रांसगिक थी, उतनी ही आज भी है। क्योंकि आज भी वर्ण व्यवस्था के आधार पर होने वाला भेदभाव, अपमान समाप्त नहीं हुआ है।

तत्कालीन समाज में ब्रह्मण वर्चस्व के कारण, माता-पिता, पत्नी, पुत्र की मृत्यु, निर्धनता और भूख से होने वाली पत्नी की दारूध मृत्यु के प्रहारों से जकाराम को वैराग्य लेने को विवश कर दिया। वास्तव में यह स्थिति केवल संत जकाराम की ही नहीं थी बल्कि तत्कालीन समाज में दलितों को मानव नहीं समझा जाता था। अगर भूख के कारण किसी की मृत्यु भी हो जाती है तो उच्च वर्ग को इसका कोई फर्क नहीं पड़ता था।

भारत में संस्कृति के विभिन्न रूप और परम्पराओं का अस्तित्व रहा और उसमें अपरिहार्य संघर्ष भी। मूलतः संस्कृति का यह संघर्ष वर्गीय आधार पर चलता है, लेकिन भारत में यह संघर्ष वर्गीय और जातिगत आधार पर देखा जा सकता है। इसके बावजूद इस तथाकथित भारतीय संस्कृति का मूल चरित्र जातिवादी ही रहा है। संत समाज के संत, केवल भक्त कवि ही नहीं थे बल्कि दलित चेतना के कवि भी थे। उन्होंने दलितों के उद्धार के लिए जाति-पाति और वर्ग-व्यवसाय को जन्म के आधार पर नकार दिया। मनु की बनाई गई व्यवस्था को मानव की योग्यता को परखने का पैमाना नहीं माना।

जुलाहे कबीर की ही भांति गुरु नानक देव ने न केवल अपनी वाणी से तीखे प्रहार किए, बल्कि धनिक के भोजन को स्वीकार न कर निर्धन, निम्न जातीय के भोजन को स्वीकार किया। खत्री जाति से जुड़े होने पर श्री भारतीय हिन्दू समाज में निम्न जातीय लोगों की दुर्दशा, ऊँच जाति के घमण्ड में चूर की लताड़ा और उनको अपना साथी बताया।

'नानक उतमु नीचु न कोई जायाहु जोति न पूछड जाति आगे जाति न हे।'

गुरू नानक के माध्यम से सुखद सन्देशा जाता है कि जो नीच जातियों में नीच है और उन नीचों में भी जो बहुत ही नीच है; उनसे मेरा अधिक गहरा सम्बन्ध है।

'संत रैदास का विश्वास है कि अपनी शरण में आने वाले को ईश्वर ऊँचा उठा देता है और गहरा सम्बन्ध है ।

'संत रैदास का विश्वास है कि अपनी शरण में आने वाले को ईश्वर ऊँचा उठा देता है। **नीचहु ऊँच करें** उनको अपनी ओछी जाति का जरा भी मलाल नहीं था क्योंकि उसे पता है कि भगवान ने उसे अपनी शरण में ले लिया है।"

संतों का मत है कि जन्म से कोई भी व्यक्ति छोटा-बड़ा, ऊंचा-नीचा नहीं होता है। न उसकी कोई अलग जाति-पाति होती है। जाति का निर्धारण केवल उसके कर्मो के आधार पर है जो जैसा कर्म करता है उसे वैसा ही कहकर पुकारने लगते हैं।

संत रैदास ने एक स्वस्थ समाज के संगठन के लिए जन-जन में चेतना के नए आयाम को उड़ेला है। उन्होंने सामाजिक विषमता, अंधविश्वास, जातिभेद पर कुठाराघात करते हुए कहा है-

"एकै माटी के सब भांडे
सम का एकौ सिरजन हारा
रविदास व्यापै एकौ घट भीतर।
सम कौ एकै घड़ै कुम्हारा।"[1]

शांति मार्ग से जो मार्ग प्रशस्त हो सकता था, उस पर चलते हुए संत रविदास ने संपूर्ण मानवता के लिए अपनी सुकोमल वाणी का प्रयोग किया।

"हिंदू समाज के और उससे जुड़े रीति-रिवाजों और पाखंडों और रूढ़ियों के विरुद्ध संत रविदास ने जो बीज बोए थे वे लगभग साढ़े तीन शताब्दियों के पश्चात् अंकुरित हुए और डॉ. अंबेडकर के रूप में पहली बार वह प्रखर व्यक्तित्व मिला जो संत रविदास के समान था और वह ऐसा ज्योति स्तंभ साबित हुआ जिससे युगों-युगों से अंधेरे में भटके हुए दलित वर्ग को राह दिखाने का कार्य किया।"[2]

सहायक आचार्य (हिंदी), अंतर्राष्ट्रीय दूरवर्ती शिक्षा एवं मुक्त अध्ययन केंद्र, समरहिल, शिमला-171 005,
मो. 0 8894 10597

संदर्भ :

1. डॉ. शत्रुघ्न कुमार, दलित आंदोलन के विविध पक्ष,पृ. 10
2. तेज सिंह, दलित समाज और संस्कृति, पृ. 09
3. डॉ. कुसुमलता मेघवाल, हिंदी उपन्यासों में दलित वर्ग, पृ. 11
4. डॉ. बलदेव वंशी, पूरा कबीर, पृ. 261
5. रविदास दर्शन, पृ. 135
6. डॉ. चंद कुमार करठे, दलित साहित्यकार आंदोलन, पृ. 86

- जब दुनिया कहती है कि हार मान लो तो आशा धीरे से कान में कहती है कि एक बार फिर प्रयास करो और यह ठीक भी है। - अज्ञात
- निस्संदेह अच्छे मित्रों की हमेशा आवश्यकता रहती है, फिर भी यदि आप अपने-आपसे मित्रता कर लें तो आप कभी अकेला महसूस नहीं करेंगे। - मैक्स वेल माल्ट्ज

कहानी

आम के चोर

◆ ओम प्रकाश नौटियाल

लगभग पाँच दशक पूर्व के जमाने की बात है। टिनू की उम्र 13 वर्ष के करीब रही होगी जब उसने मुझे अपने घनिष्ठ मित्र के रूप में स्वीकार किया था। मैं उससे शायद 2 वर्ष छोटा रहा हूंगा।

टिनू हद दर्जे का शरारती था। उसकी शरारत के किस्से आस पास के गांवों में भी मशहूर हो गए थे। उसकी शरारतें बालपन की हदें अकसर तोड़ जाती थीं और गांव के बड़ों की नजरों में अक्षम्य अपराध का रूप धारण कर लेती थीं। गांव में लगभग सभी मां बाप अपने बच्चों को उसके साथ खेलने से मना करते थे। पर फिर भी उसकी टोली में दोस्तों की कमी कभी नहीं दिखाई दी। उसके साथ साथ रहने में सभी बच्चे अपने को बहुत सुरक्षित तो महसूस करते ही थे साथ ही साथ सभी उसके साथ रहकर मिलने वाली थ्रिल तथा साहस और बहादुरपन की भावना का भी आनंद लेना चाहते थे जो उस उम्र में तो सबको बहुत पसंद आती है।

उसके साथ देख लिए जाने पर सब के पास तैयार बहाने होते थे, "मैं रमेश, विरेश और विमल खेल रहे थे वह भी आ गया कि मुझे भी खिला लो अब हम उसे मना तो नहीं कर सकते थे' आदि आदि। फिर टिनू भी बड़ा वाक पटु और हाजिर जवाब था। उसे भली भांति ज्ञात था कि उसके साथ खेलने को मना किया जाता है। वह सभी के माता पिता को श्रद्धा से नमन करता था और उनके हाल चाल पूछ कर कहता था, 'चाचा जी , आज भी मोहन नहीं आया खेलने। हम तो बस यहीं कुछ देर चोर सिपाही खेलते हैं। जल्दी ही खेल खत्म कर देते हैं क्योंकि सबको 'होम वर्क' करना होता है। आप उसको भेजिए न कल से।' और उनके जाने के बाद मोहन को आवाज लगा कर कहता था, 'निकल आ बाहर, चले गए तेरे पिताजी भूसा लाने'

उधर मोहन के पिता सोचते थे कि यह टिनू उतना बुरा भी नहीं है जितना लोग उसे बताते हैं और उनकी यह धारणा उसकी अगली शरारत के किस्से सुनने तक दिमाग में घर किए रहती थी। टिनू भी अपने साथ उन बच्चों को रखना पसंद करता था जिनको सब सीधे शरीफ समझते थे और जो पढ़ने में अच्छे होते थे। वह भी शायद अपने को उनके बीच में सुरक्षित समझता था। फिर किसी प्रकार की प्रतिस्पर्धा का भी कोई खतरा नहीं था और ऐसे सभी बच्चे डर या रोमांच के कारण उसका हर काम में साथ देते थे। वह भी अपने साथियों का पूरा खयाल रखता था बस उसका हुक्म तामील होना चाहिए ।

उसे एक हुक्म बजाने वाले अच्छे जहीन बच्चों की टोली की जरूरत थी। शैतानी वगैरह के लिए वह खुद ही किसी भी दुस्साहस के लिए तैय्यार रहता था। स्कूल में पढ़ाई मे कमाई इज्जत के कारण वह मेरा विशेष ध्यान रखता था। सदा बड़ी आत्मीयता से बात करता था और पक्ष भी लेता था। उसे शायद इस बात की उम्मीद थी कि मुझे साथ रखने से लोगों की नजर में उसकी छवि भी सुधर सकती है।

कई बार पिताजी से लोग शिकायत भी कर देते थे कि मैं उसकी टोली में घूमते देखा गया हूं। पिताजी मुझसे इस विषय में कोई सीधा सवाल तो नहीं करते थे पर कभी कभी उसकी संगति से होने वाले दुष्परिणामों के बारे में अवश्य आगाह कर दिया करते थे। उनका प्रवचन कुछ इस तरह होता था।

'अब वह दिनेश मास्टर जी का टिनू है। मास्टर जी अपने आप इतने शरीफ हैं पर सुना है वह अव्वल दर्जे का बदमाश है। इतनी सी उम्र में उसके यह हाल हैं बाद में न जाने क्या करेगा। सुना है छुप कर सिगरेट पीता है। पढ़ने लिखने मे उसे कोई रुचि नहीं है दिन भर जंगल, नदी बाग बगीचों में घूमता फिरता है। बगीचों से फल चुराता है। भोलू माली कह रहा था किसी दिन हाथ लग गया तो टाँगें तोड़ दूंगा उसकी और बंद कर दूंगा वहीं कोठरी में, मास्टर जी आएंगे तभी छोडूंगा। कभी जंगलात में गार्ड के हाथ लग गया न तो बड़ी धुनाई होगी उसकी। उसके साथ रहने का मतलब न केवल बदनाम होना है वरन् इन सारे खतरों से खेलना भी है।'

अब उन्हें क्या पता कि यह सब कुछ हमारी भागीदारी में होता है। हम उसकी हिम्मत और चुस्ती पर इतने मुग्ध थे कि यह बात ही बड़ी हास्यास्पद लगती थी कि वह बूढ़ा भोलू या लंगड़ा गार्ड उसे कभी पकड़ भी सकता है। पिताजी की सिगरेट वाली बात एकदम सही थी लेकिन उसकी तारीफ में आज यही कह सकता हूं कि उसने कभी किसी दूसरे लड़के को सिगरेट पीने के

लिए बाध्य नहीं किया। इसका कारण यह हो सकता है कि उसके पास पैसे तो होते नहीं थे वह सिगरेट के अध पिए बट इकट्ठे किया करता था और औरों से भी लाने को कहता था। शायद उसे लगता होगा की सिगरेट के सीमित कोटे में औरों को साझेदार बनाना ठीक नहीं है। अशोक और अभय को वह खास ताकीद देता था, 'अरे अशोक, अभय तुम दोनों के पिताजी तो दिन रात धुँआ छोड़ते हैं। बड़े बट लाया कर साथ में एकाध सिगरेट भी पैकेट से निकाल लिया करो चाचा जी को कुछ पता नहीं चलेगा।' उसका सिगरेट पीने का काम छुपम छुपाई के दौरान चलता था जिसमें हम लोग कहीं दूर खेत में किसी की उगाड़ या उस जमाने में घर से बाहर बनें गुशलखाने में छिपते थे और उसकी इस कला को निहारते थे। वह धुंए के छल्ले और अन्य आकृतियाँ बनाने में महारथी हो गया था। निकलने के बाद वह पानी से बहुत देर तक कुल्ला करता था और फिर संतरे वाली मिठाई की गोली खाता था। बड़ों के सामने तब कोई सिगरेट नहीं पीता था और फिर बड़ा चाहे रिश्तेदार हो या गाँव का कोई। फिर टिनू तो छोटा था वह इस बात का विशेष खयाल रखता था कि किसी को पता न चले, वैसे ही कोई शक करता है तो करता रहे। उस जमाने मे आँखों के सामने गाँव के सभी बड़ों, बुजुर्गों को लड़के बहुत इज्जत देते थे।

मुझे याद है एक बार गाँव के कुछ युवक गाँव की चाय की दुकान के भीतरी कमरे में चाय की चुस्कियों के साथ गपशप कर रहे थे, एक उनमें सिगरेट भी पी रहा था। तभी गाँव के एक बुजुर्ग ने दुकानदार से अखबार की तलब करते हुए भीतर प्रवेश किया और एक अलग पड़ी कुर्सी पर बैठ गया। सभी लड़कों ने ताऊ को राम राम की। उन दिनों गाँव में शायद ही कोई घर पर अखबार लेता हो सब दुकान पर आकर पढ़ते थे। सिगरेट वाले लड़के ने कुछ देर सिगरेट हाथ में छुपा कर रखी कि शायद ताऊ चला जाए और टालने के लिए कहा भी ताऊ आज का अखबार अभी अभी मास्टर जी ले गए हैं घन्टे भर बाद दे देंगे। पर ताऊ तो वक्त बिताने आया था जम गया। थोड़ी देर में जब उस लड़के का हाथ जलने लगा तो उसने सिगरेट छोड़ दी और अपनी समझ में पैर से मसल कर बुझा दी। चंद मिनट बाद ही दुकान से धुंआ उठने लगा जो जल्दी से पूरी दुकान में फैल गया। सब लोग खांसते हुए बाहर निकले और पान भिगाने की बाल्टी का पानी उधर फेंक दिया। दरअसल जलती सिगरेट नीचे गिरे अखबारों पर पड़ी और वो आग पकड़ गए। पीछे ही छोले के और चाट के दौने रखे थे उनमें भी आग फैल गई फिर पुराने अखबारों की ढेरी तक पहुंची आग काफी तीव्रता से फैल गई। गाँव के सब आदमी जमा हो गए और अपने अपने घरों से पानी ला लाकर लगभग आधा घन्टे में उस आग पर काबू पाया। उसके बाद दुकान में फैली गंदगी साफ करने में भी वहुत वक्त लगा पर उन युवकों के और गाँव वालों के मिले जुले प्रयासों से सब लगभग पूर्ववत हो गया सिवाय थोड़ी बहुत नुकसान के। तजुरबेकार लोगों ने शायद आग का कारण भाँप लिया था क्योंकि रघु चाचा उस ताऊ को कह रहे थे, 'अरे, बंसी जहां लौंडे बैठे हों उनके बीच मे तुम्हे नहीं बैठना चाहिए। खैर।

गर्मियों की छुट्टियाँ हो गई थी। पिताजी 09.30 बजे कार्यालय चले जाते थे फिर शाम को 06.30 से पहले तो शायद ही कभी लौटते हों । माँजी अध्यापिका थी। प्राइमरी स्कूल था उनकी छुट्टियों में अब भी लगभग 20 दिन शेष थे। हम सब दोस्तों की दिन भर मस्ती होती थी। पिताजी मुझे ताकीद देकर जाते थे कि दिन में बाहर न घूमूं , आँखें खराब हो जाती हैं । किसी पुस्तकालय से लाकर एक दो अच्छी साहित्यिक पुस्तक भी नियम से देते थे। मैं पुस्तक को दिन और रात के समय में पढ़ लेता था जिस से दिन का समय दोस्तों के लिए बचा रहे।

ऐसी ही एक गर्मियों की छुट्टियोँ की दोपहर थी। टिनू की आवाज सुनाई दी। वह मुझे बाहर बुला रहा था। मैंने जल्दी से अपना सामान इकट्ठा किया और बाहर निकला। वहाँ पहले से ही पूरी मित्र मंडली जमा थी- टिनू समेत रमेश, विरेश, अशोक, अभय, गोविन्द सभी आ चुके थे। मुझे देखते ही सबकी बाँछें खिल गई। मेरे आते ही टिनू ने हम सबको सड़क के किनारे बुला कर बिना वक्त खोए संबोधित किया।' आज सिवाने वाले आम के पेड़ों से आम तोडने हैं। पूरा पेड़ लदा हुआ है। आम गदरे हो गए हैं कुछ पक भी गए हैं। हम सिवाने के खेत पार कर वहाँ पहुँचते हैं ।वहाँ इस वक्त कोई नहीं होता है। दूर दूर तक हल चलाए हुए खाली खेत हैं। बाकी वहीं पहुंच कर तय करते हैं। और हाँ हम लोग दो दो के ग्रुप में वहां पहुँचेंगे। पूरी टोली देखकर लोग वैसे ही शक कर लेते हैं। और हाँ ! जैसा कि मैं बार बार कहता हूं कोई भी किसी को उसके असली नाम से नहीं पुकारेगा। लगभग आधा घन्टा बाद हम सब वहाँ एकत्र हो गए। दिन के बारह बजे का समय था। सूरज सर पर था धूप तेज थी। चारों तरफ सुनसान पसरा था। आम के दो पेड़ खेतों के उस पार वाली सड़क पर थे दोनों आम से लदे थे। यही सड़क श्मशान को भी उतर जाती थी जो कि नदी किनारे स्थित था। श्मशान से कुछ उत्तर की ओर लम्बी सीढ़ियां नदी में उतरती थी जहा किनारे पर ही एक शिव मंदिर था। दोनों पेड़ दरअसल सड़क किनारे की बाड़ का हिस्सा थे । बाड़ में अधिकतर सिमालू की चार फीट के लगभग ऊंची झाड़ियां थी।

पेड़ों से पत्थर मार कर आम तोड़ने की प्रक्रिया अव्यावहारिक सी थी। लग्गी हम साथ रखते नहीं थे क्योकि खतरे की दशा में उसके साथ भागना आसान नहीं है फिर उसे लेकर चलना अभियान की पोल पहले ही खोल देता है। खैर दोनों पेड़ों का निरीक्षण करने के बाद तय हुआ कि उनमें से एक पेड़ पर अपेक्षाकृत आसानी से चढ़ा जा सकता है और चढ़कर कई डालियां और उनके आम तोड़ने की पहुंच के अंदर होंगे। चढ़ने के लिए हमारे नेता टिनू ने खुद ही अपने को प्रस्तावित किया इसलिए सब

काम बहुत सरल हो गया।

तीन लड़कों का पिरामिड बना जिसमें सबसे ऊपर टिनू था और देखते ही देखते टिनू लगभग नौ फीट उँचाई पर पेड़ के उस भाग पर पहुंच गया जहाँ से शाखाएं अलग होती थी। विरेश नीचे बड़े थैले के साथ था। सिमालू की एक लम्बी डन्डी तोड़कर हमने उसे दे दी जिससे उन आमों को भी तोड़ा जा सके जो हाथों की पहुँच से कुछ बाहर हैं। वह इत्मीनान से आम तोड़ रहा था और नीचे हम उन्हें कैच कर के उस बड़े थैले में रख रहे थे। वह डालों पर मंडराने लगा। बड़ा थैला आधे से भी अधिक भर गया था, हम उसे नीचे उतरने के लिए कह रहे थे पर उसका एक ही जवाब होता था, 'जरा रुको' ऊपर चढ़कर आम ही आम देखकर उसका लालच बढ़ता जा रहा था। हम कुछ डर भी रहे थे। उसी वक्त सिमालू की झाड़ियों में कुछ सरसराहट हुई और तभी अचानक मंदिर का एक महात्मा जो झाड़ियों के पीछे से अचानक प्रकट हुआ उसने विरेश के हाथ से आम का थैला छीन कर गुस्से में हमे लताड़ना शुरू कर दिया। उन आम के वृक्षों की रखवाली और सेवन मंदिर के महात्मा ही किया करते थे। यह बात शायद टिनू को पता थी पर वह हमें पहले बता कर हमारे मन में किसी प्रकार का भय नहीं आने देना चाहता था।

दरअसल मंदिर जाने वाले किसी श्रद्धालु ने मंदिर में महत्मा को शिकायत कर दी कि कुछ लड़के आम तोड़ रहे हैं। यह बात सुनते ही महात्मा क्रोध में सीढ़ियों से ऊपर आए और झुककर, छुपकर सिमालू की झाड़ियों के साथ साथ चलते हुए एकदम हमारे कार्यस्थल पर प्रकट हुए और झपट कर विरेश से थैला छिनते हुए बरस पड़े, अरे तुम लोग भले घर के लडके हो। यह चोरी का काम करते हो। छुट्टियाँ है तो घर बैठो, अच्छी, अच्छी किताबें पढ़ो, घर के काम में हाथ बटाओ, गाय की सेवा करो, पानी भरने का काम करो, मंदिर जाओ प्रवचन सुनो दिन मे कुछ देर आराम करो। पर तुम लोग दिन भर यह आवारागर्दी करते हो। तुम्हारे माँ बाप को पता चलेगा जो कि अब चलेगा ही तो क्या सोचेंगे वह लोग? ... ' इस बीच टिनू नीचे उतरने की प्रक्रिया में था और कूद मारकर महात्मा जी के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। बड़े विनम्र भाव से हाथ जोड़ कर बोला, 'महात्मा जी हमे माफ कर दीजिए। हमें तो बताया था कि इन पेड़ों से कोई भी आम तोड़ सकता है इन पर किसी का कब्जा नहीं है। इसलिए हम लोग इतनी दूर चलकर गाँव से यहाँ आए। चोरी करनी होती तो गाँव मे क्या कम पेड़ हैं? हम तो परिवार के लिए आम इकट्ठा कर रहे थे और यहाँ यही सोच कर आए थे कि यह वृक्ष सबके हैं। माफ कर दीजिए।' महात्मा उसकी बात और लहजे से कुछ पसीजते दिखाई दिए, बोले, 'अरे आम का पेड़ क्या तुम बच्चों के चढ़ने के लायक होता है। हड्डी पसली टूट गई तो जिंदगी भर के लिए अपाहिज हो जाओगे। जरा से लालच के लिए ऐसा जोखिम उठाते हो!' टिनू फिर बोला, 'जी बहुत बड़ी गलती हो गई। हम तीन घन्टे से यहाँ मेहनत कर रहे थे कि घर वाले आम देखकर खुश हो जाएंगे।'

महात्मा को कुछ और दया आई चार चार आम निकाल कर बच्चों को देने लगे, 'लो और आइन्दा गलत काम मत करना, अच्छी बातें सीखो और सलीके से रहो।' टिनू फिर हाथ जोड़कर बोला, 'बस इतने से आम हमने इतनी मेहनत की, जोखिम भी उठाया, कम से कम आधे तो हमें मिलने ही चाहिए। अगर आप किसी से तुड़वाते तो वह भी आधी बाँट पर ही तोड़ता। वैसे आजकल में आपको यह तुड़वाने ही थे। आगे से आप हमे कह दीजिएगा हम तोड़ देंगे। अभी तो आप आधे आधे कर दीजिए। हमने जो भी किया अनजाने में किया पर आपको तो मजे से तुड़े तुड़ाए आम मिल गए।'

महात्मा ने हल्के तर्क वितर्क के साथ हथियार डाल दिए और आधे आधे करने के लिए तैयार हो गया। 'वहाँ उस खेत में जहाँ दायं चलने की जगह है वहाँ करते हैं साफ सुथरे में।' टिनू ने कहा।

'और हाँ महात्मा जी थैला मुझे दीजिए आधे आधे मैं करूंगा। मुझे पता है कि कैसे कैसे आम हैं। हर तरह के पके आमों के मैं आध आधे करूंगा।' दायं की ओर चलते हुए टिनू बोला। यह कहते हुए टिनू ने महात्मा के हाथ से थैला लगभग छीन लिया। महात्मा ने भी इस जिद्द का कोई प्रतिरोध नहीं किया।

थैला लिया ही था कि टिनू ने दौड़ लगा दी और चिल्लाया, 'अरे सोहन, दीपू, रामू-नरेश, विरेन्द्र भागो।' महात्मा गुस्से में आगबबूला लड़कों के पीछे दौड़ने लगे, 'अरे बदतमीजों, डाकुओं मैं तुम सबको पुलिस के हवाले कर दूंगा।' उधर टिनू दौड़ता हुआ कुछ आगे रुका और मुड़कर बोला, 'अरे महात्मा आम खाएगा। ले आ जा। आधे लेगा? बड़ा मालिक बनने चला है।' हम लोगों ने उससे कहा, 'अरे चल अब, वह आ जाएगा।' 'अरे यह बुढ़ाऊ हल चलाए खेतों मे कहाँ भाग सकता है ?'

'बदतमीजों मोहन राम मास्टर को मैं जानता हूं। उसी का लड़का है न यह सोहन ? शाम को गाँव आकर तुम्हे पिटवाऊँगा भी और पुलिस के हवाले भी करवाऊँगा। महात्मा कुछ दूर दौड़ कर बड़बड़ाता हुआ वापस चला गया। टिनू ने महात्मा के सामने जो नाम लिए थे वह उन सब लड़कों के थे जो चाहकर भी टिनू गैंग अपने माता पिता की जबर्दस्त सख्ती के कारण जाइन नहीं कर पाए थे। उस दिन शाम को सोहन के घर के सामने बहुत भीड़ जमा थी। लोग कह रहे थे कि सोहन को उसके पिताजी ने मंदिर के महात्मा की शिकायत पर बहुत पीटा है। उसकी एक न सुनी।

उधर हम लोग मोती की उगाड़ में आराम से आम चूस रहे थे।

301, मारुति फ्लैट्स, गायकवाड कंपाउंड, ओ.एन.जी.सी. के सामने, मकरपुरा रोड, वडोदरा, गुजरात-390 009
मोब. 0 94273 45810

कहानी

लड़कियां

◆ हेमचंद्र सकलानी

दो घंटे पहले सुषमा ने दोनों लड़कों दिनेश, भुवन को भेजा था कि जाकर मुहल्ले के घरों से नौ बच्चियों को बुला लाओ जिमने के लिए। दरवाजे पर खड़ी बड़ी देर से दोनों लड़कों और बच्चियों के आने का इंतजार कर रही थी पर दूर दूर तक किसी का पता नहीं था। सारा सामान सजा के रखा था बच्चियों के पूजा और खाने का, इंतजार था तो बच्चियों के आने का। कुछ देर बाद दोनों अकेले आते दिखाई पड़े तो आंखों में अनेक प्रश्न उठ खड़े हुए थे। ''क्यों कहां रह गयी बच्चियां?' सुषमा ने पूछा था। 'मां बड़ी मुश्किल से दो तीन मिली थीं वो भी बहुत व्यस्त हैं आज। कारें लेकर लोग आ रहे हैं और उन्हें ले जा रहे हैं,' उत्तर दिया था दिनेश ने।

सुषमा की आंखों के सामने वर्षों पहले पहाड़ पर बसे अपने रानीचौरी गांव के दोनों दृश्य घूम गये थे। दोनों त्योहार बच्चियों के ही तो होते थे। पहले फूल संकरांद आती थी। चारों ओर पौधों पर खिले रंग बिरंगे फूल वातावरण में जमकर अपनी सुंदरता और खुशबू बिखेरते थे। छोटी-छोटी बच्चियां जैसे इंतजार ही कर रही होतीं थी फूल संकरांद का। दस बारह बच्चियां हंसती खिलखिलाती हाथों में झोली या डलिया फूलों से भर कर हर घर का चक्कर लगाते हुए घर के दरवाजे के दोनों ओर फूल रख कर मुस्कराते हुए गीत गुनगुनाते हुए दरवाजा खुलने का इंतजार करतीं। जब हंसते हुए सुषमा उनके हाथ में कुछ सिक्के रखती तो उनके चेहरे पर आयी खुशी देखने लायक होती थी। दौड़ती हुई बच्चियां आगे के घर की ओर दौड़ लगा देती थीं। उस खुशी में बच्चियों से ज्यादा खुशी वह महसूस करती थी। दूसरे को खुश देख कर खुद खुश होने की परम्परा तो अब खत्म सी हो गयी जैसे। उसे पिछली बार जब गांव गयी थी तो लगा यह खूबसूरत त्योहार अब दम तोड़ गया है या फिर आधुनिकता की भेंट चढ़ गया है। फूल संकरांद के बाद नवरात्रों में भी जब चारों ओर रामनवमी की धूम थी बच्चियां रंग बिरंगे परिधानों में इधर से उधर घरों में हंसती खिलखिलाती जा रही थीं। उनके आंगन में प्रवेश करते ही लग रहा था मानों सैकड़ों चिड़ियाएं शोर करती आ गई हों। महिलाएं उनकी खुशामद में एक दिन पहले से और फिर सुबह से ही लग जाती थीं पहले हमारे घर जिम लेना दूसरी कहती पहले हमारे घर जिम लेना हमें बहुत जरूरी काम से जाना है। एक यही दिन होता है जब बच्चियों की हर घर में बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा होती है। मां अक्सर कहा करती थी घर में अगर रौनक होती है तो लड़कियों से ही होती है। हार कर सुषमा ने सारा सामान उठाया और दोनों बच्चों को लेकर मंदिर की ओर चल दी थी। पंडित जी को लड़कियां न मिलने की बात बता कर वहीं मंदिर में पूजा कर सामान पंडित जी के सुपुर्द कर चली आयी थी। आज उसे लड़की न जनने का बहुत दुख हो रहा था। मन ही मन सोच रही थी अगर होती तो घर के सारे कामों में हाथ ही नही बंटाती वरन् एक छोटी सहेली की तरह शादी होने तक साथ रहती सारे सुख दुख में हाथ बंटाती। उसके बेटों की कलाई भी रक्षा बंधन के दिन बिना राखी के सूनी नहीं रहती कभी और भैया दूज के दिन माथा भी सूना सूना न लगता हालांकि पड़ोस की शर्मा जी की लड़की त्योहार के दिन ये सारी रस्में पूरी कर जाती थी, पर अपनी लड़की न होने का अभाव उसे हमेशा खटकता था।

आज बीस वर्ष बाद कितना बदलाव आ गया मानवीय सोच में। बीस वर्ष कब गुजर गये पता ही नहीं चला, जैसे पतझड़ का कोई तीव्र झोंका अचानक जीवन में आया हो और उड़ा ले गया था दिनों को।

सुषमा बार बार दरवाजे पर जा कर बाहर देख कर लौट आती। फिर मन ही मन बुदबुदाती 'कहां रह गये इतनी देर हो गयी।' आधा घन्टे बाद जब रिक्शा घर के बाहर रुकते उसने देखा तब चेहरे पर चैन दिखाई पड़ा था। ''कितनी देर हो गयी, कहां रह गये थे?'' बेटे बहु के घर अन्दर प्रवेश करते ही मां ने पूछा था।

कुछ देर के लिए दोनों सकपका गये थे। फिर कुछ देर ठहर कर मंदमंद मुस्कराते भुवन ने कहा 'मां सुनकर तू खुश हो जायेगी अगर बता दूं'' कहते हुए उसने रंजना की ओर देखा था, जो शर्म से सर झुकाये जमीन को तक रही थी। ''अरे ऐसी क्या बात है'' मां ने पूछा था। ''बता दूं मां को'' उसने शरारती अंदाज में रंजना को देखा। ''अरे बता क्यों नहीं रहा है, पहेलियॉं क्यों बुझा रहा है।''

रंजना भाग कर अपने कमरे की ओर चली गयी थी।''मां हम डाक्टर के पास गये थे, इसका चैकअप कराने।'' ''अरे क्या तबियत खराब है, पहले मुझे बताना चाहिए था'' चिंतातुर स्वर में सुषमा बोली।
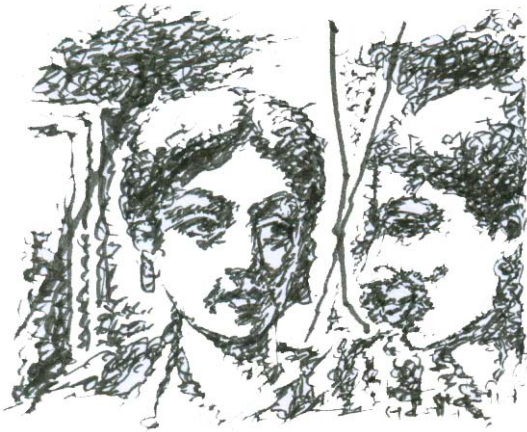
''नहीं मां तबियत ठीक है'' भुवन ने कहा।

''फिर क्या बात है?''

''मां तुम दादी बनने वाली हो,पोता आ रहा है घर में''

''अरे सच कह रहा है?'' खुशी से पूछा उसने,पर तभी कुछ क्षण ठहर कर कुछ सोचते हुए पूछा ''पर तुझे कैसे पता मेरा पोता ही आ रहा होगा?''

''मां आजकल सब कुछ सम्भव है। डाक्टर को पैसे दो वह जॉच कर बता देता है।''

''पर बेटा ऐसी जांच करने वाला तो सुना है अपराधी होता है।''

''होता होगा पर फिर भी सब कुछ होता है'' भुवन ने उत्तर दिया। चार वर्ष पूर्व बड़े बेटे दिनेश और उसकी बहु सविता ने बेटे की चाह में एबार्शन करवा दिया था। अगले वर्ष उन्होंने मां को इसी तरह खुश खबरी सुनाई थी कि बेटा आ रहा है। तब तक सुषमा नहीं समझ पायी थी कि बेटे जब चाहो पैदा किये जा सकते हैं। यह वह बाद में समझ पायी थी कि कैसे आसपास पड़ोस में गत कुछ वर्षों में बेटे ही बेटे पैदा हुये थे। दो वर्ष बाद दिनेश के फिर बेटा पैदा हुआ। भुवन की बहू का पहला बच्चा होना है दोनों की ही नहीं बहुत से रिश्तेदारों की इच्छा थी कि पहला बच्चा लड़का ही हो और बाद में पता चला कि बेटा ही आने वाला है। पता चलने पर सबके चेहरों पर खुशी दौड़ गयी थी। सुषमा जब लड़कियों को बड़े बड़े पदों पर कार्य करते देखती और फिर घर के काम में हाथ बंटाते देखती तब उसका बेटी को जन्म न दे पाने का दुख और बढ़ जाता था। उस दिन तो और बढ़ गया था जब पड़ोस में शकुंतला शर्मा के यहां गयी। शर्माजी दस वर्ष पहले गुजर गये थे। गनीमत थी कि जाने से पहले दोनों लड़कों की, और बेटी अर्चना की शादी करा गये थे। ये भी सौभाग्य की बात थी कि उनके रहते दोनों लड़कों की अच्छी नौकरी भी लग गयी थी। लड़कों का सर्विस लगने और शादी के बाद छोटे से शहर में मन नहीं लगा।

पत्नियों के कहने पर दोनों ने मेरठ में अपने लिये नए घर बना लिये और एक दिन पुराना घर भी छोड़ दिया। एक बार नहीं सोचा शकुन्तला घर में अकेली कैसे रहेगी। बेटे तो साल छह महीने में एक बार कभी फोन कर भी लेते थे पर जिन बहुओं को बड़े मन से ब्याह कर लायी थी उन्होंने फोन से बात करनी तो दूर कभी मुड़ कर भी नही देखा। बस एक बेटी अर्चना ही थी जिसके हर हफ्ते फोन आ जाते या स्वास्थ्य का ध्यान रखने की हिदायत के साथ लम्बी चिट्ठी आती थी। तब कई कई बार पढ़ती थी उन चिट्ठियों को जब तक शकुंतला का मन नही भर जाता था। घर में एक कन्या के आगमन की प्रतीक्षा सुषमा के मन में दबी ही रह गयी।

शहर में बढ़ती छोटी छोटी बच्चियों के अपहरण,बलात्कार और उसके बाद उनकी निर्मम हत्याओं की खबरों से अक्सर विचलित हो जाती थी सुषमा और तब क्रोध से भर कर कह उठती थी' ऐसे लोगों को फांसी दे देनी चाहिये।''

''अरे मां दुनिया के सारे देशों में ऐसी घटनाएं हो रही हैं किस किस को फांसी दोगी'' दिनेश ने कहा था।

''दुनिया के देशों में जो कुछ गलत हो रहा है जरूरी है कि वह हमारे यहां भी हो। दुनिया के लोग आधुनिकता के नाम पर गू खाने लगें तो क्या हम लोग भी खायें ?'' ऐसे अवसर पर दिनेश ने चुप रहना ही उचित समझा। कभी कभी सुषमा सोचने लगती अच्छा हुआ जो इस घर में बच्चियों ने जन्म नहीं लिया। उनकी चौबीसों घंटे की सुरक्षा कितना बढ़ा प्रश्न बन जाता इस घर के लिए। तीन वर्ष बाद फिर भुवन की बहू ने पुत्र को जन्म दिया तो सुषमा बहुत उदास हो गयी थी।

समय कितना बदल गया है सुषमा सोचने लगी फिर अपने आप से ही कहने लगी अरे समय कहां बदला लोग ही बदल गये हैं लोगों की सोच ही बदल गयी है।

एक दिन गुप्ता जी की पत्नी आयी बातें करते करते बताने लगी ''अशोक को देखने लड़की वाले आये थे। कह रहे थे अपनी लड़की रोशनी के रिश्ते के लिए आए हैं। बात करते करते गिनाने लगे कि हम ये देंगे वो देंगे, आज कल तो अच्छे लड़के बहुत मुश्किल से मिलते हैं पर रुपया पैसा खूब खर्च किया जाये तो लड़कों की कोई कमी नहीं रहती।" कुछ माह बाद अशोक की शादी भी हो गयी। गुप्ता जी की पत्नी, सुषमा को दहेज का सामान दिखाते थक नहीं रही थी। ढेर सारा दहेज पाकर परिवार फूला नहीं समा रहा था। ''आपके तो चार पोते हैं बहुत पैसा और दहेज मिलेगा'' कहा था गुप्ता जी की पत्नी ने।

''हमारे पर्वतीय समाज में दहेज का तथा लेनदेन का कोई प्रचलन नहीं है। हम सिर्फ अच्छा घर अच्छी लड़की देखते हैं। मैं चाहती हूं। मेरे घर में मेरे बच्चे गरीब से गरीब घर की गुणी लड़कियां "लायें बस'' बड़े गर्व से कहा था सुषमा ने।

सारे रिश्तेदारों से परिचितों से कहते कहते सुषमा थक गयी थी कि दिनेश भुवन के लड़के बड़े हो रहे हैं लड़कियां बताओ।

सुदेश दीक्षित की ग़ज़लें

(एक)

चले आओ अब दूरियां सताती हैं
ता रात खनकती चूड़ियां सताती हैं।

तोड़ा है हसरतों ने दम किस कदर
यह बिस्तर की सिलवटें बताती हैं।

अश्क है थमने का नाम नहीं लेते,
मेरे दिल को हिचकियां सताती हैं।

बही है तुफां संग कितनी कश्तीयां
ये समंदर की लहरें बताती हैं।

कैसे दूर करोगे यादों को 'दीक्षित'
तन्हाई में उनकी यादें सताती हैं।

(दो)

दिल को जितना कहो कहां असर होता है
लाख दुआओं से एक का असर होता है।

तुम्हारा कहना मज़ाक हो सकता है पर
तुम्हें क्या मालूम छलनी जिगर होता है।

न जाने दिन में कितनी बार जीते-मरते हैं
बार-बार मरने से एक बार मरना अच्छा होता है।

हमने तो सदा सलामती चाही है तुम्हारी
देखना दुआ का धीरे-धीरे असर होता है।

इश्क में इतना भी पगला न जाओ 'दीक्षित'
बचना हर हाथ में मौत-ए-मंजर होता है।

दीक्षित निवास, पंतेहड़, डाकघर घरथोली (बैजनाथ), जिला कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश-176 125, मो. 0 94182 91465

आखिर वह दिन भी आया जब दिनेश के बेटे राहुल के लिए लड़की देखने उन्हें जाना था। रिश्तेदारों, राहुल के दोस्तों तथा अड़ोस पड़ोस के लोग सहित पैंतिस लोग हो गये थे काफिले में। जब लड़की वालों के घर पहुंचे तो सभी का जोरदार स्वागत हुआ था। बातचीत चलते चलते सभी के चेहरे पर झलक रहा था कि अब लेनदेन की बात हो जाये। आखिर लड़की के पिता ने ही दिनेश से कहा ''भाई साहब लड़की तो आपने देख ही ली है अच्छी है, गुणी है, सुशील है, घर के कामकाज में निपुण है। ऊपर से सरकारी नौकरी है तीस हजार सैलरी है। इसे पढ़ाने लिखाने योग्य बनाने में हमने बहुत मेहनत की अपने धन का बहुत हिस्सा खर्च किया और कोई कसर नहीं छोड़ी।''

''देखिये मोहन जी मेरा दृष्टिकोण रहता है साफ कहना और सुखी रहना, लड़की कुछ ना कुछ लेकर आये यह हर लड़के के मां बाप की इच्छा रहती है भले ही कोई क्यूं न दिखावा करते कहे जी हमें कुछ नहीं चाहिये'' दिनेश ने कहा।

''वो तो है दिनेश जी, हर माता पिता अपने बच्चों के भविष्य के लिये अपने जीवन का सब कुछ दांव पर लगा देते हैं।''

'' आप दहेज के लिए परेशान मत होईये हमें कुछ नहीं चाहिये भगवान के लिये हमारे पास सब कुछ है,बस हम चाहते हें लड़की दहेज में पांच बहुमूल्य चीजें लेकर जरूर आये।'' दिन्ेा ने कहा। सुन कर मोहन जी चौंक कर बोले ''वो तो ठीक है पर.... ....'' कहते कहते रुक गये थे।

''पर क्या, हम तो सिर्फ यह चाहते हैं लड़की दहेज में हमारे लिए, हमारे घर के लिये, हंसी, खुशहाली, प्रसन्नता, शांति, समृद्धि लेकर आये, यही हमारे लिए सबसे बड़ा और सच्चा दहेज होगा'' कहते हुये ठहर गये थे दिनेश।

''लेकिन दिनेश जी हमने लड़की पर इतना पैसा खर्च किया योग्य बनाया, आज कल लड़कियां मिल कहां रही हैं, वह भी इतनी योग्य, संस्कारी लड़की। अब आप दहेज लेने की नहीं देने की बात कीजिये। हमें पांच लाख तो कैश चाहिये,एक गाड़ी बाकी आप लोगों की श्रद्धा पर छोड़ते हैं। आखिर आप लड़के वाले हैं अपने लड़के के लिए सांस्कारिक, गुणी, कमाने वाली लड़की लाने में कोई कमी तो करेंगे नहीं ?'' एक सॉस में साहस जुटा कर कह गये थे मोहन जी। सुनते ही दिनेश के नीचे से जैसे जमीन खिसक गयी थी। दो बेटों और दो भतीजों का चेहरा उनकी आंखों के सामने घूम गया था। अगर चारों के ब्याह में इतना देना पड़ा तो क्या होगा। सारी जमीन जायदाद बिक जायेगी फिर भी कम रहेगा।

वर्षों पहले मां की कही बात उसके दिमाग में हथौड़े की तरह चोट कर रही थी 'यदि इसी तरह लड़कियों के प्रति समाज का नजरिया रहा और लड़कों की चाह में लडकियां नहीं होती रहीं तो एक दिन ऐसा आयेगा जब लाखों का दहेज वर पक्ष द्वारा वधु पक्ष को देने के बाद भी लड़कियां शादी के लिए नहीं मिल पायेंगी। फिर ऐसा समय भी आयेगा जो अच्छा ज्यादा दहेज दे पायेगा वही लड़का विवाह कर पायेगा। लड़कों के विवाह नहीं होंगे तो बच्चियों के अपहरण, बलात्कार, हत्याओं की घटनाओं में क्या भयंकर वृद्धि नहीं होगी।' बात कड़वी जरूर थी पर सच थी। बड़े लोग कितनी दूर की सोचते थे आज यही सब कुछ तो हो रहा है।

**1/240 विद्यापीठ मार्ग विकास नगर, देहरादून
मो.न. 0 9412 931781**

लंबी कहानी

मिलन

◆ कृष्ण चंद्र महादेविया

(गतांक से आगे)

प्रीति तेज-तेज कदम रखते बिना इधर-उधर देखे बाहर निकल गई। बाहर परिसर में उसका इन्तजार कर रहे कुछ छात्र-छात्राओं को उसने टाल दिया और बनावटी मुस्कान बिखेरते मस्तमार्ग की ओर तेज-तेज चल पड़ी जैसे कुछ हुआ ही न हो। किन्तु विजय प्रताप सिंह के कहे शब्द एक बार उसके कानों से जैसे पुनः टकरा गये थे।

शालु बैंच पर से खड़ी हो गई थी। अब वह प्रीति के साथ नहीं गई। बल्कि वह अब प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह का इन्तजार करने लगी। वह पक्के तौर पर प्रीति के बदले माफी मांगना चाहती थी। उसके कान प्रिंसिपल और उनकी बातों पर लगे थे।

''मैडम माथुर, आपसे इतना जरूर कहना चाहूंगा कि निर्णय देने से पूर्व बात की तह तक जरूर जाना चाहिए।'' गम्भीरता से प्रोफैसर बोले। बाहर की ओर जाते दरवाजे पर रुकते हुए वह पुनः प्रिंसिपल से बोले- मैडम, मुझे पता चल गया है प्रीति शहर की अमीरजादी सुधा गुप्ता की बेटी है। प्रीति,. .... मेरी अपनी बेटी है मैडम माथुर। यदि मैं उसका बाप न भी होता तो भी बच्चों के सिर पर हाथ रखने और मुस्कराने का अधिकार नहीं छीनना चाहिए।'' विजय प्रताप सिंह मुड़े और तेज कदमों से निकल गए। प्रिंसिपल को जैसे काटो तो खून नहीं। वे हक्की-बक्की हो विजय प्रताप सिंह को जाता देखती रह गयी थी। फिर उनका मन मस्तिष्क जैसे सुन्न हो गया था।

बाहर खड़ी शालु को भी जैसे सांप सूंघ गया था। कुछ देर बाद वह जैसे चौंकी फिर बाहर की ओर दौड़ गयी। प्रोफैसर तेज कदमों से मस्तमार्ग की ओर बढ़ रहे थे। उनके हाव भाव, चाल-ढाल उनके भीतर छुपे दर्द और तुफान की ओर इंगित करने लगे थे।

''सर, रुकिए प्लीज।'' पीछे से शालु ने पुकारा तो विजय प्रताप सिंह ने मुड़कर देखा। शालु दौड़ती आ रही थी। उन्होंने पूरे प्रयत्न से अपने भीतर के दर्द पर काबू पाकर सहज होने का प्रयत्न किया। वैसे तुफान उनके भीतर था वह बाहर नहीं निकला था। वह सहज हो ही नहीं पा रहे थे। मूसलाधार वर्षा तुफान के बाद शांति छा जाती है किन्तु यहां विजय प्रताप सिंह के भीतर हाहाकार मचा था।

''शालु रानी, आज फिर छूट गयी अकेली?'' अत्यंत स्नेह से प्रोफैसर बोले। उन्होंने सहज होने और दिखने की पूरी कोशिश की थी।

''जी सर।'' अपने दुःख को दबाते शालु धीरे से बोली।

वह अपने कदम प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह के समकक्ष लाते चलने लगी थी। वह समझ नहीं पा रही थी कि किस तरह बात बढ़ाए वैसे शालु का साथ चलना प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह में शांति पैदा करने लगा था।

''शालु बेटे, प्रीति तो बड़ी अच्छी फाइटर है। हां, तुम्हारी सखी जो है न ?''

''हां सर, अभिनय भी तो बहुत बढ़िया करती है। तीन दिन बाद ही तो उसका नाटक होने वाला है। सर, आप नहीं देखेंगे?''

''तीन दिन बाद?....... काश ! मैं देख पाता।'' ठण्डे स्वर में प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह बोले। उनके चेहरे पर उदासी रेंग गई थी। जिसे उन्होंने शालु से जरूर छुपाने की कोशिश की थी। किन्तु स्वर से टपकती उदासी शालु ने भांप ली थी।

''सर, प्रीति की ओर से मैं माफी मांगती हूं। प्लीज सर, कुछ भी मन में मत रखें। आज घर लौटेंगे न मेरे साथ..... प्लीज। मैंने प्रिंसिपल से आपकी बातें सुनी हैं सर।'' शालु ने बहुत करुण स्वर में कहा तो प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह रुक से गए। शालु की आंखों में अपार स्नेह और करुणा देखकर उनका मन भर आया। उनके भीतर भरा स्नेह का घड़ा उलट गया। प्यार से निहारते धीरे से बोले- ''शालु तुम्हें सब पता चल ही गया है तो सुनो बेटे। प्रीति को पहली बार जब मस्त मार्ग पर देखा था तो पता नहीं क्यों मुझे लगा था कि मेरी बेटी भी आज ऐसी ही होगी। दूसरी बार फिर उसे गौर से देखा तो उसकी आंखें, पलकों पर तिल मेरे जैसे ही हैं और दांत भी मेरी तरह ही। मैं अपने बारे में उसे बता सकता था किन्तु यह उचित अवसर नहीं था शालु बेटे..... हां जो घर अब छोड़ दिया है अब वहां नहीं जा पाऊंगा। अब मुझे जल्दी ही यहां से लौट जाना होगा, यहां से दूर राज्य के दूसरे कोने में।''

''ऐसा मत करें सर, आप नहीं जानते प्रीति कितना याद करती है आपको। वह दिल की बहुत अच्छी है सर, गलती से ही वह ऐसा व्यवहार कर बैठी है। जब उसे पता चलेगा कि आप उसके पापा हैं वह पागलों की तरह दौड़ी चली आएगी। यदि आप चले गए तो वह अपनी जान दे देगी सर। मैं उसे जानती हूं। वह मर जाएगी। प्लीज मत जाना सर, प्लीज।'' प्यार और बहुत आदर से शालु बोली। उसकी आंखें भर आई थी। फिर वह रो पड़ी।

आज मस्त मार्ग भी कुछ उदास-उदास था। पेड़-लताएं भी उदास थी। हवा जैसे कुछ सिसकने लगी थी। शहर की सीमा आरम्भ हो गई थी शालु ने बहुत स्नेह और आदर भरे स्वर में कहा-

''सर, प्लीज लौट आइए न। प्रीति आपको देखकर बहुत खुश होगी। आंटी जी भी कितना खुश होंगी।''

प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह ने कोई उत्तर नहीं दिया। अपनी राह बढ़ते धीरे से बोले- ''शालु बेटा, प्रीति और सुधा को मत कहना कि मैं इसी शहर में हूं। जब चला जाऊंगा उस समय चाहे बता देना। हां, उनसे मैं बहुत दूर जरूर रहा हूं, पर उनके लिए तड़पा बहुत हूं। शालु बेटे कौन ऐसा पिता होगा जो इक्कीस वर्ष से बिछुड़ी बेटी के लिए तड़पता न हो? अपने जीवन साथी की याद न करता हो?....अच्छा बेटे शालु।'' तेज तेज कदमों से विजय प्रताप सिंह एक ओर बढ़ गए।

शालु काफी देर वहां खड़े उन्हें जाता देखती रही। उसकी आंखें भर आई फिर टप-टप आंसू बह चले। उसने महसूस किया कि सर की आंखें भी बरस रही थी तभी वे रुके न थे।

शालु ने घर पहुंचते ही अपने रूम में पुस्तकें रखी और रसोई घर में काम कर रही अपनी ममा के पास जाकर प्रीति के घर जाने की इजाजत ले कर तेज-तेज चली गयी। उसकी ममा उसे दूध और फल लेने को कहती ही रह गई थी।

प्रीति सोफे पर लेटे-लेटे नाटक के अपने डायलॉग याद कर रही थी। पात्रानुकूल संवादों के बोलने के ढंग पर दरवाजे पर खड़ी उदास शालु भी एक पल को मुस्करा दी थी। कुछ देर बाद सोफे से उठकर वह अभिनय करती संवाद बोलने लगी। अभिनय कला में कलाकार को कैसे डूब जाना होता है इस वक्त कोई प्रीति से सीखता। हाव-भाव, स्वर, शब्दों का इस्तेमाल सब उम्दा था। एकाएक उसकी नजर शालु पर पड़ी तो नाटक की प्रतिलिपि मेज पर रखी और शालु की ओर लपकी। उसका हाथ पकड़ कर कमरे में लाते हुए बोली-

''मेरी शल्लो रानी, कहां रह गई थी?..... अब ये मुंह क्यों लटकाया है। क्या आज फिर कोई बदमाश मिल गए थे ?''

शालु केवल गौर से प्रीति का मुखड़ा देखती रही। ओजस्वी चेहरे और साफ-सुथरे दिल की प्रीति आज इतनी संकीर्ण कैसे हो गई जरूर इसे प्रोफैसर साहब के प्रति गलत फहमी हो गई थी।

''क्या बात है शालु? आंखें फाड़-फाड़ क्या देख रही हो?.... क्या मेरा चेहरा ही बदल गया है?......यदि किसी ने छेड़ा है तो बता, अब नानी याद करा दूंगी। इन सड़क छाप मजनुओं को सैट करना ही होगा।'' कठोर स्वर में प्रीति बोली और शालु को खींच कर सोफे पर ले आई।

''बोल क्या खाएगी। क्या मंगाऊं तुझे? अच्छा चम्पा से कॉफी मंगवाती हूं।'' प्रीति आवाज देने को हुई तो शालु ने रोक दिया।

''नहीं प्रीति, इच्छा नहीं है। तू बैठ कुछ बातें कर लौट जाऊंगी।''

शालु के उदासी भरे स्वर और झुकी गर्दन पर प्रीति चौंकी। कुछ देर उसे देखते रहने के बाद उसकी ठोडी ऊपर उठाई।

''शालु, बोल क्या बात है। यदि उस पाण्डे के बच्चे ने तुझे छेड़ा है तो तेरी कसम बीच शहर में उसकी टांगें न तोड़ डाली तो तुम्हारी दोस्त नहीं।''

अपने प्रति प्यार और सहानुभूति पाते ही उदास और दुःखी शालु के आंसू निकल गए। प्रीति उसे झटपट अपने गले लगाती बोल पड़ी- ''क्या बात है? सच बता नहीं तो मैं भी रो दूंगी।'' प्रीति ने अपने ओंठों से उसके गाल छू लिए। फिर उसके आंसू पोंछ लिए। कुछ देर चुप रहने के बाद शालु बोली-

''प्रीति, सच बताना, क्या प्रोफैसर साहब ने तेरे कंधे दबाए थे?''

''धत् तेरे की। अभी तक तुम उस घटना पर सोच रही हो?.....वही बात हुई न कि खोदा पहाड़ निकली चुहिया।'' शालु का नाक पकड़ते प्रीति बोली।

''प्लीज प्रीति, आए एम सीरियस, जो मैंने पूछा वही बताओ। नहीं तो मैं रूठ कर चली जाऊंगी। हो सकता है फिर मैं कभी न आऊं।'' गम्भीरता और उदासी से शालु ने कहा।

जरूर दाल में कुछ काला है, प्रीति सोच गई। शालु के स्वर-शब्द समझते और उसका चेहरा गौर से देखते, कुछ याद करते से प्रीति ने कहा- ''शालु, शायद नहीं। कंधे पकड़ना और धक्का खाकर कंधों का सहारा लेना अलग बातें हैं। जानबूझ कर शायद उन्होंने नहीं पकड़ा था। शायद उनके मुस्कराने से नाराजगी और लड़कों के उकसाने पर ही उनकी शिकायत कर बैठी हूं। शालु..... अब मैं ऐसा सोचने लगी हूं। पर उनका मुस्कराना मुझे अच्छा नहीं लगता। उनका ही नहीं मुझे किसी भी पराए व्यक्ति का इस तरह लड़की को देखकर मुस्कराना अच्छा नहीं लगता यार।''

''थैंक्स गोड, प्रोफैसर साहब गलत नहीं हैं। वे गलत हो ही नहीं सकते।'' एक बारगी शालु खुशी से उछल पड़ी। बादलों से झांकते चांद की तरह शालु का उदास चेहरा मुस्कराया था।

''प्रीति बता तो, क्या तुम्हें उनकी मुस्कान में छिछलापन नजर आया है?''

''शायद नहीं, ऐसा तो कुछ भी नहीं शालु।''

शालु की खुशी पर खुश होते प्रीति ने कहा जरूर किन्तु वह उसकी खुशी और शब्दों का अर्थ भी वह समझने का प्रयत्न करने लगी थी।

''तुम शायद उनकी आंखों में बहता स्नेह नहीं देख पाई''

''हां शायद, ऐसा हो भी सकता है। कुछ सोचते प्रीति ने धीरे से कहा।

''तो फिर प्रोफैसर साहब से तुम्हारी नाराजगी क्यों?''

''शालु तुम्हें क्या हो गया है जो मुझसे नाराज दिखती हो और प्रोफैसर साहब का कुछ अधिक पक्ष ले रही हो?''

''प्रीति, क्या तुमने प्रोफैसर साहब के दांत और अपने दांत देखे हैं? अपनी पलकों के ऊपर तिल और प्रोफैसर साहब की पलकों के ऊपर तिल का निशान देखा है?'' धड़कते दिल से किन्तु खुश हुए जल्दी-जल्दी शालु ने बहुत प्यार से कहा।

''मैं समझ नहीं रही हूं, प्रोफैसर साहब पर तुम इतना मेहरबान क्यों हो? फिर मैंने कहां अपने चेहरे से तुम्हारे प्रोफैसर साहब के चेहरे का मिलान किया है?'' थोड़ी नाराजगी से प्रीति बोली।

''मेरे प्रोफैसर....... । प्रीति किसी व्यक्ति पर एकदम गलत राय नहीं बना लेनी चाहिए। कई बार उसका परिणाम बाद में रूलाता भी है।'' दूसरी ओर मुंह फेरते शालु बोली। वह कुछ गलत न समझ ले उसने एक आह भरी और उदास हो गई।

प्रीति ने उसकी उदासी भांप कर उससे चुभने वाली बातें कहना अच्छा न समझा। फिर शालु कभी फिजूल की बातें करने वाली युवती भी न थी। वह प्रायः उच्च विचारों भरी और शिक्षा-संघर्ष की ही बातें करती है, उसका माथा ठनका था। जरूर इसकी बातों में कुछ राज छुपा है। शालु एक एक कर हर बात समझ-बूझने पर ही उससे कुछ पूछती है। प्रीति झट सोच गई थी।

''मेरी शालु डार्लिंग, तुम पहेलियां न बुझाओ। तुम जो भी कहना चाहती हो सीधे-सीधे कहो न, प्लीज।'' शालु का चेहरा अपनी ओर फेरते प्रीति ने बहुत लाड़ से कहा। फिर उसकी नाक पकड़ते उसकी आंखों में अपनी आंख डाल ली। शालु की भर आई आंखों और चुप देखकर अपनी बाहें उसके गले में डाल ली। जब शालु फिर काफी देर तक चुप रही तो प्रीति ने ढेर सारा प्यार उंडेलते कहा-

''प्लीज मेरी शालु बहिना बताओ न ?''

''प्रीति, तुम चाहे विश्वास न करो पर सब कहूंगी। पर प्लीज तुम्हें मेरी कसम उसके बाद मुझे जाने देना। कुछ भी और मत पूछना।'' शालु ने प्रीति के आग्रह पर उसके कंधे और गालों को स्पर्श करते कहा। उसकी आंखें पूर्ववत आर्द्र थी।

''प्रोमिज, मैं तुमसे उसके बाद आज कुछ न पूछूंगी। बस जो तुम कहोगी उसे ही सुनूंगी। पर सच ही सुनाना।''

''प्रीति,......प्रीति, प्रोफैसर साहब ही तुम्हारे पापा हैं।''

''क... क्या !....... तुम सच बोल रही हो न?'' हैरानी और खुशी से प्रीति बोल उठी और शालु को पकड़ लिया। उसके सारे शरीर में मीठी कंपकंपी रेंगने लगी।

''हां ऽऽ, प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह। मैं बिल्कुल सच बोल रही हूं। अब कुछ न पूछना, मैं जा रही हूं।' उठते हुए शालु बोली वह वहां ठहरेगी तो जोर-जोर से रो पड़ेगी।

''शालु प्लीज, कहो न कहां है पापा ?... कहां है पापा ?...... प्लीज।'' वह रूआंसी हो गई थी।

''अपना प्रोमिज याद करो, मुझे जाना है।'' शालु कहते ही दौड़ गई किन्तु उसकी रूलाई फूट पड़ी वह रोते-रोते दौड़ गई थी। यही तो दोस्ती की भी पहचान होती है। शायद अब प्रीति भी पापा-पापा कहते जोर-जोर से रो पड़ी।

प्रीति पागल सी हो उठी थी। रो-रो कर उसका बुरा हाल था। उसे रह रह कर प्रोफैसर साहब के शब्द याद आ रहे थे। कभी सड़क पर उसे मुस्कराते देखना, अब उसे उनका प्यार से देखना लगने लगा था। उसके दृश्य पटल पर स्नेहिल मुस्कराहटें आने जाने लगी थी। अपने व्यवहार पर उसे ग्लानि होने लगी थी। वर्षों बाद पापा से मिली भी तो निपट मूर्ख की तरह। अपने किए व्यवहार पर वह एक बार तो आत्महत्या करने की सोचने लगी थी। फिर दूसरे ही क्षण सोच गई कि मरने की बात तो कायर सोचते हैं। यदि वह मर गई तो पापा से कैसे मिलेगी। अब वह जल्दी से जल्दी पापा से मिलना चाहती थी। उसे यह भी पता नहीं चला कि उसकी मम्मी कब आई थी। अब तो वह और भी जोर से दहाड़े मार कर रोने लगी। फिर अपनी मम्मी की गोदी में सिर रखकर बस रोती ही रही। रोते-रोते उसने सारी बातें अपनी मम्मी को बता दी। उसकी मम्मी सुधा गुप्ता ने उसे प्यार से समझाया-बुझाया। उसने हर हालत में उसके पापा को घर लाने का वचन दिया। फिर कहीं

जा कर धीरे-धीरे प्रीति की रूलाई रुकी थी। किन्तु बहुत देर तक उसकी हिचकियां निकलती रही थी। मां व नौकरानी के कहने पर भी प्रीति ने खाना नहीं खाया था और औंधे मुंह बिस्तर पर पड़ गयी थी। प्रीति की ममा सुधा गुप्ता ने प्रीति के सिर पर हाथ फेरा और उसके पापा को लौटा लाने के लिए एक बार फिर कहकर उसे साहस बंधाया था। कुछ देर तक उसके पास बैठी रहकर उसे चादर ओढ़ा कर अपने रूम में चली आई थी।

सुधा गुप्ता ने भी आज भोजन नहीं किया था। बिस्तर में तकिए को सिराहने रख कर वह लेट सी गई। अनायास ही उसके आंसू अब टप-टप कर तकिया भिगोने लगे थे। कॉलेज में विजय प्रताप सिंह के साथ बिताए प्यार भरे लम्हें एक-एक उसके सामने फिल्म की तरह आते गए। शादी के बाद घर में साथ-साथ बिताए दिनों में सुधा गुप्ता अब पूरी तरह खो गई थी।

मस्तमार्ग, कॉलेज और शहर में ढूंढने के बाद भी प्रीति को प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह नहीं मिले। अब उसकी हालत बिगड़ गयी थी। अपने को अपराधी मान कर वह जोर-जोर रो पड़ती थी। शालु ही उसे धैर्य बंधाती और शांत करती थी। दूसरे दिन भी उसने कॉलेज और शहर की खूब खाक छानी किन्तु आज प्रोफैसर साहब नहीं मिले। फिर तो प्रीति सीधे प्रिंसिपल के पास चली गयी। उसने अपनी भूल और गलती की सभी बातें उन्हें बता दी। उसने रोते-रोते कल के नाटक में भाग लेने को भी मना कर दिया। प्रिंसिपल मैडम माथुर ने बड़े स्नेह और गौर से प्रीति की सारी बातें सुनी थी। उसने बहुत प्यार से उसे सांत्वना भरे स्वर में कहा-

''प्रीति बेटे, गलतियां सभी से हो जाती हैं। मैं प्रोफैसर साहब को लौटा लाने का पूरा प्रयत्न करूंगी। बेटे, हो सकता है विजय प्रताप सिंह तुम्हारा नाटक देखने जरूर आएंगे। इसलिए तुम नाटक में जरूर भाग लो।''

प्रीति में आशा सी जगी किन्तु उसकी हिचकियां बन्ध गई थी। प्रिंसिपल ने प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह को रोकने और मिलाने का पूरा आश्वासन देकर नाटक में भाग लेने को मना ही लिया था। प्रीति शालु के संग विश्वास और आशा के साथ घर लौट गयी थी। उसे लगने लगा था कि शायद उसके पापा उसका नाटक देखने आएं। तब वह उन्हें कहीं जाने ही नहीं देंगी।

इन्डोर स्टेडियम छात्र-छात्राओं से भर गया था। मुख्यातिथि का इन्तजार होने लगा था। सभी कलाकार थियेटर के कक्ष में नाटक की तैयारी में व्यस्त थे। प्रीति अब भी उदास थी, वह कभी-कभी बाहर की ओर देखकर अपने पापा को आशा भरी नजरों से ढूंढ लेती थी। प्रिंसिपल ने सभी प्रोफैसरज को उनके कार्य समझा दिए थे। जैसे ही मैडम माथुर प्रोफैसर इंद्र कनैत के साथ बाहर आने को हुई तो फोन की घण्टी बज उठी।

''हलो, प्रिंसिपल माथुर दिस साइड।''

''आए एम सुधा गुप्ता हियर।''

''जी मैम कहिए, कैसे याद किया ?''

''प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह कहां हैं ?''

''दो दिन की छुट्टी पर थे, अभी तक तो नहीं आए। शायद अपनी ट्रांस्फर के चक्कर में....... ।''

''........ यदि विजय प्रताप सिंह यहां से चले गए तो यू शुड बी रिम्मेबरड, यू विल नो मोर हियर।'' सुधा गुप्ता ने दांत पीसते कहा था। फोन का रिसिवर ठक की आवाज से रखा गया था। मैडम माथुर के चेहरे में कई रंग आए और कई गए। उन्होंने फोन रख दिया।वह विजय प्रताप सिंह के विषय में सोचने को मजबूर हो गई थी। एकाएक तभी घण्टी पुनः बजी। मैडम ने फोन उठाया तो फोन पर विजय प्रताप सिंह थे। अंधे को क्या चाहिए दो आंखें। मैडम माथुर ने तुरन्त उनका ठोर-ठिकाना पूछ लिया। प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह ने जब छुट्टी बढ़ाने की बात कही तो मैडम माथुर की छठी इन्द्री ने तुरन्त काम किया।

''प्रोफैसर साहब, प्लीज आप शीघ्र कॉलेज पहुंचो प्रीति की हालत ठीक नहीं है। प्लीज रीच सून। प्लीज।''

मैडम माथुर ने झट चोंगा रख लिया। उनका मारा तीर ठीक निशाने पर लगा था। बेटी के लिए तड़पते विजय प्रताप सिंह ने तुरन्त कॉलेज की ओर टैक्सी पकड़ ली थी।

इंडोर स्टेडियम में अभिनय थियेटर के सामने प्रमुख व्यक्तित्व सोफों पर विराजमान हो गए थे। शहर के महापौर मनोज पांडे मुख्य मेहमान थे। थियेटर में कार्यक्रम शुरू हो गया था। मुख्य अतिथि द्वारा दीप प्रज्वलन के उपरांत सरस्वती वन्दना की प्रस्तुति हुई। संगीत के कार्यक्रम ने तो सभी का मन मोह डाला था। काफी देर तक तालियां गूंजती रही थी। सितार तबला, सांरगी-तबला बादन पर तो पूरा स्टेडियम गूंज गया था।

संगीत के बाद प्रारम्भ हुआ नाटक मिलन। मंच संचालिका छात्रा शालु द्वारा जैसे ही नाटक का नाम अनाऊंस हुआ वैसे ही जोरदार तालियों से स्टेडियम गूंज उठा।

विजय प्रताप सिंह टैक्सी से उतरे, टैक्सी का भाड़ा चुका कर सीधे प्रिंसिपल के ऑफिस की ओर तेजी से लपके किन्तु वहां चौकीदार से सारी सूचना पाकर स्टेडियम की ओर दौड़ते से निकल गए।

नाटक प्रारम्भ हो चुका था। निर्धन युवक और युवती के प्रणय और प्रेम विवाह पर आधारित नाटक मिलन का कथानक, पात्रानुकूल संवाद कालक्रम की सुधड़ता और भाषा शैली सब बहुत सुन्दर थे। प्रेमी-प्रमिका, मां-पिता, दोस्त, बेटी, सखी सभी का अभिनय छात्र-छात्राएं बहुत सुन्दर ढंग से अभिनीत कर रहे थे। पूरा आंतरिक स्टेडियम तालियों और वाह-वाह! से गूंज उठता था।

विजय प्रताप सिंह दरवाजे के पास से खड़े-खड़े नाटक देखने लगे थे। हां वे नाटक के संवादों पर थोड़ा चौंक जरूर जाते थे। नाटक का तीसरा अंतिम प्रभाग शुरू हो गया था। बेटी की भूमिका

विजय प्रताप सिंह अभिनय करती प्रीति पर नजरें स्थिर किए थे। उनका ध्यान बस उसी ओर था। फिर कौन पिता होगा जो वर्षों बाद मिली बेटी से नजरें हटा पाएगा? प्रीति की नजरें उनसे मिली। वह आदर-स्नेह करुणा और पश्चाताप से देख गई थी। इस वक्त विजय प्रताप सिंह अपनी सारी पीड़ा भूल गए थे। बेटी के उत्कृष्ट अभिनय पर उनका सीना फूलने लगा था। फिर प्रीति धीरे-धीरे अपने पात्र में डूब सी गई ममा-पापा के कल्ह के बीच पिसती बेटी और पिता के स्नेह से वंचित बेटी के सशक्त और उत्कृष्ट अभिनय पर स्टेडियम में तालियां थमने का नाम नहीं लेती थी। अधिकांश दर्शक छात्र-छात्राएं अपने आंसू रोक नहीं पाते थे।

में प्रीति के कारुणिक स्वर और पात्र के अनुकूल कथोपकथन को सुनकर प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह अपने को रोक नहीं पाए और दरवाजे से सीधे स्टेडियम में घुस गए। प्रीति की निगाहें उन पर पड़ी तो वह दोगुने उत्साह से अभिनय करने लगी। प्रथम पंक्ति में खाली सीट पर जाते अनेक छात्र-छात्राओं की दृष्टि प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह पर पड़ गई थी। उनके कंधे पर आज बैग नहीं था। छात्र-छात्राएं फिर नाटक में तल्लीन हो गए थे।

विजय प्रताप सिंह अभिनय करती प्रीति पर नजरें स्थिर किए थे। उनका ध्यान बस उसी ओर था। फिर कौन पिता होगा जो वर्षों बाद मिली बेटी से नजरें हटा पाएगा? प्रीति की नजरें उनसे मिली। वह आदर-स्नेह करुणा और पश्चाताप से देख गई थी। इस वक्त विजय प्रताप सिंह अपनी सारी पीड़ा भूल गए थे। बेटी के उत्कृष्ट अभिनय पर उनका सीना फूलने लगा था। फिर प्रीति धीरे-धीरे अपने पात्र में डूब सी गई ममा-पापा के कल्ह के बीच पीसती बेटी और पिता के स्नेह से वंचित बेटी के सशक्त और उत्कृष्ट अभिनय पर स्टेडियम में तालियां थमने का नाम नहीं लेती थी। अधिकांश दर्शक छात्र-छात्राएं अपने आंसू रोक नहीं पाते थे। अनायास ही विजय प्रताप सिंह की आंखें भी भर आई। स्टेडियम में केवल संवाद गूंज रहे थे, माहौल एकदम शांत था। सभी मंच पर के अभिनय संवादों के आकर्षण, कारूणिक संगीत पर जैसे सम्मोहित से हो गए थे। अभिनय में पूरी तरह डूबी प्रीति मां बनी छात्रा से अकस्मात ही कह उठी-

''ममा, आपके लिए पापा विजय प्रताप सिंह होंगे, किन्तु मेरे लिए तो बस पापा हैं। ममा जी, मुझे उनकी जरूरत है। ममा, मुझे पापा की बहुत जरूरत है। प्लीज ममा, मुझे पापा ला दीजिए। ममा प्लीज''

मां का अभिनय कर रही छात्रा तो हैरान हुई साथ में मुख्य मेहमान सहित पूरा स्टेडियम आश्चर्यचकित रह गया था। स्टेज पर पिता बना छात्र घर छोड़ कर चला जाता है। विजय प्रताप सिंह ने अपनी आंखें रूमाल से साफ की और अवसर पाकर सीट से उठ कर चल पड़े। नाटक समाप्त ही था।

प्रीति की निगाह स्टेडियम से जाते विजय प्रताप सिंह पर पड़ी। "पापा ऽऽऽ। पापा ऽऽऽ। पापा ऽऽऽ।'' उसकी आवाज माइक पर गूंजी। वह जोर से रो पड़ी। प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह के पांव रुक गए। स्टेडियम में बड़बड़ाहट रेंग गई। शालू ने तुरंत अपने प्रभावशाली स्वर में सभी से शांत रहने की अपील की और संगीत के साथ नाटी होने की सूचना भी दी। शालु ने विजय प्रताप सिंह से निवेदन किया कि वे प्लीज न जाएं, उनसे बहुत से लोग मिलने को उत्सुक हैं। विजय प्रताप सिंह पुनः खाली स्थान पर लौट आए।

मुख्य अतिथि मनोज पाण्डे से रहा नहीं गया। उन्होंने आव देखा ना ताव तुरन्त स्टेज पर आ गए। कॉलेज का समस्त स्टॉफ और समस्त छात्र-छात्राएं असमंजस में पड़ गए थे। मुख्य अतिथि के स्वयं ही मंच पर चले जाने से कुछ देर को तो हड़कंप-सा मच गया किन्तु महापौर मनोज पाण्डे ने माऊथ पीस पकड़ कर अत्यंत प्रभावशाली स्वर में बोलने लगे तो पूरा स्टेडियम एकबार फिर खामोश हो गया। प्रीति के सिर पर हाथ फेरकर पास के सोफे पर मंच संचालिका शालु को उसे बिठाने का संकेत किया। यद्यपि मंच के मध्य भाग पर अनेक सोफा सैट तुरन्त लगा दिए गये।

''मेरे नौजवान साथियों और कॉलेज स्टाफ पहले तो मैं आप सभी का शुक्रगुजार हूं कि मुझे मुख्य मेहमान के रूप में बुलाकर मेरा मान बढ़ाया है। मुझे खुद मेरा बाइस वर्ष पूर्व का छात्र जीवन याद आ गया है और याद आ गए वे मेरे यार-दोस्त और प्राध्यापक भी। किन्तु मेरे बीते दिन अब नहीं लौटेंगे। आज आपके संगीत, गीत नाटक कार्यक्रमों की प्रस्तुती पत्थरों को भी पिघलाने में समर्थ रही है। प्रीति बेटी जैसी बेहतरीन अभिनय कुशल, कराटेबाज और पढ़ाई में अव्वल बेटी पर पूरा कॉलेज-यूनिवर्सिटी तो गौरव अनुभव करेगी ही किन्तु मैं तो अभिभूत हूं। शबाश प्रीति बेटे।

मैं अब नाटक मिलन के लेखक को मंच पर बुलाऊंगा मुझे उम्मीद है इक्कीस वर्ष बाद इस शहर में आया वह मेरा यार, मेरा आग्रह नहीं ठुकराएगा। प्रीति को मैं उपहार देना चाहता था किन्तु अब बेशकीमती उपहार प्रीति स्वयं ही पाएंगी।''

मनोज पाण्डे कुछ क्षण को चुप हुए तो एक बड़बड़ाहट स्टेडियम में फिर रेंग गई सभी इधर-उधर लेखक को देखने लगे किन्तु सभी अपरिचित ही रहे। प्रीति की निगाहें अपने पापा से इधर-उधर न जाती थी। शालु प्रीति और प्रोफैसर साहब के चेहरों को गौर से देख लेती थी।

''नौजवान दोस्तो, मिलन नाटक के वह लेखक हैं प्रीति के पापा और मेरा दोस्त प्रोफैसर विजय प्रताप सिंह। विजय सारी

औपचारिकताएं छोड़ कर मंच पर आ जाओ यार। प्लीज, बहुत हो गया रूठना।''

पूरे स्टेडियम में एक बारगी हलचल मच गयी। सभी हैरान और उत्सुक थे। विजय प्रताप सिंह के खिलाफ हुए छात्र-छात्राएं तो खिसियाने से हो गए थे। सभी विजय प्रताप सिंह की ओर देखने लगे थे। विजय प्रताप सिंह धीरे-धीरे मंच की ओर जाने लगे तो जोर की तालियां गूंज उठी। प्रीति के आंसू झर-झर निकलने लगे। अब शालु के आंसू भी बह चले। वह प्रीति के पास बैठ गयी थी। विजय प्रताप सिंह जैसे ही मंच पर पहुंचे तो मनोज पाण्डे ने उन्हें बाहों में भर लिया। मनोज पाण्डे जिन्दाबाद के नारे भी लगने लगे। तालियां और हूटिंग बस।

मनोज पाण्डे विजय प्रताप सिंह को प्रीति के पास ले गया तो प्रीति जोर से रोते अपने पापा से लिपट गयी। पूरा माहौल गमगीन हो उठा था। विजय प्रताप सिंह की आंखें भर-भर जाती थी किन्तु उन्होंने पलकें झपकाकर आंसू गिरने न दिए। विजय प्रताप सिंह से अब किसी को भी नाराजगी न थी। मंच और स्टेडियम में बैठे समस्त खुशी और उत्सुकता से भरे हुए थे।

मनोज पाण्डे ने फिर कहना शुरू किया-

''दोस्तो, इक्कीस वर्ष बाद पिता-पुत्री का मिलन बहुत सुखद है। अपने बेटे द्वारा एकाएक पढ़ाई और व्यायाम की ओर झुकाव पर मुझे आश्चर्य हुआ तो पूछने पर पता चला कि विजय सच ही इसी शहर में है। उनके द्वारा ही बेटे का हृदय परिवर्तन सम्भव था। साथियों विजय प्रताप सिंह का उपनाम है सूरज चव्हाण। आज का मिलन नाटक इनका ही लिखा है। इसी नाम से कहानियां आप सभी ने पढ़ी होंगी।''

मनोज पाण्डे चुप हुए तो चारों ओर से स्वर गूंजे। हां-हां हम इन्हें पढ़ते हैं। तालियां फिर गूंज उठी। मनोज पाण्डे ने फिर माइक पकड़ा- साथियों, मिलन भवन के निर्माण के लिए ग्यारह लाख रुपये, आज के कार्यक्रम में प्रतिभागी छात्र-छात्राओं को दो लाख रुपये इस मंच की आधुनिक साज-सज्जा के लिए पांच लाख रुपये, कराटे ओर जूडो तथा वुशु खेलों के सामान के लिए पांच लाख रुपये प्रदान करता हूं। अपने दोस्त विजय से इक्कीस वर्ष बाद मिलने की खुशी में पूरे कॉलेज को मेरी ओर से लंच। आप लोगों ने मुझे सुना आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। स्टेडियम तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। पत्रकारों के कैमरे थे कि रूकने का नाम ही नहीं लेते थे। स्थानीय चैनलों के फोटोग्राफर विभिन्न कोणों से शूट कर रहे थे। मंच संचालिका शालु के अनुरोध पर नाटी की जगह दो गज़ले प्रस्तुत हुई। कॉलेज की ओर से जलपान के उपरांत विजय प्रताप सिंह प्रीति और शालु को मनोज पाण्डे अपनी गाड़ी में अपने घर ले गए।

कुदरत और उत्तम वास्तु-शिल्प का ध्यान रखते हुए मनोज पांडे के खूबसूरत मकान की आन्तरिक और बाह्य साज-सज्जा भी सलीके से की गई थी। खानदानी रईस होने के बावजूद भी कहीं पर भी कोई बनावटीपन न था। वे उनके बड़े से किन्तु खूबसूरती से सजे हॉल में बैठ चुके थे।

युद्धवीर पाण्डे अपनी माता का हाथ बंटाते हुए फल और मिठाइयां मेज पर सजाने लगा था। नौकरों को उन्होंने आज बाहर के काम में भेज दिया था। शालु और प्रीति युद्धवीर पाण्डे को काम करते देखे जा रही थीं। उसने भी उन्हें एक-दो बार कनखियों से देख लिया था। सभी साथ-साथ फल लेने के बाद कॉफी पीने लगे थे। विजय प्रताप सिंह और मनोज पांडे तो पुरानी यादों में खो जाते और बीच-बीच में ठहाका मार कर हंस पड़ते थे। प्रीति भी सारा दुःख भूल गई थी। उसे अपने पापा से ढेरों बातें करने का मन होता था पर वह दो दोस्तों के बीच अवरोध नहीं बनना चाहती थी। विजय प्रताप सिंह शायद प्रीति के मन को समझ गए थे। वह भी बेटी से ढेर सारी बातें करना चाहते थे। यहां बैठे खाते-पीते और बातें करते तीन घण्टे कब बीत गए उन्हें पता ही न चला था। दीवार घड़ी ने चार बजे की सूचना दी तो विजय प्रताप सिंह ने मनोज पाण्डे और उनकी पत्नी से विदा ली। उनके आग्रह पर फिर आने को कह कर शालु और प्रीति के साथ लौट चले थे। मनोज पांडे ने अपने बेटे युद्धवीर पांडे को उनके रेजीडेंस तक छोड़ने को कहा तो वह उन्हें अब गाड़ी में बिठा कर ले चला था।

युद्धवीर पाण्डे ने दो मंजिली इमारत के सामने तीनों को उतारा, विजय प्रताप सिंह को नमस्कार और शालु तथा प्रीति को हलो कहकर वह लौट गया था। वैसे विजय प्रताप सिंह ने उसे कुछ देर बैठ लेने का आग्रह किया था। बहुत आदर और शालीनता से युद्धवीर पाण्डे ने फिर आने को कह कर विदा ली थी।

पेड़ पौधों और फूलों से घिरी सुन्दर सी इमारत का नाम रखा था एकांत कुटीर। विजय प्रताप सिंह ने निचली मंजिल का मुख्य द्वार खोला और बड़े प्यार से प्रीति और शालु को भीतर आने का आग्रह किया। खुले-खुले ड्रांइगरूम के साथ तीन कमरे एक ओर आकर्षक बाथरूम-टायलेट और दूसरी ओर कुछ हट कर साफ सुथरा किचन था।

बैठते ही प्रीति ने भरी आंखों से कहा-

''पापा, कई दिनों से आप यहां हैं, किन्तु अपनी बेटी से मिलने तक नहीं आप आए, पत्थर दिल तो आप लगते नहीं पापा !... बच्चों को अपने ममा-पापा की कितनी जरूरत रहती है यह भी आप भूल गए? वर्षों से पापा-पापा पुकारते आपकी याद में सुबकती हूं किन्तु आप..... ।''

वर्षों से प्रीति के भीतर छुपा तुफान आंखों से बरस पड़ा। शालु की आंखें भी भर आई फिर दोनों की हिचकियां निकलने लगी थी। इस बार विजय प्रताप सिंह अपने आंसू रोक नहीं पाए। दोनों के सिर पर हाथ फेरते वह उन्हें भीगी आंखों से सांत्वना दे रहे थे। गमगीन समां धीरे-धीरे शांत हुआ जैसे बरसात में बादल धीरे-धीरे

छंटते हैं। विजय प्रताप सिंह ने बहुत अपनत्व से कहा-

''प्रीति बेटा, सच तो यही है कि जब मुझसे रहा नहीं गया तो मैंने यहीं युनिवर्सिटी के नजदीक कॉलेज में अपनी ट्रांस्फर कराई थी। मुझे विश्वास था कि तुम कहीं न कहीं जरूर मुझे मिल जाओगी।...... बेटा प्रीति, बच्चों से मां बाप और मां बाप से बच्चे कभी दूर नहीं रहने चाहिए। मुझे माफ करना बेटा, मैं सचमुच तुम्हारा अपराधी हूं।''

आज प्रीति का पूरा दर्द आंसुओं के रूप में बह गया था। पिता के प्यार से वंचित वह सब कुछ भूल कर बस पापा के पास रहना चाहती थी। प्रीति उठी और उसने सोफे पर बैठे अपने पापा की गोदी में अपना सिर रख लिया, उसके सिर पर उंगलियां फेरते विजय प्रताप सिंह ने स्नेह से पूछा-

''प्रीति बेटा ?''

''जी पापा।''

''तुम्हारी ममा कैसी है बेटा?... यह तो मैं जानता था कि वह मेरे पाले का प्यार भी तुम्हें पूरे यत्न से देने का प्रयास करेगी।'' प्यार से निहारते और उसका सिर धीरे-धीरे थप-थपाते विजय प्रताप सिंह ने कहा।

''पापा जी, ममा आपको बहुत याद करते हैं। मैंने तो उन्हें कई बार दिन रात चुपके-चुपके रोते भी देखा है।........हमें आपकी बहुत याद आती है पापा। बहुत ऽऽऽ... । इतने वर्ष बीत गए पर आप पत्थर की तरह कठोर बने रहे। क्यों पापा? क्यों?'' प्रीति की आंखें फिर भर आई थी।

यूं भी वर्षों बाद कोई अपना मिलता है तो आंखें अनायास बरस जाती हैं। फिर यहां तो पिता और पुत्री का मिलन था। बेटी जो बचपन से पिता के प्यार को तरसती रही थी। पिता जो बेटी के प्यार के लिए भीतर ही भीतर तड़पता रहा था। जो मजबूर नहीं हैं फिर भी परिस्थितियों के हाथों मजबूर हो जाते हैं। पिता-पुत्री को आज दुनिया भर की खुशी मिल गयी थी किन्तु गिले शिकवे, रूठना-मनाना तो इसी जीवन का हिस्सा है।

''मैं पत्थर की तरह नहीं हूं बेटा। तुम लोगों से दूर इक्कीस वर्ष में कैसे जिया हूं, कैसे बताऊं, हां दिल पर पत्थर रखकर चुपचाप बिछुड़ने का दर्द सहता रहा हूं।'' पुनः उदास होते विजय प्रताप सिंह बोले।

''फिर आप मुझ से मिलने क्यों नहीं आए? मुझे किस जुर्म की सजा दी आपने?'' रूआंसे से प्रीति बोली उसकी आंखें फिर भर आई थी। शालु पिता और पुत्री की बातें चुपचाप भीगी आंखों से देखते सुन रही थी। उसे अपनी सखी को खुल कर खुश होते देखना बहुत ही अच्छा लग रहा था।

''हां बेटा, तुम्हारा बहुत बड़ा गुनहगार हूं। तुम मुझे जो सजा दोगी हंसते हुए सहूंगा। किन्तु पुत्तर, अपने वचनों से बंधा मैं तुम से मिलने को तरसते हुए जीता रहा। जब कभी छोटी-छोटी बच्चियों को गोद में किलकारते देखता, स्कूल जाती बेटियों को देखता तो उन्हें गोद में लेने को मचल जाता था। उस वक्त कल्पना में तुम्हें देख कर हंस जाता था। कई बार तो लोग मुझे पागल भी कह देते थे।...... बेटा प्रीति, सच मानना तुम्हारे लिए मैं दिन-रात बहुत तड़पा हूं।..... जब मुझसे रहा ही नहीं गया तो यहां ट्रांस्फर कराकर आ गया। मुझे विश्वास था कि कहीं न कहीं तुम्हें जरूर देख सकूंगा।'' एक-एक शब्द स्नेह से उंडेलते विजय प्रताप सिंह ने कहा तो प्रीति ने गोदी में सिर रखे अपने पापा का हाथ पक्का पकड़ लिया।

''अब कभी मत जाना पापा, कभी मत जाना आप, आप नहीं जानते बेटियों को पिता की कितनी जरूरत होती है।''

''हां पुत्तर, तुम्हें याद होगा, जब मस्त मार्ग में तुम्हारी एड़ी मुड़ी थी, मैंने पूछा था चोट तो नहीं लगी....... । मुझे उस वक्त लगा था जैसे मेरी बेटी को मोच आ गई है और मैं भीतर ही भीतर तड़प गया था। मुस्कराता जरूर रहा था।''

''आइ एम वैरी सॉरी पापा, रियली वैरी सॉरी। उस वक्त मैं आपको पहचान नहीं पाई थी। यूं भी मुझे कोई मुस्कराते देखता है तो मुझे अच्छा नहीं लगता था। शायद मेरे मन में घर कर गई यह बात सबसे उपेक्षा का कारण बनी रही।..... मुझे पता है पापा, ममा पैसे से प्यार करती थी और बनावटीपन में जीना चाहती थी। दौलत के नशे ने उन्हें घमण्डी और हठी बना दिया था। पर पापा, अब वे वैसी नहीं रह गई हैं।''

शालु से रहा नहीं गया तो वह सगी बेटी की तरह बोल पड़ी- ''हां-हां अंकल जी, अब तो वे बिल्कुल सादा जीवन जीती हैं और श्रेष्ठ विचारों की मालकिन हैं। उन्होंने अनाथ और गरीब बच्चों के लिए विजय प्रताप हाई स्कूल चलाया है। इस स्कूल में बच्चों के रहने से लेकर खाने-पीने-पढ़ने तक का पूर्ण खर्च उनके द्वारा ही वहन किया जाता है। यही नहीं बेसहारा महिलाओं को आत्म निर्भर और स्वाभिमानी बनाने के सुधा-विजय इण्डस्ट्री चलाई हुई है।

विजय प्रताप सिंह दोनों की बातें चुपचाप सुन रहे थे। उन्होंने ठण्डी आज भर कर आंखें बन्द कर ली थी। नासिका और माथे पर उंगली घुमाते विचारों में उलझते चले गए। कुछ देर बाद उन्हें मौन से बाहर न निकलते देख प्रीति बहुत करुणा से बोली- ''पापा ऽऽ। यदि मेरा आना आपको बुरा लगा तो मैं लौट जाती हूं। आपको देख लिया, आपसे मिल ली। आप और ममा दूर-दूर रहेंगे तो मेरा जीवन कोई जीवन है फिर मेरा जीना ही व्यर्थ है पापा।'' प्रीति फिर सुबक पड़ी। शालु की आंखे भी भर आई थी। जब प्रीति विजय प्रताप सिंह की गोदी से सिर उठाने लगी तो उन्होंने प्यार से फिर सुला दिया।

''पगली, तुम्हारा जीवन व्यर्थ नहीं है। तुम तो हमारे जीवन की बहार हो बेटा। फिर तुम तो निडर मां की बेटी हो डरपोक की तरह नहीं सोचते पुत्तर।''

''अंकल जी, आप प्रीति और उसकी ममा को बहुत प्यार करते हैं। क्या अब भी दूर दूर रहना चाहेंगे? लौट आइए न उनके पास, प्लीज।'' शालु ने बहुत अपनत्व से कहा।

''हां यह सच्च है शालु बेटा। आई लव हर वैरी मच इन माई ऑल हटर्स। यदि सुधा से प्यार न करता तो कब का दूसरा घर बसा लिया होता।.... बच्चो, सुधा से मिलने के बाद ही कोई निर्णय हो पाएगा। वह यदि...... ।'' प्रीति को मीठी थपकी देते विजय प्रताप सिंह और कहना चाहते थे कि खटाक से मुख्य दरवाजा खुला और सुधा गुप्ता एक दम से बैठक में पहुंच गई थी। तीनों हैरानी से उसे देखने लगे थे। प्रीति ने अपने पापा की गोदी से सिर उठा कर अपनी ममा से कहना चाहा था कि विजय प्रताप सिंह एकदम से खड़े हो गए।

''सुधा तुम ?''

इक्कीस वर्ष पूर्व की सुधा गुप्ता के रूप-लावण्य में फर्क जरूर आ गया था किन्तु उसके आकर्षण में कोई कमी नहीं आई थी।

''हांऽऽ, मैं आ गई प्रताप। मैंऽऽऽ...... ।'' विजय प्रताप सिंह के पांव की ओर झुकते और अपने आंसुओं पर काबू पाते सुधा गुप्ता ने कहना चाहा था किन्तु उसका गला भर आया था। विजय प्रताप सिंह ने तुरन्त उसे गले लगा लिया। वर्षों बाद मिले पति-पत्नी जार-जार रो पड़े थे। आंसू थे कि रुकने का नाम नहीं लेते थे। दोनों एक दूजे के आंसू पोंछते किन्तु नयन लगातार बरसात में बारिश की तरह बहते रहे। वर्षों बाद जब दो अपने मिलते हैं तो ये आंसू भी मुए छलक-छलक कर गिरते हैं। न चाहते हुए भी पत्थर भी रो पड़ते हैं। किन्तु सुधा और विजय प्रताप सिंह पत्थर दिल न थे। प्रीति और शालु की भी हिचकियां निकलने लगी थी। शायद रामायण में जब भगवान राम और सीता रावण को मारने के बाद जब मिले होंगे तो ऐसा ही दर्द भरा मिलन हुआ होगा। बहुत देर के बाद आंसू-हिचकियां थमी। विजय प्रताप सिंह के हाथों को थामें और आंखों में झांकते सुधा गुप्ता बोली-

''इक्कीस वर्ष तुमसे दूर, जीवन का सफर काटते-काटते थक गई हूं प्रताप।...... प्रताप, मुझे माफ कर दो, मैं जान गई आदमियत से ज्यादा दौलत और प्रतिष्ठा कुछ भी नहीं होती। तुमने ठीक कहा था कि मर्द और औरत केवल कुछ क्षण के साथी नहीं होते बल्कि जीवन भर के साथी होते हैं।.... लौट आओ न उन्हीं पुराने दिनों में। अपनी बेटी के पास, मेरे पास।''

''हां सुधा,..... देखो न हमारी बेटी कितनी बड़ी हो गई है। ......मैं इसे गोद में नहीं उठा पाया हूं। इसकी किलकारियां, ठिठोलियां-रूठना कुछ भी देख नहीं पाया।...... मैं इसका गुनहगार हूं सुधा।..... प्रीति को देखने के लिए रात दिन बहुत तड़पा हूं पर क्या करता .... ।''

''इसकी दोषी मैं भी हूं प्रताप। किन्तु अब आपको जाने नहीं दूंगी।'' विजय प्रताप सिंह की आंखों में डूबते सुधा गुप्ता ने कहा। फिर दोनों एक दूसरे को देखते यंत्र चलित से सोफे पर बैठ गए। प्रीति खड़े होते बनावटी गुस्से से बोली-

''आप दोनों गुनहगार पापा-ममा। इसकी आप लोगों को सजा मिलेगी।''

''मंजूर है बेटा।'' दोनों एक साथ बोल उठे थे। फिर एक दूसरे को निहार कर मुस्करा उठे थे जैसे कॉलेज के दिनों में मुस्कराया करते थे।

''तीन दिन बाद मेरा जन्म दिन है। खूब धूमधाम से मनाना है और सारे मित्र-सम्बन्धी शामिल करने होंगे।''

''ठीक है बेटा।'' इस बार फिर सुधा गुप्ता और विजय प्रताप सिंह एक साथ बोले तो शालु और प्रीति हंस पड़ी फिर सुधा और विजय भी हंस दिए। हंसी के बीच शालु बोल पड़ी-

''किन्तु आंटी जी, आपको यहां का पता कैसे चला?''

''भैया मनोज पाण्डे जी ने पूरी जानकारी फोन पर दे दी थी।''

''लो मैं भी हाजिर हूं भाभीऽऽऽ।'' ठक-ठक कर प्रवेश करते मनोज पाण्डे ने कहा।

''अरे महापौर जी आप?'' सुधा गुप्ता खड़े होते बोली।

"महापौर नहीं भाभी, मनोज पाण्डे। हम तो अपने यार से मिलने आए हैं। इससे बातें करने, दिल नहीं भरा तो दौड़ पड़ा। प्रीति बेटे जाओ कॉफी ढूंढो और बना कर फटाक से ले आओ।'' विजय प्रताप सिंह के पास सोफे पर पसरते मनोज पाण्डे ने अति उत्साह से कहा।

''जी, अंकल जी।... आओ शालु चलते हैं।''

दोनों रसोई में चली गई। उन्हें दूध-चीनी और कॉफी ढूंढने में वक्त नहीं लगा। खुशी से भरी कॉफी बनाने में जुट गई थी।

मनोज पाण्डे विजय प्रताप सिंह और सुधा गुप्ता कॉलेज और युनिवर्सिटी के दिनों की बार्ता में खो गए थे। बीच-बीच में उनके हंसी के ठहाके भी गूंज जाते थे। इस समय प्रीति और शालु भी हंसे बिना नहीं रह पाती थी। वैसे सच यह था कि प्रीति की खुशी की कोई सीमा न थी। शालु ने अपनी सखी प्रीति के चेहरे पर आज वर्षों बाद सच्ची इन्द्र धनुषी चमक देखी थी। उसे हंसते-मुस्कराते देख शालु की आंखें खुशी के मारे भर-भर आती थी। बाहर उमस भरे वातावरण को बारिश की बौछार ने सुहावना बना दिया था। देवदार और बुरांश हवा से गीत सुन कर मस्ती में तालियां पीटने लगे थे। पक्षी चह-चहाकर और बन्दर उछल-कूद कर खुशी ही खुशी दर्शाने लगे थे। एकांत कुटीर में पांच जनों की खुशी अवर्णनीय थी। (

समाप्त)

विकास कार्यालय पधर, मण्डी (हि. प्र.)-175012
मो. 0 86791 56455

अमर बरवाल 'पथिक' की कविताएं/ग़ज़लें

फोर लेन

सुना है कि शहर में
मंत्री जी आ रहे।
फोर लेन के नाम पर
उपलब्धियाँ गिनवा रहे।
हमनें देखा सज रहा
शहर आज सत्कार में
क्या पता कुछ और दे दें
दान वो उपहार में।
वो हवा से आ रहे
क्योंकि सड़कें हैं खुदी।
अनगिनत वृक्षों की लाशें
क्षत-विक्षत सी पड़ीं ।
लोग घर से हो गये बेघर
अब किस से कहें
हम तरक्की कर रहे हैं
इसलिए चुप ही रहें।
धराशाई हो रहे पहाड़
हिम्मत हार कर
बढ़ रहीं आगे मशीनें
छाती पर प्रहार कर।
आएँगे ज्यादा सैलानीं
देखने पहाड़ जब
वाहनों के धुँए से
हो जाएँगे लाचार सब।
विकास के नाम पर हम
बेवजह इठलाएँगे ।
बर्फ को खोजते हम
खुद बर्फ हो जाएँगे।
गाँव की पगडंडियाँ
आती बहुत हैं याद अब
विकास नामक दैत्य ने
छीन ली सौगात सब।

रक्त... यह कहता हर वक्त

रक्त सब बीमारियाँ करता बयां
जिस्म की दुश्वारियां करता बयां।
कौन सा पुर्जा बगावत कर रहा
होंगी क्या लाचारियाँ, करता बयां।

ये दशा बतलाता है बीमार की
ये दिशा दिखलाता है उपचार की।
वक्त रहते ही करता है आगाह
परहेज, आहार और विहार की

खून का कतरा भी है ज्ञानी बड़ा
आजकल लेकिन ये है चिन्तित बड़ा
यह नहीं करता किसी मजहब की बात
प्रार्थना पूजा या इबादत की बात

इसका मकसद बस रगों में दौड़ना
वैमनस्य द्वेष और नफरत की बात।
ये तो बस इतनी सी इल्तिजा करे
जिस्मों से बाहर यह बहने से डरे।

ये बहे तो बस शिराओं में 'पथिक'
प्रेम और सौहार्द की आशा करे।

बेटियाँ

ख्वाबों का झरोखा है
फिर से जीने का मौका है
अनुभव ही अनोखा है....
बेटियाँ ...

दो परिवारों को जोड़े
मिथ्या भ्रम सब तोड़े

मुश्किलें पीछे छोड़े ...
बेटियाँ...

ईद पर या दीवाली पर
अपनों की खुशहाली पर
खिलती डाली-डाली पर...
..बेटियाँ....

कुछ ना किसी से कहती हैं
जाने क्या क्या सहती हैं
भीतर भीतर बहती हैं...
..बेटियाँ...

माँ सी डाँट लगाती हैं
बीवी सा धमकाती हैं
दादी भी बन जाती हैं...
बेटियाँ...

रेशम की इक डोर हैं
फिर भी कब कमजोर हैं
फैविकोल का जोड़ है..
..बेटियाँ....

मालिक का वरदान है
घर परिवार की शान है
रब का 'पथिक' अहसान है...
.. बेटियाँ....

ग़ज़ल

जिन्दगी में जलजला भी चाहिए
चोट लगने की वजह भी चाहिए।

अजनबी से दोस्तों की भीड़ में
यार कोई बेवफा भी चाहिए।

राह सीधी बोरियत का है सबब
टेढ़ा मेढ़ा रास्ता भी चाहिए।

पास रहने में भी हैं दुश्वारियाँ
दरमियाँ कुछ फासला भी चाहिए।

क्यों कुरेदे जा रहे हो चोट को
जख्म कोई दूसरा भी चाहिए।

बातों से तो पेट भरता नहीं
जेब में कुछ रोकड़ा भी चाहिए।

उनकी आँखों के समन्दर में 'पथिक'
डूबने का हौसला भी चाहिए।

ग़ज़ल

धूप आँगन तक उतरती जाए है
वृक्षों की शाखाएँ कटती जाए है।

हम तरक्की के शिखर चढ़ते रहे
ऑक्सीजन कम क्यों पड़ती जाए है।

ठूँठ बन कर वो पड़े औंधे मगर
गट्ठरों के ढेर बढ़ते जाए है।

कल जहाँ पर देवदार थे अनगिनत
सड़क अब उस ओर मुड़ती जाए है।

आ गये वानर सब फिर शहर में
उन की भी आदत बिगड़ती जाए है।

मौसमों की बेवफाई क्या कहें
वो भी हम को आँख ही दिखलाए है।

गाड़ी अपने घर तलक जाए 'पथिक'
चाह हर दिल में उमड़ती जाए है।

उपकरणीय अभियन्ता
डॉ. यशवन्त सिंह परमार वानिकी एवं औद्यानिकी विश्व विद्यालय
नौणी, सोलह हिमाचल प्रदेश
मो. 094184 72685

नोटबंदी : कुछ क्षणिकाएं

◆ रमेश चंद्र शर्मा

(एक)

सुबह सवेरे
अखबार ही पढ़ता रहता हूं
चाय पास ही पड़ी रहती है।
मेरी लेखनी चैन से सोती है
मेरी निगाह खबरों में लीन होती है!
ठंडी चाय बार-बार गरम करते करते
केतली रोती है।
ज़्यादा सुर्खियां नोटबंदी पर
निर्भर हैं
और मेरी प्रेरणाओं को बदलवाने
के लिए पक्षधर हैं।

(दो)

नोटबंदी काले धन के खिलाफ
हल्फनामा है!
भ्रष्टाचार निरोधक दवा है,
सरकार की नीतियों का
अमलीजामा है।

(तीन)

नोटबंदी किसी न किसी तरह
कविता बनती जाती है
देखता हूं, ए.टी.एम. के आगे मोड़
बैंकों में वाद विवाद
एक बुढ़िया, रोज़ यहां आती है
सकुचाती है, चली जाती है।
लोगों को लाईन की लंबाई चौड़ाई
खाताधारियों की बातचीत से
अवगत कराती है।

(चार)

पंक्ति, यानी लाईन
किसी को मारती नहीं
बल्कि बचने बचाने का
प्रयास है
यह वहां खड़े रहने वालों का भी
विश्वास है।

(पांच)

मेरी कविता की नज़रें
नोटबंदी की ख़बरों पर
टिकी रहती हैं।
कविता लिखने से पूर्व
कहानी का प्लॉट बन जाता है
काव्य में अकसर
कहानी का असर भी आता है।

(छह)

नोटबंदी के कारण मज़दूर/शाम
को नकदी की बजाए/चैक पाकर/
रोता है/ हैरान होता है/
रात को अपनी पत्नी को-
इस अपने हाल से-
अवगत कराता है।
रात भर नींद से आंखें चुराता है
सपनों की रोटी
उम्मीदों की दाल खाता है।

(सात)

चाहता हूं अब तो
मेरी कविता
दुःख, शोषण, दुराचार, भ्रष्टाचार
को, जड़ से जुदा कर दे।
दोनों के हो जाएं, दो अलग-अलग हिस्से
ओ मेरे देश के साहस जाग!

रिटायर्ड आई.ए.एस, टकसाल हाउस, छोटा शिमला,
शिमला-171 002, दूरभाष : 0177 2021144

पुस्तक-समीक्षा

कविता के आंतरिक आयाम

◆ रामदेव शुक्ल

पुस्तक का नाम : कंप्यूटर पर बैठी लड़की (काव्य संग्रह) लेखक : तेज राम शर्मा, प्रकाशक : सूर्यप्रभा प्रकाशन 2/9, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 मूल्यः 350 रुपये

कविता जितना बाहरी यथार्थ रचती है, उससे ज्यादा कवि के बहाने मनुष्य मात्र के भीतरी यथार्थ की परतों को खोलती है। इस समय फैशन केवल बाहरी कह सकते हैं अखबारी यथार्थ की कविता करने का है, इसीलिए प्रायः रचनाएं अखबार की तरह ही पढ़ने के बाद भावक के चित्त से उतर जाती हैं। ऐसे माहौल में भारत सरकार की प्रशासनिक सेवा से निवृत्त पहाड़ के बेटे तेजराम शर्मा ने अपनी कविताओं में पहाड़ को, अपने को और मानव मात्र के अंतर्मन को रचा है।

'बरगद' कविता पहाड़ी जीवन की एक मुकम्मल तस्वीर सामने रख देती है।

वट चबूतरे पर बैठा/देख रहा हूँ आड़े तिरछे पत्थरों को
दीवाल टूटी है कई जगह/वृक्ष के बढ़ने के साथ साथ
बढ़ा है चबूतरे का घेरा/घेरे के अंदर घेरा
हर घेरे के नीचे घेरा/परत-दर-परत घेरा

जहां टूटी है दीवाल/वहां मैं अंदर झाँकता हूँ
बालों जैसी जड़ें/कहीं बहुत गहरे ढूँढ रही हैं/अमृत कलश को
उनकी कुलबुलाहट के स्पष्ट स्वर/प्रथम स्तुति गान कर रहे हैं
'हमें अमृत दो'

इसी वट चबूतरे के पास जीर्णशीर्ण देवालय में सुबह की पूजा से लेकर टूटे फूटे स्कूल के इतिहास पढ़ाते अध्यापक, विश्व इतिहास के महान अभियानों की ध्वनियाँ, मैदान तक पहुँचती जड़ों में माटी की गंध, देव मूर्तियाँ, उनके साथ खेलते बतियाते बच्चे और चबूतरे के दिल की धड़कन सुनता कवि एक साथ रूप-रस-गंध स्पर्श के बिम्ब रच रहा है। पहाड़ के जीवन की महागाथा सूत्र रूप में बरगद में कह दी गयी है।

लेकिन कवि के भीतर बैठा यायावर अपने पहाड़ के सम्पूर्ण जीवन दर्शन को एक झटके में छोड़ विश्वव्यापी जिन्दगी की तलाश में निकल पड़ता है।

यह रहा तुम्हारा विचार/यह रहा पंथ
यह रहा तुम्हारा जीवन-दर्शन/तुम स्थापित हुए
पर जिन्दगी की कविता सी अछोर फैली तस्वीर
किसी फ्रेम के घेरे में समेट न सका।

कवि अनंत चक्षु वर्धमान महावीर की परंपरा की विरासत को अग्रसर कर रहा है यह बोध करने के साथ कि जिन्दगी और कविता दोनों का फैलाव अछोर अनंत तक है, उसे किसी एक व्यक्ति, मत, पंथ या विचारधारा के चौखट में सीमित नहीं किया जा सकता।

वैश्विक स्तर पर आदमी कितना क्रूर और आक्रामक हो गया है, इसका वर्णन आजकल दुनियाभर के साहित्य में हो रहा है। तेज राम जी 'ध्वंस' कविता में आदिम बर्बरता, पृथ्वी का त्रस्त होकर आकाश से शरण-याचना, बर्बर आखेट को अत्याधुनिक ध्वंसक हथियारों से लैस हो जाना और आदमी को इन्सान बनाने वाले व्यवहार का विलोपन सहज रूप में रच देते हैं।

पता नहीं/कब से आखेट पर निकला है आदमी
अद्‌भुत हैं उसके अस्त्र शस्त्र/भूख है उसकी अमिट
धरती आकाश से माँग रही है शरण
माँग रहे शरण जलचर, नभचर/सोच में पड़े हैं पालतू पशु
किससे माँगे शरण/संतति सोच में पड़ी है
क्या मिलेगी शरण कोख में?

जो शक्ति (स्त्री) देवताओं तक की रक्षा करती आई है, उसी को कोख में ही मार दिया जा रहा है। धर्म, संस्कृति का इससे ज्यादा पतन क्या होगा? प्रतिरोध चेतना से सम्बद्ध शब्द व्यवहार में अर्थ खो चुके हैं।

इस आखेट के चरमोल्लास में/संयम शब्दकोश में बंद है
बंद है संवेदन/दया बंद है/बंद है अहिंसा
पूजाघरों के भारी भरकम तालों में/बंद है सारे के सारे भगवान

भाषा जो मनुष्य की सबसे बड़ी खोज और उसे सृष्टि का सिरमौर बनाने वाली उपलब्धि है, उसका क्या हाल है?

चीख है आखेट की भाषा/भाष आर्तनाद है
कोलाहल है भाष/भाष हलाहल है

जो अरण्य 'आरण्यक उपनिषद' रचते थे उनका हाल यह है कि-

जल रही है अरण्यों में नरकाग्नियाँ।

मशीनी सभ्यता की परिणति कवि इस रूप में देखते हैं-

ओ आने वाली पीढ़ियों/मैं निमंत्रण नहीं देता
कि तुम मेरी दुनिया में आओ/मैं बनूँगा अपना ही क्लोन
और शत-शत मुखों से/बुझाऊँगा अतृप्त प्यास
मेरी इस दुनिया में/रिमोट कंट्रोल से चलता है बम
उसी से रोबोट/और उसी से चलूंगा मैं

विज्ञान, तकनीकी और पूँजी के अपवित्र गठबंधन की संहारक क्षमता को शर्मा जी पुराने लोक विश्वास में आए जिन्न के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए बताते हैं कि जिन्न सब कुछ करने में समर्थ था लेकिन हमारे पुरखों ने उसकी शक्ति को कीलित कर दिया था।

बहुत पीढ़ियों तक/सेवा में रहा जिन्न/पर पता नहीं क्यों
पुरखों ने उसे नहीं लगाया सोना निकालने में
सारे जंगलों को साफ करने में/पृथ्वी तल से सारा तेल निकालने में
वह भी तो नारंगी की तरह निचोड़ सकता था पृथ्वी को
अगली शताब्दियों के हिस्से की/सारी ऊर्जा पी सकता था
अपने समय में/पर सुना है कि पुरखों ने बाँध रखा था उसे सीमाओं में।

मगर आज के अमानवीय अपवित्र गठबंधन से उपजा जिन्न-

रक्तबीज होकर/उभरता है असंख्य रूपों में
और एक माउस की क्लिक पर/उगलता है चीजें इस गति से
कि जल-थल में जगह नहीं है कूड़े के लिए

मनुष्य है अस्त्र-शस्त्र से इतना सम्पन्न-
कि हर कपाल के लिए/उसके पास है एक प्रक्षेपास्त्र

रचनाकार मानवता के उज्ज्वल निर्मल भविष्य के प्रति आश्वस्त रहता है।

कवि देख रहा है कि-

शून्य और एक के पाश से/फिर भी शायद बचें रहेंगे कुछ लोग
बची रहेगी उम्मीद/उन्हीं के पास

जीवन की गति थमने वाली नहीं। वह चलता ही रहेगा, बस उसे देखने वाली आँखें चाहिए और महसूस करने वाली संवेदना।

सुबह-सुबह/धरती को नहाते देख लो/ओस में, प्रकाश में, रंगों में.....
इस सुबह/फुलचुही चिड़िया की लंबी चोंच/फूल के पराग तक
कलम की नोक सी/झुकी कविता पर

तेजराम जी के लिए जीवन की धड़कनों से कविता का अटूट सम्बन्ध है।

कविता कहती है/मुझे लिखो/मैं लिखता हूँ
र से राम ब से बाण/रामबाण/
कविता कहती है/मुझे सुनो
मैं सुनता हूँ/मटके में दुध की धार का संगीत ....
कविता कहती है/मुझे महसूस करो
और मैं हो जाता हूँ आपादमस्तक संवेदित।

'शब्द' और 'विचार' शीर्षक कविताएं इस कवि के लिए रचना का अर्थ क्या है और रिश्ता क्या है, बताती हैं।

शब्द/जन्म लेते ही/निकल पड़ते हैं/लम्बी यात्रा पर
कुछ होते हैं मृण्मय/रास्ते की धूल हो जाते हैं
पन्नों के बीच पड़े रहते हैं कुछ/कुछ पत्थर से कठोर

घिसते नहीं शताब्दियों तक/दूर तक निकल जाते हैं
कुछ लिए होते हैं/हीरे सी शक्ति और चमक
जितना भी दोहराओ/चमकते ही जाते हैं
पीढ़ियाँ याद करते-करते/थक जाती हैं/पर थकते नहीं शब्द

शब्दों के साथ अनंत यात्रा पर चलने का अभिलाषी कवि 'विचार' के लिए कहता है-

विचार जहाँ/मस्तिष्क से उठकर
ब्रह्माण्ड में घूम आते है/मैं उन विचारों से आलोड़ित हूँ
विचार जहाँ/कंकालों के पर्वत पर/ऊँचे उठकर अट्टहास करते हैं
मैं इन कंकालों के नीचे दफन हूँ

विचार जहाँ/आँखों की कोरों में/आकर नम हो जाते हैं
मैं उस आदिम नदी के तट पर बसा हूँ
विचार जहाँ/अँधेरी रात में/टिमटिमाते रहते है दूर आकाशगंगा में
मैं उन जुगनुओं के पंखों में विचरता हूँ।

संग्रह की आखिरी कविता का शीर्षक हैं 'कविता' जिसमें कल्पना और यथार्थ की इंद्रधनुषी बुनावट की झलक दिख जाती है।

एक दिन कविता/शब्दों से बाहर निकल कर
मौन खड़ी देखती रही अपने आप को/कितना भी घना बुने
कविता निकल ही जाती है/शब्दों के जाल से

शब्दों की शृंखलाओं से मुक्त/क्या सोचती होगी कविता
शब्दों के बारें में? -रोज़-रोज़ की लड़ाई से छुटकारा पाकर
उड़ जाना चाहती है/अनंत आकाश में/फिर आकाश में कविता
बादलों से अठखेलियाँ करना चाहेगी/और धीरे-धीरे शब्दों में उतरने लगेगी

शब्दों के बीच संवेदना के छोरों पर आत्मा की पहचान तलाशती कविता सपने में आटे का रंग, नमक का स्वाद, पसीने की गंध और चूल्हे की आँच के साथ तदाकार हो जाती है प्रवासी पति की याद में घुलती युवती पत्नी के साथ।

प्रवासी पिया की याद में/आजकल गुम-सुम बैठी
सोचती है अपने समय के बारें में/हो चुकने के बारें में
चुक जाने के बारें में।

तेजराम शर्मा के पास अपने देश के सभी प्रांतों के और विदेशों के विपुल अनुभव हैं। देश-विश के साहित्य से उनका परिचय है। एक तरह से वैश्विक विमर्शों से सुपरिचित है। 'थिंक ग्लोवली एंड वर्क लोकली' के स्तर पर अपने देश भारत और उसमें भी अपने प्यारे पहाड़ से आंतरिक जुड़ाव है उनका। पहाड़ अपने समूचेपन के साथ बार-बार उनकी चेतना में मूर्त होता रहता हैं। कभी पहाड़ शीत प्रभात मे बाँग देता है, कभी खेतो में पाले की सफेद चादर ओढ़े ठिठुरता है, कभी-स्वप्न और जागृति के बीच आत्मा के संघर्ष सा/बिस्तर पर करवटें बदलता रहता है। पहाड़ के दृश्यों को चाक्षुष बिम्बों में रचते हैं शर्मा जी।

प्रथम किरण से आलोकित हिमशिखर घेरे हैं
कोमल रुईं में लिपटी घाटी को/धूप धुनिये-सी धुनती है इस धुंध को

कवि जहाँ भी रहे उसे पहाड़ अपनी पूरी जीवंतता में पूरा का पूरा चाहिए

मैं समय के/दाँए-बाँए/उपर-नीचे/कहीं भी रहूँ/मेरे आस पास रहे
माटी में नमी/आकाश में गीत/टिमटिमाता सा कोई विचार
चाँद सा कोई शब्द/सूरज सा कोई कर्म/सूरज की आँख से
देखना चाहता हूँ/इस सुबह को/पहाड़ की चोटियों को
धुंध को/धुंध से घिरी घाटी को।

पहाड़ की धड़कनों के साथ कवि की साँसों में दादा-दादी, माँ-पिता, पत्नी-प्रिया की उपस्थिति पाठक को सुखद अहसास से भरती रहती है। अस्तित्व अपने स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों में इन कविताओं में विद्यमान है। कुछ बोध सामान्य जन की पकड़ से बाहर के है किंतु कवि अपनी संजीवनी कहाँ से पाता है, इसका रहस्य बताती है 'आग्रह' कविता।

जिनके लिए मैं लिखता हूँ/वे कविता पढ़ना छोड़ चुके हैं
जो पढ़ते हैं/वे सलाह देते हैं कि अब
जो नहीं है अर्थ से पूर्ण/वह व्यर्थ है
पर मुझे उन्हीं के पास जाना है बार-बार/बार-बार पुकारना है उन्हें
विश्वास जीतना है उनका/उन्हें ही कहना है बार.बार
कि मेरे लिखे को भी/अर्थ दो, अर्थ दो, अर्थ दो.............
...

एक सचेत, संवेदनशील, दार्शनिक और वैज्ञानिक ज्ञान से समृद्ध कवि की इन कविताओं का आस्वादन प्रत्येक स्तर का काव्य-रसिक कर सकता है। अरसिकों और अपने चाबुक से रचना को हाँकने वाले महाबली आलोचकों के लिए तो कविता होती भी नहीं।

शीतल सुयश, राप्ती चौक, आरोग्य मंदिर,
गोरखपुर-273003

पुस्तक-समीक्षा

'कदमताल' में व्याप्त जीवन दर्शन

◆ सुदर्शन वशिष्ठ

चर्चित संकलन : कदमताल (कहानी संग्रह), कथाकार : जितेन्द्र शर्मा
प्रकाशक : विजया बुक्स नवीन शाहदरा दिल्ली-110032,
संस्करण : 2016, मूल्य : 225 रुपये

'कदमताल' कहानी संग्रह की कहानियां छोटी-छोटी घटनाओं के शब्द चित्रों के माध्यम से बड़ी बात कहने की कोशिश करती हैं। कथाकार गांव, कस्बे से होता हुआ विदेश तक की परिस्थितियों का आकलन करने का प्रयास करता है। ज्यादातर कहानियों में ग्राम्य बोध के साथ पहाड़ उपस्थित रहता है। नैनीताल, अल्मोड़ा और शिमला के चित्र अनायास ही देखने को मिल जाते हैं। स्कूल से लेकर कॉलेज, साधारण दफ्तरी माहौल, अति निम्न वर्ग से लेकर उच्च धनाढ्य; हर वर्ग के पात्र इन कहानियों में विचरण करते हैं। पात्रों के आपसी सम्बन्ध, सम्बधों में ऊहापोह, मनोवैज्ञानिक दबाव, बुढ़ापे की यन्त्रणा, बालमन का चित्रण भी इन कहानियों में बखूबी उभर कर आता है। कथाकार का अनुभव क्षेत्र विस्तृत है जिससे कहीं भी कहानियों में दोहराव नज़र नहीं आता।

संग्रह की सत्रह कहानियों में अधिकांश छोटी कहानियां हैं। छोटी कहानी में सुघढ़ता हो तो यह अपना प्रभाव गहरे तक छोड़ती है। ऐसा कई कहानियों में देखने को मिलता है। कथाकार ने ज्यादा विस्तार में न पड़ते हुए एक कहानी में एक बात कहने का प्रयास किया है जिससे ये कहानियां अलग दिखलाई पड़ती हैं। प्रायः लम्बी कहानियों में बहुत कुछ लेने पर उसका निर्वाह करना कठिन हो जाता है। ऐसा इन कहानियों में नहीं है। एक सूत्र पकड़ कर उसी पर केन्द्रित रहते हुए बात को सम्प्रेषित करने की कोशिश की गई है जिसमें कथाकार सफल रहा है। ऐसा करने में शब्दाडम्बर, उलझाव या व्यर्थ के विवरणों से भी बचाव हुआ और कथाकार सीधे-सीधे, सरल भाषा में अपनी बात पाठकों तक पहुंचाने में सफल रहा है।

संग्रह की कुल सत्रह कहानियों से गुजरने पर यह अनुभव होता है कि कथाकार ने अनावश्यक विस्तार से बचते हुए कथा शिल्प के आडम्बर से दूर बड़ी साफ़गोई से अपनी बात कही है। और यही कथाकार की विशेषता है। मध्यवर्ग और निम्न वर्ग की कठिनाइयों और विषम परिस्थितियों को बिना किसी चमत्कारिक प्रयोग के सहज ढंग से उजागर किया गया है।

'विरुद्ध' कहानी में जुआरी और शराबी पिता को बिना ऊंची आवाज़ किए चेताना हो या 'कदमताल' में शिष्य राकेश के माध्यम से भीख न देते हुए ज़रूरतमंद की सहायता करना हो या 'मुक्ति अलग अलग' में मां की बीमारी पर पुत्रों का व्यवहार या दुर्व्यवहार; सब में विरोध का स्वर अंदर ही अंदर चलता है चाहे उसका बाहरी प्रदर्शन खुल कर सामने न आए। बीमार मां की मृत्यु का इंतजार करते बेटों से समाज की निर्ममता झलकती है। 'बोझ' में बालमन पर समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का प्रभाव हो या 'त्यागपत्र' में पिता द्वारा दी गई आदर्श की सीख हो; कथाकार अपनी बात सीधे सीधे कहने में सफल होता दिखता है।

प्रेम प्रसंगों पर आधारित दो कहानियां मर्मस्पर्शी कहानियां है। ''जब सपने बदलते हैं'' एक उत्कृष्ट यथार्थ प्रेम कथा है जिसमें आदर्श भी है और यथार्थ भी। एक अंग्रेजी स्कूल का सफल अध्यापक मैथ्यू रोज़ी से नाता तोड़ उसी स्कूल में पढ़ाने वाली शर्ली से प्रेम करने लगता है। विवाह तक बात पहुंचने पर शर्ली के मां बाप राजी नहीं होते और अंततः वह स्कूल से त्यागपत्र दे देता है। ऐसी ही दूसरी कहानी 'बड़ा काम' है। रेखा और रामनाथ की मंगनी हो जाने पर भी नायक का रेखा के प्रति झुकाव और ऊपर से रामनाथ का दबंग व्यक्तित्व। यह बात रेखा को भी मालूम है कि रामनाथ ने उसके लिए बड़े बड़े रिश्ते ठुकरा दिए हैं। कहानी के अंत में गुंडानुमा रामनाथ का रेखा को नायक के घर में लाना एक अप्रत्याशित घटना है कहानी को एक मारक मोड़ देती है। यह दोनों कहानियां प्रेम सम्बन्धों पर एक मनोवैज्ञानिक दबाव की

कहानियां हैं जो कई कुछ कह जाती है और पाठक को सोचने पर विवश करती है।

ऐसी ही एक और प्रेम कहानी ''आलिंगन'' है। नायक का मंजूषा को कॉलेज जाते देखना और कुछ वार्तालाप। उसके चले जाने के अढ़ाई साल बाद लौटना और दूसरी जगह संपन्न घर में शादी होने पर भी प्रेम का एक तंतु बना रहता है। कहानी के अंत नायक द्वारा सुंदर, मांसल पत्नी से आलिंगन पर मंजूषा का आभास होना, रमा के शरीर में मंजूषा की प्राण प्रतिष्ठा कहानी को सुंदर मोड़ पर छोड़ती है।

'विवाह' कहानी कुछ यथार्थवादी और कुछ आदर्शवादी कहानी है। डॉक्टर बने चाचाजी का एग्ज़यूटिव इंजीनियर की काली कलूटी बेटी से विवाह मां को रास नहीं आता। बेशक इंजीनियर परिवार सम्पन्न था, मां काली कलूटी बहू को स्वीकार नहीं करती और सब के सामने उसे काली कलूटी, उलटा तवा कह छोड़ देने को कहती है। मगर चाचा 'अपनी तरक्की पसंद सोच' पर कायम रहते हैं।

'धूप के धब्बे' पिता के कर्मशील व एक्टिव होने और पुत्र के कुछ न कर पाने की कथा है जिस में रामू धोबी, चंदू चमार, माधो की बिगड़ी बेटियां, लोहार की मुन्नी आदि कई प्रसंगों का जिक्र आता है। 'गन्ने ते गंडेरी मिट्ठी' में तांगे वाले के माध्यम से समसामयिक हालात पर टिप्पणी की गई है जिसमें रत्ना दीदी के साथ आई सांवरी के प्रति मोह, उसका आमन्त्रण अगले दिन होने वाले इंटरव्यू के समक्ष हलका पड़ जाता है।

धनी लोग किस तरह अपने बच्चों से छुटकारा पाने के लिए उन्हें बोर्डिंग स्कूलों में भेज देते हैं, इस का चित्रण 'चेतन' कहानी में मिलात है। यह एक बाल मनोविज्ञान की कहानी है जिस में तथाकथित ऊंचे लोग गुंडों के साथ मिल कर अपने वर्थ के लिए हत्या की योजनाएं बनाते हैं। हॉस्टल में छोटी बड़ी शरारतें करने पर हॉस्टल से निष्कासन और घर में गुंडागर्दी का माहौल; इस सब का सफल चित्रण इस कहानी में मिलता है।

'गली में घर' तथा 'परदेसिया' दो छोटी छोटी साधारण कहानियां हैं। 'दूरस्थ गांव' में एक गांव की दास्तान बखान की गई है तो 'त्यागपत्र' एक आदर्शवादी कथा है जिसमें पिता की सीख पर रिश्वत लेने से इनकार और नौकरी से त्यागपत्र देने तक की घटना है। छोटी नौकरी होने पर भी एक आदर्श के साथ जीने का सुख इस में दिखाया गया है जबकि दूसरे लोग अनैतिक जीवन जी कर धन दौलत कमा रहे हैं। 'खुरदरे कम्बल में दोस्त' में लड़कियों को रण्डी कहने वाला दोस्त सुसंस्कृत बंगाली किराएदारनी के पति प्रेम से प्रभावित हो अपनी धारणा बदलता है। मगर वही किराएदार औरत सब कुछ होते हुए भी उसकी ओर आकर्षित हो जाती है तो वह पुनः औरतों को कुतिया कहने लगता है। ''सौदा' एक प्रोफेसर का कॉलोनी खाली करने के लिए मालिकों से मिल जाने की कहानी है जिसमें वह नेता बना कर कॉलोनी में रहने वाले गरीब लोगों को धोखा देता है।

कथाकार ने अपने चरित्रों को विशेष पहचान देने के लिए उनका वैसा ही चित्रण किया है यथा : लंबा, नुकीली नाक वाला, तेज़तर्रार पिता; सांवले रंग की तेज़ हरी मिर्च सी सांवरी; गेरूए रंग का मखमली कुरता धोती पहने मेघराज; लंबे पतले दुबले, लंबी तोतई नाक वाला पड़ोसी; तांबे जैसी चमड़ी और चेहरे पर बाजरे जैसे सफेद गोल बिंदुओं वाला मैथ्यू आदि आदि।

विरुद्ध, किधर, मिट्टी की गंध और पहाड़ों के द्वीप के बाद 'कदमताल' कथाकार जितेन्द्र शर्मा का पांचवां कहानी संकलन है जो विषयों की विविधता के कारण ध्यान आकर्षित करता है। पात्रों के चरित्रों के रेखांकन, घटनाओं का सहजता से चित्रण, कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक बात कहने की कोशिश इन कहानियों की विशेषता है। कदमताल करते रहने से भी मनुष्य आगे सरकता है, गतिमान रहता है, यही इन कहानियों का अभीष्ट है।

'अभिनंदन' कृष्ण निवास लोअर पंथा घाटी
शिमला-171009, मो. 94180-85595

- दुष्ट व्यक्ति दूसरों के कार्यों को नष्ट करना ही जानता है, उसे सिद्ध करना नहीं जिस प्रकार वायु वृक्षों को उखाड़ना ही जानती है, उन्हें खड़ा करना नहीं। -पंचतंत्र
- हमारी वास्तविक निर्धनता यह है कि दूसरों को सुधारने का अधिक से अधिक प्रयत्न करते हैं और स्वयं को सुधारने का अल्प से अल्प। -धूमकेतु
- हर बच्चा इसी संदेश के साथ आता है कि भगवान अभी तक मनुष्यों से हतोत्साहित नहीं हुआ है। -रवींद्र नाथ टैगोर

ISSN 2454-972X

हिमप्रस्थ

मार्च, 2017

हिमाचल प्रदेश में
मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह
के नेतृत्व में
चहुँमुखी विकास और
सर्व कल्याण का

दिहाड़ीदारों की दैनिक दिहाड़ी बढ़ी

आर्थिक सशक्तता की ओर बढ़े क़दम

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हि.प्र. द्वारा जारी

ISSN : 2454-972X

हिमप्रस्थ

वर्ष : 61 मार्च, 2017 अंक : 12

सम्पादकीय कार्यालय: हि. प्र. प्रिंटिंग प्रेस परिसर, घोड़ा चौकी, शिमला-5

वार्षिक शुल्क : 150 रुपये, एक प्रति : 15 रुपये

E-Mail : himprasthahp@gmail.com
Tell: 0177 2633145, 2830374

ज्ञान सागर

अपनी सफलता में किस्मत को जो बिलकुल नहीं मानते, वे अपने आपसे मजाक कर रहे हैं।

– लैरी किंग

इस अंक में

लेख

कहानी

लघुकथा

कविता/ग़ज़ल

ट्रैकिंग वृतांत

व्यंग्य

पुस्तक-समीक्षा

अपनी बात

भारतवर्ष मेलों एवं त्योहारों का देश है। हमारे देश में त्योहारों और उत्सवों का सिलसिला वर्षभर चला रहता है। भारतीय लोक संस्कृति में आदिकाल से चले आ रहे इनके निरंतर आयोजन का प्रचलन आज भी बदस्तूर जारी है। विविध जलवायुगत परिस्थितियों के कारण यह देश अनेक ऋतुओं के लिए जाना जाता है। वसंत ऋतु के आगमन पर शरद ऋतु में सुप्तावस्था में पड़ी वनस्पति नव जीवन पाकर खिलखिला उठती है। देश की समृद्ध एवं बहुरंगी संस्कृति को समेटे इस ऋतु में शिवरात्रि, वसंतोत्सव और होली त्योहार मुख्य रूप से मनाए जाते हैं। देश के भिन्न-भिन्न भागों में अलग-अलग तरीकों से मनाए जाने वाले रंगों के त्योहार होली को देशभर में अलग-अलग नामों से जाना जाता है। होलिका पूजन, होलिका दहन, धुलिवंदना और वसंतोत्सव नामों से विख्यात यह त्योहार फाल्गुन माह की पूर्णिमा को मनाया जाता है। यह त्योहार सही मायनों में विविधता व अनेकता में एकता की भारतीय संस्कृति की सार्थकता को चरितार्थ करता है। इस त्योहार को मनाए जाने के पीछे प्रारंभ से अनेक मत रहे हैं। प्राचीनकाल में भारतवर्ष के अत्यंत बलशाली एवं घमंडी राजा हिरण्यकश्यप अपने आपको भगवान मानने लगा और उसने अपने ही पुत्र प्रह्लाद को ईश्वर भक्ति के लिए मृत्यु दंड दिया। राजा ने अपनी बहन होलिका जिसे अग्नि में भी न जलने का वरदान प्राप्त था, की गोद में प्रह्लाद को बिठाकर जलाने का प्रयास किया। इस प्रयास में होलिका तो भस्म हो गई लेकिन विष्णु भक्त प्रह्लाद चमत्कारिक तरीके से बच गया और होलिका दहन का प्रचलन प्रारंभ हुआ। उत्तरी भारत में इस त्योहार को भगवान श्रीकृष्ण द्वारा राक्षसी पूतना के वध से जोड़कर पूतना दहन के रूप में मनाया जाता है। वहीं दक्षिण भारत में इसे भगवान शिव द्वारा कामदेव को तीसरे नेत्र से भस्म करने के दुख से द्रवित उनकी पत्नी रति की प्रार्थना पर कामदेव को पुनर्जीवित करने के उपलक्ष्य में मनाया जाता है जिससे प्रसन्न होकर देवताओं ने रंगों की वर्षा की। तदोपरांत यह रंगों के त्योहार के रूप में मनाया जाने लगा। धार्मिक सद्भाव की दृष्टि से देखा जाए तो यह त्योहार केवल हिंदू ही नहीं वरन् इसे मुस्लिम भाई- बंधुओं द्वारा भी मनाया जाता है। सुप्रसिद्ध मुस्लिम सैलानी अलबरूनी के ऐतिहासिक यात्रा संस्मरण तथा अनेक मुस्लिम कवियों की रचनाओं में होलिकोत्सव का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसकी प्रमाणिकता की तस्वीरें मुगलकालीन इतिहास में देखी जा सकती हैं। देवभूमि के नाम से विख्यात हिमाचल प्रदेश को देशभर में अनूठी देव संस्कृति के लिए जाना जाता है। यहां के जनजीवन में उत्सवों का अपना एक अलग ही महत्त्व है। हिमाचल प्रदेश में वसंतु ऋतु के दौरान मनाए जाने वाले त्योहारों में हालांकि होली पूरे प्रदेश में मनाई जाती है लेकिन हमीरपुर जिले की सुजानपुर टीहरा की होली का अपना एक विशेष महत्त्व है। स्वतंत्रता पूर्व रियासतकालीन दौर में प्रदेश की तत्कालीन कांगड़ा रियासत के कटोच वंशज महाराजा संसार चंद ने अपने शासनकाल में यहां की कला एवं संस्कृति को विशेष रूप से संरक्षण एवं प्रोत्साहन प्रदान किया। वह एक कलाप्रेमी राजा थे जो मेलों एवं त्योहारों विशेष रूप से होली उत्सव को ऐतिहासिक सुजानपुर टीहरा मैदान में प्रजा के साथ मिलकर मनाया करते थे। उनके शासनकाल में होली एक ऐसा उत्सव था जो उनके समकालीन रियासतकालीन दौर में सबसे लोकप्रिय त्योहार माना जाता था। और इसी ऐतिहासिक महत्त्व के साथ यह त्योहार आज भी पारंपरिक तरीके से भव्य रूप में मनाया जाता है। इस ऋतु के त्योहारों में शिवरात्रि प्रदेश का प्रमुख त्योहार है और मंडी का अंतर्राष्ट्रीय शिवरात्रि महोत्सव सप्ताहभर विशेष रूप से मनाया है। मंडी में शिवरात्रि मेले के दौरान जनपद के देवी-देवता हर वर्ष राजदेवता माधोराव के दरबार में हाजिरी लगाते हैं। पालकियों में सुसज्जित देवताओं का यह भव्य समागम शायद ही अन्यत्र देखने को मिले। नियमित सामग्री के साथ इस अंक में होली पर लेख व कविताओं को भी समाहित किया गया है। आशा है आप पूर्व की भांति इस बार भी अपनी प्रतिक्रिया से हमें अवश्य अवगत करवाएंगे।

– संपादक

आलेख

मुक्तिबोध के काव्य की अंतर्वस्तु

◆ डॉ. लीला मोदी

मुक्तिबोध के काव्य की अंतर्वस्तु जितनी व्यापक है, उससे भी ज्यादा गहरी हैं। अपनी रचनाओं के माध्यम से वे समाज, जीवन और युग के जिस यथार्थ का साक्षात्कार करते हैं और जिसे अभिव्यक्त करते हैं। वह वस्तुतः जटिल, संकुल और इतना उलझा हुआ और षड्यंत्रों से पटा हुआ है कि उसे सीधे-सीधे पकड़ पाना या अभिव्यक्त कर पाना मुक्तिबोध के लिए स्वभावतः ही संभव नहीं था। उनकी अन्तर्वस्तु में राजनीति की उलझी हुई, पेंचदार बाजियों, नेताओं के भ्रष्टाचार और इसकी जड़ें, समाज में रह रहे मध्यवर्गीय, बुद्धिजीवी व्यक्ति के मन के बाह्य और भीतरी संघर्ष, निरन्तर विघटित होते मूल्यों के बीच में जिंदा रहने की छटपटाहट में फंसे हुए जन तथा इसके साथ ही साहित्य, साहित्य से जुड़े हुए तमाम-तमाम सवाल भी हैं।

मुक्तिबोध ने साहित्य संबंधी सैद्धांतिक निबंधों द्वारा अपने जागरूक रचनाकार के प्रखर और संवेदनशील चिंतन को प्रस्तुत किया है। एक रचनाकार की रचना-प्रक्रिया क्या और कैसी होती है। उसे किन-किन कठिनाइयों, उलझनों का सामना करना पड़ता है। एक रचना में वस्तु एवं रूप का क्या संबंध होता है। साहित्यकार का समाज से क्या रिश्ता होता है। सामाजिक विकास में साहित्य की क्या भूमिका होती है। जनता का साहित्य किसे कहते हैं? इस तरह के सवालों से मुक्तिबोध अपने निबंधों में साक्षात्कार करते हैं।

मुक्तिबोध ने अपने निबंधों में साहित्य संबंधी विचार प्रकट किए हैं। 'जनता का साहित्य' किसे कहते हैं लेख में बताया है कि जनता का साहित्य क्या है 'जो साहित्य जनता के जीवन मूल्यों को, जनता के जीवनादर्शों को प्रतिष्ठापित करता हो उसे अपने, मुक्तिपथ पर अग्रसर करता हो जनता का साहित्य है।' साहित्य का उद्‌देश्य है- सांस्कृतिक और मानसिक परिष्कार करता है। उन्होंने रचना प्रक्रिया की चर्चा करते हुए इसके तीन क्षण माने हैं- कला का पहला क्षण है जीवन का उत्कट तीव्र अनुभव क्षण, दूसरा इस अनुभव का अपने कसते-दुखते हुए मूल्यों से पृथक हो जाना और एक फैंटेसी का रूप धारण कर लेना मानों वो फैंटेसी अपनी आँखों के सामने खड़ी हो, तीसरा और अंतिम क्षण इस फैंटेसी के शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया का आरंम्भिक क्षण और प्रक्रिया की परिपूर्णावस्था तक की गतिमानता। वस्तु एवं रूप पर विचार व्यक्त करते हुए कहा "वस्तु को रूप से या रूप को वस्तु से अलग नहीं किया जा सकता। वस्तु जैसी होगी, वैसा विषय होगा उसके रूप का निर्धारण वह वस्तु ही करेगी- यहाँ इन दोनों में द्वंद्वात्मक संबंध है।

मुक्तिबोध ने लगभग लम्बी कविताएं लिखी हैं। वे कहते हैं- "यथार्थ जो होता है वो गतिशील होता है, उसके तत्त्व परस्पर गुंफित होते हैं। गतिशील यथार्थ को अभिव्यक्त करने में रचना भी लम्बी से लम्बी होती चली जाती है। आपका मत है "यह युग आवेगों या भावनाओं को अभिव्यक्ति देकर छुटकारा पाने का युग नहीं है बल्कि संवेदनात्मक ज्ञान को ज्ञानात्मक संवेदना से जोड़कर अभिव्यक्त करने का है। ऐसे में कोई भी अनुभव संवेदना के धरातल पर उद्वेलित होकर अभिव्यक्त नहीं होता बल्कि वह ज्ञान से जुड़ता है, विचारों से जुड़ता है और संम्पूर्ण जीवन-जगत से जुड़ता है ऐसा अनुभव चाहे कितना ही आवेग भरा हो वह विचार में परिवर्तित होगा ही।" अतः मुक्तिबोध की कविताएं वैचारिक और लम्बी हैं।

मुक्तिबोध व्यापक अर्थों में राजनीतिक कवि हैं। किन्तु उनका उद्‌देश्य राजनीति पर व्यंग्य, कटाक्ष करने का या राजनीतिक परिदृश्य को अभिव्यक्ति देने का नहीं रहा है। अपितु मुक्तिबोध ने राजनीति और राजनीतिक व्यवस्था के आतंक, भय, भ्रष्टाचार, रहस्य और जन जीवन को समाप्त करती जा रही राजनीतिक संस्कृति के किले में घुसकर उसे नंगा करने का प्रयत्न किया है। राजनीति और व्यवस्था और इनका यथार्थ इतना सरल नहीं होता, जितना हम मान लेते हैं। इस यथार्थ की सही पहचान और पकड़ के लिए मुक्तिबोध को जो कलात्मक रास्ता अपनाना पड़ा, वो भी उतना ही जटिल, प्रतीक और बिंबों में उलझा हुआ

जान पड़ता है, किन्तु एक बार इनकी तह में जाने पर सब कुछ साफ-साफ दिखाई पड़ने लगता है।

मुक्तिबोध की राजनीतिक समझ बहुत साफ और दृढ़ है। वे मार्क्सवादी विचाराधारा के प्रतिबद्ध कवि हैं। वे मानते हैं कि समाज और मानव का उद्धार तब तक नहीं हो सकता जब तक कि शोषण और आतंक में पिसती हुई जनता पूँजीवादी और साम्राज्यवादी शक्तियों के विरूद्ध क्रांति के लिए तैयार न हो जाए। मुक्तिबोध यह भी मानते हैं कि इस वर्ग विभाजित समाज में बुद्धिजीवी वर्ग का कर्त्तव्य इस जन शक्ति को क्रांति के दिपदिपाते विचारों से लैस करने का है और जनता को उसके शोषण के हथियारों से वाकिफ करवा कर उसमें चेतना जगाने का है। इसलिए अपनी कविताओं में वे बार-बार अपनी प्रतिबद्धता जनता के पक्ष में रखते हैं- वह सुविधाभोगी, भ्रष्टाचारी वर्ग से आगाह करते हैं, उनमें आत्मविश्वास जगाते हैं। मुक्तिबोध की एक कविता है- ''गुंथे तुमसे, बिंधे तुमसे''-

''वेदना में हम विचारों की/गुंथे तुमसे/बिंधे तुमसे/व आवेष्टित परस्पर हो गये/कोई नहीं थे हम तुम्हारे किंतु/सहचर हो गये/चाहे जलधि, पर्वत, हजारों मील की दूरी/हमारे बीच में आ जाए/फिर भी मानसिक अदृश्य सूत्रों से/हमारी आत्माएँ परस्पर बात करती हैं''

वह जो "तुम हैं जिससे कवि विचारों की वेदना में गुंथने-बंधने की बात कर रहा है। यह आम कर्मशील, जनता ही है- विचारों की वेदना या चिंतन में कवि ने यही पाया है कि यदि समाज में किसी के साथ होना है, यदि समाज का उद्धार करना है तो इसी शोषित पीड़ित, जन के प्रति प्रतिबद्ध होना पड़ेगा। द्वितीय विश्व युद्ध में पूँजीवादी साम्राज्यवादी शक्तियों ने आंतक, मौत, भय का जो खेल खेला सारे विश्व को धरती को युद्ध की आग में झोंक कर जो तानाशाही बने, उनका वर्णन मुक्तिबोध ने 'जमाने का चेहरा' कविता में किया है-

'चांद का मुंह टेढ़ा है' कविता में से जो उद्धरण दिया है- उससे पता चलता है कि कवि कितनी भयाकुल, आतंक पैदा करने वाली और त्रासद स्थिति का चित्रण कर रहा है। सुनसान घोंसले, चुपचाप जहरीली छीः थूः कारतूस, छर्रे, हवेली, हवाओं के पल्लू, पीली-पीली पट्टियां, काला-काला समय- एक ऐसे भयानक और वीरान वातावरण का निर्माण करते हैं, जिससे कविता एक स्तर पर इसी भयानकता की सृष्टि करती जान पड़ती है। यहाँ कवि का उद्देश्य डराना नहीं बल्कि उस आतंक, भय से परिचित कराना है जो पूंजीवादी राजनीति और संस्कृति के कारण पनपता है, जो मनुष्य के मूलभूत विश्वासों और मूलभावों पर प्रहार करके उन्हें तोड़ता है। जो मनुष्य को जड़ मशीन में बदलने लगता है।

साम्राज्यवादियों के बदशक्ल चेहरे/ एटमिक धुएं के बादलों से गहरे/क्षितिज पर छाए हैं,/जापान को ध्वस्त कर/ईरान को मारकर/ईजिप्त के खात्में के लिये हैं उतावले/ अरब के खात्में के लिये हैं बावले।''

साम्राज्यवादी शक्तियाँ भारत में भी सक्रिय हैं। यहां भी वे अपने पांव पसार रही हैं-

साम्राज्यवादियों के/पैसों की संस्कृति/भारतीय आकृति में बंध कर/दिल्ली को/वाशिंगटन व लंदन का उपनगर/बनाने पर तुली हैं।/भारतीय धनतंत्री/जनतंत्री बुद्धिजीवी/स्वेच्छा से उसी का ही कुली है॥

मुक्तिबोध सीधे-सीधे पूंजीवादी संस्कृति, सभ्यता और राजनीति का भी विश्लेषण करते हैं, इसके द्वारा मानव जाति पर जो अत्याचार किये जाते हैं। जिस आतंक, भय से व्यक्ति के जीवन, उसके सोचने की शक्ति पर प्रहार किये जाते हैं, और जिसके बारे में वे सचेत नहीं रह पाता, उसका चित्रण भी मुक्तिबोध ने किया है। छायावाद का चमकीला, प्रेमिका के मुखड़े जैसा सुंदर चाँद मुक्तिबोध के यहाँ आकर पूँजीवाद का प्रतीक बन जाता है। सौन्दर्यबोध का यह दूसरा छोर है। एक छोर तो सौन्दर्यबोध का वह होता है जहाँ सुंदर, कमनीय, लावण्य; कोमलता और आनंद है और दूसरा छोर वह है, जहाँ भय, आतंक, पीड़ा, त्रासदी और किमाकार है। मुक्तिबोध सौंदर्यबोध के इसी दूसरे किन्तु यथार्थ छोर पर खड़े दिखाई देते हैं-

मीनारों के बीचों-बीच चाँद का है टेढ़ा मुँह/लटका/मेरे दिल में खटका/कहीं कोई चीख, कहीं बहुत बुरा हा रे ॥/अजीब है॥/गगन में करफ्यू/धरती पर चुपचाप जहरीली छीः! थूः!/पीपल के सुनसान घोंसलों में पैठे हैं/कारतूस छर्रे/जिससे कि हवेली में हवाओं के पल्लू भी सिहरे।/गंजे सिर चाँद की संवलाई किरनों के जासूस/साम-सूम नगर में धीरे-धीरे घूम-घाम/नगर के तिकोनों में छुपे हुए/करते हैं महसूस/गलियों की हाय- हाय॥ /चाँद की कनखियों की किरनों ने नगर छान डाला है। /अंधेरे को आड़े-तिरछे काट कर/ पीली-पीली पट्टियाँ बिछा दी/समय काला-काला है।''

यहाँ 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' कविता में से जो उद्धरण दिया है- उससे पता चलता है कि कवि कितनी भयाकुल, आतंक पैदा करने वाली और त्रासद स्थिति का चित्रण कर रहा है। सुनसान घोंसले, चुपचाप जहरीली छीः थूः कारतूस, छर्रे, हवेली, हवाओं के पल्लू, पीली- पीली पट्टियां, काला-काला समय- एक ऐसे भयानक और वीरान वातावरण का निर्माण करते हैं, जिससे कविता एक स्तर पर इसी भयानकता की सृष्टि करती जान पड़ती है। यहाँ कवि का उद्देश्य डराना नहीं बल्कि उस आतंक, भय से परिचित कराना है जो पूंजीवादी राजनीति और संस्कृति के कारण पनपता है, जो मनुष्य के मूलभूत विश्वासों और

मूलभावों पर प्रहार करके उन्हें तोड़ता है। जो मनुष्य को जड़ मशीन में बदलने लगता है। इसके बाद मुक्तिबोध अपनी कविताओं में इस व्यवस्था से छुटकारा पाने, इस जहर को समाप्त करने के लिये, इसके प्रति जागरूक होने के लिये जनशक्ति से वैचारिक, भौतिक और संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ने का आह्वान भी करते हैं। यह उनके काव्य समूचे काव्य का चेतना शिखर है।

मुक्तिबोध की कविताओं में तत्कालीन सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति विभिन्न रूपों में हुई है। इतना तो मनीषी जान ही गये होंगे कि मुक्तिबोध के लिये यथार्थ या सामाजिक यथार्थ एक घटना मात्र नहीं होती बल्कि वो सम्पूर्ण जीवन में गुथा हुआ ऐसा यथार्थ होता है जिसके कई सिरे होते हैं। जिसकी जड़ें दूर गहरे तक जीवन के कई-कई संदर्भों में धंसी हुई होती हैं। इस यथार्थ को मुक्तिबोध गतिशील यथार्थ कहते हैं। जिसकी कलात्मक अभिव्यक्ति के लिये वे फैंटेसी का इस्तेमाल करते हैं, फलतः इनकी कविताएं दीर्घ होती जाती है।

मुक्तिबोध सुविधाभोगी जमात के लोगों की झूठी उपलब्धियों को रेखांकित करने के बहाने इस वर्ग के लोगों की असलियत नंगा करते हैं। वे यह बताते हैं ये लोग वस्तुतः अवसरवादी, झूठे स्वार्थी और जनता के उतने ही दुश्मन हैं, जितने वे लोग जो सत्ता हाथ में लेकर जनता का शोषण करते हैं। मुक्तिबोध की एक कविता है 'भाग गयी जीप'। इसमें वे बताते हैं कि बस (सुविधाओं की) छूट जाती है। कुछ लोग इसमें चढ़ जाते हैं। इसमें चढ़ने वाले आज के अवसरवादी सुविधाभोगी लोग हैं जो 'बस में ही ठुंस जाने को जिन्दगी की जीत' मानते हैं। मुक्तिबोध लिखते हैं-

तुममें कुछ/अच्छाई ही शेष थी/इसीलिए घबरा गये/पकड़ न सके बस/और वह छूट गयी/पीछे रह गये तुम।।/बस मिस हो गयी/ कर गये मिस तुम/बहुत अच्छा हुआ यह/प्राणों में हमारे/समासीन पूर्ण तुम/समय के मारे तुम/केवल हमारे हो/केवल हमारे हो।।

मुक्तिबोध यहाँ सुविधाभोगी, अवसरवादी लोगों के समकक्ष अपना पक्ष भी स्पष्ट करते हैं, वे इन लोगों में शामिल हो कर अपने वर्ग से अलग नहीं होना चाहते। ''कहने दो उन्हें जो कहते हैं''

शीर्षक कविता में मुक्तिबोध इस तथाकथित सफलतावादी, सुविधावादी वर्ग के लोगों का घटियापन और कमीनापन उघाड़ने हुए बताते हैं कि ये लोग अपने ही (मध्यम) वर्ग के होते हुए भी उस मरणशील व्यवस्था का साथ देते हैं जो शोषण भ्रष्टाचार और मूल्यहीनता की बुनियाद पर टिकी है। सफलता, भद्रता, कीर्ती और यश की यह रेशम की पूनों की चांदनी मात्र है-

सूखे हुए कुओं पर झुके हुए झाड़ों में/बैठे हुए घुग्घुओं व चमगादड़ों के हित/जंगल के सियारों और/घनी-घनी छायाओं छिपे हुए/भूतों और प्रेतों तथा/पिशाचों और बेतालों के लिये ही/मनुष्य के लिए नहीं -फली यह।''

ये सुविधापरस्त लोग जो सुविधाएं और सफलता के सिक्के बटोरने के लिए घुग्घु, सियार और बेताल बन जाते हैं। मुक्तिबोध उन्हें भी ललकारते हैं और स्वयं को उनसे अलग करते हैं-

सामाजिक महत्त्व की/गिलौरियां खाते हुए/असत्य की कुर्सी पर/आराम से बैठे हुए/मनुष्य की त्वचाओं का पहने हुए, ओवरकोट,/बंदरों व रीछों के सामने/नयी-नयी अदाओं से नाच कर/झूठाई की तालियां देने से/लेने से/सफलता के ताले ये खुलते हैं/जवाब यह मेरा है/जा कर उन्हें कह दो कि सफलता के जंग-खाये/तालों और कुंजियों/की दुकान है कबाड़ी की।''

मुक्तिबोध की एक और कविता है 'एक रंग का राग'। इसमें वे बताते हैं कि आज के युग में तो बुराइयाँ, भ्रष्टाचार, झूठ, बेईमानी, धोखाधड़ी इस व्यवस्था के कारण रेत के कणों सी समाज में फैल गयी है और वे केवल व्यंग्य का विषय है। आगे उसके लिए तर्क भी दिया है कि यह तो अंग रूप है, हमारे जीवन का अटूट हिस्सा है-

पूर्व युगों में भी खूब बुराइयां रहती आयीं हैं/किंतु, वे भीमाकार शक्ति रूप/दिखलायी जाती थीं,/रावण व कुम्भकर्ण, शैतान/उनका ही रूप था।/उनसे डरा जाता था, उनसे लड़ा जाता था।

किंतु उसी अमंगल को आज सिर्फ/सहा जाता है।/हास कह कर/आज वह मात्र व्यंग्य रूप है। तर्क यह -हाय ! यह सबका अंग रूप है।''

मुक्तिबोध गहन मानसिक अन्तर्द्वंद्वों और तीखे सामाजिक अनुभवों के कवि हैं। मुक्तिबोध की कविताओं में जिन शब्दों का बहुत इस्तेमाल हुआ है उनमें से एक शब्द है- 'अंधेरा', इसी से मिलते-जुलते और शब्द भी हैं- स्याह, काला, याम, सांवला, रात, तम-अंतराल, तिमिर आदि। यहाँ तक कि कुछ प्रसिद्ध फूलों को भी कवि इसी रंग में देखता है-

काले गुलाब व स्याह सिवन्ती/स्याह चमेली! सफवलाये कमल/'' आदि। यह अंधेरा क्या है,? कवि इससे इतना घिरा हुआ क्यों है? वास्तव में यह अंधेरा मन का और मन को बनाने वाली बाह्य परिस्थियों का है। भीतर और बाहर के इस अंधेरे में मुक्तिबोध अपने आत्मरूप की, आत्माभिव्यक्ति की खोज करते हैं। डायरी में कवि लिखता है-

''मुझे लगता है, मन एक रहस्यमय लोक है। उसमें अंधेरा है अंधेरे में सीढ़ियां हैं। सीढ़ियां गीली हैं। सबसे निचली सीढ़ी पानी में डूबी हुई हैं। वहाँ अथाह काला जल हैं। उस अथाह जल से स्वयं को ही डर लगता है। इस अथाह काले जल में कोई बैठा है- वह शायद में ही हूँ। ''मैं का यह रहस्यमय लोक मुक्तिबोध की कविताओं में बार-बार आता है। गड्ढा, बावड़ी, तालाब, तिलिस्मी खोह, तह आदि जैसे प्रयोग मन के इसी रहस्यमय लोक की ओर ले जाते हैं-चला जा रहा हूँ /सूखे हुए झरने की पथरीली गली

में/भयानक गुफाओं में घुसता हूँ कांप कर/मन मार/उतरता हूँ गड्ढों में, खोहों के तले में।

मन के भीतर इन अंधेरों में आत्मा का सत्य छिपा बैठा है जो सौ-सौ पहरों में बंधा हुआ है। ये पहरे मनुष्य की आत्मा पर सदियों में इस शोषणवादी - सामंती, पूँजीवादी व्यवस्था की देन है। इसलिए कवि बार-बार भीतर की ओर भागता है जहाँ ज्ञान, वीर्य, ओज, प्रकाश, जहरीली आग, स्वर्ण स्फुलिंग अंगारी धूप, किरण, सूर्य मिलते हैं-

सच, हृदय रक्त के लाल थाल/में डूबा, गहरे डूबा है/जीवन विवेक /दुर्दान्त ज्ञान का मणि अशोक यह जो जीवन विवेक है। 'यही कवि का आत्म सत्य है, इस को चरितार्थ करना, इसे कर्म में ढालना ही विचारों को आचार में परिणत करना है। मुक्तिबोध के आत्मसंघर्ष की यह एक मुख्य दिशा है। विचार और कर्म का द्वंद्व, रचनाकर्म और नागरिक कर्म। मुक्तिबोध से अपराध-बोध को इस संदर्भ में समझा जा सकता है और इसी संदर्भ में उसकी परम अभिव्यक्ति की बेचैनी भी समझी जा सकती है- अपने अनुभव सत्य को जन तक पहुँचाने की कितनी बेचैनी है कितनी छटपटाहट है। तब हम भी अपने अनुभव के/सारांशों को उन तक पहुँचाते हैं जिसमें/जिस पहुँचाने के द्वारा हम, सब साथी मिल/दण्डक बन में से लंका का पथ खोज निकाल सकें।

मुक्तिबोध के इस भीतरी भयानक मनः संघर्ष को बनाने वाली परिस्थितियां बाहर हैं। पूँजीवादी व्यवस्था और समाज में हैं, इसलिए उनके काव्य में जितना संत्रास है, उतना ही विद्रोह भी है। मुक्तिबोध की कविताओं में अंधेरे के अलावा जो दूसरा शब्द और रंग बहुतायत में प्रयुक्त हुआ है वह है- 'लाल'।

लाल-लाल चादरें/सिंदूरी झंडियाँ/सुनहरी पताकाएँ फरफरा रही हैं/और आसमान में/कत्थई गेरूएँ/धुए बड़ी-बड़ी लहरें/तैरती है हवा में/घुसती है लाल-लाल मशाल अजीब सी,/अन्तराल-विवर के तम में/लाल-लाल कुहरा/कुहरें में, सामने, रक्तालोक-स्नात पुरुष एक/रहस्य साक्षात्/धरती ने खिलाये हैं ज्वलंत लाल-लाल/नये-नये फूल कैसे लगते हैं आग भरे/जीवन-सुहाग-भरे।''

इसके अतिरिक्त ''लाल चिंता की रूधिर-धारा, किरणों के रक्त मणि, रक्तिम तितलियाँ, गेरूआ, ज्वाला, आभ्यंतर का अग्नि-सरोवर'' आदि कविताओं में प्रयुक्त शब्द 'अंधेरे' के विरुद्ध अपनी आभा का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह आभा क्रांति की आशा और आकांक्षा की है-

भारतीय अंधेरी गहरी-गहरी गलियों में आजकल/सर्दी की भयानक काली-काली रातें हैं/व उनके किनारों पर/ विद्रोह के जल रहे लाल-लाल/धधकते अंगार/''

यह लाल रंग क्रांति का सूचक है। मुक्तिबोध ने यह अनुभव किया है कि क्रांति के द्वारा ही परिवर्तन लाया जा सकता है, राजनीतिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन। सार रूप में हम कह सकते हैं कि मुक्तिबोध का समग्र कार्य आज की परिस्थितियों में भी कितना सच्चा और प्रासंगिक है। आप चिंतन के तराजू पर तौलकर देखिए।

प्रोफेसर, (हिंदी विभाग), राजकीय वाणिज्य स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय कोटा एवं समन्वयक हिन्दी विभाग कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान), मो. 0 94628 29900

संदर्भ :

1. मुक्तिबोध रचनावली भाग दो
2. भूरी-भूरी खाक धूल मुक्तिबोध
3. चाँद का मुँह टेड़ा है (द्वितीय संस्करण), मुक्तिबोध
4. नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र, मुक्तिबोध
5. नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध, मुक्तिबोध
6. कविता के नए प्रतिमान, डॉ. नामवर सिंह
7. आधुनिक कविता और युग दृष्टि, डॉ. शिव कुमार मिश्र
8. गजानन माधव मुक्तिबोध व्यक्तित्व और कृतित्व,जनक शर्मा
9. गजानन माधव मुक्तिबोध, सं. लक्ष्मण दत्त गौतम
10. तार सप्तक,सं. अज्ञेय
11. नयी कविता और अस्तित्ववाद, डॉ. रामविलास शर्मा
12. मुक्तिबोध प्रतिबद्ध कला के प्रतीक, चंचल चौहान
13. मुक्तिबोध विचारक, कवि और कथाकार, डॉ. सुरेन्द्र प्रताप
14. मुक्तिबोध का रचना संसार, डॉ. गंगा प्रसाद विमल
15. मुक्तिबोध का काव्य, नरेन्द्र देव
16. नये प्रतिनिधि कवि, डॉ. हरिचरण शर्मा
17. नयी कविता स्वरूप और समस्याएँ , डॉ. जगदीश गुप्त

पत्र-पत्रिकाएँ

1. वीणा- श्री मुक्तिबोध स्मृति अंक
2. आलोचना अंक 6
3. कल्पना, नवम्बर 1964
4. समीक्षा, अक्टूबर-दिसम्बर, 1981

आलेख

आनंदोल्लास और भाईचारे का मंगल पर्व 'होली'

◆ डॉ. जगदीश गांधी

भारत संस्कृति में त्योहारों एवं उत्सवों का आदि काल से ही काफी महत्व रहा है। हमारी संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता है कि यहाँ पर मनाये जाने वाले सभी त्योहार समाज में मानवीय गुणों को स्थापित करके, लोगों में प्रेम, एकता एवं सद्भावना को बढ़ाते हैं। भारत में त्योहारों एवं उत्सवों का सम्बन्ध किसी जाति, धर्म, भाषा या क्षेत्र से न होकर समभाव से है। यहाँ मनाये जाने वाले सभी त्योहारों के पीछे की भावना मानवीय गरिमा को समृद्धता प्रदान करना होता है। यही कारण है कि भारत में मनाये जाने वाले सभी प्रमुख त्योहारों एवं उत्सवों में सभी धर्मों के लोग आदर के साथ मिलजुल कर मनाते हैं। होली भारतीय समाज का एक प्रमुख त्योहार है, जिसका लोग बेसब्री के साथ इंतजार करते हैं। परम पिता परमात्मा से हमारी प्रार्थना है कि होली का मंगल पर्व हम सभी के जीवन में नई आध्यात्मिक क्रान्ति लाए!

होली को लेकर देश के विभिन्न अंचलों में तमाम मान्यतायें हैं और शायद यही विविधता में एकता, भारतीय संस्कृति का परिचायक भी है। भारत के उत्तर-पूर्व में होलिकादहन को भगवान कृष्ण द्वारा राक्षसी पूतना के वध दिवस के रूप में जोड़कर, पूतना दहन के रूप में मनाया जाता है तो दक्षिण भारत में मान्यता है कि इसी दिन भगवान शिव ने कामदेव को तीसरा नेत्र खोल भस्म कर दिया था। तत्पश्चात् कामदेव की पत्नी रति के दुख से द्रवित होकर भगवान शिव ने कामदेव को पुनर्जीवित कर दिया, जिससे प्रसन्न होकर देवताओं ने रंगों की वर्षा की। इसी कारण होली की पूर्व संध्या पर दक्षिण भारत में अग्नि प्रज्जवलित कर उसमें गन्ना, आम की बौर और चन्दन डाला जाता है। यहाँ गन्ना कामदेव के धनुष, आम की बौर कामदेव के बाण, प्रज्जवलित अग्नि शिव द्वारा कामदेव का दहन एवं चन्दन की आहुति कामदेव को आग से हुई जलन हेतु शांत करने का प्रतीक है।

'होलिका' का दहन समाज की समस्त बुराइयों के अंत का प्रतीक है

होली भारत के सबसे पुराने पर्वों में से एक है। होली की हर कथा में एक समानता है कि उसमें 'असत्य पर सत्य की विजय' और 'दुराचार पर सदाचार की विजय' का उत्सव मनाने की बात कही गई है। इस प्रकार होली मुख्यतः आनंदोल्लास तथा भाई-चारे का त्योहार है। यह लोक पर्व होने के साथ ही अच्छाई की बुराई पर जीत, सदाचार की दुराचार पर जीत व समाज में व्याप्त समस्त बुराइयों के अंत का प्रतीक है। ऐसा माना जाता है कि होली के दिन लोग पुरानी कटुता व दुश्मनी को भूलकर एक-दूसरे के गले मिलते हैं और फिर ये दोस्त बन जाते हैं। राग-रंग का यह लोकप्रिय पर्व बसंत का संदेशवाहक भी है। किसी कवि ने होली के सम्बन्ध में कहा है कि - नफरतों के जल जाएं सब अंबार होली में। गिर जाये मतभेद की हर दीवार होली में।। बिछुड़ गये जो बरसों से प्राण से अधिक प्यारे, गले मिलने आ जाएं वे इस बार होली में।।

प्रभु के प्रति अटूट भक्ति एवं निष्ठा' के प्रसंग की याद दिलाता है यह महान पर्व

होली पर्व को मनाये जाने के कारण के रूप में मान्यता है कि प्राचीन काल में हिरण्यकश्यप नाम का एक अत्यन्त बलशाली एवं घमण्डी राक्षस अपने को ही ईश्वर मानने लगा था। हिरण्यकश्यप ने

अपने राज्य में ईश्वर का नाम लेने पर ही पाबंदी लगा दी थी। हिरण्यकश्यपु का पुत्र प्रह्लाद ईश्वर का परम भक्त था। प्रह्लाद की ईश्वर भक्ति से क्रुद्ध होकर हिरण्यकश्यप ने उसे अनेक कठोर दंड दिए, परंतु भक्त प्रह्लाद ने ईश्वर की भक्ति का मार्ग न छोड़ा। हिरण्यकश्यप की बहन होलिका को वरदान प्राप्त था कि वह आग में भस्म नहीं हो सकती। हिरण्यकश्यप के आदेश पर होलिका प्रह्लाद को मारने के उद्देश्य से उसे अपनी गोद में लेकर अग्नि में बैठ गई। किन्तु आग में बैठने पर होलिका तो जल गई परंतु ईश्वर भक्त प्रह्लाद बच गये। इस प्रकार होलिका के विनाश तथा भक्त प्रह्लाद की प्रभु के प्रति अटूट भक्ति एवं निष्ठा के प्रसंग की याद दिलाता है यह महान पर्व।

जो प्रभु की आज्ञा तथा इच्छा को पहचान लेता है फिर उसे संसार की कोई शक्ति प्रभु कार्य करने से रोक नहीं सकती

यह संसार का कितना बड़ा अजूबा है कि असुर प्रवृत्ति के तथा ईश्वर के घोर विरोधी दुष्ट राजा हिरण्यकश्यप के घर में ईश्वर भक्त प्रह्लाद का जन्म हुआ। प्रह्लाद ने बचपन में ही प्रभु की इच्छा तथा आज्ञा को पहचान लिया था। निर्दयी हिरण्यकश्यप ने अपने बेटे प्रह्लाद से कहा कि यदि तू भगवान का नाम लेना बंद नहीं करेंगा तो मैं तुझे आग में जला दूँगा। उसके दुष्ट पिता ने प्रह्लाद को पहाड़ से गिराकर, जहर देकर तथा आग में जलाकर तरह-तरह से घोर यातनायें दी। प्रहलाद ने अपने पिता हिरण्य-कश्यप से कहा कि पिताश्री यह शरीर आपका है इसका आप जो चाहे सो करें, किन्तु आत्मा तो परमात्मा की है। इसे आपको देना भी चाहूँ तो कैसे दे सकता हूँ। प्रह्लाद के चिन्तन में भगवान आ गये तो हिरण्यकश्यप जैसे ताकतवर राजा का अंत नृसिंह अवतार के द्वारा हो गया। इसलिए हमें भी प्रह्लाद की तरह अपनी इच्छा नहीं वरन् प्रभु की इच्छा और प्रभु की आज्ञा का पालन करते हुए प्रभु का कार्य करना चाहिए।

होली पर्व के पीछे तमाम धार्मिक मान्यताएं, मिथक, परम्पराएं और ऐतिहासिक घटनाएं छुपी हुई हैं पर अंततः इस पर्व का उद्देश्य मानव-कल्याण ही है। लोकसंगीत, नृत्य, नाट्य, लोककथाओं, किस्से- कहानियों और यहां तक कि मुहावरों में भी होली के पीछे छिपे संस्कारों, मान्यताओं व दिलचस्प पहलुओं की झलक मिलती है। होली को आपसी प्रेम एवं एकता का प्रतीक माना जाता है। होली हमें सभी मतभेदों को भुलाकर एक-दूसरे को गले लगाने की प्रेरणा प्रदान करती है। इसके साथ ही रंग का त्योहार होने के कारण भी होली हमें प्रसन्न रहने की प्रेरणा देती है।

सभी धर्मों के लोग मिलकर मनाते हैं 'होलिकोत्सव'

होली जैसे पवित्र त्योहार के सम्बन्ध में सुप्रसिद्ध मुस्लिम पर्यटक अलबरूनी ने अपने ऐतिहासिक यात्रा संस्मरण में होलिकोत्सव का वर्णन किया है। भारत के अनेक मुस्लिम कवियों ने अपनी रचनाओं में इस बात का उल्लेख किया है कि होलिकोत्सव केवल हिंदू ही नहीं अपितु मुसलमान लोग भी मनाते हैं। इसका सबसे प्रामाणिक इतिहास की तस्वीरें मुगलकाल की हैं और इस काल में होली के किस्से उत्सुकता जगाने वाले हैं। इन तस्वीरों में अकबर को जोधाबाई के साथ तथा जहाँगीर को नूरजहाँ के साथ होली खेलते हुए दिखाया गया है। शाहजहाँ के समय तक होली खेलने का मुगलिया अंदाज ही बदल गया था। इतिहास में वर्णन है कि शाहजहाँ के जमाने में होली को 'ईद-ए-गुलाबी या आब-ए-पाशी' (रंगों की बौछार) कहा जाता था। अंतिम मुगल बादशाह शाह जफर के बारे में प्रसिद्ध है कि होली पर उनके मंत्री उन्हें रंग लगाते थे।

होली का आधुनिक रूप

होली रंगों का त्योहार है, हँसी-खुशी का त्योहार है। लेकिन होली के भी अनेक रूप देखने को मिलते हैं। प्राकृतिक रंगों के स्थान पर रासायनिक रंगों का प्रचलन, नशेबाजी की बढ़ती प्रवृत्ति और लोक-संगीत की जगह फिल्मी गानों का प्रचलन इसके कुछ आधुनिक रूप है। पहले जमाने में लोग टेसू और प्राकृतिक रंगों से होली खेलते थे। वर्तमान में अधिक से अधिक पैसा कमाने की होड़ में लोगों ने बाजार को रासायनिक रंगों से भर दिया है। वास्तव में रासायनिक रंग हमारी त्वचा के लिए काफी नुकसानदायक होते हैं। इन रासायनिक रंगों में मिले हुए सफेदा, वार्निश, पेंट, ग्रीस, तारकोल आदि की वजह से हमको खुजली और एलर्जी होने की आशंका भी बढ़ जाती है। इसलिए होली खेलने से पूर्व हमें बहुत सावधानियाँ बरतनी चाहिए। हमें चंदन, गुलाबजल, टेसू के फूलों से बना हुआ रंग तथा प्राकृतिक रंगों से होली खेलने की परंपरा को बनाये रखते हुए प्राकृतिक रंगों की ओर लौटना चाहिए।

होली पर्व का मुख्य उद्देश्य 'मानव कल्याण' ही है

होली पर्व के पीछे तमाम धार्मिक मान्यताएं, मिथक, परम्पराएं और ऐतिहासिक घटनाएं छुपी हुई हैं पर अंततः इस पर्व का उद्देश्य मानव-कल्याण ही है। लोकसंगीत, नृत्य, नाट्य, लोककथाओं, किस्से-कहानियों और यहाँ तक कि मुहावरों में भी होली के पीछे छिपे संस्कारों, मान्यताओं व दिलचस्प पहलुओं की झलक मिलती है। होली को आपसी प्रेम एवं एकता का प्रतीक माना जाता है। होली हमें सभी मतभेदों को भुलाकर एक-दूसरे को गले लगाने की प्रेरणा प्रदान करती है। इसके साथ ही रंग का त्योहार होने के कारण भी होली हमें प्रसन्न रहने की प्रेरणा देती है। इसलिए इस पवित्र पर्व के अवसर पर हमें ईर्ष्या, द्वेष, कलह आदि बुराइयों को दूर भगाना चाहिए। वास्तव में हमारे

द्वारा होली का त्योहार मनाना तभी सार्थक होगा जबकि हम इसके वास्तविक महत्व को समझकर उसके अनुसार आचरण करें। इसलिए वर्तमान परिवेश में जरूरत है कि इस पवित्र त्योहार पर आडम्बरता की बजाय इसके पीछे छुपे हुए संस्कारों और जीवन-मूल्यों को अहमियत दी जाए तभी व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र सभी का कल्याण होगा।

होली पर्व के जोश के लिए कुछ सुझाव

होली का लुत्फ घर में बच्चों से ज्यादा शायद ही कोई दूसरा उठाता होगा। इन बच्चों की होली की तैयारियां कई दिनों से शुरू हो जाती हैं जिसके चलते हर घर में अफरा-तफरी का माहौल छा जाता है। रंगों से ले कर तरह-तरह की पिचकारियों का मेला लगना तो आम बात होती है मगर इस धमाचौकड़ी में आपके बच्चे को कोई नुकसान न पहुंचे और वह अपनी होली पूरे जोश और रंग के साथ खेले इसके लिए हम आपको कुछ सुरक्षा उपाय बता रहे हैं :-

इससे पहले की आपके बच्चे अपनी-अपनी पिचकारियों के साथ घर से निकलें। आपके लिए यह जान लेना बहुत जरूरी है कि हर रंग किसी न किसी रासायनिक पदार्थ के प्रयोग से बना होता है। लाल रंग मरकरी सल्फाइट, बैगनी रंग क्रोमियम तथा ब्रोमाइड कंपाउंड, हरा रंग कॉपर सल्फेट और काला रंग लिड ऑक्साइड से बना होता है। इन खतरनाक रंगों के उपयोग से त्वचा में जलन, गंजापन, ऐलर्जी यहां तक की अंधापन होने की भी गुंजाइश रहती है। इसलिए यह अच्छा होगा की आप अपने बच्चों को ऐसे रंगों के उपयोग से दूर रखें और उन्हें हर्बल रंग खरीद कर दें।

इस दिन बच्चे ज्यादा उत्तेजित हो जाते हैं और वह खुशी में भूल जाते हैं कि उन्हें अपने पड़ोसियों से कैसा व्यवहार करना चाहिए। आप उन्हें बताइये कि अगर कोई रंग नहीं खेलना चाहता या बीमार है तो उससे जबरदस्ती न करें।

बच्चे जब आपस में होली खेल रहें हों तो आपका उनके आस-पास रहना बहुत जरूरी है। उन पर हमेशा ध्यान रखें की कहीं उनके आंखों या फिर मुंह में रंग न चला गया हो। साथ ही उन्हें पूरे कपड़े पहनने को बोलें तथा पूरे शरीर में तेल लगा कर ही बाहर भेजें।

ढेर सारे रंग और पिचकारियों के चलते होली के दिन पानी का खूब प्रयोग होता है। इस दिन घर में पानी ही पानी फैला होता है और घर में धमाचौकड़ी मचाते हुए बच्चों को रोकना भी कठिन होता है। इसलिए कोशिश करें कि बच्चों को डांटे बगैर उन्हें कहीं बाहर पार्क में होली खेलने की हिदायत दें।

कुछ बदमाश बच्चे होली में रंगों के बजाए गंदगी का प्रयोग करते हैं। अगर आप के बच्चे भी अंडा, मिट्टी या गंदे पानी का प्रयोग करना चाहें तो उन्हें तुरंत मना कर दें। साथ ही उन्हें गंदगी के दुष्प्रभाव बता कर इस पर्व पर सफाई रखने को कहें।

वह बच्चे जिन्हें चोट लगी हो या फिर मुंह पर मुंहासे आदि हों तो उन्हें डाक्टर से सलाह लेकर ही होली खेलने दें। कुछ रंग इतने हानिकारक होते हैं कि वह त्वचा के माध्यम से अंदर प्रवेश कर के शरीर को नुकसान पहुंचा सकते हैं।

इस बात पर ध्यान दें कि आपका बच्चा रासायनयुक्त रंगों से न खेल रहा हो। आप चाहें तो अपने घर पर ही हल्दी, टेसू या अन्य प्रकार के हर्बल रंग बना कर उन्हें दे सकते हैं।

बाइक जैसे तेज वाहन लेकर होली खेलने जाने से अपनी किशोर तथा युवा संतानों को समझाकर जाने से रोके। होली के दिन नशे में तेज गति से रफड्राइविंग से सर्वाधिक दुर्घटनायें भारत में होती हैं। घर के आसपास ही होली खेलने की सलाह दें।

होली का मंगलपर्व हम सभी के लिए एक नई आध्यात्मिक क्रांति लाए

होली भारत के अलावा अनेक देशों में धूमधाम से मनाया जाने वाला एक बड़ा त्योहार है। इसका विशेष आयोजन भारत देश के ब्रज क्षेत्र में लगभग एक माह पहले से किया जाता है। इस त्योहार का अहम मकसद पुरानी रंजिशों को होली में जलाने के बाद आपसी दिल मिला कर, नया सकारात्मक मानवीय अध्याय शुरू करना होता है। अगर आप थोड़ा सा भी सजग एवं सावधान रहें तो त्योहार की खूबसूरती बरकरार रह पाएगी। रंगों द्वारा खेलने की वजह से ही इसका महत्व विशिष्ट बड़े त्योहारों में गिना जाता है। शुभ होली! हम सभी इसी संकल्प से संकल्पित हो कि होली का मंगलपर्व हम सभी के जीवन में एक नई आध्यात्मिक क्रांति लाए, जिसके प्रवाह में सफलता के सुनहले रंग से जीवन आच्छादित हो उठे।

शिक्षाविद् एवं संस्थापक-प्रबंधक, सिटी मोंटेसरी स्कूल, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

दिल में उमंग लिए, हाथों में रंग लिए

मन में खुशियां लिए, अपनों को संग लिए, बुजुर्गों का आशीर्वाद लिए

बच्चों का प्यार लिए, रंगों का खुमार लिए, होली का त्योहार लिए

शोध लेख

मोहन राकेश के कथा-साहित्य में संवेदना के विविध आयाम

◆ डॉ. राजेंद्र सिंह

मोहन राकेश के लेखन के संबंध में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने अपने जीवन के अनुभवों और अनुभूतियों को अपने कथा-साहित्य की पृष्ठभूमि बनाया। मोहन राकेश का संवेदनशील मन सदा अपने आस-पास की घटनाओं से उद्वेलित होता देखा जा सकता है। उन्होंने संवेदना भरी दृष्टि से जीवन को देखा और उसे अपनी कृतियों में अभिव्यंजित किया। एक ओर राकेश अपने मन की व्याकुलता को व्यक्त करना चाहते हैं, दूसरी ओर वे अपने आस-पास के जीवन को खुली दृष्टि से देखते हैं और उसका उपयोग अपनी रचनाओं में करते हैं। इस प्रकार उनकी रचनाओं में दो संसार एक साथ हैं- अपना और सबका। राकेश की अनुभूति जीवन के नाना प्रसंगों से सीधी जुड़ी हुई है। स्वयं राकेश ने लिखा है, ''मेरे लिए अनुभूति का सीधा संबंध मेरे यथार्थ से है मेरा समय और परिवेश-व्यक्ति से परिवार, परिवार से राष्ट्र और राष्ट्र से मानव समाज तक का पूरा परिवेश। मैं इनमें से किसी एक से कट कर शेष से जुड़ा नहीं रह सकता- अपने पास के संदर्भों से आँख हटाकर दूर के संदर्भों में नहीं जा सकता।''[1] मोहन राकेश ने लेखन की प्रेरणा को समयबद्ध करने की भी लगातार चेष्टा की है। इसका प्रमाण है इनका 'आषाढ़ का एक दिन' और 'लहरों के राजहंस'। उन्होंने इन नाटकों में प्राचीन को भी सामयिक परिवेश से जोड़ा है।

मोहन राकेश के कथा-साहित्य में सामाजिक, वैयक्तिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि अनेक संवेदनाएँ पाई जाती हैं। राकेश ने पिता की मृत्यु के साथ-साथ प्रिया दिव्या की मृत्यु भी देखी। विभाजन के दर्द को झेला तथा अपनी भूमि से उखड़ने के दुख सहे। अग्निकांड, नृशंस हत्या, बलात्कार, लूटपात, विस्फोट आदि को अपनी खुली आँखों से देखा। अनेक स्थानों पर नौकरियाँ कीं और छोड़ीं। राकेश ने पिता की आर्थिक विपन्नता देखी तथा स्वयं अपने जीवन में दयनीय आर्थिक स्थितियों का सामना किया। इस तरह निजी अनुभव का क्षेत्र बढ़ता गया। पिता के साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्कारों ने उन्हें अत्यधिक प्रभावित किया। उनके अध्यापक पंडित राधारमण ने संस्कृत साहित्य से साक्षात्कार करवाया एवं उनकी रचनाओं को सुसंस्कृत रूप दिया। अंग्रेजी साहित्य तथा देश-विदेश के साहित्य की नवीन गतिविधियों के अध्ययन ने राकेश को मांजा, परिष्कृत किया तथा समसामयिक परिवेश से जोड़ा।

इन तमाम बातों एवं घटनाओं ने राकेश को गहरी अनुभूति प्रदान की, उनके अनुभव को व्यापक बनाया तथा उन्हें आधुनिक युगबोध से संबद्ध किया। राकेश के कथा-साहित्य में संवेदना के विविध आयाम निम्नवत् हैं -

साहित्य हर स्तर पर समाज से जुड़ा हुआ है। समाज के किसी भी अंग को वह अपनी रचना का विषय बना सकता है। यह वर्तमान परिस्थितियों में जिस घुटन, पीड़ा, संत्रास का अनुभव करता है, वह उसकी पीड़ा न होकर वास्तक में पूरे समाज की पीड़ा होती है। समाज और जीवन के साथ कहानीकार का गहरा रिश्ता होता है। समाज में भिन्न-भिन्न वर्गों के लोग रहते हैं। साहित्यकार समाज के जिन अनुभवों को अपने साहित्य में व्यक्त करता है, वही अनुभव आगे चलकर सामाजिक संवेदना का रूप धारण कर लेते हैं। कोई भी साहित्यकार समाज से बाहर रहकर अपनी रचना का निर्माण नहीं कर सकता।

समाज में जो भी घटित होता है, साहित्यकार उसे अपने साहित्य में शामिल करता है। जैसे-जैसे समाज में बदलाव आता जाता है, वैसे-वैसे ही साहित्यकार के साहित्य में भी बदलाव आता जाता है। राकेश ने समाज में घटित होने वाली कई घटनाओं को और समस्याओं को अपने साहित्य में शामिल किया है। उन्होंने शोषक और शोषित के संबंध तथा वर्ग संघर्ष को आम पाठक के सामने रखने की कोशिश की है। शोषित में नारी की समस्याओं को प्रमुख विषय बनाया है। इनके साथ ही उन्होंने मध्यवर्गीय लोगों की स्थिति और मानव मूल्यों का वर्णन भी अपने साहित्य में किया है।

नाटककार, उपन्यासकार, कहानीकार राकेश के ये तीनों रूप एक से बढ़कर एक हैं। उनके शब्द यथार्थ चित्रण के लिए पूर्ण सक्षम हैं। इन तीनों रूपों में राकेश ने अक्षयकीर्ति अर्जित की। स्वाधीनता के पश्चात् जिन नई स्थितियों और नए बदलते जीवन मूल्यों को समकालीन मनुष्य अनुभव कर रहा था, उसे पहली बार राकेश ने सहानुभूति और साहस से अभिव्यक्त किया। सुषमा

अग्रवाल का कहना है, ''वस्तुतः राकेश का औपन्यासिक मानस एक ऐसा दर्पण है जिसमें स्वातन्त्रयोत्तर समाज की विभिन्न छवियों, प्रतिध्वनियों के रंग दिखाई देते हैं। मध्यवर्गीय समाज की जो तस्वीर राकेश के उपन्यासों में है, उसकी रूपरेखा की एक पहचान उनकी कहानियों के माध्यम से भी की जा सकती है।'' मोहन राकेश के कथा-साहित्य में तीन पक्ष हैं। उसमें एक ओर स्वतन्त्रता, देश के विभाजन और स्वतन्त्र देश की कुछ समस्याओं का रेखांकन है, तो दूसरी ओर उनकी कुछ कहानियों में राजनीतिक और नैतिक प्रसंग भी मिले हुए हैं। कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं, जिनमें व्यक्ति और उससे संबंधित समस्याओं को भी उभारा गया है। राकेश के उपन्यास कहानियों से अलग तो नहीं हैं, पर संवेदना एवं विचारधारा के स्तर पर वे अत्यधिक समसामयिक और सशक्त हैं।

परिवर्तनशील युग के साथ-साथ व्यक्ति की विचारधारा भी बदलती रहती है। साहित्य उसी युग के सत्य को उद्घाटित करने के लिए बाध्य होता है। समाज के हर पहलू पर साहित्यकार अपने विचार साहित्य के माध्यम से व्यक्त करता है। वह सामाजिक समस्याओं को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त करता है। कोई भी साहित्यकार अपने युग की परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। साहित्यकार की वैयक्तिक संवेदना का निर्माण वही समाज करता है, जिसमें वह रहता है। आज व्यक्ति को समाज में अनेक विषमताओं का सामना करना पड़ रहा है। ऐसी विषम परिस्थितियों में देश की जो संवेदनशील, महत्त्वाकांक्षी और भविष्य के सुनहरे सपने देखने वाले साहित्यकारों की नई पीढ़ी उभरी, वह क्षोभ और आक्रोश से भरी हुई है। मोहन राकेश स्वयं इसी सामान्य जनता के अंग थे और उसकी सारी विषमताओं को भोग रहे थे।

मोहन राकेश का व्यक्तित्व अंतर्विरोधों से परिपूर्ण था। गोविन्द चातक ने तो उनके विषय में लिखा है, ''शायद मोहन राकेश एक अजीब मिट्टी से बना था। बेहद दोस्तों से घिरा हुआ, हंसी-ठहाकों में खोया हुआ, जिंदगी का मुस्तैद सिपाही, मुंहफट और जिंदगी को अपनी ही शर्त पर जीने वाला एक राकेश था, उसी के अन्दर एक दूसरा भी राकेश था जिसकी एक निजी भूख थी जो कभी मिटी नहीं, जिसने असुरक्षा की भावना को झेला था, जो अकेले जिंदगी से जूझा था, जो जीवन में सराबोर रहकर भी जिंदगी से हार गया था। बहुत सारे टूटते संबंधों की परवाह न करने वाला इन्सान, पर वास्तविक जीवन में वह कमज़ोर था, भावुक था। इनमें असली राकेश कौन था, यह चर्चा का विषय हो सकता है। उसे किसी ने समझा भी नहीं, यह भी कहना मुि कल है।'' फिर भी अपने चारों तरफ लोगों को इकट्ठा करना शायद वे जानते थे। राकेश की एक और विशेषता यह है कि उनमें भावना का लगाव इतना सीधा और सच्चा लगता है कि अपनी रचनाओं में वे पुरोधा लगते हैं। वे अपने लेखन को मानवीय पीड़ा और तड़प के अनुष्ठान के रूप में लेते रहे। उन्होंने दर्द भरे सवाल ही नहीं उठाए वरन् सवालों से घिरी अपनी एक दुनिया भी खड़ी की जिसमें, पीड़ाएँ और यंत्रणाएँ हैं, संशय और विवषताएं हैं, किन्तु मोक्ष या मुक्ति नहीं है। लोग उन्हें ठीक समझे या न समझे, वे अपने को ठीक समझते थे। जो कुछ उन्होंने लिखा, उसे उन्होंने जीवन में जिया भी था। इसलिए जो कुछ भी उन्होंने लिखा, आंतरिक दबाव से उद्भूत था, निजी आवश्यकताओं की देन था।

मोहन राकेश ने अधिकतर स्वतन्त्र रूप से ही लेखन कार्य किया। इसके लिए वे किसी भी समझौते के लिए तैयार नहीं थे। इसी कारण उन्होंने अपने जीवन में अनेक नौकरियां छोड़ी। उनके लेखक के रूप में फिल्म कंपनी से दिये गये त्याग-पत्र का एक अंश उनकी इस विशिष्टता को अच्छी प्रकार उजागर करता है - ''............मेरे अधीन काम करते थे। अब स्थिति ऐसी चरम सीमा को पहुँच चुकी हैं कि मेरा मस्तिष्क अब ऐसे कार्य से और अधिक संबद्ध रहने को इनकार करता है। मैं अपने जीवन के लाभों को भविष्य की सुनहरी आशाओं की वेदी पर न्योछावर नहीं कर सकता।'' राकेश ने जितना भी साहित्य लिखा उसमें अपने जीवन-मूल्यों को नहीं त्याग सके। उन्होंने पूरी ईमानदारी से साहित्य लिखा। जहाँ बहुत से लेखक अपने व्यक्तित्व को कई खानों में बांटकर जी लेते हैं, वहाँ उनका सारा वुजूद एक की खाना है। उनके जीवन से लेकर साहित्य तक एक ही प्रतिमान था। सुषमा अग्रवाल ने लिखा है, ''जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण उनकी जीने की अदम्य लालसा के कारण विकसित होता गया था। अनेक संघर्षों और असंगतियों के बीच उनके भीतर जिजीविषा थी। जितने अधिक संघर्ष आते और जितनी उलझने बढ़ती जातीं, उतनी ही मात्रा में जिजीविषा और गहरी होती जाती थी। जीवन को अपने ढंग से जीने के क्रम में वे न तो किसी की परवाह करते थे और न यही सोचते थे कि मेरे इस व्यवहार से किस पर कितना प्रभाव पड़ेगा?'' इससे भी स्पष्ट है कि मोहन राकेश ने राजनीति से स्वतन्त्र होकर ही साहित्य की रचना की है।

मोहन राकेश के कथा-साहित्य में भी किसान, मजदूर के प्रति उनकी आर्थिक संवेदना को देखा जा सकता है। किसानों की

मोहन राकेश के कथा-साहित्य में तीन पक्ष हैं। उसमें एक ओर स्वतन्त्रता, देश के विभाजन और स्वतन्त्र देश की कुछ समस्याओं का रेखांकन है, तो दूसरी ओर उनकी कुछ कहानियों में राजनीतिक और नैतिक प्रसंग भी मिले हुए हैं। कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं, जिनमें व्यक्ति और उससे संबंधित समस्याओं को भी उभारा गया है। राकेश के उपन्यास कहानियों से अलग तो नहीं हैं, पर संवेदना एवं विचारधारा के स्तर पर वे अत्यधिाक समसामयिक और सशक्त हैं।

कविता

मैं हूं पेड़

◆ इंजी. आशा शर्मा

मैं हूं पेड़ मुझे मत काटो
टुकड़ों-टुकड़ों में मत बांटो
दर्द मुझे भी होता है
मन मेरा भी रोता है

मैं तो सखा तुम्हारा हूं
साथी सबसे न्यारा हूं
फल मैं खुद नहीं खाता हूं
सब तुमको दे जाता हूं।

जहरीली गैसें पी जाता
शुद्ध हवा तुम तक पहुंचाता
झूम-झूम के जब लहराऊं
मानसून के बादल लाऊं

धरती का श्रृंगार करूं
सूरज का सब ताप हरूं
जीवन का मैं हूं आधार
फिर भी तुम करते प्रहार।

सुनो बात तुम देकर कान
वृक्षों का करना सम्मान
रखवाली हरियाली की
चाबी है खुशहाली की।

123, करणी नगर, लालगढ़, बीकानेर, राजस्थान-334 001, मो. 0 94133 59571

स्थिति तो इतनी दयनीय है और उनके खेतों में भी कुछ नहीं उगता। मोहन राकेश ने 'उसकी रोटी' कहानी में लिखा है, ''नकोदर रोड में उस हिस्से में आस-पास कोई छायादार पेड़ भी नहीं था। वहाँ की ज़मीन भी ऊबड़-खाबड़ थी- खेत वहाँ से तीस चालीस गज़ के फासले से शुरू होते थे। खेतों में भी उन दिनों कुछ नहीं था।'' इसी प्रकार मोहन राकेश ने 'चांदनी और स्याह दाग' में अब्दुल गनी के गांव का वर्णन किया है, जिसको कबायलियों ने लूटा है। उन्होंने लिखा है, ''गांव के कई घरों में कबायली चार-चार, पांच-पांच दिन तक टिके रहे थे। उन घरों की लड़कियों की आंखें बदल गई थीं। जेहलम से पानी भरती थीं और सिंघाड़े बीनने के लिए जाती थीं, मगर ....।'' इस प्रकार स्पष्ट है कि किसानों की आर्थिक संवेदना मोहन राकेश के कथा-साहित्य में यत्र-तत्र देखी जा सकती है।

मोहन राकेश ने दिखाया है कि मध्यवर्गीय परिवार निरन्तर आर्थिक संकट से जूझ रहा था। 'रोजगार' कहानी में मिस दारूवाला की भावुकता अपने भाई के लिए है, जो कि कुछ नहीं कमाता। इसी बात पर मिसेज एडवर्डस उससे कहती है, ''तू पैसे देता है? मिसेज एडवर्डस रजिस्टर खोलकर गुस्से में उसके पन्ने उलटने लगी। कमाकर पैसे देता, तो तेरे होशो-हवास दुरूस्त रहते। तूने तो जिन्दगी में एक ही काम सीखा है, और वह है खाना और पड़े रहना।'' इस प्रकार मिस दारूवाला को अपने भाई के कारण आर्थिक संकट से जूझना पड़ता है। निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि मोहन राकेश के कथा-साहित्य में संवेदना के विविध आयाम पाए जाते हैं। सामाजिक संवेदना के अन्तर्गत पूँजीवादी व्यवस्था, निम्नवर्ग, मध्यवर्ग व दलित वर्ग, क्रान्ति का आह्वान, समसामयिक जीवन यथार्थ एवं समस्याएं तथा धर्म आदि आते हैं। वैयक्तिक संवेदना के अन्तर्गत राकेश के कथा-साहित्य में प्रेम और सौन्दर्य, भावनात्मक प्रेम, आत्मीयता की भावना और वासनात्मक प्रेम आते हैं। राकेश के साहित्य में राजनीतिक संवेदना भी विद्यमान है जिसमें साहित्य और राजनीति, वर्तमान राजनीति की विविध विसंगतियाँ हैं। अवसरवाद एवं भ्रष्टाचार, न्याय व्यवस्था की सीमाएं और नौकरशाही का शोषक रूप भी कथा-साहित्य में देखने को मिलता है। राष्ट्र के प्रति असीम स्नेह, अहिंसा व शान्ति, बुनियादी आवश्यकताएं, प्राचीन परम्परा और संस्कृति की उन्मुखता आदि सांस्कृतिक संवेदना के अन्तर्गत आते हैं। आर्थिक संवेदना भी राकेश के साहित्य में देखने को मिलती है, जिसमें राकेश ने किसान, मज़दूर की आर्थिक संवेदना, स्त्री-पुरुष संबंधों पर आधारित आर्थिक संवेदना तथा शिक्षित व नौकरीपेशा मध्यवर्गीय आर्थिक संवेदना को अपने कथा-साहित्य में चित्रित किया है।

सुपुत्र श्री दुनी चन्द, गांव व डाकघर जरी, तह. व ज़िला कुल्लू
हिमाचल प्रदेश-175105, मो. : 0 97791 15459

संदर्भ ग्रन्थ-सूची

1. मोहन राकेश, परिवेश वाराणसी: भारतीय ज्ञानपीठ, 1967
2. कमलेश्वर, सारिका बाम्बे : टाइम्स ऑफ इंडिया, 1973
3. सुषमा अग्रवाल, मोहन राकेश : व्यक्तित्व एवं कृतित्व जयपुर : पंचशील प्रकाशन, 1986
4. गोविन्द चातक, आधुनिक नाटक का मसीहा : मोहन राकेश दिल्ली : इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, 1975
5. मोहन राकेश, रोयें-रेशे दिल्ली : राधाकृष्ण प्रकाशन, 1968,
6. मोहन राकेश, मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानिया, दिल्ली : राजपाल एण्ड सन्ज, 1997

शोध लेख

चित्रा मुद्गल : पितृसत्ता से टकराहट और स्त्री-विमर्श

◆ संदीप कुमार

समकालीन हिन्दी साहित्य के गद्य और पद्य दोनों ही रूपों में स्त्री-विमर्श की तीव्र अनुगूँज सुनाई पड़ रही है। स्त्री-विमर्श, नारी से शोषण के विरोध में पितृसत्ता के खिलाफ चलाया जा रहा आन्दोलन है। नारी-शोषण जिसका अन्तहीन आरम्भ नारी के जन्म से पूर्व कन्या भ्रूणहत्या के रूप में आरम्भ हो जाता है और फिर क्रमशः बेटा, बेटी में भेदभाव, वैवाहिक सौदेबाजी, रूपहीनता का दंश, घरेलू हिंसा एवं उत्पीड़न, कार्य स्थल पर शोषण, बलात्कार तथा नारी अवमानना के रूप में निरन्तर बढ़ता चला जाता है। समकालीन हिन्दी साहित्य में नारी के दर्द और आँसू के साथ-साथ उसकी ललकार और तीक्ष्ण चुनौतियों की अनेकानेक भंगिमाएं अंकित होने के बावजूद मूल समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। इसका समाधान क्या हो सकता है? हमारे विचारानुसार इसका समाधान स्वयं नारी के पास है। नारी आदिशक्ति है। अतः उसे ही पितृसत्ता की बंदिशों को तोड़ते हुए बेटा और बेटी में अन्तर किए बिना आगे आने वाली सन्तति में नये संस्कारों, विचारों, मूल्यों एवं नयी सोच का उजाला भरना होगा और तभी नवप्रभात का उदय होगा जहाँ नारी खुलकर साँस ले सकेगी और पूर्ण आत्मसम्मान के साथ जी सकेगी।

विगत तीन-चार दशकों से हिन्दी साहित्य में स्त्रीवादी विचारधारा को पूर्णता मिली है और साहित्यिक मंचों पर भी स्त्री-विमर्श की चर्चा जोर पकड़ती जा रही है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सम्पूर्ण भारत वर्ष में स्त्री-चेतना का विकास धीरे-धीरे होने लगा और आठवें दशक तक पहुंचते-पहुंचते स्त्री-विमर्श का मुद्दा प्रचंड होता गया। स्त्रीशोषण, स्त्री संघर्ष, परम्परा मुक्ति, पृितसत्तात्मक टकराहट एवं संघर्ष, अस्मिता और अस्तित्व की लड़ाई तथा सशक्तिकरण को ध्यान में रखकर जो विचार व्यक्त किए जाते हैं, वे स्त्री-विमर्श के अंतर्गत आते हैं। इसमें नारी की वास्तविक स्थिति और उससे जुड़े अनेक मुद्दों का समग्र एवं सूक्ष्म चिंतन किया जाता है। स्त्री-विमर्श ने सदियों से चली आ रही स्वत्वहीनता और खामोशी को तोड़ा है और अपनी चुप्पी को गहरे मानवीय अर्थ दिए हैं। इसने स्त्री को पितृसत्तात्मक मूल्यों, दोहरे नैतिक मापदण्डों व अन्तर्विरोधों को समझने एवं पहचानने की अंतर्दृष्टि प्रदान की है जिससे वह अपने वास्तविक अस्तित्व के प्रति सचेत होकर अहम्‌वादी पुरुष सत्ता और उसके वर्चस्व को चुनौती देकर संघर्षरत स्त्री की छवि उकेरने के काबिल हुई है। नारी की विविधि स्थितियों एवं दशाओं पर किया गया गहन अध्ययन व चिन्तन 'स्त्री-विमर्श' कहलाता है।

नासिरा शर्मा स्त्री-विमर्श पर विचार प्रकट करते हुए लिखती है, "स्त्री-विमर्श द्वारा शताब्दियों से चले आ रहे अंकुश की जंजीरों को तोड़ा जाता है जो औरत की जुबान और ज़ज्बात को बाँधे हुए हैं।"[1] अतः स्त्री-विमर्श ने हजारों वर्षों से चले आ रहे पितृसत्तात्मक टकराहट के विमर्शों, सिद्धांतों और प्रतिमानों को चुनौती दी है क्योंकि ये सिद्धान्त पुरुष द्वारा निर्मित हैं। कुमारी मीरा के अनुसार, "स्त्री-विमर्श के अन्तर्गत स्त्री जीवन से सम्बन्धित समस्याओं, उनसे सम्बन्धित कारकों, स्त्री के अधिकारों एवं कर्त्तव्यों तथा उसकी वर्तमान स्थिति के संदर्भ में जो विचार-विनिमय किया जाता है, उसे स्त्री विमर्श कहते हैं।"[2] अतः नारी की वास्तविक स्थिति एवं उसके जीवन से जुड़ी समस्याओं और घटनाओं तथा अधिकार प्राप्ति के लिए उसके संघर्ष की गाथा का ब्यौरा स्त्री-विमर्श के अन्तर्गत आता है।

हिन्दी साहित्य में कई साहित्यकारों ने स्त्री-विमर्श के अनेक पहलुओं को अपनी रचनाओं के माध्यम से उजागर करने के प्रयास किए हैं, जिनमें मैत्रेयी पुष्पा, उषा प्रियंवदा, नासिरा शर्मा, मेहरूनिसा परवेज़, कृष्णा सोबती, मणिका मोहनी और आशारानी बोहरा इत्यादि के नाम प्रमुख हैं परन्तु चित्रा मुद्गल ने परम्परा से हटकर जिस दृढ़निश्चयी, आत्मविश्वासी, स्वाभिमानी और अस्तित्व एवं अस्मिता के लिए समाज से संघर्ष करने वाले नारी पात्रों को अपनी रचनाओं द्वारा प्रस्तुत किया है, वह निश्चित रूप से उल्लेखनीय है। चित्रा ने 'स्त्री-विमर्श' के दृष्टिकोण से नारी मन के अंतर प्रदेश में उतरकर अनछुए प्रसंगों, स्थितियों एवं समस्याओं को उजागर करते हुए अनेक पहलुओं को लेखनी का विषय बनाकर हिन्दी साहित्य जगत में नई पहचान अर्जित की है। समसामयिक नारी जीवन की कहानी और उसकी वास्तविक जीवन स्थिति के साथ आत्मचेतस तथा आत्मसजग नारी के अनेक

रूप उनके कथा साहित्य में उपलब्ध होते हैं जिससे उनके स्त्री-विमर्श के सन्दर्भों की व्यापकता का सहज ही अन्दाज़ा लगाया जा सकता है।

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में स्त्री-विमर्श का जीवंत एवं यथार्थ उल्लेख पूर्णतः से हुआ है। 'केंचुल' कहानी में एक ऐसे परिवार की त्रासदी के बहाने पूरे समाज और वर्ग का यथार्थ जीवन देखा जा सकता है जहां स्त्रियां अपना परिवार चलाने के लिए दारू का धंधा करती हैं। उनकी बेटियों तक को कर्ज देने वाले साहूकार, बनियों की अश्लील हरकतें सहने के लिए बाध्य होना पड़ता है। सरजु की माँ को जब इस बात का पता चलता है तो वह चाहकर भी कुछ नहीं कर पाती। "मजाल थी कि बानी की छीछालेदर किए बगैर ही लौट पड़ती? पर लौटती कैसे न! बानी के एहसान जो छाती पर लदे बैठे हैं।"[3] अतः गरीबी, अभाव, जिंदा रहने का संघर्ष और परिवार के प्रति जिम्मेदारी का भाव औरतों में ज्यादा होता है जिसे निभाने के लिए वह हर स्थिति में कष्ट और अपमान सहन करती हैं।

'त्रिशंकु' कहानी में निम्नवर्ग के परिवार की स्त्री सीताबाई का अंतहीन कष्टभरा दारुण संघर्ष है जो घर-घर जाकर दिन भर बर्तन साफ करके शाम को शराबी पति द्वारा जानवरों की तरह पीटी जाती है और स्वयं पति दूसरी स्त्री के साथ जिंदगी के मज़े लूटता है। "भड़वा एक पैसा नहीं देता.......मैं खून पिला-पिला कर बच्चे पालती और तू हरामखोर वो रांड के साथ मस्ती मारता है"[4] बेटी को पति के इस दुर्व्यवहार से बचाने के लिए वह उसे दूसरों के घरों में काम करने भेजती है ताकि वह इस नरक से बच सके परन्तु जब माँ, पिता की मारपीट से कोई भी काम करने में असमर्थ हो जाती है तो बेटा बंडु भी पढ़ाई छोड़कर दो व़क्त की रोजी-रोटी के लिए काम करने को तैयार हो जाता है। अभावों, मजबूरियों और प्रताड़नाओं को सहन करते हुए औरत को पुरुष की निर्ममता, हिंसात्मक व्यवहार तथा उनकी कमाई पर अधिकार जमाने की सामंती प्रवृत्ति को कहानीकार मार्मिक ढंग से रेखाकिंत करती है।

चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में शोषित, प्रताड़ित, उपेक्षित और रूढ़ियों के बन्धन में बंधी रहने वाली नारी का यथार्थ व अनुभूतिपरक चित्रण विद्यमान है जिसका वास्तविक उद्देश्य मानव समाज को नारी जीवन के संघर्षों, वास्तविक स्थितियों एवं समस्याओं से परिचित करवाकर उसके प्रति सकारात्मक सोच एवं दृष्टिकोण पैदा करना है। साथ ही शिक्षित, अधिकारों के प्रति सज़ग एवं जागरूक, स्वाभिमान से युक्त नारी पात्रों की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतियों का सृजन करके जनमानस में स्थित नारी के व्यक्तित्व को साकार रूप प्रदान किया है जिसके द्वारा समकालीन विषम परिस्थितियों का कुशलता व दृढ़ता से सामना किया जा सके।

'लेन' कहानी में निम्न जाति की महेंदरी नामक महिला के माध्यम से एक इज्जतदार, स्वाभिमानी, ईमानदार, दृढ़ संकल्प और निडर नारी के आदर्श रूप को प्रस्तुत किया गया है जो पाखाना साफ करने का काम करती है। पति दत्तु रिक्शा चलाकर परिवार का भरण-पोषण करता है परन्तु एक बार अचानक कुछ गुण्डों द्वारा किसी का बीच-बचाव करते हुए दत्तु बुरी तरह घायल हो जाता है और अस्पताल में मरणासन्न पड़ा होता है तो गुण्डे महेंदरी को डरा-धमकाकर थाने से केस वापिस लेने के लिए जोर-ज़बरदस्ती करते हैं और पांच हजार रुपये देते हुए थाने में जाकर उन्हें न पहचानने के लिए कहते हैं। वह क्रुध होकर निडरता से नोटों की गड्डी उनके मुँह पर फैंकती है और कहती है, "मज़ाक उड़ाने आए हो मजबूर माणस का। अरे कोई कितना भी गिर जाएगा, अपने मरद की जान की कीमत खाएगा?"[5] और गुण्डों को थाने तथा कोर्ट-कचहरी जाकर उनके किए की सजा दिलाती है, साथ ही अशक्त देह से लाचार पड़े मर्द की देखभाल, हाल ही में जन्में बच्चे को पालने की हिम्मत रखते हुए सशक्त स्त्री का उदाहरण प्रस्तुत करती है।

'ट्रेन छूटने तक' कहानी में शोभा के रूप में संघर्षशील नारी के जीवन की दर्दभरी दास्तान का चित्रण है। पिता की मृत्यु के बाद माँ और भाई होने के बावजूद भी नौकरी करके वह घर का पूरा खर्चा चलाती है। एक ओर दफ्तरी वातावरण में स्त्री के प्रति पुरुषों की घटिया मानसिकता तो दूसरी तरफ घर में स्त्री के द्वारा स्त्री का शोषण अभिव्यक्त होता है। पहले तो माँ, भाई के परीक्षा में कई बार फेल हो जाने के बावजूद भी उसे पढ़ाने के पक्ष में होती है परन्तु शोभा के पक्ष में नहीं। उसके नौकरी करने के बाव़जूद भी माँ उसकी शादी नहीं करवाना चाहती और भाई के एक गोवन स्त्री से शादी करने पर भी खुश है तथा शोभा की नौकरी से ही घर का सारा खर्चा चलता है। वह भी अपने सहयोगियों की भांति शादी करके अपना घर बसाना चाहती है। परन्तु "शायद माँ ही नहीं चाहती कि वह अन्य लड़कियों की भान्ति अपना घोंसला बसाए। पापा की मृत्यु के बाद घर का खर्चा पूरा करने के लिए उसे पैकिंग में सर्विस करनी पड़ी थी।"[6] अतः आज भी समाज में नारी को घर तथा घर से बाहर शोषण का शिकार होना पड़ता है। यहां पर कामकाजी महिला के जीवन संघर्ष का शारीरिक एवं मानसिक रूप में नग्न यथार्थ प्रस्तुत है।

कामकाजी महिलाओं के जीवन संघर्ष का दारुण रूप 'दरमियान' कहानी में झलकता है। नौकरी पेशा स्त्रियों को परिवार, छोटे बच्चों को अपने से अलग रखने का अपराध-बोध, दफ़्तरों में काम करते हुए लगातार वहां के माहौल और किस्से कहानियों को झेलने से जो खीझ, पीड़ा तथा अपमान महसूस होता

है, उसका बारीकी से चित्रण हुआ है। कई बार "छोड़ो भी यह नौकरी-फौकरी का चक्कर, घर बैठे, जैसे भी चलेगा, चलाएंगे, सच। इस गुड़िया को यूं छोड़कर जाना अखरता है।"[7] परन्तु जीवन में बढ़ते खर्चों को निपटाने के लिए मजबूरीवश उन्हें इस संघर्ष से गुजरना ही पड़ता है और घर से लेकर दफ्तर तक के असहनीय वातावरण को झेलना पड़ता है।

'मुआवजा' कहानी में शैलु के माध्यम से नारी का साहसी, ईमानदारी, सेवाभाव और संघर्षशील रूप चित्रित हुआ है। शैलु एयरहोस्टेस है। एक बार आंतकवादियों के द्वारा विमान अपहरण के दौरान यात्रियों को वह पिछले गेट से निकाल देती है और स्वयं मारी जाती है। उसकी साहसी मृत्यु के लिए पुरस्कार एवं नियमानुसार मुआवज़ा भी दिया जाता है। शैलु के माता-पिता इस राशि को बनिता आश्रम में देने का निश्चय करते हैं क्योंकि पहले जब उसका पति और घरवाले उसकी नौकरी और मॉडलिंग के शौक से बिल्कुल भी खुश नहीं थे तो वह बनिता आश्रम की सदस्य बनकर असहाय स्त्रियों के स्वावलंबन हेतु कार्य करना चाहती थी। परन्तु मुआवजे का समाचार सुनकर सालों से शैलु से अलग रहने वाला पति अधिकार और कानून के नाम नाम पर उसे वसूल करना चाहता है और जब वह नौकरी करती थी तो उसके माता-पिता से कहता था, "शैलु की उद्दंडताओं को पोसा है आप लोगों ने, कारण बने हमारे दरमियान। देख रहा हूँ मम्मी, स्त्री-स्वतंत्रता, आत्म-निर्भरता की आड़ में बेटी की दायित्वहीनता को लगातार पोस रही है।"[8] अतः नारी नौकरी पेशा होते हुए भी पति एवं उसके पारिवारिक सदस्यों के शोषण का शिकार होने के बावज़ूद भी पूरे विमान के यात्रियों को बचाने का साहस रखती है और जीवित रहते हुए पति की शारीरिक पीड़ाओं को सहने के कारण उससे अलग होकर, शेष जीवन सामाजिक कल्याण के लिए अर्पित कर स्त्री मुक्ति का संदेश देती है।

'लाक्षागृह' कहानी में नौकरी करने वाली बेटी के वेतन से घर-परिवार चलाकर बेटी की जिंदगी के संबंध में आनाकानी करने वाले मां-बाप हैं। सुन्नी जैसी लड़कियां अपनी शक्ल-सूरत के कारण लड़कों द्वारा ठुकरा दी जाती हैं। अगर वे कमाती हैं तो भी माता-पिता की घटिया मानसिकता के कारण आजीवन अविवाहित रह जाती हैं। माता-पिता उसकी शादी के लिए अपेक्षित परिश्रम नहीं करते और लोगों के सवालों के लिए उसकी मां का जवाब बहुत ही विचित्र है, "जिद्दी है, ब्याह के लिए तैयार ही नहीं होती। बिरादरी में पचासों लड़के देखे हमने, मगर इसकी ना तो ना।"[9] सुन्नी भी अपना घर बसाकर अन्य स्त्रियों की भान्ति सपरिवार जीवन जीने के सपने देखती है परन्तु उसके माता-पिता स्वार्थ के लिए उसकी शादी नहीं करवाना चाहते। अन्त में उसी के ऑफिस का सिन्हा नामक व्यक्ति उसके साथ शादी करने के लिए तैयार हो जाता है ताकि वह अपने परिवार की जिम्मेदारियों को आसानी से उसके पैसों से निभा सके और बड़े स्वाभिमान से अपने मित्रों से कहता है, "छोड़ यार! कालीवाली ही सही। सौदे की कोई शक्ल-सूरत नहीं होती।"[10] इससे सुन्नी को गहरा आघात पहुँचता है। अतः वह जीवन में पुरुष की सत्ता का मोहताज न बनकर तमाम जीवन विवाह की चाह और मां बनने की आकांक्षा को त्याग देती है।

'आवा' उपन्यास में नमिता के रूप में एक ऐसी नारी का रूप चित्रित है जो पिता की मृत्यु के बाद घर तथा घर से बाहर शारीरिक शोषण का शिकार होती है। परिवार का खर्चा चलाने के लिए वह पिता के ऑफिस में अपना हमदर्द समझकर अन्ना साहब के कहने पर नौकरी करने के लिए राज़ी हो जाती है और वहां पर पिता तुल्य अन्ना साहब के दैहिक शोषण का शिकार होती है तथा घर पर सगे मौसा द्वारा ज़बरदस्ती शारीरिक सम्बन्ध बनाने पर गर्भवती हो जाती है। इतना होने पर भी उसकी मां रिश्तों की गरिमा को समाप्त और कलंकित न करने की वजह से नमिता को कहती है, "जो हुआ सो पेट में डाल।"[11] अतः नारी को परिस्थितिवश घर से लेकर बाहर तक, अपनों से लेकर परायों तक के शोषण का शिकार होने के लिए मज़बूर होना पड़ता है।

'प्रमोशन' कहानी में नौकरीपेशा नारी ललिता के पति सुभाष की रुग्ण मानसिकता जाहिर होती है। बॉस कोठारी ललिता के अनुभव, परिश्रम और लगन को देखते हुए उसकी प्रमोशन पैकिंग विभाग के इंचार्ज पद पर करता है तो उसका पति उसकी प्रमोशन को शक की नज़र से देखता है, "कोठारी तुम पर इतने मेहरबान क्यों है, तीन साल में इतना बड़ा प्रमोशन? विभाग में तुम्हारी बनिस्वत अनेक वरिष्ठ, अनुभवी, योग्य व्यक्ति पड़े हुए हैं"[12] क्योंकि सुभाष ने विभाग में रेखा नाम की महिला के शरीर का उपभोग करने के बाद ही प्रमोशन दी थी। अतः वह अपनी पत्नी ललिता पर शक करता है और उसे नौकरी छोड़ने का आदेश देता है। परन्तु वह अपने अधिकार एवं स्वातंत्र्य से सज़ग होकर पति की घटिया मानसिकता की पूरी उपेक्षा करती है। अतः नारी को पुरुषों की संकुचित एवं रुग्ण मानसिकता और देहमात्र समझने वालों के प्रति सजग और सर्तक होकर अपनी अस्मिता के लिए सही मार्ग चुनकर संघर्ष करने की ओर प्रेरित किया गया है। अन्यथा युगों- युगों से प्रताड़ित नारी जीवन में किसी भी तरह का सुधार आने की संभावना नहीं की जा सकती।

निष्कर्षतः चित्रा मुद्गल के कथा साहित्य में शोषित, प्रताड़ित, उपेक्षित और रूढ़ियों के बन्धन में बंधी रहने वाली नारी का यथार्थ व अनुभूतिपरक चित्रण विद्यमान है जिसका वास्तविक उद्देश्य मानव समाज को नारी जीवन के संघर्षों, वास्तविक स्थितियों एवं समस्याओं से परिचित करवाकर उसके प्रति सकारात्मक सोच एवं दृष्टिकोण पैदा करना है। साथ ही शिक्षित, अधिकारों के प्रति सज़ग एवं जागरूक, स्वाभिमान से युक्त नारी

दोहों में फागुनिया संसार

◆ मंजु गुप्ता

फगुनाई ने खिलायी, खुशियों वाली भोर
लाल गुलाल लगा गया, चुपके से चितचोर।

गुजिया, कांजी, सेव की, छायी अजब बहार
स्वाद-सुगंध में रंगा, फागुनिया संसार।

धरती-अंबर हो गए , देखो लालम लाल
मदहोशी के रंग ने, किया कैसा कमाल।

सजी रंगीली होली, भर पिचकारी धार
कनक रंगों ने घोला, बाल - बड़ों में प्यार।

अमराई में झूमते, मीठे कोकिल बोल
गोद भराई कर गयी, बजा - बजा के ढोल।

कोरे-कोरे कलश में , घोले सारे रंग
प्रेम पिचकारी मारते, एक-दूसरे संग ।

ऊँच-नीच के भेद को, करती होली दूर
गले लगाय जन-मन को, समरसता की हूर।

रंग-बिरंगी फगुनिया, लाती होली पर्व
जली अधर्मी होलिका, करता जहान गर्व।

दिल की दहलीज पर वे, रख गए रंग लाल
नया रूप-रंग दे के, कर गए लाल गाल ।
होली पर बेटियों को , भेजे 'मंजु' गुलाल
सुख-सौहार्द से सजे, बेटी की ससुराल।

रंगों ने रंगा ऐसा, लगे सभी मुख एक
पूछ जेठी-दोरानी, तेरा वाला कौन ?

जलाएँ होलिका में, नफरत, वैर-विकार
गले लगाता है सब को, समरसता का त्योहार।

रंगों में सब रंग के, हुए सभी बदरंग।
रिश्ते-नाते भूल कर, सभी करें हुड़दंग।

मुमताजी अंदाज में, छलके सारे रंग
प्रेम रंग भीगा गया, शाहजहाँ-से अंग।

नजर चुराता फागुन, आ गया दिल-द्वार
प्रेम अँगूठी डाल के, फेरों को तैयार।

नहीं मारो गुब्बारे, लगती गहरी मार
बुराई की इस जड़ को, तुरंत काटो यार।

मन होलिका पर लगाय, जल्दी से तू आग
आँच न आने देगी , लगेगा न फिर दाग।

19, द्वारका, प्लॉट 31, सेक्टर-९ए, वाशी, नवी मुंबई-400 703,
मो. 0 98339 60213

पात्रों की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतियों का सृजन करके जनमानस में स्थित नारी के व्यक्तित्व को साकार रूप प्रदान किया है जिसके द्वारा समकालीन विषम परिस्थितियों का कुशलता व दृढ़ता से सामना किया जा सके। मुद्गल ने अनेक साहसी एवं जागरूक नारी पात्रों की रचना करके पितृसत्ता से टकराहट और स्त्री-विमर्श को नवीन दिशा देने का सफल प्रयास किया है। हिन्दी साहित्य का स्त्री-विमर्श जिन लेखिकाओं की सशक्त उपस्थिति से मज़बूती पाता है, चित्रा मुद्गल उनमें से एक है। वह यथार्थवादी साहित्यकारों में विशिष्ट स्थान रखने वाली, नारी मनोविज्ञान और उसके जीवन से जुड़े प्रत्येक पहलु का गहन और सूक्ष्म चिंतन करने वाली लेखिका है। वह उन आधुनिक महिला कथाकारों में से है जिन्होंने नारी के विभिन्न रूपों का सूक्ष्म विश्लेषण करके उनकी वास्तविक स्थिति से परिचित करवाकर, पारिवारिक परिधि से बाहर निकालकर स्त्री के व्यापक अस्तित्व एवं संदर्भ को महत्त्व प्रदान किया है।

हिंदी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय,
समरहिल, शिमला-171 005, मो. 0 94182 08814

सन्दर्भ सूची

1 नासिरा शर्मा, औरत के लिए औरत, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. 59
2 कुमारी मीरा, आधुनिक महिला कथाकारों के उपन्यासों में सामाजिक विसंगति, शोध प्रबन्ध, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़, पृ. 91
3 चित्र मुद्गल, केंचुल, पृ. 143
4 वहीं, त्रिशंकु, पृ. 78
5 वहीं, लेन, पृ. 150
6 वहीं, ट्रेन छूटने तक, पृ. 45
7 वहीं, दरमियान, पृ. 181
8 वहीं, मुआवजा, पृ. 253
9 वहीं, लाक्षागृह, पृ. 232
10 वहीं, पृ. 239
11 वहीं, आवां, पृ. 303
12 वहीं, प्रमोशन, पृ. 72

शोध लेख

मृदुला गर्ग की कहानियों में नारी संदर्भ

◆ कंचन कुमारी

महिला कथा साहित्य को लेकर पिछले कुछ वर्षों से बहस चल रही है। हिन्दी महिला कथाकारों की बात करते हैं तो साहित्य के क्षेत्र में महिलाओं के योगदान में प्राचीन ''वैदिक काल में नारी वैदिक ऋचाओं की रचयित्री भी थी।''[1] साहित्य क्षेत्र में नारी के योगदान में मध्यकालीन कवयित्री मीरा का नाम विशेष रूप में उल्लेखनीय है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र के समान साहित्य के क्षेत्र में भी नारी ने प्रवेश किया। ''सन् 1922-23 में चांद'', 'माधुरी' पत्रिकाओं का प्रकाशन विशेषता नारी के साहित्यिक बनाने के उद्देश्य से किया गया।''[2] परिणाम स्वरूप अनेक लेखिकाओं की कहानियां प्रकाशित होने लगी।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के प्रारंभिक चरण में उषादेवी मित्रा, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, चंद्रकिरण सौनरेक्सा, रजनी पन्निकर आदि महिला कहानिकारों का नाम लिया जा सकता है। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में महादेवी वर्मा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। महादेवी वर्मा ने अपने गद्य साहित्य और उनकी 'शृंखला की कड़ियाँ' नारी जीवन को उजागर करने वाली महत्वपूर्ण रचना है।

सन् 1960 से महिला 'कथा साहित्य के क्षेत्र में उषा-प्रियवंदा, दीप्ति खंडेवाल, मन्नू भंडारी, कृष्णा सोवती, मृदुला गर्ग, शशिप्रभा शास्त्री, राजी शेठ, मुजुल भगत, मेहरून्निसा परवेज, नासिरा शर्मा, प्रभा खेतान, निर्मला भुरड़िया, मीना अग्रवाल आदि कई महिला-कथाकारों ने महिला कथा साहित्य को अत्यन्त समृद्ध किया। इसके अतिरिक्त शिवानी, ममता, कालिया, मालती जोशी, सूर्यबाला, शुभा वर्मा, मणिका मोहिनी, मैत्रेयी पुष्पा, सुधा-अरोड़ा, चित्रा, मुद्गल, मृणाल पाण्डेय, कृष्णा अग्निहोत्री, निरुपमा सेवती आदि लेखिकाओं का भी योगदान रहा है।

नई कहानी के बाद हिन्दी कहानी में जिन कथाकारों ने अपनी अलग पहचान बनाई है, उनमें से एक मृदुला गर्ग है। मृदुला गर्ग ने 1972 से लेखन कार्य की शुरूआत की। 1972 में उनकी पहली कहानी 'रूकावट' सारिका पत्रिका में छपी। 'वंशज' और 'चित कोबरा' जैसे उपन्यासों की सर्जक मृदुला गर्ग के प्रमुख कहानी-संग्रहों में 'कितनी कैद', 'टुकड़ा-टुकड़ा आदमी', डैफोड़िल जल रहे हैं, 'ग्लेशियर से', उर्फ सेम', 'शहर के नाम', और 'समागम' प्रमुख है।

मृदुला का कहना है,''मुझे लगता है कि हिन्दी कहानी में सबसे ज्यादा वैविध्य मेरी पीढ़ी से आया।''[3] कहानी में वे केवल शिल्प में नहीं, कथ्य में भी नये-नये प्रयोग करने में विश्वास रखती हैं। परिणामस्वरूप उन्होंने अपनी कहानियों में युग-यथार्थ की पृष्ठभूमि में युग-जीवन को तथा युग जीवन के संदर्भ में व्यक्ति के जीवन को विभिन्न प्रसंगों एवम् स्थितियों में अंकित किया है। नारी के टूटते जीवन, सेक्स सम्बन्धी टूटते रिश्ते पारिवारिक समस्याएं आदि उनकी कहानियों में चित्रित हुआ है।

'कितनी कैदें' कहानी नारी के यौन अनुभवों, प्रेम विषयक आधुनिक जीवन दृष्टि को पूरे खुलेपन के साथ चित्रित करती है। इस कहानी की मीना अत्याधुनिक नारी के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होती है। वह ड्रग भी लेती है और डेट पर भी जाती है। नशे की हालत में कुछ लड़कों ने मिलकर उस पर सामूहिक बलात्कार करते हैं। परिणाम क्या निकलता है मीना के जीवन में एक ही चीज़ बचती है वह है घुटन'। अन्य हिन्दी कथा-लेखिकाओं की भांति स्त्री की परम्परागत छवि को तोड़कर उसे प्रकृत रूप में स्थापित करने का प्रयास मृदुला गर्ग ने भी किया है।

बलात्कार करने वाला कोई और होता है और सजा भुगतनी पड़ती है स्त्री को। लेखिका ने बड़े ही प्रखर रूप में इस बात का विरोध करते हुए लिखा है, ''बलात्कार स्त्री के पति नहीं, परिवार के मर्दों के प्रति किया गया अपराध है क्योंकि उससे समाज में उनकी इज्ज्त इज्ज्त नहीं रहती।''[4] भारतीय समाज में स्त्रियों की कामवासना की और सहज, स्वाभाविक, प्राकृतिक रूप में नहीं देखा जाता। उसके साथ पवित्रता अपवित्रता, परिवार की इज्जत, नैतिकता-अनैतिकता आदि जुड़ जाते हैं। 'कितनी कैदें' में मीना का चरित्र मनोवैज्ञानिक धरातल पर चित्रित हुआ है।

'दुनिया का कायदा' कहानी उच्च वर्गीय जीवन की परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में रक्षा की तल्ख प्रतिक्रियाओं को व्यक्त करती है। दो खण्ड़ों में विभाजित यह कहानी के प्रथम खण्ड में बहू को मारने की घटना और दूसरे खण्ड में रक्षा के पति द्वारा

आयोजित एक पार्टी का चित्रण है। परिवार के अन्य लोगों को बड़ी बहू के मरने का इतना दुःख नहीं है जितना की छोटी बहू रक्षा को है। छोटी बहू रक्षा को छोड़कर परिवार के अन्य लोग दिवंगत स्त्री के अधेड़ पति के पुनर्विवाह को लेकर और दान-दहेज को लेकर की जाने वाली चर्चा में ऐसे व्यक्त हैं जैसे कि कुछ हुआ ही नहीं। छोटी बहू रक्षा जब इस पुनर्विवाह की चर्चा पर आपत्ति करती है तो उन्हें उत्तर मिलता है, ''यह तो दुनिया का कायदा है।''[5] कहानी के दूसरे खण्ड में रक्षा के पति द्वारा आयोजित पार्टी में उसका पति उसे मेहता के साथ नाचने के लिए और उसकी अश्लील हरकतें सहने के लिए विवश करता है। इस पार्टी में भी सब कुछ 'दुनिया का कायदा' के नाम पर होता है।

पढ़ी-लिखी और महाविद्यालय में नौकरी करने वाली समझदार बहू रक्षा समाज में नारी की दोयम स्थिति को देखकर बेचैन होती है। इस दुनिया का कायदा है, ''औरत आदमी के बगैर रह सकती है, आदमी औरत के बगैर नहीं रह सकता।''[6] यह वाक्य व्यवस्था की क्रूरता की ओर संकेत करता है। स्त्री और पुरूष के लिए भिन्न-भिन्न कायदा बनाने वाले समाज और नारी की स्थिति को देख रक्षा उद्वेलित होती है। इन स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में रक्षा को रखकर रक्षा की पीड़ा, बैचैनी को लेखिका ने आवाज़ दी है।

लेखिका की 'हरी-बिन्दी' कहानी स्त्री की नयी छवि को प्रस्तुत करती है। दाम्पत्य की एकरसता से ऊब चुकी नायिका पारम्परिक सती भी नहीं है और वेश्या भी नहीं है। वह अपनी इच्छानुसार जीने की ललक रखने वाली स्त्री है परन्तु उसने न घर छोड़ा है न पति को। पति के गांव जाने के बाद अपने लिए जिन्दगी के पल चुरा लेती है। आधुनिक परिवेश को चित्रण को चित्रित करने वाले यह कहानी महानगरीय बौद्धिक युवती के संदर्भ में अस्तित्वगत चेतना को महसूसती एवं दाम्पत्य जीवन एकरसता से उक्ता चुकी युवती की दिशाहीनता की कहानी भी है। इस कहानी के संदर्भ में स्वयं लेखिका ने लिखा है, "हरी बिन्दी' अपने साथ कुछ क्षण गुजार पाने की ललक की कहानी है।''[7]

'दो एक फूल' की शांतम्मा घर की नौकरानी तथा अभिरुचि सम्पन्न नारी है, जो अपने पति के कर्मों की सजा पाकर धीरे-धीरे मृत्यु की ओर जा रही है। पहला पति रोज बाज़ार की औरतों के पास जाता था, दारू पीता था और शांतम्मा को पीटता था। सारे दुःखों को चुपचाप सहने वाले नारी के रूप में शांतम्मा का चरित्र चित्रित हुआ है। अलग-अलग औरतों के साथ सम्बन्ध रखने वाले पति के कारण उसके ब्लड में सिफिलिस प्रेजेंट था। अपना दोष न होते हुए भी अपने को दोषी मानकर सजा भुगतने तैयार रहने वाली शांतम्मा की मान्यता है कि स्त्री को पति की हर स्थिति में समझौता करके ही जीना है। उनके चरित्र के द्वारा देहाती स्त्री की दर्दनाक स्थिति पर प्रकाश डाला गया है।

'उसकी कराह' कहानी को सुधा के माध्यम से विषम समाज व्यवस्था में स्त्री की महत्वहीनता पर प्रकाश डाला गया है। दिल के ट्यूमर की बीमारी से धीरे-धीरे मृत्यु की ओर बढ़ने वाली पत्नी सुधा का मृत्यु तक इन्तजार करना उसके पति लिए कठिन है। इतना ही सुधा के मरने के पहले ही नयी लड़की के साथ शादी की तैयारियां भी शुरू कर देता है।

मृदुला गर्ग की कहानियों के अध्ययन करने पर लगता है लेखिका नारी स्वातंत्र्य के स्वर को लेकर आयी हैं, इतना ही नहीं सीमित लेखन के दायरे को भी तोड़ा हैं। नारी-जीवन सम्बन्धी विविध पहलुओं को उजागर करते हुए लेखिका की कहानियों में चित्रित नारी-पात्रों में विविधता भी है, नयापन भी है और जिंदादिली भी। ये नारियां बड़े आत्म-विश्वास के साथ लगातार आगे प्रतिनिधित्व भी करतीं हैं। आधुनिक युग के अनुरूप लिखने वाली मृदुला गर्ग का कहना है, "मैं समझती हूं कि जब लेखक सांस्कृतिक मूल्य व्यवस्था को पुनः परिभाषित करने की प्रेरणा से, कहानी के कथ्य, शिल्प व भाषा में प्रयोग करता है तो हम कह सकते हैं कि उसमें एक नये बोध को स्वर देने का प्रयास कर रहा है।"[16] मृदुलाजी की कहानियों में यह प्रयास सर्वत्र है।

'अवकाश' कहानी की वह 'स्त्री' अपने पति महेश और बच्चों के साथ सुखी-दाम्पतय जीवन जी रही है, लेकिन प्रेम किसी और पुरूष से करती है और अपने प्रेमी के साथ भाग जाने को तैयार हो जाती है। 'ग्लेशियर से ' कहानी की विवाहिता मिसेज दत्त वैवाहिक जीवन की जड़ता को तोड़ने वाली कहानी है। रोजमर्रा की जिन्दगी में बंधने के कारण उसे उसका जीवन नीरस और यंत्रवत् लगता है। साठोत्तरी लेखिकाओं ने स्त्रियों के विकास में विवाह को बाधक माना है। "वैवाहिक जीवन में अब पति को अपनी पत्नी की इच्छाओं, उसकी रुचि-अरुचि, उसके विरोध समर्थन को भी ध्यान में रखना होगा अन्यथा दाम्पत्य जीवन में दरारें पड़ने लगेगी। यह विवाह संस्था अब परिस्थिति जन्य संतुलन चाहती है।''[8] ऐसा मत मृदुला गर्ग का रहा है। परिणामतः उन्होंने 'ग्लेशियरसे' 'अवकाश', 'तुक', 'वितृष्णा', जैसी कहानियों का सृजन किया है।

दाम्पत्य जीवन में हर स्थितियों में समझोता नारी को ही करना पड़ता है। 'तुक' कहानी की मीरा स्थितियों से समझौता करके जीने वाली, घुट-घुट जीने वाली नारी के रूप में प्रस्तुत हुई है। भिन्न स्वभाव, भिन्न-रुचि, जीने का भिन्न तरीका, भिन्न संस्कारों के परिणाम स्वरूप उन दोनों के दाम्पत्य जीवन में तनाव की स्थिति पैदा होती है। नरेश के स्वामित्व और मीरा के पालतुपन में ही घरेलूपन बचा था। नरेश के तिरस्कार के बाद भी उसे रिझाने

की कोशिश करती है। ''एक मैं ही हूं, जो पति के दफ़्तर से घर लौटने पर, उसके चेहरे से अपनी निगाहें हटा नहीं पाती। एक मैं ही हूं, जो प्याले में केतली से चाय डालते हुए या नमकीन की प्लेटें उसकी ओर बढ़ाते हुए उसके चेहरे पर आये हर भाव को पढ़ने की कोशिश करती रहती हूँ''[9]

भारतीय समाज व्यवस्था की पारिवारिक स्थिति और सामाजिक सुरक्षा के मोह के कारण मीरा सब कुछ सहने को बाध्य है। ''पति का होना उनके लिए एक स्थिति है। पति की खुशी-ना खुशी, आकर्षण विकर्षण, रुचि-उदासीनता जैसे मेरे लिए जिन्दगी और मौत का सवाल है।"[10] 'तुक' कहानी की मीरा सामाजिक सुरक्षा के बदले सब कुछ सहने वाली औसत भारतीय नारी है।

'खरीददार' कहानी की नायिका नीना एक शिक्षित, प्रबुद्ध और निर्णय की पक्की युवती है। 'गलेशियरसे' की नायिका परम्परागत भारतीय नारी है, तो इस कहानी की नायिका नीना मीरा से विपरीत स्वभाव की युवती है। आई.सी.एस. की परीक्षा उत्तीर्ण करके सहायक कमिश्नर की नौकरी करने वाली नीना विवाह के बाज़ार में अपने आपको बेचने के लिए संघर्ष करना ही पड़ेगा, ऐसा दृढ़ रूप से मानने वाली नीना का कहना है कि समाज में नारी का दूसरा दर्जा है, उसके लिए नारी को ही आगे बढ़ना पड़ेगा। पुरुष को आकर्षित करने वाले सौन्दर्य की मालिक एवम् परिवर्तन की आकांक्षी नीना का कहना है, "नहीं। यह बिक्री का माल नहीं है। मैं खरीददार बनूंगी। विक्रेता नहीं खरीददार।"[11] प्रस्तुत कहानी में लेखिका को नीना के चरित्र के द्वारा नारी के इस नये रूप को प्रस्तुत किया है।

'एक चीख का इंतजार' कहानी की प्रमुख नारी पात्र 'वह' के माध्यम से प्रसव वेदना का सजीव चित्र अंकित करके समाज को स्त्री के इस दर्द को परिचित कराना लेखिका का उद्देश्य रहा है। पुरुष को श्रेष्ठ और स्वयं को हीन मानने वाली नारी की कहानी 'उर्फ सैम' लेखिका की उल्लेखनीय कहानी है। इस कहानी में लेखिका ने भारतीय नारी और अमेरिकन नारी की सोच, रहन-सहन, मानसिकता आदि को सूक्ष्मता से रेखांकित किया है। साथ ही पति-पत्नी का साथ, अनिवार्यता बनकर नहीं पति के कार्य पूर्ति का साधन मात्र के रूप में आता है।

'वितृष्णा' कहानी की शालिनी स्त्री की परिवर्तित छवि को लेकर प्रस्तुत हुई है। आधुनिक स्त्री के रूप में नये तेवर को लेकर आने वाली शालिनी का मानता है कि पति को अपने स्वाभिमान का सम्मान करना ही पड़ेगा। सम्मान, अपने स्वाभिमान के बदले वह कोई चीज़ नहीं चाहती, यहां तक कि घर भी नहीं। शालिनी और दिनेश के दाम्पत्य जीवन की जड़ता का मार्मिक चित्रण इस कहानी में चित्रित हुआ है।

'तीन किलो की छोरी' की शारदाबेन गुजरात के एक छोटे गांव से ग्राम सेविका का काम कने वाली अश्पृश्य स्त्री है। दूसरों के सुख के दुःख से सुख-दुःख की अनुभूति करने वाली शारदाबेन को अश्पृश्य जाति के बदले एक दाई के रूप में देखते हैं तो वह बहुत खुश होती है। ग्रामीण मध्यवर्गीय स्त्री का चित्र अंकित करने में लेखिका को सफलता मिली है! 'वह मैं ही थी' की उमा की कहानी नहीं है, बल्कि भारत के हर छोटे से गांव में रहने वाली स्त्री की कहानी हैं, जहां चिकित्सा की कोई सुविधा नहीं है। 'एक चीख का इंतजार' कहानी में स्त्रियों की पीड़ा को अभिव्यक्त करने का प्रयास हुआ है तो इस कहानी में नारी चिकित्सा के अभाव में गर्भवती उमा का दम तोड़ देने का चित्रण करके लेखिका ने नारी जीवन को उजागर किया है।

अपनी रचनाओं के द्वारा लेखिका ने शोषितों, पीड़ितों, दीन-हीन मजदूर वर्ग के जीवन जीने वाले लोगों को नयी दृष्टि से देखा है। वह इन लोगों के प्रति सहानुभूति का निर्माण नहीं, उनको स्वाभिमान की चमक से चमकाना चाहती है। उनमें से एक कहानी है, 'शहर के नाम'। इस कहानी में लड़की का चरित्र भी वैसा है, जिसमें यह चेतना बहुत प्रबल रूप में दिखाई देती है। इस कहानी की प्रमुख नारी पात्र लड़की एक सरकारी अफसर की बेटी है। दीन-हीनों के प्रति सहानुभूति रखकर उनके जीवन को सुधारना चाहती है, इज्जत देना चाहती है। झुग्गी-झोपड़ियों में जाकर नुक्कड़ नाटक के द्वारा भ्रष्टाचार, शोषण, प्रदूषण-जैसे समाज के अनिष्टों से अवगत कराके जागृति लाने का प्रयास करती है। पढ़ाई के लिये अमरिका जाती है। परन्तु मन न लगने से वह भारत वापिस लौटती है। अपने शहर में आने के पश्चात् वह भूतपूर्व युवराज जिन्होंने आपात्काल के समय आत्महत्या की थी, उनकी आत्मा को महसूस करती है। अपने कर्तव्य को ईमानदारी से निभाने वाले युवराज को याद करते वह भी आत्महत्या कर लेती है। जिन्हें अपने परिवार और समाज समझ नहीं सका। अजनबीपन और हताश से घिरी नायिका अपने-अपने ाहर की आत्मा को ढूंढ़ती रही। मृदुला गर्ग ने 'शहर के नाम' कहानी में नये रूप में नारी के चरित्र को उजागर किया गया हैं।

'मीरा नाची' कहानी में मीरा की 'अपनी चाहत' प्रखर रूप में उभरकर आयी है। 'अपनी चाहत' के बिना किसी भी व्यक्ति का विकास सम्भव नहीं हैं। नारी की स्वाधीनता और नारी विकास के सारे बीज इनमें छिप हुए हैं। लेखिका की अन्य कहानियों की भांति 'मीरा नाची' की मीरा एक नये रूप में जीवित रखने की है। लेखिका की यह कहानी दाम्पत्य जीवन की एक सशक्त कहानी है। ''मेरा अपना कोई अस्तित्व नहीं' चुनाव नहीं निर्णय नहीं।"[12] कहने वाली बिन्नी अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ती है और अपनी अस्तित्वगत चेतना को जिंदा रखकर जीना चाहता है।

'अदृश्य' कहानी की वीना दाम्पत्य जीवन में कसमसाती और पति के प्यार में तड़पने वाली नारी हैं। बाँस-फूल' एक स्त्री की उसके ही घर में उनकी दयनीय स्थिति का चित्रण करने वाली

कहानी है। 'चकरधिन्नी' कहानी 'खरीददार' तथा 'खाली' कहानियों की तरह स्त्री की नयी छवि प्रस्तुत करती है। आज की नारी खुद मूल्यवान बनेंगी तो ही दूसरों की नजर में उसका मूल्य होगा, का स्वर इन कहानियों में मुखरित हुआ है।

'चकरधिन्नी' कहानी में विनीता की मां लेखा 'आदर्श माँ' और 'आदर्श पत्नी' भी है। सारे काम-काज निभाते हुए भी उसके पति उससे संतुष्ट है! उनके पति-विनीता से कहते हैं, "तुम्हारी माँ से अच्छी पत्नी की मुझे कभी चाह नहीं थी।"[13]

'रेशम' कहानी हेमवती के वैधव्य जीवन को उजागर करने वाली कहानी है। जो रिश्ता जुड़ा ही नहीं उसके टूटने का गम नहीं हैं हेमवती को। अब तक दब-दबकर जीने वाली हेमवती अपने पति के स्वर्गस्थ होने के पश्चात् सुकून महसूस करती है, मानो एकदम तनाव रहित हो गयी हो, इसीलिए उठावने में आयी औरतों को बड़े सधे स्वर में कहती है, "मैं कह रही हूं न, उठावनी हो ली, सोंग खतम। आप लोग चाय पीकर जाओगे तो मुझे अच्छा लगेगा।"[14] इतना ही नहीं उनकी दूसरी शादी करने की बात होती है, तब वह सोचती है, "बच्चों ने सोचा होगा, मां अपने सुहाग की चिंता में फक पड़ गयी है। बेचारे, पहली पीढ़ी के बारे में कैसे भ्रम पालते हैं"[15] पति के चल बसने के बाद भी उसी परिवेश से जुड़े रहने की बात करने वाले लोगों को तथा समाज को हेमवती बहुत बड़ा धक्का देती है।

मृदुला गर्ग की 'छत पर दस्तक' कहानी की नलिनी अकेलेपन की शिकार है। आज के दौर में वस्तु करण की प्रक्रिया तेज हुई है। परिणाम स्वरूप मानवीय सम्बन्धों को अवमूल्यन हो रहा है। अमेरिका का अकेलापन वैभव के बीच से उभरा है और भारत का अकेलापन अभाव ग्रस्त स्थितियों से। मानवीय सम्बन्धों और स्पर्श की जगह उपभोग वस्तुओं ने ली है। परिणामतः 'छत पर दस्तक' कहानी में चित्रित निरुपाय बूढ़ा भी अकेलेपन से त्रस्त है और भारत में संयुक्त परिवार में सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करने वाली नलिनी भी।

निष्कर्षतः मृदुला गर्ग की कहानियों के अध्ययन के पश्चात् हम कह सकते हैं कि लेखिका नारी स्वातंत्र्य के स्वर को लेकर आयी हैं, इतना ही नहीं सीमित लेखन के दायरे को भी तोड़ा हैं। नारी-जीवन सम्बन्धी विविध पहलुओं को उजागर करते हुए लेखिका की कहानियों में चित्रित नारी-पात्रों में विविधता भी है, नयापन भी है और जिंदादिली भी। ये नारियां बड़े आत्म-विश्वास के साथ लगातार आगे प्रतिनिधित्व भी करतीं हैं। आधुनिक युग के अनुरूप लिखने वाली मृदुला गर्ग का कहना है, "मैं समझती हूं कि जब लेखक सांस्कृतिक मूल्य व्यवस्था को पुनः परिभाषित करने की प्रेरणा से, कहानी के कथ्य, शिल्प व भाषा में प्रयोग करता है तो हम कह सकते हैं कि उसमें एक नये बोध को स्वर देने का प्रयास कर रहा है।"[16] मृदुलाजी की कहानियों में यह प्रयास सर्वत्र है।

शोधार्थी पीएच. डी. (हिन्दी)
हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल, शिमला, हिमाचल प्रदेश -171005
मो. 0 94185 28952

संदर्भ :

1. महिला उपन्यासकारों के उपन्यास में नारीवादी दृष्टि, डॉ. अमर ज्योति, पृ.15
2. साठोत्तरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएं, डॉ. विजया नारद, प्रथम पृष्ठ भूमिका से, डा. सूर्यनारायण रणभूसे
3. मृदुला गर्ग, दिनांक 25-10-2000 को दिल्ली स्थित निवास पर दिये व्यक्तव्य से, कुमारी राजु. एस. बागल काट
4. समकालीन कहानी रचना मुद्रा, सं. पुष्पपाल सिंह, पृ. 149
5. दुनिया का कायदा (कितनी कैदे), मृदुला गर्ग, पृ. 120
6. दुनिया का कायदा, मृदुला गर्ग, पृ. 122
7. साठोत्तरी महिला कहानीकार, डॉ. मधु संधु, पृ. 90
8. वहीं, पृ. 91
9. 'तुक' (ग्लेशियर से), पृ. 41
10. वही, पृ. 50-51
11. 'खरीददार' (ग्लेशियर से), पृ. 65
12. बर्फ बनी बारिश, (समाग्रम), पृ. 41
13. चकरधिन्नी (शहर के नाम), पृ. 39
14. रेशम, (शहर के नाम), पृ. 70
15. वही, पृ. 70.
16. साहित्य : क्या, क्यों, कैसे-चुकते नहीं सवाल, मृदुला गर्ग, पृ. 09

- महिला, पुरुष की वह साथी है, जो कि भगवान द्वारा समान मानसिक ताकत या शक्ति के साथ भेंट दी गई है। -महात्मा गांधी
- किसी भी देश की स्थिति का अंदाजा उस देश की महिलाओं की स्थिति को देखकर लगाया जा सकता है। -जवाहर लाल नेहरू
- प्रेम, स्नेह व करुणा की प्रतिमूर्ति है नारी। -अज्ञात

आलेख

कथाकार अमरकांत की सृजनशीलता का आकलन

◆ डॉ. हेमराज कौशिक

अमरकांत हिन्दी कथा साहित्य में नयी कहानी दौर के महत्वपूर्ण कथाकार हैं। स्वातंत्र्योत्तरकाल के प्रथम दशक में हिन्दी कहानी में 'नयी कहानी' का आन्दोलन उभरा और वस्तु और रूप की दृष्टि से नये कथाकारों ने पूर्ववर्ती कहानी से भिन्नता बनाकर मोहभंगजन्य कुण्ठओं और संत्रास को मुखरित करते हुए कहानी के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग किये। परन्तु अमरकांत कहानी के क्षेत्र में इस नवीनता की चिंता न करते हुए किसी आयातित फार्मूलों से प्रभावित हुए बिना अपने कथा साहित्य में सामान्य भारतीय व्यक्ति के सामाजिकार्थिक जीवन की विडम्बनाओं, विद्रूपताओं, विसंगतियों, अन्तर्विरोधों, अंध वि वासों, वर्गभेद की खाइयों को कहानियों का विषय बनाते रहे। उनके समग्र साहित्य में उनकी सहानुभूति निम्न मध्यवर्गीय समाज के प्रति रही है जिसमें न मध्यवर्गीय समाज का काइयांपन है न उच्चवर्ग का दंभ और छलछद्म ही है । उनका कथा साहित्य मानवीय जिजीविषा को मूर्तिमान करता है । प्रेमचन्द परम्परा के सजग प्रहरी अमरकांत के समग्र कृतित्व का संपादन हिन्दी के वरिष्ठ कथाकार रवीन्द्र कालिया ने 'अमरकांतः एक मूल्यांकन' शीर्षक ग्रंथ के रूप में किया है जिसमें अमरकांत के व्यक्तित्व, जीवनव्यापी संघर्ष, सृजन प्रक्रिया और उनके कृतित्व के विविध पक्षों का नये सिरे से मूल्यांकन है। इस ग्रंथ का संपादन जिस सूझबूझ और व्यवस्थित क्रम में किया गया है। उसके माध्यम से अमरकांत के व्यक्तित्व और सृजनकर्म के विविध आयाम मुखरित हुए हैं । संपादक रवीन्द्र कालिया ने ग्रंथ के प्रारंम्भ में अमरकांत की रचनाओं के मूल्यांकन से पूर्व पृष्ठभूमि के रूप में उनके आत्मकथ्य को 'देश के लोग और वह' शीर्षक से संकलित किया है। इस आत्मकथ्य के माध्यम से उनके जीवन की संघर्षशीलता, साहित्य सृजन का समारंभ, जीवन दृष्टि, रचनाशीलता के अनेक प्रामाणिक रूप सामने आए हैं।

अमरकांत के आत्मकथ्य के पश्चात् 'प्रतिनिधि कहानियां' शीर्षक के अंतर्गत तीन कहानियां संकलित की हैं ताकि पाठक कहानियों से गुजर कर रचनाकार की संवेदना और शिल्प को समझ सकें। मधुरेश ने 'दोपहर का भोजन,' सुरेन्द्र चौधरी ने 'डिप्टी कलक्टरी, श्रीपतराय ने 'मूस' विश्वनाथ त्रिपाठी ने 'हत्यारे' का प्रतिनिधि कहानियों के रूप में चयन किया है। अमरकांत की ये कहानियां नितांत चर्चित रही हैं जिन्हें पाठक बार-बार पढ़ना चाहता है।

'संस्मरण' शीर्षक के अंतर्गत संपादक ने उन साहित्य सर्जकों के संस्मरणों को संग्रहीत किया है जिनका अमरकांत से किसी न किसी रूप में सानिध्य रहा है। संस्मरणों के अंतर्गत 'जरि गइले एड़ी कपाल' (शेखर जोशी), 'कलफ और खिजाब की दुनिया से दूर' (ममता कालिया), 'एक साधारण मध्यमवर्गीय चेहरे की तेजस्विता' (गिरिराज किशोर) सम्मिलित हैं। शेखर जोशी ने अपने संस्मरण में अमरकांत की किस्सा गोई और व्यंग्य को स्पष्ट किया है। लेखक ने उनके जीवन के संघर्ष को स्मरण करते हुए लिखा है 'सिलसिले बार याद नहीं पड़ता। पिछले 18-20 वर्षों में जब-जब इलाहाबाद में रहे, अमरकांत को अनेक स्थितियों में देखा है- अपनी या परिवार की बीमारी से जूझते हुए बेरोजगारी के लंबे और कमर तोड़ देने वाले दौरे में, आर्थिक संकटों में आकण्ठ डूबे हुए, बच्चों की पढ़ाई, नौकरी और ब्याह शादी की चिंताओं से ग्रस्त, समृद्ध भरे पूरे परिवार के वरिष्ठतम सदस्यों के रूप में अपेक्षित मांगों को पूरा न कर पाने की आत्मग्लानि से लाचार, नगण्य से पारिश्रमिक पर पाण्डुलिपि देने की विवशता में रायल्टी के लिए झूठे या टालू वायदे झेलते हुए अपर्याप्त वेतन पर खटते हुए, सहायता के नाम पर शोषण की चक्की में पिसते हुए, लेकिन ऐसे दौर से भी उनकी मनःस्थिति संक्रामक नहीं होती बल्कि उनकी जिजीविषा दूसरों के लिए भी प्रेरक शक्ति का काम करती है। कथाकार ममता कालिया ने 'कलफ और खिजाब की दुनिया से दूर' संस्मरण में अमरकांत के व्यक्तित्व के अनेक पक्षों को उद्घाटित किया है। वे लिखती हैं, "दरअसल अमरकांत के बारे में कुछ भी कहना बेहद मुश्किल काम है, क्योंकि उन्होंने अपना विश्लेषण खूबियों, खामियों के स्तर पर न कभी किया न होने दिया । ऊपर से सहज से, लगभग अबोध लगने वाले अमरकांत भीतर से एक बेहद जटिल व्यक्तित्व हैं। वे अपनी पीढ़ी में एक मात्र ऐसे लेखक हैं, जिनके पास सुनाने को सबसे कम तलखियां, तोहमत व तमगे हैं।" गिरिराज किशोर के 'एक साधारण मध्यवर्गीय चेहरे की तजस्विता' शीर्षक संस्मरण

में अमरकांत की रचनात्मकता और जीवन संघर्ष से संपृक्त अनेक पक्ष विवृत हुए हैं। इस संदर्भ में वे कहते हैं 'मैं अधिक नहीं जानता, परन्तु जितना जानता हूँ, उसके आधार पर यह ज़रूर कहा जा सकता है उनकी पारिवारिक, आर्थिक और व्यक्तिगत परिस्थितियां उनको अपने लेखन से उस सीमा तक जुड़ने की अनुमति नहीं देती थीं, परन्तु उन्होंने इस संकट को मोल लेकर अपने लिए ऐसी खाई का निर्माण कर डाला, जिसको लांघने के लिए वे बार-बार दौड़ लगा कर आते हैं, परन्तु लांघ नहीं पाते'। गिरिराज किशोर उनके साहित्य के प्रति समर्पण को व्यक्त करते हुए कहते हैं, "अमरकांत के संपूर्ण साहित्य से यह पता चलता है कि अमरकांत ने जिन्दगी के अभावों को रचनात्मकता की भट्टी में ईंधन की तरह झोंका है और उससे अपने रचनाकार को तपा कर खरा किया है। अपने अभावों और लेखन के बीच एक ऐसा समीकरण स्थापित करके चले हैं, जो आमतौर पर संभव नहीं होता।"

'अमरकांत से एक साक्षात्कार' में सत्यप्रकाश मिश्र ने अमरकांत से एक साक्षात्कार लिया है । इस बातचीत में साक्षात्कारकर्त्ता ने अमरकांत से सृजन कार्य में सामाजिक दायित्व की प्रेरणा, साहित्य पर मांग और पूर्ति का नियम, रचना की प्रासंगिकता, साहित्य के संदर्भ में सैंसर, साहित्य और राजनीति के मूलभूत प्रकृतिगत अन्तर्विरोध, साहित्य के संदर्भ में क्रांति, प्रेमचंद की मानवीय दृष्टि परम्परा और प्रभाव आदि विषयों पर अनेक प्रश्न पूछे हैं। सृजन कार्य में सामाजिक दायित्व की प्रेरणा के संदर्भ में अमरकांत कहते हैं 'गहरी संवेदना और सहानुभूति तथा सर्जनात्मक प्रतिभा की अनिवार्य शर्तों के बावजूद सृजन स्वयं में एक गंभीर सामाजिक दायित्व का कार्य है । सृजन का क्षेत्र है जीवन । रचनाकार अंधकार, पशुता एंव असत्य के विरुद्ध मानवीय जिजीविषा, संघर्षशीलता एवं सच्चाइयों का द्वन्द्वयुक्त संवेदनात्मक और कलात्मक चित्रण करते हुए नूतन सौन्दर्यचेतना और प्रगतिशील सांस्कृतिक मूल्यों का निर्माण करता है।' अमरकांत यह मानते है कि जो साहित्य हमारी चेतना, ज्ञान और अनुभव का अंग नहीं बन सकता, वह अंततः निरर्थक हो जाता है।

इस ग्रंथ में 'प्रेमचंद की द्वन्द्वात्मक दृष्टि और अमरकांत' विश्वनाथ त्रिपाठी का विस्तृत लेख है जिसमें लेखक ने प्रेमचंद की कहानियों की द्वन्द्वात्मक दृष्टि को उनकी कफ़न आदि कहानियों के संदर्भ में विवेचित करते हुए अमरकांत की 'जिन्दगी और जोंक' 'डिप्टी कलक्टरी' 'छिपकली', 'हत्यारे', 'मूस', 'विजेता' आदि कहानियों का संवेदना, चरित्र सृष्टि, जीवन दृष्टि आदि का गहन विश्लेषण किया है, उनकी उपलब्धियों के साथ सीमाओं को भी सामने लाया है। 'अमरकांत के बहाने एक बहस' शीर्षक के अंतर्गत हिन्दी के कथा आलोचक सुरेन्द्र चौधरी, मधुरेश, परमानंद श्रीवास्तव के लेख हैं जिनमें अमरकांत के कथा साहित्य पर विभिन्न कोणों से विचार किया गया है। सुरेन्द्र चौधरी ने 'अमरकांत : आम आदमी की प्रतिबद्धता के लिए' शीर्षक लेख में नयी कहानियों के संदर्भ में अमरकांत की कहानियों की प्रतिबद्धता को विवेचित किया है तथा यह प्रश्न उठाया है कि क्या पश्चिमी रूप तत्व से मार्क्सवादी विचारधारा को विस्तारित किया जा सकता है । मधुरेश ने 'अमरकांत : एक पक्षधर लेखक' शीर्षक लेख में अमरकांत की 'जिन्दगी और जोंक,' 'गले की जंजीर' 'नौकर' 'पलाश के फूल' 'म्यान की दो तलवारें' 'देश के लोग' 'शुभचिंता' 'हत्यारे, फर्क 'सुख दुख का साथ' आदि कहानियों के संदर्भ में अमरकांत की सामान्यजन विशेष रूप में निम्नमध्यवर्ग के प्रति प्रतिबद्धता को तार्किक रूप में विश्लेषित किया है। 'अमरकांत : रूपवाद के विरुद्ध' लेख में परमानंद श्रीवास्तव ने अमरकांत को पचास के बाद कहानी के क्षेत्र में जिस जागरूक पीढ़ी ने प्रवेश किया उसमें उन्हें अग्रणी माना है। उनके लिए सामाजिक संलग्नता रचना का खास उद्देश्य है। परमानंद श्रीवास्तव का उनकी कहानियों के संबंध में कहना है, 'अमरकांत आलोचनात्मक यथार्थवाद के लेखक हैं इस तर्क से कि रोचक सरलता का निर्वाह करते हुए भी समस्याओं के विश्लेषण में उनकी सचेष्टता बनी रहती है। प्रतिबद्वता उनकी कहानियों को अनावश्यक रूप से सरलीकृत नहीं करती, न उन्हें रचना के अपने लक्ष्य से गिरने देती हैं।" संपादक रवीन्द्र कालिया ने अमरकांत की कहानी 'कला प्रेमी' को भी इस ग्रंथ में सम्मिलित किया है। यह कहानी उनकी अन्य कहानियों से भिन्न संवेदना की कहानी है जिसमें मध्यवर्गीय कलाकारों की स्वार्थीवृति को सामने लाया है । संपादक ने 'समकालीन' शीर्षक के अंतर्गत राजेन्द्र यादव के 'अमरकांत एक अस्तित्ववादी कथाकार' और मार्कण्डेय के 'समय नए सवालों के उठाने का' लेख सम्मलित किए हैं। राजेन्द्र यादव ने अमरकांत से परिचय इलाहाबाद में साहित्यिक गोष्ठियों के संस्मरणों का उल्लेख करने के पश्चात उनकी कहानी कला के चिंतन पक्ष का विश्लेषण किया है । राजेन्द्र यादव उनकी कहानी कला के संबंध में कहते हैं, 'अमरकांत टुच्चे और कमीने लोगों के मनोविज्ञान का मास्टर है। उनकी तर्क पद्धति, मानसिकता और व्यवहार को जितनी गहराई से अमरकांत जानता है, मेरे ख्याल से हिन्दी का कोई दूसरा लेखक नहीं जानता।" टैकनीक की दृष्टि से वे अमरकांत को चेखव के निकट पाते हैं। मार्कण्डेय ने उनकी कहानियों की उपलब्धियों और सीमाओं का उल्लेख किया है । वे लिखते हैं, 'वर्ग चरित्रों और उनके मनोविज्ञान की समझ के क्षेत्र में अमरकांत की गहरी रुचि है, लेकिन वे विचित्र चरित्रों की सृष्टि की ओर बढ़ रहे हैं, जिनमें केस स्टडी का व्यंग्य- चित्रात्मक स्वर प्रमुख होने लगता है। 'खलनायक' उनकी ऐसी ही कहानी है, जिसके पूरे अंतरंग शिल्प को 'डिप्टी कलक्टरी' से मिलाकर देखें, तो लगता है कि लेखक रचनाशीलता के ढलान पर खड़ा है और निरंतर ह्रास की ओर जा रहा है, लेकिन यहां अमरकांत की उन

रचनाओं की ओर भी ध्यान जाता है, जो 'दोपहर का भोजन' से चल कर 'छिपकली' के वस्तुनिष्ठ यथार्थ चित्रण तक पहुँचती है'। संपादक ने 'प्रगतिशील रचनाएं मनुष्य की संघर्षशीलता को उजागर करती हैं' शीर्षक के अंतर्गत दिल्ली में फरवरी 1977 में विश्वनाथ त्रिपाठी, राजकुमार सैनी, आंनद प्रकाश, रमेश उपाध्याय, बलवीर सिंह और द्वारिका प्रसाद आदि के मध्य हुई बातचीत को इस ग्रंथ में शामिल किया है। यदुनाथ सिंह ने 'अमरकांत पर कुछ जरूरी नोट्स' शीर्षक लेख के अंतर्गत अमरकांत की बहुत सी प्रमुख कहानियों का विश्लेषण किया है। अशोक कुमार सुमन का 'व्यवस्था की विकृतियों का चित्रण अब्दुल बिस्मिल्लाह का 'समाज की विद्रूप स्थितियों का कथा संस्करण' और गोबिन्द स्वरूप गुप्त का 'जन साधारण की भाषा का कोश' लेखों को संपादक ने 'परवर्ती' शीर्षक के अंतर्गत रखा है। इन लेखों में अमरकांत की संवेदना और शिल्प वैशिष्ट्य का विवेचन है। पूर्ववर्ती शीर्षक के अंतर्गत संपादक ने यशपाल, श्रीपतराय और उपेन्द्र नाथ अश्क के साक्षात्कार रखे हैं जो अमरकांत को गहनता से समझने में सहायक हैं ।

'समीक्षाएं' शीर्षक के अंतर्गत कमला प्रसाद पाण्डेय, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, परमानंद श्रीवास्तव, श्रीपतराय और विजय मोहन सिंह के लेख सम्मिलित किए गए हैं। कमला प्रसाद पाण्डेय ने अमरकांत के उपन्यासों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया है। 'सूखा पत्ता' अमरकांत की प्रथम औपन्यासिक कृति है । सम्पादक ने चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, राजेन्द्र किशोर और परमानंद श्रीवास्तव के इस उपन्यास के संदर्भ में तीन अभिमतों को प्रस्तुत किया है जो उस समय 'आजकल' 'कल्पना' और 'ज्ञानोदय' में प्रकाशित हुए थे। उन्हें प्रस्तुत कृति में सम्मिलित किया है ताकि एक रचनाकार के प्रारंम्भिक रचना के प्रति आलोचकों के दृष्टिकोण को समझा जा सके। श्रीपतराय की 'ज़िन्दगी और जोंक' संग्रह के संदर्भ में टिप्पणी है। आधुनिक कथा साहित्य के आलोचक विजय मोहन सिंह का 'मौत का नगर' संग्रह के संदर्भ में विवेचन अमरकांत के कथा साहित्य को नए सिरे से समझने के लिए निष्कर्ष का कार्य करता है।

इस ग्रंथ के अंत में 'चिट्ठी-पत्री' शीर्षक के अंतर्गत सम्पादक रवीन्द्र कालिया ने अमरकांत को समकालीन साहित्य सर्जकों और प्रबुद्ध पाठकों के लिखे पचास पत्रों को सम्मिलित किया है। ये पत्र मोहन राकेश, रांगेय राघव, राजेन्द्र यादव, नामवर सिंह, कमलेश्वर, केदार, राजनाथ पाण्डेय, मन्नु भण्डारी, मार्कण्डेय, शेखर जोशी, भैरव प्रसाद गुप्त, भीष्म साहनी, निर्मल वर्मा, श्रीकांत वर्मा, ज्ञान प्रकाश, सुरेन्द्र वर्मा, विश्वनाथ भटेले, वारान्निकोव, गार्डन टोडरमल द्वारा अमरकांत को 1950 और 1965 के मध्य लिखे गए हैं। इन पत्रों के माध्यम से जहां एक और अमरकांत के जीवन संघर्ष और रचनाशीलता का बोध होता है वहीं दूसरी ओर समकालीन रचनाकारों की सृजनशीलता और तत्कालीन साहित्यिक परिवेश प्रकट हुआ है । उस समय निकलने वाली पत्र - पत्रिकाओं 'अमृत' 'पत्रिका' 'प्रतीक' 'कहानी' 'सुप्रभात' 'ज्ञानोदय' 'धर्मयुग' 'नयापथ' 'नई कहानियां' 'आजकल' आदि के संदर्भ भी इन पत्रों में आए हैं जो उस समय के साहित्यिक वातावरण और साहित्य के प्रति समर्पण भावों को व्यक्त करते हैं।

इस ग्रंथ में अमरकांत के जीवन, सृजन और चिंतन पर ख्यातिलब्ध कथाकारों और आलोचकों ने विभिन्न कोणों से विवेचन किया है। इसमें अमरकांत की प्रमुख रचनाओं का विश्लेषण और मूल्यांकन तो है ही, इसके साथ उनके सृजन कर्म की प्रेरणा, परिवेश, सृजन प्रक्रिया, रचनाशीलता, संवेदना भूमि और शिल्प पर भी प्रकाश डाला गया है। विभिन्न साक्षात्कारों में अमरकांत के सृजन कर्म के प्रति दायित्व बोध, प्रतिबद्धता और वैचारिक दृढ़ता उद्घाटित हुई है। रवीन्द्र कालिया ने मूल्यांकन के क्रम में अमरकांत के कहानीकार को जिस जीवन्तता से उभारा है उतना उनके औपन्यासिक पक्ष को नहीं। उन्होंने दर्जन से अधिक उपन्यास लिखे हैं। एक आध विस्तृत लेख कहानियों की भांति उपन्यासों पर भी होता तो यह अभाव दूर हो सकता था। फिर भी यह ग्रंथ रवीन्द्र कालिया ने जिस अनुभव संपन्नता और संपादकीय विवेक से व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया है, यह श्लांघनीय कार्य है। अतः 'अमरकांत : एक मूल्यांकन' हिन्दी के शोधकर्ताओं और प्रबुद्ध पाठकों के लिए महत्त्वपूर्ण और प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करता है जिसके लिए संपादक साधुवाद के पात्र हैं । पुस्तक जिस आकर्षक कलेवर में प्रस्तुत की गई है उसके लिए प्रकाशक भी बधाई के पात्र हैं।

वी.पी.ओ. बातल, अर्की,
जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश-173208

अमरकांत : एक मूल्यांकन (आलोचना) सं. रवीन्द्र कालिया
सामयिक बुक्स, 3320-21, जटवाड़ा, दरियागंज, एन.एस. मार्ग, नई दिल्ली-110 002
प्र. स. 2012, पृ. 352, मूल्य : 500 रुपये

कलम का चितेरा

कला की बारीकियों को उजागर करता एक कलाकार जितेंद्र कुमार

◆ अजय पाराशर
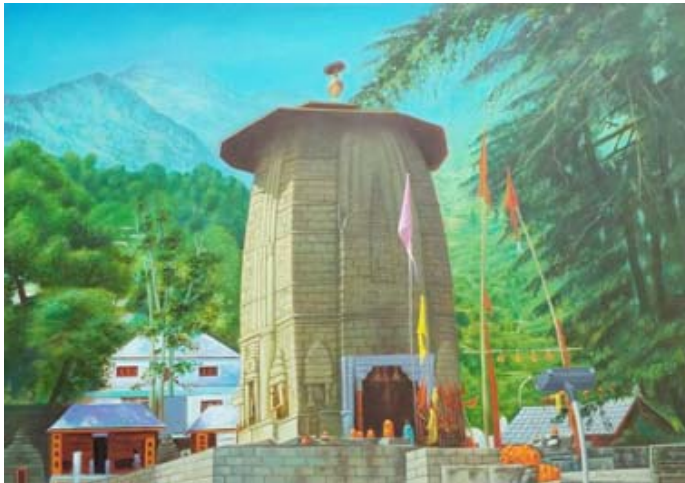
कला को अपना जीवन मानने वालों के लिए यह ज़रूरी नहीं कि वे कला की किसी भी विधा को पारंगत होने के बावजूद इसे व्यवसाय के रूप में अपनाएं भी। हो सकता है अपनी रोज़ी-रोटी के जुगाड़ में वे किसी और क्षेत्र में कार्यरत हों लेकिन जब बात अपनी रुचि या शौक को पूरा करने की आती है तो ये लोग अपने उपलब्ध समय को पूरी तरह से कला को समर्पित कर देते हैं। समय के साथ ऐसे शौकिया कलाकार या फ़नकार अपनी विधा में इतने सिद्धहस्त हो जाते हैं कि अगर वे किसी मोड़ पर अपने आपको पूरी तरह से कला के लिए समर्पित कर दें तो कामयाबी उनके क़दम चूमने के लिए तैयार रहती है। ऐसा ही एक नाम है सिरमौर ज़िला के चित्रकार जितेन्द्र कुमार का।

तैलीय, एक्रिलिक एवं जल रंगों में बराबर की महारत रखने वाले जितेन्द्र के चित्रों को देखकर यह अन्दाज़ा लगाना मुश्किल होता है कि वह पूर्णतया व्यावसायिक नहीं शौकिया कलाकार हैं। हिमाचल प्रदेश के युवा सेवाएं एवं खेल विभाग द्वारा समय-समय पर आयोजित राज्य स्तरीय चित्रकला प्रतिस्पर्धाओं में वह सात मर्तबा प्रथम और दो बार द्वितीय पुरस्कार जीत चुके हैं। शिवपुरी रोड, नाहन के रहने वाले जितेन्द्र ने इतिहास विषय में परा स्नातक की डिग्री हासिल की है। उन्होंने जितना मान अपनी कला को दिया है, उतनी ही खूबसूरती से अपनी पारिवारिक जिम्मेवारियों को भी निभाया है। एकल परिवार के दौर में भी उनके संयुक्त परिवार में तीन पीढ़िया साथ रहती हैं।

वर्तमान में पांवटा विकास खंड में बतौर पंचायत सचिव कार्यरत जितेन्द्र कुमार के चित्रों में उनकी क़लम की पकड़ स्पष्ट देखी जा सकती है। उनके चित्रों में जिस बारीक़ी और नफ़ासत से छोटे से छोटे अंशों और अंगों को अहमियत दी जाती है, वह देखने योग्य होती है। उनके अब तक के चित्रों में स्वामी विवेकानन्द, नोबेल पुरस्कार विजेता गुरु रविन्द्र नाथ टैगोर, भारत के लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल, भारत के प्रथम प्रधान मंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू, हिमाचल प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार और सत्य साईं

बाबा के पोट्रेट के अलावा कई मशहूर मंदिरों और स्थानों के दृश्य शामिल हैं। ख़ास तौर पर उनके द्वारा बनाए गए गुरुदेव और स्वामी विवेकानन्द के चित्रों में उन्होंने आंखों की जो गहराई उन्होंने उकेरी है, उसमें दर्शक बरबस ही डूब जाते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त स्थानीय कलाकार श्री मुकेश थापा उनके चित्रों की बारीकियों के बारे में बताते हैं कि चौरासी मंदिर के पत्थरों की नफ़ासत को उन्होंने जिस तरह उकेरा है, उसे आम आदमी मंदिर के दर्शन करते हुए भी शायद ही देखता हो, जो उनकी पारखी नज़र को दर्शाता है। इसी तरह कला समीक्षक राका कौल बताती हैं कि उनके झरने के चित्र में जल प्रवाह को बेहद खूबसूरती से अंकित किया गया है। उनके भीमाकाली मंदिर के चित्र में मंदिर की नक्काशी के साथ प्रकृति के सौंदर्य को बखूबी उभारा गया है।

जितेन्द्र मुस्तक़बिल की अपनी योजनाओं के बारे में कहते हैं कि वह अपनी कल्पनशीलता और मौलिकता के बल पर अपनी चित्रकला को आगे बढ़ाना चाहते हैं। ऐसा नहीं है कि उन्होंने ऐसे चित्र नहीं बनाए हैं किन्तु वह कहते हैं कि एकल प्रदर्शनियों के लिए मौलिकता और तसव्वुर का अपना महत्व है। मौलिकता और कल्पनाशीलता ही किसी भी कलाकार को कला जगत में एक अलग मुकाम दिलवाते हैं।

उप निदेशक, क्षेत्रीय कार्यालय,
सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, धर्मशाला, ज़िला कांगड़ा,
हिमाचल प्रदेश–176215

रमेश चंद्र पंत की ग़ज़लें

एक

आप हमें इस राह पर बुलाते क्यों हैं,
गम यूं ही बहुत हैं रूलाते क्यों हैं।

ठीक है अपनी डगर इस पर चलना है,
बेवजह रंगीनियां दिखाते क्यों हैं।

कद है बहुत छोटा-सा राह लंबी है,
दौडूं जल्दी आवाज़ लगाते क्यों हैं।

जानता हूं सबको सब ही तो वही हैं,
चेहरे से नकाब उठाते क्यों हैं।

रास्ते सब ही तो मिल जाते हैं आखिर,
दांव-पेंच इतना फिर सिखाते क्यों हैं।

दो

आइने को इस कदर न देखिए लोगो,
मुस्कान जहरीली न अब फेंकिए लोगो।

जलाकर बस्तियां इस छोर से उस छोर तक
नहीं अब हाथ अपना सेंकिए लोगो।

न रहें हम काबिल खुद की नज़रों के,
इस कदर ईमान तो न बेचिए लोगो।

इसके पहले कि उठाएं उंगलियां हम पर,
ज़रा अपनी आस्तीं भी देखिए लोगो।

मिल गई है बादशाहत सच है लेकिन,
आसमां पर पैर तो न टेकिए लोगो।

'उत्कर्ष', विद्यापुर, द्वाराहाट, अल्मोड़ा, उत्तराखंड–263 653
मो. 0 96393 73737

कहानी

फेस बुक

◆ नफे सिंह कादयान

आकाश की बुलदियों पर रूई के पहाड़ों जैसे बादलों को देख सयानी पाठक का मन मयूर नाच उठा। तभी बादलों के झुंड से निकल कर सफेद घोड़े पर बैठा एक सुंदर, सजीला, बांका प्रिंस उसकी तरफ बढ़ने लगा। जैसे जैसे वह उसके नजदीक आता गया उसके नाजुक, नन्हे दिल की धड़कन उसे नजदीक से देखने, उससे प्यार भरी बातें करने के लिए बढ़ने लगीं।

घोड़े से उतर कर वह उसके इतना नजदीक आ गया की सयानी की सांसे उसके चेहरे से टकराने लगी। उसने अपने मोबाईल स्क्रीन को और अधिक जूम कर के प्रिन्स को ध्यान से देखा। 'वाह क्या हैंडसम, मस्त ब्याए है। वह आह भर कर मन ही मन बोली और प्रिन्स की जन्म कुंडली चैक करने लगी। "कौन हो तुम? कहां रहते हो, क्या करते हो? घर पर कौन-कौन हैं?" सयानी की उंगलियां की-बोर्ड पर किसी कुशल नर्तकी की तरह कत्थक नृत्य करने लगीं।

'डार्लिंग मैं तुम्हारे सपनों का वो ही राजकुमार हूं जिसका तुम्हें सदियों से इंतजार था। सपनों की नगरी में रहता हूं, सपने बेचता हूं, घर पर अकेला हूं आ जाओ मिलने। प्रिन्स ने भी इन्वोक्स से सयानी के कान में रस घोलते हुए सरगोशी की। 'शक्ल से तस्वीर में तो ठीक ठाक लगते हो, पर लगता है भेजे में कुछ खोट है। कभी मिले नहीं, देखा नहीं, तेरी डार्लिंग कहां से बन गई वे मैं? और सपने बेचने से पेट नहीं भरता। रोटी के लिए कुछ वर्क करना पड़ता है। सयानी ने सयान पट्टी दिखाते हुए प्रिन्स को जवाब लिख भेजा।

'मजाक कर रहा था यार। घर पर मम्मी, पापा और एक सिस्टर है। मैंने अभी एम.बी.ए. करके बैंक मैनेजर की पोस्ट ज्वाईन की है। अस्सी हजार पे है। आ जाओ, गुजारा तो चल ही जाएगा। तुम क्या कर रही हो डियर?'

'मैं स्टडी कर रही हूं, बीए लास्ट ईयर, महानगर में। सयानी पाठक नाम है। घर में मम्मी, डैडी, भाई, सब हैं।

'नंबर दो न अपना। इन्बोक्स में क्या मजा आता है। खुलकर बात किया करेंगे। कुछ हम कहेंगे, कुछ तुम कहना। बातों बातों में दिल बहलाया करेंगे।

'नो सौ निन्यानवे, साठ ट्रिपल नाईन है पर किसी को देना मत। मैं हर किसी को अपना नम्बर नहीं देती। तुम शरीफ लगते हो। रिंग करना, अगर कोई आसपास न होगा तब ही बात करूंगी।

'डीयर ये तो बी आई पी नम्बर ले कहां से लिया?, मैं वी वी आई पी हूं।,

'अच्छा अभी फोन करके वीवीवआईपी की मीठी आवाज श्रवण करता हूं।'

'न... अभी मत करना कॉलेज में हूं। चश्मुदीन का लैक्चर चल रहा है।,

'अपने गुरुओं के बारे में ऐसे विचार नहीं रखने चाहिये। आखिर वो हमारे ज्ञानदाता होते हैं।

'अच्छा अब तू मुझे सिखाएगा कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं। जाओ मुझे तुम्हारे साथ बात नहीं करनी। सयानी अब तक हाई स्पीड़ से जवाब दे रही थी मगर अब उसने प्रिंस की प्रतिक्रिया देखने के लिए नैट का स्वीच ऑफ कर दिया।

डी.ए.वी. गर्ल्ज कॉलेज महानगर। बी.ए. अंतिम वर्ष कक्षा में अंतर्राष्ट्रीय विधि पर लेक्चर जारी पर सयानी पाठक का ध्यान लैक्चर पर नहीं। वह तो अपने एक दर्जन से भी अधिक प्रिंसों की दिवानी थी। किसी की नजर न लग जाए, कोई उससे चुरा न ले। उसने बैंच पर अपनी दोनों टांगें फैला कर साईलेंट मोड पर मोबाईल इस प्रकार रखा हुआ था कि वो उसके पास बैठी छात्राओं को भी नज़र नहीं आ रहा था।

वह हर एक प्रिंस को अच्छे से चैक करती थी। पहले एफ. बी. इन्बोक्स में मीठी-मीठी बातें होतीं, फिर मोबाईल नंबर का आदान प्रदान और फिर दो दो घंटे नॉन स्टॉप प्यार में वार्तालाप होता। कस्में वादों का दौर चलता। रूठने मनाने के वार्तालाप होते। हर प्रिंस उससे मिलने की जिद करता। उसके साथ डेट पर जाना चाहता। उसे छूह कर देखना चाहता। उसे गले लगाना चाहता। उसका किस्स लेना चाहता मगर वह कोई न कोई बहाना कर टाल देती।

सयानी अपने कॉलेज की मिस कॉलेज थी। उसका गोरा चिट्टा रंग, जीरो साईज फिगर था। वह चैटिंग, रोमांस, कस्में वादे भले ही जुबानी जितने मर्जी कर ले पर वो यों ही किसी भी ऐरा गैरा

प्रिंस से नहीं मिल सकती थी। उसका एटीट्यूड बड़ा हाई फाई था। वह तो इन प्रिंसों में से ऐसा प्रिंस खोजना चाहती थी जो सलमान खान की तरह डोलों सोलों वाला हैंडसम दिखता हो। जो चाणक्य की तरह बुद्धिमान हो। जो मजनूं की तरह उसके वियोग में कपड़े फाड़ कर सहराओं की खाक छानने लगे। रईस इतना की जो फाईव स्टार में डिनर कराने की हैसियत रखता हो। जो उसे लंदन, पेरिस की सैर करा सके। जो केवल उसका हो और किसी अन्य चुड़ैल की तरफ नजर भर कर भी न देखें। जिसे वह छोटे पर्स में ढाल कर अपनी अंगिया में हिफाजत में रखा सके। सयानी के डैडी ने उसके लिए अच्छे घराने का रिश्ता खोज रखा था। उसे अरेंज मैरिज पसंद नहीं थी। वह अपने डैडी को ये कहते हुए टाल रही थी कि अभी तो वह पढ़ रही है उसके बाद ही शादी के बारे में सोचेगी।

प्रिंसों को चैक करने के लिए उसने मल्लिका हीरोइन, मस्त गर्ल, कवयित्री उदास नामों से तीन 'फेक' फेसबुक प्रोफाईल बनाई हुई थी। अपने हर एक प्रिंस से कसम लेती थी की वह केवल उस से प्यार करेगा उस से इकरार करेगा। अगर किसी दूसरी लड़की से गुटर गू करता पाया गया तो वह उसे फौरन अपनी एफबी से ब्लॉक कर देगी।

सयानी ने अपनी 'फेक' प्रोफाईलों से अपने प्रिन्सों को खूब चैक किया। मल्लिका वाली से डांस गाने भेज कर ललचाया। मस्त गर्ल से बोल्ड, मस्त, हॉट, पोर्न सामग्री भेजी। कवयित्री से भावुक कविताएं, शेरो शायरी का दौर चलाया। नतीजा यह हुआ कि उसके तमाम प्रिंस बोल्ड आउट हो गए। ये नए दौर के प्रिंस थे जो किसी एक सयानी के दिवाने नहीं होना चाहते थे। सयानी को जितने भी प्रिंस मिले उसकी नजर में हरामी निकले। अब तो उसे लगने लगा था कि सारे मर्द जात की एक ही फितरत है। ये चरित्रहीन, बहुपत्नीक प्राणी होते हैं। उसके चाहने वाले लाख कसमें वादे करते मगर मल्लिका के डांस पर मर मिटते थे। मस्त गर्ल को एक रात के लिए लाखों की पेशकश करते। कवयित्री की उदासी भरी ग़ज़लों पर रोने लगते और अपनी तरफ से भी उसके शेरों के जवाब में आशिकी भरी तुकबंदियां उछाल देते।

'अगर हम किसी गैर मर्द के पास अकेले में दस मिनट के लिए भी बैठ जाएं तो हमें सारी मर्द जात कुलटा, चरित्रहीन घोषित कर देती है तो ये सारे हरामी क्या हैं। सयानी ने गुस्से में आकर हर एक प्रिन्स को जी भरकर गालियां देते हुए ब्लॉक कर दिया।

आज जिस प्रिंन्स से वह एफ बी के इन्बोक्स में चैटिंग कर रही थी उसकी सुबह ही फ्रेंड रिक्वेस्ट आई थी। इस प्रिंस को देखते ही वह बोल्ड हो गई। यह हीरो सलमान का हमशक्ल था। बातें भी समझदारी से कर रहा था। सरकारी नौकर था। कॉलेज से निकलते ही सयानी पाठक की बेचैनी बढ़ गई। गेट तक आते ही उसने नए प्रिंस को मिस कॉल कर ग्रीन सिग्नल दे दिया।

प्रिन्स भी जैसे उसी की रिंग टोन का इंतजार कर रहा था। देखते ही देखते दोनों के बीच बातों का लम्बा दौर चलने लगा। बातों से बड़े बड़े घड़े, मटके भरने लगे। कुछ हल्की बातें, कुछ उदास बातें, कुछ रोमांटिक प्यारी बातें, कुछ रूटने मनाने वाली खट्टी मिट्टी बातें। कमरे में बातें, छत पर बाते, बस में बातें, कॉलेज के मैदान में बातें, हर जगह, हर दिन बातें ही बातें होने लगी, फिर आखिरकार नये प्रिन्स की परीक्षा की घड़ी आ ही गई।

सयानी ने मल्लिका के लटके झटके दिखा प्रिंस को बोल्ड करना चाहा मगर उसने मल्लिका को विनम्र निवेदन से बतला दिया कि वह किसी और से प्यार करता है। बाकी लड़कियों को तो वो अपनी मां, बहन की तरह मानता है। सयानी ने मस्त गर्ल से 'आई लव यू माय कूल ब्वाय, गिव मी ए किस, का जुमला लिख प्रिंस के इन्बॉक्स में सुंदर टॉपलेस गाल की हॉट फोटो भेजी तो प्रिन्स ने बैड गर्ल कहते हुए उसे ब्लॉक कर दिया। सयानी ने अंत में प्रिन्स को पटाने के लिये कवियत्री की प्रोफाईल से उदासी भरी कविताएं भेजी। शेरो शायरी से प्रिन्स को पटाना चाहा। अपने साथ हुए तथाकथित मार्मिक अत्याचारों का वर्णन लिख भेजा मगर प्रिन्स टस से मस नहीं हुआ। उसने कवयित्री की पोस्टों पर लाईक करना ही बंद कर दिया, उसके लिये इन्बाक्स लॉक कर दिया। पहली बार सयानी को कोई ऐसा सही सच्चा मर्द मिला जिसके साथ वह संसार रूपी भव सागर पार कर सकती थी। 'इससे तो मिलना ही होगा। पहले वह लगातार उसे कोई न कोई बहाना बना कर टालती आ रही थी पर अब वह स्वयं अपने प्रिन्स को गले लगाने के लिये आतुर होने लगी। अब वह उसके साथ होटलों, पार्कों, कॉलेज की कंटीनों, मैट्रो की सीढ़ियों, बस स्टॉप के शेडों में बैठकर, हाथों में हाथ डाल, प्यार के नगमें गुनगुनाना चाहती थी। उसका इरादा था कि दो साल लिव-इन- रिलेशनशिप में रहने के बाद ही वह अच्छी प्रकार अपने प्रिंस से सात फेरे लेगी।

रविवार के दिन दोपहर एक बजे प्रिंस और सयानी ने शहर के फाईव स्टार होटल में लंच करने का प्रोग्राम बना लिया। एकांत में सयानी के साथ मौज मस्ती करने के लिए प्रिंस ने होटल का स्पैशन कमरा नंबर चार सौ बीस बुक करवाया। सयानी की खुशी आज छुपाए नहीं छुप रही थी। पहली बार अपने दिलवर, प्रेमी,

कविता

वतन की मिट्टी

◆ वासुदेव शर्मा

मेरे वतन की मिट्टी
मेरे वतन के खेत
कहीं श्याम-सुंदर
कहीं स्वर्ण-श्वेत,
कभी इनमें मक्की की महक
कभी गेहूं की बालियों की झलक
कहीं हैं धान के क्यार
जिनमें आज भी है मेरी मां की ममता
मेरे पिता जी की परवरिश
और मेरे भाई बहन का प्यार
ये मुझे बचपन की यादें दिलाते हैं
मेरे दोस्तों-बुजुर्गों से मिलाते हैं
मेरे खेत आज भी
मुझे, मेरे परिवार को, खिलाते पिलाते हैं
इसी मिट्टी में मेरा बचपन खिला-पला है
मैं इस मिट्टी को बराबर पूजता हूं
क्योंकि इसी से मेरा, मेरे परिवार का भला है।

विजय निवास, लोअर टुटू, शिमला, हिमाचल प्रदेश-171 011

प्यारे प्रिंस को देखने का उल्लास उसके रोम-रोम से उजागर हो रहा था। वह फूली नहीं समा रही थी।

रविवार को ब्यूटी पार्लर के सुबह नौ बजे शटर उठाते ही सयानी दनदनाते हुए कुर्सी पर बैठ गई। सबसे पहले उसने अपनी बाजुओं टांगों के बाल उधड़वाने की मुहिम चलवाई। ब्यूटी पार्लर ने पूरे एक घंटे में उसकी टांगों, बाजुओं, गर्दन पीठ की तसल्ली से वैक्सिंग कर दी। फिर मैनी क्योर, पैडी कोर, ब्लीचिंग, गोल्ड फेशियल का दौर चला। आईब्रो की धारदार सैटिंग की गई। घड़ी की सुइयों का मिलन जब बारह के अंक पर आकर हुआ तो वह ब्यूटी पार्लर से खजूरी चोटी बनवा कर पूरी तरह से टीप टॉप हो चुकी थी। सयानी ठीक एक बजे होटल पहुंच गई। उसने कमरा नम्बर चार सौ बीस की बैल बजाने से पहले पर्स से छोटा आईना निकाल कर अपने चेहरे को जांचा परखा। संतुष्ट होने पर बैल के बटन पर उंगली रख दी।

'अंदर आ जाओ डीयर गेट अनलॉक है। अंदर से प्रिन्स की जानी पहचानी मधुर आवाज सुनाई दी तो सयानी उमंग में भरकर दरवाजे का ट्रेंडल दवा अंदर दाखिल हो गई, मगर यह क्या?

सयानी की नजर जैसे ही अंदर बैठे प्रिंस पर पड़ी, उसके होश उड़ गए। वहां लगभग साठ साल का बुड्ढा जेंटलमैन बनकर मेज के आगे कुर्सी रखे बैठा था। वह बालों को डाई किए था और चकाचक सूट पहन अत्र फूलेल लगाए बैठा था। उसने मेज पर अनेक प्रकार के व्यंजन मंगा रखे थे। कांच के गिलास में गुलाब के फूलों का एक छोटा गुलदस्ता सजा रखा था। शाहरुख खान स्टाईल में जमीन पर एक घुटना रख हाथ उसकी तरफ बढ़ा दिया।

'यू रास्कल, ठरकी बुड़ऊ, तुम प्रिंस हो?, सयानी ने गुलाब हाथ में ले उसे मसलते हुए बूढ़े के मुंह पर दे मारा तो गुलाब के पीछे टहनी पर लगे कांटों से उसकी हथेली लहूलुहान हो गई।

'क्यों, आखिर क्यों तुम मेरे दिल से खिलवाड़ करते रहे। किस सुंदर राजकुमार की फोटो तुमने अपनी प्रोफाईल पर लगा रखी है? जब मलिका, मस्त गाल, कवयित्री की प्रोफाईल से तुझे प्रेम संदेश भेजे जा रहे थे तब उनके चक्र में क्यों नहीं पड़े? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था जो मेरे सारे अरमानों पर पानी फेर दिया। सयानी प्रिन्स को खरी खोटी सुनाते हुए सवाल करने लगी।

'तुम तो वैसे ही नाराज हो रही हो डियर, प्रिंस भावुक होते बोले- 'सलमान खान से चार पांच साल ही तो बड़ा हूं। वह भी अभी तक कुंवारा है और मैं भी अपने लिए किसी ऐसी गर्ल की तलाश में हूं जो एक दर्जन प्रिंसों से इश्क न लड़ा केवल मुझसे सच्चा प्यार करे। प्रोफाईल पर तसवीर मेरी ही है, पर बीस साल पुरानी है। अब शरीर ढल गया तो इसमें मेरा क्या कसूर। बॉडी पुरानी है पर दिल तो अभी जवान है। तेरी तीनों फेक आई डी को मैंने तेरे मोबाईल नम्बर को एफ बी के फॉरगैट पासवर्ड ऑप्शन पर सर्च करके देख लिया था कि वो तेरे ही नंबर पर बनी हुई फेक प्रोफाइल्ज हैं। कोई गुनाह नहीं किया, जबरदस्ती नहीं की। जैसे तुम अपने लिये जीवन साथी खोज रही हो, में भी अपनी जीवन संगनी की तलाश में प्रयासरत हूं।

सयानी को अब एहसास हुआ कि बुड़ऊ सही कह रहा है। गलती उसकी भी थी जो बिना सोचे समझे फेसबुक पर अपने लिए कोई अच्छा वर ढूंढ रही थी। वह बूढ़े को खरी खोटी सुना अपने घर चली आई। सयानी ने आते ही सबसे पहले अपने फेसबुक अकाउंट को डिसेबल कर दिया। अब उसने मन ही मन निश्चय किया कि पढ़ाई पूरी करके कोई नौकरी करने के बाद ही शादी के बारे में सोचेगी।

गां. गगनपुर, डाकघर बराड़ा, जिला अंबाला,
हरियाणा-133 201, मो. 0 99918 09577

कहानी

बेघर

◆ विमल कुमार शर्मा

जोली जी धीमे कदमों से कोर्ट की सीढ़ियां उतर रहे थे। आज बरसों बाद कोर्ट ने उनके पक्ष में फैसला दिया और ये माना कि सच में उनके साथ नाइंसाफी हुई है। जोली जी ने अपने हक के लिए लंबी लड़ाई लड़ी थी। इस लड़ाई में बहुत बार उन्हें निराशा भी मिली लेकिन उन्होंने इसे अपने वुजूद से जोड़ लिया और यही विचार उनकी प्रेरणा और शक्ति बना। आज जब फैसला उनके हक में हुआ था तो उन्हें ना तो कोई ज्यादा खुशी हो रही थी और ना ही कोई उनके आस पास था जो उन्हें इस जीत के लिए बधाई देता। उन्हें खुशी की जगह एक थकान का एहसास हो रहा था क्योंकि अब ये सफर खत्म हो गया था, आज सुबह तक उनका हर दिन इसी फैसले के इंतजार में शुरू होता और इसी इंतजार में खत्म भी हो जाता। इस बीच जिंदगी में बहुत से महत्त्वपूर्ण क्षण आए और गए लेकिन जोली साहिब की वरीयता में यही जंग सबसे ऊपर रही, उन्हें तो पता ही नहीं चला कि कब उनके बच्चों के भी बच्चे हो गए और कब वो अपनी नौकरी से सेवानिवृत्त हो गए। कोर्ट ने पुलिस विभाग को उन्हें एक करोड़ रुपये मुआवजा चुकाने के आदेश दिया थे। लेकिन अब इस सब के कोई खास मायने नहीं थे उनके लिये क्योंकि उनके सपने तो शायद बरसों पहले राख हो गए थे इस अनहोनी घटना से जिससे उनका दूर दूर तक कोई रिश्ता नहीं था।

जोली साहिब का जन्म एक निम्न मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। वो लोग सन 1947 में पाकिस्तान से यहां आए थे। जोली साहिब परिवार में सबसे छोटे थे। उनको एक बड़ा भाई और चार बहनें थी। उनके पिता जी की पंजाब के एक सीमावर्ती शहर में छोटी सी सब्जी कि दुकान थी। आर्थिक तंगी के बावजूद सब आपस में प्रेम से रहते। सभी के बच्चों की तरह ये भाई बहन मोहल्ले के सरकारी स्कूल में पढ़ते थे। बड़े भाई ने भी स्कूल पास करके पढ़ाई छोड़ दी और बहनों के चाहने के बावजूद भी माता-पिता को उनकी पढ़ाई में कोई दिलचस्पी नहीं थी इस लिए उनकी शिक्षा भी स्कूल के बाद प्राईवेट ही रही और फिर छोटी उम्र में ही अपनी हैसियत के लड़के देख कर उनकी शादी तय कर दी गयी। वो अपने ससुराल में संघर्ष करने लगीं क्योंकि आर्थिक अभाव की विरासत ने उनका यहां भी पीछा ना छोड़ा था। ऊपर से पंजाबी और पाकिस्तानी मिश्रित संस्कारों के चलते लड़के वालों को लड़की के मायके से कुछ उम्मीद ज्यादा ही रहती। बहनों का दुःख माता पिता और जोली साहिब महसूस तो करते लेकिन बेटियों के ससुरालपक्ष और अपनी बदनसीबी को कोसने के सिवा और कुछ भी किसी के हाथ में ना था। इन रिश्तेदारियों में अपनेपन की जगह रुसवाइयां ही ज्यादा थीं। बहनें कभी बच्चा जनने या कभी किसी तीज त्योहार पर घर आती तो परिवार एक अतिरिक्त आर्थिक दबाव में आ जाता क्योंकि एक तो इन सब गतिविधियों का खर्च उन्हें ही देखना होता दूसरे जब बहनों को वापिस अपने ससुराल जाना होता तो सब के लिए कुछ ना कुछ तोहफे भेजना एक सामाजिक परम्परा थी। लेकिन हर मुश्किल वक्त में प्रभु कोई ना कोई राह दिखाते और किसी तरह ये सब निपट जाता। एक अच्छी बात जरूर थी कि सभी के सभी शारीरिक रूप से तंदुरुस्त थे। जोली साहिब पढ़ने में विलक्षण तो नहीं थे लेकिन मेहनती थे और किताबों को रट कर अच्छे अंकों में परीक्षा पास कर लेते। घर में कोई ज्यादा पढ़ा-लिखा नहीं था तो सब की उम्मीद उनपर थी, किस्मत कि मेहरबानी इतनी थी कि विश्वविद्यालय तक की पढ़ाई की सुविधा इसी शहर में थी और इस लिए पढ़ते-पढ़ते जोली साहिब ने एम. एस. सी. कर ली। जोली साहिब अपने परिवार के पहले पढ़े-लिखे सदस्य थे और अब उनका रुतबा परिवार में सबसे ऊंचा था। कुछ दिन कोशिश करने के बाद उन्हें दिल्ली में एक छोटी सी अस्थायी नौकरी मिल गयी। पारिवारिक परिस्थिति के चलते जोली साहिब को इसे स्वीकार करना पड़ा। उनका परिवार बहुत खुश था क्योंकी परिवार में पहली बार किसी को सरकारी नौकरी मिली थी। जोली साहिब अपने सीमित सामान के साथ दिल्ली आ गए और अपने दूर के चाचा के घर रहने लगे। वक्त बीतने लगा और एक दिन अखबार में भारत सरकार के एक नये विभाग में अधिकारियों के बहुत से पद निकले जिसकी शैक्षणिक योग्यता को जोली साहिब भी पूरा करते थे। जोली साहिब ने खुशी-खुशी इस पद के लिए आवेदन कर दिया और टेस्ट के लिए इंतजार करने लगे। किस्मत ने साथ दिया और उनका चयन भी

हो गया। अब जोली साहिब को मनचाही मुराद मिल गयी। कुछ ही दिनों में एक संपन्न परिवार में जोली साहिब की शादी निश्चित हो गयी। परिवार में सब खुश थे और कुछ ही दिनों में शादी भी हो गयी। जीवन अपनी चाल से अच्छा चल रहा था और समय बीतता गया। जोली साहिब के परिवार में भी दो नये सदस्य आ गए एक बेटा और एक बेटी। सभी की तरह जोली साहिब ने भी सोचा कि जब तक तो नौकरी है तब तक तो सरकारी घर है लेकिन सेवानिवृति के बाद अपना घर होना चाहिए। इसी दौरान उनकी पोस्टिंग चंडीगढ़ में हो गयी लेकिन चंडीगढ़ में घर लेना जोली साहिब के बूते से बाहर था और इसीलिए उन्होंने अपने ससुराल वालों की मदद से पंजाब के एक छोटे शहर फरीदपुर में एक पुराना घर खरीद लिया और ये सोचा कि अब धीरे-धीरे इसे मरम्मत करवा कर अपने रहने के लायक बना लेंगे।

कुछ बरसों बाद की बात है फरीदपुर में ये एक सामान्य सुबह थी बाकी दिनों कि तरह आज भी शहर धीरे-धीरे दिन की शुरुआत कर रहा था, कि अचानक शहर के थाने पर आतंकवादियों ने हमला कर दिया। पहले तो किसी को कुछ भी समझ नहीं आया लेकिन जब तक इसे समझ पाते तब तक आतंकवादी भाग कर जोली साहिब के पुराने घर में छुप गए जो कि थाने के सामने था। जैसे ही इस हमले की सूचना ऊपर तक पहुंची तो बहुत सा पुलिस बल और सेना के कमांडो वहाँ बुला लिए गए। दोनों तरफ से गोलीबारी हुई। ये ऑपरेशन उस दिन शाम तक चला उग्रवादी तो मारे गए लेकिन इस गोलाबारी में जोली साहिब का खरीदा हुआ घर भी तहस नहस हो गया। जोली साहिब तक भी
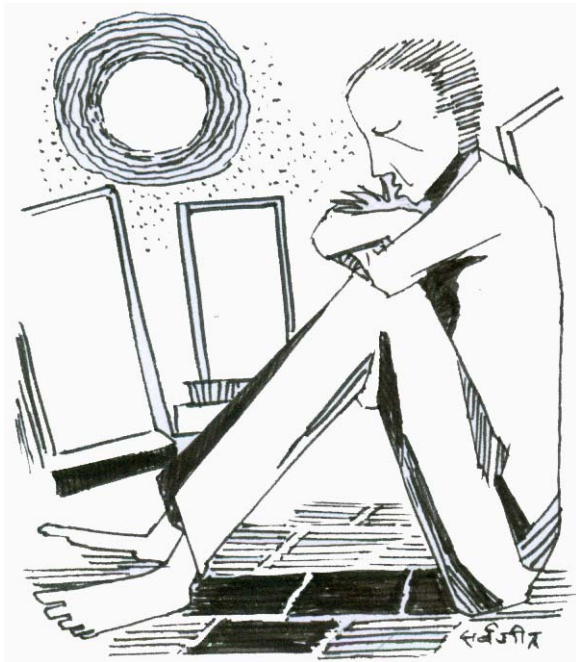
कहीं से खबर पहुंची तो वो भागे भागे वहां पहुंचे, घर की हालत देख कर उनका दिल बैठ गया। पुलिस ने घर को चारों तरफ से सील कर दिया था इस लिए जोली साहिब को भी अपनी बर्बादी का मंजर बाहर से ही देखना पड़ा। किसी को कुछ कहने के लायक नहीं थे इस लिए अपनी सुसराल पहुंच गए सबने उनको दिलासा दिया। अभी वो ठीक से दुखी भी ना हुए थे कि उनका एक साला एक वकील को लेकर आ गया सारी बात सुनने के बाद वकील ने जोली साहिब को कहा आप क्यों दुखी होते हो आप जो घर खुद बनाते अब उस घर को सरकार बनवाएगी आपको तो खुश होना चाहिए आपके जो भी मन में है उसका एस्टीमेट बनवाकर हम सरकार पर केस कर देंगे। जोली साहिब को भी बात जंच गयी। मानव मन की मक्कारी देखिये जोली साहिब महल के सपने बुनने लगे और वो भी मुफ्त के। वकील ने इस काम के लिए मोटी फीस बताई जो कि जोली साहिब ने खुशी-खुशी मान ली जब कि कार्यालय में जोली साहिब की प्रसिद्धि एक कंजूस के रूप में थी। गाहे-बगाहे दस दिन के अंदर केस दायर कर दिया और बात पुलिस के महानिरीक्षक तक पहुँच गयी जिसमें नुकसान की सारी जिम्मेदारी उन पर डाली गयी थी। पुलिस विभाग ने सपने में भी ये नहीं सोचा था, महानिरीक्षक ये फाईल लेकर घबराए हुए गृहमंत्री के पास पंहुचे। दोनों में काफी देर मंत्रणा हुई और कुछ निर्णय लिया गया।

जोली साहिब सुबह सुबह ऑफिस के लिए तैयार हो रहे थे कि अचानक घर की काल बेल बजी जोली साहिब की पत्नी ने दरवाजा खोला तो देखा पुलिस का एक इंस्पेक्टर खड़ा है। उसने पूछा मिस्टर जोली यहीं रहते हैं पत्नी ने कहा अभी बुलाती हूँ। जोली साहिब ने सोचा लगता है केस में कुछ प्रगति हुई है इस लिए वो खुशी-खुशी आए और इंस्पेक्टर से कहने लगे हांजी सेवा बताओ, इस्पेक्टर ने रूखे अंदाज में कहा कि आप पुलिस मुख्यालय चलो आप से पूछताछ करनी है। अब जोली साहिब को कुछ घबराहट हुई। हर शरीफ आदमी की तरह उन्होंने कहा आप प्लीज बैठें और बताएं आखिर बात क्या है ? इंस्पेक्टर ने कहा बैठने का टाइम नहीं है मेरे पास आप बाहर आकर गाड़ी में बैठिये मैं आपका इंतजार कर रहा हूँ। जोली साहिब ने अपने ऑफिस में फोन करके अपने बॉस को सारी बात बताई और कहा कि मैं वहाँ से होकर ऑफिस आता हूँ। और फिर वो कांपती टांगों से पुलिस की जिप्सी में मुजरिमों की तरह सवार होकर पुलिस मुख्यालय पहुंचे उन्हें बार बार पसीने आ रहे थे। उन्हें ले जाकर एक कमरे में बिठा दिया गया उनका मन किसी अनहोनी के डर से बैठा जा रहा था। सुबह से दिन और दिन से शाम हो गयी वो बस लोगों को अंदर बाहर होते देख रहे थे पर उन्हें नहीं बुलाया जा रहा था। आखिर शाम को पांच बजे उन्हें बुलाया गया। सामने पुलिस के पांच ऑफिसर बैठे हुए थे और उनके सामने बहुत से कागज बिखरे हुए थे। एक ऑफिसर

ने सख्त लहजे में पूछा कहां के हो। जोली साहिब ने भराए हुए गले से अपने पैतृक शहर का नाम लिया, उसने कहा वहाँ से पहले पाकिस्तान में कहाँ से आए हो, जोली साहिब ने कहा वो तो हमारे पिता जी आए थे बरसों पहले मेरा जन्म तो यहीं का है। जितना पूछा जाये उतना ही बताओ ज्यादा होशियार बनने कि जरूरत नहीं खुफिया रिपोर्ट और पुख्ता सबूत हैं कि तुम्हारे आतंकवादियों से सम्बन्ध हैं, इसीलिए आतंकवादियों ने तुम्हारे घर में शरण ली तुम पर देशद्रोह का केस बनता है। अब जोली साहिब के पैरों तले से जमीन खिसक गयी। लेकिन उन्होंने हिम्मत करके कहा कि ऐसा तो कुछ भी नहीं है, पुलिस ऑफिसर ने कहा ये तुम हमें में ना बताओ हमरे पास सबूत हैं तुमको हिरासत में लिया जाता है और हाँ अगर तुम केस वापिस ले लो तो हम ये जांच बंद भी कर सकते हैं। हमने कोई जानबूझकर तुम्हारा नुकसान नहीं किया है हो गया है अब हम तुम्हारा इतना खर्च कहाँ से दें जो तुमने केस किया है। जोली साहिब डर गए लेकिन उन्होंने कहा कि कैसे भी हुआ हो हुआ तो है मुझे तो मुआवजा चाहिए। पुलिस ऑफिसर ने कहा आप शरीफ आदमी लगते तो हो लेकिन हो नहीं आप को हमारी बात समझ में नहीं आई इस लिए अब कोई चारा नहीं है आप मुआवजे का केस लड़ो हम देशद्रोह का केस बना देते हैं। उस दिन उन्हें घर भेज दिया गया लेकिन अगले दिन कि अखबार में ये खबर मुख्य पृष्ठ पर थी कि फरीदपुर आतंकी हमले का सबूत मिला और जोली साहिब को अब हर तीसरे दिन पुलिस मुख्यालय बुलाया जाता सुबह से शाम तक बैठा कर रखते शाम को बेज्जती करके वापिस भेज देते। जोली साहिब पर मानसिक दबाव बनाया जा रहा था, पुलिस ने उनके खिलाफ एक झूठा केस कोर्ट में दायर कर दिया। लेकिन इन सब ने जोली साहिब को अंदर-ही-अंदर एक मजबूती भी दी क्योंकि वो जीवन में दूसरी बार सब कुछ गवां चुके थे, पहली बार तब जब पाकिस्तान से विस्थापित हो कर आए थे और दूसरी बार इस वाकया के बाद। जोली साहिब ने अपने घर से जुड़े जो सपने देखे थे वो सब के सब अधूरे थे क्योंकि जब तक केस का फैसला ना होता तब तक उस पर सरकार का ताला लगा था। हालांकि पुलिस का केस कमजोर था लेकिन अदालती कायदे कानूनों के चलते एक कोर्ट से दूसरी कोर्ट में केस चलता रहा और जोली साहिब का जीवन बीत गया। आज जब जोली साहिब बासठ बरस के हो गए हैं तब इस केस में ये फैसला आया है कि उनकी बात सच थी और उन्हें सरकार कि तरफ से नुक्सान का मुआवजा दिया जाये। अब जोली साहिब ये सोच रहे थे कि जो सपने उन्होंने खोये हैं और जो मानसिक दबाव उन्होंने सहा है उसका मुआवजा क्या इस जन्म में मिल पाएगा। उनका मन भारी था और आँखों में इस अन्याय के खिलाफ सिर्फ बेबसी थी।

शिमला, हिमाचल प्रदेश, मो. 0 98162 50166

होली पर दोहे

◆ पुष्पा मेहरा

आई होली झूम के, बजने लगे मृदंग।
सुध-बुध खोकर पवन भी, मचा रहे हुड़दंग॥

गली-गली उड़ने लगे, रंग अबीर-गुलाल।
एक रंग में लिपट रहे, भारत के सब लाल॥

नशा भंग का यूँ ठना, भाभी भई गुलनार।
रंगों की बौछार बिच, देवर हुए गलहार॥

चोली-दामन से सदा, रंग रश्मि हैं साथ।
हँस-हँस के सूरज रँगे, धरा वधू के हाथ॥

द्वेष भाव को छोड़ के, आओ बजाएँ चंग।
मन पल्लू में बाँध लें,सारे स्नेहिल रंग ॥

राग कपट की होलिका, बैठी पाँव पसार।
जा दिन ये दोनों जले, जग पावे निस्तार॥

झूम रहीं अमराइयाँ, सुन कोकिल की तान।
तितली भौंरे उड़ रहे, भर मकरंद गुमान॥

बरसाने की राधिका गोकुल के घनश्याम।
प्रेम रंग में रंगे हुए, छवि सोहे अभिराम॥

छन-छन आती धूप ने, चूमा गगन का गात।
बौराया उपवन हँसा, रक्तिम हुआ प्रभात॥

शाख शाख उन्मत्त है, हवा रचाती छंद।
आम्र डाल पे कोकिला, कहे प्रेम के बंद॥

वृन्दावन की गोपियाँ,नन्द गाँव के बाल।
एक रंग में रँग रहे, क्या मोहन क्या ग्वाल॥

अँजुरी फूलों की खुली,उड़ने लगी सुवास।
चंदा हेरे चाँदनी, चकवा के मन फाँस॥

बी-201, सूरजमल विहार, दिल्ली-92

कहानी

पॉपकॉर्न

◆ अनंत आलोक

सितंबर की उल्टी गिनती शुरू हो चुकी थी। मकई की हल्की हरी और भूरी फसल से लहलहाते खेत यूं लग रहे थे मानों सीमा पर असंख्य सैनिक हाथों में बंदूकें लिए खड़े हों। वातावरण में घुली हल्की गुलाबी ठंडक और खेतों में तैयार खड़ी फसलें किसानों के चेहरे और गुलाबी कर रही थी। हिमाचल प्रदेश के जिला सिरमौर का एक छोटा सा गाँव है बायरी, इसके नामकरण के पीछे किंवदंती है कि एक जमाने में यहाँ पर बेर का घना जंगल हुआ करता था। इस जंगल के बीचों बीच दोनों ओर एक सर्पीली सड़क निकली तो लोगों ने यहाँ जमीने खरीद कर मकान बनाये और एक छोटा सा गाँव बस गया य बायरी। दस घरों के इस छोटे से गाँव में राजेश का भी अपना मकान और कुछ सीढ़ीदार खेत हैं। राजेश अपने गाँव का इकलौता ग्रेजुएट है। वह कॉमर्स में ग्रेजुएशन किया है। नौकरी मिली नहीं इस लिए वह इन पांच खेतों में ही अलग अलग फसलें साग ,सब्जी आदि उगा कर अच्छा खासा कमा लेता है। वह खेती बाड़ी में आधुनिक तकनीक का प्रयोग करता और सबसे कम जमीन होने के बावजूद भी सबसे अधिक इनकम लेता। गाँव में सभी लोग उसके स्मार्ट वर्क की तारीफ करते वह भी सभी से यही कहता कि आज हार्ड वर्क नहीं स्मार्ट वर्क का जमाना है।

कुछ ही दिनों में फसलें कटनी शुरू हो गई। जैसा कि आमतौर पर हमारे यहाँ होता है कि फसल कटाई या फिर कोई अन्य भारी कार्य हेल्ला (सामूहिक श्रम) द्वारा किया जाता है। गाँव के लोग इकट्ठे हो कर एक दूजे की फसलें काट रहे थे और हेल्ले वाले घर पर खूब दावतें उड़ा रहे थे। लगभग एक सप्ताह में राजेश का हेल्ला भी आ गया। शाम को बैठ कर राजेश ने पत्नी और बच्चों से बात कर हेल्ले का मीनू तैयार किया और प्रातः तड़के ही वे दोनों पति पत्नी सामान के लिए बाजार निकल गए। दोनों बच्चे पाठशाला चले गए। राजेश ने टौमी को आखिरी खेत के नीचे की ओर इस तरह से बाँध दिया था कि उसे सारे खेत वहीं से नजर आ जाये। उसके खाने पीने का सारा सामान वहीं उसके पास रख दिया। वह निश्चिन्त था क्योंकि हर रोज भी तो टौमी ही उनके खेतों की रखवाली करता था। हालांकि अब गाँव में सबके फसलें कट चुकी थी और केवल उसकी फसल ही बाकी थी इस लिए उसे ही बंदरों का सबसे अधिक खतरा था। वे जा तो रहे थे लेकिन राजेश का मन अभी भी वहीं खेतों में ही अटका हुआ था। बाजार पहुँचते ही उन्होंने से सबसे पहले सामान खरीदा और सरकारी हॉस्पिटल खुलते ही वहां रीना का चेकअप करवा कर दवाइयां लीं। राजेश की पत्नी रीना को पिछले कुछ दिनों से तेज बुखार रहने लगा था। डॉ. ने कहा तेज धूप में फसल की रखवाली करने से ऐसा हो गया है। अपनी ओर से उन्होंने सारा काम जल्दी-जल्दी निपटाया फिर भी घर पहुँचते-पहुँचते दिन के दो बज चुके थे। राजेश और रीना ने घर के आंगन में पाँव रखा ही था कि उनके पाँव तले से जमीन खिसक गई। उनके सारे खेत उजड़े हुए थे और बन्दर यहाँ वहां गुलटियाँ मार रहे थे। रीना तो गश खाकर वहीं गिर पड़ती अगर उसे राजेश ने संभाल न लिया होता। राजेश भी यूं तो हिम्मत हारने वालों में से नहीं लेकिन छह महीने की कमाई यूं पल भर में डूब जाए तो कोई भी पागल हो सकता है। उसे टौमी पर बहुत गुस्सा आया। उसने एक मोटा सा डंडा लिया और उस ओर तेज तेज कदमों से चल पड़ा जहाँ सुबह टौमी को बाँध कर गया था। वह सोच रहा था कि आज तक तो ऐसा हुआ नहीं कि टौमी के होते कोई बन्दर खेत में घुसने की भी हिम्मत करता, लेकिन गुस्से में उसका विवेक भी उसका साथ नहीं दे रहा था। टौमी को आराम से सोया देख उसका क्रोध सातवें आसमान पर था और उसने आव देखा न ताव ! एक के बाद एक अंधाधुंध डंडे उसने टौमी के सिर पीठ और टांगों पर बरसा दिए। "साले ...हराम के बीज, तुझे इतना खाने पीने को दिया और तू यहाँ आराम फरमा रहा है ... हरामखोर।" राजेश बड़बड़ाया। क्रोध निकलने पर राजेश को होश आया तो उसे भान हुआ "अरे बेटा टौमी ! मैंने तुझे इतना मारा तूने चूं भी नहीं ... "डरते डरते उसने कुत्ते को उल्टा पलटा। "ओह ! माई गॉड ये तो मरा पड़ा है। है राम ...शायद मुझ से इसके सिर पर डंडा इतना जोर का लग गया कि ये चित हो गया।" राजेश धड़ाम से नीचे बैठते हुए फिर बड़बड़ाया।

थोड़ी देर सांस लेने के बाद उसने फिर कुत्ते को देखा , उसका ध्यान कुत्ते के मुंह के पास पड़ी आधी खाई हुई रोटी पर गया। उसने देखा रोटी कुछ काली काली है , लेकिन उसने जो रोटी

सुबह दी थी वह तो ये नहीं है। उसने रोटी हाथ में उठा कर सूंघ कर देखी उसमें से बारूद जैसी गंध आ रही थी। उसने देखा कुत्ते के मुंह से खून निकला पड़ा जो ताजा नहीं सूख चूका है। बस उसे समझते देर न लगी कि कुत्ते को किसी ने जहर दे कर मारा है। "है भगवान् सत्यनाश हो ऐसे लोगों का जिन्होंने एक निरीह प्राणी कुत्ते को भी नहीं बक्शा।" बड़बड़ाते हुए उसने शेड से गैंती और फावड़ा निकाला और वहीं खेत के पास कुत्ते को दफना दिया। घर जाकर हाथ मुंह धोया और परिवार को ये सारा वाकया सुनाने के बाद आगे की योजना बनाने लगा। गाँव पड़ोस के कुछ मित्र शोक जताने आये, सहायता का वचन भी दे गए लेकिन राजेश जानता है कि भगवान् भी उसकी सहायता करता है जो अपनी सहायता स्वयं करता है। अगली सुबह जो कुछ लोग हेल्ले में आये, उनके साथ मिलकर राजेश ने बची खुची फसल इकठ्ठी की, छिली और लगे हाथ दाने निकलवा कर आंगन में सूखने को डाल दिए। राजेश सोच रहा था फसल सलामत रहती तो लगभग तीस हजार की तो थी लेकिन अब जो कुछ बचा है पांच हजार का भी नहीं हैं, उसमें से भी ज्यादातर अधू खाया ही है। खाना खाकर राजेश आंगन में लगी चारपाई पर पड़ा सोच रहा है। रीना और बच्चों को नींद तो नहीं आई है लेकिन सोने का ढोंग कर रहे हैं बच्चों ने थोड़ा बहुत खाया है रीना ने तो अन्न का दाना भी मुंह में नहीं लिया। पड़ा पड़ा वह सोच ही रहा था कि साल भर क्या खायेंगे अगली फसल का क्या भरोसा पानी तो है नहीं सब ऊपर वाले पर ही निर्भर है। वह अचानक उठ बैठा , भीतर जाकर लाइट जलाई और अपना लेपी ऑन किया। नेट कनेक्ट होते ही सर्च इंजन गूगल टिमटिमाया। उसने तुरंत टाइप किया 'पोपकोर्न' और अंगूठे के साथ वाली उँगली झटक दी। कुछ ही सेकंडों में पोपकोर्न विकिपीडिया यूं प्रकट हुआ ज्यूं अलादीन के चिराग का जिन्न और मानो कहने लगा हो क्या हुक्म है मेरे आका ! राजेश ने एक एक कर उसकी स्टडी की और चैन से सो गया। सुबह की चाय के साथ राजेश ने योजना परिवार को परोस दी। उसके चेहरे पर गजब का आत्म विशवास और उत्साह था। उसने लेपीऑन कर योजना सब को समझा भी दी और साथ ही कार्टन का आर्डर भी ऑनलाइन प्लेस कर दिया। "सन्डे को बच्चों की छुट्टी होती है , उसी दिन हम ये काम करेंगे।" राजेश ने कहा और सब ने हामी भर दी। राजेश ने लेपी को ड्राइंग फाइल की तरह बंद करते हुए बेटी पलक को पकड़ा दिया।

संडे को परिवार के सभी सदस्य सुबह जल्दी उठ गए। नहा धोकर राजेश ने कुल देवता का नाम लेकर कढ़ाई चूल्हे पर चढ़ा दी। रीना ने आग पहले ही जला दी थी। एक एक मुट्ठी मकई के दाने राजेश गर्म गर्म कढ़ाई में डालता रहा और बड़ी से झरनी के साथ उन्हें हिलाता रहा। ज्यों ही उनकी खीलें बन जाती उन्हें निकाल कर परात में रख देता। रीना बराबर लकड़ी से आंच लगाती रही। बच्चे पलक और सन्देश पेटियों में भर कर बंद करते रहे। इधर कम्पनी के एक एम्प्लोइ ने अपने लेपी पर कुछ देर उँगलियाँ नचाई तो राजेश के मोबाइल पर क्लिंग-क्लिंग की आवाज के साथ एक मैसेज उभरा 'रुपीस फिफ्टी थाउजेंड एंड हंडरड हैज़ विन क्रेडिटेड टू यूअर अकाउंट'।

साहित्यालोक, बायरी डाकघर ददाहू तहसील ददाहू
जिला सिरमौर, हिमाचल प्रदेश-173022
मो. 0 94187 40772

- भीड़ हमेशा उस रास्ते पर चलती है जो रास्ता आसान लगता है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि भीड़ हमेशा सही रास्ते पर चलती है।

- अपने रास्ते खुद चुनिएं क्योंकि आपको आपसे बेहतर कोई नहीं जानता।

रत्न चंद निर्झर की लघु कथाएं

ममता

सुरेश की पत्नी ने टेबल पर एक थाली में परांठा, दही रखते हुए कहा, "गर्मागर्म नाश्ता कर लेना जी, कहीं ठंडा न हो जाए।"

"अच्छा कर लेता हूं।" विचारों में खोए सुरेश ने कहा। उसकी नजर बरामदे के उस पार बच्चों को दूध पिला रही कुतिया पर टिकी हुई थी।

अपने मुंह में परांठा ग्रास डालने से पहले उसने परांठों का एक टुकड़ा कुतिया की ओर फेंक दिया।

कुतिया ने परांठे के टुकड़े की ओर एक नजर भी न डाली और पिल्लों को दूध पिलाती रही। पिल्ले दूध पीकर 'कूं-कूं' करते हुए इधर-उधर भाग गए। तब कुतिया फेंके गए परांठे के टुकड़े की ओर लपकी और टुकड़ा खाते हुए वहां से चली गई।

सुरेश को एकाएक रेस्तरां में वह दृश्य सामने उभर आया जो कि उसने पिछली शाम देखा था- आधुनिकता के रंग में डूबी मां भूख से कुलबुलाते बच्चे को नजरंदाज कर खाना खाती रही। रेस्तरां की दीवारें अबोध बच्चे के रुदन स्वर में गूंजती रही थीं। कुतिया ने इसके विपरीत पहले मां का दायित्व निभाया फिर पेट की भूख शांत की।

यहां नहीं बैठना

बस अभी-अभी अड्डे पर आकर रुकी। दिलीप पिछले एक घंटे से प्रतीक्षा कर रहा था। छोटा-सा कस्बा, बस में चढ़ने की सवारियों में होड़ लग गई। दिलीप भी जैसे-तैसे पिछले दरवाजे से बस में चढ़ने में कामयाब हो गया। एक जगह खाली सीट देखकर उसने बैठने का उपक्रम किया ही था कि खिड़की वाली सीट पर बैठी छह-सात साल की एक नन्ही सी लड़की ने आंखें तरेरते हुए कहा,

"यहां नहीं बैठना, मेरे पापा की सीट है, अभी आते होंगे। मेरे लिए खाने के लिए कुछ लेने नीचे उतरे हैं।"

दिलीप मन मसोस कर खड़ा रहा। इस बीच और सवारियों ने भी बैठने की कोशिश की तो उन्हें भी यही रटारटाया वाक्य सुनने को मिला। पांच-सात मिनट बीतने के पश्चात उस लड़की के पिता दोनों हाथों में लिफाफे थामे आ पहुंचा। बस के बीच बस्ता लादे एक स्कूल की बच्ची को खड़ा देखकर वह बोला, "बेटी श्रेया इस बालिका को भी साथ बिठा लो। यह तुम्हारी हमउम्र है।"

पापा की बात सुनकर हामी में सिर हिलाते हुए श्रेया ने अपनी बगल में बिठा लिया। स्कूली छात्रा के बैठते हुए श्रेया ने सवालों की एकाएक बौछार करते हुए ढेरों प्रश्न पूछ डाले, "क्या नाम है? किस क्लास में पढ़ती हो? मां-बाप क्या करते हैं?" गोरखा समुदाय की उस छात्रा ने एक-एक उत्तर देते हुए कहा, "बहन मेरा नाम कमला है। चौथी में पढ़ती हूं। मेरी मां नहीं है, बापू सड़क पर दिहाड़ी पर काम करते हैं।" मां की याद आते ही वह भावुक हो उठी और आंखें सजल हो उठीं।

कमला को रुआंसा देखकर उसकी ओर लिफाफा बढ़ाते हुए पलकों पर लुढ़क आए आंसुओं को पोंछते हुए कहा, "मन छोटा नहीं करते दीदी, यह लो मिठाई खाओ।" फिर उनकी बातों का सिलसिला चल पड़ा। एकाएक उनकी हंसी से सारी बस गूंज उठी। कुछ देर पहले श्रेया जो किसी को भी अपने पास न बिठा रही थी। कमला के बैठते ही उन दोनों के बीच पराएपन की दीवार ढह गई थी।

अगले मोड़ पर पहुंचते ही कमला सीट से उठते हुए "अच्छा बहन चलती हूं। मेरा पड़ाव आ गया।" "ठीक है बहन अपना खयाल रखना।" आराम से उतरना।" बस से उतरते ही कमला पगडंडी से डेरे की ओर चल दी। श्रेया ने विदाई में हाथ ऊपर उठाए और दूर तक पगडंडी पर जाती उसे देखती रही।

म. नं. 211, रौड़ा सेक्टर-2, बिलासपुर, हिमाचल
प्रदेश-174 001, मो. 0 94597 73121

लघु कथा

बेटियां

◆ रघुराज सिंह 'कर्मयोगी'

संजना की प्रसव पीड़ा बढ़ती जा रही थी। मोबाइल में रेलवे अस्पताल के आपातकालीन वार्ड का टेलीफोन क्रमांक पड़ा था। सो बात करके फटाफट एंबूलेंस बुलवा ली। वैसे तो आजकल की लड़कियां संयुक्त परिवार वाले सिस्टम को अच्छा नहीं मानतीं। फिर भी प्रदुम्न ने प्रसव के दौरान सूचनाओं का आदान-प्रदान ठीक प्रकार हो और देखभाल में कोई बाधा न आए, इसलिए उसने दो महीने पहले ही मां को बुला लिया था। मां के साथ बाबूजी भी आ गए तो प्रदुम्न को बहुत सहारा मिला।

घर पर बाबू जी को छोड़ दिया। संजना को उसने प्रसूति वार्ड में भर्ती करा दिया। रात में महिला वार्डों में पुरुषों को रुकने नहीं दिया जाता। इसलिए घर चला आया। मगर उसका दिमाग चैन से बैठने को तैयार नहीं था। सुबह जल्दी अस्पताल चला आया। थोड़ी देर बाद, करीब चार बजे थे। अचानक बच्चे के रोने की आवाज सुनाई दी। आवाज प्रदुम्न के कानों में रस घोल गई। मां ने बाहर आकर बताया-

"लक्ष्मी आई है। बधाई हो बेटा।"

प्रदुम्न के कान बच्चे की आवाज सुनने के लिए बेताब थे। बेटी होने की सूचना, मां ने उसे दी तो खुशी से झूम उठा।

"अच्छा हुआ मां। मैं यही चाहता था कि संजना के पहली बेटी ही हो। जो मां की सहेली बने, दादी की लाडली तो दादा की उंगली पकड़ कर उन्हें गुरु की तरह उच्च रक्तचाप की दवा पीने के लिए डांटे। स्वयं प्रदुम्न के माथे की पगड़ी बने। ढेर सारे विचारों का अंधड़ उसके मस्तिष्क में चक्रित हो गया।

बच्ची के लिए छोटे-छोटे कपड़े और झबले वाला बैग प्रदूम्न के पास रखा था। मां ने लेबर रूम में पहुंचा दिया। पुत्री होने की खबर प्रदूम्न ने शीघ्र बाबू जी को टेलीफोन से दी। परिवार के सभी लोग प्रसन्न थे। किसी के माथे पर किंचित मात्र शिकन न थी। चार दिन के बाद संजना को अस्पताल से घर रवाना कर दिया।

छठी पूजने के बाद प्रदूम्न ने मध्यम दर्जे की पार्टी का आयोजन कर डाला। बाबू जी ने बच्ची का नाम बड़े प्यार से शीतल रखा। मां और संजना ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। धीरे-धीरे वह बड़ी होने लगी। मगर दो वर्ष के बाद संजना के पेट में दूसरा बच्चा कब सरक गया, उसे पता ही न चला। तीन महीने तक मासिक न आया तो चिंता हुई।

"प्रदूम्न जी, आप दूसरे बच्चे के पिता बनने वाले हैं। देखना, हां... मुझे बेटा ही होगा।" संजना ने कहा तो प्रदूम्न ने प्यार से उसका माथा चूम लिया। दोनों ने एक दूसरे के हाथ अपने हाथों में ले लिए।

"चाहता तो मैं भी यही हूं। मगर ईश्वर का क्या विधान है? इस पर किसी का कोई नियंत्रण नहीं", प्रदूम्न ने कहा। संजना का मुंह उतर गया। बोली- शहर में कई डॉक्टर हैं जो भ्रूण परीक्षण करते हैं। परीक्षण करा लेना उचित रहेगा।" प्रदूम्न ने भारी मन से सहमति दे दी। वह कार्यालय गया और एक दिन का आकस्मिक अवकाश स्वीकृत करा लिया।

अगले दिन मोटर साइकिल से दोनों शहर के प्रसिद्ध डॉक्टर के क्लिनिक पर पहुंच गए। सहायक से पर्चा बनवाया और बारी आने की प्रतीक्षा करने लगे। घंटे-सवा घंटे में नंबर आ गया।

"डॉक्टर, हमारे यहां एक लड़की पहले से ही है। अब हमें बेटा चाहिए, पुत्री नहीं", प्रदूम्न ने कहा। डॉक्टर ने समझाया कि प्रकृति ने लड़के-लड़कियों को एक जैसा बनाया है तो तुम कौन होते हो अंतर करने वाले? मगर दोनों में से कोई भी मानने को तैयार न था। विवश होकर डॉक्टर को भ्रूण परीक्षण की प्रक्रिया पूर्ण करनी पड़ी। दो दिन बाद परीक्षण की रिपोर्ट मिली तो दोनों के पैरों के नीचे पृथ्वी ही न थी। भ्रूण कन्या का था।

दोनों की सोच पर नकारा विचार हावी हो गया। इससे पहले कि प्रदूम्न कुछ बोल पाता, संजना बोल पड़ी, "डॉक्टर, आप तो भ्रूणपात करा दीजिए। वंश चलाने के लिए हमें लड़का तो चाहिए ही। पिता के मरने के बाद शव को पहला कंधा तो पुत्र ही देगा। आग की हांडी लेकर पुत्र ही शव यात्रा में शव के आगे-आगे चलता

- बेटियां हर किसी के मुकद्दर में कहां होती हैं, रब को जो घर पसंद आए, बस वहां होती हैं।
- सशक्त नारी से ही बनेगा सशक्त समाज।
- महिलाएं राष्ट्र की आंखें हैं।
- महिलाओं की उन्नति या अवनति पर ही राष्ट्र की उन्नति निर्भर है।

है।"

"तुम किस युग में जी रहे हो? आजकल महिलाएं शमशान जाने लगी हैं और तुम कहते हो लड़का ही पिता को कंधा देगा।" डॉक्टर ने कहा।

डॉक्टर को विवशता ने बेड़ियां डाल दीं। झक मार कर मेघना को फार्म भर कर देने का डॉक्टर ने प्रस्ताव दिया तो प्रदूम्न ने शीघ्र हस्ताक्षर कर दिए। इंजैक्शन, गोली बाजार से खरीद कर लाने के लिए पर्ची लिख कर दे दी। चार दिन तक दवा ली। संजना को कोई फर्क न पड़ा। डॉक्टर ने आगे इलाज देने से स्पष्ट मना कर दिया। कहा, "अब भ्रूणपात संभव नहीं। मेरा कहना पत्थर की लकीर समझना। इस बच्चे को संसार में आने से कोई शक्ति नहीं रोक सकती। इसलिए ईश्वर की अनमोल भेंट समझ कर इसे संसार में लाने का पुण्य कमा लो।" कुछ दिन बाद संजना के घर दूसरी स्वस्थ और सुंदर सी कन्या ने जन्म लिया। दंपति ने भारी मन से उसका पालन-पोषण प्रारंभ किया और उसे रेनू नाम दिया।

बच्ची बड़ी हुई। तेज दिमाग। ढाई वर्ष की होते ही कांवेंट स्कूल में उसे प्रवेश दिला दिया। वह हर कक्षा में प्रथम श्रेणी में पास होती। विज्ञान में मास्टर डिग्री करने के बाद प्रदूम्न चाहता था कि रेनू किसी संस्थान में नौकर कर ले। मगर वह उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहती थी।

प्रयास के पग सफलता की तरफ ही बढ़ते हैं। पिता की इच्छा के विपरीत बायोटैक्नॉलोजी में पी-एच.डी. करने के लिए जयपुर के बड़े महाविद्यालय के हॉस्टल में जाकर बैठ गई। पिता ने पहले तो ना-नुकर की। मगर बेटी की जिद के आगे हथियार डालने पड़े। दौड़ते हुए, घोड़े को चाबुक लगाने की आवश्यकता नहीं होती।

ईश्वर की दया का सागर रेनू पर इस तरह छलका कि पी-एच.डी. करने के बाद अपने ही शहर के एक महाविद्यालय में प्रोफेसर बन गई। शहर में उसका नाम है और सामाजिक स्तर भी। लोग रेनू को प्रदूम्न के नाम से नहीं बल्कि ये कहते हैं, "ये रेनू के पिता हैं।" जाको राखे साईयां, मार सके न कोय।

थर्ड एवेन्यू, 1059/बी, आदर्श कॉलोनी, डडवाड़ा, कोटा जं., राजस्थान-324 002, मो. 0 80038 51458

लघुकथा

सपना

◆ **अनुभूति गुप्ता**

'माई..... ये तुम हर बात पर मुझे ताने क्यों मारती रहती हो?', गौरी भनभनाते हुए बोली। अरे कलमुंही, तेरी उम्र निकली जा रही है, और तू ब्याह के लिए हामी ही नहीं भरती। "क्या जीवन भर मेरी छाती पर मूंग दलेगी? तेरा ब्याह हो जाये तो मैं समझूंगी कि मैं गंगा नहा ली'', कमला ने भौहें चढ़ाते हुए गौरी से कहा। 'अरे माई, मैं आगे और पढ़ना चाहती हूं कुछ बनना चाहती हूं। बापू का सपना पूरा करना चाहती हूं अब तू ही बता इसमें गलत क्या है?', गौरी ने अपनी मां को समझाते हुए कहा।

'सुनते हो गौरी के बापू, आपकी लाड़ली क्या कह रही है? ये सब किया धरा आपका ही है, लड़की को इतना सर चढ़ा रखा है। कभी सोचा है कैसे इसके हाथ पीले करोगे ये तो हर बात पर जुबान लड़ाती है, क्या करोगे इसे इतना पढ़ा लिखाकर? सम्भालना तो इसे चूल्हा चौका ही है', कमला गुस्से में अपने पति से बोली।

'कमला, तेरी मोटी बुद्धि में ये बात क्यों नहीं घुसती कि पढ़ाई-लिखाई कितनी जरूरी है। मैं भी तो गरीब परिवार से हूं, क्या मैंने पढ़ाई लिखाई नहीं की, और अगर गौरी पढ़ना चाहती है तो इसमें बुराई क्या है? हां वैसे भी तेरी मनमानी के कारण मैं सुम्मी बिटिया को न पढ़ा सका, तेरी ही जिद ने उसका जीवन बर्बाद कर दिया। कच्ची उम्र में ब्याह हुआ, और पढ़ने लिखने की उम्र में दो बच्चे सम्भाल रही है', आंखों में नमी के साथ श्यामू ने कहा।

'मगर गौरी के बापू, अरे बस भी करो कमला तेरा बस चलता तो तू गौरी को भी अनपढ़ ही रखती। श्यामू ने भावुक होकर आगे कहा- 'मैं अपनी बड़ी बेटी का जीवन तो सवार न सका, कम से कम गौरी को पढ़ा लिखाकर उसका सपना पूरा करने में जितनी बन पड़े उतनी मदद तो करूं'। गौरी नम आंखों से बोली- 'बापू, अगर आप न होते तो मैं कैसे अपना सपना पूरा करने का सोच पाती'।

सम्पादक 'नवपल्लव पत्रिका', 103, कीरतनगर, निकट डी.एम. निवास लखीमपुर-खीरी--262701, मो. 0 96950 83565

बाल कहानी

तालाब में होली

◆ पवन चौहान

हर बार की तरह इस बार भी जंगल के सभी जानवर होली मनाने का निर्णय कर चुके थे। लेकिन हर बार की तरह इस बार भी होली के लिए एकमात्र तालाब के जीव फिर से शामिल नहीं किए गए थे। अन्य जानवरों ने उन्हें इस साल भी एक ही सलाह दी कि यदि तुम पानी के बाहर आ सको तो खूब खुले दिल से होली खेलो। लेकिन तालाब के अंदर नहीं।

हाथियों के सरदार ने उन्हें समझाया, 'तुम्हारा पानी में होली खेलने का मतलब होगा पानी को गंदा और रासायनयुक्त बनाना। इससे सभी जानवरों का यह एकमात्र पीने के पानी का स्रोत खराब हो जाएगा और आप सभी का जीवन भी खतरे में पड़ सकता है। परंतु इतना तो अवश्य है कि हम आपके साथ भी होली जरूर मनाएंगे। लेकिन आपको सिर्फ होली का टीका ही लगाया जाएगा। आप समझ सकते हैं। यह हम सबकी मजबूरी है। आप इस बात को भलीभांति समझते हैं। आशा है इस बार भी आप हमारा सहयोग करेंगे।'

उन्होंने सबके सामने तो हां कर दी। परंतु पानी का हर जीव उनकी हर बार की योजना से जरा भी सहमत नहीं था। इन सभी ने इस बार खूब खुले दिल से होली मनाने की जिद पकड़ ली थी। अतः निर्णय यह हुआ कि मगरमच्छ और कछुए रंगों का इंतजाम करेंगे क्योंकि ये तालाब से बाहर जा सकते हैं।

होली का दिन भी आ गया। आज आसमान में बादल उमड़-घुमड़ रहे थे। धूप बहुत हल्की थी। ऐसा लग रहा था जैसे बारिश कभी भी आ सकती है। होली के दिन ऐसा मौसम तालाब के बाहर रहने वाले जीवों के लिए सही नहीं था लेकिन तालाब वालों के लिए ऐसा मौसम कोई खास फर्क नहीं डालने वाला था। योजना के मुताबिक सुबह होने से कुछ देर पहले मगरमच्छ और कछुओं ने लाए गए कई प्रकार के रंगों को तालाब के हर छोर से तालाब में डाल दिया। हर छोर से अब सारे के सारे रंग पानी में घुलना शुरू हो गए थे। अब तक सुबह भी हो चुकी थी। कछुओं और मगरमच्छों ने जोर-जोर से ढोल बजाना शुरु कर दिए और वे ऊंची आवाज में बोलने लगे ....होली है भई, होली है.......बुरा न मानो, होली है........। ढोल की आवाज सुनकर तालाब के सारे जीव जाग गए और उछल उछल कर बाहर का नजारा ताकने लगे। मछलियां तो बहुत ही खुश थीं।

तालाब के हर छोर से डाले गए कई प्रकार के रंगों के कारण तालाब रंग-बिरंगा हो चुका था। पानी से बाहर निकलने वाला जीव अलग-अलग प्रकार के रंगों से रंगकर बाहर निकल रहा था। मछलियां एक-दूसरे को कई प्रकार के रंगों में रंगा देखकर बहुत खुश हो रही थीं। आज सही मायने में वे होली का मजा ले पा रही थीं। तालाब के सभी जीव आज अपने-अपने ढंग से होली का आनंद ले रहे थे। किसी को अपने ऊपर चढ़ा होली का रंग भा रहा था तो कोई तालाब को रंग बिरंगा देखकर मस्ती में झूम रहे थे। सभी एक-दूसरे को रंगा हुआ देखकर खूब ठहाके लगा रहे थे। ढोल की तान पर सभी नाच रहे थे। उन्हें देखकर तालाब के बाहर खड़े कछुए और मगरमच्छ भी खुद को रंगने से रोक नहीं पाए। वे भी अब तालाब के अंदर दाखिल हो गए। जंगल की भांति आज तालाब में भी जश्न का माहौल था।

बाल कविता

तमन्ना

◆ कृष्णा ठाकुर 'कविता'

बादल नहीं मैं
फिर भी चांद तारों को
छूने की तमन्ना है मुझे।

हवा नहीं मैं
फिर भी तुम्हारी सांसों में
घुलमिल नए जीवन की तमन्ना है मुझे।

मैं पंछी नहीं
फिर भी नील गगन में स्वच्छंद, उन्मुक्त
कहीं खो जाने की तमन्ना है मुझे।

जल नहीं मैं
फिर भी बहते ही चले जाना
हरेक को निर्मल, स्वच्छ
बनाने की तमन्ना है मुझे।

मैं रोशनी नहीं
फिर भी जहां को रोशन, उजला
करने की तमन्ना है मुझे।

माटी नहीं मैं
फिर भी मिट्टी संग दोस्ती कर
सोना उगलाने की तमन्ना है मुझे।

कृष्णा कुंज बाशिंग, कुल्लू, हिमाचल प्रदेश, मो. 0 94180 63160

लेकिन यह क्या! थोड़ी ही देर में पानी के सभी जीवों की आंखों और त्वचा में जलन शुरू हो गई। मछलियां, मगरमच्छ, कछुए और पानी के अन्य जीवों को सांस लेने में तकलीफ होने लगी। बहुत सारा रंग पानी में घुलने के कारण अब वे पानी के अंदर एक-दूसरे को ढंग से देख भी नहीं पा रहे थे। यह क्या हो रहा था? किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। जहां कुछ देर पहले खुशी का माहौल था वहां अब त्राहि-त्राहि का शोर मच गया था।

इस शोर को सुनकर पास ही होली खेल रहा हाथियों का झुण्ड दौड़ा चला आया। कछुए, मेंढक, मगरमच्छ इस वक्त तक तालाब के बाहर आ चुके थे। तालाब की हालत देखकर हाथियों का सरदार गुस्से से चिल्ला पड़ा............ 'यह तालाब की क्या हालत कर दी है। मना करने के बावजूद भी तालाब के पानी को तुम सभी ने गंदा कर दिया। रंगों में मिले रसायनों ने इस पानी को जहरीला बना दिया हैं। यही वह कारण था जो हम सब आपको पानी के अंदर होली खेलने से रोकते थे। अब सब पानी कैसे पीएंगे? तुम्हारी जिद्द ने अपने पैरों पर स्वयं ही कुल्हाड़ी मार दी है।'

'हम मरना नहीं चाहते। हमें बचा लो। हमें बचा लो...।' पानी के सभी जीव चिल्ला रहे थे।

'तालाब में फैला यह रंग जब तक बाहर नहीं निकलेगा तब तक तुम सबकी जान पर खतरा यूं ही मंडराता रहेगा। रंग निकालने के लिए साफ पानी की आवश्यकता होगी जो फिलहाल यहां आस-पास कहीं नजर भी तो नहीं आता। बस एक ही उम्मीद है यदि ये बादल जल्दी बरस जाएं तो तुम सबकी जान बच सकती है।' सरदार को बचने का एकमात्र उपाय बस यही सूझ रहा था।

हाथी की बात सुनकर पानी के सभी जीव अपने किए पर शर्मिंदा थे। उन्हें अपनी गलती का अहसास हो चुका था। अब तो सच में बारिश ही उनकी जान बचा सकती थी। वे जान चुके थे कि तालाब से रसायन सिर्फ बारिश के खूब सारे पानी के इसमें पड़ने से बाहर निकल सकता है और इसका दूसरा अन्य कोई उपाय नहीं हो सकता। पानी के सारे जीव तड़प रहे थे। पानी के बाहर उछल-उछल कर बचने का प्रयास करने की कोशिश कर रहे थे लेकिन उनका यह प्रयास ज्यादा कोई सहायता नहीं कर पा रहा था। तालाब के बाहर खड़े सभी जानवर इस स्थिति में स्वयं को असहाय महसूस कर रहे थे। वे उन्हें यहां से बाहर निकालना चाहते थे। पर कैसे? पानी के बिना उन्हें दूसरी जगह भी नहीं ले जाया जा सकता था और बिना पानी के वे ज्यादा देर जीवित भी नहीं रह सकते थे। यह बात वे भलिभांति जानते थे।

सभी जानवर इन्हें बचाने की उधेड़बुन में ही फंसे थे कि इसी समय पानी की कुछ बूंदें हाथी की सूंड पर आ गिरीं। यह वर्षा का पानी था। हाथी जोर से चिल्लाया,'बरखा आ गई। देखो, बरखा आ गई। अब फिक्र करने की कोई जरूरत नहीं है। अब सभी बच जाएंगे।' हाथी के इतना ही कहने की देरी थी कि सच में मूसलाधार बारिश होने लगी। जल्द ही तालाब वर्षा के जल से लबालब भर गया और उसमें से रंग-बिरंगे रसायनयुक्त पानी ने बाहर बहना शुरू कर दिया। पानी के जीव अब राहत महसूस करने लगे थे। सबकी जान बच गई थी। इस घटना ने सबको यह बात अच्छी तरह से समझा दी थी कि बेवजह की जिद्द कई बार बहुत बड़े संकट का कारण भी बन जाया करती है।

गांव व डा. महादेव, तहसील सुन्दर नगर, जिला मण्डी, हिमाचल प्रदेश-175018, फोन : 0 98054 02242

ट्रैकिंग वृत्तांत

जंजैहली घाटी का अविस्मरणीय अनुभव

◆ आशा गुप्ता

जिस प्रकार मात्र एक उँगली से एक भारी-भरकम शिलाखण्ड को हिलाया जा सकता है उसी प्रकार से जीवन में सहजता से ही बड़े-बड़े कार्य आसानी से किए जा सकते हैं। हम जब किसी कार्य को करने के लिए बहुत अधिक ज़ोर लगाते हैं अथवा अधिक प्रयास करते हैं तो हम सहज नहीं रह पाते। ऐसी असहज स्थिति तनाव ही उत्पन्न करती है और तनाव की अवस्था न केवल कार्य करने में बाधक होती है अपितु स्वास्थ्य के लिए भी घातक है। हम जितने सहज होकर कार्य करते हैं कार्य करने में उतना ही अधिक आनंद आता है क्योंकि कार्य पूरा करने का बेजा दबाव नहीं होता। ऐसे में सफलता की संभावना बहुत अधिक बढ़ जाती है।

बीते साल तीस अक्तूबर को विभाग द्वारा फोन पर मुझे सूचना मिली कि डी.डी.ए. अधिकारियों के ट्रैकिंग में जाने वाले ग्रुप में मेरे नाम का भी चयन हुआ है और इकत्तीस अक्तूबर को ही हिमाचल प्रदेश के मंडी ज़िले के जंजैहली नामक स्थान के लिए प्रस्थान करना है। यह एक उत्साहजनक समाचार था लेकिन तैयारी के लिए समय? एक सप्ताह के सफ़र की तैयारी के लिए केवल अठाईस घंटे का समय दिया गया था और वो भी ट्रैकिंग जैसे टफ़ कार्यक्रम के लिए। इतना कम समय पर्याप्त नहीं कहा जा सकता लेकिन ट्रैकिंग में जाने के लिए मैंने फ़ौरन अपनी स्वीकृति दे दी और यात्रा की तैयारी शुरू कर दी। संयोग से ट्रैकिंग व यात्रा के लिए ज़रूरी सामग्री घर पर ही मिल गई और सामान जुटाने के लिए ज़्यादा भागदौड़ नहीं करनी पड़ी लेकिन फिर भी कुछ अत्यंत आवश्यक चीज़ें रह ही गईं। वहाँ जाने पर ज्ञात हुआ कि ट्रैकिंग के दौरान विशेष रूप से पहाड़ों में कैंपिंग के दौरान टैंटों में टॉर्च आदि कुछ चीज़ों का कितना महत्त्व है क्योंकि बिजली के अभाव में मोबाइल फोन को चार्ज करना संभव नहीं होता। इसके बावजूद देवभूमि हिमाचल प्रदेश के अद्वितीय प्राकृतिक सौंदर्य के बीच ट्रैकिंग का ये अनुभव हमेशा याद रहेगा।

जंजैहली हिमाचल प्रदेश के मंडी ज़िले की थुनाग तहसील में पड़ता है जो मंडी से लगभग सत्तर किलोमीटर व तहसील मुख्यालय थुनाग से तेरह किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। आधुनिक युग की चहल-पहल व भाग-दौड़ से रहित जंजैहली घाटी प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। हम इकत्तीस अक्तूबर को शाम सात बजे दिल्ली के कश्मीरी गेट स्थित अंतर्राज्यीय बस अड्डे पर पहुँच गए जहाँ से हमें मंडी के लिए बस लेनी थी। हम चालीस यात्री थे और हिमाचल राज्य परिवहन निगम की दो वोल्वो बसों में हमारी बुकिंग थी। कार्यक्रमानुसार हमें आठ बजे तक दिल्ली से प्रस्थान करना था लेकिन कुछ बसें रद्द हो जाने की वजह से हम नौ बजे तक ही प्रस्थान कर पाए। पूरी रात के सफ़र के बाद अगले दिन अर्थात् एक नवंबर को प्रातः सात बजे तक हम सब मंडी पहुँच गए। वहाँ से हम सब एक होटल में गए और ये पूरा दिन मंडी स्थित होटल में ही बिताया जहाँ से अगले दिन अर्थात् दो नवंबर को हमें जंजैहली के लिए प्रस्थान करना था।

मंडी स्थित होटल में सबने फ्रैश होकर नाश्ता वगैरा किया और विश्राम भी। दोपहर तक सभी लोग चुस्त-दुरुस्त नज़र आ रहे थे। दोपहर के भोजन के उपरांत रिवाल्सर झील जाने का कार्यक्रम था। मंडी ज़िले में कई ख़ूबसूरत झीलें हैं जिनमें से रिवाल्सर भी एक है। रिवाल्सर झील मंडी से 24 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। बस द्वारा लगभग एक घंटे के सफ़र के बाद हम रिवाल्सर झील के किनारे खड़े थे। झील चारों तरफ़ से घने वृक्षों से आच्छादित ऊँची-ऊँची पहाड़ियों से घिरी है। झील के शांत जल में इनका प्रतिबिंब बहुत ही आकर्षक लगता है। झील के चारों ओर परिक्रमा पथ बना है व इस पर एक गुरुद्वारा, मंदिर व कई बौद्ध मॉनेस्ट्रीज़ स्थित हैं। यह अत्यंत सुरम्य स्थल है अतः प्राचीन काल से ही अनेक साधु-संतों व तपस्वियों की तपस्थली रहा है। इस स्थान को महर्षि लोमश की तपोभूमि भी माना जाता है।

यहाँ रिवाल्सर के किनारे पर जो भव्य गुरूद्वारा है वह गुरू गोविंद सिंह जी की याद में बनवाया गया है क्योंकि गुरू गोविंद सिंह जी तीस दिन तक यहाँ रुके थे। मंडी के राजा जोगिंदर सिंह ने सन् 1930 में इस गुरूद्वारे का निर्माण करवाया था। हर साल बैसाखी के अवसर पर श्रद्धालु यहाँ स्नान करने के लिए आते हैं। यहाँ के सुरम्य परिवेश में लगभग एक घंटा व्यतीत करने के उपरांत शाम की चाय के समय तक हम सब मंडी स्थित अपने होटल में लौट आए। चाय के दौरान कुछ सदस्यों ने गीत-ग़ज़लों व शेरो-

शायरी के द्वारा माहौल को खुशनुमा बना दिया। रात के भोजन के बाद सभी सदस्य अपने-अपने कमरों में सोने के लिए चले गए क्योंकि अगले दिन प्रातः काल जंजैहली के लिए प्रस्थान करना था। अगले दिन अर्थात् दो नवंबर को प्रातःकाल ब्रेकफास्ट के उपरांत मंडी से जंजैह्ली के लिए प्रस्थान किया। लगभग साढ़े तीन-चार घंटे की यात्रा के पश्चात हम जंजैहली में थे। वास्तव में ट्रैकिंग के लिए जंजैहली बेस कैंप है क्योंकि यहीं से ट्रैकिंग का प्रारंभ होता है। दो नवंबर को हम जंजैहली में ही रुके। वहीं पहुँचकर सबने लंच लिया और दोपहर के बाद वहीं थोड़ी सी ट्रैकिंग भी की। ट्रैकिंग करते हुए हम जहाँ पहुँचे वहाँ दो-तीन परिवार रहते हैं। उन्होंने हम सभी को सेब खाने के लिए दिए। आजकल यहाँ सेब काफी मात्रा में उगाया जाने लगा है। मुख्य रूप से गोल्डन एप्पल उगाया जाता है। यहाँ का स्थानीय राजमा भी बहुत प्रसिद्ध है। पता चला कि यहाँ लोग अब पारंपरिक चीज़ों की खेती करने में रुचि नहीं लेते हैं क्योंकि खेती में बहुत मेहनत करनी पड़ती है और खेती लाभदायक भी नहीं रही। अतः लोग मटर, आलू और दूसरी फसलें उगाने की बजाय अपने खेतों में अधिक से अधिक सेब के पेड़ लगाने पर ज़ोर दे रहे हैं। इसमें कम मेहनत करनी पड़ती है और आय भी नियमित सी ही हो जाती है। एक बार पेड़ लगाने पर कुछ साल के बाद लगातार कई साल बिना मेहनत के आराम से फल मिलते रहते हैं। अन्य पर्वतीय स्थलों की तरह यहाँ के लोग भी काफी परिश्रमी व सीधे-साधे हैं। सूरज छिपने पर अंधेरा होने के बाद दस-पंद्रह मिनट में ही सब सुनसान नज़र आने लगता है। अगले दिन अर्थात् तीन नवंबर को सुबह जल्दी उठकर तैयार हो गए और अपना सारा सामान पैक करके वहीं जंजैहली के होटल में रख दिया क्योंकि ट्रैकिंग के बाद तीसरे दिन वापसी होनी थी। नाश्ता वग़ैरा करने के फ़ौरन बाद ट्रैकिंग के लिए अपेक्षित सामान लेकर ट्रैकिंग प्रारंभ कर दी। पहले दिन का हमारा गंतव्य बूढ़ा केदार नामक स्थान था। जैसा कि नाम से ही पता चलता है इसका संबंध भगवान शिव व भीम दोनों से है। यहाँ के लोग इस स्थान को बड़ा पवित्र मानते हैं। यहाँ एक छोटा सा मंदिर भी बना हुआ है। ऊपर से बहते हुए आ रहे नाले को रोककर एक कुंड सा भी बना दिया गया है। यही नाला नीचे जंजैहली होकर आगे चला जाता है और इसमें कुछ और छोटे नाले भी मिल जाते हैं। बूढ़ा केदार में कोई आबादी नहीं है बस एक पड़ाव मात्र है। चढ़ाई के बीचो-बीच तीनों तरफ़ से ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों व घने पेड़ों से घिरा हुआ एक बहुत ही छोटा सा समतल स्थान है जहाँ पंद्रह-सोलह टैंट लगाए जा सकते हैं। प्रायः ट्रैकिंग ग्रुप्स ही यहाँ अपने टैंट लगाते हैं। हम सभी ट्रैकर्स दोपहर होते-होते बूढ़ा केदार पहुँच गए। जंजैहली से बूढ़ा केदार तक की तीन-चार घंटे की ट्रैकिंग काफी मज़ेदार रही पर साथ ही थकान भी कम नहीं हुई थी क्योंकि कई स्थानों पर खड़ी चढ़ाई थी। रास्ते में कहीं कोई आबादी नहीं थी अतः रास्ते में खाने-पीने के लिए कुछ भी मिलना संभव नहीं था। वैसे इस ट्रैकिंग के लिए हम सबके पास खाने-पीने का पर्याप्त सामान था। दोपहर होते-होते हम बूढ़ा केदार पहुँच गए।

नवम्बर के पहले सप्ताह में ही रात को इस स्थान का तापमान शून्य से नीचे पहुँच जाता है अतः रात में सोने के लिए स्लीपिंग बैग्स की व्यवस्था थी। ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों व घने पेड़ों से घिरे जंगल में नाले के किनारे लगे टैंट में स्लीपिंग बैग में सोने का अनुभव अत्यंत रोमांचक था। नाला भी उसी स्थान पर पास ही काफी ऊँचाई से गिर रहा था। दिन में तो पता नहीं चला पर रात को पानी के गिरने की बड़ी तेज़ आवाज़ आ रही थी।

वहाँ टैंट लगे हुए थे। धूप खिली हुई थी जो बहुत सुहावनी लग रही थी। चाय पीने के बाद सभी लोग धूप में पसर गए और धूप का आनंद लेने लगे। उसके बाद लंच लिया। क्योंकि ये स्थान तीन तरफ़ से ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों व घने पेड़ों से घिरा हुआ था अतः बहुत जल्दी ही देखते-देखते धूप ग़ायब हो गई और ठंड बढ़ने लगी। दोपहर के बाद पास की एक खड़ी चट्टान से रस्सियों के सहारे नीचे उतरने का अभ्यास करवाया गया जिसमें अधिकांश लोगों ने भाग लिया। आज रात तीन नवंबर की रात को यहीं टैंटों में रुकना था। हल्की बूँदाबाँदी भी शुरू हो गई थी जो जल्दी ही रुक गई। रात जल्दी ही खाना-पीना हो गया और उसके बाद बोनफ़ायर। सभी अलाव के चारों तरफ़ बैठ गए और सभी ने अपने-अपने हुनर का प्रदर्शन करते हुए लोगों का भरपूर मनोरंजन किया। नवम्बर के पहले सप्ताह में ही रात को इस स्थान का तापमान शून्य से नीचे पहुँच जाता है अतः रात में सोने के लिए स्लीपिंग बैग्स की व्यवस्था थी। ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों व घने पेड़ों से घिरे जंगल में नाले के किनारे लगे टैंट में स्लीपिंग बैग में सोने का अनुभव अत्यंत रोमांचक था। नाला भी उसी स्थान पर पास ही काफी ऊँचाई से गिर रहा था। दिन में तो पता नहीं चला पर रात को पानी के गिरने की बड़ी तेज़ आवाज़ आ रही थी। वैसे डर भी लग रहा था कि कहीं कोई जंगली जानवर न आ जाए पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। वैसे उस क्षेत्र में बाघ अथवा तेंदुए भी मिलते हैं। अगले दिन चार नवंबर को सुबह उठने के बाद अगले सफ़र की तैयारी शुरू कर दी। आज यहाँ बूढ़ा केदार से चलकर शिकारी देवी नामक स्थान तक पहुँचना था और आज ही वहाँ से वापस बूढ़ा केदार भी आना था। सुबह जल्दी ही नाश्ता करने के बाद सभी अगले गंतव्य के लिए रवाना हो गए। यह ट्रैकिंग भी काफ़ी कठिन व रोमांचक रही। कई जगहों पर चढ़ाई काफ़ी खड़ी व मुश्किल थी। किसी तरह शिकारी देवी पहुँचे लेकिन वहाँ पहुँचकर सारी थकान भूल गए। वहाँ शिकारी देवी माता का मंदिर है जिसकी पूरे क्षेत्र में दूर दूर तक बड़ी मान्यता है। यह स्थान आसपास के सभी स्थानों से काफ़ी ऊँचा है अतः यहाँ से चारों

तरफ़ के दृश्य दिखलाई पड़ते हैं जो अत्यंत आकर्षक लगते हैं। अधिक ऊँचाई पर होने के कारण यहाँ हवा भी काफ़ी तेज़ी से चल रही थी। दोपहर ढल चुकी थी अतः ठंड भी बढ़ने लगी थी। वहाँ रुकने की व्यवस्था भी हो सकती थी लेकिन वहाँ चाय पीकर हमारा वापस आने का कार्यक्रम था। वैसे शिकारी देवी तक दूसरे रास्ते से गाड़ियाँ भी जाती हैं लेकिन हम जिस रास्ते से आए थे और जिस रास्ते से वापस जाना था वहाँ केवल ट्रैकिंग ही संभव है। कुछ लोग जो वापसी में ट्रैकिंग नहीं करना चाहते थे गाड़ी लेकर दूसरे रास्ते से सीधे जंजैहली पहुँच गए। चाय पीने के बाद हम पुनः ट्रैकिंग करते हुए बूढ़ा केदार के लिए चल पड़े। आज का सफ़र कल के मुक़ाबले में डबल हो गया था। वापसी में उतराई ज़रूर थी लेकिन बीच-बीच में दुर्गम ऊँचाइयाँ भी कम नहीं थीं। उन्हें पार करते हुए जब हम बूढ़ा केदार पहुँचे तब तक सूरज ढल चुका था।

अगले दिन अर्थात् पाँच नवंबर को सुबह उठते ही चाय पीने के बाद जंजैहली लौटने की तैयारी शुरू कर दी। बूढ़ा केदार से जंजैहली तक वापसी की ट्रैकिंग अपेक्षाकृत आसान लगी। दो-ढाई घंटे में आ पहुँचे। आसान इसलिए भी लग रही होगी कि यात्रा का कठिन पड़ाव पूरा हो रहा था। जंजैहली पहुँचकर पूरे दिन आराम किया। अगले दिन अर्थात् छह नवंबर को वापसी थी। छह नवंबर को सुबह चाय पीने के बाद जंजैहली से लगभग तीन किलोमीटर पहले स्थित भीमशिला नामक स्थान पर सड़क के रास्ते से पैदल गए और वापस आए। यह सफ़र तो बहुत मज़ेदार रहा। यहाँ सड़क के पास ही छह साढ़े छह फुट ऊँचाई का एक अण्डाकार पत्थर रखा है। कहते हैं इसे भीम ने स्थापित किया था इसीलिए इसे भीमशिला के नाम से ही जाना जाता है। भीमशिला की एक विशेषता यह है कि इसे सिर्फ़ एक उँगली से हिलाया जा सकता है लेकिन दोनों हाथों से पूरे शरीर का ज़ोर लगाने पर यह बिल्कुल नहीं हिलती। इसके अतिरिक्त इस शिलाखण्ड की एक और विशेषता भी है। एक ख़ास दूरी से लोग इस शिलाखण्ड के ऊपरी भाग पर छोटे-छोटे कंकर फेंकते हैं। कंकर फेंकने से पहले मन में कोई बात सोचते हैं अथवा संकल्प लेते हैं। फेंकने पर कंकर यदि शिलाखण्ड पर रुक जाता है तो कहते हैं कि मन में सोची हुई बात अवश्य पूरी होगी। शिलाखण्ड में उपरोक्त विशेषता को किसने खोजा होगा और कैसे खोजा होगा ये तो पता नहीं लेकिन इन विशेषता से कई महत्त्वपूर्ण व उपयोगी संदेश ज़रूर मिलते हैं।

जिस प्रकार मात्र एक उँगली से एक भारी-भरकम शिलाखण्ड को हिलाया जा सकता है उसी प्रकार से जीवन में सहजता से ही बड़े-बड़े कार्य आसानी से किए जा सकते हैं। हम जब किसी कार्य को करने के लिए बहुत अधिक ज़ोर लगाते हैं अथवा अधिक प्रयास करते हैं तो हम सहज नहीं रह पाते। ऐसी असहज स्थिति तनाव ही उत्पन्न करती है और तनाव की अवस्था न केवल कार्य करने में बाधक होती है अपितु स्वास्थ्य के लिए भी घातक है। हम जितने सहज होकर कार्य करते हैं कार्य करने में उतना ही अधिक आनंद आता है क्योंकि कार्य पूरा करने का बेजा दबाव नहीं होता। ऐसे में सफलता की संभावना बहुत अधिक बढ़ जाती है। गोलाई के कारण शिलाखण्ड का ऊपरी भाग पूरी तरह से समतल न होने के कारण या ठीक से कंकर न फेंके जाने पर अधिकांश कंकर नीचे गिर जाते हैं। यदि आप बिलकुल ध्यानपूर्वक कंकर फेंकते हैं अथवा कई बार कोशिश करते हैं तो कंकर शिलाखण्ड के ऊपरी ढलवां भाग पर रुक भी जाता है। यदि कंकर फेंकने में कम बल लगाएँगे तो कंकर अपने गंतव्य तक नहीं पहुँच पाएगा और ज़्यादा बल लगाएंगे तो वह अपने गंतव्य से आगे पहुँचकर नीचे ज़मीन पर गिर जाएगा। यदि कंकर बहुत छोटा होगा तो उसे फेंकना संभव नहीं होगा और यदि कंकर बहुत बड़ा अथवा भारी होगा तो भी वो अपने ज़्यादा भार के कारण लुढ़क कर नीचे गिर पड़ेगा। यदि कंकर को एकदम से बहुत ज़्यादा ताक़त लगाकर फेंका जाएगा तो वो अपेक्षित स्थान पर गिरने के बाद छिटककर दूर जा गिरेगा। कहने का तात्पर्य यही है कि जब तक हम बल की मात्रा व गति का सही आकलन नहीं कर पाएंगे तब तक कंकर को अपेक्षित स्थान पर फेंककर वहीं रोक देना संभव ही नहीं होगा। यही हमारे जीवन का सत्य है। कार्य में सफलता पाने के लिए सहजता के साथ-साथ शारीरिक संतुलन व मानसिक सतर्कता व एकाग्रता भी अनिवार्य है। इसी के साथ हम जो कार्य करना चाहते हैं अर्थात् हमारा लक्ष्य भी अत्यंत स्पष्ट व निश्चित होना चाहिए। अर्जुन की तरह अत्यंत स्पष्ट व निश्चित। गुरु द्रोणाचार्य एक वृक्ष के नीचे बैठकर कौरव और पाण्डव राजकुमारों को धनुर्विद्या का प्रशिक्षण दे रहे थे। उन्होंने सभी शिष्यों से पूछा, "बताओ तुम्हें पेड़ पर क्या दिखलाई पड़ रहा है?" पेड़ पर एक चिड़िया बैठी थी। सभी राजकुमारों ने कहा कि उन्हें पेड़ पर एक चिड़िया दिखलाई दे रही है लेकिन अर्जुन ने कहा, "मुझे तो सिर्फ़ चिड़िया की आँख दिखलाई पड़ रही है।" अन्य राजकुमारों के मुक़ाबले में अर्जुन का लक्ष्य एकदम स्पष्ट था। जब हमारा लक्ष्य अर्जुन की तरह पूर्ण रूप से स्पष्ट और निश्चित होता है तभी हमें अपना निशाना लगाने में आसानी होती है और हम सही लक्ष्य पर संधान कर पाते हैं। जीवन में सहजता, सरलता, संतुलन, सतर्कता और निचित लक्ष्य अथवा उद्देश्य की स्पष्टता व एकाग्रता यही सफलता के मूल आधार हैं। भीमशिला जाना भी अत्यंत सार्थक रहा। भीमशिला से लौटने के बाद लंच लिया। बस तैयार खड़ी थी। जंजैहली से बस में बैठकर पुनः मंडी के लिए रवाना हो गए। वहाँ सीधे बस अड्डे पर पहुँच कर दिल्ली के लिए रात वाली बस ली और पूरी रात सफ़र करने के बाद अगले दिन अर्थात् सात नवंबर को प्रातःकाल दिल्ली जा पहुँचे।

ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा,
दिल्ली-110034, मो. 0 93101 72323

व्यंग्य

महंगाई में दाढ़ी

◆ नरेंद्र देवांगन

आदमी का शरीर बहुत उपजाऊ होता है तभी तो आज दाढ़ी बनाओ दूसरे दिन फिर नई कोपलें निकल आती हैं। काश, ईश्वर ने हमें हमारे शरीर जैसी ही भूमि दी होती तो किसानों को आंसू नहीं बहाने पड़ते। एक बार बीज छिड़क देते फिर फुर्सत जिंदगी भर के लिए, फसल काटते रहो और खाते रहो। पर ईश्वर देता भी है तो फालतू चीजों को छप्पर फाड़कर। दाढ़ी, सिर के बाल को ही लीजिए, ये सब पैसे खर्च कराने वाले हैं आदमी के काम तो आते नहीं। वैसे मैं दाढ़ी कभी सेलून में नहीं बनवाता। कहां साहब, वृहत महंगाई का आलम और ऊपर से बेरोजगारी, ऐसे में सेलून में दाढ़ी बनाने लग गए तो अपनी खटिया ही खड़ी हो जाएगी। सारे पैसे नाई को दे देगें तो अपने पेट के लिए क्या बचेगा? इसलिए मैंने कान पकड़ लिया है कि कभी सेलून में दाढ़ी नहीं बनवाऊंगा। सिर के बाल के लिए तो मजबूरी है ही, सेलून में कटवाने ही पड़ते हैं। यदि मुझे स्वयं काटना आता तो मैं कभी सेलून नहीं जाता। एक बार बाल काटने के लिए मैंने कैंची लेकर प्रयास भी किया, लेकिन हाथ नहीं जमा। जैसे-तैसे कुछ-कुछ काट लिया। उसके बाद मैं जिस रास्ते से गुजरता, हंसते-हंसते लोगों के पेट पर बल पड़ जाते। लोग कहने लग गए कि कहां से ये लंगूर आ गया। खर्चे में कटौती करने के लिए मैं जब बाल एक मीटर लंबे हो जाते हैं तभी कटवाने सेलून जाता हूं। लंबे बालों के कारण कई बार मेरा नाई के साथ झगड़ा भी हो गया है। नाई लंबे बालों को काटने के अधिक पैसे मांगता है, लेकिन मैंने कभी पांच रुपये से ज्यादा नहीं दिया।

मैं दाढ़ी स्वयं बनाता हूं और एक ब्लेड से बीस-पच्चीस बार दाढ़ी बनाता हूं। मैं शेविंग क्रीम उपयोग नहीं करता। लेकिन साहब इस तरह दाढ़ी बनाना कोई आसान काम नहीं है। इस तरह दाढ़ी वे ही बना सकते हैं जिसके पास हिम्मत हो, दर्द सहने की शक्ति हो। आप भी कभी बगैर शेविंग क्रीम के आठ-दस बार घिस चुके ब्लेड से दाढ़ी बनाकर देखिए, फिर अंदाज लगाइए मेरी सहनशक्ति का। कभी-कभी तो चमड़ी ऐसे छिल जाती है मानो कोई किसान खेत में उगी बेकार घास पर फावड़ा चला दिया हो। दाढ़ी बनाने के बाद चेहरा ऐसे नजर आता है जैसे मैदान में उगी घास को जानवर चर दिए हों।

एक दिन मैं घर से बस स्टैंड जा रहा था कि रास्ते में पांच रुपये का सिक्का मिला। फिर क्या था मेरी तो किस्मत ही बदल गई। पांच रुपये पाकर मैं ऐसे खुश हुआ जैसे शादी में ढेर सारा दहेज देखकर लड़के के मां-बाप खुश होते हैं, जैसे शादी की सालगिरह पर पति के हाथ में साड़ी देखकर पत्नी खुश होती है। वैसे ही मेरी खुशी भी आसमान छूने लगी। मैं बार-बार सिक्के को उलट-पुलटकर देख रहा था। अचानक मुझे ध्यान आया कि सिक्का तो खोटा है। मेरी खुशी फीकी जरूर पड़ गई। जैसे चांद को गगन में देखकर पुलकित हो रही प्रेमिका के सामने यदि चांद का आधा भाग बादल में छिप जाए तो प्रेमिका जिस तरह उदास हो जाती है वैसे ही मेरी खुशी उदासी में बदल गई। वैसे मैं खोटा पैसा चलाने में बहुत माहिर हूं। मैं सोचने लगा कि इस पैसे का उपयोग कहां किया जाए। अंत में मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि आज सेलून में दाढ़ी बनवा लिया जाए। मेरे गांव में एक ही सेलून है 'साहित्य प्रेमी हेयर कटिंग एंड डाई क्लिनर।' यहां के सभी नाई साहित्य प्रेमी है। लेकिन दुर्भाग्य कहिए कि सभी नाई छुरा चलाना जानते हैं, कलम चलाना किसी को नहीं आता।

मैं अपनी बढ़ी दाढ़ी में हाथ फेरते हुए सेलून पहुंचा। मैं उस समय बहुत खुश था। सेलून में दाढ़ी बनवाने के नाम पर मेरा सीना दो इंच ज्यादा फुल गया था। आजकल तो केवल रईस आदमी ही सेलून में दाढ़ी बनवाते हैं। ऐसे में मुझ जैसे खल्लू को सेलून में दाढ़ी बनवाने का मौका मिला था, वाकई खुशी की बात थी।

नरेंद्र फोटो कॉपी, पोस्ट खरोरा, जिला रायपुर,
छत्तीसगढ़-493 225, मो. 0 94242 39336

पुस्तक-समीक्षा

पगडण्डी

◆ शिव प्रताप पाल

पुस्तक : पगडण्डी (कविता संग्रह) लेखक : गुप्तेश्वरनाथ उपाध्याय, अयन प्रकाशन, महरौली, नयी दिल्ली, पृष्ठ : 128 मूल्य : 250 रुपये

आज के इस भौतिकवादी युग में जहाँ व्यक्ति की सारी जीवन-उर्जा और सोच पैसा कमाने-बनाने तक सिमट कर रह गयी है, ऐसे में भी कुछ व्यक्ति बड़ी बेपरवाही से भीड़ में रहकर भी भीड़ से अलग रहतें हैं। वो बेपरवाह जरूर होते हैं पर लापरवाह कतई नहीं। वे पूरी तरह सचेत रहकर समाज को सचेत कर सोचने को मजबूर करने को अपना दायित्व मानते हैं। ऐसे ही एक कवि गुप्तेश्वरनाथ उपाध्याय हैं जिनका कविता संग्रह 'पगडण्डी' पदार्पण कर चुका है। इसमें कुल सत्तर कवितायें हैं, जो अलग अलग विषयों पर केन्द्रित हैं।

आज जहाँ ज़्यादातर चलताऊ और मंचों पर तालियाँ बटोरने वाली फूहड़ कविताओं का दौर है, हास्य-व्यंग्य, उपहास करने का पर्यायवाची बन गया है, टी. वी. कार्यक्रम उससे भरे पड़ें हैं, और नयी कविता के नाम पर कैसे भी, कुछ भी लिखा-परोसा जा रहा है, उससे अलग हटकर यह कविता संग्रह है।

नयी कविता के अंदाज में लिखी इन कविताओं में एक अनूठापन है, गजब की रचनात्मकता है, कलात्मकता है, कोमलता है, गतिशीलता है, संवेदना है, आलोचना है, दर्द है, गंभीरता है, निराशा है, आशा है, उत्तेजना है, आक्रोश है, इतने सारे रंग मौजूद हैं कि पढ़ते समय महसूस होता है कि पाठक कविता नहीं पढ़ रहा हैं, बल्कि कवितायें स्वयं अपना पाठ कर रहीं हैं। नए सांकेतिक बिम्बों का नवीनता से अच्छा प्रयोग किया गया है। गुप्तेश्वर जी अपनी महीन और बारीक कारीगिरी से एक साथ कई समानांतर विषयों की और संकेत करते हुए अपनी बातें कह देतें हैं।

पहली कविता 'बापू' देश की वर्तमान स्थिति का वर्णन करती है, और दूसरी आजादी दिलवाने के लिए बापू का आवाहन करती है। 'बापू तुम जग से कहाँ गए / तुमने हमें आजादी दी, अपना शासन और खादी दी / ... /पर हमने तेरे सपनों का भारत अब तक कहाँ दिया / 'राम राज्य का सपना तेरा पूरा अब तक कहाँ किया' आज के गुरु शिष्य सम्बन्ध पर कविता 'गुरु-दक्षिणा' में कवि कटाक्ष करता है। 'आज जब एक स्कूल मास्टर ने / अपने एक शिष्य को / साक्षर बनाया / नीति का पाठ पढ़ाया / और गुरु-दक्षिणा के लिए / हाथ बढ़ाया / तो उसने /अपने हाथ का अंगूठा ही / गायब पाया'

देश की सड़ी गली परम्पराओं पर प्रहार करता हुआ कवि अपनी कविता 'परंपरा' में कहता है- 'पक गया है / आम यह / फिर भी कड़ा है। लौह का / बीड़ा बना है / पान यह फिर भी सड़ा है। आस्तीन में / सांप देखो / पल रहा है / एक बूढ़ा / साठ मन का / बोझ ढोता / चल रहा है' आत्मावलोकन करता हुआ व्यक्ति 'पहचान' कविता में कहता है - 'कौन हूँ मैं? / नाम, पद, प्रतिष्ठा / सब तो पराया है / फिर मैं क्या हूँ / मेरा क्या है / अपनी पहचान / की तलाश में / भटक गया हूँ'

'मनुष्य' कविता में कवि कहता है- 'मनुष्य न तो पूरा शेर है / और ना पूरा हिरन / वह एक साथ सब कुछ है / अतः उचित और अनुचित / ... / की परिभाषा / अपने स्वार्थो के दायरे में / बदलता रहता है / यही कारण है / कि वह अपने भाइयों को / ... / कभी गधा तो कभी कुत्ता पुकारता है / कभी किसी अन्य / मनुष्य के सामने / दुम हिलाता है / अपने से कमजोर को / अपना शिकार बनाता है'

बदलते वक्त में आधुनिकीकरण का गाँवों पर असर दिखाती कविता 'मेरा गाँव' में कवि कहता है- 'अब घर के मुंडेर पर / कौवा नहीं बोलता / वहाँ तो बजती है लाउडस्पीकर / घर में बच्चे के होने पर / औरतें सोहर नहीं गाती / फिल्मी धुन में / गला फाड़-फाड़ कर चिल्लाती हैं'

ग्रामीणों पर बाढ़ की विभीषिका दर्शाती कविता बाढ़ का अंश- 'देखते ही देखते / बह गया / मंगरुआ की माँ का घर / सवा किलो गुड़ / पांच किलो आटा / और किलो भर सत्तू'

कविता 'कफन का दाम' एक मजबूर स्त्री की वेदना और अपराधबोध को प्रकट करती है, वह अपराध जो उसने किया ही नहीं, बल्कि वह तो खुद पीड़िता है - 'मरने पर अपने पति के / सुलक्षणा पहुंची थी / उसके मालिक के घर / मांगने कुछ पैसे / . .. / घर आकर अपने पति की लाश पर / ... / रोई थी बहुत वह ' ... ' "क्षमा कर देना स्वामी / क्योंकि इसमें / मेरी अपनी कोई गलती नहीं थी'

'मर्द और नामर्द' कविता में मर्द के गुण गिनाते हुए कवि

कहता है- 'मर्द वह है / जो कभी डरता नहीं है / मर्द वह है जो / दूसरों में / डर कभी भरता नहीं है'

कविता मानव बनाओ में कवि मन ईश्वर से प्रार्थना करता है- 'मुझे इतना न दो कि / मानवता भूल जाऊं / इतना कम भी न दो कि / मैं दानव बन जाऊं' कविता 'मौ' में मौत को ललकारता कवि कह उठता है - 'जब तक मैं हूँ / तुम्हारा कोई अस्तित्व नहीं / जिस दिन तुम होगी / तुम ही होगी / तुम्हारा हेकड़ी / देखने के लिए मैं नहीं रहूंगा' कविता 'गीता पुनः सुनाओ' में कवि जनता का आह्वान करते हुए कहता है- 'ऐ जाह्नवी की अम्मा / ओ शकीला के अब्बू / तुमने बना दिया है / पीढ़ी समस्त दब्बू / विकराल रूप वाले / उस कृष्णा को बुलाओ / गांडीव की प्रत्यंचा पर / शान्ति गीत गाओ'

'कविता बेटी है' नामक कविता में कवि ने कविता और बेटी दोनों की स्थिति का एक साथ वर्णन किया है - 'कविता कबाड़ी की दुकान में / बिकने लगी / खोने लगी अपना आकर्षण / बूढ़ी होने लगी कविता' अफसरशाही और चाटुकारिता पर कुत्ते के माध्यम से व्यंग्य करती कविता 'साहब का कुत्ता' में कवि कहता है-'...घर की रखवाली कम करता है / किन्तु भौंकता ज्यादा है / अन्य कुत्ते / दिख जाएँ तो / भौंक-भौंक कर / पागल हो जाता है / घर में बाघ / किन्तु बाहर में / अन्य कुत्तों के सामने दुम दबाता है / गीदड़ बन जाता है'

कविता 'ब्रह्मपुर की सावित्री' में कवि ने एक पतिव्रता विधवा के साथ हुए अन्याय तथा नपुंसक समाज को दर्शाया है- 'उसे अकेली पाकर / यमराज छुपते-छुपाते / उसके घर में आया था / पलंग खिसकाया था / बिस्तर को तार-तार कर / अपना वीभत्स रूप / दिखलाया था / देवता की कौन कहे / मानव भी / उसकी सहायता के लिए / नहीं आया था' कविता- 'लेखनी कमजोर पड़ती जा रही है' में कवि ने निराशा व्यक्त करते हुए कहा 'चापलूसों से भरी इस फौज में, फांसी लगेगी सिरफिरे उन लेखकों को / जो नहीं हैं गीत गाते चारणों के' कविता 'शिकार मत बना' में कवि सचेत करते हुए कहता है- 'खुद शिकारी मत बनो / पर शिकारी के / पैंतरे से अनजान / शिकार भी तो / मत बनो'

कविता 'सृजनशील विश्व' में कवि भगवान् कृष्ण से प्रार्थना करते हुए कहता है- 'आपसे करबद्ध प्रार्थना है / अर्जुनों को युद्ध के लिए / उकसाना नहीं / क्योंकि उनके हाथ में / अब गांडीव नहीं / अणुशक्ति संपन्न / प्रक्षेपात्र है / ... / ऐसा कोई उपाय कीजिये / संसार के समस्त आयुध भण्डार को ही / विनष्ट कीजिये'

महुए के वृक्ष का अनूठा वर्णन 'महुआ' कविता में इस प्रकार है- 'बिन ब्याही माँ / कोकिला की तान पर मस्त / अपनी कोख में / कोयने को पालती / महुआ / अब पूरी तरह / जवान हो गयी है' वहीं कविता 'कुत्ते की पूँछ' में कवि सभी चीजों को एक तराजू में तौलने से रोकता है। 'जलेबी की पहचान / उसके टेढ़ेपन में है / क्या मतलब टेढ़ी है या सीधी / जो भी है मीठी है / कुत्ते की पूँछ को सीधी करने की बात छोड़ो / उसे टेढ़ा ही रहने दो'

कविता 'खूँटे मत गाड़ो' में कवि विचारों को बाँधने का विरोध करता है- 'वर्षों से चल रही अंधी परंपरा में /अब युगांतकारी परिवर्तन लाओ / अब चाहे मवेशियों के लिए हो / अथवा विचारों के लिए / खूंटे मत गाड़ो 'कविता' मैं एक मेमना हूँ' में कवि आज के समय में ईमानदार बुद्धिजीवियों की स्थिति को दर्शाता है- 'मैं / छोटा सा मेमना / देखता हूँ / सब कुछ समझता हूँ / फिर भी बोल नहीं पाता / जिस दिन बोला / विद्रोही कहलाउंगा / ... / काटने के लिए भेज दिया जाऊँगा'

पर्यावरण को हो रहे नुकसान के प्रति कवि अपनी कविता 'शाम ढलती जा रही है' में इंगित करता है, तथा इसे बचने का आवाह्न करता है- 'कट रहे हैं पेड़ / जंगल घट रहे हैं / कंक्रीट के महल / अब पट रहे हैं / ... / और अब भी वक्त है चेतो बटोही / घर जलाकर आग में अब / हाथ मत सेंको बटोही' पर्यावरण प्रदूषण के साथ ही आतंरिक-मानसिक प्रदूषण के सम्बन्ध में कवि 'प्रदूषण' कविता में लिखता है- 'उससे भी बड़ी चिंता / मानवीय प्रदूषण की / मूल्यों की बारिश कम होने लगी / मानवता की फसल बर्बाद होने लगी / ... / निगल जायेंगे पूरी आत्मा ही'

कविता 'अंगीठी' के माध्यम से कवि क्रांतिकारियों को संबोधित करते कहता है- 'तुम अपने भीतर की आग को / बुझने न देना / यह आग ही / तुम्हारी पहचान है / ... / क्योंकि खाक में / मिल जाने वालों की / कोई पहचान / नहीं होती' इसी प्रकार अपने शोषण से अनभिज्ञ शोषित जनता का हाल 'कोल्हू का बैल' कविता में व्यक्त करता है- 'विद्रोह वह / कर सकता नहीं / ऐसा करने नहीं देती / पड़ी आँख की पट्टी' आज बेटियों की स्थिति की ओर संकेत करती कविता 'शकुन्तला' का अंश 'वह अपनी पहचान / अंगूठी में पा रही है / वह समझ नहीं पा रही है / कि अंगूठी बड़ी है / या कि वह / आज भी / अबला ही कही जा रही है'

'संतोषं परम सुखं' को महिमामंडित करती कविता 'आँधी का झोंका' में कवि कहता है - 'मैं अपनी झोपड़ी में / प्रसन्न हूँ / नदी को पार / करने के लिए / नाव बनाने में / वक्त बर्बाद करना / नहीं चाहता'

अंततः मैं कविता 'मानव मन' को उद्धृत करना चाहूंगा, इसमें कवि ने जो उपमा दी है, वह देखते ही बनती है- 'मानव मन / जैसे गिरगिट का रंग / कभी लाल / कभी काला / बेपेंदे के लोटे को / फर्श पर डाला / उलट गया लोटा / फर्श गीला कर डाला'

इस प्रकार विभिन्न रंगों से सजा यह कविता संग्रह पठनीय और संग्रहणीय है।

113 / 1 के, शिवकुटी महादेव, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश-211 004

पुस्तक-समीक्षा

खूबसूरत भावों की बाड़ 'किनारे की चट्टान'

◆ वीणा वत्सल सिंह

पहाड़ के रहने वाले कवि पवन चौहान जी से काव्य संकलन के तौर पर 'किनारे की चट्टान' की ही अपेक्षा की जा सकती है। मेरा मतलब यहाँ काव्य संकलन के शीर्षक से है। संकलन की पहली ही कविता अपनी सादगी लेकिन सम्वेदना से भरी होने के कारण ह्दय में इतने प्यार से उतर जाती है जैसे अपने घर के फैमिली मेंबर होते हैं। पूरी कविता आपसे शेयर करने की बलवती इच्छा को रोक नहीं पा रही हूँ। हालांकि कविता कुछ लम्बी है लेकिन बहुत ही प्यारी है। पढ़ें

मेरी इस खेत की बाड़ ने
सम्भाल रखा है बहुत कुछ
दे रखी है सुरक्षा
आवारा डंगरों ,कुक्कडों
और उन चोरटे लोगों से भी
जिनकी नजर हमेशा रहती है
हमारी फसल, साग-सब्जी
फल और फूलों पर भी
खेत पर सजी इस बाड़ की
हर गाँठ पर लगी है
मेरी माँ के चादरू
और पिता के साफे की लीरें
माँ की स्नेहिल छाया ने
दे रखी है मजबूती सब लकड़ियों को
और पिता की छत्रछाया में
बाड़ खड़ी है सीना तान
हर बाधा से लड़ने को तैयार
इस बाड़ ने छुपा रखा है
और भी बहुत कुछ
मेरे नन्हे बेटे की अठखेलियाँ
बाड़ को बुनते बुनते जो
निकल आई थी खेत पर
खेलती रही थी
बेटे के साथ
गोधूली पलों तक
खेत की धूल में
दिलाती रही थी हमें
खीझ और खुशी साथ साथ
बाड़ के पूरा होने तक
बाड़ लगने की खुशी में
लाडो मेरी कहे बगैर ही
पिला रही है चाय बार बार
क्योंकि अब नहरे चढ़नी पड़ेगी उसे
तीन मंजिला घर की
थका देने वाली सीढ़ियाँ
वह सुखायेगी अब कपड़े इसी बाड़ पर
रुकी रहेंगी उसकी टांगों की पीड़ा भी
फुदकेगी चिड़िया भी अब इसी बाड़ पर
गायेगी मीठे गीत वह
हम सबके साथ
काकड़ी, कद्दू , करेले, घीये की बेलें
बाड़ का हाथ थामे
चढ़ पायेगी अब
ऊँचे पेड़ की नाजुक टहनी तक नापेंगी
वे भी आसमान की बुलंदी
माँ की ममता और
पिता के हौसले ने
सम्भाल रखा है
सब लकड़ियों को एक साथ
जैसे ताउम्र सम्भाला उन्होंने
अपना परिवार
वे यहाँ भी डटे हैं
मुस्तैदी से
और बाड़ मेरी गर्व से कड़ी
कर रही है वादा
हर फूल, फल, फसल और सब्जी से

उनकी सुरक्षा और खुशहाली का

कवि ने जितनी खुबसूरत यह भावों की बाड़ अपनी पहली कविता में बुनी है उसे अंत तक निभाया है। आप एक बार इस बाड़ के अन्दर आ गए तो फिर बाहर तब तक नहीं जाना चाहेंगे जब तक कवि खुद यह नहीं चाहेगा। कविताओं में भावों का यह सौन्दर्य पूरी सादगी के साथ; बिना किसी बिम्ब के -- एक पहाड़ का कवि ही भर सकता है। साथ ही, पहली ही कविता यह अहसास करा जाती है कि यह संकलन सिर्फ 'किनारे की चट्टान' नहीं बल्कि 'खुबसूरत भावों की चट्टान' है।

संकलन के शीर्षक की सार्थकता दूसरी ही कविता में लिखते हुए कवि का कहना है कि 'किनारे पर बैठा कवि देखता है सब /लहरों का उन्माद....चट्टान की सहनशीलता /समुद्र से टकराने का हौसला /उसकी दृढ़ता, आत्मविश्वास /वह भी होना चाहता है चट्टान /किनारे वाली चट्टान और यह चट्टान बने रहने की कशमकश अगली कविता ' जाने कब ...' में व्याख्यायित होका सामने आ जाती है 'मैं बार बार लौट रहा हूँ /उसी दहलीज पर /खींच रहा हूँ बेटे को भीतर'

लेकिन, पवन जी की कवितायें केवल अपने अंतर्मन के कशमकश को ही नहीं जीती हैं वे अपने आस पास के सांस लेते रिश्तों की भी पड़ताल करती हैं। जब वे 'खांसते पिता ' में यह कहते हैं कि 'खांसते पिता सम्बल हैं हमारे लिए /और हमारी चेतना का सैलाब / उनका खांसना देता रहता है हमें /सुरक्षा का आभास /दिन रात डराता रहता है /हमारे घर पर बुरी नजर रखने वालों को भी /वे ओजोन परत हैं हमारे लिए ....' तो पाठक की सारी चेतना जैसे सजग हो जाती है अपने पिता के अस्तित्व को नए सिरे से खंगालने के लिए। सिर्फ पिता की घर में मौजूदगी ही सुरक्षा का आभास नहीं कराती है बल्कि उनका खांसना भी जैसे उनके होने को परिभाषित कर जाता है। कविता पढ़ते हुए एकबारगी हर पाठक का ध्यान अपने बुजुर्ग पिता या पिता के पिता की और जरूर चला जाता है; जहां उनका खांसना भी हमारे मन के चारो ओर एक सुरक्षा कवच का निर्माण कर जाता है। बरबस ही यहाँ मुझे भोजपुरी की वह कहावत याद आ जाती है कि 'जउन घर में रहेलन बूढ़ा बूढ़ी चोरन के ना होखे पैठ उहाँ।' बात चाहे थोड़ी अक्खड़ता दिखाती हुई हो लेकिन मर्म वही है जो कविता कह रही है सुरक्षा का अहसास।

कवि एक ओर जहां अपने लड़कपन की मनोदशा में पिता की छत्रछाया की तलाश करता नजर आता है वहीं दूसरी और वह कविता 'चिम्मु ' में अपने पितृत्व का अहसास करता नजर आता है। जीवन के इन दोरंगे पहलुओं को बड़ी ही आत्मीयता और सघनता के साथ बयान कर जाती हैं ये कवितायें।

कविता 'सेब का पेड़' एक माँ की पीड़ा से न सिर्फ पाठक के मन को झकझोरती है बल्कि उन त्रासदियों की ओर भी ध्यान खींचती है जो वृद्धावस्था में अधिकाँश माँओं के हिस्से आती है

बेटे के विदेश में बसने के बाद
रखती रही वह इसके फल सहेजकर
हर वर्ष
एक आस लगाये
वह आयेगा इस वर्ष
जरूर लौटेगा वह
ममता की छाँव तले

माँ का यह विश्वास और बेटे की आधुनिक जीवन शैली की व्यस्तता किसी से छुपी हुई नहीं है।

वस्तुतः संकलन की कई कवितायें एक के बाद एक इंसानी रिश्तों की भावनात्मक पड़ताल करती जाती हैं। और, पाठक भावों की इस सुन्दर तलैया में डूबता उतराता रहता है। रिश्तों का सोंधापन ही नहीं है केवल पवन जी की कविताओं में उनकी तल्खियां भी हैं

रिश्ते इतने कच्चे थे कि
कुछ टूट गए
कुछ बिखर गये
दूर दूर तक हवा की तरह ....

रिश्तों का यह बिखराव कहीं 'अधूरे स्वप्न ' की तरह आया है तो कहीं एक 'उम्मीद ' है तो कहीं 'आकांक्षा' और कहीं 'भ्रम' भी।

पहाड़ का कवि 'पहाड़ का दर्द' अनुभूत न करे और उसे शब्दों में न पिरोये ऐसा तो हो नहीं सकता। पवन जी की लेखनी ने भी इस दर्द को शब्दों में बांधने की कोशिश की है। हाँ , यह दर्द या पीड़ा कुछ अलग अंदाज में आई है। कवि का स्वर उलाहने का है जो पहाड़ से इतर अन्य क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के प्रति है।

पहाड़ों पर फैला सौन्दर्य निहारने
चले आते हैं दूर देश से वे ....
कल्पना मात्र से ही जी लेना चाहते हैं वे
पहाड़ का कठिन जीवन
मुश्किल रास्तों का लंबा सफर ....

कवि का यह आक्रोश या उलाहना अपनी जगह पूर्णतः सही है। पहाड़ को जीने के लिए जरूरी है पहाड़ होना। सैलानी होकर सिर्फ सैर किया जा सकता है; पहाड़ को समझा भी नहीं जा सकता; जीना तो दूर की बात है।

पहाड़ की सीधी चढ़ाई या ढलान की तरह सीधे सरल शब्दों में रिश्तों के साथ अंतर्मन की सुगंध लिए गए काव्य के आकांक्षी पाठकों को यह काव्य संकलन अपने अन्दर जरूर समेट लेगा।

Rly Colony, Q- Number&8, type-4, Butler Palace
Colony,Joplin Road-226011, Luckhnow (U.P.)
मो. 09829018087

पुस्तक-समीक्षा

आम आदमी की जुबां 'प्रथम पंक्ति के लोग'

◆ यादवेंद्र शर्मा

कविता संग्रह : प्रथम पंक्ति के लोग, आधारशिला प्रकाशन, बड़ी मुखानी, हल्द्वानी, नैनीताल (उत्तराखंड)-263139, पृ. 100 मूल्य : 200 रुपये

सतीश धर का तीसरा कविता संग्रह 'प्रथम पंक्ति के लोग' आम आदमी की मुश्किलों, उसके संघर्ष, राग विराग, असुरक्षा तथा स्मृतियों पर केंद्रित है। हमारे प्रजातांत्रिक ढांचे में नए मानव का निर्माण नहीं हो सका है। सामाजिक-आर्थिक असमानता के बीच आम आदमी की मुश्किलें तथा पीड़ाएं उसे कचोटती हैं। कविता 'प्रथम पंक्ति के लोग' में उन लोगों की मानसिकता उभारी गई है, जो वास्तव में प्रथम पंक्ति के लोग नहीं हैं, बल्कि ऐसा होने का ढोंग रचते हैं। वे 'भीतर के भय से त्रस्त' खुद से बतियाते रहते हैं। इनमें जीवन मूल्यों की जगह अवसरवादिता का बोलबाला है। पंक्तियां देखें- 'मेले में/ ठेले में/ जलसों में/ जुलूसों में/ शादी में/ बरबादी में/ हवाओं/ फिजाओं में/ सबसे दिखने को अलग/ करते कमाल/ चलते/ हंस की चाल/ तमाशबीनों में तमाशा बन जाते हैं/ प्रथम पंक्ति के लोग।' सतीश धर की खूबी है कि वे रोजमर्रा के मामूली अनुभवों के जरिए बड़ा अर्थ उद्घाटित करने की कोशिश करते हैं। बकौल डॉ. दिवाकर भट्ट- 'सरल अंदाज में दुरूह कह जाना यह कवि सतीश धर की कविताओं की विशिष्टता है, जो अन्यत्र देखने को नहीं मिलती।' एक अन्य कविता- 'बातों का अंत नहीं होता' में सतीश धर बातों का महत्त्व समझाते हैं। बातें हमारी अभिव्यक्ति का पहला माध्यम हैं। मनुष्य में बातों का हुनर न होता तो यह दुनिया उजाड़ हो जाती- 'जैसे आदमी के बिना/ धरती अधूरी है/ वैसे ही बातों के बिना/ आदमी अधूरा है।' इस कविता संग्रह की कुछ अच्छी कविताएं हैं- 'मां ने कहा था', 'पिता के लिए', 'नदी निरंतर बहती है', 'लोकगीतों में मां', 'शानों के लिए', 'बजंतरी', 'बदनसीब बाप के बच्चे' 'मां, नदी और गांव'। इन कविताओं में कवि की भाव प्रवणता दर्शनीय है। हमारी व्यवस्था की कमी है कि इसने मनुष्य को ठीक तरह से विज्ञान से नहीं जोड़ा। आम आदमी के सम्मुख जब भी कोई बड़ी उलझन आ खड़ी होती है, तो वह ईश्वर की शरण में जाने को मजबूर होता है। आम आदमी का संगठित न होना भी उसे असुरक्षित बनाता है। ईश्वर की शरण में झूठी ही सही एक तसल्ली उसे मिल जाती है। 'मंगल का दिन' नामक कविता में यही कुछ दर्शाया गया है। 'मंदिर के बाहर शराबी की स्वीकारोक्ति' नामक कविता में कवि मंदिर में बैठे भगवान पर व्यंग्य करता है तथा उसे बाहर आकर मानव के मसलों को सुलझाने की सलाह देता है। पंक्तियां देखें- 'प्रभु/ यह खामोशी कैसी?/ मौत से भी अधिक/ पीड़ादायी है/ आपकी खामोशी।' 'शानों के लिए' कविता में कवि ने अंग्रेजी के दबदबे में तिरस्कृत की जा रही मातृभाषा का पक्ष रखा है। टिप्पणी में बताया गया है कि शानोखान ग्यारह वर्ष की छात्रा थी जिसे अंग्रेजी वर्णमाला कंठस्थ न कर पाने के लिए एक अध्यापिका द्वारा शारीरिक दंड दिया गया, जिसे वह सहन न कर सकी और उसकी मृत्यु हो गई। यह कविता जहां शानो के बचपन में झांकती है वहां अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों पर भी उचित टिप्पणी करती है। 'बजंतरी' एक सशक्त कविता है जिसमें दलित वर्ग की दुर्दशा को उभारा गया है। भूखे बजंतरी का वाद्य भी उसके चीत्कार को वाणी देने लगता है। कविता में ध्वन्यार्थ व्यंजनों का कुशल प्रयोग है। 'लोकगीतों में मां' नामक कविता में लोकगीतों को बचाने में स्त्री की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। लोकगीतों का मां के द्वारा गाया जाना तथा कवि द्वारा प्रसिद्ध लोक गायिकाओं को मां के रूप में देखना उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है। कवि कहता है- 'लोक गीतों ने दिया है/ मां को हब्बा खातून/ और अरण्यभाल का दर्जा/ रोशनी और गंभरी का रुतबा...' इस संग्रह के उत्तरार्ध में कई कमजोर कविताएं भी शामिल कर दी गई हैं, जिन पर प्रसिद्ध कवि धूमिल की सी जुमलेबाजी का प्रभाव है। धूमिल अत्यंत प्रतिभाशाली कवि थे जिन्होंने साठोत्तरी कविता में एक सही प्रतिरोध पैदा किया। अनेक कवि उन कविताओं के फार्म से चकित होकर वैसी कविता लिखने लगे, लेकिन सफल न हुए। वे धूमिल के कविता के विन्यास की नकल तो कर पाए लेकिन धूमिल जैसी जबरदस्त बेचैनी उनके यहां नहीं थी। यह सुखद है कि सतीश धर की ताजा लिखी कविताओं पर धूमिल का प्रभाव नहीं है तथा कवि अपनी शैली रचने में कामयाब हुआ है।

मं. नं. 117/6, लोअर बाड़ी, सुंदरनगर, जिला मंडी, हिमाचल प्रदेश-175 018, मो. 0 97361 79913

प्रेस तथा पुस्तक पंजीयन अधिनियम की धारा 19 'डी' के अन्तर्गत अपेक्षित 'हिमप्रस्थ' मासिक के स्वामित्व एवं अन्य विषयों से सम्बन्धित विवरण

फार्म-4 (नियम 8 देखिये)

प्रकाशन स्थान	'हिमप्रस्थ' कार्यालय हिमाचल प्रदेश, राजकीय मुद्रणालय परिसर, शिमला-171005
प्रकाशन अवधि	मासिक
मुद्रक	डॉ. डी. के. गुप्ता नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला-171005
नागरिकता	भारतीय
प्रधान सम्पादक	आर. एस. नेगी
नागरिकता	भारतीय
वरिष्ठ सम्पादक	डॉ. आर.एस. राणा
नागरिकता	भारतीय
सम्पादक	वेद प्रकाश
नागरिकता	भारतीय
प्रकाशक	आर. एस. नेगी निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश, शिमला-171002
नागरिकता	भारतीय
उन व्यक्तियों के नाम और पते जो मासिक के स्थायी स्वामी हैं, जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक सांझेदार/हिस्सेदार हों	हिमाचल प्रदेश सरकार एलर्जली, शिमला-171002

मैं आर.एस. नेगी यह घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार ऊपर दिया गया विवरण सत्य है।

(आर. एस. नेगी)
निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग
हिमाचल प्रदेश

1 मार्च, 2017

खुशहाल
हिमाचल
कर मुक्त बजट
2017-18
हिमाचल प्रदेश में
मुख्यमंत्री श्री वीरभद्र सिंह
के नेतृत्व में
चहुँमुखी विकास का
5 वां
साल
बजट में बेरोज़गारी भत्ते
के लिए ₹150 करोड़ का प्रावधान
10 + 2 या उससे अधिक शैक्षणिक योग्यता वाले युवाओं को 1000 रु. प्रतिमाह बेरोज़गारी भत्ता
विकलांग बेरोज़गार युवाओं को 1500 रु. प्रतिमाह भत्ता
कौशल विकास भत्ता योजना जारी रखने का फैसला
सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हि.प्र. द्वारा जारी

पंजीकरण संख्या : 845/1957 मार्च, 2017 एच.पी./79 एस.एम.एल. 2015—17

गेहूं की फसल से लहलहाते खेत

आर.एस. नेगी निदेशक, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश द्वारा प्रकाशित तथा डॉ. डी. के. गुप्ता, नियंत्रक, मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार के लिए राजकीय प्रेस, शिमला—171005 से मुद्रित करवाकर शिमला से प्रकाशित। सम्पादक वेद प्रकाश।